॥ श्रीः ॥

भूमिका ।

यद्यपि इस ग्रन्थके प्रथम भागमें भूमिकारूप एक वृत्तान्तका प्रकाश कर चुके हैं, परन्तु इस ग्रन्थके गौरवसे इस दूसरे भागकी भूमिकामें भी कुछ कहना है भारतके प्राचीन इतिहासकी खोज अभीतक पूरी नहीं हुई है. इतिहासका अभाव इतिहासका अभाव चारोंओरसे यह ध्वनि गूंज रही है, पर ईश्वर की कृपासे इस अभावकी पूर्ती शीघ्र ही होनेवाली है, इतिहासका पर्दा शनैः२ ऊपरको उठ रहा है, दूसरे देशवासियोंके लिखेहुए पक्षपात पूर्ण इतिहासोंसे हमारे देश तथा धर्म कर्मका गौरव कब रहसकता है, इसीसे विदेशीजनोंके निर्मित इतिहास पढकर ही हमारे नवयुवक अपने पुरुषाओंको तुच्छ समझतेहुए धर्म कर्मसे हाथ धो बैठते हैं, समयकी कैसी विचित्र महिमा है कि जिन भारतवासी पुरुषाओंसे हम अपना गौरव समझते थे, आज उन्हींके नाम और चरित्रसे हम खिजते हैं, उनको तुच्छ दृष्टिसे देखते हैं, उनके आचार विचार पर श्रद्धा नहीं करते बल्कि स्वच्छन्द वृत्ति होनाही इतिहासका मर्म प्राप्त होना मानते हैं. पूर्व इतिहासोंमें यदि किसी व्यक्तिके बलविक्रमका विशेष परिचय पायाजाय तो झट उसे कल्पित मानते हैं, पर आज बलके विषयमें तो प्रोफेसर राममूर्तिने बलकी असम्भवताको सम्भव कर दिखाया है कि आप चलतीहुई बडी मोटरकार को हाथसे पकडकर थाम लेते हैं, छातीपर हाथी पैर रखकर चलाजाता है, पर इस महापुरुषको कुछ पीडा नहीं होती, इसी प्रकार यदि दूसरे विचारोंमें उन्नति कीजाय तो क्या पुरानी सामग्री हमको असम्भव प्रतीत होगी, कभी नहीं, इस राजस्थानके इतिहासके साथ रजवाडेके सिवाय भारतके अन्य प्रान्तोंका भी तथ्य वर्णन आजाता है, इन्द्रप्रस्थकी पुरानी बातोंका बहुत कुछ पता लगसकता है जोधपुर बीकानेर जैसलमेर जेपुर कोटा बूंदी इन कईएक पुरातन राज्योंका इसमें बडी खोजके साथ आदिसे वर्णन किया गया है, मैं समझता हूं कि मेवाड और मारवाड राज्यका तो आदर्श मानो सज्जनोंके सन्मुख तथ्यरूपसे उपस्थित होगया है, इस दूसरे भागमें इन राज्योंके चरित्र किस प्रकारसे संघटित हैं, किस २ भाँतिकी विपत्तियोंका सामना इस देशके नरपतियोंको आया है, अथवा कभी २ नरपतिकी अयोग्यतासे प्रजाको कितना कष्ट उठाना पडा है, राजपूत महिलाओंने किस प्रकार अपने धर्मोंकी रक्षा की है, यवनोंने किस प्रकार छल प्रपञ्चोंसे भारतपर आक्रमण किया है इस ग्रन्थके पाठमात्रसे इन सब बातोंका भेद खुल सकता है, इतिहास ही हमको इस बातकी साक्षी देसकता है

कि आदिपुरुष किस रहन सहनके थे, उनका कर्तव्य क्या था किस प्रकारके आचार विचार थे, किन कार्योंके करनेसे वह अपने देशको उन्नतिके शिखरपर पहुचा सके थे अहा ! उन दिनोमे यह देश कैसा फूलकी समान खिल रहा था, इसकी सुगंधिसे यही देश नहीं किन्तु बाहरी देश भी सुगंधित हो रहे थे, पर वह बात अब कहा है अब तो अधर्मने ऐसा दबाया है कि समस्त ही कर्तव्य परायण लोग अपना कर्तव्य त्यागन किये बेठे है, आलस्य, अकृतज्ञता, अकर्मण्यता, मद्य, आखेट, द्यूत अहिफेन, ईर्षा, द्वेषका एक प्रकारमे चक्रसा वर्त रहा है, फिर किस प्रकारसे देशमे जाग्रति हो हमारी समझमे जो देश जिन बातोंसे उन्नत था बिना उन बातोके ग्रहण किये कभी जाग्रति न होगी इनमे मूलकारण हमारा सनातनधर्मसे ढीलापन है, "सनातनधर्मकी उपेक्षा ही हमारी अधोगतिका कारण हुई है, इसीकी उपेक्षासे भारत अभक्ष्य भक्षणमे प्रवृत्त हुआ है, इसीकी उपेक्षासे अपनी रहन सहन बदल बेठा है, इसीकी उपेक्षासे बडे बूढोको भूल बेठा है, इसीकी उपेक्षासे महापुरुषोंके वचनोंमे अविश्वास कर बैठा है, इसीकी उपेक्षासे वर्णाश्रमकी मर्यादा बिगाड बेठा है, इसीकी उपेक्षासे स्वराज्यमे तिरस्कृत होगया है, इसीकी उपेक्षासे ईश्वरज्ञानसे रहित होगया है, यही सब प्रकारकी उन्नतिका मूल है, इसीकी उपेक्षासे द्विजोमे विधवा विवाह, इसीकी उपेक्षासे यवनादिका हिन्दू बनना, तथा इसीकी उपेक्षासे संकरताका बीज शनै अकुरित होकर वृक्ष आकार धारण करेगा,, सज्जनो ! सावधान इतिहासका आदर करो, तुम्हारे इतिहास पुराणोमे एतिहासिक रत्न बहुतसे भरे पडे है, परिश्रम कर उनको निकालो देशमे उनका चमत्कार दिखाओ, हम इकले कहातक इस कार्यमे सफल मनोरथ हो सकते है, सबकोही थोडा २ परिश्रम करना चाहिये, इस भारत और अष्टादशपुराण रूप रत्नाकरमेसे मनोनीत इतिहास रूपी रत्नोकी माला गूँथो अपने देशका मुख उज्ज्वल करो, दूसरे देशनिवासी विद्वान् इन्ही ग्रन्थोंसे रत्न निकाल २ कर यहांके इतिहास लिखकर अपनी समाजमे गौरव लाभ कर रहे है, पर आप किस नींदमे सो रहे हैं इतिहासकी खोजकर भारतवर्षका एक बृहत् अभाव दूर करना भारतवासीमात्रका काम है समय जा रहा है ऐसा न हो किसी प्रकारसे आप लोग पीछे रहजाय

इस समय जिस इतिहासका गौरव राजस्थानमे विशेषरूपसे पायाजाता है ओर जिसमे पक्षपात बहुत ही न्यून है, हमने उसी जेम्स टाड्महोदय लिखित राजस्थान ग्रन्थका अनुवाद टिप्पणी सहित करके हिन्दीप्रेमियोको भेट करना उचित जाना ओर कुछ दिन हुए कि उसका पहला भाग मेवाडका इतिहास हम पाठकोंकी भेट कर चुके है जिन २ महानुभावोने वह पहला भाग देखा होगा वह उसके गौरवकी लेख प्रणालीसे समझ गये होंगे कि इतिहासमे देशको कितना लाभ है, ओर इतिहास हमको क्या शिक्षा देता है, तथा हमारे पूर्व पुरुष किस प्रकारकी रहन सहनवाले थे। अब यह दूसरे भागका भी विशद शुद्ध हिन्दी अनुवाद पाठकोंकी भेट है, पहले बृहत् भागमे दो खण्ड थे, पहलेमे पुरातन नरपतियोंका आरम्भिक वृत्तान्त और दूसरे खण्डमे बाप्पारावलसे आरम्भ करके

सिसोदिया वंशका समस्त वर्णन किया गया है, इस दूसरे भागमें मारवाड जोधपुर बीकानेर जैसलमेर जयपुर शेखावाटी कोटा बूंदी और टाडसाहबके भ्रमणका पूरा वृत्तान्त है, यह ग्रन्थ जैसा विशद है वैसाही इसका विषय है. हमने इस ग्रन्थके अनुवादको सर्वांग सुन्दर बनानेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी है, ग्रन्थकारसे जो इसमें कहीं भूल हुई है हमने टिप्पणी लिखकर उसका परिहार किया है. तथा जितना महात्मा टाडसाहबका लिखा यह ग्रन्थ है हमने उसके आगेका भी बहुतसा वृत्तान्त इसमें सन्निविष्ट करदिया है इतना ही नहीं जो सन्धिपत्र मूलग्रन्थमें ग्रन्थकारने किसी कारणसे नहीं उतारे थे, हमने दूसरे अंग्रेजी ग्रन्थोंसे उनकी नकलें लेकर उनका अनुवाद करके इस ग्रन्थमें सन्निविष्ट करदिये हैं तथा कहीं उनपर निजकी तौरसे समालोचना की हैं, कि जिनको पाठ करनेसे पाठकोंके हृदयपर इनका बडा प्रभाव होगा, कालचक्रकी कैसी विचित्र महिमा है, राजनीतिका कैसा प्रभाव है "समयके फेरसे सुमेर होत माटीको", फूट और परस्पर विद्वेषका कैसा भयंकर परिणाम होता है, स्वार्थ मनुष्यको कैसा पक्षपाती बना देता है, न्यायकारिता कैसी संतोषकी नौका है इत्यादि महत्वकी बातोंकी जानकारी और शिक्षा इसके अवलोकनसे प्राप्त होगी। यद्यपि यह ग्रंथ अंग्रेजीकी बडी गम्भीर भाषामें लिखा गया है. तथापि हमने इसके अनुवादमें बडी सावधानी रक्खी है कि जिससे सब कोई इसकी भाषा सरलतासे समझ सके इस बातका पूरा ध्यान इसमें रक्खा गया है और जिससे अपने देश तथा जातिका गौरव विशेष रूपसे बना रहे, कोई बात न रहजाय सब वृत्तान्त ग्रन्थकारके आशयके अनुसार विशदरूपसे प्रकाश किया गया है इन राज्योंके मूल इन जातियोंकी उत्पत्ति जो अब कुछसे कुछ नामवाली होगई है इन नामोंके कारण क्षत्रियोंके भेद उनके उच्चकुल उन २ राजोंकी वंशावली यह सब बातें इस ग्रन्थमें बडे विस्तारसे प्रमाण सहित लिखी गई है, सत्य तो यह है कि इस ग्रन्थके अनुशीलनसे पाठकोंके हृदयके कपाट खुल जायगे, और आगेके लिये इतिहासका मार्ग स्वच्छ होजायगा हम इसकी विशेष प्रशंसा क्या करें पाठक स्वयं इसको पढकर जान सकेंगे।

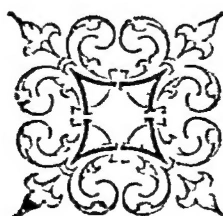
इस ग्रन्थके अनुवादका कार्य मेरे मध्यम भ्राता पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्रने अपने हाथमें लिया था, वह जैसी हिन्दी लिखते थे वह जैसी रोचक ओजस्विनी सर्वजन प्रिय होती थी, यह बात किसी महानुभाव हिन्दीसाहित्यप्रेमीसे छिपी नहीं है, इस ग्रन्थको उन्होंने बडे चावसे लिखा था, और इस दूसरे भागको आधेके लगभग तैयार करचुके थे, कि अचानक विकराल कालने उनको आ घेरा और इस कार्यको अधूरा छोड अपने कुटुम्बी तथा स्नेही जनोंको सदाके लिये शोकसागरमें निमग्नकर वे इस असारससारसे यात्रा कर जगदीश्वरके चरणोंमें सदाके लिये चलेगये, पाठक जानते है कि ऐसे पुरुषके उठ जानेपर शोकित हृदयसे उस कामके पूरा करनेमें कैसी अडचन पडती है, उनके इष्टमित्रोंके अनुरोधसे तथा भाई साहबकी कीर्तिरूपी पताका चिरकालके लिये फहराती रहे सज्जनमंडली इस इतिहाससे वंचित न रहै, उनकी आत्माको परलोकमें स्वकार्यकी

पूर्तिसे सतोष हो, इत्यादि कई कारणोसे मुझे इस ग्रन्थकी पूर्तिका भार स्वयं उठाना पडा, और उस सर्वनियन्ता परमात्माकी असीम कृपा कटाक्षसे यह देशोपकारी ग्रन्थ सब प्रकारसे पूर्ण होगया हिन्दीभाषाकी शली यथा साध्य भाईसाहब जैसी पूरी रखनकी चेष्टा कीगई हे, पर यदि कही त्रुटि रहगई हो तो पाठकगण अपनी उदारतासे उसको क्षमा करेगे क्या अच्छा होता जो यह ग्रन्थ उनके सामने प्रकाशित होता, पर हरिइच्छामे किसीको कुछ कहनेकी सामर्थ्य नही है । परन्तु उनकी आत्माको सन्तोष हो मुझे यही अभीष्ट हे.

इस ग्रन्थके निर्माणमे जगत्प्रसिद्ध हिन्दी हितैषी परोपकारनिरत श्रीवेंकटेश्वर यन्त्रालयाधिपति सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयका बहुत ही धन्यवाद है कि आपने इसके अनुवादकी सहायतामे किसी प्रकारकी कमी नही की, सब प्रकारसे इसके प्रकाशका प्रबन्ध अपनी ओरसे करके यह अनुपम ग्रन्थ पाठकोंके लाभार्थ तथा हिन्दीभडार भरनेके अर्थ प्रकाशित किया हे, परमात्मासे प्रार्थना है कि वह इसी प्रकारसे हिन्दी तथा सस्कृतकी उन्नतिमे दत्तचित्त रहकर देशका कल्याण करते हुए यशके भागी बनै, धन सन्तानकी वृद्धिके सहित मनोभिलषित कार्योकी प्राप्ति करे.

अब मै इस भूमिकाको यहां पूर्ण करता हुआ परमात्माको प्रणामपूर्वक यही चाहताहू कि इस ग्रन्थका प्रचार समस्त भारतवर्षमे हो ओर इसका पाठ कर पाठक अपने पूर्वजोके आचार विचारकी श्रद्धा करतेहुए सुखभागी हो ।

पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्र { सज्जनोका अनुगृहीत ज्वालाप्रसाद मिश्र दीनदारपुरा मुरादाबाद सम्वत् १९६८ आषाढपूर्णिमा



॥ श्रीः ॥

सूचीपत्र ।

राजस्थान दूसराभाग ।

मारवाड़ जोधपुर.

अध्याय.	विषय.	पृष्ट.

बीकानेरका इतिहास.

जैसलमेरका इतिहास.

जयपुरका इतिहास.

शेखावाटीका इतिहास।

बून्दीराजका इतिहास ।

कोटाराज्यका इतिहास ।

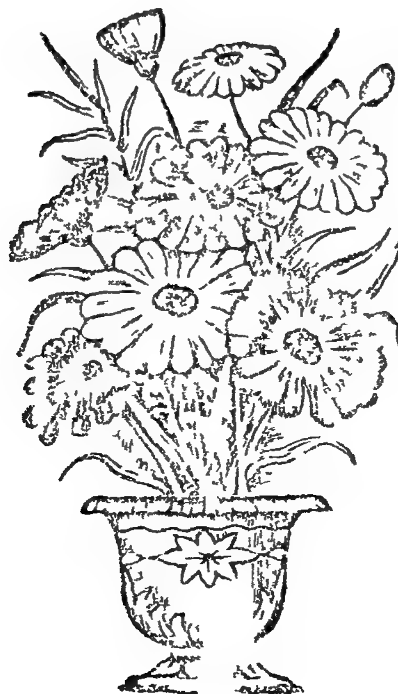
कर्नलटाड्का भ्रमणवृत्तान्त ।

मरुभूमिका वर्णन ।

ग्रन्थकी पूर्ति।



१ अंग्रेजी पुस्तकमें अमरकोटका वर्णन दूसरे अध्यायमे है और इन्दुवतीसे नागरगुरु तकका वर्णन प्रथम अध्यायमे है लेख प्रमादसे यह परिवर्तन होगया है।



इति

राजस्थान द्वितीयभाग विषयानुक्रमणिका

समाप्त ।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जोधपुर, या मारवाड़का इतिहास.



जोधपुर, या मारवाड.

एच्. एच्. राजराजेश्वर महाराजाधिराज सरमद रझाइ
श्री सरदार सिहजी वहादुर





















जोधपुर या मारवाड,

(१) राव सिहाजी, १२६०
(२) से ११ दस सरदार
(१२) राव रिणमल, १४२७
(१३) जोधाजी १४५३
(१४) सूजा १४९१
(१५) उदयसिंह (राज नहीं किया)
(१६) गंगा १५१५
(१७) मालदेव, १५३१
(१८) उदयसिंह (मोटा राजा) १५८३
(१९) राजा सूरसिंह, १५९४
(२०) गजसिंह १६१९
(२१) महाराजा जसवन्तसिंह पहला १६३५
(२२) अजीतसिंह १६७८
(२३) अभयसिंह १७२५
(२४) रामसिंह, १७५०
(२५) बखतसिंह १७५१
(२६) विजयसिंह, १७५३
(२७) भीमसिंह, १७९४
(२८) मानसिंह, १८०४
(२९) तख्तसिंह, १८४३
(३०) जसवन्तसिंह, जी सी एस आई—१८७३
(३१) सरदारसिंह गद्दीपर बैठे १८९५ (चित्र नहीं है)

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

राजस्थानका इतिहास.



दूसराभाग २.

दोहा–सिद्धिसदन आनंदघन, गिरिजासुवन गणेश ।
उमा सहित सुमिरहुँ सदा, जगसुखदान महेश ॥ १ ॥
वीणा पुस्तकधारिणी, देवी गिरा मनाय ।
मारवाड़ इतिहासकी, भाषा लिखत बनाय ॥ २ ॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादाबाद ।
इंगलिशसे भाषा कियो, द्विज बलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
बुधज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ।
भूल चूक पुनि होय जो, क्षमिहहिं सन्त सुजान ॥ ४ ॥
वेंकटेश्वर यंत्रपति, खेमराज जगजान ।
जगहित छाप्यो ग्रंथ यह, सकल सुमंगल खान ॥ ५ ॥

मारवाड़का इतिहास ।

अध्याय १.

मारवाड़के भिन्न २ नाम, प्राचीन इतिहासके प्रमाण–पतिकी वंशावली,–मारवाड निवासी राठौर जातिकी पारलीपुरके यवन राजाओसे उत्पत्ति, द्वितीयवंशावली। नयनपाल और उसकी तिथि–कन्नौज विजय,–राजपूत वंशावलियोका काम,–कवि करणीदान रचित सूर्य्य प्रकाश,–राजरूपक इतिहास, ख्यात अजीतसिहकी बाल्यावस्था और उसके राज्यका इतिहास–विजय विलास अर्थात्, जीवनचारित्र । दूसरी प्रमाणिक वस्तुएँ । यवनाश्व अर्थात् इन्डोसिदिक (Indo scythic) जाति, कामध्वज नामधारी तेरह राजपूतोका वंश–कन्नौजाधिपति राजा जयचंद मुसल्मानोके भारतविजयसे पूर्व इस राज्यकी सीमा और चमत्कार,–सेवा प्रबंध, मांडलिक पदवी–राजाको ईश्वरीय–पदवी । जयचंदका राज–स्वयंवर यज्ञ । स्वयंवरका पूर्ण रहना और उसका परिणाम–भारतकी दशा,–हिन्दुओकी चार बडी राजधानी–दिल्ली, कन्नौज, मेवाड, अनहलवाडा, उस समय भारतकी क्या दशा थी–गोरके बादशाह शहाबुद्दीनका भारतपर आक्रमण–दिल्लीके चौहान राजाओपर उसकी विजय । कन्नौजपर आक्रमण, सात शताब्दोके पश्चात् कन्नौजका नाश । जयचंदकी मृत्यु और उसकी मृत्युतिथि ।

मारवाड़शब्द मारुवारका अपभ्रंशहै। यथार्थमें इसका नाम मरुस्थल वा मरुदेशहै, जिसका अर्थ होताहै मरेहुए मनुष्योका देश। इसको मरुदेशभी कहतेहै, प्राचीन मुसलमान व इतिहासवेत्ताओने नासमझीसे मारदेशभी लिखाहै। कवियोने प्रायः इस देशको मुरधरभी कहाहै जिसका अर्थभी मरुदेशहै और कभी २ छन्द ठीक करनेकेलिये केवल मरुही लिखदियाहै। यद्यपि आजकल यह नाम इतने देशकाहै जो राठौर वंशके राज्यमेहै, परन्तु प्राचीनसमयसे असलमे यह नाम उस भू भागकाहै जो समुद्रसे लेकर सतलज नदीतक फैलाहुआहै। और रेतीसे परिपूर्णहै।

मारवाड़देशाधिपति राठौरवंशका पूर्णवंश—चरित्र प्रथमखण्डके अ० ६ पृष्ठ ४९ मे दिया जाचुकाहै, इसलिये इसका उस समयतकका वृत्तान्त, जहाँतक कि, यह वंशावली अपनी जड पुष्ट न करले संक्षेपसे लिखेगे। अर्थात् वहाँतक जब कि, यह वीर राठौर इस रेतीले स्थानमे आ बसेहै, और अपने वंशको सूर्यवंशकी शाखा बतलातेहै, उचित समझा गयाहै कि, उनके वंशोका यथार्थ वृत्तान्त उनकेही ग्रन्थोसे दिखलायाजावे, इसलिये हम उनकेही इतिहासोका उल्लेख करेगे। जैसा कि, हमने मेवाडके वृत्तान्तमें सब इतिहासोको एकहीमे मिलादियाहै, ऐसा हम यहां नही करेगे पाठकोके चित्तविनोदार्थ हम राठोर ग्रथोके रहस्योका सरल अनुवाद भी करेंगे।

सबसे प्रथम हम ग्रन्थकर्ताओके प्रमाणोका उल्लेख करतेहै। प्रथम नाडलाई जैनमंदिरके पुजारी यतीको बनाईहुई वंशावली है। यह वंशावली ५० फुट लम्बीहै सबसे पहिले इसमे राठौरवंशकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदंडसे बतलाई है पारलीपुरके राजा यवनाश्वको कल्पित पिता लिखाहै। पारलीपुरके वृत्तान्तके विषयमे राठौरी इतनाही जानतेहै कि यह स्थान कही, उत्तरमे है, परन्तु इस वशके पूर्वजोके अश्व वा असिजातिके यवन राजाके सिदियन जातिसे उत्पन्न होनेके विषयमे हमारे पास प्रमाणहै।

यह इतिहास कान्यकुब्ज वा कन्नौज और कमधजवंशकी प्रारम्भ स्थितिसे प्रारम्भ होता है और राठौरोकी १३ महाशाखाओ, उनके गोत्राचार्य गौतम गोत्र माध्यंदिनी-शाखा शुक्राचार्य गुरुगणपति अग्नि पंखनी देवी आदिका वृत्तान्त लिखकर समाप्त किया गया है।

दूसरा वंशवृक्षभी उसी प्राचीन समयका है, जिस समयकी बिना चरित्रोकी वंशावली है। उसकी प्रतिष्ठा उसी प्रकार की है, जिस प्रकारसे उनकी की जाति उसको देखे, नयनपालसे पहलेका वृत्तान्त अब हम यहां छोडते है, इस राजा नयनपालने सवत् ५२६ (सन् ईसवी ४७०) मे कन्नौजको विजय किया, और वहांके राजा अजयपालको मारा। उस समयसे इस वंशका नाम कन्नौजिया राठार हुआ। अब यह इतिहास कन्नौजके अंतिम राजा जयचन्दका वृत्तान्त वर्णन करता है, जिसमे उसके भतीजे सियाजीका देशनिकाला (और कन्नौजके राज्यसे भयभीत हुए) बहुतसे भाइयोका मरुदेशमे बसना, राजा जसवन्तसिहकी (सम्वत् १७३५ सन् १६७९) मृत्यु और उनकी प्रत्येक शाखाका वर्णन किया है। वास्तवमे पाठकोको बडाही आनन्द होगा कि, जिस समय वे यह देखेगे कि, यह वंशवृक्ष फल फूलकर अपनी शाखाओको बढावैगा।

यद्यपि इतिहासवेत्ताओको यह वृत्तान्त वहुतही शुष्क और नीरस प्रतीत होगा, परन्तु तत्त्वज्ञानियोके लिये मनुष्य जातिका इस्से अच्छा रुचिकर इतिहास संसारभरमे न होगा। सन् ११९३ मे हम जयचन्दकी गद्दी लौटीहुई देखते है, उसके भाई भतीजे और सम्वन्धी भारतीय मरुस्थलके छोटे २ सरदारोकी सेवामें प्रविष्ट होते है। चार शताव्दि पहलेसे ही हम इन गंगाके किनारे रहनेवालोको सारे रेतीले स्थानमे वसता हुआ देखते है। जहाँपर इन्होने तीन राजधानी वनाई वडे वडे राजभवन बनाये, और एकही वापकी सन्तानने जो अव ५०००० वीर है रणक्षेत्रमें दिल्लीके वादशाहका मुकावला किया। कन्नौज विजयी मुसलमान वादशाहोंके मनमे जिनकी पांच पुस्ते राठौरोके पराक्रमसे अनभिज्ञ रही, क्याही विचित्र विचार इस राठौरवंशकी महोन्नति देखकर हुए होगे। जव कि, उत्साही शेर शाहने सियाजीकी राठौर सन्तानसे रणक्षेत्रमे भिड़ते समय कहाथा कि, हम एक मुट्ठी जौके वदलेमे भारतका राज खोनेको थे, अर्थात् हम इस देशको गरीव समझकर इसका ध्यान नही करतेथे।

यह देखकर हृदयमे वडा आनन्द उत्पन्न होता है कि यह जातीय विचार इस महासेनाके प्रत्येक योधामे वर्तमान है। यहाँ तक कि, प्रत्येक पुरुष अपना सम्वन्ध उस वंशवृक्षकी शाखासे रखकर समझाता है कि, हम उस वंशसे बहुत दूर नही है, और उस वृक्षकी शाखाओको अर्थात् अपने पुरुपाओको भूले नही है। ऐसी सदाचार-युक्त सहानुभूतिका जो कुछ प्रभाव पडा करता है वह सर्व साधारण जानते ही है, इस लिये उसका लिखना उचित नहीं है। इतिहासवेत्ता केवल वहुतसे नामोका लिखना व्यर्थ कागज रंगना समझते है, जो केवल सियाजीकी संतानके ही रहस्यका विपय है।

ऊपर कहीहुई दोनो कुल-तालिकाओके अतिरिक्त जो और भी कई एक भट्ट-ग्रन्थ मारवाडके इतिहासके विपयमे पाये जाते है, उनमेसे "सूर्य्यप्रकाश" "राजरूपाख्यात" और "विजयविलास" ये तीन प्रधान है, अस्तु हम इस समय इन्ही तीनो भट्ट ग्रन्थोका वर्णन लिखते है।

मारवाड़के एक दूसरे राठौर राजा अभयसिहके राजत्वकालमे उसकी आज्ञानुसार * कर्णीदान नामक भट्टकविने सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थ वनाया। इसमे ७५०० छन्द है सन् १८२० मे राजा मानने इसकी नकल मेरे पास भेजी थी। यद्यपि कर्णीदान कविने मनुष्योकी उत्पत्तिकालसे आरम्भ कर महाराज सुमित्र तक राजवंश वर्णन किया है तो भी उसके उपरान्त नयनपाल तक और किसी राजा वा राजवंशका विवरण नही देखा जाता। उक्त ग्रन्थमे लिखा हुआ है कि, महाराज नयनपालने कन्नौजराज्यको जीत उसपर अधिकार कर कमधजकी उपाधि धारण की थी कवि कर्णीदानने राजकीय वृत्तान्तोसेही अपना ग्रन्थ रचा है। किन्तु नाडोलके देवमंदिरमे जो कुलतालिका पाई गई थी, उसमे लिखे हुए वृत्तान्तके साथ सूर्य्यप्रकाशकी विशेष समानता देखी जाती है। परन्तु यह घटनावली भी संक्षिप्त ही है। कन्नौजकी रंगभूमिमे राठौरकुलकी वीरता, वडाई वा

* कर्णीदान भट्ट नहीं था चारण था।

दूसरे किसी कार्य्यका अभिनय हुआ था कि नही, आश्चर्य्यका विषय है कि, सूर्यप्रकाश ग्रन्थमे उसका विशेष वर्णन नहीं है, यहांतक कि, कविने कन्नौजके राजा जयचन्दके हारने और उसके मारेजानेके वृत्तान्तको भी छोड़ दिया है। उसने शीघ्रताके वशीभूत हो वहुत जल्दी मारवाडकी रंगभूमिमे उपस्थित हो, महाराज सियाजीके वंशधरोका संक्षेप वर्णन करके उस कुल-तालिकाको पूर्ण कर दिया है।

"राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमे सवसे पहिले सूर्य्यवंशके कई एक वृत्तान्त लिखे हुए है इसमे उस समयका संक्षेप वर्णन देखा जाता है जिस समय महाराज इक्ष्वाकुके वंशधर अपनी पुरानी राजधानी अयोध्यानगरीके सिहासनपर सुशोभित थे, उन सव वृत्तान्तोके उपरान्त ग्रन्थकर्ताने सियाजीके देश छोडने आदि घटनाओका वर्णन किया है। जिस दिन राठौर वीर सियाजीने कुछेक अनुचरोको साथ ले राजस्थानकी विशाल मरुभूमिमे राठौर वंशका वृक्ष स्थापित किया था, जिस दिन उनके अत्यन्त साहसके प्रभावसे उस दग्ध मरुभूमिमे राजमहल सुशोभित हुए थे, उस दिनसे और महाराज यशवंतसिहकी मृत्युतक राठौर कुलका भाग्य तरंग किस किस ओरको वहा है, इसका सव संक्षेप वर्णन इस ग्रन्थमे लिखा हुआ है। परन्तु इसके उपरांतकी घटनाओका वर्णन भली प्रकारसे विस्तारपूर्वक लिखा गया है। महाराज यशवन्तसिहके अन्यायसे मारे- * जानेके उपरान्त उनके वालक कुमार अजितसिहने किस २ प्रकारकी घटनाओमे गिरकर राजसिहासन पर अधिकार किया और किस प्रकारकी राजनीतिसे राज्य किया। इन सव वातोकाही वृत्तान्त "राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमे क्रमानुसार वर्णन किया गया है। ग्रन्थकारने यहीतकका वर्णनकर लेखनी नही छोडी, वरन् उसने राठौर वीर अजितसिहके और उसके पुत्र अभयसिहके राजत्वकालसे लेकर गुजरातके सूवेदार सर वुलंदखॉके साथ युद्धके अन्तिमसमयतककी घटनाओका वर्णन इस ग्रन्थमे किया है। 'राजरूपक' के प्रथम संक्षेप वृत्तान्तके उपरान्त यह इतिहास उस समयकी घटनाओका है जो सम्वत् १७३५ (१६९६ ई०) से सम्वत् १७८७ (१७३१ ई०) तक हुआ था।

इसके अतिरिक्त "विजयविलास" और "ख्यात" नामक और भी दो भट्टग्रन्थोमे कुछ २ मारवाड़का वर्णन पायाजाता है। विजयविलासमे एक लाख छंद है। इसमे वख्तसिहके पुत्र विजयसिहके राजकालतकका समस्त वर्णन लिखा हुआ है। तथा विजयसिह उसके भतीजे रामसिह और अभयसिहके पुत्रके युद्धका वृत्तान्त है, पीछे मरहठोके प्रथम मारवाडमे प्रवेश करनेका वृत्तान्त है "ख्यात" भी एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। परन्तु टाड् + साहवको यह पूरा २ ग्रन्थ नही मिला। जिस अंशमे वादशाह अकवरके मित्र राठौर राजा उदयसिह, उसके पुत्र गजसिह और पौत्र यशवंतसिहका वर्णन लिखा हुआ है, वही अंश उनको मिला था। जो हो इन सव छिन्न भिन्न इतिहासोको एकत्रित

---

* महाराज यशवन्तसिंह अन्यायसे नहीं मारे गये मृत्युसे मरे। + यह पाठ असल टाड राजस्थानमे नही पाया जाता।

कर जगत्वन्धु टाड्साहवने मारवाडके इतिहासकी रचना की है, इस समय दूसरे ऐतिहासिक वृत्तान्तोंसमेत उनके अनुवादको लिखते है ।

राठौरोकी उत्पत्तिका वृत्तान्त राजस्थानके प्रथम खण्डमे लिखा हुआ है । * इस समय हम उनके इतिहासको लिखते है । उत्तरकी ओर वसेहुए पारलि + पुरसे उखड कर राठौर वंश-वृक्ष किस प्रकार गंगाके दक्षिण मरुभूमिमे फिर स्थापित हुआ, उसका वृत्तान्त भलीप्रकारसे किसी इतिहासग्रन्थमे नही देखा जाता । जान पडता है कि, राठौरोने उस समय राजनीतिमें विशेष विज्ञता प्राप्त नही की थी ।

इनके सिवाय जोधपुरके दरवारने एक बुद्धिमान् राजकर्म्मचारीसे कुछ यादगारी लिखवाई थी, जिसमे सन् १६२९ मे राजा आजितसिहकी मृत्युसे लेकर सन् १८१८ मे अंग्रेजोके संधिपत्रतकका वृत्तान्त है । इस लेखकके पुरुषा जोधपुर दरवारमे वड़े पदाधिकारी थे, और यह मनुष्य भूत तथा वर्तमान ऐतिहासिक वृत्तान्तोकी मूर्ति था ।

इस प्रकार पुस्तकोके वृत्तान्तोंसे और राजा महाराजा और दरवारियों राजदूतो और प्रजासे वातचीत करके यह इतिहास संग्रह किया है जिनकी वाह्य अवस्था नीरस जान पड़ती है परन्तु अन्तमे यही चित्ताकर्षक इतिहास प्रतीत होगे ।

राठौरोके वंशका सूचीवृक्ष और उनकी शाखा सहित सूची इस पुस्तकमे दिखलाई गई है, जिनकी सन्तान आजकल आपसमे शत्रुता या वैर रखती है । जिसके देखनेसेही प्रत्येक वंशके अधिकार ज्ञात होजायँगे, और उनके परस्परके लड़ाई झगडोसे जो दीन दशा उनकी होगई है, मेरे लेखसे ऐसे समयमे भी महाराजाधिराजको आवश्यकताके समय न्यायदृष्टिसे देखने पर इनके अधिकार स्थिर करनेमे वड़ी सुगमता होगी ।

राठौर सूर्य्यवंशी है या नही इस तर्कके समाधानका उद्योग हम नही करना चाहते है, प्रथम राठौरकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदंडसे हुई या नही इसपर भी हम वाद विवाद नही करना चाहते, और उनके नाममात्र पिताकी राजधानीका पता भी हम उत्तरसे नही लगाना चाहते है परन्तु हम तो केवल इसी पर संतोष करते है कि, राजा पारलीपुरके वंशमे यह दैविक हस्ताक्षेप किसी गुप्त अपयशके ढकनेके लिये निर्माण किया गया था ।

यवनाश्वका नाम जो यवन और अश्वकी संधिसे प्रगट होता है कि, इण्डोसिदिक (Indo Scythic) जंगली जाति सिन्धुनदीके दूरदेशी तटोपर निवास करती थी, चंद्रवंशियोकी वंशावलीमे, जिनकी उत्पत्ति वुध देवता और पृथ्वीसे हुई है (देखो चित्र १ खण्ड १) लिखा है कि विजयाश्वके पांचो पुत्र सिधुनदीके तटस्थ देशोमे निवास करते थे, और वादशाह सिकंदरके आक्रमणके संक्षिप्त इतिहासोमे भी आसासेनी और आसाकानी (Asasenae and Asacani) जातियोका वृत्तान्त आया है, जो इन देशोमे वर्त्तमान समयमे भी वास करती है ।

---

* राजस्थान प्रथमखण्ड अ० ६ और ४९ पृष्ठ देखो । + उर्दू तर्जुमेमे प्रलयपुर लिखा है ।

इस समयमे इस हिन्दुद्वीपकी स्थाई वंशोमे बहुतसे उलट फेर हुए जिनमेसे कुछ जातियॉ हन्स, पारथियन और जेट इत्यादिने अपनी पृथक् २ राजधानियॉ भारत खण्डके उत्तरीय और पश्चिमीय सीमाओपर बनाई।

सम्वत्(५२६ सन्४७०)मे नयनपालने कन्नौजको हस्तगत किया और उस समयसे राठौरोको कमध्वजकी पदवी प्राप्त हुई उसके पुत्र पदारत और उसके पुत्र पुंजासे उन तेरह महा वंशोकी उत्पत्ति हुई थी जिनमेसे प्रत्येक (भरत) की कमध्वजकी पदवी थी।

यती संन्यासीकी दी हुई वंशपत्रिकामे इसका नाम भरत लिखा हुआ है परन्तु पुराने वृत्तान्तोमे यह केवल पदारतहीके नामसे प्रसिद्ध है।

उन तेरह राजवंश और उन सवको वंशावलीके नाम नीचे लिखे हुए है।

" प्रथम । धर्म्मबिम्व । इसके वंशवाले दानेश्वर । कमधजके नामसे प्रसिद्ध हुए।

" २ । मान । इसने कांगडानामक स्थानमे अफगानोके साथ युद्ध किया था। अभयपुर भी इस कमध्वजके द्वारा प्रतिष्ठित है, इसही कारण इसके वंशवाले अभयपुरी कहे जाते है।

" ३ । वीरचन्द्र । इसने अनहलपुर पत्तनके अधिपति हीरा चौहानकी वेटीसे विवाह किया था। वीरचन्द्रके चौदह पुत्र हुए वे अपना देश छोड दक्षिणमे जा वसे। वीरचन्द्रके वंशवाले कपालिया कमधजके नामसे विख्यात हुए।

" ४ । अमरविजय । इसने गंगाके किनारे वसेहुए गौरागढके पमार अधिपतिकी पुत्रीसे विवाह किया। और राज्यके लालचसे अपने श्वसुरके गोत्रवाले सोलह सहस्र पमारोको मारकर गौरागढपर अधिकार किया था, इसीसे गौरा कमधज उत्पन्न हुए।

" ५ । सुजन विनोद । इसके वंशवाले जल खेडिया कमधजके नामसे प्रसिद्ध है।

" ६ । पद्म, यदुवंशी राजा तेजोमानके हाथसे इसने वुगलानाको जीता। उडीसा भी इसीके पराक्रमसे जीता गया था।

" ७ । ऐहर । यदुवंशियोसे इसने वंगालेको जीता था। इससे ही ऐहर कमधज उत्पन्न हुए है।

" ८ । वासुदेव । इसके वडे भाईने इसको वनारस और ४८ गॉव जागीरके तौरपर दिये थे। किन्तु उसने अपनी कीर्ति फैलानेके निमित्त पारकपुर * नामक एक नगर वसाया, वरदेव या वासुदेवके वंशवाले परकरा कमधजके नामसे अपना परिचय देते है।

" ९। उग्रप्रभाव। कहते है कि उग्रप्रभावने हिगलाज चंदेल नामक स्थानमे + देवताके मन्दिरमे जाकर कठोर व्रत तप किया था।

इससे देवताने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसे एक तरवार दी। कहते है कि देवताकी आज्ञासे वह तलवार मन्दिरके सामनेवाले एक कुण्डसे निकली थी। देवताकी

---

* पारकपुरको सिंधुके सम्मुख वसा हुआ टाडसाहवने लिखा है। + यह मेकरानाके उपकूलमे वसा हुआ है।

दी हुई उस तलवारकी सहायतासे उग्रप्रभुने समुद्रके तटस्थ समस्त दक्षिणप्रदेशको जीत लिया था। इसीसे चँदेला कमधजोका वंश चला।

" १०। मुक्तमान। वा मुकुटमणि। तम्वरवंशी भानुराजाके हाथसे इसने उत्तर भागके कुछेक देशोको जीता था। इसके वंशवाले वीरपुरा कमधजके नामसे प्रसिद्ध हुए।

" ११। भरत। इसने ६१ वर्षकी अवस्थामे वीर गूजरवंशी रुद्रसेन नामक किसी राजाको परास्त कर उत्तरदेशमे पहाडोके नीचे वसेहुए कनकसर नामक एक नगर पर अधिकार किया। इसके वंशवाले वरियावर कमधजके नामसे विख्यात है।

(रायल एशियाटिक सोसाइटीके पुस्तकालयकी एक पुस्तकमे जो कोरासे प्राप्त हुई थी इस कन्नौजवंशकी शाखाका कुछ वृत्तान्त लिखा है)

" १२ अलनकुलने खैरोदा नामक एक नगर वसाया। अलनकुल एक वीर पुरुप था। अटकमे मुसलमानोके साथ इसका एक युद्ध हुआ था। इसके वंशवाले खैरोदिया कमधजके नामसे प्रसिद्ध है।

" १३। चंद, इसको उत्तर प्रदेशमे तारापुर नामक एक नगर प्राप्त हुआ था। प्रसिद्ध ताहिरा नामक नगरके चौहान अधिपतिकी पुत्रीके साथ चन्द्रका विवाह हुआ। चन्द्रने उस स्त्रीके समेत काशीमे आकर वास किया।

"सूर्य्यवंश इस प्रकारसे वढ़ा और पुष्ट हुआ था।" सन ४७० ई० से जिस दिन राठौर वीर नैनपालने कन्नौज जीता, और उसके कुछ दिन उपरांत जिस दिन उनके तेरा पौत्राने भारतके चारोओर नानादेशोमे फैलकर राठौर वंशकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे क्रमानुसार सात शताव्दी तक (सन् ११९३) राठौर वीरोके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन नही देखा जाता राठौरोका इतिहास उस समयसे चलता है जव कि उनका अधिकार गंगाजीके किनारे पर जम गया था। इस दीर्घ समयके उपरान्त जयचंद कन्नौजके सिहासन पर वैठा। इन सात शताव्दियोमे केवल इक्कीस राजाओका नाम देखा जाता है। जिस ग्रन्थमे इन इक्कीस राजाओका नाम लिखा है उसके देखनेसे पाया जाता है कि, "राजा" की उपाधि वाले कुछेक राजाओके पहिले "राव" की उपाधिवाले इक्कीस राजाओने राठौरवंशका राज्य किया था, किन्तु किस राजाने सवसे पहिले उक्त उपाधि धारण की, और कितने "राजा" के नामसे परिचित हुए थे, उसका कोई वृत्तान्त अव तक नही देखा जाता। केवल यही वात सही नही है। इससे

---

१ तारापुर विजय करनेसे इसकी सन्तानका नाम जयवन्त कमधज हुआ। ग्रे० टी०। २ ताहिराका वर्णन तवारीख फिरिस्तामें अनेकवार देखा गया है। ३ सूर्यप्रकाश। ४ भम्बूत्रा धर्मभम्बू कन्नौजाधिपतिका एक पुत्र अजयचन्द था ११ पीढीतक इस वंशकी राव पदवी रही इसके पीछे राजाकी पदवी हुई। ५ इन कई एक राजाओने "राजा" की उपाधि धारण की थी; उदयचंद, नृपति, कनकसेन, सहस्रपाल, मेघसेन, वीरभद्र, देवसेन, विमलसेन, दानसेन, मुकुंद, मोदू, राजसेन, त्रिपाल, श्रीपुंज, (विजयचंद) और उसका पुत्र जयचंद, इसकी पदवी दलपंगल हुई।

पहिले संन्यासी को दी हुई वंशावलीमे जो कथा लिखी है, उससे ऐसे अनेक नाम पाये जाते है जो सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थमे नही हैं। संन्यासीकी दी हुई सूचीमे जो कई एक नाम अधिक देखेजाते है, उनमेसे एक राजाका नाम अंगदध्वज भी है। लिखा है कि अंगदध्वजने दिल्लीके प्रसिद्ध तोमर राजा यशोराजको एक युद्धमे परास्त किया था। यशोराजके राजत्वकालका भलीप्रकारसे निश्चय हुआ है। परन्तु दु.खका विपय है कि पहले कही हुई संन्यासीकी दी हुई तालिकामे अंगदध्वज और उसके पहिले व पिछले राजाओके नाम ऐसे जटिलभावसे (शिकस्ताः) लिखे हुए ह कि, सूर्य्यप्रकाशमे लिखी हुई नामावलीके साथ उसका कुछ भी सम्बन्ध नही होसकता। कन्नौजकी रंगभूमिमे महाराज नयनपालके वंशवाले अर्थात् जयचंदके पूर्व पुरुषोके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन भली प्रकारसे नही देखा जाता, किन्तु जो अधूरा और साधारण वृत्तान्त पाया जाता है, उसकी समालोचना करनेसे हम कह सकते है कि, वे राठौरपदके योग्य और राठौर वीर नयनपालके योग्य संतान थे। क्योकि वे सव क्षत्रियोके उत्तम गुणोसे विभूषित हो अपने २ सन्मान मर्यादाको भली प्रकारसे स्थित रखनेमे समर्थ थे। एक समय उनके गौरवसे भारतभूमि प्रतिष्ठित होगई थी, एक समय भट्टकवि और चारण लोग अभिमानपूर्व्वक उच्चस्वरसे उनका यश गाते हुए भारतके नगरो २ मे घूमते थे किन्तु भारतके अभाग्यसे वह सव प्रकाशित गौरव आज मनुष्यमात्रके नेत्रोसे दूर हो काल–सागरमे विलीन होरहा है। इस ही कारण आज नयनपालके वंशवालोकी क्रियाएँ पौराणिक लीलाके स्थानमे प्राप्त हुई हैं।

जैसे बुझनेके समय दीपक एकबारगी प्रज्ज्वलित हो उठता है, वैसे ही मिटतीके समय कन्नौजराज्यका गौरव पहिलेसे दूना हो उठा था। इस अत्युन्नतिका सविस्तर वर्णन मुसल्मानोके इतिहास और महाकवि चंदवरदाईके अमृतमय ग्रन्थमे भली प्रकारसे देखा जाता है। और जव हम देखते है कि राठौरोके प्रचंड शत्रु चौहानोने भी निश्चल भावसे उनकी उस अत्युन्नतिका वर्णन किया है, तव कन्नौजकी दशाको विचार कर विना आंसू वहाये नही रहा जाता। हाय!

जो राठौर वीर नयनपालने अपनी विजयपताकाको जिस कन्नौजमे स्थापित किया था, एक समय उसका विस्तार पन्द्रह कोश (३० मील) मे था। एक समय उस राठौर वंशकी विशाल सेना "दलपिगल" के नामसे प्रसिद्ध थी, इसका तात्पर्य्य यह है कि, इस पराक्रमी सेनाको अधिक संख्याके कारण कूच करनेमे पडाव करना पड़ता था, जिसके विषयमे चंदकवि लिखता है कि, कूंचमे जव सेनाकी हरावल रण–क्षेत्रमे पहुँच जाती थी तव उस समय चंदावल सेना अपने स्थानसे चलती थी।

वह बलवान और असंख्य राठौर सेना संसारकी किसी जातिकी वलिष्ट सेनाके साथ हर प्रकारसे लडने योग्य थी। सूर्य्यप्रकाशग्रन्थमे उस विशाल सेनाका परिमाण इस प्रकारसे लिखा हुआ है। अस्सी हजार कवच–धारी वीर, तीस हजार सवार पांखरवाले

१ यती। २ घोडे या हाथीके वस्तरको पाखर कहते हैं। (जिरह बख्तर।)

तीन लाख पैदल, और दो लाख धनुष और फरशाधारी (सफरमैना) सिपाही थे इसके अतिरिक्त कालेबादलोकी समान मतवाले हाथियोका भी एक झुण्ड युद्धक्षेत्रमे जाता था।

इस बलवान् विशाल सेनाको लेकर एक समय राठौर वीर सिन्धुनदीके सुदूर-स्थित यवनराजका प्रचंड बल रोकनेके निमित्त भयानक समरभूमिमें गये थे। जिस दिन सिन्धुनदीको पारकर गोर और ईरानके बादशाह भारतवर्षमे आये, उसी दिन समरकुशल जयसिह उनकी प्रचंड गति रोकनेके निमित्त उनके सन्मुख हुआ। दोनों दलोमे बहुत समयतक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमे दोनो ओरकी असंख्य सेना मारी गई। रक्त बहकर सिन्धुनदीका नीला जल लाल हो उठा। किंतु हवशी राजा और उसके फरंग * वीर कन्नौजपतिकी सेनासे हार गये। उसी दिनसे सिन्धुनदीका सुखीब-नाम हुआ।

जो चौहान कि, राठौरोके पुराने शत्रु थ, उनका भट्टकवि चन्द भी महाराज नयनपालके वंशवालोके गौरवको बखान किये विना नही रहा। वह उनको माण्ड-लीककी उपाधि देकर वर्णन करता है कि, उन्होने उत्तरेदशके माण्डलिक यवन शहाबुद्दीन गोरीको परास्त कर उसके वशवर्त्ती आठ बादशाहोको कैद कर लिया। केवल यही नही; अनेक वीर पराक्रमी हिन्दू राजा भी इनके प्रकाशित पराक्रमरूपी आगके सामने अपने सन्मान और गौरवकी आहुति देते थे।

अनहलवाड़ा यानी पत्तनके अधिपति सोलंकी राजा सिद्धराज भी इनके अमित भुज-बलसे दो बार पराजित हुआ था। इससे राठौर राज्यकी प्रभुता नर्मदाके दक्षिण किनारे तक फैल गइ थी। गर्वित राठौर राजा जयचंद केवल मनुष्योचित सन्मान पाकर सन्तुष्ट न हुआ। यहाँतक कि, उसने बड़े भारी राजसूय यज्ञका अनुष्ठान कर देवताओकेसे सन्मान पानेकी चेष्टा की थी। पौराणिक हिन्दू-राज समाजमे वह भारी यज्ञ जिस प्रकारकी धूमधामसे होता है. उसका विचार करनेसे किस भारतबासीका हृदय आनन्दसे खिल न उठैगा?

१। इस महायज्ञके सब काम, यहाँतक कि, अतिसाधारण द्वारपाल आदिके कामोको भी राजालोग करते है। महाराज युधिष्ठिरके उपरान्तसे अबतक कोई हिन्दू राजा इस यज्ञको नही कर सका था। यहांतक कि, शकाब्द राजा विक्रमादित्यको भी यह असीम देव-सन्मान नही प्राप्त हुआ। भारतके समस्त राजाओको निमंत्रण पत्र भेजा गया। उसके यज्ञकी धूमधाम और तैयारीकी बात सुनकर समस्त भारतवासी चमत्कृत हुए। सभी लोग जयचन्दको धन्यबाद देने लगे। निमंत्रणपत्रोमे यह भी

---

१ चरदाई ग्रन्थमे देखा जाता है, कि फरंग गण शहाबुद्दीनके दलमें नियुक्त थे किन्तु किस प्रकारसे हवशीराज्यके दलमे आये, इसका भली प्रकारसे निश्चय करना कठिन है, जान पडता है कि, यह जेरुसलमसे भगे हुये किसी क्रूजेट सेनाके होंगे। २ रक्तजल। प्रे० टी०। ३ उत्तर देशके राजाओंसे अभिप्राय सिंधुनदके पश्चिम यवन राजाओसे है।

लिखा गया कि, राजकुमारी संयोगिताके स्वयंवरके साथ ही इस महायज्ञका समारोह होगा। अर्थात् यज्ञमे आये हुए राजा महाराजाओमेसे संयोगिता + अपने लिये इच्छित वर ढूंढ लेगी।

देखते २ यज्ञका दिन आ उपस्थित हुआ। निमंत्रित राजालोग अपनी अपनी सेना समेत आकर उस यज्ञमे सम्मिलित हुए। उन सबके आनेसे कन्नौजनगरने एक अपूर्व शोभा धारण की। कविवर चंदभट्टने इस अपूर्व शोभाका भली प्रकारसे वर्णन किया है। भारतके सभी हिन्दूराजा आये. परन्तु चौहानराज पृथ्वीराज और गहलोत राजा समरसिह * जयचन्दके उस सन्मानको अयोग्य विचार यज्ञके निमंत्रणमे न आये इस कारण जयचन्दने उन दोनोकी सोनेकी प्रतिमाएँ बनवा उन्हे अति नीच और साधारण टहलके स्थानपर नियत किया। पृथ्वीराजको अत्यन्त तिरस्कृत करनेकी इच्छासे जैचन्दने उसकी मूर्त्तिको द्वारपालकी जगहमे खडी करवाया। इन सब समाचारोको पृथ्वीराजने भी सुना तब क्रोधके कारण उसका वीर हृदय उमड पडा। वह प्रेम और बदलालेनेमे प्रसिद्ध था। उसने अपनी सारी अवस्था धनुर्विद्यामे बिताई थी। अस्तु उसने प्रतिज्ञा की कि–"दुष्ट जयचन्दके यज्ञको विध्वंस करूंगा और उसीके सामने उसकी पुत्रीको हरलाऊंगा।" चौहान वीर पृथ्वीराज इस कठोर प्रतिज्ञाके पालन करनेमे सब प्रकारसे शक्तिसम्पन्न और समर्थ था। किन्तु इससे राठार और चौहानोमे जो विवाद उत्पन्न हुआ, वह थोडेहीमे शान्त न हो सका। उसके शान्त करनेमे दिल्ली और कन्नौजके जीवनस्वरूप अगणित राजपूत समरक्षेत्रमे मारे गए। इस महाचारित्र वर्णनको चन्दकविने विस्तारसे ६९ खण्डोमे समाप्त किया है। उसने कहा है कि, पृथ्वीराजकी संयोगिताका हरण करलेनेपर क्रमशः पॉच दिनतक घोर युद्ध हुआ था। यह भयानक गृह विग्रह ही भारतका कालस्वरूप हुआ।क्योकि इस व्यर्थ विग्रहमे दोनो ओरका सेनाबल नष्ट होजानेसे चतुर गोरी सुलतानने हिन्दोस्थान पर हमला किया। उसके उस हमलेके रोकनेके निमित्त दृपद्वतीके तटपर जो युद्ध हुआ, उसीसे हिन्दोस्थानकी स्वतंत्रताका सर्व नाश हुआ।

इस समयमे और इसके बहुत शताब्दी पहलेसे यहॉतक कि, महमूदके आनेके पहिले भारतवर्ष नीचे लिखेहुए चार राज्योमे बटा हुआ था।

प्रथम। दिल्ली, तॅवर और चौहानोके अधीन।

दूसरे। कन्नौज,–राठौरोके अधीन।

तीसरे। मेवाड़,–गहलोतोके अधीन।

चौथे। अनहलवाडा:–चावडा और सोलंकियोके अधीन।

इन प्रत्येक बडे बडे राज्योकी अधीनतामे छोटे छोटे असंख्य राजा निवास करते थे। वे सब वशवर्ती राजालोग उस समयकी राजनीतिके अनुसार अपने २ स्वामियोकी

+संजोगिता। * पृथ्वीराज रासोंमें समरसिंहजीकी स्वर्ण प्रतिमा बनाए जानेका वर्णन नहीं है।

आज्ञा पालन करते थे, और युद्धकालमे उनके झंडेके नीचे खडे होजानेपर खेलकर युद्ध करते थे।

दिल्ली और कन्नौज, दोनो स्वतंत्र राज्य होकर परस्पर वहुत ही निकट वसे हुए थे। दोनोके वीचमे केवल कालीनदी वहती थी, जिसको यूनानी भूगोल वेत्ताओने कालिन्दी लिखा है। दोनो राज्योके वशवर्ती राजा प्रायः समान ही थे। कालीनदीसे सिन्धुनदीके पश्चिम किनारे तक और हिमालय पहाडके नीचेसे मारवाड और अर्वली पर्वतोतक दिल्लीका विशाल राज्य फैला हुआ था। इनमे उत्तराधिकारी चौहानोके १०८ सूवे थे जिनमे वहुतसे अधीन राजा थे, इस वडे विशाल राज्यका राजा अनंगपाल तोमर था। चौहान पृथ्वीराजने इस राज्यको प्राप्त करके ❀ एक समय एक सौ आठ प्रधान सामन्त राजाओपर शासन किया था।

गर्वोन्नति और कन्नौजकी प्रभुता उत्तरमे हिमालय पर्वत, पूर्वमे काशी, और चम्वल नदीसे पार हो "वुन्देलखण्ड तक फैली थी। दक्षिणमे यह मेवाडकी उत्तरी सीमासे रुकीहुई थी। मेवाडकी सीमा उत्तरमे अर्वली पर्वत और दक्षिणमे सुरधर (वशवर्ती कन्नौज) और पश्चिममे अनहलवाडेसे थी, और अनहलवाड़ा दक्षिणमे समुद्र तक व पश्चिममे सिंध व अटकतक फैला था। इसकी उत्तरी सीमामे जंगल था।

भट्टग्रन्थोमे कहा है कि, यह सव राजा प्राय: एक दूसरेके विरुद्ध तलवार लेकर एक दूसरेके हृदयका रक्त गिराते थे।इन कई एक राज्योका राजनैतिक जीवन जवसे आरम्भ हुआहै तवसे देखाजाता है कि, गहलोतो और चौहानोमे प्रायः मित्रता और राठौरोमे प्रायः प्रचंड शत्रुता रही है। राठौरो और तोमरोकी शत्रुता ही भारतवर्षके सर्वनाशका प्रधान कारण हुई है परस्पर विवाहोके संवन्धसे नित्यश.के क्लेश शान्त होगये पर आंतरिक वैमनस्य न गया इस कारण फिर उभर खडे हुए। यह वात प्राचीन इतिहासोसे ही पाई जाती है।

महमूद गजनवीके पश्चात् यदि कोई यात्री योरुपके दरवारोसे घूमताहुआ और वादशाह तैमूरके मार्गपर वेजिनटियम यानी गजनी (जो हिन्दुओकी लूटसे भरा हुआ था) होता हुआ दिल्ली कन्नौज व अनहलवाड़ाकी सैर करता तौ उसको राजपूतोकी सभ्यता व शिल्प-विद्या सवसे वढ़ चढ़ कर विदित होती। जो शस्त्रविद्यामे भी किसीसे कम नही थे।

पश्चिमके नियमानुसार उस समय भारतवर्षमे प्रत्येक राजधानीका अधिकार इस प्रकार था कि, युद्धके समय प्रजामेसे सेनाका चुनाव होता था सौभाग्यवश योरुपमें जम्भूरीराज्य + नियमका प्रवेश होगया था जिससे वहाँके प्रवन्धमे जान पड़ गई, परन्तु भारतवर्षकी वा एशियाकी तृतीय राजधानी राज्यके सर्वाधिकारसे पृथक् रही, जो स्थाईरूपसे सहायता होगई थी हिन्दुस्थानमे उस समय शस्त्रविद्यासे उत्तम कोई काम

❀ राजा पृथ्वीराज अनंगपालकी लडकीका लडका था इसलिए अनंगपाल उसको अपना उत्तराधिकारी वनाकर आप वद्रिकाश्रमको तप करने चला गया था। + प्रजाधीन राज्यको फारसीमे जम्भूरीसल्तनत कहते हैं।

नही गिना जाता था।इस कारणसे वारम्बारके युद्धोंसे राजपूत जाति उत्तरीय बादशाहोंसे लड़कर परास्त हुई । शहाबुद्दीन गोरीने इन झगड़ोंसे लाभ उठाकर भारत पर आक्रमण किया । उसने सबसे प्रथम दिल्लीके चौहान राजा पृथ्वीराको परास्त किया, जो उस समय भारतवर्षका सबसे बडा राजा था ।

जिस दुर्दिनसे दृषद्वतीके रक्ताक्तजलमे भारतके गौरवका सूर्य्य डूबा उसी दिनसे विजयी शहाबुद्दीनने पाण्डव वीर राजा युधिष्ठिरकी राजधानी पर अधिकार कर जयचंद पर आक्रमण किया । इसके पहले ही जयचंद पृथ्वीराजके साथ युद्धकरके अपने सेना-बलको खो चुका था । इस समय इस आडहुई घोर विपदको देख यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके वह शहाबुद्दीनके सन्मुख हुआ । किन्तु उसके सब यत्न व्यर्थ हुए । इस विजयी आक्रमणकर्त्ताके प्रचंड बलको वह रोक न सका । अन्तमे जैचंदने गंगापार भाग-जानेकी इच्छा की,किन्तु यह भी न होसका गंगाके अथाह जलमे नौका डूबजानेसे जयचंद जीवित ही जल निमग्न हुआ यह शोचनीय घटना सम्वत् १२४९ (११९३ई०) मे हुई। वे छत्तीस राजा जो हिमालयसे विन्ध्याचल तक अधिकार रखते थे और जो इतने दिनो-तक राठौर सनाका विजयपताकाके नीचे खडे होते थे, उसी दिनसे वे अपने २ राज्योको चले गये उसी दिन कन्नौजके विशाल राज्यक्षेत्रसे महाराज नयनपालका लगाया हुआ वंश वृक्ष सदैवको उखड़ गया । किंतु तौ भी वह एकवार ही नाश न होगया । भविष्य भावीको यह स्वीकार था राज्यके वंशज अभी पीढियोतक स्थित रहे, और इसी वंशकी इकतीसवी पीढ़ीमे इसी राज्यवंशकी सन्तान राजराजेश्वर राजामान् बड़े प्रताप-शाली तेजस्वी और राजा जयचन्दके समान मरुदेशके रत्नहो, जिनको दूवी सन्मान मिलै उनके प्राचीन पुरुषा नयनपाल १४ वी शताब्दीके पूर्वहुए उसी समय उसने कन्नौजमे राज्य स्थापित किया, इस प्रकार १३६० वर्षोंकी वंशावलीका पता लगाकर जो कुछ अभिमान करै उचित है, और इतनेही इतिहास पर संतोष कर नयनपालके पश्चा-त्का वृत्तान्त कवियोके छन्दो वा पुराणोकी गाथाओमे छोड़ देव । भाग्यवश कुछेक राठौर वीरोने इस उखडेहुए वंशवृक्षको भारतके रेगिस्तानमे फिर लगाया । वह फिर लगायाहुआ राठौरोका वंश वृक्ष मरुभूमिकी परम वालूके ऊपर थोड़े हा समयमे सजीव हो उठा और उसकी बडी बडी साखाओने चारोओर फैलकर राठौरोके गौरवको पुनः प्रकाशित करदिया ।

द्वितीय अध्याय २.

जयचंदके पोते सियाजी आर सेतरामका देश छोडना; पश्चिमी जंगलमे उनका प्रवेश; सिंधुतक फैले हुए मरुभूमिके अधिवासी जनोका वृत्तान्त; कोलुमढके राजाके निकट सियाजीको पद प्राप्त होना; फूलराके प्रसिद्ध डांकू लाखाफलाणीके साथ उसका युद्ध; सेतरामका माराजाना; सोलंकी राजकुमारीके साथ सियाजीका विवाह; द्वारकाकी ओर उसका जाना; लाखा फूलाणीके साथ घोर युद्ध, महवेकी डावी जाति और खेडधरकी गोहिल जातिका मारा जाना; खेडदेशमे सियाजीका वास पालीके ब्राह्मणोसे उसका पृथ्वी मांगना; सियाजीका पहाडी जातियोके विरुद्ध पालीके ब्राह्मणोकी सहायता करना; ब्राह्मणोका उसको पृथ्वी देना; उसका स्वीकार, पुत्रजन्म, ब्राह्मणोको मारकर सियाजीका उनके ग्राम छीनना; तीन वेदोको छोडकर सियाजीकी मृत्यु; उसका विश्वासघातकता; सियाजीके जेठे पुत्र आसमानका राज्याभिषेक सोनग और अज आसथानकी मृत्यु, दहडका उसके सिंहासन पर बैठना, दूहडकी कन्नौज पर चढ़ाई और पुनरधिकारकी चेष्टा; उसका मारा जाना रायपालका अभिषेक; उसकी प्रति हिंसा; उसके तेरह पुत्रोका वर्णन; कन्नरावका सिंहासनपर बैठना; राव जालनसी राव छाडो लीजे और दूसरे जातिवालोके साथ इनका विवाद; भीनथालकी जय; राव सलका, राव वीरभद्रो राव चूडा; और उसका मंडोराधिकार; उसकी अन्यान्य जीतोंका वर्णन मंडोरके परिहारराजकी दुहिताके साथ उसका विवाह; गहलोत कुलके साथ उसका सम्बन्ध सम्बन्धका फलाफल, अडमल और साधूका विवाह; चूडाका मारा जाना; राव रिड़मल्लका सिंहासन पर बैठना; उसका चित्तौरमे निवास करना. उससे अजमेरका जीताजाना; उसकामारवाड़के विभाग करना; राव रिड़मल्लका माराजाना; उसके चौबीस पुत्रोका वर्णन; और सामन्तोकी फहरिस्त।

जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड बाहुबलसे कन्नौजका राज्य चूर्ण हुआ, जिस दिन स्वदेशद्रोही जयचन्दने गंगाजीके पवित्र जलमे गिरकर अपने कियेहुए पापोका प्रायश्चित्त किया. उसी दिनसे अठारह वर्षके पीछे सम्वत् १२६८ (१२१२ ई०) मे उसके पौत्र सियाजी और सेतराम अपनी जन्मभूमिको छोडकर दोसो साथियोंके साथ मरुभूमिकी ओर गये। वे किस कारण वश अपनी मातृभूमिसे चलेगये, इस विषयम भिन्न २ भट्टग्रन्थोसे भिन्न २ मत पायेजाते है। कोई कहता है कि उनका प्रधान अभिप्राय पुण्यतीर्थ द्वारिकाको जानेका था। किसी ग्रन्थमे देखा जाता है कि, उद्यम और व्यापारकी सहायतासे नवीन स्थानमे जाकर भाग्यकी परीक्षा करै और वहां सुख व स्वाधनितासे दिन वितावे, इसी इच्छासे उन्होने अपने देशको छोड़दिया था। इन दोनो मतोमे कौन मत सत्य है, वह सियाजीके भविष्य चारित्रोके देखनेसे सहजहीमें स्थिर किया जासकता है। सियाजी अभिमानी राठौरकुलका योग्य वंशधर था। पितृ पुरुषोके वीतेहुये गौरवकी स्मृतिको अपने हाथसे त्याग कर और नाशहुए गौरवका उद्धार न करके यथार्थ राजपूत कभी भी मुनि वृत्तिका अवलंबन नही करसकता अस्तु श्योसियाजी ऐसा नही करसका, यदि वह ऐसा करता तो हिन्दोस्तानके नकशेमे मारवाड़देश स्थान पाता या नही इसमे भी सन्देह है।

राठौर कुलका भविष्य भागरूपी प्रकाश जो धीरे २ प्रकाशित होरहा था, उसको सियाजी न जान सका। और वह उसे मुट्ठीभर सेनावलको लेकर मरुभूमिके गरम वालुका-राशिके ऊपर भ्रमण करनेलगा। कहां जाऊं ? किस उपायसे सौभाग्य लक्ष्मीकी कृपाकटाक्ष प्राप्त करसकूं ? वह इसका कुछ भी निश्चय न कर सका; किन्तु कठोर उत्तम और कामकी सहायतासे मूलमंत्रके साधन करनेमे दृढ़प्रतिज्ञ हो उसने भीषण कार्य क्षेत्रमे प्रवेश किया। इसी मंत्रके साधनके प्रभावसे उसने कुछ ही समयमे जिस विस्तारवाले भूभागपर आधिपत्य स्थापित किया था। वह यमुना, सिंधु और गारानदी तथा अर्वलीकी ऊंची चोटियोंसे चारोओरसे घिराहुआ है। इन चारो सीमाओसे घिरेहुए विशाल देशमे जो भिन्न२ जातिये निवास करती है उनका संक्षिप्त वृत्तान्त कहा गया है। कछवाहोनेभी उस समय तक संसारमे राजनैतिक प्रतिष्ठा न प्राप्त की थी। इनके स्वर्गीय राजा पजोनीमें वीतेहुए मुसल्मानी हमलेमे कन्नौजके युद्धमे प्राणत्याग कियेथे। इस समय उसीका पुत्र मलीसी + कछवाह कुलके सिहासनपर वैठा अजमेर अमेर सॉभर और दूसरे चौहानराज्य मुसल्मान राजाओके हस्तगत होगये थे, किन्तु अर्वलीके अनेक क़िले इस समयभी राजपूतोके वशमे रहे। विशेषकर नाडोल नगर मुसल्मानोके घोर आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हुआथा। उस समय वीसलदेवका एक वंशधर उस नगरका अधिपति था। इन सबोमेसे मरुभूमिका गौरवस्वरूप मडोर नगर, प्राचीन पडिहार कुलके गौरवकी ध्वजाको अपने विकट दुर्गके सिरमे धारण कियेहुए दुर्गसहित खड़ाहै। उस समय पडिहार कुलकी दूसरी शाखाएं ईदां गोत्रमे उत्पन्न हुए राणा मानसिहके हाथसे मुंदोरके अधीन शासित होतीथीं। मानसिह अपने राज्यके चारो-ओरवाले सामन्तोसे पूजित और सन्मानित हो मरुभूमिमें श्रेष्ट राजा गिना जाता था। उत्त-रमें नागोर कोटके निकट माहिलगण निवास करतेथे। यद्यपि कालके कठोर हाथोके घोर प्रहारसे आज हिन्दोस्थानके नकशेमे इसका चिह्नतक नही पायाजाता, किन्तु उस समय यह अत्यन्त प्रतिष्टित नगरथा, इसका विवरण बहुतसे भट्टग्रन्थोंमे देखा जाताहै। उस समय इस मोहित कुलके अधिपतिने ओडिटनामक नगरमे अपनी राजधानी स्था-पित कर १४४० गावोके ऊपर अपने राज्यको फैलाया था। जिस स्थानमे आजकल वीकानेर राज्य स्थित है उस स्थानसे भटनेरतक समस्त प्रदेश उस समय जाट जाति-योमे वहुतही छोटे २ स्वाधीन हिस्सोमे वंटा हुआ था। इन सब हिस्सोके पूर्वसे गारा नदी की रेतीली पृथ्वीतक समस्त पृथ्वीका भाग जो पाया, ट्या और लंगा❀आदि कईएक असभ्य जातियोके अधीन था। जैसलमेरमे भाटी उसके दक्षिणसे सोन और सिन्धु व कच्छ प्रवेशमे जाडेचा जाति वसती थी. इनके और आवू व चन्द्रावतीके पंवारोके मध्यस्थलमे

+ पृथ्वीराज रासामे इसका नाम मलैसी लिखाहै। ❀ उस समय इस प्रदेशमे दूसरी जातिये निवास करतीथीं, किन्तु आजकल उनका पतातक नहीं लगता, उनमेसे बहुतसी तो शत्रुओके हाथसे मारी गई और शेषने मुसल्मान धर्मको स्वीकार कर अपने प्राचीन नामको तिला-ञ्जली देदी।

सोलंकी रहते थे। इसके अतिरिक्त ईडर और मेवाड़के दैवीगण, खेडधरके गोहिलगण, साचोरके देवडागण, झालोरके सोनगरा ओडिनके मोहिलगण, और सिनलिके सोलागण आदि अनेक प्राचीन जातिएं समस्त प्रदेशके बीचमे इधर उधर बहुतही टूटी फूटी अवस्थामे वास करती थी। इनमेसे बहुतौने तो राठौरोके जलते हुए विक्रमाग्निमे अपने कुलकी मर्यादा और निवासभूमिकी आहुति दे दी थी। शेष अब उनके स्वाधीन रहकर सामन्त रूपसे निवास कर किसी प्रकार सुख दुःखसे जीवनको बिता रहे है।

राठौर वीर सियाजीने अपने बाल्यावस्थाके लीलाक्षेत्र कन्नौज नगरको छोड-दिया जिस राज्यमे उसके पितृपुरुषोने बडे गौरवसहित राज्यकार्यको निबाहाथा, आज उसको अत्यन्तही दीन हीन भावसे वहांसे भागना पड़ा। कदाचित आज समस्त जीवनके निमित्त उससे उस भूमिका सम्बन्ध टूट गया। अब वह उस "स्वर्गादपि गरीयसी" जन्मभूमिको न देखने पावैगा, अब उस गंगाजीके किनारे बसेहुए कन्नौजके ऊँचे महलोकी अट्टालिकाओपर बैठकर लहराती हुई गंगाजीके अनन्त शब्दको न सुन सकेगा। वह राजपुत्र गौरवान्वित राठौर वंशका एक योग्य वंशधर है। कहाँ तो वह सिंहासनपर बैठता, कहाँ आज निर्वासित और निराश्रयकी भाँति देश देशमे भटकता फिरता है। सियाजीके हृदयमे इस प्रकारकी नाना चिन्ताओका उदय होनेलगा। परन्तु वह क्षणभरको भी न घबडाया। वह जानता था कि आपत्तिका सहन करनाही राजपूतोका प्रधान कर्तव्य है, क्योकि आपात्तिही मनुष्यको सुखकी सूचना देनेवाली है,। उसने उन मुट्ठीभर साथियोको साथ लेकर अपने बाल्यकालके शांतिनिकेतन, आशाकी विलासभूमि पिताके राज्यसे बाहर हो भारतके विशाल रेतीले मैदानमे प्रवेश किया। चारोओरसे अनन्त रेतका सागर सूर्य्यकी किरणोसे झुलसकर उसके जलेहुए हृदयकी समान धुधकार रहा है, सामनेसे अगणित रेतके कण उड़ २ कर उसके निष्फल आशा भरोसेकी समान उसको अत्यन्त विरूप कररही है। तौ भी सियाजी क्षणभरके निमित्त निराश न हुआ। तरंगसे चलायमान काठके टुकड़ेकी समान भाग्यके प्रबल बहावमे बहते २ अन्तमे वह कोलूमढनामक स्थानमे पहुँचा। आजकल जिस स्थानमे बीकानेर नगर बसाहुआहै, कोलूमढ वहांसे दश कोश यानी २० मील पश्चिमकी ओर है। उस समय वहां एक सोलंकी राजा राज्य करता था। वह सियाजीसे बहुत आदर सन्मान शिष्टाचारके साथ मिला।

सोलंकी राजाके आदर करने और उदार व्यवहारसे सियाजी अत्यन्तही प्रसन्न हुआ और उसके कियेहुए उपकारका बदला चुकानेकी इच्छा करनेलगा। उस समय लाखा फूलाणी नामक एक वीर राजपूत उस देशके निवासियोको अत्यन्त दुःख देरहाथा। लाखा फूलाणी प्रसिद्ध जाड़ेचा कुलमे उत्पन्न हुआथा, उसका फूलरा दुर्ग मरुभूमिकी अनन्त बालुका राशिके ऊपर स्थित हो शत्रुओके पक्षमे सब प्रकारसे दुर्गम और अटूट भावसे खड़ा था। लखा स्वयं ऐसा दुर्द्धर्ष था कि सतलजसे लेकर समुद्रके किनारेतकके सब

देश उसका नाम सुनतेही कॉप उठते थे। * सोलंकी राजाकी आज्ञासे राठौर वीर सियाजीने आज उस वीर लाखाके विरुद्ध तलवार धारण करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की। धीरे २ युद्धकी तैयारी हुई। सोलंकी राजाने सियाजीको सेनापति वनाकर समस्त सेनाका भार उसीके हाथमे देदिया। उसका भाई सतराम और राठौरवीर भी उसकी सहायताके निमित्त युद्धक्षेत्रमे आये। धीरे २ दोनो दलोमे लड़ाई आरम्भ हुई। सियाजी अपने घोर शत्रु लाखाको जीत लिया। परन्तु वह जीत सहजमे न प्राप्त हुई। उसके वदलेमें उसके जीवनका संगी भाई सेतराम और दूसरे राठौर वीरोके हृदयका रुधिरभी वहा इस युद्धमें जय पानेसे आनन्दित हो कोलूमढका राजा राठौर राजकुमारसे वडे आनन्दसे गद्गद होकर मिला, और अपनी वहिनका व्याह उसके साथ कर उसे अपने साथ एक दृढ़ सम्वन्धसूत्रमे बांधा। तदनन्तर जय पानेके पुरस्कारको साथ ले सियाजी द्वारकाकी ओर बढ़ा। कुछ दिनोके उपरान्त अनहलवाड़ा पट्टन उसको दिखाई दिया। श्रम दूर करनेके अभिप्रायसे वह उस नगरमे उपस्थित हुआ। वहांके राजाने उसका यथायोग्य सत्कार किया। अनहलवाड़ामे ही सियाजी था कि, उसी समय एक दिन समाचार आया कि दुष्ट लाखा फूलाणीने उस नगरपर आक्रमण किया है। लाखाके आक्रमण करनेसे पत्तनका राजा अत्यन्त भयभीत होगया था, किन्तु सियाजी उसके भयको दूरकर स्वयंही उस दुर्द्धर्ष जाडेचा वीरके साथ द्वंदयुद्धमे प्रवृत्त हुआ। पहले लाखा उसके प्राणप्यारेभाई सेतरामको मारकर स्वयं निर्विघ्नतासे युद्धक्षेत्रसे भागगया था। आज उस भाईके मारनेवालेके हृदयके रुधिरसे सियाजी दारुण भ्रातृशोकाग्निको शान्त करना चाहते थे। घोर वदला लेनेकी प्यास और यशकी इच्छासे उत्तेजित हो राठौरवीरने लाखाके साथ भीषण युद्ध आरम्भ किया। दोनो ओरकी सेना दूर रहकर चित्रलिखेकी समान खड़ी हो इन दोनो राजपूतवीरोके अद्भुत रण–कौशलको देखने लगी। उनके घोर असियुद्धसे रणभूमि वारम्वार कांपने लगी। आपसमे तलवार लड़नेके झनझन शव्द और उन दोनो वीरोके ललकारके अतिरिक्त उस समय और कुछभी न सुनाई देता था। किन्तु लाखा आज वुरी सायतमे अनहलवाडा पट्टनमे आया था। वुरी साइतमे वह सियाजीके साथ द्वंद युद्धमे प्रवृत्त हुआ था। भाईके शोकसे दुःखित बदला लेनेकी इच्छावाले राठौरवीरके हाथसे वह आत्मरक्षा न करसका। सियाजीकी प्रचंड तलवारके आघातसे उसका शिर दो टुकड़े हो पृथ्वीपर गिरपड़ा। यह देखतेही पट्टनराजकी सेनाके जय २ कार शव्दसे आकाश गूंजउठा।

---

* यद्यपि लाखा फूलाणी अत्यन्त दुर्द्धर्ष था, परन्तु उसने कभी निराश्रयो और निर्वलोको नहीं सताया। इसके अतिरिक्त उसने दान ध्यान और अनेक अच्छेकामभी कियेथे इस सम्बन्धमे लोनी नदीसे सिन्धु नदीके सागर संगम देशोतक उसके प्रशसा सूचक गीत सुनेजातेहै। राजस्थानके ६ प्राचीन नगर इसके वशमे थे। उन नगरोके नाम नीचे लिखे पद्यसे भली भांति जाने जातेहै।

"कशपगढ़ा सूरजपुरा, वशकगढा ताको। अंधानीगढ़ जगरूपुरा, ये फुलगढ्इ लारको।"
अर्थात् कश्यपगढ़, सूर्यपुर, वशकगढ़, अधानीगढ, जगरूपुर, और फूलगढ़ी, लाखाके वशमे थे।

यह जयशब्द अनन्त आकाशमे पहुँच वायुके वेगसे चारोओर फैलगया। जो लोग लाखाके अत्याचारसे पीड़ित होरहे थे, उन सबोने उस जयशब्दको आनान्दित हृदयसे सुना। और सतलजसे लगाकर समुद्र किनारे तकके समस्त देशवासियोने दोनो हाथ उठा २ कर राठौर वीरको आशीर्वाद दिया।

दुर्धर्ष लाखाके रुधिरसे भाईकी दारुण शोकाग्निको शांतिकर सियाजीका हृदय आनन्दसे फूल उठा। अब उसको तीर्थयात्रा करनी शेष रही। वास्तवमे उसने इस इच्छाको पूर्ण किया या नहीं इसका कोई वृत्तान्त अबतक नहीं पायाजाता। भट्ट ग्रंथोमे लिखा है कि, उस समय वह राजपूतोके प्रधान मंत्रसे चलायमान हो अटल प्रतिष्ठा प्राप्त करनेमे तत्पर हुआ था पट्टनसे विदा होकर सियाजीने लूनी नदीके किनारे कुछ दिनो वास किया। वहां महवा नामक एक नगर था वहां छत्तीस राजकुलके मॅकेडावी (* दावी) क्षत्री वास करते थे। सियाजीने उन सबको मारकर उस नगरपर अपना अधिकार किया। राज्यका लोभ धीरे २ उसके हृदयमे दूना बढ़गया। तब उसने निकटही बसेहुए खेरधरके गोहिलोको मारकर उनके देशमे अपनी विजयपताका फहरानेका संकल्प किया और उसका यह संकल्प थोड़ेही दिनोमे पूर्ण होगया। गोहिलोके राजा महेशदासने उसके हाथसे मरकर उसके सौभाग्यको मार्ग भलीप्रकारसे साफ करदिया। अभागे गोहिल प्राण लेकर भागगये। तब विजयी सियाजीने लूनी नदीके किनारे प्राचीन 'खेडनाथ' की लीलाभूमिमे राठौर कुलकी विजयपताका गाड़ी।

सौभाग्य–लक्ष्मीके प्राप्त होतेही मनुष्यके इच्छित कार्य्य शीघ्रतासे पूर्ण होने लगते है। खेड़धरमे निवास करनेके कुछही काल उपरान्त सियाजीको अपनी श्री बढ़ानेका एक और सुअवसर शीघ्रही हाथलगा। उसी समयमे उस प्रदेशके निकट पाली नामक नगरके प्रान्तमे कुछ ब्राह्मण निवास करके अतुल भूमि सम्पत्तिका भोग करते थे, किन्तु पर्वत निवासी मेर और मीना जातिवाले अकसर उनपर आक्रमण कर उन्हे अनेक प्रकारसे दुःख देते थे। शांतिकी इच्छा रखनेवाले ब्राह्मण उन दुष्टोसे अपनी रक्षा होनेके किसी उपायको अबतक स्थिर न कर सके थे।इस समयके पराक्रमको सुन उन्होंने उसकी शरण और सहायता लेनेकी इच्छा की। तदनन्तर उन सबोने मिलकर उसके निकट जा अपने समस्त वृत्तान्तको आदिसे अन्ततक कह सुनाया। सियाजीने उनसे सहायता करनेकी प्रतिज्ञा और थोड़ेही दिनोंके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर उन शांति प्रिय ब्राह्मणोसे आशीर्वाद और धन्यवादको प्राप्त किया। किन्तु ब्राह्मण इससे भी निश्चिन्त न रहसके उन्होने देखा कि, सियाजीके पाली नगरके निकटसे चले जानेपर दुष्ट पहाडी लोग फिर भी उनके ऊपर आक्रमण कर पहिलेकी समान अत्याचार करेगे।

---

* दावी जाति ३६ जातियोंमेसे है, उनके स्वतंत्र राज्यका यह अन्तिम वृत्तान्त है, मै इन देशोकी यात्रामे काम्बेकी खाडीमे भावनगरके गोहिलोसे मिला और उनके इतिहासकी अशुद्धि प्रगट की कि, उनका आना खेरधरसे लिखाहै परन्तु यह नहीं लिखा कि, खेरधर कहाहै।

यह विचार उन्होने सियाजीको अपनेही निकट रखनेकी इच्छा कर उसको कुछेक पृथ्वी दी। सियाजी उस पृथ्वीको आदरसहित ग्रहण कर उन्हींके निकट वास करने लगा। सियाजीने जिस कोलूमढकी सोलकिनीके साथ विवाह कियाथा, आज उसने यहाँ एक पुत्र उत्पन्न किया। सियाजीने कुलगुरुके कहनेके अनुसार नवकुमारका नाम आसथान, रक्खा।

यद्यपि सियाजी इस प्रकारसे उन शान्तिप्रिय ब्राह्मणोके बीचमे निवास तो करने-लगा किन्तु उसकी दुराकांक्षाकी कुछभी तृप्ति न हुई। उसकी यही इच्छा थी कि * पालीनगरी और उसमे मिलीहुई समस्त पृथ्वी मेरे वशमे होजाय किन्तु किस प्रकारसे उसकी इच्छा पूरी हो, इसका वह कुछभी उपाय निश्चय न करसका। यद्यपि ब्राह्मणो-को मारकर उसकी इच्छा पूरी होसकतीहै, किन्तु ब्रह्महत्या महापाप है। साधारण भूमिके निमित्त क्या सियाजी इस महापापमे लिप्त होगा? किन्तु नही, दुःखकी वात है कि, राठौर वीरके हृदयमे यह दुराकांक्षा इतनी वलवती होउठी कि, उसने एकवारभी इस वातको न विचार जिन ब्राह्मणोसे उसके सौभाग्यका मार्ग खुलाथा, आज उसने छातीमे पत्थर वांधकर कृतज्ञताके पवित्र मस्तकमे लात मार उन्हींके मारनेका संकल्प किया। सुनाजाताहै कि, उसकी उस सोलंकिनी स्त्रीहीने उसे इस पैशाचिक संकल्पके पूर्ण कर-नेको उभाराथा। जो हो, सियाजी इस अनर्थ करनेवाली दुराकांक्षाके पूर्ण करनेका सुअ-वसर देखने लगा। एक दो दिन कर अंतमे होलीका त्योहार आ पड़ा। इस त्योहारके उत्सवकालमे सभी हिन्दू सव प्रकारकी चिन्ताओंको छोड़ श्रीकृष्णजीकी लीलाके अनुरा-गसे फाग खेलकर समय विताते रहतेहै। सियाजीने इस सुअवसरमे पालीके ब्राह्मणोके अधिपतिको मार उनकी समस्त भूमि और सम्पत्तिपर अधिकार करलिया। इससे सिया-जीके नाममे सदैवको कलंककी कालिमा लगगई, किन्तु इस दुष्कर्मके उप-रान्त उसकी आयुभी शीघ्रही क्षीण होगई। ब्रह्महत्या और विश्वासघातकताके पाप-रूपी कीचमे हाथोको फैलाकर उसने जिस सम्पत्तिपर अधिकार किया उसका एकवर्षसेभी अधिक भोग न करसका। ब्रह्माके लेखको पूरा करके उसने इस लो-कसे विदा ली।

सियाजीके तीन पुत्र हुए थे। उनमेसे वड़ा आसथान मझला सियाजीसोनग और छोटा अज्ज था। राज्याधिकार पानेके नियमोके अनुसार जेठा आसथानही पिताकी

* पाली, राजपूतानाके पश्चिम ओर एक बड़ी और प्रसिद्ध वाणिज्यकी मंडीहै। यह प्राय भीलवाडेके समानहै। यह चारोओर ऊंची २ दीवारोसे घिरीहुई है मरहठे शत्रुओके घोर अत्या-चारसे इसकी रक्षा करनेके निमित्त यह दीवारें वनीथीं। वह दीवारे (शहरपनाह) प्राय आजकल टूटीफूटी पडीहै। इसके भीतर दशहजारसेभी अधिक घर देखेजातेहैं। पाली अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रसिद्धहै, पाली जिस प्रकारसे वसाहुआ है उससे जानाजाताहै कि यह किसी समयमे उत्तर हिन्दो-स्थान और समुद्रके तटस्थ देशोको एक वड़ी मण्डी थी। तिव्वत और उत्तर हिन्दोस्थानसे वहुतसी सामग्रिये यहीं आकर इकट्ठी होतीं और फिर यहींसे देशदेशान्तरमे अरब, यूरोप और अफ्रीका आदि देशोको जातीथी। पहले प्रतिवर्ष पालीमे ७५००० रुपया चुंगीकी आमदनी थी।

गद्दीका अधिकारी हुआ। एक भट्टग्रन्थमे देखा जाताहै कि, आसथानने गोहिलोके हाथसे खेड़धरको छीन लियाथा। पिताके दोष गुणके अनुसार पुत्रमेभी बहुतसी दग़ाबाज़ी भरीथी। सियाजीने जिस प्रकार विश्वासघातकता और अधर्माचरणसे पालीपर अधिकार कियाथा, आज उसके जेठे पुत्रनेभी उसी प्रकारके आचरणोसे ईडरको जीत अपने छोटे-भाई सोनगको वहॉका अधिकार दिया।

ईडर नगर गुज़रातकी सीमाके अन्तिम किनारेपर बसाहुआ है उस समय यह डावीवंशीय किसी राजाके अधिकारमे था। आसथानने चतुरता और विश्वासघातकतासे उस नगरके प्रथम राजाके मरनेपर वहॉपर अपना अधिकार करलिया। शोकसे विह्वल नगर निवासी राठौरवीरके ऐसे अन्यायाचरणको न रोकसके सोनग वंशवाले हातौदिया राठौरके नामसे प्रसिद्ध हुए,। तीसरे भाई अज्जलने भी दोनो बड़े भाइयोके समान घोर हिंसावृत्तिके द्वारा उभड़कर सौराष्ट्रके दूसरे प्रान्ततक अपनी प्रचंड तलवार चलाईथी। सौराष्ट्रके पश्चिमओर ऊखामंडल नामक एक नगरथा प्राचीन सौरवंशी भीखमशाह नामक एक राजा उस समय वहां राज्य करताथा। हिंसक अज्जने उसका वध कर उसके राज्यपर अधिकार करलिया। ऐसा कार्य करनेके कारणही उसके पुत्र पौत्र वाढेलाके नामसे प्रसिद्ध हुए।

इस विचित्र नामसे परिचित हो राठौरवीर अज्जके वंशवाले आज भी द्वारका और उसके निकटके देशोमे वास करते है।

आसथान आठ पुत्रो * को छोड़कर परलोक गया, इनमेसे जेठा पुत्र दूँहड पिताके राज्य सिंहासनपर बैठा। उस अप्रसिद्ध और थोड़े राज्यसे उसका हृदय तृप्त न हुआ। उसके हृदयमे एक इच्छा और भी बहुत दिनोसे धीरे २ बढ़ रही थी। दूहड़ लडकपन-सेही अपने पूर्व पुरुषोके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यके उद्धार करनेकी इच्छाको मनमे पोषण करता आ रहा था। इस समय पिताके राज्यपर बैठ उस इच्छाके पूर्ण करनेका उसने दृढ़ संकल्प किया। परन्तु उसका वह सकल्प पूरा न हुआ। कन्नौजके उद्धार करनेमे निष्फल हो दूहडने पड़िहारोके हाथसे मंडोर छीननेकी चेष्टा की। किन्तु उस चेष्टाका पूर्ण होना तो दूर रहा, उससे उसके प्राणभी जाते रहे। उसने पडिहार राजके रक्त बहानेको जा स्वयंही उसके देशको अपने रक्तसे सींचा।

---

* दूहँड़, जोयसाव, रवीयसी, भूपसू, धाडल, जैतमल, बांदर, और उहड़ यह आठ पुत्र थे। यह आठौभाई अपने २ नामसे एक २ गिरोहके स्वामी हुए थे। उन गिरोहोमेसे धूहड, धाधल, जैतमल और उहर गिरोह, इनकी सन्तानका पता चलताहै शेष नाश होगये।

१ इन नामोमे बहुत गलती है दूहड़ जोपसाव धांदल ये तीन नाम तो मारवाड़के इतिहासमे मिलते है और ऊहड़ आसथानका पोता और जोपसावका बेटा था। बाकी तीन नाम अशुद्धभी है पर इतिहासमे लिखेभी नहीं है इनकी जगह हरड़के पेथड़ मैलग और चाचक नाम है। और किसी किसी बहीमे वेगड़ सीगण और नापा नामभी आसथानके बेटोके लिखेहै (प्रे. टी.)

दूहडके सात पुत्र* उत्पन्न हुए थे। उनमेसे जेठा रायपाल पिताके मरनेके उपरान्त राठौर कुलके सिहासनपर बैठा। सिहासन पर बैठतेही वह पडिहारके राजाके हृदयके रक्तको बहा पितृशोकको दूर करनेका यत्न करनेलगा। थोड़ेही दिनोमे उसका यत्न पूरा हुआ। बदला लेनेकी इच्छा रखनेवाले रायपालने एक सेनादल ले मंडोर दुर्गपर आक्रमण किया। पडिहार राजा उसके उस प्रचंड आक्रमणको न रोकसका, इस कारण वह युद्ध खेतमे मारागया। उसके मरतेही विजयी रायपालने मडोर दुर्गपर अधिकार किया। राठौर कुलकी विजयपताका मंडोर दुर्गके शिखरोमे फहराने लगी; किन्तु यह सब विजय थोडेही दिनके निमित्त थी। हारेहुए पडिहारोने शीघ्रही फिर अपने पूर्वबलको इकट्ठा कर रायपालको मंडोरसे मारभगाया।

रायपालके तेरह पुत्र थे। उनमेसे जेठा कन्न रायपालके उपरान्त गद्दीपर बैठा। बाकी सब उसके देशके सब स्थानोमे फैल गये थे। कन्नका पुत्र जाल्हन जाल्हनका पुत्र छाडा और छाडाका पुत्र टीडा एक दूसरेके उपरान्त गद्दीपर बैठे। इन राठौर कुमारोके राजत्वकालका कोई विशेष वर्णन नही देखाजाता। केवल इतना ही विदित होता है कि, हिसक वृत्तिका अवलम्बन कर वे अपने निकट निवासियोसे सदैव युद्ध करते रहे। कभी किसीसे हारे और कभी किसीको मारकर उसकी भूमि सम्पत्तिपर अधिकार किया। जैसलमेरके भट्टग्रन्थोमे पायाजाता है कि इनमेसे छाडा और टीड़ा ही वडे दुर्द्धर्ष थे। ये प्राय: भारी लोगोको बहुतही दु:ख देते। इसी कारण वे इनसे युद्ध करनेके निमित्त सेना लाए खेडराज्यमे आकर इनके साथ युद्ध करते थे। राव टीडाने राज्यको बढालिया था। उसने सोनगरा सर्दारसे भी नमालनगर और देवड़ा तथा बेलिचाओके राज्यके कुछ २ अंशको जीत लिया था। टीड़ोके मरनेपर सलखाँ उसकी गद्दीपर बैठा। भट्टग्रन्थोमे केवल इसका नामही लिखाहुआ है। इसके उपरान्त वीरँम देव * और वीरमदेवके उपरान्त चूडा राठौर कुलकी गद्दीपर बैठे। वीरमदेवने उत्तर निवासिनी जोया जातिपर हमला कर रणभूमिमे प्राण छोड़े थे। किन्तु इसके वीर पुत्र चूंडासे राठौरकुलकी श्रीवृद्धि हुई चूंडा जैसा वीर था वैसाही एक राजनीतिका जाननेवाला भी था। यह नाम राठौरोके इतिहासमे बहुत प्रसिद्ध है, केवल इसके ही विक्रमके प्रभावसे वीर सियाजीका वंश उन्नत हो उठा। वीरे २ ग्यारह पीढियोमे यह राठौरवंश राजस्थानके प्राय: समस्त देशोमे फैल गया था। वीर (चूडा) ने सोचा कि, मै निश्चय करता हूं कि, अपने वंशकी श्री वृद्धिको ऊँची सीढीपर स्थापित करसकता हूं,

---

* रायपाल, कीरतपाल, विहार, पिटल, जुगल, दालू और विगर यह सात पुत्र थे। २ इसके वंशधर सलखावत नामसे प्रसिद्ध है, महेवा और रारधड़ामे यह अबभी भूमियाकी समान वास करतेहै। २ इसके वंशधर वीरमोतके नामसे प्रसिद्ध है वीरमदेवके विज्जानामक एक पुत्र था, उसी विज्जाके वंशधर वीजावतके नामसे प्रसिद्ध हो सेतरावा सिवाना देछूनामक तीन स्थानोमे वास करते है।

---

१ जोधपुर राज्यकी वंशावलीमे राव दूहडके बेटे रायपाल, चन्द्रपाल, शिवपाल, जीवराज, भीमराज, मनोहरदास, मेघराज, सावतसिह, सूरसिह लिखे हैं

राठौरोकी वीरताको जगत्मे प्रकाशित करसक्ता हूं। किन्तु इतने दिनोतक किसीने इस कार्य्यके करनेका साहस नही किया। यद्यपि इससे पहिले उनको जयार्ज्जनके अनेक उदाहरण देखे गयेहै किन्तु उन सबमे उनके उद्यम शीलता आदिका विशेष प्रमाण नही पायागया। जो उद्योगी और उद्यमी नहीं है, भाग्य स्रोतके विरुद्ध तलवार पकड़ जो आत्मोन्नतिका साधन कर आगे नही बढ़सकते, उनको जगत्मे कुछभी उन्नति प्राप्त नही होती सियाजीका विपुल वंश अवतक कुछ नही कर सका, अतएव राठौर कुलकी श्री की वृद्धि भी न होसकी। वीरवर चूडाने यह सब विचारा। समझ बूझकर राठौर कुलके हृदयमे उसने एक विकट ताड़ित (बिजली) बलका प्रयोग किया उस ताड़ित बलके स्पर्श होतेही राठौरकुल मानो फिर नये सिरेसे जीवित होगया। उस समय उसने समस्त राठौरोको इकट्ठा कर बड़े भयानक कार्य्यके करनेका विचार किया। उस कार्य्यकी प्रथम तरंग तो मंजेरका आक्रमण था। मंडोरको१पड़िहारराजा चूडाके उस भीषण आक्रमणको न सम्हालसका। उसके हृदयके रक्तसे समरभूमि सिच गई। राजाका मरण देखतेही समस्त सेना विना राजाके होकर इधर उधर भागगई। जयलक्ष्मी राठौर वीर चूंडाकी गोदमे सुशोभित हुई। शीघ्रही राठौरकुलकी प्रचंड पताका मरुभूमिके प्राचीन दुर्गकी ऊंची शिखरपर सगर्व फहरानेलगी।

उद्यम, अध्यवसाय और सहनशीलताही राजपूतोके पराक्रमको उत्पन्न करनेवाले है। इन तीनो श्रेष्ठ गुणोसे सुशोभित हुए। बिना राजपूत कभीभी उन्नति नही प्राप्त करसकता। वीरवर (चूंडा) इन तीनो श्रेष्ठ गुणोसे विभूषित था, इस कारण असंख्य विघ्न और संकटोसे पार होकर उसने अन्तमे मंडोरके सिहासनको प्राप्त किया। नही तो इस विजय पानेके कुछ दिनोके पहिले वह इस दीन अवस्थामे गिराथा। उसको देखकर कौन विचार सकता था कि, यही चूंडा मंडोरके सिहासनको प्राप्त करसकेगा। पहले वह अपने पूर्वपुरुषोकी प्राप्ति की हुई भूमिसम्पत्तिसे वंचित (बेदखल) होगयाथा, यहांतक कि, प्राण बचानेके लिये उसको छिपकर दिन काटने पड़ेथे। उस दीन हीन अवस्थामे वह राठौरवीर चूडा अपनी रक्षाके निमित्त कालाऊ नगरमे गया। वहां उसने एक चारणके घरमे शरण ली। कुछ दिन उस चारणके घरमे छिपेहुए वेषमे समय बितायाथा परंतु अवसर पाकर उसने अपनी उन्नतिके मार्गको अपने हाथसे स्वच्छ करलिया। कहा जाताहै कि, चूंडाके मंडोरमे राजा होनेपर वही कालाऊ नगरका चारण कवि उससे मिलने आयाथा। किन्तु चूंडाने उसको न पहिचानकर अपने पास न आनेदिया। तब वह चारण अत्यन्त दुःखित हो एक कविता * बना राजसभाके समीप गया। वह कविता

---

१ राठौरोके इतिहाससे यह बात सिद्ध नहीं होती है कि चूंडाने पड़िहारोसे मंडोवर लिया था, किन्तु ईंदा जातिके पडिहारोंने तुर्कोंसे मंडोवर लेकर दहेजमे दियाथा जिसको साक्षीका यह सोरठा मारवाड़मे मशहूर है।

चूंडा चंवरी चार, दी मंडोवर दायजे। ईंदा तणू उपकार, कमधज कदै न वीसरै॥ १॥ (प्रे० टी)

* सोरठा–चूंडा नहिं आवे चीत, काचर कालाऊ तना। बैठमयो भयभीत, मंडोवर रैमालियै॥

मूल ग्रन्थमें यह कथा यहां नहीं लिखीहै पहले भागके पृष्ठ ६२७ में लिखीहै।

आजभी मारवाड़के भाटोंके मुखसे सुनी जातीहै। उस चारणका वह मर्मभेदी सुन्दर गीत आजभी चूंडाके पूर्व आचरणोका स्मरण करताहै ।

मंडोर नगरमे अपनी प्रभुताको दृढ़ करके चूंडाने नागौरमे रहनेवाली बादशाही सेनापर हमला करनेकी इच्छा की उसकी वह इच्छा भी पूर्ण हुई अर्थात् वह नागौरमे विजयी हुआ । तदनन्तर वह अपनी विजयिनी सेना लेकर धीरे २ दक्षिणकी ओर मुडा और बडी धूमधामसे गोडवाड राजधानी नाडौल नगरमे पहुँचा । वह अपनी सेनाको रख अपने नगरमे जा राज्य करनेलगा । वह जैसा वीर था, उसही प्रकार उसने सदैव वीरोंको समान समय विता वीरोचित कार्योमेही अपने जीवनको समर्पण किया । उसकी मृत्युके उपरान्त उसके वीरत्वका विवरण औरभी प्रकाशित हुआ । चूंडाके चौथे लडके अर्डकमलके चरित्रोका उसके साथ ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि पहले उसका वर्णन न कर यदि पीछे कियाजाय तो वह वर्णन अत्यन्तही अप्रासंगिक और नीरस होजायगा । इससे हम विवश हो पहले अर्डकमलकी वीरताका ही वर्णन करतेहै ।

जैसलमेरके भाटीराजाके अधीन पूगलनामक एक नगर है। उस समय उस पूंगलमे राणांगदेव नामक एक भाटीसर्दार राज्य करताथा । राणांगदेवके सादूल नामक एक वडा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ । लाखा फूलाणीके समान सादूलभी अपने भुजबलके ऊपर निर्भर होकर जीवन बितातारथा । नागोरसे लेकर नदीके किनारे तकके सवही प्रदेशो पर समय २ पर आक्रमण करके उसने बहुतसा धन लूटा । मरुभूमिके समस्त मनुष्य साटलसे यमकी भांति भय करते थे । एक समय वह किसी नगरसे कुछेक ऊंटो और घोड़ोको जीतकर मोहिलोकी राजधानी ऊडिटके समीपसे होकर अपने नगरको जाता था कि, उसी समय उस नगरके स्वामी माणिकराजने आदरसहित उसका निमंत्रण किया । सादूल उसके निमन्त्रणको स्वीकार कर यथा-समय उसके घर पहुँचा । शीघ्रही खाने पीनेकी सामग्री होने लगी । इधर माणिकराज मोहिलवीर सादूलके निकट बैठ उसकी वीरत्वसूचक अनेक बाते सुननेलगा।उन सब वीरताकी बातोको सुनकर मोहिलराज कुछ विस्मित और प्रसन्नचित्त हुआ । वह समस्त वीरत्वकी कहानी एक जनके कानोमे बारम्बार अमृतकी धारा बरसा रहीथी । वह एकाग्रचित्तसे उस पाहुने भाटीवीरके समस्त वचनामृतका पान कररहीथी । उसका नाम कोडमदे था, वह मोहिलराज माणिकराजकी पुत्री थी । माता पिताकी जीवनस्वरूपिणी कोडमदे जन्मसेही सुखकी गोदमे पलीथी । मरुभूमिके बीचमे वह एक परम सुन्दरी स्त्री थी । मंडोराऽधिपति चूंडारावके चौथे बेटे अर्डकमलसे उसके विवाहका सम्बन्ध स्थिर होगया था । विवाहभी शीघ्रही होनेवाला था,-इस कारण व्याहकी दोनोओरसे तैयारिये हो रहीथी । परन्तु वह सम्बन्ध कोडमदेको अबतक न भायाथा । उसने सादूलकी अत्यन्त वीरताका वर्णन सुनाथा, सुननेके पहिलेसेही उसको मनहीमनमे अपना पीत स्थिर करलिया था । आज उस इच्छित पतिको सामने देखकर और अपने कानोसे उसकी वीरताको सुनकर वह अपने हृदयके भावको प्रकाश किये विना न रहसकी । उसकी सहेलियोंने उसे बहुत

समझाया परन्तु वह कुछभी न समझी। उसे जिसने जितनाही रोकनेकी इच्छा की उससे वह उतनाही कहनेलगी "तुच्छ राजसिंहासनको लेकर क्या होगा, ऊंचे राठौर कुलकी पुत्रबधू होकर क्या करूंगी ?-मैंने जिसको प्राण मन समर्पण कियाहै, उसीकी दासी होकर रहूंगी दूसरेकी स्त्री न हूंगी।" कोडमदेकी इस कठोर प्रतिज्ञाको उसके माता पितानेभी सुना। उनका हृदय सहसा भय और दुःखसे व्याकुल होगया। राठौर कुलके साथ अपनी पुत्रीका सम्बन्ध स्थिर कर माणिकराजने ऊंच कुलके गौरवके प्राप्त की आशाको हृदयमे पोषण कियाथा,-किन्तु अभाग्यवश उसकी वह आशा पूर्ण न हुई। यदि कोडमदे राठौर राजकुमारसे विवाह करनेपर राजी न होगी तो मोहिल कुलके बिरुद्ध राठौरवीर चूडाकी रोपाग्नि निश्चयही प्रदीप्त होगी, निश्चयही वह ओडिट नगरपर आक्रमण कर मोहिल वंशको समूल नाश करदेगा। इन सब चिन्ताओंने माणिक राजके हृदयमे प्रवेश कर उसको विचलित करडाला। वह कुछ भी स्थिर न करसका कि, मै क्या करूं। अन्तमे पुत्रीकाही स्नेह बलवान होनेके कारण वह पुत्रीकी सम्मति स्वीकार करनेको विवश हुआ।

खान पान समाप्त हुआ, मोहिलराज माणिकराजने सादूलसे समस्त वृत्तान्त प्रगट किया और राठौर राजकुमारके साथ सम्बन्ध भंग करनेसे बिपदकी संभावना है, यह भी प्रकाश किया। तेजस्वी सादूल इससे कुछ भी भयभीत न हुआ। उसने कहा "यदि पूगलसे रीत्यनुसार नारियल भेजाजाय तो मै आपकी पुत्रीके साथ विवाह कर सकता हूं।" इन सब बातोके होनेके उपरान्त सादूल अपने नगरको चलाआया। शीघ्रही उसके यहां विवाहसम्बन्धी नारियल गया और थोडेही दिनोके उपरान्त ओडिट नगरमे व्याहकार्य्य समाप्त होगया। राजा माणिकराजने इस विवाहमे बहुतसा दहेज दिया। बहुमूल्य माणि रत्नादि नानाप्रकारके सोने चांदीके वर्तन, एक सुवर्णकी बैलकी मूर्त्ति और तेरह राजपूत स्त्रिये माणिकराजने वर कन्याको दी।

इस विवाहका सम्वाद ब्राह्मणद्वारा शीघ्रही अर्टकमलने सुना। वह अत्यन्त क्रोध और बैमनस्यसे उन्मत्त सा हो उठा, अस्तु सादूलको दंड देनेकी इच्छासे वह चार हजार राठौर सेनाके साथ उसके मार्गको रोककर खडा होगया। इससे पाहिले सादूलने सॉकला मेहराज * नामक एक मनुष्यको मारडाला था। इस समय उस पुत्रके शोकसे व्याकुल वृद्ध पुरुषने भी पुत्रका बदला लेनेकी आशासे राठौर राजकुमारका साथ दिया। माणिकराजने यह सब समाचार पाकर सादूलसे कहा। वीरपुरुष सादूल माणिकराजकी शंकाकुल बातोसे कुछ भी न डरा, यहांतक कि मोहिल राजने चार सहस्र सेना उसे अपने साथ लेजानेको कहा, परन्तु उसने सेना लेजाना भी अस्वीकार किया। अपनी भुजाओंके बल और अपने साथकी सातसौ शंभुरतन भाटी सेनाके ऊपर उसका भलीप्रकारसे विश्वास था। परन्तु तोभी माणिक राजने अत्यन्त विपत्तिकी आशंका देखकर अपने साले मेघराज और उसके अधीन पचास सैनिकोंको उसके साथ करदिया।

---

* यह विख्यातवीर हड्डू सांकलाका पिता था। सादूलके साथ इसने अनेक बार युद्ध किया था।

इन साढ़े सात सौ सैनिकोके साथ भाटीवीर सादूल चंदननामक स्थानमें पहुँचकर थकावट दूर करने लगा। रोषोन्मत्त राठौर वीर सेनासमेत उस स्थानमे जापहुँचा। यद्यपि उसका सैन्यबल सादूलकी अपेक्षा तिगुना था, परन्तु तोभी उसने अपने शत्रुके साथ केवल द्वंद्वयुद्ध करनेकी इच्छा प्रगट की। दोनो ओरके दल कुछ देर विश्रामकर रणभूमिमे आये। सबसे पहिले भाटीकी ओरका पाहू गोत्रवाला जयतुंग और राठौरकी ओरका जोधा चौहान ये दोनो परस्पर सामने हुए। दोनोने अपने २ घोडोको एक दूसरेके विरुद्ध बडे वेगसे दौडाया। दोनो अपने २ हाथमे तीक्ष्ण दुधारी तलवारे लियेथे। थोडीहीदेरमे वे भीषणतलवारे एक दूसरेक ऊपर चलनेलगी। तलवारोके एक दूसरेको लगनेसे अग्निकी चिनगारिये उडने लगी, और वह दोनो तलवारे सूर्यकी किरणोसे बिजलीसी चमकने लगी। अडकमल और सादूल दोनो अपनी २ सेनाके आगे खडे होकर आनन्दसहित उस भीषण द्वन्दयुद्धको देख ने लगे। देखतेही देखते युद्ध भयानक हो उठा। यकायक जयतुंग एक घोर शब्द कर छलांग मार घोडेसमेत योधाके ऊपर जा टूटा। योधा उस विकट वेगको न सहसका अतएव घोडेसमेत पृथ्वीपर जा गिरा।योधा फिर न उठा, शत्रुके प्रचंड आघातसे उसका प्राणवायु चलवसा। विजयसे उन्मत्तहुआ जयतुंग उस समय उस तीक्ष्ण तलवारको उठाय शत्रुसेनाकी ओर दौडा, और जिसको अपने बराबरका शत्रु समझा उसीके ऊपर आक्रमण करनेलगा किन्तु उसका यथार्थ द्वन्द-युद्ध न हुआ। वह एकके साथ युद्धमे प्रवृत्त हो शेष न होते २ दूसरेपर आक्रमण करने-लगा। इससे एक घोर विच्छिन्नता फैलगई और तत्कालही द्वन्दयुद्ध बंद होकर दल-युद्धका आरम्भ हुआ। दोनो दलके योद्धा भयानक सिहकीसी गर्जना करकर एक दूसरे-पर प्रचंड वेगसे आक्रमण करने लगे।

अडकमल और सादूल दोनोकी इच्छा परस्पर द्वन्द युद्धकरनेकी थी। अतएव सेनाका व्यर्थ नाश होना विचार दोनोने द्वन्द युद्धमे प्रवृत्त होनेकी इच्छा की। युद्ध स्थलसे दूर रथपर बैठीहुई सुन्दरी कोडमदे रणरंग देख रहीथी। सादूल इस समय अन्तिम विदा लेनेके लिये उसके निकट गया। बीरनारी कोडमदेने शांत और गंभीर स्वरसे कहा "जाओ युद्ध करो मै इसी स्थानपर रहकर आपका युद्धकौशल देखूंगी और यदि आप समरभूमिमे मारेगये तो आपहीके साथ मैभी परलोकको जाऊंगी।" कोडमदेकी वीरतासे भरीहुई बाते सुन सादूलका दिल दुगना उभर उठा और वह प्रचंड वेगसे शत्रुदलके ऊपर जा टूटा। उसके हाथमे लियेहुए तीक्ष्ण शूलके प्रहारसे कितनेही राठौर सैनिकोने प्राण गवाँए। इस प्रकार उन्मत्तकी समान भ्रमण करता २ वह राठौर राजकुमार अडकमलके सामने आया। राठौर राजकुमार स्वयं सादूलके हृदयके रक्तसे अपने घोर अपमानके धोने और हृदयकी अग्निको बुझानेके निमित्त इस समय तक गर-दन उठाये उसकी राहही देख रहा था सादूलको वह इस समयतक चीन्ह न सकाथा इसही कारण क्रोधसे उन्मत्त और अधीर होकर भी उसके आनेकी राह देखताहुआ भीतर अग्नि भरे हुए पहाडकी समान अचल खडाथा। इस समय उसने अपने समीप खडे हुए

शत्रुको भली प्रकारसे पहिचाना और अपने पंचकल्याण नामक घोडेको प्रचंड वेगसे उसकी ओर चलाया। एक जन दूसरेके सन्मुख खडाहुआ रीत्यनुसार क्षणभर तो सदाचारसे व्यतीत हुआ। परन्तु थोडीही देरमे सादूलने अपने शत्रुके मस्तकको ताककर तीक्ष्ण तलवारका प्रहार किया। किंतु चतुर अडकमलने अत्यन्त शीघ्रतासे उसको रोक कर सादूलके मस्तकके ऊपर तलवार चलाई। उस समय दोनोही वीर वज्रसे टूटे हुए दो मेरुके शिखरोके समान पृथ्वीपर गिरपडे। राठौरवीर मूर्च्छित होगया था अतएव फिर उठ खडाहुआ, किंतु भाटी वीर सादूल फिर न उठा। गिरतेही गिरते उसके प्राण निकल गये। युद्ध रुकगया। दोनोओरके वीर वज्रसे मारे हुएकी समान क्षणभर खडे रहे। फिर युद्धको रोककर रणभूमिसे कुछ २ दूर हटगये।

पतिव्रता कोडमदेका आशा भरोसा टूटगया। उसने विचारा था कि, स्वामीके साथ रहकर बहुत समयतक सुखसे दिन विताऊंगी, किन्तु उस अभागिनीके सुख सम्बन्धका बन्धन होते न होते वह सदैवके लिये उसे छोडगया। कहां है वह उसकी लावण्यमयी सुन्दर मूर्ति कि, जिस हास्यमयी मूर्तिसे उसने भाटीवीर सादूलके मनको हरण किया था, राठौर वीर अडकमलने जिस मूर्तिको अति यत्नसे हृदय मंदिरमे प्रतिष्ठित कियाथा, वह सुन्दर हास्यमयी सरला सुकुमारी मूर्ति कहां है?—वह सुन्दर कान्तिमान् मूर्ति वरमालाके साथ नवीन लाजके नये रंगसे अभी पूरी २ छूटीभी नहीं था कि, विधवापनके विषमजालने उसको अपने अधिकारमे करलिया। कमलकली एक दिनमे ही उत्पन्न और विकसित हो कोडेके काटनस गुच्छेसे गिर पडी किन्तु कोडमदे वीरनारी थी। उसने अपने प्राणप्यारेको युद्धमे उत्साहित किया था, आज वह धर्म युद्धकी रणभूमिमे प्राणोको न्योछावर करती है, उसके स्वर्गका मार्ग स्वच्छ हुआ, स्वर्गकी विद्याधरिये पारिजातकी माला हाथमे लिये उसके सत्कारके निमित्त स्वर्गके द्वारपर आखडी हुई। कोडमदेने मानस नेत्रोंसे यह सब कुछ देखा। उसके हृदयमे विषादकी लहरें उमडने लगी, हृदय स्वर्गकी इच्छासे उत्साहित हो उठा और वह पतिके साथ जानेकी तैयारी करने लगी। शीघ्रही उस रणभूमिमे एक बडीभारी चिता बनाई गई। मोहिल कुमारीने एक तीक्ष्ण तलवार उठाई और एक हाथसे उसको पकड प्रसन्नतापूर्वक उसने अपने दूसरे हाथको काटडाला। उसकी सखियें और सैनिक चुपचाप खडे हुए इस भयानक और शोचनीय कार्यको देखते रहे। कोडमदेने वह कटीहुई भुजा अपने श्वशुरके देनेके निमित्त एक सैनिकको दे धीर और गम्भीर स्वरसे कहा "कहना कि, तुम्हारी पुत्रवधू इस प्रकारकी थी।" तदनन्तर उसने अपने दूसरे हाथको फैलाकर निकटमे खडे हुए एक सैनिकसे कहा "मेरे इस हाथकोभी काटडाल।" कोडमदेके मुख मंडलने एक अपूर्व तेजोमयी मूर्त्ति धारण कीथी, उसके दोनो विशाल नेत्रोंसे एक प्रकारकी अद्भुत ज्योति प्रज्वलित होरही थी, इसी कारण उस सैनिकने तुरंत महारानीकी आज्ञाका पालन किया। एक ही चोटसेही बाँह कट गई। दर्शक गण शोक और विस्मयके मारे हृदयभेदी शब्द करने लगे। उनके रोनेसे आकाश गूंज गया। परन्तु कोडमदेके उस अपूर्व कान्ति-

मान् मुखमंडलपर उदासी या मलिनताके चिह्नतक न दिखाई दिये । उसने धीर और अकम्पित स्वरसे उस दूसरी कटीहुई भुजाको गोहिल कुलके भाटकविको देनेकी आज्ञा दी और प्राणपतिके मृतक शरीरको ले वह चितापर चढ़ गई । आज्ञाके अनुसार रानी कोडमदेकी दोनो भुजाएँ जहां तहाँ भेज दी गई । पूँगलके बूढे राव राणंगदेवने उस भुजाको भस्म करके उस स्थानमे एक पुष्करणीकी प्रतिष्ठा की । वह पुष्करणी आज तक भी कोडमदे सरके नामसे पुकारी जाकर उस वीरनारीके नामको अमर कर रही है ।

यह अनर्थकारी अपूर्व संग्राम सन् १४०७ मे हुआ था । इस घोर युद्धमे राठौरोके सांकला गणोने अत्यन्त वीरता प्रगट की थी। उनके ३०० सैनिकोमेसे केवल पचास सेनापति मेहराजके साथ युद्धभूमिसे लौटे थे। मेहराज भी अत्यन्त घायल हुआ था अडकमल और उसके चार भाइयोको भी घायल होना पडा था। वह घाव जो उसके शरीरमे हुए थे छ. महीनेमे ऐसे विषम हो उठे कि, उनसे ही उस संतप्त राठौर राजकुमारके प्राण निकल गये ।

किन्तु इससे भी वह भयानक विवाद शांत न हुआ। रक्तके बदले रक्त वहने पर भी दोनो ओरसे संतोष न हुआ । दोनो ओरका एक एक भी राजकुमार मरा । अस्तु इस समय पिताओने तलवार धारण की। वीर सॉकला मेहराजके प्रचण्ड प्रभावसे ही सादूलकी सेनाका वल नष्ट हुआ था । इस कारण पुत्रके शोकसे दु.खित राव राणंगदेवने मेहराजको दंड देनेके अभिप्रायसे दल समेत उसके नगर पर आक्रमण किया । सांकलागण साधारण प्रतापशाली नही थे, मरुनिवासी कोई वीर भी उनको इस समय तक कभी परास्त नही करसके थे। विशेष कर मेहराज एक सुप्रसिद्ध वीर केसरी हडवूसांकलाका पिता था। उसके प्रचंड विक्रमको अवतक कोई नही रोक सका। तो फिर क्या पूँगलका राव राणंगदेव आज उसको हरा सकेगा ? पुगलपतिने विशाल सेनादल लेकर सांकलके राज्यपर आक्रमण किया । सांकला उस समयमे असावधान था अथवा वह राणंगदेवके प्रचंड बलको न रोक सका था, इसका अबतक कोई विशेष वृत्तान्त नही पाया जाता किन्तु वह हारगया । उसकी तीन सौ सेनाके गरम लोहूसे लूनी नदीके किनारेको बालू भीग गई । विजयी राणंगदेव हारेहुए सांकला राजाका सर्वस्व लूट कर सगर्व अपने नगरको लौट आया । राणंगदेवके मरनेका समाचार शीघ्रही उसके शेष दोनो पुत्र तनु और मेरूके निकट पहुँचा । दारुण हिंसासे उनका मस्तक जल उठा । किन्तु वे निरुपाय थे । उनको ऐसा बल नही था कि, जो वे मंडोरके राजाके साथ युद्ध कर सकते । अतएव उस दारुण क्रोधके वेगको रोक कर वे इसका उपाय विचारने लगे । उस समय मुलतानमे खिज़रखॉ मुसलमान वादशाह था । रोषोन्मत तनु और मेरूने इस समय उसीकी शरण ली और सनातन हिन्दुधर्मको छोड मुसलमानी धर्मको ग्रहण कर वे स्वामीको प्रसन्न करनेका यत्न करने लगे । खिज़रखॉ ने उनपर प्रसन्न हो उनको एक सेनादल दिया । उस

सेनादलको लेकर तनु और मेरू राठौरराजके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी करने लगे। उसी समयमें जैसलमेरके राजा रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने उनके साथ मुलाक़ात की। उसने उनके बलाबलकी परीक्षा कर उनको एक गूढ़ उपाय करनेकी सम्मति दी, और कहा कि, यदि इस उपायका अवलम्बन करो तभी अपने बदला लेनेकी प्यासकी शांति कर सकोगे।

तदनन्तर भाटी राजकुमार केलणने[1] उसी गूढ़ उपायकी सहायतासे राठौर-राज (चूंडा) को कौशल जालमे फंसानेकी इच्छा की, इसी कारण उसने अपनी एक पुत्री चूंडाको देनेका प्रस्ताव किया परन्तु चूंडाने विश्वास न करके उसके प्रस्तावको अस्वीकार किया, इस कारण केलणने कहला भेजा " यदि आप इसमे किसी प्रकारका सदेह करते है, तो आपकी आज्ञा होनेसे मै अपनी कन्याको नागौर भेज सकता हूँ। " चूंडाने इस बातको अच्छा समझा और इसीको स्वीकार भी किया।

विवाहका दिन स्थिर हुआ। कुछ दिन हुए कि, चूंडाने नागौरनगरको जीत लिया था। इस समय वहाँ विवाहकी तैयारी होने लगी। चूंडाभी उस नगरमे आय विवाहके दिनकी राह देखने लगा। धीरे २ वह दिन आ पहुँचा। उस दिन उसके किसी गुप्त ग्रहने उसकी भाग्यकी डोरको पकड लिया था उसको वह न जान सका इंधर जैसलमेरके तोरणद्वारको लांघकर पचास ढके हुए शकट बाहर निकले। उन शकटोके पीछे २ कुछेक घुडसवार और सातसौ ऊंटोके रक्षक चले। किन्तु यह विवाहकी यात्रा नही थी,—असलमे युद्धकी यात्रा थी। क्योकि वह सभी घुडसवार और ऊंटोके रक्षक छिपे हुए वेशके राजपूत सैनिक थे और पहिले पचास ढके हुए फाटकोके भीतर स्त्रियोके बदले पूँगलके साहसी वीरगण बैठे हुए थे। इसके अति-रिक्त सबके पीछ राजाकी प्रायः एक सहस्र घुडसवार सेना अतिसावधानीसे आ रहीथी। जो ऊंट इसके साथ आते थे. उनकी पीठमे सैनिकोके खानेकी सामग्री और अस्त्र शस्त्रादि भरे हुए थे। राठौरराज चूंडा यह कुछभी न जान सका। वह विवाहके—योग्य साजसे सजकर उस छद्म भाटी सेनाकी ओर चला। नगरके सिंहद्वारसे कुछ दूर निकलते ही उसने उन शकटोको देखा। उसको विश्वास उत्पन्न हुआ कि, भाटीराजने उस्से दगा नही किया। वह इस विश्वासके ऊपर निर्भर हो निःसन्देह उन शकटोके निकट चलागया। परन्तु एकाएक उसके मनमे विषम सन्देह उत्पन्न होआया। इसलिये वह शीघ्रही नागौरकी ओर लौटा। परन्तु नगरके द्वारके समीप पहुँचते ही पहुचते उस-पर शत्रुओने आक्रमण किया। विश्वासघातक भाटी अपना स्वरूप धारण कर एकाएक उसके ऊपर आ टूटे। अकेले ही कई एक सिपाहियोको संग लिये हुए चूंडा उन सहस्रो प्रचंड भाटीवीरोकी गतिको कैसे रोक सक्ता ? इस भयानक आपत्तिके समयमे उसके मनमे आया कि, वह यदि नगरके तोरणद्वारमे पहुँच सके. तो वह अपनी रस्ता भली प्रकार कर सकता है, किन्तु हाय ? उसके मनकी इच्छा मनहीमे रह गई। प्रचण्ड शत्रुओके

---

[1] मूल ग्रन्थमें यह एक सहस्र घुड़सवार खिजरखांके लिखे है।

साथ युद्ध करते २ (चूंडा) सिंह द्वारकी ओर चला। उसका सब शरीर रुधिरसे भीगगया, उसके शरीर रक्षक सिपाहियोंमेसे अनेकोने ही उसकी रक्षाके निमित्त प्राणत्याग दिये। बराबर रक्तके निकलने और अस्त्रोके प्रहारसे चूंडाका अंग प्रत्यंग शिथिल हो आया। राठौर कुल तिलक वीरवर चूंडा उस नगरके द्वारपर गिर पडा पाखण्डी भाटी अधर्म्मकी जीतसे प्रसन्न हो विकट सिंहनाद कर उठे, और नगर लूटनेके अभिप्रायसे प्रचंड पहाडी नदीके समान उन्मत्तभावसे उसके भीतर पैठ पडे। राजराजेश्वर चूंडाका पवित्र देह उनके पैरोंसे पिसने लगा, उसकी ओर किसीने एक बार देखा भी नही।

इस प्रकार राठौर कुलका एक जलताहुआ दीपक सदैवको बुझगया। चूंडाके और भी कुछ दिन जीवित रहनेसे राठौरकुलकी और भी द्विगणित वृद्धि होजाती। अपने अमानुषिक वीरत्वके प्रभावसे वह वीरवर सियाजीके वंशमे जो तडित वलका प्रयोग करगया उसीके कारण पतित राठौरकुल फिर गर्वसहित मस्तकको उठासका। चूंडाके चौदह पुत्र[2] और एक कन्या हुई थी। उसकी कन्याका नाम हँसा था। हँसा मेवाडके राजा राणा लाखाके साथ व्याही गई थी। इसके ही गर्भसे कूंभा[3] उत्पन्न हुआ था। इस अयोग्य व्याहसे मेवाड और मारवाड राज्यमे जो विषम अनर्थ उत्पन्न हुआ था, उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमे हो चुका है[4]।

महावीर चूंडाकी मृत्युके उपरान्त उसका जेठापुत्र रिडमल्ल मंडोरके सिंहासनपर बैठा। इसकी माता गोहिल वंशकी थी। रिडमल्लका शरीर अत्यन्त दीर्घ और बलवान था, यहांतक कि वह अपने कुलमे सबसे अधिक बलिष्ठ गिना जाता था। चूंडाकी मृत्युके उपरान्त नागौर राठौर कुलके हाथसे निकलगया। राणा लाखाके साथ उसकी अत्यन्त प्रीति उत्पन्न होगई। लाखा उसको अपने सामन्तोमे सबसे श्रेष्ठ जानता था। इसके अतिरिक्त उसको चालीस गावो समेत धनला नगर और भी दिया। लाखाके जीवित समयमे रिडमल्लने मेवाडका एक बडाभारी उपकार किया था अजमेरके सूवेदारके निकट एक लडके लेजानेके वहाने वह उस पुराने चौहान किलेके भीतर प्रवेश करगया और किलेके पहरेदारो तथा उसमे रहती हुई सेनाको मारकर उस किलेपर अपना कब्जाकर उसको राणाके सिपुर्द करदिया। खीमसी पंचोली[5] नामक एक मनुष्यने रिडमल्लको यह

---

१ चूंडा सम्वत् १४२८ मे गद्दीपर बैठा और सन् १४६५ मे मरा चूंडाके गद्दी पर बैठनेका सम्वत् १४२८ मारवाड़के इतिहाससे अशुद्ध है १४५१ उसके मंडोर लेनेका सम्वत् है और वही उसके गद्दीपर बैठनेका भी है। इससे पहले वह कहीं गद्दीपर नहीं बैठा था किन्तु अपने बापके बड़े भाई रावल मलीनाथकी तरफसे मडोरसे ९ कोशपर गाव सालोड़ी थानेदारके तौरपर रहता था। २ इसके चौदह पुत्रोंके नाम रिड़मल्ल, सत्तारणधीर, अड़कमल्ल, पुंज, भीम, कान्हा, अज्जा, रामदेव, बीजा, सहेशमल्ल, वोधा, लम्बा, शिवराज इनमेसे रिड़मल्ल, सत्ता, अड़कमल्ल और कान्हका वंश आजभी वर्तमानहै। ३ कूंभा उत्पन्न नहीं हुआ माकल उत्पन्न हुआ था और कुंभा मोकलका बेटा था। ४ राजस्थान प्रथम खण्ड। ५ कायस्थको कहतेहै।

यत्न वताया था। इस कारण राणाने इसके इनाममे उसे केटोनामक नगरका अधिकार दिया, जो पहले खानियोसे छीना गया था। रिडमल्ल तीर्थयात्राके निमित्त गयाजीको गया और वहांके यात्रियोपर जो कुछ कर लगता था। वह सब उसने स्वयंही दिया।

रिडमल्ल राजकार्यमें अत्यन्त चतुर था उसने ऐसे अनेक प्रबंध कियेथे जिनसे राज नियमानुसार शासित होवै यद्यपि वीर रसके चाहनेवाले भाटकवि इसका बहुतही थोडा वर्णन करतेहै, परंतु ऐसा समझना मूर्खताहै कि, मरुदेशके राजपूतोके यहां कानूनी मिसले विद्यमान न हो और इस बातमे कविको सम्मतिभी यही है। वह राव रिडमल्लका वडा काम यह बतलाताहै कि, इसने अपने राज्यभरमें बांट और माप एकसे करदिये। और वह अबतक प्रचलित है। राव रिडमल्लका अन्तिम कार्य यह था कि उसने धोखेसे मेवाडके बालक राजाकी गद्दी छीननी चाहीथी, परन्तु चंद (चूंडा) ने उसको प्राण-दंड दिया जिसका वृत्तान्त उस राज्यके इतिहासमे लिखाहै। इस झगडेसे दोनो राज्यो-की सीमा पृथक् २ होगई, और वह उस समयतकही कि जिस समयतक मेवाडकी सीमा अर्वलीतक पहुँच गईथी। किन्तु हम राठौर कुलके भायेके वर्णित कियेहुए वृत्ता-न्तसे जानतेहै, कि,रिडमल्लने अपने राज्यके सब स्थानोमे भूमि और करका निर्णय समा-नरूपसे कियाथा। रिडमल्लका शोचनीय अन्तिम वर्णन मेवाडके इतिहासमे भलीप्रकारसे वर्णित होचुकाहै, इस कारण विस्तार होनेके भयसे हम फिर दुबारा उसका वर्णन नही करते। रिडमल्लके सब मिलाकर चौवीस पुत्र थे, विशेषकर इसके ज्येष्ठ पुत्र जोधाकी सन्तान मारवाडकी प्रजाहै, उनके पुत्र प्रपौत्रोने विशाल मरुभूमिके चारोओर फैलकर अपनी उन्नति की थी। आवश्यकताके कारण उनके नाम, धाम, भूमि, संपत्तिकी सूची नीचे लिखी जातीहै।

नाम	जातिये जो उनके नामसे प्रसिद्ध हुइ	भूसम्पत्ति
१ जोधाजी. [सिहासनपर वैठे]	जोधा	
२ कांधलजी.	कांधलोत इन्होने बीकानेरकी भूमि जीती	बीकानेर
३ चाम्पाजी.	चांपावत	
४ अखैराज. इनके सात पुत्र थे जेठा कूँपा	कूम्पावत	आहुवाकेटो पलरी हरसौला बरोहट, जावला सथलाना, सिनगा, आसोय कंपालिया, चंद्रावल,सिरयारी, खारलो, हरसौर, वनू विजौरिया, ज्योपुरा, देवरिया,
५ मडलाजी.	मांडलोत	सरौदा

१ जोधा ज्येष्ठपुत्र नहीं था कई भाइयोंसे छोटा था सब भाइयोमे बडा अखैराज था उसने बापकी इच्छासे जोधाके राजतिलक अपने हाथसे दियाथा उसी प्रथासे अबतकभी गाँव वगडीके ठाकुर जो अखैराजके उत्तराधिकारी है जोधपुरके राजाको तिलक देते है।

२ कूँपा अखैराजका बडा बेटा नहीं था। वडा वेटा पचाण था जिसके बेटे जैताकी औलादमे वगडीके ठाकुर हैं कूपा महाराजका बेटा और महाराज पचाणका भाई था।

	नाम	खांपवशाखा	भूसम्पत्ति
६	पाताजी	पात्तावत	कूर्निचरी, नखा वारोह तथा नखदेश*
७	लाखाजी	लाखावत	
८	वालोजी	वालावत	धुनार
९	जैतमालजी	जैतमालोत	पालासनी
१०	करनजी	करनौत	लूनावास
११	रूपाजी	रूपावत	चौतला
१२	नाथाजी	नाथावत	वीकानेर
१३	डूंगरजी	डूंगरोट	इनकी भूमिसम्पत्तिका कहीं वर्णन नही पायाजाता यह सभी अपने वडे वंशधरोंके अधीन होगये
१४	सांडाजी	सांडावत	
२५	मांडनजी	मांडनोत	
१६	वीराजी	वीरोवत	
१७	जगमालजी	जगमालोत	
१८	हांपाजी	हांपावत	
१९	शक्ताजी	शक्तावत	
२०	कर्मचंद्रजी	कर्मचंदोत	
२१	अडवालजी	अडवालोत	
२२	खेतसीजी	खेतसिओत	
२३	शत्रुशालजी	शत्रुशालोत	
२४	तेजमालजी	तेजमालोत	

तीसरा अध्याय ३.

जोधाजीका सिंहासनपर वैठना, जोधपुरका वसायाजाना; राठौरोंका मंडोरसे जोधपुरको जाना, राजधानीका वदलना राजधानीके वदलनेका कारण सातलमेर, मैडता और बीकानेरकी नई प्रतिष्ठा, जोधाजीका परलोक गमन, उनके चरित्रोंका वर्णन, राठौर वंशकी उन्नति, सूजाजी रावका गद्दीपर वैठना, मुसलमान वादशाहकी सेनासे राठौरोंका प्रथम युद्ध, पठानोंद्वारा पीपाड नगरसे राठौर कुमारियोंका हरण, सूजाजीकी वीरता और मृत्यु, उसके सिहासन[illegible] उसके पौत्र राव गांगाका वैठना, सिहासनके निमित्त गागा और उसके चचा सेखाका युद्ध, [illegible]रुद्ध, सेखाकी मृत्यु, वाव-

* यहाके सिपाही वडे साहसी और रणनिपुण होते हैं यह जलत[illegible]तेपरभी सहजहीमें घूमा करतेहै यह साधारण वातपर अस्त्र ग्रहण नहीं करते परन्तु जब अत्यन्त आपत्ति आतीहै तव यह लडाईमे वुलाये जातेहै।

रका हिन्दोस्तानपर आक्रमण करना; सब राजपूतोंकी सम्मतिसे महारथी राणा सांगाका सेनापति हो बावरसे युद्ध करना; राव गांगाकी मृत्यु; राव मालदेका गद्दीपर बैठना; मालदेका गौरव; उसके द्वारा नागौर, अजमेर, जालोर और शिवानेका उद्धार,–उनका परस्परका विवाद; उसकी प्रतिष्ठा; गद्दीसे हटायेहुए हुमायूंपर उसका अनुचित व्यवहार; शेरशाहका मारवाडपर आक्रमण करना, यवनसेनाको आपत्ति; बुद्धिमानीसे शेरशाहका छुटकारा पाना; राठौर सेनाका पीछे हटना; दो प्रधान सामन्त सम्प्रदायका आत्मत्याग; अकबरका मारवाडपर हमला करना; मेडता और नागौरको जीत बीकानेरके रायसिंहको देना; मालदेका अपने दूसरे पुत्रको अकबरकी सभामें भेजना । सम्राटके साथ उसका असद्भावं; जोधपुरका फरमान अकबरद्वारा रायसिंहको देना; अकबरद्वारा जोधपुरका घेराजाना; मालदेका जोधपुरकी रक्षा करनेका उद्यम, उदयसिंहको अकबरके निकट भेजना; उदयसिंहका सत्कार; चन्द्रसेन, उसके द्वारा राठौर कुलकी स्वाधीनताकी रक्षा; उसका वीरत्व; मालदेका वीरत्व; मालदेका मरना; अ र [illegible] रह पुत्र ।

सम्वत् १४८४ के वैशाख मासमें राठौरवीर योधाने मेवाडके अंतर्गत धनला नामक नगरमे जन्म लिया। इनके पिता राव रिडमल्ल थे जोधाजी जिस प्रकार आपत्तिमे फँसे थे और उस आपत्तिसे छूटनेके निमित्त जैसा उनको कष्ट सहना पडा था, उसका समस्त वर्णन मेवाडके इतिहासमे किया जा चुका है। अब इस समय हम केवल उसके जीवन चरित्रका वर्णन करते है इस कारण उसके सम्बन्धमे और कुछ नहीं कह सकते।

गहलौत राजकुमार वीरवर चूंडाने * नये जीते हुए मुंडोर नगरपर अधिकार किया; और उसके बाद रिडमल्ल वहांका राजा हुआ, तब उस रिडमल्लका जेठा पुत्र पराक्रमी जोधाजी अरवलीके वनघोर वनमे छिपेहुए वेपसे जा छुपा। उस दीन हीन अवस्थामे समय व्यतीत करतेहुए राठौरवीर जोधाने क्षणभरको भी न जाना कि, दैवकी कृपासे उसके भाग्य–गगनका मार्ग शीघ्रही स्वच्छ होगा और फिरभी वह मंडोर नगरको पाकर अपने अनंत कीर्तिके स्तंभ जोधपुरको प्रतिष्ठित करेगा। उसकी सहायताका बल अत्यन्तही हीन होगया। अन्तमे धीरे २ उसका बल औरभी निर्बल होतागया,। परन्तु तो भी जोधा क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ। आशाही मनुष्यका जीवनस्वरूप है, और दीन, दरिद्र और अभागे मनुष्योंको अत्यन्तही शांतिकारक है। विपुल राज्यका उत्तराधिकारी होकरभी जोधा आज दीन हीन अवस्थामे गिरा है। वह उस विराट् अरवलीके भीतरी भांडक–पिराओ नामक गम्भीर वनके निर्जन प्रदेशमे कुछ एक संगियोके साथ छिपा हुआ उचित अवसर पानेकी बाट देखताहुआ समय बिताने लगा। थोडेही दिनोमे उसकी इच्छा पूर्ण हुई; भगवती आशापूर्णा अपने वर देनेवाले रूपसे उसके सामने आ खडीहुई। उस दीन हीन अवस्थासे राठौर वीर जोधा कुछ समय व्यतीत कर एक दिन अपने साथियोके साथ मंडोरके जीतनेकी सलाह करता था। सजे सजाये सबहीके सामने तीक्ष्ण भाले रक्खे हुए थे कि, इतनेही मे एक शुभ–शंसी पक्षी जोधाजीके भालेके ऊपर बैठ बारम्वार शब्द करने लगा, उस समय एक चारणने जोधाजीके सामने आकर कहा "महाराज !

* इसी चूडाने राठौरवीर रिडमल्लको माराथा।

आज आपके ग्रह शुभ है, आपकी जन्मरात्रिमें जो नक्षत्र उदय हुआथा, आज फिरभी उसका उदय हुआहै, अतएव इस शुभ नक्षत्रके अस्त न होते २ आप यदि मंडोरके उद्धार करनेका प्रयत्न करे, तो आपकी इच्छा अवश्यही पूर्ण होगी। यह देखो, शुभ-शंसी पक्षी आपके भालेके डंडेपर बैठकर आपको अपना काम करनेको कह रहाहै।" इन उत्साह बढानेवाली बातोंको सुनकर राठौरवीर जोधा अत्यन्त उत्साहित हो उठा और हडवू सांकला तथा प्रभुराय आदि प्रसिद्ध वीरोंको साथ लेकर उसने युद्धकी तैयारी की। सौभाग्यवश उसके समस्त उद्यम शीघ्रही सफल हुए। और उसने बहुत जल्दी मंडोर नगरका उद्धार कर उसपर अपना अधिकार जा जमाया।

यद्यपि जोधाजीको मंडोर दुर्ग फिर प्राप्त हुआ किन्तु उसमें वह अधिक दिन न रहा। उसने शीघ्रही अपने नामका नगर बसाकर अमरत्व प्राप्त करनेकी इच्छा की। किन्तु वह राजपूत थे राजपूत सदैवही संस्कारके वशीभूत रहतेहै। उनका एक यही प्रधान धर्म है कि, वह सहसा किसी रद्दबदल करनेको अच्छा नही समझत,जिस मंडोर दुर्गको जोधाजीके पूज-नीय पितामहने अपनी भुजाओंके बलसे जीता था, जहां आजतक उसकी तीन पीढियोंने राज्य किया,जो आजतक मारवाडकी प्रसिद्ध राजधानीके नामसे विख्यात रहा उसही मंडोर नगरको उसने एकसाथ छोड़दिया। उसका विशेष कारण है। वह कारण देवकी आज्ञा वा शकुनका बतायाहुआ ज्ञान अथवा दूसरी कोई दैव घटना न थी,वह केवल एक सिद्ध* योगीपुरुषकी आज्ञा थी। वह योगी मंडोरसे दो कोस दक्षिणकी ओर स्थित भाखर

---

* केल्ट (Celt) के डिरुड (Druid) के अनुसार वानप्रस्थ योगी ऐसे मनुष्योंको उपदेश कियाकरतेहै, जो सौभाग्यवश उनके निकट निर्जन वन वा पर्वतकी गुफामें पहुँच जाया करतेहै। इस लिये यह कोई आश्चर्यजनक वार्ता नहीहै कि ऐसे तपस्वी महात्माकी आज्ञाको यह विश्वासी राजपूत शिरोधार्य न समझते हो॥ साधुओंसे हमारा प्रयोजन उन दरिद्रीभिक्षुकोंसे नहीं है जो भारतवर्षमें दरवदर मारे फिरतेहै, और जिनके देखनेमात्रसे नेत्रोंको घृणा मालूम होती है, परन्तु हमारा प्रयोजन उन तपस्वी योगियोंसे है जो इन्द्रियोंको दमन करते है और जिनकी प्राकृतिक इच्छा केवल इतनीही होतीहै कि, जिससे शरीरमें प्राण बनेरहै। जिन्होने दर्शन शास्त्रोंका विचार करते हुए वेदान्तका अभ्यास कियाहै और जिनका अन्त करण मायाकी छायासे शुद्ध होगयाहै, या जिन्होंने अपने आशयके नियमानुसार घोर तपस्या और एकान्तवास कियाहै। ऐसी कठिन तपस्या कीहै जिसको देखकर हमारी बुद्धि चकरागई ऐसे महात्माओसे भारतके राजा महाराजा उपदेश लेनेके लिये जाया करतेथे। हमने स्वयं एक ऐसे महात्माको देखाहै जिन्होने ४० वर्षतक भूमिपर शयनके त्यागका व्रत कियाथा इन महात्माके व्रतमे केवल तीन ३ वर्ष शेप रहगये। उन्होने बहुत देशाटन कियाथा और बडे विद्वान् और ज्ञानवान् थे इस कठिन व्रतके शेप रहजानेसे कुछ दु ख प्रतीत नहीं होता था परन्तु उनकी आकृति बडी हसमुख, तेजभरी सरल और चित्त आकर्षक थी। वह अपनी तपस्याका वृत्तान्त कुछ गर्वसे नहीं कहतेथे और न उनको अपने व्रतकी समाप्तिका कुछ हर्षही था। एक वृक्षपर झूला पडाथा और उस झूलेपर यह महात्मा शयन करतेथे। आरम्भमे कई वर्षतक इस नियम पालनमें कष्ट रहा, अर्थात् शरीरपर सूजन आगईथी परन्तु कुछ दिनो पीछे यह कष्ट जातारहा, इस व्रतमेभी एक प्रकारका अभिमान है और स्थिर करना बहुतही उत्तमहै कि, ऐसी कठिन तपस्यासे मनुष्यका गौरव ईश्वरीय दृष्टिमे ग्राह्य होताहै।

चिडिया (विहंगकूट) नामक पर्वत श्रेणीके एक एकान्त गुफामे निवास करताथा। उसका चित्त सदैवही राठौर कुलकी मंगलकामनामे लगा रहताथा। एक दिन जोधाजीके साथ उसका मिलाप हुआ, उसने राठौर राजासे कहा "महाराज! मंडोरमे आपके राज्यकी दृढता भलीप्रकारसे खटकेसे रहित न होगी इस कारण मेरी इच्छाहै कि, आप वकरचीराकी सीमामे अपने नामका एक नगर वसाओ।" राठौरवीरने जोधाने योगिराजकी इच्छानुसारही किया। शीघ्रही उस "विहंगकूट" की ऊंची चोटियोमे नये नगरके प्रतिष्टित होनेकी तैयारी होनेलगी। जिस सुन्दर पर्वत श्रेणीके ऊपर मंडोर नगर स्थापित था, भाखरचिडिया केवल उसीका एक अंगहै। यह पर्वत श्रेणी ऐसी है कि, इसपर कोई चढ नही सकता और इसका लम्वावभी अधिक है। इसके चारो ओर बडे २ घने जंगल वृक्षोसे ढके हुए है, पहाडकी ऊंची चोटियोसे प्रायः छोटे २ वादल मिले रहतेहै। इसकी वडी २ ऊची चोटियोपर खडे होकर वीरवर जोधाजीके वंशवाले अपने विशाल राज्यके चारोओरको सरलतासे देखसकते है वर्षा होकर जव दिशाएं स्वच्छ हो जातीहै तव अपने विश्राम भवनके खुलेहुए झरोखोके समीप खडे होकर राठौरकुलके राज्यकी सीमाको देखते रहते; उस समय उनके हृदयमें नाना प्रकारके सुखकी चिन्ताएं उत्पन्न होती और वे सदैवही ऐसी क्रीडा करतेरहते हैं। जोधपुरके नीचेकी ऊंची पहाडिये दक्षिणमे जाय अर्वलीकी पर्वत श्रेणियोसे मिल अनन्त आकाश सागरसे असंख्य अचल लहरोकी समान विराजमान है। और शेष तीन ओरसे विशाल मरुसागर अत्यन्त वालूको उत्पन्न कर तीव्र सूर्यकी किरणोसे धुधुकार २ दूर जाती हुई दृष्टिके मार्गको रोकताहै. स्वच्छ जल कि, जो जीवनकी रक्षाका एक प्रधान उपाय है, उसका उस समय जोधाजीने विचार न किया। यद्यपि भाखरचिडिया सव विषयो व सामग्रियोसे परिपूर्ण है तौ भी उनमे एक इसही बडे विषयका अभाव देखा जाताहै, इसमे स्वच्छ जल पानेका कोई उपाय न था इस वातकी चिन्ता किला बनानेके समय जोधाजीके मनमे न उत्पन्न हुई। अतएव जोधपुरमे जो यह वडाभारी अभाव रहगया वह सहजहीमे समझा जा सकताहै। परन्तु पीछे अपरिणामदर्शी होनेके कारण महाराज जोधाजीकी निन्दा न कीजाय इस भयसे मारवाडके भाट लोगोने चतुरताके साथ समस्त दोष उसी तपस्वीके ऊपर डार दिया। वह कहते हैं कि, मिस्त्रियोने जोधपुरकी चारो सीमाओको नापकर देखनेके समय उन योगिराजके एकान्त आश्रमको भी सीमाके भीतर लेलिया था। अपने साधन स्थानको दूसरेके हाथमे जाता हुआ देखकर सिद्ध पुरुषने वहुतसी विनय की, परन्तु किसीने एक न सुनी। उसकी प्राचीन कुटी खंड २ होकर जोधपुरमे मिला ली गई तव उसने अत्यन्त क्रोध करके शाप दिया मेरे आश्रमको छीन लेनेसे जोधपुरका समस्त जल सदाही कसैला होकर दूषित रहैगा उसका शाप पूर्णहुआ, राजाने शुद्ध जल पानेका दूसरा उपाय न देखकर एक सरोवरसे जो कि, किलेके नीचे था, कलकी सहायतासे जलका मँगवाना आरम्भ किया। महाराज जोधाजीके आगे जो राठौर राजा हुए उन्होने वारूदकी सहायतासे गिरिशृंगको उडाकर शुद्ध जलके पानेकी वहुतसी चेष्टा की। परन्तु, उनका समस्त पारे-

श्रम वृथा गया । यदि इन सब बातोको छोडकर विचार किया जाय तो यही ज्ञात होगा कि, जोधपुरके बसानेके समय महाराज जोधाजीने नगरवासियोंके सुबीते असुबीते पर कुछ भी ध्यान नही किया था । जिस योगीका वर्णन ऊपर कर आये है जोधपुरके रहनेवाले आजतकभी उसके आश्रमको दिखाकर उसे भक्तिके साथ प्रणाम करते है ।

सम्वत् १५१५ के ज्येष्ठ मासमे राठौर वीर जोधाजीने अपने नगरकी प्रतिष्ठा की । यह मंडोरसे चारमील है । इसके उपरान्त वह और तीसवर्ष जीवित रहकर सम्वत् १५४५ मे इकसठ वर्षकी अवस्थामे इस लोकसे विदा होगये । उनके देहकी पवित्र भस्म उनके पितृपुरुषोकी भस्मके साथ मंडोरके महलमे रक्षित हुई । मारवाडके विशाल क्षेत्रमे जोधाजीही राठौर कुलका द्वितीय प्रतिष्ठानकर्त्ता था । उसके प्रतिष्ठित किये हुए जोधपुरने राठौरके इतिहासमे तीसरे युगकी अवतारण की थी । जीवनकी प्रथम अवस्थामे वह जिन असंख्य संकटोमे पतित हुए थे, सुखका विषय है उन्होने उसकी होनहार उन्नतिके मार्गको साफ करदिया था । वह उन सब आपत्तियोसे क्षणभरके निमित्त न घबडाये, वरन इससे महत् चरित्र और भी विकसित होगये उन्होने उन विषम आपत्तियोमे छुटकारा पानेके निमित्त जिन उपायोको निकाला और अवलम्बन किया था वह सभी उनकी होनहार उन्नति की सीढीस्वरूप हुए । जिन समस्त सामन्तोके बाहुवलके प्रभावसे प्राचीन राठौरोने अनेक महामहा कार्योका अनुष्ठान और अनेक बडी कीर्त्तियां स्थापित कीं थी । इतने दिन उन्होने जोधाजीके पितृ पितामहोसे परित्यक्त हो अत्यन्त दीन और गुप्तभावसे मरुस्थलके दुर्गम प्रदेशोमे समय विताया था । किन्तु उसने मंडोरसे दूरहुए उन समस्त त्यागेहुए स्वार्थवंचित प्राचीन सामंत कुलके वंशधरोको ढूंढ २ कर फिर उनके पदपर प्रतिष्ठित किया । पितृपुरुषोके पूर्वपदको फिर प्राप्त होनेसे वे सामन्त अत्यन्त आह्लादित हुए । उनका हृदय उत्साहसे परिपूर्ण हो उठा अपने स्वामीके निमित्त उन्होने जीवनतकको न्योछावर करदेनेकी प्रतिज्ञा की और प्रतिज्ञाके अनुसार वे गहलौतोके हाथसे राजधानीके उद्धार करनेमे सवप्रकारसे समर्थ हुए । इन समस्त वीरोसे जोधारावका असीम उपकार हुआ था, उनको वह समस्त जीवन न भूल सका । उस हरबूसांकला, उस पावूजी और उस रामदेवराठौर की मूर्ति पत्थरमे कटवाकर वीरवर जोधाजीने प्राचीन मंडोरके सन्मुख भागमे स्थापित की थी । आजभी उस मरुदेशके रहनेवाले उन समस्त वीरोकी घोडेपर चढीहुई प्रचड मूर्ति उस स्थानमे जीवि-

---

१ पावूजी अपने प्रसिद्ध तुरंगनी कालवीके ऊपर वैठाहुआहै । हरवा साकलाके समान यहभी वीरत्व, राजपूत कवि और देखनेवालोके आदरका धनहै, उसके समस्त कार्योकी एक २ तसवीर खींचकर प्रतिवर्ष मारवाडके निवासियोको दिखाई जाती है । २ रामदेवको राठौर गलत लिखाहै राठौर तो पावूजी थे और रामदेव तवर था । प्रे० टी० । ३ वीर रामदेव राठौरका नाम मरुदेशमे यहांतक विख्यात है कि प्राय सभी राजस्थानमे सुना जाताहै । राजस्थानके प्राय सभी गांवोमे इसके नामसे एक वेदिका वनी हुईहै ।

तकी समान विराजमान देखते है * उन स्वदेशप्रेमी वीरोका पवित्र नामकोईभी राठौर नही भूलसकता । आजभी वे प्रातःकाल सोतेसे उठनेके समय उनके पवित्र नामोकी मालाका जप करते है, आजभी वे प्रतिवर्ष उन पत्थरकी मूर्तियोकी भक्तिसहित परिक्रमा कर उनके गुणोका कथन करते २ अत्यन्त आनन्दित और आह्लादित होतेहै । राठौरवीर सियाजीने जिसदिनसे अपने पितृ पुरुषोंके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोडकर मरुभूमिकी अनन्त वालुकाराशिके ऊपर राठौर कुलकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे इस समय तक कुछ कम तीनसौ वर्ष बीतगये। इन तीन शताब्दियोमे उनके वंशधर इतने विस्तृत और वहुतगोष्ठी (सम्प्रदाय) वाले होगये कि, चालीस सहस्र वर्गकोश भूभागभी इनके निमित्त थोडा स्थान जान पडनेलगा । यद्यपि विधाताकी इच्छासे उसी वीरकेसरी राठौर सियाजी वर्तमान वंशधर अत्यन्त दीन भावसे समय बितातेहै, परन्तु इनके पूर्व पुरुषोके प्रचंड बाहुबलके प्रभावसे पराहत होकर जो प्राचीन राजपूतवीर स्वाधीनतासे अनन्तकालके निमित्त राज्यच्युत हुए थे; एकवार उनके विपयोपर विहार करनेसे किसी प्रकार भी दारुण विसमय और शोकके वेगको नही रोकाजासकता । पडिहार सांकला, ईदा, चौहान, गोहिल, सोनगरा कान्तिजित् और हुल्ल आदि जिन प्राचीन राजपूतोके अतिमानुष अनुष्ठानसे समस्त भारतभूमि एकसमय गौरवान्वित हुई थी, आज उन्हीके कुछेक मनुष्य राठौरोके वशमे सामन्त राजाओके रूपसे विराजमान है शेप सवका अस्तित्व तो ऐसा है कि, उनका नामतक

---

* यह सब मूर्तिये एक २ पत्थरकी चट्टानमे काटकर बनाई गईहै । यह सभी घोडेपर चढ़ी हुई और सम्पूर्ण योद्धाओके वेशमे है । वे दहिने हाथमे बर्छेको उठाये, बाएं हाथमे घोडेकी लगाम पकडे, पीठमे ढाल लटकाये, बडाभारी धनुप और तरकस बांधे, कमरसे तलवारे और कमरबंदमे छुरी खुसीहुईहै । वह भी उन्हीं मूर्तियोकी समान सजेहुए है देखनेसे यह मूर्तियें जीवित समझ पडतीहै । मानो सबही[1] अहंकारसहित टेढी भौहे करके देख रहीहै । कालके प्रभावसे भारतकी स्वाधीनताके साथही साथ समस्त शिल्पविद्याका भी लोप होगया है। हमारे पुराणोंमें जो हिन्दोस्थानके प्राचीन शिल्पका वृत्तान्त देखाजाताहै, आजकलकी अवस्था देखनेसे वह सभी कल्पित जानपडताहै । परन्तु उस शिल्पने भारतमे एक समय बडी उन्नति प्राप्त की थी, वर्तमान समयमें भी उसका अधिक प्रमाण पायाजाताहै । यह सब मूर्तिये एक बडे मैदानमे ऊपरकी ओर क्रमश. स्थापित है । पहिले पावूजी तदनन्तर रामदेव राठौर और उसके उपरांत राठौरवीर हैडवूसांकलाकी मूर्ति है, अन्तमें चौहानवंशीय प्रसिद्ध वीर गांगाकी मूर्ति है कि जिसने महमूदका आक्रमण रोकनेको सतलजके किनारे अपने सैंतालीस लडको समेत जीवनको न्योछावर कियाथा। इन सबके पीछे गहलौत कुलमें उत्पन्न हुए मिबेशतिमंगोलियाकी मूर्तिहै, इसनेभी राठौरराज जोधाजीकी सहायता की थी । इन कईएक वीरोकी मूर्ति देखनेसे मनमे अत्यन्त उत्साह हो उठताहै । अपने देशकी रक्षाके निमित्त इन्होंने अपने प्राणतक देने स्वीकार किये थे । दु खका विपयहै कि, इनका यथार्थ वर्णन कहीं नहीं देखाजाता।

---

१ हडवूसांकला राठौर नहीं था, सांकला था जो पवारकी एक शाखा है ।

राजस्थानके नक्शेसे लुप्त होगया है, आज भाटोंके काव्यग्रंथ और मनुष्योंके स्मृति-पद (याददास्त) के अतिरिक्त उनका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं देता। उनके वंशका वृक्ष अनन्त कालसागरमें डूवगया है, परन्तु उस अनन्त मरुभूमिमें उनके पैरोंके चिह्न अब भी जीवित भावसे विराजमान है। उन समस्त महापुरुषोंके पवित्र पद चिह्नोंको देखकर कौन उनका अनुसरण करके उनके महत् चरित्रोंके अनुकरण करनेमें अग्रसर न होता ? कौन राजपूत भाट कवियों समेत ऐसे समस्वरसे नहीं कह उठता कि "सवही अनित्य है, जीवन दीपकमें जलनेवाले पतंगेकी समान है। सब ऐश्वर्यकी सामग्रीका नाश होजायगा, केवल महापुरुषोंका नामही अनन्तकालतक अमर रहैगा।"

जोधारावके चौदह पुत्र * उत्पन्न हुएथे। उनमेंसे जेठे सांतलजीने पिताके राज्यको छोड राजस्थानके उत्तर पश्चिम भाटियाके राज्यमें सातलमेर नामक एक क़िला बनवाया। यह क़िला आजकल पोकर्णसे तीन कोशकी दूरीपर स्थित है। मरु-भूमिके एक प्रान्तमें सराई नामक यवनजाति वास करतीथी। उसके अधिपतिके साथ सांतलका घोर विवाद उपस्थित हुआ। उसी विवादमें उसने उस यवन राजा (खान) सराईको मारडाला था, परन्तु आपभी अपनी रक्षा न करसका सगोनामक स्थानमें इसका शव जलायागया। सांतलकी सात स्त्रियेंभी उसके साथ सती होगई।

जोधा रावके चौथे पुत्र दूदाने मैरताके विशाल क्षेत्रमें अपने वंशतरुको स्थापित किया। इसकेही वंशधर मैडतिया राठौरके नामसे प्रसिद्ध है। एक समय यह मरुदेश में वडे श्रेष्ठ वीरके नामसे प्रसिद्ध था। जिस वीरकेसरी जयमलने दिल्लीश्वर अकवरकी प्रचंड सेनाके विरुद्ध चित्तौड़गढकी रक्षा की थी, जिसकी पत्थरकी मूर्ति आजभी

---

* नाम.	गोष्ठी	भूसम्पत्ति.	कैफियत
१ सांतलजी	+	सातलमेर	पोकर्णसे तीनकोश
२ सूजाजी	+	+	जोधपुरका उत्तराधिकारी
३ जोगाजी	+	+	निर्वंश
४ दूदाजी	मेर्तिया	मैरता	इसने चौहानोंके हाथसे सांभरको
५ वरसिहजी	वरसिहोत	नौती	छीन लियाथा इसके वरिन नामक
६ वीकाजी	वीकावत्	वीकानेर	एक पुत्र हुआ वरिननके दो पुत्र जयम
७ भारमह्लजी	भारमह्लोत	वीलारा	ल और जगमाल हुए इनसे जयमलो-
८ शिवराजजी	शिवराजोत	दूनारा	त और जगमलोत दो गोष्ठी उत्पन्नहुई
९ कर्मसीजी	कर्मसोत	क्योनसर	रवीमसर
१० रायपालजी	रायपालोत		
११ सावतसीजी	सावतसीगोत	द्वारो	
१२ वीदाजी	वीदावत	वीदावाटी	जि० नागौर
१३ वनवीरजी			
१४ नीवाजी			

दिल्लीके सिहद्वारमें विराजमान है, राठौड़ राज कुमार दूदा उसीका पितामह था। दूदाके एक सर्वगुण सम्पन्न और परमविदुषी पुत्री हुईथी। उसका नाम मीराबाई था। उसी मीराबाईके साथ राणा कूंभाका विवाह हुआथा। मीराबाईके गुणोकी प्रशंसा आजतक मेवाड़मे गाई जाती है।

छठवे पुत्र बीकोने अपने चचा कांधलकी चालचलन व रीति भाँतिको स्वीकार किया और अन्तमे उसकेही साथ मिलगया। तदनन्तर जाटोके अधिकृत कईएक गाँव और नगरोको छीनकर उसने प्रसिद्ध नगर बीकानेरकी प्रतिष्ठा की बीकाजीका सविस्तर वृत्तान्त बीकानेरके इतिहासमे प्रगट होगा।

राठौरकुल चूडामणि जोधाके मरनेके उपरान्त उसका दूसरा पुत्र सूजा मारवाडकी गद्दी पर बैठा। जो नियम कि राजगद्दीपर बैठनेका सदासे चला आताथा, उसमे यह विरुद्धता क्यों हुई, इसका कोई कारण नही देखा जाता, ग्रन्थकर्ता भाट-कवियोने भी इस विषयमे कुछ नही कहा। जो हो सूजा सबप्रकारसे अपने पिताका योग्य पुत्र था। उसके अधिकारमे मारवाडका राज्य सत्ताईस वर्ष रहा, उसने बड़ी सावधानी और चतुरतासे राज्यकार्य किया।

दिल्लीके सिहासनके लिये जिस समय लोदीवंशीय राजाओमे अत्यन्त विग्रह उपस्थित हुआ, उस समय मारवाड़का सिहासन यवनोकी दुष्ट दृष्टिसे बचाहुआथा। घरकेही युद्धमे लिप्त होकर लोदियोको देश जीतनेका अवसर प्राप्त न हुआ। किन्तु यवन हिन्दुओके परम शत्रु है। हिन्दुओको भलीप्रकार शांतिसे सुख भोगते देख उनको अत्यन्त असंतुष्टता उत्पन्न होतीहै। मुसलमान् राजाओको हिंदुओके शांति भंग न करनेकी चेष्टा करनेपर भी उनके यहांके स्वार्थी और हिन्दुओके द्वेषी सेनापति समय २ पर हिन्दुओके ऊपर आक्रमण कर उनपर अनेको प्रकारके अत्याचार करतेथे। सम्वत् १५७२ (सन् १५१६ ई) के श्रावण मासके शुक्लपक्षकी पार्वती तृतियाको पीपार

---

१ यह बात गलतहै मीराबाई दूदाकी वेटी थी और कूंभाको विवाही गईथी क्योंकि वास्तवमे मीराबाई दूदाजीके दूसरे बेटे रत्नसिहकी वेटी थी और महाराना कूंभाके पोते महाराना सांगाजीके कँवर भोजराजको विवाही थी। २ जोधाके पीछे सातल गद्दीपर बैठाथा और उसके पीछे सवत् १५४८मे उसका भाई सूजा उसका उत्तराऽधिकारी हुआ। ३ राजस्थान प्रथम खण्डके अ०२३ पृ० ७२३ मे पार्वती तृतीयाका वर्णन देखो। ४ पीपार यह एक साधारण छोटासा शहर जोधपुरसे १५ कोश है। इसमे कुछ अधिक १५०० घर है। इस शहरमे बहुतसे वनिये रहते है। कहा जाताहै कि, ईसाके जन्मके पहिले उज्जैनमे जो एक गन्धर्वसेन नामक पंवार राजा था, उसहीने इस पीपाडनगरको वसाया था। महात्मा टाडसाहबको यहां एक पत्थरका लेख मिलाथा। उससे विजयसिह और दूलनजी राजाका नाम पाया जाताहै। यह दोनोही गहलौत कुलमे उत्पन्न हुएथे और रावलकी उपाधिद्वारा प्रसिद्ध थे। इससे जानाजाताहै कि गहलौतोने पंवार राजाओसे उस नगरको जीताथा। इधर मेवाड़के एक प्राचीन इतिहासमे भी देखाजाता है, कि गहलौत कुलमे जो चौवीस शाखाओमे बटाहुआ है, उन चौवीस शखाओसे अतिरिक्त दूसरे " पिपाडा गहलौतभी " हैं।

नामक नगरमें एक महोत्सव होरहाथा, उस महोत्सवमे मारवाडकी अनेक दिशाओंसे असंख्य * राजपुत स्त्रिये भगवती गौरीकी पूजा करने आईथी । उसी समय उस "तीज" के दिन एक पठानोकी सेनाने आकर उस मेलेपर आक्रमण किया, और वे १४० कुमारियोको हरलेगये । कोईभी उनको न रोकसका । इस शोचनीय समाचारको राजा सूजाने सुना । क्रोध और हिंसासे उसका मस्तक जलने और चकराने लगा दुष्टोंको दंड देकर कुमारियोकी रक्षाके निमित्त वह अत्यन्तही कातर हो उठा। अधिक सेनाके सजानेमे विलम्व होनेके भयसे वह अपनेही साथवाले पहरेदार सिपाहियो समेत पाखण्डो पठानोका पीछा करनेको वाहर निकला सूजाने अत्यन्त वेगसे धावा करके उनका पीछा किया, पीछा करते २ अन्तमे उसने मुसल्मान सेनाको देखपाया। वह क्रोध और हिंसासे दुगना उत्तेजित हो उठा। सिंह जैसे अपने वच्चोको हराहुआ देख अति प्रचंड वेगसे हरनेवालेपर आक्रमण करता है। आज मारवाड़के अधिपति राव सूजाने उसही प्रकार कुमारियोके हरनेवाले पठानोके ऊपर अत्यन्त प्रचंड पराक्रमसे आक्रमण किया, शीघ्रही दोनो दलोमे घोर युद्ध होने लगा । थोड़ेही देर युद्धके उपरान्त सूजाने यवनोको मार कुमारियोको छुड़ालिया । सूजा विजयीहुआ। यद्यपि उसने यवनोको मारकर कुमारियोका उद्धार करलिया, परन्तु शत्रुओके घोर आघातोंसे वह इतना घायल हुआ था कि उन्ही आघातोंसे वह अधिक क्षण जीवित न रहसका। राजपूत कुमारियोके छुड़ानेके कुछ ही देर उपरान्त वह भी रणभूमिमे गिरपड़ा। किन्तु वह मृत्यु उसकी आनन्दकी मृत्यु हुई। वे एक सौ चालीस कुमारियां जव उसको घेरकर उसकी वीरताके गीत गानेलगी, तव उसके आनन्दकी सीमा न रही। उस असीम आनन्दका भोग करते २ वीर सूजाकी आत्मा अनन्त सुखमय अमरधामको चलीगई। राव सूजाकी इस असीम वीरताका वर्णन आजभी राजस्थानके भाटोके मुखसे सुना जाता है, आजभी उसी पार्वती तृतीयाके मेलेमे उस मारवाड़की राजाकी असीम वीरता और महत्वता तथा पीपाड नगरकी कुमारियोके हरण किये जानेका वर्णन उत्साह सहित गाया+ जाता है।

---

* असंख्य राजपूत स्त्रियोका आना गलतहै क्योंकि न तो असंख्य राजपूत स्त्रियाँ पीपाडमे आईथीं और न मेलेमे राजपूत स्त्रियोके आनेका कहीं नियम है। और फिर इसतरह बिनारक्षाके राजपूत स्त्रियो आती जाती नहीं है कि, जिनसे एकदम १४० को मुसलमान पकडकर लेजावे और एकभी तलवार उसजगह न चले सभवहै कि साधारण प्रजाकी वहूवेटिया है (प्रे० टी०)

+ यह घटना राव सूजाजीके समयमे श्रावणी शुक्ल २ स० १५७२ को नही हुईथी, किन्तु राव सातलके समयमे चैत्र सुदी ३ स १५४८ मे हुई थी उस समय राव सातलजीसे और अजमेरके सूवेदार मल्लूखांसे पीपाडके पास लडाई होरहीथी। तीजके दिन गोव कोसानेके तालावपर से जो पीपाडके नजीक है मल्लूखाँका एक सर्दार तीज पूजनेवाली सात वीसी लडकियोको पकड लेगया सातलजी मल्लूखांके लशकर पर रातको धावा करके उन लडकियोको छुडा लाया और आपभी वहुत जखमी होनेसे उसी रातको गाव कोसानेमे आकर मरगया। सूजाजी गद्दीपर वैठे।

सूजाके पांच पुत्र थे। उनमेंसे जेठेने तो अकालमेही देह छोड़ दी थी, इस कारण उसका पुत्र गांगा पितामहके सिंहासनपर बैठा। सूरजमलके चार पुत्रोंमेसे दूसरे पुत्र ऊदाके वीर्यसे ग्यारह पुत्र उत्पन्न हुए। इनका वंश उदावतके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इनको मारवाड़ और मेवाडमे बहुतसी भूमिसम्पत्ति प्राप्त हुई। उनमेसे तीमाज, जेतारन गूदोज, वराठिया और रायपुर आदि कुछेक नगर प्रसिद्ध है, तीसरे सांगाको एक स्वतंत्र नगर प्राप्त हुआ था, उसका नाम वरोहमे था। इस सांगाके वंशधर सागावतके नामसे प्रसिद्ध है। चौथे प्रयागसे प्रागदास गोत्र उत्पन्न हुआ। पांचवां वीरमदेव, इसके नरा नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। मारवाड़ निवासी नराको देवताके समान पूजा करते है। सोजत नामक स्थानमे इसकी एक मूर्त्ति स्थापित है तिसकी आजकल भी पूजा होती है नराके वंशधर नरावत जोधाके नामसे प्रसिद्ध है। इसकी एक शाखा हाडोतीके अन्तर्गत पंच पहाड़ नामक स्थानमें देखी जाती है।

राठौर वीर सूजाके सम्वत् १५७२ (सन् १५१६ ई०) के भाद्रपद मासमे परलोक गमन करनेपर उसका पौत्र गांगा मारवाडके सिंहासन पर बैठा, उससे गांगाका दूसरा चचा सेरवाजी उसका घोर शत्रु होगया। सेरवा अपनेको पिताका योग्य उत्तराधिकारी कहकर प्रचारित करने और गांगाको गद्दीसे उतारनेके निमित्त एक योग्य सहायताकी खोज करने लगा। लोदीवंशीय दौलतखां नामक जिस विश्वासघातक यवनने दिल्लीश्वर इब्राहीम लोदीका सर्वनाश करनेके निमित्त वीरकेसरी बाबरको भारतवर्षमे बुलाया था, वही इस समय राठौरोंके हाथसे नागोरको छीनकर सुख भोगता था। अपने स्वार्थसे अंधेहुए मनुष्यको अपने हिताहितका ज्ञान एकसाथ भूलजाता, यहां तक कि, वह यथार्थ पशुकी समान होजाता है। आज स्वार्थान्ध सेरवाजी भी ठीक ऐसाही होगया। जिस दौलतखांने उसके पितृपुरुषोके जीते हुये प्राचीन नागौरको बलपूर्वक छीन लिया था। आज सेरवाजी स्वार्थ पूर्ण करनेके निमित्त राठौर कुलके उसी शत्रुके निकट सहायताकी प्रार्थना करने गया। अपनीही जातिकी शत्रुतासे ऐसेही कायरोद्वारा भारतका सर्वनाश होगया है। जो हो, स्वदेशवैरी स्वार्थान्ध सेरवाजीकी दुष्टतासे मारवाडमे एक वड़ाभारी झगडा उपस्थित हुआ। इस घरके उपद्रवमे नित्य लिप्त हो आज महाराज जोधाजीके पुत्र प्रपौत्र परस्पर एक दूसरेके हृदय रक्त पीनेको उन्मत्त हो उठे। मारवाडके वीरगण आज दो दलोमे बँटकर दोनो राठौर राजकुमारोंके पताकाके नीचे खडेहुये दौलतखांने इनका विचोही होकर झगड़ा दूर करनेकी चेष्टा

---

१ वीरमदेव सूजाका वेटा नहीं सूजाके बेटे वाणाजीका वेटा था। जो कि कँवरपनेमे मर गयाथा। २ नराजी वीरमका वेटा नहीं था, सूजाजीका वेटाथा और वाणाजीसे वडाथा। ३ यह दौलतखा न तो लोदी वंशी था और न इसने राठोरोसे नागोर छीना था यह तो नागौरका स्वतंत्र रईस नव्वाब कई पीढियोंसे था। और टाक जातिका मुसलमान राजपूत गुजरातके बादशाहोंकी शाखामेसे था। और खानजादा कहलाताथा। गुजरातके वादशाहोकी सहायतासे इसको नागौरका अधिकार मिलाथा।

की और मारवाडके राज्यको शत्रुओंके बीचमे बाँट देना चाहा। किन्तु तेजस्वी गांगाने अहंकारपूर्वक उस प्रस्तावको अस्वीकार किया और तब दोनो तलवारकीही सहायतासे अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेमे तत्पर हुए। सौभाग्य वश उसको मरुस्थलीके श्रेष्ठ वीरोंकी सहायता प्राप्त हुई। इस कारण उस गृहयुद्धमे उसीने सब प्रकारसे जय प्राप्त की। उसका घोर शत्रु सांगा युद्धस्थलमे मारागया और दौलतखां लोदी अत्यन्त घायल और तिरस्कृत होकर युद्ध क्षेत्रसे भाग निकला।

राज्यको पाकर गांगाने बारहवर्षतक निष्कंटक राज्य किया। इसी समय वीरवर बाबरकी प्रचण्ड रणदुन्दुभीके शब्दसे समस्त हिन्दोस्थान कांप उठा। उस भयानक कंपके साथही साथ दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोदीकाभी सिंहासन कांप उठा-उसका राजमुकुट पतित होकर पृथ्वीपर गिरपडा। अकस्मात इस विप्लवके होजानेसे हिन्दूराजसमाजमे एक घोर भय उपस्थित होगया। सभी राज्यके नाश होनेके भयसे अत्यन्त भयभीत हो इस नये आयेहुए प्रचंड शत्रुके पराजित करनेका यत्न करने लगे-और सबने महारथी राणा संग्रामसिंहकी पताकाके नीचे इकट्ठे हो उस भयानक भारत-शत्रुके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की मारवाडपति राव गंगाभी अपने देशकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त उस महायुद्धमे सांगाके साथ हुआ। इस भयानक संग्राममे राजपूतोने जो आश्चर्य्यजनक वीरता दिखाई मेवाडके इतिहासमे उसका भलीप्रकारसे वर्णन हुआहै। यदि राजपूतकलंक तँसर सलहदी विश्वासघातकता कर बाबरकी ओर न हो जाता तो राजपूत अवश्यही मुसलमानोंके पंजेसे भारतको छुड़ालेते। अन्यान्य राजपूतोंकी समान राठौरोने भी इस युद्धमे असीम वीरता दिखाईथी। कहते है कि, इस युद्धमे सब सेनाके सामने इसी सेनाने स्थान पायाथा। उस राठौर सेनाका सेनापति राव गंगाका पोता वीर बालक रायमल[1] हुआथा। रायमलने मैरतिया सरदार खाँतो और रबरत्ननामक दो राठौर वीरो समेत बाबरकी तोपोंके सामने हो अतुल वीरताको प्रकाश कर अन्तमें रणभूमिमे प्राण त्यागदियेथे।

इस दारुण पौत्र शोकसे गांगा अधिकदिन जीवित न रहसका[3] उस भयानक युद्धके चारवर्षके उपरान्तही उसने देहको त्याग इस शोकके बोझसे छुटकारा पाया।

---

१ यह रायमल गांगाजीका पोता नहीं था। दूधाजी मेडतीयका बेटा था। और गांगाजीका पोता राममल तो इस लडाईके कई वर्ष पाछे पैदा हुआथा।सबमे बडा पोता राव गंगाजीका राव राम था। वह भी इस लडाईसे दो वर्ष बाद संवत् ११८५ में पैदा हुआथा रायमल मेडतिया अपने भाई मेडतेके राव वीरमदे ही तरफसे अपने भाई रत्नसिंह साहित जो मीराबाईका बाप था राजा सांगाकी मददके लियेरया उस लड़ाईमे यह दोनो भाई काम आगये थे। २ पतिकी दीहुई कुलतालिकामे लिखाहुआहै कि गांगाको विष दियागयाथा। परन्तु यह विश्वासके योग्य नहीं क्योंकि इसका वर्णन और किसी ग्रन्थमे नही पायाजाता। ३ इस शोक सन्तापकी कथा भी नयीगढन्त जैसी मालूम होतीहै जोधपुर राज्यके मूल इतिहासमे इसका कहीं पता नहीं लगता।

गांगाके मरनेपर मालदेव सम्वत् १५८८ (सन् १५३२ ई०) मे उसके सिंहासनपर बैठा। मारवाड़के बड़े २ राजाओके समान मालदेभी मारवाडके इतिहासमे एक महत् चरित्रको स्थापित करगयाहै। उसके राज्यकालमे मारवाडकी जैसी उन्नति हुईथी, यदि उसमे कुछभी चेष्टा की जाती तो वह देश रजवाडेमे सब देशोंका सिरमौर गिनाजाता। परन्तु राव मालदेवने अपने यत्नमे न्यूनता न की। यद्यपि वह अपने राज्यमे बाबरके आक्रमण करनेकी आशंका करता था, परन्तु इस आशंकासे उसकी कुछ हानि न हुई क्योंकि बाबरकी तीक्ष्ण दृष्टि उस समयतक मारवाडकी ओर नही गई। अन्न उपजानेवाली गंगा किनारेकी भूमि छोड़कर शाक उपजानेवाले महावीर मारवाडकी प्रचंड बालुकाराशिकी ओर जानेकी उसने इच्छा भी न की। इससे मालदेवको अपने राज्यके बढानेका एक अच्छा अवसर हाथ लगा। जिस स्थानसे दिल्ली और मारवाडकी सीमा विभक्त है उस स्थानपर कईएक किले बनेथे, वे किले दिल्लीके राजाओके अधीन थे। इस समय अवसर पाकर मालदेवने उन सब किलोको अपने वशमे करलिया और दूर बसेहुए दूढाड़मे राठौरकुलकी विजयपताका स्थापित की। उसका गौरव दिन २ बढने-लगा। उसके गौरववृद्धिके मार्गमे उस समय एकभी कांटा वर्तमान न था। वीरकेसरी राणा सांगाके मरनेपर मेवाड राज्यमे जो घोर उलटपलट और विग्रह उपस्थित हुआ उसमे सभी मुगल, पठान आदि शक्तिमान मुसलमान लिप्त थे उस समयमे मारवाडकी ओर किसीकी भी दृष्टि न पड़ी। अतएव राजा मालदेवने अप्रतिहत प्रभावसे अपनी असीम प्रभुताको प्रगट कियाथा। उसने ऐसे सुअवसरको पाय अपने राज्यके बढ़ानेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की, इस कारण जो शत्रु मित्र उसकी उन्नतिके मार्गमे कंटक स्वरूप खडे हुए थे, उन्हीको अपनी तलवारसे काट उनके राज्यपर अपना अधिकार किया। ऐसेही धीरे२वह मारवाडका अति श्रेष्ठ राजा होगया। इतिहास लेखक फरिस्ताने इसकी अपेक्षा औरभी उच्च सन्मान दिया है। वह कहताहै कि "मालदेवही उस समयमे हिन्दो-स्थानके प्रसिद्ध राजाओमे गिना जाताथा।"

मारवाड़पति राव मालदेव जो यथार्थहीमे इस सुनामके योग्य था, उसके महत चरित्रोपर विचार करके भलीप्रकार प्रगट होजायगा कि उसके चरित्र वा प्रभाव बहुत बड़े थे। राजपद्पर अधिष्ठित होकर उसने मुसलमानोके ग्राससे पितृपुरुषोके प्राप्त किये दो प्रधान नगर नागौर और अजमेरका उद्धार किया। इसके आठवर्षके उपरान्त सम्वत् १५९६ मे सिंधिलोके अधिकारसे उसने जालोर, सिवाना और भाद्राजून नामक तीन *नगर छीन लिये, और बीकाके वंशधरोको बीकानेरके अधिकारसे च्युत करदिया। लूनी नदीके किनारेवाले जिन नगरोमे राठौरवीर सियाजीने एक समय अपनी विजयपताका स्थापित की थी, उन सब स्थानोके अधिपतियोने इससे पहिले राठौर कुलकी आधीनताको दूर बहाकर स्वाधीनता प्राप्त की, परन्तु इस समय मालदेवने उन

* राव मालदेवने ये तीन नगर स्यन्दल राठौरोंसे नही छीनेथे। जालोर तो सं० १५९५ मे बिहारी पठानोसे छीना गयाथा और सिवाना जेतमालोत राठौर जातिके राना डूगरसी राठौरसे लियाथा।

सबको पराजित करके उन्हे फिर अधीनताके बंधनमे बाँधा । उसका प्रचण्ड प्रताप अत्यन्त प्रकाशित हो उठा । उसके असीम प्रतापके सामने विशाल मरुस्थलीके सभी राजाओने शिर झुकालिया । जो प्राचीन "भूमियांगण" एक समय मरुस्थलीके बीचमे अत्यन्त दुर्धर्ष गिने जाते थे, वे भी राठौरराजके प्रवल प्रतापसे पराजित हुए और उन्होंने उसको समस्त मारवाड़का अधिपति कहकर स्वीकार किया और वे अपने रुधिरका दान कर २ उसकी सेवा करने लगे ।

जब प्राचीन भूमियांगण उसके अधीन हुए, तब वह राठौरराज मालदेव अपनी विजयिनी सेनाको लेकर धीरे २ उत्तरकी ओर वढने लगा और प्रचण्ड प्रतापी भाटियोंके साथ घोरयुद्धमे प्रवृत्त हो अपनी उन्नतिके मार्गको औरभी स्वच्छ करनेकी इच्छाकी । वह युद्ध धीरे धीरे बढ़ताहुआ बहुत दिनो चला । इधर उसने दो एक नगरोको जीत अपने अधिकारमे किया । विक्रमपुर * ने उसकी अधीनता स्वीकार की । उसने आमेरकी राजधानीसे दशकोश दूर बसेहुए चाटसू नगरपर अधिकार कर उसके आसपास शहर पनाह वनवाई । इससे पहले देवतोने शिरोहीको जातालयाथा, किन्तु राठौर राजने इस समय उसको जीतकर फिर उन्हींके अधिकारमे कर दिया । उसने गौरवकी इच्छा और हिंसाके वशवर्त्ती हो इनसव ग्राम और नगरोको जीताथा, केवल यही नहीं, वरन किस प्रकारसे जीतेहुए स्थान रक्षित रहसके इसकाभी उसने विशेष प्रबंध किया । इसी अवसरमे मारवाडके चारोओर किले और वड़े २ महल इत्यादि वनने लगे । जोधपुरके चारोओर एक वड़ी दृढ दीवार वनाईगई । वीरकेसरी जोधाने अपने वसाये नगरकी शोभा और रक्षाके योग्य जिन महलो और सुन्दर अट्टालिकाओको स्थापित कियाथा, मालदेवने उनकोभी कुछ मरम्मत करवाई । सांतलमेरको तुडवाकर उसने उसकी सव सामग्रियोसे नये जीतेहुए पोकर्ण + को दृढ़ किया और उस नगरके प्राचीन निवासियोको वहांसे निकाल मारवाडी प्रजाद्वारा उसको सज्जित करनेलगा । सिवाना नगरमे

---

* यहापर इसके पितृपुरुषोंके गोत्रकी एक शाखा बास करतीथी वह गोत्र इस समय जैसलमेरके साथ मिलगयाहै । वह इस समय मालदोतके नामसे प्रसिद्ध है । मालदेत मारवाडमें वडे साहसी दस्यु कहेजातेहै । + पोकर्ण झालामंड और जोधपुरके ठीक बीचोबीचमे स्थितहै । यह दुर्ग अत्यन्त दृढ और सुरक्षित है । सन् १८१९ ई० के २ नवम्वरके दिन मिस्टर टाड्साहव जिस समय झालामंडसे जोधपुरको आरहेथे उस समय मार्गमे पोकर्णके सर्दारने उनका वड़ा आदर सत्कार कियाथा । उस समयके पोकर्ण सामन्त राजाका नाम सालमसिंह था।सालमसिंह मारवाडके सामन्तोंमे धन और प्रतापमे श्रेष्ठ था । यह चाम्पावत्के नामसे प्रसिद्धहै।यद्यपि चाम्पावत् मारवाड़ राजाके अधीन है किन्तु राठौर राजा इनके भयसे कांपतेही रहे । इनके प्रचण्ड पराक्रमसे राठौरोंके सिंहासनपर कईवार आपत्ति आई । सालमसिंहका परदादा देवीसिंह ऐसा तेजस्वी और वलवान था कि, वह किसी राजासे कुछभी भय न करताथा।वह प्राय यही कहाकरता, "मारवाडका सिंहासनतो मेरी तलवारके मियानके भीतरहै ।"

कुंडलकोट और इसके समीपही पीपलोद दो शैलकूटकी कोठीपर भद्राजूनहै, उसके निकट जूॅडोजरिया, पीपाड और दूनाडा नगरमे एकर दृढ दुर्ग वनवाया । प्राचीन गढ वीटली (अजमेर) कि, जिसका बुर्ज आजतक "कोटवुर्ज" के नामसे प्रसिद्ध है वह मालदेवहीने वनवायाथा । एक कलके द्वारा उसने किलेके ऊपर पानीको चढ़ाकर अपनी अतुल बुद्धिका परिचय दिया था। इन सव महत् कार्योंमे उसका अतुल धन व्यय हुआथा। केवल मेरता* नगरके किलेकी मरम्मतमे २४००० रुपया व्यय हुआथा । अपने राज्यकी दृढ़ताके योग्य वहुतसे कार्य्य करके मालदेवने उन कार्योंमे जो रुपया व्यय कियाथा, उसका विचार करतेही हृदय आनन्दसे परिपूर्ण होजाताहै । भाट कवि कहते है कि, रत्न उपजानेवाली सांभरके अनंत रत्नोंकी सहायतासेही उसने अत्यन्त धन व्यय कर अपने कार्योंको पूरा कियाथा । इससे भलीप्रकार प्रगट होता है कि, इस समय सांभरझीलमे वहुतसा लवण उत्पन्न होता था कि, जिसकी आयसे वहुत धन राठौर राजके कोशमे आता था। इसी लवणसे प्राप्त हुए धन द्वारा मालदेव अपने राज्यकी वृद्धि करसका था + ।

शांतिके फूलोंकी शैयापर सोकर राठौरवीर मालदेवने क्रमशः दशवर्ष तक निष्कंटक राज्यका भोग किया। परन्तु इस विमल शांति सुखका भोग भोगना उसके भाग्यमें और अधिक दिन न रहा । इतने दिन वह केवल अपनेही राज्यके बढ़ानेमे लगारहा था । किन्तु इस समय उसको अपने प्राण बचानेमे संकट आ उपस्थित हुआ । वीर केसरी वावरने इसी समयमे देह छोड़ी और उसका पुत्र हुमांयूॅ प्रचंडवीर शेरशाह द्वारा पिताके

---

* यह नगर मंडोरके राजा राव दूदाका वसायाहुआ था। मालदेवने इसमे एक दुर्ग वनवाकर अपने नामपर उसका नाम मालकोट रक्खा। मालकोटके दुर्गका व्यास प्राय एक कोशका होगा।

+ इसका राज्य कितनी दूरतक फैल गयाथा, भट्टग्रन्थोंमे इसका विवरण भलीप्रकारसे देखा जाताहै। यहांपर प्रयोजन समझकर उसका वर्णन कियाजाताहै। जो नगर और गॉव मालदेव के अधिकारमे थे उन सबकाही नाम यहॉ लिखाजाताहै । सोजत, सांभर, मेरता, खाटू, बदनौर लाडनू, रायपुर, भाद्राजून, नागौर, सिवाना, लोहागढ़, झागलगढ, बीकानेर, भीनमाल, पोकर्ण, बाढमेर, कसौली, रैवासो, जोजावर, जालौर, वंवली, मलार, नाडोल, फिलोदी, सांचौर, डीडवाना, चाटसू, लुहान, मलारना, देवरा, फतहपुर, अमृतसर, फावर, मीनापुर, टोंक, टोडा, अजमेर, जिहाजपुर, और प्रेमरका, उदयपुर, (शेखावटीके अन्तर्गत) इन अड़तीस जिलोंमे बहुतसे तो जालोर, अजमेर, टोंक, टोडा और बिदनौरके अन्तर्गत है। मालदेव जैसा विशेष प्रतापी राजा था और जैसा उसका राज्य राजस्थानमे बडीदूरतक फैला था, वह ऊपरके नामोके पढ़नेसेही भलीप्रकार ज्ञात होजायगा। किन्तु इन सब जिलोंमे मालदेवने कुछही दिनो राज्य करपाया। चाटसू लवान टोंक टोडा और जहाजपुर तो शीघ्रही उसके हाथसे निकल गये। बिदनौरकीभी यही गति हुई। यद्यपि विदनौर और उसके अन्तर्गत तीनसौ साठ गॉवोंमे राठौर राजा वास करतेथे, किन्तु वे सबही मेरता गोत्रसे उत्पन्न हुएथे। वीरकेसरी जयमलनेही इस मेरता कुलको उज्ज्वल कियाथा । इसी कारण उस समयसे बिदनौर मेवाडकी भूमिसम्पत्ति गिना जानेलगा।

राज्यसे भगाया जाकर अपने प्राण बचानेके निमित्त दूरदेशको भागा । कहां तो वह दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर निष्कंटक राजसुखको भोगता सो ऐसा न होकर वह अपने पिताके सिंहासनसे वांचित हो भाग्यके विपरीत स्रोतमे तृणकी समान तैरने लगा। उस भयानक आपत्तिकालमे उसको जो दु.सह दु ख भोगना पड़ा उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमे भलीप्रकारसे किया गया है। उस आपत्तिकालमे उस निस्सहाय हुमांयूने शत्रुद्वारा भगाये जाकर राठौर राजा मालदेवके निकट शरण पानेकी प्रार्थना की थी, किन्तु मालदेवने एकवेर उसके मुँहकी ओर भी न देखा । इसमे संदेह नही कि मालदेवने इसमे अत्यन्त निष्ठुरता प्रकाश की थी,किन्तु जिस कारण वश हो वह इस निष्ठुरताके करनेको विवश था उसका हमने वर्णन नही किया । मालदेवने जो हुमायूँके साथ असद्व्यवहार किया उसका विशेप कारण है। बीतेहुए बयानांके भीपण युद्धमे मालदेवके* पुत्र रायमलको बाबरने मार डालाथा । इस दारुण पुत्रशोकको वह राठौरराज समस्त जीवन भी न भूलसका । इस कठोर शोकानलके शांत करनेके निमित्त उसने बाबरके हृदयके रुधि-रको बहानेकी इच्छा की थी, किन्तु उसकी वह इच्छा इस समयतक न फली । जबसे युद्धमे उसका पुत्र मारागया तबसे वह बाबरको सहस्रोही गालियां दिया करता था।हुमायूं बाबरका पुत्र है । इस कारण वह चाहै दुःखी हो चाहै सुखीही हो उसके साथ सहानु-भूति प्रकाश करनेको मालदेवकी इच्छा न हुई । हुमायूं उसकी शरण लेनेकी इच्छासे वहां आया, परन्तु उसके हृदयकी अग्नि कि, जिसमे धुंआ सुलग रहा था अति प्रचंड वेगसे जल उठी । तमोगुणने प्रचण्ड प्रबल हो उसके हृदयके सतोगुणको नाश करडाला, अतएव उसने क्षणमात्रको भा विचार कर न देखा कि नि सहाय हुमायूं शरण लेनेकी इच्छासे उसके निकट आया है । अतिथिसत्कारके ऐसे असद्व्यवहारके कारण मालदेवने जो पाप संचय किया था फिर वह उसका प्रायश्चित्त न करसका । अपने बलके अहंकारसे मत्त हो उसने क्षणभरको भी न विचार देखा कि, वही हुमायूं विपत्तिसे छूटकर समस्त भारतके सिंहासनपर फिर बैठेगा और उसका जेठापुत्र अकबर थोडेही दिनोंमे इस असद्व्यवहारका योग्य फल देगा । अकबर + हुमायूकी उस घोर रात्रिका केवल एक ध्रुवनक्षत्र, उसके छिन्न भिन्न हृदयका केवल एक सान्त्वनाका पदार्थ था । वह उस समयमे मरुस्थलकी वालुकाराशिके ऊपर शुक्लपक्षकी शशिकलाके समान दिन २ वढ रहा था । धनके भोग विलासमे सोकर मालदेवने उस समय एकवेर भी स्वप्नमे न देखपाया कि, इसी अकबरके हाथमे राठौरकुलका भाग्यचक्र एकदिन अर्पित होगा, उसीके महत्व और उदारताके गुणसे एकदिन उस मालदेवके वंशधर "राजराजेश्वर" की उपाधि धारण करेगे। शरण चाहनेवाले हुमायूंपर इस प्रकारका असत् आचरण कर माल-देव किसीभी उपकारको न प्राप्त हुआ, वरन् इससे उसको एक वड़ी आपत्तिमे ग्रसित

---

* यह रायम॰ मालदेवका पुत्र नहीं था । जिसके शोकका यह व्यर्थ वृत्तान्त गढ़ा गयाहै। इस विपयमे पहले टिप्पणा होचुकी है । (प्रे० टी०) । + अकबर तो इस समय उत्पन्न भी नहीं हुआथा ।

होनापड़ा। हुमायूंके प्रचंड शत्रु शेरशाहने मालदेवके इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको जान उसको अपने वशमे करनेकी इच्छा की। सब प्रकारसे इसका यही कारण जाना जासकताहै कि शेरशाह मालदेवके प्रतापको देखकर शंकित होगया था। यवनराजने जब राठौरराजके पराक्रम और प्रतापका वर्णन सुना तब उसके मनमे एकाएक यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि, दिल्लीके समीप ऐसे प्रचण्ड प्रतापी राजाके रहतेहुए उसका प्राप्त कियाहुआ वह राज्य कभीभी निष्कंटक नही होसकता। इस विषमयी चिन्ताके दंशनसे अत्यन्त पीड़ित हो शेरशाह मालदेवके परास्त करनेको आतुर हो उठा, और इसी अभिप्रायको पूर्ण करनेके निमित्त अस्सी सहस्र सेनाके संग मारवाड़के राज्यपर आक्रमण किया। मालदेवने इस वृत्तान्तको जान पाया। वह पहिले तो कुछ न बोला और न उसने उसके रोकनेका कोई प्रबंध किया, यवन सेनाने बे रोकटोक अतिवेगसे मारवाड़के भीतर प्रवेश किया। उस समय राठौरराजने उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पचासहजार राजपूत सेनाको इकट्ठा किया। आज पचास हजार राठौर वीरोकी तलवारे एकत्रित हो देशके वैरी मुसलमानोके विरुद्ध उठीं। किन्तु रणविशारद मालदेव शीघ्रताके वशवर्ती न हुआ, वरन् अत्यन्त सावधानी और बुद्धिमानीसे सेनादलको चलाने लगा। उसके युद्धकी तैयारीका उत्तम यत्न देख शेरशाह अत्यन्त भयभीत हुआ। युद्ध विषयमे निपुण होकरभी उसके हृदयमे ऐसे भयका संचार हुआ कि, वह अपने ठहर-नेके प्रत्येक स्थानपर पहुँचकर अपने डेरेपर बैठ अनेको प्रकारकी चिन्तायें करनेलगा उसने विचारा कि, यदि राजपूतोके हाथसे पराजित हुआ तो फिर युद्धस्थलसे लौट· जानेका कोई उपाय न रहैगा। और इससे निश्चयही युद्धभूमिमे प्राण देने पडैगे। राज-पूत जिस प्रकार दिन २ बल और विक्रमको बढ़ाये भयानक मूर्ति धारण करतेथे, इसी कारण उसके हृदयमे इस प्रकारकी चिन्ता उत्पन्न हुई। शेरशाह अपनी शीघ्रताके विषयको विचार अत्यन्तही कातर हुआ। ऐसे २ सोच विचारो मे जितनेही जितने दिन बीतने लगे, उतनाही यवनराजके दुःखकी वृद्धि होने लगी। धीरे २ एक महीना बीतगया। राजपूत और यवनोने परस्पर एक दूसरेके सामने सेना डालकर बिना युद्धही एक महीना बिताया। धीरे २ शेरशाहका दुःख अधिक बढ़ने लगा, किन्तु वह इससे अज्ञान न हुआ, वरन उससे छूटनेके उपाय खोजने लगा। अनेक चिन्ता और विचारोके उपरान्त अन्तमे उसने अपने कार्यसिद्धिके लिये एक गूढ़ उपाय स्थिर किया। शेरशाह राजपूतोको भलीप्रकारसे जानता और पहिचानता था कि, उनका हृदय थोड़ेही आघातसे आहत होता और थोड़ीही चेष्टासे दूसरी ओरको नम जाता है। इसी निश्चयके अनुसार उसने राठौर सेनामे अविश्वास और फूट उत्पन्न करादेनेकी प्रतिज्ञा की। और एक पत्र लिखकर यत्नपूर्वक मालदेवके डेरेमे फेकवा देनेकी इच्छा की। यह उसका यत्न बहुत सहजमेही पूर्ण होगया। पत्र इसप्रकारके भावसे लिखा गया कि, जिस्से उसके पढतेही राठौर सर्दारोपर मालदेवका दारुण अविश्वास उत्पन्न होजाय। पत्र लिखजानेपर यवनराज विचारनेलगा कि, इसको किस प्रकारसे मालदेवके सम्मुख

पहुँचासकूँ परन्तु थोड़ीही देरमे इसका भी उपाय स्थिर होगया। युद्धको और भी कुछदिन रोक रखनेका अनुरोध कर शेरशाहने राठौरराजके निकट एक दूत भेजा। दूतने यत्नपूर्वक उस पत्रको मालदेवके डेरेके समीप डालदिया और अपने कामको पूरा कर अपने स्थान-को लौटआया। इसके कुछही देरके उपरान्त वह जाली पत्र मालदेवके सम्मुख पडा। उसने विस्मित चित्त हो तत्कालही उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढ़ा। उसका मस्तक घूमने लगा, क्रोधसे हृदय कांप उठा। उसने चारोओर अंधकार देखा, जिन सर्दारोके ऊपर बिश्वास कर उसने कठोर कार्यके पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा की है, क्या वे विश्वास-घातक है ? क्या वे उसका सर्व नाश करनेके निमित्त देशवैरी यवनोके साथ मेल रखते है ?—यह क्या सत्यहै ? मालदेव अत्यन्त विस्मित हुआ। सभी सर्दार उसको विश्वास घातक जान पड़ने लगे। उनके समस्त उत्साह और उद्यमको उसने केवल छलही छल जाना।

दो एक दिन करके देखते २ युद्धका वह नियत दिनभी आ उपस्थित हुआ माल-देवका विषादसे गम्भीर मुंह, जड और स्थिर प्रकृति तथा उदास चेहरेको देख राठौरवीर अत्य-न्तही चिन्तित हुए। कहां तो उसने उसदिन जलतेहुए उत्साहित वाक्योसे उन सबको उन्मादित कियाथा, और अब कहाँ स्वयंही निर्जीवके समान चुपचाप अपनी शय्यापर पड़ेहुए ह। इसका कारण क्या है ? सर्दार लोग इसको कुछभी न समझ सके। युद्धका नियत समय आजानेपर उन्होने राजाकी आज्ञा चाही, परन्तु राजाने आज्ञा न दी। दारुण विस्मय और सन्देहसे राठौर सर्दारोका हृदय घूमने लगा। शत्रुलोग घरके द्वारपर आकर ललकारते है, क्या इससेभी वह निश्चिन्त रहसकते है ? उनके जीवित रहते हुए राठौर कुलका सम्मान गौरव क्या यवनोके पैरोसे दलित होगा ? मालदेव क्या राठौर नहीहै ? क्या उसने वीरकेसरी जोधारावके कुलमे जन्म नही लिया ? तव देहमे प्राण रहते, भुजाओमे वल रहतेहुए वह शत्रुओकी गर्जना क्यो सहन करसेहै ? इसका कारण क्या है ? आनन्दकी वात है कि, पराक्रमी राठौर सर्दारोने राजाकी इस उदासीनताका यथार्थ कारण जान-लिया, और निश्चय समझलिया कि, इस समय हम बातोसे उनके संदेहको दूर नहीं करसकेंगे। तव उन्होने कार्यद्वारा उस संदेहके दूर करनेकी प्रतिज्ञा की, इस कारण उन्होने तत्कालही अपने २ सेनादलको ले यवनोकी सेनाके ऊपर आक्रमण किया। वारह सहस्र राजपूत वीरोने देशवैरी यवनोके पंजेसे राठौर कुलकी सान मर्यादाके छुडा-नेके निमित्त अत्यन्त उत्साह समेत शेरशाहकी धुस्स बंधीहुई सेनापर धावा किया। साधारण धुस्स उनकी प्रचण्ड गतिको न रोकसका। उनके दलकेदल यवन सेनाके ऊपर पड़कर उनको दलित और त्रसित करनेलगे। इस प्रकार शेरशाहकी अनेक सेना राठौरोकी तीक्ष्ण तलवारद्वारा कटकर गिरगई। किन्तु जैसे एक २ गिरने लगा वैसेही उसके स्थानपर दूसरा दल कर भीषण उत्साहके साथ युद्ध करनेलगा। इससे यवन सेनाका कुछभी नाश होता न जानपड़ा। इधर प्रधान २ राठौर वीरभी उस भयानक युद्धमे गिरने लगे। धीरे २ राठौरोका वल न्यून होगया, राठौर सेना धीरे २ नाश

हानपर आगई। राठौर सर्दारोको इस असीम वीरतासे मरते देख मालदेवके ज्ञान-नेत्र खुलगये। उन्होने अव समझा कि, मै छलागया। किन्तु वह असमय था; असमयमे कुम्भकर्णकी मोहनिद्रा भंग हुई, आज उसकी नीच दशाको कोई नही रोक सकता। राठौरसेना प्रायः नाश होगई, उस समयभी यवनसेना मानो अक्षत देहसे युद्ध करतीथी। राठौरोके जीतनेकी अव कुछभी सम्भावना नही रही है। देखते देखते हिन्दू मुसलमानोका युद्ध भयानक हो उठा। उस विशाल राठौर सेनाके वचेहुए कुछेक सैनिकोने विस्मयकर वीरता प्रकाशित कर युद्धमे प्राण छोड़दिये। मालदेव हारगया। उसने निश्चयही जानलिया कि, मेरीही मूर्खतासे मुझको यह घोर पराजय स्वीकार करनी पड़ी। सर्दारोके तिरस्कार और संतापकी ज्वालासे उसका हृदय जलने लगा। यदि वह सर्दारोका इस प्रकारका अविश्वास न करता, यदि वह अपनी वीरतासे उनके उत्साहकी अग्निको प्रज्वलित किये रहता तो पठानसिह शेरशाहकी उस मरुभूमिसे निश्चय समाधि होती। राठौरोने इस भयानक ससरमे जो असीम वीरता दिखाई उसको शेरशाह स्वयंही स्वीकार करता है। इस आपत्तिसे छुटकारा पाकर उसने कहा "कि मुट्ठभिर जौके निमित्त भारतराज्यको मैने अपने हाथसे निकाल देनेका यत्न किया था।"

इस शोचनीय और घोरतर पराजयसे राठौरराज मालदेवको जो विपम मनो-वेदना प्राप्त हुई थी, उससे वह शीघ्रही छुटकारा न पासका। उस दारुण अपमानके उपरान्तभी वह वहुत दिनो जीवित रहा। अपने जीवित कालमे उसने दिल्लीके सिहा-सनमे दो स्वतंत्र राजवंशोको वैठते हुए देखा। पहिले तो लोदीवंशके अध.पतनके साथ मुगलवंशका गद्दीपर वैठना फिर उस वंशसे राज्यको छीन शेरशाहके वशका सिहासन पर वैठना। इन दो राजवंशोके तख्तपर वैठने और उतरनेसे हिन्दोस्थानके राज्यमे दो प्रचण्ड उत्पात हुए थे। शेरशाह भी वहुतदिनो तक भारतराज्यके सुखको न भोग सका, उसकी मृत्युके कुछेक वर्षके उपरान्तही हुमायूंने अपने राज्यका उद्धार करलियां यदि हुमायूं कुछदिनोतक और जीवित रहता तो राठौर अपनी श्रीकी वृद्धि करसकते क्योकि हुमायूं जिस प्रकार शांतस्वभाव और अहिसा परायण था, उससे राजपूत वेखटके अपने राजकी श्रीको वढ़ा सकते थे। किन्तु उनके दुर्भाग्यसे राज्य पानेके कुछही दिनोके उपरान्त हुमायूंने इस असार ससारको छोड़दिया + उसकी मृत्युके उपरान्त ही वीरवालक अकवरकी रोषाग्निने वज्रानलके तेजसे मारवाड़के ऊपर पतित हो मालदेवकी आशालताका नाश करादिया।

सम्वत् १६१७ (सन् १५६१ ई०) मे बीरवालक अकबरने एक विशाल सेना ले (१५ वर्षकी अवस्थामे माताके द्वारा अमरकोटके कष्ट स्मरण करानेसे

---

१ इसके द्वारा मारवाडकी उपजका कम होना और दारिद्रता प्रगट होतीहै। (२) शेरशाहके मरनेके उपरान्त दो मुसलमान राजा दिल्लीके सिंहासनपर बैठेथे, पहिला तो सलीमशाहशूर, दूसरा मुहम्मद आदिलशाह। (३) हुमायूंकी एक जीवनी एडिनवराके मेजरमुलके पुस्तकागारमें देखी गईहै। जिस समय हुमायूंने पारसके राज्यमें छिपेहुए वेशसे कुछदिनो वास कियाथा उस समय उसके एक साथीने उसकी जीवनी लिखाथा।

मारवाडके अन्तर्गत मालकोट * दुर्गको घेरलिया। उसने मनमे विचाराथा कि, थोडे श्रमसेही दुर्गको अपने वशमे कर सकूंगा । किन्तु जव उसने दुर्गनिवासियोके पराक्रम और रणकी निपुणताको देखा, तव उसके वह मनका विचार दूर होगया। अत्यन्त घोर युद्ध हुआ,दोनोओर के सैनिकोका रुधिर वहा, अन्तमे दुर्ग अकवरके हस्तगत होगया। मरनेसे शेप रहीहुई राठौर सेनाने जव देखा कि, मुगलोके आक्रमणसे अव दुर्गरक्षाका कोई उपाय नहीहै, तब वे शत्रुसेनासे निकलकर राजाके समीप चलेगये। मेडताके अधीन होनेपर विजयी अक़वरने अपनी प्रचण्ड सेनाको नागौरकी ओर चलाया। वह नगरभी उसके अधीन होगया। तव उसने जीतेहुए इन दोनो नगरो और उनकी समस्त भूमिमंडलीको वीकानेरके राजा रायसिहको देदिया।

अकवरका प्रताप दिन २ बढ़नेलगा। उसके उस वढ़तेहुए प्रतापके सामने राजपूतचूडामणि वीरकेसरी प्रतापके अतिरिक्त प्रायः सभी राजपूतोके मस्तक नीचे होगए अनेको तो षोडशोपचारसे उसकी पूजा करनेलगे और प्रायः राजपूत राज–समाजमे यह रीति फैलगई। दुःखका विषयहै कि, राठौर राजा मालदेवभी इसी रीतिमे आ फँसा। किन्तु उसने इच्छापूर्वक कभी अकवरके निकट मस्तक नही झुकाया घटना स्रोतके घोर भँवरमे पड़कर उसको यह तिरस्कार सहन करना पड़ाथा । इसी कारण सं०१६२५ + (१५६९ ई०) मे मालदेवने अनेको भेटे दे अपने दूसरे पुत्र चन्द्रसेनको अकवरके निकट भेजा। अकवर उस समय अजमेरमे रहताथा । मालदेव जो स्वयं उससे आकर न मिला इससे वह उसपर अत्यन्त असतुष्ट हुआ, उसके मनमे यह दृढ निश्चय हुआ कि, गर्वित मालदेव मेरा अपमान करनेके निमित्तही स्वयं मुझसे मिलनेको न आया। अतएव इस अभिमान और अपमानका वदला लेनेके निमित्त रायसिहको केवल वीकानेरका ही स्वाधीन अधिकार देकर वह शांत न रहा, यहाँतक कि, जोधपुरका फरमान और समस्त राठौर कुलके ऊपरका आधिपत्य उसे अर्पण किया गया।

चन्द्रसेन गर्वित राठौरकुलका योग्य राजपुत्र था। यद्यपि पिताकी आज्ञानुसार वह अकवरके डेरेमे गया परन्तु उसकी अकवरके दर्वारमे जानेकी बिल्कुल इच्छा न थी।

---

* मेड़तेके पास मालदेवका बनायाहुआ एक गढ़है । + सम्वत् १६२५ तक राव मालदेवका जिन्दा रहना और चन्द्रसेनको अकवरके पास अजमेर भेजना गलत है। राव मालदेव तो १६१९ में मर चुकेथे । चन्द्रसेन जोधपुरकी गद्दीपर वैठेथे। पर अकवरने फौज भेजी थी। संवत् १६२२ मे जिसमे जोधरपुर फतह कर लिया और चन्द्रसेन सिवानेके किलेमे चलेगये। सम्वत् १६२७ मे अकवर वादशाह अजमेर होकर नागौरमे आये उस वक्त रावचन्द्र सेन भाद्राजूनमे थे। वादशाहके वुलानेसे नागोरमे आकर उनके भाई रायमल सोजनसे उदयसिह फलोदीसेभी वहाँ आगयेथे। वीकानेरके राव कल्याणमलके कंवर रायसिहभी बीकानेरसे आयेथे--राव चन्द्रसेनके कुँवर रायसिंहभी उनके साथ थे। राव चन्द्रसेनतो वादशाहसे मिलकर भाद्राजूनको लौटगये उनके कंवर रायसेन भाई उदयसिह और बीकानेरके कुँवर रायसिह तीन वादशाहके नौकर हुये। रायमल सोजनको चलेगये (यह वही रायमल है कि जिनकी वावरकी लडाईमे माराजाना टाडने गलतीसे लिखदियाहै जैसे कि, मालदेवका सम्वत् १६२७ तक जिन्दा रहना लिखाहै।)

जन्मभूमिकी स्वाधीनता और राठौर कुलकी मानमर्यादाको वह प्राणोसेभी अधिक मूल्यवान् जानताथा और अपने जीवनके वदलेमे उसने चेष्टा की थी। उसके बड़े भाई उदयसिहने अपनी मर्यादाको तिलांजली दे स्वाधीनताकी सुवर्णप्रतिमाको अपने हाथसे विसर्जन कर अकवरके चरणोमें शिर नवाया। तेजस्वी चन्द्रसेनने उसको अपना वड़ाभाई कहकर स्वीकार नही किया। यहांतक कि, उसके राजगद्दीपर बैठनेसे राठौर कुलका ऊंचा मस्तक नीचा होगया। अपने यत्नभर उसको मारवाड़की गद्दी पर न वैठने दिया[1]। अनेक तेजस्वी और पराक्रमी राठौरोने उसका साथ दिया। उन समस्त विश्वासी और स्वाधीनचित राठौर सर्दारोके साथ उसने अपने स्वत्व और स्वाधीनताके दृढ़ रखनेकी प्रतिज्ञा की। राजधानी जोधपुरसे जानेके उपरान्त उसने उन सब विश्वस्त सरदारोके साथ मारवाड़के पश्चिम प्रान्तमे वसेहुए सिवाना नामक स्थानमे गमन किया और वहां वह कठोर उद्यम व परिश्रमकी सहायतासे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करने लगा।

यद्यपि राठौरवीर चन्द्रसेन राजसे चला तो गया, परन्तु उसने अपनी मान मर्यादाको न छोड़ा। उसके मनमे दृढ़ निश्चय था कि यदि राजसिहासनको प्राप्त करसकूं तो मै यवनोके विरुद्ध अपने देशकी स्वाधीनताको अटल रखसकताहूं। जीवनको पोषण करनेवाली आशाकी मोहिनी मूर्त्तिसे मोहित होकर उसने क्षणभरके निमित्त अपने इस निश्चयको न छोड़ा। इसी निश्चयके कारण उसने अपने पिताके सिहासनपर स्वयं बैठनेकी प्रतिज्ञा की। उसको सहायता और सहारा थोड़ा और सेनाबल मुट्ठी-भर था, किन्तु उदयसिहके वड़े सहायक और वड़ी भारी सेना थी विशेषकर स्वयं राजा मालदेवही उसका पोषक था। वरन तोभी तेजस्वी चन्द्रसेन आशाको न छोड़-सका, उस दूर वसेहुए सिवाना नगरमे कुछेक साथियोंको संग लिये हुए वह सत्रह बरस वरावर जेठेभाई उदयसिंहसे शत्रुता करता रहा। सुखका विषयहै कि उसने अपने कार्यको अधिकतर पूरा करलिया। उसके असीम गुणोसे मोहित हो अनेक राठौरोंने उसको राजाओके योग्य सन्मान दिया। धीरे २ समस्त राठौर दो भागोमे वॅट चले। परन्तु हा! चन्द्रसेन अपने अभाग्यवश उस सन्मानको अधिकदिनतक न भोगसका। सत्रहवे बर्षके वीतते बीतते उसने यवनोके प्रचण्ड आक्रमणसे राठौरोकी स्वाधिनताकी रक्षा करनेके निमित्त

---

१ यह बातभी गलत है कि, चन्द्रसेनने उदयसिंहको गद्दीपर न बैठने दियाहो, उदयसिंह चन्द्रसेनसे तीन चार वर्ष वड़े थे और उनके सगे भाई थे। परन्तु वड़े दुःस्वभाव थे, इससे इनकी मातानें राव मालदेवजीसे कहकर इनको राजगद्दीसे वंचित रक्खा और चन्द्रसेनको युवराज करादिया। जिससे वे पिताके पीछे उत्तराऽधिकारी हुएथे। और उदयसिहको फलोदीका परगना मिलगयाथा तो भी वे राव चन्द्रसेनसे वैमनस्य रखतेथे। २ जिस समय मुगलोने सिवाना नगरपर आक्रमण किया उस समय उसकी रक्षा करनेमे मारागया।

तलवार धारण की और युद्धभूमिमे अपने जीवनको न्योछावर कर स्वदेशप्रेमी बीरोकी समान अमरत्वको प्राप्त किया। उस समय उसके तीन पुत्र उग्रसेन, आसकर्ण और रायसिह जीवित थे। रायसिह सिरोहीके प्रसिद्ध वीर राव सुरतानके साथ द्वन्द्वयुद्धमे प्रवृत्त हुआथा, परन्तु उस युद्धमे वह जयको प्राप्त न करसका। राव सुरताननें उसको और उसके २४ सर्दारोको दत्तानी नामक स्थानमे मारडाला था।

राठौर राजा मालदेवका अन्तिम जीवन इसी प्रकारकी आपत्तियोसे पीड़ित रहाथा, इससे वह छुटकारा न पासका फिर भी इसके ऊपर उसको अपने नगरकी रक्षाके निमित्त तलवार पकड़नी पड़ी। बीकानेरके रायसिहके हाथमे मारवाड़के राज्यका फर्मान देकर मुग़ल बादशाह अकबर निश्चिन्त न रहा। अन्तमे जोधपुरपर आक्रमण किया। मालदेव कायर नही था कि जो मुग़लसम्राटकी भौहसे ही भयभीत हो बिना झगड़ा किये उसके हाथमे आत्मसमर्पण करदेता। मुग़लसेनाने आकर उसके नगरको घेर लिया, तब उसने अपने उपायभर अपनी रक्षा करनेके निमित्त चेष्टा की और अत्यन्त पराक्रम और साहसके साथ वह युद्ध करनेलगा। किन्तु उसके यत्न निष्फल हुए। मुगलोंकी अपार सेनाके सामने वह अपनी आत्मरक्षा न करसका। उसकी आशा तथा भरोसा सभी मिट्टीमे मिलगए। उसने विचारलिया था कि, अपने जीवनभर गर्वित राठौर कुलके उन्नत मस्तकको यवनके चरणोमे न झुकाऊगा। किन्तु उसकी वह आशा फलवती न हुई। जो राठौरकुल बराबर तीन चारसौ वर्षसे स्वाधीनतापूर्वक असीम प्रभावसे राज्य कररहाथा, आज उसका ऊंचा मस्तक नीचा होगया, आज यवनोके चरणोमे वह गर्वोन्नत मस्तक झुकगया। मारवाड़मे राठौरोकी प्रभुताको स्थिर रखनेके निमित्त दूसरा उपाय न देख, मालदेवने अकबरकी अधीनताको स्वीकारकिया और अपने जेठेपुत्र उदयसिहको मुग़लबादशाहके समीप भेजदिया। विजयी अकबरने पूजोपचारसे संतुष्ट हो उसको एक सहस्र सेनाका सेनापति किया।

जिसदिन गर्वित राठौरोका उन्नत मस्तक यवनोकी सेवामे इस प्रकारसे झुका, उसी दिनसे तेजस्वी मालदेवके हृदयमे जो विषम आघात उत्पन्न हुआ उससे वह फिर छुटकारा न पासका। वह उसी अपमानकी वेदनासे पीड़ित हो शीघ्र ही इस लोकको छोड़गया।

---

(१) यह भी सही नहीं है कि राव चन्द्रसेन युद्धमे काम आयेथे। (२) दोनोंही ओरसे कुछ २ वीर एकत्रित हो युद्धभूमिमें आये थे। इन दोनो ओर दो वीरवंश थे। इधर तो राठौर और दूसरी ओर चौहानकुलकी एक दूसरी शाखा देवड़ा थी। (३) यह अप्रासंगिक कथा फिर यहांसे मालदेवका पुनर्जीवन करके चलायी गई है, सो मालदेव तो संवत् १६१९ हीमे मरगयेथे दत्तानीका झगडा सम्वत् १६४०मे हुआथा, उसके पीछे फिर मालदेव कैसे जीवित होकर अकबरसे लड़े और उदयसिंहको अकबरकी सेवामें भेजा। यह अनुवाद पूर्वापर स्वयं विरुद्धहै। (४)उनसे सिवाना सम्वत् १६२२ में अकबरकी फौजने तीन वर्ष तक लड़कर लेलियाथा। और वह परगना सोजनमें आ रहेथे और बादशाही थानोपर जो मारवाडमे जगह जगह बैठे थे, धावे किया करतेथे निदान सं० १६२७ में उनको एक राठौर सर्दारने जहर देकर मार डाला। प्रे० टी०।

पहिले हो चुका है। चन्द्रसेनके तीन पुत्र हुए थे। उनमेसे जेठे उग्र प्रदेशप्रेमी वीरोकी
स्थानका अधिकार प्राप्त हुआ। उग्रसेनके भी तीन पुत्र कर्ण, का उग्रसेन, आसकर्ण

५। आसकर्ण, इसका वंश आज भी जूनियानामक स्थानमे के साथ द्वन्द्वयुद्धमे
६। गोपालदास, ईडर नगरमें मारागया। सुरतानने उसको
७। पृथ्वीराज, इसके वंशधर अबतक जालौरमे जीवित है।
८। रतनसिंह, इसके वंशधर भाद्राजूनमे हैं। त्तियोसे पीड़ित
९। भोजराज, इसके वंशधर अहारीमे है। गरकी रक्षाके
१०। विक्रमादित। यका फर्मान
११। भान। } इनका कुछ वृत्तान्त अबतक नही जाना गया या। माल-
१२। ड़ा किये या, तब

चतुर्थ अध्याय ४.

मारवाड़के राजाओंकी अवस्थाका परिवर्तन, राजा उदयसिंहका राजतिलक, चन्द्रसेनकी मृत्युसे पहिले राजपूतानेके बडे बड़े नरेशोंको उसका आधिपत्य स्वीकार न करना, इतिहासका पुन प्रचार, बादशाहके अधीन होनेके समयतक राजपूतानेके तीन बडे २ वृत्तान्त, राज्याधिकार प्रणालीका परिवर्तन, मेवाड़ आमेर और मारवाड़में राजधानियोका बदलो किन शाखाओतक इस अधिकारका नाम सीमन्त हुआ, ऐसी भूलोका अंदेशा, उदाहरण, जोधाजीका जागीरोंको नियम बद्ध करना, मारवाड़के आठ बड़े२ राजकीय मनुष्य, इस प्रबधका मालदेवका कायम रखना और द्वितीय श्रेणीकी जागीरोंका मौरूसी होना, जोधाके बेटे और भाई, जागीरोके भिन्न २ वृत्तान्त, राजपूतोकी जागीरदारीका नियम, बादशाह अकबरका इस प्रबंधको यूरुपवालोके अनुसार कायम रखना, राजपूत नरेशोके बंश महत्वका मिथ्या न होना, छोटसे छोटे राजपूतोंकाभी अपना वंशसम्बन्ध राजासे लगाना, उदयसिंहका नाम राजपूतोंके लिये कष्टदायक, उदयसिंहका अपनी बहिन जोधाबाईको अकबरको देना, राठौरोको इस विवाहसे लाभ, उदयसिंहकी बहुतसी सन्तान, गोविन्दगढ़ और पीसागढ़मे जागीरोका कायम होना, किशनगढ़ और रतलाम, राजा उदयसिंहकी विचित्र मृत्युका इतिहास, उदयसिंहकी सन्तानका वंशवृक्ष।

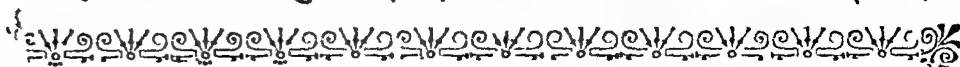
जिसदिन राठौरबीर मालदेवने इस लोकसे बिदा ली, उसी दिनसे राठौर कुलकी भाग्यतरंग दूसरी ओरको बहने लगी, उसदिन मारवाड़के इतिहासमे एक नए युगका प्रकाश हुआ। उसके साथही साथ राठौर सामन्तोकी भी अवस्था

---

१ उग्रसेन जेठा नही था। जेठा तो रायसिंह था। उससे छोटा उग्रसेन और उससे छोटा आसकर्ण था। इसके बेटे कर्मसेनको अकबरबादशाहने अजमेरके जिलेमे नायका परगना दियाथा।

२ ये तीनो बेटे उग्रसेनके नहीं थे उग्रसेनका तो एक बेटा कर्मसेन जिसको विक्रमसेनभी कहतेथे।

३ आसकर्णका नाम मालदेवके बेटोमें नहीं आताहै और न उसकी औलाद जूनियोंमें है जूनियोंमें तो उदयसिंहके बेटे माधोसिंहकी औलादहै।



ई। इतने दिन जो उनकी इच्छा सिवाजीके वंशधरोकी इच्छाके रसे निर्भर थी, अथवा उन्हीकी इच्छाद्वारा भलीप्रकारसे परिचा- नेदिनतक जिनको समस्त मारवाड़का अधिपति कहकर गर्व करतेथे, से उस राजाके ऊपर और एकजन राजा मानना पड़ा। राठौरकुल- रंगी " पताका इतने दिनों तक सियाजीके बीर बंशधरोके ऊंचे मस्त- हराकर अमरकोटके अनन्त रेतीले मैदानसे लवण सरोवर साँभरतक निकटवर्ती मरुस्थलसे अर्वलीकी श्रेणियोतक राठौरकुलके बिजयबार्ताकी

मालदेवका य तीथी, आज उसको नीचा करके उसके मस्तकके ऊपर मुगलोकी अर्द्ध- भत बिजयबैजयन्ती पताका गर्वसहित फहराने लगी। अब उस फहराती रंगी पताकाकी वह शोभा, वह तेज, वह प्रकाशित ज्योति नहीं है, मानो तेजरहित होगये, मानो सभीका लोप होगया; मानो यह उस महापुरुष सियाजीका वंश नहीं है, मानो उस वीरकेसरी जोधाके विकट शरसाधनाका अमृतमय फल नहीहै, नही तो उन्होने तलवारकी सहायतासे जिस मारवाड़का अधिकार प्राप्त किया था, आज दूसरेकी आज्ञा लेकर उसी मारवाड़के सिहासनपर उन्हे क्यो बैठना पड़ता ? नही तो उनको दूसरेका प्रसाद पानेके निमित्त जीवन और सर्वस्व स्वाधीनता क्यो बेचना पड़ती ? इसीसे कहते है कि, मारवाड़के इतिहासमे आज एक दूसरे नये युगका प्रकाश हुआ। राठौर कुलकी भाग्यतरंग दूसरी ओरको प्रवाहित हुई। एक समयके स्वाधीन राठौर आज मुस- लमानोकी आज्ञामे बँधेहुए दास है; एक समयका उन्नत मारवाड़ आज गिरोहुई अव- स्थामे है, आज वह उन्नत और स्वतंत्र राठौरकुल पृथ्वीपर दीनके वेशसे लोट रहा है। इसी कहेहुए वर्त्तमान कालसे राठौरकुलका भाग्यचक्र मुगलोकी भौहके साथ चलने लगा, उसके भावी उत्तराधिकारी गण राठौरसेनाको ले जेताकी आज्ञानुसार अपनी ही जातिका रक्त बहानेलगे। इसी समयसे सम्राटकी इच्छानुसार उनका भाग्यचक्र परि- चालित होने लगा, उनके कार्योकी उत्तमताको देख आनन्दित हो सम्राट् उनको राज- सन्मान देनेलगे। जो हो, यदि नीच और हिसक कार्य ही पदोन्नतिके प्रधान सीढ़ी स्वरूप होते, यदि मोल लिएहुए दासके समान स्वामीके पैर चाटनेसेही उन्नतिका मार्ग खुलता तो राठौर राजागण राजसरकारसे उच्चपदको कभी भी न प्राप्त करसकते और उदयसिह सबसे पहिले जिस " मनसब " पदको प्राप्त हुआ था, उससे उसके वंशधर गण और उन्नतिको न प्राप्त करसकते। राजपूत स्वभावसेही तेजस्वी होते है, विशेषकर राठौरोकी तेजस्विता और पराक्रम अत्यन्त प्रबल होता है। यद्यपि भाग्यकी कठोर आज्ञासे उनकी स्वाधीनता तो छिनगई किन्तु उन्होने अपनी तेजस्विताका परित्याग न किया। इस श्रेष्ठ गुणके प्रभावसेही उन्होने बादशाहके दरबारमे दाहिनी ओर बैठकके गौरवका अधिकार प्राप्त किया। और इसीसे मारवाड़की सुविस्तृत मरुभूमिको रत्नोंके अलंकारोसे सुशो-

१ राठौरोंकी पचरंगी पताका नहींहै कछवाहोकी है।



भित करादिया। किन्तु इससे राठौरराजकुमार कभी क्षणभरके निमित्त भी हृदयमे शान्तिको न प्राप्त करसके। सम्राट्के ७६ सामन्तोंके ऊपर उच्च सन्मानको पाकर भी—गोलकुंडा और बिजयपुरके अनत रत्नभंडारसे मरुमय जोधपुरको अमरनगरसे वदल करके भी वे एकदिनके निमित्त भी सुखी न होसके। क्योंकि उन्होने जानलिया था कि, वह सम्राट्के अधीन है और अमूल्य रत्न स्वाधीनताके वदलेमे उस समस्त तुच्छ धनको प्राप्त करसकते है। जव यह दृढ निश्चय औरभी दृढ होता, तव वे एक साथ उन्मत्त हो उठते और सम्राट्के दियेहुए सन्मान मर्यादाको विपकी समान जान अपने आपको सैकडो वार धिक्कार ते थे। उस समय स्वयं सम्राट उनके सामने उपस्थित होकर भी उनके उस प्रचंड मानसिक बेगको न रोकसकतेथे। राठौर राजा मालदेवका सम्वत् [1]१६२५ मे परलोकवास हुआ। उसने अपने जेठे पुत्र उदयसिहको अपना उत्तराधिकारी मानलिया था। किन्तु भाटग्रन्थोमे देखाजाताहै कि, तेजस्वी चन्द्रसेन जव तक जीवित रहाथा, तव तक उदयसिहको राजगद्दी न प्राप्त हुई। उदयसिहने जो कायरोके योग्य उपायका अवलम्बन कर दिल्लीश्वरके हाथमे अपनी वहनको अर्पण किया इससे राज्यके प्रधान २ सामन्तोंने उसपर अत्यन्त विरक्त हो चन्द्रसेनके पक्षका अवलम्बन किया था। अव हम उदयसिहके राजत्वकी समालोचना करनेके पहिले एकवार मारवाड़की बीतीहुई घटनापर विचार करतेहै। जिस समय राठौर वीर सियाजीने पितृपुरुषोके लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोड़ा, उस समयसे ही आरम्भ करके उदयसिहके राजत्वकाल तक मारवाड़के इतिहासको हम तीन प्रधान युगोमे विभक्त देखते है वह तीनो युग नीचे लिखेहुए क्रमसे विभक्त हुए है।

प्रथम—खेड़राज्यमे सियाजीका आगमन १२१२ खृष्टाव्द से चण्डद्वारा मंदोर जय ([3]१३८१ ई०) तक द्वितीय—मंदोरके जयसे जोधपुरके स्थापन ([4]१४५४ ई०) तक, और तृतीय—जोधपुरके वसनेसे उदयसिहके गद्दीपर वैठनेके समय तक। सन् १५८४तक इन कुछ कम चारसौ वर्षोंके वीचमे राठौर कुलका भाग्यतरंग किस२दिशाको प्रावाहित हुआहै, हम इस समय उसीकी आलोचनामे प्रवृत्त होतेहै। देखा जाताहै कि प्राचीन भूमियांओके निकटसे मरुभूमिका पश्चिमभाग जीतनेमे पाहिले दो युग वीतगयेहै। उस समय उनको उस छोटे प्रदेशकोही लेकर संतुष्ट होना पड़ाथा। अन्तमे चौहानोके अधःपतनसे चूड़ाद्वारा जिस समय मंडोर नगर जीतागया, उस

---

(१) इस ग्रन्थमें राव मालदेवकी मृत्युका वर्णन, कहीं सं० १६२७ और कहीं १६२५ और कहीं दत्तानी युद्धके पीछे लिखाहै जो सं० १६४०में हुआथा। और१६२५ यहां लिखाहै सो यह बड़ी भूल है यथार्थ वर्णन मारवाड़के इतिहासोंके अनुसार सं०१६१९ है। (२) यहभी गलतहै, क्योंकि राव मालदेवने उदयसिंहको नहीं, चन्द्रसेनको अपनाउत्तराधिकारी मानकर युवराज पदपर नियत कियाथा। (३) यह सन् सही नहीं मालूम होता क्योंकि मारवाड़के इतिहासमें १४५१ में सन् १३९४ में चूडाजीका मंडोर प्राप्त करना लिखाहै। (४) यह सन्भी गलतहै क्योंकि जोधपुर सं० १५१५ सन् १४६८ में वसाथा।

समयमे लूनी नदीके दोनो किनारोकी सव उपजाऊ भूमि रणमल और जोधाके पुत्रोके अधिकारमे आई। इसके उपरान्त जोधपुर वसा। इस कारण पुराना नगर छूटकर राठौर राज्यकी राजधानी नये बसाये हुए जोधपुरमे स्थापित हुई। राजपूत स्वभावसेही स्थितिशीलताके अनुरागी होतेहै, बिशेषकर इनको अपनी पुरानी राजधानीके छोड़नेकी इच्छा नही होती। राजपूत समाजका यह एक सदैवसे ही नियमहै कि, राजधानी बदलनेके साथही साथ राजपूत राजाओकी शासनविधि और कौलिक उपाधिका प्रायः परिवर्तन होता रहताहै। मारवाड़के इतिहासमे इस नियमका कोई दोष नही देखा जाता। जोधाने अपने नामसे जोधपुरको बसाया। मारवाड़के इतिहासमे एक दूसरे नबीन युगका प्रकाश हुआ, राठौर कुलकी भीतरी शासनबिधिका भी अदलबदल हुआ। जोधाके तेईस भाई थे। योग्य उत्तराधिकारीके अभावसे सिहासन किसी दूसरे निकटवर्ती राज्यपानेके सम्बन्धीके हाथमे दिया जासकताहै, किन्तु जोधाने नियम करलियाथा कि उसके वंशधरके अतिरिक्त और कोई जोधपुरके सिहासनको प्राप्त नही होसकेगा। विशेष जो राठौर कि मारवाड़के सामन्त गिनेजातेहै वे तो कभी राठौर कुलकी राजगद्दीपर न बैठ सकेगे। राजपूत शासन नीतिका एक विचित्र भावहै। इसका विस्तारसे वर्णन अजमेरके इतिहासमे होगा।

जोधाराव जानताथा कि राठौरवीर सियाजीके वंशधरोमे वही प्रधान प्रतिष्ठावान् नरपति है। अपने ऊंचेपनको विचारकर वह मनहीमनमे गर्वित भी हो गयाथा। कुछ गर्व और कुछ अभिप्रायके वशवर्ती हो उसने अपने राज्यकी सामन्त प्रथाको नवीन आकारसे वनानेकी इच्छा की और उपसामन्तोकी भूमिवृत्तिको एक नियमित सीमामे विभक्त करनेके निमित्त एक योग्य नियमावली (कानून) भी बनाई। उसके पिता रणमल्लके चौबीस और अपने चौदह पुत्रोके विषयमे विचार करते २ उसके मनमे सहसा यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि,—"इनके पुत्र प्रपौत्र बहुत सम्प्रदायोके होजॉयगे, और फिर उनमेसे भी बहुतसे उपसामंत होगे, ऐसी अवस्थामे भूमि सम्पत्तिके पीछे विवाद होनेकी सम्भावनाहै, अतएव जिससे किसी प्रकार उनमे विवाद न होवै उसीको ही प्रवंध करना कर्तव्य कर्म है।" मनमे इस प्रकारका विचार कर जोधाने प्रत्येक उपसामन्तोकी भूमिवृत्तिकी संख्या और सीमाको नियमित करदियाथा। उसके बड़े भाई कांधलने हिसकवृत्ति द्वारा प्रेरित हो बीकानेरका स्वाधीन राज्य स्थापित किया। वह उसके वंशधर कांधलोतके नामसे प्रसिद्ध हो स्वाधीनतापूर्वक राज्य करने लगे। जोधाका तीसरा भाई चाम्पाजी, कूंभाजी[1] दोनों पुत्र दूदो और करमसिह तथा दूसरा पौत्र ऊदो अपने २ नामानुसार चांपावत, कूंपावत, मैरतिया (दूदोके वंशधर) करमसोत और ऊदावत नामक छह गोत्रोके अधिपति हो मारवाड़ राज्यके खम्भ स्वरूप राज करने लगे * मरुदेशके प्रथम चांपा सामन्तमे गिनागया। इसके वंशधर इस

---

१ कूंभाजीपर पहले नोट करचुके हैं उसको देखो।

* आठ वड़ी २ भूमिसम्पत्तियां इनके हाथमे अर्पित हुई। वह आठ भूमिसम्पत्तियां आठ ठकुरायतोके नामसे प्रसिद्ध है। उनमेंसे प्रत्येककी वार्षिक आय ५० हजार रुपया है। इसके अतिरिक्त उनको औरभी उपसामन्तोसे द्रव्य प्राप्त होताथा।

उच्च सन्मानको सदैवसे भोगते आते है। इनके प्रचण्ड विक्रमसे राठौर राजाओके सिंहासन अनेको वार तितर बितर होनेपर आगये। इसके अतिरिक्त जोधारावने अपने भाई पुत्र और पौत्रोको भी सामान्य २ भूमिसम्पत्ति दी थी। यह भी भूमिसम्पत्ति मौरूसी मुस्तहकुम (जो छीनी न जाय) दीगई। राजा जैसे अपने सिंहासनको पवित्र जानता है वैसेही भूमिके अधिकारी भी अपनी भूमिवृत्तिको पवित्र जानते है। राजाके साथ अति निकटका रुधिर सम्बन्ध होनेसे वे अपनेको उसका वृत्तिभोगी कहकर स्वीकार करनेमे कुण्ठित नही होते, वरन् वह इससे स्वयं गर्वित हो इस प्रकार राजाके सम्बन्धमे कहा करते है "जवतक हम सेवा करते है तवतक वह हमारा स्वामी है और जव सेवाकी आवश्यकता नहीं होती तो हम उसके भाई और कुटुम्बी है और पितृराजमे समान हक़दार भी है।"

राव मालदेवने जोधाजीके इस विभागको स्वीकार किया। यद्यपि उसने छोटे दरजेकी जागीरे बटाई और जो कि, मारवाड़ देशकी सीमा उसके समयमे पूरी होगई थी इस कारण इन जागीरोकी संख्या नियत करदेना परम आवश्यक समझा गया। इस लिये जोधाजोसे लेकर मालदेवकी सन्तानोतक यह जागीरे मौरूसी (स्थायी) रही; परन्तु पहली दी हुई और पिछली दी हुई जागीरोमे इतना भेद रखागया कि, जो जागीरे शस्त्रबलसे विजय की गई थी, वे इस प्रकार मौरूसी रक्खी गई कि यदि जागीरदारके पुत्र न हो तो गोद लियाहुआ वेटा भी उसका अधिकारी हो सकता था, परन्तु पिछली जागीरे कुछ दिनोके पश्चात् मुख्य राज्यमे मिला ली जाती थीं। राजपूतोंकी मालगुजार अर्थात् कर देनेवाली थी। जागीरे किसी जिमीदारको केवल उसके जीवन तकके लिये ही उसके इतिहासके अनुसार दी जाती थी।

यद्यपि यह उत्तम नियम उनके प्राचीन इतिहासोसे देखा जाताहै, परन्तु जव तव प्रवन्ध न होनेके कारण इस नियमका खण्डनभी देखागयाहै। इन उदाहरणोसे मालगुजार और बिना करकी जागीरोमे दो प्रकारका भेद पाया जाताहै। सियाजीसे लेकर जोधाजी तक बहुतसी वंशशाखाओने जो उस राज्यके उत्तरीय और पश्चिमीय खण्डोमे निवास करतेथे अपनी आर्थिक अवस्था अल्प होनेके कारण वा बहुतोने अपने पूर्व पुरुषोके अभिमानके कारण उन जागीरोको स्वतंत्ररूपसे भोगाहै। तो भी यह जागीरदार मारवाड़ नरेशको अपना राजा मानतेहै और जवकभी उनके राजापर संकट आताहै, तो वे सहायता करते है। यह वंशशाखा कोई 'कर' वा दण्ड नही देतीहै, और इसलिये उनकी जागीरे विना करवाली कहलाई जासकतीहै, उन जागीरोकी संख्यामे हम वाढ़मेर कोटड़ासे और फलसूंदकी गणना करतेहै। दूसरे जागीरदार यद्यपि पूरे स्वतन्त्र नही है तो भी वह छोटे माफीदार कहलाये जासकते है, जो आवश्यक समयपर सहायता देतेहै और वड़े २ उत्सवोपर स्वय राजाकी भेटको उपस्थित होते है। महेवा और सनदरीभी इन माफ़ीदारोमेसे है। प्राचीन वंशज जो राजपूतानाभूमिमे फैलेहुए हैं, और जो वर्तमान राजाके यहांभी नौकर है, वह अपने वड़ेवूढ़ोकी उपाधिसे पहचाने जातेहै। यद्यपि वहुतसे मनुष्य दूहाड़िया, मांगलिया,

ऊहड़ और धांदलके नाम सुने जातेहै, परन्तु यह कोई नही जानता कि यह राठौर है। विवाहके समय कवि वा भाटकी छन्छबद्ध पुस्तक देखी जातीहै, जिससे कि, समधियोंको वंशपरम्परामे हानि न हो, जिनका पालन बड़ी दृढ़तासे होता है और उसमे उनके और दूसरे वंशोके इतिहास विद्यमान होते हैं, जो दूसरी दशामे नष्ट भ्रष्ट होजाते है।

इस जोधा जातिके लिये किसी उपाधिसे क्यो न पुकारा जावै, हमने समझनेके सुभीतेके लिये जागीरदारके नामसे याद कियाहै और आगेभी जागीरदार नामसे ही स्मरण करेगे। इसमे कुछभी सन्देह नही है कि यह परम्परा जागीरदारीकी उपाधि राठौरजातिमे प्राचीनकालसे अर्थात् उनके पुरुषा सियाजीके समयसे प्रचलित है, जो कन्नौजकी राजधानीसे लायेथे, अन्तिम राजा जयचंद और चौहा-नोके युद्धसे बढ़कर कोई मनोहर दृश्य इस सहायक सेनाकी धूमधाम और सजावटका इतिहासमे विद्यमान नहीहै। राजपूतानेके प्रत्येक रजवाड़ेकी प्रणाली उनके इतिहासोके अनुसार योरुपकी परपरासे मिलती चली आतीहै और विशेषतः मेवाड़की जहां १३०० वर्ष पूर्व सारे जागीरदार राज्यके अपने महाराजाको नजर भेट नही करते थे और जवतव वदला लेनेकी धमकी भी देतेथे तौ भी अपने नरेशका नमक खानेके कारणसे उन्होने एक वर्षतक कुछ शत्रुता नही की और एक वर्षकी अवधि समाप्त होनेपर उसको गद्दीसे उतार दिया (देखो खण्ड १ सूची)। वादशाह अकवर जो हिन्दूधर्मका पक्ष करता ा, उसने वहुतसे नियम अपने राज्यके इनको देखकर वनाये।

पश्चिमीय राजनीति और भारतीय राजनीतिका मुकावला करतेहुए पाठकोको एक वातका ध्यान रखना उचित है, अर्थात् यह कि जागीरदारका नियम सब देशोमे जैसे कि राजपूतोमे पाया जाताहै, और राजपूतोमे सब जागीरदार कुटुम्बी होतेहै (सिवाय वाहरके जागीरदारोके) और जिस प्रकार योरुपमे राजाके प्रभुत्वको मानतेहै, उसी प्रकार राजपूतानेके ठाकुर भी मानतेहै। इस प्रकार चांपाके पुत्रसे लेकर जो बड़ा राजा था एक गरीव पेटपालनेवाले तक सब राजाके साथ वंश-सम्बन्ध रखतेहै। यह जानना वड़ा कठिन है, कि इस प्रणालीसे हानि हे वा लाभ, क्योकि मानुषिक इतिहा-सोमे अच्छे और वुरे दोनो प्रकारके उदाहरण मिलतेहै। जोधाकी ५००००० सन्तानोमेसे १२०००० हजार राजपूतोंके राजा मालदेवके लिये युद्धमे प्राण देदेना उनकी अचल राजभक्तिको प्रगट करताहै। जिसकी आजतक प्रशंसा होती है।

जोधारावके प्रसंगमे हमने उसकी प्रतिष्ठित कीहुई सामन्तप्रथाका वर्णन किया। मारवाड़की समस्त प्रथाका यथास्थान वर्णन किया जायगा। अब इस समय फिर उदय-सिहका वृत्तान्त लिखनेमे प्रवृत्त होते है।

पहले ही कह आये है कि उदयसिहके राजगद्दीपर वैठनेके सम्बन्धमे पृथक् २ भाटग्रन्थोमे पृथक् २ मतभेद देखे जातेहै। कोई कहताहै कि वह राजा

मालदेवके मरनेके थोड़े ही काल उपरान्त सम्बत् १६२७, सन् १५६९ ई० मे मारवाड़के सिहासनपर बैठा। इन दोनो मतोमे कौन सत्य है उसका हम भली प्रकारसे निर्णय नही करसकते। परन्तु भलीप्रकार विचारकर देखनेसे अन्तिम बात ही मानने योग्य होसकती है क्योकि चन्द्रसेन जैसा तेजस्वी था वैसे ही उसने अपने यत्नभर उदयसिहको मारवाड़की गद्दीपर न बैठने दिया होगा। जो हो, हम अन्तिम मतको स्वीकार कर उदयसिहको सन् १५८४ ई० मे ही मारवाड़के सिहासनपर बैठाहुआ मानते है।

राजस्थानके " उदय " नाममे एक महा अनर्थकारी शक्ति देखीजाती है। आश्चर्यका विषय है कि जो कोई उदय नाम धारण कर जिस किसी सिहासनपर बैठा, उसके ही द्वारा उस राज्यका सर्वनाश हुआ।

उदाहरण स्वरूपमे शिशोदिया उदयसिहकी कायरता मेवाड़के इतिहासमे वर्णित हुई है, इस समय अभिप्रायवश राठौर कुलका अयोग्य राजा और तेजस्वी जोधारावका अयोग्य वंशधर था। यद्यपि वह भाग्यकी कठोर आज्ञासे पितृपुरुषोकी स्वाधीनतासे विच्युत हुआ था, किन्तु उसने क्षणभरके भी निमित्त उस स्वर्गीय रत्नके पानेकी फिरसे चेष्टा न की, वरन् उस पराधीनताकी जंजीर अपने हाथसे दृढ़ बांध ली थी, वह स्वभावसेही विलासप्रिय और सुखका चाहनेवाला था। सहिष्णुता और तेजस्विता यही राजपूतोके दो प्रधान गुण है। इन दोनो श्रेष्ठ गुणोकी सहायतासे ही राजपूत अति भयानक अत्याचारियोके प्रचण्ड अत्याचारको सहन करके भी बदला लेनेके निमित्त योग्य अवसरकी राह देखते रहते है। किन्तु दुःखका विषय है कि इन दोनो गुणोमे से उदयसिहमे एक भी न था। यद्यपि अकबर उसको अधीन राजाकी समान नहीं देखता था, और उसने उसको लोहेकी जंजीरमे बांधनेके बदले फूलोके हारोसे बांध रक्खा था, किन्तु ऐसा होनेपर भी क्या वह फूलोका हार दासत्वकी जंजीर नही है? स्वामी, सेवकका चाहै जितना आदर क्यो न करै चाहै जितने मणि मुक्ता देकर उसको सोनेकी जंजीरसे क्यो न सजादे, परन्तु जो दास है वह तो सदा दासही रहैगा। वह आदर और वह स्नेहानुराग तो केवल अभागे दासत्वका पुरस्कार है। वीरचूड़ामणि प्रतापसिह अकबरके उस आनन्द और स्नेहानुरागके कर्मको जानता था, इसी कारण उसने विजातीय घृणाके साथ मुगलसम्राट्के सैकडो हजारो लोगोका तिरस्कार कियाथा और राजधनसे वचित होकर भी वह कठोर वनवासव्रतका अवलम्बन कर गहलौतकुलकी स्वाधीनता और गौरव गरिमाको स्थिर रखनेमे शक्तिमान् हुआथा। यदि उदयसिह चाहता और उसकी ओर जाकर मिलजाता तो वह अपने देशकी स्वाधीनताका उद्धार करसकता था, किन्तु क्या कहाजाय वह तो स्वाधीनताके मर्मको ही नही जानता था। नही तो वह अपने देशकी माया ममताको भूल और अपनी जातिवालोके मुखकी ओर न देखकर टुकड़े खानेवालोकी समान मुगलसम्राट्का कृपापात्र बननेके निमित्त इतना आतुर क्यो होता? मुगल साम्राज्यके आश्रयकी छायाके नीचे सुख प्राप्तकर वह जिस समय अपनी स्वाधीनताके मार्गमे अपने हाथसे कांटे बिखेररहाथा, वीरकेसरी

प्रतापसिंह उसी समयमें असह्य वनमे बसनेके क्लेशोंका सहन करताहुआ कठोर अत्याचारसे पीड़ित हो अपने देश और अपनी जातिकी स्वाधीनताके मार्गको स्वच्छ कररहा था। इसी कारण उस शिशोदिया महापुरुषकी पवित्र प्रतिमूर्ति आज भी प्रत्येक राजपूतोके हृदयमंदिरमे प्रतिष्ठित हो रही है, । इसी कारण प्रत्येक राजपूत प्रातःकाल सोकर उठनेके समय उनके पवित्र नामका स्मरण करता है ।

मुग़ल सम्राट्के कृपापात्र होनेके निमित्त उदयसिहने किसी कार्य्यके करनेमें कमी न रक्खी । यहांतक कि अपने जातीय गौरवको भी जलाञ्जली दे अपनी बहिन जोधाबाईको अकबरके साथ व्याह दिया था। इससे अकबरने उसपर संतुष्ट हो केवल अजमेरके अतिरिक्त मुग़लोके अधीन मारवाड़के समस्त नगर परगने और गांव उसको लौटादिये । इसके अतिरिक्त मालवेके बहुतसे बड़े २ नगरोको भी उदयसिहने अपने अधिकारमे करलियाथा । राजमुकुटधारी माननीय मुग़लबहनोईका सेनाबल पाकर उदयसिहने गर्वित सामन्तोंकी शक्तिको नीचा करदिया। प्रधान२सर्दारोंके बलको व्यर्थ करदिया और प्राचीन भूम्यधिकारी तथा उपसामंतोकी भूमिसम्पत्तिको छीन लिया। इस प्रकार उदयसिहके राज्यकी आमदनी पहिलेसे दूनी होगई। ऐसा वर्णन है कि नया बंदोवस्त करके उसने ऐसेही एकसाथ चौदह सौ गांव सर्कारी खजानेमे लगा लियेथे। दूदाकी संतानवालोसे उसने प्रायः समस्त जमीन छीन ली थी। और ऊदावत लोगोंसे जैतास तथा चांपा और कूंपाके खानदान वालोसे भी कितनेएक साधारण नगर छीन लियेथे।

बादशाह अकबरने जो सलूक उदयसिहके साथ किया उसका हमेशा उदयासिह कृतज्ञ बनारहा, क्योकि इसीके कारणसे वीर राठौरोने बादशाहके बड़े २ काम कियेथे। राजा स्वयं युद्धमे नही जाता था। इस जंगली राजा (बादशाह अकबरने उसको यही उपाधि दी थी) के ३४ लड़के लड़कियां थे, जिनसे नवीन वंश और जागीरदारियां मरुदेशमे कायम होगई, जिनमेसे बड़ी जागीरे गोविन्दगढ़ और पीसागढ़की है, और कुछ जागीरे राजसीमासे बाहर आबाद की गई जो स्वतंत्र होगई और उनका नाम उनके स्थापकोके अनुसार रक्खा गया इनमेसे किशनगढ़ और रतलाम मालवेमे है।

उदयसिहका शरीर उसी योग्य था कि जैसी उसके हृदयकी वृत्ति थी। राजपूत लोग उसे "मोटा राजा" कहकर पुकारते थे। उसका शरीर यहांतक मोटा होगयाथा कि फिर वह घोड़ेपर नही चढ़सकताथा, चढ़े भी तो वैसी सामर्थ्य किसी घोड़ेमे नही थी कि जो उसे उठाकर लेचलता। सिंहासनपर बैठकर उसने तेरह वर्ष राज्य कियाथा। उसकी मृत्युका एक अद्भुत वर्णन पाया जाताहै, इस वर्णनसे उदयसिहके चरित्रकी और राजपूत संस्कारकी एक प्रकाशमान छवि नेत्रोके आगे दिखाई देजातीहै। प्रयोजन समझकर उसका यहां वर्णन करतेहै। मारवाड़के प्रायः समस्त भाटग्रन्थोमे देखा-

---

१ वीरचूड़ामणि प्रतापसिहका जीवनचरित्र टाड्राजस्थानके प्रथमखण्ड पृ० ३१२ में देखो।

जाताहै कि राठौर कुलके राजकुमारोकी नीतिशिक्षा उत्तम रीतिसे हुआ करतीथी और वे अपने २ चरित्रकी नैतिक उत्कर्षताको प्राप्त करलेतेथे–उनकी नीतिशिक्षाका भार विश्वासी और बुद्धिमान् सर्दारोको सौपा जाता था। सबसे पहले वे सर्दारलोग उनको इन्द्रियदमन करना सिखलाते थे। राजकुमारलोग इस शिक्षामे अत्यन्त निपुण होजाते थे, वालकपनसेही वे इन्द्रियोका दमन करना सीखते थे। और बीस वर्षसे पहिले कभी स्त्रीका मुँह नही देखते थे। परन्तु स्थूलशरीर उदयासिहको यह शिक्षा प्राप्त हुई थी या नही सो हमको ज्ञात नहीं। यदि यह शिक्षा उसने पायी भी हो तो इस परिणत अवस्थामे वह उसको भूल गया था। यद्यपि उसकी सत्ताईस रानियां थीं. तथापि उसने बुढापेमे इन्द्रियोके वश हो, एक पवित्र हृदयवाली ब्राह्मणकुमारीकी ओर कामपूर्ण नेत्रोंसे देखा था यह कुमारी ही उदयसिहके नाशका कारण हुई।

"ख्यात्" नामक एक भाटग्रंथमे देखा जाता है कि एक दिन उदयसिह वादशाहके दरबारसे अपने राज्यको लौट रहा था, इसी समय मार्गमे उसने बीलाडा नामक गांवके बीच एक परमसुन्दरी स्त्री देखी। उस बालाके अद्भुत सौंदर्यको देखकर पंचशरने राजाके हृदयमे सुमनबाण मारे। राजाने उस मनमोहिनीका नाम धाम पूँछा। उस स्त्रीके उत्तर देनेसे ज्ञात हुआ कि वह आईपंथी सम्प्रदायके किसी उत्तम ब्राह्मणकी लड़की है। आईपंथी ब्राह्मणलोग कालिकाकी अपरामूर्त्ति आईमाताके उपासक है। वे घोर तान्त्रिक होनेके कारण मद्य मांसके द्वारा अपने उपास्य देवताकी पूजा किया करते थे। जिस लावण्यपतीके रूपपर राजा उदयसिह मोहित हुए थे, उसका पिता उग्र सम्प्रदायका अग्रणी होनेपर शुद्ध और निर्मलचारित्रवाला था। उस काममोहित राठौर राजाने एकवार भी अपनी अवस्था और पद मर्यादाका विचार न किया, राजपूत होकर भी उसने क्षणभरके लिये भी ब्राह्मणोके मुखकी ओर नही देखा। जिन ब्राह्मणोको उसके दादा परदादा देवताओकी समान पूजते आये थे, जिनके साधारण भ्रुकुटी कटाक्षको वे वज्रपातकी समान समझते थे, आज उदयसिहने उसी पवित्र और निर्मल राठौर कुलमे जन्म लेकर और विशाल राज्यका अधीश्वर होकर एक विमल–चरित्रवाली ब्राह्मण कन्याको बलपूर्वक हरण करनेका विचार किया। ब्राह्मणोने दुष्ट राजाके अभिप्रायको शीघ्र ही जानलिया, ब्राह्मणने विचारा कि आज तो रक्षक ही भक्षक होगया है, जिसके ऊपर दुर्बल प्रजाका मान और प्रतिष्ठा निर्भर है, आज वही अपने हाथसे उसका नाश किये डालता है। क्या मेरे जीवित रहते ही एक राजपूत इस कन्याको बलपूर्वक हरण करके लेजायगा। और मेरे पवित्र कुलमे सदाके लिये कलंक लगावैगा। चारों ओर बदनामी होगी और कोई ब्राह्मण मुझसे हेलमेल भी न करेगा। मै जातिसे निकाला जाऊंगा। इस प्रकारकी चिन्ता वारंवार उसके हृदयमे उदित होनेलगी। वह एकसाथही उन्मत्त होकर राजाके

१ पहिले कहेहुए बीलाड़ा गांवमें इनका एक मंदिर था।

नामपर सैकड़ों धिक्कार देनेलगा। अनंतर यह विचारकर कि अपने वंशका कलंक अब किसी उपायसे नही छूटसकता, वह स्वयंही अपनी पुत्रीके संहार करनेका विचार करनेलगा। जिस कन्याको अपने रुधिरसे पालन पोषण किया, जिसका मुंह देखनेसे उसके प्राण प्रसन्न होतेथे, संसारमे केवल जिसको ही वह अपना समझताथा, आज उसी प्राणप्यारी कन्याका संहार करनेके लिये ब्राह्मणका हाथ उठा । सबसे पहिले उसने एक बड़ा होमकुंड खोदा, पीछे पुत्रीका वध करके उसकी सुकुमार देहके टुकड़े २ किये और अपने हृदयका भी कुछ थोड़ासा मांस काटकर कन्याके अंगोंमे मिलादिया। शीघ्रही प्रचण्ड होमकुण्ड जलनेलगा, लकड़ियोके साथ बहुतसा घी भी उस होमकुंडमे डालागया, शोकसे उन्मत्तहुआ ब्राह्मण इस प्रकार अपने देवताकी पूजा करनेको बीभत्स होम करनेलगा। दुर्गन्धिमय विकट धूमराशि उसके घर आंगनमे भर गई, अगणित लहरे निकलकर आकाशको चूमनेलगी, उस समय अचानक ब्राह्मणने खड़े होकर गंभिर वाणीसे राजाको शाप दिया " तुझको अब कभी शान्ति न प्राप्त होगी। आजसे तीन वर्ष, तीन दिन, तीन प्रहरके मध्यमे प्रतिहिसा अवश्य पूर्ण होगी। आईमाता साक्षी है, मै जाताहूं। देवी बावड़ी ही मेरा होनहार स्थान होगा।" इस भयंकर शापके शेष होतेही वह तांत्रिक ब्राह्मण जलते हुए अग्निकुंडमे कूद पड़ा। अग्निकी अगणित लपटोने शीघ्रही उसको भस्म करदिया।

यह भयानक और बीभत्स समाचार राजा उदयसिंहने भी सुना। अपने घोर अपराधको विचार उसका हृदय कम्पित होने और शरीर लड़खड़ाने लगा। उसी दिनसे वह क्षणभरके भी निमित्त शांति न पा सका। वह सोनेके समय स्वप्नमे सदैव उस ब्राह्मणकी बिकट मूर्त्तिको मानसिक नेत्रोसे देखने लगा, सदैव उसका भीषण शाप उसके कर्णछिद्रोमे गूंजने लगा। उसका वह अत्यन्त मोटा शरीर बहुतकुछ सूख गया। अन्तमे वह अभागा राठौर उस ब्राह्मणके दियेहुए शापके नियत समयमे ही इस लोकको छोड़गया।

बहुत दिन बीतगये, परन्तु उस बीलाड़ावासी आईपंथी ब्राह्मणके विकट प्रतिहिसाका चित्र अबतकभी कोई मारवाड़ी नही भूलसका। उसके इस भयानक होमका वृत्तान्त व्यभिचारी राजाओके पक्षमे एक कठोर आज्ञाकी समान विराजमान होरहाहै। जो कोई राजा अपनी मर्यादाको भूलकर इस प्रकारके पाप पंकमे फँसनेकी

---

१ यह कहानी सही नहीं मालूम होती। बीलाडेमें आईजीका मंदिर तो है पर आईपन्थी कोई ब्राह्मण नहीं पायाजाता। सीरवी जातिके किसान विशेषकर आईपंथी हैं, जिस ब्रह्मराक्षसका उल्लेख कियाहै, उसका एक पडिहार राजाके मंडोरमे ऐसे ही अत्याचारसे ब्रह्मराक्षस होना सुनाजाता है। मोटा राजा उदयसिंहका देहान्त लाहौरमे बीमारीसे हुआथा। उसके मरनेकी ऐसी कथा शायद चारणोंने गढीहै क्योंकि उन्होंने इन लोगोंके कई शासन गॉव एक कसूरपर छीन लियेथे जिससे नाराज होकर बहुतसे चारणोंने गाँव आवे तो वहांके जागीरदार चंपावत गोपालदासकी सहायतासे चारी अर्थात् आत्महत्या की थी।

इच्छा करताहै, तो वही प्रेतात्मा ब्राह्मण उसी समय उसके सामने प्रगट हो उसको पापके मार्गसे हटादेताहै।

वहम भी कभी २ सदाचारी वना देताहै। बीलाड़ाके आईपन्थी ब्राह्मणके ब्रह्मराक्षस होनेका भय वहुत समयतक मनुष्योपर छाया रहा, और जिस समय और किसी प्रकारसे राजकुमारोके चरित्रोका सुधार नही हुआ, उस समय यही ब्रह्मराक्षसका भय राजकुमारोको सदाचारी वनाता था। उदयसिहके प्रपौत्र प्रसिद्ध जसवन्तसिहका अपने एक कर्म्मचारीकी कन्यासे प्रेम होगया और उसको वह बावड़ीदेवीमे लेगया, परन्तु इस बदला लेनेवाले ब्रह्मराक्षसके भयने उसकी कामनाओमे बाधा डाली, इस समय संकल्प विकल्पोका उसके मनमें महायुद्ध हुआ, जिससे जसवन्त पागल होगया, परन्तु किसी उद्योगसे भी उसके मनसे प्रेमभाव नही हटा। ब्रह्मराक्षसकी चिन्ता भी मनसे वनीरही। सर्व साधारण रीतिपर यह विचार था कि, इसके ऊपर किसीका आवेश है, क्योकि जिस समय उसको खेलाया जाता था तो वह यह कहता था कि यदि जसवन्तसिहके बरावर कक्षाका कोई सरदार इसके बदलेमे अपनी जान देदे तो मै जसवन्तपरसे उतर जाऊंगा। कूंपावत् जातिका अधिपति नाहरखॉ जो इसके निमित्त सदा युद्धमे सेनापतिका कार्य्य करता था, स्वामीके बदलेमे अपना शिर देनेको राजी हुआ और जिस समय कि उसने अपनी यह इच्छा प्रकट की, स्यानेने जो इसको खेलाताथा भूतको पानीके कटोरेमे उतारा और तीनबार जलको उसके शिरके चारोओर घुमाकर वह जल नाहरखॉको पीनेके लिये देदिया। जसवन्त उसी समय अच्छा होगया। आश्चर्य्ययुक्त बदला इस भूतका राजस्थानके राजकुमारोपर पूरा विश्वास रखता है और इसी कारणसे नाहरखांका नाम ईमानदारका ईमानदार रहा। नाहरखांने मरनेसे पहिले अपने पुत्रको बुलवाया और सौगंध दिलाई कि अव ऐसे राज्यकी प्रधानताको छोड़ देना जिसके कारणसे यह प्राण समर्पण हुआ है, उस दिनसे आसोपके कूपावतोके स्थानमे आहवाके वे चांपावत अधिकारी हुए, जिन्होंने अपने राजकुमारके दाये स्थानको गद्दीकी बाई तरफ बैठना स्वीकार किया।

तेजस्वी मालदेवके अयोग्य पुत्र उदयसिहके सम्बन्धमे अव अधिक कहनेकी कुछ आवश्यकता नही है, पहिले ही कह आये है कि वह वीरपूज्य जोधारावका अयोग्य वंशधर था, गर्वोन्नत राठौरकुलका अयोग्य राजा था। उसीसे सियाजीका विपुल वंश नीचेको गिरने लगा। मारवाडका गौरवसूर्य विषादसागरमे डूबनेके निमित्त मध्य आकाशको परित्याग कर धीरे २ नीचेको उतरने लगा।

हम एक राजावली पुस्तकसे उल्लेख कर २ उदयसिंहका वृत्तान्त उसके सन्तानोकी सूची देकर समाप्त करेगे। ऐसे पाठकोको जिनको इन वंशोसे प्रयोजन है उनके लिये यह इतिहास बहुत ही रुचिकर होगा और विशेषकर ऐसे पाठकोको जिनको इनके जातीय अधिकारमें हस्ताक्षेप करनेकी आवश्यकता पड़ती है। यहॉपर उस महापितृवृक्षकी शाखाये एकही शताब्दीमे सव देशोमे फैली विदित होती है और जिनमेसे किशनगढ रूपनगढ

और रतलामके स्वतन्त्र शासक और गोविन्दगढ़ खरवा पीसागढ़के ताल्लुकेदार जो सब उदयसिहकी सन्तान है रक्षादृष्टिसे देखते है।

१। सूरसिह, सिहासनपर बैठा।

२। अखैराज।

३। भगवानदास–इसके बल्लू, गोपालदास और गोविन्ददास नामक तीन पुत्र थे। इसने गोविन्दगढ़ स्थापन किया।

४ नरहरदास
५ शक्तसिह } इनके कोई सन्तान नही हुई।
६ भूपनसिंह

७ दलपत,–इसके चार पुत्र हुए थे, उनमेसे जेठे महेशदासके रतननामक पुत्रने रतलाम नामक एक गढ़ बसाया था और २ यशवंतसिह, ३ प्रतापसिह ४ कुनीरैन हुए।

८ जयतके चार पुत्र हरसिह अमर, कन्हीराम, और प्रेमराज हुए, इनकी [1]संतानोको बलूंता और खरवाकी पृथ्वी प्राप्त हुई थी।

९ किशनसिंहने सम्वत् १६६९–सन् १६१३ ई० मे किशनगढ़ स्थापित किया। इसके सहसमल, जगमाल, भारमल नामके तीन पुत्र हुए। भारमलका पुत्र हरिसिह और हरिसिहका पुत्र रूपसिह हुआ। रूपसिहने रूपनगर बसाया था।

१० यशवन्तसिह–इसके पुत्र मानने मानपुर बसाया। मानकी औलाद मनरूप जोधाके नामसे प्रसिद्ध हुई।

११ यशवन्त, केशो, इसने पीसानगढ़को बसाया था।

१२ रामदास.
१३ पूरनमल.
१४ माधोदास.
१५ मोहनदास. } इनके नामोके अतिरिक्त कुछ वृत्तान्त नही पायाजाता।
१६ कीरतसिह.
१७ — — —

इनके अतिरिक्त उदयसिहके सत्रह पुत्रियां भी हुई थीं; परन्तु उनका कोई वर्णन भाटग्रन्थोमे नहीं देखाजाता।

---

१ यह गलत लिखाहै क्योंकि शक्तसिंहकी औलादमें खरवा इलाका अजमेरके इस्तमुरारदार है।

२ रतलाम, किशनगढ, और रूपनगढ़ तीन स्वाधीन परगने है। और तीनों स्वतंत्रतापूर्वक सुखसे समय बितातेहै।

पंचम अध्याय ५ः

राजा शूरसिंहका अभिषेक, उसके द्वारा सिरोहीके राव सुरतानका पराभव; गुजरातके राजाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा; धुंधकाके युद्धमे शूरसिहका जय पाना; उसको धन और सन्मानकी प्राप्ति; उसका भाटोको धन देना; अमर बलेचाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा, नर्मदाके तटपर युद्ध, अमरकी हार और उसका माराजाना; नवीन २ सन्मानोंकी प्राप्ति; अपने पुत्र गजसिहके साथ राजा शूरसिंहका सम्राट्की सभामे जाना; मारवाड़के होनहार उत्तराऽधिकारीको सम्राट्का अपने हाथसे सजाना; जालेरके किलेको लांघना; राणा अमरसिंह; मेवाडके विरुद्ध खुर्रम शाहजादेके साथ गजसिहकी युद्धयात्रा; राजा शूरसिंहकी मृत्यु; नर्मदाके किनारे उसके द्वारा तलाक देनेपर मीनारका बनाना; राठौरपतिका बहुत समयतक जन्मभूमिसे बाहर रहनेके कारण मन न लगाना; जोधपुरकी शोभाकी वृद्धि; राजा शूरके पुत्र प्रपौत्र; गजसिंहका सिंहासनपर बैठना, बुरहानपुरके राजत्वमें और दक्षिणावर्तके प्रतिनिधित्वमे अभिषेक; उसकी परम्परा, दलथम्भनकी उपाधि मिलना; राजपूत कुमारियोंका वर्णन, राज्याधिकारके लिये बेगमोकी चालाकी, सुलतान परवेज और खुर्रम; परवेजके विरुद्ध खुर्रमका षड़यंत्र रचना; राजा गजसिहसे उसकी सहायता मांगना; प्रार्थनाकी निष्फलता; राजमंत्री गोविन्ददासकी गुप्तहत्या; गजसिंहका पदत्याग, खुर्रम द्वारा परवेजका मारा-जाना; जहाँगीरको तख्तसे उतारनेका यत्न करना; जहागीरका राजपूतोसे सहायता मांगना; बनारसका युद्ध, गजसिंहके आचरण, विद्रोहियोंकी पराजय; सुलतान खुर्रमका भागजाना, गुजरातकी सीमापर राजा गजसिंहकी मृत्यु; उसके दूसरे पुत्र यशवंतसिंहका अभिषेक; सदैवके उत्तराधिकारित्वके नियमोका अदलबदल; अकबरकी सन्तानसे राजपूतोंका पृथक् होना, उसका देशसे निकाला जाना; मुगल सम्राट्के निकट अमरका आश्रय लेना; उसकी प्रतिष्ठा होना उसकी शोचनीय मृत्यु ।

उदयसिहके मरनेके उपरान्त उसका जेठापुत्र[1] शूरसिह सम्वत् १६५१—सन् १५९५ मे मारवाड़के गौरवहीन सिहासनपर बैठा। जिस समय पिताके मरनेका समाचार उसके निकट पहुँचा. उस समय वह बादशाहकी फौजको लियेहुए लाहौर नगरमे भारतकी सीमावाले देशोकी रक्षा करता था । जिस समय सन् १६४८ मे सिधु जीतागया, उस समयसे वह वही था । शूरसिह एक पराक्रमी और रणकुशल राजा था । पिताके जीवित समयमे उसने इतनी रणकुशलता और वीरता दिखाई कि जिससे बादशाहने उसपर प्रसन्न हो उसको एक ऊँचापद और 'सवाईराजा' की उपाधि दी थी।

मुगल बादशाह अकबरने राठौरवीर शूरसिहके बल विक्रमका भलीभांतिसे परिचय पाया था; इस समय उन्होंने उसको एक कठोर कार्यके पूरा करनेपर नियत किया। सिरोहीका अधिपति राव सुरतान अपने पर्वतमय प्रदेशोके स्वाभाविक क़िलोके ऊपर निवास करताहुआ अत्यन्त गर्वित हो गया था। उसने सोच रक्खा था कि मुग़ल बादशाहकी कोपाग्नि उसके अभेद्य पर्वतोको भेदकर उसको न जला सकेगी। इसी कारण वह अकबरके अधीन न हुआ था। शूरसिहने उस गर्वित राजपूतके विरुद्ध लड़ाई की। इसके पहिले सिरोहीराजके साथ उसका घोर विवाद हुआ था। शूरसिहको इस सुअवसरमे

---

१ शूरसिह जेठा पुत्र नहीं था, कई भाइयोंसे छोटा था।

उस पुराने झगड़ेके वदला लेनेका अच्छा मौका मिलगया। भाटगण उसके सम्बन्धमें ऐसा कहते है कि शूरसिहने उस पुराने विवादका वदला सिरोहीराजसे भलीप्रकार लिया और उसका सिरोही नगर लूटलिया। यहांतक कि राव सुरतानके पास चारपाई व विछौना तक न रहा, उसकी स्त्रियोको पृथ्वीपर सोना पड़ा था, इससे जाना जाता है कि शूरसिहके पराक्रमसे सिरोहीपतिका घमंड और आत्माभिमान चूर्ण होगया था और उसका ऊँचा मस्तक नीचा होगया था। एक समय वह संसारमें किसीको भी श्रेष्ठ न जानता था। उसकी शेखी और गर्वकी अधिकता क्या कहै "सूर्यभगवान साहस करके उसके ऊपर किरणोका विस्तार कर रहे थे, इससे उसने एक समय उनको वाणसे वेधनेकी इच्छा की थी।" आज राठौरराजा शूरसिहके प्रवल पराक्रमसे उसका समस्त गर्व दूर होगया। आज उसको मुगल वादशाहकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। सामंतोंकी प्रथाके अनुसार सुरतानरावने सम्राट्के भेजेहुए फरमानको स्वीकार किया और अपने सेनादलको लेकर वह दिल्लीश्वरकी सेवा करनेको प्रस्तुत हुआ। इसी समय वादशाहकी आज्ञानुसार राजा शूरसिहने गुजरातके शाह मुजफ्फरके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की। हाराहुआ सिरोहीपति भी उसकी सहायताको सेना समेत गया। धुंधकानामक स्थानमें दोनो दल एक दूसरेके सामने खडे हुए। राठौरवीर शूरसिह समस्त देवर और राठोर सेनाका सेनापति हो युद्धखेतमें गया। दोनो ओरसे वहुत देरतक घोर युद्ध होतारहा। इस भयानक युद्धमें वहुतसे राठौर मारे गये; किन्तु अन्तमें शूरसिह ही जीता और मुज़फ्फ़र अपमानित और पराजित होकर राजपदसे विच्युत हुआ। उसके सत्रह सहस्र नगर विजयी राठौरोके अधिकारमें आये। उन नगरोका धन रत्न लूटकर शूरसिहने दिल्लीको भेजा, उसने उस धनमेसे केवल कुछ थोड़ासा अपने यहां भी रख छोड़ा था। इस जीतसे अकवरने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसके पदको वढ़ा दिया और उसको एक तलवार बहुतसा इनाम और नई भूमिसम्पत्ति पुरस्कारमें दी।

गुजरातकी जीतमें राजा शूरसिहको जो अतुल धन प्राप्त हुआ था उससे उसने जोधपुर नगर और दुर्गोके कुछ भागोकी वृद्धि की, और नगरको नवीन शोभासे सजाया, शेष धन उसने मारवाड़के छः भाट कवियोको वॉट दिया। वह भी साधारण नही था, प्रत्येकको एक २ लाख रुपया मिलाथा।

जिस दिन राठौरवीर शूरसिहने अपने पराक्रमसे दुष्ट मुज़फ्फ़रका विषदंत तोड़डाला उसी दिनसे उसका यश राजस्थानके चारोओर फैल गया। मारवाड़के भाटगण आनंदमें

---

१ मुजफ्फ़रकी लडाई तो शूरसिहके राजा होनेसे वर्ष छ महीने पहले ही खानखानाने जीतकर गुजरात फतह करली थी। इस लड़ाईमें शूरसिहके वाप उदयसिंह भी शामिल थे और यही कारण विशेष करके उनको जोधपुर मिलनेका हुआ था। शूरसिहने अकवरके मरेपीछे जहॉगीरके वादशाह होनेके समय मुज़फ्फ़रके वेटेको हराया था, उसीके वृत्तान्तको गड़वड़ करके भाटों तथा टाड्ने ऊपर लिखी कथा यहॉ गढ़लीहै जो इतिहाससे मेल नहीं खाती।

पुलकित हो पंचम तानसे उसकी वीरत्व कहानी नगर २ मे घूम २ कर गाने लगे। बादशाहने उसका और भी यश बढानेके निमित्त उसे और एक कठोर कार्यके करनेको प्रेरित किया। नर्मदाके किनारे अमरवलेचा नामक एक तेजस्वी राजपूत वास करता था। उसने अबतक बादशाहकी अधीनता स्वीकार नही की थी। अकबरकी आज्ञानुसार शूरसिहने उस राजपूत राजाको अधीन करनेके निमित्त उसपर चढाई की। तेरह हज़ार घुड़सवार, दस बडी २ तोपै और बीस बड़े २ मदमत्त हाथी, इतनी सेना लेकर राठौरराज शूरसिहने नर्मदाके किनारे चौहान वीर अमरके ऊपर हमला किया। अमर पाच हज़ार घुड़सवार लेकर उसके प्रचंड आक्रमणके रोकनेके निमित्त आगेको बढ़ा। दिल्लीश्वरकी अपार सेनाके सामने अमरकी पांच हज़ार सेना बहुतही थोड़ी थी; परन्तु तो भी अपने राज्यकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त वह बड़े उत्साहके साथ राठौर राजके सन्मुख हुआ। दोनो ओरसे लगातार तीन महायुद्ध हुए। पहिले दो युद्ध हुए। पहिले दो युद्धोंमें किसीकी हार जीतका निश्चय न हुआ परन्तु तीसरे युद्धमे अमर बलेचाने राठौरवीरोके हाथसे युद्धमे प्राण त्याग किये। उसका समस्त राज्य विजयी शूरसिहके हाथमे आया। इस जयका समाचार शीघ्र ही दिल्लीश्वरके निकट पहुँचा। बादशाहने शूरसिह पर अत्यन्त प्रसन्न हो उसको नौबत भेजी तथा धार और उसमे मिला हुआ समस्त राज्य उसके अर्पण कियाँ।

शूरसिहके अमित पराक्रमसे मुग़ल बादशाह नए २ राज्य जीत रहा था, कि उसी समयमे कराल कालने उसपर आक्रमण किया। वह अपने पुत्र जहांगीरके हाथमे विशाल मुग़लराज्यकी सलतनत दे आप इस लोकसे विदा हुआ। नवीन बादशाहके सिहासनपर बैठते ही शूरसिह अपने जेठे पुत्र और होनहार उत्तराधिकारी गजसिहके साथ उसको प्रीति और राजभक्तिकी भेट देनेके निमित्त सभामे आया। तरुण वीर गजसिहको देखकर जहांगीर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राठौर राजकुमार गजसिह शूरसिहका योग्य पुत्र था। उसने बालक पनसेही युद्धविद्या सीखी थी, इससे पहिले जहांगीरने जालौर क्षेत्रमे उसकी वीरताका विशेप परिचय पाया था। इस समय उसी वीरताकी बात मनमे आते ही बादशाहका आनन्द दूना हो उठा। उसने उसी सभामे उसको अपने हाथसे तलवारकी मूठ पकड़ाई और जालौर युद्धके विपयमे कहकहकर वह बारंवार उसकी प्रशंसा करनेलगा।

---

१ बलेचो, चौहान कुलकी एक शाखाहै।

२ इस युद्धका अकबर तथा मारवाड़के गये इतिहासोमे कुछ पता नहीं लगता। बालीसा चौहानकी एक खांप है जिसको नालौचा भी कहते है। वे गोडवाडाके पहाडोंमें मारवाड़ और मेवाड़की सीमापर रहते है। उनमे ऐसा कोई पराक्रमी नहीं हुआ जो नर्म्मदातक राज्य करके अकबरसे लड़ने के योग्य हो। उस समय तो अम्बरचम्पू नाम विजन मंत्री दक्षिण अहमदनगरके बादशाहक इतना प्रबल था कि वह सम्राट् अकबरकी फौजोंसे लडा करता था। उनके किसी युद्धसे इस कथाका सम्बन्ध हो तो कुछ आश्चर्य्य नहीं है। भाट लोगोने बेसमझीसे इसी अम्बरचम्पूको अमराबालेसा समझ लिया होगा। महात्मा टाड्ने भी बिना सोचे विचारे वह कथा अपनी तवारीखमें नकल करदीहै।

गजसिंहको जालौरके रणक्षेत्रमें अपनी वीरता दिखानेका पहला ही अवसर था। उसी साधन भूमिसे उसकी होनहार उन्नतिका मार्ग क्रमशः स्वच्छ होता रहा। उसने जालौरको गुजरातके बादशाहके अधिकारसे छीनकर मुग़ल सम्राट्के अधिकारमें करदिया। वीररसके चाहनेवाले भाट कवियोंने उसकी वीरताका भलीभांतिसे वर्णन किया है। दुष्ट पठानोंके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेके निमित्त गजसिंहको आज्ञा हुई। उसके युद्धके बाजे बजने लगे, अर्बुदगिरिने वह शब्द सुना, उसका सर्वांग कांप उठा। जो काम अलाउद्दीनने कई एक वर्षोंमें किया था, गजसिंहने उसको तीन ही महीनेमें पूरा किया। अपनी तलवार उठाकर वह जालन्धरके ऊपर कि जिसका नाम जालौर है चढ़ गया। उस युद्धमें अनेक राठौरवीर मारे गये, किन्तु उसने सात हजार पठान सेनाको मारकर वहांके असबाबको लूट लिया और उसे बादशाहकी सेवामें भेजदिया।

भाट ग्रन्थोंके पढ़नेसे जानाजाता है कि जबसे गुजरात विजय हुआ और मुजफ़्फ़रखांकी औलादका नाश हुआ तबसे शूरसिंह केवल राजधानीहीमें रहने लगा। इधर उसका जेठा पुत्र गजसिंह अपने साथकी फौजको लेकर बादशाहकी आज्ञाके पालन करनेमें प्रवृत्त हुआ। जालौर जीतनेके कुछ ही समयके उपरान्त गजसिंहने मेवाड़के अधिपति राणा अमरसिंहके विरुद्ध अपनी विजयिनी सेनाको चलाया। उस समय गहलोत कुलके स्वाधीनताका सूर्य्य धीरे २ छिप रहा था उसी समयमें अर्वलीके दूसरे द्वारस्वरूप प्रसिद्ध क्षेनतर क्षेत्रमें उस वीरपूज्य गहलोत कुलकी बुझतीहुई पराक्रमाग्नि जैसे प्रचंड तेजसे जलरही थी उसका विस्तारित वृत्तान्त मेवाड़के इतिहासमें लिखा हुआ है किन्तु दुःखका विषय है कि मारवाड़के भाट कवियोंने इसके विषयमें कुछ विशेष नहीं लिखा, उनके ग्रन्थोंमें केवल इतना ही देखाजाताहै कि खुर्रमशाह शाहकी आज्ञासे बद्ध होकर कर्णने बादशाहकी सेवा करना स्वीकार किया और गजसिंह तारागढ़ में लौट गया। बादशाहने गजसिंह और उसके पिता दोनोंका ही मंसब बढ़ा दिया।

राजस्थानके भाट कवियोंको अपने देशके राजाके गौरव और वीरताका वर्णन करना अच्छा लगता है। किन्तु जो समस्त मनुष्य उनके उस गौरवके प्रधान द्वारस्वरूप है–उस वीरताकी प्रधान सामग्री है, जिनकी सहायता न पानेसे वह कभी भी प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त करसकते, दुःखका विषय है कि उन्होंने उन मनुष्योंके नामतक नहीं प्रकाशित किए। जिनको इतिहासमें भली प्रकारसे जानकारी

---

१ जालौर एक पृथक् राज्य बिहारी पठानोंका था जिनकी सन्तानमें अब पालनपुरके नव्वाबहैं।

२ राजस्थान प्रथम खण्ड–अ० ११ पृ० ३५९

३ अजमेरका दुर्ग तारागढके नामसे प्रसिद्ध है, किन्तु यह अजमेरके बदले लिखा गयाहै। जहांगीरके जीवनचरित्रमें देखाजाता है कि उसने अजमेरमें दौलतबाग़के नामसे एक सुन्दर बाग बनवायाथा। उस दौलतबाग़में ही वह रहता था।

४ गद्य इतिहासोंमें इस प्रकारके सब नाम हिन्दू मुसल्मान और राजपूतोंके लिखे मिलते हैं, परन्तु टाड्को वे ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुए जिससे ऐसे ऐसे आक्षेप किये गयेहैं।

नही है, उक्त एकदेशदर्शी ऐतिहासिकोके सूक्ष्म वर्णनका पाठ करनेसे उनको सहसा यह निश्चय होगा कि राठौर राजाओने ही उस समयकी वडी घटनाओका अभिनय किया है । उदाहरणके स्वरूपमे एक युद्धके वृत्तांतका वर्णन किया जाता है गहलोतवीर राणा अमरसिहने अपने देशकी रक्षाके निमित्त प्राणपणसे चेष्टा की, परन्तु विधाताकी विडंवनासे उसके सव श्रम निष्फल होगये;उसका सव वल और आश्रय छिन्न भिन्न होगया,वह अपनी थोड़ीसी मुट्ठीभर सेना लेकर मुग़ल सेनाके अनंत वलके रोकनेको गया,परन्तु पराजित हुआ । विवश हो राणाने वादशाहकी अधीनता स्वीकार की । उस प्रचण्ड मुग़ल अक्षौहिणीमे राजकुमार गजसिह जो दूसरा सेनानायक था उसका वर्णन उस समयके इतिहासेमे भलीप्रकारसे वर्णित हुआ है, किन्तु जो उन समस्त वृत्तान्तोको न पढ़कर केवल मारवाड़के ही भाटग्रन्थोका अनुशीलन करते है उनके मनमे यही निश्चय होगा कि गजसिहसेही मेवाडका पराक्रम हीन होकर जगन्मान्य गहलोतकुल स्वाधीनतासे च्युत होगया था । राठौर कवियोके इस प्रकार पक्षपात युक्त इतिहासका एक साधारण कलक नहीं है । उन्होने अपने देशके राजाको एक वड़ा ऊँचा आसन दिया है, किन्तु दु खकी बात है कि जहांगीरने अपने रोज़नामचेतकमे उसका नाम नही लिखा, वरन् उसने कोटा और दतियाके राजाओको शाहजादे खुर्रमके साथ भेजनेका हाल लिखाहै, परन्तु तौभी उस युद्धमे राठौर राजकुमारके नामकी गंध भी नही देखी जाती । इससे विलक्षण विवाद उत्पन्न होता है कि जिस प्रचण्ड मुग़ल सेनाने उस समय मेवाडराज्यपर आक्रमण किया था । अन्यान्य राजपूतोकी समान राठौर राजकुमार गजसिहने भी उसकी पुष्टि साधन की थी ।

सम्वत् १६७६–सन् १६२० ई० मे राठौर राजा शूरसिहने दक्षिणमे प्राण त्यागकिये । वह गर्व्वोन्नत राठौर कुलका एक योग्य राजा था । उदयसिहकी कायरताके कारण राठौर कुलका जो वहुतसा गौरव प्रभारहित होगया था, शूरसिहकी वीरतासे वह फिर महातेजसे उज्ज्वल हो उठा । किन्तु जो तेज वीरवर जोधारावके रोमकूपोसे निकला था, जिसके प्रभावसे एक समय समस्त भारतभूमि प्रकाशित हो उठी थी, वह तेज इसमे नही था।परन्तु तौ भी यह दाहिका और उज्ज्वलकारी शक्ति है । राजा शूरसिहका शौर्य्य वीर्य्य क्या स्वदेशीय क्या विदेशीय अनेक वीरोको आदरणीय हुआ था । उसके वीरोचित गुणोसे मोहित होकर अनेक विदेशी यहां तक कि स्वय वादशाह भी उसका भक्ति सहित सन्मान करते थे । उसके भयसे दक्षिणके निवासी सदैव कांपते रहते थे । उसके अन्तिम जीवनमे एक विचित्र प्रतिष्टाका विवरण देखा जाता है । कहा जाता है कि उसने अन्तिम कालसे नर्मदाके किनारे एक खंभ (मीनार) वनानेकी आज्ञा दी और उसमे एक तलाक लिखदेनेको कहा कि जो कोई उसका वंशधर नर्मदाके दक्षिणओर जाय तो उसको उस शापका भागी होना पड़ेगा । इस मीनारके वनानेका कोई विशेप कारण नही दिखाई देता । कोई कहते है

१ क्यो नहीं 'लिखाहै ।

कि वह बहुधा नर्मदाके दक्षिण ओर ही लडता रहा था, व्यर्थ युद्धोमे लगे रहकर वहां उसने बहुतसे मनुष्योका रक्त बहाकर दक्षिणके निवासियोका सर्वनाश किया था। अपनी की हुई असंख्य नरहत्या और असीम अपकारके विषयपर ध्यान देकर अन्तिम जीवनमे उसके हृदयमे विषम शोच और आत्मद्रोहका उदय हुआ था,इसी कारण उसने अपने वंशधरोको उस नृशंस कार्यसे निवारण करनेके निमित्त उस तलाकको लिखवाया था। और किसी भाटग्रन्थमे देखाजाता है कि समस्त जीवनभर वह कार्य्यवश हो दक्षिणमे ही फँसा रहा था। इस कारण उसको एक वार भी अपनी जन्मभूमिके देखनेका अवसर न मिला। सुविधा और सुयोग पाकर जब वह अपने देशके लौटनेका उद्योग करता तभी कोई एक अकस्मात् घटना आकर उसको उस नर्मदाके दक्षिण किनारेसे ही फंसा रखती। इच्छा होतेहुए भी कार्य्य करनेके अनुरोधसे वह नदीकी सीमाको पार न करसका। क्रोधमे आकर उसने नर्मदाको अनेको शाप दिये थे, वह दक्षिण तटसे छुटकारा पानेके निमित्त सदैव ही देवताओसे प्रार्थना किया करता था। किन्तु उस समयमे उसकी कोई भी प्रार्थना स्वीकार न हुई। वह अपने जीवनमे कभी भी मनभर जन्मभूमिकी ठंडी छायाके नीचे रहकर शान्ति सुख प्राप्त न करसका। बादशाहके प्रसन्न रखनेके निमित्त वह जन्मभर विदेशमे ही रहा। उसने वचपनसे ही अपने पिताके साथ समय विताया था। उसका पिता जिस देशमे अपनी सेना लेगया, मरुभूमिके युद्धक्षेत्रोमे भीषण मैदान व पहाड़ोमे जहां उसने युद्ध किया, बालक शूरसिंहने क्षणभरके लिये भी उसका साथ न छोड़ा। बालकपनसे ही प्रतिपद उसने पिताका अनुसरण किया, जवानीमे राठौर सेना लेकर बादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त दूर २ देशोमे गया, उसने कितने समयमे कितना दुःख पाया, उसकी सीमा नहीं है। उसके पिताने प्राण त्याग किया, उस अन्तिम कालमे शूरसिंहने एक वार भी पिताके चरणोको न देख पाया,एक बारही जन्मभरको विदा ली,शूरसिंहके भाग्यमे उसके देखनेका अवसर भी न वदा था। क्योकि उस समय वह पंजावमे निवास कर रहा था। पिताकी मृत्युके उपरान्त वह पिताकी राजगद्दीपर वैठा, उसने विचारा था कि राज्यमे रहकर मातृभूमिकी श्रीवृद्धि करूंगा, परन्तु दुःखका विषय है कि वह आशा भी आकाशके फूलोमे बदल गई। राज्यशासन और प्रजापालन तो केवल नाममात्रको था बादशाहकी आज्ञापालना ही उसको अपना कर्त्तव्य कर्म माननापड़ा।

---

१ ये बाते बहुधा गद्य इतिहासोके विरुद्ध है। शूरसिंह कई दफे जोधपुरमे आये और उन्होने कई अच्छे२ महल, मकान, बाग, तालाब, कुंड आदि बनाये, जो अबतक विद्यमान है। तलाक मीनारकी बात भी कहानी जैसी मालूम होती है, क्योकि उनके पीछे उनके बेटे गजसिंह यशवन्तसिंह आदि दक्षिणकी बादशाही नौकरियोपर जाते रहे है, जिनसे मारवाड़को द्रव्यका विशेष लाभ होता रहा है।

२ बादशाहको प्रसन्न रखना नहीं, अपनी नौकरीपर जाना था; मसल मशहूर है कि नौकरी कि भाई वन्दी।

बादशाहकी आज्ञा पालनमें ही उसका समस्त जीवन बीत गया। अपने देशको छोड़ दक्षिण देशमें ही उसका समस्त काल कटा। अंतमें उस दूर देशमें ही उसका देह छूटा। कहां वह आशाका विलासक्षेत्र, जीवनका आश्रयकेन्द्र, शांतिकी लीलानिकेतन जन्मभूमि, और कहां उसकी मृत्युशय्या, उस अन्तिम सेजपर लेटेहुए वह उस " स्वर्गादपिगरीयसी " जन्मभूमिकी वार्ता विचारने लगा था। उसके पूजनीय पूर्वपुरुषोंने जिस मारवाड़ राज्यके निमित्त प्रसन्नमनसे आत्मत्याग किया था, और बुद्धिमानीसे वे राजनीतिका परिपालन करगये, किन्तु उस मारवाड़ राज्यके निमित्त उसने क्या किया ? अधीन कर्म्मचारियोंके हाथमें राज्यका भार देकर समस्त जीवन दूसरेकी सेवामें ही बिताया, अन्तमें दूर देशमें देह त्याग करनी पड़ी, अन्तिम समयमें एक बार भी मातृभूमिका मुख न देखपाया। यह सब चिन्ताएँ जब प्रबल वायुके समान उसके छिन्न हृदयमें टकराने लगी तब उसे चारोओर अंधकार देख पड़नेलगा। वह अपनी प्रतिष्ठा और राजसन्मानको सैकड़ो धिक्कार देनेलगा। अन्तमें उस तलाकनामेके मीनारके बनानेकी आज्ञा देकर वह सदाके लिये संसारके दुःखोंसे छूट गया।

राजा शूरसिंहने दिल्लीश्वरके निमित्त जो असीम आत्मत्याग स्वीकार किया था, यथार्थमें बादशाह उसको कभी न भूलसका। बादशाहने यथार्थ ही उसको बड़े २ पुरस्कार दियेथे, उसने राठौर[1] राजको सोलह बड़ी २ जागीरें[2] देदी थी, उसको 'सवाई' की उपाधिसे विभूषित कर समस्त सभासद राजाओंके ऊपर बैठनेका उच्च आसन दिया था, परन्तु उसने जिस मातृभूमिसे वंचित हो समस्त जीवन दूरदेशमें ही विताया, अपने राजकार्य्यको नौकरोंके ही हाथमें दे दिल्लीके कल्याणके निमित्त बहुतसे राठौरोंके रक्तको बहाया, उसके बदलेमें क्या उसको योग्य दान मिला था ? बादशाहके दियेहुए कई एक सन्मानोंसे क्या उन समस्त कार्योंका योग्य बदला होसकता है ? उसके साथ ही साथ उसके सामंतगण भी इसी प्रकारसे परदेशके अनंत क्लेशोंसे पीड़ित होगये थे, स्त्री पुत्र कुटुम्बियों और अपनी २ सम्पत्तिको छोड़कर उनको भी

---

१ शूरसिंह उनके पास लाहौरमें थे और अकबर बादशाहने वहीं उनको राजतिलक दियाथा।

२ इन सोलहोंमेंसे नौ तो उनके पितृराज्य मारवाड़के अन्तर्गत थीं। जैसा कि मारवाड़ प्राय. (नौकोटी) मारवाड़के नामसे भी प्रसिद्ध है। शेष सात भागोंमेंसे पांच गुजरातमें, एक मालवेमें, और एक दक्षिणमें थी। यह सात विभाग अवश्य मारवाड़के अन्तर्गत नहीं थे, यही बादशाहने दिये थे, किन्तु उस नौ हिस्सोंमें बंटेहुए मारवाड़में यह सात जागीरें क्यों मिलाईगई ? इसका विचार करते ही मारवाड़का शोचनीय वृत्तान्त स्मरण हो आता है और हृदय व्याकुल हो उठता है। भाग्यकी कठोर आज्ञासे जिस दिन राठौर राजा मालदेवने मुसल्मानोंके हाथमें आत्मसमर्पण किया, उसी दिन उसके पितृपुरुषोंका स्वाधीन राज्य पराधीन होगया। उसी दिनसे मारवाड़का राज्य मुगल साम्राज्यकी एक प्रधान जागीरमें गिना गया। उसी समयसे राठौर राजा सामंतप्रथाके अनुसार उसको जागीरकी समान भोगने लगे। और प्रत्येक नवीन अभिषेकमें बादशाहके निकटसे उनको नये २ फर्मान लेने पड़े।

राजाके साथ इसी प्रकार देश २ मे घूमना पड़ा था,इससे उनका भी हृदय सदैव व्यथित रहता था। यद्यपि राजाकी सन्मानवृद्धिके साथ ही साथ उनका भी सन्मान और पद वढ़ता था, किन्तु उनको जव जन्मभूमिकी वात याद आती तव वे सम्राट्के दिये-हुए उन समस्त सन्मानोको तुच्छ जानकर उनसे घृणा करने लगतेथे। जन्मभूमिकी गोदमे रहकर यदि उनको समस्त जीवन अनन्त दुःख भोगना पडता तो भी वे उससे ऐसे दुःखी न होते जैसे कि वादशाहकी कृपासे सव भोगविलास पाकर पेटभर रोटी खाकर और कोमल सेजपर सोकर एक दिन भी सुखसे न वितासके। इसलिये वादशाहकी दीहुई वह सम्पत्ति-वह राजभोग और वह सुन्दर सुकोमल शय्या उनके पक्षमे दुर्गन्धिमय नरक और दारुण कण्टकशय्या जान पड़ती थी। वादशाहके आश्रयकी छायाके नीचे वैठकर विलासभोग और भोजनकी सामग्रीका सेवन करते २ जव उनको मरुक्षेत्रकी सूखी जुवार और रावड़ी या गेहूंकी रोटीकी याद आती तो वे भोजनके पात्र दूर फेक-कर अधखाईहुई अवस्थामे ही आसनसे उठकर चल देते थे।

राजा शूरसिह जैसा वीर था वैसा ही प्रतिष्ठित भी था। उसके द्वारा जोधपुरकी शोभा व सुन्दरता अधिक वढ़गई थी। उसने अपने नामके वहुतसे कुएँ, वावड़ी, और मंदिर तालाव आदि वनवाये थे, उनमे अवतक भी वहुतसे देखे जातेहै। उसके वनवाये हुए सरोवरोमेसे केवल एक 'शूरसागर' ही प्रसिद्ध है। जो इस मरुभूमिमे कुछ कम लाभकी वस्तु नही है। इसके पानीसे इसके किनारेके वाग आदि सीचे जाते है।

महाराज शूरसिहने ६ पुत्र और सात कन्याये छोड़कर परलोक वास किया। उसके मरनेके उपरान्त उसका जेठा पुत्र गजसिह सन् १६२० ई० मे पिताके सिहासन पर वैठा। गजसिहने लाहौरमे जन्म लिया था पिताकी मृत्युसमयमे वह वुरहानपुरमे था उसी समय दारावखाँ वादशाहका प्रतिनिधि हो कर उसके डेरेमे पहुचा और उसके मस्तकपर मुकुट, ललाटमे राजतिलक और कमरमे तलवार सजाई। पितृराज्य नौकोट मारवाड़के अतिरिक्त उसको राजगद्दीपर वैठनेके दिनसे गुजरातके "सप्तविभाग" ढूंढाड़के अंतर्गत झिलाय और अजमेरके निकटका मसूदानगर भी जागीरमे दियेगये। इन सव पुरस्कारोके अतिरिक्त उसे एक और भी वड़ा सन्मान प्राप्त हुआ, वह यह कि वादशाहने उसको दक्षिणकी सूवेदारी दी, और उसी समयसे यह नियम करदिया कि

---

(१) गजसिह (सवसे जेठा) सवलसिह, वीरमदेव, विजयसिह, प्रतापसिह और यशवंत यह छः पुत्र थे। उनकी सात पुत्रियोंके सम्वन्धमे कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता।

(२) आमेरका आदि और प्राचीन नाम ढूंढाडर है। आमेर या जयपुर केवल इसकी राजधानी है। पश्चिमी ऐतिहासिकोंमेसे अनेकोहीने अपनी इच्छाके वशसे राज्यके नामका लोप कर उसको अपनी राजधानीके नामसे प्रसिद्ध कियाहै। इसी कारण आज हम प्राचीन मेवाड़ और मारवाड़के वदले उदयपुर और जोधपुरका उल्लेख पातेहै। किन्तु इसके द्वारा जो इतिहासका अपमान हुआहै उसको उन्होंने एक वार भी विचारकर नही देखा। महात्मा टाड् साहवने इसके विषयमे जो श्रेष्ठ मार्ग दिखाया है, उसका उनको अवलम्वन करना उचितहै।

अवसे इसके सर्दारोंके घोड़े न दागेजावे। इस नियमसे मुग़लवादशाहने राठौर सामन्तोंकी एक घोर अपमानसे रक्षा कीथी।

बालपनसे ही पिताके साथ देशदेशांतरोंमे भ्रमण करके गजसिंह उसके सुन्दर गुणो और रणदक्षताका अनुकरण करनेमे समर्थ हुआ था। वह दाक्षिणकी सूवेदारीपर नियत हो उन समस्त श्रेष्ठ गुणोका परिचय देनेलगा। उसकी तीक्ष्ण तलवारके मुखमे अनेक नगर और ग्राम पतित हुए। खिड़कीगढ़, गोलकुण्डा, कोलिया, परनाला, कंचनगढ़, आसेर और सितारा। थोडे ही दिनोमे राठौरराज द्वारा विजय हो मुग़लराज्यमे मिलालिये गये। इन सव स्थानोमे उसने जो असीम वीरता और रणदक्षता दिखाकर विपुल जय प्राप्त की, इससे वादशाहने प्रसन्न होकर उनको 'दलथंभन' की उपाधि दी थी। इन सव युद्धोमे गजसिंहके ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंहने भी उसके साथ रहकर विस्मय-कर वीरता और रणदक्षता दिखाई थी।

वहुतसे विवाह करना राजसमाजमे महा अनिष्टका मूल है। जो राजा विलास अथवा पितृपुरुषोकी प्राचीन प्रथाके वशवर्ती हो वहुतसी स्त्रियोमे विवाह करते है, तो पुत्रवती होनेपर वे सव स्त्रियां प्रायः राजमाता होनेकी इच्छा करती है। पुत्रकी आयु बढ़नेके साथ ही साथ उनकी इच्छा भी वलवती होती जाती है। उस वलवती प्रवृत्तिकी वशवर्तिनी होकर वे एक वार ही ज्ञानरहित होजाती है, वे राज्यके होनहार मंगल अमंगलका विचार नही करसकती। स्वार्थसाधनके निमित्त वे एक साथ ही इतनी उन्मत्त होजाती है कि स्वयं राजा भी यदि उनके स्वार्थके विरुद्ध खड़ा हो तो समय पाकर उसे भी विप देकर या किसी दूसरे प्रयोगसे नाश करडालती है। पिताके दिखायेहुए मार्गका अवलम्बन कर जहांगीर वादशाहने भी कछवाह कुलकी दो स्त्रियोसे पाणिग्रहण किया था। राजपूतोको इस सम्वन्धके कारण शाही सलतनतमे हस्तक्षेप करनेका अवसर मिलता था। उनमेसे राठौर-वंशीया स्त्रीके गर्भसे उसके परवेज[2] नामक एकपुत्र उत्पन्न हुआ। वही जेठा और सदैव प्राचीन प्रथाके अनुसार सिंहासन पानेका योग्य पात्र था। किन्तु आमेरराजकुमारीके गर्भसे वादशाहके वीर्यसे खुर्रम नामक जो पुत्र हुआ था वह सिंहासन पानेके निमित्त परवेज़का घोर शत्रु हो खड़ाहुआ। और अपने स्वार्थसाधनके निमित्त योग्य अवसर ढूँढने लगा। यद्यपि खुर्रम छोटा था किन्तु परवेज़की अपेक्षा वह गुण और बुद्धिमे वड़ा

(१) इस प्रकारकी प्रथासे राजपूत अपनेको वहुत अपमानित समझते थे। वीराचरणके प्रधान सहायक प्रिय घोड़ोकी पीठमें जब वे उस कलंकको देखपाते तब उनके मनमे दासत्वका कलंकित चिह्न मूर्तिमान होकर दर्शन देजाता था।

(२) परवेज नहीं खुर्रम उत्पन्न हुआ था।

(३) यह जेठा नहीं था, खुसरोसे छोटा था।

(४) खुर्रम नहीं, खुसरो हुआथा, परन्तु खुसरो वापके प्रतिकूल होगयाथा, जिससे कैद रालियागया था। और परवेज उसका प्रतिनिधि हुआथा।

था । वह एक निपुण और साहसी योद्धा था, विशेपकर अनेक मोहित करनेवाले गुणोसे अलंकृत था । इसी कारण वह वहुतसे मनुष्योका प्रीतिभाजन होगया था । भाग्यवश उसको योग्य मित्रो और सलाह देनेवालोकी सहायता भी प्राप्त होगई थी । शिशोदीय वीर तेजस्वी भीमसिह और विख्यात सेनापति महावतखॉने उसके असीम गुणोपर मोहित होकर उसके पक्षका अवलम्बन किया, और उन्होने उसके कार्यके पूरा करनेमे सहायता देनेकी भी प्रतिज्ञा की । उनके उत्साह और परामर्शसे उत्साहित हो खुर्रम अपनी अभीष्ट–सिद्धिके वाधक परवेज़के मारनेको व्यस्त हो उठा ।

राजकीय सेनाको लेकर खुर्रम जिस समय दक्षिणदेशमे उपस्थित हुआ, उसी समयसे उसका भाग्यमंडल धीरे २ स्वच्छ होनेलगा और उसके कार्यसिद्धिके कंटक एक२ करके दूर होने लगे । अवतक वह केवल कल्पनाकी ही गोदमे सो रहा था, किन्तु इस समयसे यथार्थ कार्यक्षेत्रमे अवतीर्ण हुआ । मारवाड़के राजा गजसिहका मर्तवा वादशाहज़ादोके सिवाय शाही दर्वारमे वढ़ा हुआ था, वह दक्षिणमे खुर्रमके ही साथ था । सुलतान खुर्रमने उससे अपने मनके भावको प्रकाशित किया और अपने कार्यके पूरे होनेके निमित्त उससे सहायता चाही । गजसिह स्वभावसे ही परवेज़को चाहता था । अपने प्रियपात्रके होनहार भाग्यको अथवा वादशाहके कियेहुए असीम उपकारोको विचारकर किसी कारणवश उसने खुर्रमकी प्रार्थनाको न सुना । उसकी असम्मति और उदासीनता देखकर खुर्रम निराश हुआ, वरन् जिस प्रकार कार्यकी सिद्धि हो उसी प्रकारके यत्नकी खोज करनेलगा । गोविंदँदासनामक एक भाटी राजपूत मारवाड़के विदेशीयँ सामंतोमे था । गजसिह उसका विशेष विश्वास और आदर करते और सव विपयोमे उसकी सम्मति लेते थे । खुर्रमने इस समय उसकी सहायता चाही और उसके मनको गजसिहसे फिरानेका वहुत यत्न किया । किन्तु भाटीसरदारके सामने उसकी कुछ भी न चली, उसने उसकी एक भी वात न मानी । इससे खुर्रम उसपर भी अत्यन्त क्रोधित हुआ। साधारण उप सामंत होकर गोविन्ददासने

(१) महात्मा टाड्साहव कहते हैं कि म्हावतखॉ शिशोदिया कुलांगार पापिष्ठ सगरजीका पुत्र वह था, अपने धर्म्मको त्यागकर महावतखांके नामको प्राप्त हुआ था (राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० ११) किन्तु जहागीरके जीवनचरित्रमे देखागया कि वह कावुलका रहनेवाला गपूरवेग नामक एक मुसलमानका पुत्र था। इसका असली नाम जमानावेग था। टाड्ने इसको मिथ्या सगरका पुत्र वनाकर सगरपर व्यर्थ आक्षेप किया ।

(२) यहांपर पढ़नेसे भलीप्रकार जानाजाताहै कि महावतखां पहिलेसे ही खुर्रमका शत्रु था; किन्तु वास्तवमे यह वात नहीं है। सन् १६२४ ई० मे जव खुर्रम पहले विद्रोही हुआ तब वादशाहकी आज्ञासे महावतखॉने परवेजके साथ उसके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। उसी समयसे महावत खुर्रमके विरुद्ध नानाप्रकारकी शत्रुता करनेलगा । अन्तको सन् १६२६ ई० मे जहांगीरके मरनेके एकवर्ष पहिले वह खर्रमके साथ मिला ।

(३) गोविन्ददास इस समयसे वहुत पहले शूरसिंहजीके जीतेजी मारा जा चुका था। खुर्रम की यह राजचेष्टा करनेके समय जीवित नहीं था ।

(४) विदेशी नहीं, देशी था ।

बादशाहज़ादेकी बात न मानी, इससे क्या खुर्रमका अपमान न हुआ ? खुर्रम उसी दिनसे उस अपमानका बदला लेनेके निमित्त व्यग्र हो उठा और उसके मारनेके निमित्त उसने किशनसिंहनामक एक राजपूतको नियत किया। किशनसिंहने अपने हत्यारे अभिप्रायको थोड़े ही दिनोंमे पूरा करदिया। इससे गजसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ। खुर्रमके आचरणको देखकर उसपर उसकी अत्यन्त विषम घृणा उत्पन्न होगई। बादशाहके कार्योंमे लगे रहनेकी फिर उसकी इच्छा न रही। विकट घृणा और रोषसे, उसका हृदय टकराने लगा और वह इस दुःखसे दक्षिणमे ही सेनाको छोड़कर अपने राज्यको लौट आया।

इस घटनाके कुछ ही दिनोंके उपरान्त अभागा परवेज, खुर्रमकी हिंसाग्निसे पतंगकी समान जलगया। तो भी उसके कार्य पूर्ण होनेका केवल एक कंटक रहगया, वह कण्टक उसका जन्मदाता बादशाह जहांगीर था। उसके गद्दीसे उतारने पर ही उसके सब बाधा विघ्न दूर होसकते थे। आश्चर्यका विषय है कि खुर्रमने उस बुरे कर्मके करनेका भी संकल्प करलिया और एक बलवानसेना इकट्ठी करके वह अपने कार्यसिद्धिका सुअवसर देखने लगा। उसका यह जघन्य अभिप्राय बादशाहको मालूम होगया। अपने पुत्रके ऐसे बुरे अभिप्रायको जान जहांगीर अत्यन्त ही दुखित हुआ। उसने स्वप्नमे भी यह न विचारा था कि खुर्रम ऐसी पितृभक्तिका परिचय देगा। जो हो इस समय उसको विषम संकट उपस्थित हुआ। एक ओर उसका जीवन और सन्मान दूसरी ओर हिन्दुस्थानके सुख और शांतिमे बाधा, उस संकटसे छुटकारा पानेके निमित्त उसने राजपूत राजाओंसे सहायता चाही। शीघ्र ही उनके पास पर्वाने भेजेगये। उन पर्वानोंके पहुँचते ही मारवाड़, आमेर, कोटा और बूंदीके राजा लोग अपनी अपनी सेना लेकर सम्राट्की सहायताके निमित्त आ उपस्थित हुए।

इस भयानक घरेलू झगड़ेके शांत करनेके निमित्त राठौर राजा गजसिंहने सबसे अधिक उत्साह प्रकाश किया। विद्रोही दलको निकट आता देखकर बादशाह अत्यन्त भयभीत हुआ था, किन्तु आज गजसिंहके उत्साह और धैर्य्यप्रद वचनोंसे उसका हृदय बहुत कुछ शांत हुआ। वह राठौरराजपर इतना संतुष्ट हुआ कि

---

(१) किशनसिंह*द्वारा किशनगढ़ स्थापित हुआ। गोविन्ददासको मारकर किशनसिंहने राजाके अनुग्रहसे अपने बसायेहुए नगरमे स्वाधीन राज स्थापित कियाथा। इसके वर्तमान वंशधर अब भी ब्रिटिशगवर्नमेंटके साथ मैत्रीके सूत्रमे बंधेहुए हैं।

(२) जहांगीरके इतिहासमे परवेजका दक्षिणमे मौतसे मरना लिखाहै। खुर्रम तो उस समय भागा २ सिन्धमे फिरता था। परवेजका मरना सुनकर वहांसे दक्षिणमें काठियावाड़ होकर लौट गया था।

* किशनसिंहने खुर्रमके कहनेसे गोविन्ददासको नहीं मारा था, गोविन्ददासने सरवनसिंहके भतीजे गोपालदासको अजमेरमें महाराज सूरसिंहके डेरेपर जाकर रात्रिके समय जेठसुदी ८ सं० १६७१ को मारा था। जिसके बदलेमें तड़के ही कुवर गजसिंहने बापके हुक्मसे पीछा करके अपने काका किशनसिंहको किशनगढ़ जातेहुए रास्तेमें मारडाला।

उससे केवल हाथ ही नही मिलाया वरन् उसके हाथको चूमा भी। विद्रोही पुत्रके दमन करनेके निमित्त बादशाहने उन समस्त राजपूत राजाओसे उसके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेको कहा। तदनन्तर सभी अपनी २ सेनासहित विद्रोहके दमन करनेको आगे बढ़े। वनारसके निकट जाकर उन्होंने खुर्रमके दलको देखा, तव बादशाहने[1] समस्त फ़ौजको श्रेणीवद्ध करके सजानेकी आज्ञा दी और उस समस्त विशाल वाहिनी सेनाका आधिपत्य आमेराधिपति मिर्जाराजाको[2] दिया। गजसिहके रहतेहुए भी जहांगीरने उसको छोड़ आमेरराजको क्यो सन्मानित किया इसका गूढ़ कारण नही समझ पड़ता। कोई कहते है कि खुर्रमने कछवाह कुलमे उत्पन्नहुई एक स्त्रीके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था, मिर्जाराजा भी कछवाह था, सजातीय होनेके कारण खुर्रमपर उसका अधिक अनुराग होनेकी सम्भावना थी, इससे उसको सन्मानित न करनेपर फिर वह पीछेसे विद्रोहीके ही पक्षका अवलम्बन करे इस भयसे बादशाहने पहिलेहीसे उसके मुखको बंद करदिया। किन्तु मारवाड़के भाटग्रंथमे देखाजाताहै कि आमेरराज सबकी अपेक्षा अधिक सेना लेगया था। इसी कारण बादशाहने उसको सबका सेनापति नियत किया। जो हो, इसके भीतर जो कोई कारण छिपा हुआ हो उसकी दलील करना इस समय निष्प्रयोजन है, यहांपर केवल इतना ही कहाजाता है कि बादशाहके ऐसा करनेपर एक विषमय फल फला। तेजस्वी गजसिहने इस बातसे अपना अपमान होना विचारा और अपनी ध्वजाको नीचा कर राजकीय सेनाको छोड़ उसने दूर डेरा जा डाला। उसने विचारा था कि चुपचाप उदासीनभावसे दूरसे ही युद्धके फलाफलको देखता रहूंगा, किन्तु ऐसा न हुआ, शिशोदिया वीर तेजस्वी भीमसिहके तीव्र वाक्यबाणोसे अत्यन्त मर्माहत हो अन्तमे उसने बादशाहके ही पक्षका अवलम्बन किया। यदि भीम राठौरराजको इस प्रकारसे उत्तेजित न करता, यदि गजसिह उस दिन उसी प्रकार चुपचाप युद्ध देखाकरता तो खुर्रम ही उस दिन भारतके राजमुकुटको प्राप्त करता, किन्तु विधाताने अदृश्यमे रहकर वृद्ध बादशाहकी इस दारुण अपमानसे रक्षा की। भीमसिहने एक पत्रद्वारा गजसिहसे कहला भेजा था कि या तो खुर्रमहीके पक्षका अवलम्बन करो, नही तो उसके विरुद्ध तलवार धारण कर अपने पराक्रमका परिचय देनेमे प्रवृत्त होओ। इस पत्रका एक२ अक्षर एक २ विषसे बुझेहुए तीक्ष्ण शरकी समान राठौरराजके हृदयमे विध गया। इससे उसको इतना कष्ट जानपड़ा कि वह उससे शत्रुके अत्याचारको भी साधारण जानने लगा। यहाँ तक कि बादशाहके उस निरादरसे जो उसे कष्ट हुआ था उसको भी उस समय वह भूलगया, और अपनी पताकाको फिर खड़ाकर उसने बड़े उत्साहके साथ विद्रोहियोके ऊपर आक्रमण किया। उसके प्रचंड उत्साह और वीरतासे उत्साहित हो राठौर और

(१) उस युद्धमे बादशाह था ही नहीं, परवेज़ था।

(२) समस्त सेनाका सेनापति उस युद्धमे शाहजादा परवेज़ था। या उसका गार्डियन महावतखाँ था। जिसने हिरावल अर्थात् अगली फौजका सेनानी जयसिंहको किया था। इसीपर गजसिहने बुरा माना था, क्योंकि राठौर उस सेनाके अग्रगामी रहाकरते थे।

उसकी सेना अपने प्राणपणसे युद्ध करने लगी। तेजस्वी भीम मारागया, गोविन्द-दासकी हत्याकी प्रतिहिंसाका भागी हुआ, प्रचंड विद्रोहानल शांत हुआ, अभागे खुर्रम-का मान मथागया और वह पराजित होकर दूर भाग गया।

इस वीर कार्यके उपरान्त राजा गजसिंहका सन्मान और गौरव अधिकतर बढ़-गया, किन्तु दुःखका विषय है कि वह इस सन्मानको अधिक दिनतक न भोग सका। सम्वत् १६९४–१६३८ ई० मे वह गुजरातके एक युद्धमे मारा गया। वादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त अथवा अपने राज्यके दक्षिण प्रान्तवाले डांकुओका नाश करनेके निमित्त ही उसने जो तलवार धारण की थी इसका कोई वर्णन किसी भाटग्रंथमे नहीं देखा जाता। गजसिंह राठौरकुलका एक योग्य राजा था। अपने देशके प्रसिद्ध २ राजाओके बीच वही अपना नाम अटल करसका था। उसने अमर और यशवन्तनामक दो पुत्रोको छोड़ परलोक गमन किया। उसके अचलनामक और भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ था किन्तु वह बचपनमे ही मर गया।

राजपूत स्वभावसे ही प्राचीन संस्कारोके वशीभूत होते है। वे कभी२ पितृपुरुषोके आचारो और व्यवहारोके विरुद्ध भी करते है। और उनकी समाजमे कभी२उत्तराधिकार-प्रथाका भी रद्दवदल देखा जाता है। राठौर कुलका इतिहास देखते २ हमने दो उदा-हरण पाये है, इस समय और भी एक उदाहरण पाया जाता है। पहिले ही कह आये है, कि गजसिंहके जेठे पुत्रका नाम अमर था। इस कारण उत्तराधिकारत्त्वकी प्राचीन प्रथाके अनुसार अमर ही राजसिंहासनका योग्य पात्र था, किन्तु गजसिंहने उसे वंचित कर अपने दूसरे पुत्र यशवंतसिंहको राजगद्दीपर विठाया। जेठेके वर्तमान रहतेहुए छोटेको क्यो राजसिंहासन मिला, इसका विशेष कारण यह है कि अमरसिंह प्रचण्ड, उद्धत और उत्कट स्वभावका मनुष्य था। इस कारण राज्यके प्रायः सव ही मनुष्य उसे चाहते न थे। विशेष कर उसमे राज्योचित कोई भी गुण न था कि जिसकी सहा-यतासे वह पचासहजार राठौरोके ऊपर राज्य करसकता। किन्तु ऐसा होनेपर भी वह असाहसी और पराक्रम रहित न था। उसकी तेजस्विता और पराक्रमके सामने उसके शत्रु तृणकी समान जलजाते थे। गजसिंह दक्षिणदेशके जिन युद्धोमे लगा रहता था अमर ने उन सवमे अपनी विशेष वहादुरी दिखाई थी, वरन् वही सव युद्धोमे सवके आगे तलवार पकड़कर शत्रुओके सामने हुआ था। अमर झगड़ोमे अगुआ, युद्धमे निडर और रणचतुर पुरुष था। इन सव गुणोके साथ ही जिसके मनकी वृत्तियोकी समानता होतीथी उन सबने ही उसके साथ योगदान किया था। उन सव प्रचंड स्वभाववाले मनुष्योके साथ मिलकर अमरसिंह विना कारण ही इधर उधर वलवा करने लगा, जिस तिसको अपमानित करने लगा। उसके अत्याचारोसे देशके सव मनुष्य दुःखित हो कर गजसिंहके निकट फरियाद लाये। प्रजाहितैषी राजाने अपनी प्रजाके सुखके निमित्त अन्तमे उद्धत स्वभाव अमरसिंहको सिंहासनसे वंचित करदिया।

(१) यह भी गलत है महाराज गजसिंहजी तो आगरेमे जेष्ठ सुदी १२ संवत् १६९४ को वीमार होकर मरेथे।

सम्वत् १६९०-१६३४ ई० के वेशाखमासमे एकदिन गजसिहने मारवाड़के समस्त सामंत और मित्रोके साथ सभामे वैठकर जेठे पुत्र अमरसिहको अपने उत्तराधिकार पदसे रहित किया।

इस प्रकारकी शोचनीय घटना राजपूतोद्वारा कभी ही होती है। अन्त्येष्टि विधानकी प्राय: समस्त ही प्रक्रिया इसमे देखी जाती है। जिस दिन ऐसी शोचनीय वात होती है वह दिन राजपूतो द्वारा शोकका दिन मनायाजाता है। गजसिह ऊँचे सिहासनपर वैठा है, दोनो पार्श्वोंमे राज्यके सामंतगण अपने २ पदमर्यादाके अनुसार वैठे है, सामने कुछेक दाहिनीओर अमरसिह खड़ा है। सभामे वैठे हुए सव सभासद चुपचाप है। सभी विस्मययुक्त नेत्रोंसे राजाके गम्भीर और तेजोमय मुखको ओर देख रहे है। सभी उनकी आज्ञा जाननेके निमित्त उत्सुक हो रहे है। उसी समय उस गंभीर निस्तव्धताको भंगकर उसके मुहँसे यह आज्ञा उच्चारित हुई कि "अमरसिह उत्तराधिकारित्वके पदसे पृथक् कियागया। वह अव भविष्यमे राजा न हो सकेगा। मारवाड़का होनहार उत्तराधिकार उसके छोटे भाईको अर्पित हुआ है। अमरसिह निकालागया, वह इसी समय देश छोड़कर चलाजाय।" इस कठोर आज्ञाके होते ही उसके निकालेजानेके वस्त्र आभूषण आदि आये।अमर उन सव वस्त्र आभूषणोंसे सज्जित हुआ।सभी वस्त्र कालेरंगके थे। काला पायजामा, काला अँगरखा, माथेके ऊपर कालेरंगकी टोपी और काली ही ढाल तलवार थी। अमरने उन सव कालेरंगके कपड़ोको पहिना, एक कालेरंगका घोड़ा उसके पास आया वह उसपर चढ़कर तत्काल ही वहांसे वाहर चलागया। उसने एक वार भी किसीकी ओर न देखा, और न किसीके साथ चलनेका भी अनुरोध किया।

यद्यपि तेजस्वी अमरने किसीकी भी सहायताकी अपेक्षा न की, किन्तु उसको देशसे अकेला न जाना पड़ा। जो सामंत और परिवारगण उसको भावी राजा जानकर उसका सन्मान करते थे वे सव एक साथ ही राजसभासे विदा लेकर उसके पीछे होलिये। अमर उन सव विश्वासी सर्दारोके साथ मारवाड़से वाहर हो वादशाहकी सभामे पहुँचा। यद्यपि वादशाहने भी उसके निकालेजानेको स्वीकार किया था तौ भी निराश्रय राजकुमारको आश्रयमे आया देख उसने उसपर दया प्रगट की, और उसको एक सेनापतिके पदपर नियत किया। अमर पराक्रमी और रणदक्ष पुरुष था। कुछ ही दिनके भीतर वादशाह उसपर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसको तीन सहस्रके मनसव पदपर आरूढ़ कर 'राव' की उपाधि दे नागौरको जिला उसके अधीन करदिया। इन सव

---

(१) अमरसिंहके इस तरह देशनिकालेकी कथा इतिहाससे सिद्ध नहीं है। महाराज गजसिंहने जसवन्तसिंहकी माके कहनेसे अमरसिंहको राजसे अलग रखनेके वास्ते वादशाही नौकर पहले ही करा दिया था। और मरनेसे कुछ पहले लाहौरमे वुलाकर अलग रखा था। उनकी मा, स्त्रियो और सन्तानोको भी जोधपुरके किलेसे उनकी वादशाहकी दी हुई जागीरमे भिजवादिया था।

(२) गजसिंहके मरनेपर अमरसिंहको रावकी पदवी और तीनहजारी मनसव मिलाथा। पहले मनसब कम था।

सन्मानेको प्राप्त हो राठौर अमरसिंह अत्यंत उग्र स्वभावका होगया और उसका वह उग्र और प्रचंड स्वभाव ही उसका काल हुआ। जिस उग्रता और प्रचण्डताके कारण वह उत्तराधिकारसे वंचित हुआ था अंतमे उसीसे उसको अकाल मृत्यु भी हुई। पदोन्नतिको प्राप्त होकर वह अपने कार्यमे अत्यन्त ही असावधान हो उठा। यहांतक कि एक समय व्याघ्र शूकर आदिके शिकारमे प्रवृत्त रहकर राजसभासे एक पक्षतक गैरहाज़िर रहा। इस गैरहाज़रीके कारण बादशाह शाहजहाँने उसको धमकी दी और जुर्मानेका भय दिखाया। परंतु तेजस्वी अमर इससे कुछ भी भयभीत न हुआ, वरन् बादशाहके सामने ही धीर और अकंपित कंठसे उसने उत्तर दिया "मै शिकार करनेको बाहर चलागया था, इसी कारण सभामे न आ सका।" तदनन्तर अपनी तलवार छूकर उसने उसी स्वरसे कहा "आप मुझपर जुर्माना करना चाहते है,—करिये, केवल यह तलवार ही मेरा धन है।"

अमरकी इन प्रचण्ड और दुर्विनीत बातोंको सुनकर बादशाह अत्यन्त क्षुभित हुआ और जुर्माना वसूल करनेके निमित्त बखशी सलावतखांको उसके निकट भेजा खजानची नियत समयमे अमरके घरपर गया और उसने कटुवचनोंसे उससे जुर्माना मांगा। उसके ऐसे अयोग्य व्यवहारसे अमर अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसको अपने सामनेसे दूर चलेजानेको कहा, और जुर्माना देनेसे साफ इनकार किया। कर्मचारीके अपमान होनेसे बादशाहने स्वयं अपना अहमान समझा और उसने तत्काल ही अमरको बुलवा भेजा। अमर उसी समय आमखासमे जा पहुंचा और उसने दूरसे बादशाहके लाल नेत्र और गंभीर मुखमंडलको देखा और उसने देखा कि सलावतखां भी उसके सामने हाथजोड़े खड़ाहै। इससे अमरका हृदय क्रोधके आवेगसे थरथराने लगा, उसकी नस २ मे गर्म खूनके पनाले बहने लगे, उसके रोम रोमसे मानो जलतीहुई अग्निशिखाएँ निक-

(१) सलावतखां बखशी कहलाता था। बखशीका काम केवल वेतन बांटनेका ही नहीं था परन्तु देखभाल व जांच पड़तालका काम भी उसके हाथमे रहता था। हमारे विचारमें बखशीका पद हाज़री लेने और वेतन बांटनेका बहुत सम्मानित था, और विशेषकर ऐसा जैसा कि उमराका पद था जिसके अधिकृत सिपाही ऐसे उग्र थे कि यदि उनके सेनाध्यक्षकी मूंछका बाल भी हवासे हिलजाय तो वह बदला लेनेको तैयार थे। इतिहासमे लिखा है कि अमरा अर्थात् अमरसिंह*और सलावतखामें द्वेष रहता था जिसका प्रयोजन शायद, यही होगा कि सलावतखां अपने कर्तव्यको बादशाहके विश्वासके अनुसार करता था।

(२) यह बात आमखासमे नहीं हुई मारवाड़के इतिहास और शाहजहाँकी तवारीखके अनुसार शाहजादे दाराशिकोहकी बेलीमे सावन सुदी ३ सम्वत् १७०१ को हुई। जहाँ बादशाह कुछ दिन पहले कारणविशेषसे जारहे थे।

* अमरसिंहने बखशीसे परवाहरा बादशाहका मुजरा कर लिया था, जिसपर बखशीने नाराज होकर गिल्ला किया और गवार कहा—जिससे रोषमे आकर अमरसिंहने बख़शीको कटारीसे मारडाला। मूलबात यही थी बाकी कवियोंकी गढन्त है।

लने लगी। उसने सोचा बादशाहने ही मेरा तिरस्कार किया है, गाली दी है, निकाले-जानेका दंड किया है, अतएव बादशाह ही इन सब उपद्रवोंकी जड़ है। इस भावनाके मनमे निश्चित होते ही वह पंचहज़ारी सप्तहज़ारी मनसबदार सरदार उमरावोंके बीचमेसे निकलकर शीघ्रतापूर्वक एक बारही सम्राट्के पास पहुंचगया, मानो कुछ कहैगा। परंतु उसने छलांग मारकर सलावतके ऊपर आक्रमण किया और उसकी छातीमे छुरी मार दी। तदनन्तर तलवार खींचकर उसने बादशाहपर आक्रमण किया परन्तु सौभाग्यवश वह तीव्र तलवार तख्तके पायेपर लगकर पृथ्वीपर गिरपड़ी। बादशाह भयसे सिंहासन छोड़ कर महलके भीतर भागगया। राजसभामे महा हाहाकार मचगया। अमरकी संहारमूर्ति देखकर सब भयसे चारोओरको भागने लगे। उसकी प्रचंड तलवार बिजलीकी समान चारोओर चमचमाने लगी। उसको भले बुरेका विचार न रहा। उसने जिसीको सामने पाया उसीपर आक्रमण किया। इस प्रकारसे उसने पांच उच्चपदाधिकारी मुग़ल सेनापतियोंको मारडाला। रक्तकी धाराओंसे तमाम सभामे कीच ही कीच होगई। तौ भी उस प्रचण्ड राठौरने कल न ली। उसके रोकनेका उपाय न देख अन्तमे उसके साले अर्जुनगोरने उसको प्रसन्न करनेके बहानेसे उसपर एक शस्त्र प्रहार किया। यद्यपि उस प्रहारसे अमर पृथ्वीपर गिरपड़ा किन्तु जबतक उसके शरीरमे स्वासा रही तबतक वह तलवार चलाता रहा, अंतमे वह उसी लोहूकी शय्यामे अनन्तकालके लिये सोगया।

अमरकी उस शोचनीय और लोमहर्षण मृत्युका बदला लेनेके निमित्त उसके सर्दारोने अपने जीवन न्यौछावर करनेकी प्रतिज्ञा की, और उन्होने पीले वस्त्र पहिनकर मुग़लोंके ऊपर प्रचंड वेगसे आक्रमण किया। चांपावतगोत्रीय बल्लू और कूंपावतगोत्रीय भाऊ नामक दो तेजस्वी राजपूत उस सेनाके सेनापति हुए। देखते २ उन कुछेक राजपूतोंकी प्रचंड वीरतासे लालकिले भीतर और एक बीभत्सकाण्डके अभिनयका आरम्भ हुआ। दलके दल युद्धविशारद असंख्य यवनसैनिक आआकर उस मुट्ठीभर राजपूत सेनाके ऊपर आक्रमण करनेलगे। अस्त्रोंकी झनकार और वीरोंके सिंहनादसे सारा आगरा गूंजउठा। देखते २ थोड़ी देरमे सभी थमगया। असीम मुग़लसेनाके निकटसे कुछेक राजपूत सर्दारोने पराजित होकर प्राण त्यागदिये। तदनन्तर अमरकी व्याहता स्त्री बूंदीकी राजकुमारी उस भीषण रंगस्थलमे उपस्थित हो प्राणपतिके मृतक देहको उठा लेगई और एक चिता बनाकर स्वामीके मृतक देहको गोदमे धर उसीके साथ सती होगई।

अमरसिंहके कुछेक विश्वस्त सेवकों और सर्दारोको प्राण छोड़े बहुत दिन होगये, " किन्तु उनकी अप्रतिम राजभक्ति, आत्मोत्सर्ग और वीरताका प्रकाशित चित्र आज भी आगरेके खम्भोंसे वर्तमान है। कालके विशाल ग्रन्थसे उसके महत् चरित्रोंका जीवित

---

(१) अमरसिंहके सरदारोंने अपने डेरेसे अर्जुन गोडके डेरेपर बदला लेनेको जाना चाहा था। उनके रोकनेको बादशाहकी फौज आई थी, उससे उनकी लड़ाई हुई।

चित्र कोई भी न हटासका। " वह बुखारानामक जिस सिंहाद्वारसे लालकिलेके भीतर गये थे वह ईटोसे वंदकर दियागया और वह उसी दिनसे "अमरसिंह-फाटक "के नामसे प्रसिद्ध हुआ। उस दिनसे वह द्वार बहुत दिनोंतक वंद रहा था। अन्तमे जार्ज स्टील नामक एक अंग्रेजने सन् १८०९ मे उसे खोला १।

---

(१) ऐसे चरित्रोंका लिखना, पश्चिमीय राजनीतिसे मिलान करनेके लिये बहुत उपयोगी होगा। और इसलिये भी कि जब कभी कोई अधिकृत राजा भारतकी वर्तमान महाशान्ति वृटिश गवर्नमेण्टके साथ करे, उनको किसप्रकार उसके साथ सलूक करना चाहिये, जैसी कि अमराने अपने प्रभुकी आज्ञाका उल्लघन किया।इस स्वतंत्र आज्ञा उलंघनेवालोको राजपूत जातिसे एक उपदेश मिलता है, क्योंकि राजपूत किसी शासकके द्वेपको चिरस्थाई नहीं रखते थे, और एक कड़ीके बिगड जानेसे कुल जंज़ीरको नहीं बिगाडते थे, अर्थात् यदि वंशमे किसी एक मनुष्यसे द्वेप होजाय तो सारे वंशसे द्वेप नहीं रखते थे। शाहजहाने उसके पुत्रसे उसका वदला नहीं लिया, परन्तु उसके पुत्रको नागौरकी गद्दीपर बिठलाया। इसका नाम रायसिंह था, और फिर यह जागीर उसके वंशपरम्परामे बहुत समयतक रही, अर्थात् हठी *सिंह, उसका वेटा अनूपसिंह उसका वेटा इन्द्रसिंह, उसका वेटा महकमसिंह इनके पास रही। इसकी चौथी पीढीमे अर्थात् जब इन्द्रसिंहको निकालकर राठौरोंने नागौरराज्यको राठौर राज्यमे मिलालिया तब निकली। परन्तु हम अभी इन मुगल और राजपूतोंके समान व्यवहार करनेको तैयार नहीं है, क्योंकि जबतक अपनी प्रजाके स्नेह और प्रेमपर हमारा पूर्ण विश्वास न हो, हम दयाभाव नहीं रख सकते, इसलिये हमारा वदला तो इन्द्रवज्रकी समान शत्रुके कलेजेको विगलित करता है। देखिये बहुतसे सरदार अपनी रियासतोंसे खारिज़ किये गये, रुहेलोंकी गुप्त चालोंके समयसे भरतपुरके विध्वसके समयतक हमने पंच बनकर ऐतिहासिक संसारमे सिंहके समान कार्य किये। अब वर्तमान समयमे हमारा राजप्रताप भलीभांति छागया है। हम दयाभाव दिखा सकते है और यदि दुर्भाग्यवश राजपूतानेमे इसकी आवश्यकता हो तो हम यह भाव प्रगट कर सकते है, क्योंकि वहांपर इसका प्रभाव बहुत पड़ता है, और आकाशकी ओसकी समान वह प्रभाव हमपर फिर लौटेगा, परन्तु यदि हम आगामी खटकेकी चिन्तासे अपने प्रबंधको ठीक नहीं रक्खेंगे तो एक दिन हमको भी उसी अवस्थामे फंसना पड़ेगा। हमारा प्रबन्ध हमारी प्रजाको प्रिय नहीं है, जहां कि अल्प समय रहनेवाले पोलिटिकल एजेण्टो (रजवाड़ोपर जो अंग्रेजोकी तरफसे निरीक्षक रहते हैं उनको पोलिटिकल एजेन्ट कहतेहै) की उद्दण्डता एक ऐसे विवाद और क्लेशकी उत्पादक होसकती है। जो सैकडो वर्षोकी जमीहुई रियासतको एकदम उखाड़ दे।

२ इसके विषयमे कप्तान स्टील साहबने टाड् महोदयसे कहा था कि जब वह अमरसिंहनामक फाटक खुलवाते थे तब नगरवालोंने उनको रोककर कहा " आप इसको न खुलवाइये, इसमे एक वडाभारी अजगर इसका रक्षकबनकर रहताहै।फाटक खोलनेसे निश्चयही आपको विपदमे पडना होगा।" कप्तान साहबने इसको उन सब मनुष्योकी भूल समझकर उसबातपर ध्यान न दिया। फाटक तुडवाते २ थोड़ासा रहगया कि उसी समय एक वड़ा भारी सर्प उसके भीतरसे बाहरको निकला और उसने स्टील साहबपर आक्रमण किया। साहब वडी मुश्किलसे उसके काटनेसे छुटकारा पाकर भागे और दूर जा खड़े हुए।

---

* हठीसिंह और अनूपसिंह तो रायसिंहके भाई थे। और इन्द्रसिंह रायसिंहका वेटा था।

छठा अध्याय ६.

राजा यशवंतका राज्याभिषेक, उसके द्वारा सब प्रकारके शास्त्रोंकी उन्नतिविधान, उसकी माता मेवाड़की राजकुमारी, गोडवॉनामे उसकी प्रथम राजसेवा, शाहजहासे औरंगज़ेबका विद्रोह, उसके दमनार्थ सेनाका सजाना और राजा यशवंतको समस्त सेनाका सेनापति करना; फ़तेहाबादका युद्ध, यशवंतका पीछेको लौटना; रावरत्नकी वीरता, आगराकी ओर औरंगजेबका आना; जाजवका युद्ध; राजपूतोका हारना, शाहजहाका तख्तसे उताराजाना, औरगजेवका बादशाह होना, यशवंतको क्षमाकर पास बुलाना, शूजाका प्रतिपक्ष अवलम्बन करनेके निमित्त उसको आज्ञा देना; खजवाका युद्ध, यशवंतका आचरण, औरगज़ेबको विपत्तिमे डालकर उसका डेरा लूटना, दाराके साथ मित्रता; दाराकी खराबी, औरगज़ेबका मारवाडपर चढाई करना, दाराके निकटसे यशवंतका अलाहिदा करना, राठौरराजको गुज़रातका प्रतिनिधि करना, उसका दक्षिणकी ओर जाना, शिवाजी के साथ यशवंतका परामर्श, बादशाहके लफटेन्ट शाइस्ताखॉंका माराजाना, उसके पदपर यशव तका मुकर्रर होना; उसके पदपर आमेर राजका अभिषेक; दक्षिणदेशमे यशवंतका पुनःअभिषेक, राजकुमार मुअज्ज़मका विद्रोह, दिलेरखॉंका युद्ध, उसपर आपत्तिका आना, यशवंतका दक्षिणसे गुजरातको लौटना, सम्राट्की आज्ञासे काबुलके अफगानियोकी युद्धयात्रा, जोधपुरमे पृथ्वीसिहकी अवस्थिति, उसपर औरंगज़ेबका क्रोध, उसे दरबारमे बुलाकर विषमिला वस्त्र पहिननेको देना, पृथ्वी-सिंहकी आकस्मिक मृत्यु; यशवंतको पुत्रके मारेजानेका समाचार मिलना; पुत्रशोकसे उसकी मृत्यु; राजपूतोकी प्रकृतिके इतिहास; यशवंतके चरित्रोका वर्णन, नाहरखॉं उसका सिंह और सिरोहीके सुलतानसे युद्ध।

अमरसिहके निकालेजानेपर यशवंतसिह मारवाड़की राजगद्दीपर वैठा। उसने एक शिशोदिया राजकुमारीके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था। पवित्र शिशोदिया कुलमे व्याह करपाने पर राजपूत राजा अपनेको पवित्र और कृतार्थ समझते थे। इस व्याहसे यदि पुत्र उत्पन्न हो तो वह पुत्र छोटा होनेपर भी वड़के सिवाय राजसिहासन प्राप्त करता था और यदि कन्या उत्पन्न होती तो वह प्राणोके चलेजानेपर भी उसको मुग़लोके हाथमे न देते थे। इस नियममे कुछ भी हेरफेर नही होता था, और यदि होता तो हेरफेर करने-वाला उसके विषमय फलको भोगता। गहलोतवंशीय-राजकुमारीके गर्भसे जन्म लेनेके कारण जो छोटा भाई यशवंत जेठे भाईके हकके राजसिहासनपर वैठा, इसका कोई भी वर्णन भाटग्रन्थोमे नही देखाजाता। इससे जानाजाता है कि अमरसिह की प्रचंड और ढीठ प्रकृतिही उसके देश निकालेका एकमात्र प्रधान कारण है।

भाटकवि कहते है कि "यशवंत अपने समयवाले राजाओंसे अद्वितीय था। उसके जगमगाते हुए ऐश्वर्यसे देशकी मूर्खता और अज्ञानता दूर होगई थी। जहॉंपर उसने राज्य किया था वहां हिन्दूशास्त्रकी वहुत वढती होगई थी। उसीके अनुग्रहसे वहुतसे ग्रन्थ वनाये गये थे।"

जो दक्षिण देश शूरसिंह और गजसिंहका प्रधान रणस्थल था, आज यशवंतने उसको ही अपनी कार्य्यसिद्धि होनेका स्थान समझा। बालकपनसे ही उसके हृदयके भीतर अपनी जातिकी गौरवेच्छा अदृश्य भावसे धीरे २ बढ़ रही थी। योग्य सहायताके पानेसे ही वह बलवती इच्छा सफल होकर भारतसन्तानकी उन्नतिके मार्गको स्वच्छ कर सकती है। किन्तु वह सहायता सम्राट्की इच्छापर निर्भर है। बादशाह यदि यशवंतके हृदयका यथार्थ भाव समझता और समझकर यदि उसके कहे अनुसार उसे सहायता देता तो फिर मारवाड़का इतिहास दूसरी मूर्ति धारण करता। किन्तु वह उस समय स्त्रीका अंचल पकड़कर केवल अन्तःपुरमें ही वास करता था और उसके पुत्र प्रतिनिधि हो हो मुगल साम्राज्यके अन्य २ विभागोंमें निवास करते थे। इस कारण शाहजहांने राठौर वीर यशवंतके महत् चरित्रोंको विचारकर एकवार भी न देखा। बादशाहने सबसे पहिले उसको गोंडवानेमें भेजा। यह गोंडवाना ही यशवंतकी प्रथम साधनभूमि था। इस स्थानमें और इसके समान और भी दूसरे स्थानोंमें वह औरंगज़ेबके अधीनस्थ विशाल सेनाके एक अंशका सेनापति हो युद्ध कार्यमें लगा रहा था। इस सेनाका बड़ा अंश बाईस भिन्न २ सामन्त सेनासे युक्त था। यद्यपि वह इन सब युद्धोंमें अपनी स्वाधीनतापूर्वक युद्धकार्य न करसकाथा तो भी जो सब सामंत राजा मुग़ल बादशाहकी सहायताके निमित्त युद्धभूमिमें आये थे उनमेंसे राठौर राजा और उसकी वशवर्ती सेनाहीने सबसे अधिक वीरता दिखाई थी। इस प्रकारसे राठौर वीर यशवन्तसिंहका शौर्य, वीर्य धीरे २ प्रकाशित होता रहा, इस प्रकार उसने बहुत दिनोंतक नीचकर्मचारीकी समान अपने भाग्यकी परीक्षा की। ऐसेही धीरे२बहुत दिन कटगये। धीरे २ बादशाहके बढ़तेहुए रोगके साथ ही यशवन्तका भाग्य बढ़ने-लगा। सन् १६५८ ई० में जब शाहजहां सांघातिक रोगमें आक्रान्त हुआ तब उसने अपने पुत्र दाराको प्रतिनिधि किया। दाराने राजा यशवंतसिंहकी बहादुरीका परिचय पाय उसको "पंचहज़ारी" का खिताब दिया और उसको मालवाप्रदेशका अपना प्रतिनिधि बनाया।

जिस दिनसे बादशाहकी पीडा अत्यन्त सांघातिक कहकर प्रचारित हुई उसी दिनसे उसके पुत्र नानाप्रकारके कूट उपायोंका अवलम्बन कर राजसिंहासनके पानेकी चेष्टा करनेलगे। किसीने खुल्लमखुल्ला विद्रोह किया, किसीने अपनी इच्छाको छिपाकर शीघ्रतापूर्वक राजधानीकी ओर पैर बढाया। सिद्धान्त यह कि उस समय राज्यमें एक भयानक झगडा उपस्थित होगया। इस भयानक झगडेके शांति करनेकी आशा वृद्ध और पीड़ित बादशाहको केवल राजपूत वीरोंहीके ऊपर निर्भर थी। बीमारीकी सेजपर लेटाहुआ बादशाह जिस ओरको देखता, उसी ओर मानो उसके दुष्ट पुत्रोंकी विकट भौं हैं उसको सैकड़ो विभीषिकायें दिखानेलगीं। जो उसके वीर्यसे उत्पन्न हुए पुत्र उसके बुढापेका

---

(१) लफटिनेण्ट करनल विरगकी अनुवाद कीहुई तारीख फरिस्तामें पाठक इस युद्धके विषयमें यवन इतिहासवेत्ताओंकी सम्मतियोंका वृत्तान्त जान सकतेहैं।

अवलम्ब है, जिनके सुखकी ओर देखनेसे वह सैकड़ो दुःखोको भूल जाता था, जिनके ऊपर विश्वास कर इसने विचारा था कि हिन्दुस्तानका राज्य सर्वथा निर्विघ्नतासे भोगूंगा, अन्तिम समयमे अत्यन्त आनन्दपूर्वक परलोक यात्रा करूंगा; आज क्या वही उसकी उस शोचनीय अवस्थामे उसको गद्दीसे उतारनेकी चेष्टा करते है ? जिसके अन्नसे वह इतने दिनोतक प्रतिपालित हुए, जिसके गौरवसे गौरवान्वित हो इतने दिनतक प्रजाकी भक्ति भेटमे पाई, आज वही पाशवीबुद्धिका अवलम्बन कर परम गुरु पिताका तिरस्कार करनेपर उद्यत हुए है ? यद्यपि बादशाहके पुत्रोने उसके विरुद्ध तलवार उठाई, किन्तु इस बादशाहने जिनकी सहायता चाहीथी, वह परम विश्वस्त राजपूत उसके दियेहुए विश्वासका निरादर न करसके । विपद् पड़नेपर उसने उन राजपूतोको बुलाया और उनकी सहायता चाही, इससे क्या वह निश्चिन्त रह सकते है ? शीघ्रही समस्त राजपूत समाजने बादशाहकी रक्षाके निमित्त अपनी २ फौज लेकर शाहजादोके विरुद्ध यात्रा की। उन सब राजपूतोमेसे आमेरके राजा जयसिंह शूजाके[1] विरुद्ध और यशवंतसिंह औरंगजेबके विरुद्ध आगेको बढ़े ।

औरंगजेबके दमन करनेके निमित्त राठौर राज यशवंतसिंह तीस सहस्र राजपूत और मुगलकी सेनाका सेनापति हो आगरेसे बाहर हुआ। उसकी विशाल सेनाके भारसे पृथ्वी हिलने लगी और शेपनाग थरथराने लगे । वह इस वृहत् सेनाके भीषण पराक्रमसहित नर्मदाकी ओर बढा । उज्जैनके लगभग आठकोस दक्षिणकी ओर वह पहुँचा कि उसी समय समाचार आया कि औरंगजेब भी उसके निकट ही आ पहुँचा है। तब यशवंतने भी आगेको न बढकर वहीपर ठहर अपने डेरे जमाये । देखते २ विद्रोहीदल नर्मदाको पारकर यशवंतके अति निकट आ पहुँचा, किन्तु सहसा उससे सामना करनेका साहस न किया । यदि राठौर राज चाहता तो वहीपर उस सेनाको भगा देता, किन्तु वह उस समय चुपचाप स्थिर रहा । इससे औरंगजेबकी फौजको मौका मिलगया । इसी मौकेमे उसने अपने भाई मुरादसे मिलकर अपने बलको और भी दृढ़ करलिया। इस वृत्तान्तको जान बूझकर भी यशवंतने कुछ न कहा, एकवार भी उसके रोकनेका यत्न न किया । अपने बलके मदसे मत्त होकर उसने विचारलियाथा कि एक साथ ही विद्रोही भाइयोके बलको नाश करूंगा, इस कारण उसने उन दोनोको एक होजाने दिया किन्तु उसका वह अभिप्राय पूर्ण न हुआ। काम पूर्ण होना तो दूर रहा वरन् उससे जो विषमय फल उत्पन्न हुआ उससे उसका सन्मान व गौरव बहुत कुछ घट गया । चतुर

(१) शूजा उस समय बंगालेका सूबेदार था । पिताको अत्यन्त बीमारहुआ सुनकर राजसिंहासनके पानेकी आशासे वह बंगालेसे आ रहाथा, कि उसी समय बनारसके निकट दाराके पुत्र सुलेमान शिकोहने उससे युद्ध कर उसको परास्त किया । राजा जयसिंहने सुलेमान शिकोहको वहांपर सहायता दी थी ।

(२) औरंगजेब उस समय दक्षिणका सूबेदार था । वह अत्यन्त कपटी था । अपनी इस दुरभिसंधिको उसने बहुत दिनोसे अपने कपटी हृदयमे छिपा रक्खाथा ।

औरंगज़ेब भाईके साथ मिलकर चुपचापही न रहा, परन् यशवंतके साथवाली मुगल-सेनाके साथ भी यह षड्यंत्र करनेलगा। उस चक्रांतका फल शीघ्र ही प्रकाशित हुआ। क्योंकि राठौरराजने जैसे ही विद्रोहियोंके साथ युद्ध आरम्भ करनेकी आज्ञा दी, वैसेही उसके अधीन मुगल घुड़सवार उसको छोड़कर औरंगजेबकी ओर चले-गये। दुष्टोंकी ऐसी विश्वासघातकतासे तेजस्वी यशवंतसिंह क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ, वरन उसका उत्साह पहिले की अपेक्षा और भी अधिक उभरउठा। यवनगण जब उसको छोड़कर चले गये तब केवल ३० सहस्र राजपूत ही उसकी फहराती हुई पताकाके नीचे खड़े रहगये। उसको इन समस्त राजपूत वीरोंपर दृढ विश्वास था कि शत्रुसेना चाहै जितनी बड़ी क्यों न हो, उसको इन वीरोंके सामने हारना ही पड़ेगा। उसकी सब सेना आज्ञा पाते ही सिंहकी समान गरज उठी, और प्रचंड पहाड़ी नदीके समान शत्रुसेनाकी ओर बढ़नेलगी। "राजा यशवंतने भयानक शूल हाथमें ले अपने रणतुरंग महबूबके ऊपर चढ बादशाहके दोनों पुत्रोंपर आक्रमण किया। उस भयानक युद्धमें दश हजार मुसलमान मारे गये। इन यवनोंके संहार करनेमें सत्रहसौ राठौर इसके अतिरिक्त गहलोत, हाडा, गोंड और सामंतोंके कुछेक वीर मारे गये। औरंगजेब और मुराद अति कष्टसे प्राण लेकर भगे, क्योंकि उनकी मृत्यु निकट थी। महबूब और यशवंतसिंह खूनसे भीग गयेथे, यशवंतसिंह भूँखसे कातरहुए सिंहकी समान देख पड़ता था, और अपने भागेहुए शिकारको देखता था।"

इस भयानक युद्धके सम्बन्धमें जो भाटोंने वर्णन किया है, मुसलमान ऐतिहासिक और बर्नियर द्वारा वर्णन कियेहुए वृत्तान्तके साथ उसकी बहुत समानता देखी जाती है। यहांतक कि इन्होंने उन्हीके वृत्तान्तका समर्थन किया है। बर्नियर स्वयं उस समय युद्धस्थलमें उपस्थित था। वह कहता है कि, यद्यपि दोनों शाहज़ादोंने बहुत सेना और फरासीसी गोलन्दाजोंको साथ लेकर बहुतसे घुड़सवारों और तोपोंके साथ राजपूतोंके विरुद्ध युद्धयात्रा कीथी, किन्तु रात्रिके आते ही उसके समस्त उद्यमोंका अन्त होगया। उस दिन दोनों ही पक्षवालोंने वह रात्रि युद्धभूमिमें बिताई। यद्यपि तारीख फ़रिश्ताके पहले अनुवादकके लेखसे जो लिखता है कि रातको जशवन्त रणक्षेत्रमें रथ पर सवार होकर घूमता रहा हमको कुछ जानकारी नहीं है तो भी यह निश्चय है कि बुद्धिमान् औरंगजेबने दूसरे दिन युद्ध नहीं किया और उसकी जन्मभूमिकी ओर जातीहुई सेनासे छेड़छाड भी न की। इस फतेहाबादके युद्धमें राजपूतोंकी ही वीरता अधिक प्रकाशित हुई, इस स्थानपर उनकी पराक्रमाग्नि जिस प्रचंड तेजसे जल उठी थी, उससे विद्रोही औरंगजेब निश्चय ही अत्यन्त भयभीत हुआ था। यद्यपि केवल अनुप्रासके

(१) कोटा इतिहाससे प्रगट होताहै कि राजा कोटा और उसके पांचोभाई इस युद्धमें काम आये।

(२) बर्नियर और खाफ़ीखाँ दोनों ही कहते हैं कि कासिमखां नामका जो मनुष्य यशवंतके अधीन मुगलसेनाका सेनापति होकर गयाथा, उसकी ही विश्वासघातकतासे यशवंत पराजित हुआथा।

(३) यह युद्ध सन् १६५८ ई० के अखीर मार्चमें हुआ था।

अनुरोधसे भाटकवियोने मेवाड़ और शिवपुरके दो वीरवंश गहलोत और गौड़ क्षत्रियोका वारंवार उल्लेख किया है तौ भो निश्चय ही जानाजाता हे कि उस भयानक युद्धभूमिमे राजस्थानके प्रायः समस्त ही वीरवंश वृद्ध शाहजहांके सन्मानको रक्षाके निमित्त आये थे। इससे प्रत्येक राजपूतवंशकी एक २ वीरनारीके मांगका सिन्दूर सदैवके लिये उठ गया,-प्रत्येक वीरवंशने स्तम्भस्वरूप एक २ वीरको सदैवके निमित्त खोदिया था। यहां-तक कि मुग़ल इतिहासवेत्ताओने वर्णन किया है कि कुछ कम पन्द्रह हजार वीरोने उस दिन रणभूमिमे प्राण छोड़े थे। यह युद्ध राजपूतोकी वीरता और विश्वस्तताका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है। राजपूत विश्वासघातक नही है, जो उनके विश्वासके ऊपर निर्भर रहता है वे उसको अपने मरणकाल तक विपदमे नही गिरासकते। वे अपने ऊपर विश्वास करनेवालेका कभी निरादर नही करते। भग्नहृदय वृद्ध शाहजहांने विपदमे पड़कर उनके ऊपर विश्वास स्थापन किया,यहांतक कि वह केवल उन्हीके मुखकी ओर देखतारहा अस्तु,वीरहृदय राजपूतोने मरण कालतक उस सरस विश्वासका अपमान न किया। दुष्ट औरं-गजेवने उनको अपने वशमे करनेके निमित्त कितने लोभ दिखलाये, होनेहार आशाके मोहनीयमानचित्र उनके नेत्रोके सामने दिखाय गये किन्तु वह छणभरके निमित्त भी उससे मोहित न हुए, क्षणभरके निमित्त भी उनके हृदयने औरंगजेवके मंगलकी इच्छा न की। उन्होने अपनी२ प्रतिज्ञा अपनी शक्तिभर पालन की थी। किन्तु विश्वासघातक यवनोके विषयको विचारते ही मनमे विजातीय घृणा उत्पन्न होती है। वे वादशाहके अन्नसे पलेथे, उसी अन्नदाता पिताकी समान वादशाहकी आज्ञाको माथेपर चढ़ाय आगरेसे वाहर हुएथे,किन्तु कहते घृणा होती है कि उन्होने उस आज्ञाका किस प्रकारसे पालन किया। जिस आज्ञाका सबप्रकारसे पालन करेगे यह कह तलवारको छूकर सौगंध की थी, उस आज्ञाका पालन करना तो दूर रहा वरन् विश्वासघातकताका अवलम्बन करके वे उसके विरुद्ध आचरण करनेमे प्रवृत्त हुए। क्या यही राजभक्ति है? क्या यही पवित्र स्वामि-धर्म है कि जिसका पालन करनेके निमित्त राजपूतोने अपनी स्वच्छन्दताको भूल अपने जीवनको प्रसन्नतापूर्वक न्योछावर किया? इस फ़तहाबादके युद्धक्षेत्रमे राजपूतोने स्वामि-धर्मके पालनका जो प्रत्यक्ष चित्र स्थापित किया है, उन्होने विश्वासका जो योग्य फल दिया है, विजातीय राजाके निमित्त संसारकी और कौन पराधीन जाती इस प्रकार कर सकती है? इसमे एक २ वंश एकवार ही प्रायः नष्ट होगया था। यहांतक कि एक प्रसिद्ध राजवंशके छः जनोने तलवार धारण की, उनमेसे केवल एक जनको छोड पांचने रणभूमिमे प्राण छोड़े थे।

(१) यह छहो जन बूंदीके राजपुत्र थे। इनमेसे जिसने अधिक वीरता प्रकाशित की थी, उसका नाम छत्रशाल था। राजा छत्रशालने जैसी अद्भुत वीरता प्रकाशित की थी उसका वृत्तान्त बूंदीके इतिहासमे लिखाहै। ख़ाफीख़ाँ और वर्नियर दोनोंका कथन टाड्साहवके कथनसे मिलता है, किन्तु मिस्टर एलोफिने कहाहै कि उस बीरवरका नाम रामसिंह था। हम ठीक नहीं कहसकते कि एलीफि-नेस्टन साहबका बयान कहांतक भ्रमोत्पादक है। क्योंकि हम देखते है कि रामसिंहनामक कोई राजा राजपूत सेनाका सेनापति हो युद्धभूमिमे नहीं गया। रामसिंहनामक एक राजा इस घटनाके प्राय. ५० वर्ष उपरान्त कोटाकी राजगद्दीपर बैठा था। वह जाजवकी लडाईमे औरंगज़ेबके लडके मुअज्ज़मके हाथसे मारा गया था। इसका वृत्तान्त कोटाके इतिहासमे लिखा जायगा।

इस भयानक युद्धमे जिन समस्त राजपूतोंने अतुल वीरता और रणदक्षता दिखाई थी, उनमेसे रतलामका रतनसिह ही प्रधान था। उसकी अप्रमेय वीरतापर मोहित होकर सबहीने मुक्तकंठसे वारवार उसको प्रशंसा की है।उसका वीरत्व वीररसके चाहनेवाले भाट-कवियोंके विशेष आदर की वस्तु है, उन्होने उसकी अक्षय कीर्तिको "रासाराव-रत्न" नामक ग्रन्थमे लिखा है। वीररत्नने राठौरकुलमे जन्म ग्रहण किया था। वह उदय सिहका प्रपौत्र था। स्वाधीनताके साथ राठौर कुलकी वीरता रत्नसिहके द्वारा ही भलीभांतिसे प्रमाणित हुई थी। उसने अपनी असीम वीरता और पराक्रमसे शत्रुसेनाका तहस नहस किया था।

यद्यपि राठौरराजा यशवंतसिहने युद्धक्षेत्रको परित्याग करदिया, किन्तु इससे उसका कुछ अपयश न हुआ क्योकि एक दिनके घोर युद्धके उपरान्त दोनो ही सेनाओने रणस्थलको छोडा था। यद्यपि दोनो ओरको हारजीतका कोई लक्षण नही देखाजाता तो भी भलीप्रकारसे विचारकर देखनेपर जानपड़ेगा कि औरंगजेब ही जीता था। यद्यपि उनके दमन करनेको राजपूतोने वहुतसे यत्न किये थे किन्तु विद्रोही शाहज़ादोकी विशाल सेनाके निकट उनकी वीरता विशेष फलदायक न हुई, क्योकि उनमेसे वहुत वीर युद्धभूमिमे मारे गये थे। जो वचरहे थे उन्हे लेकर यशवंतने फिर औरगज़ेबपर आक्रमण करना न चाहा। चतुर औरगजेब भी प्रसन्न हो चुपचाप रहकर आगेको न बढ़ा। जो हो दोनो ही ओरके वीर फिर और कुछ झगड़ा न कर युद्धभूमिसे चले गये। पहिले ही कह आये है कि राजा यशवंत अपनी राजधानीकी ओर लौटा किन्तु वह सहजसे ही जोधपुरमे प्रवेश न करसका, उसके जानेके मार्गमे एक जनद्वारा एक प्रचड वाधा उपस्थित हुई थी। वह जन उसकी प्यारी स्त्री ही थी।

राजा यशवंतने शिशोदियाकुलकी एक स्त्रीसे विवाह किया था। उसकी स्त्री जेसे ऊंचे कुलमे उत्पन्न हुई थी, उसी प्रकार ऊचे गुणो और अलंकारोसे विभूपित थी। जव उसने फतेहावादके युद्धका वृत्तान्त सुना कि उसके पतिकी प्राय. समस्त सेना नष्ट होगई है और वह शत्रुका पराजय न कर रणभूमिसे चला आया है, तव उसके हृदयमे विपम क्रोध और घृणा उत्पन्न हुई। कहां उसे रणमे थकेहुए राजाको सांत्वनाके वाक्योसे धीरज देना चाहिये, परन्तु यह न करके उसने उसी समय किलेके द्वार वंद करदेनेको आज्ञा दी। इस विचित्र आज्ञाको सुनते ही उसकी सव सहेलिये विस्मित होगई। उसके लाल नेत्र और गभीर मुखमडलको देखकर सभीके हृदयमे विपम भयका सचार हुआ। अत्यन्त क्रोधसे कांपतीहुई मनके विकारको न रोककर वह सर्पिणीके समान फुफकार कर कहनेलगी "राजपूतकुलमे जन्म ग्रहण करके वीरपूज्य शिशोदिया कुलमे विवाह करके जो मनुष्य प्राण रहतेहुए शत्रुको पीठ दिखाता है, वह क्या वीर पुरुप है? नही, कभी नही, वह कायर है, कायरसे भी अधम है। उस अधम मनुष्यको मै कभी इस क़िलेमे प्रवेश न करने दूंगी।उससे कहना कि

मे ऐसे मनुष्यको अपना स्वामी स्वीकार नही करसकती। क्योकि शिशोदीय राजाके दामादका मन कभी इस प्रकारका नीच नही होसकता। उसको इस बातका विचार करना चाहिये था, कि ऐसे ऊंचे वंशमे विवाह करनेपर इस वशके असीम गुणोका अनुकरण करना होगा। या तो वह युद्धमे जीतता ही, नही तो शत्रुके हाथसे प्राणत्याग कर रणस्थलही मे मर जाता,परन्तु उसको हार मानकर प्राण बचा कभी घरको न आना था।" कहते २ रानीके मुखमडलने और ही मूर्ति धारण की, दोनो आंखोसे आंसुओकी धारा बहने लगी, वह पागलनीकी तरह रोनेलगी। रोते २ उसने एक बड़ीभारी चिताके बनानेकी आज्ञा दी। अब वह जीवनको धारण न करेगी। अपमानित और कलंकित होकर अपने स्वामीको भी जीवित न रहने देगी, अवश्य ही राजाको मरना पड़ेगा, वह उसका अनुगमन करेगा, उसके साथ मिलकर उस चितानलमे जीवन त्याग करेगी। क्षणभरके भीतर वह शोकसे उन्मादिनी हुई मूर्ति भी बदलगई। उसके स्थानमे और भी भयानक मूर्ति दिखाई दी। वह स्वामीको सैकड़ो धिक्कार देनेलगी। इसी प्रकार ऐसी अवस्थामे उसने आठ नौ दिन बिताए। अन्तमे उसकी माताने उसके पास आकर उसे नानाप्रकारसे समझाया और कहा कि राजा थकावट दूर करके ही फिर युद्धभूमिमे जांयगे और ओरंगजेबको हराकर फिर नष्ट हुए गौरवको प्राप्त करेंगे।

यह वृत्तान्त सब सत्य है, इसको फरिस्ता[2] और वर्नियर दोनोने ही मुक्तकंठसे स्वीकार किया है। वर्नियर स्वयं उस समयमे उपस्थित था। उसने देख और सुनकर जो वर्णन किया है उसीका मर्म ऊपर लिखागया है। जो हो स्त्रीकी कोपाग्निके शान्त होनेपर राजा यशवन्तसिह रणकी थकावट दूर कर अपने राज्यकार्यमे लगा, इधर औरंगजेबने मालवेके मांडूनगरमे पहुँचकर कईएक दिन आमोद प्रमोदसे बिताये, तदनन्तर जय पानेकी इच्छासे उत्सुक हो शीघ्रतापूर्वक वह राजधानीकी ओर बढ़ा। उसको आगे बढ़ता देखकर वृद्ध शाहजहांका हृदय अत्यन्त थरथरा उठा, उसका राजमुकुट स्खलित हो सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसने फिर परम विश्वस्त राजपूतोको बुलाया। उसके बुलावेका कोई भी तिरस्कार न करसका। राजपूतोके रणतुरंग फिर छलांग मार बड़े जोरसे हिनाहिनाने लगे, राजपूत वीरोने और एकबार वृद्ध शाहजहांकी सन्मानरक्षाके निमित्त उसके विद्रोही पुत्र औरंगजेबके विरुद्ध तलवार उठाई। आगरेसे पन्द्रह कोस दक्षिणकी ओर बसेहुए जाजवँनामक[3] गांवमे राजपूतोका औरंगजेबसे सामना हुआ।

---

(१) वर्नियरसाहब कहते है कि "इसप्रकारके वृत्तान्तसे भलीभाति जानाजाता है कि राजस्थानकी स्त्रिया अत्यन्त साहसी ओर ऊंचे हृदयवाली है।" महात्मा टाड साहबने भी वर्नियरके इतिहाससे संकलन कर जो अपने बनायेहुए ग्रन्थमे लिखाहै, उसीका अनुवाद दिया है। Bernier's History of the late revolution of the Empire of the mogul P. 13, ad. 1684.

(२) मूल फरिस्तामे तो, अकबरके पीछे मुगल बादशाहोका इतिहास ही नही है और न फरिस्ताका लिखनेवाला जो अकबरका समकालीन था औरंगजेबके समय तक जीता रहसकता था।

(३) कोई २ इसको सामगढ़ भी कहते है।

शीघ्रही उस युद्धका आरम्भ हुआ कि जिससे बुढ़ापेसे दुःखित बादशाहकी कठोर होनहारका निश्चय हुआ, भारतका राजमुकुट उसके मस्तकसे छिनगया, वह तख्त ताऊससे उतारा जाकर दीन हीन शोचनीय अवस्थासे अंधे कारागारमें डाला गया।

वृद्ध शाहजहांके साथ ही साथ उसके प्रियपुत्र दाराका भी अधःपतन हुआ। वह मुगलसाम्राज्यके प्रतिनिधित्व (नायावत) से दूर हो भागनिकला। अनन्तर पितृद्रोही औरंगज़ेबने पिता भाई और आत्मीय स्वजनोंके आंसुओंकी बूंदोंके साथ सिंहासनपर अधिकार कर अपने हाथसे अपनी उन्नतिके मार्गको साफ करनेकी प्रतिज्ञा की। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि जो कोई उसके उन्नतिके मार्गमें प्रतिरोधस्वरूप खड़ा होगा, पिता, भाई यहांतक कि पुत्र होनेपर भी वह उसके हाथसे निकाला जावेगा। सिंहासनपर बैठते ही उसने अपने भाई शुजाको दमन करनेके निमित्त एक बड़ी भारी सेना सजाई और आमेरके राजकुमार द्वारा क्षमा प्रगट कर राठौरराज यशवन्तको बुलाभेजा "आपके सब कसूर माफ किये जावेंगे, अगर आप जल्दीसे आकर शुजाके खिलाफ़ तलवार उठाओगे।" शाहजादा शुजा उस समय अपना स्वत्व दृढ़ करनेके निमित्त आगरेकी ओर बढ़रहाथा यशवन्तने यह जानपाया। इस उपद्रवको अपनी कार्यसिद्धिका योग्य अवसर और बदला लेनेका अच्छा समय विचारकर वह औरंगजेबकी आज्ञापालन करनेमें सम्मत हुआ। और शुजासे अपनी समस्त इच्छा प्रगट की।

शीघ्र ही युद्धकी तैयारी हुई। (प्रयाग) इलाहाबादके १५कोस उत्तरकी ओर बसेहुए खजुवानामक स्थानमें दोनो एक दूसरेके शत्रु शाहज़ादे अपनी २ सेनाको ले एक दूसरेके सन्मुख हुए। राजा यशवत अपने राठौर घुड़सवारों समेत थोड़ीदेर इधर उधर घूमकर सहसा राजकीय सेनाके पीछेकी ओर दौड़ा, देखा कि शाहजादा उस स्थानकी रक्षा कररहाहै। राठौरराजने अकस्मात् उसकी रक्षित सेनाके ऊपर आक्रमण किया। उसके भीषण प्रहारसे शाहजादेकी वह विशाल सेना छिन्नभिन्न होगई। तब यशवंत तीव्र वेगसे बादशाहके डेरेके सन्मुख दौड़ा और उसकी सब सामग्री लूटकर अच्छी २ सामग्रियें बांध २ उसने अपने नगरको भेजदी। परस्पर के शत्रु दोनो भाइयोंके युद्धसे जो भयानक अग्नि उत्पन्न हुईथी, उससे दोनो ही पतंगोंकी समान जलजांय यही यशवंतकी भीतरी इच्छा थी। उस इच्छासिद्धिका विचार करते २ वह एकसाथ ही आगरे नगरमें उपस्थित हुआ। उसके आगरा पहुंचने के बहुत पहले वहां यह अफवाह उड़ी थी कि औरंगज़ेब हार गया है। इस अफ़वाहके सुनते ही औरंगज़ेबकी सेनाके मनमें विषम भयका संचार होगया था। इस समय यशवंतको दलसमेत निकट आया देख उनका यह भय और भी दृढ़ होगया और वे सैनिक इतने व्याकुल होगये कि यदि यशवंत वहां पहुँचते ही उनको आत्मसमर्पण करने की आज्ञा देता तो उसकी वह आज्ञा तत्काल ही पाली जाती, और फिर वह शाहजहांको कारागारसे निकालकर औरंगजेबकी उन्नतिके मार्गमें ऐसी बाधा स्थापित करसक्ता कि कभी कोई उस बाधाको दूर न करसकता।

किन्तु वृद्ध शाहजहाँके अभाग्यसे उस समय राठौरराजकी ऐसी मति न हुई, इस कारण उसने आगरामे पहुँचते ही तत्काल उसको छोड़ दिया।

राजा यशवंत जो आगरेमे पहुँचतेही तत्काल उसको छोड़कर बाहर निकलपड़ा उसका भी विशेष कारण है। उसने देखा कि यदि औरंगज़ेब जीतगया और जीतके गौरवके साथ नगरमे आकर उसने मुझको देखा, तो फिर बड़ी विपद आनेकी सम्भावना है। इस कारण नगरके बीचमे बंद रहना किसी प्रकारसे भी उचित नहीं। इसके अतिरिक्त उसका और भी एक गूढ़ आशय था। राजाने इसके पहिले दाराके साथ परामर्श किया था। दाराही सिंहासनका योग्य उत्तराधिकारी था, अतएव उसको सिंहासनपर बैठानेके अभिप्रायसे यशवंतने उसको युद्धभूमिमे आनेकी सलाह दी थी। साधारण यही दोनो विषय माने जासकते है। राजधानीसे बाहर होकर वह औरंगज़ेबके पीछेकी ओर घूमनेलगा। पहली सम्मतिके अनुसार उसी स्थानपर दाराके आनेकी बात स्थिर हुई थी। वह उत्कंठितचित्तसे वारबार दाराके आनेका मार्ग देखने लगा, किन्तु दारा न आया। वह उस समय मारवाड़के दक्षिण ओर घूमताहुआ आशावैतरणीकी लहरोकी गिनती कर रहा था। किन्तु उसकी सब आशाएं निष्फल हुई और यशवंतके समस्त यत्न वृथा हुए। उसने लूटका माल और शाही डेरे इत्यादि सब जोधाके किलेमे बंद करदिये। दाराने लाचारीसे मेरता आकर मेलकिया, क्योंकि शुजाको पराजित कर चतुर औरंगज़ेब दल समेत उसके निकट आ उपस्थित हुआ था। अनिश्चयात्मक असिबलकी अपेक्षा वह कौशल और कूट नीतिका अधिक आदर करता था, क्योंकि उसका दृढ़ निश्चय था कि कार्य प्रायः कौशलसेही सिद्ध होते रहते है। इसी निश्चयके कारण उसने यकायक तलवारकी सहायता न लेकर कौशल का ही अवलम्बन किया। मेरता नगरमे पहुंचते ही उसने यशवंतको दूतद्वारा बुला भेजा कि यदि राठौरराज दाराके निकटसे सब सेनाको लौटाकर इस युद्धसे हाथ खींच-कर चुपचाप होजायँ तो केवल उसके दोषोको ही क्षमा न करूंगा वरन उसको गुजरात का प्रतिनिधि भी बनाऊंगा। औरंगज़ेबके इस प्रस्तावको यशवंतसिंहने स्वीकार किया और वह राजकुमार मुअज्ज़मके अधीन अपनी सेनाको लेजाकर महाराष्ट्रसिंह शिवाजीके विरुद्ध युद्धभूमिमे आया।

यद्यपि लोभके वशवर्ती हो अनेक राजपूतोने योग्य उत्तराधिकारी दाराको छोड़ औरंगज़ेबका पक्ष अवलम्बन किया था किन्तु ऐसा होनेसे क्या यशवंत उन नीच मनवाले राजपूतोंके अन्तर्गत है? क्या वह भी चतुर औरंगजेबके लोभोमे भूलकर दाराको छोड़कर चलागया? यद्यपि पाठकोंके मनमे सहसा यह प्रश्न उठसकता है किन्तु इसके उत्तरमे हम केवल इतना ही कहसक्ते है कि ऐसे लोभोसे राजा यशवंत क्षणभरको भी मोहित न हुआ। तो फिर उसने क्यो दाराका संग छोडदिया, उसका कारण दाराकी अयोग्यता ही है। दारा शाहजहांका योग्य उत्तराधिकारी था, उसका हृदय अतिमहत् और उच्च था, विशेषकर वह भीतरसे राजपूतोकी भक्ति और

श्रद्धा करता था। उसके उन समस्त महत्गुणोंसे मोहित हो यशवन्त और दूसरे प्रधान राजपूतोंने उसके पक्षका समर्थन किया था। राजा यशवन्त अन्तःकरणसे उसके मंगल की कामना करता था और अपनी शक्तिभर उसने उसके हितकार्य करनेमें भी कमी न की थी। इसी कारण उसने अनेक समयोंमें अपने आत्मत्यागको भी स्वीकार किया था, यहाँतक कि वह सदैवके निमित्त औरंगजेबकी आंखोका शूल होगया था। किन्तु उसके समस्त उद्यम और त्याग स्वीकार निष्फल हुए। उसने देखा कि आलसी दारा चतुर और शीघ्रकर्म्मा औरंगजेबके विरुद्ध कभी न जीत सकेगा, इस कारण जान बूझकर उसने विवश हो उसको छोड़ा। नहीं तो यदि दारा चतुर और कार्यदक्ष होता तो फिर समस्त भारतवर्ष चाहे एकओर होजाता परन्तु यशवन्तको उसके पक्षसे कोई पृथक् न करसकता।

दक्षिणमें पहुँचते ही यशवन्तसिंह महाराष्ट्रवीर शिवाजीके साथ मिलकर कपट-जाल रचने लगा। उस कपटजालका फल थोड़े ही समयके भीतर फला। थोड़े ही दिनोंके बीचमें औरंगजेबका सेनापति शाइस्ताखां शिवाजीके हाथसे मारा गया इसके मारेजाते ही यशवन्त उसके पदपर नियत हो प्रधान सेनापतिके कार्यको करनेलगा। इन सब समाचारोंको औरंगजेबने अत्यन्त ही शीघ्र सुना, यशवन्तने जो शिवाजीके साथ मिल-कर शाइस्ताखांको मरवाया था उसका भी सत्य समाचार एक विश्वासी दूतसे उसको मिला इससे उसके हृदयके भीतर छिपीहुई विद्वेषकी अग्नि एकबार ही धधक उठी। किन्तु वह देशकाल पात्रका विचारकर काम करना जानता था। यशवन्तको इस समय उभारनेसे बहुतसे अनिष्टोंके होनेकी सम्भावना थी, अतएव उसने मनकी आग मनहीमें रखकर राठौरराजसे कुछ न कहा, यहांतक कि उसके नवीन पदोन्नतिके विषयमें लिखकर उसपर अपनी विशेष प्रसन्नता प्रकाश कर भेजी। किन्तु औरंगजेब उस प्रचंड विद्वेषाग्निको अधिक दिनतक न छिपासका। दोही वर्षके न बीतते २ उसको उस पदसे हटा उसकी जगहपर अम्बरराज जयसिंहको नियत किया। दक्षिणमें पहुँचते ही थोड़े दिनोंके बीचमें राजा जयसिंहने महाराष्ट्रवीर शिवाजीको कौशलजालमें फाँसकर बंदी-भावसे राजधानीमें भेजा। जयसिंहने शिवाजीको अभयदान देकर धीरज बँधाया था कि बादशाह भी उसके प्राणोंको कुछ भी बाधा न देसकेगा। किंतु शिवाजीके कैद होते ही औरंगजेबके आचरण देख उसके मनमें विषम सन्देह उत्पन्न होगया। उसने देखा कि निष्ठुर मुग़ल महाराष्ट्रवीरके प्राणघातकी चेष्टा करता है। तब उस समय राजा जयसिंह अपनी प्रतिज्ञाके पालनेमें तत्पर हुआ। सुखका विषय है कि शिवाजी उसी समयमें स्वयं भागनेका उद्योग कर रहा था। राजा जयसिंह यह जानकर भी अनजान होगये। वरन् उसके भागनेमें और भी सहायता की। दुष्ट मुग़लराजकी इच्छा व्यर्थ हुई, उसने जिस शठताका अवलम्बन कर शिवाजीके मारनेकी चेष्टा की थी, चतुर महाराष्ट्र उस शठताका योग्य प्रतिफल दे उसकी आंखोंमें धूल डाल आप वेखटके वहांसे भाग खडाहुआ। औरंगजेब जानगया कि जयसिंहने जानकर

भी उसको बाधा न दी। इससे वह अमेरराजके ऊपर अत्यन्त विरक्त हुआ और यकबारही उसने यशवंतको अपना प्रतिनिधि किया। सुयोग पाकर राजा यशवंतसिंह अपने कार्यसाधनसे तत्पर हुए और बादशाहके विपरीत मुअज्जमके साथ नानाप्रकारके कपट-जाल करने लगे। उसकी कार्रवाई देखकर चतुर औरंगज़ेबके मनमें अनेको प्रकारके संदेह उत्पन्न हुए। उन सब सन्देहोसे चलायमान होकर उसने राठौरराजको भी पदच्युत करदिया।

अनंतर दिलेरखाँ प्रधान सेनापतिके पदपर नियत हो बादशाहकी आज्ञा पालनमें तत्पर हुआ। उच्चपदके लोभसे गर्वित हो उसने औरंगाबादमें प्रवेश किया। जिस-दिन वह उस नये बसे हुए नगरमें पहुँचा उसी दिन उसको ऐसे घोर संकटमें फंसना पडा कि यदि गुप्त दूतद्वारा अपनी विपदकी वार्ता सुनते ही वह पीछे न लौटआता तो निश्चय ही उसको वहांपर अपना प्राण देना पड़ता। किन्तु उस नगरको छोड़ भागनेपर भी वह संकटसे न छूटसका। राजा यशवंत और मुअज्जम भी प्रचंड दावानलकी समान उसके पीछे २ चले। वह प्राणोके भयसे नर्मदाकी ओर भगा। मुअज्जम और यशवंत भी शीघ्रतापूर्वक चलकर वही पहुँचे। अपने सेनापतिको इस विपम संकटसे बचानेका उपाय न देख औरंगज़ेबने राठौरराजको उस स्थानसे हटाया और उसको गुजरातका सूबेदार नियतकर शीघ्र ही वहां जानेका फर्मान भेजा। यशवंतसिंह उसकी आज्ञाको न टालसका, परन्तु अहमदाबादमें पहुँचते ही उसने देखा कि शठ औरंगज़ेबने उसके साथ शठता कर उसे धोखा दिया है। यशवंतने समझलिया कि मैने अपने ही दोपसे धोखा खाया। यदि सोच समझकर काम करता तो कभी न धोखा खाता। जो हो अपने ठगेजानेके विपय पर विचार करते २ वह सम्वत् १७२६ सन् १६७० ई० में अपने नगरकी ओर रवाना हुआ और नियत समयमे वहां पहुँचकर अपने बदला लेनेके उपाय ढूंढने लगा।

दुष्ट निष्ठुर औरंगजेबने पहिले कहेहुए विपयोमें राठौरराजको धोखा देनेकी चेष्टा की थी और यदि भाटोकी बातपर विश्वास कियाजाय तो भलीभाँतिसे जानपडेगा कि इन सब चेष्टाओके पूरा करनेमें उसने अति नीच और हिंसक उपायोका अवलम्बन किया था। उसके विद्वेपका पात्र हो यशवंतने अनेक समयमें अनेक विपदोमें पड़कर भी अपने विश्वासी और भक्त सामन्तोकी सहायतासे उन विपदोसे छुटकारा पाया था और उस दुष्टके कौशलजालको छिन्नभिन्न करडालता था। किन्तु अन्तमें वह जिस चतुरताके जालमें जड़ित हुआ उससे फिर छुटकारा न पासका। अन्तमें “औरंगज़ेबने विश्वासघातसे अपने अभिप्रायको न पूरा करसकनेके कारण उसने उसके गलेमें कल्पित बंधुवा संबंधकी फाँस डाल उसको अटकके पास मरनेको भेजदिया।”

औरंगजेब जानगया था कि राजा यशवंत उसका परम शत्रु है। जानबूझकर उसकी शत्रुताका बदला देनेके निमित्त उसने नानाप्रकारके घातक उपायोके करनेमें कसर न की, किन्तु वह सब उपाय इस समय व्यर्थ होगये। इसलिये इस समय उसने

उसको ऐसे स्थानपर भेजनेकी इच्छा की कि जहांसे यशवंत सैकडो चेष्टा करने पर भी उसका अनिष्ट न करसके। मन ही मनमें इस प्रकार स्थिर कर औरंगज़ेब अवसर ढूंढने लगा। सौभाग्यवश वह अवसर भी आप ही आप आ उपस्थित हुआ। उसी समय दुष्ट अफ़गानोंने विद्रोही हो काबुल राज्यमे घोर उत्पात उत्पन्न करदिया। औरंगज़ेबने इस उत्पातके होनेसे अत्यन्त प्रसन्नहो राजा यशवंतको बड़े मान सन्मान से उस उत्पातके दवानेको कावुलकी सीमा पर भेजा। राजा यशवंत उसके मान सन्मान और वड़ाईकी वातोमे ऐसा आगया कि उसको वीती वातोपर विचार न हुआ। अतएव वह दुष्ट अफ़गानोंको दमन करनेके निमित्त दूरदेश जानेको सम्मत हुआ। थोड़े ही दिनोंके वीचमे जानेकी सव तैयारी पूरी हुई। उस समय यशवंतने अपने जेठे पुत्र पृथ्वीसिंहके हाथमे राजकार्यका भार दे स्त्री और कुटुम्बियो तथा मारवाड़के बडे २ वीरोंको साथ लेकर वह कावुलकी ओर चला। हाय! उस ही महायात्रासे फिर वह अपने देशको न लौटसका।

मारवाड़के भाटग्रन्थमे लिखा है कि औरंगजेवने यशवन्तसिंहके उत्तराधिकारीके राजसभामें आनेका फर्मान भेजा। पृथ्वीसिंह उसकी आज्ञाको न टालसका। उसके सभामें पहुँचनेपर वादशाहने उसको बड़े आदर सन्मानसे लिया। नियमित रीतिके अनुसार पृथ्वीसिंह वादशाहके निकट ही आसन ग्रहण करता था। एक दिन वह सभामें पहुँचकर वादशाहको सलाम कर अपने आसनपर बैठने जाता था कि उसी समय औरंगजेवने कुछ हँसकर उसको बुलाया। राठौर राजकुमार उसके समीप जाय हाथजोड़ खड़ा होगया, तव वादशाहने दृढतापूर्वक उसके हाथ पकड़ धीरे २ कहा, "राठौर! सुना है कि इन भुजोंमे तुम अपने पिताके समान वल रखते हो, अच्छा इस समय तुम क्या करसकते हो?" पृथ्वीसिंहने उचित अभिमानके साथ उत्तर दिया "ईश्वर दिल्लीश्वर[1] का कल्याण करे, वादशाह! जव साधारण राजा प्रजाके ऊपर आपका आश्रयरूपी हाथ फैलाते है तव उनकी इच्छाएँ पूरी होती है, किन्तु आज मेरे सौभाग्यवश जव आपने ही स्वयं अपने हाथोंसे इस सेवकके हाथ पकड़े है तव मुझे ऐसा जानपड़ता है कि मैं समस्त पृथ्वीको जीत सकूंगा।" वात कहनेके साथ ही साथ प्रचंड वीरतासे मानो उसमें नया वल हो आया। उस समय वादशाह कहउठा कि, "देखते हो यह जवान दूसरा कुट्टन[2] है।" इस वातमे जो भीतर कुटिलभाव भरा था उसको पृथ्वीसिंह अवतक न जानसका, अतएव रीतिके अनुसार वह वादशाहके सामने ही उस खिलतको पहिन सलाम कर उस सभासे विदा हुआ।

हाय! वही दिन उसके उस उल्लासमय जीवनका अन्तिम दिन हुआ। राजसभासे वाहर होते ही अपने डेरेमें पहुँचते २ राजकुमार पृथ्वीसिंह अत्यन्त व्यथित हो उठा। उसके हृदयमें अत्यन्त ऐंठन होनेलगी। इस दुःखसे पीड़ित होकर वह क्षणभर भी स्थिर न रहसका। उसका सम्पूर्ण मस्तक कांपने लगा और वह हाथ पैर फटफटाने लगा

(१) कवियोंने मुसलमान वादशाहोको अश्वपतीके नामसे भी पुकारा है।
(२) यशवंतको औरंगज़ेब इसी नामसे पुकारता था।

धीरे २ उसके सब अंग निस्तब्ध और निस्तेज होगये । और वह सुन्दर स्वर्ण वर्ण मुख-मण्डल सुन्दर चम्पेकीसी मूर्त्ति मलीन होगई । यशवन्तके हृदयका आनन्द, राठौर कुलकी होनहार आशा भरोसाका लक्षराज—कुमार पृथ्वीसिंह विश्वासघाती पाखण्डी औरंगजेबकी हिंसकतासे आकालमें ही इस लोकसे चलबसा[२] ।

---

(१) मारवाड़के इतिहासोंमें पृथ्वीसिंहका इस तरहसे मरना नहीं पायाजाता ।

(२) इस प्रकारके उपायोंसे जो शत्रुका नाश कियाजाता है, राजपूत उसका बिलक्षण विश्वास करते है । राजपूत जातिके इतिहासमें ऐसे अनेकों उदाहरण पायेजाते है । उन सबमेंसे गन्नौरकी रानीका वृत्तान्त जो अत्यन्त मनोहर है यहांपर लिखाजाता है । जब गन्नौरका राजा मुसलमानोंसे हारगया, तब वहांकी रानीने बहुत दिनोंतक मुसलमानोंके हमलोंको रोका किन्तु उसका सेनाबल धीरे २ नाश होता गया इस कारण गन्नौरका एक २ किला शत्रुओंके हाथमें पड़ने लगा । परन्तु तौभी राजपूत कुलकमल वीरनारीने मुसलमानोंको आत्मसमर्पण न किया । धीरे २ उसके सब किले छिन गये, अन्तमें अपनी आत्मरक्षाका कोई उपाय न देख वह अन्तिम आश्रयस्वरूप नर्मदाके किनारे बनेहुए एक दूसरे किलेमें भागगई, किन्तु दुष्ट मुसलमानोंने वहां भी उनका पीछा किया। वह वीरांगना नावसे उतरकर नर्मदाके किनारे आरहीथी कि उसी समय मुसल्मानोंकी सेनाने आकर उसपर आक्रमण किया । वह किसी प्रकारसे किलेमें तो प्रवेश करपाई किन्तु किलेके द्वारके बंद होते २ शत्रुसेना भी किलेके भीतर घुसगई और बचे बचाये राजपूतोंको मारडाला । गन्नौरकी रानी जैसी वीर थी वैसी ही स्वरूपवान्‌भी थी । उस समय दक्षिण देशमें उसकी समान स्वरूपवान् कोई भी स्त्री न थी । किन्तु यह असाधारण सुन्दरता ही उसका काल हुई । इसी रूपके लालचसे खिंचकर उसको अपनालेनेके अभिप्रायसे यवनराजने उसकेराज्यपर हमला किया था । गन्नौरराज्यको जीत-कर यवनराजने दूतद्वारा वीरनारीको कहलाभेजा कि " प्यारी ! तुम्हारा राज्य तुम्हींको लौटा दूंगा, तुम मेरे हृदयराज्यकी मालकिनी हो, मुझसे अपना विवाह करो । मैं तुम्हारा दास होकर रहूंगा ।" इस पत्रके पढते ही वीरनारीका समस्त शरीर क्रोधाग्निसे जल उठा, किन्तु वह क्या करे ! यवनराज उस समय महलके नीचे उत्तर पानेकी आशासे बैठाहुआ था । दूसरा उपाय न देखकर वीरनारीने काम विमोहित यवनराजके प्रस्तावको स्वीकार किया और कहलाभेजा कि "मुझको दो घण्टेका समय देना होगा, मैं विवाह योग्य सब वस्त्र आभूषण तैयार करलूं, तब फिर तुम्हारे पास प्रस्तुत हो सकती हूं ।"

दो घंटा बीतगये । गन्नौरकी रानी विवाहके योग्य सुन्दर सामग्रियोंसे सुसज्जित हो अपने गोलमहलमें जा बैठी । उसने यवनराजके पास भी ब्याहके वस्त्र भेजे अस्तु वह यवन सरदार उन्हीं वस्त्रोंसे सुसज्जित हो कर मन मोहिनी रानीके सामने जा पहुंचा । वीरनारीको देखते ही उसे ऐसा भ्रम हुआ कि मानो वह विद्याधरी है । दोनोंमें नानाप्रकारकी बातें होने लगीं । यवनराज मोहित हो उस चित्तविनोदिनीके वचनामृतका पान करने लगा । उसके हृदयमें सुखकी अनेकों चिन्ताएं उठनेलगीं, किन्तु उसके हृदयमें अकस्मात् दारुण यन्त्रणा भी उत्पन्न हुई उसका माथा घूमनेलगा और चारोओर अंधकार दिखाई देनेलगा । वह उन्मत्तसा होकर अपने शरीरके वस्त्र फेंकनेलगा । " सब शरीर जलाजाता है " यह कहकर वह चिल्लानेलगा । तब उस वीरनारीने सम्बोधन करके कहा, "यवनराज ! जानलो कि अब तुम्हारा अन्तिम काल आ पहुंचा, आज मेरा विवाह और काल एकसाथ

कुमार पृथ्वीसिंह यशवन्तकी आंखोकी पुतली और बुढ़ापेकी लकड़ी था। वह राठौर कुलका योग्य राजपुत्र, वीरकेशरी योधारावका योग्य वंशधर था। बूढ़े यशवंतने विचारा था कि अन्तसमयमे उसके हाथमे राठौरकुलका राज्यकार्य दे संसारसे विदा लूंगा, किन्तु अभाग्यके कारण उसकी वह इच्छा पूरी न हुई। पृथ्वीसिंह जवान होते ही दुष्ट औरंगजेबकी रोपाग्निमे पतंगेकी समान जलगया।

यशवंतका आशा भरोसा नष्ट होगया। अत्याचारीके प्रचंड अत्याचारोको सहन करके भी जो हृदय इतने दिनोतक अटूट था, आज वह इस पुत्रशोक रूप दारुण शैलके प्रहारसे सौ टुकडे होगया। उसके मनमे यह विचार कभी भी न हुआ था कि पाखण्डी औरंगज़ेब उससे ऐसा बदला लेगा। तौ भी मनुष्यके अत्याचारोको सह-कर वह जो कुछ दिनो जीवित रहसकता, सो निठुर यमने उसके बचेहुए दोनों पुत्र जगत् सिंह और दलथम्मनको हरणकर उसको उन कईदिनभी न बचने दिया शोक, दुःख दारुण मनोवेदनासे भग्नहृदय राठौर राजने उस सुदूर हिन्दूकुशकी तराईमे सम्वत् १७३७–१६८१ ई० मे परलोकको गमन किया। उसके मरनेके पहिले ही उसकी आशाका दीपक बुझगया था। उस महा प्रस्थानमे यात्रा करनेके समय वह ऐसे किसी उत्तराधिकारीको न रखगया कि जो उसकी उस शोचनीय मृत्युका बदला लेता, और औरंगज़ेबके प्रायश्चित्तका विधान करसकता।

जिस वर्ष राजा यशवंतने इस लोकसे गमन किया। महाराष्ट्रीय वीर शिवाजीका भी उसी वर्षमे कई महीनोके उपरान्त परलोकवास हुआ। अतएव औरंगजेबने दोनो भयानक शत्रुओसे छुटकारा पाया। इन दोनो महावीरोसे वह साक्षात् यमकी समान भय मानता था। इसका विशेष प्रमाण उसके रोज़नामचेके देखनेसे पायाजाता है। मेवाड़ाधिपति वीरवर राणा राजसिंहके जीवनचरित्र लिखनेवालेने राठौरवीरके सम्बन्धमे

—ही होगा, तेरे अपवित्र ग्राससे स्त्रीके साररत्न सतीत्व धनकी रक्षा करनेका और दूसरा उपाय न देख मैने तुझे विषके वस्त्र पहननेको दिये है।" यह कहते २ वह राजपूतसती दुमंजिले मकानसे फांदकर नीचे खाईके गंभीर जलमे कूदपडी। कामपीड़ित दुष्ट यवनने भी शीघ्रही प्राण त्यागन किये

शत्रुके मारनेकी ऐसी गुप्त रीति यूरोपमे भी बहुत पुराने समयसे प्रचलित थी, हरक्यूलसके लेखमें इसका वर्णन पाया जाता है। वह कि जिसने डिजेनीटाको ज़हर वा विषसे लिपटी हुई कमी-जपर लपेटकर अग्निपर रखदिया। वास्तवमे इस विषका प्रभाव मसामोमे होता होगा और गरमी की ऋतुमें जब कि एक पतला कुरता पहना जाता है अधिक हानि होतीहोगी। यद्यपि यह सम-झना कठिन है कि इस प्रकार मृत्यु क्यो होती है, परन्तु प्राचीन समयका विश्वास है इससे हमको भी विश्वास करना चाहिये।

(१) यह दलथभन तो महाराज यशवन्तसिंहके मरे पीछे पैदा हुआ था उनके जीतेजी वह कैसे मरगया।

(२) हिन्दुकुशपहाड़ तो काबुल और बदखशांके आगे बलखके पास है और महाराज यश-वन्तका देहान्त खैबरके घाटेके नीचे जमरोद नाम स्थानमे हुआ था।

कहा है "यशवंत जबतक जीवित रहा, तबतक औरंगजेबका दीर्घ निस्वास एक दिनके लिये भी न थमा।

राजा यशवंतसिंहने सब समेत ४२ वर्ष राज्य किया था। वीरस्थान राजपूतानामे जिन समस्त स्वदेशप्रेमी महापुरुषोने जन्म लिया था, जिनके जीवनचरित्र जीवित अक्षरोसे आज भी प्रत्येक राजपूतके हृदयपटमे लिखे है, जिनकी अतिमानुष कीर्तिकलाप आजभी राजस्थानके द्वार २ पर भाटोद्वारा गायी जारही है, राठौरराज यशवंतसिंह उन सबके मध्यमे एक ऊचे आसनको प्राप्त होसकते है। यद्यपि यशवंतकी कार्यकुशलता ऊंची श्रेणीकी थी, किन्तु यदि वह उसके अमित भुजवल साहस और प्रतिष्ठाके समान होती तो वह दुष्ट औरंगजेबके प्रचड शत्रुओकी सहायतासे भारतवर्षसे निश्चय ही मुग़लराज्यको उखाड़ देता। उसका जीवन अपूर्व घटनाओसे परिपूर्ण था। नर्मदाके किनारे जिसदिन वह वृद्ध शाहजहांकी रक्षाके निमित्त अपने राठौरवीरोको ले पितृद्रोही औरंगजेबके विरुद्ध अवतीर्ण हुआ, उसी दिनसे उसके जीवनके अन्तिम कालतक घटनाके ऊपर घटनास्रोतने पतित हो उसको दूर दूरान्तरमे विक्षिप्त किया उन स्रोत समूहोको कभी वह अपने अमानुषिक शक्तिके प्रभावसे वशमे करता और कभी उनके भीषण बलसे थकित हो तृणकी समान तैरने लगता। किन्तु वह क्षणभरके लिये भी व्याकुल नही हुआ। सहस्रो बाधा और विपत्तिये उठकर भी उसको उसकी इच्छासे न हटासकी। वह जहापर जिस प्रकारकी अवस्थामे गिरता वहीपर ही अपने प्रधान अभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा करता। यद्यपि वह शाहजहॉके सब पुत्रोमेसे दाराको अधिक चाहता था, किन्तु ऐसा होनेसे क्या हुआ ?–वह समस्त मुसलमान जातिको हृदयसे घृणा करता था। जो मुसलमान हिन्दूधर्म और हिंदू स्वाधीनताके प्रचंड शत्रु थे यशवंत उन्हे भलीप्रकारसे जानता था, इस कारण वह उनसे जन्मभर घृणा करता रहा और उसने अपनी शक्तिभर औरंगज़ेबके सर्वनाश करनेकी चेष्टा की, किन्तु अभाग्यवश उसकी वह चेष्टा फलवती न हुई। औरंगज़ेबके नर्मदा युद्धसे लेकर काकेशश पर्वतपर कर्कश पठानोके युद्धतक उसने बडे २ काम किये।

मुगल सिंहासनके लिये जबजब शाहजहॉके पुत्रोमे झगडा हुआ तब २ चतुर यशवंतने उनमेसे किसी न किसी एक जनके पक्षका अवलम्बन किया उसके मनमे यह दृढ निश्चय था कि इस प्रकारके घरेलू झगड़ोके होनेसे अन्तमे उन सभीका नाश होजायगा। नर्मदाके युद्धमे यदि वह दलके मदसे मतवाला हो वृथा समय न विताता तो निश्चय उसका बहुतकुछ श्रम फलीभूत होता। किन्तु इससे भी यशवंत निरुत्साह न हुआ। उसके हृदयके पर्तपर्तमे जो प्रवृत्ति मिली थी नर्मदाके किनारे व्यर्थ होनेपर भी उसका नाश न हुआ, वरन वही पराजय स्वीकार कर और भी प्रचंड हो उठी थी उसकी तीव्रता मानो और भी दूनी हो उठी थी। उस प्रचंड प्रवृत्तिकी साध पूर्ण करनेके निमित्त वह योग्य अवसर ढूढ़ने लगा। जब खजवेमे परस्पर

---

(१) नर्मदा नही, सपरा।

के शत्रु दोनो शाहजादेने भाग्यकी परीक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध तलवार धारण की;तभी उस घटनाको राठौरराजने अपने कार्य सिद्धिका योग्य अवसर कहकर आदरपूर्वक उसका सन्मान किया, किन्तु दाराके आलस्यने उसको उस सुयोग अवसरसे भी वंचित किया दाराका सब कौशलजाल छिन्न भिन्न होगया।विजयी औरंगजेवने यह सब जानलिया, किन्तु वह कुछ न वोला। चतुर औरंगजेवके ऐसे आचरणोसे वह उसपर संतुष्ट न हुआ, वरन उसकी घृणा ओर विद्वेप और भी वढगया, वदला लेनेकी प्यास अत्यन्त वढ़गई। उस वदला लेनेकी प्यासको शान्त करनेके निमित्त वह कोई सुयोग अवसर ढूंढनेलगा। औरंगजेवने जिस पदपर उसको अभिपिक्त किया, यशवन्त उस पदको ग्रहण कर अपनी कार्य सिद्धिके यत्नमे तत्पर हुआ। और प्रत्येक कार्यमे अपने स्वतंत्र विचार की गंध उठाई। क्रमशः उसके सब कार्योंकी आलोचना करनेपर उसके हृदयकी प्रचंड प्रवृत्तिका भलीप्रकारसे परिचय पाया जाता है। जिसके साथ लडनेको भेजागया था उसी शिवाजीसे उसने भेटकी। शिवाजीके साथ मिलकर कपटजाल किया, कारण कि शिवाजी भी मुग़लराजका परम शत्रु था, शाइस्ताखांका[1] माराजाना, दिलेरखांपर आक्र-मण और पिताके विरुद्ध मुअज़्ज़मका उभडना, यह एक २ कार्य उसके उस विकट वदला लेनेकी प्यासका प्रकाश्य उदाहरण है।

यशवंतकी उस गूढ और प्रचंड प्रवृत्तिका विपय वादशाह औरंगजेवको भलीप्र-कार विदित था, उसने जानलिया था कि कठिन वदला लेनेकी प्यास और विद्वेषद्वारा चलायमान हो राजा यशवन्तने उसके साथ समस्त जीवन बुरे आचरण किये है। किंतु वह क्या करे ? यह जान बूझकर की वह केवल अपने अभिप्रायके पूरे होनेके निमित्त उन सबको सहन करता जाता था। उसने सदैव यशवंतकी विद्वेषाग्निसे दूर रहनेकी चेष्टा की और सावधानीके साथ उसके सब कपटजालको छिन्न भिन्न कर वह प्रकाशमे उसके साथ सदाचरण करता रहा। वह जो यशवन्तका भीतर ही भीतर भय करता था इसीसे उसके सब कार्योंमे विलक्षणरीतिसे रद्दबदल होतेरहे। औरंगजेबने उसको ऊंचे २ पदोमे अभिषिक्त किया गुजरात, दक्षिण, मालवा, अजमेर और कावुल इन एकएक प्रदेशमे क्रमशः वादशाहने उसको सूवेदार नियत किया, यह पद उसको कही स्वतन्त्र-रूपसे कही सेनाध्यक्ष और कही किसी शाहजादेकी नीचे दियेगये थे। वादशाह की यह सब कृपाएं दूसरेके पक्षमे माननीय हो सकती थी, किन्तु तेजस्वी राठौर राजाने उन सबको अपने अभिप्राय सिद्धिका प्रधान साधन स्वरूप ग्रहण किया था। उसके इस प्रकारके आचरणोपर विचार करनेसे सहसा यही मालूम होता है कि वह एक विश्वासघातक जन था। परन्तु यदि उस वादशाहके चरित्रोपर ध्यान दिया जाय तो साफ मालूम हो जाय कि यशवंत विश्वासघाती नही था, जिसने धर्मरक्षामे आत्म समर्पण करदिया उसको हम विश्वासघाती कभी नही कहसकते। यद्यपि यह वात

---

(१) शाइस्ताखां नहीं मारागया उसका बेटा मारागया था। शाइस्ताखां तो इस घटनाके बहुत वर्षो पीछे तक वंगालेमें सूवेदार रहा था।

सत्य है कि वह बादशाहके अधीन होकर उसीके विरुद्ध आचरण करतारहा, पग २ मे उसने उसके अनिष्टकी चेष्टा की, किन्तु ऐसा होनेपर भी वह विश्वासघातक नही होसकता। बादशाहके चरित्रोंके देखनेसे इस बातकी सत्यता प्राप्त होसकती है। बादशाह हिन्दूधर्म्मका परम शत्रु और हिन्दूजातिका परम विरोधी था। उसके अपवित्र ग्राससे अपने जातिके गौरव पितृपुरुषोके सनातनधर्मकी रक्षा करनेके निमित्त ही राजा यशवंतने इन सब उपायोका अवलम्बन किया था, यह क्या विश्वासघातकता है? विश्वासघाकता करना किसे कहते है? औरंगज़ेबने विश्वास करके यशवंतको किसी बड़े काममें नहीं नियुक्त किया, यद्यपि उसने राठौरराजको बड़े २ पदोपर नियत किया था, और उसको बड़े २ सूबोका सूबेदार किया था, किन्तु यह सब उसने विश्वास करके नही किया था। क्रमशः उसके आचरणेके देखनेसे भलीभांति प्रतीत होता है कि उसने एक दिनके भी निमित्त यशवंतका विश्वास नही किया। वह यशवंतको भलेप्रकार पहिचानता था, और यह भी जानता था कि राठौरराज अवसर पाते ही विना मेरा अनिष्ट किये न मानेगा, फिर जो उसने उसको ऊंचे २ पदोपर नियत किया था तो केवल उसको अपने अधीन रखनेके निमित्त, उसके मनमे यही गुप्त इच्छा थी कि समय पाते ही उसको कमलकी समान तोड़ मरोड़ डालूंगा। इसी इच्छाके पूरी होनेके निमित्त उसने बराबर चेष्टा की, किन्तु यशवंतकी सावधानीके कारण उसकी वह समस्त चेष्टाएं निष्फल होगई। यह सब सावधानियां विश्वास घातकता नही है यह केवल शठके साथ शठताका आचरण करना है।

यशवन्तसिंहका जीवनचरित्र एक असाधारण प्रकारका है और उनकी पूरी जीवनीसे पूरे २ वृत्तान्त प्रगट हो सकते है। जिससे उस समयके रहस्यजनक रहन सहन और प्रत्येक प्रणालीका चरित्र चित्रित होसकता है। इसमे सन्देह नही कि कभी २ यशवन्तसिंह बादशाहके उन सलूकोसे जो वह उसके पुरुषार्थ देखने निमित्त करता था आश्चर्यमे आजाता था और जब कभी उसके साथी राजकुमार बादशाहके कृपापात्र बनना चाहते थे, तो उस समय राजपूतानेके राजकुमारोमे यशवन्त अग्रणी समझा जाता था। इसी प्रकार इन विवादोमे दोनोका इतना समय व्यतीत होगया जो मनुष्य-जीवनके लिये पूरा होता है। औरंगज़ेबका भी यह काम कुछकम प्रशंसाके योग्य नही है कि इतने दीर्घ समयतक उसने यशवन्तसिंहके घृणास्पद विचारोको काममे नही लानेदिया, परन्तु इसका प्रयोजन उसका अभिमान था, और एक कारण यह था कि बादशाहके महाबलको वह अपनी राजधानीमे काममे लायेथे और बादशाहने इन राजकुमारोको सूबेदार बनाकर गुलाम व अधीन करलिया था, नही तो उसके सहयोगी आमेर नरेश जयसिंह मारवाड़नरेश राना राजसिंह और शिवाजी यह सब मिलकर अपने जातिशत्रु औरंगज़ेबको तहसनहस करदेते। यदि यशवन्तसिंह उतने दिली सदमोपर संतोष करता जो उसने दुष्ट औरंगज़ेबके दिलपर पहुंचाये थे तो उसको सफलता होती, क्योकि बेगमातके महलोमे भी औरंगज़ेबके आखोके सामने यशवन्तकी मूर्ति विराजमान

रहती थी; परन्तु उसके पुत्रका प्राणघात और उसके निरपराध वंशके साथ पशु-व्यवहार करनेसे प्रगट है कि बादशाहको कितना भय यशवंतसे रहता था। राठौरवीर यशवंतसिहके मरनेके उपरान्त उसके शोकार्त कुटुम्बियोको औरंगजेवने जिस प्रकार घोररूपसे दु:खित किया उसका वृत्तान्त और उसके साथकी घटनाओका वर्णन करनेके पहिले हम परमविश्वस्त राठौरसरदारोके दो एक वर्णन लिखते है। जो सामन्त औरगजेबके विरुद्ध राजा यशवंतके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक सहायता देनेमे तत्पर हुए थे उनमेसे केवल नाहररांवकी जीवनी उन सबके उदाहरणस्वरूप गृहीत होसकती है नाहरराव प्रसिद्ध कुम्पावत सम्प्रदायका शिरोमणी था। वही सब राठौर सर्दारोके बीचमे श्रेष्ठ था। आशोप उसकी आदि भूमिसम्पत्ति थी, उसका आदि नाम मुकुन्ददास था,

नाहरखां नाम तो केवल बादशाहका दियाहुआ था। इसकी योग्यता वीरता और बहदुरी से यशवन्तके प्राणघातके उपाय निरर्थक होजाते थे। किस प्रकार उसको यह नाम प्राप्त हुआ था उसका वर्णन नीचे लिखाजाता है। इसके पास एक शाही अहदीकी मारफत बादशाहने एक पैगाम भेजा, इसने उसका उत्तर बड़ी वीरतासे अपमान जनक शब्दोमें दिया इस कारण वह निष्ठुर बादशाह उस्से अप्रसन्न हुआ और उसके दडस्वरूपमे उसको एक प्रचंड व्याघ्रके पिजरेमे नंगे बदन और विना हथियार लेकर जानेकी आज्ञा दी। इस कठोर आज्ञाके सुनते ही तेजस्वी मुकुन्ददास कुछ भी भयभीत न हुआ वरन हँसते २ उस भीषण बाघके समीप जा पहुँचा; उसने देखा कि वह भयानक बाघ गर्व सहित इधर उधर पैर बदलताहुआ पिजरेके भीतर फिररहा है। उसके सामने पहुँचते ही राठौर सरदारने गर्वसहित उससे सम्बोधन करके कहा, "रे यवनके बाघ! आ, यशवन्तके बाघके सामने हो" मुकुन्ददासके दोनो नेत्रोसे आगकी लपटै निकल रही थीं। उसकी ऐसी भारी ललकार सुनकर बाघ चौकन्ना हुआ और पूँछ फुलाकर विकराल गर्जन करताहुआ शत्रुकी ओर देखने लगा। अग्निसे जाज्वल्यमान चारोनेत्र परस्पर मिले, थोड़े ही देरके उपरान्त बाघ मुख फिराकर मुकुन्ददासके सामनेसे चलागया। व्याघ्रको भागताहुआ देख पराक्रमी राठौरसर्दार ऊँचे स्वरसे कहउठा "यह देखो, बाघ साहस करके भी मेरे साथ युद्ध न करसका, रणसे भागेहुए शत्रुपर आक्रमण करना राजपूत धर्म्मके विरुद्ध है।" ऐसी अनोखी घटना देखकर सब देखनेवाले वज्रसे मारेहुएकी समान खडे रहे। यहांतक कि औरंगजेबका पाषाण हृदय भी विस्मय रससे पिघलगया। उसी समयसे उसने उसका नाम नाहरखॉ, (बाघपति) रखकर उसे बहुतसा इनाम दिया और अत्यन्त प्रसन्न होकर पूछा "राठौर! इस असीम बाहुबलके अधिकारी होनेके निमित्त तुम्हारे कितने पुत्र उत्पन्न हुए?" नाहरने कुछेक हँसकर उत्तर दिया "बादशाह! जब आपने मुझको मेरी स्त्री परिवारसे जुदा कर अटकके पार पश्चिमओर भेजदिया, तब मेरे किस प्रकार पुत्र होसकते है?" तेजस्वी मुकुन्ददासके इस निर्भय वाक्यको

(१) सही नाम नाहरखान है यह कूंपावत सरदार था।

सुनकर सभी चमत्कृत होगये। बादशाह भी मनमे कुछ क्षुभित हुआ, किंतु उससे कुछ कह न सका। इस प्रकार राठौरवीर मुकुन्ददासको नाहरखाँकी उपाधि प्राप्त हुई थी।

नाहरखांके इसी प्रकारके निर्भय और तेजोव्यंजक वाक्योद्वारा एकबार शाहज़ादा उससे अप्रसन्न भी होगया था। एक समय राजकुमारने तमाशा देखनेके निमित्त नाहरखाँ से कहा "राठौरवीर? मैने आपकी रणदक्षताका विशेष परिचय पाया है, किन्तु आपकी एक और क्रीड़ाके देखनेकी मेरी अत्यन्त इच्छा है। आप क्या घोड़ेको सरपट दौड़ातेहुए उस दौड़तेहुए घोड़ेकी पीठसे एक लम्बी पेड़की डालीको पकड़ उससे झूल सकतेहो?" ऐसी क्रीड़ामे बल और फुर्ती दोनो ही की आवश्यकता है। किन्तु ऐसी क्रीड़ामे बहुतसे अकृत कार्य हो गिरते रहते है। अनेक राजपूतोकी ऐसी क्रीड़ामे विशेष आसक्ति देखीजाती है। जो हो राजकुमारकी बातके सुनते ही तेजस्वी नाहरने घमंडसहित उत्तर दिया "मै बंदर नही हूँ, राजपूत हूं,–राजपूतोकी जो कुछ क्रीड़ाएं है सब तलवारकी सहायतासे होती है, योग्य शत्रु पानेपर उसके साथ तलवारका खेल दिखासकता हूं।" शाहज़ादेने जो इच्छाकी थी वह पूरी न हुई। इससे वह अत्यन्त क्रोधित हुआ किन्तु प्रकाशमे कुछ कह न सका वह मन ही मनमे मुकुन्ददासके सर्वनाशकी इच्छा कर उसको सिरोहीके देवड़ा राजा सुरतानके विरुद्ध भेजा। वीर नाहरखां इससे कुछ भी भयभीत न हुआ वरन् दूने उत्साहके साथ शाहज़ादेकी आज्ञा पालनमे यत्नवान् हुआ। इस युद्धमे वह राठौरराजकी समस्त सेनाको लेगया था।

मुकुन्दके युद्धकी तैयारी सुनकर सुरतानने युद्धकी आशाको छोड़ अपने दुर्गम गिरिशिखरमे आश्रय ग्रहण किया। उसने विचारा था कि शत्रु इस दुर्गम स्थलमे प्रवेश कर उसपर आक्रमण नही कर सकते। इस आशासे धैर्य्यवान हो वह निश्चिन्त मनसे वहां आराम करनेलगा। किन्तु राठौरवीर मुकुन्ददासकी प्रचंड विद्वेषाग्निके तेजने उसके रक्षित घरमे भी प्रवेश कर उसको शीघ्र जला डाला। एक दिन रात्रिके समय सुरतान अपने दुर्गमे निश्चिन्त होकर सो रहा था, समस्त किलेमे सन्नाटा छायाहुआ था केवल एकओर एक पहरेदार दीवारपर खड़ाहुआ थोडी२ देरमे चिल्ला रहा था। बीच२ मे दो चार सियारो और हिंसक प्राणियोका शब्द सुन पडता था, कही झीनी२ हवासे पेडोके हिलते हुए पत्तोकी खडखड़ाहट सुनाई देती थी। मुकुन्दने अपनी सेना लेकर सावधानीके साथ दीवारके ऊपर चढ़ उस अकेले जागतेहुए पहरेदारको मारा और तदनन्तर सुरतानके घरमे जाय उसकी फैलीहुई पगड़ीसे शय्यासमेत उसे बांधकर अपनी सेनाके हाथमे अर्पण किया। जब राठौरसेना सुरतानको बंदी करके ले चली तब मुकुन्दने बड़ाभारी शब्द किया। उसकी मेघकी समान गर्जनासे सब किला गूँज उठा और क्षणभरमे ही समस्त

---

(१) यह बड़ी असंगत कथा है क्योंकि देवड़ासुरतान बहुत पहले मरचुका था। नाहरखांके समयमे तो उसका पोता देवड़ा अखैराज सिरोहीका राव था।

देवड़ा सेना जाग उठी। जागते ही, वह अपने स्वामीपर विपत्ति आई जान सब इकट्ठे हो उसको छुड़ानेकी चेष्टा करनेलगे। किन्तु वीर मुकुन्ददाराने बड़ीभारी गर्जना करके कहा " देवड़ा सैनिको! शांत हो, शांत हो, वृथा उद्यमकर अपने और अपने प्रभुके जीवनको न खोओ। यदि तुम मेरी बात मानोगे तो सुरतानके अंगमे कॉटातक न लगैगा, मै एकबार केवल राजाके निकटतक ले जाऊँगा और यदि मोहवश मेरे विरुद्ध कार्य करोगे तो इसी क्षण तुम्हारे स्वामीका शिर काटडालूंगा, निश्चय जानना कि इनका जीना मरना मेरी इच्छाके ऊपर निर्भर है। इस समय मै इनको कैसे निर्विघ्न वंदी करके ले चलाहू यह दिखानेके निमित्त ही मैने तुम्हे जगाया। " इन तेजोव्यञ्जक बातोके सुनते ही देवड़ासैन्यगण मत्र और औषधिसे रुकेहुए पराक्रमी सॉपके समान स्थिर-भावसे खड़े रहगये, किसीको भी एकपग आगे बढ़नेका साहस न हुआ। राठौरवीर मुकुन्द वंदी सुरतानको ले प्रचंड पराक्रमसहित किलेसे बाहर निकला और राजा यशवंतके निकट पहुँच सुरतानको उसके हाथमे अर्पण किया।

राजा यशवंतने सिरोही राजको बादशाहके यहां लेजानेकी इच्छा प्रकाशकर उसको यह कहकर धीरज दिया कि " आपके गौरव व सन्मानमे कुछ भी फर्क न आने पावैगा। आप केवल एकबार बादशाहसे मुलाकात करै "। देवड़ाराज इसपर राजी हुआ। इसी अनुसार वह योग्य कर्म्मचारीके साथ राजमहलमे पहुँचा। राजाको राजमहलमे लेजानेके पहिले कर्मचारियोने उससे कहा " देखो बादशाहको सलाम करना न भूलजाना विना उन्हे सलाम किये कोई नही जासकता "। यह बात तेजस्वी सुरतानके हृदयमे वज्रकी समान लगी। उसने निर्भय मनसे उत्तर दिया " मेरा जीवन बादशाहके हाथमे है किन्तु मेरा सन्मान मेरे ही निकट है, भाग्यमे जो होगा वही होगा, मै कभी मनुष्यको मस्तक न झुकाऊंगा इस जीवनमे यह कभी नहीं होसकता "। राजा यशवंतने प्रतिज्ञा की थी कि वह सुरतानको अपमानित न होनेदेगा, इस कारण वह कर्म्मचारी उसका सन्मान न नष्ट करसके। किन्तु यह विचारकर कि बादशाहके निकट माथा झुकाना ही पड़ेगा, उन्होने अपने अभिप्रायको यत्नपूर्वक पूरा किया। जिस मार्गसे प्रत्येक आदमी बादशाहसे मिलने जाता था उस मार्गसे न लेजाकर उसे एक अति छोटी खिडकीसे लेगये। वह खिड़की पृथ्वीसे जानूकी बराबर ऊंची थी। कर्मचारियोके इस गूढ अभिप्रायको न समझकर देवडाराजने उसी खिडकीसे सभामे प्रवेश किया। इससे उसको आगे पैर बढ़ाय फिर मस्तकको निकाल उसमे प्रवेश करना पडा यही उसका यथार्थ अभिवादन कहकर स्वीकार हुआ। उसकी तेजस्विनी आकृतिको देख तथा वीरोचित व्यवहार, स्वाधीनताकी रक्षाका कठोर उद्यम और यशवंतकी प्रतिज्ञाका वृत्तान्त स्मरण कर बादशाहने उसको केवल क्षमा ही नही किया वरन उसकी इच्छानुसार जागीर देनेको भी वह सम्मत हुआ। यद्यपि बादशाहने उसपर उदारता प्रकाश की किन्तु उस उदारताके भीतर जो एक गुप्त रहस्य छिपा था उसको देवडाराजने उसी समय जानलिया। वह भलीभांति जानगया कि बादशाहने

उसको अपने अधीन सामन्तराजाओमे शामिल करनेकी इच्छा की है, इस अभिप्रायके समझते ही तेजस्वी सुरताननें निर्भय होकर कहा "बादशाह । मेरे अचल गढ़के[1] समान और क्या भूमि वा रत्न दान करसकतेहो ?—मै और कुछ नही चाहता केवल यही कि आप मेरा राज्य मुझे दे दे । और मै वहां चलाजाऊं।

तेजस्वी देवड़ाराजकी इस बातसे बादशाह कुछ भी क्षुभित वा असंतुष्ट न हुआ वरन उसने प्रसन्नतापूर्वक उसकी बातको स्वीकार किया । उसे आवूकेकिलेको जानेकी आज्ञा दी । सुरतान अपने अचल गढ़को लौट आया । उस दिन उस सभामे बैठेहुए समस्त राजाओके सामने उसे जो सन्मान प्राप्त हुआ, उससे वह वंचित न हुआ । उसकी उस तेजस्विता, उस निर्भयता, उस स्वाधीनप्रियताके अमृतमय फलको उसके वंशधर गण आज भी निर्विघ्नतासे भोग करते है और अपनेको स्वाधीन समझते है ।

राठौरवीर नाहरखांको तेजस्वी सामन्तोके बीचमे उदाहरणकी भाँति ग्रहण किया जा सकता है । यह लोग स्वभावसे ही निर्भय और तेजस्वी होते है । राजभक्ति इनके रोम २ मे जड़ी रहती है । स्वदेशके उपकारके निमित्त राठौरकुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेके निमित्त यह प्रसन्नतासे अपने प्राणोको देसकते है । इनके प्राण वलिदेने और जाति प्रियताका एक प्रदीप्त उदाहरण आगेके अध्यायमे दिखलावेगे ।

---

(१) आबू और शिरोहीके राजाओके प्रसिद्ध किलेका नाम अचलगढ़ है ।

(२) यह कथा निरी गप्पाष्टक है इसका कोई अंश इतिहाससे सिद्ध नहीं है, जिसने इसको गढ़ा है वह इतिहास कुछ नही जानता था । सुरतान महाराज जसवन्तसिंहके समयमे क्या उनके बापके समयमे भी जिन्दा नहीं था । फिर नाहरखा उसको कहांसे पकड़लाया और बादशाही दर्बार किसीका घर नहीं था कि जिसके दरवाज़ेमेसे सुलतान टॉग आगे करके निकलता वहॉ तो जयपुर जोधपुरके राजाओके भी शिर झुका करते थे, सुरतान किस गिनतीमे था जो वहॉ बुलाया जाता और ऐसे यमदण्डसे जाता । सिरोहीवाले तो हमेशा जयपुर जाधपुरके अधीन रहे है । टाड्साहबको ऐसी गप्पसप्प कथाए मूर्ख चारण भाटोकी गढ़ीहुई बहुत पसन्द थी इसीसे उन्होने उनको खूब घुमाघुमाकर अपनी किताबमे बडे आनन्दपूर्वक लिखा है और सच झूठका कुछ निर्णय नहीं किया । एसी निर्मूल कथाओका गढन प्रारम्भ पृथ्वीराज रासेसे हुआ है जो आजतक चली आती है । चारण भाटोकी इन बातोसे भोलेभाले राजपूतोकी सरकारोकी खूब बनआई है ।

सप्तम अध्याय ७.



यशवंतकी मृत्युसे उसकी पटरानीके सती होनेका उद्योग करना और सर्दारोका उसे निवारण करना, राजाके साथ अन्यान्य रानियोका सती होना, चन्द्रावतीका मंडोरमे सती होना, यशवंत की मृत्युसे सबको खेद, अजितका जन्मग्रहण, यशवंतके परिवार और सामन्तोका काबुलसे मारवाड़को लौटना, औरंगज़ेबद्वारा उनका मार्गमें रोकाजाना, अजीतसिहकृत औरंगज़ेबकी प्रार्थना, साथवाली स्त्रियोको मारकर सर्दारोंकी आत्मरक्षा, बालक राजपुत्रकी जीवन रक्षा; ईदागण द्वारा मंडोराधिकार, उनको दूर करना; औरंगजेबका मारवाड़पर आक्रमण करना और लूट करना; बड़े२नगरोका नाश करना; हिन्दुओंके मंदिर आदिको तोड़कर राठौरोको धर्म्म छोडनेकी आज्ञा देना; उसके इस प्रस्तावकी अयोक्तिता; जिजियाकर स्थापन; औरंगज़ेबके विरुद्ध राठौर और शिशोदियोंका एक होकर कपटजाल करना, युद्धके उपरान्त मेड़तिया सम्प्रदायकी वीरता; नाडोलमें राजपूतोका युद्ध; माराजाना; राजपूतोके विरुद्ध युद्धमे अकबरका अनुमोदन; सधिबंधन, अकबरको बादशाह कहकर राजपूतोका जाहिर करना, तैन्वरखांकी विश्वासघातकता और मृत्यु, अकबरका भागकर राजपूतोकी शरणमे जाना, अकबरकी रक्षा करते २ दुर्गदासका दक्षिणमे जाना, सोनगका राठौर सेनाको चलाना; जोधपुरमे युद्ध; सोजतमे युद्ध, विशूचिका और महामारीका होना, औरगज़ेबको संधिकी प्रार्थना करना; सोनगकी संधिमे अनुमोदन; सोनगकी मृत्यु; औरगजेबका संधिसंधान; युद्धनिर्वाहका भार आज़मके अर्पण करना, मारवाड़मे सर्वत्र मुसलमान सेनाका फैलना, अर्वली पर्वतमे राठौरोका निवास; स्थान २ पर असंख्य युद्धविग्रह और अगणित प्राणियोका नाश; राठौरोंके साथ भाटोका मिलाप; मेड़तिया सर्दारोका अन्यायसे माराजाना; सिवानेका अवरोध, मुसलमान सेनाका नाश; नूरअली-द्वारा रसानीजातिकी स्त्रियोका हरण और उसका माराजाना, साभरमे यवनसेनाका संहार; राजपूतो द्वारा जालौरका रोकाजाना।

पुत्रशोककी शोकाग्निमे आत्मजीवनकी आहुति दे जिसदिन महाराज यशवंतसिहने इस लोकसे विदा ली, जिसदिन पापी औरंगज़ेबका एक कांटा उखड़गया, उसी दिनसे भारतका एक उज्ज्वल नक्षत्र अनंतकाल सागरमे डूब गया भारतका भाग्य गगनकालके मेघजालमे आवृत्त होगया और समस्त हिन्दू समाज घोर विषादमे व्याकुल होगई। यशवंतकी पटरानी प्राणपतिके शोकसे व्याकुल हो उसके साथ सती होनेको तयार हुई। शीघ्र ही प्रशस्त चिता सजाई गई। शोकातुर रानीने स्वामीके मृतक देहको ले चितापर बैठनेका उद्योग किया। वह उस समय सात महीनेकी गर्भवती थी,–मारवाड़का होनहार उत्तराधिकारी अजीत उस समय सीपके भीतर रहेहुए मोतीकी समान उसके पवित्र गर्भमे[1] था। उस समय उसका सती होना अयोग्य और पाप विचार कर कूपावत् गोत्रीय ऊदाने उसे सती होनेसे रोकनेकी चेष्टा की। किन्तु सतीने उसके निवेदनको स्वीकार न किया। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा देख

---

(१) पटरानी उनके साथमे नहीं थी, दूसरी दो छोटी रानियाँ जादमजी और नरूकीजी साथमे थी आर दोनोही गर्भवती थी।

राठौर सर्दार अत्यन्त शोकातुर हुए। उन्होने सोचा कि विपुल राठौरकुल आज निर्मूल हुआ चाहता है, अब महाराज यशवंतके वंशकी रक्षा कौन करेगा ? उसके जो कईएक पुत्र हुए थे वे सब अकालमृत्युके मुखमे पतित होगये; उसकी स्त्रीके गर्भमे रहेहुए वालकपर आशा भरोसा रखकर राठौरसर्दार उसके मृत्यु शोकको वहुतकुछ भुला-सके थे, किन्तु इस समय रानी भी उस आशाके निर्मूल करनेको तैयार है । तव फिर कौन यशवतके सन्मान व गौरवकी रक्षा करेगा? कौन राठौरकुलका राज्यकार्य कर दुष्ट औरंगज़ेबके पापाचरणोका योग्य प्रायश्चित्तविधान करेगा ?–यह सब चिन्ताएं शीघ्रता-पूर्वक ऊदा कूंपावत सर्दारके मनमे उदित हुई। और जव उसने अपने विनयको व्यर्थ देखा तव अन्तमे उसने बलपूर्वक उसको सती होनेसे निवृत्त किया।

यद्यपि यशवंतकी पटरानी सती न होसकी किन्तु राजाकी अन्यान्य स्त्रिये उसकी मृतदेहके साथ सती होगई । इस समयमे उसकी दूसरी रानी चन्द्रावती मंडोर नगरमे रहती थी। प्राणपतिके मरनेका समाचार पाते ही उसने भी राजाकी एक पगड़ी ले जलतीहुई चितामे प्रवेश करके शरीर त्यागकिया। जो यशवन्त इतने दिनोतक अपनी शक्तिभर सनातन हिन्दूधर्म्मकी रक्षा करता आया था, उसको आज मराहुआ देख समस्त हिन्दूसमाज अत्यन्त शोकसे व्याकुल होगया। राज्यके छोटे वड़े, स्त्री पुरुष सभोने हँसी दिल्लगी और भोगविलास छोड़ शोक करना आरम्भ किया । आज मारवाड़ गम्भीर शोकान्धकारसे ढकाहुआ है। आज यहां सब स्थानोपर गम्भीर शून्यता और स्थिरता तथा उदासीनता छाईहुई है। यहांके मन्दिरोमे अब घंटा नही वजता, सूर्य्योदय और सन्ध्याकालमे अब घर २ शंख नही सुनाई देते। मानो समस्त मारवाड़मे एक युगान्तर उपस्थित है राज्यके सब मनुष्य भयभीत और निराश है । कोई २ तो भयसे व्याकुल हो आत्मरक्षाके निमित्त मुसल्मान धर्म्मका अवलम्बन करनेलगे, किसी २ ब्राह्मणने भी सनातन धर्मको छोड़कर मुसल्मानोके धर्म व नीतिके सीखनेमे चित्त लगाया।

यशवन्तकी विधवा रानीसे यथासमय एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सबकी सम्मतिके अनुसार उस नये उत्पन्नहुए पुत्रका नाम अजित रक्खागया। प्रसवका दुःख जब दूर हुआ और रानीने अपनेको चलने फिरनेमे शक्तिमती समझा, तब राठौर सर्दार उसको राठौर राजपुत्रको राजकुमारियोको तथा राजपरिवारके अन्तर्गत अन्यान्य मनुष्योको साथ ले अपने देशकी ओर चले; किन्तु हिंसक औरंगजेबने उनको सुखसे घरको न आने दिया। यशवन्तके जीवितकालमे भी वदला ले वह पापी उसकी मृत देहमे खड्गघात करनेपर उद्यत हुआ। उसके एकमात्र वंशधर राजकुमार अजितके छीन लेनेका उसने उद्योग किया। जिस समय राठौरसर्दार परिवार समेत दिल्लीमे आये कि उसी समयमे निर्द्दयी मुग़ल वादशाहने आज्ञा दी कि राजकुमारको मेरे हवाले करदो। उसने सामंतोको नानाप्रकारके लोभ दिखाये,उसने उनसे कहा कि "यदि तुम राजपुत्रको मुझे देदोगे तो मै समस्त मारवाड़ तुमको बांटदूंगा।" औरंगजेबने यह न जाना कि इस प्रकारके लाखो मारवाड

यहांतक कि इन्द्रकी अमरावतीके समान एक २ इन्द्रपुरी भी उनको देनेपर वह प्राण जानेतक अपने राजपुत्रको शत्रुके हाथमे न देंगे। उसकी इस पापकथाके सुनते ही वे सरदार अत्यन्त क्रोध और हिंसासे एकवारगी उन्मत्त हो उठे और अहंकारसहित मेघके समान गंभीर स्वरसे उन्होंने उत्तर दिया "हमारी मातृभूमि हमारी अस्थिमज्जाके साथ मिली हुई और नस २ मे जड़ित है, आज वही अस्थि मज्जा और नसें उस जन्मभूमि और हमारे राजाकी रक्षा करेंगे।"

रोषसे उन्मत्तहुए सर्दार "आमखास" को छोडकर शीघ्रतापूर्वक अपने २ डेरोंमें आए। उनके डेरोको शीघ्र ही यवन सेनाने घेर लिया। पाखण्डी औरंगज़ेवकी ऐसी विश्वासघातकतासे राठौरवीर अत्यन्त क्रोधित हुए। किन्तु ऐसे आपत्तिकालमे क्रोधसे अधीर होनेपर सब ही नष्ट होगा, ऐसा विचारकर उन्होंने धैर्य धारण किया और राजपुत्रके जीवनकी रक्षाके निमित्त वे कोई सदुपाय ढूंढने लगे। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धिसे शीघ्र ही उपाय भी सोच लिया। सर्दारगण राजधानीमें आनेवाले हिन्दुओंको मिष्टान्न भेटमे देनेके बहानेसे अनेक संदेश और अनेक प्रकारके पकवान चारोओरको भेजने लगे वह सब पकवान जिस टोकरेमे जानेलगे उनमेसे एकमे राजकुमार अजितको भी गुप्त करदिया। इस बार राठौरवीर अपनी जातिके सन्मान रक्षाके निमित्त दृढ़प्रतिज्ञ हुए। नियमित पूजा आदिकी क्रिया समाप्तकर सबोंने दूनी २ अफीम खाई और अपने २ रणतुरंगोपर बैठकर अपनी शक्तिभर राठौलकुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेमे वे उद्यत हुए। एक ही समयमे पांच प्रचंड वीर रणछोड़ गोविन्ददास, रघुपुत्र दारावत, चन्द्रभान निर्भीक, उदावत भारमल, और सुजावत् रघुनाथ, दारुण रोष और हिंसासे उन्मत्तहो गम्भीर स्वरसे कह उठे "आओ, वीरो! आओ, हम समरसागरसे पार होवे आओ इस असुर कुलको नाश करो, इसमे यदि प्राण जातेरहे तो हानि नही है, क्योंकि मरनेपर हम अप्सराओके साथ स्वर्गलोकमे सुख भोगेगे उनके इस गंभीर बातके कहते ही भाट कवि सूजा गंभीर स्वरसे उत्साहके साथ कहउठा "राठौरवीरो! आज आपलोगोंका राजानुग्रह भोगकरना सार्थक होगा। आजके समान दिनमे अपने राजा और स्वदेशके गौरव रक्षाके निमित्त तलवार धारण कियेहुए देह त्यागकर दलसहित स्वर्गमे जानेके निमित्त आपलोग इतनदिनोंसे जागीरोका भोग करते आते है। आओ, आगे बढ़ो, मैभी आपलोगोके साथ चलताहूं, मैने महाराजकी बन्धुता और प्रभुताके अनुग्रहका भोग किया है, आज उसकी सार्थकताको पूर्ण करूंगा आज मै पिताके नाम और गौरवकी रक्षा करूगा और मृत्युको शिरपर बुलाकर निर्भयहो युद्धभूमिमे विचरण करूंगा। आगे होनेवाले कविलोग अमृतमय तानसे हमारे यशका गान करेंगे।" तदन्तर आशाका पुत्र वीर दुर्गादास क्रोधसे ज्वलित होकर कहउठा "हिन्दुओके अस्थि मांसका चर्वणकर राक्षस यवनोकी डाढ़े अत्यन्त तीक्ष्ण होगई है, किन्तु यह सब थोड़े दिनोके निमित्त है। आज हम सब उनको इसका दण्ड देंगे, आज हमारी तीक्ष्ण तलवारसे जो जलतीहुई विजलीकीसी चिनगारियाँ निकलेगी, उनसे समस्त दिल्ली जल जावेगी,

आज दिल्ली स्थिर होकर हमारी वीरता देखैगी, आज राजपूतोकी रोषाग्निसे मुसलमानोकी सेना भस्म हो जावेगी।"

राजपुत्रके जीवनकी रक्षा कर राठोरवीर इसवार अपनी सहगामिनी स्त्रियोंके सन्मान और गौरवकी रक्षा करनके निमित्त तत्पर हुए। किस प्रकार उनका पवित्र कुलगौरव रक्षा पावैगा, किस प्रकार उनकी प्राणप्यारी स्त्रियां मुसल्मानोके अपवित्र स्पर्शसे रक्षा करसकेगी, इसका उपाय ढूंढनेलगे। यवनसेना उनके चारो ओर अस्त्र लिये खड़ीहुई है। उनके वीचसे स्त्रियोको वेखटके लेजानेका कोई उपाय नही है। तव फिर इस समय राठौर स्त्रियोकी मानरक्षाका केवल एक उपाय उनके प्राणोके नाश करनेका है। इस समय भयानक हिंसाके अतिरिक्त राजपूत नारियोकी पवित्रताकी रक्षाका और कोई उपाय नही है। राठौर सर्दार आज उसी भयानक कार्यके करनेसे प्रवृत्त हुए। घरके भीतर एक कमरेमे वहुतसी वारूद और काठ कवाड़ इकट्ठा किया गया। वीरनारी राजपूत स्त्रियोंने इष्टदेवका नाम लेते २ उस भयानक घरमे प्रवेश किया, घरका द्वार वंद करदियागया और घरके एक झरोखेसे वारूदमे अग्नि देदीगई। सैकड़ो वज्रकी समान शब्द कर वारूदका ढेर जलउठा और क्षणमात्रमे उन कमलकी समान स्त्रियोको भस्म करदिया। रूप यौवन लावण्य सव ही क्षणभरमे अग्निसे भस्म होगया।

राठौरवीर एकवार निश्चित हुए; जिनके निमित्त प्राण रोरहे थे, जो आदरकी सामग्री थी, जिनके सन्मानमे कुछ भी फर्क पड़नेसे राजपूतोके हृदयमे सैकडो वज्रकीसी चोटे लगती थीं, आज उन्हीं सुन्दर ललनाओने जलती आगमे शरीर भस्म करदिया। राठौर वंशका एकमात्र उत्तराधिकारी, महाराज यशवंतका वंशधर शिशु अजित भी रक्षा पागया है, तो फिर अव इस समय रणक्षेत्रमे मरनेसे राजपूत वीरोंको क्या चिन्ता है? इस समय सव ही निश्चिन्त होकर मुसल्मानोके सन्मुख भयानक युद्धमे तत्पर हुए। इस प्रकारके लोमहर्षण युद्धका वृत्तान्त जैसा भाटग्रन्थोमे लिखाहुआ है उसका ही अनुवाद नीचे लिखाजाता है। "यमकी समान राठौरगण हाथमे शूल उठाकर शत्रुदलके विरुद्ध दौड़े। उसी समय तलवारोकी झनझनाहट और ढालोका चट्चट् शब्द होनेलगा। युद्धभूमिमे रुधिरकी धारासे कीच ही कीच होगयी। दिल्लीके राजमार्गमे दूहड़के वंशधरोने जो युद्ध किया, मुण्डधारी शंकरने स्वयं उस युद्धभूमिमे विचरण कर अपने भयानक मुण्डमालको पूर्ण किया। नौंज़ाहर शत्रुसेनाके साथ रत्न

---

(१) रनवास वारूदसे नहीं उड़ाया गया तलवारसे काटा गया था।

(२) राव दूहड़ मारवाड़का एक प्राचीन अधिपति था। यहांपर वह राठोरकुलके एक प्रधान पुरुषके रूपसे वर्णित हुआ है। अनुप्रास अथवा शब्द लालित्यके अनुरोधसे भाट कवि प्राय. इसी प्रकार अनेक प्रसिद्ध पुरुषोंके नामकी विनाश होनेसे रक्षा करते रहते है।

(३) मारवाड़के भाट कवि कहते हे कि महादेवजीकी नरमुंडमाला अवतक असम्पूर्ण थी, किन्तु इस युद्धमे शत्रुके शिरोसे गूंथकर उन्होंने उसको पूर्ण कर लिया था।

युद्ध करनेलगा, किन्तु उसकी तलवार जय न प्राप्त करसकी अतएव वह रणभूमिमे मारा गया। रणभूमिमे गिरते ही रम्भा उसको लेकर चलीगई। दारावत्वीर दहूने आत्मजीवन उत्सर्ग किया, आज उसने स्वामीके नमकको रणके लोहूसे मिलादिया। चन्द्रभान अप्सराओसे घिरकर चन्द्र लोकको गया। भट्टीवीर सौ टुकड़े हो सुरतानके पुत्रके निकट शस्त्र शय्यापर अनंत निद्रामे सो रहा, प्रभुपरायण उदावत् वीर कमलकी समान लाल रंगका हो यशवंतसे मिलनेके निमित्त स्वर्गमें गया। कविवर शन्द दोनो हाथोसे दो तलवारे चलाताहुआ सेनाके सामने युद्ध करने लगा, अन्तमे वह भी देह छोड़कर चन्द्रलोकमे जा वसा। राजवंश और गोत्रके प्रत्येक वीरोने तलवार चला २ कर अपने कर्तव्यको पूरा किया, अंतमे वीर दुर्गदास दुष्ट वैरियोका गर्व चूर्ण कर अपने सन्मान और गौरवकी रक्षा करनेमे समर्थ हुआ"।

राठौर कुलकी सन्मान रक्षाके निमित्त यह प्रचण्ड उद्यममय युद्ध सम्वत १७३६ के श्रावणकृष्ण ७ को हुआ। वीररसके प्रेमी भाट कवि इस भीषण युद्धको स्पष्ट शब्दोमे वर्णन कर राठौरवीर सियाजीके पवित्र वंशका असीम गुण गाते है। वह दिन राठौर कुलके इतिहासमे एक पवित्र दिन कहागया है। उस पवित्र दिनमे अत्याचारी यवनराजके पैशाचिक अत्याचारोका वदला लेनेके निमित्त राठौरोने जो एक प्रचंड उद्यम किया था, उस उद्यमके सफल होनेसे दुष्ट औरंगजेवका सिंहासन चूर्ण होजाता, तथा भारतका इतिहास नई मूर्त्ति धारण करता इसमे कुछ भी सन्देह नही, परन्तु भारतवासी सदैवसे ही राजभक्त है, राजभक्ति इनकी अस्थि मज्जामे नस नसमे प्रत्येक रक्तके बूँदमे मिली हुई है। विद्रोहिता किसे कहते है, उसे यह नही जानते न कभी जानना चाहते हैं। किन्तु ऐसा होनेपर भी इनका हृदय पत्थरसे नही बना है इसी कारण ये अत्याचार सहन नही करसकते। इसी कारण जिसकी यह देवताकी समान पूजा और सन्मान करते है, उसको हिंसक और

---

(१) भाट कवियोद्वारा वर्णित संक्षिप्त और सारगर्भित युद्ध विवरणका अनुवाद ही यहापर प्रकाशित हुआ है। स्वदेश, स्वधर्म, अथवा स्वदेशीय राजाओके सन्मान रक्षाके निमित्त रणक्षेत्रमे जीवन विसर्जन करनेसे वीरगण जो परम पुण्यका संचय और श्रेष्ठ पदकी प्राप्ति करते रहते है, उसका स्पष्ट वर्णन इस युद्ध वर्णनकी प्रत्येक पक्तिमें देखा जाता है। किन्तु यह नई नीति नहीं है। इन भाटग्रन्थोंके रचेजानेके बहुत शताब्दी पहिलेसे आये शास्त्रकारोंने कुहकिनी वर्णनकी सहायता से युद्धमे गिरेहुए वीरोंके जिस पुरस्कारके विषयका उल्लेख किया है उसके पाठ करते ही अति निर्जीव मनुष्य भी अपने देशके निमित्त रणक्षेत्रमे प्राण छोड़नेको उत्साहित हो उठता है।

" जितेन लभ्यते लक्ष्मीर्मृतेनापि सुरांगना। क्षणविध्वंसिनि काये का चिन्ता मरणे रणे? "

इस प्रकारके प्रचंड उत्साहसे जो श्लोक लिखेहुए है, उनका पाठ करनेसे स्वदेश, स्वधर्म और स्वजातिकी गौरवगरिमाकी रक्षाके निमित्त कौन नहीं प्रसन्नतापूर्वक रणस्थलमे प्राण छोड़ सकता? क्षणभगुर मानवदेह धारण कर कौन अनन्त और अक्षय स्वर्गसुखका तिरस्कार करसकता है। चाहे जो करसके परन्तु वीररसके चाहनेवाले राजपूत कभी ऐसा नहीं करसकते। यह सब उत्साह बढाने-वाले लोग ही राजपूतोंके रणविलासिताका एक प्रधान उद्बोधक हैं।

निष्ठुर मूर्त्ति धारण करते देख इनके हृदयमे सहस्र वज्रानल प्रज्वलित होजाती है, वह उनकी अग्नि उस दुष्ट राजाके हृदयकी ही अग्निसे शांति होती है। राजपूतोका धर्म-शास्त्र यही वाते स्पष्ट शव्दोंमे अनुमोदन करता है। किन्तु ऐसा होनेसे क्या इसको विद्रोहिता कहाजासकता है। जिसकी देवताके समान पूजा कीजाय, जिसको रक्षक जानकर जीवन और जीवनकी अपेक्षा प्यारी स्वाधीनता और सन्मानको अर्पण किया जाय, वह यदि पत्थरका हृदय करके पिशाच और पाखण्डकी मूर्त्ति धारण कर अपने स्वार्थमे तत्पर हो उस आश्रित मनुष्यके उस श्रेष्ट प्राण मनुष्यके उस अनुग्रह चाहनेवालेके सर्वनाश करनेकी चेष्टा करे तो उस चेष्टाके रोकनेका उद्यम क्या विद्रोह कहाजा-सकता है, ? भासुरक सिहके पंजेसे निर्वल खरहोकी रक्षा कीगई थी तो क्या वह विद्रोह था ! उन निर्वल खरहोके साथ श्रेष्ट प्राणवाले राजभक्त राजपूतोकी तुलना करनेसे इन दोनोंमे अत्यन्त समानता पाईजाती है । राजपूतोने समस्त जीवनके निमित्त सुखकी आशाको छोड़ सगे सम्वन्धी और जन्मभूमिको त्याग औरंगज़ेवके ऊपर समस्त आशा भरोसेका भार रख उसीके कल्याणके कारण प्राणोको न्यौछावर करके उन्होने दूरदेश कावुलको पयान किया था। उनके मनमे दृढ़ विश्वास था कि मुग़ल वादशाह उनके असीम आत्मत्यागका उचित पुरस्कार देगा, उनके मंगलकी ओर दृष्टि रक्खैगा। ऐसा ही विश्वास कर उन्होने दुष्ट मुसल्मानोके बीचमे निर्भयरूपसे प्रवेश किया था और अपने राजपूत रक्तको व्यय करके वे वादशाहके वड़े २ कार्य करनेलगे थे। किन्तु वादशहने उनके कियेहुए उपकारका उन्हे क्या पुरस्कार दिया ? उसने इन महोपकारी विश्वस्त राजपूतोको जो पुरस्कार दिया, उसका विचार करनेसे हृदय सहम उठता है और औरंगज़ेबको एक हिसक कहाजासकता है। औरंगज़ेवने उनके जेठे राजकुमारको कायरकी समान मारकर बूढ़े यशवंतके हृदयमे तीक्ष्ण शूलका प्रहारकिया, उसके विषम आघातसे दूरदेशमे राजाका प्राण भी जातारहा। परन्तु इससे भी औरंगज़ेबकी छाती ठंढी न हुई, अन्तमे महात्मा यशवंतके प्रेतात्माको साधारण जलगंडूष (कुल्ले) से वंचित करनेके निमित्त उसके एकमात्र उत्तराधिकारी वच्चे अजितको भी उसने मारना चाहा। क्या यही राजाका धर्म है? इस प्रकारका नरराक्षस क्या राजा कहलाया जासकता है ? जिस राजाने प्रजाके मुखकी ओर न देखा, जाति वर्ण और धर्म्म भेदसे जिसने भिन्न दृष्टि रखकर शासन किया वह क्या राजाके नामके योग्य है ? हिन्दुस्तान इस प्रकारका राजा कभी नही चाहता, भारतवासी ऐसे अयोग्य राजाको अत्याचारी प्रजापीड़क जान उसके पापी मस्तकमे भीम वज्रका प्रहार करते है और वे इसको विद्रोह नही समझते।

राजपुत्र अजितने राक्षस औरंगज़ेबके हाथसे छुटकारा पाया। सर्दारोने उसको लड्डुओसे भरेहुए टोकरेके भीतर छुपायकर एक विश्वासी मुसल्मानके हाथमे अर्पण किया। वह सत्यपरायण मुसल्मान बड़े यत्नपूर्वक राजकुमारको नियत स्थानपर

लेगया। इसकी सत्यपरायणता और विश्वासका विचार करनेसे इसके पक्षमे बड़ी भक्ति उत्पन्न होती है। उन्ही हिन्दू मुसल्मानोके प्रचण्ड युद्धकालमे जब कि हिन्दू विद्वेषी उस निठुर राजाके राज्यमे थे तब उस समयमे स्वयं मुसल्मान हो जिस मनुष्यने एक हिन्दू राजकुमारके जीवनकी रक्षा की, उस मनुष्यका यह काम साधारण नही कहा जासकता। निश्चय ही उसका हृदय बड़े २ महत् गुणोसे भूपित था। दुःखका विपय है कि भाट कवियोने ऐसे उपकारी वन्धुके नामको प्रकाशित नही किया। जो हो जिस समय वह राजकुमारको लेकर नियत स्थानमे पहुँचा उसके थोड़ी ही देरके उपरांत वीरवर दुर्गदास भी वचेहुए सर्दारोको साथ ले वहां जा पहुँचा। पराक्रमी दुर्गदास अपने अमित भुजवलसे अकेले असंख्य यवनोके वीचस वाहर निकलसका था। उसकी प्रचंड तलवारके भीषण प्रहारसे अनेक यवन सैनिक पृथ्वीपर गिरे थे, वहुतोने उसको दूरसे ही कालमूर्त्ति देख भयसे मार्ग छोड़दिया था। दुर्गदासका सव शरीर क्षत विक्षत और रुधिरसे भराहुआ था। तौ भी वह क्षणभरके निमित्त श्रमित और क्लान्त नही हुआ, क्षणभरके निमित्त भी वह इस वड़े कार्यके करनेमे विचलित न हुआ। विधाताने उसको इस असीम आत्मत्यागका योग्य फल भी भोगने दिया अर्थात् जिस राजकुमारकी वह विवश अवस्थामे इतने श्रमसे रक्षा करसका था उसे वह मारवाड़की गद्दीपर भी बिठला सका था। राजकुमार अजित उसके कियेहुए उन असीम उपकारोको जन्मभरतक न भूलसका और यह वड़े हर्षका विषय था कि एक ओर तौ ओरंगज़ेवने इतना कष्ट दिया, और उसी जातिके एक निर्धनी मुसल्मानसे उसका सम्वन्ध वरावर वना रहा, वह अजितका रक्षक उसकी युवा अवस्था और उसके परंपरा प्राप्त अधिकारको भोगनेतक जीता रहा। उसने यह जानलिया था कि राजालोग उपकार भूलनेवाले नही होते इस कारण वह दरबारमे प्रतिष्ठित हुआ, और काका शब्दके सिवाय अजितने उसको दूसरे शव्दसे नही पुकारा और उसका मान वढ़ानेके लिये जो जागीर उसको दीगई वह अवतक उसके वंशधरोके अधिकारमे है।

राजकुमारको लेकर वीरवर दुर्गदास कुछेक विश्वासी सर्दारोके साथ अर्वुद पहाड़की तराईमे चलागया और वहां एक एकान्त मंदिरमे आश्रय ले उस राजकुमारका वडे यत्नके साथ लालन पालन करनेलगा। उसके उस असीम यत्नसे लालित हो पिताहीन राजकुमार शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी समान दिन २ परिपुष्ट होनेलगा। उसको पाखण्डी औरंगजेबकी विद्वेषाग्निसे वेखटके रखनेके निमित्त दुर्गदास गुप्त वेषसे वास करनेलगा। इस प्रकारसे कुछ समय वीतगया। किन्तु अग्निकी चिनगारी वस्त्रके दामनमे कवतक ढकी रहसकती है। कुछ ही दिनोके वीचमे राजपूतोमे यह अफवाह उड़ी कि यशवतका एक पुत्र जीवित है और वीरवर दुर्गदास तथा कुछेक राजपूत सर्दार उसकी रक्षा करते है। तीव्र दावानलकी समान यह अफ़वाह वहुत शीघ्र राजपूतोमे फैलगई, इस अफवाहके फैलते ही दलके दल राठौरगण राजकुमारके ढूंढ़नेको वाहर निकले, सवसे पहिले वह दुर्गदासको ढूंढने लगे और इधर उधर घूमते २ अन्तमे वे आवू पहाड़की

तराईमे जा पहुँचे। दूनाडाका सर्दार उस समय गुप्तवेशी राजकुमारको धनी कहकर पुकारा करता था, अतएव उसको पहिचान लेनेमे राठौरोंको कुछ भी दिक्कत न हुई। इस प्रकारसे राठौर अपने राजकुमारको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और उसको मारवाड़की गद्दीपर बिठानेके निमित्त दृढ एकताके सूत्रमे बँधकर जातीय बल इकट्ठा करने लगे।

वह शान्तिमय आश्रम शीघ्र ही वीरोंकी निवासभूमि होगया। उस शून्य गुफामे और वृक्षोंकी छायाके नीचे वीर-रसराते राठौरगण भाट और चारण कवियोंद्वारा गाए जातेहुए जातीय गानको सुनकर अत्यन्त उत्साहसे उत्साहित हो राठौर राजकुमारका स्वत्व दृढ़ रखनेका यत्न करनेलगे। इस समय उनको एक प्रचंड जातिका आक्रमण रोकनेके निमित्त युद्धखेतमे जानापड़ा। अति प्राचीन कालमे ईदा नामक एक प्राचीन राजपूतवंश मरुभूमिमे राज्य करता था। ईदा प्रसिद्ध पड़िहार कुलकी एक शाखा है राठौर वीरोंके मारवाड़मे जानेके समयसे वे अपने पुराने राज्यसे दूर होगये थे क्योंकि राठौरवीर चूंडाने मारवाड़के वालुकामय क्षेत्रसे इनके वंशवृक्षको जड़से उखाड़ दियाथा। राज्यहीन पड़िहारगण उसी समयसे हारेहुए सामंतोंकी समान दीनभावमे समय बिताने लगे थे। किन्तु वे क्षणभरके निमित्त भी राज्यके उद्धार करनेको आशाको न छोड़सके थे इस समय अवसर पाकर वे उस आशाके सफल करनेमे कृतकार्य हुए। ईदा वीरोंकी इच्छा शीघ्र ही पूर्ण हुई। अर्थात् थोड़े ही समयके बीचमे प्राचीन मंडोरमे पड़िहार कुलकी राज्यध्वजा फहराने लगी।

पडिहार कुलवाले इस विजयसे अत्यन्त उत्साहित हुए, इस विजयके पाते ही रत्ननामक एक राठौरने जोधपुरके जीतनेकी इच्छा की। जो राठौरवंशी अमरसिंह अपनी चंचलता और प्रचण्ड प्रकृतिके कारण राजसिंहासनसे वंचित हो पिताद्वारा निकाला गया था, और जो बादशाह शाहजहांके मारनेको जाकर स्वयं ही उस सभामे मारा गया था, ऊपर कहाहुआ रत्न उसीका पुत्र था कहाजाता है कि औरंगजेबने ही

---

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड प्रथमभाग अ० ६ पृ ६५ देखो।

(२) रत्न नाम गलत लिखा है, सही नाम रायसिंह है जो राव अमरसिंहका बेटा और महाराज जसवन्तसिंहका भतीजा था।

(३) उदारहृदय शाहजहांने अमरसिंहकी ढीठताको क्षमा करके उसके पुत्र रत्नको नागौर का राज्य देदिया था। यह राज्य उसके कुलमे चार पीढ़ीतक रहा, फिर इन्द्रसिंह राठौर राजाने इसके खान्दानवालोंको वहांसे निकाला। अमरके वंशको नागोरमे फिर बसाकर प्रजावत्सल मुग़लसम्राट्ने जिस माहात्म्यका परिचय दिया था, हिन्दुस्तानमें और किसी विजातीय राजासे वैसी उदारता और सुव्यवहार हुआ है या नहीं टाड्साहबने इस बातको पूर्णरीतिसे मानलिया है कि यदि भारतवर्षमे वृटिश राज्यको अचल रखनेकी इच्छा हो तो इसी प्रकारकी उदारता और महान्था का परिचय देना आवश्यक है। इस विषयमे उन्होंने जो कुछ अपने ग्रन्थमे लिखा है उसका यथार्थ अनुवाद यहा दियाजाता है। मुगल क्या वरन महाराष्ट्रलोग भी जिन दृष्टान्तोंको रखगये है

रत्नको जोधपुर जीतनेके लिये उत्साहित किया था, जो हो रत्नकी चेष्टा फलीभूत न हुई। विश्वासी राठौरसर्दार बालक अजितके स्वत्वकी रक्षा करनेके निमित्त उसके साथ युद्धमे प्रवृत्त हुए। उस युद्धमे रत्नकी हारहुई। उसने भागकर नागौरके किलेमे अपने प्राणोकी रक्षा की। तदनन्तर सर्दारोने ईंदा वंशवालोपर आक्रमण कर उन्है मंडोरसे दूर भगादिया। औरंगज़ेबने जिस अभिप्रायसे रत्नको जोधपुरके जीतनेमे उत्साहित किया था वह सफ्ल न हुआ। इसके पहिले उसने गुप्त वेपसे अपने दुरभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उन सब चेष्टाओको निष्फल होताहुआ देख इसवार वह स्वयं कार्यक्षेत्रमे अवतीर्ण हुआ। एक विशाल सेनाको लेकर उसने

—हमने अबतक उनके अनुकरण करनेका साहस नही किया, इसी कारणसे हमारा प्रतिशोध भयंकर वज्रकी समान दौड़कर शत्रुका हृदय फाडडालता हैं। रुहेले लोगोके विरुद्ध जिसदिन घृणित मैत्री कीगई. उस दिनसे लेकर तबतक कि जबतक हमलोगोने भरतपुरके बीच पिछले संहार कार्य्यकी मध्यस्थता करके कहानीमे कहेहुए गेरकी तरह व्यवहार किया था, वहांतक देखजाओ तो ज्ञात होगा कि कितने सर्दार अपने २ पितृपुरुषोकी सम्पत्तिसे वंचित होगये हैं। हमारी वर्तमान अवस्था ऐसी प्रभुता शालिनी होगई है कि इस समय हमलोग क्षमा शीलताका परिचय देसकते है। ईश्वर न करे यदि राजपूतानेमें हमको इस सद्वृत्तिकी कार्य्यकारितामें आवश्यकता पडे तो यह बहुतायतसे दी जायगी; कारण कि वहाँ इसके मंगलमय प्रभावका विशेप आदर देखाजाता है, और ऐसा होनेपर यह ओसके विन्दुकी समान फिर हमारे शिरपर आकर पड़ेगी। परन्तु यदि हमलोग दिन रात केवल विपत्तिकी शंका करके प्रजाका विश्वास विना किये राजनीति को चलावेगे तो एक समय यह भयंकर प्रतिशोधस्वरूप हमारे मस्तकपर गिरेगा। हमारी आधुनिक शासनरीति विजित लोगोंके अमंगलसे यदि पूर्ण होगई है; ऐसी अवस्थामे यदि किसी क्षणकाल स्थाई पुलिटकल एजंटका मिजाज गरम होजाय, तो उसके द्वारा कदाचित् ऐसा विवाद उत्पन्न होसकता है कि जिससे एक बहुतदिनोंके राज्यके बिगड़जानेकी सम्पूर्ण सम्भावना है। *

---

* इन नोटोमे इतनी बाते अशुद्ध है।

(१) एक तो अमरसिहके बेटेका नाम रत्न नहीं था। रायसिह था मारवाड़के इतिहास और औरंगजेबके इतिहासमें रत्न नहीं लिखा है।

(२) रायसिहके कुलमे यह राज चारपीढी नहीं रहा दोही पीढी मुशकिलसे रहा।

(३) इन्द्रसिह रायसिहका बेटा था। इसने किसके खानदानवालोंको निकाला यह कुछ समझमें नहीं आता। असली बात यह है कि महाराज अजीतसिहने इन्द्रसिह और उसके बेटोको परास्त करदिया था।

(४) रायसिहको जोधपुरका राज्य औरंगजेबने उज्जैनकी लड़ाईके पीछे यशवन्तसिहसे नाराज होकर दिया था। मगर फिर दाराशिकोहके गुजरातमे आकर यशवन्तसिहसे मेल करलेनेसे और रायसिहको तो मौकूफ रक्खा और यशवन्तसिहको मनालिया। रायसिह यसवन्तसिहसे पहले मरगया था, इसलिये अब औरंगजेबने जोधपुरके राज्यका फरमान इन्द्रसिहको लिखदिया था, मगर राठौरोने उसको लड़ाईमे हरादिया जिससे औरगजेब भी नाराज होगया और इन्द्रसिहका जोधपुरमे अमल न रहसका। रत्नका नाम रायसिह वा इन्द्रसिहकी जगह इस पुस्तकमे गलत लिखा है।

मारवाड राज्यपर चढाई की । शीघ्र ही जोधपुर घिरगया,-कोई भी उस आक्रमणको न रोकसका और कोई भी उसके कराल ग्राससे राजधानीका उद्धार न करसका। जोधपुर औरंगज़ेबके अधिकारमे आगया, जोधपुरकी शोभा सौन्दर्य्य आज नाशहो यवनोके पैरोसे दलित हुई । आज यमकी समान यवन सैनिकौने नगरके भीतर घुसकर राठौरकुलके समस्त धनरत्नको हरलिया । शीघ्र ही बड़े २ तीन नगर मेरता, डीडवाना, और रोहत भी, जोधपुरकी दशाको प्राप्त हुए ।

मारवाड़को अपने अधिकारमे करके मुसल्मानोने उसकी दुर्दशाकी सीमा न रक्खी । नगर, गाँव और कसबोको तोड़ फोड़कर जलाडाला । देवमंदिर, स्तंभ आदि गिरादियेगये, और देवमूर्तियाँ टूट २ कर पाखण्डी यवनोके पैरोसे कुचली जानेलगीं । किसीने उस ओरको देखातक भी नही, और न कोई उन पवित्र मूर्तियोके उद्धार करनेमे अग्रसर हुआ । जो कईजन हिम्मतकर उस कार्यके करनेमे साहसी हुए, उनमेसे अधिकोने मुसल्मानोके हाथोसे प्राण गँवाए जो जीवित रहे, दुष्ट यवनोने उनको जाति-भ्रष्टकर बलपूर्वक मुसल्मान बनालिया । मारवाड़देशके घरघरमे अराजकता, प्रजाहत्या, और महामारी भीषणमूर्ति धारण कर भ्रमण करनेलगी । आज समस्त मारवाड़ मानो वीभत्स महास्मशानमे बदल गया, नगरपर नगर, शहरपर शहर, गांवपरगांव, जलाये जाने लगे । कोई भस्म होगया और कोई पृथ्वीमे मिलगया । कही तो धुवाँ और जलतीहुई अग्निकी लपटै मकानोसे बाहर निकलने लगी,कही दो चार मंदिर टूटे फूटे पड़ेहै,और वहीं पर उनके ऊपर मसजिदे बन रहीहै,मदमत्त मुसल्मान पृथ्वीपर गिरीहुई देवप्रतिमाओके मस्तको-पर पिशाचोकी समान पदाघात कररहे है,कहीपर पृथ्वीमे गिरेहुए राजपूत हृदयविदारक स्वरसे आर्तनाद कररहेहै । औरगज़ेब अपने इस पाशवी अत्याचारके कियेहुए वीभत्स चरित्रको देखते २ प्रसन्नतापूर्वक अपने नगरको लौटआया । उसका हृदय क्षणमात्रको भी न कम्पित हुआ । निश्चय ही उसका हृदय पत्थरकी समान कठोर होगया था; नही तो क्या वह इस वीभत्स दृश्यको देखकर क्षणभरको भी कातर न होता ? कातर होना तो दूर रहा वरन उसने उस अत्याचारके दुगुने बढ़ानेका संकल्प कर लिया और समस्त हिन्दूप्रजाके ऊपर कठोर जिजिया कर स्थापनकर उसने अपने पैशाचिक संकल्पको पूर्ण किया । इसी दुःखदायी अत्याचारके समयमे वीरकेसरी राणा राजसिह शिशोदिया राठौरोको मिलाय अत्याचारियोके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमे अवतीर्ण हुआ था, उसी समयमे उसकी क़लमसे ऐसे तेजयुक्त असाधारण पत्र लिखेगये थे, कि जिनका अनुवाद इस ग्रन्थके प्रथमखण्डमे लिखाहुआ है[1] ।

राजपूतोके नाश करनेकी आज्ञा पाय सत्तरहज़ार सेनाके साथ तहव्वरखाँ युद्ध-क्षेत्रमे आया । इसके उपरान्त औरंगजेब स्वयं अजमेर गया मेरतिया सामन्त दलसमेत

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० २२ पृ० ४४६ देखो ।

(२) इस स्थानसे अजितके राज्य प्राप्तिपर्यंत समस्त वृत्तान्त टाड्साहबने भाटग्रन्थमे संग्रह कर उसका अनुवाद लिखा है । यहापर उनका वह अनुवाद ज्योका त्यो लिखागया है । इस प्रकार के अनुवादमे जो मूल ग्रन्थकी सुन्दरता विनष्ट हुई है उसका विदित करना चतुर पाठकोके लिये

इकट्ठे हो उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पुष्करके सामने अग्रसर हुए। भगवान वराहके पवित्र मंदिरके सामने युद्धका आरम्भ हुआ। वहां वीराग्रगण्य चिरजव मेरतीयगणके कराल कृपाणने सहजसे ही असुरोंके मस्तक काटे। इसी युद्धस्थलमें सम्वत् १७३६ के भाद्रमासकी एकादशीको मेरतिया गणोंने प्राण त्याग किये।

तहव्वरखां धीरे २ आगे बढ़नेलगा। मुरधरके निवासी प्राणोंके भयसे पहाड़ोंकी ओर भागनेलगे। यवन सेनापतिकी गति रोकनेके निमित्त रूपा और कूँपानामक दोनो भाई अपनी फौजको ले गुडानामक स्थानमें आये। किन्तु उनकी इच्छा पूर्ण न हुई। पचीस जन भाइयोंके साथ वह रणभूमिमें मारेगये। कालमेघ जिस प्रकार जगत्में जल वरषाते है, औरंगजेबने उसी प्रकार अपनी म्लेच्छ सेनाको देशके ऊपर चलाया। वह अजय दुर्गमें केवल पांचदिन रहा। इसके अनन्तर उसने चित्तौड़की ओर कूँचकिया। उसके चित्तौड़में पहुँचते ही चित्तौड़की अत्यन्त शोचनीय अवस्था होगई, जानपड़ा कि मानो आकाश टूटकर माथेके ऊपर गिरा है। शिशु राजकुमार अजित राणाद्वारा रक्षित हुआ, और राठौरगण शिशोदिया सेनाको आगे चलाकर युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। मुसल्मानोंके बलको अधिक देखकर उन्होंने राजकुमारको एक गुप्तस्थानमें छिपारक्खा। दिल्लीपति देहवाड़ीके समीप आया; इधर कुंभा उग्रसेन और ऊदो आदि राठौरवीर गणोंने उस गिरि मार्गमें खड़े हो उसकी प्रचंड गतिको रोका। उस गिरिमार्गमें होकर औरगजेबने जब उदयपुरपर आक्रमण किया, तब आज़म चित्तौड़में था इसी समय समाचार आया कि दुर्गदासने जालोर राज्यपर आक्रमण किया है। इस समाचारके सुनते ही औरंगज़ेब अजमेरकी ओर लौटा। जाते समय मुकर्रमखांको यह आज्ञा देगया कि वह जालोर युद्धमें बिहारीकी सहायता करे। किन्तु दुर्गदास युद्धका कर इकट्ठा करते २ जोधपुरमें आया। गर्वसे औरंगजेबके मस्तकने आकाशको स्पर्श किया। उसने प्रण करलिया कि देशमें केवल एक ही धर्म्म रक्खूंगा, और वह धर्म मुसल्मानधर्म है इस पाशवी प्रतिज्ञाको वह बहुत कुछ पालन करसका था। राजकुमार अकवर तहव्वरखांके निकट भेजागया। लूटना, मारना, जलाना आदि देशमें सर्वत्र फैलगया। देशशून्य महा-श्मशानकी समान होगया। सभी स्थानोंमें एक घोर विभीषिका विजयके अहकारसे भ्रमण करनेलगी। किन्तु क्या होगा? देवेच्छासे आज भारत सन्तानोंको वह दु:ख भोगनापड़ा है। ईदागणोंने जोधपुरमें अधिकार करलिया। किन्तु कूंपावत् वीरोंने नगी तलवार ले खत्तापुरमें उनके सामने हो उनका नाशकिया। मुरधरदेशाधिपति और

—व्यर्थ है। महात्मा टाड्साहब कहते हैं, "भाटकवियोंने यह सब वर्णन जिस प्रकारके मनोहर शब्दोंमें नियमानुसार किया है उस नियमके विरुद्धाचरण करनेसे ही मूलग्रन्थकी सौन्दर्य्यता और सारवत्ता के भलीप्रकारसे नष्ट होनेकी सम्भावना है। अतएव यहांपर उस ही नियमका अनुसरण करना उचित है।" इस ही कारण यहांपर भी उस ही नियमका अनुसरण हुआ है।

(१) इस स्थान देहवारी जहाँ वे वधहुए थे वहां अवतक वह स्मरणीय लक्ष्य उन योधाओं के दाहिनी ओर द्वारमें प्रवेश करनेके समय दिखाई देता है।

भी एकवार रावकी पदवीसे वंचित हुआ। यद्यपि बादशाहकी इच्छा थी कि परिहारगण मारवाड़के अधिकारी हो परन्तु उसकी यह इच्छा सम्वत् १७३६ के ज्येष्ठमासकी त्रयोदशीको विफल हुई।

अर्वलीपहाड़ने राठौरोको आश्रय दिया। इस दुर्गम और निर्जन प्रदेशसे समय २ मे बाहर हो वे मुसल्मानोको धानकी समान काटते और उनकी लाशोको ढेरके ढेर कर रखते, तथा उनका अन्नधन हर लेते थे। औरंगज़ेवको कुछ भी शान्ति प्राप्त न हुई, और राठौरोका स्वामिधर्म्म दिन २ बढ़नेलगा, वे दिन २ स्वदेशके निमित्त विपुल त्यागस्वीकार करनेलगे। उन्होने दुष्ट औरंगज़ेवके तहसनहस करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की। एक दलने जालौर पर आक्रमणकिया। दूसरा दल सिवानाके आक्रमण पर तत्परहुआ। उस समय औरंगज़ेवने राणासे युद्ध करना छोड़ समस्तसेना मारवाड़को भेजी। वीरकेसरी राणा राजसिंहने अजितको आश्रयदे बादशाहकी क्रोधाग्नि भड़काई थी। इस समय उसने अपने पुत्र भीमके हाथमे शिशोदियासेनाका भार अर्पणकर उसे राठौरोंकी सहायताको भी भेजा। उस समय इन्द्रभान और दुर्गदास राठौर सेनाको लिये गोड़वाड़ामे निवास कररहे थे। शिशोदियावीर भीमसिंह दलसहित वहां पहुंच कर उनके साथ मिलगया। राजकुमार अक़वर और सेनापति तहव्वरखां मुग़लसेनाको लेकर उनके सन्मुख हुए; शीघ्र ही नाडोलनगरमे युद्ध आरम्भहुआ। शिशोदियागण राजपूतसेनाके दक्षिण ओर हुए। बहुत देरतक युद्ध होतारहा, इसमे बहुतसे सैनिक मारेगये, राजकुमार भीम भी युद्धक्षेत्रमे मारागया, राणा भीमकी सेना राठौरोकी प्रचंड दुर्गस्वरूपथी। वीर इन्द्रभान अत्यन्त विस्मयकर वीरता प्रकाशकर ऊदावत जैताके साथ रणस्थलमें पतित हुआ। सोनग और दुर्गदासने भी उस दिन आश्चर्यकर वीरता दिखाई!

वह दिन राजपूतोकी वीरता दिखानेका एक प्रसिद्ध दिन था। उस दिनके बीतते ही राठौरकुलकी गौरवगरिमा भी लोप होगई, एक वार ही गौरवोन्नत मारवाड़ आज हीनदशामे पतित होगया, तौ भी राठौरगण उस दिनकी घटना नही भूलसके और यह भी जानपडता है कि न कभी भूलसकेंगे। जिस दिन वह भूलेगे, उसी दिन राठौरोंका नाम जगत्से लोप होजायगा। उस पवित्र दिनमे राजपूत वीरोने स्वदेशस्वाधीनता और स्वजातीय राजाकी गौरवरक्षाके निमित्त जो अतुल आत्मत्याग जो विपुल वीरता प्रकाश की, उसको देखकर राजकुमार अक़बर भी मोहित होगया था, उसका भी पत्थरसा हृदय पिघल गया था। अपने बलके मदसे मत्तहो दुराकांक्षाकी परितृप्तिके निमित्त उसने राजपूतोको नानाप्रकारसे उत्पीड़ित किया था, इस समय अपने कियेहुए उन समस्त अत्याचारोको विचार २ वह मन ही मन सताप करनेलगा। उसके पिताने इस वीरजातिके ऊपर क्यो ऐसा अत्याचार किया उसको वह न समझसका। वास्तवमे

---

(१) मेवाड़के भाट कवि कहते है कि राठौरोके साथ इस समय मुसल्मानोका और भी एक युद्ध हुआ था, उस युद्धमे राजपूतोने बड़ी बहादुरी और बुद्धिमानीसे जय पाई थी। [राजस्थान-प्रथमखण्ड अ० १२ पृ० ४५५ देखो]।

पराक्रामी राजपूतोकी वीरता देखकर उसके हृदयमे क्षोभ उत्पन्न हुआ होगा, और क्षोभके स्निग्ध रससे उसके हृदयकी कठोरवृत्तियें भी पिघलगई। उसने सेनापति तहव्वरखांसे अपने हृदयका भाव प्रगट करादिया, और पिताकी निठुरताका वर्णन कर दुःख सहित कहा "ऐसे साहसी और विश्वासी सामंतोको मुगलोके स्नेहवन्धनसे अलग कर बादशाहने अच्छा काम नही किया"। उसके दुःखसे तहव्वरखांका भी हृदय पिघल गया, उसने उसके साथ अपनी भी सहानुभूति प्रगट की। तदनन्तर राजकुमार अकबरने दुर्गदासके पास एक दूत भेजकर कहला भेजा कि "राज्यमे शान्तिस्थापन होना चाहिये, अतएव एकवार राजपूतोका मेरे साथ मिलना आवश्यक है।

राठौरवीर दुर्गदासने राठौर सर्दारोको इकट्ठाकर सबके सामने अकबरके इस प्रस्तावको प्रगट किया। किन्तु उस प्रस्तावमे प्रायः सबने ही असम्मति प्रकाश की। किसी २ ने कहा, 'कपटी यवन विश्वासघातकता कर राठौरकुलका सर्वनाश करेगे' किसी २ ने विचारा कि दुर्गदासका ही उससे कुछ अभिप्राय है, नही तो वह संधिके निमित्त इतना आग्रह क्यो करता ? उन सबको इस प्रकारके अनेको सन्देह करते देख तेजस्वी दुर्गदास बोलउठा, "सरदारो ! क्यो तुम वृथा भयभीत होकर नानाप्रकारके संन्देह करते हो ? मनमे भय और सन्देह करना क्या वीरोका काम है ? क्या राठौरोका भुजवल लोप होगया है ? शत्रुपक्षके जब संधिस्थापन करनेको कह कर स्वयं ही मिलना चाहते है तब उनके साथ न मिलनेसे वे हमको डरपोक कहैगे। हृदयमे बल रहतेहुए क्यो हम इस प्रकारके कलंकके भागी होवे ? आओ, हम सब इकट्ठे हो मुसल्मानोके डेरोपर चले, यदि मुसल्मानोके मनमे छल होगा, तो हम सब क्या उनका संहार नही करसकते। क्या कभी सुना है कि मनुष्योने मेघमालाको रोक रक्खा है ?" वीरवर दुर्गदासके तेजोमय और गम्भीर वाक्योंने सर्दारोके हृदयका सब अंधकार दूर करदिया। उन्होने राजकुमार अकबरसे मुलाकात की। एक दूसरेके हृदयका भाव एक दूसरेपर प्रकाशित होगया युक्ति प्रगट करके कर्तव्य स्थिर किया गया। शीघ्र ही संधिबंधनका भी शेष होगया। तत्काल ही दोनो ओरकी सम्मतिसे अकबरके मस्तकके ऊपर राजछत्र शोभितहुआ, उसी दिनके निमित्त सभा भंग हुई। इसके अनन्तर अकबरने अपने नामका सिक्का चलाया तथा राज्यकी सर्वत्र सीमा नियत की। आज अकबर हिन्दोस्तानका बादशाह हुआ, मुग़ल साम्राज्यके श्रेष्ठ सामन्तोने उसको "भारतेश्वर" की उपाधि दी। वंदीजन उसकी कीर्तिका गान करनेलगे। इस संवादने अजमेरसे औरगजेबके कर्णमे वज्रकी समान प्रवेशकर उसके हृदयमे दारुण आघात किया। उसका हृदय व्यथित हुआ। उसको कही भी शांति न प्राप्त हुई, जिधर उसने देखा उधरहीसे मानो नाना विभीषिकाएं आकर उसे भय दिखानेलगी। इसके ऊपर यह भी समाचार आया कि राठौरवीर दुर्गदास अकबरके साथ मिलगया है। औरगजेबकी सब आशाएँ निर्मूल होगई दारुणक्रोध, विषाद और मनो-वेदनासे वह अपनी मूछोके बाल और होठ काटनेलगा। यह सब सम्बाद थोड़े ही दिनोमे समस्त देशमे फैलगया। देशके जिस स्थानपर जितने राठौर थे सब अकबरकी स्वार्थरक्षाके निमित्त

उसकी पताकाके नीचे आ खड़ेहुए। भारतका राज्य आज दो हिस्सोमे वॅटकर दो राजाओका राज्य कहा जानेलगा। अब भगवान्‌की कृपासे मृतप्राय सनातनधर्म पाखण्डी औरंगज़ेबके लोह बंधनसे छूटकर पुनः जीवित हो उठा।

आज औरंगज़ेब बड़ी विषम विपदमे पड़ा है। आज इकट्ठेहुए राजपूतोके क्रोधसे उसका सिंहासन बारम्बार कांपनेलगा; उसके राजमुकुटने पृथ्वीपर गिरनेकी तैयारी की। उसको भय हुआ कि निश्चय ही मै सिंहासनसे उतारा जाऊंगा। क्योंकि वह जिधर देखता उधर ही राजपूतोकी क्रोधाग्नि प्रचण्डतेजसे प्रज्ज्वलितहो उसको जलाती हुई देखपड़ती थी। उसे उससे बचनेका कोई भी उपाय न दिखाई दिया, समीपी बन्धु, बांधव सहायक आदि किसीका भी आसरा न रहा। अतएव उसने समझलिया कि शीघ्रही मुझको गद्दीसे उतरना होगा। किन्तु तौ भी औरंगज़ेब निरुत्साह न हुआ। उसको बन्धु, बान्धव, सहायक, संबल सबने ही छोड़दिया, किन्तु आशा उसको छोड़कर भी न छोड़सकी, उसके हृदयसे उत्साह दूर न हुआ। उस आशा और उत्साहसे उत्साहित हो औरंगज़ेबने विपदसे छुटकारा पानेके निमित्त शठताका अवलम्बन किया और कपट तो उसके जीवनका साथी था, उसको जब संकट पड़ा, तभी उसने शठता और कपटकी सहायतासे उस विपत्तिसे छुटकारा प्राप्त किया,–उसी समय भी उसके दोनो संगियोने दो विशालसेनाकी समान उसकी सहायताकी। आज चतुर मुग़लबादशाह इन्हीं दोनोकी सहायताद्वारा इस विपत्तिसे छुटकारा पागया। यह सब वृत्तान्त मुग़लोके इतिहासमे और मेवाड़ तथा मारवाड़के भाटग्रन्थोमे विस्तारपूर्वक वर्णित है। किन्तु उन सबमे भली प्रकारसे एकता नही पाईजाती, इस कारण हमने भाटग्रन्थोसे ही उक्त वृत्तान्तका अनुवाद किया है।

"अगणित राजपूतोके साथ अकबर अजमेरकी ओर बढ़ा। औरंगज़ेबने समझा कि अब शीघ्र ही पिता पुत्रमे घोरयुद्ध होगा, इस कारण वह भी सावधान होरहा, किन्तु अकबर तहव्वरखांके हाथमे समस्तभार अर्पणकर आप स्त्रियोसे परिवेष्टित हो नृत्य, गानके आनन्दमे समय बितानेलगा। हम भाग्यके सेवक है, हम भाग्यके खिलौने है, भाग्य डोरेमे बांधकर जैसा हमको नचाता है हम नाचते है। अस्तु तहव्वरखां विश्वास-घातकताकी कल्पना करनेलगा। उसके निकट गुप्त समाचार आया कि यदि वह अक़बरको बादशाहके हाथमे अर्पण करसके तो वह बहुत पुरस्कार पावेगा। इस समाचारके ऊपर विश्वासकर उसने रात्रिको गुप्तभावसे बादशाहसे मुलाकात की और उसी स्थानसे राठौरोको लिखभेजा कि, 'आपलोगोके साथ जो अकबरकी संधि हुई थी उसमे मै ग्रन्थिस्वरूप था, किन्तु जिस बॉधने जलका भाग कररक्खा था, वह टूटगया है,–पिता पुत्र फिर मिलकर एक होगये है। हमने परस्परमे जो प्रतिज्ञा की थी उसका पूर्णहोना कठिन है, अतएव मै जानताहूं कि आप अपने देशको लौट जाओगे'। पत्र लिखकर शेष हुआ, विश्वासघातक तहव्वरने उसके ऊपर अपनी मुहरकी और एक विश्वासी दूतद्वारा उसे राठौरोके निकट भेजकर स्वयं पुरस्कारकी आशासे औरंगज़ेबके

निकट आया । किन्तु दुष्टको पाशवी विश्वासघातकताका योग्य फल मिला । वादशाहके सामने वह वात भी न करनेपाया कि वादशाहने स्वयं अपने हाथसे उसकी गर्दन काट डाली, उसकी पापात्माने नरकका आश्रय ग्रहणकिया । इधर अर्द्धरात्रिके समय दूतने राठौरोके डेरेमे जाकर वह पत्र दिया और कहा कि तहव्वर मारागया । डेरोमे वड़ी हाहाकार पड़गई, त्रसित राठौर शीघ्र ही अपने २ घोड़ोपर चढ़ राजकुमार अक़वरके डेरेसे एक कोश दूर जाकर ठहरे । राजकुमारकी सेनामे भी इस वातका समाचार फैलगया । वह भी हवासे गिरेहुए सूखे ईखके पत्तेकी तरह चारोओरको भागनेलगे, किन्तु उस समय भी अक़वरकी मोहनिद्रा न टूटी, उस समय भी वह नचैयो गवैयोसे घिरकर आमोद प्रमोदमे लगारहा " ।

भाट कवि लिखित उपरोक्त वर्णनके पाठ करनेसे राजपूतोकी अनसमझी भली प्रकारसे विदित होती है । राजपूत घटनास्रोतके पक्षमे केवल सामान्य तृण है वे आगा पीछा न विचारकर प्रायः प्रत्येक काममे ही प्रवृत्त होजाते है । दूतसे समाचार पाते ही उनको दृढ़ विश्वास होगया था । यद्यपि अकवर उनके समीप ही ठहराहुआ था तथापि इस वातके जाननेकी उन्होने एकवार भी चेष्टा न की कि यह समाचार सत्य है या मिथ्या । उन्होने जो सुना उसपर विना विचारे ही विश्वास करलिया और उसी ख्याली विचारके वशीभूत हो वे क्षणमात्रमे वहांसे दूसरे स्थानको कूंच करगए । यहांतक कि जवतक दशकोश न निकलगये तवतक घोड़ेकी वाग न ढीली की । किन्तु इस प्रकारके चरित्र राजपूतोके स्वाभाविक चरित्र नही है । विश्वासघाती मुसल्मानोसे वारम्वार ठगे जानेपर उन्होने मुसल्मानोका विश्वास करना ही छोड़दिया । विशेषकर झगड़ा होनेके समय तो वे ऐसे मूढ होजाते है कि किसका विश्वास करना होगा, यह भी नही जानते । यद्यपि वह अक़वरको चाहते थे और उसके स्वार्थ रक्षाके निमित्त उन्होने तलवार भी उठाई थी, तथापि अक़वर मुसल्मान था इस कारण उन्हे यह भी विश्वास था कि यह भी विश्वासघातक होसकता है । वे इसी विश्वासके वशीभूत हो अक़वरके डेरेको छोड़ रातोरात वहांसे चलेगये ।

अव राजकुमार अक़वरकी मोहनिद्रा भंगहुई जव राठौरसेना उसका डेरा छोड़कर चली गई, वह अपनी सेनाको भी भागाहुआ जान कर समझ गया कि मै केवल अपने ही दोषसे विपदग्रस्त हुआ हूं । विश्वासघातक तहव्वरको जो योग्य फल मिला इससे वह सतुष्ट हुआ और उसके प्रेतात्माको सैकड़ो शाप देता हुआ भागीहुई सेनाके खोजमे अग्रसर हुआ । उस समय उसके साथ एक सहस्र मनुष्य भी न थे । वड़ी देरतक घूमनेके उपरान्त राजकुमार भागीहुई सेनाके निकट पहुँचा, ततूपश्चात् वह उसको ले अपने मित्र राजपूतोकी खोज करनेलगा । उसने उनको पाकर अपने और अपने

---

(१) औरंगजेवने खुद तहव्वरखांको नहीं मारा, विश्वासदेकर वुलाया था पर जव वह हथियार बाँधेहुये दर्वारमे जानेलगा तो उसको रोकागया इसपर वह पीछा लौटा और डेरेकी रस्सियों से वाहर निकलते ही ड्योढीदारोंके हाथसे मारागया ।

परिवारको उनके समर्पण करके कहा—? कि यदि आप चाहैंगे तो मुझे मार सकते है और रख भी सकते है। राजपूत यह बात सुनकर उसको न त्यागसके और फिर उसके साथ होगये।

राठौरोने जिस प्रकार शरणमे आयेहुए राजकुमार अक़बरको रक्खा था कवि कर्णीदानने उसका श्रेणीवद्ध वर्णन किया है। जब अक़बरने आश्रयकी प्रार्थना की तब राठौर इस बातका विचार करने लगे कि राजकुमारका सन्मान किस प्रकार करना चाहिये। चांपावत और कूँपावत् पातावत, लाखावत्, कर्णौत डूंगरोत्, मेरतिया वरसिंहोत तथा ऊदावत् और वीदावत् आदि सामंतगण अपने २ पदानुसार मंत्रागारमित बैठे। समय पाकर भाट कवि एक २ करके उन सामन्तोके पितृपुरुषोका गुणानुवाद वर्णन करनेलगे। जिस समय राठौर सर्दारगण यथा योग्य आसन पर बैठगये, उस समय अकबरके सत्कारके विषयमे अनेको तर्क वितर्क होनेलगे। प्रत्येक सर्दारने सारगर्भित और तेजस्विनी वक्तृताद्वारा मुसल्मानोके आचार व्यवहार और अपने २ मन्तव्यको प्रकाशित किया। बहुतसा तर्कवितर्क होनेके उपरान्त सभा भंगहुई। अन्तमे सबकी यही सम्मति हुई कि शरणसे आयेहुए अक़बरकी प्राण रहतेहुए रक्षा की जायगी। चांपावत सम्प्रदायके सर्दारका छोटा भाई जैत अक़बरके कुटुम्बका रक्षक नियत हुआ इस प्रकारसे उस दिन राठौरकुलके जीवन नाट्यका एक वृहत् अंक आरम्भ हुआ। वीरवर दुर्गदास उस अंकका अगुआ हुआ। उसके महत् चरित्र कविके ओजमय वर्णनके प्रभावसे यथार्थ हृदयग्राही हुए है। कविने दुर्गदासकी महिमाका इस प्रकारसे वर्णन किया है कि,—

"जननी सुत ऐसा जने, जैसा दुर्गादास। बांध मुड़ासो राखियो,विनखम्बा आकाश॥"

वीरवर दुर्गदास राजपूतचरित्रका एक अनुपम नमूना था,वह जैसा वीर था वैसा ही चतुर भी था। उसकी असीम वुद्धि और विक्रमके प्रभावसे मारवाड़की भूमिकी ध्वंश होनेसे रक्षा हुई, उसने ही आत्मत्याग स्वीकार कर राजकुमारकी प्राणरक्षा की थी और अंतमे भीषण समरसागरको पार कर असंख्य विषम संकटसे उसका उद्धार किया था। औरंगजेब इस राठौर वीरसे बहुत डरता था, इसके सम्बन्धकी कई एक बाते सुनी जाती है। वे बाते बड़ी ही मनोहर है। उन बातोंमेसे एक बात यहां भी लिखी जाती है। औरगंज़ेबने अपने भीषणशत्रु शिवाजी और दुर्गदासका चित्र लानेकी आज्ञा दी। चित्रकार उन दोनोके चित्र लेकर उसके निकट आया। दोनो चित्र पूर्ण अंगोसे युक्त थे। शिवाजी एक आसन पर बैठाहुआ था और दुर्गदास अपने भालेकी नोकमे एक रोटी छेदकर उसे आँच पर सेक रहा है। उन दोनो प्रचंड शत्रुओका चित्र देखते ही औरंगजेब चिल्लाकर कह उठा "मै इस पहाड़ी चूहेको (शिवाजीको) जालमे बांध सकता हूं, परन्तु यह कुत्ता मेरा कालस्वरूप होकर उत्पन्न हुआ है"।

राजकुमार अक़बरसे मिलकर वीरवर दुर्गदास उस समेत अपनी सेनाको लेकर औरंगजेबके पीछे पड़ा। वह मन ही मन विचारता था कि लूनी नदीके

किनारे पर बादशाह पर आक्रमण करूंगा । परन्तु चतुर औरंगज़ेबने अपना अभिप्राय पूर्ण करनेके निमित्त दूसरा ही यत्न किया अर्थात् वह दुर्गदासको लोभ दिखलाकर उसे वशीभूत करनेकी चेष्टा करनेलगा । उसने सबसे प्रथम उसको आठहजार मुहरे (भाटग्रन्थमे ४० हजार लिखा है) भेज दी । चतुर राजपूत वीरने तत्काल ही उन्है लेकर अकबरको देदिया । दुर्गदासका यह कर्म देखकर यवन राज-कुमार उससे अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ और उसने उस पायेहुए धनका कुछ अंश उसके सर्दारो और और सेनापतियोको बांटादिया । औरगज़ेवकी इच्छा पूरी न हुई । जब उसने देखा कि, राजपूत वीर लोभके वशीभूत न होगा तब उसने अपने विद्रोही पुत्रको लानेके लिये एक सेना भेजी । अकबर अत्यन्त ही भयभीत हुआ । वह समझ गया कि पिताके हाथमे जानेसे अनुग्रह प्राप्त होनेकी आशा नही है। मुझको अपमा-नित होना पड़ेगा और मेरी होनहार उन्नतिका मार्ग सदैवके लिये रुकजायगा। मनमे इस प्रकारका निश्चय होते ही उसने पिताकी रोपाग्निसे दूर रहनेका विचार किया उसको भयभीत देखकर दुर्गदासने कहा कि–"आपके जीवन मरणका मै उत्तरदाता हूं विना मुझको मारे बादशाह आपका वध नही कर सकता" । राजपूत वीरने केवल प्रतिज्ञा ही न की वरन जिस प्रकार वह प्रतिज्ञा पूरी हो यही यत्न करनेमे तत्पर हुआ । जेठे भाई सोनगदेवके हाथमे शिशु राजकुमारका रक्षणभार अर्पण कर आप एक सेनाके साथ दक्षिणकी ओर चला । जो प्रसिद्ध राजपूत वीर राजकुमार अकबरके शरीररक्षक होकर युद्धके निमित्त गये थे कवि कर्णीदानने उनका नाम लिखकर उनकी असीम कीर्तिका वर्णन किया है । इन सब राजपूतोमे चॉपावतो ही की संख्या अधिक थी । इसके अतिरिक्त जोधा और मैरतिया आदि देशी तथा यदु, चौहान, भाटी, देवड़ा, सोनगरा और मांगलिया आदि विदेशीय सर्दार दुर्गदासके साथ गए थे।

बादशाहने उनका पीछा किया। उसकी सेनाने राठौरोको चारो ओरसे घेर लिया, किन्तु दुर्गदासने एक सहस्र सैनिकोके साथ उसके पीछे २ आकर उत्तर दिशाको त्याग किया, और पक्षीकी समान शीघ्रतापूर्वक उसके डेरेको छोड़ गया। औरंगजेब उसका पीछा करते करते झालोरमे आया, उस नगरमे आते ही वह समझ गया कि इतने दिनतक मुझे भ्रम हुआ है, दुर्गदास झालोरकी ओर नही गया, वरन गुजरातकी दक्षिण ओर और चम्बलकी बाई ओर राज कुमार समेत नर्मदा तीर पर जा-पहुँचा है। उसके क्रोधकी सीमा न रही, वह दारुण क्रोधसे अधीर होकर धर्म कर्म सब भूल गया यहॉतक कि उसने कुरानतक उठा कर फेंक दिया । अनन्तर उसने आज़मको आज्ञा दी कि "उदयपुरके जीतने व अन्य किसी अभिप्रायसे मै वहॉ रहूंगा, तुम सबसे पहिले राठौरोको निर्मूल कर अपने दुराचारी भाईको बंदी करो" । वायु जैसे प्रकाशके रोकनेवाले मेघोको छिन्न भिन्न कर देता है उसी प्रकार कमधज

---

(१) किसका जेठा भाई ? नाम नहीं लिखा। यदि दुर्गदासका जेठा भाई समझा जाय तो सोनग दुर्गदासका जेठा भाई नहीं था क्योंकि सोनग चांपावत था और दुर्गदास करणोत।

(जो पदवी राठौरकी थी) वीरानुष्ठानने मेवाड़के समस्त क्लेश दूर कर दिये। बादशाह अजमेर पहुँचनेके दसदिन उपरान्त ही जोधपुर और अजमेरमे सेना रख स्वयं आगेको बढा दुर्गा नामकी महिमाके प्रभावसे सैकड़ो शत्रु खेत छोड़ गये। दुर्गा स्वयं वासुकि और अकबर मंदरगिरि था; इन दोनोने एक दूसरेकी सहायतासे औरंगज़ेब रूपी सागरको मथन कर उससे १४ रत्न निकाले। इन १४ रत्नोमे हम लक्ष्मी और धन्वन्तरी-रूप धर्मको प्राप्त हुए।

खीची वंशीय शिवसिह और मुकुन्दकी अपेक्षा और कौन अधिक विश्वासी होगा? जबतक शिशु राजकुमार अजित आबू पहाड़की कन्दराओमे छिपा हुआ था तबतक उन्होने एक क्षणके निमित्त भी उसका संग न छोड़ा। दुर्गदासने केवल इन दोनो जनोकी और विश्वस्त सोनगरा सर्दारके छिपे रहनेकी बात कही थी। मारवाड़के समस्त सामन्त जानते थे कि वह कही छिपे हुए थे परन्तु कहां और किसके आश्रयमे थे यह किसीको भी ज्ञात न था। किसीने विचारा था कि वह जैसलमेरमे है किसीने सोचा था कि वह विक्रमपुरमे है और किसीने निश्चय किया था कि वह सिरोहीमे छिपे है। राठौर सामन्त अत्यन्त ही प्रशंसाके पात्र है क्योकि यथार्थ वीरोके समान ही उन्होने बनवास व्रत लिया था। उनकी नाड़ियोने मारवाड़के गौरवकी रक्षा की थी। उनकी वीरतासे मोहित होकर राजा, राव और राना आदिने मुक्तकंठसे उनकी प्रशंसा की थी। उस प्रचंड आक्रमणमे मुसल्मानोके पैशाचिक अत्याचारसे सभी ध्वंश होगया था, मारवाड़-के नौ सहस्र और मेवाड़के दश सहस्र नगरोमे मनुष्य न रहे थे। सभी शून्य वीभत्स श्मशानकी समान होगये थे, उसी वीभत्स श्मशानके ऊपर विचरण कर इनायतखांने दश सहस्र सेनाके साथ जोधपुरमे प्रवेश किया, और वह उसकी रक्षा करनेके निमित्त वही रहनेलगा। परन्तु चांपावत सर्दार मरुभूमिमे मेरुकी समान अटल और दुर्गदासका भाई सोनगरा निर्भय और दृढ़प्रतिज्ञ रहा। यवनग्राससे जोधपुर उद्धार करनेके निमित्त आज राजपूत वीर भयानक कार्य क्षेत्रमे अवतीर्ण हुए। कर्णोत क्षेमकर्ण, जोधावंशीय सबल, महेचा विजयमल, सूजावत जैतमाल, कर्णोत केसरी और जोधावंशीय शिवदान तथा भीम नामक दोनो भाइयोने अपनी २ सेनाएँ एकत्रित की, और जब उन्होने सुना कि यवनराज अजमेरके चारकोस दूरपर आ उपस्थित हुआ है, उसी समय जोधपुरमे इनायतखांको रोक रक्खा। किन्तु शीघ्र ही बीस सहस्र मुग़ल सैनिक उसके उद्धारके निमित्त वहां आये। जोधपुरके द्वारपर और एक भयानक युद्ध हुआ। उसमे यदुवशी केसरी और अनेक राजपूत सर्दार मारे गये। युद्धमे मारेजानेसे पहिले उन्होने सैकड़ों शत्रुओको मारा था।

यह भयानक युद्ध विक्रम सम्वत् १७३७ आषाढ़ वदी ७ के दिन हुआ था। शूरवीर सोनगने अपनी प्रचण्ड तलवार और आग्नेयास्त्र चारो ओर चलाये औरंगज़ेब आगेको भी न बढ़ सका और न पीछेको हट सका, परन्तु एक स्थानमे खड़ा रहा। छछूंदर पर आक्रमण करके सांप जिस प्रकार विषके भयसे न तो उसको

---

(१) सोनग दुर्गदासका भाई नहीं था।

निगल सकता है, और न अन्धे होनेके डरसे उसको त्याग सकता है, उसी प्रकार औरंगज़ेब की अवस्था राठौरो पर आक्रमण करके हुई हरनाथ और कान्हसिह (कान्हा-शंकर) सोजतकी ओर अग्रसर हुए और गवादि पशुओको लेकर दूर कर आये। अनन्तर एक भयानक युद्ध आरम्भ हुआ, इस युद्धमे मुसल्मानोका सेनापति मारा गया, किन्तु हरनाथ और कर्ण तथा उनके अनेक जातीय कुटुम्बवालोने अपने२ हृदयका रुधिर देकर समरभूमिको गीला किया। इस युद्धका अन्त सम्वत् १७३८ के प्रारम्भमे हुआ था। इस भयानक विप्लवकालमे तलवार और महामारीने एकत्रित हो राज्यको शून्य करदिया था।

वीर सोनग इस भयानक समरक्षेत्रमे भीमाकार रुद्रकी समान विचरण करने लगा, उसके वीरानुष्ठानसे दिल्ली और आगरा वारंवार कम्पित होने लगे, वह वीर औरंगज़ेबको दुर्बल शशाकी समान देखता था। यवनराजने उसके निकट दूत भेजा। उसके दूत भेजनेका अभिप्राय संधिप्रार्थना और शान्तिकामना थी। उसने राजकुमार अजितको सातहज़ारी पदकी पदवी दी और उसके सजातीय भाइयोको अजमेर देकर सोनगको वहॉका अधिकारी नियुक्त किया। उसने संधिपत्रमें यह भी लिख दिया था कि—"मै ईश्वरको साक्षी करके इस संधिपत्र पर मुहर करता हूँ कि इसके विरुद्ध कदापि न होगा"। उस संधिपत्रको लेकर दीवान असदखॉ मध्यस्थ होकर वहॉ आया। उसने वहॉपर शपथ करके कहा कि इस संधिपत्रके अक्षर २ का प्रतिपालन होगा। संधिबंधन शेष होगया, किन्तु औरंगजेब एक क्षणके निमित्त भी न भूल सका, अक्बरकी चिन्ता सैकड़ो विषैले सर्पोकी समान उसके हृदयको डसने लगी। अन्तमे उसने दक्षिणकी ओरको यात्रा की। असदखॉ अजमेरमे और सोनग मेरता नगरमे निवास करने लगे, किन्तु सोनग औरगज़ेबका कंटक था। उसने उस कंटकको दूर करनेके लिये ब्राह्मणको धन प्रदान किया ब्राह्मण मारण मंत्रसे दीक्षित हो सोनगको सूर्यमंडल भेजनेके लिये होमकुंडमे औषधिये और कालीमिरच डालने लगा। होमका अन्त हुआ, संधिबंधनके कुछ ही दिनोके उपरान्त मारण मंत्रके प्रभावसे सोनगकी (प्रसिद्धिमे यह मृत्यु जादूसे बतलाते है पर अनुमान है कि उसे विष दिया गया) प्राणवायु शरीरसे बाहर होगई। (६ वी आश्विन १७३८)

असदखांने औरंगज़ेबके निकट इस समाचारको भेजा। उसका कंटक दूर हुआ। आज वह निश्चित हुआ, वह निश्चित हृदयसे संधिपत्रके विरुद्ध होगया और प्रसन्नता पूर्वक दक्षिणकी ओर बढ़ने लगा। सोनगकी मृत्युसे देशमे अन्धकार छागया। मेरतिया

---

(१) भीषण विशूचिकाके आक्रमणसे इस महामारीका प्रादुर्भाव हुआ था। इससे प्रथम मेवाडके इतिहासमे हमने वर्णन किया है कि राणा राजसिहके राजत्वकालमे सन् १६६१ ई०मे मेवाडभूमि इस प्रकारके भयानक महामारीके आक्रमणसे उजाड़ होगई थी। इस समय मारवाड़के इतिहासमें जो महामारीका वर्णन किया गया है इससे २० वर्ष पहले भी मेवाडमे उक्त सर्व-नाश हुआ था।

कल्याणका पुत्र मुकंदसिंह अपनी उपाधि (पदवी) को त्यागकर मातृभूमिके कल्याणसाधनमें दृढ़ प्रतिज्ञ हुआ। मेरताके निकट असदखाँकी सेनासे एक घोर युद्ध हुआ। विट्ठलदासका पुत्र अजवसिंह[1] सेनाके अग्रभागमें युद्ध करते २ अनेक वीरोंके साथ रणभूमिमें मारा गया। इससे मुसल्मान अत्यन्त प्रसन्न हुए, किन्तु प्रभुभक्त राजपूतोंको दुःखकी सीमा न रही।

यह घनघोर संग्राम सम्वत् १७३८ कार्तिक शुक्ल २ को हुआ था। राजकुमार आज़म असदखाँके साथ रहा, इनायत जोधपुरमें रहने लगा और उसकी सेना देशके चारों ओर फैल गई, आज भी उनकी कबरें इधर उधर दिखाई दे रही हैं। चंडावलका स्वामी कूंपावत् शम्भु, बख़शी उदयसिंह और दुर्गादासके पुत्र तेजसिंह (जिसे महादेव की भुजा कहते थे) के साथ राठौर सेना ले रणस्थलमें पहुँचा। इसी समयमें फतहसिंह और रामसिंह यवन राजकुमार अक़बरको दक्षिणमें रख आप स्वयं कूंपावत्की सहायताको आये। इनके अतिरिक्त और भी वहुतसे निर्भय राजपूत वीर उनके झंडाके नीचे आ इकट्ठे हुए। यह देशके चारों ओर, यहाँ तक कि मेवाड़तक फैल गये और उन्होंने पुर मांडल[2] नगरको ध्वंश कर वहाँके हाकिम क़ासिमखाँको मारडाला।

इन भीषण और वारंवारके युद्धोंसे निर्भय राठौरोंकी पराक्रमाग्नि अत्यन्त प्रचंडतासे क्षुभित हो उठी और यवन सेना अधिकतर क्षीण होगई थी। किन्तु मारवाड़के वीरकुल प्रायः निर्मूल होनेपर आगये थे। उस समय राठौरोंको पुनर्वार पहाड़ोंका आश्रय लेना पड़ा। उन दुर्गम पहाड़ियोंकी कन्दराओंके भीतर रहकर वे सुअवसर देख रहे थे, और समय २ पर शत्रुओंके ऊपर आक्रमण करके उन्हें छिन्न भिन्न करदेते थे। इसी प्रकारसे कई एक महीने वीत गये तव उन्होंने जेतारनमें स्थित सेनाके ऊपर आक्रमण करके उन्हें दलित, वित्रासित और ताड़ित करदिया, और फिर तत्काल ही उन्हीं कन्दराओंमें जाछिपे। इसी प्रकारसे सम्वत् १७३९ विक्रमीमें राठौरोंने फिर जोर पकड़ा। इसी समयमें सोजतका दुर्ग चांपावत वंशीय विजयसिंह द्वारा विध्वंश हुआ और ठीक इसी समयमें योधावताकी सेना लेकर रामसिंह उत्तर प्रदेशके युद्धमें लिप्त रहा। इस समय मिर्जातूर अलीनामक एक मुसल्मान चेराईका हाकिम था, राठौर

---

(१) यह अजवसिंह सोनगका भाई था और सोनगके पीछे राठौरोंने इसको अपनी सेनाका सेनापति बनाया था।

(२) पुरमाडल, दो भिन्न २ स्थान है। इन दोनोंका नाम पुर और माडल है। यह दोनों ही मेवाड़के अन्तर्गत है। पुर मेवाड़का एक प्राचीन नगर है। कहा जाता है कि यह विक्रमादित्यके प्रथमसे ही प्रतिष्ठित है। यह दोनों नगर देखनेमें अत्यन्त सुन्दर है और इन दोनों ही स्थानसे जहाँ तहाँ चाँदीकी सामग्री गडी हुई पाई जाती है। पुर नगरकी अपेक्षा माडल देखनेमें अत्यन्त ही रमणीय है। माडल मेवाड़के अन्तर्गत एक छोटा सा द्वीप है। यह चारोंओर बड़े २ बांधोंसे घिरा हुआ है, उसके ऊपर नानाप्रकारके फल फूल है। निठुर मरहठोंके अत्याचारसे माडलद्वीपकी शोभा बहुत ही न्यून होगई है। मांडलमें एक प्राचीन जय स्थंभ देखा जाता है। अजमेराधिपतिने महाराज विशाल देवको जीतकर यह जयस्तम्भ बनवाया था।

वीरोने उदयभान योधावत्‌को सेनासमेत लेकर आक्रमण किया। तीन घंटे तक बडा ही घनघोर संग्राम हुआ, रणभूमिमे हज़ारो मुसल्मानोकी लाशोका ढेर लगगया।

जिस जेतारण युद्धमे चांपावत् उदयसिह और मेरतिया मुहकमसिहने राठौर सेनाको रणस्थलमे भेजा था, उसके लौटते ही दोनो वीर गुजरातकी ओर रवाना हुए। खैराल् नगरमे पहुँचते ही गुजरातके हाकिम सैयदमुहम्मदने उनको रत्नपुरकी पहाड़ियोमे घेर लिया। वह सारीरात अस्त्र शस्त्र लिये खड़े रहे। प्रातःकाल होते ही दोनो ओरसे युद्ध आरम्भ हुआ। कर्ण केसरी और भाटी गोकुलदास दीवानी विभागके समस्त कर्म्मचारियो समेत युद्धभूमिमे मारे गये। और रामसिहने भी उसी दिन यहाँपर प्राण त्यागे, किन्तु अगणित सेना और सामन्तोके मारे जाने पर भी अन्तमे मुसल्मानोंकी पराजय हुई। इसी साल भादोके महीनेमे पाली नगर पर मुसल्मानो ने आक्रमण किया। तब नूरअलीके साथ युद्ध आरम्भ हुआ। तीनसौ राठौरोने पांचसौ मुसल्मानोसे युद्ध करके उनको पराजित किया, उनका सेनापति अफ़ज़लखॉ घनघोर संग्रामके उपरान्त रणक्षेत्रमे मारा गया। जिस राठौर वीरने इस युद्धमे मुसल्मानोको पराजित किया था उसका नाम वल्लू था, इसके उपरान्त उदय-सिहने सोजतपर आक्रमण किया। जेतारण फिर नवीन बलसे बलवान हुआ। वैशाखमे मेड़तिया मोकमसिहने मेरतामे रहीहुई मुसल्मान सेनापर आक्रमण किया और सैयदअलीको मारकर मुसल्मानोको दूर भगादिया।

इस प्रकारके अविश्रांत युद्ध और नरहत्याके साथ सम्वत् १७३९ भी अनन्त कालसागरमे लीन होगया। कालचक्रका एक चक्र पूरा हुआ, किन्तु इसके साथ राठौरोका अदृष्ट चक्र अनेक बार अनेको ओरको परिवर्त्तित हुआ। इस दीर्घकाल व्यापी युद्धमे राजपूत और यवनोका वहुतसा रुधिर व्यय हुआ, अनेक राठौर वीरोने स्वदेश रक्षाके निमित्त युद्धभूमिमे प्रसन्नतापूर्वक प्राण न्यौछावर कर दिये। किन्तु वह यथाशक्ति चेष्टा करनेपर भी मुसल्मानोको निर्मूल न करसके। राठौरोके अमित भुजविक्रमसे सैकड़ो मुसल्मान मरने लगे, परन्तु फिर उनके रक्तबिन्दुसे मानो हज़ारो मुसल्मान उत्पन्न हो हो मुग़लसेनाको दृढ़ करने लगे किन्तु राजपूतोकी ओर जिन वीरोने प्राण त्याग किया, उनकी पूर्ति फिर किसी प्रकारसे भी न हो सकी, उनके अभावसे राठौर वंशकी जो हानि हुई उस हानिको कोई भी पूरा न कर सका। हिन्दू मुलल्मानोके इस भयानक संग्राममे राजस्थानके प्रायः सभी राजपूत राठौरोके साथ मिलगये थे, परन्तु जो इतने दिनोतक उनके साथ न मिले थे वे भी धीरे २ मिलने लगे। सम्वत १७३९ के अन्तमे जैसलमेरके भाटियोने राठौरोका साथ दे उनका सन्मान व गौरव स्थित रखनेके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक अपने हृदयके रुधिरसे रणभूमिको गीला किया था।

---

(१) जिन कुछेक राजपूत वीरोने वीरवर दुर्गादासके साथ जाकर राजकुमार अकबरको औरंगजेबकी रोषाग्निसे बचाया था। रामसिह उनमेका एक दूसरा सर्दार है।

देखते २ नवीन वर्ष सम्वत् १७४० का आगमन हुआ, उसके साथ ही साथ मुसल्मानोका उत्साह नवीन हो उठा। वे नये २ जय प्राप्त होनेके यत्न करने लगे। आजम और असदखॉ दक्षिणमे औरंगज़ेवसे जा मिले और इनायतखॉ अज़मेरका हाकिम नियत होकर वही रहा। उस समय उसको यह आज्ञा दी गई थी कि राठौरोके साथ वरावर युद्ध होता रहे यहॉतक कि वर्षाकाल आनेपर भी युद्ध वद न हो। इसी आज्ञानुसार इनायतखॉ युद्धमे तत्पर हुआ। मारवाड़के समस्त नगर और ग्राम मुसल्मानोके अधिकारमे थे यवनोके भारसे मारवाड़ थरथर कॉपता था, जिस ओर देखो उसी ओर अनगिन्ते यवनोकी भीषण भृकुटी मानो अनेको विभीषिऍ दिखाती थी। इस विपुल यवन वलके विरुद्ध तलवार लेकर कुछेक राजपूत वीर किस प्रकारसे समरभूमिमे जा सकते है? अतएव देख सुनकर भी वे मेरवाड़ाको एक रक्षित स्थान जान उसीमे आश्रय ग्रहण करने लगे। देखते २ राठौर गण अपने २ कुटुम्वियो समेत उस मेरवाड़ाकी दुर्गम पहाड़ियोके भीतर एकत्रित हुए। इस निविड़ पर्वतश्रेणोके वीचमें छिपे रहकर वे सुविधा पाते ही यवनोके ऊपर आक्रमण करते और नगर व गॉवोको लूटकर पुनर्वार उसीमे प्रवेश करजाते। वे मुसल्मानोके असीम अत्याचारका वदला लेनेके लिये किसी भी सुअवसरको हाथसे न जाने देते थे। इस प्रकारसे पाली सोजत और गोड़वार आदि कई एक नगर और गॉव राठौरोसे दलित हुए। प्राचीन मंडोर नगर ख्वाजह शालहनामक एक मुसल्मान सेनापतिके अधिकारमे था, परन्तु भाटियोने उसपर आक्रमण करके उसे वहॉसे निकाल दिया। वैशाख महीनेमे वगड़ी नामक स्थानमे एक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमे रामसिह और सामंतसिह नामक दो भाटी सर्दारोने हज़ार मुसल्मानोको मारकर दोसौ सैनिकोके साथ समर भूमिमें प्राण त्यागकिये। इधर अनूपसिहनामक एक सर्दार कमरसोत और कूंपावतो को ले लूनीके किनारेवाले मुसल्मानोका संहार करने लगा। उसके असीम पराक्रमसे उस्तरां और गांगाणी नामक दो दुर्गोंसे मुसल्मान भाग गये। मोकमसिह अपनी मेड़तिया सेनाके साथ अपनी प्राचीन पितृभूमिमे आकर मुसल्मानोपर आक्रमण कर २ उनको दलित और त्रसित करने लगा। उसके आक्रमणोसे दुःखित होकर यवनसेनापति मुहम्मद अलीने दल सहित उसपर आक्रमण किया। तेजस्वी राठौर गण उस आक्रमणसे कुछ भी भयभीत न हो उससे युद्ध करनेपर कटिवद्ध हुए। उनके अमित पराक्रम और साहसको देखकर यवनसेनापतिने भयभीत हो युद्ध रोक रखनेका अनुरोध किया। सरल हृदय राजपूत उसके अनुरोधको अस्वीकार न करसके। किन्तु वह कुछ न समझ कर कपटीके कपटजालमे जड़ित हुए। संधिवंधन दोनो ही ओरसे एक समान हुआ। तत्पश्चात् दुष्ट यवनोने मेड़तियॉ सम्प्रदायके सेनापतिको विश्वासघातकता करके गुप्तभावसे मारडाला।

यवनोकी विश्वासघातकतासे राठौरोकी क्रोधाग्नि द्विगुणित प्रज्वलित हो उठी, वे अपना वदला लेनेके लिये मुसल्मानोपर जहॉ तहॉ आक्रमण करने लगे। हिन्दू मुस-

लमानोका विग्रह धीरे २ और भी वढ़ उठा। सम्वत् १७४१ के प्रारम्भमे युद्ध विग्रह और विभीपिकाकी कुछ भी शांति न हुई । सुजानसिह राठौर सेनाको ले दक्षिणकी ओर गया, इधर लाखा चांपावत और केशर कूपावत् भाटी और चौहानसेनाकी सहायतासे जोधपुरमे रही हुई मुसलमानसेनाको निरंतर भय दिखाने लगे। सुजनसिहके मारे जाने पर भाट कविने सेनापति संग्रामके निकट जाकर विनीतभावसे निवेदन किया कि आप अपने जातिवाले भ्रातृदलमे संयुक्त होकर यवनोको पराजित करो ।

सग्राम उस समय मंसव पदपर अभिषिक्त हो कुछेक भूमिसम्पत्तिका भोग करता था। वह कविकी प्रार्थनाको अस्वीकार न कर सका, शीघ्र ही राठौरसेना उसक झंडेके नीचे आ पहुँची। उसने शिवाणची पर आक्रमण कर वह नगर और वालातरा तथा पचभद्राको लूट लिया । इधर नगरमे मुसलमानसेना रुकी हुई थी, इस कारण वह राठौरोके सामने न आ सकी । सूर्य्यअस्त होनेके एक घंटा पहिले मरुस्थलीके समस्त द्वार वंद होगयेथे। यद्यपि दुर्ग असुरोहीके हाथमे रहे परन्तु आवादियो मे अजितका ही जयनाद; हुआ । वीर उदयभान अपनी योधावत् सेनाके साथ भाद्राजूनके सामने आ पहुँचा और उसने शत्रुपर आक्रमण कर उनके धन दौलत वा रसद आदिकी सामग्री लूट ली । जोधपुरमे रहेहुए मुसलमान सैनिकोने अपने उस धन आदि पर अधिकार करनेके लिये पुनर्वार चेष्टा की तथापि जोधावतोको जयके ऊपर जय प्राप्त हुई ।

पुरदिलखांने सिवाना और नाहरखांने मेवात तथा कुनारी पर अधिकार करलिया था। उनपर आक्रमण करनेके लिये चांपावत् दल मुकुलसरनामक स्थानमे इकट्ठा हुए। उसी समय समाचार आया कि नूरअली खानदान अशानीकी दो स्त्रियोको वलपूर्वक हर लेगया है। इस समाचारके सुनते ही राठौरोको और भी क्रोध हो आया। शीघ्र ही रत्नसिह राठौर सेनाको लेकर युद्ध क्षेत्रमे पहुँचा। उसने कुनारीपर पहुँचकर पुरदिलखांपर आक्रमण किया। अभागा मुसल्मान सेनापति उसके आक्रमणको न रोक सका और ६०० सैनिकोके साथ रणभूमिमे मारागया। उस दिन चैत्रमासकी नवमीको राठोरोके केवल १०० मनुष्य मारे गये । यह हारनेकी वात सुनकर मिरजा, आशानीकी दोनो स्त्रियोंको ले अति भयभीत हो तोदादा गांवकी ओर गया। तदनन्तर उसने कुकोचालमे पहुँचकर डेरा डाला। यह समाचार आसकर्णके पुत्र सवलसिहके

---

(१) संग्रामसिह किस खानदानमें पैदा हुआ था, और कैसे उच्चपद अभिषिक्त हुआ था, हम इसको प्रमाणित करनेसे असमर्थ है। तथापि इसके हृदयकी उदारतासे जाना जाता है कि इसने किसी वड़े वशको उज्ज्वल किया था। *

(२) सिवाना इसका प्रधान नगर है ।

---

* संग्रामसिह जुझारसिहका वेटा था। और वादशाही नौकर था। मगर नौकरी छोड़कर राठौरोंके दु खमें शामिल होगया था। (प्रे० टी)

कानमे पहुँचा । वैसे ही वह अफीम खाकर यवनसेनापतिके विरुद्ध दौड़ा । यद्यपि मिरज़ाके यहां बड़े २ वीर थे तथापि सवलसिहकी तीक्ष्ण तलवारने उसके हृदय श्रोणित को पानकर लिया । किन्तु भाटी सर्दार खण्ड खण्ड हो उसी स्थानपर मारा गया । रुधिरके कीचसे मार्ग निकलना कठिन होगया, और मुसल्मानोके एक २ थाने उनके हाथसे निकल गये ।

देखते २ सम्वत् १७४१ भी वीत गया तौ भी हिन्दू मुसल्मानोके घोर संग्रामका अन्त न आया । इसके उपरान्त सम्वत् १७४२ के आरम्भमे लाक्षावतो और आशा-वतोने सांभरमे आकर मुसल्मानोके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी की । इधर दूसरे सांमत भी गोड़वारसे वाहर हो अजमेरके सिहद्वार तक मुसल्मानो पर आक्रमण करते चले आये । इन सव साधारण युद्धोसे राठौर वीरोकी क्रोधाग्नि शांत न हुई । अन्तमे उन्होने मेरताक्षेत्रमे इकट्ठे होकर यवनसेना पर आक्रमण किया । किन्तु उस युद्धमे मुसल्मानोने विजयी होकर राठौरसेनाको छिन्न भिन्न करदिया । इस पराजयसे संग्राम-सिहकी क्रोधाग्नि और भी भड़क उठी । वह उनसे अपना बदला लेनेके लिये अत्यन्त आतुर हुआ । उसने सेना समेत जोधपुरके आसपासके गांवोमे जाकर उनको जला दिया । तदनन्तर दूवाड़ानामक नगरमे पहुँच कर उसने अपनी सेना इकट्ठी की । उसके विकट उत्साहसे राठौरसेना उत्साहित हो गगनभेदी शव्द करने लगी । उसने शीघ्र ही जालौर पर आक्रमण किया । उस समय वहॉके हाकिमको विवश होकर वह नगर छोड़ना पड़ता, परंतु उस अवस्थामे उसपर किसीने भी अधर्म्माचरण नही किया । इस प्रकार १७४२ सम्वत् भी अनन्त कालसागरमे लीन होगया ।

---

(१) कर्नल टाड्साहबका विचार है कि जब एक जन भाटीवीरने अपने इस कठोर अपमान का बदला लिया था । तब जानपड़ता है कि आशानी भटी खान्दानकी एक शाखा होगी ।

आठवां अध्याय ८.

शिशुराजकुमार अजितके देखनेके लिये सर्दारोंकी प्रार्थना, राठौरोंके साथ कोटाके दुर्जनशाल का मेल, आबूकी ओर उनका बढना, सर्दारोंसे अजितकी मुलाकात, सर्दारोंके साथ अजितका स्थान प्रतिस्थानमें घूमना, औरंगज़ेबका भयभीत होना; उसकी सहायताके लिये और भी कईएक राजाओंका आना, एकत्र हुए राठौरों और हाड़ाओंके प्रभावसे मारवाडसे मुगलोंकी सेनाको दूर करना, पुरमांडलमें विप्लव, हाडा राजाका मारा जाना, दक्षिणावर्त्तसे दुर्गदासका आना, उसके हाथसे सफीखाँकी हार, सफीखाँका अजितको धोखा देनेकी चेष्टा करना; उसकी अकृतकार्यता और अपमान, मेवाड़के राजकुमार अमरसिंहका विद्रोह; राठौर पर रानाकी अनुकूलता, अकबरकी दुहिताके लिये औरंगज़ेबकी संधिप्रार्थना; पहाड़ोंमे अजितका पुनर्वार आश्रय ग्रहण करना, विजयपुरका कांड, राठौरोंकी विजय, अपनी पौत्रीके लिये औरंगजेबकी आशंका, रानाके चाचाकी लड़कीके साथ अजितका व्याह; युद्ध रोकनेके लिये पुनर्वार उद्योग, राजकुमारीका प्रत्यर्पण, राठौरोंका जोधपुरमे पुनर्वार अधिकार करना, दुर्गदासकी महानुभावुकता, अजितका राज्याधिकार, उसकी पुनर्वार दुर्गति, हिन्दुजातिकी दुर्दशा, अजितका पुत्रलाभ; दूनाडेकी लड़ाई; औरंगज़ेबकी मृत्युसे हिन्दुओंको आनन्द; अजितका जोधपुरमे फिर अधिकार करना, मुसल्मानोंकी दुर्गति; बहादुरशाहके नामसे आज़मका दिल्लीकी गद्दी पर बैठना; आगरा युद्ध, सम्राट्का मारवाड़ पर आक्रमण करनेका उद्योग; अजमेरमें उसका आगमन, वैविलारुमे आना; अजितके निकट दूतका भेजना, मुसलमानोंकी विश्वासघातकता, एकाएक जोधपुर पर आक्रमण करना, बादशाहके साथ अजितका जाना, राजाओंका असंतोष, उनका उदयपुर जाना, राजाओंका मेल, अजितका पुनर्वार जोधपुरमे अधिकार, अजमेरके सिंहासनपर जयसिंहको फिर गद्दीपर बिठानेके लिये अजितका उद्यम, साँभरका युद्ध, अजितकी विजय, जयसिंहके साथमें आमेरार्पण, अजितका बीकानेर पर आक्रमण, नागौरेका उद्धार, राजाओंके ऊपर बादशाहका क्रोध, फिर मेल, अजमेरमें आगमन, बाहशाहके समीप राजाओंका जाना, और फर्मानका प्राप्त करना, कुरुक्षेत्रमे अजितकी तीर्थयात्रा, तीस वर्षके युद्धोंकी समालोचना, दुर्गदासका गुणकीर्तन, अभयसिंहकी जन्मपत्रिका ।

जिस समय प्रभुभक्त राठौर वीर पूर्वोक्त प्रकारसे मुसलमानोंके साथ युद्ध कर रहे थे, उस समय राठौरकुलका आशा भरोसा राजकुमार अजित उस घने वनमे धीरे २ बढ़ रहा था । उस दीर्घकालव्यापी युद्धमे जिसके लिये वीरोंने प्रसन्नतापूर्वक अपना रुधिर बहाया था, अबतक उन्होंने उसको नहीं देखा । सदैव युद्धभूमिमे रहनेके कारण उनको इतना भी अवसर न मिला कि, वे राजकुमारका एक बार भी दर्शन करते । इसीसे वे अबतक अपनी इच्छाको रोके हुए थे, किन्तु अब वह न रोक सके । सम्वत् १७४३ के प्रारम्भकालमे ही चंपावत, कूंपावत्, ऊदावत, मेड़तिया, जोधा, करमसोत, और मरुभूमिके दूसरे सर्दार गण अपने राजाको देखनेके लिये अधीर हो उठे । उन्होंने खीची वंशीय मुकुंदके यहाँ दूत भेजकर उसको बुला भेजा और कहा कि—"हम एक बार अपने

राजाको देखेगे, किन्तु मुकुन्दने उत्तर दिया कि जिसने विश्वास करके राजाको मेरे हाथमे समर्पण किया है, वह इस समय भी दक्षिणमे है। सरदार कुछ भी शांत न रह-सके। खींचीवीरका उत्तर सुनते ही उन्होने एक स्वरसे कहा कि जबतक हम एकबार अपने स्वामीको नही देखेगे तबतक भोजन पानमे हमारी रुचि नही होगी। उनका ऐसा आग्रह देख कर मुकुन्दने उनकी इच्छा पूर्ण की। तदनुसार वे सब एकत्रित हो आबू पहाडके आश्रमकी ओरको चले। कोटाराज्यके हाड़ा राजा दुर्जनशालने दो हजार घुड़सवारो समेत उनका साथ दिया इस समय वह भी राजाके देखनेको बाहर निकला। सम्वत् १७४३ चैत्रमासकी अंतिम तिथिको सर्दारोने राजाके दर्शनकर अपने नेत्र सार्थक किये थे। जिस प्रकार सूर्यकी किरणोसे कमल खिल उठता है, उसी प्रकार शिशुराज कुमारको देखते ही राठौरोका मानसकमल विकसित हो उठा, और जिस प्रकार भौरा कमलरसको पान करता है, उसी प्रकार वे सब राजकुमारके रूपसुधाका पान करने लगे। उस सभामे उदयसिंह, संग्रामसिह, विजयपाल, तेजसिह, मुकुन्दसिह और नाहर आदि चंपावत, राजसिह जगतसिह और सामन्तसिह आदि ऊदावत और रामसिह, फतहसिह, और केसरी आदि कूंपावत, सरदार गण उपस्थित थे। इन सर्दारोके अतिरिक्त पुरोहित, खीचीमुकुंद, पड़िहार, और जैनश्रावक यती ज्ञानविजय उस राजमंडलोकी शोभाको बढ़ा रहे थे। शुभलक्षणमे अजीत सबके सामने प्रगट हुआ। पहले हाड़ारावने नए राजाको अभिवादन किया। अनतर मारवाड़के समस्त सामंतोने उसे स्वर्ण, मणि, मुक्ता और अश्वादि भेटमे दिये।

इनायतखाँ द्वारा यह सब समाचार औरंगजेबको विदित हुए, राजसभामे उपस्थित होकर मुसलमान सेनापतिने ऊँचेस्वरसे कहा "महाराज! अधिपतिके न रहते हुए भी जिन्होने आपसे बहुत समयतक युद्ध किया है, वे अब अपने राजाको पाकर इतने उत्साहित होगये है कि जिसको आप स्वयं ही विचार सकते है अब विना अधिक सेना के उनका सामना नही होसकता"।

आनंदसे प्रसन्न हो जय २ कार करते हुए राठौर सरदार शिशुराजाको आहोरमे लेगये, आहोरके अधिपतिने मौक्तिकके साथ "वाधू" विधान कर बहुतसे घोड़े भेटमे दिये। उस राठौर सामंतशिरोमणिके दुर्गमे अजितसिहका बड़ाभारी सत्कार किया गया, और उसी स्थानपर टीकादौड़की रीति पूरी की गई। उसने आहोरके दुर्गसे विदा ली। मार्गमे रायपुर, वीड़ा और बारोद उसके अधिकारसे आये, वहाँके सरदार गणोने उनके निकट उपस्थित हो पूजा भेट आदि की। अनंतर वह आसोप दुर्गमे पहुँचा, वहाँ कूंपावत् सर्दारने उसका बड़ाभारी सत्कार किया। आसोपसे भाटी सरदारकी जागीर लवेरा लवेरेसे मैरतियोकी निवास-भूमि, रियाँ और, और रियाँसे करमसोतोके खीमसरमे पहुँच कर वह वहाँके सरदारोकी पूजाको प्राप्त हुआ। अजित इस प्रकारसे जिस स्थानको गया, उसी स्थानपर सरदार उसका सत्कार कर२उसके झंडेके नीचे इकट्ठे होने लगे, वह खीमसरसे पाबूराव धाँधलके

---

(१) राठौर वीर पाबूराव शूलकी युद्धविद्यामे प्रसिद्ध वीर था।

निवासस्थान कोलू नगरमे पहुँचा। उस समय पाबूरावने अपनी सेना लेकर उसका साथ दिया। अंतमे सम्वत् १७४४ भाद्रमासकी दशमीको राजकुमार पोकरणमे पहुँचा, वहाँ दुर्गदासने दक्षिणसे लौटकर उसके दलको पुष्ट किया।

वधावना और टीकाडोरसे अजितकी होनहारता प्रगट हुई। इन दो मांगलिक अनुष्ठानोसे राठौरोका उत्साह और साहस दूना बढ़ गया। पराक्रमी दुर्जनशाल आदि वीरोने जब उस जलते हुए उत्साह और साहसकी अग्निमे इंधन दिया तब राठौरोका पराक्रम अत्यन्त ही बढ़गया, इसको पाठक सहज ही समझ सकते है।

इनायतखाँ अत्यन्त ही भयभीत हुआ। राजपूतोके इस नवीन सेना बलको दमन करनेके अभिप्रायसे उसने एक नवीन सेना सजाई, परन्तु मृत्युने उसपर आक्रमण कर उसकी समस्त आशाको तोड़ दिया, इससे औरंगजेब अत्यन्त ही दुःखित हुआ। उस समय उसने एक और भी यत्न किया, मुहम्मँदशाहनामक एक मनुष्यको राजा यशवंतका पुत्र कह कर उसे मारवाड़के आधिपत्यमे नियुक्त किया, और अजितको पंच-हजारी पदपर प्रतिष्ठित कर उसकी स्वाधीनता स्वीकार करनेको कहा। परन्तु अभागा महम्मदशाह उस राजसन्मानको न भोगसका। जोधपुरकी ओर आते २ उसने मार्गमे प्राणत्याग किये। अनंतर इनायतखाँके बदलेमे सुजावतखाँ मारवाड़का सेनापति नियुक्त हुआ। तत्पश्चात् राठौर और हाड़ा एकताके सत्रमे बँधकर मारवाड़का शत्रुओके हाथसे उद्धार करनेके लिये मुसलमानो पर आक्रमण करने लगे, मालपुरा और पुरमांडलमे जो मुसल्मान सेना थी वह सब राजपूतोकी तीक्ष्ण तलवारसे छिन्न भिन्न होगई। इस पुर मांडलके किलेको घेरनेके समय हाड़ा राजाने एक गोलेसे प्राणत्याग किया, विजयी राजपूत इस स्थानमे ८ सहस्र मुहर मेना व्ययके लिये लेकर मारवाड़को लौटे। इधर पुरोहित और दीवान गण अजितके राज्यमे धन इकट्ठा कर उसकी सहायता करने लगे। इस प्रकार सम्वत् १७४४ भी वीत गया।

सम्वत् १७४५ के प्रारंभकालसे ही सुजाअतखाँने मारवाड़पर कर बाँधनेका प्रस्ताव किया। प्रस्तावके समयमे उसने प्रतिज्ञा करली थी कि अगर राठौर विदेशी वाणिज्यका

---

(१) इस अनुष्ठानमें एक मनुष्य मोतियोंसे भरा हुआ एक पीतलका वर्तन नवीन राजाके मस्तक पर रख उसकी परिक्रमा करता है।

(२) इस समयमे वीर दुर्जनशाल चम्पावत् सर्दार सुजानसिंहकी लड़कीसे व्याह करनेके निमित्त आया था। यद्यपि वह विवाह करनेको आया था परन्तु उसने युद्धमें साथ देनेके लिये कुछ भी टालाटूली न की, उस समय किसीने भी उसके हृदयको उत्तेजित न किया था। वह स्वय ही साहस और स्वदेशानुरागसे उत्तेजित और उत्साहित हो उठा था।

(३) जब दिल्लीमे महाराज जसवन्तसिंहके कवीलोकी रक्षाके वास्ते राठौर औरगजेबकी सेनासे घोर युद्ध करके मारवाडको चले आये थे तब दिल्लीके कोतवालने एक बालकको ले जाकर बादशाहको दिखाया था कि यह जसवन्तसिहका लड़का है। बादशाहने उसको मुहम्मदीराज नाम रखकर, पाला था। वह सम्वत् १७४५ मे प्लेगसे मर गया।

आदर करेंगे तो जो कुछ वाणिज्यपर कर आवैगा उसका एक चतुर्थांश मिलैगा, इसी बातमे वह सम्मत हुआ। अनंतर इनायतका लड़का जोधपुर छोड़कर दिल्लीकी ओर वढ़ा। उसके रैनवल नामक स्थानमे पहुँचते ही जोधा हरनाथने उसपर आक्रमण कर उसकी धन दौलत और उसके साथकी स्त्रियोंको छीन लिया। खाँसाहव भयभीत हो शरण पानेके अभिप्रायसे कछवाहेके निकट गये। उसे संकटसे उद्धार करनेके लिये सुजाअतवेग अजमेरसे निकला, किन्तु उसे भी दुर्दशाग्रस्त होना पड़ा। चांपावत् मुकुन्ददासने उसपर आक्रमण कर उसका सर्वस्व छीन लिया।

सम्वत् १७४७ में सफीखाँ अजमेरका सूवेदार नियत हुआ। दुर्गदासने उसपर आक्रमण करनेकी इच्छा की। सफीखाँ एक पहाड़ी मैदानमे सेना समेत खड़ा हुआ। दुर्गदासने उसी स्थानमे उसपर आक्रमण कर उसे अजमेरकी ओर भगा दिया। यह सब समाचार औरंगज़ेवको भी ज्ञात हुआ।उसने सफीखाँको लिख भेजा कि अगर तुम दुर्गदासको परास्त कर सकोगे तो राज्यमे तुम्हारा सबसे वड़ा दर्जा किया जायगा और अगर तुम्ही परास्त होगे तो तुमको वाला भेजकर पदच्युत किया जायगा, और तुम्हारे स्थान पर शुजाअत नियत किया जायगा।" सफीखाँ, वड़ी विपतमे पड़ा उसने अपना कार्य सिद्ध होनेका उपाय न देखकर अजितको छलकर अपनी प्रतिष्ठा स्थिर रखनेका यत्न किया, और शीघ्र ही राठौर राजकुमारको इस आशयका एक पत्र लिखा कि–"आपका पितृराज्य आपको देनेके लिये मुझे सनद मिली है, अतएव राजाके प्रतिनिधि स्वरूप आप यहाँ आकर उसे लेजावे।" इस पत्रके पाते ही अजित वीस सहस्र राठौर सेनाके साथ अजमेरकी ओरको वढ़ा "परन्तु शत्रुकी कुछ वदनियत है या नही" यह जाननेके लिये उसने मुकुंद चांपावतको आगेसे भेजदिया। पर्वतश्रेणीके दूर स्थित संकीर्ण मार्गके सामने ही आकर मुकुंदने शत्रुकी दुरभिसंधिको जान लिया, उसने लौटकर समस्त व्योरा अजितको कह सुनाया परंतु राजकुमार कुछ भी भयभीत न हो अपने सरदारोसे कहने लगा कि–"सरदारो ! जव हम इतने निकट आ पहुँचे है तव आओ एक बार अजय दुर्गको भली प्रकारसे देखकर खाँनसाहवका सन्मान ग्रहण करै, यह कहकर अजित दल समेत नगरकी ओर वढ़ा। उस समय अजितकी वश्यता स्वीकार करनेके अतिरिक्त दुष्ट सफीखाँसे और कुछ न वन पड़ा, उसको तड़फानेके लिये एक जनने कहा कि–"आओ ! हम नगरको जला डालै, नगर और आत्मरक्षाकी चिन्तासे व्याकुल हो सफीखाँ काँपने लगा, और अजितको संतुष्ट करनेके लिये उसने धनरत्न और अश्वादि भेटमे दिये।

सम्वत् १७४८ के साथ ही साथ मेवाड़मे नाना प्रकारका विप्लव उत्पन्न हुआ, राजकुमार अमरने अपने पिता राना जयसिहके विरुद्ध तलवार उठाई। मेवाड़राज्यके समस्त सरदार उसके साथ एकत्रित हुए। राना भयसे गोड़वाड़ राज्यमे भाग गया, और घाणेरावमे सेना इकट्ठी करने लगा, अमर उसपर आक्रमण करनेमे तत्पर हुआ,

(१) एक घृणा दिखानेवाली वस्तु।

तब राना जयसिंहने राठौरोंसे सहायताकी प्रार्थना की, शीघ्र ही मेड़तिया गण उसकी सहायताको आये, थोड़े ही समयमें अजितने दुर्गदास और भगवान्‌को भी भेजा, वे दोनो जोधावंशी रिड़मल और मारवाड़के आठ सामन्त सम्प्रदायोंको एकत्रित कर राणाकी सहायताके निमित्त मारवाड़से बाहर हुए किन्तु उनकी सेनाकी हानि न हुई। चूंडावत और शक्तावत् तथा झाला और चौहानोंने विदेशियोंकी सहायता ग्रहण न करनेसे पहिले ही पिता पुत्रके विवादको दूर कर दिया। इस प्रकार सिंहासनरक्षाके निमित्त राना मारवाड़के निकट कृतज्ञताके पाशमें बंध गया था।

राठौरोंका साहस और बल देखकर औरंगज़ेबके मनमें अनेक प्रकारकी शंकाएं उठ रही थीं, इस समय और भी एक नवीन शंकाने उसपर आक्रमण किया। 'राजकुमार' अकबरकी एक पुत्री दुर्गदासके आश्रयमें थी, अजितको युवा अवस्थामें देख औरंगजेब उस समय उस लड़कीकी इज्जतके लिये शंकित हुआ, इस लिये उसने राठौरोंके साथ संधि करलेनेकी इच्छा की। नारायणदास कुलवी मध्यस्थ हुआ, इस संधिबंधनकी कथा वार्ता जबतक हुई तबतक सफीखॉं भी शत्रुभावको छोड़े रहा। इस प्रकारकी वार्तोंसे सम्वत् १७४९ भी बीत गया।

किन्तु मुसलमान चुपचाप न रहे। १७५० में जोधपुर जालौर और सिवानाके मुसलमान हाकिमोंने अपनी २ सेनाको एकत्रित कर अजितपर आक्रमण किया। अजित पुनर्वार पहाड़ोंमें आश्रय लेनेको विवश हुआ, वह वल्लभवंशी अक्षोंके साथ यवनोंके सन्मुख हुआ, परन्तु प्रति मास उसको पराजित होना पड़ा। इसी समयमें मुसल्मनोंने एक बड़े भारी पवित्र सांड़को मार डाला, इससे चांपावत् वीर मुकुंदधासने उनपर आक्रमण किया। मोकलसर नामक स्थानमें दोनो दल परस्पर सन्मुख होकर खड़े हुए, मुकुन्ददासने जय प्राप्त कर चांकके हाकिम और उसकी सेना व सामंतोंको बंदी कर लिया।

इस पराजयको मुसल्मानोंके कुग्रहका अग्रदूत कहना चाहिये। क्योंकि इसके थोडे ही दिन उपरान्त अर्थात् सम्वत् १७५१ में वह ऐसे संकटमें पतित हुए कि अनेक जनपद और नगरोंके निवासियोंने राठौरोंकी अधीनता स्वीकार की, उसमेंसे किसीने चौथ और किसीने कर दिया, और बहुत तो इस युद्धसे दुःखित हो तथा खानेपीनेकी सामग्री इकट्ठा न कर सकनेके कारण राठौरोंके दलमें संयुक्त होने लगे। इस साल कासिमखॉं और लश्करखॉंने अजितके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की, अजित उस समय विजयपुरमें था, उनका आक्रमण रोकनेके लिये दुर्गदासका पुत्र सेना समेत उनके सन्मुख हुआ। शीघ्र ही युद्धका आरंभ हुआ, अंतमें सफीखॉंको पराजित होना पड़ा। वर्षके उपरान्त वर्षके बीतनेसे जैसे २ अजितकी अवस्था बढ़ने लगी वैसे ही वैसे राठौरोंका उत्साह भी बढ़ने लगा, इधर औरंगज़ेब अपनी पौत्रीकी वयोवृद्धिके साथ ही साथ दुःखी होने लगा, अकबरकी पुत्रीके लिये वह क्षणभरको भी कभी निश्चिन्त न रहसका। उसने क्षणभरके लिये भी उसके छुटानेकी चेष्टा न छोड़ी। उसने जोधपुरके हाकिम

सुजाअतखाँको लिखा कि जिस किसी उपायसे हो और जितना व्यय करनेसे हो, मेरे सन्मानको रक्खो ।

इसी वर्ष राणाने अपने छोटे भाई गजसिंहकी लड़कीके साथ अजितका सम्बन्ध स्थिरकर मुक्ताजटित नारियल और रत्नजटित अम्बाड़ियोंसे सुसज्जित दो हाथी और दश घोड़े भेजे, यह सब भेट आदरपूर्वक ग्रहण की गई, और ज्येष्ठ माससे राठौर राजकुमारने उदयपुर जाकर शिशोदिया कुमारीसे पाणिग्रहण किया, और आषाढ़मासमे अजितने एक और व्याह देवलियामे किया ।

बादशाह औरंगजेब अपनी पौत्रीका ध्यान क्षणभर भी न भूल सका, वह सुलतानीके छुटानेके लिये रात दिन व्याकुल रहता समय २ पर अजितको भी पत्र लिख भेजता, और समय पर दूतद्वारा उसके छोड़ देनेकी भी प्रतिज्ञा करता । सम्वत् १७५३ मे दुर्गदाससे उसका पत्रव्यवहार होने लगा, अंतमे सुलतानीको लौटा कर अजित अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ । सम्राट्ने दुर्गदासको पंचहजारी पदपर प्रतिष्ठित करना चाहा परन्तु दुर्गदासने उसे स्वीकार न करके कहा कि. " आप इस पदके वदले मुझे जालौर सिवानची सांचोर और थिरादको देदो " । दुर्गदासने सुलतानीकी जिस यत्न और सन्मानसे रक्षा की थी उसे जानकर औरंगजेबने उसकी बड़ी प्रशंसा की ।

सम्वत् १७५७ के पौषमासमे अजित पुनर्वार अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ । जोधपुरमे पहुँचकर उसने उस नगरके पाँचो द्वारोके मध्यमे एक २ भैसा बलि दिया था । सुजाअतखाँके मरजानेसे शाहजादा सुलतान उसके आगे २ मार्ग दिखलाता हुआ चला था ।

---

(१) प्रतापगढ़ देवलिया यह छोटी रियासत मेवाड़की है इसे मल्लने बसाया था इसकी उत्पत्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन राजस्थान प्रथमखण्डमे देखो ।

(२) अजितने सुलतानीको लौटाई और न उसके पलटेमे पितृसिंहासन प्राप्त किया । दुर्गदासने लौटाई थी और उसीको मनसबमे ऊपर लिखे परगने मिले थे और यही कारण अजितसिंहके दुर्गदाससे नाराज होनेका हुआ था । उर्दू अनुवादमे भी अजितसिंहका सुलतानीको लौटाना नहीं लिखा ।

(३) यहांपर एकबार ही चार वर्षका वृत्तान्त छूट गया है, हम नहीं कह सकते कि, यह चार वर्ष क्योकर रह गये, और पता नहीं लगा । टाड्साहवने लिखा है कि कवि कर्णीदानके मूलग्रंथमे इन चार वर्षोंका कोई विवरण नहीं है, अथवा कोई लिखने योग्य बात न होनेसे अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया है, इससमय यह बात ध्यानमे नहीं आती कि क्यो ऐसा हुआ, विदित होता है कि मुसलमान उस समयमें दक्षिणकी लड़ाइयोमे लग रहे थे, इससे राजपूत जातिके लिये शांति हुई थी । और यही कारण है कि उस समय मारवाड़मे कोई वर्णनीय बात नहीं हुई ।

(४) निश्चय राजकुमार अजितको यहां शाहजादेके नामसे लिखा गया है, उस समय वही गुजरातका प्रतिनिधि सरदार था ।

सम्वत् १७५९ मे आजमशाहने पुनर्वार जोधपुरपर आक्रमण किया और अजित जालौरमे वास करनेको विवश हुआ, उसके कोई २ सरदार शत्रुओंकी सेवा करने लगे। और किसी २ ने राठौरोका आश्रय ग्रहण किया। राना भी इस समय विवश व निरुपाय था, उस समय केवल एक लिंग भगवान्के अतिरिक्त और किसीपर उसका आशा भरोसा न था। इधर आमेरेश्वर दक्षिणमे यवनराजकी सेवामे तत्पर था। मुसलमानोके पापभारसे चारो पाद पूर्ण हो उठे, वह यहाँ वहाँ, यहाँतक कि, मथुरा, प्रयाग और ओकामंडलमे भी गो हत्या करने लगे, दारुण अत्याचारसे पीड़ित होकर योगी और वैरागी देवताओके आश्रयकी प्रार्थना करने लगे, परन्तु उससे कुछ भी फल न हुआ, हिन्दुओका प्रताप जितना ही जितना क्षीण पड़ता जाता था मुसलमानोका अत्याचार उतना ही उतना बढ़ता जाता था, इसी वर्ष अर्थात् सम्वत् १७५९ माघमासमे मिथुन लग्नमे अजितकी प्रधान महिषी (रानाके भाईकी पुत्री) ने एक पुत्र उत्पन्न किया। अजित पुत्रका मुख देखकर आनन्दके सागरमे मग्न हुआ और उसका नाम अभ्यसिंह रक्खा।

इसके पीछे कविश्रेष्ठ कर्णीदानने लिखा है कि " यूसुफखाँ इतने दिनोतक जोधपुरके हाकिम अर्थात् प्रधान शासन कर्त्ता पदपर नियत था। इन्होने जोधपुरमे आते ही बादशाहकी दी हुई मेरतादेशकी शासनसनद अजितके हाथमे देकर उक्त देशके शासनका अधिकार भी अजितके करकमलमे अर्पण किया। मेरतिया सरदार कुशलसिंह एवं धांधल गोविन्ददासने भारको ग्रहण करनेकी आज्ञा दी, इन्द्रसिंहके पुत्र मोहकमसिंह जो अजितकी बाल्यावस्थासे ही उसकी रक्षा करते थे वह अजितकी यह अवस्था सुनकर महादु.खी हुए। जब उनको यह भार न मिला तब विचारने लगे कि अजितने हमै उचित पुरस्कार नही दिया है। अस्तु उन्होने बादशाहको इस मर्मका पत्र लिखा कि यदि आप मुझे मारवाड़के सेनापतिका पद दे तो मै वहाँ हिन्दू मुसलमान दोनो जातियोके लिये संतोषप्रद शासन कर सकता हूँ "।

"सम्वत १७६१ मे राठौर जातिके चिर शत्रु यवनोके सौभाग्यका सूर्य मानो अस्त होगया। दुरात्मा औरंगज़ेबने समस्त भारतवर्षमे हिन्दुओके ऊपर जो लोमहर्षण

---

(१) अभयसिंहका जन्म शिशोदिया रानीसे नहीं हुआ था किन्तु चौहान रानीसे हुआ था जो महाराज अजितसिंहकी पटरानी, गांव होटल परगना साचौरके चौहान चतुर्भुज दयाल दासोत् की बेटी थी। उर्दू तर्जुमेमे भी अभयसिंहका जन्म चौहानरानीसे होना लिखा है। शिशोदिया रानीके पुत्रका नाम तो सुरतानसिंह था।

(२) उर्दू अनुवादसे इस सनदका मुरशिदकुलीखांके हाथसे दिया जाना लिखा है जो यूसुफकी जगह पर जोधपुरमे आया था।

(३) उर्दू अनुवादमे यो लिखा है कि, कुशलसिंह मेड़तिया और धांधल गोविन्ददासको मेडतेमे जाकर कबजा करनेका हुक्म हुआ।

(४) यहा भी कुछ भूल मालूम होती है क्योकि इन्द्रसिंह और मोहकमसिंह तो ठेठसे ही अजितसिंहसे शत्रुता रखते थे।

अत्याचर, उत्पीड़न और निग्रह करके कालान्तकके समान अकबरके सिंहासनको कलंकित किया था तथा चारोओर अपने प्रवल प्रतापका विस्तार कर पाशविक वलके कठिन स्वभावका परिचय दिया था, इस समय मानो उनका वह पैशाचिक बल विक्रम क्रमशः क्षीण होचला। हिन्दूजातिके हिन्दूधर्मके सौभाग्य द्वारके मानो फिर खुलनेके पूर्व लक्षण दृष्टि आनेलगे, जो मुगल शाशनकर्ता मुरशिदकुलीखाँ प्रवल पराक्रमके साथ मारवाड़को शाशन करता था, इस वर्षमे माफरखाँ उसी पदपर नियुक्त होकर जोधपुरके राठौर राजेके यहाँ आया। मोहकमसिंहने अजितके आचरणसे क्रोधित हो सम्राटके पास गुप्तभावसे जो पत्र लिखा था इस समय वह अजितके हाथमें आया। मोहकमसिंह अजितसे अत्यन्त भयभीत हो अपने सेवकोंके साथ राठोरोंके डेरोंको छोड़कर मुगल बादशाहकी सेनाके साथ जा मिले[१]। अजितने बड़ी शीघ्रतासे यवनोंकी सेनाके विरुद्धमें युद्धकी यात्राकर दूनाड़ा नामक स्थानमें महायुद्ध प्रज्वलित करदिया, उस भयंकर युद्धमे बादशाहकी सेनाके एक बार ही परास्त होनेसे और ईंदावत सम्प्रदायके[२] उक्त मोहकिमसिंहसे निहत होकर अपनी राजद्रोहिताके उपयुक्त फलको पालिया। "सम्वत् १७६२ मे यह संग्राम हुआ था।"

"सम्वत् १७६३ मे बादशाहके लाहौरमे स्थित प्रतिनिधि इब्राहीमँखा लाहौरसे गुजरातमे जाकर कुमार आजिमके हाथसे वहाँके शाशनका भार ग्रहण करनेके लिये मारवाँड़से[३] चले गये। चैत्रमासके कृष्णपक्षकी[४] द्वितीयाको राठौरोंने आनंददायक समाचार पाया कि औरंगज़ेबकी मृत्यु होगई। इसको सुनते ही भारतके प्रत्येक हिन्दूकी समान राठौर अत्यन्त आनंदके समुद्रमे मग्न होगये, औरंगज़ेबकी मृत्युसे हिन्दुजातिने मानो कृतान्तके कराल ग्राससे उद्धार पाया। अजित स्वजातिके प्रधान शत्रुकी मृत्युका समाचार पाते ही सेना सजाकर चैतमासकी पंचमीको घोड़ेपर सवार हो जोधपुरकी ओरको चले गये। और राजधानीके तोरणद्वारपर जाते ही उन्होने जातिकी रीतिके अनुसार

---

(१) उर्दू तर्जुमेंमे राठौरोंके डेरोंको नहीं वरन् शाहजादेसे अलग होकर बादशाही फौजके शामिल होना लिखा है।

(२) ऐसा जाना जाता है कि इंद्रावत सम्प्रदायका विशेषण मुहकमसिंहके साथ कहा गया है क्योंकि मारवाड़ी महावरेसे वा बोलचालसे मुहकमसिंह इन्द्रावत यानी इन्द्रसिंहका बेटा था। बादशाही सेना मुहकमसिंहसे नहीं निहत हुई, उर्दू तर्जुमेसे स्वयं मोहकमसिंहका निहत होना पाया जाता है। पर मोहकमसिंह उस लड़ाईमे निहत नहीं हुआ था, भागा था। यह बात मारवाड़के गद्य इतिहासोंसे सिद्ध होती है।

(३) इब्राहीमखाँ बादशाहका साला था।

(४) उर्दू अनुवादमें यों लिखा है कि सं० १७६३ मे लाहौरका बादशाही सूबेदार इब्राहीम खां जो बादशाहका समधी था गुजरातकी सूबेदारीका चार्ज अजीमसे लेनेके लिये रास्ते चलता हुआ मारवाड़से निकला।

(५) शुक्लपक्ष द्वितीया चाहिये क्योंकि औरंगज़ेबका देहान्त चैत्र कृष्ण अमावस्याको हुआ था।

तुरन्त ही भैंसोका बलिदान किया, असुरगण (यवन) अजितको सेनासहित आता हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होकर अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये महाव्याकुल होगये। उनमेंसे बहुतसे तो प्राणोके भयसे भागने लगे और बहुतसे मारे भयके गुप्तभावसे छिपने लगे। अजितको आता हुआ देखकर यवन शाशनकर्त्ता मारेंडरके योधगिरीसे नीचे उतर आये और अजितने अपने पिताकी राजधानी जोधपुरके महलमे प्रवेश किया। छत्तीस वर्षतक दारुण कष्टको भोग कर जो राठौर जाति यवनोके प्रति अत्यन्त क्रोधित हुई थी, उनके हाथमे पड़कर उन्हे यवनोपर किञ्चितमात्र भी दया न आई। यवन निराश हो प्राणोके भयसे चारो ओरको भागने लगे । उन्होने मारवाड़मे जो घोर अत्याचार करके अतुल धन संग्रह किया था वह समस्त धन आज फिर राठौर जातिके हस्तगत होगया। राठौर गण अपना बदला लेनेके लिये उन भागे हुए बर्बर यवनोंको बंदी करने लगे। यद्यपि बहुतसे यवनोने उस घोर विपत्ति से अपनी रक्षा भी की । परन्तु अन्तमे वह सभी छिन्नभिन्न देह होकर भाग गये अनेक तो राठौर सामन्तोके निकट तथा हिन्दुओके देवमंदिरोकी शरणमे गये। राजपूतोका यह स्वभाव ही था कि वे निराश्रयको अवश्य ही अपने यहाँ आश्रय देते थे, इस कारण वे शरणागत यवन सरलतासे आश्रम पाने लगे। यवनोकी सेनाके प्रधाननेताने स्वयं कूंपावतोंके अवतारितद्वार देवालयोंकी शरणम जाकर अपने प्राणोकी रक्षा की। इस समय राठौर गणोने सब प्रकारसे जय प्राप्तकी, समस्त राठौरोंने उन भागे हुए यवनोंके ऊपर आक्रमण करके अपना बदला लेलिया, उस समय यवनोने अपने प्राणो की रक्षाके लिये भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय न देखा। यवनोने हिन्दूभिखारियो का भेष धारण कर "सीताराम हरगोविन्द" देवताओके नाम उच्चारण करतेहुए भिक्षा माँगकर प्राण बचाए और रात्रिके समय एक करके एक ग्रामसे दूसरे ग्रामको भागने लगे। मुल्लाओकी स्फटिक माला इस समय राम नाम जपने लगी, यवनोने विचारा कि डाढी देखकर हमारी पहचान होजायगी, तब हम अवश्य ही पकड़े जायँगे इस भयसे गुप्तभावसे रुपये देदेकर उन्होने दाढ़ी मुड़वाली। मुरधरके प्रत्येक प्रान्तमे केवल म्लेच्छोका आर्तनाद सुनाई देने लगा, जिधर देखो उधर यवन भाग रहे है यही दृष्टि आता था। यवनगण मेंरताको छोडकर भाग गये, और जो घायल हुए थे वे नागौरको चले गये सोजत और पाली दोनो प्रदेश फिर अजितके हस्तगत होगये म्लेच्छ यवनोके जोधगढ़मे बहुत समयतक रहनेसे वह अपवित्र होगया था इससे वह गंगाजल और तुलसीदलसे पवित्र कर लिया गया और अजितने राजतिलक धारण किया।

"औरंगजे़बके पापी जीवनके पंचभूतमे लीन होते ही उसके पुत्र पिताके सिहासनपर अधिकार पानेके लिये राजधानीकी ओर चले। कवि लिख गये है " कि दक्षिणसे आज़िम और उत्तरसे मुअज्ज़मन भारतके सिहासनको हस्तगत करनेके

---

(१) महामान्य टाड़ महोदय लिखते हैं कि औरगजेबके शाशन समयमे यवनोकी डाढ़ी मूंछोंको देखकर हिन्दू और राठौरोने यवनोके चिह्नस्वरूप डाढ़ी मूछतकको नहीं रक्खा था।

लिये सेना सहित दर्शन दिए। आगरेमे जाकर दोनों असुरदलोमे भयंकर युद्ध उपस्थित हुआ। औरंगज़ेबके बड़े पुत्र शाहआलम इस युद्धमे जय प्राप्त करके पिताके सिहासन पर विराजमान हुए। नवीन बादशाहने शीघ्र ही यह समाचार पाया कि अजितने मारवाड़मे सभी यवनोंको विध्वंस करके छिन्न भिन्न करदिया है और उनके समस्त धन रत्न छीन कर वह अपने पिताके सिहासन पर विराजमान हुए है।

"सम्वत् १७६४ मे वर्षाऋतुके बीतते ही नवीन मुगल बादशाह शीघ्र ही अपनी प्रबल सेना साथ लेकर अजमेरमे आगया। इस समय भगवानके पुत्र हरिदास ऊहड और मांगलीयके दोनो सामन्त, ऊदावतोके नेता रत्नसिहने अपनी सम्प्रदायके आठसौ योधाओके साथ जोधपुरमे जाकर अजितके नामसे शपथ करके कहा कि हमने जीवन दान करके आपकी राजधानीकी पापी यवनोके हाथसे रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की है बादशाहकी सेनाने शीघ्र ही भाभी बीलाड़ानामक स्थानमे डेरे डाल दिये। महाराज अजित भी बादशाहकी सेनाके आक्रमणको निवारण करनेके लिये शीघ्र ही तैयार होगये। धूर्त्त औरंगज़ेबने जिस प्रकार समयके परिवर्तनमे सबसे पहले चातुरीजालसे अपने उद्देशको सिद्ध कर लिया, उसके पुत्र नवीन बादशाहने भी इस समय उसी प्रकारसे पिताके मार्गका अनुसरणकिया। उसने अपनी चातुरी जालका विस्तार कर मारवाड़ेश्वर अजितको अपने हस्तगत करनेके लिये उनके निकट सन्धिका प्रभाव भेज दिया। अजितने बादशाहके दूतके आते ही अपने दूतको उस बादशाहके दूतके साथ बादशाहके यहाँ भेजकर संधिके प्रस्तावमे अपनी सम्मति प्रगटकी। सम्राट्ने फिर उसी दूतके हाथ अजितके पास मारवाड़की सनद देनेके लिये भेजी, परन्तु अजितने उस राजसनदको लेनेके पहले ही एक बार बादशाहसे साक्षात् करनेकी अभिलाषाकी। एक मतसे फालगुन मासकी पहली तारीखको अजित सेना सहित योधगिरि छोड़कर बीसलपुरकी ओर चले। खानखाना (प्रधान अमात्य) के पुत्र सुजा-अतखाने कितने ही अमीर और भदावरके राजा तथा बूँदीके रावबुधसिहके साथ बाद-शाहकी ओरसे पीपाड़ नामक स्थानमे इनका बड़ा आदर सत्कार किया। किस प्रकार से संधि होगी, रात्रिमे केवल इसी प्रस्तावकी मीमांसा हुई, दूसरे दिन प्रात काल ही अजित मरुक्षेत्रकी समस्त सेनाके साथ आगे बढ़े। और आनंदपुरनामक स्थानमे म्लेच्छो के अधीश्वरके साथ उनका साक्षात् हुआ। बादशाहने इनको "तेगबहादुर" की उपाधिसे विभूषित किया। परन्तु बादशाहने जिस समय अजितको उपाधि देकर उसका सन्मान बढ़ाया था उस समय उनकी चतुरता सफल होगई। अजितके बीसलपुरसे सेना सहित आते ही बादशाहने अच्छा मौका पाकर गुप्तभावसे महारानखाँको सेनासहित जोधपुर पर अधिकार करनेके लिये भेज दिया था। विश्वासघाती मोहकम भी उसके

(१) यही बहादुरशाह नामसे सिहासन पर बैठा।

(२) उर्दू तर्जुमेमे यो लिखा है कि फागुनकी १ तिथिको उसने (अजीतसिंहने) जोधाके पहाड़से कूच किया और रवाना होकर बीसलपुर पहुँचा, वहाँ उसके पास खानखाना शुजाअतकी मारफत संदेशा आया, उसके साथ भदोरिया राजा और राव बुधसिंह बूंदीके थे। पीपाड़मे मुलाकात ठहरी।

साथ गया था। इस कारण उन्होंने अजितके न होनेपर बड़ी सरलतासे जोधपुर पर अधिकार कर लिया। अंतमें अजितने जब बादशाहकी इस चालाकीको जाना तब वह अत्यन्त क्रोधित हो मतवाले हाथीकी समान उन्मत्त होगया। परन्तु बुद्धिमान् बादशाहने उस समय भी अजितको इस प्रकारसे अपने हस्तगत कर लिया था कि, वह उस क्रोधको अपने हृदयके भीतर ही रखकर बादशाहके साथ कुमार कामबखशके अधीन करनेको दक्षिणको चले गये। आमेरके महाराज मिरजा राजा जयसिंह भी[1] इस समय इस स्थानपर बादशाहके साथ थे; वह भी मारवाड़के महाराजकी समान प्रतारित होकर अत्यन्त रुष्ट होगये। बादशाह शाहआलमने गुप्तभावसे आमेरमें एक दल यवनोंकी सेनाका भेजकर उस पर अपना अधिकार कर जयसिंहके छोटे भ्राता विजयसिंहके शिरपर आमेरराजकी पताका शोभायमान कर दी थी, उस समय जयसिंह भी अजितके समान बादशाहके साथ दक्षिणको गये थे। अनत जलसे पूर्णनदी जिस प्रकारसे अपनी तरंगोंके वेगसे किनारोंको तोड़ती हुई महागर्जना करके अपने अंगका विस्तार करती है उसी प्रकारसे बादशाहकी सेनाने राजपूतोंकी सेनाके साथ मिलकर शीघ्र ही यात्रा प्रारंभ की। यवन बादशाहके शीघ्र ही उस नदीके[2] पार होते ही[3] दोनों राजपूत राजाओंने निर्द्धारित कल्पनाकार्यके सफल करनेमें किंचित् भी विलम्ब न किया। वे बादशाहसे कुछ न कहकर सेना और सामन्तोंकी मंडलीके साथ सीधे रजवाड़ेकी ओरको चल पड़े। वे सबसे पहले उदयपुर पहुंचे, महाराणा अमरसिंह आगे बढ़कर बड़े आदर सन्मानके साथ उनको अपनी राजधानीमें ले आये। तीनों राजा एक साथ बैठे तीनों राजाओंके मस्तक पर राजछत्र शोभायमान होने लगा, वे लोग मानों त्रिमूर्तिसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वररूपसे अनुपम सुखमा प्रकाश करने लगे—इन तीनों महाबली राजाओंके संमिलन तथा मित्रतासे असुरोंके भाग्यका पतन होना प्रारंभ हुआ, और अपने धर्मकी महिमाका विस्तार हुआ[4]।

उदयपुरसे महाराज अजित और महाराज जयसिंह भी मारवाड़में आये थे। दोनों राजाओंके आहोयामें आते ही चांपावत् सम्प्रदायके नेता उदयभानुके पुत्र संग्रामसिंहने अपने मस्तकपरसे पगड़ी उतार कर बिछा दी। दोनों महाराज उसके ऊपर चलकर सामन्तके यहाँ गये।

"१७६५ सम्वत्‌के श्रावण मासमें प्रतीत हुआ कि असुरोंका आशा भरोसा एकवार ही लुप्त होगया। अजित अपनी जन्मभूमिमें आगये हैं, यह समाचार पाते ही महराबखां अत्यन्त भयभीत हुआ। सात तारीखको तीस हजार राठौरोंकी सेनाने जोधपुर राजधानीको जा घेरा और १२ वीं तारीखको महराबखॉने आत्म समर्पण किया। आसकर्णके पुत्रने उस समय उसके जीवनकी रक्षाकी थी, इसीसे उसने उसको

(१) मिरजा राजा तो मर चुके थे, इस समय सवाई जयसिंह थे।

(२) अर्थात नर्मदा।

(३) यवन इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि यह सम्राट इस समय लाहौरकी ओर गये थे।

(४) हमारे पाठकोंने प्रथम काण्डमें इन तीनों राजपूत राजाओंके संमिलनसूत्रसे विवाहिक सम्बन्ध बंधनके विषयमें पढ़ा होगा। ज्ञात होता है कि उसका उल्लेख करना भूल गये थे।

धन्यवाद दिया। [1]महरावखॉं बड़े आदरभावके साथ सेना सहित उसकी रक्षामें लग गया। अजित अत्यन्त ही आनन्दित हो मरुक्षेत्रकी राजधानीमें आगये।"

इसके पीछे राठौरोंके कविने लिखा है कि "महाराज जयसिंह सूरसागरके किनारे रहने लगे, वे राज्यसे भ्रष्ट थे, इस कारण अत्यन्त विषादित हृदयसे असंतोषकी अवस्थामें अपने भाग्यकी परीक्षा करने [2]लगे। परन्तु वर्षाऋतुके वीतते ही कछवाहोंके प्रधान सामन्त अजयमल्लने जयसिंहको फिर सिंहासन पर बैठालनेका प्रस्ताव किया। अजित शीघ्र ही जयसिंहके साथ सेना सहित मेरतानामक स्थानमें आ पहुँचे, उनके भयसे आगरा और दिल्ली कंपायमान होने लगा, दोनों राजाओंके अजमेरमें आते ही वहॉंका यवन शासनकर्त्ता प्राणोंके भयसे अत्यन्त भयभीत हुआ, उसने ख्वाजा कुतबनामक महम्मदी साधूकी मसजिदका आश्रय लिया, और अजितसे अपने प्रति दया करनेके लिये कहला भेजा। शासन कर्त्ताने अजितके प्रस्तावके मतसे वहुतसा रुपया भी दंडमें दिया। इसके पीछे अजित बाज पक्षीकी समान आमेर देशपर जा टूटे। इस स्थानपर आमेर राजके प्रत्येक श्रेणीके सामन्त सेना सहित आकर उनके अधीश्वर जयसिंहके साथ जा मिले। आमेरकी यवनसेनाके नायक सैयदहुसेनने बारह हजार यवनसेनाके साथ उस सांभर झीलके तीर भूमिपर अग्रसर हो अजीतसिंहके साथ संग्रामानल प्रज्ज्वलित कर दी। सबसे पहले कूपावत् सामन्तोंने यवनोंपर आक्रमण किया, घोर युद्ध होने लगा। हुसेनने ६ हजार यवनोंकी सेनाके साथ रणभूमिमें सर्वदाके लिये शयन किया। और बची बचाई सेना अपने प्राणोंके भयसे जिधर तिधर भाग गई। सैयदहुसेनके सहकारी पड़िहार जातिके नेता इस समरभूमिमें अजितकी तलवारसे आहत होकर हताश होगये। अजित उस परिहार पतिका प्राण नाश करके मन्दोर राज्यको चले जॉंयगे—यह विचार करने लगे। इस युद्धमें पराजयका समाचार पाते ही असुर गण सॉंभर [3]छोड़कर चारोंओरको भाग गये। सॉंभरमें एक सेना रखकर अजितने माघमासमें जयसिंहको आमेरका राज्य देदिया। अजित बीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये पहलेसे ही तैयार होगये थे, इस कारण विश्वासी रघुनाथ भंडारीको दीवानकी उपाधि देकर उसके हाथमें सांभरके शासनका भार अर्पणकर आप बीकानेरकी ओरको चले गये।"

"सम्वत् १७६६ भादोंके महीनेमें सम्राट् [4]औरंगजेबने कामबक्सका प्राण नाश

---

(१) दुर्गादासने महराबखांके आत्म समर्पणके प्रस्तावको ग्रहण करके उसके प्राणोंकी रक्षा की थी।

(२) उर्दू तर्जुमे से जाना जाता है कि कछवाहोंने अजमल अर्थात् अजीतसिंहको आमेरमें फिरसे विठलाना चाहा।

(३) उर्दू तर्जुमेमें यहां आमेरका छोड़ना लिखा है।

(४) यहां औरंगजेबका नाम भूलसे लिखा गया है मुअज्ज़म अर्थात् शाहआलम बादशाह का नाम चाहिये।

किया। जयसिंहने इस समय फिर यवन बादशाहके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। मारवाड़के महाराज अजितने इस समय सेना सहित नागोर पर अधिकार कर लिया था। नागौरपति इन्द्रसिंह अपनेको अत्यन्त दुर्बल और असमर्थ जानकर अग्रसरहो अजितके चरणोंमे आत्म समर्पण करनेकी प्रार्थना करने लगे। अजितने अपने आत्मीय भ्राताको शरण आयाहुआ देख उसके ऊपर दया प्रकाश कर नागौरके बदले मे लाडनूको उसके वंशानुक्रमसे शाशन करनेके लिये दे दिया। परन्तु इन्द्रसिंह इससे संतुष्ट न हुए, कारण कि वह सम्पूर्ण नागौरके अधीश्वर होकर एक सामान्य देशको लेकर किस प्रकारसे संतुष्ट होसकते थे ?—इन्द्रसिंहने बड़ी शीघ्रतासे अजितके इस आचरणसे रुष्ट हो दिल्लीके बादशाहके यहाँ जाकर इस समाचारको कहा। मुग़ल बादशाह अजितके उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुआ, राजपूतजातिने भी बादशाहके क्रोधका समाचार सुना, और फिर सबने एकत्र संमिलनसे अपने २ स्वार्थकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य समझा। समस्त राजपूत राजा बड़ी शीघ्रतासे डीडवाना नगरके पास कोलियानामक स्थानपर इकट्ठे हुए, और यवन बादशाह भी बड़ी शीघ्रतासे अजमेरसे आते हुए, दिखाई दिये। यवनसम्राट्ने अजमेरसे मित्रभावके चिह्नस्वरूप अर्थात् हाथके चिह्नकी लगी हुई सनद राजाओंके पास भेजी। सम्राट्का प्रधान अनुचर नाहरखाँ उस सनदको लाया। आषाढ़मासकी पहली तारीखको मारवाड़ और आमेर राज वह सनद लेकर बादशाहसे साक्षात् करनेके लिये अजमेरको गये। बादशाहने सबके सन्मुख बड़े आदरभावसे दोनो महाराजाओंसे साक्षात् की। उन्होंने अजितको नौदुर्ग युक्त मरुभूमि और जयसिंहको आमेरके शाशनकी सनद देकर बड़े सन्मानके साथ विदा किया। दोनो राजा बादशाहसे विदा होकर पूर्वकी ओर पवित्र पुष्कर तीर्थमे स्नान करनेके लिये गये। तीर्थकर्मके समाप्त होजानेपर दोनो राजा परस्पर मित्रभावसे विदा होकर अपने अपने राज्योंकी ओर चले गए। अजित सम्वत् १७६७ के श्रावणमासमे जोधपुरकी राजधानीमे आकर अपने पिताके सिंहासन पर बैठकर राज्य करने लगे। इस वर्ष अजितने गौड़सम्प्रदायकी राजकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया। अर्ज्जुनसिंहने दिल्लीके आमखास नामक दरबारमे अमरसिंहकी हत्या करके राठौर जातिके साथ जातीय शत्रुताका बीज बो दिया था, अजितने

---

(१) कामबख्स औरंगजेबका पुत्र था, एक राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। कामबख्स औरंगजेबकी वृद्धावस्थाका पुत्र था, इसीसे यह उसको बहुत प्यारा था। औरंगजेबने मृत्युकी शय्यापर पड़कर इसको जो स्नेहपूर्ण पत्र लिखा था हमारे पाठकोंने प्रथम काडमे उसे पढ़ा होगा।

(२) इन्द्रसिंह यशवन्तसिंहके बड़े भ्राता महातेजस्वी अमरसिंहके पुत्र और अजितके विश्वासहन्ता मोहकिमसिंहके पिता थे। मोहकिमसिंहने अजितसे मेरताके शाशनका भार न लियाथा। इसी कारण वह उनके विरुद्ध बादशाहके साथ जामिले थे।

उस शत्रुताको भी उन्मूल करदिया। अजित इसके पीछे महाभारतमे लिखे हुए कुरु पांडवोंके महा युद्धस्थान कुरुक्षेत्रको चले गये; और भीम कुंडपर जाकर पुण्यको संचय करनेलगे। इस प्रकारसे १७६७ सम्वत् व्यतीत होगया"।

---

(१) राजपूतोका यह और एक विचित्र निदर्शन है। और वे राजाके घोर शत्रु होनेपर भी जातीय सत्वकी रक्षाके लिये उसीका पक्ष लेते है। हमारे पाठकोंने पहले ही पढ़ा होगा कि महाराज यशवन्तसिंहके बड़े भ्राता अमरसिंह एक मात्र उद्धत स्वभावके कारण अपने पितासे छोड़ दिये गये थे, और जातिके समस्त अधिकारसे रहित करके अंतमे मारवाड़से निकाल भी दिये गए थे, तब दिल्लीके सम्राटकी सभामे प्रशंसनीय वीराभिनय करके उक्त अर्जुनके द्वारा मारे गये। अमरसिंहके पुत्र इन्द्रसिंहने और पौत्र मोहकिमसिंहने जो यशवन्तसिंहके बड़े भ्राताके वंशधर थे, जोधपुरका सिंहासन पानेके लिये जन्मभर तक विशेष चेष्टा की, और अजितके स्वार्थ नाश करनेमें कुछ भी कसर बाकी न रक्खी, परन्तु कैसा विचित्र जातीका स्वभाव है कि जब समस्त राठौरजाति स्वजातिके स्वार्थकी रक्षाके लिये यवनोंके विरुद्ध खड़ी हुई, तब अजितके शत्रु इन अमरसिंहके वंशधरोंने बड़ी शीघ्रतासे अजितका पक्ष लिया। यद्यपि यह बादशाहके यहाँसे स्वतंत्र शासनकी सनद पाकर नागौरको शासन करते थे तथापि इन्होने अजितका साथ * दिया। राठौरोका जातीय विधान कैसा हृदय हारी है!

(२) कर्नल टाड्साहबने इस स्थान पर लिखा है। "कि भारतवर्षके इस प्राचीन महा युद्धके समय इस कुंडके सम्बन्धमे जो एक प्रवाद वचन प्रचलित है, उसको पढ़कर वीर प्रतावलम्बी राजपूत जाति किस प्रकारसे संस्कार युक्त थी, यह सरलतासे जाना जा सकता है। भारतके प्राचीन महावीरोंके अभिनय क्षेत्रस्वरूप इस संग्रामस्थलको देखनेके लिये सम्राट् बहादुरशाह संभवत अपनी राजपूत रानी और राजपूत जननीकी प्रेरणासे वहाँ गये। कुरुओंके प्रधान नेता भीष्म कुंडपर कि जिसको एक बड़ाभारी वृक्ष ढके हुये था, बहादुरशाहने चारोंओर कनात रोक कर अपनी रानीको बिठाला था। कि इसी अवसरमे एक गृद्ध हड्डीका टुकड़ा चोचमे दबाये हुए उस वृक्षकी शाखा पर आबैठा, और थोड़े ही समयमे वह अस्थि भीष्मकुंडमे गिर गया, तब वह ऊंचे स्वरसे हँसने लगा। चारो ओरसे घेरे हुए स्थानमें अचानक मनुष्यके हँसनेका शब्द सुनकर सम्राट् बहादुरसाह अत्यन्त विस्मित हुए। और ऊपरको देखकर उस पक्षीको मनुष्यकी समान बोलता हुआ सुनकर और भी विस्मित हुए। पक्षीने बादशाहको बुलाकर मनुष्यकी बोलीमें यो कहना प्रारंभ किया, "पूर्व जन्ममे मैं योगिनी था। मैने इस कुरुक्षेत्रके महायुद्धमे से एक महाबली वीरकी कटी हुई भुजा उठा ली। और वृक्षके ऊपर आन कर बैठ गया। उस बाहुमे एक बड़ा कीमती स्फटिक मणिका अलंकार था। मेरे हाथमेसे कुछी समयके पीछे वह मणियोसे जड़ा हुआ अलंकार इस कुंडमे गिर गया। और आज भी इसी प्रकारसे इस कुंडमे हड्डी गिरी है, इस समय मुझे वही पहली बात स्मरण हो आई, इसी लिये मै ऊँचे स्वरसे हँसने लगा"। यह हम अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं; कि गृद्ध संस्कृत वा देशी भाषामे जो यह बातें कह रहा था। रानीने उसका यथार्थ अर्थ करके बादशाहको समझा दिया। बादशाहने शीघ्र ही उस अलंकारको लानेके लिये गोतेखोरोंको कुंडमे घुसनेकी आज्ञा दी। गोतेखोर तुरन्त ही बादशाहकी आज्ञासे उसके भीतर घुसे और बड़ी शीघ्रतासे

---

* इन्द्रसिंह मोहकमसिंहने कभी अजितसिंहका साथ नहीं दिया। हमेशा शत्रुता करते रहे साथ देनेकी बात गलत और इतिहास विरुद्ध है। (प्रे० टी०)

हिन्दुओंके आशा भरोसा मध्याह्नमार्त्तंड यशवन्तसिंहके काबुलमे अकालमृत्युसे स्वर्गवासी होनेपर अजितके पिताके सिंहासनपर अभिषेकके समयतकका इतिहास हमने राठौर कवियोंके इतिहाससे अविकल अनुवाद कर दिया है। इस तीस वर्ष व्यापी महा युद्धका वृत्तान्त हमारे पाठकोंको सरलतासे ज्ञात होजायगा तब वह अवश्य जान जाँयगे कि राठौर जाति इस दीर्घकालमे किस प्रकारसे अपने जातीय सत्वकी रक्षाके लिये कैसी राजभक्ति दिखाती थी। तथा किस प्रकारका बल विक्रम प्रकाश कर गई है। वर्तमान अध्यायकी समाप्तिके पहले हम इस स्थानपर महात्मा टाड्साबकी शेष उक्तिको अविकल प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते है। अतीत तीस वर्षकी घटनावलीकी समालोचनासे कर्नल टाड्साहबने जो कुछ लिख दिया है—हम उसके अतिरिक्त कुछ नही कह सकते। महत्मा टाड्साहब लिख गये है, कि "दीर्घकाल स्थायी समरके समयमे राठौर गणोने जिस प्रकारकी अटल राजभक्ति दिखाकर अपने

उस महा युद्धका चिह्नस्वरूप स्फटिक मणियोंसे जटित अलकारको निकाल लाये। उसकी बडी २ मणियोंको देखकर बादशाहने कहा। इसको गलीचेके ऊपर रक्खो, इससे सब कार्य सरलतासे पूरे हो जांयगे। बादशाहके साथ उस स्थानपर जो समस्त हिन्दू राजा थे, उनमे राजा अजित और जयसिंह सम्राटकी इस आज्ञासे अत्यन्त दु खित हुए, उन दोनोंने बादशाहसे एक एक स्मरणीय रत्न मांगा। मिरजा राजा सवाईसिंहको दो मणियें दी गई, वे दोनो मणी इस समय जयपुरमे है। एक तो वहॉ सिलादेवीके मंदिरमे है।और दूसरी गोविन्दजीके मंदिरमे रक्खी गई है।अजितने जो एक रत्न पाया था। वह भी आजतक जोधपुरमे गिरिधारीजीके मंदिरमे रक्खा है, और वहॉ इसकी पूजा होती है। हमारे प्राचीन शिक्षक और मित्र यतिज्ञानचंद्रने जो इस प्रवादके श्लोकको पढ़ कर व्याख्याकी है।मैंने उसका अनुवाद कर लिया, उन्होने इन तीनो मणियोंको देखा था, और इन तीनोंके प्रति प्रीति भक्ति दिखा कर उनकी पूजा की थी। उन्होने अनुमान किया था; कि कोटा वा बूंदीमे इस प्रकारका और भी एक रत्न है, राणाने किस उपायसे उक्त रत्नोंमेसे और एकको संग्राह कर लिया, सो विदित नहीं इन पवित्र सफेद मणियोंमेसे एक २ मणि वजनमे आध सेर होगी। कुरुक्षेत्रके युद्धके समयमे अवश्य ही विराट शरीरवाले मनुष्य थे। नहीं तो इस प्रकारके वजनवाली तेरह मणियोंका हाथमे पहरना कुछ साधारण बात नहीं थी। यही कहा जायगा कि कविश्रेष्ठ होमरके * वीर कुरु वीरोके निकट वामन स्वरूप थे। "तब यह संदेह हो सकता है कि कुरुओंकी भुजाओंके अलकारोंको वह तोल सकते थे अथवा नहीं। हमारे पूजनीय शिक्षक यद्यपि उदार मतावलम्बी थे, परन्तु उन्होंने पूर्वकालके विराटकाय मनुष्योंके सम्बन्धमे साधारण मतके विपरीत मत दान नहीं किया। उन्होने कहा कि मनुष्योकी आकृति क्रमानुसार युग २ मे छोटी हो गइ है। इसमे कुछ भी संदेह नहीं"।

---

* होमर नामका कवि यूनानमें हो गया है, वह सिकन्दरसे कई सौवर्ष पहले हुआ था। परंतु उसकी वीरसपूर्ण परम ओजमय काव्यका समस्त यूरपमे अब भी बड़ा आदर होता है।होमर काव्यकी एक प्रति ऑडैसीका अंग्रेजी गद्यानुवाद मैंने देखा है। उससे मुझे वह कथा कविकल्पना मालूम होती है। इतिहास नहीं है।

जातीय चरित्रके महत्वको प्रकाश किया था, ससारके अन्य किसी जातिके इतिहासमे हमने ऐसी राजभक्ति दूसरी जगह नही देखी। राठौरोके कविने लिखा है। कि इस दीर्घस्थायी युद्धके समयमे एक सामन्तने भी स्वाभाविक मृत्युशय्या पर शयन नही किया" (अर्थात् रोगी होकर कोई सामन्त नही मरा) जो मनुष्य विचारते है कि हिन्दू वीरोके हृदयमे स्वदेश हितैपिता नही थी वह इस वर्षके अलंकृत इतिहासको पढै, और वह जगत्के अन्य किसी जातिके इतिहासके साथ इसकी तुलना करके देखै, और राजपूत जातिके असीम साहसके लिये धन्यवाद दे। यह उद्धृत इतिहास अत्यन्त सरलस्वभावसे रचागया है, और इसकी सत्यताका विशेप समर्थन करना है। इस समरके समयमे अत्याचारी यवन सम्राट् साम्राज्यके ऊँचे पदपर नियोगका लोभ दिखाकर राजपूत जातिकी मूलनीतिको नष्ट करनेके लिये उद्यत हुए थे, जिससे वे स्वजाति, स्वधर्म, स्वदेश और अपने अधीश्वरोके विरुद्ध सम्राट्की सहायता करै, बादशाहने एक२ समयमे एक२ मनुष्यको इतना लोभ दिखाया कि वह लोभ अपरिहार्य होगया। परन्तु ऐसी घटना अत्यन्त सामान्य हुई कि जिससे राजपूत जातिने उस लोभके प्रति घृणा न दिखाई हो। राजपूत जातिके गौरवकी गरिमा स्वरूप महावीर दुर्द्धर्ष साहसी दुर्गदासके आचरण कैसे उज्ज्वल दृष्टान्तका स्थान है। बलविक्रम राजभक्ति और विश्वास आदि गुण उनकी गाढ़ बुद्धिके साथ मिलकर महा विपत्तिमे भी उनकी महोच्चताका चूड़ान्त प्रमाण दिखा गये है, और वही सद्गुणावली आजतक राठौर जातिके स्मृति मार्गमे पड़कर उनकी कीर्तिको वढ़ा रही है। यवन सम्राट्ने उनको जो लोभ दिखाया था, वह सव प्रकारसे अपरिहार्य है–बादशाहकी केवल सुवर्णकी मुद्रा ही नही वरन् उन्होने स्वजातिकी दृष्टिसे सहस्रो मुद्राओको घृणाकी दृष्टिसे फेक दिया था, वे उसी मुहूर्त्तमे मरुक्षेत्रके अधीन सामन्तपदसे एक वार ही देशीय राजाओके संमान पद मर्यादा और सामर्थ्यको प्राप्त करते थे पर उन्होने उस लोभके प्रति भी आग्रह न किया, राठौर कविने यथार्थ ही कहा है कि वह अमूल्य और अतुलनीय थे। राजपूत जातिके आजीवन पालनीय एक मात्र प्रतिहिसाके लिये उन्होने उस महोच्च सन्मानको ग्रहण न किया था। उन्होने शत्रुओके पड्यंत्रसे उनके साहसी अग्रज सोनगके प्राण हननका वदला लेनेके लिये इतनी दया प्रकाश की थी, कि वह जिस युद्धमे जाते उसी मे[1] अपनी भ्रातृहत्याको उचित प्रतिहिसा सफल कर लेते थे। कुमार अकवर जिस समय अपने महा क्रोधित पिताके कराल कवलसे पतनोन्मुख हुए थे, उस समय उन्होने जिस प्रकार असीम साहस और महान वीरतासे उनका उद्धार करके अनिवार्य मृत्युके मुखसे उनकी रक्षा कर जिस प्रकार प्रवल विक्रमका परिचय दिया, उसी प्रकारसे अकवरके परिवारकी रक्षाका भार उनके हाथमे सौपा गया, वह इनके ऊपर जिस

(१) इसका अर्थ यह है कि इस युद्धमे मारवाड़के जितने सामन्तोने प्राण त्याग किये सभीने रणभूमिमे स्वजातिके लिये जीवनका वलिदान किया था।

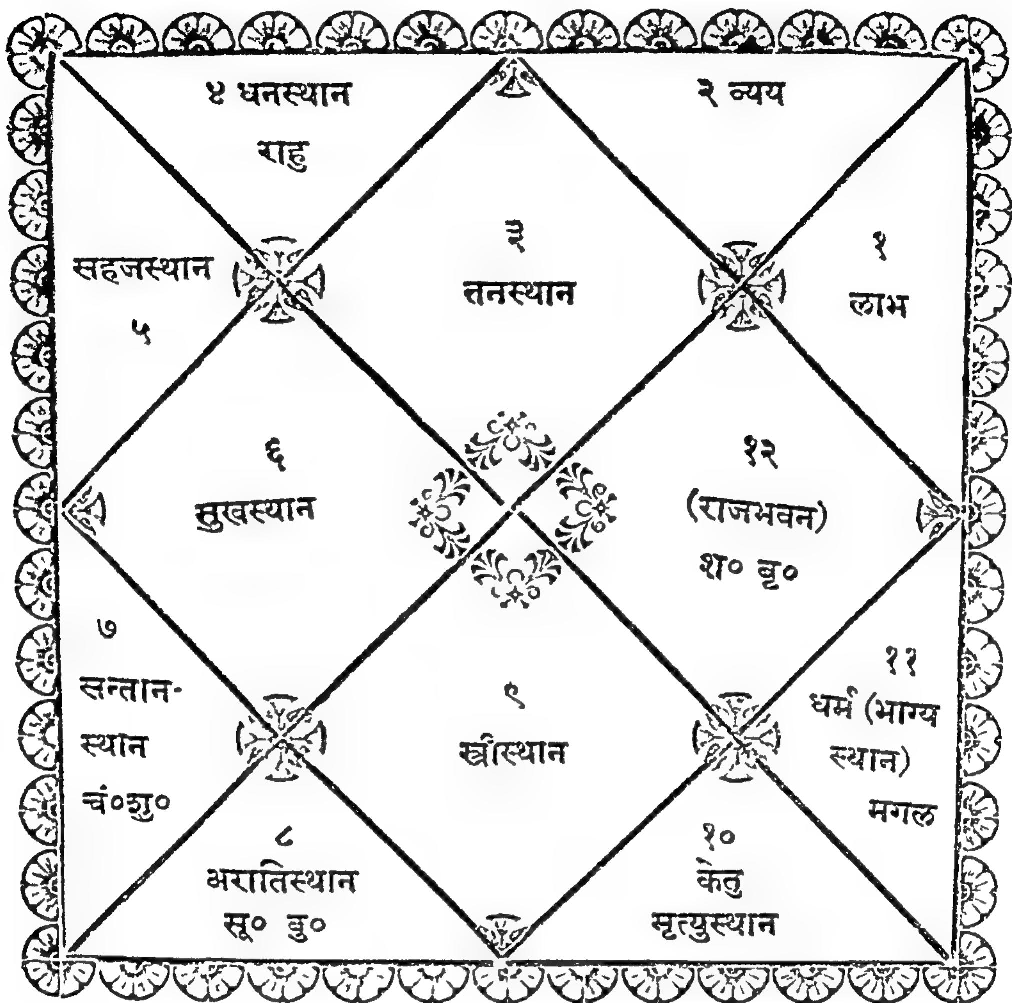
प्रकारसे दया और स्नेह करते थे वह भी उनके अतुलनीय गुणग्रामोके पूर्ण परिचायक थे, वे विपरीत धर्मावलम्वी भिन्न जातिके शत्रुको इस प्रकार प्रतिज्ञा पालनमे और उसकी विश्वासकी रक्षामे कैसे दक्ष थे उनके साथ यदि इसकी तुलना की जाय तो क्यो नहीं, दुर्गदासकी हृदयके अनलसे ऊँची प्रशंसा की जायगी? दुनाड़ाके देवालयमे औरंगज़ेवकी पुत्रीके सतीत्वको जिस भावसे निर्विघ्नतासे रख आये थे, यहां यह संदेह है, कि आगरे के तीन प्रकार वेष्टित अंत.पुरमे भी उसे उस भावसे रक्खा था या नही। वालक अजितको पहले छ. वर्षतक सवसे छिपाकर स्वजातीय भ्राताकी अपेक्षा तीक्ष्ण शक्ति और विज्ञताका कैसा चमत्कार दिखा गये है। राठौर कवियोने दुर्गदासकी जो प्रशंसा की गाथा रचना की थी। हम यहाँ पर उसका अवलम्वन कर उपसंहार करनेकी अभिलाषा करते है। राठौर कवियोका कहना है कि अगणित शुभ अनुष्ठानोसे दुर्गदासने अक्षय यश प्राप्त किया था। उनकी स्मृतिको सभीने वड़े आदरभावके साथ हृदयमे स्थान दिया था। उनकी उस वलविक्रम और साहसकी प्रतिमासे पूर्ण कार्यावलीकी ऊँची प्रशंसा प्रत्येक प्रान्तमे सुनाई देती है। वह वीरोकी मूर्तियोमे श्वेत अश्वपर चढ़े हुए है। उनकी वह वृद्ध महावीर मूर्ति राजपूत जातिके परम प्रिय रूपसे विराजमान होरही है।"

महाराज अजितके ज्येष्ठ पुत्र अभयसिहकी जन्मपत्रिकामे ४ र्थ, ७ म, ८ म, १० म, ११ श, एवं १२ श अंकवाला अर्थात् धन, सन्तान, शत्रु, मृत्यु, भाग्य और राजभवनके ग्रह उनके भाग्यका निश्चय करते है। सातमे अर्थात् पंचम सन्तान स्थानमे चंद्रमा और शुक्रने अधिकार किया है, आठमे अर्थात् शत्रुस्थानमे सूर्य और वुध विराजमान होरहे है, दशमेमे केतु है, इस कारण ४ र्थ और १० दशम अकमे राहु केतु दोनो ही अमंगल मूलक है। सौभाग्यके गृहमे मंगल और राजभवनमे शनि और वृहस्पति वैठे हुए है। अभयसिहकी इस जन्मपत्रीसे जाना जाता है, कि उनका भाग्य शुभाशुभ दोनो लक्षणोसे घिरा हुआ था।

---

(१) दुर्गदास लूनी नदीके किनारे दूनाडाके सामन्त थे। उनकी पत्थरकी मूर्ति वहा स्थापित है।

राजा अभयसिंहकी जन्मपत्रिका ।



महात्मा टाड्साहबने इस स्थान २ पर लिखा है कि "ज्योतिषी यदि अभयसिंहकी जन्मपत्री देखकर यह बता देता कि अभयसिंह पिताकी हत्या करनेवाले होंगे, तो उसकी गणना शक्तिकी प्रशंसा होसकती थी ।" कर्नल टाड्साहबने जन्मपत्रीकी गणनाका विश्वास नहीं किया, कारण कि उन्होंने पीछे लिखा है कि "जो मनुष्य इस निर्बुद्धिताके परिचायक गणनाके सम्बन्धमें दृष्टि रखते हैं वे देखैंगे कि यूरूपके ज्योतिषियोंने हिन्दुओंके यहाँसे इस रीतिको ग्रहण किया है, मैंने उसका प्रमाण दिखानेके लिये विलायतमें जिस प्रकारके हितकारी विषय लिये हैं, उसी प्रकारसे भ्रान्त विषयोंको भी ग्रहण किया है, यही दिखानेके लिये इस स्थानपर इसे प्रकाशित किया है" पर हमें ऐसा बोध होता है कि कर्नल टाड्साहबको हिन्दुओंके ज्योतिष शास्त्रकी प्रकृति परीक्षा करनेका सुअवसर नहीं मिला था ।

नवम अध्याय ९.

नाहन और सवालक पर्वतके विद्रोही सामन्तोके दमन करनेके लिये सम्राटका अजितको भेजना; अजितकी जय प्राप्ति; अजितका गंगा स्नानार्थ जाना, दिल्लीके वादशाह वहादुरशाहकी मृत्यु; सम्राट्कुमारोका आत्मविग्रह, अजीमुस्सानका हत्या करना, मुइज्जुद्दीनका सम्राट्के पदपर अभिषेक, सम्राट्का अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधिपद पर नियोजित करना, फर्रुखसियरको सम्राट् पदकी प्राप्ति; अजितका अपने पुत्र अभयसिंहको सम्राट्के यहाँ भेजना, नागौरके सामन्त मुकुन्दकी * असीम साहससे हत्या करना; सैयदके दोनो भ्राताओंका महा क्रोध, सम्राट्की सेनाका मारवाड़ पर आक्रमण, संधिबंधन, अभयसिंहका सम्राट्की सभामे जाना, अजितका दिल्लीमें जाना, सम्राट्के दोनो सैयद मंत्रियोंके साथ अजितका गुप्त संधिबंधन, फर्रुखसियरके साथ अजितकी कन्याका विवाह; जोधपुरका प्रत्यावर्तन, जिजियाकरका रहित करना, राजप्रतिनिधिरूपसे अजितका गुजरातमे जाना, वहाँकी शासन व्यवस्था और शांति स्थापन, अजितका द्वारका तीर्थमे जाना, जोधपुरकी राजधानीमे आना; दोनो सैयदोंकी आज्ञासे दिल्लीकी यात्रा, दोनो सैयदोके साथ अजितका गुप्त षड़ यंत्र, अजितके साथ साक्षात् करनेके लिये सम्राट्का जाना, भावी कुलक्षण, दक्षिणसे हुसेनअलीका आगमन; सैयद और अजितके शत्रुओंका भयभीत होना; राठौरोंकी सेनाके द्वारा अजितका दिल्लीमें प्रासाद वेष्टन, सम्राट् फर्रुखसियरकी हत्या साधन, परवर्ती सम्राट् मुहम्मदशाह आमेरराजके विरुद्ध मुहम्मदशाहकी युद्धयात्रा, अजितके निकट आमेरके महाराजका आश्रय ग्रहण करना; अजितका मुहम्मदशाहसे देश प्राप्त करना; जोधपुरमे फिर जाना, अजितकी कन्या सूर्यकुमारीके साथ आमेरपतिका विवाह, दोनों सैयदोका निधन, अजितका अजमेर पर आक्रमण, वहाँके शासनकर्त्ताका प्राणनाश; वहाँकी मसजिदोका विध्वंश करना, हिन्दूधर्मकी पुनः प्रतिष्ठा, अजितका यवन सम्राट्की अधीनता स्वीकार करके सम्पूर्णतः स्वाधीन रूपसे आत्मघोषणा अपने नामसे मुद्रा चलाना; तुलादंड परिमाण निर्द्धारण और विचारालयकी प्रतिष्ठा, राठौरोंके सामन्तोंमे श्रेणी विभाग करना; सम्राट्की सेनाका मारवाड़ पर आक्रमण, तीस हजार राठौरोंकी सेनाके साथ अभयसिंहका सम्राट्की सेनाके आक्रमण निवारण करनेके लिये जाना, सम्राट्का युद्ध करनेके लिये निषेधका विज्ञापन देना; राठौरोकी सेनासे सम्राट्की शस्य सम्पन्न देगावलीका विध्वंश होना, अभयसिंहका धौंकलकी उपाधि ग्रहण करना; जोधपुरको लौट जाना, साँभरके युद्धमे वदला देनेके लिये सम्राट्का समस्त सेनाके साथ अजितके विरुद्ध युद्ध यात्रा करना, अजमेरका घेरना, अजितकी आत्म रक्षा, सम्राट्के करमें अजमेरको समर्पण करनेमे अजितकी सम्मति; सम्राट्के डेरेसे अभयसिंहका जाना, उनकी सन्मान पूर्वक अगौनी, उसका उद्धत आचरण, पुत्रके हाथसे अजितका प्राणनाश, राठौर कविकी कर्तव्यपालनमे विमुखता, ऐतिहासिक विवरण, अजितकी अन्त्येष्टि क्रिया, छ रानी और ५८ उपनायकाओंका अजितके संग चितापर आरोहण, नाज़िर, कवि और पुरोहितोद्वारा पटरानियोको समझायाजाना और चितापर चढ़नेको निषेध करना, रानियोकी दृढ प्रतिज्ञा, चितापर चढना; अजितकी जीवनी और उनके शासन विवरणकी समालोचना।

---

* सही नाम मोहकमसिंह चाहिये।

मारवाड़के स्वामी महाराज अजितके जन्मसे सिंहासन पानेतकके समयका जो इतिहास हमको राठौर कवियोके ग्रंथोसे मिला वह पहले अध्यायमे प्रकाशित होचुका है, वर्तमान अध्यायमे भी हम उस जातिके इतिहासके अवलम्बसे राजा अजितके समयकी प्रशंसनीय लीलाओका दृश्य और अन्त समयका शोचनीय वियोगान्त दृश्य पाठकोंको दिखाना चाहते है। रठौर कविकुल चूड़ामणिने लिखा है, "संवत् १७६८ मे बादशाह बहादुरशाहने अजितको नाहन प्रदेश पर अधिकार और महावर्षवाले कैलास पर्वतके राजद्रोही सामन्तोको दमन कर अपनी अधीनताकी साँकलमे बाँधनेके लिये भेजा। वीर शिरोमणि अजितने बादशाहकी आज्ञा पालनेके लिये शीघ्र ही वहाँ सेना लेजाकर बड़ी वीरतासे शत्रुओंको पराजित किया। विजय लक्ष्मीको प्राप्त कर महा आनन्दसे महाराज अजित पीछे पवित्र जलवाली गंगाजीमे स्नान करनेके लिये सेना सहित चले। गंगास्नान और दान पुण्य करके राजा वसंत ऋतुमे अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये"। कविने इस वर्षकी और कोई विशेष घटना नही लिखी।

महाराज अजितने भारतके आगे होनेवाले दृश्यका जो अभिनय किया है इस अगाड़ीके सालमे वही काम आरंभ हुआ। कविने लिखा है, "संवत् १७६९ में दिल्लीश्वर शाहआलम स्वर्ग सिधारे। बादशाहके पुत्रोमे अहंताके कारण द्वेषाग्नि प्रज्ज्वलित हुई। अजीमुस्सान शोचनीय रूपसे मारे गये, और भारतका राजछत्र मुईजुद्दीनके मस्तक पर शोभित हुआ। मारवाड़के राजा अजितने नए बादशाहके पास शीघ्र ही भंडारी खीमसीको उपहारी द्रव्योके साथ भेजा। नए बादशाहने प्रसन्न होकर उसी भंडारीके साथ अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त कर सनद भेज दी। सम्वत् १७६९के माघ महीनेमे अजितने सत्रह हजार नगर पूर्ण अहमदाबादके अधिकारके लिये बड़ी सेना बनाई, किन्तु इस समय दिल्लीके सिंहासन पर फिर गोलयोग हुआ। दोनों सैयद भाइयोने बादशाह मुइजुद्दीनको मारकर फरुखसियरको उनके सिंहासन बिठा दिया। जुलफकारखाँ भी उसी समय मारे गये, इस कारण उस समय मुगलोकी प्रभुता एक साथ ही जाती रही। इस ओर दोनो सैय्यद भाई राजसिंहासनको अपना जान स्वामीभावसे शासन शक्तिको अपने हाथमे ले फिर अपना प्रताप प्रकाशित करने लगे। दोनो सैय्यदोकी सलाहसे नये बादशाह फर्रुखसियरने अजीतसिंहसे यह कहला भेजा कि तुम अपने पुत्र अभयसिंहको शीघ्र ही राठौर सेनाके साथ दिल्ली भेज दो। अभयसिंहकी इस समय सत्रह वर्षकी अवस्था थी। परन्तु अजीतसिंहको इस समय यह समाचार मिला कि विश्वासघाती नागौरपति मुकुन्द[1] दिल्लीके बादशाह की सभामे रहता है, और बादशाहके यहां उसका अधिक सन्मान भी है। इस लिये अजितसिंहने उस विश्वासहन्ताके जीवनविनाशके लिये शीघ्र ही कितने ही

---

(१) कर्नल टाड्साहबने एक स्थान पर मुकुन्द और एक स्थान पर मोकम लिखा है। परंतु सही नाम मोकम या मोहकमसिंह ही है।

विश्वासी सेवकोको दिल्लीमे भेज दिया । गुप्त अनुचरने अजितसिहकी आज्ञासे उस दिल्ली नगरमे जाकर असीम साहसके साथ मुकुन्दके जीवनका नाश कर डाला। अजीतसिहकी आज्ञासे उनके सेवक उस असीम साहससे निर्भय हो नागौरपतिके जीवनका नाश होनेसे महा क्रोधित हो शीघ्र ही सेना सहित मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये आगये। महा प्रतापशाली दोनो सैयदोको सेना सहित आता हुआ देख कर अजितने पहलेसे ही अपनी धनवान् प्रजाको उंयानोतमे और अपने पुत्र अभयसिहको कुटुम्व सहित राड़धड़ानामक[2] मरुस्थान पर भेज दिया । वादशाहके सेनादलने शीघ्र ही राजधानी जोधपुरको जा घेरा, वादशाहकी ओरसे शीघ्र ही अजितके पास यह हुक्म आया कि उनको भविष्य सच्चरित्रताके प्रतिभूस्वरूप अभयसिहको वादशाहके घर रखकर उनको भी सम्राटकी सभामे जाना होगा । परन्तु महाराज अजीतसिहने इन दोनो प्रस्तावोमे से किसीको भी नही माना । परन्तु दीवानसाहबकी सम्मतिसे विशेष करके कविश्रेष्ठ केसरके उपदेशसे अंतमे इस प्रस्तावमे अपनी सम्मति प्रकाशित की, कविने कहा कि दौलतखॉने जिस समय मारवाड़ पर आक्रमण किया था, उस समय मारवाड़-पति राव गांगाने अपने पुत्र मालदेवको इस भॉति नियुक्त करके भेजा था । राजा अजितसिहने पहले प्रमाण पाकर फिर कोई आपत्ति न की। अभयसिहको राड़धड़ासे वुलाया, तव यह "सम्वत् १७७० के आपाढ़ महीनेके अंतमे हुसेनअलीके साथ दिल्लीमे भेजे गये। मरुक्षेत्रके युवराजको वादशाहके यहॉसे पॉच हजार सेनाके नायक पदकी पदवी प्राप्ति हुई।"

"अजित शीघ्र ही अपने पुत्रके पीछे २ दिल्लीकी सभामे गए । अजितकी शैशव अवस्थामे जिन सम्पूर्ण राठौर सामन्तोने दुष्ट औरंगजेवके कराल कवलसे रक्षा करनेके लिये दिल्लीमे युद्धकर प्रवल विक्रम प्रकाश करके जीवन त्याग किया था, उसी दिल्लीमे उन महावली राजभक्त वीरोंकी समान समाधि चिह्न देखकर अजितके हृदयमे निद्रित प्रतिहिसा मानो प्रवल वेगसे फिर प्रज्वलित होगई, उन्होने उसी समय तैमूर-सम्राट् वंशको लोपकर प्रतिहिसा सफल करनेकी मनही मनमे दृढ़ प्रतिज्ञा की, महाराज अजित सिहने हिन्दू जातिके प्रतिनिधि स्वरूपसे इस समय चार विपयोपर यवन सम्राट्के विरुद्ध प्रवल अनुयोग उपस्थित किया,-

१ म-नौरोजा[3]।

---

(१) उर्दू तर्जुमेमे सिवानेके किलेमें भेजना लिखा है।

(२) राड़धड़ा लूनी नदीके पश्चिम तीरपर स्थित एक देश है।

(३) नौरोजा नवा दिन, प्रति महीनेके नवेदिन एक मेला होता था। जिसमे राजमहलके औरर भी वड वड़े अमीर उमराओके घरके लोग अपनी दस्तकारीके सामान लाते थे, और परस्पर क्रय विक्रय होता था। इसी नौरोजेका सालभरमे एक ऐसा मेला होता था, जिसमें केवल स्त्रियां इकट्ठी होती थीं, वड़े छोटे सवघरोकी स्त्रियोके सिवाय कोई पुरुष वहां न जा सकता था। परंतु वेगम साहवाके साथ वादशाह वेप वदलकर जाया करता था, इस मेलेमे प्राय वहुत सी अनरीत भी हुआ करती थीं। इस मेलेको अकवरने जारी किया था।

२ य-बादशाहके साथ कन्या और भगिनियोका परिणय दान करनेके लिये देशीय राजाओको बलपूर्वक राजी करना।

३ थ-गोहत्या।

४ र्थ-जिजियाकर।"

स्वजातीय राजाओके गौरवकी रक्षाके लिये हो या राठौर वंशके कलंककी प्रच्छन्न भावसे रक्षा करनेके अभिलाषी होनेसे हो, राठौर कवि इस स्थानपर एक विषयका भी उल्लेख करनेके लिये आगे नही बढ़े। सैयदके मारवाड़ पर आक्रमण करनेके पीछे अजितके निकट जो कई एक प्रस्ताव उपस्थित किये गयेथे, उनमेसे अजितकी एक कन्याके साथ बादशाह फर्रुखसियरके विवाहका प्रस्ताव भी एक था। इस विवाहके कारण जो राजनैतिक घटना हुई थी, हमारे पाठकोने उसे प्रथम कांडमे पढ़ा होगा। अजित्की किंचित्मात्र भी इच्छा न थी, कि वह पापी यवनके करकमलमे कन्या देकर अपने वंशको कलंकित करे। केवल सम्राट्की ओरका प्रबल बल देखकर और राज्यकी रक्षाका अन्य उपाय न देख वह फर्रुखसियरको कन्या देनेके लिये राजी हुए थे। यवन बादशाहने बलपूर्वक उनको इस कन्यादानके लिये राजी करके सम्राट् वंशके विनाशका साधन अपने आप करलिया। अजित शीघ्र ही अपने स्वर्गीय पिताकी समान राठौर तेजके साथ स्वाधीनता प्रभुत्व और यवन सम्राट्के प्रबल प्रतापरूपी सूर्यको अस्त करनेके लिये दोनो भाई सैयदोके साथ जा मिले। अजितने दोनो सैयदोके साथ मिलकर उन्हे चिरकाल तक हस्तगत रखनेकी इच्छासे शीघ्र ही नौरोज़ उत्सवमे राजपूत राजकुमारियोके आगमनका निवारण, देशीय राजाओको सम्राट्के करमे कन्यादानकी रीतिको रहित करना, गोहत्या निवारण तथा जिजियाकरको एक बारही दूर करदेनेके प्रस्ताव किए थे। सब बाते स्वीकृत हुई और इसके अतिरिक्त अजितके द्वारा बादशाहने यह भी स्वीकार किया कि "राजपूत गण दिल्लीकी राजधानीके जिस प्रान्तमे निवास करते थे, उस प्रान्तके देवमंदिरोमे नियम सहित शंखध्वनि होती रहै। बादशाहकी ओरसे इसमे कोई बाधा नही होगी। और हिन्दुओके देवमंदिरोको यवन किसी समय भी अपवित्र नही कर सकैगे। महाराज अजितसिंहने उसके साथ ही साथ अपने पिताके राज्यकी सीमाको भी बढ़ा लिया"।

कालकी कैसी विचित्र गति है[1] कठिन ओरंगज़ेबने जिस अजितके जीवननाशका तथा राठौर राजवंशके एक बार ही विनाशका यत्न किया, जो बाल्यावस्थामे बड़े यत्नसे पाले गये थे। और युवावस्थातक प्राणोके भयसे दूरदेशके जंगल पहाड़ोमे मारे मारे फिरते रहे थे। उन्ही अजितने इस समय दिल्लीके बादशाहकी सभामे प्रबल अधिकार प्राप्त करके हिन्दुओ के अभिलषित प्रत्येक अनुष्ठान सिद्ध कर लिये। राठौर कविने इसके पीछे लिखा है कि "समस्त आशाओके सफल होने पर अजित सम्वत् १७७२ के ज्येष्ठ मासमे

---

(१) राजस्थानके प्रथम कांडके तेईसवे अध्यायके २१५ पृष्ठमे इनके विवाहका वृत्तान्त वर्णन किया गया है।

गुजरात राज्यके प्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेके पीछे नई सनद पाकर दिल्लीको छोड़कर जोधपुरको चले गये। मंत्री खीमसीकी सहायतासे शीघ्र ही जिजियाकर सब स्थानोंसे उठा दिया गया। हिन्दूकुलतिलक महाराज यशवन्तसिंहके उपयुक्त कुमार अजितके द्वारा उसे घृणित करके रहित होनेसे सर्वत्र हिन्दूमात्रने महा आनंदित हो अंतःकरणसे अजितकी जय ध्वनिसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित करदिया। यद्यपि अजित अपनी अनिच्छा से फर्रुखसियरके करकमलमे कन्यादेनेसे मन ही मन महा दुःखित हुए थे, परन्तु उसके पलटेमे इस समय समान धर्मावलम्वी स्वजातिके प्रार्थनीय अनेक विषयोंमे सफलता प्राप्त करनेसे उनका शोक अवश्य ही विशेष कर घट गया था।"

"अजितसिंहने सम्वत् १७७२ मे अपने पिताके राज्यके प्रधान २ देशोंमे स्वय जाकर सुशाशनकी व्यवस्था की। दक्ष होनेकी इच्छासे कुमार अभयसिंहको अपने साथ लेकर चले। सबसे पहले वह जालोरमे गये। इस समय वर्षाऋतुका प्रबल वेग देखकर महाराज अजितसिंहने वह समय जोलोरमे ही व्यतीत किया। शरद्ऋतुके आते ही प्रकृति देवीने प्रसन्न मूर्ति धारण की। तव मारवाड़पतिने शीघ्र ही अपनी सजी हुई सेना साथ लेकर सबसे पहले मेवासा देशके आवू और सिरोहीकी देवड़ा जाति पर आक्रमण किया। अजितके नीमाजपर अधिकार करते ही समस्त देवड़ाओंने उनकी अधीनता स्वीकार की, और उन्होने कर देनेमे भी किंचित् विलम्ब न किया। इस समय पालन-पुरसे फीरोजखाँने आगे जाकर अजितके साथ साक्षात् करके उसका यथोचित सन्मान किया। थिराद देशके राणा अजितको एक लाख रुपया करमे दिया करते थे, और कलवी जातिके नेता क्षेमकर्ण सव प्रकारसे अधीनताकी जंजीरमे वंध गये। शक्ता चांपावत् ओर विजयभंडारी गत वर्षसे पाटन देशमे सुशाशनकी व्यवस्थाके लिये भेजे गये थे, वे भी इस समय पाटनसे आकर महाराज अजितसिंहके साथ मिले।"

"सम्वत् १७७३ मे महाराज अजितने हलवदके झालाको परास्त किया। और उनको अधीनताके जालमे जडित करके नवानगरके जाम लोगोंपर आक्रमण किया। नवा नगरके जाम एक महावली और पराक्रमी अजितके द्वारा आक्रान्त होकर अपने राज्य और प्राणोकी रक्षाके लिये इसकी शरणमे गए, और करस्वरूपमे तीन लाख रुपया और पचीस श्रेष्ट घोडी देकर उन्होने प्रवल विपत्तिसे उद्धार पाया। अजितसिंह अपने राज्यके समस्त भागोंमे सुरीति स्थापन करनेके पीछे अपनी सेना सहित द्वारका तीर्थको चले गये। गोमतीमे स्नान कर तथा तीर्थक्षेत्रमे पुण्य सचय करनेके पीछे वह अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये, आते ही उन्होने सुना कि इन्द्रसिंहने हमारे पीछे नागौर पर अधिकार किया है। इस समाचारसे क्रोधित हुए सिंहकी समान शीघ्र ही सेना सहित नगरमे जाकर उन्होने इन्द्रसिंहको फिर सिंहासनसे उतार दिया"।

---

(१) आवू शिखरके दुर्गम पर्वत दुर्गको मेवासा नामसे कहा है। यहाके आदि भूमियां कोल मीना माहीर आदि थे और समय २ पर राजपूत गण भी इस दुर्गम प्रदेशमे भागकर अपनी रक्षा करते थे।

अगले वर्ष अर्थात् सम्वत् १७७४ मे, महाराज अजितसिह भारतके क्षेत्रमे चिरस्मरणीय अभिनय करनेमे प्रवृत्त हुए। फर्रुखसियरके शाशनके समयमे दिल्लीके वादशाहकी सभामे मंत्रियोमे परस्पर झगड़ा मचा। एक ओर मुगल अमीर उमराव, और दूसरी ओर दोनो भाई सैयद खड़े हुए। उन्होने जिस प्रकारका शोचनीय काण्ड उपस्थित किया, वह इतिहास-पाठकोसे छिपा नही है। उस मुगल ओर सैयदोके आत्म-विग्रहके समयमे महाराज अजितसिह एक प्रधान अंशोका अभिनय करनेके लिये शीघ्र ही रंगभूमिमे बुलाये गए। हुसेनअली इस समय दक्षिणमे था, और अवदुल्ला वादशाहके विरुद्धमे गुप्तभावसे षड़यंत्रका विस्तार कर रहा था। दोनो सैयद इस समय महाराज अजितको एक प्रवल वलशाली देख कर सवसे पहले उन्हीको हस्तगत करनेके लिये चेष्टा करने लगे। उन्होने अजितको राजधानीमे सेनासहित आनेके लिये उनके पास क्रमानुसार पत्रके ऊपर पत्र भेजे। अजित अपना वदला लेनेका सुअवसर जानकर विक्रम वाहिनी सेनाके साथ नागर, मेरता, पुसकर, मारोट और सांभरसे होकर दिल्लीमे आ पहुँचे। सांभरके किलेमे वहुत सी राठौरसेनाको रख आये। आनेके समय अजितसिहने अपने पुत्र अभयसिहको मारोटसे जोधपुर राजधानीकी रक्षाके लिये वहाँ भेज दिया। अजित अपनी प्रवल सेना साथ लेकर आये है, यह सुनते ही सैयद उनको वड़े सन्मानके साथ लेनेके लिये दिल्लीसे चले। अजितके अलीवूर्दीखाँकी सरायमे उतरते ही सैयद वहाँ जा पहुँचा, और उनका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया। सैयदने अजितसिहके साथ मिलकर शीघ्र ही अपने गुप्त अभिप्रायको उनसे कहदिया। इस समय जयसिह और मुगल अमीर वादशाहकी ओर थे, उन्होने सैयदके दोनो भ्राताओको एक वार ही सामर्थ्यसे रहित करके वादशाहको निष्कंट करनेकी चेष्टा की थी। उन्ही जयसिहने मुगलोका नाश करनेके लिये शीघ्र ही अजितके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि अपना मनोरथ इसीसे पूर्ण होगा, इनसे वदला लेनेके लिये विशेष सुअवसर जानकर अजितने सैयदके साथ उस गुप्त संधिके करनेमे किंचित् भी विलम्ब न किया। राठौर कविका वचन है कि "विषधारी सर्प जिस प्रकार पिटारीमे वंद होता है सम्राट् फर्रुखसियर उसी भावसे इस समय रहने लगा, दोनो सैयदोने अपने प्रधान प्रतिद्वन्दी शत्रुओके नेता जुल्फकारखाँको सवसे पहले इस संसारसे विदा करके अजितके प्रथम कार्यको स्थिर कर लिया"।

जिस कठिन औरंगजेवने महा प्रताप और विपुल विक्रमके अकथनीय अत्याचारोसे तथा भारतवर्षमे पाशविक वलकी पूर्ण सहायतासे मुगलोकी शाशन शक्तिको अक्षय रखनेकी विशेष चेष्टा की थी। जिसके उस पैशाचिक शाशनसे भारतवर्षमे हिन्दू जातिके हिन्दूधर्मके और हिन्दू समाजकी दुर्गतिका एक शेष होगया था। जिस शाशन शक्तिने भारतवर्षके प्रत्येक राजाको कंपायमान करदिया था। कालचक्रकी गतिसे इस समय मुगलोकी वही शाशन शक्ति विपरीत अवस्थामे पड गई। जिस

औरंगजेबने अजितको बाल्यावस्थामे ही हत्या करके अपनी पाप प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये विशेष यत्न किये थे, जिसे अजितने अपने प्राणोके भयसे बड़ी दूर जाकर पर्वतोके शिखर पर निवास किया था, वही अजित आज दिल्लीमे आये है, और दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान बादशाह फर्रुखसियर उन अजितके साथ मिलनेके लिये अधीर होगया । अजित राजधानीमे आये है, यह सुनकर बादशाहने शीघ्र ही कोटा राज्यके हाड़ाराव भीम और खान दौरानखॉको अजितके पास, जिससे अजित बादशाहके साथ शीघ्र साक्षात् करे ऐसा प्रस्ताव करके, भेजा । राजनीतिमे चतुर अजितने अपनी इच्छासे ही फर्रुखसियरको जामातृ पद पर वरण नहीं किया था, वह जिस अनिवार्य कारणसे अपनी असम्मतिसे कन्या देनेके लिये राजी हुए थे, पाठकोको वह पहले ही विदित होगया है । जामाता बताकर भी बादशाहके ऊपर जिस स्नेहके बदले उसे राठौर वंशीके कुलमे कलंककी निशानी चिह्न समझते थे, और इसीसे वे मनमे बादशाहसे अत्यन्त रुष्ट थे । वह जो कुछ भी हो उन्होंने अपने अभिप्रायकी सिद्धिके लिये मनकी बात मनहीमे रखकर बादशाहके प्रस्तावसे उसके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की। मोतीबाग नामक रमणीक बगीचेके महलके ऊपर बादशाहके साथ अजितका साक्षात् स्थान नियुक्त हुआ । अजित इकले न जाकर अपने अधीनमे स्थित समस्त माननीय सामन्त और वीरोको साथ ले महा समारोहके साथ चले । राठौरोकी सामन्त मंडलीके अतिरिक्त उनके साथ जयसलमेरके राव विष्णुसिंह देरावलके पद्मसिंह, मेवाड़के फतेसिंह, सीतामऊके राठौर नेता मानसिंह, रामपुराके चन्दावत् गोपाल, खंडेलाके उदयसिंह, मनोहरपुरके शक्तसिंह, खिलचीपुरके कृष्णसिंह तथा और भी बहुतसे बुद्धिमान् मनुष्य अजितके साथ २ चले । अजितके केवल मारवाड़पति होनेसे ही नही, वरन् इस समय गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेसे समस्त राजपूत सामन्त उनको नेता जानकर उनके अधीनमे रहनेके लिये तैयार हुए, अजित उस समय कितने बलवान् होगये थे, शत्रु उनको किस प्रकारसे भयमय नेत्रोसे देखते थे, उसका अनुमान सरलतासे होसकता है, बादशाह फर्रुखसियर ने महाराज अजितको बडे सन्मानके साथ लिया । उनसे मिल कर बादशाहने उन्है "सप्तहजारी मनसब" अर्थात् सात हजार सेनाके नायक नियत कर उनके राज्यकी सीमा बढ़ाई, साथ ही इसके और भी एक करोड़ रुपयेकी जागीर उन्हे दी ।

इसके अतिरिक्त माहीमरातब नामक सन्मान चिह्न, हाथी, घोडे, मूल्यवान हीरे सुवर्णके म्यानसे ढकीहुई तलवार, किरीच, हीरोके सिरपेच और दो मूल्यवान् मोतियोकी माला उपहारमे दी । इस प्रकारसे महाराज अजित बादशाहसे सन्मानित होकर शीघ्र ही सैयद अबदुल्लाखांके साथ साक्षात् करनेके लिये चले । अजितके आनेकी वार्ता सुनकर अबदुल्लाखांने आगे बढ़कर उन्है बड़े आदरभावके साथ लिया । अजित और उनके सेवकोकी सामन्त मण्डली परस्पर मिली। राठौर कविके मतसे वह अत्यन्त ऊँचा सन्मान था । सैयदके साथ इस साक्षात् स्थानमे दोनोमे यह धारणा होगई कि उपस्थित राजनैतिक

अभिनयसे यातो जय ही होगी नही तो दोनो ही अपने जीवनको त्याग देंगे, अजितके साथ सैयद अबदुल्लाके इस गुप्त साक्षात् और परामर्शकी वार्ता सुनकर मुगल अमीर भय-भीत चित्तसे अनेक अनिष्टोकी शंका करनेलगे, तथा अजितके जीवनरूपी दीपकको निर्वाण करनेके लिये मुगल गण गुप्तभावसे अस्त्र हाथमे लेनेका समय ढूंढ़नेलगे।

राठोर कवि इस वातको लिख गये हे "सम्वत् १७७५ पूस मासके शुक्लपक्षके दूजके दिन वादशाह फर्रुखसियरने अजितके यहां जाकर साक्षात् किया। अजितने वादशाहके योग्य सन्मान करनेमे कोई कसर न की। उन्होने एक लाख रुपयेको एक जगह रख उसके ऊपर वादशाहका आसन विछाया, और उसके ऊपर वड़े आदरभावके साथ उसे वैठाला। इसके अतिरिक्त हाथी, घोड़े मूल्यवान हीरे और रत्नोके जडे हुए अलंकार भी उपहारमे दिये। वादशाह फर्रुखसियर अजितके सन्मानसे अत्यंत संतुष्ट हो विदा होकर अपने स्थानको चले आये। दिल्लीकी राजधानीमे इस समय एक मात्र अजित ही सवसे अधिक सन्मानित और सामर्थ्यवान् गिने जाकर सवसे पूजित होने लगे। फागुनके महीनेमे अजित और सैयदोने वादशाहके साथ साक्षात् करनेके पीछे आपसमे एक गुप्त सलाह करके एक पत्रमे अपने एक पड़यंत्रके प्रत्येक विपय लिखकर दक्षिणमे हुसेनअलीके पास भेज दिया। और उसको यथाशक्ति शीघ्रतासे आकर मिलनेके लिये अनुरोध किया।" कविने इस स्थान पर लिखा है कि "इस समय आकाश मंडलमे भावी कुलक्षण दिखाई देने लगे। चारोओर मानो घोर लोहित दावानल प्रज्ज्वलित होगई। गधोका असमयमें चिल्लाना-तथा कुत्तोके भयकर चित्कार चारोओर सुनाई देने लगे। विना मेघोके ही वज्रध्वनिने पृथ्वीको कंपायमान कर दिया। जिस वादशाहकी सभामे एक समय वरावर उत्सव होते रहते थे, जिस सभामे कुसुम कोमल लावण्यमयी युवतियोके नाचनेसे नूपुरकी झनकार सुनाई देती थी, किन्नरियोके कठसे निकलीहुई संगीतध्वनि सभीके नेत्र और मनको तृप्त करती थी, उस उज्ज्वल सम्राट्की सभामे आज घोर सूनसान, होकर अधकार छा रहा है। मानो आनेवाली विपत्तिके पूर्ण लक्षण दिखाई देरहे है। वीसदिनमे हुसेन संहारमूर्तिसे दिल्लीसे आ पहुँचा। महलके पास आते ही जयका डंका वजा, मानो वह पाशविक वलके पतनके पहले ही घोपणा करने लगा। हुसेनके साथ जो अगणित अश्वारोही आये थे उनके खुरोकी उड़ी हुई धूरिसे दिल्ली मानो घोर अंधकारसे पूर्ण होगई। अपनी सेना दिल्ली नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल कर हुसेनअली शीघ्र ही अपने भ्राता अवदुल्ला और अजितसे साक्षात् करनेके लिये गया। हुसेनअलीके सेना सहित आनेकी वार्ता सुनकर फर्रुखसियर पहलेसे भी अधिक भयभीत होगया, उसने शीघ्र ही हुसेनअलीके पास उपहार द्रव्य भेज दिए। इस समय राजधानीके मुगलनेता अपने २ स्थानोमे मौनभावसे रहने लगे थे। आकाशमे बाज पक्षीको उड़ता हुआ देखकर चिड़िया जिस प्रकार क्षेत्रमे नव दूर्वादलके साथ मिलकर प्राणोके भयसे अत्यन्त संकुचित भावसे रहती है, हुसेनके दिल्लीमे आते ही अमीर उमराव

भी उसी भावसे भयभीत होकर रहने लगे। आमेरके अधीश्वर मिरजा राजा सवाई जयसिह इस समय तेलहीन दीपककी समान प्रभाहीन होगये थे। दूसरे दिन सैयद इत्यादि सभी यमुनाके किनारे अजितके डेरोमे आकर मिले, और उन्होने अपने गुप्तकार्यको सिद्ध करनेके लिये सलाह की। सलाह होनेके पीछे यथार्थ कार्यका आरंभ होना स्थिर हुआ। अजितसिंह अपनी रणतुरंगिनीकी पीठपर चढ़े, और शीघ्र ही विपुल पराक्रमी राठौरोकी सेनाके साथ उन्होने उन डेरोमेसे दिल्लीके महलमे जाकर महलके प्रत्येक द्वार पर अपनी राठौर सेनाके पहरे बिठाकर सब प्रकारसे महल पर अपना अधिकार कर लिया"। हाय! इतिहासने किस प्रकारका फिर अभिनय किया। जिस औरंगज़ेबने मारवाड़के महाराज यशवन्तसिहको काबुलमे विप देकर उनकी हत्या करनेके पीछे योधगिरिके महल पर अधिकार करके अजितको एक बार ही राज्य हीन कर दिया था, उसी अजितने आज उस मुग़ल बादशाहके दुर्जय महल पर अपना अधिकार कर लिया। इस बातको कौन विचारता था कि सर्वस्वान्त प्राणभयसे भयभीत हुआ बालक अजित एक समय इस प्रकारके असीम साहससे उत्साहित होकर प्रशंशनीय कार्य करेगा, क्या कोई भूलसे भी ऐसा अनुमान न करसकता था? कि वह दुर्बल अजित इस प्रकारसे प्रबल स्वजाति शत्रु मुग़लबादशाहके वंशको विध्वंश करनेके लिये संहारमूर्तिसे दिल्लीके महलको अपने हस्तगत कर लेगा? राठौर कवि पीछे लिखते है कि "अजितने मानो महाप्रलयके प्रचंड सूर्यकी समान दर्शन दिया। प्रदीप्त दिन मणिरूपी सिहके आगमनसे जिस भाँति अंधकार रूप हाथियोके यूथ दूर भाग जाते है, तेलके अभावसे दीपककी शिखा जिस प्रकार बुझ जाती है, उसी प्रकारसे राजा अजितके विचारमय और प्रजाके मंगल उद्देशके लिये राज्यशाशन रूपी उज्ज्वल प्रकाशसे अराजकताका अंधकार एक बार ही दूर होजाता, परन्तु उस तेलरूपी न्यायविचारके अभावसे ही उनके शाशनका दीपक सरलतासे निर्वाण होगया। दिल्लीका राजछत्र इस समय जिस महा आघातसे कंपित और चंचल होगया था, भारतवर्ष भी शीघ्र ही उसी संवात ध्वनिसे शब्दायमान होगया। दिल्लीका खजाना सब लूटलिया गया, मुग़ल अमीर उमराओमेसे कोई भी साहस करके बादशाह फर्रुखसियरकी रक्षा करनेके लिये आगे न बढ़ सके और आमेरके महाराज जयसिह इस महा विपत्तिको आता हुआ देखकर शीघ्र ही नररक्त प्लावित दिल्लीको छोड़कर अपने राज्यको चले गये। फर्रुखसियरके प्राणनाशके पीछे शीघ्रही एक मनुष्य दिल्लीके राज्यसिहासनपर अभिषिक्त किया गया, परन्तु चार महीनेमे ही उसने पागलपनेकी दशामे प्राण त्याग किये। इसके पीछे दौलाके शिरपर भारतका राजमुकुट शोभा पानेलगा। परन्तु दिल्लीके मुगल अमीर गणोने इकट्ठे होकर इस समय

(१) सम्राट् फर्रुखसियरकी हत्याका वृत्तान्त प्रथम काडमे यथास्थान वर्णन किया गया है।
(२) सम्राट् रफिउल दाराजात।
(३) सम्राट रफ़िउद्दौला।

आगरा नगरके नेकोशाहको भारतके सम्राट् पदपर अभिषिक्त किया। अजित और अवदुल्लाको सम्राट् रफिउद्दौलाके निकट रखकर हुसेनअलीने उन मुगलोंपर सेना सहित आगरेको पयान किया "

"सम्वत् १७७६ मे, अजित और सैयदने दिल्लीसे यात्रा की, परन्तु इस समय जिन मुगलोंने नेकोशाहको सम्राट्रूपसे अभिषिक्त करके सलीमगढ़की रक्षा कीथी, वही उसे इस समय अजितको लौटा देनेके लिये राजी होगये। इस समय सम्राट् रफिउद्दौलाके प्राण त्याग करनेपर अजित और सैयदके दोनो भ्राताओंने फिर एक नवीन बादशाह मोहम्मदशाहको दिल्लीके विश्व विदित सिंहासनपर बैठाल दिया। जिस समय मारवाड़पति अजितने दोनो सैयदोंके साथ मिलकर समस्त भारतमे, एकमात्र सबमे प्रधान सामर्थ्यवान् वीरस्वरूपसे दिल्लीके सिंहासनपर अपनी इच्छानुसार मनुष्यको अभिषिक्त किया था, उस समयमे प्रवल आत्मविग्रहसे यवनराज्याके अनेक समृद्धिवान् नगर विध्वंश और दूसरे पक्षमे अनेक नगर स्वाधीनभावसे मस्तक उठासके थे। बादशाह फर्रुखसियरके स्वर्गारोहणके साथ ही साथ जयपुरके महाराज जयसिंहकी आशा भरोसा एक वार ही लीन होगया। दोनो भ्राता सैयद इस समय विशेष सुभीता पाकर अपने शत्रुपक्षके उन महाराज जयसिंहको उचित दंड देनेको शीघ्र ही सुसज्जित होगये। आमेरपति जयसिंह कमलपत्र पर स्थित जलकी समान चंचल होगये। जब नवीन सम्राट् महोम्मदशाह और दोनों सैयद अजितके साथ सेना सहित जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़कर सीकरीनामक स्थानमे पहुँचे, तब जयपुरके सम्पूर्ण सामन्तोंने अपने प्राणोंके भयसे अजितके पास जाकर उनकी शरण ली। उन्होने अजितको बुलाकर कहा, यदि आप जयपुरके महाराजकी सैयदोंके हाथसे रक्षा न करसके तो जयपुर राज्यके साथ हमारा सर्वनाश होजायगा। द्वापरमे श्रीकृष्णने जिस प्रकार अर्जुनको अभय देकर उनकी रक्षा की थी, अजितने भी उसी प्रकारसे जयसिंहको अभय दान देकर उन्हे बुला भेजा। उन्होने चांपावत् सम्प्रदायके नेता और अपने मंत्रीको जयसिंहके निकट भेज कर कहला भेजा कि महाराज अब कुछ भय नही है। अभय पाकर जयपुरपति जयसिंह उस चांपावत् नेता और अजितके मंत्रीके साथ तुरन्त ही उनके पास चले आये। जयपुरके महाराजने मानो प्रलयके मुखसे उद्धार पाया। अजितने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे मोहम्मदशाहको दिल्लीके सिंहासन पर बैठाया था, उसी प्रकारसे राजा जयसिंहको महा विपत्तिसे उद्धार कर दिया। बादशाह मोहम्मदशाहने इस समय अजित पर अत्यन्त संतुष्ट हो उनको अहमदाबाद देशकी एक कालीनदानकी सनद देकर उन्हे अपने राज्यमे जानेकी आज्ञा दी। अजित आमेरके जयसिंह और बूंदीके बुधसिंह हाडाके साथ महा आनंदित हो अपनी राजधानी

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि सम्वत् १७७६ में अजीत और अवदुल्लाखां भी दिल्लीसे रवाना हुये, पर मुगलोंने नीकोशाहको सौंप दिया और वह सलीमगढ़में कैद किया गया।

जोधपुरकी ओरको चले गये । और जाते समय रास्तेमे मनोहरपुरके सेखावत नेताकी एक परम सुन्दरी कन्याके साथ विवाह कर लिया। सुखदाई शरदृऋतुके पहले आश्विन मासमे महाराज अजीत जोधगिरिमे गए, वहाँ आमेर पतिने सूरसागरके किनारे और हाड़ा रावने नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल दिये ॥ "

राठौरोके कवि कर्णीदानने इससे पीछे लिखा है "ऋतुराज वसन्तके आते ही शरद् ऋतु विदा होगई । नवीन आम्रमुकुलके अमृतमय सौरभसे भौर मतवाले होगए। पादपराजि नवीन रसके आनेसे नवीन पत्तोके आभूपणोसे अपने सर्वाङ्ग शरीरको भूपित करके कमनीय दृश्य दिखाने लगी। भौरोने गूॅ गूॅ शब्द करते २ ऋतुपति माधवके जयका कीर्तन प्रारंभ कर दिया। चारोओर आनन्द ध्वनि होने लगी, देवता तथा स्त्री पुरुष सभी आनन्दके समुद्रमे मग्न होगये। ऐसे सुख समयमे आमेरपतिने लालरंगके वस्त्र धारण किये, रमणीय अजितकी कन्या सूर्यकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया। चिर प्रचलित रीतिके अनुसार महाराज अजितने इस कन्यादान करनेके पहिले इसके सम्बन्धमे चांपावत् सम्प्रदायके आदिप्रधान अर्थात् प्रधानमंत्री कूॅपावत् संप्रदाय भंडारी दीवान और अपने गुरुदेवकी अनुमति ले ली। यदि हम इस विवाह संबन्धके संपूर्ण वृत्तान्तको वर्णन करे तो एक बड़ा भारी ग्रंथ वन जायगा, इस कारण इसके सम्वन्धमे कुछ थोड़ा सा ही लिखते है "।

अगले वर्प, अर्थात् संवत् १७७७ महाराज अजितके जीवनके पक्षमे एक चिर-स्मरणीय वर्ष हुआ था। महावीर मालदेवके पुत्र उदयसिहने वादशाह अकबरकी अनुकूलता स्वीकार करनेके पहले "राजा" की उपाधि धारण करनेसे अकबरके चरणोमे जिस जातीय स्वाधीनताको वेच दिया था, अजितने इस वर्षमे उसी जातीय स्वाधीनताको पुनः संचय करके भारतवर्षमे अपनी कीर्त्तिको अक्षय रखनेका उद्योग किया। सूर्यप्रकाशनामक ग्रंथसे जाना जाता है कि सम्वत् १७७७मे वर्षाऋतुके आने पर आमेरके महाराज जयसिह और बूंदीके राव बुधसिह इस वर्षाकाल तक अजितके ही पास रहे, इसी समयमे यह समाचार आया कि मुगलोने वलवान होकर वादशाह मुहम्मदशाहकी सहायतासे दोनो भ्राता सैय्यदोकी हत्या की है, और महाराज अजितका सर्वनाश करनेके लिये वह उद्योग कर रहे है। वीर श्रेष्ठ अजितने यह समाचार पाते ही क्रोधित हुए सिहकी समान रुद्रमूर्तिसे तलवार उठाकर शपथ की, चाहे जिस रीतिसे हो मै अजमेर पर अवश्य ही अपना अधिकार कर लूगा नरेश्वर अजितने शीघ्र ही आमेरके महाराज जयसिहको विदा दी। वारह दिनके वीचमे ही मारवाड़पति अपनी वलवान् सेनाके साथ मेरतामें आ पहुॅचे। और अत्यन्त शीघ्रतासे उन्होने सेनादलके साथ मुसलमानोको अजमेरसे भगाकर अजमेरके किलेके ऊपर राठौरराजकी पताकाको लगा दिया। अजमेरमे स्थित सम्राट्की ओरके प्रधान

---

(१) दोनो सैयदोकी हत्याका वृत्तान्त प्रथम काडमे प्रकाशित हो चुका है, इसी कारणसे हमने यहाॅपर उसको दुवारा नहीं लिखा है।

शाशनकर्ताका प्राण नाश करके अभेद्य किले तारागढ़ पर अधिकार कर लिया। हिन्दुओके देवमंदिरोमे आज फिर शंख और घंटेका शब्द सुनाई देने लगा, और मुसल्मानोकी मसजिदोमें (बांगदेना उपासनाके अर्थ बुलानेका स्वर) एक वार ही वंद होगया, जिस अजमेरमे केवल कुरानोका पाठ ही सुनाई देता था, इस समय उसी अजमेरमे पुराणोके पाठ आरंभ हुए। और मसजिदोके स्थलमे मन्दिरावलीने अधिकार कर लिया, समस्त काजी भाग गये, और ब्राह्मणोने इस समय फिर अपनी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त कर ली। जिस अजमेरमे केवल गोहत्या हुआ करती थी, उसी अजमेरमे इस समय पवित्र होमकुंड स्थापित होने लगे। विजयी अजितने सांभरके लवण ह्रद, डीडवाना देश और अन्यान्य वहुतसे देशोको एक २ करके अपने अधिकारसे कर लिया। मारवाड़पति अजित चारो ओर अपने जयभेदी शब्दसे विजयकी पताका उड़ाकर अपने पिताके सिंहासन पर सम्पूर्ण स्वाधीनरूपसे विराजमान हुए। उनके मस्तक पर स्वाधीन राजछत्र शोभायमान होने लगा। अपने ही नामका सिक्का चलाया, और स्वतंत्र तुलादंडको नियुक्त किया, और अपना स्वतंत्र परिमापक गज चलाया, स्वतंत्र ही सेर इत्यादिके बॉटखाराकी सृष्टिकी, और सर्वत्र स्वतंत्र विचारालयके स्थापन करनेमे किंचिन्मात्रका भी विलम्ब न किया। अपने अधीनके सामन्तोकी पद मर्यादा भी नियुक्त कर दी। और उन सामन्तोके सन्मानके लिये, सोटा नौबत पताका आदि नियत करके अपनी स्वाधीन अवस्थाका समस्त अनुष्ठान कर लिया। दिल्लीके अश्वपतिकी समान अजित अजमेरमे पूर्ण स्वाधीन भावसे रहने लगे। शीघ्र ही यह समाचार समस्त भारतवर्षमे अधिक क्या मक्के और ईरानमे भी फैल गया. सम्पूर्ण मुसलमानोने जान लिया कि अजितने अपने जातीय धर्मकी उन्नति फिर कर ली, और समस्त मरुक्षेत्रसे मुसलमान धर्म एक वार ही दूर होगया"।

सूर्यप्रकाशकारने आगे लिखा है सम्वत् १७७८ मे मुग़ल सम्राटने अजमेर देश पर फिर अपना अधिकार करनेका विचार किया। मुजफ्फ़रखॉ सम्राट्के द्वारा सेनापति पद पर नियत होकरवर्षाॠतुमे ही सेना लेकर अजमेरकी ओर चला। मुग़ल सम्राट्की अधीनताकी शृङ्खलाको छेदन करनेवाले वीर श्रेष्ठ अजितने सम्राट् की सेनाका समाचार पाकर अपने असीम साहसी पुत्र अभयसिंहको शत्रुओका नाश करनेके लिये भेज दिया। कुमार अभयसिंहके साथ मारवाड़के आठ वीर सामन्त और तीस हजार अश्वारोही चले। वाहिनीके दक्षिणमे चांपावत गण वॉई ओर कूंपावत् गण, तथा करमसोत मेरतिया जोधा इंदा भाटी सोनगरा देवड़ा खीची धांन्धल

---

(१) अजितने दिल्लीके मुग़ल सभाके आदर्शमें यह समस्त ध्वजा, दंड, नौवत, आशा सोंटा आदि इन सबको सामन्तोकी श्रेणीमे विभाजित कर दिए थे, जोधपुरमे आज तक वह रीति विराजमान है। राजपूत गण सर्व साधारणके पहले दिल्लीके प्रवल प्रतापान्वित बादशाहको अश्वपति कहकर उल्लेख करते थे। उनके मतसे अश्वपति दूसरी श्रेणीका सन्मान सूचक है। और गजपति प्रथम श्रेणीका सन्मान सूचक है।

और गोगावत् इत्यादि सम्प्रदायकी सेनाके प्रधान, वाहिनी रूपसे कुमार अभयसिंहके अधीनमे जय २ कारके स्वरसे पृथ्वीको कंपित करते हुए यवनोंका संहार करनेके लिये चले। आमेरसे राठौर और सम्राट्की सेनाका परस्पर मुकावला हुआ। परन्तु मुजफ्फरने राठौर सेनाकी संहारमूर्ति देखकर विना समय ही भयके मारे भाग कर अपने नामको कलंक लगा दिया। महावीर अभयसिंह वादशाहके सेनापति और सेनाको भीरु कापुरुषोकी समान आचरण करता हुआ देख कर उत्तेजित हो वादशाहको दमन करनेके लिये उस प्रवल सेनाके साथ आगे वढ़े, अभयसिंहने एकादि क्रमसे शाहजहानपुर पर अधिकार कर नारनोलको लूटा और पटना अर्थात् तंवरावाटी और रिवाड़ीसे वहुतसा धन संग्रह कर लिया। यह जानेके समय प्रत्येक ग्राम २ नगर २ मे अग्नि लगाकर जाने लगे। अलीवरदीकी सराय तक वह अग्नि जल उठी। अभयसिंहके उस महा पराक्रमसे सारी दिल्ली और आगरा मारे भयके कंपायमान होने लगे। अभयसिंहके इस असीम साहसको देखकर असुर गण पादुका छोड़कर प्राणोके भयसे चारो ओरको भागने लगे। और अभयको यवन वंशका विध्वंश करते हुए देख कर उनको 'धॉकल' अर्थात् वंशविलोपक उपाधि दी। कुमार अभयने इस प्रकारसे चारो ओर अपने वीर विक्रमको प्रकाशकर सांभर और लूधानासे जाकर नरूकापतिकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया।

कवि इसके पीछे लिख गये है, सम्वत् १७७९ मे विजयीकुमार अभयसिंहने सांभरमे जानेके समय वहांकी सेनाकी संख्याको वढ़ाकर किलेको अभेद्य कर लिया। इस वर्षमे महाराज अजित अजमेरसे आकर अपने पुत्र अभयसिंहके साथ मिले। कश्यपके साथ जिस प्रकार सूर्यका साक्षात् हुआ था। उसी प्रकार अजितके साथ उनके पुत्र अभयसिंहका साक्षात् हुआ। अभयसिंहने प्रचंड सूर्यकी समान ध्वान्तस्वरूप मुजफ्फरको परास्त करके हिन्दू जातिके सुखकिरणको प्रभासित करादिया था, मुगल सम्राट् मोहम्मदशाह फिर पिता पुत्रका मिलन देखकर महा भयभीत होगये। उन्होंने अजितके उद्धत आचरणको निवारणकर अजितके साथ फिर मित्रताके होनेकी आशासे चार हजार सेनाके साथ नाहरखांको अजितके निकट सांभरमें भेज दिया। परन्तु नाहरखां दौत्यकार्यमे अनुपयुक्त था। विशेष करके वह मनुष्य अत्यन्त उत्कट भाषाका प्रयोग करके शीघ्र ही चार हजार यवनसेनाके साथ उस सांभरके रणक्षेत्रमे निहत

---

(१) धान्धल और गोगा सम्प्रदाय मरुक्षेत्रके अत्यन्त प्राचीन अनधीन सामन्त है। धांधल* गण राउ गागाके वंशधर और गोगावत् गण प्रसिद्ध चौहान गोगाके वंशमें उत्पन्न हुए। सतलजके किनारे जवतक पहले पहल यवनोने आगमन नहीं किया था, उस समय तक इस वीर श्रेष्ठ गोगाने महा वीरता प्रकाश करके सतलजकी रक्षा की थी। गोगाका नाम राजस्थानमें सर्वत्र प्रसिद्ध है।

(२) नरुका सम्प्रदाय जयपुर राज्यमें एक प्रधान सामन्त वंशीय था, इनका विवरण यथा समय प्रकाश किया जायगा।

---

* धाधल तो राठौर है गांगाके वंशके नहीं है। राव आसथानके बेटे धांधलके वंशज है।

होगया। इस समय चूड़ामणि जाटके पुत्रने आकर अजितकी शरण ली। बादशाह मुहम्मदशाहने इस समय राज्यके चारोओर असंतोषकी अग्नि प्रज्ज्वालित देख कर तथा हिन्दू जातिकी पुनर्वार उन्नति और अपने बलको अत्यन्त क्षीण होता हुआ देखकर भारतका राजमुकुट छोड़कर मक्के तीर्थमे जाकर वहॉ रहनेका विचार किया। परन्तु मारवाड़पति स्वाधीन नरश्रेष्ठ अजितने जो नाहरखॉकी हत्या की थी, इससे बादशाह महाक्रोधित होकर एक बार ही इनसे बदला लेनेके लिये उत्तेजित होगया। जितनी सेना भारतराज्यके बाईस राजप्रतिनिधियोंके अधीनमे थी, मोहम्मदशाहने अजितको दमन करनेके लिये उस सब सेनाको इकट्ठा किया। उस प्रबल वाहिनीके अधिनायक पदपर आमेरके महाराज जयसिंह, हैदरकुली, इरादतखॉ बङ्गस इत्यादि प्रधान २ वीर नेताओंको नियुक्त करके अजितके विरुद्ध अजमेरको भेज दिया। श्रावणके महीनेमे उस सेनाने अजमेरके तारागढ़को जाकर घेर लिया। अभयसिंह उस किलेकी रक्षाका भार अमरसिंहके हाथमे सौप सेना लेकर चले। यवनोंकी सेना चार महीने तक इस किलेको घेरे रही। परन्तु तो भी अपना अधिकार न कर सकी। सम्पूर्ण भारतके साम्राज्यकी सेना तो एक ओर, और मारवाड़पति अजित अकेला एक ओर था। उन चार महीनोमे अजित असीम साहस करके राठौरोंके बाहुबलको प्रकाश करनेसे शान्त न हुआ। अंतमे आमेरपति जयसिंहके प्रस्तावसे महाराज अजितने बादशाहके साथ संधि करनेकी सम्मति प्रकाश की। बादशाहकी ओरके यवन और अमीरोंने कुरान हाथमे लेकर संधिके नियमोंको पालन होनेके लिये शपथ की, अजित बादशाहको अजमेर देनेके लिये राजी होगये। इसके पीछे अभयसिंह जयसिंहके साथ तुरन्त बादशाहके डेरोंमे गये, डेरोंमे यह प्रस्ताव हुआ कि अभयसिंह जो बादशाहकी अधीनता स्वीकार करेंगे तो इसके प्रमाणमे उनको बादशाहकी सभामे जाना होगा। आमेरपति जयसिंहने कहा कि अभयसिंहकी ओरसे कोई आपत्ति नही होगी, और वही इसके साक्षी भी बन गये, परन्तु अभीत हृदय अभयसिंहने तलवार हाथमे लेकर कहा कि यह तलवार ही हमारे जीवनकी साक्षी है"!

इस स्थान पर कर्नल टाड्साहब लिखते है कि मारवाड़के युवराज बादशाहकी सभामे आशातीत ऊँचे सन्मानके साथ ग्रहण किये गये थे। अभयसिंहने विचारा कि उनके पिता ही एक मात्र बादशाहकी दहिनी ओर प्रधान आसन पानेके अधिकारी है, इस कारण जब कि मै उनके प्रतिनिधि स्वरूपसे आया हूँ, तब मै भी उसी प्रकारसे उस सन्मानसूचक आसनका अधिकारी हूँ। समस्त भारतवर्षमे दिल्लीके बादशाहकी सभाका नियम और वहांकी रीति सबसे कठिन है, परन्तु अभयसिंहने इस पर तनिक भी ध्यान न दिया, और गर्वित हो सभामे पैठ समस्त महामान्य प्रधान २ अमीर और उमरावको पीछे छोड़ कर वे आगे बढ़े, अधिक क्या कहै सिंहासन की एक सीढ़ी पर पैर रखते ही एक अमीरने देख लिया तब उसने इनको रोका,

---

(१) भरतपुर राज्यके प्रतिष्ठाता।

इससे अभयसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो तलवार अपने हाथमे ले ली । सम्राट् मोहम्मद शाहने इस समय भयंकर विपत्ति देख कर अपनी बुद्धिवलसे उसी समय अपने गलेमेसे हीरोका हार उतार कर अभयसिंहके गलेमे डाल दिया, इसीसे वह शोचनीय कांड दूर होगया । मोहम्मदशाह यदि इस समय ऐसा व्यवहार न करते तो जिस प्रकार अमरसिंहने अपनी तलवारके वलसे सभामे रुधिर वहा दिया था, उसी प्रकारसे अभयसिंह भी करते ।

हम यहां तक जिन अजितके प्रशंशनीय वीर लीलाओका अभिनय वर्णन करते आए है, यहाँ पर उन्ही राठौर राजकुलके मध्याह्न मार्त्तड अजितके उस पूर्ण प्रकाशमय जीवनावसानको वर्णबद्ध करनेके लिये विवश होते है। हमने जिन राठौर कविके इतिहासकी सहायतासे अजितकी जीवनी–अजितका वल विक्रम–अजितकी यवनपराधीनताके छेदनसे स्वाधीनताके अमृतमय सौरभकी सुगंधि–अजितके द्वारा स्वजाति और अपने धर्मका जीवन साधनसे प्राणपणकी समान महा शक्तिकी आराधनाको वर्णन किया, अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह कवि मारवाड़पति राठौर अजितके जीवन नाटकके उस वियोगान्त अभिनयको वर्णन करके एक बार ही मौन होगये । ऐसा वोध होता है कि उस वियोगान्त कथाको वर्णन करके, राठौर राजवंशकी कलंककालिमाको प्रकाशित करनेके अत्यन्त ही अभिलाषी होकर कवि अपने कर्त्तव्य पालनसे विमुख होगये । महामान्य टाड् साहव लिखते है कि कुमार अभयसिंह अपने पिता अजितकी असम्मतिसे दिल्लीके वादशाहकी सभामे गये । अभयसिंह इस वातको भली भाँतिसे जान गये थे, कि उनके कलुषित हृदयमे जो गंभीर पापकल्पना विराजमान होरही है वह शीघ्र ही सफल होजायगी, इसी लिये वह अपने जन्मदाता पिताकी आज्ञाको न मानकर दिल्लीको चले गये। अभयसिंह महावीर महायोधा असीम साहसी और प्रवल पराक्रमी थे। परन्तु राठौर राजकुलाङ्गार भी थे। यद्यपि यह महामान्य टाड् साहवने नही कहा है, तथापि हम मुक्तकण्ठसे कह सकते है कि अभयसिंहने जिस घृणित कार्यको करके पिताकी प्राणहत्याके द्वारा राठौर राजवंशमे जिस प्रकारका कलंक लगा दिया था पाठकोने उसे प्रथम कांडमे पढा होगा, इसी कारण यहांपर उसके दुवारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नही है। यद्यपि अभयसिंहने स्वयं अपने हाथसे अपने पिताका प्राण नाश नही किया । परन्तु उनके प्राणनाशका मूलकारण वही थे–वही पितृ हत्याके पापके महा पातकी थे। अभयसिंहने राज्यप्राप्तिकी आशासे अपने भाई बख्तसिंहको लोभमे डालकर [1] पिता अजितको अकालमे ही इस लोकसे चिरकालके लिये विदा किया था,

हमने जिन राठौर कवियोके लिखे हुए काव्यके इतिहासके अवलम्वनसे इन अजितकी जीवनीको वर्णन किया, वह दोनो इतिहास ही उन अजितके प्राणहन्ता अभयसिंहकी आज्ञासे और उनकी अध्यक्षतामे लिखे गये थे । सूर्यप्रकाश ग्रथसे अजितके इस अकालमृत्युके विषयमे केवल इतना ही वर्णन लिखा है

(१) प्रथम काड २९ अध्यायके ९२८ पृष्ठमे देखो।

कि "अजित इस समय स्वर्गको चले गये" परन्तु किसने उनको वैजयन्त धाममे भेजा, यह नही लिखा है। परन्तु राजरूपक ग्रंथकारने एक वार ही मौन न रह कर अजितके उस शोचनीय निधनसे प्रबल शोकके वेगको अपने मन ही मनमे रख कर सत्यकी उज्ज्वल प्रभाको गुप्त रख कर लिख दिया है कि "दूसरे अजित स्वरूप अभयसिंहका अश्वपतिके निकट परिचय हुआ। अजित इस समाचारको पाकर महा आनंदित हुए। परन्तु इस संसारमे स्वल्पस्वरूप सभी वस्तु असार है। पहले हो अथवा पीछे हो समय आने पर करालकालके ग्रासमे एक दिन सभीको जाना होगा। अखंड प्रतापशाली बादशाह वा अमित बलशाली महाराज क्या मृत्युके मुखसे अपनी रक्षा कर सके थे? इस संसारमे हमारे रहनेका समय पहले ही नियत होगया है, हम कभी भी अपनी इच्छानुसार नियत किये हुए समयके अतिरिक्त एक मिनटको भी जीवित नही रहसकते। हमारे इस पृथ्वी पर जन्म लेनेके समय विधाताने हमारे मस्तक पर भाग्यकी लिपि–परमायु नियत करदी है। उस नियमके घटाने वढ़ानेकी किसीको भी सामर्थ्य नहीं है, भाग्यमे जो लिखा है वह अवश्य ही होगा। गोविन्दकी आज्ञासे इन्द्रके अवतार स्वरूप अजित इस समय मृत्युलोकमे अपने प्रवल यशको फैला कर अपने नामको अक्षय कर सुरलोकको चले गये। सारांश यह है कि शत्रुओके कुलकंटक स्वरूप महाराज अजित भगवान् की उस आज्ञासे इस संसारसे विदा होकर परलोकको चले गये। इन्होने मुसलमानोको उचित दंड देकर अपने जातीय धर्मके गौरवके सूर्यको भलीभाँतिसे उदित कर दिया था। मरुक्षेत्रके महाराज वैकुंठधामको चले गये, राजधानी जोधपुर गाढ़शोकसे परिपूर्ण होगई, चारो ओर हाहाकारका शब्द सुनाई देने लगा। प्रत्येक प्रजाने भयभीत हृदयसे नेत्रोमे जल भरकर परस्पर रुदन किया "हमारा सूर्य अस्ताचलको चला गया है।" यमराजके अधिकारका समय उपस्थित होते ही कौन उसको रोकनेकी सामर्थ्य रखता है?–क्या पाँचो पांडवोने हिमालयके प्रबल हिमानीमंडित देशमे प्राण त्याग नही किये? दाताकुल चूड़ामणि महाराज हरिश्चंद्र भी अपने भाग्यकी लिपिका खंडन नही कर सके। इस संसारमे कौन ऋषि, मुनि, साधु, कौन मनुष्य कौन पशु, पक्षी, कीट, पतंग ऐसा है, जो मृत्युके हाथसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हो, अधिक क्या महाराज विक्रम और कर्णको भी यमका दंड स्वीकार करना पड़ा अस्तु महाराज अजित् किस प्रकारसे उस कालके गालके जालसे उद्धार पानेकी आशा कर सकते थे"।

राठौर कुल धुरन्धर अजितकी जीवनीकी समालोचनाके पहले हम यहाँ पर राठौर कविका अनुसरण करना ही उचित समझते है। कविश्रेष्टने लिखा है, सम्वत् १७८० के आषाढ़ महीनेके कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको मरुक्षेत्रके "आठ ठाकुरौत्" अर्थात् प्रधान अष्ट सामन्तोके अधीनमे स्थित सत्रहसौ राठौरवंशी वीर नंगा सिर किये नंगे पैरो नेत्रोमे जल भरे शोक संतापित हृदयसे अपने स्वर्गको गये हुए

महाराज अजितसिंहके शवके निकट अंतसमयमे इकट्ठे हुए । उन्होने मृतक महाराजके शवको एक नौकाकृति रथीमे रखकर चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बड़ी धूमधामके साथ राजश्मशान भूमिमे लाकर रक्खा । चंदन काष्ट अनेक प्रकारके सुगंधित द्रव्य, भारी भारी तुला, वहुतसे घी और कपूरसे शीघ्र ही महाराजकी चिताको सजा दिया। कविकी लेखनी किस प्रकारके हृदयसे इस हृदयभेदी शोककी घटनाका वर्णन करै? नाजरने (रावॅल) महलमे जाकर "रावसिधारे" कहा । यह सुनते ही चौहानी रानी सोलह दासियोके साथ आकर राजपूत रानियोके कहने योग्य वचन वोली, आज हमारे वड़े सौभाग्यका दिन है कि जिस वंशमे हमने जन्म लिया है वह वंश आज उज्ज्वल होगा । जिनके साथ चिरकाल तक एक सग जीवन विताथा आज किस प्रकारसे उनको परित्याग करूँ ?"

जेसलमेरकी शाखामें उत्पन्न हुई रावलभीमकी कन्या महा ऊँचे वंशकी भट्टियानी रानीने चक्रधारी श्रीकृष्णके चरण कमलोमे प्रार्थना करके कहा, "मै आनंदित होकर अपने प्राणपतिके साथ जाती हूं, हे प्रभो ! मैने तुम्हारे चरणोकी शरण ली, मेरे सतीत्वकी रक्षा करो । देरावरकी राजनंदिनी रानी मृगावती, निष्कलङ्क वंशीय तॅवर रानी चावड़ा रानी और सेखावत रानी, ये सभी भट्टियानी रानीके समान पतिके साथ जानेके लिये हरिका नाम कीर्तन करनेलगी । इन छाहो रानियोके हृदयमे मृत्युका भय तथा प्रज्वलित चिताकी अग्निमे दग्ध होनेका भय किञ्चित् भी नही हुआ । यही महाराज अजितकी प्रधान रानियां थी, इन्हींके समान महाराजकी ५८पट प्रणयिनी उपस्त्रियोने भी इसी भांतिसे चिताकी अग्निमे भस्म होनेका विचार किया वे वोली "ऐसा सुअवसर ऐसा सुदिन अव कव आवैगा, यदि हम जीवित रहै तो रोग आकर हमे आक्रमण करैगा, हम कमरेमे शय्याके ऊपर शयन करके अपने प्राणोको खोदेगी । जैसे कि समस्त जीवोको यमराज ग्रास करलेते है, । जव कि एक समय हमै भी उसी यमके करालग्रासमे पतित होना होगा, तव फिर क्यो हम इस समय अपने स्वामीका साथ छोड़कर अपयशकी भागी वनै ? इस घोर कलिकालसे हमै विदा लेनी ही उचित है । " गंगाजीकी रेणुकाको मस्तक पर लगाकर गलेमे तुलसीकी माला पहरते समय भट्टियानी रानीने कहा, "हमारे

(१) वैतरणी नदीके पार होनेके लिये राजपूतलोग राजाके शवको तरीकी समान आकार वाली रथीमे रक्खा करते है ।

(२) रायलएशियाटीक सोसाइटीकी पुस्तकके प्रथम वालूमके १५२ पृष्ठमे इस रीतिका वर्णन हुआ है ।

(३) अन्त पुर अर्थात् जनाने महल ।

(४) अजितने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे ही इस रानीके साथ विवाह किया था । यही पितृहन्ता अभयकी माता थी ।

(५) भाटी जातिकी प्राचीन राजधानीका नाम देरावर है।यह रानी उसी राजवंशमे उत्पन्न हुई थी।

(६) इनके पिता दिल्लीके प्राचीन स्वाधीन हिन्दू राजवंशीय थे ।

(७) अगहलवाडा पत्तनके प्रथम राजवंशधर इन्हींके पिता थे ।

प्राणपतिके अतिरिक्त हमारा जीवन ही मरण स्वरूप है " इसी प्रकारसे प्रत्येक रानीने ही पतिके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, नाजिरने उनको बुलाकर कहा, "इस समय तुम्हारा संग जाना सुखदाई नहीं है। आप जानती हैं कि चदनकाष्ठ अति शीतलहै, परंतु प्रज्ज्वलित अग्निका संयोग होते ही उसकी वह शीतलता दूर हो जायगी, तव क्या आप इस इच्छाको अव्याहत रख सकेंगी? जिस समय वह भयंकर अग्निकी शिखा आपके कोमल शरीरको दग्ध करेगी, तब या तो आप उस दारुण पीड़ासे अधीर होकर चितासे भागनेका उद्योग करेंगी और या आप उस दारुण पीड़ाको सहन न करके उठकर चल देंगी, तब आपके पतिके वंशको कलंक लग जायगा। आप सब विपयोंको भली भाँतिसे विचार करके देख लीजिये, और मेरे कहनेसे आप जिस महलमें रहती है उसीमें निवास करिये। आपके चिरजीवनने इन्द्रानीकी समान सुख भोग करके शरीरमें विविध भाँतिकी सुगंधित वस्तुओंका शरीरमें लेप कर, फूले हुए फूलोंकी सुगंधिको सूँघा है, तब अग्निकी किरणको आपका कोमल शरीर सहन न कर सकैगा, चिताकी प्रज्ज्वलित अग्निकी बात तो फिर कौन कहै।" अंतःपुरके रक्षकको विशेष आग्रहके साथ निवारण करते हुए देख कर रानीने कहा "हम समस्त संसारको छोड़ सकती है, पर अपने प्राणपतिको नहीं छोड़ सकती।" इसके उपरान्त समस्त रानियोंने स्नान करके सुन्दर वस्त्राभूपण धारण किये, और महाराज अजितके चरण कमलोंमें इस जन्मका अंतिम प्रणाम किया। मंत्री श्रेष्ठ, कविवृन्द, तथा पुरोहित यह सभी प्रत्येकरानीको चितापर चढ़नेसे निपेधकरनेलगे। पटरानीने चौहानराज-नंदिनीको बुलाकर कहा—कि आप स्वामीके साथ न चलिये, कारण कि आपके दोनो पुत्र अभय और वख्तको कौन स्नेह सहित पालन करेगा? आप उनके लिये जीवित अनाथोंको अन्नदान दरिद्रियोंको धनदान और साधुओंको धनदेकर धर्मकर्म करतीहुई पवित्र भावसे अपने जीवनको व्यतीत कीजिये। रानीने उत्तरदिया "यद्यपि यह वात सत्य है परन्तु महाराज पांडुकी रानी कुंती अपने पतिके साथ नहीं गई, उन्होने जीवन धारण करके अपने पाँचो पुत्रोंके सुख और ऐश्वर्यको देखना चाहा था, परन्तु इससे क्या उनके जीवनकी लालसा पूर्ण हुई? यह जीवन असार है, छायावत् है, यह देह मंदिर केवल दुःखमय है। हमैं अब आप न रोकिये, प्राणपतिके साथ प्रज्ज्वलित अग्निमें इस दुःखमय देहके समर्पित होते ही हमारे शोकका अंत होजायगा।"

इसके पीछे कविने उनके सहगमनके सम्बन्धमें लिखा है, कि "शीघ्र ही बाजा बजने लगा, महाराज अजितके शवके साथ स्मशानभूमिमें जानेवाली हजार२ सेना सहस्र२ प्रजा एक स्वरसे हरिका नाम लेती हुई जाने लगी। वर्षाऋतुमें जिस प्रकार

(१) जोधपुर राजदरवारमें समस्त कर्मचारियोंका दिल्लीके सम्राट् महलके समान यावनी नाम रक्खा गया था। इसी लिये अन्त पुरके रक्षक एक राठौरके होने पर भी उसका नाम नाजिर होता था।

जलकी धारा वर्षा करती है, उसी प्रकारसे जानेके समय रास्तेमें दीन दुःखियोंको धन लुटाया जाने लगा । रानियोंके मुखमंडल पर प्रभातकालके सूर्यकी समान सतीत्वकी पवित्र ज्योति प्रकाशमान होने लगी । स्वर्गसे, उमाने उन अजितकी रानियोंकी ओर देख कर उनको आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे उस जन्ममें भी अजित तुमको पतिस्वरूपसे मिले । अजितकी चितासे धुँएके निकलते ही सहस्रों मनुष्य खमां खमां (शावास २) कह कर धन्यवाद देने लगे । आग्नेय पर्वतकी समान चिताकी अग्निके भयंकर मूर्तिसे प्रज्वलित होते ही देवकन्याओंने जिस प्रकार मानसरोवरमें स्नान किया था, सती रानियोंने भी उसी प्रकारसे प्रज्वलित चिताकी अग्निसे अपने शरीरको डाल दिया । उन्होंने अपने पतिके साथ जाकर जिस २ वंशमें जन्मलिया था, अपने उसी २ वंशको पवित्र किया । "अजित तुम धन्य हो ! धन्य हो ! तुमने अपने गौरवकी गरिमाको बढाकर असुरोंका नाश किया था । " सावित्री, गौरी, सरस्वती, गंगा और गोमती इन सबने एक साथ मिलकर उन पतिकी अनुगामिनी सती रानियोंको बड़े आदरभावके साथ वरण किया । महाराज अजितसिंह पैंतालीस वर्ष तीन महीने और बाईस दिन तक मृत्युलोकमें रह कर पीछे स्वर्गधामको चले गये ।

मरुक्षेत्रके सिंहासन पर यहां तक जितने राजा बैठे थे, उनमें जन्मभूमिकी कृतज्ञ संतान स्वजातिके परम हितैषी स्वधर्मके अभ्युदयसाधक अजित ही सबसे अधिक प्रसिद्ध और सबमें श्रेष्ठ हुए । पाठकोंने उनकी जीवनीको पढकर भली भांतिसे जान लिया होगा कि अजितके जन्मसे लेकर मृत्यु तक समस्त जीवनमें अनेक प्रकारकी विचित्र घटनाएँ हुई हैं । घोर तुषार मंडित पर्वतमय काबुलसे जिस समय अजित इस जगत्में आये, उसके पहले ही इनके पिता हिन्दूकुलचूड़ामणि महाराज यशवन्तने कालयवनके दिये कालकूट सेवनसे अकालमें ही मायामय शरीरको त्याग दिया था, इसी कारणसे अजितने अनाथ अवस्थामें ही उन दूरके देशोंमें जन्म लिया । उनके जन्म होनेका समाचार पाते ही नवराक्षसस्वरूप औरंगजेब उनके उस सुकुमारजीवनके नाश करनेका अभिलाषी हुआ । जन्मसे ही उस ज्ञानहीन बालक अजितके भाग्यमें मानो मरणकी भयंकर मूर्त्ति आकर दिखाई दी । केवल एक मात्र चिर राजभक्त राठौर सामन्तोंकी वीरतासे तथा राजभक्तिके बलसे शिशु अजितने उस कालके कराल ग्राससे रक्षा पाई । उसके जीवनकी रक्षाके लिये स्वजातीय राजवंशकी रक्षाके लिये राठौरोंकी सामन्त मण्डलीने सम्मुख संग्राममें महा वीरता दिखाकर अपने २ प्राणोंको त्यागकर दिया । अजितके ही द्वारा भविष्यतमें भारतकी रंगभूमिमें चिरस्मरणीय वीरलीलाका अभिनय होगा, इसीसे हिन्दू जाति हिन्दूधर्म हिन्दू समाजकी शोचनीय दुर्गति उनके द्वारा दूर होजायगी, इसी कारणसे बालक अजितने अत्यन्त विचित्र उपायोंसे नरपिशाच औरंगजेबके हाथसे छुटकारा पाया था । यद्यपि उद्धार पा लिया था, परन्तु उसके प्राणोंका भय दूर नहीं हु[illegible]आ था,

समस्त रजवाड़ेके न्यायमतके अधीश्वर होने पर भी महान् राजद्रोही महा अपराधीकी समान उस सुकुमार अजितको आबूके पर्वतपर अत्यन्त गुप्तभावसे निवास करनापड़ा, अर्वलीकी दुर्गम चोटी पर यवनोंने छद्म वेषसे उसके ढूढनेमे कसर न की। समस्त मारवाड़के महाराजका यह शैशव भाग्य कैसा हृदयभेदी था। बालक अजितसिंह विक्रमी यशवन्तसिंहका पुत्र था, इसी कारण ज्ञान प्राप्त होते ही उस सुकुमार बालक अवस्थामे ही उसने वीर नेताके समान अपने साहसी अनुरक्त और महा विक्रमी सामन्तोंके साथ पिताके राज्यका उद्धार करने तथा पिताका सिंहासन पानेके लिये बाहर जानेसे एक मुहूर्त्त मात्रका भी विलम्ब न किया। "महात्मा टाड् साहब लिखते है" कि अजितके जन्मसे लेकर जबतक उसके भाग्यने पलटा खाया तथा वह जब जन्मभूमिका उद्धार करनेको समर्थ हुये थे उस दीर्घ समय तक राठौर सामन्त मण्डलीने तथा राठौर जातिने उनके ऊपर जिस प्रकारकी राजभक्ति दिखाई थी, समस्त जगत् और समस्त मनुष्य समाजके इतिहासोंमे इस प्रकारकी राजभक्तिका उज्ज्वल चित्र और दूसरा दिखाई नही देता। जो सामन्त शासनकी रीति शुभ फलकी अपेक्षा अधिक अशुभ फलदायक है, उसी सामन्त शासन रीतिके तमोमय चित्रके ऊपर इस प्रकारकी घटनाने ही उज्ज्वल रमणीक किरणे फैला दी। वास्तवमे राजपूत गण एक वंशजाति और सामन्त शासन रीतिके अन्यान्य अनेक प्रकारके सम्बन्धोंसे बँधे हुए थे, बाहरी दृश्य मानो एक बड़े परिवारके समान था। महाराज अजितके सत्रह वर्षकी अवस्थामे पहुँचनेके पहले ही जब राजपूत वीर सामन्तोंने अजितको एक बार भी आंखोसे न देखा था और बराबर उसके लिए लड़ते मरते रहे तब उनकी राज्यभक्ति वा देशभक्ति कहांतक तारीफ की जावे। वे इतिहासमे अपने गौरवका एक अद्वितीय नमूना छोड़ गए है। उनका यह कथन है कि "हम अपने स्वामीके दर्शन पाये बिना अन्नजलसे किंचित भी रुचि नही रखते-हमको सभी पदार्थ स्वाद हीन है" विशेष भक्तिभाव सूचक है। राठौर कवि भी अपनी अमृतमयी कवितामे उन सामन्तोंके मनके भावोंको कैसे चमत्कारतासे वर्णन कर गये है-तरुण अरुणोदय जिस भाँति फूल कुलरानी पद्मिनीके नेत्रोंको उन्मीलन करता है, उसी भाँति उन बालक अधीश्वर अजितके दर्शनमात्रसे ही प्रत्येक राठौरका हृदयरूपी कमल अत्यन्त प्रफुल्लित होता था। जिस भाँति पपीहा सुखदाई शरद् ऋतुमे चम्पेका अमृत रसभर कर पीता है। उनके नेत्र भी उसी भाँतिसे अजितके रूपामृतको पान करने लगे"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने पुनर्वार लिखा है कि राठौर जातिकी प्रत्येक सम्प्रदायने छत्तीस वर्ष तक निरन्तर चलनेवाले भूपालके युद्धसे किस प्रकार अधिकतासे अपना रुधिर बहाया था, राठौरोंके इतिहासमे उसके कितने ही वृत्तान्त विदित होनेकी सम्भावना है, और स्वधर्म तथा नरपतिकी स्वाधीनता संचय करनेके लिये उन वीरोंने जिन्होने अपना जीवन तक दे दिया था, उनके स्मरणके लिये मंदिर स्थापित किये और चिह्न समूहोंके स्थानो पर उज्ज्वल

भापामे जो स्मारक लिपि लिखी गई है, वह सभी भलीभाँतिसे उनकी कीर्तिका परिचय दे रही है। यदि अन्य किसी प्रमाणकी आवश्यकता हो तो उन राठौरोंके निवासी मेवाड़ आमेर इत्यादि राजाओंके कवियोंके इतिहासोंमे तथा उन राठौरोंके जन्मके शत्रु यवनोंके इतिहासोंमे भी भलीभाँतिसे प्रकाशमान है। दूसरी ओर राठौर कवियोंके कुलकी काव्यावली तथा प्रवाद वचनकी समान वंशानुक्रमसे राजस्थानमें सर्वत्र जो गीत आज तक गाये जाते है, उनसे भी उन राठौर जातिके पूर्व पुरुषोंके वलविक्रम तथा उनके गौरवकी गरिमा अक्षय हो रही है।" कर्नल टाड् साहवकी इस सत्यतापूर्ण उक्तिके साथ हम और अधिक कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझते। राठौर सामन्तोंने जन्मभूमिके लिये, अपने धर्मके लिये, किस प्रकार प्रफुल्लित मुखसे जीवन देकर अपना जन्म सार्थक किया था, वे किस प्रकार स्वाधीनताको संग्रह करनेके लिये निर्भय हो पाशविक वलके विरुद्ध न्यायकी महाशक्तिकी सहायतासे खडे हुए थे। यह राठौर सामन्त गण जो जीवन्तका निदर्शन दिखा गये है, आर्यरुधिर धारण करनेवाले उसको चिरकाल तक स्मरण करें। यही हमारा अन्तमें कहना है।

महात्मा टाड् साहवने इस स्थान पर अजितके सम्वन्धमे लिखा है कि "अजित जिस प्रकारके दृढ़प्रतिज्ञ राजा थे, वैसे असीम साहसी भी थे, उनके शरीरका गठन भी उसी प्रकार वीरपुरुषोंके समान वलवान् था। उन्होंने अपने पिताकी ही समान दुर्द्धर्प साहस करके अपने पिताके गुणोंको प्राप्त किया था। ग्यारह वर्पकी अवस्थामें जिस समय वह अपने पिताकी राजधानीमें शत्रुओंके सन्मुख आये थे, उसी समयसे इस साहसके प्रतिभारका पूर्ण परिचय दिया। और उनके उस समयके विनय और नम्रता युक्त आचरणके यथार्थ अभिप्रायके जाननेमें केवल राजपूत ही समर्थ हुए थे। तीस वर्प तक वरावर जिस खंडमें प्रत्येक वर्पमें युद्ध होता था, उसमें कई युद्धोंमें अजितने स्वयं समस्त राठौर सामन्तोंके साथ अपने वल विक्रमका परिचय दिया था। सम्वत् १७६५मे आमेरमे दोनों सैयद भ्राताओंके साथ जो संग्रामकी अग्नि प्रज्ज्वलित हुई थी, जिस संग्रामसे दोनों सैयदोंके साथ अजितका गुप्त सधिवन्धन होगया था, उस युद्धमें भी अजित स्वयं उपस्थित थे। अजितके जीवनका शेप अंश केवल वादशाहकी सभामें ही व्यतीत हुआ था, परन्तु अजीत जैसे वलवान् और प्रवल साहसी थे, यदि वह इस प्रकारसे गुप्त षड़यन्त्र विद्याको सीखलेते तो निश्चय ही सबसे प्रधान नेता रूपसे दोनों सैयदोंसेको दमन करके अपने प्रवल प्रतापको विस्तार करनेमें समर्थ होते। उन दोनों सैयदोंके साथ सधि बंधनसे उनकी मृत्यु तकके षड्यंत्र ही अजितकी सहायताके विशेप प्रार्थनीय है, और प्रयोजन होने पर फर्रुखसियरसे लेकर मोहम्मदशाह तक तैमूरके सिंहासनपर जितने वादशाह अभिपिक्त हुए, मारवाड़पति अजित ही उन सबके अभिपेकके दूसरे नेता थे। उनके पिता जिस भांति मुसल्मानोंको अपने जन्मका शत्रु मानते थे, उसी भांति यह भी मुसल्मानोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते तथा सम्पूर्ण

विपरीत धर्म कर्म आचार व्यवहार युक्तयवनोके नाश करनेका सुअवसर पाकर सरलतासे उस सुयोगको न छोडते थे। जिन प्रकाशित कारणोसे अजित मुसल्मानोके नाम तकसे क्रोधित होते थे, यदि उन्ही कारणोकी ओर हम देखते है तो जो बादशाह फर्रुखसियरके निकट उन अजितका पारिवारिक सम्बन्ध बंधनसे अधीनताके सूत्रमे बंधे थे, उसने उसी सम्बन्धके प्रति उपेक्षा दिखाकर उस फर्रुखसियरके विरुद्धमे दोनो सैयदोके साथ मिलकर फर्रुखसियरके ऊपर ही कठोर आचरण किये। हम कठिन समालोचनाके मुखमे अजितके उन व्यवहारोको नही डाल सकते।"

कर्नल टाड् साहबने निम्नलिखित उक्तिसे अजितकी जीवनीका उपसंहार किया है, "परन्तु अजितके जीवनमे एक कलंककी रेखा प्रकाशमान है। यद्यपि राठौर कवियोके काव्यमे उस कलंकका कोई भी उल्लेख दृष्टि नही आया। परन्तु वह इस प्रकारसे प्रमाणित होता है कि उनकी जीवनीकी समालोचनाके समय वह घटना–जो घटना राजपूत जातिके तथा समयके पूर्ण चित्रको प्रकाशित कर देती है, तथा जिस घटनासे राजपूत सामन्तोके शासनके अपूर्ण भारका परिचय मिलता है, उस घटनाका उल्लेख करनेमे भूलना उचित नही। महावीर दुर्गदास जो अजितके बाल जीवनके रक्षक थे–तथा अजितके बाल्यजीवनके शिक्षादाता थे–अजितके यौवन जीवनके उपदेष्टा थे, वही चिरप्रचलित प्रवाद वाक्य 'राजाके ऊपर कदापि विश्वास करना ठीक नही है' इसी उक्तिको समर्थन करनेके लिये मानों जीवित थे। दुर्गदासने एक बार नही दो बार नही, अनेक बार बहुतसे स्थानोपर प्रशंशनीय रूपसे स्वार्थ त्याग किया था, बहुत बार धनका लोभ तथा ऊंचे सम्मानको भी त्याग दिया था। उस धन और सम्मानसे–उस निर्लोभतासे वह मोहित होगये। वह मारवाड़के सामान्य अधीन सामन्तपदसे अपने अधीश्वर प्रभु अजितके समान पद पर स्थित और सामर्थ्यवान् होसकते थे। जिस दुर्गदासने अपने बाहुबल, पराक्रम, तथा बुद्धिबलसे यवनोके ग्राससे मारवाड़ राज्यका उद्धार कर दिया था, वही दुर्गदास इस मारवाड़से निकाल दिये गये थे। अजितने किस समय और किस कारणसे इस कलंकके भारको धारण किया था, यह नही जाना जा सकता। बहादुरशाहके डेरोसे जो मूलपत्र भेजे गये थे, उन सबका अनुसंधान करनेके समय घटनाके क्रमसे ये विषय प्रकाशित हुए,–"उस मूलपत्रावलीमे एक खंडके ऊपर इस प्रकारका लिखा हुआ देखा कि–'दुर्गदासने अपने कुटुम्बके सेवकोके साथ उदयपुरसे पिछोला नदीके किनारे निवास किया था, और अपने पालनके लिये उन्हे राणाके पाससे प्रतिदिन पॉचसौ रुपये मिला करते थे। सम्राट् बहादुरशाहने उनको समर्पण करने को आज्ञा दी, परन्तु राणाने एक वार ही उसमे असम्मति प्रकाश की।' ऐसा जाना जाता है कि अजितने किसी भारी कारणसे यह शोचनीय व्यवहार किया

(१) कर्नल टाड् साहबको उदयपुरके महाराणाके महलमें उक्त पत्र खोज करनेके समयसे मिले थे।

था । लेखकने यह अनुमान करके मारवाड राज्यके इतिहासको विशेष रूपसे जाननेवाले एक यतिसे यह बात पूछी । यति इस विषयको भली भाँतिसे जानता था, उसने इस बातको नीचे लिखी हुई कवितामें कहा था " दुर्गा देशां काढियां गोला गांगानी " अर्थात् दुर्गदासको निकाल कर गांगानी गांव गोलांको दिया गया था । "

" यह गांगानी लूनी नदीके उत्तरकी ओर स्थापित था । और यह कर्मसोत सम्प्रदायका प्रधान नगर था, दुर्गदास उस सम्प्रदायके नेता थे । यह गांव इस समय मारवाड़के महाराजके खास अधिकारमें होगया है, परन्तु दुर्गदासके समयमें यह राजाके ही अधिकारमें था, फिर पीछे किसका हुआ यह हमें विदित नहीं है, करणोत सम्प्रदायने उन महावीर दुर्गदासके स्मरणके निमित्त उस गांगाणीमें एक मंदिर बनाया गया उस मंदिरमें आज तक वीर पूजा किया करते हैं " ।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये वीर श्रेष्ठ दुर्गदासके निकालनेकी कथाका उल्लेख कर गये हैं, यह अवश्य ही मानना होगा, कि दुर्गदास जो निकाले गये थे इसको भी प्रमाणित करदिया है, परन्तु किसलिये और किस समय दुर्गदास निकाले गये थे, उस सम्बन्धमें उन्होंने कुछ भी नहीं लिखा । इस कारण संदेहके स्थानोंपर अजितके चरित्रोंमें दोष लगानेके लिये हम आगे नहीं बढते । जिस विधर्मी यवनने अजितको दिल्लीसे झाडीमें लेजाकर उसकी रक्षा की थी । जब कि अजितने जीवन पर्यन्त उस मुसलमानको काका कहकर उसका सन्मान बढाया था, तब राजपूतोंके जीवनकी अपेक्षा श्रेष्ठ स्वाधीनता और स्वदेश जो दुर्गदासकी सहायतासे अजितको मिले थे, उन्हीं दुर्गदासको इन्होंने एक सामान्य कारणसे विना अपराधके निकाल दिया हो, राजपूतोंके चरित्र जाननेवाले इसका कभी अनुमान नहीं करसकते । हम कह सकते हैं जब किसी ओरके अपराधीको उस सदेह भाजनका कोई उपाय नहीं मिला, तब किसी पक्षके ऊपर भी कलंकका भार अर्पण करनेकी हमारी इच्छा नहीं है । मारवाड़पति अजितकी जीवनीके सम्बन्धमें हमारा अन्तिम कहना यही है कि केवल राजपूत जातिमें ही नहीं, वरन् आर्यवंशधरमात्रके पक्षमें अजितकी जीवनी चिरकाल तक स्मरण करनेके योग्य है ।

---

(१) कर्नल टाड् साहब ।

(२) अर्थात् गुलाम ।

(३) कर्नल टाड् साहबने पूर्वाध्यायमें लिखा है, कि दुर्गदास दुनाराके सामन्त थे । *

---

* दुर्गदास कर्मसोतजातिके राठौरोंके नेता नहीं थे, करणोत जातिके थे । खीमसर गाव अब भी बसता है । वह प्रधान नगर न कर्मसोतोंका था न कर्णोतोंका खालसेका एक गांव था । उसको महाराजा अजितसिंहजीने सम्वत् १७६५ में खीची मुकुन्ददासके बेटे गोकुलदासको जागीरमें देदिया था । खीची मुकुन्ददासने महाराजकी बहुत अच्छी सेवा की थी, दुर्गदासके किसी पक्षपाती चारणने जलनसे गोकुलको गोला (गुलाम) कह दिया है ।

दशम अध्याय १०.



पितृहत्यारूप महापापके कलक स्वरूप मारवाड़की शोचनीय अवस्था, यवन सम्राट्का अपने हाथसे पितृहन्ता अभयसिंहका अभिषेक करना, दिल्लीके बादशाहकी सभासे राजा अभयसिंहका जोधपुरको जाना, प्रजाका उनके प्रति सन्मान दिखाना, पुरोहित और कवियोंको अभयसिंहका धनादि देना, मारवाडके कवि इतिहास वेत्ता कर्णीदान, अभयसिंहका नागोर पर अधिकार, अनुज वख्तसिंहको पुरस्कार स्वरूपमें नागौरराज्य देना, उद्धत स्वभाव भूमियादिकोंका दमन, बादशाहका अभयसिंहको दिल्लीमें बुलाना, दिल्लीमे जानेके समय अभयसिंहका अपने राज्य को देखना, अभयसिंहको विपफोटक रोग; दिल्लीमे जाना, गुजरातमें स्थित राजप्रतिनिधि और दाक्षिणमें कुमार जंगलीके साथ विद्रोह, इस समयके मुगल सम्राट्की सभाका चित्र, शत्रुओंके दमन के लिये बीड़ेका उपस्थित करना, उपस्थित अमीरगणो तथा सामन्तोंका बीडा उठानेमें असामर्थ्यता दिखाना, राठौरराज अभयसिंहका बीडा ग्रहण करना, अभयसिंहका अजमेरमें जाना, और वहाँ सेना स्थापित करना, आमेरके महाराजसे पुष्करतीर्थमें अभयसिंहका साक्षात् करना; भारतमे यवन राज्यके विनाशके लिये गुप्त परामर्श करना, मेरतानामक स्थान पर अभयसिंहके साथ उनके अनुज वख्तसिंहका मिलन, जोधपुरमे जाना, राठौर सामन्तोका सेना सहित इकट्ठे होना, अस्त्रपूजा, मीना गणोका अभयसिंहकी सेनाके पशुओका हरण करना, फिर लौट जाना, रणक्षेत्रमे यात्रा, अभयसिंह का मीनाओंके नेता सिरोहीके सामन्तोके किले पर अधिकार, सिरोहीपतिकी वश्यता स्वीकार और संधिवधनके लिये अभयसिंहके साथ अपने भाईकी पुत्रीका परिणय होना, अभयसिंहके साथ सिरोही की सेनादलका योगदान, अहमदाबादकी ओरको जाना, राजप्रतिनिधिको आत्मसमर्पण करनेके लिये आज्ञा देना, राजपूतोंके युद्धकी सभा, वख्तसिंहका वीर सामन्तोंके ऊपर कुसुम जल वर्साना, सरबुलन्दखाका अपनी रक्षाके लिये तैयारी करना, यूरोपियनोंका उसकी तोपोपर अधिकारी होना, सरबुलन्दके यूरूपिय बदूकधारी शरीर रक्षक गण, युद्ध, राजपूतोकी विजय, सरबुलन्दका आत्मसमर्पण, अभयसिंहका उसको वंदीकरके बादशाहकी सभामे भेजना, अभयसिंहका गुजरात पर शासन; अभयसिंह का जोधपुरमे जाना, ।

साधनसे ही सिद्धि है । कार्यकुल तिलक अजित एक मात्र महाशक्ति साधनाके बलसे ही उस अनाथ अवस्थासे मनुष्यजीवनकी शेष प्रार्थनीय अवस्था तथा सम्पूर्ण स्वाधीनताका अमृतमय फल प्राप्त करके अपने दुर्भाग्य वशसे कुलाङ्गार दोनो कुमारोंके पापरूपी कामनाके मुखमे अपने जीवनका बलिदान करनेमे सन्नद्ध हुए । जो अजित एक मात्र अपने बाहुवलके पराक्रमसे दृढ़प्रतिज्ञता और अपने तेजके बलसे उस अनाथ अवस्थामे शेष यवनसम्राट्की स्वाधीनताका नाश करनेसे सम्पूर्ण रूपसे स्वाधीन होगये थे, जिन्होने राठौर राजवंशके मारवाड़के आर्यजातिके सन्मानको भली भांतिसे बढ़ाया था, वही मुगल सिंहासनके तथा मुगल सम्राट् पदके अभिषेककर्ता होकर चिरस्मरणीय अभिनय करगये है, हमारी यह क्षुद्र लेखनी उन महावीरोंकी जीवनी प्रकाश करनेके पीछे, इस समय मारवाड़के राजा उन अजितके वंशधरोकी शासनके विपरीत हृदयवाले

शोचनीय वृत्तान्तसे परिपूर्ण, इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढो है। मरुमय क्षेत्रमे आदि राठौरके अभिनेता सियाजीने जिस स्वाधीनताका बीज बोया था, उदयसिहके समयमे उस अमृतमय फलसे पूर्ण नन्दनमन्दारको अकवरके चरणकमलोमे उपहार देकर जगत्मे पहले ही राठौरने क्रीतदासकी उपाधि ली। समयके आते ही महावीर अजितने उस घृणित एवं जघन्य उपाधिको छोड़कर उस अमृतमय पादपका यवनोके हाथसे उद्धार कर लिया था। परन्तु उन्ही अजितके वंशधर फिर उसी क्रीतदास पदपर नियुक्त हो विचित्र अभिनय करनेमे प्रवृत्त हुए।

राजाके दोपसे ही राज्य नष्ट होजाता है। राजाके पापसे ही राज्य विध्वंस होजाता है। कलुपित जीवनवाले अभयसिह और वख्तासिह पितृहत्याके पापसे पापी और महा पातकी होगये थे। पवित्र राठौर राजवंशमे पवित्र मारवाड़ राज्यमे उन दोनो भ्राताओने जिस महा पापका सर्वनाशकारी बीज बोया था, समय आतेही उस पाप पादपकी विकट जड़ने समस्त मारवाड़मे फैलकर सारे देशको आकर्षण करके कंपायमान कर दिया। उसी महा पापके विपमय फलसे उन महा पातकी दोनोके अधीन बहुतसे मनुष्योको जर्जर कर दिया। उन दोनो महापापियोमेसे एक नरश्रेष्ट इकले ही महाराष्ट्रोको दमन करनेमे समर्थ होकर भी एकमात्र उसी पितृहत्याके पापके फलसे मनुष्यजीवनके प्रार्थनीय धनको प्राप्त नही कर सका।

यद्यपि अभयसिह पिताकी हत्या करके महापातकी होगया था। परन्तु हम सत्य और सन्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही इस बातको स्वीकार करते है कि वह एक अत्यन्त बलवान और प्रबल पराक्रमी तथा अत्यन्त प्रभावशाली वीर पुरुष था। अजितकी जीवित अवस्थामे ही अभयसिहने कई बार यवनोके साथ प्रबल संग्राम करके अत्यन्त बल विक्रमप्रकाश कर अपने गौरवको बढ़ा लिया। परन्तु वह एक महावीर भी था। तथा राठौर जातिके स्वभाव सुलभ समस्त गुणोसे विभूपित था, तथापि उसके एक ही दोषने इसके उस बलविक्रमको उज्ज्वल नही करने दिया। वह दोप केवल पिताकी हत्याका ही नही है, वह दोप एक और प्रकारका है। जिस दोपसे उदयसिहने पिताकी आज्ञाको उल्लंघन कर अकवरके चरणोसे अपनी स्वाधीनताको वेचदिया था। उस दोषमे ही अभयसिह केवल पितृहत्यारे नही है, वरन् उसने स्वजातिके गलेमे फिर अधीनताकी जजीर डाल दी। असमयमे अन्याय, प्रभुभक्ति चलानेकी इच्छा यही एक प्रधान दोप है। उदयसिह मारवाडके सिहासन पर अभिपिक्त होनेके लिये ही पिताकी अनिच्छासे अकवरके चरणोमे प्रणत हुए थे, अब एक अभयसिह भी उसी पापकी आगाके वगवर्ती हो पितृहत्याके महा पापसे लिप्त हुए। अभयसिहके चरित्रोके सम्बन्वमे विना कुछ कहे हुए पहले हम उसके शासन वृत्तान्तको प्रकाश करना चाहते है।

राठौर कवि कर्णादानने लिखा है, सम्वत् "१७८१ मे मारवाडके महाराज अजित जब स्वर्गधामको चले गये। तब दिल्लीके वादशाह मोहम्मदशाहने अपने

हाथसे अभयसिहके मस्तक पर राजतिलक किया, कमरमे कनककोपबद्ध तलवार बॉधी, मस्तक पर राजमुकट बॅधाया और हीरे और मणिमुक्तोसे जडे हुए रत्नजड़ित किरचका देकर उनको मारवाड़के अधीश्वर पदपर अभिषिक्त कर दिया। छत्र, चमर, नौवत और नगाड़े आदि वाजे तथा अनेक प्रकारके मूल्यवान् द्रव्य उपहारमे देकर वादशाहने अजितपुत्रका पद योग्य सम्मान वढ़ाया। अधिक क्या कहैं जो नागौर देश अमरसिहको दिया गया था, सम्राट् मोहम्मदशाहने उस देशकी शासन सनदतक अभयसिहको दे दी। मारवाड़के नवीन महाराज अभयसिह वादशाहसे यह ऊँचा सम्मान पाकर वहॉसे विदा हो अपने पिताकी राजधानी जोधपुरको लौट आये।" जिन महावीर अजितने अपने वाहुवलसे यवनोकी पराधीनताको छिन्न भिन्न कर सम्पूर्ण स्वाधीनताका संग्रह किया था, और उसी स्वाधीनभावसे इस संसारको छोड़ गये थे, उन्ही अजितके पुत्र अभयसिहने आज फिर अपने गलेमे पराधीनताकी जंजीरको धारण किया। अजितके शेष जीवनमे मारवाड़मे जो शान्तिका चंद्रमा प्रकाशमान हुआ था तथा स्वाधीनतारूप अनन्त तारागणोसे जो विभूषित हुआ था, आज फिर वही मारवाड़ घोर अंधकारसे ढक गया।

राठौर जातिकी कैसी अखंड राज्यभक्ति है। राजाके महापापी और अपराधी होने पर भी एक मात्र राजशक्तिने राठौर जातिको किस विचित्र रूपसे अंधा कर दिया। यद्यपि वख्तसिहने अपने हाथसे जन्मदाता पिताके पवित्र वक्षस्थलमे तीक्ष्ण तलवार मारी थी और इस हत्याके समयमे अभयसिह विदेशमे वादशाहकी सभामे था, परन्तु एकमात्र अभयसिहके लोभ दिखानेके उपदेशसे तथा इसकी आज्ञासे अथवा इसकी ताड़नासे ही जो वख्तसिहने नरकके कीड़ोकी समान अपने पिताके जीवनरूपी कमलको काट लिया, यह वृत्तान्त मारवाड़ निवासियोसे कुछ छिपा नही था। किन्तु तौ भी राठौर जातिके हृदयमे राजभक्ति इतनी प्रवल थी कि अभयसिहके मारवाड़मे आते ही राठौर जातिके प्रत्येक सम्प्रदायके वाल वृद्ध सभीने मानो एक मनुष्यकी समान खड़े होकर नवीन राजाको वड़े आदर सम्मानके साथ लिया। सभी उस पितृहत्याके महा पापको भूल गये! राठौर कविने अभयसिह को अभ्यर्थनाके सम्वन्धमे लिखा है, "ग्रामके दूसरे ग्रामोको उल्लंघन करके राजा अभयसिह राजधानीकी ओरको आगे वढ़े, वैसे ही प्रत्येक स्थानकी कुलवधुए जलसे भरे हुए कलशोको शिरपर रखकर गीत गाय गायकर उनका सत्कार करनेलगी। इन्होने जोधपुरमे जाकर समस्त राठौर सामन्तोको उपहारमे अनेको द्रव्य दिये, तथा कवि ओर चारणोको धन देकर पुरोहितको पृथ्वी दान की।"

महामान्य टाड् साहवने नवीन मारवाड़ेश्वर अभयसिहके शासनवृत्तान्तको वर्णन करनेके पहले इस स्थानपर कवि कर्णादानके सम्वन्धमे कई एक कथाओको लिखा है, इस कारण हम भी उनका अनुसरण करते है। कवि कर्णादाने कान्यकुब्ज देशके

(१) कर्णादान कवि जातिका चारण था। न तो उसके वंशज स्वयं उसे कन्नौजके राजकविसे उत्पन्न हुआ वतलाते है और न और कहीं ऐसा प्रमाण देखा गया है। चारण जातिके लोग कभी कन्नौजमे न थे और न अव है।

शेष हिन्दू सम्राट् जयचंदकी सभामें स्थित प्रधान कविके वंशसे उत्पन्न अपनी लेखनीसे उसे प्रकाशित कर गये हैं। कर्नल टाड् शाहबने कहा है कि " कर्णीदान जिस प्रकार पहली श्रेणीके कवि थे, उसी प्रकार राजनीतिमें भी चतुर, योधा और गाढ पण्डित थे, और प्रत्येक विषयमें ही वह अपनी चतुरताका चूड़ान्त प्रमाण दिखाया करते थे। मारवाड़के आत्मविग्रहके समय प्रत्येक राजनैतिक घटनाका उन्होंने प्रशंनीयरूपसे अभिनय किया। दूसरे उनके बलविक्रमके सम्बन्धमें हमें केवल इतना ही कहना है कि राजपूत जातिके अतुलनीय प्रबल युद्धमें लिप्त हुए वीरोंमें जो कईजने अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे, कवि कर्णीदान भी उन्हींमेंसे एक थे। तीसरे सात हजार पांचसौ कवित्तोंसे पूर्ण " सूर्यप्रकाश " ग्रंथ उनके पांडित्य और कवित्वका अक्षय परिचय दे रहा है। वही सूर्यप्रकाश केवल उनका पैतृक गुण है। हृदयहारी कवितामाला तथा ग्रंथ शक्तिका प्रज्ज्वालित प्रमाण दिखा रहा है, यही नहीं कि उन्होंने अपनी गौरवगरिमाको बढ़ानेके लिये ही इस श्रेष्ठ नीतिका अवलम्बन किया था, इसके भी बहुलसे उपदेश मूलक प्रमाण विद्यमान है। " राठौर राजकवि कर्णीदान विक्रमाजीतकी सभामें कालिदासकी समान अथवा महामान्य भारतेश्वरीकी सभामें वर्त्तमान लार्ड हेनिसकी समान केवल वीणाध्वनिसे प्रकृतिको प्रसन्न ही नहीं करसके किन्तु वह अपनी अमृत निःस्यन्दनी लेखनीकी समान जन्मभूमिके लिये तलवार भी चला सकते थे। कर्नल टाड्ने इसीको प्रकाशित किया है। इस बातको हम कह सकते है कि कर्णीदानने केवल अपनी लेखनीके बलसे, अथवा तलवारके बलसे, या नीतिज्ञताके बलसे अपने यशकी किरणोंको नहीं फैलाया था, वरन् उनके द्वारा आर्यजातिका एक कलंक दूर होगया है। विलायतके निवासी शिक्षित गणों और उन पश्चिमी शिक्षाके उपासक देशी गणोंको दृढ़ विश्वास था–कि भारतमें इतिहास रचनाकी प्रणाली किसी समय भी प्रचलित नहीं थी। परंतु कवि कर्णीदानका बनाया हुआ इतिवृतमय सूर्यप्रकाश उस भ्रान्तिकी जड़में अवश्य ही एक दारुण आघात करता है। कविकर्णीदान राजपूत जातिके लिये ही गौरव स्वरूप नहीं थे, वरन् यह सम्पूर्ण भारतके अलङ्कार स्वरूप थे, इतिहास अनन्तकाल तक इस बातका प्रचार करता रहेगा। इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

इस स्थान पर मारवाड़पति अभयसिंहका ही अनुसरण करना होगा, कर्नल टाड् साहब लिख गये है कि नरपतिके अभिषेकका उत्सव थोड़े दिनोंमें ही समाप्त होगया। अभयसिंहने नागौर पर अधिकार करनेके लिये तैयारी कर दी। जिस समय वीर श्रेष्ठ अजितके साथ मुगलबादशाह मोहम्मदशाहका झगड़ा होनेसे युद्ध हो रहा था। उस समय बादशाहकी ओरसे राव अमरसिंहका उत्तराधिकारी इन्द्रसिंह उक्त नागौरराजके पद पर फिर प्रतिष्ठित किया गया था।

कवि कर्णीदानने इसके सम्बन्धमें लिखा है कि जिस समय यवन साम्राटके अधीनमें

---

(१) ऐसा बोध होता है कि टाड् साहब कविके लिखे काव्यसे अनुवाद करनेके समय भ्रमसे इन्द्रके बदलेमें इन्दु लिखगये हैं।

स्थित भारत साम्राज्यके बाइस जनोंने राज प्रतिनिधिकी सेनाको लेकर अजितके विरुद्ध अजमेरको घेर लिया। उस काल समय पाकर जिजियाकरके ग्राहक इरादतखाँ बंगसने राव इन्द्रको नागदुर्गके सिंहासन पर अभिषिक्त किया, परन्तु होली उत्सवके समाप्त होते ही ज्वालामुखीकी बड़ी धूमधामसे पूजा करके और श्रीभगवतीके निमित्त बकरोका बलिदान करनेके पीछे उन सबके शरीरोको घृत, रुधिर और लालचंदनसे शोभायमान करदिया। अभयसिंहकी चतुरंगिनी सेना शीघ्र ही नवीन महाराजके अधीनमें नागौर पर अधिकार करनेके लिये चली। अभयसिंहके आनेका समाचार सुनकर राव इन्द्रने उसके सम्मुख सम्राट्के हस्ताक्षर सहित नागौरकी शासनसनदको उपस्थित करके कहा कि बादशाहने हमें नागौर देदिया है, दूसरा कोई भी नागौर पर अधिकार नहीं कर सकता। इसके साक्षी आमेरके महाराज है, इस कारण न्यायके अनुसार हमी नागौरके यथाथ अधिकारी है। अभयसिंहने इनके वचन पर किंचित् भी ध्यान नहीं दिया, और नागौरको जाकर शीघ्रतासे घेर लिया। प्रवल पराक्रमी अभयसिंहके विरुद्ध युद्ध करना असंभव है, तथा उनके ग्राससे नागौरकी रक्षा करना भी असंभव जानकर राव इन्द्रसिंहने शीघ्र ही आदरभावके साथ नागौरके किलेको छोड दिया। अभयसिंहने थोड़े समयमें ही नागौर पर अधिकार करके अपने अनुज बख्तसिंहको वहांका अधिकार अर्पण कर दिया।" इस नागौरराज्यके लोभसे ही पापात्मा बख्तसिंहने अपने पिताके जीवनको नष्ट किया था। पाठक यथास्थान उसको पढ़चुके होंगे। अभयसिंहने उस पितृहत्याके पुरस्कार स्वरूपमें बख्तसिंहको नागौर देकर प्रतिज्ञाके ऋणसे मुक्ति प्राप्त की। राठौर कविने लिखा है, कि अभयसिंहके नागौर पर अधिकार करते ही, मेवाड़ जयसलमेर, बीकानेर और आमेरके तीनों अधीश्वरोंने उनको बडे आदरभावके साथ बुला भेजा। विजयकी इच्छासे उत्साहित हुई सेनाके साथ अभयसिंह अपनी राजधानीको लौट आये, सारी प्रजा महा आनंद प्रकाश करने लगी। सम्वत् १७८१ में इस प्रकारसे नागौरको विजय किया था।

दूसरे वर्ष अर्थात् सम्वत् १७८२ में अभयसिंह अपने राज्यके दक्षिण सीमाके अनुवर्ती देशोंमें उद्धत स्वभाव भूमीयादिकोंको दमन करनेके लिये चले। अभयसिंहके प्रवल प्रतापसे सिन्धलदेवड़ा, वाला बोड़ा, वालिसा और सोढा-जाति समूहने एक २ करके मस्तक झुकाकर उनकी अधीनता स्वीकार की।

कविने लिखा है, "सम्वत् १७८३ में बादशाहका आज्ञापत्र राजा अभयसिंहके निकट आया। अभयसिंहने उन अनुमति पत्रोंको अपने शिरके ऊपर रखकर शीघ्र ही अपने अधीन समस्त सामन्तोंको सेना सहित बुला भेजा। सामन्त भी तुरन्त ही अपनी २

---

(१) नागौरका प्रकृत नाम नागदुर्ग है।

(२) यह अग्निपूजन ज्वालामाईका पूजन है, यह कालीका उपनाम है।

(३) उर्दू तर्जुमेमें बधाई भेजना लिखा है।

सेना साथ लेकर आ पहुँचे। अभयसिंह दिल्ली जानेके पहले एक वार अपने राज्यके संपूर्ण प्रधान २ स्थानोंको देखनेके लिये गये और इन्होंने प्रत्येक देशमे तथा दुर्ग और सेनाकी शिक्षामे शासनकी उत्तम व्यवस्था करके प्रजाकी समान उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। पर्वतसरनामक स्थानमे जाते ही राजा अभयसिंहको चेचक रोग होगया। जगत रानीने मानो उनकी समस्त आपत्तियोंके दूर करनेके लिये वसन्तद्वारा उनके शरीरको आवृत करदिया।"

"संवत् १७८४ मे अभयसिंह दिल्लीमे आये। अभयसिंहको आदरभावके साथ राजधानीमे बुलालेनेके लिये वादशाहने भारत साम्राज्यके सबमे प्रधान अमीरखान दौराखांको अपने प्रतिनिधिरूपसे भेजदिया। जब अभयसिंह महामान्य वादशाहके सम्मुख आये तब वादशाहने इनको बडे सम्मानके साथ अपने पास बैठाकर कहा। "खुशवख्त महाराज राजेश्वर! आज बहुत दिनोंके पीछे आपके साथ भेट हुई है। आज मै अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ हूं। आज इस आम और खास सभाका सुख दूना बढ़ गया।" इस प्रकारसे अभयसिंहने शिष्टाचार पाकर वादशाहसे विदा ली। उनके निवासस्थान अभयपुरमे उनके सम्मानके लिये वादशाहने शीघ्र ही उत्तर देशमे होनेवाले अनेक भांतिके स्वादिष्ट फल सुगंधित तेल और गुलावजल आदि उपहारमे भेज दिये।"

वादशाह अकवरने उदयसिंहका जिस प्रकार सम्मान किया था, अभयसिंहके प्रति वादशाह मुहम्मदशाहका इससे भी अधिक सम्मान हुआ। यद्यपि महात्मा टाड् साहब और राठौर कविने इस ऊँचे सम्मानका कारण प्रकाश नहीं किया, परन्तु विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे कि दिल्लीके वादशाहका वह प्रवलप्रताप बलविक्रम इस समय अधिक घट गया था, इसी कारणसे उसने महावली अभयसिंहको अपने हस्तगत करनेके लिये इस प्रकारके आशातीत सम्मानसे विभूषित किया था। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि वादशाहने इस समय अभयसिंहको समस्त अमीर और सामन्तोमे सबसे प्रधान नेता पदपर वरण किया। सम्वत् १७८४ के अन्तमे गुजरातका राजप्रतिनिधि सरबुलन्दखाँ वादशाहका विद्रोही होगया। इस कारण उसी सूत्रसे राठौर जातिका बाहुबल, और संग्राममे निपुणता प्रकाश करनेका एक सुअवसर उपस्थित हुआ, और राठौर कविकी काव्यरचना भी उपयुक्त उपकारणसे संग्रह की गई। राठौर कवि उसके सम्बन्धमे नीचे लिखे हुए अनुसार वृत्तान्तको काव्यरचनामे वर्णन कर गये है।

दक्षिणमे वडीभारी हलचल पड़गई। शाहजादा जगलीने विद्रोही होकर

---

(१) राजपूत शीतला देवीको जगत्रानी कहा करते थे।

(२) महाराष्ट्रोंकी * प्रथम उन्नतिके समय यह यवन राजकुमार उनके नेतास्वरूपसे था। इस समयके किसी मुसल्मान इतिहासवेत्ताने उसे नहीं लिखा।

* जंगली शाहजादा, ग्रन्टडफने शायद वाजीराव पेशवाको लिखा है। जिसकी फौजने मालवेका सूवा मुगलोंसे फतह किया था।

छ. हजार सेना साथ ले, मालवा, सूरत, और अहमदपुरके शासनकर्ताओपर आक्रमण किया तथा गिरिधरबहादुर, इब्राहीमकुली, रुस्तमअली, और मुग़ल गुजाअत बादशाहके इन कई एक प्रतिनिधियोकी हत्या कर डाली "।

बादशाहने इस विद्रोह समाचारको पाते ही इसको शांत करनेके लिये तुरन्त ही सरवुलन्दखाँको प्रधान सेनापतिरूपसे भेज दिया। सरवुलन्दखाँ पचीस हजार सेना और उसके भोजनके लिये एक करोड रुपया लेकर विद्रोही दलको दमन करनेके लिये चला। परन्तु इसके अधीनको आगे जानेवाली दश हजार सेना शत्रुओके साथ युद्धमे परास्त होगई, तव इसने शत्रुओके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्रके मतसे सरबुलन्दखाँके अधिकारी देशोको विद्रोही दलकेनताके साथ भाग करलेनेकी सम्मति प्रगट की और शीघ्र ही सरवुलन्दखाँने शत्रुओके साथ मिलकर संधिपत्रके प्रस्तावके कार्योको परिणत कर लिया "।

महात्मा टाड् साहव लिख गये हे कि इस समय मारवाड़के महाराज अभयसिंहने अपने पिताके राज्यमे जानेके लिये वादशाहसे आज्ञा माँगी। सरवुलन्दखाँकी विद्रोहिता के उपलक्षमे कविकर्णीदान इस समयके वादशाहकी सभाके जिस चित्रको अंकित करगये है, हम यहाँ पर उसीको आदर सहित वर्णन करनेकी अभिलाषा करते है। कविने लिखा है, " कि सम्राट् मुहम्मदशाह दिल्लीके जगद्विख्यात् सिंहासन पर, और सभाके यथास्थान पर साम्राज्यके दोसौ उच्च कक्षाके सामन्त उमराव बैठे हुए थे, इसी समयमे समाचार आया कि सरवुलन्दखाँ, विद्रोही होगया है। सभास्थान पर प्रधान राजमंत्री कमरुद्दीनखाँ ऐत्तमादुद्दौला, खाँनदौरान, मीरवखशी समसामउद्दौला अमीरउलउमरा मनसूरअली, रोशनउद्दौला तुर्रावाजखाँ, रुस्तमजंग, अफगानखाँ, ख्वाजासैयदउद्दीन (गोलन्दाजदलके सेनापति) सआदतखाँ (खासदरोगा) बुरहानउल मुल्क, अवदुलसम्मदखाँ, दलीलखाँ, ज़फ़रयावरखां (लाहोरके शासनकर्ता) दलेलखाँ मीरहमला, खानखाना ज़फ़रजंग, इरादतखाँ, मुरशिदकुलीखाँ, जाफ़रखाँ, आलीवर्दीखाँ और अजमेरके शासनकर्ता मुज़फ़्फ़रखाँ इत्यादि वहुतसे अमीर उमराव उस स्थान पर विराजमान थे "।

उस सभामे सवके सम्मुख ऊंचे स्वरसे यह पढ़ागया कि सरवुलन्दखाँने सव प्रकारसे गुज़रात पर अपना अधिकार करके अपनेको उन देशोका स्वाधीन अधीश्वर प्रख्यात किया है, और मंडला झाला, चौरासमां वघेला और गोरिल जातिको एक ही वारमे परास्त करके वाला जातिको सहसा विध्वस करदिया है, और हाला जातिने उसको कर देनेकी सम्मति प्रकाश की है—सरवुलन्दने इस प्रकारसे वलविक्रम प्रकाश किया है, कि भूमीयां गण अपने २ किले छोड़ कर उसकी शरण हुए है, और उसको

(१) उर्दू तर्जुमेमे साठ हजार लिखा है।
(२) यही पीछेसे अवधका वजीर हुआ।
(३) शेषमे यही वंगालेका नव्वाब हुआ।

" सत्रह हजार देशका" अधिकार देकर मान्य दिखाया था, और सरबुलन्द अपनेको अहमदाबादका अधीश्वर बताकर दक्षिणके महाराष्ट्रोके साथ जा मिला।

इससे पीछे कविने लिखा है, " कि बादशाह मोहम्मदशाहने विचारा कि यदि विद्रोही सरबुलन्दखांको दमन न किया जायगा तो इसके आदर्शमे भारतके अन्यान्य देशके राजप्रतिनिधि भी अधीनता छोड़कर स्वाधीन हो अधीश्वर रूपसे मस्तक उठावेगे। इतिहाससे उत्तर देशके जकरियाखॉ, पूर्वाञ्चलमे सआदतखॉ, और दक्षिणमे निजाम-उलमुल्कने अपने पापकी इच्छासे मुग़ल बादशाहकी अधीनता छोड़कर स्वाधीनरूपसे राज्यशासन करनेके पूर्वलक्षण प्रकाशित किये थे। मुगल सम्राट्का प्रवल प्रताप इस समय एक बार ही अत्यन्त क्षीण होगया था। इस कारण मोहम्मदशाहने शासनशक्तिको दृढ़ करनेके लिये विशेष अभिलाषा की। निर्वाणोन्मुख दीपककी शिखा जिस भांतिसे अतमे एक वार प्रवल मूर्ति धारण करके कुछ ही समयमे बुझ जाती है, उसी प्रकारसे भारत साम्राज्यके मुग़लशासनकी शक्ति औरंगज़ेवके शासनसे एकवार ही भयंकर मूर्ति धारण कर उस औरंगजे़वकी मृत्युके साथ ही साथ प्रभाहीन होगई। यद्यपि परिवर्ती बादशाह उस जगत्विख्यात् दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर तथा जगत् विदित भारत सम्राट्की उपाधि धारण करके शासनशक्तिको चलाते आये थे, परन्तु इससे उनके उस प्रताप, प्रभुत्व, विक्रम, वीरत्व, और गौरवगौरसा प्रभात कालके चंद्रमाकी समान घड़ी २ मे हीन तेज होती जाती थी।

हम जिस समयके इतिहासका वर्णन करते है, उस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तसे, क्या यवनराजके प्रतिनिधि शासनकर्ता, क्या देशी राजा सभीने मुग़लराज्यकी अधीनताकी जंजीरको छेदन करके स्वाधीनभावसे छोटे २ राज्योंकी प्रतिष्ठा करनेकी कल्पना की था और सरबुलन्द ही सबमे प्रथम दूसरे राजप्रतिनिधियोंके उदाहरण स्वरूप हुआ।

सरबुलन्दखांने विद्रोही दलके साथ मिलकर स्वयं स्वाधीन अधीश्वररूपसे अपने नामका प्रचार करदिया। इससे बादशाहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ, सरबुलन्दको दमन करनके लिये तुरन्त ही उसने तैयारी कर ली। सभामे सरबुलन्दखांके राजविद्रोहिताके समाचारका प्रचार होतेही बादशाहकी आज्ञासे मीर तुजक एक सोनेके पात्रमे बीड़ा अर्थात् ताम्बूल रखकर हाथ फैलाये उन बैठे हुए अमित बलशाली अमीर उमराव और देशी, राजाओंके बीचमे होकर धीरे २ जाने लगा। परन्तु हाय! उसका वह कार्य निष्फल होगया!—कोई भी साहस करके उस ताम्बूलको ग्रहण न कर सका!—किसी २ अमीरने तो शिर झुका लिया, किसी २

---

(१) आर्य शासनके समय यह देश सत्रह हजार ग्राम और नगरोंसे पूर्ण था। इसीसे सर्वसाधारणमे सत्रह हजार नामसे विदित था

(२) दिल्लीके बादशाह हिन्दुओंका सर्व नाश करनेवाले थे तो भी बादशाहको सभी ईश्वरके समान माना करते थे।

का शरीर मारे डरके थर २ काँपने लगा। किसीको भी उस बीड़ेकी ओर देखनेका साहस न हुआ।

राठौर कविने लिखा है, "कि परमेश्वर, बादशाह जो एक मात्र भिखारीको इच्छा करते ही बारह हजार सेनाके नेता और अमीर कर सकते थे, तथा अमीरको भिखारी कर सकते थे, वही अतुल शक्तिमान् सम्राट् आज एक उपयुक्त साहसी वीर शून्य है। अमीर गणोमेसे एक जनने कहा, जिसको दारुण वज्राघातके सहन करनेकी सामर्थ्य है, वही सरबुलन्दके विरुद्ध आगे बढनेका साहस करेगा, फिर और एक अमीरने कहा 'जो प्रबल नावको पकड़ कर उस नावके साथ समुद्रमे जाय वही सरबुलन्दके साथ युद्ध करनेमे समर्थ होगा।' तीसरे अमीरने कहा 'कालकूटधारी सर्पका मुख पकडनेकी जिससे सामर्थ्य है वही सरबुलन्दको दमन करनेके लिये तैयार होगा।' अमीरोके इस भाँतिके वचन सुनकर सरबुलन्दके विरुद्ध युद्धके लिये जानेमे सभीको असमर्थ देखकर बादशाह मोहम्मदशाहने अत्यन्त दुःखित हो मीरतुज़ुकको इशारेसे बुला उसको लोटजानेके लिये कहा ।

राठौर कवि इसी समयके बादशाहकी सभाका यथार्थ चित्र अंकित करगये है। सरबुलन्दखाँ जैसा एक अमित तेजस्वी और दुर्द्धर्ष साहसी वीर था, दूसरी ओर दिल्लीके उमराव भी इस समय विलासिताके इतने वशीभूत होगये थे, कि उनका बल विक्रम और शूरवीरता एक बार ही दूर होगई थी। जिस बादशाहकी सभामे एक समय अमीरोने शत्रुओके साथ युद्ध करनेके लिये बादशाह की आज्ञा मिलनेकी इच्छासे सेनापति पदपर नियुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की थी, और सहयोगी अमीरोके साथ प्रतियोगिता दिखाई थी, कालवश उसी बादशाहकी सभाके वह अमीरगण इस समय प्राणोके भयसे अत्यन्त भयभीत होरहे है।

कर्नल टाड्ने लिखा है। कि राठौर राज अभयसिह बादशाहकी यह दुखदाई अवस्था देखकर मन ही मनमे अत्यन्त दुःखी हुए, और जब बादशाह आमखास नामक सभास्थानको छोड़नेके लिये उद्यत हुए, तब उसी समय वीरश्रेष्ठ अभयसिहने गर्वित हो साहसमें भर कर उस बीडेको उठानेके लिये हाथ फैला दिया। बीड़ा ले मस्तकके ऊपर रखकर बादशाहको सम्बोधन देकर अभयसिह बोले, "जगत्के सम्राट्? आप दुःखित न हूजिये, आपकी कृपासे मै इस विद्रोही सरबुलन्दको अवश्य ही परास्त करदूंगा, निश्चय ही उसके स्वाधीन होनेकी आशाकी जड़मे दारुण कुठारका आघात करूंगा, और उसके मस्तकको आपके जगत् विख्यात सिहासनके नीचे उपहारमे दूंगा।"

अभयसिहने जिस समय अपने हाथसे बीडा उठाया उस समय पका हुआ

(१) जो साहसी वीर ताम्बुल ग्रहण करते हैं वह शत्रु दमन करनेको सेनापतिके पदपर नियुक्त होते है।

अनार जिस भाँति खोल २ होजाता है, उसी प्रकारसे सभामे वैठे हुए समस्त अमीरोका हृदय हिसाके प्रवल वेगसे मानो विदीर्ण होगया। कुछ ही समयके उपरान्त बादशाह मोहम्मदशाहने अभयसिहको गुजरातके शासनकी सनद दी, तब तो अमीरोका द्वेष और भी प्रवल होगया। परन्तु मोहम्मदशाहने उपस्थित अमीर और देशी राजाओके बीचमे एकमात्र राठौरपति अभयसिहको विद्रोही सरबुलन्दके विरुद्धमे युद्ध करनेका अभिलापी देख अत्यन्त प्रसन्न चित्तसे अभयसिह . बुलाकर कहा. दिल्लीके सिहासनकी रक्षाके लिये आपके पूर्वपुरुष भी इसी प्रकार वीरोकी समान आचरण करगये है, वादशाह जहाँगीरके राज्यमे आपके पूर्वपुरुषोकी सहायतासे कुमार खुर्रम और भीमकी विद्रोहिता दूर होगई थी। और दक्षिणके उपद्रव भी शान्त होगये थे, तथा मै विश्वास करता हूँ कि, इसी प्रकारसे आपके द्वारा मोहम्मदशाहके सिहासन और उनके सन्मानकी रक्षा होगी।" अभयसिहके लिये यह सम्मान अवश्य ही ऊँचा कहना होगा। जिस सभामे वादशाहके अधीनमे स्थित प्रत्येक वीर और अमीर इकट्ठे थे। जिन अमीरोकी मर्यादा वादशाहकी सभामे महासम्मानवाली गिनी जाती थी, जो अपने महावीर कहकर अभिमान करते थे। अभयसिहने उनको लज्जित करके इस बीड़ेको उठाकर केवल राठौर जातिका गौरव बढ़ाकर अपने असीम साहसका चूड़ान्त प्रमाण ही नही दिखाया था, वरन् उन्होंने केवल यही दिखाया था कि विजयी यवनोकी अपेक्षा विजित जाति ही अधिक राजभक्तिके वशीभूत है।

राठौरोके इतिहाससे जाना जाता है, कि "सम्राट् मोहम्मदशाहने शीघ्र ही प्रसन्न चित्तसे राठौरपति अभयसिंहको वहुतसे द्रव्य और महामूल्यवान् सात हीरोके अलंकार उपहारमे दिये। राजखजानेको खोलकर सेनाके खर्चके लिये इकतीस लाख रुपया अभयसिहको दिया। तोपगोदामसे बन्दूके और वहुतसे युद्धके अस्त्र सेनाने आनंदित होकर ग्रहण किये। सम्वत् १७८६ के आषाढ़ मासमे अभयसिहने बादशाह मोहम्मदशाहके द्वारा अहमूदाबाद और अजमेरके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त हो शासन सनदको ले बिदा ली"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिख गये है, "कि मुग़लवादशाहके साथ मारवाडका राजनैतिक विनाश इसी समयसे आरंभ हुआ, कारण कि सरबुलन्दकी विद्रोहितासे ही यवनराजको खंड २ मे विभक्त होनेके पहले ही सूचित होगया था। सन् १७३० ईसवीके जून मासमे मारवाड़के अधीश्वर महाराज अभयसिहने वादशाहसे विदा मागी। अभयसिह जिस अजमेरके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त हुए, सबसे पहले उसी अजमेरसे जानेके उनके दो अभिप्राय थे, पहला यह था—कि मारवाडमे जानेके मार्गका अभेद्य दुर्गस्वरूप (केवल मारवाड़मे ही नही वरन् राजपूतानेके प्रत्येक राज्यका पथस्वरूप) अजमेर पर अधिकार तथा दूसरा उस सदेहजनक राजनैतिक अवस्थाके सम्बन्धमे आमेरके महाराजके साथ परामर्श। आमेरके महाराज जयसिह किस अभिप्रायसे

इस समय अजमेरमे आये थे, राठौरोके इतिहासमे उसका कोई उल्लेख दिखाई नही देता, परन्तु अन्यत्र इनके सम्बन्धमे जो कारण निर्दिष्ट हुआ है उससे अनुमान किया जा सकता है कि पुष्कर तीर्थमें अपने पित्रोके लिये श्राद्ध तर्पणका करना ही उनके आनेका कारण था। राठौर कवि इन दोनो राजाओके साक्षात् संबन्धको भली भांतिसे वर्णन करगये है। उन्होने लिखा है कि हिन्दुओके दोनो राजाओने एक दूसरेके निमित्त अपनी २ पगड़ी फैलादी, उसीके ऊपर होकर आये, तथा दोनो जनोने एक ही साथ भोजन कर विश्राम किया। और वे यवनराज्यको विध्वंस करनेके लिये गुप्त सलाह करने लगे, इससे हम अनुमान कर सकते है कि कविकर्णीदानको इस गुप्त राजनैतिक परामर्शके विपयमे भली भांतिसे जानकारी थीं।

वादशाहकी सभामे महासम्मानित हो मारवाड़पति अभयसिह अजमेरमे जा अपने कर्मचारियोको यथायोग्य पदपर नियतकर मेरताको चलेगये। अनुज वख्तासिहने मेरतामे पहले जाकर अपने वड़े भाई अभयसिहको भक्तिपूर्वक अधिक सम्मानके साथ ग्रहण किया। इस समय वख्तासिहको नागौरराज्यके शासनकी पूर्ण सनद मिलगई। दोनो भ्राता शीघ्र ही मेरताको छोड़कर सेना और सामन्त मण्डलीके साथ जोधपुरकी ओरको जानेलगे। रास्तेमे महाराज अभयसिहने समस्त सामन्तोको सेना सहित विदा दकर कह दिया, कि विद्रोही सरबुलन्दके साथ शीघ्र ही युद्ध करनेको जाना होगा, इस कारण आप विलम्ब न करिये, और शीघ्रतासे अपनी अपनी सेना साथ लेकर जोधपुरमे इकट्ठे हूजिये। राठौर गण फिर इस समय अपने बाहुबलको प्रगट करनेका सुअवसर पाकर आनंदित हो अपने २ देशोको चले गये। नरश्रेष्ठ अभयसिह और नागौरपति बख्तासिह जोधपुमे जाकर सरबुलन्दके साथ युद्धकी तैयारी करनेलगे। इस ओर ठीक समय पर मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तके राठौर सामन्त अपनी २ सेना सजाकर जोधपुर नगरमे आनेलगे। राठौर कवि, सामन्तोके सेना सहित आगमन और युद्धकी तैयारी के विपयको भली भॉतिसे वर्णन कर गये है। समस्त सेनाके इकट्ठा होते ही शास्त्रके अनुसार " वड़वानल " " मगरमुखन " जमरा जदंष्ट्र, इत्यादि तोपोकी पूजा प्रारंभ हुई। राठौर वीरोने उन तोपोकी श्रेणी तथा अस्त्रोके सम्मुख अपने हाथसे बकरोका वलिदान कर उन बलिदान किये हुए बकरोके रुधिरसे तथा लाल चंदन और घृतसे तोपोको शोभायमान कर दिया।

युद्धकी समस्त तैयारी होगई, अभयसिहका प्रधान उद्येश यह था कि वह सरबुलन्दखॉको दमन करनेके पहले और भी एक अभिलापाको पूर्ण करनेके लिये उद्यत हो। अभयसिह अजमेरके राजप्रतिनिधि थे, इस कारण उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई वह उस सेनाके साथ प्रतिवासी सिरोहीपतिको दमन करने और उसका प्रतिफल देनेके लिये व्यग्र होगये। सिरोहीका अधीश्वर जिस भॉति उग्र स्वभावका था, उसी प्रकारसे अमित तेजस्वी और स्वाधीन वीर था। वह किसी समय भी किसीकी अधीनताके जालमे न फसा था, तथा सव प्रकारसे इस

ससय स्वाधीनताका अमृतमय फल भोग करता था । सिरोही देश दुर्गम पहाड़ोंके ऊपर स्थापित है, उसके तीनो ओर पहाड़ी आदमी रहते थे; इस कारण सिरोहीराज उन असीम साहसी पहाड़ी निवासियोंकी मित्रतासे और उनकी सहायतासे सब प्रकारसे स्वाधीनताकी रक्षा करता था । सिरोही राज्यका जो अंश मारवाड़की ओर था, केवल उसी अंशकी रक्षा करके वह विशेष वीरता दिखाया करता था ।

"सिरोही राज्यके तीनो ओर जो पार्वती जाति निवास करती थी वह मीना नामसे विदित थी । वही मीना गण इस समय अभयसिंहके भयंकर कोपमे पतित हुए । अभयसिंह जिस समय सेना सहित दिल्लीसे जोधपुरमे आकर सामन्तोको विदाकर अफीमका सेवन करके उन्मत्त होगये, उस समय शुभ सुअवर पाकर उक्त मीना गण अभयसिंहके पशुओको चुराकर अपने अधिकारी पहाड़ी देशको लेगये । मीनोके द्वारा पशुओके हरण होनेका समाचार अभयसिंह तक पहुंचा, तब उन्होने हँसते २ कहा, "अच्छा हमारे पशुओको लेजाओ, उन्होंने यह जाना होगा, कि "धान्य और घासके न मिलनेसे हमारे पशुओको अत्यन्त कष्ट होरहा है, इस कारण वह उन पशुओको अपने देशमे भोजन देनेके लिये लेगये है, तुम कुछ न कहना ।" महामान्य टाड् साहबने लिखा है कि बड़े आश्चर्यका विषय है कि महाराज अभयसिंहके युद्धका उद्योग करते ही मीनागणोने वह चुराये हुए पशु उसी समय ला दिये। अभयसिंहने मीनागणोके इस आचरणसे कहा, कि यह हमने पहले ही कह दिया था कि यह मीनागण हमारी अनुगत विश्वासी प्रजा है ।"

तुरन्त ही रणभेरी बजने लगी; चतुरंगिनी सेनाका दल वीरगर्वसे गर्वित हो पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ भारतक्षेत्रके चिरस्मरणीय वीरोका अभिनय करनेके लिये संहारमूर्तिसे आगे बढ़ा । राठौर कविने इस स्थान पर इकट्ठी हुई सेनादलका विशेष वृत्तान्त वर्णन किया है । सेनादलमे केवल मारवाड़के राठौरोका सेनादल ही नहीं वरन् रजवाड़ेके अन्य कितने ही देशोकी राजपूतसेना और दो यवनसेनापतियोके अधीनमे यवनसेना भी इकट्ठी हुई थी । कविने लिखा है, कि ""कोटा और बूंदीके हाड़ासैन्यदल, गगरौनकी खीची सैन्य, शिवपुरकी गौड़सेना, आमेरकी कछवाही सेना और मरुक्षेत्रकी सोढासैन्य अपने २ अधीश्वरोके अधीनमे इकट्ठी हुई । मारवाड़के अधीश्वर उस सम्मिलितवाहिनीके प्रधान सेनापतिरूपसे उनको चलाकर लेगये, मारवाड़के सम्मिलित राठौर, सेनादलके, बॉई ओर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहके अधीनमे चले ।"

राठौर कविने लिखा है, सम्वत् १७८६ चैत्रमासकी दशमी तारीखको जोधपुरको छोड़ कर भाद्राजून मालगढ़ सिवाना और जालौरमें होकर अभयसिंह सेना सहित आगे बढ़े । वह सबसे पहले रिवाड़ा पर आक्रमण कर अस्त्रोकी वर्षा करने लगे । महा संग्राम होनेके पीछे चांपावत्के नेता अपने जीवनको त्याग कर शत्रराशिके ऊपर जा गिरे । देवड़ागण परास्त होकर प्राणोके भयसे पर्वतको छोड़कर भागने लगे । वहाँका एक दल सेनाकी रक्षाके पीछे अभयसिंहके साथ पूसालियाको चलागया । पीछे

आवूसिखर उस विजयी वाहिनीके आगमनसे कंपायमान होगया। सिरोहीपतिने जव यह सुना कि रिवाड़ा और पोसालिया यह दोनो देश अभयसिहकी सेनाने विध्वंश करदिये है, तव वह एकवारही निराशाके समुद्रमे मग्न होगये। सिरोहीपति चौहानराव नारायणदासने अन्य उपाय न देखकर वीरश्रेष्ठ अभयसिहके हाथमे अपनी भ्रातृपुत्रीको देकर राज्यकी रक्षा करनेका विचार किया"।

चावड़ा जातीय राजपूत सामन्त मायारामकी मध्यस्थतामे सिरोहीपति राव नारायणदासने अभयसिहके निकट संधिका प्रस्ताव भेज दिया। और उसके साथ ही अपने भाई मानसिहकी कन्या उन्हे देनेकी अभिलाषा भी प्रगट की। उस भयानक रणभूमिमे शीघ्र ही राजपूत जातिके विवाहके पूर्वोपहारस्वरूपमे एक नारियल, आठ श्रेष्ठ तुरंगनी और चार हाथियोका मूल्य राव नारायणदासने अभयसिहके पास भेज दिया। अभयसिहने उसको बड़े आदरके साथ ग्रहण करके विवाह करनेमे तुरन्त ही अपनी सम्मति प्रगट की। कुछही समयमे युद्धका वाजा बंद होकर विवाहके आनंदका कोलाहल होने लगा। शुभ मुहूर्त्तमे महाराज अभयसिहने मानसिहकी कन्याका पाणिग्रहण किया। इस विवाहके फलस्वरूपमे अभयसिहके औरससे इस रानीके गर्भसे दश महीने पीछे जोधपुरमे रामसिहने जन्मलिया। राठौर कविने लिखा हे कि राव नारायणदासने इस परम सुन्दरी भाईकी पुत्रीको अभयसिहके करकमलमे अर्पण करनेके अतिरिक्त कर देकर संधिवंधन समाप्त करलिया।

देवड़ा जातीय सामन्त मंडली अपनी २ अधीनकी सेनाके साथ मारवाड़के महाराज अभयसिहके अधीनमे स्थित प्रवल वाहिनीके संग जा मिले, मारवाड़पतिने विद्रोही सरवुलन्दखॉको दमन करनेके लिये सरस्वती नदीके निकटवर्ती पालनपुर और सिद्धपुर होकर सेना सहित यात्रा करनेमे क्षणमात्रका भी विलम्व न किया। वीर श्रेष्ठ अभयसिहने विद्रोही नेता सरवुलन्दके निकट जाकर वहॉ अपने डेरे डाल दिये, और उसके पास एक दूत भेज दिया। सरवुलन्दने दिल्लीके वादशाहके अधिकारी जिन समस्त सामरिक और अन्यान्य द्रव्यो तथा तोपों पर अधिकार कर रक्खा था, उन सवको लौटादे, अधिकारी राज्यकी आसदनी तथा उसके खर्चका हिसाव, और समस्त राजस्व देदे, और अहमदावाद और उस देशके अन्यान्य किलोमे जो सव विद्रोही सेना ठहर रही थी, उसको निमंत्रण कर विदा देनेके लिये प्रधान सेना पति अभयसिहने उस दूतके हाथ सरवुलन्दके निकट यह आज्ञा कहला भेजी। सरवुलन्द अभयसिहकी उस आज्ञाके विरुद्ध गर्वित हो अहंकारसे पूर्ण उत्तर देनेमे कुछ भी भयभीत नही हुआ। उसने कहला भेजा कि "मै अहमदावादका राजा हूँ जवतक मेरे शरीरमे प्राण रहैगे तवतक किसी प्रकार भी अहमदावादको नही देसकता।"

विद्रोही नेता सरवुलन्दखॉका उत्तर सुनकर महाराज अभयसिहने तुरन्त ही एक महती सभा की। समस्त राठौर सामन्त सभास्थलमे इकट्ठे होगये, सरवुलन्दके पास

जो प्रस्ताव भेजा गया था, उसका उसने जो उत्तर दिया था, तथा इसके सम्बन्धमे जिस भावसे तर्कवाद और वक्तृता हुई, तथा सवसे पीछे जिस नीतिका अवलम्वन किया गया राठौर कविने उसका विशेष वर्णन किया है। उसने मरुक्षेत्रके सवमे प्रधान आठ राठौरोके सामन्तोकी वक्तृताका संक्षिप्त मर्म भली भाँतिसे प्रकाशित किया है।

राठौर कविकी लेखनीसे जाना जाता है, कि "चांपाके वंशधर अह्वाके हरनाथके पुत्र सामन्त कुशलसिह जो मारवाड़के महाराजके दहिनीओर आसन पर बैठनेके अधिकारी थे। सबसे पहले उन्होने अपने मनके भावको प्रकाशित कर दिया। इसके पीछे कूपावत सम्प्रदायके नेता आसोपके सामन्त कन्हीराम, जो मरुक्षेत्रपतिके वॉई ओरके आसन पर बैठनेके अधिकारी थे उन्होने कहा, "आओ किलकिलांके समान हम समररूपी समुद्रमे कूद पड़े। इसके पीछे मेरताके सामन्त केसरीसिहने अपने मन्तव्यको प्रकाशित किया, ऊदावत सम्प्रदायके वृद्ध असीम साहसी और वहुतसे युद्धोमे महावीरता प्रकाशक नेताओने " इस समय क्या करना उचित है " अपने २ मनके भावको इस विषयमे प्रकाशित करदिया इसके पीछे योधा सम्प्रदायके प्रधान नेता खैरवाके सामन्तने कहा "मै सबसे पहले रणभूमिमे अपना जीवन देकर अप्सराओकी वर मालाको ग्रहण करनेकी अभिलाषा करता हूं। आओ मेरे शरीरको लालरंगके वस्त्रोसे शोभायमान करो, पीछे शत्रुओके रुधिरसे तलवार और भालोको रँगकर सरवुलन्दका मस्तक लेकर क्रीडा करूंगा। जेतावत फतेसिह और कर्णोत अभयमल्लने योधा नेताकी इस युक्तिको भली भांतिसे समर्थन किया, समस्त वीर एक स्वरसे युद्ध! युद्ध! कहकर चिल्ला उठे। कोई २ वीर लाल वस्त्रोको धारण करके मानो सूर्यलोकके जीतनेको तैयार हुए। ऊँचेस्वरसे चांपावत कर्णसिहने कहा, " अप्सरा गण अमृतके पूर्ण पात्र हाथमे लिये सूर्यलोकमे हमारे साथ आदर सहित सम्भाषण करेगी। प्रत्येक[३] राजपूत सामन्त और समस्त कवियोने एक स्वरसे कहा–' युद्ध! युद्ध! '।

---

(१) किलाकिला एक छोटे पक्षीका नाम है। यह खजनके बरावर होता है, और प्राय रूपरग मे भी उससे मिलता जुलता होता है। यह अकसर नदी या तालमें पानीसे दो चार हाथ ऊपर मडराया करता है, और ज्योही देखता है कि उसके भक्ष योग्य कोई छोटी मछली वूँद लेनेको उठ रही है त्यौहीं वह तीरकी तरह पानीमे गोता मारकर इस मछलीको पकड़ लेता है। वह प्राय किलकिल शब्द करता है इसीसे उसे किलकिला कहते है।

(२) सही नाम अभयकर्ण है। यह दुर्गादासका बेटा था। इसीकी मिलावटसे कि उस रातको यह चौकी पर था, जब वख्तसिहने ज़नानेमें जाकर अपने बापको मारा था।

(३) महात्मा टाड् साहवने यहॉ पर टीकेमें लिखा है, " कि हमारे प्राचीन शिक्षक जिस समय सरवुलन्दके साथ इस युद्धका वृत्तान्त पढ़ रहे थे, और मै उसका अनुवाद करता जाता था, उस समय मेवाडके सबसे प्रधान माननीय सलूमरके २२ वर्षके एक युवक सामन्त मेरे पास बैठे हुए मन लगाकर इसको सुनतेजाते थे। इन्हीं सलूमरके सामन्तवंशी किसी विशेष कारणसे (वह कारण–

इसके पीछे बख्तसिहने उठ कर अपने भाई अभयसिह और सामन्तोको बुलाकर कहा, "कि आपलोग सभी इस स्थान पर विश्राम करिये, मै अकेला ही सबसे पहले सेनाको चलाकर सरबुलन्दके अहंकारको चूर्ण करता हूं। आप इन्ही डेरोमे विश्राम कीजिये" तुरन्त ही एक बडे पात्रमे लाल जल लाया गया, वह पात्र मारवाड़के महाराजके सम्मुख रक्खा गया। अभयसिहने उस पात्रमेसे जल लेकर उन बैठे हुए वीरोके ऊपर उसे छिड़कते हुए कहा, "इस युद्धमे प्राण त्याग करनेसे अवश्य ही अमरपुरसे जाना होगा"।

इस स्थान पर कविने इकट्ठी हुई अश्वारोही सेनाके अश्वोकी प्रशंसा की है। दक्खनकी भीमरथालीनामक अश्वश्रेणी सबसे अग्रणीय थी, इसके पीछे मारवाड़के अन्तर्गत घाट और राड़धड़ा और सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावाड़के अश्वोकी प्रशसा की थी। सरबुलन्दखॉने अपनी रक्षाके लिये सम्मिलित राजपूत वाहिनीके करालग्राससे नवजीतराज्यकी रक्षाके लिये जिन सब उपायोका अवलम्बन किया, राठौर कविने उसका भी वर्णन किया है। उसने नगरके जानेके प्रत्येक मार्गपर दो२ हजार सेना और पॉच पांच तोपे रख दी। इन तोपोको यूरूपवाले चलाते थे। एक दल यूरूपीय बंदूकधारी सेना शरीररक्षकरूपसे उसके पास रहती थी। अभयसिहने युद्धकी सभामे नियत किये हुए मतसे सरबुलन्द पर आक्रमण करना विचार कर शीघ्र ही समरानल प्रज्ज्वलित करदी। पहले दोनो ओरसे तोपोके भयंकर गोलोकी वर्षा प्रारंभ हुई, क्रमानुसार तीन दिन तक इस प्रकारसे गोलोकी वर्षा होनेके पीछे सरबुलन्द का पुत्र मारा गया। महावीर बख्तसिहने सबसे पहले संहार मूर्तिसे राठौरोकी सेनादलके साथ शत्रुपक्ष पर भयंकर वेगसे आक्रमण किया, राजपूतोकी सेनाका दल उस प्रथम आक्रमणसे ही अपना प्रशंसनीय बलविक्रम दिखाने लगा, प्रत्येक

—हम इस समय भूल गये है) किसी भांति भी अफीम सेवन नहीं करते थे। विशेष शपथ करके सलूमरके सामन्तोंने अफीम सेवनसे घृणा की थी। इस सामन्तके पितामह यहॉतक अफीम सेवनसे घृणा करते थे कि एक समय प्रकाश्यप्रीतिकी सभामें उनके शरीरके किसी स्थान पर अफीम मिले हुए पानीकी एक बूंद गिर पड़ी थी। उन्होने तुरन्त ही अपनी तलवारसे शरीरके उस स्थानको काटडाला। मुझे यह पहले ही ज्ञात था, तब मैंने उस युवक सामन्तको बुलाकर कहा, "अच्छा रावतजी आप अप्सराओके हाथसे अमृतपूर्ण प्यालेके ग्रहण करनेकी अभिलाषा करोगे या अपने कुलकी प्रतिज्ञाको रखनेके लिये निषेध करोगे? उसी समय युवक सामन्तने उत्तर दिया, मैं अवश्य ही अप्सराओके हाथसे अमृतमयपात्रका ग्रहण करनेकी इच्छा करता हूं, पर वह इस अफीम पूर्ण-पात्रसे अवश्य ही भिन्न है। मैंने कहा "तब क्या आप विश्वास करते है, कि जो रणभूमिमें जीवनदान करते है? अप्सरा गण उनकी आत्माको आदर सहित सूर्यमंडलमें ले जाती है? उत्तर मिला इस बातको न माननेमे किसको साहस है। जब हमारा समय आवैगा तब हम अवश्य ही अप्सराओके हाथसे उस पात्रको आदर सहित ग्रहण करेगे। वीरके लिये कैसा उज्ज्वल विश्वास है। इस युवक सामन्तने दीर्घकाल तक हमारे प्राचीन शिक्षक और मित्रोंके पास बैठकर समस्त कविता सुनी थी।"

राजपूत सामन्त ही इस समय नंगीतलवारे और भाले हाथमे लेकर शत्रुओका संहार करनेमे उन्मत्त होगयथे। चांपावत सम्प्रदायके नेता कुशलसिंह रणक्षेत्रमे अपना जीवन देकर सूर्यलोकको चलेगये। अहमदाबादके इस भयंकर युद्धमे राजपूतानेके जिन महावीरोने अपना जीवन दिया था, महात्मा टाड् साहबने इस स्थान पर कविके ग्रंथसे उसको उद्धृत करनेकी अभिलाषा नही की, इसी लिये हम भी उन्हीके पीछे चलते है। प्रत्येक राठौर वीर ही, अधिक क्या अभयसिह और वख्तसिह दोनो भ्राता भी शत्रुपक्षके एकसे अधिक नेताके प्राण नाश करनेको समर्थ न हुए। अमरा जिसने बहुत वार अजमेरकी रक्षा करके महा वीरता प्रकाशित की थी, उसने ऊँचे पदपर स्थित पांच नेताओके जीवनको निर्वाण कर दिया और दो या तीन हजार सवार मारडाले।

कवि लिख गये है, " जिस समय आठ घडी दिन वाकी रहा उसी समय सरबुलन्दखॉ भाग गया। परन्तु उसकी अग्रवर्ती सेनादलका नेता अलियार तव भी महा विक्रम और असीम साहसके साथ वरावर युद्ध करता रहा। अंतमे वीरश्रेष्ठ वख्तसिहकी तलवारने उस अलियारके मस्तकके दो खंड करदिये। तुरन्त ही राजपूतोकी सेनादलमे जयका डंका वजनेलगा। अहमदावादका स्वतःसृष्ट नरपति सरबुलन्दखॉ पहलेसे ही घायल होगया था, वह जिस सवारी पर चढ़ा हुआ जा रहा था, वह सवारी मानो हरिनीकी समान शीघ्रतासे चली। इस युद्धमे शत्रुओकी ओरके ४४९३ जने घायल हुए, इनमेसे एकसौ तो पालेंकीनशीन[1] थे तथा आठ हाथीनशीन[2] और तीनसौ ऐसे थे कि जो दीवान आमनामक सभाके कमरेमे जानेके समय ताजीमी सन्मानके अधिकारी थे।"

"एकसौ वीस ऊँची श्रेणीके राठौर सेनानायक और पांचसौ अश्वारोही सैनिक अभयसिहकी ओरके मारे गये और सातसौ सिपाही घायल[3] हुए।"

उपरोक्त विवरणसे प्रकाशित होता है कि अहमदावादका यह युद्ध अत्यन्त प्रवलरूपसे प्रज्ज्वलित होगया था। और इस युद्ध क्षेत्रमे विद्रोही यवनसेना दलकी अपेक्षा राठौरोकी सेनाने अधिक वीरता दिखाई थी। इसके पीछे कविने लिखा है " कि दूसरे दिन प्रभात होते ही अन्य उपाय न देखकर सरबुलन्दखांने अभयसिहके कर कमलमे आत्म समर्पण करदिया। उसके अनुचर तथा सहयोगी भी उसीके साथ वंदी होगये। विजयी अभयसिहने अपनी प्रतिज्ञाको पूरण करनेके लिये विद्रोहियोके नेता सरबुलन्दको वंदीभावसे आगरेमे भेज दिया। सरबुलन्दके सहयोगी जितने मुगल

---

(१) इनको नरयानमें चढ़नेका अधिकार वादशाहसे प्राप्त हुआ था।

(२) उन्होंने वादशाहसे ही हाथी पर चढ़नेका अधिकार पाया था।

(३) कविश्रेष्ठने इस स्थान पर घायल हुए प्रधान २ वहुतसे सेनापतियोंके नाम लिखे हैं, उन सवकी आवश्यकता न जानकर कर्नल टडाने उनको प्रकाशित नहीं किया। उन घायल हुओमें 'वुलाक' नामक एक अँगरेज भी था।

घायल होगये थे, वंदीभावसे जाते समय उनमेंसे बहुतसे ऐसे थे कि जिन्होने मार्गमे ही अपने प्राण छोड दिये। इस भयंकर युद्धमे राठौर सेनाके अनेक सामन्त तथा कुटुंबियोके जीवन नाशसे वीर श्रेष्ठ अभयसिह अत्यन्त ही शोकित हुए। अभयमल्लने सत्रह हजार नगरोसे पूर्ण गुजरात, और नौ हजार ग्राम नगरसे पूर्ण मारवाड़, और एक हजार ग्राम नगरोसे पूर्ण अन्य और एक देश पर राज्य किया। ईडर, भुज, वागड़, सिन्ध, सिरोही, फतेपुरके चालुक झुंझनू जैसलमेर, नागौर डूंगरपुर, वासवाड़ा, लूनावाड़ा, हलवध इत्यादि देशके अधीश्वर प्रतिदिन प्रातःकाल ही महाराज अभयसिहके चरणोमे अपना मस्तक नवाया करते थे "।

"इसी प्रकारसे महाराज रामचंद्रने जिस विजयादशमीके दिन लंकाको जय किया था, सम्वत् १७८७ सन् १७३१ ईसवीमे उसी विजया तिथिको वारह सहस्र सेनावाले सरबुलन्दखॉके साथ युद्ध करके विजय प्राप्त की थी।

विजयी अभयसिहने गुजरातकी राजधानी पर अधिकार करके शान्तिरक्षाके लिये सत्रह हजार सेना रखकर गुजरातके समस्त धन रत्नोको लूट लिया, और महा आनंदित हो अपनी राजधानी जोधपुरमे उन सबको लेकर चले आये, ऐसा जाना जाता है कि अभयसिह गुजरातको जीत कर ही नगद चार करोड़ रूपये, नानाजातीय अनेक प्रकारके एक हजार चारसौ तोपै तथा अगणित सामरिक द्रव्य गुजरातसे लाये। मुग़लराज्यकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त ही हीन होगई थी, इस कारण अभयसिह उन समस्त तोपो और सामरिक द्रव्योसे मारवाड़के किलेको भली भॉतिसे दृढ़ करके अपने स्वार्थ साधनके साथ ही साथ मुग़लशासनशक्तिके लोप होनेकी राह देखने लगे।

रणविजयी वीर अभयसिहने सरबुलन्दखांको परास्त करके उसे वंदीभावसे आगरेमे भेज दिया था, यद्यपि महात्मा टाड् साहबने इस प्रकारसे लिखा तो है परन्तु अभयसिह गुजरातको जीतनेके पीछे वादशाहकी सभामें गये थे या नही, उन्होने

(१) मारवाड़की राठौर सामन्तमंडली तथा अन्य समस्त राजपूत अधिनायकोके अधीनमे स्थित सामन्त और वीर गणोने मारवाड़पति अभयसिहके अधीनमे होकर महा वीरता प्रकाश करके जीवन दान किया, राठौर कविने उनके बल विक्रमकी अत्यन्त ऊची प्रशंसा करते उनके नामोका भी उल्लेख किया है। इस संग्राममे सम्पूर्ण सम्प्रदायोके कई नेता मारे गये। उक्त सम्प्रदायके पालीके सामन्त करनसिह सनदरीके किशनसिह, जालोरके गोर्धन तथा कल्याणने भी अपने प्राण त्याग किये थे। कूंपावत् सम्प्रदायके नरसिंह, सुरतानसिंह और दुर्गनके पुत्र पद्म इत्यादि भी घायल हुए। योधा सम्प्रदायक तीन नेता थे; हठीसिंह गुमान और योगीदास तथा प्रसिद्ध असीम साहसी मेड़तिया वीरवृंदोमेसे तीन जने, भूमासिह, कुशलसिह, और हाथीके पुत्र गुलावने अपने प्राण त्याग किए। जादो सोनगरा धाधल और खीची इत्यादि अनधीन सामन्तोमे भी अनेक महाबली वीर सूर्यलोकको चले गये। इनके सिवाय कवि और पुरोहित भी मारे गये। कविने छन्दके अनुरोधसे एक २ स्थान पर अभयसिहके बदलेमे अभयमल्ल कहकर उल्लेख किया है।

उसका कोई उल्लेख नहीं किया, हमें ऐसा बोध होता है कि मारवाड़पति अभयसिंहने इस समय दिल्लीश्वरको अत्यन्त हीन बल देखकर गुजरातको फतह करके जो समस्त धन रत्न और द्रव्य अपने अधिकारमें किये थे, उन सबको बड़े यत्नसे रक्खा । और स्वजातिकी स्वाधीनता बढ़ानेके लिये वह विशेष यत्न करने लगे। वास्तवमें मोहम्मद-शाहकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त हीन होगई थी । केवल मारवाड़पति ही नहीं वरन् दिल्लीके अधीनके सभी यवन राजप्रतिनिधि और देशीयराजा कईसौ वर्ष तक अधीनता स्वीकार करनेके पीछे भी फिर स्वाधीन रूपसे मस्तक उठाकर नवीन २ राज्यों के स्वतंत्र अधिकारी बनगए ।

ग्यारहवाँ अध्याय ११.

राठौरराजके दोनों भ्राताओंके मनमें मलीनता; बख्तसिंहके बाहुबल और वीरताको देख कर अभयसिंहको महा भय, बख्तसिंहकी अवलम्बित नवीन राजनीति; राठौर कवि कर्णका जोधपुर छोड़कर नागौरमें जाना, और बख्तसिंहके साथ मिलकर षडयंत्र करना, अभयसिंहका बीकानेर पर आक्रमण, अभयसिंहके अधीनस्थ सामन्तोंके विचित्र आचरण, शत्रुपक्षकी सहायता करना; आमेरके महाराजके साथ अपने भाई अभयसिंहका विवाद उपस्थित करनेके लिये बख्तसिंहका षड़यन्त्र, अभयसिंहके न होने पर आमेरपति जयसिंहका जोधपुर पर आक्रमण रोकना; आमेरपति जयसिंह, आमेरकी सामन्त मण्डलीका अभयसिंहके प्रस्ताव विचारको बदलदेना; बख्तसिंहके भेजे हुए दूतका आमेरके महाराजके साथ साक्षात् होना; दूतके उद्देशको पूर्ण करना; जयसिंहका अभयसिंहके निकट अपमान कारक पत्र भेजना; अभयसिंहका क्रोधपूर्ण उत्तर देना; जयसिंहका सेना सहित सामन्तमण्डलीको बुलाना; जयसिंहका वैदेशी राजाओंसे सहायता पाना; आमेरनगरमें एक लाख सेनाका इकट्ठा होना, मारवाड़की सीमाके अन्तमें सेनादलका जाना; अभयसिंहका बीकानेरके अवरोधको छोड़ देना; बख्तसिंहका विचित्र आचरण, नागौरके समस्त सामन्तोंका प्रतिज्ञामें बांधना, आमेरकी प्रबल सेनाके साथ युद्धके लिये बख्तसिंहका केवल सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ यात्रा, गगवाणामें युद्ध, साठ जनोंकी सेनाके साथ बख्तसिंहका आमेरपति के ऊपर आक्रमण, आमेरपतिका उद्देश पूर्ण आमेरके कवियोंका बख्तसिंहकी वीरताकी प्रशंसा करना, अनुचरोंकी सेनाके विनाशसे बख्तसिंहका अनुताप, मेवाडेश्वर राणाके द्वारा विवाद करनेवाले राजाओंमें मित्रता स्थापन; अभयसिंहका परलोक गमन, उनकी जीवनीकी समालोचना,

महाराज अभयसिंहके सरबुलन्दको पराजय और गुजरात पर अधिकार करते ही उनके यशका गौरव चारों ओर संपूर्ण रूपसे फैल गया—राठौर जातिकी गौरव-गरिमा दूनी बढ गई, इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे करलेंगे । विजयी वीर

* इनको भक्तसिंह नामसे भी लिखा है

अभयसिंह गुजरातको जय करके वहांसे वहुतसा धन और तोपें आदि पाकर अपने राज्यमें स्थित किलोंको दृढ़ करके आनन्दपूर्वक शांति सुख भोगने लगे। परन्तु इस शांतिके आलिंगनमें वह बहुत दिनतक न रहसके। अभयसिंह अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ अफीम सेवनके अधिकाधिक वशवर्त्ती होगए। दूसरी ओर वीर श्रेष्ठ वख्तसिंहका असीम साहस, महा वीरता सामरिक प्रतिभा अधिक बढ़ गई, और इसीसे अभयसिंहके हृदयमें महा भय उपस्थित होगया। एक ओर अभयसिंह जिस प्रकार अपने भाईके बल और गौरवके विषय विद्वेषके वशीभूत होगये, दूसरी ओर अपने भाईको पूर्ण स्वाधीनता असीम सामर्थ्य और शांतिको संभोग करते हुए देखकर वख्तसिंहके हृदयमें भी विद्वेषकी अग्नि धीरे २ प्रज्वलित होगई। दोनों राठौर राजभ्राताओंके मनोमालिन्य होनेमें कुछ भी बाकी न रहा। दोनों भाइयोंके हृदयमें विद्वेषकी अग्निका वृक्ष धीरे २ बढ़नेलगा, यद्यपि वख्तसिंह नागौरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित होगये थे, परन्तु वह जैसे महावीर, प्रतिभाशाली, तथा ऊँची आशाओंके वशवर्ती थे, इससे उस सामान्य राज्यखंडके शासनमें उनकी तृप्ति होना कहाँ संभव थी? परन्तु इस बातको वख्तसिंह भली भाँतिसे समझ गये थे, कि असीम साहसिक आचरण, या कठिन स्वभाव, तथा वीरताके बलसे उन्होंने राठौर जातिके सर्वसाधारणके ऊपर अपना प्रवल अधिकार स्थापित किया है, इनको सभी विद्वेषपूर्णनेत्रोंसे देखते थे, उद्धतस्वभाववाली राठौर जाति इनका किंचित् भी विश्वास नहीं करती थी। इस कारण विशेष सावधानी के विना यह तीनसौ साठ खंड नगरोंसे पूर्ण नागौर राज्यकी निर्विघ्नतासे रक्षाकर अपने गौरवको पूर्णतासे अचल न रख सकते थे।

वख्तसिंह केवल असीम साहसी वीर ही नहीं थे, वरन् यह एक चतुर और नीतिज्ञ पुरुष भी थे। विदेशिय मित्र राजगणोंकी सहायतासे अथवा मारवाड़में आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित करके इन्होंने अपनी सामर्थ्य बढ़ानेकी इच्छा नहीं की थी। वह इस बातको जानते थे कि इससे स्वजाति और अपने ही अनिष्ट होनेकी संभावना है, परन्तु वख्तसिंहने इस समय विख्यात् राठौर कविकर्णीदानके प्रस्ताव वा उपदेशके अनुसार एक विचित्र राजनीतिका अनुसरण करना प्रारंभ किया। वह राजनैतिक अनुष्ठान राजपूत चरित्रोंके नवीन लक्षण और विचित्रताको प्रकाशित करता है। कवि श्रेष्ठ कर्णीदान सरबुलन्दके साथ अभयसिंहके युद्धका वृत्तान्त ऐतिहासिक काव्यमें वर्णन करनेके पीछे जोधपुरको छोडकर नागौरमें जाकर वख्तसिंहके साथ मिलगया। यह तो हम पहले ही कह आये हैं कि कवि कर्णीदान एक ऊँची श्रेणीका राजनीतिज्ञ मनुष्य था। राठौर जातिके अन्यान्य वर्णोंकी समान यह कविश्रेष्ठ भी षड्यंत्र विद्यामें विशेष पारदर्शी था, इस कारण इसने ऊँची अभिलाषापूर्ण हृदयको वख्तसिंहके साथ मिलाकर अभयसिंहके विरुद्ध षड्यंत्र जालके विस्तार करनेकी पूर्व सूचना कर दी। वह कवि एक महामान्य मनुष्य था। इस कारण वह अत्यन्त सरलतापूर्वक गुप्तभावसे षड्यंत्र जालका विस्तार करने

लगा। कवि कर्णादानने वख्तसिंहके साथ मिलकर वहुतसी सलाह करनेके पीछे यह निश्चय किया कि मारवाड़ेश्वर अभयसिंहके साथ आमेरके अधीश्वरका विवाद उपस्थित होनेसे सहजमे ही आशा पूर्ण होजायगी, और इससे सरलतासे वख्तसिंहका उद्देश सफल होजायगा। कविके इस प्रस्तावके कार्यको पूर्ण करनेका अवसर भी शीघ्रतासे आ पहुंचा।

महावीर सियाजीने मरुक्षेत्रमे जिस राठौर वंशका वीज वोया था, उस वंशरूपी वृक्षकी एक शाखासे बीकानेरका राजवश उत्पन्न हुआ। बीकानेरके राठौर राजा इस समय सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। मारवाड़पति अभयसिंह बीकानेरपतिके नाममात्रके प्रभु थे। बीकानेरराज्य किसी विषय पर इस समय अभयसिंहके साथ अप्रीतिकारक आचरण करता था। अभयसिंह इसको वदला देनेके लिये तैयार हुए। दिल्लीके अधीश्वर सम्पूर्ण देशीय राजाओके प्रभु थे। परन्तु उन दिल्लीपतिके इस समय प्रवल प्रताप और प्रभुत्वकी विक्रमशक्ति एकबार ही हीन होगई थी, अतः अभयसिंहने निर्भय होकर सेनासहित वाहर जा बीकानेरको घेर लिया। मारवाडके राठौरोकी सेनाने प्रवल रूपसे बीकानेरको घेरा तथापि बीकानेरकी सेनाने सरलतासे राठौरोको जय प्राप्त करने नही दी, वे वड़ी वीरताके साथ शत्रुपक्षके कराल ग्राससे बीकानेरकी रक्षा करनेलगे। महाराज अभयसिंह सेनासहित कई सप्ताह तक इस प्रकार बीकानेरको घेरे रहे, वख्तसिंहने विचारा कि इस सुअवसरमे बीकानेरको आक्रमणसे उद्धार करसकेंगे तो सरलतासे मनकी कामना पूर्ण होजायगी। वास्तवमे उनके लिये यह सुअवसर विशेष सुखकारी विचारा गया।

अभयसिंहने मारवाडके समस्त सामन्तोंके अधीनमे स्थित समस्त राठौर सेनाके साथ बीकानेरको घेर लिया था। परंतु वह घेरना ही था अभयसिंहके साथी उन लोगोसे सहानुभूति रखते थे, और यथासमय उन्हे सहायता भी देते थे। कर्नल टाड् साहव लिखते है कि अवरोधकारी राठौर यदि बीकानेरकी सेनाको अफीम, लवण और लड़ाईका सामान न देते तो अवश्य ही वह आत्म समर्पण करदेते। मारवाड़के राठौर गणोने किस कारणसे बीकानेरके निवासियोके ऊपर यह करनेके अयोग्य नीति विरुद्ध आचरण किया था, हमारे विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे—यह तो हम पहले ही कह चुके है। कि बीकानेरके निवासी मारवाडकी राठौर जातिके समान समरक्तवाही और एक ही वंशमे उत्पन्न थे। इस कारण अभयसिंह बीकानेरपतिको अधीनताकी जंजीरमे वॉधनेके लिये उद्यत हुए, तो भी राठौर गणोने चुपके २ अपने जातिवाले बीकानेर निवासियोको जातीयप्रेमके वशसे सहायता दी। इसी लिये अभयसिंहके अधीनकी प्रवलवाहिनीने एकत्रित होने पर भी बीकानेरकी संख्यावद्ध सेनाको सरलतासे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ होने दिया।

कवि कर्णादानके प्रस्तावके मतसे कार्य करनेका सुअवसर पाकर अर्थात् मारवाड़पति अभयसिंहको बीकानेरके आक्रमणमे प्रवृत्त देखकर नागौरपति वख्तसिंह शीघ्र ही

आग्रहके साथ कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। कवि कर्णीदानने वख्तसिंहसे कहा, "कि आप आमेरके महाराजको इस भावका पत्र लिखिये कि अभयसिंहने बीकानेरके आक्रमणसे आमेरके महाराजका अपमान किया है। आमेरके महाराज ही बीकानेरपतिके रक्षक स्वरूप हैं, इस कारण बीकानेरके आक्रमणसे अभयसिंहने प्रकाशमें आमेरके महाराजकी शक्तिको अस्वीकार किया है। अभयसिंहने इस समय बीकानेरको घेर लिया है, इस कारण इस सुअवसरमें आमेरपति सरलतासे जोधपुर पर आक्रमण कर सकते हैं।"

कविकी आज्ञासे वख्तसिंहने शीघ्र ही जयसिंहके नाम एक पत्र भेजा। और उसी समयमें आमेरपतिकी सभाका जो श्रेष्ठ दूत रहता था उसको भी पत्रके द्वारा यह लिख भेजा कि इस समय क्या करना उचित है।

आमेरपति जयसिंह बुढ़ापेमें अत्यन्त ही अफीमके भक्त होगये थे; और इससे राजकार्यमें भी अनेक विघ्न होनेकी सभावना थी, इस बातको वह भी भली भांतिसे जान गये थे इसीसे उन्होंने अपने राज्यमें इस आज्ञाका प्रचार किया, कि जिस समय हम अफीम सेवन करके उसके नशेमें संज्ञाहीन हों, उस समय राजनैतिक अथवा राज्यकार्यका कोई विषय भी हमारे सम्मुख उपस्थित न किया जाय। इस आज्ञाके प्रचारका कारण यह था कि वह अफीमके नशेमें उन्मत्त होकर कहीं कोई अन्याय न कर बैठें। नागौरपति वख्तसिंहका पत्र आमेरराजकी सभामें आया, आमेरके समस्त सामन्तोंने एकत्रित होकर उस पत्रको पढ़कर तर्कवितर्क करनेके पीछे प्रकाश्यरूपसे यह निश्चय करदिया, कि मारवाड़पति अभयसिंह और बीकानेरपति दोनों ही स्वजाती और अपने हैं, इस कारण इस विषयमें आमेरके महाराज किसी ओर भी हस्ताक्षेप करनेकी अभिलाषा नहीं करते। सामन्तोंके ऐसा निश्चय करनेसे वख्तसिंहकी आशालता एकबार ही मुझारगई। परन्तु बीकानेरके जो दूत आमेरके महाराजकी सभामें थे, वह जैसे चतुर थे उसी भाँति नीतिज्ञ भी थे। आमेरराजके शासनविभागके प्रधानमंत्री विद्याधर उक्त दूतकी मित्रताकी जंजीरमें भली भाँतिसे बँधगये थे, उसी मित्रताकी सहायतासे दूतश्रेष्ठने आमेरके महाराजके साथ साक्षात् करके कई एक बातें जबानी निवेदन करनेकी आज्ञा प्राप्त की। शीघ्र ही आमेरपतिके सम्मुख दूत आया, उसने हाथ जोड़ कर नम्रतापूर्वक कहा, "महाराज! इस समय बीकानेरके ऊपर महा विपत्ति उपस्थित है, हमारे प्रभु मारवाड़पतिको अधीश्वर कह कर स्वीकार नहीं करते, वह अपनेको ही अधीश्वर जानते हैं।" उस दूतके इन कई एक वचनोंने आमेरके महाराजके हृदयमें अधिक गर्वका संचार करदिया। दूसरे अफीमकी प्रबल शक्ति भी इस समय उनकी कुछ विशेष सहायता न करसकी। आमेरके महाराजने दूतके निवेदनको

(१) महात्मा टाड् साहबने टीकेमें लिखा है, कि यह विद्याधर एक बंगाली ब्राह्मण थे। यह जिस भांति अनेक शास्त्रोंके पंडित थे उसी प्रकार ज्योतिष शास्त्रमें भी विशेष विद्वान् थे। वर्तमान जयपुर नगरकी आकृति उन्हींके द्वारा निश्चय हुई थी, अर्थात् उन्हींकी सम्मतिसे जयसिंह नगर बनाया गया था।

सुनकर कलम हाथमे ले मारवाड़पतिको लिखा "हम सभी एक प्रवल परिवारके अधिकारी है, वीकानेरपतिको क्षमा करके वीकानेरके आक्रमणको रहित कीजिये"। जयसिहने इन कई एक पंक्तियोको लिखकर, एक पात्र पूर्ण अफीमका सेवन कर पत्रको वंद करके दूतके हाथमे देदिया, चतुर दूतने विनय करके कहा, महाराज! दो बाते और लिख दीजिये "नही तो मेरा नाम जयसिह है यह स्मरण रखिये"। अफीमसेवी जयसिहने विना ही कुछ कहे हुए दूतकी प्रार्थनाको पूरण करदिया।

इधरतो आशातीत सफलताकी प्राप्तिसे अत्यंत प्रसन्न हो उक्त राजदूतने वहांसे विदा होकर एक शीघ्रगामी ऊंट पर वह पत्र वाहकद्वारा अभयसिहके डेरोमे भेज दिया। इधर वीकानेरके दूतके विदा होते ही कुछ ही समयके पीछे आमेरके अन्यतर प्रधान सामन्त अमेरराजाके सामने आ पहुँचे। जयसिहने उसी समय उन लोगोसे उस पत्रका सम्पूर्ण विपय वर्णन करादिया। सामन्तोने अत्यन्त दुःखित होकर कहा, "यह पत्र आपके संग्गामे विलक्षण विरक्तिका कारण होगा। यदि कछवाह वंशके रक्षा करनेकी इच्छा है यदि प्रवल पराक्रमी अभयसिहके क्रोधसे अमेर राज्यको रखना चाहते हो, तो इसी समय उस पत्र लेजानेवालेको लौटाये जानेकी आज्ञा दीजिये। जयसिहने सामन्तके वचन सुन चैतन्य हो पत्र वाहकको मार्गमेसे ही लौटानेके लिये दूतके ऊपर दूत भेजे। परन्तु पत्रवाहक अपने कार्यसाधनमे विशेप चतुर था। इस कारण जयसिहके भेजे हुए दूत उस पत्रवाहकको न पकड़ सके।

मध्याह्नकाल ही भोजनके समय समस्त सामन्त रसोवड़ा अर्थात् भोजनगृहमे इकट्ठे हुए, वृद्ध सामन्त दीपसिहने अन्यान्य सामन्तोके प्रतिनिधिस्वरूप जयसिहसे कहा कि आपने अत्यन्त ही अन्याय और अविचारका कार्य किया है, आपके इस अविचारसे हम सभीको कष्ट भोगना होगा।"

जिस प्रकारसे एक शीघ्रगामी ऊंटपर चढ़ाकर जयसिहका पत्र अभयसिहके डेरोमे भेजा गया था, उसी प्रकार यथासंभव शीघ्र समयमे उन डेरोमेसे अभयसिहका भेजा हुआ गर्वपूर्ण उत्तर भी आया। जयसिहने पत्रको खोलकर सामन्तोके सामने पढ़ा। अभयसिहने महाक्रोधित होकर पत्रमे लिखा था "हमे आज्ञा देनेका तथा हमारे सेवकके साथ हमारे विवादमे हस्ताक्षेप करनेका आपको क्या अधिकार है?—यदि आपका नाम जयसिह है, तो याद रखिये कि मेरा नाम भी अभयसिह है।

पत्रको पढ़ चुकते ही वृद्ध सामन्त द्वीपसिहने कहा "महाराज! जो होना था वह मैने आपके श्रीचरणोमे पहले ही निवेदन कर दिया था। जो होना था वह होगया है, परन्तु इस समय अब और कोई उपाय नहीं है, शीघ्र ही अपने मित्रोको इकट्ठा होनेकी आज्ञा दीजिये"। प्रधान सामन्तोके यह वचन सुनते ही अन्यान्य सामन्तोने एक स्वरसे आमेरराजके सम्मानकी रक्षाके लिये अभयसिहको तलवारसे

---

(१) वैवाहिक सम्वन्ध वधनका नाम सगा है। यही सगाई कहाती है।

प्रत्युत्तर देनेके लिये अपनी सम्मति प्रगट की। शीघ्र ही आमेरराजके द्वारा अनेक स्थानोमे सामन्तोके पास सेनासहित आनेके लिये दूत भेजे गये-प्रत्येक कछवाहोको असि, भाले हाथमे लेनेके लिये आज्ञा दी गई, तथा प्रतिवासी राजाओकी सहायता प्राप्तिकी आशासे दूत भी भेजे गये। तुरन्त ही राजधानीके बाहर पंचरंगी जयपुरकी राजपताकाके उड़ते ही चीटियोकी श्रेणीके समान समस्त कछवाहोका दल आकर उसके नीचे इकट्ठा होने लगा। बूंदीराजके हाड़ा सैन्यगण, करौलीके यादो, शाहपुराके सिसोदियागण, खीचीगण तथा जाटगण आकर आमेरपतिके साथ मिले। बहुत थोड़े समयमे ही उस राजधानीके बाहर एक लाख सेना इकट्ठी होगई। यवन शासन शक्तिके लोप होनेके समयमे उन पितृहन्ता बख्तसिहकी पापकल्पनाके दोषसे इस प्रबल आत्मविग्रहानलके प्रज्वलित होनेके पूर्ण लक्षण प्रकाशित होने लगे। आमेरके महाराज जयसिहभी अपनी प्रभुताका विस्तार कर अभयसिहको बदला देकर बीकानेरपतिका उद्धार करनेके लिये तुरन्त ही अपनी सेनाके साथ मारवाड़की ओर चले। नगारे भेरी आदि बाजोके शब्दसे पृथ्वीको कंपायमान करती हुई वह सम्पूर्ण सेना शीघ्र ही मारवाडकी सीमामे स्थित गगवाना नामक ग्राममे आ पहुँची, और अपने डेरे डाल कर निर्भय हो अभयसिहके आनेकी बाट देखने लगी।

महाराज जयसिहको उस प्रबल वाहिनी सेनाके साथमे बहुत दिनोतक बाट न देखनीपड़ी। आमेरके महाराज सेनासहित युद्ध करनेको आये है, यह सुनते ही अभयसिह क्रोधित हुए सिहके समान उन्मत्त होगये। जयसिहने अन्यायके आचरणसे इस युद्धकी तैयारी की है, इससे अभयसिहका क्रोध और भी दूना होगया। वह इस समय कई दिनकी अपेक्षा करके सरलतासे बीकानेर पर अधिकार कर सकते है, परन्तु जयसिहकी युद्धयात्राका समाचार पाकर वह अत्यन्त ही व्यथित हृदयसे बीकानेरके अवरोधको छोड़कर संहारमूर्तिसे जयसिहका आक्रमण रोकने और अपने "अभय" नामको प्रामाणित करनेके निमित्त शीघ्रतासे कछवाह सेनाकी ओरको चले।

जो नागौरपति बख्तसिह इस महा अनिष्टका कारण था, जो निज अवलम्बित नीति और पापके षड़यंत्रसे इस विषमय फलको उत्पन्न करनेके लिये उद्यत था, वही बख्तसिह इस समय इस महा असंभव व्यापार देखकर अत्यन्त भयभीत होगया। उसके षड्यंत्रसे इस प्रकारका भयंकर कांड उपस्थित होगा, उसकी मातृभूमि और स्वजातिके भाग्यमे जो इस प्रकार कालरात्रि उपस्थित करैगा-इस बातका विचार उसने स्वप्नमे भी नही किया था। केवल उसने अपने भाई अभयसिहके साथ विदेशी राजाओकी विषम अनबन उपस्थित करनेकी अभिलाषा की थी, परन्तु इस प्रकारके महा आत्म विग्रहानल, तथा जातीय महासमर उपस्थित होनेकी उसे किंचित् भी आशा नही थी। वह जिस षड़यंत्रसे मारवाड़के भाग्यमे इस कालरात्रिकी भयंकर भ्रुकुटी देखनेलगे कि यदि यह षड्यंत्र प्रकाशित होजायगा तो कैसा होगा, इस भयसे भी वह इतना

भयभीत नहीं हुआ था, पर जब उसने सोचा कि आमेरपतिकी प्रबल सेना उनके अभयसिंहपर आक्रमण करके मारवाड़को विध्वंस करदेगी, तब उसकी जन्मभूमि और स्वजातिके भाग्यमें घोर कलंकका टीका लगेगा, इस भय और दुःखसे अनुतापित हो वह अत्यन्त ही अधीर होगया, बख्तसिंह समझगया था कि उपस्थित जातीय विषम युद्धमें उसका उद्देश पूर्ण होना तो दूररहा वरन् विशेष अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। इसलिये वह शीघ्र ही नागौरसे अपने अग्रज और अपने अधीश्वर प्रभु अभयसिंहके निकट जाकर विनयपूर्वक यह वचन बोला, " आपने बीकानेरको जिस भावसे घेरलिया है उसी भावसे घेरे रहिये, सेनाके वहांसे लानेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है, मैं अकेला ही नागौरके सामन्तोंके साथ रणक्षेत्रमें जाकर भगोतियाको पराजयकर भगवान्के अनुग्रहसे उनको उचित शिक्षा दूंगा।" अनुज बख्तसिंहने पापकी आज्ञाके वशीभूत होकर जिस षड्यंत्रजालके विस्तारसे इस जातीय युद्धका सूत्रपात किया था उसने उसी अपराधसे उचित दंड पाया। अभयसिंहके हृदयमें इस भावका विशेष उदय हुआ, इस कारण वे बख्तसिंहको आमेरके महाराजके साथ युद्धकी आज्ञा देकर आन्तरिक घृणाके साथ उस गुप्त षड्यन्त्रके लिये विशेष भर्त्सना करके भी वह शान्त न हुए।

राठौरोंके इतिहाससे जानाजाता है कि "नागौरके वीर सामन्तोंके इकट्ठा होते ही शीघ्रतासे नगाड़े बजने लगे। नागौरपति बख्तसिंह नागौरसे दिल्लीको जानेवाले तोरण द्वारपर खड़े होगये। अफीम, शरबत, और कुंकुम जलसे पूर्ण दो बडे पीतलके पात्र एकओर रखकर सामन्तोंकी सेनाको आनेके बाट देखनेलगे। एक २ सामन्त जिस प्रकारसे प्रवेश करनेलगे, बख्तसिंह वैसे ही उन्हें एक पात्रमें अफीमका शरबत देनेलगे और दहिने हाथसे कुंकुमका जल लेकर उनके वक्षस्थल पर छिड़कने लगे। बख्तसिंहने इस प्रकारसे आठ हजार राजपूतोंकी सेना अपने अधिकारमें कर ली। वह सभी उनके साथ यह प्रतिज्ञा करके आये थे कि या तो युद्धमें प्राण देंगे या विजय ही होजायगी। उनमें जो असीम साहसी वीर थे उनको निकाल लेनेका विचार [illegible]यागया। समस्त इकट्ठी हुई राजपूत सेनाको नागौरके बाहर एक बड़े भारी बाजरेके खेतके निकट लेजाकर वहां सबको कुछ कालके लिये खड़े होनेकी आज्ञा देकर बख्तसिंहने ऊँचे स्वरसे कहा "आप सब लोगोंमेंसे हमारे साथ जय पराजयके अंशभागी होनेमें जो लोग तयार हों केवल वही हमारे साथ चलै, यदि आपमेंसे कोई भी वहांसे लौटनेकी इच्छा करता हो तो हम ईश्वरका नाम लेकर आज्ञा देते हैं कि वह इस स्थानसे चलाजाय। कुछी समयमें वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने उस बाजरेके खेतमें घोड़ा चलाया। खेतमें होकर [illegible]आनेका यह अभिप्राय था, कि जो चलेजानेकी इच्छा करते हैं वे विना किसीके देखेभा[illegible] खेतके बीचमें होकर चुपचाप जासकते हैं। बख्तसिंहने खेतमें जाकर देखा कि अ[illegible]ठ हजार

(१) साधू संन्यासीको भगतिया कहते हैं। जयसिंह अत्यन्त धार्मिक और साधु थे। इसीसे बख्तसिंहने उनको भगतिया कहा।

सेनामेसे पांच हजारसे अधिक सेना उनके साथ चलनेको तैयार है और शेष सब भागगई है।"

हाय! राठौरजातिका कैसा अतुलनीय साहस है कि समस्त जगत्के प्रत्येक जातिके प्रत्येक इतिहासके एक २ पत्रेको देखनेसे जीवन मरण, तथा रणमे भयहीन वख्तसिहकी समान असीम साहसी वीर एक भी देखनेमे नही आया। अंग्रेजोके लिखेहुए बंगालके भारतके प्रत्येक इतिहासको हमने देखा है। संख्यावद्ध अंग्रेजोकी सेनाने असीम साहसमे भरकर दशगुणा अधिक शत्रुओकी सेनाको परास्त किया है। हम देखते है कि पलासीके उस चिरस्मरणीय युद्धक्षेत्रमे कर्नल क्लाइवने प्राय. एक हजार गोरे और २१०० सिपाही सेनाके साथ अभागे नवावकी ३५००० पैदल और १५००० अश्वारोही सेनाको परास्त करके भारतवर्षमे लोहमय वृटिश शासनदड प्रचलित किया था। अतमे आत्महत्याकारी वंगविजेता क्लाइव समस्त जगत्मे अतुल वीर तथा असीम साहसी पूजित हुए, परन्तु जो सत्यके सन्मानके रखनेकी अभिलापा करते है, जो न्यायकी पूजा करनेमे आगे वढ़े है वे लोग अवश्य ही जानजॉयगे कि क्लाइवका वह साहस,वह विक्रम, वह वीरत्व किस प्रकारकी प्रवंचना, प्रतारणा, तथा शठता और धर्मनीतिके साथ संश्रवशून्य, राजनीतिके ऊपर निर्भर था। मनुष्य पशुराज सिहके चित्रको अंकित करते है, इस कारण सिह जगत्मे सवकी अपेक्षा महावली जीव होकरभी उस चित्रमे मनुष्यके निकट परास्तरूपसे चित्रित हुआ है। किन्तु उस पशुराजको यदि वह चित्र अकित करने दियाजाय तो न्याय तथा सत्यके सम्मानकी रक्षा होसकती है। वंगालके भारतके अंग्रेज इतिहास लेखकगण उस सिहके चित्रको अंकित करनेवाले मनुष्यकी समान आलेख्यको चित्रित करगये है। सत्य और न्यायकी तुलना वाइविलके साथ टैमूस नदीके वीचमे डालकर उन्होने भारतमे आकर केवल असत्य और अन्यायके मलीन अंगारोसे उस इतिहासके चित्रको अंकित किया है। इस स्थानकी समान और कहां सत्यकी प्रज्ज्वलित हुई दीपकशिखा दिखाई देती है कि राठौरवीर वख्तसिह कुछएक पॉच हजार सेनाके साथ उस आमेरपतिके अधीनमे स्थित एकलाख सेनाके संग युद्ध करनेके लिये चले। क्या वख्तसिह भी क्लाइवकी समान प्रवंचना, शठता, धर्मनीति शून्य राजनीतिकी सहायतासे रणक्षेत्रमे आगे वढ़े थे? नहीं कभी नही! वह केवल एक मात्र आर्यरक्तके प्रवल तेजवलसे, जातीय गर्व दर्प वीरता और विक्रमके वलसे, स्वजातीय स्वभाव सुलभ अतुलनीयसाहसके वलसे मुट्ठीभर सेनाके साथ उस एक लाखसे भी अधिक शत्रु सेनाके संहारमें तत्परहुए थे। आजकल अंग्रेजोकी कृपासे अंग्रेजी भाषाके प्रसादसे देशीय कृतविद्य युवकगण म्याटसिनि, ग्यारिवाल्डी, क्रमवेल, नेपोलियन, वलिंटन इत्यादि विलायतके महारथियोके नाम सुनकर मिसर, ग्रीस, रोम, कार्थेज, ट्रेय, फ्रान्स, इंगलेन्ड, स्पेन, डेनमार्क, जर्म्मनी आष्ट्रिया और आजकलके अमरीका इत्यादि पाश्चात्य और नवीन जगत्के इतिहासमे महावीरोकी असीम वीरता पढ़कर विचार करलेते है कि उनकी समान वीर संसारमे

दूसरा उत्पन्न नहीं हुआ, उनका और भी विचार है कि भारतके रावण राम, भीम, दुर्योधन, कर्ण, भीष्म इत्यादि कवि कल्पित वीर है, परन्तु हम उनसे कहसकते है कि अठारहवी शताब्दीके सामान्य मारवाड राज्यके इन वख्तसिहकी समान असीम साहसी वीर विलायत और नवीन जगत्‌मे कही भी दिखाई नही देते ? एकलाख शत्रुओकी सेनाके मुखमे थोड़ी पॉचहजार सेना लेकर कौन विलायतका वीर साहसमे भरकर पतित हुआ था ? वह एकलाख सेनाके विरुद्ध पॉचहजार सेनाके साथ प्राणोके भयसे अपनी रक्षा करसकता है, परन्तु आक्रमण करनेका साहस उसको नहीं होसकता। चाहै वख्तसिह पितृघातकहो। चाहै भाईके विरुद्ध षड्यन्त्रकारी हो। परन्तु जगत्‌के वीर इतिहासमे वह एक अतुल साहसी सराहनीय वीर थे।

राठौर इतिहास लेखकोने पीछे लिखा है कि आमरेश्वर जयसिह गगवाना नामक स्थानपर उस प्रबल सेनाके साथ शत्रुओके आनेकी बाट देखरहेथे। वख्तसिहको आता हुआ देखकर आमेरकी सेना आगे बढ़ी। कुछ ही समयमे वख्तसिहने शत्रु दलपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी, तुरन्त ही मानो घनघोर मेघकी समान वह विक्रमी राठौरोकी सेना तलवार भाले हाथमे लेकर आमेर महाराजकी अगणित सेनाके ऊपर छूटे और वे शत्रुओपर आक्रमण करते २ प्रत्येक सेनाका संहार करते हुए अपने भयंकर गर्जनसे रणभूमिको कंपायमान करते हुए रुधिरकी नदीसे संग्रामस्थलको प्लावित करते व्यूहको भेदन करनेलगे। वख्तसिहने उस सहारमूर्तिसे शत्रुओकी सेनाका नाश करतेहुए व्यूहके प्रत्येक प्रान्तको छिन्नभिन्न करके एकवार ही पीछा फिरकर देखा कि उस पॉचहजारसे अधिक सेनामे केवल अब साठ जने ही जीवित रहे है। शेष सभी उस युद्धक्षेत्रमे जीवन देकर वीर नामका परिचय देगये है। इसी समय नागौरके समस्त सामन्तोंमे सबमे श्रेष्ठ सामन्त गजसिह पुरापतिने वख्तसिहसे कहा, महाराज! पिछले भागमे गहनवन होरहा है, चलिये वहांका आश्रय लीजिये। असीम साहसी वख्तसिहने कहा, "क्यो ?—सम्मुख यह कौन सा मार्ग है ? हम जिस मार्गसे आये है, उस मार्ग होकर नही जॉयगे ? दूरसे ही सामने आमेरपतिकी पचरंगी राजपताकाको उडती हुई देखकर वख्तसिह जानगये कि आमेरपति स्वयं ही इस स्थानपर विराजमान है, उन्होने उसी समय उस बची हुई साठ जनोकी सेनाके साथ उन आमेरराजके डेरोपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी और आपने भी रुधिरसे भीगे हुए शरीरसे अपने घोड़ेको कालान्तक कालमूर्तिसे उसी ओरको चलादिया। वख्तसिहको आता हुआ देखकर कुन्तानी सम्प्रदायके वासवो सामंत दीपसिहने महा विपत्ति देखकर उसी मुहूर्त्तमे आमेरपतिको रणक्षेत्र छोड़नेकी सम्मति दी। आमेरराज जयसिह भी वख्तसिहको आताहुआ देखकर कुछ देरतक इधर उधर करके अंतमे सामंतोके मतसे वख्तसिहके आक्रमणको रोकनेके लिये रणभूमिको छोड़कर अपने मस्तकपर कलंकका टीका लगाकर भागगये। पीठ दिखाते ही युद्धमे सब प्रकारसे पराजय और कलंक लगा विचारकर उन्होने कुछ ही समयमे वाम

और उत्तरकी ओर कुण्डला नामक ग्राममे आकर आश्रय लिया। भागनेके समय जयसिहने कहा 'सत्रह युद्ध किये थे। परन्तु आजके युद्धकी समान किसी युद्धमे भी तलवारके बलसे किसी पक्षको जय प्राप्त करतेहुए नही देखा।' महाराज जयसिंहने समस्त जीवनमे अतुल गौरव और असीम यशको संग्रह किया था। जो परमज्ञानी गाढ़पंडित तथा भारतमे एक प्रवल प्रतापान्वित राजा थे, उन्ही महाराज जयसिहने आज साठ राठौरोकी सेनाके भयसे रणक्षेत्रको छोड़कर अपने नामको कलकित किया। 'एक राठौर दस कछवाहोकी समान है' वह इस प्रवादवाक्यका प्रत्यक्ष प्रमाण दिखागये।

राठौर कविकी लेखनीने इन सब सत्यवृत्तान्तोको वर्णन किया है सो हमारे पाठकोको भलीभॉतिसे विदित होगा। वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने इस युद्धमे किस प्रकारका अतुल वीराभिनय किया और राठौरजातिके बाहुबल तथा विक्रम और साहसका कैसा अद्वितीय प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाया। वख्तसिहकी समान असीम साहसी वीरनेता संसारमे किसी जातिमें भी उत्पन्न नहीं हुआ? वख्त और अभयसिहको उत्पन्न करके भारतभूमिने जिस प्रकारसे यथार्थ जननीनामको सार्थक किया है और किसी भूमिको इस प्रकारकी वीरजननी नामको सार्थक करते हुए नही देखा? कोई २ यह विचारसकते है कि वख्तसिहके बल विक्रमको हमने अत्युक्तिसे अनुरंजित किया है, परन्तु उनकी उस भ्रान्तिको दूरकरनेके लिये हम उन वख्तसिहके विपक्षी आमेरपतिके सहकारी कछवाहे कविकी लेखनीको, जो इस युद्धमे वख्तसिहके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा करगई है, यहां उद्धृत करदेते है।

वख्तसिहका वह प्रशंसनीय वीरत्व, वह दुर्द्धर्ष साहस, वह संहारमूर्ति, वह भयंकर जयशब्द, वह कालान्तक कालकी समान सैनाका महार और वह निर्भयता देखकर आमेरके महाराज जयसिहके कवि एकवारही मोहित होकर सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये शत्रुपक्षके नेता वख्तसिहकी वीरताका कवितामें कीर्तन करगये है, "यह क्या कालीके उस श्रवणभैरव युद्धका स्वर है? नहीं यह तो वीर श्रेष्ठ हनूमानजीके युद्धका चीत्कार है? या यह अनन्तकी अनन्तमुखसे निकलीहुई ध्वनि है? नही यह तो कपिलेश्वरके रुद्रका स्वर है?" वख्तसिहकी उस संहारमूर्तिको देखकर कविने लिखा ह, "यह वीर क्या नृसिहका अवतार है? नही यह प्रचंड सूर्यकी विदग्धकारी किरण है?—नही डाकिनीकी वह क्रोधदृष्टि है? नही यह तो त्रिनेत्रके मध्यनयनसे निकलीहुई अग्निकी राशि है? प्रलयकालकी भयंकर अग्निकी समान वख्तसिहकी तलवारसे जो अग्निकी राशि निकली थी, ऐसी किसमे सामर्थ्य थी कि जो उसको सहन करसकता?" शत्रुओके ओरके कविकी लेखनीसे निकलेहुए प्रमाणको पढ़कर पाठक अवश्य ही इस बातको स्वीकार करसकते है कि वीरश्रेष्ठ वख्तसिहका यह वीरताका वृत्तांत अन्य प्रकारसे नही लिखा है, अर्थात् वह यथार्थमें ऐसेही वीर थे और साथमे यह भी मानना होगा कि वख्तसिहने उस क्लाइवकी समान जय

प्राप्त नही की थी इन्होने प्रतारणा, प्रवंचना शठता और षड्यंत्र जालका विस्तारकर धर्मनीतिके साथ संस्कारशून्य राजनीतिकी सहायतासे जय प्राप्त नही की, एकमात्र अपने बाहुबलसे तथा असीम साहससे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त किया था। अंग्रेज इतिहासवेत्तागण जिस प्रकार पलासीके युद्धमे क्लाइवकी उस जय प्राप्तिकी ऊँची प्रशंसा करके आकाशको विदीर्ण करगये है राठौरकवि वा शत्रुपक्षके कविने उस भावसे वख्तसिंहकी जयप्राप्तिको कीर्तन नही किया, पाठक इसको अवश्य ही स्वीकार करेगे।

इस समय वीरनेताओका ही अनुसरण करना होगा। वख्तसिंहने डरकर भागी हुई शत्रुओकी सेनाके ऊपर तीसरीवार वार करनेका उद्योग किया, पर राठौरकवि कर्णीदानने उनको मना करादिया। जो दृढ़प्रतिज्ञ महाविक्रमी सेना वख्तसिंहके साथ उस महा युद्धमे लिप्त हुई थी, कवि कर्णीदान भी उसमेसे एक थे, उन कविकी तलवारने भी शत्रुपक्षकी अनेक सेनाका प्राणनाश किया था। कवि कर्णीदानके निषेध करते ही उनको शीघ्र ही अनिच्छा होगई। जयपुरपति जयसिंह अपनी सेनाके साथ चलेगये। वख्तसिंह उस समय जानगये कि हमारी राजपूत सेनामेसे कितनी सेनाने अपने प्राण दिये है। इस स्थानपर महात्मा टाड् साहव लिखगये है, "इसके कुछी समय पीछे कैसा विचित्र दृश्य दृष्टि आनेलगा। जो मनुष्य कई मुहूर्त्तोंके पहले रणभूमिके प्रत्येक प्रान्तमे मृत्युकी भयंकर मूर्ति देखकर भी भयभीत नही हुआ था, वह इस समय केवल अपने सेवकोंके मारेजानेसे बालककी समान रुदन करनेलगा। उन कुटुम्बी जनोंके तथा सामन्त वीरोंके वियोग होनेसे उसके हृदयपर भयंकर आघात लगा। उस भावने मनके दुःखसे जैसी कातरता दिखाई थी, इसका विचार वख्तसिंहको स्वप्नमे भी नहीं था। इस भयंकर युद्धमे भाई अभयसिंह उनकी सहायता करनेमे एक बार ही असम्मत होगये थे। वख्तसिंहने विचारा कि मारवाड़के विध्वंश होनेका उपाय होरहा है, इस कारण वह इस दुः से उस महावीरत्वको प्रकाशकर, अगणित शत्रुओंकी सेनाका नाश कर तथा विजय पानेके पीछे उन लाशोंसे परिपूर्ण युद्ध-भूमिमे बैठकर शोक करनेलगे"। कुछी समयके उपरान्त भाई अभयसिंहने सेना सहित इनके पास आकर प्रीतिपूर्ण वचनोसे भाई वख्तसिंहको संतुष्ट किया। 'आजके इस महायुद्धमे तुमने अकेलेने ही विजय प्राप्त की है, इस समय आपकी सहायता करनेके लिये मै न आसका।' वीरनेता वख्तसिंहने भाईके वचनोसे प्रसन्नहो उसी समय यह प्रतिज्ञा करी कि 'भागेहुए जयपुरके महाराजको मै आमेरके किलेमेसे बाल पकड़कर लेआऊंगा।' वख्तसिंह कैसे तेजस्वी और साहसी वीर थे, उनकी यह शोकोक्तिभी वीरताका विलक्षण प्रमाण दिखाती है।

आमेरपति जयसिंहने अफीमके उस विषमय फलसे उत्पन्न हुए मत्तताके वश होकर अभयसिंहको जो पत्र लिखा था, यद्यपि उसी पत्रके फलस्वरूपमे युद्धभूमिमे उन्होने घोर कलंक सचय कराळिया था, परन्तु उनका एक उद्देश्य यह भी था कि वह बीकानेरके महाराजका उस महाविपत्तिसे उद्धार करले। ऐसा करनेसे वह अभिप्राय

इस समय पूर्ण होजायगा पर मेवाड़के महाराणाने मध्यस्थ होकर जयपुरके महाराजके साथ मारवाडपतिकी मित्रता करादी । अभयसिंहने वख्तसिंहके बाहुबलसे अपने अभिप्रायको पूर्ण करालिया। और जयसिंहने युद्धमे परास्त होकर बीकानेरके महाराजका उद्धार किया। बीचमे मेवाडके महाराजने आकर उन विवाद करनेवाले स्वजातिके दोनो राजाओंको मित्रताकी शृङ्खलामे बाँधदिया।

हमारे पाठकोंने इस विस्तृत इतिहासके अनेक स्थानोंमे पढ़ाहोगा कि राजपूत जिस समय युद्ध करनेके लिये बाहर जाते थे, उस समय केवल सेनाही नहीं वरन् गुरु, पुरोहित, कवि, भाट, चारण और कुलदेवताको भी अपने साथ ले जाते थे। उस विग्रहके समय मूर्तिका दर्शन करके राजपूतवीर निर्भयहो युद्ध करते थे। इस युद्धमे वख्तसिंह भी इसी भाँति अपनी कुलदेवीकी मूर्ति साथ लेगये थे। ऐसा विदित होता है कि युद्धके समय जयसिंहने वख्तसिंहकी कुलदेवीकी मूर्ति भी अपने हस्तगत करली। जयसिंह उस कलंककारी युद्धमे एकमात्र जयके चिह्नस्वरूप उस देवीकी मूर्तिको बडी धूमधामके साथ जैपुरमे ले आये। पीछे एक देवताकी मूर्तिके साथ उस देवीकी मूर्तिका बडी धूमधामसे विवाह करके उन दोनो मूर्तियोंको फिर वख्तसिंहके पास भेजदिया। 'हा! राजपूत वीरोंके हृदयका कैसा हृदयहारी व्यवहार है, कैसी प्रीतिदायक सौजन्यता है, इस युद्धके पीछे मेवाड़, मारवाड़ और आमेरके तीनो राजाओंमे मित्रतामूलक संधिबंधनके समाप्त होजानेके पीछे उस मित्रताको स्थाई करनेके लिये मेवाड़ राजकुटुम्बके साथ मारवाड और आमेरराजके परिवारमे वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होगया। उस विवाहकी सभामे उन मेवाड़पतिके महलमे फिर जयसिंह, अभयसिंह, और वख्तसिंहने एकसाथ मिलकर मनुहारका प्याला हाथमे लेकर उस शत्रुताको विस्मृतिके जलमे डालदिया और जातीय ममतामे भरकर वे फिर परस्पर आलिंगन करके एकताका साधन करने लगे। ओहो! यह दृश्य कैसा कमनीय है, कि स्वर्गीयभावसे पूर्ण सभीकी नाड़ी २ मे आर्यरक्त प्रवाहित हुआ है, सभी समानधर्मके अवलम्बन करनेवाले है, सभी महावीर है, इस कारण सभीने एक हृदय होकर वैरके विस्मरणमे इस एकताकी पूजा की, इससे आर्यसंतानका कैसा गौरव बढा'! हा भारतवासी गण! तुम कब इस प्रकार हृदयसे हृदय मिलाकर इस अनन्त स्मशानमे इस प्रकारसे एकताकी पूजा करनी सीखोगे?

राठौरोंके इतिहाससे जानाजाता है कि उपरोक्त युद्ध ही मारवाड़पतिके शेष जीवनमे स्मरण करने योग्य घटना हुई। मेवाड़, आमेर, और मारवाड़ इन तीनो राज्योमे मित्रता होजानेके पीछे अभयसिंहने फिर कोई युद्ध नहीं किया। संवत् १८०६–१७५० ईसवी मे, अभयसिंहने जोधपुरमे प्राण त्याग किये। महात्मा टाड् साहब लिखगये हैं, "कि अभयसिंह उग्र तेजस्वी थे, यद्यपि ऐसा कहा जासकता है, परन्तु अधिक आलस्यके वशीभूत होजानेसे उनकी संपूर्ण उग्रता एक भांतिसे क्षीण होगई थी। अभयसिंहके स्वभावके सम्बन्धमे अनेक प्रकारके प्रवाद प्रचलित है। राठौरोंके

इतिहाससे जानाजाता है कि जव मारवाड़पति अजितसिंह चौहानीका विवाह करनेके लिये गये थे उस समय उन्होने रास्तेमे एक सिंहको तो सोताहुआ और एकको जागतेहुए देखा। वह देखकर ज्योतिषीने कहा कि इन चौहानी रानीके गर्भसे महाराजके औरससे दो पुत्र उत्पन्न होगे, उनमेसे एक तो आलसी और एक महावीर होगा। यदि ज्योतिषी महाराज यह भी कहदेते कि दोनो पुत्र पिताके रुधिरसे हाथोको कलंकित करैगे तो वह अवश्य ही मारवाड़का उद्धार करसकते, उन अजितकी हत्यासे ही मारवाडका विध्वंश होना प्रारंभ हुआ था। "

महात्मा टाड् साहबकी इस युक्तिको समर्थन करके इतना तो हम अवश्य ही कहैगे कि कर्नल टाड् साहबकी उक्तिके मतसे अभयसिंह सर्वथा आलसी नही थे। युवा अवस्थाके आते ही अभयसिंहने अपने पिताकी समान वरावर युद्धोमे जैसा वल विक्रम दिखाया था, इससे उनके आलसी होनेका कोई लक्षण नही पायाजाता। अभय-सिंहकी तेजस्विता वीरता, विक्रम और इनके साहसका पूर्ण परिचय वरावर कई युद्धोमे प्रकाश पाचुका है। उनके उस साहसका और भी एक प्रत्यक्ष प्रमाण कर्नल टाड् साहवने दियाहै। टाड् साहवने पीछे लिखा है, कि "कछवाहे अर्थात् जयपुरके राजपूतोकी जातिकी वीरता कहना तो दूर रहा वरन् राठौर भी इनको साहसहीन और दुर्वल वताकर इनसे घृणा करते थे और अभयसिंहभी जयपुरके महाराज जयसिंहको घृणित दृष्टिसे देखते थे। दोनोमे विवाहिक सम्वन्ध होनेसे एक दूसरेकी श्रेष्ठताकी रक्षासे परस्पर एक दूसरेके विशेष अभिलाषी थे। अभयसिंहने वादशाहके सामने भी जयसिंहको वाणीके छलसे कहा था, कि आपका कुश्य नाम धरागया है, कुशका आघात जैसा तीक्ष्ण और गंभीर है आपकी तलवारका आघात भी उसी प्रकारका है। यह सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए, परन्तु यथार्थ उत्तर देनेमे असमर्थ हो उन्होने अभयसिंहसे वदला लेनेके लिये षड्यन्त्र फैलाया। जिस भांति जयसिंह विलायतके विज्ञानियोके साथ भारतीय विज्ञानियोके मिलन साधनसे भारतके अद्वितीय विज्ञानी राजा मानेगये थे, अन्य पक्षमे अभयसिंह भी उसी प्रकारसे राजवाड़ेमे सवमे प्रधान असिचालक वीरवर गिने गये थे। जयसिंहने दिल्लीपतिके कोशाध्यक्ष कृपरामको अपने हस्तगत करलिया था। कृपाराम दावक्रीड़ामें विशेष चतुर थे, इसीसे वादशाहके विशेष प्रियपात्र थे। कृपाराम जिस समय वादशाहके पास वैठकर क्रीड़ा करते उस समय देशीय राजा और अमीर भी खडे होजातेथे। जयसिंहने उन्ही कृपारामके साथ पहले सव वातोको स्थिर कररक्खा था कि एक समय जिस वादशाहने कृपारामके साथ क्रीड़ा की थी और अभयसिंह इत्यादि राजा खड़े हुए थे, उस समय कृपाराम जयपुरपतिके पूर्व उपदेशके मतसे अभयसिंहके वाहुवलकी ऊँची प्रशंसाको कीर्तन करनेलगे। एक समय अभयसिंहने अपने वाहुवलसे तलवारके द्वारा एक अत्यन्त बलवान उग्र भैंसेका शिर काटडाला था। उसका उल्लेख करके उन्होने और भी प्रशंसा की थी। वादशाहने कहा—' मैने सुना है कि आप तलवार चलानेमे विशेष चतुर है।' राजा अभयसिंहने उनको उसी समय उत्तर दिया, ' हाँ

हजूर ! मै एक दिन आपको तलवारका बल दिखाऊंगा।' अभयसिहकी प्रतिज्ञाके अनुसार एक वड़ा तेजस्वी बलवान् भैसा रंगभूमिमे लाया गया। अभयसिह तलवारके बलसे उस महाक्रोधी भैसेका वध करदिखावैगे, इस समाचारके प्रकाशित होते ही रंगभूमिमे वहुतसे दर्शक आआकर इकट्ठे होनेलगे। अंतमे रंगभूमिमे जब वह बड़ाभारी भैसा आया तब उसी समय अभयसिहने वादशाहसे कुछकालके लिये विश्रामगृहमे जानेकी आज्ञा मांगी, वादशाहकी आज्ञा पाते ही मारवाड़के महाराजने उस विश्रामगृहमे जाकर दो गिलास भरकर अफीमजलका सेवन किया। अभयसिह भलीभाँतिसे समझगये थे कि जयसिह ही मुझे विपत्तिके चक्रमे डालनेके लिये इस जालको फैलारहे है, इस कारण वह मारे क्रोधके उन्मत्त हो लाल २ नेत्र करके रंगभूमिमे आतेहुए दिखाई दिये। अभयसिहने कुछ ही कालके पीछे महाक्रोधान्ध अवस्थामे उस वलवान् भैसेके दोनो सीगोको भलीभाँतिसे पकड़ लिया और जिस ओर महाराज जयसिह वैठे थे, उसी ओरको वड़ेवेगसे उसे खैचतेहुए लेजाने लगे, सम्मुख ही विपत्तिको आताहुआ देखकर जयसिह महाभयभीत हुए। अभयसिहको वादशाहने जयसिहके पास जानेके लिये मना किया तथापि इन्होने क्रोधोन्मत भैसेको जयसिहके पास लेजाकर दोनो हाथोमे खड्ग धारणकर एक आघातसे ही भैसेका शिर काटडाला। जिस समय भैसेका शिर कटकर अभयसिहकी गोदमे गिरा उसी समय उसका महाकाय शरीर महाराजके ऊपर गिरा।सबने इस वातको सराहा, पर लिखनेवाला कहता है कि वादशाह ने फिर कभी अभयसिहसे दूसरे भैसाके मारनेको नही कहा।

जिस स्थानपर उग्रता, तेजस्विता, साहस और विक्रम विराजमान रहते है उस स्थानपर आलस्यका होना सर्वथा असंभव है।ऐसा विदित होता है कि महात्मा टाड् साहव ने अभयसिहकी वृद्धावस्थामे विशेपकर अफीमके सेवनसे विलासिताके वशीभूत होता हुआ देखकर उनके चरित्रोमे आलस्यका समावेश दर्शन किया था।

अभयसिहके मारवाड़पर शासन करनेके समयमे, विख्यात् नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया। तव तैमूरके उस चंचल सिहासनकी रक्षाके लिये वादशाह मुहम्मदशाह ने राजपूत राजाओका सेनासहित नादिरके साथ संग्राम करनेको वुलाया पर अन्यान्य राजपूत राजाओकी समान अभयसिह वादशाहकी सहायता करनेके लिये नही गये। करनालके युद्धमे जिस प्रकार एक भी राजपूत राजा नही आया था, उसी प्रकारसे नादिर शाहने दिल्लीको घेर लिया, तथा उसपर अपना अधिकार कर मोहम्मदशाहको सिहासन से उतार दिल्लीमे अत्यन्त शोचनीय हत्याकाण्ड किया। और समस्त धन रत्नोको हरण करलेनेसे भी किसी राजपूत राजाने इनके लिये शोकका एक श्वांस भी त्याग नही किया। मारवाड़पति अभयसिहके शासनके आरंभके पहले इन्होने दिल्लीपति मोहम्मद-शाहकी अधीनतामे वँधकर जिसभाँति स्वजातीयताके मस्तकपर कलंकका टीका दिया था, जीवनकी अंतिम दशामे उन्होने उसी प्रकारसे यवनसम्राट्की अधीनताको अस्वीकार कर महाराज अजीतसिहकी समान प्रशसनीय राजनैतिक अभिनय कर,

महावल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे यवनकी अधीनताको जड़से काटडाला था।

सियाजीसे लेकर जो समस्त राठौरवंशके राजा मरुक्षेत्रमे राजनैतिक और वीराभिनय करगये है, अभयसिह भी उनमेसे अवश्य ही एक योग्य वीरपुरुप थे। इस वातको हम मुक्तकंठसे कहसकते है कि अभयसिहने अपने पिताको मारकर जो अपने नामको कलंक लगाया था, यही नही, वरन् राठौर राजवंशके तथा मरुक्षेत्रके और आर्यजातिके नामको भी उन्होने घोर कलंकित किया था और एकमात्र उसी महापापके लिये मारवाड़के भाग्यमे कालरात्रि उपस्थित हुई थी। अभयसिहने जिस प्रकार एक पक्षमे दिल्लीके वादशाहकी अधीनताको छेदन कर स्वजातिके स्वाधीन नामका परिचय देकर अपने अधिकारको सग्रह किया, दूसरे पक्षमे उसी प्रकारसे उनके उस महापापकी फल रूप उस स्वाधीन अवस्थामे भी मारवाडके चारो ओर भयकर आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होगई, इसीने राठौरजातिका सर्वनाश किया। हमारे पाठक परवर्ती इतिहासको पढकर जानसकेगे कि पितृहत्याके पापके विषमय फलने शीघ्र ही उत्पन्न होकर हृदयभेदन करनेवाले दृश्यको नेत्रोके सम्मुख उपस्थित किया था।

बारहवाँ अध्याय १२.

रामसिहका मारवाड़के सिहासनपर वैठना, उनका क्रूरस्वभाव, रामसिहके अभिषेकके समयमें उनके चचा बख्तसिहका न होना; बख्तसिंहका धात्रीको प्रतिनिधिस्वरूपसे अभिषेकके समय भेजना, उससे रामसिहका अपमान जानना; उनका क्रोध प्रकाश तथा जालौर देशको लौटानेकी आज्ञा देना, चापावत्के नेता कुशलसिह; रामसिहके द्वारा कुशलसिहका अपमान; कुशलसिहका जोधपुर छोड़ना, जोधपुरके प्रधान राजकविके साथ कुशलसिहका साक्षात्, बख्तसिहके साथ कुशलसिहका मिलना, आत्मविग्रह; मैरतामे युद्ध; रामसिहकी पराजय; बख्तसिंहका जोधपुरके सिंहासन पर अधिकार, वगडीके सामन्तका मारवाड़के नवीन महाराज बख्तसिंहकी कमरमें तलवार बाधना; पदसे रहित मारवाड़पति रामसिहके साथ राजपुरोहित जगूका योगदान, महाराष्ट्रोकी सहायताकी आशासे उनका दक्षिणमे जाना; राजा बख्तसिंहका पुरोहितके निकट कविता भेजना, पुरोहितका उत्तर देना; बख्तसिहकी अभिज्ञता, विज्ञता, शिक्षा और शारीरिक बल, महाराष्ट्रोका मारवाड़पर आक्रमण करनेका उद्योग, समस्त राठौर सामन्तोका बख्तसिंहके अधीनमे इकट्ठा होना, महाराष्ट्रोके साथ युद्धके लिये बख्तसिंहका जाना, बख्तके साथ युद्ध करनेमे महाराष्ट्रोकी अनिच्छा, बख्तसिह का अजमेरके मार्गमे रहना; आमेरकी रानीका बख्तसिंहको विषमय वेष देना, उस वेषधारणसे बख्तसिंहका जीवन त्याग; बख्तसिंहके चरित्रोंकी समालोचना।

अभयसिंहका स्वर्गवास होते ही उसके पुत्र रामसिंह युवा अवस्थामें अपने पिताके सिंहासनके अधिकारी रूपसे राजनैतिक रंगभूमिमें आये। जिस समय अभयसिंहने प्राण त्याग किये, उसके ठीक बीसवर्ष पहले सिरोहीके मानसिंहकी कन्याने अभयसिंहके औरससे रामसिंहको उत्पन्नकर अपने पतिके वंशकी रक्षा की। सिरोहीके देवड़ा सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष है। चौहान जाति अग्निकुलसे उत्पन्न है। उस चौहान नंदनीके गर्भसे राठौरवंशके औरससे जन्म लेकर आपने यौवन कालमें रामसिंह महा तेजस्वी और उग्रस्वभावके हुए। रामसिंह अपने पिताकी समान केवल महाक्रोध ही नहीं थे वरन् उनकी उस बीसवर्षकी अवस्थाके समयमें, उस नवीन योवनके आगमनके समयमें उनके चरित्रोंके प्रति दृष्टि डालनेसे ज्ञात होता है कि उनके चारित्र सब प्रकारसे भयंकर होगये थे। रामसिंहने पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर अपने उस उग्र स्वभावका भयंकर परिचय देना आरंभ किया। रामसिंहके अभिषेकके समयमें मरुक्षेत्रके प्रत्येक प्रान्तमें प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक सामन्त, तथा प्रत्येक जातिके आत्मीय जनोंने राजधानी जोधपुरमें आकर, उनके प्रति सम्मान दिखाकर अनुगत्यता स्वीकार की। 'परन्तु नागौरपति महावीर बख्तसिंह किस कारणसे अपने भतीजेके अभिषेकके समय नहीं आये, राठौर कविने उसका कोई कारण नहीं दिखाया'। बख्तसिंह समस्त राठौरगणोंमें सबसे अधिक निकट आत्मीय तथा सबसे अधिक ऊँचे पदपर स्थित थे, इस कारण उनके लिये उस सभामें जाकर नवीन मारवाड़पति महाराज रामसिंहके मस्तकपर राजतिलक देना कर्तव्य था, परन्तु बख्तसिंह स्वयं न गये, और न किसी चतुर सामन्तको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे भेजा, पर अपनी धात्रीको प्रातिनिधि स्वरूपसे जोधपुरमें भेजदिया। रजवाड़ेकी धात्री माताकी समान पूजनीय होती है। महातेजस्वी वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने अपने भतीजेको बालक जानकर ही धात्रीको भेजा था या नहीं, राठौरकविने इसका कोई लेख नहीं लिखा। परन्तु उस पूजनीय धात्रीके प्रति रामसिंहने उचित सम्मानके बदलेमें अत्यन्त निन्दनीय आचरण करके उसे अपनी उग्रताका विशेष परिचय दिया। वृद्धा धात्रीको देखकर रामसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर कहा, "चचासाहबने मुझे बानर जानाहै? इसी कारण उन्होने मुझे राजतिलक देनेके लिये इस डाकिनी को भेजदिया है।" नवीन महाराज रामसिंहने तुरन्त ही महाक्रोधित हो जालौर देश लौटादेनेके लिये अपने चचाके पास एक दूत भेजदिया। अभिषेकके कुछ ही कालके उपरान्त चचा भतीजोंमें यह विद्वेषाग्नि प्रज्ज्वलित होगई।

नवीन महाराज रामसिंहने महा क्रोधमें भरकर एक पत्र लिखकर भी दूतके हाथ भेजा था और क्रोधानलके शीतल होनेके पहले ही सेना सजाकर डेरे डालनेकी आज्ञा देकर अपने चचाको उचित शिक्षा दे अपने पद और मर्यादाकी रक्षा करनेके लिये वे तैयार हुए। रामसिंहने इस समय अपने राज्यके प्रधान २ नीतिजाननेमें चतुर परम

---

(१) उर्दू तर्जुमेंमें सिरोहीके देवड़ेकी जगह कोटेके चौहानका उल्लेख है परन्तु गद्य इतिहासके अनुसार रामसिंहका जन्म लदानेके ठाकुर नरूका केसरीसिंहकी बेटीसे हुआ था।

हितैषी सामन्त और मंत्रियोंकी वातको भी न सुना, और अपने राज्यके अत्यन्त नीची श्रेणीके कर्मचारीके साथ सलाह करके कार्य करना प्रारंभ किया। इस मनुष्यका[1] नाम अमियां था। इसके पूर्व पुरुष जोधपुरमे प्रधान तोरण द्वारपर नगाड़े वजानेमे नियत थे। यह मनुष्य भी अपने पिताके पदपर नियत होकर नवीन महाराजका अत्यन्त प्रियपात्र और प्रधान सलाह देनेवाला होगया। रामसिहके समान इसका भी अत्यन्त क्रोधी स्वभाव था, इस कारण दोनोकी खूव पटती थी। रामसिह अमियांके परामर्शसे अपने चचाके विरुद्ध लड़नेको खड़े होगये। नवीन अधीश्वर रामसिहने ज्ञानहीन उन्मादी की समान अपने चचाके पास क्रोधपूर्ण पत्र भेजकर युद्धकी तैयारी की, मारवाड़के प्रधान सामन्त चांपावत् सम्प्रदायके नेता आहवापति कुशलसिहने यह समाचार पाकर महाविपत्ति देख शीघ्र ही महलमे जा रामसिहको समझाने की चेष्टाकी। परन्तु उनके निर्दिष्ट आसनपर न वैठते २ राजारामसिहने क्रोधित भावसे कहा, "आपके इस विकट कुत्सित मुखको जितना न देखे उतना ही अच्छा है" नवीन महाराजकी इस उक्तिसे महाक्रोधित हो आहवाके सामन्तने अपनी पीठपरसे ढाल लेकर शय्याके ऊपर विपरीत भावसे रखकर कहा- "युवकराज! इस ढालको आप जिसभॉति विपरीत भावसे गिराहुआ देखते है, राठौर बख्तसिह भी समस्त मारवाड़को इसी प्रकार विपरीत भावसे निक्षेप करनेमे सामर्थ्यवान् है, आपने उन्हीं महावीर वख्तसिहका अपराध किया है आप शीघ्र ही इसका फल भोगेगे" लाल २ नेत्र करके यह वचन कहते हुए उठकर कुशलसिह सभास्थानको छोड़कर शीघ्र ही अपने अधीनमे स्थित समस्त सेनाको साथ ले जोधपुरके प्रधान राजकविके निवासस्थान मूंधियाड़को चलागया। कनौजसे सियाजीके साथ जो कवि सवसे पहले मरुक्षेत्रमे आया था, उसीके वंशधर उससे रहते थ। यह राजकवि मरुक्षेत्रमे किस प्रकारसे सम्मानित था, उसके प्रमाणमे हम केवल इतना ही कहसकते है कि उसके अधिकारी ग्रामोमे वार्षिक आमदनी मरुक्षेत्र के प्रधान सामन्तोकी आमदनीके समान एक लाख रुपयेसे भी अधिक थी। सामन्त मंडलीको समान इन कविका सम्मान पदमर्यादा और सामर्थ्य थी, कुशलसिह सवसे पहले उसी कविके पास गये।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है, "कि राजनीतिज्ञ वख्तसिहने जव सुना कि मरुक्षेत्रके सवमे प्रधान सामन्त कुशलसिह जोधपुरको छोड़कर हमारे राज्य नागौरकी सीमाके अंतमे आये है, तव वह तुरन्त ही उन माननीय सामन्तको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये आगे वढ़े, बख्तसिह विना विश्राम किये ही गंभीर रात्रिमे आकर जहॉ कुशलसिह सोनेके लिये जा रहे थे वहीं जा पहुंचे और निद्रित सामन्तको न जगाकर

(१) यह गलत लिखा है कि मूंधवाडका वारहठ कन्नौजसे आये हुए कविकी सन्तानसे था। कन्नौजसे कोई कवि नहीं आया था सियाजीकी चौथी पीढीमे चांदा नाम एक भाटीको पकड़कर जवरदस्ती अपना पोलपात वारहट वना लिया था, और उसका विवाह चारणोंमे कराडिया था उसकी औलादमें मूंदियाड़के वारहट जोधपुरके पोलपात है।

थकेथकाये वख्तसिंह उसी सामन्तकी शय्याके ऊपर एक ओरको लेट रहे। प्रभात होते ही कुशलसिंहने नेत्र मलतेहुए सेवकोको हुक्का लानेकी आज्ञा दी, सेवकोने अँगुलीका इशारा किया कि शय्याके ऊपर वख्तसिंह सो रहे हैं। कुशलसिंह तुरन्त ही चौकन्ने होकर उठ बैठे। उसी समय वख्तसिंहकी भी निद्रा जाती रही। आहवाके सामन्तने वख्तसिंहका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया, अंतमे वार्तालाप होनेके उपरान्त सामन्तने कहा, आजसे हमारा मस्तक आपकी इच्छाके अधीन हुआ, आजसे आपकी आज्ञाका पालन ही हमने जीवनमे प्रधान व्रतरूपसे स्वीकार किया। जब यह बातचीत होरही थी, उसी समय जोधपुरके प्रधान कवि भी वहीं थे। वह भी दोनोके मिलनेमे विशेष पोषकता करने लगे। वख्तसिंहने कविश्रेष्ठको आहवामे जाकर सामन्तके पुत्र और कुटुम्बको लानेके लिये आज्ञा दी, कविने प्रफुल्लित हो उसी समय उस कार्यसाधनमे तैयार होकर कहा, 'आजसे मैंने भी जोधपुरसे सर्वदाके लिये विदा ली।' तुरन्त ही वख्तसिंहने कहा। जोधपुर और नागौरमे आप किंचित् भी भेद न समझिए। जबतक एक टुकड़ा बाजरेकी रोटीका भी मिलैगा तबतक हम उसको बाँटकर खांयगे, राजनीतिमे चतुर वख्तसिंहने इस प्रकार मारवाड़के प्रधान सामन्तको अपने हस्तगतकर अपनी भविष्य उन्नतिका द्वार खोललिया"

युवक अधिपति रामसिंह अपने चचाको सेना संग्रह करनेका भी अवकाश न देकर अपनी प्रवलवाहिनीके साथ उनपर आक्रमण करनेके लिये चले। सबसे पहले खेरली नामक स्थानमे दोनो पक्षमे एक महायुद्ध हुआ। इसके पीछे बराबर छः स्थानोपर मेरताके समतलक्षेत्रमे लूनावास नामक स्थानमे भयंकर सग्रामानल प्रज्वलित होगई, इस भयंकर युद्धका विशेष वृत्तान्त यथास्थान पाठकोने पढा होगा। इस युद्धमे उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी निर्बुद्धि और अज्ञानताका फल पाकर परास्तहो प्राणोकी रक्षाकेलिये भाग गये। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जैसे ही उस भयंकर युद्धमे विजय प्राप्तकर जोधपुरकी ओरको चले, वैसे ही राठौरोने सब नगरोंके तोरणद्वार खोलदिये। वीरश्रेष्ठ वख्तसिंह जोधपुरमे अधिकार करके शीघ्र ही सिंहासनपर विराजमान हुए। बगड़ीके जेतावत् सामन्त, जिसके पूर्वपुरुषगण प्रत्येक अभिषेकके समय नवीन राजाके मस्तकपर राजतिलक देते थे, उसने ही वख्तसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया। बगडी सामन्तवंशको राजटीका देनेका अधिकारी कहकर, "मारवाडका मारकिवाड़" की उपाधिसे भूपित किया।

---

(१) महात्मा टाड् साहबने मारवाटमे जानेके विवरणमे प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमे लिखा है कि चांपावत् और आसोप दोनो देशोके दोनो सामन्त रामसिंहसे विरक्त होकर नागौरमे चलेगए। और वख्तसिंह तथा रामसिंहके साथ उनके मिलन होनेकी चेष्टासे उसमे दोनो सामन्तोके सम्मत न होनेपर भी शेषमे वख्तसिंहने उनको अपने दलमे मिलालिया, ऐसा जानाजाता है कि उन्होने भूलसे यहांपर आसोपके सामन्तोके नाम नहीं लिखे।

(२) कर्नल टाड् साहबने मारवाड़मे इस युद्धका विवरण प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमे किया है।

महावीर बख्तसिंह एकमात्र राजनीतिज्ञता और तलवारके बलसे चिरप्रार्थनीय राजसिंहासनपर स्थित हो अपने जीवनको सार्थक माननेलगे। मरु क्षेत्रके बहुतसे सामन्तो का उनके साथ योगदान होनेसे बख्तसिंहने यह सरलतासे स्थिर करलिया कि भ्रातृपुत्र रामसिंह कभी भी जोधपुरपर अधिकार करनेमे समर्थ नही होसकते। यद्यपि बख्तसिंहने तलवारके बलसे सिंहासनपर अधिकार करलिया और उनके स्वजातीयवीर राठौरगण भी उनके पक्षपाती थे। वे उस सिंहासनकी दृढ़भावसे रक्षा करसकते थे, पर तो भी निश्चय जानते थे, कि उस सामन्त मण्डलीके अतिरिक्त अन्यान्य सामर्थ्यवान् मनुष्योको हस्तगत करना हमारा मुख्य कर्त्तव्य है।

रजवाड़ेके राजदरबारके मंत्री, पुरोहित, कवि इत्यादि पदोको पुरुषानुक्रमसे भोगते है। मंत्रीके पदपर मंत्रीका पुत्र, पुरोहितके पदपर पुरोहितका पुत्र, इस प्रकारसे पिताके पदपर पुत्र ही नियत होते है। पिताके पदपर नियत होना होगा इसीसे पुत्रोको बालकपनसे ही उचित शिक्षा दीजाती है, इन समस्त पिताके पदके अधिकारियोको अपने हस्तगत करना नवीन महाराजका सबसे पहला कर्त्तव्य था, अधिक क्या कहे बख्तसिंहने स्वयं अपनी तलवारके बलसे ही अपने भतीजे रामसिंहको सिंहासनसे उतारकर स्वयं मारवाड़का राजछत्र धारण किया। समस्त वीर सामन्तोने जिसभांति उनके पक्षका अवलंबन किया उसी प्रकार सामरिक प्रधानमंत्री, शासनविभागके प्रधानमंत्री और प्रधान कविने भी उनके पक्षका अवलम्बन किया। परन्तु राजदरबारमे एकमात्र प्रधान कुल पुरोहित जगूने रामसिंहको अत्यन्त उद्धतस्वभाव और राजपदके अनुपयुक्त और बहुतसे दोषोसे युक्त देखकर भी राजभक्तिको अपना कर्त्तव्य विचार कभी उसने बख्तसिंहके पक्षका अवलम्बन न करके सिंहासनसे भ्रष्टहुए रामसिंहके पक्षका ही अवलम्बन किया। रामसिंहने सिंहासनसे भ्रष्ट होकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया, पुरोहित जगू अपने प्रभुको राज्यपर फिर अधिकृत करनेके लिये महाराष्ट्रोकी सहायताकी आशासे दक्षिणको चलागया।

नीति चतुर बख्तसिंहने देखा कि जगू पुरोहित होकर मारवाड़के विध्वंसकी सूचना करनेके लिये उद्यत हुआ है, विदेशीय महाराष्ट्रोको मारवाड़मे लाना चाहता है जिससे मारवाड़का सर्वनाश होजाय। अस्तु पुरोहितको ही अपने हस्तगत करना एकान्त कर्त्तव्य विचारकर उन्होने शीघ्र ही अपने हाथसे एक कवितापूर्ण पत्र लिखकर उसके पास भेजदिया। बख्तसिंह केवल नीतिज्ञ साहसी और वीर ही नही थे, वरन् वह विशेष विद्वान् भी थे। उन्होने पुरोहितके पास अपने हाथसे कवितामे जो पत्र लिखभेजा उसका सारांश यो है:—

"हे मधुकर! जिस फूलके सौरभपर आप मोहित होरहे है वह उस फूलका पेड़ प्रबल आँधीके आनेसे छिन्नभिन्न होगया है, उस गुलाबके वृक्षपर अब एक पत्ता भी नही रहा, फिर क्यो वृथा काँटोमे बँध रहेहो?"

---

(१) इसी आशयके ये दो दोहे बिहारी सतसईमे लिखे है।
दोहा—जिन दिन देखे वे सुमन, गई सु बीत बहार। अब अलि रही गुलाबमे, निपट कटीली डार॥
यही आश अटक्यौ रहै, अलि गुलाबके मूल। हुइ है फेर बसंत ऋतु, इन डारन वे फूल॥

पुरोहितने उत्तरदिया कि "सूखे हुए गुलाबके वृक्षके ऊपर भौरा केवल इसी आशासे बैठा है कि नवीन वसंतऋतुके आगमनसे नवीन खिलेहुए फूलोंकी सुगंधिसे पुनः मनको प्रसन्न करूंगा ? "

पुरोहितको यथार्थ विश्वासपालक देखकर महाराज बख्तसिहने प्रसन्न हो उसका यथोचित सम्मान किया। यद्यपि पुरोहित बख्तसिहके पक्षका अवलम्बी नहीं था तौ भी बख्तसिह उसके इस आचरणसे किंचित् भी दुःखी न हुए।

महात्मा टाड् साहबने लिखा है, "कि बख्तसिह जैसे सदानंदचेता थे, उसी प्रकार उनके स्वभावसे असीम साहसिकता और असीम वदान्यताके मिलनेसे उनको राजपूत जातिने आदर्शस्वरूप करदिया था। इन श्रेष्ठ गुणावलीकी समान उनकी मूर्त जैसी शान्त थी और शरीर बलिष्ठ था उसी भाँतिसे देशकी समस्त विद्याओंमे भी वह पंडित थे, विशेष करके उनमे कविता रचनाकी शक्ति भी सामान्य नही थी। यदि वह एकमात्र पिताकी हत्या न करते तो रजवाड़ेमे यहांतक जितने राजाओंने जन्म लिया है उनमे एकमात्र यही सबसे श्रेष्ठ और चिरकालतक सम्मानित होते और इनका नाम भी अक्षय हो सकता। बख्तसिहने अपने श्रेष्ठ गुणोसे स्वजातीय राठौरोको अपने अनुगत करलिया था। इन्होंने केवल समरक्तवाही वीरोको प्रीतिके सूत्रमे बांधलिया था, यही नही, वरन् समस्त रजवाड़ेकी सब जातियां इनके गुणोपर मोहित होगई थी, बख्तसिहने सभीके हृदयपर अधिकार करलिया था। जिस समय सिंहासनसे भ्रष्टहुए रामसिहका दूत महाराष्ट्र लुटेरोके नेता सैंधियाको अपने हस्तगत कर उसकी सेनाकी सहायतासे रामसिहको फिर जोधपुरके सिंहासनपर बैठालनेके लिये तैयार हुआ, उस समय महाराज बख्तसिंहने एकमात्र अपने प्रीतिमय आचरणसे और संतोषदायक व्यवहारसे तथा अपने बल विक्रमके बलसे इस भांति अगणित सेनाका संग्रह किया कि महाराष्ट्रोका दल, उस सेनाश्रेणीमे समस्त रजवाडेके श्रेष्ठतम वीर सम्प्रदायको इकट्ठाहुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होगया। महाराष्ट्रोके दलको इस प्रकारसे उपस्थित देख और इनके द्वारा जन्मभूमिके सर्वनाशकी संभावना देखकर, सियाजीके वंशधर प्रत्येक शाखाके राठौर सामन्त एक मनुष्यकी समान खड़े होकर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहके अधीनमे उस रुद्रमूर्ति महाराष्ट्रनेता माधोजीके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये चले। महाराष्ट्रोका दस्युदल केवल अपने बाहुबलको प्रकाश करके विजय तथा गौरव उपार्जन करनेके लिये नही आया था, वरन् वह लोग केवल मारवाड़को लूटकर तथा उसको विध्वंश करनेकी इच्छासे ही रामसिंहको ले आये थे, परन्तु महावीर बख्तसिंहको उस प्रबल सेनाके साथ आताहुआ देखकर वे समझगये कि जिसभाँति युद्धमे विजय करना असंभव है, उसी भाँति मारवाड़को लूटना भी असंभव है, इस कारण महाराष्ट्रगण राजपूत वीरोको साथले सांग और सिरोहीके साथ अपने बरछोके बलकी परीक्षा दिखानेकी इच्छा करनेलगे।

---

(१) यह दशफुट लम्बी होती है सिरोही देशमें सांग एका प्रकारका भाला है, इसीसे उसका-

कर्नल टाड् साहबने इससे पीछे वर्णन किया है, "तलवारके बलसे जो उद्देश्य साधन नहीं हुआ कालकूट विषयने उस उद्देश्यको पूर्ण करदिया, अजमेरके निकट जिस मार्गसे मारवाड़के राज्यमे सरलतासे प्रवेश कियाजासकता है, शत्रुओंको उसी मार्गसे किसीभाँति भी न जानेदेनेकी इच्छासे वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहने सेनाके साथ वहां अपने डेरे डालदिये और शत्रुओंके आगमनकी प्रतीक्षासे वह वहां रहने लगे। आमेरपति माधोसिंहकी राठौरजातीया रानीने वहां जाकर वख्तसिंहके साथ साक्षात्कर भ्रातृपुत्र रामसिंहके स्वार्थसाधन करनेके लिये वख्तसिंहके जीवनरूपी दीपकको अपनी चतुरतासे बुझादिया । किस उपायसे आमेरकी रानीने अपने उद्देश्यको पूर्णकिया था ? उन वीरश्रेष्ठ वख्तसिंहकी अन्तिम दशाका वृत्तान्त पहले ही वर्णित होचुका है। वख्तसिंहने सम्वत् १८०९ स० १७५२ ईसवीमे इस मायामय शरीरको त्यागकिया । उनकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विजयसिंहके साथ रामसिंहका महायुद्ध होनेसे मारवाड़के चारो ओर आत्मविग्रहानलके प्रज्वलित होनेसे मारवाड़देश विध्वंस होगया ।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने वख्तसिंहकी जीवनीके उपसंहारमे लिखा है, "कि वीरश्रेष्ठ वख्तसिंह जब तीनवर्षतक मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त रहे, उस थोड़े समयमे ही उन्होने मारवाड़के दुर्ग समूहोंको दृढ़ और सुसज्जित करनेका अवकाश तथा उपाय प्राप्त किये थे, उन्होने राजधानीमे बड़े २ किले बनादिये, तथा अहमदाबाद

—सिरोही * नाम हुआ । इसकी धार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है । कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें जोधपुरके कई एक प्राचीन विशाल भाले रक्खेगये थे, ऐसा विहित होता है कि उनको पाठकोंने अवश्य ही देखाहोगा ।

(१) महात्मा टाड् साबहको इस स्थानपर भ्रम होगया है । हमने उनकी उक्तिके मतसे " कर्नल टाडके मारवाडमे जानेका वृत्तान्त " २९ अध्याय पृ० ९४० मे लिखा है, कि जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी स्त्रीने महाराज वख्तसिंहको कालकूट विषमय वस्त्र दिये थे, बख्तसिंहने उसी वस्त्रको धारणकर प्राण त्याग किये । परन्तु महात्मा टाड् साहबने यहां कहा है कि माधोसिंह की स्त्रीने वे कालकूटमय वस्त्र दान किए थे। इसकी सत्यताका निर्णय करना अत्यन्त कठिन + है ।

(२) प्रथमखंडमे कर्नल टाड्के मारवाड़से आनेका वृत्तान्त २९ अध्यायके ९४० पृष्ठमे देखो ।

---

* सिरोही एक किसमकी फौलादी तलवार होती है। यह काट करनेमे बडी तीक्ष्ण होती है पर साथ ही यह बात भी है कि चलाने वाला कुशल नहीं है तो टूट भी जाती है इसीसे कहा वत है (कि सर नहीं कि सिरोही नहीं) । यह तलवार राजपूतानेके सिरोहीनामक स्थानमे बनती है इसीसे इसका नाम सिरोही पड़ा ।

+'गदरयातमे' माधवसिंहका गांव सोनेली परगने मालपुरा इलाके मारवाडमे वरतसिंहसे मिलनेको आना लिखा है सो उस समय माधोसिंह ही जयपुरके राजा थे। उसी ग्राममे भादो वदी १२ स० १८०९ को महाराज बख्तसिंहका देहान्त हुआ था ।

वादको जीतकर जो समस्त उपकरण लायेथे वख्तसिहने उन सव उपकारणोसे जोधपुरके महलोको अत्यन्त सुन्दरतासे सजायाथा। कठिन यवनोने हिन्दुओके प्रति और विशेष करके मारवाड़निवासी राठौरोके प्रति एक समयमे जो अकथनीय निग्रह, दारुण अत्याचारको किये थे,महावीर वख्तसिहने उन सव अत्याचारोका इन्हे उचित फल दिया। उन्होने अपने मुख्य अधिकारी नागौरराज्यकी यवन मसजिदोको तोड़ फोड़ कर उन स्थानोपर पूर्वकालके आदि मंदिरोको वनादिया। एकमात्र उन असीम साहसी वख्तसिहने समस्त मारवाड़मे ऐसी आज्ञा दी कि जो कोई मुसलमान ऊँचे स्वरसे खुदाको पुकारैगा उसको प्राणदंड दियाजायगा। वख्तसिहकी उसी आज्ञाके अनुसार ही समस्त मारवाड़मे तथा सारी मसजिदोमे वह चीत्कार शब्द एकवार ही वंद होगया, और आजतक उस प्रवल नियमका पालन होताहै। उस समय भारतवर्षमे जिस भाँतिका राजनैतिक विप्लव होरहाथा दिल्लीके प्रवल प्रतापशाली यवनसम्राट्की वह जगत् विख्यात् गौरवगरिमा लुप्त होगई थी, तथा इनके शासनकी शक्ति भी एकबार ही हीनप्रभा होगई थी। कृष्णाके किनारे कृपिजीवी महाराष्ट्रदलने मस्तक उठाकर सवमे प्रधान शासन शक्तिका संचय किया था, यदि वीरश्रेष्ट वख्तसिह कुछ कालतक और जीवित रहते तो अवश्य ही राजपूतजाति प्राचीनकालकी समान समस्त भारतमे उस शासनशक्तिको प्राप्तकर पहलेकी समान स्वाधीनभावसे स्वजातिके गौरवरूपी सूर्यको फिर उदित करनेमे समर्थ होती। जिस यवनराजकी शासनशक्तिने भारतके देशीय राजाओकी स्वाधीनताको नष्ट करदिया तथा उनको एकवारही मोल लियेहुए दासकीभाँति पदपर स्थित करदिया था, उसी यवनसम्राट्के वंशको विनाश करनेकेलिये सभी राजपूत राजा एकसाथ मिलसकते थे, परन्तु उन देशीय राजाओने अनेक प्रकारके राजनैतिक पापोके कारण उस अभिलषित सुअवसरको पाकर भी खोदिया और वे अपने मनोरथको सिद्ध न करसके"।

सत्यप्रिय टाड् साहव स्पष्ट अक्षरोमे लिखगये है कि पाठकगण इस स्थानपर वख्तसिहके पिताका प्राणनाश और आमेरकी रानीके द्वारा उस पितृहन्ताके जीवनका विनाश देखकर यह न विचारै कि राजपूतजाति इसीप्रकारसे जीवनको नाशकर अपने वंशको कलंकित करनेका अभ्यास रखती है। इस प्रकारका हत्याकाण्ड यही एकमात्र दिखाई दिया है। कर्नल टाड् साहवने इसके पीछे लिखा है, " पाठकगण एकवार पाश्चात्य इतिहासकी ओर दृष्टि उठाकर देखै। ग्यारहवीं शताव्दीमे जिस समय प्रवल प्रतापशाली जयचद यवनोके द्वारा सिहासनसे भ्रष्ट हुए थे, जिस समय सियाजीने मरुक्षेत्रमे राठौरोके शासनकी प्रतिष्ठा की उस समय विलायतवासी असभ्यता और अंधकारसे मुक्ति प्राप्तकर रहे थे। जिस समय आर्यराजवंशका प्रताप, प्रभुत्व, स्वाधीनता एकवार ही विजातियोके आक्रमणसे हीन होगई थी, उसी समय विलायतनिवासियोने नवीन सभ्यता और शिक्षाके वलसे मस्तक उठाया था, विलायत निवासी नाइट अर्थात् वीर कुलीन उपाधिवाले मनुष्य जिन गुणोसे विभूषित हो

जिस भाँतिसे अपने साहस और वल विक्रममे प्रशंसनीय हुए थे, राजपूत वीर भी उन सभी गुणोसे विभूपित थे, वरन् विलायत वासियोकी अपेक्षा राजपूत वीरनेता मानासिक उत्कर्षतासाधनमे अधिकतर शिक्षितथे। ऐसा कोई समय भी नही हुआ कि जिस समय राजपूत राजा अपने नामके हस्ताक्षर न करसकते हो, वरन् वह सभी अपनी सुशिक्षाके वलसे अपने हाथसे राजनैतिक पत्र तथा मन्तव्य लिखा करते थे, और आवश्यकता होनेपर वह कविता भी वना लेते थे। तव रजवाड़ेके हत्या काण्डका उल्लेख करके युरोपके मध्यसमयके हृदयभेदी अगणित हत्याकाण्ड क्या शोचनीय नहीं होसकते ? ''

उदार स्वभाव टाड् साहव इस स्थानपर सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वदेशके नाइटकी उपाधि धारण करनेवाले वीरोकी अपेक्षा राजपूतवीर नेताओके प्रति ऊँचा सम्मान दिखागये है। महात्मा टाड् साहवने पीछे कहा है, किं वख्तसिहने जो अपने पिताको मारा था राजपूत कवियोने उस महापापकारी हत्याकाण्डके प्रति किसी प्रकारका भी मन्तव्य प्रकाशित नही किया। पाठक इस प्रकारका सिद्धान्त न करै। रजवाड़ेके राजाओसे लेकर दीन दरिद्री किसानतक भी कविकी लेखनीसे निकलेहुए ''विषगयंद्योको'' आजतक पढ़ा करते है, इससे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि राठौरके कविने निर्भय हृदय हो स्वाधीनभावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेमे किसी भाँतिकी भी त्रुटि नही की। वख्तसिहने जो अपने पिताको मारडाला था, इस विपयमे आजतक एक प्रवाद प्रचलित है। एक समय महाराज अभयसिह आमेरपति महाराज जयसिहके साथ पवित्र पुष्करतीर्थको जारहे थे। तीसरे पहरके समय दोनो महाराज अपने अपने परिपदोके साथ बैठे हुए आनन्द भोग रहे थे, इसी समयमे दोनो राजाओने प्रधान कवि कर्णीदानको नवीन कविता बनाकर सुनानेकी आज्ञा दी। कविश्रेष्ठने तुरन्त ही दोनो राजाओकी आज्ञासे निर्भय हो यह कविता पढी।

जोधपुरा आमेरिया, दोनो थाप उथाप।
कूरम मार्‌यो डीकरो, कमधज मार्‌यो वाप॥

कविताका यह अर्थ था कि जोधपुर और आमेरके महाराज यह दोनो ही साखा

---

(१) यूरोपके मध्यसमयके नाइट (Knight) अत्यन्त ही मूर्ख थे। वे अपना नामतक नहीं लिखसकते थे।

(२) मालूम होता है कि यहाँ अनुवादकर्त्ताकी मुराद विसरसे है मारवाड़में कविताके दो भेद हैं सर और विसर, सर प्रशंसामया कविताकी संज्ञा है और विसर निन्दापूरित कविताकी, इसी साशब्दसे विप पद्य गढ़ा गया होगा।

ठीक नहीं है दोनो ही सिंहासनसे भ्रष्ट हुए और दोनो ही फिर अभिषिक्त हुए। कूर्मने अपने पुत्र शिवासिंहकी हत्या की थी, और कमध्वजने अपने पिताका विनाश किया।

असीम साहससे भरी इस नवीन कविताके सुनते ही सभी आश्चर्यमे होगये। उसी समयसे रजवाड़ेके प्रत्येक मनुष्योंके मुखसे यह कविता सुनाई देनेलगी।

उपसंहारमे हमारा कर्त्तव्य यही है कि यदि महाराज बख्तसिंह अपने भाई अभयसिंहकी आज्ञासे तथा उनकी ताड़ना, उपदेश और लालचसे आकर अपने पिताके प्राणनाश न करते तो कर्नल टाड् साहबकी समान हम भी उनको राठौरवीरोंमे अग्रणीय कहकर महान उच्च सम्मान दिखासकते थे।

तेरहवाँ अध्याय १३.

विजयसिंहका राज्याभिषेक; मेरता नामक स्थानमे नवीन महाराजके प्रति राठौर सामन्तोंका सम्मान दिखाना, जोधपुरकी राजधानीमे विजयसिंहका जाना; सिंहासनसे भ्रष्ट रामसिंह का जयपुरपतिके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके साथ संधिबंधन; आक्रमणकारी सेनाका संमिलन; आक्रमणकारियोंके विरुद्धमे युद्धके लिये मारोठनामक स्थानमें विजयसिंहका सेना इकट्ठा करना; रामसिंहका सिंहासन देनेके लिये विजयसिंहके पास आज्ञा भेजना; विजयसिंहका उत्तर देना; युद्ध, विजयसिंहकी पराजय, राठौरोंकी अश्वारोही सेनाका नाश, सेनाके साथ सामन्तोंका भागना रणक्षेत्रमे विजयसिंहका इकला रहना; उनका भागना, रामसिंहका किलेपर अधिकार करना; महाराष्ट्रोंके सेनानायकके जीवनका नाश; उस हत्याकी हानिको पूर्ण करना, अजमेरमे जाना; महाराष्ट्रोंका चौथ संस्थापन, महाराष्ट्रोंका रामसिंहके पक्षको छोड़ना; कविलिखित पद्य, रामसिंह की मृत्यु, उनके चरित्र, मारवाडमें अराजकता, राठौरराजाके प्रति पोकर्णके सामन्तोंका दुर्व्यवहार, सामन्तोंकी शासनशक्तिको घटानेके लिये मारवाड़पतिकी कल्पना; सामन्तोंकी समिति; गोवर्द्धनखीची; राजाके प्रति उनका उपदेश, सामन्तोंके साथ राठौरपतिका असम्भ्रममूलक संधि बधन, वेतनभोगी विदेशीय सेनाको विदा देना; राजगुरुकी मृत्यु; गुरुकी भविष्यवाणी; प्रधान २ सामन्तोंका प्राणनाश, सुबलसिंहका अपने पितृहन्ताके प्रति बदला लेनेका उद्योग करना; सुबलसिंह की मृत्यु, सामन्तोंकी शासनशक्तिका रोकना, सिन्धुदेशसे अमरकोटको छीनलेना; मेवाड़से गोद्वार राज्यका ग्रहण करना, महाराष्ट्रोंके विरुद्ध मारवाड़ और जयपुरके दोनो राजाओंका मिलन; तूगानामक स्थानमे पराजय, राठौरोंका अजमेरपर फिर अधिकार करना, पाटन और मेरतामें युद्ध, अजमेरमें जाना, अजमेरके शासनकर्ताकी आत्महत्या, विजयसिंहकी उपस्त्रीका मानसिंहको गोद लेना, उनके असदाचरणसे सामन्तोंका क्रोधित होना; उनकी हत्या करना, विजयसिंहकी मृत्यु।

---

(१) जयपुरेश्वर, यहांपर कुश्यसे कूर्मा हुआ है।

(२) कामध्वज कान्यकुब्ज पतिकी प्राचीन उपाधि है। मारवाड़के राठौरोंको यह उपाधि मिला करती थी।

जब वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने अपने पिताकी हत्याके फलस्वरूपमे अपने राज्यकी सीमाके बाहर कालकूट विषमय वेशको पहरकर एक शोचनीय दशामे प्राण त्याग किया, तब उनके पुत्र विजयसिंह बीसवर्षकी अवस्थामे मारवाड़के राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त हुए। यद्यपि दिल्लीके बादशाह इस समय नाममात्रके बादशाह थे, इस समय उनके शासनकी शक्ति एकबार ही लुप्त होगई थी, देशीय राजा और यवन शासनकर्ता गणोंने पहलेकी समान उनकी अधीनताको स्वीकार कर महाराजकी आज्ञा पालन नहीं की थी, और बख्तसिंहके समयसे ही मारवाड़मे दिल्लीश्वरका प्रभुत्व लुप्त होगया था, तथापि नवीन मारवाड़पति विजयसिंहने प्राचीन रीतिके अनुसार दिल्लीके बादशाहके निकट अपने अभिषेकका समाचार भेजदिया। दिल्लीश्वरने उसी समय उस अभिषेकमे पूर्ण सम्मति प्रकाशित कर भेजी। केवल दिल्लीश्वर ही ने नहीं वरन् राजवाड़ेके अन्यान्य राजाओंने भी नवीन मरुक्षेत्रपति विजयसिंहके अभिषेकमे आनंद प्रकाशके साथ अभिनंदनपत्र भेजे । मारवाडकी सीमामे स्थित मारोठ नामक स्थानमे विजयसिंहका अभिषेक किया गया। नवीन महाराज विजयसिंहने मारोठसे मेरतामे जाकर वहां अशौचकालतक समय व्यतीत किया। उस समय बीकानेर कृष्णगढ़ और रूपनगरके स्वाधीन राजा भी अपने २ अधीनकी सेनाको लेकर वहां आये और सबने विजयसिंहका उचित सम्मान किया, तथा सम्पूर्ण सामन्तोने भी वहाँ जाकर विजयसिंहके सम्मान बढ़ानेमे त्रुटि न की। नवीन नागोरेश्वरने इस प्रकारसे सबका सम्मान बढ़ाया। और राजधानी जोधपुरमे जाकर बड़ी धूमधामके साथ अपने स्वर्गीय पिताका श्राद्ध किया। इस श्राद्धकार्यमे उसने बहुतसा धन खर्च करके कवि, भाट, चारण, ब्राह्मण और अनाथोंको अधिक धन देकर विशेष यश प्राप्त किया ।

बीसवर्षकी अवस्थामे विजयसिंह जिस समय पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, उस समयको अवश्य ही विपदमय कहना होगा । यद्यपि प्रतिवासी राजगण और सामन्तमंडलीने उनके पक्षका अवलम्बन किया, परन्तु अभयसिंहका पुत्र रामसिंह मारवाड़के राज्यसिंहासनका प्रधान दावादार राजनैतिक बंगाल भूमिमे आपहुँचे। बख्तसिंह अपने एकमात्र असीम साहस, अतुल सामर्थ्य, प्रबल पराक्रम और कूट राजनीतिके बलसे ही रामसिंहको भगाकर स्वयं सिंहासनपर विराजमान हुए थे। परन्तु इस समय विजयसिंहकी अवस्था केवल वीस वर्षकी थी, उनके लिये राजनैतिक रंगभूमि और संग्रामभूमिमे पिताकी समान सामर्थ्य दिखाना असम्भव व्यापार था । जो हो विजयसिंहने पिताके सिंहासनपर बैठकर रामसिंहकी आशाको व्यर्थ करदिया ।

बख्तसिंहके द्वारा मारवाड़से निकाले जाकर रामसिंह जैपुरमे रहने लगे। यदि बख्तसिंह जीवित रहते तो उनके मनकी आशा कभी पूर्ण न होती, यह उन्होंने भलीभाँतिसे समझलिया था। इस समय उन्हीं सिंहविक्रमी बख्तसिंहकी मृत्युसे रामसिंहने

महासंतुष्ट हो फिर पिताके राज्यका उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा की। रामसिंह और जयपुरके महाराज भी भलीभाँतिसे जानगये थे, कि विजयसिंहकी बीस वर्षकी अवस्था होते ही जब कि राठौर जातिने इनको अधीश्वररूपसे स्वीकार करलिया है; जब कि प्रतिवासी राजाओंने इनके अभिषेकमें अपनी सम्मति प्रकाश की है, तब एकमात्र जयपुरकी सेनाकी सहायतासे विजयसिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट करना असंभव है। इस कारण रामसिंहने अन्य उपायसे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेकी चेष्टा की। इस समय महाराष्ट्रोंके दलने भी प्रबल होकर भारतभूमिमें विशेष शक्ति स्थापित करली थी। रामसिंह उन्हीं महाराष्ट्रोंके दलकी सहायतासे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये आगे बढे। रामसिंहके पुरोहितने यद्यपि एकवार ही महाराष्ट्रोंकी सहायताको संग्रह किया था, यद्यपि महाराष्ट्रोंके दल मारवाडके विध्वंस करनेको दस्युमूर्तिसे अग्रसर हुए थे, परन्तु उस समय पुरुषसिंह बख्तसिंहकी अमित बलशालिनी सेनाको देखते ही उन्होंने मनकी कामना पूर्ण होना असंभव विचार शीघ्रतासे पीठ दिखाई थी। किन्तु इस समय बख्तसिंहके न होनेसे अपने पापके उद्देश्य पूर्ण होनेमें किसी प्रकारके उपद्रव न होनेकी संभावना विचारकर महाराष्ट्र दलके नेताने सरलतासे रामसिंहके प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाश की। रामसिंहकी ओर महाराष्ट्रदलके नेताके साथ शीघ्र ही सन्धिबंधन होगया, दोनो ओरके नेताओंने उस सन्धिकी सम्पूर्ण धाराओंके पालन करनेमें सौगंद की। महाराष्ट्रोंकी सेना शीघ्र ही कोटासे होती हुई जयपुरमें आ पहुंची। उस समय रामसिंह जयपुरमें ही रहते थे। सहायकारी महाराष्ट्रोंके आते ही रामसिंह शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके सहित महाराष्ट्रोंके साथ मिलकर विजयसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये आगे बढ़े।

"महाराष्ट्रोंका तस्करदल मारवाडमें जाते ही देशका सर्वनाश करदेंगे, यहांका सर्वस्व लूटकर सारी धनसम्पत्ति लेजायंगे"। महाराज विजयसिंहकी राठौर सामन्त मण्डली और सर्वसाधारण प्रजाने इस बातको भलीभाँतिसे जानलिया था। इस कारण मरुक्षेत्रके प्रत्येक राठौर नवीन महाराजकी आज्ञासे शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके दस्युदलको भगाने तथा रामसिंहकी आशाको व्यर्थ करनेके लिये दलके दल आकर मेरताके समतलक्षेत्रमें इकट्ठे होनेलगे। समस्त राठौर जातिको उस रणभूमिमें इकट्ठाहुआ देखकर राठौरकवियोंने उनकी बडी प्रशंसा की है। विशेष करके इस समय अनधीन पातावतगण तक कठिन महाराष्ट्र–दस्युदलके हाथसे स्वदेशकी रक्षाके लिये उपस्थित हुए। कवियोंने उनके यशको भलीभातिसे गायाहै।

रामसिंहने महाराष्ट्री सेनाके साथ पुष्करतीर्थमें जाकर विजयसिंहके पास यह कहला भेजा, "कि तुम इसी समय मरुक्षेत्रके सिंहासनको छोड दो, नहीं तो निस्तारा

(१) यह सन्धि "हलदी वा वलपत्र" (पक्काकागज) नामसे विदित है। महाराष्ट्र दलके समस्त प्रधान नेताओंने उसपर हस्ताक्षर करदिए थे उनका नाम इस प्रकार है–जनकोजी सेंधिया, मालजी तातिया, चित्तेजी रघुपागिया, घोपालिया, जादोन, मुल्ला यारअली, और फीराजखा।

नही है । ” महाराज विजयसिहने उन समस्त सामन्तोके सामने रामसिहके उस आज्ञापत्रको पढ़ा, जिसे सुनते ही समस्त राठौर अत्यन्त क्रोधित होगये। और “युद्ध होगा ! युद्ध होगा ! ” यह कहकर महावीरता प्रकाश करतेहुए बोले, “यह कौन आपाहै जो हमै भय दिखाता है ? हजार वज्रपात होनेपर भी हम अपनी रक्षा करेंगे । ” उत्तेजित राठौरोने इस प्रकार एकस्वर और एकमतसे युद्धपक्षका समर्थन किया । महाराज विजयसिहने उसी समय रामसिहके निकट यथोचित उत्तर भेजदिया, महात्मा टाड् साहब लिखते है कि शत्रु सेनाकी संख्या राठौरोकी सेनाकी सख्यासे अधिक थी । राठौरगण कछवाहोकी सेनासे तो कुछ भी भयभीत न हुये, कारण कि वह जानते थे कि हम कछवाहोको सरलतासे परास्त करसकैगे, परन्तु महाराष्ट्रोके साथ जय प्राप्त करनेके विषयमे उनको कितनी ही वातोकी चिन्ता करना पड़ी । जो हो राठौरोकी सेना महाराष्ट्रोके साथ प्रवल विक्रम प्रकाश करके अपने वाहुवल और पराक्रमका चूडान्त प्रमाण दिखानेमे असमर्थ न हुई ।

राठौरोके कवियोंने, जो जो सम्प्रदाय इस युद्धमे नियुक्त थी, उन सबकी यथायोग्य प्रशंसा कीहै ।

इस प्रवल युद्धके समयमे राठौरोंमें दो आकस्मिक घटनाएं उपस्थित हुई । यदि यह दोनो घटनाएं न होती तो इस भयंकर युद्धमे विजयसिह ही विजयलक्ष्मीका आलिगन करसकते । एकदल राठौरोकी अश्वारोही सेना शत्रुपक्षके व्यूहको भेदन कर लौटा जारहा था । इसी समयमे उसको शत्रुओकी सेना जानकर राठौरोने उसके ऊपर बाण और गोलोकी वर्षा करके उसे विध्वंस करदिया । इस दुर्घटनाका वर्णन यथास्थान किया गया है, यदि विजयसिहका भाग्य मंद न होता तो ऐसी दुर्घटना क्यो होती ?—दूसरी दुर्घटना भी इसी प्रकारकी थी । सेंधिया इस समय रणक्षेत्रको छोड़कर भागनेके लिये तैयार होगया था, यदि राठौरगण कुसंस्कारके वशीभूत होकर छिन्नभिन्न न होजाते तो इन्हीके विजयकी पताका उड़ती ।

कृष्णगढ़ और रूपनगर इन दोनो राज्योके राजा भी मारवाड़ राजवंशसे उत्पन्न है । परंतु दोनो ही स्वाधीनभावसे राज्यशासन कर दिल्लीके वादशाहसे सम्बन्ध रखते थे । कृष्णगढ़के महाराजने अपने कुटुम्बी रूपनगरके महाराजको सिहासनसे उतारकर उक्त राज्यको अपने अधिकारमे करलिया था । ‘रूपनगरके महाराज सामन्तसिहने वृद्धावस्थाके कारणसे हो अथवा वैराग्यधर्मसे हो’ जब कृष्णगढ़पतिने उनके राज्यको अपने अधिकारमे करलिया तब वह यमुनाके किनारे श्रीवृन्दावनधाममे जाकर

---

(१) महाराष्ट्रनेता जय आप्पाजी सेंधिया ।

(२) राजस्थानके प्रथमकाडमे कर्नल टाड साहवके मारवाडसे आनेका वृत्तान्त २९ अध्याय मे देखो ।

(३) उर्दू तर्जुमेमें यो लिखाहै कि सिन्धियेकी बखतरी (पाखरवाली) फौज राजपूतोपर हमला करके पीछे आती थी उसपर दुश्मनोकी फौजका भ्रम हुआ और वह आपसे* उडादी गई ।

---

* तोपका ढर्रा ।

आनंदसहित हरिनामका कीर्तन करतेएहु जीवनके शेष दिनोको व्यतीत करनेलगे। राज्यकी चिन्तासे छुटकारा पाकर श्रीभगवानके चरणकमलोमे कृतज्ञता प्रकाश करके उन्होने अपने मनको पुण्यपुंजके संचयमे लगाया, परन्तु रूपनगरके महाराज सामन्तसिहके पुत्रने पिताके उस वैराग्यभावसे दु:खित हो, कृष्णगढ़पतिके हाथसे अपने राज्यका उद्धार करनेके लिये पिताको वारम्वार उत्तेजित किया। सामन्तसिह उस समय यहांतक संसारसे वासनाहीन होगये थे कि उन्होने पुत्रकी बात किंचित्‌मात्र भी न सुनी, वरन् 'विषयवासना अनेक प्रकारके पापोकी जड़ है' इस कारण उसका चित्र अंकित करके पुत्रको राज्य प्राप्तिकी आशाके छोड़नेकी सलाह दी। पुत्रने पिताके वचन सुन अत्यन्त दु:खित होकर कहा, "हे पिता! आप सम्पूर्ण विषय वासनाओसे तृप्त होकर इस समय शान्त होगये हो, इसीसे मुझे ऐसा उपदेश देते हो, परन्तु मेरेलिये तो राज्यका शासन सब प्रकारसे अनुकूल है।" पिताके पाससे निराश हो रूपनगरके महाराज सामन्तसिहके पुत्र पिताके राज्यका पुनर्वार उद्धार करनेके लिये सुसमयकी वाट देखनेलगे। इसी समय विजयसिहके साथ रामसिहकी विवादानल प्रज्वालित होगई। युवकने इस सुअवसरमे रामसिहके साथ मिलकर उनके दूतके साथ महाराष्ट्रोकी सहायताके लिये दक्षिणको गमन किया। महाराष्ट्रनेताने जिस प्रकारसे रामसिहके स्वार्थ साधनको सुना था, इसी प्रकार रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी कामनाको पूर्ण करनेमे भी सम्मति प्रकाशित की।

जिस समय मेरताके युद्धक्षेत्रमे विजयसिहकी सेनाने महाराष्ट्रोकी सेनाको छिन्नभिन्न करदिया, जिस समय महाराष्ट्रोकी सेनाने अपने प्राण बचाकर भागनेका उपाय किया था, उस समय उस महाराष्ट्रनेता जय आप्पाने उक्त युवकको बुलाकर कहा, "रामसिहके भाग्यके साथ आपका भी भाग्य जड़ित है। परन्तु रामसिहका भाग्य अत्यन्त मंद देखता हूं। इस कारण अब हम यहांसे भागनेके पहले आपका और क्या उपकार करसकते है?" युवक महाराष्ट्रनेताके यह वचन सुनकर एकबार ही आशा-हीन होगया। यद्यपि वह राजनीतिमे और युद्धविद्यामे अज्ञान था तथापि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानता था कि स्वजातिका स्वभाव किस प्रकारका है, इस कारण जिस समय महाराष्ट्रनेता युद्धको भंग करनेके लिये उद्योग कररहे थे, उस समय उसने एक विचित्र उपायसे अपने मनोरथको पूर्ण करनेका सुअवसर प्राप्त किया। युवकने देखा कि यदि प्रबल राठौरोकी सेनाको किसी उपायसे भी रणसे शान्त नही करसकैगे तो किसी प्रकार सुभीता नही है, इस कारण उसने एक स्वजातीय अश्वारोहीको शत्रुओके डेरोमे अन्य मार्गसे भेजदिया।

जिस स्थानपर राठौरोकी सेना प्रबल पराक्रमके साथ युद्ध कररही थी वहां माईनोत सम्प्रदायके नेता सेनापति पद्पर थे। उक्त अश्वारोहीने वहां वड़ी तीक्ष्णतासे जाकर सामन्तको बुलाकर कहा 'अब क्यो वृथा युद्ध करतेहो, विजयसिह शत्रुओके गोली से रणभूमिके अन्य पार्श्वमे हत होगये है।" सामन्तने उस अश्वारोहीको

अपने पक्षका जानकर उसके कहनेपर विश्वासकर बिना खोजकिये रणको भंग करदिया। दावानलकी समान विजयसिंहकी मृत्युका समाचार चारोओर फैलगया। राजपूत जातिके इतिहासमे ऐसी घटनाके हजारो प्रमाण होनेपर भी वह किसी प्रकारसे किसी समय भी उसका निर्णय नही करसके। उस अश्वारोहीका वचन सत्य है अथवा मिथ्या, इस बातका किसीको भी कोई प्रमाण नही मिला और न किसीने जांचा परताल करनेकी चेष्टानकी, सभी प्राणोके भयसे चारोओरको भागनेलगे। इस समय विजयसिंहने महावीरता प्रकाश करके इस प्रकारका युद्ध कियाथा कि कई मुहूर्तमे ही उनकी विजय होनेकी सभावना थी,—परन्तु उन्होने सहसा देखा कि उनके अधीनमे स्थित समस्त सामन्त सग्रामभूमिको छोड़कर चारोओरको भाग रहे है। मारवाडके महाराज विजयसिंह जो एकलाख सेनाके साथ युद्ध कररहे थे, वह इस समय समस्त सेनासे त्यागेजाकर महाविपत्तिमे पड़गये। महाराष्ट्रोने सरलतासे जयलक्ष्मी का आलिंगन किया। मारवाड़पति विजयसिंहने जिस भावसे असहाय अवस्थामे रणक्षेत्रसे भागकर एक कृपककी सहायतासे अपने जीवनकी रक्षा की थी, उसे पाठक पहले ही पढ़चुके हैं[1]।

यदि सिंहासनसे पतित रूपनगरके महाराजके युवकपुत्र इस प्रकारसे अपनी चतुरता जालका विस्तार करके राठौरोकी सेनाको वृथा भ्रममे न डालते तो महाराष्ट्रनेताओको अवश्य ही रणक्षेत्र छोड़देना पड़ता, और रामसिंहके भाग्यमे वह युद्ध ही निर्धारित होजाता। अधिक क्या कहै, यद्यपि इस युद्धमे महाराष्ट्रगणोने अधिक चतुरता करके जय प्राप्त की, परन्तु राठौर सामन्तोने भागनेके पहले जिस भावसे वीरता प्रकाश की थी कविने उसकी अत्यन्त प्रशंसा[2] की है।

महाराष्ट्रोने धोखेवाजीसे ही युद्धमे जय प्राप्त की और राठौरोकी सेना छिन्न-भिन्न होकर चारो ओरको भागगई, रामसिंहके भाग्यका सूर्य मेघसे मुक्त होगया। एक २ करके अनेको किलोके ऊपर रामसिंहकी विजयपताका फहराने लगी। इसी समय महाराष्ट्रोके तस्कर दलने पंगपालकी समान मरुक्षेत्रमे आकर लूटमार करनी प्रारंभ करदी। परन्तु महाराष्ट्रदलके प्रधान नेता जयआप्पा सहसा शोचनीय रूपसे मारेगये, अतमे विपरीत काण्ड उपस्थित होगया[3] महाराष्ट्रगण रामसिंहकी सहायता

---

(१) प्रथमकांडके २९ अध्यायमे यह वृत्तान्त वर्णन कियागयाहै, विजयविलास नामक ग्रंथमे प्रकाशित हुआहै कि जिस जाट किसानने महाविपत्तिमे आश्रय देकर उनकी सहायता की थी विजयसिंहने उसको ५०० वीघे भूमि उसके वंशतकको भोगनेके लिये देदी, आजतक उस किसानके वंशधर उस भूमिको भोगते है।

(२) इस युद्धमे मारेहुए वीरोमे चापावत् सम्प्रदायके नेता वीरसिंह, सत्रावतके नेता लालसिंह, और कूम्पावत् सम्प्रदायके नेताने सबसे अधिक बल प्रकाश करके अपने जीवनका बलिदान किया।

(३) प्रथमकांड २९ अध्याय ९५१ पृष्ठमे इस हत्याकाण्डका वर्णन कियागयाहै। विजय विलास ग्रथसे जानाजाताहै कि जिस समय जयआपाने राठौरोके किलेको घेरलिया था, उसी युद्धमे

करनेके लिये आये थे। केवल धन प्राप्ति और मारवाड़का लूटना ही उनका प्रधान उद्देश था, परन्तु इस समय जयआप्पाके मारेजानेसे माहाराष्ट्रोने संहारमूर्ति धारणकर उस हत्याकाण्डके वदला लेनेका पूरा विचार करलिया। वे लोग रामसिहके स्वार्थको छोड़कर इस समय अपने स्वार्थसाधनके कार्य करने लगे। प्रवल युद्ध और वादानुवादके पीछे जयआप्पाके प्राणनाशके दंडस्वरूपमे विजयसिहने अजमेरको एक वार ही महाराष्ट्रोके करकमलमे समर्पण करदिया, और मारवाड़की खास भूमि और सामन्तोकी अधिकारी भूमिके ऊपर त्रैवार्षिक कर देनेके लिये वह राजी हुए। महाराष्ट्रगण उस हानिको पूर्ण करनेकेलिये रामसिहका पक्ष छोड़कर अजमेरमे अपनी अतुलशक्तिको वढ़ाने लगे।

अजमेरदेश मारवाड़के राजमुकुटका उज्वल मणिस्वरूप था, महाराष्ट्रोने जिस दिन उस मुकुटसे मणिको छीनलिया उसी दिनसे मारवाड़की स्वाधीनता चंपल होगई। महातेजस्वी अजितकी प्राणहत्याके फलस्वरूप मारवाड़ने प्रायः एक शताब्दीतक इस प्रकारसे आत्मविग्रह, विजातीय आक्रमण, तथा अनेक प्रकारके अत्याचार और पीड़ाओसे अत्यन्त कष्टसे भोगा। जिस समय रूपनगरपतिकी चतुरतासे राठौरोकी सेना रणको छोडकरके भागगई, उस समय राठौरकविने मनके दुःखसे दुःखी होकर उसका उल्लेख किया था।

याद वनेदिन आवसी, आपावाला हेल।
भागा तीनोभूपती, माल खजाना मेल॥

इसका अर्थ यह है कि समस्त धन रत्न और युद्धके अस्त्रोको छोड़कर तीनोजने भूपति (विजयसिह, वीकानेरपति और कृष्णगढ़पति) जयआप्पाके[*] भयसे भयभीत होकर भागगये, यह वात चिरकालतक हमको याद आती रहैगी।

सत्य कहना होगा, अवश्य ही स्वीकार करना होगा, रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी चतुरतासे जिस युद्धमे महाराष्ट्रोने सरलतासे जय प्राप्त की थी, राठौरोकी सेनाद्वारा रणभंग हेनेसे रूपनगरपतिके युवकपुत्र आनंदितहो गर्वमे भरकर जय आप्पाके निकट जाकर वोले, "आपने देखा कि मैने इस स्थानपर खड़े होकर अपने हाथपर सरसोके वीजको वोए थे।" सरसोका वीज जैसे थोड़े समयमे वृक्ष होजाता है वैसेही अल्प समयमे यह चातुरी चलगई। जव युवकने रूपकसे यह वात

---

*—जह मनुष्य महासंकटमे पड़ा था वहा वह रोगी होगया। जय आपाको आरोग्यकरनेकेलिये महाराज विजयसिंहने अपने प्रधानवैद्य सूर्यमल्लको उसके डेरामे भेजकर उनको आरोग्य करनेके लिये कहा, राजवैद्यने कहा महाराज यदि आप कहो कि तुम जयआप्पाको जाकर विष दो तो हम यह आपकी आज्ञा नहीं मानेंगे, इसपर विजयसिह वोले, मै वह आज्ञा नहीं दूंगा। आप यथाशक्ति उनकी चिकित्सा करके उनको आरोग्य करदीजिये। चारदिनमें आराम होनाहो तो दो दिनमे आराम करो, चिकित्सक जयआपाके पास गये, यद्यपि वह शत्रुपक्षके वैद्य थे तथापि जयआपाने इनसे चिकित्सा करानेमे कुछ आपत्ति न की। और वैद्यकी दवासे वह आरोग्य भी हुए।

कही तुरन्त ही जयआपाने कृष्णगढ़पतिके हाथसे रूपनगरका उद्धार करके उस सिहासनपर उक्त युवकको वैठालनेके लिये इच्छा की तब युवकने कहा "यह करनेका प्रयोजन नही है, पहले हमारे प्रभु रामसिहका स्वार्थ साधनकर उनको जोधपुरके सिहासनपर वैठालिये तो हमारी आशा सरलतासे पूर्ण होजायगी।" परन्तु कई दिनोके पीछे जिस समय जयआपा मारेगये, उस समय महाराष्ट्रोके डेरोमे रामसिहके अधीन जितने राजपूत थे सभीके ऊपर महाराष्ट्रोको महासंदेह उपस्थित हुआ। और उक्त युवकके प्रति भी महाराष्ट्रोने सदेह प्रकाश करनेमे त्रुटि न की। जयआपाकी मृत्यु होते ही डेरोमे समस्त राजपूतोको षड्यंत्रकारी कहकर महाराष्ट्रोने सवके ऊपर आक्रमण किया। विशेषकरके मेवाड़के महाराणाके दूत रावत् कुवेरसिंह जो विजयसिह के साथ सधिवधन करानेके लिये महाराष्ट्रोके डेरोमे गयेथे, वह भी इसी कारणसे मारे गये। ताऊसरमे जयआपाकी भस्मराशिके ऊपर एक स्मृति मदिर वनायागया। महात्मा टाड् साहवने कहा है कि महाराष्ट्र और राठौर दोनो उस स्मृति मदिरके प्रति अधिक सम्मान दिखाते है।

जो हो महाराष्ट्रोके दलने राठौरोके साथ सधिवधन करके रामसिहके पक्षको छोड़दिया। रामसिहके भाग्यमे फिर दुर्दिन आगये। रामसिहने पिताका सिहासन पानेके लिये वाईस वर्षतक युद्ध किया था, परन्तु महाराष्ट्रोके छोडते ही वह शीघ्र ही असहाय अवस्थामे विजयसिहकी दयादृष्टिके अभिलाषी हुए। विजयसिहने सामरका जो अंश मारवाड़ राज्यके अधीनमे था वह अंश उनको देदिया, जयपुरके महाराजने भी दया करके सांभरके जो अश अपने अधिकारमे थे उन सवको तुरन्त ही रामसिहको दे दिया। रामसिह उस सांभरके अधिकार को पाकर अत्यन्त दीनभावसे रहनेलगे। वह युवा अवस्थामे जैसे ऊधमी, क्रोधी और तेजस्वी थे भाग्यपतनके साथ ही साथ वह उसी भाँतिसे विनयशील और नम्र होगये, उन्होने सम्वत् १७७३ मे जयपुरमे प्राण त्याग किये। कर्नल टाड् साहवने कहा है, कि रामसिहका शरीर वीरोके समान वलवान था, तथा इनकी मूर्ति सौम्य थी। वह अपराधियोके ऊपर अत्यन्त दया प्रकाश करते थे। उनकी वुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी। और उनकी मानसिक उत्कर्षता तो विशेषरूपसे दृष्टि आती थी। परन्तु एकमात्र अत्यन्त उग्रतेज और कठिन स्वभावके लिये ही यह मरुक्षेत्रके सामन्तोके अत्यन्त अप्रियपात्र होगये थे। और इसी लिये वह सिहासनसे भ्रष्ट होकर, निकाले जाकर जन्मभरतक अनेक प्रकारके कष्ट भोगते रहे। राठौरकविने विजयसिहकी अपेक्षा रामसिहको अत्यन्त साहसी और वीर कीर्तन किया है। कविने कहा है कि विजय सिह हजारो सेना साथ लेकर भी युद्धमे विजय न पासके थे। परन्तु रामसिहने वहुत थोडी सेना लेकर भी युद्धमे विजय प्राप्त की थी। कविने एक एक विषयपर रामसिहको अजितके समान वर्णन किया है। रामसिहके उग्र और तेजस्वी होनेसे

(१) ताऊसर एक साधारण गाँव नागौर परगनेके एक परगने मे है।

समस्त मारवाड़के सामन्त इनसे भयभीत रहते थे । जिन सामन्तोने मारवाड़के महाराजसे कभी भय नही किया था, वे लोग भी रामसिहके अभिषेकके पीछे अति शंकित रहे । यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि रामसिहके अभिषेकके समयसे मारवाड़के भाग्यमे घोर कालरात्रि दिखाई दी । रामसिहने ही कठिन महाराष्ट्रोके दलको मरुक्षेत्रमे लाकर मारवाड़के विध्वंसका जो वीज वोया था, इसका कहना वाहुल्यमात्र है ।

समस्त आशा भरोसेसे हीन होकर रामसिहने निर्वासित अवस्थामे जयपुरमे प्राण त्यागकिये । तव मारवाड़के महाराज विजयसिह एकवार ही निश्चिन्त होकर सुखसहित राज्यशासन करने लगे । पाठक ऐसा विचार न करै कि रामसिहकी मृत्युसे मरुक्षेत्रकी हानि लाभ कुछ भी नही हुई । रामसिहकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल शत्रु इस समय मारवाड़को विध्वंसकर चारोओर भयंकर अग्नि प्रज्वलित करके अजितके प्राणनाशका फल प्रकाश करनेलगे । महाराष्ट्रगण अजमेरपर अधिकार करके, मारवाड़से चौथका संग्रह करके और राजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे प्रबल प्रभुताका विस्तार करके एक २ देशको लूटकर धनका संग्रह करते २ मतवाले होगये । उन्होने राजपूतोमे विवादानल प्रज्ज्वलित करदी । किसी न किसी पक्षका अवलम्बन करके उन्होने अपनी आशाको सफल करलिया । इस विजातीय अत्याचारसे मारवाड़के चारोओर घोर अशान्ति छागई । उस अराजकता और स्वेच्छाचारसे प्रजा कृषिक्षेत्रके कर्षणकार्यमे नियुक्त न रहकर प्राणेके भयसे चारोओरको भागने लगी । मरुक्षेत्रके प्रत्येक सामन्त इस समय महाराज विजयसिहको अत्यन्त हीनवल और साहसहीन देखकर अपने २ अधिकारी देशोमे असीम शक्तिका विस्तार कर अपनी इच्छासे अत्याचारकी अग्निको प्रज्ज्वलित करनेलगे । उनकी इच्छासे ही अनेक स्थानोमे वाणिज्य द्रव्यके ऊपर दूना महसूल होगया और वे स्थान २ पर समस्त वाणिज्य द्रव्योको लूटने लगे । राज्यमे वाणिज्य एकवार ही वंद होगया । अपने दुर्भाग्यसे ही विजयसिह इस समय इतने हीनवल होगये, कि सामन्त उनसे कुछ भी भय नही खाते थे । यहांतक कि अपने महलमें भी विजयसिहका प्रभुत्व मानो एकवार ही प्रभाहीन होगया ।

मारवाड़के चारोओर राजपूत राज्यमे अन्य सामन्तोकी अपेक्षा मारवाड़के सामन्त स्वाधीनभावसे अधिक प्रभुत्व, शक्ति और सामर्थ्यको चलाते आये है । उनको इस सामर्थ्यके अधिकारका प्रधान कारण यह है कि उनके पूर्वपुरुषा इसी मरुक्षेत्रमे अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार करगये है । एकमात्र महाराजकी कृपासे ही वृत्तिस्वरूपमे देशोको न पाकर, उन राजवंशवालोने अनेक विस्तारित और मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोमे वहांके निवासियोको परास्त कर और भगाकर अपनी २ शासनशक्तिको स्थापित किया, इस कारण मारवाड़मे जयपुरकी अपेक्षा इनकी स्वाधीनता अधिक है । महाराज अजित जिस समय अज्ञान अवस्थामे थे उस समय सामन्तोने सव प्रकारसे स्वाधीनभावसे रहकर अजितके दृढ़पक्षको अवलम्बन किया था । मारवाडके सामन्त प्रवल सामर्थ्यवान थे, इसीसे विजयसिहके शासनके आरंभ

समयमें वह अपनी इच्छानुसार कार्य करते थे। इस समय और भी एक कारणसे सामन्तोंके साथ विजयसिंहका झगड़ा होगया। समयके गुणसे ही यह कारण उपस्थित हुआ था, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है।

पोकरणके असीम साहसी चांपावत् सम्प्रदायकी मुख्य भूमि थी। पोकरणके सामन्त पुत्रहीन अवस्थामें मरगये, वह मृत्युके पहले महाराज अजितके दूसरे पुत्र देवीसिंहको गोदलेनेके लिये अपनी स्त्रीसे कहगये थे। किस प्रकारकी रीतिसे राजवाड़ेमें दत्तक पुत्र गोद लियाजाता है, इसको हमारे पाठक भलीभाँतिसे जानते है।पोकरणके सामन्त मृत्युके समय अजितके पुत्र देवीसिंहको क्यों दत्तकरूपसे गोद लेनेके लिये कहगये, उसके सम्बन्धमें महात्मा टाड् साहबने अनुमान किया है कि अजितके अनेक पुत्र थे इस कारण उनमेंसे एकको गोद लेनेमें राजवंशका ही सुभीता होगा, जब वह राजकुमार एक देशका सामन्त होजायगा, तब सभी आनन्दसहित रहसकैंगे, यही विचारकर उन्होंने यह आज्ञा दी थी। रजवाड़ेकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार जिस समय पुत्रके गोद लेनेपर मृतक सामन्तकी पगड़ी उसके शिरपर रक्खीजाती है उसी समयसे वह अपने जन्मदाता पिताको भूलजाता है। जिस सामन्तके आसनपर स्थित होता है उसीको अपना पिता मानता है। इस कारण अजितनंदन देवीसिंह जिसदिन पोकरणके सामन्तके यहां दत्तक हुए, उसी दिनसे राजपुत्रके समस्त अधिकारोंसे रहित होनेपर उनके हृदयमें एक विचित्र वासना उत्पन्न होनेलगी। यदि देवीसिंहको पोकरणके सामन्त गोद न लेते तो वह किसी समय भी मारवाड़के सिंहासनपर बैठनेके लिये एक मुहूर्त्तको भी आशा वा चिन्ता नहीं करसकते थे, परन्तु जब उन्होंने मरुक्षेत्रके एक प्रबल सामर्थ्य-शाली सामन्तके पदको पाकर अपने पितृहन्ता दोनों भ्राता और उनके उत्तराधिकारियों को पिताके सिंहासन लेनेके लिये निरन्तर युद्ध करतेहुए देखा कि वह पिताके सिंहासनकी ओर कातर दृष्टिसे देखरहे हैं, तब उन्होंने भी राजदरबारमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार करके महाराज विजयसिंहको हस्तगत करनेकी चेष्टा की। महात्मा टाड् साबने इस स्थानपर एक विचित्र मत प्रकाश किया है, उन्होंने कहा है, "यदि मारवाड़के अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये हों, तो स्वाधीन ईडरराज्यके

---

(१) यह बात झूठी है देवीसिंह न महाराज अजितसिंहका बेटा था और न पोकरणमें दत्तक हुआ। वह पोकरणके ठाकुरका बेटा था।

(२) ईडर राज्य सियाजीके भ्राताके द्वारा अधिकृत कियागया था। पाठकोंको यह स्मरण होगा। ईडर राज मारवाड़के राजके अत्यन्त निकट जातिवाले होकर मारवाडपतिके सिंहासनपर बैठनेके अधिकारी * है।

---

* यह नोट भूलसे लिखागया है क्योंकि न तो ईडर सियाजीके भाई द्वारा प्राप्त कियागया और न सियाजीके सम्बन्धसे ईडरवाले मारवाड़पतिके सिंहासनपर बैठनेके अधिकारी है। सही बात यह है कि पहले ईडरको सियाजीके दूसरे बेटे सोनगने जीता था, परन्तु उसकी औलादसे ईडर छूटगया था, वह महाराज अभयसिंहने बादशाहसे लेकर अपने भाई आनन्दसिंहको दे दिया था, इसी निकटस्थ सम्बन्धसे आनन्दसिंहके बंशज जोधपुरका राज्य पानेके अधिकारी थे।

अधीश्वरका पुत्र मारवाड़के सिंहासनपर बैठनेका अधिकारी है। ईडरके महाराजके यदि एक भी पुत्र उत्पन्न होजाय तो वह एक पुत्र ही मारवाडके साथ ईडरराज्यमें मिलकर मारवाड़का राज्य करेगा और यदि मारवाड़के महाराजका कोई पुत्र किसी प्रकारके अपराधसे भी अपराधी न हो पर वह अन्य सामन्तके द्वारा दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण कियाजायगा, तो उसका सिंहासनके ऊपर कोई अधिकार नहीं होगा। यह नियम विचित्र है।" इस बातको हम कहसकते है कि कर्नल टाड़ साहबके मतके अनुसार दत्तकपुत्र यदि फिर जन्मदाता पिताके सत्वका अधिकारी होजाय, तो हमारे शास्त्रीय विधानके मतसे दत्तक ग्रहणकी रीति अव्याहत नहीं होसकती

चापावतके नेता देवीसिंह, मारवाड राज्यमें मारवाडपतिके ऊपर अधिकारकी रक्षा करनेके अभिलाषी होगये। 'जिससे मरुक्षेत्रके अन्य किसी सम्प्रदायके नेता उनके साथ प्रतियोगिता दिखाकर वा उनपर न्यायकी सामर्थ्य न चलासके'। चतुर देवीसिंह इसलिये आहुवाके सामन्त और चापावत् सम्प्रदायकी अन्यान्य शाखाओंको एकत्रित करके राज्यमें अतुल सामर्थ्य उपार्जन करनेलगे। राजदरबारमें प्रभुत्वके कारण देवीसिंहने अपनी सम्प्रदायमेंसे एक प्रबल बलशाली सेनाकी सृष्टि करके मारवाड़पति विजयसिंहके शरीरकी रक्षाके लिये आधी सेनाको किलेमें रक्खा और आधीको नगरमें रखदिया। इसी समयमें मारवाड़के चारोंओर अराजकता और पर्वतियोंके द्वारा प्रजाके ऊपर अत्याचार, तथा राठौरके सामन्तोंको स्वेच्छाचारी देखकर विजयसिंहने अत्यन्त व्यथित हृदयसे शोक प्रकाशित किया,-"पोकरणपति देवीसिंहने कहा, "हे महाराज! मारवाड़के लिये आप इतनी चिन्ता क्यो करते है, आप यह निश्चय जानिये कि मेरी तलवारके म्यानके भीतर ही मारवाड़का सिंहासन है"।

सामन्तोंको तथा विशेष करके देवीसिंहको प्रबल सामर्थ्य चलाते, तथा मारवाड़के चारोंओर अशान्तिका विस्तार होतेहुए देखकर राजा विजयसिंह अपने मनही मनमें महा दुःखित होनेलगे। उद्धतस्वभाव सामन्तोंका दमन और अपनी प्रबल शक्तिका विस्तार यह उनको एकमात्र कर्त्तव्य होगया, परन्तु उन्होंने ऐसा कोई उपाय न देखा कि जिससे वह इस मनोरथको सिद्ध करसकते। पाठकोंको अवश्य ही विदित होगा, कि रजवाड़के राजकुमारोंकी धात्रियोंको देशमें अधिक सम्मान और पृथ्वी तथा बहुतसा धन दियाजाता था। राजकुमार भी उस धात्रीका माताकी समान सम्मान करते थे। उस धात्रीके गर्भसे उत्पन्नहुए पुत्र राजकुमारोंके भ्राता अर्थात् धाभाई नामसे विख्यात् होते थे। इन धाभाइयोंने अवस्थाके आते ही राज्यमें ऊँचे पद पर अधिकार करलिया। महाराज विजयसिंहकी धात्रीका एक पुत्र था उसका नाम जग्गू था। इसने विजयसिंहका धाभाई होकर राज्यमें अधिक सम्मान पाया। यह जग्गू विशेष सावधान और दूरदर्शी मनुष्य था, उसने

(१) ऐसा नियम मारवाड़में नहीं है और न कभी हुआ।

विजयसिंहको भी अपने उपदेश और सलाहोंसे सावधान और दूरदर्शी करदिया। विजयसिंह जग्गूमे जिस भाँतिकी श्रद्धा करते थे, उसी प्रकारसे उसको एकमात्र अपना हितैषी जान संकटके समयमें उसीकी आज्ञाके अनुसार कार्य करते थे। विजयसिंहने जग्गूसे धीरे २ अपनी शोचनीय अवस्थाका समस्त वृत्तान्त कहदिया, यह सुनकर जग्गूने उनको भलीभाँतिसे धीरज बँधाया। चतुर जग्गूने प्रबल सामन्तमंडलीके साथ प्रगटमे मिलकर उनकी अवलम्बित नीति और कार्यमे दृढ़ समर्थन करके उन्हे धोखा दिया, कोई भी किसी प्रकारसे न जानसका कि जग्गूने उनकी शक्तिको घटानेके लिये भीतर ही भीतर कैसा कांड उपस्थित किया है। बुद्धिमान जग्गू महाराज विजयसिंहके प्रताप, प्रभुत्वका विस्तार तथा उसके साथ ही साथ सामन्तोकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये एक नवीन अनुष्ठान करनेलगा। रजवाड़ेमे जो रीति किसी समयमें भी प्रचलित नही थी, जिसका अनुष्ठान सामन्त शासन रीतिके सम्पूर्ण विपरीत था, जग्गूने उसीके अनुष्ठानसे अपने उद्देशको पूर्ण करनेका उद्योग किया।

बिना किसी प्रबल युद्धके हुए अन्य समयमे अफीमका सेवन करके राजपतलोग केवल आलस्यके वश होकर समय व्यतीत करते थे। विशेष करके राजपूतोकी जातीयशक्ति इस समय एकबार ही विपरीत होगई थी। जग्गूने स्वजातिको अत्यन्त आलसी देखकर सामन्तोके निकट यह प्रस्ताव किया, कि "राजधानी की रक्षाके लिये एक वेतनभोगी सेना रक्खीजाय, वही सब आज्ञाओका पालन करै, आप इच्छानुसार रहसकते है, तथा आपकी सेनाको वृथा कार्य करना नही होगा।" आलसी सामन्त इस बातको न समझे कि चतुर जग्गू हमारी ही सामर्थ्य की जड़मे कुल्हाड़ी मारनेके लिये नवीन सेनाके तैयार करनेको उद्यत हुआ है। सामन्तोने सरलस्वभावसे जग्गूके इस प्रस्तावमे अपनी सम्मति देदी। विशेष करके प्रकाशमे जग्गूको इस प्रकारकी रीतिसे कार्य करतेहुए देखकर सामन्तोने विचारा कि यह हमारे हितका करनेवाला है, इसीसे नवीन सेनाको तैयार करनेके लिये कहता है। जग्गूने सामन्तोको यहांतक अपने हस्तगत करलिया था कि उसने नवीन सेनाके वेतनको भी इन्हीसे लेना स्वीकार कराया। इस प्रकारसे जग्गूने अपनी कूट राजनीतिके जालका विस्तार कर सिन्धुदेशके कईसौ मनुष्योको अपनी उस नवीन सेनामे रख-लिया। मरुक्षेत्रमे राठौर शासनमे मासिक वेतनभोगी विजातीय सेनाकी यही प्रथम सृष्टि हुई थी। हम यह नही कहैगे कि राजपूत राजा अपने अधीनमे स्थित सामन्तोको सेनाके अतिरिक्त विदेशीय और किसी सेनाको नही रखते थे, रजवाड़ेके सभी राज्योमे विदेशीय राजपूत ही सेनारूपमे नियत होते आये थे, परन्तु इनको किसी समय भी मासिक वेतन नही देनी पड़ी थी, वेतनके बदलेमे उनको भूवृत्ति दीजाती थी। जग्गूने जिस नवीन सिंधी सेनाकी सृष्टि की यह सभी पैदल थी। यह पश्चिमी युद्धकी रीतिके अनुसार बहुतसी शिक्षा पाई हुई थी। महात्मा टाड् साहबने कहा है कि जिस कारणसे मारवाड़मे

इस वेतनभोगी सेनाको सृष्टि हुई थी, उदयपुर और जयपुरके दोनो अधीश्वरोंने भी उसी कारणसे इस प्रकारकी वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि की। इस वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि होनेसे समस्त राजस्थानसे सामन्त शासनकी मूल नीति एकवार ही छोड़ दीगई।

जग्गूने जिस नवीन सेनाकी सृष्टि की, उनमे राजपूत, सिन्धी अरब और रुहेले गणोके दलके दल नियत हुए। वह सेना सामन्तोके अधीनमे न रहकर मारवाड़के महाराजकी आज्ञामे रहनेलगी। मारवाड़के महाराज उन शासनसंक्रान्त राजपुरुषोकी आज्ञा पालनके लिये नियुक्त करके उन राजपुरुषोके द्वारा उस नवीन सेनादलके ऊपर आज्ञा चलानेमे प्रवृत्त हुए। थोड़े ही समयमे उस नवीन सेनाका बल ऐसा प्रवल होगया कि सामंत मण्डली उनकी उपस्थितिमे अपनी सामर्थ्य और शक्तिको लोप होताहुआ देखकर महा असंतुष्ट हो अपना अमंगल विचारनेलगी। इसी कारण उनका उस नवीन सेनादलके साथ नित्य झगड़ा होनेलगा। महात्मा टाड् साहव लिखते है, कि " जिस उद्देश्यके वश होकर विजयसिंहके शासन समयमे मारवाड़में वेतनभोगी सेना रक्खी गई थी, उसी उद्देश्यके साधनसे अर्थात् प्रवल प्रतापशाली सामन्तोको दमन करने और आवश्यकता पड़नेपर स्थान २ पर सामन्तोकी सामर्थ्यको एकबार ही लुप्त करनेके लिये मेवाड़ जैपुर और कोटा इत्यादि राज्योमे भी इसी भाँति वेतनभोगी सेनारक्खी गई थी, परन्तु एकमात्र कोटेके अतिरिक्त अन्य किसी राजपूत राज्यमे इस वेतनभोगी सेनाके द्वारा कोई उद्देश्य सिद्ध नही हुआ। एकमात्र कोटेके महाराजने ही इस वेतनभोगी शिक्षित सेनाको रखकर अपने उद्देश्यको पूर्ण करलिया। "

राजा विजयसिंहके धा भाईने सातसौ विदेशीय सैनिकोको रखलिया, और सामन्तोसे ही उनका वेतन संग्रह कर पहले उस सेनाको शासनकर्ताके अधीनमे नियुक्त रखकर शेपमे क्रम २ से वह उसको किलेकी रक्षामें रखने लगा। उस समय भी सामन्त यह न जानसके कि जग्गूने किस उद्देशको सिद्ध करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है। मारवाड़के महाराज विजयसिंह इस सेनाकी सहायतासे पुष्ट होकर अपने धाभाई और दीवान फतेचंदके साथ सलाह करके मरुक्षेत्रके चारोओर फैलीहुई भयकर अराजकता और अत्याचारको दूर करके राज्यमें शान्तिकी स्थापना करनेके लिये तैयार हुए। परन्तु महाराजका खजाना इस समय इतना खाली होगया था कि उससे शान्ति स्थापन और पहाड़ियोको दमन करनेके लिये आवश्यकता होनेपर खर्चका चलना कठिन होगया। तथापि विजयसिंहके मंगलसाधनके लिये धाभाई जग्गूने इतना यत्न किया था कि वह उस दुःसमयमे भी किसी उपायसे उस प्रयोजनीय धनको संग्रह करनेमे क्षान्त न होसके। जग्गूकी माता विजयसिंहकी धात्री थी, इसी कारण उसको वख्तसिंहके पाससे पाँचहजार रुपये मिला करते थे। जग्गूने विजयसिंहके लिये अपनी मातासे उस धनको मांगा और साथमे यह भी कहदिया कि यदि तू रुपये न देगी तो मै आत्मघात करके मरजाऊंगा। इस प्रकारका भय दिखानेपर माताने तुरन्त ही पुत्रके प्राणकी रक्षाके लिये पचासहजार

रुपये देदिये। जग्गूने उस धनको पाकर राज्यमे शान्ति स्थापन और पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये सम्पूर्ण तैयारी करदी। दुर्भाग्यका विषय है कि इस समय मारवाड़मे घोड़ोका यहाँतक लोप हुआ कि जग्गूकी नवीन सेनाके लिये बहुतसे घोडोकी आवश्यकता थी परन्तु घोड़ोका मिलना कठिन होगया तब यह सातसौ सैनिकोको गाडियोपर चढ़ाकर नागौर राज्यमे ले आया। अश्वारोही सेनादलको शकटो पर चढ़कर जाना अत्यन्त अप्रीतिकारक था। परन्तु नीतिज्ञ जग्गूकी आज्ञासे उन्होने घोडोके न मिलनेसे नागौरतक उसी सवारीपर चढकर जानेमे कुछ उजर न की। जग्गू जिस समय वेतनभोगी सेनाको नागौरमे लेगया उस.समय सामन्तोने इसका कारण पूछा, इसने उसी समय उत्तर दिया कि पहाडियोंको दमन करनेके लिये इस सेनाको लियेजाते है जग्गूके ऊपर सामन्तोका उस समय भी पूर्ण विश्वास था, इस कारण वह इसके वचनको सत्य मानकर मौन होगये। इधर जग्गूने उस सेनाको नागौरमे लाकर वहांके किलेके ऊपर जो कईसौ तोपे रक्खीहुई थीं उनको उतारकर शीघ्रतासे पहाड़ियोंको दमन करनेके लिये गमन किया। अत्याचारी पर्वती इस सेनादलसे शीघ्र ही परास्त होगये। उनको उचित दंड देकर विजयसे गर्वितहुए जग्गूने सेनासहित आ थलनगरी नामक स्थानके किलेपर धावा किया। उस किलेपर आक्रमण करते ही सामन्त समझगये कि जग्गूने इतने दिनोंतक किस प्रकारकी चातुरी जालका विस्तार करके हमारे नेत्रोंमे धूल डालकर हमारा ही सर्वनाश करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है। उस किलेपर अधिकार करते ही मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त अपनी भावी विपत्तिके लक्षण देखकर भयभीत हो अपने स्वार्थ, सामर्थ्य और शक्तिको पहलेकी समान अक्षतभावसे रखनेके लिये, जोधपुर राजधानीसे दशकोस पूर्वको, वीसलपुरनामक स्थानमे इकट्ठे हुए, और विजयसिंहके विरुद्ध सम्मति करने लगे।

सामन्त मंडलीको एकत्रित होते देखकर विजयसिंह अत्यंत भयभीत हुए। धाभाई जग्गूने जिस नीतिका अवलम्बन किया है, इससे हमारा मनोरथ पूर्ण न होगा, वरन् इसके विपरीत फल होनेके लक्षण दिखाई देरहे है, यह विचारकर वह अत्यन्त ही व्याकुल होगये, और सामन्तोके क्रोधको शांत करनेका विचार करनेलगे। खीची जातीय गोर्धननामक एक विदेशीय राजपूतवीर अपने बाहुबल तथा वीरता और नीतिज्ञतासे मृतक महाराज बख्तसिंहका परम प्रियपात्र होगया था। बख्तसिंहका वह अत्यन्त विश्वासी था। अनुगत और प्रबल बलशाली वीरको देखकर बख्तसिंह मृत्युके समय उसको विजयसिंहके अधीनमे रहनेके लिये अंतिम आज्ञा देगये थे, उस बुद्धिमान गोर्धनको बुलाकर महाराज विजयसिंहने पूछा कि इस महाविपत्तिके समय अब क्या करना उचित है? गोर्धन सामन्तोके चरित्र और उनके मनके अभिप्रायको भलीभाँतिसे जानता था, अतः वह यथार्थ राजपूतोंके समान विजयसिंहसे बोला "कि सामन्तोके हृदयमे क्रोधानलका प्रज्ज्वलित

(१) इसको विदेशीय गलत लिखा है यह मारवाड़का रहनेवाला था।

करना किसी प्रकार भी उचित नही है, उनका पदोचित सन्मान करके और न्यायमतसे सामर्थ्य देकर उनके साथ सद्भावसे रहना तथा राज्यशासन करना यही यथार्थ राजनीति है, नही तो राज्यकी भुजा स्वरूप उन सामन्तोको असन्तुष्ट कर उनकी न्यायसामर्थ्यके लोप करनेसे घोर अनिष्टकी संभावना है। आप सेनाको साथ न लेकर उन सामन्तोके समितिस्थानमे जाकर उनको मधुर वचनोसे संतुष्ट करनेकी चेष्टा कीजिये। जव यह आपके अनुगत रहैगे तव राज्यका कोई अमंगल न होसकेगा। गोर्धन विजयसिहको यह सलाह देकर महाराजको साथ ले शीघ्र ही उन क्रोधित सामन्तोके डेरोमे गये।

तरुण अरुणोदयके साथ ही साथ वीरश्रेष्ठ गोर्धन उन सामन्तोके डेरोमे जा पहुँचा। इसने शीघ्र ही उस सामन्त समितिमे जाकर कहा "आपके महाराज प्रभु विजयसिह आपकी राजभक्तिके ऊपर पूर्ण विश्वास स्थापित कर आपसे मिलनेके लिये आये है, इस कारण आप भी आगे वढकर महाराजका यथोचित सम्मान कर उनको अभिनन्दन करनेके लिये चलिये। गोर्धनके इस प्रकार विनीतभावसे वारम्वार अनुरोध करनेपर भी कोई फल दिखाई न दिया। सामन्त विजयसिहसे अधिक रुष्ट होगये थे, इस कारण उनके स्वार्थ साधनके लिये स्वभावसिद्ध राजभक्तिको प्रकाश करनेके लिये वे एक पग भी आगे न वढे। गोर्धनने कार्यमे सफलता न देखी तव अपने डेरोमे आकर सुना कि महाराज विजयसिह उसकी सलाहसे इकले आरहे है, इस कारण वह तुरन्त ही उन सामन्तोसे तिरस्कार किये हुए महाराज विजयसिहको मरुक्षेत्रके सवमे प्रधान सामन्त आहवापतिके डेरोमें लेगया तुरन्त ही और भी सव सामन्त इसके डेरोमे आये। सवके इकट्ठा होते ही महाराज विजयसिहने सबसे पहले यह प्रश्न किया, "सामन्तोने किस कारणसे हमै छोडदिया है?"

चांपावत् सम्प्रदायके नेताने तुरन्त ही उत्तर दिया कि "महाराज! हमलोग अनेक सम्प्रदायोमे है पर भिन्न २ देहधारी होकर भी हमारा मस्तक एक ही है, यदि हमारा कोई दूसरा मस्तक होता तो उसको आपके अधीनमे अर्पण करते।" इस उत्तरके पीछे वरावर तर्कवितर्क होतारहा। इस वातसे विजयसिहका अभिप्राय पूर्ण होना कठिन होगया। अतमे दीर्घ तर्कवाद और आन्दोलनके पीछे व्याकुल होकर महाराज विजयसिहने कहा, 'किस प्रकारकी व्यवस्था करनेसे सामन्तमंडली पहलेकी समान हमारी अनुगतता स्वीकार कर राज्यमे सुशासन और शान्ति स्थापन करनेमे सम्मत होसकेगी, मै इसके जाननेकी इच्छा करताहू।' राजाके इस प्रश्नपर सामन्तोने उसी समय तीन प्रस्ताव उपस्थित किये,–

१–धाभाईके अधीनमे जो वेतनभोगी सेना है उसके अस्त्र छीन लियेजॉय, तथा उसे सर्वदाके लिये विदा देनी होगी।

२–राजाको पट्टा वही हमारे हाथमे देनी होगी।

३–किलेके वदले नगरमे राजकार्य किये जॉयगे।

महाराज विजयसिहने सामन्तोके इन तीनो प्रस्तावोको सुनकर विचारा कि सामन्त

जिस भावसे उत्तेजित हुए है और सबने एक सम्मतिमे बँधकर जिस भावसे भावी अनिष्ट साधनके पूर्व आभासको प्रकाश किया है, इससे इन तीनो प्रस्तावोमे यदि अपनी सम्मति प्रगट नहीं करताहू तो अवश्य ही राज्यमे आत्मविग्रह उपस्थित होजायगा, मारवाड़ विध्वंस होजायगा, सिहासन चंचल हो उठैगा, अशान्तिका स्रोत प्रवल वेगसे वहने लगेगा। विशेष विचार करनेके पीछे महाराज विजयसिहने सबसे पहले पहल प्रस्तावके कार्यको पूरण करदिया। धाभाईके अधीनकी सेना जो प्रवल होगई थी इसीसे सामन्त अधिक क्रोधित हुए थे, इस कारण उन्होने शीघ्र ही सेनाको विदा देनेकी आज्ञादी, सामन्तोके पहले और तीसरे प्रस्तावमे महाराजको कुछ भी आश्चर्य न हुआ और न वह कुछ असंतुष्ट हुए, परन्तु दूसरे प्रस्तावसे राज्यशक्तिको घटता हुआ देखकर वह अत्यन्त ही खेदित हुए। भूवृत्तिका देना अथवा भूस्वामीके ऊपर अधिकारका चलाना राजाकी प्रधान शक्ति है, सामन्तोने उसी शक्तिकी जड़मे कुठाराघात किया है इससे विजयसिह अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु क्रोधित सामन्तोको संतुष्ट करनेके लिये अन्य उपाय न देखकर उसमे भी उन्होने अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे सामन्त मंडलीके नेता अपने स्वार्थकी रक्षा कर अपनी पूर्व सामर्थ्यको पाकर संतुष्ट चित्तसे अपने २ निवासस्थानको चलेगये, परन्तु चांपावत् सम्प्रदायके नेता अपनी सेना लेकर पहलेकी समान विजयसिह और स्वदेशके ऊपर पूर्ण सामर्थ्य चलानेके लिये अधीश्वरोके साथ राजधानी जोधपुरमे आये।

गोर्धनकी सलाहसे इस भाँति क्रोधितहुए सामन्त उद्धत भावको छोड़कर पहलेके समान चुपचाप हुए। इसके कुछदिन पीछे महाराज विजयसिहके गुरु आत्मारामको संघातिकपीड़ा उपस्थित होगई। विजयसिह अत्यन्त गुप्तभावसे मृत्युके मुखमे पतित गुरुदेवके निकट गये, गुरुदेवने मृत्युके समय विजयसिहको अभय देकर कहा, "महाराज! कुछ चिन्ता न कीजिये, मेरे प्राण त्यागनेके साथ ही साथ आपके सम्पूर्ण शत्रुओका जीवन नष्ट होजायगा"। गुरुदेवके प्राणत्याग करते ही धाभाई जग्गूने विजयसिहके निकट गुरुकी उस उक्तिके अर्थकी व्याख्या करदी। धाभाईकी इस व्याख्याको एकमात्र विजयसिहने ही जाना, और किसीने किंचित भी न पाया। इन पारत्रिक मंगलविधाता गुरुदेवके स्वर्ग चलेजानेसे महाराज विजयसिह प्रकाशमे विषम शोक प्रकाश करने लगे, और गुरुके प्रति अचल भक्ति दिखानेके लिये समस्त सामन्तोमे यह प्रचार करदिया कि, राजधानीके किलेमे गुरुदेवकी प्रतक्रिया होगी, इस आज्ञाके प्रचारित होते ही राजरानी और राजाके अन्त पुरकी अन्यान्य स्त्रिये गुरुदेवके प्रति भक्तिप्रकाश करनेका वहाना करके वहुतसी सेना और सहचरोसे युक्त हो उस किलेमे आतीहुई दिखाई दी। वह सेनादल और सहचरगण मानो उन राजवालाओके शरीरकी रक्षा करनेके लिये आये। पहले ही विजयसिहकी आज्ञासे सामन्तोके निकट आदमी भेजे गये थे। इस कारण वह भी राजगुरु आत्मारामकी मृतक आत्माके प्रति सम्मान दिखानेके लिये किलेमे आनेलगे। वह उस समय भूलसे भी यह नहीं जानसके थे कि

गुरुदेव मृत्युके समय क्या आज्ञा देगये है, धाभाई जग्गूने उस आज्ञाकी क्या व्याख्या की है और महाराज विजयसिंहने किस अभिप्रायसे किलेके भीतर गुरुके क्रिया कर्म होनेकी आज्ञा दी है, इस कारण वह लोग निर्भय होकर आनेलगे। इस शोकके समयमे नरेश्वर किसी प्रकारके चातुरीजाल तथा षड्यन्त्रका विस्तार करके सामन्तोका कोई अनिष्ट करैगे इस सम्बन्धमे कोई भी सन्देह न करसका, और यदि किसीके मनमे यह सन्देह उपस्थित भी हुआ हो तो उसे कहनेका साहस न हुआ।

यह तो हमारे पाठकोको विदित ही है कि जोधपुरका किला पर्वतोके ऊपर स्थापित था। उन पहाड़ोको खोदकर किलेपर जानेके लिये सीढ़ियां बनाई गई थी। सामन्तोमे अग्रणीय देवीसिंह अन्यान्य सामन्तोके साथ जैसे ही उन सीढ़ियोपर चढ़े कि वैसे ही सहसा उनके हृदयमे अमंगलकी चिन्ता उदय हुई। इन्होने कहा, "आज मै सुलक्षण नही देखता हूं!" पासके सभी सामन्त धीरज बँधातेहुए बोले, "आप मरुक्षेत्रके स्तभस्वरूप है, ऐसा किसमे साहस है जो आपकी ओरको आंख उठाकर देखसके ?" सामन्तमण्डलीने धीरे धीरे किलेमे प्रवेश किया। परन्तु प्रवेश करते ही उन्होने देखा कि पीछेके नक्कारेका द्वार बंद होगया, तुरन्त ही सभी एकस्वरसे भयभीत हो कह उठे, "यह विश्वासघातकता!" कुछ कालमे आहवाके सामन्तने अपनी कमरसे तलवार निकालकर राजसेनाका संहार करना प्रारभ करदिया। परन्तु राजाकी ओर की अधिक सेना थी, विशेष करके सभी सामन्त निशंकचित्तसे अपनी २ सेनासहित नही आये थे, इस युद्धमे कई एक सामन्त मारेगये, और सब धाभाईकी सेनाके द्वारा बंदी होगये। बंदी होते ही वीर सामन्त सरलतासे समझ गये कि, हमारे भाग्यमे क्या होगा। इस षड्यत्रका विस्तार करनेवाले धाभाईने विजयके गौरवसे अहंकारके वशहो उन बंदी सामन्तोसे कहा कि "आपलोग जीवनका बलिदान देनेके लिये तैयार होजाओ।" असीम साहसी राजपूतसामन्त मृत्युसे भय करना बचपनसे ही नही सीखे इस कारण वे धाभाईके वचनसे कुछ भी विचलित नही। हुए उन्होने केवल यही कहा कि "हम राजपूत है, राजाकी समान सम रक्तवाही राठौर है इस कारण हमारा अंतिम कहना यही है, कि हमारा जीवन इस वेतनभोगी सेनाकी बंदूककी गोलियोसे नष्ट न किया जाय, तलवारके द्वारा हमारा मस्तक काटकर वीरोकी समान हमारी आत्माको छुटकारा देना चाहिये।" वास्तवमे बंदी सामन्तोकी यह अभिलाषा पूर्णकी गई थी या नही, विजय विलास ग्रंथमे इसका कोई उल्लेख दृष्टि नही आता, धाभाईकी आज्ञानुसार शीघ्र ही चांपावत् सम्प्रदायके तीन प्रधान नेता, आहवाके जगतसिंह, पोकरणके देवीसिंह, हरसोलावके सामन्त, कूंपावतके नेता चद्रसिंह, चन्द्रायणके केसरीसिंह, निमाजके सामन्तकुमार, रासके सामन्त और ऊदावत् गणोके प्रधान २ नेताओका जीवन नष्ट कियागया। परन्तु

(१) उर्दू तर्जुमेमे अजीतसिंह लिखा है।

(२) गद्य इतिहासमे इनमेसे किसी भी सरदारका मारा जाना नहीं लिखा है। उसके अनुसार पोकरणका देवीसिंह महासिंहोत, आसोयका कूंपावत् चरणसिंह, रासका केसरीसिंह उदावत्—

देवीसिहकी अंतिम अवस्थाका वृत्तान्त जैसा हृदयभेदी है उसी प्रकार राजपूतवीरोचित गर्वका प्रकाशक भी है । देवीसिह महाराज अजितसिहके औरसजातपुत्र थे, इस कारण उस राजरक्तधारीको गोली अथवा तलवारसे मारनेमे किसीको भी साहस न हुआ। अंतमे एक वड़ेपात्रमे विषमिलाहुआ अफीमका पानी उनके पास भेज दिया गया और उन्हे यह आज्ञा मिली कि तुमको यह सव पानी पीकर प्राण त्यागने होगे, परन्तु देवीसिह इस आज्ञाको सुनते ही क्रोध उन्मत्तहुए सिहकी समान उस वंदी दशामे ही हुंकार करके बोले, "क्या देवीसिह इस मट्टीके पात्रमे अफीम सेवन करेगे ? मेरा सुवर्णका पात्र ला दो मै इसी समय इस सव अफीमको सेवन करके राजाकी आज्ञाका पालन करूंगा" । परन्तु वदी देवीसिहकी वह प्रार्थना पूर्ण न की गई, उन्होने तुरन्त ही अफीमके पात्रको दूर फेकदिया, और पत्थरकी दीवारपर अपने शिरको देपटका, मस्तकके चूर्ण २ होते ही उनके प्राण पयान करगये । महात्मा टाड् साहव लिखते है कि इस प्रकारसे आत्महत्या करनेके पहले देवी सिहसे एक मनुष्यने पूछा "आपकी जिस तलवारमे मारवाड़का सिहासन स्थित है वह तलवार इस समय कहां है ?" इसपर उस वीरने तुरन्त ही उत्तर दिया "इस समय वह तलवार पोकरणमे मेरे पुत्र सवलसिहकी कमरमे वँधी हुई है" ।

महाराज विजयसिह उद्धतस्वभाव सामन्तोमे सवमे प्रधान नेताओंको इस प्रकारसे संहार करके निर्विघ्नतासे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर राज्यमे शान्तिस्थापनका उद्योग करनेलगे। परन्तु धाभाई जग्गूके उपदेश और परामर्शसे ही इन सामन्तोके प्राण नाश हुएथे—जो सामन्तवंश चिरकालसे मरुक्षेत्रके लिये युद्धमे जीवनदान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाते आये है, उन्ही सामन्तवंशके प्रति इस प्रकारका हृदयभेदी आचरण करके, इससे कुछ भी संदेह नही कि, उन्होने अपने दुर्वल हृदयका परिचय दिया। यदि वह अपने पिताके समान प्रभावशाली साहसी, नीतिज्ञ और पराक्रान्त होते तो उद्धत सामन्तोको इस भावसे न मारते, और किसी उपायसे उनको दमन करके अपनी अभिलाषाको पूर्ण करसकते थे, अन्य पक्षमे हम यह भी कहसकते है कि सामन्तमंडली यदि विजयसिहको हीन-वल देखकर अपने राज्यमे अतुल शक्तिके विस्तारसे राजाकी सामर्थ्यको घटाकर तथा चारोओर इच्छानुसार अत्याचार न करती, तो कभी भी उनके भाग्यमे इस प्रकारकी शोचनीय अवस्था नही होसकती और न उनको इस वंदीभावसे प्राणत्याग करनेपडते। यद्यपि इस स्थानपर विजयसिहका धाभाई जग्गू ही इस मरु-क्षेत्रके स्तंभस्वरूप प्रधान २ सामन्तोके प्राणनाशका कारण स्वरूप कहकर निन्दित

—और नीमाजका दौलतसिंह ये चार सरदार कैद किये गए थे। इनमेसे २४ दिन पीछे देवीसिह एक महीने पीछे छत्रसिह और तीन वर्ष पीछे केसरीसिह कैदमे ही मरे और दौलतसिंहको महाराजने छोड दिया था, क्योंकि वह इन तीनोके वरावर कसूर वार नहीं था।

(१) देवीसिह अजीतसिंहका पुत्र नहीं था पोकरणके ठाकुर महासिंहका वेटा था।

होसकता है, परन्तु यदि हम विशेष विचार करके देखते हैं तो अवश्य ही हमें यह मानना होगा कि धाभाईने केवल निस्वार्थभावसे एक उद्देश साधन करनेके लिये यह नाररूपने धारण की थी। विजयसिंहको जिससे शक्ति और सामर्थ्यका विस्तार होजाय, उक्त सामन्तोंके अत्याचार जिससे दूर होजांय, राज्यमें जिससे फिर शान्ति स्थापित होजाय, जग्गूने केवल उसी लिये इस चातुरीजालका विस्तार कर विजयसिंहके राज्यके कण्टकस्वरूप सामन्तोंका जीवन समाप्त करदिया। यदि सामन्तमण्डली विजयसिंहकी राजसत्ताको लुप्त करनेमें अग्रसर न होती, यदि राज्यमें अन्यायके अतिरिक्त आधिपत्यके विस्तारमें यत्न न करते, तो जग्गूके द्वारा यह शोचनीय अनुष्ठान अवश्य ही तीक्ष्ण समालोचनाके योग्य होजाता। धाभाई जग्गूने इस स्थानपर अन्य उपायके अभावसे ही एकमात्र निःस्वार्थभावसे जब कि इस कार्यका अनुष्ठान किया, तब उसको पूर्ण अपराधी मानना ठीक नहीं है। इस प्रकारसे राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये विलायत वासियोंमें केवल सामन्तोंका ही क्यो वरन राजाओंके जीवनका भी नाश होजाता था, यह इतिहास कुछ पाठकोंसे छिपा नहीं है। परन्तु हम यह भी अवश्य कह सकते हैं कि विजयसिंह यदि अपने पिताकी समान सभी गुणोंसे विभूषित होते तो कभी भी इनको इस प्रकारके उपायसे उद्देश पूर्ण नहीं करना पडता। विजयसिंह युवा अवस्थामें अत्यन्त हीनबल होगये थे, इसी कारण देवीसिंह इत्यादि सामन्तगण इस प्रकारसे मस्तक उठानेमें समर्थ हुए।

देवीसिंहने इस शोचनीय रूपसे प्राण त्याग किये। बड़ी शीघ्रतासे यह समाचार पोकरणमें उनके पुत्र सबलसिंहके कानमें पहुचा। सबलसिंह अपने पिताकी समान महातेजस्वी और वीर थे। विजयसिंहने इनके पिताको चातुरीजालमें बाँधकर उनके प्राण लिये हैं यह सुनते ही मानो उसके शरीरसे आगकी चिनगारियां निकलनेलगीं। वह किंचित् भी विलम्ब न करके पोकरणके सम्पूर्ण वीरोंको अपने साथ ले अपने पितृहन्ता विजयसिंहको उचित फल देनेके लिये रुद्रमूर्त्तिसे चला। सबलसिंहने सबसे पहले रजवाडेके अन्यतर वाणिज्यप्रधान पालीनगरको लूटकर उसको अग्निद्वारा भस्म करदिया[1]। परन्तु इससे उनका वह मनोरथ पूर्ण न हुआ। वह तुरन्त ही क्रोधित हुए केसरीकी समान लूनी नदीके निकट प्रसिद्ध समृद्धिशाली वाणिज्यस्थल बीलाड़ापर भी आक्रमण करनेके लिये आगे बढे। परन्तु इस स्थानपर भी उनकी वह कामना पूर्ण न हुई, वरन् उनको इसका विपरीत फल मिला। बीलाडा नगरके प्राकारको उल्लंघन करनेकी चेष्टा करते ही प्रज्वलित गोलेके आघातसे उसने इस संसारको त्यागकिया। दूसरे दिन इसकी देह उस लूनी नदीके किनारे भस्म कीगई।

विजय विलास ग्रंथसे जानाजाता है कि उन सामन्तोंके प्राणत्याग करनेके पीछे मारवाडके भाग्यका चक्र मानो फिर बदलगया। सामन्तोंके अन्यायके अतिरिक्त शक्ति चलानेकी इच्छाके दूर होते ही सरलतासे अराजकता निवृत्ति हो, फिर वाणिज्यस्रोतकी

(१) उर्दू तर्जुमेमें लिखा है कि पाली लूटनेका इरादा किया था, परन्तु पूरा नहीं हुआ।

वृद्धि प्रजा साधारणकी दैन्य अवस्था धीरे २ वदलनेलगी। राठौरकविने लिखा है कि "प्रजाके निर्भय शांति संभोग करनेसे शेर वकरी एक वाटपर जल पीनेलगे।" कविकी इस उक्तिसे भलीभॉति जानाजाता है कि सव सामन्तोने उद्धत आचरणसे उनकी राजशक्तिकी तीक्ष्णताका साधन किया था, उनके अविद्यमान रहनेपर वह स्वच्छन्दता-पूर्वक फिर राज्यमे शांतिस्थापन करनेके लिये समर्थ हुए। यद्यपि राजाविजयसिह उद्धत सामन्तोके प्राण संहार करके साधारण सामंतश्रेणीके विरागभाजन हुए थे, परन्तु उन्होने फिर अपनी सामर्थ्य पाकर तथा वरावर २ कईएक प्रयोजनीय युद्धोमे उन सामन्तोको रखकर अत्यन्त ही अल्प समयमे उनके हृदयमे स्वभावसिद्ध राजभक्तिको प्रवल करदिया। राजा पहलेकी समान उनके प्रियपात्र होगये, विजयसिहकी अवस्था अत्यंत अल्प थी, इसीसे असीम साहसी महावीर सामंतोने उनकी सामर्थ्यको घटाकर अपने प्रभुत्वको वढ़ानेका यत्न किया था। परन्तु अवस्थाकी वृद्धिके साथ ही साथ विजयसिहके चरित्र भी वदलने लगे। उन्होने अपने पिताकी समान फिर राजनैतिक क्षेत्रमे प्रशंशनीय अभिनय आरंभ करदिया। उनके वल विक्रमकी पूर्ण मूर्तिने तीक्ष्ण किरणजालका विस्तार करना आरंभकिया। विजयसिहने निष्कंटक होकर सामन्त और सेनाके साथ शीघ्र ही मरुक्षेत्रके अत्याचारी दस्युस्वरूप खोसा और सराईजातिके विरुद्ध युद्धके लिये पयान किया। इन दोनो जातियोके दमनसे सिन्धुदेशके नाममात्र अधीश्वरोके साथ भी उनका महासंग्राम हुआ। परन्तु विजयसिहने उस युद्धमे सम्पूर्ण जय प्राप्त करके सिन्धुदेशके द्वारस्वरूप विख्यात् अमरकोटके किलेपर अधिकार करलिया। यह अमरकोट मारवाड़राज्यकी शेप सीमारूपसे परिणतहुआ।

मारवाड़पति विजयसिहका भाग्य इस समय अत्यन्त प्रसन्न होगया। उनके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा इस समय चारोओर गुंजारने लगी। उन्होने विजय दर्पित हृदयसे उस विजयी सेनादलके साथ शीघ्र ही मारवाडकी सीमाका जो अंश जेसलमेर राज्यमे था, उस अशको वाहुवलसे मारवाड़के अधिकारमे करलिया। विजयसिह केवल यही करके शान्त न हुए उन्होने समृद्धिशाली गोड़वाड़राज्य मेवाड़ेश्वर राणाके हाथसे छीनकर अपने अधिकारमे कर गौरवको अधिक वढालिया, मरुक्षेत्रके अधीनमे यह मुख्य भूमि है, कर्नल टाड् साहव लिखते है कि यह गोड़वाड़देश सव मारवाड़के समान मूल्य युक्त था। राठोर जातिके मरुक्षेत्रसे प्रादुर्भावके पहले मेवाड़के अधीश्वरने मडोरमे प्राचीन अधिपतिके हाथसे इस देशको छीन लियाथा। उसी समयसे पॉच शताब्दीतक यह गोड़वाड़ मेवाडके अधीनसे शासित होता आया था, परन्तु मेवाड़पति राणा आत्मविग्रहके समय इस गोड़वाड़ देशको विजयसिहके देनेके लिये वाध्य होगये और उनको यह देश दे दिया। तभीसे यह देश मारवाडपतिके अधिकारमे हुआ है, इसके ऊपर मेवाड़ेश्वरका और कोई अधिकार नही है"।

विजयसिह अपने पिताके स्वर्गवासी होनेके पीछे जिस भांति रामसिहके साथ युद्धसे लिप्त और परास्त होकर महाराष्ट्रोको अजमेर देश तथा चौथ कर देनेमे सम्मत

हुए, इसीसे वह एकवार ही हतवीर्य और लुप्त तेज होगये थे, उसी प्रकार देवीसिंह इत्यादि उद्धतस्वभाव सामन्तोंके इच्छानुसार उत्पीड़नसे वह अपनी राजशासन शक्तिके चलानेमें एकवार ही असमर्थ होगये, परन्तु उन देवीसिंह इत्यादिको चतुरतासे वंदी करने और मारडालनेके पीछे विजयसिंहने पुनर्वार अपने सामन्तोंकी सहायता पाकर कई एक युद्धोंमें जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर अपने लुप्ततेजको पुनरुद्धार करके विशेष शूरवीरता प्रकाश कर कई वर्षोंतक मारवाड़का सुख शान्ति रूपी सौरभ प्रकाश करदिया। मारवाड़के दुर्दिन मानो एकवार ही दूर होगये, परन्तु विजयसिंहको शीघ्र ही फिर राजनैतिक रंगभूमिमें प्रवल युद्धक्षेत्र अवतीर्ण होगया। यद्यपि विजयसिंहने अपने राज्यमें शान्तिस्थापन कर अपने गौरवको वढ़ाया था, परन्तु इस समय महाराष्ट्रोंके कवलसे अजमेरराज्यको पुनर्वार अपने अधिकारमें करने तथा उनके करसे अपनेको छुड़ानेमें वे समर्थ न हुए।

महाराष्ट्रलोग इस समय अत्यन्त वलवान् होकर भारतके प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार, उत्पीड़न, और लूट मार करके आर्यक्षेत्रको एकवार ही विध्वंश करके उसे रमण करनेके लिये उद्यत हुए। वह इस समय इतने शक्तिशाली थे कि भारतके प्रत्येक राजा प्रजाके भयके कारण स्वरूप होगये। प्रत्येक जन उनके भयसे धन प्राणकी रक्षाके लिये अत्यन्त व्याकुल होगये थे। भारतके प्रत्येक प्रान्त पर अधिकार करके नवीन राज्यकी प्रतिष्टा वा प्रवल प्रतापशाली सम्राट् स्वरूपसे प्रत्येक राजाको अधीनता की जंजीरमें वाँध कर समस्त शासन शक्तिमें हीन मुगल वादशाहके आसनपर वैठने की उनको कुछ भी इच्छा नहीं थी। केवल तस्करदलका संहार मूर्तिसे प्रत्येक देशको विध्वंस कर समस्त धनरत्नोंको लूटनेका ही उनका अभिप्राय था। मनुष्योंका सर्वनाश कर दस्युवृत्तिको चरितार्थ करनेमें वह पहलेसे भी आग्रहके साथ अग्रसर हुए इसीसे उन्होंने सव प्रकारका सुवीता पाकर भी दिल्लीके नाममात्रके वादशाहके आसन पर अधिकार नहीं किया। वह यदि अन्य जातिकी समान अधिकारका विस्तार करके सुशासनका आश्रय लेते, तो निश्चय ही उस समय भारतमें महा शक्तिका संग्रह कर अपने अधिकारका विस्तार कर सकते थे। दिल्लीके वादशाह उस प्रवल प्रताप-शाली औरंगजेवके आसन पर विराजमान होकर भी इस समय कुछ भी सामर्थ्य वा शक्तिमान् नहीं थे। वह नाममात्रके वादशाह थे, दूसरी ओर भारतके प्रवल प्रतापशाली देशीय राजा भी इस समय बहुकालव्यापी आत्मविग्रहसे जातीय युद्धोंमें लिप्त होकर विजातीय यवन सम्राटकी स्वेच्छाचारिताके मुखमें विदलित हो समस्त जातीय श्रेष्ठ गुणोंसे रहित होगये थे। इस समय महाराष्ट्रोंमें किसी शिक्षित और वीर नेताने भी जन्म नहीं लिया, नहीं तो वह सरलतासे भारतका राजमुकुट अपने मस्तक पर धारण कर सकते थे। विशेष करके महाराष्ट्रोंके दलमें फिर भिन्न २ सम्प्रदायों की सृष्टि होनेके कारण एकताके अभावसे उनको उस महान् शक्तिका अभिलाषित फल प्राप्त न हुआ। महाराष्ट्रोंने इस समय प्रवलरूपसे मस्तक उठाकर, रजवाड़ोंमें फिर

घोर अत्याचार करना प्रारंभ कर दिया, तब समस्त राजपूत राजा इनको दमन करनेके निमित्त मिलकर सम्मति करने लगे। यवन बादशाहके हाथसे जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये इन राजाओके पूर्व पुरुष जिस प्रकार एक २ समय एक साथ मिलकर महायुद्धमे लिप्त हुए थे, इस समय आर्यरक्तधारी, आर्य धर्मावलम्वी इस दस्युसम्प्रदायके विरुद्ध भी उसी प्रकारसे इकट्ठे होकर वे अपने राजनैतिक सत्वकी रक्षाके लिये विशेप यत्न करने लगे।

इस समय जयपुरके राजसिहासन पर महाराज प्रतापसिह विराजमान थे। प्रतापसिह जैसे तेजस्वी वीर थे, वैसे ही असीम साहसी, प्रतिभाशाली और उद्यमशील भी थे। उन्होने महाराष्ट्रोको प्रवलतासे राजवाड़ेके प्रत्येक राज्यका सर्वनाश करनेमे उद्यत देखकर सम्वत् १८४३ मे सन् १७८७ ई० मारवाड़पति विजयसिहके पास यह प्रस्ताव एक दूतके हाथसे भेजा कि "महाराष्ट्र गण जिस प्रकारसे सर्वसाधारणके ऊपर घोर अत्याचार कर रहे है इससे उनको एकवार ही दमन करना हमारा परम कर्त्तव्य है, और इन शत्रुओको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजाओको एक साथ मिलकर महाराष्ट्रोको परास्त करके निश्चिन्त होना उचित है। मैने स्वय युद्धभूमिमे जाकर महाराष्ट्रोको उचित फल देनेकी इच्छा की है, इस कारण यदि आप इस समय राठौरोकी सेनाको सहायताके लिये भेज देगे, तो सरलतासे हम अपने जातीय शत्रुओका गर्व दूरकर एकवार ही रजवाड़ेको निष्कंटक करदेगे।" महाराज विजयसिह अत्यन्त सकट और असहाय अवस्थामे पडकर महाराष्ट्रनेताके साथ संधि करके मारवाड़के राजमुकट उज्ज्वल मणिस्वरूप अजमेरको महाराष्ट्रनेताको समर्पण कर चौथ देनेके लिये राजी होगये थे। इस समय उन्ही महाराष्ट्रोको उचित फल देनेके साथ अजमेर पर पुनः अधिकार और चौथसे छुटकारा पानेकी आशा देखकर प्रसन्न हो उन्होने वीर विक्रमी राठौरोकी सेनाको प्रतापसिहकी सहायता करनेके लिये तुरन्त ही भेजदिया। एक समय जयपुरके महाराज ईश्वरीसिहकी स्त्रीने यद्यपि विजयसिहके पिताका प्राणनाश किया था, यद्यपि वही ईश्वरीसिह एक समय उन विजयसिहको वदी करके उनका जीवन नष्ट करनेको सन्नद्ध हुये थे। परन्तु विजयसिह उन सब बातोको भूलकर जातीय शत्रुओका नाश करनेके लिये सेना भेजकर भी निश्चिन्त न हुए। वियारके महावीर सामन्त जवान दास राठौरोकी सेनाके नेतास्वरूपसे तुरन्त ही जयपुरकी सेनाके साथ आ मिले, इनके आते ही तुंगानामक स्थानमे महाराष्ट्रोकी सेनाके साथ राजपूतोकी सेनाका भयकर युद्ध होनेलगा। इस युद्धभूमिमे जयपुरकी सेनाकी अपेक्षा राठौरोकी सेना अधिक वलशाली थी, महाराष्ट्रोकी सेना फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा शिक्षा पाई हुई थी। तथापि वह किसी प्रकारसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ न हुई। विख्यात् वीर जवानदासने उस

---

(१) प्रथमकाड २९ अध्याय, ९४० पृष्ठ देखो।

(२) प्रथम काड, २९ अध्यायका ९४८ पृष्ठ देखो।

उत्तेजित राठौरोकी सेनाको महाराष्ट्रीय गोलन्दाज–दलके ऊपर चलाकर उसी मुहूर्त्तमे उनको विध्वस करदिया। महाराष्ट्रनेता सिन्धिया सम्मिलित राठौरोकी सेनाके निकट एकवार ही परास्त होगये, और युद्धके समस्त द्रव्योको रणभूमिमे छोड़कर प्राणोके भयसे भाग गये। कठिन अत्याचारी सिन्धियाकी सेना सम्मिलित राजपूत सेनाके निकट परास्त होकर प्राणोके भयसे भाग गई, उसी समय विजयी राठौर दलके नेता रियांके सामन्त जवानदासने शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके कराल कवलसे अजमेरपर फिर अपना अधिकार करके वहां मारवाड़के महाराज विजयसिहकी विजयपताका स्थापित कर दी।

मारवाड़ राज्यमुकुटका उज्ज्वल मणिस्वरूप अजमेरराज्य फिर मारवाड़पतिके हस्तगत होगया, महाराष्ट्र नेताके साथ विजयसिहका जो सधिबंधन होगया था, अथवा उन्होंने जो कर देना स्वीकार किया था उन्होने उस सधिपत्रको रहित करदिया, तथा वह कर भी बन्द करदिया। महाराज विजयसिह फिर सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करनेलगे। महाराष्ट्रोंके दलको एकवार ही परास्त कर उनकी सम्पूर्ण शक्तियोको खड २ करदिया, राठौरोकी सेनाने भारतवर्षमे ऊँची प्रशंसाको संग्रह कर मारवाड़मे फिर शांति स्थापित कर दी।

तुंगाके युद्धमें महाराष्ट्रनेता माधोजी सिन्धियाने एकवार ही परास्त होकर उस बचीहुई सेनाके साथ भागकर अपने भाग्यमें घोर कलकका टीका लगाया था, परन्तु उनका हृदय वदला लेनेके लिये भयंकर रूपसे प्रवल होगया। कूटबुद्धि माधोजीने एकवार ही अधीर न होकर अपने अधीन फरासीसी सेनापति डिवइनिकी सम्मतिसे फिर एक नई सेना तैयार करके उनको पश्चिमी युद्ध विद्याकी शिक्षा देनी प्रारंभ की। माधोजी भलीभाँतिसे जानता था कि राजपूतोकी सेनाका दल एकसाथ मिलकर भलीभाँतिसे युद्ध प्रारंभ करेगा, तव महाराष्ट्रोंकी सेना किसी प्रकारसे भी जय प्राप्त नही करसकेगी। इस कारण माधोजी चिर–वीर–व्रतावलम्बी असीम साहसी राजपूत अश्वारोहीकी समान सुशिक्षित अश्वारोही सेनाकी ओर भलीभाँतिसे ध्यान देनेलगा। क्रमानुसार चार वर्षतक उस सेनाको भलीभाँतिसे शिक्षा दी। अंतमे तुंगाके युद्धके उस महाकलंकको दूर करनेके लिये राठौरोसे वदला लेनेके लिये तथा रजवाड़ेको विध्वंस करनेके लिये माधोजी सिन्धिया और डिवाइन प्रावृट संगममे उत्ताल तरंग मालामय जलधिकी समान भयंकर गर्जन करती हुई, चारोओरको विध्वंश करती हुई सेनाके साथ आगे बढ़े। माधोजी इस प्रकार अधिक सेना साथ लेकर आते हुए दिखाई दिये कि राजवाड़ेमे वहुत दिन पीछे इस प्रकारकी अगणित सेना रणभूमिमे कभी नही आई थी। माधोजीके आगमनका समाचार सुनते ही महाराज विजयसिहने फिर जयपुरके महाराजके यहां एक दूत भेजा, और कहला भेजा कि पहलेकी समान इस समय भी हमारी सहायताके लिये अपनी सेना भेज दो। जयपुरके महाराजने विचारा कि उनके कहनेसे विजयसिहने जब तुंगाके युद्धमे राठौरोकी सेनाको भेज दिया था, तब इस समय

(१) इस युद्धका वृत्तान्त प्रथम कांडके ३० अध्यायके ९५६ पृष्ठमे वर्णन किया गया है।

वर्तमान युद्धमे जयपुरकी सेनाका भेजना अवश्य ही संगत है। विशेष करके महाराष्ट्र यदि पहलेकी समान फिर प्रबल होगये तो जयपुरके भी अधिक अनिष्ट होनेकी संभावना है, इस कारण इस युद्धमे महाराष्ट्रोंको पहलेकी समान किसी प्रकारसे व्यर्थ मनोरथ करना उचित ही है। यह विचार जयपुरके महाराजने शीघ्र ही बहुतसी सेना भेज दी। साम्मिलित राजपूतोंकी सेना पहलेकी समान एकताके सूत्रमे शोभायमान होकर जय शब्दसे रजवाड़ेको प्रतिध्वनित करती हुई शत्रुओंका संहार करनेके लिये आगे बढ़ी। परन्तु इस समय रजवाड़ेका भाग्य अत्यन्त ही मंद होगया था, इस कारण युद्धके पहले अति सामान्य कारणसे राठौर और जयपुरकी सेनामे कुछ झगड़ा होगया। पाटन नामक स्थानके युद्धमे केवल राठौरोंकी सेन महावीरता प्रकाश करके महाराष्ट्रोंकी अधिक सेनाके होनेसे अंतमे परास्त होगई। महाराज विजयसिह राजधानीके ही भीतर थे जब उन्होंने उस परास्त हुई सेनाके मुखसे जयपुरकी सेनाकी विश्वासघातकताका समाचार सुना तब वह जयपुरकी सेनाके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। अंतमे बहुतसे तर्कवितर्क करनेके पीछे महाराष्ट्रोंको फिर रणभूमिमे बुलाकर उन्होंने अपने पराक्रमके दिखानेका निश्चय कर लिया। सम्वत् १८४३ मे सन् १७९१ ईसवीमे मेरतामे फिर एक भयंकर युद्ध हुआ। यद्यपि राठौरोंकी सेनाने इस संग्रामभूमिमे पहलेकी समान अकथनीय वीरता प्रकाश की तथापि वह इस समय जयलक्ष्मीका आलिगन न कर सके। विजयी महाराष्ट्रनेताने बदला लेनेके लिये साठ लाख रुपये दंडमे महाराज विजयसिहको देनेके लिये आज्ञा दी। परास्त हुए विजयसिहने कुछ उपाय न देख कर शीघ्र ही रुपया देना स्वीकार कर लिया। मारवाड़का खजाना इस समय एकबार ही खाली होगया था। साठ लाख रुपया इकट्ठा एक ही साथ देना इस समय असंभव होगया, परन्तु दुराचारी महाराष्ट्रोंने कुछ भी रुपया कम न किया। अंतमे सारी प्रजाकी धनसम्पत्ति लूट ली। जब इससे भी धनकी पूर्ति न हुई तब उन्होंने प्रधान २ सामन्तों और प्रजाको बंदी करके उनके घरकी वस्तुओंका बेचना प्रारंभ किया। विजयी माधोजीने मानो कालान्तक कालकी समान मारवाड़में जाकर अपने सेवकोंको मारवाड़के विध्वंस करनेकी आज्ञा दी। मारवाड़के घर २ मे हाहाकार मच गया—चारोओर भयंकर रोनेका शब्द सुनाई देने लगा। सती स्त्रियोंका हृदयभेदी चीत्कार। बालकोंके अन्तिम रोनेकी ध्वनि—प्रजाकी कातरताने मानो मारवाड़को नरकका कुंड कर दिया। परन्तु दुष्ट माधोजीका हृदय कुछ भी विचलित न हुआ। उसके सेवकोंने मारवाडकी समस्त धनसम्पत्ति लूट ली।

माधोजी सिन्धियाने मारवाड़मे जानेके पहले ही अजमेर राज्यपर फिर अपना अधिकार करलिया था, जिस समय फरासीसी सेनापति डिवाइनने अजमेरमे

(१) प्रथम कांड ३० अध्याय ९५९ पृष्ठको देखो।
(२) प्रथम कांडके, ३० अध्यायके ९६० पृष्ठको देखो।

प्रवेश किया था, उस समय अजमेरके शासनकर्ता दुमराजने विजातीय सेनाके हाथमे अजमेरको लौटादेनेमे कलंक संचयकी अपेक्षा आत्महत्या करना ठीक जान, उसने अफीम खाकर प्राण त्याग दिये । इसी समयसे अजमेर चिरकालके लिये मारवाडसे अलग होगया। समय आते ही महाराष्ट्रोंके हाथसे अंग्रेजी सेनाने इस अजमेर पर अधिकार कर लिया, और आजतक इस अजमेरके किलेपर अंग्रेजोकी पताका उड रही है ।

मेरताके रणक्षेत्रमे महाराष्ट्रोंके तस्करदलके द्वारा विजयसिहकी पराजयके पीछे मारवाड़के सौभाग्यके सूर्यने मानो चिरकालके लिये अस्ताचलका आश्रय लिया-घोर कालरात्रिने आकर शीघ्र ही मारवाड़ पर अधिकार करलिया । मारवाड मानो स्मशानकी समान होगई। नष्ट गौरव, हतवीर्य, विजयसिह मानो निर्वाणोन्मुख दीपशिखाकी समान स्तम्भित तेजसे मरुक्षेत्रका शासन करने लगे । परन्तु अवस्थावृद्धिके साथ ही साथ उन्होने और एक विचित्र अभिनय आरंभ कर दिया । इसीसे मारवाडके भावी सर्वनाशका बीज बोया गया। विजयसिहके जीवनकी शेप दशाका बल विक्रम-राजपूतस्वभाव सुलभ साहस, शूरता मानो विस्मृतिके जलमे डालकर कन्दर्पके प्रिय उपासक होगये। ओसवाल जातिकी एक सुन्दरी युवतीके प्रेममे वह अत्यन्त मोहित होगये थे-वह एकवार ही हतज्ञान होकर अपने हाथसे अपने पैतृक राज्यके नाशका कारण संचय करने लगे । विजयसिह युवतीके प्रेममे इतने मोहित होगये थे कि जो पटरानी ऊँचे सम्मानकी अधिकारिणी थी उन्होने उस विलासनीको उस सम्मानका भागी किया[1] प्रकाशमे इस चतुरा ललनाने विजयसिहको अपने रूपयौवनके बलसे मानो मोल लियेहुए दासकी समान अपना अनुगत करलिया था । कर्नल टाड् साहब लिखते है "कि इस युवतीने विजयसिंह पर इतना अधिकार करलिया था-कि वह उसके प्रेममे इतने व्याकुल थे कि वह युवती मारवाड़पति विजयसिंहको बारम्बार पादुकासे प्रहार करती थी और महाराज फिर उसकी शरण लेते थे[2] विजयसिह इस कामिनीके कालकूटमय प्रेममे मोहित होकर चेतनाहीन होगये; और उस पादुकाके प्रहारसे वह कुछ भी अपना अपमान नहीं जानते थे, वरन् वह उस चंद्रमुखीकी प्रत्येक आज्ञाके पालन करनेमे अपनेको विशेप चरितार्थ मानते थे । विजयसिहकी इस कन्दर्पसेवा और विलासिताके कारण मारवाड़के चारोओर फिर घोर अराजकताने आकर दर्शन दिया ।

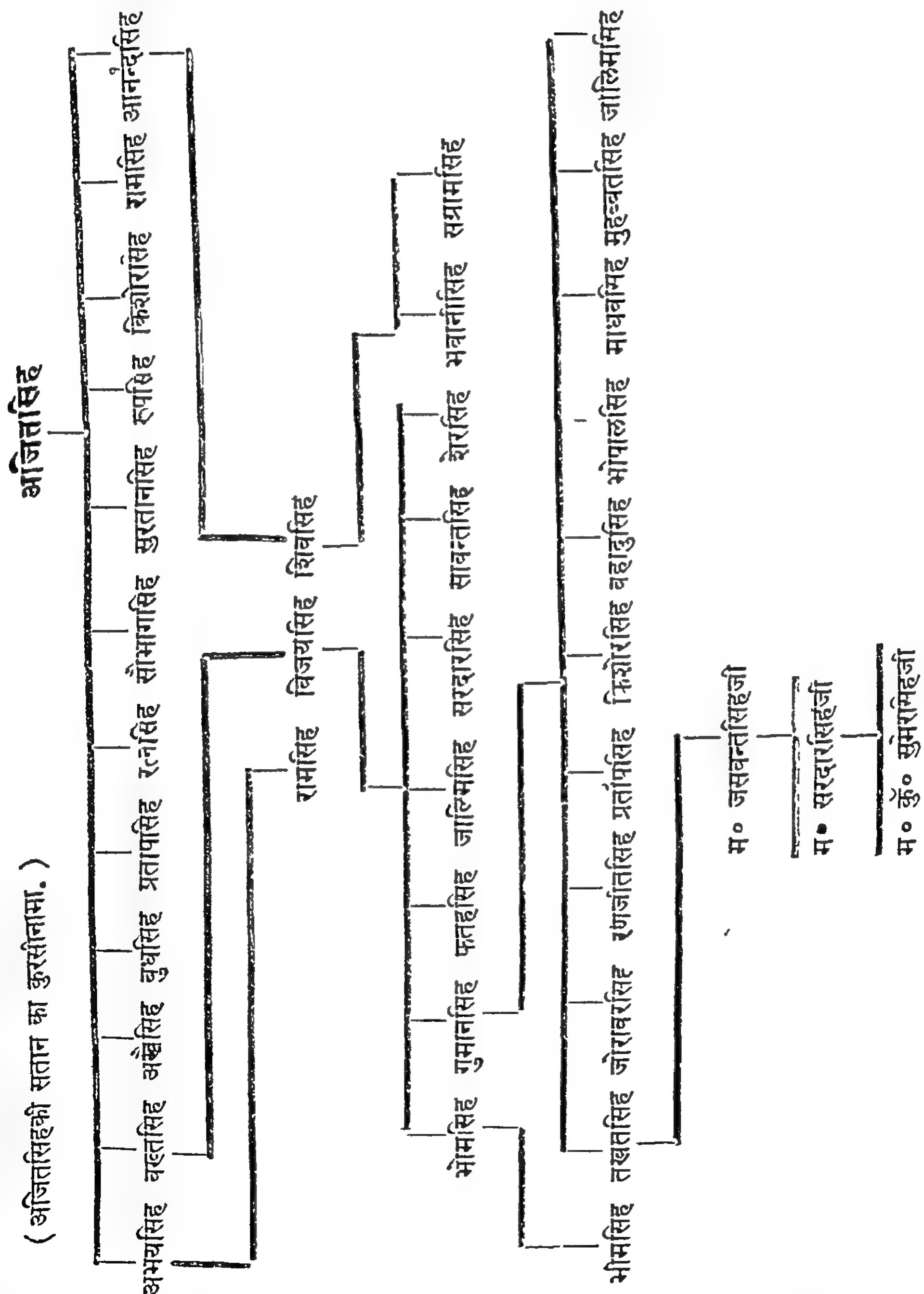
उस युवतीने विजयसिहको अपना दास बनाकर राज्यमे अपनी प्रबल सामर्थ्यका चलाना प्रारंभ करदिया । यद्यपि यह स्त्री विजातीय थी तथापि विजयसिहके निकट उसने यह प्रस्ताव किया कि आपके पुत्रको कभी राजसिहासन नही मिल सकैगा, मै एक पुत्र गोद लूंगी, और वही पुत्र आपके भविष्य उत्तराधिकारी

---

(१) जाटजातिकी थी ।

(२) परंतु ऐसा तो कभी सुननेमे नहीं आया, बल्कि लोग उसकी धर्म निष्ठा और उदारता की अबतक तारीफ़ करते ह । उसने मारवाड़मे वैष्णवधर्मको बहुत पुष्ट किया था । उसके बनाये हुए अच्छे अच्छे मन्दिर महल बाग हाट और तालाब जोधपुरमे विद्यमान हैं । इसका नाम गुलाबराय था ।

रूपसे राज्यमे रहेगा । विजयसिहने युवतीके इस प्रस्तावमे कुछ भी आपत्ति न की। मारवाडमे भावी [अनिष्टका बीज बोनेके लिये उसी] समय उसमे अपनी सम्मति प्रकाश की । जो चिर प्रचलित रीतिके अनुसार मारवाड़के सिंहासन पर उत्तराधिकारी नियुक्त होते आये थे, विजयसिहने इस युवतीके मतसे उस रीतिकी जडमे भयंकर कुठाराघात किया । पाठक गणोको इस होनेवाली घटनाके पहले उस समयके मारवाड़राजवंशकी कारिका पाठ करना उचित जानकर हम उसे यहां लिखते है ।



पशु प्रवृत्तिक क्रीतदास विजयसिंहने उस पासवानी स्त्रीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये जिस पौत्र मानसिंह (गुमानसिंहके पुत्र) को दत्तक स्वरूपसे ग्रहण किया था, उसी मानसिंहको उन्होने उक्त कामिनीकी गोदमे डालकर उसको युवतीका दत्तक पुत्र तथा अपना भविष्य उत्तराधिकारी कहकर घोषणा कर दी, मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोको बुलाकर और उक्त मानसिंहको उनका भविष्य प्रभु कहकर उन्हे नजर देनेके लिये आज्ञा दी। सामन्तोने राजाकी इस आज्ञासे अत्यन्त ही क्रोधित होकर कहा, कि हम दासीके पुत्रको अपना भविष्य प्रभु कदापि नही मानसकते। अज्ञानी विजयसिंहने कुछ उपाय न देखकर शीघ्र ही मानसिंहको शास्त्रकी रीतिके अनुसार दत्तक पुत्ररूपसे ग्रहण कर अपने औरसजात पुत्रको सिंहासनके अधिकारसे एकवार ही वञ्चित करदिया। युवतीने अपनी कामनाको पूर्ण हुआ देखकर प्रसन्नचित्त हो दत्तककुमार मानसिंहको जालौरके किलेमे विद्या पढनेके लिये भेज दिया, किन्तु इसके पीछे शेरसिंह (जिन्होने पहले मानसिंहको दत्तक-स्वरूपसे ग्रहण किया था) की प्रभुताके अधीनमे मानसिंह उन्हीके अनुगत हुए, परन्तु उक्त युवतीने मानसिंहको फिर अपने यहां बुलाकर अपने सेवकोके हाथमे उनकी रक्षाका भार अर्पण किया। मारवाड़के भविष्य अधीश्वर मानसिंहका इस प्रकारसे पालन होने लगा। परन्तु हतज्ञान विजयसिंह इस समय युवतीके हाथमे कठपुतलीकी समान रहते थे, युवतीने अपने राज्यमे इच्छानुसार व्यवहार करनेकी अभिलाषा की, इसीसे मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त फिर राजा पर अत्यन्त रुष्ट होगये, और सभी अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये मालकोसनी नामक स्थानमे इकट्ठे हुये।

सामन्तोने देखा कि विजयसिंहने एक साधारण स्त्रीके प्रेममे फँसकर जैसा कार्य करना प्रारंभ किया है, उससे पवित्र मारवाड़का सिंहासन कलंकित होता है, विना इनको सिंहासनसे उतारे हुए किसी भांति भी राज्यका मंगल नही होसकता। तब सब राठौर सामन्तोने मिलकर यह निश्चय किया कि विजयसिंहके पञ्चम पुत्र भीमसिंहके युवक पुत्र भीमसिंहको मारवाड़के सिंहासन पर बैठाना उचित है। असंतुष्ट हुए सामन्तोने चुपके २ इस प्रकारका सिद्धान्त करके इस प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेका उद्योग भी किया। जब विजयसिंहने देखा कि इस समय समस्त सामन्त रुष्ट होकर एकत्रित होरहे है तो पहले जिस भाँति सामन्तोके डेरोमे स्वयं जाकर इन्होंने उनको अपने हस्तगत कर लिया था इस बार भी उसी प्रकारसे सामन्तोको अपने हस्तगत करनेके लिये वे शीघ्र ही उनके डेरोमे गये। महाराज विजयसिंहने सामन्तोके डेरोमे जाकर उनको जिस समय संतुष्ट कर अनेक प्रकारके वचनोसे धीरज दिया उसी समय सामन्तोने गुप्तभावसे एक पत्र लिखकर रासके सामन्तके पास भेजदिया। उस समय वह सामन्त जोधपुरके महाराजकी रक्षामे नियतथे। सामन्तने तुरन्त उस युवतीसे जाकर कहा कि महाराज विजयसिंह सामन्तोके डेरोमे आये है। उन्होने आपको भी वहां शीघ्र ही बुलाया है। शरीर रक्षक सेना तैयार है आप शीघ्रतासे चलिये। युवती उस सामन्तके वचनो पर

विश्वास कर जैसे ही इकली महलसे निकल कर सवारी पर चढी कि वैसे ही पीछेसे एक मनुष्यके इशारा करते ही, एक मनुष्यने उसके शिरके दो टुकडे कर दिये। सामन्त उसी समय मारवाडके उस सर्वनाशकी कारणस्वरूपा उस नारीकी सम्पूर्ण धन सम्पत्तिको लेकर, विजयसिहके पंचम पुत्र भोमसिहके युवक पुत्र भीमसिहको लेकर सेनासहित नागौरके मार्गमे अपने डेरोमे जा पहुँचे । यदि रासके सामन्त भीमसिहको उक्त डेरेमे न लेजाकर बरावर इकट्ठे हुए सामन्तोके डेरेमे लेजाते तो सरलतासे सामन्त गण पहले विचारसे उस स्थान पर विजयसिहको सिहासनसे रहित कर भीमसिहको मारवाड़के सिहासन पर वैठाल सकते थे। जिस दिन सब सामन्तोने यह समाचार पाया कि वारवधूका प्राण नाश करके रासके सामन्त भीमसिहको लेआये है, उसी दिन विजयसिहको भी यह समाचार मिला और वे तुरन्त ही वड़ी शीघ्रतासे भीमसिहके निटक आये ।

विजयसिह सामन्तोके डेरोको छोड़कर भीमसिहके डेरेमे गये, इनके वहां जाते ही सामन्तोके षड्यंत्रका जाल एकवार ही छिन्नभिन्न होगया । उन्होंने भीमसिहको वशीभूत करनेके लिये सोजत और सिवाना एकवार ही देकर भलीभाँतिसे धीरज दे उसी समय उनको सिवानेके किलेमे भेज दिया। भीमसिहको यद्यपि मारवाडका सिहासन नही मिला परन्तु उन दोनो देशोके मिलनेसे प्रसन्न हो उन्होने वहाँ जानेमे कुछ आपत्ति न की। चतुर विजयसिहने इस प्रकारसे भीमसिहको सतुष्ट कर उनको पीछे भेज दिया और अपने पुत्र जालिमसिहको निकट बुलाया। जालिमसिह ही मारवाड़के सिहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी थे। विजयसिहने मानसिहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था, और उनको उस अधिकारसे वंचित किया था, जालिमसिह उससे महा असंतुष्ट हुए थे। विजयसिहने उनको हस्तगत करनेके लिये उसी समय उन्हे समृद्धिशाली गोड़वाड़देशका पूर्ण आधिकार देदिया, और उनको वहाँ भेज दिया। तथा विदाकरनेके समय चुपके से यह भी कह दिया, कि तुम शीघ्र ही भीमसिहपर आक्रमण करके उनको मारवाड़से निकालदो ।

जालिमसिह गोड़वाड़ राज्य पाकर महासंतुष्ट हो शीघ्र ही वहाँ चले गये, और पिताकी आज्ञा पालन करनेके लिये उन्होने अपने भ्रातुष्पुत्र भीमसिह पर सेना सहित आक्रमण किया। भीमसिह पहलेसे ही विजयसिहकी गुप्त आज्ञाके विषयको जान गये थे, कि वह युद्धके लिये तैयार होगये थे, इस कारण जालिमसिहके आक्रमण करते ही उन्होंने महायुद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी । जालिमसिंहकी सेना प्रबल थी। भीमसिंहने अतमे परास्त होकर प्राणोके भयसे पोकरणके सामन्तका आश्रय लिया। परन्तु उस स्थानपर निर्विघ्नतासे रहना असंभव जानकर वह जैसलमेरको भाग गये ।

जिस समय जालिमसिंहके साथ भीमसिहका युद्ध होरहा था, जिस समय मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोने विद्रोही होकर अराजकता उपस्थित की थी, जिस समय पुत्र पौत्र गणोंने आत्मविग्रहमे लिप्त होकर राठौरोके राजवंशको कलंक लगाया

था उसी समये ३१ वर्ष मारवाड़का राज्यकरके महाराज विजयसिहने अपनी प्राणप्यारी उक्त पासवान युवतीके शोकमे सम्वत् १८५० मे आपाढ़के महीनेमे शरीर त्याग दियो।

विजयसिहकी जीवनीके सम्वन्धमे हमैं केवल इतना ही कहना है कि उन्होने युवा अवस्थामे जिस भांति वल विक्रम दिखाया था उनका शेप जीवन उसी भांति घोर कलंकसे पूर्ण था। वह यदि अपने पाटन तथा मेरताके युद्धक्षेत्रमे जाकर महाराष्ट्रोके साथ युद्ध करते तो कभी भी उस क्षेत्रमे राठौरोकी उस भांति पराजय न होसकती थी, और न जयपुरकी सेना इस प्रकार कृतघ्नता दिखा सकती थी। राजाके आलस्य और भोगविलासिताके वश होनेसे जातिके भाग्यमे क्या फल होता है, विजयासिह वृद्धावस्थामे एक कुलटा स्त्रीके प्रेममे मोहित हो उसका चूड़ान्त प्रमाण दिखागये है। सारांश यह है कि मारवाड़के सौभाग्यका सूर्य विजयासिहके शासन समयसे एकवार ही अस्त होगया।

---

(१) इकतीस वर्ष नहीं, महाराज विजयसिंहने इकतालीस वर्ष राज्य किया क्योकि उनका जन्म संवत् १७८८ मे हुआ था और जिस वक्त वे राज्य सिंहासनपर बैठे उस समय उनकी अवस्था २० वर्षकी थी।

(२) इस अध्यायका यह पिछला अंश वहुत गड़बड़ लिखा गया है और महाराज विजयसिंह पर कई ऐसे कलंक लगाये है जो सर्वथा झूठे है। महाराज विजयसिंहका ठीक इतिहास ग्रन्थ कर्त्ताओको ज्ञात न होनेसे उन्हें वहुत सी कल्पनाएं करनी पड़ी है। ऐसे ही महाराज अजितसिहका इतिहास भी उनको मालूम नहीं था इसीलिये उन्होने पोकरणके ठाकुर देवीसिहको उक्त महाराज का बेटा माना है महाराज विजयसिंहके बेटोंके नाम भी यथार्थरूपसे नहीं लिखे। बड़ा बेटा उनका युवराज भौमसिह ही था। वह जब मरगया तो उसके बेटे भीमसिंहको महाराज विजयसिहने युवराज बनाया। जालिमसिंहका कोई हक्क युवराज बननेका नहीं था उसकी मा उदयपुरकी जरूर थी मगर उदयपुरवाले जयपुर और जोधपुरके राजाओंसे जो यह शर्त कराया करते थे कि उनका दोहिता या भानजा ही गद्दीका मालिक हो सो कभी वह पूरी नहीं हुई। यह एक नाममात्रकी शर्त राणाजीको राजी रखनेके लिये थी और इसीसे कर्नल टाड्ने जालिमसिहको गद्दीका मालिक मानकर तर्कवितर्क किए हैं। पर जालिमसिंह, भौमसिह गुमानसिंह और फतहसिह तीनोंसे छोटा था इस लिये महाराज विजयसिहने इन तीन बेटोंके होते हुए उसको कभी युवराज नहीं किया था। भीमसिहको युवराज करनेके पीछे उसका क्रूर स्वभाव और भाई बन्धुओसे द्वेप देखकर महाराजने अपने दूसरे कुंवरके बेटे मानसिंहको, जो बापके मरजानेसे अनाथ अवस्थामे था, पासवान गुलावरायको सौंपा कर उसे गुप्तरूपसे जालौरमे भेजदिया था। क्योकि वह जानते थे कि भीमसिह राजा होकर सांपिडियोको जीता नहीं छोड़ेगा। भीमसिंह गुलावरायका भी द्वेषी था और पोकरणके ठाकुर सवाईसिंहके कहने पर चलता था जो अपने बाप दादोंके हरामखोरीस मारेजानेसे महाराज विजयसिंहका द्वेषी था और जैसे उसके दादा देवीसिंहने उपद्रव उठाया था वह भी वैसेही किया चाहता था। उसीने मारवाड़के कई सरदारोंको बहकाकर भीमसिंहके सानुकूल और महाराजके प्रतिकूल करदिया था। उसी बखेड़ेमें पासवान गुलावराय भी मारी गई थी और अन्तमे भीमसिह भी जोधपुरसे निकाला गया। यह सब वृत्तान्त महाराज विजयसिंहके गद्य इतिहासमे यथा समय लिखे गये है।

चौदहवाँ अध्याय १४.

भीमसिंहका मारवाड़के सिंहासन पर अधिकार; उनके प्रतियोगी जालिमसिंहका हताश होना, भीमसिंहका मानसिंहके अतिरिक्त मारवाड़सिंहासनके प्रार्थी अन्यसबके जीवनका नाश करना, जालौर पर आक्रमण; भोजनसग्रहकरनेके लिये वद किलेमेसे सेनाका बाहर जाना, कुमार मानसिंहका उस सेनापर नेतृत्व, मानसिंहके वंदीदशामे पतन होनेकी संभावना, आहोरके सामन्तो का मानसिंहका उद्धार साधन; राजा भीमसिंहके आचरणसे सामन्तोंको असंतोष, सामन्तोका मारवाड़को छोडना, नीमाजपर आक्रमण; जालौर देशमे आत्म समर्पणकी पूर्व सूचना, राजा भीमसिंहकी अकस्मात् मृत्यु, मानसिंहका सिंहासन पर अधिकार, पोकरणके सवाईसिंहकी विद्रोहिता; चोपासनी नामक स्थानमें षड्यंत्र, राजा भीमकी रानीके गर्भसमाचारका प्रचार, राजा मानसिंहके साथ व्यवस्था करना, भीमसिंहकी कन्याका जन्म, नवजात राजकुमारका गुप्तभावसे पोकरणमे भेजना और उनके जन्मसंवादको गुप्त रखना; नवीन राजकुमारका धौंकलसिंह नाम रखना; पूर्व नियत किये हुए व्यवस्थाके मतसे कार्य करनेके लिये राजा मानसिंहके निकट सामन्तोका प्रस्ताव, भीमसिंहकी रानीका धौकलसिंहको अपने अधीश्वर अभयसिंहके पास भेजना, सवाईसिंहका फिर गुप्तभावसे षड्यंत्रका विस्तार करना, सवाईसिंहका आमेर और मेवाडके दोनो अधीश्वरोके साथ मानसिंहका विवादानल प्रज्ज्वलित करना, उनका धौंकलसिंहको लेकर जयपुरमें जाना, उसको मारवाड़का अधीश्वर कहकर घोषणा करना, धौंकलसिंहके पक्षमे अधिकतर राठौरके सामन्तोका मिलना, बीकानेरके अधिपतिका धौकलसिंहका पक्ष समर्थन, रणक्षेत्रमे सेनाका बुलाना, हुलकरकी नीचता, उनके द्वारा राजा मानसिंहके पक्षका छोडना, युद्ध प्रारंभ, सामन्तोका मानसिंहके पक्षको छोडना; मानसिंहकी आत्महत्याका उद्योग, राजा मानसिंहका भागजाना, मानसिंहका जोधपुरमे जाना; अपनी रक्षाकी तैयारी, समस्त कुटुम्बियोके ऊपर मानसिंहका संदेह, उनको किलेकी रक्षामे नियत करनेके लिये असम्मति देना, शत्रुओके साथ उनका सम्मिलन और जोधपुर का घेरना; जोधपुर नगर लूटकर उसपर अपना अधिकार करना, अवरोधकारियोको कष्ट, मीरखाँके आचरणसे आक्रमण करनेवालोमें अनैक्यता, उनका मारवाड़से भागना; जयपुरके सेनापतिका उनका अनुसरण, युद्ध, जयपुरकी सेनाको विध्वंस करके नगरका घेरना, जयपुरके महाराजका विपत्ति देखकर महाभयभीति होना, जोधपुरका अवरोध छोडना; जयपुरमे निर्विघ्नतासे जानेके लिये २०००००० रुपये देनेमें बाध्य होना, जयपुरकी सेनाने जोधपुरके जो द्रव्य लूट लिये थे राठौरगणोका उनपर फिर अधिकार करना; मीरखाँका राजा मानसिंहके अधीनमे नियुक्त होना, तथा चार राठौर सामन्तोके साथ जोधपुरमें जाना।

जिस समय महाराज विजयसिंहकी मृत्यु होगई उस समय उनके पौत्र भीमसिंह जो राज्यसे निकाले जाकर जैसलमेरमे रहते थे। वह विजयसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही तुरन्त ही अपने सेवकोके साथ बाईस घंटेके भीतर शीघ्रतासे जोधपुरमें आगये, और उन्होने सिंहासनपर अपना अधिकार करलिया। विजयसिंहके मध्यम पुत्र जालिमसिंह जो शास्त्रके मतसे मारवाड़के सिंहासनके उत्तराधिकारी थे वह भी

पिताकी मृत्युका समाचार पाते ही राजधानीमें आनेके लिये चले। उन्होने मेरता नामक स्थानमे आकर शुभदिन और शुभ मुहूर्त्तमे प्रवेश करनेका विचार किया था; यह उन्हे स्वप्नमे भी ध्यान नही था कि चतुर भीमसिह इतनी जलदी जैसलमेरसे आजॉयगे, इस कारण जैसे ही वह शुभ मुहूर्त्तमे राजधानीकी ओरको बढ़े कि वैसे ही तोरणद्वारके नक्कारेके शब्दसे तथा प्रजाके मुखसे सुना, कि भीमसिहने अपने शिरपर मारवाड़का राजमुकुट धारण किया है। जालिमसिहकी सम्पूर्ण आशा मानो एकबार ही विलीन होगई. पिताके सिहासन पर अब अधिकार करनेकी उनको कुछ भी आशा न रही। जालिमसिह सिहासन प्राप्तिके लिये आये है, यह सुनते ही महाराज भीमसिहने तुरन्त ही एक प्रबल सेना भेजकर उनको पकड़ लानेकी आज्ञा दी। सिहासन पाना तो दूर रहा, अपने प्राणोका बचना कठिन जानकर जालिमसिह शीघ्र हो नगर द्वारसे प्राणोके भयसे भागने लगे। मारवाड़के सामन्त यदि उनकी सहायता करते, यदि प्रजा उनको मरुक्षेत्रका उत्तराधि कहकर उन पर राजक्ति दिखाती तो कभी भी वह इस भावसे पीठ नही दिखाते, अवश्य ही पिताके सिहासनपर अधिकार करनेके लिये रणक्षेत्रमे अन्तिम वल प्रकाश करते। जालिमसिह जोधपुरको छोड़कर बीलाड़ा तक वरावर भागे, भीमसिहकी सेनाने वही जाकर उनपर आक्रमण कर उन्हे एकबार हो परास्त करदिया। परास्त हुए जालिमसिह अपने प्राणोके भयसे उक्तस्थानसे उदयपुरमे आकर राणाकी शरणमे गये। मेवाड़के महाराणा भी इस समय हीनवल होगये थे, मेवाड़के चारोओर अशान्तिका पूर्ण अधिकार होगया था, इसी कारण उन्होने अपने भानजे जालिमसिहको न्यायपूर्वक स्वार्थ पूर्ण करनेके लिये सीसोदिया सेनाको मारवाड़मे नही भेजा। उन्होने जालिमसिहको आजीविकाके लिये अपने राज्यके एक बड़े देशका अधिकार देदिया। जालिमसिह एक बडे विद्वान और पण्डित पुरुष थे, नीतिके जाननेवाले कवि और इतिहासवेत्ता भी थे[1] वह उस अधिकारको पाकर काव्यशास्त्रकी आलोचनामे समय व्यतीत करनेलगे। परन्तु वह बहुत दिनतक जीवित न रहे, उन्होने अपने हाथसे एक नसकाट डाली थी तथा एक रक्त वाहिका नाड़ीको काट डाला था, इसी कारण अधिक रुधिरके निकलनेसे युवा अवस्थामे ही वह इस संसारको छोड गये।

महाराज भीमसिह जैसे ही मारवाडके सिहासनपर बैठे वैसे ही दुष्टाचारी औरंगज़ेबकी समान सहारमूर्ति धारण करके, राठौर राजवशमे जो शोचनीय कांड कभी नहीं हुआ था इन्होने उसी प्रकारके निन्दनीय कार्य करने प्रारंभ किये। ऐसा विदित होता है कि मानो औरंगज़ेबकी प्रेत आत्माने आकर भीमसिहके शरीरका आश्रय लिया था। इनका जैसा भीम नाम था उसी प्रकारसे इन्होने कार्योमे भी भीम

---

(१) जालिमसिहका वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमे यथास्थान पढ़ा होगा। पाठकोंको यह स्मरण होसकता है, कि महात्मा टाड् साहबके गुरु यति ज्ञानचंद्र इन जालिमसिंहके विद्यार्थी थे, ज्ञानचंद्रने इनसे ही रजवाड़ेके समस्त जानने योग्य विषयोंकी शिक्षा पाई थी।

अभिनय प्रारंभ करदिया। जिस भांति औरंगज़ेबने भारतवर्षमे निष्कंटक राज्य भोगनेके लिये अपने जन्मदाता पिताको वन्दी कर अपने सगे भाइयोकी हत्याकी थी, उसी प्रकारसे भीमसिहने भी निर्विघ्नतासे मारवाड़का राज्य भोगनेके लिये उन म्लेच्छ यवनोके अनुकरणसे पवित्र राठौर वशके नामको कलंकित करनेमे किंचित्‌मात्र भी विलम्ब न किया। मारवाड़के सिहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी जालिमसिहको भगाकर उन्होने विचारा कि चचा गणोके जीवित रहते हुए निष्कंटक होनेका उपाय नही है, इस कारण वह हृदयभेदी उपायसे स्वार्थसाधन करनेके लिये अग्रसर हुए। विजयसिहने जिस समय प्राण त्याग किये उस समय उनके सात पुत्रोमे केवल जालिमसिह और सरदारसिह ही जीवित थे, फतेसिह, सामन्तसिह, भीमसिहके पिता भूमसिह और गुमानसिंह इनकी मृत्यु पहले ही होगई थी। भीमसिहने जालिमसिहको भगाकर देखा कि सरदारसिह और शेरसिह जिन्होने इनको दत्तकरूपसे ग्रहण किया था, यही दोनो जने सिहासनके कंटकस्वरूप है इस कारण भीमसिहने सबसे पहले अपने चचा सरदारसिहके प्राणोका नाश करके अपनी पिशाच प्रकृतिका परिचय दिया। पीछे शेरसिहको मारा जिसने भीमसिहको दत्तकरूपसे ग्रहण किया था। भीमसिहने समस्त माया ममता और वाध्यवाधकताके सम्बन्धको छोड़कर नरराक्षस औरंगज़ेबकी समान उन शेरसिहके दोनो नेत्र निकलवा लिए। शेरसिहने अत्यन्त दुःखित हो अपने दत्तकपुत्रके द्वारा ऐसा भयंकर दंड पाकर दीवारमे अपना शिर देमारा, इसीके आघातसे उनके प्राण पयान करगये। पिशाचप्रकृति भीमसिहने इस प्रकारसे अपने तीन तातोको मारकर अंतमे विचारा कि सामन्तसिहके पुत्र सूरसिह और गुमानसिहके पुत्र मानसिह जिन्हे पासवान युवतीने गोद लिया था, और विजयसिहने जिनको मरुक्षेत्रका भावी अधीश्वर नियुक्त किया था, यह दोनो अभी जीवित है। सूरसिह अपने गुणोसे सभीके प्रियपात्र होगये थे, और यह भीमसिहके वड़े भाईके भी पुत्र थे इस कारण राजसिहासन पर सबसे पहले इन्हींका अधिकार होसकता था यह विचारकर पापात्मा भीमसिहने उनका सहार करनेमे भी क्षणमात्रका विलम्ब न किया!

राठौर राजकुल कलंक भीमसिहने पापकलुपित आत्मा औरंगज़ेबकी समान इस प्रकारसे लो[illegible]र्षण हत्याकांड करनेके पीछे देखा कि उनके सकटस्वरूप एकमात्र मानसिंह के स[illegible] न हैं। युवक मानसिह उस समय जालौरके अभेद्य किलेमे थे, इस कारण पापात्मा राजा भीमसिहने उनके प्राणनाशका सरल उपाय न देखकर शीघ्र ही सेना साथ ले उस कि[illegible]र जा घेरा। मारवाड़मे जालौरका किला जैसा मजबूत था उसी भाँति अभेद्य भी था। [illegible] वकों का उस किलेपर सरलतासे अधिकार नही होसकता था, भीमसिहने यद्यपि उस किले [illegible] जाकर घेर लिया परन्तु उनका मनोरथ पूर्ण न होसका, वह शीघ्र ही जान गये कि मरुक्षेत्रकी अधिकसंख्यक राठौर सामन्तों-की अधीन सेना और वेतनभोगी सेना जालौरको घेर कर कई महीनेतक अनेक

उपाय करके भी अपने मनोरथको सफल न करसकी थीं। भीमसिंह जानगये कि इस किलेपर अधिकार करना कुछ सरल बात नहीं है, तब सेना नायकको इस किलेके घेरनेका भार सौंप कर आप अपने नगरको लौट आये। वह सेनानायक दीर्घकालतक किलेको घेरे हुए पड़ा रहा, भीमसिंहकी सेना नियमित रूपसे किलेकोचारों ओरसे घेरकर छिन्नभिन्न भावसे रहने लगी। युवक मानसिंहके अधीनमें इतनी अधिक सेना नहीं थी, न इतने अधिक सामन्त ही थे कि उनकी सहायतासे वह किलेसे बाहर होकर भीमसिंहकी सेनाके साथ युद्ध करके सिंहासन पर अधिकार कर लेते इसी कारण अपनी रक्षा करलेना ही उन्होंने अपना कर्त्तव्य समझा। इस प्रकारसे धीरे २ कई महीने व्यतीत होगये, किलेमें भलीभांतिसे बँधकर रहना असम्भव था, अधिकतर भोजनकी सामग्रीके विना बहुत कालतक रहनेकी किसीमें भी सामर्थ्य न थी। भोजन की आवश्यक सामग्री भलाभांतिसे किलेमें नहीं मिल सकती थी। भीमसिंहने जब देखा कि अधिक सेनाके होनेसे भी इस अभेद्य जालौरके किलेपर अधिकार करना सर्वथा असंभव है तब उन्होंने दीर्घकाल तक किलेको घेर कर मानसिंहको सेनासहित भूखोंमार कर नष्ट करनेका विचार किया,था परन्तु पहले ही कहचुके हैं कि अवरोधकारी सेनादल दीर्घकाल तक अवरोधताके सूत्रसे अपने कार्यसाधनमें हतउद्योग होगया था, युवक मानसिंह यह सुभीता पाकर कितनी ही सेना साथले मारवाड़की खास भूमिमें जाकर प्रजाकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटने तथा प्रयोजनीय खाद्य पदार्थोका संग्रह करके लानेलगे, भीमसिंहकी सेना इनपर कुछ भी हस्ताक्षेप न करसकी। एक बार नहीं, दो बार नहीं, जभी खाद्यद्रव्योंके संग्रह करनेका प्रयोजन होता था मानसिंह उसी समय सुभीता पाकर गुप्तभावसे अपने अनुचरोंके साथ बाहर जाकर अपना कार्य साधन करके फिर किलेमें आकर रहने लगते थे। परन्तु वारम्वार इस प्रकारसे कार्य करनेके कारण एकवार मानसिंहका जीवन महा संकटमें पड़ गया, मानसिंह पहलेबारकी समान अपने सेवकोंके साथ पालीनामक वाणिज्य-प्रधान नगरको लूटनेके लिये बाहर गये, कार्यसाधन करके जैसे ही लौटे, कि वैसे ही भीमसिंहकी सेनाने इनके ऊपर आकर आक्रमण किया। मानसिंह बालकपनसे ही किलेमें रहते थे, इस कारण राजपूत जातिकी समान उनमें पूर्ण साहस तथा बलविक्रम होनेपर भी उन्हें युद्धकी रीति नीति और विपत्तिके समयमें क्या करना कर्त्तव्य है वह कुछ भी मालूम न था केवल विद्याकी शिक्षासे ही उनकी मानसिक उन्नति हुई थी। जिस समय भीमसिंहकी सेनाने मानसिंह पर आक्रमण किया, उस समय मानसिंह घोड़ेपर सवार नहीं थे, इस कारण शत्रुओंकी सेना उनको पकड़नेके लिये तैयार होगई। मानसिंहको शत्रुओंके हाथमें पड़ाहुआ देखकर जो सामन्त मानसिंहके साथमें थे, उन्होंने अपनी बुद्धिबलसे उसी समय मानसिंहका हाथ पकड़ कर उनको अपने घोड़ेपर चढ़ा लिया, और शीघ्रतासे भगाकर अपने और उनके प्राणोंकी रक्षा की। आहोरके सामन्त इस प्रकार निर्विघ्नतासे जालोरके किलेमें आगये, तब भीमसिंहकी सेनाकी आशा व्यर्थ होगई।

राजस्थानके राज्यसिंहासनको लेनेके लिये जब कभी दो राजकुमारोंमें बड़ा

झगड़ा मचता था तभी अपना प्रताप तथा प्रभुता विस्तार करनेके लिये सामन्तश्रेणी भी भिन्न भिन्न पक्ष अवलम्बन करके दल बद्ध होजाती थी । भीमसिह और मानसिहने इस समय मारवाड़के सिहासनकी प्राप्तिके लिये विशेप चेष्टा की थी, इसीसे मरुक्षेत्रके सामन्तोने भी उसी प्रकारसे दोनो ओरका साथ दिया था। परन्तु भीमसिहको अधिक प्रबल, साहसी, और वीर देखकर बहुतसे सामन्त इनके पक्षको छोड़कर मानसिहके पक्षमे जा मिले। परन्तु जिन सब सामन्तोने भीमसिहका साथ दिया था, वह राजासिहासन लेनेके लिये दोनोमे झगड़ा होता हुआ देखकर शुभ और सुअवसर जान अपनी अधिक सामर्थ्यको संचय कर तथा राजाके ऊपर प्रभुत्व करनेवाले होगये। सारांश यह है कि "भीमसिंह जिससे हमारी सम्मतिके अनुसार कार्य करै, जिससे उनकी सहायता इस समय विशेष उचित जानकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेमे आग्रहके साथ नियुक्त रहै," सामन्तोकी एकमात्र यही इच्छा होगई, परन्तु राजा भीमसिहने, सामन्तोके अधिकार बढानेमे कुछ सहायता न करके स्वय पग २ पर उनको अपने पैरोके नीचे मोल लियेहुए दासकी समान रखनेकी विशेष चेष्टा की, इससे सामन्त इनके ऊपर अधिक अप्रसन्न होने लगे। रामसिह जैसे उद्धत स्वभावके मनुष्य थे, तथा सामन्तोके ऊपर जैसा अप्रीतिकारक व्यवहार करते थे, भीमसिह भी उसी प्रकारसे उद्धत आचरण करने लगे। इन्होने जिन सामन्तोको जालौरमे अधिकार करनेके लिये नियुक्तकर रक्खा था उनको हतउद्योग देखकर (वर्षके ऊपर वर्ष बीत गया, तथापि मानसिहको वह लोग बंदी न करसके, तब) महा क्रोधित होकर आज्ञा दी " कि जो सामन्त जालोर पर अधिकार करनेके लिये नियुक्त है, वह कदापि वीर नही होसकते, वे लोग घोड़ोपर चढ़ने योग्य नही है, इसलिये घोड़ोके बदलेमे उनके चढ़नेके लिये बैल दिए जॉय ? । " भीमसिहसे इस प्रकार अपमानित हो, सामन्तोका शरीर क्रोधानलसे प्रज्ज्वलित होने लगा। महात्मा टाड् साहब कहते है कि " राजा भीमसिहके साथ यदि सामन्तोका इस प्रकार झगड़ा न होता तौ इस भावसे दीर्घकाल तक जालौरके किलेकी रक्षा करना मानसिहके पक्षमे अवश्य ही असंभव होजाता और उन्हे भी अन्यान्य कुटुम्बियोके समान भीमसिहकी क्रोधाग्निमे भस्मीभूत होना पड़ता। राजा भीमसिहने सामन्तोको उस भावसे घोड़ोके बदलेमे बैल देनेकी आज्ञा देकर उनको अपमानित किया था। इससे सामन्त उसी समय रणभूमिको छोड़कर सकुटुम्ब गोडवाड़के प्रधान देश घाणेरावको चलेगये। भीमसिह और मानसिह इन दोनोके ही ऊपर सामन्त अत्यन्त अप्रसन्न हुए, इसीसे अपनी जन्मभूमिको छोड़कर पासके ग्राममे जाकर रहने लगे। इधर भीमसिह सामन्तोके इस आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित होगये, और उनकी बहुत सी जमीन अपने अधिकारमे कर ली । और मरुक्षेत्रके अन्य प्रधान वीर नेता ऊदावत् सम्प्रदायके सामन्तोके अधिकारी नीमाज पर आक्रमण ओर अधिकार करनेके लिये आज्ञा दी। परन्तु उदावत सम्प्रदाय क्रमानुसार एक वर्ष तक अतुल बलविक्रम प्रकाश करके भीमसिहकी सेनाके हाथसे नीमाज दुर्गकी रक्षाके

पहले ही पराजय स्वीकार करचुकी थी। नीमाज दुर्गपर अधिकार करते ही भीमसिहने उसे तुडवाकर एकसा मैदान करदिया । नीमाजके किलेपर अधिकार करनेके लिये वेतनभोगी विजातीय वहुत सी सेना नियुक्त थी, भीमसिहने उसको वहांसे जालौरपर अधिकार करनेके लिये भेज दिया।

विजयी वेतनभोगी सेना दुगने उत्साहके साथ जालौर और वहाके किलेपर अधिकार करनेके लिये वड़ी शीघ्रतासे चली और थोड़े दिनोमे ही उसने जालौर नगर पर अधिकार करलिया। मानसिहका आशा भरोसा इस समय मानो एकवार ही लुप्त होगया। उस सख्यावद्धसेनाके साथ किलेमे आवद्ध रह कर वे उसी समय अपने भाग्यपतनके तथा संसारको छोड़नेके पूर्व लक्षण देखने लगे। मरुक्षेत्रकी जो सामन्त मंडली तथा प्रजावर्ग मानसिहके अनुकूल पक्षकी थी, राजा भीमसिहने इस समय उसको मरुक्षेत्रसे निकाल दिया था, इस कारण किलेके वाहरी भागसे किसीसे भी सहायता मिलनेकी आशा न रही। किलेके भीतर जो सेना वरावर कई वर्ष तक घिरी हुई थी, जिसने मानसिहके साथमे अनेक प्रकारके कष्ट भोग किये थे, उसने न जाने किस भाँति आवे पेट भोजनके मिलनेसे प्राण धारण करके उनके जीवन की रक्षामे सहायता की थी, इस समय समस्त भोजनको सामग्री समाप्त होगई, तथा भीमसिहकी सेनाने प्रवल रूपसे किलेको घेर लिया, अब पहलेकी समान वाहर जाकर भोजनका सग्रह करना भी एकवार ही असंभव होगया। क्या तो भोजनके न मिलनेसे इस समय प्राणत्याग करने होंगे, और क्या शत्रुओके हाथमे आतम समर्पण करना होगा, यह विचार करनेलगे, विपादित हृदयसे मानसिह उस संख्यावद्ध सेनाके साथ घोर दुर्दिनमे चारोओर निराशाकी भयकर मूर्ति देख रहे थे, इसी समयमे अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नेताने एक दूतको किलेमे भेजकर उसके द्वारा कहला भेजा, " महाराज ! आप किलेको छोड़कर डेरोमे आजाइये, आप ही इस समय हमारे प्रभु है, आपकी आज्ञा पालन करना ही हमारा कर्त्तव्य कर्म है।" इष्ट मित्र और वधु वांधवोको छोड़कर नि सहाय सम्पत्तिहीन मानसिह क्रमानुसार ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेके भीतर महा कष्ट भोगते हुये रहे, पीछे उसी सम्वत्‌मे कार्तिक मासके आठवे दिन (सन् १८०४ ईसवीके दिसम्बर महीनेमे) यह समाचार मिला, कि राजा भीमसिहकी मृत्यु होगई है। इस शुभ समाचारको सुनकर मानसिहको पहले तो किसी भांति भी विश्वास न हुआ। यद्यपि यह अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नायकका दूत था, इसने राजमत्री इन्द्रराजके हस्ताक्षर सहित पत्रको लाकर मानसिहके हाथमे दिया; तथापि मानसिहके हृदयमे विपम संदेह उपस्थित होने लगा। उन्होने विचारा कि भीमसिहने अपनी चातुरीजालका विस्तारकर उनको वंदी करनेके लिये ही इस प्रकारका उपाय किया है। अतमे राजगुरु देवनाथको राजाभीम सिहकी मृत्युके समाचारके सत्या-सत्यकी जांचकरनेके लिये, शत्रुओके डेरोमे भेज दिया,उनके लौट आनेपर मानसिह सत्य ही अपनी भाग्य-लक्ष्मीको प्रसन्न जानकर आनंदके मारे व्याकुल हो किलेसे वाहर हुए।

जो राठौरोकी सेना उनको वंदी करनेके लिये ग्यारह वर्षतक नियुक्त थी, वह इस समय मानसिहको देखकर महा आनंदित हुई, और उसने खड़े होकर इनका सम्मान बढ़ाया।

सम्वत् १८६० मे माघमासके पांचवे दिन, शुभदिन और शुभ मुहूर्त्तमे मानसिहके मस्तकपर राजतिलक दिया गया। यद्यपि मानसिह मरुक्षेत्रके सिहासनपर अभिषिक्त हुए, परन्तु उनके ही शासन समयसे मारवाड़के इतिहासका शोचनीय अध्याय आरंभ हुआ है उनकी विचित्र लीला और गुणोंसे मारवाड़ एकवार ही विध्वंस होगया था, उन्हींके शासनसे राठौर जातिका चिर प्रसिद्ध वलविक्रम शूरवीरता मानो चिरकालके लिये अस्त होगई, और उन्हींके शासनसमयसे राठौर जातिकी स्वाधीनताका सूर्य एकवार ही अस्त होकर गिरिगुफामे जा छिपा। राजा मानसिहके शिर पर राजछत्र शोभायमान होनेके कुछ ही दिन पीछे भविष्यके लिये महा अनिष्टकारी मारवाड़के विध्वंसका बीज वोया गया। आशा है कि पोकरणके महा तेजस्वी सामन्त देवीसिहका नाम पाठकोको भलीभॉतिसे स्मरण होगा। मानसिहके पितामह विजयसिहने किस प्रकारके उपायसे देवीसिहको वंदीकरके उनके जीवनका विनाश किया था, और उन्ही देवीसिहके प्राणनाशके कारण उनके पुत्र सवलसिह उनसे वदला लेनेके लिये किस प्रकार रुद्रमूर्तिसे रंगभूमिमे गये थे, तथा अंतमे जीवन त्याग किया था, उसका वर्णन पहले ही करचुके है। पोकरणके सामन्त-वंश मारवाडकी दूसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे चुनेगये है, और इन्होने अपनी अतुल सामर्थ्य चलाई, इसका फिर उल्लेख करना निष्प्रयोजन है, मानसिह जिस समय सिहासन पर विराजमान हुए उस समय उन निहत देवीसिहके पौत्र सवलसिहके पुत्र सवाई सिह पोकरणके सामन्त पदपर चांपावतोकी सहायतासे प्रवलपराक्रमके साथ रहते थे। देवीसिहने जिस प्रकार गर्वपूर्ण वचनसे कहा कि "मारवाड़का सिहासन मेरी तलवारमें है" और मृत्युके समय कह गये कि "पोकरणमे मेरे पुत्र सवलकी तलवारमे मरुक्षेत्रका सिहासन रहैगा" इस प्रकारसे सवाईसिहने अपने पितामह देवीसिह और पिता सवल सिहका बदला लेनेके लिये मानसिहके अभिषेकके पीछे सबसे पहले मारवाड़के विध्वशका बीज वोदिया। पितृपुरुषोके प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करना यदि इस संसारमे धर्म कहा गया है तव तो इस विषयमे सवाईसिह अत्यन्त धार्मिक होसकते है। मानसिहके अभिषेकसे उनकी मृत्युके समय तक सवाईसिहने मानसिहके शिरपर तीक्ष्ण तलवार रक्खी थी। मानसिहके सिहासन पर बैठनेके कुछ ही काल पीछे शान्तिसुख न भोगकर सवाईसिह असंतुष्टहो राजसभाको छोड़कर अपना मनोरथ पूर्ण करनेकी चिन्तामे उन्मत्त होगये।इन्होने सबसे पहले जोधपुरको राजधानीसे ढाई कोस दूर चोपासनी नामक स्थानमे अपनी सब सम्प्रदायोको बुलाकर षड्यत्र जालका फैलाना आरंभ कर दिया। उपस्थित सामन्तोको बुलाकर कहा, "मृतमहाराज भीमसिहकी रानी गर्भवती है, इस कारण आप सभी एकमत होकर यह प्रतिज्ञा कीजिये कि यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा तो मानसिहको सिहासनसे उतार कर उसीको

राजतिलक दिया जायगा।" सवाईसिंह रणकुशल योधा थे, तथा महावीर और नीतिके जाननेवाले भी थे, इस कारण उनके उद्देश, उपदेश और उत्तेजनासे सभी सामन्तोंने एकमत होकर अपनी सम्मति प्रकाशित की, कि हम सभी लोग आपके प्रस्तावमें सम्मत है, अंतमें सम्मतिपत्र पर अपने२ नामके हस्ताक्षर भी करदिये। सवाईसिंहने इस प्रकार सबसे पहले सफलता प्राप्त करके शीघ्र ही उस सामन्त मंडलीके साथ किलेमें से भीमसिंहकी गर्भवती रानीको लाकर नगरमें बड़ी सावधानीसे एक महलमें रख दिया। अंतमें उस सामन्त मंडलीने एक सम्मतिमें राजा मानसिंहके सामने उन भीमसिंहकी रानीके गर्भका समाचार कहा, यदि रानीके पुत्र होगा तो उनको मारवाड़के सिंहासनका भावी उत्तराधिकारी रूपसे स्वीकार करना होगा। चतुर मानसिंह इस बातको भलीभाँतिसे जान गये थे कि यदि इस विषयमें मैंने अपनी असम्मति प्रकाश की, तो सभी सामन्त मुझसे विरुद्ध होजाँयगे, इस कारण उन्होंने उसी समय कहा, कि "यदि रानीके पुत्र होगा तो वही मरुक्षेत्रका उत्तराधिकारी होगा, और कुमारके जन्म लेनेसे उनकी पद मर्यादा बढ़ानेके लिये नागौर और सिवाना यह दोनो उनको दियेजाँयगे, और यदि रानीके कन्याहुई तो ढूंढारके राजकुमारके साथ उसका विवाह करदिया जायगा।" राजा मानसिंहकी इस प्रतिज्ञासे सामन्तोने किसी प्रकारकी आपत्ति करनेका प्रयोजन न समझा, और पोकरणके सामन्तने भी उस समय अपनी प्रतिहिंसा वृत्तिको चरितार्थ करनेका कोई उपाय न देखा। रानीने यदि पुत्र उत्पन्न किया तो उनकी आशाके पूर्ण होनेमें विशेष सुभीता मिल जायगा, इसी आशासे धीरज धरकर वे समयकी बाट देखने लगे।

राजाके परलोकवासी होनेके पीछे विधवा रानियोंके औरस जात सन्तान उत्पन्न करते ही राजपूत राज्यमें बड़ी हलचल मच जाती थी, उन नवप्रसूत राजकुमारके स्वार्थ साधनके लिये सामन्त मण्डलीकी प्रायः एक २ सम्प्रदाय उनके पक्षमें जाकर आत्मविग्रह और अंतमें जातीय युद्धतक उपस्थित कर देती थी। ऐसी अवस्थामें गर्भवती रानियां प्रायः पुत्र ही उत्पन्न करती है, "और जो रानीके कन्या उत्पन्न हुई तो उसी समय किसी और के गर्भजात पुत्रको लाकर, रानीके यह पुत्र उत्पन्न हुआ है, ऐसा प्रचार करते थे या नहीं" यद्यपि महात्मा टाड् साहबने इसका वर्णन नहीं किया है, परन्तु उनकी कथाके भावसे यही समझा जाता है। वह जो कुछ हो, ठीक समयसे भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ। राजा मानसिंह नवीन कुमारके कोमल जीवनकमलको नष्ट करदेंगे, इस भयसे राजमहिषीने कुमारको एक टोकरीमें रखकर अत्यन्त विश्वासी सेवकके द्वारा उसे पोकरणमें सवाईसिंहके पास भेजदिया। पोकर्णके सामन्त उस नवीन कुमारको पाकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त हुए, और बडी सावधानीसे उनका लालन पालन करनेलगे। परन्तु प्रकाशमें उन्होंने दो वर्षतक राजकुमारके जन्मका वृत्तान्त गुप्त रक्खा। कर्नल टाड् साहब लिखते है "कि यदि महाराज मानसिंह अतीत घटनाको भूलकर सबके ऊपर न्याय करते, और सामन्तोंसे विद्वेशभाव प्रकाश कर भीमसिंहके शासन समयमें जिन

सामन्तोंने उनका साथ न देकर भीमसिंहके पक्षका अवलम्बन किया था, उनके साथ असद्व्यवहार न करते, तो इन नवीन कुमार धौकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त चिर दिन तक गुप्त रक्खा जासकता। राजा मानसिंहने राज्यमे अपनी शासन शक्तिको भलीभांतिसे दृढ़ करके, जिन सामन्तोने इनके साथ जालौरके किलेमे बंदीभावसे रहकर इनकी विशेप सहायता की थी, केवल उन्ही सव सामन्तोको ऊंचापद सम्मान और मर्यादा दी थी तथा जो सामन्त भीमसिंहकी आज्ञाके अनुसार उनके विपक्षमे खडे हुए थे, उन्होने सरलतासे उनके ऊपर विराग दिखाना प्रारंभ करदिया। राजा मानसिंहका साथ केवल उनके स्वजातीय दो प्रधान सामन्तोंने दिया था। उनके पक्षका अवलम्वन करनेवालोमे भाटी जातीय राजपूत सेना तथा महन्त कायमदासके अधीनमे स्थित विष्णुस्वामी नामक सेनादल[१] भी था।

राजा मानसिंहने अपने अनुगत सामन्तोंके प्रति विशेप कृपा प्रकाश की और अन्य सामन्तोके ऊपर वे अधिक रुष्ट रहने लगे, इस व्यवहारसे पोकरणके सामन्त सवाईसिंहके हृदयमे वह भस्माच्छन्न प्रतिहिंसाकी अग्नि फिर प्रवल होगई। वह इतने दिनोतक मानसिंहको किसी भाँति भी सामन्त मडलीका अप्रियपात्र होता हुआ न देख कर मौन थे, परन्तु दो वर्षके पीछे मानसिंहको पक्षपातमूलक, आचरण करते हुए देखकर तथा अन्यान्य सामन्तोंको उससे महा असंतुष्ट देखकर सवाईसिंहने शीघ्र ही अपनी सम्प्रदायके प्रधान २ नेताओंके निकट धौकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त, और "दो वर्पतक मैंने उनका पालन किया है" यह समाचार कहला भेजा, और उसके साथ ही साथ सबको यह भी याद दिलाई कि राजा मानसिंहने राजकुमारको जो नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा है वह इस समय अपनी उस प्रतिज्ञाको भी पूर्ण करैं। अत्यन्त अल्प समयमे ही सामन्त गण सवाईसिंहके द्वारा भेजे हुए समाचारको पाकर एक साथ मिलगये। सवाईसिंहने उनके साथ महलमे जाकर धौकलसिंहके जन्मका समाचार राजा मानसिंहको सुना दिया, "महाराज! आपने कुमारको नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा था, इस समय आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन कीजिये।" भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ है, दो वर्प तक मानसिंहको यह समाचार विदित नहीं हुआ था, परन्तु इस समय धौकलसिंहके जन्मका समाचार सुनकर वह चैतन्य होगये। मानसिंह और कोई उपाय न देखकर वोले, "धौकलसिंह यदि वास्तवमे ही राजा भीमसिंहके औरस जात पुत्र हुए है, तो भलीभाँति खोज करलेने पर मै अवश्य ही अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करूंगा।" भीमसिंहकी विधवा रानी, पुत्रको पोकरणमे भेजकर आप जोधपुरके महलमे रहती थी। राजा मानसिंह यथार्थ बातके जाननेके लिये उद्यत हुए है, यह सुनते ही रानी महाभयके समुद्रमे निमग्न होगई। उन्होने विचारा कि

---

(१) यह सेनादल विष्णुका भक्त था। महन्तके स्वार्थकी रक्षाके लिये इसने प्राणपणसे युद्ध किया था, आवश्यकता होनेपर महन्तकी आज्ञासे दूसरोका साथ भी देते थे। यद्यपि धर्मार्जन ही इनके जीवनका प्रधान उद्देश था पर वे युद्धकार्यसे भी कदापि विमुख न होते थे।

यदि मैं इस बातको स्वीकार करती हूँ कि धौकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र है तो राजा मानसिंह अवश्य ही इनको अपना शत्रु जानकर मार डालेंगे। यह विचार कर रानीने धोकलसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये सबके सामने कहा, कि धौकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र नहीं है। रानीके इस प्रकार कहते ही राजा मानसिंहकी समस्त आपत्तियें मानो दूर होगई, तथा पोकरणके सामन्त सवाईसिंहकी ऊँची आशालता भी मानो उसके साथ ही साथ एकवार ही भस्म होगई। भीमसिंहकी रानी निश्चय ही गर्भवती थी पहले उन्होंने इसका कोई प्रमाण नहीं लिया था, इस कारण सामन्त गण रानीके इस वचनको सत्य जान कर राजाके सम्मुख तैयार होगये, और पोकरणके सामन्त भी चारोओर अंधकार देखने लगे।

प्रतिहिंसा दानार्थी सवाईसिंह यद्यपि भीमसिंहकी रानीकी उक्तिसे व्यर्थ मनोरथ होगये, यद्यपि उन्होंने प्रकाशमें राजा मानसिंहके समीप कोई प्रार्थना नहीं की, यद्यपि उनको उसी समय अपने सहयोगी सामन्तोंके साथ मिलकर मानसिंहके विरुद्धमें तलवार धारण करनेका सुअवसर नहीं मिला, परन्तु वह शीघ्र ही अन्य उपाय न देखकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये सावधान होगये। पितृहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये सवाईसिंह इस समय कूट राजनीतिका अवलम्बन कर जिस प्रकारके विषोक्त षड्यंत्र जालकी सृष्टि करने लगे, उस षड्यंत्र सूत्रसे क्या विष उत्पन्न होगा उसको वह स्थिर न करसके। उसी षड्यंत्रसे केवल मारवाड विध्वंस कर दिया, यही नहीं, उसीसे सवाईसिंहने अपने धन और प्राणको भी खो दिया–विश्व विदित राठौर जातिकी स्वाधीनता रूप अमृतराशि विजातीय विधर्मी और अत्याचारियोंके द्वारा अपहृत हुई, और राठौर जातिका वह अंतिम क्षीण गौरव भी एकवार ही चिरकालके लिये लुप्त होगया। सवाईसिंहने एकमात्र प्रतिहिंसा वृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये विध्वंसकारी नीतिके अवलम्बनसे सबसे पहले अपनी भविष्य उन्नतिके आशा भरोसा और प्रताप प्रभुत्वको सञ्चय करनेके लिये एकमात्र उपायस्वरूप धौकलसिंहकी निर्विघ्नतासे रक्षा करना एकान्तकर्त्तव्य जान लिया था। पोकरणका किला यद्यपि भलीभांतिसे मजबूत था तथापि वहां इनको दीर्घकालतक रखना असंभव जानकर उन्होंने धौकलसिंहको शेखावाटीसे खेतडी ले जाकर छत्रसिंहभाटीके प्रतिभू अभयसिंहके पास भेज दिया। धौकलसिंह अभयसिंहके पास निर्विघ्नतासे रह सकेंगे, यह जानकर सवाईसिंहने अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये चातुरी जालका विस्तार प्रारंभ करादिया, सवाईसिंह जैसे असीम साहसी वीर थे, उसी प्रकारसे षड्यन्त्रके कौशलका फल भी शीघ्र ही प्रकाशित हुआ।

सवाईसिंहने इतने दिनोतक मानसिंहके विरुद्ध खड़े होकर उनको यह विदित करदिया कि यही उनके राज्यके कण्टक स्वरूप है और इन्हीके द्वारा विघ्नकी विशेष संभावना है, पर अब परम नीतिज्ञ चतुर सवाईसिंह अपने स्वार्थ साधन करनेके

(१) यह सेखावत सम्प्रदायके एक अत्यन्त बलशाली प्रधान नेता थे।

धौकलसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मानसिंहके विरुद्ध जगत्‌सिंहकी सेनाके साथ जो समस्त राठौर नेता जा मिले थे, उनमें राठौर वंशमें उत्पन्न हुए बीकानेरके स्वाधीन राजा सबमें अग्रणीय थे। बीकानेरके महाराजको मानसिंहके विरुद्ध खड़ा हुआ देखकर मरुक्षेत्रके अन्यान्य सामन्तोंने भी एक २ करके जगत्‌सिंहका साथ दिया। राजा मानसिंह इकले ही उस महा विपत्तिके जालमें फँस गये। पोकर्णके सामन्तोंकी प्रतिहिंसावृत्तिके चरितार्थ होनेके पूर्व लक्षण भलीभांतिसे प्रकाशित होनेलगे। यद्यपि मानसिंहको सम्पूर्ण सामन्तोंने छोड दिया था, यद्यपि वह चारोओर केवल निराशाकी विभीषिकामयी मूर्त्तिको देखने लगे थे, परन्तु उन्होंने स्वजातिके स्वभाव वश साहसके साथ धीरज धर कर अपनी रक्षा करने और जगतसिंहने भी उनकी सहयोगी राठौर सेनाके साथ युद्धके लिये तैयार होनेमें किञ्चिन्मात्रका विलम्ब नहीं किया। जगत्‌सिंह सम्मिलित सेनाके साथ मारवाडमें जाकर उपस्थित हुए, मानसिंह इससे पहले ही अपने अधीनकी सेनाके साथ बलविक्रम प्रकाश करके सीमाके अन्तमें आ पहुँचे। इधर जयपुरपति जगत्‌सिंहने अपनी सेनाके अतिरिक्त मरुक्षेत्रके प्राय सभी राठौर सामन्तो की सहायता पाकर लाखसे भी अधिक सेनाको युद्धके लिये तैयार करलिया। मारवाड विध्वंसके पूर्व लक्षण प्रकाशित होने लगे। जगत्‌सिंह जिस प्रकार अनुपम रूपवती कृष्णकुमारीको पानेके लिये तथा मारवाडपतिको प्रतिहिंसा देनेके लिये बलविक्रम प्रकाश करते हुए आगे बढे, उसी प्रकारसे धौकलसिंहके अनुगत सामन्त भी मानसिंहको सिंहासनसे उतार कर धौकलसिंहको मरुक्षेत्रके राज्य गद्दी पर बैठानेके लिये, आग्रहके साथ आ मिले। इसी कारणसे मानसिंहका प्रतिद्वन्दी पक्ष अत्यन्त प्रबल होगया। अधिक क्या कहें, जयपुरके महाराजने इकले ही अपनी सेनाके साथ मारवाड़ पर आक्रमण करनेका उद्योग किया, मानसिंह इससे कुछ भी भयभीत न हुए, परन्तु उनके स्वजातीय महावीर राठौर सामन्तोंने जो जयपुरके महाराजका साथ दिया, इससे मानसिंहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ। महाराज अजितके जीवन विनाशका फलस्वरूप क्या मारवाड एकबार ही विध्वंस होजायगा, इसी लिये राठौर सेनाके सामन्त अपने स्वभावसे राजभक्तिकी जडमें दारुण कुठाराघात करके अपने राजाके विरुद्ध खडे होगये है? मारवाड और जयपुरके दोनो राजाओंमें इस महा युद्धकी तैयारी होते ही रजवाडे और भारतके अन्यान्य प्रान्तोंसे अनेक सम्प्रदायोंने आ आकर किसी न किसी पक्षका साथ दिया। जिन महाराष्ट्रोंने इस समय भारतमें केवल दस्यु वृत्ति राज्यको लूटना, और राजपूत राजाओंमें विवाद प्रज्वलित करादिया था, वे अंतमें किसी न किसीके पक्षके योगसे दोनो ओरके निकटसे अधिक धनके संग्रह करनेमें नियुक्त होते थे, वही इस समय इन दोनो राजपूत राजाओंके विवादसे महा प्रसन्न हो स्वार्थ साधन करनेके लिये दलके दलें आकर दोनो पक्षोंका साथ देनेलगे। कई वर्षके पहले माधोजी सिन्धिया मारवाड़में सर्वस्व लूटनेके लिये गये थे, इस कारण मारवाडके खजानेकी अवस्था इस समय अत्यन्त शोचनीय होरही थी, अन्य पक्षसे जयपुरपतिके अर्थ बल प्रबल होनेसे

अधिकांश महाराष्ट्र उनके साथ मिल गये। जिस समय अंग्रेजी सेनाके नायक लार्ड लेक दूसरे महाराष्ट्रनेता हुलकरके विरुद्ध धावमान हुए थे, उस समय हुलकर मारवाडपतिका आश्रय लेकर अपने कुटुम्बको मारवाडमे निर्विघ्नतासे रख, आप अटकके किनारेको चले गये। मानसिंहने उस समय हुलकरकी अधिक सहायता की थी, इसीसे इस समय उन्होने महा विपत्तिमे हुलकरसे सहायता माँगी, तुरन्त ही महा विपत्तिमे आश्रय दाता मानसिंहकी सहायताके लिये हुलकर अपनी सेनाके साथ आ गये। हुलकरने मानसिंहके डेरोंसे नौ कोस दूर पर अपने डेरे डाले और कहला भेजा कि कल प्रभात होते ही आपके साथ साक्षात् किया जायगा, परन्तु बुद्धिमान् सवाईसिंहने मानसिंहकी वह आशा भी व्यर्थ कर दी। सवाईसिंहने जब देखा कि प्रबल पराक्रमशाली हुलकरने मानसिंहका साथ दिया है, इस कारण इनको युद्धमे जीतना असंभव होजायगा, तब इसने सबसे पहले हुलकरको ही अपने हस्तगत करना उचित जाना। शीघ्र ही हुलकरके साथ उसने स्थिर किया, वह मानसिंहकी सहायताके लिये किंचित् भी सेना न भेजे, और तुरन्त ही कोटेकी ओरको चले जाँय। वहाँ जाते ही इनको भेटमे १००००० रुपये प्राप्त होंगे। धनका लोभी हुलकर मानसिंहके उन उपकारोंको एकबार ही भूल गया, और बिना ही युद्धके १००००० रुपया मिलता जानकर तुरन्त ही सवाईसिंहकी हस्ताक्षर सहित हुन्डी लेकर कोटकी ओरको चला गया। महा दुःखके समय घोर विपत्तिके समयमे महाराज मानसिंहने जो हुलकरको आश्रय दिया था, हुलकर उसको एकवार ही भूल गया। हुलकरके इस आचरणको देखकर महाराज मानसिंह अत्यन्त ही निराश होगये। परन्तु उस समय भी उनके पक्षमे मरुक्षेत्रके सबमे प्रधान वीर मेरतिया सम्प्रदाय तथा अन्यान्य राठौरोंकी सम्प्रदाय भी नियुक्त थी, वह सभी साहसमे भरकर युद्धकी अग्नि प्रज्ज्वलित करनेके लिये आगे बढे।

हुलकरके भागते ही जगत्सिंह और धौकलसिंह उस लाखसे भी अधिक सेनाके साथ मानसिंहकी सख्याबद्ध सेनाको एकवार ही विध्वस करनेके लिये महा बल विक्रमके साथ आगे बढे। मानसिंह इस समय अपनी सेनादलके साथ गागोलीनामक स्थानमे थे, दोनो ओरकी सेनाके सम्मुख होते ही जो सब राठौर सामन्त उस समयतक राजा मानसिंहके पक्षमे नियुक्त थे उन्होने घोड़ेपर सवार हो भलीभाँतिसे सम्मान कर प्रणाम करके विदा ली, राजा मानसिंहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि सामन्त अपने २ अधीनकी सेनाके साथ युद्धमे जानेके लिये विदा लेते है, परन्तु तुरन्त ही उनका वह भ्रम जाता रहा, जगत्सिंहकी सेनाने जिस समय गोले वर्षाने प्रारंभ किये उसी समय समस्त सामन्त सवाईसिंहके साथ पूर्व निर्द्धारित सम्मतिसे मानसिंहका पक्ष छोड़कर शत्रुपक्षके साथ जा मिले। अधिक क्या कहे, जो मेड़तिया मरुक्षेत्रमे राजभक्तिमे सबसे अधिक प्रसिद्ध थे, कोई भी सिंहासन पर

बैठे, कितना ही अत्याचारी क्यो न हो पर तथापि वे उसका साथ नही छोडते थे मेड़तियाके दलके ईहाईधूया तथा सरदार चम्पावत जयतावत गण, जो शूरवीरताभे विख्यात् गिने जाते है—तथा अन्यान्य नीची श्रेणीके सामन्तोके साथ मानसिहका पक्ष छोडकर धौकलसिहके स्वार्थ साधन करनेके लिये उनके आधीनसे रितत अन्य स्वजातीय राठौर सेनाके साथ जा मिले। इस युद्धके प्रारभमे ही भयंकर विपत्तिके मुखमे पडे हुए मानसिह अपने आधीनके समस्त सामन्तोसे त्यागे जाकर चारोंओर अन्धकार देखने लगे। क्रोध अनुताप तथा विषाद और भयके मारे मानसिह मानो उन्मत्त होगये, और इस समय क्या करै! इसका कुछ भी स्थिर न करसके। मरुक्षेत्रके सम्पूर्ण सामन्तोमे केवल कुचामन आहवा जालौर[1], और नीमाज इन्ही चारो सामन्तोने राजा मानसिहको इस महा विपत्तिके समयमे नहीं छोड़ा था, वह लोग विपत् सम्पत्के अंशके भागी होनेके लिये उनके साथ ही रहे थे। मानसिह उन चारो सामन्तोके आधीनकी सेनाके साथ, और अपने सगवाली बूंदीकी संख्यावद्ध सेनाको साथ लेकर शत्रुओकी अगणित सेनाके विरुद्ध अतिस साहसके साथ युद्ध करनेके लिये आगे चले। परन्तु उन विश्वासी चारो सामन्तोने देखा कि शत्रुओकी अगणित सेनासे युद्धमे जय पाना तो एक ओर रहा वरन् प्राणोकी रक्षा भी कठिन होगी, इस कारण उन्होने मानसिहको इस असीम साहसके कार्यमे हाथ डालनेसे निषेध किया। तव मानसिह मारे दुःखके आत्मघात करनेको तैयार हुए;परन्तु कुचामनके शिवनाथसिहने आगे जाकर महाराज मानसिहको हाथी परसे उतार लिया और तुरंत ही उन्हे एक वेगगामी घोडेपर बिठाकर रणखेतसे चले जानेका अनुरोधकिया। राजा मानसिहने देखा कि इस समय यहांसे भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय नही है, तव वह शीघ्र ही, विषाद, क्रोध, लज्जा, घृणा और अनुतापसे विदग्ध हृदय हो घोडेपर चढकर वहाँसे चले गये। उन्होने जानेके समय नेत्रोमे जलभर कर कहा, " हाय! राठौर राजवंशमे एक मैने ही कछवाहोके सम्मुख युद्धमे पीठ दिखाकर राठौर राजकुलमे कलंक लगाया। " वास्तवमे राठौर जाति मरुक्षेत्रसे अपनी प्रभुताके विस्तारके समय अन्यान्य राजपूत जातियोको अपनी उपेक्षा बलविक्रममे अत्यन्त हीन जानकर उनके प्रति अपेक्षा दिखाती थी, इस कारण मानसिहके हृदयसे इस समय ऐसा पश्चात्ताप होनेमे आश्चर्य ही क्या है।

राजा मानसिहने अपना पक्ष अत्यन्त दुर्बल जानकर पहलेसे ही सावधान होकर पर्वतसर मार्गसे आधे कोश आगे जाकर अपने डेरे डाल दिये। सरलतासे भागने और शत्रुपक्षके आक्रमणको निवारण करनेके लिये यह स्थान वड़े सुभीतेका था। इस कारण वह अतमे अत्यन्त निरुपाय होकर उसी मार्गसे पर्वतसरमे आगये। राजा मानसिहने जव वनियाराके रावके साथ पीठ दिखाई तव उनके पक्षके बूंदीके गोलन्दाजो तथा हिदालखॉं नामके मनुष्यने धनके लोभके वशीभूत होकर इनका साथ दिया था,

---

(१) जालौर तो खालसेका गॉंव है वहॉं कोई सामन्त नहीं है और न पहले था।

उसके आधीनकी गोलन्दाज सेना बराबर भयंकर वेगसे गोलोकी वर्षा कर शत्रुओके पक्षके आक्रमणको निवारण करने लगी । जिस समय दोनो ओरसे गोलोकी वर्षा होने लगी, उस समय मानसिह निर्विघ्नतासे मेरतामे आ पहुँचे । राजा मानसिहको इस प्रकारसे शत्रुओके करालग्राससे उद्धार करके उनको औरका उक्त गोलन्दाज दल भी धीरे २ चलकर राजा मानसिहके निकट आ पहुँचा । मानसिहने मेरतामे आकर देखा कि एक लाखसे भी अधिक सेनाके हाथसे अपनी रक्षा होगई, पर मेरताकी अपेक्षा किसी अभेद्य किलेमे रहना ठीक है, इस कारण वह शीघ्र ही मेरतासे पीपाड़ होकर राजधानी जोधपुरमे आ पहुँचे । वे चार सामन्त, जिनके पास बहुत थोडी सेना थी, और जो उनके साथ सुख दुःख सबमे अंशके भागी होनेके लिये मिले थे, उस समय भी उनको न छोड़कर साथ ही साथ जोधपुर राजधानीमे चले गये । मानसिहके युद्धक्षेत्रसे भागते ही जगत्सिह और धौकलसिहके साथ महाराष्ट्र नेता सेंधियाके अन्यतर सेनापति वालारावने मानसिहके डेरोको लूटकर अठारह तोपै अपने अधिकारमे कर ली, और अमीरखांनामक अन्य एक पठान सेनापतिने, जो शत्रुओके यहां नियुक्त था, मानसिहके डेरोमेसे बहुत सा द्रव्य लूटलिया । विजयी सेनाने मानसिहके भागनेसे पर्वतसर और उसके निकटवर्ती ग्रामोंको लूट लिया । मारवाड़के विध्वंशका यह प्रथम ही कारण प्रारंभ हुआ ।

पोकरणके सामन्त सवाईसिहने मानसिहके भाग्यमे यह कालरात्रि उपस्थित कर दी । जिसने अपने पैतृक प्रतिहिंसावृत्तिको चारितार्थ करनेके लिये इस भयंकर समरानलको प्रज्वलित किया था, प्रथम युद्धमे ही मानसिहके भागजानेसे उसकी वह आशा पूर्ण हो गई और जयपुरके महाराज जगत्सिहकी प्रतिहिंसावृत्ति सफल हुई । मानसिहके भागते ही जगत्सिहने सवाईसिहको बड़े आदर सम्मानके साथ बुलाकर कहा, " आपका मनोरथ सिद्ध होगया, मानसिह जिस भावसे परास्त होकर भाग गये है इससे अब धौकलसिहको सिहासनकी प्राप्तिमे वह कुछ भी बाधा नही देसकेगे। आप सेनाके साथ राजधानी जोधपुर पर अधिकार कर धौकलसिहके शिरपर मारवाड़का राजमुकुट धारण कीजिये, मै भी राणाकी कन्याके साथ पाणिग्रहण करनेके लिये मेवाड़को चलता हूं।" बुद्धिमान् सवाईसिह जगत्सिहकी अपेक्षा अधिक नीतिज्ञ और विचारवान् थे । जगत्सिहका स्वार्थ पूरण करना उनका मुख्य अभिप्राय न था । केवल जिससे जगत्सिहकी सहायतासे धौकलसिहका स्वार्थ सिद्ध होजाय इसीलिये उन्होने उस अभेद्य षड्यंत्र जालके विस्तारसे जगत्सिहको विजड़ित करदिया था। उन्होने जगत्सिहको उत्तर दिया कि " मानसिह इस समय भी परास्त नही हुए है, अभी उनको उचित फल नही मिला है, वह इस समय भी हतवीर्य नही हुए है । मानसिहको सब प्रकारसे परास्त करके मेवाड़मे जाकर कृष्णकुमारीके साथ विवाह करना आपको उचित है।" सवाईसिहके इस वचनसे जगत्सिहने उसी समय मेवाड़मे जाकर उनकी संमतिके अनुसार कार्य करना प्रारभ किया । सवाईसिह जगत्सिहके उपदेशसे विजयी सेनाके

साथ शीघ्र ही राजधानी जोधपुरमे न जाकर मेरता नामक स्थानमे तीन दिन तक अपेक्षा करने लगे। वुद्धिमान् सवाईसिहने विचारा था कि मानसिहके अधीनमे जितनी अल्प संख्यक सेना है, उससे वह राजधानी जोधपुरकी रक्षा कभी नही कर सकते, अवश्य ही जोधपुरको छोड़कर जालौरके अभेद्य किलेका आश्रय लेंगे, इस कारण उनके जालोरमे जाते ही जोधपुर पर अधिकार करेगे। वास्तवमे सवाईसिहका यह अनुमान अवश्य ही सत्य था। राजा मानसिह सेनाके साथ भागकर सबसे पहले जालौरका आश्रय लेनेके लिये वीसलपुरमे आ पहुँचे। चैनमल सिंघवी नामक एक राजकर्मचारीने मानसिहको जालौरमे आश्रय लेनेके लिये उद्यत देखकर कहा, "महाराज! यहासे दहिनीओर नौ कोस दूरी पर राजधानी जोधपुर और सोलह कोस दूरपर जालौरका किला स्थित है, जालौरकी अपेक्षा जोधपुरमे बड़ी सरलतासे पहुँचा जा सकता है। आप यदि अपने बाहुबलसे राजधानीकी रक्षा करनेमे समर्थ न होंगे तो अन्यत्र स्थानमे रहकर सिंहासनके अधिकारकी आशा कहाँ है? आप जबतक राजधानीमे रहकर सिंहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करते रहैंगे, तबतक सम्पूर्ण सर्वसाधारण प्रजा अवश्य ही आपके पक्षका अवलम्बन करैगी, नहीं तो जालौरका आश्रय करैगी, आपको कभी उनसे सहायता नही मिलैगी" राजा मानसिहने इस कर्मचारीके उपदेशको न्यायसंगत जानकर, कई घंटोके बीचमे जोधपुरमे आकर, शत्रुओंके करालग्राससे सिंहासनकी रक्षाके लिये दृढ़ किलेके भीतर रहनेका उद्योग किया। इस प्रकारसे मानसिह जालौरमे न जाकर राजधानीमे लौट आये, इससे सवाईसिहकी कल्पना व्यर्थ होगई, इस कारण जगत्सिह उस समय मेवाडमे जानेकी आशा छोडकर शीघ्र ही राजा मानसिहको एकवार ही सिंहासनसे रहित कर धौकलसिहको अभिषिक्त करनेके लिये सम्मिलित सेनाके साथ राजधानी जोधपुर पर अधिकार करनेके लिये चले। वास्तवमे मानसिह यदि पहले विचारके मतसे जोधपुरमे न आकर जालौरमे चले जाते तो धौकलसिहको राज्याभिषेक करनेमे कोई उपद्रव नही होता। राजा मानसिहके युद्धमे परास्त होकर भागते ही अत्यन्त पीड़ा उपस्थित हुई थी, इस समय उनका राजपूत वीर स्वभाव तथा बलविक्रम मानो एकवार ही लुप्त होगया था, अपने अधीनके सामन्तोको अपने ही विरुद्ध खडा हुआ देखकर वह हतोत्साह और ज्ञान हीन होगये थे, परन्तु उनके राजधानीमे आते ही, वह विध्वंश हृदय वह जातीय गर्व दर्प फिर शीघ्रतासे आता हुआ दिखाई दिया, उस समय इन्होने अपने दुगने उत्साहके साथ सिंहासनकी रक्षामे प्राणपणसे चेष्टा की।

मरुक्षेत्रके जो सब सामन्त शत्रुओंकी सेनाके साथ मिले थे इससे महाराज मानसिह उनके ऊपर अत्यन्त रुष्ट हुये। राठौर सामन्तोके ऊपर अब उनको किञ्चितमात्र भी विश्वास नही रहा, अधिक क्या, जो चार सामन्त इस समय तक उनके अनुगत भावसे रहते थे, यह भी किसी समय हमारा साथ छोड कर शत्रुओमे जा मिलैंगे, वह यह

---

(१) वीसलपुरसे जालोर ४० कोसके करीब होगा। नकी सोलह कोस।

विचारने लगे। यद्यपि वह चार सामन्त इनके जातिके थे, तथापि उन्होने शत्रुओके कराल कवलसे, जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार भी उनके हाथमे नही दिया। सवसे पहले इन्होने विजातीय वेतन भोगी हिन्दालखाके अधीनमे स्थित सेनाके तीन हजार साहसी वीरोको नियुक्त करके, उनके साथ नेता कायमदासके अधीनका विष्णुस्वामीनामक धर्मयोधा दल तथा चौहान, भाटी और मंडोरके आदिमे राजवंशीय ईदाजातीय एक हजार सेनाका सग्रह कर उसके हाथमे किलेकी रक्षाका भार सौप दिया, इस प्रकार सव समेत पांच हजार सेना सग्रह करके मानसिहने विचारा कि जोधपुरके किलेकी रक्षाके लिये इससे अधिक सेनाका प्रयोजन नही होगा, इस कारण उन्होने शत्रुओके हाथसे राज्यके अन्यान्य अभेद्य किलोकी रक्षाके लिये चेष्टा की। सवसे पहले जालौरका किला तथा राज्यकी सीमावर्ती अमरकोटके किलेको रक्षाके लिये कितनी ही सेना भेज दी। जिससे सिन्धी सेनादल राजा मानसिहको महा विपत्तिमे देखकर अमरकोट पर अधिकार न करले, इसी लिये उन्होने पहले ही सावधान होकर वहां सेनाको भेज दिया।

मानसिह इस प्रकारसे जोधपुरके किलेको दृढ़वद्ध तथा जालौर और अमरकोटमे सेनाको भेजकर साहस पूर्वक शत्रुओके आनेकी राह देखने लगे। परन्तु जो चार सामन्त इनकी महा विपत्तिके समयमे भी सुख दुःखके साथी हुए थे, वह विजातियोके हाथमे जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार अर्पण हुआ देखकर अत्यन्त ही दु'खित हुए और उन्होने अनेक भॉतिसे विनय करके मानसिहके निकट प्रार्थना की कि हमारे हाथमे किलेकी रक्षाका भार अर्पण कियाजाय, मानसिहने किसी भॉतिसे भी उनकी प्रार्थनाको पूर्ण न किया, अर्थात् किलेकी रक्षाका भार उनको नही दिया। परंतु जव चारो सामन्तोने अनेक वार प्रार्थना करी तव अंतमे इन्होने कहा "यदि आपकी इच्छा हो तो जोधपुर नगरकी रक्षाके कार्यमे नियुक्त होजाइये।" महाराजको वृथा सन्देहित देखकर अंतमे वह चारो सामन्त अत्यन्त दु'खित होकर राजधानीको छोड़ शीघ्र ही शत्रुओके साथ जा मिले। इस प्रकारसे महाराज मानसिह सव सामन्तोसे छोडे जाकर केवल वेतनभोगी सेनाको लेकर सिहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करने लगे। इन्होने विचारा कि यद्यपि शत्रुपक्षकी सेनाकी सख्या एक लाखसे भी अधिक है, यद्यपि समस्त राठौर सामन्त तथा विजाती महाराष्ट्र और पठान उस सेनामे मिले है तथापि वह किसी भॉतिसे भी अति अल्प समयमे सरलतासे सिहासन पर अधिकार नहीं करसकते। मानसिह इस अनिश्चित आशापर विश्वास करके रहने लगे। जातिगत पतन होगया चारो ओरसे सव हृदय भेदी लक्षण स्वत' ही प्रकाशित होगये यह सव कांड अभिनय अनिवार्य होगये—मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमे—राठौर जातिमे वह सव लक्षण—वह सकल कांड—वह सकल अभिनय—अविश्रान्त गतिसे इस समय नेत्रोके सम्मुख दृष्टि आने लगे। जातिगत पतन जातिके द्वारा ही होता है, जातीय स्वाधीनता विलुप्त, जातीय समस्त अधिकारसे रहित, जातीय गौरवके सूर्य अस्त करनेको यदि जाति स्वय अग्रसर न हो तो, कभी अन्य जातिके द्वारा यह

कार्य सिद्ध नहीं होता, जो महाशक्ति जातिकी प्राणप्रतिष्ठा करदेती है, जातिकी नस २ मे अपना अव्यर्थ तेज भर देती है, जातिने जिस दिनसे उस महाशक्तिका अपमान किया, तथा आलस्य विलसिताके वशीभूत होकर जातीय भ्रातृभावकी जडमे कुठार मारनेके लिये उद्यत हुई कि उसी दिनसे अविश्रान्त गतिसे जातिका पतन साधित हुआ। उस समय जातिने ही एकता, वीरता, विक्रम, और साहके विनाश साधनमे विनियुक्त होकर हृदय विदारक दृश्य उपस्थित करदिये थे। मारवाड़के भाग्यमे भी इस समय वही दशा आकर उपस्थित होगई। एकमात्र मानसिहको लक्ष्य करके, चिरवीर-व्रतधारी राठौर सामन्त जन्मभूमिका विध्वंश करके जातिके समस्त अधिकारको लोपकर अपना स्वार्थ नाश करनेके लिये उद्यत हुए। उन्होने भूलसे भी इसका विचार न किया—उस उद्योग नेता सवाईसिहने एकबार चिन्ता करके भी न देखा कि यह विध्वंस करनेवाली नीति किस प्रकारसे सर्वनाश उपस्थित करदेगी!

पोकर्णके जो सामन्त एकमात्र अपने पितामह, और पिताकी प्रतिहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये इस जातिका सर्वनाश करनेको उद्यत हुए, एकमात्र अपने नीति कौशल तथा षड्यंत्रकी चतुरतासे इन हज़ारो मनुष्योका सर्वनाश होनेपर भी मानसिहको जोधपुरके किलेमे आश्रय ग्रहण करते हुए देखकर, उसने जयपुरके महाराज जगत्‌सिहको पुनः मरुक्षेत्रकी राजधानी पर आक्रमण करनेके लिये उत्तेजित किया। पहले युद्धमे ही मानसिहको भागाहुआ देखकर, जगत्‌सिहने विचारा कि इनको उचित फल मिलगया। तव आप उसी समय उदयपुरकी ओर जाकर कृष्णकुमारीके साथ विवाह करनेके अभिलाषी हुए थे, परन्तु इस समय मानसिहको प्रवलभावसे किलेमे रहता हुआ देखकर और सवाईसिहके मोहनी मत्रमे मोहितहो जयपुरनरेशने एक लाखसे भी अधिक सेनाके साथ भयकर मेघगर्जनकी समान उत्तालतरंगमालाका विस्तार करते हुए मरुक्षेत्रकी राजधानी पर आक्रमण किया। मानसिहने मारवाड़की राजधानी जोधपुरमे सेना नही रक्खी थी, इस कारण आक्रमण कारियोने सरलतासे नगरको जीत लिया। जो महाराष्ट्र और पठानोकी सेना जयपुर तथा राठौरोकी सेनाके साथ आई थी, वह नगर पर अधिकार करके जयपुरकी सेनाके साथ उस मनोहर राजधानीको लूटकर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगी, चारोओर अत्याचार भयंकर रूपसे प्रवल होगये, जो राठौर सामन्त शत्रुपक्षमे थे वह भी स्वजातिका सर्वनाश होता हुआ देखकर उसके दूर करनेमे किंचितमात्र भी उद्योगी न हुए। उनकी प्रत्येक नस मे राठौरोका रुधिर प्रवाहित हुआ था, तथापि वह उस समय एकवार ही हत ज्ञान होरहे थे, वे स्वजाति वात्सल्य और ममतासे रहित होकर उन अत्याचारियोके साथ जा मिले, और अपने अतःसार शून्यताका परिचय देनेमे मतवाले होगये। फलोदी नामक स्थानके अतिरिक्त राजधानी तथा अन्य समस्त नगर और देशोको वहुत थोडे समयमे ही आक्रमण कारियोने विध्वंस कर दिया। केवल फलोदीके निवासियोने तीन महीने तक विशेष वीरता

प्रकाश करके अपनी रक्षा कर अंतमे उस प्रवल शत्रुदलके हाथमे आत्म समर्पण कर दिया। बीकानेरके अधीश्वरने स्वयं आकर प्रथमसे ही शत्रुपक्षके साथ मिल, सहायता करनेसे उनके पुरस्कार स्वरूप उस फलोदी देशको अपने अधिकारमे करलिया। सवाईसिहने इस प्रकारसे राजधानी और मरुक्षेत्रके अन्यान्य नगरोपर अधिकार कर धौकलसिहको मारवाड़के अधीश्वर रूपसे स्वीकार कर उनका साथ देनेके लिये मरुक्षेत्रमे सर्वत्र घोषणा पत्रका प्रचार करदिया। राजा मानसिह इस समय किलेमे दृढ़भावसे रहनेके अतिरिक्त बाहर होकर शत्रुओके साथ युद्ध करने अथवा किसी प्रकारकी बाधा देनेके लिये आगे नही बढ़े। परन्तु, शत्रुगण शीघ्र ही किलेपर अधिकार करलेगे, यह विचार कर वह अत्यन्त भयभीत होगये, महाराष्ट्री और पठानो इत्यादिकी जो सब विजातीय सेना लूटनेके कार्यमे प्रवृत्त थी उसने शीघ्र ही धौकलसिहको मारवाड़का अधीश्वर कहकर प्रचार करनेके लिये दूने उत्साहके साथ तैयार हो किलेपर अधिकार करनेके लिये गोलोकी वर्षा करनी प्रारभ कर दी। विपत्तिके जालमे पडे हुए मानसिहने उस सख्यावद्ध सेनाके साथ किलेमे रह कर अपने जीवन देनेका सकल्प किया, और असीम साहससे किलेकी रक्षा करनेमे किसी भाँतिकी भी कसर न की, परन्तु उनको किलेकी रक्षाकी आशा दिन २ क्षीण होने लगी। वह इसी मुहूर्त्तमे शत्रुओके द्वारा किलेपर अधिकार करनेकी संभावना विचारने लगे। परन्तु मानसिह ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेमे घिरे रहे, फिर जिस प्रकारसे भाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्न दृष्टिसे उस विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होकर अपने शिरपर राजमुकुट धारण करनेमे समर्थ हुए थे, उसी प्रकार इस भयंकर विपत्तिके जालके मध्यसे हठात् मानो आशाकी ज्योतिर्मयी मूर्ति उनके नेत्रोके सम्मुख दृष्टि आनेलगी। शत्रुओका दल इस समय आत्मविच्छेद तथा स्वतः सृष्ट विपत्तिके जालसे जडित होगया था, महाराज मानसिह सरलतासे उसी कारण अपने उद्धारका पूर्ण विश्वास करनेलगे। विजयी जगत्सिह धौकलसिह और सवाईसिहआदिके भावी विपत्तिके पूर्ण लक्षण तथा उनके विनाश साधनके पूर्वानुष्ठान भी सूचित होने लगे।

जयपुरपति जगत्सिह उस प्रबल सेना श्रेणीके द्वारा जोधपुरके किलेको बराबर पांच महीने तक घेरे रहे। परन्तु उस दीर्घ समयमे जोधपुर राजधानीके पार्श्ववर्ती अन्य नगर और ग्रामोपर अपना अधिकार कर वहांकी धन सम्पति लूटकर तथा उनको विध्वंस करनेके अतिरिक्त वह अवरुद्ध मानसिहका और कुछ भी अनिष्ट न करसके। मानसिह इस सख्या वद्धसेनाको लेकर महावीरता प्रकाश कर असीमसाहसके साथ उस अभेद्य किलेकी रक्षा करने लगे। यद्यपि जगत्सिह उन विक्रमी राठौरोकी सहायता से उन राठौरोकी राजधानीके किलेके उत्तर पूर्व प्रान्तमे निरन्तर गोलोकी वर्षाके द्वारा उस अशको भग्न करनेमे समर्थ हुए, परन्तु भग्न स्थानके सम्मुख ८० फुट ऊँची पत्थर की दीवारको न लांघ सके, उस भग्न स्थानमे प्रवेश करना असभव जानकर आक्रमण-कारी हताश होगये। राजा मानसिह निर्भय होकर उस भग्नस्थानकी दृढ़भावसे रक्षा

करने लगे। इसी समय आक्रमण करनेवालोंके डेरोंमे इस प्रकारकी एक घटना उपस्थित हुई कि उस घटनाने मानसिंहको शत्रु पक्षके कराल कवलसे उद्धारका भावीसूत्र पात करदिया। जगत्‌सिंह और धौकलसिंहके अधीनमें जयपुर और राठौरोंकी सेनाके अतिरिक्त पठान इत्यादिकी अन्यान्य बहुत सी धनलोभी सेना भी नियुक्त थीं क्रमानुसार पाँच महीने तक निरन्तर उस रणक्षेत्रमें उपस्थित रहने तथा रीतिके अनुसार वेतनके न मिलनेसे वह सभी सेना महा असंतुष्ट होकर उद्धत होगई, विशेष करके घोड़ोंकी घास भी इस समय समाप्त होगई थी। शत्रु पक्षके इतने घोड़े आगये थे कि पाँच महीनेमें उनके उसनगर और पार्श्ववर्ती ग्रामोंके सम्पूर्ण तृण चुक गये थे इस कारण घोड़ोंको दक्षिणपर्वतमें दूर २ जाकर घास खिलाया करते थे। सवाईसिंहकी उत्तेजनासे अमीरखाँ नामक एक कठिन नरपिशाच पठान धौकलसिंहकी सदा सहायता करनेके लिये अपनी पठान सेनाके साथ जोधपुरके किलेके घेरनेमें नियुक्त था। अमीरखाँ महाराष्ट्रोंकी समान व्यवसाई और उन्हींकी तरह पक्का लुटेरा था। उसने घोड़ोंको दूर घास चुगानेका बहाना करके समस्त सेनाको अवरोधकारियोंकी सेनासे अलग कर अपनी विकट मूर्ति धारण करनेमें एक मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्ब न किया। अमीरखाँके अधीनमें सामान्य पठान सेना नहीं थी। वह जैसे लुटेरे थे वैसे ही निष्ठुर प्रकृति भी थे, इस कारण नेता अमीरखाँने सबसे पहले मारवाड़की खास भूमि और वाणिज्यके प्रधान स्थानोंको लूटकर तथा उन सब देशोंसे अधिक धन संग्रह करनेके लिये अमित अत्याचार करना प्रारंभ किया। वह सबसे पहले राजा मानसिंहकी खास भूमिसे अधिक धन संग्रह करके शेषमें पाली, पीपाड, वीलाड़ा और अन्यान्य नगरोंको लूटने लगा। जिन सामन्तोंने मानसिंहका पक्ष छोड़कर धौकलसिंहका पक्ष अवलम्बन कर उस जोधपुरके किलेको घेर लिया था इस धनके लोभी अमीरखाँने उन्हीं सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें भी जाकर प्रजाका सर्वनाश करना प्रारंभ कर दिया। अमीरखाँके इन अत्याचारोंसे महा असंतुष्ट हो सामन्तवर्ग अवरोधकारी दलके प्रधान नेताके निकट उनके इस आचरणके विरुद्धमें अनुयोग उपस्थित करने लगे। दीर्घकाल तक जोधपुरके किलेको घेरेरहने, तथा महाराष्ट्री पठान इत्यादिकोंको अपने पक्षमें मिलानेके कारण जयपुरके महाराजका खजाना इस समय एकवार ही खाली होगया, इस कारण मारवाड विध्वंसके प्रधान नेताने पोकरणके सामन्त सवाईसिंहको शीघ्र ही अपने यहाँसे प्रयोजनीय धन लानेके लिये कहा, सवाईसिंहने तुरन्त ही विना कुछ कहे सुने अपना समस्त सञ्चित किया धन तथा अपनी सम्प्रदायके अन्यान्य सामन्तोंके यहाँसे लाकर इनके सम्मुख रख दिया। परन्तु थोड़े दिनोंमे ही वह सब धन समाप्त होगया, जिन चार राठौर सामन्तोंके ऊपर मानसिंहको संदेह था जो अत्यन्त दुःखी होकर इनका पक्ष छोड़कर शत्रुओंके साथ जा मिले

(१) इस नरपिशाच अमीरखाँका विस्तृत वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमें यथास्थान पढ़ा होगा।

थे, सवाईसिहने उनसे धन माँगा । परन्तु यह चारो सामन्त वास्तवमे मानसिह के विरुद्ध तलवार धारण करनेके अभिलापी नही थे, जव मानसिहने इनको अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया, तव यह इच्छा न होने पर भी अपनी रक्षा करनेके लिये धौकलसिहके साथ जा मिले थे । परन्तु इस समय जब उनसे धन मांगा गया तव वे धनके देनेमे राजी न हुए, और असतुष्ट हो उसी समय धौकलसिहका पक्ष छोड़कर अमीरखाँके साथ जा मिले । उन चारो राठौर सामन्तोने विचारा कि वर्तमान अवस्थामे किसी प्रकार भी मानसिंहका उपकार कर सके तो राजाने जो हमारे ऊपर संदेह करके अविश्वास किया है, वह दूर होजायगा । यह चारो जने एकमत हो अमीरखाँके द्वारा अपनी उस आशाके पूर्ण होनेकी विशेप संभावना जानकर सबसे पहले उसको हस्तगत करनेका उपाय करने लगे । अमीरखाँ केवल धनके लालचसे ही इस युद्धभूमिमे आया था, इस कारण उस मनुष्यने उक्त चारो राठौर सामन्तोके प्रस्तावसे सरलतासे मानसिहका पक्ष स्वीकार करनेकी सम्मति दी । सामन्तोने प्रस्ताव किया, कि जयपुरके महाराज जगत्सिह अपनी सम्पूर्णसेनाके साथ इस समय जोधपुरमे है, इस कारण इस सुअवसरमे अ रक्षित जयपुर राज्यपर सरलतासे ही आक्रमण किया जासकता है, निर्विघ्नतासे विना युद्ध किये वहुत सा धन मिल सकता है। अमीरखां इस वातको भलीभांतिसे जानगया था कि पीपाड़, पाली और वीलाड़ा आदिको लूटनेसे जयपुरके महाराज मेरे ऊपर अत्यन्त रुष्ट होगये है । इस कारण वह मनुष्य राठौरके चारो सामन्तोकी सम्मतिसे उसी समय जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये सेना लेकर चला । वे चारो सामन्त भी उसके साथ चले ।

अमीरखांके अत्याचारोका वृत्तान्त राठौरके सामन्तोने जयपुरके महाराजसे पहले ही कह दिया था, जयपुरके महाराजने अमीरखांको दमन करनेके लिये अपने प्रधान सेनापति शिवलालको कई हजार सेनाके साथ भेजा । जिस समय अमीरखां उन चारो राठौर समान्तोके साथ सलाह करके जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये जारहा था, उसी समयमे शिवलालने अपनी प्रवल सेनाके साथ आकर इसपर आक्रमण किया । शिवलालके पास अधिक सेना थी । अमीरखां चारो सामन्तोके साथ शीघ्रतासे लूनी नदीके किनारे२ भागने लगा । शिवलालने लूनी नदीके पास आते ही इसको उसके परली पार करदिया । अमीरखां और चारो सामन्त गोविन्दगढमे चले आये, शिवलालके उस स्थानमे आक्रमण करते ही अमीरखां हरसोर नामक स्थानमे चलागया । वह चारो सामन्त भी इसके साथ २ गये । अमीरखाँ एकवार भी युद्धमे सम्मुख न होकर न जाने किधरको भाग गया, विजयीसेनापति शिवलाल इसका कुछ भी अनुभव न करसका । इसने अमीरखांको सेना सहित वदी करनेकी इच्छासे रात्रिके समय हरसोर नामक स्थानपर फिर आक्रमण किया । अमीरखां चारो सामन्तोके साथ जयपुर राज्यकी शेप सीमाके अन्तवाले फागी नामक स्थानमे भाग गया । शिवलालको भ्रमसे भी यह विचार नही हुआ था कि प्रवल पराक्रमकारी पठानपति अमीरखांको

इतनी जल्दी २ प्रत्येक स्थानसे भगा देंगे। अमीरखां किस गुप्त अभिप्रायके वशीभूत होकर इस प्रकार अपनी इच्छासे ही शिवलालको मारवाड़से क्रमानुसार जयपुरकी सीमामे लाया, उसको उस समय इसका अनुमान भी नही हुआ था। अमीरखां समस्त भारतवर्षमे इस समय एक प्रबल अत्याचारी और पिशाच-प्रकृतिका मनुष्य विख्यात् था। शिवलालने उसको क्रमानुसार इस प्रकारसे मारवाडसे भगा दिया, इसका विचार करके वह मनही मनमे अत्यन्त गर्वित होगया। अंतमे अमीरखॉ चारो राठौर सामन्तोके साथ फागी नामक स्थानको भाग गया, विजयी शिवलालने विचारा कि जयपुरके महाराज जगत्सिहकी आज्ञासे अमीरखॉको जब कि मारवाड़की सीमासे भगा कर उनकी आज्ञाका पालन किया है, तब अब उसका पीछा करनेकी आवश्यकता नही है,। वह अपने मनही मनमे इस प्रकारका सिद्धान्त कर विजयी सेनादलको उसी स्थानमे डेरोके भीतर रख स्वयं अकेला ही उस उत्सवमे संमिलित होनेके लिये जयपुरमे चला गया। इस ओर अमीरखॉ राठौर सामन्तोके साथ टोंकके निकटवर्ती पीपलूनामक स्थानमे आया, और इसने सुना कि शिवलाल अपनी सेनाको सीमाके अंतमे रखकर जयपुरको चलागया है। इस सुअवसरमे वह अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये उद्योग करने लगा। अमीरखॉ इसे भली भॉतिसे जानता था कि इन राठौर सामन्तोके अधीनमे जो सामान्य सख्यक सेना है उसके द्वारा सरलतासे कार्य सिद्ध नही होसकता, इस कारण उसने विचारा कि इस समय अन्य सहायकारियोकी सहायता लेना अवश्य कर्त्तव्य है। इस समय मुहम्मदहसाहखॉ और राजा बहादुर दोनो जने प्रबल सेनादलके साथ ईसरदा नामक स्थानको घेरे हुए थे, अमीरखांने उनको हस्तगत करके हैदराबादी रिसालानामक सेनादल जो इस समय भारतवर्षमे लूटके कार्यमे विशेष विख्यात होगया था, उसको भी अपने हस्तगत किया और शिवलालके न होने पर प्रबल पराक्रमके साथ जयपुरकी उस सेना पर आक्रमण किया। जयपुरकी सेना उस समय प्रधान सेनापतिसे हीन होकर अत्यन्त ही दीन अवस्थामे पड़ी हुई थी, तथापि उसने अतुल बल विक्रम प्रकाश किया। हीरासिहकी सेनाने इस समय इतने साहसके साथ युद्ध किया कि युद्धके अंतमे उन सभीने रणभूमिमे अपने प्राण देदिये। भयंकर युद्ध होनेके पीछे जयपुरकी सेना एकबार ही परास्त होकर विध्वस होगई, और विजयी अमीरखांने उनके डेरोमे जाकर समस्त युद्धके द्रव्योको अपने अधिकारमे करलिया। राठौरके चारो सामन्तोकी सम्मतिके अनुसार कार्य करके अमीरखांने इस प्रकारसे जय प्राप्त की। अमीरखांका प्रधान उद्देश यही था-वह सेनाको साथ लेकर जैसे ही जयपुरको लूटनेके लिये आगेबढा वैसे ही जयपुरके निवासी महाभयके समुद्रमे निमग्न होगये। तब बुद्धिमान् चारो सामन्तोंने इस प्रकारसे अमीरखांको प्रधान सेनापतिके पदपर वरण किया, इसीसे राजा मानसिहकी मुक्तिका द्वार खुलगया, सम्मिलित राजपूतोकी सेनादलमे बड़ी हलचल पडगई। चक्र-भग और मारवाड-विध्वसके प्रधान कारण स्वरूप प्रधान नेता सवाईसिहके भाग्यमे घोर कालरात्रि उपस्थित होगई।

छ महीने तक जोधपुरके किलेको घेरे रहनेके पीछे सवाईसिह और धौकलसिहके षड्यंत्रजालके छिन्नभिन्न होनेके पूर्व लक्षण भलीभांतिसे प्रकाशित होनेलगे। वेतनके न मिलनेसे सेनामे असंतोष वृद्धिके साथ ही साथ अवरोधकारियोके प्रधान२ नेताओमे भी झगड़ा होना प्रारंभ होगया। वीकानेर और शाहपुराके राजा यह दोनो ही झगड़ा होनेके कारण अवरोधकारियोके पक्षको छोड़कर अपने २ राज्यको चले गये। सवाईसिह और जगत्‌सिह इससे किंचित्‌मात्र भी निराश न हुए राठौरोकी सेनादलकी सहायतासे जगत्‌सिह मारवाड़को विध्वंस और जोधपुरको घेरनेमे समर्थ होनेसे अपनेको महा गौरववान् जानते थे। परन्तु अमीरखां और संख्यावद्ध राठौरोकी सेनासे अपनी सेनाका विध्वंस होना और, राजधानीको घेरनेका समाचार मानो वज्रघातकी समान उनके गर्वोन्नत शिरपर पतित हुआ। जयपुरकी सेनाके इस पराजयका समाचार सवाई-सिहको पहले ही विदित होगया था, परन्तु जयपुरके दीवान रायचन्दको घूँस देकर उसने अपने वशीभूत करलिया था, इसीसे जगत्‌सिहको यह समाचार विदित न हुआ, कारण कि जगत्‌सिह इस समाचारके पाते ही शीघ्र ही अवरोधको छोड़कर चलेजाते, सारांश यह है कि उनका मूल उद्देश पूर्ण न हुआ। रायचँदने सवाईसिहके इस कथनको गुप्त रक्खा। परन्तु जगत्‌सिहकी माताने इस समय कई एक गुप्त सेवको द्वारा उनके पास यह समाचार भेज दिया, वह सवाईसिहके ऊपर अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और अव क्या करे, इसका कुछ भी उपाय स्थिर नही करसके। उन्होने जिस समय माताके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुना उसी समय वह किलेको छोड़कर चले गये। जिन जगत्‌सिहने कुछ समयके पहले अपनेको महा गौरवान्वित माना था। जयपुरका कोई भी महाराज जिस कार्यके करनेको समर्थ न हुआ, यह उसी मारवाड़को विजय करने तथा जोधपुरके किलेको घेरनेमे समर्थ हुए, इसीसे महान् गर्व प्रकाश किया था, वही जगत्‌सिह इस समय चारोओर विभीषिकाकी भयंकर मूर्ति देखने लगे, किस प्रकारसे वह निर्विघ्नतापूर्वक मारवाड़से अपनी राजधानीमे चले जॉय, किस प्रकारसे विजयी अमीरखॉ और राठौरोके आक्रमणसे अपनी रक्षा कर सके, यह चिन्ता उनके हृदयमे प्रवल होगई। जगत्‌सिहने जोधपुरकी राजधानीको लूट कर जो बीस तोपै और अन्यान्य बहुतसे असूल्य द्रव्योको संग्रह किया था, सवसे पहले उन सबको अपने सामन्तोके पास भेजकर महाराष्ट्रोके नेताओको बुलाभेजा। जगत्‌सिहने

---

(१) सन् १८०६ ईसवीमे जिस समय जगत्‌सिहने महाराष्ट्र नेता सेन्धियाके समीप सहायता मांगनेके लिये एक दूत भेजा, उस समय कर्नल टाड् साहव सेधियाके डेरोमें थे। वापू सेधिया, वालाराव तथा जानवेपटिस्ट इस समय अपनी २ सेनाके साथ सेधियाके अधीनसे नियुक्त थे। जगत्‌सिहकी प्रार्थनानुसार जिस समय महाराष्ट्रोकी सेना उनकी सहायता करनेके-लिये जा रही थी उस समय महात्मा टाड् साहवने वहां जाकर उस सेनाको स्वयं देखा था। और १८०७ ईसवीमें रजवाड़ेके भौगोलिक तत्त्वकी खोज करनेके लिये कर्नल टाड् साहव जिस समय जयपुरमे गये, उस समय जयपुरकी उस सेनाके विनाश होनेके अगणित चिह्न भी देखे थे।—

विचारा कि जोधपुरसे चलते ही शत्रुओसे परास्त होनेकी पूरी सभावना है, अधिक क्या—ऐसा होनेसे प्राणतक भी नष्ट होसकते है, इसी कारण महाराष्ट्र नेता गण उनके बुलाते ही आगये। उन्होने उन्हींके सामने यह प्रस्ताव किया "कि यदि आप हमे निर्विघ्नतासे जयपुरमे पहुँचा देगे तो हम आपको इसके पुरस्कारमे १२००००० रुपये देगे।" धनके लोभी महाराष्ट्र नेताने तुरन्त ही इस बातको स्वीकार कर लिया। यद्यपि महाराष्ट्र नेता सारी सेना सहित इनको निर्विघ्नतासे जयपुरमे पहुँचाने के लिये तैयार होगये थे, परन्तु पठान नेता अमीरखॉ उस समय मार्गमे ही ठहरा हुआ था, इस कारण जगत्सिह किसी भॉतिसे भी निर्भय हो आगे न बढ़ सके। जगत्सिहकी सम्मतिसे उनके इस हठात् भाग्य पतनका कारण स्वरूप अमीरखॉ ९००००० लेनेके लिये राजी होगया, "वह जगत्सिहके जयपुरमे जानेके समयमे कुछ भी विघ्न नहीं करेगा" जयपुरके महाराजने इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अपनी रक्षाका उपाय स्थिर किया, और जोधपुरकी राजधानीको छोड़कर वह अपनी राजधानीको चल दिये। जगत्सिहने जिस प्रकारसे महा गर्वमे भरकर जोधपुरको घेरा था उसी प्रकारसे घोर कलंकका टीका अपने यशरूपी मस्तक पर लगा हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो दु.ख, अपमान, और लज्जासे उन्होने अपने डेरोमे आग लगा दी, और अंतमे स्वयं अपने हाथसे अपने प्राणप्रिय हाथीके प्राण नाश कर दिये। हाथी उनको शीघ्रतासे लेजानेमे समर्थ न हुआ इसीसे जयपुरके महाराजने अत्यन्त क्रोधित हो उस अज्ञान पशुके जीवनका विनाश किया।

यद्यपि महाराष्ट्र नेताने जगत्सिहको निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचा देनेका वादा किया था, और यह उनके साथ भी गये थे, और अमीरखॉने धन लेकर यह वचन भी देदिया था कि अब किसी प्रकारका अत्याचार तुम्हारे साथमे न किया जायगा, तथापि महाराज जगत्सिह निर्विघ्नतासे अपने राज्यमे न पहुँच सके। जोधपुरके घेरनेवालोने उसी प्रकार इनके भागते ही महा अपमान और कलकके अतिरिक्त इनको और भी घोर कलकित किया था। जिन राठौर सामन्तोने अमीरखांके साथ मिलकर राजा मानसिहकी मुक्तिका द्वार खोल दिया था। इस समय उन्हीं सबने मिलकर यह निश्चय किया, कि किसी प्रकारसे भी हो जयपुरके महाराजको विजयमे पाये हुए तथा लूटे हुए द्रव्योको लेकर हम लोग नही भागने देगे। यह विचार कर समस्त सामन्तोने मेरतासे दस कोस पूर्वकी ओर जाकर जगत्सिहके आनेके मार्गमे उपस्थित हो अपनी सम्प्रदायके सम्पूर्ण राठौरोको इकट्ठा कर इन्द्राज सींघीको अपने सेनापति पदपर वरण किया। इन्द्राज, सींघी राजा

—जो सेना जगत्सिहके साथ जोधपुरपर अधिकार करनेके लिये आई थी, उसने अंतमें जयपुरके बाहर ठहर कर अपने वेतनके न मिलनेसे मारे भूखोंके प्राण त्याग कर दिये। महात्मा टाड् साहबने नगरके बाहर हज़ारों घोड़ोके ढॉचेके ढेरके ढेर तथा सेनाके मनुष्योंकी हड्डियोंके ढेर स्वय अपनी ऑखोसे देखे थे। प्रथम काडमें यथास्थान इसका वर्णन होचुका है।

मानसिहके पहले दो राजाओके शासन समयमे मारवाड़मे दीवान पदपर नियुक्त थे। उन चारो सामन्तोको केवल वृथा संदेह करके ही मानसिहने छोड़ दिया था, इसी कारणसे वह भी दीवानके पदसे रहित हुए थे। इन्द्रराज तथा समस्त सामन्तोने सेना सहित इकट्ठे होकर यह प्रस्ताव किया कि राजा मानसिहने जो हमको शत्रुओके साथ मिला हुआ जानकर अन्याय किया है, तथा उनको जो हमारे ऊपर संदेह हुआ है, उस संदेहका दूर करना हमको अवश्य कर्त्तव्य है। राजा मानसिहके शत्रुपक्षके रुधिरसे उस सदेहकी कालिमाको धोकर, जगत्‌सिह मारवाडको लूटकर जो स्मृति चिह्न तथा वहुतसे मूल्यवान् द्रव्योको लिये जारहे है उन सबको छीनकर राजा मानसिहके चरणकमलोमे उनका उपहार देते ही महाराज अवश्य ही हमारे ऊपर प्रसन्न होकर पहले ही की समान विश्वास करलेगे। यह विचार करके समस्त सामन्त अतुल वलशाली राठौरोको सेनादलको साथ लिये हुए जगत्‌सिहके आनेकी वाट देखने लगे।जगत्‌सिहके सेना सहित आगे वढते ही वदला लेनेवाले राठौरोने संहारमूर्तिसे उनके ऊपर भयंकर वेगसे आक्रमण किया। दोनो ओरसे युद्धकी आग भड़क उठी। जगत्‌सिहने केवल राठौर सामन्तोकी सहायतासे ही जोधपुरको घेरा था, इस समय सवाईसिह और राठौर सेनादलके न होनेसे केवल जयपुरकी सेना सहित जगत्‌सिहको देखकर वीरव्रतावलम्वी राठौरोकी सेनाने सरलतासे अत्यन्त अल्प समयमे ही उन्हे परास्त करादिया। जयपुरकी सेना पहलेसे ही हतवीर्य और हीन साहस थी, इस कारण दोनो राज्योकी सीमामे स्थित होकर उस युद्धमे केवल यही नही हुआ कि महाराज जगत्‌सिह ही परास्त हुए हो, वह जिन द्रव्योको लूटकर लिये जा रहे थे, विजयी राठौरोने अपनी पहली प्रतिज्ञाके अनुसार उन सब द्रव्योपर फिर अपना अधिकार करलिया। जयपुरकी सेना चारोओर छिन्नभिन्न होकर भाग गई। विचारे जगत्‌सिह मारे भयके प्राण लेकर अपने राज्यमे भाग गये। जगत्‌सिह जोधपुरसे जो चवालीस तोपे लाये थे, राठौर गण उन सब तोपोको लेगये। उन राठौरोने इस प्रकारसे महाराज जगत्‌सिहका अत्यन्त अपमान कर उन्हे मारवाड़से भगा दिया। जयकी आशासे फिर मानसिहकी सहायताके लिये एक और उपाय किया। जगत्‌सिहके जयपुरको भागनेसे पहले ही धौकलसिह और सवाईसिह जोधपुरको छोड़कर दूसरे राठौर सामन्तोके साथ मिलकर नागौरमे चले गये थे। इससे राठौरगण धौकलसिह और सवाईसिहको सहसा हतवीर्य न कर सके। इसी कारणसे महाराज मानसिहका कल्याण न विचार कर धौकलसिहके पक्षमे प्रायः समस्त राठौर सामन्त तथा जितनी अधिक सेना थी उसको देखकर वे चारो सामन्त फिर अमीरखांको अपने हस्तगत कर उसीके द्वारा अपने कार्य सिद्ध होनेका उपाय करने लगे। जब इन्होने देखा कि विना वहुत सा धन दिये अमीरखांसे सहायता नही मिल सकती तब उन्होने सबसे पहले धनके संग्रह करनेका यत्न किया। यद्यपि कृष्णगढ़के राजा एक राठौर थे। परन्तु उन्होने इस जातीय युद्धमे किसीकी भी सहायता न की, वह निरपेक्ष भावसे रहे। अमीरखांसे सहायता लेनेके लिये विजयी सामन्तोने कृष्णगढ़के महाराजसे दो लाख

रुपये माँगे महाराजने तुरन्त ही इनको दे दिये। अमीरखाँ उन दो लाख रुपयोको लेकर यह प्रतिज्ञा की, "कि मै राजा मानसिहकी तन मनसे सहायता करूँगा।" विजयी सामन्त शीघ्र ही अमीरखाँको साथ लेकर जोधपुरमे आ पहुँचे, महाराज मानसिहने इनको विश्वासी और राजभक्त जानकर बड़े सन्मानके साथ अपने यहाँ रक्खा, और इनके अधिकारके जिन २ देशोको पहले अपने अधिकारमे कर लिया था, इस समय इनको वह सभी देश देदिये, और इन्दराजको वखसी अर्थात प्रधान सेनापतिके पदपर नियत किया। राजा मानसिहका इस समय भाग्योदय हुआ।

पंद्रहवाँ अध्याय १५.

जोधपुरमे अमीरखाँकी अभ्यर्थना; सवाईसिंहके दलको भंग करनेके लिये अमीरखाँकी प्रतिज्ञा, अमीरखाँका नागौरमे जाना; सवाईसिहके साथ उनका साक्षात् होना, धौंकलसिहकी ओरसे सहायता करनेके लिये अमीरखाँका सौगंध खाना, राजपूत सामन्तोंका हत्याकाड, धौंकलसिहका भागना, अमीरखाँके द्वारा नागौरका लूटा जाना; पुरस्कारमे राजा मानसिहके पाससे अमीरखाँको दश लाख रुपया मिलना तथा कुछ जमीनकी भी प्राप्ति होना, अमीरखाँकी सेनाका जयपुरके भिन्न २ देशोको लूटना, बीकानेर पर आक्रमण, मारवाड़मे अमीरखाँके प्रभुत्वका विस्तार होना तथा उसके अत्याचारोका प्रारंभ; नागौरके किले पर अमीरखाँका पठान सेनाको रखना, अमीरखाँका मेरताके भागको अपने अधीन नेताओंको देना, अमीरखाँका नावाके किलेपर सेना रखना तथा वहां और सांभरके लवण ह्रदपर अधिकार करना, इन्दराज और राजगुरुका देवनाथकी हत्या करना, राजा मानसिहके चित्तकी विकृति, उनका एकान्त निवास; अपने पुत्र छत्रसिंहको राज्य देना, छत्रसिंहके दुश्चरित्र; राजा मानसिंहकी उन्मत्तताका बढ़ना, उसका कारण, राजा मानसिंहकी सलाहसे इन्दराज हत होगये है सर्व साधारणका इस प्रकारसे संदेह करना; पोकरणके मृतक सामन्त सवाईसिहके पुत्र सालमसिंहका राज्यमे अधिकार पाना, वृटिश गवर्नमेन्टके साथ मारवाडके महाराजका सधि करनेका प्रस्ताव करना, छत्रसिहका प्राणत्याग, राजा मानसिंहके हाथमे फिर राज्यका भार पहुँचते ही अपने अनिष्टकी विशेष संभावना जानकर, सामर्थ्यवान् सामन्तोका मारवाड़के सिंहासन पर ईडरके राजकुमारको अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव करना; उस प्रस्तावका परिहार, उसका कारण, राजा मानसिंहको फिर राज्य ग्रहण करनेके लिये अनुरोध करना, राजा मानसिंहका फिर राज्य ग्रहण करना, संधिकी कई एक धाराओंपर मानसिहका असंतोष प्रकाश और उनमे आपत्ति, एक अंग्रेज प्रतिनिधिका जोधपुरमे जाना, अखैचन्दका मारवाडके प्रधान राजस्वभागपर मन्त्रित्व करना, प्रधानमंत्री पोकरणके सालमसिंह, फतेराजका उपद्रव करना, राजा मानसिंहकी सहायताके लिये वृटिश सेनाको उनके हाथमे अर्पण करनेका प्रस्ताव उठाना, उस प्रस्तावका स्वीकार न करना, उसका कारण, अंग्रेजी एजन्टका अजमेरको लौट जाना, जोधपुरके महाराजकी सभामे स्थाई गवर्नमेन्ट एजन्टका नियोग, जोधपुरमे आना, राजधानीकी अवस्था, मानसिहके साथ साक्षात्; एजन्टका जोधपुर छोड़ना, सामन्तोकी भूवृत्तिपर अपना अधिकार करना, राजा मानसिहका प्रकाशमे फिर पहलेकी समान राज्यशासनमे उदासीनता दिखाना; मानसिहकी प्रवल धोखेवाजी, राजा

का सामन्तोकी धन सम्पत्तिको हरण करना, उनके कलंकसे मृत्यु, राजा मानसिंहके मारनेमे बुद्धिका लगाना, सामन्तोके विपरिजालमे लगी हुई चेष्टाका व्यर्थ होना, नीमाजके सामन्तपर आक्रमण, उक्त सामन्तोका साहसके साथ अपनी रक्षा करना, उनका वधसाधन होना, पोकरणके सामंत का भागना, फतेराजको प्रधान मंत्रित्व पदकी प्राप्ति, फतेराजको राजमानसिहका उपदेश, नीमाज पर आक्रमण, नीमाजका लूटाजाना, राजा मानसिहका अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना, वेतनभोगी सेनाके नेताका प्रशंसनीय आचरण, मारवाडके समस्त सामन्तोका इच्छानुसार विदेशमे जाना, प्रतिवासी राजाओका सामन्तोको आदर सहित स्थान देना, ओनाडसिहके प्रति मानसिहकी अत्यन्त अकृतज्ञताका प्रकाश करना, वृटिश गवर्नमेन्टके निकट निकाले हुए राठौर सामन्तोकी मध्यस्थताकी प्रार्थना करना, वृटिश गवर्नमेन्टका मध्यस्थता करनेमे असम्मति प्रकाश करना, अतीत घटनाकी समालोचना।

जिस पठान नेता अमीरखाँकी सहायतासे महाराज मानसिहने उस जातीय विपत्तिके समुद्रसे कुछ एक उद्धार पाया था, जिस चातुरी जालसे अवरोधकारी जगत्सिह अतमे प्राणोके भयसे भागकर कलंकित हो अपनी राजधानीमे लौटगये थे, जिसके उस वल विक्रमसे मारवाड़ विध्वस हुआ था, और सवाईसिह धौकलसिहको लेकर जोधपुरको छोड़ आये थे–उस पठान सेनापति अमीरखाँको मानसिहके अत्यन्त विश्वासी चारो राठौर सामन्त ही अपने हस्तगत कर जोधपुरमे लाये। महाराज मानसिहने उसका वडा आदर मान किया। यद्यपि उस समय जगत्सिह अपनी सेना सहित जारहे थे, यद्यपि शत्रुपक्षका वल अत्यन्त हीन होगया था तथापि सवाईसिह उस समय तक मरुक्षेत्रके सिहासनकी आशासे धौकलसिहको लिये हुए अन्यान्य राठौर सामन्तो और सेनाके साथ पहलेके समान मानसिहके विरुद्ध खड़े रहे, उस समय मानसिह एकवार ही उस विपत्तिके समुद्रसे पार न होसके थे, विपत्तिकी तरंगोमे फसे हुए मानसिह वारम्वार हिलोरे लेते थे। इस कारण मानसिहने शत्रुकुलको निर्म्मूल तथा अपनी शासन शक्तिको प्रवल करनेके लिये उस महा दुःसमयमे स्वजन मित्र वांधव और प्रजासे त्यागे जाकर शीघ्र ही उस विजातीय विधर्मी तथा कठिन तस्कर–अर्थ और क्षमता लोलुप पठान सेनापति अमीरखाँकी सहायता स्वीकार करनेका विचार किया। यद्यपि अमीरखाँ अत्यन्त सामान्य वशका 'पठान था, यद्यपि वह मनुष्य पवित्र आर्य रक्तधारी राठौरोकी राजसभामे आसन पानेका अधिकारी नही था, परन्तु महाराज मानसिहने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये उस पतित और शोचनीय अवस्थामे उस अमीरखाँको केवल आदरके साथ नही ग्रहण किया वरन् उसके भाग्यमे कभी भी जो सन्मान प्राप्त नही हुआ था आज मानसिह ने उसे वही सम्मान दिया। जिन राठौर सामन्तोने सियाजीके समयमें एकता की जीवन्त मूर्तिकी पूजा करके संसारमे अपनी अक्षय कीर्त्तिको संचय किया था, इस समय अपने भाग्यके दोषसे–तथा राठौरजातिके भाग्य–दोषसे उनके वंशधरोके परस्पर उस एकताकी छातीमे लात मारनेसे अपने देश और स्वजातिको अवनतिके समुद्रमे डालनेके लिये अत्यन्त उन्मत्त होकर महाराज

मानसिंहने शीघ्र ही विजातीय विधर्मीको ऊँची पदवी देकर अपने राज्यमे शान्ति स्थापन की।

महाराज मानसिंहने अमीरखॉको आदरसहित ग्रहण करके उसके रहनेके लिये योधगिरिके किलेमे एक मकान देदिया, और वहुतसे मुल्यवान् द्रव्य उसे उपहारमे दिए। अंतमे दोनोमे यह निश्चय हुआ कि अमीरखॉ अपनी सेनाके द्वारा सवाईसिंह और धौंकलसिंह दोनो शत्रुओकी सेनाको भगाकर उन्हे विध्वस करदे, यदि ऐसा हुआ तो महाराज मानसिंह उस कार्यके पुरस्कारमे उसे यथोचित धन और भूवृत्ति देगे। अमीरखॉने शीघ्र ही महाराज मानसिंहके प्रस्तावके मतसे अपनी भविष्य उन्नति तथा सामर्थ्य प्राप्तिकी विलक्षण सभावना जान कर, शपथ करके यह प्रतिज्ञाकी, कि "मै निश्चय ही सवाईसिंहके चक्रजालको भेद कर शत्रुपक्षको निर्मूल करदूँगा।" महाराजने केवल प्रतिज्ञा ही नही की वरन चिर प्रचलित राजपूत रीतिके अनुसार उस विधर्मी पठानके साथ पगडी बदल कर प्रतिज्ञा दृढ की, और उसी समय उसको इसकार्यके व्यय स्वरूपसे तीन लाख रुपये दे दिये। हाय! कालकी कैसी विचित्र गति है! जिस मरुक्षेत्रके स्वाधीन राठौर राजगण मुगल पठानोको स्वजाति तथा स्वदेश और स्वधर्मके प्रवल शत्रु जानकर हृदयसे घृणा करते थे, उसी मरुक्षेत्रके राजवशधर उस राठौर राजसिंहासन पर विराजमान हुए मानसिंह विजातीय पठानोके साथ पगड़ी वदलनेमे कुछ भी लज्जित न हुए! आज जातिका पतन होगया, केवल एकमात्र प्रजाही नही वरन् स्वय महाराज तकने कहॉतक हीनता स्वीकारकी। इस स्थानपर उसका विलक्षण परिचय दिया गया है।

एकमात्र पिताका वदला लेनेकेलिये पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने अपनी जन्मभूमिके चारोओर इस हृदयभेदी दृश्यको उपस्थित करादिया था, जिससे मारवाड यथार्थमे मरुक्षेत्रकी समान होगया, अपने प्रधान सहायक जयपुरपति जगत्सिंहके भागते ही सवाईसिंहने शीघ्र ही धौंकलसिंह और समस्त राठौर सामन्तोके साथ जोधपुरको छोड़कर नागौरदेशको यात्रा की। जिस समय सवाईसिंह नागौर देशमे आकर फिर षड्यंत्रका विस्तार कर जोधपुरपर फिर अधिकार करनेके निमित्त उपाय कर रहा था उसी समय चतुर पठान सेनापति अमीरखॉने अपने भविष्य कर्त्तव्यका निश्चय कर लिया, और अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह आगे वढ़ा।

साक्षात् नरपिशाचस्वरूप पठान सेनापति अमीरखॉ अपनी प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये अग्रसर होनेके पहले ही इस वातको जान गया था कि धौंकलसिंह और सवाई-सिंहको युद्धमे परास्त करना सव प्रकारसे असभव है, कारण कि अत्यन्त वलशाली राठौरोकी सेनाके साथ युद्धमे सम्मुख होकर जय प्राप्त करना कोई साधारण वात नहीं है। और फिर विशेष कर धौंकलसिंहकी ओरसे इस समय मरुक्षेत्रके समस्त राठौर सामन्त सेना सहित नागौरमे ठहरे हुए है, इस समय मेरे अधीन वहुत थोडी सेना है,

तिसपर अधिक वलशाली भी नहीं ह, इस कारण जयलक्ष्मीका प्राप्त होना अत्यन्त कठिन देख पड़ता है बुद्धिमान् अमीरखॉने अत्यन्त घृणित और निन्दनीय उपायसे अपनी अभिलापाको पूर्ण करनेका उपाय स्थिर किया। अमीरखॉ अपनी सेनाको साथ लेकर नागौरसे दसकोस दूरीपर सूँधियाड़ स्थानमे डेरे डालकर अपनी प्रतिज्ञा पूरण करनेके लिये उपाय करने लगा। अमीरखॉने मुंधियाड़मे आकर यह विख्यात कर दिया कि महाराज मानसिहने इस समय मेरे प्रति अत्यन्त अप्रिय आचरण किये है। अमीरखॉने राजा मानसिहको जिस प्रकारसे महा विपत्तिके समय सहायता की थी, उसके वदलेमे उन्होने उसे उचित पुरस्कार न देकर उसके साथ अत्यंत निदनीय आचरण किया है। सवाईसिह और धौकलसिहको इस समाचार पर विश्वास होगया और वे मनहीमन अत्यन्त प्रसन्न होने लगे। इस प्रकारसे अमीरखॉ पहले अनुष्टानके पीछे सवाईसिहके साथ साक्षात् करनेके लिये चेष्टा करने लगा। वहुत कुछ सोच विचार कर अमीरखॉने एक दूतको सवाईसिहके निकट भेजकर उनसे यह कहला भेजा कि, "नागौरमे पीर तारकीन नामक पीरकी एक मसजिद है, यदि आप आज्ञा दे तो मै उस मसजिदमे जाकर अपना नित्त–नियम कर आया करूं।" जिस समय मारवाड़से दिल्लीके वादशाहका प्रताप और उनकी प्रभुताई लुप्त होगई थी, उस समय से मरुक्षेत्रमे मुसलमानोकी जितनी मसजिदे और दरगाहे थीं वे सव एकवार ही विध्वंस कर दी गई थी विशेप करके महाराज बख्तसिहने मारवाडसे यवनोके समस्त चिह्नोको एकवारही लुप्त करदिया था। केवल एकमात्र पीरतारकीनकी मसजिदको किसी विशेप कारणसे विध्वंस नही किया था। उस कारणको महात्मा टाड् साहवने इस स्थानपर प्रकाश नही किया परन्तु हमैं ऐसा अनुमान होता है कि यवनराज्यमे वहुतसे हिन्दू अनेक पीरोको, मसजिदोपर अनेक प्रकारके कारणोसे भक्ति प्रकाश करते थे। वहुतसे पीरोको हिन्दू जागृत देवता कहते थ और उन पर विश्वास करते थे–यहांतक कि इस समय भी वह विश्वास उसी भावसे प्रवल है। अनेक हिन्दू अव भी ऐसे है जो इन पीरोकी भक्तिभावसे पूजा करते है. ऐसा वोध होता है कि उन पीरोकी उसी प्रकारसे राजपूतोमे जागृत देवता रूपसे पूजा होती थी, इसी कारणसे अपनी जन्मभूमिसे यवनोके समस्त चिह्नोको लोप करनेकी अभिलापासे बख्तसिहने प्रजाकी इच्छानुसार उस मसजिदको विध्वंस नही किया। जिस समय सवाइसिहने जगत्सिहके साथ मिलकर जोधपुरको घेरा था, अमीरखॉने उस समय उनके पक्षको छोड़कर मारवाड़को विध्वंस करनेका विचार किया। सवाईसिह तथा अन्यान्य सामन्तमडली उसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुई थी, और उसको दमन करनेके लिये जयपुरके सेनापति शिवलाल गये थे. हमारे पाठकोसे यह वात छिपी नही है कि अमीरखॉकी ऐसी अवस्थामे मानसिहका पक्ष लेनेसे सवाईसिह उसको शत्रु जानते थे। परन्तु अमीरखॉ अपनी पाप अभिलापाको पूर्ण करनेके लिये वकध्यानी की समान इस समय धीरे २ आया, सवाईसिहने इसके प्रति पूर्वभावको प्रकाशित न करके विना संदेह किये हुए उसकी उस प्रार्थनाको स्वीकार कर-

लिया सवाईसिहने विचारा कि निश्चयही महाराज मानसिहने अमीरखॉका तिरस्कार किया है, इसी लिये वह राजधानी छोड़कर धर्मकार्य साधन करनेके लिये पीरकी मसजिदमे आनेके लिये कहता है। इसका उन्हे भूलसे भी अनुमान न हुआ कि पिशाचबुद्धि अमीरखॉ किस गुप्त और भयंकर अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये धर्मका बहाना कर घोर अधर्मको संचय करनेके निमित्त तैयार हुआ है।

पिशाच बुद्धिअमीरखॉ तुरन्तही सवाईसिहकी आज्ञा पाकर, प्रसन्न हो उसी समय कुछ अश्वारोहियोके साथ मूधियाड़से उस पीरकी मसजिदमे गाया। पीरकी मसजिदमे उपासना और वंदना करनेसे उसका कुछ भी प्रयोजन न था उसके हृदयमे उस समय और एक भयंकर कामना विराजमान थी। इस कारण उसने उस मसजिदमे जाकर दिखानेके लिये नाममात्रकी उपासना करके, जानेके समय विना बुलाये ही सवाईसिहके डेरोमे जाकर उनसे साक्षात् की। सवाईसिहने अमीरखॉका बड़ा आदर सन्मान किया कारण कि उस समय अमीरखॉको अपने दलमे भरती करनेके लिये उनकी विशेष इच्छा थी। आमीरखॉने साक्षात् होनेके पीछे बिदा मागी और कहा, कि "मैने महाराज मानसिहके जितने उपकार किये है महाराजने उसके शतांशमे के एक अंशका भी पुरस्कार नही दिया, यदि मै इस प्रकारसे दूसरेकी इतनी सहायता करता तो अवश्य ही मुझे बहुतसा पुरस्कार मिलता।" अमीरखांके यह वचन सुनकर सवाईसिहने प्रसन्नचित्त हो उसी समय यह प्रस्ताव किया, कि "यदि आप धौकलसिहका पक्ष लेकर राजा मानसिहको सिहासनसे उतार दे तो म प्रतिज्ञा करता हूं कि धौकलसिह जिस दिन मारवाड़के राजसिहासनपर शोभायमान होगे उसी दिन मै आपको भलीभांतिसे पुरस्कार देकर संतुष्ट करूगा। यह कहिये कि आप कितने रुपये लेगे" अमीरखॉने कहा, "मुझे २०००००० वीस लाखकी आवश्यकता है।" सवाईसिहने कहा, "मै फिर शपथ करके कहता हू कि जिसदिन धौकलसिहके शिरपर मारवाडका राजछत्र शोभायमान होगा उसी दिन आपको २०००००० रुपये दूंगा।" शीघ्र ही यह संधिपत्र लिखकर तैयार किया गया, अमीरखॉने कुरानको स्पर्श करके उस प्रतिज्ञाको पालन करनेके लिये शपथ करी और उसी समय सवाईसिहने प्रचलित राजपूत रीतिके अनुसार अमीरखॉके साथ पगडी बदल ली। इस प्रकारसे सवाईसिहने प्रबल पराक्रमशाली अमीरखॉको अपने हस्तगत कर धौकलसिहके साथ भी उसका परिचय करादिया। अमीरखॉने धौकलसिहके समीप शपथ करके फिर प्रतिज्ञा की कि "मैने आपके स्वार्थसाधनमे इस जीवनतकको उत्सर्ग किया। आपको जोधपुरके सिहासनपर बैठालनेके लिये मै प्राणपणसे चेष्टा करूगा।" अमीरखॉकी इस प्रतिज्ञा पर विश्वास कर उसी समय उसे बहुतसे मूल्यवान् द्रव्य उपहारमे दिये

(१) महाराजा मानसिहके इतिहाससे धौकलसिहका इस युद्धमे मौजूद होना कहीं नहीं पाया जाता। और वह आभी कैसे सकता था, क्योंकि वह अभी २ वर्षका बचा था। सवाईसिह ने उसके नामसे यह सब प्रपच रचा था।

गये। इस प्रकारसे अमीरखॉ अपने गुप्त अभिप्रायके सिद्ध करनेकी पूर्व सूचना करके धौकलसिह और सवाईसिहसे विदा हो मूंधियाडको लौट आया। धौकलसिह और सवाईसिहके प्रति मित्रता प्रकाश करनेके लिये उन दोनोके यहां जो राठौर सामन्त सेनासहित उनके अधीनमे नियुक्त थे, उनको भी अमीरखॉने अपने यहां वुला भेजा. सवाईसिहने इस आमत्रणके ग्रहण करनेमे कुछ भी आपत्ति न की वरन अत्यन्त प्रसन्न हो समस्त राठौर सामन्तोको अपने साथ लेकर आप स्वयं अमीरखॉके डेरेपर गये।

सवाईसिहके इस निमत्रणके स्वीकार करतेही नरपिशाच अमीरखॉने अपना दुष्ट अभिप्राय साधन करनेके लिये किंचित् भी विलम्व नही किया। मारवाड़पति मानसिहके निकट अमीरखॉ साहवने जो प्रतिज्ञा की थी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह भयंकर मूर्तिसे रुधिर प्रवाही अभिनय करनेकी वाट देखने लगा। सम्वत् १८६४ के चैत्रमासमे उस चिरस्मरणीय उन्नीसवे दिन सवाईसिह नागौरसे समस्त राठौर सामन्तोके साथ पॉचसौ अनुचरोको लेकर अमीरखॉके उत्सवमे शामिल होनेके लिये तथा उससे परस्पर मित्रता वढ़ानेके लिये उसके डेरेपर आये। वुद्धिमान् अमीरखॉने निमंत्रित सवाईसिह और अन्य समस्त सामन्तोको वडे आदर सन्मानके साथ सभामे वैठाला। तुरन्त ही परस्पर पगडी वदलीगई। सवाईसिहके हृदयमे मानो आनंदकी तरंगे उठने लगी, वह अपने मनहीमनमे विचारने लगा कि अव अवश्य ही अमीरखॉकी सहायतासे मानसिहको सिहासनसे रहित कर धौकलसिहको राजगद्दी पर वैठाल स्वयं राज्यमे अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाऊंगा, वह मनहीमन इस प्रकारकी कल्पना करके प्रसन्न होने लगा। सभामे शीघ्र ही नृत्यगीत प्रारंभ होगया। अत्यन्त रूपलावण्यमयी नर्तकी गण कोयलकी समान वाणीसे गानद्वारा राजपूतोके नेत्र और मनको प्रसन्न करने लगी। सभी अपार आनन्दरूप जलमे मग्न होगये, मानो सभी दर्शक उस महोत्सवमे मतवाले होगये। किसीको अपने शरीरका कुछ भी ध्यान न रहा। उसी समय अमीरखॉ किसी कार्यका वहाना करके अचानक सभासे चलागया। नॉच, गान पहलेकी समान होतारहा। आयेहुए सभी सामन्त प्रसन्नचित्तहो उस उत्सवको देखने लगे। उनको यह स्वप्नमे भी ध्यान न था, कि उनपर किस प्रकारकी विपत्ति आनेवाली है ? उनके भाग्यमे किस प्रकारसे भयंकर कालरात्रि उपस्थित होनेवाली है। उनको इसका जरा भी संदेह न हुआ कि, वह मित्र अमीरखॉ किसप्रकार कालान्तक मूर्तिसे, किस प्रकारके छल कपटसे और किस प्रकारकी चातुरी जालसे उनको अपने हस्तगत कर कैसा वियोगान्त अभिनय करनेके लिये तैयार हुआ है। सहसा उस सभाका वाजा ऊंचे स्वरसे चीत्कार कर उठा, उसी समय सव नर्त्तकी सावधान होकर न जाने किधरको भाग गये, और तुरन्त ही अचानक सैकड़ो पठान अपने भयंकर स्वरसे डेरोको कंपायमान करते हुए नंगी तलवार हाथमे लिये हुए डेरोमे आ पहुँचे। और उन्होने उस मारवाड़ विध्वंसके मूल कारण सवाईसिह और बयालिस राठौर सामन्तो

पर आक्रमण किया, सवाईसिह और समस्त सामन्तोने पठानोको अचानक आक्रमण करते हुए देखकर समझ लिया कि नरपिशाच अमीरखॉने मित्रताका वहाना करके कुरानको स्पर्श कर जगदीश्वरका नाम ले शपथ करके प्रतिज्ञा की थी, वह सब कपट था उसने मित्रताकी चिह्नस्वरूप पगड़ीको वदलकर केसा भययकर लोमहर्षण अभिनय किया है। आक्रमणकारी पठानोकी संख्या अधिक थी । वहुत थोड़े समयमे ही उन आयेहुए सामन्तोके शरीर खंड २ होगये–ऊँची अभिलाषा तथा वदला लेनेकी इच्छावाले सवाई सिहका शिर भी काटा गया। अमीरखॉने तुरन्त ही उस पापीके शिरको तथा सामन्तोमे ऊँची श्रेणीके सामन्तके शिरको महाराज मानसिहके समीप उपहारमे भेज दिया। सवाईसिह और सामन्तोके साथ जो पॉचसौ सिपाही आये थे वे अकस्मात् इस भयकर घटनाको देखकर आश्चर्यान्वित हो भागनेके लिये तैयार हुए, परन्तु पठानोने उनको भी विध्वंस करदिया, और जो सेना भाग गई थी वह तोपोके गोलोके आघातसे एकवार ही भस्म होगई। नरराक्षस अमीरखॉ इस प्रकारसे सवाईसिह और समस्त राठौर सामन्तोका संहार करके अपनी प्रतिज्ञा पूरण कर उसी समय नागौरपर अधिकार करनेके लिये आगे वढा । अपने भाग्यसे ही धौकलसिह इस पाखण्डीके डेरोमे नहीं आये थे, वह नागौरमे ही थ। परन्तु अमीरखांके इस हृदयभेदी राक्षसी आचरणके समाचारको पाकर, प्राणोके भयसे वे भी उसी समय वहांसे चलदिये, और जो अन्यान्य राठौर सामन्त तथा सेना नागौरमे थी वह भी तुरन्तही छिन्नभिन्न होकर चारो ओरको भागगई। अमीरखॉ इस प्रकारसे सामन्तोके प्राणनाश करके सेनाके साथ नागौरमे आया, और उसने धौकलसिह तथा अन्यान्य समस्त सामन्तोके धन और अनेक प्रकारकी वस्तुओको लूट लिया। मारवाड़के महाराज वख्तसिहने नागौरके किलेमे जिन वहुतसे युद्धके द्रव्योको सग्रह कर रक्खा था, उन सबको अमीरखाने वडी सरलतासे लूटलिया। अमीरखांने इससे पहले जिन कईएक किलोको अपने अधिकारमे करलिया था, उसने नागौरके किलेमेसे तीनसौ तोपै लेकर उनको उन किलोमे भेजदिया। इस प्रकारसे नरपिशाच अमीरखा महाराज मानसिहके शत्रुओको एक साथही निर्मूल कर राजधानी जोधपुरमे गया महाराज मानसिहने इस समय उसका पहलेसे भी अधिक सम्मान किया, और इस चिरस्मरणीय पैशाचिक अभिनयके पुरस्कारमे शीघ्र ही उसे दशलाख रुपये दिये, तथा मूँडवा और कुचेरा नामक तीस हजार रुपये वार्षिक आमदनीवाले दो वडे २ गाव दिये। इसके अतिरिक्त अमीरखांको महाराजके यहासे प्रतिदिन खर्च करनेके लिये सौ रुपया मिलने लगा।

मानसिह पूर्वजन्मके पुण्यवलसे जिस प्रकार महाराज भीमसिहके ग्राससे ग्यारह वर्षतक अपनी रक्षा करके अंतमे ईश्वरकी कृपासे सहसा मारवाडके सिंहासन पर विराजमान हुए थे, उसी प्रकारसे उस जगदीश्वरकी कृपासे फिर भी इन्होने इस भयकर विपत्तिसे उद्धार पाया. इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है

कि सवाईसिहने किस भावसे मानसिहके विरुद्ध प्रवल षड्यंत्र जालका विस्तार किया था, समस्त राठौर सामन्तोको अपने हस्तगत करके किस भावसे मानसिह का अनिष्ट करनेके लिये वह उद्यत हुए थे। यदि क्रूरकर्मचारी अमीरखाँ राजधर्मके विरुद्ध, नीतिके विरुद्ध तथा युद्धकी रीतिके विरुद्ध उस हृदयभेदी उपायसे सवाईसिहका तथा अन्यान्य सामन्तोका प्राण नाश करके अपनी आत्माको कलंकित न करता तो किसी प्रकारसे भी महाराज मानसिह अधिक दिनतक किलेमे वंद रहकर अपनी रक्षा न कर सकते। अधिक क्या कहे सवाई सिहने अपने पितासह और पिताकी प्रतिहिसावृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये अपनी जन्मभूमि और स्वजातिको जिस प्रकार दुर्गतिमे डाला उसका प्रतिफल भी उन्हे मिला उनकी इस भॉति शोचनीय मृत्युने राठोर जातिको दिखा दिया कि अपने स्वार्थसाधनके लिये स्वजातिकी दुर्गति करनेके लिये उद्यत होनेसे किस प्रकारका दंड भोगना पडता है। यद्यपि मानसिहने अपने भाग्यवलसे ही छुटकारा पाया, परन्तु जिस प्रकारके घृणित और हृदयभेदी उपायसे विजाती और विधर्मी पठान अमीरखॉकी सहायतासे उन्होने स्वजातीय राठौर कुलके सामन्तोका प्राण नाश किया, और आप निष्कटक होकर रहे, इसी कारणसे उस महापातकके फलस्वरूपमे उन्हे भी अपार क्लेश भोगना पड़ा, तथा मारवाड़के गौरवका सूर्य भी एकवार ही अस्त होगया। यद्यपि मानसिहने एक ही कटककी सहायतासे वहुतसे कंटकोको उखाड़ डाला था—परन्तु उनके आश्रय स्वरूप उस कंटकने उनका भी विशेप अनिष्ट करनेमे कुछ कसर न की।

महाराज मानसिहने अमीरखॉकी सहायतासे सवाईसिह तथा अन्यान्य सामन्त मंडलीको इस प्रकारसे मारकर फिर प्रवल प्रतापसे मारव ड़मे अपनी शासन शक्तिका विस्तार किया। प्रतिद्वन्द्वी धौकलसिह निराशाके अगाध जलमे पड़कर प्राणोके भयसे नागौरसे चले गये, परन्तु जो सामन्त तथा राजा धौकलसिहका पक्ष लेकर जीवित थे, मानसिह ने इस समय ठीक सुअवसर जानकर उनको भी उचित फल देनेमे किंचित् भी विलम्व न किया। जयपुरके महाराजके ऊपर महाराज मानसिह अत्यन्त अप्रसन्न होगये थे अधिक क्या कहे, मानसिहने इस समय उनके साथ युद्धका विचार न करके अमीरखॉके अधीनकी पठान सेनाके द्वारा जयपुरराजके वहुतसे देशोको विध्वस करदिया मानसिहके दूसरे शत्रु वीकानेरके महाराज इससे पीछे उनके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। यद्यपि वीकानेरके महाराज शेप अवस्थामे धौकलसिहके पक्षको छोड़कर केवल फिलोदीको पाकर अपने राज्यको लौट आये थे, परन्तु उन्होने पहली अवस्थासे सेना सहित जयपुरके महाराजके साथ मिलकर धौकलसिहको मारवाड़के सिहासन पर वैठानेके लिये जोधपुरको घेरा था, इसीसे उस समयकी सहायताके पुरस्कारसे फलोदीको वीकानेरके राज्यमे मिला लिया था, इसी कारणसे महाराज मानसिहने उनको भी विशेप दंड देना निश्चय किया। शीघ्र ही महाराज मानसिह अपनी वारह हजार सेनाके साथ प्रधान सेनापति इन्दराज तथा अमीरखॉ और हिन्दालखॉ अपनी २

सेनाके साथ पैतीस तोपै लेकर वीकानेरके स्वाधीन राजा पर आक्रमण करनेके लिये चले। वीकानेरके महाराज पास आईहुई विपत्तिको देखकर शीघ्र ही यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके अपनी रक्षा करने लगे। उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई, वह मानसिहकी सेनाके वरावर ही होगी। वापरी नामक स्थानमे दोनो सेनाओका युद्ध हुआ। वीकानेरके महाराज इस युद्धमे परास्त होकर अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानीको चले आये। उस पहले युद्धमे वीकानेरके महाराजके दोसौ योद्धा नष्ट होगये थे। वीकानेरके महाराजके भागते ही महाराज मानसिहके प्रधान सेनापति इन्दराज अमीरखॉ और हिदालखॉ उनका पीछा कर गजनेर नामक स्थानमे आ पहुँचे। वीकानेरके महाराजने देखा कि यद्यपि उनकी सेनाकी संख्या शत्रुओकी अपेक्षा कुछ कम नही है परन्तु पठानोंकी सेनाके साथ समभावसे वीरता प्रकाश करके अपनी रक्षा करना असंभव है, इस कारण उन्होने उस अवस्थामे युद्धके वदले संधि करनेमे अपना विशेष कल्याण देखा। तव उन्हाने सन्धिका प्रस्ताव उठाया। वीकानेरके महाराजने युद्धके व्ययके वदलेमें दो लाख रुपये देना स्वीकार किया और जिस फलोदीको अपने अधिकारमे करलिया था, इस समय उसे भी लौटा दिया, मारवाडके महाराज मानसिह उस प्रस्तावमे सम्मत होगये, और दोनोमे उसी समयसे मित्रता होगई।

जिस पठान सेनापति अमीरखांने जगत्सिहके साथ मिल कर सामान्य नेता स्वरूपसे मारवाड़के अवरोधमे नियुक्त हो अंतमे भयकर कार्य करके इस समयके इतिहासमे भयानक एक राजनैतिकरीति अभिनय किया था उसी अमीरखांने अपने सौभाग्यवलसे कूट राजनीतिके वलसे अपने षड्यत्रके वलसे तथा महा पातकके वलसे मारवाडमे धीरे २ अपनी सामर्थ्यका विस्तार करके अतमे वह मरुक्षेत्रका एक हर्त्ता कर्त्ता विधाता होगया, और सर्वत्र ही उसके अधिकारका विस्तार होगया। राजाके यहां अपनी सामर्थ्यके विस्तार करनेमे तथा राठौर सामन्तोने ऊपर अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेमे उस मनुष्यने कुछ भी कसर न की। महाराज मानसिहके महा विपत्तिमे पडनेके समय अमीरखाने अनेक उपकार किये थे, उसीकी सहायतासे वह राज्यकी रक्षा करसके थे इसी कारणसे महाराजने इस समय अमीरखांके घोर अन्याय करने पर भी उससे अपनी सामर्थ्यका विस्तार करनेके समय कुछ भी कहनेका साहश न किया। सारांश यह है कि अमीर-खांका भाग्य सर्वथा प्रसन्न होगया। अमीरखांको वृत्तिस्वरूपमे मानसिहके यहासे अच्छी आमदनीवाले दो देश मिले थे, इसके अतिरिक्त क्रम २ से मारवाडके अनेक देशोको भी उसने अपने अधिकारमे करलिया। उसने अपने अधीनके सेनापति गाफूरखांको एक सेनाके साथ नागौरके किलेमे रखकर समृद्धिशाली मेरता देशको विभक्त करके अपने अधीनके नेताओको देदिया। वह इतना करके भी शान्त न हुआ, उसने नावा के किलेमे अपनी सेनाको रखकर नावा और सांभरके लवणक्षेत्र भी अपने अधिकारमे करलिये। सारांश यह है कि अमीरखॉ इस समय वास्तवमे मरुक्षेत्रके राजाओकी

समान अपनी इच्छानुसार व्यवहार करके राठौर सामन्तोके ऊपर घोर अत्याचार करने लगा। मानसिंह अपनी शासनशक्तिकी पुनर्वार प्रतिष्ठा करके केवल प्रधान सेनापति इन्द्राज और अपने गुरु देवनाथकी सम्मतिसे सम्पूर्ण कार्य करने लगे। अन्यान्य राठौर सामन्तोने पूर्व पुरुषोकी समान राजसभामे कुछ भी बोलनेका अवसर न पाया, वरन पग पग पर विजातीय अमीरखॉके द्वारा उनका घोर तिरस्कार होने लगा। क्रमशः वह अत्याचार अत्यन्त प्रबल और असहनीय होगये, तब सब सामन्तोने मिलकर यह प्रस्ताव किया कि महाराज मानसिंह केवल इन्द्राज और राजगुरु देवनाथकी सम्मतिसेही कार्य करते है, इस कारण अमीरखांने जो घोर अत्याचार करने प्रारंभ किये है उन सबके कारण इन्द्राज और देवनाथ ही है, उन्हीको सम्मतिके अनुसार अमीरखॉने निर्भय हो इस प्रकारके भयंकर अत्याचार करने प्रारंभ किये है। अनेक भांतिसे विचार करनेके पीछे शेषमे सभोने मिलकर यह निश्चय किया कि इन्द्राज और देवनाथको मारे विना किसी भांतिसे अपना मंगल नही होसकता, परन्तु उन्होने अपनी सामर्थ्यको हीन अवस्थामे देख राजद्रोही होकर इन्द्राज और देवनाथको नाश करनेका साहस न किया, अंतमे यह निश्चय किया, कि जब महा पापी अमीरखांको सब सामर्थ्य है, अर्थात् वह सभी कुछ कर सकता है और वह धन लेकर सभी काम करनेके लिये तैयार होजाता है तब उसीकी सहायतासे इन्द्राज और देवनाथका प्राणनाश करना उचित है। सामंतोके नेताने शीघ्र ही यह अपना प्रस्ताव अमीरखांसे कहा, इनके यह वचन सुनकर अमीरखांने कहा, "कि इसके पुरस्कारमे आप हमै सात लाख रुपये दीजिये। मै आपके शत्रु इन्द्राज और देवनाथका इसी समय नाश कर सकता हूॅ।" सामन्तोने सात लाख रुपये देना स्वीकार कर लिये तब अमीरखॉने शीघ्र ही एक षड्यंत्र विस्तार करना प्रारंभ किया। इन्द्राजकी पठान सेनाने अपने बाकी वेतनके लिये जो झगड़ा किया। उसीमे उसका और राजगुरु देवनाथका सर्वनाश हुआ।

यद्यपि राजगुरु देवनाथने राज्यमे अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार किया था, परन्तु महाराज मानसिंहको उसके द्वारा अनेक विषयोमे भलीभॉतिसे सहायता मिली थी इसलिये वह गुरुदेवकी उस सामर्थ्यके चलानेसे किंचित् भी दुःखित न हुए, बरन् वे गुरुदेवके उपकारोके परमकृतज्ञ थे। मानसिंहने विचारा था, कि अपने समस्त कुटुम्बी और सामन्तोके बीचमे एकमात्र गुरुदेव देवनाथ ही हमारे प्रधान हितैषी मित्र है। गुरुदेवके ऊपर उनकी जैसी भक्ति थी, फिर क्यो गुरुदेवने उसी प्रकारसे अपने स्वार्थको सिद्ध करनेके लिये कोई कार्य न किया। उन्ही गुरुदेवको जैसे ही दुराचारी अमीरखॉने मारा कि वैसे ही मानो मानसिंहके हृदय पर सहस्रो वज्र टूट पड़े। महाराज मानसिंह गुरुशोकसे इतने कातर हुए कि सर्वसाधारण भी उनके चित्तकी विकृतिको जानगये, गुरुदेवकी मृत्युके पीछे महाराज मानसिंहने राज दरबारमे जाना छोड़ दिया, और एक निर्जन स्थानमे अकेले रहने लगे। धीरे २

समस्त राजकार्य छोड़कर तथा समस्त धर्म कर्मोको भी त्याग करके वह उन्मत्तकी भाँति रहने लगे। क्या आत्मीय क्या कुटुम्बी, क्या मंत्री क्या परिवार उन्होंने सभीके साथ बातचीत करनी छोड़ दी। महाराजके इस दारुण शोकको देखकर समस्त मंत्री तथा सामन्त राज्यमे शांतिकी रक्षाके लिये चिन्ताके समुद्रमे मग्न होगये। महाराजकी राजकार्यमे उदासीनता देखकर सभीने एकमत होकर उनके एकमात्र पुत्र छत्रसिहको सिहासन पर बैठाकर राज्यमे शान्ति करनेका विचार स्थिर किया। राजा मानसिहने सामन्तोके उस प्रस्तावमे सम्मत होकर अपने हाथसे कुमार छत्रसिहके मस्तक पर राजतिलक देकर उनको मरुक्षेत्रके सिहासन पर बैठाला।

कुमार छत्रसिह युवा अवस्थामे सिहासन पर विराजमान होकर अत्यन्त निन्दनीय कार्य करने लगे, इन्होने राज्यशासनकी ओर किंचित् भी ध्यान न दिया, और भोग विलासमे रत होनेसे यह शीघ्र ही सर्व साधारणके अप्रियपात्र होगये, और इसी कारण से वह अधिक दिनतक सिहासन पर न बैठ सके। ऐसे ऊधमी छत्रसिहने पशुओकी समान आचरण करनेके कारण उस युवा अवस्थामे ही ज्वरसे पीड़ित हो इस ससारको छोडकर परलोकका रास्ता लिया। ऐसा भी जाना गया है कि, कुमार छत्रसिहने एक महीने तक एक सुन्दरी युवतीके कमनीय रूपसे मोहित हो उसके सतीत्वको नाश करनेकी चेष्टा की थी इसीसे वह मारेगये, और यह भी कहा जाता है कि वह विषम ज्वररोगसे मृत्युको प्राप्त हुए, अब यह नही कह सकते कि कौन सी बात सत्य है, इस बातको महात्मा टाड् साहबने भली भाँतिसे प्रकाशित नही किया, परन्तु हमे ऐसा बोध होता है कि छत्रसिहको इस अवस्थाके पहले ही उनको विषमज्वरने इस संसारसे बिदा करदिया।

महान् शोकग्रस्त महाराज मानसिह अपने एकमात्र पुत्रकी अकालमे ही मृत्यु होनेसे और भी उन्मत्त होगये। उन्होने विचारा कि उसके जीवन—नाशके लिये सभीने षड्यंत्रका विस्तार किया है। इसलिये सभीके ऊपर महाराजका अविश्वास होगया। अधिक क्या कहै, अपनी अर्द्धांगिनी रानी तकको भी वह अपना शत्रु जानने लगे। विचारा कि रानीने मेरे भी प्राण नाशमे बहुतसे उपाय किये होगे। महाराज मानसिह इस प्रकारसे अपने प्राणनाशके लिये सबको उद्यत हुआ जान कर अत्यन्त चिन्तित हुए और उनके हाथका भोजन तक करना छोड दिया। केवल एक अत्यन्त विश्वासी सेवक जो कुछ खानेके लिये लाता था केवल उसीको खाकर जीवन निर्वाह करने लगे। उस इकले कमरेमे वह उन्मत्तकी समान रहकर दिन रात केवल चिन्ताकी अग्निमे भस्मीभूत होने लगे, इससे उनकी उन्मत्तता और भी दूनी बढने लगी। उन्होने स्नान करना तथा हजामत बनवाना भी छोड़ दिया। इससे उनकी मूर्ति भी अत्यन्त भयकर होगई। धीरे २ सबसे बातचीत करना भी छोड दिया। इस समय मंत्रियोने उन्हींके नामसे राज्यकार्य किया। जब कोई विशेष प्रयोजनीय कार्य होता

तो महाराजके समीप जाकर निवेदन करते परन्तु महाराज मौनभावसे सुन लेनेके अतिरिक्त उनको कुछ भी सम्मति नही देते थे। महात्मा टाड्साहब लिखते है कि मरुक्षेत्रके अनेक सामन्तो और प्रजाका ऐसा दृढ़ विश्वास था कि महाराज मानसिहके जीवनको नष्ट करनेके लिये शत्रुओरके असंतुष्ट हुए सामन्तोने षड्यंत्रका विस्तार किया है–परन्तु इन्होने प्राणरक्षाके लिये केवल प्रकाशमे उन्मत्तताका बहाना किया है। वास्तव मे इनको उन्माद नहीं हुआ था, और किसी किसीको ऐसा भी विश्वास है कि, महाराज ने स्वयं इन्द्रराजके प्राणनाशमे गुप्तभावसे अपनी सम्मति दी थी, इसीसे उन इन्द्रराज के प्राणनाशसे गुरुदेव देवनाथके प्राण भी गये; तब उन्होंने अनुतापकी अग्निसे दग्ध होकर इस प्रकारसे उन्मत्तता प्रकाश की थी। महात्मा टाड् साहबका स्वयं यह मत है, कि महाराज मानसिहने नृशंस हृदय नरराक्षस अमरिखांके साथ मिलकर जो शोचनीय वियोगान्त अभिनय किया था और जिसमे कि सैकड़ो प्राणियोका जीवन नष्ट हुआ था इसीसे इन्द्रराजके प्राणनाशमे भी सर्वसाधारणको इनके ऊपर संदेह हुआ था। छत्रसिहके परलोक जानेके पीछे मानसिहकी उन्मत्तता और भी बढ़गई, तब मारवाड़के विध्वंसके कारणस्वरूप पोकरणके निहत सामन्त सवाईसिहके पुत्र सालमसिह नेता-स्वरूपसे सामन्तोके साथ मिलकर मारवाड़को शासन करने लगे। यद्यपि सवाईसिह मानसिहके प्रधान शत्रु थे पर उनके पुत्र सालिमसिहको फिर राज्यमे शासन शक्तिको चलाता हुआ देखकर हमारे पाठक विस्मित होसकते है, परन्तु राजपूत रीतिके अनुसार पिताका अपराध पुत्रपर न लगायगया इसीसे सालिमसिहने राज्यमे फिर अपनी प्रभुता विस्तार की, इसके पीछे महाराज मानसिह भी इस भावसे अधिक दिन तक न रहसके।

"इस क्षीणप्राण दुर्बलहृदय हिन्दूजातिके प्रस्तावसे, हिन्दूजातिके बुलानेसे, हिन्दूजातिके उपदेशसे एवं उनकी मंत्रणा–और सहायतासे कर्नल क्लाइव और वाट्सनने एक मुट्ठी अंग्रेजी सेनाके साथ सन् १७५७ ईसवीमे पलासीके युद्धमे जिस शासन शक्तिको जन्म दिया, जिस शासनशक्तिने क्रम २ से प्रबल होकर कूट राजनीतिजालका विस्तार कर साम, दान, दंड और भेद–मय राजनीतिके द्वारा देशीय राजाओमे भेद डालकर अपना प्रभुत्व स्थापन किया था, इस समय १८२७ ईसवीमे दिल्लीके अखंड प्रतापशाली यवन सम्राट्को दमन कर वह बृटिश शासनशक्ति वीरभूमि रजवाडोमे अपने अधिकारको विस्तार करनेकी इच्छासे, उस कूटराजनीतिके बलसे आगे बढ़ी। जो शासनशक्ति सम्पूर्ण भारतकी पचीस[1] करोड प्रजापर शासन करती थी, जिस शासनशक्तिने न्याय विचार और अपक्षपातकी भेरीका शब्द करके स्वेच्छाचारकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, जिस शासनशक्तिने स्वजातिके स्वार्थ साधनके लिये भारतीय प्रजाका अनिष्ट करनेमे मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्ब नही किया, जो शासनशक्ति एकमात्र ईश्वरकी कृपासे तथा शुभग्रहोके बलसे सत्तासी

(१) क्लाइवके समयमे भारतकी मनुष्य गणना पचीस करोड़ नहीं थी। मुश्किलसे दश बारह करोड़ होगी।

हज़ार अंग्रेजी सेनाको लेकर पचीस करोड़ प्रजासे पूर्ण संसारमे सबसे प्राचीन वीर वंशधरोकी जननी आर्यभूमिका शासन करती थी, उसी शासनशक्तिने यवनराज्यके लोप होजानेके पीछे राजस्थानके वीरव्रतावलम्वी राजपूत राजाओके ऊपर प्रभुत्व स्थापन करनेके लिये मरुभूमिकी ओर पदार्पण किया । मारवाड़के महाराज उदय सिंहने जिस प्रकार सबसे पहले वादशाह अकवरके सम्मुख जातीय स्वाधीनताको वेचकर मरुक्षेत्र की राजनैतिक अवस्थाको बदल दिया था, उसी प्रकार महाराज मानसिहके राज्यसमयमे मारवाड़ने अंग्रेजोकी अधीनता स्वीकार की । यवनराज्य के लोप होनेके समयसे यद्यपि मारवाड़के महाराज फिर भी स्वाधीन होगयेथे, परन्तु जगदीश्वरकी महिमा अत्यन्त विचित्र है ! कुछही वर्षोके बीतने पर उस राठौर जातिने भी भारतवर्षके अन्यान्य आर्यसंतानोकी समान बृटिशशक्तिकी अधोनता को स्वीकार किया । महाराज मानसिहने उदयसिहकी समान सबसे पहले उस शृंखला को धारण किया, और उसी कारणसे मरुक्षेत्रकी राजनैतिक अवस्था फिर बदलगई । यद्यपि बख्तसिहके परलोक चलेजानेके पीछे मारवाड़ आत्मविग्रहके षड्यन्त्र तथा जातीय युद्धोसे विध्वंस होगया था, यद्यपि महाराष्ट्रोने राठौरोके उन बुरे दिनोमे तथा महा-विपत्तिके समयमे उनके ऊपर अत्याचार करनेकी पराकष्ठा दिखाई थी, यद्यपि राठौरोका पहला प्रताप और उनका प्रभुत्व उस समय एकबार ही लोप होगया था, यद्यपि धनका लोभी सैंधिया उस समय राठौर राजके यहांसे बहुत सा धनसंग्रह कर रहा था, परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्यही कहैंगे कि, उस समय भी राठौर गण "स्वाधीन" नामका परिचयदेनेमे सव प्रकारसे अधिकारी थे। बृटिशगवर्न-मेन्टके साथ उस स्वाधीन राठौर जातिके संधिबंधनसे उस जातिकी वह उपाधि बदल गई थी या नहीं, इसको हमारे बुद्धिमान् पाठक अवश्यही जानते होगे, इस कारण उस विषयके सम्बन्धमे यहांपर हम अधिक कहनेकी अभिलाषा नही करते । "

इस समय महात्मा टाड् साहबकीही बातको ठीक मानना होगा । टाड् साहब लिखते है, कि "१८१७ ईसवीमे जिस समय लुटेरे महाराष्ट्रोके साथ के समस्त सम्बन्ध-वंधनोको छेदन कर भारतवर्षमे शान्ति स्थापन करनेके लिये हम राजपूतोको अपने साथ मिलनेके लिये बुलाते है, उस समय महाराज मानसिहने अपने कुमार छत्रसिह वा उनके मन्त्रीगणोने हमारे उस प्रस्तावके मतसे दिल्लीमे अपने दूतको भेजा । परन्तु वह संधिवधन भली भांतिसे ठीक भी न होसका था कि इसके पहले ही कुमार छत्रसिह परलोकवासी होगये । महात्मा टाड्साहबकी युक्तिके विरुद्ध कौन बोल सकता है? किसी प्रकारसे भी झगड़ा करतेहुए हमारा हृदय अत्यन्त दु:खित होता है, परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये उस झगड़ेको विना कहे हुए भी नहीं रह सकते । इसको हम मानते है कि बृटिश-शक्ति समस्त भारतवर्षमे शान्ति स्थापन करनेके लिये माराष्टोके अत्याचारोको रोककर उनकी शासनशक्तिको हीनवल करनेके लिये राजपूतोको बुलाती है. परन्तु हम पूँछते है कि उनके बुलानेका क्या यही मुख्य

उद्देश है ? राजपूतोके साथ संधि होजानेमे क्या और कोई उद्देश गौरांगशक्तिके हृदयमे नही छिपा था ? सम्पूर्ण देशीय शासनशक्तिको लोप करके अपनी शासनशक्ति की प्रवलता वढ़ाकर देशीय राजाओको उस संधिके मोहमय पाशमें फॉस कर प्रकाशमे उनको स्वाधीनताकी उपाधि दे भीतर ही भीतर क्या उनके प्रधान प्रार्थनीय स्वत्व-अधिकार और सामर्थ्यको लोप करनेका उनका आशय नही था ? इस प्रश्नके उत्तरका अब प्रयोजन नही है। जिस समय स्वयं कर्नल टाड्साहब उक्त शान्ति स्थापनके उद्देशके विपयको वर्णन करगये है, उसके पीछे भी बहुत वर्प वीत गये है। उन प्रत्येक वर्प-प्रत्येक मास-प्रत्येक दिन तथा प्रत्येक मुहूर्त्तमे इस समय देखा जाता है कि वह स्वाधीन राजपूत राजा इस समय किस प्रकारकी अवस्थामे विद्यमान है।"

कर्नल टाड्साहव इससे पीछे लिखते है कि "छत्रसिंहके प्राणत्याग करते ही पोकरणके उस समयके सामन्त सालिमसिहने जिन अन्य सामन्तोके साथ मिलकर मारवाड़मे अपनी शानसशक्तिका प्रयोग किया था, वे अत्यन्त ही भयभीत होगये। उन्होने विचारा कि, यदि महाराज मानसिहके करकमलमे फिर मारवाडके शासनका भार दियाजायगा तो उनकी निजकी समस्त शक्तियोका फिर लोप होजायगा, और मानसिह पुनर्वार अपनी पूर्व मूर्तिसे शोचनीय अभिनय आरंभ करैगे । इस कारण नेता सालिमसिहके अधीनकी सामन्त मंडलीने एकमत होकर यह निश्चय करलिया कि, मानसिहके वदलेमे ईडरके महाराजके एक कुमारको मारवाड़के सिहासनपर अभिपिक्त करना सव प्रकारसे कर्त्तव्य है"। सामन्तोने शीघ्र ही ईडरके महाराजके पास यह समाचार भेजा । महाराजने यह उत्तर भेजा, कि "हमारे एकमात्र पुत्र है, यदि मारवाड़के प्रत्येक सामन्त ही एकमत होकर उस कुमारको मारवाड़के सिहासन पर अभिपिक्त करनेकी अभिलाषा करते है तो उनके इस प्रस्तावमे मै सम्मत हूँ, नही तो दो चार सामन्तोके कहनेसे उस एकमात्र कुमारके देनेकी मेरी इच्छा नहीं होती।" ईडरके महाराजका यह उत्तर पाकर सब सामन्तोने एकमत होकर फिर महाराज मानसिहको ही शासनशक्तिके चलानेके लिये इच्छा प्रगट की, और वह प्रस्ताव मडित होगया। सामन्तमंडलीने हताश होकर महाराज मानसिहके करकमलमें राज्यका भार अर्पण होनेके अतिरिक्त दूसरा उपाय न देखा। महाराज मानसिह इस समय अत्यन्त उन्मत्त भावसे रहते थे, संसारके सभी सुखोको उन्होने एकवार ही छोड़दिया था। राज्यमे अराजकता-विशेप करके अंग्रेजोकी जो ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ नवीन संधिबंधनमे बँधकर मारवाड़के भाग्यमे फिर नवीन व्यापार होसकता था, यही विचार कर सामन्त गण महाराज मानसिहके उस इकले कमरेमे जाकर मारवाड़की अत्यन्त शोचनीय अवस्था उनको समझाने लगे। यद्यपि महाराज मौनभावसे सव सुनते जाते थे परन्तु किसीका कुछ उत्तर नहीं देते थे। अंतमे ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ जो संधि होगई थी, उसमे उनकी सम्मतिकी आवश्यकता थी 'यह भी कह दिया गया' इस विषमये सभी उनसे कहने

लगे कि "हे महाराज! इस समय यदि आप राज्यभार ग्रहण न करैंगे तो अवश्य ही मारवाड़ देश विध्वंस होजायगा।" महाराज मानसिहने उनके उन वचनोपर कुछ भी ध्यान न दिया, और वे सिहासनपर बैठनेके लिये भी राजी न हुए। परन्तु सामन्त-मंडलीने दूसरा उपाय न देखकर हताश हो महाराज मान सिहको सिहासनपर बैठनेके लिये बारम्वार कहा। यद्यपि मानसिह अपने राज्यकी राजनैतिक नवीन शोचनीय अवस्थाको भलीभांतिसे जानगये थे और उसी कारणसे वह एकान्तमे रहने लगे थे। इस समय फिर उनको स्वाधीनभावसे राज्यशासनका सुअवसर मिला, परन्तु अपनी दृढ प्रतिज्ञाके वलसे फिर भी वह ऐसा भाव प्रकाशित करने लगे कि उनके चित्तकी विकृतिका कोई भी लक्षण दूर नहीं हुआ. जब महाराजने देखा कि अब राजनैतिक परिवर्तनका पुनर्भाव होगया है, और सामन्त राज्यके भारको मेरे हाथमे देनेके लिये विशेष आग्रह करते है, तव आप राज्यभारको ग्रहण करनेमे राजी होगये, उस समय उनका गवर्नमेण्टके साथ कुमार छत्रसिहके शासन समयमे जो संधिबंधन होगया था, उस सन्धिपत्रको देखकर यह कुछ सन्तुष्ट न हुये, वरन् उन्होने सन्धिपत्रकी किसी २ धारापर विशेष असंतोप प्रकाश किया विशेष करके सन्धिपत्रकी जिस धारामे यह लिखा हुआ था कि उनके अधीनके सामन्तोकी सेनाको आवश्यकता होनेपर ईस्टइण्डिया कम्पनी अपने अधीनमे कर लेगी, उसी धाराके ऊपर विशेष असम्मति प्रकाश की। वह इस वातको भलीभॉतिसे जान गये थे कि इस धारासे अंतमे अधिक असंतोषदायक अग्निके प्रज्ज्वलित होनेकी संभावना है।

महात्मा टाड् साहवने जिस भावसे अपना मन्तव्य प्रकाशित किया है उसमे मारवाड़के महाराज मानसिहकी उन्मत्तताके सम्वन्धमे वे सन्देह प्रगट करते है, परन्तु महाराज मानसिह जो एक सामान्य कारणसे इस भांति उन्मत्तकी समान रहते थे, उन्होने परम धार्मिक हिन्दू होकर भी अपने सभी धर्म-कर्मोको त्यागदिया था, इस वातको हम ठीक नही मान सकते। कर्नेल टाड्साहवका दूसरा मत यह कि असंतुष्ट सामन्त लोग महाराजके प्राणनाश करनेमे लग रहे थे, इसी कारणसे महाराजने उन्मत्तताका वहाना करके अपने प्राणोकी रक्षा की थी। इस मन्तव्यको पुष्ट करनेके लिये भी हम आगे नहीं वढ सकते। जब कि मानसिहको अपनी भार्याके ऊपर भी सदेह हुआ, जब कि उन्होने केवल एकमात्र अपने एक विश्वास-पात्र सेवकके अतिरिक्त दूसरेके हाथका भोजन तक करना छोड दिया, तब उनका केवल सामन्तोके भयसेही उन्मत्तताका वहाना करना किस प्रकारसे सिद्ध होसकता है? हमारा ऐसा अनुमान है कि इस समय मारवाड़के चारोओर प्रत्येक सामर्थ्यवान मनुप्यने जिस प्रकार पड्यत्रका विस्तार किया था और पापी अमीरखॉने उस पड्यत्रजालमे लिप्त होकर जिस प्रकारसे पैशाचिक कार्य किये थे उसने जिस भॉति धनके लालचसे अनेक मनुप्योके प्राणनाश किये थे, उससे लुप्तप्रताप सामर्थ्यहीन महाराज मानसिहका चित्त विकृत होनेमे आश्चर्य ही क्या है? गुरु देवनाथ मानसिहके

एक प्रधान सहायक और परम हितैषी मित्र थे। उनकी इस शोचनीय मृत्युसे ही महाराजका स्वभाव एकवार ही वदल गया, और इसके पीछे अपने इकलौते पुत्र छत्रसिंहके परलोक जानेपर उनका शोक और भी प्रवल होगया। दारुण भय और शोकसे महाराज मानसिंहकी जैसी अवस्था होगई थी उसका वर्णन कहाँतक किया जाय, परन्तु वास्तवमे उनको उन्माद नही हुआ था, यह वात भी सर्वथा सत्य है। देशकी दुर्दशा-जातिकी पतित दशा-सामन्तोके व्यवहार-और अपने कियेहुए दुष्कर्मोको स्मरण करके उन्होने सभी विषयोमे उदासीनता प्रकाश की थी। किन्तु अनेक साध्यसाधना-अनेक उपरोध अनुरोध, अनेक व्याख्याओके पीछे उन्होने राज्यभार को ग्रहण किया। और वृटिशसिंहको धीरे २ समस्त भारतवर्षपर आक्रमण करतेहुए देखकर उन्हेने उस समय फिर पहलेकी समान उदासीनता प्रकाशित नही की।

सन् १८१७ ईसवीमे, जिस समय कुमार छत्रसिंह पिताके प्रतिनिधिस्वरूपसे सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय सामन्तोने अपनी पूर्ण सामर्थ्यका विस्तार किया था, जिस समय मारवाड़के चारोओर अराजकता विराजमान होगई थी, जिस समय अमीरखाँने प्रजापर घोर प्रभुत्व जमाकर अपने अत्याचारोकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, उस समय ईस्टइण्डिया कम्पनीने महाराष्ट्रोको दमन करनेका वहाना करके महाराष्ट्र और पठानोसे पददलित रजवाड़के हतवीर्य्य राजाओको संधि करनेके लिये दिल्लीमे वुलाया। इससे पहले ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ रजवाड़ोके अन्यान्य राजाओकी समान मारवाड़के महाराजका कोई सम्वन्ध नही था। वृटिशसिंहने विचित्र राजनीतिकी चतुरतासे अत्यन्त सामान्य अंग्रेजी सेना तथा अपनी ही वरावर देशी सेनाकी सहायतासे धीरे २ देशीय राजाओंका प्रताप लोप करके उनको अपने अधीनताकी जजीरमे वाँधना आरंभ किया। राजपूतोके महाराज यह देखकर शीघ्र ही ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता करके संधि करनेके लिये अग्रसर हुए। विशेष करके महाराष्ट्रोंके अत्याचार अत्यन्तही असहनीय होगये थे, और अंग्रेजोकी ईस्टइण्डिया कम्पनीने उन महाराष्ट्राको एकवार ही परास्त करके उन्हे उचित दंड दिया. यह देखकर देशी राजा और भी आग्रहके साथ कंपनीसे संधि करनेके लिये राजी होगये. परन्तु ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ संधि करनेसे अंतमे क्या फल होगा इस वात पर उन्होने किंचित् भी ध्यान नही दिया। एकमात्र भारतवर्षमे शान्ति स्थापन तथा महाराष्ट्रोको दमन करना ही इस संधिका प्रधान कारण तथा मूल उद्देश था। इसके जो और उद्देश थे, उनको कोई भी न जानसके। विशेष करके इससमय राजपूतानमे जितने राजा थे उन सवकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय होगई थी, सभी हीनवल और लुप्तप्रताप होगये थे। यदि ऐसा न होता तो विना युद्धके तथा विना कारणके एक विजातीय कम्पनीके साथ संधि क्यो कर-लेते ? जव राजपूत राजाओकी लाख २ सेनाका नाश होजाता था और फिर भी वे अतुल वल प्रकाश करके यवनवादशाहके साथ संधि करने पर राजी न होते थे, आज वही

राजपूत इस प्रकार विना किसी दवावके भी क्यो सन्धि करनेके लिये तैयार हुए ? उनके अंग्रेजकम्पनीके साथ संधि करनेसे भलीभांति जानाजाता है कि इस समय राजपूत राजाओकी अवस्था कैसी शोचनीय थी। मारवाड़के महाराज मानसिंहके प्रतिनिधि स्वरूपसे उनके पुत्र छत्रसिहके दूत बनकर व्यास विष्णुराम नामक एक ब्राह्मणने सन् १८१७ ई० मे दिल्लीमे आकर ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया।

सन्धिपत्र।

माननीय अंग्रेजी ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुरके राजा महाराज मानसिह बहादुरके प्रतिनिधि स्वरूप राजकुमार युवराज—महाराज कुमार छत्रसिह बहादुरका सन्धिपत्र भारतवर्षके गवर्नर जनरल अर्थात् प्रधान शासनकर्त्ता महामाननीय मार्किस आफ हेष्टिन्स के० जी० द्वारा सामर्थ्य प्राप्त चार्लस थियोफिलास—मेटकाफ माननीय कम्पनीके पक्षमे तथा ऊपर लिखेहुए महाराज कुमारके द्वारा पूर्ण सामर्थ्य पाकर व्यास विष्णुराम और व्यास अभयराम—महाराज मानसिह बहादुरके पक्षमे नियत हुए।

पहली धारा—माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनी और महाराज मानसिह तथा उनके उत्तराधिकारी और इनके स्थानपर जो अभिषिक्त हो उनमे चिरकालके लिये मित्रता संधिवंधन और परस्पर स्वार्थकी एकता विराजमान कीजाय, तथा किसी ओरके जो मित्र और शत्रु होगे वह दोनो ओरके मित्र तथा शत्रुरूपसे गिने जायगे।

दूसरी धारा—बृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरके साम्राज्य तथा अन्य अधिकारी देशोको शत्रुओके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा—महाराज मानसिह और उनके उत्तराधिकारी तथा उनके स्थानपर जो अभिषिक्त हो वह गवर्नमेण्टके अधीनमे रहै, और उस गवर्नमेण्टकी प्रभुताको स्वीकार करै, तथा अन्य किसी राजा वा किसी देशके साथ वह किसी प्रकारका संवन्ध नही करसकते।

चौथी धारा—महाराज और उनके उत्तराधिकारी जो इनके स्थानपर अभिषिक्त हो वह गवर्नमेन्टकी आज्ञाके विना अन्य किसी महाराज अथवा साम्राज्यके साथ किसी प्रकारका भी सधिवंधन नही करसकेगे। परन्तु अपनी जाति तथा मित्र राजाओ के साथ प्रचलित रीतिके अनुसार पत्रव्यौहार कर सकैगे।

पॉचवी धारा—महाराज या उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अन्य किसी के ऊपर अत्याचार अथवा विवाद न करसैकगे। यदि अचानक किसीके साथ कुछ झगड़ा होजाय तो उस झगडेमे मध्यस्थ होने तथा दंड देनेका भार गवर्नमेन्टके हाथमे दिया जायगा।

छठी धारा—जोधपुरराज्य, जो कर सैधियाको देता आया है, जिन्होने एक स्वतंत्र तालिका उसके साथमे लगाकर दी है, वह कर सर्वदाके लिये वृटिश गवर्नमेन्टको देना होगा और जोधपुर राज्यके साथ सैधियाके करके सम्वन्धमे जो सधिवधन होगया है वह तोडदिया जायगा।

सातवी धारा–महाराज इस बातको स्वीकार करते है कि जोधपुरराज्यसे जो कर सेंधियाको दियाजाता है उसके अतिरिक्त और किसी राजाको किसी प्रकारका कर नही दिया जाता था, और वह उपरोक्त करको वृटिश गवर्नमेन्टको देनेके लिये सम्मत हुए है, यद्यपि सेंधिया तथा अन्य कोई राजा महाराजके समीपसे कर मागेगा तो वृटिश गवर्नमेन्ट उस करके मागनेवालेको उत्तर देगी ।

आठवी धारा–आवश्यकता होने पर जोधपुरके महाराज पॉचसौ अश्वारोही सेना देगे और जबतक आवश्यकता होगी तबतक जोधपुर राज्यके आभ्यन्तारिक शासनकार्य की सुविधा और शान्तिकी रक्षाके लिये प्रयोजनीय संख्यक सेनाके अतिरिक्त राज्यकी अन्य समस्त सेना अंग्रेजी सेनाके साथ मिलानी होगी ।

नौमी धारा । महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त उनके शासित देशोमे पूर्ण सामर्थ्य होकर स्वाधीन शासनकर्तास्वरूपसे रहैगे और जोधपुर राज्यमे वृटिश गवर्नमेन्टके शासनकी सीमा वा उसकी सामर्थ्य प्रचलित नही होसकैगी ।

दशवी धारा । यह दश धाराओसे युक्त संधिपत्र दिल्लीमे तैयार हुआ तथा एम. चार्लस मेटकाफ और व्यास विष्णुराम तथा व्यास अभय रामके हस्ताक्षरो सहित तथा मोहर लगा हुआ आजसे छः सप्ताहके बीचमे महामाननीय गवरनर–जनरल और राज–राजेश्वर महाराज मानसिह बहादुर और युवराज महाराज–कुमार छत्रसिह बहादुरके द्वारा स्वीकार कियाजाय ।

दिल्ली, आजकी तारीख ६ जनवरी सन् १८९७ ईसूवी ।
(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ,
रेज़ीडेण्ट ।
व्यास विष्णुराम ।
व्यास अभयराम ।

"उपरोक्त संधिपत्रको पढ़कर हमारे हृदयमें किस भावका उदय हुआ ? इसे क्या हम विश्वास करसकते है कि सियाजीके वंशधरोने उस स्वाधीनताकी अत्यन्त ऊँची अवस्थामे रहकर वृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधि की थी ? जिस वीरव्रतका अवलम्बन करनेवाली राजपूत राठौर जातिने औरंगजेबको भी तंग करदिया था, जिस राठौर जातिने सैकड़ो शत्रुओंका विना ही संहार किये अकबरकी स्वाधीनताको स्वीकार नही किया था, जिस राठौर जातिने अपने बलविक्रमके प्रकाशसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित करदिया था, जिस राठौर जातिने उस यवन सम्राट्की अधीनताकी अवस्थामे भी सुअवसर पाकर स्वाधीनतारूपी रत्नके लेनेकी चेष्टा करनेमे कसर नही की थी, वही राठौर जाति बिना कारण गवर्नमेन्टके साथ संधि करनेके लिये राजी होकर वृटिश गवर्नमेन्टकी अधीनताको स्वीकार कर, वृटिश गवर्नमेन्टके सेवकभावसे रहनेके लिये तैयार होकर, गवर्नमेन्टको कर देनेके लिये राजी होगई है,इससे हमारे विचारवान् पाठक

क्या समझे होंगे ? सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये क्या हम इस बातको नही कह सकते है कि राठौर जातिके भाग्यके अत्यन्त ही दुर्दिन उपस्थित हुए थे-राठौर जातिके स्वाभाविक समस्त गुणोका लोप होकर राठौर जातिका विध्वस होनेपर राठौरोके राज सिहासन पर एक अयोग्य महाराज विराजमान थे, इसीसे बुद्धिमान् कम्पनीने सरलतासे बिना झगड़ेके मारवाड़मे अपनी प्रधानता विस्तार करके यवनोकी अधीनतासे मुक्त हुई राठौर जातिके गलेमे फिर अधीनताकी माला डाल दी ? सियाजीसे वख्तसिहतक जिन राजाओने मारवाड़के सिहासनपर विराजमान होकर अपने प्रवलप्रतापसे जातीय स्वाधीनताको प्रदीप्त प्रकृतिको उज्ज्वल करलिया था, अपने भाग्यके दोपसे अन्तिम अवस्थामें यवनोकी अधीनताको स्वीकार करके भी शूरसिह, यशवन्तसिह, अजितसिह, अभयसिह, ओर वख्तसिह इत्यादि महारथी जिस भावसे वीरताका अभिनय करगये है, यदि उनमे से एक भी आज इस मारवाड़के सिहासनपर विराजमान होता तो माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ इस प्रकारसे संधि नही होसकती थी। हम इस बातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि वृटिश शक्तिके साथ सधि करके राठौर जातिका उस समय एक बड़ा उपकार हुआ। राठौर जातिकी उस समय जैसी शोचनीय अवस्था होगई थी। आत्मविग्रह स्वजाति विद्वेष-विजातीय अत्याचार-उत्पीड़नोने उस समय राठौरजातिको जिस भावसे हतवीर्य और बलहीन कर दिया था, महाराष्ट्र और पठानोने जिस भावसे मारवाड़को विध्वंस कर उसका सर्वस्व लूटलिया था उससे उस समय राठौर जातिको एक प्रवल सामर्थ्यवान् शक्तिकी सहायतासे प्रार्थनीय होना अवश्यक था परन्तु पूर्वोक्त सन्धिवंधनके कारणसे मरुक्षेत्रके चिरवीरव्रतावलम्बी स्वाधीन राजाओके वंशधर उस समयसे कैसी अवस्थामे पडे उसका स्मरण करनेसे ही हृदयपर वज्राघात होता है।

इस समय कर्नल टाड्साहवकी ही बातको ठीक मानना होगा। १८१७ ईसवीके दिसम्बर महीनेमें ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुर राज्यका सधिबंधन होनेके एक वर्ष पीछे अर्थात् १८१८ ईसवीके दिसम्बर मासमे वृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूप अजमेरके सुपरिंडेण्ट मि० विलडर (Mr. Wilder) जोधपुर राज्यमे गये। राज्यकी यथार्थ अवस्था कैसी थी, किस भावसे राज्यशासन होता था, महाराज किस प्रकारसे शासनकार्य करते थे, सामन्तमंडली कैसे आचरण करती थी, तथा राठौर जातिकी शक्ति कैसी थी इसीको जाननेका उनका प्रधान उद्देश था। कर्नल टाड् साहव लिखते है, " यद्यपि इस समय पूर्व वर्णित कारणोसे स्वजाति-द्वेष और आत्मविग्रहसे मारवाड़का शासनविभाग वहुतही गड़वड अवस्थामे था, तथापि मारवाड़ राज्यसभाकी उज्ज्वलता, ऐश्वर्यका आडम्बर और राजसी रीति नीतिमे कुछ भी अदल वदल नही हुई थी। अर्थात् राजसिहासनके सम्मान और प्रतापके ऊपर राठौर जातिका सम्मान निर्भर था। इस कारण वे लोग उस राजसिहासनपर सुशोभित अप्रिय अविश्वासी तथा घृणित मनुष्यका भी सर्वसाधारणके सामने उचित

आदर और आडंवर करनेके लिये पहिलेसे ही सुशिक्षित थे।" महात्मा टाड् साहवकी इस युक्तिसे जानाजाता है, कि राठौर जाति अपने राजाओंके ऊपर विराग और अभक्ति होते हुए भी विदेशी दूतके निकट विदेशी राजाके प्रतिनिधिके सम्मुख ऐसे दुर्दिनोंमे भी राजसभामे उज्ज्वल प्रभा, महिमा और महत्वको प्रकाश करके शांत नहींहुई। इतिहास वेत्ता पीछे लिख गयेहै कि "इस समय मारवाड़राज्यके दीवान पदपर अखैचंद और सामंतमंडली के प्रतिनिधि स्वरूप पोकरणके अधीश्वर सालिमसिहने भांजगड़की उपाधि धारण करके प्रधान सामरिक नेतास्वरूपसे नियुक्त हो प्रवल प्रतापके साथ अपनी शासनशक्तिको चलाया। महाराज मानसिहके अधिवासी सामन्तोने इस समय अखैचंद और सालिमसिहको नेता पदपर वरण करके राज्यके समस्त किलेमे अपनी अधिकारी सेनाको स्थापित कर राजकीय प्रधान२ पदपर अपनी इच्छानुसार कर्मचारियोंको नियुक्त किया, और अपने स्वार्थसाधनमे विशेष चेष्टा थी। परस्परमे मनान्तर, आत्मनिग्रह, विवाद विसम्वाद इस समय प्रवल रूपसे प्रज्ज्वलित होगये थे। सामन्तोने अपनी इच्छानुसार शक्तिको संचय करनेके लिये अत्याचारोके करनेमे किंचित् भी कसर नही की थी, परन्तु उन सामर्थ्यवान् सामन्तोके विरुद्धमे हतमंत्री इन्द्रराजके वेटे फतहराजने खड़े होकर अनेक विपयोमे भयंकर उत्पात किये थे। फतहराज जोधपुरकी राजधानीमे अध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। उन्होंने अपने निहत पिताका वदला लेनेके लिये सामन्तोकी प्रत्येक कामनाको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की थी। उद्धत हुए सामन्तोके उन अप्रीति मूलक स्वाधीन आचरणोसे महाराज मानसिंहकी शासनशक्ति एकबार ही दुर्बल होगई थी, माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके उक्त दूत मि. वेलडरने राजधानीमे जाकर राज्यकी उस अवस्थाको देख उक्त कंपनीकी आज्ञानुसार तीन दिनके पीछे वे गुप्त भावसे महाराज मानसिहसे जा मिले और उनसे कहा कि, सामन्तोके उस अन्याय और स्वेच्छाचारको निवारण करनेके लिये ईस्टइण्डिया कम्पनी उनको सहायता स्वरूपसे वृटिश सेना देनेके लिये तैयार है।" कर्नेल टाड् साहव पीछे लिख गये है, कि "महाराज मानसिह कितने सावधान थे, उन्होंने इस प्रस्तावके सम्वन्धमे जो व्यवहार किया वह तो सभीको विदित है। वह भली भाँतिसे जानते थे कि असंतुष्ट और उद्धत सामन्तोको एकबार ही विध्वंस करनेके लिये बड़े भारी मुदगरोको उठाना पड़ेगा, पर उन्होने यह भी स्थिर करलिया था कि इन मुदगरोको प्रयोग करनेके वदले केवल इन्हे पास रखनेसे ही सव उद्देशोको पूर्ण कर सकूंगा। सामन्तगण इन मुद्गरोको देखकर ही इनके भयकर वलका अनुभव कर उद्धत आचरण छोड़ देगे, उन्होने और भी विचारा कि इस विराटकाय यंत्रके चलानेसे अकस्मात् प्राप्तहुई विपत्तिके भोगनेके वदलेमें यदि इस यंत्रके अस्तित्वसे ही सम्पूर्ण सुविधा और सुयोगको प्राप्त होकर अपनी इच्छानुसार फल पा सकै तो और भी अच्छा है।" कर्नेल टाड् साहवकी उपरोक्त उक्तिसे भलीभाति जाना जाता है कि महाराज मानसिहने माननीय ईस्टइण्डिया कंपनीके प्रस्तावके अनुसार अंग्रेजी सेनाकी सहायतासे उद्धत हुए सामन्तोको दमन करना न विचारा पर उसी समय नही आवश्यकता होने पर विश्वविजयी अंग्रेजी

सेनाकी सहायता लूँगा यह बात कहकर उन्होने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद दिया और सामन्तोको केवल भय दिखाकर अपने उद्देशको पूर्ण कर लिया । उन्होने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद देकर कहा कि अब इस समय इस उद्देशको साधन करनेके लिये अंग्रेजी सेनाकी सहायताकी कुछ अवश्यकता नही है । मै स्वयं ही राज्यके प्रार्थनीय संस्कारोका साधन कर असतुष्ट हुए सामन्तोंको दमन करनेकी सामर्थ्य रखता हूँ । सामन्तोने भी महाराजके उस व्यवहारसे भयभीत होकर आगेको घोर अनिष्टकी संभावना विचार स्वयं नम्रता स्वीकार करली । महाराज मानसिह ने बालकपनसे ही राजनीति विद्यामे विशेष शिक्षा प्राप्त की थी । उन्होने कई वर्षतक राज्यशासनसे वैराग्य प्रकाशित किया था, और उन्मत्तकी तरह निर्जन स्थानमे रहनेके पीछे वह फिर सिहासन पर विराजमान हुए, पर उन्होने बड़ी चतुरताके साथ धीरे २ अपनी शासन शक्तिको पूर्ववत् संचय करालिया । वह समस्त सामन्तोके सम्मुख उनके अत्यन्त अप्रिय कार्योंको मानो भूलकर प्रगटमे उनके प्रति उदारता तथा दयाभाव दिखाने लगे । सामन्तोकी दो श्रेणी होगई थी, एक श्रेणी तो इनके विपक्षमे खडी हुई और दूसरी श्रेणी इनके अनुकूलमें इनके ऊपर भक्ति दिखाती थी । महाराज मानसिहने सबसे पहले उन दोनो श्रेणियोमेसे प्रयोजनीय मनुष्योको निकाल कर राज्यके भिन्न २ भागोमे नियुक्त करदिया । उसीसे दोनो श्रेणी उनके ऊपर प्रसन्न होगई । विशेष करके महाराज इस समय दोनो श्रेणियोके ऊपर तथा जिसने उनका विशेष अनिष्ट करनेमे कसर नही की थी उसके ऊपर भी उन्होने ऐसी दया और कृपा प्रकाशित की कि जिससे अत्यन्त संदिग्ध सामन्तोको भी किञ्चित्मात्र सन्देह करनेका अवसर न मिला, कर्नल टाड् साहव लिख गये है कि अंग्रेजी दूतने इस समय महाराजको वारम्वार अनुरोध किया । " कि, वृटिश गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायता लेनेके विना आप किसी प्रकार भी राज्यमे शान्तिस्थापन और अपनी शासन शक्तिको प्रवल न करसकेगे, परंतु महाराजने उस प्रस्तावका वारम्वार निषेध करदिया कि, गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायताके विना ही मैं स्वय अपनी सामर्थ्य बलसे शांति स्थापन कर सकता हूं । जब दूतने देखा कि महाराज किसी प्रकारसे भी अंग्रेजी सेनाकी सहायता लेनेमे राजी नहीं होते तब वह शीघ्र ही मारवाड़को छोड़कर अपने स्थानको चलागया । " यह हम दावेके साथ कह सकते है कि महाराज मानसिह इस बातको भली भांतिसे जान गये थे कि अंग्रेजी सेनाको मारवाड़में बुलानेसे अंतमे बिपरीत राजनैतिक काण्ड उपस्थित होनेकी संभावना है । भारतवर्षके वृटिश शासनके इतिहासको हमारे पाठकोने भलींभांतिसे पढ़ा होगा कि जिस जिस राज्यमे इस शक्तिने शान्ति स्थापनका वहाना करके प्रवेश किया है उसी २ राज्यके अंतमे कैसे २ परिणाम हुए है । मि० वेलडर किसी भांति भी महाराज मानसिहको कम्पनीके कूट राजनीति जालमे न फॉस सके, और वहाँसे चले जानेके पीछे १८१९ ईसवीमे महात्मा टाड् साहव भारतवर्षके गवर्नर जनरलके द्वारा उदयपुर कोटा बूँदी और शिरोही देशके समान इस

मारवाड राज्यमे भी वृटिश पक्षकी ओरसे राजनैतिक एजण्टके पदपर नियुक्त हुए, परन्तु कई विशेप कारणोसे महात्मा टाड साहवने कई महीने तक मारवाड़मे चरण रखनेका अवसर न पाया। टाड् साहव नवम्वरके महीनेमे मारवाड़मे आये। कर्नल टाड् साहव लिखते है कि मि० वेलडर मारवाड़मे जाकर राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था तथा चारो ओरको अशान्ति और सामन्तोकी सम्प्रदायके अन्यायके अतिरिक्त प्रभुत्व देख गये थे उन्होने भी इसी भॉतिसे जोधपुरमे जाकर वह सभी अप्रीतिकारक कार्य देखे। वह वर्णन कर गये है, "वह उद्धत सामर्थ्यवान् सामन्तोकी सम्प्रदाय राजाके ऊपर उसी प्रकारसे अपने प्रभुत्व[१] और शक्तिको चलाती थी, तथा राज्यके सभी कर्मचारियोको उसी भॉतिसे अपने सेवक भावसे आज्ञा पालनमे नियत कर रक्खा था, महाराज मानसिहने केवल साक्षी गोपालस्वरूपसे सिहासन पर स्थित होकर उन सामन्तोके प्रत्येक कार्यमे संतोष प्रकाशित किया था, उन्होने किसी विपयमे भी स्वाधीन भावसे हस्तक्षेप करनेका साहस न किया। महाराजके अधीनमे जो धनके लोभी तथा वेतनभोगी सिन्धु देशकी सेना तथा पठानसेना नियुक्त थी वह इस समय अत्यन्त शोचनीयरूपसे दारुण कष्ट भोगती थी, विशेप करके अगले तीन वर्पोका वेतन जो उनको नही मिला था उसी वेतनके लिये आर्त्तनाद करके भयंकर असंतोप प्रकाश करती थी, उसकी अवस्था इतनी हृदयभेदी होगई थी, कि उस समय वह जोधपुरकी राजधानीमे प्रत्येक मनुष्यके दरवाजे पर जाकर भिक्षा मॉग अतिकष्टसे अपने दिन व्यतीत करती थीं; और वहुतसी सेना अनाहार रहकर प्राणोके भयसे वड़े कष्टसे धान्योका संग्रह कर उनको खाकर जीवन निर्वाह करती थी, वृटिश गवर्नमेन्टके एजेण्ट कर्नल टाड साहवने जोधपुरकी राजधानीमे जाकर महान् उद्योगकर उस कष्टमे पड़ीहुई वेतनभोगी सेनाके पिछली वेतनका हिसाव करके उस सेनासे कह दिया कि तुम्हारे पिछले वेतनमे सैकड़ा पीछे ३० रुपया मिलैगा और इसके अतिरिक्त कुछ नही मिलसकता, सेनाने उसमे अपनी सम्मति दी, परन्तु एजेन्ट तीन सप्ताहके पीछे जोधपुर छोड़कर चले गये, इसलिये उस सेनाकी वह आशा भी निष्फल होगई।" कर्नल टाड् साहवके उक्त वर्णनसे भलीभॉति जाना जाता है कि यद्यपि महाराज मानसिह फिर सिहासन पर विराजमान हुए थे परन्तु वह स्वय किसी सामर्थ्यको न चलाकर उन सामर्थ्यवान् सामन्तोके द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य करते थे। इस वातको हम कह सकते है कि मानसिहके इस प्रकारके आचरण करनेका एक गूढ़ कारण था; वह कारण समय पर स्वयं प्रकाशित होजायगा।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव पीछे लिख गये है, कि "इस समय जिसको विचार कहा है जोधपुरके निवासी उसको एकवार ही भूल गये थे। यदि कोई इस समय

---

(१) कर्नल टाड् साहवके मारवाड़में जानेका वृत्तान्त महाराज मानसिंहका उनकी अभ्यर्थना करना, इत्यादि प्रथम काण्डके २८ अध्यायमें भलीभॉतिसे वर्णन कियागया है।

किसी मनुष्यको जानसे मारडालता तो उसको विचार करके दंड देना तो दूर रहा वरन कोई उस हत्या करनेवालेके विरुद्धमे कुछ बाततक भी नही कह सकता था । उस समय अन्नके न मिलनेसे सेना प्राणत्याग करने लगी–तथा राजपूत धर्मकी विधिको त्यागकर भक्ष्य अभक्ष्यका विचार न कर सब प्रकारके मांस खाकर अपने प्राण धारण करनेलगी, सारांश यह है कि जब सामन्तोकी सम्प्रदायने अपनी इच्छानुसार कार्य करने आरंभ किये और महाराज मानसिंह सब प्रकारसे उनके हस्तगत होकर बिन्दुमात्र भी स्वाधीनभावसे कुछ कार्य न करसके, तभी वह समस्त गर्हित उपायोके अवलम्बनमे नियुक्त हुए थे। एजेण्ट तीन सप्ताह तक जोधपुरमे रहे इस बीचमे उन्होने कईबार महाराज मानसिंहके साथ गुप्तभावसे साक्षात् किया। उस साक्षात्को देखकर महाराज मानसिंहने अपनी अवस्था तथा जिस कारणसे उनकी यह अवस्था हुई थी उसके सम्बन्धमे बातचीत होकर दोनोमे अत्यन्त ही मित्रता उत्पन्न हुई। उनकी उस वार्ताके समय मारवाड़ राज्यके प्राचीन ऐतिहासिक विवरण और महाराजके उस समयकी अवस्थाकी आलोचना हुई। एजेण्ट साहबने निम्न लिखित उक्तिसे विदा ग्रहण की,–" आपने जिन समस्त विपत्तियोसे उद्धार पाया था वह मुझे भलीभांतिसे विदित है, आप किस प्रकारसे उन भयंकर विपत्तियोके उद्धार करनेमे समर्थ हुए थे, वह कुछ हमसे छिपा नही था। आपकी सुमतिसे ही आपके बाहरी शत्रुओका नाश हुआ है, आप इस समय बृटिश गवर्नमेण्टके मित्र हुए है, आप उसी प्रकार साहसके साथ उस बृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर निर्भर रहिये, तथा बहुत थोड़े दिनोमे ही आपके सभी मनोरथ पूर्ण होजांयगे।"

कर्नल टाड् साहब इससे पीछे लिखते है कि " राजा मानसिंहने बड़े आग्रहके साथ इन सब बातोको सुना, पर उन्होने उस सौन्दर्य सौम्यमूर्तिसे अपने हृदयके भावका कोई भाव भी प्रकाशित नही किया, उन्होने उसी मूर्तिसे आनन्द प्रकाश करके कहा, कि " मित्रभावसे आप हमारे राज्यमे जिन संस्कारोकी इच्छा करते है, आप देखैगे कि वह इसी वर्षके बीचमे ही पूर्ण होजांयगे, । " इसके उत्तरमे एजेण्टने कहा, "यदि आप इच्छा करेगे तो इसके आधे समयमे ही प्रार्थनीय संस्कार पूर्ण होसकते है।" सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कह सकते है कि राजपूत बांधव महात्मा टाड् साहबने मि० वेलडरके समान महाराज मानसिंहको एकमात्र बृटिश सेनाकी सहायतासे मारवाड़मे शांति स्थापन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया। राजा मानसिंहके उस अनुरोधको पालन न करनेसे कर्नल टाड् साहब अपने दौत्यकार्यको सफल न होता हुआ देखकर अत्यन्त दुःखित हुए थे। हमारे पाठक इसका अनुमान बडी सरलतासे कर सकते है कि यदि १८१९ ईसवीके बदले वर्त्तमान समयमे ऐसा अनुरोध न माना जाय तो और ही प्रकारका फल उपस्थित होसकता है।

इतिहास वेत्ता टाड् साहब लिखते है कि इस समय निम्न लिखित कई विषयो पर महाराज मानसिंहको अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता थी।

१ उचित शासन रीतिका प्रचार।

२ राज्यकी आसदनीपर विशेष दृष्टि।

३ खास भूमिकी व्यवस्थाका संस्कार।

४ सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर जो अन्याय करके अपना अधिकार करलिया है यह असन्तोषकी भयंकर अग्नि उसीसे प्रज्ज्वलित हुई है उसके सम्बन्धमे सन्तोषदायक व्यवस्था करना उचित है।

५ महाराज मानसिहने जो विदेशी वेतनभोगी सेनाको अपने यहाँ भरती करके प्रधानतः उसके द्वारा शासनशक्तिको चलाया है उस सेनाका संस्कार करके उसकी फिर व्यवस्था करनी उचित है।

६ मारवाड़के दक्षिण देशके मेर गण उत्तरके लरखारी गण, मरुक्षेत्रके सराई गण, और पश्चिमकी खोसा जातिने जिन ग्रामोंको लूटकर चारोओर उपद्रव मचा रखा है उनके उपद्रव निवारण तथा शान्तिरक्षाके लिये विशेष पहरेवाले रक्खे जाँय।

७ वाणिज्य पर महसूल वहुत लिया जाता है इसीसे वाणिज्यका काम प्रायः वन्द होगया है और जो व्यापारकी वस्तु प्रायः इस अवस्थामे भी लाई जाती है चोर उनको लूट लेते है अस्तु इन सव वातोंके भी उचित प्रवंधकी व्यवस्था करना।

महात्मा टाड् साहव उपरोक्त सात विषयोका उल्लेख करगये है, इससे भली भाँति जानाजाता है कि उस समय मारवाड़मे अराजकता इतनी प्रबल होगई थी और वहां वही सव लक्षण भलीभांतिसे विद्यमान थे जो कि एक स्वाधीन जातिकी पतन अवस्थामे होते है। विलासिता, अनैक्यता, स्वजातिमे वैरभाव आदि कारणोंसे इस समय राजपूतोंका वल विक्रम मानो एकहीवार मोहकी निद्रासे ढक गया था। इस महा दुःसमयमे भी जो राठौर–सामन्त–नेता जीवित थे, वे केवल विध्वंस करनेवाली नीतिके अवलम्वनसे राजशक्तिको घटानेके साथ आत्मस्वार्थको पूर्ण कर जन्मभूमिका सर्वनाश करनेके लिये अग्रसर हुए थे। महात्मा टाड् साहव पीछे लिख गये है कि उनके जोधपुरको छोड़ते ही सामर्थ्यवान् सामन्तोने पहलेकी समान पुनः पैशाचिक मूर्ति धारण कर राज्यमे फिर अशान्ति और उपद्रव प्रारंभ करदिये। या तो धनपानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, अथवा प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये, जोहो, पर प्रधान मंत्री और उनके अनुगत सामन्तोने इस समय राज्यके चारोंओर घोर अत्याचार और इच्छानुसार उत्पीड़नकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। जातीय ममता मानो एकवार ही उनके हृदयरूपी आकाशसे न जाने कहाँ चलीगई। जातिमे विद्वेषके वशीभूत होकर वे स्वेच्छाचारी मंत्री और सामन्त तथा अन्यान्य अनुगत सामन्त महा निग्रह भोग करानेके लिये विभीषण साजसे सजने लगे। मानसिहने कर्नल टाड् साहवके निकट यद्यपि यह प्रतिज्ञा की थी कि एक वर्षमें ही आवश्यक सुधार कर लूंगा, परन्तु एक पक्षके वीतते न वीतते मंत्रीश्रेष्ठके संहार मूर्ति धारण करने तथा अन्यान्य सामन्तोंके यथेच्छ व्यवहार करनेपर भी उनको कुछ कहनेका साहस न हुआ। प्रधान मंत्रीनेसवसे पहले गोड़वाड़ देशके प्रधान स्थान घाणेरावको अपने

अधीनमे करलिया, उस अशान्ति पूर्ण अवस्थामे गोडवाड़की असल जागीर घाणेरावको कुड़क करलिया, और एक सालकी मालगुजारीसे अधिक लेकर उसको पीछेसे मुक्त किया, यह क्या थोड़ा अत्याचार है। घाणेराव ठाकुरने जिस भाँतिसे दंड भोग किया था उसी प्रकारसे उनके अधीनके नीची श्रेणीके सामन्तोने भी सरदारोको दंड दिया। विशेप करके अत्याचारी दीवानके एक भ्राताने उस समृद्धिशाली गोड़वाड़ देशके सामन्तोके ऊपर करका भार ऐसा लगाया कि उनके कष्टकी सीमा न रही। गोड़वाड़ राज्यके चाणोद मुकामको भी अपना कर दीवान और प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारसे स्वेच्छाचारका एक विशेप प्रदर्शन दिखाकर सामन्तोपर घोर अत्याचार कर सफल मनोरथ हो साहसमें भर अंतमे मरुक्षेत्रके सबमे प्रधान सामन्त आहवापतिके प्रति भी हस्ताक्षेप किया। परन्तु महावीर चांपाके वंशधरोने गर्वित होकर यह उत्तर दिया, " कि हमारे अधिकारी देश कुछ आजके नहीं है और न आप भय दिखाकर अपना स्वार्थ पूर्ण कर सकते है। "

दीवान अथवा प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारसे मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार तथा हृदयभेदी उपद्रवोको प्रारंभ करके जिन सामन्तोको अपने दलमे भरती नही किया था, इस समय वही घोर विपत्तिके आनेकी आशंका करने लगे। उन्होने देखा कि अखैचंद कुछ थोड़ेसे सेवक सामन्तोको अपने साथ लेकर मानो प्रवल शासनशक्तिकी सहायतासे मारवाड़को विध्वंस करनेके लिये तैयार हुआ है। विशेष करके जब टाड् साहब चलेगये, तव महाराज मानसिह पहलेकी समान निर्जन स्थानमे रहकर उदासीनता प्रकाश करने लगे, इसीसे सामन्तोकी आशालता मानो एकवार ही सूखगई। कर्नल टाड् साहबने कहा है कि महाराज मानसिहके इस समय राज्यके किसी विषयकी ओर भी ध्यान न देनेसे अखैचंद और फतहराजमे परस्पर घोर वैमनस्व होगया। यद्यपि फतहराज मानसिहके समीप मित्रभावसे रहता था, और वह मानसिहका प्रियपात्र था, यद्यपि मानसिहकी प्यारी रानी फतहराज पर विशेप प्रसन्न रहती थी, यद्यपि वहुतसे मामन्त उसकी सहायतामे नियुक्त थे, परन्तु चतुर अखैचंदने समस्त सेनाको अपने हस्तगत करके राज्यके समस्त किले अधिक क्या जोधपुरके किलेतकको भी अपने हस्तगत करलिया, और अपना प्रवल प्रताप प्रकाशित किया फतहराजको किसी प्रकारसे भी अपने शत्रु तथा स्वदेशमे अरातिस्वरूप अखैचन्दके उस अत्याचारको निवारण करने तथा उसके प्रतापको लोप करनेका साहस न हुआ—अखैचन्द अपने वलको प्रवल जानकर फतहराजका तिरस्कार कर पहलेकी समान निर्भयहो घोर अत्याचार करने लगा। तव फतहराजने उसको मारनेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार किया। यह वात जानकर वह राजधानी छोड़कर किलेमे चलाआया।

देखते २ इस प्रकारसे छः महीने वीतगये। सारे मारवाड़में अखैचन्दका दौर्दंड—प्रताप क्रमशः वढ़ गया। अखैचन्दकी आज्ञाके उल्लंघन करनेमे किसीको

भी साहस न हुआ। महाराज मानसिहको मानो इस समय अखैचन्द काठकी पुतलीकी समान नचाने लगा। टाड् साहव लिखते है कि जिस समय अखैचंदने उस शासन शक्तिके अपव्यय, अत्याचार, और उत्पीड़नसे समस्त सामन्त और सारी प्रजाका नाश करके केवल अपने सेवकोको धनसे परिपूर्ण कर दिया था, उस समय सहसा राज्यमे इस वातका प्रचार हुआ कि अखैचंदका पतन होगया है! महाराज मानसिह जो इतने दिनोतक उन्मत्तकी समान रहे थे, उनका इस प्रकारसे रहना केवल अखैचदसे वदला लेनेके लिये ही था। हम पहले ही कह आये है कि महाराजने जव पहले ही अखैचंद तथा अत्याचार करनेवाले सामन्तोके ऊपर किंचित् भी ध्यान न दिया था, उसका एक गूढ़ कारण था, उस गूढ़ कारणको क्या हमारे पाठक नही जानते है? परन्तु नीतिज्ञ मानसिह केवल सुअवसरकी ही वाट देख रहे थे, वह समय आते ही महाराजने अखैचन्दको उसके साथियो साहित अपनी राजधानीमे वुलाया और सवको वंदी करके, कहा गया तुमने जितना धन राज्य और प्रजाका लूटा है वह सव वताओ नहीं तो तुमको प्राणदण्ड होगा, तव उन्होने राजा प्रजाका माल वताना आरंभ किया। दीवान और उसके साथियोने एक सूची चालीस लाखकी तैयार की, महाराजने वह सव धन हस्तगत करके वड़े कष्ट दे देकर उनको इस संसारसे विदा किया; नगजी किलेदार जो छत्रसिहको विगाड़नेवाला था, मूलजी धांधलके साहित (जो जागीरदार था) विपका प्याला पिलाकर संसारसे विदा किया गया, और फतहपोल द्वारपर उनके शरीर फेक दिये गये। धांधलके भाई जीवराजका विहारीदास खीची और एक दरजीके सहित शिरकाट कर मोरीसे नीचे फेक दिया गया, वेदपाठी व्यास शिवदास भी श्रीकृष्ण ज्योतिपीके साहित उस सूचीमे उसी दंडके भागी हुए, नगजी किलेदार और मूलजी जो पहले राजाके मरनेसे अपने स्थानोको चले गये थे और पूर्व राजासे जो धन उन्होने ठगा था उससे उन्होने वहां किले आदि वनाये। जव महाराजा मानसिह गद्दीपर वैठे और अपराध क्षमाका विज्ञापन निकला तो वे अपने कामोपर आये उनपर महाराजकी कृपा हुई उनको यह ध्यान न रहा कि हम कभी विद्रोही हुए थे, मानसिंहने उनको भी इस समय वंदी करके अपने पूर्वके जवाहरात उनसे मांगे। अपने पुत्रका धन उनसे लेकर उनको किलेके उन्हीं वुर्जोंसे नीचे फेक दिया गया। जिनकी वह रक्षा करते थे, उस समय दीवानके इलाकेके उसके मित्र भी वंदी किये गये और उनमेसे जिन्होने राज्यका रुपया वतादिया था अकसर छोड़ दिये गये। कहा जाता है कि महाराज मानसिहने अत्याचारियोसे एक करोड़ रुपया संग्रह किया था पर टाड् साहव कहते है कि इससे आधा भी मिला हो तो अच्छा।

टाड् साहव कहते है यदि महाराज मानसिह केवल अत्याचारी अखैचंदको ही प्राण दंड देते और जिन कर्मचारियोने उनके साथ विश्वासघातकता की थी उनके अपराधों के अनुसार उनको दंड देते और जो सामन्त उद्धत होकर शान्ति स्थापनमें वाधा देते थे केवल उन्हींके अधिकारके देशोको अपने हस्तगत करके सन्तुष्ट रहते तो वड़ी सरलतासे

दूसरे सामन्तोके हृदय पर अधिकार करके उनकी सहायतासे प्रशंसा पासकते थे । परन्तु उन्होने पहले ही अखैचंद इत्यादिको दंड देकर अपना मनोरथ पूर्ण कर लिया, इसी कारणसे अन्यान्य संदिग्ध मनुष्योसे भी बदला लेनेकी आग भड़क उठी । वह धीरे २ बड़ी सावधानीके साथ छलकपटके जालका विस्तार करने लगे । जिन ऊँची श्रेणीके सामन्तोने कई दिन पहले राजसभामे महा ऊँचा सम्मान पाया था, तथा जिन्हे पुरस्कारमे बहुतसे देश मिले थे उनके प्राणनाश करनेका भी महाराजने अपने मनमे निश्चयकर लिया था । केवल एक अचानक घटनासे ही वह अखैचंदके साथ न मारेगये, कारण कि वे वहांसे भाग गये थे । पोकरणके सामन्त सालिमसिह निमाजके सामन्त सुरतानासिह, आहोरके सामन्त ओनाड़सिह तथा उनकी सम्प्रदायके अन्य नीची श्रेणीके कितने ही सामन्त अखैचंदके साथ मिलकर राज्यके शासनकार्यमे नियुक्त थे । वह प्रतिदिन राजसभामे जाकर राज्यशासनमे अपनी सुसम्मति देकर दीवान अखैचंदकी विशेष सहायता करते थे । महाराज मानासिहके अखैचदको बन्दी करते ही वे समस्त सामन्त अत्यन्त ही भयभीत होगये, उनके उस भयको दूर करनेके लिये महाराज मानासिहने उनके समीप एक दूतके हाथ कहला भेजा कि उनके ऊपर किसी प्रकारका हस्तक्षेप न होगा, एकमात्र अत्याचारी तथा दुश्चरित्र अखैचंदको उचित दंड देकर महाराजकी अभिलाषा पूर्ण होगई है । परन्तु महाराजने जिस छलकपटके जालका विस्तार करके उनका सर्वनाश करनेके लिये अनुष्ठान किया था, सामन्त इससे पहले ही इस बातको भली भाँतिसे जानगये थे । महाराज मानसिहने पोकरणके सामन्त सालिमसिहके वंशको एकबार ही लुप्त करनेके लिये यथार्थमे उद्योग किया था । ओनाड़सिह मानासिंहके अत्यन्त प्यारे मित्र थे । उन ओनाड़सिहके एक विश्वासी सेवकको महाराज मानासिहने स्वयं आज्ञा दी कि तुम समस्त सामन्तोको अपने साथ लेकर राजसभामे आओ परन्तु सामन्त सावधान थे उनके बुलाने पर कुछ भी ध्यान नही दिया । उसी रात्रिमे मानासिहकी प्रतिहिंसारूप अग्नि भयंकर वेगसे प्रज्वलित होगई—उसी रात्रिमे जोधपुरकी राजधानी भयंकर मूर्ति धारणकर हृदयभेदी विभीषण वियोगान्तका अभिनय दिखाने लगी ।

नीमाजके सामन्त सुरतानासिह राजधानीमे अपनी सेना सहित एक घरमे रहते थे । इन सुरतानासिहने यद्यपि महाराज मानासिह पर घोर विपत्ति पड़नेके समय उनके विशेष उपकार किये थे परन्तु महाराज मानासिह उन सभी उपकारोको भूलगये और उनसे भी बदला लेनेके लिये उन्होने इच्छा की । उस राजधानीमे आठ हजार वेतनभोगी सेना तोपे और बहुतसे गोलोको अपने साथमे लेकर सुरतानसिह नगरके जिस स्थानमें रहते-थे उसी स्थान पर आक्रमण किया । वीरश्रेष्ठ सुरतानसिहने केवल एकसौ अस्सी अनुचरोके साथ अपनी रक्षा की; और जब तोपोंके मुखसे गोले निकल २ कर पृथ्वीपर गिरने लगे तब यह नंगी] तलवारे हाथमें ...

(१) प्रथम कांड अध्याय २७ पृष्ट ८८९ में देखो ।

ले वाहर निकल समरभूमिमे आ डटे। और महावीर पुरुपके समान उस सत्यवीरने सैकड़ो मनुष्योका प्राणनाश करके अन्तमे युद्धक्षेत्रमे अपने प्राण त्यागदिये। जो कई सेवक जीवित थे वह सुरतानके शिशु पुत्रके जीवन और स्वार्थकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रको छोड़कर नीमाजकी ओरको भाग गये। नीमाजके सामन्तोकी समान सालमसिहकी भी इस प्रकारसे हत्या करनेका महाराज मानसिहका विशेप अभिप्राय था, परन्तु पहले आक्रमणसे ही सुरतानने विशेप वीरता प्रकाश करके उस युद्धमे वहुतसे नगर निवासियोके प्राण नष्ट करदिये, इससे महाराज सालिमसिह पर आक्रमण न करसके। सालिमसिह रातभर विशेप सावधानोके साथ रणशय्या पर रह कर शेपमे सुभीता पाय मारवाड़की ओरको चलेगये। यदि पोकरणके सामन्त पकड़ेजाते अथवा मारेजाते तो इन सामन्तवंशके चार पुरुप, देवीसिह, सुवलसिह, सवाईसिह और सालिमसिह जो मारवाड़के सिहासनको नष्ट करनेके लिये तथा अपनी सामर्थ्य विस्तार करनेके लिये निरन्तरभावसे जिस निन्दनीय कार्यको करते आये थे, इसमे कुछ भी संदेह नही कि उस अभिनयकी यवनिका गिरजाती।

जिस रात्रिमे जोधपुरकी राजधानीमे वह शोचनीय अभिनय हुआ उस समय फतहराजको वुलाकर उनको राज्यके दीवान अर्थात् प्रधान मंत्री पदपर अभिषिक्त करदिया। फतहराज और मारे हुए प्रधान सेनापति इन्दराजके पुत्र वह इस समयतक महाराजके अत्यन्त प्रियपात्र होकर रहते थे। महाराजने फतहराजको प्रधान मंत्रीपद पर अभिपिक्त करके कहा, कि "आप इस समय अवश्य ही जानगये है कि मै आपको इतने दिनोतक क्यो अभिपिक्त नही करसका था।" महाराजके इन वचनोका यथार्थ अर्थ हमारे पाठक सरलतासे जानगये होगे, महाराज मानसिहने अखैचंद और उसके सहायकोको प्राणदंड देकर नीमाजके सामन्तोका जीवन नाश तथा पोकरणके सामन्तोको भगाकर नवीन संग्रहकिये हुए धनसे 'जो वेतनभोगी सिन्धी सेना अपने वाकी वेतन के लिये अवतक भयकर चीत्कार शव्दके साथ अत्यन्त असंतोप प्रकाश करके दारुण कष्ट भोग रही थी' उसको तुरन्त ही वेतन देकर संतुष्ट किया, और जो सामन्त पहलेसे ही महाराज मानसिहके ऊपर अत्यन्त क्रोधित होगये थे, विशेष करके जो अखैचंदके प्राणनाशसे अधिक असंतुष्ट हुए थे, महाराज मानसिहकी चतुरनीतिके वलसे उनको महाभयके जालमे विजड़ित करलिया गया। शीघ्र ही राज्यमे इस वातका प्रचार होगया कि महाराज मानसिहने इस समय अपने राज्यमे शांति स्थापन करनेके लिये वृटिश सेनाकी सहायता मांगी है। इस समाचारके प्रचार होनेका फल लगगया, नही तो समस्त सामन्त उस अवस्थामे महाराज मानसिहको सिहासनसे रहित कर सकते थे रन्तु वह वृटिश सेनाके आनेका समाचार पाते ही अपने प्राणोकी रक्षाके लिये महा यभीत होगये।

नीमाजके सामन्त सुरतानसिहके जोधपुरकी राजधानीमे मारेजाते ही उनके रकालके विश्वासी सेवक उनके वालक पुत्रके प्राणोकी रक्षाके लिये तथा स्वार्थरक्षाके

लिये नीमाजमे चलेगये थे । महाराज मानसिहने शीघ्र ही नीमाजपर आक्रमण करनेके लिये सेनाको भेज दिया, नीमाजके निवासी सब प्रकारसे अपनी रक्षामे सावधान हुए अंतमे महाराजके नामकी मुहरका लगा हुआ पत्र सुरतानके बालक पुत्रको सुनाया गया कि महाराजने उनको क्षमा करके नीमाज देशको उनके हाथमे देना स्वीकार करलिया है। "महाराजकी वह प्रतिज्ञा सत्य है या नही वास्तवमे वह प्रतिज्ञा पालन कीजायगी या नही" सुरतानके पुत्रके मनमे जब यह संदेह हुआ तब जो वेतनभोगी सेना नीमाजपर आक्रमण करनेमे नियुक्त थी उस सेनाके नेताने प्रतिज्ञा की कि इस प्रतिज्ञाको मै अवश्य ही पालन करूगा । परन्तु अत्यन्त लज्जा और राजपूतोके लिये अत्यन्त कलंकका विषय है कि सुरतानका पुत्र सब प्रकारसे विश्वास करके किलेसे होकर जैसे ही वह राजाके डेरोमे पहुँचा कि वैसे ही महाराजकी वह प्रतिज्ञा भंग होगई । बालक सामन्तके राजाके वचनोपर विश्वास करके डेरोमे आते ही एक राजपुरुषने महाराजके हस्ताक्षर सहित अनुज्ञापत्र उसके हाथमे अर्पण करके कहा कि महाराजने आपको बंदीकरके राजदरबारमे लानेकी आज्ञा दी है। महाराज मानसिहके यह आचरण जैसे असंतोपदायक थे, धनके लोभी वेतनभोगी सेनाके प्रधान सेनापतिके आचरण भी उसी भाँति अत्यन्त प्रशंसनीय थे। प्रधान सेनापति नही जानता था कि महाराज मानसिह अत्यन्त कलंकदायक आचरण करके इस बालक सामन्तका सर्वनाश करेगे, इस कारण उस कर्मचारीने ऊपर लिखी हुई राजाकी आज्ञाको पढ़कर सुनाया और क्रोधित होकर कहा, "ना, यह कभी नही होसकता, मेरे कहने पर सब प्रकारसे विश्वास करके इस बालक सामन्तने हमारे हाथमे आत्मसमर्पण किया है, यद्यपि महाराजने अपनी प्रतिज्ञाको भंग करनेकी इच्छा की है, परन्तु मै अपनी प्रतिज्ञाको अवश्य ही पालन करूंगा और इनको किसी निर्विघ्न स्थानमे रख आऊंगा ।" प्रधान सेनापतिने जो कुछ कहा था उसीको किया। उसने महाराजकी उस आज्ञाको उल्लंघन करके अभागे बालक सामन्तको साथ ले उसे अर्वली पर्वतके पार कर आया । वह बालक सामन्त वहांसे मेवाड़राज्यको चलागया।

जो महाराज मानसिह इतने दिनोतक वैराग्यभावसे उन्मत्तकी समान एक कमरेमे रहकर उद्धत सामन्तोके अत्याचार स्वेच्छाचार—उत्पीड़न और धनकी लूटको चुपचाप देख रहे थे, जो महाराज मानसिह अंग्रेज गवर्नमेन्टके द्वारा वारम्वार अनुरुद्ध होकर भी वृटिश सेनाकी सहायता ग्रहण करके राज्यमे शान्ति स्थापन करनेके लिये राजी नही हुए थे, वही महाराज मानसिह इस समय यथार्थ राजपूत वीरमूर्तिसे रंगभूमिमे आ विराजमान हुए । यद्यपि महाराज मानसिहने अत्यन्त कठोर नीतिका अवलम्वन कर लोहेके शासनदंडको धारण करके एक वियोगान्त अभिनय किया था, एक पक्षमे यद्यपि यह अत्यन्त निन्दनीय कार्य था, तथापि हम सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो अवश्य कहैगे कि उस समय मारवाड़के चारोओर जैसी अराजकता फैल रही थी सामन्तोने उसी भावसे अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये गर्हित उपायोके अवलम्वन करनेमे भी कसर नहीं की, इसीसे महाराज

मानसिहकी कठोर नीति न्याययुक्त थी । इस प्रकारकी कठोर नीतिका अवलम्बन किये विना उस अवस्थामे महाराज मानसिह कभी भी राज्यमे सरलतासे शांति स्थापन करनेको समर्थ नही होते । जब महाराज मानसिह एकबार ही शासनसामर्थ्यसे हीन होगये थे, तब उस शासनशक्तिको संग्रह करनेसे उदारनीतिका अवलम्बन कर कभी कार्य नही करसकते थे ।

"कर्नेल टाड् साहब पीछे लिखगये है, कि महाराज मानसिहने अखैचंद इत्यादिको प्राणदंड देकर नीमाज इत्यादिके देशोपर अधिकार करनेकी समान क्रमानुसार, छलकपट, और अत्याचारोसे एक २ करके सभी सामन्तोको हतवीर्य कर दिया । सभी सामन्त इस समय स्वतंत्र भावसे रहते थे, इस कारण उन्होने महाराज मानसिहके अधीनकी दश हजार वेतन भोगी सेनाके विरुद्धमे इकले खड़े होकर अपने स्वार्थकी रक्षा करनेमे किसी प्रकारका भी साहस न किया । अन्य पक्षमे उस अवस्थामे एकसाथ मिलकर भी वह खड़े न होसके, कारण कि उन्होने विचारा कि सब मिलकर भी महाराज मानसिहके विरुद्ध खड़े न होसकैगे क्यो । कि ऐसा करनेसे महाराज मानसिह अंग्रेजी सेनाकी सहायता लेकरके हमको एकबार ही विध्वंस कर डालैगे । इस प्रकारसे कई महीनोमे मारवाड़के समस्त सामन्त महाराज मानसिहके निष्ठुर आचरणसे पीड़ित हो अंतमे अपने २ अधिकारी देशो अर्थात् अपनी जन्मभूमिको छोड़कर आसपासके राज्योमें भाग गये । महाराज मानसिहने बृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधि करली थी इसी उपायसे उन्होने अपनी अवलम्बित नीतिको सफल कर लिया, नही तो वह किसी प्रकारसे भी अपना अभीष्ट सिद्ध नही कर सकते । राजा मानसिहने गवर्नमेन्टके साथ संधिबंधन करके सब कार्य सिद्ध करलिये तथा मारवाड़के सभी सामन्तोको इच्छानुसार निकालदिया, मारवाड़-के पूर्ववर्ती प्रबल प्रतापशाली असीमसाहसी किसी राजाने भी इस प्रकारके कार्य करने का साहस नही किया था ।"

इतिहासवेत्ता टाड् साहब निम्न लिखित उक्तिसे मारवाड़के इतिहासको समाप्त करगये है, "उन साहसी वीर सामन्तोने वहांसे निकलते ही, कोटा, मेवाड़,बीकानेर,और जयपुरमे आकर निवास किए । अधिक क्या कहे उस चिर विश्वासी ओनाड़सिह के प्रति भी किसी प्रकारकी कृतज्ञता प्रकाश करके उसकी विश्वासताका पुरस्कार न दियागया,वह ओनाड़सिह भी वहाँसे निकल कर दूसरे राज्यमे चलेगये । मानसिह जिस समय भीमसिहसे परास्त होकर जालौरके किलेमे रहते थे, उस समय यह ओनाड़सिह ही मानसिहके प्रधान सहायकरूपसे रहते थे । और इन्ही ओनाड़सिह ने अपनी स्त्रीके सम्पूर्ण अलकार अधिक क्या नाकमेकी नथ भी जो किसी प्रकारसे भी नही उतारी जाती और जिसका उतारना महा अशुभ जाना जाता है उस नाककी नथतकको भी लेकर वेचडाला, और उस समस्त धनको मानसिहके आत्मपालन तथा शत्रुओके ग्राससे अपनी रक्षा करनेके लिये देदिया था । जिस समय मानसिह पाली नामक वाणिज्यके प्रधान स्थानमे विना घोड़के गये थे और उस सुअवसरमे शत्रुओने

उनको वदी करनेका उपाय किया था उस समय एकमात्र ओनाड़सिहने ही मानसिहका उद्धार किया था। धौकलसिहके साथ युद्धके समय जिस समय मारवाड़में समस्त सामन्तोने मानसिहका पक्ष छोड़कर धौकलसिहका पक्ष लिया था उस समय जो चार सामन्त मानसिहके पक्षमे थे यह ओनाड़ासिह भी उन्हीमेके एक है, जिस समय जयपुरके महाराज जोधपुरको लूटकर वे पदार्थ अपने राज्यमे लिये जाते थे, उस समय इन्ही चारो सामन्तोने महावीरता प्रकाश करके उनके सभी द्रव्योको छीन लिया था। जव छत्रसिहकी मृत्यु होगई तव मानसिहके हाथमे राज्यशासनका भार देनेके लिये इन्हीमेसे एकने प्रधान उद्योग किया था। इसप्रकारसे १८२१ ईसवीमे मारवाड़के अधिकांश प्रधान २ सामन्तोने निकाले जाकर अत्यन्त कष्टमे पड़कर अंतमे गवर्नमेण्टकी शरणमे प्रार्थना पत्र भेजकर उसे मध्यस्थ होनेका प्रस्ताव उपस्थित किया, परन्तु और एक वर्ष व्यतीत होगया, तथापि गवर्नमेण्टने उनकी उस शोचनीय अवस्था पर कुछ ध्यान न दिया। उन्होने वड़ा भारी साहस करके वृटिश गवर्नमेण्टके कर्मचारीके द्वारा जो पत्र भेजा था उसे हमारे पाठक भलीभांति पढ़ चुके है। उन्होने कर्नलटाड् साहवको भी अपनी बात सुनानेमे कुछ आनाकानी न की, वहांसे उत्तर मिला कि यदि यथा समयमे मध्यस्थता स्वीकार न कीजाय तो अन्तमे वह अपनी हानि मानसिहसे पूर्ण कर ले।”

“१८२३ ईसवीतक मारवाड़की राजनैतिक अवस्था इस प्रकार थी। यदि वह राजा मानसिहको पैशाचिक हिसावृत्तिसे मोहित न करते तो महाराज स्थाई शांति स्थापनका बीज वोसकते थे, और अपने मंगल तथा राज्यके मंगलके लिये जो संस्कार अवश्य प्रयोजनीय होगये थे उन संस्कारोको भी पूर्णरीतिसे कर सकते थे, प्रयोजन होनेपर शासनरीतिका संस्कार तथा सामन्तोको बिना विध्वंस किये उनका दमन और उस समय राज्यकी जैसी अवस्था होगई थी उस अवस्थाके लिए उपयोगी समस्त व्यवस्थाको ठीक करनेकी भी उनको सामर्थ्य थी, पर उन्होने अपने राज्यमे शासन नीतिके समयके उपयोगी नवीन भावके गठनसे यश और गौरवके उपार्ज्जनके वदले एकमात्र गवर्नमेन्टके साथ संधिकरके वाहरी शत्रुओसे निर्भय हो स्वदेशकी सामन्त श्रेणीका एकसाथ ही नाश किया और उसी कारणसे उन्होने उस राजशक्तिके प्रति सर्वसाधारणकी अनुरक्तिको विना प्रकाशित किये घृणा दिखाई थी।”

साधु टाड् साहवने मारवाड–इतिहासके उपसंहारमे निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशित किये है, “राजपूत जातिकी एक प्रधान शाखाके अत्यन्त प्राचीन साम्राज्य, कान्यकुब्ज वशकी छः शताब्दियोके पहले, मारवाड़के नवीन उपनिवेश स्थापनसे वर्तमान समयके इतिहासको सक्षेपसे वर्णन करके, वृटिश गवर्नमेण्टके साथ उस राजके सधिवंधनसे इस समय जो अस्थिरनीति विद्यमान है, तथा राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्थाका वर्णन हुआ है उसकी विना आलोचना किये इतिहासका

---

(१) प्रथम काड, परिशिष्ट पृ० १११२ देखो।

उपसंहार करना असंभव है। राजपूतोंके साथ हमारी जो संधि होगई है, उन समस्त संधियोंकी मूलनीति किस प्रकारकी अस्थिर और अपूर्ण थी, मारवाड़की उक्त अवस्था उसको प्रकाशित कर रही है। यदि शीघ्र ही इस रोगकी औषधी न कीजायगी और राजपूतोकी दशा शीघ्र ही न बदलेगी तो असंभावी महाकष्ट उत्पन्न होगे कि जिनका वर्णन न होसकेगा, और हमारे लिये भी घोर विपत्ति आनेकी आशंका होगी। इन राजपूतोने जिस साहससे अपनी भूमिके अधिकारको अविनाशी कह कर प्रचार किया था, उसी प्रकार वे स्वत्वरक्षा-प्राचीन चिरप्रचलित पैतृक स्वत्वाधिकार-और सामर्थ्यको भली भाँतिसे रक्षा करनेमे समर्थ थे। उस सत्वाधिकारकी रक्षाके लिये समय २ पर हजार २ राठौर, एक २ पुरुषकी मृत्यु होनेसे घोर अत्याचार और उपद्रवोसे अपने अधिकारकी रक्षा करते आये थे। वह अत्याचारी और पीड़ा देनेवाले इस समय कहाँ है? गजनी और गिल्जई, लोधी-पठान-तैमूर तथा कठिन महाराष्ट्रोके वंशधर इस समय कहां है? देशीय राजपूत उस समस्त राठौरोके विप्लवमे भी अपने स्वार्थकी रक्षा करते आये थे-उन्होने अत्याचार करनेवालोका पतन भी देखा था। यदि उन राजपूतोमे स्वजातिकी विद्वेष-रूपी अग्नि प्रज्वलित न होती तो जिन अत्याचारियोंके सहवाससे राजपूतोने आत्म-निग्रहकी शिक्षा ली थी उस आत्मनिग्रहकी अग्निको प्रज्वलित न करते तो राजपूत-गण अवश्य ही अत्याचार करनेवालोके साथ ही साथ अपने नवीन बलसे बलवान हो भारतवर्षमे वीरमूर्तिसे मस्तक उठा सकते थे। राजपूतोके आत्मविच्छेद तथा अनैक्यतासे ही लूटनेवालोका दल रजवाड़ोमे गया, तस्कर महाराष्ट्रोका दल, पिशाचबुद्धि पठान गण, पंगपालकी समान रजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे गये; और राजपूतोकी निर्बुद्धिताकी सहायतासे उन्होने प्रबल बलशाली होकर शुभ फल संचय करलिया, परन्तु इन राज-पूतोने अंग्रेजोके साथ मित्रता करली थी, न्याय विचार, क्षमा और सत्यता अंग्रेज जातिकी महाशक्तिकी मूलभित्ति है। परन्तु अंग्रेज जातिने उन राजपूतोसे किसी प्रकारकी भी आशा नही की थी, केवल उन्ही राजपूतोकी आत्मरक्षाकी सहायता, तथा शांति स्थापन करनेके लिये जिस विधिका प्रयोजन था, उसी अनुरागकी आशा की थी, उस अंग्रेज जातिकी सहयोगितासे राजपूत जातिका वह अभाव दूर होसकता था। "हमने मारवाड़की जिस शोचनीय अवस्थाको अंकित किया है, रक्षा करनेवाली वृटिश गवर्नमेण्टने कई वर्ष तक उस शोचनीय अवस्थाका परिवर्तन करनेके लिये किसी प्रकारके उपायका अवलम्बन न करके अपनी प्रतिज्ञाको कैसा पालन किया? इसका हमारे पाठक भलीभाँतिसे विचार कर सकते है। यदि कम्पनी कहे कि हमने राजपूत राजाओके साथ जो संधि की है उसमे यह व्यवस्था है कि हम उस राज्यके भीतरी विषयमे हस्तक्षेप न करेगे, वे भीतरी शासनकार्य अपनी इच्छाके अनुसार करसकते है इस कारण हमको इस विषयमे हस्तक्षेप करनेका अधिकार नही है, तो हम कह सकते है कि यदि राजाकी समान राजपूत सामन्त गणोपर राजपूत राजा अत्याचार करैं, उनका स्वत्वाधिकार तोडदे, तो ऐसे समयमे गवर्नमेण्ट उनकी सहायता

नही करना चाहती तो राजपूतोकी शासनप्रणालीमें जो हम परामर्श देते है उस परामर्शसे भी रुकजाना हमाराकर्तव्य है तभी राजपूत राजगण यथार्थमे स्वाधीनतापूर्वक भीतरी शासन करनेमे समर्थ होगे। और किसी बातमे हस्तक्षेप किया जाय और किसी बातमे उदासीनता दिखाई जाय तो इसमे न्यायमे वाधा आती है। इस प्रकार अपनेको न्यायी जाननेके निमित्त हमको निस्वार्थभावसे दोनो पक्षोपर ध्यान रखना चाहिये राजपूतोकी राजनैतिक अवस्था बदलनेके लिये और भी विज्ञता मूलक दयामूलक उदार–नीतिका अवलम्बन करना उचित है जिससे राजपूतोकी भीतरी उन्नति और मंगलकी वृद्धि हो, इस विषयकी हमे सदा चिन्ता रखनी चाहिये। ऐसा करनेसे हमारे राज्यमे भी शान्ति और श्रीवृद्धि होगी वहुतसे राठौर सामन्तोने इस नीतिपक्षका समर्थन किया । इस अवसरके आते ही अभयसिहके वंशधर राजाओने मारवाड़के भाग्यमे मानो इस अविश्रान्त निग्रहको वुलादिया है, उसी वंशको सिहासनसे उतारकर ईडरराजके कुटुम्वसे मृत महाराज जोधाके एक वंशधरको मारवाड़के सिहासन पर बैठा देना हमारा पहला कार्य है। यदि हम राठौर सामन्तोंकी समाजमे अपनी राजतंत्रकी रीति वा स्वेच्छाचारकी नीतिका प्रयोग करै और उनके अत्याचारोके निवारणमे हस्तक्षेप न करै, तो हम इन असीम साहसी सामन्तोको एकबार ही निराश और क्रोधोन्मत्त करसकते है, हमने इन राठौर सामन्तोके कियेहुए जिन भयकर कार्योका वर्णन किया है उसका फल क्या हुआ है यह सामन्त किस कार्यको नही करसके, इसका विचार करना हमे उचित है, धावामारनेवाले पिडारो और लूटनेवाले मरहठोने जो शोचनीय कार्य किये है, निगृहीत राठौर सामन्त उनकी अपेक्षा अवश्य ही लोमहर्पण कार्य करनेको उद्यत होजाते तो कैसा हृदयभेदी काण्ड उपस्थित होता! कैसी अराजकता और कैसे अत्याचार दिखाई देते! ऐसी किम्वदन्ती है कि निगृहीत राठौर सामन्त–मण्डलीने उस असह्य अकथनीय कष्ट अविचार और स्वेच्छाचारको सहनेमे असमर्थ होकर गवर्नमेण्ट कम्पनीसे इस विपयमे सहायता चाही थी, सरकारके मध्यस्थ न होने पर उद्दीप्त हृदयहो उन्होने अपनी आशाको उत्कटरूपसे सफल करलिया तथा राजा मानसिंहके हृदयमे छुरी घुसेड़दी । यदि यह कहावत सत्य है तो ऐसी प्रतिहिसा उचित दंडरूपसे मानी जायगी, यह आशा की गई थी कि इस प्रकारके उद्योगके विना निगृहीत सामन्त कभी अपने कार्यको पूरा नही करसकते वह सत्य निकली; यह भी जाना गया है कि जोधपुरके सिहासन पर इस समय भीमसिहके पुत्र विराजमान है। यह वात भी विचारके योग्य है । पहले जिस सम्प्रदायने धौकलसिहका पक्ष लिया था, इस

---

(१) टाड् साहवने अपने देश जानेके समय जो यह कहावत लिखी है यह सव अंशोंमे सत्य नहीं जान पड़ती हमने जिस पिछले इतिहासको संग्रह किया है पाठक उसे पढकर उस आशय को समझ लेंगे।

समय वही उनके साथी होंगे, पोकरणके सामन्तने भी उनका मंत्री होना स्वीकार किया है, पर न्यायके अनुसार प्रधान मंत्रीपदपर चांपावत सम्प्रदायके नेता आंहवाके सामन्तके बैठनेका अधिकार है और इस वंशकी चिर-प्रचलित रीति भी ऐसी ही है, ऐसा न होनेसे ही विवाद विसम्वाद रक्तपात षड्यंत्र चारोओर दिखाई देरहा है, यदि कोई ईडरका राजकुमार मारवाड़के सिंहासन पर आरूढ़ होता तो यह सब बखेड़े दूर होजाते, यदि समस्त राठौरोंको एक जातीय सभा होकर इस प्रश्नकी मीमांसा कीजाय तो निश्चय है कि दश संख्यामे नौजनोकी सम्मति ईडरके किसी राजकुमारको मारवाड़के सिंहासन पर बैठानेकी होगी, ऐसा करनेसे वृटिश सरकार भी निर्भय ही भीतरी विषयोमे हस्तक्षेपकी सब विपत्तियोंसे छुटकारा पालेगी सहस्रों राठौरोंको शान्ति प्राप्त होगी और हमारी चिन्ता भी मिटजायगी।

सोलहवाँ अध्याय १६.

मारवाड़के आधुनिक इतिहासकी सूचना; मानसिंहके साथ वृटिश गवर्नमेण्टके सबसे पहले संधिपत्रका उल्लेख; संधिपत्र, उस संधिपत्रमें मानसिंहकी असम्मति, मानसिंहका गवर्नमेण्टके विरुद्ध आचरण; निकली हुई राठौर मंडलीका गवर्नमेण्टसे विचारके निमित्त सहायता मागना; गवर्नमेण्टका इसमे असम्मति प्रकाश करना; एजेंटकी मध्यस्थतामे सामन्तोंके साथ महाराजका सम्मिलन; संधिपत्र; महाराजका सामन्तोंपर क्षमा प्रकाश करना; मेरवाड़ेके सम्बन्धमें गवर्नमेण्टके साथ महाराजका संधिपत्र, राठौर सामन्तोंका पुनरुत्थान; धौंकलसिंहका मारवाड़के सिंहासनकी फिर इच्छा करना, जयपुरके महाराजका मारवाडपर आक्रमणके लिये उद्योग; मानसिंहका वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता मागना; सहायतामे असम्मति, गवर्नमेण्टका मानसिंहकी भर्त्सना करना, गवर्नमेण्टका मत परिवर्तन, धौंकलसिंहका पलायन, गवर्नमेण्टका जयपुरके महाराजकी भर्त्सना करना; मानसिंहका उद्धार पाना; संधिपत्रके मतसे मानसिंहका सहायताके लिये गवर्नमेण्टको पंद्रह सौ सेनाका देना, उस सेनाकी चतुरताके सम्बन्धमें सरकारका दोषारोपण, उसकी एवजमें मानसिंहका एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक देना स्वीकृति करना; संधिबंधन; मेरवाड़ेके सम्बन्धमे दूसरी बार व्यवस्था; बुढ़ापेमे मानसिंहका धर्मराजकोंके ऊपर भक्ति प्रकाश करना, उनके उपदेशसे राज्यमें असंतोषकारी रीतिका अवलम्बन; राठौर सामन्तोंका शेष उत्पात; मारवाड़में राजनैतिक उपद्रव, वृटिश सेनाका मारवाड़मे प्रवेश, गवर्नमेण्टके साथ महाराजका संधिबंधन, संधिपत्र; राज्य संस्कार; मेरवाड़ेके सम्बन्धमें शेष व्यवस्था, महाराजमानसिंहकी मृत्यु।

राजपूत वंधुमहात्मा टाड् साहबने रजवाडोंके जिस समयतकके इतिहासको वर्णन किया है हमको उस विस्तारित वर्णनके सिवाय उस समयसे इस समयतकका

---

(१) सन् १८२३ ई० मे कर्नल टाड् साहब जिस समय भारतको छोड़कर चिरकालके लिये अपने देशको चले गये थे उस समय आहवाके सामन्त निकाले जाकर मेवाड़में रहते थे।

इतिहास भी पाठकोके सम्मुख रखना उचित है, और पहले भी हमारी इच्छा शेष इतिहासके संग्रह करनेकी थी। हमने उस प्रतिज्ञा-पालनकी अपनी सामर्थ्यभर चेष्टा की, हम नहीं कह सकते कि हमारे पाठक उसको पढ़कर प्रसन्न हुए थे या नही, महात्मा टाड् साहबने रजवाड़ेके पोलिटिकल एजेण्ट स्वरूपसे राजपूतोमे दीर्घकालतक निवास कर राजस्थानके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान प्रधान कवियो प्रत्येक नीतिज्ञ, प्रत्येक प्रधान २ भाट और चारणोकी सहायतासे, स्वयं रजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तोमे घूमकर राजपूत कवियोकी लिखी हुई ग्रंथावलीको संग्रह करके उन्होने इस विस्तृत इतिहासको संपादन किया, परन्तु हमारे लिये इतना सुवीता कहाँ है, इस कारण हमने यथाशक्ति परिश्रम और चेष्टा करके जहाँतक इतिहासका संग्रह किया है वह अपनी प्रतिज्ञा की रक्षाके लिये पूर्वमे भी पाठकोके आगे रक्खा है और इस समय भी रखते है, पर हमारा यह कार्य ऐसा है कि जिस प्रकार सबसे श्रेष्ठ सुवर्णमंडित पर्वतराज हिमालयकी ऊँचाईकी बराबरी करनेके लिये सामान्य दूर्वा उपस्थित हो। इस बातको हम स्वीकार करते है कि महात्मा टाड् साहबकी शिक्षा ज्ञान, दूरदर्शिता और राजपूतोके चरित्रोकी अभिज्ञताके साथ साथ उनकी सामर्थ्य बहुत बढ़ी हुई थी, इस कारण हमारे पाठक इस अनुवादकके लिखे हुए परिशिष्टको पढ़कर किसी प्रकार भी टाड् साहबके लिखे हुए इतिहासकी समान सन्तोष लाभ नहीं करसकेगे यह तो हमको विदित ही है, हम अपनी प्रतिज्ञा पूर्तिके लिये दृढ़ विश्वाससे इस संक्षिप्त और अपूर्ण इतिहासको वर्णन करनेमें अग्रसर होते है।

इतिहास वेत्ता महात्मा टाड् साहब जबतक इन भारतीय रजवाड़ोमे रहे, उसी समय तकके इतिहासको उन्होने वर्णन किया है पीछे अपने देशमें जाकर वह इस विस्तारित इतिहासको छपाकर इसके प्रचार करनेके निमित्त जीवनके शेषभागको विश्राम देकर केवल राजपूत जातिके मंगलकी चिन्तामे लगेरहे। उनको पिछले इतिहासके संग्रह करनेमे इतना यत्न नहीं था, अथवा उनके इतिहासके प्रकाशित होनेसे परवर्ती घटनावलीको उसके साथ संग्रह करनेका अवसर नहीं मिला। मानसिंह जिस समय मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान थे उस समय उदारहृदय टाड् साहब रजवाडेको छोड़कर इंगलेण्डको चलेगये, इस कारण मानसिंहके शेष इतिहासको उन्होने प्रकाशित नही किया।

महाराज मानसिंहके शासनके इतिहासको सम्पूर्ण करनेके पहले हमारी यहां एक और विषयके उल्लेख करनेकी अभिलाषा है। महात्मा टाड् साहबने उन विषयोका उल्लेख या तो भूलसे न किया होगा, या उसका प्रयोजन न समझा होगा परन्तु इतिहासके सम्मानकी रक्षाके लिये हम उन विषयोका उल्लेख करना अत्यन्त कर्त्तव्य जानते है। सन् १८१८ ईसवीमे महाराज मानसिंहके साथ महामान्य अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीका जो संधिबंधन हुआ था महात्मा टाड् साहबने केवल उसीका उल्लेख किया है, परन्तु इसके पहले १८०३ ईसवीमे मारवाड़के महाराज मानसिंहके साथ कंपनीका जो संधिबंधन हुआ था उस विषयका उन्होने कोई उल्लेख

नहीं किया। महाराज मानसिंह ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेमे रहकर, अंतमे महाराज भीमसिंहके परलोक चलेजाने पर जिस समय मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त हुए, उस समय अर्थात् १८०३ ईसवीमे ईस्टइण्डिया कम्पनीने भारतके कठिन महाराष्ट्र तस्करदलके दो प्रधान नेता सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्तिको एकवार ही लोप करनेके लिये महा समराग्नि प्रज्वलित की। प्रबल पराक्रमशाली अंग्रेजी सेना उस युद्धमे सेंधियाको एकवार ही परास्त करके भागे हुए हुलकरके पीछे शीघ्रतासे गई। रजवाड़ेके राजाओने उस समय तस्करोके दोनो नेताओको अपने यहां आश्रय न दिया। ईस्टइडिया कम्पनीने इस प्रकारके उपायकी खोजमे प्रवृत्त हो मारवाड़के नवीन महाराजके साथ संधि करनेका निश्चय करलिया। कम्पनीने विचारा कि यदि इस समय मारवाड़पतिके साथ सधि कर ली जायगी तो वृटिश शासनशक्तिके विरुद्धमे खड़े होनेसे सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्ति बड़ी सरलतासे लुप्त होजायगी और रजवाड़ेके राजाओके साथ भी चिरस्थाई सम्बन्ध होजायगा।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके नेता जनरल लेक जो सेंधियाको परास्त करके हुलकरको पकड़नेके लिये सेना सहित गये थे उन्होने भारतवर्षके उस समयके गवर्नर जनरल लार्ड वेलसलीकी सम्मतिसे महाराज मानसिंहके निकट संधिका प्रस्ताव भेजा। महाराज मानसिंहने उस समय ऐसी कोई आपत्ति न करके संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने की सम्मति दी। इस प्रकारसे अकबराबाद सूबेके अधीन सरहिन्द नामक स्थानमे संवत् १८६० की ६ तारीखको पूसके महीनेमे यह संधिपत्र तैयार किया गया।

संधिपत्र।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह बहादुरकी मित्रता तथा संधिके सम्बन्धका पत्र माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके पक्षमे महामहिम वर रिचार्ड मार्क्विस वेलेसली, सेण्टपाटिक नामक महोच्च कौलीन्य उपाधिके नाइट, ग्रेटवृटिनके महामान्य अधीश्वरके माननीय प्रिविकाउन्सर भारतवर्षके अंग्रेजोके अधिकारी समस्त देशोकी सेनादलके कप्तान जनरल और प्रधान सेनापति और सूबा बंगालेके अंतःपाती फोर्ट विलिइम किलेके सकाउन्सल गवर्नर जनरलके द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर भारतवर्षके वृटिश सेनादलके प्रधान सेनापति महा मान्यवर जनरल-जिवर्ड लेक द्वारा और स्वयं महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह बहादुर द्वारा निर्धारित सन्धित्र।

प्रथम धारा-माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज मानसिंह बहादुर और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणोमे दृढ़ और चिरस्थायी मित्रता तथा सन्धि सम्बन्ध स्थापित हुआ।

दूसरी धारा-जिस कारणसे दोनो राज्योमे मित्रता स्थापित हुई है तब दोनो पक्षके शत्रु और मित्र दोनों पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे माने जायगे। इस नियत की हुई व्यवस्थाका मान्य चिरकालतक दोनों राज्य करेगे।

तीसरी धारा–माननीय कम्पनी महाराजाधिराजके अधिकारी देशोके शासनके सम्बन्धमे किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करेगी, और उनसे कर भी नही मॉगेगी।

चौथी धारा–कम्पनीने हिन्दुस्थानके जितने देशोको अपने अधिकारमे कर लिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोपर फिर अधिकार करनेके लिये तैयार हो तो महाराजाधिराजको कम्पनीकी सहायताके लिये अपने अधीनकी समस्त सेना भेजनी होगी, और शत्रुको भगानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा करनी होगी, मित्रता और कृतज्ञता प्रकाश करनेमे कोई सुअवसर न छोड़ा जायगा।

पॉचवी धारा–जिस कारण वर्तमान संधिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे दोनो राज्योमे मित्रता स्थापित हुई है, जिससे कोई विदेशीय शत्रु महाराजाधिराजके शासित देशपर आक्रमण न करसके कम्पनी इसी कारण महाराजके समीप दायी रहेगी, इसमे महाराजाधिराजने अपनी सम्मति प्रकाशित की है कि यदि किसी समय किसी कारणसे किसी भिन्नराज्यके अधीश्वरके साथ किसी विषयपर उनका मत भेद वा विवाद उपस्थित होजाय तो पहले महाराजाधिराज उस विवादके कारणको कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट उपस्थित करै, गवर्नमेण्ट उस विवादकी सरलता से मित्रभावसे मीमांसा करनेकी चेष्टा करेगी, परन्तु यदि शत्रुपक्षके दोषसे उस भावसे मीमांसा करनेका सुभीता न मिलै तो महाराजाधिराज उस मीमांसाके लिये कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट सहायता की प्रार्थना करै। उपरोक्त घटनोके होनेसे वह प्रार्थना ग्रहण की जायगी और उस सहायता देनेमे जितना खर्च होगा, हिन्दुस्थानके अन्यान्य राजाओके साथ जो हारे उसीको व्यय देनेकी व्यवस्था हुई ह, वही यहा रहैगी। महाराजाधिराजने उस हारेहुएको व्यय देनमे अपनी सम्मति प्रकाश की है।

छठी धारा–महाराजाधिराजने इसमे जो सम्मति प्रकाश की है यद्यपि वास्तवमे वह अपनी सेनाके प्रभु है, परन्तु जिस समय युद्ध होगा, अथवा युद्धकी पूर्व सूचना होगी उस समय अंग्रेज सेनाके साथ उनकी सेना नियुक्त रहैगी, उस अंग्रेजी सेनादलके प्रधान सेनापतिकी आज्ञा और उसकी सम्मतिके अनुसार कार्य किया जायगा।

सातवी धारा–कम्पनी गवर्नमेण्टकी आज्ञाके अतिरिक्त किसी अंग्रेज वा फरासीसी प्रजाको अथवा यूरूपखडके किसी जातीय निवासीको महाराज अपने अधीनमे कर्मचारी स्वरूपस नियुक्त नही करसके गे, अथवा अपने राज्यमे किसी कारणसे भी उनका प्रवेश नहीं होने देगे।

उपरोक्त सात धाराओसे युक्त यह सधिपत्र, महामान्यवर जनरल जिवार्ड लेकका अकवरावादसूवेके अधीन सरहिन्द नामक स्थानमे १८०३ ईसवीके दिसम्वर मासकी वाईसवीं तारीख हिजिरी सन् १२१८ सालके १ रमजानमे संवत् १८६० के पूस मासकी नोमी तारीखको हस्ताक्षर सहित और महाराजाधिराज मानसिंह वहादुरकी

१८०३ ईसवीकी २२ दिसम्बरको मोहर लगा हुआ, हस्ताक्षरकी रीतिके अनुसार नियत होकर स्वीकार कियागया।

जिस समय उक्त सात धाराओसे युक्त संधिपत्र महामहिमवर सकान्सेल गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर सहित मोहर लगा हुआ महाराजाधिराजके हाथमे दिया गया उस समय माननीय जनरल जिरार्ड लेकने इस संधिपत्रको उन्हीको लौटा दिया।

कम्पनीकी मोहर।

(हस्ताक्षर) वेलसली सकाडेन्सेल गवर्नर जनरलका

१८०४ ईसवीमे १५ जनवरीको यह संधिपत्र तैयार होगया।

(हस्ताक्षर) जी. एन. वार्लो।

(ऐ) जि. डडनि*।

यद्यपि महाराज पहले संधिपत्रपर अपनी सम्मति देकर उस पर हस्ताक्षर करते थे, परन्तु भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलने संधिपत्रपर हस्ताक्षर करके उनके पास भेजदिया। उन्होने सन्धिपत्रकी कई धाराओ पर विशेष आपत्ति प्रकाश की। बरन् उस सन्धिपत्रको खारिज करके और एक नवीन सन्धिपत्रको तैयार करनेकी इच्छा प्रकाश की। ईस्टइण्डिया कंपनी महाराजके प्रस्तावके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टके प्रार्थनीय और एक कार्यके करनेमे लगी। मारवाड़के महाराज जिससे हुलकरको किसी प्रकार भी सहायता न दे इस लिये गवर्नमेण्ट मानसिंहके साथ वह सन्धि करनेको तैयार हुई थी–परन्तु महाराज मानसिंहने १८०४ ईसवीमे अंग्रेजोके द्वारा निकाले हुए हुलकरको अपने राज्यमे आश्रय दिया उसकी सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट महा क्रोधित हुई और महाराज वृटिश गवर्नमेण्टके विरुद्धमे खड़े हुये, १८०४ ईसवीके जिस महीनेमे यह सन्धिपत्र खारिज किया था, ईस्टइण्डिया कंपनीको उस समय मारवाडके महाराजके साथ किसी प्रकारका संवन्ध करनेकी इच्छा नही थी। इतना तो हम अवश्य ही कह सकते है कि जब महाराज मानसिंहने केवल जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये–अपने प्रताप और प्रभुत्वको प्रवल रखनेके निमित्त ही पहले सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर नही किये थे परन्तु१८१८ ईसवीके जनवरी महीनेमे दिल्लीमे जव दूसरा सन्धिपत्र तैयार होगया यदि उसके साथ इसका मिलान किया जाय, तो यह पहला सन्धिपत्र महाराजके लिये अनेक वातोमे हितकारी था। यद्यपि इस पहिले संधिपत्रमे मानसिंह ईस्टइण्डिया कम्पनीके निकट वश्यता स्वीकार करनेको राजी होजाते, परन्तु दूसरे सन्धिपत्रके मतसे उनको जो कर देनेकी व्यवस्था हुई इस सधिपत्रमे उसका कोई उल्लेख नही था। यदि मानसिंह इस संधिपत्र पर हस्ताक्षर करके ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता करलेते, तो अमीरखाँके द्वारा मारवाड़राज्य क्षार खार न होता, सवाईसिंहके षड्यंत्रसे धौकलसिंह और जयपुरके महाराज भी मारवाड़को विध्वंस नही कर

* Aitchison's Treaties Vol. IV. Page 45. सि. इड.
अचिसनकी वनाई भारतवर्षको संधिपत्रावली पुस्तकके ४५ पृष्ठमे देखो।

सकते थे, और न सेंधिया ही मारवाड़को जातकर चौथके ग्रहण करनेमे समर्थ होसकता था। विधाताको यही करना था कि मारवाड़के महाराजको अंग्रेजोके करद रूपसे रहना होगा, इसी लिये मानसिहने पहिले संधिपत्रको अपनी निर्बुद्धिके वशसे स्वकिार नही किया था।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव १८२३ ईसवीतक मारवाड़राज्यके इतिहासके चित्रको अंकित करगये है। १८२४ इस्वीसे हमने इस इतिहासको प्रारभ किया। महात्मा टाड् साहबने मारवाडके चारोओर प्रवल अशान्ति, अत्याचार, अविचार और स्वेच्छाचारकी अग्निकी प्रवल शाखाको प्रज्वलित कर सामन्तोको निकाल प्रजाको अत्यन्त दीन हीन अवस्थामे डाल महाराज मानसिहको उग्र मूर्तिसे दूसरी वार राज्य करते हुए देखा। पिछले वर्पमे मारवाड़की आभ्यन्तरिक अवस्था भी उसी प्रकार थी। परन्तु महाराज मानसिहको इस समयसे क्रीत दासत्वता स्वीकार करनेके पीछेसे राज्यमे शान्ति स्थापन करनेकी विशेष अभिलापा होगई। वह इस लोक और परलोकके उद्धारकर्त्ता गुरु देवनाथकी मृत्युके पीछे दीर्घकालतक उन्माद अवस्थासे एकान्तमे रहे थे, तथा जिस समय इनके इकलौते पुत्र छत्रासिह मारवाड़के सिहासन पर पिताके प्रतिनिधि स्वरूपसे विराजमान होकर राज्यशासन करते थे, उस दीर्व समयमं जिन सामन्त नेता राजपुरुपोने सुअवसर पाकर भी राज्यका सर्वनाश कर खजानेको लूटकर सामन्तोके ऊपर घोर अत्याचार किये थे, महाराज मानसिहने दूसरी बार शासनभारको ग्रहण करके उन सभी अत्याचार करनेवालोंके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, महात्मा टाड् साहव उसे स्वयं ही वर्णन करगये है। मेवाड़, कोटा, वीकानेर और जयपुर इत्यादि राज्योमे भागकर उन सामन्तोने इससे पहले महाराज मानसिंहके विरुद्धमे वृटिश गवर्नरके दूत कर्नल टाड्के पास एक अनुयोग पत्र भेजा वृटिश गवर्नमेण्ट जिससे मध्यस्थ होकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण कर उनके पैतृक अविकारको फिर उन्हीको देदे, जिससे महाराज मानसिंह उनके ऊपर फिर किसी प्रकारके अत्याचार न करसकै, इस लिये प्रार्थना की परन्तु गवर्नमेण्टने उस समयकी प्रचलित रीतिके अनुसार मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी विषय पर भी हस्तक्षेप नही किया, संधिपत्र जैसी प्रतिज्ञासे वंधा हुआ था, उसके अनुसार महा विपत्तिमे पडे हुए उन सामन्तोकी उस प्रार्थना पर कुछ भी ध्यान न दिया। परन्तु १८२४ ईसवीमे उन सामन्तोने फिर गवर्नमेण्टसे सहायता मॉगी, अवकी वार गवर्नमेण्ट मौन न रहसकी।

मि० एफ विलडर इस समय साधू कर्नेल टाड् साहवके पदपर राजपूतानेके पोलिटिकल एजेटरूपसे नियुक्त थे। जव स्वतः निकाले हुए सामन्तोने इस भॉतिसे वारम्वार प्रार्थना की तव वह भारतवर्पके गवर्नर जनरलकी सम्मतिके मतसे महाराज

(१) गवर्नमेण्टसे मुराद ईस्टइण्डिया कम्पनीसे है।

मानसिंहके साथ उन सामन्तोके उपद्रवोका विचार करने लगे। मि० वेलडरने बृटिश गवर्नमेण्टके पक्षसे महाराज मानसिहके निकट यह प्रस्ताव किया "कि इन सामन्तोके ऊपर दया करके तथा इनके अपराधोको क्षमा कर इनके जो देश छीन लिये है इस समय वह इनको दे दिये जॉय।" इन सामन्तोके ऊपर मानसिहका अत्यन्त क्रोध था, विशेष करके इन सामन्तोने पहलेसे ही उनकी शक्तिको लोप करनेकी चेष्टा की थी, इसीसे महाराजने निश्चय करलिया था कि इनके ऊपर किसी समय भी दया नही की जायगी यदि ऐसा होगया तो यह फिर भी मारवाड़मे आकर हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध पहलेकी समान षड्यंत्रजालका विस्तार कर हमारा सर्वनाशके लिये चेष्टा करैगे। इसी कारणसे उनके अधिकारी देशोको अपने अधिकारमे कर उनको चिरकालके लिये निकाल देनेका विचार किया था। परन्तु मि० वेलडरने बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधिस्वरूपसे बारंवार महाराज मानसिहको दया प्रकाश करनेका अनुरोध किया, महाराज मानसिहने शीघ्र ही कहा, कि यदि स्वतः निकाले हुए सामन्त अपने पहले अपराधोको स्वीकार करके प्रतिज्ञा मे बँधे है अथवा वह अब कभी हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध षड्यंत्रका विस्तार कर पहलेकी समान कोई अपराध नही करैगे, और बृटिश गवर्नमेण्ट यदि उन सामन्तोके सच्चरित्रताके विषयमे साक्षीस्वरूपसे रहैगी तो मै उनको क्षमाकर उनके देशोको दे सकता हूं, और सबके अंतमे महाराजने यह भी कह दिया कि यदि यह सामन्त फिर किसी प्रकारका असंतोपदायक व्यवहार करैगे तो उनको अपनी इच्छानुसार दंड दूंगा। बृटिश गवर्नमेण्ट उसपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न करसकेगी, गवर्नमेण्टको इस प्रकारका एक स्वीकार पत्र लिखना होगा। मि० वेलडरने महाराज मानसिहका यह उत्तर पाकर भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुरके निकट इसको प्रकाशित करदिया। अन्य पक्षमे जिन सामन्तोने बृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगी थी उनको भी सुनादिया। गवर्नर जनरल बहादुरने महाराज मानसिहके प्रत्येक प्रस्तावमे ही अपनी संमति प्रकाश की। ओर एक और सामन्तोमे आहवा आसोप नीमाज तथा रियां इत्यादि समस्त सामन्त ही मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे समस्त कार्य करनेके लिये संमत होगये। केवल बूडस् और चंडावलके ठाकुर अर्थात् यह दोनो सामन्त उस महा निग्रहको भोग करके भी मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे महाराज मानसिहकी वश्यता स्वीकार कर प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर करनेके लिये सम्मत न हुए, मि० वेलडरने उनके कल्याण साधनके लिये महाराज मानसिहको अनुरोध किया। उक्त सामन्तोने बृटिश गवर्नमेण्टके एक मतसे महाराज मानसिंहके प्रस्तावमे सम्मत हो अतमे नीचे लिखा हुआ संधिपत्र तैयार किया। महाराज मानसिहके प्रधान मंत्री फतहराजने निम्न लिखित सधिपत्र पर महाराजकी ओरसे हस्ताक्षर करदिये,–

स्वतः निकले हुए ठाकुरोके प्रति दया प्रकाशके सम्बन्धमें महाराज मानसिहका संधिपत्र।

बूडस् और चडावलके दोनो ठाकुरोकी राजअनुग्रह और क्षमा प्राप्तिके लिये

बृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा अनुरोध करानेकी इच्छा नही थी; और आहवा, आसोप, नीमाज और रासके सामन्त यद्यपि किसी प्रकारसे क्षमाके योग्य नही थे परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके संतोप साधनके लिये महाराज बख्तसिहके शासन समयमे वह जिन २ भागोके अधिकारी थे, आजकी तारीखसे छः महीनेमे उनके वह देश लौटा दिये जॉयगे, परन्तु महाराजके संतोषके लिये गवर्नर जनरल बहादुरको निम्नलिखित उद्देशमूलक एक खलीता लिखदेना होगा—यदि यह ठाकुर अपनी प्रतिज्ञा पालनमे असमर्थ हुए अथवा इन्होने कोई अपराध किया, तो महाराज अपनी इच्छानुसार कार्य कर सकेगे।

वर्तमान समयमे केवल एकमात्र बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोध और अनुग्रहसे क्षमा दिखाई गई, यदि इसके पीछे यह ठाकुर वशमे रहैगे, अथवा महाराजकी आज्ञानुसार स्वदेशके कार्यमे नियुक्त होनेकी इच्छा करैगे, तो उनको और भी पुरस्कार दिया जायगा और जो नीची श्रेणीके ठाकुर स्वतः निकाले गये है वह जिस समय महाराजसे संतोषदायक व्यवहार करैगे उसी समय उनको फिर पूर्व अधिकार देदिया जायगा, परन्तु गवर्नमेण्ट उनकी ओरसे किसी प्रकारका अनुरोध नही करसकैगी।

(हस्ताक्षर) फतहराज दीवान।

मारवाड़के प्रधान राजमंत्री फतहराजने महाराज मानसिहकी ओरसे उक्त सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करदिये, और महाराजके पूर्व प्रस्तावके मतसे पोलिटिकल एजेण्ट मि० वेलडरने निम्नलिखित प्रतिज्ञापत्र लिखदिया।

महाराज मानसिहने बृटिश गवर्नमेण्टके अभिप्रायके अनुसार जिन ठाकुरोको पहले अपराधके लिये निकाल दिया था उनको उनके पैतृक अधिकार देनेमे राजी हुए। मै इस कार्यको साधन करनेके लिये गवर्नमेण्टकी ओरसे भेजा हुआ आया हू, यदि इससे पीछे इनमेसे कोई मनुष्य भी किसी प्रकारका अपराध करैगा या महाराजकी इच्छाके विरुद्ध कोई कार्य करैगा तो सन्धिपत्रमे प्रकाश कियागया है कि उस समय महाराज अपनी पूर्ण शक्तिका प्रयोग करेगे. इस कारण बृटिश गवर्नमेण्ट उन सामन्तोकी ओरसे किसी प्रकारसे हस्तक्षेप न करसकेगी। फिर महाराजको और भी संतोपके कारण गवर्नर जनरलकी ओरसे इस प्रतिज्ञाका एक पत्र देना होगा।

२५ फर्वरी, १८२४ ईसवी।
(हस्ताक्षर) एफ, वेलडर।
पोलिटिकल एजेण्ट।

यद्यपि उपरोक्त सन्धिपत्रके अनुसार कार्य करनेको महाराज मानसिंह राजी होगये थे, यद्यपि अत्यन्त अनिच्छासे एकमात्र बृटिश गवर्नमेण्टके संतोपके निमित्त निकाले हुए सामन्तोमेसे केवल उपरोक्त लिखे हुए सामन्तोमेसे कितनोही पर कृपा प्रकाश की, परन्तु नीची श्रेणीके अन्यान्य समस्त ठाकुर जो स्वतः निकाल दिये गये थे, उनके ऊपर दया न की। यद्यपि नीमाज इत्यादिके सामन्तोने फिर बृटिश

गवर्नमेण्टकी कृपासे पैतृक अधिकारको प्राप्त किया था, परन्तु महाराज मानसिह उनके ऊपर अत्यन्त ही विरक्त होगये थे इस कारण उन्होंने उनके ऊपर दया प्रकाश न की।

१८२४ ईसवीमे और भी एक प्रधान घटना वर्णन करनेके योग्य थी। १८१८ ईसवीमे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मारवाड़पति महाराज मानसिहकी जो संधि हुई थी, उसके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टने मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी उपद्रव पर भी हस्तक्षेप न किया, महाराज मानसिहने अपनी इच्छानुसार अपने देशको शासन किया। परन्तु उन सामन्तोके पक्षसे वृटिश गवर्नमेण्टका अनुरोध करना स्पष्ट ही दिखाता है कि गवर्नमेण्टने संधिकी धाराको भंग करके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्तक्षेप किया। इसी लिये महाराज मानसिहने सामन्तोके ऊपर अनुग्रह प्रकाश करके संधिपत्रमे कहदिया था कि वृटिश गवर्नमेण्ट और ऐसे विषयोपर किसी प्रकारका अनुरोध नही करैगी। भारतवर्षके गवर्नर जनरलको इस प्रकारके पत्रपर हस्ताक्षर करने होगे। मि० वेलडरने जिस प्रतिज्ञापत्र पर लिखदिया था उसमे भी उस तारीखका उल्लेख है, परन्तु गवर्नर जनरल बहादुरने उस प्रकारके खलीतापत्रको दिया था या नही, उसका कोई संधान नहीं पाया जाता, राज्यके मंगलसाधनके अभिप्रायके वशसे वृटिश गवर्नमेण्टने जव अनुरोध किया था तव प्रतिज्ञाभंगका दोष प्रवल नही होसकता, परन्तु एक वर्षमे वृटिश गवर्नमेण्टने और एक विषय पर प्रकारान्तरसे प्रतिज्ञाको भगकर भीतरी शासन पर हस्तक्षेप किया।

१८१८ ईसवीके संधिपत्रके अनुसार यद्यपि महाराज मानसिह वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगत्यता स्वीकार करके वार्षिक १०८००० रुपया देनेके लिये राजी होगये, परन्तु १८२४ ईसवी तक वृटिशसिहको मारवाड़की सूचीमुखपरिमाण पृथ्वीपर पैररखनेका भी अधिकार प्राप्त नही हुआ। या तो मारवाड़मे प्रवेश करनेके लिये ऐसा किया हो, अथवा किसी राजनैतिक उद्देशको सफल करनेके लिये ऐसा किया हो (उस उद्देशके विषयको इस स्थानपर वर्णन करनेकी हमारी इच्छा नही है) १८२४ ईसवीमे गवर्नमेण्टने मेवाड़ेश्वर महाराणाकी समान मारवाड़के महाराज मानसिहके निकट भी प्रस्ताव किया कि मेरवाड़के पर्वती मीना और मेरगण अत्यन्त उद्धत और ऊधमी है, वह लोग जोधपुर राज्यकी सीमामे जाकर लूटमार कर अनेक प्रकारके उपद्रव करते है, इस कारण गवर्नमेण्टको उनके दमन करनेकी अभिलाषा हुई है। अंग्रेजोकी एक सेना भी वहाँ जानेके लिये तैयार है। यह समाचार सुनते ही महाराज मानसिहने अनुगतकी समान गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार कईएक सामन्तोको सेना लेकर वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये भेजदिया। अंग्रेजी सेनाके द्वारा उक्त पर्वतियोका दमनकार्य समाप्त होगया, गवर्नमेण्टने फिर प्रस्ताव किया कि पर्वती मीना, और मेरोको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने एक स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करनेकी अभिलाषा

की है और उस सेनाके खर्चको पूरा करनेके लिये महाराजको वार्षिक पंद्रह हजार रुपये देने होगे। ऊपरके मेरवाड़ेमे महाराज मानसिहके अधिकारी चाङ्ग और कोट किराना नामक दो परगनोमे जो इक्कीस ग्राम है, उनको भी वृटिश गवर्नमेण्टके हाथमे आठ वर्षके लिये देना होगा। गवर्नमेण्ट स्वयं वहाँ शासनशक्तिको चलाकर उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपयेके अतिरिक्त बाकी समस्त कर महाराजको दिया करैगी। हतवीर्य लुप्तप्रताप मानसिह बिना कुछ कहे सुने शीघ्र ही वृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावमे सम्मत हुए। उसीके अनुसार निम्नलिखिन संधिपत्र दोनोकी ओरसे तैयार होगया।

मेरवाड़ाके मारवाड़के राजोंके अधिकारी अंशके सम्बन्धमें जोधपुर राज्यका संधिपत्र।

यह राजदरबार सम्पूर्ण संतोषजनक रूपसे विदित है कि मेरवाड़ेके सब अंशोमे उपयोगी प्रहरी एव रक्षक सेनाका नियोग अथवा वहाँके सब प्रकारके उपद्रवोको निवारण करनेकी सामर्थ्य रक्खे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेकी इस रजवाड़ेकी एकान्त इच्छा है, और गवर्नमेण्टकी इस समय उन देशोपर अपनी श्रेष्ठ रीतिके चलानेकी इच्छा है उसमे शान्ति स्थापनके लिये जो नई सेना तैयार होगी, मि० वेलडरके प्रस्तावसे उस सेनाके व्यय निर्वाहके लिये आठ वर्षके लिये वार्षिक पंद्रह हजार रुपये देने होंगे। इस प्रकारसे मारवाड़के अधिकारी चाङ्ग चितार और अन्यान्य खालसा ग्राम जिन ग्रामोके निवासियोके दमन करनेके लिये अंग्रेजी सेना भेजी जायगी, इस दरबारके ठाकुरोने जिस वृटिश सेनाकी सहायता से उनको दमन करके समस्त ग्रामोपर अपना अधिकार कर लिया है, वह सभी ग्राम उक्त आठ वर्षके लिये गवर्नमेण्टको देने होगे—परन्तु जो कर अदा किया जायगा उसका हिसाब देखने और परीक्षाके लिये इस दरबारकी ओरसे एक प्रतिनिधि वहाँ रहनेके लिये भेजा जायगा, उनमेसे उक्त रुपया छोड़कर बाकी हिसाब करके इस दरबारमे लाना होगा। जो परिमित समयके लिये ग्राम दे दिये है उस समयके बीतते ही उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपया और नही देना होगा, तथा उन ग्रामोको फिर लौटा देना होगा।

४ था रजब, १२३९ हिजरी।
(हस्ताक्षर) व्यास सूरतराम।
वकील।

महाराज मानसिहकी ओरसे वकील व्यास सूरतरामने उक्त सधिपत्र पर हस्ताक्षर किये, वृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेन्ट मि० एफ वेलडरने निम्नलिखित संधिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये।

वृटिश गवर्नमेण्टको विश्वासके साथ मारवाड़ मेरवाड़ेके जो ग्राम दिये गये थे, उनमेसे जितना रुपया करस्वरूपसे सग्रह होगा, उक्त पंद्रह हजार रुपयेके अतिरिक्त सभी लौटा देना होगा, तथा आठ वर्षके पोछे उक्त ग्राम फिर जोधपुरके महाराजको दे देने होगे और वह पंद्रह हजार रुपया ग्रहण नही किया जायगा।

उपरोक्त तारीख ५ मार्च सन् १८२४ ईस्वीके, पोलिटिकल एजण्ट मिस्टर एफ् वेलडर साहवके हस्ताक्षर युक्त संधिपत्रसे भली भाँति जाना जाता है कि महाराज मानसिहने पार्वत्य मीना और मेरोके दमन करनेमे समर्थ होकर भी वहाँ स्वयं शांति स्थापनमे समर्थ होकर भी केवल गवर्नमेण्टके संतोषके लिये उन ग्रामोको गवर्नमेण्टके करकमलमे समर्पण किया। गवर्नमेण्टने मेरवाडेपर अधिकार करके अंतमे किस प्रकारसे स्वार्थसाधन किया था। उसका वर्णन आगे किया जायगा।

जिस भाँति महाराज उदयसिहने सवसे पहले वादशाह अकवरकी अधीनता स्वीकार करके राठौर जातिको यवनोकी दासश्रेणीमे गिनाया था, उसी भांति महाराज मानसिह भी सवसे पहले अंग्रेजोकी शरण हुए, परन्तु उदयसिह ही यवनोके साथ सन्धिवधन करके अपने राज्यकी उन्नति करनेमे समर्थ हुए थे. अव मानसिहने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धि करके केवल स्वदेश-स्वजाति और अपने भाग्यमे घोर रात्रिको वुलाया। अपनी बुद्धिके दोषसे तथा उच्च अगकी राजनीतिज्ञताके अभावसे महाराज मानसिह वालकपनसे ही विपत्तिके समुद्रमे मग्नहुए थे। उन्होने मानो विपत्तिको अपना साथी मित्र वनाकर इस संसारमे जन्मलिया था। स्वजातिका विध्वंस, स्वराज्यका नाश, और जातिके गौरवकी सीमाको एकवार ही लोप करनेका भार लेकर ही मानो वह राजसिहासन पर विराजमान हुए थे। रजवाड़के अन्यान्य राजाओकी समान सामन्तोके साथ राजाकी अनैक्यता आत्मनिग्रह विलासिता, और स्वजातिमे विद्वेष यही मारवाडके पतनकी जड थी। कुछ समयके पीछे महाराज मानसिहने अपनी शासनशक्तिको प्रवल करनेके लिये पहलेसे ही सामन्तोके ऊपर कठोर व्यवहार करना प्रारभ किया था। १८२४ ईसवीमे, यद्यपि महाराज मानसिहने गवर्नमेण्टके कहनेसे स्वतः निकाले हुए सामन्तोमे से कितने ही पर क्षमा प्रकाश की थी, परन्तु उनके साथमे व्यवहार अच्छा नही किया, ओर नीची श्रेणीके सामन्तोको भी क्षमा न किया-इसीसे महाराज मानसिहके विरुद्धमे फिर षड्यंत्र जालका विस्तार होने लगा, मानसिह ने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर भी ली थी, परन्तु अव गवर्नमेण्टने सुना कि मारवाडके वाहरी देशोमे पडीहुई सामन्त मडली १८२७ ईसवीमे फिर महाराज मानसिहको सिहासनसे उतारनेके लिये दल वाँधरही है।

पोकरणके सामन्त सवाईसिहने धौकलसिंहको अवलम्वन कर जयपुरके महाराजकी सहायतासे जिस प्रकार मारवाडको विध्वंश कर दिया था, असतुष्ट सामन्तमंडलीने फिर भी उसी प्रकारसे धोकलसिहका पक्ष अवलम्वन करके जयपुरके अधीश्वरकी सहायतासे फिर मारवाड पर आक्रमण कर मानसिहको सिहासनसे उतार धौकलसिहको महाराज जोधाके आसन पर बैठालनेकी तनमनधनसे चेष्टा की है। प्रत्येक सामन्त अपनी सेनाके दलके दल लेकर जयपुरकी राजधानीमे इकट्ठे होने लगे है। हतउद्योग धौकलसिह फिर मारवाड़के सिहासनपर विराजमान होंगे, इसीसे उन सामन्तोके साथ मिलनेमे उन्होने एक मुहूर्त्तका भी विलम्व न किया,

और जयपुरपति महाराज सवाई जयसिंहने भारतवर्षके किसी देशीय राज्यपर आक्रमण नही किया था, वृटिश गवर्नमेण्टके साथ इस प्रकारसे संधि करके भी साहसमे भर धौकलसिहकी सहायतासे वह मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए है।

इस समय प्रबल प्रतापशाली अंग्रेजी सरकार लाल २ नेत्र कर संहारमूर्तिसे भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तकी ओर देखती, और महा सिंहनाद करके गर्जती थी, राठौर सामन्त, धौकलसिंह, तथा जयपुरके महाराज इससे कुछ भी भयभीत न हुए। इसी समयमे रणभेरी वजने लगी, फिर राठौर सामन्त स्वजातिकी उस शोचनीय दशा पतन अवस्थामे जातिके शेष अस्तित्वके लोपके निमित्त तथा, स्वदेशका नाम भारतवर्षसे लोप करनेके निमित्त फिर नंगी तलवार हाथमे लेकर सजने लगे। मारवाड़का राजनैतिक आकाश देखते २ काले २ वादलोसे ढक गया, महाराज मानसिंहको चारोओर अंधकार दृष्टि आने लगा, उस घोर अंधकारमे शत्रुके ओरकी भयकर भृकुटीरूप चपला चमकने लगी, परन्तु इन दुर्दिनोमे इस भयंकर तरंगमालासे युक्त विपत्तिके समुद्रमे उनका आशा भरोसा, सहाय–बल केवल अंग्रेज़ ही थे। उन्होने विचारा कि अंग्रेजोकी वश्यताका भार शिर पर धारण किया है, दस्तखत कर दिये है, प्रत्येक वर्षमे कर देते है, गवर्नमेण्ट संधिकी धाराको भंग करके भी जब जो कुछ कहती है वही करते है। इस कारण, १८१८ ईसवीमे संधिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे उन्होने गवर्नमेण्टसे सहायता मॉगनेका विचार किया, और सोचा कि गवर्नमेण्ट अवश्य हमारा इस उठती हुई तरंगमालामय विपदजालके भयंकर आक्रमणसे उद्धार करैगी। मानसिंहने इसी आशासे हृदयको धीरज दे वृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगनेके लिये समाचार भेजा। परन्तु वृटिश राजनीतिका चक्र किस अभिप्रायसे किस मूर्तिसे किस समय घूमा करता है, इसको मानसिंह कुछ भी नही जानते थ। उन्होने करदमित्र राजरूपसे सहायता मॉगी, परन्तु गवर्नमेण्टने उनकी आशाके विपरीत उत्तर दिया, कि मारवाड़के आभ्यन्तरिक किसी उपद्रव पर गवर्नमेण्ट हस्तक्षेप वा किसी प्रकारकी सहायता न करैगी। मानसिंहको निष्कंटक कर मारवाडके सिंहासन पर वैठालनेमे तथा उनके शत्रुओके दमन करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार नही है! पाठक! क्या आपने इतिहास नही पढा है, अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि होजानेके पीछे अंग्रेजोकी कंपनीके दूत मि० वेलडरने मारवाडमे जाकर इन महाराज मानसिंहसे वारम्वार कहा था, कि मारवाडमे शान्ति स्थापन करनेके लिये, तथा ऊधमी सामन्तोको दमन करनेके लिये अंग्रेजोकी सहायता लीजिये। परन्तु जव फिर विचित्र राजनैतिक लीलाका दृश्य दृष्टि आया, और महाराज मानसिंहने स्वय उनसे सहायता मॉगी ? तव यह क्या उत्तर पाया ? वृटिश राजनीतिके चक्रका मर्म कुछ भी समझमे नही आता।

माननीय गवर्नमेण्टका उत्तर पाकर मानसिंह चैतन्य होगये और वह इस वातको

जानगये कि उनके पूर्ववर्ती कई पुरुष दिल्लीके यवन वादशाहके साथ संधि करके जिस भावसे राज्यशासन करगये है इनके भाग्यमे वह वात असम्भव है। उन्होने कहला भेजा कि "इस समय संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार कार्य करनेका समय उपस्थित है। आभ्यन्तरिक उपद्रवोको निवारण वा शान्ति स्थापनके लिये गवर्नमेण्टसे सहायता नही मागी गई है। जो सामन्त असंतुष्ट है और वह उन्हीके अधिकारी देशमे रहते है, तथा वह उन्हीके विपरीत षड्यंत्रका विस्तार करके उपद्रव उपस्थित कर उनको सिहासनसे उतारनेकी चेष्टा करते है। मारवाड़राज्यके वाहरी भिन्नराज्य-जयपुरराज्यसे, जयपुरराज्यकी सहायतासे शत्रुओका दल उनको आक्रमण करनेकी अभिलाषा करता है। इस कारण जव कि विना कारणके ही जयपुरके महाराज हमारे राज्यपर आक्रमण करनेके लिये उद्यत् हुए है, तव क्या वृटिश गवर्नमेण्ट इसको वाहरी शत्रुके द्वारा आक्रमण मानकर स्वीकार नही करैगी ? संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार हमारे राज्यकी रक्षारूपसे प्रतिज्ञा पालन करना क्या अपना कर्त्तव्य नही मानेगी ? " मानसिहने विचारा कि अव गवर्नमेण्ट सहायता देनेमे कुछ आपत्ति न करसकैगी, परन्तु ! विस्तारित वृटिश राजनीतिके चक्रका कोन स्थान किस प्रकारकी ग्रन्थियोसे पूर्ण है, महाराज मानसिह उस समय भी इस वातको न जान सके, जाननेका तो वडा सुवीता प्राप्त नही हुआ था, इसी लिये उस समय भी उनका वह चिन्ता और भयसे जड़ा हुआ हृदय आशाके अस्फुट प्रकाशको मानो ऊषाके खेलकी समान देखने लगा।

वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज मानसिहको क्या उत्तर दिया था ! अंग्रेजोने भयंकर मूर्तिसे भृकुटिको चढ़ाकर गर्जकर कह दिया कि " यदि सर्वसाधारणमे इसी भॉतिसे राजविद्रोह फैल उठा है तो ऐसा समझ पड़ता है कि सामन्तमंडली और प्रजा राजाको सिहासनसे उतारनेकी इच्छा करती है यदि ऐसा है तो जोधपुरके राजा अपने दोपसे सव प्रकारसे प्रजाकी सहायता और अनुरागसे हीन होगये है इस जोधपुरके सिहासन पर विराजमान होकर यदि कोई अन्यायके साथ प्रजाके ऊपर भयकर विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करै तो हम उस विद्रोहके विरुद्धमे, तथा उस अप्रिय राजाको वलपूर्वक सिहासन पर वैठालनेका कोई कारण नहीं देखते है। जिन देशीय राजाओने राज्यकी रक्षा करनेमे हमसे प्रतिज्ञा करली है वह सभी राजा अपनी रक्षाके लिये हमसे सहायताकी प्रार्थना करसकते है और जो राजाके अविचार, अयोग्यता, तथा कुशासनसे ही प्रजा असंतुष्ट हुई है, तथा राजाके दोपसे ही प्रजामे विद्रोह फैला है, उसको निवारण करनेके लिये हमारी सहायता नही मिल सकैगी। देशीय राजा अपनी प्रजाके ऊपर शासनशक्तिको चलावेगे, ऐसी आशा की जाती है, परन्तु यदि उन्होने अपने आचरणोसे ही प्रजामे विद्रोह फैला दिया, तो राजाको उसका फल स्वयं भोगना होगा। यह* राजनीतिसे पूर्ण कैसा विचित्र उत्तर है। मानसिहको क्या ऐसे उत्तरकी आशाथी ? रक्षण और पीड़नकी संधिमे वॅधकर कौन

---

* Malleson's Native States of India Part I Chap. III Page 56.

राजा इस प्रकारका उत्तर दे सकता है ? सन् १८१८ ईसवी मे जो संधि दोनोके वीचमे हो गई थी, कौन साहससे कह सकते है कि यह उत्तर उसी सधिपत्रके मतसे दिया गया है ? "आभ्यन्तारिक शासन पर हस्तक्षेप नही करैंगे" इस वातका क्या यही अर्थ है कि जव सामन्त अपने स्वार्थसाधनके लिये तुमको सिंहासनसे उतार कर महा विपत्तिमे डालै तो हम तुम्हारी सहायता नही करैंगे ? मि० वेलडर और कर्नल टाड् साहवको जिस समय वृटिशसेनाकी सहायता लेनेमे अत्यन्त इच्छा हुई थी, उस समय असंतुष्ट हुए सामन्तोंने जो काण्ड उपस्थित किया था, इस समय भी वह उसी मतसे काण्ड उपस्थित करेंगे। इस प्रकार वृटिश गवर्नमेण्टने किस प्रकारसे राजनीतिको मित्रता की यह नवीन व्याख्या की ? यद्यपि महाराज मानसिह प्रजाके अप्रियपात्र हो-गये थे तथापि गवर्नमेण्टको उनकी सहायता करनी उचित थी।ऐसी अवस्थामे क्या उनके ऊपर भयंकर गर्जन करना न्यायसंगत था ? इस समय यदि साधू टाड् साहव पोलिटि-कल एजेण्टके पदपर नियुक्त होते तो वह ऐसा उत्तर कभी नही दे सकते थे। मानसिह उक्त उत्तरको सुनकर इस वातको भलीभांतिसे जानगये कि सधिपत्रका मूल्य कितना है।

सौभाग्यसे शीघ्र ही वृटिश गवर्नमेण्ट इस वातको भली भांतिसे जानगई कि इस समय जयपुरके महाराज और धौकलसिह असंतुष्ट हुए राठौर सामन्तोको साथमे लेकर मारवाड पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए है तव इनको अवश्य ही वाहरी शत्रुका आक्रमण मानना होगा। कम्पनी सरकारने मानसिह से कुछ न कहा, केवल राजनैतिक सम्वन्ध विस्तार कर उपस्थित उपद्रवोका विचार करनेमे लगी। जयपुरके महाराजके साथ वृटिश सरकार की जो संधि पहले ही होगई थी जिससे कि वह भारतवर्पके किसी देशीय राज्यपर आक्रमण वा किसी देशीय राजाके साथ युद्ध नही करसकते थे। जयपुरके महाराज उस संधिको भग करके मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए इसीसे वृटिश गवर्नमेण्टने विशेप असंतोप प्रकाश कर उनके पास एक पत्र भेजा तथा जिससे वह सेनाको विदा देकर मारवाड़ पर आक्रमण न करै, ऐसी आज्ञा भी लिख भेजी। वृटिशसिहके उस भयंकर गर्जनसे भयभीत हो जयपुरके महाराज शीघ्र ही मारवाड़के आक्रमणसे विमुख होगये। जयपुरके महाराजकी समान धौकलसिहको भी गवर्नमेण्टने भय दिखाकर अन्यत्र जानेकी आज्ञा दी, वह भी भयभीत होकर झज्जूर नामक स्थानमे चलेगये। जातीय शक्तिके शेप अस्तित्वको लोप करनेके लिये मारवाडको समभूमि करनेके लिये जो असतुष्ट सामन्त श्रेणी वीर साजसे सजी थी, इस समय जयपुरके महाराज और धौकलसिहको वृटिश गवर्नमेण्टकी ताडनासे पीठ दिखाते हुआ देख कर शीघ्र ही गंभीर निराशाके जलमें मग्न होगई। कोई २ सामन्त फिर मारवाडमे जाकर मानसिहकी वश्यता स्वीकार कर पहलेकी समान निग्रह भोग करने लगे। और मानसिह पहलेकी विपत्तियोकी समान इस वार भी अनेक विपत्तियोसे उद्धार पाकर मनहीमन अपने भाग्यकी प्रशसा करके निर्भय हो राज्य-शासन करने लगे।

यद्यपि वृटिश गवर्नमेण्टने इस समय राजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे अपने पूर्ण प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करलिया था, यद्यपि भारतके सर्व प्राचीन राजरक्त-धारी राजपूत एकवार ही कंपनीके वशीभूत होचुके थे, यद्यपि अंग्रेजोंके भयंकर गर्जनसे भारतवर्ष कंपायमान होगया था, तथापि स्वाभाविक तस्करदल इस समय सुवीता पाकर भी अपनी जातीय वृत्तिको सफल न करसका । १८३२ ईसवीमे एक अधिक वलवान् तस्करदलने नागौरकी सीमामे भयकर अत्याचार करने प्रारभ करदिये।उसके अत्याचारोसे चारोओर हाहाकार मच गया । वृटिश गवर्नमेण्टने उन लूटनेवाले तस्करोको दमन करना अपना कर्त्तव्य विचारा । १८१८ ईसवीमे मारवाड़पति मानसिहके साथ जो वृटिश गवर्नमेण्टकी सधि हुई थी उसकी आठवी धारामे यह वात लिखी गई थी कि गवर्नमेण्टकी आज्ञा पाते ही महाराज पंद्रहसौ अश्वारोही सेना उनकी सहायताके लिये भेजे गे । उस तस्करदलको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने सधिपत्रकी उसी धाराके मतसे महाराज मानसिहको शीघ्र ही पंद्रहसौ अश्वारोही सेना भेजनेके लिये आज्ञा दी । संधिवधन होजानेके समयसे ही मानसिह गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनमे नियुक्त थे, इस कारण उन्होने विना कुछ कहे सुने शीघ्र ही डेढ़ हजार अश्वारोही सेना उन लूटनेवालोको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टके पास भेज दी । राठौर अश्वारोही दलने अंग्रेजोकी सेनाके साथ मिलकर शत्रुदलको शीघ्र ही दमन करदिया, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टने भारतके प्रत्ये प्रान्तमे अपनी राजनीतिको विस्तारकर जिस भावसे अपनी शासनशक्तिको प्रवल करके, देशकी दुर्वल शासनशक्तिको एकवार ही अवनत करदिया था, उसी राजनीतिके गुप्त उद्देशको साधन करनेके लिये इस समय फिर विचित्र राजनीतिका अभिनय करने लगी । यह तो हमारे पाठक टाड् साहवकी उक्तिसे पहले ही जानगये होगे कि भारतमे राठौर अश्वारोही वल विक्रम और रणकी चतुरतामे अद्वितीय थे, परन्तु इस समय वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज मानसिहको विदित किया कि तुमने जो सेना भेजी थी, वह युद्धविद्यामे सवप्रकारसे अशिक्षित, किसी कामकी नही है। उसके वदलेमे वृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरके नामसे एक स्वतंत्र सेनाके तैयार करनेकी अभिलाषा कीहै और उस सेनाका सम्पूर्ण खर्चा महाराजको देना होगा !! पाठक ! इस प्रस्तावका अर्थ कुछ समझे, इस राजनैतिक रहस्यके मर्मको कुछ हृदयङ्गम किया या नही ?—१८१८ ईसवीके सन्धिपत्रकी आठवी धाराके मतसे मारवाड़के महाराजको आवश्यकता होनेपर १५०० अश्वारोही सेना देनी होगी, यह वात लिखरही थी, परन्तु वह सेना महाराजके अधीनमे रहैगी । इस समय वृटिश गवर्नमेण्ट उस सेनाको अपने अधीनमे चिरकाल तक रखनेके लिये उस धाराको वदलनेके लिये तैयार हुई। भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित असि-स्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्ट मि० एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे महाराज मानसिहके समीप उस प्रस्तावको उपस्थित करके कहा कि आप जो पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी होगये है, गवर्नमेण्ट उससे आपको मुक्ति देनेके लिये तैयार है, परन्तु जो नई सेना तैयार होगी उसके लिये आपको वार्षिक एक लाख पंद्रह

हजार रुपया देना होगा। इस स्थानपर उसका उल्लेख करना केवल बाहुल्य मात्र है, पोलिटिकल एजेण्टने अवश्य ही महाराज मानसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया था कि वृटिश गवर्नमेण्ट केवल महाराज मानसिंहकी मंगलकामनाके लिये, जोधपुरमे शांतिकी रक्षाके लिये एक नई सेनाको जोधपुरके नामसे तैयार करनेकी इच्छा करती है। क्या तो महाराज मानसिंह वृटिश राजनीतिके उस मधुर अर्थसे मोहित हुए होगे या और कोई गति देखकर मौन हुए हो, उन्होने तुरन्त ही उस प्रस्तावमे अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे १८३५ ईसवीमे निम्नलिखित उपायोसे १८१८ ईसवीके सन्धिपत्रकी आठवी धाराका बदला होगया।

"जिस कारण जोधपुरके महाराज मानसिंह बहादुरने वृटिश गवर्नमेण्टके साथ १८१८ ईसवीके जनवरी महीनेकी छठवी तारीखको दिल्लीमे जो सन्धि की थी उस सन्धिपत्रके ही मतसे वह आवश्यकता होनेपर पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी हुए थे, अब इस समय उस डेढ़ हजार सेनाके बदलेमे संवत् १८९२ मे पूस सुदी पूर्णमासीसे वार्षिक एक लाख पंद्रह हजार रुपये देनेके लिये राजी हुए है, इस कारण वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे इस स्वीकार पत्रके द्वारा उपरोक्त संधिपत्रकी आठवी धारामे लिखा हुआ "जोधपुरराज्यको जब आवश्यकता होगी तभी डेढ़ हजार अश्वारोही सेना देना होगी" इस धाराको बदल कर उस स्थान पर यह लिख दिया कि उपरोक्त कारणसे उक्त सेनाके वेतनके हिसाबसे जोधपुर राज्य अजमेरको नगद "वार्षिक एक लाख डेढ़ हजार रुपया" देगा सम्वत् १८९३ के पूस मासकी पहली तारीखको यह एक लाख डेढ़ हजार रुपया देना होगा, और भविष्यत्मे प्रत्येक वर्षमे उक्त तारीखको उतना ही रुपया देना पडा करैगा।

जोधपुर २ पूस वदी सम्वत् १८९२– अंग्रेजी १ दिसम्बर १८२५ ईस्वी।	(हस्ताक्षर) एच–डवल्यू० ट्रिवेलियन। गवर्नर जनरलकी ओरके आसिस्टेण्ट एजेण्ट।

सकाउन्सेल गवर्नर जनरलका १८३६ ईसवी की ८ फरवरीको स्वीकार किया।

इस प्रकारसे वृटिश गवर्नमेण्ट महाराज मानसिंहके पाससे एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक पानेकी व्यवस्था करके एक स्वतंत्र सेनाको निर्माण कर अजमेरको अपने अधीनमे रखने लगी।

उपरोक्त संधिपत्र तैयार होनेके एक महीने पहिले महाराज मानसिंह गवर्नमेण्टकी एक और आज्ञाके पालन करनेमे सम्मत हुए। महाराजके अधिकारी मेरवाडेके मीनो और मेरोको दमन करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्ट १८२४ ईस्वीमे वहाके २१ ग्रामोको आठ वर्षके लिये अपने अधीनमे ग्रहण करके शांति स्थापन करनेके लिये पन्द्रह हजार रुपये लेते थे, परंतु १८३५ ईसवीमे वह आठ वर्ष वीत गये। वृटिश गवर्नमेण्टने १८२४ ईसवीमे संधिपत्रके अनुसार उन ग्रामोको नहीं लौटाया। असिस्टण्ट पोलिटिकल एजेण्ट एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने फिर महाराज मानसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया कि वृटिश गवर्नमेण्ट फिर मेरवाड़ेके उन ग्रामोको ९ वर्षके लिये अपने अधीनमे रखनेकी अभिलाषा करती है, मीना और

मेरोको दमन करनेके लिये जो सेना तैयार हुई है, और महाराज जिसको वेतनके हिसाबसे गत आठ वर्षतक वार्षिक पंद्रह हजार रुपया देते आये है उसी प्रकारसे धन भी उनको नौ वर्षतक देना होगा, और जो सुवीता मिला तो उन ग्रामोके अतिरिक्त उसीके समीपवाले और भी सात ग्राम उक्त नियमके अनुसार दिये जॉयगे। महाराज मानसिंहने बृटिश कम्पनीको सर्वदा संतुष्ट रखनेके लिये व्रत किया था, इसी कारणसे उन्होने विना कुछ कहे सुने उक्त असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्टके प्रत्येक प्रस्तावमे अपनी सम्मति दी। १८३६ ईसवीकी २३ वी अक्टूबरको फिर उक्त प्रदेशके सम्वन्धमे पूर्वमतसे नवीन सधिपत्र तैयार होगया। महाराजकी ओरके वकील व्यास सवाईराम और गवर्नमेण्टकी ओरके मि० एच० डवल्यू० ट्रिवेलियनने परस्पर हस्ताक्षर करदिये।

जिस देशमे राजतंत्रकी शासनरीति प्रचलित है, उस देशमे नरपति यदि अपनी नीतिके वलसे वलवान हो, सर्व साधारण प्रजाकी अभिमातिके प्रति सम्पूर्णतः आदर दिखाकर राज्यशासन करता रहे तो उस देशमे से शांति कभी नही जासकती, और उस राजाको भी शासनके विरुद्धमे किसी प्रकारकी विपत्ति नही होसकती, परन्तु जिस राजतंत्र शासनप्रणाली युक्त देशमे राजा अपनी इच्छानुसार पूर्ण अभिनय करते है, पाशविक वलकी सहायतासे प्रजाकी साधारणमति पर पदाघात करके शासनदंडको चलानेकी अभिलापा करते है उस देशकी शांति शीघ्र ही लुप्त होजाती है, तथा उस यथेच्छाचारकी शासनशक्ति, उस पाशविक बलके विरुद्धमे साधारण प्रजाकी नैतिकरूप महाशक्ति अत्यन्त प्रवल होकर समय पर अवश्य ही उस पाशविक वलको दमन करलेती है, संसारके प्रत्येक इतिहासकी ओर देखनेसे जाना जासकता है कि पहिले पहिल पाशविक वल विशेष प्रवलता विस्तार करनेमे समर्थ था, परन्तु इस समय वह एकवार ही विध्वंस होगया। जातिकी पतनदशामे– अंतिम शोचनीय दशामे पाशविक बल तथा प्रभुत्व प्रकाश करनेमे पहले तो विघ्न नही होता परन्तु वह पतितजाति उस पाशविक बलसे विदलित जाति अनन्त निग्रहको भोग करते २ अंतमे ज्ञानशून्य होकर प्रतिक्रियाके बलसे उस पाशविक बलको इस प्रकारके भावसे आक्रमण करती है कि उसी समय पाशविक बलका पतन अनिवार्य होजाता है। औरंगजेबके प्रचंड पाशविक बलका प्रयोग करना ही भारतसे यवनशासनके लोपका कारण था। प्रथम ही पाशविक बलके प्रयोगसे महाराष्ट्र जाति कई वर्षोंमे एकबार ही क्षीण प्राण होगई। महाराज मानसिह सामन्तोमेसे वहुतोके ऊपर पाशविक बलका प्रयोग करके निरन्तर विपत्तिके अगाध जलमे मग्न होगये थे, उनके उस पाशविक बलने ही उनके शासनके लोप होनेका सबसे पहिला अनुष्ठान रच दिया उसके जब पूर्वलक्षण दिखाई दिये तो सर्वसाधारण प्रजाके ऊपर वह पाशविक वल प्रयोग न करके उन्होने वड़े कष्टसे वहुतसे रक्तपातोसे उद्धार पाया था, परन्तु इस समय उनकी वार्द्धक्यदशा उपस्थित हुई है, कुसंस्कार युक्त धर्मयाजकोके मोहमंत्रके वश होकर उन सामन्तोके ऊपर फिर इस प्रकारके

अत्याचार करने प्रारंभ करदिये, फिर इस प्रकारका पाशविक वल प्रयोग करने लगे। उसी कारणसे शीघ्र ही मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमे फिर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित होगई, विद्रोहके बढ़ते ही शांतिके दूर होनेसे अराजकता उपस्थित होगई। धर्मयाजक वृन्दोकी आज्ञाने तथा उनकी मंत्रणा और परामर्शके उपदेशने मानसिंहके वक्षस्थल पर पदाघात कर उनकी वृद्धा अवस्थामे राज्यमे फिर इस प्रकारका विप्लव उपस्थित करदिया कि जिससे राठौर जातिके वंश सहित नाश होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आनेलगे।

इस पुण्यमय भारतक्षेत्रमे क्या राजा, क्या धनी, क्या सामन्त, क्या निर्धन, क्या प्रजा, सभी वृद्धा अवस्थामे पारलौकिक पुण्यको संचय करनेके लिये झुकजाते है, वृद्धा अवस्थामे हमारे महाराज मानसिंहने भी वही किया, महाराजकी भक्ति धर्मकी ओर अधिक थी, सो यह कुछ विचित्र बात नही है। परन्तु भारतकी पतन दशामे धर्मयाजक गण शास्त्रज्ञानसे हीन होकर केवल धनको संग्रह कर अपना प्रभुत्व प्रकाश करनेमे सावधान रहते थे। प्राचीन आर्य ऋषि मुनियोके समान उनका ज्ञान, विद्या, विचार, अभिज्ञता और उनके चरित्रोमे उस प्रकारकी निर्मलता नही थी, परन्तु तौ भी वह एकमात्र धन और प्रभुत्वके प्रयासी होकर प्रवल प्रतापशाली राजासे लेकर सामान्य कृषक तक सभीके ऊपर एकभावसे प्रभुत्वका विस्तार करते थे। राज्य और समाजकी ओर उनका किंचिन्मात्र भी ध्यान न था, वह केवल अपने ही स्वार्थको पूरण करनेमे प्रमत्त हो जाते थे। महाराज मानसिंह इस वृद्धा अवस्थामे धर्मयाजक श्रेणीके मोहमंत्रसे मोहित होगये। उस राजनीति-शिक्षा हीन धर्मयाजकोके परामर्शसे शासन दंडके चलाते ही मारवाड़मे वह विद्रोहानल प्रबल होगई।

वृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है ? १८२४ ईसवीमे जयपुरके महाराज धौकलसिंह और अन्यान्य राठौर सामन्तोको अपने साथ लेकर मारवाड़ पर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए, कम्पनीने भयकर हुकारके साथ भृकुटी चढ़ाकर मानसिंहको कैसा भर्त्सनापूर्ण पत्र लिखा था कि समस्त प्रजा उनके विरुद्ध होगई है इससे गवर्नमेण्ट उनकी सहायता नही करेगी, इस समय वह वृटिश गवर्नमेण्ट अपनी उस उद्गीरित उक्तिको फिर उदरस्थकर नवीन राजनैतिक अभिनय करने लगी। यद्यपि महाराज मानसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टको कर देनेमे राजी होकर संधि कर ली थी, परन्तु यहां तक एक भी अंग्रेजी सेनाको मारवाड़मे जाकर वृटिशसिंहको सहारमूर्ति दिखानेका सुअवसर नही मिला। वृटिश कम्पनी इस समय राठौर जातिको वह सहारमूर्ति दिखानेके लिये महाराज मानसिंहको अपना क्रीड़नक रूपसे परिणत कर वृटिश कर्मचारीके द्वारा मारवाडको शासन कर अपनी सामर्थ्यको प्रवल करनेके लिये-तथा मानसिंहको यथार्थ वशीभूत बनानेके लिये सुसज्जित हुई।

१८३९ ईसवीमे वर्षाऋतुके शेषमे-तथा शरदऋतुके प्रारभमें कर्नल सदरलेण्डने विश्वविजयी वृटिश वाहिनीके साथ दर्पसे मारवाड़में प्रवेश किया। यद्यपि मारवाडमें विद्रोह निवारण करके शांति स्थापन करनेके लिये तथा सुशासनकी व्यवस्था करके असतुष्ट सामन्तोको पैतृक अधिकार दिलानेके लिये गवर्नमेण्टने सदरलैण्डको भेजा था

यदि प्रसन्न हृदयसे यह महात्मा उस महान् उद्देशको पूर्ण करते तो हम उस उद्देशकी ऊँची प्रशंसा करते, परन्तु हम देखते है कि सन् १८३९ ईसवीसे भारतके अन्यान्य देशीय राज्योंके समान यह मारवाड़ भी अंग्रेजी एजेण्ट द्वारा जिस प्रकारसे सामर्थ्यहीन किया गया, उसका वर्णन नही होसकता। उसे एकमात्र देशीराजा ही कह सकते है। इस एजेण्टने उनको किस प्रकारसे अपने हस्तगत करलिया। चिर वीरव्रतावलम्बी, स्वाधीनताकी प्रिय उपासक जिस राठौर जातिने अपने घोर दुर्दिनोमे तथा महा विपत्तिमे पडकर भी दिल्लीके बादशाहकी सेनाको भी कुछ न गिना था, आज वही राठौर जाति अंग्रेजी सेनाके जोधपुरमे आते ही क्षीण प्राण दुर्वल हृदयके समान रहने लगी। महाराज मानसिहने महा भयभीत होकर उस अंग्रेजी सेनाको बड़े आदरभावसे ग्रहण किया! हा! कालकी कैसी विचित्र गति है!–जातिकी पतनदशामे जातिके चरित्रोका कैसा हृदयभेदी चित्र होताहै। अंग्रेजी सेनाने जोधपुरके किलेपर अधिकार करलिया, महाराज मानसिह भी मस्तक झुकाकर कर्नेल सदरलैण्डकी आज्ञा पालन करने लगे। महाराज मानसिहके साथ बृटिश कम्पनीका फिर निम्नलिखित नवीन संधिपत्र तैयार हुआ,–

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराज मानसिंहका संधिपत्र।

माननीय बृटिश गवर्नमेण्टके साथ जोधपुर राज्यकी अत्यन्त प्राचीन कालसे मित्रता है सन् १८१८ ईसवीके संधिबंधनके मतसे वह मित्रता दृढ़ता पूर्वक स्थापित हुई है, इस प्रकारसे दोनो राज्योमे परस्पर मित्रभाव वर्तमान समयतक विराजमान है और भविष्यत्मे भी इसी प्रकारसे दोनोमे मित्रभाव रहेगा।

वर्तमान समयमे बृटिश गवर्नमेण्ट और जोधपुरके महाराज मानसिहमे कर्नेल जान सदरलैण्डके द्वारा नीचे लिखीहुई कई धाराओसे युक्त एक संधिपत्र तैयार हुआ।

प्रथम–इस समय राज्यमे सुशासन स्थापन करनेके लिये परस्पर सहयोगिता ग्रहण करनेमे स्वीकृत होकर महाराज कर्नेल सदरलैण्ड तथा सरदार और अहलकार एवं शासन विभागके खवास पासवान गण एक साथ सम्मिलित हो और राज्यके सुशासनके लिये नियम सहित रीतिको नियुक्त करे, उसी नियमकी रीतिके मतसे इस समय और भविष्यत्मे शासनकार्य किया जायगा। उन्होने और भी कितने ही सामन्तो के, राज्यके, राजकर्मचारियोके तथा उनके अधीनमे स्थित मनुष्योके स्वत्वाधिकार और सामर्थ्यको प्राचीन रीतिके अनुसार निर्द्धारित, प्रकाशित एवं स्थापित करदिया।

दूसरी धारा–बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट तथा जोधपुरराज्यके अहलकार परस्पर पहिले एकसाथ मंत्रणा करके महाराजके साथ परामर्श कर उस नियत कियेहुए नियमके मतसे राजकार्य करे–

तीसरी धारा–उक्त पचायती लोग चिरप्रचलित प्राचीन रीतिके मतसे राज्यके समस्त कार्योंको करे।

चतुर्थ धारा—कर्नल साहब कहते है कि जोधपुरके किलेमे अंग्रेजी सेना रखनी होगी, तथा उसमे महाराज सम्मत होते है। राजस्थानके अन्यान्य राज्योके जिन २ स्थानोमे पोलिटिकल एजेण्ट रहते है, वह नगरके बाहर रहै। यहॉके किलेमे केवल वस्ती और घर है, तथा स्थान वहुत संकीर्ण है। इस कारण इस विषयमें कुछ व्याघात हुआ है, बृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेके लिये जब अंग्रेजी सेनाको रखनेके लिये सम्मति दी है, और उस सेनाके रखनेके लिये उचित स्थान नियत करदियागया है, तव सेना वहॉ रहैगी, जोधपुरके महाराजको तथा गवर्नमेण्टको इस विषयमे किसी प्रकारके भयका कारण नहीं है।

पॉचवी धारा—श्रीजीका मंदिरस्वरूप विग्रह तथा जोगीश्वरके (विग्रह) एवं देशीय अथवा विदेशीय धर्मयाजक गण, अनुचर और उमराव, कका गण, मुसद्दी (कुशलराज फौजराज इत्यादि) एवं पासवान गण (राजकर्मचारी) अन्यान्य सभी इस समय जिस प्रकार पदमर्यादा स्वत्व अधिकार और क्षमता सभोग करते है, इसमे कुछ भी घटती बढ़ती न होगी।

छठी धारा—जो नियम लिखे गये है, राजकर्मचारी उन्ही नियमोके अनुसार अपने २ कर्त्तव्योको पालन करते रहैगे, यदि उनमेसे कोई किसी समयमे उस कर्त्तव्यके पालनमे असमर्थ हुए तो महाराजके साथ परामर्श करके उनके पदपर दूसरे मनुष्यको नियत किया जायगा।

सातवी धारा—जिनकी जागीर और स्वत्वाधिकारको राजाने अपने अधिकारमे करालिया है, न्याय विचारकी मूलनीतिसे उनको फिर वह अधिकार प्राप्त होगा, और उस सत्वाधिकारीको राजाके यहॉ आनुगत्यभावसे कार्य करना होगा।

आठवी धारा—मारवाड़की राजशासनशक्तिको चिरस्थाई करना और मारवाडका स्वार्थ रक्षण तथा महाराजका सन्मान और उनके यशकी रक्षा करना कम्पनीका मुख्य उद्देश है इस कारण गवर्नमेण्टने महाराजके मान वा उनकी शासनशक्तिको न घटाया, इसी लिये गवर्नमेण्ट साक्षी होकर रहैगी।

नवी धारा—बृटिश गवर्नमेण्ट और मारवाड़के अहलकार आपसमे एकसाथ परामर्श करके महाराजकी आज्ञासे तथा जिन नियमोकी रीति नियत हुई है उन्ही नियमोकी रीतिसे बृटिश गवर्नमेण्टको जो कर मिलता है, उस करको नियमित रूपसे देनेके लिये तथा सेनाका खरच (जोधपुरके नामसे जो सेना बृटिश गवर्नमेण्टने तैयार की है) जो इस समय मिलता है वह देना होगा, और आगेको नियमित रूपसे देनेकी व्यवस्था की जायगी। जिनको अधिक हानि हुई है, उन्होने जिनके द्वारा हानिको उठाया है, यदि उसका प्रमाण मिल गया, तो उन हानि पहुँचानेवालोसे उस हानिको भर लिया जायगा, अन्य था मारवाड़ राज्यको अन्यान्य राज्योके निकट जो दायी किया, यदि उस दायीको रीतिके मतसे प्रमाणित कर दिया तो उस राज्यसे आदाय करके देना होगा।

दसवी धारा–जिस प्रकारसे महाराजने सरदारोंके अधिक अपराधोंको क्षमाकर उनको अनुगत बना फिर उनको जागीरोंकी सनदें दी थी, उसी भाँतिसे वृटिश गवर्नमेण्ट भी स्वरूप एवं योगेश्वरके मंदिरमे जो सब धर्मयाजक गण, उमराव और अहलकारोंके चरित्रोंसे असंतुष्ट हुई थी उनको भी क्षमा करती है।

ग्यारहवीं धारा–राजधानीमे एक अंग्रेजी एजेण्ट नियुक्त रहैगा। किसी मनुष्यके प्रति कोई किसी प्रकारका भी अत्याचार नही करसकेगा। जो छः धर्म सम्प्रदाय है, उनके किसी विपय पर भी हस्तक्षेप नहीं किया जायगा, और जो पशु पक्षी मारवाड़में पवित्र गिने जाते है उनका जीवन नाश नही किया जायगा।

वारहवी धारा–यदि छः महीने, वा एक वर्प अथवा अठारह महीनेमे महाराजके शासनविभागकी सुव्यवस्था होजायगी तव पोलिटिकल एजेण्ट और समस्त अंग्रेजी सेना जोधपुरके किलेको छोड़कर चली जायगी, यदि उक्तकार्य उसकी अपेक्षा थोड़े समयमे ही शेप होगया तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त प्रसन्न होगी, कारण कि उस कार्यसे वृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिपत्तिकी वृद्धि होगी।

तेरहवी धारा–उपरोक्त वर्णन किया हुआ यह संधिपत्र सन् १८३९ ईसवीके सितम्वर मासकी २४ वीं तारीखको जोधपुरमे तैयार हुआ था, इसको लेफ्टिनेण्ट कर्नल सदरलैण्ड द्वारा महामहिम वर भारतवर्पके गवर्नर जनरलके पास स्वीकृत और संशोधित होनेके लिये भेजा जायगा–और उक्त संधिपत्रके मर्मसे युक्त एक खरीता उक्त महामान्य गवर्नर जनरलके पाससे महाराजको मिलैगा।

भारतवर्पके गवर्नर जनरल महा महिम वर जार्ज लार्ड आकल्यांड जि सि. वि के द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर, यह सधिपत्र कर्नल सदरलैण्डका नियत किया हुआ।

" ऋद्धमल वकीलके हस्ताक्षर। फौजमल्लके हस्ताक्षर। "

उपरोक्त संधिपत्रके नियत होते ही कर्नल सदरलैण्ड राज संस्कारमे प्रवृत्त हुए। जिन दो मनुष्योंने राजपुरुपोंकी सम्मतिसे महाराज मानसिहके राज्यमे यह असंतोषकारी काण्ड उपस्थित किया था, कर्नल सदरलैण्डने उनको पदसे उतार दिया। श्रीजी स्वरूप जी योगेश्वरजी इत्यादिक जो जो प्रधान २ धर्मयाजक अशान्तिके कारण स्वरूप होगये थे कर्नल सदरलैण्डने उन पर भी हस्ताक्षेप किया, परन्तु महाराज मानसिहने किसी प्रकारसे भी उसमे अपनी सम्मति न दी। विशेष करके उन्होने कर्नल सदरलैण्डके प्रस्तावके मतसे अपने चिरशत्रु सामन्तोको भी क्षमा कराया, कर्नल सदरलैण्डने भी उसके आदर्शमे धर्मयाजकोको भी क्षमा कर दिया। कर्नल सदरलैण्डने प्रस्ताव किया था कि धर्मयाजक गण जिससे राजदरबारमे किसी राजनैतिक वा शासनविषय पर हस्तक्षेप न करसकै, सधिपत्रमे ऐसी एक धारा नियत करनी अवश्य कर्त्तव्य है, परन्तु मानसिहने उसमे आपत्ति करके कहा, कि जव धर्मयाजकोको राजपुरुप वा राजकर्मचारी नही गिना जाता है, तव उस धाराके शामिल करनेकी कुछ आवश्यकता नही है। जिससे कर्नल सदरलैण्ड मारवाड़की देवोत्तर भूमिके ऊपर अथवा मारवाड़मे प्रचलित छः धर्मसम्प्रदायोके ऊपर किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करसके, इस कारण

महाराजने पहले ही उन छः सम्प्रदायोके आग्रहसे संधिपत्र तैयार किया था, इस कारण विपयमे कर्नल सदरलैण्ड कुछ भी न कह सके। मारवाडकी अशान्तिके मूल-स्वरूप सामन्तोके असंतोप निवारण करनेके लिये शीघ्र ही महाराजने उनके अधिकारको देदिया। इतने दिनोंके पीछे सामन्तोने भी अपने २ अधिकारको पाकर महाराजकी आनुगत्यता स्वीकार की। इसके पीछे कर्नल सदरलैण्डने संधिपत्रके मतसे राज्यके प्रधान २ कर्मचारी मन्त्री और सामन्तोको शीघ्रही सभामे बुलाकर मारवाड़मे सुशासन स्थापन करनेके लिये चिर प्रचलित रीतिके मतसे नियमोकी रीति नियत कर दी, और एक २ करके अपने सभी अभिलपित मनोरथ पूर्ण करालिये। मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमे आज फिर शांति देवी विराजमान होगई। पॉच महीने तक अंग्रेजी सेना जोधपुरमे रहकर फिर अपने स्थानको चलीगई, महाराज मानसिह निर्विघ्न हो शांति संभोग करनेलगे। परन्तु उनकी स्वेच्छाचारकी शासनशक्ति घट गई तथा पाशविक वलकी सामर्थ्य भी एकवार ही दूर होगई। वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट मारवाड़के हर्ताकर्ता विधाता होकर राज्यके सव भागोमे अपनी सामर्थ्य चलाने लगे। इनके द्वारा यद्यपि विध्वंस मारवाड़मे फिर शांतिने आकर दर्शन दिया, परन्तु मानसिहके समयसे राठौर राज्यकी शक्ति जो एकवार ही दूर होगई थी उसका स्मरण करनेसे ऐसा कौन है कि जिसके हृदयमे वेदना उपस्थित न हुई हो? चिर वीर व्रतावलम्वी राठौर राजवंशका स्वाधीन शासन इन मानसिहही के समयमे समाप्त होगया, यद्यपि उक्त सन्धिकी प्रत्येक धारा केवल मान-सिहके शासन समयमे ही पाली जायगी, इसके पीछे नही यह मत निश्चय होगया, परन्तु आजतक वृटिश एजेण्टने मारवाड़मे जाकर राठौर राजकी शासनशक्तिको किस प्रकारसे सीमावद्ध कर रक्खा है उसका स्मरण करनेसे किसका हृदय प्रसन्न होगा।

वृटिश एजेण्टने सन् १८३५ ईसवीमे महाराज मानसिहके अधिकारी मेरवाडेमे जो अट्ठाईस ग्राम थे उनको दूसरीवार अपने अधीनमे नौ वर्पके लिये रक्खा था। १८४३ ईसवीमे वह अवधि वीतगई। यह हम पहले ही कह आये है कि वृटिश गवर्नमेण्टने किस कारणसे इन कई एक ग्रामोको अपने अधीनमे करके उन ग्रामोकी आमदनीमेसे वार्पिक पंद्रह हजार रुपये लिये थे, महाराज मानसिह इस वातको न जानसके। १८४३ ईसवीमे महाराज वृटिश गवर्नमेण्टके आशयको भलीभॉति जानगये थे। उन्होने दूसरीवार जो सात ग्राम दिये थे इसवार भी उन सातो ग्रामोको लेकर वाकी कई एक ग्रामोको इस आशयसे दिया कि गवर्नमेण्टकी जवतक इच्छा हो तवतक इनको अपने अधीनमे रक्खे। इसके सम्वन्धमे कोई नवीन सधिपत्र नहीं तैयार हुआ। वृटिश गवर्नमेण्टने तवसे यहांतक उन ग्रामो पर अपना अधिकार किया था कि उक्त कई ग्रामोके अतिरिक्त महाराजके मालानीनामक देशको भी ले लिया, जो जोधपुरके पोलिटिकल एजेण्टके अधीनमे शासित होता आया था। यद्यपि मालानी देशके अधिनायकने जोधपुरपतिकी आनुगत्यता स्वीकार की परन्तु वह पोलिटिकल एजेण्टकी आज्ञा पालनमे नियुक्त थे। एजेण्टने केवल उक्त देशोसे वार्पिक ६८८२ रुपया संग्रह कर जोधपुरके महाराजको दिया था।

महाराज मानसिंह और अधिक दिनतक इस संसारमें न रह सके। उन्होने १८४३ ईसवीमे सितम्बर मासकी ५ तारीखको पुत्रहीन अवस्थामे इस मायामय शरीरको त्यागदिया। महाराज मानसिंहके चरित्रोकी समालोचना करनेका हम कुछ प्रयोजन नहीं देखते, कारण कि महामान्य टाड् साहवने १८२३ ईसवीतक मानसिंहके शासनको वर्णन किया है, पाठक उसको पढ़कर उनके चरित्रोके सम्बन्धमे स्वयं न्यायसंगत मंतव्य गठन कर सकते है।

सत्रहवाँ अध्याय १७.

मारवाडेक सिंहासनके अधिकारीको चुननेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका मानसिंहकी रानी और राठौर सामन्तोको अनुरोध करना; मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये धौकलसिंहकी प्रार्थना; उनकी प्रार्थनाका अस्वीकार होना, अत्यन्त कुटुम्बी अहमदनगरके महाराज तख्तसिंहके अभिषिक्त करनेके लिये रानी और सामन्तोका प्रस्ताव, तख्तसिंहका परिचय, ईडर और अहमदनगरका संक्षिप्त विवरण; कर्नल टाड् साहवकी पूर्वकामनाका सफल होना; बृटिश गवर्नमेण्ट का सम्मति देना, महाराज तख्तसिंहका अभिषेक; महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरको अपने अधीन करनेके लिये कामना करना, उसके सम्बन्धमें ईडरपतिकी आपत्ति; महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरका स्वत्वाधिकार छोड़ना, कुमार यशवन्तसिंहका मारवाड़से लौटना, ईडरराज्यके साथ अहमदनगरका मिलना; महाराज तख्तसिंहके शासनमे सामन्तोका असतोष प्रकाश, बृटिश गवर्नमेण्टका अमरकोटके किलेपर अधिकार करना; मारवाड़पतिका उस किलेके पानेकी प्रार्थना करना; सुनकर भी महाराजको उस किलेके देनेमे गवर्नमेण्टका असम्मति प्रकाश करना, किलेके बदलेमे हानि पूरण करनेका प्रस्ताव करना; दुर्ग सम्बन्धी शेष मीमासा, उसके सम्बन्धका स्वीकार पत्र, सन् १८५७ के सिपाही विद्रोहके समय महाराज तख्तसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टको सहायता देना; उस सहायताका पुरस्कार स्वरूप अंग्रेज राजप्रतिनिधिका मारवाड़ राजवंशको दत्तक पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना, सनदपत्र, तख्तसिंहका घाणेरावपर अधिकार करना, सामन्तोकी आपत्ति, असतोष, फिर विद्रोहके लक्षण प्रकाश, उसके सम्बन्धके उपद्रवोका निवारण, अजमेरके दरबारमे महाराज तख्तसिंहका अशिष्टाचरण, कलकसंचय, दड, महाराज तख्तसिंहकी मृत्यु।

महाराज मानसिंहकी मृत्यु होते ही मारवाड़का राजसिंहासन सूना होगया। महाराजके एकमात्र प्राणप्यारे पुत्र छत्रसिंह पहले ही परलोक सिधारगये थे, तथा महाराजने किसीको भी अपने उत्तराधिकारी स्वरूपसे दत्तक नही लिया था। इस कारण सबसे पहले तो यह प्रश्न उठा कि उनके पीछे कौन सिंहासन पर वैठेगा। बृटिश गवर्नमेण्टने इस प्रश्नकी मीमांसा करनेके लिये, मानसिंहकी रानी, सामन्त, और राजकर्मचारियोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि चिरप्रचलित जातीयरीतिके मतसे किसको मारवाड़का राजतिलक देना उचित है, इसका आपही विचार कर लीजिये।

जिस समय यह प्रश्न मारवाड़के चारोओर उठ रहा था उस समय अभागे धौकल-सिहने फिर मारवाड़के सिहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टके समीप एक प्रार्थनापत्र भेजा। गवर्नमेण्टने देखा कि सर्व साधारण ही इनसे अप्रसन्न है, इस कारण धौकलसिहकी प्रार्थना स्वीकार न की गई। इसी समयसे धौकलसिहकी आशा चिरकालके लिये एकबार ही लुप्त होगई। राजरानी और सामन्तोने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार बम्बई प्रसिडेन्सीके अन्तर्गत अहमदनगरपति महाराज वख्तसिहको मारवाड़के सिहासन पर अभिषिक्त करनेके लिये वृटिश गवर्नमण्टके निकट प्रस्ताव उपस्थित किया।

महाराज तख्तसिह कौन है और क्यो वह निर्धारित हुए है? पाठकोके कौतू-हल निवारण करनेके लिये हम इस स्थानपर उनके सम्बन्धके कई ज्ञातव्य विषयोके वर्णन करनेकी अभिलाषा करते है। मारवाड़पति महाराज अजितसिहके तीसरे पुत्र आनंदसिहको ईडरके महाराजने, तथा चौथे पुत्र रायसिहको मालवेके अन्तर्गत जोवरेके महाराजने दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। महात्मा टाड् साहबने अजितकी वंशावलीमे अपना यह मत प्रकाशित किया है, तथा टाड् साहब भ्रमसे रायसिहके नामको इस प्रकारसे लिख गये है। परन्तु कर्नल म्यालिसन और अचिसन इत्यादिकी पुस्तकोसे जाना जाता है कि महाराज अजितके दो पुत्र १७२९ ईस्वीमे अपनी सेना साथ ले ईडर और अहमदनगरमे जा उन दोनो देशोपर अपना अधिकार कर स्वाधीनभावसे राज्य करने लगे थे। तख्तसिह उक्त अहमदनगरपति रायसिहके प्रपौत्र थे। अहमदनगरपति पृथ्वीसिहने तख्तसिहके पुत्र यशवन्तसिहको दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण किया था। पृथ्वीसिहके प्राण त्याग करते ही महाराज तख्तसिह जसवन्तसिहके नामसे राज्यशासन करते थे, मारवाडकी राजरानी और सामन्तोने देखा कि महाराज अजितके वंशमे यह तख्तसिह ही सिहासन प्राप्तिके अधिकारी है, निकट आत्मीय और योग्य पात्र है, इस कारण उनको मारवाड़ राज्यका भार देनेके लिये सभीने एकमत होकर वृटिश गवर्नमेण्टके निकट यह प्रस्ताव किया। महात्मा टाड् साहब मारवाड़के इतिहासके अंतमे कह गये है कि पितृहन्ता अभयसिह और वख्तसिहके महापापोके फलस्वरूप उनके उत्तराधिकारी मारवाड़को छार-खार करते है, इस कारण मानसिहको सिहासनसे रहित कर अजितके अपर पुत्रोसे उत्पन्न ईडरके राजा किसी एक पुत्रको मारवाडके सिहासनपर अभिषिक्त करना उचित है। साधू टाड् साहव १८२३ ईस्वीमे इस प्रकारसे वर्णन कर गये है, १८४३ ईस्वीमे वह कार्य पूरा होगया, वृटिश गवर्नमेण्टने महारानी और सामन्तोके उक्त मतमे शीघ्र ही सम्मति दी, महाराज तख्तसिह मारवाड़के सिहासनपर विराजमान हुए। इनके अभिषेकका कार्य बडी धूमधामसे होगया।

---

(१) यह बात गलत है।
(२) रायसिहके प्रपौत्र नहीं थे अनन्तसिंहके प्रपौत्र थे।

महाराज तख्तसिंह मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान हुए, परन्तु अहमद्-नगर राज्यको भी अपने अधीनमें रखनेके लिये इन्होंने अपने पुत्र यशवन्त सिंहको शीघ्र ही वहां भेजदिया । परन्तु इस समय ईडरके महाराजने इसके सम्बन्धमें एक भयंकर काण्ड उपस्थित किया । उन्होंने कहा कि महाराज तख्तसिंह जब कि मारवाड़के सिंहासन पर विराजमान हुए हैं, तब अहमदनगर राज्यपर उनका कुछ भी अधिकार नहीं है, अहमदनगर ईडरमें शामिल है, इस कारण उक्त देश इस समय ईडरके अधिकारमें होजायगा । महाराज तख्तसिंहने कहला भेजा कि मैं स्वयं अहमदनगरका अधीश्वर नहीं हूँ मेरे पुत्र यशवन्तसिंहको अहमदनगरके भूतपूर्व अधीश्वर पृथ्वीसिंहने दत्तकपुत्र और उत्तराधिकारीरूपसे ग्रहण किया था, इस कारण वह अहमदनगरका अधिकारी है । मैंने केवल यशवन्तसिंहके नामसे अहमदनगरको शासित किया था, इस कारण मेरे मारवाड़के सिंहासन पर अभिषिक्त होनेसे भी यशवन्त-सिंहका अधिकार नष्ट नहीं हुआ । ईडरपतिने इसका उत्तर भेजा कि यद्यपि यशवन्त सिंह दत्तकपुत्र रूपसे ग्रहण किये गये थे, परन्तु आपने जब गत वर्षतक अहमदनगरके अधीश्वर नामसे परिचय देकर अधीश्वररूपसे समस्त शासनकार्य किये थे, तब यशवन्त सिंहका अधिकार पहिले ही लुप्त होगया । इस कारण आपके मारवाड़के सिंहासन ग्रहण करनेके साथ चिर प्रचलित रीतिके मतसे अहमदनगर पर जो आपका अधिकार था, यह लुप्त होगया है, कई वर्षतक इस प्रकारसे आन्दोलन होता रहा, बृटिश गवर्नमेण्टने ईडरके महा-राजकी उक्तिको न्यायसंगत तथा चिर प्रचलित रीति संगत कहकर स्वीकार किया, महाराज तख्तसिंहने शीघ्रही अहमदनगरको छोड़दिया, कुमार यशवन्तसिंह छः वर्षके पीछे अहमदनगरको शासन करके मारवाड़को लौटआये । अहमदनगर १८४८ ईस्वीमें ईडरराज्यके अधिकारमें होगया ।

महाराज मानसिंहके दीर्घ शासनसे मारवाड़ एकबार ही क्षार–खार होगया था इस कारण नवीन मारवाड़ेश्वर तख्तसिंहके शासनके आरंभसे सम्पूर्ण राठौर जाति आशा करनेलगी कि महाराज अपने न्यायशासनसे शांतिकी जल वर्षाकर जातिका कल्याण करेंगे, परन्तु अत्यन्त दु:खका विषय है कि महाराज तख्तसिंहने सर्वसाधारण प्रजाकी वह आशा फलवती न की । वह राजकार्यके प्रत्येक भागकी ओर स्वयं दृष्टि, न रखकर केवल मंत्रियोंके ऊपर समस्त भार अर्पण कर निश्चिन्त हो बैठे । मंत्रीगण यह सुअवसर पाकर फिर अपनी इच्छानुसार शासन प्रारंभ कर केवल महाराजके मनको संतुष्ट रखनेमें नियुक्त हुए । इसी कारणसे समस्त मारवाड़में फिर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित होगई । पर जैसे महाराज मानसिंहने विशृंखल शासनसे चारोओर जिस प्रकारसे पीड़न अत्याचार, उपद्रव और अंतमें विद्रोह तकको दिखा दिया था, सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कहेंगे कि महाराज तख्तसिंहके शासनमें वह दृश्य आकर उपस्थित नहीं हुआ । इतना अवश्य कहा जायगा, कि प्रजाने जितनी आशा अपने कल्याणकी की थी, महाराज तख्तसिंहके शासनके प्रारंभमें उतनी शांति प्रजाको न मिलसकी ।

विख्यात अमरकोटका किला और उसके अधीनके देश सन् १७८० ईस्वीमे मारवाड़के अधीश्वरके अधिकारी तथा मारवाड़के राज्यमे मिल गये थे परन्तु मारवाड़के अत्यन्त दुर्दिनोमे सिन्धदेशके अन्तर्गत तालपुरके अमीरने सन् १८२३ मे उक्त किले और देशको जीत लिया । पीछे बृटिश गवर्नमेण्टने सिधदेशको जीतनेके समय उस किले पर भी अपना अधिकार करलिया । प्रचलित संधिपत्रके मतसे गवर्नमेण्टने उस किलेको मारवाड़पतिको देनेका विचार किया । परन्तु बृटिश राजनीतिकी चतुरता को कौन समझ सकता है ? यद्यपि गवर्नमेण्टने प्रतिज्ञा की; और शेप समयके उपस्थित होते ही महाराज तख्तसिहने उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करानेका उद्योग किया, तब गवर्नमेण्टने यह न चाहा, स्वार्थ साधन करनेके लिये निश्चय करलिया कि अमरकोटका किला और उसके अधीन के देश जो उसके स्थान पर स्थापित है, और दुर्ग जैसे अभेद्य है, इससे उसको महाराजको न देकर अपने अधीनमे रखना कर्त्तव्य है। गवर्नमेण्टने इसकी कुछ भी परवाह न कर महाराज तख्तसिहसे कहला भेजा कि अमरकोटकी सीमाके दुर्ग हमारे अनेक काममे आवेगे, और दूसरे आपको इस देशसे किसी भॉति भी शांति नही मिल सकेगी, इस कारण किला हमारे ही अधिकारमे रहेगा, इसमे जो आपकी हानि होगी उतना रुपया देनेके लिये हम तैयार है । यद्यपि महाराज तख्तसिह कम्पनीको प्रथम प्रतिज्ञा बद्ध और शेपमे उस प्रतिज्ञाको भंग करनेके लिये उद्यत हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, परन्तु उनकी क्या सामर्थ्य थी कि जो वह इसमे विचार करनेके लिये कहते? वह मस्तक झुकाकर फिर गवर्नमेण्टके उस प्रस्तावको ग्रहण करनेके लिये सम्मत हुए । १८४७ ईस्वीकी ६ मार्चको ग्रटहेड साहबने महाराज तख्तसिहकी ओरके वकीलसे प्रस्ताव करके भेजा कि महाराज तख्तसिह पहिले संधिपत्रके मतसे सेनाके वेतनके हिसाबसे जो वार्षिक एक लाख पद्रह हजार रुपया देते है उसमेसे वार्पिक दश हजार रुपया छोड दिया जायगा। अर्थात् सेनाके वेतनके हिसाबसे महाराजको वार्षिक एक लाख पांच हजार रुपया देना होगा । वकीलने महाराज तख्तसिहके निकट उस प्रस्तावको उपस्थित किया, कि महाराजको प्रकारान्तरमे उस क्षतिको पूरण करनेसे अमरकोटका सत्वाधिकार चिर कालके लिये गवर्नमेण्टको देना होगा । बृटिश गवर्नमेण्टने इसके सम्बन्धमे स्वतत्र किसी सधिपत्र पर हस्ताक्षर न करके उक्त वकीलके निम्नलिखित पत्रमे सम्मति देकर इसको स्वीकार करलिया ।

१८४७ ईस्सवी १९ मईका जोधपुरराज्यके वकीलका पोलिटिकल एजेण्टके निकट भेजा हुआ पत्र ।

आपने विगत मार्च मासकी छठी तारीखको जो पत्र लिखकर उसमे अमरकोटके किलेको गवर्नमेण्टको लौटा देना, और उसकी हानिके पूर्णस्वरूपसे, वार्पिक जो ११५००० रुपया सेनाके खर्चके लिये महाराज देते है, उसमेसे वार्पिक १०००० रुपया छोड़नेका जो प्रस्ताव किया है, मै महाराजको उस पत्रका मर्म सुनाता हूँ ।

महिमवर महाराज कहते है, "कि अमरकोटका किला हमारा है, और इसमे जो हमारे सम्पूर्ण अधिकार है, वह सब प्रकारसे प्रकाशित है, साहब बहादुर (बृटिश गवर्नमेण्ट) को वह भली भाँतिसे विदित है । यह अमरकोटका किला जितने दिनोतक गवर्नमेण्टके अधिकारमे रहेगा उतने दिनतक वह इसको अपना ही कहकर अनुभव कर सकेगे, परन्तु किसी समयमे गवर्नमेण्ट इसको और किसीको देनेकी इच्छा करे तो वह हमको दे और किसीको न दे, कारण कि अमरकोट हमारा है, इस कारण हमको देना होगा । हम राजस्थानकी भूमिके स्वत्वाधिकारको सबसे श्रेष्ठ मानते है, इस कारण जिस दिन अमरकोटा हमारे हाथमे आजायगा वह दिन हमारी बड़ी प्रसन्नताका होगा । "

"इस समय१०८००० रुपये बृटिश गवर्नमेण्टको जो कर दिये जाते है उसमेसे वार्षिक १०००० रुपया छोड़ देना होगा । कारण कि भूमि के वदलेमे यह दश हजार रुपया छोड़ा जाता है, और भूमिके ऊपरका कर ग्रहण करनेके योग्य है, इस कारण उस करसे यह रुपया छोड़ देना उचित है । "

(यथार्थ अनुवाद)

(हस्ताक्षर) एच एच. ग्रेट हेड,

पोलिटिकल एजेण्ट ।

सन् १८४७ ईसवीकी १७ जूनको सकाउन्सेल गवर्नर जनरलको स्वीकृत और धार्य हुआ*। "

सन् १८५७ ईसवीमे समस्त भारतवर्षमे प्रबल सिपाही विद्रोहाग्नि प्रज्वलित होगई । जिस समय नाना साहब कानपुर और इलाहाबादमे सौ २ अग्रेज तथा सैकड़ो अंग्रेज महिलाओ और सैकड़ो छोटे २ बालकोका प्राण नाशकर अपनी महापापकी प्रतिहिसावृत्तिको सफल करने लगे, जिस समय मेरठ, दिल्ली, एवं लखनऊ इत्यादि देशोपर सिपाहियोकी सेना संहारमूर्ति धारणकर अग्रेज राजपुरुष और अंग्रेजी सेनाको बंदीकर उनके सम्मुख उनकी स्त्रियोका सतीत्व नाश करके उनके बालकोंको नंगी तलवारोके अग्रभागसे भेदनकर अंतमे सबका संहार करने लगी, जिस समय प्रत्येक अंग्रेज अपने २ प्राणोके भयसे जहां तहां भागने लगे, जिस समय दिल्लीके नाममात्रके बादशाहने भारतमे यवनराज्यका विस्तार करनेके लिये उस विद्रोहके उपलक्षमे मस्तक उठाया, जिस समय भारतमे प्रत्येक अग्रेजके मुखसे हाहाकारकी ध्वनि उठने लगी, जिस समय सिपाहियोकी सेनाने नगर २ और ग्राम २ पर अपना अधिकार करना प्रारंभ करदिया, जिस समय भारतसे बृटिश शासनशक्ति प्रायः लोप होतीचली उसी समयमे बृटिश गवर्नमेण्टने भारतके अन्यान्य राजाओंकी समान मारवाड़के महाराज तख्तसिहके निकटसे भी सहायता मागी । महाराज तख्तसिहने तुरन्त ही १८१८ ईस्वीके सधिपत्रके अनुसार गवर्नमेण्टकी उस महाविपत्तिमे सहायता करनेके लिये

* Artchison's Treaties

अपनी सेना भेज दी । १८३५ ईस्वीमे वृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरमे शान्तिकी रक्षाके लिये महाराजके नामसे जो नवीन सेना तैयार की गई थी वह अजमेरमे रक्खी गई थी, जोधपुरके महाराजके यहाँसे उस सेनाके वेतनके हिसाबसे एक लाख पंद्रह हजार रुपया लिया जाता था, भारतके इस विद्रोहके समयमे वह सेना भी विद्रोही होगई । महाराज तख्तसिहने उस विद्रोही सेनाको दमन करके अपनी राजधानी मे अंग्रेजोको आश्रय दिया, विद्रोहके शान्त होजानेपर वृटिश गवर्नमेण्टने इसके पुरस्कारमे अन्यान्य देशीय राजाओके समान महाराज तख्तसिहको निम्नलिखित सनद दी।

" महारानी विक्टोरियाकी अभिलाषा है कि भारतवर्षके जो राजा इस समय अपने २ राज्यको शासन कर रहे है उन सबका राज्य उनके वंशधरोके द्वारा शासित हो, और उनके वंशके पदसम्मानको अक्षतभावसे रखना होगा, उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त मै आपको इसपत्रके द्वारा प्रगट करती हूं,कि आप और आपके भावी स्थलाभिषिक्तोके पुत्र न होनेपर आप अथवा आपके राज्यके भावी उत्तराधिकारी हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्र ग्रहण करसकैगे, गवर्नमेण्ट उसमे अपनी सम्मति देगी ।

जबतक आपका वंश राजभक्तरूपसे स्थित रहैगा, और जो संधिके द्वारा वृटिश गवर्नमेण्टके साथ बाध्यता हुई है उस संधि इत्यादि पर जबतक विश्वास रक्खा जायगा तबतक किसी कारणसे भी इस अंगीकारको भंग नही किया जायगा ।

(हस्ताक्षर) केनिग* ।

राठौरोकी सामन्त मंडलीमे जो सम्प्रदाय राजाके यहां प्रतिपत्ति प्राप्तकर एवं शासनकी सामर्थ्य चलानेमे समर्थ न होकर महाराज तख्तसिहके ऊपर विरक्त हुई थी, १८६७ ईस्वीमे उन्होने मारवाड़मे फिर एक शोचनीय कांड उपस्थित करनेका सुअवसर पाया, इसी संवत्‌मे घाणेरावके सामन्तने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये,उनके भ्राताने सामन्त पदको ग्रहण किया । परन्तु महाराज तख्तसिहने उसे चिरप्रचलित रीतिके विरुद्ध जानकर घाणेराव देशपर अधिकार करनेके लिये एक सेना भेज दी । शीघ्रही राजसेनाके दलने घाणेराव पर अधिकार कर लिया, समस्त असंतुष्ट सामन्त दल बांधकर फिर राज्यमे विद्रोह उपस्थित करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करनेलगे । तव महाराज तख्तसिहके जो अनेक पुत्र उत्पन्न हुए थे, उन्होने उनमेसे एकको घाणेरावके देनेकी इच्छा प्रकाश की, वस यही काण्ड उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोने इसको अत्यन्त अन्याय जानकर वृटिश गवर्नमेण्टके निकट प्रवल अनुयोग उपस्थित किया । "उनका प्रधान अनुयोग यह था कि महाराजने जो अन्याय करके घाणेराव पर अधिकार किया है, उन्होने सामन्तोको राजसभामे नही बुलाया है, तथा अपनी इच्छानुसार सभीको पीडित किया है" । इसीसे अप्रसन्न सामन्त राज्यमे विद्रोह फैलानेके लिये सव प्रकारसे उद्योगी हुए थे, परन्तु एकमात्र वृटिश गवर्नमेण्टके भयसे उनकी वह कामना मनकी मनमे ही

---

* Artchison's Treatres

रहगई। और दूसरी ओर राज्यमे शांति स्थापन तथा सामन्तोके असंतोप निवारण करनेके लिये वृटिश गवर्नमेण्टने महाराज तख्तसिहको अनुरोध किया। गवर्नमेण्टने उसी अनुरोधके मतसे महाराज तख्तसिहके समस्त उपद्रवोके निवारणके साथ ही साथ अपना भी प्रयोजन सिद्ध करालिया।

सन् १८७० ईस्वीमे महाराज तख्तसिहने अभिमानके वश हो अपनी दुर्बुद्धिसे एक अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य करके अपनेको कलकित और अपमानित किया। इसी सनमे भारतवर्पके भूतपूर्व मृत अग्रेज राजप्रतिनिधि तथा गवर्नर जनरल अर्ल मेओने राजपूतानेमे भ्रमण करनेके समय अजमेरमे जाकर एक दरवार किया। राजस्थानके सभी देशीय राजाओको उस दरवारमे वुलाया गया। उनके आमंत्रणसे राजस्थानके अन्यान्य राजाओके समान महाराज तख्तसिह भी अपने पुत्र यशवन्तसिहके साथ अजमेरमे आये। दरवार अनुष्ठानके पहले ही चिरप्रचलित रीतिके अनुसार यह प्रस्ताव हुआ कि जिस २ राजकीय दरवारके समय सव राजा इकट्ठे होगे उस समय उदयपुरके महाराणा जोधपुरपति सवसे आगे आसन पावेगे। यह समाचार सुनते ही महाराज तख्तसिहने अत्यन्त अप्रसन्न होकर कहा कि जो उदयपुरके महाराणाके आगे मुझे आसन नहीं दिया जायगा तो मै दरवारमे नही जाऊँगा। महाराज तख्तसिहकी इस आपत्ति पर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको यह समाचार भेजा गया, कि इस आसनके सम्वन्धमे वहुत कालके पहले विचार होकर जो निश्चय होगया है उसका विचार अव दूसरी वार किसी प्रकारसे भी नहीं होसकता, परन्तु महाराज तख्तसिहने इस वातको कुछ भी न सुना। इन्होने अपनी प्रतिज्ञाको ही प्रवल रखनेका यत्न किया। पोलिटिकल एजेण्ट और कुमार यशवन्तसिह तख्तसिहको वारम्वार समझाने लगे कि आप इसमे कुछ आपत्ति न कीजिये। गवर्नमेण्टने जो निश्चय कर दिया है उसी प्रकारसे उदयपुरके राणाके परिवर्ती आसनको ग्रहण कर उनके मानकी रक्षा कीजिये। तथापि महाराज तख्तसिह किसी प्रकार भी सम्मत न हुए।

ठीक समयमे सभास्थलमे एक २ करके सभी राजा आकर अपने २ आसन पर वैठ गये। क्रमानुसार दरवारका समय उपस्थित होगया, महाराज तख्तसिहके आनेकी वाटमे सभी वैठे रहे परन्तु तो भी महाराजने दर्शन न दिया। महामान्य अग्रेज राजप्रतिनिधि अर्ल मेओ वहादुर दरवारके प्रारंभ होनेका समय वीतजाने पर महाराज तख्तसिहके आनेकी और एक घंटे तक राह देखने लगे, दृढ़ प्रतिज्ञ महाराज तख्तसिह तथापि न आये, यह देखकर अंतमे राजप्रतिनिधि अर्ल मेओने शीघ्रही महाराज तख्तसिहके आसनको सूना रखकर दरवारका कार्य प्रारंभ करादिया दरवार समाप्त होजानेके पीछे अंग्रेज राजपुरुप गणोने यह व्यवस्था की कि मारवाड़पति महाराज तख्तसिहने महामान्य राजप्रतिनिधि अर्ल मेओके निमंत्रणका तिरस्कार कर उनके ऊँचे पदका अपमान किया है। अस्तु महाराज तख्तसिंहके साथ भी उसी प्रकारका व्यवहार करना कर्त्तव्य है, तुरन्त ही राजप्रतिनिधिके डेरोमेसे महाराज तख्तसिहके निकट इस मर्मका एक आज्ञापत्र भेजागया, "महाराज! कल प्रभात

होते ही अपने अनुचरोको साथ ले अजमेरको छोड़कर अपने राज्यको चले जॉय। प्रचलित नियम यही है। इस प्रकारसे दरवारके समयमे देशीय राजा आये थे चलते समय उन सभीने विदा लेकर राजप्रतिनिधिके डेरोमे जा सन्मान ग्रहण किया, और राजप्रतिनिधिने भी राजाओके यहॉ जाकर साक्षात् किया, परन्तु यहॉ यह निश्चय हुआ कि महाराज तख्तसिहके प्रति वह सन्मान नही दिखाया जायगा। वह जिस समय अजमेरसे जाने लगे उस समय प्रचलित नियमके साथ विदा होनेके समय तोपोकी ध्वनि भी नही कीगई। महाराज तख्तसिहके सन्मानमे जितनी तोपोकी संख्या नियत की गई थी इस समय उसमेसे दो तोपै घटा दी गई। महाराज तख्तसिह इस प्रकारसे अपमानित, कलंकित, और दंडित होकर दूसरे दिन प्रातः काल ही अपने राज्यको चले गये। परन्तु यहॉपर इतना हम अवश्य कहैगे कि यद्यपि महाराज तख्तसिहने अत्यन्त अशिष्टाचरण करके कलंकको संचय किया परन्तु उनके पुत्र कुमार यशवन्तसिहने पहिलेसे ही पिताको राजप्रतिनिधिकी आज्ञापालन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया था। पिताको मंदवुद्धि देखकर कुमार यशवन्तसिहने दरवार भंग होजानेके पीछे राजप्रतिनिधिके डेरोमे जाकर उनके साथ साक्षात् कर अनेक भॉतिसे विनय कर उनका सन्मान किया, इससे राजप्रतिनिधि इनसे परमसंतुष्ट हुए।"

इस प्रकारसे महाराज तख्तसिह वहादुर जीवनकी शेष दशामे, वृथा कलंकित होकर थोड़े ही दिनोमे अर्थात् १८७३ ईसवीमे इस मायामय शरीरको छोड़कर चलवसे।

अठारहवॉं अध्याय १८.

महाराज यशवन्तसिंहका अभिषेक, शासनविभाग संस्कार, महाराजका कलकत्तेमे आना, भारतके भावी सम्राट्के साथ साक्षात्; महाराजको प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्रकी उपाधि प्राप्ति, दिल्लीकी राजसूय समितिमे महाराजका जाना, स्मारक पताका और पदककी प्राप्ति, सम्मान सूचक तोपसंख्यावृद्धि, मारवाड़के इतिहासका उपसंहार।

महाराज तख्तसिह वहादुरका स्वर्गवास होनेपर उनके ज्येष्ठ कुमार जसवन्तसिंह १८७३ ईसवीमे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, और इस समय वडी सावधानीसे

(१) महाराज तख्तसिहको दरवारमें महाराणा उदयपुरके नीचे वैठना मजूर नहीं था, इस लिये दर्वारमें नहीं गये। इसमे कोई वात कलंककी नहीं थी। दो तोपै जो उस समय सलामी की घटा दी थी तो उनकी उन्होने कुछ परवाह नही की थी। वल्कि उन्होने लाट साहवकी इस तजवीजकी शिकायत पार्लिमेंट तक की थी और यह दलील की थी कि जव हम उनके वुलानेसे अजमेरमे चले गये थे तो फिर हमारी वैठक क्यों ऐसी तजवीज की कि जिससे हमारा अपमान हुआ। हमारा और राणाजीका दरजा आपसके वर्तावमे वरावर है। इसका कुछ ख्याल नहीं किया गया।

निर्विघ्न हो मारवाड़का शासन करने लगे। वर्तमान महाराज जसवन्तसिह वहादुरने सच्चरित्रता, नीतिज्ञता, विज्ञता तथा शासन विषयमे विशेष अभिज्ञता अपने पिताके शासनसमयमे ही भलीभाँतिसे प्रकाशकी। भारतवर्षकी गवर्नमेण्ट इनके आचरणोसे पहलेसे ही संतुष्ट होगई थी; इसकारण इनके राजपदपर अभिषिक्त होते ही राजप्रतिनिधि वहादुरने विशेष आनंदप्रकाशक पत्र द्वारा भारतेश्वरीके नामसे महाराजको अभिनन्दन करनेमे भी त्रुटि न की। वड़ी धूमधामके साथ अभिषेक कार्य होजानेके पीछे महाराज जसवन्तसिह वहादुरने अपने राज्यके उत्कर्ष साधनमे भलीभाँतिसे मन लगाकर सभीके मनोरथ पूर्ण किये। सामन्तोका विद्वेष निवारण और राज्यके प्रत्येक प्रान्तमे शांति स्थापन करनेके लिये यथायोग्य पहरेवालेको नियत करना, राजस्वकी वृद्धिके लिये श्रेष्ट उपाय करना इत्यादि विषयोसे महाराजने थोड़े दिनोमे ही सफलता प्राप्त की।

भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्स वहादुरके १८७५ ईस्वीमे भारतमे आनेके समय भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने उनके सम्मानको वढ़ानेके लिये भारतवर्षके प्रधान २ राजाओको कलकत्तेमे वुलाया। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थव्रुकके वुलानेसे महाराज जसवन्तसिह अनुचरोको साथ ले कलकत्तेमे आये। १८७५ ईस्वीकी २३ वी दिसम्बर को प्रिन्स आफ वेलस वहादुरके कलकत्तेमे आते ही, मारवाड़पतिने अन्यान्य राजाओके साथ भारतके भावी सम्राट्को वड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। इसके पीछे कलकत्ते के गवर्नमेण्टके यहाँ जाकर भावीसम्राट्के साथ साक्षात् कर फिर सन्मान दिखाया, भावी सम्राट्ने भी महाराजके यहाँ जाकर साक्षात् किया। १८७६ ईस्वीकी १ जनवरी को कलकत्तेके किलेमे भावी सम्राट्ने एक वड़ाभारी दरवार किया। उस दरबारमे महाराज जसवन्तसिह वहादुरको वड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। इस दरबारमे भारतके प्रथम श्रेणीके कितने ही देशी राजाओको भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महा सन्मानसूचक उपाधियां दी थी। इन्हीमे महाराज जसवन्तसिह भी थे। मरुक्षेत्र विजयी सियाजीने केवल अत्यन्त सामान्य "राव" की उपाधि धारण कर संसारमे अक्षय कीर्तिको प्राप्त किया था, इसके पीछे उन्हीं सियाजीके वंशधर उदयसिहको बादशाह अकबरसे "राजा" की उपाधि मिली; इससे पीछे दिल्लीके यवनसम्राट्ने इन मारवाड़ पतिको "महाराजाधिराज राजराजेश्वर" कहकर संभाषण किया, परन्तु महाराज जसवन्तसिह इस दरबारमे सबसे पहले विजातीय उपाधिके भूषणसे भूषित हुए। देशीय राजा, अथवा राजकर्मचारी और सम्भ्रान्त प्रजाका सन्मान बढ़ानेके लिये भारतेश्वरी विक्टोरियाने, "भारतनक्षत्र" नामकी एक श्रेणीकी नूतन उपाधिकी सृष्टि की थी। वह तीन श्रेणीमे विभक्त हुई। महाराज जसवन्तसिह बहादुरको वह प्रथम श्रेणीकी उपाधि मिली। भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महाराजके गलेमे वह उपाधिका पदक पहिनादिया। विदेशी सेक्रेटरीने सभास्थानमे ऊँचे स्वरसे कहा—"महाराज सर जसवन्तसिह बहादुर, नाइट ग्रांड कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया।" मारवाड़पति इस प्रकारसे महासन्मानित हो अत्यन्त प्रसन्न हो अपने राज्यको चले आये।

बृटिशराज्ञी महारानी विक्टोरियाके सन् १८७७ ईस्वीमे भारतेश्वरी उपाधि धारणके उपलक्षमे दिल्लीमे जो राजसूय समिति हुई थी, महाराज सर जशवन्तसिह वहादुर भी उस राजसूयमे अपने पारिपद आत्मीय जन और सेनाके साथ आमंत्रित होकर गये थे । १८७६ ईस्वीमे २८ दिसम्बरको महाराज सर जसवन्तसिह वहादुर महिमवर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन वहादुरसे साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये, इनके सम्मानके लिये सत्रह तोपे छूटी, स्थानके सम्मुख खड़े होकर अंग्रेजी सेनाने युद्धकी रीतिके अनुसार महाराजकी सलामी ली, भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने आगे वढ़कर महाराजको सन्मानके साथ ग्रहण किया, और वड़े आदरभावके साथ वह उन्हे अपने यहां ले गये। राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन वहादुरने सिहासनसे कुछ दूर आगे वढ़कर महाराजको बड़े आदरके साथ उनका हाथ पकड़कर अपनी दहिनी ओर सिहासनपर वैठाला, इसके पीछे कुशल प्रश्न पूँछनेलगे । मारवाड़ राजवंशने भारतमे वृटिश शासनमे जो सहायता की थी उसका वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त संतोप प्रकाश किया, दो अंग्रेजी सैनिकोंने एक सुवर्णके दंडेपर लगी हुई अत्यन्त रमणीय पताका[2]को लाकर सम्मुख खड़ा किया । राजप्रतिनिधि शीघ्र ही सिहासन छोड़कर उस पताकाकी ओर गये, और वड़े संतोपके साथ निम्नलिखित उक्तिसे उन्होने महाराजके हाथमे वह पताका दी ।

" महाराज ! आपके वंशके राजचिह्नोसे अंकित यह पताका महामान्या राज्ञीकी स्वकीय उपहारस्वरूप है–वह भारतेश्वरीकी उपाधि धारणके चिह्नस्वरूप महिमवरको उपहारमे देती है "।

" इंगलैण्डके सिहासन और आपके राजवंशके साथ जो दृढ़ सम्बन्ध विराजमान है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य (अग्रेज गवर्नमेण्ट) आपके वंशकी प्रवलता सुख स्वच्छंदता और अविनाशिताके दर्शनकी अभिलापी है । आप जवतक इस पताकाको उड़ावेगे, तवतक वह आपके स्मृतिमार्गमे उदित होगी महामान्याका ऐसा विश्वास है।"

महाराज सर जसवन्तसिह वहादुरने वड़े आदरमानके साथ उस पताकाको ग्रहण किया, फिर लार्ड लिटन वहादुरने भारतेश्वरीकी मूर्तिसे अंकित एक सुवर्णका पदक महाराजके गलेमे डालकर कहा,–

" महाराज ! राज्ञी एव भारतेश्वरीकी आज्ञानुसार मैने इसके द्वारा आपको विभूपित किया, मै ऐसी आशा करता हूँ कि आप इसको दीर्घकाल तक धारण करैगे,

---

(१) देहली दरवार।

(२) सुवर्णके डडेके शिरोभाग पर सुवर्णका राजमुकुट, उसके नीचे सुवर्ण रंजित दो मुखका वरसा समान्तरालभावसे स्थित था, उसके नीचेके भागमें ताम्बूलके आकारकी झालर युक्त पताका लटक रही थी । पताकाके एक ओर जोधपुरराजका चिह्न अंकित था, और दूसरी ओर कैसरहिन्द लिखा हुआ था । सन् १८७७ ई० के देहली दरवारमे इसी प्रकारके निसान सव स्वतंत्र राजाओको दिए गये थे ।

और जो तारीख इसमे अंकित हुई है उसके स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर उत्तराधिकारी इसको दीर्घकाल तक पदक रूपसे रखनेमे समर्थ होगे ”।

मारवाड़के महाराजने इस स्मारक–पदकको वड़े आदरके साथ अपने गलेमे पहिन लिया, राजप्रतिनिधिने फिर हँसते २ कहा, कि आज आपकी तोपोंकी सलामीकी संख्या वढ़ा दी गई; अर्थात् जितनी तोपोकी सलामी हुआ करती थी उनसे भी अधिक वढ़ाई गई। महाराज इस दिनसे पाहिले वृटिश अधिकारी किसी देशमे जाते तो इनके सन्मानके लिये सत्रह तोपे छूटा करती थीं, परन्तु इस समय यह नियत होगया कि महाराज जवतक जीवित रहे गे तवतक इनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपे छूटा करैगी। इस प्रकारसे महाराज जसवन्तसिह सन्मान पाकर अपने स्थानको चलेगये।

दूसरे दिन २७ दिसम्बरको अंग्रेज राजप्रतिनिधि वहादुरने मारवाड़पति महाराज सर जसवन्तसिह वहादुरके यहाँ जाकर साक्षात् किया, महाराजने वड़े आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। इसके पीछे दो जनवरीको महाराज राजसूय समितिमे जा अपने कर्त्तव्य पालनके पीछे स्वयं अपनी राजधानीको लौटआये, महाराजके वर्तमान दीवान, अर्थात् मारवाड़के प्रधान मंत्री मेहता विजयसिहने अपनी दक्षता, विज्ञता और शासनकार्य की कुशलतासे उस १८७७ ईसवीकी पहली जनवरीको राजसूय समितिमें सन्मानसूचक “ रायवहादुर ” की उपाधि प्राप्त की। पंडित शिवनारायण इस समय महाराजके गुप्तमंत्रीका कार्य करते थे।

मारवाड़के प्रत्येक प्रान्तमे इस समय शांतिमती देवी विराजमान हो रही थी, सुशासनके गुणसे राजा और प्रजामे कुछ भी झगड़ा नही था। आत्मविग्रह नहीं, स्वजातिमे विद्वेष नही, सामन्तोमे षड्यंत्र नही, पहाड़ियोके अत्याचार भी नही है। इस समय चारोओरसे यही शब्द उठ रहा है शांति! शांति! शांति! वाणिज्यकार्य अटलभावसे चल रहा है, किसान लोग निर्विघ्नतासे धान्य उत्पादन कररहे है, प्रत्येक कार्य न्यायके अनुसार होता है। राजकीय करके संग्रहमे कोई वाधा नही होती। राजधानीमे विद्यालय स्थापित होरहे है, उन विद्यालयोमे अंग्रेजी भाषातककी शिक्षा दीजाती है, राज्यके भिन्न २ प्रान्तोमे शिक्षालय स्थापित हुए है, राजधानीमे अंग्रेजी चिकित्सालयोका अभाव नही है, राज्यकी श्रीवृद्धिके लिये पूर्त्तकार्य विभाग भी स्थापित हुआ है। इन सव वातोको देखकर और सुनकर जैसा महान् सुख होता है वैसेही स्मरण होताहै कि जिस राठौर जातिने शूरवीरता और वलविक्रम प्रताप प्रभुत्व एकता उद्दीपना, प्रतिभा, नीतिज्ञता एवं साहस और दृढ़प्रतिज्ञताके वलसे चिर–वीर–व्रतका अवलम्वन कर राठौर-राज्यके प्रतिष्ठाता सियाजीके समयसे स्वाधीन अवस्था तथा यवनोकी पराधीनतामे भी भारतक्षेत्रमे चिरस्मरणीय अभिनय करके अनन्त यश और कीर्त्तिको संचित किया था, उन राठौरोके वर्तमान वंशधरोके वह समस्त सद्गुण इस समय कहाँ है? गवर्नमेण्टकी छत्र छायाके सहारे राठौर जातिको वह अपने सम्पूर्ण गुण संग्रह करने चाहिये।

उन्नीसवाँ अध्याय १९.



मारवाड़का विस्तार और जनसंख्या, भिन्नजातीय अधिवासी; जाट राजपूत, ब्राह्मण वैश्य और दासजाति, मृत्तिकाके गुणागुण, फलमूल, खानिज पदार्थ, लवणहृद, मर्मर पत्थर और चूड़ेकी खान, टीन सीसा और लोहेकी खानें, फटकड़ी, शिल्पकौशल, वाणिज्यस्थली, वाणिज्य के द्रव्योंकी आमदरफ्त, पश्चिम भारतके वाणिज्य प्रधान स्थान, पाली, वणिकजाति, खैरतरा और ओसवाल, कूता, वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकदल, आमदरफ्तीका परिमाण, वाणिज्य द्रव्यरक्षक चारण गण, वाणिज्यकी अवनति, उसका कारण, अफीमके वाणिज्यकी एक चोटिया, मूँडवा और वालोतरा, भिलोतका मेला, विचार विभाग, दंडदेनेकी रीति; साधारण न्यय, प्रतिपालित कैदियोंके ऊपर महाराजकी दया प्रकाश, सूर्य और चंद्र ग्रहण, राजकुमारका जन्म और राजाके अभिषेकके समय कैदियोका छोड़ा जाना, सोगन अर्थात् अग्नि जल और तत्ते तेलसे अपराधियोंकी परीक्षा, पंचायत, राजस्व और उसकी रीति, बटाई वा धान्यका कर, सेहना और कनवारिया, साधारण कर, अंग कर, घासका कर, किवारी अर्थात् द्वार कर, द्वार करकी सृष्टिका मूल, भिन्न प्रकारका कर, उसका परिमाण, धनी वा करसंग्राहक, लवणहृदका राजस्व, मारवाडका मोट, राजस्व, सेनाकी सख्या वेतनभोगी सेनाका दल, सामन्तोंके अधीनकी सेना, सामन्तोकी तालिका, आधुनिक विवरण।

महात्मा टाड् साहबने मारवाडके इतिहासको वर्णन करके अन्यान्य ज्ञातव्य विषयोसे पूर्ण एक और अध्याय लिखा है । यद्यपि वह अध्याय उस समयकी अवस्था का पूर्ण चित्र है, यद्यपि वर्तमान समयसे प्रायः उन सबकी गति बदल गई है, तथापि इस स्थानपर उसका वर्णन करना हमारा कर्त्तव्य है । हमारे पाठकोको इसके पढनेसे उस समयके सभी विषय भलीभाँतिसे ज्ञात होजॉयगे । हमारे पाठक आजकलकी अवस्थाके साथ उसका मिलान करके तृप्त होजॉयगे,—इस दीर्घ समयमे मारवाडकी आभ्यन्तारिक अवस्था श्रेष्ठ हुई है या नही, राजाका राजस्व, साधारण वाणिज्य और विचार विभागकी किस प्रकार उन्नति हुई है, यह भी उन्है सरलतासे ज्ञात होजायगा। इस समय हमने इसके सम्बन्धमे किसी प्रकारसे भी मतामतको प्रकाश न करके केवल टाड् साहबकी उक्तिका अविकल अनुवाद करदिया है ।

कर्नल टाड् साहबने मारवाड़ राज्यका इसप्रकार विस्तार लिखा है, "मारवाडकी राजधानी जोधपुर समान्तरालभावसे पश्चिममे गिराप और पूर्वकी ओर आरवलीके शिखरपर स्थित श्यामगढतकके देशके वीचमे स्थित है । इस समान्तराल रेखाका परिमाण अँग्रेजी २७० मील है । मारवाड़का और कोई अंश इतना विस्तारवाला नही है । सिरोहीकी सीमासे मारवाड़की उत्तर सीमातकके देश सभी दीर्घ विस्तारवाले है । इनका परिमाण दोसौ वीस मील है । डीडवाना और जालैरके उतर पूर्वकोनसे सॉचोरकी सीमाके अन्तमे दक्षिण पश्चिम कोनतक पृथ्वीका परिमाण

१ टाड् साहबके ग्रथमें यह १६ वां अध्याय है दो अध्याय वीचमे अनुवादकके संगृहीत हैं ।

साढे तीनसौ मील है । मारवाड़की चार सीमा एं इस प्रकारसे असरल है एवं एक २ अंश इस भावसे भिन्न २ राज्यके भीतर गया है कि त्रिकोण मितिकी सहायताके अतिरिक्त मारवाड़के विस्तारका ठीक निश्चय और पृथ्वीके परिमाण और उसकी सीमाका निर्णय करना असंभव है, इस समय उसका प्रयोजन नहीं है ।"

"केवल लूनी नदीने ही प्रधानतः मरुक्षेत्रकी आकृतिके स्थान २ मे विभिन्न देश परिणत कर दिये है । यह लूनी नदी मारवाड़की पूर्वसीमाके अंत पुष्करसे निकलकर पश्चिमकी ओरको जाकर राज्यको दो भागोमे विभक्त कर उर्वर और अनुर्वर देशकी सीमारूपसे गई है । यद्यपि इस तरंगिनीसे दक्षिण किनारेसे अर्वलीके शिखरतकके विस्तारित भूखंड मारवाड़मे अधिक समृद्धिशाली है, परन्तु वाहिनीके उत्तर प्रान्तके भूखंड क्या अनुर्वर है? यह नहीं कहा जा सकता । पाठक और पाठिका गण ! नागौर देशको वीचमे छोड़ जोधपुर होकर वालोतरा देशतक एक कल्पित रेखा खैंचे तो यह भलीभाँतिसे समझ जॉयगे कि कौन देश उर्वर है, और कौन देश अनुर्वर है । उस रेखाके दक्षिणमे डीडवाणा, नागौर, मेरता, जोधपुर, पाली, सोजत, गोडवाड़, सिवाना, जालौर, भीनमाल और साञ्चोर पड़ते है । इन देशोमेसे वहुतसे उर्वर है उनमे बस्ती घनी है, हमै यह निश्चय है, कि इन सव देशोके प्रति वर्ग-माईलमे ८० मनुष्य वास करते है । उस कल्पित रेखाके उत्तर प्रान्तवर्ती देश इससे भिन्न है, उसको भी उप-विभागमे विभक्त करनेका प्रयोजन है, कारण कि उत्तर पूर्व अंशमे नागौरके कितने ही अंश फलोदी और पोकरण इत्यादि प्रधान २ नगर है इनकी संख्या ३० दरजे है, परन्तु दक्षिण पश्चिमकी सीमाके अन्तमे गोगादेवका थल या गोगाश्यो० बाड़मेर, कोटड़ा, और यह दश दरजेसे कम है और चोहटन मारवाड़की सब मिलाकर जनसंख्याका अनुमान वीस लाख है ।"

कर्नल टाड् साहव इसके सम्वन्धमे लिख गये है कि मारवाडमे कौन २ जाति और कौन २ वर्णके निवासियोकी संख्या कितनी है, "जाट जातिकी संख्या आठ अंशोमेसे पॉच अंश है, राजपूतोकी संख्या दो अंश है और बाकी सब ब्राह्मण है, वाणिज्य व्यवसायी दास है । यदि यह अनुमानिक प्रमाण सत्य है तो राजपूत स्त्री पुरुष और बालकोकी संख्या पॉच लाख होगी, इनमे पचास हजार राजपूत अस्त्र धारणकी सामर्थ्य रखते है ।"

राठौर जातिके चरित्रोके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लिखा है, कि "हमने राठौर जातिके द्वारा अनुष्ठित प्रदर्शित और संसाधित जिन जातियोके चरित्र जानकर जिस घटनाका वर्णन किया है, राठौर जातिके चरित्रोके सम्वन्धमे उसके अतिरिक्त और कुछ कहना केवल वाहुल्यमात्र है । भारतवर्षकी छत्तीस जातियोमे केवल इस राठौर जातिने ऊँचा आसन पाया है । यद्यपि इस समय इस राठौर जातिने अफीमका सेवन करके अपनी जातीयशक्तिकी अवनति की है तथापि प्रवल-

(१) साचोर देशम केवल ब्राह्मण ही निवास करते है, उनका साचोरा ब्राह्मण नाम विख्यात है।

प्रतापशाली यवन शासनके समयमे यह राठौर जाति अपने उसी ऊँचे सन्मानकी अवस्थामे थी, उस यवनशासन शक्तिने जिसप्रकार पग २ पर इसका आग्रह किया था इस समय उसीप्रकार किसी एक उद्दीपक घटनाके उपस्थित होते ही उसी भावसे यह राठौर जाति फिर उद्दीपानलसे उद्दीप्त होकर अपने उसी भावसे जातीयताका तीक्ष्ण तेज दिखा सकती है। सम्राट् औरंगजेबने घोर अत्याचार करके राठौर जातिकी अवनति कर उनकी जातीय शक्तिको घटा दिया था । वर्तमान महाराज मानसिंहके द्वारा वह जातीय शक्ति उससे भी अधिक विध्वंस होगई थी। जब मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमे शान्ति सती अचलभावसे दीर्घकाल तक नृत्य करैगी, तब क्षयको प्राप्त हुई राठौरोकी जनसंख्या फिर भी बढ़जायगी, परन्तु अश्रुतपूर्व प्रतारणा, शठता, षड्यंत्र, स्वेच्छाचार, और प्रत्येक राठौरके परिवारके ऊपर अविश्वास प्रकाश करनेसे राठौरोके जातीय चरित्र एकवार ही दूर होगये तथा जातिका नैतिक वल एकसाथ लोप होगया, राठौरोका वही नैतिक वल, वही जातीय महत्व और वही जातीय पवित्रता वहुत थोडे दिनो पूर्वतक रजवाड़ेके अन्यान्य जातिकी अपेक्षा भलीभांतिसे विदित थी। कई वर्ष पहिले इस मरुक्षेत्रके प्रजारंजन सर्व प्रिय राजा अत्यन्त सरलतासे प्रवल वीरतेजा वाहिनीके संगठन–"एक वापका वेटा पचास हजार तरवार राठौरान" अर्थात् एक पिताका वंश सम्भूत पचाश हजार राठौरोकी सेनाके संग्रह करनेमे समर्थ है । इनमेसे पांच हजार अश्वारोही है। इस समय मानो वह वाक्य चरितार्थ होगया है। उस इकट्ठी हुई आधे लाख राठौर सेनाके अतिरिक्त मारवाड़ेश्वर अपनी सेना और खास भूमिकी वृत्तिभोगी सेना, तथा वेतनभोगी विदेशी सेनाको भी एकत्र कर सकते थे। भारतवर्षमे एकमात्र राठौर अश्वारोही सेना सवसे श्रेष्ठ साहसी और वीर विदित थी। मरुक्षेत्रके कई स्थानोपर विशेष करके वालोतरा और पुष्करमे जो घोडोका मेला होता है, उसमे कच्छ, काठियावाड़, जंगल, और मुलतानसे वहुतसे उत्तम २ घोडे आते है। मारवाड़के पश्चिम सीमाके अन्तमे लूनी नदीके किनारेके कई देशोमे मूल्यवान् अत्यन्त श्रेष्ठ घोड़े उत्पन्न होते है, इनमे राडधड़ाके अश्व प्रथम श्रेणीके गिने जाते है परन्तु गत वीस वर्षसे राजनैतिक शोचनीय घटनाओके कारण उन घोडोके संग्रह करनेके प्रत्येक मार्ग वंद होगए है । राड़धडा, कच्छ और जंगलके अश्व संग्रह करके जो अश्व उत्पन्न कराये जाते थे वह एक साथ ही वंद होगये। सिन्ध नदीके पश्चिमसे जो घोडे लायेजाते थे, सिक्खोके द्वारा उनमे भी व्याघात हुआ है–पहिले मरुक्षेत्रमे जिस समय लूटनेकी वृत्ति भयकर रूपसे प्रचलित थी उस समय अधिकतासे घोडोका प्रयोजन होता था। इस कारण वहुतसे मनुष्य उन घोडोके लानेकी अनेक चेष्टाएं करते थे, और अव वह लूटनेकी रीति एकवार ही दूर होगई है, इस कारण घोड़ोका भी प्रयोजन नही होता, अंग्रेजोके द्वारा जो शांति हुई है यह उसीका फल है।"

जिस समय राज्यमे आत्मविग्रह उपस्थित होनेसे अथवा शत्रुओके कराल त्रासमे मारवाड़की रक्षा करनी कठिन होगई थी, हमने सुना है, कि उस समयमे केवल राठौरोकी सम्प्रदायने ही युद्धभूमिमे चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा किया

था। चांपाके वंशधर यद्यपि उस प्रकारसे बहुत सी सेना इकट्ठी करसकते थे, परन्तु जन्मभूमिकी विशेष विपत्तिके समयके अतिरिक्त अन्य समयमे उस भावसे इकट्ठे नही होसकते थे। चांपावत् नेताने युद्धभूमिमे इस प्रकारसे बहुत सी अश्वारोही सेनाके साथ जाकर राजभक्ति नही दिखाई। राठौर सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको उपभोग करते थे, उसकी आमदनी प्रतिवर्ष पॉचसौ रुपया थी उन्होने एक अश्वोकी सेना और दो पैदल सेना युद्धके समय भेज दी थी। उच्चश्रेणीके सामन्तोकी एक तालिका यथास्थान दीगई है"।

मृत्तिकाके गुणागुण–कृषिकार्य और कृषिजात द्रव्योके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहब लिख गये है, "कि मारवाड़मे निम्नलिखित चार श्रेणीकी मृत्तिका है,–बेकलू चिकनी, पीली, और सफेद, प्रथमोक्त मृत्तिका देशके अधिकांश स्थानोमे पाईजाती है। इसमे मिट्टीका असर बहुत थोड़ा है, देखनेमे छोटे २ अणु और रेतीली है, इसमे केवल बाजरा, मूंग, मटर, तिल, और ज्वार आदि धान्य उत्पन्न होते है। खरबूजा भी होता है। चिकनी मट्टीका वर्ण काला है, यह मट्टी डीडवाना, मैरता, पाली और गोडवाड़के सामन्त शासित देशोमे पाई जातीहै। इसमे गेहूॅ और दूसरे प्रकारके भी धान्य उत्पन्न होते है, पीलीमट्टी हलदीके रंगकी समान है। इसमे वालू मिलाहुआ है, यह विशेषकर बनसर, जोधपुर, जालौर, वालोतरा और दूसरे देशोके किसी किसी स्थानमे पाईजाती है। इसमे जौ नये गेहूं (कोकनागेहूॅ) तम्माखू प्याज और दूसरे शाकभी उत्पन्न होतेहै सफेद रंगकी मट्टीमे खेती नही होती हां घोर वर्षाके पीछे उस भूमिमे कुछ अन्न होताहै, तिजारतके लायक यहां बाजरा कम होताहै"।

"लूनी नदीके दक्षिण किनारे पाली सोजत, और गोडवाड़ इत्यादि स्थानोकी मट्टी पर्वतके शिखरसे निकली हुई छोटी छोटी नदियोके प्रवाहसे उर्वर होजातीहै। उस मट्टीमे बाजरेके सिवाय और सब प्रकारके नाज अधिकतासे उत्पन्न होतेहै। नागौर और मेरता के देशमे कुएके जलसे खेती होती है और उसमे बहुतसे कीमती धान्य उत्पन्न होते है। पश्चिमाचलमे पॉचसौ दश ग्राम है। जालौर, सांचोर, और भीनमालके विस्तारित देश, खालसा अर्थात् मरुक्षेत्रके अधीश्वरोकी स्वयं अधिकारकी खास भूमि है। उस भूमिकी मट्टी अत्यन्त श्रेष्ठ है, विशेष करके आबू शिखरसे निकलीहुई छोटी २ स्रोतस्वती उस भूमिके ऊपर होकर जातीहै। और दक्षिणकी विस्तारित नदियोने इसकी उर्वरताको अधिकतासे बढ़ादिया है, परन्तु यह भूमि जितना धान्य उत्पन्न करनेमे पहिले समर्थ थी, राजा मानसिहके अराजकतामय शासनमे उससे एक तिहाई अशभी उत्पन्न नही होती थी। और सोहराई तथा सिन्धु देशके दस्युओका दल इस खालिसाकी भूमिमे आकर किसानोके यहांसे अधिक धन और धान्य लूटकर लेजातेथे। इस देशकी श्रेष्ठ भूमिमे गेहूं, जौ, धान्य, ज्वार, मूंग और तिल यह अधिकतासे उत्पन्न होते है। और रेतीली जमीनमे केवल बाजरा, मूॅग और तिल ही उत्पन्न होते है। इसी उत्तरदेशके पिशाचोने जो भयंकर मुख फैलाकर हजारो जीवोका प्राणनाश किया था, यदि मारवाड़के सिहासनपर कोई योग्य राजा विराजमान होते, यदि चारोओर सुशासनका प्रचार होता

तो मारवाड़के इसप्रकार धान्य संग्रहकरनेके वहुतसे उपाय थे । जिससे बडी सरलतासे दुर्भिक्ष निवारण होसकताथा । यद्यपि दक्षिणाचलके कुओमे अधिकतासे जल भराहुआ है, परन्तु मेवाड़मे जितने कुए है, यहां उस भॉति नहीं है । पॉचसौ छः नगर और ग्राम नागौरप्रदेशमे है, जो मारवाड़के वड़े राजकुमारके अधिकृत सम्पत्तिरूपसे निर्द्धारित है । उस देशकी यथार्थ अवस्था सुविधाजनक थी परन्तु अत्यन्त प्राचीनकालसे वहां खेतीके सुभीतेके लिये कुए अधिकतासे खुदवाये गये तथा मारवाड़के अन्यान्य देशोकी अपेक्षा वहांके किसानभी अधिकतासे जलकी सहायता पातेथे । ”

“ खनिजपदार्थ—यद्यपि मारवाड़की भूमि उर्वरता रहित है, परन्तु यहां एक वहुमूल्यवान् खानि विराजमान है । उसके लिये भारतके अन्यान्य प्रान्तवर्ती तथा उर्वरदेशके निवासी भी उस खनिज पदार्थको विशेप प्रयोजनीय कहकर उसे ग्रहण करते है । पचभद्रा, डीडवाणा और सॉभरका लवणह्रद धनके आगमनका प्रधान द्वार है, उसी मे से लवण भारतवर्षके सम्पूर्ण स्थानोमे जाताहै । अन्य पक्षमे मारवाड़की पूर्व सीमामे स्थित मकरा नामक स्थानमे मर्मर पत्थर खानसे निकलता है । इस पत्थरके द्वारा ही यवनशासनके समयमे भारतके प्रधान २ नगरोमे वड़े २ ऊँचे महल बनाये गये थे । दिल्ली और आगरेके सारे मकान, मसजिदे, शिवालय, और समाधिमंदिर इत्यादि जो कुछभी वनायाजाता उस सवके लिये मारवाड़से पत्थर लायाजाताथा । मारवाडके महाराजने वहुत थोड़ेही समयमे इस समस्त पत्थरकी खानसे यथेष्ट राजस्व संग्रह करलिया । परन्तु समयके हेर फेरसे यवन शासनकी समान इससमय लाखो रुपये खर्च करके वड़े २ मकान और महल बनवानेका समय जातारहा, इसी कारणसे पहलेकी समान राजस्वके प्राप्त होनेकी इस समय संभावना नही है । जोधपुर और नागौरके निकट श्वेत पत्थरके टुकड़े और कितनी ही खाने है, महल वनानेके कार्यमे विशेप प्रयोजनीय कंकर मारवाड़ के अनेक देशोमे अधिकतासे पायाजाता है । सोजत नामक स्थानमे टीन और सीसा उत्पन्न होते है । पाली नामक स्थानमे फिटकरी, और भीनमाल तथा गुजरातके पासके देशोमे लोहा पायाजाता है । ”

“ शिल्पकौशल—वाणिज्यदृष्टिसे देखनेसे मालूम होता है कि मारवाड़मे शिल्प कौशल (दस्तकारी) श्रेष्ठ नही है । सूतका मोटा वस्त्र और कम्वल वनायेजाते है, यद्यपि इसी देशके सूत और रेशमसे वहुतसा कपड़ा तैयार होता है, परन्तु वह परदेशको नहीं भेजाजाता । अपने देशमे ही खर्च होजाता है । वंदूक, तलवार तथा और भी युद्धके अनेक शस्त्र राजधानीमे और पालीमे वनते है और पालीसे ही एक प्रकारके लोहेके संदूक और यूरूपके टीनके वक्सोकी समान वक्स बनते है । रंधन०कार्यके लिये लोहेका वनाहुआ कडाह और कडाई इत्यादि यहांतक उत्तम वनते है कि इनके वनानेवाले किसी समय भी निश्चिन्त नहीं रहते ” ।

वाणिज्यका प्रधान स्थान—“ समस्त राजपूत राज्य ही एक एक वाणिज्यके प्रधान स्थान है । मेवाड़मे भीलवाड़ा, वीकानेरमे चुरु और जयपुरमे मालपुरा जिस भॉति वाणिज्यके प्रधान स्थान है उसी भांति मारवाड़ोमे पाली भी वाणिज्यका प्रधान स्थान है ।

यह केवल रजवाड़ेके उक्त वाणिज्यप्रधान स्थानोका प्रतिद्वन्दी नही है, यह समस्त रजवाड़ेमे प्रधान वाणिज्यका स्थान विख्यात है। वास्तवमे हम इस वातको अधिकतासे सत्य मानते है, कारण कि भारतवर्षके महाजन तथा वणिक व्यवसाइयोमेसे दश अंशोमेसे नौ अंश इस मरुक्षेत्रमे जैनधर्मका अवलम्वन करते थे। खेतरा नामक वणिक् सम्प्रदायके हजारो मनुष्य वाणिज्यके लिये भारतके अनेक प्रान्तोमे जाते है, और ओसिया नामक स्थानमे जो सम्प्रदाय ओसवाल नामसे विख्यात है उन ओसवाल वणिक् और महाजनोके परिवारकी संख्या प्रायः एक लाख होगी। यह सभी राजपूत रक्तधारी है, परन्तु जिन अँग्रेजोने हिन्दुओके चरित्र और हिन्दूजातिके सम्वन्धमे खोज की है उनको यह वात विदित नहीं है। शतद्रुसे भारतके महासागरतक विस्तारित देशोमेसे यह मारवाडके वणिक् जो धन लाया करते है वह सभी उनके देशसे आता है। जैन समाजमे यह रीति प्रचलित है कि पिताका पैदा किया हुआ धन केवल वड़े पुत्रको ही नही मिलता, अर्थात् पिताके पास जितना धन हो उसमेसे वरावर २ सव पुत्रोंको वॉट दियाजायगा। तव केवल मध्य एशियामे जिस जाति और केल्टर की जूट जातिकी समान सवसे छोटे पुत्रको दूना हिस्सा दियाजाता है। यदि पिताके जीवित रहते ही धन वॉटदियाजाय तो सवसे छोटे पुत्रको इस प्रकार मिलेगा, अर्थात् पिता सव धनका भाग करके सव पुत्रोको समभावसे वॉट दे और अपने जीवन निर्वाहके लिये एक अंश अपने पास रखले, पिताकी मृत्युके पीछे पिताका वह हिस्सा भी छोटे ही पुत्रको मिलेगा। यह नही कहाजासकता कि इसभॉतिसे धनका विभाग समस्त चराचरमे है या नही। परन्तु एकसमय जो इस प्रकारकी रीति वाहुल्यतासे प्रचलित थी उसका प्रत्यक्ष प्रमाण विराजमान है। मारवाड़मे कितनी जाति यां वाणिज्य व्यवसाय करती है, उनके नामकी एक वड़ी तालिका दीजाय तो एक वड़ा अध्याय होजायगा एक जैनियोके पुरोहित जो कई वर्षोंसे विशेष परिश्रम करके असियॉ तालिकाको वना रहेथे, उन्होने अठारहसौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नामोको संग्रहकर पीछे वड़े२ दूरके देशोसे और भी डेढ़सौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नामप्राप्तकर शेषमे तालिकाको समाप्त करनेमे संतोष न प्राप्तकर इस कार्यको अधूरा ही छोड़दिया"।

इस स्थानपर कर्नल टाड् साहव मारवाड़के वाणिज्यप्रधान पाली नगरके सम्वन्धमे वर्णन करगयेहै, " कि पाली पूर्व और पश्चिमके देशोमे सर्वप्रधान वाणिज्यका स्थान था, यहां भारतवर्ष, कश्मीर और चीनसे वाणिज्यके द्रव्य आतेथे, और उन सवके पलटेमे यूरूप, अफरीका, फारिस और अन्यान्य देशोको वाणिज्यद्रव्य लेजाते थे। कच्छ और गुजरातसे हाथीदॉत, नॉवा, खर्ज्जूर, गोद सुहागा, नारियल, वनात, रेशमी और पशमीनेके वस्त्र, चंदनकाष्ट, कपूर, रंग, औषध, काफी, मसाला, गंधक इत्यादि वहुतसे पदार्थ छकड़ोमें भरकर यहां लाये जाते थे, और उन सवके वदलेमे यहांसे छीटके वस्त्र, सूखेफल, जीरा, मुलतानी हींग, चीनी, सोडा, और मासवेकी अफीम, पसमीनेके वस्त्र, श्रेष्ट वस्त्र, क्षार, साल, रंगेहुए कम्वल, वस्त्र और इस देशका नमक दूसरे देशोको जाता था"।

"सुईवाह सांचौर भीनमाल और जालौर होताहुआ वाणिज्यद्रव्य छकड़ोमे भरकर पालीमे आता था, राजपूत जातिमे जिन कवियोको परमपूजनीय माना है, वही सैकड़ो वाणिज्यके छकड़ोके साथ रक्षक होकर जाते थे। इन कवियोके ऊपर सर्वसाधारणकी जैसी भक्ति थी, जैसा इनका मान और इनसे भय माना जाता था इतना और किसीका नही था, इनके छकड़ोके साथमे होनेसे दस्युदल भी वाणिज्य द्रव्योके लूटनेका साहस न करसकते थे। यद्यपि यह चारणगण तलवार तथा ढाल लेकर अपने बाहुवलसे वाणिज्यके द्रव्योकी रक्षा करनेसे असमर्थ थे, परन्तु यह अपने शरीरके आघातसे तस्करोको इस भांति नरकका भय और परलोकका भय दिखाते कि जिससे कुसंस्कारके भयसे लुटेरे आक्रमण नही करसकते थे। यदि कोई तस्कर वाणिज्यके छकड़ेपर आक्रमण करता तो यह कवि ब्राह्मण भाटोकी समान उसी तस्करके सम्मुख सबसे पहले अपनी देहके एक स्थानपर छुरी मारलेते यदि तस्कर इससे भी शान्त न होते तब अतमे अपनी हत्या करते। पीछे स्त्री पुत्र परिवार सभी अपने प्राण त्यागनेका तस्करोको महा भय दिखाते थे—और कहदेते कि इस नर हत्याके पापका भयंकर फल तस्करोको अवश्य भोगना होगा। हमारा यह शाप किसी समय मिथ्या नही होगा। इसी कारणसे वाणिज्यके शकटोके साथ कवि जाया करते थे, इसीसे तस्कर उन छकडोपर आक्रमण वा लूट नही करसकते थे।" इतिहास लेखक टाड् साहव पीछे लिखगये है "कि गत बीस वर्षसे यह विस्तारित वाणिज्यकार्य एकवार ही लोप होगया था। यद्यपि इस समय भारतवर्षके चारोओर शांति विराजमान है परन्तु उस समय समस्त भारतमे लूटनेकी रीति भयंकरतासे प्रचलित थी पर उस समय वर्तमान समयकी अपेक्षा यह वाणिज्यका स्रोत दशगुणा अधिक बह रहा था। बहुतसे मनुष्य यद्यपि इस बातको असत्य मानेगे परन्तु यह बात सर्वथा सत्य है। वर्तमान समयमे एक चेटिया वाणिज्यसे मारवाड़मे जैसी हानि पहुँची है पर्वती सराई और दुर्दान्त बर्बटियो के तथा दस्युओके आक्रमणसे भी वैसी हानि नही पहुँची थी, यह ठीक है कि दस्युओके भाले और तलवारोसे चारणगण द्रव्यवाही शकटोकी रक्षा करके अपना रक्तपात करते थे, परन्तु वर्तमान समयमे इस प्रकारका रक्तपात न करके उस रक्तको सुखादिया है, ईस्टइण्डियाकम्पनीने उस समय अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटिया करके भारतका लवण और अफीम जिससे भारतसे अन्यत्र पूर्णरूपसे न जासके और विदेशको चालान न हो इस कारण उसपर विशेष महसूल लगा दिया था इसी कारणसे मारवाड की अफीम और लवणके व्यापारमे बहुत विघ्न उत्पन्न हुआ, और यह दोनो वाणिज्य धीरे धीरे बहुत न्यून होगये। इस्टइण्डियाकम्पनीने अपने प्रयोजन सिद्ध करनेको राजाओके राजस्वका यह अनिष्ट किया, उदारनीति टाड्साहवने इस कार्यका भलीभाँतिसे खंडन किया है।

मेलेके सम्बन्धमे साधू टाड् साहव लिखते है, इस देशमे प्रत्येक वर्षमे दो मेले हुआ करते है, एक तो मूँडवा नामक स्थानमे और दूसरा बालोतरामे। पहले मेलेमे तो साधारण हाथी, घोड़े, गौ आदि पशु वेचे जाते थे। इसके अतिरिक्त भारतके और भी

अनेक देशोसे वणिक् और व्यवसायी वहांके योग्य बहुत प्रकारके पदार्थ लाते है। और पासके राज्योमे वह वणिक् उन सबको बेच जाते है। यह मेला प्रथम माघके महीनेसे प्रारंभ होकर छः सप्ताहतक रहता है। दूसरे मेलेमे उक्त विधिसे सब प्रकारके पशु लायेजाते है और भी अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्योके आनेसे पाली नगरका वाणिज्यकार्य बड़ी श्रेष्ठतासे होता है। इस मेलेमे भारतके अनेक स्थानोसे बहुतसे मनुष्य आते है परन्तु इस समय उस श्रेष्ठताका चिह्न एकवार ही लुप्त होगया है।

मारवाड़के उस समयके विचार विभागके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहब लिखते है, "कि इस राठौर समाजमे विचारकार्य बड़ा ही शिथिल देखा जाता है। यदि कोई मनुष्य राजद्रोह तथा राजनैतिक अपराध करता तो उसीको दंड दिया जाता था। और राजनैतिक अपराधके अतिरिक्त अन्य किसी अपराधमे प्राणदड नही किया जाता था। इस सामन्त शासन प्रणाली प्रचलित समाजमे वह राजनैतिक अपराध करनेवाला मनुष्य अपराधी रूपसे गिनाजाता था, और महाराज अपनी राजशक्तिसे उस अपराधीको दंड देते थे। परन्तु कोई मनुष्य यदि किसी सामन्तके विरुद्ध अथवा किसी मनुष्यके विरुद्ध उस प्रकारका अपराध करता तो उसको सहसा क्षमा न करते बरन् धीरेधीरे दयाप्रकाश करते थे। अधिक क्या कहे, यदि कोई मनुष्य किसी मनुष्यको जानसे मारदेता तो उसके बदलेमे शारीरिक दंड दिया जाता, कारागार दंड अथवा उसकी समस्त धनसम्पत्तिको महाराज अपने हस्तगत करलेते, या उसको देशसे निकालदेते। चोर इत्यादि सामान्य अपराधीको अर्थ दंड और कारागारमे जानेका दंड दियाजाता और उसके भोजन वसनका खर्च उसी चोरकी संपत्तिसे वसूलकियाजाता था। यदि चोर उस हानिके पूर्ण करनेमे असमर्थ होता तो उसको शारीरिक दंड दियाजाता, तथा उस समयमे मारवाड़के खजानेकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी और उसी कारणवश ऐसा होता था। राजा विजयसिहकी मृत्युके पीछे विचारासन शून्य होगया था, यद्यपि महाराज विजयसिंह अपराधियोपर विशेष दया करते थे, परन्तु प्रजा उनके सुविचारकी आजतक मुक्तकंठसे प्रशंसा कर रही है। उन्होने किसी समय भी किसी मनुष्यको प्राणदण्ड देनेकी आज्ञा वा उसमे अपनी संमति नही दी। वह कैदियोके ऊपर इतने दयालु थे कि आजतक यह बात प्रसिद्ध है और बहुतसे मनुष्य कहते है कि "हमै घरमे राबड़ी भी खानेको नही मिलती, परन्तु कारागारमे लड्डू खानेको मिलते है" जयपुरके समान इस जोधपुरके कारागारवासी अपराधी नगरवासी दानियोकी सहायतासे पालेजाते थे। यह बात सभीको विदित है, शेषोक्त स्थानमे वणिक् श्रेणी विशेष करके जैनधर्मका अवलम्बन करनेवाले यदि दयाकरके कैदियोको भोजन न देते तो वे वंधुए अनाहारसे मरजांय, धनवान व्यापारी साधारण कैदियोको भोजन देते है इस कारण स्वय महाराज उनके भोजनके लिये अपना धन खर्च नही करते, यदि दे तो काराध्यक्ष कैदियोके लिये राजाके यहांसे धन लेकर अपने पास रख लेगे। एकवार किसीको कारागारमे भेजकर फिर उसकी कोई खबर नही लेता। इसी कारण कैदियोके कष्टकी सीमा नही रहती थी। परन्तु इस महाकष्टको पाकर कैदियोकी मुक्तिकी दूसरी प्रकारसे

आशा है। प्रत्येक सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण, नवीन राजकुमारोंका जन्म और राजाओंके अभिषेकके समयमे चिरप्रचलित रीतिके अनुसार कैदियोंको छोड़ाजाताहै । कैदीलोग इसी आशासे इस शुभ समयके आनेकी वाट देखते रहते है "।

माहात्मा टाड् साहव इस स्थानपर " सोगन " नामक एक प्रकारकी विचाररीतिका उल्लेख करगयेहै, " इस सोगन विचारका यथार्थ अर्थ निरपराधियोंके प्रमाणके लिये परीक्षादेना है । यह रीति राजपूतानेके अन्यान्य राजाओकी समान आजतक मारवाड़में भी प्रचलित है, यद्यपि यह रीति इस समय अधिकतासे अचल होगई है, परन्तु यहांके निवासियोका भगवान्‌के प्रति इस समय भी विश्वास नही हो ऐसा नही पर समाजकी अवस्था और नगरवासियोके मनका भाव वदलजानेसे सभी इस भाँति परीक्षा देनेमे अग्रसर नही होते। एकमात्र कोटाके जालिमसिह ही इस समयकी रीतिके अनुसार अपराधियोकी परीक्षा लेते है, परन्तु वह भी हाड़ोतीकी डायनोके प्रति इस समय उदासीन होगयेहै । डायनोकी परीक्षा केवल जलसे ही लीजाती है। इसप्रकार परीक्षाकी रीति-इसप्रकारसे अपराधियोंके अपराधको निर्णय करनेकी प्रथा चिरकालसे भारतवर्षमे प्रचलित थी। रावण सीताजीको हरकर लेगयाथा, इस कारण महारानी सीताजी अपने सतीत्व की रक्षा करसकी है अथवा नहीं इसका निर्णय करनेको भगवान रामचंद्रजीने उनकी अग्निसे परीक्षा लीथी । जल और अग्निके द्वारा परीक्षाकी समान और भी एक प्रकार का उपाय है अर्थात् अपराधी मनुष्यके हाथपर गरम तेल डालकर परीक्षा लीजाती थी परन्तु यहां इस वातका उल्लेख करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है–कि यह नही था, किसी भी मुकदमेमे वादी और प्रतिवादी इसी भाँतिकी परीक्षा देनेकी इच्छा प्रगट करतेहो वरन जव पचायतसे विचार नही होसका तथा अन्य किसी प्रकारसे भी विचार करनेका सुवीता नही मिलता तव सवके अंतमे यह उपाय कियाजाता था। यदि अपराधीको न्याय विचार न प्राप्त होता अथवा उसे घूंस देकर गुरुदंडसे छुटकारा पानेमे समर्थ न होता तो सवके पीछे इस सोगन परीक्षाके देनेकी इच्छा करता था " ।

पंचायतकी रीतिके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहव लिखते है कि "दीवानीके सभी मुकदमोका विचार पंचायतके द्वारा होता है । यदि कोई उस पंचायतके विचारसे संतुष्ट न होकर राजाके समीप फिर उसका विचार होनेकी प्रार्थना करसकता है; परन्तु इस प्रकारके विचारकी प्रार्थना करनेसे समस्त पंचायतकी सम्मति लेनी होती है और राजाके समीप विचार होनेके पहले उसके निमित्त नियमित रुपया देनेकी व्यवस्था है, राज्यमे ऐसे मुकद्दमोकी संख्या सरलतासे नही वढ़सक्ती । इस पंचायतके नियोग की रीति अत्यन्त सरल है। वादीको सवसे पहले जिलेके हाकिम अर्थात् वह जिस ग्राममे निवास करता है उस ग्रामके पटेलके समीप अभियोग उपस्थित करना होगा। इसके पीछे वादी और प्रतिवादी अपनी २ इच्छानुसार एक २ दो २ ग्रामोका नाम उल्लेख करदे, तव उसी ग्राममे पंचायत की जायगी । जिस ग्रामका उल्लेख कियागया है, उसी ग्रामके पटेलके समीप समाचार भेजा जायगा, पटेल अपने २ पटवारियोको लेकर अथाई अर्थात् ग्राम विचारागारमे इकट्ठे होते है। पीछे साक्षियोको वुलाकर उनसे शपथ

कराकर साक्षी लेते है। साक्षीगण "गादीकी आन" अर्थात् राजाके नामसे शपथ करते है। हिरोडाटस इस बातको लिखगया है कि प्राचीन सीदियन भी इसी प्रकारसे शपथ करते थे। परन्तु केवल राजपूत ही राजाका नाम लेकर शपथ करनेके अधिकारी है अन्यान्य जातिके पक्षमे अपराधियोके शपथकी व्यवस्था उनके धर्मानुसार है। विचार कार्य होजानेके पीछे पंचायतकी राय देनेसे हाकिम उसपर अपनी मुहर लगा देते है, और उसी सम्मतिके अनुसार कार्य करते है, अथवा वादी या प्रतिवादीके विरुद्धमे राजाके यहां फिर विचार होनेकी प्रार्थना कीजाती है तो उसीके योग्य कार्य करते है। यह प्रमाणित होगया है कि राजपूतानेमे प्राचीन सुखशांतिके समयमे प्रत्येक मुकदमा इसी प्रकारकी सरल रीतिसे निवट जाता था, उसके विरुद्धमे फिर कोई भी कुछ न बोल सकता था।"

राजस्वकी रीतिके सम्बन्धमे साधू टाड् साहब वर्णन करते है कि "मारवाड़मे राजस्व अनेक उपायोसे संग्रह होता है, उनमेसे यह चार प्रधान हैं।

१–खालसा वा राजाकी स्वयं अधिकारी भूमिका कर।

२–लवण ह्रद।

३–आमदरफ्ती वाणिज्य शुल्क।

४–हासिल नामक नानाविधिका कर।

यद्यपि अर्द्ध शताब्दीके पहले राजा विजयसिहके शासन समयमे मारवाड़के राजस्वका सोलहलाख रुपया संग्रह होता था और उसका अर्द्धांश एकमात्र लवणह्रदसे प्राप्त होजाता था, परन्तु वर्तमान समयमे मारवाड़पतिका समस्त राजस्व दशलाख रुपयेसे अधिक नही है। सामन्तोके अधिकारी देशोको मिलाकर वार्षिक राजस्व पचास लाख रुपयेका अनुमान होता है। परन्तु इतना संदेह है कि वर्तमान समयमे उससे आधा रुपया संग्रह होता है या नहीं। शामन्तोकी जो सेना है उसमे पैदलके अतिरिक्त अश्वारोही सेनाकी संख्या पांच हजार है। जिन सामन्तोकी जितने रुपयेकी आमदनी है उनमेसे प्रत्येक वर्षमे हजार रुपयेपर एकजन अश्वारोही और दो पैदलोकी सेना रखनी पड़ती है" सामन्त शासनकी रीतिका नियम ही इस प्रकार है, यदि किसी सामन्तकी प्रत्येक वर्षमे दश हजार रुपयेकी आमदनी है तो दश अश्वारोही और बीस पैदलोकी सेना उस आमदनीसे रख सकता है। युद्धके समयमे वा अन्य किसी समयमे राजाकी आज्ञानुसार उनको उस सेना दलके साथ राजाकी आज्ञा पालन करनी होती है।

"मारवाड़पतिकी जो ठीक आमदनी दश लाख रुपया निश्चय हुई है, यह वह है जो खजानेमे रक्खी जाती है। राजदरबारके कर्मचारीगण राजाकी खास भूमिके जिस २ अंशको वृत्तिस्वरूपसे भोग करते है, उस भूमिका राजस्व इसके साथ नही लिया जासकता।" वह दशलाख रुपयेमे सम्मिलित नही है।

---

१ मारवाड़मे यह दस्तूर है कि जागीरदार लोग एक हजारकी जागीरपर एक घोड़ा पॉचसौं की जागीरपर एक पैदल और सात सौकी जागीरपर एक ऊंट राजसेवामें देते हैं।

" प्रजाके पाससे भिन्न प्रकारका राजस्व लिया जाता है। सस्यका कर जो भारतवर्षमे चिरकालसे प्रचलित है उसका नाम वटाई अर्थात् विभागकर है । समान अंशका आधा धान्य महाराजको दिया जाता है और शेष आधा भाग किसानोको मिलजाता है । प्राचीन कालसे राजा चार अंशोमेसे एक अंश वा छः अंशोमे का एक अंश धान्य लेते थे, इस समय उसके बदलेमे समान अंश ग्रहण किया जाताहै । जितना धान्य किसानोके क्षेत्रमे उत्पन्न होता है इस प्रकारसे उसका अर्द्धांश राजाको बिनादिये राजाकी ओरके सब पहरेवाले उस खेतकी रखवाली करते है । और जो धान्यका विभाग करते है उनका खर्चभी यही देते है । दश मन धान्यपर दो रुपया लिया जाता है । उस रुपयेमेसे पहरीका वेतन और कोतवारी अर्थात् सस्य विभागकारीका वेतन देकर वाकी जो कुछ बचताहै, ग्रामके पटेल और पटवारी उसका भाग करलेते है। महाराजके घोड़े और गौ आदि पशुओके भोजनके निमित्त प्रत्येक किसान से एक २ गाडी चरी वा ज्वार ग्रहण करते है । परन्तु इस समय उसके बदलेमे इस हिसाबसे प्रत्येक किसानसे एक २ रुपया लिया जाता है । जिस समय काल पडनेकी संभावना होती है, उस समय रुपया नही लियाजाता, कड़वी (चरी) लीजाती है । पटवारी और पटेल इत्यादिको अन्यान्य कर्मचारियोके समान व्यय निर्वाहके लिये किसान और राजा दोनोके अंशोमेसे धान्य दियाजाता है । प्रति मनभर धान्यमे से एक पावसेर अथवा जितना धान्य उत्पन्न हो उसके अस्सी अंशोमेका एक अंश मिलताहै । पटवारी अथवा सामन्तोके अधीनके किसान खालसा अर्थात् राजाकी निज अधिकारभुक्त- भूमिके किसानोंकी अपेक्षा बहुत सुभीतेसे है, कारण कि उनके यहां जितना धान्य उत्पन्न होता है उसके पॉचवे अंशमेसे केवल दो अंश ग्रहण करतेहै और इसके अतिरिक्त किसान जितनी पृथ्वीमे खेती करते है, उसमे प्रति एक सौ बीघा भूमिके ऊपर वह सामन्तगण वार्षिक बारह रुपया करस्वरूपसे ग्रहण करते है । किसान लोग बड़ी सरलतासे इस सामान्य करको आनंदित होकर देदेते है । "

किसानोसे जो धान्यका कर लियाजाता है उसके अतिरिक्त मारवाड़के प्रचलित अन्यान्य कर आदिके सम्बन्धमे कर्नल टाड साहब लिखते है, " कि सम्पूर्ण मारवाड़में जितनी अवस्थाके स्त्री पुरुष निवास करते है उनमेसे सभीसे एक २ रुपया कर लिया- जाता है " यह " अंगकर " नामसे विदित है ।

" वासमारी नामक पशुके प्रति भी प्रचलित एक प्रकारका कर है । प्रत्येक बकरी और भैसके ऊपर -) आना, प्रत्येक भैसेके ऊपर ॥) आना और प्रत्येक ऊंटके ऊपर तीन रुपया कर लियाजाता है । "

" किवाडो नामक कर सबकी अपेक्षा उत्पीड़क है । किवाड़ शब्दका अर्थ द्वार है । महाराज विजयसिहने सबसे पहले इस करको चलाया था । उनके शासनकी शेष अवस्थामे मारवाडके सभी सामन्त विद्रोही होकर पालीमे इकट्ठे हुए, और उन्होने महाराजको सिहासनसे रहित करनेके लिये षड्यंत्रका विस्तार किया, इस समय महा- राज विजयसिह उनको धीरज देकर हस्तगत करनेके लिये वहां गये । परन्तु सामन्तो

ने किसी प्रकारसे भी उनकी अनुगत्यता स्वीकार न की। उन्होने वहांसे लौटकर जोधपुरके नगर द्वारपर आकर देखा कि नगरमे जानेका कोई उपाय नहीं है, भीमसिहने सिहासनपर अभिषिक्त होकर नगरका द्वार बंद करदिया है। तव उन्होने घोर विपत्ति मे पड़कर सेना संग्रह करनेके निमित्त प्रजासे धनकी सहायता माँगी। प्रजाने प्रत्येक घरसे तीन ३ रुपया देनेका प्रस्ताव किया और शीघ्रही वह सव रुपया इकट्ठा भी करदिया। परन्तु जिस प्रजाने भीमसिहका पक्ष लिया था उसको दंडित करनेके लिये अथवा राजस्वको वढ़ानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, महाराजने उस समय एकवार तो इस भाँतिसे सहायता लेकर फिर उसको चिरस्थाई करस्वरूपसे प्रचलित करदिया। प्रजा उसी दिनसे वरावर कर देती आती थी। परन्तु जिस समय महाराज मानसिहके विरुद्ध षड्यंत्र फैला, और पठानोने महाराजकी खास भूमिपर अधिकार करलिया, उस समय महाराज मानसिहने उस तीन रुपयेके स्थानमे दश रुपया कर नियत करलिया। परन्तु यह कर समभावसे सवसे नहीं लिया जाता। सवसे पहले प्रत्येक नगर और ग्राममे जितने घर होते है, उनकी गिनती की जाती है इसके पीछे घरके अध्यक्षोकी जिसकी जैसी अवस्था है उसीके अनुसार उससे कर ग्रहण कियाजाता है, दरिद्री दो रुपया कर दे तो धनीको वीस रुपये देने होगे। महाराज कृपा करके मुक्तिदान न करेगे तो सामन्तो के अधिकारके भी किसी देशको कर देनेसे छुटकारा नही मिलैगा"।

वाणिज्य शुल्कके सम्वन्धमे महात्मा टाड् साहव अतीत वर्षोंकी सूचीको उद्धृत करके वर्णन करगये है, "मारवाडमे वाणिज्य करका कितना रुपया दिया जाता है, उसकी अनुमान की हुई सूचीको नीचे लिखते है, इससे हमारे पाठक अवश्यही समझ लेगे कि इतना धन पूर्वकालमे शुल्कस्वरूपसे संग्रह होताथा और इस समय नही होसकता इससे परिणाम निकलसकता है कि सभी देशोमे वाणिज्यकी व्यवस्थाके अनुसार यह शुल्क घटता वढ़ता रहता है, परन्तु जिन देशोमे लूट अत्याचार, पीड़न, विजातियोका आक्रमण और दुर्भिक्ष हो उस समयमे उसकी कैसी अवस्था होसकती है, इसका विचार वड़ी सरलतासे होसकता है। प्राचीन राजकीय पुस्तकके हिसावसे यह तालिका उद्धृत कीगई है। मारवाड़की उन्नतिकी अवस्थामे इतना वाणिज्य शुल्क संग्रह होताथा, इसके सम्वन्धमे संदेह करनेका कुछ भी प्रयोजन नही है।

निम्न लिखित स्थानोसे नीचे लिखाहुआ वाणिज्य शुल्क अदा कियाजाताथा:-

जोधपुर ...	७६००० रुपया।
नागौर ...	७५००० "
डीडवाणा ...	१०००० "
परवतसर ...	४४००० "
मेरता ...	११००० "
कोलिया ...	५००० "
जालौर ...	२५०००

पाली	७५००० रुपया।
जेसोल और बालोतराकामेला	४१००० ”
भीनमाल	२१००० ”
सांचोर	६००० ”
फलोदी	४१००० ”
	जोड़ ४३०००० रुपया।

ढाणी अथवा जिलाकलेक्टर प्रधान २ नगरोमे जाकर अपनी नियत की हुई वेतनको पाते है। और उनके अधीनके नीची श्रेणीके कर्मचारी जितना महसूल मिलाकर देते है उनमेसे सौ रुपये पर कुछ पाते है। यह वाणिज्य महसूल धान्यके ऊपर भी प्रचलित है, परदेशसे जितनी आमदनी होती है उसके ऊपर भी कर है। मारवाड़के एक जिलेसे दूसरे जिलेमे जो धान्यकी आमदरफ्त होती है उसके ऊपर भी महसूल लियाजाता है। ”

लवणके करके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहव लिखते है “ वाणिज्य शुल्क और भूमिका राजस्व जिस प्रकार घटगया है। लवण ह्रदकी आमदनी भी उसी प्रकार पहिलेसे वहुत कम होगई है तथापि इसकी एक बँधी हुई आमदनी है। इससे पहले कितना धन आता था उसकी सूची नीचे प्रकाश करते है,—

पचभद्रा	२००००० रुपया।
फलोदी	१००००० ”
डीडवाणा	११५००० ”
सांभर	२००००० ”
नांवा	१००००० ”
	जोड़—७१५००० रुपया।

“ इस आमदनीके विभागमे आजतक हजारो श्रमजीवी तथा लाखो गौ आदि पशुओका पालन होता है। बंजारा नामकी एक श्रेणीके ऊपर इस लवणके कार्यका भार सौपा गया है । इनमेसे एक २ जनके अधीनमे इस लवणको लेजानेके लिये ४०००० वैल नियुक्त रहते है। सिन्धके किनारेसे लगाकर गंगाजीके किनारे तक भारत-वर्षके सभी स्थानोमें यह लवण जाता है और यह सर्वसाधारणमे “सांभर—लवण” नामसे विदित है। यद्यपि भिन्न ह्रदका लवण भिन्न प्रकार है परन्तु लूनी नदीके वाहर देशके पचभद्राका लवण सवसे श्रेष्ठ है। ह्रदके भीतरी भागसे यह लवण स्वाभाविक भीतर से उठता है।

उस भूमिमे क्यारिये वनाते है, उसपर नकुलकी घास डाल देते है जिसके कारणसे लवण और भी शीघ्रतासे ऊपरको उठता है और फिर इसके द्वारा ह्रदकी स्वाभाविक तरंगमालाके उठनेसे यह घास सरलतासे दूर होजाती है। ह्रदके वीचसे इसभाँति लवणके उठते ही समस्त लवणको तौलकर एक स्थानपर ढेर लगादिया जाता है। और क्षार विशिष्ट, पत्ते तिनके और सज्जी इत्यादि उसके ऊपर रखकर उसमें

अग्नि लगा दीजाती है। इस प्रकारसे उस खारके तापसे लवण ऐसा जम जाता है कि जल और वायुके द्वारा उसका कोई अनिष्ट नही होसकता "।

इतिहासवेत्ता टाड् साहवने इससे पीछे मारवाड़के अत्यन्त प्राचीन कालके राजस्वके सम्वन्धमे एक सूचीको उद्धत करके लिखा है "कि वहुत पुरानी हिसावकी पुस्तकमे मारवाड़की आमदनीका सव मिलाकर प्रायः तीसलाख रुपयेका उल्लेख पायाजाता है, हम उसके सम्वन्धमे इस स्थानपर फिर व्याख्या करनेकी अभिलापा करते है। किस २ अंशका कितना अतिरिक्त परिमाण धरा गया है इस समय उसका वर्णन करना कुछ सहज वात नहीं है। कारण कि उसमे अंतर आगया है।

१–खालसा अर्थात् नरपतिके निज अधिकारी १४८४ ग्राम और नगरोकी आमदनी।	....	१५००००० रुपया।
२–वाणिज्यशुल्क	....	४३०००० "
३–लवणह्रद	...	७१५००० "
४–हासिल अर्थात् अन्यान्य कर जो सव समय ठीक स्थिर नही होसक्ता।	....	३००००० "
	जोड़	२९४५००० रुपया।
सामन्त और मंत्री समाजकी आमदनी	...	५०००००० रुपया।
	कुलजोड़	७९४५००० रुपया।

इस प्रकारसे देखा जाता है कि " चिरकालसे मारवाड़पतिको निजका तथा अधीनके सामन्तोका सव मिलाकर राजकीय कर प्रायः अस्सीलाख रुपया है। यद्यपि हमे इस विपयमे संदेह है कि आजकल इसका अर्द्धांश भी नहीं आता पर इसमें संदेह नही कि मारवाड़के प्राचीन मंत्री वंशोमे तथा संघी परिवारमे वहुतसा धन है वह लोग अत्यन्त धनवान् गिने जाते है, उनका समस्त धन विदेशीय नगरोसे प्राप्त हुआ है, इस देशके मनुष्य स्वभावसे ही उस समस्त धनको गुप्तभावसे रखते हैं, रुपयेसे लेनदेनका व्यवहार भी नही करते, इसी लिये धनकी वृद्धि भी नहीं होती। जिस समय महाराज विजयसिंहने नागौरके कितने ही महलोको तुड़वा दिया था उस समय उनको उनमेसे वहुत धन मिला था। "

मारवाड़के उस समयकी सेना वलके सम्वन्धमे अंतमे कर्नल टाड् साहव लिख गये है, " कि इस समय केवल राठौर जातिके युद्धके वलके सम्वन्धमे वर्णन करना शेप रहा है। उनकी आमदनीकी घटती वढ़तीके साथ ही साथ सेनाकी भी घटती वढ़ती होती रहती है। उपद्रवी सामन्तोको दमन करनेके लिये मारवाड़के महाराजने एक सम्प्रदाय वेतन भोगी सेना रक्खी थी। इस सेनामे प्रायः रुहेले और अफगानी पैदल अधिक थे, वह सभी वंदूकधारी थे। उनके साथमे तोपे भी थी, वे युद्ध विद्यामें विशेष पारदर्शी थे। इस समय वे लोग असीम साहसी राठौर अश्वारोहियोके सम्मुख प्रति द्वन्दी होगये थे। कई वर्षके वीत जानेपर महाराज मानसिंहने इस प्रकार साढ़े तीन हजार पैदल पंद्रहसौ अश्वारोही और २५ तोपैं इस सेनामे नियत की थी। पानीपतके

एक निवासी हिन्दालखांको उस सेनाका नायक किया था। विजयसिंहके शासन समयसे वह मनुष्य मारवाड़ महाराज वंशके साथ मिलगया था, राजाके यहाँ उसकी वात अधिक चलती थी, उसके साथ राजाकी मित्रता होगई थी महाराज मानसिंह उसको वड़े सम्मानके साथ " काका " कहकर पुकारा करते थे। इस वेतनभोगी सेनाके अतिरिक्त मारवाड़मे एक और भी योधाओका दल था, उसका नाम विष्णुस्वामी था और कायमदास नामके एक मनुष्यको उनके सेनापति पदपर वरण किया था। इस सेनामे सातसौ पैदल थे, तीनसौ अश्वारोही और एकदल धनुर्धारियोका था। यह धनुर्धारी धनुप वाण लेकर युद्ध किया करते थे। विलायतमे वारूदके निर्माण होनेके आधी शताव्दी पहले भारतवर्षमे इस प्राचीन धनुष वाणका व्यवहार होता था। एक समयमे राजाका एक दल विदेशीय सेनामे नियुक्त था, अथवा वह लोग उनके अधीनमे नियुक्त थे, उनकी संख्या ग्यारह हजार थी। इसमेसे आधी सेना अर्थात् दो हजार अश्वारोही थी, पचास तोपे और एकदल धनुपधारियोका था। मासिक वेतनके अतिरिक्त भिन्न २ सेनादलके प्रधान २ नेताओको भूवृत्ति दीजातीथी, जिसकारणसे मारवाड़के सामन्त अत्यन्त उद्धत होगये थे, और राजाके साथ उनका घोर झगड़ा हुआ था, इससे पहले उसका वर्णन करचुके है। उन असंतुष्ट हुए सामन्तोको दमन करनेके लिये यह अतिरिक्त सेना नियुक्त की थी, इसीसे राज्यका नैतिक वल हीन होगया था, और देशके विध्वंस होनेकी भी वारी आगई थी। सामन्तोके साथ घोर झगड़ा होनेके कारण इसी अतिरिक्त सेनाका नियोग कियाथा। इसीसे परस्परका विश्वास नष्ट होगया। "

साधू टाड् सावकी इस कथाको हम पूर्ण सत्यरूपसे स्वीकार करते है। राजपूत जातिके पतनके समयमे केवल मारवाड़ ही नही वरन रजवाड़ेके सभी राजपूत राजाओ के साथ अधीनके सामन्तोकी विवादकी अग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित होगई थी। हम देखते है कि राजपूत जातिके पतनके वहुत पहले सभी सामन्त अत्यन्त उद्धत हो राजाके विरुद्धमे अस्त्र धारण करनेमे कुछ भी भयभीत नही हुए थे, परन्तु इस प्रकारका झगड़ा सभी सामन्तोने नही कियाथा, वरन उनमेसे ऐसे भी बहुत थे कि जिन्होने उन विद्रोही सामन्तोको दमन करनेके लिये राजाकी सहायताभी की थी। सारांश यह है कि यह सामन्त शासनकी रीति जिस देशमे प्रचलित थी, उस देशके राजा यदि स्वयं वलशाली ओर नीतिज्ञ होते तो उनके अधीनके सामन्त इस प्रकारसे विद्रोहकी आगको कभी प्रज्वलित न करसकते। राजाके ही वलहीन होनेसे सामर्थ्यवान् सामन्त सभी देशोमे सरलतासे अपनी शक्तिको प्रवल करनेके लिये अग्रसर होते है। रजवाड़ेके सामन्तोने हमारी इस उक्तिको समर्थन किया है। गवनमेण्टके शासनमे आजतक एक भी सामन्त राजाके विरुद्ध खड़े होने के लिये समर्थ न होसका।

उपसंहारमे साधू टाड् साहव उस समयकी सामन्त श्रेणीके सम्वन्धमे लिखते हैं, " मेवाड़के सामन्तोकी संख्या सोलह थी और जयपुरके सामन्तोकी संख्या वारह थी। मारवाड़की प्रथम श्रेणीकी संख्यामे आठजने थे। नीचे सूचीमे उनके नाम लिखते है।

उनके नाम, उनकी सम्प्रदायके नाम, निवास स्थानके नाम और उनकी कितनी आमदनी थी उसका वर्णन भी नीचे करते है। उन्होंने राजाकी सहायताके लिये कितनी सेना दी थी, उससे वह उनकी आमदनीका निश्चय कर सकते है, वह लोग प्रति पाँचसौ रुपयेकी आमदनीपर एक २ अश्वारोही सेनाके देनेमे समर्थहुए थे। ”

प्रथम श्रेणी.

नाम।	सम्प्रदायके नाम।	वासस्थान।	आमदनी।	मन्तव्य।
			रुपया	
१ केसरीसिंह	चापावत	अहोवा	१०००००	मारवाडके यही सबमें श्रेष्ठ सामन्त हैं। इनकी आमदनी अर्द्धांश इनके पिताकी पृथ्वीसे सग्रह की जातीहै, इन्होनेही सम्प्रदायके नीची श्रेणीके सरदारोकी भूवृत्तिको वलपूर्वक अपने अधिकारमें करलिया था, इसी कारणसे आधी आमदनी होती है।
२ बख्तावरसिंह	कूंपावत	आसोप	५००००	
३ सालिमसिंह	चापावत	पोकरण	१०००००	पोकरणके सामन्त मारवाडके सभी सामन्तोंमें अधिक सामर्थ्यवाले हैं।
४ सुरतानसिंह	उदावत	नींमाज	५००००	
५ *	मेरतिया	रिया	२५०००	समस्त राठौरजातिमें मेरतिया सबसे अधिक साहसी वीर है।
६ अजीतसिंह	मेरतिया	घाणेराव	५००००	पहले यह देश मेवाडके सोलह सामन्तोंमेसे एकके अधिकारमे था अति बडा नगर भग्न होगया और कितनेही ग्राम राजपरिवारके अधिकारमे होगये।
७ *	करमसोत	खींमसर वा किमसर	४००००	यह शहर बहुत बडा था, पर अब वैसा नही है।
८ *	भाटी	खेजडला	२५०००	मारवाडके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंमें यही एक मात्र विदेशी थे।

दूसरी श्रेणी।

			रुपया.	
१ शिवनाथसिंह	ऊदावत	कुचामन	५००००	यह अत्यन्त सामर्थ्यवान् थे।
२ सुरतानसिंह	जोधा	खारीकादेव	२५०००	
३ पृथ्वीसिंह	ऊदावत	चंडावल	२५०००	
४ तेजसिंह	ऐ०	खादा	२५०००	
५ ओनाड़सिंह	भाटी	आहोर	२१०००	निकालेगयेथे।
६ जीतसिंह	कूंपावत	वगडी	४००००	
७ पद्मसिंह	कूंपावत	गजसिंहपुरा	२५०००	
८ *	मेरतिया	मीटरी	४००००	
९ कर्णसिंह	ऊदावत	मारोत	१५०००	
१० जालिमसिंह	चापावत	सारोट	१५०००	
११ सवाईसिंह	जोधा	चापुर	१५०००	
१२ *	... ...	बूडसू	२००००	
१३ शिवदानसिंह	चांपावत	कावटा (वडा)	४००००	
१४ जालिमसिंह	ऐ०	हरसोलाव	१००००	
१५ सावलसिंह	ऐ०	दीगोद	१००००	
१६ हुकमसिंह	ऐ०	कावटा (छोटा)	१२०००	

महात्मा टाड् साहब सबसे पीछे लिखते है, " यही मारवाड़के प्रधान सामन्त है तथा राजाकी अनुगत्यता स्वीकार कर राजकार्यमे नियुक्त होकर भूवृत्तिको भोग करते है। मारवाड़के अधीनके सरदारोकी श्रेणी इनमे नहीं है। विशेष २ घटनाओंके उपलक्षमे यह राजाकी आज्ञा पालन करते है उन अनधीन सामन्तोकी श्रेणीमे

(१) मेड़तिया। (२) चम्पावत। (३) जेतावत "सही है"।

वाढ़मेर, कोटड़ा, जसोल, फलसूंद, बड़गांव, वांकड़ा, कालिन्दरी और वारूदाके सामन्त प्रधान है। यदि राजा उनको संतुष्ट करके अपनी आज्ञा पालन करासकते तो वे अपनी प्रवल सेनाके साथ राज्यकी सहायता करनेके लिये इकट्ठे होकर आते। सामन्तोके अधिकृत जिन देशोकी सूची लिखीगई है वह ठीक सत्य नही होसकती। उपरोक्त सूची एक अत्यन्त प्राचीन पुस्तकसे संग्रह कीगई है। इसका विश्वास करना सर्वथा संभव है। अराजकता विद्रोहिता इत्यादि, हम जिन शोचनीय घटनाओका वर्णन करते आये है उन घटनाओमे से इस राज्यका प्रत्येक विषय जिस प्रकारकी शीघ्रतासे वदल गया है, राजस्व विभागके कर्मचारियोने सरलतासे इस सूचीको त्यागकर नवीन सूची बनानेकी आवश्यकता स्वीकारकी है। पहले यह नियम प्रचलित था कि जिन २ सामन्तोकी जितनी २ आमदनी थी उसमे से प्रति पॉचसौ रुपये की आमदनीपर जो राजाकी सहायताके लिये देते थे उस धनसे एक अश्वारोही और दो पैदल सेना रक्खी जाती थी, परन्तु इस समय उनकी भूवृत्तिकी सीमा घटा दी गई है और उनके समस्त देशोका मूल्य भी घट गया है, इस समय उन पॉचसौ रुपये के स्थानमे एक हजार रुपया नियत किया गया है। अर्थात् हजार रुपयेकी आमदनीपर एक अश्वारोही और दो पैदल सेना सामन्त रखते है।"

१८८६ ईस्वीमे आचिसन साहबने अपनी पुस्तकमे लिखा है, "जोधपुर राज्यकी भूमिका परिमाण ३५६७२ वर्गमील है और प्रजाकी संख्या १७७३६०० है। राज्यकी आमदनी साढ़े सत्रहलाख रुपयेकी है। उसमे लवणदहसे प्रायः पाँचलाख रुपया राजस्व का आता है। महाराजने जो सेना रक्खी है उस सेनाकी संख्या ६००० से अधिक नही है। स्थानीय पोलिटिकेल एजेन्ट मारवाड़के वकील समितिमें सभापतिका कार्य करते है। मारवाड़के साथ बीकानेर, जैसलमेर, कृष्णगढ़, सिरोही और पालनपुरकी सीमासे लगाकर यदि कोई विवाद अथवा किसी प्रकारका उपद्रव उपस्थित हो तो, इस वकील सभितिसे ही उसका विचार होता है, उस समितिमे उक्त राज्य, उदयपुर जयपुर, और सीकरके वकील इकट्ठे होते है। प्रतिवर्षमे एक एक बार अजमेर, नागार और आवू शिखरमे इस समितिका अधिवेशन हुआ करता है।"

मिस्टर जे. थैाम्सह्वीलर अपनी पुस्तकमे १८१८ ईस्वीमे लिखा है कि "मारवाड़ की भूमिका परिमाण ३६६७० वर्गमील था, प्रजाकी संख्या प्रायः २०००००० जन थी और वार्षिक आमदनी २५००००० रुपया था"।

---

(1) Adchison's Treaties.
(2) Wheeler's History of the Imperial Assemblage.
(3) At Delhi.

वीसवाँ अध्याय २०:

आधुनिक विवरण, जोधपुरमे अंग्रेज रेसिडेन्सी स्थापन, ऋतुफल, शस्य, स्वास्थ्य, शासन-विभाग, फौजदारी विचारालय, जागीरदार विचारालय; अपील विचारालय, वकील विचारालय, वाणिज्य शुल्क, अफीमके वाणिज्यकी आय व्यय, ऋण सीमाका निश्चय, पूर्त्तकार्य, रेलवे, डकैतोंका दमन, मारवाड़की वर्तमान सेनाकी संख्या, उपसंहार।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहव मारवाड़की जनसंख्या, आमदनी, राजस्व, कृषि, और विचार-विभाग इत्यादिके सम्बन्धमे अपने ग्रंथमे जो कुछ भी वर्णन करगये है पहिले अध्यायमे हमने उसे अविकल प्रकाशित किया है। यह हम पहले ही कह आये है कि समयकी विपरीतितासे उनके सम्बन्धमे इस समय बहुत कुछ अदल वदल होगया है। हम इस विस्तारित इतिहासको समाप्त करनेकी इच्छासे उस परिवर्तन विवरणको प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते है। सन् १८२४ ईस्वीसे गतवर्पतकके प्रत्येक वर्पका परिवर्तन प्रकाश कियागया है, ग्रंथके अधिक बढ़जानेकी संभावना जानकर हम उसके वदलेमे केवल गतवर्पके प्रयोजनीय समस्त विवरणको लिपिवद्ध करनेके लिये आगे बढ़े है। पाठकगण इस विवरणके साथ कर्नल टाड् साहवके वर्णित विवरणकी तुलना करके सरलतासे जानजॉयगे कि किस २ विषयमे किस २ प्रकारका पारिवर्तन हुआ है, और कौन२ से विषयोमे मारवाड़की उन्नाति हुई है। पश्चिम राजपूतानेके अंग्रेज रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी. डबल्यू. पावलेटने सन् १८८३ ईस्वीकी १७ वी अप्रैलको भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके पास मारवाड़के शासनसंवन्धमे जो विस्तारित विज्ञापन भेजा था हम उसीके ऊपर विश्वास करके आगे बढ़े है, इस कारण यह जैसी विश्वासतासे संग्रह हुआ वैसे ही इसकी सभी कथा सत्यतासे पूर्ण है इसमे कुछ सन्देह करनेकी आवश्यकता गहीं है।

अंग्रेज रेसिडेण्ट.

समालोच्य वर्पमे अर्थात्-सन् १८८२-८३ ईस्वीमे लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी. डवल्यू. पावलेट, मारवाडके अंग्रेज़ गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि अर्थात् रेसिडेण्ट पदपर नियुक्त थे। अंग्रेज रेसिडेण्ट इतने दिनोतक एरिनपुरा नामक स्थानमे अपना प्रधान कार्यालय स्थापन कर वहां रहे, परन्तु भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने राजनैतिक उद्देश्यको भलीभॉतिसे साधन करनेके लिये उस कार्यालयको १८८२ ईसस्वीके जौलाई मासमे एरेनपुरासे जोधपुरमे स्थापित किया था।

ऋतुफल।

इस वपम जोधपुरमे कुल सव मिलाकर १२ इश्च वृष्टि हुई थी, इस कारण वृष्टिके अभावसे राजधानीकी सभो प्रधान २ नदियां जनवरीके महीनेमे ही सूख गई, राज्यके अन्यान्य स्थानोमे उचित वृष्टि न होनेसे जलका कष्ट हुआ था।

सस्य ।

जलके अभावके कारण राज्यमे जितना धान्य उत्पन्न होता था इस वर्षमे उसकी अपेक्षा कम धान्य उत्पन्न हुआ ।

स्वास्थ्य ।

इस वर्षमे किसी प्रकारकी भयानक महामारी नही हुई । राज्यमे देशीय प्रणालीके मतसे चिकित्साके अतिरिक्त अंग्रेजी रीतिके मतसे चिकित्सालय और चिकित्सक नियुक्त हुए । मारवाड़के महाराज राजभंडारसे चिकित्सा विभागकी सबप्रकारसे सहायता करते है।

वृटिश रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्टकर्नेल पावलेट गत वर्षके स्वास्थ्य सम्बन्धी विवरणमे उल्लेख करगये है कि गतवर्षमे जोधपुर नगरमे कईएक पागल कुत्तोने विशेष उपद्रव आरंभ किये थे। उन पागल कुत्तोके काटनेसे चौवालीस मनुष्योसे भी अधिक मनुष्योकी मृत्यु हुई। महाराजने यह समाचार पाते ही कुत्तोको पकडकर एक स्थानमे बॉध रखनेकी आज्ञा दी । परन्तु इस समाचारको पाते ही राजधानीके समस्त वणिक् और दूकानदार महा अप्रसन्न हुए और सभीने दूकाने बंद करदी और दलकेदल बॉधकर नगरके प्रधान २ स्थानोमे जाकर राजकर्मचारियोको भय दिखानेलगे। पशु पक्षियोके ऊपर मारवाड़के निवासी चिरकालसे दया प्रकाश करते आये है; अधिक क्या कहै कालके पड़नेपर स्त्री पुरुष सभी पहिले पशु पक्षियोको भोजन कराकर पीछे आप भोजन करते है, इस कारण पाठक सरलतासे अनुमान कर सकते है कि यह वणिक्लोग राजाकी आज्ञासे क्यो इतने रुष्ट हुए थे। रेसिडेण्ट लिख गये है, कि तीन दिनके पीछे जिन वनियोने नेता स्वरूपसे विद्रोहभाव प्रकाशित किया था राजकर्मचारी उनको पकड़कर राजाके सम्मुख लेगये, वहां जातेही राजाके दंडके भयसे अंतमे सब वनियोने राजाकी आज्ञा माननी स्वीकार की ।

शासन विभाग ।

विगत अक्टूवरके महीनेमे महाराज प्रतापसिह सी. एस. आई " मुसाहिवआला " की उपाधि पाकर राज्यके प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त हुए । महाराजने इस पदपर नियुक्त होनेके पहले कई महीनेतक विशेष परिश्रम करके राज्यमे डकैतीको रोककर वहुतसे अत्याचारियोको बंदी करके शांति स्थापन की। इसी कारण इनके द्वारा राज्यके अन्याय, अपव्यय सरलतासे दूर होजॉयगे यह विचारकर मारवाड़के महाराजने इनको प्रधान मंत्रीपदपर वरण किया । महाराज प्रतापसिह एक प्राचीन कालके राठौरोके समान असीम साहसी महावीर और नीतिविशारद है। इनके शासनके समयमे मारवाड़मे सुखशांतिकी विशेष आशा है।

मेहता विजयसिह और पंडित शिवनारायण पूर्वपदपर स्थित होकर वड़ी प्रशंसाके साथ कार्य करते है। मारवाड़के दूसरे मंत्री खॉवहादुर फैज़उल्लाखॉ इस समय राज्यके पुलिस विभागमे है। पुरातत्वकी खोज करनेका भार भी उन्हीके ऊपर है।

विचार विभाग।

मारवाड़के महाराज यशवन्तसिंह वहादुरने राज्यमे सुविचार प्रचलित करनेके लिये विचार विभागकी ओर अधिक ध्यान दिया था। गतवर्षमे विचार विभागमे वहुत कुछ अदलवदल हुई। बड़े आनंदका विषय है कि वृटिश रेसिडेण्टने इस विचार–विभागका संस्कार करनेसे विशेष संतोष प्रकाश किया।

फौजदारी विचारालय।

अलवरके मुन्शी मखदूमवख्श जोधपुरके फौजदार अर्थात् मजिस्ट्रेट है। रसिडेण्ट साहव लिखते है, "मै विचार करता हूं कि इनके द्वारा यथार्थ रूपसे सफलता प्राप्त होगी"। मुन्शी मखदूँमवख्शने कार्यभारको ग्रहण करके देखा कि ३७४६ फौजदारीके मुकद्मोका विचार करना वांकी है। गतवर्षमे उन्होने उन सव मुकद्दमोका विचार किया, उनमेसे केवल ७२ वाकी रहे थे, और इसके अतिरिक्त ८५० नवीन फौजदारीके मुकद्दमोका विचार किया था। देशीय राजा जिस प्रकारकी रीतिसे शीघ्रतासे विचार कार्य करते है, रेसिडेण्ट साहव लिखते है कि मुन्शी मखदूँमवख्शने उस प्रकारकी शीघ्रतासे विचार कार्य नही किया, वह सभी विषयोको सुनकर न्याय–पूर्वक विचार करते है।

दीवानी विचारालय।

मेहता अमृतलालको दीवानीके विचारालयका भार प्राप्त हुआ है। पहले वर्षमे विचार के मुकद्मे ५३४० थे और गतवर्षके सव मिलाकर ११४२ मुकद्मे उपस्थित हुए। इनमेसे गततर्षके ४१०० मुकद्दमोका विचार होगया।

जागीरदार विचारालय।

मारवाड़के जागीरदारोंके मुकद्मोका विचार करनेके लिये गतवर्षमे "जागीदार विचारालय" नामका एक नवीन विचारालय स्थापित हुआ है। जोधपुरके जो सामन्त कार्योंके लिये आते है उनमेसे उच्च सामन्तोको लेकर राजदरवारके एक कुटुम्वी मनुष्यने इस विचारालयके विचारकार्यको किया था। रेसिडेण्ट साहव लिखते है कि इस विचारालयका फल इस समय तक भी प्रीतिदायक नही हुआ। वृटिश शासित भारत-वर्षसे एक विद्वान् विचारपतिको इस विचारालयके प्रधान विचारपति पदपर नियत करनेका विचार हुआ है। इस कार्यके पूर्ण होनेसे सफलता प्राप्तिकी सम्भावना है।

अपील विचारालय।

पहले भी राजदरवारके द्वारा अपीलोका विचार होता था, परन्तु दरवारके अनेक कार्योंमे लगे रहनेके कारण अपीलका विचार वड़ी कठिनतासे होता था। इसी कारण गतवर्षसे एक स्वतत्र अपीलका विचारालय स्थापित हुआ है। कविराज मुरारिदान इस अपीलके विचारपदपर नियत हुए है। रेसिडेण्ट साहव लिखते हैं कि विचार कार्य स्पष्टतासे कियाजाता है। कविराज मुरारिदानने पद ग्रहण करते ही

देखा कि १३८ मुकद्दमोंके अपीलका विचार करना वाकी है; फिर तिसपर गत मार्च महीनेके शेषतक के १६१ नये मुकदमें उपस्थित है, इनमेसे विचारपतिने २७३ अपीलके मुकद्दमोका विचार किया। मारवाड़के नावालिग सामन्तोकी भूसम्पत्तिकी रक्षाका भार भी इन्हीं विचारपति कविराजके ऊपर था।

वकील विचारालय।

मारवाड़मे जो वकील विचारालय है उसको हमारे पाठक पहले अध्यायमे पढ चुके है। पश्चिम राजपूतानेके वकील अर्थात् राजाकी ओरके प्रतिनिधि एकसाथ मिलकर सीमाके सम्बन्धके उपद्रवोका तथा और भी अनेक प्रकारके उपद्रवोका विचार करते थे। १८८२ ईस्वीकी पहिली अप्रैलसे १८८३ ईसवीकी ३१ मार्चतक इस विचारालयमे कुल सब १२८ मुकद्दमे विचार करनेके लिये उपस्थित हुए थे, इनमे ९२ मुकद्दमोका विचार होगया है और सब ७५५८ रुपया, दशआना, ८ पाई डिग्री हुई है। इसमे २३ मुकद्दमोंकी अपील हुई उनमेसे ८ मुकद्दमोकी राय वहाल रही और एक खारिज कियागया। विचार करनेके लिये ४ मुकद्दमे वाकी है।

उपरोक्त विचारालयके उक्त ९२ मुकद्दमोंमे निम्नलिखित अपराधोके मुकद्दमोका विचार होगया है:-डकैती १५, आघातके २, डकैती एवं हत्या ५, राजमार्गमे चोरीके १०; राजमार्गमे तस्कर एवं आघात २, राजमार्गमे दस्यु एवं हत्या ३, चोरी १९, चोरी और हत्या १, हत्याके ३, वलपूर्वक धन लेनेके २, चराईके पशु ग्रहण ६, सेता चोरी २, अनेकभाँतिके अपराध १५, क्षतिसाधन १, एवं पशुचोरी ६, कुल ९२.

वाणिज्य शुल्क।

विचार एवं शांति रक्षा विभागके समान वाणिज्य शुल्कके विभागका भी गतवर्पमे मारवाड़पतिने सम्पूर्ण रूपसे संस्कार किया। मारवाड़से भिन्न देशको रवानगी, आमदनी, तथा देशमे एकदेशसे अन्यदेशकी रवानगी शुल्कके सिवाय और भी वारह प्रकारका वाणिज्य शुल्क मारवाड़मे प्रचलित था। परन्तु वह बारह प्रकारका शुल्क सर्वत्र समभावसे ग्रहण नहीं कियाजाता था। अफीमका महसूल भिन्न स्थानोमे लिया जाताथा दौलतपुरामे अफीमका महसूल २॥) रुपयेके हिसावसे लेते थे और नागौरमे उतनीही अफीमके ऊपर १७ रुपया महसूलका लिया जाता था। कोई २ वणिक् सम्प्रदाय महसूल देती थी और किसी किसीने एकवार ही छुटकारा पाया था। धान्यके ऊपर भी महसूल लिया जाता था, यदि नगरमे कोई काष्ठका बोझा लाता, अथवा वगीचेके मालीकी स्त्री एक टोकरी फल लाती तो नगरके द्वारपर ही उसको महसूल देना पड़ता था, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टके प्रस्तावके मतसे मारवाडराजने आमदनी, रवानगी तथा एक देशकी वस्तुको दूसरे देशमे भेजनेके अतिरिक्त और सभी वस्तुओसे महसूल लेनेकी रीतिको एकवार ही रहित करदिया है। धान्यके ऊपर जो महसूल दिया जाता था वह भी रहित करदिया गया, तथा जागीरदारोंके जो देश अधिकारमे थे उन देशोपर जो "मापा" नामका शुल्क प्रचलित था इस समय वह भी छोड़

दियागया । यद्यपि इससे जागीरदारोको हानि हुई परन्तु उस हानिके पूर्ण करनेकी भी व्यवस्था हुई है शुल्कके लेनेमे जो समस्त कर्मचारी नियुक्त थे, उनको तत्वविधान कार्यमे नियुक्त कियागया । अफीमके ऊपर अधिक महसूलको वढ़ाकर नित्यके प्रयोजनीय द्रव्योके ऊपरका महसूल घटादियागया । गत २० वी सितम्बरसे यह नवीन रीति प्रचलित हुई । वृटिश रेसिडेण्टने अपने विज्ञापनमे लिखा कि कई वर्ष व्यतीत होगये, कर्नल वेल्डरने इस प्रकारके संस्कारका प्रस्ताव किया था परन्तु वह राजदरवारकी आमदनी और रफ्तनोके ऊपर महसूल वढ़ाकर और सभी वस्तुओके ऊपरके महसूलको एकवारही छोड़ देनेको कहते थे सो ऐसा नही कियागया । इस समय गवर्नरजनरल एसिस्टेण्ट एजेण्ट मि. हिडसनने इस वाणिज्य शुल्कके संस्कारपर नियुक्त होकर इस अभिलपित फलके संग्रहका प्रारंभ किया । पहले वाणिज्य शुल्कसे मारवाड़पतिको समस्त खरचा वाद देकर ५ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी । इसके पीछे सातलाख रुपये की आय होती थी । किन्तु इस समय जिस प्रकारका सस्कार होकर नवीन व्यवस्था हुई है, इससे मारवाडके महाराजको पचासहजार रुपयेकी हानि हुई है । वर्तमान वर्षमे वाणिज्य शुल्कद्वारा ९१४००० की आमदनीका अनुमान कियागया है । रसिडेण्ट साहव कहते है कि इन रुपयोमेसे महसूलके संग्रह भागका सभी रुपया खर्च होगया है, राजभंडारमे साढेछ लाख रुपया दियाजायगा । जागीरदारोकी हानि पूर्ण की जायगी और वर्तमान समयमे जो कितने ही प्रयोजनीय द्रव्योके ऊपर अधिकतासे महसूल लिया जाता है वह कम कियाजायगा यह अनुमान सत्य और अवश्यही प्रीतिदायक होगा । यद्यपि इससे महाराजको आधेलाख रुपयेकी हानि हुई है, परन्तु इस समय महसूलके घटजानेसे वाणिज्यके वढ़नेके साथही अधिक आमदनीके वढ़जानेकी भी संभावना है । महाराजने इस वाणिज्य शुल्कके संग्रह विभागमे मि हिडसनके द्वारा विशेष उपकार पाकर उनको इस विभागमे कुछ समयतक और रखनेके लिये गवर्नमेण्टसे प्रार्थना की थी ।

अफीमका वाणिज्य ।

महात्मा टाड्साहव वारम्वार लिखगये है कि राजपूतोके श्रेष्ठ गुणोके नाश करनेका कारण एक मात्र अफीमही थी । महावली दृढप्रतिज्ञ राजपूत अधिकतासे अफीमका सेवन कर एकवार ही कर्महीन होगये थे । इसी कारणसे उनकी जातीयशक्ति भी धीरे २ घटती जारही थी, राजपूत लोग जिससे अफीमका खाना छोड़ दे इसके लिये साधू टाड् साहवने विशेष चेष्टा की थी । दुर्भाग्यके वशसे उनकी वह अभिलाषा सफल न हुई कारण कि वह इसके पहले ही राजस्थानको छोडकर अपने देशको चलेगये । राजपूत वावत टाड् साहव रजवाडोसे अफीमके लोप होजानेकी अभिलाषा करते थे, उन्ही रजवाडोमे इस समय अफीमका प्रचार प्रत्येक वर्षमे अधिकतासे वढता जाता है । राजपूतानेके सभी राजपूत राज्यमे पहले जितनी अफीमका सेवन होता था इस समय उसकी अपेक्षा वहुतगुण वढ गया है । राजपूतानेमे जाकर गवर्नर जनरलके एजेण्ट

लेफ्टिनेण्ट कर्नल ई. आर.सी. ब्राडफोर्ड सी. एस. आई. ने विगत १८८३ ईसवीकी २७ वी अगस्तको राजपूतानेका शासन वृत्तान्त भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके पास भेजा था, उन्होने उसमे लिखा था कि " राजपूतानेके प्रधान २ धनी महाजन मुण्डीके व्यापारको छोडकर आधिक धन प्राप्तिकी आशासे अफीमके वाणिज्यकी ओर झुके ह। वड़े २ प्रधान महाजनोने ग्रामके महाजनोको अग्रिम रुपया देदिया है। वह ग्रामके महाजन उस रुपयेको लेकर किसानोको ऋणस्वरूपसे देते है। किसान लोग उस रुपयेके वदलेमे अफीम तैयार करके ग्रामके महाजनोको देते है और ग्राम्य महाजन उस अफीमको लेकर नगरके प्रधान २ महाजनोको वांट देते है।" धीरे २ रजवाड़ेमे अफीमकी विक्री किस प्रकारसे वढ़गई है, उसके सवन्धमे वह लिखते है कि " अफीम के वाणिज्यके साथ समाजका न्यूनाधिक घनिष्ट संवन्ध उपस्थित है। वर्तमान समयमें अफीमकी विक्री वड़ी शीघ्रतासे वढ़गई है, खाल एवं कुएके खोदनेकी वृद्धिके साथ ही साथ पोस्तकी डण्डीकी विक्री भी अफीमके वरावर ही वढ़ गई है। जो पृथ्वी पोस्तकी डण्डीके खेतीके लिये ठीक मानीगई है, तथा वम्वईके जानेके मार्गसे वहुत दूर है, इतने दिनोतक उसमे और वस्तुओकी खेती होती थी, राजपूताना मालवा रेलवेकी प्रतिष्टासे उस समस्त भूमिमे इस समय अफीमकी खेती आरभ हुई है।" लेफ्टिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने समस्त राजपूतानेके संवन्धमे इस प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया है। मारवाड़मे अफीमकी खेती और इसका वाणिज्य जो अन्यान्य रजवाड़ोके अन्य राज्योकी समान क्रमशः वढ़गया है इसका अनुमान वड़ी सरलतासे होसकता है। इस अफीमके वाणिज्यकी वृद्धिका केवल शुभ फल यही प्रत्यक्ष हुआ है कि इसकी खेतीके लिये सर्वत्र कुए खुदा दिये गये है। समयपर कुए और तालावोसे ईख आदिकी खेतीको वडा सुभीता होगा। लेफ्टिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डकी यह आशा थी, परन्तु हम कहसकते है कि इस अफीमकी खेती और वाणिज्य वृद्धिसे किसान और महाजनोको धन प्राप्त होता है तथा राजाको भी राजस्वकी वृद्धि होती है। यह ठीकहै परन्तु इसके साथ राजपूत जातिमे अफीमके सेवनका प्रचार प्रवलतासे होता जाता है और इसका परिणाम वुरा है। वहुत थोड़े मूल्यकी सुराको पाकर जिस भाँतिसे मदिरा पीनेवालोकी संख्या अधिक वढ़जाती है, इसका अनुमान पाठक सरलतासे कर सकते है। उसी भाँतिसे राजपूत भी प्रत्येक ग्राममे अल्प मूल्यमे अफीमको पाकर अधिक अफीमसेवी होगये। चीन इत्यादि देशोमे रफ्तनीके लिये जो श्रेष्ठ श्रेणीकी अफीम तैयार होती थी, राजपूत गण उस अफीमका सेवन नही करते थे। यहां वट्टी नामको एक प्रकारकी अफीम तैयार होती थी उसका मूल्य पहली अफीमकी अपेक्षा प्रति मनपर ४० वा ५० रुपये कम होगया था। राजपूत जाति इस कम मूल्यवाली अफीमका ही सेवन करती थी। कर्नल टाड् १८२३ ईस्वीमे जो ईस्टइण्डिया कम्पनीकी अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटियाके कारण दृढ़ प्रतिवाद करगये हे, इस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टने उन दोनो वाणिज्योको उसी प्रकारसे एक चेटीया रक्खा है, इस कारण पहलेकी समान देशीय राजाओको लवण और अफीमके वाणिज्यमे विशेष लाभकी संभावना नही रही।

आय व्यय।

महात्मा टाड् साहबने मारवाड़की आमदनी और खर्चकी जो सूची प्रकाश की है उसको हमने यथास्थानमे वर्णन किया है। वर्तमान अंग्रेज रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पावलेट लिखते है * कि १८८२ ईस्वीकी १ ली जौलाईको जो वर्ष समाप्त होता है उस वर्षमे मारवाड़के महाराजको निम्नलिखित आमदनी हुई थी।

राजस्व .	३२५३२३९	रुपया।
व्यय	३०५५७४६	"

जोधपुरशाखा रेलवेके निमित्त जो ४५४७७८ रुपया कर्जमे लिया था, वह खर्चकी सूचीमे नही लिखा है, ऐसा विदित होता है कि उस ऋणके रुपयेको छोड़कर शेष दो लाख रुपया उद्धृत हुआ है। कर्नल टाड् साहबने मारवाडकी जो अवस्था देखी थी इस समय उसकी अपेक्षा राजस्वकी अवस्थाने कैसी उत्कर्षता पाई है, इसको अवश्य मानना होगा। परन्तु ऐसे दीर्घ सुशासनमे राजस्वकी जैसी प्रीतिदायक अवस्था होनी चाहिये सो नही हुई। पहिलेकी अपेक्षा शासन-विभागमे जो अधिक खर्चा होगया था इसका अनुमान होसकता है, इसी कारणसे समस्त खर्चेको छोडकर उद्धृत परिमाणसे विशेष वृद्धि नही जानी जाती।

ऋण।

मारवाड़के महाराज पर आजतक कुछ रुपया कर्ज है। अंग्रेज रेसिडेण्टने लिखा है, "कि यह तो निश्चय नहीं जाना जाता कि राज्यके ऋणका कितना रुपया है, परन्तु गत सन् १८८२ ईस्वीकी १ ली जौलाई तक १३७८००० रुपया कर्जका था, इसको मै जानता हूं। वर्तमान वर्षकी समाप्तिमे यह ऋण कमती था अर्थात् १२ लाख रुपया था।" गत वर्षमे मारवाड़के महाराजकी भगिनीके साथ बून्दीके एक राजकुमारका विवाह हुआ था उसमे जो तीन लाख रुपया खर्च हुआ है, वह इसी ऋणके अन्तर्गत है। रेसिडेण्टने आशा की थी कि वर्तमान समयके प्रधान मंत्री महाराज प्रतापसिहके द्वारा सरलतासे यह ऋण चुक जायगा।

सीमान्त निर्द्धारण।

मारवाडके आभ्यन्तरिक शासनके अन्यान्य अनुष्ठानोके समान सामन्तोके साथ महाराजका जो सीमापर झगडा चलता था, उसके संबन्धकी मीमांसा करनेकी सुव्यवस्था कीगई है। सीमाका निश्चय करनेके लिये सन् १८८२ ईस्वीके जनवरी मासमे कमान लेक नियुक्त हुए थे। गत वर्षमे उन्होंने १३ परगनोकी सीमाका निश्चय करादिया था, कृष्णगढकी सीमासे मारवाडकी शेष दक्षिण सीमातक अर्वली पर्वतोके शिखरके पाददेशसे बीकानेर राज्यकी सीमातक सब ढाईसौ मील स्थानकी सीमाका निश्चय

* Report of the political Administration of the Rajpootana States for 1882-1883. P. 115

कियागया है । इस प्रकार उनके द्वारा १३५ सीमाका निश्चय हुआ है । इसमे जो ३०००० रुपया खर्च हुआ है, रेसिडेण्ट साहब लिखते है कि उसके बहुतसे हिस्सेकी अभियुक्तोंके पाससे संग्रह होनेकी संभावना है । जिन सीमाके अन्तमे विवाद लेकर शोचनीय कांड उपस्थित होनेकी संभावना थी, कप्तान लेकने पहिले उन्हींका विचार किया है, संतोपका विपय है कि पंचायतियोके मध्यमे होनेसे उनकी मीमांसा सरलतासे होगई है। रासके सामन्तोकी सीमामे जो महाकांड उपस्थित करनेके पूर्ण लक्षण दिखाई दिये थे कप्तान लेकने सबसे पहिले उन्हींपर हाथ डालकर प्रीतिदायक विचार करदिया है ।

पूर्त्तकार्य ।

राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण-साधन तथा अन्यान्य विपयोमे राजाके यहाँसे अधिक धन खर्च होता था।कृपिकार्यकी सुविधाके लिये गतवर्पमे महाराजने अनेक स्थानोपर बाँध–बधनकार्यमे बहुत धन खर्च किया । रेसिडेन्टने इस बातको मानलिया है कि इससे विशेष उपकार होसकते है, क्योकि राजधानी जोधपुरमे अधिकतासे जलके संग्रह करनेके लिये सुव्यवस्था होनेकी आवश्यकता है ।

रेलवे ।

वृटिशशासनके स्मरणीय प्रधान अनुष्ठान लौहवर्म है । सात समुद्रके पारवर्ती श्वेतद्वीपवासी अंग्रेजोने भारतके वक्षस्थल पर रेलरूप लोहेका हार अर्पण किया है । इस रेलवेके विस्तारसे जैसे एक ओर वाणिज्य व्यवसायका विशेप सुबीता हुआ है, प्रजाके एक देशसे भिन्न देशमे अत्यन्त अल्पव्ययसे बहुत थोडे समयसे आनेजानेका यथेष्ट सुभीता होगया है,जिस प्रकार भारतके इस प्रान्तके निवासियोके साथ अन्य प्रान्तके साथ आलाप, परिचय, तथा घनिष्ट सम्बन्धमे विशेप सुभीता होगया है, उसी प्रकारसे दूसरी ओर वृटिशशासनशक्तिको दृढ़ करनेके लिये भी यह यथेष्ट सहायकारी है। पचीस करोड प्रजापूर्ण भारतवर्पमे सत्रह हजार अंग्रेज और अंग्रेजोके अधीनमे एक लाख पचीस हजार देशी यसेना वृटिश शासनशक्तिकी सहायता करती है । भारतके एक प्रान्तमे युद्धविग्रह अथवा विद्रोह उपस्थित होते ही गवर्नमेण्ट बड़ी सरलतासे एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तको रेलमे बैठालकर सेनाको भेज विशेप उपकार कर सकती है । जैसे १८५७ ईसवीमे सिपाही विद्रोहके समय भारतकी अंग्रेज राजलक्ष्मीके ऊपर विपत्ति आई थी उस समय एक मात्र इस रेलके अभावसे गवर्नमेण्टके एक स्थानसे दूसरे स्थानको अल्पसमयमे सेनाकी सहायता न भेजसकी थी । परन्तु वर्तमान समयमे भारतके रेलविस्तारके साथही साथ अंग्रेज गवर्नमेण्टका वह अभाव भी दूर होगया है ।

भारतवर्पके प्रत्येक प्रान्तमे रेलकी गति पहुँच गई है । इस रेलके विस्तारसे देशीय राजोको जो उपकार प्राप्त हुआ है उसे अवश्य ही मानना होगा, राजस्थानके एक राजपूत राज्यसे अन्य राजपूत राज्यमे जानेके लिये कितना कष्ट पड़ता था, उसे हमारे

पाठकोंने यथास्थान पढा होगा। कर्नल टाड् साहबने मारवाड़मे जाने के समय रास्तेमे कितना कष्ट उठाया था, वह उनके भ्रमण वृत्तान्तमे भली भाँतिसे प्रकाशित कियागया है। इस समय उसी राजपूतानेमें रेलका विस्तार होगया है, और प्रधान राजपूताना तथा मालवा रेलवेसे शाखा निकलकर भिन्न २ राजपूत राज्योंमे गई है। जोधपुर शाखा रेलवेके सम्बन्धमे भली भाँतिसे प्रकाशित हुआ है, कि "जोधपुरकी शाखा रेलवे जौलाई मासमे पालीतक खोली गई है। गत मार्च मासकी समाप्ति तक इस शाखा रेलवेको जितनी आमदनी हुई है, उसकी समस्त आमदनी रेलमे ही लगगई है। और इसमे जो पांच लाख रुपया खर्च हुआ है, उसका सैकड़ा पीछे दो रुपया करके अदा किया गया है। यह निश्चय है कि लूनी नदीके किनारेसे चवाँ ग्रामतक इस शाखारेलवेका यथा संभव शीघ्र विस्तार किया जायगा। इस समय जितनी रेले खोली गई है उनका परिमाण साढ़ेनौ कोशतकका है। चवाँतक विस्तार होनेसे इसका विस्तारित परिमाण साढ़ेवाईस कोशतक होगा। तब जोधपुरकी राजधानीसे नौ कोश दूरतक रेल आवैगी। हमैं ऐसी आशा है कि वर्ष की समाप्तिमे इस रेलकी शाखा पूरे तौरसे बनकर खुलजायगी। मि० डबल्यू० होम इस शाखा रेलवेके मैनेजर और इञ्जिनियर पदपर नियुक्त है*"।

यह रेलवे महाराजने स्वयं अपने व्ययसे खुलवाई है इसके तयार होनेसे मारवाडके वाणिज्यमे अधिक लाभकी सभावना है।

डकैती दमन।

कर्नल टाड् साहबकी उक्तिसे पाठक अवश्य ही जान गये होंगे कि डकैती और चोरी मारवाडमे चिरकालसे प्रचलित थी। पर्वतकी सीमाके निवासी भील मीना इत्यादि सब जातिआ डकैती और चोरी करके ही अपना निर्वाह करती थीं, विशेष करके नीची श्रेणीके सामन्त भी बीच २ मे डकैती दलके नेता बनकर राज्यमे महा अशान्ति उपस्थित करदेते थे। इन डकैत और चोरोके दमन करनेके लिये गतवर्ष मारवाडके महाराजने विशेष प्रबन्ध किया था, और इसी कारण इस कार्यमे विशेष सफलता प्राप्त हुई थी, पर प्रतापसिंहजी महोदयने तस्करोंको दमन करके उसके पुरस्कारमे प्रधान राजमंत्रीपद पाया था। भील मीना और बावरी चोरोकी जातिपर विशेष दृष्टि रखकर उनको कृषिकार्यमे शिक्षित करनेके लिये विशेष प्रबन्ध किया गया है। पुलिसके पहरेवालोकी सख्याकी वृद्धि पहरेवालोके अफसरोका तत्वावधान करके प्राचीन रीतिका सस्कार ओर शातिरक्षा विभागमे योग्य कर्मचारियोको नियुक्त किया था, गतवर्षमे नव प्रकारसे डकैतोको दमन करनेके निमित्त मारवाड़की सेनाकी सख्या बढाई गई, महाराज प्रतापसिंहने बहुतसे डाकू और चोरोको पकड़कर दण्ड दिया था, अग्रज रजिडेण्ट आशा करते है कि शीघ्रही डकैतोके उपद्रव पूर्णरीतिसे शान्त होजाँयगे।

---

* Report of the political Administration of the Rajputana states for 1882-1883 P. 115

मारवाड़की वर्तमान सैन्यसंख्या।

गोलन्दाज.									अश्वारोही और पैदल.									
									अश्वारोही.					पैदल.				
युद्धक्षेत्रकी तोपें.	कार्यकी उपयोगी तोपें	अन्यान्य तोपें	कार्यके उपयोगी	जंगी तोपें.	जंगीकार्यके उपयोगी	गोलन्दाज सेना.	तोपोंके लेजानेवाले घोड़े	तोपोंके लेजानेवाले बैल	तोपोंके लेजानेवाले रायर.	शिक्षित घुड़सवार	सामन्तमंडली और जागीरदारोंके अधीनके अश्वारोही	अन्यान्य नियमित अश्वारोही	अश्वारोही.	नियमित पैदल.	किलेकी रक्षामें नियुक्त पैदल.	नागा और अन्य जातिके पैदल	तहसीलके सिपाही और नाजिर.	पैदल.
५५*	४०	१२५	३५	१८०	२५	३३०	२२	२८	७	+१३६०	१८००	७३९	३८९९	२४७७	११२०	८९२	२४८३	५९५४

कर्नल टाड् साहबने मारवाड़की सेनाकी संख्याकी जो सूची दी है उसको हमने यथास्थान प्रकाशित किया है हमारे पाठक गण उस सूचीके साथ इस सूचीको मिलाकर भलीभाँति समझ लेंगे कि इस समय मारवाड़की सामरिक अवस्था कैसी है एक समय मारवाड़ेश्वरके अधीनमें राठौरोंकी ५०००० पचास सहस्र सेनाने एकत्र होकर अनेक युद्धोमें महावीरता प्रकाश करके अक्षय कीर्ति प्राप्त की थी। वही मारवाडकी अत्यल्पसेना संख्याको देखकर हृदय व्याकुल हो उठता है पर साथमें यह हर्ष भी है कि ५०००० सेनाके होते हुए भी जहाँ शान्ति न थी आज गवर्नमेण्टकी कृपासे अत्यल्प सेना होते हुए भी पूर्ण शान्ति विराजमान होरही है।

जिस अज्ञान अमेय शक्तिने राठौर राज्यकी मरुदेशमे प्रतिष्ठाके लिये सियाजीकी सहायता की थी, जिस शक्तिने एक समय राठौर जातिको महावीर रूपसे विख्यात किया था, जिस शक्तिने राठौर जातिके द्वारा एक समय भारतके गौरवको वढ़ा दिया था, आज उसी शक्तिने मरुक्षेत्रमे राठौर जातिकी वर्तमान भाग्यलिपिको विधिवद्ध करदिया है, यह राठौर जाति फिर कब गर्व सहित अपना मस्तक

* इनमें पाच तोपे इंगलेण्डकी वनी हैं। + ५०० से कुछ अधिक पैदल है और ६० अश्वारोही। १८८१–८२ ई०के शीतकालमें चोरजातिके दमन करनेमें नियुक्त हुए थे। इनमे ६० ऊँटोंपर चढ़नेवाले योधा भी है।

उठाकर जननी भारतभूमिके अस्त हुए गौरवको उदय करनेमे समर्थ होगी? पर इस वातका निश्चय कोई नही करसकता कि वह अज्ञेय शक्ति राठौर जातिकी पुनः उन्नतिमे तथा उद्धारमे सहायक होगी या नही ? गवर्नमेण्टके सुशासनमे उन्नति करनेमे कुछ भी वाधा नही है ।

इस समयका वृत्तान्त ।

यह राज्य राजपूतानेमे सवसे बडा है इसके उत्तरमे बीकानेर और शेखावाटी है जो जयपुरराज्यका एक भाग है, पूर्वको जयपुर और किशनगढ, अग्नि कोणमे अजमेर मेरवाड़ा और मेवाड़, दक्षिणमे सिरोही और पालनपुर, पश्चिममे कच्छका-रण और सिंध और वायु कोणको जैसलमेर राज्य है। २४ अंश ३६ कला, उत्तर अक्षांशसे लेकर २७ अंश ४२ कला उत्तर अक्षांशतक, और ७० अंश ६ कला पूर्व देशान्तरसे लेकर ७५ अंश २४ कला पूर्व देशान्तरतक फैलाहुआ है। ३७००० वर्गमीलमे इसका विस्तार है। राजधानी जोधपुरसे अर्वली पहाडके बीचका देश उपजाऊ है, लूनी नदीसे वडी सहायता मिलती है, यहॉ रेतके टीले टीवे कहलाते है यहांका पानी खारी विशेष है, कही कहीका पानी विषैला भी है, जिसके पीनेसे वहुत हानि होसकती है। यह वहां वेरावण पानी कहाता है। साम्भर डीडवाना और पचधारा स्थानोमे नमक वहुत होता है। सांभरकी झीलसे सात आठ कोश पश्चिमको मकराना ग्राम है। यहां स्वच्छ श्वेतपत्थरकी खान है। इसे संगमरमर कहते है । गोड़वाड़ परगनेके वाणेराव स्थानके पास भी ऐसेही पत्थरकी दूसरी खाने है। जोधपुर राजधानी पहाडपर वहुत ही दृढरूपसे वनी है। गरमीमे यहा पानीका कष्ट रहता है। नागौर जोधपुरसे ईशान कोणको पाली जोधपुरसे १८ कोश अग्निकोणको वसेहुए इस राज्यमें प्रसिद्ध नगर है। नागौरका तलभूमिका गढराजस्थानमे वहुत प्रसिद्ध है, जोधपुरसे ३५ कोश दक्षिणको जालौरका प्रसिद्ध गढ है, यह गढ मारवाडमे सवसे विकट है। जोधपुरसे ४० कोश पूर्वको मेरताका प्रसिद्ध नगर है जहाके चर्कमे घूघी प्रसिद्ध है इसके सिवाय सोजत, पचपधरा, फलोदी, पोकरण, और वालोतरा आदि कई प्रसिद्ध स्थान है। कुचामन नीमाज रियां जयपुर अहवा आसोप मारोह जसोल वाटमेर और साचोर आदि स्थान भी जाननेयोग्य है। वालोतरामे वड़ा मेला होता है।

सन् १८९१ ईस्वीमे २५२४०३० मनुष्योकी संख्या थी। लोग वहुधा गुम्वजरूपी घरोमे रहा करते है। जोधपुरमे पगडी और पीतलके वर्तन वहुत वनते है, इसकी वार्षिक आमदनी ४१००००० इकतालीस लाख रुपया है। यह नगर ६ मील लम्बी चहार-दीवारीसे घिरा हुआ है। इस दृढ दीवारमे ७० फाटक है। नगरमे पाषाणके वनेहुए वहुत अच्छे २ घर और मन्दिर है और तालावोपर पक्के घाट वने है। सन् १८९१ की जन संख्यामे ६२००० मनुष्य थे। जोधपुरसे तीन मीलपर मडोरके, जो पहिले पुराना मुख्य नगर था खण्डहर दिखाई देते है।

सम्वत् १९४३ मे महाराज प्रतापसिंहको सरकारकी ओरसे K C S I की उपाधि मिली, सम्वत् १९४४ मे प्रतापसिंहजी महाराणी राजराजेश्वरीकी जुबिलीके

उत्सवमे इंगलेण्ड गये। वहां उनको लेफ्टिनेण्ट कर्नलकी उपाधि मिली। इन्ही महाराज प्रतापसिहजीने महाराज कुमार सरदारसिहजीको शिक्षा दी है जिसके कारण वह सब प्रकारके कलाकौशल तथा राजविद्यामे चतुर और प्रवीण होगये है।

राज्यका काम कौन्सल, 'राजसभा'द्वारा सम्पादन किया जाता है। इसमें पोकरणके ठाकुर मंगलसिहजी चाँपावत, कविराज मुरारिदानजी, पण्डित शिवनारायणजी, मुन्शी हरदयालसिहजी मुख्य सभासद है। महाराज प्रतापसिहजी महाराजा साहब जसवन्त सिहके तीसरे भाई और महाराजा जालिमसिहजी सबसे छोटे भाई है, हम परमात्मा से प्रार्थना करते है कि इस राज्यकी सब प्रकारसे वृद्धि हो और हमारे वर्त्तमान महाराजा साहब बहादुर धन सुत सम्पत्तिशाली होकर आनंद लाभ करै।

जोधपुर राज्यके वर्तमान शासक श्रीमन् महाराजाधिराज श्री सरदारसिह साहब बहादुरजी बड़े विद्वान और योग्य महाराजा है। इससमय जोधपूर राज्यकी शासन प्रणालीका प्रबंध राजपूतानेकी रियासतोंमें सबसे अच्छा है। दीवानी, फौजदारी, पुलिस, फौज आदि सब महकमोका अच्छा प्रबंध है। प्रजावर्ग और जागीरदार सब प्रसन्न है। जोधपूर राज्यकी घुड़सवार फौज बहुत ही अच्छी है, इसवर्ष सन् १९०९ के दिसम्बर मासमे, गवर्नर जनरल लार्ड मिन्टो महोदय जोधपूरमे पधारे थे और हिजमजेस्टी सम्राट महोदयका आज्ञापत्र आपने जोधपुरमे ही सुनायाथा। तात्पर्य्य यह है की उक्त महाराजके सब भाँतिसे सुयोग्य और नीतिचतुर होनेसे अंग्रेज सरकार भी आपका बड़ा सन्मान करती है।

महाराज सरदारसिहजी साहब बहादुरके दो महाराज कुमार है। उनमेसे बड़ेका नाम महाराज कुमार श्रीसुमेरसिह बहादुर है।

इस समय (जोधपुर) मारवाड़मे रेलका अधिक प्रचार व विस्तार होगया है जोधपुर बीकानेर रेलवे तथा मारवाड़ रेलवेने इतना विस्तार पाया है कि प्रायः मुख्य स्थानोमे रेल होगई है. मारवाड़, जंकशन, पाली, केरला, लूनी-जंकशन, सालावास, जोधपुर, पीपाड़ मेरता, खजवाना, मूँडवा, नागौर, बालोतरा, पचपधरा, कुलेरा, कुचामन आदि स्थानोमे रेल चल रही है, जिससे व्यापारमे बहुत उन्नति हुई है।

दोहा-सिया सहित श्रीरामके, चरणकमल हियलाय।
पूर्ण भयो इतिहास यह, जोधनगर सुखदाय॥ १॥
महावीरके चरण गहि, द्विज बलदेव प्रसाद।
चाहत पाठक जननके, रहै हिये अहलाद॥ २॥

जोधपुरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

राजस्थान.

दूसराभाग.

बीकानेरका इतिहास.



एच्. एच्. महाराजा राजराजेश्वर नरेन्द्रशिरोमणि श्रीमहाराजाधिराज
सर गङ्गासिंहजी बहादुर जी. सी. आई. ई के सी. एस. आई.
एच् आर. एच्. धी प्रिन्स आफ़ वेल्स् के एडीकाङ्ग—बीकानेर.























बीकानेर।

(१) राव बीका,
(२) नारा
(३) लूनकरन,
(४) जैतसी
(५) कल्यानसिंह
(६) राजा रायसिंह
(७) दलपतसिंह
(८) सूरसिंह
(९) करनसिंह
(१०) महाराजा अनोपसिंह,
(११) सरूपसिंह
(१२) सुजानसिंह
(१३) जोरावरसिंह
(१४) गजसिंह
(१५) ,, राजसिंह,
(१६) ,, प्रतापसिंह
(१७) ,, सूरतसिंह
(१८) रतनसिंह
(१९) ,, सरदारसिंह
(२०) डूंगरसिंह
(२१) गंगासिंह

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

बीकानेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बीकानेरकी राजसृष्टिका आदि विवरण-आर्य राजाओंकी दिग्विजयकी रीति-राज्यप्रतिष्ठता, तथा इन देशोंके आदिम निवासी जाटोंकी उस समयकी अवस्था-सिक्ख जातियोंकी संख्या-विस्तृति तथा पश्चिम राजपूताना और उत्तर भारतमें इन जाट कृषकोंकी संख्याकी अधिकता उनके कृषिका व्यवसाय-शासनविधान-धर्मप्रणाली-बीकाके अभ्युदयके समय बीकानेरमें स्थित जाटोंकी नगरावली-बीकाकी जयप्राप्तिका मूल कारण-जाटनेताओंका बीकाके समीप इच्छानुसार अधीनता स्वीकार करना-उनके सम्बन्धकी व्यवस्थाका निश्चय करना-बीका और उनकी जात प्रजाका जोहियोंपर आक्रमण-बीकाका जय प्राप्त करना-बीकाका भाटियोंके पाससे नागौर देशको छीनकर १४८९ ईस्वीमें उसके द्वारा बीकानेर राजधानीकी प्रतिष्ठा करना-उनके चचा कांधलका उत्तरांशको जीतना-बीकाकी मृत्यु-उसके पुत्र लूनकरणका अभिषेक-उसका भाटियोंसे कितने ही देशोंको जीतना-उनके पुत्र जैतसिंहका अभिषेक-बीकानेरमें शासनशक्तिका विस्तार-रायसिंहका सिंहासन प्राप्त करना-बीकानेरके जाटोंकी स्वाधीनताका नाश-राजशक्तिकी प्रबलता-अकबरके साथ रायसिंहका मिलन-उनका सन्मान और सामर्थ्य वृद्धि-जोहियोंकी विद्रोहिता और उनका दमन-जोहियोंके अधिकारी देशोंमें अलिकजण्डरके आक्रमणके चिह्न-राजभ्राता रामसिंहसे पूणियाके जाटोंकी पराजय-रायसिंहकी कन्याके साथ कुमार सलीमका परिणय-रायसिंहकी मृत्यु-उनके पुत्र करणसिंहका अभिषेक-करणसिंहके तीन पुत्रोंका यवनसम्राट्के कार्यमें प्राण त्यागना-सबसे छोटे अनूपसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति-उनके द्वारा काबुलका विद्रोहनिवारण-उनकी मृत्युके सम्बन्धमें मतभेद-स्वरूपसिंहका अभिषेक-उनका हनन-सुजानसिंह, जोरावरसिंह, गजसिंह, और राजसिंहको क्रमानुसार सिंहासन प्राप्ति-विमाताका विषप्रयोग-राजसिंहका प्राणनाश-और उसका सामन्तोंके विरुद्ध सिंहासनपर अधिकार करना-सिंहासनके न्यायअधिकारी अपने भतीजेका प्राणनाश करना-आत्मविग्रह-जोधपुरपर आक्रमण-बीकानेरकी वर्तमान अवस्था-बीदावाटीका वृत्तान्त।

वर्त्तमान् विजित भारतकी पतित आर्य जातिके गौरव स्वरूप आर्य शासनके शेष स्मृति चिह्न स्वरूप दो प्रधान राजपूत राजाओंके इतिहासको वर्णन करके, हम इस समय राठौर वंशकी शाखा बीकानेरके इतिहासको वर्णन करते है। प्रकृतिकी आश्रय-

स्थली, मरुक्षेत्रमे कान्यकुब्ज वंशीय सियाजीके आदि राज्यस्थापनसे मारवाड़के वर्तमान महाराजा यशवंतसिहके शासन समयतक सम्पूर्ण जाननेयोग्य विषयोको पाठकोंके समुख भेट किया गया है। इस समय हमै आशा है कि गुणवान् पाठक उस राठौर राज्य–वंशरूपी वृक्षकी एक प्रधान शाखाके ज्ञातव्य इतिहासको पढकर अवश्य ही उसी प्रकारकी धीरताके साथ समय वितानेमे कातर न होंगे।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव सवसे पहिले लिखगये है, कि "राजपूतानेके राजाओंमे वीकानेरका राज्य दूसरी श्रेणीका गिना जाता है। यह मारवाड़की एक शाखा है, इसके महाराज जोधपुरके वंशधर है। इनके आदि अधीश्वर मूलराज्यने मारवाडकी उत्तर सीमामे स्थित देशको जीतकर इस राज्यकी प्रतिष्ठा की थी और इस राजको ठीक मारवाड़के मध्यस्थलमे स्थापित करके इसकी स्वाधीनता की विशेष रूपसे रक्षा की थी"।

हमारे पाठकोने मारवाडके इतिहासमे महावीर जोधाके शासन समय, सन् १५१५, संवत् १४५९ ईस्वीमे प्राचीन राजधानी मंडोरको छोडकर जोधपुर-नामक नवीन राजधानीके स्थापित होनेके वृत्तान्तको पढा है। जिस समय मारवाड़के महाराज जोधगिरिसे नवीन राजधानीमे आये उस समय उनके दूसरे कुमार वीका अपने चचा कांधलके साथ तीन सौ राठौरोकी सेना लेकर मरुक्षेत्रमे पिताके राज्यको मारवाडकी सीमामे वढ़ानेके लिये वाहर हुए। वीकाके जानेके पहले ही उनके भ्राता वीदाने अत्यन्त प्राचीन निवासी मोहिलोकी निवासभूमि पर आक्रमण कर उनको परास्त करके उनके देशोको जीतलिया। अपने भ्राता वीदाकी इस सम्पूर्ण फलदायक जय प्राप्तिसे उत्साहित हो वीकाजी दिग्विजयके लिये चले थे।

आर्य राजाओमे दिग्विजयकी रीति भारतवर्पमे चिरकालसे प्रचलित थी। हमारे शास्त्र, पुराण और इतिहासोमे इस दिग्विजयके सम्वन्धमे वहुत सी कथाएं पाई जाती है। चिर वीर व्रतधारी क्षत्रियोंके लिये दिग्विजयकी रीति वीरधर्मका प्रधान अग गिनी जाती थी। वीरधर्म, वीरनीति, और राजनीतिके मतसे यह दिग्विजयकी रीति आजतक निन्दनीय नही गिनी गई थी। स्वाधीन भारतमे वीरताका महान् आदर था, इसीसे सत्युग, त्रेता, और द्वापर तथा कलियुगके आर्यराजा इस दिग्विजयके लिये वाहर जाकर अनन्त धन उपार्जन कर यश और सन्मानसे विभूषित हो अपनी वीरताकी ऊँची प्रशसासे भारतवर्पको कंपायमान करते हुए अपने २ राज्यमे लौट आते थे। भारतवर्प कभी भी एक आर्यमहाराजके अधीनमे नही रहा। जहाँतक जानाजाता है उसके पहलेसे ही चन्द्रवश और सूर्यवंशने दो भागोमे विभक्त होकर भारतके भिन्न २ प्रान्तोमे राज्यका विस्तार किया था, और अन्तमे सवसे पहले आर्यावर्तके अधिकारमे होते ही क्रमश· दक्षिणतकको जीतकर सम्पूर्ण भारतमे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर लिया था। उस क्षत्रीवर्णके मूल सूर्यवश और चन्द्रवशसे धीरे २ अनेक शाखाए निकल कर भारतवर्पके छोटे २ अगणित स्थानोमे पहुँच गई,। इस सूर्यवश और चन्द्रवंशके वीचमे जव जिस वशमे कोई महावीर महा योधा जन्म लेता था,

तभी वह दिग्विजयके लिये बाहर जाकर अपने बाहुबलसे छोटे २ राज्योंको जीतकर चक्रवर्ती महाराजकी उपाधि धारण करता था। यद्यपि वह चक्रवर्ती महाराज भिन्न २ राज्योंको जीतकर अतुल धन और विवाहके योग्य सुन्दर २ स्त्रियोंको हरण करके लाते थे, परन्तु वह किसी समय भी कूट राजनीति जालके विस्तारसे उन समस्त राज्योंको अपने अधिकारमे नहीं करते थे। किसी राजवंशका एकवार ही लोप नही करते थे, न किसीका राज्य अपने हस्तगत करते थे। पूर्वकालमे जिस समय देशीय राजा दिग्विजयके लिये बाहर जाकर समरभूमिमे युद्ध करनेकी इच्छासे डटते थे, उस समय वह केवल उन्हींके साथ युद्ध करते थे जो समर चाहते थे। जो अपनेको असमर्थ जान विना युद्धकिये अधीनता स्वीकार करलेते थे उनके साथ वे कभी युद्ध नहीं करते थे। दिग्विजयी राजा वीर धर्मके अनुसार युद्धमे प्रवृत्त होकर कभी किसी जातिका लोप तथा राज्यका नाश नहीं करते थे। उनमे कुछ ही समयके उपरान्त मित्रता होकर वैवाहिक सम्बन्ध हो जाता था। यद्यपि प्रधान २ राजवंशके वीर व्रतधारी कुमार स्वतंत्र राज्यके स्थापनकी अभिलाषासे अन्य देशोंपर आक्रमण कर उनपर अधिकार करलेते थे, परन्तु वह ऐसा कदापि नहीं करते थे कि उस देशको एक ही बार कठोर पराधीनतामे बॉधकर प्रत्येक प्रजाके राजनैतिक अधिकारको हरण कर प्रजाके सर्वस्व हरणकी इच्छा करते हो। वीर-धर्मके अनुसार वह युद्धभूमिमे जाकर देशको जीतकर वहॉके निवासियोके साथ मिलकर उनमेसे एकको लेकर उस नवीन राज्यको शासन करते थे। वहॉके निवासी भी इनको अपनी ही समान जानकर नवीन शासनमे पूर्वकी नाई स्वाधीनता और सुख शान्ति संभोग करते, तथा किसी स्थानमे नवीन राजाके बल विक्रम और शिक्षा ज्ञानकी सहायतासे स्वदेश और जातिकी उन्नति करलेते थे। अतएव मारवाड़के राजकुमार बीकाने इस शेपोक्त श्रेणीकी समान दिग्विजयके लिये बाहर जाकर इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि बीकाने दिग्विजयके लिये बाहर जाकर सबप्रकारसे सर्व साधारणमे सफलता प्राप्तकी, विजयकी अभिलाषावाले यही प्रतिज्ञा करके घरसे चलते थे कि या तो मार डालेंगे या मर-जॉयगे, दूसरे जाति धर्मकी विधिके अनुसार शत्रु हो अथवा मित्र हो दिग्विजयके समय उनके हाथसे देशको छीन लेनेकी रीति वीरधर्मावलम्बी राजपूतोमे प्रबल थी, इसीसे सफलता प्राप्तिका और भी सुभीता हुआ।

मारवाड़के राजकुमार बीकाजी पहिले पहिल केवल तीनसौ राठौर वीरोकी सेना साथ लेकर दिग्विजयके लिये चले। उन्होने जाङ्गल नामक स्थानपर सांखला नामकी प्राचीन जातिपर आक्रमण किया। प्रबल युद्ध होनेके पीछे राठौरोने सांखलालोगोको परास्त करके मारडाला, बीकाजीके बलविक्रमसे राठौरोकी सेनाका दल साहस और वीरताके ऊंचे गौरवसे शीघ्र ही मरुक्षेत्रको प्रतिध्वनित करनेलगा। उस प्रथम युद्धमे सब प्रकारसे जय प्राप्त करके बीकाजीके साथ पुंगल देशमे भाटियोका परिचय हुआ। पुंगलपतिने बीकाको महावीर पुरुष देखकर अपनी एक कन्याका विवाह उनके साथ करदिया। बुद्धिमान्

पुगलपति इस बातको भलीभांतिसे जान गया था कि वीर बीकाके साथ युद्धके बदलेमें उसके साथ संबन्ध करके अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करना ही कर्तव्य है । बीकाने देखा कि भाटी जातिके अधीश्वरने जब अपने वंशमें होकर कन्या दी है तब पुगलपर अधिकार करना किसी भांति भी उचित नहीं, इस कारण उसने भाटियोंकी स्वाधीनतामें किसी प्रकार हस्ताक्षेप न करके कोड़मदेसर नामक स्थानमें नवीन किला बनाकर वहां निवास किया, और वह धीरे २ निकटवर्ती अन्यान्य प्रदेशोंको जीतकर अपने अधिकारमें करनेलगा । असीम साहसी राठौरोंकी सेनाके विरुद्ध कोई भी स्थानी सम्प्रदाय जय प्राप्त करनेमें समर्थ न हुई, इस कारण बीका धीरे २ क्षुद्र देशोंकी सीमा दबाकर प्रबल होगया । विजयी बीका धीरे २ राज्यकी सीमाको बढाकर अंतमें वहांके प्राचीन निवासी जाटोंके अधिकारी देशोंकी ओर जा पहुँचा, जाट चिरकालसे ही इन देशोंमें निवास करते थे । इस समय बीकानेर राज्यके अधिकांश देशोंमें जाट लोग ही रहते थे, जोधपुरवंशीय बीकासे कृषिजीवी जाटोंमें सामन्त शासनकी रीति प्रवर्तित होनेके पहिले उनकी अवस्था किस प्रकार थी, महात्मा टाड्र साहब उस विषयको प्रयोजनीय जानकर इस । स्थानपर वर्णन कर गये है । उन देशोंके जाटोंके प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको लिखना उचित जानकर हम भी यहां प्रकाश करतेहैं ।

इतिहासवेत्ता टाड्र साहब लिखते है " इस विख्यात् तथा सुविस्तारित जातिके सक्षिप्त विवरणको हमने इससे पहिले भी प्रकाशित किया है । टिमिरिस (Tomyris) तथा साइरस (Cyrus) के समय लाहौरके वर्तमान जाट राजाके समयतक प्राचीन एशियाकी जातिमें इन जाटोंकी सख्या सबसे अधिक थी, यह बात सभी इतिहासोंमें प्रसिद्धहै, वर्तमान लाहौरपतिके उत्तराधिकारी यदि इनकी समान उद्यम एवं प्रतिभाशाली होते तो जाटजातिके पुनर्वार उदयमें वह अपने प्राचीन पैतृक वासस्थानसे एशियाके सिहासन पर एक दिन अवश्य बैठ सकते । उस मध्य एशियाकी ओरसे यह इतनेमें अनेक दूरतक आगे बढ़े है । ईसोंकी चतुर्थ शताब्दीमें पजाबमें जट्ट वा जाट राज्य प्रतिष्ठित था, परन्तु इन्होने कितने समय पहिले इस जाटजाति और इस देशके प्रथम उपनिवेशको स्थापन किया था, वह विषय हमें ज्ञात नही है । मुसलमान भारतवर्षमें अपनी शक्तिको विस्तार करनेके लिये जब उद्यत हुए थे तब इस जाटजातिने ही उनके विरुद्ध खड़े होकर विशेष बाधा दी थी । महमूदने जिस समय सिन्धु नदीके पार होनेकी चेष्टा की थी, उस समय इस जाटजातिने ही अपने बाहुबलसे उनके मार्गको रोककर अपनी रक्षा की थी, तथा कठोर हृदय तैमूरने जिस समय इन जाटोंके विरुद्ध भयकर सग्राम किया था

---

(१) कर्नल टाड साहबने पजाबपति रणजीतसिंहको जाट कहकर इस टीकेमें लिखा है, " रणजीतसिंहने बहुत पहिलेसे पेशावर पर अधिकार किया है, और काबुलपर भी अधिकार करनेकी इच्छा की है । काबुलकी वर्तमान विशृंखलामें उनकी आशा पूर्ण होनेका विशेष सुभीता उपस्थित हुआ है ।"

(२) प्रथम भागका परिशिष्ट देखो ।

उस समय इन्होने जैसा बल विक्रम प्रकाश किया था, उसको हम पहिले ही कह आये है। संम्राट बाबरने स्वयं लिखा है कि जब जब वह भारतवर्षमें अपनी शासनशक्तिको स्थापन करने के लिये अग्रसर हुआ तब तब जाटोने ही उसके विरुद्ध हथियार पकँडे थे। पंजाबके किसान जिस समय मुसलमानी धर्मसे आक्रान्त हुए, उस समय प्रधानतासे इस जाटजाति, और पंजाबके समर व्यवसाइयोने नानकके द्वारा प्रचारित धर्मका अवलम्बन करके उस समय जाट नामको छोड़ कर सिक्ख नाम धारण किया"।

इसके पीछे साधु टाड् साहब लिखते है, "कि इस बातका हमे निश्चय है कि इनके जूति, जिति, जित, जूट, वा जाट, यही नाम है, तीन शताब्दीके पहिले भारतवर्षमे अन्यान्य जातियोकी अपेक्षा इनकी सख्या अधिक थी, और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि रजवाड़ेके पश्चिमांश और उत्तरांशके किसानोमे इनकी संख्या अधिक नही थी"।

पहिलेसे इस बातको भी लिखा है, कि "किस समय इस जाटजातिने भारतवर्षके मरुक्षेत्रमे सबसे पहिले आकर निवास किया था। यह तो हम पहिले ही कह चुके है कि यह विषय हमै विदित नही है। परन्तु जिस समय राठौर गण इस जाट जातिको जीतनेमे प्रवृत्त हुए थे उस समय इसी जाटजातिमे जैसे आचारोके व्यवहार करनेकी रीति प्रचलित थी उससे भलीभाँति जानाजाता है कि यह जाटजाति सीदियन जातिसे उत्पन्न है। यह लोग केवल खेती करके ही अपना जीवन निर्वाह करते थे, इनके नेताओने कभी अपना प्रभुत्व इनके ऊपर नही प्रकाश किया, केवल उपदेश और सम्मति देते रहे। विश्वजननी भवानी एक जाटकी कन्यास्वरूपसे प्रगट हुई थी। इसीके विश्वाससे उन्होने उस भवानीकी आराधनाके अतिरिक्त हिन्दू धर्मका और कोई विधान ग्रहण नही किया, अर्थात् हिन्दू धर्मके साथ उनका कोई सम्बन्ध नही था। साराश यह है कि, जरकसीजसे पहिले जाट लोग जिस पौत्तलिक रीतिको भारतवर्षमे लाये थे, विख्यात मुसलमान साधु शेख फरीदने उनकी उस पौत्तलिकताको नष्ट कर दिया, इस लिये धर्मके सम्बन्धमे उनका कोई एक निश्चित विधान न रहा। मरुक्षेत्रके जाट पौत्त-लिकता और मुसलमानता दोनोको पालन करते थे, और उन्होने अपनेको एक स्वतन्त्र जाति विचार लिया था। एक पूनिया जाटने हमसे कहा कि "हमारा आदि वासस्थान

(१) बादशाह बाबरने लिखा है, कि "पहिली रबीउलकी १४ वीं तारीख शुक्रवारके दिन। २९ दिसम्बर १५२५ ईस्वीको मै स्यालकोटामे गया। हिन्दुस्तानमे मै जितनी बार आया" जाट और गूजर लोगोने उतनी ही बार नियमितरूपसे पर्वत और झाडियोमेसे बडी संख्याके सहित बैल और भैसोको चुरा कर हमारे ऊपर धावा किए।'

(२) मिस्टर एलफिन्स्टन जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये, उस समय कर्नल पिटमान उनके साथ गये थे, कर्नल पिटमानने लिखा है कि काबुलके जाट किसान मुसल्मान थे, वहाँ सिक्ख किसान बहुत थोड़े दिखाई देते थे, परन्तु वह जाट सिक्ख जातिके द्वारा एकबार ही परास्त होगये थे।

पंजावके वाहर है" । अधिक क्या कहै । बीकाने मारवाडके जो छः नामधारी जाटोकी सम्प्रदायका दमन करके केवल अपने अधिकारका विस्तार किया था । उसमे एक सम्प्रदायका नाम अग्निख देखा जाता है । अकसम एवं जक्षरतीसर्तीसे जो चार जाटोकी सम्प्रदायने बेटरियाके ग्रीक राज्यका नाश किया था, उसी सम्प्रदायके नेताका नाम अग्नि था इसी कारणसे दोनोमे भलीभाँति सदृशता विराजमान है । "

कर्नल टाड् साहब लिखते है 'कि' तैमूर और बाबरके भारतपर अधिकार करनेके मध्य समयमे राठौरोने जाटोको पराजित किया था । तैमूर चगताई वशका आदि पुरुष है उसने जाटोको भारतके पञ्जक्षेत्रमे ट्रन्स सक्तियानासे भगा दिया ।

इस कारण हम यह सिद्धान्त कर सकते है कि मध्य एशिया ससारकी सभी जातिका उत्पत्ति स्थान है । जाट गण यहासे सिन्धुनदीके पूर्वप्रान्तकीओर भाग गये थे । बीकाजीने जिन जाटोको परास्त किया था उन जाटोने बहुत शताब्दियोके पहले यहां आकर निवास किया था ।

जाटोके अधिकारी देशोका विस्तार भी इस सिद्धान्तकी पुष्टि करता है, कारण कि बीकानेर राज्यकी सीमाके प्राय सभी देश नीचे लिखी हुई छ. सम्प्रदायोके जाटोसे परिपूर्ण है,-

१ पूनिया ।　　४ असिघ ।
२ गोदारा ।　　५ बेनीवाल ।
३ सारन ।　　६ जोया ।

यद्यपि शेषोक्त सम्प्रदायको बहुतोने भाटियोकी शाखा कहा है, परन्तु भाटियोके द्वारा पुत्र रूपसे परिपालित हुए जोया गण इस जाटजातिसे उत्पन्न नही थे यह भी सिद्धान्त है।

"बीकानेरके जाटोकी प्रत्येक सम्प्रदायके नामसे एक २ विभाग है, और वह प्रत्येक विभाग जिलारूपमे विभक्त है । जाटोकी वस्ती छ विभागोके अतिरिक्त बागौर, खारी पट्टा और मोहिल नामके राजपूतोसे छीने हुए और भी तीन विभागोमे है । यह छ जाट विभाग बीकानेरके मध्य और उत्तरांशमे स्थित है और राजपूत विभाग दक्षिण और पश्चिमकी सीमामे स्थापित है ।

उस समयके छ' विभाग इस प्रकार है ।

विभाग	ग्रामसंख्या	जिलेके नाम ।
१ पूनिया	३००	भादरा, अजितपुर, सीधमुख, राजगढ, दादर, थोह सांकू इत्यादि ।
२ बेनीवाल ।	१५०	भूकरखा सून्दरी, मनोहरपुर, कूई बाड, इत्यादि ।
३ जोया ।	६००	जैतपुर, कबानो, महाजन पीपासर, उदयपुर इत्यादि ।
४ अग्निघ ।	१५०	रावतसर, बिरामसर, दाद्रसर, गुॅडडली, कोजर, फुआग,
५ सारन ।	३००	बूचावास सोवाई, वादनू सिरसिला इत्यादि ।
६ गोदारा ।	७००	पुन्दरासर, गोसेनसर, (बडा) शेखसर, गडसीसर, गरीबदेसर,
जोड संख्या	२२००	(जाटोके प्रदेश) रगीसर काल्, इत्यादि ।

७ भागौर	३००	वीकानेर, नार, किला, राजासर सतासर, चतरगढ़, रिनदीसर, वीतनख, भवानीपुर, जयमलसर इत्यादि।
८ मोहिला	१४०	चौपुरा (मोहिलोकी राजधानी) सावन्ता, हीरासर, गोपालपुर, चारवास, वीदासर, लाडन्, मलसीसर, खरवूजारा-कोट इत्यादि।
९ खारीपट्टा अर्थात् खारी-नामकका देश।	३०	
सब जोड़	२६७०	

महात्मा टाड् साहवकी उक्तिका प्रतिवाद करना हम किसी प्रकार भी उचित नही समझते, परतु सत्यके समानकी रक्षाके लिये हम उनकी इस बातका प्रतिवाद करनेको वाध्य है कि भारतवर्षके जाट् मध्य एशियाके जट्ट जातिके वशधर नही है। इसमे उनको चाहे दृढ विश्वास हो, परंतु हम उसका पोषण किसी भाँतिसे नहीं कर सकते। इसी विश्वाससे उन्होने राजपूतोको पोरसका राजवंशी कहा है। सारांश यह है कि जहाँ नामका कुछ भी सादृश्य रहे, जहाँ आचार व्यवहारमे किञ्चित् भी समानता देखी है, वही पर टाड् साहवने अपनी विचित्र युक्तिमय कल्पनाओका विकाश किया है। जेसे उनका यह अनुमान है कि जट्ट जातिने मध्य एशियासे भारतमे आकर जाट नाम धारण किया। इसी प्रकार उनका यह भी विश्वास था कि ब्राह्मण, क्षत्री इत्यादिने भी मध्य एशियासे भारतवर्षमे प्रवेश करके आदिमके निवासियोको जीत कर क्रमानुसार अपना राज्य विस्तार किया है। एलफिनिस्टन्, कोलब्रुक आदिने भी इसी मतका अनुमोदन किया है। आधुनिक मैक्षमूलर इत्यादि विद्वानोका भी यही मत है। इन्हीके आदर्शसे विश्व-विद्यालयके शिक्षित देशियोका भी यही विचार प्रवल होगया है। परन्तु हम इस मतके पक्षपाती नही है। हमारे शास्त्र, पुराण,इनिहास इत्यादिमे इसका कोई प्रमाण नही पाया जाता कि आर्य गणोने मध्य एशियासे भारतमे आकर राज्यका विस्तार किया है। वरन हमे महाभारत इत्यादिमे इस प्रकारके प्रमाण मिले है, कि भारतवर्षकी अनेक जातियां म्लेच्छ होकर मध्य एशियाकी ओरको चली गई थी। हमारे देशके सम्बन्धमे, जातिके सम्बन्धमे देशके इतिहासके संबन्धमे साहवोके वचनोपर जिनका वेदवाक्यके समान विश्वास है, हम उनके उस भ्रामक विश्वासके विरुद्ध किसी वातके कहनेकी अभिलाषा नहीं करते। हा केवल इतना ही कह सकते है कि शास्त्र पुराण ओर इतिहासोको पढ़कर

(१) कर्नल टाड् साहवने टीकेमे लिखा है कि पहिले जाटोने अपनेको वियानाके यदुवंशका उत्तराधिकारी कहकर परिचय दिया था। उनसे इस पकार किवदंती प्रचलित है कि उनका आदि वासस्थान कन्धारमे था।

इसके सम्बन्धमे अपना गठन प्रकाश करना कृतविद्य संप्रदायको उचित है और शास्त्रोके देखनेसे यह भ्रांति सहजमे मिटजाती है।

खैर-महात्मा टाड् साहबने जो कुछ पीछे वर्णन किया है कि "इस समय राज्यकी वसती इतनी शीघ्रतासे पूर्ण हो रही थी कि बीकाजी अपने पिताके वासस्थान मंडोरको छोड़ कर कई वर्षके बीचमे ही २६७० ग्रामोके अधीश्वर होगये। परन्तु इतने बड़े प्रदेश विजय करनेके लिये बीकाजीको अपनी प्रबल शक्तिके प्रयोग करनेकी आवश्यकता न पडी कारण कि वहांके निवासियोने अपनी इच्छानुसार, बिना युद्ध किये ही उनकी अधीनता स्वीकार करके उनको अपना प्रभु बना लिया। वह जाटगण बीकाके अधीनमे एक राज्यकी प्रजारूपसे रहने लगे थे, परन्तु वर्तमान समयमे पूर्वोक्त संख्यक ग्रामोकी सख्या आधी भी नही रही।

बीकावंशके वर्तमान बीकानेरके अधिपति सूरतसिंहके राज्यके ग्रामोका परिमाण १३०० खड भी नहीं हुआ।"

बीकाजी मारवाडके जिन अंशोको अपने अधिकारमे करनेके लिये बाहर गये थे, उस उत्तरके गारा अंशके जाट तथा जोहिया गण अत्यन्त सामान्य अवस्थासे केवल पशुओके पालनसे अपनी जीविका निर्वाह करते थे। उनकी धन सम्पत्ति और उनका सर्वस्व केवल पशु ही थे। वह दलके दल पशुओको साथमे लेकर अतिरिक्त पशुओको बेचा करते थे, और गाय भैस इत्यादिके दूधमेसे घी निकाल कर, तथा भेड़ इत्यादिका रुऑ सारस्वत ब्राह्मणोके हाथ बेचा करते थे। इस देशमे उपरोक्त याजन कार्यके अतिरिक्त वाणिज्य व्यवसाय भी करते रहते थे। जाट और जोहिया उक्त कई एक द्रव्योके बदलेमे उन वणिक ब्राह्मणोंसे गेहूँ चावल इत्यादि आवश्यक पदार्थोंको लेते थे।

वीर श्रेष्ठ बीका जिस समय नवीन राज्यके प्रतिष्ठाकी इच्छासे इन जाट और जोहियोंके अधिकारी देशोको जीतनेके लिये वीरताके गर्वसे आगे बढ़ा, उस समय उनकी उस कामनाके पूर्ण होनेके पक्षमे बहुत सा सुभीता मिलगया था। इस कारण उन्होने बडी सरलतासे विना युद्ध किये एक विस्तीर्ण देशका राज्य प्राप्त करलिया। क्षीणहृदय दुर्बलशरीर बगालीजातिने जिस भाँति सिराजुद्दौलाके घोर अत्याचार और उपद्रवोसे पीडित हो अंतमे अंग्रेजोके करकमलमे जननी जन्मभूमिको अर्पण किया था, इन जाटोने भी उसी प्रकारसे विना युद्ध किये वीर श्रेष्ठ केशरी बीकाके हाथमे जननी जन्मभूमिके शासनका भार अर्पणकिया।

टाड् साहब लिखते है, कि "एक २ करके अनेक भिन्न कारणोके समावेशसे बीकानेरकी राज्यवृद्धिमे विशेष सुभीता हुआ था, तथा उसी कारणसे जाटोने प्राचीन सीढियोके सरलभावको छोड़कर राजपूत सामन्त शासनकी रीतिके अनुसार नवीन प्रथाको धारण किया। यद्यपि बीकाके भाई बीदाने मोहिलोंको परास्तकरके और उनके देशोपर अधिकार करके बीकाकी जय प्राप्तिका मार्ग साफ कर लिया था, परन्तु जिस पापसे ससारकी समस्त साधारण शासनरीतिका विध्वंस होगया है, यदि

जाटोमे वह पापाग्नि प्रज्वलित न होती तो बीका कभी भी इस प्रकारसे विना युद्ध किये देशको नही जीत सकता था। जाटोंकी छः सम्प्रदायमेंसे जोहिया और गोदारा नामक अत्यन्त सामर्थ्यवान् जाट सम्प्रदायमें परस्पर विद्वेष अधिक बढ गया था, इसी कारणसे यह जोधाके वंशधर सरलतासे राजसिंहासनपर विराजमान हुए बीकाकी जयप्राप्तिका एक दूसरा कारण यह भी था कि इसके पहिले अत्यन्त कठिन स्वभाव मोहिल जातिके साथ इन जाटोकी भयंकर शत्रुता थी, वीदाने राठौरोकी सेना के साथ आकर उनका एकवार ही विनाश कर अपनी वीरता प्रकाश की थी, अस्तु जाट इनके भयसे बीकाकी शरण आये। और फिर इन्ही देशोकी सीमामे जैसलमेरका राज्य विराजमान था; उसी जैसलमेरमे भाटी लोग अत्यन्त प्रवल होकर जाटोके ऊपर अन्याय उपद्रव और घोर अत्याचार करते थे, इस कारण जव उन्होने उन अत्याचार करनेवालोके हाथसे स्वजातिकी रक्षा होनी असंभव देखी, तव इन जाटोने विना युद्ध किये बीकाकी अनुगत्यता स्वीकार करली। विशेष करके बीकाके आधीनकी महा-वली राठौर सेनाने दिग्विजयके लिये वाहर जाकर जिस भांतिसे अपने वल विक्रमको प्रकाशित कर जंगलके निवासियोंका नाश करदिया था, इसीसे उन्होने बीकाकी शरण जानेके अतिरिक्त अपनी रक्षाका दूसरा उपाय न देखा"।

तव गोदाराके जाटोने घोर संशयमे पडकर, बीकाको आत्म समर्पण करना उचित है अथवा नही,इसका निश्चय करनेके लिये शीघ्र ही एक जातीय सभा की। सबसे पहले गोदाराके नेताने उस सभामे आकर अनेक तर्क कुतर्क करनेके पीछे यह निश्चयकिया कि राठौर वीर बीकाको संतुष्ट करना परम कर्तव्य है।

गोदारा जाटोके प्रधान नेता पाण्डु सेखासरमे निवास करते थे। पाण्डुको नीचे लिखे हुए रूनियाके नेतासे संमान और मर्यादा प्राप्त हुई थी। इन जाटोमे सव प्रकारसे सौम्यभाव प्रचलित था। सभी मनुष्य समभावसे भूसम्पत्तिको भोगकर पशुओंका पालन करके जीविका निर्वाह करते थे।

गोदाराके जाटोने जातिकी साधारण सभामे एकताका अवलम्वन कर उक्त सेखासर और रूनियाके अधिनायकको राठौर राजकुमार बीकाजीके निकट भेजकर निम्नलिखित व्यवस्था कर उसके करकमलमे आत्म समर्पण करनेके लिये अनुरोध प्रकाशित किया।

प्रथम–जोहिया तथा जो अन्यान्य जाट गोदाराके साथ शत्रुता और अत्याचार करते है बीकाको उनकी ओरसे जोहिया आदिके विरुद्धमे खडा होना होगा।

---

(१) पाक पत्तनके मुसलमान साधु, शेख फरीदके नामके अनुसार इस गावका नाम शेखा-सर रक्खा गया था। इस देशमे शेख फरीदकी एक दरगाह आजतक है। टाड् साहव लिखते है कि, "जाट भवानी देवी माताकी आराधनामे लिप्त होनेके पहले इसी शेख फरीदकी ओर विशेष भक्ति प्रकाश करते थे,। ऐसा जानाजाता है कि कर्नल टाड् साहवने यही विश्वास करके जाटोको सिदियन जातिसे उत्पन्न माना है तथा उन्हे मुसलमानसे हिन्दू होना निश्चय किया था। उस समय भारतवर्षमे सर्वत्र ही बहुतसे हिन्दू मुसलमान पीरोकी भक्ति और पूजा करते थे, इससे क्या वे मुसलमान समझेजाते है। इससे जाटोको मुसल्मान धर्मवाला कहना ठीक नहीं है।

द्वितीय–भाटीगण जिससे फिर आक्रमण न करसकै इस हेतु पाश्चात्यसीमाकी रक्षा करनी होगी ।

तृतीय–यहांके निवासियोके चिर–प्रचलित स्वत्व और अधिकारपर आप किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न कर सकैगे ।

दोनो जाट नेताओने बीकाके सम्मुख जाकर उपरोक्त तीनो प्रस्तावोको कह सुनाया, नीति–विशारद बीकाने गोदारादिकोके उस प्रस्तावमे तुरन्त ही अपनी समति दो । जब कि विना युद्ध हुए वहां अपना अधिकार होता है, तब ऐसा कौन है कि जो अपनी संमति न देगा? बीकाके इस प्रकार संमति देते ही गोदारालोगोने उसको तथा उसके उत्तराधिकारियोको तुरन्त ही अपना अधीश्वर मानलिया । विजयी बीकाके साथ गोदारा वासियोका यह नियम निश्चित हुआ कि बीका और गोदारावासियोकी वास-भूमिमे जितने घर है उन सब घरोसे करका एक २ रुपया लिया जाय, और गोदारा-के अधिकारी भूभागो पर प्रत्येक सौ बीघे जमीन पर किसानोसे दो रुपया करका लिया जायगा । राठौर बीकाने इसमे भी अपनी समति देनेमे विलम्ब न किया । क्या इस समय कोई भारत जाति आत्म समर्पण करते समय अपने स्वत्वकी रक्षा करनेके लिये कुछ कह सकी है ? कोई भी नही, क्लाइवके सम्मुख मीरजाफरसे कष्ट पाकर क्या आत्म समर्पण करते समय बंगाली कुछ कहसके थे । अहा एक सामान्य पशुपालक गोदाराके जाटने वीर श्रेष्ठ बीकाके हाथमे आत्म समर्पण करके तथा उसको स्वजातिके अधीश्वर पद पर वरण कर, कर देनेमे अपनी सम्मति प्रकाशित करके भी अपने स्वजातिके स्वार्थ और अधिकारको विस्मृत न किया । उन्होने निर्भय होकर स्पष्टरूपसे कहा " आप अथवा आपके भविष्य उत्तराधिकारी हमारे जातीय अधिकारके ऊपर किसी प्रकारसे हस्ताक्षेप न करै इसमे प्रमाण क्या है ? तथा इसका साक्षी कौन है ? " धर्मनीतिके साथ राजनीतिका कहाँतक सम्बन्ध हे ? इस बातको बीका भली भाँतिसे समझता था, और वह यह भी जानता था कि कूट राजनीतिके चक्रको घुमाकर अपना स्वार्थ साधन करना किसी प्रकार भी उचित नही इसी कारणसे गोदाराके जाटोने विना समर किये जब उसकी वश्यता स्वीकार कर ली तब उसने अपनी नवीन प्रजाके ऊपर किस प्रकार व्यवहार करना कर्तव्य है तथा किस प्रकारसे उनके भयको दूर किया जाय इसका निश्चय शीघ्र ही करलिया, और वह निश्चय जिस प्रकारसे एक पक्षके भयका दूर करनेवाला तथा गौरवका बढानेवाला था दूसरे पक्षमे भी वही मत राजनीतिज्ञताका चूडान्त परिचय देनेवाला था । बीकाने गोदारासे उसी समय कह दिया कि " मे तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी तुम्हारे चिर प्रचलित अधिकारके ऊपर हस्तक्षेप नही करेगे, उसकी साक्षी यही है कि तुमने जो विना युद्ध कियेहुए हमारे हाथसे आत्म समर्पण किया है, और मुझे अपने अधीश्वर पद पर वरण किया है, इसके स्मृति चिह्नस्वरूपमे हमारे उत्तरा[धि]कारियोके पक्ष और हमारे निज पक्षसे इस नियमका निर्धारण होगा, और उ[स] नियमोके पालन करनेकी यह रीति बाँधते हैं कि, मे और मेरे उत्तराधिकारी तु

और तुम्हारे दोनो नेताओके वंशधरोसे अभिषेकके समयमे राजतिलक ग्रहण किया करेगे। जबतक इस प्रकारसे राजतिलक न दिया जायगा तबतक राजसिहासन सूना विचारा जायगा"। अहा कैसी सरल और उदार राजनीति है!

जिस प्रकार वीरश्रेष्ठ बीकाने विना युद्ध किये अत्यन्त सरलतासे एकमात्र अपने बल विक्रमका भय दिखा कर गोदाराके ऊपर अपना अधिकार किया था, इस प्रकार की घटनाएँ भारतवर्षके इतिहास मे बहुत कम पाईजाती है। एक और भी विचित्र दृश्य हमारे नेत्रोके सम्मुख आया है? वह यह कि राजपूत वीरोने रजवाड़ा वा मारवाड़ के जिन देशोके प्राचीन निवासियोको राजनैतिक बलसे परास्त करके अपने अधिकारका विस्तार किया है और वहाँके प्राचीन निवासियोने जिस भावसे उनकी अधीनता स्वीकार कर उन्हे अपना अधीश्वर स्वीकार किया है उसके स्मृति चिह्न–स्वरूप अनेक प्रथाएँ, आजतक मेवाड़, मारवाड़ और आमेर आदि राज्योमे प्रचलित है! मेवाड़के आदि निवासी भील गणोने गहलोत वंशके आदि पुरुषको जिस भावसे राजपद पर अभिषिक्त कर उनको राजतिलक दिया था, उदयपुरके महाराणाके यहाँ आजतक उसी भावसे भीलनेताके द्वारा राजतिलक देनेकी रीति प्रचलित देखीजाती है। आज भी मेवाडके महाराणाके अभिषेकके समय वह ओगना भील सम्प्रदायके नेता अपने हाथके अँगूठेको छेदन कर उस रक्तसे महाराजके मस्तकपर तिलक कर और महाराणाका हाथ पकड़ कर उनको सिहासनपर बैठाते है। और उन्दरी नामक भील सम्प्रदायके नेता अपने पूर्वपुरुषोके समान टीका देनेके समय, एक चाँदीके पात्रमे धान, दूर्वा और रुपये रख कर नजर देते है। आमेर अर्थात् जयपुरके आदिम निवासी मीना गण भी राजाके अभिषेकके समय इस प्रकार तिलक किया करते है। कोटा, और बूँदी-राज्य हाडौतीके आदिम अधीश्वरोके नामसे आजतक पुकारा जाता है। महाराज बीकाने विना युद्ध किये जो जाटोको अपने वशमे करलिया था, सो बीकाके उत्तराधि कारियोने भी दो प्रथाएँ उसके स्मृति चिह्नस्वरूप रक्खीथी। पाण्डुने जिस प्रकार बीकाके मस्तकपर राजतिलक किया था, आजतक बीकानेरके अधीश्वरोके मस्तक पर उसी पाण्डुके वंशधरोके सबमे प्रधान नेता उसी भाँति तिलक किया करते है। अभिषेकके समय महाराज पाण्डुके वंशधरोको भेटमे पच्चीस सुवर्ण मुद्रा दिया करते है। अहा! राजाकी प्रतिज्ञा–पालनका कैसा उज्वल निदर्शन है। पलासीके युद्धके पीछे क्लाइवने जालपत्रको प्रकाश कर अमीचन्दको वंचित किया था, और समरके प्रधान सहायकारी मीरजाफरको भी सिहासनसे रहित करदिया था, परन्तु क्षत्रिय वीर बीकाने जो प्रतिज्ञा की थी उसके वंशधर भी आजतक उस प्रतिज्ञाको उसी प्रकारसे पालन करतेआते है। इससे स्पष्ट होता है कि बीका स्वयं इस बातको भलेभाँतिसे जानते थे कि राजाको किस प्रकारसे प्रतिज्ञा पालन करना चाहिये और किस प्रकारसे प्रजाके हृदय पर अधिकार करना उचित है। इसका एक और प्रमाण यह भी है कि बीकाने उसके निकट यह प्रस्ताव किया था कि "यह देश मुझे देदो, मै इस स्थान पर राजधानी स्थापित करूँगा"। यदि बीका इच्छा करते तो

अपनी चतुरता तथा कूट राजनीतिके जालका विस्तार करके उस देशपर अधिकार कर सकते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उनके उस प्रस्तावके करते ही उस भूखंडके अधिकारीने कहा "मै इस देशको देनेके लिये तैय्यार हूं, परन्तु यह देश जो कि मेरे अधिकारमे था वह मैने आपको दिया, इसके स्मरणके लिये आपके नामके साथ मेरा नाम मिलाकर इस राजधानीका नाम रखना होगा"। बीकाने तुरन्त ही यह बात भी मानली। इसी कारणसे उस राज्यधानीका नाम बीकानेर हुआ। क्योंकि उस जाटका नाम नेरा था।

दिवाली और होलीके समयमे शेखासर और रूणियांके वर्तमान प्रधान नेता आजतक बीकानेरके अधीश्वर और समस्त राठौर सामन्तोका तिलक करते है। रूणियांके नेता चांदीके पात्रमे टीका देनेके समय चंदनादि समस्त सामग्री हाथमे लेते है और शेखासरके नेता उसे हाथमे लेकर स्वय महाराजके मस्तकपर तिलक लगाते है। महाराज तिलक पाकर उनको भेटमे एक सुवर्णकी मोहर और पांच रुपये देते है। इस प्रकार जाट नेताओंके राजतिलक दे चुकनेपर पीछे सामन्त लोग अपने अपने पदके अनुसार एक २ करके महाराजका तिलक करते है। राजाकी ओरसे कुछ सुवर्णकी मुद्रा शेखासरके नेताको और चॉदीकी मुद्रा रूणियांके नेताको मिलती है।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे गोदाराके जाटोपर अपने अधिकारका विस्तार करके प्रतिज्ञा की, कि वह और उनके उत्तराधिकारी किसी समयमे भी उनके पैतृक अधिकारपर हस्तक्षेप नही करेंगे। गोदारागणोने तुरन्त ही उस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो महाबली राठौर राजा वीर बीकाकी आधीनता स्वीकार करली। इस प्रकारसे बीकाने गोदारा देशको जीतनेके लिये निकटवर्ती जोहियोके देशको जीतनेका सकल्प किया। जोहिया और जाटोके साथ गोदाराओका बहुत समयसे वैमनस्य चलरहा था, इस कारण वीर व्रतधारी बीका असीम साहसी राठौर सेनाको लेकर नवजीत गोदारोके साथ मिलकर शीघ्रही जोहियोको जीतनेके लिये चले। थोडे ही समयमे गोदारावासी बीकासे इतनी प्रीति करने लगे थे कि बीकाके प्रस्ताव करते ही उन्होने अस्त्र धारण करके रणभूमिमे जाकर जोहियो पर आक्रमण करनेमें कुछ भी विलब न किया। इन्ही जोहियोके सबन्धमे कर्नल टाड साहब लिखते है कि "मरुक्षेत्रके समस्त उत्तरांशमे अधिक क्या सतलजतक इन जोहियोकी बस्तीका विस्तार था। उनके अधिकारी देशोमे ग्यारहसौ ग्राम थे, परन्तु तीन शताब्दियोके बीचमे अब 'जोहिया' नामतक लोप होगया है।"

जोहियोके सर्वप्रधान नेता शेरसिह मरूपाल नामक स्थानमे निवास करते थे। विजयी बीका अपनी पराक्रमशाली सेनाको साथ लेकर शेरसिंह पर आक्रमण करने के लिये चले। शेरसिहने भी समस्त जोहियोंकी सेनाके साथ अपनी रक्षा करनेके लिये युद्धकी तैयारी की। बराबर कई युद्धोमे विजयी होकर इस बारके युद्धमे बीका सरलतासे जय प्राप्त न कर सके। जत्रगण घोर पराक्रम दिखाकर आक्रमण करने वालोको निराश करने लगे। परन्तु कर्नल टाड साहब लिखते है कि अन्तमे षड्यन्त्र

द्वारा शेरसिंहके प्राण नाशकर, बीकाने फिर उत्साहके साथ आक्रमण करके मरूपाल पर अधिकार करलिया । यहाँतक कि अन्तमें विवश होकर उन्हे राठौरोकी आधीनता स्वीकार करनी पड़ी ।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे सामान्य सेनाके साथ एक २ करके एक सुविस्तृत प्रदेशको अपने अधिकारमे करलिया और अंतमे पश्चिमकी ओरको दिग्विजयके लिये कूच किया, पश्चिम सीमाके निकटवर्ती भाटीराज्यके अधीश्वरने बहुत दिनो पहिलेसे जाटोके हाथसे वागर नामक देशको अपने अधिकारमें करलिया था । अस्तु बीकाने अपनी सेनाके साथ पहिले उसी देशपर जाकर भाटियोके ग्राससे उस देशको छीन लिया । बीकाने इस प्रकारसे अपने पिताकी राजधानी मंडोरसे दिग्विजयके लिये बाहर जाकर तीस वर्षके पीछे चारोओर अपना अधिकार करके इस वागोरदेशमे राजधानी स्थापित करनेका विचार किया और नेरा नामक जाटसे पूर्वोक्त भूखंडको लेकर संवत् १५४५ सन् १४८९ ईसवी की १५ मईको वैशाख मासमे " बीकानेर " नामक नवीन राजधानी स्थापित की ।

हम पहिले ही एक स्थान पर वर्णन कर चुके है कि बीका अपने चाचा कॉधलके साथ इस दिग्विजयके लिये बाहर गये थे । वीर श्रेष्ठ कॉधलने अपनी वीरता और नीतिचातुरी द्वारा अपने भतीजे बीकाकी इस नवीन राज्यके स्थापनमे विशेष सहायता की थी, बीकाने मंडोरको छोड़ कर क्रमानुसार तीस वर्षतक अपने अधिकारके विस्तार करनेमे लिप्त रह कर अंतमे जब नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा कर अपनी शासनशक्तिको भली भाँतिसे दृढ करलिया तब वीर श्रेष्ठ कॉधलने अपने निकट—आत्मीय राठौरोके साथ बीकानेरको छोड़कर उत्तर प्रान्तमे एक स्वतत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके लिये यात्रा की । राठौर वीर कॉधलने अपनी साहसी सेनाके साथ क्रमानुसार सियाग, वेनीवाल और सारण नामक जाटोकी तीनो सम्प्रदायोको परास्त कर अपनी शासनशक्तिको शीघ्र ही प्रबल करलिया । इन कांधौलजी क वंशधर अवतक बीकानेरके उत्तर प्रदेशमे पाये जाते है और वे इस समय कॉधलोत् राठौर नामसे प्रसिद्ध है । यद्यपि उस समय यह तीनो देश बीकानेर राज्यके एक प्रधान अगस्वरूप थे, परंतु इन कांधलोत् राठौरोने बीकानेरके महाराजको सम्पूर्णरूपसे अपना अधीश्वर नही माना केवल कुटुम्बके संम्बन्धसे उनके गौरवका परिचय दिया। यदि उनसे बीकानेर राज्यकी ओरसे कोई कर मॉगाजाता तो वे उत्तर देते कि क्या हमारे पूर्वपुरुष कांधल ही इस देशपर अधिकार नही करगये है ? क्या हमारे पूर्वज कांधलने ही बीकाको राज्यपदपर अभिषिक्त नही किया था और जबकि हमारे पूर्वपुरुष काधलने ही बीकाको राजेश्वर बनाया है? तव बीकाजीकी संतान बीकानेरके महाराजको हमसे कर लेनेका क्या अधिकार है ?

जो हो ! वीर तेजस्वी कांधल एक स्वतंत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले ही इस संसारसे चले गये । जब वह हिसारके किले पर अधिकार करनेको गये तब उसी समय

दिल्लीके यवनसम्राट्के प्रतिनिधिने इनको मारडाला। इसमे कुछ भी सदेह नही कि यदि कांधल जीवित रहते तो और भी एक सुविस्तृत राज्यको स्थापित करजाते।

महाराज वीका नवीन राजधानी वीकानेरको स्थापित करनेके पीछे अधिक दिन तक राज्य न करसके। उन्होने भारतवर्षमे इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा करके संवत् १५५१ मे इस मायामय शरीरको त्यागदिया। वीकाने पूगलके जिस भाटियोके अधीश्वरकी कन्याके साथ विवाह किया था, उसके गर्भसे वीकाके लूनकरन और गड़सी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेसे सबसे बड़े पिताके सिहासनपर विराजमान हुए और छोटे गडसीने गड़सीसर और अड़सीसर नामक दो नगर स्थापन किये। उनके अगणित वशधर इस समय गड़सियोत वीका नामसे पुकारे जाते है, और वह गडसीसर अथवा गरीवदेसर नामक स्थानमे निवास करते है। इन दोनो देशोमे प्रत्येक देशके अधिकारमे चौवीस चौवीस ग्राम है। विजयी वीकाके वडे पुत्र लूनकरणने राजपद पर अभिषिक्त होकर अपने राज्यकी पश्चिम सीमाको वढ़ानेके लिये एक एक कर भाटियोके अधिकारी अनेक देशोको जीतलिया। जिस समय लूनकरणने स्वयं अपने बाहुवलसे वीकानेर राज्यकी सीमाको वढ़ालिया था, उस समय इनके चारो पुत्रोमेसे वडे पुत्रने महाजन नामक देश और १४४ ग्रामोंको लेकर स्वतंत्र भावसे रहनेकी इच्छा प्रकाश की। महाराजने तुरन्त ही अपने पुत्रकी इस इच्छाको पूर्ण किया। इस कारण वडे पुत्रने उक्त महाजन देश और १४४ ग्राम लेकर सिहासनका समस्त अधिकार अपने छोटे भाई जेतसीको देदिया। सम्वत् १५६९ मे लूनकरणकी मृत्यु होगई, तव जैतसी पिताके सिहासन पर विराजमान हुए। उनके और भी दोनो भ्राताओने दो स्वतत्र देश और कुछ थोडी सी जमीन ले ली। जैतसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए–पहिले कल्याणमल, दूसरे शिवजी और तीसरे अश्वपाल। जैतासिह भी वीकाके ही समान वीर थे, उन्होने स्वाधीन गिरासियाके अधीश्वरोमेसे अन्यतर तारनोत नामक देशके अधिनायकको युद्धमे परास्त करके नारनोत पर अधिकार करलिया, और अपने दूसरे पुत्र सिरगजीको उन देशोका अधिकार देदिया। वीका और कॉधलके इस मारवाडमे बैठनेके पहिले ही राठौर वीर वीदाने राठौर सेनाके साथ आकर वहॉ छावनी स्थापन की थी। वीर श्रेष्ठ जैतसीने भी उसी वीदावंशको परास्त करके उनको अपने आधीन कर उनसे वार्षिक कर लेनेका प्रस्ताव किया। और इस वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कुछ कर उनसे ग्रहण किया।

सवत्१६०३ मे, जैतसीके परलोक वासी होने पर कल्याणमल पिताके सिहासनपर विराजमान हुए। यद्यपि कल्यणमलके शासन समयमे वीकानेरकी कुछ उन्नति नही हुई और न कोई परिवर्तन हुआ,परन्तु इन्होने दीर्घकाल तक निर्विघ्नतासे राज्य किया। इनके

---

(१) महात्मा टाड साहवने टीकेमे लिखा है कि " इन मरुक्षेत्रके दूरवर्ती देशोका प्राचीन समयके युद्धका वृत्तान्त यथा रीतिसे वर्णन कियागया है (पर यहां उसके लिखनेका प्रयोजन नहीं।) कारण कि सभी युद्ध समान थे, केवल उनके नाम और स्थान भिन्न है।

तीन पुत्र उत्पन्न हुए-पहिले रायसिंह दूसरे रामसिंह और तीसरे पृथ्वीसिंह। कल्याणसिंहकी संवत् १६३० मे मृत्यु होगई, तब रायसिंहके मस्तकपर राजछत्र शोभायमान हुआ।

रायसिंहके शासन समयसे बीकानेरके गौरवकी सीमा बढ़नी प्रारंभ हुई। बीकानेर इतने दिनो तक अत्यन्त सामान्यरूपसे एक छोटा राज्य गिनाजाता था। परन्तु साहसी वीर और नीतिचतुर रायसिंहने अपने राज्यकी उन्नति करनेके लिये ही पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर बड़े राजनैतिक रंगभूमिमे चरण रक्खा था। इस समय दिल्लीके सिंहासनपर बादशाह अकबर विराजमान थे। रायसिंह यह भली-भाँतिसे जानगये थे कि भारतवर्षके राजपूत राजाओंने दिल्लीके बादशाहके आधीनमे रहकर जिस भावसे अपने गौरव और राज्यकी सीमाको बढा लिया है। युद्धभूमिमे जिस भावसे यवन बादशाह उनसे प्रसन्न हुआ है और जिस भावसे उन्होने अपना राज्य बढाया है। इस समय हमै भी केवल बीकानेरके शासन कार्यसे ही संतुष्ट होकर समय बिताना उचित नही है वरन इस समयके बराबरवाले अन्यान्य देशी राजाओके समान नाम और यश पानेकी चेष्टा करना उचित है। विशेष करके वह इस बातको भी जान गये थे कि ऐसा एक दिन अवश्य ही आवेगा कि जिस दिन दिल्लीके बादशाह बीकानेरपर अधिकार करके हमै अपनी आधीनतामे करनेका यत्न करेगे इस कारण जब कि भारतवर्षके प्रधान २ राजा ऐसे प्रबल बलशाली होकर भी स्वाधीनताकी रक्षा न करसके तब मेरा उपेक्षा दिखाकर स्वाधीनताकी रक्षा करना अवश्य ही असंभव है। इस लिये इस समय यही उचित है कि मै पहिलेसे ही बादशाहके साथ मित्रता करलूं। रायसिंहके सिंहासन पर बैठनेके समय तक इस देशके जाट अधिकतासे अपने प्राचीन स्वत्वकी रक्षा करते आये थे। परन्तु समयकी गतिसे राठौरोकी संख्या क्रमानुसार बढ़ती जाती थी। और उन जाटोको पहिलेके समान अपना स्वत्वपालन कष्टदायक होगया था इसीसे उनके राजनैतिक अधिकार घटते जाते थे। स्वाधीनता होनेके साथही साथ उनका वह साहस बल विक्रम इत्यादि भी एक २ करके लोप होते जाते थे। इसी प्रकारसे बीकानेर राज्य शक्तिशाली होगया, परंतु समयकी प्रबलताके कारण जाटोकी स्वतंत्रता छीननेवाला वह राज्य भी शीघ्रही दिल्ली राज्यकी परतंत्रताका अनुगामी होनेपर विवश हुआ।

पिताके परलोकवासी होनेपर रायसिंह स्वय पिता की भस्म सिरानेके लिये गंगाजीको गये। रायसिंहने जैसलमेरकी जिस कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था बादशाह अकबरने भी उसी राजाकी एक अन्य कन्याके साथ विवाह किया था, इस कारण सम्राट् अकबरके साथ रायसिंहका पारिवारिक सम्बन्ध पहिलेसेही था। वह पिताकी भस्म और अस्थियोको गंगाजीमे डालकर यवन बादशाहकी राजधानीको चलेआये। पहिले सम्बन्धके होनेसे बादशाह अकबरके समीप इनको अपना परिचय देनेमे बड़ा सुभीता मिला। आमेरके महाराज राजा मानसिंहने इस समय बादशाह अकबरकी सभामे विशेष प्रतिपत्ति प्राप्त की थी, उन्ही राजा मानसिंहने बीकानेरके महाराज रायसिंहका परिचय सम्राट् अकबरके समीप करादिया। रायसिंहका भाग्य प्रसन्न

होगया था इस कारण बादशाह अकबरने अपने हिन्दू आत्मीय रायसिहको बड़े आदर भावके साथ ग्रहण कर, उनको चार हजार अश्वारोही सेनाके नेता पदपर महाराजकी उपाधि और हिसारदेशके शासनका भार अर्पण किया। बीकाने सामान्य रावकी उपाधि लेकर नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी, इस समय रायसिह सबसे पहिले राजाकी उपाधि धारण कर उस बीकानेर राज्यका गौरव बढ़ानेको अग्रसर हुए। बादशाह अकबरके इस प्रकार प्रसन्न होनेपर भारतके राजाओंमे बीकानेर और बीकानेरपतिका नाम विख्यात होगया। विशेष करके बादशाह इस समय मारवाड़ पर आक्रमण करने के लिये बाहर गये, और नागौर देशको जीतकर उसका अधिकार उन्होने रायसिहको ही देदिया, इससे रायसिहका सन्मान और भी बढगया। भाग्यवान् रायसिह इस प्रकारसे बादशाह अकबरसे संमानित हो सामर्थ्य पाकर अपने राज्यको लौट आये, और विशेष करके यह बादशाहकी चार हजार अश्वारोही सेनाके नेतापदको प्राप्त हुए। इसीसे रजवाड़ोमे उनका गौरवरूपी सूर्य पूर्ण रूपसे उदय होगया। महाराज रायसिहने बीकानेरसे आकर अपने छोटे भाई रामसिहको एक सेनाके साथ भाटियोके प्रधान स्थान भटनेर पर अधिकार करनेके लिये भेजदिया। रामसिहने बडी सरलतासे वीर विक्रमी राठौरोकी सेनाके साथ उन देशोपर अधिकार करलिया।

जोहियाके जाट सामान्य पशुपालन एव कृषि व्यवसायमे नियुक्त होकर भी भारतकी वीर जातिके समान विशेष स्वाधीनताप्रिय थे। यद्यपि बीकानेरके महाराजने उनके उस स्वाधीनताके रत्नको हरण करलिया था, यद्यपि जोहियोके अधिकारी देशोपर राठौरोकी शासनशक्ति अत्यन्त प्रबल होगई थी, तथापि वह जोहिया जाट-गण अपनी हरण की हुई स्वाधीनताको फिर संग्रह करनेके लिये फिर भी हत उद्योग नहीं हुए। रायसिह जिस समय यवन बादशाहसे सन्मानित होकर अपनी राजधानीको जारहे थे उसी समयमे यह जोहिया जाति फिर स्वाधीनताको उपार्ज्जन करनेके लिये अग्रसर हुई। रायसिहने तुरन्त ही जाटोके उस जातीय उदयको अस्त करदेना कर्त्तव्य जानकर विजयी राठौरोकी सेनाको फिर जोहियोकी वासभूमिमे भेज दिया। जिससे जोहिया गण फिर किसी प्रकारसे मस्तक न उठासके, और न फिर राठौरोकी शासन-शक्तिके विरुद्ध खड़े होनेका साहस करै। राठौरोकी सेनाने उसी अभिप्रायसे जोहि-योके अधिकारी देशपर भयंकर काण्ड उपस्थित करदिया। प्रबल समराग्नि प्रज्ज्वलित होगई, हजारो जोहिया जाटगण स्वाधीनताके लिये उस सग्रामभूमिमे प्राण त्यागने लगे। अतमे रणवीर राठौरोकी सेनाने उस देशको यथार्थ मरुक्षेत्रके समान करदिया। महात्मा टाड् साहब लिख गये है कि तभीसे अबतक यह देश जनशून्य अवस्थामें पडा है यद्यपि इस देशके बहुतसे नगर और ग्रामोमे जोहिया जाटोंके अत्यन्त प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान थे, परन्तु अब जोहियोंका नामतक यहासे लोप होगया है।

जोहियोके अधिकारी देशोमे भारतविजेता विख्यात सिकन्दर यूनानी अर्थात् मेसिडोनियाके महावीर एलिकजण्डरका नाम आजतक विख्यात होरहा है,

और उनके स्मृतिके चिह्न भी आजतक पायेजाते है। दादूसर नामक स्थानमे रंगमहल नामका एक प्राचीन महल टूटाफूटा विद्यमान है। सुनाजाता है, कि यही प्राचीन राजवशकी राजधानी थी। महावीर एलिक्जण्डर जिस समय भारतवर्षको जीतनेके लिये आया था, उस समय उसने दादूसरपर आक्रमण करके वहांके अधीश्वरको परास्त कर राजधानीको विध्वंस करदिया था। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि यद्यपि एलिक्जण्डरने जोहियोकी निवासभूमिके निकट पंजाबमे समराग्नि प्रज्वलित करदी थी, परन्तु इतिहासमे ऐसा कोई प्रमाण नही पायाजाता कि जिससे वह गारा मार्गकी ओरसे इन जोहियोंके जीतनेके लिये आप हो। साधू टाड् साहब अनुमान करते है कि महावीर एलिक्जण्डरके अधीनस्थ ग्रीक सेनापतिने समुद्रके किनारे जिस राज्यको स्थापित किया, विदित होता है, उसी राजाके किसी राजाने किसी समयमे आकर इस रंगमहलको विध्वस किया होगा।

वीरश्रेष्ठ रामसिंह अपने अग्रजकी आज्ञासे जोहियोको सब भाँतिसे दमन कर, जिससे वह किसी प्रकार भी मस्तक न उठासके इस प्रकारसे अपनी शासनशक्तिको प्रबल करके, अंतमे विजयी राठौरोकी सेनाके साथ पूणियाके जाटोके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। बीकाके वशधरोने गोदारा और जोहियोको दमन करके अपने अधिकारका विस्तार कर तो लिया था, परन्तु वे पूणियाको परास्त नही करसके थे। पूणियाके जाट अबतक अपनी प्राचीन स्वाधीनताकी सब प्रकारसे रक्षा करते आये थे। महाराज रायसिहने उनको दमन करके अपने राज्यकी सीमाको बढानेके लिये अनुज रामसिहको आज्ञा दी। रामसिहने तुरन्त ही पूणियाके जाटोके विरुद्ध घोर युद्ध किया। भयंकर युद्ध होनेके पीछे अत्यन्त बलशाली राठौरोने जय प्राप्त करके पूणियाके अधिकारी देशको अपने हस्तगत करलिया। विजेता रामसिहने नवीन अधिकारी देशमे राज्य स्थापित करके स्वय वहाँ निवास करनेका विचार किया। परन्तु अत्यन्त दुःखका पिपय है कि वीरश्रेष्ठ रामसिह जयलक्ष्मी प्राप्त करके भी, स्वाधीनताकी रक्षाके लिये प्राणपणसे यत्न करनेवाले पूणियाके जाटोके हाथसे थोड़े ही दिनोमे मारेगये। रामसिहके मारेजानेपर विजयी राठौरगण अधिकार स्थापन करनेमे फिर भी विचलित न हुए। समृद्धिशाली प्रधान २ सभी नगर राठौरोके आधीनमे होगये। यहाँके राठौरगण रामसिहोत नामसे विदित है। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि यद्यपि रामसिहोतके द्वारा बीकानेरके राठौरोकी सख्या वृद्धि और उस पूणियाके अधिकारी देश बीकानेरके अधिकारमे होनेसे राज्यकी सीमा और भी बढ़गई थी। परन्तु कॉधलोतगणोने बीकानेरके महाराजकी पूर्ण अधीनता स्वीकार नही की, और बीकानेरके महाराजको जिस भाँति कांधलोनोके द्वारा युद्धके ससयमे विशेप सहायता नहीं मिली थी, यह रामसिहोत राठौरगण भी बीकानेरके महाराजके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते आये थे। और बीकानेरके महाराज भी उसी प्रकारसे इनके बलसे अपने बलको प्रबल न जानसके। सीधमुख एवं सांखू रामसिहोतो की दो प्रधान वासभूमि थी।

इस प्रकारसे पूणियाकी स्वाधीनता हरनेके साथही साथ मारवाड़के छ. जाटोके अधिकारी देश भी बीकानेरके महाराजके अधिकारमे होगये । यह जाट इस समय खेती और पशुपालनके व्यवसायमे अपना समय व्यतीत करते थे । कर्नल टाड् साहव लिखते है कि इन निरीह जाटोने वर्तमान समयमे सम्पूर्ण वली राठौरोके प्रभुको रीतिके अनुसार कर देनेमे किसी प्रकारकी भी आपत्ति न की ।

यद्यपि वीकाके वंशधर रायसिंहने यवन शासनके समय सवसे पहिले राजाकी उपाधि धारण कर, समयके अनुसार नीतिज्ञताके समान कार्यक्षेत्रमे विचरण करना प्रारंभ किया, परन्तु वह साहस वल और विक्रममे किसी अंशमे भी हीन नही थे । उस ससय वीरतामय कार्यक्षेत्र, वीरलीलास्थान जितना ही विस्तारित होता था उन्हे उतने ही शूर वीरता प्रकाश करनेके अनेक साधन संघटित होते थे और उतना ही उनके गौरवका सूर्य अपनी पूर्ण मूर्तिसे मध्याह्न समयके सूर्यकी समान चारो ओर अपनी तीक्ष्ण किरणोके फैलानेमे समर्थ हुआ । रामचन्द्र और लक्ष्मणजीके वाहुवल प्रचार करनेका एकमात्र मूल लंकाका युद्ध था। यदि रावण सीताजीको हरण करके न लेजाता तो कभी भी दो सूर्यवंशी वीर-व्रतधारी वीरोकी ऐसी प्रशंसा सुनाई न देती । लंकाके विजयके पीछे महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मणजीका ऐसा गौरव युक्त युद्ध क्यों नहीं हुआ ? भीमसेन अथवा अर्जुन इत्यादि पाण्डवोने अपने महान् वलविक्रमको प्रकाश कर महावीरकी उपाधि धारण की थी । मेवाड़के वंशधर इतने दिनोतक मरुक्षेत्रके सीमावद्ध देशमे अपने वल विक्रमको प्रकाश करते आये थे । परन्तु महाराज रायसिहको दिल्लीके वादशाह अकवरकी अधीनता स्वीकार करनेके पीछे अपने पूर्वपुरुपोकी अपेक्षा अधिक गौरव संग्रह करनेमे विशेष सुभीता मिलनेलगा । उनका कार्यक्षेत्र विस्तृत होगया । वह भारतके अनेक प्रान्तोमे क्रमानुसार राठौरोके वाहुवलका पूर्ण परिचय देने लगे । सम्राट् अकवरने अपने शासन समयमे भारतवर्षके जिस २ प्रान्तमे जिस जिस युद्धको उपस्थित किया रायसिहने भी उसी २ समरभूमिमे जाकर असीम साहसके साथ अपने वाहुवलकी पराकाष्ठा दिखलाई । रायसिंहने अहमदावादके शासनकर्ता मिरजा मुहम्मद-हुसेनके साथ वीर विक्रमशाली राठौरोकी सेनाको ले युद्ध करके घोर वीरता प्रकाश कर उसका परास्त करदिया, और अहमदावादपर भी सीघ्रतासे अधिकार करलिया इसी कारणसे यह वादशाहके सम्मुख वड़े वीर गिनेजाते थे, और इनका सन्मान भी सवसे अधिक होता था । सम्राट् अकवरकी, इन वीर विक्रमशाली हिन्दूराजाओके साथ परिवारिक सम्वन्ध करके, भारतमे यवन शासनको दृढ़ करनेकी, विशेष इच्छा थी । इस लिये वह हिन्दूराजाओंमे जिसको वीर और असीम साहसी जानता था उसीको अपने हस्तगत करनेके लिये उसके वल विक्रमका ऊँचा पुरस्कार देकर उसके हृदयपर अधि-कार करलेता था । रायसिहके वल विक्रमको देखकर अकवर विशेष प्रसन्न हुआ, और उसने उनका अधिक सन्मान वढ़ाया । यद्यपि रायसिहके साथ उसने सांसारिक सवन्ध पहिलेसे ही करलिया था, तथापि उस सवन्ध वन्धनको दृढ करनेके लिये उसने अपने पुत्र कुमार सलीमके (जिसने पीछे जाहगीर नाम धारण किया)

साथ रायसिहकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज रायसिह समयके सेवक और नीतिके जाननेवाले थे, इस कारण उन्होने अन्यान्य राजपूत राजाओका पहिलेसे यवन सम्राट् वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध होता हुआ देखकर उस प्रस्तावमे कुछ भी आपत्ति न की। विवाहका कार्य बड़ी धूमधामके साथ समाप्त होगया। इस विवाहके फलस्वरूपमे अभागे कुमार परवेज़ने जन्म लिया। महाराज रायसिहने इस प्रकार सबसे पहिले भारतवर्षमे बीकानेरका नाम और यश विस्तार करके, बादशाहके सम्मुख सन्मानित हो, संवत् १६८८ (१६३२ ईस्वी) मे इस मायामय शरीरको त्यागदिया।

महाराज रायसिहकी मृत्युके पीछे उनके एकमात्र पुत्र करणसिह पिताके सिहासनपर विराजमान हुए। करणसिह पिताकी जीवित अवस्थामे ही दिल्लीके साम्राट्की अधीनतामे दो हजार अश्वारोहीके नेताकी उपाधि धारण कर दौलताबादके शासनकर्त्ता पदपर नियुक्त थे। करणसिह सुलतान दाराशिकोहके विशेष अनुगत थे। दाराका भी प्रवेश जिससे बादशाहके यहाँ होजाय इस वि षयमे करणसिहने विशे सहायता की थी। इसी कारणसे दाराके प्रतिद्वन्द्वीके प्रधान सेनापति करणसिह जिनके आधीनमे रहते थे, उन्होने करणसिहके प्राणनाश करनेके लिये गुप्तभावसे एक षडयंत्र जालका विस्तारकिया। परन्तु बूंदीके महाराजने पहिलेसे ही करणसिहको सावधान करदिया, इसकारण करणसिहने बड़ी सरलतासे शत्रुओकी उस पापकामनाको निष्फल करदिया। करणसिहने कई वर्षतक अपने प्रबल प्रतापके साथ राज्यशासन करके निम्नलिखित चार पुत्रोको छोडकर शरीरको त्यागदिया।

१–पद्मसिह।
२–केशरीसिह।
३–मोहनसिह।
४–अनूपसिह।

करणसिहके चार कुमारोमे से प्रथम दोने यवन सम्राटके कार्यमे अपने जीवनका बलिदान किया। जिस समय बादशाहकी सेना बीजापुरके युद्धमे नियुक्त थी, उस समय पद्मसिह और केशरीसिहने राठौरोकी सेनाके साथ बादशाहकी ओरसे रणभूमिमे असीम साहस प्रकाश करके प्राण त्यागकिये। तीसरे पुत्र मोहनसिहके जीवनके वियोगान्त अभिनयका जो वृत्तान्त फरिश्ताने दक्षिणके इतिहासमे वर्णन किया है। हमने इस स्थानपर उसका वर्णन करना उचित जाना है। क्योकि इससे

---

(१) कर्णसिह तो रायसिहके पोते थे और रायसिह सम्वत् १६६८ मे मरे थे। उनके ४ बेटे दलपतसिह सूरसेन किसनसिह और भूपनसिह थे रायसिहके पीछे दलपतसिह गद्दीपर बैठे और सम्वत् १६७० मे शाही सेनासे लड़कर काम आये, तब सूरसेन राजा हुए। उनका देहान्त सम्वत् १६८८ मे हुआ। उनके पीछे कर्णसिंह गद्दीपर बैठे थे। इस तरह ऊपर लिखे लेखमे दो राजाओ अर्थात् दलपत और सूरका हाल नहीं है।

प्रगट होता है कि अपने पद और सन्मानकी रक्षाके लिये क्षत्रियजाति किस प्रकारसे अपने प्राणतक देनेमे तैयार होजाती थी ।

जिस समय वादशाहकी सेना दक्षिणको विजय करनेके लिये जारही थी उस समय करणसिहके चारो कुमार भी राठौरोकी सेनाके साथ गये थे । एक समय दक्षिणकी मुहिममे शाहजादे मोअज्जिमके डेरोमे उनके सालेके साथ मोहनसिहका एक मृगके वच्चेके लिये झगड़ा होउठा । धीरे २ वह झगड़ा इतना वढ़गया कि दोनो क्रोधके मारे उन्मत्त होकर कमरसे तलवारें निकाल परस्पर युद्ध करनेलगे । उस युद्धमे मोहनसिहके गिरतेही यह शोचनीय समाचार शीघ्रही राठौरोके डेरोमे पद्म-सिहके पास भेजागया । असीम साहसी पद्मसिह अपने भ्राताके अपमान और मरणका समाचार पाकर क्रोधित सिहके समान कंपायमान होते हुए नंगी तलवार हाथमे ले कितने ही राठौर सेवकोके साथ उसके डेरोमे आपहुँचे । डेरोमे जाते ही उन्होने देखा कि भाई मोहनसिहका सारा शरीर रुधिरसे सन रहा है, और प्राणपक्षी पयान करगये है, ऐसी अवस्थामे वह पृथ्वीपर अचेत पड़े है, और इस अवस्थामे भी शत्रु उनकी छातीपर वैठा है । यह देखकर राठौर कुमारके दोनो नेत्रोसे मानो अग्निकी चिनगारियां निक-लने लगीं । पद्मसिहकी उस संहारमूर्ति तथा प्रतिहिसा दानार्थी आकृतिको देखकर हत्याकारी यवनोके हृदयमे महाभय उत्पन्न हुआ । राठौरोके हाथसे निश्चय ही मृत्यु जानकर उन पापियोने उसी समय अपने प्राणोके भयसे कायरपुरुषोकी समान डेरोसे भाग जानेकी चेष्टा की । परन्तु शाहजादेको भी डेरेमे वैठाहुआ देखकर पद्मसिह कुछ भी शंकित न हुए, वरन् महाक्रोधित हो सिहके समान गर्जन करके भ्राताकी हत्या-करनेवालेको मारनेके लिये उसके पीछे चले ।

तवारीख फरिस्तामे लिखा है कि " पद्मसिहने क्रोधसे उन्मत्त होकर इस प्रकार वलके साथ तलवारका प्रहार किया कि उस प्रहारसे एक स्तभके दो टुकडे होगये और उसके साथ ही साथ हत्याकरनेवालेके देहके भी दो खण्ड होकर एक ओरको जापडे । " उचित दड देकर पद्मसिह अपने मृतक भ्राताका शरीर ले शाही डेरोको छोड़कर अपने स्थानको चलेआये । जयपुर जोधपुर और हाडौती इत्यादि देशोके जिन राजाओने सेनाके साथ उन डेरोमे निवास किया था। उन सवको वुलाकर हृदयभेदी वक्तृतामे पद्मने सभीसे कहा कि पापात्मा यवनोने मोहनसिहका प्राण नाश करके समस्त राजपूत जातिका अपमान किया है, इस कारण यवन वादशाहके आधीनमे अव किसी भाँति भी रहकर रणभूमिमे उनकी सहायता करना राजपूतमात्रको उचित नहीं । उनके यह वचन सुनकर सभी राजपूतोने कहा " शीघ्रही इन डेरोको छोडकर हम सवको अपने२ राज्यमे जाना उचित है और वह सभी लोग सेना साथ ले डेरोको छोड अपने २ राज्यमे जानेके लिये तैयार भी हुए । शाहजादे मोअज्जिमने उनको सावधान करनेके लिये एक वुद्धिमान मुसलमान उमरावको भेजा । उमरावने राजपूत राजाओको अनेक भाँतिसे समझाया, परन्तु उन्होने उमरावकी वातपर कुछ भी ध्यान न दिया, उमरावने कहा, कि वीरश्रेष्ठ पद्मसिह मोहनसिहके हत्या करनेवालेको मारकर निश्चिन्त होगये,

इससे शाहजादा इनके ऊपर कुछ भी क्रोधित न हुए, वरन् पद्मसिहको इस कार्यके करनेमे उन्होने अपनी सम्मति दी है। पर क्रोधित हुए राजपूतोने किसीकी भी बातको न सुना और अपनी २ सेनाको साथ ले डेरोंको छोड़कर दशकोशकी दूरीतक चलेगये, अंतमे जब महाविपत्तिको सम्मुख आया देखा तब शाहजादेने स्वयं जाकर उनको धीरज दिया और उनकी हानिको पूरण करनेकी प्रतिज्ञा की, तब राजपूत राजा फिर लौटकर डेरोमे आये। इस घटनांके पीछे महाराज पद्मसिह तथा केशरीसिह बीजापुरके युद्धमें मारे गये। फरिस्ता के इतिहासमे केशरीसिहकी वीरताका एक विशेष निदर्शन उल्लेख किया है। वह यह है कि एक समय केशरीसिंहने बादशाहके सम्मुख उनकी आज्ञासे राठौर जातिका बाहुबल दिखानेके लिये एक बड़भारी बलवान् सिहके साथ तलवार हाथमे लेकर युद्ध किया था, और उसको मारकर उन्होने केशरी नाम पाया था। इसके पहिले उनका क्या नाम था इसको हम नही जानते। केशरीसिहने उस सिहको मारकर ही बादशाहको सतुष्ट किया, इसके पुरस्कारमे बादशाहने इनको पच्चीस ग्राम दियेथे। उक्त इतिहाससे यह भी जानाजाता है कि केशरीसिहने दक्षिण देशाधिपति एक राजाके हवशी जातके एक महाबलवान् सेनापतिको तलवारसे मारकर विशेष यश और गौरव प्राप्त किया था।

राजा करणसिहके स्वर्गवासी होनेके पीछे उनके सबसे छोटे पुत्र अनूपसिह संवत् १७३० (१६७४ ईस्वी) मे राजाकी उपाधि धारण कर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। महाराज रायसिहके समयसे लेकर बादशाहके यहॉ बीकानेरके राजाओकी विशेष प्रतिष्ठा होगई थी। विशेष करके बीकानेरके राजवंशसे बादशाहको अनेक समयमे सहायता मिली थी, वह इसका उचित पुरस्कार देनेके लिये कातर नही थे। महाराज अनूपसिह एक महावीर और असीम साहसी पुरुष थे। बादशाहने इनको पॉच हजार अश्वारोही सेनाका मनसब अर्थात् उसके अधिपतिकी उपाधि देकर देशकी भूमिका अधिकार, तथा बीजापुर और औरंगाबाद देशके शासनका भार अर्पण किया। अनूपसिहने प्रबल प्रतापके साथ अपने राजशासनके समय सम्राट्के आधीनमे अनेकबार वीरता दिखाई, इससे इस वंशका गौरव दुगना बढ़ने लगा। जिस समय काबुलके अफ़गान दिल्लीके बादशाहके विपक्षमे विद्रोही होगये थे, उस समय मारवाड़पति उस विद्रोहको दमन करनेके लिये बादशाहके द्वारा भेजे गये। बादशाहकी आज्ञासे वीरश्रेष्ठ अनूपसिहने भी बीकानेरकी सेनाके साथ काबुलमे जाकर विद्रोहके निवारण करनेमे विशेष सहायता की थी। विद्रोह शांत होजानेके पीछे वह अपने राज्यमे लौट आये, और फिर भी बादशाहके यहॉ रहकर उन्होने अनेक युद्धोमे यश पाया था। उनकी मृत्युके सम्बन्धमे फरिस्ता और राजपूत इतिहासमे मत-भेद है। फरिस्ता लिखता है कि राजा अनूपसिहने दक्षिणमे प्राणत्याग किये, परन्तु राठौरोके इतिहाससे जानाजाता है कि जिस समय राजा अनूपसिह दक्षिणमे सेना सहित गये थे तब वहॉ उनके डेरा स्थापनके स्थानपर बादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ कुछ झगडा होगया था, इससे वह अत्यन्त विरक्त होकर दक्षिणको छोडकर अपने

राज्यमे चलेआये, और तुरन्त ही उन्होंने शरीर त्यागदिया । इसी शेषोक्त वृत्तान्त को हम सत्य मानते है । महाराज अनूपसिह, स्वरूपसिह और सुजानसिह नामक दो कुमारोको छोडकर परलोकवासी हुए ।

इतिहासवेत्ता टाड् महोदय लिखते है कि स्वरूपसिह[1]सम्वत् १७६५ सन् १७०९ ई० मे पिताके सिहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इन्होने अधिक दिनतक राजशासन नहीं किया । महाराज अनूपसिहने जीवनकी शेषदशामे बादशाहकी सेनासे अपना सभी सम्बन्ध त्यागदिया था, इसीसे ओड़नी देश जो इनको बादशाहसे पहिले मिला था, इनसे वापिस लेलिया गया । स्वरूपसिहने अपनी सेनाको साथ ले उस ओडनी देशपर फिर अधिकार करनेके लिये धावा किया । उसी युद्धमे यह मारेगये, कर्नल टाड् साहब लिखते है कि उनसे छोटे भाई सुजानसिह राजसिहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इनके राज्यकालमे कोई स्मरणीय घटना नही हुई । सम्वत १७९३ (१७३७ ई०)मे जोरावरसिंह बीकानेरके अधीश्वररूपसे विख्यात हुए, परन्तु सुजानसिहके समान इनका शासनकाल भी स्मरणीय नही था ।

दश वर्षतक राज्य करके जोरावरसिह इस असार संसारको छोड़गये । तब वीर-श्रेष्ठ गजसिह बीकानेरके सिहासनपर विराजमान हुए । सुजानसिंह और जोरावरसिह के शासनसमयमे बीकानेरमे किसी प्रकारकी घटना नही हुई । परन्तु गजसिहका शासन अनेक घटनाओसे पूर्ण था । महाराज गजसिह वास्तवमे एक यथार्थ राठौर वीर थे, इस कारण उन्होने इकतालीस वर्षतक राज्य करके राजकी सीमा और अपने गौरवको बहुत बढालिया था । बीकानेरकी सीमाके भाटियोके साथ तथा भावलपुरके मुसलमान राजाओके साथ बराबर कई युद्ध करके इन्होने अपने बाहुबलका चूडान्त परिचय दिया था । महाराज गजसिहने भाटियोके निकटसे राजासर, कालिया, रानियार, सत्यसर, वूज्रिपुरा, मुतालाई और अन्यान्य कितने ही छोटे २ प्रदेश तथा अन्य शत्रुओके कितने ही छोटे २ देश और भावलपुरके अधिनायक खॉके साथ युद्ध करके अपने राज्यकी सीमामे स्थित विशेष प्रयोजनीय अनूपगढ़ नामक किलेको अपने अधिकारमे करलिया था । दाऊदके पोतड़ा जिससे सीमामे किसी प्रकारका उपद्रव न करसके, अथवा अनूपगढपर फिर अधिकार करनेमे समर्थ न हो, इसलिये गजसिहने अनूपगढकी पश्चिम ओरकी भूमिको विध्वस करके वहांके सभी कुओको मट्टी भरवाकर पटवा दिया था ।

(१) बीकानेरके गद्यकाव्यमे लिखा है कि महाराज अनूपसिह सम्वत् १७५५ मे ओडनी (दक्षिण) मे स्वर्गधामको प्राप्त हुए थे, और उनके साथमें १८ रानिया सती हुई थीं ।

(२) बीकानेरके इतिहासमे सम्वत् १७५५ है ।

(३) सुजानसिह सं० १७७७ में गद्दीपर बैठे थे ।

(४) बीकानेरके इतिहासमें सं० १७९२ माघ वदी ५ लिखा है ।

(५) भावलपुरके आदि अधीश्वरका नाम दाऊदखां था । उसके वंशधरोंको राठौर गण दाऊद पोतरा कहते थे ।

राजा गजसिहके औरससे ६१ पुत्र उत्पन्न हुए, परन्तु इनमेसे केवल छः पुत्र विवाहिता स्त्रीसे उत्पन्न हुए थे। उनके नाम यह है।

(१) छत्रसिह। (४) अजवसिह।
(२) राजसिह। (५) सूरतसिह।
(३) सुरतानसिंह। (६) श्यामसिह।

उपरोक्त छः पुत्रोमेसे छत्रसिहकी मृत्यु बालकपनमे ही होगई थी और सूरतसिहकी माताने विष देकर राजसिहका प्राण नाश किया था, सुरतानसिह और अजवसिहने विचारा कि हम भी भाई राजसिंहकी तरह मारे जायगे, इस कारण वे अत्यन्त भयभीत होकर पिताके स्थानको छोड़ जयपुरको चलेगये। इस प्रकार सूरतसिह अत्यन्त घृणित उपायोसे पिताके सिहासनपर विराजमान हुए। और श्याम सिह बीकानेरके अन्तर्गत एक छोटे देशका अधिकार पाकर वहाँ निवास करते थे। महाराज गजसिह अपने घोर पराक्रमके साथ इकतालीस वर्षतक राज्य करके परलोकवासी हुए। राजपूतरीतिके अनुसार सवत् १८४३ (१७८७ ई०)मे राजसिह के मस्तक पर बीकानेरका राजछत्र शोभायमान हुआ, परन्तु उनकी साक्षात् पिशाचिनी सौतेली माताके हृदयमे हिसा और विद्वेषकी अग्नि प्रबल होगई थी इस कारण वह पन्द्रह दिन भी राजसिहासनपर न बैठसके। गजसिहके पांचवे पुत्र सूरतसिहकी माताने स्वयं अपने हाथसे विष देकर राजसिहके जीवनको समाप्त करादिया, इसी कारण से राजसिह केवल तेरह दिनतक ही राजसिंहासनपर बैठे थे। माता जैसी पिशाच बुद्धि की थी पुत्रका हृदय भी उसी प्रकारका कठोर था। इस कारण राजसिहकी मृत्युके पीछे सूरतसिहने पिशाचमूर्ति धारण करके बीकानेरके राजवंशमे घोर कलंक लगानेका अभिनय प्रारंभ करादिया।

महाराज राजसिहके प्रतापसिह और जयसिह नामसे दो पुत्र थे। सूरतसिहकी पिशाचिनी माताकी इच्छा थी कि राजसिहको मारकर अपने पुत्रको सिहासनपर बैठाऊगी। परन्तु बुद्धिमान् सूरतसिहने देखा, कि बीकानेरके वीर सामन्त और अमात्यगणोंके सम्मुख इस शोचनीय हत्याकाण्डके पीछे सिहासनपर बैठना महा-विपत्ति कारक है, इस कारण उन्होने अपनी इस पापिनी अभिलाषाको मनहीमे रख-लिया, और प्रगटमे सौतेले भाईकी मृत्युसे शोक प्रकाश करके भविष्यतमे लोमहर्षण पैशाचिक कार्य करनेमे प्रवृत्त हुए। पिशाचबुद्धि सूरतसिह सबसे पहिले अमात्य मंडली और सामन्त तथा प्रजाके हृदयको आकर्षण करनेके लिये राजसिहके बालक पुत्रको सिहासनपर बैठाल कर स्वयं राजप्रतिनिधिरूपसे राज्य शासन करनेलगे। इन्होने क्रमानुसार अठारह वर्षतक विशेष चतुरता और बड़ी सावधानीसे राज्य किया, और प्रधान २ सामन्त तथा अमात्यगणोको अपने हस्तगत करनेके लिये बहुत कीमती उपहार देकर उनको विशेष लोभ दिखाया। सामन्तोके हस्तगत करनेमे समर्थ होतेही अपनी अभिलाषा सरलतासे पूर्ण होजायगी, यही विचार कर वह चतुर नीतिजालका विस्तार करनेलगे, परन्तु इन्होने अठारह महीनेतक अपने इस गुप्त अभिप्रायको किसीके

सम्मुख भी प्रकाश न किया। अठारह वर्षके वीतजानेपर जब उन्होंने देखा कि उनकी वाहरी दया और नम्रताके व्यवहारोंसे सामन्त प्रसन्न होगये है, तब उन्होंने सबसे पहिले अपने विशेष अनुगत महाजन और भादरां के दोनो सामन्तोसे अपने हृदयके पापी अभिप्रायको कह सुनाया, यद्यपि वह दोनो सामन्त इनके अनुगत थे, तथापि वह इस प्रस्तावको सुनकर महा दुखी और भयभीत हुए। परन्तु चतुर सूरतसिहने उन दोनो सामन्तोको अधिकभूमि देकर सरलतासे उनको अपने वशमे करालिया । यद्यपि महाजन और भादरांके राजद्रोही दोनो सामन्तोंने पिशाच बुद्धि सूरतसिहको उस पापी अभिप्रायके पूर्ण करनेमे सहायता और अपनी सम्मति दी थी, परन्तु उनके उस पैशाचिक अभिनयके पूर्ण लक्षण सरलतासे प्रकाशित होगये । बीकानेरके दीवान बख्तावरसिह सूरतसिहकी इस पैशाचिक कल्पनाको जानकर अपने सुकुमार प्रभुके प्राणोकी रक्षाके लिये भयभीत होकर आगे बढे। बख्तावरसिहके ऊर्द्धतन चार मनुष्य इस दीवान पदपर नियुक्त थे, इस कारण उन्होंने राजसिहके बालक कुमारकी जीवन रक्षा करना सब प्रकारसे उचित जाना । परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि, बख्तावरसिहने ऐसे कुसमयमे अधिक देरीमे सूरतसिहके पटचक्रका समाचार पाया कि वह उस समयमे किसीभाँतिसे भी उस जालको छिन्नभिन्न न करसके, वरन उसका विपरीत फल हुआ । सूरतसिहने बख्तावरसिहको अपना प्रधान शत्रु जानकर उसी समय उसे पकड़कर कारागारमे बंदी करदिया। सूरतसिह इस बातको भली भाँतिसे जानते थे कि बख्तावरसिह ही मेरी राज्यप्राप्तिमे कंटकस्वरूप है, इस कारण उसको बंदी करके समस्त विघ्न बाधाओको दूर करनेके लिये भटिंडा इत्यादि भिन्न२ देशोसे सेना सग्रह की। पाशविक बल प्रयोगके अतिरिक्त वह सरलतासे अपने मस्तकपर राजमुकुट धारण न करसकैगे इसको वह भलीभाँतिसे जानगये थे, इस कारण वह बडी सावधानीके साथ शीघ्रतासे रगभूमिमे आपहुँचे। सूरतसिहके पापकी कामनाके प्रकाशहोने के पहिले ही बालक महाराजको बडे गुप्तभावसे रक्षा होती थी। सूरतसिहने अधिक सेना सग्रह कर बीकानेरके सभी सामन्तोके पास अपने नामसे यह आज्ञापत्र भेजा । वह सभी एक २ करके इनकी राजधानीमे आकर इनकी आज्ञा पालनमे नियुक्त हुए। महाजन और भादरॉ नामक दोनो स्थानों के दो राजद्रोही सामन्तोने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके सूरतसिहकी आधीनता स्वीकार की, उन दोनोके अतिरिक्त और कोई सामन्त भी राजधानीमे आनेके लिये सम्मत न हुआ। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि अन्य राजभक्त सामन्तोने सूरतसिहकी पापलिप्साको जानकर भी अपनी २ सेनाके साथ राजधानीमे आकर उसकी जघन्य अभिलाषामे किसी प्रकार बाधा न दी। वे अज्ञानकी तरह अपने २ किलोमे बैठे रहे।

जब सूरतसिहने सामन्त मडलीको अपनी आज्ञापालनमे असम्मत देखा, तब उन्होंने अपने मनमे निश्चय करलिया, कि यह लोग मेरा स्वत्व स्वीकार करनेको तैयार नहीं है। इस कारण वह सेनाको साथ लेकर सामन्तोको दमन करनेके लिये चले।

मेरे हृदयमे कभी ऐसी आशाका उदय नही हुआ।" यह सुनकर भगिनीने कहा, "यदि सत्य ही आपके हृदयमे उस घृणित पापकारी आशाको स्थान नही मिला है तब आप सबके सामने देवताका नाम लेकर शपथ करिये कि मै अपने भ्रातृपुत्र कुमार महाराजका प्राण नाश नहीं करूंगा।" परन्तु हाय! विचारी कन्याकी कौन सुनता था। दयावती राजकुमारीके सुसरालको चलेजाने पर कुछ ही दिन पीछे पाखंडी सूरतसिहने महाजनके सामन्तोको बुलाकर आज्ञा दी कि "आप अपने हाथसे शिशु नरपतिके प्राणोंका नाश कर मेरे अभिषेकका मार्ग स्वच्छ करदे।" यद्यपि सामन्त राजद्रोही थे परन्तु इस कार्यमे हस्ताक्षेप करनेको किसी प्रकार भी सम्मत न हुए। अंतमे उस दुष्टने एक दिन स्वय अपने हाथसे अपने भतीजे बीकानेरके बालक महाराजाके गलेमे तलवार मार कर उनका जीवन नष्ट करदिया!!

भ्रातपुत्र हन्ता–राजहन्ता सूरतसिहने इस प्रकारसे अपने सौभाग्य के प्रधान कंटकको उखाड कर बीकाके पवित्र सिहासनपर बैठ बीकाके पवित्र रक्तको कलंकित किया। यद्यपि अत्याचारी सूरतसिहके इस शोचनीय हत्या करनेके पीछे बीकानेरके राजछत्रको अपने मस्तकपर धारण करतेही राठौरजाति अगाध शोकसमुद्रमे डूब गई, परन्तु समस्त सामन्तोमेसे कोई भी उसके विरुद्ध साहस करके खडा न होसका। राजसिहके और दो भाई सुरतानसिह और अजीवसिह जो पहिलेसे ही अपने प्राणोके भयसे जयपुरमे चलेगये थे, सूरतसिहके इस पैशाचिक अभिनयका समाचार सुनते ही महा क्रोधित हो सूरतसिहको इसका उचित फल देनेके लिये भटनेर नामक स्थानमे आ उपस्थित हुए। उन्होने बीकानेरके समस्त असतुष्ट सामन्त और भटनेरके समस्त सामन्तोको बुलाकर राक्षस बुद्धि सूरतसिहको शीघ्रही सिहासनसे उतारनेके लिये युद्धकी तैयारी की। यद्यपि सभी भाटीगण एक मनसे दोनो राजकुमारोकी आज्ञापालनके साथ सूरतसिहको दण्ड देनेके लिये तैयार होगये थे, परन्तु राठौर सामन्तोमे से बहुतसे सूरतसिहके घोर अत्याचारोको स्मरण करके इच्छाके होतेहुए भी साहसमे भरकर योग देनेमे समर्थ न हुए। इधर चतुर सूरतसिहने अनेक सामन्तोको घूस देकर अपने दलमे भरती करलिया, इस कारण सुरतानसिह और अजीवसिहकी कामना पूर्ण होनेमे अनेक विघ्न उपस्थित होनेलगे। सूरतसिहके भयसे राठौर सामन्तोमेसे बहुतोको पीठ दिखाते हुए देखकर भी उन्होने केवल भाटियोकी सेनाकी सहायता लेकर युद्धकी तैयारी की परन्तु चतुर सूरतसिह ने विचार किया कि शत्रुओका बल अधिक होनेदेना उचित नही, इस कारण तुरन्त ही साहसमे भरकर उसने सेनासहित उनपर आक्रमण किया। बागोर नामक स्थानमे भयंकर सग्राम उपस्थित होगया, दोनो ओरके शत्रुओने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके रणभूमिमे रुधिरकी नदी बहादी। तीन हजार भाटियोकी सेनाके नाश होजानेपर अतमे सूरतसिहने विजय प्राप्त की। कालचक्रकी गतिसे अधर्मकी ही जय हुई। सूरतसिहने इस प्रकारसे शत्रुओको परास्त करके निष्कंटक राज्य सिहासनपर विराजमान हो सभी विघ्नोको दूर करदिया।

उस भयंकर युद्धके स्मृति चिह्नस्वरूपमे सूरतसिहने उस रणभूमिमे जयदुर्ग फतहगढ़ नामका एक नवीन किला बनाया।

रणविजयी सूरतसिह अपने देश और विदेशमे अपनी शासनशक्तिको प्रवल करनेकी इच्छासे एक प्रवल सेनादलके द्वारा वीरोचित कार्य करनेलगा। सवसे पहिले उसने अपने आत्मीय उद्धत स्वभाव वीदावतोके अधिकारी देशपर आक्रमण कर वहाँसे दंडमे पचास हजार रुपये करमे लिये। पहिले यह सुना था कि चूरू नामक स्थानके सामन्त सुरतान और अजवसिहकी सहायता करैगे इस लिये सूरतसिहने फिर उस चूरू देशपर आक्रमण कर चूरूनगरीको जालूटा। विजयी सूरतसिहने इस प्रकारसे धीरे २ अनेक देशोपर आक्रमण कर तथा लूटमारकर अंतमे भादरां स्थानके निकट छानीदेशके सामन्तोके किलेको घेरलिया। परन्तु वहाँके महावली सामन्तोने वड़ा पराक्रम करके सूरतसिहकी सेनासे अपनी रक्षा की, क्रमानुसार सूरतसिह छ महीनेतक किलेको घेरे रहे परन्तु किसी प्रकारसे भी विजय प्राप्त न करसके, अतमे वह सेना सहित अपनी राजधानीको लौटआये।

राजा सूरतसिह इस प्रकारके पाशविक वलकी सहायतासे अपनी शासनशक्तिको दृढ़कर प्रवल प्रतापके साथ राज्य करने लगा। परन्तु सामन्त और प्रजाको अत्यन्त असंतुष्ट देखकर वह अन्य उपायोसे इनको अपने हस्तगत करनेके लिये व्याकुल होगया। जिससे प्रजा इसके अन्यायाचरण करने पर भी सिहासनके अधिकारके सम्वन्धमे किसी प्रकारका आन्दोलन न करसके, तथा कोई राजकीय प्रश्न लेकर कही क्रोधित न होजॉय, इस लिये वह विशेष सावधान होनेलगा, इसके सौभाग्य वलसे उसी सम्वन्धमे एक और भी शुभ सुयोग उपस्थित होगया। वीकानेरकी सीमावाले भावलपूरके महाराजके साथ वहुत समयसे विवाद चलाआता था। उस सीमा सम्वन्धी विवादके उपलक्षमे वीकानेरके सामन्तोने कई वार युद्धभूमिमे जाकर वीरता प्रकाश की थी। इस समय भावलपुरके अधीश्वर भावलखांने अपने आधीनके तियारो नामक स्थानके किरणी जातीय खुदावख्श नामक एक यवन सामन्तपर आक्रमण किया। उस सामन्तने शीघ्रही सूरतसिंहकी शरण ली, और उन्हे अपने अधीश्वर भावलखॉके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये उत्तेजित करने लगा। सूरतसिंहने भी देखा कि वीर विक्रमशाली राठौर अवश्य ही युद्धमे प्रवृत हो जॉयगे, इस सुयोगपर वे मेरे अन्यायसे राज्य सिहासन लेने और अपने भतीजेको मारडालने आदि कठोर आचरणोको भूल कर इस युद्धमे उन्मत्त हो जॉयगे, । इस कारण उसने शीघ्रही इस नवीन राजनैतिक कार्यका प्रवध प्रारम्भ किया। जैसे ही तियारोके सामन्त खुदावख्शने वीकानेरका आश्रय लिया, कि वैसे ही राजा सूरतसिहने उनको वीस ग्राम देदिये। और उनके प्रतिदिनके खर्चके लिये एकसौ रुपया रोज देनेकी आज्ञा दी। किरणीकी सम्प्रदाय भावलपुरमे सबसे अधिक प्रवल वलशाली और असीम साहसी थी। राजा सूरतसिहने इन्ही किरणियोंकी सहायतासे अपने राज्यकी सीमाके वढ़ानेका विचार किया, और तियारोके महाराजने [illegible] कहा कि " मे आपकी सहायता करनेके लिये सब

प्रकारसे तैयार हूं, परन्तु आपके द्वारा क्या मै किसी प्रत्युपकारकी आशा करसकता हूं ? " खुदाबख्शने शीघ्रतासे उत्तर दिया, कि " मै आपके राज्यकी सीमाको समुद्रतक विस्तार करनेमे भलीभांतिसे सहायता दूंगा। " सूरतसिहने इस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो वीर व्रतधारी राठौरोकी सामन्त मंडलीके निकट तुरन्त ही युद्धका समाचार भेजदिया। यद्यपि बीकानेरके सभी सामन्त सूरतसिहसे अप्रसन्न होगये थे, परन्तु इस समय रणभूमिमे अपना २ पराक्रम दिखानेके लिये वे अपनी २ सेनाको साथ लेकर राजधानीमे आनेलगे। नियारोके सामन्त पॉचसौ पैदल और तीनसौ अश्वारोही सेनाके साथ आये थे। इस समय उस सेनाके साथ बीकानेरकी निम्नलिखित सामन्तोकी निम्नलिखित संख्यक सेना आकर मिली थी,–

	पैदल.	अश्वारोही.	बन्दूकधारी।
भूखरकाके सामन्त अभयसिह	२०००	३००	
पूंगलके सामन्त रावरामसिह	४००	१००	
रानेरके सामन्त हाथीसिह	१५०	८	
सतीसरके सामन्त करणसिह	१५०	९	
जसाना शारोहके सामन्त अनूपसिह	२५०	४०	
इमनसरके सामन्त, खेतासिह	३५०	६०	
जॉगलूके सामन्त बेनीसिह	२५०	९	
बितनोके सामन्त भूमासिह	६१	२	
जोड	३६११	५२८	
मोजी पड़िहारके अधीनकी तोपे ...	—	—	२१
नरपतिके अधीनकी विदेशीय सेना या खासपायगॉ ..	.	२००	
गंगासिहके अधीनकी मंडली ..	१५००	२००	४
दुर्जनसिहके अधीनकी " ..	६००	६०	४
अनोकसिह (सिक्खसामन्त गण)		३००	
लाहौरीसिह (सिक्खसामन्त गण)		२५०	
बुधसिह (सिक्खसामन्त गण)		२५०	
अफगान सामन्त सुलतानखॉ तथा अहमदखॉके अधीनकी ..	...	४००	
	५७११	२१८८	२९

राजा सूरतसिहने इस प्रकारसे अपनी प्रबल सेनाको इकट्ठा करके अपने दीवानके पुत्र वीरश्रेष्ठ जैतराव महताके हाथमे प्रधान सेनापतित्वका भार अर्पण किया। सम्वत् १८५६ मे माघमासकी तेरहवी तारीखको राठौरसेना भावलपुरके राज्यपर अधिकार करनेके लिये चली। प्रधान सेनापति जैतराव कुनसर राजसर केली रानेर होकर अनोहागढ़मे आकर

प्राप्त हुए और वहाँसे चलकर शिवगढ मौजगढ़ तथा फूलरामे क्रमशः डेरे डाले-गये। हिन्दूसिह नामके एक भाटिया सरदारने साहसके साथ मौजगढ़पर अधिकार करके अपने नामको अक्षय किया। उसने अपने प्रवल पराक्रमसे मौजगढ़के किलेकी दीवारको लांघ कर और उसके भीतर जाकर वहाँके शासनकर्ता किरणी नामक यवन जातिके महम्मद मासफको सेना सहित विध्वंस करदिया, और अतमे उसकी स्त्रीको वंदीकर वीकानेरमे भेजदिया। उस स्त्रीने पॉच हजार रुपये और चारसौ ऊंट देकर अपनी स्वाधीनता प्राप्त की। विजयी सेना वरावर कई सप्ताहतक उन तीनो किलोको घेररहो, फिर जय प्राप्त करके फूलरासे एक लाख पचीस हजार रुपये और कितने ही मूल्यवान् द्रव्य और नौ तोपै अपने अधिकारमे करली।

विजयी राठौरोकी सेना इस प्रकारसे भावलपुरकी राज्य सीमामे अपना आतंक जमातीहुई सिधुसे डेढकोशके फासलेपर खैरपुर नामक स्थानमे आपहुँची। भावल-पुरके अन्य असन्तुष्ट सामन्त भी इस समय जैतरावके साथ मिलगये, परन्तु वुद्धिमान् भावलखॉ अपने सम्मुख इस विपत्तिको आते देखकर तथा राठौर सेनाको पग २ पर विजय पाती हुई देखकर भयभीत हो अन्य उपायसे शत्रुओकी गतिके रोकनेकी चेष्टा करनेलगा। यदि जैतराव शीघ्रतासे राजधानीपर आक्रमण करता तो निश्चय ही राठौरोकी विजयपताका भावलपुरके किलेपर फहराती परन्तु उसने अपना समय वृथा नष्ट किया, उस सुअवसरमे उस राज्यके जो सामन्त शत्रुओकी ओर जामिले थे, उन्हे भावलखॉ अनेक छल वल और चतुरता करके तथा लोभ दिखाकर अपने दलमे वुलाने लगा। इस कारण राठौरोकी सेनाका वल धीरे २ घटगया। तव राठौर सेनापतिने भावलपुर के अधिपतिको धमकाकर और उसे वहुत कुछ भलावुरा कह कर उससे वहुतसा धन दडमे लिया और उसे बीकानेरको भेजदिया। और इसीसे सतुष्ट होकर उन्होने भावलपुरका घेरा छोडदिया। इससे सूरतसिहने अत्यन्त असतुष्ट होकर उक्त सेनापति सामन्तका पद और मान घटा दिया।

राजा सूरतसिंह इस प्रकारसे वीकानेरका गौरव विस्तार करनेके लिये भावलपुर-पर आक्रमण करनेके पीछे भी निर्विघ्नतासे अधिक समय तक शाति न भोगसके। नागोरके युद्धमे पराजित भाटिया लोग अपने घोर अपमानका[1] वदला लेनेके लिये दो वर्षतक फिर भी युद्धके साजसे सजेरहे और वीकानेरको जय करने और सूरतसिह-को उसकी शठताका उचित फल देनेके लिये आगे वढ़े। परन्तु सूरतसिंहने इस समय सब भातिसे प्रजाके हृदयपर अधिकार करके अपना वल वैभव खूब वढा लिया था, इस कारण वह उनसे कुछ भी भयभीत न हुआ, वरन क्रोधित हो सेनाले भाटियोके आक्रमणको रोकनेके लिये चला। फिर भी युद्धकी अग्नि भडक उठी। फिर रणक्षेत्र मनुष्योके रुधिरसे भीगगया। और अंतमे फिर भी सूरतसिहने जय प्राप्त करके

(१) पहिले इस स्थानका नाम फुल्लर था। मारवाडमे जिस भांति फूलरा एक अत्यन्त प्राचीन नगर है, यह भी उसी प्रकारसे प्राचीन स्थान था।

भाटियोकी आशालताको भिन्नछिन्न करदिया। यद्यपि भाटीगण इस दूसरी वारके युद्धमे भी परास्त होकर भागगये थे, परन्तु महामान्य टाड् साहव लिखते है कि संवत् १८६१ तक राजा सूरतसिहके साथ उनका वीच २ मे सग्राम होता ही रहा। पीछे उक्त सवत् मे सूरतसिहने भटियोको एकवार ही वलहीन करनेकी प्रतिज्ञा की, और भाटियोकी राजधानी भटनेरपर आक्रमण किया। भटनेरके यवन अधीश्वर जाव्ताखॉने क्रमानुसार ६ महीनेतक बड़े साहसके साथ अपनी रक्षा करके अतमे राजा सूरतसिहके करकमलमे सेना सहित सारी धन सम्पत्ति अर्पण करदी। राजा सूरतसिहने नवीन जीतेहुए भटनेर देशको वीकानेरमे मिलालिया और जाव्ताखा रहानियां नामक स्थानमे जाकर वहॉ निवास करनेलगा।

उपरोक्त घटनाके पीछे राजा सूरतसिहने अपने वल विक्रमको प्रकाश कर गौरव वढ़ानेके साथ ही साथ राज्यकी सोमाको वढ़ानेकी इच्छासे फिर भी रणभूमिमे पदार्पण किया। इस समय सवाईसिहने धौकलसिहको मारवाड़के सिहासनपर वैठालनेके लिये जयपुरके महाराजकी सहायतासे समस्त राठौर सामन्तोके साथ मारवाडपति मानसिहके साथ युद्ध करनेका विचार किया। राजा सूरतसिहने सवाईसिहकी प्रार्थनानुसार जिस भावसे अपनी सेना भेजी थी, अथवा जिस भावसे उसने जाकर युद्ध किया था, उसका वर्णन मारवाडके इतिहासमे विधिपूर्वक कियाजाचुका है। प्रथम सूरतसिहने अपना वल विक्रम प्रकाश करके जय प्राप्त कर मारवाडके अन्तर्भुक्त फलोदी देशको अपने अधिकारसे करलिया, परन्तु अन्तमे जव देखा कि धौकलसिहके पक्षसे जय प्राप्त करना कोई साधारण वात नही है तव वह शीघ्रही उनका पक्ष छोड़कर अपनी राजधानीको चलेआये। परन्तु मानसिह अपनी शासनशक्तिको प्रवल करके फलोदी देशपर फिर अधिकार कर वीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए तव सूरतसिहने अत्यन्त भयभीत होकर उनसे संधि करके और हानिके वहुतसे रुपये देकर अपनी रक्षा की। महामान्य टाड महोदय लिखते है कि राजा सूरतसिहने अपनी दुर्वुद्धिवश मानसिहके विरुद्ध धौकलसिहका पक्ष लिया था। और अन्तमे अपमानके साथ भागकर अपने पहिले प्रभुत्व और गौरवको भी लुप्त करदिया था। इन्होने इस समय धौकलसिहकी सहायताके लिये अपने छोटे राज्यकी प्राय पांचवर्षकी आमदनी अर्थात् चौवीस लाख रुपया खर्च करके वडे छलवलके साथ युद्धका साहस किया था, परन्तु अंतमे इस युद्धमे परास्त होकर मानसिक वेदनासे दुःखित राजा सूरतसिह कठिन रोगसे पीड़ित होकर रुग्णशय्यापर गिरपड़े। अपमान, आत्मघृणा और धनके नाश होनेसे वह मृतप्राय होगये थे, सभीने उनके जीवनकी आशा छोड़ दी। वैद्य डाक्टर सभी हताश होगये थे, आर्यरीतिके अनुसार मृत्यु समयके पहिले जो पारलौकिक कर्म किये जाते है, वह भी प्रारंभ होगये थे परन्तु अपने दुर्भाग्यवश तथा सौभाग्य वश राजा सूरतसिह मरे नही भयानक मृत्युके मुखसे निकल कर उन्होने शीघ्रही अरोग्यता प्राप्त की।

राजा सूरतसिहके पुनर्जीवन प्राप्त होनेके पीछे महात्मा टाड् साहव अपने प्रिय राजस्थानको छोड़कर विलायतको चलेगये। इस कारण वे इसी स्थानपर राजा

सूरतसिंहके शासनके साथ ही साथ बीकानेरके इतिहासको भी समाप्त करगये है। हमने राजा सूरतसिंहके शेष शासनवृत्तान्तके साथ बीकानेरके वर्तमान समयतकके इतिहासको वर्णन करनेके पहिले साधू टाड् साहबके उपसंहारमे वर्णन कियेहुए, प्रवन्धको अनुवाद करना उचित समझा। साधू टाड् साहब लिखगये है, "कि सूरतसिंहने केवल खजानेको भरनेके लिये प्रजासे बलपूर्वक कर लेनेमे किसी प्रकारका संकोच नहीं किया। उन्होने विचारा था, कि पुरोहितोको धन देकर धर्मकार्य करनेसे मेरे सम्पूर्ण पाप दूर होजॉयगे; इस कारण हर समय उनको लोभी ब्राह्मण घेरे रहते थे। सूरतसिंहसे धन पाकर ब्राह्मण भी अत्यन्त प्रसन्न होकर समय व्यतीत करते थे। राजा सूरतसिंह जैसे लोभी थे उसी प्रकारके भीरु, अत्याचारी, और निष्ठुर भी थे। भूखरकाके सामन्तोने अनेक समयमे उनके बहुतसे उपकार किये थे। परन्तु इन्होने उनके भी प्राण नाश किये, राज्यके सर्वप्रधान सामन्तोमे सीधमुखके नाहरसिंह, गुन्दाइलके गुमानसिंह और ज्ञानसिंह भी इसी प्रकारसे मारेगये। राजा सूरतसिंहके फिर चुरूपर तीसरी वार आक्रमण करनेसे, वहॉके सामन्त तथा वह देश भी इनके हस्तगत होगये "।

कर्नल टाड् साहब लिखगये है कि "इस प्रकारसे सभीको भयप्रद और कठोर शासनसे राजा सूरतसिंहके कुसंस्कार जितने २ वढ़ते गये वैसे २ ही राजकार्यके करनेमे भी इनकी अनिच्छा होती गई और उतनी ही प्रत्येक वर्षमें बीकानेर राज्यकी धन और जनसंख्या क्रमशः घटती गई। उत्तर प्रान्तके सामन्तोने उनकी आधीनता स्वीकार न की, और भाटी जातिके तस्कर भी क्रमानुसार बीकानेरके आदि भूस्वामी जाट और किसानो के ऊपर धावा करके उनके गौ आदि पशुओको हरण कर खेतपरसे समस्त नाज काटकर लेजाने लगे, इस कारण जाट लोगोंने विचारा कि अपने प्राण धनकी रक्षाके लिये यहॉसे भागजाना ठीक होगा. नहीं तो यहॉ भोजनके न मिलनेसे प्राण त्याग करने होगे। इस प्रकारसे अत्याचार और उपद्रवोसे पीड़ित होकर बहुतसे जाट किसान सीमामे स्थित वृटिश गवर्नमेण्टके अधिकारी देश हॉसी और हरियानाको चलेगये, वहॉ इनको बडे आदरभावके साथ लिया गया। विशेष करके उसी समयसे अंग्रेज गवर्नमेण्टने बहादुरखॉके अधिकारी देश और अन्यान्य भूखंडको भी अपने अधिकारमे करलिया था, तभीसे बीकानेरके उत्तरप्रान्तवाले निवासियोको दुगना कष्ट मिलता था। कारण कि उसी बहादुरखॉकी ओरके मनुष्य इस समय तस्करवृत्तिका अवलम्बन कर उनके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे। और फिर उनसे इन उपद्रवोके दूर करनेका कुछ उपाय नहीं होता था। बीकानेरके किसी २ देशके जाटोने इस प्रकारसे तस्करोके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये स्वयं उपयुक्त उपायका अवलम्बन किया। प्रत्येक ग्रामके जाटोंने अपने ग्रामोंमे एक मट्टीका वडा ऊँचा टीला बनाकर उसपर एक पहरेदार रक्खा। यदि वह पहरा देनेवाला मनुष्य दूरसे ही किसी तस्करको आताहुआ देखता तो उसी समय सबको सावधान करनेके लिये बड़ी जोरसे डंका बजा देता था। उसी बाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामवाले सावधान होजाते थे। एक ग्रामके शब्दको सुनकर दूसरे ग्रामवाले भी उसी भॉति बाजा बजा देते थे। क्रमानुसार उस

बाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामोके मनुष्य इकट्ठे होकर तस्करोको भगादेते थे। इन तस्करोका भय इतना प्रबल होगया था कि सभी जाट और किसान अपनी रक्षा और धान्यकी रक्षाके लिये ढाल और बड़े २ भाले हाथमे लेकर खेती रखाते थे। बीकासे तीनसौ तेईस वर्षके पीछे सूरतसिंहने जाटोकी प्रजासे परिपूर्ण उस राज्यकी ऐसी दीन हीन अवस्था कर दी।"

उपसहारमे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखगये है, कि "जो बीदावाटी इस समय बीकानेरका एक प्रधान अंशस्वरूप था और जिस देशमे राव बीदाके वंशधर वास करते थे, हम बीकानेरकी प्राकृतिक अवस्थाको वर्णन करनेके पहिले, उस देशके सम्बन्धमे कुछ कहनेकी अभिलाषा करते है। पाठकोको पहिले ही विदित होचुका है कि राव बीकाके दिग्विजयके लिये बाहर जानेके पहिले, उनके भ्राता बीदाने सबसे पहिले प्राचीन राजधानी मंडोरसे सेनासहित बाहरहो सबसे राठौरोका उपनिवेश स्थापन किया। बीकाने प्रथम राणाके अधिकारी गोड़वाड़ प्रदेशपर लड़ाईकी, और वहाँ अपनी छावनी स्थापन करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राणाकी प्रबल सेना उनके विरुद्ध खड़ी होगई, इस लिये वह शीघ्र ही उस देशको छोडकर उत्तरकी ओरको चलेगये। और मोहिलोके अधीश्वरोके आधीनमे रहनेलगे। कोई २ ऐसा कहते है कि यही मोहिलजाति यदुवंशकी एक शाखा है, परन्तु अन्य लोग इनको क्षत्री जातिमेसे एक स्वतंत्र जाति बतलाते है। वे मोहिलोके अधीश्वर छापर नामक स्थानमे निवास कर ठाकुरकी उपाधि धारण कर एकसौ चौवालीस खंड ग्राम और नगरोका शासन करते थे। बुद्धिमान् बीदाने देखा, कि संख्याबद्ध सेनाके साथ प्रगटरूपसे प्रबल पराक्रमी मोहिलपतिके साथ युद्ध करके अपने हृदयगत अभिप्रायका पूर्ण होना असंभव है, इस कारण वह अन्य उपाय सोच कर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये अग्रसर हुए। चतुर राठौर राजकुमार बीदाने जो उपाय किया था उसपर मोहिल किसी प्रकारसे भी संदेह नही करसकते थे। बीदाने सबसे पहिले मारवाड़की एक राजकुमारीके साथ मोहिल पतिके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया। बीर राठौर वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बधन स्थापन करना महा सन्मानका विषय जान मोहिलपतिने शीघ्र ही इस प्रस्तावमे अपनी सम्मति दी। कुछ ही दिन पीछे बीदाने विचित्र चातुरी जालका विस्तार कर राठौर राजकुमारीके पदोचित सज्जित सेनाको साथले, कन्यायात्री और कन्याको छापरमे लेआये। कन्यायात्रीगण और कन्या सवारोमे गुप्तभावसे आई, किसीको कुछ भी संदेह करनेका अवसर प्राप्त न हुआ, कन्या और कन्या यात्रिगणोको बड़े आदर-भावसे ग्रहण करनेके लिये मोहिलपतिने अपने राज्यके समस्त सामन्तोके साथ किलेमे डेरे दिये। कन्या और कन्याके कुटुम्बके लोग सभी एक २ करके सवारीमेसे उतरकर किलेके भीतर गये। परन्तु शीघ्र ही रथ और वहलियोमेसे नंगी तलवारे हाथमे लियेहुए सैकड़ो राठौरो ने निकल कर मोहिलपति और सामन्तोके ऊपर भीम वेगसे आक्रमण किया। विवाहका अनुष्ठान समाधिमे बदलगया। बीदाकी चतुरता सफल होगई है, यह समाचार पाकर मारवाड़के

महाराजने शीघ्रही उनकी सहायताके लिये अधिक राठौरोकी सेना भेज दी। उस सेनाकी सहायतासे साहसी बीदाने मोहिलोके शासनको एकबार ही लुप्त करके अपनी शक्तिको प्रवल करलिया। पिता जोधाने सेनाके द्वारा पुत्र बीदाकी सहायता की, बीदाने नवीन जीतेहुए राज्यके लाडणू नामक देश और बारह खड़ ग्राम पिताको देदिये। वह देश आजतक मारवाड़के अधिकारमे है। बीदाके परलोक जानेके पीछे उनके पुत्र तेजसिंहने अपने पिताके नामसे बीदासर नामकी नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा की। यही बीदावत सम्प्रदाय बीकानेरमे सबसे अधिक वलवान् थी। इसीसे बीकानेरके महाराज अपने राज्यमेसे सभीसे इच्छानुसार कर लेते थे, परन्तु इस बीदावाटीसे कभी अपनी इच्छानुसार कर नही लिया। यह देश अच्छे विस्तारवाला था परन्तु पृथ्वी एकसार थी। वर्षाऋतुमे चारो ओरके वालुमय छोटे २ पहाडोपरसे जल निकलकर इस स्थानको तर करता रहता है। वहांकी पृथ्वी वजर है, इस कारण इस स्थानके चारोओर अधिकतासे गेहूं उत्पन्न होते है। समस्त बीदावाटी देशके एकसौ चौवालीस खण्ड ग्रामोमे इस समय जो चौवालीस वा पचास हजार निवासी रहते है, इनमेसे तीन अंशोमेसे एक अंशके निवासी राठौर है, यह हमै निश्चय नही होता। यह देश बारह भागोमे विभक्त है, इनमेसे पाच श्रेष्ठ है।' इन देशोके आदि निवासी मोहिलोमेसे इस समय बीस परिवारसे अधिक सारी बीदावाटीमे नही दिखाई देते। और शेष निवासियोमेसे प्रधानतः अधिकाश जाट किसान और वाणिज्यका व्यापार करनेवाली जातियां है।"

द्वितीय अध्याय २.

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सूरतसिंहके सन्धिबंधनकी चेष्टा करना—संधिके प्रस्तावमे बृटिश गवर्नमेण्टका असम्मति देना—राजा सूरतसिंहका इच्छानुसार शासन—राजद्रोह—बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धिबंधन—सन्धिपत्र—कर देनेसे छुटकारा पाना—शांतिस्थापन—राजा सूरतसिंहका परलोक जाना—उनके चरित्रोकी समालोचना—रत्नसिंहका अभिषेक—पीडित सामन्त और प्रजाकी नवीन आशा—जैसलमेर राज्यके साथ विवाद—दोनो राज्योमे युद्धकी तैयारी—उदयपुर और मेवाडपतिकी रणशय्या—राणा रत्नसिंहका सेना सहित जैसलमेरमे जाना—अंग्रेज गवर्नमेण्टका युद्धमे विघ्न करना—सन्धिपत्रके अनुसार रत्नसिंहके निकट प्रस्ताव भेजना—युद्धसे शान्ति होना—मेवाडके महाराणाका मध्यस्थ होकर विवाद भंजन करना—दोनों राजाओंके द्वारा दोनोंकी क्षति पूर्ण करना—असंतुष्ट सामन्तोंका फिर विद्रोहके लक्षण प्रगट करना—उनका दमन करनेके लिये रत्नसिंहका अंग्रेज रेसिडेण्टके निकट सहायताकी प्रार्थना करना—सहायता देनेमे रेसिडेण्टकी प्रतिज्ञा करना—गवर्नर जनरलका उस प्रतिज्ञापालनमे बाधा देना—गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार सन्धिपत्रका अर्थ करना—जैसलमेरपतिके साथ रत्नसिंहका फिर विवाद—गवर्नमेण्टका विवादकी मीमांसा करना—दोनों राजाओंमे मित्रता—रत्नसिंहका राज्यसीमा—वृद्धिकी चेष्टा करना—वाणिज्य—शुल्ककी नवीन व्यवस्था—राजा रत्नसिंहकी मृत्यु।

जिस समय महाराज सूरतसिंह मृत्युके मुखसे छुटकारा पाकर नवीन जीवन पा अपने राज्यमे फिरसे भयंकर राजनैतिक शासन करनेके लिये अग्रसर हुए। उसी समय महामाननीय टाड् साहब अपने प्रियस्थान रजवाड़ोको छोड़कर अपनी जन्मभूमि इंगलैन्डको चलेगये, इसी कारणसे उनको बीकानेरका इतिहास उसी समय समाप्त करना पड़ा था। प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हम मेवाड और मारवाड़के समान बीकानेरके पीछेके इतिहासको भी लिखनेमे प्रवृत्त हुए है।

राजा सूरतसिह जिस समय मारवाड़के महाराज मानसिहसे परास्त होगये थे, उस समय विजयी वृटिशसिहने भारतके अनेक प्रान्तोमे अपना अधिकार करके भावी प्रवल शासनशक्तिको दृढ़ करलिया था। सूरतसिहने अपनी दुर्बुद्धिके वशीभूत होकर मानसिहके विरुद्ध धौकलसिहके साथ मिलकर अपने राज्यकी पॉच वर्षकी आमदनीको वृथा खोदिया था, इसी कारणसे उनका आर्थिक बल और बिक्रम घटगया था, मानसिहकी सेनाके प्रवल दावानलके समान वीकानेरकी सीमामें आते ही सूरतसिहका साहसपूर्ण हृदय कंपायमान होगया, उन्होने विचारा कि इस अगाध विपत्तिसागरसे उद्धार पाना तो दूर रहा वरन राज्यके भी नाश होनेकी संभावना है। इस हेतु उन्होने उस समय भारतमे एकमात्र वृटिश गवर्नमेण्टको प्रबल बलशाली जानकर १८०८ ईसवीमे गवर्नमेण्टके निकट संधिका प्रस्ताव भेजदिया। गवर्नमेण्ट उस समय अपनी शासनशक्तिका विस्तार कररही थी अस्तु उस राजनीतिसे सूरतसिहका पक्ष समर्थन न कियागया। और कहागया कि यमुनाके पारवाले किसी देशीय राजाको आश्रय न दिया जायगा न किसी देशी राजाके साथ रक्षण पीड़न तथा संधिस्थापन कियाजायगा*मान्यवर टाड् साहब ने न जाने क्यो इस घटनाका वर्णन नही किया, इसका विचार करनेमे हम असमर्थ है।

राजा सूरतसिहने कठोर रोगसे छुटकारा पाकर प्रजाके प्रति फिर उसी प्रकारके उपद्रव और अत्याचार करने प्रारंभ करदिये तथा सामन्तोके प्रति भी कठोर व्यवहार करना प्रारंभ किया। राज्यके प्रत्येक प्रान्तमे फिर भयंकर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित होगई। खाली खजानेको परिपूर्ण करनेके लिये अधिकतासे करकी वृद्धि की गई और प्रत्येक सामन्तोके अधिकारी देशपर जाकर उनकी समस्त धन सम्पत्ति भी लूटी जाने लगी इत्यादि। इन्ही सब दुरुपायोका अवलंवन कर सूरतसिह इस समय उस हानिको पूर्ण करनेलगे जो उन्हे मानसिहके विमुख होनेसे हुई थी और इसीसे प्रजा तथा सामन्त लोग सूरत सिहको राक्षस स्वरूप जानतेथे और उससे भयभीत होकर सभी उपद्रवोको सहन करते थे। यद्यपि सब सामन्त एकमत होकर सरलतासे सूरतसिहको राज्यच्युत करसकते थे, परन्तु उसके असह्य अत्याचारोको स्मरण कर, वे यह सोचकर रहजाते थे कि कदाचित् पीछे सूरतसिहकी जय होजाय तो यह हमारा सर्वनाश करदेगे। इसी भयसे कोई भी साहसके साथ सूरतसिहके विरुद्ध खडे न होसके। अत. सूरतसिहके अत्याचारोका स्रोत समभावसे वहने लगा।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV P. 146

यही नहीं कि सूरतसिंह केवल राजहन्ता ही हो, वरन् अनेक प्रकारके पापोंसे इनका जीवन महाकलंकित होगया था, इस कारण यह उन पापोंके नाश होनेकी इच्छासे प्रायः ब्राह्मणोंको बहुतसा धन देते थे, तथा दरिद्र ब्राह्मणोंको अपने यहाँ आश्रय देकर उनका अधिक संमान करते थे, और देवसेवा तथा धर्मकार्यमें भी लिप्त रहते थे। और जो दुराचारीगण उनके बालकपनके संगी थे, उन्होंने ही उस समय राज्यभारको ग्रहण करके चारों ओर इच्छानुसार उपद्रव करने प्रारंभ करदिये थे। यद्यपि राजा सूरतसिंह पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये ब्राह्मणोंकी सेवा और देवकार्यमें लिप्त रहते थे, तथापि दुराचरण करनेसे भी कदापि न चूकते थे। तब एक ओर जो शासनकर्ताने अपने स्वार्थसाधन तथा राजभंडारको पूर्ण करनेके लिये लोहेका दंड धारण करके प्रजाको पीडित करना प्रारंभ करदिया, तब दूसरी ओर उसी भाँति अराजकताकी वृद्धि होनेसे चोरोंका बल इतना प्रबल होगया कि लोग अपने धन और प्राण बचानेके लिये भी व्याकुल होगये। अन्तमें सामन्त लोग अधिक अत्याचार सहन न करसके। और वे प्रगट रूपसे सूरतसिंहके विरोधी होगये।

ब्राह्मणोंको धन देकर पूजा होम इत्यादिसे पापोंके नाशमें नियुक्त सूरतसिंह राज्येक चारों ओर प्रबल असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित और सामन्तोंको विद्रोही हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होगये। उस समय न जाने उनके पुण्यसंचयकी वाञ्छा कहाँ भाग गई। उस समय वह अपने प्राणोंकी रक्षा सिंहासनकी रक्षा, और राज्यकी रक्षाके लिये व्याकुल होकर चारों ओर आश्रय पानेके लिये चेष्टा करनेलगे। इस समय पिंडारियोंकी लडाई के पहिले १८२८ ईस्वीमें वृटिश सरकार रजवाडोंके सभी राजाओंके साथ प्रथम संधिबंधन करनेके लिये अग्रसर हुई थी। गूढ़ राजनैतिक उद्देशको गुप्त रखकर अपनी भावी शासन-शक्तिका विस्तार करने और राजपूत राजाओंकी स्वाधीनता लोप करनेके लिये ही वृटिश गवर्नमेण्टने हतवीर्य राजपूत राजाओंको संधिबंधन करनेके लिये बुलाया था, बीकानेरके महाराज सूरतसिंहने तुरन्त ही बड़े आनन्दके साथ गवर्नमेण्टके डेरोंमें उपयुक्त प्रतिनिधिको दिल्ली भेजदिया। राजनीतिचतुर सूरतसिंह भलीभांतिसे जानगये थे कि अंग्रेजोंकी सहायतासे अवश्य ही हम ऊधमी सामन्तोंको वशमें करसकैंगे। इस कारण उन्होंने एकमात्र गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन करना ही अपने भावी मंगलका कारण निश्चय किया, और बड़े आग्रहके साथ शीघ्रही संधि कर ली। राजा सूरतसिंहको उस समय स्वप्नमें भी यह ध्यान नहीं था कि हमारे भावी प्रतिनिधि इसी संधिबंधनके वशीभूत होकर सदाके लिये गवर्नमेण्टके आधीन होकर रहेंगे।

राजा सूरतसिंहके प्रतिनिधि ओझा काशीनाथ दिल्लीमें गये और वृटिश गवर्नमेण्टके साथ निम्नलिखित संधिपत्र तैयार किया गया। -

सन्धिपत्र।

माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ बीकानेरके अधीश्वर महाराज सूरतसिंह बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कम्पनीकी ओरसे महामहिमवर मार्किस आफ

हेसाटिन्स भारतवर्षके गवर्नर जनरलसे सम्पूर्ण क्षमता प्राप्त मि० चार्लस थियोफि-लास मेटकाफ और राजराजेश्वर श्रीमान् सूरतसिंह बहादुरको उनके द्वारा दिया गया, तथा सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् ओझा काशीनाथ द्वारा निर्द्धारित हुआ।

पहिली धारा।

माननीय कम्पनीके साथ महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा जो इनके स्थान पर अभिषिक्त हो वह, चिर स्थाई मित्रता करके संधिवंधन करले, अपने अपने स्वार्थकी ओर दोनोंहीका ध्यान रहे। जिस किसी पक्षके मित्र और शत्रु होंगे वह दोनो ओरके मित्र शत्रुरूपसे गिने जायँगे।

दूसरी धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टने बीकानेर राज्य और उसके अधिकारी देशोंको शत्रुपक्षके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा।

महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करै, और वृटिश गवर्नमेण्टका प्रभुत्व स्वीकार करते है, और वे अन्य किसी राजा अथवा राज्यके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न करसकैंगे।

चौथी धारा।

वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार और अनुमतिके अतिरिक्त महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसी राजा वा किसी राज्यके साथ संधिवंधन नही करसकैंगे, परन्तु अपने कुटुम्बी तथा मित्र राजाओंके साथ नियमितरूपसे पत्रव्यवहार करसकैंगे।

पाँचवीं धारा।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसीके प्रति अत्याचार नही करसकैंगे, यदि दैवयोगसे किसीके साथ विवाद उपस्थित होजाय तो उसकी मीमांसा तथा दंडकी मध्यस्थताका भार वृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर रखना होगा।

छठवीं धारा।

जिस कारणसे बीकानेर राज्यके कितने ही मनुष्योंने राजमार्गपर लूटमार की है तथा समस्त धन सम्पत्ति लूटकर इस संधिवंधनमे आवद्ध हुए दोनो राज्योंकी शान्ति-प्रिय प्रजाके ऊपर अत्याचार किये है और अंग्रेजोंके अधिकारी देशके निवासियोंकी चोर और डकैतोंने वहुत सी धन सम्पत्ति लूट ली हैं, उन सवको लौटा देनेके लिये तथा अंतमे राज्यसे चोर और चोरोंको जडसे नाश करनेके लिये महाराज स्वीकार करते है। यदि महाराज चोर और डाकुओंको निवारण करनेमे समर्थ न होंगे, तो उनके प्रार्थना करनेपर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको सहायता मिलेगी, और उस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी महाराजको उसका सव खर्चा देना होगा। यदि वह

इस खर्चेके देनेमे किसी प्रकारकी अरुचि करैगे तो उसके पलटेमे अपने राज्यके कई देश गवर्नमेण्टको देने होगे, और वृटिश गवर्नमेण्ट उन देशोकी आमदनीसे वह द्रव्य लेकर फिर वह देश राजाको लौटा देगी ।

सातवीं धारा ।

महाराजके राज्यके जो ठाकुर तथा अन्यान्य निवासी विद्रोही होगये है तथा जिन्होने उनकी शासनशक्तिकी अवमानता की है, महाराजके आवेदन करनेपर वृटिश गवर्नमेण्ट उनको दमन करेगी । इस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी, महाराजको उसका भी खर्चा देना होगा, यदि महाराज उस खर्चेके देनेको समर्थ न होगे तो उसके बदलेमे वृटिश गवर्नमेण्टको अपने राज्यके कुछ देश देने होगे और वृटिश गवर्नमेण्ट उन देशोकी आमदनी लेकर उन्हे फिर महाराजको लौटा देगी ।

आठवीं धारा ।

वृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधसे बीकानेरके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेनाकी सहायता करैगे ।

नवीं धारा ।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यको स्वाधीनभावसे शासन करते रहे, और उस राज्यमे वृटिश गवर्नमेण्टके शासनकी सीमाका विस्तार नही होगा ।

दशवीं धारा ।

वृटिश गवर्नमेण्टकी यह इच्छा और यह अभिलापा है कि काबुल और खुरासान इत्यादि देशोसे जिससे वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे आसकै, इस कारण बीकानेर और भटनेर राज्यके मार्गकी रक्षा भलीभातिसे कीजाय; इस निमित्त महाराज स्वीकार करते है कि वह अपने राज्यमे उक्त उद्देशको इस प्रकारसे सफल करनेकी चेष्टा करै कि वणिक् लोग जिससे निर्विघ्नतासे आ जा सकै, और उनको चोर डाकू किसी प्रकारकी बाधा न देसकै, अथवा वाणिज्य महसूल इस समय जितना लियाजाता है उससे अधिक न बढ़ाया जाय ।

ग्यारहवीं धारा ।

यह ग्यारह धाराओसे युक्त सन्धिपत्र मि० चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और ओझा काशीनाथके द्वारा तैयार होकर हस्ताक्षर करके इसपर मोहर लगा दीगई, और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल तथा राजराजेश्वर महाराज श्रीमान सूरतसिंह बहादुरका स्वीकार हुआ, आजकी तारीखसे लेकर बीस दिनके बीचमे परस्परमे लेन देन होजायगा ।

दिल्लीमे आज सन् १८१८ ईस्वीकी ९ मार्चको लिखा गया.

(हस्ताक्षर) सी टी मेटकाफ
(हस्ताक्षर) ओझा काशीनाथ ।

महाराज सूरतसिहने सन् १८२४ ईस्वीमे इस मायामय शरीरको त्याग दिया। अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि होनेके समय यद्यपि राज्यमे अधिकतासे शांति होगई थी, परन्तु उनकी मृत्युके पहिलेसे ही उन असतुष्ट सामन्तोने फिर विद्रोह उपस्थित करदिया। राज्यके चारो ओर फिर अराजकता उपस्थित होगई। अफ़गानिस्तानसे वहुतसे वाणिज्यके द्रव्य इस वीकानेर राज्यमे होकर भारतके अनेक प्रान्तोमे जाते थे। इसी लिये उस संधिमे एक यह धारा भी रक्खी गई थी कि जिससे वीकानेरके सामन्त इन वाणिज्य द्रव्योंसे भरे हुए छकडोके साथ जानेवाले वणिकोंके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार न करे, परन्तु इस समय उस धाराके अनुसार कार्यकरनेमे महाराज सूरत-सिह निपट असमर्थ थे।

इस वातको महाराज स्वय मानते थे कि मै घोरपातकी हूँ। परन्तु अपनी सामर्थ्य तथा अपने गौरवको वढ़ानेके लिये उन्होने कितनी ही वार युद्धभूमिमे जाकर प्रशंसनीय वीरता दिखाई थी। इनके राज्यकी सीमा जैसी सामान्य थी, उनकी सेनाका वल जैसा सामान्य था। यदि अपने कार्यक्षेत्रको भी उसी भांति सीमावद्ध रखनेकी चेष्टा करते तो अतसमयमे वह कभी भी आपत्तिग्रस्त तथा हीनवल नही होसकते थे। किन्तु वह अपनी दुर्वुद्धिवश मारवाडपति मानसिहके साथ ऐसे कुसमयमे युद्धमे लिप्तहुए कि वही युद्ध उनकी अवनतिका कारण हुआ। महाराज सूरतसिहके मारवाड़पति मान-सिहका विरोधी होनेका यद्यपि टाड् साहवने कोई कारण नही लिखा परन्तु हमारे विचारवान् पाठक सरलतासे इसका अनुमान करसकते है कि सूरतसिहके हृदयमे अवश्य ही एक गूढ़ और ऊँचा उद्देश छिपा हुआ था, उसी अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये यह धन और सेनाका नाश करनेमे प्रवृत्त हुए थे। अनुमान होता है कि उन्हें इस वातपर पूरा विश्वास था कि मानसिहके परास्त होते ही धौकलसिह अवश्य ही मारवाड़के सिहासन पर वैठेंगे, परन्तु जिस सूरतसिहने अपने भतीजेको मारकर राज्यसिहासन् पाया था उसकी आशा क्यो फलीभूत हो और इनका प्रताप और प्रभुत्व क्यो लोप न होजाय ?

महाराज सूरतसिहके परलोकवासी होनेपर उनके पुत्र रत्नसिह राजसिंहासनपर विराजमान हुए। रत्नसिहके सिहासन पर वैठनेके साथ ही साथ वीकानेरके सामन्त और समस्त प्रजाके मनका भाव भी सहसा वदल गया। सभीने विचारा कि सूरत-सिहके परलोक जानेके साथ ही साथ उनके निग्रह भोग भी समाप्त होजायगे, इस कारण वह नवीन राज्यके शासनमे मंगल और शांतिकी आशा करके नवीन २ आशाओंसे हृदयको शोभायमान करने लगे। महाराज सूरतसिहकी मृत्युके पहिले राज्यमे जिस प्रकारकी अशान्ति, उत्पीडन और अत्याचारोके समुद्रकी तरंगमालाके विस्तारने बीकानेर विध्वस होगया था चोर डाकुओके घोर उपद्रवोसे अराजकता अपनी पूर्णमूर्तिसे विभीषिकामय दृश्य दिखा रही थी, नवीन शासनके प्रारंभमे वह नग्न-माला और वह दृश्य न जाने कहां चले गये।

प्रार्थना भेजी। रेसिडेण्ट शीघ्र ही सेनाकी सहायता देनेके लिये सम्मत हुए। वृटिश गवर्नमेण्टने सधिपत्रका अर्थ सभी समयमे समभावसे नही किया है, सो हमारे पाठक इसे पहिले ही अनेक स्थानोमे पढ़चुके है। परन्तु रेसिडेण्टकी सहायताके लिये सेना भेजनेको तैयार होते ही अंग्रेज गवर्नर जनरलने असंतोष प्रगट करके रेसिडेन्टसे कहला भेजा कि "देशीय राजाओके घरेलू झगडोको शान्त करनेके लिये कभी सहायताके लिये सेना नहीं भेजी जायगी। यदि किसी विशेष कारणके उपस्थित होनेपर गवर्नमेण्ट आज्ञा देगी तो उस प्रकार सहायता दी जासकती है। इस समय बीकानेरकी अवस्था ऐसी नही है कि उनको सेनाकी सहायता दीजाय।" गवर्नमेण्टकी यह आज्ञा पाते ही रेसिडेण्टने फिर सहायताके लिये अपनी सेना नही भेजी। सधिपत्रका यथार्थ अविकल अनुवाद हम पहिले लिखचुके है, उसी सधिपत्रके मतसे अंग्रेज गवर्नमेण्टने राजा सूरतसिंहको सेनाकी सहायता देकर राज्यके विद्रोही सामन्तोका दमन किया था, परन्तु न जाने क्यो वृटिश गवर्नमेण्टने इस समय उस सधिपत्रका भिन्न अर्थ करलिया। जिस धाराके मतसे गवर्नमेण्टने एकबार ही बीकानेरके आभ्यन्तरिक उपद्रवोको शान्त करनेके लिये सेनाकी सहायता दी थी, इस समय उसी धाराका क्या अर्थ करलिया। एचिसन साहब अपने ग्रंथमे वर्णन करगये है कि "रेसिडेण्ट १८१८ ईस्वीके सधिपत्रकी छटवी और सातवी धाराका यथार्थ अर्थ नही समझसके। उपरोक्त दोनो धाराओके मतसे उस समय कार्य करना था। असतुष्ट प्रजा और सामन्तोको दमन करनेके लिये बीकानेरके महाराजको परिणाममे उक्तधाराके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टके निकट कभी भी सेनाकी सहायताकी प्रार्थना करनेका अधिकार प्राप्त नही था"। परन्तु हम कह सकते है कि एचिसन साहबकी यह उक्ति यदि सत्य है, सधिपत्रकी उक्त दोनो धाराओका यदि इस प्रकारका अर्थ है तो १८१८ इस्वीमे बोदावाटीके सामन्तोके विद्रोही होनेसे वृटिश सेना क्यो उनको दमन करनेके लिये बीकानेरमे आई थी? तब उक्त दोनो धाराओका दूसरा अर्थ क्यो हुआ? सारांश यह है कि वृटिश कम्पनीने जिस समय जैसी आवश्यकता देखी उस समय वैसा अर्थ किया।

जब महाराज रत्नसिंहने सुना कि गवर्नमेण्टसे सहायता न मिलेगी, तब इन्होने शीघ्र ही अपनी सामर्थ्यके अनुसार अपने आधीनकी सेनाके द्वारा ही विद्रोही सामन्तोको वशीभूत करनेकी चेष्टा की। परन्तु इनकी यह चेष्टा सफल भी न होनेपाई थी कि बीचमे ही और एक विवादाग्नि प्रज्वलित होगई। यद्यपि जयसलमेरपतिके साथ महाराज रत्नसिंहके विवादकी एकबार मीमांसा होगयी थी परन्तु इस समय अर्थात् १८४५ ईस्वीमे दोनो राजवंशोमे वह विवाद इतना प्रबल होगया, कि वृटिश गवर्नमेण्टको फिर शांति स्थापन करनेके लिये एक अंग्रेज राजपुरुषको मध्यस्थ करके भेजना पडा। उस अंग्रेज राजपुरुषने कार्यक्षेत्रमे आकर दोनो राजाओका विवाद इस प्रकार सतोषदायक रूपसे निपटादिया, कि दोनोहीमे जो दीर्घकालसे शत्रुता चली आरही थी उसे दोनो भूलगये, और दोनोमे परस्पर मित्रताका सम्बन्ध स्थापित होगया।

कर्नेल म्यालिसन साहब लिखगये है कि महाराज रत्नसिहने उन उपद्रवोके बीचमे ही हिसारकी ओरतक अपने राज्यकी सीमाके विस्तार करनेका दृढ़ यत्न किया था, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टने दृढ़रूपसे असंतोष प्रकाश कर कठोर नीतिका अवलम्वन किया इससे महाराजकी वह आशा दूर होगई।

वाणिज्यकी श्रीवृद्धिकी ओर वृटिश गवर्नमेण्ट विशेष ध्यान रखती थी। एक समय बीकानेरके वाणिज्यकी अधिक उन्नति थी। कावुलसे अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्य बीकानेरमे होकर भारतमे आते थे। सन् १८१८ ईस्वीके संधिपत्रके मतसे वृटिश गवर्नमेण्टने ऐसी व्यवस्था कर दी कि जिससे यह वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे बीकानेरमे होकर भारतके अन्यान्य प्रान्तोमे पहुँच जायाकरे। १८४४ ईस्वीमे अंग्रेज गवर्नमेण्टने उस वाणिज्यकी श्रीवृद्धिके लिये महाराज रत्नसिहके निकट एक नवीन प्रस्ताव उपस्थित किया। जो वाणिज्यके द्रव्य बीकानेरसे होकर सिरसा और भावलपुरमे जाया करते थे उन सभी द्रव्योपरसे बीकानेरके महाराज अधिक महसूल लेते थे। इस वर्षमे वृटिश गवर्नमेण्टने वही महसूल घटा देनेका प्रस्ताव किया।

महाराज रत्नसिहने इस प्रकारसे पचीस वर्षतक राज्य करके १८५२ ईस्वीमे इस मायामय शरीरको छोड दिया।

तृतीय अध्याय ३.



सरदारसिहका अभिषेक–राजपूत जातिका साहस तथा बल विक्रम घटनेका कारण–यवन-शासन और अंग्रेज शासनमे राजपूत जातिकी अवस्थाःका भेद–वृटिश गवर्नमेण्टकी ओर सरदारसिहकी अनुरक्ति–सिपाही विद्रोहके समयमे सरदारसिंहका वृटिश गवर्नमेण्टको सहायता देना–वृटिश गवर्नमेण्टका सरदारसिहको पुरस्कार देना–अंग्रेज राजप्रतिनिधिका सरदारसिंहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण करके सनद देना–सनदपत्र–वृटिश गवर्नमेण्टका सरदारसिंहको इकतालीस खंड ग्रामोका चिर स्वत्व देना–दानपत्र सीमान्तरपर उपद्रवकर–वृद्धिके पलटेमें सामन्तोके साथ विवाद विसम्वाद–वृटिश गवर्नमेण्टके दियेहुए ग्रामोंपर करकी वृद्धि करना–उन ग्रामोके निवासियोका अनुयोग–ग्रामनिवासियोंके पूर्व अधिकारको अक्षत रखनेके लिये सरदारसिंहको अंग्रेज राजप्रतिनिधिका आदेश–करवृद्धि–बीदावाटीके सामन्तोको नवीन सनद देना–महाराज सरदारसिंहकी मृत्यु–नवीन मंत्री समाजके द्वारा बीकानेर राज्यका शासनभार अर्पण–वर्तमान महाराज डूगरसिंहका अभिषेक–मंत्रीसमाज–अमरसिंहका महाराजके प्राणनाशकी चेष्टा करना–अमरसिहके द्वारा महाराज डूंगर-सिहको दंड–तीर्थयात्रा–माननीय प्रिन्स आफ वेलसके साथ महाराजाका साक्षात्–सामन्तोके साथ राजपूत राजाओका सम्वन्ध परिवर्तन–महाराज डूंगरसिंहका सामन्तोकी कर वृद्धिके लिये प्रस्ताव करना–उसके सम्वन्धमे पंचायतका नियोग–जरीव बनाना–वर्द्धित कर देनेमे सामन्तोंकी असम्मति–बीदासरके सामन्तोपर करवृद्धि–प्रधान२सामन्तोंका कर देनेमे असम्मति प्रकाश–सामन्तोका तीन प्रस्ताव उपस्थित करना–कारागारसे अमरसिंहको छोड़देना–उनके पुत्र ,रावको राजाकी उपाधि

देना—नोरवादेशके सामन्तोकी अवाध्यता—महाराजका उनके अधिकारको ग्रहण करना—नीची श्रेणीके सामन्तोकी वर्द्धित कर देनेमें असम्मति--महाराज डूगरसिंहके निकट उनका कर घटानेके लिये आवेदन -महाराजका उस आवेदनको ग्रहण न करना--एसिस्टेण्ट पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान टालवटका सामन्तोको राजधानीमे बुलाकर वर्द्धित कर देनेकी आज्ञा देना--सामन्तोका असतोप प्रकाश-- उनका भागना--सामन्तोको दंड देनेकी तैयारी--बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकुमसिंहका सेनाके साथ सामन्तोके विरुद्ध युद्धकी यात्रा करना--विद्रोही सामन्तोकी युद्धके लिये तैयारी--हुकुमसिंहका महाजन, रावतसर और गान्धोली देशपर अधिकार करना--सामन्तोका बीदासरके किलेका आश्रय लेना--उनकी युद्धके लिये तैयारी--विद्रोहियोको दमन करनेके लिये महाराजकी गवर्नमेण्टसे सहायता मागना--सेनाकी सहायता देनेमे गवर्नमेण्टकी सम्मति—अंग्रेजी सेनाका बीकानेरमें आगमन—अंग्रेजी सेना और महाराजकी सेनाका बीदासरके किलेको घेरना—सामन्तोका युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा करना—कप्तान टालवटका बीदासरके किलेके साथ आत्मसमर्पण करनेके लिये सामन्तोके निकट दूत भेजना—सामन्तोका उत्तर—घेरेहुए किलेपर गोलोकी वर्षा—सामन्तोका आत्मसमर्पण—अंग्रेजोकी सेनाका राव बीदाके प्राचीन दुर्गोको समभूमि करना—विद्रोही सामन्तोंको कारागारमें भेजना—पार्लिमेण्टके हाउस आफ लार्ड का भारतवर्षके स्टेटसेक्रेटरीका उक्त समरके सम्बन्धमे मतव्य—प्रकाश—बीकानेरके आभ्यन्तरिक शासनके सम्बन्धमे अंग्रेज एसिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्टका असंतोष प्रकाश--शासनविभागका व्यक्तिगत परिवर्तन--शासन व्यवस्थाके सम्बन्धमे मतव्य प्रकाश--शासनविभागके सम्बन्धमे वर्तमान पोलिटिकल एजेन्टका मन्तव्य—उपसंहार।

अपने पिताके परलोक जानेके पीछे सन् १८५२ ईसवीमे सरदारसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। सरदारसिंहके अभिषेकके समयसे बीकानेरकी राजशक्ति मानो क्रमश. हीनबल होनेलगी। जो बल विक्रम साहस शूरता आदि गुण राठौर राजाओका अंग भूषण थे वे सब एकबार ही निर्जीवसे होगये। राजपूत जातिकी चिर वीरताका मानो एकबार ही लोप होगया। प्रतिवासी राजाओके साथ युद्ध होनेसे यवनसम्राट के आधीन भारतके अनेक स्थानोपर सग्राममे केवल राठौर ही नही वरन् चौहान इत्यादि सभी राजपूत युद्धके अभ्याससे पतित अवस्थामे भी जातीय धर्म पालनके साथ शूरवीरता और बल विक्रमकी अचल भावसे रक्षा करतेआये थे। परन्तु सरदारसिंहके समयमे उस जातीय धर्म पालनके भाव सहसा ह्रास होगये। एक सरदारसिंह ही नही, रजवाडा ही नहीं, समस्त भारतक्षेत्र ही मानो स्तम्भित होगया, सन्धिबंधन होते ही युद्धकी चर्चा न्यून होनेसे सब शांतिका सुख भोगनेलगे। जैसी सरकार अंग्रेजोसे सधि कर रियासतोको शांति मिली है यदि इस शांति समयमे गवर्नमेण्टकी समान बनावटी युद्धोमे अपनी समर कुशलता भारतके राजा बनाये रखते तो उनकी सेनामे वीरता धीरता और प्रताप बराबर बना रहता, कारण कि जो विद्या पढकर उसका अभ्यास न रहे तो उसमे अवनति होजाती है, युद्धविद्या भी केवल सीखनेसे विना समर किये फलीभूत नही होती। हृदयमे दृढताका आविर्भाव नही होता, चुप रहनेसे बल विक्रम साहस अवनतिको प्राप्त होजाता है, कोई भी वीरजाति यदि तलवार भाला हाथमे लिये सौ वर्षतक चुपचाप बैठी रहे तो क्या उसमे साहस रह सकता है? कभी नही,

हमारा इससे यह अभिप्राय नही कि देशीय राजा परस्पर युद्ध करते रहे, पर हमारी यह इच्छा है कि वे आलस्य और विलासितामे अपना समय व्यतीत न करके वल विक्रम संपन्न रहे, सरकार अंग्रेजको वहुत स्थानोपर सेनाकी आवश्यकता होती है यदि क्रमसे रियासतोकी सेना इस कार्यमे ली जायाकरै तो उनमे वह गुण सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहे, यवनसम्राटोने भी देशीय राजाओकी सेनाके साथ ही साथ अपना प्रभुत्व संपादन किया था, इन सेनाओसे कार्य लेनेसे उनका वल वीर्य साहस वृद्धिको प्राप्त होता रहेगा, साथमे ऐसी शिक्षाकी भी आवश्यकता है जिससे राजपूत जाति अपने आचार विचार और जातीय धर्मको भली प्रकारसे जानती रहे, इन बातोके वनेरहनेसे राजपूत जातिमे जातीय गौरव वरावर वनारहेगा।

महाराज सरदारसिंह वीकानेरके सिंहासनपर विराजमान होकर भलीभाँति जानगये थे कि भारतवर्षके देशीय राजाओका चिर–प्रचलित कर्त्तव्यकर्म केवल समयके गुणसे वदलगया है, इस कारण वह समयानुसार कार्य करनेका यत्न करनेलगे। सरदारसिंह समझ गये कि विश्वविजयी वृटिशसिंह भयंकर मूर्तिसे भीषण गर्जन कर भारतवर्षको कपायमान कर रहा है इससे उसीकी आधीनता स्वीकार करके उसीका मन प्रसन्न करना उचित है।

नवीन महाराजको केवल पाच ही वर्ष राज्य करते हुए थे कि इसी समयमे प्रवल पराक्रमी अंग्रेजोने प्रवलतासे अंतिम आर्त्तनाद उपस्थित किया। १८५७ ईस्वीमे सिपाही विद्रोहका जघन्य काण्ड उपस्थित हुआ। उस समय हजारो अंग्रेजोके कुटम्वोकी हत्याके समय–तथा महा विपत्तिके समय महाराज सरदारसिंह बड़े आग्रहके साथ सेनासहित वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये सन्नद्ध हुए। वीकानेरके समीप हांसी और हिसार देशपर वृटिश गवर्नमेण्टका अधिकार था, वहांकी अंग्रेजी सेनाने विद्रोह उपस्थित करके अंग्रेजोपर आक्रमण करना प्रारंभ किया, उस समय वीकानेरके महाराजने वड़े साहसके साथ उस विद्रोही दलको दमन किया, और अंग्रेजोकी सेनाको सहायता देकर जो अंग्रेज अपने प्राणोके भयसे भयभीत हो भागनेके लिये तैयार होगये थे उनको वड़े आदर और यत्नके साथ अपनी राजधानीमे आश्रय दिया। महाराज सरदारसिंहने अंग्रेजोको प्राणपणसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार सहायता देनेमे कसर न की। जिस वृटिश गवर्नमेण्टने वीकानेरके विद्रोही सामन्त दलको दमन करनेके लिये रत्नसिंहको सधिपत्रके अनुसार सेनाकी सहायता नही दी थी, उसी गवर्नमेण्टसे विपत्तिके समयमे उस रत्नसिंहके पुत्रने कैसा व्यवहार किया, इसे हमारे पाठक भलीभाँतिसे स्मरण रक्खेगे।

उस महा विद्रोहानलके शांत होजानेके पीछे सौभाग्य वश देशी राजाओकी सहायतासे अंग्रेजोकी शासनशक्ति भारतवर्षमे फिर स्थापित होनेके पीछे राजपूतानेके गवर्नरके एजेन्टने महाराज सरदारसिंहकी बड़ी प्रशंसा करके गवर्नरजनरलको पत्र लिखा, इसपर भारतवर्षके गवर्नरजनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड केनिंगने परम संतुष्टहो सहाय-

कारी अन्यान्य भूपालोके समान वीकानेरके महाराज सरदारसिंहके पास एक बहुमूल्य-उपहार भेजा, इसके पहिले देशी राजाओके हृदयमे ऐसा विचार हुआ था, कि यदि यह पुत्रहीन अवस्थामे प्राणत्याग करेगे तो इनकी रानी आर्य रीतिके अनुसार पोष्यपुत्र वा दत्तकपुत्रको ग्रहण नहीं करसकैगी, तथा वह पोष्य वा दत्तकपुत्र सिंहासन प्राप्तिका अधिकारी नही होसकेगा, और बृटिश गवर्नमेण्ट उस राज्यको अपने हस्तगत करलेगी । परन्तु सिपाहीविद्रोहके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टने देशीय राजाओकी उस भीतिको दूर करनेके लिये सभीको इस भावकी एक सनद देदी, कि वह हिन्दूरीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण करसकते है, उनका दत्तकपुत्र उनका उत्तराधिकारी हो-सकेगा, और गवर्नमेण्ट उसके राज्यको अपने हस्तगत न करेगी । महाराज सरदार-सिंहने बृटिश गवर्नमेण्टकी जो सहायता की थी उसके लिये अन्यान्य राजाओकी समान इस समय उनको भी सनद दीगई ।

सनदपत्र ।

महामान्या (रानी विक्टोरिया) की अभिलाषा है कि जो राजा इस समय अपने २ देशको शासन करते है वह सब देश चिरकालतक उनके वंशधरोके द्वारा शासित होते रहैंगे और उनके पद संमानको अक्षतभावसे रक्खाजायगा, उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त मै आपको इसके द्वारा सूचित करता हू, कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अथवा आपके राज्यके भावी शासनकर्ता, हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण करसकते है, इसमे गवर्नमेण्टकी भी सम्मति है ।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे स्थित रहैंगे तथा जिस सन्धि आदिके द्वारा गवर्नमेण्टके साथ मित्रता स्थापित हुई है, उस सन्धि आदिपर जबतक विश्वासके द्वारा विशेष ध्यान रक्खाजायगा तबतक किसी प्रकार भी यह नियम भंग नही कियाजायगा ।

(हस्ताक्षर केनिंग)
गवर्नर और वाइसराय, हिन्द

महाराज सरदारसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टकी जिस प्रकारसे प्राणपणसे सहायता की थी, उसके बदलेमे केवल एक मूल्यवान् खिलत और उक्त सनदका देना उपयोगी न जानकर १८६१ ईसवीके पहिले महीनेमे राजप्रतिनिधि एवं गवर्नर जनरल बहादुरने महाराज सरदारसिंहको हिसार देशके ४१ ग्राम भी प्रदान किये। गो कि वे गांव कई वर्ष पहिले इनसे ही छीनकर हिसार प्रदेश सामिलित करलियेगये थे । निम्नलिखित सनदपत्रके द्वारा नीचे लिखेहुए ग्राम राजा सरदारसिंहको दिये गये ।

वीकानेरके महाराज सरदारसिंहको ग्राम दियेजानेका सनदपत्र ।

हर्षका विषय है कि, जिस कारणसे राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके विज्ञापनमे प्रकाशित हुआ, कि विद्रोहके समयमे महाराज सरदारसिंह बहादुर बृटिश

गवर्नमेण्टकी ओर राजभक्ति और उनकी अनुरक्तिके वश होकर स्वयं कार्यक्षेत्रमे उपस्थित हुए है। उन्होने धन खर्च करके कितने ही अंग्रेजोके जीवनकी रक्षा की है तथा गवर्ननेण्टके और भी अनेक प्रकारके उपकार किये है इस लिये यह व्यवहार गवर्नमेण्टके पक्षमे विशेष संतोषदायक विचारागया, इस लिये उक्त महाराजको गवर्नमेण्टके निकटसे धन्यवाद लाभ और सन्मानसूचक खिलत प्राप्त हुआ है, गवर्नमेण्ट इस समय अत्यन्त संतुष्ट होकर सिरसाके जिलेके मध्यमे स्थित वार्षिक चौदह हजार दोसौ बानवे रुपयेकी आमदनीवाले ग्रामोकी एक स्वतंत्रतालिका लिपि वद्ध करके उन ग्रामोका सभी अधिकार महाराजको देती है। इससे वह ग्राम उनके राज्यके अन्तर्गत कियेगये उनके राज्यके साथ जो नियम प्रचलित थे इनके सम्बन्धमे भी वही नियम नियत किये गये। १८६१ ईस्वीके पहिले महीनेकी पहिली तारीखसे यह सनद मानीजायगी।

ग्रामोंकी सूची। ११ अप्रैल १८६१ ई०

सन् १८६१–६२.

संख्या.	ग्रामोके नाम.	वार्षिक आमदनी.	मन्तव्य.
१	सावूरा	३०० रुपया	
२	मानकटीवी	१७० ”	
३	खाडखाडा	४९० ”	१८६५–६६ ईस्वीमे इसकी आमदनी ५९० रुपया है।
४	उदियाखाडा	४०६ ”	
५	कामपुरा	१३७ ”	उक्तवर्षमे २३५ की आमदनी वढ़
६	सोलावाली	२३४ ”	
७	मूलाकाखाडा	४५१ ”	
८	वासीहर	५०० ”	
९	गिलवाला	४१० ”	
१०	सहारन	३५० ”	
११	फूलचढ	२५० ”	
१२	सुरावाली	९४८ ”	
१३	चन्द्रवाली	२०० ”	
१४	पीरकामडिया	७४० ”	
१५	पुन्यावाली उर्फजगरानी	२०७ ”	
१६	फुल्लानी	४५१ ”	
१७	मगरानी	५३४ ”	
१८	मासानी	३४६ ”	
१९	टिविवाराजेका	८८९ ”	
२०	रउआखाड़ा	१९९ ”	

२१	रातिखाड़ा	१६	"	१८६५-६६ ई०मे इसकी आमदनी २३५ रुपये बढ़ी
२२	किसनपुरा	१२०	"	७०-७१ ई० मे ३०० रुपये बढ़े
२३	सलीमगढ़	१७	"	७०-७१ ई० मे १३० बढे
२४	धारुई	२१०	"	६५-६६ ई० मे ३४० को वृद्धि हुई
२५	सिलवानाखुर्द	१९४	"	६५-६६ इ० मे २२६ की वृद्धि हुई
२६	बैरवाला फल्यान	२८०	"	
२७	सिलवाला कल्यान	२४१	"	६५-६६ ई० मे ३६६ की वृद्धि हुई
२८	तलवाराकल्यान	७५७	"	
२९	जलालाबाद	१७६	"	६५-६६ ई० मे २७६ की वृद्धि हुई
३०	मोहरवाला	४८२	"	६५-६६ ई० मे ५५४ की वृद्धि हुई
३१	असितावाली	२२३	"	६५-६६ ई० मे २६१ की वृद्धि हुई
३२	रामसर	२५८	"	६५-६६ ई० मे ३०८ की वृद्धि हुई
३३	दुवलीखर्द	३९४	"	६५-६६ ई० मे ४५४ की वृद्धि हुई
३४	रामनगर	२००	"	
३५	दुबलीकल्यान	७३०	"	६५-६६ ई० मे ७८० की वृद्धि हुई
३६	भिर्जावाली	३५१	"	६५-६६ ई० मे ४२३ की वृद्धि हुई
३७	चाउवाली	३१०	"	६५-६६ ई० मे ३६० की वृद्धि हुई
३८	बुरहानपुरा	१७४	"	६५-६६ ई० मे २२५ की वृद्धि हुई
३९	खैरवाली	१८१	"	६५-६६ ई० मे २३१ की वृद्धि हुई
४०	शिवधनपुरा	४७३	"	
४१	खान्द्वानिया	२८५	"	

सब जोड़ १४२९१ रुपये

बीकानेरके महाराज सरदारसिंह बहादुरने गवर्नमेण्टके अनेक उपकार करके यह जो ४१ ग्राम पाये थे यह अवश्य इनके पुरस्कारके योग्य थे, परन्तु यवनसम्राटोंने ऐसे उपकार पाकर बहुतसे प्रत्युपकार किये है, जिनकी तुलनासे यह उपकार सामान्य-मात्र होरहता है, परन्तु जहा धन्यवादका ही बड़ा मूल्य गिनाजाता है, वहां बीकानेरके महाराजको ४१ ग्रामोका मिलना अवश्य ही उच्चकक्षाका पुरस्कार गिनाजायगा।

महाराज सरदारसिंहके शासनसमयमे सीमाका विवाद फिर प्रबल होगया, १८६१ ई० मे मारवाडके साथ बीकानेर राज्यकी सीमासे लेकर फिर संग्रामके पूर्व-लक्षण दिखाई दिये। बीकानेरकी सीमावाले निवासियोने मारवाडकी सीमामे जाकर घोर

1 Aitcheson's Treaties Vol IV.

अत्याचार करने प्रारंभ करादिये, अन्तमे बृटिश गवर्नमेण्टने मध्यस्थ होकर सब उपद्रवोको शान्त करदिया।

यह हमने बारंबार इस लिये कहा है कि राजाके दुर्बल होनेसे ही अधीनस्थ सामन्त विरक्त होकर अपनी शक्तिके विस्तार करनेकी अभिलाषा करते है । महाराज सूरतसिंहके शासनसमयमे बीकानेरके सामन्त उद्धत होकर राजद्रोही होजाते थे। रत्नसिंहके साथ सामन्तोका जैसा असद्भाव था, वह दूर न होकर सरदारसिंहके साथ भी वह सामन्त अनेक अप्रिय आचरण करने लगे । महाराज सरदारसिंहने बीकानेरके समस्त सामन्तोपर करके बढ़ानेका विचार किया, इसीसे राज्यमे फिर उपद्रव उपस्थित होने लगे। विशेष करके इस समय गवर्नमेन्टके दियेहुए इकतालीस ग्रामोंपर भी कर बढ़ाया गयाथा, इसीसे उपद्रव प्रबल होगये । उक्त ग्रामोके निवासी अबतक बृटिश गवर्नमेन्टके आधीनमे थे, इस समय नवीन शासनमे अपने अधिकारको नष्ट होताहुआ देखकर वह अत्यन्त असतुष्ट हुए, और तुरन्तही बृटिश गवर्नमेन्टके समीप बीकानेरके महाराजके विरुद्ध आवेदन करनेको तैयार हुए। अंग्रेज राजप्रतिनिधिने उस आवेदनपत्रको पाकर महाराज सरदारसिंहके समीप विशेष असंतोष प्रकाश करके एक पत्र लिखभेजा कि इन ग्रामोंकी प्रजाको गवर्नमेन्टने जैसा अधिकार दिया है आपभी उसीके अनुसार कार्य करै। ओर इन सब ग्रामोमे अपने राज्यके सुशासनके लिये सब अंगोमे योग्य मनुष्योको शीघ्रही नियत कीजिये। महाराज सरदारसिंहने भारतवर्षके गवर्नर जनरल और राजप्रतिनिधिके इस पत्रको पाकर आवश्यक संस्कार और सुशासनके अनुष्ठान करनेमे जरा भी विलम्ब न किया। परन्तु राव बीका द्वारा संवत् १५४५ मे बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे संवत् १९२६ पर्यन्त जो सामन्तगण "कहारा राज्यकर देते आये है, अब उनपर कर बढ़ाकर राज्यकोषकी आय बढ़ाये जानेका अनुष्ठान कियागया। बीकाजीके समयसे जो सामन्त प्रतिअश्वारोही सेनाका वार्षिक १००) रुपया प्रति ऊंटपर५०) रुपया प्रतिपैदलपर पच्चीस रुपया देतेआये थे. इस समय महाराजके अधिक कर बढ़ाये जानेसे प्रधान अप्रधान सभी सामन्त महा असतुष्ट होगये, और उसीसे राज्यमे फिर अशान्तिके लक्षण दिखाई दिये। परन्तु मेजर पावलेट (इससमयके कर्नल) जो अंग्रेज पोलिटिकेल एजेण्ट थे,उन्होने इन उपद्रवोको निवारण करनेके लिये यह अहारा कर नियत करदिया कि सामन्तोको प्रत्येक अश्वारोहीके प्रति वार्षिक २०० रुपया ऊंटके प्रति १०० रुपया और पैदलके प्रति५० रुपया देना होगा। पहिलेकी अपेक्षा इस समय दुगने करके बढ़ जानेसे सभी सामन्त विरक्त होगये थे, परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि पावलेट साहबने भी जब यही स्वीकार करदिया, तब उनको गवर्नमेण्टके भयसे कुछ भी कहनेका साहस न हुआ । सभीने एक साथ प्रतिज्ञा करके हस्ताक्षर करदिये और उपद्रवोकी समाप्ति होगई।

हमारे पाठक पाठिकाओने राव बीदा द्वारा अधिकार कीहुई बीदावाटीका वृत्तान्त पढ़ा होगा। यद्यपि यह बीदावाटी बीकानेर राज्यके अन्तर्भुक्त था, परन्तु यह एक छोटा राज्य गिनाजाता था । महाराज रत्नसिंहके पूर्ववर्ती बीकानेरके

महाराजने वीदावाटीके सामन्तोपर कर नही लगाया, राव वीकाके वीकानेर राज्यके स्थापन करनेके छ. वर्ष पहिले अर्थात् सवत् १५४० मे उनके भ्राता वीदासिहने इस वीदावाटी राज्यको स्थापन किया था । वीका और वीदा दोनो ही सहोदर भ्राता थे। वीदाके साथ इनकी माताने आकर इस वीदावाटीमे निवास किया। वीकाने इसी लिये प्रतिज्ञा की थी कि जबसे माता वीदावाटीमे आकर निवास करेगी तबसे मै तथा मेरे वंशधर किसी समय भी वीदावाटीपर आक्रमण नही करेगे। रत्नसिहने इस प्रतिज्ञाको पालन न करके वीदावाटीके सामन्तोसे नियमित कर ग्रहण किया। महाराज सरदारसिहने भी उसी प्रकारसे सवत् १९२६ मे वीदावाटीके सामन्तोके निकटसे वार्षिक पचास हजार रुपया नियत कर ग्रहण किया।

इस रूरके उपद्रवोके शांत होजानेके पीछे महाराज सरदारसिह १८७२ ईस्वीके पहिले महीनेमे स्वर्गवासी हुए।

महाराज सरदारसिहकी पुत्रहीन अवस्थामे मृत्युहोनेसे वीकानेरका सिहासन शून्य होगया। इसी कारणसे वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मंत्रिसमाजकी सृष्टि करके उस समाजके हाथमे शासनका भार सौपागया । प्रधान राजनैतिक अंग्रेज कर्मचारी उस मत्रीसमाजके सभापति होकर राज्य करने लगे। इस प्रकारसे कुछ काल-तक राज्य होनेके पीछे नवीन महाराजको नियुक्त करनेके लिये राजरानी और सामन्तोने विचार किया कि राजहता सूरतसिहके वंश लोपहोनेसे शीघ्र ही मृतक महाराजके कुटुम्वमेसे किसी मनुष्यको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण कर उनका अभिषेक करना उचित है। अतएव लालसिह नामक एक वुद्धिमान् मनुष्यके पुत्र डूगरसिह को शेष दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण करनेका प्रस्ताव किया गया। राजरानी और सामन्तोने भी इसमे अपनी सम्मति दी। गवर्नमेण्ट पहिलेहीसे प्रतिज्ञाके पाशमे वॅधगई थी कि महाराजकी यदि पुत्रहीन अवस्थामे मृत्यु होजाय तो राजरानी हिन्दूरीतिके अनुसार किसीको दत्तकपुत्रस्वरूपसे ग्रहण करै, इस कारण गवर्नण्टने विना कुछ आपत्ति किये इनको वीकानेरका अधीश्वर स्वीकार करलिया और अभिषेकके प्रस्तावमे शीघ्र ही अपनी सम्मति दे दी। अल्पावस्थामे डूगरसिह राजाकी उपाधि धारण कर वड़ी धूमधामके साथ वीकानेरके सिहासनपर शोभायमान हुए।

महाराज डूगरसिह वहादुर अल्प वयस्क होनेके कारण राजकार्यको कुछ नही जानते थे, इसीसे इनके हाथमे सम्पूर्ण राज्यशासनका भार देना असभव जानकर अग्रेज गवर्नमेण्टकी रीतिके अनुसार एक स्वयं मत्रीसमाज नियुक्त हुआ। महाराजके पिता लालसिह उस मत्रीसमाजके सभापतिपदपर विराजमान हुए, और महाराव, हरिसिहराव, यशवन्तसिह, मेहता मानमल और मगनहीरालाल यह सव सदस्य पदपर नियुक्त हुए।

१८७५ ईस्वीमे महाजनके सामन्त अमरसिह महाराज डूगरसिह वहादुरका जीवननाश करनेको उन्हे विष देनेके लिये तैयार हुए। महाराजने उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो उनको प्राणदण्डके वदलेमे चार वर्षके लिये कारागारमे

रहनेकी आज्ञा दी । अमरसिंहके कारागारमे जाते ही उनके पुत्र रामसिंह पिताके पदपर नियुक्त हुए ।

महाराज डूंगरसिंह वहादुर अवस्थाके अधिक होनेपर भी मंत्रीसमाजकी सहायतासे राज्यशासन करते थे। महाराज १८७६ ईसवीमे हरद्वार और गया तीर्थको गये, और वहांसे जव यह अपने राज्यको लौट रहे थे तव इन्होने आगरेमे जाकर भारतके भावी सम्राट् प्रिन्सआफवेलस वहादुरके साथ साक्षात् किया । महा माननीय प्रिन्स आफवेल्स वहादुरने महाराजको वडे आदरभावके साथ ग्रहण कर उनके सम्मानको वढानेमे किसी भांतिकी कसर न की ।

राजपूत राजाओको पूर्ण स्वाधीनता लुप्त होनेऔर अवस्थाके परिवर्तनके साथ ही साथ सामत मण्डलीके सग उनका पूर्वसम्वन्ध भी वदलता गया । राजपूत राजा जिस समय सम्पूर्णरूपसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते थे, अपने वाहुवलसे राज्यकी रक्षा तथा शासन करते, अग्रेज गवर्नमेण्टकी रीति जाननेसे पहिले इन्होने सामन्तोसे करस्वरूपसे नगद रुपया नही लिया था । जो सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको भोगते थे उनको उसी प्रकारसे निर्द्धारित रीतिके अनुसार युद्धके समयमे सेना देना, तथा वर्पमे कई महीनेतक राजाके यहां रहकर राज्यशासनकी सहायता करनी पडती थी । यवनशासनके समय देशीय राजाओने स्वाधीनताके हेमगिरिसे गिरकर भी सामन्तोसे नगद धन ग्रहण नही किया था । उस समय आधीनके सामन्त राजाओके साथ मिलकर यवनसम्राट्की आज्ञानुसार भारतके अनेक प्रान्तोमे सेना सहित युद्ध करनेको गये थे, पर अग्रेजी राज्यमे वह रीति वदल गई । इस समय चारो ओर शांतिमयी देवी विराजमान है, किसी देशी अथवा विदेशी राजाके द्वारा आक्रमणका भय नहीं है, और अंग्रेज गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार सेना सहित समरक्षेत्रमे भी जाना नही पड़ता, इस कारण सामन्त जो चिरकालसे सेनाकी सहायता करते थे उन्हे भी देशीय राजाओके पक्षमे सेनाकी सहायता देनेकी आवश्यकता नही होती है ? विशेष करके वुद्धिमान् अंग्रेज गवर्नमेन्टने प्रायः प्रत्येक देशीय राज्यको निर्विघ्नतासे रखनेकी प्रतिज्ञा कर उन देशीय राजाओसे वार्पिक कई लाख रुपया ले स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करके उसे अपने आधीनमे रक्खा है, इस कारण राजाओको इसके लिये अधिक खर्चा देना पड़ा है, और सामन्तोने जो सेना रक्खी है इस समय उस सेनाके रखनेकी भी आवश्यकता नही होती इस कारण देशीय राजाओकी इस अवस्थाके वदलनेसे उन्हे अपने २ आधीनके सामन्तोसे उस सेनाके वदलेमे नगद रुपया लेना पड़ा है और इसी लिये देशीय राजाओके साथ विवाद विसंवाद तथा युद्धतक भी होगया है ।

वीकानेरमे स्थित गवर्नर जनरल एसिस्टैण्ट एजेण्ट ए डवलिड रिचार्ट्सने गत १८८३ ईस्वीकी ११ मईको बीकानेरके शासन विज्ञापनमे लिखा कि "१८७० ईस्वीमे दशवर्पके जो करदेनेकी व्यवस्था हुई थी, चार वर्प बीत गये, वह नियमित समय समाप्त होगया है । १८८२ ईस्वीके अप्रेलके महीनेमे सामन्तोकी सम्मतिके अनुसार कार्य करना चाहिये कि उस करको अव किसी प्रकारसे वढाया जाय, इस कारण उनके

अधिकारकी पृथ्वीको हस्तगत करना ठीक है, इस प्रस्तावके होजानेपर पाँच महीनेके पीछे सभी सामन्त बीकानेरमे इकट्ठे हुए, और उन्होने श्रीमान् महाराजके प्रति निवेदन किया कि एक पंचायतके हाथमे इस कार्यका भार अर्पण कियाजाय। उनके इस अनुरोधकी रक्षा की गई। अर्थात् चार सामन्त और चार राजपुरुषोने उस पचायतमे नियुक्त होकर तीन महीनेतक घोरपरिश्रम कर उपस्थित प्रश्नोका विचार करदिया। इस समय ठाकुर (सामन्त सर्वसाधारणमे ठाकुर नामसे विख्यात थे) ऐसा कहते है कि १८७० ईस्वीमे जो २०० रुपयेका नियम हुआ था, वह लोग उससे अधिक कर नही देसकते, और उन्होने अपने २ पट्टेको लौटा दिया हे। नियमित करकी सख्या घटा देनेसे इन उपद्रवोके विचार करनेकी चेष्टा की गई है। ऐसी आशा होती है कि शीघ्र ही इसका विचार होजायगा * मेजर रिचार्ड्सने यह आशा प्रकाशित की अत्यन्त दुःखका विषय है कि थोड़े दिनोमे ही उनकी आशाके विपरीत फल फलनेके पूर्वलक्षण दिखाई देते है।

बीकानेरके महाराजने अन्यान्य साधारण सामन्तोकी समान बीदावाटीके सामन्तो के ऊपर एक बार ५० हजार रुपयेसे लेकर फिर ८६००० हजार रुपया नियत करदिये। यद्यपि महाराज रत्नसिहके समान सरदारसिहने भी इन सामन्तोसे ५० हजार रुपया कर ग्रहण करके सनद दे दी थी कि अबसे कभी कर नही बढ़ाया जायगा, परन्तु महाराज डूंगरसिहने उस सनद पर विश्वास न करके उपस्थित अवस्थाको समझकर ही प्रस्तावित करके बढादेनेकी आज्ञा दी। इस करके बढनेसे ही धीरे २ भयकर उपद्रव होनेलगे।

महाराज डूंगरसिहने प्रचलित करको दुगना बढ़ाकर राज्यके प्रधान २ सामन्तोंमे महा आपत्ति उपस्थित की, परन्तु अंतमे सामन्तोने अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्टको राजाका पक्ष लेते हुए देखकर शीघ्र ही उस करके देनेमे राजी होकर स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर करदिये। परन्तु उन्होने इस वर्द्धित करके देनेके पहिले महाराजके निकट यह प्रस्ताव किया, कि महाजनके भूतपूर्व सामन्त समरसिहने जो महाराजको विष देकर मारनेकी चेष्टा की थी, इस कारण उनको कारागारमे रक्खा गया था, इस समय उनको छोड़ देना चाहिये क्यो कि इसका कोई प्रबल प्रमाण नही पायाजाता कि जिससे यह जाना जाय कि वह निश्चय हो विष देनेके लिये तैयार हुए थे, और फिर १८७८ ईसवीसे अभीतक कारागारमे बंदी रहनेसे उनको भली भातिसे फल भी मिलगया है। दूसरे रावतसरके सामन्तोको उनके अधिकारसे रहित कर महाराजने जो उनके अधिकारी देशोको अपने अधिकारमे करलिया है, वह देश उन सामन्तोको देदिये जांय, और पहिले उनका जैसा सम्मान तथा [illegible] थी इस समय वह भी करनी होगी। " तीसरे गान्धोली तथा जसानाके [illegible]

* Report of the Political Administration of [illegible] States for 1882–83.

भी उनका पूर्व अधिकार देना होगा" । महाराज डूंगरसिहने सामन्तोकी इनभअभिलाषाओंको तुरन्त ही पूर्ण करदिया और केवल कारागारके वंदी अमरसिंहको छोड़ कर ही निश्चिन्त न हुए वरन् उनके पुत्र महाराव रामसिहको " राव राजा " की उपाधि दी और इससे उनका और भी अधिक सम्मान बढ़ाया । जसानाके ठाकुर और इनके भ्राता जोरासरके ठाकुरोका पूर्व अधिकार भी दे दिया गया* । और नोखा नामक देशके सामन्तके कामदार अर्थात् प्रधान कर्मचारीके बीकानेर राजदरवारका अपराधी होनेसे महाराजने नोखाके सामन्तोको आज्ञा दी, कि उसको शीघ्रही राजदरवारमे भेज दे परन्तु सामन्तने राजाकी आज्ञा पालन न की और उक्त कामदारको लेकर उन्होने भिन्न देशमे प्रस्थान किया । इसपर महाराजने उक्त नोखा देशपर अधिकार कर लिया था, इस समय उस अराजभक्त सामन्तको भी चले आनेकी आज्ञा दी गई परंतु सामंतने उस आज्ञाको पालन न किया ।

यद्यपि महाराज डूंगरसिह बहादुरने सामन्तोकी उक्त प्रार्थनाको स्वीकार किया था, तथा सामन्त गण, उस वर्द्धित करके देनेमे सम्मत भी होगये थे परन्तु नीची श्रेणीके सामन्त इस वर्द्धित करके देनेसे फिर भी असतुष्ट रहे । वह किसी भांति भी उस वर्द्धित करके देनेमे राजी न हुए । अंतमे उन सबने मिलकर डूंगरसिहके पास यह समाचार भेजा, कि इस करके देनेमे हम लोग सब प्रकारसे असमर्थ है । इस कारण हमे क्षमा किया जाय, महाराजने इसके उत्तरमे कहला भेजा कि राज्यके प्रधान २ सामन्त जब कि इस बढ़ेहुए करको देरहे है तब मै इस विषयमे आपकी कोई बात नही सुन सकता। तब तो वह नीची श्रेणीके सामन्त निराश हो राज्यमे असन्तोष दायक उपद्रव करनेलगे ।

इस समय मेजर रिचार्ड्स अन्य स्थानको बदले गये और कप्तान टालवट उनके पदपर नियुक्त होकर आये। कप्तान टालवटने बीकानेरमे आकर महाराजके मुखसे समस्त वृत्तान्त सुनकर जानलिया कि करके देनेमे जो गडबड़ी होरही है इसका विचार सरलतासे नही होगा, इस कारण उन्होने सब सामन्तोको बुलाकर आज्ञा दी कि किसी २ स्थानपर दुगना और किसी २ स्थानपर तिगुना कर आपको देना होगा, और सभीको पहिले सन्धिपत्रकी पॉचवी धाराके अनुसार एक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करनेहोगे । सामन्तोने इस प्रस्ताव पर अत्यन्त असन्तुष्ट होकर कहा कि इस समय जो कर बढ़ा दिया गया है उसको घटा दिया जाय, और सब स्थानोपर समभावसे करके ग्रहण करनेकी व्यवस्था कीजाय । कप्तान टालवट भलीभांतिसे जानगये थे कि सामन्त

---

(१) महाजनके सामन्तोके कर्मचारी लक्ष्मीचन्द महताने सिविल और मिलिटरी गजट नामके समाचारपत्रमे इसके सम्बन्धका जो पत्र प्रकाशित किया है, तथा १८८४ ईसवीकी तीसरी जौलाईको इन्डियनमिररसे जो पत्र उद्धृत हुआ है, हमने उसीसे इस अंशको उद्धृत किया है ।

* Report of the Political Administration of Rajputana states for 1882–83

असन्तुष्ट होगये है, यह सरलतासे कर देनेमे राजी न होगे, इस कारण उन्होने सबके सामने कहा कि यदि तुम लोग हमारा नियमित कर नही दोगे तो तुमको इसका उचित फल मिलेगा। सामन्त यह वचन सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो उसी समय राजधानी छोड़कर चले गये।

इस प्रकारसे जब सामन्त राजाकी आज्ञा न मानकर और राजधानी छोड़ कर चले गये तब महाराज डूंगरसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो सामन्तोको दमन करनेके लिये उचित उपाय सोचा। बृटिश एजेण्टने भी तुरन्त ही महाराजके इस प्रस्तावको समर्थन कर लिया। अन्तमे रेसिडेन्टकी सम्मतिके अनुसार बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकमसिह को महाराजने आज्ञा दी कि राज्यके प्रधान २ सामन्तोके अधिकारी देशोपर शीघ्रही अपना अधिकार किया जाय। प्रधान सेनापति हुकमसिह अपनी समस्त सेना साथ लेकर राजाकी आज्ञा पालन करनेके लिये चले। यह सुनकर सभी सामन्त अपने २ स्वार्थकी रक्षाके लिये राजाकी सेनासे युद्ध करनेके लिये अपनी २ सेना और कुटुम्बियोको साथ ले महाजन नामक ठिकानेमे इकट्ठे हुए। प्रधान सेनापतिने वहॉ सेना रखकर विद्रोही सामन्तोसे कहला भेजा, कि "महाराजकी ऐसी आज्ञा है कि तुमलोग अपने २ नगरो और किलोको हमे देदो। उपस्थित उपद्रवोका विचार होते ही फिर यह नगर और किले आपको देदिये जायगे"। सामन्तोने देखा कि इस समय महाविपत्ति उपस्थित है। महाराजकी सेनाके साथ युद्ध करनेकी हमारी सामर्थ्य नही है, और फिर दीर्घकाल तक यहा रहना भी असभव है, इस कारण दुर्भेद्य किलेमे चले जाना उचित जाना और रावतसर तथा गन्धोली नामक तीनो ठिकानोके किलोको छोडकर वे बीदावाटी देशके बीदासर नामक स्थानके दुर्भेद्य किलेमे गये। बीदावाटीके सामन्तोने भी वर्द्धित करको देना स्वीकार नही किया था इसीसे उन्होने विद्रोही सामन्तोके नेता पदकोही ग्रहण किया था, सामन्तोने वहॉ इकट्ठे होकर महाराजके साथ युद्ध करनेका विचार किया।

सामन्तोकी इस प्रकारसे विद्रोही व्यवस्था देखकर महाराज डूगरसिहने कप्तान टालवटके सम्मुख यह प्रस्ताव किया कि अग्रेजी सेनाको सहायताके अतिरिक्त इस विद्रोहकी अग्निके शान्त होनेका दूसरा उपाय नहीं है। कप्तान जनरलने राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजैण्ट कर्नल ब्रेड फोर्डके पास यह प्रस्ताव भेजा और गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अनुसार उन्होने शीघ्र ही १८१८ ईस्वीके सन्धिपत्रके अनुसार अग्रेजी सेनाको सहायता देनेकी आज्ञा दी। शीघ्र ही प्रबल अग्रेजी सेना युद्धसाजसे सजगई। मेजर जनरल डवलिड एम टारण बुलके आधीनमे एफ रायल आर्टलरी नामक गोलन्दाज दलकी तीन तोपे, मेजर क्यारिटनके आधीनकी के वार्सेस्टार रेजिमेट नामक सेनादलके दो कपनी मेजरटाडिरोके आधीनकी आठ कम्पनी बम्बईकी पैदलोकी एक शाखा, लेफटिनेण्ट कर्नल कोनसरके आधीनकी एक कम्पनी, सापार्स तथा मिनार्स मेजर किगरके आधीनमे मेरवाड़ा सेनाका दल, एव मोजरगिस मरके आधीनमे एरनपुरके पैदलोकी ४०० सेना, और दिग्डिरेगटार सेनादलकी १५० सेना सजकर बीकानेरमे आ

पहुँचो। जनरल जिलेसपि इस सेनाके प्रधान सेनापति पदपर नियुक्त होकर आये। पाठक गण! यह तो हम पहिले ही कह आये है कि अंग्रेज सरकारने सन्धिपत्रके अर्थको समयके भेदसे दूसरी प्रकारका कर लिया था। १८३० ईसवीमे जब महाराज रत्नसिहने इस प्रकारसे विद्रोही सामन्तोके दमन करनेके लिये वृटिश रेसिडेण्टके निकट सेनाकी सहायता मांगी थी और रेसिडेण्ट सेना देनेको तैयार हुए तब वृटिश गवर्नमेण्ट ने उस सेनाके देनेका निषेध किया, सन्धिकी धाराका इस प्रकारका अर्थ करलिया कि गवर्नमेण्ट बीकानेर राज्यके भीतरी झगडोमे अथवा विद्रोहको निवारण करनेके लिये सेनाकी सहायता नही देगी, केवल सन्धिबंधनके समय महाराज सूरतसिहको इस प्रकारकी सहायता देनेके लिये सम्मत होनेसे सहायता दी थी, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टने सन्धिधाराकी उसी प्रकारकी व्याख्या करके बीकानेरके आभ्यन्तारिक उपद्रवोको निवारण करनेके लिये सेना भेजी।

बीकानेर राज्यके प्रधान सेनापति हुकुमसिहने महाराजकी आज्ञानुसार सेना सहित शीघ्रही बीदावाटीमे जाकर बीदासरके किलेको घेरलिया। इस ओर अंग्रेजी सेना भी जनरल जिलेसपिके साथ आकर बीकानेरकी सेनाके साथ मिलगई। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान टालबट भी शीघ्रतासे वहां पहुँच गये। राजाकी सेना और अंग्रेजी सेनाको आयाहुआ सुनकर बीदावाटीके सामन्त विद्रोही सामन्त तथा अन्यान्य सामन्त साथ मिलकर राठौरोका बाहुबल दिखानेको युद्धके निमित्त पहिलेसे ही सज गये थे। यद्यपि राठौरोका बल विक्रम लुप्त होगया है यद्यपि जातीय बल एकबार ही क्षीण होगया है, यद्यपि वीरोकी सख्या रजवाडोमे नही रही है, कि बहुतः ऐसा कहनेसे भी अत्युक्ति नही होगी कि यद्यपि राजपूत जातिका वह विश्वविदित साहस शूरता इस समय प्रवाद वचनोमे परिणत होगई है, तथापि वह सम्मिलित विद्रोही सामन्त राजाकी सेना और अंग्रेजोकी युक्त सेनाके साथ युद्ध करनेको तैयार हुए। उन्होने इस कारण भी रणक्षेत्रमे जानेकी प्रतिज्ञा की, कि पीछे जयपुर, जोधपुर, जयसलमेर और मारवाड़ इत्यादि राज्यके सामन्त उनको भीरु और कायर पुरुष कहकर उपहासन करे।

इसको तो हम पहिले ही कहआये है कि विद्रोही सामन्तोके साथ कैसा व्यवहार किया गया। कप्तान टालबटने सब विद्रोही सामन्तोसे कहला भेजा कि किलेके भीतर उनका जो परिवार है उसको वे वहाँसे और किसी स्थानपर भेज दे, सामान्तोने तुरन्त ही यह आज्ञा पालन की। इस आज्ञासे सामन्त भली भाँति समझगये कि हमारे भाग्यकी परिक्षा सरलतासे समाप्त नहीं होगी। इसके पीछे कप्तान टालबटने यह भी कहलाभेजा कि तुम शीघ्रही बीदासरके किलेको हमे दे दो। कप्तान टालबटकी यह आज्ञा सुनकर सामन्तोने कहला भेजा कि, "बीकासिहने सवत्[२] १५४५ मे बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठा की है, उनके छोटे भ्राता बीदासिहने इससे पहिले अर्थात

(१) १८८४ ईसवीके २ जौलाईके इन्डियनमिरर देखो।

(२) १८८४ ईसवीके २ जौलाईके इन्डियनमिररको देखो।

संवत् १५४० मे वीदासर राज्य स्थापन किया था । वीदासिहने अपनी माताके साथ निवास कर शपथ करके यह प्रतिज्ञा की थी मै तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी वीदासरपर आक्रमण नही करैगे, यह बीकानेरके इतिहासमे भली भाँतिसे प्रकाशित होचुका है, उसी समयसे इस वीदासरके ऊपर बीकानेरके किसी राजाने भी हस्ताक्षेप नही किया । जबतक करका विचार भली भाँतिसे न होजायगा, तभीतक हम निर्वि घ्नतासे इस वीदासरमे रहैगे ।" सामन्तोके यह वचन सुनकर कप्तान भली भाँतिसे जान गये कि राठौर सामन्त अंग्रेजोकी सेनाको आया हुआ देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वे अपने ओजस्वी स्वभावके वश युद्ध करनेके लिये तैयार है, इस कारण उन्होने शीघ्रही वीदाके बनायेहुए किलेको घेरनेकी आज्ञा दी । १८८३ ईसवी की १६ वी दिसम्बरको अंग्रेजी सेना और बीकानेरके महाराजकी सेनाने किलेको जा घेरा, और उसके मुँहपर तोप लगाकर गोलेकी वर्षा करनेलगे । वहुत समयके पीछे आज फिर समरानलने प्रज्वलित होकर विचित्र दृश्य दिखाया । एक ओर प्रवल पराक्रमी अंग्रेजी सेना दूसरी ओर संख्यावद्ध क्षीणवल राठौर सामन्त केवल जातीय गौरव तथा राजपूतोके सम्मानकी रक्षाके लिये अपनेको वलहीन जानकर भी युद्धमे लिप्त हुए थे । निरन्तर गोलोकी वर्षा करके अंग्रेजी सेनाने उस प्राचीन किलेको विध्वंस करदिया । तव उन विद्रोही सामन्तोने अंतमे १८८३ ईस्वीकी २५ दिसम्वरको अंग्रेजी सेनाको आत्म समर्पण करदिया । विजयी अंग्रेजी सेनाने वीदासरके किलेके अतिरिक्त और भी कई एक किले एकवार ही तोड फोड़ डाले ।

वीदासरके सामन्तोके आत्मसमर्पण करते ही उनको राजनैतिक बंदीरूपसे देहलीके किलेमे भेजदिया गया । वह वहाँ वंदीभावसे रहने लगे । अन्यान्य सामन्त भी वंदीभावसे कारागारमे रक्खे गये। इन वंदी सामन्तोके विपयमे उस समय कोई विचार नहीं हुआ, परन्तु ऐसी आशा की जाती थी कि वृटिश गवर्नमेण्ट शीघ्र ही वीकानेरके महाराजके साथ परामर्श करके अच्छी व्यवस्था करदेगी ।

उपरोक्त समयके सम्वन्धमे इंगलैण्डकी पार्लिमेण्ट, हाउस आफलार्डस नामक सभामे भारतवर्पके सेक्रेटरी आफस्टेटस् अर्लआफ किम्वर्लीने जो कहा था "वह प्रकाशित करते थे कि वीकानेरके महाराजके साथ विद्रोह उपस्थित हुआ, और वह उस विद्रोहको निवारण करनेमे समर्थ न हुए, तभी उन्होने भारतवर्पकी गवर्नमेण्टसे सहायता माँगी । भारतवर्पकी गवर्नमेण्टने इनकी सहायताके लिये जनरल जिलेसपिके आधीनमे प्राय १८०० सेना भेजी । यह हमे संतोप है कि इस सेनाने वीकानेर राज्यमे जाकर एक मनुष्यका भी प्राणनाश नहीं किया और कईएक किलोको विध्वस करनेके अतिरिक्त और कोई अनिष्ट नही किया । इस काण्डमे शेपतक यही वृत्तान्त[२] है " ।

---

१ महाजनके सामन्तोके कर्मचारी, सिविल और मिलिटारि गजटमे यह प्रकाशित किया है । तथा १८८४ की ३ जौलाईके इन्डियनमिररमें यह उद्धृत हुआ है ।

२ लन्दनके टाइम्स नामक पत्रमे यह वृत्तांत प्रकाशित हुआ है । १८८४ ईसवीकी छटवी अगस्तके इण्डियनमिररमें यह उद्धृत होचुका है ।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि महाराजके राज्यशासनके सवन्धमे साधारण प्रजा और सामन्तोके समान वृटिश गवर्नमेण्टने भी संतोप प्रकाश नही किया। यद्यपि अंग्रेजी सेनाने पूर्वोक्त विद्रोहको निवारण करनेके लिये सव प्रकारसे महाराजकी सहायताकी थी, परन्तु भूतपूर्व पोलिटिकल एजेण्ट मेजर, एडवालिड रिचार्टसूने १८८१–८२ ईसवीमे राजपूत राज्योके शासन वृत्तान्तमे जो मन्तव्य प्रकाशित किया है उससे भलीभांति जानाजाता है कि उस समय बीकानेर राज्यकी उचित सुशासन व्यवस्था नही हुई थी। * परन्तु मेजर रिचार्ट्सने पिछले वर्पके अर्थात् १८८२–८३ ईसवीके शासन विज्ञापनमे बीकानेरके शासनके सम्वन्धमे लिखा है कि "अवतक जिस प्रकार मन्त्री समाज (कौनसिल) द्वारा शासनकार्य निर्वाह होता चलाआया है, उसमे इस समय केवल एक पुरुपका परिवर्तन हुआ है। महाराव हरीसिह जो दरवारके पुरुपानुक्रमिक राजकर्मचारी थे, और जो अनेक वर्पोंसे मन्त्रीसमाजके प्रधान सेनापति थे, उन्होने गत अक्टूवर महीनेमे प्राणत्याग किये है। वह शून्य पद कुछ दिनके लिये पूर्ण किया गया है, अर्थात् उनके भ्राता राव यशवन्तसिह जो एक समय मन्त्रीसमाजके सदस्य थे, और जो अपने कर्त्तव्य पालनमे दृढ़ नही थे इसीसे वह १८७९ ईसवीमें पदसे रहित कियेगये थे, अव पुनः उसी पदपर नियुक्त किये गये है। गत मार्चके महीनेमे जिस समय गवर्नरजनरलके एजेन्ट बीकानेरमे आये, उस समयसे माननीय महाराज प्रति सोमवार और वृहस्पतिवारको प्रजाका आवेदन पत्र लेकर सुना करते है, एवं ऐसी आशा कीजाती है कि वह इस भॉति आवेदन पत्रको सुनेंगे, कि जिससे मत्रीसमाज शासन विभागके किसी विपयमे विलम्व न करै। इस लिये वह विशेप ध्यान रक्खेगे। भूतपूर्व मृतक महाराज किसानोके स्वार्थसाधनके लिये विशेष ध्यान रखते थे, और राजकर्मचारियोके कार्यकी ओर अधिक ध्यान देते थे, परन्तु आजकलके माननीय महाराज राजकर्मचारियोकी ओर अत्यन्त मृदु व्यवहार करते है।" * गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजेन्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नेल ई. आर. सि वाडफोर्ड सि. एस. आई, ने १८८३ ईसवीकी २७ वी अगस्तको माननीय राजप्रतिनिधि गवर्नर जनरलके निकट लिखा कि बीकानेरके माननीय महाराज सव प्रकारसे स्वस्थ शरीर है परन्तु वह प्रजाके प्रति विच्छिन्न भावसे रहते है, और महलके वाहर क्या होरहा है, इसके सम्वन्धमे कुछ भी नही जानते, राज्यके सुशासनके लिये किस प्रकारके अनुष्ठानका प्रयोजन है, इसको कुछ भी स्थिर नही करसकतेहै, हमारे वहॉ रहनेके समय माननीय महाराजने स्वयं प्रजाके आवेदनपत्रका ग्रहण कर सुननेका विचार किया, और इससे उन्होने प्रजाके कल्याणकी अभिलाषाकी, इससे उनके सामान्य आभासमे भी प्रजामे सुफल उत्पन्न होनेकी संभावना है, परन्तु शासनके सम्वन्धमे इतना सामान्य सतोष दायक मन्तव्य प्रकाश किया जाता है। +

---

* Repoit of the political Administiation of Rajputana states foi 1882–83.

× Selections fiom the Records of the Goveinment of India foreign Department No. CXC III.

उपसंहारमे हमै केवल इतना ही कहना है, यद्यपि हम अंग्रेजी पोलिटिकल एजेण्ट की उक्तिके प्रति ऐसी आस्था नहीं दिखाते तथापि हम बीकानेरके शासन सम्वन्धमे अन्यान्य लक्षणोसे भली भाँति जानगये है, कि राज्यके आभ्यन्तरिक शासनके सम्वन्ध मे सुव्यवस्था करना कर्त्तव्य है, हम आशा करते है, कि महाराज वड़े उद्योगके साथ हमारी अभिलाषाको पूर्ण कर सामन्तमंडली तथा प्रजाके हृदयको आकर्षित करनेमे समर्थ होगे।

वर्तमान वृत्तान्त।

यह वीकानेर देश जोधपुरके उत्तरकी ओर है। पृथ्वीके हिसावसे यह राजपूतानेका दूसरा और निवासियोके हिसावसे चौथा राज्य ठहरता है। इसमे २२३४० वर्गमील पृथ्वी है और ८३१२१० निवासी सन् १८९१ की गिन्तीमे पाये गये। इसकी वार्षिक आमदनी अठारह लाख १८००००० रुपये है। यहां नदियां नही कुओसे जल लियाजाता है। नगरके कुए ३०० फुट तक गहरे है, वाहर२० फुट खोदनेसे पानी निकलता है। यहांके घोडे गाय भैस वैल आदि जैसे होते है वैसे सव भारतवर्षमे नहीं पायेजाते। भीते यहांकी ऐसी ऊची है और मुंडेरो तथा बुर्जोंसे ऐसी विभूषित है कि दूरसे वडा नगर दिखाई देता है, सडकै तंग और तिरछी है इसमे पत्थरके चित्रित अनेक घर है, राज्यमे कालिजके सिवाय कितनी ही पाठशाला है संवत् १९४४ मे महाराज डूंगरसिहके छोटे भाई।

महाराज राजराजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि श्रीगंगासिहजी वहादुर।

गद्दीपर विराजमान हुए। इनकी अवस्था उस समय अनुमान दशवर्षकी की थी इस कारण राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट मेजर टालवट साहव C. I. E के अधिकारमे कौसल द्वारा राजकाज होता था अव श्रीमान् कालिजसे विद्या पढ कर योग्यता प्राप्त करके अधिकार सपन्न हुए है। आपने विलायतकी यात्रा भी की है। भली प्रकार प्रजापालन करते है। इनके समय वीकानेरकी उन्नतिमे वहुत आशा है परमेश्वर महाराज को चिरजीव रखकर प्रजापालनमे तत्पर रक्खै।

चतुर्थ अध्याय।

बीकानेरकी प्राचीन और वर्त्तमान अवस्थाका भेद—बीकानेरकी भूमिका पारिमाण—मनुष्यों की सख्या—जाटजाति—सारस्वत ब्राह्मण—चारण—उद्यानपाल—क्षौरकार—राजपूत—प्राकृतिक अवस्था—सस्य—फल—वृक्ष—कर्पणयंत्र—जल—लवणह्रद—प्राकृतिक सौन्दर्य—खानिज पदार्थ—पशुपालक—वाणिज्य और शिल्प—पशम—लौहद्रव्य—मेला—राजस्व—खास भूराजस्व—धुँआकर—अंगकर आमदनी और नगरके वाणिज्य पर महसूल—पुपायेति अर्थात् कृषिकर, मालभा प्राचीन राजस्वकी सूची—धावूईकर—दंड एवं खुशियाली—सामन्तोके आधीनके पूर्वतन सेनाकी सूची—पूर्वतन राजसेनाकी संख्या—बीकानेरके प्रधान २ सामन्तोके नाम धाम—राजस्व और सेनाकी तालिका—पूर्वतन विदेशीय सेनाकी सूची—आधुनिक विवरण—राजस्व—स्वास्थ्य चिकित्सालय, राजस्व सम्बन्धी मुकदमे—दीवानी विचारालय—फौजदारी विचारालय—वन्दियोकी संख्या—विद्यालय—

इतिहासवेत्ता टाड् साहब बीकानेर राज्यके प्राकृतिक वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले लिख गये है, कि "अंग्रेजोके समीप यह देश अत्यन्त अपरिचित था, अंग्रेज इस देशको सब प्रकारसे मरुक्षेत्र जानते थे। प्रवादियोके मुखसे इस देशके अत्यन्त प्राचीन कालके उत्कर्पावस्थाके अनेक परिचय पायेजाते है, पर उनके साथ वर्तमान अवस्थाकी बराबरी नही की जासकती। जिस समयसे राजपूतोने यहांके निवासी जाटोके ऊपर अपने अधिकारका विस्तार किया उसी समयसे गत तीनसौ वर्षमे इस देशकी जो अवनति होगई है इसको देखकर हमारा अनुमान ठीक होता है, यह मरुक्षेत्र एक समय उर्वर और घनी वसतीसे पूर्ण था, यद्यपि इस देशमे इस समय बालू अधिक बढ गई है तथापि यह देश अब भी इतने धान्य उत्पन्न करनेमे समर्थ है कि इससे बहुतसे निवासियोका भोजन संग्रह होसकता है, यह अनुमान सभी सदेहोसे रहित है। बीकानेरके भूतपूर्व राजा रणक्षेत्रमें अपनी स्वजातीय दश हजार सेनाको इकट्ठा करनेमे समर्थ होते थे, यद्यपि वह प्रबल सेनादलके व्ययसम्पादन करनेके लिये यवनवादशाहोसे कुछ अतिरिक्त भूवृत्ति भोग करते थे, परन्तु वे केवल अपने राज्यकी आमदनीसे भी उस सेनाके पालन करनेमे समर्थ थे। अधिक अनुर्वरताके अतिरिक्त इस राज्यकी शोचनीय अवस्थाके कुछ अन्य कारण भी देदीप्यमान थे। एक ओर जिस भाँति यहाँके निवासी चोर डकैतोके द्वारा सतायेजाते थे, उसी प्रकारसे राज्यमे भी अत्याचारी राजाके अधिक कर बढानेसे प्रजा अत्यन्त पीड़ित होती थी, उस शासनके सम्बन्ध मे प्रजा इस करके देनेसे शान्ति नही पाती थी। यही बडे आश्चर्यका विषय है कि इस अवस्थामे भी राज्यकी प्रजा अधिकतासे विध्वस नही हुई। बीकाने जिन ग्राम और नगरोको बल पूर्वक अपने अधिकारमे किया था और जिन ग्राम निवासियोने इच्छानुसार उनकी आधीनता स्वीकार की, पिछली तीन शताब्दियोमे इस समय उन ग्रामोके कोई चिह्न भी नही पाये जाते और जो ग्राम बचे थ वह भी क्रमानुसार उसी

दशाको पहुँच गये है। एक समय जिस भाँति बहुतसे वाणिज्यकी वस्तुओसे पूर्ण छकडे इस राज्यमे आयाकरते थे और उनपरसे महसूल लेकर राज्यकी आमदनी वढती थी इस समय राज्यकी शान्ति नष्ट होनेसे और चोर डाकुओकी वृद्धि होनेसे अव उस भाँतिसे वाणिज्य द्रव्य नही आते है, इससे बीकानेरके महारावको जिस भाँति हानि पहुचती है, उसी भाँति वाणिज्यके प्रधान स्थान चूरू, राजगढ़, और रेनी इत्यादिकी अवनतिसे प्रजाको भी यथेष्ट हानि पहुची है। एक समय इस वाणिज्य स्थानपर सिन्धुजात और गङ्गाजीके किनारेके देशोसे बहुतसे वाणिज्य द्रव्य आयाकरते थे। यही नही कि केवल बीकानेर राज्यकी ही यह शोचनीय अवस्था होगई है, जिस कारणसे बीकानेरको यह दुर्गति हुई है उसी कारणसे जयसलमेर तथा और भी पूर्व सीमावर्ती राज्योकी ऐसी दुर्दशा होगई थी। बीकानेरके समान उन सव राज्योमे सुशासनके अभावसे चोर और डाकू प्रवलतासे वढगये थे। बीकानेरके बीदावत स्वय जैसे अत्याचारी और तस्कर थे, वैसे ही जयसलमेरके मालदेवोत और जयपुरके सेखावत भी होगये थे। फिर इनके साथ अधिक पश्चिम मरुक्षेत्रके सराई, खोसा और राजड़गण राज्यके सभी स्थानोपर चोर डाकू लूटते हुए फिरा करते है। यह भी जानागया है कि अरव देशके वद्दूगणोके समान यह शेषोक्त कई एक जातियो समान आचार व्यवहारवाली कही जासकती है।" महात्मा टाड् साहवकी इस उक्तिको पढ कर हमारे पाठक सरलतासे अनुमान करसकैगे कि उस समय बीकानेर राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था कैसी थी। यद्यपि अनेक वर्ष वीत गये है परन्तु हम अत्यन्त दु खके साथ प्रकाश करते है, कि इस दीर्घकालमे बीकानेर राज्यकी अवस्था उचित रीतिमे नहीं बदल सकी थी। यद्यपि अधिकतर चोर और डाकुओके उपद्रव निवारण होगये है यद्यपि आभ्यन्तरिक सुशासनके लिये अनेक उपाय होरहे है तथापि राज्यमे आजतक पूर्णरूप शांति विराजमान नही है। यद्यपि वाणिज्य और व्यापारमे अधिकतासे लाभ हुआ है, रजवाड़ोके अन्यान्य राजपूत राज्योमे इस दीर्घकालमे वाणिज्यकी इतनी उन्नति होगई है पर बीकानेर उतनी उन्नति नही करसका है।

बीकानेरकी भूमिका परिमाण—महात्मा टाड् साहव लिखगये है कि "इस राज्यके पूंगलसे राजगढतक देश पूर्वकी अपेक्षा विस्तारवाले है और इसका परिमाण प्रायः नव्वे कोशतक है, और चौडाई उत्तरसे दक्षिण तक है। भटनेर और महाजन परगनेके मध्यस्थ भूमिका परिमाण अस्सी कोश तक है, सम्पूर्ण बीकानेर राज्यकी भूमिका परिमाण कोई ग्यारह सौ कोशसे अधिक नहीं होगा। पूर्वकालमे इन विस्तारित देशोमे दो हजार सातसौ नगर और ग्राम थे, परन्तु इस समय उनसे आधे भी नहीं है।" "आचिसन साहवने १८७६ ईस्वीमे लिखा है कि बीकानेरकी भूमिका परिमाण १७६७६ मील है"।

मनुष्योकी सख्या—मात्र् टाड् साहव जिस समय रजवाडोमे उपस्थित थे उस समय बीकानेरके निवासियोकी सख्या कितनी थी, उसके सम्बन्धमे लिखगये है, 'उसके कुछ एक उदाहरणोके विना दियेहुए मारवाड़ देशकी जनसख्याकी
[illegible]

के समान जनसंख्या होगी । " इन निवासियोंमे चार अशोमेके तीन अंश यहांके आदि निवासी जाट है, और शेष उनके विजेता बीकाके वंशधर है । इनमे सारस्वत ब्राह्मण, चारण कवि, और अन्यान्य कितनी ही जातियां है । समस्त निम्न जातियोके निवासियोकी संख्या राजपूतोके दश अंशोमेका एक अश भी नही होगी । अधिक शांतिके होनेसे बीकानेरके निवासियोकी संख्या इस समय बढ़गई है ।

जाटजाति—बीकानेरके जाट निवासियोके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहब लिखगये है कि यहांके निवासियोमे जाटोकी संख्या समधिक है, और वह सबसे अधिक धनवान् भी है, जाटोके प्राचीनकालके समाजिक नेतागणोके समान इस समय सभी प्राचीन भूमिहार अर्थात् भूस्वामी है, वह विशेष धनवान् है, परन्तु उनका धन किसी भी कामका नही होता, कारण कि राज्यके भयसे वे सदा चिथड़े लगेरहते है, केवल विवाह इत्यादिके समयमे वह लोग अधिकतासे धन खर्च करते है । अधिक क्या कहे वह लोग भोजन करानेके लिये राजमार्गपर मनुष्य रखकर अनिमंत्रित मुसाफिरोतकको बड़ी विनती से घर बुलाकर भोजन कराते है । इस प्रकारसे वह जितने मनुष्योको भोजन करासकते है उनका गौरव उतना ही सौगुणा बढ़ता है ।

सारस्वत ब्राह्मण—"इस देशमे प्राय सारस्वत ब्राह्मण ही अधिक निवास करते है । वे लोग इस बातका गर्व करते है कि जाटगणोके इस देशमे उपनिवेशके स्थापनके पहिले उनके पूर्वपुरुष ही इस देशके अधीश्वर थे, वे लोग शांतिप्रिय और परिश्रम करनेवाले है । वे ब्राह्मण होकर कोई कुसस्कार नही करते । परन्तु मांस खाते है, तमाखू सेवन करते, कृषिकार्य करते और अधिक क्या कहै वह लोग पवित्र गौओका व्यवसाय भी करते है । "

चारणगण—"चारण गण इस देशके निवासियोमे सबसे पवित्र गिनेजाते है ओर वे पूजनीय भी है । वह वीरव्रतधारी राजपूत ब्राह्मणोके धर्मोदेशकी अपेक्षा चारण गणोके वीरगाथाके प्रति विशेष मान्य दिखाते है । चारणगणोका देशके सभी राठौर सम्मान करते है और प्राचीन गाथाके बलसे सभी भूवृत्तिको भोगते है, जैसलमेरके इतिहासमे इनका वर्णन विस्तारपूर्वक कियाजायगा । "

"प्रत्येक राजपूत परिवारमेमाली एव नाई यही क्षौर कार्य करते है । यह लोग प्रत्येक ग्राममे पायेजाते है । ये लोग प्रायः राजपूतोके भोजन भी बनाते है ।

चूहड एव थोरी—कर्नल टाड् साहब लिखगये है कि " चूहड़ एव थोरी यह प्रकृत चोरजाति है चूहड़गण लक्खो जगलके और शेषोक्त गण मेवाडके निवासी है बीकानेरके प्राय. सभी सामन्तोने इस चूहड़ और थोरी जातिके कितनेही नेताओको वेतन देकर सेवककी भांति अपने यहां रक्खा है । किसी असाध्य कार्यके लिये इनको रक्खा जाता है । भादराके सामन्तोने अपने आधीनके सभी राजपूतोको विदा देकर केवल चूहड और थोरी जातिके मनुष्योको अपने यहां रक्खा था । चूहड अत्यन्त विश्वासी गिनेजाते है । सामन्त और नगरके द्वारकी रक्षाका भार उनके हाथमे रक्खा

जाता है। प्रत्येक शव दाह होनेपर यह एक २ आना करके दस्तूरी लेते है, इससे यह जानाजाता है कि यह यहांके आदिम निवासी है"।

राजपूत–वीकानेरके राठौरोके सम्वन्धमे साधू टाड् साहवका यह मत है, "कि वीकानेरके राठौरोके वीरत्वमे कुछ भी परिवर्तन नही हुआ, भारतवर्षके अन्यान्य वीरजातियोके समान इन्होने भी वीर कहा कर यश प्राप्त किया था। जिस तरह मारवाड़ आमेर और मेवाड़के वीर राजपूत महाराष्ट्र और पठानोके द्वारा वहुत वर्षोंसे पीड़ित होते आये थे। वहुत दूरतक स्थित होनेसे वीकानेर राज्यके राठौरगण उनके द्वारा कभी पीड़ित नही हुए, परन्तु उन्हे उस तरह राज्यके भीतरी अत्याचारोसे विशेष दुःख भोगने पड़े है। पूर्वाञ्चलवर्ती स्वजातियोकी अपेक्षा राठौर इनसे अधिक कुसंस्कार युक्त नही है। वे लोग खानपानके विषयमे विशेष विचार नही रखते जिसके हाथका जल पीते है उसके हाथका भोजन भी करसकते है। वह लोग जैसे साहसी, सहनशील, सरलहृदय और अत्यन्त धीर है, वैसे ही यदि युद्धकी शिक्षा तथा शासनरीतिके वशी होते तो संसारमे वह सवसे श्रेष्ठ योधा होसकते थे। परन्तु इसके विरुद्ध वे इस देशके उपानिवेशके स्थापनकी अवधिसे मादक सेवनमे अत्यन्त आसक्त होगये है। अफीम और गॉजेने वर्तमान समयके वंशधरोमे अपनी प्रवल शक्ति विस्तार की है"।

प्राकृतिक अवस्था–महात्मा टाड् साहवने वीकानेर प्रदेशकी प्राकृतिक अवस्थाके सम्वन्धमे लिखा है, कि इस राज्यमे कितने ही स्थानोके अतिरिक्त अन्य सभी न्यूनाधिक परिमाणसे वालुकामय है। पूर्वसे लेकर पश्चिमकी सीमातक जो अंश सवसे अधिक विस्तारवाले है, वह अंश भी वरावर वालुकामय है। यद्यपि वालुकामय छोटे २ शिखर राज्यके मध्यस्थलसे आरभ हुए है, परन्तु प्रधान भूधरमाला प्रत्येक ओरके छोटे २ पर्वतोको भेदकर जैसलमेर राज्यकी ओरको गई है, अन्य पक्षमे यही ठीक कहना होगा कि यह शिखरमाला समुद्रके पूर्ववर्ती देशोसे आरंभ होकर वीकानेरके हृदयमे आकर शेष होगई है। उत्तर पूर्व प्रान्तमे राजगढ़से नोहर और रावतसर देशतककी मिट्टी उत्तम है। उस मिट्टीका रंग काला है, कुछएक वालुका मिलीहुई है, कृपिकार्यके उपयोगी है और वहां जल अत्यन्त निकट पायाजाता है, इस देशमे गेहूं चना और चावल भी अधिकतासे उत्पन्न होते है। भटनेरसे गाराके किनारेतककी मिट्टी भी इसी प्रकार है। मोहिलोके अधिकारी समस्त देश वालुकामय है, शिखरके शेष अंश इन्ही देशोकी उत्तर सीमामे शेष होगये है। प्रत्येक वर्षकी वर्षाऋतुमे वर्षाका जल चारोंओर भरजाता है। यहॉ गेहूँ भलीभॉतिसे उत्पन्न होते है। यद्यपि मृत्तिकाके दोषसे यहॉ ऊँची श्रेणीका नाज उत्पन्न नही होता है। मोहिलके उर्वर क्षेत्रकी अपेक्षा इस मरुक्षेत्रका वाजरा वहुत उत्तम है, मेवाड़ और मारवाड़के श्रेष्ठ धान्यके साथ मिलान करनेसे यहॉके निवासियोने अपने देशके वाजरेकी स्वयं प्रशंसा की है। जिस वर्षमे वहुतसा वाजरा उत्पन्न होता है उसी वर्षमें वहॉके निवासी दो वर्षके लिये उसे संग्रह करके रख लेते है, इस

बाजरेकी खेतीसे अधिक जलका प्रयोजन नहीं होता, परन्तु वर्षाके ठीक समयमे होनेसे ही बहुत धान्य उत्पन्न होता है" ।

"बाजरेके अतिरिक्त तिल और मोठ भी यहाँ उत्पन्न होते है । यह मनुष्य और पशु दोनोके लिये उपयोगी और खाद्य है, तिलोसे रंधन और जलानेका कार्य होता है। गेहूँ, चना, और जव उर्वरक्षेत्रमे उत्पन्न होते है परन्तु हमने केवल बीकानेरके प्रधान २ धान्योका उल्लेख किया है" ।

जिस मिट्टीसे गेहूँ उत्पन्न होते है वहाँ रुई भी उत्पन्न होती है। इस देशके कपासमे सात और दश वर्षतक फल लगते है। रुईके फल उतार कर वहाँके निवासी उन वृक्षोंकी शाखाको काट डालते है, और केवल जड़की रक्षा करते है । प्रत्येक वर्ष मे यह वृक्ष बढते रहते है, और अन्तमे यही वृक्ष बड़े आकारवाले होजाते है, इस देशमे रुई अधिकतासे उत्पन्न होती है, इससे अन्य देशोमे इतने बडे बड़े वृक्ष नही देखेजाते" ।

मनुष्योके आहारके लिये अनेक प्रकारकी शाक सब्जी उत्पन्न होती है। गौ आदि पशुओके भोजनके लिये उत्तम धान्य बोया जाता है। ज्वार कचरी, ककडी और बडे २ तरबूज यहाँ बहुतायतसे उत्पन्न होते है,यह फल विशेष उपकारी है,कारण कि जिस समय दुर्भिक्ष होता है, अथवा जिस समय कोई फल नहीं मिलता उस समयके व्यवहारके लिये उन्हे खण्ड २ करके धूपमे सुखा रखते है। इस फलका वाणिज्य भी होता है, और जिस समय अन्यान्य फल भली भाँतिसे उत्पन्न होते है उस समय भी मनुष्य इन फलोको बडे आदरके साथ भोजन करते है । सूखेहुए तरबूजके आटेका पदार्थ स्वास्थ्यके लिये विशेष उपकारी है, समुद्रकी यात्राके समय सामुद्रिक रोगमे इसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानकर ग्रन्थकारने कुछ थोडेसे पदार्थ कई वर्ष बीते कलकत्तेको भेजे थे। हमारे भारतके जहाज बहुतायतसे इन पदार्थोंको संग्रह करसकते है, कारण कि जितनी आवश्यकता होती है तरबूजकी उतनी ही खेती की जाती है, जिससे जहाजवाले और मारवाड़के निवासी दोनोको अच्छा लाभ होसकता है । भारतवर्षके भीतरी देशोमे जो तरबूज उत्पन्न होते हैं, उनकी अपेक्षा यहाँके तरबूज अत्यन्त श्रेष्ठ मानेगये है, और मरुस्थलमे यात्रा करनेवाले मुसाफिरोंका कथन है कि यहाकी बालूके शिखरपर जितनी जगह तरबूज उत्पन्न होते हैं उन तरबूजोसे अश्वारोही और घोडोतककी तृषा दूर होसकती है " ।

" इस सूखे देशके निवासी लोगोका सर्वस्व वर्षाके ऊपर निर्भर है। उन्हे प्राय प्रतिसात वर्षके अन्तर दुर्भिक्षका सदेह रहता है, इस कारण जो द्रव्य मनुष्योके

---

(१) कर्नल टाड् साहब अपने टीकेमें लिखगये है, "१८१३ ईस्वीमें मैने मि० मोरक्राफटके पास परीक्षाके लिये भेजे कुछ द्रव्य थे परन्तु उसका फल क्या हुआ सो कुछ नहीं जाना जाता ' ।

(२) मि० बारोने अपनी बनाई हुई दक्षिण अफरीकाकी विवरणी पुस्तकमें लिखा है कि वहा तरबूज स्वत बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं ।

आहारके लिये उपयोगी है, यहाँके निवासी उन सबको बड़े यत्नके साथ सग्रह कर रखते है। गरीब लोग प्रायः भुरुट, बूर हिरारू सेवन, इत्यादिके फलोंका चूर्ण करके उसे बाजरेकी मैदाके साथ मिलाकर भोजन करते है। बनबेर, खैर, और करीर आदिके छोटे २ फल भी बहुतसे नीची श्रेणीके मनुष्य संग्रह कर रखते है खेजड़ा वृक्षकी छाल जो अति तिक्त है उसको भी संग्रह करते है और सुखाकर उसे मैदाकी तरह चूर्ण करके खाते है, तात्पर्य्य यह कि खानेके योग्य किसी वस्तुका संग्रह और उपयोग करनेमें वहाँके लोग कसर नही लगाते।

"फलवाले बड़े २ वृक्ष यहाँ नही पायेजाते, राजधानीके मुख्य २ स्थानोमे आम और इमलीके वृक्ष लगाएजाते है परन्तु ववूल पीलू ' और जाल नामक छोटे २ फलवाले वृक्ष अधिकतासे उत्पन्न होते है, सेहुडा नामके एक प्रकारके वृक्ष और भी उत्पन्न होते है, उनकी उँचाई वीस फुट होती है।

वह घरोके बनानेके काममे आते है। भारत विख्यात नीमके वृक्ष भी यहां उत्पन्न होते है। सक नामक एक और प्रकारके जो वृक्ष उत्पन्न होते है वह यहाँके लिये विशेष उपकारी है। यहाँके निवासी कुँएके चारोओर इसको फैलाकर कुँएमे रेतके गिरनेको रोकते है"।

बीकानेरमे मदार (आक) के वृक्ष बहुत होते है, यहाँपर वे जैसे बड़े होते है वैसे ही मजबूत भी होते है, उनकी जडसे जो रस्सियां बनती है वे बड़ी कड़ी और खटाउ होती है और प्रायः मूंजकी रस्सियोकी अपेक्षा उत्तम होती है सन मूज यहाँ बीदावाटीमे उपजती है।

कृपियंत्र—"यहाँके कृपियत्र साधारण है, पर यहाँके कृपिक्षेत्रोके लिये उपयोगी है, हल केवल एक बैल या ऊंटके द्वारा चलाया जाता है। दो बैल वा ऊंटका हल अक्सर माली लोग उस समयमे चलाते है जब कि मिट्टी अधिक कठिन होती है। सभी चलनीका व्यवहार करते है, और उस चलनीसे एक २ धान्य पृथक् और दूर २ बोयाजाता है"।

जल—"इस मरुदेशकी पृथ्वीमे बड़े गहरेपर जल पायाजाता है, बीकानेरकी राजधानीके निकटवर्ती देश नख नामक स्थानमे दो तीनसौ फुट खोदनेसे जल दिखाई पड़ता है। थाल अर्थात मरुक्षेत्रमे ६० फुटसे अधिक विना खोदेहुए मनुष्योके पीने योग्य जल नही निकलता। ३० फुट खोदनेसे जो जल निकलता है, वह पशुओके पीने योग्य होता है। प्रत्येक कुँएके चारोओर सक नामक वृक्षकी दीवारी बँधी रहती है।

---

(१) सभी प्रधान २ नगरोंमें माली जल बेचा करते है। इस जल बेचनेका कार्य उनकी एक चेटियासे होता है प्रायः सभी घरोमे हौज बने होते हैं, वर्षा ऋतुमे इनमे खूब जल भरजाता है, यह जलधारा ईट वा पत्थरकी बनी होती हैं और सब ढकी रहती है, केवल ऊपरके भागका एक द्वार खुला रहता है, उसमे पवन जाती है। उसके द्वार सभी बन्द करके रखते हैं इसमें जल एक वर्षतक उत्तम अवस्थामें रहता है।

हिन्दुस्तानके रेगिस्तानमें कई एक नमककी झीले एकमे मिलकर 'शिर' नामसे प्रसिद्ध है। परन्तु उनमेसे कोई भी मारवाड़की झीलोकी भांति नही है। उक्त झीलके किनारेपर 'सिरा' नामका एक बड़ाभारी नगर भी बसाहुआ है जिसका नामकर्ण झीलके ही नामसे संवन्ध रखता है। सिरा झीलका लंवान चौड़ान प्रायः छ. मील होगा। दूसरी नमककी झील दो मील लंवी चौड़ी चौपूरके पास है। ये दोनो झीले सर्वत्र प्रायः पांच फुट गहरी होगी। गरमीके दिनोमे गरम वायुके संयोगसे लवण आपसे आप पानिके ऊपर जम जाता है। उसीमेसे नमकके चैलेके चैले उतार लियेजाते है। उक्त दोनो झीलोका नमक दक्षिणी झीलसे कम दामका होता है।

प्राकृतिक सौन्दर्य–" इस देशमे प्राकृतिक सौन्दर्य कुछ भी नही है, और ऐसे दृश्य बहुत थोड़े है कि जिनको नेत्रोके लिये आनंददायक कहाजाय। परन्तु हमने यहांके ऐसे मनुष्य देखे है कि उन लोगोंको अन्य देशके उपादेय आहारकी अपेक्षा यहांकी रावड़ी और वाजरेकी रोटी ही अत्यन्त प्यारी होती है। वह मनुष्य हिममण्डित अचलराज हिमालयकी अपेक्षा यहांकी वालुकामय छोटी २ भूधरमालाको ही प्रीत पूर्वक देखते है। हमारे पाठक पाठिकागण अवश्य ही स्मरण करेंगे, कि जहां जन्म हो वही देश प्यारा लगता है।

खानिज पदार्थ–"यहां खानिज पदार्थोंकी उपज बहुत कम है। राज्यके कई प्रदेशोमे शुद्ध पत्थरकी खाने है। विशेष करके वीकानेरकी राजधानीके तेरह कोश उत्तर पश्चिमको पृसियारा नामक स्थानकी खानसे दो हजार रुपया वार्षिक आय है, वीदासर और विरामसरमे तॉवेकी खाने है। परन्तु विरामसरकी खानसे तो लागतका भी खर्च नही निकलता और वीदासरकी खानोसे ३० वर्षतक तांवा निकाला जाचुका है इस लिये इस समय वहां भी लाभ होना असंभव है।

"कोलाद नामक स्थानके निकट एक खानसे एक प्रकारकी मिट्टी अधिकतासे तेलसे भीगी सी निकलती है, और वह वाणिज्यके अन्य द्रव्योकी तरह विदेशको भेजी जाती है, इसीसे राज्यको वार्षिक पन्द्रह सौ रुपयेकी आमदनी होती है। यह मिट्टी मनुष्योके वाल और शरीरके साफ करनेके लिये विशेष काममे आती है। और ऐसा भी विदित है कि एक श्रेणीकी स्त्रियॉ अपने लावण्य और वृद्धिके लिये इस मिट्टीको खाती भी है"।

पशु–मरुक्षेत्रकी गौ अत्यन्त श्रेष्ट हैं। ऐसेही यहांके ऊँट भी लादने और युद्ध क्षेत्रमे सवारीके काममे आते है, उनका मूल्य भी अधिक होता है, और भारतवर्षमे यह सब ऊँटोसे श्रेष्ठ गिने जाते है। इन ऊँटोका सर प्राय. वड़ा सुन्दर होता है और यहॉ भेड़ भी बहुत होती हैं, और यहॉके स्वाभाविक उपजनेवाले घास पातसे उनके आहार मे कुछ कमी नहीं होती नीलगाय तथा प्रत्येक जातिके हरिन भी यहां देखेजाते है। मारवाड़की लोमडीका गठन अत्यन्त चमत्कारक है। शृगाल और हरिन ही नही वरन् शेरतक बीकानेरके जगलोमे पायेजाते हैं।

वाणिज्य और शिल्प—"बीकानेर राज्यमे राजगढ़ वाणिज्यमे प्रधान नगर है। और सब देशोसे इसी स्थानपर वाणिज्यके द्रव्योंसे भरेहुए छकड़े आया करते है। पंजाव और काश्मीरके द्रव्य हाँसी हिसार होकर यहाँ आते है, और पूर्वाञ्चलके वाणिज्य द्रव्य भी अर्थात् पशमीनेके वस्त्र, नील, चीनी, लोहा, ताँवा इत्यादि दिल्ली रिवाड़ी और दादरीके रास्तेसे आते है। हाड़ोती और मालवेसे अफीम आती थी और फिर यहाँसे सम्पूर्ण राजपूत राज्योंमे उन वस्तुओका आवागमन होता है, समुद्रदेशसे जैसलमेर होकर मुलतान और शिकारपुरसे शकटोंमे खजूर, गेहू, चावल और स्त्रियोके लुंगी नामके वस्त्र फल इत्यादि और पाली समुद्रके किनारेके देशोसे टीन, औषधि, नारियल, हाथीदाँत इत्यादि आते है, इन सब द्रव्योंमेसे कितने ही द्रव्य बीकानेरके निवासियोके व्यवहारसे आयाकरते थे, और वहुतसे यहाँसे अन्य देशोको भी जाते थे, उसी कारणसे यहाँ समधिक वाणिज्यका महसूल सग्रह होता है।

पशम—"मारवाड़मे जो अधिक भेड़े उत्पन्न होती है, उनके शरीरके रुएँसे अनेक भाँतिके वस्त्र वनते है, और उनका भी वाणिज्य होता है। भेड़ोके रुएँसे स्त्री पुरुषोके पहिरने योग्य पोशाके वनती है जो धनी निर्धन सभीके काममे आती है, इस पशमके अच्छे निकृष्ट सभी श्रेणीके वस्त्र यंत्रोके द्वारा बनायेजाते है। मोटी एक जोड़ी लोई तीन रुपयेकी विकती है, और वढ़िया वारीक लोई ३० रुपयेकी विकती है। शेषोक्त मोलकी लोई देखनेमे अधिक सुन्दर होती है वरन् उसको एक प्रकारसे शाल कहसकते है। उनकी पगड़ी भी वनती है, जिनकी लम्बाई ४० से ६१ फुटतक होती है, इतनी लम्वी पगड़ीके शिरपर वाँधनेसे कुछ भी वोझा नही मालूम होता, और न देखनेमे वड़ी ही लगती है-अर्थात् इतनी वारीक होती है"।

"भैस, वकरी, और गौ इत्यादिके दूधसे जो घी निकलता है वह भी यहाँके वाणिज्यका एक प्रधान द्रव्य गिनाजाता है"।

लोहद्रव्य—"बीकानेरके शिल्पियोंने लोहेके अनेक भाँतिके द्रव्य वनाकर विशेष प्रशंसा प्राप्त की है। राजधानी और प्रधान २ नगरोमे लोहेके कारखाने है। उन सब कारखानोंमे छुरी, तलवार, चाकू, भाले, वंदूक इत्यादि वनते है, शिल्पीगण हाथीदांतके भी अनेक प्रकारके द्रव्य तैयार करते है, इनमे स्त्रियोके पहिरने योग्य चूड़ी और कड़े भी तैयार होते है"।

देशमे व्यवहार करनेके लिये पहरने योग्य स्थूल वस्त्र अधिकतासे वनते है"।

मेला—"कार्तिक और फाल्गुनके महीनेमे कोलाद और गजनेर नगरमे प्रत्येक वर्षमे मेला हुआ करता है, और उस मेलेमे आसपासके स्थानोसे अनेक वणिक आया करते है। उस मेलेमे मारवाड़से ऊंट गाय तथा मुलतान और लक्खी जंगलके घोड़े विकनेके लिये आते है। परन्तु इस समय उस मेलेका अव वैसा गौरव नही रहा। सारांश यह है कि इस समय यहाँका वाणिज्य एकवार ही लोप होगया है"।

राजकर–" पहिले बीकानेरके अधीश्वरका राजस्व कर कई प्रकारसे संग्रह किया-जाता था। खालसा अर्थात् राज्यके अधीनकी भूमिका कर, कृषि कर और दंड यह तीन आमदनीके प्रधान द्वार थे। परन्तु सब प्रकारसे राजाका राजस्व वार्षिक पाँच लाख रुपयेसे अधिक नही होता था। यदि रजवाड़ेके अन्यान्य राजपूत राज्योंके साथ इसका मिलान किया जाय तो मालूम होगा कि जितना बीकानेरकी भूमिका परिमाण है उसके हिसावसे वहाँके सामन्त अधिकांश पृथ्वीके अधिकारी है। रजवाडोके अन्यान्य राज्योके सामन्त उतनी परिमित भूमिके अधिकारी नही है। इसका कारण केवल यही है कि बीदावत और कांधलोतगणोने सवसे पहिले इस देशकी भूमिके अधिक भागपर अधिकार किया था, उन दोनो सम्प्रदायोका भूभाग एकसाथ मिलानेसे बीकाके अधिकारी राज्यकी अपेक्षा वडा होगया। दूसरे बीदावत और काँधलोतगण बीकाको अपने अधिकारी देशमेका कोई अंश देनेके लिये सम्मत नही हुए। वह बीकाको केवल नाममात्रका अधीश्वर मानते थे। राजगढ़ रेवी नोहर, गारा, रत्नगढ़, और चूरू यह कितने ही देश महाराजकी खास भूमि है। कुछ ही दिनोसे चूरू राजाके अधि-कारमे होगया है "।

इतिहासलेखक टाड् साहब लिखते है, कि " निम्नलिखित प्रकारसे छ प्रकारका कर संग्रह होता है,–खालसा अर्थात् खासभूमिकाकर, धुँआकर, अंगकर, चुंगी और आमदरफ्तीका महसूल, कृषिकर और छठा मालवा "।

१ खालसामे खास भूमिकरसे पहिले वार्षिक दो लाख रुपयेकी आमदनी थी परन्तु कुसंस्कार और फजूलखर्चीके कारण राजाओने निजके कुल नगर और गांवोमेसे दो तिहाई उजाड़ दिये है। पहिले इन खास ग्रामोकी संख्या २०० थी परन्तु इस समय केवल ८० से अधिक नहीं है। और उन अस्सी ग्रामोका राजस्व कर एक लाख रुपयेसे अधिक नही है। सूरतसिंह अपनी इच्छानुसार चलते है। वे पात्र कुपात्र या कर्त्तव्य अकर्तव्यका कुछ भी विचार न करके जिसे जो जो चाहा सो वगस देते थे। वह चाहे ब्राह्मण हो चाहे एक ढेंटेरा उनकी नजरमे सव वरावर है। और खालसा अर्थात् खास भूमि मे ही उनके सब खर्च चलते है। इसी लिये वह यथेच्छ दान करनेके लिये सर्वसाधारण प्रजासे मनमाना धन उगाहते है।

२ " धुँआकर—यद्यपि यह कर साधारणत. धूम्रका कर समझाजाता है परन्तु वास्तवमे इसको अग्निकर कहना चाहिये। सभी रसोई बनाना चाहे और और सभी काम करना चाहे पर सवके घरमे आतिश दान या धुआँकस कहासे आया, सूरतसिंहके सचिवने इसे राहगीर कर यह कर नियत करलिया, प्रत्येक घरसे इस करका एक रुपया लियाजाता था, प्रवल सामर्थ्यशाली सामन्त यदि इस करके देनेसे छुटकारा न पाते तो इससे अपार धन संग्रह हो सकता था प्रधान २ सामन्तोके इस करके विना दिये भी इस समय इससे एक लाख रुपया आता है। राजा लूनकरणके वडे पुत्र रत्नसिंहने बीकानेरके सिंहासनको छोडकर केवल महाजन देशको ग्रहण किया था वह भी

इस धुऍके करको नहाॅ देते । अन्यान्य कर जिस प्रकारसे बढ़ाया जाता था तथा उसके बढ़ाये जानेकी सम्भावना रहती थी । वैसी इस करकी अवस्था नही थी, यदि किसी ग्रामकी वसती आधी घटजाती तो जो ग्राममे निवास करनेवालोसेही समस्त कर नही संग्रह कियाजाता। यह धुऍका कर केवल जैसलमेर और बीकानेर राज्यमे प्रचलित है" ।

३ " अगकर—यह देहकर राजा अनूपसिहने प्रचलित किया था । यह एक प्रकारसे सम्पत्ति कर कहा जासकता है । प्रत्येक अवस्थाका मनुष्य एक अंगरूपसे विचारा जाता है और उसके प्रति चार आना कर नियत होता है, गौ, बैल, भैस, इत्यादि भी अगकरकी गणनामे सम्मिलित है, और इन सबके ऊपर भी कर लगता जाता है। दश बकरी और एक भैसका एक ही अंग नियत कियागया है, परन्तु एक ऊॅटको चार अगकी समान गिना है, और उसपर एक रुपया कर लिया जाता है। राजा गज-सिहने इसको दुगना करदिया यह कर यद्यपि समय २ पर अनेक रूपसे बदलता गया है, तथापि इससे वार्षिक दो लाख रुपयेकी आमदनी होती है "।

४ " आमदरफ्ती—तथा नगरका वाणिज्य शुल्क—यह कर अधिक परिवर्तन शील है, परन्तु महाराज सूरतसिहके शासन समयसे इस करको बहुत हानि पहुॅची है । पूर्वकालमे एकमात्र राजधानीसे जो वाणिज्य शुल्ककी आमदनी होती थी, इस समय समस्त राज्यसे आती है यह उतनी आय नही है । पहिले इसका परिमाण दो लाख रुपयेसे अधिक था, परन्तु इस समय एक लाख रुपयेसे भी कम है । इस एक लाखसे अधिक रुपयेमे बीकानेरके प्रधान वाणिज्य स्थान राजगढ़से आधे लाख रुपयेकी आमदनी होती थी । चोर और डाकुओके द्वारा अधिक अत्याचार और उपद्रवोके होनेसे पजाबके साथ वाणिज्य कार्य एकवार ही बद होगया । पहिले मुलतान भावलपुर और शिकारपुरसे वणिक्लोग व्यापारी द्रव्योको बीकानेरमे होकर पूर्वाञ्चलको लेजाते थे, इस समय वह व्यापार भी नष्ट होगया है । और राज्यमे स्थिर प्रकृष्ट नीतिका अभाव ही इसका कारण है । इस समय केवल प्रति सौमन विक्रीके धान्यके ऊपर सैकड़ा पर ४ चार रुपया कर संग्रह होता है । " कर्नेल टाड् साहबने अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ महाराज सूरतसिहके संधिबंधनके पहिले बीकानेरके वाणिज्यको जो अवस्था थी, यहाॅ उसका वर्णन भलीभातिसे किया है, परन्तु हम यहाॅ अत्यन्त आनंदके साथ प्रकाशित करते है कि इस समय बीकानेरके वाणिज्यकी अवस्थाकी अधिक उन्नति होगई है । और इसीसे राज्यकी आमदनी भी बढ़ गई है ।

५ कृषिकर—कृषिकार्यमे जितने हलोका व्यवहार होता है, उनमेसे प्रत्येक हलपर पाॅच रुपया कर लिया जाता है । पूर्वकालमे किसानोके यहाॅसे नाज संग्रह करलेते थे । खेतमें जितना धान्य उत्पन्न होता था, उसका एक चतुर्थांश राजा ग्रहण कर लेता था । राजा रायसिहने इस करको तोड़दिया और एक और कर स्थापन किया, जिससे जाट अत्यन्त ही आनदित हुए, कारण कि जिस समय धान्य ग्रहण करनेकी रीति थी उस समय राजाके यहाॅके कर्मचारी इच्छानुसार किसानोको

कष्ट देते थे । पहिले इसी कारणसे दो लाख रुपया राजस्वका दिया जाता था, परन्तु अन्यान्य विभागोके समान बीकानेरकी खेतीकी भी क्रमशः अवनति होगई, उसके साथ ही साथ इस करका परिमाण भी घट गया । बीचमे दो लाख रुपया दिया जाता था,इस समय एक लाख पच्चीस हजार रुपया संग्रह होताहै।इस स्थानपर हम अत्यन्त सन्तोपके साथ प्रकाशित करते है कि राज्यमे सम्पूर्ण शान्तिके होनेसे कृषिकार्यकी श्रीवृद्धिके साथ राज्यकी आमदनी भी बढगई है ।

" ६ मालभा–इस देशके आदि निवासी जाट जिस समय बीका और उनके उत्तराधिकारियोंकी आधीनता स्वीकार करके बीकाकी अनुगत प्रजापदपर अपनी इच्छासे नियुक्त हुए, उस समय वह जाट स्वयही करदेनेमे सम्मत होगये थे, इस कारण वह कर समभावसे प्रचलित है । मालशब्दका अर्थ भूमि है इसलिये यह भूमिकर नामसे विदित है । बीकानेर राज्यकी प्रजा जितनी पृथ्वीको जोतती है उसमे प्रतिसौ बीघे पथ्वीके ऊपर दो रुपया इसकरका नियत हुआ है । इस करसे इस समय पचास हजार रुपया भी सग्रह नही होता " ।

राजस्वकी सूची ।

१	खालसा*	२००००० रुपया.
२	धुआँकर	१००००० "
३	अगकर	२००००० "
४	वाणिज्यशुल्क+	७५००० "
५	हलका कर	१२५००० "
६	मालभा (भूमिकर)	५०००० "
	जोड	६५०००० रुपया हुआ

* कर्नल टाड साहबने अपने टीकेमे निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है.

" नाहरजिलेके	८४	ग्रामोका राजस्व	१००००० रुपया.
रेनी "	२४	ऐ	१०००० '
राणिया "	४४	ऐ	२०००० "
जालेली "	१	ऐ	५००० "
सब आदिम खास भूमिका राजस्व कर		.. .	१३५००० रुपया.

जबसे राजगढ़, चुरु और अन्यान्य कई देश खास अधिकारमें होगये हैं ।

+ प्राचीन समयके वाणिज्य शुल्ककी सूची ।

नूनकरण ग्रामका वाणिज्य शुल्क		२००० रुपया
राजगढ "	ऐ	१०००० "
मेहरासर "	ऐ	५००० "
राजधानी बीकानेरके	ऐ	७५००० "
चुरु और अन्यान्य नगरके	ऐ	४५००० "
सब आमदनी		१३७००० रुपया हुए.

उपरोक्त वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कई प्रकारका कर संग्रह कियाजाता है, और उससे राजा सूरतसिहका राजभंडार पूर्ण कियाजाता है।

"धातूई नामका कर प्रति तीन वर्षके भीतर लियाजाता है इस करका परिमाण पांच मुद्रा है, ओर प्रत्येक हलके ऊपर यह प्रचलित है, राजा जोरावरसिहने इस करकी सृष्टि की थी, केवल आसियागतिके ५० ग्राम और चेगीवनके १० ग्रामोके अतिरिक्त इस करको और सभी देते है। उक्त वार्जित ग्राम निवासी सीमाकी रक्षामे नियुक्त रहते है, इसी कारणसे उनसे कर नहीं लिया जाता। प्रधान २ सामन्त भी इस करको नही देते, इसके द्वारा एक लाख रुपयेकी भी आमदनी नही होती।

कर्नल टाड् साहब लिख गये है, कि "उपरोक्त निर्द्धारित करके अतिरिक्त वर्तमान महाराज सूरतसिहने अपनी इच्छानुसार अतिरिक्त करको अनेक उपायोसे संग्रह किया है, और राजाके यहांके कर्मचारी भी अपने उदर पूर्ण करनेके लिये कृषि-जीवी और श्रमजीवियोके ऊपर घोर अत्याचार करते हैं, और अनेक भांतिके कष्ट देकर उनसे धन संग्रह करते है, इस प्रकारके उपायोसे महाराज सूरतसिंहने निर्द्धारित राजस्वकी आमदनी दुगनी करली है"। अत्यन्त संतोपका विषय है कि वर्तमान महाराज डूंगरसिह वहादुरने अपनी प्रजासे इच्छानुसार बलपूर्वक कोई कर सग्रह नही किया।

इतिहासवेत्ताने १८१३ ईस्वीमे लिखा है, कि "दंड और खुशाली नामके अन्य प्रकारके कर भी प्रचलित हुए थे। दंडकर वलपूर्वक आज्ञा न माननेवाले अपराधी से ग्रहण कियाजाता था, और खुशाली कर प्रजाको संतोष प्रकाश स्वरूपसे प्रदान करनेकी आज्ञा देता था। सामन्तवृन्द वणिकदल और महाजनोके निकटसे सर्वसाधारणमे इस करके ग्रहण करनेकी रीति थी। नीची श्रेणी की प्रजा भी गुप्तभावसे इस करको देती थी। दडकरको ग्रहण करनेके लिये चौदह कर्मचारी नियुक्त थे। प्रत्येक जिलेमे एक २ कर्मचारी रहते थे। यह कर्मचारी अपनी २ इच्छानुसार दंडकरको निर्द्धारण करके सग्रह करते थे। गान्धोलीके सामन्त उक्त करके ग्रहण करनेवालेको इस आशयसे दो वर्षमे दश हजार रुपये देनेके लिये तैयार हुए थे, जिससे कि तीसरे वर्षमे उनको दंड न देना पड़े, परन्तु करलेनेवाला मनुष्य इस प्रस्तावमे सम्मत न हुआ, इससे सामन्तोने अत्यन्त क्रोधित होकर करग्रहण करनेवालेको अपने नगरसे निकाल दिया, और आप स्वयं स्वामीके विरुद्ध खड़े हुए। इच्छानुसार दंडकर किस प्रकारसे संग्रह किया जाता था उसके प्रमाण भलीभांतिसे पायेजाते है"।

"सूरतसिहने एक समय जिस खुशाली करको सग्रह किया था, उस वृत्तान्तको प्रकाशित करना हम अत्यन्त आवश्यक समझते है। राजा सूरतसिहने जिस समय वीकानेरके समस्त राठौरोकी सेनाके साथ भटनेरको जीतकर अपने राज्यकी सीमाको वढाया था, उस समय उन्होने विजयसे उद्दीप्तहो उस युद्धके खर्चेके लिये अपने राज्यमेके प्रत्येक घरसे १० रुपया देनेकी प्रजाको आज्ञा दी। सूरतसिहने घोररूपसे अत्याचार करके प्रजासे जब इस प्रकारसे कर ग्रहण किया और प्रजाने उनकी विजयके

लिये जब रुपया देदिया तब उनके परास्त होनेसे मानो प्रजाके भाग्यमे कैसी दुर्घटना हुई इसका अनुमान इतिहासप्रिय हमारे पाठक स्वयं करसकते है।

सामन्तोके आधीनकी सेनाकी संख्या–कर्नल टाड् साहबने महाराज सूरतसिहके शासनकालीन सामन्तोके आधीनकी सेनाकी संख्याके सम्बन्धमे वर्णन किया है कि "सामन्त शासनकी रीतिके मतसे देशको शासन करनेवाले राजाओ के चरित्रोके ऊपर सामन्तोसे सेना संग्रह कराना निर्भर है, यदि सूरतसिह सर्वजन प्रिय होते, यदि किसी प्रबल समरके उपलक्षमे जातीय सेनाके समावेशकी आवश्यकता होती तो राजा सूरतसिह समरक्षेत्रमे बीकाके वंशकी दश हजार राजपूत सेनाको इकट्ठा करसकते थे, विदेशीय सेनाके अतिरिक्त उनमे बारह हजार अश्वारोही उपस्थित होते। परन्तु इतना सन्देह है कि वर्त्तमान अवस्था और समाजके उद्देश्यमे प्रत्येक विषयकी अवनति होनेसे इस समय उपरोक्त संख्यामेसे आधी भी इकट्ठी नही सकती "राजाके निज आधीनकी सेनामे केवल एक दल विदेशीय पॉचसौ पैदल, ५ तोपै और ढाईसौ अश्वारोही है। यह सभी विदेशीय सेनापतिके आधीनमे चलते है। इसके अतिरिक्त बीकानेरकी राजधानीके किलेकी रक्षाके लिये एक राजपूत सेनापति नियुक्त है। उन्होने पुरीहर जातीय और उस किलेकी रक्षाके हेतु जो सेना नियुक्त रक्खी है उसको वेतन देनेके लिये राजाके यहॉसे पच्चीस खण्ड ग्रामोकी आमदनी मिलती है।

साधू टाड् साहब उपरोक्त सामन्तोकी सूचीको प्रकाश करनेके पहिले लिखगये है कि यद्यपि बीकानेरके सामन्तोके आधीनमे अधिक सेना थी, परन्तु वर्त्तमान महाराज सूरतसिंहको इसकी चतुर्थाश सेना इकट्ठी करनी कठिन है।

महाराज सूरतसिहके शासनसमयकी विदेशी सेना।

	अश्वारोही	पैदल	तोपै
सुलतानखॉ		२००	
अनोखेसिह सिक्ख		२५०	
बुधसिह देवडा		२००	
दुर्जनसिह बटालियनके आधीनकी	७००	४	४
गगासिह बटालियनके आधीनकी	१०००	२५	६
जोड़ विदेशीय	१७००	६७९	१०
बड़ी तोपैं			२१
	१७००	६७९	३१

बीकानेरके पूर्वतन सामन्त श्रेणीकी सूची.

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील उसूल रु०	सेनाकी संख्या		विशेष.
				पैदल	सवार	
वैरीशाल ...	बीका	महाजन	४००००	५०००	१००	राजा लूनकरण के उत्तराधिकारीने एकसौ चौवालीस ग्रामोंको पाकर सिंहासनके अधिकारको छोड़ दिया
अभयसिंह .	वनीरोत्	भूकरका	२६०००	५०००	२००	यह बीकानेरके सबसे प्रधान सामन्तहैं.
अनूपसिंह ...	बीका	जसाना	५०००	४००	८०	
पेमसिंह ...	ऐ०	वाई	५०००	४००	२५	
चैनसिंह ...	वनीरोत्	सावह	२००००	२०००	३००	
हिम्मतसिंह ...	रायोत्	रावतसर	२००००	२०००	३००	
शिवसिंह ...	वनीरोत	चूरु	२५०००	२०००	२००	
उमेदसिंह, जैतसिंह ...	वीदावत	वीदासर, साउनदवा	५००००	१००००	२०००	
बहादुरसिंह, सूर्यमल्ल, गुमानसिंह, अताइसिंह ...	नारनोत	मननसर, तिनदीसर, काटर, कुटचोर	४००००	४०००	६००	
शेरसिंह ...		निम्वाजी	६०००	६००	१२६	
देवीसिंह, उमेदसिंह, सुरतानसिंह, कर्णादान ..	नारनोत्	सीधमुख, कारीपुरा, अनोतपुरा, विपासर	२००००	५०००	४००	
सुरतानसिंह	कच्छवाहा	नयनावास	४०००	१६०	३०	
पद्मसिंह ...	पँवार	जेसीसर	५०००	२००	१००	यह दोनों विदेशी सामन्त हैं एक तो जयपुरके और दूसरे प्राचीन पँवार वंशके
किसनसिंह ...	बीका	ह्यादीसर	५०००	२००	५०	

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील उसूल रु०	सेनाकी संख्या		विशेष
				पैदल	सवार	
रावसिंह ...	भाटी	पूगल	६०००	१५००	४०	जैसलमेरके भट्टियोंके समीपसे पूगलदेशको छीन लिया है
सुलतानसिंह ...	ऐ०	राजासर	२५००	२००	५०	
लखनेरसिंह ...	ऐ०	सनेर	२०००	४००	७५	
करनीसिंह ...	ऐ०	सतीसर	१०००	२००	९	
भूमसिंह ...	ऐ०	चक्कर	१०००	६०	४	
वीकाके आदि अधिकृत देशके चारों सामन्त हैं।						
१भानीसिंह ...	भाटी	विहचनाक	१५००	६०	६	
२जालिमसिंह ...	ऐ०	गरविआना	१०००	४०	४	
सरदारसिंह ...	ऐ०	सुरजीरा	८००	३०	२	
कायतसिंह ...	ऐ०	रनदिसर	६००	३२	२	
चदसिंह ..	करमसोत	नोरवा	११०००	१०००	५००	११ वर्ष हुए २७ ग्राम जोधपुरके महाराजसे लेकर इन्होंने यहा निवास किया था
सतीदान ...	रूपावत	वदीलह	५०००	२००	२५	
भूमसिंह ...	भाटी	जागल	२५०००	१००	९	
केतसी	ए०	जामिनसर	१५०००	५००	१५०	
ऊम्वरसिंह ...	मॅडला	सारोटा	११०००	२०००	१५०	ग्राम सख्या २७
पद्मसिंह ...	भाटी	कुदम	१५००	६०	४	
कल्याणसिंह ...	ऐ०	नयनियाह	१०००	१०	२	
		सब जोड़——	३३१८००	४३५८२	५४०२	

आधुनिक विवरण।

भूमिकर–कर्नल टाड साहवने महाराज सूरतसिहके शासनसमयकी वीकानेर राज्यकी आमदनीकी जो सूची प्रकाश की है हमने उसे यथास्थान दिखलाया है। १८८२–८३ ईस्वीमे राजपूत राज्योंके शासनविज्ञापनमे वीकानेरके एसिष्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है "कि दरवारका कथन है कि गत सम्वत्की आमदनी और खर्चका यथार्थ हिसाव जिलोंसे अवतक नही मिला, वह अधूरा रहगया है, इस कारण इस समय राज्यकी ठीक आमदनी और उसके खर्चकी सूची देनेमे दरवार असमर्थ है। गतवर्षमे राज्यकी आमदनीकी अवस्था उत्तम रही है। परगने हनुमानगढ़का भूमि–कर २५००० रुपया और टीवी परगनेका ७००० रुपया वार्षिक २० वर्षसे वढ़ादिया गया है। ऐसा विदित है कि इस समय राज्यकी आमदनी वारह लाख रुपयेकी थी और खर्च भी उतना ही था।" इसको पढ़कर हमारे पाठकगण सरलतासे अनुमान करसकते है कि वीकानेरकी आमदनी क्रमशः वढ़गई थी। विशेष करके वर्तमान वर्षमे सामन्तोके कर वढ़ानेसे इसमे कुछ संदेह नहीं कि आगामी वर्षमे आमदनी अधिक वढ़ जायगी, तव हमे केवल यही कहना है कि जितने रुपयेकी आमदनी होती थी उतने ही रुपयोंका खर्च करदेना किसी प्रकार भी उचित नही था। राजभण्डारको धनसे परिपूर्ण करना उचित है। और यह भी सत्य है कि शासन विभागकी उन्नतिके साथ ही साथ खर्चकी भी वृद्धि हुई थी, परन्तु आमदनी देखकर उन्नति करना शोभा पाता है। पोलिटिकल एजेण्टको विश्वास था कि वर्तमान व्यय करनेपर दो लाख रुपया वचत है, यदि यह सत्य है तो अत्यन्त संतोषका विषय होगा।

स्वास्थ्य–मेजर स्वार्टस् उक्त शासन विज्ञापनमे लिखगये हैं कि गत "नवम्वर और दिसम्वर महीनेमे राजधानीमे चेचक रोगका प्रवलतासे प्रादुर्भाव हुआ था। सर्वसाधारण प्रजा टीका लगानेके फलको अनुभव करनेमे असमर्थ है। गतवर्षमे २७२ लोगोंके अंग्रेजी टीका लगाया गया, राजभरकी जनसंख्याके हिसावसे यह अति अल्प परिणाम है। नगरके स्वास्थ्यके सम्वन्धमे कितने ही उन्नतिमूलक अनुष्ठान किये गये है"।

चिकित्सालय–समस्त वीकानेर राज्यमे अथवा राजधानीमे केवल एक चिकित्सालय है। गतवर्षमे वहां ५४ रोगियोंने जाकर चिकित्सा कराई थी और ३६७४ रोगियोंने केवल औषधी लेकर ही चिकित्सा की थी। चिकित्सकोंके वेतन और औषधीके मूल्यके हिसावमे १४३४ रुपया खर्च हुआ था"।

राजसम्वन्धी मुकदमे—पोलिटिकल एजेण्ट लिखते है, "वर्षमें ३१६ मुकदमें आये थे, और पहिले वर्षके २२७ मुकदमोंका विचार करना वाकी था, इनमेसे २७१ मुकदमोका विचार होगया है और १८८३ ईस्वीके ३१ मार्चतक ३१७ मुकदमोका विचार करना वाकी है"।

दीवानी विचारालय—" गतवर्षमें बीकानेरकी सदरदीवानी अदालतमे ५८८ नवीन मुकदमे आये थे। पूर्ववर्षके ४२१ मुकदमोका विचार करना बाकी था। इस प्रकारसे सब १०१० मुकदमोमे गत वर्षमे ६४० मुकदमोका विचार शेप होगया है बीकाके वंशधर किस प्रकार न्याय प्रिय थे वह इस सूचीसे जाना जाता है।

फौजदारी विचारालय—मेजर रिचार्ड्स लिखते हैं कि "फौजदारी विचारालयके कार्यका विवरण इस सूचीसे प्रकाशित है १२३१ मुकदमे आये इनमेसे ७१७ मुकदमे कर दिये गये है और ५१४ मुकदमोका विचार करना बाकी है। सब मिलाकर १०८० अपराधी पकड़े गये है।

कारागारसे दंडपानेवाले	३४० मनुष्य
अर्थ दंडवाले	२५५
छोड़दियेगये .	२४६
भागगये ..	१५
जमानतपर छूटे	१३९
मरगये	१६
देशनिकालेवाले . .	८
जिनकी खोज होरही है . .	६१

छोटी कन्याकी हत्याका एक भी अपराध नही हुआ "।

" बीकानेरके कारागारमे निम्नलिखित अपराधी बंदी है।—

जन्मभरके लिये	१३ मनुष्य
१४ वर्षके लिये	५
१२ ,, ...	३
१० ,, . .	२
९ ,, . .	१
८ ,, .	२
७ ,, . ..	१३
६ ,,	७
५ ,, .. .	१४
५ वर्षसे कमती वर्षके लिये .	९८
९ माससे कम समयके लिये .	३३
विचाराधीन ...	२१
	सब २१२ मनुष्य

उपरोक्त बंदियोमेसे १९६ पुरुप और १६ स्त्री है। सामन्तोके आधीनके देशोके जो अपराधी विचार होकर कारागारमे भेज दिये गये थे उनको इस सूचीमे नहीं लिखा है। हमने नगरका कारागार दिखाया है, देखो कैसा साफ और परिमित है "।

विद्यालय–वीकानेरमे आजतक एक भी राज्यविद्यालय नहीं था । १८८३ ईस्वीमे २७ फर्वरीको राजधानीमे एक विद्यालय स्थापित हुआ है । उस विद्यालयका नाम वर्तमान महाराजके नामसे " डूंगरसिहकालिज " रक्खागया है । हम कहसकते है कि राज्यमे जितना विद्याधन वितरण किया जायगा उतनी ही राज्यकी श्रीवृद्धि होगी, विद्या शिक्षाके विषयमे महाराजको भलीभाँतिसे धन खर्चना कर्त्तव्य है ।

पंचम अध्याय ५.

भटनेरकी आदि उत्पत्ति और उसका नामकरण--भटनेरकी जाटजातिकी ऐतिहासिक श्रेष्ठता--वरसीका छावनी स्थापन करना--भीरोको उत्तराधिकारकी प्राप्ति--उसका मुसल्मानधर्मावलम्बन--रावदुलीच--हुसेनखाँ--हुसेनमुहम्मद--इमाममुहम्मद--बहादुरखाँ--जावताखाँ, देशकी अवस्था--प्राकृतिकपरिवर्तन--प्राचीन प्रसादोका ध्वंसावशेष--पौराणिकखोजप्राणी और उद्भिजतत्व--प्राचीन नगरोंकी सूची--मरुक्षेत्रमें प्राप्त प्राचीनताम्र फलक ।

इतिहास लेखक टाड साहवने वीकानेरके इतिहासको समाप्त करनेके पीछे भटनेर देशके सम्बन्धमे एक अध्याय लिखा है । हम उस अध्यायका अनुवाद करके वीकानेरके इतिहासको समाप्त करते हैं, कर्नल टाड साहव लिखते हैं, कि "भटनेर जो इस समय वीकानेरके सम्पूर्णतः अधिकारमे है वह देश वहुत पहिले एक श्रेणीके जाटोका स्वतन्त्र वासस्थान था । वह जाटजाति एक समय इतनी वलवान् थी कि राजाके साथ भी विरोध करके उनको घोर विपत्तिमे डालती थी, और राजाओपर जो शत्रु चढ़ाई करते उस समय उनकी भलीभाँतिसे सहायता करती थी । यह प्रसिद्ध है कि भाटीजातिने ही इस देशका उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इसका नाम भटनेर हुआ । एक प्रवल वलशाली भाटी राजाने इस राज्यकी प्रतिष्ठा करके यह देश भाटियोंके वंशाधीनरूपसे प्रसिद्ध किया, इसीसे इसका नाम भटनेर रक्खा गया । जैसलमेरके इतिहासमे इस नामकरणके सम्बन्धमे और भी एक विवरण देखागया है । भाटियोके इतिहाससे जानाजाता है कि भाटी जातिने यहाँ उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इस समय इसका नाम भटनेर हुआ है,परन्तु भाटीजाति इस राज्यकी आदि प्रतिष्ठाता नही है । समस्त उत्तरांश"नेर" नामसे विख्यात हुआ है । यह 'नेर' शब्द मरुस्थलीका प्राचीन नाम विशेष है । जब भाटीजातिके कितने ही मनुष्योने मुसलमान धर्म अवलम्बन किया तब उनको आदि भाटीजातिसे विभिन्न करनेके लिये भाटी नाम रक्खा गया "।

कर्नल टाड साहवने पीछे लिखा है, कि भटनेरके आधीनका भूखंड और उसके उत्तरॉचलमे स्थित जो पृथ्वी गाड़ा नदीके किनारेतक गई है, वह भूमि इस समय जनशून्य अवस्थामे पड़ी हुई है, परन्तु पूर्वकालमे ऐसी जनशून्य नहीं थी, हमने यहांपर कितने ही प्राचीन समयके नगरोकी सूची प्रकाशित की है वह नगर पूर्वकालमे

विशेष प्रसिद्ध थे; और उनके पूर्वगौरवके चिह्न आजतक विराजमान है, उन नगरोंके इतिहासको विचार करनेसे अवश्य ही हमारे इस मन्तव्यके बहुतसे प्रमाण मिल सकते है "।

" इस भटनेर प्रदेशने मध्य एशियासे भारतवर्षके आक्रमणके मार्गमे स्थापित होकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्तकी है। इस जाटजातिने गजनीके महम्मदके साथ सिन्धु-नदीमे जलयुद्ध करके उसके भारतमे प्रवेश करनेमे विघ्न डाला था, इस जातिके पूर्व पुरुषोने उक्त समरके बहुत समय पहिले मारवाड़ और पंजाबमे उपनिवेश स्थापन किया था, हम जब उनको ३६ राज्यघरानोमेकी एकजातिरूपसे देखते है तब हम सरलतासे अनुमान करसकते है कि भारतविजेता गजनीके सुलतानसे बहुत शताब्दी पहिले इन जाटोने प्रबल राजनैतिक सामर्थ्य प्राप्त की थी । शहाबुद्दीनके भारतवर्षपर अधिकार करनेके बारह वर्ष पहिले अर्थात् १२०५ ईसवीमे शहाबुद्दीनका स्थलाभिषिक्त कुतबउद्दीन स्वयं उत्तर मरुक्षेत्रके जाटोंके विरुद्ध युद्धभूमिमे गया था, कारण कि उस समय जाटोने यवनोके अधिकृत हासी देशको बलपूर्वक छीन लिया था। फीरोजकी उपयुक्त उत्तराधिकारिणी हतभागिनी महारानी रजिया बेगम जिस समय सिहासन छोड़नेको बाध्य हुई थी उस समय वह जाटोकी शरण गई और जाटोने इसको आश्रय दिया और प्राचीन टिमिरियोके समान धाईकारियोके साथ मिलकर रिजियाके आधीनमे उसके शत्रुओके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये वे अग्रसर हुए, परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि रजिया शत्रुओको बदला देनेमे समर्थ न हुई, केवल वह रणक्षेत्रमे जीवन देकर अपने गौरवको बढ़ागई। फिर १३९७ ईसवीमे जिस समय तैमूरने भारतवर्षपर अधिकार किया, उस समय उसने अत्यत क्रोधित हो भटनेरपर आक्रमण किया । आक्रमणका कारण यह था कि तैमूरने जिस समय मुलतानपर आक्रमण किया था उस समय जाटोने उसके विरुद्ध विषम बाधा देकर उसको अस्तव्यस्त कर दिया था। तैमूरने उसी क्रोधसे स्वयं सेना सहित भटनेरपर आक्रमण कर जाटोको भयंकररूपसे निगृहीत किया। सारांश यह है भट्टि और जाट इस प्रकारसे परस्पर मिले हुए थे कि उनको दो जाति कहना कठिन था। हमारी इस प्रश्नकी भाटियोके इतिहासमे विशेष रूपसे समालोचना करनेकी इच्छा थी, पर जिस समय राठौर जातिकी शासनशक्तिका इस भटनेरपर विस्तार हुआ, हम उस समय भटनेरके उस समयके इतिहासको वर्णन करनेके लिये प्रवृत्त हुए है "।

कर्नल टाड् साहबने इतिहासके सम्बन्धमें लिखा है, " कि तैमूरके आक्रमण करनेके कुछ काल पीछे मरोठ और फूलरा स्थानकी एक सम्प्रदायने भाटियोके नेता बरसीहके आधीनसे बाहर होकर भटनेरपर अधिकार करलिया था, उस समय एक मुसल्मान भटनेरका शासनकरता था। वह तैमूरके आधीन था । या दिल्लीके बादशाहके आधीनमे यह कुछ विदित नहीं हुआ, परन्तु यह अनुमान है कि वह तैमूरके आधीन हो, इस यवन अधीश्वरका नाम चिगातखाँ था । इसने जाटोके भटनेरपर अधिकार करलिया था "।

बैरसी सत्ताईस वर्षतक भटनेर पर राज्यकरके परलोकवासी हुए। उनके पुत्र भीरो भटनेरके अधीश्वर हुए। भीरोके शासन समयमे चिगातखाँके उत्तराधिकारीने दिल्लीके यवनसम्राट्की सहायता लेकर बराबर दो बार भटनेरपर आक्रमण किया, और दोनो बार वह भागगया, बैरसीके वंशधरोंने उसकी यथेष्ट हानि की। परन्तु तीसरी बार प्रबलपराक्रमके साथ आक्रमण करके चिगातखाँके वंशधरोंने भटनेरको घेरकर भीरोको घोरविपत्तिमे डाला। भीरोने दीर्घ कालतक अपनी रक्षा करके अन्तमे जब देखा कि भोजनके अभावसे सेना सहित प्राण त्यागनेकी पूर्ण सम्भावना है तब उसने संधिकी सूचना देनेवाली सफेद पताका किलेपर लगादी, और अपने किलेकी रक्षाके लिये आक्रमणकारियोंके पास संधिका प्रस्ताव भेजा। आक्रमणकारियों ने कहलाभेजा कि यदि आप मुसल्मानधर्मको अवलम्बन करें, अथवा अपनी कन्याको दिल्लीके बादशाहके करकमलमे समर्पण करे, तो आपका राज्य विध्वंश नही किया जायगा। भीरोने इस घोर विपत्तिमें पड़कर अपनी प्राणरक्षाका अन्य कोइ उपाय न देखकर शीघ्र ही यवनधर्मको स्वीकार करलिया। उसी दिनसे यवनधर्मी भट्टीजातीय भीरोके वंशको भट्टिजातिसे पृथक् करनेके लिये उनका भट्टी नाम रक्खा गया है। भीरो के पीछे और भी छः वंशधरोंने क्रमानुसार इस प्रकारसे यवन होकर भटनेरका शासन किया था। भीरोसे छठे पुरुष रावदुलिच उर्फहयातूखाँ जिस समय भटनेरके सिहासनपर विराजमान थे, उस समय बीकानेरके अधीश्वर महाराज रायसिंहने भटनेरपर अधिकार करलिया। भटनेर बीकानेरके आधीन होगया। भीरोके वंशधरोंने खाँनगढ़ फतेहाबादमे जाकर निवास किया।हयातूखाँकी मृत्युके पीछे हुसेनखाँ नामक उसके पोतेने राजा सुजनसिहके पास फिर भटनेरको अपने अधिकारमे करलिया। हुसेनमुहम्मद और इमाममुहम्मदके समयतक यह देश उनके अधिकारमे था, शेषमे महाराज सूरतसिहने बहादुरखाँके शासन समयमे इस भटनेरको फिर अपने अधिकारमे करलिया[1]"।

साधू टाड साहबके समयमे जावताखां इस देशका अधीश्वर था, महाराज सूरतसिहने उनको विताड़ित किया, बीकानेरके इतिहासमे इसका वर्णन कियागया है। उसी जावताखांके सम्बन्धमे महात्मा टाड साहब लिख गये हैं, जावताखाँ जो इस समय रेनी नामक स्थानमे निवास करता है, इस समय केवल पचीस ग्रामोका भोक्ता है। बीकानेरके रायसिहने अपनी रानीके नामसे इस रेनी नगरको बसाया था इमाममुहम्मदने इसको अपने अधिकारमे करलिया था। जावताखांने इस ससय चोरी डकैती करके तीन लाख रुपया वार्षिक संग्रह करलिया था। इसके अत्याचार और लूटमारके भयसे समस्त दरिद्र जाट धन और प्राणके मारे सदा शंकित रहते थे, इसके अधिकारी देश बृटिश राज्यकी सीमामें स्थापित थे, इसको वहाँ चोरी करनेका साहस

---

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमे लिखते हैं सम्वत् १८५७–१८०१ ईसवी मे विख्यात वीर जार्जटामसने तीन लाख रुपये पाकर कुछ दिनके लिये इस देशको भाटियोके आधीनमें कर दिया था, परन्तु पिछले वर्षमें राठौरोंने फिर अपने अधिकारमें कर लिया"।

न हुआ, तव उसने उत्तरांशमे चोरी करनी प्रारम्भ की। उसी कारणसे उत्तरांश जनशून्य होगया है, एक समयमें इस देशके खेतोमें बहुतसे पशु चरा करते थे। वीकानेरकी उत्तर सीमासे गाड़ नदीतकके देश अधिक उर्वर थे और इनके निकटही जलपानेका विशेष सुभीता था, इन विस्तारित खेतोमे वालुकामय भूधरमालाका नामतक नहीं है, इसीसे यहाँ कृषिकार्यमे विशेष सुभीता था, अनेक शताव्दी वीतनेपर कगर और हाकड़ा नदी सूख गई, ऐसा विदित होता है कि इसी कारणसे यह देश जनशून्य होगया है और ऐसा भी लोग कहते है कि यह नदी पूर्वकालमे पश्चिमकी ओरको फूलरा होकर गई थी। उस फूलरामें नदीका चिह्न आजतक विराजमान है। फूलरा होकर वह नदी उच्च नामक स्थानमे सिन्धुनदीके साथ मिलगई थी। नेर अर्थात् मरुक्षेत्रकी वालुकामय भूधरावलीसे यह नदी पाटके अधीश्वर राव हमीरके शासनसमयमे लुप्त होगई थी, कविकी गाथामे उसकी ऐसी ही कीर्ति है। यदि कोई अंग्रेज भ्रमण करनेको इस भारतीय मरुक्षेत्रमे जाय तो वह अमरकोटेके निकटवर्ती चोर नामक स्थानके अत्यन्त प्राचीन सोढाराजके वंशधरोको देखेगा और यदि उस राजवंशके कवि जीवित रहे तो उस कविके मुखसे इस स्मरणीय इतिहासके अनेक विवरण उक्त घटना सन् तारीखके हिसावसे सरलतासे जाने जासकेगा, कि इस देशका उक्त प्राकृतिक और राजनैतिक परिवर्तन किस प्रकारसे हुआ था। अत्यन्त प्राचीन कालके प्रधान २ नगरोका मूल चिह्न आज भी इस देशकी वालुकाके गर्भमे विराजमान है। उन सब चिह्नोसे सरलतासे उक्त प्रवाद प्रमाणित होता है। और उस नगरमे भटनेरकी पश्चिमी सीमामे स्थित पूर्वोक्त रंगमहल इत्यादि जो भूगर्भमे स्थित कक्षादि आजतक श्रेष्ठ अवस्थामे थे जो सव ऐतिहासिक घटनासे पूर्ण थे वह भी सरलतासे जाने जासकते है, भटनेरके साढे वारह कोश दक्षिण सीमान्तवर्ती ददूसर नामक स्थानके एक अत्यन्त वृद्ध निवासीने हमारे प्रश्नके उत्तरमे उक्त देशकी प्राचीन अवस्थाके सम्वन्धमे कहा है, कि जव पँवारवंशके महाराज इस समस्त देशको शासन करते थे, तव सिकन्दररूमीने आकर उनपर आक्रमण कर इस देशको विध्वंश करदिया था"।

कर्नल टाड्‌ साहव लिखगये हैं, कि "हमारे राज्यकी पश्चिम सीमाके अन्तमे हासी हिसारसे उसने इस देशमे गमन किया था। उपरोक्त सम्वन्धके प्रवाद वाक्य कहांतक सत्य हैं उनकी परीक्षा की जा सकती है। प्राचीन प्रमारजातिके महलोके ध्वंसावशेपका अनुमान होसकता है परन्तु और भी पश्चिम प्रान्तके मरुक्षेत्रके सम्वन्धमे भी इस प्रकारके प्रवाद प्रचलित है, इस प्रकारके टूटेफूटे महल अवतक विराजमान हैं प्रवाद मुखसे प्राचीन राजधानीका नामतक सुनाजाता है, परन्तु उसका कोई चिह्न इस समय दृष्टिगोचर नही हुआ। उक्त देशमे वड़ी सरलतासे जाया जासकता है, मार्गमे जातेहुए कोई कष्ट नही होता। यह भ्रमण करनेवालोके लिये अवश्य ही प्रीतिकारक है। इस स्थानमे जानेसे राजपूतानेके उत्तर मरुक्षेत्रके अनेक प्राचीन तत्व वडी सरलतासे ज्ञात होसकते हैं। और वहाके अनेक प्रकारके प्रवाद तथा भिन्न २ जातिके अनेक विधिके सामाजिक आचार व्यवहार खोजकरनेवालोके लिये विशेष लाभकारी हैं।

यद्यपि इस देशमे उद्भिज और पशु अत्यन्त अल्प है, परन्तु यहांका कृपिकार्य वड़ी सरलतासे होता है, और गंगाजीके किनारेके देशोकी अपेक्षा यह देश उद्भिद है, तथा प्राणियोकी श्रेणियां भिन्नतासे देखी जाती हैं. कहागया है कि अफरीकाके विश्व-विदित मरुभूमिके साथ यहांके प्राकृतिक दृश्य और स्वभाव जाति द्रव्योंके अनेक अंशोकी तुलना यहांसे होसकती है। भट्टि, खोसा, राजड़ सराई. मांगलिया, सोढा और अनेक जातिकी श्रेणियां खोजकरनेवालोके लिये उपयुक्त है जीवतत्त्वज्ञाता मनुष्य यहांके मनुष्य समाजके आचार व्यवहार और प्रयोजनीय विवरणको संग्रह करनेके पीछे ग्राम्यपशुसे तत्त्वानुसंधान करसकते है। यहा वनैले गधे और प्रत्येक श्रेणीके हरिण आदि पशु है, यहॉकी भैसे साधारण तृणका आहार करके डेढ़ महीनेतक जल नहीं पीतीं, यहॉ लवणह्रद है और अनेक श्रेणियोके धान्य उत्पन्न होते है यहॉके मनुष्य विलासी नही हैं, और उनमे सभ्यताके अनेक चिह्न पायेजाते है। यहॉके वर्तमान निवासी वृक्षोकी शाखाओसे कुटी वनाते है। कुटीका नाम झोपड़ा है। कुटीको भीतरसे मिट्टीसे लीपते है। यह कुटी अफरीका निवासियोकी कुटीकी अपेक्षा श्रेष्ठ है "।

साधू टाड् साहवने इस देशके प्राचीन नगरकी निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है,–

आभोर, वंजारे, वंजारेका नगर रंगमहल सोदल वा सूरतगढ माचोतल,रायतीवंग, कालोंवंग, कल्यानसर फूलरा मरोट तलवारा गिलवारा, वुन्नी, मानिकखर सूरसागर, भामेली, कोरीवाला कालधरानी। फूलरा और मरोटतद्देश आजतक प्रसिद्ध है, पहिले अत्यन्त प्राचीन और पवांरवंशियोके आदि शासनके समयमे इसकी गणना नाकोटी मारुकामे हुई थी। जैनियोके प्राचीन शलाका मुख अक्षरोसे अंकित ताम्रफलक यहॉ वहुत मिलते है, मरुक्षेत्रके दुर्लभा नामक स्थानमे हमने इस प्रकारका एक तॉबेका अनुशासन पत्र पाया था। नौ शताव्दीके वीत जानेपर वह देश विध्वंस होगया है। फूलरादेशमे लाखाफूलानी निवास करते थे, मरुक्षेत्रके इतिहासमे पाठकगणोके सम्मुख उनका नाम भली भॉतिसे विदित है। लाखाफूलानी अनहलवाराके सिद्धराय और धारके उदयादित्य एक समयके है "।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने भटनेरके जिस इतिहासका वर्णन किया है, हमने ऊपर उसका वर्णन किया। भटनेर देशकी सीमा यद्यपि वड़ी नहीं है, परन्तु इसमे कुछ भी संदेह नही कि यह एक अत्यन्त प्राचीन राज्य है। टाड् महोदयने सभी प्राचीन नगरोकी तालिकाको प्रकाश किया है, समयके प्रभावसे इस समय वह सब लुप्त होगया है, स्थान २ पर टूटेफूटे जो चिह्न विराजमान है, टाड् साहबके उपदेशके मतसे खोज करनेवाले यदि उन सब विध्वंस हुओकी परीक्षा करनेमे अग्रसर होगे तो अनेक प्राचीन तत्त्व प्रकाश हो सकते है। मरुक्षेत्रमे राठौरोकी शासन शक्तिका विस्तार होनेके वहुत शताव्दीके पहिले प्रमरवंशीय राजा इस देशमे प्रबल प्रतापके साथ राज्य करते थे, और उनके वाहुवलने एक समय समस्त भारतवर्षको

कम्पायमान कर दिया था। मेसोडोनियाके भुवन विदित बीर अलिकजंडरने इस देशके अधीश्वरके साथ बाहुबलकी परीक्षा की थी, आज भी उसी प्रकार जनरव सुनाई देता है तब सरलतासे स्वीकार किया जा सकता है। कि इस देशके अधीश्वर सामान्य बलशाली नहीं थे। कर्नल टाड् साहबने इस बातको स्वीकार नही किया कि अलिकजंडर इन देशोमे समरके लिये आये थे, परन्तु हम कह सकते हैं कि जब सहस्रो लोगोमे यह बात प्रचलित है कि "सिकन्दररूमीने रंगमहल इत्यादिको विध्वंस किया है, तब उस प्रवादमे कैसे अविश्वास कर सकते है ?

अलिकजंडरने भारतजयके अभिप्रायसे बीरसाजसे आकर जो बीरता दिखाई थी, उसका विस्तार इतिहासकी भिन्न पुस्तकमे पाया जाता है। उसने जो रंगमहल विध्वंस किये यह किसी इतिहासमे प्रकाशित नहीं किया इसीसे कर्नल टाड् साहबने इसके सम्बन्धमे सन्देह प्रकाश किया है। परन्तु हमे विश्वास है कि अलिकजंडर भारतविजयके लिये जिस मरुक्षेत्रमे आया था, उनमेसे प्रधान २ समरके अतिरिक्त अन्यान्य युद्धोका विवरण इतिहासवेत्ताने वर्णन नही किया। व कट्रियाके जिस ग्रीक-वंशीयने रंगमहलपर आक्रमण किया था, उसका भी कोई प्रमाण किसी इतिहासमे नही पायाजाता। इस अवस्थामे हम किस प्रकार अनुमानके द्वारा सिद्धान्त कर-सकते है कि अलिकजंडरने रंगमहलपर आक्रमण नहीं किया ? जब कि सैकड़ो वर्षसे यह बात प्रचलित है कि सिकन्दर रूमीने इस देशको जीतकर स्वयं अपने बाहुबलसे इस दृष्टान्तकी रक्षा की थी, तब अन्य प्रमाणोके अभावमे वह प्रवाद ही ग्रहण कर-नेके योग्य है।

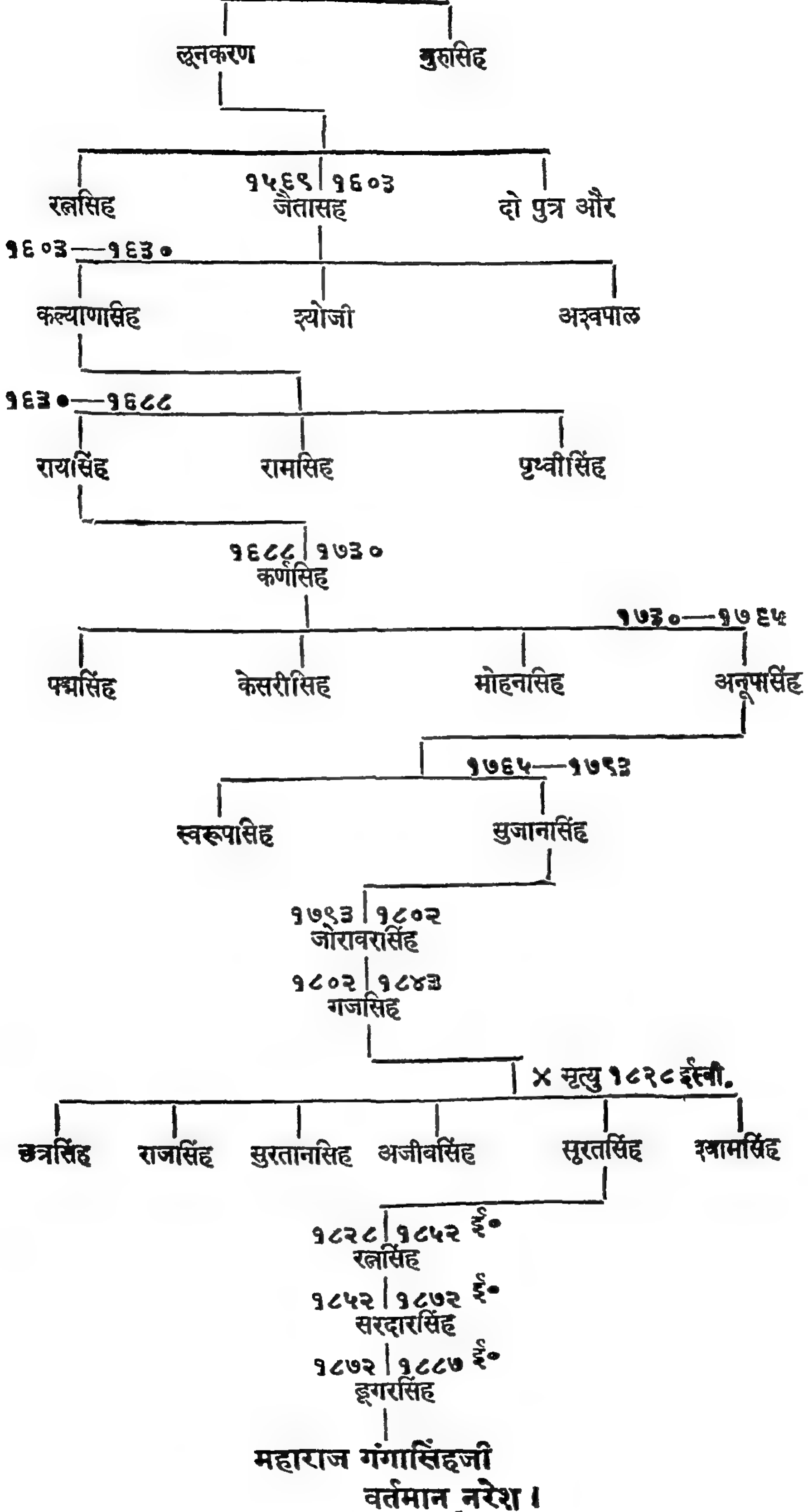
भटनेर इस समय बीकानेरके अधिकारमे है। यद्यपि इस देशकी अवस्था इस समय अधिकतासे बदल गई है, परन्तु ऐसी कोई विशेष राजनैतिक घटना नही हुई कि जिसके विस्तार सहित उल्लेख करनेका प्रयोजन हो, इस कारण हमने इस स्थानपर बीकानेर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया।

बीकानेरका इतिहास समाप्त।

'श्रीवेङ्कटेश्वर' स्टीम् प्रेस–बंबई.

बीकानेरके राज्य वंशका कुरसीनामा.

बीकाजी (राज्य प्रतिष्ठा संवत् १५४५ मृत्यु १५६१)



---

* पहला संवत राज्याभिषेकका और दूसरा मृत्युका है. × यहांसे सन ईस्वी आरंभ होता है.

४



३



२



५



१



११



६



१२



१०



७



८



९



जैसलमेर।

(१) भीमसिंह, सन नहीं मालुम,
(२) सावलसिंह,–,,–
(३) अमरसिंह,–,,–
(४) जसवंतसिंह, १७०२
(५) बुद्धसिंह, (कुछही रोज राज किया)

(६) तेजसिंह, (यूरूरपर) वो शख्स कि जो विना अधिकार किसीका राज पाट छीन ले–
(७) अखेसिंह, १७२२
(८) मूलराज, १७६२

(९) गजसिंह, १८२०
(१०) रणजीतसिंह, १८४६
(११) वरीसाल, १८५४
(१२) महारावलशालिवाहन १८९१

राजस्थान.

दूसराभाग.

जयसलमेरका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

जयसलमेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

सूचना–जयसलमेर राज्यके प्राचीन नाम–जयसलमेरके भाटी राजपूतोंका यदुवंश सम्भूत प्रमाण–भारतवर्षके अधीश्वर भरतसे इस वंशकी उत्पत्ति–प्राचीन भारती गणोंकी समुद्र यात्रा–यदुवंशका आदि नगर प्रयाग, मथुरा, और द्वारका, उनका अन्तर्जातिक समर–यदुवंशके नेता मथुरा द्वारकापति श्रीकृष्णवंशका विस्तार–उनके प्रपौत्र नाभ और खीरका द्वारकासे निकाले जाकर, नाभ द्वारा मरुस्थलमें राज्य स्थापन करना जाडेचा और यदुभान–नाभके परलोक जानेपर मरुक्षेत्रमें प्रतिबाहुका अभिषेक–उनके पुत्र–सुबाहु राजा गज–उनके द्वारा गजनी स्थापन–सीरिया और खुरासानके दोनों अधीश्वरोंद्वारा राजा गजका आक्रान्तहोना–दोनों अधीश्वरोंकी पराजय–राजा गजका कश्मीरपर आक्रमण–उनका विवाह–खुरासानके पतिका दूसरी बार आक्रमण–गजकी मृत्यु–गजनीका अधिकार–कुमार शालिवाहनका पंजाबमें आगमन संवत् ७२ मे उनके द्वारा शालिवाहन नगरका स्थापन–पजाब विजय–दिल्लीके तूंवरवंशीय जयपालकी कन्याका पाणिग्रहण–फिर गजनीपर अधिकार–बालन्दका अभिषेक–उनके बहुत वंशधर–उनकी देशविजय–बालन्दका शालिवाहन नगरमें निवास–उनके पुत्र चाकितोंको गजनी देना–चाकितोका मुसलमान धर्म अवलम्बन–खुरासानके सिंहासनपर अभिषेक–चाकितोंसे एक सम्प्रदाय मुगलकी उत्पत्ति–बालन्दकी मृत्यु–उनके पुत्र भट्टीका राज्याभिषेक–यदुवंशके परिवर्तित भाटीवंशका नामकरण–मंगलरावको राज्यप्राप्ति–उनके भ्राता मनसूर राव और पुत्रोंका गारानदीके पार होना और लक्खी जंगलपर अधिकार–मंगलरावके पुत्रोंकी जातिका नाश–उनके राजपूत नामका लोप–उनके वंशधरोंको आभोरिया और जाटकी उपाधि प्राप्ति–तक्षक जाति–तक्षशीलकी राजधानीका आविष्कार, मंगलरावका मरुक्षेत्रमे आगमन–मरुक्षेत्रमे तत्कालीन जातिसमूह–मंगलरावके पुत्र मंडमरावके साथ अमरकोटके महाराजकी कन्याका विवाह–उनके पुत्र केहर–जालोरके देवरागणोंके साथ मित्रता–तणोटकी प्रतिष्ठा केहरका अभिषेक–वाराह जातिका तणोटपर अधिकार–संवत् ७८७ मे तणोट निर्माण समाप्ति–बाराह जातिके साथ संधिबंधन–समालोचना ।

उद्दीप्तदिनमणिकी तीक्ष्ण किरणै, शरदृतुके चन्द्रमाकी स्निग्ध चन्द्रिका, सुखशांति धनधान्यसे भरे भूलोकमे जिस प्रकार परिपूर्ण देह होकर महादेवकी अशेष महिमाकी घोषणा कर रही है एक समय इसी स्वर्णभूमि भारतवर्षमे उसी प्रकारसे उन चन्द्र सूर्यके वीरव्रतावलम्बी वंशधर क्षत्रिय नरपतियोकी वीरता, उद्दीपना, साहस, शूरता और उन्नति ऊँचे शिखरपर पहुंच गई थी। परन्तु हाय! वह क्षत्रिय कुलका भारत, वह अर्जुन, कर्ण, दुर्योधनवाला भारत, वह दिलीप, अज, राम, लक्ष्मणका भारत आज अवनतिके नीचे पड़ाहुआ है। जो चन्द्रमा और सूर्य आकाशरूपी विमानमे वैठेहुए एक समय आनंदित नेत्रोसे भारतक्षेत्रमे अपने २ वशधरोकी वीरलीलाको देखकर भीतर ही भीतर संतोष पाते थे, हाय! इस अनन्त शून्यमे वह चन्द्रमा सूर्य विराजमान है, इस भारतमे उनके वंशधर आज भी राजदंडको धारण कर रहे है, परन्तु हाय! कैसा हृदयभेदी विचित्र दृश्य है! जो सूर्य और चन्द्रवंशीय क्षत्रिय सैकड़ों वर्ष पहिले मध्याह्न सूर्यकी समान जगत्मे विराजमान रहते थे, वही वीरवंशधर आज अस्त हुए दीपककी समान पड़े है। वाल्मीकि-वेदव्यासजी मधुर शब्दकारिणी वीणासे जिस चन्द्र सूर्यवंशकी कीर्तिगाथाको कीर्तन करगये है, जो गाथा आज भी इस अनन्त श्मशानमे परिणत हुए भारतमे पूर्व स्मृतिको जागरित करके मृतसंजीवन मंत्रके प्रचार करनेमे समर्थ है, हाय! उन्ही दो वीरवंशोके गोरवको गरिमा आज प्रवाद वाक्यसे परिणत है! जिस गौरव गरिमाका सोता उत्ताल तरंग मालाकी समान समस्त जगत्मे व्याप्त होरहा था, हाय! उसी विशाल गौरवगरिमाका सूर्य आज सूखा हुआ पड़ा है! अनन्त श्मशानमें वह वीर जाति मानो आज अनन्त निद्रामे सोरहो है। केवल मनोहारिणी आशा मानो क्षीण स्वरूपसे कहरही है प्रतीक्षा-और क्रिया-इसीको धारण करो।

विश्वविदित अत्यन्त प्राचीन दो वीर क्षत्रियवंशोके इतिहासको वर्णन करनेके पहिले हम इस समय और भी एक प्राचीन पवित्र वीरवशके भूपाल कुलका इतिहास वर्णन करनेमे प्रवृत्त हुए है। जिस पवित्र देववशने एक समय समस्त भारतमे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर असीम गौरव उपार्जन किया था। जिस वशके राजा इतिहासकी गोदीमे अपने २ अकथनीय वल विक्रम और नीतिज्ञता देकर धर्ममूलक अगणित कार्य कलापके विवरणको हीरेके अक्षरोमे गूँथगये है वही चंद्रवंश इस समय हमारा अवलम्बन है। जिस पवित्र चंद्रवंशमे श्रीकृष्ण भगवानने जन्म लेकर भारतमे अनन्त लीला की थी; जिन हरिका नाम लेकर आज भक्तवृन्द मतवाले होरहे है, उन्ही हरिका वंश वर्णन करनेके लिये हम आगे वढ़े है नदियाकी निमाई स्त्रीने जिन हरिके नामसे एक समय केवल वंगविहार उडीसा ही नही वरन समस्त भारतवर्पमे प्रेमभक्तिका अनन्त सोता वहादिया था, विश्वजननीका भ्रातृभाव विस्तार करके पापी, तापी, साधु भक्तको एक प्रेमकी जजीरमें वाँधकर भक्तिमंदार प्रफुल्लित किया था, शाक्त, शैव, म्लेच्छ, और मुसल्मानको भी जिस मधुर हरिनामके गुणने एक जातिमें परिणत किया था, आज उन्नीसवीं शताब्दीका निराकार उपासक दल, "जलमे हरि, स्थलमे हरि, अनन्त आकाशमें हरि" मानकर जिस विश्वजयी

हरि नामके माहात्म्य कीर्तनमे मग्न है, विधर्मी देशीय ईसाई परिणामके एकमात्र सार धन हरि नामका उच्चारण करनेके लिये ईस शब्दके साथ जिस हरि नामको मिलाकर "ईस् हरि" क ग्ग खड़ताल वजाकर कीर्तन करते है, उन्हीं हरिके वंशावतंस राजकुलकी कथा इस समय हम वर्णन करते हे । अंग्रेजी शिक्षक युवक पाठक!–तुम्ही कहो " कि ब्राह्म ईसाई दयानन्दी उन मोरमुकुटधारी वंशीधरका नाम दूसरी प्रकारसे लेते है वा नही ? हम इस वातको मस्तक झुकाकर स्वीकार करते है । वाल्मीकिने जिस भांति नारदजीसे उपदेश ले अपनी मुक्तिका द्वार खोलनेके लिये "मरा मरा" शब्द उच्चारण करके गुप्तभावसे जंगलमे राम नाम कीर्तन किया था, हम इस वातको कहते है कि ब्राह्म ईसाई इसी प्रकार उस भावसे क्या हरि नाम कीर्तन नही करते है उस नामके गुणसे उनके परिणामका मार्ग स्वच्छ होता है। हरि स्वयं कहगये है कि "मुझे जो जिस भावसे पुकारता है मै उसको उसी भावसे दर्शन देता हू; उसी भावसे उसकी कामना पूर्ण करता हू"। इसीसे कहता हू कि सिख, ईसाई मुसल्मानतक दयालु हरिके नामको जिस भावसे उच्चारण करते है हरि उसी भावसे उनकी कामनाको पूर्ण करते है।

विजातीय भाषाके शिक्षित उन्नीसवी वीसवी शताब्दीके दुहाई दाता अभक्त हिन्दू, मुसल्मान, ईसाई, ब्राह्म, नास्तिक–तथा अद्भुतजीव! उन्ही हरिका नाम लेकर शरीरको कंपित कर अवज्ञाके स्वरसे कहते है कि "श्रीकृष्ण लम्पट थे, यह कभी ईश्वरका अवतार नही हो सकते" । हम कहते है कि यह तुम्हारी विजातीयताकी भ्रान्ति है । ज्ञान कहता है कि इस ससारके प्रत्येक स्त्री पुरुष प्रकृतिके प्रतिकृतिस्वरूप है। पुरुष प्रकृति सर्वमय है । स्त्री पुरुषोके देहमे आत्मा पुरुष प्रकृतिका मगलमय है–शांतिमय–पवित्रमय छायामे पडा है । स्त्री पुरुषोकी छोटी शक्ति उस अनन्त शक्तिके साथ जडित है । जो स्त्री पुरुष उस अनन्त शक्तिके साथ अपनी उस अत्यन्त छोटी "अस्तित्व" शक्तिको मिलाकर पृथ्वीमण्डलपर विराजमान करते है, वही स्त्री पुरुष देवता और देवी है, और जो मानव मानवी अपने शरीरमे आत्माकी उस महान् शक्तिके अस्तित्वको अनुभव करनेमे समर्थ न होकर अपनी छोटी "अस्तित्व" शक्तिका एक वार प्रवल कर कुमार्गमे चलते है, उसी महाशक्तिको लेकर वे मानव मानवी इस ससारमे दानव दानवी है । तुम यदि अपनी देहमे आत्मामे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करते हो तव तुम किस प्रकारसे कह सकते हो कि ईश्वर सर्वव्यापी है ? ईश्वरकी व्यापकता क्या इससे सीमावद्ध नही होसकती, तुम अवतारवादको स्वीकार नही करतेहो, इसमे कुछ हानि नही है। परन्तु ज्ञान इस वातको कहता है, कि अनन्त शक्तिके साथ मनुष्यकी छोटी शक्ति पवित्रताके बलसे मिलकर मनुष्यको देवता करदेती है, इस लिये तुमको स्वीकार करना होगा कि महान् शक्तिके साथ श्रीकृष्णकी शक्तिने जटित होकर उनको देवतारूपसे ससारमे पूजित करादिया है। पर यह वात कुतार्कियोके निमित्त है हमारे सिद्धान्त और वैदिक मर्मसे श्रीकृष्ण साक्षात ईश्वर है, और प्रेमिक भक्त साधु ज्ञानके नेत्रोसे देखते है कि, हरि सव जीवोके आश्रय हैं हरिका नाम ससारमे सार धन ह, हरि स्वयं ईश्वरके अवतार है।

ईश्वरको न माननेवाले ! नास्तिक ईश्वरके अस्तित्वको सम्पूर्णरूपसे स्वीकार नहीं करते। जो कहते है कि सृष्टिसे यहां तक जिसको ईश्वर कहते है वह अज्ञात और अज्ञेय है। उनके गुरुदेवने बहुत (५) हजार वर्ष पहिले भारतमे यह बात कही थी, फिर उसका खण्डन भी नही होगया है, भक्तको हरि कह गये है—"मै दुर्ज्ञेय हू प्रेम भक्ति यो ग और पवित्रताके विना कोई मुझे नही पासकैगा"। जब ऐसा है तब केवल युक्तिके प्रकाशसे उस दुर्ज्ञेय पदार्थको कौन जान सकैगा। प्रेम भक्ति योग साधना और पवित्रताके अतिरिक्त उस दुर्ज्ञेय हरिका दर्शन प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, नई सभ्यतावालो! तुम्हारा गुरुदल उस प्रेम भक्ति योग साधन भजन पूजनसे रहित है, इसी लिये तुम्हारे शिक्षक गण केवल आधे मार्गमे जाकर अन्धकारमे घूमते २ फिर अपने स्थानको लौटआते है। तुम भी उनका अनुकरण करते हो। तुम अहंकारसे गर्जन करके कहोगे "कि क्या मिल, कौमल, कार्लाइल, स्पेन्स इत्यादि विश्वाविदित गाढ पण्डित विख्यात वैज्ञानिक प्रशंसनीय नैयायिकोको भी भ्रांति हो सकती थी?" तो भक्त भी कहते है कि यदि पण्डित होकर अभ्रान्तता स्वीकार करै तो पूर्वतन ऋषि मुनि जो एक २ गाढ पण्डित थे उनका मत अभ्रान्त क्यो नही मानते, उन्हींके मतके अनुसार ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नही करते? तुम कहोगे कि "मुनि ऋषि असभ्य वनवासी और वर्वर थे, उस समयका मत इस समय नही चलसकता"। अच्छा तब तुम कार्लाइल स्पेन्सरकी समान विलायतकी ईसाई समाजमे जो गाढ पण्डित डिनविशप आर्टविशप, कार्डिनल इत्यादि विराजमान है, पश्चिमी विलायतवाले जिनको महान् विद्वान् मानते है, फिर वह क्यो शिक्षित होकर भी ईसाइयोको उक्तिके मतसे सूत्रधार पुत्र ईसूको ईश्वरका पुत्र और उसके भजनके अतिरिक्त निस्तारका उपाय न बताकर उसकी आराधनामे प्रवृत्त होते है? भक्त कहते है कि केवल पडित होनेसे ही भक्त प्रेमिक और योगी नही हो जासकता, और भक्त प्रेमिक योगी विना हुए उन महा योगेश्वर हरिको कोई नही पासकता।

हमने विजित देशकी जातिमे जन्म लिया है। जातीय धर्म, जातीय आचार व्यवहार, जातीय व्यवस्था विधान सभी मृतभावसे पड़े हुए है। एकमात्र धनकी लालसासे उदरान्नके लिये इस समय मनुष्य इधर उधर भ्रम रहे है, बहुत थोड़े मनुष्य शिक्षित है ज्ञानकी खोजमे लगरहे है। हमारे जातीय धर्मकी शिक्षा तुलसीकृतरामायण और महाभारतमे भी बहुत मिल सकती है। पर विद्यालयमे शिक्षकके निकट गुरुजनोके निकट धर्मकी शिक्षा और नीतिकी शिक्षा हमको नही मिली। विजातीय भाषा शिक्षाके गुणसे विजातीय धर्मका मर्म हमै जहातक ज्ञात है उसके अनुसार हमको जातीय धर्ममे उसके शतांशका एक अंश भी विदित नही है। हम यह भी नही बतासकते कि दशरथजीके कितनी रानी और उनके पुत्रोका क्या नाम था। एकजातिके पतनमे जो हृदयभेदी दृश्य उपस्थित हुआ है, वही दृश्य हमारे नेत्रोके सम्मुख पडा है। तुम मिलकोमेतके शिष्य युवक हो। प्रश्न करनेपर तुम उसी मुहूर्तमे विजातीय ईसूके अमूल्य जन्मको वर्णन करसकते हो, ईश्वरको धर्म सस्कार

व्याख्या कर सकोगे, मिलकोमेतके मतकी व्याख्या करोगे, परन्तु यदि तुमसे श्रीकृष्णके जन्मका प्रश्न किया जाय तो तुम्हारी अन्तरात्मा सूख जायगी ? श्रीकृष्णने भगवद्गीतामे क्या कहा है, उसका यदि प्रश्न किया जाय तो तुम चारोओर अन्धकार देखोगे?–और ईसाने पहाड पर बैठकर किस प्रकारकी उपासना की थी, उसको पूँछाजाय तो झट कहडालोगे ? तुम्हारी जन्मभूमिमे स्वजातिमे वेद, पुराण, उपपुराण, न्याय, स्मृति, दर्शन, विज्ञान इत्यादि सब कुछ है यह तुमने सुना है, पर उनको तुम भ्रमसे भी जाननेकी इच्छा नही करते कि वह सब क्या पदार्थ है उनके बीचमे क्या अनन्त महामूल्य रत्न विद्यमान है। उन रत्नोके लेनेकी तुम चेष्टा नहीं करते, उनके लेनेकी न तुम्हारी इच्छा है, न यत्न है ! तुम्हारी जननी जन्मभूमि इस दुष्प्राप्य अनन्त धनसे धनवती है, और तुम इस विजातीय भाषाकी शिक्षित सन्तान हो, इस श्रेणीके धनके लिये सात समुद्र पार भिन्न जातिके द्वार पर स्थित होते हो ! तुम्हारे घरमे धन है या नही है एक वार भूलकर भी इसका अनुसन्धान नही करते, और मार्गके भिखारी वनकर नवीन धनसे–अत्यन्त अल्प धनसे धनी हुई भिन्न जातिके समीप तुम प्रार्थना करते हो ? धर्मसम्बन्धके प्रवन्ध लिखनेके समय तुम्हारे पूर्वगुरु मिलकोमेत् इत्यादिने अगणित मत उस प्रवन्धमे उद्धृत किये है, परन्तु तुम्हारे पितृ पुरुष जिस धर्मके आश्रयसे जीवन व्यतीत करगये है, उसी धर्मके उस सनातन हिन्दूधर्मके शास्त्रोसे दो श्लोक उद्धृत करते हुए चारो ओर अन्धकार दिखाई देता है ? वेदसे दो वात लिखते हुए अध्यापक मोक्षमूलरके ऋग्वेदसहिताके अंग्रेजी अनुवादके भिन्न तुम्हारी कार्यसिद्धिका अन्य उपाय नही है ? श्रीमद्भागवतके दो श्लोक उद्धृत करनेके समयमे भट्टाचार्यका आश्रय लेना पडता है ? तुम्हारा शास्त्र ज्ञान ही एकमात्र इसकी सीमा है। और तुम अंग्रेजी शिक्षक युवक हो। तुमसे यदि प्रश्न कियाजाय कि ४४९ ईसवीसे भारतेश्वरी महारानीके समय तक इंग्लेण्डके प्रधान २ विवरणोका वर्णन करो तो तुम शीघ्रतासे महीना सन तारीखके साथ तुरन्त कहदोगे। यदि कहाजाय कि चन्द्रवंशकी प्रधान २ घटनाओको लिखो तो तुम्हारी लेखनी एकवारही निश्चल होजायगी ? तुमसे यदि प्रश्न किया जाय कि भारतेश्वरी विक्टोरियाके प्रपितामहका नाम क्या था तो तुम एकमिनटमे ही वता सकोगे, यदि तुमसे पूछा जाय कि जहाँगीरके वृद्धपितामहका नाम क्या था तव उसे भी तुम उसी समय वतादोगे, और यदि तुमसे श्रीकृष्णके वृद्धप्रपितामहका नाम क्या था ? यह प्रश्न किया जाय, तो नासिकाको सकोड लेते हो ? हे शिक्षित शर्मन् महोदय ! यदि तुमसे पूछा जाय कि तुम्हारे वृद्धपितामहका नाम क्या है तो तुम्हारा मुखचन्द्र मलीन क्यो होजाता है ? जब तुम्हारा जातीय धर्मज्ञान शास्त्रज्ञान कुछ भी नही रहा तव श्रीकृष्णके नामसे तुम्हारे हृदयमे विजातीय घृणाका जो सचार हो तो इसमे आश्चर्य ही क्या है ? और सत्य भी है भक्ष्याभक्ष्य मांस मद्यके निरन्तरसेवन तथा मुर्गवंशध्वंस करनेमें जिनकी जिह्वा सदा लपलपाती है उनमे धर्मभाव कहाँ ठहर सकता है।

हम आज देशवासी शिक्षित मनुष्योको स्मरण कराते है,–कि इस तत्त्वके जाननेके लिये श्रीमद्भागवत देखो वहाँ क्या लिखा है।

"निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्।
पिवत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः।"

हम हृदयसे प्रत्येक स्वजातीय भ्राताको अनुरोध करते है कि वह एक वार श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताका अध्ययन करै। जो लोग संस्कृत भाषाको नहीं जानते है तो वह उनके अनुवादको पढै तव वह अवश्य जान जायँगे कि श्रीकृष्ण कौन थे? तभी श्रीकृष्णके सम्बन्धमे जो भ्रान्ति और अविश्वास है वह छिन्न भिन्न होजायगा, तव तुम लोग यह भली भांतिसे जानजाओगे, कि समस्त विलायतमें धर्मपुस्तक एवं मिलकोमेत् स्पेन्सर इत्यादिके धर्मकी व्याख्याको एकत्र करनेपर श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताके शतांशका एक अंश भी उपदेशका देनेवाला न होगा, जिन्होने धर्म जगतमे दृष्टिकी रक्षा की है वह मुक्तकण्ठसे इस वातको स्वीकार करेंगे कि प्रत्येक धर्म ही कालक्रमसे अज्ञानी अनभिज्ञ और मूर्खोंके दोषसे विकृतभाव युक्त होजाता है। और धर्मनेताओके चरित्र कालक्रमसे उपासकोकी रुचिके अनुसार भिन्न आकृति होजाते है, पर तत्व निकालनेवाले उसका तत्व जानते रहते है तो क्या हमारे शिक्षित युवक चिरकालतक हरिके प्रति कुसंस्कारापन्नभावसे ही रहैंगे? इस स्थान पर उन दयामय हरिके चारित्रोका आख्यान और हरि नामके माहात्म्यका प्रचार तथा श्रीमद्भागवत और गीता इत्यादि ग्रन्थोका स्थूल मर्मप्रकाश करना प्रसंगके विरुद्ध जानकर हम अपनी इच्छासे अत्यन्त दुःखके साथ विराम करते है। परन्तु हम देशके आशा भरोसा स्वरूप पुरुषोसे कहते है कि इस अनंत श्मशानकी समान भारतवर्षमे जिस प्रकारकी महा शक्तिकी साधनाका प्रयोजन है, मृतसजीवनमंत्रके प्रचार की शीघ्र ही आवश्यकता है, इसी प्रकारसे इस मरुक्षेत्रमे हरिनामरूपी अमृतसे सीचकर प्रेमभक्तिकी लहरका प्रवल आन्दोलन करना उचित है। इस अनैक्य समुद्रमे मग्न हुए देशमे अव हम शाक्त और वैष्णवोंमे विवाद नही चाहते हम केवल योग ही चाहते–है। उन सर्वेश्वर हरि और योगमायाकी शक्तिको एकत्र मिलाना चाहते है, पुरुष और प्रकृतिका परिणय चाहते है। केवल विजातीय शिक्षाके वलसे जातीय उन्नति कभी नहीं होसकैगी। जातीय शास्त्रकी आलोचना–जातीय धर्मकी श्रेष्ठता साधनके सिवाय उन्नतिका और उपाय नहीं है– एकता साधन ही उन्नतिका मुख्य उपाय है, हे भारतवासी! इसीसे कहते है कि तुम अपने मिलकोमेत स्पेन्सरको इस समय दूर रख दो, तुम्हारे घरमे जिस अमूल्य धनका अनादर होरहा है, जिस रत्नके आश्रयसे इस भवसागरके पार सरलतासे हो सकोगे उस रत्नकी ओर आँख उठाकर देखो। भाई! महाशक्तिकी भैरवी ध्वनिके सगमे विश्वविजयी हरि नामकी ध्वनिके सयोगका इस समय प्रयोजन है। भइया याद रक्खो कि अतमे हरि नाम ही सार पदार्थ है।

वेदविभाजक महर्षि वेदव्यासने अपनी अमृतमयी लेखनीसे जिस पवित्र हरिवंशके वृत्तान्तको वर्णन किया है, जो हरिवंश महाभारतके परिशिष्टमे सब प्रकारसे गिना जाता है, जो हरिवंश आर्यधर्मावलम्बी आर्यमात्रके आदरका धन है, भारतके गौरव-

स्वरूप संस्कृतभाषाके उज्ज्वल मणिस्वरूप उन्ही हरिवंशावतंसके परिवर्ती नरपति कुलके वंशका वर्णन करनेको हम प्रवृत्त हुए है। सर्वजीवोंके आधारस्वरूप दयामय हरिकी मानवलीला समाप्तिके पीछे वैकुंठधाममे जानेतकका वृत्तान्त कविकुलपति वेदव्यासके हरिवंशमे लिखा गया है। इस कारण उसके परवर्ती यदुवंशियोके राजाओके शासनका इतिहास इस समय वर्णन करना योग्य है। जिन आर्यसतानोने हरिवंशके पर्वको पाठ किया है, जिन्होंने यदुवंशके विध्वस वृत्तान्तको पढा है उनके उस यदुवंशकी शेष अवस्था क्या हुई, वह हमे आजतक विदित नही है। यह वक्ष्यमाण इतिहास उनके इस कौतूहलको मिटा देगा, हमारी यही आशा है। जो दयामय हरि इस भारतवर्षमे अक्षय अवर्णनीय लीला करगये है उन हरिके कौनसे वंशधर इस समय भारतवर्षमे विराजमान है, पाठक उसको पढ़कर भलीभाँतिसे जानजॉयगे और इससे फिर वह अत्यन्त ही आनन्दित होंगे जो हरि भारतवर्षमे प्रेमभक्तिका पूरा परिचय करगये है जिन हरिने प्राणियोकी मुक्तिका मार्ग स्वच्छ करादिया है जिन्होंने मित्रताका तथा राजनीतिका चूडान्त निदर्शन दिखादिया है जिन दयामय भगवानने भारतवर्षको पवित्र करदिया है उन्ही हरिके चरणकमलोका ध्यान कर हम इस समय इतिहासका आरभ करते है।

अनुवादकर्त्ताकृत भूमिका समाप्त.

मारवाडका जो अंश इस समय जैसलमेर नामसे विख्यात है वही जयसलमेर उक्त हरिके वंशधरोकी वर्तमान राजधानी है, जयसलमेर नाम आधुनिक है पहिले भारतीय मरुक्षेत्रके मध्यमे यह अंश प्राचीन भूगोलके अनुसार मरुस्थल नामसे विदित था। प्राचीन जनप्रवादके मतसे इसका नाम मरु है। मरु वा मरुका प्रादेशिक अर्थ भूधर है, रेतीले मरुक्षेत्रमे केवल यही देश पाषाणमय उर्वर है। यह जिस प्रकार स्वाधीन हिन्दूराजवंशकी राजधानी है, इसी प्रकार इसके प्राकृतिक दृश्य, और स्वाभाविक अवस्थाएँ विशेष जानने योग्य है, इस देशके स्थानीय आचार व्यवहार, कृषि स्वभाव, वृक्ष और खेतीका विवरण बड़ा विचित्र और अवश्य जानने योग्य है, इस देशमें जो जाति निवास करती है उस जातिका विवरण और इतिहासकी अपेक्षा उसका तत्वसधान विशेष उपयोगी और अत्यन्त प्रयोजनीय है।

भाटी यादव या जादववंशकी एक शाखा है जो कि अबसे तीन हजार वर्ष पहिले समस्त भारतवर्षके धाता विधाता थे। इस समय देशके एक कोनेमे राज्य करनेवाले (बीकानेरके) महाराज अपनेको उसी महाराज मनुकी संतान बतलाते है जो किसी समय यमुनासे लेकर भूगोलकी अंतिम सीमातक शासन करते थे।

उन यदुवंशियोके सबंधमे इस समय ऐसे शृखलाबद्ध ऐतिहासिक प्रमाण पाना तो असंभव है, जिससे यह निर्णय होजाय कि वे निसन्देह आदिवंशसम्भूत है। परन्तु

(१) श्रीकृष्णने जो द्वारकापुरी निर्माण की थी पहिले उसका जगत्कुण्ठ नाम हुआ, ग्रंथकारने जगत्कुण्ठका अर्थ जगतकी शेषसीमा लिखा है परन्तु इसका वास्तविक अर्थ भूस्वर्ग है [अनु०] मूल पुस्तकमे worlds end है।

जिस भावसे वे वंशावलीकी रक्षा करते आये है उससे प्रमाणित होता है कि वे आदिवंशसम्भूत है । यदुवंशियो (भाटियो) के इतिहासकी खोजकरनेसे हमारे मनमे दो एक अनुमान उदय हुए है और वे अवश्य मान्य भी होसकते है। पहला यह कि यदु भट्टि (भाटी) सिथियन वंशसे उत्पन्न है। दूसरा यह कि वे आर्य है । यदि हम अत्यंत प्राचीन कालके उस ऐतिहासिक समयकी ओर ध्यान देते है जब कि हिन्दू और सीथियन लोग एक ही थे तथा दोनोने एक दूसरेसे पृथक् होकर दो भिन्न राष्ट्र स्थापित किये तो मालूम होता है कि कास्पियन समुद्रसे लेकर गंगाके किनारे तकके भिन्न भिन्न संप्रदायोके लोग उस एक ही सुबृहत् वंशकी संतान है जो किसी समय एक ही भाषा बोलते थे और एक ही धर्मके अनुयायी थे । उसी अतिप्राचीन कालमे सीथियन लोगोके मध्य साम्राज्यके अवशिष्ट अथवा विनष्ट होजानेपर बुधके पुत्र भरतने भारतवर्षमे अपनी साम्राज्य स्थापित किया[२]–(इसीको इन्डोसीथियन राज्य कहा है) उसी सार्वभौम राजा भरतके संतानोद्भव यदु भाटी इस समय मरुस्थलके एक संकीर्ण कोनेमे शासन करते है ।

भारतवर्षके प्रथम उपनिवेशके संबधमे राजकुल (सूर्य्यवंश चंद्रवंश) को यहाँका

---

(१) ग्रंथकारने टीकामे लिखा है किप्रसिद्ध कुवेरने प्राचीनमध्य साम्राज्यके अस्तित्व सम्बन्धमे इस प्रकार सन्देह किया है कि Ni Meise ni Homere ne nous parlit d'an grand empire dansla Haute A sie (Discours suiles Revolutions dela surface du globe P. 206)

इजेकियेल कहता है कि जिसने मिसरको जीतकर बहुत कालतक वहा अधिकार किया था वह तोगरमाहके पुत्र किसके थे, ग्रंथकारका यह मत है कि तोगरमाहके पुत्रोने उक्त मध्य साम्राज्यसे जाकर मिसरपर अधिकार किया था ।

(२) इसपर ग्रंथकारका टिप्पण है कि निम्नलिखित क्षत्रिय जाति पवित्र विधिका पालन न करनेसे तथा ब्राह्मणोकी सेवा न करनेसे क्रमश नीच वर्ण अर्थात् शूद्रत्वको प्राप्त हुई वह पौड्रक उड्र द्रविड कम्बोज यवन पारद पह्लव चीन किरात और शक कहलाई देखो मनु अध्या० १० श्लोक ४३ । ४४ बक्तियनके ग्रीकलोगोका इस यवन मतका मानना भ्रांतिमात्र है कारण कि नहुपके तीसरे पुत्र ययातिके पचम पुत्र यवनसे उत्पन्न थे आइयोनिया इस जातिके होसकते है, शक गण एशियाकी शकजाति है पह्लवगण प्राचीन पारसिक वागृवेजाति है चीनी (चायना) चीन निवासी है, और शकगण प्रबल हिमानीमंडित भूधरके निवासी है खो अर्थात भूधर शब्दके साथ शक शब्दके मिलनेसे खोशाका शब्दकी उत्पत्ति है पोटेलमिन इसको कासिमामोण्टस कहा है खोशाका शब्दका अपभ्रंश काकेशश है ।

(१) ययाति नहुपके तीसरेपुत्र नहीं वरन् दूसरे भाग० स्क० ९ अध्याय १८ अनु० ।
(२) ययातिके पाचवे पुत्रका नाम यवन नही था किन्तु यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु और पुरु यह पाच पुत्र थे भाग० स्क० ९ अ० १८ (अनुवादक)

आदि भूमियां अनुमान करना वृथा है। यह स्वयं सिद्ध है कि यहाँके आदि भूमियें गोडभील मीना आदि लोग है। वास्तवमे एक ही पूर्वपुरुषकी संतान है और राजनीति विहीन होनेसे विजेताओ द्वारा इस शोचनीय दशाको पहुँचाये गये है।

यद्यपि हमै ऐसा विश्वास है कि चंद्रवंश और सूर्यवशके प्रादुर्भावके पहिले उक्त आदिम निवासी भारतवर्षमे रहते थे। परन्तु इसका कोई प्रमाण नही पायाजाता कि वे चंद्र और सूर्यवंशसे उत्पन्न थे, इस अत्यन्त प्राचीन हिन्दू जातिकी क्षमता और उस क्षमताके विस्तारके सम्वन्धमे मध्यकालके पुरातत्त्ववेत्ताओने भ्रान्त और संकीर्ण मत संगठन किया है। बहुतोका यह विचार है, कि मुसलमानोके भारतपर अधिकार करनेके समयसे हिन्दू जातिमे जो संस्कार प्रचलित हुए है, अर्थात् अटक नदीके पार या जहाज़ पर चढ़कर समुद्रमे जानेवाले हिन्दुओको निषिद्ध बतलाया गया है, यह कुसंस्कार चिरकालसे हिन्दूसमाजमे प्रचलित है। नवीन और अभ्रान्तमत ग्रहण करनेकी अपेक्षा प्राचीन और भ्रान्तमतका छोडना यदि अधिक कठिन नही है तो सरलतासे ज्ञात हो सकता है। कि हिन्दुओकी यह समुद्रयात्रा निषेधक रूढ़ि अतीव आधुनिक है। दूसरे हिन्दूगण स्मरणा तीतकाल पहिलेसे जल युद्धमें निपुण और बल-सम्पन्न थे और उसीकें बलसे उन्होने अफ्रीका अरब और पारसके उपकूलमे आष्ट्रेलियाके आर्चीपेलागो द्वीपपुजोमे गमन किया था।

---

(१) ग्रंथकारने इसपर टिप्पण किया है कि कावा जातिका प्राय लोप होगया है श्रीकृष्णके समयमे यह जाति सौराष्टके वन्यनिवासी रूपसे विदित थी, जब वनके भीलने श्रीकृष्णको गुप्तरूपसे आहत कर "मैने अनिच्छा और भूलसे ऐसा किया यह कहकर शोक प्रकाश किया" तब श्रीकृष्णने उसे यह कहकर क्षमा किया कि 'रामावतारमे मैने तुम्हारा वध किया था इसी लिये तुमने इस जन्ममे मुझे आहत करके अपना बदला लिया है, इससे जानाजाता है कि रामचन्द्रने यहाँके निवासियोको आधीनताकी श्रृखलामे बाधकर सभ्य करदिया था और यह भी जाना जाता है कि इसी कावा जातिने श्रीकृष्णकी मृत्युके पीछे उनके परिवारको हरण कर लूट लिया था।

(२) ग्रंथकार टिप्पणीमे लिखते है गम्बिया और सेनिगल नदीके समीपके नगरका नाम तम्बाकुण्डा है वहा और भी बहुतसे कुण्ड पाये जाते है।

(३) मिमार्सडेनने हिन्दूसाहित्यके सम्बन्धमे तत्वकी खोज करनेके समय सर विलियम जौन्सके साथ इसका आविष्कार किया है कि सब द्वीपपुज अर्थात् मेडेगास्करसे पूर्व द्वीपतक जो मालियन भाषा प्रचलित है इस भाषामे बहुतसे संस्कृत शब्द पायेजाते है उनके मुसलमान धर्ममे दीक्षित होनेके बहुत शताब्दी पहिले उस भाषाकी यह अवस्था थी उन्होने विश्वास किया है कि गुजरातसे उक्त द्वीपपुजकी गति चली है यहांके निवासियोके अनेक प्रवाद और विचरण रामायण और महाभारतमें विद्यमान है एशियाटिक रिसर्चेजवाल० ६ पृ० २२६.

मि० मार्सडेनने उक्त मतको प्रकाश करनेके पीछे उपरोक्त द्वीप पुज बृटिश अधिकारभुक्त होनेसे वहाके प्राचीन स्थानोमे प्रासादादिके विशप तत्वपाये थे, कि उक्तद्वीपोमे सूर्यवंशियोने जाकर अपने महल बनाये उन मन्दिरोमे जिस भावसे देवी देवताओंकी मूर्तिये खोदी गई हैं और—

हमारा यह अनुमान अत्यन्त हास्यजनक है कि हिन्दू लोग सदासे अपने इसी वर्तमान भारत सीमाके भीतर गुजर करते आये है। एक प्रकारके अपूर्ण और कल्पना-संपन्न ऐतिहासिक पुस्तक पुराण और मनुसंहिता आदि हिन्दुओकी प्राचीन पुस्तकोसे स्पष्ट प्रमाणित है कि पहिले आक्सस नदीसे लेकर गंगातक सब देशोमे बराबर आते जाते थे। पुराणोके रूपक वर्णनसे यह भी जाना जाता है कि एशियाके मध्य साम्राज्य इस समय म्लेच्छ गिनेजाते है वहींसे हिन्दुस्थानमे अनेक विद्या और ज्ञानके स्रोत बहे थे। मनुजीने भी पुराणोके मतकी पुष्टि की है जिससे जानाजाता है कि अति प्राचीनकालमे शाकद्वीपसे लेकर गंगाके किनारे तक एक ही (सनातन धर्म) का प्रचार था।

—स्थानीय ग्रंथोमे वीरोंकी वीरगाथाका कीर्तन हुआ है उससे उक्तमतके और भी प्रमाण पायेजाते है बहुत पुराने समयसे भारतवर्षके साथ मिसरवालोंका जो सम्बन्ध था, खोज करनेसे इसके सबन्धमे बहुत प्रमाण पायेजाते है इसमे हम आशाहीन नहीं है सिंहलद्वीपसे मिसरके साथ भारतवर्षका प्रथम सम्बन्ध उपस्थित हुआ था, लंकाविजयी रामचन्द्रके पास भी अपने पूर्वपुरुष सगरको समान बहुत नौकाबल था इसमे सन्देह नही। मेरा बहुत दिनोसे यह विचार था कि लंका ही प्राचीन इथोपियाका राज्य था, प्राचीन लेखकोने लिखा है कि इथोपीयगण भारतवर्षमे उत्पन्न है और इथोपियोंसे ही मिसरमें शिक्षा और सभ्यताकी वृद्धि हुई।

(१) टिप्पणीमें टाड् साहब लिखते हैं, कि अग्निपुराणमे जो सृष्टिका विवरण है वहाँ सात द्वीपोका वर्णन कियागया है, उनमे शाकद्वीप भी एक द्वीप है, शाकद्वीपनिवासी भूपसे उत्पन्न है इसीसे उनका नाम शाकेश्वर है भूपके पुत्रोका नाम जुल्द सुकुमार मानीचक कुरम उत्तर दराविक और द्रुम है, इन प्रत्येकने अपने २ नामसे एक २ खण्ड स्थापन किया, यथा सुकुमारखण्ड इत्यादि यहांके प्रधान ७ पर्वतोंके नाम जुलूद रैवत श्याम इन्दक अमकीरीम और केसरी है। सांत प्रधान नदी मग मगध अरवर्णा इत्यादि हैं यहांके निवासी सूर्योपासक थे। सक्षेप तत्व ज्ञानके आधार पर हम विश्वास करते हैं कि शाकद्वीप ही प्राचीन सिथियन देश था, और शाकेश्वर मनु और विलायतके शाकि जातिके पुरुष ही पर्थियन लोगोके आदि पुरुष थे, उनके आदि अधीश्वरका नाम अरशक था, अरवर्णा नामके साथ अरक्षस नामकी सादृश्यता देखी जाती है यह जक्षरतीसका अपभ्रंश है। दूसरे शाकद्वीपके प्रथम नरपतिके पुत्र जुलूदका नाम देखागया है तातारजातीय इतिहासवेत्ता अबुल गाजीने हिन्दुओंके समान ही उसको जुलूदस कहा है। उसका अर्थ शैल श्रेणी है पुराण और तातारके इतिहासमे इस प्रकारकी समानता क्यों हुई। *

पर ब्राह्मणोके नेताको विष्णुजीके गरुड शाकद्वीपसे जम्बूद्वीपमे लाये उसीसे शाकद्वीपके ब्राह्मण जम्बूद्वीपमे परिचित हुए देखो मि० कोलब्रुकका एशियाटिक रिसरचेज पाचवां खण्ड पृ० ५३

* टाड साहबकी इस युक्तिको हम पुराणसंगत नहीं मानते। उन्होंने पुराणका नाम लेकर जो लिखा है वैसा पुराणोंमे नहीं पायाजाता तथा नामोंमे भी बहुत गड़बड़ है, मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है [illegible] प्रियव्रतने अपने पुत्रोंको सब [illegible] दिया।

प्रियव्रतोऽभ्यषिञ्चत्तान् सप्त सप्तसु पार्थिवान् ।
द्वीपेषु तेषु धर्मेण द्वीपांस्ताश्च निबोध मे ॥
जम्बूद्वीपे तथाग्नीध्रं राजानं कृतवान् पिता ।
प्लक्षद्वीपेश्वरस्यापि तेन मेधातिथिः स्मृतः ॥
शाल्मले तु वपुष्मन्तं ज्योतिष्मन्तं कुशाह्वये ।
क्रौञ्चद्वीपे द्युतिमन्तं हव्यं शाकाह्वये सुतम् ॥
पुष्कराधिपतिञ्चैव सवनं कृतवान् सुतम् ।

प्रियव्रतने जम्बूद्वीपमे अग्नीध्रको, प्लक्षद्वीपमे मेधातिथिको, शाल्मलिमे वपुष्मान्को कुशद्वीपमे ज्योतिष्मान्को, क्रौञ्चमें द्युतिमन्तको, शाकद्वीपमे हव्य और पुष्करमे सवन पुत्रको स्थापित किया, भागवतमे इनके नाम अग्नीध्र इध्मजिह्व यज्ञबाहु, हिरण्यरेत, घृतपृष्ठ, मेधातिथि वीतिहोत्र लिखे है शाकद्वीपका वर्णन मत्स्यपुराणके १२२ अध्यायमे लिखा है ।

शाकद्वीपस्य वक्ष्यामि यथावदिह निश्चयम् ।
जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्द्विगुणस्तस्य विस्तरः ॥
तत्र पुण्या जनपदा चिराच्च म्रियते जनः ।
ऋज्वायता प्रतिदिशं निविष्टा वर्षपर्वता ॥
रत्नाकराद्रिनामान सानुमन्तो महाचिता ।
उभयत्रावगाढौ च लवणक्षीरसागरौ ॥
शाकद्वीपे तु वक्ष्यामि सप्त दिव्यान्महाचलान् ।
देवर्षिगन्धर्वयुत प्रथमो मेरुरुच्यते ।
प्रागायत स सौवर्ण उदयो नाम पर्वतः ॥
तस्यापरेण सुमहान् जलधारो महागिरिः ।
स वै चन्द्र समाख्यात सर्वौषधिसमन्वित ॥
नारदो नाम चैवोक्तो दुर्गशैलो महाचित ।
तत्राचलौ समुत्पन्नौ पूर्वं नारदपर्वतौ ।
तत्रापरेण सुमहाञ् श्यामो नाम महागिरिः ॥
यत्र श्यामत्वमापन्ना प्रजाः पूर्वमिमा किल ।
स एव दुन्दुभिर्नाम श्यामपर्वतसन्निभ ॥
तस्यापरेण रजतो महानस्तो गिरिः स्मृत ।
स वै सोमक इत्युक्तो देवैर्यत्रामृतं पुरा ॥
तस्यापरेचाम्बिकेय सुमनाश्चैव स स्मृत ।
आम्बिकेयात्परो रम्य सर्वौषधिनिषेवित ॥
विभ्राजस्तु समाख्यात स्फाटिकस्तु महान्गिरिः ।
सैवेह केशवेत्युक्तो यतो वायु प्रवाति च ॥

अर्थात् शाकद्वीपका जम्बूद्वीपसे दूना विस्तार है, वहां पुण्यात्मा पुरुष रहते है और वे बहुत कालमे मरते है, वहा भी प्रतिदिशामे सात पर्वत है जो लवण और क्षीरसागरसे मिलते है, देवर्षि

अन्यत्र चले जानेके विषयमें जो वृत्तान्त देशीय इतिहासोंमें जिस भावसे वर्णन किया है

गन्धर्वोसे युक्त पहिला सुमेरु है यह सुवर्णका उदय पर्वत है, इसके आगेका पर्वत जलधारा नाम वाला है उसपर बहुतसी औषधियां है, इसको चन्द्र भी कहते है, अगला पर्वत नारद नामक है उसीसे नारदपर्वत नाम दो गिरि प्रगट है, इसके आगे श्यामपर्वत है, जहांकी प्रजा पूर्वकालमें श्यामत्वको प्राप्त हुई थी, वहीं दुंदुभी नामवाला श्यामपर्वतकी समान है उसके आगे अस्त वा रजत नामक पर्वत है, उसीको सोमक भी कहते है; इसके आगे अम्बिकेय है जिसको सुमना कहते है उसके आगे सब औषधियोंसे युक्त स्फटिकका विभ्राज नाम पर्वत है, उसे केशव भी कहते हैं, जहाँसे वायु चलते है। इसके आगे वर्षोका। वर्णन किया है उनके नाम यह है।एक एकके पर्वतोकी समान दो दो नाम है, उदयवर्ष वा गतभय, सुकुमार वा शैशिर, कौमार वा सुखोदय, श्यामपर्वतवर्ष, वा अनीचक, वा आनन्दक, कुसुमोत्कर वा असितसोमक, मैनाक वा क्षेमक, ध्रुव वा विभ्राज। सात ही नदी दो दो नामवाली है। सुकुमारी वा शिवज्जला, सुकुमारी तप सिद्धा, नन्दा वा पावनी, शिविका इक्षु वा कुहू, वेणुका वा अमृता, सुकृता वा गभस्ति, इत्यादि-हमारा पुराणोक्त शाकद्वीप और टाड् साहबका सीदिया एक ही देश है या पृथक् है यह पाठक गण सहजमें अनुमान करसकते है। अग्निपुराणमें भी शाकद्वीपके राजाका नाम भूप नहीं है, टाड् साहबने जो उसके पुत्र लिखे है वे नाम भी ठीक नहीं है, केवल एकाध नाम मिलता है।

शाकद्वीप निवासियोंको म्लेछत्व कैसे प्राप्त हुआ उस विषयमें ग्रन्थकारने लिखा है कि "उन्होंने ब्राह्मणोंको अपने देशमें न वसने दिया। इसीसे वह म्लेच्छ होगये," परन्तु पुराण देखनेसे यह बात विदित नहीं होती। हम पहिले खण्डमे इस बातको दिखा चुके है, कि सगरने शकादिको यहाँसे निकाल दिया था वही म्लेच्छ होगये, कोलब्रुक साहबने जैसा अपने ग्रन्थमें लिखा है उसी मतको टाड साहबने लिया इसीसे यह भ्रम पडगया है। सहस्रो वर्षोकी मीमांसा अनुमानसे नहीं लगाई जासकती, यह अंग्रेजी सिद्धान्त कि सूर्य तथा चन्द्रवंश मध्य एशियाकी सिदियन जातिसे उत्पन्न है मध्य एशिया ही सबका आदि निवास स्थान है आदि यह सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण है। आर्य जातीय इतिहासपुराणमे ही इस गुरुतर प्रश्नकी मीमांसा हो सकती है। अनुमान लगानेसे बहुत भूल होती है।

'ग्रन्थकारने कहा है कि जो यह यदुवंश आदिसे उत्पन्न है उसका कोई प्रमाण इतिहासमें नहीं पाया जाता, हम इसपर कहते हैं कि महाभारत हरिवंश और श्रीमद्भागवतमें इनके अनेक प्रमाण है। वहा इनका धारावाहिक वृत्तान्त है, आगे इतिहासलेखकने लिखा है कि कारिका देखनेसे ज्ञान होता है कि यदुवंश आदि चन्द्रवंशसे उत्पन्न हैं, यदुवंशी सिदियन जातिके थे, यह बात भी भ्रान्तिपूर्ण है। हां यह हम मानते हैं कि पहिले सबकी एक ही भाषा थी, परन्तु सीदिया शाकद्वीप है, यह हम नहीं मानते, सीदिया शकजातिकी सृष्टिके पहिले शाकद्वीपकी सृष्टि हुई है, शकादिके म्लेच्छ होनेपर सर्वथा इनके साथ सम्बन्ध छूट गया था, इसको हम पहिले ही लिख चुके है, जब सगरके समय इनसे सम्बन्ध टूटा तब चन्द्रवंशके आदिपुरुष उस म्लेच्छ जातिसे कैसे उत्पन्न है, चन्द्रवंश-का वृक्ष देखनेसे ही विदित होता है कि शकजातिके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध नहीं है, जब कि आदिकालमें आर्य नृपति यहांके निवासी लिखे हैं, तब मध्य एशियामें उनका यहां आना भ्रान्ति मूलक है, अनुमानके सामने जातीय इतिहासका खण्डन नहीं होसकता। हां यहाकी निकली हुई

इस समय सबसे पहिले उसीकी ओर ध्यान देते है । वहाँ लिखा है कि यदुवशी भारतवर्षके वाहर छिन्नभिन्न होकर चलेगये इस बातको हम प्रमाण करते है यद्यपि यदुवंशके आदिपुरुष बुधसे श्रीकृष्णजी तक पचास[2] पुरुष व्यतीत होगये, परन्तु

जातिने म्लेच्छत्वको प्राप्त हो पश्चिमी देशोंतक गमन कियाहो, यह सत्य होसकता है। ग्रन्थकारने लिखा है कि नहुषके तीसरे पुत्र ययाति थे उसके पांचवे पुत्र यवनसे यवन जातिकी उत्पत्ति हुई। परन्तु हम इसमे भी भ्रम देखते है कारण कि पुराणमे प्रमाण है कि-

" यदोस्तु यादवा जातास्तुर्वसोर्यवना.सुता ।
द्रुह्योस्तु वै सुता भोजा अनोस्तु म्लेच्छजातय." मत्स्यपु० अ० ३४

यदुसे यादव, तुर्वसुके यवन, द्रुह्यके भोज और अनुके म्लेच्छ जाति हुई है । पिताने यदुको शाप दिया था कि तुम्हारे वशमे चक्रवर्ती राजा न हो, मत्स्यपुराणके दशवे अध्यायमे लिखा है कि वेनके शरीर मथनेसे म्लेच्छ जाति प्रगट हुई, तथा यवनपतिके निस्सन्तान होनेसे उसकी स्त्रीसे गर्गका सम्बन्ध होनेसे कालयवन उत्पन्न हुआ, उसने म्लेच्छजातिका बड़ा संग्रह किया। विष्णुपुराण अंश ५ अ० २३ भिन्न २ समय भारतमे किस किस सम्प्रदायको म्लेच्छत्व प्राप्त हुआ यह बात इन प्रमाणोंसे भलीभाति जानी जाती है, इससे यह स्पष्ट है कि चन्द्र तथा सूर्यवशी यहाँके आदिम निवासी है तब सीदियासे उनका आगमन ग्रथकारका आनुमानिक सिद्धान्त है न कि प्रामाणिक

इस समय भारतवर्षकी जैसी सीमा है आदिमे इससे विशेष थी।यहाँ आर्यजनोके निवासकी भूमि आर्यावर्त थी पहिले खण्डमे इसका वर्णन कर चुका है यहाके निवासियोकी वृद्धिके साथ ही साथ भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें उनके निवासका प्रचार हुआ । महाराज भरतके समयसे इसका नाम भारतवर्ष हुआ पीछे इन्दुवंशकी प्रतिष्ठासे इन्दोस्थान और अब 'हिन्दोस्थान' कहाता है। सूर्य चन्द्रवंशीय क्षत्रिय और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और संकरजातिकी उत्पत्तिके साथ साथ यहाँके निवासियोंने धीरे धीरे दाक्षिणात्य इत्यादि स्थानोमें उपनिवेश स्थापन किये। साम्राज्यभ्रष्ट और जातिसे पतित हुए मनुष्योंने भारतसे निकलकर अन्यान्य प्रान्त तथा मध्य एशियाका आश्रय लिया, इस कारण आर्यगण सिदियासे भारतमे आये और सिदियासे भारतमें ज्ञानका विस्तार हुआ। परन्तु शास्त्रके मतसे यह स्वीकार नहीं किया जासकता, हाँ यह ठीक है जो लोग भारतसे चले गये थे उनके साथ भारतके वैश्योंका वाणिज्यकार्य चलता था दोनोमे आवागमन था, मध्य एशियावाले भारतवर्षसे ताडित होकर ही म्लेच्छत्वको प्राप्त हुए थे और आर्यजाति विस्तारको प्राप्त हो पश्चिम देशोंतक अर्चन धर्मका विस्तार करने लगी [अनुवादक]

(१) टाड् साहबने एशियाटिक रिसर्चेजके तीसरे वालमें यदुवंशका वर्णन किया है अंग्रेजी पाठक उसे देखे और देशीय पाठकोको हरिवश और महाभारत देखनेका हम अनुरोध करते है। [अनुवादक]

(२) एक कारिकासे चन्द्रसे श्रीकृष्णतक ५२ पीढ़ी पाईजाती है (अनु०)

उस बुधने जिस मार्गसे भारतवर्षमे आकर सूर्यवंशकी कुमारी इलाके शाथ विवाह किया थाँ [इलासे उसके वंशका विस्तार हुआ] उस मार्गको यदुवंशी भूले नही थे। पीछे ग्रंथकार जैसलमेरके इतिहासलेखककी पुस्तकसे उद्धृत करके लिखते है कि चन्द्रवंशीय यादवोकी आदि निवासभूमि प्रयाग थी, पीछे पुरूरवाने मथुरामे राजधानी स्थापित की और बहुत समयतक वही राजधानी रही। इन्ही यादवोसे छप्पन कुलकी उत्पत्ति हुई है इसी विख्यात वंशमे हरिकृष्णने जन्म लेकर द्वारकाकी प्रतिष्ठा की।

कुरुक्षेत्रमे यदुवंशियोके छप्पन कुलका जो भयंकर संग्राम हुआ था और उसके

---

(१) ग्रंथकार टिप्पणीमें लिखते हैं कि भागवतसे जानाजाता है कि बुध अपने पापोंको नष्ट करनेके निमित्त देवकार्य साधन करने तथा इलाके साथ विवाह करनेको भारतवर्षमे आये थे। इलाके गर्भसे बुधके पुरूरवा नाम पुत्र हु ः सने मथुरामे अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की, पुरुके और भी छ पुत्र उत्पन्न हुए वह भारतमें यदुवंशी नामसे विख्यात है, यह आयु ही भारतमे आदि पुरुष थे, उनकी भाषामे आयु शब्दका अर्थ चंद्र है उनकी और राजपूतोकी दोनो ही भाषा चन्द्र कहीगई है पहिलेके अनेक लक्षणोसे जानाजाता है कि भारतमे यदुवंश सिदियन था, आयु शब्दका अर्थ सस्कृतभाषामें चन्द्र है *

(२) इस समय इसको इलाहाबाद कहते है, यहां गंगा यमुनाका संगम है ग्रीक इतिहासवेत्ताने इसको प्रासिक कहा है।

(३) कुरुक्षेत्रमे यदुवंशी छप्पन कुलोंका समर नहीं हुआ, परन्तु वहां कौरव पाण्डवोका युद्ध हुआ था। पाण्डवोका समर यदुवंश समर कहना भ्रान्ति है। ग्रन्थकारने छप्पन करोडको छप्पन कुल माना है यह ठीक है।

(४) यादवोका समर भी द्वारिकामे नहीं किन्तु प्रभासक्षेत्रमे हुआ था [अनु०]

---

* ग्रंथकारने जो बुधका वृत्तान्त लिखा है यह भी अस्तव्यस्त है। भागवतके नवमस्कधमें जहा बुधका वर्णन है वहां कहीं भी यह बात नहीं लिखी कि बुध अपने पाप दूरकरनेके निमित्त भारतवर्षमे मध्य एशियासे आये थे, और यह जो मत है कि श्रीकृष्णके पीछे यदुवंशी भारतको छोड मध्य एशियामे चले गये यह भी समीचीन नहीं। महाभारत और भागवत पढनेसे हमारे पाठक भलीभांति जानजायगे कि यदुवंशियोंने परस्पर युद्ध करके ही रणक्षेत्रमे शयन किया था, उसमे कोई मध्य एशियाको नही गया। तथा भागजानेका कोई कारण भी नही था। जब कि उस युद्धमें समस्त यदुवंशका ध्वंस होगया, और एकमात्र वज्र बचा और कोई दूसरा शत्रु भी वहां न था तब मध्य एशियाको बचेहुए कैसे भाग गये। आयुशब्दका अर्थ सस्कृतभाषामे चन्द्र हो ऐसा किसी कोषमें नहीं पायाजाता, तातारीभाषामे आयुका अर्थ चन्द्र है, तो आयु उनका आदि पुरुष है इस बातको कौन मानेगा, और एकबात यह है कि आयुके पुत्र नहुषसे यदुवंशकी उत्पत्ति है। यह जो तातारियोंसे कहा गया है उसमे तातारियोके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं देता। तातारियोंमे यदुओंके नाम इत्यादि है तो क्या हम उनको श्रीकृष्णका वंशोत्पन्न कह सकते है? [अनु०]

पीछे जो द्वारिकामे भयंकर समर हुआ था, हिन्दू इतिहासपाठकोसे वह छिपा नही है ईसासे ११०० सौ वर्ष पहिले इस घटनाकी गणना की जाती है। इस वंशके छिन्नभिन्न होजानेसे वहुतोने भारतवर्षको छोड़ दिया, इनमे श्रीकृष्णजीके दो पुत्र भी थे। इन देवोपम यदुवशके नेता श्रीकृष्णजीकी आठ प्रधान रानियां थीं इनमेसे पहिली और सातवी[३] रानीके वशधर वे लोग हे जिन्हे अव हम हिन्दू नही कह सकते।

सव रानियोमे रानी रुक्मिणी ही प्रधान थी, उसके पुत्रोमे प्रद्युम्न सवसे श्रेष्ठ थे, इन्होने विदर्भकी राजकुमारीके साथ विवाह किया, उसके गर्भसे अनिरुद्ध[४] और वज्र दो पुत्र उत्पन्न हुए, वज्रसे भाटियोकी उत्पत्ति हुई वज्रके नाभ और खेर (क्षीर) नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए।

---

(१) महाभारत और प्रभासक्षेत्रका समर द्वापरके अन्त और कलिकी आदिमे हुआ जिसको इस समय ५००० वर्षसे अधिक होते हे इस वातको हम प्रथम खण्डमे लिखे चुके हैं [अनु०]

(२) इसका शोधन आगे करेगे।

(३) टीकामे ग्रथकारने लिखा है कि सातवीं रानीका नाम जाम्ववती था, जाम्ववतीके वड़े पुत्रका नाम साम्व था, यह सिन्धुनदीके दोनो तीरवर्ती देशोका अधीश्वर हुआ इससे सिन्धुमे साम्ववंशकी उत्पति हुई,उस वंशसे जाडेचागणोकी उत्पत्ति हुई,मीनगढमे जो साम्वजाति एलिकजंडरके विरुद्ध खडी हुई थी यह सम्भव हो सकता है कि वे श्रीकृष्णके पुत्र इन्ही साम्वसे उत्पन्न हो जाड़ेचा जातिके इतिहाससे जानाजाता है कि उनके पूर्वपुरुष साम वा सीरियासे आये थे, उनको अपना आदि वरण विदित नही था इसी कारण उन्होने ऐसा लिखा है।

(४) ग्रन्थकारको यहां भ्रम हुआ है। श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न और प्रद्युम्नके अनिरुद्ध और वज्र लिखे है, यहॉ पिता पुत्र एक कर दिये है, वज्र अनिरुद्धके भ्राता नहीं वरन पुत्र थे यथाहि–

प्रद्युम्न आसीत्प्रथम पितृवद्रुक्मिणीसुत. ।
स रुक्मिणो दुहितरमुपयेमे महारथ· ॥
तस्यां ततोऽनिरुद्धोभून्नागायुतवलान्वितः ।
स चापि रुक्मिण पौत्रीं दौहित्रो जगृहे तत ॥
वज्रस्तस्याभवद्यस्तु मौसलादवशेषित ।
प्रतिबाहुरभूत्तस्मात्सुबाहुस्तस्य चात्मज ॥ ३ ॥

भागवत० १० कन्ध ९० अध्याय

तथा च–अनिरुद्धात्सुभद्राया वज्रोनाम नृपोभवत् ।
प्रतिवाहुर्वज्रसुतश्चारुस्तस्य सुतोभवत् ॥ गरुडपु०अ० १४४

अर्थात् श्रीकृष्णके वड़े पुत्र प्रद्युम्नने रुक्मीकी पुत्रीके सग विवाह किया उसके महावली अनिरुद्ध हुए, उसने रुक्मकी पोतीसे विवाह किया उसका पुत्र वज्र हुआ, मौसल युद्धमे यही एक बचा इसका पुत्र प्रतिबाहु और उसका सुबाहु हुआ, गरुडपुराणमें भी यही लिखा है अनिरुद्धसे सुभद्रा [कदाचित् रुक्मकी पोतीका नाम है] मे वज्र पुत्र हुआ वज्रका प्रतिबाहु उसका चारुपुत्र हुआ

इन श्लोकोसे जाना जाता है कि वज्र अनिरुद्धके छोटे भ्राता नहीं न वज्रके क्षीर नव नाम वाले दो पुत्र थे, किन्तु वज्रके प्रतिबाहु उनके सुबाहु उनके शातसेन उनके शतसेन हुए यहातक श्रीमद्भागवत और हरिवंशमे लिखा है इससे ग्रन्थकारका वह मत मान्य नहीं [अनुवादक]

ग्रंथकार लिखते है कि देशीय इतिहास लेखकने लिखा है कि जिस समय यादवगण द्वारकाके युद्धमे विध्वंस होगये और कृष्णभगवान स्वर्गको चले गये, उस समय वज्र मथुराजीसे अपने पिताको देखनेके लिये जारहे थे, परन्तु वह वीस कोश गये होगे कि मार्गमे उनको समाचार मिला कि उनके सब कुटुम्वियोका नाश होगया है तब इन्होने उसी स्थानपर प्राण छोड दिये, और नाभ राजसिंहासनपर अभिषिक्त हो मथुराजीमे आये और क्षीर द्वारकाको चलेगये ।

यादवोने समस्त भारतवर्षमे अपने प्रवल प्रतापसे शासनशक्तिका विस्तार कर जिन छत्तीस राजकुलोको निगृहीत और पीडित किया था, इस समय वे सव वदला लेनेमे प्रवृत्त हुए । अन्तमे नाभ पवित्र नगरी द्वारिका पुरीको भागगया, पीछे वह पश्चिम प्रान्तमे मरुस्थलीके राज्यपर अभिषिक्त हुआ, भागवतमे यहांतक इतिहास देखाजाता है । हमने भाटी जातिके परवर्ती इतिहासको मथुराके ब्राह्मण शुकधर्मके लिखे हुए इतिहाससे वर्णन कियां है ।

नाभके एक पुत्रका नाम प्रतिवाहु था । क्षीरसे जाडेचा और यदुभानुकाँ जन्म हुआ, यदुभानु एक समय तीर्थयात्राको गये थे कुलदेवीने उनकी इच्छा जानकर उनको सोतेसे जगाकर कहा कि तुमको जिस वरकी इच्छा हो मांगो मै तुमको वही वर दूंगी, राजकुमारने कहा कि दे देवि ! तुम मुझे एक राज्य दो कि मै वहाँ निवास करूँ देवी वोली तुम इस भूधरका शासन करो, यह कहकर अन्तर्द्धान होगई । जव सवेरे यदुभानु जागे और रात्रिके स्वप्नका स्मरण कररहे थे कि उसी समय दूरसे महा कोलाहल सुनाई देने लगा, इन्होने इधरउधर देखकर जानलिया कि इस देशके राजाने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये है इस कारण राजपदपर किसीको वैठानेके

---

(१) यह कथा भी हमको मूल भागवतके अनुसार विदित नहीं होती । देशीय इतिहास लेखकने विना श्रीमद्भागवतके देखे ऐसा कैसे लिखा । मूलभागवतमे तो ऐसा है कि यदुवश ध्वस होने के पीछे वज्र मथुरामे आये और अर्जुनने उनको भलीभॉति समझा बुझाकर मथुराके राज्यपर अभिषिक्त करदिया ।

यदि ग्रन्थकारने देशीय इतिहास लेखकका अविकल अनुवाद किया है तो ऊपर की कथामे उसका भ्रम है अन्यथा ग्रथकार अनुवादकका भ्रममानना होगा, न वज्रने प्राण छोडे न नाभको राज्य मिला श्रीमद्भागवतकी सहस्रों पोथी है और सबमे ही एकसी बात है तब हम यह नहीं कह सकते कि यह भ्रम कैसे हुआ, पर जब वह इतिहास ही हमारा अवलम्बन है तब यहा उसीका अनुसरण करना होगा. (अनु०)

(२) शुकधर्मके ग्रथसे भी शका होती है कि वह कौनसी भागवत थी कि जिसमे नाभका भागना लिखा है (अनु०)

(३) ग्रथकारने यदुभानके बदलेमें यदभान लिखकर भान शब्दका अर्थ [illegible] किया है, और कहा है, जब ऐसा है तब पूर्वकालमें हिन्दू अवश्य बारूद निर्माण करना जानते थे । यह अर्थ सर्वथा [illegible], यदि वो यह विचारते कि भानुशब्दका अर्थ सूर्य है तो ऐसा न लिखते ।

निमित्त आन्दोलन होरहा है । उधर प्रधान राजमंत्रीने कहा कि मैने स्वप्नमे देखा है कि श्रीकृष्णके एक वंशधर इस वीहड़मे आये है यह सुन वहुतसे मनुष्य राजतिलक देनेके लिये उनकी खोजमे वाहर निकले, और वे यदुभान को नगरमे ले आये, अस्तु सवकी सम्मतिके अनुसार यदुभानु उस गद्दीपर विराजमान हुए । वह अपने वाहुवलसे एक प्रवल सामर्थ्यवाले राजा गिने गये । क्रमशः उनके वंशधरोकी संख्या वढ़ती गई, उन्होने जहाँ राज्य किया वह स्थान "यदुगिरि नामसे विख्यात हुआ । '

---

(२) ग्रंथकार टीकेमे लिखते है कि भाटीग्रंथमे जिस प्रकार प्राकृतिक भूगोलका वर्णन लिखा है, वह इतिहास अत्यन्त विश्वासके योग्य है । इस समय यदि जैसलमेरके निवासी किसी महोदयसे यह प्रश्न किया जाय कि यदुकाडांग यदुगिरि वा विहाड़ किस स्थानमें है, तो इसे कोई नहीं वता सकेगा, परन्तु वावर वादशाहकी स्मारक पुस्तकका जिसका अनुवाद मिस्टर आर्सकिनने प्रकाश किया हैं उसके विना हम यदुगिरिका पता न पासकते । सन् १५१७ ई० १७ फरवरीको वावरने सिन्धुपर आक्रमण किया । वहाँ कई नदियोके वीचमे विहड़ नगर है । यहाँ २५ पचीस सौ वर्ष पहिले श्रीकृष्णके वंशधरोने राजस्थापन किया था । १९ तारीखको मै यहाँ आया । उसने फिर लिखा हैं कि वहींसे सातकोशपर एक पर्वत है । जाफरनामा [तैमूरका इतिहास] और दूसरी पुस्तकोमे इस पर्वतको यदुगिरि लिखा है, सवसे पहिले हमको इसका नाम विदित नहीं था, किन्तु पीछेसे विदित हुआ कि इस पर्वतमे एक महानुभाव उत्पन्न हुए दो पुत्रोके वंशधर यहाँ निवास करते थे । एक सम्प्रदाय यदु नामसे, और दूसरी जनजूहा नामसे विख्यात थे । अत्यन्त प्राचीन कालसे वह इस पर्वतके निवासियोंको शासन करते थे । और उनकी शासनरीति नीलावसे वहीरा तकके देशोपर थी । वह भ्राता और मित्रभावसे देशको शासन करते थे । वह इच्छानुसार प्रजासे कुछ भी नहीं ले सकते थे । चिरकालसे जो नियम किये गये थे वह उसीके अनुसार प्रजासे केवल करमात्र लेते थे । इस समय यदुवंश अनेक साखाओमे वँट गया था और जनजूहाका वंश भी इसीके अनुसार विभक्त हुआ । इनमे जो प्रधान नेता थे उनको "राय" की उपाधि मिली" ।

आरस्किन साहवकी अनुवादित वावरकी स्मारक पुस्तकके, २५४ पृष्ठको देखो ।

"इन हिन्दू उपनिवेशियोंने वावरके समयतक अपने आचार व्यवहारोकी जो समभावसे रक्षा की थी, यही उसका यथार्थ प्रमाण है । जनजूहा जातिका जो उल्लेख लिखा गया है, इसीसे जोहिया जाति सन्देह करनेके योग्य नहीं है, शतद्रुके किनारे यह जोहिया जाति विशेष प्रसिद्ध हुई थी । इसका वर्णन पीछे किया जायगा । इस जातिके इतिहास मूलक एक छोटे ग्रन्थको मैने रायल एशियाटिक सुसायटीको अर्पण किया है। वावरने कहा है कि यदुओकी समान यह उनके एकवंशसे उत्पन्न हैं, यह भी सम्भवाहै कि यही भट्टियोके भ्राता भूपतिके वंशधर हो । भट्टीने यदुवंशके वदलेमे अपने नामके अनुसार भट्टीवंश नाम प्रधान किया और इससे यह प्रसिद्ध होता है कि जव ज्येष्ठ वंशकी शाखा गजनीसे ताडित हुई थी, उस समय उन्होने वहासे यदुओंको अपने कुटुम्वियोके साथ मिलाया। वावर इस यदुगिरिकी अतुलनीय सुन्दरतासे युक्त उपत्यकाको देखकर एकवार ही मोहित होगया था । उसने लिखा है कि यही कश्मीरका अनुरूप है ।"

" नाभके पुत्र प्रतिवाहुने मरुस्थलीके राजा होकर श्रीकृष्णके चिह्नस्वरूप विश्वकर्मा के वनाये हुए राजछत्रको शिरपर[1] धारण किया। उनके वाहुवल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वाहुवलने मालवेके राजा विजयसिंहकी कन्या कमलावतीके साथ विवाह किया। विजयसिंहने विवाहके यौतुकमे उनको खुरासान देशके एक हजार घोड़े, एकसौ हाथी वहुतसे हीरे मोती वहुत सा सुवर्ण, और पांचसौ सुन्दरी दासी रथ और कितने ही सुवर्णके वने हुए पलँग दिये। प्रमारवंशकी कमलावतीने प्रधान पटरानी होकर सुवाहु नामवाला एक पुत्र उत्पन्न किया "।

" वाहुने घोडे परसे गिरकर प्राण त्याग किये। उसके औरससे सुवाहुने जन्म लेकर अजमेरके चौहान वंशके राजा नंदकी कन्याके साथ अपना विवाह किया। उस विवाहिता स्त्रीने विष देकर सुवाहुको मारडाला "।

सुवाहुके रज नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसने वारह वर्षतक राज्य किया। उसने मालवाके राजा वैरसीकी कन्या सौभाग्यसुन्दरीके साथ विवाह किया था, सौभाग्यसुन्दरीने गर्भावस्थामे एक स्वप्न देखा कि उसके एक हाथी उत्पन्न हुआ है। ज्योतिषियोने यह स्वप्नका वृत्तान्त जानकर कहा कि रानीके महा वलवान् पुत्र उत्पन्न होगा। पुत्रके उत्पन्न होते ही ज्योतिषियोकी आज्ञानुसार उसका " गज " नाम रक्खा गया। गजके युवा अवस्थामे पहुँचते ही पूर्वदेशके राजा यदुभानुने गजके साथ अपनी कन्याके विवाहका प्रस्ताव किया, और क्षत्रियोकी सामाजिकरीतिके अनुसार उनके पास नारियल भेजा। इसी समयमे यह वात भी प्रगट हुई कि म्लेच्छोने पहिले सुवाहुको आक्रमण किया है

---

(१) पूर्वकालमे प्रमार गण मध्य भारतवर्षके प्रवल वलशाली राजा थे। सुन्दर दासी और सुवर्णके पलंग हिन्दू राजकुमारियोके विवाहके समयमे यौतुकरूपसे दियेजाते थे, उनके यहाकी यह रीति अखंड थी।

(२) टाड साहवने लिखा है कि " अवुलफजल कहता है कि तातारियोके आदि पुरुष उगजखाने गासमिन और कश्मीरके राजा जोगाको मारा था।

(३) इतिहासवेत्ता टाड साहवने लिखा है, कि " भट्टियोंके इतिहासके प्रथम अशमे ही ऐतिहासिक तथ्यका मिलान दृष्टि आता है, और यह पाया जाता है कि यदुभाट्टियोके लेखकने सीरिया और वेक्ट्रियाके ग्रीक और प्रथम मुसल्मानोंने भारतविजेताओके साथ सवर्पण होना वर्णन किया है।

सुवाहु, उनके पुत्र और पोते गजका यह शासन सम्बन्धी वृत्तान्त कितना ही असम्पूर्ण क्यों न हो, पर गज जो खुरासानके फरीद और उसके सहयोगी रूमके राजासे आक्रान्त हुआ है, हमें आन्टियोकसके इतिहासमें इसका प्रवल प्रमाण मिला है, उसने ईसाके जन्मके दोसौ चार वर्ष पहिले वेक्ट्रिया और भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। सीरियापति जो इस युद्धमें आया था, इसने भारतवर्षके राजा साफाग सेनूस(Sofhasusenus)के साथ संधि करके करस्वरूपमें हाथी लिये थे, यह वृत्तान्त भारतर पाया जाता है, और इसीका अनुमान निश्चयी घटनाओंसे—

और वही समुद्रके किनारेसे आते है, खुरासानका फरीदशाह चार लाख घुड़सवारी

—भी वर्णन किया जा सकता है कि सोफागसेनस गजनीमे यदुवंशियोंके अधीश्वर थे। सुवाहु और गज नामसे ग्रीक गणोंने सोफागसेनस् नामकी सृष्टि की है मालवेकी राजनदिनी सुभगा सुन्दरी का पुत्र कहकर गजको सोफागसेनस् कहा है इसकी मीमासा करनेका भार हमने विचार करनेवालो को ही दिया हैं।

(क) यह भी सम्भव हो सकता हैं कि ग्रीकराजको भारतीय राजाने कर स्वरूपमें हाथी दिया था, इसीसे उसका नाम गज हुआ।'

(ख) कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि इस इतिहासके बीचमे मध्य एशियाके प्रान्तसे मुसल्मान जातिके आदिम अभ्युदयके सम्बन्धमे अनेक विषयोका उल्लेख पाया जाता है, प्रेन्स साहवने खुलासतुल्अहवरी नामक ग्रन्थसे अपने उत्कृष्ट इतिहासमे उद्धृत किया है कि "हिजाजको खुरासानके शासनका भार और अब्दुल्लाको सीस्तानके शासनका भार मिला। अब्दुल्लाको उसके स्वामी हिजाजने काबुल पर अधिकार करनेकी आज्ञा दी, इस समय रितेल वा रितपेल नामका एक मनुष्य काबुल पर राज्य करता था, ग्रन्थकारने ऐसा अनुमान किया हैं कि वह हिन्दू वा तातारी था।

(ग) उक्तराजाकी चतुराईमे पीठ दिखाते ही मुसलमानोकी सेनाका दल जैसे ही गिरि सकटमे पहुंचा कि वैसे ही उन्होने इनका पीछा रोककर इनके जानेका मार्ग एकबार ही बद करदिया। अब्दुल्ला महा विपत्तिमे पडा, उसने अपने उद्धारका कोई उपाय न देखा तब सात लाख दिरम नाम मुद्रा देकर छुटकारा पाया। ७८ हिजरी साल अर्थात् ६९७ईसवीमे यह घटना हुई थी, इसके पीछे और जो घटना हुई उनसे जाना जाता हैं कि गजके पिता रज इस घटनाके नेता थे।फिर भी लिखा गया है कि–

"अब्दुला और अब्दुलरहमानने चालीस सहस्र सेना लेकर सीस्तान पर चढ़ाई की यद्यपि काबुलके राजाने छलका विस्तार किया था, परन्तु इस वार मुसल्मानोने उसके उस चातुरी जालको—

(क) हमने श्रीमद्भागवतसे पहिले ही वर्णन किया हैं कि वज्रके पुत्र, प्रतिबाहु, उनके शांतसेन, शातसेनके पुत्र शतसेन हुए। यदि हम यह स्थिर करले कि भट्टियोंके इतिहास लेखकने भ्रममे पडकर लिखा है कि वज्रके पुत्र नाभ नाभके प्रतिबाहु, प्रतिबाहुके बाहुबल, उनके पुत्र बाहु बाहुके पुत्र सुबाहु, सुबाहुके पुत्र रज, और रजके पुत्र गज हुए, और ऐसा होनेसे ही ग्रीकइतिहासके लेखक उक्तमतको हमारे पक्षमे समर्थन करते है। सुभगा सुन्दरीसे कदापि सोभागसेनका नाम नहीं हो सकता। हमे ऐसा बोध होता हैं कि शांतसेन वा भद्रसेनको ही ग्रीक गणोने सोफागसेनस् नामसे पुकारा है।

(ख) टाड् महोदयके इस अनुमानको हम बहुत अंशमे सत्य मानते है। टाड् साहबने जो भट्टी इतिहासदृष्टिसे जयसलमेरका इतिहास लिखा है, हमने उसकी बहुत खोज करी परन्तु वह नहीं मिला। यदि हमें वह मिलजाता तो हम जान सकते थे कि कर्नल टाड साहबने उस इतिहासके अनुवादके समयमें कुछ गडबड की है या नहीं। यह हमें विश्वास है कि यह गज ही शत_ सेन नामसे ख्यात् हुआ हैं। इसकी माताने स्वप्नमे गज उत्पन्न किया था, इसीसे इसका नाम जग रक्खा गया [अनु०]

(ग) हिन्दुओका नाम रितैल वा रितपैल कभी नहीं होसकता। तब फिर जो मूलबातको विकृतरूपसे लिखा हैं, यह स्वतन्त्र बात है [अनु०]

सेनाको साथ लिये आ गये है, और सम्पूर्ण प्रजा मारेभयके चारोओरको भागरही है। राजाने यथार्थ समाचार जाननेके लिये एक दूतको भेजा। और स्वयं आप भी शीघ्रता से सेना साथ ले शत्रुओको दमन करनेके लिये हरियू नामक स्थानपर जा पहुँचा। उस समय शत्रुओके दलने दो कोसकी दूरीपर कुंज शहरमे अपने डेरे डाले।

दोनो ओरसे भयकर युद्धकी अग्नि भडक उठी। आक्रमणकारी यवन इस युद्धमे तीस हजार सेनाके साथ विध्वस होकर परास्त होगये। हिन्दुओकी केवल चार हजार

—छिन्नभिन्न करदिया। मुसल्मानोने काबुलके बहुतसे स्थानोको जीतलिया और वहांकी समस्त धन सम्पत्ति लूटकर सीस्तानका ले आये। इससे हिजाज अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। अब्दुलरहमानने विभक्त होकर रितरेयेके साथ षड्यन्त्र किया, और वह हिजाज पर आक्रमणकर काबुलको कर देनेसे हटानेके लिये प्रवृत्त हुआ। अब्दुलरहमानकी मृत्युके उपरान्त मुगीरा खुरासानके अधिनायक हुए, और उसके पिता हलवने जहूके पार देशमे जाकर पेचिस रोगसे प्राण त्याग किये। उस देशके शासनका भार यजीदके हाथमे पड़ा।

खुरासानके शासनकर्त्ता मुगीरा जिस समय काबुलके हिन्दू राजाओके विरुद्ध युद्ध करनेको तैयार हुए, उस युद्धमे उनकी मृत्युका जो विवरण प्रकाशित हुआ है, उस घटनाके साथ जावली स्थान (जाबुलिस्तान) के नरपति रिकके साथ साम्राज्यकी अचानक मृत्युकी सादृश्यता देखीजाती है; इस समय यह मीमांसा स्थिर होती है कि मुसल्मानोंके प्रथम अभ्युदयके समय हिन्दू राजा इन देशोपर सर्वत्र शासनशक्ति चलाते थे और अन्तमे बहुत शताब्दियोतक फिर इन देशोको जय करनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। इसके प्रमाणके सम्बन्धमे बाबरने गजनीके विवरणमे लिखा है कि " मैने एक और इतिहासमे लिखा देखा है कि जब हिन्दुओके राजाने सुबुक्तगीनपर गजनीमे आक्रमण किया उस समय उसने कुएमें गोमास आदि अपवित्र वस्तुओके डालनेकी आज्ञा दी। उसके यह कहतेही हाड मासकी वर्षा होने लगी, और ऊपरसे बरफ पडने लगा आँधी आई, इस सुअवसरमे सुबुक्तगीनने शत्रुको परास्त किया।' बाबरने और भी लिखा है, "कि मैंने गजनीमे उस कुएके विषयमे अनेक बार पूछा, परन्तु किसी प्रकार भी मुझे उसका भेद न मिला (१८० पृष्ठ) बाबरने जब भारतवर्षको जय किया तब उसको हिन्दुओके आचार व्यवहार सब विदित होगये थे, उस समय वह अवश्य ही इस प्रवादके मूल कारणको प्रगट करनेमें समर्थ हुआ था, वह इस बातको भली भातिसे जानता था कि सुबुक्तगीनने केवल अपने शत्रुओको धर्मसंस्कारके कारणही जय किया था। जिस कुएका जल हिन्दू पीते हैं उसमे गोमास आदि अपवित्र वस्तुओके पडनेसे वह कभी उसके जलको अपने व्यवहारमे नहीं लावेंगे, यही विचार कर उसने ऐसा किया था, और इसी लिये हिन्दू युद्धभूमिसे भागगये। और ऐसे ही उपायोंसे विख्यात वह गण परास्त हुए थे।'

(१) उर्दू तर्जुमेमे यों लिखा है कि इस अरसेमें खबर आई कि समुद्रके किनारेसे म्लेच्छ, जिन्होंने पहिले बुखारा पर हमला किया था, फिर फरीदशाह खुरासानवालेकी सरदारीमें चार लाख सवार लिये हुये लडनेकी तैयारीसे चलेआते हैं।

(२) किसी मानचित्रमे भी उक्त दोनों नगरोंके नामका पता दिखाई नहीं देता. सरविलियम लिखते हैं कि "खुरासानमें कुंजरमार और याग्रसमें पिकर नामका नगर है।'

सेना युद्धमे मारी गई। फिर यवनोका दल वचीवचाई सेनाको साथ ले लड़नेको आया, नरेश्वर रजने इस समय भी पहिले ही की तरह अपने प्रवल बाहुवलसे समरसागरमे शत्रुओको परास्त करदिया, परन्तु इस समय उनका पुत्र गज पूर्व राज्यके राजा यदुभानुकी पुत्री हंसावर्तीके साथ विवाह करके स्त्रीके साथ इस रणभूमिमे आया था, नरनाथ रजने विपक्षियोके शस्त्रोके आघातसे क्षतविक्षत होकर प्राण त्याग किये। इसके ऊपरके दोनो संग्रामोमे ही खुरासानपति एकवार ही परास्त होगया, और अन्तमे उसने पौत्तलियोके राज्यमे कुरानका प्रचार होने और मोहम्मदियोकी व्यवस्थाके विधानको चलानेके लिये रूमके राजासे सेनाकी सहायता मॉगी। जिस समय इस प्रकारसे यवन लोग दलवलको जुटाकर अपना वल प्रवल करने लगे उस समयसे ही राजा गज मंत्रियोको बुलाकर इसका विचार करने लगे।

जिस देशमे यह समरानल प्रज्वलित हुई थी, उस देशमे कोई भी ऐसा वडा किला नही था कि जिस पर अगणित सेनाके विरुद्धमे खडे होकर संग्राम किया जाय, सवकी सम्मतिसे उत्तरकी ओरवाले पर्वतके ऊपर एक वडाभारी किला वनाया गया, राजा गजने इसकी सहायताके लिये अपने मित्रोको बुलाया और वह अपनी कुलदेवीकी उपासना करने लगे। देवीने राजासे कहा कि हिन्दुओंके शासनकी सामर्थ्य लोप होजायगी। परन्तु देवीने राजा गजको एक किला वनवाकर उसको गजनी नाम रखनेकी आज्ञा दी। जिस समय किला वनकर तैयारीपर आया उस समय राजा गजको समाचार मिला कि रूम और खुरासानके दोनो अधीश्वर अपनी सेना लेकर अत्यन्त निकट आगये है"।

रूमीपति खुरसानपति, हय गय पाखड़ पाय।
चिन्ता तेरे चित्त लगि, सुनियो यदुपतिराय॥

भट्टी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है, "कि राजा गज यदुपतिकी जयका डंका वजाने लगा, सेनाके व्यूहकी रचना करके स्वयं सजगया, उपहारके द्रव्य पात्रोमे दिये जाने लगे, और ज्योतिषियोको इस प्रकारसे शुभ मुहूर्त देखनेकी आज्ञा दी, उन्होने मूहूर्त देखकर कहदिया कि, इस शुभ मूहूर्तमे यात्रा करनेसे अवश्य विजय होगी"।

"माघ महीनेकी सुदि त्रयोदशी वृहस्पतिके दिन एक पहरके पीछे वह शुभ दिन था। उसी शुभ मूहूर्तमे शुभ यात्राकी सूचना देनेवाला वाजा वजने लगा। उस दिन महाराजने केवल आठ कोशपर ही जाकर अपने डेरे डालदिये, दोनो म्लेच्छ राजा भी अपनी २ सेनाको एकसाथमे मिलाकर आगे बढ़नेलगे, परन्तु उसी रात्रिको खुरासानपतिने उदररोगसे प्राण त्याग किये। जब रूमके राजा शाहसिकन्दर रूमीके पास यह समाचार भेजा गया, कि शाह सामेराजकी मृत्यु होगई है, तव उसने महा

(१) उर्दू टाड् राजस्थानके पेज २५७ मे यो लिखा है कि मशहूर मकामपलासी भी इसी तरकीवसे फतह हुआ था।

(२) उर्दू तर्जुमेमे शाहममरेज।

भयभीत होकर कहा, हम मरजाते तो अच्छा था, जिस समय इस महान् कल्पनाजालका विस्तार किया था उस समय भगवानने अन्य अभिप्रायसे न जाने हमें क्यो अलग कर दिया। परन्तु रूमीपति अत्यन्त भयभीत होकर भी प्रवल समुद्रकी तरंगके समान अपनी सेनाको साथ लेकर चला। हाथीकी पीठपर हौदा रक्खा गया, और शृंखलावद्ध मनुष्योके पैरोकी ध्वनिके कानमे पहुँचते ही चारोओर भयकर रणभेरी वजने लगी। सचल और अचलकी समान सेनादल चलने लगा, धूलिके उडनेसे आकाशमे अधकार छागया, उज्ज्वल शास्त्रोपर सूर्य भगवानकी उज्ज्वल किरणे पडकर उनकी शोभाको और भी उज्ज्वल करने लगी, जव दोनो पक्षकी सेनाका दल चार कोशपर पहुँच गया, तव राजा गज और उनके सामन्तोने कुल देवताकी पूजा करके योगिनियोको पीछे रक्षामे रखकर असीम साहसके साथ युद्धमे आगे गमन किया। क्रोधित हुए सिहकी समान प्रत्येक योद्धा परस्पर एक दूसरेपर आक्रमण करने लगे, पृथ्वी कंपायमान होगई, आकाशमे अंधकार छा गया, उस गंभीर अधकारमे वीरोकी उज्ज्वल तलवारोके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नही पड़ता था। समरका वटा वजने लगा, घोड़ोके विकट शव्दने रणक्षेत्रको कपायमान करदिया, भादोके महीनेकी अधेरी रात्रिके समान सेनाकी श्रेणी परस्पर एक दूसरेसे टकराने लगी, योधाओका सिहनाद चारोओर होने लगा, तलवारकी धारसे सैकडो वीरोके शरीर छिन्न भिन्न होकर पृथ्वीपर गिरने लगे और रुधिरकी नदी वह निकली। दोनो पक्षमे प्रवल युद्धकी अग्नि भडक उठी। रणभूमिके, एक प्रान्तमे यदुराय और दूसरी ओर खॉ और अमीर गणोने महावीरता प्रकाश करके अपने यशको उज्वल करदिया। प्रवल वलशाली वीरोके शवोसे युद्धभूमि ठसाठस भर गई। वीर अपने २ स्वामीके लिये असीम साहस करके प्राण त्याग करने लगे। अन्तमे हार मानकर शाहकी सेना भाग गई। उसमे की पच्चीस हजार सेना युद्धमे कट गई, वह हाथी और सिहासन तकको छोडकर प्राणोके भयसे भाग गए। उस भयानक रणभूमिमे केवल सात हजार हिन्दुओने अपने जीवनकी आहुति दी, शीघ्र ही हिन्दुओकी सेनामे विजयका डका वजने लगा और यदुवशी राजा जयलक्ष्मीका आलिगन कर गौरवके साथ अपनी राजधानीको लौट आये"।

महाराज गज इस प्रकारसे जय प्राप्त करके अपनी राजधानीमे आ राज-सिहासनपर विराजमान हुए। यदुवशियो (भट्टी) के इतिहासवेत्ताने लिखा है, कि धर्मराज युधिष्टिरके ३००८ सवत्मे वैशाख महीनेके तीसरे दिन रविवार रोहिणी नक्षत्रमे महाराज गज गजनीके सिहासनपर विराजमान हुए, और यदुवंशियोका शासन करने लगे।

उस जयप्राप्तिके कारण उनकी शासनशक्ति अत्यन्त ही प्रवल होगई उन्होने क्रम २ से सम्पूर्ण पश्चिमी देशोको जीतकर अतमे कश्मीरके राजा कदर्पकेलिको

(1) कर्नल टाडने इस नियुक्त समयको भी भ्रान्ति पूर्ण कहा है, हम कहसक्ते है कि इतिहास वेत्ताकी यह त्रुटि नहीं है।

अपने घरपर आनेके लिये कहला भेजा । परन्तु महाराज कंदर्पकेलिने उनकी उस आज्ञाको पालन नहीं किया, उन्होंने कहला भेजा कि रणभूमिमे विना परास्त हुए यदि सम्पूर्ण ब्रह्मांड भी मेरे ऊपर पतित होजाय तो भी मै दूसरे राजाके यहाँ नही जा सकता। राजा गज यह उत्तर सुनकर,अत्यन्त ही क्रोधित हुए और शीघ्र ही वह कश्मीर को विजय करनेकी इच्छासे चले । उन्होंने घोर युद्ध करके कश्मीरको विजय कर कंदर्पकेलिकी कन्याके साथ विवाह किया । उस रानीके गर्भसे राजा गजके शालिवाहन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ " ।

जब इन राजकुमारकी अवस्था वारह वर्षकी थी उस समय यह समाचार आया कि म्लेच्छगण फिर खुरासानसे युद्ध करनेके लिये चढे चले आरहे है । यह समाचार पाते ही राजा गज अपनी कुलदेवीके मंदिरमे जाकर इकला तीन दिनतक देवीकी उपासना करता रहा, चौथे दिन देवीने महाराज गजको दर्शन दिया और कहा कि तुम्हारे हाथसे शत्रुदल अवश्य ही गजनीको छीनलेगा, परन्तु समय आनेपर तुम्हारे वंशवाले फिर इस गजनीको अपने अधिकारमे करलेगे, पर हिन्दू स्वरूपसे नही वरन् मुसलमान होकर । देवीने राजा गजको एक और आज्ञा दी कि अपने पुत्र शालिवाहनको पूर्वदेशकी ओर हिन्दुओमे भेज दो, शालिवाहन वहाँ जाकर अपने नामसे नई राजधानी स्थापित करैगे । देवीने ओर भी कहा कि उसके पन्द्रह पुत्र उत्पन्न होगे और उस वंशका क्रमसे विस्तार होता रहैगा । यद्यपि आप गजनीकी रक्षाके समय रणक्षेत्रमे शयन करोगे, परन्तु परलोकमे आपको महान् गौरव देनेवाला पुरस्कार प्राप्त होगा ।

" महाराज गजने देवीके मुखसे यह भविष्य वार्ता सुनकर शीघ्र ही अपने कुटुम्बी और मित्रमंडलीको बुलाकर ज्वालामुखी तीर्थके दर्शन करनेका बहाना कर अपने पुत्र शालिवाहनके साथ सबको पूर्वदेशमे भेज दिया " ।

" कुछ कालमे ही शत्रुओंका दल गजनीसे पॉच कोश दूरी पर आ पहुंचा । राजा गज अपने चचा श्रीदेवको गजनीकी रक्षापर नियुक्त कर स्वय सेनाको साथ ले शत्रुओंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढे । खुरासानके अधीश्वरने अपनी सेनाको पॉच भागोमे विभक्त करके चारोओर रणकी अग्नि प्रज्वलित करदी, राजा गजने अपनी सेनाको तीन भागोमे विभक्त करके शत्रुदल पर आक्रमण किया, क्रमसे विभीषण समरने अत्यन्त भयंकर मूर्ति धारण की । अन्तमे रणभूमिमे खुरासानपति और राजा गज दोनो ही मारेगये । पॉच पहर तक यह सग्राम हुआ । इस युद्धमे एक लाख म्लेच्छ और तीस हजार हिन्दुओंके जीवनका बलिदान हुआ । खुरासान पतिके पुत्रने गजनी पर आक्रमण किया । श्रीदेवने तीस दिनतक प्रबल आक्रमण करके गजनीकी रक्षा की और अन्तमे जौहरकी किया, जिसमे नौ हजार वीर हिन्दुओंका सहार हुआ ।

---

(१) ज्वालामुखी हिन्दुओंका पवित्र तीर्थ कहागया है । यह शिवलोक पर्वतपर स्थित है ।

(२) जौहर वा जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पाठक गणोंने प्रथम काण्डमे यथास्थान,देखा होगा।

हमारे स्वदेशी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि जब यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद शालिवाहनतक पहुँचा, तब वह महा शोकसमुद्रमे मग्न होकर बारह दिनतक पृथ्वीपर सोये । और अन्तमे उन्होने पंजाबमे आकर नद नदी और तड़ाग आदिसे पूर्ण एक देशमे सबको इकट्ठा किया और नवीन राजधानी स्थापित करनेके उपरान्त अपने नामके अनुसार उस नगरीका नाम शालिवाहनपुर रक्खा । उनकी नवीन राजधानीके चारोओरके आदिभूमिहारोने आकर उनको अपना अधीश्वर स्वीकार किया । महाराज विक्रमादित्यके प्रचलित किये संवत ७२ के भादोके महीनेकी अष्टमी रविवारके दिन शालिवाहनपुर नामक राजधानी प्रतिष्टित हुई थी।

" शालिवाहनने समस्त पंजाबके देशोको एक २ करके जीतलिया । उसके औरस से पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए, और सभीको राज्यपदपर अभिषेक हुआ, उनमे तेरहके नाम इस प्रकार है-

१-बालचन्द ।	७-लेख ।
२-रसाल ।	८-जसकर्ण ।
३-धर्माङ्गद ।	९-नीमा ।
४-बच्छ ।	१०-मात ।
५-रूपा ।	११-नेपक ।
६-सुन्दर ।	१२-गांगेव ।

१३---जगेव ।

इन सभोने अपने बाहुबलसे एक २ स्वाधीन राज्य स्थापित कर अपनी २ शासन शक्तिका विस्तार किया ।

देशीय इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है, " बालन्दके युवा होते ही दिल्लीके अधीश्वर तवरवंशी जयपालने अपनी कन्याके साथ बालदका विवाह करदेनेके लिये प्रचलित-रीतिके अनुसार नारियल भेज दिया, उसे बालन्दने आदर सहित ग्रहण किया । बालन्द

---

(१) कर्नल टाड् साहब अपने टीकेमे लिखते है कि, गजनीसे भागे हुए शेष यदुवंशी राजाके पञ्जाबमे इस शालिवाहनपुरके स्थापनके समय ७२ शकाब्दी अथवा १६ ईसवी निर्धारित होती है। शालिवाहनपुर पञ्जाबके ठीक किस स्थानमे था, उसका हम निश्चित निर्द्धारण करनेका कोई उपाय भी नहीं देखते, किन्तु ऐसा बोध होता है कि वह लाहौरके अत्यन्त निकट था ।

(२) टाड् साहब अपने टीकेमे लिखते है कि इतिहासवेत्ताने प्राचीन और परिवर्ती घटनाको गोलमाल करके एक जगह मिला दिया है। उन्होने कहा है कि इतिहास लेखक धारा वाहिक वृत्तान्तको इतिवृत्तमें न लिख सके । उनका कथन है कि दिल्लीके राजाका नाम जयपाल हो सकता है, परन्तु तूंवार राजवंश कारिकाओंकी ओर दृष्टि करनेसे शालिवाहनके [illegible] नामवाला कोई भी दिल्लीका राजा नहीं था । टाड्का दूसरा मत यह है कि शालि[illegible] सम्बन्ध पञ्जाबमे न आकर उससे और भी पीछे आये थे ।

दिल्लीपतिकी बेटीके साथ पाणिग्रहणके लिये बड़े समारोहके साथ गये । महाराज जयपालने आगे बढकर उनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करनेमे किसी प्रकारकी कसर न की। बालन्द नवविवाहिता वधूके साथ शालिवाहनपुरमे आये, महाराज शालिवाहनने अपने पिताकी मृत्युका बदला लेनेके लिये तथा शत्रुदलसे गजनीको अपने अधिकारमे करनेके अभिप्रायसे सेना सजायी। और शीघ्र ही वीरसाजसे सुसज्जित होकर उन्होने म्लेच्छोका संहार और गजनीका उद्धार करनेके लिये अटक नदीके पार होकर शत्रुपक्षके नेता जलाल की बीस हजार सेनाके विरुद्ध रणभूमिमे दर्शन दिया, इस समरमे सम्पूर्ण म्लेच्छ मारेगये । महाराज शालिवाहनने जयलक्ष्मीका आलिंगन करके गर्वके साथ अपने पिताकी राजधानी गजनीको फिर अपने हस्तगत करलिया। कुछ समयतक गजनीमे रहकर अन्तमे महाराज शालिवाहन अपने बड़े पुत्र बालन्दको राज्यशासनका भार अर्पण करके आप अपनी राजधानी पंजाबको लौट आये। परन्तु अब उन्हे अधिक समयतक इस संसारमे रहना नही बदा था, शीघ्र ही उनकी मृत्यु होगई। महाराज शालिवाहनने तेतीस वर्ष और नौ महीने तक राज्यछत्र धारण किया था ।

"पिताकी मृत्युके उपरान्त बालन्द राज्यपर अभिषिक्त हुए। उनके अन्य भाइयोने इस समय पंजाबके सम्पूर्ण पर्वती देशोमे स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था। परन्तु इस समय म्लेच्छ फिर प्रबल होगये। उन्होने फिर अपने आधिपत्यका विस्तार कर विशेष यत्नपूर्वक गजनीके चारो ओरके स्थानोको अपने अधिकारमे करलिया। इस समय बालन्दका कोई भी प्रधान मंत्री नही था, वह इकले ही समस्त राज्यके विभागोकी देखभाल करते थे, उनके सात पुत्र उत्पन्न हुए ।

१—भट्टी ।	४—झंझे ।
२—भूपति ।	५—सहराव ।
३—कल्लूराव ।	६—भैसडेच ।
७—मगरेव ।	

बालन्दके दूसरे पुत्र भूपतिके औरससे चाकेता नामवाले एक पुत्रने जन्म लिया। उससे चाकेता जातिकी उत्पत्ति हुई"।

"चाकेताके औरससे निम्नलिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए,"।

१—देवसी ।	५—जयपाल ।
२—भैरो ।	६—धरसी ।
३—क्षेमकर्ण ।	७—विजली खान ।
४—नाहर ।	८—साहसमन्द ।

---

(१) ग्रन्थकार कहते है कि बाबरने यदुवंशसे उत्पन्न यदुगिरिकी जिस जनजूही जाति का उल्लेख किया है वही जोहियाया जदू जाति है, यह झंझ जोहिया जदू जातिके आदि पुरुष है ।

"वालन्द अपने पौत्र चकेताके हाथमे गजनीके शासनका भार अर्पण करके शालिवाहनपुरमें लौट आया, परन्तु इस समय म्लेच्छ इतने प्रवल होगये थे और उनकी सख्या भी क्रम से इतनी बढ गई थी कि जिससे चाकितोने उन म्लेच्छोकी सेनाको अपनी सेनामे युक्त करलिया, और कितने ही म्लेच्छोको सामन्तोके पदपर भी वरण किया, उस म्लेच्छ सामन्तमंडली और सारी सेनाने महाराज चाकेतोके सम्मुख यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि यदि आप अपने पिताके धर्मको छोड दे तो हम आपको वलखवुखाराकी गद्दीपर विठलावेगे। उस देशमे केवल उजवक जाति ही निवास करती थी, और वहाँके राजाके कोई पुत्र भी न था। केवल एक परम सुन्दरी कन्या थी"। चकेताने उसी लालचमे आकर वलखवुखारेके अधिपतिकी कन्याके साथ पाणिग्रहण किया, और अन्तमे यहाँके अधीश्वर पद पर अभिषिक्त हो अट्ठाइ हजार अश्वारोही सेना अपने अधीनमे की। वाल्हीक (वलखवुखारा) इन दोनो राज्योके वीचमे एक स्रोतस्वती नदी वहती थी। चकेता उस वाल्हीक (वलख) स्थानसे लेकर भारतप्रदेशके मार्गतक सुविस्तृत राज्यके अधीश्वर हो गये। उस चाकितोसे ही चगत्ता मुगलजातिकी उत्पत्ति हुई है"।

"वालन्दके तीसरे पुत्र कलूरावके आठ पुत्र उत्पन्न हुए, उनके वंशधर कलर नामसे विदित है। उनके नाम इस भाँति है,-

१-श्योदास।	५-समोह।
२-रामदास।	६-गगू।
३-अस्सो।	७-जस्सू।
४-किसतन।	८-भागू"।

इन सभीने मुसल्मान धर्मको धारण किया, इस सम्प्रदायकी सख्या अधिक थी, यह नदीके पश्चिमी तीरपर स्थित पहाडी देशमे निवास करते थे और कालान्तरसे यही नामसे विख्यात हुए"।

"चौथे पुत्र झुझके औरससे सात पुत्र उत्पन्न हुए,-

---

(१) कर्नल टाडने लिखा है कि "प्राचीन भारतके सिदियन यदुवंशियोंके राजाने इसी स्थान पर मुसल्मान धर्मको स्वीकार किया है, इस समाचारमें कुछ संदेह करनेकी आवश्यकता नहीं है, कि मुसल्मान इतिहासवेत्ताओंका मत है कि चाकितोंके नेता तमृचीन जो चगेजखा नामसे विदित है उसे पौत्तलिक कहा है और मुहम्मदख्वारजमके पिता तकशका भी ऐसा ही वृत्तान्त लिखा है। उनमे एकको जट वा जृति जातीय और दूसरेको ताक वा तक्षक जाति लिखा है। दोनोंसे ही एशियाकी दो प्रधान जातिया उत्पन्न हुई है।"

(२) टाड महोदय लिखते है कि यह पहिले ही कहा जा चुका है कि वाल्न्दके पन्द्रह भाइयोंने पजाबके पर्वती देशोंमे अपना राज्य स्थापित किया, और उनके पुत्रोने सिन्धुनदीके पश्चिम (दामान) मे अपने राज्यका विस्तार किया। सम्पूर्ण अफगानजाति नियून अर्थात यहूदी वंशसे उत्पन्न हुई है ऐसा अनुमान होता है, उनमे सर्व साधारणका [illegible] चलता है। और—

१–चम्पू ।	४–हसा ।
२–गोकुल ।	५–भांदो ।
३–मेवराज ।	६–रामू ।

७–जग्गू ।

"इनके वंशधर झुंज नामसे पुकारे गये, और इसीसे अन्यान्य पुत्र भी भिन्न जातिके नेता हुए"।

"बालन्दके ज्येष्ट कुमार भट्टी अपने पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। भट्टीने अपने प्रबल पराक्रम और बाहुबलसे इकले ही चौदह राजाओंको जीतकर उनकी सारी धनसम्पत्ति अपने अधिकारमे करली, उनके धनका परिमाण इतना था कि चौबीस हज़ार खच्चरोंपर चला करता था। ६० हजार अश्वारोही और अगणित पैदल सेना उनके आधीनमे थी। महाराज भट्टीने सिंहासनपर बैठते ही अपनी सम्पूर्ण सेनाको लाहौरमे इकट्ठा करके कनकपुरके राजा वीरभानु बघेलके विरुद्ध युद्धकरनेकी तैयारी की। शीघ्र ही कनकपुरमे भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, और उस रणक्षेत्रमे वीरभानुकी चालीस हजार सेनाका नाश हुआ।

"भट्टीके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम मंगल राव और दूसरेका नाम मसूर वा महीसूर राव था। इन महावीर भट्टीसे ही भट्टी वंशका नाम चला। सैकडो वर्षसे यह वंश यदुवंशियोंके नामसे विख्यात था, परन्तु इस समयसे अब भट्टीवंश लोक प्रसिद्ध हुआ।

"भट्टीकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र मंगलराव पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। परन्तु यह अपने पिताकी समान भाग्यशाली नहीं थे। इसी समयमे गजनीके अधीश्वर धुन्धीने अपनी अगणित सेना ले शीघ्र लाहौरपर आक्रमण किया। परन्तु मंगल रावने उन म्लेच्छोंकी सेनाके विरुद्ध युद्धकी तैयारी नहीं की और अपने बडे पुत्रको लेकर वह नदीके

—जो अफगान इस समय शालिवाहनके वंशधरोंके द्वारा अधिकारके देशोंमें निवास करते है, वे भी संभव है कि यदुवंशी हों। उन्होने मुसलमान धर्ममे दीक्षित होकर अपने प्राचीन वंशके गौरवकी रक्षाके लिये यदु शब्दको यहूदी शब्दमे बदलकर अपनी जातिका शेष विवरण कुरानसे ले लिया है, अफगानियोंका प्रधान वंश यूसुफजई अर्थात् यूसुफके वंशवाले विख्यात है, और काबुल और गजनी देशमे उनका आदि निवासस्थान है और आजतक उनके एक सम्प्रदायका नाम जादून रक्खा है बालन्दके वंशधरोंने सिन्धुनदीके पूर्वप्रान्तकी और पहाड़ी देशको विजय किया था, वह आजतक उसी देशमे निवास करते है। अफगान यहूदी नहीं है, वह यदुवंशी है यह हमे प्रमाण मिला है और वह वास्तवमे माननीय भी है।

(१) देशीय इतिहासवेत्ताकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि लाहौर और शालिवाहनपुर एकही राजधानीका नाम था, परन्तु पीछे जाना गया कि यह दोनो नगर एक नहीं थे उस समय यह दोनो नगर पास पास थे, शालिवाहनपुर वा शालपुर पञ्जाबके किस स्थानमे था, इसका निश्चय नहीं हो सकता, टाड् साहबने ऐसा अनुमान किया है कि प्राचीन नगरोंके विध्वंस होनेके पीछे ही उसके ऊपर यह शालिवाहनपुर बनाया गया था।

तीरवाले वनमे भागगये । शालिवाहनपुरके जिन स्थानोमे राजाका कुटुम्ब रहता था उन्हे शत्रुदलने जा घेरा, परन्तु महीसुर राव वहॉसे भी भागकर लक्खा जगलमे जा रहे । लक्खी जंगलमे केवल किसानलोग ही रहते थे, इस कारण महीसुर रावने बडी सरलतासे उन्हे पराधीनताकी शृंखलमे बॉधकर वही अपना राज्य जमाया महीसुर रावके दो पुत्र उत्पन्न हुए उनमे एकका नाम अभयराव और दूसरेका नाम शारण राव था । वड़े अभय रावने अपने बाहुबलसे समस्त लक्खी जगलके देशोमे अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया । उस समय उनके वंशकी सख्या बढने लगी, और वे आभोरिया भट्टी नामसे विदित हुए । शारण अपने भतीजेसे झगडा करके अन्य स्थानपर चलागया और वहॉ उसके वंशधर समयानुसार कृषकश्रेणीमे गिनेगये । वह सर्वसाधारणमे शारण नामसे प्रसिद्ध हैं[1] ” ।

भट्टीके ज्येष्ठ पुत्र मगलराव जो म्लेच्छोके भयसे अपने पिताकी राजधानी शालिवाहनपुरको छोडकर भाग गये थे, उनके निम्नलिखित छ. पुत्र थे–

१–मडमराव ।	४–शिवराज ।
२–कलरसी ।	५–फूल ।
३–मूलराज ।	६–केवल ।

जिस समय मगल राव अपने पिताके राज्यसे भाग गए, उस समय उनके पुत्रोकी रक्षा प्रजाने स्वय गुप्तभावस की थी । तक्षक जातीय सतीदास[2] नामका

---

(१) कर्नल टाड् साहब बीकानेरके इतिहासमे लिखते है कि जाटोका वासस्थान कन्धार था । परन्तु जाट इस बातको स्वय कहते है कि वहॉ यदुवंशी रहते थे । इस समय किसकी बातपर विश्वास किया जाय ? यहॉ देशीय इतिहासवेत्ताओने प्रमाण दिये है कि शारणसे एक श्रेणीमे जाटोकी सृष्टि हुई हैं और वही यदुवशी है। कर्नल टाड् साहबने हजारो बार मध्य एशियाके जिस नामके साथ जाट जातिके नामकी सादृश्यता अनेक स्थानोमे दिखाई है कि जाटगण जट जातीय है । उन्होने केवल यत्किंचित् नामकी सादृश्यता देखकर ही इस प्रकारका विचित्र सिद्धान्त किया है, उन्होंने यहॉ लिखा है कि मैने सुना था कि बियाना और भरतपुरके जाट कन्धारसे आये थे और वही यदुवशी है, परंतु यह नहीं कह सकते कि शारणके वशधर क्यो जाट नामसे पुकारे गये, इसको हम कह सकते है कि शारण अवश्य ही अपने वडे भाईका कोई वडा अपराध करके समाजसे अलग हुआ था, और इसी कारणसे उसके वशवालोकी अवनति हुई ।

(२) इतिहासवेत्ता टाड महोदयने इस स्थान पर अपने टीकेमे लिखा है कि “ इस घटना मे एक जातिका उल्लेख पाया जाता है, और यदुवशियोके पजावके सिहासन पर बैठनेके सम्बन्ध मे यही एक अत्यन्त प्रयोजनीय बात जानने योग्य है । मैने इतिहासमे एक स्थानपर इस जातिका सक्षिप्त वृत्तान्त लिखा है, परन्तु उसे लिखनेके पीछे मैने टाकजातिकी प्राचीन राजधानीका उद्धार किया है, और [illegible] उसके मित्र तक्षशिलाकी राजधानीमे जो स्थान था उससे हमने अनुमान किया है कि [illegible] उस स्थानकी भी खोज कर ली है । पहिले मैने एक जातिका विवरण वर्णन किया था कि इस नगरका नाम किसी मनुष्यके नाम विशेषमे उत्पन्न नहीं हुआ । वहाके—

एक भूमिया था । जिसके पूर्वपुरुषगण, पुरातन भट्टिराजगणोके द्वारा सामर्थ्यहीन हो अत्यन्त दीनदशामे पडे थे। उसने पिताका प्राचीन बदला लेनेकी इच्छासे विजय पाये-हुए म्लेच्छराजसे प्रगट किया, कि मगल रावके कितने ही पुत्र और कुटुम्बके मनुष्य इसी नगरमे एक महाजनके घर रहते है । म्लेच्छराजने उनके यह वचन सुनकर शीघ्र ही अपनी सेनाको उसके साथ भेज दिया। सतीदास उस सेनाके साथ उक्त श्रीधर महाजनके घर गया और इसको पकड़कर राजाके सम्मुख ले आया। म्लेच्छराजने श्रीधरसे कहा "कि यदि तुम शालिवाहनके प्रत्येक राजकुमारको मेरे सम्मुख नही लाओगे तो याद रक्खो कि तुम्हारे कुटुम्बमे एकको भी जीता न छोड़ूंगा। इस पर महा भयभीत होकर महाजन श्रीधरने विनय करके म्लेच्छराजाके सम्मुख निवेदन किया कि "मेरे यहाँ राजाका एक पुत्र भी नही है । जो कई बालक मेरे यहाँ रहते है, वह एक भूमियाके पुत्र है। वह भूमिया मेरे ऋणसे बँधा हुआ इस युद्धके समय भागगया है। म्लेच्छराजने महाजनके इन वचनोपर किंचित् भी ध्यान नही दिया, और शीघ्र ही बालकोको अपने सम्मुख लानेकी आज्ञा दी । जब महाजन श्रीधरने देखा कि राजकुमारोके प्राणोकी रक्षाका और कोई उपाय नही है, तब उनके प्राणोकी रक्षा करनेके लिये वह म्लेच्छराजाकी आज्ञानुसार कार्य करनेमे सम्मत हुआ। शीघ्र ही यदुवंशी राजकुमार किसानके बालकके वेषमे म्लेच्छराजाके सम्मुख लायेगये, और म्लेच्छराजाने उनके साथ भूमिहारोंकी कन्याका विवाह करदिया। इस प्रकारसे शालिवाहनके वंशसे उत्पन्न सम्पूर्ण राजकुमार जो श्रीधरके घरमे थे, उनमे कलोरके पुत्र भी कलोरिया जाट, मुदराज और श्योराजके पुत्र मुंदाजत और शिवराजत नामसे विख्यात हुए। कुमार फूल और कुमार केवलाका नाई, और कुम्हारके पुत्र कहकर म्लेच्छराजाके सम्मुख परिचय दिया था, इस कारण उन दोनो जनोके वंशवाले उन दोनो श्रेणियोमे गिनेगये"।

भट्टी इतिहासलेखकने फिर लिखा है, कि "मंगल राव जिस गाडा नदीके किनारेके बनैळ देशोमे रहते थे, उन्होने पीछे उस नदीके पार होकर एक नवीन देशपर अधिकार करके उसने अपना अलग राज्य स्थापित किया इस

—अधीश्वर तक्षक वा नागवंशके राजा थे, इसीसे उक्त नाम हुआ है । पुस्तक बाबरीकी सहायतासे मै इसका उद्धार करनेको समर्थ हुआ हूं । बाबर तो देशकी सीमाके वर्णनमे बाबर लिखता है, कि "पश्चिममे एक जगल है जिसे बाजार या टाक भी कहते है" वहाँके राजाका ताक नाम भी है" इस कथाको अनुवादकने यहाँ मिलाकर कहा है कि "तक नगर बहुत समयसे दामानकी राजधानी था।" मि० एलफिन्स्टोनके मानचित्रमे जो बाजारताक नामक स्थान है जिसको बाबरने तक कहा है, वह बाजार ताक अटकसे कुछ ही कोश दूरीपर है । जो तक वा तक्षक अर्थात् नागवंश एक समयमे समस्त भारतवर्षमे विस्तारित हुआ था, निस्सन्देह यह नगर और नदीका नाम उसी तक्षकवंशके नामके अनुसार पडा है"।

समय वराहाजाति उस नदीके किनारे निवास करती थी। उनसे पहिले वहाँ बूत गणोके बूता राजपूत राजा थे। पुगलदेशके प्रमार गण धातदेशके सोढा जाति लुद्रदेशके लुद्रराजपूतगण निवास करते थे। मगलरावने इन राजाओके निकट आश्रय लिया और सोढा जातिके अधीश्वरोकी सम्मतिके अनुसार उन्होने लुद्र वराहा और सोढा जातिके मध्यस्थ भूखण्डोपर अपना वासस्थान वनाया। जव मगलरावकी मृत्यु होगई तव उनका पुत्र मडमराव पिताके पदपर विराजमान हुआ"।

मडमराव अपने पिताके साथ शालिवाहनपुर भाग आया था। धोरेके राजाओने उसको राजा मानकर उसके अभिषेकके समय महामूल्यवान् द्रव्य भेजे। अमरकोटके सोढा जातिके राजाने मंडमरावके करकमलमे अपनी कन्याको अर्पण करनेकी इच्छासे उसके पास यह समाचार कहला भेजा। मडमरावने तुरन्तही इस वातको स्वीकार करलिया, इस शुभ विवाहके समयमे अमरकोटकी राजधानीमे वडी धूमधाम हुई। मडम रावके औरससे तीन पुत्र उत्पन्न हुए,–

१–केहर।
२–मूलराज।
३–गोगली।

"केहर अमित तेजस्वी और असीम साहसी पुरुष था। एक समय आरोरसे कई सौ वाणिज द्रव्यसे भरे हुए घोडे मुलतानको जा रहे थे, उसने यह समाचार सुनते ही अपने कितने ही योधाओको ऊँटोके व्यापारियोका भेष धारण कराकर उस वणिक दलके पीछे भेजा, उन्होने वडी तीव्रतासे पञ्चनदके किनारे जाकर वणिकदलपर आक्रमणकर उनके सारे द्रव्योको लूट लिया, और फिर अपने स्थानको लौटआये। इस प्रकारकी छल चातुरीके कार्यसे उसका नाम सर्वत्र विख्यात् होगया। पीछे जालौरके

---

(१) वराहा जाति राजपूतोकी एक शाखा है। टाड् साहवने कहा है कि यही इस समय मुसलमान जातिमें गिने गये हैं।

(२) इस बूता राजपूत जातिका इस समय लोप होगया है।

(३) अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रमारजाति पुगलमे निवास करती आई है। स्मरणातीत कालमे अमरकोटके सोढाराजवश मरुक्षेत्रमे निवास करते आये हैं एलिफिन्सटनने जो सगढाजातिका उल्लेख किया है ऐसा वोध होता है कि वह जाती यही है।

(४) लुद्रभाका विवरण पीछे प्रकाश किया जायगा।

(५) [illegible]राजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उनके नाम यह है राजपाल, लोहवा, चूवर, वडे पुत्र राजपालके औरससे रेन्नू और गगू नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। रेन्नूसे निम्नलिखित पाँच पुत्रोने जन्म लिया, भोसर, पांगर, तुत्र, कलसू और जयपाल। उनके पुत्र भी एक २ सम्प्रदायके नेता हुए।

(६) टाड साहव टीकेमें लिखते है कि "सिन्धुनदीके ऊपर उपत्यकामे उस अत्यन्त प्राचीन राजधानीमें [illegible] ईसवीमे पासर मे परम आनन्दित हुआ। [illegible] जिस राजा श्रीधरकी राजधानी [illegible] लिया है, यह वही राजधानी है।

आलनसिह देवराने, मंडमरावके वयप्राप्त पुत्रोके निकट नारियल भेजा। विवाहका कार्य बड़े समारोहके साथ समाप्त होगया। विवाह होजानेके उपरान्त यह अपने स्थानको चले आये, केहरने अपनी कुलदेवी तन्नोमाताके नामसे एक किलेकी दीवार स्थापित की परन्तु किलेके विना तयार हुए ही मंडमरावकी मृत्यु होगई"।

केहर पिताके पदपर अभिषिक्त हुए। उनके राजसिंहासनपर बैठनेपर तनोट का किला वराहाजातिके अधीश्वर राज्यकी सीमामे बनाया गया है। यह कहकर वराहा-पति यशोरथ*ने सेना सहित तनोटपर आक्रमण किया। परन्तु मूलराजने बड़े विक्रमके साथ तनोटकी रक्षा करके अन्तमे वराहियोको परास्त करके भगादिया"।

अन्तमे यदुभट्टीके इतिहासवेत्ताने लिखा कि "७८७ संवत् ७३१ ईसवी मे माघमासकी पूर्णिमाको मगलवारके दिन तनोटका किला बनानेका कार्य समाप्त होगया, और देवी तनोमाताका एक पवित्रमंदिर वहाँ स्थापित हुआ। कुछ ही दिनोके उपरान्त वराहाराजके साथ संधि होगई। और उस संधिका यह फल हुआ कि मूलराजकी कन्याके साथ वराहापतिका विवाह होगया"।

मुरकामे यदुभाटियोकी राजधानी स्थापित होनेतक ही हम उनकी प्राचीन वंशख्यातिका वर्णन करना आवश्यक समझते है। यद्यपि एक सुविस्त्रित और विख्यात वंशका इतिहास इतर बहुत ही सक्षेपमे वर्णन किया गया है परन्तु इसके साथ ही साथ जो टीका टिप्पणी दिये गये है उनसे पाठकोको पूरी सहायता मिलना संभव है और वे इसीसे निम्नलिखित चार सिद्धान्तोपर अपना विचार स्थिर कर सकते है। एवं निम्नवातोका निश्चय कर सकते है।

प्रथम—यदुवंशियोके पूर्व पुरुष श्रीहरिसे उत्पन्न है।

द्वीतीय। जो यदुवशी भारतवर्षसे भाग गये, वा जिन्होने इच्छानुसार हरिकुल अथवा पांडवोके साथ भारतवर्षको छोडकर सिन्धुनदीके पश्चिम देशोको गमन किया उन्हीने मरुस्थलीमे उपवेशन स्थापन किया, गजनी राज्यकी प्रतिष्ठाकी और रूम और खुरासानके वादशाहोसे युद्ध किया।

तृतीय। वह लोग जाबुलिस्थानसे भाग गये णौर पंजाबमे उपनिवेश स्थापन किया, तथा उन्होने शालिवाहनपुर नामक नवीन राजधानी प्रति ष्ठित की।

चौथा।—उनका पंजाबसे भागना, मरुक्षेत्रके पर्वतके ऊपर विराजमान होना और तनोट दुर्गका बनाना।"

साधू टाड् साहबने उपरोक्त प्रकारसे इतिवृत्तको चार अशोमे विभक्त करके शेषमे

---

* (१) कर्नल टाड् साहबने लिखा है, "इससे ज्ञात होता है कि वराहाजाति (यदु) भट्टियोकी समान एक धर्मका अवलम्बन करती थी। इस घटनाके बहुत काल पीछे भी मुसलमानोने इस स्थानपर अपने अधिकारका विस्तार नहीं करपाया। —(२) उर्दू तर्जुमेमे जसरथ।

कहा है कि "इस यदुवशके आदि इतिहासको अन्यत्र विशदरूपसे समालोचना की गई है इस कारण इस वंशके आदिमे इत्तिवृत्तके स्थान पर अधिक समालोचना करनेकी आवश्यकता नहीं है। छिन्नभिन्न सत्य घटनाये और भौगोलिक प्रमाणोसे हम इस इतिहास का साधारणत विश्वास करते है, अर्थात यदुवंशी राजाओका एशियामे राज्य होना, और मुसल्मानोके अभ्युदयके साथही साथ उनका वहाँसे भागकर फिर भारतवर्षमे आना आदिमतोकी विशेष पुष्टि करते है। हम ग्रीक इतिहासवेत्ताओकी पुस्तकमे इस प्रकारके प्रत्यक्ष प्रमाण देखते है, कि ग्रीक वीर आन्टियोकस् इस देशके सोफागसेन नामक भारतसिदियन राजाके द्वारा मारे गये थे। इसीसे यदुवंशिओने सीरिया और वैक्ट्रियाके अधीश्वरके साथ युद्ध किया था। उसीसे कल्पना करके अनुमान करना होगा कि सुवाहु और उसके पुत्र गजसे इस नाम सोफागसेनसकी उत्पत्ति हुई है। और यह संभव भी हो सकता है क्योकि ग्रीक इतिहासमे यह भी प्रकाशित है कि गजनीके यदुवशी राजाओने खुरासानके राजाओके साथ युद्ध किया था।"

महात्मा टाड् महोदय फिर लिखते है "कि सेइस्तान और उपत्यकाके दोनो ओर आदि समयमे और एक शाखा वसती थी। सिन्दसंमावंश साम्वसे उत्पन्न है। और ग्रीक गणोने भी इस वशको साम्ब कहा है। और इसी वंशके एक राजाने अलिकजडर के भारतविजयके समय विपम विघ्न उपस्थित किया था, इस वशकी राजधानीका नाम साम्वका कोट वा सवनगरी था, और आजतक सिन्धुके किनारे वह नगरी विराजमान है, ग्रीक गणोने उसके नामको वदलकर मीनगढ नामसे उल्लेख किया है।"

इतिहासवेत्ताका अन्तमे यह कहना है कि चगत्ताई गण यदुवशसे उत्पन्न है, इस अनुमानका अत्यन्त प्रयोजन है। मेवारके राणा गणोके आदि पुरुष वापा रावने इसी प्रकार चित्तौरमे अपनी राजधानी स्थापित कर, वंशकी रक्षाके पीछे, मध्य भारतवर्षको छोडकर खुरासानको गमन किया था। इन प्रमाणोसे जाना जाता है कि

---

(१) कर्नल टाट साहवने राएल एसियाटिक सुसाइटीकी पुस्तकके तीसरे वालममे यदुवंशियोके इतिवृत्तकी समालोचना की है।

(२) इस भ्रमको हमने पहिले ही प्रगट करादिया है इस कारण उसका उल्लेख करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। [अनु०]

(३) कर्नल टाट महोदयने अपने टीकेमे लिखा है "मि० विलसन" को पोटालमी साहवके जुगराफियेमे सोगदियानाके भूवृत्तमे पाडु नाम मिला है और इवन हेकलके मतसे हिरात नगरको हरि नामसे कहा है।

इसके निकट मर्व वा मरुस्थली देश है। पाडु तथा हारिकुल भारतवर्षसे चलकर उक्त देश तथा मरुस्थलीमे चले गये। यदि इन दूर देशोमे खोज कीजाय तो बडी सरलतासे बहुतसे शिलालेख प्राप्त हो सकते है। समरकन्दके तोरणद्वार पर जो हमारी भाषामे वर्णबद्ध खोदी हुई लिपि है वह तथा [illegible] के देवमंदिर और बामियाकी गुहावलि तथा खोदी हुई अनुलिपि सभी अत्यन्त प्रयोजनीय और जानने योग्य बाते है"।

इतने दूरवर्ती देशोमे हिन्दूधर्म प्रचलित था, और मध्य भारतवर्ष तथा भारतवर्षमे गतिविधिसे वाणिज्यका व्यवसाय विलक्षणतासे चलता था। ट्रान्सकजियाना देश और पंजाब देशोमे इसके तत्वकी विशेष खोज करने और पुराने स्थानोकी खोज करनेमे नियुक्त होनेपर इस सबन्धमे अनेक आविष्कार पाये जा सकते है। शालिवाहनपुर कपिल्य नगरी, वहीरा, यदुका डाङ्गबूसी फालिया उसके सात नगर और तक्ष शिलाकी राजधानी पाई जा सकती है। खोज करनेवाले वनवासी अफ्रीकाके बदले यदि इन देशोकी खोजमे लिप्त होते तो, अनेक प्रयोजनीय ऐतिहासिक तत्व प्राप्त कर सकते थे, कारण कि यही स्थान सभ्यताकी जन्मभूमि है"।

द्वितीय अध्याय २.



खलीफा वलीदके समयमे राजा केहर, उनके वंशधरोंका भिन्नसम्प्रदायोका नता होना और पहिलेके समतलक्षेत्रमे अपना राज्य बढ़ाना–उसकी हत्या–तनुको उस पदकी प्राप्ति–बराहा और लङ्गा दोनो जातियो पर आक्रमण–मुलतानके राजासे तनोटका किला घेरा जाना, उसकी हार–बूताकी राजकुमारीसे राव तनुका विवाह-उसके पुत्र गण–तनुसे गुप्तधनका आविष्कार होना–बीझनोट दुर्गका निर्माण–तनुकी मृत्यु–विजैरावको उस पदका मिलना–भट्टियोंके अधिपतिपर आक्रमण करनेके निमित्त लंगा जातिके साथ बराहा जातिका षडयन्त्र और विजेरावका उनपर आक्रमण–विजैराव और उनके स्वजनोंको विश्वासघातसे मारना–एक ब्राह्मणसे देवराजकी जीवन रक्षा–तनोट अधिकार-वहांके निवासियोंको मारना–वतावत नामक स्थानमे अपनी मातासे देवराजका मिलना–देरावर बनाना और वता जातिके स्वामीका उसपर आक्रमणके समयमे बञ्चित होना, और देवराजसे उसका मारा जाना–एक योगीके साथ भट्टी राजाका मिलना और राजाका उसकी शिष्यता स्वीकार करना–रावसे रावल उपाधिका बदला जाना–देवराजसे लगाहोका मारा जाना, और उनका देवराजका आश्रय लेना–लगाजातिका इतिहास–देवराजका लुप्त राजपूतोकी राजधानी लुद्रवापर अधिकारकरके राजासे बदला लेना–स्वदेश हितैषिताका उत्कृष्ट प्रमाण-धारपर आक्रमण–लुद्रवामे फिर आना–खडाल नामक स्थानमे हौद खुदाना–उनकी हत्या–रावलमधको पिताका सिंहासन मिलना–पिताकी मृत्युका बदला लेना–उनके पुत्र वाछका अनहलवाडा पत्तनके वल्लभसेनकी लडकीसे विवाह होना–गजनीके मह म्मदके सामयिक राजगण–वोडोको तितर बितर करना–यो भट्टी गणोसे मुगलके जोहियोका हारना–दुस्सजका खीचियोपर आक्रमण–उसका तीन भाइयोके साथ खेड प्रदेशमे जाना और गिहलौत राजाकी कन्याके साथ विवाह होना–वाछू रावकी मृत्यु-दुस्सजका सिंहासनपर बैठना–सोढा जातिके राजा हमीरका आक्रमण करना–हमीरके शासन समयमे मरुक्षेत्रमे कागार नदीका प्रवाह रुकना–जनप्रवाद–दुस्सजके पुत्रगण–कनिष्ट कुमार लाझाविजय रावका अनहलवाडाके राजा सिद्धराज सोलंकीकी कन्यासे विवाह–दुस्सजके अन्यान्य पुत्र गण-जयसल और विजेराव-लाझाविजयरावके पुत्र भोजदेवके दुस्सजके मरजानेपर लुद्रवाका सिंहासन मिलना अपने भतीजे-भोजदेवके विरुद्ध जयसलका षड्यत्र–गोरके सुलतानसे सहायता मागना और

अरोट नामक स्थानमे उसके साथ मिलना–सुलतानके साथ मित्रतामूलक शपथ करना–भोजदेवको सिहासनसे हटानेके लिय महम्मदसे सहायता पाना–लुद्रवा पर आक्रमण और लूट लेना–भोजदेवकी हत्या जयसलसे भाटियोंको रावल पद मिलना–लुद्रवा प्रदेशको छोडना–नूतन राजधानीकीप्रतिष्ठाका पूर्व आयोजन–ब्रह्मसरकुंडकी दैव अनुलिपि–जयसलमेर राजधानीकी प्रतिष्ठा–जयसलकी मृत्यु–और दसरे शालिवाहनका सिंहासनपर बैठना ।

" पूर्वअध्यायमे जिन २ भिन्न घटनाओका वर्णन हुआ है उन सवमे जो जो तारीख और सन् दी हुई है विचार करनेसे उनमे संदेह होता है परन्तु अव अन्तमे हम इस समय भट्टीजातिके इतिहासका सम्पूर्णत: विश्वास करने योग्य वृत्तान्त प्रकाश करनेमे प्रवृत्त होते है । गजनीके यदुवशी राजाने युधिष्ठिरके ३००८ वर्ष पीछे रूम और खुरासानके अधीश्वरोंको परास्त किया था, । हम इस निश्चय की हुई अवधिको सत्य नहीं स्वीकार करते और ७२ वी विक्रमाव्दीमे शालिवाहनने अपने कुटुम्बियोके साथ जावुली स्थानसे भागकर पजावमे निवास किया हम इसका भी विश्वास नहीं करते, । परन्तु मरुक्षेत्रमे यदु भट्टियोंके उपनिवेश स्थापन, और सवत ७८७ (७३१ ई०) मे उनकी प्रथम शासनशक्तिके विस्तारके प्रमाणस्वरूप तनोट

---

(१) बादशाह बावरने लिखा है कि भारतवर्षके निवासी सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमाके बाहर स्थित समस्त भूखण्डको खुरासान कहते थे ।

(२) कर्नल टाड महोदयने टीकेमे लिखा है " यद्यपि ग्यारहसौं वर्षके वीतजानेपर भट्टीगण पंजावसे भाग गये थे, और शालिवाहनके उत्तराधिकारियोंकी उक्त स्थानके त्यागनेके पीछे धर्म, भाषा इत्यादिका अदलवदल होगया था, परन्तु आजतक उक्त देशोंमे भौगोलिक ऐसे अनेक प्रमाण विराजमान है कि भट्टियोंका वहा अधिकार रहना प्रमाणित होता है, जहापर शालिवाहनपुर था हम उसका अनुसंधान करें तो वहा " भट्टिकापिंडि" और भट्टिकाचक्र इत्यादि देख सकेंगे ।–और एलफिस्टोनके मानचित्रको भी देख लेंगे ।

(३) हम साधु टाड् महोदयकी उस उक्तिको किसी प्रकार नहीं मान सकते। हमारे स्वदेशी भट्टी इतिहास लेखक जब कि यदुवंशियोंके इतिहासमें, सन, तारीख, महीना, वार, तिथि और नक्षत्रोतकको लिख गये है, तब उनकी उक्ति किस प्रकारसे अविश्वास करनेके योग्य होसकती है । हमारे देशके प्रचलित युग और सम्वत्के सम्बन्धमे पश्चिमी पंडितोको ऐसा विश्वास नहीं है, यह सभीको विदित है । और इसका अनुमान भी सरलतासे हो सकता है कि कर्नल टाड्ने जिन [illegible] वश भट्टि इतिहास लेखकोंके लिखे हुए इतिहासके पहिले अंशमे सन् और तारीखका विचार नहीं किया । हमारे देशमे चिरकालसे भी पहिले अनेक समयमें अनेक भांतिके [illegible] सन्, और शाके इत्यादि प्रचलित होते आये है, और उन २ सन्, संवत् वा शाकेका [illegible] वा राज्यके बदलने कारण लोप होता चला आया है, और उनके स्थानोंमे नया संवत दिखाई पड़ता है, इस अवस्थामें यदुभट्टियोंके इतिहासलेखकने जिन सवतोंका उल्लेख किया है, यदि वह [illegible] सवतरूपसे प्रचलित रहते तो उनके मतमें हम अपने मतको प्रकाश करनेमें समर्थ होसकते । पर युधिष्ठिरके सवतमें किसी प्रकारकी शंका नहीं है, टाड् साहबने इसी कारणसे [illegible] दूसरे अंग्रेजोंके माने वंश तथा उनकी सृष्टिके वर्षोकी आधुनि[illegible] [illegible] ।

दुर्गके बनानेका जो समय निर्द्धारित हुआ है, वह इस इतिहासका प्रमाण अनेक स्थानोमे सन्देहसे रहित प्रमाणित हुआ है "।

भाटी जातिके इतिहासमे जिस केहरका नाम विशेप प्रसिद्ध दिखाई पड़ता है और जिसके असीम साहस और वीरताका वर्णन पहिले हुआ है, वह अवश्यही प्रसिद्ध खलीफा वलीदका समकालीन था। सबसे पाहिले भारतभूमिमे उसने ही अपना अधिकार किया। और उत्तरसिन्धुके देशोमे अटरोड नगरमें उसने ही सबसे प्रथम अपनी राजधानी स्थापित की "।

"कर्नल टाड् साहबने जिस यदुभट्टी इतिहासलेखकके ग्रन्थसे भट्टीवंशके परवर्त्ती इतिहासको उद्धृत किया है, उस इतिहासमे यह प्रकाशित कियागया है कि केहरके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, तनूउतेराव, चहा, खाफरिया आथहीन इन सभीके पुत्र उत्पन्न हुऐ और वह अपने २ पिताकी उपाधिके साथ एक एक सम्प्रदायके नेता हुए। यह सभी वीर योधा थे, और इन्होने चन्नराजपूतोके अधिकारी बहुतसे देशोको जीतलिया। राजपूतोने इसी लिये केहरके साथ विलक्षणतासे इसका बदला लिया कि, जिस समय केहर शिकार खेलनेमे रत थे, उसी समय इन्होने इनके प्राणोका नाश किया।"

केहरकी मृत्युके उपरान्त तन्नू पिताके पदपर अभिषिक्त हुए। उन्होने अपने प्रबल पराक्रमके साथ वराहा जाति और मुलतानकी लगा जातिके अधिकारी देशोपर चढाई करके उनको विध्वस करदिया, परन्तु हुसेन शाह लोहेका वख्तर पहिनकर लंगोंके साथ दूदी, खींची खोकर, मुगल, जोहिया, जूद और सैद जातिके दश

(१) उतेरावके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, सुरना, सेहसी, जीवा, चाको और अजो। इनके वंशधर साधारणतासे उतेराव नामसे पुकारे जाते हैं।

(२) चन्न जाति इस समय लुप्त होगई है।

(३) टाड् महोदय अपने टीकेमे लिखते है "कि यह हिन्दू सिदियन जाति पशुओके नामसे भी पुकारी गई है जैसे—वराह शब्दका अर्थ शूकर है, और नूमारि शब्दका लोमडी; तक्षक शब्दका अर्थ सर्प है, अश्व शब्दका अर्थ घोड़ा है।" हमारे स्वजाति पाठकोको पुराणादिसे इनके नामोकी उत्पत्तिका कारण भलीभांतिसे विदित होसकता है।

(४) कर्नल टाड् महोदय लिखते है कि "लंगा गण अग्निकुलकी चार प्रधान शाखाओमे सोलंकी राजपूतोकी शाखासे उत्पन्न है। यह पीछे मुसल्मान होगये। और ऐसा भी संभव है कि वह लोग सिन्धुनदीके पश्चिम ओर गलमान देशमे रहते थे।"

(५) बादशाह बाबरने भारतपर अधिकार करनेके समय मार्गमे जिन जातियोके साथ साक्षात् किया था, उसने उन सभीके नामोका उल्लेख किया गया है। परन्तु उसने दूदी जातिके नामको नहीं लिखा। शायद डोड हो।

(६) खींची जातिको भट्टी कविने लिखा है कि खिची जाति उत्तर प्रान्तमे रहनेवाली थी, और सिन्धु सागर अर्थात् पंजाबके दोआवेके बीचमे एक देश उनके अधिकारमें था।

(७) टाड् साहबने कहा है कि "यह भी सम्भव होसकता है कि यह खोकर जाति ही गक्कट जाति थी। बाबरने उसे घोकर लिखा है"।

हज़ार अश्वारोही वीरोंको साथ ले यादवों पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढा। इसके वराहा राज्यमे पहुँचते ही वराहा जातिने इसके साथ सम्मति की, और सभोंने वहाँ डेरे डाल दिये। वीर श्रेष्ठ तनूको असीम साहस और वलके साथ आया हुआ देखकर विजातीय गण अपने २ स्वजातियोंको इकट्ठा करके अपनी रक्षाकी तैयारी करने लगे। क्रमानुसार चार दिनतक यदुवशपति तनूने अतुल पराक्रमके साथ अपनी रक्षा की। और पाँचवे दिन अपने रोके हुए किलेके द्वारको खोलदेनेकी आज्ञा दी। इनकी आज्ञानुसार किलेका द्वार खोल दिया गया। और वह अपने प्राणप्यारे पुत्र वीर विजैरावके साथ नंगी तलवारे हाथमे ले म्लेच्छोंके विरुद्ध सम्पूर्ण यादवोंकी सेना सहित शत्रुके सम्मुख हुआ। यदुवंशी क्षत्री वीरोंके प्रवल पराक्रमसे शीघ्र ही शत्रु परास्त होगये। सबसे पहिले वराहा जाति भाग गई, और उसके पीछे अन्य म्लेच्छ गण युद्धमे भगा डाले चारोओरको भाग गये। रणमे जय प्राप्त कर तनूने शत्रुओंके डेरोंपर चढ़ाई कर उनके धन रत्नोंको लूट लिया। मुलतान और लंगहोंकी सेना जब परास्त होकर भाग गई तब बूतावानके बूता राजपूतोंके अधीश्वर जीजूने महाराज तनूजीके पास नारियल भेजा। और यह विवाह हो जानेके पीछे तनूजीकी मुलतानके अधीश्वरके साथ संधि होकर मित्रता होगई।"

तनूके औरससे निम्नलिखित पाँच पुत्र उत्पन्न हुए,–

१–विजैराव।	३–जयतुंग।
२–मुकुर।	४–आलन।

५–राखेचा।

"दूसरे कुमार मुकुरके औरससे माहपाने जन्म लिया. माहपाके औरससे महोला और दिकाउ उत्पन्न हुए। इस दिकाउने अपने नामसे एक विख्यात् ह्रद खुदवाया था, उसीके वंशधर सुतार हुए, और आजतक वह मुकुर सुतार नामसे पुकारे जाते है।"

"तीसरे पुत्र जयतुंगके रत्नसी और चोहर नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए। रत्नसी बहुत प्राचीन समयके विध्वंस हुए वीकमपुर नगरमे जाकर रहे। और चोहरके कोला और गिरिराज नामवाले दो पुत्र हुए, इन दोनोंने कोलासर और गिरराजसर नामके दो स्वतन्त्र नगर प्रतिष्ठित किये।"

"चौथे पुत्र आलनके औरससे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए।"

१–देवसी।	३–भवानी।
२–त्रिपाल।	४–राकेचो।

(१) मुकुरके आगे पुत्रोंकी गणना राजपूतोंमे नहीं हुई, उनकी गणना माताओंके वर्णानुसार हुई थी।

"देवसीके वंशवाले रेवारी अर्थात् उष्ट्रपालक हुए, और राकेचोके उत्तराधिकारी वणिक हुए, और उनकी गणना इस समय ओसवाल जातिमे हुई।

"तनूको विजासनी देवीकी कृपासे एक स्थान पर बहुत सा गुप्त धन मिला, उसने उसी धनसे एक बड़ा भारी किला बनाया और उसका नाम विजनोट रक्खा, और उसी किलेमे उन्होने संवत् ८१३ (७५७ ई०) के माघमासकी त्रयोदशी तिथि रोहिणी नक्षत्रमे देवीकी मूर्ति स्थापित की और वह अस्सी वर्षतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य करके स्वर्गको चलेगये"।

देशी इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "विजयरावजी सम्वत् ८७० सन् ८१४ ईस्वीमे पिताके राज्यपर विराजमान हुए थे, उन्होने राज्यसिहासनपर बैठकर अपनी जातिकी प्राचीन शत्रु वराह (वरहा) जातिके साथ युद्ध करनेका प्रस्ताव किया, और शीघ्र ही युद्धमे उनको परास्त करके उनकी सारी धन सम्पत्ति लूटली, सवत् ८९२ मे बूता जातिकी रानीके गर्भसे एक कुमार उत्पन्न हुआ। उसका नाम देवराज रक्खा गया। वराह जाति और लङ्गागण शत्रुसे बदला लेनेके लिये एकसाथ मिलगये और उन्होने भट्टिराज विजैरावपर आक्रमण किया। परन्तु असीम साहसी विजयरावने अपने पिताकी तरह वीरता प्रकाश करके उनको रणक्षेत्रमे परास्त कर भगादिया, जब वराह जाति और लंगाहोंने देखा कि रणभूमिमे इनका परास्त करना असम्भव है, तब अन्तमे उन्होने षड़यन्त्रके साथ विश्वास दिलाकर उनके नाशका विचार किया। और बहुत कालसे प्रज्वलित हुई शत्रुताकी आगको बुझानेका बहाना कर वराह जातिके अधीश्वरने अपनी कन्याका विजयराजके पुत्र देवराजके साथ विवाह करनेका प्रस्ताव किया। भट्टिराजको इस षड़यन्त्रका समाचार कुछ भी विदित नही था, इस लिये वह अपने पुत्र देवराज और आठसौ स्वजातियोंको साथ लेकर वराहपति की राजधानी भटिंडामे चले गये। उनके वहाँ पहुँचते ही दुराचारी वराहोने उनपर सहार मूर्तिसे सहसा आक्रमण करके उन्हे और उनके प्रत्येक साथीको खड २ कर दियां[2]। जब कुमार देवराजने देखा कि अब मृत्यु निकट ही है तब वह अपने प्राणोकी रक्षाके

---

(१) भारतवर्षके वैश्योंमे यह ओसवाल जाति सबसे विशेष धनवान् थी और इनकी संख्या भी अधिक थी, यह पहिले ओसिया नगरमे आकर रहे थे इसी कारणसे ओसवाल नामसे प्रसिद्ध हुए। टाड साहबने कहा है कि यह विशुद्ध राजपूत है, परन्तु एक सम्प्रदायके नहीं है, इनमे पँवार सोलंकी भाटी इत्यादि सब सम्प्रदाय हैं। यह सभी जैनधर्मका अवलम्बन करनेवाले हैं भारतवर्षमें सर्वत्र ही यह ओसवाल वणिक वाणिज्यमें लिप्त रहते हैं। यह सर्वसाधारणमें माड़वारी नामसे पुकारे जाते है, बहुतोंका मारवाडसे ही मारवाड़ी नाम हुआ है, इसका अनुमान किया जासकता है परन्तु वास्तवमे ऐसा नहीं है।

(२) चारण रामनाथवाले राजस्थानमे लिखा है कि विवाह होगया था सोतेमें विजयराजजीको मारा। तब उनकी सासने देवराजको भगादिया, ऊँटपर बैठाकर भगाया था। सबेरे सांगीरत्नके एक खेतमे पहुचकर देवराजजीको उसे सौपदिया और इनके साथ पीछेसे उक्त भोजनादि व्यवहार हुआ,

लिये वराहराजके पुरोहितकी शरणमे गये । वराहगणोने इस शोचनीय अवस्थामे कुमारके मारनेकी इच्छासे पुरोहितके घरपर आक्रमण किया । पुरोहितने देखा कि इस समय भयकर विपत्ति उपस्थित है राजकुमारका भागना भी असभव बोध होता है इस कारण उसने अपने बुद्धिवलसे देवराजके गलेमे जनेऊ डालकर आक्रमण करनेवालेसे कहा कि " जिसको आप ढूंढ रहे है वह हमारे घर नही आया । इसके पीछे ब्राह्मणने उनके सामने ही एक थालीमे देवराजके साथ भोजन भी किया, यह देखकर शत्रुओने विचारा कि जिसको हम देवराज विचारते थे वह मनुष्य देवराज नही निकला देवराज तो क्षत्री है, यदि जो यह मनुष्य क्षत्री होता तो ब्राह्मण पुरोहित किस प्रकारसे इसके साथमे भोजन करता ? यह विचार कर उन लोगोने पुरोहितके घरको छोड़कर अपने दलके साथ भट्टियोकी राजधानी तनोटपर आक्रमण किया और जितने मनुष्य किलेके भीतर थे उन सबको एक २ करके मारडाला । इस प्रकारसे कुछ दिनोके लिये भाटीजातिका नामतक लोप होगया । "

इस प्रकार प्राणोके भयसे भयभीत हो देवराज बहुत समय तक वराहा जातिके बीचमे गुप्तभावसे रहे । और अन्तमे भागनेका सुअवसर जान वहांसे चलकर अपने नाना बूतावनके राज्यमे चलेगये । देवराजने ननसालमे जाकर वहॉ अपनी माताके चरणकमलोका दर्शन किया, जिस समय शत्रुओने तनोटके किलेको अपने अधिकारमे करके वहाके प्रत्येक स्त्री पुरुषोके प्राणोका नाश किया था, उस समय देवराजकी माता अपने किसी पुरातन पुण्यकी सहायतासे प्राण लेकर शत्रुओके ग्राससे निकल भागी थी, देवराजके मुखचन्द्रको देखकर दुःखिनी माताने अत्यन्त आनन्दके साथ कुंवरके मस्तक पर लवण लगाकर उसे जलमे डालकर कहा " कि हे पुत्र ! तुम्हारे शत्रुओका इसी भॉति लोप होजाय " । देवराज बहुत दिनतक पराधीन अवस्थामे रहे, अन्तमे अत्यन्त कातर हो उन्होने अपने नानासे एक ग्राम मॉगा । बूतानके अधीश्वरने पहिले ही इनको एक ग्राम देनेके लिये कह रक्खा था, जब उनके कुटुम्बियोने देखा कि महाराज इनको ग्राम देनेके लिये तैयार है तो वे लोग राजाको भय दिखाने लगे, और बोले कि यदि तुमने देवराजको अपने राज्यमे ग्राम दे दिया तो अन्तमे इस राज्यका महा अनिष्ट होगा, इस कारण आप किसी भॉति भी देवराजको ग्राम न दीजिये, बूतापतिने अपने कुटुम्बियोके इन भयदायक वचनो पर शकित हो देवराजको वहॉ ग्राम न देकर मरुक्षेत्रमे एक अत्यन्त सामान्य भूखड दिया । देवराजने उसी पृथ्वीमे केकय नामक एक शिल्पीकी सहायतासे भटनेर नामका किला बनवाया । और फिर कुछ दिनोके

---

(१) कर्नल टाड साहब कहते हैं कि " भट्टियोके नेताने दुर्ग बनानेके लिये जो प्रवञ्चना की थी वह भारतके अन्यान्य प्रान्तोमे भी विदित है । भाटना अर्थात् विभागसे ही इसका नाम भटनेर हुआ । कलकत्तेके नामकरणका क्रम भी इसी प्रकार है । यह कालकाटासे अंग्रेजीमें कलकत्ता हुआ है इसका असल नाम कालकाटा है " ।

पीछे एक बडाभारी किला बनाकर अपने नामसे उसका देवगढ़ वा देवरावल[1] नाम रक्खा। संवत् ९०९ के माघ महीनेकी पाँचवीं तारीखको सोमवारके दिन[2] इस किलेकी प्रतिष्ठा की गई थी।

" जब बूताके अधीश्वरने यह सुना कि मेरे दौहित्रने रहनेके लिये स्थान न बनाकर किला तैयार कराया है, तब उसने क्रोधित हो उस किलेको तोड़नेके लिये एक सेना भेजी। देवराजने यह समाचार सुनते ही किलेकी चावी माताको देकर उसे नानाके पास भेज दिया, और जो सेनाके नेता थे उनको किला लेनेके लिये बुला भेजा। वह उस सेनामेंके एकसौबीस नेताओंको सुसम्मतिका बहाना करके किलेके भीतरीभागमें लेगया, और वहाँ लेजाकर एक २ करके सबको मारडाला, इस प्रकार से सब नेता मारेगये, बचीबचाई सेना नेताओंके अभावसे उसी समय भाग गई, देवराजने उन नेताओंकी लाशोंको किलेके बाहर फेंक दिया।"

देवराज जिस समय गुप्तभावसे बराहोंके राज्यमें रहता था, उस समय एक योगीने आकर उसके प्राण बचाये थे, कुछ ही दिनोंके पीछे यह योगी देवराजके सम्मुख आया और उसने देवराजको सिद्धपुरुषकी उपाधि दी। इस योगीमें ऐसी शक्ति थी कि प्रत्येक धातुको सुवर्ण कर सकता था। देवराजके पिता और कुटुम्बी लोग बराह राज्यमें मारेगये। देवराज जिस घरमें रहता था उसी घरमें यह योगी अपने यज्ञके घडेको रखकर किसी कार्यके लिये चला गया। उस रसके घड़ेकी एक बूँद देवराजकी तलवारमें स्पर्श होनेसे सारी तलवार सुवर्णकी होगई। यह देखकर देवराज उस घड़ेको लेभागे और उस घडेकी सहायतासे ही यह देवरावल किला बनवाया था। योगीराजने बहुत दिनोंके पीछे आकर यह समाचार सुना कि देवराज इस समय राजसिंहासनपर विराजमान है। उन्होंने देवराजके साथ साक्षात् करके कहा कि " यदि तुम हमारे शिष्य होकर योगीका वेष धारण करो तो मैं उस घड़ेके ले आनेकी बात किसीके सम्मुख नहीं कहूँगा।" देवराजने, शीघ्र ही गुरुकी आज्ञाको मानलिया। देवराजने गुरुकी आज्ञानुसार गेरूये वस्त्र पहिने, कानोंमें मुद्रे धारण किये। इसके उपरान्त वह हाथमें कमंडल लेकर अपनी जातिके लोगोंके दरवाजोंपर भिक्षा माँगने लगा। उसका वह कमंडल सुवर्ण और मोतियोंसे भर जाता था। योगीद्वारा यदुवंशियोंमें चिरकालसे प्रचलित हुई रायकी उपाधिके बदले उसी समयसे रावलकी उपाधि दी गई। राजतिलक देनेके पीछे योगिराजने देवराजको इस प्रतिज्ञामें बाँधलिया कि जबतक यदुवंश रहैगा तबतक इसी रीतिके अनुसार राजतिलक हुआ करैगा। इसके पीछे योगी बाबा[3] अन्तर्द्धान होगए"।

---

(१) मि एलफिन्स्टोन जिस समय गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये थे उस समय उन्होंने इस देवरावल नामक स्थानमें ही विश्राम किया था। बूता राजपूतोंका राज्य कहां था यह इस किलेसे प्रमाणित होता है।

(२) उर्दू तरजुमेमें पुष्य नक्षत्र भी लिखा है।

(३) उर्दू तर्जुमेमें बाबारत्त [रता उस योगीका नाम था] लिखा है।

" जब देवराजने देखा कि मेरी इस समय अवनतिसे उन्नति होगई है और क्रमश. मेरी सेनाका बल भी बढ़ गया है तब उसने यदुवंशियोको विध्वंस करनेवाली बराह जातिको उचित फल देनेकी प्रतिज्ञा की । और उस क्षत्रिय कुलतिलक देवराजने अपनी उस प्रतिज्ञाको शीघ्र ही पूर्ण भी करलिया। उन्होने बराह जातिको इस भाँति परास्त किया कि इनके रनवासकी कुलवधुओका घूंघट तक अपने हाथसे खोला इस प्रकार बराह जातिको उचित फल देकर वह देवरावलमे चले आये । फिर उसने शत्रु लङ्गाहो पर आक्रमण करने और उनको उचित दंड देनेकी प्रतिज्ञा की । इस समय लङ्गाहोके युवराज अलीपुर नामक स्थानको विवाहके लिये सेनासहित जारहे थे, यह सुअवसर पाय देवराजने सेना सहित कुमारके ऊपर धावा किया, और बातकी बातमे एक हजार लङ्गाहोको मारडाला । लङ्गाहोने देवराजसे परास्त हो उसी समयसे इनकी आधीनता स्वीकार करली । लङ्गाह गण बडे ही वीर राजपूत थे "।

कर्नल टाड् साहबने लङ्गाह जातिके सम्बन्धमे अपनी सम्मतिये प्रकाश की है कि " यदुभट्टीवंशके पंजाबसे विताडित होकर भागनेके समयसे लेकर मरुक्षेत्रमे उनकी शेष राजधानीके स्थापन तकके समयके पीछे पूर्व वर्णित समयसे यदुभट्टी-जातिके प्रत्येक अन्तर्जाति समरमे यह लङ्गाह जाति यदुभट्टियोकी सहायतामे नियुक्त थी तब इस जातिका आदिम विवरण और उसके शेष भाग्यके सम्बन्धमे कुछ कहना इस स्थान पर उचित जान पडता है । यह तो भली भाँतिसे प्रकाशित किया जा चुका है कि इस समय लङ्गाह गण राजपूत थे और वह वास्तविक अग्निकुलकी चार शाखाओमे चालुक्य वा सोलङ्की जातिसे सबंध रखते थे । उनका आदि वासस्थान नौकोटदेशमे था । इससे बोध होता है कि यह आबू शिखरसे आकर हिन्दूधर्मका अवलम्बन करनेके पहिले नौकोट देशमे रहथे थे ।

सवत् ७८७ सन् (७३१ ईस्वी) मे भट्टि उपनिवेशीदलके नेताद्वारा तनोट दुर्गके निर्माणसे लेकर सवत् १५३० सन् (१४७४ ईस्वी) तक ७४३ वर्ष सीमाके निमित्त भाटीजातिके साथ लङ्गाहोका विवाद और युद्ध चला था । परतु युद्धोके कारण पूर्वमे दीर्घकालसे चली आई हुई इन दोनो जातियोकी विवादाग्नि एकबार ही बुझगई । इसके कुछ समयके पीछे बाबरने भारतवर्षपर आक्रमण किया, और मुलतान उसके सामराज्यका एक अंशरूपसे गिना गया । उसी समय इस जातिका अधिकार लोप होगया । तारीख फरिस्ताने इस जातिको मुलतानके राजवंशी कहकर उल्लेख किया है, और इस वंशके जानने योग्य वृत्तान्तका भी वर्णन किया है । इस वंशके पांच राजाओमे सबसे पहिले राजा ७४७ हिजिरी (१४४३ ईस्वीमे) अर्थात रावल चाचककी मृत्युके तीस वर्ष पहिले राज्य करते थे । मुसल्मान इतिहासवेत्ताने कहा है कि जबतक खिजरखाँसैयद दिल्लीके तख्तपर आरूढ थे तबतक उन्होंने शेख यूसुफको अपने प्रतिनिधिरूपसे मुलतानमे भेजा । शेख यूसुफने मुलतानने

जाकर अपने उत्तम व्यवहारोसे और पासके देशोके राजाओके मनको हरण करलिया। उन्ही राजाओंमे लङ्गाह जातिके अधीश्वर राय सेहरा भी एक थे। राय सेहराने मुलतानमे जाकर शेख यूसुफको बुलाकर उनके करकमलमे अपनी पुत्री देनेकी इच्छा प्रगट की, और उनके आधीनमे रहकर कार्य करनेको भी कहा। शेख यूसुफ उनकी वातपर सम्मत होगया। सेवीसे मुलतान तक उस समय यह समाचार आनेजाने लगा, और राय सेहरने क्यो यूसुफका इतना सम्मान किया और क्यो उसके सम्मुख अपने मनका ऐसा भाव प्रकाशित किया था इसका मतलव छिपा न रहा। तात्पर्य यह था कि उसने इसी मित्रताके वहानेसे शेख यूसुफको वदी करलिया, और उसे दिल्ली भेजकर अपना नाम कुतुवउद्दीन रक्खा। फिर आप मुलतानके अधिष्टाता पदपर प्रतिष्ठित हुआ।"

कर्नल टाड् साहवने फिर लिखा है "फरिस्ताने, राय सेहरा और इनके स्वजातीय लङ्गाहगणोंको अफगान कहा है, सेवी देशके निवासी नूमरी जातिके थे यही नूमरी जाति अगणित जाट जातिकी एक शाखा थी। और विशेप करके इन्होने यवनधर्मके अवलम्वनके समयसे विलोचकी उपाधि धारण की है। भट्टीवंशके इतिहासवेत्ताने लङ्गाहोको एक स्थानमे पठान और दूसरे स्थानमे राजपूत कहा है। पठान और अफगान यह उस समय मुसल्मान थे। यह स्पष्ट प्रकाशित नही होता। एकमात्र रायकी उपाधि ही इस वातको सावित करती है कि यह जाति किसी समय हिन्दू थी। अफगान जाति यहूदी जातिसे उत्पन्न है, इस वातको मिष्टर एलफिन्स्टोनने वदल दिया है, उनका कथन है कि अफ़गानियोकी पस्तोभापा संस्कृत थी। तथा उसमे जुन्दभापाके अनेक शव्द देखेजाते है, परन्तु हिब्रू भापाका कोई शव्द भी उसमे नही था। परन्तु मै यह प्रकट करचुका हूँ कि अफ़गानी यदुवशसे उत्पन्न है, और यदु शव्दके विगड़नेसे ही यहूदी वा जूर्जि शव्द हुआ है, इस मतको किसी भॉति नही वदला जा सकता। अव इसके प्रमाणकी आवश्यकता है कि यह यदुजाति यूति वा जट जातिसे उत्पन्न है या नही। "मि० एलफिन्स्टोनकी समान हम पहिले ही कह आये है कि अफ़गान जातिसे यहूदी जातिकी उत्पत्ति नही हुई।"

इस समय इतिहासका अनुसरण करते है। "देवरावलकी दक्षिण सीमामे लोद्र राजपूत निवास करते थे। उनकी राजधानीका नाम लुद्रवा था, और वह नगरी जिस भॉति विस्तारवाली थी उसी भॉति उसमे जानेके लिये वारह वडे २ दरवाजे थे। लुद्रवाके राजपुरोहितने किसी कारण वश राजासे विवाद कर अन्तमे देवराजके पास आकर आश्रय लिया। और वह लुद्रवाके राजाको सिहासनसे अलग करके उक्त राज्यको अपने अधिकारमे करनेके लिये देवराजको सम्मति देने लगा। देवराजने राजपुरोहितकी सम्मतिके अनुसार लुद्रवाराजके नृपभानुके पास यह संदेशा भेजा कि मै आपकी कन्याके साथ विवाह करनेकी अभिलापा करता हूँ। राजाने देवराजको अपनी कन्या देनेमे महा गौरव समझा और शीघ्र ही उनके प्रस्तावको स्वीकार करलिया। वीर श्रेष्ठ देवराज वारहसौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाको

साथमे लेकर वरका भेष धरे लुद्रवाकी राजधानीमे आपहुँचे। शीघ्र ही नगरका द्वार खोल दिया गया। परन्तु देवराजने अपने सेवक और सेनाके साथ-नगरमे पहुँचते ही युद्ध आरम्भ करदिया। लोद्रगणोके परास्त होते ही देवराज लुद्रवा के सिंहासन पर विराजमान हुए। और अन्तमे नृपभानुकी कन्याके साथ विवाह करके यादवोकी सेनाके एक दलको वहाँ छोड़ आप देवरावलको लौट आये। देवराज इस समय छप्पन हजार अश्वारोही और एक लाख ऊँटोके अधीश्वर हुए।"

"इस समय देवरावलसे यशोकर्ण नामका वैश्य धारानगरीमे जा रहा था। धारा-पति बृजभानु पँवारने उसे धनवान् जानकर बन्दी करलिया और उसका समस्त धन छीन कर अन्तमे उसे छोड दिया। जब यशोकर्ण देवरावलसे आया तब देवराजके सम्मुख नेत्रोमे आँसू भर विनती कर नम्रतासे कहने लगा, कि "महाराज! धारापतिने बिना ही कारण मुझे बन्दी करके अनेक कष्ट दिए है, और मेरे पास जितना धन था वह छीन कर अब मुझे छोड़ दिया है। उन्होने मुझे जैसा कष्ट दिया है उसे आप देखिये कि मेरे गलेमे रस्सीके बाँधनेका चिह्न अबतक विद्यमान है।" देवराजने यशोकर्णके गलेमे रस्सीका चिह्न देखकर विचारा कि इससे तो मेरा बड़ा अपमान हुआ है, पँवार राजाने जो यशोकर्णका अपमान किया है सो मानो मेरा ही अपमान किया है यह विचार कर वह अत्यन्त क्रोधित होगये और उन्होने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि मै अपने इस अपमानका बदला लिये बिना जलपान भी न करूँगा।

"पाठक गण! आपने अंग्रेजी भाषामे लिखी हुई संसारकी प्रत्येक प्रान्तीय अनेक जातिके राजाओकी प्रतिज्ञाओको पढा होगा, वह राजप्रतिज्ञा किस प्रकारसे पूर्ण होती थी और होती है वह आपसे छिपी नहीं है। परन्तु ऐसे बहुत थोडे राजा है कि जिन्होने प्रतिज्ञा करके उसे पूर्ण किया है। परन्तु राजपूत राजा अपनी प्रतिज्ञाको किस प्रकारसे पालन करते थे वह आपने इस इतिहासके अनेक स्थानोमे पढा है तदनुसार इस समय यदुवंशी देवराजकी प्रतिज्ञापूरणके वृत्तान्तको भी पढिये—देवराजने प्रतिज्ञा की है कि यशोकर्णके अपमानका बदला लिये बिना जलतक भी स्पर्स नहीं करूँगा। यह प्रतिज्ञा कोई साधारण प्रतिज्ञा नहीं है। धारानगरी बहुत दूर है एक दिनमे वहाँ

(१) टाड महोदयने टीकेमे लिखा है "कि यह हमे विदित नहीं है कि लुद्रगण राजपूत जातिके किस कुलमे उत्पन्न है, परन्तु एक समयमे जो पवाँर वा प्रमार जाति भारतवर्षमे सबसे [illegible] मरुक्षेत्रकी अधीश्वर थी संभव है कि यह भी वही हो। भट्टी जातिके द्वारा वर्तमान राजधानी जयसलमेरके स्थापनके पूर्व तक लुद्रवा ही भट्टियोकी राजधानी थी। लुद्रवा अत्यन्त प्राचीन नगरी कही जाती है, परन्तु इस समय यह एकबार ही विध्वंस होगई है। इस समय गडेरियेही लुद्रवामे निवास करते है। मरुक्षेत्रके और भी अनेक प्राचीन नगर इस समय विध्वस होगये हैं। और निरतरके [illegible] इसका कारण है। मुझे लुद्रवामे व्रजराजके समयका अर्थात् दशमी शताब्दीका एक ताम्रका अनुशासन पत्र मिला था। वह जैनभाषामे लिखा हुआ था। उससे यह जाना जाता है कि इस देशमे इस समय जैनधर्म प्रचलित था।"

(२) टाड साहबने कहा है कि लिखनेवालोके दोषमे ही यह संख्या विशेषरूपसे गिनी गई है।

जाकर उसका जय करना किसी प्रकार भी सम्भव नही हो सकता, फिर जव प्रतिज्ञा की है कि विना धारानगरीको जीते हुए जल भी स्पर्श नही करूँगा ? तव क्या उपाय है? तिस पर फिर कई दिनतक विना जलपान किये हुए जीवित भी असंभवहै, और जव यह प्रतिज्ञा की है तो शरीरमे प्राण रहतेहुए प्रतिज्ञाको भंग नही कर सकते" ॥ अन्तमे मन्त्रियेोने यह सम्मति दी कि धारानगरीके निवासी पॅवार है और वहॉका राजा भी पॅवार है, आपकी सेनामे वहुतसे पंवार और प्रमार जातिकी सेना है। आप मट्टीकी एक धारानगरी तैयार करवाइये तलवार हाथमे लेकर आपकी सेनाके पॅवार उसकी रक्षा करे, और आप सेना सहित उस कृत्रिम धारानगरी पर आक्रमण कर विजयी हो अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कीजिये। इस सम्मतिके अनुसार शीघ्र ही कार्य आरंभ होगया। देवराजको सेनासे जितने पॅवार थे वह सभी अपने २ हाथमे तलवारे और भाले लेकर वीरसाजसे सजकर धारानगरीकी रक्षामे नियुक्त हुए। वीरश्रेष्ठ देवराजने सेना साथ ले उसपर आक्रमण किया। दोनो ओर भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, इसी समयमे पॅवारोकी सेनाने कहा,—

दोहा—जहॉ पॅवार तहॉ धार है, जहॉ धार तहॉ पॅवार।
धारक विना पॅवार नहि, नहि पॅवार बिन धार ॥

इसका अर्थ यह है कि जिस स्थानपर पॅवार है वह स्थान ही धार है और जिस स्थानपर धार है उसी स्थान पर पॅवार है। पॅवारके अतिरिक्त धार नही है और धारके अतिरिक्त पॅवार नही है।

पॅवारोकी सेना अपने नेता तेजसिंह और सारङ्गके आधीनमे वड़े विक्रमके साथ उस कृत्रिम धारानगरीकी रक्षा करने लगी। भयंकर युद्धमे एकसौ वीस पॅवार मारे गये और देवराजने उस कृत्रिम धारानगरीको जीतकर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया। जिस पॅवार सेनाने उस रणभूमिमे महा वीरता दिखानेके पीछे जीवन त्याग किया था, देवराजने उनकी असीम वीरतासे प्रसन्न हो उनके स्त्री पुत्रोके भरण पोषणके लिये उचित वृत्ति नियत करदी। " किस देशके किस राजाने इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञाको पालन किया है? राजपूत राजा जो प्रतिज्ञा करते थे शरीरमे प्राण रहते हुए उसे किसी भॉति भी भग नही करसकते थे। क्षत्रियोकी यही रीति थी, उसी क्षत्रिय जाति को आजकलके अंग्रेजी पढ़ोने जगली और वरवर वताकर उपहास किया है, परन्तु इस वातको हम दावेके साथ कह सकते है कि इस संसारमे जिस भावसे अपनी प्रतिज्ञाको क्षत्रिय जाति पूरा करगई है, शिक्षित सभ्य और उन्नतिवाले कोई राजा भी उनकी समान सहस्रों अंशोमेके एक अंशकी भी प्रतिज्ञा पालनमे सामर्थ्य नही रखते।"

इतिहासवेत्ता पीछे लिखते है " कि देवराजने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके पीछे जल ग्रहण किया, और कुछ ही दिनोके पीछे अपनी वलवान् सेनाको सजाकर धारानगरीको जीतनेके लिये प्रस्थान किया। धारापति व्रजभानुने इनकी गति रोकनेके लिये

(१) यह कुटेशनका लेख विशेष है.

पहिलेसे ही सीमापर सेना भेज दी थी, परन्तु अतुल पराक्रमी यादवोंकी सेनाने प्रलयकालीन मेघमालाकी समान उस प्रमारोंकी सेनाको न जाने कहाँ छिन्नभिन्न करदिया। देवराजने अन्तमे धारानगरीपर धावा किया। धारापति बृजभानु धन और प्राण तथा राज्यकी रक्षाके लिये पाँच दिनतक लड़ाई करते रहे, और अन्तमे आठसौ सेनाके साथ युद्धभूमिमे मारेगये। देवराजने अत्यन्त प्राचीन धारानगरीके किलेकी चोटीके ऊपर अपनी विजय पताका लगाई, और फिर आप लुद्रवानगरीको लौट आये"।

"देवराजके औरससे मंद और छेणो नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। और शेषोक्त पुत्रोंके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, वह लोग छेणोराजपूत नामसे विख्यात् है। जिस खदाल नामक देशमे देरावर स्थापित था उस देशमे देवराजने बहुतसे बडे २ सरोवर खुदवाये तनोट नामक स्थानमे जो सरोवर खुदवाया था वह तनोटसर नामसे प्रसिद्ध है, और देवसर नामवाला एक वड़ा सरोवर अपने नामसे खुदवाया था। एक समय देवराज कुछ थोडेसे सेवकोंको साथमे ले शिकार खेलनेको गये। ऐसे सुअवसरको पाकर छानिया जातिके वलोचोने छब्बीस अनुचरोंके साथ देवराज पर आक्रमण करके उनको मारडाला। देवराजने ५२ वर्षतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य किया।"

"देवराजके शरीर त्याग करनेपर इनके वडे पुत्र मूंदजी पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए, उन्होंने बारह दिनतक अशौचमे रहकर पिताका श्राद्ध कार्य समाप्त किया तदनन्तर राज्याभिषेक हुआ ६८ कुओंके जल और एकसौ आठ भिन्न २ पवित्र वृक्षोंके पत्तोंसे, मूंदने स्नान किया और एक उत्तम आचरणवाली सती स्त्रीने मूंदके मस्तक परसे सुगंधित द्रव्योंको उतारा, मून्दके सम्मुख पचामृत रक्खा गया, सुवर्ण, चॉदी, मूँगा, मोती, राजछत्र, दूर्वा, और अनेक भॉतिके सुगन्धित पुष्प, दर्पण, एक राजकुमारी कन्या, एक रथ, एक पताका, एक वेलेका वृक्ष, सात प्रकारके खरगोश, दो मछली, एक घोडा, एक वैल, एक वडा शंख, एक कमल, एक पात्रजल, चामर, वत्सतरी, नारियल हरेवर्णकी मट्टी और नैवेद्य इत्यादिसे सुसज्जितकर रक्खी गई। शेरकी खालके ऊपर (उस खालके ऊपर सात द्वीपोंका चित्र खिचा हुआ था) योगीभेपसे कुमार वैठाये गये उन शरीरमे विभूति लगाकर कानोंमे मुद्रे पहराये गये, उनके ऊपर सफेद चमर हुलने लगा। वह अपने पिताके सिंहासनके ऊपर विराजमान हुए, पुरोहितने आशीर्वाद दिया और सामन्त गण उपहार देने लगे, मूंदने पिताके सिंहासनपर वैठते ही अपने पिताके मारनेवालेके विरुद्ध वदला लेनेके लिये युद्धकी तैयारी की। हत्या करनेवाले पहिलेसे ही अपनी रक्षाके लिये सज रहे थे, मूदजीने उनको आक्रमण करके शत्रुओंकी आठसौ सेनाका नाश कर उन्हे उचित फल दिया। रावलमूंदके वाछू नामक एकमात्र पुत्र

(१) पर दूसरा इतिहास कहता है इनकी अवस्था १२० वर्षकी थी। इतिहास चारण रामनाथ रत्नू.

(२) उर्दू तारीखे कागज,

उत्पन्न हुआ, जब कुमारवाछूकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई उस समय (पातन) पट्टनके राजा सोलंकी जातके वल्लभसेनने उनके साथ अपनी कन्या व्याह देनेके लिये क्षत्रियोंकी रीतिके अनुसार, नारियल भेजा। वाछूरावने पातनमें जाकर सोलङ्की राजकुमारीका पाणिग्रहण किया।"

"राव मन्धजी (मूंदजी) के शरीर त्याग करनेपर वाछूराव संवत् १०३५ श्रावण कृष्ण द्वादशी शनिश्चरके दिन पिताके सिंहासनपर बैठे। इनका भी पूर्वोक्त रीति भांतिके अनुसार राज्याभिषेक हुआ। वेछूके औरससे निम्न लिखित पॉच पुत्र हुए।

"१–दूसाजी। २–सिंह।
३–बापेराव। ४–इनवे।
५–मूलअपसा।

"उक्त पांच पुत्रोंके वंशधर अनेक शाखाओंमें विभक्त हुए।"

"एक अश्व व्यवसाई एकसौ घोडे लिये जा रहा था, उसके घोडोंमें एक घोड़ा सबसे श्रेष्ठ था, और उसका मूल्य एक लाख रुपया रक्खागया था। सिन्धुनदीके पश्चिम सीमाका निवासी गाजीखां नामक पठान उस घोडेका अधीश्वर था। दूसाजीने अपने भ्राताके साथ मिलकर सेना साथमें ले उस देशमें जाकर गाजीखांके प्राणोंका संहार किया, और उस घोडेको विजयके धनस्वरूपमें ले आया।"

सिंहके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सचाराय था। उसके पुत्र वल्लाके औरससे रत्न और जग्गा नामके दो कुमार उत्पन्न हुए। और वह मंडोरके अधीश्वर पड़िहार जातीय जगन्नाथपर आक्रमण करके उनके आधीनके पांचसौ ऊँटोंको जीतकर ले आये। उसके उत्तराधिकारीगण सिंहराव राजपूत नामसे विदित हैं।"

"बापेरावके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम पाहुर और दूसरेका नाम मांदन था पाहुरके औरससे विरम और तोलर नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनके अगणित वंशधर पाहु राजपूत नामसे विदित हैं। पाहु राजपूतोंने उनके निवास स्थान बीकमपुरसे जाकर जोहियोंके जितने देश उनके अधिकारमें थे उनपर और देवी छालतक अपना अधिकार करलिया। और उन्होंने पुगलमें अपनी राजधानी स्थापित करके वहॉ अगणित कुएँ खुदवाये। वह सभी पाहु कूप नामसे विख्यात हैं।"

"मारवाड़के आधीन नागौर देशके निकट खाट्टूनामक स्थानमें खिची जातिका यदुराय नामवाले एक महाबलवान् और असीम साहसी वीर निवास करता था। यह मनुष्य इतना साहसी था कि इसने पुंगलनगरीके द्वारतक जाकर वहॉ उनका सर्वस्व लूटकर जयतुंग भाटियोंका संहार किया। इन तस्करोंके नेताओंके उपद्रव दूर करने और उनको उचित दंड देनेकी इच्छासे दूसाजीने एक समय गंगाजीमें स्नान करनेका बहाना कर कितने ही साहसी वीर योधाओंको अपने साथमें ले दस्युनेताओंके अधिकारी देशमें जाकर उनके नेता और उनके आधीनके नौसौ मनुष्योंका एकबार ही नाश कर दिया"।

" गहिलोतोके अधीश्वर प्रतापसिंह जिस खेड़देशमे रहते थे दूसाजी अपने तीन भाइयोको लेकर वहॉ गया, और प्रतापसिंहकी तीन कन्याओके साथ अपना विवाह किया, उस खेडदेशमे यदुवंशियोने मुक्त हाथसे धन खर्च किया था। कितने ही दिनोके पीछे विलोचोने खडाल राज्यमे जाकर विषम अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, उस कार्यसे भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित होगई। इस युद्धमे पॉचसौ विलोच मारेगये, और शेष सव भाग गये, वाछूरावके प्राणत्याग करनेपर उसके पुत्र दूसाजी ११०० संवत्मे आषाढ़के महीनेमे यदुवशके सिहासनपर विराजमान हुए "।

" दूसाजीके मस्तक पर राजछत्र शोभित होनेके कुछही दिन पीछे सोढाजातिके अधीश्वर हमीरसिंहने अपना दल ले दूसाजीके राज्यपर आक्रमण किया। और वहॉ जाकर उसकी वहुतसी धन सम्पत्ति लूट लाये। हमीरको इस प्रकारसे आक्रमण करता हुआ देखकर दूसाजीने उनके पास एक दूतके हाथ कहला भेजा कि हम दोनो वहुत काल पहिलेसे सम्वन्धवन्धनमे बँधेहुए है इस कारण आप हमारे राज्यमे लूट न करे। परन्तु हमीरने इनके वचनो पर कुछ भी ध्यान न दिया, तव दूसाजी अत्यन्त क्रोधित होकर अपनी सेना साथले धाट राजधानीमे गया, और वहॉ प्रवल पराक्रम करके हमीरको परास्त करदिया। दूसाजीके जैसलदेव और विजैराव नामक दो पुत्र हुए उन्होने मेवाडके राणाकी कुमारीके साथ विवाह किया था। दूसाजीकी वृद्धावस्थामे उस राजवालाके गर्भसे एक और पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम लांझाविजयराज रक्खा गया। दूसाजीके परलोकवासी होनेपर राज्यके सम्पूर्ण नेता और सामन्तोने उसी तीसरे कुमार लांझाविजयराजको राज्यसिहासनपर अभिषिक्त किया। लांझाविजयराजने राज्यसिहासनपर वैठनेके पहिले सोलकीवंशके सिद्धराज जयसिंहकी कन्याके साथ विवाह किया था। विवाहके समयमे जयसिंहकी रानीने लांझाविजयराजके माथेपर तिलक करनेके समय कहा "वत्स उत्तरांशके जो नवीन राजा प्रवल होकर इस राज्यसे शत्रुता करते है और पीडा देते हैं, उनसे आप ही हमारे राज्यके उत्तरप्रान्तकी रक्षा करो।, पैत्तनकी सोलंकिनी रानीके औरससे लांझाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम भोजदेव रक्खा, भोजदेवके प्राण त्यागनेपर वह पचीस वर्षकी अवस्थामे लुद्रवा देशके अधीश्वर हुए दूसाजीके और भी पुत्र इसी समय योग्य होगये थे। इस समय जयसलकी अवस्था ३५ वर्षकी थी और विजैराज वत्तीस वर्षकी अवस्थाके थे।

"दूसाजीकी मृत्युके कितने ही वर्ष पहिले धारराजेश्वर उदयादित्यके वंशधर रायधवल पँवारकी तीन कन्याओमेसे एकके साथ शोलंकी वंशीय सिद्धराजके पुत्र जयपाल वा अजयपालने विवाह किया, और दूसरी कन्याके साथ भट्टीराजकुमार विजैराजने

(१) टाड साहवने अपने टीकेमें लिखा है कि " कुमारपालचरित नामक जिस पुस्तकमें अनहलवाडा पत्तनके राजाओंके इतिहासका वर्णन है, उसमें सिद्धराजके शासनका समय सम्वत ११५० से १२०१ तक अर्थात १०९४ से ११४५ ईस्वी तक लिखा है।

और तीसरी कन्याका सबंध चित्तौरके राणाके साथ ठहर गया । भट्टीजातिके अधीश्वर सातसौ अश्वारोही सेना साथले लुद्रवासे धारानगरीको विवाह करनेके लिये गये। उस समय सीशोदिया और सोलङ्की राजा भी वहां पहुंच गये थे । भट्टीराज विवाह करनेके पीछे लुद्रवाको चले आये, और महादेवजीका एक वड़ाभारी मंदिर वनवाया, और उसके सम्मुख एक वडा सरोवर खुदाया, उस पवॉर राजकन्यासे राहड नाम वेटा पैदा हुआ, इनके नेतसी और केकसी नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए । ”

भट्टी इतिहासवेत्ताने लिखा है कि “भोजदेव वहुत दिनोतक लुद्रवाके सिंहासनपर निश्चिन्त न वैठसके, कारण कि कुछ ही समयमे इनके चचा जयसलदेवने इनके विरुद्ध भयानक षड़यन्त्रका विस्तार किया। परन्तु भोजदेव सदा पांचसौ सोलकी राजपूत वीरोसे रक्षित रहते थे इस कारण जयसल किसी प्रकार भी उनके शरीरपर हस्तक्षेप न करसके। इस समय पाटनके अधीश्वर भारतविजयकी अभिलापासे गजनीके शहावुद्दीनके साथ युद्धमें लिप्त थे, शहावुद्दीन उस समय ठट्टानामक देशको जीतकर पाटनके अधीश्वको परास्त करनेमे लगरहा था, चतुरनीतिविशारद जयसलने देखा कि भोजदेवको सरलतासे हस्तगत करके उनके सिंहासनपर वैठना कोई साधारण वात नही है, इस कारण वहुत चिन्ता करनेके पीछे अन्तमे उसने एक उपाय स्थिर किया। उसने अन्तमे शहावुद्दीनके साथ मिलकर अनहलवाडा पट्टनपर आक्रमण करनेका दृढ़ संकल्प किया। उसने यह विचारा कि जो सेना भोजदेवके शरीरकी रक्षा करनेके लिये स्थित है, अनहलवाड़ा पट्टनपर आक्रमण करते ही विपत्तिको सम्मुख देखकर वह अवश्य ही भाग जायगी। और हमारा मनोरथ सरलतासे सिद्ध होजायगा। नीतिविशारद जयसलने मनहीमन यह सिद्धान्त निश्चित कर अपने प्रधान २ कुटुम्वियोंके दोसौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाके साथ पजावको गमन किया। इसी समय शहावुद्दीन गौरी ठट्टेको जीतकर वहॉ एक दल यमनोकी सेनाका रख सिंधुदेशकी प्राचीन राजधानी अरोड़ नगरको जा रहा था। जयसल यवनराजाके साथ साक्षात् करनेके लिये उसी अरोडमे आये। शहावुद्दीनने जयसलको आया हुआ देखकर इनका भलीभांतिसे आदर सत्कार किया। जयसलने अपने मनका अभिप्राय कह सुनाया, इसपर शीघ्र ही दोनोकी मित्रता होगई। शहावुद्दीनने करीमखॉ नामक एक प्रधान सेनापतिको कई हजार सेनाके साथ जयसलकी सहायताके लिये अर्थात् भोजदेवको परास्त करने और लुद्रवाराज्यको जयसलके हाथमे समर्पण करनेको भेज दिया। वीर श्रेष्ठ जयसलने इस प्रकार यवनोकी सेना साथ ले लुद्रवापर आक्रमण कर प्रबल युद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इस भयंकर युद्धमे भोजदेवके मरते ही उसकी वची वचाई सेनाने जयसलकी आधीनता स्वीकार करली। जयसलने लुद्रवाके निवासियोको अपनी २ धन सम्पत्ति अन्यत्र लेजानेके लिये दो दिनकी अवधि दी। तीसरे दिन यवनसेनापति करीमखॉ लुद्रवाको लूटकर भक्खरदेशको चलागया ”।

"इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ जयसलने लुद्रवाके सिहासनपर अपना अधिकार किया। उनके अभिषेकके विरुद्धमें और कुछ कहनेका साहस नहीं होता। परन्तु जयसलने राज्यपर बैठकर जब देखा कि लुद्रवा देश एक ऐसे स्थानमे स्थित है कि जहां शत्रु-दल बडी सरलतासे आकर विजयी होसकते है और ऐसे स्थानपर राजधानीकी रक्षा करना किसी प्रकार भी सभव नही होसकता, तब उसने अपनी रक्षाका एक स्थान निर्धारित किया। वह स्थान लुद्रवासे पांच कोश दूर था। एक समय एक पत्थरके ऊपर जयसलने एक ब्राह्मणको बैठा हुआ देखा। ब्रह्मसर नामक कुडके समीप उस ब्राह्मणकी कुटी थी। जयसलने उस पूजनीय ब्राह्मणको प्रणाम करके अपने आनेका समाचार कहा, ब्राह्मणने अभय देकर निभृत आश्रमके अत्यन्त समीप त्रिशृङ्गके शिखर पर आ [illegible] तिहासका वर्णन करना आरम्भ किया। ब्राह्मणने कहा त्रेतायुगमे कावा काग नामका एक योगी इस कुंडके निकट वास करता था। उसी योगीके नामके अनुसार उस कुंडसे निकलनेवाली तरंगिनी कागनदी नामसे विख्यात् हुई। पाण्डुकुल धुरंधर अर्जुन श्रीकृष्णके साथ एक समय इस कुंडकी यात्रा करनेके लिये आये थे। उस समय श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा कि बहुत कालके पीछे हमारे ही वंशका एक मनुष्य इस त्रिकूट पर्वत पर राजधानी स्थापित करैगा। श्रीकृष्णके यह वचन सुनते ही अर्जुनने कहा कि "हे मित्र! यदि यहॉ राजधानी [illegible] नगई तो यहॉके निवासियोंको जलका अत्यन्त कष्ट होगा, कारण कि इस नदीका जल निर्मल नही है। यह वचन सुनते ही सर्वमय हरिने अपने चक्रसे उस पर्वतको संघर्षण किया जिससे अमृतके समान सुन्दर स्वादिष्ट जलकी नदी वह निकली। उस नदीके पार्श्वमे ही भविष्यद्वाक्य मूलक एक कविता पत्थरके ऊपर खुदी हुई थी, उक्त योगीने जयसलको वह भी पढ़ कर सुनाई,—उसका आशय नीचे लिखा जाता है।

१ "हे यदुवंशावतंस! नरपति। आप इस देशमे पधारिये, और इस शिखरके ऊपर त्रिकोण किला बनवाओ।"

२ "लुद्रवा विध्वस होगया है और जयसलदेश इस स्थानसे पॉच कोश दूर है। जो उससे मजबूत है।"

३ "हे यदुवंश सम्भूत! जयसल लुद्रवाको त्याग कर इस स्थानपर राजधानीकी प्रतिष्ठा करे।

"जिस नदीके पार्श्वमें उक्त श्लोक लिखे थे एकमात्र योगी ही उस स्थानको जानता था। उस योगीका नाम ईसाल था। उसने अपने स्वार्थ साधनके लिये जयसलसे इतना कहा था कि दुर्गके पश्चिम पार्श्वमें स्थित क्षेत्र मेरे नामसे ईसलक्षेत्र कहा जाय और उसकी रक्षा रहै, उसने गणनासे जयसलको यह भी प्रगट किया, कि आप जो दुर्ग बनानेकी अभिलाषा करते हैं वह दो बार अन्यान्य जातियोसे लूटा जायगा,

(१) देशी भाषामें त्रिकुटा पहाड़.

ओर रुधिरकी नदी वहेगी, और कुछ दिनोंके लिये, आपके उत्तराधिकारी गण सर्वस्व हार जांयगे।"

"संवत् १२१२ सन् (११५६ ईसवी) श्रावण कृष्णा द्वादशी रविवारके दिन जयसलमेर राजधानी प्रतिष्ठित हुई और थोड़े ही दिनोंमे लुद्रवाके सब निवासी अपनी समस्त धन सम्पत्ति लेकर नवीन राजधानी जयसलमेरमे आकर निवास करने लगे। जयसलके औरससे केवल और शालिवाहन नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। जयसलने अतुल पराक्रमी पाहुजातिके एक विद्वान पुरुषको अपने प्रधान मंत्री और उपदेष्टा पदपर नियुक्त किया। भट्टी जातिके प्राचीन शत्रु चन्ना राजपूतोंने फिर लोदी देशपर आक्रमण किया, परन्तु उनको इसके लिये उचित फल मिला, कारण कि जयसल इस घटनाके पाँच वर्ष पीछे तक जीवित थे। उनके प्राण त्याग करनेपर उनके छोटे पुत्र शालिवाहन (द्वितीय) पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।"

तृतीय अध्याय ३.

जयसलके ज्येष्ट पुत्र केलनजीको निर्वासन दंड–शालिवाहनका अभिषेक–काठी वा काथि देशके अधिपतिके विरुद्ध युद्धकी यात्रा–उनकी उत्पत्तिका विवरण–बद्रीनाथके यदुवंशी राजाकी मृत्यु होजानेपर उनके सिंहासनपर बैठनेके लिये एक यदुवंशी राजकुमारसे प्रार्थना करना–शालिवाहनके उपस्थित न होनेसे उनके पुत्र बीजलदेवको सिंहासनका अधिकार देना–शालिवाहका खड़ाल देशमे जाना और बलोचोंके साथ युद्ध करना–बीजलदेवका आत्मघात करके प्राण त्याग करना– केलनजीको फिर बुलाकर सिंहासनपर बैठालना–उनकी संतानोंसे सम्प्रदायकी सृष्टि होना–खिदरखाँका फिर खडालपर आक्रमण–केलनका खिजरखाँपर आक्रमण और अपने पिताकी मृत्युका बदला लेना–केलनकी मृत्यु–चाचकदेवको सिंहासनकी प्राप्ति–उनका चन्ना राजपूतोंको भगाना–अमरकोटके सोढा राजपूतोंको परास्त करना–राठौरोंका मरुक्षेत्रमे आना और उनका उपद्रव मचाना चाचककी मृत्यु–उनके पुत्र करणका सिंहासनपर बैठना–करणके जेष्ठ भ्राता जैतसिंहका जयसलमेरको त्यागना–करणकी मृत्यु–लाखणसेनका सिंहासनपर बैठना–उनकी उन्मत्तता–उनके पुत्र पुन्यपालका सिंहासनपर बैठना–पुन्यपालको गद्दीसे अलग करना–उनके पोते रणंगदेवका रोट और पूंगलपर अधिकार करना–पुन्यपालको निर्वासन दंडके पीछे जैतसीको फिर बुलाकर सिंहासन देना–अलाउद्दीनने जिस समय मंडोरके पड़िहार राज्यपर आक्रमण किया उस समय जैतसीको मंडोरराज्यका आश्रय देना–जैतसीके पुत्रोद्वारा तथा और मुलतानसे भेजे हुए दिल्लीके बादशाहका प्राप्य कर लूटना–यवन बादशाहका जैसलमेर पर आक्रमण करना–जैतसी और उनके पुत्रोका युद्धके लिये उद्योग करना–जयसलमेरका घेरना–यवनोंका पहिला आक्रमण व्यर्थ करना–रणक्षेत्रमे भट्टी सैन्यकी रक्षा–जैतसीकी मृत्यु–जैतसीके पुत्र रत्नसिंहके साथ आक्रमणकारियोके सेनापतिके साथ विचित्र मित्रता–मूलराजको सिंहासन प्राप्ति, फिर यवनोंकी राजधानी पर अधिकार करनेकी चेष्टा करना–उनकी दुबारा पराजय–दुर्गम पहुंची हुई सेनाको अत्यन्त कष्टकी प्राप्ति–युद्धके विचारकी सभा–जौहरकी रीति–रत्नके मुसल्मान मित्रका उनके दोनो पुत्रोंके प्रति उदार व्यवहार–शेषमें आक्रमण–रावलमूलराज और रत्नके प्रधान यादवोंका रणभूमिमे प्राण त्यागना–यवनोंका जयसलमेर पर अधिकार करना–जयसलमेरका विध्वंस होना और उसका त्याग।

यदुवंशावतंस जयसल नवीन राजाधानी जयसलमेरकी प्रतिष्ठा होजानेके पीछे वारह वर्ष तक जीवित रहकर अपने प्रबल पराक्रमके साथ राज्य करते रहे। इस वीर श्रेष्ठ जयसलके नामसे ही जयसलमेर नामकी सृष्टि हुई। जयसलमेर आजतक यदुवंशियोके अधिकारमे है, और उसी नामसे पुकारा जा रहा है, यह तो पहिले ही कह आये है कि पाहु जातिके कृतविद्य मनुष्यने जयसलमेरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त हो भट्टीराज्यमे अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार किया था। यह मंत्री इतनी सामर्थ्यवाला होगया था कि इसके मन प्रसन्न रखनेके लिये सभी अपनी २ सामर्थ्यके अनुसार चेष्टा करते रहते थे। उसकी इच्छाके अनुसार ही राज्यशासन होता था। रावल जयसलके केलन और शालिवाहन नामवाले दो पुत्र थे, पाठकोने पहिले अध्यायमे उनका वृत्तान्त पढा होगा, प्रचलित नियमोके अनुसार युवराज केलन पिताके सिहासनपर बैठे–इनके सिहासनपर बैठनेसे मंत्री पाहु अत्यन्त असंतुष्ट होगये। युवराजको सिहासनसे अलग करनेपर भी उनके हृदयकी अग न बुझी, उसको एकवार ही निर्वासित कर दिया। इन युवराज केलनको निर्वासन होने पाठकगण सरलतासे समझ जायँगे कि पाहुमंत्रीमे कैसी सामर्थ्य थी। केलणके निर्वासित होते ही रावल जयसलकी मृत्यु होनेके पीछे उनके छोटे कुमार शालिवाहन सबकी सम्मतिसे सवत् १२२४ सन् (११६८ ईसवीमे राज्य सिहासनपर विराजमान हुए।

यदुकुलदिवाकर पहिले शालिवाहनके समान इस दूसरे शालिवाहनने भी शीघ्र ही अपने वाहुवल और पराक्रमसे अपने नामको सर्वत्र विख्यात्त करादिया।

जालौर वा आरावलीके वीचवाले देशोमे काटी वा काठी नामकी एक जाति निवास करती थी। जगभान नामका एक मनुष्य उस जातिका अधीश्वर था। शालिवाहनने राजदंड धारण करनेके पीछे सबसे पहिले उस जगभानुसे युद्ध करनेका विचार किया। काठी जातिके अधिपाति उस समरमे परास्त होकर मारे गये। रावल शालिवाहनने विजयी हो काठी जातिके समस्त घोडे और ऊँट अपने अधिकारमे करलिये और फिर वह अपनी नगरीको लौट आये। इस युद्धमे शालिवाहनके विशेप पराक्रमसे उनके यशका सूर्य अपनी पूर्णमूर्तिसे उदय हुआ, और सभी इनके वाहुवलकी प्रशसा करने लगे। शालिवाहनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए,—

१–वीजलदेवजी।
२–वानर।
३–हसू।

यदुवशी पहिले शालिवाहन, जिसने गजनीसे पजावमे आकर शालिवाहनपुरमे राजधानीकी प्रतिष्ठा की थी, उसीके पुत्रने वद्रीनाथके पर्वत पर एक स्वतत्र और

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमें लिखा है " एलिकजंडरके भारतपर अधिकार करनेके समयमें जिस काठी जातिने अपनी विषम वीरता प्रकाश करके उसमें विघ्न किया था, यह वही काठी जाति है। यह उस समय मुल्तानमे रहती थी, सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावार राज्यकी एक श्रेणीके मनुष्य इस स्थानमे आकर रहे थे और यदुभट्टिराजने इन्हींपर आक्रमण किया था।'

स्वाधीन राज्य स्थापन किया। वह यदुवंशी राजा पर्वत शिखर पर इतने दिनोतक अपने प्रवल प्रतापसे राज्यशासन करते आये थे। जयसलमेरके सिंहासन पर जिस समय उक्त दूसरे शालिवाहन बैठे थे उसी समय उक्त बदरीनाथके यदुवंशी अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्यागकिये। वहांके मंत्री और सामन्तोने मिलकर यदुवंशके सिंहासन पर एक यदुवंशीको बैठालनेके लिये यदुवंश धुरंधर शालिवाहनके पास कईएक सामन्तोको भेजकर एक यदुवंशी राजकुमारकी प्रार्थना की। रावल शालिवाहनने अपने स्वजातीय राजोंक सिंहासनकी रक्षाके लिये अपने तीसरे कुमार हस्सूको बदरीनाथमे भेज दिया। परन्तु अत्यन्त दु खका विषय है कि कुमारने बदरीनाथमे जाते ही प्राण त्यागदिये। हस्सूकी स्त्री गर्भवती थी वह उसी अवस्थामे बदरीनाथको जा रही थी कि मार्गमे ही उसे प्रसवकी वेदना उपस्थित हुई। उसने पलाश वृक्षके नीचे जाकर एक कुमार उत्पन्न किया। पलाश वृक्षके नामके अनुसार ही कुमारका नाम पलाश रक्खा गया। वही बालक कुमार बदरीनाथके राज्यपद पर अभिषिक्त हुआ; और उसीके नामके अनुसार उक्त राज्यका नाम भी पलासिया रक्खा गया और उसके उत्तराधिकारी वंशधर लोग पलासिया भाटी कहाये।

इस समय सिरोहीके देवरा जातीय मानसिंहने रावल शालिवाहनको अपनी कन्या देनेका प्रस्ताव करके उनके पास नारियल भेजा। शालिवाहन अपने ज्येष्ठ कुमार बीजलदेवको राज्यकी रक्षाका भार देकर आप विवाह करनेके लिये सिरोहीको गये। शालिवाहनके जानेके दो चार दिन पीछे बीजलकेधाभाई अर्थात् धात्री माताके पुत्रने राज्यमे यह बात उडा दी कि रावल शालिवाहन मार्गमे एक व्याघ्रके साथ युद्ध करके मारेगये। वह धाभाई इस जनरवको फैलाकर ही तृप्त न हुआ वरन उसने इस सुअवसरमे बीजलको पिताके सिंहासन पर नियमित रूपसे अभिषिक्त करनेके लिये विशेष प्रयत्न किया। बीजल अपने धाभाईकी सम्मतिसे ही सब कार्य्य करता था कुछ दिन पीछे रावल शालिवाहनने सिरोहीसे आकर देखा कि मेरा विश्वासहन्ता पुत्र सम्पूर्ण राजशक्तिको धारण करके सिंहासन पर दृढ़भावसे बैठा है। इस समय पुत्र बीजलने पिताके प्रति कुछ भी भक्ति न दिखाई वरन प्रकाशरूपस यह कह दिया कि "जयसलमेरके सिंहासन पर अब आपका कोई अधिकार नही है, आप सिंहासनसे अलग होगये है इस कारण आपकी जहॉ इच्छाहो वहॉ जासकते है"। रावल शालिवाहनने अपनी सारी प्रजाको भी अपने पुत्रकी पक्षपाती जानकर जब देखा कि राज्यपर हमारा अधिकार किसी प्रकार नही होसकता तब वह शीघ्र ही देरावर नगरके अधीन खड़ाल देशको चलेगये। यद्यपि सिंहासनसे भ्रष्ट होकर शालिवाहनने प्राचीन राजधानी देरावरका आश्रय लिया था परन्तु वह इस शोचनीय अवस्थासे बहुत दिनोतक जीवित न रहे। खिजरखॉ बलोचने वहॉ विद्रोह उपस्थित किया। रावल शालिवाहन उसको दमन करनेके लिये गये और तीनसौ सेवकोंके साथ वहीपर मारे गये। पिता शालिवाहनको राज्यसे निकाल कर बीजलने भी बहुत दिनोतक सुख न भोगा। एक समय किसी द्वेष विशेष

वश मनोरागसे बीजलने अपने धाभाई पर तलवार चला दी। उसने भी इस पर तलवारका वार किया। तब अत्यन्त लज्जित हो बीजलने आत्महत्या करके जीवनके दिन पूरे किये।

शालिवाहन और उनका पापी पुत्र बीजल इस संसारसे विदा होगये। अब सर्व साधारणमे यह प्रश्न उठा कि जयसलमेरके राज्यसिंहासन पर किसको बैठायाजाय। बहुतसे तर्क वितर्क होनेके पीछे यह निश्चय हुआ कि शालिवाहनके बड़े भाई केलन (जो कि मंत्रीसमाजसे निर्वासित हुए थे) उनको बुलाकर राज्यसिंहासनपर बैठाया जाय। सभीने इस बातको मान लिया और इस समय (सन् १२०० ईस्वीमे) केलन फिर अपने पिताके राज्यमे आकर पचास वर्षकी अवस्थामे अभिषिक्त हुए। केलनके औरससे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुए,—

१–चाचकदेव।	४–पीतमसी।
२–पाल्हन।	५–पीतमचंद।
३–जयचंद।	६–ओसराड।

दूसरे और तीसरे कुमारोके वंशकी संख्या अगणित हुई, और वह राजपूत वंश नन्ही नामसे विख्यात है।

इतिहाससे जाना जाता है कि इसी समय उक्त खिजरखॉने दूसरी बार पांच-हजार अश्वारोही सेनाके साथ सिन्धुनदीके पारसे आकर फिर खड़ाल पर आक्रमण किया। प्रथम बार इसी खिजरखॉने रावल शालिवाहनको परास्त किया था। अब जब केलनने सुना कि खिजरखॉ अपनी सेना सहित फिर खड़ाल देशपर आपहुँचा है तब उसने तुरन्त ही सात हजार यादवोकी सेना सजाकर युद्धकी तैयारी की, और रणभूमिमे जाकर उससे घोर घमसान युद्ध किया, इस भयकर युद्धमे खिजरखॉने पॉचसौ सेनाके साथ पीठ दिखाई। इस भॉति बड़ी वीरतासे शत्रुको परास्त करके वृद्धावस्थामे केलणने उन्नीस वर्षतक राज्य किया, और अंतमे इस अनित्य शरीरको त्याग कर वह सुरलोकको सिधार गये।

रावल केलणके प्राण त्याग करनेपर इनके ज्येष्ठ पुत्र चाचकदेव संवत् १२७५ सन् १२१९ ईस्वीमे जयसलमेरके राजसिंहासनपर बैठे। उन्होने सिंहासनपर बैठते ही चन्ना राजपूतोके साथ भयकर युद्ध किया। उस समय यदुपतिने दो हजार चन्ना राजपूतोका जीवन शेष करके उनकी चौदहसौ दूध देनेवाली गौओको अपने अधिकारमे करलिया, और चन्नाजातिको चिरकालके लिये उस देशसे निकाल दिया। चन्नाराजपूत अपने प्राणोके भयसे भयभीत हो शीघ्र ही जोहियोके अधिकारी देशमे जाकर रहे, विजयदर्पी रावल चाचकदेवने कुछ दिनोके पीछे सोढाके अधीश्वर राणा अमरसीके अधिकारी देश पर आक्रमण किया। अमरसी रावल चाचकदेवका अकारण

(१) [illegible] लिखा है कि उनकी औलाद जसर और मीराना राजपूत कहलाते हैं।
(२) [illegible] १५ सौ।
(३) [illegible]।

अपने राज्यपर आक्रमण करता हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुआ, परन्तु वह उसी समय चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा करके रणभूमिमे भी आडटा। यादवोके प्रवल पराक्रमसे पॅवारराजपूत परास्त होकर अपनी निज राजधानी अमरकोटको भाग गये। और अन्तमे अपनी एक परम सुन्दरी कन्या चाचकदेवको देकर उन्होने इस महा विपत्तिसे छुटकारा पाया।

इसी समयमे कान्यकुब्जके राठौर खेड़ मरुभूमिमे आकर धीरे २ अपनी शासन-शक्तिका विस्तार करते थे। राठौर गणोने अपने बाहुबलसे चारोओर अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये थे, अतएव रावल चाचकने सोढा जातिके अधीश्वरकी सेनामे अपनी सेना मिलाकर उन उदय होतेहुए राठौरोको दमन करनेका विचार किया। जशोल और वालोत्तरानामक दो देशोपर राठौरोने अपना अधिकार किया था अस्तु यदुपतिने उक्त सम्मिलित सेनाके साथ स्वयं उस देशमे जाकर राठौरोंके साथ घोर युद्ध किया। परन्तु राठौर वीर छाड़ा और उसके पुत्र टीड़ाने रावल चाचकको एक साथ राठौर राजकुमारीं देकर उनकी क्रोधाग्निको शान्त किया।

रावलचाचक प्रवल पराक्रमके साथ वत्तीस वर्ष तक राज्य करके सुरलोकको सिधारे उनके सम्मुख ही उनके इकलोते पुत्र तेजराव वयालिस वर्षकी अवस्थामे वसंन्त रोगसे ग्रसित होकर इस असार संसारको छोड़ गये थे। तेजरावके जैतसी और कर्णसी नामके दो पुत्र थे, कनिष्ट कर्णसीके ऊपर उनके दादा अत्यन्त प्रीति करते थे, मृत्यु शय्यापर शयन करके चाचकने समस्त सामन्त और कुटुम्बियोको बुलाकर सबसे कहा कि "आप हमारे इन अंतिम वचनोको मानो। मेरे छोटे पुत्र कर्णसीको मेरे उत्तरा-धिकारी रूपसे सिहासन पर अभिषिक्त करो"।

रावलचाचककी मृत्युके उपरान्त उनकी अन्तिम आज्ञानुसार सामन्तमंडलीने कर्ण-सीको जयसलमेरके सिहासन पर बडे समारोहके साथ अभिषिक्त किया। छोटेको राजमुकुट धारण करते हुए देखकर बड़ा पुत्र जैतसी अत्यन्त दुःखित और लज्जित हो अपनी जन्मभूमिको छोड़कर गुजरातमे जाकर वहाँके मुसल्मान अधीश्वरके आधीनमे रहने लगा। जिस समय रावल कर्णसी जयसलमेरके राजसिहासन पर सुशोभित हुए उसी समय मुजफ्फरखाँ नागौरमे पांच हजार सवारोके साथ हिन्दुओके ऊपर भयंकर अत्याचार करके उनको दुःखी कररहा था। इस समय नागौरसे पांच कोश[2]पर वराहा जातिके अधीश्वर भगोतीदासके आधीन एक हजार पांचसौ अश्वारोही सेना थी। भगौतीदासकी एक कन्या अत्यन्त रूपवती सुनी जाती थी, दुराचारी यवन मुजफ्फरखाँने उसी कन्याके रूपलावण्यकी प्रशसा सुन कर उसको लेनेकी इच्छासे उसके पास एक मनुष्यको भेजा। पापी म्लेच्छोको अपनी कन्या देना किसी प्रकार भी उचित न जानकर भगौतीदासने स्पष्ट कह दिया कि मै यवनको अपनी कन्या नही दे सकता। परन्तु भगौतीदास यह भी जानता था कि मुजफ्फरके साथ युद्ध करना मेरी सामर्थ्यसे बाहर है इस लिये उसने अपनी समस्त धनसम्पत्ति और

(१) चेचक। (२) उर्दूतर्जुमेमे १५ कोश।

कुटुम्बके लोगोको लेकर जयसलमेरपतिकी शरणमे जानेका निश्चय कर लिया। जब भगौतीदास अन्तमे सपरिवार जयसलमेरकी ओरको चले और दुरात्माखॉने यह समाचार सुना तब वह भी शीघ्र ही अपनी सेना लेकर उसके पीछे पीछे चला। और मार्गमे उसे जालिया दोनो सेनाओमे भयानक युद्ध होने लगा, यवनोकी सेना अधिक थी इस कारण मुजफ्फरखॉने बडी सरलतासे चारसौ वराहवंशी राजपूतोको मारकर भगौतीदासको परास्त करदिया, और अन्तमे भगौतीदासकी परम सुन्दरी कन्या तथा उसके और भी कुटुम्बकी स्त्रियोको वन्दी करके वह लेगया। इस महा अपमानसे अपमानित और परास्त हो भगौतीदासने शीघ्र ही जयसलमेरमे जाकर वहॉके अधीश्वरसे मुजफ्फरखॉके अत्याचारोको कह सुनाया। कर्णसीने पापाचारी यवनोके इन अत्याचारोको सुनकर शीघ्र ही अपनी वलवान सेनाको साथ लेकर मुजफ्फरखॉ पर आक्रमण किया। रावल-कर्णसीने घोरयुद्ध करके मुजफ्फरखॉ और उसकी तीन हजार सेनाका नाश करके भगौतीदासकी हरी हुई समस्त धन सम्पत्ति और कन्याको लाकर फिर भगौतीदासको दे दिया, इस प्रकार कर्णसी अट्ठाईस वर्ष राज्य करके स्वर्गको सिधारे।

कर्णसीके पीछे उनके पुत्र लाखनसेन सम्वत् १३२७ सन् १२७२ इसवीमे पिताके सिहासन पर बैठे। यह वड़े ही भोले पुरुप थे परन्तु उनको एक प्रकारका उन्माद सा रहता था। एक दिन रात्रिके समय गीदड़ वडे ऊचे स्वरसे चिल्ला रहे थे, लाखनसेनने सभासदको बुलाकर पूछा कि यह इतनी जोरसे क्यो चिल्ला रहे है? इस पर सभासदने उत्तर दिया कि वे दारुण शीतसे पीडित होकर चिल्ला रहे है, यह उत्तर सुनकर राजाने आज्ञा दी कि प्रत्येक शृगालको एक २ वस्त्र तैयार करादो। कई दिनोके पीछे राजाने फिर उनके चीत्कार शब्दको सुना और फिर उसी सभासदको बुलाकर पूछा कि क्यो इनको अभीतक कपडे नहीं वनवाये? इसके उत्तरमे सभासद्ने कहा कि महाराज कपड़े तो सबको वनवाकर देदिये गये है। तब लाखनसेन बोले, फिर यह इतना शोर क्यो मचा रहे है, अच्छा इनके रहनेके लिये मकान वनवादिये जॉय यह सब उसीवडे भारी घरमे रहा करेगे। इतिहास लेखक इसको लिखगये है कि राजकर्मचारियोने तुरन्त ही राजाकी इस आज्ञाका पालन किया। शृगाल इत्यादि पशुओके लिये मकान वनवाये गये। टाड् साहबने कहा है कि उन पशुशालाओंने आजतक कितने ही घर देखे जाते है। यह लाखनसेन, कानडदेव सोनगराका समसामयिक था उसकी जान लाखनकी रानीके सगुन जानने से बची थी. इसकी सोढा जातिकी रानी लाखनसेनके ऊपर अपना विशेप प्रभुत्व चलाती थी। रानीने अपने पिताकी राजधानी अमरकोटसे अपने वहुतसे कुटुम्बियोको जयसलमेरमे बुलाकर उनके हाथमे राज्यके एक २ विपयका भार अर्पण किया। परन्तु उसके उन्मादग्रस्त स्वामी लाखनसेनने उन सभीको मारकर उनकी लाशोको एक ओर डाल दिया। इतिहासमे लिखा है कि यह निर्वोध राजा चार वर्पतक यदुवंशियोके राजसिहासन पर स्थित रहा था।

लाखनसेनके पीछे उनके पुत्र पुण्यपालने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने मस्तक पर धारण किया, परन्तु यह इतने क्रोधी थे, कि इनके रूखे व्यवहारोंसे समस्त सामन्तमंडली अप्रसन्न रहती थी इस हेतु सभोंने मिलकर सम्मति करके उनको सिंहासनसे उतार दिया। और जैत्सीजी जो पहिले ही निकल कर गुजरातमे यवनोंकी सेनाके नेताओंके साथ जा मिले थे, सामन्तोंने उन्हींको बुलाकर उनके हाथमे राज्यशासनका भार अर्पण किया। अपने ही दोषसे सिंहासनसे अलग होकर पुण्यपालने जयसलमेरके राज्यसे कुछ दूर जाकर अपने रहनेके लिये एक स्थान बनवाया। कुछ समयमे लाखनसी नामक उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसी लाखनसीके पुत्र राणिङ्गदेवजीने, खरल राजपूत जातिके एक मनुष्यके साथ परामर्श करके षड्यंत्रका विस्तार किया, और जोहियोंसे मेल करके मरोट और थोरी नामक दस्यु जातिके अधिकारीसे पुंगल देश पर अपना अधिकार करलिया। उक्त दस्युदलके नेताने रावकी उपाधि धारण कररक्खी थी, राणिङ्गदेव उनको बदी करके पुंगल नामक देशमे सकुटुम्ब रहते थे। राव राणिङ्गदेवके सादोल नामवाला एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह जैसा विषयविलासी था वैसा ही वीरतामे भी विख्यात् हुआ।

जैतूसी सवत् १३३२ १२७६ ईस्वी मे जयसलमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उनके औरससे मूलराज और रत्नसी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए। मूलराजके पुत्र देवराजने जालौरके (सोनगड़े) जातिके अधीश्वर की एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया। जब मुहम्मद (खूनी) बादशाहने मंडोरके पड़िहार जातीय राणारूपसी जीके राज्य पर आक्रमण किया, तब राणारूपसीजीने उससे परास्त हो अपनी बारह कुमारियोंके साथ जयसलमेरपतिका आश्रय लिया। रावलने इनको अभय देकर बारू नामक स्थानमे रहनेके लिये एक स्थान देदिया।

सोनगडे वंशकी रानीके गर्भसे देवराजके जंवन, सिरवन, और हमीर नामके तीन पुत्र उत्पन्न हुए। यही हमीर एक महाबलवान् वीर थे, और यह महबोदवाले कम्पो-हसेनपर आक्रमण कर उनकी राजधानीकी बहुतसी धन सम्पत्ति लूटकर ले आये थे। हमीरके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, उनमे बडेका नाम जैतू, दूसरेका नाम लूनकर्ण, और तीसरे पुत्रका नाम मीरो था। इस समय गौरी अलाउद्दीनने भारतवर्ष राजाओंके विरुद्ध घोर युद्धकी अग्नि प्रज्वलित करदी थी। मुलतान और ठट्ठा उस समय दिल्लीपति अलाउद्दीनके अधिकारमे थे। इन दोनों देशोंका राजधन इस समय पन्द्रहसौ अश्व और पन्द्रहसौ खिच्चडोंकी पीठपर लादकर भक्खर नामक स्थानसे दिल्लीकी ओर बादशाहके निकट भेजा गया था। उस समस्त धनसम्पत्तिको लूटनेकी इच्छासे जैतरावके पुत्र अत्यन्त गुप्तभावसे रास्तेमे आ डटे। वे समस्त राजकुमार वैश्योंका वेष धारण कर सातसौ अश्वारोही और बारहसौ ऊँटोंकी सेनाको साथ ले बाहर हुए, पञ्चनदमे एक नदीके किनारे जाकर उन्होंने देखा कि चारसौ मुगल और चारसौ पठान अश्वारोही उस समस्त धनको लिये हुए जा रहे है। भाटियोंने उस सम्राट्सेनाके पीछे २ जाकर एक स्थान पर विश्राम लिया, दैवयोगसे मुगल और पठानोंने

भी उसी स्थान पर विश्राम करनेके लिये अपने डेरे डालदिये। जब रात्रि होगई और समस्त मुगल पठान निद्रित अवस्थामें हुए तब उसी समय भाटियोंने उस निद्रित यवन सेनापर जाकर धावा किया, और सबको मारकर सारे रत्न और धनको लूटकर वे जयसलमेरमें ले आये। मुगल और पठानोंकी सेनामेंसे दो चार मनुष्य जो किसी तरह भाग्यवश बच गये थे बादशाहके सम्मुख जाकर रोये। उन्होंने भाटियोंके इस अत्याचारका सारा वृत्तान्त कहा, इस पर बादशाहने तुरन्त ही भट्टीराजकुमारोंसे इसका बदला लेनेके लिये सेना तैयार करनेकी आज्ञा दी। इधर यदुपति रावल जैतसीने भी जब सुना कि यवन सम्राट् जयसलमेरपर आक्रमण करनेके लिये सेना सहित चलकर अजमेरके समीप सागर स्थानपर आ पहुँचा है, तब निश्चिन्त न रहकर उन्होंने भी प्रबल उद्योगके साथ शत्रुके करालगालसे रक्षाके लिये अपनी तैयारी की, उन्होंने किलेके भीतर बहुतसे धान्य रक्खे और किलेकी चारों ओरकी दीवारोंपर पत्थरके बड़े२ टुकड़े सजा कर रक्खे। उसने यह निश्चय किया कि शत्रुओंकी सेना जैसी ही किलेके समीप आवैगी वैसे ही उसके ऊपर पत्थरोंकी वर्षा करके उसका नाश करेंगे। और वृद्ध मनुष्य और कुटुम्बके मनुष्य तथा रनवासकी सभी स्त्रियोंको मरुक्षेत्रके भीतर भेजदिया। रावल जैतसी इस प्रकारसे अपनी रक्षाकी तैयारी कर अपने दो पुत्र और पांच हजार सेनाको साथ ले किलेमें रहने लगे। और देवराज और हमीरकी एक सेनाको साथ लेकर बाहरसे यवन सेनाके मोरचे तोडनेको सन्नद्ध हुए। अलाउद्दीन तो स्वयं उस समरक्षेत्रमें न आकर अजमेरकी ओरको गया और भादोंके मेघोंकी समान लोहेके बख्तर पहरे हुए अगणित खुरासानी सेनाने जयसलमेरको जा घेरा। जयसलमेरके ५६ बुर्जकी रक्षाके लिये तीन हजार सात सौ योधा खडे हुए थे, और दो हजार सैनिक आवश्यकता होनेपर किलेपर किलेके भीतर ही सहायताके लिये तैयार थे। पहिले सप्ताहमें जब कि यवन सेना अपनी रक्षाके लिये मोरचेबन्दी तैयार कर रही थी कि भाटीयोंकी सेनाके अस्त्राघातसे सात हजार यवन मारे गये परंतु मीर महबूबखाँ और अलीखाँ नामके दो यवन सेनापति बचीबचाई सेनाको साथ लिये रणभूमिमें डटे रहे। यवनसेनाको दो वर्षतक तो जैसलमेर पर विवश होकर घेरा डाले रहना पडा क्योंकि उनके लिये मंडोरसे जो रसद आती थी उसे उक्त देवराज और हमीर लूटलाट कर बराबर कर देते थे और किलेवालोंको बखूबी रसद पहुँचती जाती थी, इसी प्रकार क्रमानुसार आठ वर्षतक दोनों ओरकी सेना युद्ध भूमिमें डटी रहीं। आठ वर्षके पीछे जयसलमेरपति जैतसी जी इस असार संसारसे। चलबसे उनकी दाह क्रिया किलेमें ही कीगई।

इस प्रकार दीर्घ कालतक स्थाई समर रहनेमें रत्नसी और यवन सेनापति नव्वाब महबूबखांमें एक प्रकारकी मित्रता होगई और दोनो परस्पर इतने मित्र बनगये कि वे प्रतिदिन अपने डेरोंको छोडकर मार्गमें जा एक खेजडाके वृक्षके नीचे मिला करते थे, उस समय उनके साथमें बहुत थोडे सेवक रहते थे। वह प्रतिदिन उसी खेजडाके वृक्षके नीचे अनेक प्रकारकी वार्तालाप किया करते, परन्तु जिस समय युद्ध हुआ करता उस समय वे दोनों परस्पर अपनी विलक्षण वीरता प्रकाश करके अपनी अपनी रक्षामें

नियुक्त होजाते थे। इसी समय जयसलमेरके राजा जैतूसी अठारह वर्षतक राज्य करके पीछे स्वर्गधामको सिधार गये।

जैतूसीजीके प्राण त्यागने पर उनके पुत्र मूलराज (तृतीय) ने संम्वत् १३५० (सन् १२९४ ई) मे शत्रुओकी सेनासे घिरे हुए किलेके भीतर ही राजतिलक ग्रहण किया। उस समय यादवश्रेष्ठ रत्नसी, यवनयोद्धा नव्वाव महवूवखॉके साथ नियम पूर्वक उक्त वृक्षके नीचे वैठे हुए परस्पर वार्तालाप कररहे थे, कि उसी समय मूलराजका अभिषेक मूलक महोत्सव आरम्भ हुआ। नव्वाव महवूवखॉने विस्मित होकर रत्नसीसे पूछा कि किलेमे किसलिये आनंद होरहा है? उन्होंने उसी समय किलेके आनन्दका यथार्थ कारण कह सुनाया। नव्वाव महवूवखॉने वह समाचार सुनकर कहा, कि मित्र! आपके साथ जो हमारी मित्रता होगई है, और इस प्रकारसे प्रतिदिन इस स्थान पर आकर परस्परमे वार्तालाप होती है इसकी खवर अलाउद्दीनको होगई है उन्होने कहला भेजा है कि तुम्हारे दोषसे ही जयसलमेरका किला अपने अधिकारमे नही हुआ है और उन्होने मेरे ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो यथासम्भव शीघ्र ही किलेको अधिकारमे करनेकी आज्ञा दी है, हे मित्र! इस कारण मै कल प्रात:कालहीसे अपनी सेना साथ ले किलेपर अधिकार करनेमे लगूँगा"।

नव्वाव महवूवखॉके ऐसे वचन सुनकर रत्नसी किञ्चित् भयभीत न हुए। वह नियमित समय पर किलेमे लौट आये।

दूसरे दिन प्रभात होते ही यवनसेनापति महवूवखॉने समस्त यवनसेनाके साथ जयसलमेरके किले पर आक्रमण किया। उस आक्रमणके होते ही भयंकर संग्राम उपस्थित हुआ। एक पक्षमे यवनगण किलेपर अधिकार करनेके लिये प्रवल वल विक्रमके साथ प्रयत्न करने लगे, दूसरी तरफ यादवोकी सेना किलेकी रक्षा करनेमें तत्पर हुई। इस भयानक युद्धमे नौ हजार यवनसेना मारी गई। तव नव्वाव महवूवखॉ अपने प्राणोके भयसे, वची हुई सेनाको साथ लेकर मैदानसे भाग गया। परंतु उसने वहुतसी सेना सहायताके लिये इकट्ठी करके फिरसे किलेको घेर लिया, जव एक वर्ष तक यवनोकी सेना इस प्रकारसे किलेको घेरे रही और किलेकी भीतरकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे अत्यंत कष्ट पहुँचने लगा। तव जयसलमेरपति मूलराजने अपनी रक्षा करना सव भॉतिसे असंभव जानकर और शत्रुके व्यूहको छेदन कर भाग जानेमे भी अपनेको असामर्थ्य देखकर उन्होने अपने ज्ञाति वांधव कुटुम्वी और सरदारोको वुलाकर कहा, " कि कई वर्षोंसे हम अपनी राजधानीकी रक्षा करते हुए आये है, परन्तु इस समय हमारे पासकी भोजनकी सामग्री चुक गई है और यहांसे निकल कर भोजनके लानेका भी अव कोई उपाय नहीं रहा है क्योकि शत्रुओने प्रत्येक द्वारोको भली भॉतिसे घेर लिया है। अव हमे क्या करना उचित है सो सलाह दीजिये?" राजाके यह वचन सुनकर सिहर और वोकमसी नामक दो सामन्तोने कहा, " कि रनवासकी रानियां जौहर

व्रत अवलम्वन करें और हमलोग रणभूमिमे अपने २ जीवनका वलि देंगे। उधर जयसलमेरके किलेमे तो यादवगण यह गोष्ठी कर रहे थे इधर यवनसेनाको इस वातकी लेशमात्र भी आशा नही थी कि यादवोकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे वड़ा कष्ट उपस्थित है इस लिये वे उसी समय व्याकुल हतोत्साह और निराश हो किलेका घेरा छोड़कर चले गए। वे समझते थे कि यादवोकी सेना वहुत दिनोतक किलेकी रक्षा करनेमे समर्थ है। इस कारण किलेको रोकना वृथा है।

सम्राट्की सेनाके भागते ही यवनसेनापतिके छोटे भाईको रत्नसीने जयसलमेरके किलेमे वुलाया और उसको मित्रका भ्राता जानकर उन्होने उसका वड़ा आदर सत्कार किया। नव्वाव महवूवखॉके भाईने किलेमे जाते ही देखा कि भोजनके अभावसे यादवोकी सेना महा कष्ट पारही है, तव वह किंचित् भी विलम्व न करके वहॉसे निकल भागा और सम्राट्की, सेनाके साथ मिला। उसने अपने भाईको किलेकी भीतरी अवस्थाका सव समाचार कहसुनाया। नव्वाव महवूवखॉ इस शुभ समाचारको पाते ही उसी समय अपनी सेनाको साथ लेकर जयसलमेरकी ओरको चला, और वड़ी शीघ्रतासे जाकर उसने फिर किलेको घेर लिया। जव यदुपति मूलराजने देखा कि यवनोने पुनः किला आ घेरा है तो वे अत्यन्त विस्मित हुए। वहुत सी छानवीन करनेसे जाना गया कि रत्नसीके अपराधसे ही जयसलमेरके भाग्यमे यह कालरात्रि उपस्थित हुई है।

मूलराजने अत्यन्त क्रोधित हो रत्नसीको वुलाकर वडी फटकार वतलाई और कहा,–"कि इस समय तुम्हारे दोषसे ही हमारा यह सर्वनाश उपस्थित हुआ है। तुमने पापात्मा यवनोके साथ मित्रता करके अपने पैरमे जानवूझकर आप कुल्हाडी-मारी है अव इस समय क्या करना उचित है?–इस महा विपत्तिसे जयसलमेरका किस प्रकारसे उद्धार होसकता है? रनिवासकी रानियोके सतीत्वकी रक्षा किस प्रकारसे होगी? यवनोने इस समय दुगुने वलके साथ किलेको घेर लिया है, इस लिये हमे अपने कल्याणकी आशादृष्टि नही आती?।

वडे भाईके ऐसे वचन सुनकर अत्यन्त उत्तेजित हो रत्नसी क्षत्रियोचित वचन वोले, उन्होने कहा "हम इस समय जेसी अवस्थामे पडे है, उससे स्वजातिकी रक्षा होनेका केवल एक उपाय है। पापी यवनोके हस्तगत होनेकी अपेक्षा मोक्ष मार्गका अवलम्वन करनेसे यदुवंशियोका सन्मान रहेगा और यही हमारा कर्तव्य भी है। जवकि हम देखते है कि यवनोकी सैन्यसंख्या अधिक है, और हमारे पासका समस्त भोजन भी निवटगया है, तव जयकी आशा करनी वृथा है। अस्तु यवनोकी आधीनताके वदले आत्मघात करके मरजाना कहीं अच्छा है। यदि एकवार भी यवनोकी सेना इस पवित्र जयसलमेरके किलेमे आकर अपना अधिकार करलेगी तो वह हमारे ऊपर अत्याचार करनेमे किसी भांतिकी भी त्रुटि न करेगी। हमारी पवित्र साध्वी सती [illegible] स्त्रियोके शरीर पर यवनोका हाथ लगनेसे उसमे घोर कलंक लगेगा, और यवनगण [illegible] पहिले यही काम करेंगे। इस अवस्थामे [illegible] पहिले रानियोको

जौहार व्रतकी आज्ञा दीजाय। अमरावतीकी समान इस जयसलमेरमे जो सुन्दर २ महल वनवाये है, हमारे परास्त होते ही यह पापी उनमे सुखसे विहार करेंगे, इसको हम कभी नही सहन कर सकते, इस कारण इन सभी मकानोको तोड़फोड़ डाले और जितनी धनसम्पत्ति है उसे इसी समय नदीमे वहादे। इसके पीछे हम सभी यदुवंशी नंगी तलवारे हाथमे ले रणभूमिमे जाकर शत्रुओका संहार करते हुए स्वर्गको सिधारे और इसीसे हमारे पवित्र यदुवंशके सम्मानकी रक्षा होगी"। वीरश्रेष्ठ रत्नसीके यह वचन सुनकर मूलराज अत्यन्त संतुष्ट हुए, और समस्त सामन्त तथा कुटुम्बी जनोको इकट्ठा कर उन्होने उनसे यह वचन कहे "आप सभीका जन्म वीरवंशमे हुआ है, और आपके अधीश्वरोने अपने स्वार्थ और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रवल वाहुवल धारण किया है, आपलोग सदैव क्षत्रियोचित मार्गपर ही चलते आये है, किस क्षत्रिय जातिने आपकी समान इस प्रकार अपने कर्तव्यको पालन किया है? संग्रामभूमिमे महावलवान् हाथीतक भी आपके सम्मुख नही ठहर सकता। हमारे सम्मानकी रक्षाके लिये आपने तलवार हाथमे ली है अव आप इसी तलवारसे शत्रुओका संहार करके जयसलमेरका सच्चा उद्धार करनेके लिये आगे वढ़िये"।

यदुपति मूलराज इस प्रकारसे समस्त यादवोको उत्तेजित कर अन्तमे रतनसीको अपने साथ ले रनिवासमे गये सव रानी और कुटुम्बकी स्त्रियोको इकट्ठा करके, दोनो यदुवंशी सवसे कहने लगे"कि हमने अपने पिताके धर्म और जातिके गौरवके सम्मानकी रक्षाके लिये इस महा विपत्तिमे जीवन उत्सर्ग किया है। इस समय हमारी जो अवस्था होरही है उससे उद्धार होनेका कोई उपाय समझमे नही आया तव हम हतउद्योग होकर यहॉ आये है। इसमे कोई भी संदेह नही है कि दुराचारी यवनोकी जय होते ही वे पापी हमारे प्राण नाश कर, तुम्हारा सारा धन, विधिदत्त धन, और क्षत्रियोकी स्त्रियोका एकमात्र सार–धन, तुम्हारे पवित्र सतीत्व–धर्म धनको नष्ट करेंगे। इस अवस्थामे तुम सभीको सुहागव्रतका अवलम्वन करना उचित है। इस समय तुम सभी जौहर व्रत करके अपने प्राण त्याग दो। हम लोग शीघ्रही सुरलोकमे आकर तुमसे मिलैंगे। यदुपति मूलराजकी सोढा वंशीय ज्येष्ठा रानीने पतिके ऐसे वचन सुनकर विनीत भावसे हॅसते हॅसते कहा–नाथ! जौहरव्रतके अवलम्वनके लिये आज रात्रिमे ही हम सारी तैयारी करलेगी और कल्ह प्रभात होते ही हम सव सुरपुरको चल-वसेगी"। पटरानीकी तरह और भी समस्त यादव कुल ललना और सामन्तोकी स्त्रियोने प्रज्वलित अग्निमे आहुति होनेका दृढ़ संकल्प किया।

अतएव! उसी कालरात्रिमे यदुवंशियोकी समस्त स्त्रियां अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये जौहरकी तैयारी करने लगी। प्रभात होते ही रनिवासके द्वार पर हृदय-भेदी भयंकर दृश्य दिखाई देने लगा वाला, प्रौढ़ा, और वृद्धा सव अवस्थापन्न

(१) स्वामीकी मृत्यु होनेके पहिले जो सती स्त्री प्रज्वलित अग्निमे दग्ध होती थीं उसको सुहागवल कहते थे, और स्वामीकी मृत्युके पीछे इस प्रकारसे दग्ध होनेको भी सुहागवल कहा है।

यदुवंशियोकी स्त्रियॉ स्नानकर रेशमी वस्त्रोको पहिरे देवताओका पूजन करके हरिगुण गान करती हुई इकट्ठी हुई, तदनन्तर प्रत्येक स्त्रीने आत्मीय और जातिवर्गके लोगोकी चरणवदनाके उपरान्त जौहरव्रतका प्रारभ किया। पर्वतकी समान प्रज्वलित अग्निशिखा मे वे राजकुल ललनाये अपने २ शरीरको स्वयं आहुति देने लगी। बालिकासे लेकर वृद्धातक इस भाति चौवीस हजार स्त्रियोने अग्निमे प्रवेश करके प्राण त्यागे। किसी किसीने तलवारसे ही अपने गले काट डाले। एक तो अग्निका तेज उसके ऊपर सती स्त्रियोके सतीत्वके तेजने उसको और भी भयकर करादिया। समस्त जयसलमेरमे उस अग्निका तेज प्रकाशमान होगया, उस समय यादवोने स्त्रियोके बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणोको भी उसी अग्निमे डालदिया। राजमहलकी प्रत्येक वस्तु भस्मीभूत होगई। शत्रुसेनासे स्पर्श किये जानेके लिये रनवासका एक तिनकातक शेष न रक्खागया। यदुपति मूलराज आज इतने दिनोके पीछे श्रीहरिके वंशका लोप होता हुआ देखा, उस समय आप भी महा दु खित हो प्रत्येक जाति और कुटुम्बियोके साथ स्नान करके कुलदेवताकी पूजा कर दरिद्रोको बहुतसा धन दे रणशय्या सजाने लगे, सभीने वख्तर पहने, शिरपर तुलसीकी शाखा और गलेमे शालिग्रामकी मूर्ति बाँधी, और मस्तक पर टोप[1] धारण कर उन्होने एक दूसरेसे अंतिम आलिगन किया। इसके पीछे वे सग्रामकी बाट देखने लगे, तीन हजार आठसौ यादव वीरोने इस भाति पैतृक धर्म और जातीय समानकी रक्षाके लिये क्रोधोद्दीपित मुखसे राजाके साथ जीवन त्याग किया।

रत्नसीके घडसी और कानड दो पुत्र थे। इस समय घड़सीकी अवस्था बारह वर्षकी थी, रत्नसीने उन दोनो कुमारोके प्राण बचानेकी अभिलाषासे शत्रुओके नेता महबूबखांके पास यह कहला भेजा कि आपको मेरे इन दोनो कुमारोके जीवनकी रक्षा करनी होगी। मुसलमान नेता महबूबखांने उस दूतके सम्मुख ही शपथ करके कहा कि मै अपने मित्रके दोनो पुत्रोके जीवनकी रक्षा करूँगा। इसके पीछे महबूबखाने अपने दो विश्वासी सेवकोको रत्नसीके पास भेजदिया। रत्नसीने अपने दोनो कुमारोको हृदयसे लगा लिया, और उनके शिरपर हाथ धर कर आशीर्वाद दिया, इसके पीछे उन्होने अपने दोनो पुत्रोको महबूबखॉके सेवकोके साथ भेजदिया। घडसी और कानडके डेरोमे आते ही महबूबखॉने उन्हे बडे आदर सम्मानके साथ लिया, और इनके शिर पर हाथ फेर कर धीरज दे भलीभॉतिसे अभय दान दिया। महबूबखॉने उसी समय दो ब्राह्मणोको इन दोनो कुमारोकी सेवामे नियुक्त करदिया।

इधर सूर्यदेवके उदय होते ही महबूबखॉंकी समस्त सेना साक्षात् कालरूप संहारमूर्तिसे जयसलमेरके किलेको जीतनेके लिये आगे बढी। शत्रुओकी सेनाको आताहुआ

---

(१) रणभूमिमे मृत्यु होनेसे स्वर्गकी अप्सराओंके साथ विवाह होता है–क्षत्रियवीरोका ऐसा विचार है। इसीसे वह विवाहके समयमें जिस भातिका टोप (मौर) धारण करते है, रणभूमिमे प्राण त्यागना निश्चय सकल्प कर अप्सराओंके साथ विवाह होनेकी आशासे इस समय भी उसी तरह टोप (मौर) धारण किया।

देखकर यदुपति मूलराज उन तीन हजार आठसौ वीर योधाओके साथ समर सागरमे कूद पडे। इस भयकर युद्धमे वीर श्रेष्ठ रत्नसी एकसौ बीस यवनोका प्राणनाश करके महानिद्रामे सो गये, धीरे२ युद्ध बढता ही गया। यदुपति मूलराजने भी कईसौ यवन सेना का संहार करके अतमे रणशय्यापर शयन किया। उनके साथ सातसौ यादव मारे गये, अन्तमे युद्ध शान्त होगया, विजयी यवन वीरनादसे जयसलमेरको कपित करते हुए किलेमे जा पहुँचे। यवन सेनापति महबूबखॉने मूलराज और रत्नसीकी लाशको रणभूमिसे मंगाकर यदुवशियोकी रीतिके अनुसार उनकी दाहक्रिया करवाई। सम्वत् १३५१ (सन् १२९५ ईसवीमे) इस प्रकारसे यदुवश फिर विध्वंस होगया, देवराज जो सेनाके साथ बाहर रहते थे, उन्होने भी इस समय ज्वररोगसे प्राण त्याग किये। यवनोकी सेना इस प्रकारसे यदुवशको विध्वस करके दो वर्षतक जयसलमेरके किलेमे रही। अन्तमे उस किलेकी दीवारे तोडकर और समस्त दरवाजोमे ताले लगाकर नव्वाब वहॉसे चलागया। जयसलमेरका दुर्ग इस प्रकारसे बहुत समय तक शोचनीय अवस्थामे पड़ारहा। क्योकि न तो यदुवशियोमें उस किलेके सुधरानेकी सामर्थ्य थी न उसकी रक्षा करनेकी।

चतुर्थ अध्याय ४.

विध्वंस हुई जयसलमेरमे महोवेके राठौरोका आगमन, और वहॉ उनका निवास–भट्टी सान्त दूदाजीका राठौरोको परास्त करना–दूदाका रावलकी उपाधि धारण करना–तिलोकसीका सम्राट् फीरोज़शाहके घोडेको चुराना–दूसरी बार जयसलमेर पर आक्रमण, और फिर जोहरका अनुष्ठान–दूदाका प्राण नाश–भट्टीराजके दोनो कुमारोको स्वाधीनताकी प्राप्ति–रावलघड़सीको जयसलमेरके राज्यकी प्राप्ति और उनका वहॉ निवास–देवराजके पुत्र केहर और उसके भविष्य भाग्यका प्रकाश–जसहडके पुत्रोद्वारा घडसीके प्राणनाश–घड़सीकी विधवा रानीका केहरको दत्तक लेना–केहरको राज्यसिहासनकी प्राप्ति–विमला देवीका प्रज्वलित चितापर चढ़ना–हमीरके पुत्रोको उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति–मेवाड़के राणाका जैतसीके पास विवाहका प्रस्ताव भेजना–उनके प्रस्तावका त्याग–दोनो भ्राताओका प्राणनाश–राव रणिगदेवका अनुताप–केहरके वशधर बडे पुत्र सोमका गिरावमे जाना और वहां निवास करना–पिताकी हत्याका बदला लेनेके लिये रणिगदेवके पुत्रोका मुसलमान धर्म अवलम्बन करना–यदुराजका उनकी सारी धनसम्पत्ति और राजसंसारसे मुक्त करना–अभोरिया भट्टियोके साथ उनका सम्मिलन–केहरके तीसरे पुत्र केलणका दुर्गवद्ध स्थानमे रहना–खडालसे दहियादिकोंको परास्त करके भगाना–ठट्टा वा गारादेशपर केलणका क्रोहर नामक दुर्ग बनाना–अमीरखां कुरईके आधीनमे स्थित जोहिया और लगाह गणोका उनपर आक्रमण और उनकी पराजय–चाहिल और मोहिलोको वशमे करना–पंचनद राज्यमे अपने राज्यका अधिकार–रावल केलणके समावंशकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण–समा जातिका विवरण–केलणका समाराज्य पर अधिकार–सिन्धुनदीको अपनी सीमामे करना–केलणकी मृत्यु–चाचकको राज्यसिहासनकी प्राप्ति–मरोटमे राजधानीका स्थापन–मुलतानके

अधिनायक लोगोंका आक्रमण–दूसरी बार विजय प्राप्ति–पचनदमें एक सेनाका रखना–दुद्दीजातिके अधीश्वर महपालको परास्त करना–असनीकोट–उसके सम्बन्धमें प्रवाद–सातलमेरके साथ विवाद–उसका फल–हैवतखां–राव चाचकका पीली बँगादेशपर आक्रमण–खोडरका वृत्तान्त–रगाहोंका उसकी सेनाको दीनापुरसे भगाना–राव चाचककी पीड़ा–मुलतानके अधीश्वरको युद्धके लिये बुलाना–दीनापुरमें गमन–चाचककी हत्या–कम्बोहका प्रतिहिंसा दान–वरसलका दीनापुरमें फिर राजधानी स्थापन करना–किरोर स्थानमें जाना–लगाह और वल्लोचोंका आक्रान्त होना–उनको परास्त करना–रावल वरसीके साथ रावल वरसलकी साक्षात्–बाबरका मुलतानको जीतना–परिवर्ती छ राजाओंका विवरण—

पूर्व अध्यायमें जो यदुवंशियोंके वंशाविध्वंसका विवरण किया गया है, उसके कई वर्ष पीछे महोबाके नेता मालाजीके पुत्र जगमालने जयसलमेरकी राजधानीको विध्वंस अवस्थामें पड़ी हुई देख और यदुवंशियोंमेंसे किसीको वहां न पाकर स्वयं जयसलमेरपर अपना अधिकार कर वहाँ राजधानी स्थापन करनेका विचार किया। वास्तवमें यदुवंशका प्राय एक बार ही लोप होगया था, इस कारण यदि राठौर सामन्त इस सुअवसरको विचार कर अनाथ भट्टियोंकी राजधानी जयसलमेरपर अपना अधिकार करके वहाँ रहनेकी इच्छासे आगे हुए तो इसमें आश्चर्य क्या है, जगमाल राठौरने सातसौ गाड़ी रसद और बहुत सी सेनाके तथा कुटुम्बी जनोंको साथ लेकर जयसलमेरमें प्रवेश किया। पन्तु उसके मनकी कामना पूरी न हुई। इस समय भट्टी राजवंशीय जसहडके दो पुत्र दूना और तिलोकसीजीने जब सुना कि एक राठौर हमारेवंशकी राजधानीपर अपना अधिकार करके वहां रहनेके लिये तैयार हुआ है तब वे अपने वंशके गौरवकी रक्षाके लिये समस्त कुटुम्बी और सेनाको साथ ले शीघ्रही जयसलमेरमें आपहुंचे। और उन्होंने चढ़ी सवारी राठौरोंपर आक्रमण किया और भयंकर युद्ध करके अन्तमें उनकी सारी धनसम्पत्ति लूटकर उनको अपने प्रबल पराक्रमसे भगादिया।

विजयी दूदाने इस भांति अपने प्रबल पराक्रम और बाहुबलसे राठौरोंको भगादिया और फिर अपने वंशकी प्राचीन राजधानी अपने हाथमें करली प्रजावर्गने भी सतुष्ट होकर उनको जयसलमेरका स्वामी स्वीकार कर रावलकी उपाधि देनेमें क्षणमात्रकी भी विलम्ब न की। दूदाने जयसलमेरके राज्यसिंहासनपर बैठकर टूटे फूटे मकान और किलेको फिर बनवा लिया। और जयसलमेर आज फिर कई वर्षोंके पीछे अपनी पहिली मूर्ति धारण करके देखनेवालोंके मनको आनन्दित करने लगा।

रावल दूदाके औरससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए। दूदाके भ्राता तिलकसी महावीर विख्यात थे। उन्होंने अपने बाहुबलसे बलोच मुसलमानों, माङ्गोलियों, देवराजाति और आबूशिखर तथा जालौरके सोनगड़ोंको परास्त करके अपनी वीरताकी पराकाष्ठा दिखाई थी। तिलोकसी बारम्बार विजयी होनेसे इतने साहसी होगये थे कि इसने सेना सहित अजमेरमें जाकर अपने बाहुबलका परिचय दिया, दिल्लीके बादशाह फीरोज शाहने अपने बहुतसे उत्तम २ घोड़े अजमेरसे आनासागरमें स्नान करानेके लिये भेजे थे एक समय उसी वीरश्रेष्ठ तिलकसीने निर्भय हो उन सब घोड़ोंको लूट लिया और फिर आप जयसलमेरमें चला आया। अलाउद्दीनके अप्रसन्न होनेसे यदुवंश जिस

भांति एक वार लुप्त होगया था, तिलकसीने भी उसी भांति वादशाह फिरोजशाहके घोडोको लूट कर अपने भाग्यमे कालरात्रि वुला ली।

जब सम्राट् फिरोजशाहने सुना कि जयसलमेरके अधीश्वरके भ्राता तिलकसी असीम साहस करके हमारे वहुमूल्य घोड़े रक्षकोके हाथसे छीनकर लेगया है, तब तो उसके क्रोधका ठिकाना न रहा, उसने शीघ्रही जयसलमेरके विध्वंस करनेके लिये एक वलवान् सेना भेजी। यदुभाट्टियोके इतिहास लेखक इस वातको लिखते है कि पहिलेकी समान इस वार भी जयसलमेरमे भयंकर घटना उपस्थित हुई। प्रवल पराक्रमी यवनसेनाके विरोधसे अपनी रक्षा होना कठिन जानकर यदुवंशियोके अधीश्वर दूदा और तिलकसीने रनिवासकी सोलह हजार रानियोको अग्निमे भस्म करके सोलहसौ[1] स्वजातीय सेनाके साथ युद्धक्षेत्रमे प्राण त्याग कर अपने जातीयके गौरवकी रक्षा की। इतिहाससे जाना जाता है कि रावल दूदाने दश वर्ष तक जयसलमेरमे राज्य किया था, इस समय फिर जयसलमेरकी पहिलेकी समान अनाथ अवस्था होगई।

संम्वन् १३६२ सन् १३०६ ईसवीमे रावल दूदा रणभूमिमे कुटुम्बियो समेत मारेगये, उसी युद्धमे पूर्व कथित नव्वाव महवूवखाँकी मृत्यु होजाने से उसके मित्र रत्नसीके जो दोनो कुमार थे इस समय उनकी रक्षाका भार महवूवखाँके दो पुत्र गाजीखा और जुलफ़कारखाँके ऊपर पड़ा। इस समय कानड अत्यन्त गुप्तभावसे एक वार जयसलमेरमे आया और ज्येष्ठ घड़सीने जो देश पश्चिम प्रान्तमे मेहवाके अधिकारमे था वहाँ जाकर महवाके राठौर नेताकी भग्नी विमला देवीके साथ विवाह[2] किया। जिस समय घड़सी विवाहकी धूमधाममे लग रहे थे उस समय उनके रिश्तेदार सोनिङ्गदेवने आकर इनके साथ साक्षात् किया। सोनिङ्ग देव जैसे भीमकाय थे वैसे ही वलवान् भी थे। विवाह होजानेके पीछे घड़सी उन महावली सोनिगदेवको अपने साथ दिल्लीको लिवा ले गये।

दिल्लीके सम्राट्ने इस भीमकाय वीर पुरुपको देख कर इनके वाहुवलकी परीक्षा करनी चाही। खुरासानके अधीश्वरने दिल्लीके वादशाहको एक लोहेका वना हुआ धनुष भेटमे दिया था। उस धनुपकी प्रत्यंचा चढ़ाना कोई साधारण वात नहीं थी। वादशाहने विचारा कि हिन्दू वीर कभी भी इस धनुपके चढ़ानेमे समर्थ नही होगा परन्तु वीर श्रेष्ठ सोनिगदेवने उस धनुपको इतना झुकाया कि उसके दो टुकडे होगये, वादशाहने हिन्दूवीरके इस वाहु वलको देख कर उसको वड़े आदरके साथ घरके भीतर लेगया। इसी समय तैमूरशाहने दिल्लीपर आक्रमण किया। घडसीने वादशाहकी ओरसे इतना वलविक्रम प्रकाश किया और सम्राट्की ऐसी सहायता की कि जिससे वह समस्त उपद्रव एक वार ही शान्त होगया। वादशाहने घडसीके इस असीम वलविक्रमसे प्रसन्न हो पुरस्कार मे उनके पिताकी राजधानी जयसलमेरके शासनका भार उनके हाथमे अर्पण करके रीतिके अनुसार उन्हे सनद भी लिखदी, और जयसलमेरके किलेको तैयार करनेकी आज्ञा दी।

---

(१) उर्दू तर्जुमेमे १७ सौ लिखा है।

(२) उर्दूतर्जुमेमे इतना और लिखा है कि विमलादेवी वेवा थी और देनड़ाको व्याही जाचुकी थी।

यदुवंशके भाग्यका आकाश मानो फिर निर्मल होगया, घडसी एकमात्र अपने बाहुबल और विक्रमसे सौभाग्य लक्ष्मीकी गोदमे बैठकर फिर जयसलमेरके यदुवंशियोकी लुप्त हुई कीर्तिको प्रकाशमान करनेके लिये आगे बढे। उनकी जाति और कुटुम्बके मनुष्य अनेक स्थानमे रहते थे, घड़सीने उन सबको बुलाया, और महेवाके अधीश्वर अपने परम मित्र जगमालके आधीनकी सामन्तमंडलोकी सहायतासे शीघ्र ही बडी भारी सेना तैयार कर उन्होने जयसलमेरमे जा चारोओर शान्ति स्थापन करके अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया। हमीर और उनके पक्षवालोने घडसीको आया हुआ देखकर इनको यदुपतिरूपसे स्वीकार किया। परन्तु जसहडके पुत्र घडसीके सिहासन पर बैठनेसे सतुष्ट न हुए।

हमारे पाठकोने पहिले अध्यायमे वीरश्रेष्ठ देवराजके वृत्तान्तको पढलिया है। देवराजने मडोरके अधीश्वर राणा रूपडाकी कन्याके साथ विवाह किया था। उसी राजकुमारीके गर्भसे और देवराजके औरससे केहर नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिस समय बादशाहकी सेनाने जयसलमेरको घेर लिया था उस समय उक्त केहर और उसकी माताको मडोरको भेज दिया गया था। जिस समय केहरकी अवस्था बारह वर्षकी थी उस समय वह अपने नानाके यहाँ ग्वालोके साथ जगलमे जाया करता था और बच्चोके साथ जगलमे खेलता हुआ फिरा करता था, एक समय केहर खेलता २ जाकर एक सर्पके बिलके पास लेट रहा, केहरके निद्रित होते ही उस बिलमेसे सर्प निकला और केहरके मस्तक पर अपने फनसे छाया करके बैठा रहा, इसी समय उस मार्गसे एक चारण जा रहा था, उसने उस परम सुन्दर बालकके शिरपर सर्पके फनकी छाया देखकर उसी समय मडोरपतिसे समस्त वृत्तान्त जा सुनाया, राणा शीघ्र ही उस स्थान पर गये और जाकर देखा कि दौहित्रके मस्तक पर सर्प अपने फनको फैलाये हुए बैठा है। उन्होने जान लिया कि यह कुमारका शुभलक्षण है, यह केहार किसी समयमें अवश्य ही राजसिहासनपर विराजमान होगा।

यद्यपि रावल घडसी अपने प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगे परन्तु विमला देवीके गर्भसे एक भी पुत्र न हुआ, इस कारण उनका मन अत्यन्त ही दुखी रहता था, उन्होने रानीको एक पुत्र गोद लेनेकी सम्मति दी। रानीने स्वामीकी आज्ञासे पुत्रको गोद लेनेकी इच्छासे राज्यमे जितने बालक यदुभाट्टियोके थे उन सभीको बुलाया, परन्तु केहरकी समान दूसरा बालक रानीके मनमे न भाया। घडसी केहरको गोद लेते है, यह समाचार पाते ही जसहडजीके दोनो पुत्र अत्यन्त ही असतुष्ट हुए, और यह उपाय सोचने लगे कि किस प्रकारसे जयसलमेर पर हमारा अधिकार होजाय ऐसा [illegible] सोचने लगे, इसी समय घडसीजी एक बडाभारी सरोवर खुदवा रहे थे उसको देखनेके लिये वह प्रतिदिन जाया करते थे, एक दिन घडसी नियमितरूपसे उस सरोवरको देखनेके लिये जा रहे थे, इसी समयमें जसहडजीके दोनो पुत्रोने इन पर आक्रमण कर उनके प्राणोका नाश किया।

---

(१) [illegible] भाट लिखा है।

साध्वी विमलादेवीने जसहडजीके दोनों पुत्रोंके द्वारा स्वामीकी मृत्युका समाचार सुना, वह इस बातको भलीभांतिसे समझ गई कि इन पापियोंने राज्यके लोभसे ही मेरे स्वामीके प्राणोंका नाश किया है, अस्तु उसी समयमें रानीने केहरको जयसलमेरका अधीश्वर कहकर मनादी फिरावा दी, और उन दुराचारियोंका मनोरथ सिद्ध न होने दिया। विमलादेवी अपने पतिके साथ ही क्षत्रियरीतिके अनुसार चिता पर चढ़ती, परन्तु कई एक कारणोंसे उसने कई महीनोंके पीछे यह कार्य किया। उसके स्वामी जिस पुष्करणीको तैयार करा रहे थे उसका पूर्ण कराना था और बालक केहरकी रक्षाके लिये भी कुछ समयकी अपेक्षा थी। छ महीनेके पीछे वह सरोवर बनकर तैयार होगया। विधवा रानीने अपने स्वामीके नामसे ही उस सरोवरका नाम "घडसीसर" रक्खा। अब शत्रु लोग केहरके प्राणोंका नाश करनेकी चिंतामें हुए, यह जान कर विमलादेवीने प्रज्वलित चितामें अपने शरीरको भस्म कर सुरलोकको प्रस्थान किया। इतिहाससे जानाजाता है कि रानी विमलादेवी चलते समय यह कह गई थी कि हमीरके पुत्र ही केहरके दत्तक और उत्तराधिकारी हों। हमीरके दो पुत्रोंमेंसे एकका नाम जेतसी और छोटेका नाम लूनकर्ण था।

जैतसीकी युवा अवस्था आनेपर चित्तौरके राणा कुंभाने उनके निकट विवाहका नारियल भेजा। भट्टीराजकुमार अपने बहुतसे सेवकोंको साथ ले विवाह करनेके लिये मेवाडको चले। आरावली शिखरसे बारह कोश दूर जाते ही उनको साकला मेहराज नामक प्रसिद्ध सालवनीके नेता मिले। उस दिन वहाँ विश्राम करके दूसरे दिन प्रभातकाल हो राजकुमार जैतसीने अपनी शुभयात्रा की। इसी अवसरमें घूघू पैक्षी चिल्लाता हुआ इनकी दाहिनी ओर गया, साकलाका साला पक्षियोंकी बोलीके शुभाशुभ फल जाननेमें विशेष विद्वान् था। उसने दाहिनी ओरको घूघू पक्षीके बोलनेका फल इस शुभयात्रामें अमंगलकारी बतलाया। उसके यह वचन सुनते ही जैतसीने अपने घोडेकी लगाम रोक कर उस दिन वहीं विश्राम किया। इसी अवसरमें उस पक्षीको पकड कर देखा गया कि उसके एक नेत्र भी नहीं है। दूसरे दिन प्रभात होते ही जैतसीने पुनः यात्रा प्रारम्भ की कि इसी समयमें कुछ दूर पर व्याघ्रीके चिल्लानेका शब्द सुनाई पडा, जैतसीने उसी समय सांकलाके सालेको बुला कर उसे व्याघ्रीके शुभाशुभ फलको बतलानेकी आज्ञा दी। उक्त मनुष्यने इसे न बताकर केवल इतना ही कहा कि आप इसी स्थानपर रहैं, और एक नौ जवान युवकको नाईके भेषमें कूमलमेरको भेजदें, वह मनुष्य वहाँ जाकर वहाँकी यथार्थ अवस्था जना आवे, इस प्रकारसे राणा कुंभाकी चतुरता का सरलतासे पता पड जायगा और यह भी विदित होजायगा कि यह अमंगलके लक्षण किस कारण दिखाई पडते है।

पहिली आज्ञाके अनुसार शीघ्र ही एक साहसी युवक नाईकी स्त्रीका भेष धारण कर कूमलमेरको चला, उसने उस भेषसे रनिवासमें जाकर देखा कि अब मंगल नहीं है,

(१) उर्दू तर्जुमेमें यो लिखा है कि एक तीतर दाहिने हाथकी तर्फसे बोला।

उसने लौट कर अमगलका समस्त समाचार कहसुनाया। जैतसीने उसके वचन पर विश्वास कर राणा कुंभाके ऊपर अत्यन्त कुपित हो सांकलाकी कन्या मारूसे विवाह किया, जैतसीने प्रस्तावकोके मतसे कूमलमेरमे जाकर राणा कुंभाकी कन्याका पाणिग्रहण न किया, इससे राणा अत्यन्त क्रोधित होगये, परन्तु वह लज्जित होकर जैतसीको इसका वदला देनेमे समर्थ न हुए। राणा कुभाने अन्तमे मनके क्रोधको मनहीमे रखकर अपनी कन्याको यागरोनके विख्यात खीचो राज अचलदासके करकमलमे समर्पित किया। इसके पश्चात् जैतसी पूगल देश पर अपना अधिकार करने गये, और इन्होंने यहीं अपने भ्राता लूनकर्ण और सालेके साथ रणभूमिमे शयन किया। उस समय इनके एक सौ वीस सेवक मारे गये। पूंगलपति वृद्ध राणिङ्गदेवको नही जानते थे कि मैने जयसलमेरपतिके अत्यन्त निकट संबन्धी दो मनुष्योके प्राण नाश किये है, जब यह जाना तब वे अत्यन्त दु खित हो काले रगके वस्त्र पहर सपूर्ण भारत-वर्पके प्रत्येक तीर्थोमे गये। तब इनके पापोका नाश होगया। फिर ये घरको लौट आये। रावल केहरने इनको क्षमा करके वीरज दिया।

केहरके औरससे निम्न लिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए।

१—सोम। इसके अगणित वंशधर सोमभाटी नामसे विदित है।

२—लखमन।

३—केलणजी। इन्होंने अपने बाहुबलसे बड़े भ्राताके अधिकारमे स्थित वीकमपुरको अपने अधिकारमे कर लिया। और सोमजी इसी लिये अपने वस्सी अर्थात सेवकोके साथ गिराय स्थानमे जाकर रहने लगे।

४—कलकरन।

५—सातल। इसने अपने नामसे सातलमेर राजधानी थापित की।

६—वीजू—

७—तन्नू।

८—तेजसी।

नागौरके राठौरोके अधीश्वरसे अपने पिताका वदला लेनेके लिये जिस समय राणगदेवके पुत्रोने यवन धर्मका अवलम्बन किया उस समय वह पूंगल और मरोटके उत्तराधिकारसे वंचित हो आभारिया भाट्टियोके साथ जा मिले और इनका नाम मोसन अर्थात् मुसलमान भाटी रक्खा गया। उस समय रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने पूंगल और मरोडपर अपना अधिकार करके विकमपुरको भी अपने अधिकारमे कर लिया। इसके अतिरिक्त यदुवंशकी शोचनीय दशामे दहिया राजपूतोने जिस प्राचीन राजधानी

(१) कर्नल टाडने यदुभट्टियोंके इतिहासमे अंग्रेजीमे जिस प्रकार लिखा है हमने वैसा ही अनुवाद किया है परन्तु जैतसीका भेजा हुआ नायन रूपधारी युवा कूमलमेर मे क्या देख आया और राणा कुभाने किस स्थानमे वदला नहीं लिया यह नहीं लिखा।

(२) इन्हीं राणिगदेवका वृत्तान्त पाठकोंके लिये प्रथम काण्डमें यथास्थान वर्णन किया गया है।

देरावल पर अपना अधिकार करलिया था, उस देशपर भी इन्होने अपना अधिकार करनेमे त्रुटि न की।

केलणने व्यासाके समीप अपने पिताके नामसे एक किला बनवाया। उसी कारणसे फिर जोहिया और लङ्गाहोके साथ भट्टियोमे विवाद और विसम्वाद उपस्थित होगया। लंगाहोके नेता अमीरखॉ कुराईने केलणके ऊपर आक्रमण किया। परन्तु केलणने क्षत्रियोकी समान साहस करके अमीरखॉको एकवार ही परास्त करदिया। केलण इस समय अपने बाहुवलसे इतना विख्यात् होगया था कि उससे चाहिल मोहिल और जोहिया गण भी भय मानते थे। केलणने धीरे २ पंचनद तक अपने बाहुवलका विस्तार किया। केलणने समाजाम नामक समावशको एक राजकुमारीके साथ विवाह किया, उस समावशमे सिंहासन लेनेके लिये आपसमे भयंकर विवादानल प्रज्वलित होगई थी। केलणने मध्यस्थ होकर उस विवादाग्निको शान्त कर दिया। उन्होने सुजाअत जाम नामक जिस समावशके नेताका पक्ष समर्थन किया था, वही सुजाअत केलणके साथ मरोटनामक स्थानमे गया। दो वर्ष पीछे सुजाअतने अपने प्राण त्याग दिये। तव केलणने समावंशके आधीनके सम्पूर्ण देशोपर अपना अधिकार कर लिया। इसीसे सिन्धुनदी उनके राज्यकी शेष सीमारूपसे नियत हुई, केलणने ७२ वर्षकी अवस्थामे प्राण त्याग किये।

केलणके स्वर्गवासी होने पर चाचकदेव उनके पदपर अभिषिक्त हुए, भाटियोका अधिकार इस समय गाडानदीके किनारे तक होगया था, इससे मुलतानके यवननेता अत्यन्त क्रुद्ध होगये थे। परन्तु यवन नेता इस राज्य पर अधिकार करनेमे समर्थ न थे इसी कारण चाचकदेव मरोट नामक स्थानमे जा वहॉ राजधानी स्थापित करके रहने लगे थे। कुछ दिनोके पीछे मुलतानके अधीश्वरने फिर यदुवंशियोको विध्वंस करनेकी इच्छासे बड़ी भारी तैयारी की। लङ्गाह, जोहिया, खीची इत्यादि देशोके जिन २ जातियोके साथ भट्टियोकी शत्रुता चिरकालसे चली आती थी सब लोग मुलतानपतिके साथ जामिले। दूसरे पक्षमे वीरश्रेष्ठ चाचकदेव मुलतानपतिको युद्ध करनेके लिये तैयार देखकर सावधान हो सात हजार अश्वारोही और चौदह हजार पैदलोकी सेना इकट्ठी कर व्यासनदीके पास जाकर असीम साहससे डटगये। दोनो ओरकी सेनाके सम्मुख होते ही घोर युद्ध उपस्थित हुआ। इस युद्धमे यवनोके नेता परास्त होकर भाग गये। वीरश्रेष्ठ चाचक शत्रुओके पड़ाव परसे बहुत सा सामान लूट लाए और पृथ्वीको कंपायमान करते हुए मरोट नामक स्थानमे आये, परन्तु इतने ही मे युद्धकी अग्नि शान्त न हुई। दूसरे वर्षमे मुलतानपतिने पहिली हारका वदला लेनेके लिये फिरसे बड़े जोरशोरसे लड़ाई ठानी। इस संग्राममे सातसौ चौवालीस भट्टी और तीन हजार मुलतानी मारे गए, मुलतान पतिके दूसरी

(१) उर्दतर्जुमेमें अमरखागोरी।

(२) उर्दूतर्जुमेमे ११.

वार परास्त होते ही चाचकके राज्यकी सीमा और भी वढ़ गई। उसने असनीकोट नामक स्थानमे किलेके भीतर एक सेना अपने पुत्रकी मातहतीमे रक्खी और आप पुंगलको लौट आये। इसके पीछे चाचकने दूंदीके अधीश्वर महिपाल पर आक्रमण कर उसको परास्त किया। इसके उपरान्त जयसलमेरमे आय अपने भ्राता लखमनके साथ साक्षात् किया। असनीकोटके किलेके आधीनमे जितने ग्राम थे उन सबकी आमदनी जयसलमेरमे लाकर राजसभामे खर्च करदी। चाचक जिस समय जयसलमेरसे अपनी राजधानीमे आ रहे थे उस समय वारू स्थानके जजराजने उनके साथ साक्षात् किया। यह मनुष्य बहुतसे बकरी और भेड़ोको पाला करता था। वरजाङ्ग नामक एक राठौर तस्कर पासके एक ग्रामसे आकर बीच २ मे इसके भेड और बकरोको चुराकर लेजाता था। वीरश्रेष्ठ जंजने यह विचारा कि चाचककी सरण लेनेसे यह तस्कर मेरे वकरे और भैसोको न चुरा सकेगा, इस हेतु उसने बड़े २ मोलके वकरे और भैसे चाकककी भेटमे दिये। यह वीर असीम साहसी योधा था। इसने सातलमेर नामक वाणिज्यके प्रधान देशको एक भाटी सामन्तके पाससे अपने वाहुवलसे लेलिया था, वरजाङ्गका नाम सुनते ही मरुक्षेत्रके निवासी अत्यन्त भयभीत होजाते थे। राव चाचक जजको अभय देकर चले गये और कह गये कि यदि वरजाङ्ग फिर अत्याचार करके तुमको पीडित करे तो मैं उसको उचित फल दूँगा। कुछ दिनोके पीछे राव चाचक जजके अधिकारी देशोमे गये, और उससे साक्षात् किया। जजने फिर उनके निकट वरजांगके अत्याचारोका वृत्तान्त कहकर अभय चाही। चाचकने जजकी विनतीसे प्रसन्न हो सातलमेरके तस्कर नेताको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेना इकट्ठी करके सीता जातिके अधीश्वरके साथ सधिवंधन करलिया। नवीन मित्रने तीन हजार अश्वारोही सेनाको साथ लेकर चाचकके साथ योग दिया। सातलमेरके राठौर तस्कर नगरके वाहर घोडोको रखकर, नगरीके सामन्त धन लेकर किस समय नगरके वाहर जाते है, इसको गुप्त भावसे देखते रहे, और अवसर पाकर उन नगरवासियोकी सारी धनसम्पत्ति लूट ली, यह जानकर चाचकने अपनी चतुरतासे समस्त राठौर और नगरके वडे वडे धनी महाजन और वैश्योको पकड लिया। नगरके महाजनोने अपने छुटकारेके लिये वहुतसा धन देना चाहा परन्तु चाचकने उनसे कहा कि यदि तुम इस स्थानको छोड़कर जयसलमेरमे जाकर निवास करो तो छूट सकते हो। इस पर ३६५ वडे २ धनवान चाचककी आज्ञा स्वीकार कर अपनी समस्त धन सम्पत्ति समेत जयसलमेरमे जाकर रहने लगे।

वरजांगके तीन पुत्र वन्दी किये गये थे। वीरश्रेष्ठ चाचकने उनमेसे मझले और छोटेकी अत्यन्त कम अवस्था देख कर उन दोनोको छोड दिया परन्तु वड़े मेराको उनके पिता वरजंगकी सच्चरित्रताके वदलेमे वंदी कर रक्खा। चाचकने जिस सीता जातिके अधीश्वरके साथ इस घटनाके पहिले मित्रता की थी, उसकी पोती सालदेवीके साथ अपना विवाह किया। कन्याके पिताने विवाहके यौतुकमे चाचकको पचास मोटे पतीन दास, चार सवारी और दोसौ ऊट दिये, इन सबको लेकर चाचक सदेह नगरको आये।

उपरोक्त घटनाके दो वर्ष पीछे वीरश्रेष्ठ चाचकने पीलवंग स्थानके अधिपतिके साथ युद्ध आरम्भ किया, यह समर एक भट्टीसे एक मूल्यवान घोड़ेके छीन लेने पर हुआ था। चाचक पीलवगेश्वरको परास्त करके उसकी राजधानीके समस्त धनरत्नोको लूटने लगे, किन्तु जिस समय चाचक इस भयानक युद्धमे लड़ रहे थे उसी समय यदुवंशके पुराने वैरी लगाहोने सुभीता पाकर चाचकके दीनापुरके किले पर आक्रमण कर वहाँकी समस्त सेनाको हटा दिया।

इधर चाचक चिरकाल तक लड़ता रहा और अनेक देशोको दमन करके उसने वहां जय पाई। इसी प्रकार उसने पञ्जाब तक अपना अधिकार करलिया अन्त समय बुढापेमे जब चाचक कठिन रोगसे पीड़ित हुआ और उसने जानलिया कि अब मेरा अन्त समय आ पहुँचा है और रोगसे मुक्त होनेकी आशा करनी वृथा है, तब उसने बहुत दिनोतक कष्ट भोगकर प्राण छोड़नेके बदले क्षत्रियोकी भांति प्राण त्यागनेका संकल्प किया। समरभूमिमे शत्रुओके भीषण अस्त्रोके आघातसे प्राण छोडने पर मरनेके पीछे प्राणी सुरलोकमे जाता है यही क्षत्रियोका परम धर्म है। इसी विश्वास पर क्षत्रिय जाति स्वर्ग सिधारनेकी इच्छासे जीवन पर्यन्त केवल तलवारकी सेवामे लगे रहते है। इसी विश्वासके बलसे क्षत्रियोंकी महिमा और गौरव संसारमे चढी चढी है। वीरश्रेष्ठ चाचकने क्षत्रियोके शिरोभूषण पदको प्राप्त किया था, और वह जीवनपर्यन्त क्षत्रिय-धर्मके पालन करनेमे तत्पर रहा था। अतएव उसने अपने अन्त समयको सम्मुख देख क्षत्रियोकी भाँति इस जगत्को छोड़नेकी इच्छा की तो इसमे आश्चर्य ही क्या है?

चाचकदेवने इस भाँति शस्त्र हाथमे ले रणभूमिपर महा निद्रामे सोनेकी लालसासे अपने आसपासवाले देशोमे अपनी समान वीरशत्रुसे भिडना चाहा। अन्तमे उन्होने एक मनुष्यको दूत बनाकर मुलतानके लङ्गाह जातिके राजाके पास भेजा। वीर चाचकदेवके दूतने जाकर मुलतानपतिसे कहा कि "चाचकदेव रोगशय्या पर पड़े है जिसमे बहुत दिनोतक रोगी रहकर उनका प्राणवायु पचमहाभूतोमे लय न हो जाय, इस कारण शत्रुकी तलवारके द्वारा वह क्षत्रियोकी समान जीवन छोड़ सुरपुर जाना चाहते है, अतएव आपसे युद्ध करनेके लिये प्रार्थना की है"। मुलतानके राजाने दूतकी बातपर विश्वास नही किया और मनमे कहा ऐसा जानपडता है कि वीर चाचक-देव छलसे हमे समरभूमिमे बुला कर अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण किया चाहते है इसीसे युद्ध करनेकी प्रार्थना कर भेजी है। राजा यह सोच कर प्रकाशमे दूतसे बोले "तुम्हारे स्वामी षड्यन्त्रसे मेरा अनिष्ट करा चाहते है-अतएव मै युद्ध नही करूँगा" मुलतानके राजाका यह उत्तर सुन दूतने शपथ खाकर कहा "राजन्! आप वृथा सन्देह करते है महाराज चाचकदेव निश्चय ही दुःसाध्य रोगसे पीडित होरहे है,

(१) कर्नेल टाडने टिप्पणीमे लिखा है कि ट्रान्सक्सियाके प्राचीन विजयी वीरगण अन्तमे रोगी होने पर तलवार हाथमे ले रणक्षेत्रमे प्राण त्यागते है यह नीति रोप जूटलैण्ड तक फैली है।

उनकी और किसी प्रकारकी इच्छा नहीं है, वह अन्त समयमे क्षत्रियोकी समान गति पानेकी इच्छासे ही केवल सातसौ सेनाके साथ रणक्षेत्रमे आवैगे। आप अपने चित्तको वृथा सन्देहसे चिन्तित न कीजिये और हमारे स्वामीकी मनोकामनाको पूर्ण करिये" मुलतानके महाराजने दूतके शपथ खानेपर विश्वास करलिया और शीघ्र ही प्रतिज्ञा की कि मै चाचकदेवकी मनोकामनाको पूर्ण करनेके निमित्त युद्ध करनेको तैय्यार हूँ। दूतने यह वात जाकर जाचकदेवसे कह सुनाई। वीर शिरोमणि चाचकदेवने अपनी अभिलाषाको पूर्ण हुआ जान परम आनन्दके साथ अपने जातिके वीरोको वुलाकर अपने हृदयके भावको कह सुनाया। सेनापति और सेनामे से जिन जिन वीर पुरुषोने चाचकदेवके साथ प्रत्येक युद्धमे अपनी वीरतासे जय पाई थी, उनमेसे सातसौ वीरोको चाचकदेवने चुन लिया। उन सातसौ वीरोने भी अपने स्वामी की अन्तिम कामना पूर्ण करनेके लिये अपने जीवनको उत्सर्ग करनेका दृढ़ संकल्प करलिया। चाचकदेवने रणभूमिमे जानेसे पहिले अपने राज्यकी व्यवस्था करदी। सीता जातिकी रानीके गर्भसे उत्पन्न हुए गजसिह नामक पुत्रको चाचकदेवने सीतारानीके साथ ननसालमे भेज दिया। उनके सोढा जातिकी लीलावती रानीके गर्भसे वरसल, कम्बोह, भीमदेव यह तीन पुत्र हुए थे और चौहान वशकी रानी सूरजदेवीके गर्भसे रत्तू और रणधीर नामक दो पुत्र हुए थे. वीर शिरोमणि चाचकने इन पांच पुत्रोके वीचमे वडे पुत्र वरसलको अपने सिहासनका उत्तराधिकारी निर्द्धारित कर खडाल (इसके प्रधान नगरका नाम देरावर) प्रदेश छोड कर उनको अपने समस्त अधिकारी प्रदेश दिये, और खडाल प्रदेश रणधीरको देकर दोनोके माथे पर राज्य तिलक करदिया। वरसल सत्रह हजार सेनाको लेकर अपनी राजधानी किरो-हेरको चला गया।

वीरवर चाचकने इस भांति अपना राज्य दो पुत्रोको वॉट दिया, और स्वय अपने जीवनको त्यागनेके लिये उक्त सातसौ वीर पुरुषोके साथ दीनापुरके मैदानकी ओर चला। वहा पहुँच कर उसने सुना कि मुलतानका राजा यहॉसे दो कोशकी दूरीपर पड़ा हुआ है। इस वातके सुनते ही उसका हृदय मारे आनन्दके खिल गया। फिर चाचकने स्नान कर पवित्र चित्तसे अस्त्रोका पूजन कर अपने इष्ट देवका पूजन किया, और दीन दरिद्रोको धन रत्नादि देकर इस मायामय ससारसे अपने चित्तको हटाकर परम पिता परमेश्वरके ध्यानमे लगाया।

थोडी देरके पीछे रणका वाजा सुनाई पडा। दोनो ओरकी सेनाके सामने होते ही वीरश्रेष्ठ चाचकने अपनी सातसौ सेनाको लेकर मुलतानके राजाकी कई हजार सेनाके साथ घोर युद्ध किया। वरावर लडते रहकर युद्ध क्षेत्रमे अपने प्यारे सातसौ

---

(१) वर्त्तरंगुमेंमे ७ मां।

(२) सिरोहर नामक स्थानका वडा किला राव केलणका वनवाया भावलपुरसे वाईस कोस दूर था। किन्तु आजकल इसका कोई चिह्न नहीं मिलता।

वीर पुरुषोके साथ चाचकदेवने दो घड़ी तक वीरता दिखाते हुए महा निद्रामे शयन किया। यदुभट्टी इतिहासके जाननेवालेने लिखा है कि उस युद्धमे उन सातसौ वीरोने मुलतान की दो हजार सेनाको नष्ट किया । चाचकदेवने इस भाति संग्रामक्षेत्रमे अपने जीवनको विसर्जन किया, और मुलतानपति अपनी राजधानीको लौट गये ।

जिस समय रणधीर देरावरमे अपने पिताका श्राद्धकर रहा था उस समय मृतक वीर चाचकका दूसरा पुत्र कुंभा पिताके शोकमे उन्मत होगया । अतएव उसने श्राद्धके मण्डपमे जाकर सबके सामने प्रतिज्ञाकी कि, "मुलतानपतिने मेरे पिताको अन्यायसे मारा है मै उसका बदला उससे अवश्य लूँगा" कुम्भा उसी समय एक नौकरको अपने साथ लेकर मुलतानपतिके डेरेमे गया । डेरेके चारोओर बाईस हाथ चौडी एक खाई थी, कुंभाने रातमे घोड़े पर चढ़कर खाईको फाँद साहसके साथ घोडेको डेरेकी रस्सियोसे बाँधा और आप मुलतानके राजा जैसे वस्त्रोको पहिना करते है, वैसे कपडोको पहिन संतरीके सामनेसे डेरेमे घुस गया,उस समय मुलतानका राजा सो रहा था, कुंभाने सोतेही मे उसका शिर काट लिया और वह आकर देरावरमे अपने भाईसे मिला ।

बरसल दीनापुरमे फिर अपना अधिकार स्थापन कर किरोहरमे चला गया । उसके पुराने शत्रु लंगाहोने फिर हैवत्खाँकी सहायतासे उस पर आक्रमण किया,परन्तु बरसलने अपने अतुल पराक्रमसे उनको परास्त कर भगा दिया, उस युद्धमे कई हजार लंगाह खेत रहे । इसी समय हुसेनखाँने[1] भी बीकमपुर पर आक्रमण किया, बरसलने उसको भी परास्त किया ।

संम्वत् १५३० सन् १४७४ ई० मे बरसलने बीकमपुरकी चहारदीवारी और किला बनवाया ।

कर्नल टाड्ने यही पर यह अध्याय समाप्त किया है । भट्टि इतिहासके लेखकने भी यहा पर कोई विशेष घटना नही लिखी । उसने केवल रावल केलणके वश-वालोके साथ पंजावके सामन्तोकी सीमान्त सम्बन्धी छोटी २ लड़ाइयोका होना लिखा है । उसके पढ़नेसे जान पडता है उन लडायोमे एक वार यदि एक पक्षवाले जीते तो दूसरी बार वह हार गये । इस प्रकारके नीरस विवरणको हम प्रकाश करना नही चाहते । अन्तमे केलणके वंशजोने बढ़ कर गारा नदीके दोनो किनारोके देशोको बाँटकर स्वतंत्रतासे निवास किया । इस घटनाके कुछ समय पीछे ही दिल्लीके सम्राट् सुलतान बाबरने लङ्गाहोसे मुलतानको छीनकर अपने अधिकारमे ले वहाँपर मुसलमान प्रवन्धकर्त्ता नियुक्त करदिया । कर्नल टाड् लिखते है कि इसी समय किरोहरकोट दीनापुर, पूँगल और मारोटके यदुवंशियोने यथासम्भव अपना अधिकार और अपना कब्जा बनाये रखनेके लिये मुसलमानी धर्मको स्वीकार करलिया ।

यदुभट्टी इतिहासलेखने पीछे जयसलमेरके प्रधान राजवंशका कुछ सामान्य विवरण लिखा है। उन्होने केवल रावल जेत, नूनकरण, भीम, मनोहरदास और सुबलसिहके वंशधरोकी नामावली लिखी है । रावल सुबलसिहके शासन समयसे ही जैसलमेरकी राजनैतिक अवस्था बदल गई थी ।

---

(१) उर्दूतर्जुमेमे हुसेनखाँ बल्लोच लिखा है ।

पंचम अध्याय ५.

जयसलमेरके राज्यवंशका उत्तराधिकारी बदलना–सुबलसिंहका यवनसम्राट्‌द्वारा जयसलमेर का स्वामी होना–जयसलमेरके स्वामीका यवनसम्राट्‌की आधीनतामें रहना–बाबरकी दिग्विजयके समयमे जयसलमेरकी सीमाकी अवस्था–सुबलसिंहके स्वर्गवास होनेपर उनके पुत्र अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना–अमरसिंहसे बल्लूच प्रदेशमें युद्ध होना–युद्धमें उनकी जीत होना–उनका अपनी लड़कीका विवाह करनेके लिये प्रजासे द्रव्यकी प्रार्थना करना–राजपूतमंत्री रघुनाथका उस विषयमें आपत्ति करनेसे मारा जाना–चन्ना राजपूतोंका विद्रोही होना–बीकानेरवासी राठौरोंके उपद्रव मचानेसे भट्टी सामन्तोंसे उसका सुधार होना–सीमा सम्बन्धी विवादका कारण–भट्टीगणोंकी जीत होना–आधीनतामें रहनेवाले सामन्तोंके बीचमें विवादके उपलक्षमें बीकानेर और जयसलमेरके स्वामियोंमें झगड़ा होना–बीकानेरके स्वामी अनूपसिंहका कलंक छुटानेके लिये अपने आधीन रहनेवाली सामन्त मंडलीको बुलाना–जयसलमेरपर आक्रमण करनेवाले राठौरोंकी पराजय–रावलका पूगलपर फिर अधिकार करना–बाड़मेरपतिको करद श्रेणीसे मुक्त करना–अमरसिंहकी मृत्यु–जसवन्तका राजसिंहासनपर बैठना–जयसलमेरका पतन–राठौरोसे पूगल बाड़मेर और फलोदीका निकलजाना–दाऊदके बेटोंका खडालसे गाडातक अधिकार करना–अक्षयसिंहका अभिषेक–तेजसिंहका जयसलमेरके शासनको अपने हाथमें लेना–तेजसिंहको फिर राज्य मिलना–उनका चालीस वर्ष राज्यशासन–भावलखोंका खडाल पर अधिकार–रावल मूलराज–स्वरूपसिंह मेहताको राजमन्त्रीका पद मिलना–भट्टीसामन्तोंपर उनकी घृणा होना–युवराज रायसिंहद्वारा स्वरूपसिंहका माराजाना–रावल मूलराज का बन्दी होना–रायसिंहका सिंहासनपर बैठनेमें अनिच्छा प्रगटकरना–एक राजपूत रमणीका मूलराजको कैदसे छुटाना–मूलराजको पुन राज्य मिलना–युवराज रायसिंहका निर्वासन–उनका जोधपुरमें जाना–भट्टीसामन्तोंका विद्रोह करना–दंडमें उनके सब अधिकारी प्रदेश लेकर राज्यमें मिलाये जाना–और सब किलोंका तुड़वाना–बारह वर्षके पीछे उनको फिर भूमिका अधिकार देना–रायसिंहद्वारा एक बनियेका शिर काटा जाना–उनका जयसलमेरमें फिर आना–उनको देवाके किलेमें भेजना–सालिमसिंहका मन्त्री होना–उसका चरित्र–उसका शत्रुके हाथमें पड़ना–किन्तु जोरावरसिंहकी सहायतासे छूटना–उसकी भावजसे उसके मारे जानेकी इच्छा प्रगट होना–जोरावरको विष देना–मेहतासे उनके भाई और स्त्रीका माराजाना–देवाके किलेमें आग लगना–रायसिंहका आगमें जलकर मरना–उनके पुत्रोंका मारा जाना–गजसिंहको राज्य देना–मूलराजके छोटे लड़कोंका बीकानेरमें भाग जाना–मंत्रीके द्वारा चिरकालतक राज्यका प्रबंध होना–भट्टी इतिहासकी समालोचना।

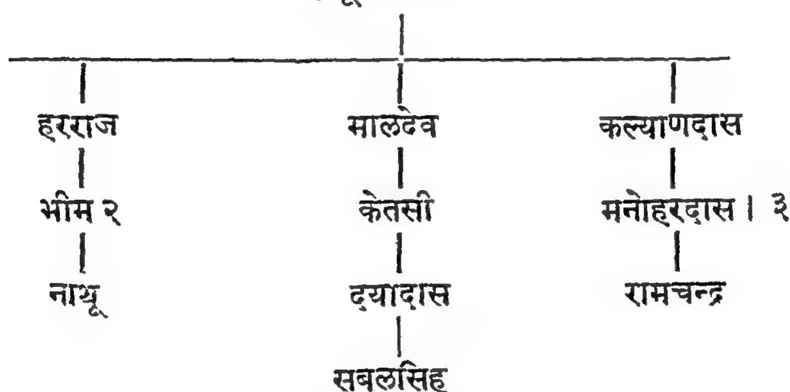
पाठकगण पहिले अध्यायमें जान चुके है कि जयसलमेरके स्वामी घड़सीके शोचनीय दशामें मरनेसे उनकी रानी विमलादेवीने केहरको दत्तक पुत्र लेकर उसीको जयसलमेरका सिंहासन दिया था। किन्तु उसने जलती हुई चितामें बैठ कर मरनेके समय यह भी कहा था कि हमीरके दोनो बेटे जैत और लूनकरण केहरके पोष्य पुत्र और उत्तराधिकारी होंगे। अतएव केहरके जयसलमेरके सिंहासनपर बैठ जानेपर और उनके औरससे आठ सन्तानोंके उत्पन्न होनेपर भी जैत और लूनकरण ही केहरके उत्तराधिकारी रहे गये। किन्तु जैत राज्य पानेके पहिले ही पूंगलको

जीत लेनेकी इच्छासे लूनकरणके साथ समरक्षेत्रमें जाकर मृत्युको प्राप्त हुआ । जैतके कोई पुत्र मरते समयतक नहीं हुआ था अतएव लूनकरणके वंशधरोंको ही जयसलमेरका सिंहासन प्राप्त हुआ, लूनकरणके तीन पुत्र हुए,—

१—हरराज ।
२—मालदेव ।
३—कल्याणदास ।

केहरके मरनेके पीछे लूनकरणके बड़े पुत्र हरराजको जयसलमेरके सिंहासनपर बैठना चाहिये था, किन्तु हरराज केहरके सामने ही मरचुका था, अतएव हरराजके एकमात्र पुत्र भीमही जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा । भीमके राज्यसमयका कोई भी इतिहास कर्नल टाड् साहबने प्रकाशित नहीं किया है । परिवर्ती इतिहासको विस्तारके साथमें दिखानेकी अभिलाषासे हम यहाँ लूनकरूणकी बंशावली प्रकाशित करते है ।

१ लूनकरूण ।



भीमके मरनेके पीछे उनका बेटा नाथू जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा । किन्तु नाथू सिंहासन पानेके कुछ ही समय पीछे बीकानेरमे एक राजकुमारीके साथ विवाह करने को गया विवाहके पीछे वह जिस दिन जयसलमेरके अन्तर्गत फलोदी देशमे आकर टिका उसी दिन कल्याणदासके पुत्र मनोहरदासने सिंहासन पानेके लोभसे एक स्त्री द्वारा विष दिलाकर उसे मरवा डाला । नाथूके मरजानेपर मनोहरदासने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया । मनोहरदासने भाईके बेटेको मारकर कुछ समय तक राज किया, अन्तमे अपने मरनेके समय अपने बेटे रामचन्द्रको सिंहासन पर बैठानेके लिये उसने बड़ा परिश्रम किया किन्तु हत्यारेके वंशमे राजसिंहासन कोई नहीं पासक्ता इससे उसकी आशा पूरी न होसकी । लूनकरणके मझले बेटे मालदेवका परपोता शुशील सच्चरित्र और वीर सबलसिंह अपने सौभाग्य एव गुणोसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा ।

रामचन्द्र बड़ा ऊधमी और दुश्चरित्र था, पर सबलसिंहकी धीर और शान्त प्रकृति थी इस कारण साधारण प्रजाने सबलसिंहको राजा बनानेके लिये प्रार्थना की । विशेष कर सबलसिंहके सौभाग्य रूपी सूर्यके उदय होनेके औरभी कारण उपस्थित थे ।

सवलसिह महाराज आमेरका भानजा था, वह आमेर नरेशकी आधीनतामे यवनोकी राजधानी पेशावरके राज्य प्रवन्धमे एक ऊंचे दरजेपर नियुक्त था। एक समय पहाड़ी अफ़गानी लुटेरोने यवन सम्राट्का खजाना लूटना चाहा था परन्तु सवलसिहकी असीम वीरतासे वह न लूट सके। इस कारणसे वह सम्राट्का भी अधिक प्यारा था। सवलसिहने अपने सद्गुणोसे सभी नरेशोमे मान पालिया, मनोहरदासके मरनेपर यवनसम्राट्ने जोधपुरके राजा वीर जसवन्तसिहको आज्ञा दी कि तुम शीघ्रही रामचन्दको हटाकर सवलसिहको जयसलमेरके सिहासन पर वैठा दो। महाराज जसवन्तसिहने यह आज्ञा पाते ही प्रसिद्ध नाहरखॉके साथ एक सेना भेज कर सवलसिहको जयसलमेरके सिहासनपर वैठानेके लिये कहा, नाहरखाँने जयसलमेर जाकर राजाकी आज्ञासे सम्राट्के आदेशको पालन किया। सवलसिहने जयसलमेरके सिहासनपर वैठकर नाहरखॉको इनाममे पोकर्ण देशका अधिकार चिरकालके लिये देदिया, तभीसे पोकर्ण देश जयसलमेरसे अलग होकर जोधपुरके राज्यमे मिल गया है।

रावल जयसल और उनके उत्तराधिकारीगण अवतक तलवारसे अपने राज्यको वढ़ाते आते थे, अवतक राज्यका कोई अंशभी दूसरेके अधिकारमे नही गया था। नाहरको दिया हुआ पोकर्णका अधिकार ही सवसे पहिले जयसलमेर राज्यका अंगभग करनेवाला हुआ। इसके उपरान्त विस्तृत जयसलमेरके राज्यका अग क्रमानुसार कटता आया है। वादशाह वावरकी दिग्विजयके कुछ दिन पहिले जयसलमेर राजधानीकी सीमा उत्तरमे गाडा नदी तक थी, पश्चिममे मेहराण वा सिन्धुतक, पूर्व और दक्षिणमे वीकानेर और मारवाड़तक थी। वीकानेर और मारवाडके राठौर राजा दोसौ वर्षसे क्रमानुसार जयसलमेरके अधिकारी प्रदेशोका वहुत सा अंश अपने अधिकारमे करते आते थे। रावल सवलसिहने यादवोके सिहासनपर वैठकर वड़ी प्रशंसाके साथ राज्य चलाया, जव वह स्वर्ग सिधारे तव उनके पुत्र अमरसिहने वलचोके साथ युद्ध करके विजय पाई, उस युद्धक्षेत्रमे ही उसको राजतिलक मिला। अमरसिहने पिताके सिंहासन पर वैठनेके कुछ दिन पीछे अपनी पुत्रीके लिये सर्वसाधारण प्रजासे द्रव्य की प्रार्थनाकी। राजपूत मत्री रघुनाथने अमरसिहके इसकार्यमे वाधा डाली, इसपर अमरसिहने उसको मरवा डाला। कुछ दिनोके पीछे चन्ना राजपूतोने फिर पहिलेकी तरह राज्यके उत्तर और पूर्वकी ओर उपद्रव और अत्याचार करना आरंभ किये, तव रावल अमरसिहने स्वय सेना लेजाकर उनको पराजय कर ऐसा दवाया और अपने आधीन वनाया कि भविष्यमे उनकी सच्चरित्रताका कारण अमरसिह ही हुए।

कुछ समयके उपरान्त जयसलमेरके और वीकानेरके सामन्तोके वीचमे विवाद होनेपर दोनो देशोके राजा रणभूमिमे आ खडे हुए। वीकानेरके काधलोत राठौरगण वहुत दिनोसे जयसलमेरकी सीमापर वडे २ अत्याचार करते थे। जयसलमेरके आधीन वीकमपुरके सुन्दरदास और दलपत नामक दोनो सामन्त उन कांधोलोतोके दुराचरणोसे चिगड कर शेष कांधोलोतोको यथार्थ रूपमे दमनकर उनके अत्याचारोका

फल देनेके लिये सम्मत हुए । दलपतने कहा "आओ, हम लोग राठौरोकी भूमि पर आक्रमण करके जगत्मे कीर्ति बढावे"। अत. उन दोनो सामन्तोंने अपनी अपनी सेना साथले बड़े साहसके साथ बीकानेर राज्यकी सीमाके अन्तमे जाजू नामक नगरपर आक्रमण किया, और उसको लूटकर जलादिया । कांधलोन गण इससे बड़े लज्जित हुए । फिर उन्होंने बड़े दलबलसे आकर जयसलमेरकी सीमापर आक्रमण कर अपना बदला लिया । इसी बातपर आपसमे बडा झगड़ा होगया और अन्तमे घोर सग्राम आरम्भ हुआ । इस संग्राममे भटीगणोने दो सौ राठौरोको मारकर विजयलक्ष्मी प्राप्त की और राठौरगण हारकर भाग गये । अपनी आधीनतामे रहनेवाले सामन्तोको विजयी हुआ देख रावल अमरसिंहने बड़ा आनन्द मनाया ।

बीकानेरके राजा अनूपसिह इस समय दक्षिणमे दिल्लीके सम्राट्की सेनामे नियुक्त थे, उन्होने जब सुना कि जयसलमेरके सामन्तोने राठौरोको परास्त करदिया है, तब उनके क्रोधका ठिकाना न रहा । उन्होने उसी समय डेरेमेसे निकल कर अपने प्रधान मंत्रीके हाथ अपनी राजधानीमे यह सदेशा कहला भेजा कि समस्त राठौर जो शस्त्र धारण करसक्ते हो जयसलमेरके जीतनेके लिये धारण करके तैयार होजायँ । कान्धलोन्गण शीघ्रही बीकमपुरकी समान जयसलमेरको कर देवे नही तो विश्वासघाती कहावेगे । राजाकी आज्ञा पाते ही मत्रीने शीघ्रतासे समस्त राठौरोमे यह ढिढोरा फिरवा दिया । तब तो सम्पूर्ण राठौर तलवारे हाथमे ले जय-सलमेरपर धावा करनेके लिये एकत्रित होने लगे । अपमानित राजा अनूपसिहने राठौरोकी सहायताके लिये हिसारसे एक पठानोके सेनापतिको सेनाके साथ भेज दिया । इधर जयसलमेरके स्वामी रावल अमरसिहने राठौरोको युद्धके लिये तयार होते देख उसी समय समस्त भाटीसेनाको एकत्रित किया। अमरसिह चतुर और युद्धमे कुशल थे । उन्होने विचारा कि उत्तेजित राठौरोको जयसलमेरकी सीमामे न आने दिया जाय, इस कारण बीकानेरके ही राज्यमे प्रवेश कर उनपर आक्रमण करना चाहिये । अमरसिहने यह विचार कर बीकानेरके अन्तवाले नगरोपर आक्रमण कर उन्हे लूटना आरम्भ कर दिया । अन्तमे बहुतसे राठौरोको मारकर पूगल प्रदेशको फिर अपने राज्यमे मिलालिया । इसी समयमे बाडमेर और कोतड़ा प्रदेशके दोनो राठौर सामन्तोको अपनी अधीनताकी साकलमे बांधलिया । रावल अमरसिहने इस भांति बड़ी शूरवीरताके साथ जयसलमेरका राज्य करके संवत् १७५८ (सन् १७०२ ई०) मे इस जगत्को छोड़ स्वर्गमे वास किया। अमरसिहके आठ पुत्र हुए उनमेसे बड़े पुत्रका नाम यशवन्तसिह था । बाकी सात लड़कोमेसे केवल हरीसिहका नाम पाया जाता है । बड़े पुत्र यशवन्तसिहकी एक कन्याके साथ मेवाडके युवराजका विवाह हुआ । यदुभट्टी इतिहासके लिखनेवालेने अमरसिहके मरनेतकका ही इतिहास लिखा है । इसके पीछे एक दूसरे मनुष्यने जय-सलमेरका इतिहास लिखा है । टाड् साहबके सामने यह मनुष्य जीवित था । "कर्नल टाडने बडी खोज और परीक्षा करके उस इतिहासके अशको सच्चा मानकर उसीके

आधार पर जयसलमेरके इतिहासका शेष अंश लिखा है । किन्तु यह इतिहासका अंश शोचनीय और हृदयभेदी चित्रोंसे अङ्कित है । इसमे श्रीकृष्णके वंशावतंस जयसलमेरके राजाओका पतन समाचार विशेषतासे देखा जाता है ” ।

अमरसिहके मरनेके उपरान्तसे ही जयसलमेरके गौरवका सूर्य वर्षा ऋतुके वादलोसे ढक गया । जयसल और उसके उत्तराधिकारी गण अपनी भुजाओके वलसे राज्यकी सीमाको भलीभाँति वढ़ा गये थे और अमरसिहने भी अपने पराक्रमसे राज्यकी सीमाके वढानेमे कुछ कमी नही की, किन्तु वड़े दुःखका विपय है कि पराक्रमी अमरसिंहके सुरलोक जानेके पीछे ही यादवोके प्रधान शत्रु वीकानेरके राठौरोने शुभ योग पाया । उन्होने संहार मूर्तिको धारण कर जयसलमेरकी शोचनीय दशा करदी । उन्होने पुरानी शत्रुतासे फिर संग्रामक अग्निको प्रज्वलित कर वड़ी शीघ्रतासे जयसलमेरके वीचवाले पुंगल, वाडमेर, फलोदी और अनेक वड़े वडे नगर तथा गाँवोको छीन कर वीकानेरके राज्यमे मिला लिया । दूसरी ओर राठौरोकी समान शिकारपुरके एक अफ़गान सेनापति दाऊदखाँने भी जयसलमेरके महाराज अमरसिहके मरनेके पीछे विशेष सुभीता जान गाडानदीके समीपवाले जयसलमेरके अधिकारी प्रदेश जवरदस्ती छीनलिये । इस भाँति अमरसिहके मरजाने पर थोडे ही दिनोके वीचमे जयसलमेरके वहुतसे प्रदेश अन्य जातिवालोके अधिकारमे होगये ।

अमरसिहके मरनेके पीछे ही उनके पुत्र जसवन्तसिह जयरालमेरके सिहासनपर वैठे । माननीय टाड साहवने उनके शासनके सम्बन्धमे कुछ भी नही लिखा किन्तु आगे पीछेके लक्षणोको देखनेसे अनुमान होता है कि जसवन्तके शासन समयमे जयसलमेरकी अवनतिके सिवाय उन्नति नही हुई । जसवन्तके नीचे लिखे पाँच पुत्र हुए.–

१–जगतसिह–इन्होने आत्म हत्या की ।

२–ईश्वरीसिह ।

३–तेजसिह ।

४–सरदारसिह ।

५–सुलतानसिह ।

आत्म हत्या करनेवाले जगत्‌सिहके नीचे लिखे तीन पुत्र हुए –

१–अखैसिह ।

२–वुधसिह–इनकी वसन्तरोगसे मृत्यु हुई ।

३–जोरावरसिह ।

इतिहास वतालाता है कि जसवन्तसिहके मरनेके पीछे उनके पोते अखैसिहको सिहासन मिलना चाहिये था । किन्तु अखैसिहको छोटा वालक देख कर उनके चचा तेजसिह जवरदस्ती राज्यसिहासनपर वैठ गये । अखैसिह और जोरावरसिह दोनो भाई अपने प्राणोके भयसे दिल्लीको भाग गये । इस समय मरे हुए रावल जसवन्तसिहके भाई हरीसिह दिल्लीके सम्राटके यहाँ राजकार्यमें नियुक्त थे

अखैसिंह और उसके छोटे भाईने हरीसिंहकी शरण ली। हरीसिंहने अपने भाईके दोनो पोतोको शरणमे आया देख कर प्रतिज्ञा करी कि शीघ्र ही जयसलमेर जाकर तेजसिंहको सिंहासनसे उतार दूँगा। थोड़े दिन पीछे हरीसिंह जयसलमेरको गये। जयसलमेरमे इस समय ऐसी एकरीति थी कि वर्षके अन्तमे जयसलमेरके महाराज एक दिन घडसीसरके किनारे सब सामन्त, कुटुम्बी मनुष्य,सेना और समस्त प्रजाको लेकर जातेथे। पीछे उस सरोवरमेसे सबसे पहिले राजा अपने हाथसे एक मुट्ठी रेत उठाकर फेकता था इसके उपरान्त सामन्त लोग, कुटुम्बी जन, मंत्रीगण, फिर समस्त प्रजा एक २ मुट्ठी रेती निकाल कर बाहर फेकते थे। इसको "ल्हास" कहते है। इसके द्वारा उक्त सरोवर वर्षके अन्तमे साफ होकर सुधर जाता था। हरीसिंहने जयसलमेरमे आकर विचारा कि तेजसिंह जिस समय उक्त ल्हासमे दत्तचित्त होगे उसी समय उस पर आक्रमण करके कार्य सिद्ध करूँगा। हरीसिंहने उक्त प्रस्तावके अनुसार ल्हास खेलनेके दिन तेजसिंह पर आक्रमण किया, किन्तु दुःखका विषय है कि हरीसिंहकी आशा पूरी न हो सकी, वह भलीभाँति तेजसिंहको परास्त न करसके। इस प्रबल संग्राममे कितने ही मनुष्य मारे गये, और तेजसिंह भी ऐसे घायल हुए कि इन्ही घाओके होनेसे उनके प्राण निकल गये।

तेजसिंहके मारेजाने पर उनका तीन वर्षका बेटा सवाईसिंह जयसलमेरके सिंहासन पर बैठा। सिंहासनसे हटाये हुए अखैसिंहने इस समय बडा सुभीता जान जयसलमेरके रहनेवाले समस्त भट्टी सर्दारोके पास यह सूचना पत्र भेजा, "कि न्यायसे जयसलमेरका सिंहासन मेरा है, तेजसिंहने बड़े अन्यायसे मुझे सिंहासनसे हटा दिया था, अब उनका जो बालक पुत्र इस समय सिंहासनपर बैठा है, देखा जाय तो उसका कोई अधिकार सिंहासनपर बैठनेका नही है। मै अपनी तलवारके बलसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठनेकी फिर अभिलाषा करता हूं। जो प्रजा राजभक्त है उसे मै अपनी सहायताके लिये बुलाता हूं।" अखैसिंहके इस सूचनापत्रके प्रचार होते ही जयसलमेरके सैकडो भट्टीसर्दार आकर उनसे मिलने लगे। इस भांतिसे अखैसिंहने अपने बड़े दलके साथ जयसलमेरके किलो पर अधिकार करनेके लिये आक्रमण किया और असीम वीरता दिखाकर उन्होने तीन किले छीन लिये। सुकुमार सवाईसिंहका जीवन थोड़े ही कालमे नष्ट होगया। अखैसिंह फिर सिंहासनपर विराजमान होगये।

रावल अखैसिंहने इस प्रकारसे बडे कष्ट उठाकर सिंहासन पाया और चालीस वर्ष तक राज्य किया। यद्यपि उन्होंने इतने दिन राजकाजको सुखपूर्वक चलाया तो भी उनके शासनके समयमे दाऊदखाँके बेटे भावलखाँने जयसलमेरके आधीनके प्राचीन देरावर और भाटी गणोने जो सबसे प्रथम खडाल देश अपने अधिकारमे किया था उस खडालका हिस्सा काढ कर अपनी राजधानी भावलपुरमे मिलालिया।

रावल अखैसिहके चिरकालतक राज्य कर मृत्यु होनेपर संवत् १८१८ (सन् १७६२ ई०) मे मूलराज जयसलमेरके सिहासनपर बैठे। मूलराजके तीन पुत्र हुए,–

१–रायसिह।
२–जैतासिह।
३–मानसिह।

मूलराज सिहासन पर बैठ तो गये परन्तु इनके मंत्रीके दोषसे इस भट्टी राज्यकी नैतिक अवस्था एकसाथ ही बिगड़ गई। इनके मंत्रीका नाम स्वरूपसिह था, यह जातिका वैश्य जैनधर्मका माननेवाला और मेहतावंशमे उत्पन्न था। यह स्वरूपसिह बडा ऊधमी स्वेच्छाचारी और भाटी सामन्तोसे वडा द्वेष रखनेवाला था, इसने मंत्रीके पदपर आतेही थोडेही दिनोमे जयसलमेरकी वडी शोचनीय दशा कर दी। इसके स्वेच्छाचारी होनेसे जयसलमेरके चारोओर अशान्ति और असन्तोषकी आग बल उठी और पुरानी राजनीतिका लोप होने लगा। मानो भाटी सामन्तोके भाग्य जलनेलगे। किस कारणसे भट्टीसामन्त गण स्वरूपसिहके विषैले नेत्रोमे गिरे इसके सम्बन्धमे एक वड़ी कलंकजनक घटनाका लेख दिखाई देता है। स्वरूपसिह एक वेश्यापर आशक्त था किन्तु वेश्याने उसकी ओर कुछभी ध्यान न देकर अयाफ जातिके राजपूत सर्दारसिहसे प्रेम करलिया। इसपर स्वरूपसिह सर्दारसिहका अनिष्ट करने लगा। सर्दारसिहने दुःखी होकर अंतमे युवराज रायसिहसे प्रार्थना की। स्वरूपसिह पहिलेहीसे युवराजकी नित्यप्रतिकी आमदनीको कम किया करते थे इससे युवराज उस पर स्वयं वड़े खिन्न रहते थे, अब उन्होने सर्दारसिहकी प्रार्थना सुन मंत्रीको उसका फल देनेका संकल्प किया। अन्तमे युवराजके आगे प्रस्ताव हुआ कि स्वरूपसिहके मारे विना राज्यमे किसी भातिसे मगल होनेकी सम्भावना नहीं है। युवराज भी उसमे सम्मत होगये। एक समय मंत्री स्वरूपसिंह राजसभामे रावल मूलराजके सामने वैठेथे समस्त सामन्त सर्दार चारो ओर विराजमान थे। इसी समयमे रायसिहने सभामे जाकर स्वरूपसिहके मारनेके निमित्त तलवार म्यानसे निकाली। स्वरूपसिहने इस अकस्मात् विपत्तिको देख मारेजानेके भयसे रावल मूलराजसे सहायता करनेके लिये प्रार्थना की किन्तु रायसिहकी तलवारने वडी शीघ्रतासे स्वरूपसिहके मस्तकको धडसे अलग करदिया। सामन्तमंडली जानती थी कि स्वरूपसिह रावल मूलराजसे अधिकार लेकर ही स्वेच्छाचारी हुआ था अतएव उन्होने इस समय सभामे वैठे हुए मूलराजके जीवनरूपी दीपकके बुझा देनेका प्रस्ताव उठाया। परन्तु युवराज रायसिहने इस मर्मभेदी प्रस्तावको उसी समय तोड़दिया।

अपने पुत्रकी सहारमूर्ति और सामन्तोकी हिसक अभिलाषा देखकर मूलराज मार जानेके भयसे अन्तःपुरमे चले गये। इधर सामन्तोने विचारा कि रावल मूलराजके सिहासन पर वैठे रहनेमे अब हमारा निस्तारा नही हो सक्ता। विशेप कर जब उनके सम्मुख ही हमने उनके मारनेका प्रस्ताव उठाया है, तब वह अवश्य ही वह हमको मरवा डालेगे। ऐसा विचार कर सामन्तोने उसी समय रायसिहसे कहा कि आप राजसिहासन पर वैठिये। आज ही हम लोग आपका राजतिलक किये देते हैं और यदि आप इसमे

राजी न होंगे तो हम आपके भाईको सिंहासनपर बैठा देंगे। रायसिंहने समस्त सामन्तोंको एकमत देखकर पिताको कैद करा लिया। और स्वयं राज्यभार ग्रहण करनेमें सम्मन होगए। थोड़े ही दिनोंमें उनके नामसे सब राजकाज होने लगा। किन्तु सामन्तोंके बहुत कहने पर भी रायसिंह सिंहासनपर नहीं बैठे उसके बदले वह दूसरे आसन पर बैठा करते थे।

रावल मूलराज सिंहासनच्युत होकर बन्दीदशामें तीन महीने चार दिन तक रहे, इसके पीछे उनकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न हुई। उनको बन्धनसे छुटानेके लिये एक रमणीका हृदय व्याकुल हुआ। वह रमणी कौन है ? प्यारे पाठको ! यह रमणी षड्यन्त्र दलके नेता और रायसिंहके प्रधान उपदेशककी स्त्री है। इसका जन्म माहेचा सम्प्रदायमें हुआ था जो राठौर राजपूतोंमें सेएक है। इसके स्वामी जयसलमेरके प्रधान सामन्त जिञ्जियालीके मालिक अनूपसिंह है, ऊंचे भावको हृदयमें धारण कर राठौर रमणी रंगभूमिमें विचित्र अभिनय करनेको उतरी। इसके स्वामी अनूपसिंहने प्रधानमंत्री होकर राजाको बंदीमें डलवा कर राजधानीमें जो अशान्ति फैलाई है आज अपने स्वामी अनूपसिंहके मारे जाने पर भी यदि राज्यमें शान्ति होजाय और रावल मूलराज बंधनसे छूट जॉय तो मेरा कर्तव्य पूर्ण होजाय, आज इसने इस कामके करनेकी अपने मनमें ठान ली है। उसने विचारा है कि रायसिंहने अपनी कम हिम्मतीसे पिताको बंदी करके बडा बुरा काम किया है, अतएव दुष्ट रायसिंहको भी सिंहासनसे उतार देना चाहिये। राठौर रमणीने क्यो अपने पतिके मरनेसे भी मूलराजको छुटानेका उद्योग किया इसका कोई विशेष कारण इतिहास नहीं बतलाता, तब राजभक्ति ही इसका मुख्य कारण ज्ञात होता है। जो हो राठौर रमणीने उक्त संकल्प करके अपने पुत्र जोरावर-सिंहको पास बुलाकर हृदयका भाव कह सुनाया। पुत्र जोरावरसिंहने माताकी बात मान ली, तब माताने कहा, "वत्स ! इस कामके करनेमें तुम्हारे पिता भी यदि कोई बाधा डाले तो तुम अपने पिताके भी मारडालनेसे न चूकना। उनके मरजाने पर मैं उनके शवके साथ सती हो सुरलोकको चली जाऊँगी; जोरावरसिंह भी माताके ऐसे भयानक आदेशके पालन करनेमें राजी होगया। राठौर रमणीने इस भांति पुत्रसे प्रतिज्ञा कराकर फिर अपने देवर अर्जुनसिंह और वारूके सामन्त मेघसिंहको बुला कर इन दोनोंसे मूलराजके उद्धारके निमित्त प्रतिज्ञा कराई।

रावल मूलराज तीन महीने चार दिनतक बंदीघरमें रहकर विचारते थे कि मुझे अपने कुलांगार पुत्रके दोषसे ही इस भयंकर बंदीघरमें जीवनका शेष करना पड़ेगा। उनके हृदयसे कारागारसे छूटनेकी आशा एक साथ ही जाती रही थी। अनूपसिंहने मंत्री होकर जयसलमेरमें जैसी प्रशंसा और प्रभुता पाई थी। रायसिंह जैसी उनकी आज्ञा पालन करते थे उससे जयसलमेरमें कोई यह नहीं कह सकता था कि मूलराज अब जीते जी बंधनसे छूटेंगे। पांचवें दिन उस वीर नारी राठौर रमणीके प्रस्तावसे प्रतिज्ञावद्ध जोरावरसिंह, अर्जुनसिंह, और मेघसिंह बहुत सी सेना लेकर कारागारसे

घुसगये और मूलराजको बंधनसे छुटा लाये। किन्तु रावल मूलराजने विचारा कि कुलांगार रायसिह अब न जाने किस बुरे अभिप्राय वा छलके साथ जेलसे निकालता है, इस लिये उन्होने पहिले निकलनेसे नाहीं की। अन्तमे जोरावरसिहने अपनी माताके षड्यन्त्रको बताया तब मूलराज उस राठौर रमणीको धन्यवाद देते हुए कारागारसे बाहर निकल आये और राजसिहासन पर बैठगये।

जिस समय जोरावरसिह, अर्जुनसिह और मेघसिहने रावल मूलराजका उद्धार किया था उस समय रायसिह राजशय्या पर निद्रा देवीकी गोदमे विराजमान थे। मूलराजके सिंहासनपर बैठते ही नगाड़े बजनेलगे। उस नगाड़के सब्दसे रायसिहकी नीद जाती रही। उन्होने उठ कर सुना कि पिताजी बंधनागारसे निकलकर सिहासन पर बैठगये है। उसी समय मूलराजके दूतने रायसिहके पास निर्वासन दंडका आज्ञापत्र और राजपूत समाजमे प्रचलित निर्वासन दंडके चिह्न स्वरूप काले वस्त्र, काले म्यानकी तलवार· काली पगड़ी, काली ढाल, लाकर रायसिहकी शय्याके पास रखकर कहा कि काला घोडा नीचे खडा है। रायसिहने हताश हो पिताकी आज्ञाका पालन किया। वह तुरन्त ही काले वस्त्रो-को पहिन काले घोड़ेपर सवार होकर जयसलमेरसे बाहर हुए। जो सामन्त मूलराजके विरोधी और रायसिहके पक्षपाती थे उनको भी अपने नौकरोके साथ रायसिहके साथ ही जाना पडा। रायसिहने सब सामन्तोके साथ राजधानीसे निकल कोटराके सामने घोडा चलाया। जयसलमेरकी दक्षिण सीमाके अन्तमे उक्त कोटरा नगरमे जब सब पहुँचे तब सामन्तोके प्रधानने रायसिहसे कहा 'नगरको लूट लेना चाहिये'। किन्तु रायसिहने राजी न होकर कहा, "जन्मभूमि हमारी जननी स्वरूप है; जो राजपूत जन्मभूमि पर अत्याचार करेगा वह मेरा शत्रु कहा जायगा"। यह सुन कर सामन्त गणोने वहाँ लूट नही की।

अपने किये पापका यथार्थ फल पाकर रायसिह जयसलमेरको छोड़ कर जोधपुरके राजाके पास आये। जो सामन्त उनके साथ आये थे वे भी ज्यो कोटड़ा और बाढमेरमे रहने लगे। उनको इसी भाँति रहते हुए बारह वर्ष बीते। किन्तु पहिले तीन वर्षोंतक उन्होने छिप २ कर जयसलमेरके बहुतसे गाँवोको लूटकर द्रव्य सचय करलिया था। यही नही वरन उन्होने जयसलमेरकी राजधानीके समीपवाले गाँव और नगर भी लूट लिये थे। उनके ऐसे अत्याचार और उपद्रवोको देख कर रावल मूलराजने उन समस्त विद्रोही सामन्तोके घरोको खुदवाकर उनके स्थानपर कुएँ बनवा दिये और उनके सब प्रदेशोको छीन कर राजधानीमे मिला लिया। सामन्तोके बारह वर्षलो निर्वासित दंड भोगनेके पीछे रावल मूलराजने उनके अपराधोको क्षमा कर उनके देशको देदिया। सामन्तोने भी शपथ खाकर तबसे राजसेवामे कोई आपत्ति नही की।

राज्यसे निकालेहुए रायसिहने ढाई वर्ष तक जोधपुरके राजा विजयसिंहके निवास किया। महाराज विजयसिंहने रायसिंहपर अपने पुत्रकी समान स्नेह

किया। किन्तु दुर्भाग्यसे रायसिंहने जोधपुरमे बडे आदर और सत्कारसे रहने पर भी अपने ऊधमी स्वभावसे एक बड़ा अन्याय कर डाला। रायसिंहने जोधपुरके एक बनियेसे कुछ रुपया कर्ज लिया। एक समय जब विजयसिंहके साथ रायसिंह शिकार खेलने जाते थे उसी समय मार्गमे उक्त महाजनने रायसिंहके घोड़ेकी लगाम पकड़ महाराज विजयसिंहकी दुहाई दे रायसिंहसे अपने द्रव्यकी प्रार्थना की। रायसिंहने अपने पिताकी दुहाई देकर बनियेसे घोड़ेकी लगाम छोड़नेको कहा। किन्तु धनी बनियेने ऐंठकर कहा कि "मूलराज की दुहाईमै क्यो मानू?" रायसिंहने इतना सुनतेही क्रोधित होकर तलवारसे बनियेका शिरकाट गिराया और उसी समय जयसलमेरकी तरफ अपने घोडेकी वाग फेरी। उन्होने जाते समय कहा कि "पराये अन्नसे पेट भरनेवालेसे मोल लिये दासका भी सत्व अच्छा है"। रायसिंहके सहसा जयसलमेरकी राजधानीमे आजानेसे राजधानीकी समस्त प्रजा उनको देखनेके लिये आने लगी, मूलराजने अपने बड़े पुत्र रायसिंहको लौट आया देखकर दूतके द्वारा पूछा कि जयसलमेरसे क्यो आये है? रायसिंहने कहला भेजा "मै तीर्थयात्रा करने जाता हू अतएव एक बार जन्म भूमिको देखने आया हूँ" रावल मूलराजने अपने कुपूत बेटेकी यह बात सत्य नही मानी, उन्होने विचारा कि रायसिंह अवश्य ही फिर कोई षड्यन्त्र रचने आया है इस कारण उन्होने उसी समय रायसिंहके नौकरोंसे हथियार लेलिये और रायसिंहको भी राजधानीमे न आने देकर देवाके किलेमे रहनेको भेज दिया।

राजदरबारोमे यह रीति चिरकालसे चली आती थी कि ऊंचे दर्जेके कर्मचारीके मरने पर उसके पुत्रको ही वह पद दिया जाय। बस इसी रीतिके अनुसार मूलराजने अपने पुराने मंत्री स्वरूपसिंहके मारे जाने पर उसके बेटे सालिमसिंहको मंत्री बनाया था। जिस समय स्वरूपसिंह मारे गये थे, उस समय सालिमसिंहकी अवस्था ग्यारह वर्षकी थी। उस थोड़ी ही उमरसे सालिमसिंहके हृदयमे प्रतिसिंहाकी वृत्तिका अंकुर उत्पन्न हो लिया था, अब थोड़े ही दिनोमे वह फल और फूलोसे शोभायमान होकर बडा विशाल वृक्ष हो गया था। कर्नल टाड् लिखते है कि राजपूतगण जैसे असीम साहस और वीरतामे प्रसिद्ध है यद्यपि सालिमसिंहमे वैसा साहस और वीरता नही थी तथापि वह वर्षोंतक सर्पकी समान करता और व्याघ्रकी समान क्रोधकी सहातासे अपनी इच्छासे प्रत्येक विरोधी मनुष्यको विषैले डंकसे मारता था। उसका शरीर तो स्त्रियोकी समान कोमल था, वैसे ही बोल-चालमे उसका स्वभाव नरम था। वह आचार व्यवहारसे निरन्तर विनयपूर्वक प्रतिज्ञा करके सर्वसाधारणको आशा और धीरज देता था। यद्यपि बाहरसे तो वह सबको प्यार करता था किन्तु वह किसी बातकी प्रतिज्ञा करके उसे कभी पूर्ण नही करता था। यह प्रकाशरूपमे जितना नरम और सरल जान पड़ता था हृदयमे उतना ही क्रूर था। सालिमसिंह जैनमतावलंबी था किन्तु जातिके धर्मको किसी भाँति नही मानता था। जैनियोके यहाँ यह रीति है कि रात्रिके समय अन्धेरेमे बैठ रहना अच्छा है किन्तु पतंग आदिके जलनेकी सम्भावनासे दीपक जलाना उचित नही, कारण कि दीपक जलानेसे पतङ्गादिकी हत्या होनी संभव है।

परन्तु सालिमका चरित्र ऐसा पिशाचरूप था कि बहुत दिनोके बीचमे विदेशी

शत्रुओंसे जितने भट्टीगण मारेगये थे इकले इसके षड्यन्त्रसे थोडे ही दिनोंमे उनसे अधिक भट्टियोंका संहार होगया। इतिहासके जाननेवालोने लिखा है कि सालिमसिंहके बालकपनमे ही इसकी विचित्र घटनासे रायसिंहके साथ निकालेहुए सामन्तोंने फिर अपने २ देशको रावल मूलराजसे लेलिया। इसी समय मारवाड़के महाराज विजयसिंह के स्वर्ग पधारनेपर राजा भीमसिंह मारवाडके सिंहासनपर बैठे। जैसलमेरके रावल मूलराजने नवीन मारवाडेश्वर राजा भीमसिंहका अभिनन्दन करनेके लिये मंत्री सालिमसिंहको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे मारवाड़को भेजा। सालिमसिंह मारवाडमे जाकर अभिनन्दन दे जिस समय जयसलमेरमे आरहे थे उसी समय मार्गमे निकाले हुए सामन्तोंने उनको पकड़ कर कैद कर लिया। उन सामन्तोंने उसी समय अपने सर्वस्व छिन जाने और दंड दिलानेके कारणस्वरूप सालिमसिंहको प्राणदण्ड देना निश्चय किया। परंतु उन्होंने जैसे ही सालिमसिंहके शिर काटनेको तलवार उठाई वैसे ही मृत्युको समीप देख सालिमसिंहने आँखोंमे आँसू भरकर गिड़गिड़ाते हुए वचनोंसे अपने शिरकी पगड़ी उतार कर जोरावरसिंहके चरणोंमे धरके अपने प्राणोकी भिक्षा माँगी। शत्रु भी अपनी शरणमे आकर आश्रय पानेकी इच्छा करे तो उसको आश्रय देना और अभय करना राजपूतोंका स्वाभाविक धर्म है,अतएव कुटिल चक्री सालिमसिंहने जिनका सर्वनाश किया था, जिनकी दुर्गतिका अंत करदिया था वह आज उन्हींके हाथोंमे पडकर उन्हींसे अपने प्यारे प्राणोंकी भीख माँगता है। यह देख कर सामन्तोंने शीघ्रही उस आश्रय पानेवाले प्राणोंके भिखारी सालिमको छोड दिया। सालिमके शिर काटनेके लिये निकाली हुई तलवार फिर म्यानमे करली। किन्तु किसने इस नरपिशाच सालिमको निकट आई हुई मृत्युके हाथसे बचाया? जिस राजपूत राठौर रमणीने एकमात्र "समान धर्म" कहकर मूलराजको कारागारसे छुटानेके लिये अपने प्राणपतिके प्राणनाश करनेमे भी संकल्प कर लिया था,उसी राठौर रमणीके सपूत बेटे,उसी मूलराज को बंधनसे छुटाकर राज्यपर बिठानेवाले जोरावरसिंहने सालिमको अभयदान दिया। जोरावरसिंहने यद्यपि मूलराजको कारागारसे छुटाकर राज्यसिंहासनपर बैठाया था, यद्यपि रावल मूलराज जोरावरसिंहके असीम ऋणसे बँधेहुए थे तौ भी दुरात्मा सालिमसिंहने अपनी प्रधानता दिखानेके लिये मूलराजके उस असीम उपकारी जोरावरसिंहको जयसलमेरसे हटाकर निकाले हुए सामन्तोंके साथ बाहर कर दिया था। उस निरपराधी जोरावरसिंहने ही पत्थरके हृदयवाले सालिमसिंहके जीवनकी रक्षा की। सालिमसिंहके छोड़देनेसे उनको भी छुटकारा मिला। उसने निकाले हुए सामन्तोंके अधिकारके देश फिर उनको रावल मूलराजसे दिलवा दिये। सालिमसिंहने यद्यपि सामन्तोंके देश उन्हे दिलवा दिये, परन्तु उनको राजसभामे पहिलेकी समान स्वाधीनता नहीं मिली। केवल जोरावरसिंहको ही पहिलेकी समान समस्त अधिकार प्राप्त हुए।

जिस समय रायसिंह देवाके किलेमे बंदी होकर रहते थे, उसी समय उनके बडे

पुत्र अभयसिह और धौकलसिह निकाले हुए सामन्तोके साथ वाढमेरमे रहते थे। रावल मूलराजने निकालेहुए सामन्तोसे वारंवार दूत भेजकर अपने पौत्रोको अपने पास भेजनेको कहा, किन्तु सामन्तोने किसी भातिसे नही माना। तब रावल मूलराजने अपनी सेनाको लेजाकर वाढमेरको चारोओरसे घेरलिया।

निकाले हुए सामन्तोने छः महीनेतक बडे पराक्रमके साथ किलेकी रक्षा करी, अन्तमे रसदके चुकजानेसे उन्होने आत्म समर्पण करादिया। किन्तु इस नियमपर उन्होने रावल मूलराजको उनके दोनो पोते दिये कि रावल वे उनके प्राणरक्षाकी शपथ करले। जोरावरसिहने दोनो कुमारोके जीवनकी जामिनी की तव दोनो कुमार मूलराज को देदिये गये। रावल मूलराजने दोनो वालकोको देवाके जिस किलेमे रायसिह कैद थे वहाँ रहनेके लिये भेजदिया। किन्तु कुछ दिनोके पीछे ही देवाके दुर्गमे भयकर आग लगी और उस जलती हुई आगमे रायसिह और उसकी स्त्री दोनो जलगये। अभय-सिह और धौकलसिहने वड़े सौभाग्यसे उस आगसे छुटकारा पाया। सालिमसिहने स्वयं दोनो कुमारोकी रखवालीमे जोरावरसिहको करके मूलराजके राज्यशासनके विघ्न दूर करनेके लिये जयसलमेरके दूरवाले प्रदेश रामगढमे उनको भेज दिया था। अभयसिह और धौकलसिहके राजधानीमे वा समीपके किसी स्थान पर होनेसे सामन्त गण उनको ले फिर किसी षड्यन्त्रको रचकर मूलराजको सिहासनसे हटा देनेका विचार करेगे, इस भयसे मेहता सालिमसिहने उनको बड़ी दूर पर रक्षा करके निश्चिन्तता पाली थी। किन्तु जयसलमेरके सवमे प्रधान सामन्त जोरावरसिह जो अभयसिह और धौकलसिह के जीवनके जामिन हुए थे—उन्होने सालिमसिहकी इस आज्ञासे दोनो राजकुमारोको राजधानीसे अनेक दिनके मार्गपर दूर चला देनेमे सन्देह किया। उन्होने विचारा कि सालिमसिहने अवश्य ही कोई षड्यन्त्र रचकर कुमारोको इतनी दूर अन्य स्थानपर भेजा है। जोरावरसिहने अन्तमे एक समय रावल मूलराजके सामन निर्भय होकर कह दिया कि "आपके सिहासनके उत्तराधिकारी राजकुमार अभयसिंहके जीवनका मै जामिन हुआ हूँ, राजकुमारको जब आगे राज्यपर बैठना होगा तव उसको दूर स्थानपर रखना किसी भांतिसे उचित नही है उसको राजधानीमे ही रखकर उसे राज्यकार्यकी शिक्षा देनाही आपका कर्तव्य है"।

जोरावरसिंहकी ऐसी सम्मति देखकर मेहता सालिमसिहका हृदय कॉप उठा। उसने विचारा कि, जोरावरसिहकी समान प्रतापशाली सामन्त राजसभामें खड़ा होकर ऐसी सम्मति दे तो इसमे हमारा मंगल नही होसकता, अतएव सालिमसिह जोरावरसिंहके मारडालनेकी चिन्ता करने लगा। इसी समयसे सालिमसिंहको पिशाच मूर्ति धारण करते देख जयसलमेरमे वड़े २ हृदयविदारक दृश्य दृष्टि आनेलगे। जोरावरसिहका खेतसी नामक एक भाई था। उस खेतसी की स्त्रीसे रजवाडेकी रीतिके अनुसार सालिमसिहने भाई वहिनका सम्वन्ध जोड लिया। सालिमसिहने अपनी पैशाचिक अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त अपने पापके उद्देश पूर्ण होनेके मार्गके कांटे

उखाडनेके लिये उस खेतूसीकी स्त्रीकी सहायता लेनेका संकल्प किया। सालिमसिहने उक्त स्त्रीको अपने घर बुलाकर, वहुतसी बातै करनेके पीछे उससे वडी चतुराईसे कहा "क्या तुम्हारी ऐसी इच्छा नहीं होसक्ती कि जिससे तुम्हारे स्वामी जोरावरसिहके पदपर जयसलमेरके प्रधान सामन्त होजांय"। अवला स्त्रीने सालिमकी इस षड्यन्त्रकी बातको समझा नही, तब सालिमने स्पष्ट रूपसे अपने मनका भाव सुनाकर कहा कि तुम्हारे स्वामी राजसभाके प्रधान सामन्त होसकते है। इस वड़ी आशासे स्त्री सालिमका कार्य करनेको तुरन्त ही राजी होगई। किन्तु सालिमने उस समय उसको यह नही बताया कि जोरावरसिंह किस भॉतिसे मारा जाय। कई दिनके पीछे सालिमसिह ने जब स्त्रीको कामके करनेमे उत्सुक देखा तब कहा "मै अपने हाथसे प्राणघातक जहर दूंगा। तुम। उस विषयको लेकर जोरावरसिहके भोजनमे मिला देना। जोरावरसिह उस विपैले भोजनको खाकर निश्चय मर जॉयगे, तभी तुम्हारे स्वामीको प्रधान सामन्तका पद मिल जायगा।" हतभागिनी रमणीने अपने स्वामीका ऐश्वर्य वढानेकी अभिलाषा से समय पाकर वह विष जोरावरसिहको खिलादिया, जिससे वह वीर सामन्त मायामय संसारको छोड़ कर परलोकको सिधारा। कृतघ्न सालिमसिहने ऐसे वीर जोरावरसिहको मारकर अपने पैशाचिक अभिनयके मार्गको स्वच्छ करलिया। और खेतूसी जिझिनियालीके प्रधान सामन्त होगये।

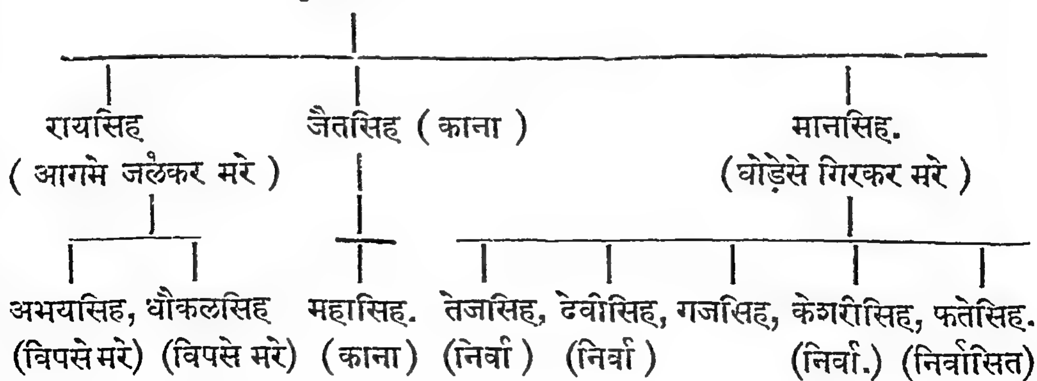
पापात्मा सालिमने इस भॉति जयसलमेरके सबमे श्रेष्ठ सामन्तको मारकर अतमे संहारमूर्त्ति धारण कर क्रमानुसार हत्या करनी आरम्भ की। उसने इस प्रकार विषसे और समयानुसार तलवारसे वारू और डॉगरी, आदिके सामन्तोको एक २ करके मार डाला। खेतूसी भी अपने भाईके मारनेमे सरीक थे वा यह नही जाना गया।

उन्होने यद्यपि सामन्त पद पालिया परन्तु दुरात्मा सालिमसिहके समयमे ही उनका भी जीवन नष्ट होगया। खेतूसीसे सालिमसिहका इस वातपर विवाद होगया कि जब सालिमसिहने अभयसिहको जयसलमेरके उत्तराधिकारसे एकवार ही वंचित करके मूलराजके छोटे पुत्र मानसिहके वेटे गजसिहको राज्यका स्वत्व देनेकी इच्छा की और खेतूसीने उस प्रस्तावमे किसी प्रकार सम्मति न दी तब अभयसिह और वौकलसिहको विना मारे सालिमसिहने अपनी इच्छा पूर्ण होनेका दूसरा उपाय न देखकर सबसे पहिले खेतसीसे इस कार्यके करनेको कहा 'कि तुम दोनो कुमारोको मारडालो' खेतूसीने इस नीच और घृणित कामके करनेसे क्रोधित होकर कहा कि, "अपने स्वामीके वंशधरोके मारनेमे मैं सहायता भी नही दे सक्ता मारना तो एक ओर रहा"। सालिमने जब खेतूसीकी यह वात सुनी तब मनमे कहा कि तुम्हे भी अब जोरावरसिहके पास भेजता हूं। कई दिनके पीछे खेतूसी अपने साले स्वरूपसिंहके साथ वालोतरा देशके अन्तर्गत फलियो नामक स्थानमे विवाहके न्यौतेमे गये। सालिमसिहने उसी समय खेतूसीके मारनेका निश्चय करलिया। खेतूसी और स्वरूपसिंह जब विवाहके पीछे जयसलमेरकी

(१) उत्तरसमे माई।

सीमामे विजोराय स्थानपर लोटकर आये तब सालिमसिहके गुप्तचरने उन्हे बड़े आदरके साथ किलेमे लेजाकर दोनोको मार डाला। थोड़ी देरके पीछे शव दाह करनेको उन्हे किलेमे से निकाला। खेतूसीकी स्त्रीने जब किसीके मुखसे सुना कि तुम्हारे स्वामीके मारनेका उद्योग कियागया है, तब वह स्वामीके घरपर न आनेसे सालिमसिहको अपना परम हितू जान उसीकेघर चली गई, और साथ मे अपने छोटे पुत्रको भी ले गई। दुरात्मा सालिमने उस स्त्रीको आश्रय तो दिया परन्तु उसे यह नही बतलाया कि मेरे ही षड्यन्त्रसे तेरा स्वामी मारागया है। स्त्री इसी प्रकार सालिमके स्थानपर रहने लगी। एक नौकर आकर प्रतिदिन स्त्रीको भोजन देजाता था, चार पांच दिनके बाद उस नौकरने एक दिन स्त्रीसे आकर कहा कि तुम्हारे स्वामी और भाई दोनो मारेगये। इस दारुण शोचकी बात सुन कर रमणीका शोकरूपी समुद्र उछलने लगा। थोड़ी देर पीछे उसके हृदयमे बदला लेनेकी इच्छा प्रबल हुई। दुराचारी सालिमने उसके स्वामीको मारा है यह जान-कर वह उसी समय प्रतिहिंसा करनेको तैयार हुई। इतिहाससे जानाजाता है कि राक्षस सालिमसिहने चिरशान्तिके लिये स्त्रीके पास एक छुरी भेजी। वास्तवमे स्त्रीने स्वयं अपनी हत्या करली या सालिमने ही उसको मारा, यह इतिहाससे नही ज्ञात हुआ। रमणीने जैसे ज़ोरावरसिहको मारकर महा पातक किया था उसका उसको यहींपर उचित फल मिला।

नराधम सालिमसिह एक २ करके अनेक भट्टी सामन्तोको मारकर पीछे राज-वंशके ध्वंस करनेको आगे बढा। जयसलमेरके आगे होनेवाले उत्तराधिकारी अभय-सिह अपने छोटे भाई धौंकलसिहके साथ रामगढमे रहते थे। नरपिशाच सालिमने अपने षड्यन्त्रसे विषद्वारा अभयसिह, धौंकलसिह, उनकी स्त्री और उनके छोटे २ बालकोको भी मरवाडाला। इन भयंकर हत्याओके पीछे सालिमसिहने रावल मूल-राजके छोटे बेटेके तीसरे पुत्र गजसिहको जयसलमेरके उत्तराधिकारी रूपसे प्रकाशित करदिया। गजसिहके और पॉच भाई पिशाच प्रकृतिवाले सालिमसिहके विकराल ग्राससे अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये जयसलमेरको छोड़ बीकानेरमे जाकर वहांके राजाकी शरणमे रहने लगे। नीचे लिखी वंशावलीके देखनेसे पाठक गण सहजमे ही जान सकेंगे कि महा पातकी सालिमने राजवंशकी कैसी शोचनीय दशा करदी थी।



(१) उर्दू तर्जुमेमें जहर देनेसे मरे।

महासिह काना था, हिन्दूशास्त्रके अनुसार कानेको राजसिहासनका अधिकार नही है, अतएव महासिहका स्वयं ही अधिकार जाता रहा, इसी लिये सालिमसिहके कराल ग्रासमे उनका जीवन नष्ट नही हुआ।

टाड् साहव इस अध्यायमे लिखते है कि "राजवाड़ेमे जिस समय मंत्रियोके सर्वाधिकारमे अखण्ड प्रभुता प्रकाश हुई है,हम केवल उसी समयमे उन मंत्रियोके खिलौने स्वरूप राजाओको चिरकाल तक राज्य करते देखते है। कोटा राज्यके भूतपूर्व महाराव भी पचास वर्षसे अधिक राज्यसिहासन पर बैठे थे। और रावल मूलराज भी इस जयसलमेर के राजसिहासन पर ५८ वर्ष तक रहे। इनके पिता ४० चालीस वर्ष तक राज्य करगये थे। जगत्के जिस किसी राज्यके इतिहासमे पिता और पुत्रमे एक शताव्दी राज्य रहा-हो ऐसा लिखा है वा नही इस विपयमे मुझे सन्देह है। जिस शताव्दीमे यह पिता पुत्र राज्य करगये है उसी शताव्दीसे इस यदुवशका घोर परिवर्तन और वड़ा पतन हुआ है। यदि हम रावल मूलराजके पितामह जसवन्तसिहके शासन समय पर दृष्टि डाले तो हम इस जयमलमेरकी सीमाको वड़ी विस्तारवाली देखते है। उत्तरकी सीमा गाडानदी-तक, (जो नदी इस राज्यको मुलतानसे अलग करती है) पश्चिममे पंचनद और सिन्धुका उपजाऊ प्रदेश इसके अन्तर्गत देखते है। उक्त समयके कुछ दिन पहिले इसकी सीमा और भी वडी थी। इसके दक्षिणमे वातराज्य है। दक्षिणके अचलमे विराजमान स्योकोटड़ा और वाढ़मेर देश इसके मध्यमे थे। किन्तु इस समय वह मारवाडकी राजधानीमे है। पूर्वसीमाके फलोदी, पोकर्ण और अन्यान्य नगर आदि भी वीकानेरमे मिलगये है। इस समय जो भावलपुर राज्य स्वतंत्र हो रहा है वह भी इसी जयसलमेरकी राजधानीका एक अंग है। राठौरोने जयसलमेरके पश्चिमी सीमाके वहुतसे प्रदेश अपने अधिकारसे करलिये हैं"।

छठवां अध्याय ६.

अंगरेज गवर्नमेंटके साथ रावल मूलराजका सन्धि करना–संधिपत्रका लिखा जाना–मूलराजकी मृत्यु–उनके पोते गजसिहका सिंहासनपर बैठना–उनका मन्त्रीके हाथमे पडकर खिलौना वन-जाना–संधिपत्रकी तीसरी धारा–राजनैतिक प्रश्नावली–सालिमसिंहका फिर शासन करना–सालिम-सिंहके अत्याचार और उपद्रवोका वढ़ना–जयसलमेरके प्रधानमंत्री पदको अपने उत्तराधिकारियोंको दिलानेका परिश्रम करना–वृटिश रक्षसे वृटिश गवर्नमेण्टके पास दरख्वास्त भेजना–पलीवालोंका स्वत निर्वासन–जामिनस्वरूप वनियेके परिवारकी रक्षा करना–वलके साथ राज करलेना–सालिम-सिंहकी सम्पत्ति–चारण और भाटोंका इतिहास–वीकानेरके राठौरोंसे उनका ध्वस होना–विश्वास-घातकता–वृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगना–सहायता मिलना–उसका फल–रावल गजसिंहका उदयपुरमे आना–रानाकी कन्यासे उनका विवाह होना।

श्रीकृष्णके स्वर्ग चले जानेपर यदुवंशकी जो दशा हुई उसे पहिले ही अध्यायमें लिख आये है। इस समय हम फिर यदुवंशकी आगेकी दशा दिखानेको तैयार हुए है। संवत् १८१८ मे रावल मूलराज रावल जयमलके सिंहासनपर बैठे थे और १८१८ ईस्वीमे उन्होने ईस्टइंडिया कंपनीके साथ संधि करली। कालकी कैसी विचित्र गति है? पवित्र यदुवंशके स्वामी भगवान् श्रीकृष्णके वंशधर जो अबलों स्वच्छन्द थे, अब उनके वंशमे उत्पन्न हुए, मूलराजको अनेक शताब्दियोंके पीछे संधि स्थापन करनी पड़ी। इतिहाससे जानाजाता है कि भारतवर्षके प्रत्येक राजपूत राजाओंने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर ली थी, उसके पीछे जयसलमेरके राजा मूलराजने संधि स्थापन की तो क्या? जिस दिल्लीमे राजपूत राजाओंने ईस्ट इंडियाकम्पनीके साथ संधिपत्र लिखा था उसी दिल्लीमे जयसलमेरके रावल मूलराजके दूतने भी सन्धिपत्र लिखा।

संधिपत्र।

माननीय अंग्रेज ईस्टइंडियाकंपनीके साथ जयसलमेरके मालिक श्रीयुत महा रावल मूलराज बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कंपनीकी ओरसे महामहिमवर मार्किस आव हेस्टिंग्स के. जी भारतके गवर्नर जनरलसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार, मि० चार्लस थियोफिलस मेटकाफ, और महाराजाधिराज महा रावल मूलराज बहादुरकी ओरसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार मिश्र मतिराम और ठाकुर दौलतसिंह मानते है।

पहिली धारा।

माननीय अंग्रेज कंपनी और जयसलमेरके मालिक महा रावल मूलराज बहादुर और उनके उत्तराधिकारियोसे तथा अन्य जमीदारोंसे चिर/स्थाई मित्रता, सन्धि-सम्बन्ध, और समान स्वार्थता रहे गी।

दूसरी धारा।

महा रावल मूलराजके वंशधर ही उत्तराधिकारी क्रमसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठेंगे।

तीसरी धारा।

जयसलमेर राज्यका पतन करनेके लिये यदि कोई राजा सेना लेकर आक्रमण करे अथवा उक्त राज्यके बीचमे कोई बडा भारी झगड़ा उपस्थित होजाय और जयसलमेरके राजासे वह दूर न होसके तो बृटिश गवर्नमेण्ट उक्त राज्यकी रक्षाके लिये अपनी शक्तिपूर्वक सहायता देगी।

चौथी धारा।

महा रावल और उनके उत्तराधिकारीगण एवं स्थलाभिषिक्तगण अटल नियमके साथ आश्रितरूपसे बृटिश गवर्नमेण्टके सहायक होंगे, और बृटिश गवर्नमेण्टका आधिपत्य मानेंगे।

पाँचवी धारा।

यह पाँच धाराओसे युक्त संधिपत्र मुझ चार्लसथियोफिलस्मेटकाफ और मिश्र मतिराम एवं ठाकुर दौलतसिहका निर्द्धारित और हस्ताक्षर युक्त तथा दोनो ओरकी मोहरोसे भूपित है, महा महिम गवर्नरजनरल और महाराजाधिराज महा रावल मूलराजवहादुरके स्वीकार होनेपर आजकी तारीखसे छः सप्ताहोके वीचमे दोनो ओरके लेने देनेका कार्य पूरा होजायगा।

दिल्लीमे आज सन् १८१८ दिसम्वर महीनेकी १२ वी तारीखको लिखा गया है।

(हस्ताक्षर) मतिराम मिश्र,
ठाकुर–दौलतसिह।
(हस्ताक्षर) सी टी मेटकाफ।

उक्त संधिपत्र लिखनेके पीछे रावल मूलराज दो वर्षतक जिये। उनकी १८२० ईसवीमे मृत्यु होगई। इस वातको पहिले ही कह आये है कि मूलराजने ५८ वर्ष तक राज्य किया था, किन्तु नाममात्रके राजा थे। सालिमसिहने और उसके पिताने ही इतने दिनोतक अपनी इच्छानुसार जयसलमेरमे प्रवंध किया था। हम कहसकते है कि मूलराज केवल मन्त्रीके हाथके खिलौने ही नही थे, वह एक तेजहीन पुरुष भी थे। जो समस्त गुण क्षत्रिय राजाओमें होने चाहिये, उनमेसे एक भी मूलराजमे नही था। उनके जीते जी ही नरपिशाच सालिमसिहने उनके वंशधरोकी जैसी दुर्गति की। जिस भांतिसे उनके वेटे और पोतोको मारा उससे यही कहना वहुत है कि जितना साहस और तेज उस राजपूत रमणीमे था जिसने मूलराजको जेलसे छुटाया था इनमे उतना भी नही था। मूलराज इतिहासमे यादवकुल अवनति कारक कहे गये है।

मूलराजके मरनेके पीछे उनका पोता गजसिह जयसलमेरके सिहासनपर वैठा। पापी सालिमसिहने अपनी प्रभुता सदा वनाये रखनेके लिये ही गजसिहको अपना खिलौना जान मूलराजके वेटे और पोतोको मार और निकाल कर गजसिहको उत्तराधिकारी प्रसिद्ध किया था। गजसिह भी मूलराजकी समान सालिमसिहके हाथके खिलौने होकर जयसलमेरके सिहासनपर वैठे। जिसमे गजसिह राज्यके किसी विषयमे हस्तक्षेप न करसके, जिस्मे सामन्तो और प्रजाके साथ उनकी किसी भातिसे प्रीति न होसके, जिस्मे वह सालिमसिहके सेवक और आज्ञाकारी होकर सदा रहे। इसी उद्देशसे नीच सालिमसिहने गजसिहको वचपनसे ही लिखापढा लिया था। दादा मूलराज जैसे सालिमसिहके हृदयमे ही आचरणोको देखकर मौन रहते थे, ऐसे ही यह नये राजा भी उन्हीकी समान रहने लगे। सालिमसिहने गजसिहको वालकपनसे ही सामन्त समाज और समस्त प्रजासे अलग रक्खा था, इसकारण वह किसी सम्प्रदायसेभी सहानुभूति नही प्रकाश कर सके थे। नीच सालिमने गजसिहको ऐसी दशामे रखकर भी इतनी देखभालकी कि जिसमे वह किसी कामके करनेका साहस न कर सके। गजसिहके राजसिहासनपर वैठनेमे चतुर सालिमसिहने अपने सेवकोको उनके पास नियुक्त किया। वह सेवक गजसिहसे

सालिमसिंह की बडी प्रशंसा किया करते, और उसको देवताके समान बताते थे। गजसिंह राज्यसिंहासनपर बैठकर किस समय क्या बात करते है, उनके मनका भाव किस २ भाँतिसे दिनमे बदलता है इन बातोपर सेवक विशेष रूपसे दृष्टि रखते और समय २ पर वे अपने स्वामी सालिमसिंहसे सब कहते थे। रावल गजसिंह उनकी रानियो और परिवारके मनुष्य सभी पूर्णरूपसे सालिमसिंहकी दयापर निर्भर रहते थे, किन्तु दुरात्मा सालिम समय पाकर गजसिंहपर भी निर्दयता प्रकाश करनेमे नही चूकता था, यदि कभी रावल गजसिंह किसी घोड़ेको मोल लेना चाहते तो उनको सालिमसिंहसे प्रार्थना करनी पड़ती, यदि कभी वह किसीको कुछ देना चाहते तो सालिमसिंहसे आज्ञा लेनी पड़ती थी। सालिमसिंह यदि रावल गजसिंहके दश रुपये माँगनेपर पाँच भी देदेते तौ इसमे गजसिंह अपना अहोभाग्य समझते थे। इन सब बातोसे हमारे पाठक स्वय जान सक्ते है कि मलराजके मरनेके पीछे जयसलमेरके राज्यमे परिवर्तन तो अवश्य हुआ किन्तु सालिमसिंहकी प्रभुता कुछ कम नही हुई; वरन् दिनप्रति बढ़ने लगी।

इतिहासके लिखनेवाले टाड् साहबने यहाँ पर लिखा है कि जयसलमेरका संधिपत्र जिस तारीखमे समाप्त हुआ (सन् १८१८ई. १२ दिसम्बर) उसके देखनेसे जानाजाता है कि केवल जयसलमेरके महा रावलने ही देशी राजाओमे सबसे पीछे बृटिश गवर्नमेण्टका आश्रय लिया था। मूलराजने सालिमसिंहकी सलाहसे बहुत दिनोतक बड़े कष्टके साथ अपना राज्य चलाया था। इस पर विशेष कर सालिमसिंहकी पहिले यह इच्छा नही थी कि रावल मूलराज अंग्रेजोसे संधि करले, कारण कि उसने पहिले ही विचारलिया था कि संधि हो जानेसे उसकी शक्ति और प्रभुता कम हो जायगी।

किन्तु सालिमसिंहने जब बड़ी खोजके साथ देखा कि समस्त रजवाडेमे इकला जयसलमेर राज्य ही बृटिश गवर्नमेण्टके आधीन नही है। और हमारे अत्याचार और उपद्रवोसे पीडित राज्यमे शत्रुओकी संख्या बढी हुई है, इस कारण बिना अंग्रेजोसे संधि किये शत्रुओद्वारा अंग्रेजोसे मिलकर चढ़ाई होनेसे महा अनिष्ट होजानेकी सम्भावना है यही सोचकर सालिमसिंहने मूलराजको संधि करनेकी सम्मति दी थी। जब संधिपत्र लिख गया तब सालिमसिंहका यह भय जातारहा। सालिमसिंहको प्रायः इस बातका भी बड़ाभारी डर था कि मेरे अत्याचारोसे पीड़ित होकर गजसिंहके जो अन्यभाई जयसलमेरको छोड़कर बीकानेरमे भाग गये थे शायद वेही इकट्ठे होकर अपनी २ सेना सहित किसी न किसी समय राज्यपर आक्रमण करे। किन्तु अंग्रेजोके साथ संधि होनेसे उसकी तीसरी धाराके अनुसार सालिमसिंहका यह भय भी जाता रहा। "बाहरसे किसीके आक्रमण करनेपर बृटिश गवर्नमेण्ट अपनी सेनासे सहायता करेगी"। तीसरी धारामे ऐसे नियमके रहनेसे गजसिंहके भाई कभी मेरी इस अखंड प्रभुतामे बाधा नही डाल सकेगे। प्रधान मंत्री सालिमसिंह बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धि होजानेपर भी शान्त नही हुआ, वरन दिन २ अपने अत्याचारोकी अग्निको प्रज्वलित करता रहा।

टाड् साहबने फिर वृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त सन्धिसम्बन्धी राजनैतिक उद्देशके सम्बन्धमे लिखा है, कि इस संधि होनेके कारण जयसलमेरका शीघ्र ही उपकार होगा, यही उपकार उक्त राज्यके लिये अत्यन्त प्रयोजनीय है। जयसलमेरका राज्य और आधी शताव्दीतक स्वाधीन दशामे स्वतंत्र रहसक्ता था वा नहीं यह सन्देहकी वात थी। अतएव जिस दिनसे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ जयसलमेरके स्वामीकी संधि हुई उसी दिनसे जयसलेरकी स्थिति निश्चित होगई। जयसलमेरकी शासनशक्ति क्रमानुसार हीन होती चली आती थी, और राज्यकी सीमा क्रमानुसार घटकर अंतमे केवल राजधानीमात्र शेष रहा चाहती थी। कारण कि समस्त भावलपुर राज्य ही एक ओर जयसलमेरके राज्यके उत्तरीय देशोसे बनगया है, दूसरी ओर सिन्धु, वीकानेर और मारवाडके तीन राजा क्रमानुसार जयसलमेरके वहुतसे देशोको अपने आधीन करते आते थे। यह तीनो राजा जव जयसलमेरको निर्वल देखते तभी अपने राज्यको वढा लेते थे और विश्वासघाती सालिमसिंहके दुराचरणोंसे ही अन्य राजाओसे विवाद होता था। केवल अन्य राज्योमे कई वर्षलो अराजकता फैल जानेसे जयसलमेरका राज्य नाममात्रकी स्वाधीनतामे रहगया था और उसीसे इस राज्यका अंग अधिक न्यून नही हो सका था। यदि वीकानेर और मारवाड प्रभृति राज्योमे अराजकता न फैलजाती तो निस्सन्देह उन दिनोमे ही जयसलमेरका राज्य वहुत ही थोडे टुकडेमे पृथ्वीपर दिखाई पड़ता। अब वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि होजानेसे सवने जान लिया कि जो कोई जयसलमेरपर आक्रमण करेगा तो जयसलमेरकी ओरसे वृटिश गवर्नमेट उस आक्रमण करनेवालेके साथ युद्धमे तत्पर होगी। अतएव सैन्धव दाऊके वेटे और राठौरोने जयसलमेरपर चढ़कर राज्यसीमामेसे कुछ देश जैसे पहिले अपने राज्यमे मिला लिये थे वैसे मिलाना वदकर दिया। यदि हम समस्त रजवाड़ेमेसे इकले जयसलमेरसे संधि नहीं करते तो जयसलमेर राज्यको अपने शत्रुओकी असंख्य सेनाके मुखमे असहाय अवस्थामे गिरना पड़ता, उसमे भी फिर अत्याचारोकी प्रवल अग्निमे जयसलमेर जलकर दूसरी मूर्तिमे वदल जाता, और भट्टी जाते वेदौनियोकी समान दस्यु जातिमे वदलकर मरुक्षेत्रके रेतमे मिलजाती। स्वाधीन देशीय राज्योमे एक जयसलमेरहीने पहिले गगा और सिन्धु नदीके किनारेवाले राज्योंके साथ वाणिज्य स्थापन किया था। किन्तु आत्मविग्रह और अज्ञानितसे वह वाणिज्यका सोता एकवार ही रुकगया, अव चिरकालतक शान्ति और विश्वासको विना जमाये वह वाणिज्य नही चल सकता। केवल वाणिज्यकी उन्नतिके लिये ही हमने जयसलमेरके साथ मित्रता की है। किन्तु यदि हम भविष्यको देखे, यदि हम अन्यदेशवालोका भारतपर आक्रमण करनेका अनुभव करें तो आनेवाले अरवसे जलमार्गद्वारा समुद्रके किनारे२ मरलनासे आकर इस स्थानसे भारतको जीत सक्ते है। इन्ही विदेशियोका भारतपर आक्रमण दूर करनेके लिये हमको जयसलमेरका अधिकार वडाही सुखदाई होगा। कारण कि हम जयसलमेरमे प्रवेश करके उत्तर सिन्धुमे जाकर सहजहीमे अपनी सेनाको वहाँ तक लेजासक्ते हैं और भारतमे आनेवालोके मार्गको पहिलेमे ही भलीभाँति रोकसक्ते हैं।

अब इतिहासका अनुसरण किया जाता है। दुष्ट सालिमसिंह अंग्रेजोंसे सन्धि होजानेके पीछे अपने शत्रुओंका भय दूरहुआ जान, पहिलेकी समान भयानक मूर्तिसे संहार मूर्ति धारण कर जयसलमेरके राज्यको उजाड देनेको तैयार हुआ। कर्नल टाड् लिखते है कि "उक्त संधि होजानेसे बड़े लोभी और शठ सालिमसिंहको जैसी शक्ति प्राप्त हुई उस शक्तिको लिखना लेखनीसे बाहर है"। पाठकगण इस लेखसे विस्मित हुए होंगे कि सालिमसिंहने इस समय संहारमूर्तिसे देशकी दशा कैसी करदी। कर्नल टाड्ने लिखा है " अन्य राज्योंसे आक्रमणका भय दूर होजानेसे महता सालिमसिंह क्षणमात्रको भी यह नही समझा कि मैने अपने स्वामी और सामन्तोके रुधिरसे स्नान किया है, अतएव कल्पित ही अनुताप करके सर्व साधारणमे अपना विश्वास जमा लूं। वनिये किसान और भ्रमणकारी सालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध रहते थे कि सालिमकी कसमका मूल्य मरुभूमिके रेतेके कणसे भी हीन समझते थे।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है " सधिपत्रके लिखजानेके उपरान्त कुछ समयतक सालिमसिंहने प्रकाशमे राज्यके सभी प्रबधोमे मन लगाया, किन्तु उसका यह भाव अधिक दिनलों नही रहा। जिस महापापके कीचड़मे उसका हृदय सना हुआ था, वही पाप उसको सबके पाससे घृणा उपजाता था अथवा यो समझना चाहिये कि वह अपने स्वाभाविक महा पाप करनेके सिवाय जीवनको कष्टदायक जान जयसलमेरम बड़ा उधम मचाने लगा। कुछ दिनोतक उसने शान्ति इस कारणसे धारण की थी कि जयसलमेरके रावलके साथ जो अगरेजोकी सधि हुई है, उस संधिपत्रमे १ धारा और नियत कराना उसका अभीष्ट था कि मेरे उत्तराधिकारीके सिवाय जयसलमेरके प्रधानमंत्री पदपर और कोई न बैठने पावै। उसने अपने मनमे सोचा कि मेरा ही वंश जयसलमेरको लूटता रहै इसीसे यह प्रस्ताव किया।

किन्तु जब उसने देखा कि बृटिश गवर्नमेण्टने उसकी यह अभिलाषा पूरी नहीं की तब अपने पिशाच वंशको मत्रीपदपर न होता हुआ देखकर उसने अपनी संहारमूर्तिसे राज्यमे असहनीय और अकथनीय अत्याचारोकी भयानक अग्नि प्रज्वलित करदी। बृटिश गवर्नमेण्टके दूतने सालिमसिंहके उस हृदयभेदी अत्याचारोको देख १८२१ ई. १७ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके पास सालिमसिंहके उक्त अत्याचारके सवादोको भेजकर लिखा कि विदित होता है कि जयसलमेरके रावलके साथ जो हमारा संधिपत्र लिखा गया था, वह अब हमारा सन्मान रखनेमे हानि करते है, कारण कि हमारे आश्रयमे रहकर प्रजा इतने

---

(१) सालिमसिंहके सम्बन्धमे बाबू लोकनाथघोषने अपनी बनाई पुस्तकमे लिखा है।

Salim was as unscrupulous as he was unprincepled He put to death nearly all the relatives of the Rawal, interrupted the trade of the country by heavy extortions from the merchants depopulated the city of Jaisalmir by the cruelty The Moden History of Indian cheeps Rajas Ac. Part I.

अत्याचार और कष्टोंको सहे, यह घोर कलङ्कका विषय है "। महता सालिमसिंहसे उन अत्याचारोंके बारेमें कहनेसे कुछ नहीं हुआ। वह अत्याचारोंसे दुःखी मनुष्योंको झूठा कहकर अपने कहे हुए अपराधोंको छिपाने लगा है। वह चतुराईसे कहता है कि न्याय विचार और दया प्रकाशकी मैं सदासे इच्छा रखता आया हूँ। इसके पीछे उसने दूने उत्साहसे निरपराधियोंको दूना दंड और प्रजाका सर्वस्वहरण करना आरम्भ किया है। महता सालिमसिंहके इस लोमहर्षण अत्याचारसे समस्त रजवाड़ेके मनुष्य दुःखी हो रहे हैं। पल्लीवाल नामक धनवान्‌से मूलधनकी सहायता लेकर समस्त बनिये भारतमें वाणिज्य करते हैं। किन्तु महताके अत्याचारोंसे इस धनवान् परिवारके प्रायः पाँच हजार मनुष्य जन्मभूमिको छोड़कर निर्वासित दशामें दूसरे स्थानपर बसते हैं। महाजन लोगोंने भी जो दूरदेशोंमें जाकर धन उत्पन्न किया है वह उसको लेकर प्राणोंके भयसे जयसलमेरसे नहीं आसक्ते हैं। किन्तु उद्दंड सालिमसिंहने उनके परिवारोंको जामिन स्वरूपमें बाँध रक्खा है जयसलमेर राज्यकी खेती एक साथ जाती रही है। जामिनके अभावसे देशी और विदेशी व्यवसाय भी उठगया है। जबरदस्ती प्रजाका धन छीनकर राज्यकर लिया जाता है "।

कर्नल टाड्‌ने जिस समयकी बात लिखी है, उस समय वह रजवाड़ेमें विद्यमान थे, अतएव सालिमसिंहके उस अकथनीय अत्याचारोंके वह प्रत्यक्ष दर्शक थे। उन्होंने लिखा है, "प्रकाशमें मंत्री सालिमसिंहने दो करोड़की सम्पत्ति इकट्ठी करली है। यह धन सब भारतवर्षमें फैला हुआ था, महताने केवल जबर्दस्ती बनियें और महाजनोंसे छीन कर इसको बारहंवर्षके[1] बीचमें इकट्ठा करलिया है। यह भी प्रसिद्ध है कि जयसलमेरके राजाके समस्त आभूषण जो हीरे जवाहरके बने बहुमूल्य थे, वह भी उसने अपनी चतुरतासे निकालकर दूसरे स्थानपर छिपा रक्खे हैं। बनिये महाजन अपने कुटुम्बको जयसलमेरसे दूसरे स्थानपर लेजानेके लिये प्रतिदिन बृटिश गवर्नमेण्टके पास परवानगीके लिये प्रार्थना करते हैं। किन्तु नरपिशाच सालिमसिंहके भयसे कोई सहसा साहसपूर्वक अपने परिवारको दूसरे स्थानपर लेजानेका साहस नहीं करता। यद्यपि सालिमसिंह बृटिश एजेन्टके प्रस्तावसे परवाना देते हैं किन्तु मार्गमें उन जयसलमेर छोड़नेवालोंको मारकर लुटवा लेते हैं "।

टाट साहबने फिर लिखा है कि–" बृटिश गवर्नमेण्टके साथ रजवाड़ेके राजोंसे निर्धारित सन्धिपत्रका मूल उद्देश यह है कि समस्त राजपूतानेमें परस्पर विवाद उपस्थित होजानेके समय बृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थता करेगी इस समय जयसलमेरकी सीमामें एक विवाद उपस्थित है जिस विवादकी मीमांसाके लिये बृटिश गवर्नमेण्ट प्रथम धाराका प्रयोग करेगी, हम यहाँपर उस विवादका सविस्तार वृत्तान्त लिखकर जयसलमेरके इतिहासको समाप्त करना चाहते हैं। बारूप्रदेशके मालदेवतोंका भयंकर विवाद उपस्थित हुआ है, और उस विवादमें दोनों राज्योंमें महा संग्राम होने और

(१) टॉड़के मतमें १० वर्ष।

राठोरोसे इस प्रकारके आक्रमणका भय उपस्थित होगया है कि जिसमे वृटिश गवर्नमेण्ट को मध्यस्थ बनना ही पडेगा। मालदेवोत जो वीकानेरियोकी विपद्दृष्टिमे गिरे है मत्री सालिमसिह ही उसका मूल कारण है यह बात सहजमे नहीं जानी जासक्ती सालिमसिहने केवल मालदेवोतोके जडसे नष्ट करनेके लिये ही उनसे कपटकी मित्रता कर अपनी इच्छा पूरी करी है। सालिमसिहने क्यो इस चतुरतासे काम किया उसका विवरण नीचे लिखा जाता है"।

मालदेवोत, केलन, वरसङ्ग पोहर और तेजमालोत्गण सभी भट्टीजातिवाले है, किन्तु एकमात्र लूटमार करनेसे विदौ अकुजाक और पिंडारियोकी समान यह भी दस्यु नामसे प्रसिद्ध होगये है। पहिले कहेहुए मनुष्यगण भी रावमालदेवसे उत्पन्न और वारूप्रदेश के अट्ठारह खण्ड गॉवोके अधिवासी है। यह वारूप्रदेश खारीपट्टा नाम स्थानके समीप है। वीकानेरके राठौरोने भट्टियोसे उक्त खारीपट्टा प्रदेश छीन लिया है। वास्तवमे भट्टीगण न्याय की दृष्टिसे उक्त राठौरोसे विशेप रूपसे बदला लेनेके अधिकारी है कारण कि राठौरो ने भट्टियोके बहुतसे देश बाहुबलसे छीन लिये है। पच्चीस वर्ष पहिले वीकानेरके उक्त राठौरोने जिस समय अपनेको बलवान् देखा उसी समय वारूपर आक्रमण कर नीच पशुओके समान आचरण करनेमे कसर नही की। राठौरोने वारूप्रदेशपर चढ़कर मनुष्य भक्षी राक्षसोकी समान वारूप्रदेशके उक्त भट्टी जातीय आबाल वृद्ध वनिता प्रत्येकको मार कर गाव और नगरोको उजाड कर समस्त कूपोको बंद कराकर, गांव और नगरके पशुओ और धनको लूट लिया। जिन भट्टियोने अपने सौभाग्यसे राठौरोके हाथसे छुटकारा पाया वह मरुक्षेत्रके एक परम गुप्तस्थानमे जा छिपे थे। क्रमानुसार उनकी वहीपर वंशवृद्धि हुई। पीछे जब जयसलमेरमे वृटिश गवर्नमेण्का अधिकार फैला उसी समय उक्त भट्टीगण फिर साहस करके अपने छोडे हुए और नष्टभ्रष्ट हुए स्थान-पर आकर बसने लगे, पीछे जब यह प्रसिद्ध हुआ कि प्रधान मंत्री सालिमसिह इसमे भट्टियोपर कुपित हुए और उन्होने देखा है कि उस वारूप्रदेशमे मालदेवोत फिरसे बसते है तो मालदेवोतोके प्रधान शत्रु वीकानेरके राठौरोकी समान वह जल उठे और मालदेवोतोको फिर ध्वस करनेकी अभिलापासे राठौरोको बुलाया। मालदेवोत-गण दस्युवृत्ति (चोरी) से अपना निर्वाह करते है, अतएव उनको दमन करना दूषित नही है, सालिमसिह सहजमे ही यह कह सक्ते थे किन्तु मूलबात तो यह है कि सालिम-सिह उस विचारसे मालदेवोतोका नाश नही करता था। पाठकोको पहिले ही ज्ञात होचुका है कि नीच सालिमसिहने जिस समय संहारमूर्तिसे विपके द्वारा और तलवारसे जयसलमेरके बहुतसे सामन्तोको मारा है, उस समय वह वारूप्रदेशके सामन्तको भी उक्त हत्याकांडसे मार चुका था। वारूके सामन्त राजकुमार रायसिहके बड़े अनुगत और रायसिंहकी शक्तिके बढ़ानेमे सहायक थे, उसीसे सालिमसिहने उनके जीवनरूपी दीपकको बुझादिया। सालिमसिहने केवल उक्त सामन्तको मारकर ही अपने कोपको दूर नही किया। वरन् वारूप्रदेशके प्रत्येक रहनेवालोको भी वह शत्रुकी दृष्टिसे देखने लगा। किस भांतिसे वह वारूप्रदेशको एक साथ उजाड़ दे केवल यही चिन्ता उसके

हृदयमे रातदिन उठती रहती थी । उसकी वह इच्छा पूरी होनेका यह एक सुयोग उपस्थित होगया । वारूके मालदेवोतोने गुप्तरीतिसे बृटिश गवर्नमेण्टका एक उपकार किया था, वह उपकार ही सालिमसिहकी आशा पूरी होनेकी सीढ़ी बन गया । जिस समय पेशवाके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संग्राम हुआ था उस समय पेशवाका एक कर्मचारी ऊट खरीदने जयसलमेरसे आया था जिस समय वह चारसौ ऊँट खरीद कर जयसलमेरकी सीमाको छोड बीकानेरके राज्यमे पहुँचा, उसी समय उक्त वारूप्रदेके अधिनायकने अपने दलबलसे उक्त कर्मचारी पर छापा मार ऊँट छीन लिये इस बातको देख बीकानेरके स्वामी अपनेको बड़ा अपमानित जान शीघ्र ही प्रवलसेनाको साथ ले उक्त मालदेवोतोको दमन करनेके लिये चले टाड् साहब लिखते है "कि सालिमसिहके गुप्तभावसे बीकानेरके स्वामीको मालदेवोतोको दमन करनेके लिये उत्तेजित न करनेसे वह कभी इतनी शीघ्र सेना लेकर मालदेवोतोपर चढाई नहीं करते । सालिमसिहने यद्यपि गुप्तरीतिसे बीकानेरके स्वामीको उत्तेजित किया, किन्तु प्रकाशमे वह संग्राम करनेका प्रतिवाद ही करता रहा । सालिमसिहने विचारा था कि चतुराईसे सहजमे ही बीकानेर के स्वामी मालदेवोतोको नष्ट करदेंगें । किन्तु अन्तमे उसके विपरीत फल हुआ । बीकानेरकी प्रवल सेनाने शीघ्र ही मालदेवोतोके प्रदेश नोखा और वारूमे आकर वहां एक साथ समान भूमि करदी, मालदेवोतोके सामन्तको मारकर ग्रामके सभी कुएँ वन्द करदिये । वह लोग इस प्रकारसे जीतकर अन्तमे बीकमपुरकी ओर शीघ्रतासे चले, और जयसलमेरकी मुख्य भूमिपर रहनेवाली प्रजाका महा अनिष्ट करने लगे । तब सालिमसिह चैतन्य हुआ । मालदेवोतोका नाश होते देख उसने देखा कि अब राज्यका सर्वनाश होना आरम्भ होगया तब अपनी चतुरताको छोड़कर संधिपत्रकी धाराके अनुसार अंग्रेजोकी शरणमे जाकर उसने सेनाकी सहायता मॉगी।बृटिश गवर्नमेण्टने संधिपत्रके नियमानुसार जयसलमेरपर आक्रमण करनेवालेको अपनी सेना भेजकर हटा दिया । बीकानेरके स्वामी अंग्रेजी सेनासे न लडकर अपनी राजधानीमे लौट आये जिस लिये वह युद्धमे प्रवृत्त हुये थे उसको पूर्ण हुआ देख कर फिर समररूपी आगको प्रज्वलित करना आवश्यक नहीं समझा " ।

जिस समय गजसिह जयसलमेरके सिंहासन पर विराजमान थे, उस समय सालिमसिह अपनी इच्छानुसार ही काम करता था. टाड् साहब इसी समयमे रजवाड़ेको छोडकर विलायतको चले गये । उन्होने नीचे लिखे अनुसार जयसलमेरके राजनैतिक इतिहासके अंशका उपसहार किया है "प्रधान मंत्री सालिमसिहकी घटनाओके लिखनेके सिवाय हम जयसलमेरके राजके सम्बन्धमे अब कोई बात नहीं कह सक्ते । गजसिह जो इस समय जयसलमेरके सिंहासनपर बैठे है, और जिनके वडे भाइयोने अपने प्राणोके भयमे भाग कर बीकानेरकी शरण ली है, प्रसिद्ध है कि वह मंत्री सालिमसिहके स्वार्थसाधनेके पात्र हैं । वह अब केवल घोडेको लेकर चुपचाप निर्जन स्थानमे रहनेमे ही प्रसन्न है । चतुर सालिमसिहने विचारा कि मेवाडके राणाकी कन्याके साथ रावल गजसिहका विवाह होजाय तो मेरा और भी सम्मान बढेगा, साथ ही

लाभ भी अधिक होगा। सालिमसिंहने यह विचार कर मेवाड़के राणाके पास यह प्रस्ताव भेजा, राणाने शीघ्र ही प्रसन्न होकर गजसिंहके पास, राजपूतोंकी रीतिके अनुसार नारियल भेजा, गजसिंहने उसको सादर ग्रहण किया। मेवाड़पतिने इस समय गजसिंहको जैसे कन्या देनेकी अभिलाषा की उसी प्रकार दूसरी कन्याको बीकानेरके स्वामीको और एक पोतीको कृष्णगढ़के राजाको देनेका उद्योग किया, महा रावल गजसिंह अपनी सेना और सामन्तोंके साथ जिस समय उदयपुरमे पहुँचे, बीकानेर और कृष्णगढके दोनो राठौर स्वामी भी उसी समयमे विवाहके निमित्त वहाँ गये। इस विवाहोत्सवपर सीशोदियोंकी राजधानीमें महा महोत्सव हुआ। चार राजवंशोमे इस समय फिर सम्मिलन हुआ। गजसिंह अपनी रानीके साथ परम सुखसे रहने लगे। उदयपुरकी राजकुमारीके एक पुत्र हुआ। सो रानावतजी (रानी) के ऊपर सबोकी भक्ति बढ गई। सालिमसिंहको बड़ा सम्मान मिला और सब प्रजाने भी आनन्द मनाया, जिससे बड़े घरानेकी शोभा प्रकाश होती है, वह सहजमे ही हमारे पाठक जान सकते है। पीछे रानी और राजा दोनो ही सर्वसाधारण प्रजाको प्रेमभावसे चलाने लगे।

सातवाँ अध्याय ७.

सूचना–जातिकी स्वाधीन और पराधीन अवस्थाका भिन्न दृश्य–देशी राजाओंकी वर्तमान अवस्था–सालिमसिंहके अत्याचार–दूसरे राजाओंके देश लेनेमें सालिमसिंहकी अभिलाषा करना–उसमे हाथ डालनेसे बृटिश गवर्नमेण्टका रोकना–सालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा–सालिमसिंहका माराजाना–सालिमसिंहके दोनो बेटोंको मंत्रीपद मिलना–सालिमसिंहके बेटेसे अपनी सौतेली माता और उसके उपपतिका माराजाना–रावल गजसिंहसे उसको जेलखाना होना–उसके पक्षवालोका असतोष होना–छोड़नेमे गजसिंहकी असम्मति–इस सम्बन्धमें हाथ डालनेसे गवर्नमेण्टकी अनिच्छा–गजसिंहका अपने हाथमे राज्यके भारको लेना–राज्यमे शान्ति स्थापन–बृटिश गवर्नमेण्टके साथ परम मित्रता–बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करना–बृटिश गवर्नमेण्टका रावल गजसिंहको धन्यवाद देना–पंजाबके युद्धमे गजसिंहसे गवर्नमेण्टको सहायता मिलना–गवर्नमेण्टका रावल गजसिंहको तीन किले देना–गजसिंहकी मृत्यु–रणजीतसिंहका सिंहासनपर बैठना–गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको वंशके क्रमसे दत्तक पुत्रके लेनेमे सनद मिलना–रणजीतसिंहकी मृत्यु–जयसलमेरमे वर्तमान राजा महा रावल बैरीशालका शासन विवरण।

---

(१) टाड साहबने नोटमें लिखा है, 'मरुक्षेत्रकी इस रानीसे मुझे कई एक पत्र प्राप्त हुए जिनसे जाना गया कि सालिमसिंहकी समान मनुष्य जब उनके निजके और उनके स्वामीके भाग्य निर्द्धारक पदपर विराजमान है, तब वह उन्हे अपने पिता और मित्रोंको आश्रितरूपसे रहना पड़ताहै।

इतिहासलेखक टाड् साहब जहांतक जयसलमेरका इतिहास विस्तारपूर्वक अपने ग्रन्थमे लिख गये है, हमने पिछले अध्यायतक उसको उसी प्रकारसे लिखा है। वर्तमान अध्यायमें हम परिवर्ती समयसे वर्तमान समयतकके इतिहासका सारांश यहांपर प्रकाश करते है।

जातिकी स्वाधीन अवस्थामे राजा, सामन्तगण और सम्पूर्ण प्रजा जैसे अटल राजनैतिक व्यापारमे लगी रहती है, उस समयमे जिस भांतिसे राजनैतिक भिन्न २ घटनाएं उपस्थित होजाती है, जाति जिस प्रकारसे राजनैतिक आन्दोलनमे सजीविता दिखानेमे शान्त नहीं होती है, जातिकी पराधीन अवस्थामे उसी भांतिसे वह सब घटनाएं विपरीत भावसे दृष्टि आने लगती है। पराधीन जाति वा नाममात्रकी स्वाधीन जातिकी जीवनशक्ति एकसाथ क्षीण होजाती है। आलस्य, विलासिता, स्वजाति-विद्वेष, अनैक्यता ओर अनुद्यम आकर जातिको एक साथ निर्बल बना देते है। अतएव जातिकी उस पराधीन वा नाममात्रकी स्वाधीन अवस्थामे किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना प्रायः दृष्टि नहीं आती। तब राजासे जातिके नीचे दरजेके किसान-तक केवल आहार विहारमे ही प्रसन्न रहकर दिन बिता देते है। तब मनुष्यत्व लोप होकर किसी विषयमे ही किसी प्रकार उद्यम, वा किसी प्रकारकी सजीविता उस जातिमे नही दृष्टि आती। जाति तब जैसे अनन्त निद्रामे सो रही है, उस पराधीन वा नाममात्र की स्वाधीन जाति उस समय स्वप्नमे भी अपनी जातिका पहिला गौरव स्मरण करके बाप दादोंकी समान जन्मभूमिके निकट, स्वजातिके निकट, समाजके निकट, स्वधर्मके निकट अपने २ दायके पालन करनेमे भी आगे नही बढ़ सक्ती। आर्य्यक्षेत्र भारतके वर्तमान देशी राजाओके राज्यमे जो लोग दृष्टि उठाकर देखते है, वह लोग इस बातको अवश्य ही स्वीकार करेगे कि वह सब देशी राजा. वह सब बडे पराक्रमी सामन्त, वह सब असीम साहसवाली प्रजा इस समय सोई हुई है। पचास वर्ष पहिले प्रत्येक देशी राज्य सजीवता दिखलाता था, प्रत्येक प्रान्तमे राजनैतिक घटनामे प्रत्येक राजा और सामन्त गण उन्मत्त थे, किन्तु आज वे आनन्दकी निद्रामे शयन कर रहे है।

विधिके विधानसे ही छोटा द्वीप इगलैड आज भारतके भाग्यका निर्द्धारक है। विधिके विधानसे ही अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ सधि करके देशी राजा आनन्द भोगते है। इस समय देशी राजाओके राज्यमे अब किसी प्रकारकी राजनैतिक घटना नही होती है। अतएव टाड् साहब जो रजवाड़ेके राज्योकी पूर्ण स्वाधीन और आधी स्वाधीन दशाको लिख गये है, वर्तमानमे निद्रित हुए उन राजपूत राज्यके राजनैतिक घटनाहीन समयका इतिहास वर्णन करते हुए उस प्रकार समुत्तेजक और कीर्तिमूलक दृश्य पाठकोके सामने उपस्थित नही करसक्ते।

दुष्ट सालिमसिहने जिस समय जयसलमेरके सिंहासनपर महा रावल गजसिंहको बैठाकर अपनी इच्छानुसार सब काम कर लिये थे, टाड् साहब उस समयमे ही अपने प्यारे क्षेत्र रजवाड़ेको छोडकर अपनी जन्मभूमि विलायतको चलेगये। अतएव

जयसलमेरका इतिहास गजसिंहके सिंहासनपर बैठने ही समाप्त होगया है । इस समय परिवर्ती इतिसाहसके पीछे चलना पडता है ।

जिस समयमे महा रावल गजसिंहने अपने शिरपर राजमुकुटको धारण किया उस समय वह व्यवहार शून्य थे । नीच सालिमसिंह गजसिंहके राजतिलक हो जानेके पीछे चार वर्षतक और जिया, किन्तु उन चार वर्षोंमे उसके अत्याचार, क्लेश और भयानक स्वार्थने जयसलमेरको एक साथ ध्वंस कर दिया। उसने श्रेष्ठ भट्टीसामन्तोको और धनवान् वनिये महाजानोको वड़े कष्ट देकर लूट लिया,समस्त प्रजाको अपनी इच्छानुसार चलाया । कर्नल म्यालिसन अपने ग्रन्थमे लिखते है कि "वह सालिम दूसरे राजाओकी राजधानीको अपने स्वामीके नामसे क्रमानुसार दवाया करता,यही नहीं वह उन सव देशोके लिये कलकत्ते जानेका भय भी दिखाता था। रावलको स्पष्ट भावसे समझाता कि और२ राजाओके साथ जेसे संधि हुई है उसमे उन राजाओके अधिकारी देशोपर संधिपत्रकी समान हाथ डालना सव प्रकारसे असंभव है।" दुष्ट*सालिमसिंह इस प्रकारसे जयसलमेरको भस्म करके अन्तमे अपने पापके भारसे दुःखी हुआ। यह वात प्रसिद्ध है कि उस नर पिशाचके हाथसे राज्यकी रक्षा करनेके लिये रावल गजसिंहने१८२४ई. मे उसके मारनेके लिये एक हत्यारेको नियुक्त किया । सालिमसिंह उस समय इतना डरा कि उसने अपने समस्त परिवारको अपनी जागीरमे भेज दिया। उसी वर्षमे दुरात्मा सालिमके पापी प्राण कलुषित शरीरको छोड गये। किन्तु कर्नल म्यालिसन लिखते है कि "सालिमसिंहने इसी विश्वाससे प्राण त्यागे कि मन्त्रीके पदपर सदा मेरे वंशधर ही रहेंगे ।" सालिमसिंहके चरित्रके सम्बन्धमे यहाँ पर हम और अधिक नहीं कहना चाहते । यहाँ इतना ही कहना वहुत है कि पवित्र हरिवंशमे दुष्ट दस्युरूपसे सालिमसिंह प्रचंड प्रभुतासे सदाके लिये घृणित लीला करगया है ।

जिसमे जयसलमेरका प्रधान मन्त्रीपद अपने वड़े वेटेके पीछे उसके वंशधरोको ही मिले अपनी जीवित अवस्थामे ही सालिमसिंहने उसके लिये वडी चेष्टा की थी । वृटिश गवर्नमेण्टने यद्यपि उसके प्रस्तावके समान प्रतिज्ञा नहीं की किन्तु पापात्मा सालिमसिंहने गजसिंह और सव सामन्तोसे जवर्दस्ती स्वीकार करालिया कि उसके वंशधरोके सिवाय कोई भी प्रधान मन्त्रीका पद न लेसके, विशेप कर जो जयसलमेरके सब सामन्त और कर्मचारी थे वह सभी सालिमके भक्त थे, सालिमकी प्रत्येक आज्ञाका. पालन करनेसे ही वह भक्त हुए थे । उन्होने अपने स्वार्थके लिये सालिमके वंशधरोके हाथमे ही प्रधानमंत्रा पद दिलानेका यत्न किया था । सालिमसिंहके मरनेके पीछे उनके अनुयायी नौकरोने ऐसा षड्यन्त्र रचा कि जिसमे गजसिंहको सालिमके वडे वेटेको ही प्रधान मंत्री वनाना पड़ा । किन्तु उस समयमे यह भी निश्चय हुआ कि उक्त वड़े वेटेके अतिरिक्त सालिमकी दूसरी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न छोटे वेटेको भी मंत्री पद मिलै । सालिमका वडा वेटा पहिलेहीसे उक्त प्रस्तावके समान अपने सौतेले भाईके साथ

*Mallesan's Native states & India. Part I. chap XIV. Page 123.

मंत्रीका काम करने लगा। सालिमसिंह जैसा क्रूर था उसका बड़ा बेटा भी उसी भाँतिसे हुआ। कर्नल* म्यालिसन लिखते हैं, बडे बेटेने उक्त सौतेली माताको एक नौकरके साथ प्रेम करते देखकर अथवा संदेहहीसे अपनी कुलटा सौतेली माताको उसके उपपतिके साथ (दोनोंको ही) मार डाला। इस+ कारणसे महा रावल गजसिंहने जो अब व्यवहारमे कुशल होगये थे उसी समय सालिमके बडे बेटेको कैदकर जेलमे भेजदिया। इस भाँति कैद होजानेसे सालिमके बेटेको ओर जो कर्मचारी थे उन्होने महा रावल गजसिंहका यह आचरण देखकर बड़ा उपद्रव मचादिया, किन्तु महा रावल गजसिंहने किसी प्रकारसे उसको जेलसे नहीं छोडा और न उसे मंत्रीके पदपर बैठानेको ही राजी हुए, वरन जो अपनेसे अप्रसन्न सामन्त और कर्मचारी थे उनको वृटिश गवर्नमेण्टके पास भेज दिया, वृटिश गवर्नमेण्टने महा रावलकी आज्ञाको बहाल रक्खा। वृटिश गवर्नमेण्टके ऐसा करनेसे अप्रसन्न सामन्त गण पहिलेहीसे उपद्रवोको छोडकर चुप होगये।

जयसलमेरके कालस्वरूप महता स्वरूपसिंहके वंशधरोंके हाथसे मंत्रीपदको निकालकर इस समय व्यवहारमे दक्ष महारावल गजसिंहने अपने हाथमे राज्यके शासनका भार लिया, गजसिंहके राज्यशासनके भारको लेते ही जयसलमेरमे शान्ति स्थापित होगई। अत्याचार पीड़ा और असंतोषके स्थानमे शान्ति, न्याय विचार, और संतोप दिखाई देनेलगे, जयसलमेरकी सब प्रजा बहुत दिनोंसे कष्ट भोग रही थी. सभी श्रेणीके मनुष्य धन और प्राणोंको लेकर भयभीत रहते थे, इस समय स्वयं राजा गजसिंह राजदंडको अपने हाथमे लेकर पुत्र भावसे प्रजाका पालन और प्रजामे शान्ति स्थापन करने लगे। महारावल गजसिंह केवल राज्यकी उन्नति ही नही करते थे वरन् उन्होंने अच्छी तरहसे जान लिया था कि चिरकालसे अराजकताके कारण स्वरूपसिंह और सालिमसिंहके स्वेच्छाचारीपनसे राज्य एकसाथ ध्वंस होगया है, समस्त प्रजाका धन हर लिया गया है, प्रजाकी जातीय जीवन शक्ति क्षीण होगई है, राज्यका बल जाता रहा है, अतएव समयकी गति देखकर अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रभाव रखना चाहिये, और जबतक वह जिये तबतक उन्होंने मित्रताको भली भाँतिसे निभाया।

---

* This man possessed all the vices of his father. Baboo Loke Nath Ghose's Modern History of the Indian Cheefs, Rajas, Zimidars &c Part I. chap XIV

+ बाबू लोकनाथघोषने अपने ग्रन्थमे उक्त घटनाका उल्लेख नहीं किया किन्तु उन्होंने लिखा है, कि—

He murdered his step brother who was associated with him in the ministry.

इसका अर्थ यह है कि इसका जो सौतेला भाई उसके साथ मन्त्रीपद पर नियुक्त था उसने उसको मार डाला।

सन् १८३८–१८३९ ईसवीमे पजावके युद्धमे वृटिश सेनाके नियुक्त होनेसे जयसलमेरके स्वामी महा रावल गजसिंहने ऊँट आदिकोंकी सहायतासे वृटिश गवर्नमेण्टका इतना उपकार किया, जिससे उक्त गवर्नमेण्टने महा रावल गजसिंहको अपना सच्चा मित्र जानकर बड़ा धन्यवाद दिया।

कर्नलम्यालिसन लिखते है कि "सन् १८४४ ईस्वीमे सिधुके जीतनेके पीछे शाहगढ़ घड़सिया और कोटरा नामक तीन किले जो वहुत दिनो पहिले जयसलमेरके राज्यसे दूसरे राजाओने छीन लिये थे वह सव फिर जयसलमेरके स्वामीको लौटा दिये। वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मीरअली मुरादने यह तीनो किले महारावल गजसिहको दे दिये, किन्तु उस समय उसके सम्बन्धमे वृटिश गवर्न्मेण्टने महारावलको कोई सनद* नहीं दी थी"।

महारावल गजसिह जिस प्रकारसे वृटिश गवर्नमेण्टके प्रियपात्र हुए थे, उसी भाँतिसे शासनके गुणसे प्रजाके भी हृदयपर उन्होने अपना अधिकार करलिया था, किन्तु बड़े दुःखका विषय यही हुआ कि उन्होने अधिक दिन राज्यके सुखको नही भोगा। सन् १८४६ ईसवीमे महारावल गजसिहने मायामय शरीरको छोड़ परलोकवास किया, कर्नल टाड् लिखते है कि गजसिहके औरससे मेवाड़की राजकुमारीने एक पुत्र उत्पन्न किया, किन्तु परिवर्ती इतिहास लेखक लिखते है कि गजसिह अपुत्रावस्थामे ही परलोकवासी हुए, इससे प्रत्यक्ष जान पड़ता है कि राणाकी कुमारीके जो पुत्र हुआ था वह बालकपनमे ही मरगया था।

महारावल गजसिहके अपुत्रावस्थामे प्राण त्यागनेसे उनकी विधवा रानीने गजसिहके भाईके बेटे रणजीतसिहको गोद ले लिया। रणजीतसिहके सिहासनपर बैठनेसे बड़ी सावधानीके साथ राज्यशासन हुआ। इनके शासन समयमे भारतमे विख्यात सिपाही विद्रोह हुआ। रणजीतसिहने उस विद्रोहके समयमे गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नही की। सन् १८६२ ईसवीमे जिस समय भारतके देशी राजाओको भारत गवर्नमेण्टने दत्तकपुत्र (पुत्रगोद) लेनेकी सनदे दी. महारावल रणजीतसिहको भी उसी समयमें उसी प्रकार एक सनदपत्र प्राप्त हुआ। रणजीतसिहके शासन समयमें राजधानीमे किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना नही हुई। सन् १८६४ ईसवीके जून महीनेमे रणजीतसिह इस जगत्को छोड़कर परलोक सिधारे।

गजसिंहकी समान रणजीतसिह भी अपुत्रावस्थामे मनुष्यलीलाको समाप्त करगये थे। अतएव रणजीतसिंहकी रानीने अपने देवर अर्थात् रणजीतसिहके छोटे भाई वैरीशालको गोद लिया। उस समय महारावल वैरीशाल पंद्रह वर्षके थे।

रणजीतसिंहकी रानीने इनको गोद तो लेलिया किन्तु महारावल वैरीशालने किसी प्रकार भी उस समय सिहासनपर बैठना नहीं चाहा सर्वोके कहने सुननेसे इन्होंने यह कहकर आपत्ति दिखाई कि "मुझे विश्वास है कि जयसलमेरका स्वामी

* Malleson's Native states of India. Part I. Chap. XIV P. 124.

हो कर मै सुखी नही रहसकता"। महारावल वैरीशालने क्यो ऐसा कहा, पाठक सरलतासे उसका अनुमान कर सक्ते है। गजसिह और रणजीतसिह वहुत थोड़े दिनोमे ही सिहासन छोड़कर चले गये थे अतएव हमको जानपड़ता है कि हिन्दूसमाजके प्रचलित सस्कारके समान यह ही विचारा हो कि राजा होनेसे अधिक दिन नही जीते है।महारावल वैरीशालके इस प्रकार सिहासनपर न बैठनेसे सभी अप्रसन्न हुए।अंतमे वृटिश गवर्नमेण्टसे पूँछनपर उसने कहा कि "इस समय इस प्रश्नको नही उठाना चाहिये कारण कि महारावल इस समय व्यवहारशून्य और वालक है, जब वह वड़े होगे तब अवश्य ही उनकी वुद्धि वदल जायगी"। गवर्नमेण्टके इस प्रस्तावके अनुसार वह प्रश्न रुक गया और महारावल वैरिशालके पिता केसरीसिह बेटेके नामसे राज्यशासन करने लगे।

महारावल वैरीशालकी बुद्धि पलटनेमे अधिक विलम्ब नही लगा। दूसरे ही वर्षमे अर्थात् १८६५ ईसवी अक्टूवरके महीनेमे उन्होने कहदिया कि "मै सिहासन पर वैठनेको तैयार हूँ"। इस वातको सुन राजधानीमे महा आनन्द होने लगा। वृटिश गवर्नमेण्टके पोलेटिकल एजेण्टने वड़े समारोहके साथ महारावल वैरीशालका राजतिलक करादिया। जयसलमेरके वर्त्तमान राजा श्रीकृष्णके वंशावतस श्रीमन्महारावल वैरीशालसिहवहादुर वड़ी वुद्धिमानी और धीरजके साथ राज्यका शासन करते है। राज्यके चारोओर इस समय शान्तिमयी मूर्ति अविश्रान्तभावसे नृत्य कर रही है। स्वार्थपरायणता स्वजातिविद्वेप, असंतोप और अत्याचारोकी पीडा इस समय एक साथ अदृश्य होगई है।

आठवाँ अध्याय ८.

जयसलमेरका भौगोलिक विवरण–परिमाण–ग्राम नगर संख्या–लवणहृद–कानोदसर–मृत्तिका–उद्भिजश्रेणी–कृपि–शिल्पवाणिज्य–वाणिज्यद्रव्य–राजकर–भूमिकर–एवं वाणिज्य शुल्क–किसानोसे इकट्ठा हुआ भूमिकर–धुआकर–थाली वा आहार्य्यकर–दंडकर मत्री सालिमसिंहका जवर्दस्ती सम्पत्ति संग्रह–राज्यका अपव्यय–अधिवासीश्रेणी भट्टिजाति, उसकी आकृति और वेश–अफीम और ताम्रकूटसे भट्टिगणोके पूर्वका अनुराग–पालीवाल जाति–उसका इतिहास–उसकी संख्या–धनपरिमाण–कार्य–विचित्र पूजा पद्धति–पोकर्णा ब्राह्मण जाति–उपाधिसख्या–जाटजाति–जयसलमेरके किलेकी अटारिया–आधुनिक विवरण।

टाड् साहव जयसलमेर राज्यके राजनैतिक इतिहासके वर्णन करनेके पीछे वहाँकी भौगोलिक, प्राकृतिक, सामाजिक और अन्यान्य जानने योग्य वाते विस्तारसे लिख गये है। हम वर्तमान समयके उन समस्त विवरणोसे पहिले टाड् साहवकी युक्तिया अनुवादित करना चाहते है। इतिहासके जाननेवाले टाड साहव लिखते है "जयसलमेरकी पृथ्वी अमरुठ है, इसका परिमाण अनुमानसे पंद्रह हजार वर्ग मील

है। ईसके वड़े प्रदेशमे नगर, ग्राम, और छोटे २ कसवोंकी संख्या दोसौ पचाससे अधिक न होगी, कोई २ अनुमान करते है इसकी संख्या तीनसौ होगी, और कोई २ कहते हैं कि दोसौ होगी, पर पिछली वात सत्य जानपड़ती है । १८१५ ईस्वीमे जयसलमेरकी ठीक जनसंख्या कितनी थी, पाठकोके जाननेके लिये, उसकी हम आगे एक विश्वासजनक सूची*देते है।

टाड् साहवने लिखा है "ग्रेट् ब्रिटेनके दूसरे श्रेणीके एक नगरमे जितने मनुष्य वसते है इस सूचीके अनुसार इस पन्द्रह वर्गमीलमे राज्यके मनुष्योकी संख्या उससे वहुत कम है। इस राज्यके आधे अंशकी वरावर तो भूमि राजधानीमे है; उस राजधानीकी आधी भूमिको छोड़ देनेसे हम देखते है कि प्रत्येक वर्गमे दोसे लेकर तीन मनुष्यतक वसते है"।

कर्नल टाड् लिखते है कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण पन्द्रह हजार वर्गमील है। कर्नलस्यालिसनने सन्१८७५ईस्वीमे लिखा*है कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण १२२५२ वर्गमील है। कर्नल + टाड्के कथनसे जानाजाता है कि सन् १८१५ ईस्वीमे जयसलमेरकी मनुष्य संख्या ७४४०० थी, मि० आचिसन् सन् १८६४ ईस्वीमे संख्या १३७०० और वावू लोकनाथ घोप सन् १८७९ ईस्वीमे ७५००० लिखते है। चिरकालसे शान्तिपूर्वक रहनेके पीछे भारतवर्षके अन्य २ देशी राज्योकी जैसी मनुष्य संख्या वढ़ी है, उसके साथ मिलान करनेसे जयसलमेरकी जनसख्या न वढ़कर समान भावसे ही है, इसका सहजमे ज्ञान होसक्ता है।

जयसलमेरके प्राकृतिक अवस्थाके सम्वन्धमे इतिहास जाननेवाले लिखते है, जयसलमेरका अधिक भाग थल वा रोही अर्थात् ऊजड़ वन्य प्रदेश है । जोधपुरके सीमास्तंभ लोवारसे सिन्धुप्रदेशके सीमाके पिछाड़ी खाड़ातक पृथ्वी केवल रेतीली और जल रहित है, इसके वीच २ मे वालुकास्तूप विराजमान है, और कोई २ अंश छोटे २ जगलोसे पूर्ण है। लोवारसे खाडातक यह जो समान्तराल अंश है, इसीने जयसलमेर राज्यको दो भागोमें वॉटा है, और स्वभावसे ही यह अंश अनुर्वर है, और यहॉ कुछ उपजता भी नही है। उत्तरांश भी ऊजड़ प्रदेश है, दक्षिणांश ,मगरा और रोई नामक छोटे २ पहाडोसे युक्त है। यह छोटी २ पर्वतमाला इस राज्यके भूतत्वकी विशेष दर्शनीय है। कच्छभुज प्रदेशसे पर्वतश्रेणी निककलर देशके प्राकृति अवस्थानुसार कही

(१) सन्१८९६ की छपी हिन्ददेशीय राजावली पुस्तकके अनुसार १६४४७ वर्ग मील भूमि लिखी है।सन्१८८१की जनसंख्यामे१०८१४३मनुष्य पाये गये और राज्यकी आमदनी१५८०००थी उत्तरमें महावलपुर राज्य, पूर्वमें वीकानेर और मारवाड़, जोधपुर दक्षिणमें मारवाड़ और पश्चिममें सिध, २६ अंश ५ कला उत्तर अक्षाशसे लेकर २८ अंश २४ कला उत्तर अक्षांशतक ६९ अंश ३० कला पूर्व देशान्तरसे लेकर ७२ अंश ५० कला पूर्व देशान्तरतक जैसलमेर राज्य है।

* Mallessn's Native states of India Part I.

+ Ghose's Indian cheefs Rajas U. Part I.

❀ जन संख्याकी सूची।

नगरोंके नाम	खालसा और सामंत शासित	घरोंकी संख्या	मनुष्य संख्या	मन्तव्य।
जयसलमेर	राजधानी	७०००	३५०००	
बीकमपुर	सामन्त शासित	५००	२०००	और भी २४ गाँव हैं।
सेरुरो	,,	३००	१२००	आजकल वसनेवाली केलण भट्टी जाति।
नचना	,,	४००	१६००	रायोलोत सामन्त।
कटोरी	,,	३००	१२००	
कावाह	,,	३००	१२००	
कोलडर	,,	२००	८००	
सत्तोह	सामन्त शासित	३००	१२००	
झिझिनियाली	,,	३००	१२००	यहांके मालिक जयसलमेरके प्रधान सामन्त।
देवीकोट	मुख्य	२००	८००	
भाप	,,	२००	८००	
बलाना	सामन्त शासित	१५०	६००	
सत्यासोह	,,	१००	४००	
वारु	,,	२००	८००	मारु देवोतगण यहींके वसनेवाले हैं।
चान	,,	२००	८००	
लोहरकि	,,	१५०	६००	
नानतलो	,,	१५०	६००	
लाहर्नी	,,	३००	१२००	
डागरी	,,	१५०	६००	
विजौराय	मुख्य	२००	८००	
मुन्दाई	,,	२००	८००	
रामगढ	,,	२००	८००	
वरसलपुर	सामन्त शासित	२००	८००	
गिरजसर	,,	१५०	६००	
सब जोड़ २४		१२३५०	५६४००	
दो हजार पचीस गांव २०२५ हैं, और भी छोटे छोटे मजरे हैं, प्रत्येक ग्राम और नगरोंमें ८ से पचास तक घर हैं। प्रत्येक घर और नगरमें जनसंख्या चारके हिसाबसे है।			१८०००	
कुल जोड़—			७४४००	

स्थूल और कही सूक्ष्म रूपसे दृष्टि आती है। चोहतन नामक स्थानकी समान किसी२ स्थानपर इसने वास्तवमे पर्वत रूपको भी धारण किया है, और फिर अगाड़ी जाकर अपनी छोटी २ पर्वत श्रेणीके ही रूपसे होगये है, कि उनको देखकर पर्वत नहीं कह सक्ते। यह छोटी २ पर्वतश्रेणी जितनी जयसलमेरके राज्यमे आई है उन सबने आकर पर्वतमूर्तिको धारण करलिया है। राजधानी जयसलमेरके बीचमे इस शिखरकी उचाई दोसौ पचास फुट है, और यह देखनेमे यथार्थरूपसे पर्वत प्रतीत होता है। भट्टियोकी राजधानी जयसलमेर पर्वत मूलमे कही जाती है कारण कि उस स्थानसे साढेसात कोश लो बराबर प्रदेशोमे भिन्न भिन्न रूपसे पर्व्वत शृंगोकी शाखाए गई है। एक जयसलमेरसे साढ़े सत्रह कोस उत्तर पश्चिमके प्रान्तमे रामगढ़ नामक स्थानतक गई है। और एक पूरबसे चलकर जोधपुर राज्यमे होती हुई पोकर्णतक मिल गई है, और फिर वहांसे उत्तरकी ओर फलोदीतक गई है और वहांसे अन्तमे छिन्नभिन्न भावसे होकर उत्तरकी ओर पच्चीस कोसतक जाकर गारियालातक गई है। यह शृंगश्रेणी रेतीले पत्थरोसे पूर्ण है, उसमे अधिकतासे गेरू मट्टी उपजती है। जयसलमेरके रहनेवाले उस गेरू मट्टीमें अपने पहरनेके वस्त्रोको रँगते है"।

टाड् साहब लिखते है कि "यह अनुर्वर शिखर श्रेणी और ऊँची तरंगाकार वालूकी स्तूपश्रेणी इस प्रदेशमे सर्वत्र कठिन भूमिस्वरूपसे विराजमान है, उसके विपरीत दृश्यको देखो! मार्गके थके मनुष्योंको आश्रय और छाया देनेके लिये कोई वृक्ष यहां नही उपजता है। यह प्राय. बडा सीमा रहित उजाड पृथ्वीखंड है, केवल किसी२ स्थान पर दो चार वटके वृक्ष दृष्टि आते है"।

समस्त जयसलमेर राज्यमे एक भी श्रोतस्वती नदी नही है, किन्तु वालुका पूर्ण शिखरसालासे वर्षा ऋतुमे जल गिरनेसे समय२पर कई एक खारी तलइये कई महीनोके लिये बनजाती है। मनुष्य उसके चारोओरसे रेतेकी दीवाल बनाकर दो एक महीने तक उसे बनाये रखते है किन्तु वह तलइये अधिक दिनतक नही रहती कभी अधिक वृष्टि होनेके कारण कोई २ तलैया सालभर बनी रहती है। इनमेंसे एकका नाम कानोदसर वा ह्रद है, यह कानोदसे मोहनगढ़तक नौ कोस बड़ा है और इसमे सभी दिन जल रहता है। बरसातमे यह बड़ा ह्रद पूर्ण होजानेसे इसमेसे एक छोटी नदी सी निकल कर पूरबकी ओर पन्द्रह कोशलो चली जाती है। मूलह्रदमे जबतक जल रहता है यह छोटी नदी भी तबतक नही सूखती। इस ह्रदमे जो नमक होता है वह राजकीय होता है, और उससे राजाको कुछ लाभ भी होजाता है।

खेती और उद्भिजके सम्बन्धमे टाड् साहबने लिखा है "यद्यपि इस रेतीले प्रदेशका बाहिरी अनुपजाऊ दृश्य दृष्टि आता है किन्तु प्रकृतिने इस प्रदेशकी उपजाऊ शक्तिका लोप नही किया है, वरन यह रेतीला प्रदेश एक प्रकारसे धान्यके उत्पन्न होनेमे बड़ा

(१) उर्दू तर्जुमेमे यो लिखा है कि इसमें पीले रंगकी मिट्टीका पत्थर है जिससे आदमी अपने मकानोंपर रग करते हैं।

उपकारी है, विशेष कर वाजरा यहाँपर अधिक होता है। फसलमे वाजरा इतना होता है कि उसमे तीन वर्षका भोजन चलता है। यहाँके निवासी केवल सिन्धुप्रदेशसे गेहूं लाते है। जिन स्थानोपर वाजरा होता है वहाँ पर दो तीन वार अच्छे पानी पड़जानेसे किसान लोग बाजरेका बीज वोदेते है। फिर स्वयं ही शीघ्र वह उत्पन्न होजाता है, धान्य होजानेपर यदि कही प्रवल वृष्टि हो जाती है तो उससे वह सब धान्य नष्ट हो जाता है। भारतवर्षके और स्थानोकी अपेक्षा इस देशका वाजरा वडा अच्छा होता है जिस समय अधिक वाजरा होता है उस समय रुपयेका डेढमन विकता है। किन्तु इस प्रकार वर्षोतक नही होता है। यहाँके निवासी पाँच २ वर्षके पीछे अधिक बाजरा होनेकी आशा करते है। यहाँ ज्वार भी होती है किन्तु वह कहीं कहीं। छोटी २ शृंगमालाके अगल वगलमे अनेक प्रकारके डाल, तिल और गवार नामक एक प्रकारका फल होता है। यह फल वडे स्वादिष्ठ होनेसे भारतके अनेक प्रदेशोमे भेजे जाते है। जयसलमेरकी राजधानीके चारो ओर जिस २ स्थान पर पानी लेजानेका सुभीता होता है वहाँ पर वहुतायतसे श्रेष्ठ गेहूँ हरिद्रा और फलवाले वृक्ष उत्पन्न होते है यहाँ चावल नही होते परन्तु सिधुदेशसे लाये जाते है"।

कर्पणयन्त्रके सम्बन्धमे टाड् साहव लिख गये है कि जहांकी मट्टी कोमल होती है वहांपर खेतीके काममे सामान्य यन्त्रका व्यवहार होता है। किसान लोग दो तरहके हलोका व्यवहार करते है; एक प्रकारके हलमे केवल एक वा दो बैल लगते है, और दूसरे प्रकारके हलोमे ऊंट जोते जाते है"।

शिल्पके सम्बन्धमे प्रसिद्ध है कि "यहाँ कोई शिल्पका काम उत्तम नही होता, कपडा वुननेवाले एक प्रकारका मोटा वस्त्र वनाते है। शिल्पकार्यके उपयोगी जो रुई आदि होती है वह सभी वाहर भेजी जाती है। यहाँके प्रधान शिल्पकार्यके वीचमे जो भेड उत्पन्न होते है उनके रोमोसे एक प्रकारकी लोई, कम्वल, उत्तरीय, घाँघरा और नानाप्रकारकी पगड़ी वनाई जाती है। आचरी नाम खानकी काली मट्टीके अनेक पीनेके और भोजन करनेके पात्र वनते है। यहाँके जितने अस्त्र वनते है वह अच्छे नही होते"।

टाड् साहव लिखते है "वाणिज्य स्थलरूपसे जो जयसलमेरकी प्रसिद्धि सुनी जाती है। वह स्वयं जयसलमेरके भीतर वाणिज्यके विस्तारके लिये नही है। जयसलमेर केवल वाणिज्यकी संधि स्थलमात्र है, भारतके पूर्वप्रान्तसे वाणिज्यके समस्त द्रव्य, जयसलमेर होकर सिन्धुके उपत्यका प्रदेश ओर सिन्धुके वाहरी देशोमे भेजे जाते है। दूसरी ओर हैदरावाद, रोडी भक्खर, शिकारपुर और उससे वाणिज्यके सम्पूर्ण द्रव्य इधरको लाते हैं। गंगाके समीपवाले प्रदेश और पंजावसे भी समस्त वाणिज्यके

(१) टाड् साहव टिप्पणीमे लिखते है कि "मैं कई जोडे विलायतको लेगया था, वहां वे बड़े पसन्द किये गये। इस देशमे शीतकालमे दुशालेकी समान सब व्यवहार करते है, यह देखनेमे भी बडे सुहावने होते है"।

पदार्थ जयसलमेरमे आते है। दुआव कानील, कोटा और मालवेकी अफीम, वीकानेरकी प्रसिद्ध गुड़, और जयपुरके वनेहुए लोहेके द्रव्य जयसलमेर होकर शिकारपुर और नोचेके सिन्धुप्रदेशोमे भेजे जाते है। वहाँपरसे अफरीकासे आया हुआ हाथीदाँत, रंग नारियल, औषधि और चंदनकी लकड़ी इधरको लाई जाती है। भागलपुरसे सूखे मेवे आते है"।

राजस्व और करके सम्वन्धमे टाड् साहव लिखते है कि "जयसलमेरमे राजाकी आमदनी पहिले चार लाख रुपयेसे अधिक थी, तिसमे एक लाख रुपयेसे अधिक भूराजस्वमे जाते थे। पँहिले एकमात्र वाणिज्य शुल्क ही इस राज्यकी निश्चित अधिक आमदनी थी किन्तु मत्री सालिमसिहके अत्याचारोसे और उसीसे भट्टीसामन्तोके दस्युताचरणसे साधारण वाणिज्य कम होजानेसे एक साथ ही वाणिज्य शुल्क जाता रहा। पहिले इस वाणिज्य शुल्कसे तीन लाख रुपयेकी आमदनी थी। इस शुल्कको दान और शुल्कसंग्रह करनेवाले दानी कहते थे। राजधानीसे जो समस्त प्रधान २ मार्ग राज्यके चारोओरको गये है उनके एक निर्द्धारित स्थानपर यह शुल्क संग्रह करनेवाले रहा करते है"।

"भूराजस्व–भूमिमे जितना धान्य उत्पन्न होता है किसान लोग उसमेसे पांचवां हिस्सा और कहीं २ पर सातवां हिस्सा राजाको देते हैं। राजा कभी भी किसानोसे पॉचवे हिस्सेसे एक हिस्सा कम वा सात अंशमेसे एक हिस्सा कम धान्य कररूपमे नहीं लेते है। जिस खेतमे जो धान्य अधिक उपजता है राजा उसीको अपने नियमानुसार करमे लेते है राजाके कर्मचारी जिस समय किसानोसे अपने करस्वरूपमे धान्यको लेते है, पल्लीवाल ब्राह्मण वा वानिये उसी समय नकद रुपया देकर उस धान्यको खरीद लेते है, फिर वह रुपयोको राज्यके खजानेमे भेज देते है"।

"धुंआ–तीसरे करका नाम धुँआकर है. यही इस समय राज्यका निश्चित कर है। धुँआ शब्दसे रंधनकर जाना जाता है। इसको थाली नामसे भी पुकारते है। थाली शब्दका अर्थ है भोजनका पात्र अतएव यह आहारकर भी अनुमित होसक्ता है। इसकी आमदनी सालमें वीस हजार रुपए होती है। कोई भी घर इस करसे छूटा नही है"।

दंड–इस प्रदेशमे दंडके नामसे और एक कर प्रचलित है, यह प्रजाको कष्टदायक है। राजाको धनकी आवश्यकता होनेसे इस करसे उस करको पूरा किया जाता है। यह जयसलमेरमे संवत् १८३० सन् १७७४ ईसवीसे प्रचलित हुआ था है

(१) बीकानेरकी प्रसिद्ध मिसरी।

(२) टाड् साहव टिप्पणीमे लिखते है "सिन्धुनदीके पश्चिममे विराजमान सिन्धुप्रदेशके बीचमें शिकारपुर एक प्रधान वाणिज्यका स्थल है"।

(३) कर्नल टाड्ने लिखा है कि सामन्तोकी आय कितनी थी इसको मै ठीक २ नहीं जान सका। साधारण रजवाड़ेके अन्यान्य राज्योके राजाओको जितने रुपये भूमिकरके देने पड़ते थे यहां सामन्तोंकी आय उससे दुगनी अर्थात् दो लाख रुपये होगी। यह लोग आवश्यकता होनेपर सातसौ घुड़सवार राजाको दिया करते है।

उस समय यह अतिरिक्त धुँआ वा थाली करके नामसे पुकारा जाता था। महाजनलोग जो रुपये पर सूद लेकर अपनी आजीविका करते है केवल उनके ऊपर तो यह कर उस समयसे लगजाता है, इसमे २७०० सौ रुपये सालकी आमदनी होती है। महेसरी महाजन इस करको प्रसन्नतासे दिया करते है किन्तु ओसवाल वैश्य इस करके न देनेसे जबर्दस्ती जेलमे रहनेसे अपना कर चुका देते है किन्तु जेलसे छूटनेके पीछे सब मिलकर प्रतिज्ञा करते है कि अब आगेको कभी रावल मूलराजका मुख नही देखेगे। वह लोग बहुत दिनोतक इस प्रतिज्ञाका पालन भी करते रहते है। जयसलमेरके रावल मूलराज जिस समय राजधानीके प्रधान २ मार्गोंमे होकर निकलते थे तब यह ओसवाल बनिये अपनी दुकानोको बंद करके घरोमे जा बैठते थे। इस भाँति उन्होने कई वर्षलो राजाका मुख नही देखा। ओसवाल बनियोकी ऐसी प्रतिज्ञा देखकर जयसलमेरके रावल मूलराज अपने मनमे परिताप करते थे। जो राजधानीके श्रेष्ठ प्रतिष्ठित और धनी महाजन है वह मुख नही देखै इससे बढकर राजाको और क्या कष्ट होगा। तब मूलरावलने उन बनियोको प्रसन्न करनेके लिये सरल हृदयसे ओसवाल बनियोके प्रधान २ नेताओके घर बिना ही बुलाये जाकर अपने शिरकी पगड़ी उतार उनके आगे पृथ्वीपर रख अपने अपराधोके क्षमाकी प्रार्थना की और एक पत्र पर यह लिख कर अपने हस्ताक्षर करदिये कि बनिये यदि धुँआकर सदा दिया करे तो फिर कभी दंडकरका प्रचार नहि होगा। धनी ओसवाल बनियोने राजाको ऐसा पछतावा और प्रतिज्ञा करते देख मूलराजके कहनेको मानलिया। मूलराजने सम्वत् १८४१ और सन् १८५२ मे रुपयेकी आवश्यकता होनेसे उक्त महाजनोसे पहिली बार तेतीस हजार और दूसरी बार चालीस हजार रुपया कर्ज लिया फिर वह कुछ कालके पीछे रीतिके अनुसार चुका दिया"।

टाड् साहबने लिखा है "गजसिहको सिहासनपर बैठनेके दो वर्ष पीछे अबतक सालिमसिहने दंडके कर स्वरूपमे चौदह लाख रूपया इकट्टा किया है। वर्द्धमान नामक एक बडा धनी और प्रतिष्टित पुरुष था जिसके पुरुपाओका रजवाडेके बीचमे बडा सम्मान होता चला आया था, सालिमसिहने अनेक समय पर क्रमानुसार उसका सब धन हरलिया है"।

टाड् साहबने जिस समय जयसलमेरका इतिहास लिखा है उस समयमे रजवाड़े का व्यय कैसा था उसकी सूची नीचे लिखी जाती है।

		रुपये
"बार	...	२००००

(१) इसको "पल्लापसारना" कहते है अर्थात किसी मनुष्यसे क्षमा मांगनेपर अपनी शिरकी पगड़ी उसके सामने रखनेसे उससे नवनेका पूर्वलक्षण पाया जाता है।

(२) कर्नल टाड् टिप्पणीमे लिखते हैं, "राजाके निज अनुचर, भृत्य, शरीर रक्षक और खरीदे हुए दास इसके मध्यमें आगये। यह लोग वेतनस्वरूपमें सीधा पाते हैं और नगरमे मेहनत मजदूरी करके उस धनसे अपने और खर्च करते है, इन लोगोंकी संख्या १००० होगी"।

रोजगार सरदार¹	४००००
सेवन्दी वा वेतनभोगी सैन्यदल²	७५०००
राजाके निजके घोड़े, १० हाथी, . .	
२०० ऊँट और गाडी .. .	३५०००
घुड़सवार पाँचसौ . . .	६००००
रानीका व्यय .	१५०००
परिच्छद् (तोशाखाना)	५०००
दान	५०००
पाकशाला	५०००
अतिथिसेवा मिजमानी	५०००
पर्वोत्सव .	५०००
वार्षिक ऊँट, घोडे, बैल इत्यादि खरीदना .	२००००
सब जोड	२९१००० रुपये

" मंत्रियोंको और राज्यके कर्मचारियोंको भूवृत्ति भी मिलती है। केवल वाणिज्य शुल्कमे ही यह समस्त व्यय किसी २ सालमे पूरा पड़जाता है । उस वाणिज्य शुल्ककी आमदनी प्रायः तीन लाख रुपये होती है "।

जयसलमेरकी रहनेवाली भाटी जातिके सम्बन्धमे टाड् साहब लिखते है कि "जो सब भाटी जाति इस समय जयसलमेरकी वर्तमान सीमामे रहती है, वह सब हिन्दू है पर उत्तर और पश्चिम सीमाके अन्तमे बसनेवाले मुसलमानोंके साथ वाणिज्यके व्यवहारमे बोलचाल और रहन सहनसे पुरानी रीति कुछ बदल गई है । जो सब भट्टी बहुत दिनोंसे फूलरा और गाड़ाकी ओर रहते है वह चिरकालसे जातिसे अलग होकर मुसलमान होगये है उनका सब व्यौहार भी मुसलमानोके साथ होगया है । राठौर, चौहान और सीशोदियोकी समान भट्टीजाति इस समय वीरजातिसे ही नही किन्तु कछवाहे वा बरूका ओर शेखावाटीके रहनेवालोसे अधिक साहसी वीर कहकर प्रसिद्ध है । भाटी राजपूतगण राठौरोकी समान बलवान् और कछवाहोकी समान लम्बे चौड़े नही है किन्तु दोनो जातियोसे देखनेमे सुन्दर और यहूदियोकी समान लावण्य युक्त है । भाटीजातिका रजवाड़ेके समस्त राजपूतोंके साथ विवाह सम्बन्ध होजाता है "।

---

(१) जो सामन्त राजधानीमें रहकर राज्यका काम करते है उनके भोजनके व्ययका नाम रोजगार–सरदार है । पहिले जो सामन्त राजधानीमे आते थे तब उनका प्रतिदिनका व्यय उठानेके लिये शुल्क संग्रह करनेवालोके यहाँसे मँगाया जाता था । किन्तु यह रीति दोनो ओरसे ओछी समझ कर उठादी गई । तबसे इस नित्य व्ययके खर्चके लिये सामन्तोंकी योग्यतानुसार ॥) आठ आनेसे लेकर ७) रुपये तक दिये जाते हैं । इसमे वार्षिक ४००००रुपया खर्च पड़ता है ।

(२) " किलेमे जो तनख्वाह पानेवाली १००० सेना है उसको सेवन्दी कहते है "। उसका खर्च ७५००० है ।

भाटीजातिके पहिनावेके सम्बन्धमें इतिहास जाननेवाले टाड् साहव लिखते है कि, भाटीगण सफेद वा छीटका जामा पाहिनते है, वह जानुतक लम्वा होता है, कमरमे कमरवंद बांधते है। पाजामा घेरदार किन्तु पैरके हिस्सेके साथ दृढ़रूपसे लगा रहता है। शिरपर कुंकुममे रँगीहुई पगड़ी बांधते है। यह लोग कमरमे एक छुरी उरसते है, वॉई पीठपर ढाल और परतलेमे तलवार लटकाये रहते है। नीचे दरजेके आदमी धोती पहिनते और पगड़ी बांधते है। भाटीजातिकी स्त्रियॉ साधारण तौरसे३०फुट(१० गज)का लम्वा लाल रेशमी कपड़ेका घॉघरा पहिनती और उसी कपड़ेका दुपट्टा ओढ़ती है।वहांकी सव स्त्रियॉ अवस्थानुसार हाथीदॉतकी वा और किसी पशुकी हड्डियोकी चूडियां पहिनती है कि जिससे उनकी भुजासे लेकर हाथके गट्टेतक वॉह ढक जाती है। एक जोड़ा चूडीका मूल्य १६ रुपयेसे ३५ रुपये तक होता है। स्त्रियाँ चॉदीके कड़े भी हाथोमे पहिनती है जिस स्त्री के हाथोमे चॉदीके कड़े नहीं होते वह अपनेको अभागिनी समझती है। नीच जातिकी स्त्रियां टहलनीका काम और खेतीके काममे वड़ी सहायता करती है।

"अन्यान्य राजपूतोकी समान भाटीजाति भी अफीम खाती है अफीम और शर्वत पीनेके पीछे सव तमाखू खाते है। उस समय यह नसेमे इतने वेहोश हो जाते है कि इनके शरीरपर किसी भॉतिका आघात करनेसे भी इन्है ज्ञात नही होता है"।

कर्नल टाड् साहव फिर लिखते है "कि हरिवंशावतस भाटियोकी समान यहॉ पर पालीवाल नामक एक श्रेणीके ब्राह्मण वसते है। इनकी संख्या प्राय भाटियोकी समान है परन्तु यह भाटियोसे अधिक धनी है। राठौरोके मारवाड़मे वस्ती स्थापन करनेसे पहिले इन पालीवाल ब्राह्मणोके पूर्व पुरुष पाली वा पाह्ली नामक स्थानमे वास करते थे। वारहवी शताव्दीमे जिस समय सीयाजीने कन्नौजसे जाकर मारवाडमे पाह्लीको जीता है उसी समयसे इन पालीवाल ब्राह्मणोका भाग्य पतित हुआ है। सीयाजी पालीवालोको तो जीतलिया किन्तु उनको एक साथ नष्ट नही किया। जव एक मुसलमान वादशाहने इस स्थानको जीता तव उसने मारवाडके प्रत्येक रहनेवालोसे कर मॉगा, उस समय पालीवालोने कहा कि हम ब्राह्मण है इस लिये हमसे किसीने कर नही लिया और न हम कर किसीको देगे। इतना सुन वादशाहने नाराज़ होकर इनके प्रधान २ नेताओको कैद करलिया। परन्तु इन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नहीं दिया तव वादशाहने इन्है राज्यसे निकाल दिया। उसी समयसे पालीवाल अधिकतासे जयसलमेरमे आगये है। पीछे सवने वीकानेर, धाट, और सिन्धुके उपत्यकामे जाकर निवास किया। यह पालीवालगण जयसलमेरमे प्रधान वणिकरूपसे गिने जाते है। देशी और विदेशी समस्त वाणिज्य व्यवसाय यही लोग करते है। यह किसानोको पहिले रुपया देकर उसका धान्य लेते है। यह लोग देशका सम्पूर्ण सूत रेशम खरीद कर विदेशको भेजते है"।

जयसलमेरमे पोकर्णा नामक ब्राह्मण और एक प्रकारके द्विज रहते है। उनकी सख्या ?० हजार होगी। मारवाड और वीकानेरमे भी अनेक पोकर्णा ब्राह्मण है। यह लोग

खेती करते और पशुओको पाला करते है। वाणिज्यके व्यवसायको पहिले नहीं करते थे। इनके आदि विवरणके सम्वन्धमे यह कहावत प्रसिद्ध है कि यह पहिले खुदाई करते थे पीछे यह पवित्र तीर्थ पुष्कर ह्रद खोदने लगे तवसे ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर इनको पोकर्णा वा पुष्कर ब्राह्मण मान लिया है। यह कुदाल आकृतिवाली मूर्तिको पूजते है"।

"इस प्रदेशमे जाट आदि अनेक प्रकारकी जातियॉ भी वसती है"।

इतिहास लिखनेवाले टाड् साहवने जयसलमेरके किलेके सम्वन्धमे नीचे लिखे हुए मन्तव्यको प्रकाश करते हुए जयसलमेरके इतिहासको समाप्त किया है। इस मरु-भूमिके राजाका किला एक असंयुक्त ढाई सौ फीट ऊँचे शिखर पर वनाहुआ है। एक अभेद्य दीवार शृंगके ऊपर वनी है। इस किलेके चार दरवाजे है, किन्तु किलेपर तोपे वहुत कम है। राजधानी इसके उत्तरांशमे स्थापित है और चारोओर चहार दीवारोसे घिरीहुई है। तीन तोरण और दो गुप्त दरवाजे है। राजधानीमे धनी महजनोके अनेक मनोहर मकान वने दृष्टि आते है किन्तु अधिकांश स्थानोमे कुटी वनी हुई है। राजभवन जितना वड़ा है उतना ही सुन्दर है। यदि सामन्तोके साथ राजाका प्रेम हो तो युद्धके समय अपने ऊँटपर चढ़कर लड़नेवाली सेनाके सिवाय पैदल और एक हजार घुड़सवार इकट्ठे हो सक्ते है"।

जयसलमेरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–वंवई.







जैपुर।

महाराजाधिराज सवाई सर माधवसिंहजी बहादुर जी. सी. एस. आई, जी. सी. आई ई. इत्यादि.











जैपुर ।

(१) प्रथवीराज, १५०३-२८
(२) पूरनमल, १५२८-३४
(३) भीम, १५३४-३७
(४) रतन, १५३७-४८
(५) आसकरन १५४८
(६) भारमल, १५४८-७४
(७) भगवानदास, १५७४-९०
(८) मानसिंह १५९०-१६१५
(९) भाउसिंह, १६१५-२२
(१०) जैसिंह, १ १६२२-६८
(११) रामसिंह १ १६६८-९०
(१२) बिशनसिंह, १६९०-१७००
(१३) जैसिंह २ १७००-४३
(१४) ईश्वरीसिंह १७४३-५१
(१५) माधोसिंह, १ १७५१-६८
(१६) प्रथवीसिंह, १७६८-७८
(१७) प्रतापसिंह १७७८-१८०३
(१८) जगतसिंह १८०३-१८
(१९) जैसिंह ३ १८१८-३५
(२०) रामसिंह २ १८३५-८०
(२१) महाराजा सर माधोसिंह २ जी सी एस आई

[illegible]

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जयपुरका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

जयपुरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

सूचना–जयपुरका प्राचीन नाम ढूंढाड तथा आमेर है–कछवाहा वा कछावा गणोंके हस्तगत होनेसे वह प्रदेश कछवाहा देश कहलाया–ढूंढाड़का वृत्तान्त–कछवाहे गणोका आदि विवरण–राजा नलका नवर राज्यकी स्थापना करना–दूलेरायको नगरसे निकाल कर उनके द्वारा ढूंढाड़की प्रतिष्ठा–दूलेरायके सम्बन्धमे प्रवाद वाक्य–आश्रयदाता खोगांवके सम्बन्धमें मीनाके अधीश्वरके प्रति दूलेरायका दुष्ट व्यवहार–बड़गूजर जातिके अधीश्वरकी कन्याका पाणिग्रहण–उक्त अधीश्वरके उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति–राज्यसीमाका विस्तार–रामगढ़मे राजधानीका स्थापन करना–अजमेरकी राजकन्याके साथ उनका विवाह होना–मीनोंके साथ युद्धमे उनका प्राण त्यागना–उनके पुत्र काकिलका ढूंढाडको जीतना–मेदलजीका आमेर और अन्यान्य स्थानोपर अधिकार–हणदेवकी देश विजय–कुंतलकी देश विजय–पजोनीको सिहासनकी प्राप्ति–इस समयके अतिरिक्त आदिके निवासियोका वृत्तान्त–मीनाजाति–पजोनीका दिल्लीके अधीश्वर पृथ्वीराजकी बहनके साथ विवाह करना–युद्धमें उनका वलविक्रम–कान्यकुब्जकी राजनन्दिनीके स्वयवरके समयमे महा युद्धमे उनका प्राण त्याग करना–मलेसीजीको सिंहासनकी प्राप्ति–उनके उत्तराधिकारी गण–और पृथ्वीराजका राजवंशको "बाराकोटरि" अर्थात् बारह सामन्तशाखामे परिणत करना–उनका हत्याकाण्ड–भारमल्लका मुसलमान बादशाहके साथ प्रथम सम्बन्ध स्थापन–राजपूत राजाओमें भगवानूदासका यवनसम्राट्‌वंशको प्रथम कन्यादान–उनकी कन्याके साथ जहॉगीरका विवाह–उस कन्याके गर्भसे खुसरोका जन्म–मानसिहको सिंहासनकी प्राप्ति–उनकी सामर्थ्य प्रताप प्रभुत्व–उनकी मृत्यु–रावभाव सिहजी–महाराजा मान व भ्राता मिरजा राजा जयसिहको सिहासनकी प्राप्ति–अपने वंशका कलंक मोचन–यवन सम्राट्‌की विशेष सहायता करना–पुत्रके विषप्रयोगसे प्राण त्याग–रामसिह–विशनसिह–

साधू टाड् साहब जयपुरके इतिहासके वर्णन करनेके पहिले ही भारतीय अंग्रेजोके एक विषम भ्रमका उल्लेख कर गये है, उन्होने लिखा है कि "भारतवर्षके अंग्रेजी राजपूतानेके राज्योके यथार्थ नामोको वदल कर उनके स्थानमे राजधानीके नामके अनुसार राज्यको संवोधन करते है–जैसे मारवाड़ और मेवाड़ राज्यके नामके स्थानमे

(१) पजोनीको टाड् साहवने पजाने लिखा है।

(२) मिरजा राजा जयसिह मानसिहका भ्राता नहीं पोतेका वेटा था।

उन्होने उक्त दोनो राज्योके प्रधान राजधानी जोधपुर और उदयपुरके नामसे राज्योका नामकरण किया है,जिस भूखंडको हाड़ौती नामसे कहना चाहिये उसे उन्होने कोटा और बूंदी नामसे प्रसिद्ध किया है वह लोग आजतक हाडौती नामका उल्लेख नही करते । अग्रेजोंके निकट ढूंढाड़ नाम तो एकबार ही गुप्त था, उन्होने ढूंढाड़ राज्यकी राजधानीको आमेर वा जयपुरके नामसे लिखा है ।

कछावा वा कछवाहेगण जिस राज्यमे निवास करते है, इस समय सर्वसाधारणमे वही जयपुर नामसे विख्यात् है ” । इन्ही कारणोसे भारतवर्षके प्राचीन देशोके नाम एकवार ही विस्मृतिके समुद्रमे डूब गये है । महाभारत और रामायण इत्यादिमे भारतवर्षकी सम्पूर्ण राजधानी और स्थानोंके नामोका जो उल्लेख पाया जाता है, आज कल वे सभी निराकारण असंभव होगये है । यह तो ठीकही है कि राजनैतिक विप्लवमे और एक २ प्रबल परिवर्तनके मुखमे पतित होनेसे यह इस प्रकारसे परिवर्तित हुए है, परन्तु भारतीय अग्रेज तो विना कारण अपनी इच्छासे हो कई नामोका वदल करते आये हें, इससे इतिहासका महा अनिष्ट होता है । अस्तु इस समय इतिहास ही को मानना होगा ।

चौहान और राठौरोने जिस भॉति भिन्न समयमे राजस्थानकी विभिन्न आदिम जातियोंको जीता तथा स्वाधीन राजाओका शासन लोप कर एक २ राज्यको स्थापन किया, उसी भॉतिसे जयपुरका राज्य भी स्थापित हुआ है । समय २ पर भिन्न आदिम निवासियोके हाथसे सम्पूर्ण देशोको छेदन कर और स्थान २ पर छोटे २ राजाओके शासनको लुप्त करके इस राज्यकी सृष्टि हुई है, इस कारण राज्यमे जो भिन्न जातियोंकी समष्टि विराजमान है उसका अनुमान सरलतासे होसकता है। जो सुविस्तृत राज्य इस समय जयपुर नामसे विख्यात है, उसका पहिले ढूंढाड नाम था । ढूंढाड एक प्राचीन स्थानका विशेप नाम है, इस कारण एकमात्र ढूंढाड़ कहनेसे ही समस्त राज्य नही समझ सकते । टाड् साहब लिखते है कि पूर्वकालमे जो अनेर नामक स्थानके निकट ही ढूंढ नामका एक विख्यात् शिखर था । उसीसे ढूंढाड नामकी उत्पत्ति हुई है । उस ढूंढके शिखरके सम्बन्धमें चौहान जातिमे एक चरचा चली आती है वह यो है कि “ चौहान जातिके विख्यात राजा अजमेरके अधीश्वर वीसलदेवने इसी शिखरपर तपस्या की थी, वह अपनी प्रजाके ऊपर अत्यन्त अत्याचार करते थे, इसीसे उनको राक्षसकी योनि मिली, वह राक्षस होकर भी पहिले ही की समान प्रजाका सहार करके उसको खाजाया करते थे पोछे वहांके मनुष्योंने उसीके पोतेको उसके सम्मुख ला धरा । अपने पोतेके प्रेम भरे और कातर वचनोसे वीसलदेव चैतन्य होगये । और उस चैतन्यताके आते ही उन्होने यमुनाके किनारे जाकर प्राण त्याग दिये ” । राक्षसयोनिसे परिणत चौहानराजका वह ढूंढ़ खुदवा डालना कर्तव्य है । यह हमें विश्वास है कि वही उनकी समाधिका मंदिर है ” । इस प्रवाद और टाड् साहवकी युक्तिके सम्बन्धमे हमें केवल इतना ही कहना है कि यह प्रवाद जिस भावसे चल रहा है उसका वहुत सा अंश मिथ्या है । विद्वान्

लोग सरलतासे समझ जाँयगे, ऐसा बोध होता है कि महाराज वीसलदेव प्रजाके ऊपर अत्याचार करते थे इसी लिये उनको राक्षसकी उपाधि दी गई थी, क्या वह निश्चय ही प्रजाको मारकर उनकेशवोको खाजाते थे, क्या ऐसा कभी सम्भव होसकता है? अत्याचारसे प्रजाको पीडित करते २ जब वह चैतन्य हुए तव उन्होंने इस ढूंढके शिखर पर पापोका नाश करनेके लिये तपस्या की थी और टाड् साहबकी युक्तिके मतसे यह ढूँढ शिखर वीसलदेवकी समाधिका स्थान हो यह वात असंगत नहीं कही जासकती।

कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि कौशलराज्य(जिसकी राजधानी अयोध्या है)के अधीश्वर महाराज रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशसे कछवाह वा कछवाहे वंशकी सृष्टि हुई है। यह जाना जाता है कि कुश अथवा उनके कई पीढ़ी पश्चात् उन्हीके किसी वंशधरने पिताकी राजधानीको त्याग शोणनदके किनारे रोहतास नामका विख्यात किला बनवाया थाा। इसके कई पीढी पीछे इस वंशके और भी एक राजा नलने संवत् ३५१ सन् २९५ ईसवी मे इस स्थानको छोड़ पश्चिमकी ओर जाकर नरवर वा निषध नामकी राजधानी स्थापित की, इस विख्यात राजधानीके स्थापित होनेके पहिले प्रबादमूलक इतिहासमे देखा जाता है, कि और भी कई एक स्थानोमे कसवे स्थापित हुए थे, इनमे पहिलेका नाम लाहर था यह इस समय कछवाहा–धार नामसे प्रख्यात है,

---

(१) विहारमें इस समय जो रोहतास गढ है, वह राजा हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहिताश्वका निर्माण कियाहुआ है। टाड् साहबकी उक्तिकी अपेक्षा इसे ही सत्य कहनेमें हमे विश्वास होता है।

साधु टाड् साहवकी उक्तिमे हमे कितने ही सन्देहात्मक प्रश्न उपस्थित होते है, हमने जो पहिली संख्यामें सूर्यवंशकी कारिका प्रकाशित की उसको पाठकोने पढ़ा होगा कि कुशके पुत्र अतिथि उनके पुत्र निषध और निषधके पुत्र राजा नल थे। अतिथि निषध और नल इन तीनो पुरुषोके बीचमे रोहिताश्व लाहौर, ग्वालियर, और नरवर वा निषध यह कई राजधानी एकसाथ कैसे स्थापित होसकती है? फिर और एक बात टाड् साहबने कही है कि नरवरका दूसरा नाम निषध है, इस कारण उसके नामसे ही राजधानीका नामकरण हुआ था। नलने जो अपनी राजधानी स्थापित की थी वही नरवर नामसे विख्यात है (अनुवादक)

(२) साधु टाड् साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि " नरवर राजधानीको एक ऐतिहासिक विवरणमें वर्णन किया है, कि राजा नलने संवत् ३५१ मे नरवर राजधानीकी प्रतिष्ठा की, परन्तु उस समयकी अनुशासन लिपिको देखनेसे जानाजाता है कि इसमे कैसी झगड़ेलू वाते लिखीहुई है, उन्हे हम नहीं जानते, परन्तु नलसे दूलेराय तक ३३ पुरुष हुए इससे उनका विशेष समर्थन होता है। यदि प्रत्येक पुरुषने वाईस वर्ष तक राज्य किया, यह निश्चय किया जाय, तो७२६ वर्ष हुए। दूलेराय संवत् १०२३ मे निकाले गये इस कारण ७२६ को घटा देनेसे २९७ वर्ष बचे अर्थात् ५४ वर्षका अन्तर होता है। यदि हम प्रत्येकके शासनकालको २१ वर्ष तक निश्चय करे तो अति सामान्य भेद दिखाई पड़ता है, इस कारण राजा नलने जिस संवत् ३५१ मे निषध राजधानी स्थापित की थी। इसको हम सरलतासे ठीक करसक्ते हैं "।

(३) उर्दू तर्जुमेमें नहर।

और दूसरेका नाम ग्वालियर है राजा नलके उत्तराधिकारियोने "पाल" की उपाधि धारण की थी (यह उपाधि राजपूत राजाओके पक्षमे मान्य सूचक कही गई है) राजा नलसे ३३ पुरुषोके पीछे सोढ़ासिहके पुत्र दूलेराव पिताके राज्यसे निकाल दिये गये थे और उन्होने संवत् १०२३ (सन् ९६७ ईसवीमे) ढूँढाढ़ नामकी राजधानी स्थापित की "।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने फिर लिखा है कि जिस वंशमे कौशल राजाके राम, निषधके नल, और मारोमीके प्रिय ढोलाराव उत्पन्न है, वह वंश आपको अवश्य ही वीरताके गौरवसे गौरवान्वित मानना होगा। भारतवर्षमे कुशवंशसे उत्पन्न पुरुष अपने वश और गौरवके स्मरणके निमित्त ही वड़े समारोहके साथ प्रति वर्ष एक दिन सूर्यदेवका उत्सव किया करते थे, उसी उत्सवके समयमे मन्दिरके भीतरसे एक परम सुन्दर रथ–जो सूर्यरथ नामसे विदित था–वाहर करके उसमे आठ घोड़े जोते जाते थे। रामचन्द्रके वंशधर कच्छवपति उसी रथपर चढ़कर राजधानीमे भ्रमण करते थे।

इस समय आमेर राज्यकी उत्पत्तिके सम्वन्वमे इतिहासकोही मानना होगा, इसको तो हमारे पाठक पहिले ही जान चुके है कि रामचन्द्रके पुत्र कुशसे कच्छव वंशकी सृष्टि हुई है, कुश वा उनके वंशधरोमेसे कोई एक मनुष्य अयोध्यासे कही अन्यत्रको चलागया। निपध वा नरवर राजधानीकी सृष्टि पीछे हुई है, नलसे सोढादेवजी तक ३३ पुरुपोने उस नरवरको शासन किया। यहां तक उस राजवंशके दो भेद नही हुए, सोढादेवके पुत्र दूलेरायसे नवराज्यकी सृष्टि हुई है उसी समयसे वर्तमान कच्छव वा कछावावंशको स्वतत्रता मिली है। साधू टाड् साहवने कछवाहोके प्रचलित इतिहासके विवरणको देखकर लिखा है, कि नलसे लेकर ३१ पीढी तक नरवरके अधीश्वर सोढादेवने प्राण त्याग किये तब इनके भ्राताने वलपूर्वक अपने सुकुमार भतीजेको गद्दीसे अलग करदिया। दूलेरायकी माता देवरका ऐसा कठिन अत्याचार देखकर अत्यन्त ही दुखित हो चिन्ता करने लगी उसने एक महा विपत्तिको सम्मुख जानकर कगालनीका वेप वनाया और अपने पुत्र दूलेरायको एक झोलीमे वांधकर वह राजधानीसे वाहर हुई। उसने विचारा कि जब देवरने वल करके सिहासनपर अपना अधिकार कर लिया है तो वह निष्कटक होनेके लिये अवश्य ही मेरे वालकको मारडालेगा। सोढादेवकी रानी यह विचारकर पुत्रकी प्राणरक्षाके लिये भिखारिनीका भेप धर राजधानीको छोड गई, वह कंगालवेपधारिनी रानी पुत्रको गठरीमे वॉधे शिरपर रखे हुए अकली कोशोतक चली गई अन्तमे खोहगाव स्थानमे (जो जयपुर राज्यसे ढाईकोश दूर था) पहुंची। उस समय मीना जाति उस खोहगांवमे निवास करती थी। इस विपत्ति ग्रस्त अत्यन्त कातर हृदया रानीने मस्तक परसे पुत्रको उतारा, एक तो राजरानी, काहेको कभी इतना मार्ग चली होगी, तिस पर भी भूख प्यासका कष्ट इस महा विपत्ति पडनेसे रानी उस समय[1] अत्यन्त अधीर होगई, चारोओर विपत्तिकी भयकर मूर्तिको देखकर उसका

---

(१) टाड साहवने इनको सोढासिंह लिखा है।

हृदय कंपायमान होने लगा। अधिक क्या कहे रानी इस अवस्थामे पुत्रको रखकर एक वृक्षके नीचेसे कुछ फल लेनेके लिये गई, उसने आकर देखा कि एक सर्प पुत्रके मस्तक पर फन फैलायेहुए बैठा है, यह भयंकर दृश्य देखकर उसके हृदय पर मानो वज्र टूट पडा। वह विकल होकर रोने और चिल्लाने लगी। दैवयोगसे एक ब्राह्मण उसी रास्तेसे जा रहा था उसने रानीकी ऐसी अवस्था देख उसे धीरज बँधाकर कहा, " आप निर्भय होकर शान्त होजाओ, भयभीत होनेका कोई कारण नही है, वरन आपका पुत्र किसी समय राजा होगा। यह सुनकर रानी आनन्दित हुई " फिर शान्त हो रानीने कहा, "कि भविष्यतमे क्या होगा इसकी तो मुझे कुछ चिन्ता नही है, बालक इस समय बहुत भूखा है, इसके खानेके लिये कहाँ मिलै, मै इसी विचारमे पड़ी हूँ । तब उस ब्राह्मणने रानीको खोहगांवका मार्ग दिखाकर कहा कि आप खोहगाँवको चली जाओ, वहाँ तुम्हे आश्रय मिलेगा"। सर्प पहिले ही अपने स्थानको चला गया था, इस कारण रानी ब्राह्मणके वचनोसे धीरजधर बालकको मस्तक पर धर कर खोहगांवकी ओरको चली। रानीने नगरीमे घुसते ही एक स्त्रीको देखकर उससे कहा, "यदि कोई मुझे अपने यहाँ दासीके कामपर रखले और भोजन देदिया करे तो मै उसके यहाँ रहनेको राजी हूँ"। उक्त स्त्री खोहगांवके राजाके यहाँकी दासी थी, इस कारण उस कंगालिनी भेपधारिणी रानी को वह स्त्री रनिवासमे ले गई। मीना रानीने उस रानीको अभय देकर कहा, कि आजसे हमने तुम्हे अपनी दासीके पदपर नियुक्त किया, और अन्यान्य मोल लीहुई दासियोके साथ रहनेके लिये कहा। महाराज सोढादेवकी रानीने अपना परिचय किसी भाँति भी नही दिया। इस प्रकारसे कुछ दिन बीतगये—एक दिन मीनारानीकी आज्ञासे सोढा-देवकी रानीने भोजन तैयार किया, मीना राजा लालनसी उस भोजनको खाकर बोले,—"कि भोजन तो हम नित्य ही करते है परन्तु आजका भोजन बडा सुन्दर और स्वादिष्ठ बना है ?" मीनाराजके इतना कहनेसे छद्मवेशी सूर्यवंशकी राजवधू उनके महलमे बुलाली गई, मीनाराजा इस परिचारिकाका परिचय पाते ही उसी समयसे रानीको अपनी भगिनी कहकर पुकारने लगे, और दूलेरायको भानजेके नातेसे उसका विशेष आदर सम्मानके साथ लालन पालन करने लगे बालक दूलेराय भी मीनाराजके आश्रयसे अवस्था बढ़नेके साथ ही साथ क्षत्रियधर्म सीखने लगे। इसी समयमे दिल्लीके सिंहासनपर तंवरवंशके राजाने बैठकर समस्त भारतवर्षमे अपनी प्रबल प्रभुताका विस्तार किया था। सभी राजा उसे कर दिया करते थे। जब दूलेरायकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई तब मीनाराजने इनको दिल्लीमे कर देनेके लिये भेजा।

दूलेराय दिल्लीमे पाँच वर्ष तक रहे। इस समय मीनाजातिके कविके साथ इनका विशेप परिचय होगया था, दिल्लीकी राजधानीमे रहनेसे और तंवरराजके प्रबल प्रतापको देखकर सूर्यवंशी दूलेरायके हृदयमें राजमुकुट धारण करनेकी इच्छा उत्पन्न होने लगी। विशेप करके यह युवा होनेके साथ ही इस बातको भी जान गये कि उनकी नस २ मे राजरुधिर बह रहा है, इस कारण उनके राज्यशासनकी जो इच्छा क्रमशः बलवती होती गई तो इसमे आश्चर्य ही क्या है।

उन्होंने अपने मनके भावको मीना कविसे कहा—और यह भी कहा कि किस प्रकारसे मेरी अभिलाषा पूर्ण होसकती है ? आप ऐसा कोई उपाय बता दीजिये"। कविने उत्तर दिया, कि आप अपने आश्रयदाता मीनाराजको दमन करके उनके राज्यभारको अपने हाथमे लीजिये। दिवालीके पर्वके समयमे चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार समस्त मीना उस अमुक सरोवरमे स्नान किया करते है आप उसी समय अपना दल ले कर उनपर आक्रमण कीजिये, तब उनका वंश नष्ट होनेसे आपको सिंहासनकी प्राप्ति हो सकती है" । कविकी सम्मतिसे दूलेराय दिल्लीसे बहुत सी राजपूतसेना साथले दिवालीके पर्वके दिन खोहगावमे जा पहुँचे, इस समय समस्त मीनागण सरोवरमे स्नान कररहे थे, दूलेरायने उसी समय उनपर आक्रमण करके उनके शवोंसे सारे सरोवरको भर दिया। परन्तु जिस मीनाकविने यह सम्मति दी थी उसके प्राण भी न बचे, दूलेरायने अपने हाथसे ही उसको मारडाला । उसने कहा कि "जो मनुष्य अपने प्रभुके साथमे ही विश्वासघात करता है वह कदापि दूसरेका विश्वासपात्र नही हो सकता" । इस प्रकारसे दूलेरायने मीनाओंके शासनका लोप कर खोहगांवको अपने अधिकारमे करलिया । इस खोहगांवके अधिकारमे होनेसे ढूंढार, आमेर वा वर्तमान जयपुर राज्यकी उत्पत्ति हुई।

जो दूलेराय बाल्यावस्थामे पिताके सिंहासनसे उतारे जाकर जननीके शिरपर पिताकी राजधानीसे अनाथकी समान खोहगांवमे आये थे इस समय उन्ही दूलेरायकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न होगई, दूलेरायको खोहगांवपर अधिकार करनेके पीछे अपनी राज्यसीमा विस्तार करनेकी बडी उत्कंठा हुई उस समय वर्तमान जैपुरसे १५ कोश पूर्वकी ओर वाणगंगाजीके किनारे द्योसा नामक स्थानमे राजपूतोकी बडगूजर सम्प्रदाय स्वाधीनभावसे निवास करती थी। दूलेरायने अपनी सेना साथले बडगूजरोंके किलेके समीप जाकर कहला भेजा कि तुम अपनी कन्याका विवाह हमारे साथ करदो । बडगूजरपतिने यह सुनकर कहा भला "यह किस प्रकार होसकता है" ? हम दोनो ही सूर्यवंशी है, अभी सौ पीढ़ी भी नही बीती है इस कारण विवाह किसी प्रकार नही होसकता ? वड़गूजरपतिके इस वचनको सुनकर दूलेरायने समझा दिया कि सौ पुरुष तौ वीत गये है तब बडगूजरपतिने आनन्दित हो नव विजयी दूलेरायके करकमलमे अपनी कन्याको समर्पण किया और इनके कोई पुत्र नही था इसीसे इनको अपने राज्यका उत्तराधिकारी भी स्वीकार किया, और इनके हाथमे अपने राज्यका भार अर्पण करनेमे किंचित् भी विलम्ब न किया। इस प्रकारसे दूलेरायकी सामर्थ्य और प्रभुता बढ़तीगई । उस सामर्थ्य बढनेके साथ ही साथ दूलेरायके हृदयमे राज्यकी इच्छा भी बढने लगी। माची नामक स्थानमे राव नाटू नामक एक मीनाराज निवास करता था दूलेराय उसको भी परास्त करके अपना प्रभुत्व विस्तार करनेकी अभिलाषा की। प्राचीन मीनाराज अपनी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमे उतरे परन्तु अतुल पराक्रमी दूलेरायकी सेनाने युद्धभूमिमे मीनाओंको सेना सहित परास्त करादिया । विजयी दूलेरायने नये अधिकारी माचीदेशमे जाकर देखा कि खोहगावकी

अपेक्षा यह स्थान अत्यन्त सुन्दर और रमणीक है, यहां एक राजधानी स्थापन कर किलेका वनना भी यही ठीक होगा, इस कारण वह शीघ्र ही खोहगांवसे अपनी राजधानी उठा लाये, और एक नवीन किला वनवाया; और अपने विश्वविदित पूर्वपुरुष रामचन्द्रके स्मरणके लिये उस किलेका नाम रामगढ रक्खा ।

इसके पीछे दूलेरायने अजमेरकी राजकुमारी भारोनीके साथ विवाह किया । एक समय दूलेराय रानीके साथ जमवाय माताके मन्दिरमे दर्शन करनेके लिये गये जव वहाँसे लौटे तौ क्या देखते है कि इनके ही देशके ग्यारह हजार मीने इकट्ठे होकर अस्त्र शस्त्र लिये मार्ग रोके खड़े हुए है । वीरश्रेष्ठ दूलेरायने उन्हे इस प्रकारसे युद्ध करने के लिये तय्यार खड़ा देखकर निर्भय हो उनके साथ युद्ध किया । शत्रुओंकी सेना अधिक थी इसी कारण दूलेरायकी सेना विशेप विक्रम न करसकी । क्रोधित हुए सिंहके समान दूलेरायने अपनी तलवारसे सैकड़ों योधाओके प्राण नाश किये, और अन्तमे आप भी चिरकालके लिये अनन्त निद्रामें सो गये । दूलेरायके मरते ही इनकी सम्पूर्ण सेना भी छिन्नभिन्न होकर भागगई, इस समय दूलेरायकी रानी गर्भवती थी इस कारण वह वहाँसे वड़े कष्टसे भाग सकी, कछुवाहोके आदि पुरुप दूलेरायकी जीवनीके सम्वन्धमे इतिहासमे यहीतक लिखा है । दूलेराय एक वडवीर और साहसी क्षत्री थे, इसका अनुमान सरलतासे ही होसकता है ।

दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ । उसका नाम कांकिल रक्खा गया । इसीने पिताके सिंहासनपर अभिपिक्त होकर ढूंढाढ राज्यको जय किया । इनके पुत्र मेदल भी अत्यन्त वीर और पराक्रमी थे इस समय सुसावत मीनोके राज्यमे आमेरके राव भत्तो निवास करते थे, उक्त राव मीना जातीय तथा समस्त मीनोकी सम्प्रदायोमे सवमे श्रेष्ठ राजा थे । मेदलरावने सेना सहित आमेर राज्यमे आकर मीनोको पराजय कर आमेरको अपने अधिकारमें करलिया । मेदलरावने इस प्रकारसे पिताके राज्यको विस्तार करनेके पीछे कुछ दिनोके उपरान्त नान्दला नामक मीनोको एक वार ही अधीनताकी शृखलामे वाँधकर गतोर नामक देशको भी अपने अधिकारमे करलिया ।

दूलेरायके वंशधरोका सौभाग्य सूर्य इस समय धीरे २ अपनी पूर्णमूर्तिसे उदय होने लगा । मेदलरावके स्वर्ग चले जाने पर उनके उत्तराधिकारी हणदेवने राजछत्र धारण किया । इस समय भी चारोओरके मीनागण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे । हणदेव भी अपने पूर्वपुरुषोकी समान पिताके राज्यका विस्तार करनेके लिये क्रमानुसार मीनालोगोके साथ युद्धमे लिप्त रहते थे । हणदेवकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र कुंतलने राजदंड धारण किया, इन्होंने अपनेही वलसे सम्पूर्ण पहाड़ियोके ऊपर अपना शासन विस्तार किया, भूड़वाड़ नामक स्थानमे इस समय एक चौहान राजा निवास करतेथे । कुन्तलके साथ उन चौहानपतिकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, रावकुंतल अपनी समस्त सेना साथ ले भूड़वाड़ देशमे जानेका उद्योग करने लगे, उस समय उनकी समस्त

मीनोकी प्रजाने पहिले भयंकर काण्डको स्मरण करा दिया कि यदि आप इस राज्यकी सीमाको उल्लंघन करके जाते है तो आप राज्यका चिह्न स्वरूप नगारा और पताका यही रख जाइये।" रावकुन्तलने मीनोका यह प्रस्ताव स्वीकार न किया, इस कारण शीघ्र ही मीनोके साथ भयंकर संग्राम उपस्थित होगया। उस संग्राममे वहुतसे मीना तो मारे गए और वहुतसे परास्त होगये, इस कार्यसे रावकुन्तलका अधिकार दृढ़तासे स्थापित होगया।

कुन्तलके परलोकवासी होनेपर एक प्रवल धनुर्द्धर कछवाहा राजसिंहासन पर विराजमान हुआ। इसका नाम पजोनीजी था। वीरविक्रमी राजपूत जातिमे इसका नाम प्रशंशित होकर विख्यात है, रजवाड़ेके प्रसिद्ध कवि चँदवरदाईने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी गुणावलीको जिस मधुर काव्यमे वर्णन किया है उसी काव्यमे अन्त करणसे इस वीर श्रेष्ठके वीर विक्रमको भी वह कवि अक्षय कवितामे वर्णन करगये है।

इतिहासवेत्ता टाड इस स्थान पर लिखते है "कि हमने रजवाड़ेके इस विस्तारित इतिहासके पूर्वअंशको अनेक स्थानोमे देखा है, कि यहाँके सम्पूर्ण आदिम निवासियोने पराधीनता और दासत्वकी शृंखलासे मुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की है, इस समय ढूढाढ़ देशमे कछवाहोके उदय होनेसे आदिम निवासियोकी वह चेष्टा भलीभाँतिसे प्रकाशमान हो रही है। ढूढाढ़की आदिम पवित्र अमिश्र मेनाजातिके पहिले पाँच नाम थे, और उनकी पाँच शाखा विभक्त थी, अजमेरसे लेकर यमुनाजी तक विस्तारित भूधरमाला जो 'काली खो, नामसे विख्यात थी, मीना गणोका वही आदिम वासस्थान था, उन्होने वहाँ आमेरराज्यकी प्रतिष्ठाकी और अपनी कुलदेवी अम्वा माताके नामसे उसका नाम आमेर रक्खा। मीनागण अम्वादेवीको "घाटारानी" अर्थात् पवित्र देवी भी कहते थे। उस शिखरकी श्रेणीमे भिन्न २ मीनाओकी सम्प्रदायके आधीनमे खोहगाव माची और अन्यान्य प्रधान २ नगर भी थे। परन्तु वावर और हुमायूके समयमे और कच्छवराज भारमल्लके शासन समयमे भी मीना जाति अत्यन्त वलवान थी, और इसके वलविक्रमको देखकर राजपूत सदा शकित रहते थे। उन स्वाधीन मीनोकी सम्प्रदायमे एक अत्यन्त प्राचीन नगरी नाहन थी, भारमल्लने मुगलोकी सहायतासे उस नगरको विध्वस करदिया। एक प्राचीन ऐतिहासिक कवितामे नाहनकी मीनाजाति की सामर्थ्य इस प्रकारसे वर्णन की गई है।

वावन कोट छप्पन दरवाजा।
मीना मरद नाहनका राजा।
वुडो राज नाहनको।
जब भूसमे चाटो मागो।

इस कविताका अर्थ इस प्रकार है, कि माहनके राजा मेनाके ५२ किले और तोरणद्वार थे जिस समय उसका शासन नाहनमे लुप्त होगया, उस समय उसने सामान्य भूसेर [illegible] भी करस्वरूपमे ग्रहण किया था। यदि उक्त वर्णन अतिरिक्त [illegible] [illegible] जाता तो [illegible] बोध होता है कि जिस समय दिल्लीके सिंहासन पर

[illegible]

प्रथम मुसल्मान बादशाह विराजमान हुए उस समय मीनागण अत्यन्त बलवान थे यह तो हमै निश्चय है कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीन कर देनेवाले नरपति पजोनीसे लेकर बावरके समसामयिक उस पजौनीके वशधर भारमल्ल तक कच्छवाहे राजा अपनी अधिक सीमाको वढ़ानेमे समर्थ न हुए भारमल्लने नाहनके पचास द्वारोको विध्वस करके उस स्थानपर मलिवाण नामका नगर वसाया। इस समय वही राजावत् सामन्तोकी वासभूमि है"।

महात्मा टाड् साहव फिर लिखते है "कि इस मीनाजातिकी भिन्न २ सम्प्रदायोके नाम उच्चारण और वर्णवद्ध पदोमे एक विभिन्नता विराजमान है। मेना शव्दका अर्थ असल वा "अमिश्र" श्रेणी है। इस अमिश्रित श्रेणीमे इस समय केवल ओसारा नामकी एक सम्प्रदाय दिखाई पड़ती है। अन्य पक्षमे मीना शव्दका अर्थ मिश्र है, वही मिश्र जाति 'वारापाल' अर्थात् वारह सम्प्रदायोमे विभक्त हुई है, और वही चौहान, तूंवर यादव, पड़िहार, कछवाहे सोलकी, साकला, गिहलोत इत्यादि राजपूतोके औरससे मेना स्त्रियोके गर्भसे उत्पन्न है। यही वर्णसकर मीना जाति पॉच हजार दोसौ सम्प्रदायोमे विभक्त हुई। जागा, धोली, वाड़ोम नामक उनके कारिका कारोने उन सभी सम्प्रदायोकी कारिकाकी रक्षा की है। अमिश्र उसारा सम्प्रदाय इस समय दिखाई नहीं पड़ती, अन्य पक्षमे मिश्र मीना सम्प्रदाय मध्य और पाश्चिम भारतवर्षके सम्पूर्ण पर्वतो और दुर्गम देशोमे विस्तृत हुई है। यह भलीभॉतिसे जानाजाता है कि राजपूतगणोसे विदित इस समयकी जेट जाति और कोल, भील, मीना, गोण्ड, साईरिया, वा सार्जा जाति यहाके आदिम निवासी है। मीना जातिका धर्म, समाजिक नियम, और आचार व्यवहार एक अलग अध्यायमे वर्णन किया जायगा"।

पजौनी जिस भॉति महान् ऊंचे वंशमे उत्पन्न हुआ था, उसी भॉति वह अत्यन्त सुन्दर और अनन्त गुणोसे भूषित था, इसीसे दिल्लीके चौहान् साम्राट् पृथ्वीराजकी भगनीके साथ उसका विवाह हुआ था। वीर पृथ्वीराजने सिहासन पर वैठते ही भारतवर्षके भिन्न प्रान्तोके एकसौ अस्सी राजाओको अपने यहॉ बुलाया, इनमे राव पजोनीको ही ऊंचा आसन दिया गया था, पृथ्वीराजने जिन २ स्थानोमे युद्ध किया राव पजोनीने भी उनके साथ उन्हीं २ युद्धोमे अपने वलविक्रमकी पराकाष्ठा दिखाई, महावीर पजोनीने उन वहुतसे युद्धोमेसे दो युद्धोमे अपनी तलवारका चूडान्त परिचय देकर महान यश संचय किया था। जिस समय उत्तरांशसे शहावुद्दीन भारतवर्षको विजय करनेके लिये आया उस समय वीर श्रेष्ठ पजोनीने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दी, पजोनीने इस प्रकारके असीम साहससे सेनाको चलाया कि जिससे शहावुद्दीन एकवार ही परास्त हो गया और उसी समय समरसे भाग गया। विजयी पजोनी उसके पीछे २ गजनी तक गये। राव पजोनीने चॅदेलोकी निवास-

(१) पजोनी या पज्जूनराय पृथ्वीराजका बहनोई नहीं वरन् साला था।

भूमि महोबाको अधिकारमे करनेसे ही अपने बलविक्रमकी प्रसिद्धि की थी और वह उस समय वहाँके प्रधान शासन कर्ताके पदपर प्रतिष्ठित हुए दिल्लीश्वर पृथ्वीराज कन्नौजपति जयचंदकी कन्या (संयोगिता) अनङ्ग मंजरीको हरण करके ले आये, उस समय दोनो राजाओंमे जो भयंकर युद्ध हुआ था उस युद्धमे भी पृथ्वीराजकी ओरके चौसठ राजा नियुक्त थे, इनमे एक पजोनी भी थे, पृथ्वीराजका जयचंदके साथ जिस समय पाँच दिन तक निरन्तर युद्ध हुआ था, उस युद्धमें नियुक्त होकर पृथ्वीराज जिस भाँतिसे कन्नौजकी राज नादिनीको ले निर्विघ्नतासे चले जाँय, इसी अभिप्रायसे पजोनीने अपनी सेना सहित मार्गमे खडे होकर शत्रुओके साथ अकथनीय समर करते २ अपने जीवनको त्याग दिया। पजोनीके साथमे मेवारके गाहिलोत[1] सामन्त भी जयचंदके साथ युद्धमे लिप्त था, और दोनोने एक ही साथ रणशय्या पर शयन किया। कविकुल केसरी चंदकवि वीरश्रेष्ठ पजोनीकी वीरता विक्रम और अन्तिम युद्धके अभिनयके सम्बन्धमे अपने काव्यमे लिख गये है जिस समय गोविन्द राय मारेगये उस समय शत्रु अत्यन्त प्रसन्न हो नृत्य करने लगे, परन्तु कुछ ही समयके पीछे पजोनी उस समरके आकाशमें गर्ज कर दिखाई दिये। वह शत्रुओके ऊपर दोनो हाथोसे शस्त्र चलाने लगे। एक साथ चारसौ शत्रुवीर इनके ऊपर आ झुके, परन्तु एक मात्र केहरि, पीपा, 'वाहु' नरसिह और कचरराय[2] नामके वीर भ्राता पजोनीकी सहायतामे आगे बढ़े। तलवार और भालोकी खटाखट चारो ओरसे होने लगी, रणभूमिमे सहस्रो शिर लुढ़कतेहुए दिखाई देनेलगे, रुधिरकी नदी वह निकली, पजोनीने एतमाद पर आक्रमण किया, परन्तु एतमादका कटाहुआ मस्तक जैसे ही पजोनीके पैरोके नीचे गिरा कि वैसे ही खाँनोके[3] भाले विषम वेगसे पजोनीके हृदयमे घुसगये, कूर्म[4] रणक्षेत्रमे पतित हुए, स्वर्गमे अप्सरा पजोनीको पतिरूपसे वरण करनेके लिये आपसमे झगड़ा करने लगी, जो उत्तर देशकी सेना युद्धमे थी उनके शवोसे रणभूमि भरगई, मनुष्योके कटे हुए शिरोसे महादेवजीकी मुडमाला बढ़गई; जिस समय पजोनी और गोविन्द युद्धमे मारे गये, उस समय केवल एक पहँर[5] दिन बाकी था। अपने आत्मीय वीरोकी सहायताके लिये जंजीरसे

---

(१) मेवाड़से कोई भी पृथ्वीराजके साथ कन्नौजको नहीं गया।

(२) पीपा, अजानबाहु, नरसिंह, कच्चर पजूनरायके भाई नहीं थे अन्यान्य जातीय सामन्त थे।

(३) चंदकविके इस प्रकारके वर्णनसे ऐसा बोध होता है कि जिस समयमे दिल्लीपति पृथ्वीराजके साथ कान्यकुब्जपति जयचंदका शेष युद्ध हुआ था, उस समय जयचंदकी ओर एकदल यवनोकी सेनाका भी था। परन्तु भारतवर्षके इतिहासमे इसका कोई उल्लेख नहीं पायाजाता, जयचंदके साथ पृथ्वीराजके उक्त समरके पीछे यवनोंकी सेनाने भारतमें आकर दिल्लीको जय किया, इसक पहिले भारतवर्षमें यवनोंकी सेना नहीं थी यही इतिहासमे देखा जाता है।

(४) जयपुरके राजा जिस भाँति कछवा नामसे विख्यात थे उसी प्रकारसे कूर्मनाम भी हुआ था, कूर्म नाम क्यों हुआ, टाड साहबने उसका कोई विशेष कारण प्रकाश नहीं किया। "पर एक स्थलमे लिखा है कि राजा करसवाहके पिताका नाम कर्म था जिसके नामसे कछवाहे कूर्म या कूर्मा कहे जाते है [अनु]

(५) उर्दू तर्जुमेमे १ घडी।

छूटेहुए सिहकी समान वीरश्रेष्ट पाल्हन महाक्रोधित हो रणभूमिमे आ पहुँचा। कन्नौजकी उस प्रवल सेनाने प्राणोके भयसे भयभीत हो पीठ दिखा दी। पजोनीके भ्राता पाल्हन अपने पुत्रके साथ कर्णकी समान वीरता दिखाने लगे। अंतमें युद्धभूमिमे दोनो ही अपने प्राण त्यागकर सूर्यलोकको चलेगये, सूर्यका रथ आगे बढ़कर इनको वडे आदर सम्मानके साथ चढ़ाकर लेगया"।

कविचंदने फिर लिखा है कि गंगादेवीके भयसे भयभीत होकर, चन्द्र चचल हुआ और दिकपाल गण अपने २ स्थानोमे चीत्कार शब्द करने लगे। कन्नौजकी सेनाकी गति रुक गई, पजोनीने जैचंददेवकी ढालको खड २ कर दिया था, उसके पुत्रने उसकी अन्तेष्टि क्रिया कर दी। पजोनी पृथ्वीराजके ढालस्वरूप थे, उन्होने कन्नौजके वीरोको विलक्षण अस्त्राघात स्वरूप उपहार दान किया था। कवियोंकी भी उस वीरताकी कहानी को वर्णन करनेकी सामर्थ्य नही हुई, उन्होने अंतमे वहुतसे वीरोंके शिर काट डाले और अगणित वीरोके प्राण नाश किये, परन्तु महावली शत्रुगण साहस करके भी उनके सम्मुख नहीं होसके। पजोनीने उस रणभूमिमें पतित होकर कहा, "कि मनुष्यकी आयु सौवर्षकी है, जिसमे आधी तो निद्रा अवस्थामे जाती है, और इसका कुछ एक हिस्सा वालकपनमे नष्ट हो जाता है, परन्तु उस सर्वशक्तिमानने मुझे इस अस्त्राघातको सहन करनेकी शिक्षा दी है"। वह यमराजकी गोदमे बैठेहुए जिस समय यह कह रहे थे उसी समय उन्होने देखा कि मेरा प्राणप्यारा पुत्र एक वीर पुरुषकी भाँति शत्रुओके संहारमे प्रवृत्त होरहा है। यह दृश्य देखकर अंतमे उनकी आत्मा अत्यन्त संतुष्ट हुई। मलैसीजीके शरीरपर शत्रुओने सात तलवारोके आघात किये थे, उनका घोड़ा भी रुधिरमे भीज रहा था। पजोनीका पुत्र उस रणक्षेत्रमे अतुल वल विक्रम प्रकाश कररहा था"।

चंदकविने मलैसीके गुणोकी महिमा की और उनके वलविक्रमकी वडी प्रशंसा की है। इतिहास कहता है, कि यही अपने पिता पजोनीके पदपर आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। साधु टाड् साहवने जिस इतिहाससे इस विवरणको सग्रह किया है, उसमे मलैसीजीके शासन समयकी कोई विशेष घटनाका उल्लेख नही था परन्तु रजवाड़े मे प्रचलित वहुतसी दतकथाओ व गाथाओ और काव्योमें पजोनीके उत्तराधिकारीके वहुतसे कीर्ति कलाप तथा राजपूतोके धर्मपालनके विशेष उल्लेख दृष्टि आते है। एक स्थानमे ऐसा लिखा है कि मलैसीने मांडू नरपतिके साथ भयकर युद्ध करके रुत्राहि नामक स्थानमे विजयलक्ष्मीका आलिगन प्राप्त किया था।

---

(१) एक काव्यमें निम्नलिखित कविता वर्णवद्ध हुई है"

पालन पजूनी जीती महोवा कन्नौज लड़ाई
माड़मलैसी जीती राररुत्राहिका
राजा भगवानदास जीती मेवासी लाड़
राजा मानसिंह जीती खोतनफौज दुवाकि—

मलैसीजीके पीछे निम्नलिखित ग्यारह राजा आमेरके सिहासन पर क्रमानुसार बैठे,—

१—बीजलदेवजी । ६—उदयकर्ण ।
२—राज देवजी । ७—नरसिंहजी ।
३—कल्हणजी । ८—वनवीरजी ।
४—कुतलजी । ९—उद्धरणजी ।
५—जोणसीजी । १०—चन्द्रसेनजी ।
११—पृथ्वीराजजी ।

उपरोक्त ग्यारह राजाओके शासनके समयके विवरणका उल्लेख इतिहासमे नही हुआ है। केवल पृथ्वीराजके शासन समयमे आमेरराज्यका एक विशेष नवीन अनुष्ठान हुआ। पृथ्वीराजके सत्रह पुत्र उत्पन्न हुए, इनमेसे पॉचकी तो अकालमे ही मृत्यु होगई, और बारह पुत्र स्थित रहे। पृथ्वीराजने उन बारह पुत्रोको अपने राज्यके बारह अंशोका भाग करके देदिया। उसीसे आमेरका राजवंश "बाराकोटरि" अर्थात् बारह पुत्रोके परिवारोमे विभक्त होकर प्रसिद्ध हुआ है, जिस समय पृथ्वीराजने इन बारह पुत्रोको राज्यका भाग कर दिया, उस समय आमेर राज्यकी भूमि बहुत थोड़ी थी, इस कारण प्रत्येक राजकुमार जिस परिमित भूखंडको वंशानुक्रमसे भोगता था वह भूमि अत्यन्त सामान्य थी। परन्तु उस समय आमेरराज्यकी भूमिका जितना परिमाण था इस समय उक्त बारह वंशोमेके एक२ वंशधर उतनी२ भूमिको भोग करते है। पृथ्वीराजके बारह वंशधरोके इस प्रकार राजभोग करनेमे मलैसी और पृथ्वीराजके मध्यवर्ती समयमे राजपरिवारके साथ राजवंशकी कनिष्ट शाखाओमे विवाद उपस्थित हुआ था और उसी कारणसे मूलराज्य की अपेक्षा और भी राज्यकी एक शाखा अधिक प्रबल होगई थी। यह घटना उदयकरणके शासन समयमे हुई थी, उनके पुत्र बालाजीने पिताका महल छोड़कर अमृतसर नाम नगर और छोटे २ देशोपर अपना अधिकार करलिया। उस समय उनके पुत्र शेखाजीने उस देशके अधीश्वर होकर अपने बाहुबलसे राज्यकी सीमाका विस्तारकर एक प्रबल बल-शाली सम्प्रदायकी सृष्टिकर शेखावाटी नामक राज्यको स्थापित किया। शेखावाटीकी भूमिका परिमाण उस समय दशहजार मील था, शेखावाटीका वृत्तान्त टाड् साहबने अन्य स्थानपर विस्तार सहित लिखा है, हम भी यथास्थान उसे अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करैगे।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमे ऐसा जाना जाता है कि उन्होने सिधुनदीके किनारे स्थापित देवल नामक एक पवित्र तीर्थमे जाकर यश प्राप्त किया था, परन्तु शोकका विषय है कि वह अपनेही पुत्र भीमके द्वारा मारेगये। इस शोचनीय हत्याकाण्डका वृत्तांत इतिहासमे दिखाई नही देता। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि उस पितृघातीको

—इसका अर्थ यह है कि पालन और पजोनीने महोबे और कन्नौजके युद्धमे जय प्राप्त की मलैसीने इत्यादि समरमे माडूपर अधिकार किया, राजा भगवानदासको मचाल्नीमे जय प्राप्त हुई, राजा मानसिंहने उनके सेनादलको परास्त किया था, इससे जाना जाता है कि एक समय काबुलके यारिरी देशोमे भी राजपूत राजाओने जय प्राप्त की थी।

एक ओर मनुष्यने उचित दंड दिया। भीम जिस प्रकारसे अपने पिता पृथ्वीराजको मारकर महान् पापमे लिप्त हुए उन भीमके पुत्र आसकर्णने भी उसी प्रकारसे उस पितृघाती पिताके जीवनका नाश किया। भीम पिताके मारनेसे सबके अप्रिय होगये थे और सभी इनको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे; राजवशधरोने भीमको संसारसे विदा करनेके लिये उनके पुत्र आसकर्णसे कहा "कि आप भीमको मारकर राजवशके कलकको दूर कीजिये। इसके पीछे तीर्थोकी यात्रा करके आप अपने पापोका नाश कीजिये"। आसकर्णने इस संमतिको उचित जानकर अपने पिताके जीवनरूपी दीपकको सर्वदाके लिये शान्तकर दिया। आमेरराजवंशके इतिहासमे इन दो महा पापियोके नाम नही लिखे गये है। इस प्रकारके कलंकियोका इस संसारसे नाम लोप होजाना ठीक ही है।

दूलेरायके समयसे लेकर पृथ्वीराजतक प्रत्येक राजा सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करते आये। दिल्लीके तूंवरवंशीय पृथ्वीराज जिस समय अपने बाहुबलसे भारतके सम्राट् पदपर विराजमान थे, उस समय यद्यपि रावपजोनी उनके यहाँ आधीनरूपसे नियत थे परन्तु राज्यके आभ्यन्तरिक शासनसे तूंवर राजवंशपर किसी समय भी हस्ताक्षेप नही किया, विशेष करके पजोनीके साथ पृथ्वीराजका सांसारिक सम्बन्ध होगया था इसलिये वह दिल्लीमे बड़े सम्मानके साथ रहते थे, आमेरके राजाओमेसे भारमल्लने सबसे पहिले यवन शासनके निकट अपना मस्तक झुकाया, और उन्होने ही सबसे पहिले यवनसम्राट्के साथ सम्बन्ध बंधन किया, बाबरने जिस समय भारतवर्षमे अपनी प्रभुताका विस्तार किया उस समय भारमल्लने उनकी आधीनता स्वीकार करली। इसके पीछे पठानोके अभ्युदयके पहिले भारमल्ल हुमायूके निकटसे आमेरके अधीश्वरस्वरूप "पंचहजारीमनसब" अर्थात् पॉच सहस्र सेनाके नेता पदपर नियत हुए। इतिहासमे भारमल्लके शासनका अन्य कोई विशेष उल्लेख दिखाई नहीं देता।

भारमल्लके पुत्र भगवानदासने आमेरके सिंहासनपर बैठकर यवन सम्राट्के साथ एक और भी घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया। सम्पूर्ण भारतवर्षमे सम्पूर्ण वीर और पवित्र वंशीय राजपूतोमे एकमात्र भगवानदासहीने सबसे पहिले पवित्र क्षत्रियोके रुधिरको कलंककी स्याहीसे अनुलिप्त किया, भगवानदास बादशाह अकबरके परम मित्र तथा प्रियपात्र थे। नीतिविशारद अकबरने सिंहासनपर बैठकर इस बातको

---

(१) राजपूतोके इतिहासमें लिखा है कि आसकर्ण पिताको मारकर अपने पापको नाश करनेके लिये तीर्थोको गये, और जब वहासे लौटे तो यवन सम्राट् (हुमायू वा बाबर) ने इनको राजाकी उपाधिमें नरवरका राज्य दिया था, नरवरराज्यके वशसे जिस आमेरराजवंशकी उत्पत्ति हुई है वह पाठकोको पहिले ही विदित होचुका है। नरवर वा आमेर इन दोनो राज्योमेसे किसी राज्यके राजाकी अपुत्र अवस्थामे मृत्यु होजाय तो आमेर राज्यकी मृत्यु होनेपर नरवर राजके राजकुमार–और जो नरवरराजकी मृत्यु हो तो आमेरके राजकुमार सिंहासनपर विराजमान होते है, जयपुरके राजा जयसिंहकी मृत्यु अपुत्रावस्थामे ही हुई थी, तब नरवरराजके एक राजकुमारको आमेरके सिंहासनपर बैठाया गया था।

(२) पृथ्वीराज तूंअरवशी नहीं थे चौहानवंशी थे।

भलीभांतिसे जानलिया था कि भारतवर्षमें यवनशासनको दृढ़ और चिरस्थाई करना ही कर्त्तव्य है, इस कारण प्रजाके हृदयमे अधिकार करनेके साथ ही साथ भारतके प्राचीन राजाओंको भी अपने हस्तगत करनेके लिये उनके साथ मित्रता करनी अवश्य है। उसने यह भी समझ लिया था कि एकमात्र तलवारकी सहायतासे ही भारतपर अधिकार रखना दुराशामात्र है । भय, कठोर, शासनदंड, तलवारके वल, और इच्छासे जो सामर्थ्य, प्रभुत्व और प्रवलता प्राप्त कीजाती है वह चिर स्थायी नहीं है,और उसका फल विषमय होता है। परन्तु एक प्रसिद्ध शान्तिसंभोग, दया, और न्यायके विचारसे युक्ति पूर्वक अनेकभाषा भाषी अनेक सम्प्रदायोमे बँधेहुए भारतवासियोके प्रति जो शासन किया जायगा उससे जो फल उत्पन्न होगा वह स्थायी होगा और वही यवन साम्राज्यके पक्षमे मंगलमय होगा।अकवरने यही सब सोच समझकर भगवानदासकी भांति प्रशंशित राजाके साथ मित्रता की थी । टाड् साहवने लिखा है " कि किस उपाय और किस चतुरतासे अकवरने कछवाहोके राजाको अपने हस्तगत किया था, यह मुझे विदित नही, तव ऐसा जाना जाता है कि उन्होने कच्छवपतिको उच्च गौरवकी आकांक्षा वा सम्मानकी लालसासे ही तृप्त किया था " । भगवान्दास वादशाह अकवरके इतने अनुगत होगये थे कि वह अपने महान् पवित्र वंशकी पवित्रताकी रक्षा करना भी भूलगये थे । वह भारतके राजाओमे सवसे पहिले यवनसम्राट्के साथ विवाहिक सम्वन्ध करनेमे कुछ भी लज्जित न हुए । भगवानदासकी कन्याके साथ कुमारसलीमका (जिसने पीछे जहाँगीर नाम धारण किया) विवाह होगया उस विवाहके फलस्वरूपमे अभागे खुसरोका जन्म हुआ था ।

---

(१) मुसलमान इतिहासवेत्ताने लिखा है कि ९९३ हिजरी सन् (१५८६ ई०) मे यह विवाह हुआ था, इस समय आमेरराजके वंशमे स्वय आमेरराज भगवान्दास * उनके दत्तक पुत्र मानसिंह और उनके पोते यह तीनोजने सम्राट्की सेनामे अधिक सम्मान प्राप्त थे, विशेष करके मानसिंहने इस समय सवसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जव वादशाहके भाई विद्रोही होगये, उस समय मानसिंहने उनके उस विद्रोहको शान्त करादिया, औरोंकी अपेक्षा राजा भगवानदास + जिस समय सम्राट्वंशीय सेनानीके आधीनमें कश्मीरके युद्धमे नियुक्त थे उस समय मानसिंहने ...वरके कठिन अफगानोंको दमन किया और उनके पुत्र कावुलके राजप्रतिनिधिके पदपर नियत हुए। फरिस्ताके इतिहासमे इसका वर्णन भलीभाँतिसे लिखा है [जिल्द २]

* यहा सव जगह भगवानदासका नाम गलत लिखा गया है और मानसिंह भी उसका दत्तक नहीं था और न भगवान्दासने शाहजादे सलीमको अपनी वेटी दी थी । टाड साहवको सही इतिहास नहीं मिला जिससे ऐसी गलती हुई है असल वात यह है कि राजा भारमल्लने पहिले अकवरसे अपनी वेटीका विवाह किया । फिर उसके वेटे भगवन्तदासने शाहजादे सलीमको अपनी वेटी दी । मानसिंह भगवन्तदासका वेटा था, भगवन्तदासका भाई भगवानदास था वह आमेरका राजा नहीं था, अकवरने उसको वाका कछवाहोकी पदवी दी थी उसकी औलादमे वाकावत कछवाहे ...राणके राजा हैं ।

\+ यह भी गलत है भगवानदास नहीं भगवन्तदास है क्योंकि मानसिंह जगतसिंहका वेटा नहीं राजा भगवन्तदासका वेटा था और जगतसिंह तो मानसिंहका वेटा था । माधोसिंह मानसिंहका भाई था, सूरजसिंह नहीं सूरसिंह भी राजा भगवन्तसिंहका वेटा और मानसिंहका भाई था,

मानसिहके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है कि भगवानदासके भतीजे उत्तराधिकारी मानसिह अकबरकी सभामे उज्वल मणिस्वरूप थे । सम्राट्के सहकारी होकर उन्होंने बहुतसे कठिन २ कार्योंका भार लिया था, तथा खुतनसे समुद्रतकके समस्त देशोंको अपनी ही तलवारके बलसे यवनराज्यके अधिकारमे किया था । मानसिहने उड़ीसोंको अपने अधिकारमे कर तथा आसामको जीत वहाँके राजाको यवनसम्राट्के अधीन किया था, इनके बाहुबलसे भयभीतहो काबुलने भी आधीनता स्वीकार की थी वह क्रमानुसार बंगाल, बिहार, दक्षिण और काबुलके शासनकर्ता हुए । सम्राट् अकबरने राजपूत राजाओंको सिहासनके साथ सम्बन्धमे बांधकर जिस बलके बढ़ानेकी चेष्टा की थी मानसिहने अपने व्यवहारसे उसे प्रमाणित करदिया, वह निर्विघ्नताका देनेवाला नही है उस सम्बन्धसे ही साम्राज्यके ऊपर उन राजपूतोंकी अत्यन्त प्रभुता चलतीहुई दिखाई देती थी और उसी कारणसे सम्राट्के उद्देश-साधनमे नित्य उपद्रव होते रहते थे । राजा मानसिह उस प्रभुतामे इतने प्रबल होगये थे, अधिक क्या कहे, सम्राट् अकबर अपनी प्रबल सामर्थ्य और प्रतिपत्तिके समयमे भी उस बेगका ह्रास करनेके लिये–पाशविक इच्छाचारी राजाओंने सचर और अचरके ऊपर जिसका प्रयोग किया था, उसी–विष प्रयोग करनेमे सन्नद्ध हुए, यह तो पहिले ही कह आये है कि सम्राट्ने मानसिह पर विष प्रयोग करके किस प्रकारसे अपना नाश किया था"। "कर्नल टाड्की कथासे जाना जाता है कि मानसिहकी उस प्रबल प्रभुताको असहनीय जानकर सम्राट् अकबरने अत्यन्त घृणित उपायसे अर्थात् विष प्रयोगके द्वारा मानसिहके जीवनको नाश करनेकी चेष्टा की थी, परन्तु अपने दुर्भाग्यसे उस विषको अज्ञानतासे खाकर स्वयं ही प्राण हीन होगया, परन्तु अन्य किसी इतिहासमे हमे इसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नही मिला । सम्राट अकबरकी विषपान करनेसे मृत्यु नही हुई, अन्यान्य इतिहासोसे तो ऐसा ही जाना जाता है" ।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि "सम्राट् अकबरने जिस समय मृत्युकी शय्यापर शयन किया, उस समय अपने भानजे खुशरोको भारतवर्षके सिहासनपर बिठानेके

(१) टाड् साहब लिखते है, कि भगवानदासके और भी तीन भ्राता थे उनमें एकका नाम सूरतसिह, दूसरेका माधोसिह और तीसरेका जगत्सिह था, मानसिह इसी जगत् सिहके पुत्र थे" ।

(२) यवनोंके इतिहास फारिश्ताने कहा है, कि मानसिह जब उड़ीसाको जय करचुके तब सम्राट् अकबरने इनको १२० हाथी उपहारमें दिये थे ।

(३) फारिश्ता इस बातको स्वीकार करता है । उसने लिखा है कि जिस समय मानसिह केवल कुमार उपाधिधारी थे, उस समय बिहार हाजीपुर, और पटनेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त हुए और उसी वर्षमे अर्थात् १५८९ ईस्वीमे उनके बड़े चचा+राजा भगवानदासकी मृत्यु होगई, और उनकी नंदिनीके गर्भसे जहांगीरके औरससे खुसरोका जन्म हुआ, मानसिहने बंगालेको जीतकर प्रतापादित्यको परास्त किया, बंगालेके पाठकोसे यह बात छिपी नहीं है ।

+ बड़े चचा नहीं राजा भगवन्तदास मानके पिता थे ।

हेतु राजा मानसिहने षड्यंत्र जालका विस्तार किया था, यदि इस बातको बादशाह जानजाते तो समस्त राजनैतिक भविष्य उपद्रवोंको शान्त करनेके लिये कुमार सलीमके मस्तक पर राजमुकुट अर्पण करनेके अभिलाषी होते। परन्तु कुछ ही कालके लिये इस समय उक्त षड्यन्त्र स्थित रहा और राजा मानसिह बंगालके शासन पर भेज दिये गये परन्तु उस षड्यन्त्रका विस्तार बढ़ता गया, कुमार खुसरोको चिरकालके लिये कारागारमे रक्खा और इनके सेवकोंकी अत्यन्त शोचनीय रूपसे मृत्यु होगई। राजा मानसिहकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी, इस कारण उन्होने उस समय प्रगटमे उस विद्रोहका बदला नही दिया, परन्तु छिपे २ भागिनेयके पक्षको समर्थन करते रहे, राजा मानसिह बीस हजार राजपूतोंकी सेनाके अधिनायक होनेसे प्रबल बलशाली थे, इस कारण उनको प्रकाशमे दमन करना बादशाहकी सामर्थ्यसे बाहर था, परन्तु देशीय इतिहाससे जाना जाता है कि सम्राट्ने दश करोड़ रुपये रिश्वत देकर मानसिहको अपने हस्तगत करलिया था। मुसलमान इतिहासवेत्ताकी उक्तिके मतसे जाना जाता है कि राजा मानसिहने १०२४ हिजरी (१६१५ ईस्वी) मे बङ्गालमे प्राण त्याग किये, परन्तु इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि उत्तराञ्चलमे खिलजी जातिके साथ युद्ध करनेको गये थे वहां इससे दो वर्ष पहिले मारे गये थे "।

राजा भगवानदासके स्वर्गवासी होनेपर मानसिह जयपुरके सिहासन पर बैठे। मानसिहके शासन समयमे आमेर राज्यने भारतवर्षमें अन्यान्य राज्योंकी अपेक्षा अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की, मानसिंहको सम्राट्के यहां जितना सम्मान मिलता था उतना ही यह अपने बाहुबलसे राज्यपर अधिकार करते जाते थे, और अनेक देशोंसे जो धनरत्न हरण कर २ के लाते थे, उससे उस छोटेसे आमेर राज्यकी क्रमशः धनसम्पत्ति भी बढती जाती थी। दूलेरायके पीछे आमेर राज्य रजवाड़ेमे एक सामान्य राज्य गिना जाता था. परन्तु मानसिहके समय उसी सामान्य राज्यकी सीमा वृद्धिके साथ ही साथ भारतवर्षमे उसकी प्रसिद्धि भी बढ़ गई। कच्छवगण अबतक भारतवर्षमे इतने वीर नही गिने जाते थे, परन्तु राजा भगवानदास और मानसिहके समयसे कच्छवोंके दलने खतनसे समुद्रतक भारतके प्रत्येक प्रान्तमे अपने अतुल पराक्रम और बाहुबलसे अपनी जातिके गौरवको बढा लिया था, राजा मानसिहकी सेना बादशाहकी सेनासे अधिक बलवान् और साहसी तथा वीर गिनी जाती थी। राजा मानसिह भारतवर्षमे यवनराज्यके शासनमे चिरस्मरणीय और प्रशंसनीय अभिनय करनेके पीछे स्वर्गको चलेगये इसके पीछे उनके पुत्र रावभावसिह आमेरके राजसिहासनपर बैठे। स्वयं यवनसम्राट्ने उनका अभिषेक करके उन्हें सम्मान सूचक "पचहजारीमनसब" की उपाधि दी। इतिहाससे यह जानाजाता है, कि यह अत्यन्त निर्बोध और मद्यपानमे

---

(१) राजपूत इतिहासमे जाना जाता है कि मानसिह १६०१ संवत अर्थात १६४२ ईस्वीमे स्वर्ग सिधारे।

(२) भगवानदास।

अधिक रत थे। कई वर्ष राज्य करनेके पीछे उसी अधिक मदिराके पीनेसे सन् १०३० हिजरीमे प्राण त्याग किये। उनके राज्यके समयमे कोई विशेष घटना नही हुई।

भावसिहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र महासिह राजसिहासनपर बैठे, परन्तु यह भी पिताकी भी समान अत्यन्त इन्द्रियलोलुप और मदिरापानमे आसक्त थे, इस कारण बहुत थोड़े दिनोमे ही इस ससारको छोड़गये। राजा मानसिह जैसे महावीर नीतिज्ञ और असीम साहसी थे,उनके पुत्र और पौत्र भी उसी भाँति उनके सम्पूर्ण गुणोके विपरीत हुए, आमेर राज्यकी प्रभुता और प्रताप इसीसे एकवार ही क्षीण होगई इस समय इस सुअवसरमे जोधपुरके अधीश्वरोने सम्राट्के यहाँ अपने प्रताप और प्रभुताईका विस्तार करलिया, इतिहाससे विदित होता है कि महासिहकी मृत्युके पीछे आमेरके सिहासन पर कौन बैठेगा ? यह बड़ाभारी प्रश्न उपस्थित था। विख्यात राजपूत—नन्दिनी जोधाबाईके साथ जहाँगीरका विवाह हुआ था उसे हमारे पाठक यथास्थान पढ़चुके होगे, उस विख्यात जोधाबाईके अनुरोधसे सम्राट् जहाँगीरने जगत्सिहके पोते जयसिहको आमेरका सिहासन देदिया। राजपूतोके इतिहास लेखकने कहा है कि इससे सम्राट्की प्रियतमा रानी नूरजहाँ अत्यन्त सुंतुष्ट हुई थी। उक्त देशीय इतिहासवेत्ता लिखगयेहै कि आमेरका सिहासन किसको दिया जाय रनिवासमे जोधाबाई बादशाहके साथ इसका निश्चय करले, जयसिह उस समय अत.पुरके नीचे थे। बादशाहने उस समय अन्तःपुरके बारामदेसे निम्नस्थ जयसिहको आमेरका राजा स्वीकार कर अभिवादन पूर्वक कहा—कि "जोधाबाईको सलाम करिये, यही आपके राजपदप्राप्तिका मूल है"। परन्तु रजवाड़ेकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार राजपूत राजा कभी किसी राजपूत कुमारीको सलाम नहीं कर सकते, इस कारण बादशाहकी आज्ञा होने पर भी जयसिह उस रीतिका तिरस्कार न करसके और बोले, "कि मै आपके रनिवासकी अन्यस्त्रियोको सलाम कर सकता हू परन्तु जोधाबाईको किसी भाँति भी सलाम नही करसकता"। परन्तु जोधाबाईने इससे अपना कुछ भी अपमान न समझा वरन मदमुसकानसे कहा "इससे कुछ हानि नहीं है, मैंने आपको आमेरका राज्य दिया"।

राजा मानसिहके पीछे दो अयोग्य उत्तराधिकारियोसे कच्छवजातिके गौरवकी कांति अत्यन्त ही हीन—प्रभा होगई थी, राजा जयसिहने आमेरके सिहानसनेपर बैठकर अपने बुद्धिबल, नीतिबल और बाहुबलसे उस कलकको दूर करके कई वर्षमे आमेर राज्यके लुप्त हुए गौरवको फिरि प्रकाशमान कर दिया। जयसिह मिर्जाराजाके नामसे विख्यात थे, मानसिहने जिस प्रकार अकबरके शासन समयमे राज्यका विस्तार तथा सामर्थ्य और सम्मानको बढाया था, और बहुतसे युद्धोमे जिस भाँतिसे अपनी प्रबल सामर्थ्य और बाहुबलका परिचय देकर अक्षयकीर्ति प्राप्त की थी मिर्जा राजा जयसिहने भी उसी प्रकार दुर्दान्त औरगजेबके शासन समयसे

---

(१) महासिंह भावसिंह बेटे नहीं थे मानसिंहके कुंवर जगत्सिंहके बेटे थे।

यवन साम्राज्यके बहुतसे उपकार किये। औरंगजेब जिन संग्रामोमे नियुक्त थे, प्राय: जयसिहने भी उन्ही युद्धोमे लिप्त होकर जयलक्ष्मीको आलिगन किया। औरंगजेबने इनकी इस वीरतासे संतुष्ट होकर उन्हे छः हजारीमनसब पुरस्कारमे दिया। भारतवर्षके इतिहासमे पाठकोने औरंगजेबके शासनकालीन इतिहासमे इन्ही जयसिहकी वीरताकी कहानी भलीभाँतिसे पढ़ी होगी। जो असीम साहसी महावीर शिवाजी महाराष्ट्रदेशके आदि नेता थे, जिन शिवाजीके नामसे सम्राट्की सेना कंपायमान होती थी, जिन शिवाजीके साथ युद्ध करके वादशाहकी सेना वारम्वार परास्त हुई थी, उन शिवाजीको यही आमेरपति महाराज जयसिह वन्दी करके दिल्लीके वादशाह औरंगजेबके यहां ले आये थे। जयसिहके शिवाजीको वंदी करके लानेका वर्णन भारतके इतिहासमे भलीभांतिसे लिखा हुआ है, इस कारण हमने उस विषयको यहां लिखना आवश्यक न समझा। यद्यपि राजा जयसिंहने विजातीय विधर्मी औरंगजेबकी आज्ञासे स्वदेशीय महावीर शिवाजीको वंदी किया था तथापि उन्होने राजपूत वीरोकी समान शिवाजीके सम्मुख यह शपथ की थी कि वादशाह आपका एक बाल भी स्पर्श नही कर सकैगा, इसका साक्षी मै हू। शिवाजीने इस राजपूतकी प्रतिज्ञापर ही दृढ़ विश्वास करके अपनेको वंदी करा दिया था। परन्तु शिवाजीके आते ही औरगजेब अत्याचार करके इनके जीवनके नाशकी चेष्टा करने लगा, तब राजपूत राजा जयसिहने वादशाहका कुछ भी भय न करके अपनी शपथको पालन करनेके लिये शिवाजीको दिल्लीसे भगा देनेमे विशेष सहायता कर राजपूत नामके गौरवकी रक्षा की। इसी कारणसे वादशाह जयसिहपर अप्रसन्न रहता था, यह हमारे पाठकोसे छिपा नही है। दिल्लीके सिहासन लेनेके समय राजकुमारोमे महा विवाद उपस्थित हुआ, मिर्जा राजा जयसिहने पहिले तो सुलतान दाराकी ओरका पक्ष लिया और फिर उसके साथ विश्वासघात किया, इससे दाराके सिहासन प्राप्तिकी आशा एकवार ही जाती रही। जयसिह वारम्वार नीतिज्ञताके बलसे कईएक कार्योमे प्रधानता प्राप्त करके अत्यन्त गर्वित होगये थे, और इसी कारणसे नरराक्षस औरंगजेबने उनका अनिष्ट करनेके लिये प्रतिज्ञा की थी। देशीय इतिहासवेत्ता लिखगये है कि मिर्जा राजा जयसिहके आधीनमे वाईस हजार अश्वारोही सेना थी, और वाईसजने प्रथम श्रेणीके सम्भ्रान्त करदेनेवाले देशी जागीरदार भी उनके आधीनकी सेनामे नियत थे। जयसिहने उन महावीरोसे युक्त हो राजदरवारमे वैठकर दो हाथोमे दो गिलास लेकर एकको दिल्ली और दूसरेको सितारा कहकर एकको तो वडे वेगसे पृथ्वीमें गिरा दिया और दूसरेको चूर्ण २ करके कहा, सितारेके पतन होनेसे दिल्लीका भाग्य मेरे दहिने हाथमे रहा, मैने विचारा है कि इसी भांति सरलतासे दिल्लीके भाग्यको पतन कर सकता हूँ"। पाठकगण इस उक्तिमे सरलतासे जान सकेंगे मिरजा राजा जयसिह किस प्रकारके दुर्दमनीय क्षत्रियतेजसे प्रकाशमान थे, उनके द्वारा ही सतारापति शिवाजीका पतन हुआ, और यदि वह विचारते तो औरंगजेबका भी पतन करसकते थे, महावीर और प्रवल प्रभुता युक्त मनुष्यके अतिरिक्त और कौन ऐसी स्पर्द्धा करसकता है परन्तु यह स्पर्द्धा ही उनका

कालस्वरूप हुई, क्रम २ से बादशाह औरंगजेवके कानोतक भी यह वात पहुच गई कि राजा जयसिह इस प्रकारसे सवके सामने कहा करता है, यद्यपि औरंगजेव प्रवल पराक्रमी वादशाह था तथापि वह जयासिहके अनिष्ट साधनमे प्रत्यक्ष रूपसे कोई उपाय करनेका साहस न कर सका। दुराचारी औरंगजेव अपने शासन समयमे केवल तलवार और विपकी सहायतासे भारतके प्रधान २ राजपूत वीरोके प्राण नाश करके निष्कंटक हुआ था, जिस उपायसे उसने जशवन्तसिहके जीवनका नाश किया था, उसी घृणित उपाय से उसने जयसिंहको भी इस संसारसे विदा दी, उसने अन्य कोई उपाय न देखकर अंतमे राजा जयसिंहके कुटुम्वमे अपना षड्यंत्र चलाया, राजपूतोकी रीतिके अनुसार वड़े राजकुमारको ही पिताका सिहासन प्राप्त होताहै, छोटेको कदापि सिहासनकी प्राप्ति नही होसकती, परन्तु दुराचारी औरंगज़ेवने जयसिहके छोटे पुत्र कीरतसिहको अनेक भाँतिके लोभ दिखाकर अपने वशमे करके कहा कि "यदि आप अपने पिता जयसिहको मारडाले तो मै राजपूतोकी रीतिके मस्तक पर लात मारकर आपके शिरपर आमेरका राजमुकुट अर्पण करूँगा, आपके वड़े भाई रामसिह किसी प्रकार भी राजसिहासनपर अपना अधिकार नही करसकते"। अभागे निर्वोध कीरतसिहने पापात्मा औरंगजेवके षड्-यंत्रमे फँसकर उसके मनोर्थको पूर्ण करनेमे कुछ भी विलम्व न किया। राजपूत कुळांगार कीरतसिहने अफीमके साथ विप मिलाकर अपने जन्मदाता जयसिहको पिलाकर उन्हे मारडाला। जयसिहने उस कुलकलंकी पुत्रके हाथसे विप पानकर प्राण त्याग दिये। पितृहन्ता कीरत सिह अपने महापापके पुरस्कारस्वरूप राजतिलक प्राप्तिके लिये अंतमे नरपिशाच औरंगजेवके सम्मुख गया, वादशाहने उसका मनोरथ पूर्ण न करके केवल कामा नामक एक देश उसे जागीरमे दे दिया।

महावीर जयसिहके प्राण त्याग करने पर उनके वड़े पुत्र रामसिह आमेरके सिहासनपर वैठे। जयसिहको छः हजारी मनसव प्राप्त हुआ था, परन्तु रामसिह "चारहजारी मनसव" प्राप्त कर आसामके निवासियोके साथ युद्ध करनेको गये। संवत् १७४६ मे रामसिहकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र विशनसिह आमेरके राजपदपर स्थित हुए, इस समय पुनर्वार आमेरका पूर्व गौरव दिन२ क्षीण होता आया था, अव वादशाहके यहाँ आमेर राजकी उस प्रकारकी प्रभुता और सम्मान नही था। इस कारण विशनसिहको "तीनहजारीमनसव" मिला। परन्तु उन्होने वहुत दिनोतक राज्यसुख नही भोगा। "वे संवत् १७५६ मे वहादुरशाहके साथ काबुलको गये थे वहीं उनकी मृत्यु हुई"।

द्वितीय अध्याय २.



प्राचीन और मध्य समयके क्षत्रिय राजगण-पश्चिमी और प्राच्य जगत्मे भावी संमिलन, हिन्दू जातिमें भविष्य आलेख्य-सवाइ जयसिंहका राज्याभिषेक-आज़िमशाहके साथ उनका योगदान-सम्राट्का आमेर राज्यपर खालसा करना-जयसिंहका बादशाहकी सेनाको जयपुरसे भगाना-उनका स्वभाव और चरित्र-उनकी ज्योतिष विद्याकी अभिज्ञता-दिल्लीका तख्त पाकर गोलयोगके समयतक उनका आचरण-बहुत विवाहोंके विषमयफलकी एक प्रमाण सूचक घटना-जयसिंहकी गुणावली-जयसिंहके अश्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा-उनके संग्रह किये और लिखेहुए दुष्प्राप्य, और मूल्यवान् बहुतसे ऐतिहासिक और पौराणिक तथा वैज्ञानिकग्रन्थ-उनकी मृत्यु।

जिसने इस विशाल इतिहासरूपी समुद्रके भीतर प्रवेश किया है, उसके नेत्रोके सम्मुख एक विशेष चित्ताकर्षक दृश्य आता है वीरमाता भारतभूमिकी गोदमे सूर्य और चंद्रवंशी क्षत्रिय जाति ही वीरनेता रूपसे चिरस्मरणीय अभिनय करती आई है, रामायण और महाभारत इत्यादि इतिहास-मूलक महा काव्योमे हम उसी चंद्र और सूर्यवंशी वीरनेताओंके अतुल बल विक्रम, अमित साहस और प्रबल प्रतापके वर्णन है उनकी अनुपम और अक्षय कीर्ति अद्यावधि स्थिर है। उन्हींके वंशधरोका वर्णन जो इस इतिहासके पाठकोने पढ़ा है क्या उससे यह प्रगट नही होता कि वे अपने ही पूर्व्व पुरुषाओके समान यश भाजन होनेके योग्य है, यदि वे भारतकी स्वाधीन अवस्थाके समय अथवा वालमीक एवं व्यासजीके समयमे जन्मलेते तो वे केवल अंग्रेजोद्वारा लिखित रजवाड़ेके इतिहासमे ही नही, एक राजपूत जातिमे ही नही, वरन् समस्त संसारमे प्रशंसनीय यश और गौरवके भागी होते। उनके यशरूपी सूर्यकी उज्वल किरणोसे समस्त भूमण्डल जगमगा उठता। महात्मा व्यास और वाल्मीकजीकी अक्षय लेखनी उस अमृतमय काव्यमे उनके गुणोको संग्रह करके भारतके गलेमे अनुपम उपहार दान करती, इसमे किंचित् भी सदेह नहीं। हम महाभारत और रामायणमे जिन क्षत्रिय वीरोके प्रताप, प्रभुत्व, क्षमता, साहस, प्रतिभा, उद्दीपना और शूरवीताके स्रोते वहतेहुए देखते है, जिनका कार्य कलाप वीरविक्रम आजतक इस अन्तःसार शून्य पतित जातिके हृदयमे भी जातीय गर्वदर्पको उदित करदेता है, यदि उन वीरोके साथ मध्य समयके राजपूत वीरोंकी बराबरी करीजाय, तो सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि मध्य समयके एक २ राजपूत वीर उनकी अपेक्षा भी ऊँची प्रशंसाके योग्यपात्र होगये है। मेवाड़, मारवाड़-बीकानेर-जयसलमेर और जयपुरके इतिहासमे कठिन यवनशासनमे भी एक जन राजपूत अपने बाहुबलसे, तलवारके बलसे और राजनीतिके बलसे जिस प्रकार अक्षय कीर्तिको स्थापित कर यवनसम्राट्के ऊपर अपना आधिपत्य स्थापित करगये हैं, उसकी प्रशंसा नहीं की जासकती। यदि वह विचारसे तो भारतवर्षसे यवनराज्यको लोप करसकते थे, परन्तु केवल

विधिकी वासनासे उनके हृदयमें ऐसी प्रेरणा नही हुई। जिन्होने इतिहास पर ध्यान दिया है वही इस वातको मानेंगे कि यवन राज्यके शासनका जो प्रचड प्रताप फैला था, उसका कारण एकमात्र राजपूत राजाओका बाहुबल था। बादशाह अकबरके समयमे देशीय राजा यवन शासनकी स्थापना दृढ़ता और गौरवसाधनके लिये एक दूसरेकी प्रति योगिता करदेनेमे लगे थे, यदि राजनीति चतुर अकबर इस प्रकारसे देशीय राजाओको पद मर्यादा, सम्मान भूवृत्ति राजवश धन पुरस्कार और अंतमे विवाहिक सम्बन्धमें बाँधकर अपना सिंहासनके साथ संयुक्त न करता तो उस समयमे यवनराज्यका वह प्रबल प्रताप और किसी भी उपायसे विस्तार न पासकता। यद्यपि औरंगजेबने अपनी चतुरताके बलसे ही भारतवर्पसे समस्त राज्योंकी अपेक्षा अपना प्रताप और अपनी प्रभुताका विस्तार किया था, परन्तु वह किसी देशीय राजाओंकी सहायता विना नहीं बढ़े। हाँ उसने अपनी कूटराजनीति, चातुरी, छलकपट, भयदंड और विपकी सहायतासे देशीय राजाओको अपने हस्तगत कर तो लिया था परन्तु विचारवान् अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते है कि उसीका फल स्वरूप यवनराज्यका विनाश साधन हुआ। उसका वह महान प्रताप और प्रभुता एक बार ही रसातलमे जाकर चूर्ण २ होगई। यदि औरंगजेब भी अकबरकी समान मित्रता आत्मीयता आर्द्रता और प्रीतिके द्वारा देशीय राजाओको हस्तगत करलेता तो उसकी मृत्युके उपरान्त यवनराज्यकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती। औरंगजेबकी मृत्युके पीछे वह राजपूत राजा भारतवर्पसे यवनराज्यका नामतक लुप्त कर देते परन्तु इतिहासका एक महान कार्य सिद्ध होगा इसी कारण उस समय उनकी उस आशाके विरुद्ध भिन्न २ बाधा इकट्ठी हुई, और उस भावी महान्कार्यके निमित्त ही महाराष्ट्र जातिने अपनी तलवारकी सहायतासे यवनराज्यके विरुद्ध और सम्पूर्ण प्राचीन राजाओके विरुद्ध खड़े होकर उनके ऊँचे मस्तकोको झुका दिया।

वह महान कार्य क्या है? पश्चिमी और पूर्वी परिणय! जगत्के इतिहासकी ओर जिनकी दृष्टि गई है वही अपने ज्ञानके नेत्रोंसे देखते है कि एक अलौकिक ऐतिहासिक घटनाके निमित्त ईश्वरने विचित्र उपाय निर्देश करदिया था, यह भारत-भूमि ही सृष्टिकी बाललीलाका क्षेत्र है, धर्मशिक्षा सभ्यता विज्ञान यह इसी भारतकी सृष्टि है यहींसे जो दूसरे देशोमे विद्या गई है इसी विद्याने उन देशोको उन्नत किया है, इसीने पश्चिमी देशोको ऊंचा बनाकर पूर्वदेशोको पूर्वावस्थामे रक्खा है, ज्ञानी पुरुपोका अनुमान है कि उसी पूर्व प्रकारसे सब शिक्षाएँ ज्ञान, और विज्ञान पश्चिमसे पूर्वमे आकर पुनः पूर्व्वीय देशोके उन्नतिके शिखरपर पहुचावेगी अतएव उन सब महान् ऐतिहासिक घटनाओंके सयोगका भार एक मात्र अंग्रेजो के ही ऊपर रक्खा गया है। अंग्रेज देशियोके ऊपर चाहै कितने अत्याचार क्यो न करै न्यायान्यायके उपायसे चाहै भारतके समस्त धनको हरण करले, गवर्नमेण्ट चाहै कितनी ही स्वेच्छाचारी क्यों न हो परन्तु भारतभूमिमे या भारतकी भिन्न २ जातियोमे जितने पश्चिमके रत्न है वह सभी अंग्रेज जातिकी सहायता कल्याण और अनुग्रहसे प्राप्त हुए है। पश्चिम और प्राच्यके मिलन होनेसे यह प्राचीन आर्यक्षेत्र फिर

एक दिन ऊँचे आसनपर अधिकार करैगा। आर्यवंशधर फिर एक दिन नवीन लीलामे लीन होकर पश्चिमी शिक्षा और विज्ञानके साथ प्रशंसित होकर ज्ञानवृद्धिके संयोगसे इस जगत्मे नवीन अभिनय कर भाग्यके पूर्व दृश्यको दिखावेंगे। वह दृश्य, वह अभिनय, वह पाश्चत्य और प्राच्यके संमिलनसे जब जगत् उन्नतिके ऊँचे मार्गपर जायगा तब आर्यवंशधरोकी कीर्तिका गौरव आकाशमे जाकर कीर्तिमान होगा। आर्यवंशधर फिर नवीन युगमे नवीन जीवनमे, नवीन जातिरूपसे संसारमे अनन्त लीलाओका अभिनय करेंगे, इसको अपने हृदय पर अंकित करनेके लिये विचारवान ही समर्थ है। जिनको भीतरी दृष्टि नही है, वह अंग्रेजी राज्यमे किसी विषयका भी परिवर्तन वा कोई सुलक्षण नही देख सकते, वह केवल भारतके धननाश बलनाश और अंग्रेजोके चरण प्रहारसे ही देशीयोके जीवनका नाश होता हुआ देखते है, परन्तु जिन्होने धीरज धरकर स्थिरभावसे अन्तर्दृष्टिसे देखा है, वही जान सकते है कि उस धननाश-बलनाश और प्राणनाशमे प्रकाण्ड पश्चिमी प्रकाशने आकर, प्रत्येक भारतवासीके नेत्रोके सम्मुख उजेला किया है, अलक्ष्यमे एक महान गन्तव्य मार्गकी रेखा उनके नेत्रोको प्रकाशित किये देती है। जो प्राचीन हिन्दूजाति, जगत्को शिक्षादाता दीक्षागुरुके पदसे रहित होकर आज अन्त.सारशून्य पराये मुखकी अपेक्षा करनेवाली परायी आशावाली दूसरेके चरणोकी सेवा करनेवाली गिनीगई है, उस जातिके मंगल और उन्नतिके लिये ही पश्चिमी और पूर्व शिक्षाका संमिलन हुआ है। हिन्दूधर्म अभेद्य हिमालयकी समान अचल और अटल है, हिन्दूधर्मकी मूलभिति अक्षय पत्थरके अक्षय उपकरणसे बनी हुई है। यद्यपि आजकल चारोओर भयंकर कोलाहल मच रहा है कि "हिन्दूधर्म गया, हिन्दूसमाज गई, अदलबदलके मुखमे समस्त ही हिन्दू समाज गई"। परन्तु विचारवान देखते है कि हिन्दूधर्म जानेवाला नहीं है। केवल उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनसे ही संसारके हितके लिये उस हिन्दूजातिकी सामाजिक रीतिनीति, आचार व्यवहार शिक्षा, सभ्यता, ज्ञान, बुद्धि, शिल्पविज्ञान, प्रतिभा उद्दीपना यह नवीन संस्कार और नवीन भावसे नवीन युगमे उपयुक्तरूपसे भविष्यतमे संगठित होगी, इस समय केवल वही आभासमात्रसे प्रकाश पारही है। उस नवीन युगमे हिन्दूधर्म नही जायगा, हिन्दूजाति नहीं जायगी, हिन्दुओका कुछ भी नही जायगा, सब यहीं रहैगा, नवीन जीवन पाकर नवीन उपकरणसे तथा नवीन रीतिसे समस्त नवीन बलसे बलवान होकर जातिको फिर ऊँचे शिखरपर पहुँचा देगे। अधिकतर धर्मकी-समाजकी-तथा जातिके सम्पूर्ण दृश्य विजातीय, विदृश्य-विपरीत और प्रार्थना रहित बोध होती है, वह सभी उपद्रवोके मुखमे पूर्ण होकर समयके उपयोगी रूपसे प्रयोजनीय रूपमे फिर तयार होगी। समयके प्रखर स्रोतको रोकनेकी किसकी सामर्थ्य है? समस्त बलशाली राजा वा प्रबल सामर्थ्यवाली समाज कभी भी उस स्रोतको निवारण नहीं करसकते। समय आनेपर समाज कार्यको अवश्य ही करैगी। एक देश-एक जातिकी अवस्था, कभी भी चिरकालतक समान नहीं रह सकती, यह बात कौनसे इतिहास लेखकको विदित नहीं है? जो हिन्दूजाति असंख्य उपद्रव और अनेक

भाँतिकी पीड़ाओको सहन करके आजतक भी भारतवर्षमे व्याप्त हो रही है,जो हिन्दूधर्म कठिन यवनसम्राट्के भयंकर आक्रमण और अत्याचारोसे किंचित् भी विचलित न हुआ, वह जाति, धर्म, फिर एकदिन अवश्य ही संसारमे शांतिमंगल और संतोषकी तरंगको प्रवाहित करेगा, इसका अनुमान करना चिन्ताशील मनुष्योंपर ही निर्भर है।

उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलन साधनके लिये ही अंग्रेजोका भारतमे आना हुआ, उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनके लियेही अग्रेजोद्वारा यवनशासनका विनाश साधन हुआ और पूर्व पश्चिमका शुभ परिणय सिद्ध करनेके निमित्त सम्पूर्ण सामर्थ्य और सत्व सम्पन्न होकर भी राजपूत राजा दिल्लीके सिहासनपर वैठनेमे यत्नशील न हुए। उनमे सवाई राजा जैसिंह दूसरे थे उन्हींके सम्बन्धका इतिहास इस अध्यायमे लिखा जायगा, राजपूत राजवंशमे जयपुरपति सवाई जयसिंह सबसे ऊँचे सिंहासन प्राप्तिके योग्यथे, यही महाराज इतिहासके सम्मुख महा सम्मानके पात्र हुए, प्रवादियोके मुखपर सबसे पहिले इन्हींकी प्रशंसा होती थी, जिन्होंने भारतके इतिहासको पढा है वे अवश्य ही इसके पूर्ण आभासको संग्रह करलेंगे। इस विशाल इतिहास कल्पद्रुममे पाठकोने जिन राजाओंके चरित्रोको पढ़ा है उन सभी राजाओंको केवल जातीय क्षत्री धर्मपालन और तलवारके वलसे भारतमे चिरस्थायी कीर्तिको स्थापित करते देखा है परन्तु सवाई महाराज जयसिंहने केवल जातिधर्म और वाहुबलको प्रकाश करके भारतवर्षमे अपने नामको विख्यात नही किया वरन शास्त्र और उसके नामको भी भारतमे अक्षय करके रक्खा। वे ज्योतिष शास्त्रकी उन्नति साधन थे हेतु नवीन संस्कार, नवीन रीति नियत करके भारतवर्षके चार प्रधान २ स्थानोमे मानमंदिर स्थापन कर गये है, वही आजतक उनकी अक्षय कीर्तिकी घोषणा कररहे है। विजित भारतके एकमात्र सवाई जयसिंहसे ही ज्योतिष शास्त्रका उद्धार हुआ है। ज्योतिष शास्त्रके वेत्ता उसे आजतक मुक्तकंठसे स्वीकार करते आये है। रजवाड़ेके राजपूतोकी गौरवकी कला केवल भारतमे ही विख्यात है परन्तु सवाई जयसिंहके यशका सूर्य इतना ऊंचा होगया था, कि उसने दूर २ तक अपनी किरणजालका उज्वल प्रकाश किया था, पश्चिमके ज्योतिर्वेत्तागण मुक्तकंठसे उस सवाई जयसिंहकी प्रशंसा करनेको तैयार है, परन्तु शोकका विषय है कि साधू टाड् उपयुक्त प्रयोजनके होनेपर भी उपकरणावलीके अभावमे उस महापुरुषकी विस्तारित जीवनी इतिहासमे अंकित नही करसके, यदि वह सवाई जयसिंहके जीवनकी प्रधान २ घटनाएँ और उनके द्वारा अनुष्टान किये विषयोका भली भाँतिसे वर्णन करते तो पृथक् एक वड़ा ग्रन्थ वन जाता, तथापि इस इतिहासमे उन महापुरुषकी जीवनी इतनी बडी है कि जिसको कर्नल टाड् साहब नही देसके, विशेष करके सुविधाके अभावमे हम भी यथाशक्ति चेष्टा करके उनकी जीवनीको यहाँ भली भाँतिसे प्रकाशित नही करसके इससे हमको अत्यन्त दुःख है।

भूमिका समाप्त।

साधू टाड् महोदय लिखते है कि "पहिले जयसिंह जिस भाँति मिर्जाराजा नामसे विदित थे, दूसरे जयसिंह उसी प्रकार सवाई नामसे विदित थे और संवत्१७५५

सन् १६९९ ई० मे औरंगजेबके शासनके ४४ वर्ष बीतने पर अर्थात् उसकी मृत्युके छः वर्ष पहिले राजसिहासनको प्राप्त हुए, उन्होने दक्षिणके युद्धमे अपने वाहुवलका विशेष परिचय दिया था, और औरंगजेबकी मृत्युके पहिले जिस समय सिहासन पानेको सम्राट् कुमारोमे युद्धकी आग भड़क उठी थी, उस समय उन्होने औरंगजेवके उत्तराधिकारी रूपसे विख्यात आजिमशाहके पुत्र कुमार वेदारवख्तका पक्ष लिया था और उसी कुमारकी सहायताके लिये वे धौलपुरके युद्धमे लिप्त हुए थे । दु खका विपय है कि उस संग्राममे वेदारवख्त मारा गया, शाहआलम–वहादुरशाह–दिल्लीके तख्तपर वैठा । तव आमेरका राज्य खालसा करलिया गया क्योकि सवाई राजा जयसिह कुमार वेदारवख्तका पक्ष अवलम्बन करके शाहआलमके विपक्षमे थे सम्राट् शाहआलमकी तरफसे एक व्यक्ति विशेष आमेर राज्यका शासनकर्ता नियुक्त होकर भेजदिया गया । परन्तु वीरश्रेष्ठ जयसिहने वादशाहका यह अन्याय देख सिहकी समान क्रोधित हो गर्जन करतेहुए कछवाहोकी समस्त सेनाको सजा उन्होने नगी तलवारे हाथमे लेकर अपने पैतृक राज्यमेसे सम्राट्की समस्त सेनाको भगाकर अपने महान् वाहुवलका परिचय दिया" । उसी समयसे जयसिहके हृदयपर यवनसम्राट्के वंशकी ओर विजातीय क्रोध उपस्थित हुआ और उन्होने यवनराज्यका नाश करनेके लिये मारवाडके अधीश्वर महाराज अजितसिहके साथ मित्रता करके सधि करली ।

कर्नल टाड् साहव लिखते है, कि "यह विख्यात राजपूत जयसिह चौवालीस वर्ष-तक आमेरके सिहासनपर स्थित होकर जवतव भयकर युद्धोमे लिप्त रहे । उन सव वातोका फिर फिर वर्णन करना नीरस होगा । वह मेवाड़ और वूँदीराजके प्रवल शत्रु थे उसी मेवाड़ और वूँदीराजके वंशधरोके इतिहासके साथ उनका वही वीर अभिनय जडित किया गया है, इस कारण उसका परिचय पाठकोको होही जायगा। जिस समय भारतमे दीर्घकालतक अराजकता नृत्य कररही थी उसी समयमे तैमूरके वंशधरोका सिहासन शीघ्रतासे छिन्नभिन्न होकर पृथ्वीमे घुसनेका उपाय कररहा था । यद्यपि महाराज जयसिह उस समय प्रत्येक युद्ध और विपत्तिमे पडेहुए थे, परन्तु वीर स्वरूपसे उनका यश कभी अक्षय नही होसका । वरन राजपूत वीरोका साहस जैसा जलती हुई अग्निकी समान होता है उनका साहस वैसा नही था, परन्तु राज्यशासन और राज्यससारमे, और षड्यन्त्रजालके विस्तारमे उनकी विशेप शक्ति थी" । अत्यन्त दु खका विषय है कि हम साधु टाड् साहवकी शेप उक्तियोके समर्थन करनेमे समर्थ नही होसकते । इतिहासवेत्ता टाड् इस विस्तारित इतिहासके प्रत्येक स्थानमे सत्य और सम्मानके रक्षा करनेकी विशेप चेष्टा करगये है, उसे हम शिर झुकाकर स्वीकार करते है, वह एक उदार हृदय देवस्वरूप और राजपूत जातिके यथार्थ मित्र थे, इस वातको राजपूत जाति भी स्वीकार करती है परन्तु हम इतना कह सकते है कि वह यद्यपि रजवाडेके भिन्न २ राज्योके इतिहासको समभावसे लिख गये है, परन्तु वह उनमे सवसे अधिक मेवाडके अधीश्वर और मेवाडके निवासियोको अत्यन्त प्रिय जानते थे । मारवाड, वीकानेर, जयसल्मेर जयपुर कोटा, और वूँदी राज्यके अधीश्वर और निवासियोकी अपेक्षा

मेवाड़के अधीश्वर और वहांके निवासियोके ऊपर उनका विशेप स्नेह प्रेम, दया और मित्रता थी। अभीगिनी कृष्णाकुमारीके पिता महाराणा भीमसिंहके साथ उनकी प्रवल मित्रता थी. इसी लिये वह महाराणाके चरित्रोको जिस भावसे वर्णवद्ध करगये है उसमें उनके प्रेमके अनेक परिचय पाये जाते हैं। यदि सवाई जयसिंहके साथ भी उनकी उसी प्रकार दया और मित्रता होती तो वह ऐसा कभी नही लिखसकते थे कि जयसिंहकी शूरवीरता तथा उनका साहस अन्य राजाओसे हीन था। विशेष करके भारतके इतिहासमे और उन्हींके निर्माण किये इतिहासमे सवाई जयसिंहके वलविक्रमको हमने जिस प्रकारसे पढ़ा है, उससे कभी ऐसा सिद्धान्त नही किया जासकता कि सवाई जयसिंह राजनैतिक रंगभूमिमें विभिन्न युद्ध क्षेत्रमे जिस प्रकारका दृश्य दिखागये है, उससे उनकी कीर्ति कलापका स्मरण नही होसकता। यद्यपि महाराज मानसिंहकी समान वह दिग्विजयी और महान वीर नहीं थे, किन्तु वह अपने वरावरके वीरोमे एक अग्रणीय पुरुष गिने गये थे, यह उनके चौवालीस वर्प तक राज्य करनेसे ही विदित है।

टाड् महोदय फिर लिखते है, कि "राजनीति और न्यायके सम्वन्धमे श्रीसवाई जयसिंहकी जीवनी उच्च आसन पाने योग्य है। हम (अंग्रेज) ने प्रायः इन्ही राजपूतानेके राजाओकी कीर्ति और दक्षताके सम्बन्धमे अत्यन्त सामान्य विचार प्रगट किया है, उस सबके प्रकाश होते ही वह भी प्रमाणित होगा। जयसिंहने अपने नामसे जयपुर वा जयनगर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की, वह राजधानी उनके

---

(१) कर्नल टाड् साहब टीकेमे लिखते है " कि उस प्रकार पूर्णालेख्य कवितामे बहुतसे उपकरण आमेरराजके महलमे विराजमान थे, उन सवमे कल्पद्रुम नामका भी एक ग्रन्थ था। उसी ग्रंथमें सवाई जयसिंहके प्रधान २ कार्योका उल्लेख है। " एकसौ नव गुण जयसिंह " नामक ग्रन्थमे कितने ही विवरण सुने है, और वर्णन किये है, सवाई जयसिंहने बरावरके सम्राट्, सम्राट् कुमार और देशीय राजाओके जो अगणित पत्र लिखे थे, इस समय उन सवका अनुवाद करके परिश्रमको सफल विचारा। अंग्रेज वहुत सा परिश्रम करके जिनके चरित्रोके आचार व्यवहारोको इतिहासमें लिख गये हैं उन सबके वदलेमे उन पत्रोको पढनेसे ही उन स्वदेशियोके आचार व्यवहार भलीभाँतिसे जाने जा सकते है। उनके समयके भारतवर्पके इतिहासमे एक प्रधान अर्थात् सम्राट् फर्रुखसियरके सिंहासनच्युतिके सम्बन्धमे सवाई जयसिंहके हाथका एक पत्र लिखा हुआ हमारे हाथ आगया है। इसमे उन्होने राणाको लिखा है "।

कर्नल टाड्ने आशा की थी कि अवश्य ही कोई न कोई अंग्रेज रेसिडेण्ट जयपुर राज्यके सविस्तार इतिहासको प्रणयन करेगा, परन्तु दुःखका विषय है कि उनकी वह आशा आजतक पूर्ण न हुई। जयपुर राजके महान् ऊंचे पदपर बहुत दिनोंसे अनेक सम्भ्रान्त शिक्षित वंगाली नियुक्त रहे। वे चाहते तो अनायास ही इस इतिहासको अपनी मातृभाषा वा अंग्रेजी भापामे लिखकर इसका प्रचार करके प्राचीन इतिहासके तत्वका उद्धार करसकते थे, परन्तु दुःखका विषय है कि विशेप सुविधा होनेपर भी वह उस विपयमें आजतक हस्ताक्षेप नहीं करसके। जयपुरके वर्तमान शिक्षित महाराज यदि ऐसा विचार करते तो वह सरलतासे अपने पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिसे भरे हुए उक्त इतिहास और पत्रोको प्रकाश कर सकते थे?

समयमे शिल्प और विज्ञानकी अधिष्ठान क्षेत्र होगई थी, और उसी नवीन नगरीने अत्यन्त प्राचीन आमेर राजधानीके प्रकाशको लुप्त करदिया। दोनो राजधानी एक दूसरीसे तीन कोश दूरी पर थीं, इसी कारणसे उस आमेर नगरीके साथ दुर्ग श्रेणीके योगसे नवीन राजधानीका परस्पर मेल होगया। समस्त भारतवर्षमे एकमात्र जयपुरकी राजधानी ही नियमितरूपसे बनी थी, और सभी राजमार्ग नियम सहित बनाये गये थे। सुना जाता है कि विद्याधर नामवाले एक बंगालीने कल्पना करके राजधानी जयपुरके शहरको वनवाया था। सवाई जयसिह जो समस्त ज्योतिर्विद्या सम्बन्धी और इतिहास सम्बन्धी आविष्कार और श्रेष्ठता साधन करगये है उन सबमे उक्त विद्याधर उनका अत्यन्त प्रसिद्ध सहयोगी था, प्राय: सभी राजपूत ज्योतिष विद्या और सामुद्रिक विद्याको भली भाँतिसे जानते थे। परन्तु जयसिहने विज्ञानके भीतर प्रवेश किया था। वह केवल वैज्ञानिक रीतिकी शिक्षा करके ही शान्त न हुए, वरन स्वय एक यथार्थ कार्यसाधक वैज्ञानिक थे। वह ज्योतिष विद्यामे इतने वढ़गये थे कि दिल्लीके वादशाह मुहम्मदशाहने इन्हीके हाथमे पंचांगके संस्कारका भार अर्पण किया था, यह ग्रह नक्षत्र, गति विधि चंद्रमा सूर्यका उदय अस्त ग्रहण इत्यादि भली भाँतिसे देख लेते थे। उन्होने निरीक्षण तथा आविष्कारके लिये अपने ज्ञानवलसे वहुतसे यंत्रोकी रचना की थी, और दिल्ली जयपुर उज्जैन, वारानसी मथुरा आदि शहरोमे वहुत करके वड़े २ मानमंदिर वनाकर उन समस्त यंत्रोको वहाँ स्थापित करवाया था तथा उन्ही सव यंत्रोके द्वारा गणना करनेमे वे इतने पडितहोगये थे कि वड़े २ ज्योतिषी भी आश्चर्यमे होजाते थे। महाराज जयसिहने उक्त समस्त यत्रोका आविष्कार करनेके पहिले, समरकन्दके राजज्योतिषी उलगवेगके वनायेहुए यत्रका व्यवहार किया था, परन्तु उन समस्त यत्रोसे उनको ईप्सित् फल प्राप्त न हुआ। क्रमानुसार सातवर्ष तक भिन्न २ मान मंदिरोमे परीक्षा करनेके पीछे उन्होने स्वय नवीन यंत्र वनाये थे। जिस समय सवाई जयसिह इस वैज्ञानिक आलोचनामे प्रवृत्त थे, उस समय पुर्तगालसे इमानुएल नामके एक पादरी भारतवर्षमे आये थे, जयसिहने उनसे पुर्तगालराज्यमे ज्योतिष विद्याकी उन्नतिके विषयमे जानना चहा, और अपने कितने ही विश्वासी सेवकोको इसी लिये उस पादरीके साथ पुर्तगालके अधीश्वर इमानुएलकी राजसभामे भेजा था, । पुर्तगालके राजा ईमानुयेलने जयपुरपति जयसिहके पास जेवियर डिसिलवा नामके एक प्रवीन ज्योतिषीको भेजदिया। जेवियर डिसिलवाने जयपुरमे आकर, पुर्तगालके डेलाहायर वनायेके हुए समस्त यंत्र जयसिहको देदिये, महाराज जयसिहने उन

---

(१) काशीके मानमंदिरको हमारे अनेक पाठकोंने अवश्य ही दर्शन किया होगा, आजतक भी वह समस्त यंत्र समस्त उपकरण सहित अव्यवहार अवस्थासे उस मानमंदिरमें पतित, तथा दीवारों पर लगे हुए हैं। उन सबको देखकर वहुतसे पश्चिमी ज्योतिषियोंने जयसिंहकी वड़ी प्रशंसा की है।

(२) टाड् साहब अपने टीकेमें लिखते हैं कि "पुर्तगालकी राजधानीमें लिस्वनके राजमहलमें इस सम्बन्धके कोई कागजपत्र पाये गये या नहीं इसका विचार करना कर्तव्य है।

यन्त्रोकी परीक्षासे उनके सम्बन्धमे निम्नलिखित मन्तव्योको वर्णवद्ध किया, "यथार्थ परीक्षा करनेके पीछे इन सब यंत्रोमे नियुक्त कीहुई गणना और सिद्धान्तोको देखकर तथा उनकी वरावरी और समालोचनासे यही प्रकाशित होता है कि वह आधी डिग्री कम है, इस कारण वह अत्यन्त भ्रामक है, यद्यपि अन्यान्य ग्रहोके स्थानके सम्बन्धमें उतना भ्रम नही है, परन्तु मै देखता हूँ कि इस मतमे सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणके सम्बन्धकी गणना ठीक नही हुई, ६मिनटका भेद पड़ता है" । "महाराज जयसिह तुर्की ज्योतिषीके पीतलके वनायेहुए यन्त्र और तालिकाके सम्बन्धमे भी इसी प्रकारका मत प्रकाश करगये है, तथा उन्होने अनुमान किया कि था हिपारकस और पोटेलमी भी ऐसे ही यन्त्र बनाया करते थे, और उन्होने कहा कि डेलाहायरकी गणना केवल नीचेवाली श्रेणीके ग्रहोके लिये अविशुद्ध हुई है । राजपूत राजा अवश्य ही उस अपने बनाये यन्त्रके लिये अपनेको गौरववान् जाननेके अधिकारी है । हमारे स्वजातीय ज्योतिषी डाक्टर डवलिड हन्टर सवाई जयसिहकी गणना और यन्त्रादिकी सत्यताके सम्बन्धमे विशेष परीक्षा करके प्रसन्न हुए थे "।

"ज्योतिष शास्त्रके सम्बन्धमे वहुतसी चिन्ता वहुतसी गणना और वहुतसे श्रम, तथा मस्तिष्कश्रमके फलस्वरूप सवाई महाराज जयसिहने कितने ही नियमोकी रीति और संकेतकी तालिका वनाई थी उसी रीति और सिद्धान्तोके अनुसार इस समय ग्रह नक्षत्रोकी गतिका संचार, ग्रहणादिकी गणना और पंचांग तैयार किये गए है "।

कर्नल टाड् साहव सवाई जयसिहके ज्योतिष शास्त्रकी दक्षताके सम्बन्धमे जिन मन्तव्योको प्रकाश करगये है ? उनसे क्या प्रगट होता है ? यह तो अवश्य ही संभव है कि जयसिह भारतवर्षमे ज्योतिषशास्त्रका पुनरुद्धारकर इसको नवीन जीवन देकर एक वड़ाभारी कार्य साधन करगये है, वह ज्योतिष विद्यामे वड़े भारी पण्डित थे, यही नही उनका प्रकाश विलक्षण था और उसी प्रकाशके वलसे वह इस सम्बन्धमे सत्यका आविष्कार करगये है, एकमात्र उस प्रकाशके वलसे केवल भारतवर्षमे ही नही वरन् विलायतमे भी उनका सम्मान हुआ था । टाड् साहवकी उक्त उक्ति उसे भी प्रमाणित करती है । उन्होने जव विलायतमे वड़े २ ज्योतिषियोंके श्रम दिखाये थे, तव यह तो वड़ी सरलतासे जाना जाता है कि वह ज्योतिषशास्त्रमे वहुत वढ़े चढ़े थे । और वह केवल प्राचीन ज्योतिषशास्त्रके ग्रंथोको संग्रह करके ही शान्त न हुए, वरन् भारतवर्षके वाहिरी देशोमे मुसलमानोमे तथा ईसाइयोमे जो ग्रंथ प्रचलित थे, उन सभीको वहुतसा धन खर्च करके वड़ी युक्तिसे संग्रह किया था, उन्होने रेखागणितकी त्रिकोणमिति और नेपायरकी वनाई गणितकी पुस्तकोका संस्कृतमे अनुवाद किया था। इन्होने विलायतसे भी वैज्ञानिक यंत्र और ग्रंथोका संग्रह किया था, सारांश यह है कि ज्योतिषशास्त्रके ग्रंथोको केवल धन व्यय करके ही नही पाया था, वरन् राजकाजमे रहकर भी एक वड़े भारी कार्यको पालन करके उन्होने दीर्घ कालतक अपनी मस्तिष्क शक्तिको व्यय किया था । इस ज्योतिषशास्त्रके उन्नति करनेसे वह कीर्तिस्वरूप मुकुटकी उज्ज्वलमणि होगये है ।

प्राचीन तथा आजकलके सभी विज्ञानी नास्तिक कहे जाते है। वह अपने विज्ञान के बलसे ही इस अनन्त संसारके सुन्दर और प्राकृत पदार्थोंको सग्रह करके, तथा दृश्यावलीकी सृष्टि, प्रक्रिया–रीति कार्यकारण अवान्तर गुण इत्यादिकी गवेषणा करके संसारमे नये नये सत्य तत्त्वोका प्रचार करनेसे सर्वशक्तिमान सर्वश्रेष्ठ परमेश्वरके अस्तित्वको एकवार ही लोप करनेमे यत्नवान् हुए है। आकाशमे अनेक रंगवाला रामधनुष निकला करता है, उसके मानस मोहनी दृश्य देखते ही मन प्रफुल्लित होजाता है, और उसी महान् विश्व मोहन दृश्यसे भावुक भक्तकी भक्ति उस महापुरुपकी ओर दौड़ती है, परन्तु विज्ञानके जाननेवाले नाक चढ़ाकर कहते है, "कि कुछ नही है, कुछ नही है! सूर्यकी किरण, और जलकी वर्षा इन दोनोका मिलन होनेसे रामधनुपका जन्म हुआ है, कितने ही रसायनिक पदार्थोके संयोगसे ही ऐसे मनोहर दृश्यकी उत्पत्ति हुई बतलाते है और जगत्गुद्ध मनुष्य कहते है कि यह रामधनुष नही है, वरन इसको रामचक्र कहना चाहिये। इसका आकार धनुपकी समान नही है वरन चक्रकी समान है। यदि हम इसको आधा देखते तो धनु कह सकते थे परन्तु वास्तवमे इसका आकार चक्रकी समान है"। विज्ञानियोको इस युक्तिमे प्रेम नही है, भक्ति नही है, महान् भाव नही है, ईश्वरके साथ कोई सम्वन्ध नही है, केवल एकमात्र रसायनका सम्वन्ध है। भावुक भक्त जिस दृश्यको देखकर अनन्त शक्तिमानकी अनन्त शक्तियोका स्मरण करते है, विज्ञानके जाननेवाले उस दृश्यमे केवल रसायनकी क्रीडा देखते है, इसी कारणसे उन्होने ईश्वरकी उस अनन्त शक्तिको स्वीकार नही किया, पश्चिमी जगत्के टिताल इत्यादि आधुनिक विज्ञानी इस मतमे नास्तिकरूपसे संसारमे प्रसिद्ध है। टिन्तालने विज्ञानकी सहायतासे सम्पूर्ण जगत्के प्रत्येक पदार्थको अलग २ करके एक रसायन पदार्थको पाया है, अणुके ऊपर परमाणु परमाणुतककी विज्ञानके वलसे उन्होने परीक्षा करके कहा है कि "हमने अज्ञेय परमाणुतकको देखा, इसके अतीत यदि कुछ है तो उसको हम नही जानसक्ते। वही अतीत अज्ञेयपदार्थ यदि सृष्टिका मूल हो और यदि इसीको ईश्वरकहते हो तो कहो" यह प्रेमिक भक्तके हृदयकी उक्ति है? अर्थात् नही।

प्राचीन और आधुनिक विज्ञानियोने इस अनन्त विश्वकी अनन्त ग्रह नक्षत्रादिकी गति–क्रिया इत्यादिकी खोजमे नियुक्त होकर कहीं भी उस सर्वशक्तिमानकी शान्तिमय मूर्तिका पता न पाया–परन्तु विज्ञानविशारद सवाई जयसिहने उनकी समान एक ही मार्ग पर चलकर उन सम्पूर्ण ग्रह नक्षत्रोमे पार्थिव पदार्थोंके दृश्यमे क्या देखा? गवेपणामे नियुक्त उनके हृदयका तंत्र किस सुरसे वजउठा है, इस अनन्त विश्वमय पुस्तकके प्रत्येक पन्नेमे उस अनन्त प्रेममयकी शान्ति शाखाका मुखकमल देखकर उनके हृदयने किस तानको लेकर प्रेमभक्तिका गान गाया था? विज्ञानविशारद सवाई जयसिंह अपने वनायेहुए ग्रन्थके मुखवधमे लिखते है कि "जगदीश्वरकी अनन्त महिमाकी जय हो" गाढ़विज्ञानी तत्त्वदर्शियोकी भिन्न २ रूपसे दृष्टि शक्तियुक्त प्रतिभा उन महेश्वरके अनन्त विश्वकी खोजमे अणुमात्र समर्थ होकर मानो उस ऊंची महिमाके कीर्तनमे अपनी

असामर्थ्यता स्वीकार करती है, और इसी प्रकार "उस महेशकी महान् शक्तिकी जय हो" जो सब ज्योतिषी हैं, जो अनन्त सौर जगत् और नक्षत्र जगत्के परिमाण कार्यमे नियुक्त है, उनकी वह गवेषणा वह आलोचना मानो उन महान् शक्तिकी कीर्तिके वर्णनमे अपनी अयोग्यता दिखा रही है और वह ज्योतिषी मानो उसी दृश्यको देखकर मोहित होना स्वीकार करते है। जिन महेश्वरकी अनन्त सामर्थ्य युक्त पुस्तकोके अनन्त आकाशके मध्यमे प्रबल २ ग्रह मंडली केवल कई एक पत्रकी समान स्थित है और प्रभा करनेवाली तारकामंडली भी असीम आकाशके ऑगनमे जिस अनन्त शक्तिमानके संसाररूपी राज्यके धनागारकी छोटी २ मुद्रास्वरूप हैं, उन्हीके पवित्र नामकी जयहो, और हम उन्ही राजराजेश्वरके चरणोमे भक्तिके वश होकर प्रणाम करते है।

भजन पूजन साधन हीन प्रेम भक्तिके आलिंगनसे रहित पश्चिमी प्राचीन और आजकलके विज्ञानी इस अनन्त विश्वकी खोजमे नियुक्त होकर कही भी उस मंडलमय देवादि देवके आविर्भावको न देखसके; किन्तु प्रेमभक्तिकी लीलाक्षेत्र भारतभूमिमे, जगत्के प्रत्येक पदार्थमे, ईश्वरके आस्तित्वको माननेवाले भारतके एकमात्र जयसिंहने उस गवेषणामे नियुक्त होकर भी केवल रसायनकी क्रीडाको न देखा, वरन उन्होने अनन्त शक्तिकी अपार लीलाको देखा, वह पश्चिमी नास्तिक विज्ञानियोके सम्बन्धमे क्या लिख गये है? उन्होने सबसे पहिले असीम साहसके साथ निर्भय हो अपने ग्रंथोमे वर्णन किया है, " कि जगदीश्वरकी सर्व मंगलमय अनन्त शक्तिका पीछा करनेमे असमर्थ होकर ही हिपारकसने (प्राचीन वैज्ञानिक) निर्बोध कृपककी समान विरक्ति उत्पन्न की है, और जगदीश्वरकी महान् सामर्थ्यकी कल्पनाके संबन्धमे, पोटेलमी उलूक स्वरूप है, वह कभी सत्यरूपी सूर्यके समुख नही होसकता, रेखागणित की व्याख्या केवल महान् सृष्टिके असंपूर्ण आलेख्यकी कल्पित रेखामात्र है "। प्राचीन प्रधान २ वैज्ञानिकोके अनीश्वरवादके विरुद्धमे जयसिंह जो यह अव्यर्थ बाण प्रयोग करगये है, क्यो नही उससे उनके साहसज्ञानकी ऊँची प्रशसा की जाय? जयपुरपतिने फिर लिखा है कि " इस अनन्त ज्ञानमयकी इस असीम विश्वसृष्टिके विमुग्धदर्शक सवाई जयसिह है। जिस दिन उनके हृदयमे ज्ञानका संचार हुआ है उसी दिनसे आरंभ करके वह ज्ञान जितने दिनोतक निर्मल होकर बढ़ा था, उतने दिनोतक केवल गणित विज्ञानकी आलोचनामे यह सब प्रकारसे नियुक्त थे, और उनका चित्त उसी कठोर समस्याके पूर्ण करनेमे लग रहा था। महान् विश्वसृष्टाकी सहायतासे उन्होने इस विज्ञानके मूलसूत्र और रीतिको जानलियां "।

---

(१) हमारी सम्पूर्ण इच्छा होने पर भी बहुतसे ग्रंथोको प्राप्त कर तथा अन्य कई एक कारणोसे हम जयसिंहके बनायेहुए वैज्ञानिक ग्रंथ और गणनाकी रीतिको यहां लिखनेमे असमर्थ है, इस कारण हमको महा दु ख है, विलायतके वैज्ञानिक डाक्टर हन्टर एसियाटिकरिसर्चेस, ५ वीं वालूम १०७ पृष्ठमे महाराज जयसिंहके बनाये यत्र, और अवलम्बित गणना प्रणालीके सम्बन्धमें एक प्रबन्ध लिख गये है, अंग्रेजी भाषा जाननेवाले पाठक उसे पढ़कर अपने संदेहोंको दूर कर सकते है, और उनको यह भी विदित होजायगा कि महाराज जयसिंह ज्योतिषशास्त्रके कितने पंडित थे।

सवाई जयसिंह केवल अनेक भाषाओमे लिखे हुए ज्योतिषशास्त्रके सवन्धके तथा गणित संवन्धके ग्रथोको संग्रहकर और उनका अनुवाद संस्कृतमे कर उनको बहुत परिश्रमसे पढ़कर उनकी आलोचनासे महान् पंडित होगये थे और अनेक स्थानोमे मानमन्दिर स्थापनकर बहुतसी खोज करके ज्योतिषके यंत्रोको बनाय गणनाकी रीतिको नियत कर भारतवर्षमे ज्योतिष विद्याकी महान् उन्नति करगये है, इतना ही नही कि वह केवल उन्नति करके ही शान्त हुए हो, वरन् वह विलायतके प्रधान २ ज्योतिषियोको अपने यहां बुलाते और उनका बड़े आदरभावके साथ अधिक सम्मान करते थे। प्रसिद्ध ज्योतिषशास्त्रके वेत्ता बंगालियोको विद्याधरकी समान तथा अन्यान्य ज्योतिषियोको भी अपनी राजधानीमे बुलाते और उनको बडे आदरसे अपने यहां जागीरे देते थे। अब यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि भारतवर्षमे उन्हीके समयसे ज्योतिषविद्याकी अधिक उन्नति हुई और इसका प्रबल विस्तार हुआ है।

कर्नल टाड् साहबने फिर लिखा है, कि "विज्ञान सम्बन्धी उक्त मानमन्दिर बनानेके अतिरिक्त जयसिंहने यात्रियोके निवास करनेके लिये अपने राज्यमे अनेक स्थानोपर बहुतसा धनखर्च करके अनेक धर्मशालाएँ बनवाई है"। हम इस बातको कह सकते है, यद्यपि पूर्वतन देशीय राजा अपने २ राज्यमे अनेक स्थानोपर अतिथि–शाला और धर्मशाला बनाया करते थे, परन्तु सवाई जससिंहने उस रीतिके सम्मानकी रक्षाके लिये धर्मशाला इत्यादि नही बनाये। उनका हृदय उदार था, पराये दु:खको देखकर वे दु:खी होते थे, उन्होंने संसारके हितके लिये इस व्रतका अवलम्बन किया था, उसी पराये दु:खसे दु:खी और हितसाधनके व्रतने ही उनको अनेक धर्मशाला ए इत्यादि बनानेमे वाध्य करादिया था।

कर्नल टाड् साहबने पहिले कहा है कि जयसिंहके साहसमे राजपूत वीरोकी समान ज्वलन्त प्रकाश नही था, और वही टाड् फिर इस स्थानपर लिखते है, "कि जब हम विचार करते है कि जिस समय भारतवर्षसे अविश्रान्त युद्धकी अग्नि प्रज्वलित होरही थी, और सम्राट्की सभामे क्रमानुसार षड्यत्रके जालका विस्तार होरहा था,

---

(१) डाक्टर डवालिड हन्टर जिस समय भारतवर्षमे आये थे, उस समय उन्होंने जयसिंहके बनवाये हुए मानमंदिर तथा यंत्रादिकी परीक्षा करके जयसिंहकी बुद्धिमानीकी विशेष प्रशसाकी थी। वह जिस समय उज्जैनमे गये उस समय एक युवक पंडितके साथ उनकी वातचीत हुई। उस पंडितके पितामह महाराज जयसिंहके परममित्र थे, और उन्हें "ज्योतिषरायकी उपाधि दी गई थी। जयसिंहने उन ज्योतिषरायको पांच हजार रुपये सालकी जागीर भी दी थी। परन्तु दुर्भाग्य का विषय है कि अत्याचारी महाराष्ट्रोके उपद्रवसे वह भूखड एकबार ही विध्वस होगया था। डाक्टर हन्टर उक्त युवकके साथ वार्तालाप करके ज्योतिषशास्त्रमे जो वह महान् पंडित थे इसको भली भांतिसे जानगये थे, और प्रकाशमें भी उनको ज्योतिषका महान् पंडित विख्यात करगये है डाक्टर हन्टरके उज्जैनसे चलेजानेके कुछ काल पीछे अर्थात् सन् १७९३ ईसवीमे उक्त पंडितने प्राण त्याग किये थे।

" उस षड्यंत्रसे यह अपनेको न बचासके, उस भयंकर उपद्रवके वीचमे रहकर भी यह विज्ञानशास्त्रकी ऐसी उन्नति करगये हैं कि जव हम उसकी खोज करते है, कि राष्ट्रविप्लव, साम्राज्यका विध्वंस साधन, और धूम्रकेतुकी समान हठात् महाराष्ट्र जातिके प्रवल उत्थानमे उन्होने भयंकर विपत्तिमें अपनी ही निर्विघ्नतासे रक्षा न की वरन चारोओर अराजकतामे एकमात्र आमेर राजकी समस्त धन सम्पत्ति और उन्नतिमे अधिक रक्षा की थी, तव हम अवश्य ही इस वातको मानते है कि वह एक असाधारण मनुष्य थे। यह वह भली भॉतिसे जान गये थे कि मुगलराज्यका पतन शीघ्र ही होजायगा, यद्यपि उन्होंने उस राज्यके पतनकी सुविधा प्राप्तिमे अपने राज्यकी उन्नति करनेका ध्यान रक्खा था, तथापि उन्होने सम्राट्के साथ विश्वासघात नही किया; कारण कि जिस समय फरुखसियरके प्राणनाश और उनके हाथसे राज्य छीननेका षड्यंत्र होरहा था उस समय कईएक सामान्य राजाओने फर्रुखसियरका साथ दिया था, इनमें महाराज जयसिह भी थे, जिस भॉति तैमूरके अन्यान्य वंशधर असीम साहस और वल विक्रमसे विभूषित थे, फर्रुखसियर भी यदि उन समस्त गुणोमेसे एक कणमात्रके भी अधिकारी होते, तो यह जयसिह इत्यादि अन्यान्य राजा उनके लिये अवश्य ही प्राण तक देदेते " । महात्मा टाड् साहवने यहॉपर सब प्रकारसे सत्यके सम्मानकी रक्षा की है। आमेरपति सवाई जयसिह भी एक असाधारण मनुष्य थे, इसमे किंचित् भी संदेह नही। यद्यपि रजवाड़के इतिहासमे राजाओंके वीचमे हम वहुतसे राजाओको महावलवान् असीमसाहसी, दृढ़प्रतिज्ञ तथा गाढ़नीतिज्ञ देखते है, परन्तु जयसिहकी समान किसीको भी सर्वगुण विभूषितकी उपाधि नही देसकते ।

साधू टाड्साहव फिर लिखते है, कि " मेवाडके महाराणाके वंशधरोके साथ जयसिह जिस समय राजनैतिक और वैवाहिक सम्वन्धमे आवद्ध थे; उक्त राज्यके उस समयके इतिहासमे उनके प्रकाशमे जीवनकी वहुतसी घटनाओका वर्णन भलीभॉतिसे हुआ है, जिस समय सयदके दोनो भ्राताओने उनके स्वामी फर्रुखसियरको मारकर राज्यमे प्रवल 'सामर्थ्य दिखाई थी, उस समय उन्होने अपनी वुद्धिकी चतुरतासे अप्रयोजन दिखाकर अपने शत्रुओके वढानेका आभिलाषा नही की, और महाराज जयसिहभी स्वामी फर्रुखसियरको कायरपुरुषोकी समान देखकर उनके उद्धारमे हतउद्योगहो अपने पिताकी राजधानीमे जाकर परम प्रिय ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी आलोचना मे लिप्त हुए । फर्रुखसियरकी मृत्युके पीछे राज्यमे जो राजनैतिक विप्लव होते रहते थे, तीन वर्ष पीछे सन् १७२१ ईस्वीमें सम्राट् मुहम्मदशाहके द्वारा वह प्रतिद्वन्दी सैयद दोनो भ्राता मारे गये, और वादशाहकी विजय होते ही उन उपद्रवोकी शांति होगई। प्रकाशमे तीन वर्षतक सवाई जयसिह उन राजनैतिक उपद्रवोमे लिप्त न रहकर विश्राम पारहे थे, मुहम्मदशाहके जय प्राप्त करने पर उसने जयसिहको ज्योतिषशास्त्रकी आलोचनाके लिये अपने यहॉ वुलाया, और इनको क्रमानुसार प्रतिनिधिके स्वरूपसे आगरे और मालवेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। इस स्थायी शान्तिके समयमें

जयसिंहने उक्त मानमंदिरोंको बनवाया था, वही भारतवर्षमें उस समयके कृष्णजलद जालसे पूर्ण इतिहासमें उज्वलतासे प्रकाशित होरहे है"।

यद्यपि सवाईसिंहने ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी उन्नतिका व्रत लिया था। परन्तु वह एक दिनको भी स्वजातिके स्वार्थकी रक्षा और आमेरके गौरव वढानेमे हतउद्योग नहीं हुए। उन्होंने सम्राट्के यहां अत्यन्त ऊँचापद पाकर सम्राट्के यहां जो अत्यन्त घृणित जिजियाकर चिरकालसे चला आता था उसको उठादेनेका उद्योग किया, और इसमे उन्होंने सब प्रकारसे सफलता भी प्राप्त की, आमेरराज्यके निकट ही अत्यन्त वलवान् जाटोंकी सम्प्रदाय क्रमानुसार मस्तक उठाकर आमेरराज्यमें कंटक स्वरूप होगई थी, उन नवीन वलवानोंके दमन करनेमे भी इन्होंने अपनी विलक्षण नीतिज्ञता और चतुरता दिखाई। सन् १७३२ ईस्वीमे जिस समय जयसिंह फिर प्रधान शासनकर्तापदपर नियुक्त हुए, उस समय नवीन वलसे वलवान् हुए महाराष्ट्र संहार-मूर्ति धारणकर, दाक्षिणसे निकले और अन्यान्य देशोंको विजय करतेहुए यवनराज्यके विनाशका उपाय करनेलगे। उस समय जयसिंह अपनी चतुरतासे इस वातको भली भाँतिसे जानगये थे कि महाराष्ट्र जातिसे भारत साम्राज्यकी रक्षा होनी असंभव है, इस कारण वह शीघ्र ही उस समय अपने राज्यकी स्वार्थरक्षामे दृढ़ प्रतिज्ञ होगये। कर्नल टाड् साहवने लिखा है, कि "हम नहीं जानते कि जयसिंहने महाराष्ट्रोंके नेता वाजीरावके साथ किस कारणसे संधि की थी। जयसिंहकी सामर्थ्य और सहायतासे ही वाजीराव मालवेमे सूवेदार हुए। देशीय सामयिक इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "दोनों सद्धर्म अर्थात् एक ही धर्मके थे इसीसे उनमे ऐसी मित्रता उत्पन्न हुई, परन्तु हमारा ऐसा विचार है कि उक्त कारणके सिवाय अवश्य ही और कोई प्रवल कारण था अर्थात् जयसिंहके इसी आचरणसे महाराष्ट्रोंके साथ उनका विवाद न वढ़ा, वाजीराव जो मालवेकी सूवेदारीपर नियुक्त किये गये, इसमे स्वदेशीय स्पष्टतासे कहते है, कि महाराष्ट्रोंके हिन्दुस्थानके मार्गको महाराज जयसिंहने ही साफ कर-दिया है, परन्तु महाराज जयसिंहने उक्त आचरणोंसे महाराष्ट्रोंके ऊपर जिस प्रकारकी प्रभुताका विस्तार किया था इससे उस समय उनके स्वामी यवनसम्राट्के पक्षमे वह विशेष उपकारी होगया था, कारण कि एकमात्र उसीसे महाराष्ट्रोंके प्रवल प्रताप और देशपर अधिकार करनेका स्रोता कुछ दिनोंके लिये थम गया था, परन्तु पीछे वही स्रोता सम्राट्की राजधानी दिल्लीतक गया और कई वर्ष पीछे सन् १७३९ ई०मे नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया। उस समय राजपूत वीरगण बुद्धिवलसे अपने स्वार्थकी और विशेष ध्यान देकर नादिरशाहके साथ सम्राट्के पक्षपाती होकर युद्धमें नहीं गये, कारण कि वह उस समय यह भली भाँतिसे जान गये थे कि एक

(१) टाड् साहव टीकेमें लिखते है, "राजा जयसिंहने कहा है कि मैंने सन् १७२८ ईस्वीमें ज्योतिष गणनाकी रीति और यन्त्र वनानेके कार्यको शेष किया, और इसमे पहिले सातवर्ष तक इनकी खोजमें तथा इनकी आलोचनामें लगा रहा"।

तलवारके बलसे अथवा कूट राजनीतिके द्वारा नादिरशाहके उस आक्रमणको दूर करना सर्वथा असंभव है। राजपूत राजा उस समय बादशाहका विशेष सम्मान करते थे, परन्तु उस समयमे यवनराज्यकी रीति ऐसी अयोग्य और घृणित थी, कि उससे यवनसम्राट्के साथ देशीय राजाओका सम्बन्ध बंधन एकदम दूर होगया था"।

महाराज जयसिह एकसौ नौ गुणोसे विभूपित होनेके कारण एक असाधारण पुरुप थे। इसीसे वह सारे रजवाड़ेमे प्रसिद्ध होगये थे। इसके सम्बन्धमे एक ग्रंथ भी लिखा है। साधु टाड् साहबने उन एकसौ नौ गुणोमेंसे जयसिहके कईएक गुण-सम्बन्धी कहानी संग्रह की थी परन्तु दुःखका विपय है कि उन्होने सबको प्रकाश नही किया। तथापि वह यहॉपर कईएक घटनाओका उल्लेख करगये है, हमनें उसके सम्बन्धमे बिना कुछ कहे ही पहिले उन घटनाओको अविकल प्रकाशित किया है। टाड् साहबने इन घटनाओको बहुविवाहका विपमय फलस्वरूप कहा है।

टाड् साहब लिखते है, कि "महाराज विशनसिंहके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम जयसिह और दूसरेका नाम विजयसिह था दोनोंका जन्म भिन्न २ माताओके गर्भसे हुआ था, अपने पुत्रका अमंगल होगा, इस पर बड़ी विपत्ति आवैगी यह विचारकर विजयसिहकी माताने इनको अपने पिताके यहाँ भेज दिया। जब विजयसिह नानाके यहॉ रहकर बड़े होगये तब उनकी माताने बादशाहकी दया और अनुग्रहके पात्र होनेके लिये इनको दिल्लीके बादशाहकी सभामे भेज दिया। माताने पुत्रको भेजनेके समय बादशाहके दरबारके प्रधान २ अमीर उमराव और राजकर्मचारियोको हस्तगत करनेके निमित्त रिश्वतस्वरूपसे पुत्रके हाथमे अपने बड़े कीमती जड़ाऊ कंगन और गहने पहरादिए, विजयसिहने उन समस्त अलंकारोको उपहारमे देकर बादशाहके प्रधानमंत्री कमरुद्दीनखॉको अपने हस्तगत करलिया। विजयसिह बादशाहके यहॉ राजकार्यमे नियुक्त होनेके लिये तथा सेनामे नेता बननेकी इच्छासे दिल्लीमे नहीं गये थे। आमेर राज्यमे बसवा नामका जो देश अत्यन्त उपजाऊ था वह उस देशके समस्त अधिकारकी प्राप्तिके लिये चेष्टा करना चाहते थे। विजयसिहके सौतेले भाई आमेरपति जयसिहने अपने सौतेले भाईकी उस कामना पूर्ण करनेमे एक मुहुर्त्तका भी विलम्ब न किया। विजयसिह यद्यपि भ्राताके इस स्नेह और दयासे अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु विजयसिहकी माता और जयसिहकी मातामे सौतियाडाह बढ़ने लगा। उन्होने पुत्रसे कहा, कि केवल "बसवा देशके लेनेसे क्या होगा, तुम प्रधान मंत्री कमरुद्दीनखॉसे कहो कि वह बादशाहसे कहै जिससे कि जयसिहको सिहासनसे उतारकर आमेरके सिहासन पर तुम्हारा तिलक करै, तुम्हारा यह काम उनके द्वारा हो सकता है। यदि ऐसा होगया तो मै, तुमको पॉच करोड़ रुपये पुरस्कारमे दूंगी, और सम्राट् जिस समय आज्ञा देगे उसी समय पॉच हजार अश्वारोही सेना लेकर उनकी सेनाके साथ योग दिया जायगा"। विजयसिहने माताकी इस आज्ञाके पालन करनेमे किंचित् भी विलंब न किया, उसी समय प्रधान मंत्री कमरुद्दीनके

पास जाकर सब समाचार कह सुनाया कमरुद्दीनने तत्काल ही यह वृत्तान्त बादशाहसे कहा। सम्राट्ने सुनकर कहा, "अच्छा जयसिहको सिहासनसे उतारकर विजयसिहको आमेरका राज्य देदिया जायगा, तब जो विजयसिह पॉच करोड़ रुपये देगे, और पॉच हजार अश्वरोही सेना आवश्यकता होनेपर मदत देगी, इसका जामिन कौन है?" मंत्रीने कहा 'मै ही इसका जामिन रहा'। अपने प्रधानमंत्री हीकी बातपर विश्वास करके सम्राट्ने उसी समय विजयसिहको आमेरका राज्य देनेके लिये सनद तैयार करनेकी आज्ञा दी। सवाई जयसिहने खॉन दौरानखॉ नामक एक चतुर मुसल्मान अमीरसे "पगड़ी बदल भाई" अर्थात् भ्रातृसम्बन्ध स्थापन किया था। उक्त खॉसाहब बादशाहके यहॉ ऊँचे पदपर स्थित थे, जिस समय उन्होने गुप्तरीतिसे यह समाचार सुना कि जयसिहको सिहासनसे उतार कर विजयसिहको आमेरके राजछत्रके नीचे बैठालनेकी तैयारी होरही है, तब उन्होने कृपाराम नामक दूतको गुप्तभावसे यह सब समाचार कहसुनाया, दूत कृपारामने तुरन्त ही यह समाचार जयसिहके पास भेज दिया। इस समय दिल्लीमे बादशाहकी सभामे कमरुद्दीनखॉ अपनी प्रबल सामर्थ्य विस्तार करनेके कारण बहुत ऊँचे पदपर पहुंच गया था। जयसिह कृपारामके दियेहुए इस पत्रको पढ़कर अत्यन्त ही दुःखित हुए, फिर उन्होने अपने विश्वासी नाजिरको बुलाकर उसको वह पत्र दिया। नाजिरने पत्र पढ़कर कहा " जिस प्रकारका भयंकर काण्ड उपस्थित है, इसमे किसी प्रकार भी तलवारकी सहायता नही ली जासकती, इसमे धन, बल यह सभी व्यर्थ जायगा, इसमे तो केवल राजनैतिक कौशलसे साम, दाम, दंड, भेद इत्यादिसे विजय होगी, और षड्यन्त्री विजयसिहके द्वारा ही यह षड्यंत्र जाल छिन्नभिन्न होजायगा। नाजिरकी अनुमतिसे जयसिहने अपने राज्यके प्रधान २ सामन्तोको बुला भेजा। नाथावत् संप्रदायके प्रधान नेता सामन्त मोहनसिह वांसखोके सामन्त दीपसिह कुभानी, सुवरम, पोताके सामन्त जोरावरसिंह, नरूका सामन्त हिमतासिह, झोलायके सामन्त कुशलासिह, मोजाबादके सामन्त भोजराज, और माओलीके सामन्त फतेसिह इत्यादि सभी इकट्ठे हुए, जयसिहने उनके संमुख अपने ऊपर आनेवाली विपत्तिकी वार्ता सुनाकर कहा, कि " आपने मुझे आमेरके राज्यपर अभिषिक्त किया है, और मेरे भाई जो एकमात्र बसवाको पाकर ही संतुष्ट होगये थे. नवाब कमरुद्दीन उनको जबरदस्तीसे आमेरराज्यका सिहासन देते है "। यह वचन सुनकर सभी सामन्तोंने एक स्वरसे आमेरपति जयसिंहको धीरज बँधातेहुए कहा, " कि आप कुछ भी चिन्ता न करिये " यदि आपने सरलभावसे यह स्थिर करलिया है कि बसवा देश विजयसिहको देदेगे, तो हम प्रतिज्ञा करके कहते है, कि हम स्वय ही इन समस्त उपद्रवोको शान्त करादेगे "। जयसिहने तुरन्त ही सामन्तोके विश्वासके लिये विजयसिहको बसवादेशका समस्त अधिकार देनेके लिये दानपत्र बनवाकर उसे सामन्तोको देदिया, और उन सबको प्रतिनिधि स्वरूपमे समस्त कार्य करनेके लिये कहा। आमेरमें जब यह पचायत होगई तब सामन्त मडलीने अपना एक २ मत्री विजयसिहके पास भेजा और जो कुछ कहना था वह सभी उससे

कह दिया। विजयसिंहने सामन्तोके प्रतिनिधियोसे मिलकर स्पष्ट कह दिया " कि मुझे अपने भाईकी प्रतिज्ञा तथा उनकी वातका कुछ भी विश्वास नही है "। परन्तु जो मनुष्य इनके पास आये थे उनमेसे " वाराकोटडी आमेरका " अर्थात् आमेर राजवंशके बारह प्रधान २ शाखाओके नेताओने " सीताराम " नामका उच्चारण करके जामिन वनकर कहा, " यदि जयसिंह अपनी प्रतिज्ञासे हटजायगा तो हम सभी आपका पक्ष लेगे और हमी आपको आमेरके सिंहासन पर बैठाल देगे "।

" विजयसिंह वहुत समझाने वुझाने पर राजी हुए, सवाई जयसिंहने जो वसवाके समस्त अधिकारोका दानपत्र भेजा था उसको उन्होने ग्रहण किया। विजयसिंह उसी सनदको लेकर अपने परम हितैपी कमरुद्दीनखांके पास गये और जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया, यह सुनकर खॉसाहव संतुष्ट न हुए। खैर उन्होने खॉनदौरान और कृपारामको आज्ञा दी, कि आप दोनोजने विजयसिंहके साथ जाइये, और इस पर ध्यान रखना कि यह वसवादेशके अधीश्वर पदपर स्थित होते है। आमेरके सामन्त विजयसिंहको राजीहुआ देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और ऐसे उपाय करने लगे कि जिससे दोनो भ्राताओमे फिर सौहार्द प्रेम स्थापित होजाय, सामन्तोके प्रस्तावके अनुसार विजयसिंहने अपने भाईके साथ साक्षात् करनेसे नाही नही की, परन्तु उन्होने कहा कि मै भाईसे मिलनेके लिये आमेरकी राजधानीमे नही जाऊँगा, आमेरके प्रधान सामन्तोकी इच्छा थी कि किसी न किसी तरह दोनो भ्राताओका साक्षात् होजाय परन्तु विजयसिंह किसी विशेप कारणसे चोमूंमे न गये और जयपुरसे पश्चिमको जो तीन कोश दूरीपर सागानेर नगरहै वहॉ जाकर डेरोमे रहने लगे।

इस ओर जयसिंह अपने सोतेले भाई विजयसिंहके साथ मिलनेके लिये सामन्तोके घरसे वाहर होरहे थे कि इसी समय पूर्वोक्त नाजिरने आकर सबके सामने जयसिंहके निकट कहा, कि "महारानी माताने मुझे आपके पास भेजा है। उन्होने कहा है कि "लालजीमे जो दोनो भाइयोका परस्पर मेल और सद्भाव स्थापित होगा सो ऐसे आनन्ददायक दृश्यको देखनेसे मुझे क्यो वचित किया गया है ? " यह सुनकर महाराज जयसिंहने कहा, कि सामन्तोसे पूछा जाय, "यदि वह महारानी माताके वचन माननेके लिये राजी है तो माता वहॉ जासकती है "। सामन्तोने तुरन्त ही इसके उत्तरमे कह दिया "कि इसमे हमै कुछ आपत्ति नही है, महारानी माता अवश्य ही जासकती है "।

"सामन्तोकी आज्ञा पाकर नाजिरने बड़ी शीघ्रतासे रानीके लिये पालकी सजानेकी आज्ञा दी। रानीकी अनुगामिनी अंत.पुरकी स्त्रियोके लिये तीनसौ रथ सजाये गये। परन्तु पालकीके भीतर वृद्धा रानीके बदलेमे महावीर भट्टीसामन्त उग्रसेन स्वयं विराजमान हुए और प्रत्येक रथके भीतर स्त्रियोके बदले दो दो जने अत्यन्त विश्वासी "शिलहपोश"अर्थात् शस्त्रधारी सैनिक सुसज्जित होकर बैठे। सामन्तगण तो पाहिले ही महाराजके साथ चले गये थे। वे इस तैयारीका अनुभव स्वप्नमे भी न करसके,

(१) राजपूतोकी माता पुत्रको " स्नेह सूचक शब्द " लालजी " कहकर पुकारती है।

एकमात्र जयसिह और बुद्धिमान् नाज़िरकी ही सलाहसे यह तैयारी हुई थी। उग्रसेन और साधारण अस्त्रधारी वीरोके अतिरिक्त प्रजामे इस बातकी और किसीको भी खबर नही थी; जिस समय पालकी और तीनसौ रथ महा धूमधामके साथ राजमार्गसे चलने लगे, उस समय रजवाड़ेकी प्रचलित रीतिके अनुसार राजाके सेवकोने पालकीके पीछे २ सुवर्णकी मुद्रा वर्षाई, सभीने मानो यह सिद्धान्त करलिया कि इस पालकीमे वृद्धारानी ही जारही है, और उन्हीके सेवक मुद्रा वर्षाते हुए जारहे है, अंतमे राजमार्गमे बहुतसी भीड़ होने लगी, दीनदरिद्र उन लूटीहुई मोहरोको लेकर महाराजका गुणानुवाद गाने लगे और साधारण प्रजा दोनो भ्राताओके सम्मिलनको सुनकर आनंदके समुद्रमे मग्नहोगई।

"महाराज जयसिह और सामन्त गण यह तो पहिलेसे ही साँगानेरमे आकर राजमाताकी बाट देख रहे थे, कि इसी बीचमे एक दूतने आकर कहा, कि रानी साहिबा साँगानेरके महलमे चली गई है। यह समाचार पाते ही महाराज जयसिह घोडे पर सवार हो महलकी ओर चले। रास्तेमे ही जयसिहके साथ विजयसिहका साक्षात हुआ। दोनो भ्राता परस्पर आलिगन करके मिले, और फिर स्नेह और प्रेम भरे वचन कहने लगे, जयसिहने विजयसिहको अत्यन्त हर्पित हो वसवा देशकी शासन सनद देकर कहा, " यदि विजयसिह आमेरके सिहासन पर बैठनेकी अभिलाषा करै तो मै प्रसन्न होकर उनको आमेरका राज्य दे दूँगा और मै वसवादेशमे ही जाकर राज्य करूंगा" विजयसिहका हृदय जयसिहके इस प्रेम भरे वचन सुनकर दिचलित होगया, और वह तुरन्त ही बोले, " अब मेरी संपूर्ण आसा पूर्ण होगइ "। इस प्रकार दोनो राजभ्राता और सामन्तोमे कुछ कालतक वार्तालाप होनेके उपरान्त वे चलनेको हुए कि इसी समय महारानीकी ओरसे नाजिरने आकर कहा, कि यह सामन्त कुछ कालके लिये यदि यहांसे चले जायँ तो महारानी माता यहां आकर अपने दोनो पुत्रोको देखेगी, या आप ही महारानीके कमरेमे चलिये "। महाराज जयसिहने यह सुनकर कहा. " कि आप सामन्तोसे पूछिये यह जैसा कहैगे वही हमारा मत है, यह सुनकर सामन्तगण दोनो भाइयोको महारानीके आनेके लिये कहकर आप सब वहाँसे दूसरे कमरेमे चले गये। कुछ कालके पीछे जयसिह उठकर जिस कमरेमे महारानी थी उसीमेको जानेके लिये विजयसिहके साथ चले। कमरेके द्वारपर एक पहेरेदार खोजा खडा था, जयसिंहने अपनी कमरसे तलवार निकाल ली, और विचारा कि माताके निकट जानेमे शस्त्रका क्या प्रयोजन है इस लिये तलवारको पहेरेदारको देदिया, विजयसिहने भी भाईका अनुकरण किया, इसके पीछे नाजिरने कमरेका द्वार खोला। विजयसिह उसके भीतर गये परन्तु माताके स्नेहालिगनके वदलेमे विराट्काय भट्टीसामन्त उग्रसेनके प्रवल आक्रमणमे फँसगये। उग्रसेनने उसी समय विजयसिहके हाथ पैर बाँधकर उन्हे पालकीके भीतर डालदिया, पालकी जिस भावसे साँगानेरमे आई थी उसी भावसे आमेरकी राजधानीकी ओरको चली, सभीने जाना कि वृद्धारानी महलसे जारहीं है। एक घंटेके उपरान्त जयसिहके पास समाचार आया कि विजयसिंह वंदी होकर किलेमे आगये। कुछ कालके उपरान्त जयसिह सामन्तगणोके

साथ मिले, परन्तु जयसिहको इकला ही अस्त्रधारियोके साथ आताहुआ देखकर सभीने इधर उधर देखकर पूछा, विजयसिह कहाँ है ? उसी समय जयसिहने उत्तर दिया "मेरे पेटमे है" । हम दोनो ही विशनसिहके पुत्र है उनमे मै बड़ा हूँ यदि आपकी यह इच्छा हो कि वही आमेरका राज्य करैगे तौ आप मुझे मारकर मेरे पेटसे उन्है निकालिये । केवल आपहोके लिये मै विश्वासघाती हुआ हूँ । विजयसिंह अवश्य ही आपके और मेरे शत्रुओको आमेरमे बुलाते और उसी कारणसे आपका विनाश होजाता " । इनके यह वचन सुनकर सभी सामन्त मंडली विस्मित होगई, परन्तु अन्य कोई उपाय न देखकर सब चुपचाप उस स्थानसे चल दिये, साँगानेरके बाहर यवन सम्राट्की छ हजार अश्वारोही सेना विजयसिहके आनेकी बाट देख रही थी, प्रधानमत्री कमरुद्दोनखाने उस सेनाको विजयसिहकी सहायताके लिये भेजा था । विजयसिहके आनेमे विलम्ब हुआ देखकर उस सेनाके नेताने पूछा " विजयसिह कहाँ है ? जयसिहने उत्तर दिया, " तुम्है इसके पूछनेका कुछ अधिकार नहीं है, तुम अपने २ स्थानको चले जाओ, नही तो मै तुम्हारे सभी अश्वोको छीन लूँगा " सेना कुछ उपाय न देखकर लौट गई और इस प्रकारसे विजयसिह वन्दी होगये " ।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब उपरोक्त घटनाओको वर्णन करके अंतमे लिखते हैं, कि " आमेरराज ज्योतिषीके एकसौ नौ गुणोके आदर्श स्वरूप यही एक गुण है । (जो न्यायमत गुणोके वदलेमे अगुण कहा गया है) इस सम्बन्धमे नीतिवेत्ताने किसो प्रकारके मन्तव्यको क्यो नही प्रकाशित किया? परन्तु कोई भी नही मान सकता, कि विशेष चतुरताके साथ इन कार्योंको पूर्ण किया था, और ऐसे स्थानमें "चाल" अर्थात् चतुरता ही प्रधान उपाय स्वरूप थी, और यह जयसिह भी नाज़िरकी बुद्धिको भलीभाँतिसे जानते थे । प्रकाशमे एकमात्र नाज़िर ही इस षड्यंत्रजालके प्रधान सृष्टिकर्ता थे । विशेष करके इस प्रकारके घटना स्थलमे षड्यंत्रका विस्तार करना न्यायसंगत है, कारण कि प्रवल सामर्थ्यवान प्रधान मंत्रीकी सहायतासे विजयसिह शीघ्रतासे अथवा विलम्बसे अपने भ्राताको सिहासनसे अलग करते। विजयसिहके भाग्यमे क्या होगा,यह नहीं जाना गया"। इस स्थानपर हमै केवल इतना ही कहना है, कि महात्मा टाड् साहबने जयसिहके "एकसौ नौ गुणोके" शब्दके अर्थको भली भाँतिसे नहीं विचारा । एकसौ नौ गुणोसे युक्त मनुष्य इस संसारमे कोई उत्पन्न नही हुआ, और न उत्पन्न होसकता है, यह कल्पना करनी भी असभव है । दूसरे पक्षमें एकसौ नौ गुण कभी भिन्न नही होसकते । इस स्थानपर "गुण" शब्दका प्रकृत अर्थ गुणपरिचायक कार्य है । सवाई जयसिंह जिन कई प्रधान २ गुणोसे विभूषित थे, उन गुणोके परिचायक एकसौ नौ प्रधान कार्योंको लेकर "एकसौ नौ गुण जयसिंहका" नामक ग्रंथमे लिखा गया है, यदि टाड् इस अर्थको विचार कर उक्त ग्रथसे कईएक घटनाओको उद्धृत करते तौ एक २ घटनाका

---

(१) टाड् साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि " मैने इन गुणोका अविकल अनुवाद किया है । " हम भी इस बातको कहते है कि हमने भी इन सब अंशोका अविकल अनुवाद किया है ।

गुण परिचायक और एक कार्यको कभी भी एक गुण नही कह सकते, ऐसा करनेसे उक्त प्रकारसे उनको गुणके बदलेमे अगुणशब्दका प्रयोग करना नही होता, यथार्थ गुणका परिचय देनेकी इच्छा करके टाड् साहब अवश्य ही उस ग्रंथसे प्रशंसनीय घटनाओंका उल्लेख कर सकते थे, जब टाड् साहब स्वय ही इसके पीछे स्वीकार करते है कि जय- सिहके उक्त कार्य न्यायसगत थे तव इस विपयमें हमै अधिक कहनेको आवश्यकता नहीं है। जयसिह अपने पिताके वड़ पुत्र थे, राजपूतरीतिके अनुसार, राजधर्मके अनुसार और हिन्दू व्यवस्थाके मतसे यही पिताके सिहासनके अधिकारी थे, आर क्षत्रियोकी रीतिके अनुसार इन्होने अनेक उपाय करके शत्रुओसे सिहासनकी रक्षा की थी, इस कारण उनका यह कार्य कभी भी निन्दनीय नही होसकता, उन्होने इस गभीर राजनैतिक जालको विस्तार कर रुधिरका एक बूंद भी न बहाकर अपने स्वार्थकी रक्षा की थी, यह काम अवश्य ही उनके एक गुणका परिचायक था।

कर्नल टाड् साहबने फिर लिखा है कि "कछवाहे राज्य और उस राज्यकी राजधानीकी प्रत्येक विधिकी उन्नति एकमात्र जयसिहके द्वारा ही हुई है। उनके समयके पहिले जो कछवाहे राजा आमेरपर अपना राज्य कर गये है, केवल उनमे व्यक्तिगत सामर्थ्य और मुगल बादशाहकी सभामे अपने मान प्रभुताईके वलसे कुछ एक राजनैतिकतामे विख्यात थे, नही तो इस राज्यमे अन्य विशेष राजनैतिक गुरुत्व और प्रभुत्व कुछ भी नही था। और यद्यपि सम्राट् वावरसे औरंगजेबके समय तकके शासन समयमे आमेरके राजाओके साथ सम्राट्के परिवारका घनिष्ट सम्वन्ध था, परन्तु दिल्लीके शेष राजपूत अधीश्वरके समान पजोनीसे यहाँतक जयपुरके कोई राजा भी अपने पिताके राज्यकी अतिसामान्य सीमाके विस्तार करनेमे समर्थ न हुए, औरगजेबकी मृत्युके पीछे जिस समय भारतवर्षमे महा हलचल पडगई थी, और समस्त राज्य खड २ होकर विभक्त होगया था, उस समयके पहिले आमेर यथार्थमे राज्यस्वरूपसे नहीं गिना जाता था, औरंगजेबकी मृत्युके पीछे जिस समय राज्यके चारोओर भयकर उपद्रव होने लगे, उस समय सवाई जयसिह वादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे पिताके राज्यके निकट आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे, इस कारण उस समय उन्होने राज्यको बढाकर अपना वल भलीभाँतिसे प्रवल करलिया"।

टाड् साहवकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभातिसे जाना जाता है कि दूलेरायके पीछे कई जनोने आमेरपर राज्य किया, उनमे पजोनीके शासनसमय तकके नव सृष्टि कछवाहे राज्यका अग कुछ एक वढा गये थे, इसके पीछे कोई राजा भी अपने वाहुवलसे राज्यकी सीमा वढानेको समर्थ न हुआ। यद्यपि मिर्जाराजा जयसिह वा मानसिह दिल्लीके सम्राट् वशके परम प्रिय थे परन्तु यह महावीर होकर भी पिताके राज्यको किसी भाँति भी न वढासके, एकमात्र सवाई जयसिहने ही आमेर राज्यकी सीमाको वढाया।

सवाई जयसिहने किस रीतिसे देवती और राजौर नामक दोनो स्वाधीन देशोपर अधिकार किया था, कर्नल टाड साहव इसका वर्णन नीचे करगये है। इस वर्णनमें राजपूत

जातिके चरित्र और विशेष करके सवाई जयसिंहके चरित्र पूर्णरूपसे वर्णन किये गये है। उन्होने कहा है "कि जिस समय महाराज जयसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए। उस समय आमेर देवसा और बसाऊ यह तीनो परगने उनके अधिकारमें थे। इन्ही तीनोके समूहका नाम आमेर राज्य था। राज्यके पश्चिम प्रान्तके देश सम्राटके अधिकारमे थे, और इनका मिलान अजमेरके साथ होगया था। शेखावाटी राज्य जो आमेरराज्यसे हुआ था, इस समय उस शेखावाटीके राज्यका अंग आमेर राज्यसे अधिक बढ़ाहुआ था। वह शेखावाटी राज्य निम्नलिखित प्रकारसे चार सीमाओमे बँधा था, दक्षिणमे चातसू नामका राज दुर्ग था पश्चिममे साभरकी झील पश्चिमोत्तरमे हस्तिना पूर्वमे देउसा और बसाऊदेश था। कोटरिवन्द अर्थात् बारह प्रधान सामन्त वंश इस समय इस परिमित भूमिके अधिकारी थे, उसका परिमाण अत्यन्त सामान्यथा।

"देवती नामक क्षुद्र और अत्यन्त प्राचीन राज्यकी राजधानीका नाम राजोर था। बडगूजर जातिके राजा उसका शासन करते थे। कछवाहे जिस प्रकारसे रामचन्द्र के वंशधर कुशसे उत्पन्न थे। बड़गूजर जाति भी उसी प्रकार रामचन्द्रके वंशधर लवसे उत्पन्न है। यह बड़गूजर जाति यवन सम्राट् वंशमे कन्यादान करना अत्यन्त घृणित और अपमानसूचक बात समझते थे इसलिये यह किसी प्रकारभी सम्राट् वंशको अपनी कन्या तथा बहन नहीं देते थे, उसी सूत्रसे उन्होने जातिमे तथा राजपूतोमे विशेष मान सम्मान और प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस समय कछवाहे राजाने यवन सम्राट्के वंशमे कन्या देकर अपने वंशको कलंकित किया था और इस कार्यसे अपनेको अंतमे पद और मानसे युक्त जाना उस समय बड़गूजर जातिने स्वजातीय स्त्रियोके सतीत्वकी रक्षाके लिये इन्हे जलतीहुई अग्निमे डालकर भस्मीभूत कर दिया था, इससे जातीय कविने उनकी अक्षय कीर्तिकी बड़ी प्रशंसा की है। जिस समय महाराज जयसिंह सम्राट्के प्रतिनिधि स्वरूपसे देशपर नियुक्त थे उस समय उक्त देवती राज्यके बड़गूजर जातिके अधिपति अपनी सेनाके साथ गंगाजीके निकट अनूपशहरमे सम्राट्की सेनाके आधीनमे थे, बड़गूजरपति जिस समय उस अनूपशहरमे उपरोक्त कार्यमे लग रहे थे, उस समय वह अपने अनुजको देवतीके राज्यका भार निर्विघ्नतासे दे सकते थे। बडगूजरपतिने एक समय वनमे शूकरका-शिकार करनेका विचार किया, और शीघ्रतासे जानेके लिये भोजन करनेको अधीर होगये, उनकी भौजाई देवरकी इतनी व्याकुलता देखकर मुँह चढ़ाकर बोली, "आप इतने अधीर क्यो होरहे है, ऐसा जाना जाता है कि आप जयसिंहके साथ समर करके उनके हृदयमे भाला मारनेके लिये जारहे है"। यह बात बड़गूजरवीरके हृदयमे लग गई। हमारे पाठकोको स्मरण होगा, कि कछवाहे राजवंशके आदिपुरुष दूलेरावने नरवरसे निकलकर इस देशमे सबसे पहिले बडगूजरोके अधिकारी चोसा नामक स्थानपर अधिकार किया था, यद्यपि स्त्रीने ताना मारकर कहा था, परन्तु बड़गूजरके भ्राताने उस बातको दूसरी ओर लेजाकर प्रतिज्ञा करी, कि मै इष्ट देवताका नाम लेकर सौगन्ध खाता हूँ, कि आपके हाथसे भोजन ग्रहण करनेके पहिले ही जयसिंहके

हृदयमे भालेका आघात करूंगा। प्रतिज्ञाकारी वीरने उसी समय दश शस्त्रधारी अश्वारोही वीरोको साथले आमेरकी ओरको गमन किया। अंतमे आमेरके ' धूलकोट ' अर्थात् मृत्तिका प्राकारके पार्श्वमे आकर डेरा डाला सप्ताह बीता, पखवाड़ा बीता, महीना गया, इस प्रकारसे कई महीने बीतगये परन्तु इनको अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका अवसर न मिला। धीरे २ सब घोड़ोको बेचकर उनसे जो धन मिला उसीसे वह अपनी जीविका करने लगे, अंतमे जब सब घोड़े भी विक गये और धन भी चुकता होगया, तव इन्होने अपने अनुचरोको विदा करदिया। और आप इकलेही उसी स्थानमे रहकर जयसिहके वक्षस्थलमे भाला मारनेका अवसर देखने लगे। जो कुछ धन पास था वह भी समाप्त हो आया, तव उसने अपने पेट भरनेके लिये अस्त्रोका बेचना आरंभ करादिया, सभी अस्त्र बेचडाले केवल अपने पास एक वस्त्र और एक भाला शेष रक्खा, जब इस धनको भी खालिया तब तीन दिनतक निराहार रहा और चौथे दिन अपनी पगडी बेचडाली, उस दिन उस धनसे क्षुधा निवारणकी। उसी दिन महाराज जयसिह किलेसे बाहरहो पर्वती मार्गको न जाकर केवल मोरा नामक सरल मार्गकी ओरको जारहे थे, इसी समयमे एक भाला तीक्ष्ण वेगसे आकर इनके एक ओर गिरा, पहेरवाला उसी समय अपनी कमरसे तलवार निकाल इस पापात्माका शिर काटनेके लिये तैयार हुआ, परन्तु राजा जयसिहने ऊँचे स्वरसे कहा, " इसको मार न डालना, राजधानीमे पकड़कर ले जाओ,। इसके पीछे राजसभामे महाराज जयसिहके सामने वह दृढ़प्रतिज्ञ बंदी लाया गया, जयसिहने प्रश्न किया, तुम कौन हो ? और किस लिये तुमने इस प्रकारसे भाला फेककर मारा था ? " प्रतिज्ञाकारी वीरने साहसमे भरकर कहा, कि " मै देवतीके बडगूजरपतिका अनुज हूँ, मैने अपनी भौजाईके साथ बातो बातोमे आपके हृदयमे भाला मारनेकी प्रतिज्ञा की थी, इस समय यदि आपकी इच्छा हो तो मुझे मारडालिये, या छोड़ दीजिये। वड़गूजर वीर कई दिनतक आपकी राह देखता रहा है, फिर धीरे २ अपने सब घोडे और शस्त्रोको बेचकर जीविका निर्वाह की, और मै इस अवस्थामे चार दिनतक बिलकुल निराहार रहा, " चतुर नीतिज्ञ जयसिहने विचार करके उसी समय प्रतिज्ञाकारीको छोड़ दिया, और मूल्यवान् वस्त्र उपहारमे देकर पचास घुड़सवारोके साथ उसे उसके राज्यमे भेजदिया, दृढप्रतिज्ञ वीरने राज्यमे आकर अपनी भौजाईसे समस्त वृत्तान्त कह सुनाया, रानीने कहा "आपने सोतेहुए विषधर सर्पको जगाया है, अब तुम्हारे इस कार्यसे यह राज्य शीघ्र ही नष्ट होजायगा। रानी इस बातको जानती थी कि जयसिंह राज्यपर अपना अधिकार करनेके लिये किसी अवसरकी राह देख रहे है, इस समय अपने दुर्भाग्यसे वह अवसर उनके हाथ आगया। राजोरके वृद्धोकी सम्मतिसे राजवंशकी स्त्री और बालकोको अनूपशहरमे वडगूजर राजके निकट भेज दिये और देवती राजोरके किलेमे युद्धकी तैयारी होने लगी "।

---

(१) टाड् साहब अपने टीकेमे लिखते है कि " उक्त नरपतिके वंशधर आजतक अनूप शहर की भूसंपत्तिका संभोग करते है "।

टाड् साहब लिखते है, "कि उक्त घटनाके तीन दिन पीछे सवाई जयसिंहने सम्पूर्ण सामन्तोको सभामे बुलाकर सबके सामने इस वृत्तान्तको कहा" कि "अब शीघ्र ही देवती पर अधिकार करना कर्तव्य है, मै यह बीड़ा रखता हूँ आपमेसे जिस वीरकी अभिलापाहो वह इसे उठाकर देवतीके साथ युद्ध करनेको जाय"। आमेरके प्रधान सामन्त चौमूपति मोहनसिहने जयसिहको सावधान करके कहा कि देवतीके विरुद्ध युद्ध करना महाविपत्तिदायक है; कारण कि बड़गूजरपति सम्राट्की सभामे माननीय मनुष्य है, विशेष करके वह अपनी सेनाको साथ लिये सम्राट्के आधीनमे है"। आमेरके प्रधान २ सामन्तोके इस वचनसे अन्यान्य सामन्त भी भयभीत होगये, और किसीने भी साहसमे भरकर उस विपत्तिजनक युद्धका बीड़ा न उठाया, इस प्रकारसे एक महीना बीत गया। देवतीके साथ फिर युद्ध करनेका विचार उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोमेसे कोई भी अपने प्रधाननेता मोहनसिहकी सम्मति उल्लंघन करनेको सहमत न हुए। इस कार्यमे किसीको भी आगे हुआ न देखकर अंतमे डेढ़सौ भूमि अधिकारियोके आधिपति वनवीर पोता फतेहसिहने उस बीडेको उठाया, यह देखकर महाराज जयसिहने शीघ्र ही फतेसिहके आधीनमे पॉच हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा होनेकी आज्ञा दी। फतेसिहने सेना साथ ले देवतीकी ओर जाकर सुना, कि बड़गूजर राज्यके भ्राता राजोरको छोड़कर गंगोर नामक परब (मेला) पर चले गये है, इस कारण इन्होने उसी ओरको प्रस्थान किया, और वहॉ पहुॅच कर एक दूतके हाथ कहला भेजा कि सावधान! वीर पोता फतेसिहका अभिवादन पहुॅचे, मै बहुत निकट आ पहुचा हूॅ। युवक बड़गूजर इस समयमे पर्वोत्सवके उत्सवमे महामतवाले होरहे थे। दूतने आकर उसके हाथमे पत्र दिया, पत्रको पढते ही उसने आज्ञा दी कि इस दूतका शिर काट डालो, परन्तु जयपुरकी सेनाने शीघ्र ही सेवको सहित बड़गूजर राज्यके भ्राताको बंदी करके उसके अन्य सब साथियोको खंड २ कर दिया। राजोरकी रानी उक्त चौमूके कछवाहे सामन्तकी बहिन थी वह प्रसवकी पीड़ासे जिस समय सूतिकागारमे गई थी उसी समय फतेसिहकी सेनाने राजौरपर आक्रमण करके उसको अपने अधिकारमें करलिया, प्रसववेदनासे कातर हुई राजोरकी रानीने नेत्रोमे ऑसू भरकर विजयी फतेसिहसे कहा, "भ्रातः! मेरे इस गर्भमे स्थित बालकके प्राणकी रक्षा करना"। परन्तु इतना कहते ही अकस्मात् उसको स्मरण होगया कि एकमात्र मेरे ही आक्षेपके वचनोसे राजोरके भाग्यमे आज यह कालरात्रि उपस्थित हुई है, इस कारण उसने मनही मनमे कहा कि झगड़ेको बढ़ानेके लिये मुझे अब जीवन धारनेका क्या प्रयोजन है?" रानीने उसी समय अपने सुकुमार हृदयपर तलवार मारकर प्राण त्याग दिये। पराजित और निहत बड़गूजरनेताके कटे हुए मस्तकको एक कपडे मे बॉधकर विजयी जयपुरी वीरगण जयशब्दसे पृथ्वीको कपायमान करते अंतमे जयपुरमे आ पहुॅचे, जयसिहने सभामे बैठकर अपने जीवन नाशके अभिलाषी उस दृढ़प्रतिज्ञ बड़गूजर राजभ्राताके कटे मस्तकको लानेकी आज्ञा दी, मस्तक सभामे लाया गया आमेरके सबमे प्रधान सामन्त मोहनसिह अपने आत्मीयका

कटाहुआ शिर देखकर नेत्रोसे ऑसू वर्षाने लगे, मोहनसिहको इस प्रकारसे रोताहुआ देखकर जयसिहको स्मरण हुआ कि इन सवमे प्रधान सामन्तने ही मुझे वदला लेनेमे विघ्न किया था यह अवश्य ही राजद्रोही और विश्वासघाती है, इस लिये उन्होने कुछ कालके पीछे मोहनसिहका तिरस्कार करतेहुए कहा; "जव मेरे प्राणनाशके लिये भाला फेका गया था, तव तो किसीके नेत्रोमे एक वूँद भी ऑसू नही आये" यह कहकर शीघ्र ही चोमू देशको राज्यमे मिलाकर मोहनसिहको राज्यसे निकालदिया, मोहनसिह इस प्रकारसे आमेरसे निकाले जाकर उदयपुरके महाराणाकी शरणमे गये। और जयसिहने इस प्रकारसे वडगूजरोके हाथसे देवती और राजोर देशपर अधिकार करके उसे अपने राज्यकी सीमामे मिलालिया। वह देश इस समय माचेरी नामसे विख्यात है[1] "।

टाड् साहवने फिर लिखा है, " कि जयसिहके चरित्रदोषोमे से एक दोष यह वड़ा भारी था कि वह मदिरा पीते थे। वह किस प्रकारकी मदिरा पीते थे मधुसंजात मदिरा अथवा चावलकी मदिराको पिया करते थे, आमेरके प्रवाहमूलक इतिहासमे इसको प्रकाशित नहीं किया गया। परन्तु टाड् साहवने लिखा है कि यद्यपि जयसिहके चरित्रोमे अनेक दोष थे तथापि उस समयमे अपनी जातिमे वह एक अत्यन्त ही प्रशंसनीय मनुष्य थे, उनका नाम चिरकाल तक इतिहासमे रहेगा यह वात भविष्यद्वाणीकी समान है।

सवाई जयसिहके शासनके पहिले आमेरका राजमहल जो मानसिहका वनाया हुआ था, वह नवीन राजधानीकी वस्तीकी अपेक्षा अनेकाश श्रीहीन था। मिर्जा राजा जयसिंहने उस महलमे कई एक कमरे वनवाये थे, परन्तु वह भी राजमहलके लिये उपयुक्त न थे इसीसे जयसिहने उसीसे लगाकर ऐसा एक मनोहर और श्रीमान् महल वनवाया कि जिसको देखकर नेत्रोको आनंद प्राप्त हो[2], सवत् १७८२ सन् १७२८ ईसवी मे सवाई जयसिहने जयपुर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की, जयपुरके देशी इतिहाससे जाना जाता है कि इस समय राजामल्ल सवाई जयसिहके मुसाहव पदपर नियुक्त थे, कृपाराम जयपुरके दूतस्वरूपसे दिल्लीमे थे, और वुधसिह कुम्भानी दक्षिणमे सम्राट्के डेरोमे दूतरूपसे नियत थे, यह सभी विख्यात और ऊँची श्रेणीके थे। जयपुरके नगरका वर्तमान विवरण हम पीछे यथास्थान वर्णन करेंगे।

महाराज जयसिह राजनीति, शासननीति, और समाजनीति तथा शास्त्रके विचार मे भी महान् पडित थे। इसका प्रमाण देनेकी कुछ आवश्यकता नही है। रजवाडेमे कन्याके विवाहके समयमे और श्राद्ध इत्यादिकार्योमे राजपूतोके यहाँ वहुतसा

---

(१) इतिहासवेत्ता अपने टीकेमे लिखते है " कि राजोर एक अत्यन्त प्राचीन देश गिना जाता था, और इस स्थानमे वडगूजर जाति वहुत पुरुषोसे वास करती आई है। चंदकवि इस जाति की वीरताके सम्वन्धमे वडी प्रशंसा करगये है। इसने पृथ्वीराजके समय विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी"।

(२) मिर्जा राजा जयसिहने इस स्थानपर तीन महल वनावाये थे, महाराज जयसिहने उनको न तोडकर उसीके वरावरमे नया महल वनवा दिया—हिन्दूराजा पूर्वपुरुषोकी कीर्तिको लोप करनेकी अभिलाषा नहीं करते थे, इसीसे जयसिहने प्राचीन महलोको नहीं तुडवाया।

धन खर्च होता था। और बहुतसे इस अधिक धनके भयसे छोटी २ कन्याओंको सूतिकागारमे ही मारडालते थे, और बहुतसी स्त्रियां इसी लिया आत्महत्या करके प्राण त्याग देती थी। जब महाराज जयसिंहने देखा कि इससे तो समाजका महा अनिष्ट होरहा है, तब उन्होने रजवाडेमे और समस्त राजपूत जातिमे ऐसा प्रबंध करदिया कि जिससे विवाह और श्राद्धके समयमे खर्च कम पडे। इस विषयमे उन्होने बहुतेरे नियम नियत करादेये, और उन नियमोको अपने राज्यमे प्रचलित करदिया था। हमारे पाठकोने राजस्थानके प्रथम काण्डमे इसका विस्तारित विवरण पढ़ा होगा, इसीसे हम यहाँ पर फिर उसका लिखना आवश्यक नही समझते। इसमे कुछ भी संदेह नही कि एकमात्र इस समाज संशोधक कार्यसे ही जयसिंहकी कीर्तिके गौरवका सूर्य सर्वदा तीक्ष्णतासे चमकता रहेगा। टाड् साहब लिखते है, "कि इस महापुरुषने समाज सम्बन्धी जो अनुष्ठान किये थे, उनके तत्त्वका अनुष्ठान करना अत्यन्त प्रयोजनीय है। महाराज जयसिंह भी हिन्दुओकी समान सभी जातिके ऊपर दयावान थे। क्या ब्राह्मण क्या मुसलमान, क्या जैन सभीको समान भावसे देखते थे। जैनियोको ज्ञानशिक्षामे श्रेष्ठ जानकर जयसिंह उनके ऊपर अत्यन्त अनुग्रह करते थे। ऐसा भी प्रगट होता है कि जयसिंहने जैनियोके इतिहास और धर्मके संबन्धमे स्वयं शिक्षा प्राप्त की थी। विद्याधर नामका जो मनुष्य उनके वैज्ञानिक तत्त्वकी आलोचनामें सबमे अग्रणी था, और उसीके प्रभावबलसे जयपुर राजधानीकी सृष्टि हुई, वह जैन धर्मावलम्बी विख्यात है। विद्याधर सुप्रसिद्ध सिद्धराज जयसिंहके प्रधानमंत्री और गुरु नहरवालाके विख्यात पंडित हेमाचार्यके वंशधर थे।

सवाई जयसिंहने एक समय अश्वमेध यज्ञ करनेकी अभिलाषा की। कर्नल टाड् जयसिंहके पक्षमे इनकी इस अभिलाषाको ऊँची अभिलाषा बतागये है। उन्होने लिखा है, "पांडुवंशीय जन्मेजयसे लेकर कन्नौजके शेष राजा जयचंदतक जिन२ ने अवश्वमेध यज्ञ किया था उन सभीका नाश होगया है, इस यज्ञका प्रकृत उद्देश यह था कि समस्त राजाओमे प्रधानता प्राप्त हो। यद्यपि महाराज जयसिंह दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रबल सामर्थ्यवाले थे, यद्यपि वह यज्ञके लिये उत्सर्ग किये घोड़ेको निर्विघ्नतासे गंगाके किनारे तक स्वेच्छानुसार विचरण करा सकते थे, कोई भी राजा उनके उस घोडेके पकडनेका साहस नही करता, परन्तु यदि उनकी वह अश्वावली मरुक्षेत्रकी ओर जाती तो निश्चय ही राठौर राजा उसको पकड़कर अश्वशालोमे रखलेते, अथवा वह अश्व चम्बलके किनारे जाता तो हाडाजातीय राजा निश्चय ही अपने जीवन और सिंहासनको विपत्तिमे डालकर भी उस घोड़ेको पकड़ते। सवाई जयसिंहने बहुतसा धन खर्च

(१) टाड महोदयने अपने टीकेमे लिखा है, कि जयसिंहने बहुत परिश्रम तथा धन खर्च करके राजपूतानेके भिन्न२ राजवंशके प्राचीन इतिहासको संग्रह किया था, राजवाली और राजतरंगिनी नामकी प्राचीन कारिका संग्रह की थी, इसके अतिरिक्त मूल और अनुवादित ग्रंथ भी उन्होने संग्रह किये थे। यदि हम उनकी खोज करते तो सबका पता लगसकता था, विशेष करके वैज्ञानिक ग्रंथोके प्रकाश करनेसे विज्ञानके अनेक उपकार होते'।

करके परम सुन्दर उज्ज्वल यज्ञशाला बनवाई थी, और उस यज्ञशालाके स्तभ और ऊपरकी छत चाँदीसे मढ़वाई थी। परन्तु दुःखका विषय है कि जयसिहके भ्रष्ट वंशधर मृत जगत्सिहने उस चाँदीके पत्रको छुड़ा लिया, और जयसिहने जिन ग्रंथोंको बड़े परिश्रम और धनव्ययसे संग्रह किया था तथा जो ग्रंथ विज्ञानके परिचयस्वरूप थे, उन सबको दो भागोमे विभक्त कर उनका एक अंश जयपुरकी एक साधारण वेश्याको देदिया।

सवाई जयसिहके सम्बन्धमे शेषमे टाड् साहबने कहा है कि संवत् १७९९ सन् १७४३ ईस्वी मे चौवालीस वर्षतक राज्य करके अंतमे महाराज जयसिहने प्राण त्याग किये उनकी तीन विवाहिता रानी और कितनी ही उपपत्नियां उनके शवके साथ सती हुई, अधिक क्या कहै उनके साथ ही साथ उनके प्रिय विज्ञानका भी लोप होगया"।

समस्त रजवाडेके इतिहासमे सवाई महाराज जयसिहके राज्यका अध्याय और सबकी अपेक्षा उज्ज्वलतासे प्रकाश पारहा है और यह चिरकालतक कीर्तित रहेगा भी; राजपूत राजाओके राज्यके समयमे केवल रणभेरीकी भयंकर ध्वनि, रणटंकार, भैरवनाद, तलवारोकी झनकार, कमानोका गगनभेदी हुँकार और वीरोकी जयध्वनि ही सुनाई देती थी, परन्तु सवाई जयसिहके राज्यमे इन सबके अतिरिक्त, समाजमे शान्तिमूलक विधान लहरी, जातिके उन्नति सूचक अनुष्ठान, विज्ञानकी प्रकाशमान ज्योति, काव्यकी मधुरवाणी, इतिहासकी स्निग्ध आभा और जातीय गौरवकी प्रचड प्रभा विराजमान थी। ऐसे राज्यको कौन भूल सकता है?।

तृतीय अध्याय ३.

ईश्वरीसिहका जयपुरके सिहासन पर अभिषेक–बहु विवाहका विषमय फल–सवाई जयसिहके दूसरे पुत्र माधोसिहका आमेरपर राज्य करनेके लिये उद्योग करना–मेवाड़के राणाका ईश्वरी सिंहके पास दूत भेजना–उसका महान् विपत्तिमें पड़ना–ईश्वरी सिहका महाराष्ट नेताका आश्रय लेना–आमेरका सिहासन लेकर राणाके साथ ईश्वरीसिंहका युद्ध होना–ईश्वरीसिंहकी विजय–कोटा और बूंदीकी विजयके समयमें ईश्वरीसिंहका महाराष्ट नेताओंकी सहायता लेना–अपने भानजे माधोसिंहको आमेरके सिंहासन पर बैठानेके लिये राणाकी फिर युद्धके लिये तैयारी–उनका हुलकर का आश्रय लेना–ईश्वरीसिंहका विष खाकर प्राण नाश–माधोसिंहका आमेरपर अभिषेक–उदीयमान जाटजातिका विशेष विवरण–जाटराजका आमेरराज्यपर सेना चलाना–आमेरकी सेनाके साथ जाटोंका संग्राम–माचेरीके सामन्तका पुन स्वत्वलाभ–माधोसिंहका प्राण त्याग–पृथ्वीसिंह–उनकी मृत्यु–प्रतापसिंह–माधोसिहकी विधवा पटरानीकी फीरोजपर कृपा–माचेरीके सामन्तोंकी स्वाधीनता–खुशियालीरामके षड्यन्त्रजालका विस्तार–फीरोजका प्राण नाश–पटरानीकी मृत्यु–महाराष्टोंके साथ मतान्तर–प्रतापसिहका राज्यभार ग्रहण करना–उनका तुंगाके समरमें जयलाभ–पाटनके समरमें शोचनीय घटना–प्रतापसिंहपर विपद–महाराष्ट इत्यादिके द्वारा जयपुरपर आक्रमण–प्रतापसिंहकी मृत्यु.

सर्वगुणसम्पन्न महाराज जयसिंहके परलोक चलेजानेपर उनके ज्येष्ठ पुत्र ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए । इस समयमे जयपुरका राज्य केवल रजवाड़ेमे ही नही वरन सारे भारतवर्षमे एक प्रबल बलशाली राज्य गिना जाता था, सर्वत्र कछवाहोंकी सेनाका वीरस्वरूपसे सम्मान हो रहा था। इस समय जयपुर राज्यकी सीमा यथार्थरूपसे नियत थी । राजकोष धन रत्नोसे परिपूर्ण था, मंत्रीसमाजमे राजनीति चतुर प्राचीन सदस्य नियुक्त थे–और सेना भी संग्राम विद्यामे संपूर्णरूपसे दक्ष और चतुर थी । ईश्वरीसिंह अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र थे, इससे वही सिंहासनपर विराजमान हुए । इनके राज्यमे कईवर्ष तक कोई विशेष ऐतिहासिक घटना नही हुई । यह सन् १७४७ ईस्वीमे अपनी सेना साथ लेकर दुर्रानियोंके साथ युद्ध करनेके लिये सतलजनदीके किनारे गये । इतिहाससे जानाजाता है कि उस समरमे उन्होने विशेष भीरुता दिखाई, और वह जिस पक्षमे नियुक्त थे उसी पक्षके प्रधान सेनापति कमरुद्दीनखॉके रणक्षेत्रमे मारे जाने पर वह अपनी सेना लेकर भाग आये । यद्यपि यह जानाजाता है कि उनका वह भागना एक राजनैतिक उद्देश्य था" । परन्तु उनके भागनेसे उनकी रानी अत्यन्त ही अप्रसन्न हुई । वीरवंशीय वीरपतिके कापुरुषोकी भॉति सग्रामभूमिसे भाग आनेसे ऐसी कौनसी राजपूत वीरबाला है जो स्वामीके इस आचरणसे क्रोधित न होगी ?

सर्वगुणमंडित असाधारण मनुष्य सवाई जयसिंहके औरससे जन्म लेकर ईश्वरीसिंह अपने पिताके नामकी रक्षा करनेमे उपयुक्तगुणोसे विभूषित न हुए।उन्हे यद्यपि सिंहासन पर स्थितहो अपने शासनसे प्रजाको प्रसन्न करनेका अवसर मिला, परन्तु उनका हृदय क्षत्रियतेजसे तथा पूर्ण साहस और प्रबल राजनीतिसे परिपूर्ण नही था । इसी लिये उन्होने शीघ्र ही अपने भाग्यमे कालरात्रि बुलाली ।

पाठकोने मेवाड़के इतिहासके तेरहवे और चौदहवे अध्यायमे पढा होगा कि जिस समय दिल्लीके प्रबल सम्राट्वंशके विरुद्ध मेवाड़ मारवाड़ और आमेर इन तीनो राज्योंके सामर्थ्यवान् तीनो राजाओने एकत्र मिलकर परस्पर दृढ़ संधि की थी,उसी समयसे तीनो राजवंशोमे परस्पर वैवाहिक संबन्ध भी स्थिर होगया था । उस संधिका यह फल हुआ कि बादशाहके उन दुर्दिनोमे मारवाड़पतिने जिस प्रकार गुजरातके समस्त देशोंपर अधिकार करके उन्हे अपनी राजधानीमे मिलालिया, दूसरी ओर आमेरराज्यके सवाई जयसिंहने भी इसी प्रकारसे आमेरके चारोओरके देशोपर अपना अधिकार करलिया, और उसी समयमे उन्होने शेखावाटीके अधीश्वरको कर देनेके लिये राजी कर लिया, यदि उस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर अपनी उन्नति कर सकती तो उस समय आमेरराज्यकी सीमाका सामर हृदसे यमुनातक विस्तार होजाता । एक ओर तो इस संधिका फल जिस प्रकारसे मंगलदायक हुआ, दूसरे पक्षमे उस वैवाहिक संबन्ध बधनने अत्यन्त विषैला फल उत्पन्न किया । आमेर और मारवाड़का राजवंश दिल्लीके यवन सम्राट् वंशमे कन्या देकर पवित्र आर्य रक्तको कलंकित करता आया था । समस्त भारतवर्षमे एकमात्र मेवाड़के राणावंशने प्राणान्ततक भी यवनसम्राट्को अपनी कन्या

नही दी, इस कारण उन्ही राणाका वंश आजतक भारतवर्षमे ऊँचा स्थान पारहा है, जिस समय उक्त तीनो राजवंशोका सधिबंधन हुआ था उस समयके पहिलेसे यवन सम्राट्के वंशमे कन्या देनेके समयसे मारवाड़ और आमेरके राजवंशके साथ मेवाडके राणावशकी आदान प्रदानकी रीति एकवार ही दूर होगई थी । इस नवीन सधिबंधनके समयसे फिर उक्त तीनो राजवंशोमे आदान प्रदानकी रीति प्रचलित होजाय इस कारण सवाई जयसिहने इस समय राणाकी कुमारीका पाणिग्रहण किया था। परन्तु विवाहके पहिले ऐसे नियम किये गये कि मारवाड़पति वा आमेरराज मेवाड़की जिस राजकुमारीका पाणिग्रहण करे उस कुमारीके गर्भसे यदि पुत्र उत्पन्न हो या मारवाड वा आमेरराजके औरससे अन्य किसी स्त्रीके गर्भसे पुत्र उत्पन्न हो, और वह पुत्र बड़ा हो तथा राणाकी कन्याका पुत्र छोटा हो तो चिरप्रचलित रीतिके अनुसार जो ज्येष्ठ पुत्रको ही राज्य प्राप्तिका अधिकार होना उचित है उसे उल्लंघनकर राणाकी बेटीके पुत्रको ही राज्यसिहासन दिया जायगा । और यदि राजनंदिनीके गर्भसे कन्याका जन्महो तो वह कन्या कदापि यवनसम्राट्के वशमे नही दीजायगी । सवाई जयसिह और मारवाड़राजने इस विचारमे अपनी सम्मति दी । जयसिहने जिस राजनंदिनीके साथ पाणिग्रहण किया था, उसके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उस पुत्रका नाम माधोसिह रक्खा गया, जयसिहने अपनी जीवित अवस्थामे ही पुत्रके मान सम्मानकी रक्षाके लिये माधोसिहके मामा राणा संग्रामसिहकी सम्मतिसे आमेर राज्यके आधीन टोक, रामपुरा, फागी, और मालपुरा नामके चार परगने कुमार माधोसिहको देदिये । और इधर अपने दौहित्रको राणा संग्रामसिहने मेवाड़के आधीन रामपुरा भानपुरा नामके दोनो देश देदिये । इन कई देशोकी आय ८४ लाख रुपये थी ।

ईश्वरीसिह पिताके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण राजसिहासनपर बैठे, प्रथम पॉच वर्षतक किसीने भी माधोसिहके पक्षका समर्थन न नही किया । पॉच वर्षमे ही राज्यशासनमे अयोग्यता दिखाकर ईश्वरसिह सामन्तोके अप्रियपात्र होगये । इनके आचरणसे असंतुष्ट हो आमेरके सामन्तोने बहुतसे षड्यत्र किये, और इनको सिहासनसे उतारकर माधोसिहको आमेरके सिहासनपर राजतिलक करनेकी अभिलाषा की । कुमार माधोसिह अबतक सतुष्ट होकर अपने पिता और मामाकी दी हुई सम्पत्तिको भोग रहे थे उन्होने भ्रमसे भी पिताके सिहासन प्राप्तिकी इच्छा नही की, और राणाने भी माधोसिहके सिहासन प्राप्तिके लिये विशेष चेष्टा नही की परन्तु माधोसिह और उनके मामा जगत्सिहके निकट मत्रियोके द्वारा उपरोक्त प्रस्तावके उपस्थित होते ही ईश्वरीसिहके भाग्यपतनके द्वार खुलनेकी तैयारी होने लगी । मेवाडपति राणा जगतसिहने आमेरपति ईश्वरीसिहके पास दूतके द्वारा कहला भेजा, " कि सवाई जयसिह मरते समय यह प्रतिज्ञा करगये है, कि अन्य पुत्रोके अवस्थामे बडे होनेपर भी हमारा भानजा माधोसिह ही आमेरकी राजगद्दीपर बैठेगा । इस कारण आप माधोसिहको सिहासन देदीजिये " । यह समाचार सुनते ही ईश्वरीसिहके मस्तकपर

[illegible]

मानो वज्र टूट पड़ा, वह मानो चारोओर अंधकार देखने लगे, उन्होंने समझ लिया कि इतने दिनोंके पीछे जब राणाने यह प्रश्न किया है तब सरलतासे इसका निवटेरा कभी नहीं होसकता, अंतमें राज्यरक्षाका कोई भी उपाय न देखकर ईश्वरीसिंहने यह संकल्प किया कि अकेले राणाके साथ युद्ध करना अत्यन्त असंभव है इस कारण उन्होने उस समय उदीयमान् महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सेन्धियाके साथ संधि करली, आपाजीने ईश्वरी सिंहके पक्षका समर्थन किया। इस ओर जब मेवाड़पति राणाने सुना कि ईश्वरीसिंह किसी प्रकारसे भी माधोसिंहको सिंहासन देनेको राजी नहीं है, वरन वह महाराष्ट्र नेता आपाजीके साथ मिलकर अपने अधिकारकी रक्षाके लिये यत्न कररहे है, तब उन्होने ईश्वरीसिंहके विरुद्ध युद्धका प्रस्ताव उपस्थित किया। कोटा और बूंदीके दोनो अधीश्वरोने भी माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मेवाड़की सेनाका साथ दिया। राजमहल नामक स्थानपर दोनो पक्षकी सेना परस्पर सम्मुखहो भयंकर संग्राम करने लगी। सीशोदियोकी सेनाका बलविक्रम उस समय एक बार ही प्रभा हीन होगया था, इस कारण राणा विशेष चेष्टा करके भी विजय प्राप्त न करसके, नवीन बलशाली महाराष्ट्रोंकी सेनाने अपना प्रबल पराक्रम दिखाकर मेवाड़ कोटा और बूंदीकी मिली हुई समस्त सेनाको परास्त करदिया। उसके साथ ही साथ माधोसिंहकी आशाका आकाश भी मानो अंधकारसे ढक गया।

ईश्वरीसिंहने महाराष्ट्रोंकी सहायतासे जय प्राप्त करके गर्वित हो आपाजीकी कुमकके साथ माधोसिंहकी सहायता करनेवाले कोटा और बूंदी दोनो राज्योपर आक्रमण किया,। उस आक्रमणसे ईश्वरीसिंहका बदला लेनेके अतिरिक्त और कोई अभिप्राय नहीं था परन्तु महाराष्ट्रनेता आपाजी भारत विजयके लिये बाहर गये थे, इस कारण वह कोटे और बूंदीमे अपने अधिकारका विस्तार करनेके लिये उस युद्धमे लिप्त हुए थे। यद्यपि कोटेके अधीश्वरने प्रबल पराक्रम करके दीर्घकालतक अपनी रक्षाके लिये बड़ी वीरताकी, यद्यपि उस समरमे आपाजीका एक हाथ कट गया, परन्तु अंतमे कोटा और बूंदी इन दोनो राज्योके राजा, पंग पालकी समान अगणित सेनाके समान महाराष्ट्रोंसे परास्त होगये। आपाजी केवल जय प्राप्त करके ही संतुष्ट नहीं हुआ, उसने दोनो राज्योके अनेक ग्राम और नगर अपने अधिकारसे करके दोनो राजाओसे कर देना स्वीकार करालिया। यद्यपि इस ओर ईश्वरीसिंह आपाजीकी सहायतासे उस यात्रामे विजय प्राप्तकर फिर पिताके सिंहासनपर निर्विघ्नतासे बैठे, परन्तु शीघ्र ही घनघोर बादलोने आकर उनके सौभाग्य सूर्यको ढांक लिया।

ईश्वरीसिंहने जिस भाँति महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सिन्धियाका आश्रय लेकर राजमहलके युद्धमे विजय प्राप्त की, मेवाड़पति राणा जगत्‌सिंहने भी इस बार उसी प्रकार उसी महाराष्ट्रजातिके अन्य नेता हुलकरका आश्रय लिया। राणाने हुलकर के साथ इस नियमपर संधि की कि तुम यदि ईश्वरीसिंहको समरमे परास्त कर सिंहासनसे उतार, माधोसिंहको आमेरके राज्यपर अभिषिक्त करो तो छयालीस लाख

रुपया मै तुमको दूंगा । धनके लोभी हुलकर तुरन्त इस बातपर सम्मत होगये । शीघ्र ही युद्धकी तैयारी होने लगी, परन्तु ईश्वरीसिंहने इस समाचारको पाते ही हुलकरके सामने अपनी विजय होनी असंभव जानकर कायरपुरुषोकी तरह विषपान करके प्राण त्याग दिये । ईश्वरीसिंहकी मृत्युके पीछे माधोसिंह निर्विघ्न होकर पिताके सिंहासनपर बैठे । हुलकरने जो माधोसिंहका पक्ष समर्थन किया था इस कारण माधोसिंहने सिंहासन प्राप्तकर प्रतिज्ञा पूर्ण करनेकेलिये चौरासी लाखके कितने ही देग जो पिता और मामाके पाससे बालकपनमे मिले थे वे सब हुलकरको देदिये ।

माधोसिंह क्षत्रियोचित गुणोसे विभूषित थे । साहस, वीरता, नीतिज्ञता, उच्च अभिलाषा और एकाग्रता इत्यादिके बलसे उन्होने शीघ्र ही सामन्त और प्रजाके प्रति असाधारण शासन करके उनके चित्तको आकर्षित करलिया । ईश्वरीसिंहके शासन समयमे आमेरका राज्य जिस प्रकार कान्तिहीन होगया था, माधोसिंहके सिंहासन पर अभिषिक्त होते ही राज्यमें फिर उसी प्रकारसे कान्तिके प्रकाशके पूर्वलक्षण दिखाई देने लगे । यद्यपि माधोसिंहको महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायतासे पिताका सिंहासन मिला था, यद्यपि उन्होने राजपूतजातिकी अवश्य प्रतिपाल्य अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हुलकरको चौरासी लाख रुपयेकी सम्पत्ति दी, परन्तु इस बातको वह भली भाँतिसे जानगये थे, कि महाष्ट्र जातिका विना दमन किये अथवा उसे रजवाडेसे विना निकालेहुए किसी प्रकार भी हमारा मंगल नही होसकता । माधोसिंहने अपनी वीरता और नीतिज्ञताका बल शीघ्र ही प्रकाशित करदिया । उन्होने किसी प्रकारसे भी महाराष्ट्र नेताओको आमेर राज्यपर आक्रमण न करने दिया, कर्नल टाड् साहब लिखते है कि " यदि इस समय उदीय मान जाट जातिके प्रति माधोसिंह कुछ भी हस्ताक्षेप न करते, यदि उनका जीवन और कुछ कालतक स्थायी रहता तो अवश्य ही वे राठौरोके साथ मिलकर महाराष्ट्रोकी शासनशक्तिको चूर्ण करसकते थे । परन्तु उनके प्रतिवासी शत्रुओने समस्त कल्पनाये व्यर्थ करदीं । यद्यपि जाट जातिके इतिहासमे इस समय सत्र विदित है, परन्तु यह जाति किस प्रकार सामान्यकृषक अवस्थासे अर्द्धशताब्दीमे एक प्रबल जातिरूपसे मस्तक उठानेमे समर्थ हुई थी, उसका वर्णन करना इस स्थानपर असंगत होगा । भारतमे जितने अग्रेज सेनापति नियुक्त थे, उनमे सर्वश्रेष्ठ वीर सेनापति अंग्रेजोने अपनी फौजको रणक्षेत्रमे चलाया था, परन्तु उस जाट जातिने उस वाहिनीका उद्देश निष्फल करदिया " ।

भारतवर्षमे जाट जातिकी उन्नतिके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहब लिखते हैं, कि " जाटजाति जिस प्रधान जट जातिकी शाखा थी उसका वर्णन इस पुस्तकमे अनेक स्थानोमे हुआ है । यद्यपि वह एक समय भारतवर्षमे छत्तीस राजवशोमे अन्यतररूपमे सम्मान पाकर अंतमे अवनतिके मुखमे पतित हुई थी, परन्तु उसने एक दिनको भी जातिकी स्वाधीनताकी आशाको न छोडा, जाटजातिमे

जिस वीरपुरुषने सबसे पहिले अपने जातीय कृषिकार्य (हलचलाने)को न छोड़कर अपने को पीडित करनेवालोके विरुद्ध तलवार चलानेके लिये जाटजातिको उत्तेजित किया था, उसका नाम चूडामणि था। औरंगजेबके उत्तराधिकारियोको राज्यके निमित्त जातीय जनोके साथ भयंकर युद्धमे लिप्त होते और सभीको रुधिरकी नदी बहाते हुए देख इस सुअवसरपर जो जाट सम्राट्के आधीनमे थून और सिनसीनी नामक ग्राममे खेती करते थे, उन्होने उन ग्रामोमे छोटे२ किलोंका बनाना प्रारंभ करदिया, और वह शीघ्र ही कज्जाक, अर्थात् तस्करनामसे प्रख्यात हो गये। वह इस उपाधिको धारण करनेमे किंचित् भी लज्जित न हुए, कारण कि उन्होने शीघ्र ही दिल्लीके सम्राट् फर्रुखसियरके महलतक को लूटनेका साहस किया था, इस समय सैयदके दोनो भ्राता दिल्लीकी राजसभामे सबके ऊपर अपना अधिकार चलाते थे, जब उन्होने देखा कि इस समय जाट बहुत शिर उठा रहे है तब उन्होने इनके दमन करनेके लिये आमेरराज सवाई जयसिहसे कहा, जयसिहने उस आज्ञाको पालन करनेके लिये शीघ्र ही सेना साथले थून और सिनसीनी को जा घेरा। परन्तु अंतमे जाटोने अंग्रेजोके साथ युद्ध करके असीम साहसके साथ वीरता और पराक्रम दिखाकर किलेकी रक्षा की थी, वह लोग उनके इस प्रथम उत्थानके समय उसी प्रकार भयंकर विक्रमके साथ उन छोटे २ मट्टीकी दीवारोके किलोकी रक्षा करनेमे समर्थ हुए। आमेरराज जयसिह क्रमानुसार एक वर्षतक उनके किलेको घेरकर विशेष चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसपर अधिकार न करसके, अंतमे हताशहो किलेको छोडकर चलेआये "।

"इस घटनाके कुछ काल पीछे चूड़ामणिके छोटे भ्राता वदनसिंह जो जाटभूमिके आधे भागके अधिकारी थे, अनेक उपद्रवोके करनेसे चूड़ामणिके द्वारा वदी होकर कई वर्षतक उसी अवस्थामे रहे, अतमे आमेरराज जयसिहके मध्यस्थ होनेपर और कईएक भूमिहार जाटोकी सम्मतिसे चूड़ामणिने अपने कनिष्ठ भ्राता वदनसिंहको छोड़ दिया। बदनसिह छूटते ही जयपुरमे जा पहुँचा और थूनपर अधिकार करनेके लिये जयसिहको आज्ञादी, जयसिहने तुरन्तही वदनसिहके कहनेसे अपनी सेना साथ ले जाटोकी भूमिपर जाकर थूनके किलेको घेरलिया। जाटपति चूडामणिने पहिलेहीकी तरह प्रवल पराक्रमके साथ छः महीने तक अपनी रक्षा की, और अंतमे अपनेको हीनवल देखकर अपने पुत्र मोहनसिहको साथ ले किलेसे भाग गया। आमेरराजने इस प्रकारसे थूनके किलेपर अधिकार किया, और वदनसिहको जाटजातिके अधीश्वररूपसे डीगनामक स्थानपर अभिषिक्त कर यह घोषणापत्र प्रकाशित किया कि यह डीग इसी प्रकारसे अन्य कारणोसे भविष्यत्मे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करेगा"।

"कर्नल टाड् फिर लिखते है कि वदनसिहके अनेक सतान उत्पन्न हुई, इनमे सूर्यमल, शोभाराम, प्रतापसिह और वीरनारायण नामके चारपुत्रोने अपने वाहुवलसे विशेष यश प्राप्त किया। बदनसिहने अपने पूर्ण शासनसे दिल्लीके वादशाहके अधिकारवाले कितने ही देशोपर अपना अधिकार करके वहाँ अपना आधिपत्य जमाया;

वदनसिहने पहिले ही वेर नामक स्थानमे एक किला बनाकर अपने तीसरे पुत्र प्रतापको दे दिया, और अंतमे अपने वड़े पुत्र सूर्यमल्लको समस्त अधिकार दे दिया "।

" पूर्वपुरुषोने जिस कल्पना जालका विस्तारकर स्वजातिकी उन्नति करनेका विचार किया था, सूर्यमल्ल उस कल्पनाको कार्यमे परिणत करनेके लिये वलविक्रम साहस इत्यादि सभी गुणोसे विभूषित थे। सूर्यमल्लने पिताके पदपर स्थित हो सबसे पहिले भरतपुर नामक स्थान (जो स्थान पीछे जाटजातिकी विख्यात राजधानीरूपसे गिना गया और आजकल भी उसी अवस्थामे है) के अधिनायक अपने आत्मीय खेमाको युद्धमे परास्त कर भरतपुर पर अपना अधिकार करलिया "।

संवत् १८२० सन् १७६७ ईस्वी मे सूर्यमल्लने ऐसा साहस और ऊँची आभिलाषा प्राप्त की, कि उसने यवन सम्राट्की राजधानी दिल्लीतकके लूटनेका विचार किया, परन्तु उसका वह मनोर्थ पूर्ण न होसका, जिस समय यह शिकार खेलनेमे लग रहा था उस समय विल्लोचोके दलने आकर इसपर भयंकर आक्रमण किया, और उसके प्राणोका भी नाश किया। सूर्यमल्लके औरससे जवाहरसिह रतनसिह, नवलसिह, नाहरसिह और रणजीतसिह नामवाले पॉच पुत्र उत्पन्न हुए, इसके अतिरिक्त सूर्यमल्ल एक समय शिकार खेलनेको गये थे। वहॉ मार्गमे इनको हरदेवबक्श नामवाला एक सुकुमार वालक मिला था, इन्होने उसको भी पुत्ररूपसे ग्रहण कर पालन किया था। उक्त पॉच पुत्रोमे से पहिला और दूसरा पुत्र कुर्मीजातिकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। तीसरा पुत्र मालिनके गर्भसे उत्पन्न हुआ, और अन्यान्य दो पुत्र स्वजातीय जाटस्त्रियोके गर्भसे उत्पन्न थे।

सूर्यमल्लकी मृत्युके पीछे जिस समय जवाहिरसिह पिताके पदपर अभिषिक्त हुए उस समयमे ही माधोसिहके शिरपर आमेरका राजमुकुट शोभायमान हुआ। जवाहिरसिहने सिहासनपर बैठते ही माधोसिहके साथ शत्रुता की। उस शत्रुताका पहिला उद्देश तो यह था कि जिससे माधोसिह महाराष्ट्रोको परास्त न करसकै, और दूसरा उद्देश यह था, कि माधोसिह जयपुरके अधीन माचेरीके सामन्तको निकाल कर उस देशपर अपना अधिकार करले। माचेरीके सामन्तके पक्षका समर्थन करै। सन् ११८२ हिजरीमे जवाहिरसिह आमेरपतिके निकट वारम्वार प्रार्थना करने लगे, कि कामा नामक देश उनको दियाजाय परन्तु आमेरराज माधोसिहने उस प्रार्थना पर कुछ भी ध्यान न दिया। तव जवाहिरसिह आमेरपतिके साथ युद्ध करनेकी इच्छासे अवसरकी खोज करता हुआ शीघ्र ही जाटसेनाको सजाय गर्वमे भर जयपुर राज्यसे होकर पवित्र पुष्करतीर्थकी ओरको चला। राजाओमे ऐसा नियम प्रचलित है कि यदि एक राज्यका राजा अन्य राजाके राज्यमे होजाकर अन्यत्र जानेकी इच्छा करै तो पहिले उस राजाको समाचार देकर उसकी अनुमति लेनेके लिये प्रार्थना करनी होती है। परन्तु जवाहिरसिंहने उस समय उस नियमकी भी रक्षा न की, उन्होने आमेरराजके प्रति अवज्ञा प्रकाश कर विना ही आज्ञा लिये जयपुरसे पुष्करको गमन किया। जिस

समय जवाहिरसिह पुष्कर तीर्थपर गये उस समय उस तीर्थमे मारवाड़पति राजा विजयसिह भी उपस्थित थे । जवाहिरसिहके साथ विजयसिंहका साक्षात् हुआ । यद्यपि जवाहिरसिह जाटजातिसे उत्पन्न थे, तथापि सूर्यवंशधारी मारवाड़ राज विजयसिहने जवाहिरसिहके साथ जातीयरीतिके अनुसार पगड़ी वदलकर मित्रता की । इस समय आमेरेश्वर माधोसिह रुग्नावस्थामे थे, उनके और दो भ्राता हरसहाय और गुरुसहाय इनकी आज्ञासे राजकार्य करते थे, जिस समय उन दोनों भ्राताओने यह सुना कि जवाहिरसिह अहंकारमे भरकर बिना हमारी आज्ञा लिये जैयपुरराज्यसे चले गये है, तो दोनो भाइयोने यह समाचार माधोसिहसे कहा और पूँछा कि इस समय क्या करना उचित है ? यह सुनकर माधोसिहने अत्यन्त क्रोधित होकर कहा कि "जवाहिरसिहको इस प्रकारका एक पत्र लिखो कि वह पहिलेकी समान हमारे राज्यमे फिर न आवे और सामन्तोको सेना सजानेके लिये आज्ञादो। यदि जवाहिर गर्वित होकर पहिले हीकी समान फिर जयपुर राज्यमे आकर हमारा अपमान करै तो सामन्तगण सेना सहित उनपर आक्रमण करके उन्हे उचित दंड दे " । अतः तुरन्त ही माधोसिंहकी आज्ञानुसार कार्य कियागया । जवाहिरसिह भी डरनेवाला मनुष्य नही था, वह माधोसिहके साथ युद्ध करनेकी वह पहिलेहीसे राह देखरहा था, इस कारण माधोसिहके पत्रपर कुछ भी ध्यान न देकर वह पहिलेहीकी तरह पुष्करसे जयपुरको चला, जवाहिरके इस आचरणसे संग्रामका उपयुक्त कारण उपस्थित होगया इस कारण आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोने शीघ्र ही माधोसिहकी आज्ञानुसार स्वजातीय वलविक्रम प्रकाश करके वीर जवाहिरको दंड देनेके लिये प्रवल वेगसे आक्रमण किया । दोनो ओरसे भयंकर युद्ध होने लगा । यदि इस युद्धमे जाट नेता जवाहिरसिह पहले ही भाग जाते तो भी इसी कारणसे आमेरराजकी विजय होजाती, परन्तु आमेरके प्रायः सभी प्रधान २ सामन्त इस रणभूमिमे मारेगये " ।

इतिहास वेत्ता जाटजातिका शेष विवरण निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन करगये है,कि "जवाहिरसिहके परलोक चलेजानेपर उनके छोटे भ्राता रत्नसिह राजसिहासन पर वैठे । वृन्दावनके एक गोस्वामीके साथ इन जाटराजका विशेष परिचय हुआ । गोस्वामीने रत्नसिहसे कहा कि हम मंत्रोके वलसे अनेक उपाय करके निकृष्ट धातुको भी सुवर्ण कर सक्ते है । जाटराजने इनकी बातोपर विश्वास कर सुवर्णके लालचमें आ बहुतसे रुपये इनको दिये । गोस्वामीने इस प्रकार बहुतसे रुपये लेकर कहा कि अमुक दिन आपको यह सुवर्णके रुपये मिल जायँगे, क्रमानुसार जब उस पाखंडी गोस्वामीने अवधिका दिन निकट आया देखा तो उसने विचारा कि इस धोखेवाजीसे तो मेरेप्राणनाशकी संभावना है, इस कारण अंतमे उसने ही रत्नसिहके हृदयमे छुरी मारकर उनके प्राण लेलिये । रत्नसिह इस प्रकारसे मारेगये, उनके छोटे पुत्र केसरीसिह पिताके सिहासनपर वैठे, और केसरीके चाचा रत्नसिहके अनुज नवलसिह अपने भ्रातृपुत्रके नामसे राज्यशासन करते थे। केसरीसिहके पीछे रणजीतसिह जाटराजके पदपर अभिषिक्त हुए। इन रणजीतसिहने अपने वाहुवलसे भारतमे विशेष प्रसिद्धि

प्राप्त की । अंग्रेजसेनापति लार्ड लेकने इनके विरुद्ध भरतपुर पर आक्रमण किया, इन रणजीतसिंहने अमित तेज और बलविक्रमके साथ अपना प्रबल प्रताप प्रकाशित किया; भारतके इतिहासमे इनकी प्रशंसा भलीभांतिसे हुई है और अंग्रेज सेनापति भी उस प्रतापको देखकर अत्यन्त आश्चर्यमे होगया था। रणजीतसिंहने सन् १८२५ ईस्वीमे अपने प्राण त्याग किये। रणधीरसिंह, बलदेवसिंह, हरदेवसिंह और लक्ष्मणसिंह नामवाले रणजीतके चार पुत्र थे, इनमे रणधीरसिंह पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। पीछे रणधीरसिंह के कनिष्ठभ्राताके संरक्षक होनेसे रणधीरके छोटे पुत्र भरतपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। अंग्रेजोकी सेनाने उनको भगानेके लिये फिर बडे समारोहके साथ भरतपुर पर आक्रमण किया, और बहुत समय तक किलेको घेरकर अंतमे विजय प्राप्त की, इसी कारणसे उस विजयी सेनाने भरतपुरके खजाने और प्रजाकी सारी धनसम्पत्तिको लूट लिया ”।

अब आमेरके इतिहासका अनुसरणकरते है, कर्नल टाड् जाटजातिके वृत्तान्तको वर्णन कर अंतमें लिखते हैं कि “ जाट नेताके साथ आमेर राज्यका उक्त समर ही माचेरी देशके परिणाममे सम्पूर्ण स्वाधीनता प्राप्तिका प्रत्यक्ष मूलकरण था, यह कईएक बातोसे जाना जाता है। नरूका संप्रदायके प्रतापसिंह आमेरराजके अधीनमे माचेरीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे, किसी बड़े अपराधसे आमेरपति माधोसिंहने प्रतापसिंहको निकालकर माचेरीको अपने हस्तगत करालिया था । प्रताप निकाले जाकर जाटराज जवाहिरसिंहकी शरणमे गये, उन्होने इनको आश्रय देकर उनके पदोचित सम्मानकी रक्षाके लिये अपने राज्यमे थोड़ीसी जमीन देदी । माचेरीके निकालेहुए सामन्त प्रतापसिंहके कार्याध्यक्ष पदपर खुसहालीराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ और जयपुर दरबारमे दूतके पदपर नंदराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ । प्रतापके निकलते ही इन दोनोने उसके साथ जाटभूमिमे आश्रय लिया । यद्यपि प्रतापसिंह खुसहालीराम और नंदराम जाटपतिकी कृपादृष्टिसे निर्विघ्न होकर भरतपुरमे रहते थे, और जाटराजकी दी हुई पृथ्वीसे अपना जीवन व्यतीत करते थे, परन्तु इनके हृदयमे उस समय भी जातीयगर्व इतना प्रकाशमान था, कि वह स्वजातिके सम्मानकी रक्षाके लिये सर्वदा उत्कंठित रहते थे, और स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान जानते थे, यहाँतक कि जिस समय जाटपति जवाहिरसिंह अपनी सेना साथ लेकर आमेरसे पुष्करको जा रहे थे, उस समय उन्होने जवाहिरसिंहके इस गर्वित आचरणसे अपना अधिक अपमान माना और वह शीघ्र ही जाटराजका आश्रय और भूवृत्तिकी ओर अवज्ञा प्रकाश करके फिर जातिके सम्मानकी रक्षाके लिये आमेरको चलेगये । जिस दिन आमेरकी सेनाके साथ जाटोकी सेनाका घोर युद्ध उपस्थित हुआ था, प्रतापसिंह उसी दिन अपनी सेना साथ ले आमेरपतिकी ओर जाकर जाटोकी सेनाका नाश करने लगे। युद्धमे जाटराज पराजित होगया। प्रतापसिंहको आमेर पतिने बडे सम्मानके साथ ग्रहण किया । यद्यपि आमेरपति उक्त समरके पाच चार दिन बाद तक जीवित रहे थे, परन्तु उन्होने प्रतापसिंहको स्वजाति का वात्सल्य और राज्यभक्ति देखकर उन्हे क्षमा किया, और उनका पूर्व-

अधिकारी माचेरी देश फिर देदिया ।” प्रतापसिंहके इस आचरणसे यद्यपि आश्रय दाता जाटोंके साथ उनका युद्ध होताहुआ देखकर किसी२ ने उनको अकृतज्ञकी उपाधि दी थी, परन्तु इस बातको हम कहसकते हैं कि स्वजाति वात्सल्य उनके हृदयमे इतना प्रवल था कि स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान हुआ जानते थे, तथापि जन्मभूमिके उपयुक्त पुत्रके कर्तव्य पालनके लिये उन्होंने अकृतज्ञकी उपाधि धारण करनेपर भी दु:ख न माना। प्रतापसिंहका ऐसा आचरण स्वजाति वात्सल्यका उज्वल निदर्शन है।

सत्रह वर्षतक राज्य करके माधोसिंह उदरामयरोगसे उपरोक्त युद्धके चारदिन उपरान्त परलोकवासी हुए। विजातीय राजनीतिज्ञ टाड् साहब लिखते है, “यदि माधोसिंह कुछ कालतक और जीवित रहते तो जो इस विषमय युद्धके पीछे आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए थे और उनको अनिष्ट फल भोगने पड़े, वह यथाशक्ति उस समरके शोचनीय फलको अवश्य ही दूरकर सकते थे, परन्तु उनके पुत्रकी शैशव अवस्था थी इस हेतु राजमे राजाके न होनेसे उनके उस मृत्यु समयसे कछवाहे राज्यके शासनकी सामर्थ्य एकवार ही क्षीण होनेलगी। उन्होंने कई नगर बनाये थे, इनमेंसे सबसे श्रेष्ठ रजवाड़ेमे वाणिज्यका प्रधान स्थान रणथंभोरके प्रसिद्ध किलेके निकट अपने नामसे माधोपुर नामका एक रमणीक नगर स्थापन किया। उन्होंने ज्योतिष विद्यामे पारदर्शी अपने स्वर्गीयपिता सवाई जयसिंहके गुणोमेसे एक पर भी अधिकार नही किया। उनके राज्यके समयमें जयपुरमे अनेक देशोसे इतने पंडित आया करते थे कि जिससे पवित्र वाराणसीके पंडितोका गौरव भी प्रभाहीन होगया था”।

माधोसिंहके औरससे दोनो रानियोके गर्भसे पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। माधोसिंहके स्वर्ग चले जानेपर, व्यवहारोको न जाननेवाले कुमार पृथ्वीसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। पृथ्वीसिंहकी माता छोटी रानी और प्रतापसिंहकी माता पटरानी थी। इस कारण प्रतापकी माता ही पृथ्वीसिंहके अभाविकास्वरूपसे राज्य करने लगी। साधु टाड् साहब लिखते हैं, “कि चन्द्रावतवंशमे उत्पन्न पटरानी प्रभुत्वके चलानेकी अभिलाषिणी तथा दृढ़प्रतिज्ञ स्त्री थी परन्तु वह फीरोजनामक महावतको उपपति पदपर वरण करके अत्यन्त कलंकित हुई। रानीने फीरोजको राजसभाके सदस्यपदपर नियुक्त किया इससे समस्त सामन्त विरक्तहो राजधानी छोड़कर अपने अपने अधिकारी देशोको चले गये और वहीं रहने लगे। रानी उन सामन्तोकी सहायता न लेगी यह विचार कर धनके लोभी विख्यात महाराष्ट्रोंने अम्बाजीके आधीनमे एक वेतनभोगी सेना नियुक्त की, और उसके द्वारा राजस्वका संग्रह किया। इस समय आरतराम नामका एक मनुष्य आमेरके दीवान वा प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था और खुशहालीराम बोरा जो परिणाममे आमेरकी राजनैतिक रंगभूमिमे प्रस्थान हुआ था, वह उसी मंत्री समाजमे नियुक्त था, यद्यपि यह अति ऊंची श्रेणीका नीति जाननेवाला था, परन्तु फीरोजके प्रभुत्व और प्रबलताने इसको भी एकवार ही सामर्थ्यहीन करदिया। फीरोज उस

राजरानी और राज्यके ऊपर पूरा आधिपत्य रखता था। क्रमानुसार नौ वर्षतक आमेरका राज्य घृणितभावसे चला, नौ वर्षके उपरान्त आमेरपति पृथ्वीसिंह घोड़ेपरसे गिरकर परलोकवासी हुए,परन्तु उस समय सर्वसाधारणके हृदयमें इस प्रकारका प्रवल सन्देह उपस्थित हुआ कि पटरानीने अपने पुत्र प्रतापसिंहको राज्यपर बैठालनेकी अभिलाषासेही पृथ्वीसिंहको विष देकर मरवाडाला है। यद्यपि यह रानी मृत माधोसिंहकी पटरानी थी, परन्तु पृथ्वीसिंहकी मृत्युसे जिनके स्वार्थके सिद्ध होनेकी संभावना थी उनको अविभाविका पदपर नियुक्त करनेसे सामान्य बुद्धिका भी अपमान किया गया था। पृथ्वीसिंह यद्यपि राजकार्यको नहीं जानते थे; यद्यपि वह पटरानीकी शासनशृंखलाको दूर नहीं करसके परन्तु उन्होंने उस अज्ञान अवस्थामें ही बीकानेर और कृष्णगढ़की राजकुमारियोंका पाणिग्रहण किया था। कृष्णगढ़की राजनंदिनीके गर्भसे पृथ्वीसिंके औरससे मानसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह शिशु मानसिंह बहुत दिनोंतक आमेर राजवंशके कंटकस्वरूप थे, पिताके मरजाने पर इनकी माता गुप्तभावसे इनको कृष्णगढ नानाके यहाँ भेज देती परन्तु उसने देखा कि यह वहाँ भी निर्विघ्नतासे न रह सकैगा इस कारण इनको अपने साथ लेकर वह सिंधियाके डेरोमें चली गई, और उसी दिनसे यह सेंधियाके ग्वालियोंके द्वारा पालेगये"।

पृथ्वीसिंहके अकालमें ही स्वर्गवास होनेपर आमेरके सूने सिंहासनपर सरलतासे पटरानीके प्यारे पुत्र प्रतापसिंह बैठे। खुशहालीराम इस समय राजाकी उपाधि प्राप्तकर तथा आमेरके प्रधान अमात्य पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अभिषेकके समयमें भलीभांतिसे सहायता की। राजा खुसहालीराम प्रधान मंत्रीपदको पाकर राज्यमें धीरे २ अपनी प्रवलताका विस्तार करता था, वह इस सुअवसरको पाकर क्रमक्रमसे अपने शत्रु फीरोजकी शासन शक्तिको एकवार ही लोप करनेके लिये विशेष चेष्टा करने लगा। वास्तवमें राजा खुसहालीराम अपना वह गुप्त मनोरथ पूर्ण करनेके लिये जिन २ उपायोंको करता था उन्हीं उपायोंसे उसके पूर्वतन प्रभु माचेरीके सामन्तको सम्पूर्ण स्वाधीनताका सुअवसर उपस्थित करादिया। प्रतापसिंहके अभिषेकके समयमें आमेरके समस्त सामन्त यथानियम महलमें उपस्थित थे, केवल उक्त माचेरीके सामन्त उनमें नहीं थे, ऐसा विदित होता है कि राजा खुसहालीरामने फीरोजकी सामर्थ्य लोप करनेकी इच्छासे विशेष चेष्टा करके राज्यमें विप्लव उपस्थित कर दिया था, और उसने उक्त सामन्तको गुप्तभावसे अनुरोध किया था, कि वह इसीसे अभिषेककी सभामें नहीं आये। दूसरे पक्षमें उनके अभावसे जिससे प्रजामें कष्ट उपस्थित हो, इस अभिप्रायसे उक्त राजमंत्रीने गुप्तभावसे राज्यके जिमींदारोंको यह अनुरोध कर भेजा, कि जिससे

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "इनके भाग्यमें दो या तीन बार आमेरके सिंहासनकी प्राप्तिका अवसर मिला सेन्धियाके साथमें रहकर अंग्रेज रेसिडेण्टने सन् १८१२ ई०की २१ वीं मार्चको [illegible] गवर्नमेण्टको जो पत्र लिखा था उसे देखो। सन् १८२० ई०में जयपुरके सामन्त जिस समय राजा जगतसिंहके आचरणोंसे कुपित हुए थे उस समय तथा उक्त राजाकी मृत्युके समयमें मानसिंहको सिंहासन प्राप्ति होनेकी संभावना थी।

वह राजाको कर न दे, इतना करके भी खुसहालीरामको संतोष न हुआ, वह राजनीति मे चतुर था, इस कारण अपना मनोरथ पूर्ण करनेके लिये मुगल सिंहासनपर विराजमान वादशाहका आश्रय लेनेके लिये दिल्ली गया। इसने विचारा कि सम्राट्की सभामे अपना प्रभुत्व चलते ही तत्काल फीरोज़रूपी कॉटा सरलतासे उखाड़ दिया जायगा।

इस समय नजफखा दिल्लीश्वर सम्राट्के प्रधान सेनापति थे। इस समय नवीन बलको पाकर जाटोने अतुल पराक्रमके साथ आगरे पर आक्रमणकर अपने अमित तेजको प्रकाशित किया था। प्रधान सेनापति नज़फ़खॉ वादशाहकी आज्ञासे उस कठिन जाटोकी सेनाको आगरेसे भगानेके लिये वादशाहकी सेना लेकर महाराष्ट्रोकी सेनाका सयोगकर रणभूमिमे गये। राजनीतिमे कुशल खुसहालीरामने यह सुअवसर देखकर शीघ्र ही अपने पूर्व प्रभु माचेरीके सामन्तसे कहला भेजा, वह उसी समय सेना साथ ले वादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ मिलकर जाटोके साथ युद्धकरने लगे। वादशाहकी सेना जिस समय महाराष्ट्रोकी सेनाके साथ जाटोको आगरेसे भगा उनकी राजधानी भरतपुरपर आक्रमण कर रही थी उसी समय माचेरीके सामन्त राजा खुसहालीरामकी सम्मतिसे आवश्यकता न होनेपर भी सेना लेकर नजफखॉके साथ जा मिले। इस समय जाटोके नेता पदपर नवलसिंह थे। मिलीहुई सेनाने जाटोपर प्रबलवेगसे आक्रमण करके उन्हे एकवार ही परास्त करदिया। इसयुद्धमे माचेरीके सामन्तने प्रवल पराक्रम करके सम्राट्का विशेष उपकार किया इससे वादशाहने प्रसन्न होकर इनको रावराजाकी उपाधि दी, और जयपुरके राजाकी आधीनतामे न रहकर स्वाधीन भावसे सम्राट्के आधीनमे माचेरीके शासनके लिये एक सनद भी लिख दी, इस प्रकारसे माचेरीके सामन्त स्वाधीन राजपदपर प्रतिष्ठित हुए।

राजा खुसहालीरामने जो अपने प्राचीन प्रभुके सौभाग्यको बढ़ानेके लिये उपरोक्त प्रकारका मार्ग साफकर दिया था, उन्होने भी अपने पूर्वतन प्रभुकी सफलता प्राप्तिके लिये उसी प्रकारके उपायसे अपने शत्रु फीरोज़का नाश करनेके लिये संकल्प किया। राजा खुसहालीरामने आवश्यकता न होनेपर भी इस समय आमेरके समस्त सामन्तोके साथ सम्राट्की सेनाके साथ मिलनेकी तैयारीकी, पटरानीने राजा खुसहालीराम वोराके उक्त प्रस्तावमे कुछ भी आपत्ति न की वरन वह इस उपायसे सम्राट्को सतुष्ट करनेके लिये फीरोजमहावतका राजपद और सम्मानके वढ़ानेकी अभिलाषिणी हुई। सदस्य राजा खुस हालीरामने स्वयं आमेरकी सेनाके नेतारूपसे जानेकी इच्छा की थी, परन्तु पटरानीने उसके बदलेमे फीरोजको ही इस पदपर नियुक्त करके खुसहालीरामके साथ भेजदिया। अभागा फीरोज़ ही इस ऊँचे पदको पाकर उनका कालस्वरूप होगया। फीरोज आमेरके प्रधान सेनापतिरूपसे माचेरीके रावराजाके साथ समान सम्मान पाकर बादशाहके प्रधान सेनापतिके डेरोमे गया। माचेरीके रावराजा खुसहालीरामके साथ गुप्त षड्यंत्र करके जिस उपायसे फीरोज़को दूर करके आप आमेरराज्यके सर्वमय कर्ताहोनेके अभिलाषी हुए थे, वर्तमान समयमें उनकी वह कल्पना सफल होती हुई

न देखकर माचेरीके अधिनायकने अपने सहयोगी खुसहालीरामके साथ परामर्शकर दूसरा उपाय शोचा, मधुर संभाषण, प्रीतिभरे वचन तथा सौजन्यता दिखाकर सबसे पहिले फीरोज़का विश्वासपात्र बनकर मित्र होनेकी चेष्टा करनेलगा, शीघ्र ही उसकी वह चेष्टा सफल होगई। फीरोज़ने रावराजाको अपना परम मित्र जाननेमे कुछ भी संदेह न रक्खा। रावराजाने इस प्रकारसे फीरोज़को अपने हस्तगत कर शीघ्र ही विष देकर उसके प्राण लेलिये, कॉटा निकल गया, इसके उपरान्त माचेरीके अधीश्वर रावराजाने खुसहालीरामके साथ मिलकर आमेरके शासनकार्यका भार लिया।

फीरोज़की मृत्युके कुछ ही समयके उपरान्त हतभागिनी पटरानीने भी अपने प्राण त्याग दिये। प्रतापसिहकी अवस्था इस समय बहुत थोडी थी, इस कारण वह विना दूसरोकी सहायताके राजकार्य नही करसकते थे। माचेरीके रावराजा और राजा खुसहालीराम यद्यपि पहिलेसे ही दोनो एक मत होकर एक कार्यको साधन कर अर्थात् अपने २ स्वार्थके लिये राजनैतिक रंगभूमिमे चातुरीजालका विस्तार करते आये थे, परन्तु दोनो ही उच्चशासनकी सामर्थ्यके लालची होनेसे शीघ्र ही महाविपत्तिमे पडे, खुसहालीरामकी प्रार्थनासे शीघ्र ही विख्यात योधाहमदानीखॉके आधीनमे एक सम्राट्की सेना आमेरमे आयी, क्रमसे राज्यमे भयकर आत्मविग्रह उपस्थित होता हुआ दिखाई दिया। बादशाहकी सेनाको आमेरसे भगानेके लिये अतमे एक पक्षने महाराष्ट्रोके साथ सधि करनेका विचार किया। एकदिन संधि होगई, दूसरे दिन दिन फिर वह सधि तोड़ दीगई। इस प्रकारसे कुछ समयतक राज्यमे महा अशान्ति अत्याचार और रुधिर बहता रहा, जब प्रतापसिंह समर्थ होगये तब उन्होने राज्य अपने हाथमे लिया। महाराज प्रतापसिहने राज्यभारको अपने हाथमे लेकर समस्त विपत्तियोको छिन्नभिन्न करदिया, और दोनो सम्प्रदायोके पापकी आशा व्यर्थ करके महाराष्ट्रोको दमन करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की।

इस समय अत्याचारी महाराष्ट्रोने भारतके प्रत्येक प्रान्तमे भयकर अत्याचार करने आरभ करदिये थे, उनके इस उपद्रव और अत्याचारोसे समस्त भारतवर्ष कपायमान होगया था। महाराष्ट्रोने रजवाडेके राज्योपर भी वारम्वार आक्रमण करके वहॉकी समस्त धन सम्पत्ति लूट ली थी, आमेरपति प्रतापसिहने सिहासन पर बैठते ही असीम साहसके साथ अपनी नीतिज्ञता दिखानी प्रारभ की। वह इस बातको भली भांतिसे जानगये कि यह महाराष्ट्र किसी भातिसे भी पंगपालको विध्वंस नहीं कर सकेंगे, परन्तु किसी प्रकार आमेर राज्यका नही वरन् अब समस्त रजवाडेका मगल भी नहीं है। इस समय सन् (१७८७ ईसवी) मे मारवाड़के सिहासन पर महाराज विजयसिह विराजमान थे, प्रतापसिहने मारवाड़राजके पास एक दूतके हाथ पत्र लिखकर भेज दिया—" यह भयकर अत्याचारी महाराष्ट्र हमारे प्रति शत्रुस्वरूप अत्यन्त हृदयभेदी अत्याचारोसे हमें पीडित कर रहे है इस कारण उनको दमन करना हमारा परम कर्तव्य है, और उन शत्रुओंको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजा, मिलकर युद्धमे

उन्हे परास्त करके निश्चिन्ततासे राज्य करे। मैने स्वयं रणभूमिमे जाकर महाराष्ट्रोको उचित दंड देनेकी अभिलाषा की है, इस कारण आप यदि राठौर सेनाको हमारी सहायताके लिये भेज दे तो सरलतासे हम अपनी जातिके शत्रुदलके गर्वको एकवार ही चूर्ण करके रजवाड़ेको निष्कंटक करदे।" मारवाड़पति महाराज विजयसिहने अपने स्वजातीय भ्राताका यह त्रप पातेही शीघ्रतासे उनकी सहायता करनेके लिये तैयारीकी, एक समय इससे पहिले विजयसिहने महाविपत्तिमे पड़कर महाराष्ट्रोके नेताको अपने अधिकारका अजमेर दुर्ग देदिया था। इस समय वह प्रतापसिहको विशेष उद्योगी देखकर साहसके साथ उनकी सहायता करके महाराष्ट्रोके हाथसे फिर अजमेरको छीननेके लिये आगे बढ़े, शीघ्र ही मारवाड़की सेना सजाई गई। महाबलवान् राठौर सामन्त जवानदासने मारवाड़की सेनाके नेतास्वरूपसे आमेरराजके अधीनस्थ चमूदलके साथ जाकरमेल किया।

तुंगानामक स्थानमे महाराष्ट्रोके नेता सेधिया और उनके शिक्षित फरासीसी सेनापति डिवाइनने प्रबल वेगसे मारवाड़ और आमेरकी मिलीहुई सेना पर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई। एक ओर जिस भॉति राजपूतोकी सेना स्वजातिके शत्रु महाराष्ट्रोका नाश करनेके लिये प्राणपणसे युद्ध करने लगी, उसी प्रकार दूसरी ओर नवीन बलसे बलवान हुए महाराष्ट्र भी अपनी स्वभाव–सिद्ध तस्करता और लूटमारकी वृत्तिको अक्षयकरनेके लिये यथाशक्ति वीरता दिखाने लगे। बहुत देरतक युद्ध होनेके उपरान्त सेधिया परास्त होगया, और समस्त अस्त्र शस्त्र तथा द्रव्योको रणभूमिमे छोड प्राण लेकर भाग गया[1]। विजयी राठौर और कछवाहोकी सेनाने आनंदित होकर उन समस्त द्रव्योको परस्परमे बॉट लिया। महाराज प्रतापसिहने स्वयं रणक्षेत्रमे सेना चलाई थी, इस कारण उनके पक्षमे यह विजय विशेप प्रशंसित विचारी गई। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि सन् १७८९ ईस्वीमे इस तुंगाके युद्धमे विजय प्राप्तकर महाराज प्रतापसिहने एक बड़ा उत्सव करके दीन दु:खियोको २४ लाख रुपये दान किये थे।

इस तुंगाके समरमे विजय होनेसे आमेरराज प्रतापसिहके यशका गौरव समस्त रजवाडेमे फैलगया, और वह अपने पूर्णप्रतापसे पिताका राज्य करने लगे, आमेरमे फिर शान्तिमती देवी नृत्य करने लगी, प्रजाने अत्याचारोसे उद्धार पाकर निर्विघ्न हो संतोपके साथ प्रतापसिहके न्यायमूलक राज्यमे फिर अपनेको उस शोचनीय अवस्थासे बदला हुआ देखा। परन्तु राजपूतजातिके भाग्यका चक्र एकवार ही बदल गया था, वह शान्ति अधिक दिनतक स्थिर न रहसकी यद्यपि माधोजीसेधिया तुंगाके युद्धमे परास्त होकर भागगया था, परन्तु कईवर्पके पीछे वह फिरसे मारवाड़ेको विध्वंस करनेके लिये चला।

प्रतापसिहकी सम्मतिसे मारवाडके राजा विजयसिहने अपनी सेनाको तुंगारके युद्धमे भेजदिया था, इस समय माधोजी सेधिया फिर बदला लेनेके लिये बहुतसी

(१) इस युद्धका वर्णन राजस्थानके प्रथम काडके ३२ अध्यायमे लिखा गया है।

सेना साथ लेकर आ रहा है यह समाचार सुनते ही महाराज विजयसिंहने आमेरपति प्रतापसिंहसे सेनाकी सहायता पानेके लिये दूतके द्वारा कहला भेजा, वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहने तुरन्त ही अपनी सेनाको महाराष्ट्रोका दमन करनेके लिये मारवाड़को भेज दिया, परन्तु दुःखका विषय है कि मारवाड़ और आमेरकी सेनाने यद्यपि मिलकर युद्ध किया, परन्तु राठौरोंके कवियोंने इस समय आमेरकी सेनाको निन्दनीय वताकर गीतोंमे रचना की इससे आमेरकी सेना स्वजातिका अपमान जान शीघ्रतासे राठौरोकी सेनासे अलग होगई। उस संगीतके कारण राठौरोके ऊपर आमेरकी सेनाका इस प्रकारसे जाति क्रोध उपस्थित हुआ कि वह उस समय जातिके परम शत्रु महाराष्ट्रोको दमन करना भी भूलगये, और राठौरोको विपत्तिमे डालनेके लिये तैयार हुए। इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि आमेरका सेनापति गुप्तभावसे महाराष्ट्रोके साथ मित्रता करके दूर रहने लगा था, रठौर इस समाचारको कुछ भी नहीं जानते थे। इसके पीछे पातन नामक स्थानमे जाकर राठौरोकी सेनाने पहलेकी समान प्रवल विक्रमके साथ महाराष्ट्रोपर आक्रमण किया। कछवाहोकी सेना इनको सहायता न देकर इकली खड़ी रही। राठौर गण उस समय इस गुप्त रहस्यको जान गये थे, परन्तु वे युद्धसे विमुख न हुए, अतमे महाराष्ट्र नेताको जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ। यद्यपि इस पातनके युद्धमे कछवाही सेनाकी सहायताके विना राठौर परास्त होगये, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि महाराज प्रतापसिंह अपनी सेनाके ऐसे व्यवहारसे दुःखी हुए थे, यदि प्रतापसिंह पहिलेकी समान इस समय भी स्वयं रणक्षेत्रमे चले जाते तो आमेरकी सेना इस प्रकारके जातीय कलंकको न सहकर गौरव वढा सकती थी।

इतिहास वेत्ता टाड् साहव लिखते है, "कि पातनके युद्धमे पराजय और राठौरोके साथ सधि टूटनेपर सन् १७९१ ईसवीमे तुकाजी हुलकरने जयपुरपर आक्रमण करके प्रतापसिंहको परास्त किया और उनसे वार्षिक कर लेना स्वीकार कराया। वह कर अंतमे अमीरखाँको मिला। उस समयसे प्रतापकी मृत्युके समय अर्थात् सन् १८०३ ईसवी तक जयपुर राज्य वडी दुर्दशामे रहा, एक तरफ महाराष्ट्र दूसरी ओर फरासीसी अपने २ अधिकारके लिये परस्पर लड़कर प्रजाका सत्यानाश करते रहे।

कर्नल टाड् महाराज प्रतापसिंहके शासनके सम्बन्धमे लिखते हैं, "कि इनके राज्यकी प्रत्येक घटनाका विवरण वर्णन करनेमे यवनराज्यकी अंतिम अवस्थाका इतिहास फिर वर्णन करना होगा, प्रतापसिंहने पचीस वर्षतक राज्य किया। उस समयसे ही वह और उनका राज्य भिन्न अवस्थामे पड़ा। वह एक साहसी राजा थे उनका बुद्धिवल भी कुछ कम नहीं था, परन्तु इनके साहस और बुद्धिके विचारोंसे अगणित लूटप्रिय तस्कर और आभ्यन्तरिक अनैक्यताके विरुद्धमे इस सामान्य शक्तिके प्रयोग से कभी भी सफलता प्राप्त न होसकी। माचेरी देशकी स्वाधीनता प्राप्तिमे जयपुरके राज्यकी आमदनी वहुत घट गई थी, और प्रतापसिंहके पूर्व पुरुषोंने जो अगणित धन

हरण किया था, महाराष्ट्र इत्यादिकोको एक २ वारमे कई २ लाख रुपये देनेसे वह धन भी शीघ्र ही समाप्त होगया, महाराष्ट्रोके तस्कर दलने उस समय जयपुरसे अस्सी लाख रुपये ग्रहण किये, परन्तु आमेरके खजानेमे इतना अधिक धन था कि माधोसिहने पिताके सिहासनपर बैठनेकी इच्छासे मुट्ठी भर २ कर धनकी वर्षा की थी परन्तु तव भी महाराज प्रतापसिहने तुंगाके युद्धमे विजय पाकर आनंदित हो चौवीस लाख रुपये खर्च किये "।

पूर्वोक्त वृत्तान्तसे यह भलीभॉति प्रमाणित होता है कि दिल्लीके यवन राज्यका नाश करनेके समयमे महाराष्ट्र और जाटजाति नवीन वल पाकर भारतवर्षकी रगभूमिमे नवीन राजनैतिकताका अभिनय कररही थी। उस अभिनयके फलस्वरूप यवनराज्यकी शक्ति एक साथ ही तेजहीन होगई, और उसके साथही साथ प्राचीन राजपूतराज्यके सुख शान्तिके मार्गको वंदकर राजपूत जातिके सौभाग्यका द्वार भी एक वार ही वंदकर दिया। कुछ समयके उपरान्त पिडारोके दलने फिर मस्तक उठाकर राज्यमे अराजकता वढ़ानेके लिये रंगभूमिमे दर्शन दिया, परन्तु इसका अंतिम फल यह हुआ कि मुगलराज्यका एकवार ही लोप, महाराष्ट्रोके प्रवल वेगकी गतिका रुकना, जाटजातिकी गतिरोध, पिडारोको उचित दंड, राजपूतोकी जातीय जीवनी शक्तिकी कमी, और अतमे क्षुद्रद्वीप वासी अंग्रेजोकी विजय आदिसे भारतवर्पमे नवीन राज्यकी सृष्टि और नवीन युगका प्रारंभ हुआ। राजनीतिमे चतुर महात्मा टाड् साहव ठीक ही कह गये है, कि जव चारोओरसे अनेक जातियोने लूटना पीटना आरंभ करादिया तव जयपुरकी समान छोटेसे राज्यके अधीश्वर कभी भी उनके वेगको निवारण न करसके। जातिकी अनैक्यता ही केवल आमेरके पतनका कारण नही थी, पिडारे, जाट इत्यादिके निरन्तर आक्रमणसे रजवाड़ेके अन्यान्य राज्योकी तरह आमेरकी भी अवनति होगई। यदि इस समय मेवाड़,मारवाड़, आमेर, वीकानेर, जयसलमेर इत्यादिके राजपूत राजा एकमत होकर जातीय प्रेमसे मतवाले हो रणभूमिमे सिहनाद करतेहुए सम्मुख होते, तो कभी भी महाराष्ट्र और पिंडारे रजवाड़ेकी ऐसी शोचनीय अवस्था नही करसकते थे। तुगाके युद्धमे इकले प्रतापसिहने ही केवल मारवाड़ सेनाकी सहायतासे महाराष्ट्रोके नेताको परास्त करदिया था। तव यदि वह इस पातनके युद्धमे भी उपस्थित होते, यदि राठौरके कवि अपनी दुर्वुद्धिवश जयपुरकी सेनाके विरुद्धमे इस प्रकारके ग्लानिसे भरेहुए गीत वनाकर जातिमे विद्वेष उत्पन्न न करते, तो अवश्य ही सेंधियाका सर्वदाके लिये पतन होजाता।

यद्यपि ईश्वरीसिहके राज्यके समयसे महाराष्ट्रोके दस्युदलके साथ, आमेरका प्रथम सयोग सूचित होता है, यद्यपि माधोसिहके शासन समयसे महाराष्ट्रोने आमेरसे वहुतसा धन संग्रह कर लिया यद्यपि प्रतापसिहके शासन समयमे महाराष्ट्रोको एकवार ही आमेरसे निकाल दिया गया था। परन्तु यह वात अवश्य ही माननी होगी कि प्रतापसिहने तुंगाके युद्धमे सेन्धियाको परास्त करके विशेप प्रशंसा प्राप्त की थी। प्रतापसिह एक महावीर और वुद्धिमान राजा थे, टाड् साहवने इस वातको मानलिया है कि केवल कालके वशसे ही उनकी वह प्रतिज्ञा और वीरता आमेरकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेमे समर्थ न हुई।

चतुर्थ अध्याय ४.



महाराज जगत्सिंहका सिंहासनपर बैठना–महाराष्ट्रके अत्याचारोंसे राजपूत राज्यका निग्रह भोग–वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराज जगत्सिंहका प्रथम संधिका प्रस्ताव–संधिबंधन–संधिपत्र–संधिभंगके लिये अंग्रेज गवर्नमेण्ट जनरलकी आज्ञादेना–हुलकरके विरुद्ध जगत्सिंहका अंग्रेज सेनापति लार्डलेकके साथ योग देना–जगत्सिंहके संधिपालन करनेपर भी अंग्रेज गवर्नमेण्ट का पूर्वसंधिका नाश करना–महाराज जगत्सिंहका दूसरा राजनैतिक अभिनय–मेवाडके राणाकी कन्या कृष्णाकुमारीके साथ विवाह करनेके लिये जगतसिंहका मेवाड़को उपहार द्रव्य भेजना–मार वाडपति मानसिंहका उन समस्त द्रव्योंको लूटना–मानसिंहके आचरणसे जगत्सिंहका क्रोध–सेन्धिया–मानसिंहके विरुद्ध जगत्सिंहका युद्ध–पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहका जगत्सिंह के साथ योगदान–जयपुरमें लक्षाधिक सेनाका संग्रह–मानसिंहके साथ युद्ध–मानसिंहका भागना–जगत्सिंहका जोधपुरकी राजधानीको लूटना–जोधपुरके किलेका घेरना–अमीरखाँका जयपुरपर आक्रमण–जगत्सिंहका रणस्थल छोड़कर कलंकित होकर अपने राज्यमें भागना–महाराष्ट्रोंका जयपुर पर आक्रमण–चौथ ग्रहण–अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ दूसरी बार संधिका विचार–संधि करनेमें जगत्सिंहको आपत्ति–संधिबंधन–संधिपत्र–जगत्सिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें टाड् साहबका मन्तव्य–जगत्सिंहकी मृत्यु–मोहनसिंह–मोहनसिंहके अभिषेक सम्बन्धी षड्यंत्रसे अंग्रेजोंके योगदानका विषमय फल–राजसिंहासनाधिकारीका निर्णय करना–राजपूतरीतिके बिना जाने शोचनीय फल–मोहनसिंहको जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेसे राजपूतरीतिका अपमान–प्रचलित रीतिके नाशका कारण–उसके सम्बन्धमें वृटिश कर्मचारियोंका आचरण–मोहनसिंहके अभिषेकमें यथार्थ सिंहासनाधिकारीका आपत्ति करना–नाजिरका विपत्तिमें पड़ना–जातीय युद्धकी सम्भावना–जगत्सिंहकी विधवा रानीका एक पुत्र उत्पन्न करना–समस्त उपद्रवोंकी शान्ति–जयसिंहका जन्म–

महाराज प्रतापसिंहके स्वर्ग चले जानेपर जगत्सिंह आमेरके राजसिंहासन पर विराजमान हुए। इतिहासवेत्ता टाड् साहब आमेर राज्यवंशके प्रत्येक राजाके राज्यका इतिहास वर्णन करगये हैं, परन्तु अत्यन्त शोकका विषय है कि उन्होंने महाराज जगत्सिंहके राज्यको इतिहासमें वर्णन नहीं किया। उनके नेत्रोंके सम्मुख जगतसिंहका शासन अत्यन्त कलंकमय था, जगत्सिंहके चरित्र घृणित विचार कर ही उन्होंने अपने इतिहासमें उनका वर्णन नहीं किया। परन्तु हम उनकी इस नीतिका अनुसरण नहीं कर सकते, जब किसी राजवंशके इतिहासको लिखनेके लिये बैठते हैं तो उसके कैसे भी आचरण क्यों न हों इतिहास लेखकको उन सबका लिखना कर्तव्य है। लेखकका किसीके प्रति उपेक्षा दिखानी उचित नहीं। इसी कारणसे हमने जगत्सिंहके शासन समयके वृत्तान्तको इतिहासमें लिखना किसी भाँति भी अयोग्य न समझा। कर्नल टाड् साहब महाराज जगत्सिंहके शासनके सम्बन्धमें कई एक कथाएं लिख गये हैं, उन्हें हम सबसे पीछे वर्णन करेंगे। पहिले महाराज जगत्सिंहके ही शासन सम्बन्धी कई एक प्रधान २ घटनाओंका वर्णन करते हैं।

सवाई महाराज जगत्‌सिहने सन् १८०३ ई० मे अपने मस्तक पर आमेरका राजमुकुट धारण किया। इस समय एक आमेर ही नही वरन समस्त राजपूतराज्य अवनतिकी अवस्थाको पहुँच गये थे। यद्यपि दुराचारी औरगजेबके शरीर त्यागनेके उपरान्त रजवाडेके समस्त राजाओने सुअवसर पाकर अपने राज्यकी सीमा तथा जातीय बलको बढा लिया था, परन्तु यवनराज्यके पतनके साथ ही साथ महाराष्ट्रोके उदयसे राजपूत राज्योकी वह क्षणिक सुखशांति और राजनैतिक ख्याति अवनति अवस्थामे पलट गई।

यद्यपि एक २ यवन सम्राट् पिशाच स्वरूप धारण करके समय समयपर राजपूतराज्योको विध्वस किये देते थे, परन्तु उससे राजपूतोकी जातीय शक्तिका लोप नहीं होता था, वरन एक २ यवन सम्राट्के आधीनमे रहकर आमेर मारवाड़ इत्यादिके राजपूत राजाओने अपने जातीय गौरवके सूर्यको भलीभाँतिसे प्रकाशमान करलिया था और इसी कारणसे उन्होने अपने २ राज्यमे धन सम्पत्ति सन्मान कीर्ति तथा बलके बढानेमे भी कसर न की। महाराष्ट्रोके लुटेरे दलने रजवाडेके प्रत्येक राज्यमे इस प्रकारसे लूटकी कि वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको हरण करके शून्य कर दिया, इसीसे प्रजामे सुख और शातिका लेश भी न रहा। वाणिज्य व्यापार सब बंद होगये, किसानोने खेती करनी छोड दी, इनके उपद्रवोसे रजवाडेके प्रत्येक राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होगई। हुलकर और सेन्धिया यही दोनो महाराष्ट्रोके नेता थे तथा इनके आधीन अमीरखॉ इत्यादि पठान और लुटेरोके यवन शासनसे भारतके प्रत्येक प्रान्तमे अराजकता उपस्थित होगई, और यह बराबर राजपूत जातिका विध्वस करनेके लिये तैयार होगये। यद्यपि तुंगाके युद्धकी तरह एक और युद्धक्षेत्रमे मिलकर राजपूतोकी सेनाने सेन्धियाकी समान लुटेरोके नेताका सर्वनाश किया था, परन्तु यह कार्य किसी विरलेकाही है। राजपूत जातिकी एकताके अभावमे महाराष्ट्रगण लोमहर्षण अभिनय करते है। जिस समय महाराज जगत्‌सिह आमेरराज्यके छत्रके नीचे शोभायमान हुए उसके बहुत दिन पहिलेसे महाराष्ट्रोने रजवाडेमे भयंकर अत्याचार करने आरंभ किये थे, परन्तु इस समय उनके अत्याचार भयकररूपसे प्रबल होगये थे, सौभाग्यका विषय है कि अंग्रेजोकी ईस्ट इण्डियाकंपनी इस समय बगालमे अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर धीरे धीरे भारतके अन्य प्रान्तोकी ओर बढरही थी। बृटिश सिहने देखा कि महाराष्ट्रोकी गतिको विना रोकेहुए सम्पूर्ण भारतवर्षको पाना असभव है, इस कारण इस समय बृटिशसिहने महाराष्ट्रोके दमन करनेके लिये कूटनीतिका विस्तार करना प्रारभ किया, गवर्नमेण्ट इस बातको भलीभातिसे जानगई थी कि महाराष्ट्र तस्करोके दोनो नेताओके भयकर अत्याचार और उपद्रवोसे राजपूत राजा अत्यन्त ही हानि उठाते आये है, इस कारण यदि वह राजा महाराष्ट्रोके अत्याचारोसे रक्षा करनेके अभिप्रायसे हमारे साथ स्थायी सधिबन्धन करले तो हमारे राज्यके पक्षमे विशेष सुभीता होजायगा। बृटिश गवर्नमेण्टने इसी अभिप्रायसे इस समय आमेरपति महाराज जगत्‌सिहके साथ सधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज जगत्‌सिहने

राजसिहासनपर बैठकर देखा कि एक ओर तो जिस भांति सातसौ वर्षका यवनराज्य एकबार ही लुप्त होगया, उसी भाँति दूसरी ओर गवर्नमेण्टका राज्य धीरे २ अपनी उन्नति कर रहा है, उन्होने यह भी विचारा कि यद्यपि महाराष्ट्र जाति सब श्रेणीके मनुष्योको पीड़ित करतीहुई उनकी धन सम्पत्तिको लूटती हुई फिर रही है, और अनेक देशोपर अपना अधिकार करके नवीन राज्यकी सृष्टि कर रही है, परन्तु वृटिशसिहने जिस प्रकार प्रवल बलशाली रूप धारण कर भारतवर्षमे दर्शन दिया है इसमे तो वृटिशसिहके साथ संधिबन्धन करनेमे अपना कल्याण है।

टाड् साहबने इस प्रथम साधिबंधनका कोई उल्लेख नही किया। हम विश्वस्त होकर उस विवरणको सग्रह करनेके लिये तैयार हुए है। आचिसन साहबने अपने बनायेहुए ग्रथमे लिखा है कि " राजपूत राज्योपरसे मुसलमानोका प्रभुत्व लोप होनेके पीछे महाराष्ट्रोके प्रभुत्वका विस्तार हुआ । सन् १८०३ ईसवीमे अग्रेजोके साथ जयपुरके महाराजकी राजनैतिक सन्धि स्थापित हुई। उस समय जगत्सिह जयपुरके महाराज थे। महाराष्ट्रोके साथ युद्ध उपस्थित होनेके समय गवर्नमेण्टने जो साधारण राजनीति सूत्रका अवलम्वन किया, अर्थात् जिस राजनीतिके अनुसार राजपूत राजाओ को अपना मित्र ठहरा कर महाराष्ट्रोको हिन्दुस्थानसे निकालना विचारा था उसी नीतिके अनुसार सन् १८०३ ईसवीमे जयपुरके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका एक सधिपत्र तैयार किया गया "।

यद्यपि महाराज जगत्सिह अग्रेजोके साथ संधि करनेके लिये राजी होगये थे परन्तु गवर्नमेण्ट इस समय भारतवर्षपर अपनी प्रभुता तथा इनकी समान प्रतापका विस्तार न करसकी थी, इस कारण जगत्सिहने अपने हस्ताक्षर न देकर केवल साधारण राजकीय मैत्रीका स्थापन सम्वन्ध करना स्वीकार किया। ईस्टइण्डिया कपनीने शीघ्र ही इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया । इस प्रकारसे महाराज जगत्सिहके साथ सन १८०३ ई०में वगर्नमेण्टका निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया गया।

संधिपत्र।

माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनीके साथ राजराजेन्द्र सवाई जगत्सिह-बहादुरका मित्रता और संधिसम्वन्ध मूलक यह सधिपत्र महिमवर मार्किस वेलेसली सेन्टपाटिक आदि महासम्भ्रान्त उपाधियोसे विभूषित महा महिमवर वृटिश राजराजेश्वरके माननीय प्रिवीकौन्सिलर, समस्त वृटिशाधिकृत देशोके अधीश्वर गवर्नर जनरल, और भारतवर्षमे स्थित समस्त वृटिशसेनाके कप्तान जनरलका अधिकार प्राप्त संधिबंधनके लिये सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् महामहिमवर जनरल जिरार्डलेक, भारतवर्षमें स्थित वृटिशसेनाके प्रधान सेनापतिका माननीय अग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनीके पक्षसे, और महाराजाधिराज राजराजेन्द्र जगत्सिह बहादुरका उनके पक्षमे उनके उत्तराधिकारी और उनके भविष्य स्थलभिषिक्तोके पक्षमे नियत किया गया।

प्रथम धारा-माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और महाराज जगत्सिंह बहादुर तथा उनके भविष्य उत्तराधिकारियोंमे दृढ़ और चिरस्थाई मित्रता तथा संधिका सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ-

दूसरीधारा-किसी कारणसे दोनो राज्योमे मित्रता होकर भी किसी ओरके शत्रु और मित्र दोनो पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे गिनेजायगे, और दोनो राज्य ही चिरकालके लिये इस व्यवस्थाकी ओर ध्यान रक्खेगे ।

तीसरी धारा-महाराजाधिराज इस समय जिस देशके अधिकारी है माननीय कम्पनी भी उस देशके शासनके सम्बन्धमे हस्ताक्षेप नहीं करैगी और न उनसे कर ले सकती है ।

चौथी धारा-माननीय कंपनीने सम्पूर्ण हिन्दुस्तानके देशोपर अपना अधिकार करलिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोपर अधिकार करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करै तो महाराजाधिराज कम्पनीकी सेनाको सहायताके लिये अपने आधीनकी समस्त सेनाको भेजेगे, और उस शत्रुको भगानेके लिये वह स्वयं अपनी सामर्थ्य दिखावेगे, तथा वह अपनी मित्रताका यथार्थ परिचय देनेमे किसी प्रकारकी कसर न करैगे ।

पॉचवीधारा-जिस कारण वर्तमान संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार मित्रता स्थापित होकर-शत्रुओके हाथसे महाराजाधिराजके अधिकारी राज्यकी रक्षाके पक्षमे माननीय कंपनी प्रतिभूस्वरूपसे कही जारही है, महाराजाधिराज इसे स्वीकार करते है, यदि उनके साथ अन्य किसी राजाका विवाद उपस्थित होजाय तो महाराजाधिराज सवसे पहिले गवर्नमेण्टके निकट उस विवादका कारण कहै, और गवर्नमेण्ट प्रीतिभावसे उस झगड़ेके मिटादेनेकी चेष्टा करैगी । यदि विरुद्धपक्षके दोषसे किसी प्रकार उचित मीमांसा न कीजाय तो महाराजाधिराज कंपनीके निकट सैनिक सहायताकी प्रार्थना करसकते है । उपरोक्त अवस्था होने पर उस सहायताकी प्रार्थना ग्रहण की जायगी, और महाराजाधिराज इस वातको स्वीकार करते है, कि इस प्रकारसे सहायताका समस्त व्यय भारतवर्षके अन्यान्य राजाओसे जिस भॉति लेनेकी व्यवस्था हुई है उसी प्रकार हम लिया जाय ।

छठवीधारा-महाराजाधिराज इस वातको स्वीकार करते है कि यद्यपि वह यथार्थमे अपनी सेनाके प्रभु है परन्तु युद्धके समयमे और संग्रामकी पूर्व तैयारीके समयमे वह अपनी सेनाके साथ जहॉ अंग्रेज सेनाका दल नियुक्त रहैगा वह उसी अंग्रेजसेनादलके प्रधान सेनापीतके उपदेश और उसकी सम्मातिके अनुसार कार्य करैगे ।

सातवी धारा-कम्पनी-गवर्नमेण्टकी सम्मतिके विना महाराज अपने राजकार्यमे किसी अंग्रेज वा फरासीसी वा यूरूपके अन्य किसी निवासीको नियुक्त अथवा अन्य किसी उपायसे उसकी रक्षा नही कर सकैगे ।

ऊपर लिखा हुआ सात धाराओसे युक्त संधिपत्र महामहिमवर जनरल जिरार्ड लेकका अकवरावाद सुवार अधीन सराहिन्द नामक स्थानमे संवत् १८६० अर्थात् सन् १८०३

ईसवीके दिसम्बर महीनेकी बारहवी तारीखको तैयार किया गया और उसी दिन उस पर हस्ताक्षर करके मोहर लगादीगई । महामहिवर सकाडेन्सिल गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर होकर तथा मुहर लगकर ऊपर लिखीहुई सात धाराओसे युक्त सधिपत्र महाराजके हाथमे दिया गया, महामहिमवर जनरललेकका हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ यह वर्तमान संधिपत्र महाराजने लौटा दिया । (हस्ताक्षर) वेलेसली ।

कम्पनीकी मोहर.

सकाडेन्सिल गवर्नर जनरल द्वारा यह सान्धिपत्र सन् १८०४ ईसवीमे जनवरीकी १५ तारीखको मान्य तथा स्वीकृत हुआ ।

(हस्ताक्षर) जी. एस. वारलो ।
जी० डडानि ।

इस संधिपत्रको देखकर पाठकगण सरलतासे जानजायँगे कि वृटिश गवर्नमेण्ट यथार्थ मित्रभावसे ही महाराज जगत्सिहको प्रवल वृटिश शासनके आधीनमे बाहरी शत्रुओके हाथसे रक्षा करनेके लिये सम्मत हुई । इस समय महाराष्ट्रगण अपने भयंकर अत्याचारोसे जयपुरको क्षारखार कर रहे थे इस कारण अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायतासे ही जयपुर राज्यकी रक्षा करना महाराज जगत्सिहने कल्याणकर समझा, विशेप करके यद्यपि उक्त संधिसे आमेरराजने अंग्रेजोकी आधीनता स्वीकार करली, परन्तु जब उन्होने इस सधिसूत्रसे गवर्नमेण्टको एक कौडी भी करकी न दी और गवर्नमेण्टने आमेर राज्यके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेप नही किया तब आपको भी अवश्य ही मानना होगा कि यह संधिपत्र गवर्नमेण्ट और महाराज जगत्सिह इन दोनोके लिये समान सम्मान दायक था ।

यद्यपि आमेरपति महाराज जगत्सिहने अंग्रेज कंपनीके साथ सधि करली थी, और उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर भी करदिये, परन्तु अत्यन्त दुःखका विपय है कि उनका वह मित्रभाव अधिक दिनतक स्थिर न रहसका । आचिसन साहव अपनी पुस्तकमे लिखते है, " कि जयपुरके महाराज सधिपत्रमे लिखेहुए अपने कर्तव्य कर्मको पालन करनेमे त्रुटि करने लगे, और लार्ड कर्नवालिसने भी देशीय राजाओके मित्रता सम्बन्ध बधनको एकवार ही तोडनेका विचार किया था । उन्होने स्पष्ट प्रकाशित किया था कि जयपुर राज्यके साथके समस्त सम्बन्ध बंधन दूर किये जॉय, क्योकि गवर्नमेण्ट जिस भावसे जयपुरके राज्यकी रक्षा करनेके लिये तैयार हुई है उस भावसे वह उक्त राज्यकी रक्षा न करसकेगी। " यह तो लिखा किन्तु महाराज जगत्सिंहने संधिबंधन स्वीकार करके भी संधिपत्रकी किसी २ धाराका पालन नही किया । परंतु उन्होने कौनसा अपराध किया था सो किसी इतिहाससे भी नहीं जाना जाता, हमारा ऐसा विचार है कि लार्ड कार्नवालिस जिस समय भारतवर्पके गवर्नर जनरल पदपर प्रतिष्ठित थे, उस समय उन्होने देशीय राजाओके सम्बन्धमे एक स्थायी मूलनीतिके अवलम्बन करनेका भी साहस नहीं किया, ऐसा विदित होता है कि उनके मतसे देशीय राजाओके साथ मित्रता करना गवर्नमेण्टके पक्षमें मगलकारी नही था, इसी लिये उन्होने

देशीय राजाओकी स्थिर की हुई पूर्वसंधिको भी व्यर्थ कर दिया, और इसी कारणस महाराज जगत्‌सिंह पर सधिपत्रकी किसी धाराके उल्लंघन करनेका वृथा दोष लगा कर उक्त संधिको भी व्यर्थ करदिया था । हमारे इस अनुमानकी सत्यता आगे आप ही मालूम होजायगी ।

यद्यपि गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिसने महाराज जगत्‌सिंहको संधिपत्र भंगकरनेवाला बताकर उनके साथ ईस्टइण्डियाकंपनीके समस्त बंधनोको तोडनेकी आज्ञादी, परन्तु आचिसन साहब उक्त मन्तव्योके पीछे वर्णन करगये है, "कि लार्ड कार्नवालिसकी उक्त आज्ञा को सुननेके पहिले ही महाराज जगत्‌सिंहने हुलकरके साथ युद्ध करनेके समय लार्ड लेकके साथ भलीभॉतिसे योग दिया और अपने पहिले सम्मानको फिर प्राप्त करलिया, इसी कारणसे लार्ड लेकने महाराजकी चिरकालतक सहायता करनेकी प्रतिज्ञा की । लार्डकार्नवालिस इनके सम्बन्धमे जिस मूलनीतिके सूत्रको नियुक्त करगये, सर जार्जबार्लोने भी उसीका अवलम्बन किया, परन्तु लार्डलेकके विशेष प्रतिवाद करनेपर सरजार्जबार्लोने साधारण राजनीति और सरल विश्वासकी रक्षाके लिये जयपुरराज्यके साथ सम्बन्ध बधन दूर करदिया *"। हमारे पाठक इससे भलीभॉति जानगयेहोगे कि ईस्टइण्डिया कम्पनी और महाराज जगत्‌सिंह इन दोनोमेंसे सन्धिभंग करनेका कौन अपराधी था । महाराज जगत्‌सिंह सधिपत्रकी किसी धाराका भी पालन नही करते इसीसे लार्ड कार्नवालिसने संधिबंधन तोडनेकी आज्ञा दी परन्तु जब कि उस आज्ञाके प्रचार होनेके पहिले ही महाराज जगत्‌सिंहने सेनापति लार्डलेकके साथ मिलकर गवर्नमेण्टके परम शत्रु हुलकरके साथ युद्ध किया, जब कि उन बृटिश सेनापतिके सधिमतके पूर्वसम्बन्धकी रक्षा की जाती थी तब सर जार्जबार्लोका उक्त आज्ञाका प्रचार करना अवश्य ही अन्याय मूलक था इससे स्पष्ट जाना जाता है कि कम्पनीने ही प्रतिज्ञा भंगकी । इस संधिके भग होनेसे तो कम्पनीकी कुछ विशेष हानि न हुई, परन्तु अंतमे जयपुरपति महाराज जगत्‌सिंहका विशेष अनिष्ट हुआ ।

महाराज जगत्‌सिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान होकर गवर्नमेण्टके साथ राजनैतिक अनुष्ठानमे लगे परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि बृटिश गवर्नमेण्टने उनके साथ अकारण ही समस्त सम्बन्ध तोड़ दिये।जयपुर राज्यको फिर महाराष्ट्री लुटेरोका दल भयंकर क्रोधाग्निसे भस्म करने लगा । जयपुरके महाराजने संधिपत्र पर पूर्ण विश्वास करके बृटिश सेनापति जनरल लेकके साथ मिलकर हुलकरके विरुद्ध शस्त्र धारण किये थे, इसी कारणसे महाराष्ट्र लुटेरोके दलने महाराज जगत्‌सिंहका सर्वनाश करनेका सकल्प किया था ।

महाराज जगत्‌सिंहने राजछत्र धारण कर उपरोक्त राजनैतिक अभिनयके पीछे एक अत्यन्त शोचनीय कार्यमे हाथ डाला; आमेर राज्यका भाग्यरूपी आकाश इस समय काले २ घनघोर बादलोसे छा रहा था, आत्मविग्रह, और स्वजातिमे द्वेष होनेसे

* Aitcheson's Treaties & Vol IV

समस्त रजवाड़ा इस समय अवनतिकी सीढ़ी पर पहुँच गया था, इसी कारण महाराज जगत्सिंहने इस शोचनीय काण्डमे हाथ डाला और प्रथम राजपूत वीरोके योग्य शूरवीरता, तथा बलविक्रम और पंडिताई दिखाकर कार्य किया। यद्यपि वह इस अति ऊँचे यशके संग्रह करनेमे समर्थ भी थे, परन्तु अंतमे कलंकित होगये। इन घटनाओ का वर्णन राजस्थानके दो स्थानोमे पहिले होचुका है उन दोनो घटनाओके साथ महाराज जगत्सिहका विशेष सम्वन्ध है इसीसे महाराज जगत्सिहके शासनवृत्तान्तको सक्षेपसे उल्लेख करना विचारा है।

जिस समय महाराज जगत्सिह आमेरके सिहासन पर विराजमान थे उसी समय मेवाड़के सिहासन पर महाराणा भीमसिंह और मारवाड़के सिहासन पर महाराणा मानसिहजी विराजमान थे। यह तीनो राजा वरावर थे। मानसिहके साथ उनके आधीनकी सामन्त मंडलीका मेल नही था। विशेष करके मारवाडके प्रधान सामन्त पोकर्णके अधिपति सवाईसिहके साथ महाराज मानसिहका इस समय घोर विद्वेष उपस्थित हुआ। सवाईसिहने अपने स्वाभाविक क्रोधके वशीभूतहो मानसिहको किसी न किसी उपायसे सिहासनसे रहित करके अपना मनोरथ पूर्ण किया था। उनके उस मनोरथके सफल होते ही इस समय और भी कितने ही कारण उपस्थित होगये। मानसिहके पहिले महाराज भीमसिह मारवाडके सिहासन पर विराजमान थे, उन भीमसिहकी रानीने इनके स्वर्गवासी होनेपर इन्हींके औरससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सवाईसिह उस राजकुमार धौकलसिह को मारवाड़के सिहासनका अधिकारी वनाकर उसीके सहारे मानसिहको विपत्तिके जालमे डालनेको तैयार हुए। नीतिचतुर सवाईसिहने विचारा कि मै इकला ही सरलतासे मानसिहको सिंहासनसे भ्रष्ट नही करसकूगा, इस कारण उसने छिपे २ षड्यत्र फैलाया। उन्होने विचारा कि इस समय आमेर और मारवाड़के अधीश्वरोमे यदि किसी प्रकारसे झगड़ा होजाय तो इस उपायसे धौकलसिहके सिहासन प्राप्तिका मार्ग स्वच्छ होजायगा। क्रमानुसार उस कल्पनाकार्यके परिणत होते ही एक सुअवसर आपहुंचा। मेवाड़के महाराणा भीमसिहके औरससे कृष्णकुमारी नामकी एक कन्याने जन्म लिया, और कुछ समयमे उस अनुपम रूपलावण्यतासे युक्त कन्याने समस्त रजवाड़ेमे "फलनलिनी" रूपसे प्रसिद्धि प्राप्त की। उस रूपवती कृष्णकुमारीके साथ मृत मारवाड़पति भीमसिहके विवाहका प्रस्ताव पहिले ही उपस्थित हुआ था, परन्तु भीमसिंहकी मृत्यु अकालमे ही होगई, इसीसे वह प्रस्ताव भी दूर होगया। कुटिल हृदय सवाईसिह उस समय उस कृष्णकुमारीके ऊपर लक्ष्य करके समस्त रजवाडेमे भयकर उत्पात मचाने लगे। इन्होने प्रकाशमे तो मानसिहके साथ मित्रता की और गुप्तभावसे षड्यत्र करके आमेरपति महाराज जगत्सिहके पास यह प्रस्ताव भेजा, "राणा भीमसिहकी कन्या अत्यन्त रूपवती है इस कारण आप उसके साथ विवाह करनेके लिये राणाके निकट समाचार भेजिये सवाईसिह इस वातको भली भांतिसे जानते थे कि महाराज जगत्सिह अत्यन्त इन्द्रियपरायण पुरुष है, वह कृष्णकुमारीके रूपलावण्यको सुनकर अवश्य ही उस रमणी–रत्नकी प्राप्तिके लिये चेष्टा

करेंगे, और वास्तवमें ऐसा ही हुआ, महाराज जगत्सिंहने उसके मुखसे कृष्णकुमारीकी सुन्दरताको सुनते ही सवाईसिंहकी सम्मतिके अनुसार बहुतसा धन खर्च करके चार हजार सेनाको मेवाड़में भेजदिया। और विवाहका प्रस्ताव लेकर एक माननीय दूत भी उनके साथ भेज दिया।

इस ओर सवाईसिंहने जगत्सिंहको उत्तेजित करके जब सुना कि आमेरसे मेवाड़को उपढौकन द्रव्य भेजेगये है तब तुरन्त ही उसने मारवाड़पति मानसिंहकी सभामें जाकर मित्रभावसे कहा, "महाराज! मेवाड़पति राणा भीमसिंहकी रूपवती नंदिनी कृष्णकुमारीके साथ मृतक महाराज भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, इस समय जयपुरपति जगत्सिंहने उनके साथ विवाह करनेके लिये उपहारका द्रव्य भेजा है। यदि जगत्सिंहको कृष्णकुमारी मिलगई, तो इस संसारमें आपके कलंककी सीमा न रहैगी। मारवाड़के अधीश्वररूपसे ही भीमसिंहके साथ कृष्णकुमारीके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, आप उसी मारवाड़के सिंहासनपर विराजमान हैं, इस कारण आपके बदलेमें यदि जगत्सिंह कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेमें समर्थ हो तो मारवाड़के सिंहासनके कलंककी सीमा न रहैगी?" जगत्सिंहके समान महाराज मानसिंह भी उन सवाईसिंहकी चतुरताके जालमें फँसगये। वह शीघ्र ही तीन हजार राठौरोंकी सेनाको साथ लेकर बाहर निकले। हीरासिंह नामक एक धनलोभी सैनिक भी सेनासहित मानसिंहके साथ आ मिला, जगत्सिंहने जो चार हजार सेनाके साथमें उपहार द्रव्य भेजा था, उसके मेवाड़में बिना पहुँचे ही मानसिंहने उनपर आक्रमण करके वह समस्त द्रव्य लूट लिया, और जयपुरकी सेनाको छिन्नभिन्न करके भगादिया। सवाईसिंहकी कामनाके पूर्ण होनेका यही पहिला सूत्रपात हुआ।

मारवाड़पति मानसिंहने जो आमेरपति जगत्सिंहकी समस्त सेनाको छिन्नभिन्न करके उसके समस्त द्रव्य लूट लिये थे इससे जगत्सिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधाग्नि प्रज्वलित होगई, इससे उन्होंने अपना अधिक अपमान जाना, और मानसिंहको इसका उचित दंड देनेके लिये और अपने सम्मान और गौरवकी रक्षाके लिये आमेरपति अत्यंत क्रोधित एवं उत्तेजित होगये, परन्तु इसी समय वे एक भारी विपत्तिमें पड़गये। इस समय महाराष्ट्रोंके नेता सेंधिया केवल रजवाड़ेके राजाओंमें आत्म विग्रहकी अग्नि प्रज्वलित करके किसी एक पक्षका अवलम्बन कर अगणित धन लूटनेमें लगरहे थे। मानसिंहके साथ जगत्सिंहके झगड़ेका समाचार पाते ही लुटेरोंने जगत्सिंहसे बहुतसा धन पानेकी इच्छा प्रगटकी, और उनसे यह कहला भेजा कि यदि तुम हमको इतना धन नहीं दोगे तो हम तुम्हारा भली भाँतिसे नाश करेंगे। परन्तु आमेरपति जगत्सिंहने सेन्धियाकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, इससे सेन्धियाने क्रोधित हो प्रतिज्ञा की कि मैं ऐसा उपाय अवश्य ही करूँगा कि जिससे कृष्णकुमारीका विवाह जगत्सिंहके साथ न हो। वास्तवमें सेन्धियाने ऐसाही किया भी उसने मेवाड़पर आक्रमण करनेके लिये एक महाराष्ट्रसेनाको उदयपुरकी ओर भेज दिया।

लुप्तप्रताप हतबल राणा भीमसिह महाराष्ट्रोके दलके आनेका समाचार सुनते ही अत्यन्त भयभीत हुए, और जगत्सिहसे अपनी सहायताके लिये उन्होनें प्रार्थनाकी, जगत्सिहने सेन्धियाको युद्धकी तैयारीसे जाता हुआ देख और उसकी प्रतिज्ञाका समाचार सुनकर राणाकी सम्मतिके अनुसार एक दूतके साथमे कई हजार सेना मेवाड़को भेजदी। सीसोदिया और कछवाहोकी सेनाने मिलकर महारराष्ट्रोकी सेनाके मेवाड़मे आनेका मार्ग रोकदिया। सेन्धियाने सबसे पहिले महाराणा भीमसिहके पास यह प्रस्ताव भेजा "कि आप किसी प्रकारसे भी जगत्सिहको अपनी कन्या नही देसकैगे। जयपुरकी जो सेना मेवाड़मे आई है, उस सेनाको और जगत्सिहके दूतको आप शीघ्र ही मेवाड़से विदा करदे।" यद्यपि महाराणा भीमसिह इस समय अत्यन्त हीनबल थे परन्तु उन्होने साहसमे भरकर सेन्धियाके प्रस्तावको स्वीकार न किया, वरन इसके विरुद्ध वे कुछ ऐसा उपाय सोचने लगे कि जिससे सेन्धिया मेवाड़मे न आसके। परन्तु महाराष्ट्रोकी सेना अपने बाहुबलसे सीसोदिया और आमेरकी सेनाके द्वारा रोके हुए मार्गको स्वच्छ करके मेवाडमे आ पहुँची, और उसके साथही साथ कालान्तक यमराजकी समान स्वय लुटेरोके नेता सेन्धिया भी उदयपुरकी राजधानीमे आठ हजार सेना साथ लिये हुए आ पहुँचा। महाराष्ट्रोके अत्याचार और उपद्रवोको स्मरण करके महाराणा भीमसिह अत्यन्त भयतीत होगये, और अपनी सामर्थ्य न देखकर सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार ही कार्य करनेको वे सम्मत होगये। सेन्धियाकी अनुमतिसे महाराणा भीमसिहने आमेरपतिके दूत और उनकी सेनाको मेवाडसे विदा करदिया। जयपुरकी सेना जिस रास्तेसे आई थी उसी रास्तेसे होकर वापिस चली गई।

इस ओर महाराणा जगत्सिह मानसिहके विरुद्धमे युद्धका विचार कर, चतुर सवाईसिह भीमसिहके पुत्र धौकलसिहको लेकर जगत्सिहके साथ आ मिले। जगत्सिहने धौकलसिहको मारवाडके सिहासनके अधिकारीरूपसे स्वीकार किया, और वे शीघ्र ही एक लाख सेना सजाकर मारवाड़को विजय करनेके लिये चले। इतिहाससे जानाजाता है, कि जयपुरका कोई राजा भी इसके पहिले एक लाख सेना लेकर युद्धके लिये नही गया था, इस कारण जगत्सिहका एक लाखसे भी अधिक सेनाका सग्रह करना अवश्य ही बडी सामर्थ्यका हेतु था। विशेष करके जयपुरका खजाना भी अतुल धनसे पूर्ण था। जगत्सिहने उसी धनके बलसे महाराष्ट्रो और पठानोको भी अपने दलमे मिलालिया। गांगोली नामक स्थानके पहिले युद्धमे मानसिह एकवार ही परास्त होगये थे, और मारवाडके सम्पूर्ण सामन्तोने सवाईसिहकी उत्तेजनासे मानसिहका पक्ष छोडकर जगत्सिहका पक्ष लिया। जगत्सिह सरलतासे विजय प्राप्त करके अपनेको गौरवान्वित जानने लगे। मानसिहके भागते ही जगत्सिहके अन्यान्य नेताओने उनके डेरोमे जाकर बहुतसी धन और सम्पत्तिको लूट लिया। मानसिहके भागनेसे जगत्सिहने विचारा कि वह स्वय ही अब कृष्णकुमारीके विवाहका प्रस्ताव नही करेगे, परन्तु इतनेमे ही चतुर सवाईसिहने बाधा देकर कहा, कि 'मानसिह अभीतक परास्त

नही हुए है, मानसिहको भलीभाँतिसे परास्त कर मेवाड़मे जाकर कृष्णकुमारी का पाणिग्रहण करना आपको अत्यन्त कर्तव्य है।" जगत्सिह सवाईसिहकी चतुरताके जालमे पहिलेसे ही फसगये थे इस कारण उन्होने इस कार्यके करनेका भी निश्चय करलिया।

मानसिंह युद्धमे परास्त होकर अपनी राजधानी जोधपुरको चले गये। जयपुरके महाराजकी विजयी सेनाने शीघ्र ही जोधपुर राजधानी पर जाकर अपना अधिकार किया। तव मानसिह किलेके भीतर चलेगये महाराज जगत्सिहने भी तुरन्त ही किलेको जा घेरा। और विजयी सेना छः महीने तक वरावर किलेको घेरे हुए गोलोकी वर्षा करती रही परन्तु किला विजय न होसका, मानसिह अतुल पराक्रम करके अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले उस अभेद्य किलेकी रक्षा करते रहे, छ. महीनेतक निरन्तर एक लाख सेना किलेको घेरे पड़ी रही, इसमे जगत्सिहका वहुत धन खर्च हुआ, तौभी इनका वह परिश्रम सफल न हुआ। दुर्भाग्यवश छ महीनेके पीछे विजयी जगत्सिहका भाग्य भयकर जलद जालसे ढक गया। इनकी सेनामे अमीरखाँ नामका एक पठान नियुक्त था, उस अमीरखाँने अपने अधीनकी सेनाको साथ लेकर स्वाधीनभावसे दूरदेशोमे जाकर मारवाडके अनेक स्थानोमे लूटमार करके वहुतसा धन इकट्ठा करलिया। इससे जगत्सिह अत्यन्त ही अप्रसन्न हुए और उन्होने अमीरखाँको दमन करना आवश्यका विचारा। जव अमीरखाँने यह समाचार सुना तव वह डेरोमे न आकर पहिलेकी समान जिधर तिधर लूटने लगा। इस आचरणसे जगत्सिह और भी कुपित हुए, और उसके साथ युद्ध करनेके लिये अपनी एक सेना भेजी। अमीरखाँने ज्यो ही देखा कि महाराजकी सेना मेरे साथ युद्ध करनेको आ रही है त्योही वह वहासे भाग गया। अमीरखाँका भागताहुआ देखकर जयपुरकी सेना भी वहुत दूर तक उसके पीछे २ गई, और अतमे जयपुरके वाहर सेनाको रखकर सेनाके नेता स्वयं जयपुरमे चलेगये। इस सुअवसरको पाकर अमीरखाँने उक्त जयपुरकी सेनापर आक्रमण करके उसको एकवार ही परास्त करादिया, और अपनी सेना सहित जयपुरमे जाकर अरक्षित राजधानीको लूटलिया। जव जयपुरपति जगत्सिहने यह सुना तो अपने राज्यकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य विचारकर वह जोधपुरसे चले आये। इनके जाते ही राठौरकी सेनाने इन पर आक्रमणकर समस्त द्रव्योको लूट लिया। महाराज जगत्सिह इससे महा अपमानित और कलंकित होकर अपनी राजधानीमे चले आये। इस युद्धमे महाराज जगत्सिहका खजना वहुतसा खाली होगया, और इसी भाति अगणित सेना भी नष्ट होगई। जगत्सिहके पक्षमे यह राजनैतिक अभिनय महा अपमान दायक हुआ, इसमे कुछ भी संदेह नही।

इस युद्धमे वहुतसा खजाना खाली होगया—वहुतसी सेना नष्ट होगई, विचारे जगत्सिह इस समय अत्यन्त हीनवल होगये, जिस राजनन्दिनी कृष्णकुमारीके लिये उनका इतना उद्योग, इतना धनव्यय, और ऐसा भयकर युद्ध हुआ था, पर अपने दुर्भाग्यसे वह उस कृष्णाकुमारीको न पासके, उक्त युद्धकी इच्छाके पीछे महाराज जगत्सिह

क्रमानुसार महाराष्ट्रों और पठानोंके द्वारा सताये गये। हुलकरकी सेनाने वारम्वार आमेर राज्यपर आक्रमण करके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार करलिया, दुर्दान्त अमीरखाँ हुलकरके नामसे बहुतसे देशोंपर अधिकार करके चौथस्वरूप उन समस्त देशोंकी आमदनीको स्वय भोगता था। सारांश यह है कि पिछले कई वर्षोंतक आमेर-राज्यकी अत्यन्त ही शोचनीय दशा होगई थी।

महाराज जगत्सिहके जीवनके शेषमे राजनैतिक अनुष्ठानसे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ फिर सधिवन्धन स्थापित हुआ सो हमारे पाठकोको पहिले ही ज्ञात होचुका है कि सन् १८०३ ईसवीमे लार्ड वेलेसली महाराज जगत्सिहके साथ मित्रता स्थापित करके संधिवन्धनमे नियुक्त हुए, और महाराज जगत्सिहने उस संधिपत्रके मतसे वृटिशसेनापति लार्ड लेकक साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके नेता हुलकरके साथ युद्ध भी किया पर लार्ड कारनवालिस और उनके स्थलाभिषिक्तने अन्यान्य रूपसे उस मित्रताकी शृङ्खलाको छिन्न करादिया। वृटिश गवर्नमेण्टकी इस प्रतिज्ञाभंगसे जयपुरपति जगत्सिह अत्यन्त हीनवल होनेसे अत्यन्त दुःखित विस्मित और परितापित हुए होगे यह सहजमे ही अनुमान होसकता है। आचिसनसाहवने अपनी वनाईहुई पुस्तकमे लिखा है, "कि इस मित्रता और सधिवंधनका भंग करना कर्तव्य कर्म हुआ था या नहीं, होम, गमर्नमेण्ट (विलायतकी कोर्ट आफडाइरेक्टर्स) ने इसको विशेष सन्देह युक्त वताकर इसका विचार किया था, इस कारण सन्१८१३ ईसवीमे होम गवर्नमेण्टने यह आज्ञा प्रचार की कि जव अवसर आवैगा तव फिर जयपुरराज्यको अंग्रेजी रक्षाके आधीनमे ग्रहण किया जायगा। इस समय नैपालके साथ युद्ध उपस्थित है पर जिस समय पिडारियोको दमन करके उनके साथ राजनैतिक वदोवस्त किया जाय तवतक इस मामलेको मुलतवी रक्खा है। सन् १८१७ ई०मे फिर जव सधिका प्रस्ताव उपस्थित हुआ तव यह प्रकाश किया गया कि जयपुर राज्यको नवीन सधि करनेमे इस समय आग्रह नही है, परन्तु इसके पीछे जिस समय जैपुरराज्यने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये संधि करना विशेष प्रयोजनीय जाना कि सम्पूर्ण निकटवर्ती राजा संधिवधन करचुके है, इधर जयपुरराज्यके आधीन छोटे छोटे राजसमूह स्वतंत्रभावसे गवर्नमेण्टके साथ सधिवंधन करचुके है। तव अन्तमे जयपुर पति सन् १८१८ ई० मे दूसरी अप्रैलको संधि निर्धारण करनेपर वाध्य हुए।

इस संधिवंधनके सम्वन्धमे कर्नल टाड् साहव अन्य स्थानोमे लिखते है, कि "भारतवर्षकी वृटिश गवर्नमेण्ट, राजपूतानेके जिन राजाओंको आश्रय देना चाहती है इनमे जयपुरराज्यने सबसे पीछे उनका आश्रय लिया है। इस रीतिके अवलम्बन करनेसे सर्वदाके लिये शान्तिनाशक शत्रुओंको भगादिया जासकता है, गवर्नमेण्टके प्रस्तावकी उस धारामे जयपुरराजने अपनी सम्मति देनेमे किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। जवतक भारतवर्षमे लूटनेवाली कई एक सम्प्रदाये एक २ करके हमारे चरणोंकी शरणमे न आवेंगी, तवतक जयपुरके महाराज हमारे प्रस्ताव और

हमारी युक्तियोको ग्रहण नही करेगे । इस समय पिंडारीगण एकबार ही विदलित हुए है, पेशवा पूनासे बंदी होकर गंगाजीके किनारे भेजे गये है और भोसलाकी अवनति हुई, सेंधिया भयभीत हुआ, और हुलकरने जयपुरसे नियमित करलेनेके अतिरिक्त बहुतसे देशोको अपने अधिकारमे करलिया।मेदनीपुरके युद्धसे उसके शासनकी सामर्थ्यमे वहुत रोक टोक होनी आरंभ हुई है ।

यद्यपि राजपूत जाति अदृष्टवादी है परन्तु प्राय: दीर्घ सूत्रतासे अपने कार्यका उद्धार करती है । हुलकरके प्रतिनिधि जिस अमीरखॉने जायदादस्वरूपसे अर्थात् सेनादलके व्ययस्वरूपसे जयपुर राज्यके अनेक देश अपने अधिकारमे करलिये थे, और नियमित कर भी ग्रहण किया था, एकमात्र उस अमीरखॉने ही इस समय जयपुरराज्यकी समाजमे शान्तिका नाश कर भयको उत्पन्न किया था और अलक्ष्यमे उन जयपुरपति महाराजको हमारे साथ संधिवंधन करनेके लिये उत्तेजित किया । अधिक क्या वही अमीरखॉ स्वय इस समय माननीय मित्ररूपसे ग्रेटविटेनके आश्रयमे वशानुक्रमसे वधुताके भावमे आवद्ध होनेका उद्योगी हुआ । अमीरखॉने ठीक इसी मुहूर्त्तमे राजधानी जयपुरके अत्यन्त निकट माधोराजपुरा नामक स्थानपर गोले वर्षाये थे, और जिस भॉतिसे कछवाहेराज हमारे प्रस्तावमे तुरन्त ही अपनी सम्मति देदे इस कारण अमीरखॉने उक्त गोलोको वर्षाकर अप्रत्यक्षके उपाय स्वरूपसे हमे ग्रहण किया । आमेरराजने संधि करनेके लिये क्यो आनाकानी की थी, उसका वर्णन नीचे कियाजायगा" ।

"सन् १८०३ ईस्वीमे जिस समय हमने जयपुरराज्यके साथ पवित्र संधिवंधन किया था, और हमारे पक्षमे जिसका होना अत्यन्त आवश्यक विचारा गया था । उस समय हमने जिस उपायसे उस संधिवंधनसे अपना उद्धार करलिया, अथवा हमारे मित्र उन जयपुरके महाराजको संधिभंगके अपराधसे अपराधी वताकर वृथा दोष लगाया था वह जयपुर राज्यके हृदयमे भलीभॉतिसे अंकित था । उस विभिन्न राजनैतिक घटनापूर्ण समयमे जो मनुष्य राजनैतिक विषयोमे लिप्त थे जिस समय हमारे पूर्वराज्यके राजप्रतिनिधिका भेजाहुआ वह संधिभंग सूचक पत्र जयपुरके दरवारमे हमारे दूतने अर्पण किया । उस समय जयपुरके महाराजने उसके सम्वन्धमे दृढरूपसे प्रतिवाद किया, और उस संधिभंगके कारणसे जिस विपत्तिके आनेकी संभावना थी उसे एक मुहूर्त्तके लिये भी न भूलकर वे अंग्रेजजातिके प्रति उपयुक्त सम्मान दिखानेमे शान्त न हुए । परन्तु जयपुर राज्यका जो दूत वीरश्रेष्ठ लेकके डेरोमे स्थित था, उसने इसकी अपेक्षा और भी तीक्ष्ण शब्दोका प्रयोग किया, और यथार्थ मनुष्यत्वके प्रकाशके साथ क्रोधित होकर कहा कि " अंग्रेज गवर्नमेण्ट जवसे भारतमे प्रतिष्ठित हुई है, तभीसे जाना जाता है कि गवर्नमेण्ट अपनी सुविधा और स्वार्थके लिये ही सव कार्य करती है" ।

यह तो हम पहिले ही कह आये है कि वृटिश कम्पनीने स्वय ही सन्धिभंग की थी; और टाड् साहवकी उपरोक्त उक्ति इसकी पुष्टता भी कररही है । जयपुरके दूतने कहा था कि अंग्रेज गवर्नमेण्टने अपने सुभीतेके ऊपर विश्वास पालन किया है,

जयपुरके साथ सधिभग करना यह उसकी प्रमाणमूलक प्रथम घटना है, परन्तु हम इतने दिनोके पीछे कहते है कि जब पलासीके युद्धमे अंग्रेजी राज्य भारतवर्षमे सबसे पहिले स्थापित हुआ, तभी क्लाइवने अमीचन्दके साथ उससे पाहिले विश्वासभग किया था, यही अग्रेजोके विश्वासपालनका पहिला चूड़ान्त निदर्शन है । कम्पनीने किस कारणसे जगत्सिहके साथ निन्दनीयरूपसे संधि भगकी उसके सबन्धमे टाड् साहबने लिखा है कि वह मार्किस आफवेलेसलीकी विस्तारित और उदार राजनीति थी–जिस राजनीतिके मतसे सम्पूर्ण देशीय राजाओको भारतके लुटेरोके विरुद्ध एकत्र सबन्ध करनेका प्रस्ताव हुआ था, लार्ड कार्नवालिसके मनके भावने और सामरिक राजनीतिने उसे एकवार ही व्यर्थ करदिया, लार्ड कार्नवालिसने हमारे इस प्रबल विस्तारसे एकमात्र हमारी भावी दुर्दशाका ही निरीक्षण किया था । महा माननीय लेकने (क्या देशीय और क्या यूरूपीय सभी जिनके नामको सम्मानके साथ स्मरण करते है) मध्यस्थ होकर देशीय राजाओके साथ जो मित्रता और सधिबधन किया था, यदि उस मित्रता और संधिबधनकी रक्षा कीजाती तो वह समस्त देशीय राजा न जाने कितने कष्टसे उद्धार पाते, इसका निर्णय नही होसकता, कारण कि गत अर्द्ध शताब्दीमे रजवाडेमे इतना अनिष्ट हुआ था कि समस्त राजोने दुराचारी महाराष्ट्रोके अत्याचारोसे सन् १८०३ ई० से १८१८ ईसवीतक अर्थात् प्रथम सधिभगसे दूसरे सधिबधनके समयतक महान् कष्ट भोग किया था, और हमे यह भी सदेह है कि अर्द्धशताब्दीमे भी उनकी वह शोचनीय अवस्था बदलैगी या नही" ।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने लिखा है कि "हमारे ऊपर इस विश्वासकी वृद्धिका और भी एक प्रबल कारण था, कि जब वजीरअली जयपुरराज्यकी शरणमे गया तब हमने बल करके उसको वहासे छीन लिया। अधिक क्या कहे यदि घोर अपराधी शत्रु भी राजपूत जातिकी शरणमे जावे तो वे उस शरणागत मनुष्यकी तन मन धनसे रक्षा करते है। शरणागतको आश्रय देना राजपूत लोग किस प्रकारसे अपनी जातिका परम धर्म मानते है, हम इस इतिहासके पहिले अध्यायमे उसका वर्णन करचुके है । जयपुरके महाराज उस समय हमारे आधीन अथवा करदेनेवाले मित्रराजाओमेसे नही थे, परन्तु हमने बलपूर्वक उनको शरणागतको आश्रय देनेवाले जातीयधर्मको उल्लंघनके लिये विवश किया, वह आश्रित मनुष्य नरहत्याकारी होनेसे हमारे मतमे कृपापात्र नही होसकता, पर उस वजीरअलीको हमारे हाथमे अर्पण करनेके लिये प्रार्थना करनेकी हमारी कोई क्षमता नही थी" ।

सधिके सम्बन्धमे अतमे टाड साहब लिखते है, कि जयपुरराज्यको उपरोक्त कठिन आपत्तियोके अतिरिक्त और भी कितनी ही गुप्त और व्यक्तिगत आपत्ति अंग्रेजोकी सधिप्रस्तावके विरुद्धमे उठानी पडी थी । उसका उदाहरण देते है। एक अंग्रेज रेसिडेण्ट राजदरबारमे आया और उसने दरबारमे चारोओर अपनी दृष्टि रक्खी, परन्तु अपनी सामर्थ्यका विस्तार होना कठिन जाना. तब उसने मत्री समाजपर आपत्तिकी ।

[illegible]

दूसरी ओर समस्त सामन्त, जो चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार मंत्रीस्वरूपसे राजसभामे पद सम्मानको सम्भोग करते आये थे, इस समय समझ गये कि अब उन्हे उस स्वभूमिसे अपना अधिकार हटाना पडेगा। जिसे इतने दिनोतक छल प्रपचसे अथवा बलप्रयोग तथा नरपतिकी कृपासे अपने अधिकारमे भोगते आये हे, इस कारण उन्होने आपत्ति उपस्थित करनेमे त्रुटि न की। आमेरराज और बृटिश सरकार गवर्नरजनरलसे सधि स्थापनके समयमे कईएक प्रधान आपत्तिये उपस्थित हुई थीं, परन्तु लार्ड हेष्टिंसने जिस साधारण राजनीतिका अवलम्बन किया था यदि वह उस नीतिके अनुसार जयपुरराज्यको अंग्रेजोके आधीनमे न करते तो उनकी उस नीतिके अगकी हानि होती। इस समय जल्दी २ कितनी ही घटना हुई थी। अमीरखाकी जयपुरमे उपस्थित—रजवाडेकी पताकाको महाराष्ट्रोका लोप करना—और अजमेरके किलेके ऊपर पताकाका लगाना—अतमे शीघ्रतासे अनिच्छा युक्तभाव—सन् १८१८ ईसवीकी दूसरी अप्रेलको १० धाराओसे युक्त एक सधिपत्रपर जयपुरके महाराजने अपनी सम्मति प्रकाश की, और उसीसे कछवाहेराज अपने वंशानुक्रमसे करदपदपर नियुक्त हुए।

महाराज जगत्सिहने किस कारणमे अंग्रेजोके साथ फिर सधि की थी, आचिसन साहबने कर्नल टाड साहबकी उस उक्तिको भलीभांतिसे प्रकाशित करदिया है. इस कारण हम इसके सम्बन्धमे अब कुछ अधिक कहनेकी इच्छा नही करते। परन्तु महाराजा जगत्सिहके पक्षसे यह दूसरी सधि पहिले सधिपत्रकी अपेक्षा विशेष हानिकारक हुई, अधिक क्या कहै स्वय सधिपत्रको पढकर ही पाठक भलीभांतिसे समझ जायगे कि कम्पनीने आमेरराज्यसे पहिले एक कौडा भी करकी नही ली थी, परन्तु इस दूसरे सधिपत्रमे जयपुर महाराजको चिरकालके लिये कम्पनीको कर देना पडा, उस सधिपत्रको हम नीचे प्रकाशित करते हे।

संधिपत्र।

"माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और सवाई महाराज जगत्सिह बहादुर जयपुरके अधीश्वरमे यह सधिपत्र निश्चित हुआ। महामहिमवर मार्किस आफहेष्टिंग्स के जो गवर्नर जनरलके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त सि०चार्लसथियोफिलस मेटकाफका माननीय कम्पनीकी ओरसे और राजेन्द्र श्रीमहाराजाधिराज सवाई जगत्सिह बहादुरके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त ठाकुर रावल बैरीसाल नाथावत् उक्त महाराजकी ओरसे नियुक्त हुए"।

पहिली धारा—माननीय कम्पनी और महाराज जगत्सिह उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तोमे वंशानुक्रमसे यह सधिसम्बन्धबधन सदा एकसा मानाजाय और किसी ओरके मित्र तथा शत्रु दोनो ओरके मित्र और शत्रुरूपसे विचारे जायगे।

दूसरी धारा—जयपुर राज्यकी रक्षा करने और उस राज्यके शत्रुओको परास्त करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार रहेगी।

तीसरी धारा–सवाई महाराज जगत्सिंह और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्त । वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करै और जिन्होने वृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगत्यता स्वीकार की है वह अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध नही कर सकैंगे ।

चौथी धारा–माहाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी विना अनुमतिके अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका संवन्ध स्थापन नही करसकेंगे, परन्तु मित्र और आत्मीय राजाओके साथ नियमित साधारण पत्र व्योहार करसकेंगे ।

पांचवी धारा–महाराज वा उनके उत्तराधिकारी अथवा स्थलाभिषिक्त किसी राजाके ऊपर अत्याचार अथवा आक्रमण नही करसकैंगे, किसी राजाके साथ कुछ झगडा उपस्थित होगा तो इसके विचारके लिये तथा दंडदेनेके लिये गवर्नमेण्टपर इसका भार रहैगा ।

छठवी धारा–निम्नलिखित व्यवस्थाके अनुसार जयपुरराज्यके वंशानुक्रमसे गवर्नमेण्टके दिल्लीके धनागारके लिये कर देना होगा–

जयपुरराज्यमे कई वर्षसे अवतक अत्याचार और लूट (महाराष्ट्रोंके द्वारा) प्रवलतासे होरही थी इस कारण इस सन्धिको तारीखसे पाहले एक वर्षका कर छोड़ दिया जायगा ।

दूसरावर्ष ..	चार लाख रुपया ।
तीसरा वर्ष ..	पांच लाख
चौथे वर्ष	छः लाख
पांचवे वर्ष ...	सात लाख
छठवे वर्ष .	आठ लाख

पीछे जवतक राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक न हो तवतक प्रतिवर्ष आठ लाख रुपया करस्वरूपसे देना होगा ।

ओर जिस समय राज्यकी आमदनी ४० लाख रुपयेसे अधिक हो उस समय नियमित आठ लाख रुपयेके अतिरिक्त वढी हुई आमदनीके सोलहवे अंशका पाँचवा अंश देना होगा ।

सातवी धारा–गवर्नमेण्टको आवश्यकता होनेपर जयपुरराज्यको अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेना देनी होगी ।

आठवी धारा–महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरस्थाई रीतिके अनुसार उनके अधिकारी राज्यमे और आधीनस्थोको सपूर्ण शासनकर्ता स्वरूपसे रहना होगा, और उस राज्यमे गवर्नमेण्ट अपनी फौजदारी और दीवानीको स्थापित नहीं करैगी ।

नवमी धारा–महाराज यदि गवर्नमेण्ट पर विश्वास कर उसके साथ प्रीति प्रकाशित करेंगे तो उनकी उन्नति तथा कल्याणके लिये विशेष विचार किया जायगा।

दशवी धारा–दश धाराओसे युक्त यह संधिपत्र मि चार्लस थियोफिलास मेटकाफ एवं ठाकुर वैरीशाल नाथावत्का नियुक्त किया हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ तैयार होगया, महामहिम गवर्नर जनरल और राजराजेन्द्र श्रीमहाराजाधिराज जगत्सिंह बहादुरका आजकी तारीखसे एक महीनेके भीतर परस्पर मित्रभाव होजायगा।

सन् १८१८ ईस्वीकी अप्रैल महीनेकी दूसरी तारीखको दिल्लीमे नियुक्त हुआ।

(हस्ताक्षर) सी. टी मेटकाफ
रेसिडेण्ट।

(हस्ताक्षर) ठाकुर रावल वैरीशालनाथवत्।

(हस्ताक्षर) हेष्टिस। ❋

यह संधिपत्र गवर्नरजनरलका तुलसीपुरके निकट डेरामे सन् १८१८ ईस्वीकी १५ अप्रैलको स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे आडम।
गवर्नरजनरलके सेक्रेटरी"।

यद्यपि महाराज जगत्सिंह इस दूसरी वार संधिवंधनमे सम्मत होगये थे, परन्तु इससे जयपुरराज्याने चिरकालके लिये अपने स्वाधीन ऊंचे मस्तकको नीचा करलिया, और आठ लाख रुपया वार्षिक कर देना स्वीकार किया, परन्तु महाराज जगत्सिंहके शासनके दोषसे इस समय जयपुरराज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था होगई थी इससे अंग्रेजोका आश्रय लिये विना इसका विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना थी। महाराज जगत्सिंह इस संधिवंधनके पीछे वहुत दिनोतक राज्य करते रहे। सन् १८१८ ई०मे उक्त संधि-वंधनके कई महीने पीछे उन्होने इस मायामय शरीरको छोडदिया।

यह तो हम पहिले ही कह आये है कि महात्मा टाड्ने इन महाराज जगत्सिंहके शासन इतिहासको आदिसे वर्णन नही किया। वह इनके सम्वन्धमे कईएक कथाएं कहगये है, उन्हीको यहॉ पर अविकल प्रकाश करके महाराज जगत्सिंहकी जीवनीको समाप्त करनेकी अभिलाषा है। कर्नल टाड्ने लिखा है, कि जगत्सिंहने सन् १८०३ ईसवी मे सिंहासन पर विराजमान होकर सत्रह वर्षतक राज्य किया। अपने समय तथा अपने स्वजातीय राजाओमे वह अत्यन्त भ्रष्ट पुरुष थे। उनके राज्यके समयमे जो घटनाएं वरावर होती रहती थी यदि वर्णन करनेके योग्य होती तो वे एक विराटकाय वड़े भारी ग्रन्थमे भी समाप्त न होती। उनके राज्यके समयमे विदेशियोके द्वारा आमेर राज आक्रान्तहुआ, शत्रुओने नगर घेर लिया, उन्होने आत्मसमर्पण करके लड़ाईका खर्च देना स्वीकार किया। जिस समय आक्रमणकारियोने भ्रान्तिके वशहो असावधानता प्रकाश की थी, केवल उस समयमे ही उन्होने वीच २ मे अपनी वीरता दिखाई थी,

❋ Aitcheson's Treaties & Vol.IV.

और वीच वीचमे उसी षड्यंत्रसे दरवारमे भी तलवार और छुरीका प्रयोग किया था। वीच २ मे रावला अर्थात् राजाके अन्त पुरसे भी कलकका समाचार पहुँचा था, और उस लम्पट नृपतिका रसकर्पूरनाम्नी स्त्रीके ऊपर आसक्त होना भी एक अत्यन्त निन्दनीय कार्य था। इन राजाके जीवनमे एक भी श्रेष्ठगुण दिखाई नही दिया, जो राजपूतोकी विशेष घृणा कापुरुषकी उपाधिसे युक्त थे उनकी जीवनीको लिखकर हमारी इच्छा इतिहासको कलंकित करनेकी नही है। उदयपुरकी राजनंदिनी कृष्णकुमारीके सम्बन्धमे उन्होने अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य किया था, उसका वर्णन पहिले ही होचुका है, केवल इसीके करनेसे उनके चरित्र कलंकित नहीं हुए, उन्होने कई लाख रुपये भी वृथा नष्ट किय थ। जयमदिर नामक उज्वल मन्दिरकी महामूल्य वस्तुएँ अत्यन्त घृणितकार्यके लिये उन्होने वृथा नष्ट की। कालीखो नामक स्थानमे मीनालोग वशानुक्रमसे जयमदिरके ऊपर विश्वासीरक्षक नियुक्त थे, प्रभु जगत्सिहको उस मदिरको विध्वंश करता हुआ देखकर वे लोग अत्यंत दु:खित हुए और किसी २ ने आत्मघात करके शरीर छोड दिया। सवाई जयसिहके निर्माण किये अत्यन्त सुन्दर जयपुर नगरके चारोओरकी ऊँची २ दीवारोको प्रत्येक श्रेणीके तस्कर और लुटेरे घेरे रहते थे। वाणिज्य व्यापार एकवार ही वद होगया, अराजकता फैलगई और राजा जगत्सिहके आलसी होनेसे तथा राजकर्मचारियोके द्वारा लूटमार होनेसे किसानोने खेती करनी भी छोड़ दी। एकदिन एक दरजीने राजसभामें प्रभुत्व किया, दूसरे दिन एक वनियेने और इसके पीछे एक ब्राह्मणने, इस प्रकारसे प्रभुत्व चलाकर पर्यायक्रमसे सभी राजधानीके निकटवर्ती नाहरगढ नामके किलेम, कि जहाँ फौजदारीके अपराधी जाते है, वहाँ वे भेजे गये, करद सामन्तोने उनके प्रति तथा उनकी आज्ञाके प्रति अत्यन्त घृणा दिखाई। जगत्सिहने जो रसकपूरको लेकर घृणित कार्य किया उससे एक समय उनको सिहासनसे उतारनेके लिये एक वडाभारी आन्दोलन उपस्थित होगया था। उस प्रस्तावसे कार्य होनेके लिये समस्त तैयारियां होगई, आमेरराजके अर्द्धाधिकारियोने उस रसकपूरको नाहरगढके किलेमे भेजना चाहा पर वह प्रस्ताव भी व्यर्थ होगया। इस मुसलमान उपपत्नीके प्रेममे महाराज जव अत्यन्त आसक्त हुए, तव उसके प्रेमसे उन्मत्त हो उन्होने अपने राज्यके आधे अशपर अधीश्वरीरूपसे रसकपूरका अभिषेक किया, और वास्तवमे उनका राज आधे अशपर ही था। अधिक क्या कहे महाराज जयसिहने जिन अमूल्य ग्रन्थोको संग्रह किया था उसका आधा भाग भी उसको देदिया, वह समस्त ग्रथ विध्वस होगये, और वन उस वार विलासनीके आधीन वाले कुटुम्बियोने वॉट लिया। राजा जगत्सिहने उस स्त्रीके नामसे सिक्का प्रचलित किया था, केवल उस स्त्रीके साथ एक वार वह घोडेपर चढकर भ्रमण करनेके लिये

---

(१) टाड साहव लिखते है, " फिरोरजीनतास नामका एक मनुष्य जातिका दरजी था हमे ऐसा अनुमान होता है कि यह मनुष्य वालकपनमे दरजीके कार्यका करता था, परन्तु यह मनुष्य जगत्सिहके कुनातियोमे प्रधान मुसाहिव था, ऐसा भी अनुमान है कि जगत्सिहके साथ [illegible] [illegible] वह मनुष्य भी उनके [illegible] गया था।

गये थे, यथार्थ राजस्त्रियोको जो समान प्राप्त होता है, उन्होने सामन्तोसे भी उस वेश्याके प्रति वैसा ही सम्मान दिखानेको कहा। परन्तु क्षत्री सामन्तोका हृदय गर्वसे पूर्ण होता है वह क्या इस आज्ञाको सहन कर सकते है? यद्यपि मिश्र शिवनारायण नाम ब्राह्मण जो दीवान और प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था, वह उस वेश्याको कन्या कहकर पुकारता था, परन्तु दूनीके सामन्त असीम साहसी चाँदसिहने क्रोधित होकर कहा कि " रसकपूरका जहाँ जो कार्य होगा मै उसमे सहायता नही दूगा, उसके इस वचनको सुनकर जगत्‌सिहने उसके ऊपर २००००० रुपया जुर्माना किया, यह दूनी देशके चारवर्षकी आमदनी थी "।

" मनुजी राजाको सिहासनसे उतरनेकी व्यवस्था करगये है और आमेरके सामन्तोको भी उसी भाँति जगत्‌सिहको सिहासनसे भ्रष्ट करनेका यथार्थ कारण प्राप्त हुआ था। परन्तु दुर्भाग्यसे सामन्तोकी वह कल्पना प्रगट होगई। राजा जगत्‌सिहके कितने ही बुद्धिमान मित्रोने इनके पद सम्मानकी रक्षाके लिये अनेक भातिसे विचार किये, उस रसकपूरके चरित्रके सम्बन्धमे कितने ही घृणित वृत्तान्त राजाने सुने, राजा जगत्‌सिहने सरलतासे उसपर विश्वास करलिया। उन्होने जो रसकपूरको धनसम्पत्ति दी थी, शीघ्र ही उसके लेलेनेकी आज्ञा दी, और जिस किलेमे अन्य अपराधी रक्खे गये थे उसीमे इसको भी बंदी रखनेकी आज्ञा दी। उस कारागारसे वह स्त्री निकल कर भाग गई, जगत्‌सिहने इस पर तीनक भी ध्यान न दिया, जगत्‌सिहने इससे पीछे अपनी मृत्युके समयतक जयसिहके पवित्र सिंहासनको कलकित किया था। सन् १८१८ ईसवीकी २१ वी दिसम्बरको उन्होने प्राण त्याग किये "।

"राजा जगत्‌सिहने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये थे। इनके कोई पुत्र नही था, और अपनी जीवित अवस्थामे इन्होने किसीको उत्तराधिकारी भी नही बनाया। राजपूतोमे यह रीति है कि यदि राजाके कोई पुत्र न हो तो राजाकी मृत्युके पीछे किसी बालक या युवकको दत्तकरूपसे नियुक्त कर लिया जाता है, और उस दत्तक पुत्रसे ही मृतक राजाकी दाहक्रिया कराई जाती है, इस कारण महाराज जगत्‌सिहकी मृत्युके पीछे नरवरके भूतपूर्व एक राजाके पुत्र मोहनसिह आमेरराजके अधीश्वररूपसे नियुक्त हुए "।

मोहनसिहको आमेरराज्यपर निर्वाचन करनेके सम्बन्धमे इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते है कि "२१ वी दिसम्बरको जगत्‌सिहने प्राणत्याग किये, परन्तु चिर प्रचलित रीतिके अनुसार उनके उत्तराधिकारीको नियुक्त करनेके समय मंत्रीसमाज इस बातको भलीभांतिसे जानगया कि पुराने समयकी रीतिके अनुसार अपनी पूरी सामर्थ्यका अपने देशपर चलाना और अपने आधीनोपर वैसा वर्ताव करना इस समय सर्वथा असंभव है, और इस बातका निश्चय सन्धिपत्रमे भी होगया था, हमारा काम राजा और प्रजाका विरोध मिटाना था, परन्तु उनकी पुरानी रीति भांतिसे अभिज्ञ होनेके कारण जब हमने उत्तराधिकारीके निर्णयमे हस्तक्षेप किया तो हमारा हस्ताक्षेप

करना आक्रमणके तुल्य हुआ, और जयपुरके सरदारोको उस मेलमिलापपर अफसोस करना पड़ा जो इस समयकी चालाकीके लिये वहॉके सामन्तोने उसे स्वीकार करलिया था "।

"नवीन राजाके नियुक्त होनेके सम्वन्धमे राजपूतोके राज्योमे जैसी रीति प्रचलित है उसको यहॉ पर लिखना भाविष्यमे राजाओको नियुक्त करनेके संवधमे विशेप लाभदायक दृष्टि आती है। बड़े पुत्रको उत्तराधिकारी पदपर अभिषिक्त करनेकी रीति समस्त राजपूतोमे प्रचलित है, कही दो एक स्थानोपरहो इस रीतिका निषेध दिखाई पड़ता है, पर उनकी संख्या अति सामान्य है। इसके सम्बन्धमे मनुजी पूरी व्यवस्था करगये है, पर मध्यकालके राजपूत मनुकी कितनी ही व्यवस्थाओका अनुसरण नहीं करते प्रचलितरीति और पूर्वदृष्टान्तके मतसे राजसिहासनके सम्वन्धमे हो अथवा और किसी अधीन सामन्तके पदसे हो बड़ा पुत्र ही जो 'पाटकुमार' 'राजकुमार' अथवा 'कुमार' नामसे पुकारा गया है वही उत्तराधिकारीरूपसे नियुक्त किया जायगा। और दूसरी ओर राजकुमारके अन्यान्य भ्राता अपने २ नामके पहिले केवल कुमार शब्दका प्रयोग करते है। राजदरवारसे हो या सामन्त पदसे हो, सभीके यहाँ अवस्थाके अनुसार सम्मान दिखाया जाता है। सभीके यहॉ 'पटरानी' और "पाटकुमार" है। पटरानीकी सामर्थ्य और रानियोकी अपेक्षा अधिक है, राजकुमारके अज्ञान होनेपर स्वयं पटरानी समाजिक रीतिके अनुसार राजकार्य करती है, भारतवर्षमे सवसे प्राचीन राजधानी मेवाड़की पटरानी ही महाराणाके साथ सिहासन पर अभिपिक्त हुई थी। राजाने सवसे पहिले जिस रानीके साथ विवाह किया था, वही पटरानी हुई थी, और सतानके उत्पन्न होते ही उनको उक्त उपाधि प्राप्त हुई, उसी दिनसे वह पटरानी "माजी" नामसे पुकारी गई, उन्होने जिस समय कार्य किया था, उस समय राज्यके कईएक देशोके सामन्त उनकी सहायता करते थे, उन सामन्तोने राजाके यहॉ कितने ही कर्मचारियोके सहित उस प्रचलित वंशकी रीतिके अनुसार उस सम्मानको भोगा था "।

यदि कोई राजा पुत्रहीन अवस्थामे मरजाय तो उनका जो अत्यन्त कुटुम्बी है अथवा सहोदर भ्राताके न होनेपर रजवाडेके प्रत्येक राज्यमे जो ऐसे राजवशीय कितने ही परिवार है, वही उसी अवस्थामे राजपद पर नियुक्त होनेकी सामर्थ्य रखते हैं। राज्यसिहासनके प्राप्तिकी सख्या सीमावद्ध करनेके लिये प्रत्येक राज्यमे इस प्रकारकी विधि नियत हुई है, जिन प्रत्येक राज्योमे केवल कितनेही राजवशियोका परिवार उक्त निर्वाचन अधिकारको प्राप्त हुआ है। इसरीतिके अनुसार मेवाड़राज्यमे केवल राणावत सम्प्रदायोके सवसे वडोने "जो वावा" की उपाधि धारण की है, केवल वही उपरोक्त अवस्थामे सिहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं। मारवाड राज्यमे जोधाव-शीय ईडर राजवशको उक्त अवस्थामे मारवाडका सिहासन प्राप्त होता था। बून्दी-राज्यमें दुगारिवश, कोटाराज्यमे पलाइताका आपजीवश, बीकानेरराज्यके महाजन गावका सामन्तवश, और जयपुरराज्यके राजा मानसिहके वशधर—शाखा राजावत

सम्प्रदाय व्यवस्थाके अनुसार उक्त अवस्थामे सिंहाशन प्राप्तिके अधिकारी है। परन्तु उस राजावत् सम्प्रदायमें जिन्होने मानसिंहके पहिले जन्म लिया है और जिन्होने पीछे जन्म लिया है उनमे भी भिन्नता है, प्रथमोक्त केवल राजावत्, वा समय२ पर 'मानासिहोत्' नामसे, और शेपोक्त 'माधानी' नामसे पुकारे जाते है। राजवत् संप्रदायोमे वहुतसे वंशहै, इनमे झिलांयके सामन्तोका परिवार सवसे श्रेष्ठ है, और उस वशमे सवसे वड़ेके यदि शारीरिक अथवा मानसिक किसी अंगकी हानि अथवा शरीरमे किसी प्रकारका रोग न हो तो उपरोक्त अवस्थामे वही जयपुरके सिंहासनकी प्राप्तिके अधिकारी है, और चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उस नियुक्त की हुई विधिका त्यागन करना अनुचित है।"

कर्नल टाड् साहव फिर लिखते है कि यद्यपि सधिपत्रकी आठवी धाराके अनुसार महाराज और उनके उत्तराधिकारी उनके राज्य तथा उनके आधीनके मनुष्योके ऊपर सव प्रकारसे राज्यके चलानेकी सामर्थ्य युक्त होकर राजा रहैंगे इत्यादि और प्रत्यक्षमे अग्रेज गवर्नमेण्टने कहा है कि किसी प्रश्नकी भी अन्याय रूपसे मीमांसा न होगी परन्तु उसने सवसे पहिले जयपुरके राजसिंहासन पर नवीन नरपतिके नियुक्त होनेके सवन्धमे जो व्यवहार किया है वह उक्त प्रतिज्ञा भंगमूलक और चिर प्रचलित रीतिके विपरीत है। गवर्नमेण्टने इस प्रथम हस्ताक्षेपके समय ऐसा काण्ड उपस्थित कर दिया कि जिसका सामान्तोने पहिले कभी भी अनुमान नही किया था, "इससे भलीभांति प्रमाणित होता है, कि जयपुरके अधीश्वरने जो हमारे साथ आपने भाग्यको विजडित करनेमे आनाकानी की है, वह अवश्य ही न्यायसंगत है।" हम वर्तमान रेसिडेन्टोसे पूछते है उनमेसे ऐसा कौन है कि जो इस प्रकारसे टाड् साहवकी समान सत्यके सम्मानके रखनेकी सामर्थ्य रखता हो।

सधिपत्रकी छठवी और सातवी धाराके सम्वन्धमे महात्मा टाड् साहव लिखते है, "छठवी और सातवी धाराओसे ही अनैक्यताका वीज वोया गया है।आश्रितोको हृदयमे जव अविश्वाश उपस्थित हो अथवा आश्रयदाता स्वेच्छाचारी होते है तभी अनैक्यता देखी जाती है।इसीमे अविश्वास उपस्थित होता है कारण कि जयपुरके सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् राजा हमारे रेसिडेण्ट ऐजेण्टके सामने अपने राज्यके राजश्वका वृत्तान्त प्रादेशिक समस्त वन्दोवस्तको प्रकाश करनेमे वाध्य हो गये है कि राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक नही है[१]।"

---

(१) महात्मा टाड् साहबने इस स्थानपर अपने टीकेमे लिखा है, कि "मेवाड़राज्यकी भी उन्नति और राजस्वकी वृद्धि होनेपर इस प्रकारके अतिरिक्त करको बढ़ादेनेकी व्यवस्था हुई थी, ग्रंथकारने बहुत भांतिसे चेष्टाकी कि इसके बदलेमे एक नियत कर देनेकी व्यवस्था हो परन्तु उनका वह मनोरथ सफल न हुआ, परन्तु यह सुनकर वह अत्यन्त आनंदित हुए थे कि मेवाड और आनेरके करदानके सन्बन्धमें परिवर्तन पूर्वक नवीन व्यवस्था हुई है, कई लाख रुपयोमे भी अधिक खर्च करनेपर राजपूतानेका असतोष दूर नहीं हुआ। जब कि हम उन्नति इत्यादि सभीको गवर्नमेण्टके—

साधु टाड्ने अतमे निर्वाचनके सम्बन्धमे कहा है " कि जयपुरकी रीतिके अनुसार जिस बालकका अभिषेक होना निश्चित हुआ था उसके सम्बन्धमे तथा गोदके उपलक्षके मन्तव्य हम यहां प्रकाशित करना आवश्यक समझते है। इस समय जो कुछ अभिषेकके सम्बन्धमे लिखते है उससे इस विषयकी रीति नीतिका ज्ञान होनेमे भविष्य के लोगोको सुविधा होगा।

मोहनसिंह नामका जो बालक था, जगत्सिंहकी मृत्युके पीछे प्रभात होते ही जयपुरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुआ। वह बालक नरवरराज्यके भूतपूर्व राजा मनोहरसिंहका पुत्र था, सेंधियाने उस मनोहरसिंहको सिंहासनसे च्युत कर राज्यसे निकाल दिया था, यह तो हम पहिले ही कह आये है कि जयपुरराज्यवंशके आठ सौ वर्ष पहिलेसे नरवरराज्यवंशकी शाखा चली थी। परन्तु आदिराज्य नरवरके अधीश्वर पुत्रहीन अवस्थामे स्वर्गवासी होगये, इस लिये नरवरवासी सामन्तोने आमेरपतिके निकट एक पुत्रकी प्रार्थना की उसपर पृथ्वीराजने अपने एक पुत्रको नरवरके सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये भेज दिया, उक्त मोहनसिंहका अभिषेक आमेरके कुमारसे चौदह पीढी पीछे हुआ था। हम पहिले ही कह आये है कि मोहनसिंहका यह अभिषेक प्रचलित रीतिके सपूर्णत विपरीत था, कारण कि आमेरके महाराजके कोई पुत्र नही था, प्रचलित रीतिके अनुसार राजा मानसिंहके उत्तराधिकारीगण और माधोसिंहके उत्तराधिकारी जो सर्वसाधारणमे राजावत् नामसे विख्यात् थे, उनमे झिलॉयके सामन्त सबसे प्रथम आमेरराजके पदपर नियुक्त होनेके अधिकारी थे, उनके अयोग्य होने पर और भी कितने ही सामन्तवश अभिषिक्त होनेकी सामर्थ्य रखते थे "।

—अनुग्रह पर निर्भय करते है, तब हमने निर्भय होकर गवर्नमेण्टके निकट अपने मन्तव्यको प्रकाश किया, परन्तु जब कि उस गवर्नमेण्टके निकट हमारी आशा और भय कुछ भी नही है, तब हम अपने उस मन्तव्यको गुप्त नहीं रख सकते। यह देश गवर्नमेण्टके शासनका स्थायी है, और जिन राज्योने हमारा आश्रय लिया है उन सब राज्योमे सुख शांति और स्वाधीनताकी वृद्धि होती रहे, यही हमारी अभिलाषा है। जिन मनुष्योने राजपूत जातिकी यथार्थ अवस्था और मानसिक भावको न जानकर उन राजपूतोकी स्वाधीनताको और भी अधिक सकोचन करनेकी चेष्टा की वह उस देशके भयानक शत्रु है यह भलीभातिसे प्रमाणित होता है औरगजेबके साथ राठोरोकी जो तीस वर्षसे बराबर शत्रुता चली आरही थी, इसे इतिहासमे पढिये, उन राठोरोके प्रति अत्याचार करनेवाले औरगजेबका अ[illegible] वश कहा है? मानचित्रके प्रति दृष्टि उठाकर देखो, उसके पीछे मर [illegible] और सम्मुख ही अरावलीके शिखर खडे हुए है इस समय कौन शत्रु उन राठोरोके ऊपर आक्रमण करनेके लिये तयार है। घृणित व्यवहार करनेवाले तथा विश्वासघाती नव्वाबोके धनने पर्लि[illegible] [illegible] सरलतासे हमको जीत लिया था, उसकी अपेक्षा राजपूत जाति किस [illegible] प्रमाणित होसकती है! देशी सेनाके प्रति यत्न करो, राजपूतोको [illegible] दो, पीछे शत्रुओके [illegible] [illegible]! [illegible] टाड साहब निर्भय होकर जो सार कथा कहगये है, वे [illegible] विषय है कि [illegible] [illegible] राजनीति उसका सुननेके लिये भी तैयार नहीं है, इस समय [illegible] टाड साहबकी उपरोक्त उक्ति विशेष शिक्षा देसकती है।

परन्तु निम्नलिखित कारणोसे चिर प्रचलित रीतिभग की गई। जगत्सिहकी मृत्यु के समय रनिवासमे मोहन नामक एक नाजिर था उसीके हाथमे उस समय राज शासनकी लगाम थी। वह नाज़िर प्रवल वुद्धिमान् था, यद्यपि उसने अनेक चतुरता करके अपने आशयको पूर्ण करलिया इससे उसको राजभक्तकी अपेक्षा स्वार्थपरायण अनुमान कर-सक्ते है, पर यह वास्तवमे राजाके मगलकी इच्छा करनेवाला एक नि स्वार्थी मनुष्य था। इस समय मोहनसिहकी अवस्था केवल नौ वर्षकी थी, इस कारण नाज़िरने उनके दीर्घकाल तक अप्राप्त व्यवहारकी अवस्थामे पूर्ण सामर्थ्य दिखानेकी इच्छासे उनको सिहासनपर अभिषिक्त किया था। राज्यके श्रेष्ठ सामन्त गणोके मध्यमे डिग्गीके मेघसिह नाजिरके एक प्रधान सहयोगी थे, मेघसिहने अपनी चातुरी और वल प्रकाशसे राजाकी खास भूमिमे अपना अधिकार करने और उसे निर्विघ्न होकर भोगनेकी इच्छासे आमेरकी बारह वलवान सम्प्रदायोमे अपनी प्रवल सम्प्रदाय (खॉगारोत्) के प्रभुत्व और प्रावलताके साथ नाज़िरके उस प्रस्तावको समर्थ न किया था। पुरोहित और धाभाई इत्यादि राजदरवारमे कुटुंवके कर्मचारीगण तथा महलके आधीनवे कर्मचारी सभी नाजिर के स्वार्थमे अपना स्वार्थ जानते थे। राजाके अज्ञान अवस्था होनेपर नाज़िरकी कृपासे वह कर्मचारी निर्विघ्नतासे अपने पदपर स्थित रह सकेगे। यदि दूसरे पक्षमे कोई मनुष्य राजपद पर प्रतिष्ठित होगा ता वह अपनी इच्छानुसार कार्य करैगा, और अपनी मित्रमडलीको भी राजकर्मचारीयोके पदपर नियुक्त करगा, यही विचार कर राजकर्मचारी गणोने भी नाज़िरके पक्षको समर्थ न किया।

"मोहनसिहके अभिषेकके सम्वन्धमे सामन्तोके साथ वा राजरानियोके साथ पहिले कुछ भी परामर्श न करके नाज़िरने केवल अपने दायित्वके भारको ग्रहण कर स्वामीकी मृत्युके पीछे दूसरे दिन प्रभातकाल ही वालक मोहनसिहको सूर्यके रथपर चढाया और जगत्सिहकी प्रेतक्रिया करानेके लिये लेगया दाहक्रिया होजानेके पीछे मोहनसिहने पवित्र स्नान किये और जितने मनुष्य इकट्ठे थे सभीने मोहनसिहको कछवाहोका राजा स्वीकार कर उनका दूसरा नाममानसिह रखकर सम्मान दिखाया। उपरोक्त घटनाके पीछे जयपुरकी राजधानीमे जयपुरके सामन्तोमे जो प्रतिनिधिरूपसे रहते थे, नाजिरने मोहनसिहके अभिषेकमे उनकी सपूर्ण सम्मति प्रकाशकपत्र पर

---

(१) यवन सम्राटोके अत पुरके रक्षक प्रधान खोजे नाजिर कहाते थे, राजपूत राजाओंसे जयपुर और बूंदीके राजाओने यवन सम्राटोका अनुकरण करके अपने अन्त पुरके रक्षकोको नाजिर की उपाधि दी थी।

(२) टाड् साहवने लिखा है, कि खागारोत् सम्प्रदाय वाईस वशोके सामन्त वशमे विभक्त थी, उन सबकी वार्षिक आमदनी ४०२८०६ रुपये थी। जयपुरपतिकी सहायताके लिये उनको ६४३ अश्वारोही सेना देनेका नियम था। यद्यपि मेघसिंह इस सम्प्रदायमे छठवीं वा सातवी श्रेणीके पदके मनुष्य थे, पर वह अपनी वुद्धि और तेजस्विताके वलसे इस सम्प्रदायके नेता हुए थे, और राजदरबारमे इस सम्प्रदायके मुख्य यन्त्रस्वरूप थे।

हस्ताक्षर करके मोहर लगानेकी चेष्टा की । उक्त प्रतिनिधियोने नाजिरके लिखेहुए प्रस्तावको स्वीकार करके सावधान होकर सम्मान दिखाते हुए ऐसा उत्तर दिया, कि जिससे न तो मोहनसिहके अभिषेकके सबन्धमे कुछ उनकी सम्मति ही विदित हुई और न कुछ असम्मति ही जान पड़ी, वरन उसके सम्बन्धमे परस्परमे विचार करनेके लिये समय प्राप्त होगया, इससे उस समय कुछ दिनोके लिये अभिषेक सम्बन्धी मीमांसा स्थिर न हुई । इस समय सभी अंग्रेजोकी ओर दृष्टि उठाकर देखने लगे, अग्रेजोको प्रसन्न रखना नाजिरकी प्रथम चेष्टा थी इस कारण उसने शीघ्र ही दिल्लीमे अग्रेज रेसिडेण्टके पास ऐसा अनुरोध प्रकाश कर भेजा, कि सरकारने तुरन्त ही अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमे भेजदिया । रेसिडेण्टका भेजा हुआ मुन्शी जगत्‌सिहकी मृत्युके छः दिन पीछे दिल्लीसे जयपुरमे आ पहुचा रेसिडेण्टने उक्त मुन्शीको निम्नलिखित कईएक प्रश्नोका उत्तर संग्रह करनेके लिये आज्ञा दी थी " नरवरराजके पुत्रको आमेरके सिहासन पर अभिषिक्त करनेका कारण क्या है? मोहनसिहके वशका विवरण, उनके वशकी कारिका, सिहासनपर अधिकार पानेका उनका कोई स्वत्व है या नही और किसकी सम्मतिसे उनका अभिषेक हुआ है । इन ग्यारह प्रश्नोके अतिरिक्त उक्त कईएक प्रश्नोमे ओर भी पूछा गया कि इस अभिषेकमे रानी और सामन्तोने संमति दी है या नही ? रानी और सामन्तोके हस्ताक्षर सहित इस सम्बन्धका एक पत्र रेसिडेण्टके निकट लानेके लिये भी हुक्म दिया गया था ।"

इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि "नाजिर और रेसिडेण्टके विश्वासी मुन्शीने उक्त प्रश्नोका इस प्रकारसे उत्तर भेजा कि, वृटिस गवर्नमेण्टने सन्तुष्ट होकर पहिली फरवरीको मोहनसिहके अभिषेकके समयमे एक अभिनदंन पत्र भेजा और इसी प्रकारका अग्रेज गवर्नरने भी इनके पास सम्मान सूचक एक पत्र भेज दिया । दरबारमे यह दोनो पत्र पढ़े गये, "फिर आज नरवरमे वाजावजने लगा,वालक मोहनसिह प्रतापके महलसे चलकर राजसिहासन पर विराजमान हुए ' । वृटिश गवर्नमेण्टने इस प्रकारसे मोहनसिहके अभिषेकमे अपनी पूर्ण सम्मति दी, जयपुरके राजदरबारमे जयपुरके सम्पूर्ण सामन्तोके प्रतिनिधि नाजिरने उनसे पूछा, "कि आपके प्रभु सामन्तोकी इस सम्बन्धमे क्या सम्मति है?" प्रतिनिधियोने तुरन्त ही उत्तर दिया, कि आपके इस प्रश्नके पूछने पर हम उत्तर देनेको प्रस्तुत है पर उन्होने उसके साथही साथ यह भी कह दिया, "कि जोधपुरके राजाकी भगिनी जो आमेरकी पटरानी है उन्हींके मतपर हमारे प्रभु सामन्तोका मत निर्भर हुआ है"।पटरानीने यहाँतक प्रकाश्यरूपसे नाजिर और उनके पक्षवालोके विरुद्धमे अपना मत प्रकाश किया था कि मार्च मासके पहिले अभिषेकके सबन्धमे सर्व साधारणमे असंतोषके प्रबल चिन्ह दृष्टि आने लगे, और झिलॉयके राजावत् सामन्त जो सिहासन प्राप्तिके समान अधिकारी थे, उन्होने इस स्वत्वकी रक्षाके लिये अस्त्र धारण करनेका विचार किया, और शीघ्र ही मिवाड और ईसरदाके दो सामन्त जो उक्त सम्प्रदायके [illegible] थे, परन्तु इस [illegible] प्रबल बलशाली थे उनके साथ योगदेनेको सन्नद्ध हुए ।

"इस उपद्रवके समयमे और भी एक सम्प्रदाय थी, पृथ्वीसिंहके पुत्र जिसके विषयमे हम पहिले वर्णन कर आये है, और जो इस सेंधियाकी दयाके आश्रयविभूत होकर ग्वालियरमे रहते थे, उनको आमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेका उद्योग किया गया, परन्तु मूर्खता और कुचरित्रताका विषय प्रकाश होगया इस लिये माधोसिंहके पुत्रोंकी ज्येष्ठ शाखासे राज्याधिकार नष्ट होगया।

कर्नल टाड् साहबके उक्त मन्तव्यको पढ़नेसे भलीभाँतिसे जाना जाता है कि इस समय आमेर राज्यमे ऐसा एक भी राजनीतिका जाननेवाला वा साहसी वीर नही था, जो उपस्थित हुए उपद्रवोंकी भलीभाँतिसे मीमांसा करता। नाज़िरने अपनी चिरकाल प्रचलित रीतिके हृदय पर लात मारकर अपनी गुप्त अभिलाषा पूर्ण करनेको राज्य पर दीर्घकालतक अधिकार चलानेके लिये नरवरराजके राजकुमारको आमेरको गद्दीपर बैठाल दिया, बडे आश्चर्यका विषय है कि सामन्त मंडलीने प्रकाशरूपसे सबसे पहिले ठीक समयपर इसके विरुद्ध कोई प्रतिवाद करनेका साहस नहीं किया। यह ठीक भी है कि इस समय नाज़िर आमेरमे अपनी अतुलनीय सामर्थ्यका विस्तार कर रहा था, किन्तु यदि सामन्तोमे एक भी साहसी वीर होता तो नाज़िर कभी भी इस भाँतिसे इच्छानुसार अपनी सामर्थ्यका विस्तार नही कर सकता। टाड् साहबकी उक्तिसे भलीभाँतिसे जाना जाता है कि अंग्रेज कंपनीने विशेष तत्त्वका अनुसंधान किये विना केवल एक नाज़िरकी उक्तिके ऊपर सपूर्ण विश्वास स्थापन करके चिर प्रचलित राजपूतरीतिका अपमान किया था। अंग्रेज रेसिडेण्टने सबसे पहिले अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमे भेजकर कईएक प्रश्न किये थे, यदि उस बातको अटल रखकर वह यथार्थ तत्त्वको जान लेते तो किसी प्रकार भी अंग्रेज सरकार नाज़िरकी उक्तिके मतसे मोहनसिंहको अभिषेक करानेमे अपनी सम्मति नही देती। मुन्शीके परामर्शसे उहोने मोहनसिंहको आमेरके सिंहासनपर बैठाकर समस्त राज्यमे भयकर अग्नि सुलगादी, अंग्रेजोके विशेष खोज न करनेसे मोहनसिंह नाजिरकी चतुरताके जालमे फँसगये। एक ओर जिस भाति सामन्त श्रेणी उत्कंठित होगई, दूसरी ओर सिंहासन प्राप्तिके लिये राजावत् सामन्तोंको संप्रदायने अस्त्र धारणकर मोहनसिंहके विरुद्ध समरकी तैयारी की। शीघ्र ही राज्यमे जातीय समरानलके प्रज्वलित होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आनेलगे। आमेरकी पटरानी जोधपुरपतिकी भगिनी पहिलेसे ही नाजिरके ऊपर अत्यन्त क्रोधित थी, उन्होने पहिलेसे ही मोहनसिंहके अभिषेकमे अपनी सम्मति नही दी, इस कारण वह भी इस समय प्रबल आपत्ति करने लगी। चतुर नाज़िर चारोओरसे अपनेको आपत्तिसे घिराहुआ देखकर उपाय सोचने लगा। नाजिरने देखा कि एकमात्र पटरानीके संतोष होते ही समस्त उपद्रवोंकी शांति होजायगी। उक्त पटरानी मारवाड़के राजा मानसिंहकी बहिन थी। इस कारण नाज़िर सबसे पहिले उन मारवाड़पतिकी शरणमे जाकर अनेक प्रकारसे विनती करने लगा। नाजिरने विचारा कि रानी अपने भाईकी आज्ञाको अवश्य ही मानैगी, और मोहनसिंहके अभिषेकके

(१) भगनी नहीं पुत्री थी।

सवन्धसे यह अपनी सम्मति भी अवश्य ही देगी । चतुर नाज़िरने मानसिहके समीप कहला भेजा कि महाराज अपनी मृत्युके समय कह गये है कि मोहनसिह ही आमेरके सिहासन पर अभिपिक्त हो अत उनकी अंतिम इच्छाके अनुसार ही हमने मोहनसिहको आमेरके सिहासनपर अभिपिक्त किया है । इस समय आप अपनी भगिनीसे सम्मति देनेके लिये कह दीजिये, तभी सव उपद्रवोकी शांति होसकती है । राजा मानसिहने नाजिरके छलमे न आकर यह उत्तर भेजा कि "जयपुरके सिहासन पर अभिषिक्त होनेका किसको अधिकार है, इस विपयके पत्रपर हम या हमारी भगिनीके हस्ताक्षर होनेकी कुछ आवश्यकता नही है इन प्रश्नोकी मीमांसाका भार चिर प्रचलित रीतिके अनुसार वारह श्रेष्ठ सामन्तोके वंशधरोपर निर्भर है, वह यदि मोहनसिहके सम्वन्धमे अपनी सम्मति देकर उस स्वीकारपत्र पर अपने हस्ताक्षर करदे तो आवश्यकता होनेपर हमारी भगिनी भी अपने हस्ताक्षर करसकती है" ।

राजा मानसिहके उक्त उत्तरसे नाज़िरको चारोओर अंधकार दिखाई पड़ने लगा । उसने समझा था कि गवर्नमेण्टके उसकी चतुरतासे भ्रांतिरूपी कुएँमे गिरते ही और गवर्नमेण्टके द्वारा भेजेहुए मुन्शीको उसके पक्षको भलिभाँतिसे समर्थन करते ही निर्विघ्नतासे मोहनसिहको आमेरके सिहासन पर वैठाल सकैगे । पर अव उसमे भी कठिनाई दीखी, तव वहुतसी चिन्ता करनेके उपरान्त उसने और भी एक षड्यंत्र जालका विस्तार किया । उसने विचारा जव कि गवर्नमेण्टने मोहनसिहको आमेरके अधीश्वररूपसे स्वीकार करलिया है तव यदि कोई सामर्थ्यवान् राजपूत राजा मोहन-सिहके पक्षमे लाया जाय तो आमेरकी सामन्तमंडली और पटरानीकी की हुई समस्त आपत्तियां दूर होसकैगी । उसने इस प्रकारकी चिन्ता करके मेवाडके राणाकी पोतीके साथ मोहनसिहके विवाहका प्रस्ताव एक दूतके हाथ उदयपुरमे भेजा । महाराणाने इस विवाहके प्रस्तावको सरलस्वभावसे स्वीकार करलिया, और राणाके जो प्रवल सामर्थ्यवान् प्रतिनिधि दिल्लीमे रहते थे वह भी इस प्रस्तावमे सम्मत होगये । परन्तु राणाके यहॉके और कितने ही सामर्थ्यवान मनुष्य इस प्रस्तावके विरुद्ध खड़े हुए । अतएव राणाको हताश होकर इस प्रस्तावमे अपनी असम्मति प्रकाश करनी पडी, कर्नल टाड् साहव लिखते है कि फिर यह सम्मति ठहरी कि राजा अपना विवाह जेपुर-राजकी वहनसे करले कि जिसकी सगाईकी रीति वारह वर्प पहिले हो चुकी थी और उसमे वहुतसा रुपया खर्च हुआ और दिया गया था, और उस समय राणाकी इच्छा जयपुर नगरमे जानेके लिये अनेक आपत्ति दिखाकर रोक दीगई थी । किसी हिन्दू जातिके महाराजको प्रतिष्ठासे लेनेके लिये समस्त आमेरके सामन्त अपने शासित देशोको छोडकर परस्पर मानी गई और वनाई गई रीतोके अनुसार वहॉ आवे कि जिसकी प्रसन्नताके स्वत्व स्वय ही सग्रह किये गये है, और जिन रीतोको यह विवाह भलीभॉतिसे दृढ कर देगा । यद्यपि नाजिरने दृढतासे इस ग्रंथिको वॉधा था परन्तु न जाने परमेश्वरने मोहनसिह और नाजिरके भाग्यमे क्या लिखा था कि एक ही उपायने

दोनोके भाग्यका चक्र पटला खागया । अचानक यह समाचार सुन पडा कि जगत्सिहकी भटियानी रानी गर्भवती है ।

महाराज जगत्सिहने सन् १८१८ ईस्वीके २१ दिसम्बरमे प्राण त्याग किये थे परन्तु सन १८१९ ईस्वीकी २४ मार्चको यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि भटियानी रानीको आठ महीनेका गर्भ है, इतने दिनोतक इस समाचारके छिपे रहनेसे सभीको आश्चर्य हुआ । परन्तु कई महीनेतक यह समाचार किसीने भी नाज़िरसे न कहा यह नही विदित हुआ । गर्भके समाचारको प्रकाशित होते ही इसका निर्णय करनेके लिये कि, क्या रानी निश्चय ही गर्भवती है अप्रैलको तीन घड़ी दिन चढ़े मृतक महाराज जगत्सिहकी सोलह विधवा रानी और आमेर राज्यके प्रधान २ सामन्तोकी भार्यायें सब मिलकर भटियानी रानीके महलोमे गई, और दूसरी ओर राज्यके समस्त सामन्त "जनानी ड्योढी" अर्थात् अतःपुरके तोरणमे लगे हुए कमरेमे जाकर उस रानीमण्डलीके निर्णयके फलकी बाट देखने लगे, तीन पहरसे भी अधिक दिन चढ़े तक उन रानियोने विशेष परीक्षा करनेके पीछे स्थिर किया कि भटियानी रानी निश्चय ही गर्भवती है इसमे कुछ भी सदेह नही । सामन्त इस समाचारको पाकर अत्यन्त सतुष्ट हुए, और सम्मति करनेके पीछे वहापर एक लिखाहुआ पत्र हस्ताक्षर करानेके लिये भेज दिया, "यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा, तौ हम उसको अपना प्रभु स्वीकार करेगे, अन्य किसीके भी पक्षको ग्रहण न करेगे।" नाजिरके निकट शीघ्र ही वह प्रतिज्ञापत्र भेजा गया, उन्होने एकपत्र पर हस्ताक्षर करके शीघ्र ही उसे दिल्लीमे वृटिश एजण्टके पास भेज दिया, और उनको इस प्रकारका अनुरोध किया, कि विशेष परामर्श करके राठौर रानीकी आज्ञासे नाजिरको पृथक् कर दिया जाय । नाजिर भटियानी रानीके गर्भके समाचारको सुनकर अत्यन्त भयभीत हुआ, यद्यपि वह इस समाचारसे निराश भी होगया था परन्तु अतमे एक और भी उपाय करे विना न रहा । उसने समस्त सामन्त मण्डलीसे इस गर्भके एक स्वीकारपत्र पर हस्ताक्षर करानेकी चेष्टा की कि मृतक महाराज जगत्सिहकी आज्ञासे ही मोहनसिहको राजसिहासन पर अभिषिक्त किया गया है, परन्तु नाजिरके इस वचनको मिथ्या जानकर किसी सामन्तने उस पर हस्ताक्षर नही किये, इस कारण नाज़िरकी वह अन्तिम चेष्टा भी व्यर्थ होगई ।

राजरानीके गर्भका समाचार समस्त राज्यमे फैलगया, जो संप्रदाय सिहासन लेनेके लिये तैयार हुई थी वह सभी शांत होगई । इस प्रकारसे जगत्सिहकी मृत्युके चार महीने और चार दिन पीछे २६ अप्रैलको प्रभात होते ही भटियानी रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । राजकुमारने जन्म लिया है यह समाचार सुनते ही सामन्त मंडली महा आनदित हुई, राजधानीमे भाँति भातिके उत्सव होने लगे, मोहनसिह और नाज़िरके ऊपर मानो भयकर वज्र टूट पड़ा । टाड् साहब लिखते है कि सामन्तोने अत्यन्त आनंदित होकर नवकुमारको कछवाहोके अधीश्वररूपसे स्वीकार किया, और उसके साथ

ही साथ मोहनसिह सिहासनसे उतार दिये गये, और जिस अवस्थामे वह पहिले थे उसीमे पहुँच गये। इस घटनासे एक समय रजवाड़ेमे महा आनंद होगया, जहाँ भयकर युद्धकी तैयारी होरही थी वह एकबार ही शांत होगई। इस घटनासे जो सबने मीमांसा की थी वह सभीके पक्षमे मंगलकारी थी। इन नवीन राजकुमारके जन्म वृत्तान्तके साथ साधु टाड् साहबने जयपुरके इतिहासको समाप्त किया है हम भी जयपुर राज्यकी सृष्टिसे यहाँतक साधु टाड्का अनुसरण करते हुए आये, इन नवीन राजकुमारके शासनसे जयपुरके वर्तमान अधीश्वरके अभिषेक तकका इतिहास हमने स्वाधीनभावसे संग्रह यिया है, पाठक उसको अगले अध्यायमे भलीभाँतिसे पढ़ सकैंगे।

पंचम अध्याय ५.

भटियानीरानीका राज्यशासन–राजमंत्री पदपर बृटिश गवर्नमेण्टके मनोनीत रावल वैरीसालका नियोग–सामन्तोका अन्याय करके अधिकृत खास भूमिको ग्रहण करना–सामन्तोका प्रतिज्ञा पत्र–विश्वासीरूपसे राजकार्य सँभारनेके लिये मुसद्दीगणोका प्रतिज्ञापत्र–आमेर राज्यमे फिर अशान्तिका आविर्भाव–भटियानी रानीके कृपापात्र झूताराम–वैरीसालको पदच्युत करके झूतारामका मत्रीपद ग्रहण करना–झूतारामका प्रबलप्रताप प्रभुत्व–उनके द्वारा राज्यमे फिर अराजकता अत्याचार और उत्पीड़न प्रारंभ होना–भटियानीरानीका प्राण त्याग–जयपुरके आभ्यन्तारिक शासन पर बृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षेपकी चेष्टा–महाराज जयसिहका प्राण त्याग–उनकी अकालमृत्युके सम्बन्धमे संदेह–झूतारामका जयसिहके विषप्रयोगका समाचार प्रचार करना–जयसिंहकी जीवनी–जयपुरके आभ्यन्तारिक शासन पर गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप–गवर्नर जनरलके एजण्टका जयपुरमे आगमन–वैरीसालको फिर मंत्रित्व पदकी प्राप्ति–उनके द्वारा शासनविभागकी नवीन व्यवस्था–झूतारामका षड्यन्त्रजालका विस्तार–अंग्रेज एजेण्टके प्राण नाशकी चेष्टा–उनके सहायकका प्राण नाश–हत्याकारियोंका पकडाजाना–उनको प्राण दंड–झूताराम और उनके साथियोंका यावज्जीवन चुनारके किलेमें बंदी होना—

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहब जयपुरराज्यके वृत्तान्तको इतिहासमे जिस रूपसे वर्णन करगये है, हमने उन सभीको पूर्वाध्यायतक प्रकाश किया है, इस समय टाड्के लिखेहुए इतिहासके आगे शेष समय तकके अंशको लिखनेके लिये अग्रसर हुए है।

हमारे पाठक गण महाराज जगत्सिहकी मृत्यु, मोहनसिहका अभिषेक, जयसिह का जन्म, और मोहनसिहके सिंहासनच्युतिके वृत्तान्तको पहलेही पढ़चुके है। जयसिंहके जन्मलेनेसे जयपुर राज्यकी राजनैतिक अवस्था फिर बदल गई, राजसिहासन पर जो उपद्रव मचा था, नाजिरके षड्यत्रसे राज्यमे जो भयकर जातीय समरके पूर्व लक्षण दिखाई दिये थे, राजावत सामन्तोंने असंतुष्ट होकर सिहासन प्राप्तिके लिये घोर विवाद करके युद्धकी तयारी की थी, गवर्नमेण्टने भी नाजिरके चक्रमे फँसकर शोचनीय

राजनैतिक काण्डके झमेलेमे पड़ रही थी वह जयसिहके जन्म लेते ही एकबार ही शान्ति होगई। जयसिहकी माता भटियानी रानी थी, इन्होने अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करना प्रारंभ करदिया, परन्तु गवर्नमेण्टने जयपुरके सुशासन, शान्ति, मगल, न्याय-विचारसाधन और बालक महाराजकी स्वार्थ रक्षाके अभिप्रायसे रावल वैरीसाल नामक एक बुद्धिमान मनुष्यको जयपुरके मंत्रीपदपर नियुक्त करदिया। रावल वैरीसाल उस ऊँचे पदको पाकर अपने सुकुमार प्रभुकी स्वार्थरक्षाके साथ राज्यके मंगल साधनके निमित्त भटियानी रानीके राज्यशासनकी सहायता करनेमे प्रवृत्त हुए।

जयपुरराज्यके पतन समयमे मृतक महाराज जगत्सिहकी अतिमदशामे आमेरके प्रबल बलशाली सामन्तोने छल कपट और अपनी चतुरता तथा बाहुबलसे राज्यकी खास भूमिको अपने अधिकारमे करलिया था, गवर्नमेण्टकी आज्ञासे महाराज जगत्-सिहने उस समस्त भूमिको फिर अपने अधिकारमे करलिया। आचिसन साहबने लिखा है, कि "सधिबंधनके समाप्त होनेके पीछे सबसे पहिले महाराजने यह आज्ञा दी थी कि आमेरके सामन्तोने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमे करलिया है उस सबको लौटा लिया जाय, और उद्धत सामन्तोको उनके पूर्व नियत किये हुए अधीन पदपर नियुक्त करना ठीक होगा। सर डेविड अकटरलोनीकी मध्यस्थतासे उदय-पुरके सामन्तोंके साथ महाराणाका जिस प्रकारका चुक्तिपत्र नियुक्त हुआ था, आमेरमे भी उसी प्रकारका चुक्तिपत्र नियतहुआ, सामन्तोने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमे करलिया था, वह सभी सामन्तोसे छीन कर महाराजको फिर दे दी गई और सामन्त गण न्यायद्वारा चिरकालसे जिस अधिकारको भोगते आये थे, गवर्नमेण्टने उसी प्रकारका उनको प्रति भू प्रदान किया"। यद्यपि सामन्तमण्डली अंग्रेजोके साथ संधिके इस प्रथम फलको देखकर मनही मन भलीभाँतिसे असंतुष्ट हुई थी परन्तु उन्होने अन्यान्यरूपसे राजाकी खास भूमिपर अपना अधिकार किया था, इसीसे प्रकाशमे कुछ कहनेका साहस न करसके।

महाराज जयसिहकी नाबालिग अवस्थाके समयमे जिससे आमेरके सामन्त फिर किसी प्रकारसे खास भूमिपर अपना अधिकार न करसके, इस लिये बृटिश गवर्न-मेण्टके प्रस्तावके अनुसार भटियानी रानीने सब सामन्तोसे एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करालिये। उस प्रतिज्ञापत्रको हम नीचे प्रकाश करते है।

प्रतिज्ञापत्र।

"समस्त ठाकुर (सामन्त) और मुसद्दियोकी ओरसे श्रीमती महारानी बाइ साहिबाको विदित किया जाता है कि जब तक महाराज जयसिहजी राजकार्यमे समर्थ न होजांय तब तक हममेसे कोई भी अपने व्यवहारके लिये खालिसा पृथ्वीके किसी अंशको भी अपने अधिकारमे नही करसकेगा और हमलोग सभी विश्वासके साथ अपने २ कर्तव्यको पालन करैगे।

(हस्ताक्षर) रावल वैरीशाल।

वाघसिह चतुर्भुजोत	
कृष्णसिह ।	चेतरामसाह ।
बहादुरसिंह राजावत ।	मंगलसिह खूभानी ।
कायमसिह बल्लभद्रोत ।	बॉशखो ।
लक्ष्मणसिह झुंजनूवाला ।	सवाईसिह कल्याणोत् ।
उदयसिह खांगारोत ।	राय ज्वाला नाथ ।
राजा अभयसिह क्षेत्री ।	दीवान अमर चँद ।
राव चतुर्भुज ।	बारहट स्वरूपसिह ।
मानसिह खांगारोत् ।	कूमावत मोहरवाला ।
बैरीशाल थूकारोत ।	दीवान नन्दीराम ।
स्वरूपसिह बनवीरपोता ।	राय अमरचंद पल्लीवाल ।
बख्शी श्रीनारायण ।	सिंगी मन्नालाल ।
भारतसिह चाम्पावत ।	बालमसिह राणावत् ।
अमानसिह पचानोत ।	रामलाल धाभाई ।
शरत्सिह चपावत ।	आडतराम बदगी ।
शार्दूलसिह नरूका ।	रावलबैरीशाले " ।
कृपाराम वकायानवीस ।	कृपाराम साह ।

सामन्तमडली और मुसद्दियोने सन् १८१९ ई० की१२वी तारीखको उस प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर किये राय ज्वालानाथ और दीवान अमरचँदने एक पत्र जरनल अक्टर लोनीके पास भेज दिया ।

मुसद्दी अर्थात् राज्यके कर्मचारी जिसमे विश्वासके साथ अपना २ कार्य साधन किया करे, और किसी प्रकार भी घूस ग्रहण करके शान्तिको भग न करे । इसी लिये उनसे भी उसी दिन राजमहिषी माताने एक प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करालिये । वह प्रतिज्ञापत्र नीचे प्रकाशित हुआ है ।

प्रतिज्ञापत्र ।

सम्पूर्ण मुसद्दियोंके पक्षसे श्री श्रीमती बाई साहिबाको विदित किया जाता है कि महाराज श्री सवाई जयसिह बहादुर जबतक राजकाजके व्यवहारोमे समर्थ न होंगे, तब-तक दरबारका जो कारबार हमारे हाथमे अर्पित हुआ है उस समस्त कार्यसाधनके समयमे और समय २ पर जो समस्त आज्ञाए प्राप्त हो, उन सम्पूर्ण आज्ञाओके पालन करनेमे हम सब निम्नलिखित व्यवस्थाके अनुसार कार्य करेंगे ।

प्रथम-हम विश्वासके साथ अपने २ कार्य करेंगे, और किसीसे भी घूस ग्रहण नहीं करेंगे ।

* Aitchisons Treaties Vol IV.

दूसरा–प्रत्येक फसलके समयमे मुख्तारके द्वारा हम प्रत्येक राजदरवारमे एक २ हिसाव भेजेगे।

तीसरा–अत्याचारी अपराधीके अतिरिक्त हम और किसीको दानका दड नही देगे।

चौथा–राज्यशासन सवन्धी कार्यमे हम आपसमे किसीके साथ भी प्रकाश्य वा अप्रकाश्य विवाद नही करेगे।

(हस्ताक्षर) राव ज्वालानाथ। चतुर्भुज।

मुन्शी दयाचँद।	दीवान नोनिधराय।
दीवान अमरचँद।	सिंगी मन्नालाल।
सोजीलाल।	घासीराम।
कृपाराम।	आडतराम।
जेतरामसाह।	श्रीनारायण वख्शी।
लछमन।	सपतूराम।
मदनचँद।	जीवनराम।
भीहराज नारायण।	रामलाल धाभाई।
राय अमृतराम।	ज्ञानचँद।
रूपचंद दरोगा।	देवराम दरोगा।
कृपा कपूर।	मुन्शी श्रीलाल।
	रावल वैरीशाल।

उपरोक्त दोनो प्रतिज्ञापत्रोने प्रकाशित करदिया है कि जगतसिंहकी मृत्युके पीछे आमेर राज्यमे शान्ति और न्याय–विचार प्रवर्त्तनके लिये सबसे पहिले यथोचित आयोजन और अनुष्टानमे कोई भी त्रुटि नही हुई, परन्तु अत्यन्त दुःखका विपय है कि वहुत थोडे दिनोमे ही आमेरराज्यकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय होगई, यद्यपि भटियानी रानी अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करती थी परन्तु वह राजपूत स्त्रियोकी समान साहस प्रतिज्ञा ज्ञान और वुद्धिके वलसे उनकी समान वलवती न होकर जितने दिनोतक जीवित रही उतने दिनोमे आमेरराज छारखार होगया। सुखशांति और मंगलमय विचार आमेरसे एकवार ही लोप होगये। आचिसन साहवने लिखा है, "कि रानीकी मृत्यु अर्थात् सन् १८३३ ईसवीतक जयपुर राज्य अराजकता और अविचारका क्षेत्रस्वरूप होगया था"। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "शिशु राजाके नावालिग अवस्थाके समयमे जयपुरराज्य अराजकता और उपद्रवोका तो मानो क्षेत्रस्वरूप होगया था* "।

"सारांश यह है कि भटियानी रानी अच्छे चरित्रवाली न थी। झूताराम नामके एक मनुष्यने अपने कौशलमे रानीको फाँसकर आमेरराज्यमे अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी थी। गवर्नमेण्टने वैरीसालको दीवानके पदपर नियुक्त किया था,

* Atcheson's Treaties Vol IV,

परन्तु झूतारामने विधवारानीके हृदयपर अधिकारके साथ ही साथ उस पदपर भी कधिकार करालिया । झूतारामने धीरे २ राज्यमे अपने प्रभुत्वका विस्तार करादिया और अपनी स्वतन्त्रताका एक शेष प्रदर्शन दिखा दिया, राजदरबार और राजाके यहाँ सम्पूर्ण ऊँचे पदोपर उनके अनुगत मनुष्य नियुक्त हुए+" । झूतारामने उस प्रबल सामर्थ्यको विस्तार करके स्वयं ही राज्यमे स्वेच्छाचारिताका एक शेष प्रदर्शन दिखाया था, यही नही किन्तु इसीकी समान इसके अनुगत नियुक्त हुए राजकर्मचारियोने भी राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें अत्याचार और उपद्रवोके मारे भयकर अग्नि प्रज्वलित् करदी । गवर्नमेण्ट संधिपत्रके अनुसार जो कर लेनेकी अधिकारी थी झूतारामके शासनसे वहकर भो बहुत कम रहगया । सन् १८३३ ईसवीतक झूतारामने इस भाँतिसे आमेर राज्यपर शासन करके एकाधिपत्यके साथ राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही सोचनीय कर दी । इसके पीछे इसी सवत्मे भटियानी रानीने भी प्राण त्याग किये । रानीकी मृत्युसे झूतारामके प्रतापपर भयंकर वज्रपात हुआ ।

जबतक भटियानी रानी जीवित रहीं तबतक बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके सम्मानकी रक्षा करती रही, और इसी कारणसे गवर्नमेण्टका कर सालके साल दिया जाता रहा, इससे कोई विघ्न भी उपस्थित नही हुआ । परन्तु सन् १८३३ ईस्वीमे महारानीके मरते ही गवर्नमेण्ट भिन्नमूर्तिसे जयपुरकी रङ्गभूमिमे आ पहुँची । कर्नल म्यालिसनने अपने इतिहासमे लिखा है, " कि जिस प्रकारसे गवर्नमेण्टके स्वार्थकी रक्षा और नियमित करमे वाधा न पडे उस अभिप्रायसे जयपुरकी राजधानीमे निवास करने और राज्यके भीतरी शासन पर हस्ताक्षेपके लिये सरकारने एक अपने कर्मचारीको नियुक्त कर उसके हाथमे संपूर्ण सामर्थ्यका देना अपना मुख्य कर्तव्य विचारा " । आचिसन साहबने अपने ग्रथमे इस प्रकारका मत प्रकाश किया है कि इसको कौन नहीं स्वीकार करैगा कि बृटिश सरकारने अपने स्वार्थसाधनके लिये जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप करके संधिपत्रका अपमान किया । गवर्नमेण्ट जब पहिलेसे ही प्रतिज्ञामे वद्ध हुई थी कि वह किसी प्रकारसे भी जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप न करैगी तब केवल प्राप्य करको अदा करनेके लिये उस प्रतिज्ञाका भग करना क्या न्याय संगत है ?

जो कुछ भी हो कर्नल म्यालिसनने लिखा है सन् १८३४-३५ ईस्वीमे शेखावाटीमे शान्ति स्थापनके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने इस समय एक अंग्रेजी सेना भेजी उस समय उस समरके व्यय चुकानेके लिये साभरके लवण हृदपर जयपुरराज्यका जो अंश था, गवर्नमेण्टने अपनी सेनासे उस अंशपर अपना अधिकार करलिया । जिस समय शेखावाटीमे समर होनेकी मीमांसा हुई थी उस समय महाराज जयसिंहने जयपुरमे ऐसी अवस्थासे प्राण त्याग किये कि जिससे एक प्रकारका प्रबल सन्देह उपस्थित होता था, राजमत्री झूताराम और राजमहलकी एक परिचारिका

+ Malleson's Native states of India. Chap II

वडारणके पड्यंत्रसे महाराजकी अकाल मत्यु उपस्थित हुई थी" । आचसन साहवने अपने वनाये हुए ग्रथमे लिखा है "कि युवक महाराज जयसिहने सन् १८३५ ईस्वीमे वर्तमान महाराज रामसिहको दो वर्षका छोड कर प्राण त्याग किये । उस समयका ऐसा विचार किया जाता है कि भटियानी रानीके समय जो झूताराम राज्यमे असीम सामर्थ्य विस्तार कर रहा था, और गवर्नमेण्टके मनोनीत मत्री रावल वैरीशालको पदसे उतार कर स्वयं उस पदपर विराजमान हुआ था उसी मनुष्यने विप देकर राजाको मार डाला "। वावू लोकनाथ घोपने अपने वनाये हुए ग्रंथमे लिखा है, कि "सन्१८३५ ई०मे महाराज जयसिहने सत्रह वर्षकी अवस्थामे प्राण त्याग किये,यह भी विचारमे आता है कि झूताराम की आज्ञासे महाराजको विप दिया गया था "। *

अत्यन्त ही दु खका विपय है कि महाराज जयसिह यौवनकी सीमापर पैर धरते ही, नारकी झूतारामके हाथसे मारेगये, अधिक क्या, महाराज जयसिहको राज्यशासनका भार प्राप्त नहीं 'हुआ' झूताराम ही सर्वमय कर्ता स्वरूपसे राज्यको छारखार करता था, झूतारामने किसलिये महराज यजसिंहके नवीन जीवनका नाश किया, इस वातका विचार पाठक स्वय करसकते है। थोडे ही दिनो पीछे महाराज जय-सिह समस्त व्यवहारोको जानकर स्वय राज्यको ग्रहण करते, इसी कारणसे नराधम झूतारामने विचारा कि इनके समर्थ होते ही मेरा प्रताप लोप होजायगा, और इस पापीके प्राणनाशकी भी सम्पूर्ण संभावना थी,इसीलिये पिशाचवुद्धि झूतारामने महाराज के जीवनका नाश करके निर्विघ्नतासे अपने पूर्व प्रतापको इच्छानुसार अखड रखनेकी प्रतिज्ञा कि थी । इसीसे उस दुष्टात्माने यह पिशाची कार्य किया, परन्तु उस पापात्माने अपनी करनीका फल भी तुरन्त ही भोगलिया ।

भटियानी रानीकी मृत्युके पीछे यद्यपि वृटिश गवर्नमेण्ट जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर हस्ताक्षेप करके आगे वढी थी; परन्तु इस समयतक सम्पूर्णरूपसे हस्ताक्षेप नही किया था । महाराज जयसिहकी अकालमृत्यु होते ही गवर्नमेण्टने जयपुरमे प्रवेश किया । आचिसन साहवने लिखा है, कि " महाराजकी मृत्युके पीछे गवर्नर जनरलके एजण्टने महाराजकी मृत्युका कारण अनुसन्धान करने तथा राज्यके शासनविभागके संस्कार करने और शिशुकुमारके अविभावक पदको ग्रहण करानेके लिये जयपुरमे गमन किया" गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल अलवीसने जयपुरमे जाकर शीघ्र ही झूतारामको पदसे उतार कर रावल वैरीशालको फिर मत्री पदपर नियुक्त करदिया, और वह राज्यके चारोओर शांति स्थापनका उद्योग करने लगे । कर्नल स्यालिसने लिखा है कि " उन्होने जिस समय प्रवल विधिकी व्यवस्था करनी प्रारभ की, उसी समय झूतारामने एक पड्यन्त्र जालका विस्तार किया, उसने एजण्ट कर्नल अलवीसके प्राणनाशकी चेष्टा की, और उनके सहकारी मि० व्लेक उन पड्यत्रियोके द्वारा मारे गये । परन्तु हत्याकारी

---

* Malleson's Native states of India Chap. II

शीघ्र ही पकड़े गये, प्रधान मंत्री वैरीसालने उन्हें प्राणदंडकी आज्ञा दी, झूताराम और उसके षड्यंत्री चुनारके किलेमें जन्मभरके लिये बंदी होकर रहे। झूतारामको प्राण दंडकी आज्ञा दी जाती तभी उसको उसकी करनीका उचित फल मिलता।

छठा अध्याय ६.

महाराज रामसिंहका जयपुरके सिंहासन पर अभिषेक–जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर वृटिश गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप–वृटिश पोलिटिकल एजण्टका महाराज रामसिंहका अविभावक पद ग्रहण करना–शासन समाज स्थापन–नवीन शासनसे जयपुरमें शान्ति और मंगलसाधन–महाराज रामसिंहका शिक्षालाभ–महाराज रामसिंहकी वय प्राप्ति–उनका राज्याभिषेक–वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमें राज्यभार अर्पण–महाराजका पूर्वानुष्ठित शासनप्रणालीकी रक्षा करना–सन् १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहके समय महाराज रामसिंहका अंग्रेजी गवर्नमेण्टकी सहायता करना–विद्रोहकी शान्तिके पीछे अंग्रेजी गवर्नमेण्टका पुरस्कार स्वरूप महाराजको कोटकासिम नामक देशका स्वत्व देना–अंग्रेजी गवर्नमेण्टका महाराजको दत्तकपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देना–महाराज रामसिंहका अपने राज्यमें मंगलमूलक नानाप्रकारके अनुष्ठान करना–प्रजासाधारणके स्वास्थ बढ़ानेके लिये समाज स्थापन तथा बहुतसे अनुष्ठान–राजधानीमें नये २ राजमार्ग बनाना–राजधानीमें यंत्रके द्वारा पानीका लाना–नगरमें सुधार–चित्रशाला–शिल्पशाला, नगरनिवास–नाट्यशाला–दातव्य–रोगीनिवास–और चिकित्सालय इत्यादिकी प्रतिष्ठा–वाणिज्यकार्यकी सुविधाके लिये राज्यके अनेक स्थानोंमें बड़े २ राजमार्गोंका बनवाया जाना–कृषिकार्यके सुलभ करनेको अनेक देशोंमें खाल खुदवाना–राज्यमें रेलका विस्तार–शिक्षाके प्रचारके ऊपर महाराजकी पूर्णदृष्टि और बहुतसा रुपया खर्च करके अंग्रेजी कालिज, संस्कृत विद्यालय, साधारण विद्यालय और स्त्री शिक्षाके विस्तारके लिये बालिका विद्यालयकी प्रतिष्ठा–शिक्षितबंगालियोंका जयपुरके राजकार्यमें नियोग–सन् १८६८ ईसवीमें जयपुरके दुर्भिक्षके समय महाराजका प्रजाको सहायता देना–और आभ्यन्तरीगण, शस्य वाणिज्य शुल्क ग्रहणसे रहित–वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजकी सम्मान वृद्धि के लिये दो तोपोंकी सलामी बढ़ाना–अंग्रेज गवर्नर जनरल और राजप्रतिनिधियोंका कौन्सिल नामक समाजके सभ्य पदपर महाराजको दुवारा नियोग करना–अपनी सद्गुणावलीसे महाराजका वृटिश गवर्नमेण्टके हृदय पर अधिकार–बड़ौदा गायकवाड मल्हाररावके विचारके समय वृटिश गवर्नमेण्टका महाराज रामसिंहको दूसरे विचार पदपर नियुक्त करना–भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्सकी अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका कलकत्तेमें जाना–कलकत्तेके महलमें महाराज के साथ भावी सम्राट्का साक्षात्–भावीसम्राट्का प्रतिसाक्षात् दान–भावीसम्राट्की अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका जयपुरमें नानाविधके अनुष्ठान–भावी सम्राटका जयपुरमें जाना–महाराज रामसिंहका बड़े समारोहके साथ उनको ग्रहण करना–भावीसम्राट्का बडे आडम्बरके साथ जयपुरकी राजधानीमें जाना–भावी सम्राटका शिकारके लिये जाना–व्याघ्रोंका शिकार–जयपुरकी राजधानीका आलोकदान–भावीसम्राटके सम्मानके लिये महाराजका दीवानआम नामक सभागृहमें दरबार

Malleson's Native states of India Chap II

करना–राजभोज–वक्तृता–चंद्रमहलमें नृत्यगीतानुष्ठान–महाराजके भावी सम्राट्का बहुमूल्य उपहार देना–अग्निक्रीड़ा–भावीसम्राट्का आमेर देखना–भावी सम्राट्के स्मरणार्थ चिह्न बनानेके लिये "अलबर्टहाल" नामक साधारण आवासकी भित्ति बनाना–महाराज रामसिंहकी अभ्यर्थनासे भावी-सम्राट्को महा आनंद प्रकाश–भावी सम्राट्का जयपुरसे जाना–सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीमें वृटिश रानीकी दिल्लीमें "भारतकी राजराजेश्वरी" उपाधि धारणके उपलक्षमें महाराजका दिल्लीमें जाना–राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनका महाराजको सम्मान सहित ग्रहण करना–पताका दान–भारतकी राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके लिये स्मारक पदक देना–महाराज रामसिंहके सम्मान बढ़ानेके लिये सलामी की इक्कीस तोपें नियत करना–"कौन्सिलर आफ दी एम्प्रेस" नामकी उपाधि देना–महाराज रामसिंहका स्वर्गवास।

महाराज जयसिंहने सत्रह वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये थे इस कारण उस समय उनके पुत्र रामसिंह अत्यन्त ही अल्प अवस्थाके थे। रामसिंहने सन् १८३३ इस्वीमें जन्म लिया था, अत. वे अपने पिताकी अकालमृत्युके समय दो वर्षकी अवस्थामें आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए। इस समय जयपुर राज्यकी जीवन-शक्ति एकबार ही क्षीण होगई थी। सामन्तोंका पहिला प्रताप जाता रहा था। कछवाहोंकी जातिमें पुन दीर्घस्थाई अराजकता फैलगई थी। अशान्ति अत्याचार उत्पीड़न और लूटमारके होनेसे तथा विजातियोंके आक्रमणसे इस समय जयपुर निपट निर्जीव होगया था। सुअवसर और सुयोगको पाकर वृटिश गवर्नमेण्टने इतने दिनोंके पीछे जयपुर राज्यमें अपनी प्रचंड शासनशक्तिका प्रयोग किया। आचिसन साहब लिख गये है, "कि जयपुरराज्यमें दीर्घस्थायी अराजकताके कारण गवर्नमेण्टका बहुत कर रहगया था, और राज्यकी आमदनी भी एकबार ही न्यून होगई थी, इसी कारणसे गवर्नमेण्टने फिर आभ्यन्तरी शासनमें हस्ताक्षेप करना कर्तव्य विचारा"। हम कह सकते है कि आमेरके सामन्तोंमें यदि एक भी पहिलेकी समान साहसी बलवान् और राजभक्त, होता तो कभी भी वृटिश गवर्नमेण्ट इस कार्यसाधनके लिये अर्थात् अपने बाकी करको चुकानेके लिये बालक महाराजके अविभावक पदको ग्रहण करके राज्यमें अपनी शासनशक्तिको न चलाती। राजपूतरीतिके अनुसार बालक महाराजके अविभावक पदको राज्यके संभ्रान्त उच्चश्रेणीके सामन्त ही पासकते थे,उस पदमें विजातीय विधर्मी राजाओंके प्रतिनिधि कभी स्थित नहीं होसकते थे, क्या जयपुर राज्य इस समय एकबार ही बलहीन होगया था, राजलक्ष्मी क्या अन्तर्द्धान होगई थी? इसी लिये एक विजातीय शक्तिने आकर हिन्दू महाराजके अविभावक पदको अयाचित होकर ग्रहण किया। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "शिशुमहाराज रामसिंह वृटिश पोलिटिकल एजण्टके आधीनमें रक्खे गये, उस पोलीटिकल एजण्टके तत्त्वावधानसे एक प्रतिनिधि शासन समाज स्थापित हुआ, पॉच प्रधान सामन्त उस समाजके सदस्य हुए, और समस्त प्रयोजनीय भारी विषय उनके द्वारा नियत किये मन्तव्योंसे ही गृहीत होने लगे"। कर्नल म्यालिसनकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि मानो वह पॉच सामन्त ही जयपुर राज्यका शासन करते थे, परन्तु

वास्तवमे ऐसा नही था बृटिश पोलिटिकेल एजण्ट ही जयपुरके सर्वमय कर्ताधर्ता थे और पॉच सदस्य अपनी आज्ञाके अनुसार कार्य करने पर सम्मत किये गये थे। पोलिटिकल एजण्टने बड़ी खोज करके जयपुरकी अराजकता दूर की और शाति स्थापित होनेसे अनेक मंगलमय कार्य होनेलगे। इस बातको हम स्वीकार करते है कि वह नियुक्त हुई शासन समाज शीघ्रही जयपुरके चारोओर शान्ति स्थापन करनेमे प्रवृत्त हुई। आचिसन साहब लिखते है, कि "सेनाकी संख्या एकबार ही घटा दीगई थी, राजकार्यके प्रत्येक विभागमे संस्कार हुआ। सतीदाह, क्रीत–दासव्यवसाय और शिशुकन्याके प्राणनाश आदि भी दूर होगये थे। देखा जाय तो राज्यकी जैसी आमदनी थी, गवर्नमेण्टका पहिला कर उससे भी अधिक होगया, इसी कारणसे सन् १८४२ ईस्वीमे गवर्नमेण्टने अपने पिछले करमेसे ४६ लाख रुपया एकबार ही छोड़ दिया और ४ लाख रुपया वार्षिक देना नियत हुआ"।

महाराज रामसिह जबतक अज्ञान रहे तबतक जयपुरराज्य इस भाति बृटिश पोलिटिकलएजण्ट और मंत्रीसमाजकी सहायतासे शासित होता रहा। जो दीर्घकालसे आमेरराज्यमे अराजकता और उपद्रवोका सोता बराबर चला आता था इस समय वह एकबार ही दूर होगया। महाराज रामसिह जिससे वीरोकी समान शिक्षा प्राप्त करै, इस लिये यथासमय उपयुक्त अनुष्ठान किया गया। पण्डित शिवधन महाराज शिक्षकके पदपर नियुक्त होकर महाराजकी शिक्षाके विषयमे विशेष परिश्रम करते थे। संस्कृत और उर्दू भाषाकी समान महाराजने अंग्रेजी भाषामे भी शिक्षा प्राप्तकी।

सन् १८५७ ईस्वीमे महाराजने सर्वगुण सम्पन्न होकर सम्पूर्ण राज्य शासनका भार गवर्नमेण्टसे अपने हाथमे ले लिया। "परन्तु महाराजकी अवस्था उस समय बहुत थोडी थी, इसी कारणसे राज्यशासनके अनेक विषयोमे पोलिटिकल एजण्टकी सम्मति लेकर कार्य करते थे। उसी पोलिटिकल एजण्टकी सम्मतिसे स्वभावसे आलसी और अधिक खर्चालू प्रधानमंत्री रावल वैरीसालको पदसे अलग कर सम्पूर्ण कार्योंमे कुशल और विशेष सावधान भ्राता लछमनसिहको उनके पदपर नियुक्त किया और उस समय महाराजके पूर्वशिक्षक पण्डित शिवधन राजस्वविभागके सर्वाध्यक्ष पदपर नियुक्त हुए"।

महाराज रामसिहने पूर्णसामर्थ्यके प्राप्त होनेपर भी स्वय चिर प्रचलित इच्छानुसार शासनरीतिके सम्मानकी रक्षा नहीं की। वह भलीभॉति शिक्षित होगये थे, इस कारण सुशासनकी ओर स्वभावसे ही उनकी विशेष दृष्टि थी। इस कारण उनके अप्राप्त व्यवहारके समयमे राज्यशासनके लिये जिस कौन्सिलकी सृष्टि हुई थी उन्होने आजीवन उसी कौन्सिल नामक मत्रीसमाजकी रक्षा की, वह मंत्रीसमाजके द्वारा ही राज्यशासन करते थे। समस्त देशीय राजाओमे एकमात्र इस जयपुरमे ही मंत्रीसमाजके द्वारा शासनकी रीति प्रचलित थी। यह रीति सब प्रकारसे ठीक थी। समय २ पर इसी रीतिने राज्यके बडे २ उपकार किये। उनका अनुमान सरलतासे होसकता है।

जयपुरपति महाराज रामसिह जिस वर्षमे पूर्णशासनकी सामर्थ्यको प्राप्त हुये थे उसी वर्षमे भारतवर्षके अंग्रेजी राज्यको जडमे भयकर वज्रपात हुआ। इस वर्षमे

अर्थात् सन् १८५७ ईसवीमे भयंकर सिपाही विद्रोहानल प्रज्वलित होकर अंग्रेजी शासनके विलोपका पूर्णभास प्रकाश करने लगा। महाराज रामसिहने उस महा कष्टमे यथार्थ मित्रकी समान गवर्नमेण्टकी भलीभांतिसे सहायता की, इन्होने धनकी सहायतासे तथा सेनाकी सहायतासे विपन्न अंग्रेजोको आश्रयदानके साथ अपनी सेनाको अग्रेजी पक्षमे नियुक्त कर यथार्थ मित्रकी समान अपना कर्त्तव्य पालन किया, आचिसन साहब लिखते है, कि "सिपाही विद्रोहके समयमे महाराज रामसिहने गवर्नमेण्टके विशेष उपकार किये, और उसी कारणसे इनको पुरस्कारमे कोटकासिम परगना मिला, परन्तु उन्होने इसको इस शर्तपर लिया कि यह देश जबतक गवर्नमेण्टके आधीनमे था तवतक गवर्नमेण्टने जो उक्त देशका राजस्व नियत किया था आगे उसी भी नियमसे चलना होगा। और उसे दत्तक[१]पुत्रके लेनेकी भी सामर्थ्य होगी"।

पवित्र रुचि और उदारचरित्र महाराज रामसिहकी अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ राज्यकी यथार्थ मंगलकामना उनके हृदयमे भलीभांतिसे दृढ़ होगई, महाराज यथार्थ हिन्दूधर्मके अनुसार चिरप्रचालित पैतृक कौन्सिल और सामाजिक रीतिके परिपोषक हुए, उन्होने एकमात्र शिक्षाके वलसे ही सम्भ्रान्त अंग्रेज जाति और अंग्रेजी गवर्नमेण्टके आदर्शके अनुकरणसे अपने राज्यकी अवस्थाको अन्यरूपसे बदलनेका यत्न किया। जयपुरकी राजधानी यद्यपि पहिलेसे ही उत्तम प्रकारसे वनी थी परन्तु रामसिंहने अंग्रेजी आदर्शसे उस राजधानीकी सुन्दरता और भी वढ़ानेके लिये जितना अधिक रुपया खर्च किया था, इससे उनका प्रवल परिश्रम समझा गया। बृटिश आर देशीय भारतवर्षमे जयपुरकी राजधानी ही इस समय सुन्दरतामे परम प्रसिद्ध हुई है, जयपुर नगरीके देखनेवाले इसकी सुन्दरताको देखकर ऊंचे स्वरसे उसकी प्रशंसा करते है, महाराज रामसिह ही उसका एक मूलकारण थे, यह इतिहास मुक्तकंठसे कहरहा है, महाराज रामसिहने इस जयपुर नगरीको भारतवर्षकी राजधानी कलकत्ते नगरीकी समान सर्वगुण सपन्न करदिया था।

यद्यपि अत्यन्त प्राचीन कालमे राजाओने प्रजाकी साधारण स्वास्थ्यरक्षाकी और विशेप ध्यान दिया था, और प्रजाके स्वास्थ्यके ही लिये विशेप अनुष्ठान किये थे, ऐसे बहुतसे प्रमाण पाये जाते है, परन्तु मध्यसमयके देशीय राजाओसे इस प्रकारके किसी अनुष्ठानका प्रमाण नहीं पाया जाता। जलकष्टको दूर करनेके लिये यद्यपि उन राजाओने बड़े २ तालाव और कुएँ खुदवा दिये थे, और चलनेके सुभीतेके लिये राज्यमे बड़े २ लम्बे चौड़े मार्ग बनवा दिये थे, रास्तेके दोनो ओर वृक्ष लगवादिये थे, परन्तु इसके अतिरिक्त और कोई भी ऐसा स्वास्थ्यकर अनुष्ठान नहीं किया। महाराज रामसिहने उन्नीसवीं शताब्दीमे प्रजाके साधारण स्वास्थ्यकी ओर विशेष दृष्टि करके वैज्ञानिकरीतिसे वर्तमान समयके अनेक उपयोगी अनुष्ठानके लिये, अंग्रेजी राजधानीमे

(१) पाठकोने गवर्नमेण्टके दिये इस दत्तक ग्रहणकी क्षमतापत्रको मारवाड मेवाड़ इत्यादिके इतिहासोमे पढा होगा।

जिस प्रकारकी मिउनिसिपैलिटी है उन्हींका आदर्श मिउनिसिपैलिटी अर्थात् स्वास्थ्यरक्षा और सौष्टववर्द्धन समाजकी प्रतिष्ठा करके सब अंशोमे योग्यपात्रोको सदस्य पदपर नियुक्त किया। परन्तु अंग्रेजोकी मिउनिसिपैलिटीने जिस प्रकारसे प्रजासे धन लेकर प्रजाके स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये अनुष्ठान किये है, महाराजकी राजधानीकी मिउनिसिपैलिटीने उस प्रकार प्रजासे धन न लेकर सर्वसाधारणके लिये अपने खजानेसे कई लाख रुपया खर्च करके बहुतसे आवश्यकीय कार्य किये, और आजतक भी उसी प्रकारसे बराबर होते चले आते है।

यद्यपि जयपुर नगरके राजमार्ग पहिली अवस्थामे वैज्ञानिकरीतिसे बनाये गये थे, परन्तु महाराज रामसिहके शासनके समयमे वह बहुत बढ गये थे, और इस समय सुन्दर श्रीको धारण कियेहुए है, राजधानीकी समान राज्यके अनेक स्थानोमे प्रधान २ नवीन राजमार्ग बनकर प्रजाका अशेष उपकार कर रहे है। बडे २ राजमार्गोके अतिरिक्त नियमितरूपसे राजमार्गमे जलसेक जलग्रहणके स्थान स्वच्छ बने हुए है, जलकी निकासीके लिये बडी २ नालियां बनी हुई है। नगर निवासियोको जिससे सरलतासे अच्छा पानी मिलसके ऐसा सुभीता भी करदिया गया है। आजतक अनेक उच्चश्रेणीके देशीय राजाओके राज्यमे गैसकी रोशनी नही है, परन्तु महाराज रामसिहके बहुतसे परिश्रम और अधिक धन खर्चसे जयपुरकी राजधानी सूर्यकी कांतिकी समान प्रकाशमान होकर नगरीकी सुन्दरताको बढारही है। यद्यपि प्राचीन ग्रथोमे हमने देशीय राजाओकी राजधानी तथा राजउद्यानके आस्तित्वको जाना है, परन्तु प्रजाओंके साधारण स्वास्थ्य बढानेके लिये वैज्ञानिक रीतिसे साधारण उद्यानोके बनानेकी कथाको कही भी नही पढा, परन्तु बुद्धिमान् महाराज रामसिहने अंग्रेजी राजधानीके आदर्शके अनुसार रामनिवास नामक अत्यंत सुन्दर उद्यान बनाकर जयपुरकी राजधानीके निवासियोका विशेष उपकार किया। साराश यह है कि सर्व साधारणकी स्वास्थ्य वृद्धिके अथवा राजधानीकी सुन्दरताके लिये उन्नीसवी शताब्दीमे महाराज रामसिहने बहुतसा रुपया खर्च करके प्रजाके हितके लिये अनेक उपकार किये। राजधानीकी सुन्दरताको बढानेके लिये और स्वास्थ्यकर अनुष्ठानोके अतिरिक्त शिक्षा और सभ्यताके विषयमे भी अनेक अनुष्ठान किये। चित्रशाला शिल्पशाला, टौनहाल वा नगर निवास, नाट्यशाला, दातव्य, रोगीनिवास, चिकित्सालय इत्यादि भी बनवाये-इस कार्यसे महाराज रामसिहके कल्याणसे प्राचीन जयपुर भलीभांतिसे नवीन जीवन पाकर नवीनभावसे नवीन मूर्तिसे देशीय अन्यान्य राज्योकी राजधानियोको तिरस्कारके साथ ही साथ मानो महाराजकी शिक्षा, रुचि, ज्ञान-और बुद्धिकी ऊँचे स्वरसे बडाई कर रहा है।

महाराज रामसिह केवल राजधानीकी उन्नति करके ही शान्त न हुए थे। समस्त राज्यकी प्रत्येक श्रेणीकी प्रजाओंके मगलकी ओर उनका पूर्ण ध्यान रहता था, इसी कारण उन्होने राजधानीकी समान अपने राज्यमें सर्वत्र ही वाणिज्यकार्यकी

सुविधा और मार्गमे सुगमतासे जानेके लिये अगणित धन खर्च करके अनेक राजमार्ग वनवा दिये, तथा किसानोके सुभीतेके लिये भी वहुतसा धन खर्च करके अनेक स्थानोमे सरोवर खुदवा दिये थे। इसके अतिरिक्त उन्नीसवी शताब्दीमे वाणिज्यकार्यमे प्रधान सुविधासाधक रेलवेको अपने राज्यमे विस्तार करादिया, इन कामोमे स्वयं महाराजने अपने ही खजानेसे रुपया लगाया था, आजतक प्रत्येक वर्ष उसी प्रकारसे वहुतसा धन खर्च होता है, इसका अनुमान हमारे विचारवान् पाठक स्वयं कर सकेगे।

बुद्धिमान् महाराज रामसिह राज्यभारको ग्रहण करके इस वातको भलीभॉतिसे जानगये थे कि इस संसारमे एकमात्र शिक्षासे ही अनेक जातियो और राज्योकी उन्नति हुई है। जितनी शिक्षा वढ़ती जायगी उतनी ही राज्यकी उन्नति होती जायगी, और उन्नतिसे ही मंगल होगा, यही उनका विचार दृढतासे था,। सवाई महाराज जयसिह यद्यपि एक उच्च अंगके शिक्षित मनुष्यथे, यद्यपि उन्होने शास्त्रकी चर्चा और शिक्षाके विस्तारके लिये शिक्षित पण्डितमंडलीके सम्मानको वढ़ानेके लिये वहुतसा रुपया खर्च किया था, परन्तु हम इस वातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि उन्होने अपने राज्यमे विस्वजननी शिक्षाके विस्तारका संकल्प नही किया था। महाराज रामसिहने उच्च शिक्षाके वलसे राज्यमे उस विश्वजननी शिक्षाका विस्तार करनेके लिये वहुतसा धन खर्च किया था, उन्होने राजधानी जयपुरमे सस्कृत विद्यालयके अतिरिक्त उर्दू विद्यालय और अग्रेजी शिक्षाके लिये कालिज तक भी वनवा दिये थे। केवल इतना करके ही वह संतुष्ट नही हुए उन्होने शिल्प शिक्षाके लिये भी एक स्वतंत्र विद्यालय वनवाया था। जयपुरका शिल्पकार्य भारतवर्षमे सवसे उत्तम गिनाजाता है, शिल्पविद्यार्थी फिर वैज्ञानिक रीतिके अनुसार नवीन शिक्षा पाकर उन प्रशंसित शिल्पकी अधिक श्रेष्ठतासाधन कर रहे है। महाराज रामसिह प्रधान सहायक थे, अतएव राजधानीमे एक एक करके अनेक कन्या पाठशालाएं भी वनवाई। इन सव कालिज और विद्यालयोसे आज अमृतमय फल निकल रहा है। किसी समयमे यह अनेक विद्यालय जयपुरकी वडी प्रतिष्ठाको वढ़ावेगे।

यद्यपि महाराज मानसिह अपने हृदयमे विचार करते ही पूर्वपुरुषोकी समान राज्यकी पूर्णसामर्थ्यको अपने हाथमे लेकर पहिलेकी समान स्वेच्छाचारकी रीतिसे सम्मानकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होने ऐसा नही किया, प्रजाके कल्याणके लिये शासन विभागकी प्राचीन रीतिको भी वदल दिया, उनकी अज्ञान अवस्थामे जिस समय मंत्रीसमाजके द्वारा राज्यशासन होता था, इन्होने अपने हाथमे राज्यभारको लेकर भी उसी रीतिको प्रचलित रक्खा। विशेष करके स्वयं सव विभागो पर दृष्टि रखनेका अवसर उनको नही मिलता था, इसीसे राज्यके एक २ विभाग पर सम्भ्रान्त शिक्षित मनुष्योको नियुक्त करके उन २ विभागोके कर्त्तृत्वभारको उन्हीको सौप दिया। यह तो प्रथम ही कह आये है कि महाराज रामसिहने जिस समय राज्यभारको अपने हाथमे लिया उस समय उनकी अवस्था वहुत थोडी थी, अंग्रेज़ पोलिटिकल एजण्टके साथ उन्होने अनेक विषयोमे राज्यकार्य्यके संवन्धकी सलाह की थी। परन्तु अवस्थाकी

वृद्धिके साथ ही साथ इनकी विद्या बुद्धि वलकी भी वृद्धि हुई, तब शीघ्र ही वृटिश पोलिटिकलएजण्टने महाराजके हाथमे संपूर्ण शासनका भार अर्पण किया।

आजकल अनेक विद्वान् वंगाली अनेक रयासतोमे अधिकार पाकर देशीय राजाओका मंगलसाधन करते है परन्तु हम इस वातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते है कि जयपुर राज्यके शिक्षित बंगालियोने जिस प्रकारसे ऊँचे पदपर नियुक्त होकर राजकार्य किया अन्य किसी देशीयराज्यके शिक्षित वंगाली उस प्रकारसे आजतक प्रवलताका विस्तार न करसके। कलकत्तेके विख्यात् वाद्/रामकमलसेनके पुत्र वावू हरमोहनसेन जयपुरराज्यमे अत्यन्त आदर सम्मानके साथ प[illegible] थे। हरमोहनबावूके वशधर इस समय उस जयपुर राज्यके अनेक पदोपर नियुक्त होकर बंगाली जातिकी दक्षता ओर योग्यताका चूड़ान्त परिचय देरहे है। महाराज रामसिह केवल सेनवंशकी ही और नही वरन शिक्षित बंगाली मात्रसे ही संतुष्ट हुए थ, इसी लिये अनेक बंगाली ब्राह्मण तथा कायस्थ भी महाराजके आश्रयसे राज्यके भिन्न २ उच्चपदोंपर प्रतिष्ठित हुए। इन शिक्षित बंगालियोके कार्यसे महाराज रामसिह इतने संतुष्ट हुए कि राज्यके एक २ विभागके कर्त्तृत्वभारको उनके हाथमे अर्पण करके उन्हे मत्रीसमाजमे आसन दिया। गुप्तमंत्रीपदपर भी महाराजने एक विद्वान् बंगालीको नियुक्त किया, उच्च वंशोद्भव कृत-विद्य वावू संसारचन्द्रसेनने महाराज रामसिहके गोपनीय मंत्री पदपर नियुक्त होकर महाराजकी मृत्युके समयतक बड़ी चतुरतासे कार्य करके जयपुरराज्यके कल्याणकी कामना की, इससे इनके ऊपर वर्तमान महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए, और वड़े आदर-भावके साथ बावू संसारचंद्रसेनको अपने गुप्तमंत्रीपदपर नियुक्त किया। और बावू मति-लालको गुप्तसहकारी प्राइवेट सेक्रेटरी पदपर नियुक्त किया।

सन् १८६८ ईसवीमे रजवाड़ेम भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा, उस समय महाराज राम-सिह प्रजाके कष्टको दूर करनेके लिये स्वयं अपने यहांसे वहुतसा धन देते थे, और उन्होने प्रजासे कर लेना एकवार ही छोड़ दिया और प्रजाके भोजनके सुभीतेके लिये वहुतसा सुभीता कर दिया। इससे महाराजका वहुत धन उठगया इस विपम दुर्भिक्षके समयमें महाराजको अधिक धन उठाता हुआ देखकर गवर्नमेण्ट अत्यन्त संतुष्ट हुई, और महाराजके सम्मान वढ़ानेके निमित्त दो सलामी तोपोकी वढ़ादी गई। जयपुरके महाराजके सम्मान स्वरूप सत्रह तोपोकी सलामी अंग्रेजीराज्यमे जानेके समय होती थी, परन्तु गवर्नमेण्टने व्यवस्थाकी कि महाराज रामसिह जवतक जीवित रहेंगे तवतक उन्नीस तोपोकी सलामी हुआ करैगी।

देशीय राजाओमे महाराज रामसिह यथार्थरीतिसे राज्यशासन कर प्रजाके हितके लिये उन्नीसवीं शताब्दीके उच्च आदर्शसे वैज्ञानिक रीतिसे राज्यसंस्कार और सुशासनकी व्यवस्थाके विपयमे सफल मनोरथ हुए। उनकी योग्यता देखकर गवर्नमेण्ट अत्यन्त ही संतुष्ट हुई। भारतवर्पके अंग्रेजी राजप्रतिनिधि और गवर्नर जनरल वहादुरने कौन्सिलके अवैतनिक माननीय सभ्यपदपर उनको नियुक्त किया। उस कौन्सिलमे

जानेके समय महाराजने विशेष दक्षता प्रकाश की, अंग्रेजी गवर्नमेण्टने फिर दूसरीवार उनको उस पदपर नियुक्त किया। महामान्या भारतेश्वरीने जिस समय भारतके देशीय राजाओंका सम्मान बढ़ानेके लिये भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि की, उस समय अन्यान्य राजाओंकी समान महाराज रामसिंह प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्र अर्थात् "नाइट ग्राण्ट कमाण्डरस्टार आफ इंडिया"नामक सबसे उच्च सम्मान सूचक उपाधि पदकको प्राप्त हुए, वास्तवमें जयपुरके विख्यात महाराजा मानसिंह, मिरजा राजा जयसिंह और गाढ-पंडित सवाई महाराज जयसिंह यवनराज्य पर जिस प्रकार अपनी सामर्थ्यके बलसे सम्राट्की सभामें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करगये थे, अंग्रेजी शासनमें उसी प्रकारसे महाराज रामसिंहने सबसे पहिले अंग्रेजी दरबारमें कीर्ति यश और सम्मानको प्राप्त किया था। भारतवर्षके राजाओंमें एकमात्र महाराज रामसिंह ही गवर्नमेण्टके इतने प्रिय होगये थे कि सन् १८७५ ईसवीमें जिस समय बड़ौदेके हतभाग्य अधीश्वर मल्हारराव गायकवाड, अंग्रेजी रेसिडेण्ट कर्नल फिरारको विष देनेके अपराधमें अपराधी हो अपने राज्यमें कुशासनके लिये बंदीभावसे विचारके लिये अंग्रेजी गवर्नमेण्टके द्वारा लाये गये उस समय उनके विचारके लिये जो कमीशन नियत हुआ उस समयके राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने,महाराज रामसिंहको योग्यपात्र जानकर उस कमीशनके अन्यतर सभ्यपद पर नियुक्त कर गायकवाड़के विचारका भार उनके हाथमें दिया। तब भी महाराज रामसिंहने अन्यान्य विचारवानोंके साथ विचारासन पर बैठकर विचारके अंतमें गायकवाड़के अपराधके सम्बंधमें निरपेक्ष भावसे अपना मत प्रकाश करके विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी।

सन् १८७५ ईसवीके शेषांशमें भारतके भावी सम्राट् ग्रेट् ब्रिटेनके युवराज माननीय प्रिन्सआफवेल्स बहादुर भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आये। उन भावी सम्राट्की अभ्यर्थना और अभिनंदनके लिये संपूर्ण भारतवर्ष मानो एक मनुष्यकी भांति खड़ा होगया, और आनंदित हो महा उत्सवके मारे उन्मत्त होगया। भारतके भावी सम्राट्को अपने राज्यमें लाकर उनका विशेष सम्मान करनेको अनेक देशीय राजाओंने अपने मनोरथ प्रकाश किये थे, परन्तु सभी राजाओंके उस मनोरथका पूर्ण करना भावी सम्राट्के पक्षमें अवश्य ही असंभव था। परन्तु जयपुरपति महाराज रामसिंह स्वयं अशेषगुणोंसे गवर्नमेण्टके परमप्रियपात्र होगये थे, जयपुर नगर ही भारतवर्षमें रमणीक स्थान नहीं है, वरन वह एक दर्शनीय स्थान कहा गया है। इस कारण भारतवर्षमें युवराजके आनेसे पहिले ही महाराज रामसिंहके प्रस्तावसे निश्चय हुआ कि प्रिन्स आफवेल्स बहादुर जयपुरकी राजधानीमें आकर महाराजकी आतिथ्यता स्वीकार करें। महाराज रामसिंह बहादुरके साथ प्राय सभी अंग्रेजोंके प्रतिनिधियोंकी विशेष मित्रता होगई थी। विशेष करके अर्ल आफ मेओ महाराज रामसिंहको अपना परम मित्र जानते थे। जिस समय अर्लमेओको एण्डमान द्वीपमें पापात्मा सेरअलीने मारा था उस समय महाराज रामसिंहने उनके वियोगसे यथार्थ शोक प्रकाश किया था, और प्यारे मित्रके स्मरणके निमित्त चिह्न स्थापनके लिये राजधानी जयपुरमें "मेओ

अस्पताल " स्थापन कर आलमेओकी एक धातुकी वनी हुई मूर्ति राजधानीमे स्थापित की । प्रिन्सआफवेल्सने जिस समय भारतवर्षमे आगमन किया था इस समय राजप्रतिनिधि पदपर लार्ड नार्थब्रुक विराजमान थे, लार्ड नार्थब्रुकके साथ महाराजकी विशेष मित्रता होगई थी, इस कारण भावी सम्राट्के आनेके पहिले ही उन्होने महाराज रामसिहको कलकत्तेमे बुलानेके लिये निमंत्रण भेजा था।

वृटिश गवर्नमेण्टके परम भक्त महाराज रामसिह वहादुर ठीक समय पर सेवको सहित कलकत्तेमे आये । राजप्रतिनिधि लार्डनार्थब्रुकने वड़े आदर सम्मानके साथ महाराजको राजमहलमे लेजाकर विशेष संतोष प्रकाश किया, और महाराज राजधानीके जिस स्थानमे रहे थे राजप्रतिनिधि वहाँ नित्यप्रति जाकर रोज साक्षात् कर आते थे। सन् १८१५ ईस्वी । २३ दिसम्वरको भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफवेलस वहादुर कलकत्तेमे आये । उस दिन उनको वड़े आदरमानके साथ ग्रहण करनेके लिये प्रिन्सपेस् घाटपर एक वडी भारी सभा हुई । उस सभामे वुलाये हुए देशीय राजा भी आये । अधिक क्या महाराज रामसिह वहादुरने वहाँ ठीक समय पर जाकर युवराजके सम्मानके कार्यमे योगदान किया । राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने अन्यान्य राजाओकी समान महाराज रामसिहका उस स्थानपर युवराजके निकट विशेष परिचय दिया । दूसरे दिन २४ दिसम्वरको १० वजेके समय आमेरपति महाराज रामसिह युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गवर्नमेण्ट हाउसमे गये । जैसे ही यह गवर्नमेण्ट हाउसकी प्रधान सीढ़ी पर चढ़े थे कि वैसे ही युवराजके पारिषद मेजर अण्डार्सने मेजर सारटारियस और दो एडिकागोने आगे वढ़कर महाराजको बड़े आदरसम्मानके साथ ग्रहण किया। महाराजके सीढीपर चढते ही दोनो ओरकी स्थित सेनाने सम्मान सूचक सलामी ली, और उसी समय किलेपरसे तोपे छूटी । भावीसम्राट् सिहासनपरसे उतर कर कईएक पग आगे चलकर स्वयं उनका हाथ पकड कर लेगये आर अपने पासके सिहासन पर उन्हे बैठाला । परस्पर कुशलप्रश्न होनेके उपरान्त वहुतसी वातचीत होती रही, और सवसे पीछे प्रचलित रीतिके अनुसार अतर लगाकर ताम्वूल दिया गया, महाराजने पहिले सम्मानके साथ विदा ग्रहण की । भावी सम्राट् २९ दिसम्वरको महाराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये, महाराजने भी उसी प्रकार वडे आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया । भावी सम्राट्ने कई दिनतक नगरमे रहकर समस्त उत्सव देखे । महाराजके साथ निम्नलिखित सम्भ्रान्त राजपुरुष और सामन्त कलकत्तेमे गये थे, ठाकुर किशोरीसिह, ठाकुर करनसिह, ठाकुर जुझारसिह, राव राजा सग्रामसिह, दुर्जनलालसिह, जोरावरसिह, प्रतापसिह, और करमसिंह । महाराज रामसिह कलकत्तेके उत्सव समाप्त होजानेके पीछे अपनी राजधानीको आये ।

भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफवेल्स वहादुरको वड़े आदर मानके साथ जयपुरमे ग्रहण करनेके लिये महाराज रामसिह वहादुरने वहुतसा धन खर्च करके अनेक भाँतिके अनुष्ठान किये । ४ फर्वरीको प्रिन्सआफवेल्स वहादुर जयपुरमे गये । " प्रिन्स

आफवेल्स वहादुरके सम्मानके लिये महाराजने वहुत पहिलेसे अनेक तैयारियाँ की थीं " युवराज जिससे संतुष्ट हो. जिससे उनके मानकी रक्षा हो इसमे महाराजने किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। वे जिस प्रकारसे वहुतसा धन खर्च करते थे उसी प्रकारसे उनका सम्मान भी होता था। क्योंकि युवराज यहाँ कल चार वजे आवेगे इससे उनके आनेके पहिले समस्त नगर आनन्दसे परिपूर्ण होगया; सम्पूर्ण प्रजा और सेना तथा जयपुरके सभी जिमीदारोने आनन्दोन्मत्त हो परम रमणीय दृश्य प्रकाश किया। जयपुरके महाराजने हिन्दूराजकी समान हिन्दू भावसे ही युवराजकी अभ्यर्थना की थी। आर्यपताका, आर्यवाद्य, आर्यसैन्य, आर्यआनन्द ध्वनि, आर्यपूजा, सभी काम आर्यरीतिके अनुसार हुए थे। यह दृश्य देखकर हृदय अधिक संतुष्ट होता था। जिस समय युवराजकी रेल जयपुरनगरसे ८२ मील दूर थी, उसी समय जयपुरकी राजपताका उठी और इनके सम्मानके लिये तोपे छूटी। जब रेल द्योसा स्टेशन पर पहुची तो किलेपरसे तोपोकी ध्वनि हुई। जयपुरके महाराज पहिलेसे ही अपने राजमंत्री और प्रधान २ सरदारोके साथ जयपुरके स्टेशन पर युवराजको सम्मान सहित लेनेके लिये उपस्थित थे, स्टेशन वड़ी सुन्दरता से सजाया गया था । पताकावली, पत्र पुष्पमाला और राजचिह्न इत्यादिसे स्टेशनकी शोभा और भी अधिक गई थी। एक ओर तो पैदलसेना स्टेशन पर युवराजको मान दिखानेके लिये खडी हुई थी और वीच२ मे मधुर ध्वनिसे वाजा वजता जाता था। रेलके स्टेशनसे लेकर शिवपोल तक मार्गके दोनो ओर घुडसवार खडे हुए शान्तिकी रक्षा कर रहे थे, शिवपोल गेटसे जयपुरकी राजधानीके कृष्णपोल गेट तक मार्गके दोनो ओर राजपैदल और नागापैदलोका दल खडाहुआ था। समस्त जागीरदार सजधजकर घोडोपर चढे हुए युवराजका मान दिखानेके लिये वाट देख रहे थे । शिवपोल फाटकके सम्मुख ही युवराजके लिये सजाहुआ हाथी खडा था "।

युवराजके स्टेशन पर आते ही जो सेना युवराजको आदर सम्मानके साथ लेनेके लिये खडी हुई थी उसने मान्य दिखाकर तोपध्वनि की। इसके पीछे युवराज स्टेशनसे चलकर सजेहुए घोडोकी गाड़ी पर सवारहो शिवपोल गेट तक गये । उस समय अंग्रेजी अश्वारोही दल उनके पीछे २ चला और कितनी ही घुडसवारी सेना उनके आगे २ चली। मार्गमे जिमीदार सरदार, और जागीरदारोने देशीय रीतिके अनुसार युवराजका आदर सम्मान किया। युवराज शिवपोल गेटमे जाकर महाराजके साथ उस सुन्दर सजेहुए हाथी पर वैठे। युवराजके प्रत्येक सेवक और कर्मचारियोने हाथीपर चढे हुए युवराजके पीछे २ गमन किया। अंग्रेज दाहिनी ओरको खड़े हुए, देशी वॉई ओरको खडे हुए इसके पीछे वीचमे हाथी चला। युवराजके शिवपोल गेटसे चलते ही फिर तोपोकी ध्वनि हुई। मार्गमे जयपुरके प्रधान २ श्रेणीके ब्राह्मणोने घंटा और शंख वजाकर युवराजकी आरती की। युवराजके आगे २ सेना, असख्य पैदल असंख्य पताकाधारी, आसाधारी, और वल्लम लिये हुए जारहे थे, अगणित देशीय क्रीड़ा करनेवाले आनंदके मारे नृत्य करते आगे २ चले । यह दृश्य युवराजकी समान प्रत्येक दर्शकको मोहित करता था। युवराज भारतवर्षमे आकर आर्यरीतिके

अनुसार इस प्रकारके भावसे और कही भी सम्मानित नही हुए थे। इस समय राजमार्गमे लाखों मनुष्योंकी आनंदध्वनिसे आकाश पूर्ण होगया था, इस प्रकारसे इस पवित्र आनन्द और सम्मानको युवराजने और कही भी नही देखा। जयपुरके महाराजने इस सम्मानसे युवराजको इतना मोहित किया था श्रीमती महारानी भी उस सम्मानके विषयको सुनकर वहुत ही आनन्दित हुई। शिवपोल गेटसे निम्नलिखित प्रकारसे यात्रा आरंभ हुई,—

अश्वारोही जमादार
एकदलदेशीय पदाति
अश्वारोही नगर कोतवाल
वृहत् राजपताकाधारी दो हाथी
एक दल प्रासादरक्षक सैन्य
ऊंटोपर चढे गोलन्दाज दल
राजपताकाधारी घुड़सवार
अश्वारोही नगाड़ेवाले
अश्वारोही
ताजीमी सरदारोके पुत्रगण
खास चौकीके कर्मचारीगण
राजकर्मचारीगण
वाजोका दल
महाराजके अश्वारोही नगाडावाद्यकदल
राजपताकाधारीगण।
वर्छाधारीदल।
हलकारे।
आसा सोटा आदि राजचिह्न धारीगण
तलवारकी क्रीडा करनेवाले नागे
महाराजके खवास
महाराज रामसिंह और प्रिन्स आफवेल्स
हाथीपर चढ़े ढालधारी दो सामन्त
अश्वारोही खास चौकीके दो कर्मचारी
चार श्रेणियेमे विभक्त हस्त्यारोही
युवराजके सहचर अंग्रेजी कर्मचारी
देशीय सामन्त
अंग्रेजी सैन्यदल
हाथीपर चढ़े वाद्यकगण
अश्वारोही नायव कोतवाल

युवराजके कृष्णपोल गेटके पार होते ही समस्त सेना और अनुचर अंग्रेजी रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराज भी उस समय महाराजके साथ सजे हुए हाथीपर चढे हुए रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराजके वहाँ पहुँचते ही महाराजकी पैदल सेनाने सम्मान दिखाया और तोप ध्वनि की गई। युवराजको रेसिडेण्टीमे पहुंचाकर महाराज अपने स्थानको लौट आये, और कुछ कालके पीछे युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये। इस सम्मानके समयमे जयपुरकी समस्त सेना राजमार्गमे खडी हुई थी। सब आठसो सजे हुए हाथियोपर युवराजके सहचर और आमेरके सामन्त सवार थे अन्यान्य और भी वहुतसे हाथी थे।

युवराजके आनेके समय इस समय पोलिटिकल एजण्ट वेनन साहवने वहुतसा धन खर्च करके स्थानको सजाया था। वेनन साहवने युवराजके रहनेके स्थानको

भलीभांतिसे सजाया था। प्रिन्स लुइस, ब्याटनवर्ग, लार्ड साफिल्ड, और लार्डक्यारिटनने युवराजके साथमें ही रहना स्वीकार किया और इनके अन्यान्य सेवक और और स्थानोंपर चले गये, युवराजकी भक्ति दिखाने तथा मित्रता बढाकर अपने सामने समस्त विषयो की खोज करनेके लिये महाराज रेसिडेण्टके निकट कलसे एक सामान्य स्थानपर रहे थे, इस लिये मृत लार्डमेओ भी इनके ऊपर अत्यन्त सतुष्ट हुए थे। और इसी कारणसे इस समय युवराजने महा संतुष्ट होकर महाराज रामसिहकी गणना अपने प्रिय-बधुओमे की थी, ४ फर्वरीको एक भोजनके अतिरिक्त और कोई प्रकाश करने योग्य घटना नही हुई "।

"कल प्रभात होते ही समस्त नगरमे यह समाचार फैल गया कि युवराज शिकार खेलनेको जायँगे। इस लिये जो उनको देखनेके लिये महलके सम्मुख खडे हुए थे, वह लोग निराश होकर अपने स्थानको लौट आये। युवराज प्रातःकाल ही भोजन करके लार्ड आइलेसफोर्ड, लार्ड क्यारिटन, लार्ड आलफ्रेड, पजेट, मेजर, ब्रडफोर्ड जोधपुरके राजा प्रतापसिंह और किशोरसिंह नाम दोनो भ्राता महाराज रामसिहके साथ शिकार खेलनेको गये, सभी सिजिकाबाग नामक स्थानपर गये, वहाँ जाकर भोजन किया। भोजन करनेके उपरान्त सभी वनमे गये। नगरसे छः मील दूरीपर झालाना नामक वनमे शिकार खेलना प्रारंभ हुआ। युवराज किशोरसिंह और अन्य एक सहचरके साथ ऊँचे स्थानपर घोड़ेपर चढकर गये और महाराज मेजर ब्रडफोर्ड, प्रतापसिह और शिकारियोंके साथ नीचेसे व्याघ्रको भगाने लगे। कुछ ही समयके उपरान्त एक बडी लम्बी चौडी आकरवाली व्याघ्रीने आकर दर्शन दिया। वह अपने भागनेका उद्योग करही रही थी कि महाराज और प्रतापसिहने उसपर चोटकी। कुछ कालके पीछे वह शेरनी युवराजसे ४० हाथ दूर रहगई कि, युवराजने उसपर गोली चलाई। वह गोली उसके बॉये कंधेमे लगी गोली खाकर शेरनी जैसे ही भागनेको हुई कि वैसे ही युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली उसकी पूँछमे लगी। गोली लगते ही शेरनी शान्त होगई, और युवराजकी तीसरी गोली खानेसे पहिले ही अबकी बार वह शेरनी दौड़कर छिप गई। चोट लगनेके कारण वह अधिक दूरतक न जासकी, एक पत्थरके ऊपर जाकर बैठगई प्रतापसिहने इसको ढूढ़ते २ युवराजको आकर समाचार दिया, युवराजने वहाँ जाकर कहा, यह शेरनी मरगई है, परन्तु प्रतापसिहने कहा कि अभी मरी नही है, यह सुनकर युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली भी खाली गई, युवराजने फिर और एक गोली मारी, तब व्याघ्रीने इस शेष आघातसे प्राण छोडे। इसके पीछे प्रतापसिह और युवराजने हाथीपरसे उतर कर व्याघ्रीके पास जाकर देखा, कि अब इसका जीवन नही रहा है, अतमे व्याघ्रीको हाथी पर लाद कर रेसिडेण्टीको लेजानेकी आज्ञा दी। युवराजने भारतवर्षमे आकर यह प्रथम ही व्याघ्रीका शिकार किया था। इससे वह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए थे। यह शेरनी देखनेमे अत्यन्त बड़ी थी। युवराजके रेसिडेण्टीमे आते ही महाराज रामसिह समस्त परिषदोंके साथ एकत्र

खड़े हुए, और शेरनीको उनके चरणोके नीचे रक्खा। इसके उपरान्त एक फोटो ग्राफरने फोटो ली"।

"युवराज कल पॉच फर्वरीको व्याघ्रोंका शिकार करके रेसिडेण्टके साथ जयपुरमे आये। मारे आनदके जयपुर नगर प्रफुल्लित होगया, चारोओर ऊँचे २ पर्वतोकी शोभा और भी अधिक बढ़ रही थी। राजप्रासाद और राजमार्ग अत्यन्त रमणीक होरहा था। जयपुर नगर देखनेमे चित्रपटकी समान था, इस पर लाखो दीपकोके प्रज्वलित होनेसे उसकी और भी शोभा बढ़ गई थी, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। रेसिडेण्टीसे राजमहल ३ मील था। सपूर्ण मार्गोमे पताका लगी हुई थी, प्रकाशमान दीपकोसे बाज़ारकी शोभा और भी अधिक बढ़ गई थी, वन, नगर, बड़े २ आवास और राजकार्यालयके प्रकाशमान होनेसे सभीके नेत्र मोहित होगये थे। युवराज इस परम प्रभामय दृश्यको देखकर अत्यन्त ही संतुष्ट हुए और महाराजको आनंद प्रकाश करके दिखाया। उस समय भारतवर्षमे वास्तवमे अन्यान्य देशीय राजाओके राज्यकी अपेक्षा जयपुरका प्रकाश अत्यन्त ही चमत्कृत हुआ था, महाराजने रुपया खर्च करनेमे किसी प्रकारकी कसर नहीं की थी। दीपकोका प्रकाश भी उसी प्रकार मनोगत हुआ। महाराजकी इच्छा थी कि युवराज जबतक यहाँ रहे तबतक गैसकी रोशनी हो, परन्तु रेल और कम्पनीके दोषसे गैसका समान इकट्ठा न होसका, महाराज इस मनोरथके पूर्ण न होनेसे अत्यन्त दुःखित हुए थे। हमारा ऐसा अनुमान होता है कि एक महीनेमे जयपुरमे गैसकी रोशनी होसकती थी"।

"कल रात्रिके सात बजेके समय दीवान आम नामक बडे सभागृहमे एक दरबार हुआ, यह गृह अत्यन्त साफ और सुन्दर २ वस्तुओसे सजा हुआ था। इसकी सुन्दरताको देखकर दर्शकोका मन मोहित होता था। इस घरमे १२ सौ कुरसियां सजाई गई थी। युवराज और महाराजके बैठनेके लिये दो रत्नजडित आसन उनके बीचमे विराजमान थे। सन्ध्या होनेसे कुछ पहिले युवराज सभागृहमे आये। उस समय जयपुरके समस्त सामन्त जागीरदार, और प्रधान २ राजकर्मचारियोने वहाँ आसन ग्रहण किए। उस दरबारमे कितने ही सम्भ्रान्त अग्रेज और देशीय मनुष्योने युवराजको अपना परिचय देनेके उपरान्त पीछे जोधपुरके महाराजके दोनो भ्राता महाराजा प्रतापसिह और महाराजा किशोरसिह इन दोनोको युवराजने भारतभ्रमणके स्मारकका पदक पुरस्कारमे दिया। जयपुरके प्रधान २ सामन्तोने युवराजको नजरमे कितने ही रुपये दिये, परन्तु युवराजने उनको स्पर्श करके सबको लौटा दिये। दरबार समाप्त होजानेके पीछे जयपुरके महाराजने जयपुरके कितने ही शिल्प द्रव्य उपहारमे दिये। युवराजने उन समस्त द्रव्योको देखकर अत्यन्त संतोष प्रकाश किया। इसके पीछे युवराज और एक सौ सम्भ्रान्त अग्रेज राजभोजमे विराजमान हुए, भोजन समाप्त होनेके पीछे युवराज अन्य कमरेमे गये। महाराज रामसिहने उस कमरेमे जाकर हिन्दुस्तानी भाषामे महारानी विक्टोरियाके प्रति युवराजके प्रति और अग्रेज गवर्नमेण्टके

प्रति भक्ति आनुरक्ति और सम्मान प्रकाशक एक वक्तृता दी। अंग्रेजी भाषाका अनुवाद और छपा हुआ पत्र अंग्रेजोके हाथमे दिया गया, वक्तृताके समाप्त होजाने पर महारानी विक्टोरियाके स्वास्थ्यके निमित्त और युवराजके प्रस्तावसे महाराज रामसिहके स्वास्थ्यके उद्देशसे सुरा पीगई, इसके पीछे महाराजने युवराजको उपहारमे बहुतसे द्रव्य दिये। बडी कीमती एक सुन्दर तलवार, आसे, बड़ी २ छुरी अतरदान इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य दिखाकर युवराजका विशेप सम्मान किया, यह देखकर युवराजने अत्यत आनद प्रकाश किया। महाराजने १४ हजार रुपयेके मूल्यका एक अतरदान भी उपहारसे दिया था, यह देखनेमे अत्यंत सुन्दर था"।

"इसके पीछे युवराज, महाराजके साथ चंद्रमहल नामक नृत्यवाटिकामे देशीय नॉचनेवालोका नृत्य देखनेके लिये गये। नॉचनेवाले वेशकीमती पोशाके पहिरे हुए सुन्दर छविसे सभागृहको प्रकाशमान कर रहे थे। युवराज इस नृत्यको देखकर अत्यंत संतुष्ट हुए। अधिक क्या कहै युवराज विश्रामगृहमे गये। वहॉ महाराजके साथ अनेक प्रकारकी वातचीत होनेके पीछे चुरट और अपने नामका खुदा हुआ एक दिवासलाईका वक्स महाराजको उपहारमे दिया। रात्रिमे अग्निक्रीडा भी वड़ी धूमधामके साथ कीगई थी। लंदनकी ब्रुक कम्पनीने १० हजार रुपये लेकर आतिशवाजी तयार की थी। इसको देखकर सभी दर्शकोने अत्यत आनदित हो जयध्वनि की। युवराज कोई दो पहर रात्रिके बीतनेपर रेसिडेण्टीमे लौट आये। कल जिस प्रकारसे जयपुर प्रकाशमान हुआ था, इस प्रकारसे इसकी शोभा और कभी नही हुई थी"।

"कल पॉच फर्वरी रविवारको प्रकाश करने योग्य कोई उत्सव नही हुआ। युवराज भोजन करनेके उपरान्त जयपुरका प्राचीन नगर आमेर देखनेके लिये गये। वहॉके प्राचीन कीर्तिस्तभ और परम रमणयि दृश्यको देखकर युवराजने सतोप प्रकाश किया। आमेरको देखकर आगमनके समय युवराजने "एडवर्ड हाल" नामक अपने नामके असाधारण स्थानकी दीवारमे अपने हाथसे पापाण स्थापन किया। युवराजने जयपुर भ्रमणके स्मरणके निमित्त महाराज रामसिहने वहुतसा धन खर्च करके यह स्थान बनाया था। कल दिनको और कोई घटना नही हुई। युवराज आज प्रभात होते ही जयपुरको छोड कर आगरेको चले गये। विदा होनेके समय राजमार्गमे अत्यन्त मनोहर दृश्य हुए थे, युवराजने यहाके शिकारियोको सौ रुपये पुरस्कारसे दिये थे। महाराजने युवराजको जो द्रव्य उपहारमे दिये थे, उसके अतिरिक्त युवराजको एक अत्यन्त मनोहर अश्वयान उपहारमे दिया था, युवराज जयपुरके महाराजका आतिथ्य और अभ्यर्थना और उत्सवसे अत्यन्त ही प्रसन्न होगये थे। भारतवर्षके अन्यान्य राजाओकी अपेक्षा महाराज युवराजके विशेष प्रीतिपात्र हुए थे"।

यद्यपि भारतके भावी सम्राट् एडवर्ड प्रिन्स आफवेल्स वहादुरने भारतके अनेक देशीय राजाओके राज्यमे सम्मान प्राप्त किया था, और उन देशीय राजाओने

बहुतसा धन खर्च करके अनेक उत्सवो द्वारा उनका सम्मान बढाया था. परन्तु पाठकगण उपरोक्त वृत्तान्तको पढकर सरलतासे समझ जॉयगे कि जयपुरपति महाराज रामसिहने केवल इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अनेक अनुष्ठानोके द्वारा ही युवराजके मनको हरण नही किया था, वरन इन्होने यथार्थ प्रीति, नम्रता और विनयके साथ पवित्र रुचिसे प्रिन्स आफवेल्सको अपना मित्र बना लिया था। जिन सम्पूर्ण श्रेष्ठ गुणोसे शिक्षित अंग्रेज स्त्री पुरुषमात्रके हृदय पर वह अधिकार करनेको समर्थ हुए थे, उन्ही समस्त गुणोसे उन्होने भावीसम्राट्को मोहित किया। शिक्षित अंग्रेज स्त्री पुरुषोके साथ मित्रताके सूत्रमे बॅधनेके लिये अत्यन्त अभिलाषी थे। कर्नल म्यालिसनने अपने ग्रथमे लिखा है कि "महाराज रामसिह अंग्रेजोके साथ स्त्री पुरुषोकी मित्रताका होना अत्यन्त श्रेष्ठ मानते थे।" महाराजके अंग्रेज मात्रही अत्यन्त भक्त थे पाठक ऐसा अनुमान न करे। महाराज रामसिह स्वय ही एक बुद्धिमान मनुष्य थे, इस कारण शिक्षित मनुष्यमात्रके साथ वह स्वभावसे ही प्रीति स्थापन करना अपना कर्त्तव्य जानते थे, केवल अंग्रेज ही नही वरन सपूर्ण देशीय समाज भी उनकी प्रीतिपात्र थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीके ग्रेट्ब्रिटेन और आयरलैण्ड की अधिराज्ञी महाराना विक्टोरियाने भारतवर्षमे राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणकी। भारतवर्षकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमे इसके उत्सवमे राजसूय समिति की गई। यहांपर भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तके राजाओकी तरह आमेरके महाराज रामसिह भी निमंत्रित होकर अपने परिषद और अनुचरोके साथ सेना सहित वहॉ गये, इनके पहुॅचते ही बडे सम्मानसे राजप्रतिनिधिने इनको ग्रहण किया। सन् १८७६ ईसवीके २६ दिसम्बरको महाराज रामसिह बहादुर अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्डलिटन बहादुरके साथ साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये। प्रधान मार्गपर सबसे पहिले अंग्रेजी अश्वारोही कर्मचारियोने महाराजका विशेष सम्मानके साथ अभिवादन किया। इसके पीछे राजप्रतिनिधिके निवासस्थान पर पहुॅचते ही उस स्थान पर खडी हुई अंग्रेजीसेनाने अस्त्र दिखाकर उनका सम्मान किया। सवारी परसे उतर कर राजप्रतिनिधि वैदेशिक सेक्रेटरी परनटन साहबने आगे जाकर आदरमानके साथ ग्रहण कर परम रमणीक चन्द्र किरणोसे शोभित सजे हुए अभ्यर्थनाके स्थानमे राजप्रतिनिधि लार्डलिटनके पास महाराजको उपस्थित किया. राजप्रतिनिधिने आनंदितहो सिहासनसे उतरकर कईएक पग आगे जा महाराजको बडे आदरसे लेजाकर दहिनी ओरके रत्नसिहासनपर बैठाला और पीछे स्वय सिहासनपर बैठे। इसके पीछे बहुत देरतक वार्ता होती रही, महाराज रामसिहने अपने राज्यमे जो हितकारी कार्य किये थे, उन सबका उल्लेख किया। गवर्नमेण्टने रामसिहकी भक्ति प्रीति और अनुरक्ति देखकर उनकी विशेष सहायता करनी स्वीकार की, और महाराजके गुणोकी प्रशसा करने लगे। इसके पीछे दो हाईलैण्डके सैनिकोने एक राजसूर्य पताका लाकर राजप्रतिनिधिके सामने रक्खी। इस पताकाके एक ओर "विक्टोरिया कैसरहिन्द" और दूसरी ओर जयपुरके राज वंशका चिह्न अंकित था। पताकाके ऊपर एक ओर

महाराज रामसिहका नाम और दूसरी ओर " विक्टोरिया एम्प्रेस, १ जनवरी सन् १८७७ " लिखा हुआ था। राजप्रतिनिधि महाराज रामसिहका हाथ पकड कर सिहासनसे उतरकर पताकाके सम्मुख गये, और महाराजसे बोले।

" महामान्या भारत राजराजेश्वरीके उपाधिधारणके स्मरणमे उनके उपहार स्वरूप आपके पारिवारिक चिह्नसे अकित यह पताका महिमवरको दी जाती है "।

" महामान्याका विश्वास है कि इंगलैण्डके राजसिहासनके साथ आपके संभ्रान्त राजवशका जो विशेष घनिष्ठ संवन्ध है, केवल यही नही वरन प्रधान राजक्षमता (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) जो आपके वंशकी उन्नति स्थापित्व और प्रवलताकी इच्छा करती है, इसको आप भुलाकर कभी इस पताकाको त्यागन करना उचित न समझेगे "।

राजप्रतिनिधिने महाराज रामसिहके हाथमे उस पताकाको दिया, महाराजने मस्तक झुकाकर सम्मान सहित उसे ग्रहण किया।

पताका देनेका कार्य समाप्त होगया, भारतके राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके स्मरणार्थ एक सोनेका पदक भी राजप्रतिनिधिने महाराजके गलेमे डाला, उस पदकके एक ओर भारतेश्वरीका आनन और नाम तथा १ जनवरी, सन १८७७ ईसवी यह खुदा हुआ था, और दूसरी ओर अंग्रेजीभाषासे " एम्प्रेस आफइण्डिया " और हिन्दी उर्दू भाषामे " कैसरहिन्द " खुदा हुआ था। राजप्रतिनिधिने उक्त पदक देनेके समय कहा —

महारानी और भारतकी राजराजेश्वरीकी आज्ञानुसार मैने आज इस पदकसे आपको भूषित किया। यह पदक जिस शुभ दिनमे अंकित हुआ है उसके स्मरणके लिये आप इसको चिरकालतक धारण करे। और आपके वशमे यह पुरुषानुक्रमिक अलकाररूपसे रक्खा जाय "।

पताका और पदक देनेके पीछे राजप्रतिनिधिने महाराजको सूचित किया " इसके पीछे आपके सम्मान सूचक इक्कीस तोपोकी सलामी हुआ करेगी। " जयपुरके महाराजकी अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ सधि करके सम्मानसूचक सत्रह तोपोकी सलामी हुआ करती थी। महाराज रामसिहने अपने न्याय सहित राज्यशासनके गुणसे पहिले ही उन्नीस तोपोकी सलामी प्राप्त करली थी, इस समय इक्कीस तोपे नियत हुई। महाराज रामसिह राजप्रतिनिधिके द्वारा सम्मानित होकर उस दिन उस स्थानको त्याग कर आनदित हो अपने स्थानको लौट आये, उनके आते और जाते समय नियमितरूपसे तोपोकी सलामी हुई।

दूसरे दिन (२१ दिसवरको) अपरान्हके समयमे राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन वहादुरने महाराजके स्थान पर जाकर उनसे साक्षात किया। महाराज रामसिहने वडे आदर मानके साथ राजप्रतिनिधिको ग्रहण करके अपने श्रेष्ठ गुणोका विशेष परिचय दिया।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको मध्याह्नके समय उस महान् विक्टोरिया समितिमे लार्ड लिटन द्वारा बृटिश रानीसे "भारतकी राजराजेश्वरी" की उपाधि धारण

करनेकी सूचना हुई। राजपूतानेके राजाओंके प्रतिनिधिस्वरूपसे "उदयपुर और जयपुरके दो अधिपतियोंने उठकर कहा कि, महामान्याके भारतमे राजराजेश्वरीकी उपाधि धारण करने पर राजपूतानेके सम्मिलित राजाओंने राजभक्तिके साथ जो अभिवादन किया है, यह समाचार महारानीको प्रगट करनेके लिये शीघ्रतासे भेजा जाय, राजाओंकी यही प्रार्थना है"।

उक्त उपाधिके उपलक्षमे भारतकी राजराजेश्वरीकी ओरसे "कौन्सिलर आफदी एम्प्रेस" नामक एक श्रेणीकी नवीन उपाधि नियत हुई। उस उपाधिकी सृष्टिका कारण राजप्रतिनिधिकी निम्नलिखित उक्तिसे प्रकाशित होता है,–"सम्मिलित राज्यकी महामान्यारानी भारतकी राजराजेश्वरीने समय २ पर प्रयोजनके अनुसार आवश्यकीय कार्य्योंमे भारतवर्षके राजा और सरदारोंकी शुभमंत्रणा ग्रहण करके और उससे प्रधानराज अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ उनका सम्मानसूचक सम्मिलनसाधन, और उस उपायसे साम्राज्यके साधारण मंगलकी सुविधा स्थापनके लिये भारतवर्षके प्रधानमंत्रियो द्वारा हमै निम्नलिखित राजा और गवर्नमेण्टके उपरितन कर्मचारियोको कौन्सिलरआफदी एम्प्रेस, (भारतकी राजराजेश्वरीके मंत्री) की उपाधि देनेकी सामर्थ्य दी है। और इससे हम उनके नाम और उनके पक्षसे उस महा सम्मानित उपाधिको देते है"। समस्त भारतवर्षमे जो आठ देशीय राजा उक्त महा सम्मानसूचक उपाधिको प्राप्त हुए है, इनमे जयपुरपति महाराज रामसिंह भी एक है। इस प्रकारसे महाराजा रामसिंह विक्टोरिया राजसमितिमे सम्मान पाकर ठीक समय पर अपनी राजधानीको लौट आये।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि बहुत थोडे समयके पीछे ही अर्थात् सन् १८८० ईसवीके सितम्बर महीनेमे सर्वमनरंजन महाराज रामसिंह बहादुरने प्राण त्याग किये। महाराज रामसिंहकी जीवनीके सम्बन्धमे हमै अधिक कहनेकी आवश्यकता नही उपसंहारमे केवल इतना ही कह सकते है कि समस्त देशी राजाओंमे महाराज रामसिंह सबसे अधिक बुद्धिमान् थे, इनकी प्रकृति उदार थी, यह उन्नतिप्रिय, कुसंस्कारहीन और प्रजारंजन पुरुष थे। जयपुरराज्यकी जिस प्रकारसे अवनति होगई थी, इनके राज्यमे जयपुरने उसी प्रकारसे सबसे ऊँचे पदपर अधिकार प्राप्त किया था। इनके राज्यमे अत्याचार अशान्ति अराजकता इत्यादि सभी उपद्रव शान्त होगये थे, जैसे २ प्रजाके हितकारी कार्य महाराज रामसिंहने किये थे पाच देशीय प्रधान २ राज्योमे आजतक वह कार्य नही हुए। उन सम्पूर्ण हितकारी कार्योंके अतिरिक्त देशीय राजा आजतक भी इस बातको स्वीकार नही करते कि बुद्धिमान महाराज रामसिंह पवित्र रुचि और सभ्यताके सम्मानकी रक्षाके लिये उन २ कार्योंको कर गये है। उन सम्पूर्ण कार्योंसे राज्यमे जो भावी महान् मंगलका बीज बोया गया और कहा इतिहासमे अंकुरित और पल्लवित होकर मोहन सुखमाका अमृतमय फल उत्पन्न करते है, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। महाराज रामसिंहजी और भी जीवित रहते तो उनसे जयपुरके राज्यकी और भी अधिक श्रीवृद्धि और उन्नति होती, इसमे किंचित् भी सन्देह

नही। जयपुरराज्यका इतिहास महाराज रामसिहके नामसे चिरकालतक हीरेके अक्षरोसे ग्रथित रहैगा, जयपुरके प्रजापुंजके वंशधर एकमात्र महाराज रामसिहको अपना नवजीवन और नवीन वलप्राप्तिका मूल, जयपुरराज्यका यथार्थ उद्धारकर्त्ता स्वीकार करते है–केवल राजस्थापनमे ही नही वरन समस्त भारतवर्पके प्रत्येक देशीय राजसिहासनोपर महाराज रामसिहकी समान राजा विराजमान होते तो भारतवर्पके दुर्दिन शीघ्र ही दूर हो जाते, इसको सभी मानलेगे, राजपूत राजकुलके मार्तण्डस्वरूप महाराज रामसिहकी अकालमृत्युसे जयपुरकी समस्त प्रजा गभीर शोकसागरमे निमग्न होकर हाहाकार करने लगी, उसके हाहाकारसे आकाश परिपूर्ण होगया, इनके वियोगसे वृटिश गवर्नमेण्टने भी तथा स्वजातीय और विजातीय मित्रमडलीने भी महान् शोक प्रकाश किया था। सर्वगुणमंडित महाराज रामसिहके शोक और वियोगको ऐसा कौन मनुष्य है जो भूल सकता हो ?।

सातवां अध्याय ७.

महाराज माधोसिहका आमेरके सिहासन पर अभिपिक्त होना–उनकी अज्ञान अवस्थामे वृटिश रेसिडेण्टका जयपुरके शासनभारको ग्रहण करना–शासन समाजका नियोग–कृष्णगढ और द्रागाढडाकी दो राजकुमारियोके साथ महाराजका विवाह–महाराज माधोसिहका वम्बई और कलकत्तेका जाना–महाराजका जयपुरमे शिल्पशालाकी प्रतिष्ठा करना–महाराजका अभिपेक–वृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमे राज्यभारअर्पण–महाराजका जयपुरमे शिल्प और प्रदर्शनीका अनुष्ठान–प्रदर्शनीका उद्देश–प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा–महाराजका अभिपेक–प्रदर्शनीकी सफलता–जयपुरमे प्रकृष्ट शासनकी रीति–मंत्रीसमाज वा कौन्सिल–कौन्सिलकी सामर्थ्य–राजदरबारमे नानापदो पर सामन्तो का नियोग–कौन्सिलके सभ्यगणोके नाम–कौन्सिलके सभ्यगणोका नियमित वेतन दानकी व्यवस्था का चलाना–सामन्तोके साथ सम्बन्ध–शेखावाटीके सामन्तोका असतोप–असंतोषका कारण–असतोष निवारण–वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराजका अकृतिम सद्भाव–प्रतिवासी राजाओके साथ महाराजका मैत्रीभाव–महाराज माधोसिहके सम्वन्धमे वृटिश पोलिटिकल एजण्टका मन्तव्य–उपसहार—

महाराज रामसिहने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये, परन्तु मृत्युके शय्यापर शयन करते समय गवर्नमेण्टने उनको दत्तकपुत्रके लेनेकी सामर्थ्य दी, उसी सामर्थ्यसे उन्होने इकट्ठे हुए सामन्त और कर्मचारियोके सम्मुख अपने कुटुम्वी ईशरदाके युवक सामन्त ठाकुर कायमसिहको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया। महाराज रामसिहकी मृत्युके पीछे उनकी इच्छासे उनकी रानी और सामन्तोने उक्त सामन्तको नियुक्त करनेकी सम्मति दी, पोलिटिकल एजण्टके प्रस्तावसे गवर्नमेण्टने भी अपनी पूर्ण सम्माति दी। ठाकुर कायमसिहने चिर प्रचालित रीतिके अनुसार अपने पहिले नामको बदलकर माधोसिह नाम रक्खा। और सन् १८८० ईसवीके सितम्वर महीनेमे वह आमेरके

सिंहासन पर विराजमान होकर राज्य करने लगे । महाराज माधोसिंह जिस समय आमेरके राजछत्रके नीचे विराजमान हुए उस समय उनकी अवस्था उन्नीस वर्षकी थी । जयपुरके रेसिडेण्ट मिस्टर जे०पी० स्टेटन सन्१८८३ ईसवीकी पहिली मईको, जयपुरके सन् १८८२–८३ईसवीके शासनके वृत्तान्तमे लिखते है"कि जिस समय महाराज राज्यपर नियुक्त नही थे उस समय इन्होने कोई उपयुक्त शिक्षा प्राप्त नही की थी, इसी कारणसे दो वर्षतक जयपुर राज्य रेसिडेण्टकी सम्मतिसे एक कौन्सिल वा मन्त्रीसमाजके द्वारा शासित हुआ, और युवक महाराज क्रम २ से शासनकी शिक्षा पाने लगे । महाराज माधोसिहने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे अपने हाथमें राज्यभार लिया था गवर्नमेण्टने अपनी अवलम्बित नीतिके मतसे महाराजके हाथमे प्रथम शासनकी सामर्थ्य न दी, जयपुरराज्य बहुत दिनोसे जिस मन्त्री समाजके द्वारा शासित होता आया था रेसिडेण्टने शीघ्रतासे उसी समाजके हाथमे शासनका भार अर्पण किया । वास्तवमे महाराज माधोसिंह पहिले एक साधारण प्रदेशके सामन्त थे । यह किसी दिन आमेरके सिंहासनपर विराजमान होगे ऐसा किसीको भी अनुमान नही था,इस कारण उन्हे राज्यशासनके उपयुक्त कोई विशेष शिक्षा नही दी गई थी।यद्यपि वह उन्नीस वर्षकी अवस्थामे राज्यपर स्थित हुए परन्तु उस समय उनके पक्षमे पूर्णशासनकी सामर्थ्यका चलाना असभव था, जबतक महाराज माधोसिंह अज्ञान अवस्थामे रहे तबतक रेसिडेण्टकी सम्मतिसे मंत्रीसमाज राज्यशासन करता था, और महाराजने इस सुअवसरमे राज्यशासनकी प्रयोजनीय शिक्षा प्राप्त करली ।

महाराज माधोसिंह बहादुरने आमेरके राज्यपद पर प्रतिष्ठित होनेके पीछे कृष्णगढ़ और काठियावाडके अन्तर्गत ध्राङ्गादड़ाके राजाकी दो कन्याओके साथ पाणिग्रहण किया, इस विवाहमे महाराजके २२७४५७रुपये खर्च हुए,यद्यपि बहु विवाहसे विषमय फल चिरकाल तक उत्पन्न होताहै, परन्तु अत्यन्त ही दु खका विषय है कि देशीय राजा सुशिक्षा प्राप्त करके भी उस अनिष्ट मूलक रीतिको आज तक पूर्ण सम्मानसे रक्षा करते आये है । भारतवर्षके देशीय राजा स्मरणातीत कालसे बहु विवाहके अभिलाषी है, उन्होने इस बहु विवाहके विषमयफलको प्रत्यक्ष करनेमे किसी प्रकारसे अनादर प्रकाश नहीं किया था, जबतक देशीय राजा भलीभाँतिसे ऊँची शिक्षाको न पासकै, तब तक बीचमे बहु विवाहसे शान्त होजॉयगे, हम ऐसी आशा नही कर सकते ।

महाराज माधोसिंह सन् १८८१ इसवीमे बम्बई कलकत्ते और गयाजीको गये । अपने राज्यमे लौटनेके पीछे उन्होने जयपुर राज्यमे एक उन्नतिका परिचायक कार्य किया सन १८८१ इसवी, २३ अगस्तको जयपुरमे एक इकानामिक और इण्डस्ट्रियल मिउजियम नामक शिल्पकी द्रव्य शाला प्रतिष्ठित की महाराज और बहुतसे प्रतिष्ठित मनुष्योके सामने कर्नल वाल्टरने इसकी प्रतिष्ठा की।इसके देखनेके लिये बहुतसे दर्शक गये ।डाक्टर

* Report of the Political Administrations of the Rajputana states for 1882-1883.

हिडली इसके आवैतनिक सम्पादकथे।महाराज माधोसिहने इस हितकारी कार्यमे वहुतसा रुपया खर्च किया, इस मिउजियमकी प्रतिष्ठासे विशेप उपकार हुआ था।

सन् १८८२ इस्वीके सितवर महीनेमे वर्तमान महाराज माधोसिह वहादुरने वाईस वर्पकी अवस्थामे पदार्पण किया,इस कारण राजपृत रीतिके अनुसार इस वर्पमे ही यह सम्पूर्ण राज काजको जानगये, महाराज इतने दिनो तक राजकार्यमे अशिक्षित रहे इसीसे गवर्नमेण्टने उनके हाथमे राज्यके पूर्ण शासनका भार नहीं दिया था, परन्तु इस समय वह सर्व गुण सम्पन्न होगये, तव गवर्नमेण्टने शीघ्र ही वडी धूमधामके साथ सितम्वर मासकी ६ तारीखको महाराज माधोसिहको आमेरके राज्यपर अभिपिक्त किया, और उनके हाथमे समस्त राज्यका भार अर्पण किया"।

इस अभिपेकके उत्सवके समयमे कितनी धूमधाम हुई थी इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे करसकेगे. यद्यपि महाराज माधोसिह पूर्ण शासनके भारको प्राप्त होगये थे, परन्तु राज्यके प्रधान २ वड़े कार्योमे अव भी पोलिटिकल एजण्टकी सम्मति लेकर कार्यकरते थे। महाराजकी अवस्था अव भी वहुत थोड़ी है, अव कई वर्पके पीछे सर्वगुणसम्पन्न होगये है, और इसमे भी कुछ सदेह नहीं कि इस समय वह समस्त राजकार्योमे निपुण होगये है। जयपुरके रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० स्टेटन जयपुरके सन् ८२।८३ ईस्वीके शासन विवरणमे लिखते है कि "गत ६ सितंवरको महाराज माधोसिह इक्कीस वर्पकी अवस्थामे राज्यकी सपूर्ण शासनसामर्थ्यको प्राप्त हुए थे, परन्तु उस समय आवश्यकता होनेपर यह व्यवस्था ठहरी कि जवतक महाराज संपूर्ण अभिज्ञता प्राप्त न करले तवतक वह सव विपयोमे रेसिडेण्टके साथ परामर्श करके राजकार्य करै। और उनके अप्राप्त व्यवहारके समय मत्रीसमाजके द्वारा जिन कार्योकी व्यवस्था नियत हुई है, उक्त रेसिडेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त वह उसके सवन्धमे कुछ भी अदलवदल नहीं करसकेगे"।

राज्यके अनेक विपय और साधारण हितकारी अनुष्ठानके विपय जयपुरराज्यमे जो भारतवर्पके अन्यान्य देशीयराज्योको पीछे रखकर अग्रसर हुए है, सर्वसाधारण मनुष्य इसको मुक्तकठसे स्वीकार करेगे। वुद्धिमान् महाराज रामसिहने जिस प्रकारसे वहुतसा धन खर्च करके राज्यमे अनेक हितकारी और मगलदायक कार्य किये थे, अत्यन्त सतोपका विपय है कि नवीन युवक महाराज माधोसिह भी उसी प्रकार वहुतसा धन खर्च करके उन मगलदायक कार्योके करनेके लिये अग्रसर हुए। सन् १८८३ ईस्वीके जनवरी महीनेमे जयपुरमे एक अभूतपूर्व अनुष्ठान हुआ। ऐसा अनुष्ठान आजतक किसी देशी राज्यमे नहीं हुआ था। वह अनुष्ठान शिल्प प्रदर्शनीका स्थापन था। शिल्प प्रदर्शनीके द्वारा वाणिज्य शिल्प इत्यादिके जो उपकार होनेकी सभावना है, उसे शिक्षित मनुष्यमात्र स्वीकार करैगे।

---

* Report of the Political Administration of the Rajputana States for 1882–1883

"महाराज माधोसिहने अपने राज्यमे उस विश्व विदित शिल्प और साधारण वाणिज्यकी उन्नतिके लिये कई लख रुपये खर्च करके उस प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा की थी। प्रदर्शनीके उद्देशके सम्बन्धमे जयपुरके रेसिडेण्ट लिखते है कि प्रदर्शनीका यह उद्देश है कि राजपूताना और जो देश इससे लगे हुइ है उन सब देशोमे शिल्पका प्रचार हो जाय"।

" इस राज्य (जयपुर) मे और इसकी सीमामे स्थित देशोमे कौन २ से द्रव्य उत्पन्न होते है, अथवा शिल्पियोके द्वारा बनाये जाते है, उनके सम्बन्धमे अभिज्ञता प्राप्त हो तथा उन सम्पूर्ण द्रव्योको उत्पादन करनेवाले, निर्माण करनेवाले और क्रियताओको एकत्र करके उसके सम्बन्धसे सर्व साधारणकी शिक्षाविधान और अभिज्ञता प्रदान ही इस प्रदर्शनीका उद्देश है "।

"जयपुरके इकानामिक और इडणिट्रयल मिउजियममे जो जो द्रव्य सकलित हुए थे, इन सबके अतिरिक्त जिन २ का संग्रह नही किया था, इस प्रदर्शनीसे उन सबका सग्रह करना इसका उद्देश है "।

जयपुरके रेसीडेण्ट चिकित्सक डाक्टर हेण्डलीने सबसे पाहिले इस शुभ प्रस्ताव को महाराजके निकट उपस्थित किया था। महदाशय महाराजने इस प्रस्तावको उत्तम जानकर शीघ्र ही इस कार्यको पूर्ण परिणत करनेकी आज्ञा दी, और इस प्रदर्शनीमे जितना रुपया लगा था वह सभी राजाके खजानेसे दिया गया। कई वर्ष हुए "अलवर्ट हाल " नामक प्रिन्स आफवेलसके स्मरणके लिये जो वडा मनोहर स्थान बनाया गया था उसी स्थानमे प्रदर्शनी होना निश्चय हुआ, जयपुरके एक जिक्यूटिव इंजीनियर मेजर जेकवने बहुत थोडे समयमे उसके निर्माणका कार्य किया था, उन्होने प्रदर्शनीको प्रतिष्ठाके योग्य कर दिया।

रेसीडेण्ट लिखते है, " कि जो प्रस्ताव किया गया उसके अनुसार सब द्रव्य इकट्ठे किये गये, क्रमानुसार दश सहस्र पदार्थोंका संग्रह किया गया। गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्ड और महामान्य महाराजके द्वारा सन् १८८३ ईसवी की १ जनवरीको प्रदर्शनी खोली गई। और दूसरी मार्चको बद हुई, उन दोनो महीनोमे ८५४ अग्रेज और सब २३६९५४ दर्शक प्रदर्शनी देखनेके लिये गये थे, और बहुतसे रुपयोकी चीज़े खरीदी भी गई थी "।

"प्रदर्शनीके समस्त द्रव्योके गुणागुण और उत्कृष्टापकृष्टताकी परीक्षा और योग्यपात्रको पुरस्कार देनेके लिये बवई, लाहौर कलकत्ता और इलाहाबाद इत्यादि स्थानोसे मि०ग्रिफिथस् और मि०क्रिपलि इत्यादि न्यायवेत्ता निरपेक्ष शिक्षित पुरुष जूरर अर्थात् परीक्षकस्वरूपसे आये थे। दोसौसे अधिक जनोको पुरस्कार दिया गया इस प्रदर्शनीमे जिस प्रकारसे महाराजने रुपया खर्च किया था उसी प्रकारसे वह पुरस्कार भी उनके द्वारा दियागया"।

राजपूतानेमें स्थित वृटिश एजण्टने इस प्रदर्शनीके सम्बन्धमे सन् १८८३ ईसवीकी २१ अगस्तको लिखा है "कि पहली जनवरीको मै जयपुरमे गया, उस समय शिल्पकी

प्रदर्शनी भलीभाँतिसे खुली थी। इसको भलीभाँतिसे सफल करनेके लिये धनखर्च करने और परिश्रम करनेमे किसी प्रकारकी त्रुटि नही कीगई, प्रदर्शनीमे जो वहुतसे दर्शक आये थे, और जितनी वस्तुये विकी थीं ऐसी राजपूताने भरकी किसी प्रदर्शनीमे भी वस्तुओकी विक्री नही देखी गई, यही एक प्रकार अनुष्ठानकी उपकारिताका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पाठकमंडली! अंग्रेजी राजपुरुषोके उक्त मन्तव्योको भलीभाँतिसे जानगई होगी कि जयपुरकी इस प्रथम शिल्पप्रदर्शनीने किस प्रकारका शुभ फल उत्पन्न किया था। हम आशा करते है कि महाराज माधोसिह वहादुरने राज्यभारको ग्रहण करके प्रथम इस शुभ अनुष्ठानमे अपना हस्ताक्षेप प्रारंभ किया था, उन्होने जन्मभर इस प्रकारसे आग्रह, उत्साह, और धन खर्च करके इस प्रकारके वहुतसे हितकारी अनुष्ठानोसे राज्यके और प्रजाके अनेक हितकारी कार्य किये।

यद्यपि महाराज माधोसिह वहादुरको राज्यकी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त होगई थी, यदि वह विचारते तो अपने हाथमे समस्त राज्यभार लेकर पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार जयपुरमे फिर व्यक्तिगत यथेच्छाचारसे शासनकी रीतिको प्रचलित कर सकते थे, परन्तु अत्यन्त सतोषका विषय है कि गत कई वर्षोंमे जिस प्रकारके लक्षण प्रकाशित हुए थे उससे महाराज माधोसिहने उस व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीतिका अनुसरण न करके महाराज रामसिहके द्वारा चलाई हुई शासन प्रणालीके पूर्ण सम्मानकी रक्षाकी। इसका अनुमान हम निसंदेह कर सकते है, कि भारतवर्षके संपूर्ण देशीय राज्योमे व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीति प्रचलित है–केवल एकमात्र महाराज रामसिह वहादुरने, प्रजा साधारणके कल्याणका विधान और राज्यकी उन्नतिसाधनके लिये मंत्रीसमाजकी सृष्टि करके उसके हाथमे प्रत्येक विभागके पूर्ण शासनका भार अर्पण किया था, इस रीतिसे जो सुशासन और न्याय विचार अधिकतासे सूचित होता है यह कहना वाहुल्यमात्र है, महाराज माधोसिहने भी इस समय उस शासनरीतिका अवलम्वन करके अपनी पवित्र रुचि और प्रजानुरागिताका विशेष परिचय दिया।

जयपुरकी वर्तमानरीतिके सवन्धमे रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० स्टेटन सन् १८८३ ईस्वीको १७ मईको लिखते है, कि अन्यान्य सामान्य राज्योकी अपेक्षा जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त सुन्दररूपसे अनुष्ठित हुई है। यह कहा जासकता है, नरपतिकी इच्छासे अथवा किसी राजकर्मचारीके प्रावल्यमे यदि किसी विषयकी मीमांसा होनेकी संभावना न हो तो वर्तमान जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त अल्पसमयमे उसे निर्धारित कर सकती है। और देशीयराजाओमे जैसे एक जनके हाथमे शासनकी सामर्थ्य है, इस स्थान पर वैसा नही है।

"महाराजके अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे स्वभावसे ही इस प्रकारके शासनकी व्यवस्था थी, और महाराजकी अल्प अवस्था तथा अनभिज्ञताके कारणसे यह रीति

प्रचलित रही है। महाराजके सभापतित्वके आधीनमे यह कौन्सिल अर्थात् शासन समाज सभारूपसे अनेक शुभकार्य कर रही है। महाराज जिस समय राजधानीमे स्वयं उपस्थित नही थे, उस समय भी शासन कार्य नियमितरूपसे होता था, और किसी भारी विषयमे महाराज जिस प्रकार कौन्सिलके परामर्श और सहायताका ग्रहण करना उचित जानते है कौन्सिल भी उसी प्रकारसे उन २ विषयोमे उनके मतकी अपेक्षा करती और सम्मति ग्रहण करती है"।

उक्त मन्तव्य केवल कौन्सिलके सबन्धमे ही प्रयोग नही होता, किन्तु कौन्सिल के अधीनमे जो २ विभाग है उन सबके कार्य सुन्दर रीतिसे होते है"।

"यद्यपि उपरोक्त प्रकारसे कौन्सिलकी सृष्टि सदसे पहिले असपूर्णतासे कार्यमे परिणत हुई, परन्तु यह रीति इस राज्यमे बहुत दिनोसे प्रचलित है। अर्द्ध शताब्दीके पहिले मृत महाराज रामसिहके अप्राप्त व्यवहारके समय इसकी सृष्टि हुईथी और इस समय यह पूर्ण अवयवोसे परिणत हुई है। उक्त महाराजकी मृत्युके पीछे यह कौन्सिल वास्तवमे यथार्थ रीतिसे स्वाधीनताके भावकार्यमे समर्थ हुई है। प्रत्येक विभागसे उपयुक्त संख्यावाले सदस्य नियुक्त है"।

"महाराजके अप्राप्त अवस्थामे रेसिडेण्टके अधीनमे कौन्सिल जिस प्रकारसे राजकार्य करती थी, इस समय महाराजके अधीनमे भी उसी प्रकारसे कार्य करतीहै। कौन्सिलके अधिवेशनके नियमित समय नियुक्त है, और उसी समयके अनुसार कार्य होता है"।

"इस राज्यमे और भी दो एक शुभ अनुष्ठान हुए है। यहाँके अनेक विभागोके कार्यमे राज्यके मैनेजरके पदपर, वकील पदपर, अन्यान्य कार्योमे सामन्तोको और उनके कुटुवियोको नियुक्त किया गया है। अन्यान्य देशीय राज्योंके सामन्त इस प्रकारके पदोपर नियुक्त होनेसे घृणा करते है और राजा भी उनको विश्वास पूर्वक नियुक्त नहीं करते, इसी कारण अन्यान्य राज्योमे राजकर्मचारी नामकी एक श्रेणी प्रवल होकर अपने धन आगमन की चेष्टामे नियुक्त रहती है, प्रभुके कल्याणकी ओर दृष्टि नही रखती"।

देशीय राजाओके छिद्र देखनेवाले रेसिडेण्ट जव जयपुरकी शासन रीतिके संवन्धमे इस प्रकारका सतोपदायक मन्तव्य प्रकाश करते है। तव पाठक अवश्य ही सरलतासे इसका अनुमान कर सकते है कि जयपुरके शासनकी रीति वर्तमान समयमे अवश्य ही प्रीतिदायक है, और महाराज माधोसिह वहादुर उस उदारनीतिके किस प्रकारसे दृढ परिपोषक है।

जयपुरकी कौन्सिल वा शासन समाज तीन प्रधान भागोमे विभक्त है। १ राजस्व विभाग. २ शासन विभाग ३ समर वैदेशिक और अन्यान्य विभाग। महाराज रामसिहकी मृत्युके पीछे सन् १८८० ईसवीमे निम्नलिखित विभागोमें नीचे लिखे हुए सदस्य नियुक्त हुए।

राजस्व विभाग–	१–डिग्गीके ठाकुर प्रतापसिह
–	२–ठाकुर शम्भूसिह
–	३–बाबू यदुनाथसेन

शासन विभाग—	१—बगरूके ठाकुर सामन्तसिंह ।
—	२—ठाकुर समन्दरकरन ।
—	३—मीरकुरवानअली ।
समर वैदेशिक—	१—चौमूके ठाकुर गोविन्दसिंह ।
एव—	२—पुरोहित रामप्रसाद ।
अन्यान्यविभाग—	३—बाबू कान्तिचद्रमुखोपाध्याय ।

उपरोक्त सदस्योमे पुरोहित रामप्रसादने सन् १८८३ ईसवीकी १३ वी अगस्तको प्राण त्याग किये, और सन् १८८२ ईसवीमे बाबू यदुनाथसेन और ठाकुर समन्दरकरन ने पेन्सन लेकर पद त्याग किया, उक्त तीनो मनुष्योके पदोपर तीन नवीन सभ्य नियुक्त हुए है ।

रेसीडेण्टके मन्तव्यसे जाना जाता है कि महाराजने जिस समय स्वजातीय तीन सामन्तोको सदस्य पदपर नियुक्त किया, उस समय यह सभी मूल्यवान जागीरोको भोगते थे, परन्तु यह कौन्सिलके सदस्य पदपर नियुक्त होकर राजकार्य करेगे, इससे परिश्रमके स्वरूपमे महाराजके निकटसे स्थाई वृत्तिकी प्रार्थना की, परन्तु स्थाई वृत्तिका देना असम्भव विचार कर, सन् १८८३ ईसवीमे कौन्सिलके प्रत्येक सभ्योको नियमित वेतन मिलनेकी रीति प्रचलितहुई ।

इस वृहत् इतिहासके अनेक स्थानोमे पाठकोने पढ़ा होगा कि जिस राज्यमे सामन्तोके साथ अधिपतिका मनान्तर विवाद और झगडा होता है वह राज्य नष्ट हो जाता है । सामन्त शासित देशमे, सामन्त ही नरपतिके प्रधान बल और उपाय स्वरूप है । सामन्तोके प्रति नरपतिका सद्भाव, और उनको चिरप्रचलितरीतिकी समान सगत स्वत्वरक्षा, और सन्मान प्रदर्शन जैसा अवश्य कर्तव्य है, सामन्तोके पक्षमे भी उसी प्रकारसे अकृत्रिम राजभक्ति दिखानेके साथ अधीश्वर प्रभुकी आज्ञापालन करना उचित है । दोनोमे व्यतिक्रम होनेसे वीर तेज राजपूत सामन्त और राजामे महा असंतोषदायक कार्य उपस्थित होता है।रजवाडेके राजपूत राज्योमे प्रथमसे ही सामन्तोके शासनकी रीति प्रचलित है, इस कारण सैकडो वर्षोसे सामन्त ही समस्त राजनैतिक स्वत्वाधिकारको भोगते आते है । उन सम्पूर्ण राजनैतिक स्वत्वोपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप होनेसे राज्यमे अनेक विपत्तियाँ आई हुई दृष्टि आती है, इस कारण राजपूत राजाओके पक्षमे जिस भाँतिसे सामन्तोके उस समस्त राजनैतिक स्वत्वको अक्षत रखकर राज्यशासन करना कर्तव्य विचारा गया है, सामन्तोके पक्षमे भी उसी प्रकारसे अपनी निर्दिष्ट की हुई राजनैतिक सामर्थ्यकी सीमाका उल्लघन करना उचित नही है । महाराज रामसिहके शासनके समयसे आमेरके सामन्तोमे किसी प्रकारका असंतोष वा अशांति आजतक दृष्टि नही हुई । वर्तमान समयके महाराज माधोसिहने भी सामन्तोके ऊपर विशेष दया करके राज्यके अनेक भागोंमे सम्भ्रान्त विश्वासी सामन्तोको नियुक्त कर परोक्षमे उनके हाथमे राज्यके अनेक विषयोके शासनका भार अपर्ण किया

है, परन्तु अत्यन्त दु.खका विषय है कि आमेरके सामन्तोमे बहुतसे अल्पबुद्धिवालोने बीच २ मे प्राय. एक अत्यन्त अप्रयोजनीय घटना उपस्थित की थी।

"जयपुरमे स्थित रेसिडेण्टके मतसे जाना जाता है कि जयपुरकी सीमाके अन्तमे पुलिसका बंदोवस्त और व्यवस्था प्रयोजनके अनुसार न होनेके कारण क्रमानुसार पंजाबसे उचित अनुयोग उपस्थित होता था। इसीलिये जयपुरके राजदरबारसे उक्त सीमामे स्थित सामन्तोको इसके सम्बन्धमे यह दृढ़ आज्ञा दी गई कि उनकी इस आज्ञाका देना वास्तवमे अत्यन्त ही प्रयोजनीय था, पर दुर्भाग्यवश उस आज्ञापत्रकी भाषा कुछ कठोर होगई इस कारण शेखावाटीके सामन्तगण, और दूसरे सामन्तगणोंने समझा कि जिन छोटे२ विषयोमे बहुतकालसे हमारी क्षमता चली आती है, अब महाराज हमारी सामर्थ्य लोप करनेमे प्रवृत्त हुए है। इससे भयानक घटना उपस्थित हुई, और उसी घटनासे उक्त सामन्त राज्यके अन्यान्य सामर्थ्यशाली सामन्तोने एकसाथ मिलकर एक प्रवल प्रतिवाद उपस्थित किया"।

"सन् १८८३ ई०के गत जनवरी महीनेमे जिस समय गवर्ननर जनरलके एजण्ट यहाँ आये थे उस समय महाराजने उन सामन्तोको जयपुरमे बुलाया और निष्कपटभावसे सब विषयोंको प्रकाश करके कहसुनाया, विशेष करके धीरज देकर सामन्तोको सावधान करदिया जिससे यह झगडा शीघ्र ही मिटजाय, परन्तु एक समय इस झगडेसे भयंकर अनिष्ट होनेके लक्षण दिखाई देते थे*"।

गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजण्टलेफ्टिनेण्ट कर्नल इ आर ब्राडफोर्डने इसके सबन्धमे लिखा है, "कि हमारे उपस्थितिके समयसे शेखावाटीके सामन्त जयपुरमें आये, तथा दरबार और उनके मध्यमे किसी २ विषयमें जो झगडा उत्पन्न हुआ था, उससे दोनोंमे ही चिरकालतक झगड़ा रहनेकी सभावना थी, अत्यन्त संतोषका विषय है कि दोनो ओरका अमगल करनेहारा झगड़ा दूर होगया"।

महाराज माधोसिह जितनी दया सामन्तोके ऊपर करते है उतने ही वह उनके राज्यकी बढती करते है, अधिक क्या कहे, जबतक सामन्त भलीभाँतिसे शिक्षा प्राप्त न कर सके तबतक संपूर्ण मंगल और शान्तिकी आशा नही है। सामन्तोके पुत्रोंको विद्याकी शिक्षाके लिये यद्यपि राजधानी जयपुरमे उपयुक्त विद्यालय स्थापित है, और अनेक दिनोसे बड़ी २ तैयारियाँ होरही है परन्तु जिससे सामन्तोके कुमार विद्या पढनेमे भलीभाँतिसे मन लगावे, उस विषयमे भी महाराजका विशेष ध्यान है और कुमारोंको उत्साहित करना उनका एकान्त कर्तव्य है, राज्यकी प्रजा जितनी शिक्षित और बुद्धिमान होगी उतना ही राज्यका मगल होगा।

इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि भारतके देशीय राजाओंके मंगलके निमित्त जगदीश्वरने गवर्नमेण्टके हाथमे भारतके भाग्यका भार अर्पण किया है।

---

* Report of the political Administration of the Rajputana state or 1882-1883.

जिन राजपूतराजाओंने सातसौ वर्ष तक यवन सम्राटोकी अधीनता स्वीकार की थी। इस समय वही राजपूत वृटिश गवर्नमेण्टके अधीनरूपसे गिने जाते है, उन्हे उस वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सद्भावकी रक्षा करना अवश्य ही कर्तव्य है। महाराज रामसिंह बहादुर सामयिक राजनीतिकी विद्यामे विशेप पारदर्शी थे, इसी कारणसे उन्होने गवर्नमेण्टके परम प्रियपात्र होकर विशेप सम्मान प्राप्त किया था, वर्तमान महाराज माधोसिह बहादुरने भी इसी प्रकारसे गवर्नमेण्टके साथ विशेप प्रीति करके अपने राज्यका मंगल साधन किया है। हम सरलतासे ऐसी आशा कर सकते है कि "वृटिश रेसिडेण्टने लिखा है कि गवर्नमेण्टके साथ जो सम्पूर्ण सधिका सवन्ध नियत हुआ था इस समय विश्वासके साथ उसका पालन किया जा रहा है, और महाराज भी उनके दरवारके साथ वृटिश रेसिडेण्टके संवन्धमे सम्पूर्ण प्रीति जनक है"। वृटिश रेसिडेण्टने जब कि स्वयं उक्त मंतव्यको प्रकाश किया है तब अवश्य ही यह मानना होगा कि महाराज माधोसिहने महाराज रामसिहकी अवलंवित नीतिका अनुसरण किया है।

भारतके पतनका कारण देशी राजाओमे अविश्वासका होना है, अनैक्यता, विवाद निसम्वाद और स्वजातिविद्वेष है। यदि देशीय समधर्मका अवलवन करनेवाले राजा परस्पर विश्वास स्थापनके साथ साथ एकताके सूत्रमे बँधे रहते तो भारतका वर्तमान मानचित्र अवश्य ही भिन्नवर्णसे रगा जाता। वर्तमान वृटिश गवर्नमेण्टके शान्ति पूर्ण शासनसे देशीय राजा प्रतिवासी एक धर्मका अवलवन करनेवाले राजाओके साथ जितनी अकृत्रिम मित्रताके सूत्रमे वंधेगे उतना ही भविष्यमे मगलदायकवीज वोया जायगा। अत्यत सतोपका विपय है कि आमेरराज माधोसिहके साथ रजवाडेके अन्यान्य राजाओकी विशेप मित्रता विराजमान है। जयपुरके रेसिडेण्ट मि० स्टेटनने लिखा है, "कि निकटवर्ती देशोमे राजाओके साथ इस प्रकारसे मैत्रीभाव साधारणतः विराजमान है। वास्तवमे उस मित्रतासे ही कितने राजाओने जयपुरकी प्रदर्शनीमे वहुतमूल्य द्रव्योको भेजा। यदि इनमे मित्रता न होती तो ऐसी आशा कहॉ थी*"।

वर्तमान महाराज माधोसिहके सम्वन्धमे राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है। हम इस स्थानपर उसको प्रकाश करनेके साथ जयपुरराज्यके इतिहासका उपसंहार करनेकी अभिलापा करते है। कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "अभिषेकके पीछे महामान्य महाराजने स्वय शासन कार्यमे भली भॉतिसे मन लगाया और उन्है पहिले सम्पूर्ण विपयोमे अभिज्ञता प्राप्त करनेका कोई सुअवसर नही मिला, वर्तमान समयमे शीघ्रतासे उन संपूर्ण विपयोमे अभिज्ञता प्राप्त करके वह विशेप आग्रहअन्वित हुए। जयपुरका भविष्य मंगल किस प्रकारसे सूचित होगा, उस सवन्धमे मन्तव्य प्रकाश करना वर्तमान समयमे असामयिक है, परन्तु महाराज इस समय अपने राज्यके शासन संवन्धमे जिस प्रकारसे दृष्टि रखते है, यदि इसी

* Report of the political Administration of the Rajputan states for the 1882-83

प्रकारसे दृष्टि रखते रहे तथा प्रत्येक विभागकी कार्यकारिता संपादनके लिये उन्होंने जिस प्रकारका आग्रह प्रकाश किया है, यदि क्रमानुसार उसी प्रकारसे आग्रह प्रकाश करते रहे तो यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि अधिक उन्नतिशील अन्यान देशीयराज्योंके साथ जयपुर सबसे अग्रणीय होजायगा।" बृटिश रेसिडेण्टका यह मन्तव्य वर्तमान महाराजके संपूर्ण गुणोंका परिचायक है। महाराज माधोसिंहके शासनसे जयपुरमें जो भविष्यमें उन्नतिकी संभावना है उससे मंगलकी निसंदेह आशा की जा सकती है, इसको हम मुक्तकंठसे स्वीकार कर सकते है, कि महाराज माधोसिंह दीर्घजीवन प्राप्त कर जयपुरके सिंहासनको उज्वलतासे प्रकाशमान और गौरवान्वित करेंगे, भविष्यमें इतिहास लेखक उनके शासनवृत्तान्तको उज्वलतासे चित्रित करनेमें समर्थ हो, जगदीश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है।

आठवाँ अध्याय ८.

जयपुरकी चारों सीमाएं और भूपरिमाण–अधिवासी जनोंकी संख्या–जाति विभाग–सीमा–जाट–ब्राह्मण, कछवाहे, राजपूत–जयपुरकी मृत्तिका–कृषि उद्भिज–राजस्व–अन्य जातिकी बनाई आमेरके अधिकारी सत्रह प्रदेशोंकी सूची–प्राचीन राजकरकी सूची–वर्तमान राजकर–वाणिज्य–लवणविभाग–पूर्त्तकार्यका विभाग–शिल्प–रेलवे–टेलीग्राफ–स्वास्थ्यविभाग–चिकित्सा विभाग–शान्तिरक्षाका विभाग, विशेष शान्तिरक्षा विभाग–जयपुरका कालिज–चादपोलविद्यालय–राजपूतविद्यालय–संस्कृतकालिज–प्रथम शिक्षाविद्यालय–सहायताकारी विद्यालय–मेओकालिज–स्त्रीशिक्षा–समरविभाग– सामन्तोंकी प्राचीन और आधुनिक सूची- जयपुरके कुछेक बडे और प्राचीन ऐतिहासिक स्थान।

इतिहास जाननेवाले टाड् साहबने जयपुर राज्यके भौगोलिक और भीतरी अन्यान्य विवरण एक स्वतंत्र अध्यायमे लिखे है। हम उन सब विवरणोंको वर्तमान समयके कुछ जाननेयोग्य समाचारोंके साथ इस समय पाठकोंको विदित कराते है।

कर्नल टाड् साहब सबसे पहिले लिखते है "हम कछवाहे जातिकी सृष्टि और विस्तारका विवरण लिखते है। अवश्य ही यहां ऐसे कितने मनुष्य विद्यमान होंगे जो आठसौ वर्षोंमे पन्द्रह हजार वर्गमील पृथ्वीपर विस्तृत प्रत्येक कछवाहे वंशके इतिहास जाननेको और चालीस हजार कछवाहोंके नंगी तलवार हाथमे लेकर अपनी जन्मभूमि और राज्यकी रक्षाके लिये खडे होनेके वृत्तान्तको न जानना चाहते है। "जन्मभूमि" यह शब्द इन्द्रजालके मन्त्रकी समान राजपूतोंके हृदयमे अपने प्रकाशसे प्रबल पराक्रम उत्पन्न कर देता है। राजपूत भ्रमसे भी अपनी स्त्रीका नाम मुखसे नहीं निकालते और जन्मभूमिके नामको सम्मानके साथ किसीके न लेनेसे उसी समय तलवार खिंच जाती है। इस सम्बन्धके अनेक ज्ञातव्य विषय इस इतिहासके अनेक स्थानोंमे प्रकाशित

हुए है, किन्तु अनभिज्ञ परदेशी (विदेशीय) बड़े साहसके साथ कहते है कि राजस्थानमे स्वदेश हितैपिता और कृतज्ञता वोधक कोई शब्दप्रचलित ही नही है"। हम कहते है कि जो विदेशी राजपूतोकी देशहितैपिता पर संदेह करते है उन्होने राजपूतजातिका मर्म नही जाना।

चारों सीमाएं और भूमिका नाप।

टाड् साहव फिर आमेर राज्यकी सीमाके सम्बन्धमे लिखते है। आमेर और उसकी राजधानीके चारोओरकी सीमा मानचित्रसे भलीभाँतिसे जानी जासकती है। पश्चिममे मारवाड़की सीमाके अन्तमे साँभरहदतक, पूर्वमे जाटसीमाके उस पार स्रौथ-नगरतक, आमेर सबसे वड़ा प्रदेश है। यह गवर्नमेण्ट मीलसे एकसौ वीस मील चौड़ा और उत्तरसे दक्षिणमे शेखावाटी समेत एकसो अस्सी मील लम्बा है। इसकी आकृति एकसी नही है। हम अनुमान करसक्ते है कि खास आमेर राज्यकी पृथ्वी नापमे नौ हजार पांचसौ वर्गमील है, और उसके अधीनमे शेखावाटीकी पृथ्वीका नाप पाँच हजार चारसौ वर्ग मील है, समस्त पृथ्वीका नाप चौदह हजार नौसौ मील है। आचिसन साहवने सन् १८६४ ईस्वीमे लिखा है "जयपुरराज्यकी पृथ्वीका नाप१५००० वर्ग मील है। किन्तु वावू लोकनाथ वोपने अपने वनाये ग्रन्थमे लिखा है कि आमेरकी पृथ्वीका नाप १५२५० वर्ग मील है।

अधिवासी।

आमेरराज्यकी भिन्न २ जातिके आदिनिवासियोके सम्वन्धमे कर्नल टाड् साहवने लिखा है इस राज्यके रहनेवालोकी सख्या ठीक २ कितनी है, उसका अनुमान करना सहज काम नही है, किन्तु विश्वाससे ऐसा जान पड़ता है कि आमेरके प्रत्येक मीलमे १५० और शेखावाटीके प्रत्येक मीलमे ८० मनुष्य वसते है।

दोनो प्रदेशोकी संख्या मिलानेसे १२४ मनुष्यके हिसावसे १८५८७० मनुष्य होते है और जब हम विचारते है कि इस राज्यमे बहुत मनुष्योसे भरेपूरे बड़े २ मकान विराजमान है तब उक्त संख्यामे शंका होजाती है। सब चारहजार गॉव और नगर है और शेखावाटीके गॉव और नगरोकी संख्या उससे आधी है। आचिसन साहब सन्१८६४ई० मे और म्यालिसन साहबने सन् १८७४ ईसस्वीमे आमेरकी मनुष्य संख्या १९००००० वताई है ओर वावू लोकनाथ वोपने उनके पीछे १९९५००० मनुष्य संख्या लिखी है। चिरकालसे रहने वाली शान्तिके सूत्रमे आमेरराज्यकी मनुष्य संख्या क्रमानुसार वढी है यह सहजमे ही जाना जाता है।

जातिविभाग।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि " उक्त निवासियोमे भिन्न जातिकी सम्प्रदाय और उसकी संख्याका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है. यद्यपि इसको हम विश्वासके साथ कह सकते है कि यथार्थ राजपूतोकी संख्या अन्यान्य जातिकी समष्टिकी अपेक्षा

अत्यन्त थोड़ी है, परन्तु यहाँके आदि निवासी मीनाजातिके अतिरिक्त और अन्यान्य प्रत्येक जातिकी अपेक्षा राजपूत जातिकी संख्या अधिक है। बड़े आश्चर्यका विषय है कि आजतक मीनोंकी संख्या अत्यन्त अधिक है। निम्नलिखित कई एक जातिके प्रधान नाम लिखे गये हैं, पाठक उसके अनुसार इनकी संख्याका अनुमान कर सकते है।

१-मीना। ४-वैश्य।
२-राजपूत। ५-जाट।
३-ब्राह्मण। ६-धाकर वा किरार (किरात)
७-गूजर"।

मीना-"मीना जाति भिन्न२ बत्तीस संप्रदाय वा श्रेणियोमे विभक्त है,यदि उनकी प्रत्येक सप्रदायका विषय वर्णन किया जाय तो ग्रन्थ वहुत वढ़ जायगा। रजवाड़ेके प्रत्येक राज्यमे यह मीनाजाति बहुतायनसे निवास करती है, हमने एक स्वतंत्र अध्यायमे उसका वर्णन करना उचित समझा है। मीनागण आमेर राज्यमे सव राजनैतिक स्वत्वाधिकार और अनुग्रह भोग करते है, नरवरके निकाले हुए नरपति मीनेके द्वारा ही आमेरके अधीश्वर पदपर अभिषिक्त हुए थे, इसका प्रमाण पाया जाता है। मीना जो स्वत्वाधिकार भोगते थे, इससे यह भी नि.सन्देह प्रकाशित होता है कि आदिमें कछवाहे राजाने इनको जीत कर इनपर अधिकारका विस्तार नहीं किया था, किन्तु मीना गणोने अपनी इच्छासे उनको अधीश्वर पदपर वरण करलिया था, कारण कि कालीखोह नामक स्थानके मीना, जयपुरके प्रत्येक नरपतियोके अभिषेकके समयमे उनके मस्तक पर अपने शरीरसे रुधिर निकाल कर तिलक करते थे। वृद्धके पैरके अंगूठेमेंसे रुधिर निकाल कर उसीसे तिलक किया जाता था, यद्यपि इस प्रकारसे इस समय टीका देनेकी रीति और और भी अनेक प्राचीन व्यवहार और प्रथाएं (जैसे मेवारके रानाका भीलद्वारा अभिषेक) उठगई है, परन्तु यह दोनो ही नि.सन्देह इसको प्रमाणित करते है कि वर्तमान समयमे पतित यह मीनागण आदिमे इस देशके अधीश्वर थे। मीनागण आजतक आमेरके अधीश्वरके यहां अत्यन्त विश्वासी पदपर नियुक्त है। जयगढ़के धनागार और राजकीय कागज़पत्रोंके देखनेमे नियुक्त है, राजधानीमे यह आमेरराज्यके शरीरकी रक्षा अर्थात् प्रहारितामे नियुक्त है, और राजाके अन्त.पुरकी रक्षाका भार भी इन्हींके हाथमे सौंपा गया है। आमेरके कछवाहे राजवंशके प्रथम अभ्युदयके समय यह मीनागण राजकीय समस्त चिह्नोंका व्यहार करते थे, और आमेरपतिके जीवनकी रक्षाका भार भी उन्हीके हाथमे था, परन्तु परिणाममे इनकी उस राजकीय ध्वजा पताकाका व्यवहार अत्यन्त ही असगत विचारा गया, और उनका वह स्वत्वरहित किया गया। अन्तमे मीनागणोने नकारा और पताकाके व्यवहार करनेके लिये अनुमतिकी प्रार्थना की। आमेरराजने उसको भी असगत विचारा। इस कारण रक्तपातके पीछे उन उपद्रवोंकी मीमांसा हुई। मीना, जाट, किरार वा किरात जाति ही आमेरकी प्रधान कृषिव्यवसायी थी, और उनमे वहुतसी कृषिक्षेत्रकी अधिकारिणी थी"।

जाट-"जाटोकी सख्या मीनाओकी समान है, इनके अधिकारी देशोकी संख्या भी प्राय: समान है, और सम्पूर्ण किसानोमे यही सबसे अधिक श्रमशाली है"।

ब्राह्मण-"ब्राह्मण जाति अध्यापना, और पवित्र धर्मकार्यमे भी अनेक लगे हुए है। सम्पूर्ण रजवाड़ेमे आमेरके धर्मकार्यमे लिप्त ब्राह्मणोकी सख्या अधिक है,परन्तु इससे हम ऐसा अनुमान नही करसकते कि आमेरके राजा सबसे अधिक धार्मिक है, वरन् इसके विपरीत सिद्धान्त है"।

"कछवाहे वा कछवाह राजपूत जातिके संबन्धमे इतिहासवेत्ता लिखते है कि यदि आवश्यक हो, यदि जातीय समरमें कछवाहे सामन्त-वृन्दके हृदय पर स्वजातिकी हितैषिता प्रकाशित होजाय तो रणक्षेत्रमे वह एक पिताके वंशीय, तीस हजार आत्मीय राजपूतोको इकट्ठा कर सकते थे, इस समय ऐसा अनुमान होसकता है कि उस तीस हजारमे नरूका सम्प्रदाय और शेखावाटी सामन्तोको भी लिया जायगा, यद्यपि कछवाहे गणोने सर्वजनप्रिय पजोनी, राजा मान और मिरजाराजा इत्यादिकी समान राजाओके अधीनमे अन्यान्य जातिकी सदृश वीरता प्रकाश करके अपनी प्रशंसाको सग्रह किया था, परन्तु वर्तमान समयके राठौर जैसे साहसी और विक्रमी विख्यात है, वह उस प्रकारसे विख्यात नही हुए । मुगल बादशाहके साथ विशेष घनिष्ट सबन्ध और उन यवनोके कदाचारका अनुसरण करनेसे उनकी अवनति हुई तो थी, परन्तु महाराष्ट्रोके द्वारा उनकी सबसे अधिक अवनति हुई"। "कछवाहे राजपूत जातिके सम्बन्धमे साधु टाड साहबने ऊपर जो मन्तव्य प्रकाश किया है, उनके पहिले अंशको हम समर्थन नही कर सकते। मुगलसम्राट्के साथ घनिष्टताके कारणसे कछवाहोका पतन नही हुआ, वरन उन्नति हुई, महाराज मानसिह, मिरजाराजा जयसिह, और सवाई जयसिह मुगलसम्राट्के अधीनमे अपनी सेनाको नियुक्त करके समस्त भारतवर्षमे कछवाहोकी सेनाके अतुलनीय बलविक्रमका चूडान्त प्रमाण दिखा गये है, जबतक बारम्बार दीर्घकालतक कठिन महाराष्ट्रोके दस्युदलने कछवाहोकी जातीय जीवनशक्तिकी जड़में दारुण आघात न किया, और उससे कछवाहोकी जातिपूर्व वीरत्व और बलविक्रम तथा साहससे हीन न हुई, तबतक हमारा यही न्यायसगत अनुमान है। अर्द्ध-शताब्दीके पहिले कर्नल टाड् कछवाहे जातिके सम्बन्धमे जो मन्तव्य प्रकाश कर गये है, इस समय हम उसकी अपेक्षा सतोषदायक मन्तव्य प्रकाशित करनेमे असमर्थ है। कछवाहोकी जाति विधाताकी गतिसे इस समय मानों अनन्तनिद्रामे मग्न है । राजपूत जातिका बलविक्रम साहस और शूरता मानो उनके हृदयमे चिरकालसे निद्रित होरही है। जगदीश्वर जाने किस समय वह निद्रित सद्गुणावली कछवाहजातिको फिर भारतके नवीन प्रशसनीय अभिनयसे उत्कृष्ट करेगी ।

मृत्तिका, कृषि, उद्भिज-कर्नल टाड् साहब जयपुर राज्यके कृषिकार्यके सबन्धमे लिखते है कि ढूढाड राज्यमे सब प्रकारकी मृत्तिका पाईजाती है, तथा खरीफ वा हैमन्तिक एवं रबी वा वसन्ती शस्य दोनो फसले ही समान अंशोमे उपजती है।

हैमन्तिक धान्यमे ज्वारकी अपेक्षा बाजरा अधिक होता है, और वसन्ती धान्यमे गेहूकी अपेक्षा जौ अधिक उत्पन्न होते है । हिन्दुस्थानमे सर्वत्र जिस प्रकार अन्यान्य धान्य और फल मूलादि उत्पन्न होते है, आमेरराज्यमे भी वह बहुतायतसे उत्पन्न होते है, इस कारण उन सबके सबन्धमे विशदरूपसे वर्णन करनेका प्रयोजन नही है। पहिले ईख बहुत होती थी परन्तु कईएक कारणोसे विशेष करके अधिक लगानसे किसानोको इसमे बहुतसा नुकसान उठाना पडा । इस कारण अब ईखकी पैदावारी बहुत न्यून होगई है, पहिले ईखकी खेती पर फी बीघे४) चार रुपयेसे लेकर छ रुपये तक कर नियत हुआ था, परन्तु अब आग्रिम साठ रुपये लेकर ईखकी खेती करने देते है । आमेर राज्यके अनेक स्थानोमे रुई बहुतायतसे होती है, और भारतवर्षके नील इत्यादि वर्ण भी यहॉ यथेष्ट उत्पन्न होते है, रजवाडेके अन्य स्थानोमे जिस प्रकारके हलका व्यवहार होता है, यहॉके हल भी उसी प्रकारके होते है ।

अर्द्ध शताब्दीके पहिले आमेरराज्यके राजस्वके संबन्धमे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है, कि " इस देशके राजस्वकी अवस्था चिरकालसे समान नही रही है, कभी बढ जाती और कभी घट जाती थी, इस कारण राजस्वका ठीक हिसाब करना अत्यन्त कष्टसाध्य है, हमै अतीत और वर्तमान कालके राजस्वके सबन्धके कितने ही हिसाबके पत्र मिले थे। राजदरबारकी जिन बडी पुस्तकोपर राज्यके प्रत्येक जिलेका नाम विवरण, राजस्व, नागरिक कर वाणिज्य शुल्क और अन्यान्य नाना प्रकार की आमदनीका वृत्तान्त लिखा हुआ था । परतु वह सब हिसाब पाठकोंके पक्षमे सुख दायक न होगा, इस लिये हमने उसे प्रकाशित नही किया । ढूढाड अर्थात् जयपुर राज्यका खास राजस्व, सामतोकी अधिकारी भूमिका राजस्वकर, वाणिज्य शुल्क इत्यादिकी सब आमदनी एक करोड रुपयेकी थी परतु जिस समय एक करोड रुपयेकी आमदनी सब मिलाकर होती थी, उस समय कठिन महाराष्ट्रो और माचेडीके नरूका सामतोने आमेरराज्यके सत्रह समृद्धिवान् ग्राम और नगर आमेरसे छीन लिये थे इसी कारणसे राज्यकी आमदनी बहुत घट गई थी ।

आमेरके जो सत्रह प्रदेश महाराष्ट्रो तथा अन्य मनुष्याने छीन लिये थे, कर्नल टाड् साहबने नीचे उनकी सूची प्रकाश की है ।

१ कामा
२ खोरी
३ पहाडी
} जनरल पीरनने अपने प्रभु सेंधियाके लिये यह तीन देश आमेर से छीन लिये थे, पीछे जाटोने इस पर इजारा किया था और उन जाटोने तीनो देशोपर अपना अधिकार करलिया ।

४ कान्ति

५ उकरोद

६ पुन्दापुन

७ गाजीका थाना

८ रामपुरा (गिरदा) ... . माचेड़ीके रावके अधिकारमे

९ गौनराई

१० राझाई

११ पूर्वानाई

१२ मौजपुर वरसाना

१३ कानोढ वा कानौंदं } डिवाइनने लेकर मुरतजाखाँ भड़ेचको दिये तथा लार्ड लेकने इसमे अपनी समति दी ।

१४ नारनौल

१५ कोट पूतली सन् १८०३–४ ईस्वीके समरमे महाराष्ट्रोके निकटसे लार्ड लेकने छीन कर खेतरीके अभयसिहको देदिया ।

१६ टोंक } राजा माधोसिहने हुलकरको यह दोनो देश देदिये । लार्ड
१७ रामपुरा } हष्टिंगसने अमीरखांको इन देशोका अधिपति किया ।

कर्नल टाड् साहव फिर लिखते है कि " यह अवश्य ही स्मरण करना उचित है, कि वहुत थोडे समय पहिले यह देश ढूढाड़राज्यके प्रधान अंगस्वरूप थे और इनमे अधिकांश यवन सम्राट्के अधिकारमे थे, आमेरके राजा यवनसम्राट्के प्रतिनिधिस्वरूपसे उक्त देशोको जायदाद अर्थात् सेनादलके वेतनके हिसाबसे भोगते थे। अर्द्धशताब्दी पहिले राजा पृथ्वीसिहके शासन समयमे आमेरराज और उसके अधीनस्थ करद सामन्तोकी सव आमदनी ११ लाख रुपये थी, और राजा प्रतापसिहके शासनके शेष वर्षमे अर्थात् सवत् १८५८ सन् १८०२ ईस्वीमे आमदनीका हिसाव १९ लाख रुपया था, ऐसा अनुमान होता है ।

सवत १८५८ मे जिस समय महाराज जगत्सिह सिहासनपर विराजमान हुए साधु टाड् साहवने उस समयकी आमदनीकी निम्नलिखित सूची प्रकाश की है —

" खालसा वा खास भूमिकी आमदनी ।

राजाके निज तत्त्वावधानसे रक्षित वा ।

जमावंदी	२०५५०००	रुपया।
देवदी तालुका, (राजअन्त पुरके खर्चके लिये नियुक्त)	५००००	,,
शागिर्द पेशा (राजदरबारके सेवकोके लिये नियत की हुई देशोकी आमदनी)	३०००००	,,
राजमंत्री और दीवान आदि कर्मचारियोकी अधिकारी भूमिकी आमदनी	२०००००	,,
सिलहपोश नामक अस्त्रधारी सेनाकी जागीरोकी आमदनी	१५००००	,,
दसदल पैदल और अश्वारोही सेनाकी जागीरोकी आमदनी	७१४०००	,,
खास आमदनी	३९१९०००	,,
जयपुरके सामन्तोके द्वारा शासित देशोकी आमदनी	१७०००००	,,

(१) आमेरके वारह प्रधान सामन्तोंमें अन्यतर अमरसिह खागारोत इन देशोके अधीश्वर थे ।

ब्राह्मणोको दी हुई उदक वा ब्रह्मोत्तर भूमिकी आमदनी	१६००००० ,,
डान और मौपा अर्थात् राज्यके भीतरी वाणिज्य शुल्क एव कृषिशुल्क	१९०००० ,,
राजधानी जयपुरकी कचहरी (नागरिक शुल्क जुरमाना इत्यादि)	२१५००० ,,
टकसाल	६०००० ,
हुडी भाडा, वीमा इत्यादि	६०००० ,,
फौजदारी (समस्त आमेरके वार्षिक जुरमानेकी आमदनी)	१२००० ,,
फौजदारी, जयपुरराजधानीके जुरमानेकी आमदनी ...	८००० ,,
बिदत अर्थात् काछाविर (सामान्य २ जुरमानोकी आमदनी)	१६००० ,,
सब्जीमडी अर्थात् बाजारोकी आमदनी ..	३००० ,,
कुल जोड़	७७८३००० रुपया
शेखावाटी देशकी आमदनी .	३५०००० रुपया
राजावत् और जयपुरके अन्यान्य सामन्तोके निकटेकी आमदनी	३००० ,,
हाडौतीके सामन्तो[२] की आमदनी	२०००० ,,
शेखावाटीकी आमदनीका जोड .	४००००० ,,
सब मिलाकर	८१८३००० रुपया

ऊपर लिखीहुई तालिका प्रकाशके साथ साधु टाड् साहब इस प्रकारसे अपना मन्तव्य प्रकाश करते है, कि "जगत्सिह जिस समय सिहासनपर विराजमान हुए, उस समय राज्यकी आमदनी अस्सी लाख रुपयेसे अधिक थी, उसको आधी खालसा अर्थात् राजाके निज अधिकारी देशोकी आमदनी थी, रजवाडेके अन्यान्य समस्त राजाओकी अपनी आमदनीसे यह प्राय. दुगनी थी। गवर्नमेण्टके साथ जब सधि हुई उस समय इनकी निज आमदनी ४० लाख रुपयेमेसे वार्षिक आठ लाख रुपया करस्वरूप अंग्रेजी गवर्नमेण्टको देना स्वीकार हुआ था और ४० लाख रुपयेसे जितनी अधिक होती जाय उसके सोलहवे अशका पाचवा अस अतिरिक्त करदेना निश्चय हुआ।

यह तो हम पहिले ही कह आये है कि इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् आर्द्ध शताब्दीके अधिकाल पहिले जयपुरकी आमदनीके सबन्धमे उक्त मन्तव्य और तालिकाको प्रकाश कर गये है पर उक्त समयके पीछे जयपुरकी अवस्था अवश्य ही बदल गई। सन १८६४ ईसवीमे आचिसन साहब लिखते है, " जागीर और धर्मसबन्धी दानसूत्रसे राज्यकी आमदनी बहुतायतसे घटगई है, राजाको सत्र ३६००००० रुपयामात्र प्राप्त होते हैं।

---

(१) बरयारा नीरनी साबर ईशम्दा इत्यादि।

(२) ब्रलयान और इन्द्रगट।

सांभर ह्रदका अधिकांश भी जयपुर नरेशके अधिकारमे है, उस ह्रदसे जो लवण उत्पन्न होता है उससे राज्यको ४०००० रुपयेकी आमदनी होती है " *

कर्नल ग्यालिसनने जयपुरपतिकी समस्त आमदनी ३६ लाख रुपया लिखी है, और गवर्नमेण्टके सधिपत्रके मतसे वार्षिक आठ लाख रुपयेके वदले चार लाख रुपया कर निश्चय किया गया है। यह पाठकोने इतिहासमे पढा होगा। यह अत्यन्त संतोष का विषय है कि दीर्घस्थाई शान्ति और सुशासनके गुणसे जयपुरके महाराजकी आमदनी वर्तमान समयमे ४० लाख रुपयेसे भी अधिक होती है। सन् १८८१–१८८२ ईसवीके शासन विवरणसे प्रकाशित होता है कि "सन् १८८०–८१ ईसवीकी आमदनी ५२४२१७६ रुपये और खर्च ५५८६९३० रुपया हुआ, ऐसा अनुमान किया जाता है, परन्तु ठीक आमदनी ५५०११६२ रुपया और खर्च ४९८५८६६ रुपये हुए इसमे ५१५२९६ रुपयेकी वचत हुई, प्रधान २ आमदनीके निम्नलिखित कईएक उल्लेख किये जाते है भूराजस्व (वेतनके परिवर्तनमे प्रदत्त भूमिकी

आमदनी	२७३४२४८ रुपया
लवणकी आमदनी	७१३६६० ,,
वाणिज्यकी आमदनी	७१२९८९ ,,
सामन्तोसे जो करलिया जाता है ...	५१२४९६ ,,

व्ययमे निम्नलिखित कईएक प्रधान—

पूर्तकार्य विभाग	४४९९०९ रुपया
सैन्यदल	८०९३७७ ,,
शासन विभागका व्यय	३४९२७९ ,,
शिक्षा विभाग	४८३११ ,,
विशेष दातव्य और धर्म सम्बन्धी वृत्ति इत्यादि ..	२२६४६० ,,
राजदरवारमे विवाहका व्यय	२२७४५७ ,,
वृटिश गवर्नमेण्टको देयकर	४०००००+ ,,

दूसरे वर्षमे अर्थात् सन् १८८१–८२ ईस्वीकी आमदनीके सम्बन्धमे रिपोर्टके वृत्तान्तसे जाना जाता है, कि इस वर्षमे कुल ४९५८७६३ रुपया आमदनी और ४८८५९९ रुपया खर्च हुआ। इस कारण ७२७६४ रुपया वचा। सन् ८०–८१ ई० की अपेक्षा सन् ८१–८२ ईस्वीमे राजस्वकी अवस्था अच्छी नही रही। सारांश यह कि राज्यकी आमदनी किसी देशमे किसी समय भी समान नही थी। अनेक कारणोसे राज्यकी आमदनी घटती बढ़ती रहती थी, पाठक अवश्य ही इस बातको स्वीकार करेगे कि महाराज जगत्सिहके शासनके समयमे अथवा उसके पहिले राज्यकी समस्त आमदनी

---

* Report of Rajputana

+ Report of the Political Administration of the Rajputana states for 1882-1883.

जिस प्रकार राजाकी इच्छानुसार ही किसी कार्यमे व्ययहोती थी, वा स्थल विशेषमे रुपया अपव्यय होता था, वर्तमान समयमे ऐसा नही हुआ। मृतमहाराज रामसिहके शासन समयसे राज्यकी आमदनी श्रेष्ठ और हितकारी कामोमे खर्च होती है। वर्तमान महाराज माधोसिह भी महाराज रामसिहका अनुकरण करके अनेक कार्य करते है।

वाणिज्य–सन् १८८१।८२ ईस्वीमे आमदनीके घटनेका दूसरा कारण यह था, कि महाराज माधोसिहने अपने राज्यमे वाणिज्य कार्यकी वृद्धिके लिये सब प्रकारके द्रव्योपर जो आभ्यन्तरिक वाणिज्य शुल्क बराबर लिया जाता था, अफीमके सिवाय उन्होने और समस्त वाणिज्य शुल्कको एकबार ही माफ करदिया। इससे शुल्कके हिसाबसे राजस्व यद्यपि घट तो गया परन्तु अन्तमें वाणिज्य वृद्धिके साथ २ आमदनीकी वृद्धिकी सभावना है। अन्यान्य वाणिज्य द्रव्योका आभ्यन्तरिक शुल्क जिस प्रकारसे एकबार ही माफ किया गया, उसी प्रकारसे अफीमके ऊपर वाणिज्य शुल्ककी वृद्धि की गई। शासन रिपोर्टसे जाना जाता है कि "गत बारह महीनेके वाणिज्य शुल्ककी आमदनी ७३१०९५ रुपये हुई। पहिले वर्षमे ७२६५४१ रुपया आया था। इससे जाना जाता है कि वाणिज्यकी क्रमश: श्रीवृद्धि होती जाती है"।

रेल इत्यादिके विस्तारसे वाणिज्यकी उन्नति की और भी सम्भावना है, इसका कहना बाहुल्यमात्र है।

लवणविभाग–सांभर ह्रद अधिकांश जयपुर अधीश्वरके अधिकारमे है। बृटिश गवर्नमेण्टने महाराजके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त करके महाराजको वार्षिक कई लाख रुपया देना स्वीकार करके उक्त लवणह्रदको ठेकेमे लेलिया है, महाराज उक्त सधिपत्रके मतसे अपने राज्यके किसी स्थानमे भी लवण नही बना सकते, इस सधिपत्रसे और बृटिश गवर्नमेण्टको साभरह्रद देनेसे महाराजको लाभके बदलेमे कितनी हानि हुई है इसका अनुमान करना असम्भव है। और हम इसका अनुमान सरलतासे कर सकते है कि इससे गवर्नमेण्टको ही अधिक लाभ हुआ है।

पूर्त्तकार्य विभाग। जयपुरके पूर्त्तकार्यविभागका नाम एक स्वतन्त्र विभाग है। राजपूतानेके सन् १८८२–८३ ईसवीके शासन विवरणसे जाना जाता है कि उक्त वर्षमे पूर्त्तकार्य विभागमे महाराजने ८ लाख रुपयेसे अधिक खर्च किया, इसके अतिरिक्त इमारतके विभागमे उक्त वर्षमे९६८४२रुपया खच हुआ था। इस विभागके हाथमे प्रासाद इत्यादिका बनाना राजमार्गका बनाना या सुधारना खाल खनन, जयपुरकी राजधानीमें जलकी कलका विस्तार, आसा लोकन साधारण उद्यानकी रक्षा और वनकी रक्षाका भार अर्पण हुआ है।

सन १८८२–८३ ईस्वीमे एकमात्र सरोवरादिके, खुदवानेमे इस विभागमे २३८६२४ रुपया खर्च हुआ था। इस विभागमें उक्त वर्षसे सब १४०१५६ रुपया खर्च हुआ है। सन् १८६८ ईस्वीसे उक्त वर्ष तक खाल खननकार्यमे महाराजका सब १४८०७९४ रुपया खर्च हुआ था। सन् १८७१–७२ ईस्वीसे १८७१।

८२ ईस्वीतक सब ४४०१२३ रुपयेकी आमदनी हुई, इस खाल खननसे कृपिकार्यकी उन्नतिके साथ महाराजकी आमदनीके बढनेकी और भी अधिक संभावना है।

शिल्प–जयपुरके शिल्प द्रव्य समस्त भारतवर्षमे प्रसिद्ध है। दीर्घस्थाई शान्तिके कारण एव मृत और वर्तमान दोनो महाराजोके व्यय उत्साह, और अनुष्ठानसे उस प्राचीन शिल्पकी उन्नति क्रमश' होती गई, जयपुरके स्वतत्र विद्यालयमे १८८२। ८३ मे एक शिल्पशालाकी भी प्रतिष्ठा हुई थी। शिल्पविद्यालयमे सन् १८८२। ८३ ईस्वोमे १०३ विद्यार्थियोने शिक्षा प्राप्त की थी। इस विद्यालयमे उपयुक्त शिक्षकोके द्वारा अनेक प्रकारके शिल्पोकी शिक्षा दीजाती है। जिससे स्वराज्यमे शिल्पकी विशेप उन्नति हो, उसके प्रति वर्तमान महाराजकी विशेप दृष्टि है। सन्१८८२–८३ मे जयपुरके महाराजने बहुतसा रुपया खर्च करके शिल्प प्रदर्शनीका अनुष्ठान किया था, यह उनके शिल्प-प्रेमका प्रमाण आजतक विद्यमान है।

रेलवे–राजपूताना स्टेट रेलवेका जयपुरराज्यमे १०५ मीलतक विस्तार हुआ है। राज्यमे सब मिलाकर २२ स्टेशन है। जयपुरका स्टेशन बड़ा बना हुआ है, इस रेलके विस्तारसे जयपुरके राज्यमे अनेक प्रकारके असीम उपकार हुए है।

टेलिग्राफ-जयपुर राज्यके समस्त रेलके स्टेशनोके अतिरिक्त राजधानीमे भी एक टेलिग्राफ आफिस है।

स्वास्थ्य और पोष्ट विभाग–जयपुरराज्यमे वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन२०पोष्ट आफिस है, इसके सिवाय राज्यके अधीनमे पृथक् पोस्ट आफिस है, उनका कार्य भली प्रकारसे चलता है प्रजा साधारणकी स्वास्थ्य रक्षाके प्रति महाराजका विशेप ध्यान है। राजधानी जयपुरमे एक मिउनिसिपैलिटी है, सम्पूर्ण वातोमे कुशल पुरुष इस मिउनिसिपैलिटीके सभापति पदपर नियुक्त है। राजधानीके स्वास्थ्यकी रक्षा,सौष्ठव वर्धन, गैसकी रोशनी, राजपथ–परिष्कार सस्कार इत्यादि समस्त कार्य सुन्दरतासे चलते है। मिउनिसि-पैलिटीके तत्त्वावधानसे जयपुरकी राजधानीका स्वास्थ्य दिन २ बढता जाता है। कई वर्षोंसे केवल राजधानी जयपुरके निवासियोकी संख्या सब १२५२८५ जन थी सन् १८८२।८३ ईसवीमे राजधानीमे २०८५ पुत्र और१८१४ कन्याएं जन्मी। अतएव सबकी सख्या मिलाकर ३८३९ हुई। इस वर्षमे ११४० पुरुप ११४४ स्त्री और १४०७ शिशु सब ३५९१ मनुष्य मरे, निम्नलिखित तालिकाके पढ़नेसे जाना जाता है कि मिउ-निसिपैलिटीके द्वारा नगरमे किस प्रकारसे स्वास्थ्यकी वृद्धि हुई।

	जन्म	मृत्यु
"१८७९–८० ईसवी०		६६६६ मनुष्य।
८०। ८१ "	२३११	५३५० "
८२। ८३ "	३८३९	३५९१ "*

* Report of the political Administration for 1882-3.

जयपुरकी राजधानीके चारोओर वड़ी २ दीवारे वनी हुई है, मुर्दे फूकनेके लिये नगरसे वाहर भेजे जाते है। इस कारण उस नगरके द्वारसे मृत्युकी तालिका ग्रहण करनेका विशेष सुभीता हुआ है।

चिकित्सा विभाग–अंग्रेजी चिकित्साकी रीति तथा औषधिके व्यवहार करनेमे राजपूत जाति वहुत दिनोसे वीतराग थी। परन्तु समयके गुणसे उनमेसे वहुतसे आजकल अंग्रेजी शिक्षाके पक्षपाती हुए है। राज्यके नि.सहाय दरिद्रोंके प्राणोकी रक्षा तथा रोगनिवारणके लिये महाराजने प्रत्येक वर्षमे वहुतसा धन खर्च किया है। वृटिश रेसिडेण्टके चिकित्सक डाक्टर हेण्डेली महाराजके चिकित्सा विभागमे अध्यक्ष पदपर नियुक्त है, भारतवर्षके भूतपूर्व मृतकराज्यके प्रतिनिधि अर्ल मेओ, जयपुरके मृतमहाराज रामसिहके परम मित्र थे। लार्ड मेओकी मृत्युसे उनके स्मरण चिह्न स्थापन करनेके लिये महाराजने वहुतसा रुपया खर्च करके एक "मेओहास्पिटल" और चिकित्सालय स्थापित किया था। इसके अतिरिक्त कारागारमे और भी एक अस्पताल है, तथा सव मिलाकर २२ और चिकित्सालय है।

सन् १८८२।८३ ईस्वीमे समस्त अस्पताल और चिकित्सालयोमे मिलाकर १२२६९ रोगियोकी चिकित्सा हुई, पूर्व वर्षकी अपेक्षा इस वर्षकी संख्या १४९५५ अधिक रही। संख्याके वढनेका कारण यह था कि उक्तवर्षमे दो नवीन विभागी चिकित्सालय स्थापित हुए थे। और एक प्राचीन चिकित्सालय दुवारा स्थापित हुआ था, और प्रजा अंग्रेजी चिकित्साकी विशेष पक्षपातिनी हुई*।

अन्यान्य अनुष्ठानोकी समान जयपुरमे चेचकका टीका देनेकी रीति भी प्रचलित हुई है। सन् १८८२।८३ ईस्वीमे सव ३०९९६ मनुष्योको टीका दिया गया था, पूर्व-वर्षकी अपेक्षा इस वर्षमे ११४८५ मनुष्योको अधिक टीका लगाया गया।

शांतिरक्षा विभाग।–जिस राज्यमे सव प्रकारसे शान्ति विराजमान होती है, उस राज्यमे प्रजाकी उन्नति सरलतासे होती है और उसीसे राज्यके मंगल सूचित होते है। अशांति, अत्याचार, उत्पीडन, अराजकता जिस प्रकारसे राज्यको विध्वस करने-वाले है, उसी प्रकारसे प्रजाके प्राणधनकी रक्षा, और वाणिज्य कृषिके व्याघात निवारणसे शान्ति होकर राज्यकी उन्नतिके द्वार स्वत ही खुलजाते है। जयपुर महाराजकी प्रार्थनासे पंजावके लैफटिनेण्ट गवर्नर एकष्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नरने महाराजकिशन नामक एक योग्यपात्रको जयपुरमे शांति रक्षाके विभाग पर अध्यक्ष करके भेजा।

उन्होने उस पदको ग्रहण करके आमेरमे शान्ति स्थापित की थी। शान्ति रक्षा विभागकी अवस्था इस समय संतोषदायक है।

---

* Report of Political Administration of the Rajputana states for the 1882-1883

गिराई वा विशेष शांति रक्षा विभाग-बृटिश भारतवर्षमे जिस प्रकार ठगी और डकैतीको निवारण करनेके लिये एक स्वतंत्र विभाग है। जयपुरके महाराजने भी अपने राज्यमे इसी प्रकारसे डकैती, राजमार्गमे तस्करता, और राज्यकी सीमाके अन्तमे उपद्रव इत्यादिको दूर करनेके लिये एक स्वतंत्र शांति रक्षाके विभागकी सृष्टि की। यह गिराई पुलिसके नामसे विख्यात् है। कॅवर नारायणसिह नामक एक साहसी कार्याध्यक्ष मनुष्य इस विभागके अध्यक्ष है, इसके शासनसे आमेरराज्यमे इस समय समस्त प्रजा निर्भय होकर वाणिज्य और कृषिकार्यमे लग रही है।

कारागार-जयपुरके कारागारकी अवस्था इस समय बहुत उत्कृष्ट है, पाठकोने कर्नल साहबके लिखे हुए इस इतिहासके अनेक स्थानोमे राजपूत राज्यके कारागारोके शोचनीय वृत्तान्तको पढा होगा। कारागारके अनेक स्थान यमालयस्वरूप थे। कैदी अनेक स्थानोपर अनाहार दड पाकर उसी कारागारमे बद रहते थे। जयपुरके कारागारकी वर्तमान अवस्था उससे सम्पूर्ण विपरीत है। सभ्यरीतिसे इस समय कारागार बनाये गये है, और कैदियोको इस समय शिल्प इत्यादि अनेक विषयोकी शिक्षा दी जाती है, और कैदियोंकी स्वास्थ्यकी ओर भी विशेष ध्यान रहता है। जयपुरके गतवर्षके शासनवृत्तान्तसे जाना जाता है कि सन् १८८२। ८३ ईसवीमे वहॉके कारागारमे प्रतिदिन ६०० कैदी बंदी रहते है, पहिले "वर्षकी अपेक्षा इनकी सख्या बहुत कम है। उक्त वर्षमे कैदियोने जिन शिल्प द्रव्योको बनाया था उनको बेचकर १४१८ रुपयेकी आमदनी हुई।

सतीदाह-यद्यपि बहुत दिनोसे सतीदाहकी रीति एक साथही लोप होगई है, परन्तु इस समय बीच २ मे अनेक राजपूत स्त्रियां मृतक स्वामीके साथ चितामे भस्म होनेकी चेष्टा करती है। यद्यपि सबकी वह चेष्टा सफल नही हुई, परन्तु एक दो स्थान पर अपने कुटुम्बियोकी सहायतासे किसी २ स्त्रीने प्रज्वलित अग्निमे जीवन त्याग किया है। जयपुरके रेसिडेण्ट मिष्टर ष्ट्राटनने लिखा है, सन् १८८२ ईसवी अकटूवर महीनेमे जयपुरके अधीनके देशमे एक ठाकुरकी विधवा स्त्रीने चिताकी अग्निमे जीवन विसर्जन किया। दरबारसे यह समाचार पहुँचते ही मनुष्य भेजा गया, जो लोग इस कार्यमे लिप्त थे उनको पकड कर ले आये, और विचार करके उसमेके प्रधान अपराधियोको कठिन परिश्रमके साथ एक वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी गई, और अन्यान्य अपराधियोको तीन वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी"।

"शिशुकन्याकी हत्या-रजवाड़ेमे बहुत समयसे शिशुकन्याकी हत्याकी रीति प्रचलित थी। योग्यपात्रके न मिलनेसे तथा विवाहमे अधिक धनके खर्च होनेसे असमर्थ पुरुष कन्याके जन्म लेते ही उसको मारडालते थे। इस समय वह रीति भी दूर होगई है। मिस्टर ष्ट्राटनने लिखा है कि गत वर्षसे शिशु कन्याकी हत्या आजतक नही हुई"।

शिक्षाका विभाग-जो जाति जितनी शिक्षित होती है उसकी उन्नति भी उतनी ही होती जाती है। यही नही कि यह शिक्षा केवल मनुष्योके मंगलके ही लिये हो,

परन्तु यह शिक्षा जाति विशेषकी और सम्पूर्ण जगत्‌की उन्नतिका कारण है। शिक्षाके विस्तारके साथ ही साथ मानवमंडलीको यथार्थ मनुष्यत्व प्राप्तिकी सुविधा प्राप्त हुई है। जयपुरके मृतमहाराज रामसिंह बहादुरने शिक्षाके शुभफलका अनुसंधान करके अपनी प्रजामे विद्याका प्रचार करना आवश्यक विचारा था, और उसीसे जयपुर राज्य मे सर्वत्र शिक्षाके विस्तारका बीज बोया गया था, और थोडेसे ही समयमे उस अमूल्य शिक्षारूपी वृक्षका अमृतमय फल उन्होंने अपने राज्यमे उत्पन्न होता हुआ देखा। देशीय राज्योमे जितना शिक्षाका विस्तार हुआ है उतनी ही उस जातिकी जीवनी शक्तिने पहिलेकी अपेक्षा दृढतासे प्रबल होकर राजपूतजातिकी नवीन मूर्ति संसारमे उपस्थित कर दी। विचारवान मनुष्य इसका अनुमान सरलतासे करनेमे समर्थ होगे। मृत महाराज रामसिंहने केवल संस्कृत अंग्रेजी हिन्दी उर्दू इत्यादि भाषाओकी शिक्षाके विस्तारके लिये प्रति वर्ष बहुतसा धन खर्च किया था, यही नहीं, वरन वे इसको भलीभाँतिसे जानते थे कि अंग्रेजी भाषाकी शिक्षाका अपने राज्यमे प्रचार होनेसे प्रजा विलायतकी शिक्षाको पाकर समय पर जन्मभूमिके बहुतसे उपकार करसकेगी। इसी कारणसे उन्होंने जयपुरमे अंग्रेजी पढनेके लिये बहुतसे कालिज बनवा दिये। सन् १८८२–८३ ईसवी की शासनप्रणालीके देखनेसे हमने जयपुरके शिक्षा विभागको निम्नलिखित संक्षिप्तता से संकलित किया है।

कालिज–राजधानी जयपुरमे " महाराज कालिज " नामका एक ऊँची श्रेणीका कालिज है। सन् १८४४ ईसवीमे यह कालिज स्थापित हुआ था। यह कलकत्तेके विश्व-विद्यालयके अधिकारमे है। इस कालिजके तीन भाग है, प्रथम अंग्रेजी भाग–दूसरा संस्कृत और हिन्दीभाग, तीसरा फारसी और उर्दू विभाग। सन् १८८२। ८३ ईसवीमे इसमे सब विद्यार्थी ९८२ थे। औसतसे प्रतिदिन ३३१ छात्र उपस्थित होते थे। इसके पहिले वर्षमे छात्रोकी संख्या ८८६ थी। अंग्रेजी भागमे ८०९ विद्यार्थी पढा करते है। अन्यान्य विभागोमे छात्रोको अंग्रेजी शिक्षा भी दी जाती है। कालिजके सब भागोमे समस्त विद्यार्थियोमे तीन अंशोमेसे दो अंशोके विद्यार्थियोको अंग्रेजी शिक्षा दी जाती है। कालिजमे उक्त वर्षमे सब २४३१५ रुपया खर्च हुआ था, इसमे विद्यार्थियोको ३३४४ रुपया दिया गया, कालिजके विद्यार्थियोमे हिन्दू ७८१, मुसल्मान १९८ ईसाई २ और १ पारसी थे। कितने ही उपयुक्त शिक्षित बंगाली इस कालिजके अध्यापक पदपर नियुक्त है। उनके यत्न, श्रम, और पढानेसे कालिजकी उन्नति क्रमश होती जाती है, गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजैण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि " जयपुरके कालिजमे विद्यार्थियोकी संख्या बढगई है। इस कालिजसे फर्स्टआर्ट अर्थात् कलकत्तेके विश्वविद्यालयमे प्रथम परीक्षा देनेके लिये नौ विद्यार्थी गये थे, जिनमेसे तीन पास हुए, और दश विद्यार्थियोने प्रवेशिकाकी परीक्षा दी थी, इनमेसे एक पासहुआ+।

+ Report of the political Administration of the Rajputana states for the 1892-1883

चॉदपोल विद्यालय–जयपुर राजधानीके अन्तर्गत चॉदपोल नामक स्थानपर उक्त कालिजके अधीनमे एक शाखा पाठशाला है। यह शाखा सन् १८८२ ईसवीमे स्थापित हुई थी। उक्त वर्पमे उक्त विद्यालयके ४९ हिन्दू और पॉच मुसलमान सब ५४ विद्यार्थी पढ़ा करते थे। इस विद्यालयमे हिन्दी, उर्दूकी शिक्षा दी जाती है इस विद्यालयका उक्त वर्पमे २८९॥) खर्च हुआ था।

राजपूत विद्यालय–राज्यके सामन्त इत्यादि उच्च राजपूतोके पुत्रोको विद्या प्राप्तिके लिये राजधानीमे सन् १८६२ ईसवी मे एक विद्यालय स्थापित हुआ है। सन्१८८२।८३ ईसवीमे उस विद्यालयमे ३५ विद्यार्थी पढते थे। उसमे ३१ हिन्दू और चार मुसलमान थे उक्त वर्पमे औसत प्रतिदिन १५ विद्यार्थी पढने आते थे। इस विद्यालयमे भी तीन दरजे है। उक्त वर्पमे इस विद्यालयमे कुल ४४३२॥) रुपये खर्च हुए।

सस्कृत कालिज–सन् १८४४ ईसवीमे राजधानीके बीच यह सस्कृत कालिज स्थापित हुआ है। इस कालिजमे संस्कृतके अतिरिक्त हिन्दी भाषा भी सिखाई जाती है। सन् १८८२।८३ ईसवीमे इस कालिजके छात्रोकी सख्या २६१ थी, पहिले वर्पमे छात्र सख्या २१२ थी। औसत प्रतिदिन उपस्थित १०० विद्यार्थी, उक्त वर्षमे कुल ७५१६) रुपया व्यय हुआ।

प्रथम शिक्षा विद्यालय–राजधानीके अतिरिक्त मुफस्सिल राज्यकीय प्रथम शिक्षाके विद्यालयोकी संख्या सन् १८८२।८३ ईसवीमे ४६ थी। इसमे २६ मे उर्दू, और २० मे हिन्दी की शिक्षा दीजाती है। विद्यार्थियोकी संख्या कुल १०६५ है।

साहाय्य कृतविद्यालय–राजधानी जयपुर और राज्यके अन्यान्य प्रदेशोमे सन् १८८२।८३ ईस्वीमे राज्यसे सहायता पानेवाले विद्यालयोकी संख्या ४१० थी। इसमे ३०३ हिन्दी और १०७ मे उर्दू की शिक्षा दीजाती है, उक्त वर्षमे विद्यार्थियोकी संख्या ८२२० थी।

मेओकालिज–देशीय राजकुमार और सामन्त कुमारोके लिये अजमेरमे मेओ-कालिज स्थापित है। उस कालिजमें जयपुरके बारह राजकुमार और सामन्तोकी पढाईका खर्चा स्वय महाराज ही देते है।

स्त्रीशिक्षा–बुद्धिमान् मृत महाराज रामसिह स्त्रीशिक्षाके विशेष प्रेमी थे, इस कारण उन्होने अपने राज्यमे स्त्री शिक्षाका प्रचार होनेके लिये विशेप यत्न किया था, और इस विपयमे वह सफल मनोरथ भी हुए थे। सन् १८८२।८३ ईस्वीमे राजधानी जयपुर और उपनगरमे १० और अन्यत्र तीन सब मिलाकर १३ कन्या पाठशालाएं थीं, कन्याओको हिन्दी उर्दू भापाकी शिक्षा और परिवारिक्त शिल्प शिक्षा भी दी जाती थी कन्याओकी सख्या ७६२। औसत उपस्थितिकी सख्या ५४७, उक्त समस्त विद्यालयोमे उक्त वर्पमे कुल ६१५० रुपया खर्च हुआ था।

शिक्षा ही मनुष्यको मनुष्यत्व प्राप्तिके मार्ग पर चलादेती है। आर्य्य राज्यमे साधारण लोकशिक्षा भलीभॉतिसे प्रचलित थी, इसका कोई प्रमाण नहीं पायाजाता। इस कारण

आर्यशासनसे जो श्रेणी शिक्षाके बलसे बलवान् थी केवल उसी श्रेणीके लोग मनुष्यत्व प्राप्त करके अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये सब प्रकारसे समर्थ हुए थे। यदि आर्यराज्यमे साधारण लोकशिक्षा भली भॉतिसे प्रचलित होजाती तो सामन्त शासनकी रीतिके द्वारा देशीय राज्योंमे जो भयंकर घटनाएं उपस्थित हुई थी वे इससे अवश्य ही दूर होसकती थी। उच्चश्रेणीके सामन्तोमे बहुतोको शिक्षाका स्वाद आजतक नही मिला। अधिक क्या कहे वह अपने नामके हस्ताक्षर तक भी लिखने नहीं जानते। कईसौ वर्पके पहिले यूरूपमे जिस प्रकार उच्चश्रेणीके सम्मानित सामन्त और नाइटगण घोर मूर्ख थे, हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता पडनेपर वह केवल अपने हाथसे अस्त्रका चिह्न पत्रमे अंकित करदेते थे, हमने देखा है कि सैकड़ो वर्प पहिले रजवाड़ेके ऊँची श्रेणीके सामन्तोमे बहुतसे सामन्त इस प्रकारसे अस्त्रोका चिह्न ही पत्रमे अंकित कर देते थे। संतोपका विपय है कि अब वह समय नही रहा है। यद्यपि इस समय शिक्षाकी ज्योतिका प्रकाश धीरे २ रजवाडेमे हो रहा है, परन्तु यह अवश्य ही कहना होगा कि यदि राजा और सामन्त इस बातको विचारते तो इतनी शिक्षाका विस्तार कर सकते थे, कि जिसके कारण आज यह घटी न होती।

जयपुरके शिक्षाविभागकी व्यवस्था रजवाडेके सम्पूर्ण राज्योकी अपेक्षा सबसे श्रेष्ठ और वर्तमान समयके लिये उपयोगी है। इसको सभी मुक्त कंठसे स्वीकार करते है। हमै ऐसी आशा है कि वर्तमान महाराजके शासनसे शिक्षाभागकी क्रमशः उन्नति होती रहैगी।

समरविभाग—इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है कि "सन् १८०३ईस्वीमे आमेरराजने तेरह हजार विदेशीय सेना अपने अधीमे रक्खी थी, इनमे तोपखाने सहित दश कंपनी पैदल चार हजार नगासेना एकदल अलिगोल नामक सैनिक प्रहरी और सातसौ अश्वारोही सेना थी। इस सेनाके अतिरिक्त सामन्त प्राय चार हजार शिक्षित अश्वारोही सेनाकी सरवराही करते थे, यह संख्या राज्यरक्षाके पक्षमे यथेष्ट थी, परन्तु किसी विजाति पर आक्रमण उपस्थित होनेपर कछवाहोकी जातिमे बीस हजार सेना इकट्ठी होसक्ती है" आचिसन साहब सन् १८६४ ईसवीमे लिखते है कि जयपुरकी रणकुशल सेनामे गोलन्दाज ४५२ पदाती ४६००, अश्वारोही ५१४२ और नागा ४०९६ थे* "।

वर्तमान सेनाकी सख्या ७६८ गोलन्दाज, १०५०० पैदल, ३५३० अश्वारोही ४०९६ नागा और ७८ तोपखाने है। समरविभागमे इस समय प्रत्येक वर्पमे औसत ८०,००० रुपये खर्च होते है।

गवर्नमेण्टके प्रतापसे इस समय भारतवर्पके चारोओर शान्तिमतीदेवी नृत्य करती है, कोई विदेशी शत्रु आमेर पर आक्रमण करनेके लिये उपस्थित नही हुआ, इस कारण जयपुरकी सेना बहुत दिनोसे कार्यहीन भावसे रहती थी, कोई वीरजाति क्यो न हो जहा बहुत समय तक सेनाने आलस्य भावसे समय व्यतीत किया, कि उसकी सामर्थ्य नष्ट होजाती है, इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। सेनादल जितना समर क्षेत्रमे

* Report of the Political Administration for the Rajputana states 1882–1883

उपस्थित रहेगा उतना ही उसका उत्साह, वल और विक्रम बढ़ेगा । यवन राज्यमे जयपुरकी सेना तथा मानसिह और मिरजा राजा जयसिहके अधीनकी सेना भारत की सम्पूर्ण सेनाओमे वीर और योधा गिनी जाती थी? इसी जयपुरकी सेनाने एक समय वंगालेको विजय किया था,देशीय राजोकी सेनाको इस समय किसी प्रकारका कार्य नही है पर उसमे वल उत्साह ज्योका त्यो वना रहै इस प्रकारका उस्से कार्य लेना उचित है ।

सामन्त श्रेणी–जयपुरपति पृथ्वीराजने अपने वारह पुत्रोको वारह प्रधान सामन्त पदपर वरण किया था साधु टाड् उन वारह पुत्रोके नाम और उनके उस समयके सामन्तोके नाम इत्यादि निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन वद्धकर गये है ।

पृथ्वीराजके पुत्र.	पारिवारिक नाम	अधिकारी देशोंके नाम	वर्तमान सामन्तो के नाम	आमदनी	सैन्य सख्या.
चतुर्भुज	चतुर्भुजोत	पवार, वगरू	वाघसिह	१८०००	२८
कल्यान	कल्यानोत	लटवाडा	गंगासिह	२५०००	४७
नाथू	नाथावत	चौमू	किसनसिह	११५०००	२०५
वलभद्र	वलभद्रोत	अचरोल	कायमसिह	२८८५०	५७
जगमाल उनके पुत्र खगार	खागारोत	टोडरी	पृथ्वीसिह	२५०००	४०
सुरतान	सुलतानोत	चादसर	०	०	०
पचायन	पचानोत	सम्भूरा	सलैसिह	१७५००	३२
गोगा	गोगावत	धूनी	रावचादसिह	७००००	८८
कायम	खूमानी	भामखो	पद्मसिह	२१५३५	३१
कुभो	कुंभावत	माहर	रावत स्वरूपसिह	२७५३८	४५
सूरत	शिववरन पोता	नैनदिर	रावत हरिसिह	१००००	१९
वनवीर	वननीरपोता	वाटको	स्वरूपसिह	१९०००	३५

इतिहासवेत्ता टाड् साहव पृथ्वीराजके द्वारा वनाई हुई उस " वाराकोटरी अर्थात् वारह सामन्त वंशकी तालिका प्रकाश करके उनके उस समय आमेर राज्यमे कितने सामन्त थे, और उनमे एक २ सम्प्रदायके अधीनमे कितने सामन्त थे, उन सवको मिलाकर कितनी आमदनी होती थी, और उनकी राज सरकारमे कितनी अश्वारोही सेना युद्धके समय सहायता देती थी, उसकी एक तालिका प्रकाश कर गये है । हम उसको नीचे अविकल प्रकाश करते है ।

	सम्प्रदायोके नाम.	प्रत्येक सम्प्रदायके अधीन सामन्तोकी सख्या.	सव मिलाकर आमदनी.	मिली हुई अश्वारोही सेना.
			रु०	मनुष्य
	चतुर्भुजोत	६	६३८००	९२
	कल्याणोत	१९	२४५११६	४२२
	नाथावत	१०	२२०८००	३७१
	बलभद्रोत	२	१३०८५०	१५७
	खागारोत	२२	४०२८०६	६४३
+ १२	सुलतानोत	—	—	—
	पचानोत	३	२४७००	४५
	गोगावत	१३	१६७९००	२७३
	कुँभानी	२	२२७८७	३५
	कुभावत	६	६०७३८	६८
	शिववरनपोता	३	४९५००	७३
	वनवीरपोता	३	२६५७५	४८
+४	राजावत	१६	१९८१३७	३९२
	नरूका	६	९१०६९	९२
	वाकावत	४	३४६००	५३
	पूर्णमलोत	१	१००००	१९
	भाटी	४	१०४०३९	२०५
	चौहान	४	३०५००	६१
	वडगूजर	६	३२०००	५८
	चदावत	१	१४०००	२१
* १०	सीकरवार	२	४५००	८
	गूजर	३	१५३००	३०
	रागड	६	२९११०५	५४९
	खेतडी	४	१२००००	२८१
	ब्राह्मण	१२	३१२०००	६०६
	मुसल्मान	९	१४१४००	२७४

(१) प्रथम वारह प्रधान सामन्तोकी सम्प्रदाय ।

(२) यद्यपि यह चार सम्प्रदाय कछवाहे, जातिकी थी परन्तु उन वारह सम्प्रदाओंके अधिकारमे नहीं थी यह वारह विदेशीय सामन्त है । इनमें अनेक जाति और वर्णन हैं।

(३) टाड् साहब लिखते है कि उक्त सम्प्रदायोंमे इस समय अवश्य ही अदलबदल होगई है, हम कहसकते है कि इस समय इसका और भी परिवर्तन हुआ है ।

आचिसन साहब सन् १८६४ ईसवीमे अपने ग्रन्थमे जयपुर राज्यके सामन्तोकी श्रेणीकी निम्नलिखित तालिका प्रकाश करगये है, हमने टाड् साहबके लिखे हुए और आचिसन साहबकी प्रकाशित सामन्त श्रेणीकी तालिकाको प्रकाशित किया, अधिक क्या कहे वर्तमान समयमे इस सामन्त श्रेणीकी अवस्थाका परिवर्तन होगया है।

सम्प्रदाय	अधिकारी देशोके नाम	प्रधान सामन्तो की आमदनी रु०	वशोके उपवशकी सख्या	सब आमदनी	रु०
पूर्णमल्लोत्	नीमेडा	१००००	१	१००००	बारह प्रधान सामन्त.
भीमपोता	लुप्त	०	०	२०००	
नाथावत्	चूरन	१००००	१०	२४७००	
पचायेनोत्	साभर	१७७००	३	०	
सुलतानोत्	सूरत	२२०००	०	१३००००	
खागारोत्	डिग्गी	५०००	२२	०	
राजावत	चदलाई	२००००	२६	२४५०००	
प्रतापजी	विलुप्त	०	०	१०००००	
वलभद्रोत्	आचरोल	२८८५०	२	१६७९००	
सूरदास	विलुप्त	०	०	२३७८७	
कल्यानोत	कालवार	२५०००	१८	४०७३८	अन्यान्य राजवंश घर.
चतुर्भुजोत	वगरू	४००००	६	४९५००	
गोगावत	दूनी	७००००	१३	२६५७५	
कुम्भानी	भानुक	२१०००	२	३००००	
कुम्भावत	महार	२७५३८	६	३४६००	
सुवर्णपोता	नीनधार	१००००	३	०	
वनवीरपोता	वाटको	१९०००	३	०	
नरूका	उनियारा	२००००	६	०	
वाकावत	लवान	१५०००	४	०	

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने निम्नलिखित मन्तव्यको प्रकाश करके जयपुर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया है, आमेरराज्यके कितने ही अत्यन्त प्राचीन नगरोके नाम प्रकाशित करके हम इतिहासका उपसंहार करते है, खोज करनेसे इस सब नगरोके सम्बन्धमे अनेक प्राचीन प्रमाण मिल सकते है।

" मोरा देवशाहसे नौकोश पूर्वकी ओर स्थित मोरध्वज ? " मयूरध्वज नामक एक चौहान राजाने इसको बनाया था।

" आमानेर-यह लालसोठसे तीन कोस पूर्वकी ओर स्थित है, यह नगरी अत्यन्त प्राचीन है । यह पहिले एक चौहान राजाकी राजधानी थी ।

मानगढ़-यह थोलाईसे पांच कोस दूर है इसके दुर्गके ऊपर बना हुआ एक प्राचीन नगरका ध्वंश स्तूप है, यह कछवाहोके अभ्युदयके पहले ढूढाड़के आदिम राजाने बनाया था ।

अमरगढ़-खुशालगढ़से तीनकोस दूर है, यह नाग वंशियोके द्वारा बनाया गया था ।

वरोट-माचेरीके अन्तर्गत वस्तीसे तीन कोस है, प्रवाद यह है कि पाण्डवोके द्वारा बनाया गया है ।

पाटन और गनीपुर-यह दोनो दिल्लीके प्राचीन तूंअर राजाओके द्वारा वनाये गये थे ।

खेरार व खण्डार-रनथॅभौरके निकट है ।

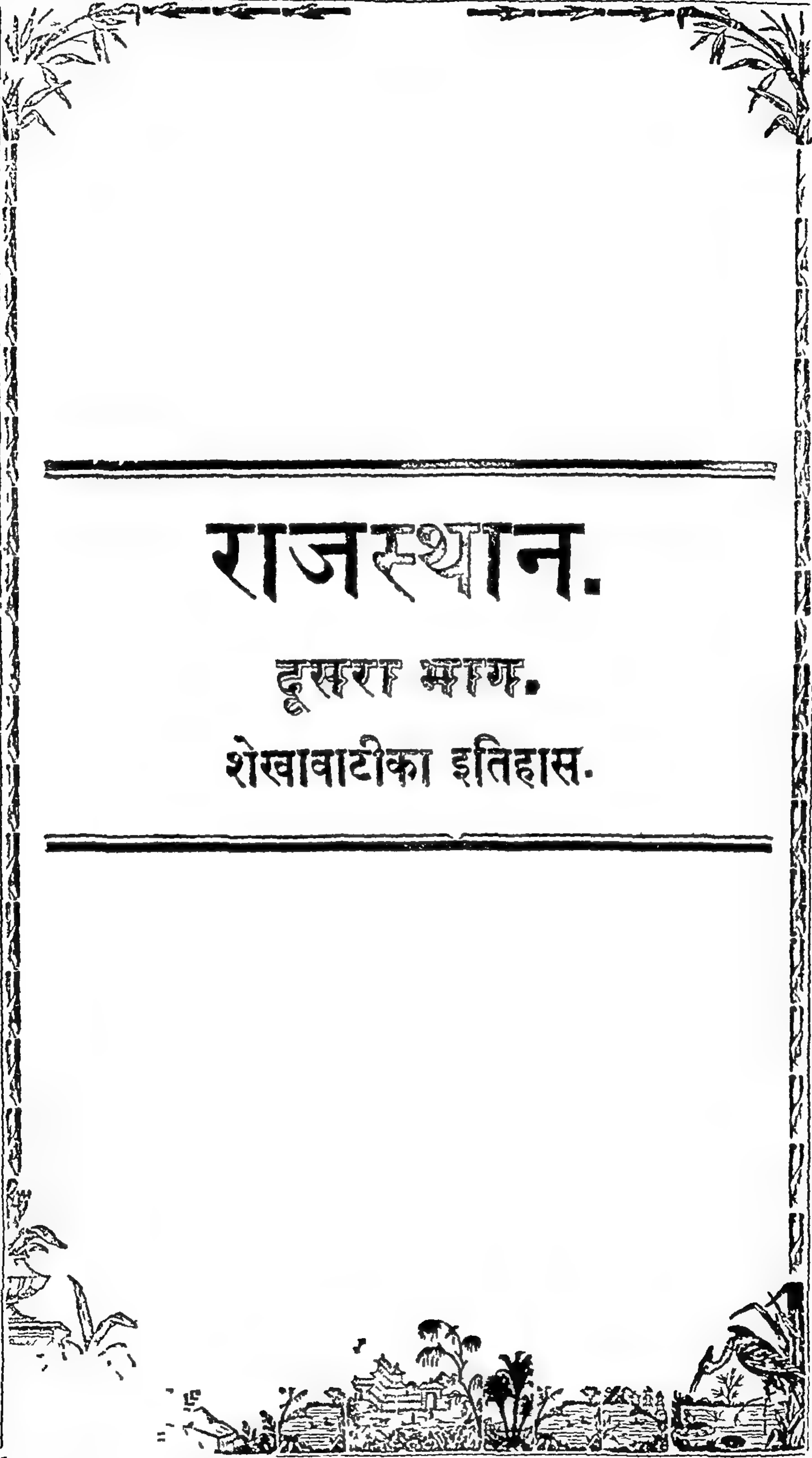
ओट गिर-चम्बलके तीरवर्त्ती है ।

आमेर वा आम्बकेश्वर-प्राचीन आमेर राजधानीमे यहां देवादि देव महादेवके नामसे एक कुण्ड विशेप है, कुण्डके वीचमे एक शिवालिग है । कुण्डका जल लिगके आधे अंगतक ढका हुआ है । ऐसा मत प्रचलित है कि, जिस दिन कुण्डके जलसे सब लिग ढक जायगा उसी दिन जयपुर राज्यका पतन होगा । इस स्थानपर अनेक शिलालेख भी है* ।

---

* सूचना-मूल पुस्तकमें आमेरके वर्णनके केवल ८ अध्याय हैं । प्रथम चार अध्यायोंमे वंशानुक्रमसे जैयपूर राज्यका इतिहास वर्णन करके तीन अध्यायोंमे शेखावाटीके इतिहासका वर्णन है तत्पश्चात् पुनः एक अध्यायमें जयपूरके भूगोलका वर्णन एव उपसंहार है.

परंतु ध्यान रहे कि यह भाषा अनुवाद वंगला भाषासे हुआ है और वंगाली लेखकने केवल जयपुरके इतिहासको आठ अध्यायोंमे वढाया है और जैपूरके शेखावाटीके इतिहासको समाप्त करके पुन जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट लिखा है । इस प्रकारसे कुल आठ अध्यायोंको वंगाली आलोचक महाशयेन १८ अध्यायोंमें खतम किया है परन्तु शेखावाटीके इतिहासमें अध्यायोंकी गणना पुन एकसे आरम्भ होती है । इससे पाठकोको भ्रम होना संभव है । अत केवल भ्रम निवारणके लिये यहांपर उल्लिखित बातोंका ध्यान रहना आवश्यक है ।



राजस्थान.

दूसरा भाग.

शेखावाटीका इतिहास.



शीकर (शेखावाटी.)

एच् एच्. राव राजा माधोसिंह बहादुर.

शेखावाटीका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

शेखावत् सम्प्रदायकी सृष्टिका आदि विवरण–आमेरराज्यके उदयकरणके तीसरे पुत्र बालूजीसे उक्त सम्प्रदायकी उत्पत्ति–मोकलजी–मुसलमान धर्मप्रचारक शेख बुरहान–उनके आशीर्वादसे मोकलजीको पुत्र लाभ–पुत्रको शेखाजी नामका प्रदान–शेखाजी द्वारा राज्यका विस्तार–रायमल्ल–सूजा, रायसाल, उसकी वीरताका प्रकाश करना–सम्राट अकबरका शासनकी सनद देना–खन्डेला और उदयपर लाभ–उनकी वीरता और चरित्र–गिरिधरजी–उनकी हत्याका विवरण–द्वारकादास–सिंहके साथ उनका विचित्र समर–खाँ जिहानलोदीके साथ समरमें उनका प्राणनाश–वरसिंहदेव–बहादुरसिंह–औरंगजेबका खन्डेलाके देवमंदिरको विध्वंस करनेकी आज्ञा देना–बहादुरका राजधानी छोड कर भाग जाना–देवमन्दिरकी रक्षाके लिये सुजनसिंहकी प्रतिज्ञा–यवनसेनाके साथ युद्ध–मन्दिरका विध्वंस करना–सम्राटकी सेनाका खन्डेलाराज्यपर अधिकार करना–केसरीसिंह और फतेसिंह दोनों भ्राताओंका खन्डेलाराज्यपर विभाग करना–फतेसिंहका प्राणनाश–दिल्लीके सम्राट्के विरुद्ध केसरीसिंहकी अवाध्यता प्रकाश–सम्राट्की सेनाके साथ केसरीसिंहका युद्ध–उनका प्राणनाश यवनसेनाका उनके पुत्र उदयसिंहको बंदी करना–उदयसिंहका बंदीभावसे अजमेरमें रहना–खण्डेला पर फिर अधिकार–उदयसिंहका मुक्तिलाभ और खण्डेलाकी प्राप्ति–मनोहरपतिके विरुद्ध उदयसिंह का समर–षडयन्त्र–आमेरपति जयसिंहका खन्डेलाको घेरना–उदयसिंहको भागना–उनके पुत्र सवाईसिंहका खण्डेला प्राप्त करना–सवाईसिंहका आमेरराज्यकी अधीनता स्वीकार करना–खण्डेला विभाग करना, सवाईसिंहका प्राण त्याग ।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहब मूल जयपुरराज्यके राजनैतिक इतिहासको वर्णन करनेके पीछे उस मूलराज्यसे उत्पन्न हुई शेखावाटी नामक एक स्वतंत्र सामान्तोंके अधिकारी देशके इतिहासको वर्णन कर गये हैं । इतिहासवेत्ताने लिखा है, "कि हम शेखावत् सामन्त सम्प्रदायके इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढे हैं। यह सम्प्रदाय आमेरकी बहुतसी सामन्त श्रेणीसे सृष्ट हुई थी ओर ऐसी कितनी ही घटनाओ और समयके गुणसे यह सामन्तोंकी सम्प्रदाय इस समय प्रबल सामर्थ्यको सचय कर रही है । इसका मूलराज जयपुरके समान है । यद्यपि इस सम्प्रदायमे किसी लिखी हुई शासनमलक व्यवस्थाका प्रचार नही हुआ, स्थाई राजनैतिक सम्मिलित शासनकी सभा नहीं है, न इसका कोई प्रधान नेता नियुक्त है । परन्तु सामन्त साधारणकी स्वार्थरक्षाके लिये सभी एकताके सूत्रमे बँध रहे हैं, मानों इसका किसीने भी इस प्रकारका विचार नही किया. इस सम्मिलित सम्प्रदायमे कोई निर्दिष्ट राजनीति नही है, कारण कि जिस समय साधारण सामन्त अथवा किसी सामन्तके विशेष स्वार्थनाशके लिये कोई उद्योग हुआ उस समय शेखावाटीके समस्त सामन्तोने उदयपुरमे इकट्ठे होकर किस प्रकारके उपाय अवलम्बन करके कल्याणके निमित्त एक मतसे कार्य किया था" ।

इस शेखावाटी सामन्त सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें टाड् साहब लिखते हैं, "आमेरके राजा उदयकरणके तीसरे पुत्र बालोजी संवत् १४४५ सन् १३८९ ईस्वीमें आमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए, यह सामन्त उन्हींके वंशधर हैं। बालोजीके समयमें आमेरके समाजकी जैसी राजनैतिक अवस्था थी यदि उसकी ओर हम देखते हैं तो जाना जाता है कि वर्तमानके समस्त भूखंड शेखावाटीके सामन्तोंकी सम्प्रदायके अधिकारमें थे। वह चौहान और नवरराजवंशीय सामन्त इस देशको खंड २ में विभक्त करके शासन करते थे, तभी वह कठिन मुसलमानोंके अत्याचार और पीडनसे शीघ्र ही समय २ पर वश्यता स्वीकार करनेको बाध्य होते थे।

इस समय शेखावत नामकी जो सामन्त सम्प्रदाय विशेषरूपसे प्रसिद्ध है, वास्तवमें बालोजी उन अगणित वंशधरोंके आदि पुरुष थे। बालोजीके पोतेको अमृतसर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ, परन्तु उन्होंने अपने बाहुबलसे उक्त देशपर अधिकार किया था, या और किसी उपायसे प्राप्त किया हो यह नहीं जाना जाता। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए–(१) मोकलजी, (२) खेमराजजी (३) खारद। मोकलजी अपने पिताके पदपर अमृतसरके अधीश्वर हुए। दूसरे पुत्र खेमराजजीके वंशधर बालापोता नामसे विदित थे। इनमें एक आमेरके बाराकोटरी अर्थात् बाहर प्रधान सामन्तोंके अन्यतर हैं। खारदके औरसमें नुमन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसके उत्तराधिकारी कूमावत् नाममें विदित थे, परन्तु इस समय उनकी संख्या प्रायः लोप होगई थी।

"मोकलने दीर्घकालतक पुत्रहीन अवस्थामें समय व्यतीत किया, एक मुसलमान धर्मप्रचारक फकीरके आशीर्वादसे मोकलके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उस फकीरके सम्मानके लिये पुत्रका नाम सेखाजी रक्खा गया। राजपूतानेका एक प्रधान अंश जो वर्तमान समयमें सेखावत् नामसे विदित है, इस भूखंडमें अगणित सामन्त वंशधरोंके आदिपुरुष यह सेखाजी थे। उस मुसलमान धर्मप्रचारक फकीरका नाम सेख बुरहान था। उसकी दरगाह अचरोलसे तीन कोस और मोकलके स्थानसे सातकोस दूरीपर बनी हुई है। वह दरगाह इस समय भी विराजमान होरही है। यह घटना तैमूरके भारतजयके थोडे ही कालके पीछे हुई थी। इस कारण यह भी सम्भव होसकता है, कि उक्त सेखबुरहान एक परमधार्मिक धर्मप्रचारक हो, वह वीर तेजस्वी राजपूत जातिको अपने धर्ममें दीक्षित करनेके लिये इस वंशमें रहते थे, इस बातको वह भली भाँतिसे जान गये थे, यद्यपि वह अपने उद्देशको पूर्ण अर्थात राजपूतजातिमें मुसलमान धर्मका प्रचार करके सफल मनोरथ नहीं होसकते थे। परन्तु अतिथि और शरणागत पालक राजपूत गण अवश्य ही उनके प्राणोंकी रक्षा करके उनका प्रतिपालन करते थे"।

शेख बुरहान भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर एक समय अमृतसरकी सीमाके एक विस्तारित प्रान्तमें पहुँच गये। दैवयोगसे मोकलजी भी उस स्थान पर

उपस्थित थे, शेखबुरहान मोकलजीके समीप जाकर अभिवादन करके बोले, क्या आप हमको कुछ भिक्षा देंगे ? " मोकलजीने नम्रतापूर्वक कहा, कि "आप जो इच्छा करैंगे वही मिलेगा । " शेखबुरहानने केवल थोड़ेसे दूधकी इच्छाकी । सेखावत् सामन्तोको दृढ़ विश्वास था कि शेखबुरहान उक्त प्रार्थनाके पीछे एक असभव कार्य दिखावैगे इस कारण एक दो दूधवाली भैस कि जिनका दूध कुछ ही समय पहिले दुहागया था, शेखजीके समीप लेआये । शेखबुरहानने कुछही समयके उपरान्त उन दुग्धहीन भैसोके थनोमेसे नदीकी समान प्रबल स्रोतेसे दुग्धको दुहलिया । इस आश्चर्यजनित कार्यको देखकर वृद्ध मोकलजीके मनमे दृढ विश्वास होगया कि यह मुसलमान फकीर अवश्य ही दैवशक्ति सम्पन्न है, यह अवश्य ही इस प्रकारसे दैवशक्तिका कार्य दिखानेमे समर्थ है । उन्होने कुछही कालके पीछे उस फकीरसे आशिर्वाद मॉगा कि मेरे एक पुत्र उत्पन्न हो । वास्तवमे मोकलजीकी यह अभिलाषा पूर्ण होगई, यथा समयमे उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ और बुरहानकी आज्ञासे उस पुत्रका नाम बुरहानकी जातिके नामके अनुसार "शेखा" रक्खा गया । बुरहानने और भी आज्ञादी कि "यह बालक मानो आजीवन मुसल्मान बालकोंके व्यवहारयोग्य बद्धी नामक माला धारण करेगा । जिस समय मालाके खोलकर रखनेका प्रयोजन होगा उस समय वह पीरकी दरगाहके किसी ऊँचे स्थानपर रखनी होगी और इस बालकको नीले वर्णका जामा और टोपी पहराई जायगी । किसी समय शूकरका मांस वा अन्य कोई मांस जिसमे उसका रुधिर रहै, बालकको आहार न कराया जायगा । शेखबुरहानने मोकलसे यह कहा कि शेखावत् वंशमे जिस समय कोई पुत्र उत्पन्न होगा, उस समय एक बकरेकी बलि दीजायगी । कुरानके कलमेका पाठ किया जायगा, और उस बकरेके रुधिरसे बालकको स्नान कराया जायगा " । यद्यपि इस बातको चारसौ वर्ष बीत गये परन्तु मोकलजीने शेखबुरहानसे उक्त नियमपालन करनेके लिये जो प्रतिज्ञा की थी वह बराबर मानी जाती है । मोकलजीके अगणित वंशधर दशहजार मीलकी भूमिमे निवास करते है, वह लोग आजतक धर्मविश्वासके साथ उस आज्ञाका पालन करते आते है । यद्यपि चिरकालसे प्रचलित हुई रीतिके अनुसार प्रत्येक राजपूत प्रत्येक वर्षमे एकदिन सूकरका शिकार करके उसके भागको खाते है ऐसी विधि प्रचलित है, परन्तु शेखावतने किसी समय भी वराहका शिकार नही किया । यद्यपि समयके फेरसे शेखावत बालकोको बद्धीपहराना, उसे दरगाहमे रखनेकी प्रथा इस समय प्रबल नहीं है परन्तु आजतक भी प्रत्येक शेखावतका बालक जन्म लेते ही दो वर्षतक नीले रंगके कुर्ता टोपी पहिरा करता है। शेखावतोने उक्त शेखबुरहानके सम्मानके लिये और एक प्रबल चिह्नकी आजतक सम्मान सहित रक्षाकी है, अर्थात् शेखावतकी जातीय हरिद्रा वर्णकी पताकाके चारोओर नीला फीता लगाया जाता है । शेखावतोंमे ऐसा प्रबल मन्तव्य प्रचलित है, कि शेखावत् चाहे दूरस्थान पर निवास करनेसे अथवा अन्य किसी कारणसे सेखकी दरगाहमे अपने २ बालकोके गलेमेकी बद्धीकी रक्षा नही करसकै, नही तो वह किसी समय भी सौभाग्यवान् नहीं होसकैगे, राजपूतजातिकी प्रतिज्ञापालनका एक चूडान्त निदर्शन यह है कि यद्यपि उक्त

अमृतसर और उसके निकटवर्त्ती देश आमेरराज्यके अधिकारमे थे, परन्तु उक्त शेख-वुरहानकी दरगाह आजतक स्वाधीनभावसे रक्षित है, और उसपर राजसामर्थ्यका प्रयोग नही किया जाता। जो कोई उनकी शरणागत जाता है, राजा उनको वलपूर्वक नही पकड़ सकता। दरगाहके निकट ताला नामक नगरमे उक्त शेखके सौसे अधिक वंशधर वसते है और वे जमीजोतका लगान नही देते।

शेखाजी पिताकी मृत्युके पीछे पितृपद पर विराजमान हुए, और अपने वाहु-वलसे प्रतिवासियोके निकटसे तीनसौ साठखड ग्रामोको उन्होने अपने अधिकारमे करलिया। शेखाजीके वाहुवल और प्रतापका समाचार शीघ्र ही आमेरराज्यके अधीश्वरने सुना। तुरन्त ही आमेरकी सेनाने उनपर आक्रमण किया, पर उन्होने चूनी पठानोकी सहायतासे अपने अधीश्वर प्रभु आमेर राज्यकी सेनाको भगा दिया। इस समय इस देशके प्रत्येक सामन्त आमेरपतिको अपना अधीश्वर मानते थे, इस देशमे जो घोडेका वच्चा उत्पन्न होता था, वह कर स्वरूपमे आमेरराजको दिया जाता था, परन्तु शेखाजीने अपने वाहुवल और प्रवल प्रतापसे आमेरराज्यके अधीन तानीगढोको एकवार ही छीन लिया, और सम्पूर्ण स्वाधीनताको सग्रह कर लिया। इस कारण जिस आमेर राज्यसे यह शेखावाटी का राज्य वना था, इसी समयसे उस मूलराज्यके साथ परस्परमे सम्पूर्णत विछिन्नभाव स्थापित हुआ। आमेरपति सवाई जयसिहके समयतक दीर्घकालसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते रहे। पीछे सवाई जयसिहने दिल्लीके सम्राट्के अधीनमे ऊँचे पदपर नियुक्त होकर सम्राट्की सेनाकी सहायतासे इस शेखा-वाटीके स्वाधीन सामन्तोपर आक्रमण करके उन्हे युद्धमे परास्त किया। और इनको आमेर राज्यके अधीन सामन्त पदपर स्थापित कर रीतिके अनुसार उनसे कर लिया।

शेखावाटीके आदि नेता शेखाजीने दीर्घकाल तक प्रवल प्रभुता विस्तार करके अपने प्राण त्याग किये। उनके पुत्र रायमल्ल पिताके पदपर स्थित हुए रायमल्लके शासन और वलविक्रमका इतिहासमे कोई लेख दिखाई नही दिया। रायमल्लके पीछे सूजा अमृतसरके सिहासनपर विराजमान हुए। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) नूनकरण (२) रायसाल और (३) गोपाल। वडापुत्र अमृतसर और उसके अधीनके ३६० ग्रामोका अधीश्वर हुआ, और रायसाल, लाम्वी नामक देशपर और गोपाल झाडली नाम देशके सामन्त पदपर स्थित हुए। दूसरे भ्राता रायसालसे एक घटनाके कारण शेखा-वाटीके सौभाग्यका सूर्य शीघ्रतासे उदित हुआ।

शेखावाटीके नेता नूनकरणका देवीदास नामका एक वनिया मत्री था, वह वडा ही तेजस्वी और चतुर पुरुष था, एक समय देवीदासने अपने प्रभुके साथ तर्क करते

(१) कर्नल टाड साहवने टीकेमे लिखा है कि " इस रीतिका पाठ करके पाठकोंको स्मरण होजावेगा कि प्राचीन फारिसराज्यमे इस प्रकारकी रीति प्रचलित थी, दूरके शासनकर्ता इस प्रकारसे घोडेके वच्चेको करस्वरूप भेजते थे। हेरोडाटसने कहा है कि एक आरमेनियाने करस्वरूपमे वर्षादिनमे वीस हजार घोडे भेजे थे "।

हुए कहा "कि पिताकी सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त करनेकी अपेक्षा अपने ही बल और पराक्रमसे सौभाग्यका उपार्ज्जन मनुष्यका कर्त्तव्य है, यही जगदीश्वरका अनुग्रह है। नूनकरणने इसका बिना ही समर्थन किये दृढ़तापूर्वक प्रतिवाद करके उत्तर दिया कि आपकी यह युक्ति कदापि न्यायसंगत नहीं है, वरन् अब आप हमारे भ्राता रायसालके समीप लाम्बीमे जाकर इस युक्तिकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये। नूनकरणने सरलभावसे उसको पदसे उतार दिया, परन्तु देवीदासने किसी प्रकार भी अपने मन्तव्यको न बदला, और शीघ्र ही वह अमृतसरको छोड़कर अपनी धनसम्पत्ति और कुटुंबको साथ ले लांबीमे आपहुँचा। यद्यपि रायसालने उनको भलीभाँति आदर सत्कारके साथ ग्रहण किया परन्तु देवीदास तुरन्त ही इस बातको जानगया कि रायसालकी आमदनी बहुत थोडी है इस कारण यहाँ रहनेसे खर्च बहुत बढ़ जायगा, फिर जिस मन्तव्यको प्रकाश करनेके लिये पदसे अलग हुआ हूँ उस मन्तव्यकी परीक्षा करनेका यहाँ कोई विशेष उपाय नहीं है, अतएव उसने स्पष्ट शब्दोमे कहा कि मै दिल्लीमे यवनसम्राट्के दरबारमे जानेकी अभिलाषा करता हूँ। वरन इसने रायसालको भी अपने साथ वहाँ लेजाकर दरबारमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका परामर्श दिया।रायसाल एक ऊँची अभिलाषाका वीर पुरुष था यह केवल अपनी सामर्थ्यके बलसे बीस सवारोको साथ ले दिल्लीको गया। इस समय अफगानियोके आक्रमणको रोकनेके लिये सम्राट्के अधीनकी एक सेना सज रही थी। ऐसी घटना प्राय. हुआ ही करती है। रायसाल मना करनेपर भी अपने उन बीस सवारोके साथ रणक्षेत्र पर गया, और इस भयंकर युद्धमे उसने असीम बलविक्रम प्रकाश करके बादशाही सेनाके प्रधान सेनापतिके सम्मुख रणक्षेत्रमे शत्रुपक्षके एक नेताका मस्तक काटकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्तकी। उस दिन उसी नेताके मारेजानेसे युद्धमे विजय प्राप्त हुई थी। रायसाल कौन है, और कहाँ रहता है। यवनसेनापति इसको कुछ भी नही जानता था युद्ध समाप्त होनेके पीछे सेनापति उस अपरिचित वीरकी खोज करने लगा, परन्तु किसी विशेष कारणसे रायसालने स्वजातीय सेनाका संग त्याग दिया, यह पहिलेसे ही अन्य स्थान पर रहने लगे, इस कारण यवनसेनापतिको इसका कुछ पता न मिला। परन्तु उन्होने रायसालकी खोज कुछ विशेषतासे नही की। उसीसे देवीदासको उक्तिकी सत्यताकी परीक्षा सरलतासे न होसकी। तब प्रधान सेनापतिने शीघ्र ही यह समाचार प्रचारित किया कि सेनाकी प्रत्येक श्रेणीके सेनापति जो रणक्षेत्रमे उपस्थित थे सबको "जियाफत्" नामक प्रमोदसभामे आना होगा और वह उस स्थानपर प्रधानसेनापतिके प्रतिसन्मान दिखावै। शीघ्र ही जियाफत नामक प्रमोदसमिति स्थापित हुई, प्रत्येक जातिके प्रत्येक श्रेणीके प्रधान२ सेनापति एकएक करके प्रधानसेनापतिके सम्मुख आ उपस्थित हुए, और उनको मान दिखाने लगे,रायसाल भी उक्त घोषणापत्रके अनुसार वहाँ गए इनके सम्मुख होते ही प्रधान सेनापतिने तुरन्त ही इनको पहिचान लिया, कि इसी असीम साहसी वीरके लिये इतनी खोज रही थी। शीघ्र ही उसका नाम और उसके वंशका वृत्तान्त पूछा गया। अमृतसरके महाराज नूनकरण भी अपनीसेनाके साथ इसी स्थानपर यवनसेनाके

अधिकारमें उपस्थित थे। उन्होंने रायसालको देखकर ईर्षावश हो तिरस्कार करते हुए कहा, कि मेरी विना आज्ञाके तुम इस स्थानपर क्यो आये ? परन्तु नूनकरणके इस तिरस्कारसे रायसालकी कोई हानि नही हुई। प्रधानसेनापतिने वीर श्रेष्ट रायसालको सम्राट् अकवरके निकट परिचित करादिया, और उसके वलविक्रमकी ऊँची प्रशसा की। बादशाह अकबर सदैव गुणियोंको उचित पुरस्कार दिया करता था। उसने शीघ्र ही रायसालको " रायसाल दरवारी " की उपाधि दी, और अपनी कृपाके विशेष चिह्न स्वरूप उस समय चन्देल राजपूतोंके अधिकार भुक्त देवासो और कासली नामके दो देशोंका अधिकार उसको दिया। रायसालका अपने ही भाग्यसे उन्नति पानेका प्रथम सूत्रपात हुआ। उसने सम्राट्के दिये हुए नवीन देशोंपर अपना अधिकार किया था कि इतनेमे सम्राट् अकवरका बुलावा आनेसे उसे वहां फिर जाना पडा, इस समय भटनेरके विरुद्ध सम्राट्की सेना जारही थी। सम्राट् अकवरने रायसालको महावलवान् पुरुष जानकर उसको उस सेनाके साथ भेज दिया। युद्धक्षेत्रमे फिर इनके विशेष वल विक्रम प्रकाशसे सम्राट् अकबर और भी संतुष्ट हुए, और इसको खाण्डेला तथा उदयपुर नामक दो देशोंकी सनद दी। यह दोनो देश उस समय निरबाण राजपूतोंके अधिकारमे थे, परन्तु उन राजपूतोंने यवन-सम्राट्की अधीनता स्वीकार न की थी और क्रमानुसार अत्याचार उत्पीड़न और लूटमारमे लिप्त थे।

वीर श्रेष्ठ रायसालने देखा कि सम्राट्ने उनको जिन देशोके अधिकारका स्वत्व दिया है उन दोनो देशो परसे राजपूतोको भगानेकी किसीकी सामर्थ्य नही है, इस कारण वह कौशलजालका विस्तार करने लगे। रायसालने भटनेरके युद्धमे जानेके पहिले खण्डेलाके अधीश्वरकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय कन्याके पिताने जो दहेज दिया था वह अत्यन्त सामान्य था, इनके योग्य न था इसीसे इसने दहेजको वढ़ानेके लिये कहा, निरवाण राजपूतने धीरज धरनेमे असमर्थ होकर कहा, कि " हमारे पास अव कुछ नही है, केवल यह शिखर प्रस्तुत है, यदि इच्छा हो तो ले लीजिये "। यह वात उस समय रायसालके हृदयमे चुभ गई थी, इस समय रायसाल उपयुक्त समयमे जाकर सेनासहित खण्डेलाकी ओर चला। वह इस वातको भली भाँतिसे जानता था कि आवश्यकता होने पर अपनी सेना इस विषयमे सहायता करेगी। रायसालको सेना सहित आताहुआ सुनकर जव खण्डेलाके अधीश्वरने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखा तव वह भयभीत हो नगर छोडकर भाग गया। नगरनिवासियोंने भ्रमके वश हो रायसालकी अधीनता स्वीकार की, इसी समयसे यह खाण्डेलादेश शेखावाटीका एक प्रधान नगर मानागया। रायसालके उत्तराधिकारी रायसालोत् नामसे पुकारे जाकर शेखावाटीके समस्त दक्षिण देशमे निवास करते थे। परिणाममें सृष्ट और एक वशकी शाखासे उत्पन्न सिद्धानी नामकी सम्प्रदाय उत्तर अशमे निवास करती थी। रायसालने खण्डेला पर अधिकार करनेके वहुत

दिन पीछे उदयपुरको अपने अधिकारमे करलिया। उदयपुर पहिले निरवाण राजपूतोके अधीनमे कसुंवी नामसे प्रख्यात थी।

रायसाल अपने यथार्थ अधीश्वर आमेरराज मानसिंहके साथ मेवाड़के महाराणा प्रातपसिंहके साथ युद्ध करनेको गये थे। काबुलके अधीन कोहिस्थानके अफगानियोके विरुद्धमे दिल्लीके सम्राट्ने जो सेना भेजी थी, रायसालको उस सेनाके साथ भी वहाँ भेजा था। रायसालने प्रत्येक युद्धमे बडी वीरता दिखाकर बादशाहसे बहुतसा पुरस्कार पाया था। इस विषयका हमै कोई समाचार नही मिला कि रायसालने किस समय प्राणत्याग किये। देवीदासने जो कहा था कि पिताके उत्तराधिकारित्व लाभकी अपेक्षा अपनी प्रतिभाके बलसे अपना सौभाग्य उपार्ज्जन करना ही आवश्यक है, और वही जगदीश्वरका प्रधान अनुग्रह है सो रायसालने सम्पूर्णरूपसे कर दिखाया।

वीरश्रेष्ठ रायसालने अपने सुशासनसे अपने अधिकारी देशोमे सम्पूर्णरूपसे शान्ति स्थापन करके प्राण त्याग किये, वह जिस सुविस्तृत देशपर शासन करते थे उसे उन्होने सात भागोमे विभक्त कर अपने सातो पुत्रोको देदिया। उन सात पुत्रोसे अगणित परिवार और संप्रदायोकी सृष्टि हुई; और वह पैतृक आदि पुरुषके नामके अनुसार भोजानी, सिद्धानी, लाड़खानी, ताजखानी, परशुरामपोता, हररामपोता, नामसे रजवाड़ोमे सर्वत्र शेखावत् ख्यातिसे विदित हुए।

रायसालके निम्नलिखित सात पुत्रोको निम्नलिखित यह सात देश मिले थे—

१—गिरिधर	खण्डेला और रेवासा।
२—लाडखान	खाचरियावास।
३—भोजराज	उदयपुर।
४—तिरमलराव	कासली और ८४ ग्राम।
५—परशुराम	बिबाई।
६—हररामजी	मून्दड़ी।
७—ताजखान	कोई देश प्राप्त नही हुआ।

ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजीको जिस प्रकार पिताके अधिकारी देशोका प्रधान अंश प्राप्त हुआ था, उन्होने उसी प्रकारसे पिताकी समान साहस शूरवीरता और बल विक्रमको प्रकाशित कर दिल्लीके यवनसम्राट्के द्वारा "खण्डेलाके राजा" की उपाधि प्राप्त की। इस समय भारतके यवन साम्राज्यमे बडी गडबड होरही थी। मेवातके पहाडी देशोपर मेव जातिके पहाडी तस्कर लोगोने भारतवर्षकी राजधानीके निकट

(१) निरबाण सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष थी। इन निरबाण राजपूतोंने इस देशमे बडा आधिपत्य विस्तार किया था, और उक्त कसुंवी जो इस समय उदयपुर नामसे प्रसिद्ध है, वहा उनकी राजधानी थी। इस उदयपुरमे ही शेखावाटीके समस्त सामन्त समयपर जातीय प्रश्नकी मीमासाके लिये इकट्ठे होते थे।

विशेष लूटमार करनी प्रारंभ की। यवनसम्राट्ने वीरवंशीय खण्डेलापति गिरधरजीको सब अंशोमे योग्यजानकर उस दस्युदलके नेताके जीवित पकड़ लाने वा मारनेका भार उन्हींके अर्पण किया। गिरधर उस कार्यके पूर्ण करनेम समर्थ भी हुए। गिरधर उक्त आज्ञाको मान विचारने लगे कि यदि एक बड़ी सेना साथमें लेकर उस तस्करदलके पकडनेके लिये वाहर होगे तो वे अवश्य हो भयभीत ही पहाड़की कन्दराओमे छिप जॉयगे और कभी भी सरलतासे हाथ नही आवेगे इस कारण उन्होने असीम साहसके साथ निर्भय हो अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले प्रत्येक पर्वत पर भ्रमण करनेके पीछे तस्करोके नेताको एक स्थानमे पाकर उसपर आक्रमण किया। आक्रमण करते ही समर उपस्थित होगया, उस समरमे असीम वलविक्रम प्रकाश करके गिरधरने दस्युदलको परास्त करके उनके नेताका जीवन समाप्त करादिया। वादशाहने इससे अत्यन्त ही सतुष्ट हो उनको राजाकी उपाधि दी। अत्यन्त दुःखका विषय है कि गिरधर बहुत दिनोतक इस ससारमे जीवित न रहसके। वह एक समय यमुनाजीमे स्नान कर रहे थे, इसी समयमे सम्राट्की सभाके एक उच्च पदाधिकारी दुश्चरित्र मुसलमानने अत्यन्त शोचनीय रूपसे उनके प्राणनाश किये। नीचे उसका वर्णन किया गया है।

एक समय खण्डेलाराज गिरिधरजीका एक अनुचर दिल्लीके एक लुहारकी दूकानमे वैठा हुआ अपने स्वामीकी तलवार वनवा रहा था। उस समय रास्तेमे एक मुसलमान जारहा था। उसने इस राजपूतको अकेला खडा हुआ देखकर कोई असभ्य मनुष्य समझा और उसे चिढ़ानेकी इच्छासे उसने लुहारकी दूकान पर जाकर उस राजपूतको व्यग वचन कहना और विद्रूप करना प्रारभ किया। राजपूतने अपनी मातृ-भाषामे धीरभावसे उत्तर दिया। इसपर मुसलमानने एक जलता हुआ अगार उस राजपूतकी वडी पगडीके ऊपर डालदिया। राजपूत इससे भी कुछ कुपित न हुआ मुसलमान आनन्दित होकर हँसने लगा। परन्तु कुछ ही समयके पाछे पगडीमे आग जलने लगी। तव तुरन्त ही उस राजपूतने अपनी सानधरी हुई तलवारसे मुसलमानके दो टुकड़े करदिये। वह मुसलमान वादशाहकी सभाके एक प्रतिष्ठित अमीरका सेवक था। उक्त अमीर खण्डेलाराजके एक सेवकसे अपने सेवकके प्राणनाशकी वार्ता सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ। वह अपने अनुचरोके साथ खण्डेलाके राजाके निवासस्थानपर गया खण्डेलाराज गिरिधर उस समय वहां नही थे। वह उस समय इकले ही अस्त्रहीन अव-स्थामे यमुनामे स्नान कर रहे थे। अन्तमे उक्त अमीरने यमुनाके किनारे जाकर कायर पुरुषोकी तरह उस अस्त्रहीन वीर खण्डेलाराज गिरधरकी हत्या की।

खण्डेलाराज गिरिधरने कई एक पुत्र छोडे थे, इनसे वडे पुत्र द्वारकादास पिताके सिहासन पर विराजमान हुए। परन्तु उनको सिहासन पर वैठनेके कुछ ही दिन पीछे एक भयानक षड्यत्रजालमे फँसना पड़ा। शेखावत् सम्प्रदायकी प्रधान शाखाके आदि पुरुष नूनकरणके एक वशधर थे. जो उस समय मनोहरपुरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित

थे, उन्होने जाति शत्रुताको चरितार्थ करनेके लिये द्वारकादासको उस महाविपत्तिमे डालनेकी गुप्तभावसे चेष्टा की। दिल्लीके बादशाह इस समय शिकार करके एक सिहको पकड़ लाये। उन्होने प्रचलित रीतिके अनुसार एक समय उस सिहके साथ वीरोसे युद्ध करनेका समाचार प्रकाशित किया गया, उक्त प्रचारके प्रकाश होतेही उल्लिखित मनोहरपुरपतिने सम्राट्के यहाँ जाकर कहा " हमारे जातिके रायसालोत् द्वारकादास जो विख्यात् वीर नाहरसिहके शिष्य है वही इस पशुराजसिहके साथ युद्ध करनेके योग्यपात्र है "। बादशाहने यह बात सुनकर द्वारकादासको सिहके साथ युद्धकरनेकी आज्ञादी। द्वारकादास इसबातको भलीभांतिसे जान गये थे कि मनोहरपुरपतिनेही उनके प्राणनाशके लिये इस षड्यंत्रजालका विस्तार किया है, परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित वा भयभीत न हुए, वरन शीघ्र ही उस आज्ञाके पालन करनमे सम्मत हुए। रंगभूमि मनुष्योसे भरगई। द्वारकादास स्नान पूजाकर एक पीतलके पात्रमे पूजाकी समस्त सामग्री अर्थात् फूल नैवेद्य लेकर रंगभूमिमे जापहुँचे और उस भयानक सिह पशुराजके सम्मुख हुए। मनोहरपुरपति विचार रहे थे कि द्वारकादास जिस समय निरस्त्र होकर उन्मत्तकी समान पूजनकी सामग्री लेकर महाबली सिहके निकट जारहे है, तब तो इनकी मृत्यु अत्यन्त ही निकट होगी। इस रंगभूमिमे साधारण दर्शकोके अतिरिक्त स्वय बादशाह भी आये थे और द्वारकादासको उस भावमे बैठा हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए। परन्तु द्वारकादासने सिहके सम्मुख जाकर सबसे पहिले सिहके मस्तकपर चन्दनका टीका लगाकर उसके गलेमे माला डाली और आप आसन पर बैठ कर पूजा करने लगे, सिह धीरभावसे आगे जा द्वारकादासके मुखकमलको अपनी जीभसे चाटने लगा। द्वारकादास यथार्थ भक्तकी समान अपनी अन्तर्हित शक्तिसे निर्भयहो अटलभावसे बैठा रहा। कुछ ही समयके पीछे द्वारकादास सम्राट्की आज्ञासे वहाँसे चला आया। सिह किंचित् भी क्रोधित न हुआ, और न उसने उनपर आक्रमण करनेकी चेष्टा की। यह देखकर प्रत्येकदर्शक अगाध विस्मयके समुद्रमे निमग्न हुए। यवनसम्राट्ने विचारा कि द्वारकादास अवश्य ही दैवीमत्रसे बलवान है, इस कारण उन्होने इनको अपने निकट बुलाकर कहा, कि " आपकी जो इच्छा हो सो माँगो, मै वही तुम्हारी इच्छा पूरी करूंगा। " द्वारकादासने केवल इतना ही कहा " कि मैने इस विपत्तिसे अपने भाग्यबलसे ही उद्धार पाया है, आप ऐसी विपत्तिके मुखमे अब और किसी मनुष्यको न डालना, बस आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है "।

मालूम होता है कि द्वारकादास उस समयके सुप्रसिद्ध महायोधा खाँ जिहानलोदी के द्वारा मारेगये। शेखावटीकी दतकथाओमे वर्णित है कि उक्त खाँजिहान लोदी भी द्वारकादासके द्वारा मारागया था। उक्त प्रवादमे दोनो वीरोकी वीरताकी कहानी जिस भावसे वर्णित हुई है, वह इस वीरजातिके इतिहासके पक्षमे अत्यत प्रशंसा जनक है। खाँजिहान और द्वारकादास दोनो ही परम मित्र थे, एक समय दिल्लीके सम्राट् खाँजिहान्के प्रति अत्यन्त ही कुपित हुए और द्वारकादासको

आज्ञा दी कि शीघ्र ही खांजिहानके जीवित वा मृत शरीरको लाकर हाजिर करो। इस आज्ञाको सुनकर द्वारकादास महा विपत्तिमे पड़े। उन्होने खांजिहानसे कहला भेजा कि हमारे ऊपर यह अत्यन्त घृणित कार्यके साधनका भार अर्पित हुआ है अतएव क्या तो आपही आत्मसमर्पण कीजिये नहीं तो आप भाग जाइये परन्तु उस वीरने कादरकी भांति भागनेकी अपेक्षा मित्रके हाथसे मरना ही श्रेष्ठ समझा। फरिश्तेसे यह खांजिहानकी जीवनी और वीरता मूलक कार्य कौतूहलका पूर्ण विवरण वर्णन पाया जाता है अधिक क्या कहे उसी कारणसे उक्त शेखावत्के नेताकी वीरताका वर्णन भी उसमे सम्बद्ध हुआ है। दोनो वीर सग्राम क्षेत्रमे जाकर एक दूसरेकी तलवारसे मारेगये।

द्वारकादासके पुत्र वीरसिंह देव अपने पिताके पदपर विराजमानहुए, वीरसिंहदेव सेना सहित यवनसम्राट्की आज्ञासे उनकी सेनाके साथ दक्षिण देशकी विजयमे नियुक्त थे। और उन्होने अपने बलविक्रमके बलसे बादशाहको सतुष्ट कर परनाला देशके शासनकर्ता पदपर प्राप्त हो प्रबलप्रतापके साथ उस देशपर अपना राज्य स्थापित किया। खण्डेलाके इतिहास लेखक लिखते है कि वीरसिंहदेव, उनके अधीश्वर प्रभु आमेरपतिके अधीनमे न रहकर स्वय स्वाधीनभावसे कार्य करते थे। परन्तु कर्नल टाड् साहब लिखते है कि मिरजा राजा जयसिंह इस समय राजपूत राजाओमे सम्राट्की सभामे सबसे अधिक सम्मानित और प्रसिद्ध तथा सेनानीरूपसे प्रबल सामर्थ्यवान् थे और वीरसिंह उनके अधीनमे आज्ञा पालन करते थे।

वीरसिंहदेवके निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए, (१) बहादुरसिंह, (२) अमरसिंह (३) श्यामासिंह,(४) जगदेव (५) भूपालसिंह (६) मोकरीसिंह (७) पेमसिंह। वीरसिंहने जीवित अवस्थामे बहादुरसिंहको युवराज पदपर अभिषिक्त किया, और अन्यान्य पुत्रोंको राज्यका एक २ देश जागीरमे दिया। राजा वीरसिंहदेव, बहादुरसिंहको अपनी राजधानीमे रखकर अपनी सेना सहित सम्राट्की सेनाके साथ दक्षिणको गये, उन्होने वहाँ जाते ही यह समाचार पाया कि उनके ज्येष्ठ पुत्र बहादुरसिंहदेव स्वय राजाकी उपाधि धारण करके राज्यशासन कर रहे है। वीरसिंह यह समाचार सुनकर पुत्रके आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और चार सवारोंको साथ लेकर दक्षिणके डेरोंसे अपने राज्यकी ओरको चले आये। राजा वीरसिंहदेवने खण्डेलासे दो कोशकी दूरीपर एक ग्राममे जाकर एक जाटकी स्त्रीके यहाँ डेरा लिया और उससे भोजन तैयार करनेके लिये कहा, और यह भी कहा किं हमारे घोडोंको सावधानीसे रखना, कहीं चोर आदि न लेजॉय। यह वचन सुनकर जाटकी स्त्रीने कहा, कि क्या "बहादुरसिंह यहाँके राजा नहो है? तुम राजमार्गमे सुवर्णकी मुद्रा फेंक आओ कोई भी उनको नहीं छू सकता"। पुत्रके ऐसे युक्तिसंगत राज्यकी प्रशसा सुनकर वृद्ध वीरसिंहदेव इतने प्रसन्न हुए कि वह जिस छद्मवेशसे आये थे उसीसे अपने डेरोंको लौट गये। वीरसिंहदेवने दक्षिण देशमे ही प्राण त्याग किये।

पिताकी मृत्युके पीछे बहादुरसिंह पिताके पदपर नियमितरूपसे अभिषिक्त हुए। इस समय दिल्लीके सम्राट् औरंगजेब स्वयं सेनासहित दक्षिणके युद्धमे लिप्त थे। बहादुर-सिंह भी अपनी सेनाके साथ दक्षिणात्यमे जाकर बादशाहकी सेनाके साथ जामिले। परन्तु बहादुरखाँ नामक एक प्रतिष्ठित मुसल्मान ने बहादुरसिंहका घोर अपमान किया था, गोड़ा मुसलमानको बादशाहके निकटसे उस अपमान करनेका कोई फल न मिला इससे तेजस्वी राजपूत बहादुर अपने डेरे त्यागकर चले आये। इसी कारणसे मनसबदार सरदारोंकी तालिकासे इनका नाम काट दिया गया। इस कठिन समरमे नरपिशाच औरंगजेबने प्रत्येक हिन्दू प्रजासे जिजियाकर संग्रह करके राज्यके समस्त हिन्दूमात्रको एकबार ही समभूमि करनेकी आज्ञा दी।

शेखावाटीके अधीश्वर राजा बहादुरसिंहके साथ जिस यवनसेनापति बहादुर-खाँकी शत्रुता होगई थी, दुराचारी औरंगजेबने उसी बहादुरखाँको खण्डेलासे जिजिया-कर संग्रह करने और खण्डेलादेशके समस्त देवमदिरोको तुड़वानेके लिये भेजा। बहादुरखाँके सम्राट्की सेनाके साथ खण्डेलाके सम्मुख पहुँचते ही खण्डेलाराज बहादुरसिंह कापुरुषोंकी तरह अपनी राजधानी छोड़कर भाग गये। सम्राट्की भयंकर सेनाके साथ जयकी आशा न देखकर यद्यपि वह भाग गये परन्तु जब जातीय धर्म जातीय विग्रह विध्वस करनेके लिये विजातीय विधर्मी इकट्ठे हुए थे तब यथार्थ राजपूत वीरोकी समान उनके लिये तो रणभूमिमे यथाशक्ति बल प्रकाश करके जीवनका बलिदान करना ही उचित था। सम्राट्की सेना खण्डेला राजधानीके दो कोशपर निर्विघ्नतासे आगई, समस्त शेखावत् देशमे यह समाचार फैलगया कि बहादुरसिंह खण्डेलासे भागगये। उसी समय यवन खण्डेलामे विग्रह मचाकर संपूर्ण मदिरोकी विध्वंस करने लगे। इस समय रायसालके दूसरे पुत्र भोजराजके वंशधर सुजानसिंह चापोली प्रदेशके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित थे। सुजनसिंहने इस समाचारको सुनते ही यथार्थ राजपूत वीरोकी

---

(१) पापात्मा औरंगजेबकी इस आज्ञाको किस प्रकारसे प्रबल आग्रहके साथ उसके सेवको ने पालन किया था उसके प्रत्यक्ष उदाहरणस्वरूप प्रत्येक नगर और गाँवोके अगणित देवालय एवं मंदिरोंके टूटे फूटे खंड़हर और खंडित मूर्तियां आजलों हीनदशामें पड़ी हैं, लाहौरसे कन्याकुमारी तक इतने बड़े प्रदेशमे ऐसी एक भी प्राचीनमूर्ति नहीं है, जिसका कोई न कोई अंग औरंगजेबकी आज्ञा पालनेके लिये न तोड़ दिया गया हो। नर्मदाके एक छोटे द्वीपपर ओंकारजीकी मूर्ति है, इस मूर्तिने भारतकी मूर्तियोके तोड़ते समय अपनी विचित्र शक्ति प्रकाशित की थी। नराधम औरंगजेबने कहा, कि–" यदि यथार्थ देवता हो तो अपनी शक्तिको प्रगट कर मेरी आज्ञा व्यर्थ करे "। इतिहास कहता है कि उक्त ओंकारजीके मस्तकमें लगुड़का आघात लगते ही उनकी नाक और मुखसे रुधिर की धारा वह निकली, उसको देखकर पापी यवनोंने दूसरीवार मूर्त्तिमें कुल्हाड़ा मारनेका साहस नहीं किया। यद्यपि ओंकारजीने पापी औरंगजेबको प्रत्यक्षमे किसी प्रकारका दंड नहीं दिया किन्तु उक्त समयसे ओंकारजीके प्रति सर्वसारधण हिन्दू मात्रकी प्रबल भक्ति होगई और उस देशकी समस्त मूर्तिमें ओंकारजीकी अधिक पूजाहोने लगी।

समान महाक्रोधित हो उसी समय यह प्रतिज्ञा की "कि मै अवश्य ही प्राणपणसे खण्डेलाके समस्त मंदिरोकी रक्षा करूंगा, यदि ऐसा न करूं तो अपना जीवन दे दूंगा"। जिस समय खण्डेलामे बादशाहकी सेनाने प्रवेश किया उस समय सुजानसिह मारवाड़की सीमामे विवाह करनेके लिये गयेथे, अतएव वह शीघ्र ही नवविवाहिता वधूके साथ अपने स्थानको लौट आये और उसको अपनी माताके समीप रखकर दोनोसे अन्तिम विदाले खण्डेलाकी ओर चले । इसी समय उनके समस्त कुटुम्बकेलोग भी आकर उनको खण्डेलामे जानेके लिये मना करने लगे, और बोले कि "जब बादशाहकी सेना खण्डेलाके मंदिरोको तोड़नेके लिये आई है तब खण्डेलाके राजा बहादुरसिहही इसको रोकनेका उपाय करैगे, आपको इस कार्यमे हस्ताक्षेप करनेका कोई प्रयोजन नही है"। इसपर क्रोधिताचित्त सुजानसिहने उत्तर दिया था,"कि क्या मै रायसालके वंशधरोमे नहीं हूं, यवन ठाकुरजीके मंदिरोको तोड़डालै और मै उनको निवारण न करसकूं झगड़के मिटानेका उपाय न करूं ! ! भला यह कैसे होसकता है ? राजपूत क्या कभी इस आक्रमणको सहन कर सकते है ?" इस कार्यमे सुजानसिहको दृढप्रतिज्ञ देखकर उनके कुटुम्बियोमेसे ६० वीर और भी उनकी सहायता करनेके लिये चले। और उसी अल्पसेनाके साथ सुजानसिहने खण्डेलामे प्रवेश किया, । यवनसेनापति बहादुरखाने यह नही विचारा था कि हमारे साथ लड़नेके लिये यह इस प्रकारसे आजायँगे इस कारण यह समाचार सुनकर वह अत्यन्त ही आश्चर्यमे हुआ । वह भली भाँतिसे जानगया कि जब राजपूत वीर किसी कार्यमे दृढ़प्रतिज्ञ हो जाते है तब वे महा भयंकर कार्य करडालते है, इस कारणसे अथवा यह स्मरण करके कि अत्यन्त सामान्य संख्यक राजपूत उसी प्रबल सेनाके विरुद्ध समर करके जीवन देनेके लिये आये है उसने दयाके वश हो सुजानसिहके दो बुद्धिमान अनुचरोको अपने डेरोमे सलाह करनेके लिये बुला भेजा,तदनुसार इधरसे दो सम्भ्रान्त राजपूत बहादुरखाँके डेरोमे जा पहुँचे,बहादुर खाँने उनसे कहा "यद्यपि बादशाहने खण्डेलाके देव मन्दिरोके तोड़नेकी आज्ञा दी है परन्तु यदि आप नियमितरूपसे हमारी अधीनता स्वीकार करके मन्दिरोके समस्त सुवर्णके कलशोको हमे देदेगे तो हम प्रसन्न होकर मन्दिरोको नही तोड़ेगे । यह सुनकर राजपूत वीरोने बहादुरखाँसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार बहुतसा धन देकर उक्त कार्य रोकनेका अनुरोध किया, पर बहादुरखाँने किसी भांति भी इस बातको स्वीकार नहीं किया। वह बारम्बार कहने लगा "कि आपको कलशे ही तोड़ कर देने होगे" इस वचनको सुनकर उक्त दोनो राजपूतोमेसे एक भी वीर धीरज धारण करनेको समर्थन हुआ, वह सिहकी समान गर्जने लगा "कलश उतार लेगे !" उसके इतना कहते ही उसी समय उसने एक मिट्टीके पिडका कलश बनाकर सम्मुख स्थापित कर क्रोधित सिहकी समान लाल २ नेत्र करके कहा, "कलश तोड़ लागे ? अच्छा, मैं कहता हूँ यदि तुममेसे किसीकी भी सामर्थ्य है तो इस मट्टीके कलशको ही पहिले तोड़कर देखलो ?" उस राजपूतके ऐसे क्रोध भरे वचन सुनकर शत्रु बहादुरखाँ भी मनही मनमे राजपूत जातिके साहसको धन्यवाद देने लगा । परन्तु वह कलश तोड लेनेकी प्रतिज्ञासे

विरक्त न हुआ। इसके पीछे वह दोनो राजपूत उसके डेरोसे चले गये, और सम्मुख युद्ध करनेका प्रस्ताव पक्का करगए।

हम जिस समयकी वात लिख रहे है उस समय तक खण्डेलामे कोई किला नही था। उच्च शिखर पर स्थित खण्डेलाके राजप्रासाद और उक्त विग्रह मूलमंदिरके वीचोंवीच जो एक भोहरा था, उसी मार्गके मध्यस्थानमे एक बड़ा तोरण (फाटक) था। सुजानसिहने अपनी कितनी ही सेना उस तोरणमे रखी और आप स्वयं कुटुम्बियोके साथ उस मंदिरकी रक्षापर नियुक्त हुए। यद्यपि वह इस बातको जानते थे, कि मुसलमानो की सेनाकी संख्या अधिक है, उनसे परास्त होनेकी संपूर्ण सभावना है, तथापि वह यथार्थ राजपूत वीरोकी समान अपने धर्मकी रक्षाके लिये अटलभावसे शत्रुओके आनेकी बाट देखने लगे, थोड़ेही समयके उपरान्त पापात्मा औरंगजेवकी सेनाने आगे वढ़कर तोरणद्वारकी रक्षा पर सन्नद्ध राजपूतोके ऊपर गोलियोकी वर्षा करनी आरंभकी। इसके उत्तरमे राजपूतसेनाने भी महापराक्रमसे आक्रमण किया। और शत्रुदलका संहार करते२ अंतमे उन सभीके प्राणोका नाश होगया। तव विजयी मुसल्मानोका दल मंदिरके रक्षक राजपूतोपर आक्रमण करनेके लिये आगे वढ़ा, यह देखते ही सुजानसिहके अनुचर राजपूत मंदिरमे स्थित प्रतिमाको प्रणाम कर नंगी तलवारे हाथमें ले कालान्तक कालकी समान शत्रुओंके सम्मुख आडटे। वे शत्रु सेनाका नाश करते२ अंतमें आप भी नाशको प्राप्त होने लगे। सबसे पीछे वीरश्रेष्ठ सुजानसिह रणभूमिमे सर्वदाके लिये निद्रित हुए। रणविजयी यवनोने तुरन्तही मंदिरोको तोड़फोड़ कर मूर्तियोको चूर्ण २ करडाला। जहाँ मंदिर थे वहाँ मसजिदे वनवादी। और उस मसजिदकी दीवारोकी जड़में उस पापीने मूर्तियोके टुकड़े भरवा दिये। कर्नल टाडू लिखते है कि "समस्त रजवाड़ेमें ऐसा एक भी प्रसिद्ध नगर नही है कि जिसमे पापात्मा औरंगजेबने मंदिरोके तोड़नेके लिये अपनी सेना न भेजी हो; और उन मंदिरोकी रक्षा करनेमे इस प्रकारसे राजपूतोने अपने जीवनका वलिदान न किया हो"। यवनसेनापपि वहादुरखॉने खण्डेलाको जीतकर वहाँ एक दल वादशाही सेनाका छोड़ दिया। परन्तु खण्डेलाके राजा बहादुरसिहके अधीनमे जो समस्त प्राचीन राजकर्मचारी नियुक्त थे विजयी वहादुरखॉने उन सबको शासन और राजस्वभागके कामोपर अपने अधीनमे रक्खा।

भागे हुए कायर वहादुरसिह समीपहीके एक नगरमे निवास करते थे। कुछ ही दिन पीछे वहॉके दीवानकी सहायतासे उन्होने बहादुरखाँसे उक्त देशकी पैदावारीका कुछ अंश और वाणिज्य शुल्कका कुछ अंश पानेकी अनुमति ली, अर्थात् उत्पन्न धान्यके मन पीछे एक सेर और वाणिज्य शुल्कके ऊपर रुपये पर एक पैसेके हिसाबसे उनको मिलने लगा। इस प्रकारसे राजा वहादुरसिह अतिकष्टसे कुछ समय व्यतीत करते रहे, पीछे बादशाहने इनको बाग और महल दे दिये। इसके पीछे जिस समय सैयदके दोनो भ्राता दिल्लीके वादशाहकी सभामे अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाते थे, उस समय बहादुर-सिहने उनको संतुष्ट कर अपने समस्त राज्यको पालिया, परन्तु उस समय भी खण्डेला

(१) तहसील उसूलका महकमा।

मे बादशाहकी एक सेनाका दल रहता था, और बहादुरसिंह उसका सारा खर्च देते थे। राजा बहादुरसिंहके तीन पुत्र थे। केसरीसिंह, फतेसिंह और उदयसिंह।

बहादुरसिंहकी मृत्युके पीछे केसरीसिंह पिताके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए, और जिस प्रकारसे इनके बापदादे खण्डेलाको शासन करते थे अर्थात् वे जिस भाँतिसे सेनाके साथ दिल्लीके बादशाहकी सेनाके अधीनमें रहकर स्वाधीनभावसे खण्डेलाको शासन करगये है उसी भावसे शासन करनेके अभिप्रायसे केसरीसिंहने अपने समस्त अनुचर और सेनाको इकट्ठा करके फतेसिंहके सहित बादशाहके डेरोमे जाकर सब प्रकारसे अधीनता स्विकार कर बादशाहकी आज्ञामे रहनेकी अभिलाषा की। खण्डेला बहादुरसिंहके पतनके साथ ही साथ रायसालकी ज्येष्ठ शाखासे उत्पन्न मनोहरपुरके अधीश्वरने सम्राट्के यहाँसे नष्ट हुई सामर्थ्यका फिर उद्धार करलिया था। इस समय जब केसरीसिंह फिर सम्राट्के डेरोमे आकर अपने वंशकी पूर्ण कीर्तिको संग्रह करनेके अभिलाषी हुए, तब उक्त मनोहरपुरपतिके हृदयमे ईर्षाग्नि प्रज्वलित होगई कि जिससे केसरीसिंह राजसभामे और स्वत्व प्राप्त न करसके। और वह ऐसे षड्यन्त्रोका विस्तार करने लगे कि उन्होने फतेहसिंहको कलाकौशलसे हस्तगत करके कहा "आप भी तो बहादुरसिंहके पुत्र है. खण्डेला देशपर आपका भी तो हक है इकले केसरीसिंह ही क्यो राज्यसुख भोगै? आप केसरीसिंहसे राज्यका आधा हिस्सा बँटालीजिये"। अज्ञानी फतेसिंहने मनोहरपुरपतिके उक्त वचनोसे उत्तेजित और ऊँची अभिलाषासे प्रदीप्त होकर भाईके साथ झगडा करना प्रारभ किया। खण्डेलाराज्यके दीवानने इन दोनो भ्राताओमे विवादकी अग्नि प्रज्वलित होते देखकर स्थिर किया, कि इससे तो सर्वनाश होनेकी संभावना है, इस कारण उसने शीघ्र ही खण्डेलाकी राजधानीमे जाकर राजमाताको समस्त वृत्तान्त सुनाकर दोनो भाइयोकी रक्षाके लिये और खडेलाके कल्याण साधनके निमित्त दोनो पुत्रोको राज्य बाँट देनेका अनुरोध किया। राजमाताने उस प्रस्तावमे अपनी सम्मति प्रकाशित की और केसरीसिंह और फतेसिंहने शीघ्र ही अपना २ भाग लेना स्वीकार किया तब खडेला देशकी समस्त जनसंख्या भूमिको पांच हिस्सोमे विभाजित कर दो भाग फतेसिंहको और राजा केसरीसिंहको तीन भाग दिये गए। इसी प्रकारसे राजधानी नगरके भी भाग करके विभाजित किये गये। इसी समयसे दोनो भ्राताओमेसे परस्पर प्रेम तो एक बार ही दूर होगया वरन वे एक दूसरेकी सूरतसे घृणा करने लगे। राजा केसरीसिंह राजा खंडेलाको त्याग कर कवटा नामक स्थानमे रहने लगे। वह जब कभी२ राजधानी खण्डेलामे आते तब फतेसिंह वहाँसे चले जाते थे। दोनो भ्राताओमे इस प्रकारसे भयकर विद्वेष चला जाता था। मनोहरपुरपति इस समय शेखावत् सम्प्रदायके सपूर्ण रूपसे नेता बनगये। इस प्रकारसे कुछ दिन व्यतीत होगये, राजा केसरीसिंहसे उक्त दीवानने गुप्तभावसे प्रस्ताव किया कि फतेसिंहको मारकर मनोहरपुरपतिकी प्रबलताको दूर करना अवश्य कर्तव्य है परन्तु राजा केसरीसिंह इस बातपर सम्मत हुए, चतुर दीवानजीने प्रगटमे दोनो भ्राताओमे मेल होनेकी इच्छासे कावटामे जानेकी तयारी

की। फतेसिहको इस वातका स्वप्नमे भी ध्यान न था कि मेरे प्राणनाशके लिये यह षड्यंत्र होरहा है। वह भाईके साथ प्रेम वढ़ानेकी इच्छासे कावटेमे आये और उसी समय तलवार मारकर उनके प्राण लेलिये गये। परन्तु इस हत्या करनेके मूलकारण दीवानजीने भी अपनी करनीका फल तुरन्त ही पालिया, उसने जो तलवार फतेसिहजी पर चलाई थी वही तलवार दीवानजीके भी गलेमे जाकर लगी, जिससे वह तुरन्त ही इस संसारसे विदा होगये।

राजा केसरीसिहने महापाप करके अपने भाईके प्राणोका नाश कर उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति और देशोको अपने अधिकारमे करलिया और दिल्लीके बादशाहके ऊपर प्रवंचना भक्ति दिखाकर केसरीसिहने इस प्रकारसे अपना मनोरथ पूर्ण किया। इस प्रकारसे संपूर्ण खडेलाराज्यका पूर्ण स्वत्व प्राप्त करके रेवासो स्थानका कर जो अजमेरके खजानेमे और खण्डेलादेशका कर नारनोलके खजानेमे दियाजाता था उसे भी इस समय वंद करदिया। इस समय सैयद अव्दुल्ला दिल्लीके वादशाहके यहाँ प्रधानमंत्रीपदपर अभिषिक्त था, वह केसरीसिहकी ऐसी अराजभक्ति देखकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ, और उन्हे इसका वदला देनेके लिये उसने खंडेलादेशपर एक सेना भेज दी। परन्तु राजा केसरीसिहने इस समय अपनी सामर्थ्यको इतना फैला दिया था कि जिससे शेखावत्की समस्त सम्प्रदायोंमे उनका अधिकार फिर प्रवल होगया था, सम्राट्की सेनाके आनेका समाचार सुनकर केसरीसिंहने समस्त शेखावत् सामन्तोको अपनी अपनी सेना सहित वुलाया–उनके उस वुलावे पर जातीय स्वत्व और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रत्येक रायसालोत् इकट्ठे होने लगे। अधिक क्या केसरीसिहके चिर शत्रु मनोहरपुरके सामन्त भी अपने धात्री पुत्रके अधीन वादशाहकी सेनाके विरुद्धमे केसरीसिह की सहायता देनेके लिये आये। राजा केशरीसिह इस प्रकारसे स्वजातीय सेनाके वलसे वलवान् हो वादशाहकी सेनाके साथ युद्ध करनेके लिये आगे वढे। सीमाके अन्तमे स्थित देवली नामक स्थानमे दोनो ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उस युद्धमे राजा केसरीसिहके भाग्यमे जयकी आशा शीघ्र ही असंभव होगई, शोचनीय जाति वैरने उनके भाग्यका द्वार तुरन्त ही वंद कर दिया। राजा केसरीसिहकी जय होते देख उनके जातिशत्रु मनोहरपुरपतिकी सेनाका सेनापति उनका धाभाई केसरीसिहका पक्ष छोड़ अपनी सेना सहित रणक्षेत्रसे इकवारगी हट। गया राजा केसरीसिह इस समय और भी एक विपत्तिमे पड़े। कासलीके जिस महावीर सामन्तने इस समय राजा केसरीसिहके पक्षमे सेनासहित प्रवल युद्धमे प्रवल पराक्रम प्रकाश किया था, जिसके ऊपर केसरीसिहको वड़ा भरोसा था, वह भी इस समय युद्धमे मारेगये। इस प्रकारसे केसरीसिंहको विपत्तिमे पड़ा हुआ देखकर दांता वा दाता देशके लाड़खानी सम्प्रदायके सामन्तनेताने इस सुअवसर पर अपना स्वार्थ साधन करना कर्तव्य विचारा। और कापुरुषोकी तरह युद्धभूमि छोड़कर राजा केसरीसिहके अधिकारी खासा देशपर अधिकार करनेके लिये सेना सहित वह उधरको चला गया।

इस समय युद्धभूमिमे चारोओरसे राजा केसरीसिहकी जयध्वनि होरही थी परन्तु उन्होने स्वजातिके उक्त असत् व्यवहारको देखकर अत्यन्त विपादपूर्ण हृदयसे कहा, "हापाप ! यदि जो इस समय फतेसिह जीवित होते तो वे कभी भी इस प्रकारसे मुझे पीठ न दिखाते, यद्यपि उपरोक्त दोनो सामन्त केसरीसिह को छोड़कर चले गये परन्तु वे इससे कुछ भी विचालित नही हुए । यथार्थमे रायसालोत्ने वीरकी समान रणक्षेत्रमे अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये उन्होने दृढ़प्रतिज्ञा की । इस समय दोनो ओरकी सेना प्रवल पराक्रमके साथ अपनी २ वीरता दिखारही थी । उसी समय उन्होने युद्धमे विषम वीरता प्रकाश करते हुए अपने छोटे भाई उदयसिहको बुलाया और उनको युद्धक्षेत्र छोडकर अपनी रक्षा करनेके लिये अनुरोध किया । इस प्रकार राजपूत वीरोके पक्षमे अपमानकारी आज्ञा पालन करनेमे उदयसिहने सर्वथा सम्मति प्रकाशकी । परन्तु जव राजा केसरीसिहने कहा कि "मैने अपने वंशके मस्तकपर कलंकका टीका देनेके लिये सेना सहित युद्धमेसे भागनेके लिये नही कहा मै स्वय रणक्षेत्रमे रहूँगा, तुम इस स्थानसे चले जाओ । यदि तुम भी मारे जाओगे,तो हमारा वश एकवार ही नष्ट होजायगा"। राजा केसरीसिहके यह वचन सुनकर दूसरे सामन्त भी उदयसिंहको रणक्षेत्र त्यागनेका अनुरोध करने लगे, उन्होने केसरीसिहको भी समरभूमिसे भागनेका आग्रह किया, परन्तु राजा केसरीसिहने कहा "नही अब हम जीवित रहनेकी इच्छा नही करते, मेरे मस्तकपर दो महापापोके कलककी रेखा खचित होचुकी है । मैने अपने भाईके प्राणनाश किये है, और विवाहके समय वीकानेरके चारणकविको विवाहका उपहार नही दिया । इसी कारण उसने मुझे शाप दिया था । इन दोनो कलकोके ऊपर कायर पुरुषोकी समान भागनेका तीसरा कलंक अव संचय करना नही चाहता, यह कह कर राजा केसरीसिहने फिर भी उदयसिहसे वही अनुरोध किया।तव उदयसिह इच्छा न होने पर भी भाईकी आज्ञानुसार रणभूमिसे चले गये ।

जिससे खण्डेलाका राज्य शत्रुओके हाथमे न जाय । जिससे खण्डेला देशपर शेखावत् वशका शासन प्रचलित रहै । उस महायुद्धमे स्थित राजा केसरीसिहने इसी लिये प्रचलित रीतिके अनुसार "मेदिनी माताको" रुधिर मांस, और मट्टीके पिड देनेका संकल्प किया । उन्होने शीघ्र ही अपने शरीरमेसे एक मांसका टुकडा काट डाला, किन्तु उस कटेहुए टुकडेसे प्रयोजनके अनुसार रुधिर न निकला । तव उन्होने अपने दूसरे अगको काटकर उसमेसे निकलेहुए रुधिरसे अपना सकल्प पूर्ण किया । कविश्रेष्ट मत्र पढने लगे, पिडदान समाप्त होगया, कविने कहा कि मेदिनीमाताने दान लिया है, आपके पीछे सात पुरुष खण्डेला पर राज्य करैगे ।

महाराज केसरीसिह पृथ्वीमाताके निमित्त इस प्रकारसे रुधिर मास और मट्टीका पिडदान करके सहारमूर्त्ति धारण कर नगी तलवार हाथमे ले युद्ध सागरमे कूद पडे । मनोहरपुर और दांताकी सामन्त सेनाने विश्वासघातकता करके पीठ दिखाई और केसरी सिहकी सेनाका वल भी अत्यन्त क्षीण होगया था, परन्तु उन्होने फिर भी अतुल पराक्रमके

साथ संग्राम किया। अंतमें यवनसेनाने विजय प्राप्त की और वीरश्रेष्ठ केसरीसिंह जन्म-भूमिके निमित्त रणशैयापर अनंत निद्रामें सोगये। उदयसिंह पहिलेसे ही खंडेलाको चले गये थे। पर विजयी बादशाहकी सेनाने खंडेला जीतकर उदयसिंहको बंदी कर लिया। खंडेलादेश बादशाहके अधिकारमें होगया; उदयसिंह बंदीभावसे तीन वर्षतक अजमेरके किलेमें रहे। तीन वर्षके पीछे उदयपुर और कासलीके शेखावत् दो सामन्तोंने सम्राट्की सेनाको विध्वंस कर फिर खंडेलाको स्वाधीनता देनेकी अभिलाषा की। किन्तु अजमेरके किलेमें बंद राजा उदयसिंह पर विपत्ति आपडनेकी आशंकासे उन्होंने गुप्तभावसे एक दूतको उदयसिंहके पास भेजकर कहला भेजा, कि "हमने खंडेलापर फिर अधिकार करनेका उद्योग किया है। पीछे अजमेरमें स्थित बादशाहके प्रतिनिधि आपको भी इसमें सम्मिलित समझेंगे, इस कारण आप अपनी निर्दोषिता दिखानेके लिये उक्त राजाके प्रतिनिधिसे कह दीजिये जिससे कि हम खंडेलापर अधिकार न करलें। जब आप उनसे ऐसा कहदेंगे तब वह कभी नहीं विचारेंगे कि आपहीके लिये हमने खंडेलाको विजय करनेका उद्योग किया है तथा आप भी इसमें शरीक हैं।" वह दूत उदयसिंहसे ऐसा कहकर लौट आया, उसी समय उदयपुर और कासलीके दोनों सामन्तोंने अपनी प्रबल सेनाके साथ हठात् खंडेलापर आक्रमण कर वहाँसे दिल्लीके बादशाहकी सेनाको परास्त करके और उसके सेनापति देवनाथको मारडाला। उदयसिंहने उक्त दोनों सामन्तोंके उपदेशसे पहिले ही अजमेरके यवनराजप्रतिनिधिको यह समाचार प्रगट कर दिया था, इस कारण राजप्रतिनिधिने उक्त दोनों सामन्तोंका खंडेला पर अधिकार करके समस्त सेनाके विनाशका समाचार सुना तो उसने विचारा कि अब किस प्रकारसे फिर उसपर अपना अधिकार होसकता है, इसीलिये उसने उदयसिंहके साथ सलाह की। उदयसिंहने कहा कि "यदि आप मुझको कैदसे छोड़दें तो मैं खंडेलादेशको फिर बादशाहके अधिकारमें करा सकता हूं उनके यह वचन सुनकर राजप्रतिनिधिने कहा "कि मैं आपको छोड सकता हूँ परन्तु आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन करैंगे इसका क्या प्रमाण है?" तब युवक उदयसिंहने कहा, "मेरे बंधु तथा कुटुम्बी कोई भी नहीं हैं, केवल एक वृद्धा माता है, मेरी साक्षीस्वरूपमें आप उनको बंदी रख सकते हैं"। वास्तवमें उदयसिंहकी वृद्धा माता अपने पुत्रकी साक्षिस्वरूप हो बंदीदशामें रहने लगी। अंतमें उदयसिंहने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरण किया कि जिससे राजप्रतिनिधि इनकी भक्ति और विश्वासको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उदयसिंहने उस राजप्रतिनिधिको बहुतसा धन भी दिया इससे राजप्रतिनिधिने अत्यन्त ही प्रसन्न होकर खंडेला देशका अधिकार इनको अर्पण किया।

उदयसिंह इस प्रकारसे पिताके नष्टहुए राज्यका फिर उद्धार करके खण्डेलाके सिंहासन पर विराजमान हुए, और सबसे पहिले वह अपने समस्त स्वजातीय और अनुचरोंकी सेनाको इकट्ठा करने लगे। मनोहरपुरके अधीश्वरको विश्वासघातकतासे ही खंडेलाका पतन हुआ था, इसको स्मरण करके उनको उचित दंड देनेके लिये उन्होंने शीघ्र ही प्रबल सेनाकी सृष्टिकी। मनोहरपुरपतिने उदयसिंहको अपने नगर पर

आक्रमण करनेके लिये आता हुआ देखकर अपने धाभाईके हाथमे सेनाका भार अर्पण कर उसीको युद्ध करनेके लिये भेजा। परन्तु वह तो मुकाविला होनेके पहिले ही अपने प्राण लेकर भाग गया,इस कारण विजयी उदयसिहने सरलतासे मनोहरपुरको जा घेरा। जव मनोहरपुरपतिने शत्रुओसे अपनेको घेरा हुआ देखा तब वह अपने उद्धारका उपाय शोचने लगे, और षड्यंत्र करने लगे। कासलीके सामन्त दीपसिहने सेनासहित उदयसिहके अधीनमे मनोहरपुरको घेर लिया था। अस्तु मनोहरपुरपतिने दो विश्वासी सामन्तोके हाथ एक पत्र लिखाकर दीपसिहको जनाया कि "उदय सिह केवल मनोहरपुरपर ही अधिकार करके शान्त न होगे यह हमे भली भाँतिसे विश्वास होगया है, वह मनोहरपुर पर अधिकार करनेके पीछे आपके अधिकारी देश कासलीको भी जीत लेगे, यह आप निश्चय जानिये।" दीपसिह इस पत्रको पाकर इस पर संपूर्णतः विश्वास कर दूसरे दिन प्रभात होते ही जिस समय मनोहरपुर पर अधिकार करनेके लिये रणभेरी वजने लगी, उसी समय उस सामंतने अपनी सेनासहित डेरोको छोड़ दिया, और वह अपने देशकी ओरको चला गया। उदयसिह इस षड्यत्रको कुछ भी नही समझे, इस कारण दीपसिहको उस भावसे भागता हुआ देख तथा उसी कारणसे मनोहरपुर पर अधिकार करके अपना बदला लेनेमे सफलता न देखकर वह मारे क्रोधके उन्मत्त होगये, और शीघ्रतासे सेना सहित दीपसिहके पीछे चले। दीपसिह भलीभाँतिसे जानगये कि यह किसी प्रकारसे भी उदयसिहके आक्रमणको निवारण नही करसकैंगे, इस कारण वह कासलीको छोड़कर जयपुरके महाराजका आश्रय लेनेके लिये भागगये। यद्यपि उदयसिहने कासलीपर अपना अधिकार करलिया। परन्तु मनोहरपुरपतिने उक्त षड्यंत्रजालके विस्तारसे शत्रुओके हाथसे उद्धार पाया, महावीर जयसिह इस समय आमेरके सिहासनपर विराजमान थे, उन्होने शरणागत दीपसिहको अभय देकर कहा कि "यदि आप शपथ करके हमारी अधीनता स्वीकार कर हमको कर देनेमे सम्मत हो सामन्तोकी श्रेणीमे नियुक्त हो तो मै उदयसिहसे कासली देशको छीनकर आपको देदूगा, और उदयसिहको इसका उचित दंड दूंगा।" दीपसिंहने इन धीरजदायक वचनो पर विश्वास करके शीघ्र ही आमेरराजके अधीनता-स्वीकार पत्रपर हस्ताक्षर करदिये, और जयपुरेश्वरको वार्षिक चार हजार रुपया कर देना भी स्वीकार करलिया।

इस प्रकारसे शेखावत्के सामन्तोकी सम्प्रदायके ऊपर वहुत दिनोके पीछे जयपुरपतिके आधिपत्य विस्तारका फिर सूत्रपात हुआ, हमारे पाठकोको यह तो भलीभाँतिसे स्मरण होगा कि जिस समय शेखावत्के सामन्तोकी संख्या वहुत सामान्य थी, और उनकी सेनाकी सख्या कई सौ थी, उस समय प्राचीन रीतिके अनुसार अमृतसरसे घोडोके वच्चे करस्वरूप देनेमे शेखावत्के नेता असम्मत हुए थे, और इसी कारणसे आमेरपतिके साथ प्रवल समर उपस्थित हुआ था। उसीके फलस्वरूपमे शेखावत् पतिने आमेरराज्यकी अधीनताकी शृंखला भगकर सव प्रकारसे स्वाधीनताको सग्रह कर लिया था। पर आज इतने दिनोके पीछे उस शेखावत्

देशमें फिर आमेरराजवंशके आधिपत्यका विस्तार आरंभ हुआ। जब कासलीके सामन्त दीपसिहने इस प्रकारसे वश्यता स्वीकार करके कर देनेमे अपनी सम्मति प्रकाश की, तब कई दिनोके पीछे आमेरराज जयसिह सूर्यग्रहणके समय गंगाजी पर स्नान करनेके लिये गये। उस समय दीपसिह भी उनके साथ गये। जयसिहने गंगाजीके निकट जा स्नानकर ब्राह्मण और दीन दरिद्रियोको धन देनेके लिये उद्यत हो एक सेवकसे पूछा, "आज कौन दान लेनेके लिये उपस्थित है?" कसालीके सामन्त दीपसिहने यह वचन सुनकर महाराज जयसिहके सम्मुख अपने अँगरखेका दामन फैलाकर कहा, "मैं आपकी कृपाका प्रार्थी हूँ"। महाराज जयसिहने हँसकर कहा, "इस दानको ब्राह्मण, संन्यासी और दरिद्री लेसकते है। आप क्या चाहते है?" दीपसिहने उसी समय उत्तर दिया कि "आपकी कृपासे फतेसिंहके पुत्रको खडेला देशके वह अंश जिनपर इनके पिताका अधिकार था मिलजाय, आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है"। महाराज जयसिहने गंगाजीके किनारे खडे होकर प्रतिज्ञा की कि मै आपकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करूँगा।

सन् १७१६ ईसवीमे यह घटना हुई थी, इस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर मस्तक ऊँचा कर रही थी, और आमेरपति महाराज जयसिह इस समय दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रतिनिधिस्वरूपसे अगणित सेनादलके ऊपर सेनापतिभावसे नियुक्त थे। और समस्त नीची श्रेणियोके राजा उनके अधीनमे रहते थे।करौली भदावर, शिवपुर और अन्यान्य देशोके तीसरी श्रेणीके राजाओमे खंडेलाके राजा उदयसिह भी इस समय अपनी सेना सहित जयपुरके महाराजके अधीनमे रहते थे, महाराज जयसिहने जाट जातिके नवीन बलसे बलवान नेता चूडामणिके अधिकारी थून नामक किलेको इस समय घेर लिया, उक्त राजाओके साथ खंडेलापति उदयसिहने भी उनकी सहायता की। परन्तु उदयसिह नियम सहित अपने कर्तव्यको पालन न करसके,इसपर जयसिहने उनका महा तिरस्कार किया। जयसिह उदयसिहके निकटवर्ती उच्च कक्षाके प्रभु अधीश्वर और सम्राट्के प्रतिनिधि थे। उदयसिह उनके ऊपर विशेष सम्मान दिखानेको बाध्य थे, तथापि वह न्यायके विरुद्ध इस तिरस्कारको न सहन कर क्रोधित हो उक्त स्थानको छोड़कर सेना सहित वहांसे चले गये। महाराज जयसिहने दीर्घकालतक थूनक किलेको घेरकर जिस समय वह किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण संभावना करने लगे, उस समय थूनपति चूडामनने गुप्तभावसे दिल्लीके बादशाहके मंत्री सैयदके साथ संधिबंधन कर लिया। इस कारण जयसिह नव बलसे बलवान् हुए जाटपतिको उचित दंड देनेमे असमर्थने हो अत्यन्त व्यथित होगये,परन्तु खडेला राज उदयसिहको उस गुप्त संधिका एक नेता मानकर उसको उचित दड देकर अपना बदला लेनेके लिये उद्यत हुए।

उदयसिहने खंडेलाके शासनका अधिकार पाकर वहाँ उदयगढ़ नामक एक दुर्भेद्य किला बनवाया, इस कारण उन्होने जयसिहके खंडेला जयकी इच्छा जानकर सेनासहित उस किलेमे प्रवेश किया, और दृढ़भावसे वहाँ रहने लगे। इस ओर महाराज जयसिहने बाजीदखाँके अधीनकी समस्त सामन्त सेना और जयपुरकी राजसेनाको

इकट्ठा करके उस उदयगढ़को जा घेरा। उदयसिंह अपने नामसे बनाये हुए, उस उदयगढ़मे एक महीने तक रहे। पर जब उन्होने देखा कि भोजनकी समस्त सामग्री समाप्त होगई है, भूखोके मारे सेनाके प्राण नाशकी संभावना है तब वह उसी समय किलेको छोड़कर मारवाड़के अन्तर्गत नारू नामक स्थानको चले गये। उदयसिंहके पुत्र सवाईसिंहने पिताको भागा हुआ देखकर विजयी जयसिंहके चरणोमे आत्मसमर्पण करके किलेकी ताली उनके हाथमे दे कृपाकी प्रार्थनाकी। महाराज जयसिंहने उसको बड़े आदरसहित ग्रहण कर क्षमाकिया, और उसको आमेरकी अधीनता स्वीकार करने के लिये कहा। कासलीके अधीश्वरकी समान सवाईसिंह आमेरराजकी वश्यताके स्वीकार पत्रपर अपने हस्ताक्षर करके वार्षिक एक लाख रुपया कर देनेके लिये सम्मत हुए। समय पर उक्त करमे से पंद्रह हजार रुपया घटाया गया और फिर खडेलापति आमेरराजको ६४ हजार रुपया प्रत्येक वर्षमे कर स्वरूपसे देने लगे। पीछे जब आमेरराजका प्रताप अत्यन्त हीन होगया और मरहठे तथा पठानोके तस्करदलने आमेराजके चारोओर अत्याचार करने आरंभ करदिये। तब जयपुरपति खडेलासे नियमित करके संग्रह करनेमे असमर्थ होगये, और उस समय करका परिमाण भी पहिलेकी समान नही रहा। यद्यपि आमेरराज जयसिंहने सवाईसिंहको अभय देकर उनको खंडेलाके शासनका अधिकार और शेखावत् सम्प्रदायके नेताकी उपाधि दी थी, परन्तु उन्होने गंगाजीके किनारे कासलीके अधीश्वरके सम्मुख जो प्रतिज्ञा की थी कि फतेसिंहके पुत्रको खडेलाका पूर्व अधिकार दिया जायगा, उसको स्मरण करके इस समय उस प्रतिज्ञाके पालन करनेमे भी शान्त न हुए। फतेसिंह जिस प्रकार खडेलाराजके दो अंशोको भोगते थे उनके पुत्र धीरसिंहको वही अंश दिये गये। इस प्रकारसे सवाईसिंहके दोनो जाति भ्राता खडेलाका अधिकार पाकर अपने अधीश्वर प्रभु जयसिंहके अधीनमे सेना सहित चले गये। सवाईसिंहके खंडेलाके छोडते ही इस सुअवसरको पाकर उदयसिंहने लाडखानी नामक स्वजानीय एक दल मदस्वभाव राजपूतोकी सहायताको लेकर हठात् उदयपुर पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकारमे करलिया। पुत्र सवाईसिंहने पिताका यह आचरण जयपुरके महाराजको कह सुनाया, जयपुरपति महाराजने शीघ्र ही सवाईसिंहके साथ सेनाको खडेलामे भेजकर उदयसिंहको भगा देनेकी आज्ञा दी। सवाईसिंहने तुरन्त ही महाराजकी आज्ञानुसार जयपुरकी सेनाके साथ उदयगढ़पर आक्रमण कर वहाँसे अपने पिताको भगा दिया। सवाईसिंहके उदयगढको घेरनेमे उदयसिंहने पहिले ही से विशेष बाधा दी थी और अतमे फिर पहिलेकी समान नारूदेशको भाग गये। उन्होने अपने जीवनके शेष अंशको उस नारूदेशमे ही व्यतीत किया और पुत्र सवाईसिंहने उनके खर्चके लिये प्रतिदिन पाँच रुपया नियत करदिया था, परतु सवाईसिंहने पिताकी मृत्युके पहिले ही इस ससारको छोडदिया। सवाईसिंहके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, बडा वृन्दावन, बिचला शम्भु और छोटा कुशल था। बडा पुत्र खडेलाके राजपद पर प्रतिष्ठित हुआ, मध्यम रानोली देश पर और छोटा पिपरौली देशपर स्थित हुआ।

द्वितीय अध्याय २.

वृन्दावनदास–उनका आमेरपति माधवसिंहकी सहायता करना–और माधवसिंहका वृन्दावनदासको सम्पूर्ण खंडेलाका राज्य देना–वृन्दावनदासके साथ इन्द्रसिंहका युद्ध–वृन्दावनका प्रजा और ब्राह्मणोंसे दण्डस्वरूप कर लेना–उसके उपलक्षमे ब्राह्मणोका आत्मनाश–माधवसिंहका पहिली आज्ञाका उल्लंघन करना–ब्राह्मणोको धन देना–इन्द्रसिंहको फिर पिताके अधिकारका प्राप्त होना–खंडेलाके दोनो राजाओंमे झगडा–फिर समर–नजफ अलीखॉ पर आक्रमण–पापोके नाश होने के लिये वृन्दावनका ब्राह्मणोको भूवृत्ति देना–उनके पुत्र गोविन्ददास पर आपत्ति–वृन्दावनका खंडेला राज्यका अधिकार पुत्रके हाथमे देना–गोविन्दसिंहका हत्याकाण्ड–नरसिंहको पिताके पदकी प्राप्ति–शेखावाटी देशपर महाराष्ट्रोंका अत्याचार–महाराष्ट्रोके द्वारा खंडेला पर आक्रमण करनेका उद्योग–संधिका प्रस्ताव–महाराष्ट्रोके द्वारा खंडेलाके दो सामन्तोंकी हत्या–प्रतिहिंसा देनेके लिये इन्द्रसिंहका उद्योग–इन्द्रसिंहका प्राण त्याग–प्रतापसिंह–महाराष्ट्रोको कर देना–नरसिंह और प्रतापसिंहका खंडेला पर शासन–सीकरके सामन्तोकी प्रबलताका विस्तार–सीकरके सामन्तोके दमनके लिये नन्दराम हलदियाका सेना सहित आगमन–सीकरपतिके साथ विचित्र उपायसे संधि स्थापन–प्रतापसिंहका समस्त खंडेला पर अधिकार प्राप्त करना–रावल इन्द्रसिंह–चौमूके सामन्तको पदसम्मान प्राप्त होना–प्रतापका समस्त खंडेलापर अधिकार करनेकी चेष्टा करना–युद्ध–नरसिंहका फिर पैतृक स्वत्व प्राप्त करना–जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंका एक साथ मिलना–नन्दराम हलदियाको पदसे अलग करना–राड़ाराम–शेखावाटीके अधीश्वरके साथ आमेरराजकी संधि–आमेरराजका संधिभंग–सामन्तोका अपने बलसे अपने २ अधिकारी देशोंको ग्रहण करना–नरसिंहकी आमेरराजको कर देनेमें असम्मति–आमेरराजका खंडेला राज्यपर अधिकार करना–कौशलद्वारा नरसिंहको बंदी करके उसे आमेरके कारागारमें रखना।

वृन्दावनदास जिस समय खंडेलाके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित हुए, उस समय आमेरके सिंहासनको लेनेके लिये माधवसिंहने ईश्वरीसिंहके साथ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित की थी। वृन्दावनदास पहिलेसे ही माधवसिंहका पक्ष समर्थन कर सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करते थे, जिस समय माधवसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए, उस समय उन्होंने उपकारी वृन्दावनदासके प्रति उपकार करनेकी इच्छाकी। वृन्दावनदासने यह प्रार्थना करी कि खंडेलाका राज्य दो भागोंमें विभक्त होकर उसमें दो प्रतिवासी अधीश्वर स्थित हैं, इसलिये आपसमें बहुत दिनोंसे झगडा और युद्ध चला आरहा है। इस कारण उस वृथा रक्तपातको दूर करनेके लिये एकके हाथमें खंडेलाका राज्य देना उचित है, ऐसा करनेसे फिर परस्परमें क्लेश नहीं होगा। इस समय फतेसिंहके पुत्र धीरसिंहके अप्राप्त व्यवहार पौत्र इन्द्रसिंह खंडेलाके अन्यान्य अंशोके अधीश्वर थे। आमेरपति माधवसिंहने वृन्दावनदासकी कामनाको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही उसके अधीनमें पांच हजार सेना भेजकर इन्द्रसिंहको भगानेकी आज्ञा दी, वृन्दावनदास इस प्रकारसे उस पांच हजार सेनाके साथ शीघ्र ही खंडेलापर गये, और उसने इन्द्रसिंह पर आक्रमण किया। इन्द्रसिंह प्रबल पराक्रमके साथ कई महीनेतक

किलेमे रहे, और अंतमे प्रबल वलशाली शत्रुओके कराल ग्राससे अपनी रक्षा करना असंभव विचार कर वह शीघ्र ही किलेको छोड़कर पारासोली स्थानको चले गये। वृन्दावनदासने फिर वहाँ जाकर इन्द्रसिंह पर आक्रमण किया, उन्होने कुछ कालतक अपनी रक्षा करके अंतमें आत्म समर्पण करना ही कर्त्तव्य समझा। उस समय इनके सैाभाग्यसे ही एक विचित्र घटना हुई, उसीसे उन्होने अपना उद्धार कर लिया। यही नही, वरन अपने पिताके अधिकारको भी फिरसे प्राप्त करलिया।

आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनदासके अधीनमे जो पांच सहस्र सेना भेजी थी, उसके वेतन देनेका भार वृन्दावनके ही ऊपर रक्खा गया था, परन्तु वृन्दावनके पूर्व पुरुष खजानेकी रक्षा भलीभांतिसे न करसके थे, उसी प्रकार वृन्दावनने भी शीघ्र ही उस सेनाका वतन देनेके लिये अन्य उपायका अवलम्बन किया। वृन्दावनने सर्व साधारण प्रजासे और देवालयोसे दंड लेना आरंभ कर दिया। उसने अन्याय करके ब्राह्मणोके निकटसे कर ग्रहण किया था, इससे वे महा क्रोधित होकर वृन्दावनको धिक्कार देने लगे, परन्तु वृन्दावनने कुछ भी ध्यान नही दिया, कारण किं इस समय तो किसी उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उसने आवश्यक समझा, इधर ब्राह्मणोने वृन्दावनदासका अपमान किया और उसके कहनेपर भी कुछ नही सुना, तथा उसको बलपूर्वक कर ग्रहण करते हुए देखकर वे लोग शीघ्र ही रजवाड़ेमे बहुत समयसे प्रचलित रीतिके अनुसार आत्मघात करके वृन्दावनको ब्रह्महत्यारूपी महापापका भागी करनेके लिये उद्यत हुए। उनके दलके दल वृन्दावनके सम्मुख जाकर अपने २ शरीर पर अस्त्राघात करके अपने प्राणोका बलिदान करने लगे। इस ब्रह्महत्याके कारणसे वृन्दावनदास अपनी जातिसे पतित होगये। इधर परम हिन्दू आमेरराज माधवसिंहने, वृन्दावनको बलपूर्वक ब्राह्मणोसे दंड लेते हुए देखकर और इसीसे ब्राह्मणोको आत्मघात करते हुए देखकर अपनेको भी अप्रत्यक्ष भावसे उस ब्रह्महत्या पापके अंशका भागी जानकर शीघ्र ही, उस भेजीहुई सेनाको आमेरमे बुला भेजा, और दंडित ब्राह्मणोको अपनी राजधानीमे बुलाकर उनको वीस हजार रुपये दिये। इस प्रकार वृन्दावनदासके अन्यायकार्यसे सेना बलहीन होगई, और घोर विपत्तिमे पड़े हुये इन्द्रसिंह सहसा श्रेष्ठ उपायको प्राप्तकर अपने समस्त सेवको को फिर इकट्ठा करके आमेरपतिका अनुग्रह संग्रह करनेके लिये बाहर हुए। इसी समय माचेडीके राव आमेरराजके विषैले नेत्रोमे पतित होनेसे, खुशालीराम वोहरा आमेरराजकी ओरसे समस्त सेना लेकर माचेड़ीके रावपर आक्रमण करनेके लिये जारहे थे, इन्द्रसिंह आयाचित होकर समस्त सेनाके साथ उस आमेरकी सेनाको लेकर माचेडीके रावके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचेड़ीके रावने देखा कि इस समय अपनी रक्षा करना असभव है तब उसने तुरन्त ही जाटोके अधीश्वरके निकट जाकर उसकी शरण ली। उक्त माचेडी पर बहुत समय तक इन्द्रसिंहने इस प्रकारस अपने बलविक्रमके द्वारा आमेर राजका उपकार किया, इससे आमेरपति इनके ऊपर परम प्रसन्न हुए, इस समय इन्द्रसिंहने भेटमें आमेरपतिको पचास हजार रुपये भी दिये। तब आमेरराजने नियमित पट्टा देकर फिर उनको खंडेलाराज्यमे पिताका अंश देदिया।

यद्यपि इन्द्रसिहको अपने स्वामी आमेरराजसे राज्यकी सनद मिल गई, परन्तु वृन्दावनदासके साथ उनकी बराबर शत्रुता चली आती थी। खण्डेलाके दोनों राजाओंने अपने २ किलेको भलीभाँति सेनासे पूर्ण करके आत्मविग्रहके समुद्रको बराबर मथन करनेमे त्रुटि न की। इस परस्परके झगड़ने धीरे धीरे ऐसी भयंकर मूर्ति धारण की, कि ऐसा द्रोह आजतक किसी जातिमें भी नहीं हुआ था। पिताके साथ पुत्र, चचाके साथ भ्रातृपुत्रने सांसारिक सम्बन्ध बंधनको भूलकर उस झगड़ेके मुखमें युद्धकी अग्नि प्रज्वलित करदी।

वृन्दावनदास जिस प्रकारसे सेनाके बलसे वीरता और बलविक्रमसे बलवान होगये थे, इन्द्रसिहने भी उसी प्रकार प्रजाके ऊपर असीम प्रेम और भक्ति दिखाकर अपना पक्ष प्रबल करलिया था। इन्द्रसिह एक समय अपनी सेना साथ लेकर वृन्दावनदासके उदयगढ़ नामक किलेपर अधिकार करनेके लिये चले, उनके विपक्ष वृन्दावनके छोटे पुत्र रघुनाथसिहने आकर उस समय अपने जन्मदाता पिताके साथ युद्ध करनेके लिये इन्द्रसिहका साथ दिया। वृन्दावनदासने अपने उक्त पुत्र रघुनाथको कुचोर नामक देशका अधिकार दिया था, परन्तु रघुनाथने पिताकी असम्मतिसे और भी तीन देशोंको अपने अधिकारसे करलिया था। इसीसे वृन्दावनने क्रोधित हो रघुनाथ पर अपना बल प्रबल करनेकी इच्छासे इन्द्रसिहके साथ मेल किया था। वृन्दावनदास गुप्तभावसे इन्द्रसिहके बलको घटानेके लिये कितनी ही सेना साथमे लेकर कुचोर पर आक्रमण करनेके लिये चले। तब रघुनाथने इन्द्रसिहका साथ छोड़ कर उनके भानेजे रानोलीके सामन्त पृथ्वीसिहको साथ लेकर कुचोरकी रक्षा करनेके लिये उधरका रास्ता लिया। परन्तु वृन्दावनदास पहिले ही कुचोरपर अधिकार करनेमे असमर्थ हो जिस समय खण्डेलाकी ओरको जा रहे थे, उस समय मार्गमे इन्द्रसिह और रघुनाथने सेना सहित इनका मार्ग रोका। जिससे किसी ओरका भी मनुष्य नगरमे प्रवेश न करने पावे, इस लिये खण्डेला नगरके द्वारको बंद करादिया। जिस समय इन्द्रसिहने वृन्दावनका मार्ग रोका उसी समय उदयगढ़ पर भी आक्रमण हुआ था। वृन्दावनके बडे पुत्र गोविन्दसिहने जिस प्रकार प्रबल विक्रमके साथ उदयगढकी रक्षाकी थी, उसी प्रकारसे इन्द्रसिहके शत्रु चिरानाकै सामन्त नाहरसिंहने उदयगढ़पर अधिकार करनेके लिये विशेष चेष्टा की थी। क्रमानुसार कितने ही दिनोतक प्रतिदिन नगरके बाहर युद्ध होता रहा; उस युद्धमे पितापुत्र, पितृव्य, भ्रातृपुत्र और जातिके भ्राता परस्पर संहारमूर्ति धारण करके आक्रमण करने लगे। अंतमें दोनो पक्ष अत्यन्त हीनतेज होगये, वृन्दावनदास अन्तमे इन्द्रसिहके पहिले अधिकार देनेको बाध्य हुए। इन्द्रसिहने इस प्रकारसे अपने अधिकारको पाकर खण्डेलाका आत्मविग्रह शान्त किया।

यद्यपि खण्डेलाराज्यपर शान्तिकी वर्षा होगई, परन्तु शीघ्र ही और एक शत्रुने आकर शेखावाटीके देशोपर अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इसी समयमे लुप्तप्रताप

(१) उर्दूतर्जुमे भतीजे।

और हीनवल दिल्लीके वादशाहकी सेनाका सेनापति नजफकुलीखाँ एकवार ही अंतिम वलके साथ अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेके लिये वादशाहकी सेनाके साथ शेखावाटी राज्यमे आपहुँचा। माचेड़ीके विश्वासहन्ता राव उस यवनसेनापतिकी विशेष सहायताके लिये तत्पर थे। वही उसको शेखावाटीमे लाये थे, उसने प्रत्येक देशके अधीश्वरके ऊपर अनेक भांतिके अत्याचार कर वलपूर्वक दंड संग्रह करना प्रारंभ कर दिया। नवलगढ़के नवलसिह खेतड़ीके वावसिह, वसाऊके सूर्य्यमल इत्यादि सिद्धानी सम्प्रदायके अधीश्वर उस यवनसेनापतिके निरधारित दंडस्वरूप कई लाख रुपये देनेमे असमर्थ होगये। तव नज़फ़कुलीखॉने उनको वंदी करलिया। शेपमे शेखावाटीके दीनदरिद्री किसानोसे कई लाख रुपये संग्रह करके वह समस्त धन यवनसेनापतिको दे दिया, इसके पीछे उक्त सामन्तोको मुक्ति प्राप्त हुई।

इस प्रकारसे खंडेलाराज्यमे आत्मविग्रह दूर होनेके पीछे धनके लोभी ब्राह्मण दिन प्रतिदिन वृन्दावनदासको जातिवध इत्यादि महापातकोका भय दिखाकर उसे उन पापोके नाशके लिये प्रायश्चित्त और भूसम्पत्ति दान करनेके लिये उत्तेजित करने लगे। वृन्दावनदास और उपाय न देख ब्राह्मणोकी शापसे प्रायः प्रतिदिन उनको राज्यके एक २ देशकी भूमिका अधिकार देकर अपने पापनाश करनेमे प्रवृत्त हुए। उनको इस प्रकारसे अपने भविष्य वंशधरोका स्वत्व लोप करते हुए देखकर उनके बड़े कुमार गोविन्ददास महाविरक्त हो उनके इस कार्यमे प्रवल प्रतिवाद किये विना न रहसके। वृन्दावनदासने अन्तमे अपने बड़े पुत्र गोविन्दके करकमलमे खंडेलाराज्य देकर केवल अपने प्रतिपालन करनेके लिये पांच नगरोका भूस्वत्व और खंडेलाराज्यका कुछ कर नियुक्त कर सिहासन छोड़ दिया।

यद्यपि पिताके वर्तमान समयमे ही गोविन्दसिह खंडेलाके राज्यसिहासन पर अभिपिक्त हुए थे, परन्तु उनको वहुत समय तक रायसालोत् गणोंके अधीश्वर पदका सम्मान भोग करनेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। वह जिस सालमे सिहासन पर अभिपिक्त हुए उस वर्पमे वर्पाके न होनेसे राज्यमे प्रयोजनके अनुसार धान्य उत्पन्न न हुए इसीसे प्रजामें चारोओर हाहाकार मचगया, और प्रजा करदेनेसे छुटकारा पानेके लिये प्रार्थना करने लगी। नारोली देशके अधीन सामन्तने खण्डेला-राज्यके गोविन्दसिहको इस समय यह सलाह दी कि आप एकवार राज्यमे घूमकर, खुद अपनी आँखोसे खेतीकी अवस्था देख आवे फिर आप इसपर विचार कर सकते है, कि इस समय प्रजासे कर लेना ठीक है या नही। गोविन्दसिह अपने पिताकी अपेक्षा अधिक कुसंस्कारहीन थे, इस कारण ब्राह्मणोने उनको पूस मासकी अमावस्या तिथिमें भ्रमण करनेके लिये वाहर जानेका निषेध किया, और कहा कि आपके जानेके लिये आज अच्छा दिन नहीं है, आज जानेसे अमगल होनेकी संभावना है, परन्तु गोविन्दसिहने उनकी वात पर किंचित् भी ध्यान न दिया और खेतीकी अवस्था देखनेके लिये वाह उसी दिन चले। काजरोली स्थानका निवासी एक सेवक गोविन्दसिहके

साथ गया था । गोविन्दसिहने उस सेवकके पास कितने ही वहुमूल्य द्रव्य रख दिये थे । उस सेवकने अपनी असावधानीसे उन सब द्रव्योको खोदिया । परन्तु अधीश्वर गोविन्दसिंहने उन समस्त मूल्यवान् द्रव्योके खोजानेसे उसका बहुत तिरस्कार किया, सेवकने अपनी निर्दोषिताके बहुतसे प्रमाण दिखाये, परन्तु राजा गोविन्दसिहने किसी प्रकार भी सेवककी वातका विश्वास न किया । स्वामीको इस प्रकारसे अत्यन्त क्रोधी देखकर और अंतमे अपनेको किसी भारी दंड मिलनेकी सभावना विचार कर उस सेवकने रात्रिके समय अपने स्वामी गोविन्दसिहके प्राण लेलिये । गोविन्दसिहके औरससे पॉच पुत्र उत्पन्न हुए (१) नरसिह, (२) सूर्यमल्ल (इन्है दोदिया देश मिला था) (३) वाघसिह (४) ज्वानसिह और (५) रणजीत (इनसे प्रत्येक वंशका ही विस्तार हुआ था)।

पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे नरसिह खंडेलाके सिहासन पर विराजमान हुए । परस्परमें प्रवल आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे और निकटवर्ती राज्योमे अनैक्यताके बढ़ जानेसे शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोने अपने २ अधिकारी देशोकी सीमाको वढ़ा लिया, और उनकी प्रजाकी संख्या भी क्रमशः बढ गई । अतुल बलशाली मुगलसम्राट्के वंशधर इस समय केवल नाममात्रके वादशाह थे, अन्य पक्षमे शेखावाटीके निकटवर्ती उपरितन प्रभु आमेरराज इस समय उनसे किंचित् कर, सम्मान और समय २ पर सेनाकी सहायता मिलनेसे अत्यन्त संतुष्ट हुए थे, उन्होने सेखावत् नेताओ की जातीय स्वाधीनताके ऊपर इस समय हस्ताक्षेप करना उचित न समझा । परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय और एक शत्रुदलने आकर दर्शन दिया । वह शत्रुदल समधर्मावलम्वी होनेपर भी अत्याचारी मुसल्मानोकी अपेक्षा अधिक उत्पीड़क और विध्वंसकारी था । वह शत्रुदल नवीन वलसे उद्दीप्त महाराष्ट्रोका दस्युदल था ।

जब महाराष्ट्रोके नेताके अधीनमे स्थित फरासीसी सेनापति डिवाइनने मेरताके युद्धमे विजय प्राप्त की, तव उनके अधीनस्थ कठिन महाराष्ट्रीदलने पंगपालकी समान कई दलोमे विभक्त होकर शेखावाटीमे जाकर लूटमार करनी प्रारंभ की, और अंतमे वे प्रत्येक दुर्वल सामन्त और उनके पुत्रोको बंदी करके लेजाने लगे । इन्ही कारणोसे उस नरघातक सर्वस्व लूटनेवाले महाराष्ट्रोके तस्करदलके हाथसे छुटकारा पानेके लिये शीघ्र ही उन बंदी हुए सामन्तोने अपना सर्वस्व बेचकर उनको धन देना स्वीकार किया, और किसी २ सामन्तको धन देनेमे असमर्थ होनेके कारण बंदीभावसे ही रहना पड़ा । पीछे उनकी रखवालोमे विशेष कष्ट होता हुआ जान कर तस्करोके दलने अंतमे उनको भी छोड़ दिया ।

महाराष्ट्रोके तस्करदलका एक दिनके अत्याचारका वृत्तान्त पढ़नेसे पाठक सरलतासे इसका अनुमान कर सकते है कि इन दुराचारियोके द्वारा शेखावाटी देशमे कैसा भयंकर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित हुआ होगा । मेरताके युद्धके पीछे महाराष्ट्र दलने शेखावाटीमे जाकर सबसे पहिले बिवाई पर आक्रमण किया बिवाईके सम्पूर्ण निवासी तस्कर दलकी

संहारमूर्ति देख उसके हाथसे किसी प्रकार भी उद्धारका उपाय न देखकर अपनी २ धन सम्पत्ति लेकर प्राणोके भयसे आसपासके प्रधान २ नगरोमे भागने लगे। केवल अस्सी राजपूत वीर जातीय गौरवकी रक्षाके लिये बिवाईके किलेके भीतर जाकर तस्करोके दलकी राह देखने लगे। महाराष्ट्र तस्कर दलने वलवान होकर बिवाईके किलेपर अधिकार करलिया, परन्तु उन अस्सी राजपूतोमेसे एक भी न भागा। तथा बराबर शत्रुओंके साथ युद्ध करते २ अंतमे वे सब मृत्यु शय्यापर शयन किए। वह तस्करोका दल इस स्थानसे चलकर पीछे खण्डेलाकी ओरको बढ़ा। और जाते २ मार्गमे भी अत्याचार और उपद्रवोके करनेमें उसने कसर न की।

महाराष्ट्र तस्कर–दलने खण्डेलासे दो कोस दूर होदीगांग नामक स्थानमे जाकर वहाँ अपने डेरे डालदिये। और खण्डेलाके दोनो अधीश्वर नरसिह और इन्द्रसिहसे दंड स्वरूप वीस हजार रुपया माँग भेजा। महाराष्ट्रोंके दूतने इन्द्रसिहके पास जाकर अपने नेताका संदेश कहा कि आपको दंडमे वीस हजार रुपया देना होगा। तव नरसिह और इन्द्रसिहकी ओरसे दो बुद्धिमान् सामन्त शीघ्र ही उस पण्डितके साथ शत्रुओके डेरोमे गये, और दंड देनेके निमित्त संधि करनेके लिये तैयार हुए। उन दोनो सामन्तोके नाम नवलसिह और दलेलसिह थे।

"उक्त दोनो सामन्त दो राज कर्मचारियोको भी साथमे लाये थे और वह इस लिये कि जव तक करका अपेक्षित रुपया महाराष्ट्र नेताके पास न पहुँचजाय तवतक वे दोनो वहां साक्षीस्वरूपसे रहे। अतएव सामन्तोने महाराष्ट्रनेतासे सव प्रकारकी वाते तय करके उक्त कर्मचारियोको वही छोड़कर रुपया लेनेके लिये किलेको वापिस जाना चाहा। परन्तु महाराष्ट्रनेताने इसमे अपनी असम्मति प्रकाश करके कहा कि आपको स्वय साक्षीस्वरूपसे यहां रहना होगा" इस वचनसे अपना अपमान हुआ जानकर एक सामन्तने कहा कि यह कभी नही होसकता। इसके पीछे वह अपने सेवकसे हुक्का लेकर तमाखू पीने लगा। यह देखकर एक असभ्य दक्षिणी महाराष्ट्रने वलपूर्वक उक्त सामन्तके हाथसे हुक्का छीन कर फेंकदिया। इस व्यवहारसे उस सामन्तने अपना विशेष अपमान जाना इसके पीछे जैसे ही वह अपनी कमरसे तलवार निकालकर इसका शिर काटनेके लिये उद्यत हुआ कि वैसे ही महाराष्ट्र नेताने दलेलसिहके मस्तकको लक्ष करके पिस्तौल दाग दिया। जो सेवक दलेलसिहके साथमे वे यह देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए, तथा वदला देनेके लिये तैयार हुए पर वलवान् तस्करदलने एक २ करके सवके प्राणोका नाश करदिया।

खडेलाके एक अशके अधीश्वर इन्द्रसिह संधिके परामर्षका फल जाननेके लिये स्वयं उत्कठित चित्तसे कितने ही सेवकोंके साथ शत्रुओके डेरोकी ओरको जारहे थे।

(१) महाराष्ट दस्युदलके मत्री तथा दूतपदपर केवल ब्राह्मण नियुक्त होते थे। कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि यह श्रेणी जिस प्रकारसे चतुर है उसी प्रकारसे प्रयोजन होनेपर असीम साहस भी दिखाती है। दौत्यकार्यमे ब्राह्मण गण ही सवसे चतुर होते थे, विख्यात् पश्चिमी नीतिज्ञ मेकिया वेलीने भी इनसे हारमान ली थी।

उन्होंने डेरोंके समीप जाते ही सुना कि दस्युदलने हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की है। इन्द्रसिंहके सेवकोंने उनको उसी समय खंडेलामें लौटजानेकी सम्मति दी, परन्तु इन्द्रसिंहने कहा, "नहीं ऐसा कभी नहीं होसकता। जब कि हमारे कुटुम्बियोंकी हत्याकी गई है तव उस हत्याका बदला दिये विना अपमानित होकर मैं खंडेलामें जानेकी अपेक्षा इस स्थान पर प्राण त्याग करना कल्याणकर समझता हूँ" इन्द्रसिंहने वीरपुरुषकी समान यह वचन कहकर उसी समय घोड़ेपरसे उतर कर उसे छोड़ दिया, इनके सेवक भी उसी समय इनकी आज्ञासे घोड़ोंपरसे उतर पड़े। सभीने नंगी तलवारें हाथमें लेकर शत्रुओंके डेरोंमें प्रवेश किया। और विषमवेगसे बदला लेनेके लिये उन्होंने महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया। बड़े २ बुद्धिमान् महाराष्ट्र उस समय डेरोंके भीतर थे, इस कारण साधारण थोडेसे सेवकोंके साथ इन्द्रसिंह विषमवीरता प्रकाश करके पीछे स्वयं मारेगये। सबको मृतक हुआ देख दस्युदलने विचारा कि दलेलसिंहके अपमानसे ही यह कार्य हुआ है और वह दलेलसिंह भलीभाँतिसे घायल होकर भी जीवित है। इस कारण वह लोग इनको उसी अवस्थामें डेरोंके भीतर लेगये।

मुगलपठानोंके स्थलाधिकारी, मुगलपठानोंके समस्त असद्गुणोंके अधिकारी सभ्यता और भद्रतासे अशिक्षित महाराष्ट्र दस्युदलने इस प्रकारसे सबसे पहिले शेखावाटीका वियोगान्त अभिनय आरंभ किया। परन्तु नरपिशाच महाराष्ट्रोंके पक्षमें वह सामान्य भूखंड शेखावाटी अभिनयका उपयुक्त पूर्णक्षेत्र नहीं विचारा गया। उन्होंने एक समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें, सतलजसे समुद्रतक प्रत्येक देश, प्रत्येक नगर–और प्रत्येक ग्रामोंपर इस प्रकारसे आक्रमण कर रक्तपात और लोमहर्षण काण्डद्वारा अपनी पैशाचिक वृत्तिका पूर्ण परिचय दिया था।

जिस समय राव इन्द्रसिंह महाराष्ट्रोंके डेरोंमें मारे गये, उस समय उनके पुत्र प्रतापसिंहने अपनी माताके साथ खण्डेलासे पाँच कोस दूर शिखर पर स्थित शिकराई नामक अभेद किलेमें निवास किया। प्रतापसिंह उस समय राजकार्यको कुछ भी नहीं जानते थे, इस कारण महाराष्ट्र दस्युदलके हाथसे नगर और अल्पवयस्क कुमारके जीवनकी रक्षाके लिये, प्रधान २ मनुष्योंने शीघ्र ही समस्त धान्यके गाल्लोंको खोलकर उनमेंका समस्त अन्न और सम्पूर्ण धन सम्पत्ति वेच डाला और इस प्रकारसे धन संग्रह करके महाराष्ट्रोंकी अभिलाषाको पूर्ण किया। इस प्रकारसे तस्करोंका दल खंडेलासे धनसंग्रह करके पीछे संहारमूर्ति धारण कर सिद्धानी सम्प्रदायके अधिकारी देशोंपर आ पहुंचा। उन्होंने सबसे पहिले उदयपुर पर आक्रमण कर वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूट उसपर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने पीछे नगरकी समस्त दीवारोंको तोड़कर अतुल धन प्राप्तिकी आशासे दीवारोंके नीचे खोदकर क्रमानुसार चार दिनतक अत्याचारका स्रोता वहाया। और उदयपुरको एकबार ही विध्वंस कर उत्तर प्रदेशके सिहाना झुंझुनू और खेतरी आदिके सामन्तोंके देशोंको लूटनेके लिये गमन किया।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलके चले जानेके पीछे प्रतापसिंह और नरसिंह खंडेलामें आकर राज्य करने लगे, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह पूर्वोक्त संघात वेगको सहन न करसके। तब उनके अधीश्वर आमेरराजने उनसे असमयमें कर लेना चाहा। प्रतापसिंहने अपने राज्यमें जितना अन्न उत्पन्न हुआ था उसका चतुर्थांश देकर आमेरपतिको संतुष्ट किया, परन्तु नरसिंहने पूर्व पुरुषोंकी समान उद्धत स्वभावके वशीभूत हो आमेरपतिको कुछ भी न दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकारके कर देनेसे हमको सामान्य भूमिया जमींदारके पदपर स्थित होना होगा"।

इस समय शेखावत वंशकी एक दूरवर्ती शाखामें उत्पन्न हुए एक सामन्तने अपने बाहुबल और विक्रमके साथ आशातीतरूपसे अपना मस्तक उठाया था। उसका नाम देवीसिंह था। वह कासलीके राव तिरमलका वंशधर था। और उसके अधिकारी देशका नाम सीकर था। देवीसिंहने शेखावतपति खंडेलाराजके अधीन सामन्त होकर भी अपने बाहुबलसे धीरे २ लोहागढ़ खोह इत्यादि पच्चीस नगर और किलोंपर अपना अधिकार करलिया। जिस समय उनके अधीश्वर प्रभु नरसिंह आमेरराजके क्रोधमें पतित हुए उस समय वह उपयुक्त सुअवसर जानकर रिवासो देशपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए। परन्तु इस समय उनके प्राण वियोग होनेसे उनका वह मनोरथ अपूर्ण ही रहगया। देवीसिंहके आजतक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, इस कारण उन्होंने मृत्युके पहिले साहपुराके सामन्तके पुत्र लक्ष्मणसिंहको दत्तकरूपसे ग्रहण करके उसको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया था। परन्तु देवीसिंहके शेखावाटीके दुर्बल सामन्तोंके प्रति वल प्रकाश करके ग्राम नगरोंको अपने अधिकारमें करलेनेके आचरणसे आमेरराजने महा क्रोधित हो अपने मंत्री दौलतरामके भ्राता नंदराम हलदियाको देवीसिंह पर आक्रमण करके राज्य कर संग्रह करनेकी आज्ञा दी। जिससे उसने शीघ्र ही लक्ष्मणसिंहपर आक्रमण करके उनको अधीन बनालिया। जयपुरके महाराजकी उक्त आज्ञाके प्रचार होते ही सीकरपति देवीसिंहने समस्त स्वजातीय सामन्तोंको निकालकर उनके अधिकारी देशोंपर वलपूर्वक अपना अधिकार करलिया था। वह सब जयपुरके महाराजकी कृपासे फिर अपने २ देशोंके पानेकी इच्छासे दलके दल सेना सहित उक्त कर सग्रह करनेवाले नंदराम हलदियाके डेरोंमें आने लगे। खण्डेलाके अधीश्वर स्वयं अपनी सेना सहित जाकर उस पक्षके साथ मिले। तिरमल्लके वंशके अन्यान्य शाखाके अर्थात् कासली विलारा इत्यादिके पट्टावत् भी शीघ्र ही इनके साथ आ मिले। तथा जिससे सिद्धानीकी सम्प्रदाय किसी समय भी रायसालोत् पर उपद्रव वा आत्मविग्रह करनेमें किसी प्रकार भी हस्ताक्षेप न करसके इससे वह भी इस समय आनन्दित होकर अपने २ दियेहुए करको लेकर सेना सहित जयपुरके सेनापतिके डेरोंमें आनेलगे। साराश यह कि सीकरपति देवीसिंहने इस समय शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंके ऊपर मस्तक उठाया था, इसीसे शेखावाटीके प्रत्येक अधीश्वर उनके दत्तकपुत्रके विरुद्ध एक मनुष्यकी समान सेना सहित खडे हुए। परन्तु सीकरपति देवीसिंह सामान्य मनुष्य नहीं थे। उनमें चतुरता और नीतिज्ञता तथा

षड्यंत्रके विस्तारकी सामर्थ्य भलीभाँतिसे विद्यमान थी। इन्होंने सबसे पहिले आमेर-राजकी सभामें सदस्योंके साथ विशेष प्रीति स्थापन की थी, कारण कि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजसदस्योंके साथ विशेष सद्भावकी रक्षा करनेसे जिन समस्त देशोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया है, इस समय उन सबको निर्विघ्नतासे उपभोग करनेमें समर्थ होंगे। देवीसिंहके साथ जयपुरके राजमंत्री और उनके भ्रातामें विशेष प्रीति उत्पन्न होगई थी। उस समय उस मित्रताकी परीक्षाका समय उपस्थित हुआ। जैसे ही नंदराम उस सम्मिलित प्रबल सेनादलके साथ सीकरपर आक्रमण करनेके लिये पहुंचे कि वैसे ही एक चन्द्रावत् सामन्त सीकरके दीवान और एक धाभाईने लक्ष्मणके प्रतिनिधि स्वरूपसे नंदरामके निकट जाकर नम्रतायुक्त वचनोंसे मृत देवीसिंहके नामसे यह कहकर प्रार्थनाकी। कि जिससे वह देवीसिंहके अज्ञानी पुत्रको प्रतिहिंसा देनेके निमित्त क्रोधित हुए शेखावतोंके मुखमें अर्पण न करैं। नंदरामने कहा कि "आपके अनुरोधकी रक्षाका मैं इस समय केवल एक उपाय देखता हूँ कि जिससे आप सरलतासे आक्रमणको निवारण करसकेंगे। और हम भी राजाकी आज्ञाको पालन करनेमें समर्थ होंगे। आप बहुत सी सेनाको इकट्ठा करके सीकरकी रक्षामें यत्नवान् हो तो कोई भी इस बातको नहीं जान सकेगा कि हमी गुप्त षड्यन्त्र करके राजाकी आज्ञाको व्यर्थ करनेके लिये उद्यत हुए है"। देवीसिंह फतेपुरके अधीनके कई एक देशोंको लूटकर यहांसे बहुतसा धन लेगये थे, इस कारण लक्ष्मणसिंहकी ओरके मनुष्योंने शीघ्र ही बहुतसे रुपये खर्च करके बहुत थोड़े समयमें ही दश हजार सेना सजाली और वे सीकरकी रक्षा करनेमें नियुक्त हुए। इस ओर पूर्व गुप्त प्रस्तावके मतसे नन्दराम सम्मिलित सेनादलके साथ सीकरको घेरकर यथार्थ युद्धके बदले केवल बाहरी समर कौशल दिखाकर युद्ध करने लगे। कई दिनतक इस प्रकारसे कृत्रिम युद्ध और सीकरपर अधिकारकी चेष्टा दिखानेके पीछे नन्दरामने जयपुरमें अपने भ्राता राजमंत्रीके पास इस मर्मका एक पत्र भेजा कि "सीकरको विजय करना किसी भाँति भी सरलकार्य नहीं है और सीकरपति लक्ष्मणसिंह वश्यता स्वीकार करके दंडस्वरूपमें दो लाख रुपये देनेके लिये तैयार हुए है, हमारी सम्मतिसे उस धनको लेकर सीकरको छोड़ देना उचित है।" नंदरामने उक्तपत्रके उत्तरकी प्रतीक्षा न करके आमेरराजके निमित्त लक्ष्मणसिंहके पाससे दो लाख रुपया और अपने लिये रिश्वतमें एक लाख रुपया लेकर सीकरको छोड दिया। इस प्रकारसे सीकरपति लक्ष्मणसिंह निर्विघ्नतासे अधिकारी देशोंको भोगने लगे। विशेष करके इस समय खण्डेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहमें विसम्वादकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे नंदरामके स्वार्थसाधनमें विशेष सुभीता होने लगा।

खण्डेलाके अन्यतर अधीश्वर नरसिंह पहिलेसे ही आमेर राजकी आज्ञाके अनुसार कर दान करनेमें असम्मत होनेसे उनकी क्रोधानलमें पतित होचुके थे, इस कारण खंडेलाके अन्य अधीश्वर प्रतापसिंह इस सुअवसरमें पिताके विवाद विसम्वादको एकवार ही निर्वाणके साथ नरसिंहको चिरकालके लिये खण्डेलाके अधिकारसे रहित

कर खण्डेला राज्यके सम्पूर्ण अधीश्वर होनेके लिये इस समय अपनी सामर्थ्यके अनुसार विशेष चेष्टा करने लगे। उन्होंने जयपुरके सेनापति उक्त नंदरामके निकट यह प्रस्ताव किया "कि जितनी आमदनी खण्डेलाकी है उसका सब कर मै अकेला दूंगा, सब देशका अधिकार मुझे दिला दिया जाय। जिस समय महाराज आज्ञा देंगे तभी मै सेना सहित उनकी आज्ञाको पालन करनेके लिये हाजिर हूंगा, और मेरे अभिषेकके समय जयपुरपतिको बहुतसा धन भेटमे दिया जायगा"। नंदराम प्रतापसिहकी प्रार्थनाके मतसे उनको समस्त खण्डेलाराज्यके अधीश्वर पदपर वरण कर तथा शासनकी सनद देनेमे शीघ्र ही सम्मत हुए।

नन्दरामके डेरोमे नाथावत् सम्प्रदायके नेता सामोदके सामन्त रावल इन्द्रसिह निवास करते थे। उन्होने नरसिहका सर्वनाश होताहुआ देखकर उनकी ओर हो उनको अभय देनेके लिये खंडेलासे अपने शिविरमे आनेके लिये बुला भेजा।

रावल इन्द्रसिहके बुलानेसे नरसिहके आते ही इन्द्रसिहने उनसे समस्त समाचार कह दिया कि "आपके प्रतियोगी प्रतापसिहको समस्त खंडेलादेशका अधिकार देनेके लिये सनदपत्र तैयार हुआ है। आप शीघ्र ही पिताके अधिकारसे रहित होजॉयगे, इस कारण यदि आप इस समय भी आमेरराजकी आज्ञाके पालन करनेमे सम्मत होगे तौ भी हम आपके अधिकारकी रक्षाके लिये विशेष यत्न और उपाय कर सकैगे"। परन्तु नरसिह किसी प्रकारसे भी उस प्रस्तावके अनुसार आमेरराजको कर देनेमे सम्मत न हुए, इसलिये इन्द्रसिहने शीघ्र ही नरसिहके जीवनकी रक्षाके लिये उनको उसी समय डेरोंको छोड़कर खंडेलासे भागनेकी सम्मति दी। उन्होने कहा, कि "आपके यहॉ रहनेसे मैने जो आपका पक्ष समर्थन करनेके लिये चेष्टा की थी वह प्रगट होजायगी, इस कारण इसमे हमपर अधिक विपत्ति आनेकी संभावना है। यदि आप इसमे सम्मत होजाते तो इस विपत्तिकी आशा न थी" उसी दिन रात्रिके समय इन्द्रसिहने अपने ६० अनुचरोके साथ अत्यन्त गुप्तभावसे नरसिहको डेरोमेसे नवलगढ़मे भेज दिया और नरसिहने दूसरे दिन प्रभात होते ही अपने किले गोविन्दगढ़मे निर्विघ्नतासे प्रवेश किया। परन्तु इन्द्रसिहने जो विचार किया था वही हुआ, उनकी उस सावधानीके अवलम्बनका कोई फल न देख पड़ा। कारण कि उन्होने नरसिहको डेरोमेसे नवलगढमे भेजा था इससे नन्दरामने उनके ऊपर क्रोधित होकर उन्हे राजकोपका भय दिखाया। परन्तु वीरतेजस्वी राजपूत इन्द्रसिहने कहा, कि "मैने राजपूतोका कर्तव्य कार्य किया है, तथा उसका फल भोगनेके लिये मै कुछ भी भयभीत नही हूँ"। अत्यन्त दुःखका विषय है कि इन्द्रसिह वास्तवमे ही आमेरपतिके क्रोधमे पतित हुए।

नाथावत् सम्प्रदायमे सामोत और चौमू इन दोनो देशोके दो सामन्त सबमे प्रधान थे, प्रथम शाखावाले सामोतके सामन्त सबसे अधिक सम्मानित थे, तथा रावल की उपाधि धारण करके नीचे पटपर स्थित अगणित सामन्तोके ऊपर अपना अधिकार

चलाते थे। परन्तु चौमूके सामन्त बहुत दिनोसे सामोतके सामन्तोंके उक्त पद सम्मान और सामर्थ्यकी हिसा प्रकाशके साथ स्वय उक्त पद और सम्मानकी प्राप्तिके लिये बीच २ मे झगडा करते थे, अधिक क्या इसी कारणसे रक्तपात भी हुआ था। सामोतके सामन्त इन्द्रसिह जभी उपरोक्त प्रकारसे आमेर राजके क्रोधमे पतित हुए तभी शुभ अवसर पाकर चौमूके सामन्त शीघ्र ही जयपुरकी राजसभामे आये, और नाथावत सम्प्रदायके सबमे श्रेष्ठ सामन्त पद और उपाधि धारण करनेके लिये आमेरके महाराजको बहुतसे रुपये भेटमे देनेके लिये तैयार हुए। आमेरके महाराज चौमूके सामन्तकी प्रार्थनापर शीघ्र ही उनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये सम्मत हुए। नन्दरामके समीप सामोतके सामन्त इन्द्रसिह इस समय भी निवास करते थे। इन्द्रसिहको शीघ्र ही आमेरराजके निकटसे इस मर्मकी एक आज्ञा हुई कि आपने जो अपराध किया है उस अपराधके दंडमे सामोत देशको आमेरराजने अपने अधिकारमे करलिया, इस निमित्त आप शीघ्र ही सामोतसे अलग होजाँय। सामोतके सामन्त इन्द्रसिहने राजाकी उक्त आज्ञाको पाते ही उसमे किंचित्‌मात्र भी आनाकानी न की, वरन् यथार्थ राजभक्तकी समान उस आज्ञापत्रको मस्तक पर धारण करके शीघ्र ही उन्होने सामोतको गमन किया। वहाँ इनकी जो कुछ भी धनसम्पत्ति थी उस सबको लेकर वह कुटुंबके साथ चिरकालके लिये सामोतको त्याग कर निर्वासित अवस्थासे मारवाड राज्यके आश्रयमें चलेगये। कुछ समयके उपरान्त सामोतके उसी अधीश्वरकी स्त्रीको आमेरराजकी सभासे पिपली नामक एक ग्रामका अधिकार मिला। इन्द्रसिह वार्द्धक्यदशामे अपनी मृत्युको अत्यन्त निकट देखकर अन्तमे अपनी जन्मभूमिमे तथा स्वजातिमे प्राण त्याग करनेके लिये उस ग्राममे चले आये। इन्द्रसिंहकी इस राजभक्तिसे जानागया कि यह अत्यन्त ही प्रशसनीय पुरुष है अधिक क्या कहे इन्द्रसिह स्वभावसे ही असीमसाहसी और वीर थे, यदि वह विचार करते तो अवश्य ही बहुत सी सेना संग्रह करके आमेरराजके उक्त अन्याय मूलक आचरणोके विरुद्ध खड़े होकर अपने पिताके राज्यखडकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होने केवल राजभक्तिके भावसे स्वार्थ त्याग किया था।

इस समय खण्डेलाकी ओर दृष्टि डालनी होगी। खण्डेलापति नरसिह आमेरपतिके विषैले नेत्रोमे पड़े, आमेरके सेनापति नन्दराम हलदियाने खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर प्रतापसिहको जब खण्डेला प्रदेशके अधिकारकी सनद दी तब प्रतापसिह अत्यन्त प्रसन्न होकर अपनी समस्त सेना साथ लेकर खण्डेलामे आये। उन्होने खण्डेलापर अधिकार करके सबसे पहिले उस तोरणको तोड़कर एकसर करनेकी आज्ञा दी, जिसे नरसिहने नगर रक्षाके लिये दुर्गस्वरूपसे बनवाया था और उसीके ऊपरसे प्रतापके पिताके महलोपर गोले वर्षाते थे। उस तोरणके ऊपर गणदेवकी एक मूर्ति थी। गणदेवता सिद्धिदाता और सर्वमंगल विधातारूपसे पूजे जाते थे। दुर्घटनाके वश तोरणके टूटनेके समय वह गणदेवकी मूर्ति भी टूट फूट कर चूर्ण होगई। यह बात प्रतापके पक्षमे अवश्य ही भावी अमंगल अनुमान किया जासकता

है। जो कुछ भी हो प्रतापसिंह उस तोरणको एकसर करके राजधानी खण्डेलाके शासनका बंदोबस्त कर रेवासो पर अधिकार करनेके लिये गये। अपने बाहुबलसे रेवासो जीत कर प्रतापसिंहने नन्दराम हलदियाके अधीनकी कितनी ही सेनाके साथ उस गोविंदगढ़ नामक किलेको भी जा घेरा जिसमे नरसिंह रहते थे। गोविन्दगढ़से दो कोस और रानोलीसे चारकोस दूरीपर गोरानामक स्थानपर डेरे डाले, रानोलीके जो सामन्त इस समय तक अपने उपरितन प्रभु अधीश्वर हतभाग्य नरसिंहका पक्ष समर्थन करते थे उन्होने अपने मंत्रीको हलदियाके पास भेजकर यह समाचार कहला भेजा कि आमेरराजको जो कर नरसिंहके पाससे मिलता है हम उस सबको देनेके लिये तैयार है और यदि नंदराम नरसिंहको उनका पहला अधिकार अर्थात् खंडेलाके राजपद पर प्रतिष्ठित कर देगे तो उनको यथेष्ट पुरस्कार दिया जायगा। इस प्रस्तावसे नदरामने बहुतसे धनकी आशासे फिर कौशलजालका विस्तार किया। उसने थोड़ी सी सेनाके साथ खंडेलामे जाकर कहला भेजा कि "गोविन्दगढ़से नरसिंहकी सेना रात्रिके समय बाहर होकर हमारी सेनापर आक्रमण करे तो आक्रमण होने पर हम लोग सेना सहित परास्त होकर शीघ्र ही वहाँसे भाग जॉयगे। ऐसा करनेसे प्रतापसिंह कुछ भी नही जान सकैगे और कार्य सिद्ध होजायगा।" नन्दरामके उक्त गुप्त प्रस्तावसे सूर्यमल्ल और बाघसिंह नामक नरसिंहके दो भ्राता गोविन्दगढ़से डेढसौ अस्त्रधारी सेना साथ लेकर रात्रिके समय बाहर हुए। और उन्होने हलदियाकी सेनापर बनावटी आक्रमण किया जिससे वह परास्त होकर उसी समय भाग गये और उस सुअवसरमे उक्त विजयी सेनाने खंडेला पर अधिकार करलिया। इस घटनासे प्रतापसिंह अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और जिससे उक्त अधिकार व्यर्थ होजाय इस कारण बहुतसी सेनाको एक प्रवेश मार्गपर रखनेकी आज्ञा दी। परन्तु नरसिंहकी सेनाने पहिले ही उस स्थानपर अधिकार करलिया था, इस कारण प्रतापसिंहको वह कामना व्यर्थ होगई। नरसिंहके ओरकी बहुतसी सेनाके दलके दल आकर खंडेलामे प्रवेश करने लगे, प्रतापसिंहने दूसरा कोई उपाय न देखकर शत्रुओको पानीकी त्रास देनेके लिये कुओको बंद करनेकी आज्ञा दी। इसी कारण वश नरसिंहकी सेनाके साथ प्रतापकी सेनाका एक प्रबल युद्ध उपस्थित हुआ, और दोनो पक्षकी बहुतसी सेना घायल हुई। शेषमे नन्दराम हलदियाने दोनो पक्षमे आमेरराजकी पचरगी पताका उड़ाकर युद्ध रोक दिया। और नन्दरामके प्रस्तावसे शेषमे दोनो पक्षमे एक संधि नियत हुई। उस संधिके मतसे प्रतापसिंहका रेवासो देश पर अधिकार हुआ और नरसिंहको खंडेला राज्यके समस्त पैतृक अधिकार प्राप्त हुए।

यद्यपि उक्त संधिके अनुसार खंडेलादेशमे शान्ति स्थापित होगई, परन्तु दोनो वंशोका झगडा एकवार ही समाप्त नहीं हुआ। बीच २ मे बहुधा दोनो पक्ष एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। गगोर नामक पर्वोत्सवके समयमे एक बार बडा झगडा हुआ। अन्तमे और एक घटनाके उपलक्षमे समस्त शेखावाटीके सामन्तोकी संप्रदाय सन्नद्ध होगई। रानोलीके सामन्त प्रतापसिंहके अधीनमे स्थित एक सामन्तके यहाँ

करनेसे शीघ्र ही समस्त शेखावतोकी संप्रदाय चमक उठी। अन्तमें सभीने एकवाक्यसे अपने प्रभु अधीश्वर आमेरराजको मध्यस्थरूपसे नियुक्त किया। आमेरपतिके उस झगडेका विचार करने और अपराधी मनुष्योको दण्ड देनेसे उसी समय समस्त उपद्रव दूर होगये।

शेखावाटीके उत्तर देशके सिद्धानी नामक सेखावत संप्रदायके सामन्त और रायशालोतोके उक्त प्रकारसे अविश्रान्त जातीय विवादसे विषैला फल उत्पन्न हुआ, और उसी कारणसे शेखावाटी देशपर आमेरराजके अधिकारका विस्तार क्रमशः होता गया। आमेरपतिके कर उगाहक नन्दराम हलदियाको छल बल चतुरता और कौशलसे अनेक देशोको अपने हस्तगत करके शेखावतोकी स्वाधीनतापर हस्ताक्षेप करते हुए देखकर वे महा असंतोप प्रकाश करने लगे। इस समयके पूर्वतक यह सामन्त वा छोटे २ देशोके राजा जयपुरपतिकी सपूर्ण वश्यता स्वीकार करके भी उनको किसी प्रकारका कर नहीं देते थे, केवल किसी सामन्तके प्राण त्याग करनेपर उसके उत्तराधिकारीके अभिपेकके समय आमेरराजको अपनेमे सबसे श्रेष्ट सामर्थ्यवाला आत्मीय जानकर कुछ रुपये भेटमे दिये जाते थे। परन्तु इस समय आमेरराजकी सेनाका दल क्रमानुसार सीमाके अन्तमे इकट्ठा होगया, और कब कौन किस समय उनकी स्वाधीनताके हरण करनेको उद्यत होगा यह विचार कर सिद्धानी गणोने अपने स्वार्थकी रक्षा करना एकान्त कर्तव्य विचार लिया। नंदराम हलदियाने इससे पहिले नवलगढ़के सामन्तोके अधीनमे स्थित तुई नगरको घेर लिया, और रानोली देशपर प्रतापसिंहका अधिकार करनेके लिये उनको भी वंदी किया गया। इसी कारणसे समस्त सिद्धानी सामन्त महाक्रोधित होगये। यद्यपि वह लोग इतने दिनोसे राय-शालोतृगणोपर आत्मविवाद विसम्वादसे हस्ताक्षेप न करके निरपेक्षभावसे निवास करते चले आये थे। परन्तु उन्होने देखा कि इस समय निरपेक्षभावसे रहना सर्वथा असंभव है। इस कारण वह लोग सम्पूर्ण शेखावाटी देशके प्रत्येक सम्प्रदायके भीतरी झगड़ेको एकवार ही दूर करके सब एक वाणी और एक मतहो शेखावाटीकी जातीय स्वाधीनता और चिर अधिकारकी रक्षा करनेके लिये आग्रहके साथ आगे बढ़े। पूर्वकालमे उदयपुर नामक जिस स्थानपर समस्त शेखावतके सामन्त किसी जातीय प्रश्नकी मीमांसा वा स्वार्थ रक्षाके लिये इकट्ठे होते थे, उसी उदयपुरमें सम्पूर्ण सेखावतोके नेता और सामन्तोके एकत्रित होते ही यह घोषणापत्र प्रचारित हुआ। जिससे किसीके मनमे भी किसी प्रकारका संदेह उपस्थित न हो जिससे कोई भी किसी प्रकारका षड्यंत्र न चलासके, जिससे उक्त जातिकी समितिके सूत्रमे कोई भी किसी प्रकारका अनिष्ट वा किसी प्रकारके पहिले झगड़ेको स्मरण करके उसका बदला देनेके लिये समर्थ न हो, इस लिये पहिलेसे ही ऐसा प्रस्ताव नियत किया गया कि जातिकी प्राचीन और पवित्र रीतिके अनुसार एकत्रित हुए समस्त अधीश्वरोको सरलविश्वास प्रकाश करनेके लिये "लूनधाव" अर्थात् नमकमे हाथ डालकर परस्परसे सद्भाव प्रकाश करनेके लिये सौगंध खानी होगी।

शीघ्र ही प्रत्येक सिद्धानीके सामन्त अपने २ अनुचरोंके साथ नियत हुए समय पर उस उदयपुर स्थानपर आ पहुँचे। केवल खंडेलाके उक्त अधीश्वर दोनों प्रताप और नरसिहदासके अतिरिक्त रायशालोतोके प्रत्येक अधीश्वर भी उस जातीय महा समितिमे आ पहुँचे। नरसिह और प्रतापसिहमे परस्परमे जो झगड़ा चिरकालसे चला आता था, इसी कारणसे उनका अधिक अविश्वास होगया था, लोग किसी प्रकारसे भी उस समितिमे शामिल होनेका साहस न करसके। ठीक समयमे उस जातीय समितिमे सबकी सम्मतिके मतसे कार्य किया गया। समस्त शेखावाटी देशके सामन्तोमे जो कुछ भीतरी झगड़ा था, उसे चिरकालके लिये सभीने छोड़दिया। अंतमे यदि किसी अधीश्वरके साथ अन्य अधीश्वरका झगड़ा उपस्थित होजाय तो वर्तमान समयमे जिस प्रकार आमेरराजको उस विवादके मीमांसा पदपर नियुक्त किया जाता है उस प्रकारसे अब नहीं किया जायगा। वरन विवादकी मीमांसाके लिये, वा जिस किसी प्रकारसे जातीय स्वार्थकी रक्षाके लिये इस उदयपुरमे जातीय सभाद्वारा ही उचित अनुष्ठान होगा। उस सभामे उस विवादका विचार किया जायगा, यदि आमेरराज बलपूर्वक हमारे जातीय स्वार्थमे हस्ताक्षेप करैंगे तो आवश्यकतानुसार प्रत्येक सामन्तकी सेना इकट्ठी होकर आमेरराजके विरुद्ध खड़ी होगी।

शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंको इस प्रकारसे एक मनुष्यकी समान खड़ा हुआ तथा दृढ़प्रतिज्ञ देखकर जयपुरपति महाराज अत्यन्त भयभीत हुए। नन्दराम हलदियाके ही अत्याचार और उपद्रवोंसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे खड़े हुए हैं यह जानकर जयपुरेश्वरने शीघ्र ही नन्दरामको पदसे रहित कर रोड़ाराम नामक एक मनुष्यको उस पदपर नियुक्त किया, और उनको सेनासहित शेखावाटीमे भेजा। और नन्दराम हलदियाको बन्दी करके जयपुरमे भेजनेकी आज्ञा भी दी। नदराम हलदिया जयपुरपतिकी इस आज्ञाका समाचार पाकर पहिलेसे ही भाग गया। उसने जान लिया कि पकड़े जाने पर अवश्य जयपुरके कारागारमे वन्दी किया जाऊंगा। जयपुर राजने, उक्त नंदराम और उनके भ्राता जो आमेरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त होकर नन्दरामके अत्याचार और उपद्रवोंमे सहायता करते थे उनके भी समस्त अधिकारी देशोंकी धनसम्पत्तिको राजदरबारके अधिकारमे करलिया।

नव नियोजित सेनापति जातिका दरजी था, वह नंदराम हलदियाको बंदी करनेके लिये और उसके अधीनकी सेनाको विध्वंस करनेके निमित्त अनेक यत्न करने लगा। नदराम हलदिया यद्यपि पहिले आमेरराजका सेवक था परन्तु आमेरराजके उसे पदसे उतार कर सारी धन सम्पत्ति छीन लेनेसे इस समय वह अपने पूर्वस्वामीको अपना दृढ शत्रु विचार कर चारों ओर अत्याचार करके गॉव २ मे अग्नि लगाने लगा। नवीन सेनापतिने नन्दरामको पकड़ने और उसके अत्याचारोंको निवारण करनेके लिये अंतमे शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंसे सहायताकी प्रार्थना की। परन्तु शेखावाटीके सामन्त पहिलेसे ही इस भांतिकी शिक्षा पाये हुए थे इस कारण वह सहसा उसकी

सहायता करनेमे सम्मत न हुए, और अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये सबसे पहिले पदोपयुक्त संधि करने, और आमेरपतिके साथ भविष्य राजनैतिक सम्बन्ध निर्धारित करनेके लिये अग्रसर हुए।

संधिपत्र।

पहिली धारा–नन्दराम हलदियाने जो बलपूर्वक तुई और ग्वाला इत्यादि नगरो पर अधिकार करलिया है, वे नगर पूर्व अधिकारियोको लौटा देने होगे।

दूसरी धारा–शेखावतोकी सम्प्रदाय इच्छानुसार पहिलेसे ही जो कर देती आई है, आमेरराजको इसके अतिरिक्त और कर ग्रहण करनेकी सामर्थ्य न होगी। शेखावाटीके सामन्त अपने २ स्वीकार किये करको आमेरकी राजधानीमे स्वयं भेजते रहैगे।

तीसरी धारा–जिस किसी कारणसे क्यो न हो आमेरराजकी सेना किसी समय भी शेखावाटीमे प्रवेश न करसकेगी, कारण कि उसी सेनादलकी उपस्थितिके कारण खण्डेलाके युद्धमे वृथा रक्तपात हुआ है।

चौथी धारा–उक्त सम्मिलित अधीश्वरगण आमेरपतिकी सहायताके लिये एक सेना भेजैगे, परन्तु वह सेना जबतक आमेरराजके कार्यमे नियुक्त रहैगी उतने दिनोंतक उसका खर्चा आमेरके महाराजको देना होगा।

उक्त नवीन राजसेनापतिकी मध्यस्थतामे उक्त संधिपत्र आमेरराज और शेखावतोकी संप्रदायमे नियुक्त हुआ, उक्त संमिलित सामन्तगणोने सेनाकी सहायताके लिये व्ययस्वरूप अग्रिम दश हजार रुपया लेकर अपने २ अनुचरोके साथ जयपुरमे जाकर अपने स्वामीको सम्मान दिखाया। जयपुरपतिने उनके समानको उसी समय स्वीकार भी किया, और जिससे नन्दराम तथा उनकी सेनाका दल शीघ्र ही पकडा जाय इस लिये उनको शीघ्र ही कार्यक्षेत्रमे जानेके लिये आज्ञा दी। अनिरुद्ध शेखावतने तुरन्त ही कार्यक्षेत्रमे जाकर पहिले उन गावोका उद्धार किया, जिन्हे नन्दरामने बलपूर्वक अपने अधिकारमे कर रक्खा था। परन्तु सामन्तगण शीघ्र ही जानगये कि यद्यपि वह संधिके अनुसार आमेरराजकी यथेष्ट सहायता करते है, परन्तु आमेरराज उस संधिके मतसे उनके स्वार्थकी रक्षामे प्रस्तुत नहीं हुए। उन्होने देखा कि उन लोगोने नन्दरामकी सेनाको भगा दिया है, परन्तु इस समय रोड़ारामकी सेना निर्विघ्नतासे उन स्थानोपर अधिकार कर रही है। जो सामन्तोकी सम्प्रदाय यहाँ इकट्ठी हुई थी वह महा दु:खित हुई–और शीघ्र ही उन्होने परामर्श करके अपने निज संधिपत्रकी धाराके कार्यको पूर्ण करनेका संकल्प किया। रोडारामकी सेनाका दल शेखावाटीके जिन ग्राम और नगरोको सामन्तोकी सम्प्रदायकी सहायताके लिये नन्दरामकी सेनाके हाथसे लेकर वहाँ निवास कर रहा था, सामन्त सम्प्रदायोने उन सब ग्राम तथा नगरोपर आक्रमण करके रोड़ारामकी सेनाको दूर करदिया। और उन सब ग्राम और नगरोको पूर्व आदि अधिकारियोके हाथमे अर्पण किया।

उक्त समयमें ही आमेरपतिने खंडेलाके राजा नरसिंहदासके निकट बाकी कर अदा करनेके लिये एक दूत भेजा, परंतु नरसिंहने उस दूतको मारपीट करके भगा दिया। वह दूत आमेरराजके मंत्रीके कुटुम्बका था, वह उक्त रीतिसे अपमानित और विताड़ित हुआ, तब वह जयपुरपति महाराजके निकट जाकर नेत्रोंमे जल भरकर उनके चरणोंमे अपनी पगड़ी रख यह वचन बोला, "नरसिंहदासने मेरा घोर अपमान किया है"। आमेरके महाराजने समस्त वृत्तान्त जानकर शीघ्र ही यह आज्ञा दी कि खण्डेलाराज्य आमेर राज्यके अधिकारमे रहै, और नरसिंहको बंदी करके शीघ्र ही जयपुरमें लाया जाय।

तुरन्त ही आशाराम नामक एक सेनापति सेना साथमे लेकर खण्डेलापर अधिकार करनेके लिये भेजा गया। नरसिंह गोविन्दगढ़मे जाकर अधीश्वर आमेरपतिके प्रति उपेक्षा दिखाने लगे। आशारामके खण्डेलामे जाते ही नरसिंह और प्रतापसिंह दोनोको एक साथ एक ही समयमे पकड़नेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार करने लगा। नरसिंह तो गोविन्दगढ़मे ही रहते थे, परन्तु प्रतापसिंह अपनी किसी विपत्तिकी सम्भावना न विचारकर जयपुरकी सेनाके साथ खण्डेलामे ही निवास करते थे। प्रतापसिंह विचार रहे थे कि नरसिंहके अपराधसे केवल उन्हींके हिस्सेके खण्डेलापर जयपुरराज्यका अधिकार होजानेकी सम्भावना है। इधर आशारामने प्रतापसिंहको किसी प्रकारका भय न दिखाकर केवल नरसिंहको पकड़नेके लिये सबसे पहिले कौशलजाल विस्तारा। आशारामने मनोहरपुरपति नरसिंहसे कहला भेजा कि उन्हे किसी प्रकारका कोई भी शारीरिक अनिष्ट नही होसकैगा। राजपूत प्रतिज्ञा और सौगधके ऊपर चिरकालसे ही विशेष विश्वास स्थापन करते आये है। शरीरमे प्राण रहते हुए कोई भी अपनी प्रतिज्ञाको भंग नही करसकता, यही राजपूतजातिका स्वाभाविक धर्म है, मनोहरपुरपति आशारामके उपदेशसे ही उसके वचनोमे बँध गये, और उनके ऊपर सम्पूर्ण विश्वास स्थापित कर वह गोविन्दगढ़से बाहर हुए, और खण्डेलामे पहुँच गये। आशारामने उनको आदरसहित ग्रहण करके बाकी करके सम्बन्धमे सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्र तैयार होने लगा। नरसिंहके डेरोको छोड़ते ही आशाराम भी सेना सहित वहाँसे कितनी दूर चलागया। चतुर आशारामने इस प्रकारसे नरसिंहको असावधान और गाफिल कर दिया और फिर तीसरे दिन लौट कर मध्यरात्रिके समय उनके घरको घेरकर उनको उसी समय डेरोमे जानेकी आज्ञा दी। नरसिंह आशारामकी इस चातुरीजालसे अत्यन्त क्रोधित हो आत्महत्या करनेके लिये उद्यत हुए पर आशारामने उनका वह उद्योग व्यर्थ करदिया। तब नरसिंह शीघ्र ही कितने विश्वासी राजपूतोके साथ आशारामके डेरोमे चले गये।

नरसिंहको हस्तगत करके उसने प्रतापको बुलाया और वह निर्भय होकर उसके डेरोमे चले आये। प्रताप विचार रहे थे कि अबकी बार वह अवश्य ही समस्त खंडेला देशके अधीश्वर होंगे, परन्तु चतुर आशारामने उनको घोर विपत्तिमे डालनेकी तैयारी की इसका उन्हे स्वप्नमे भी ध्यान नहीं था। दूसरे दिन प्रताप और नरसिंह जिस समय

अस्त्रहीन होकर भोजन कर रहे थे, उसी समयमे आशारामकी आज्ञासे एक सेनादलने दोनोको एकबार ही बंदी करलिया। घोर अपराधियोकी समान जंजीरोसे बाँधकर बंद और एक सवारीमे चढ़ाकर पांचसौ पहरेवालेकी सेनाके साथ उनको जयपुरमे भेज दिया। जयपुरमे पहुँचते ही दोनो राजाके कारागारमे बदी होगये, इस प्रकारसे दोनोके बंदी होजाने पर जयपुरके महाराज और उनके मंत्री अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। और आशारामको धन्यवाद देने लगे। आशारामने राजाकी आज्ञासे शीघ्र ही समस्त खंडेलादेश पर आमेरराजका खास अधिकार करके शान्ति रक्षाके लिये वहाँ पाँचसौ सिपाही रख दिये। वह सब नीची श्रेणीके सामन्त खंडेलाके दोनो राजोके अधीनमे थे, आशारामने उनको पूर्व पदपर नियुक्त रख कर उनको रीतिके अनुसार कर देनेमे सम्मत करलिया, और उसने उनसे ऐसी प्रतिज्ञा भी कराली कि वह कभी किसी प्रकारसे भी शान्ति भंग अथवा किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करैगे। इस प्रकारसे खंडेलाराज्य फिर अवनतिकी अवस्थामे पतित होकर पराधीन होगया।

तीसरा अध्याय ३.

आमेरपतिके विरुद्धमे बाघसिहका अभ्युत्थान-बाघसिंहके साथ जार्ज थामसका योगदान-भयंकर युद्ध-बाघसिहका खंडेलाके किलेमें जाना-हनुमंतसिंहका उनकी सेना और अनुज लक्ष्मणसिहके प्राण नाश करना-बाघसिहका फिर खंडेलाके किलेको जीतना-आमेरराजद्वारा एक ब्राह्मणको खण्डेलादेशमे जमाबंदीके लिये भेजना-उक्त ब्राह्मणका आपमानित होना-संग्रामसिह का अभ्युत्थान-गायोका लूटना-उनकी मृत्यु-जोधपुरके विरुद्धमे आमेरराज्यके साथ शेखावाटीके सामन्तोका मिलन-आमेरराजके साथ शेखावतोका नवीन संधिबंधन-नरसिंह और प्रतापसिंहका छूटना-मारवाड़के युद्धमे नरसिहकी मृत्यु-अभयसिहको पितृपदकी प्राप्ति-आमेरराजकी विश्वास-घातकता-हनुमन्तका गोविन्दगढ़ और खंडेला इत्यादि पर अधिकार करना-खुशालीरामको मुक्ति-लाभ और जयपुरमे मंत्रीपदकी प्राप्ति-खडेलाके करद सामन्तोको नवीन शासनकी सनद मिलना-अभय तथा प्रतापसिहको पिताके अधिकारकी प्राप्ति-मोहम्मदशाहके विरुद्ध शेखावाटीके सामन्तो का सेनासहित गमन-आत्मविवाद-सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिहका खंडेलापर आक्रमण-हनुमंत-सिहकी वीरताका प्रकाश करना-उनकी मृत्यु-लक्ष्मणसिहका खंडेलापर अधिकार-खडेलाके दोनो अधीश्वरोका चिरकालके लिये पैतृक अधिकारसे वचित होना-उनका निकाला जाना-राजमंत्रीके साथ लक्ष्मणसिंहका विवाद-विवादका फल-सिद्धानियोका इतिहास-लाड़खानी लोग-शेखावाटी का राजस्व—

दीनाराम वोहरा इस समय सन् १७९८-९९ ईस्वी में जयपुरके प्रधानमंत्री पदपर नियुक्त थे। आशारामको खंडेला विजय करते हुए देखकर वह शीघ्र ही राजधानी छोड़कर सिद्धानीके सामन्तोके पाससे कर लेनेके लिये शेखावाटीको चले। दीनाराम

उदयपुरमे आशारामकी सेनाके साथ मिलकर सिद्धानी सामन्तोंके अधिकारी देशोके बीचमे परशुरामपुर नामक नगरमें सेनाको लेगये। वहां जाकर इन्होने सम्पूर्ण सामन्तोके पास आज्ञापत्र भेजकर शीघ्र ही अपने २ देय करको उपस्थित करनेके लिये कहा। इतना ही करके वह शान्त न हुए, जिससे शीघ्र ही कर अदा होजाय इस हेतु प्रत्येक देशमे एक २ अश्वारोही दल भी भेजदिया। इस सेना भेजनेका नाम धोस था। इसका मूल उद्देश यही था कि अश्वारोही सेनाका दल सामन्तोके यहां जाकर उनसे सरकारी कर मांगे। सामन्त जितने दिनोतक कर देनेमे विलम्ब करैगे सेना उतने दिनोतक प्रतिदिन निर्द्धारित धन उनके निकटसे दंडमे लेती रहैगी। यदि सामन्त कर देनेमे राजी न हो तो उनके साथ युद्धका विचार किया जायगा। जब जयपुरके राजमत्री उक्त अपमान कारक उपायसे कर लेनेके लिये उद्यत हुए, तब समस्त सिद्धानी सामन्तोने अत्यन्त क्रोधित हो शीघ्र ही मिलकर एक पत्र पर हस्ताक्षर करके उनके पास भेज दिया। उन्होने उस पत्रमे लिख भेजा, कि दीनाराम यदि एक मुहूर्तका भी विलम्ब न करके उस भेजी हुई सेनाको बुलाकर स्वयं सेना सहित झुंझुनूमे न चलाजायगा तो उसे विलक्षण फल मिलैगा, वह यदि झुंझुनूमे चलागया तो सामन्तोके देय हुए करका जो दश हजार रुपया इकट्ठा हुआ है वह शीघ्र ही मिलजायगा। समस्त शेखावाटीके नेताओने एक मत होकर उक्त पत्रको लिखा। परन्तु खण्डेलाके वन्दी राजाके भ्राता वाघसिह किसी प्रकार भी उसमें सम्मत न हुए। शेखावत देशके समस्त अधीश्वरोने एक साथ मिलकर थोड़े ही दिनोके पहिले आमेर राजके जिस प्रकारसे उपकार किये थे, नंदरामकी प्रवलता विनाश करनेके लिये आमेरकी सेनाकी जिस प्रकार सहायता की थी, तिस पर भी आमेरपतिके विपरीत पुरस्कार देनेसे वाघसिह आमेरपतिके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। आमेरराजके साथ शेखावतोकी पहिले जो संधि होगई थी, उसकी एक धारामे यह भी उल्लेख था कि शेखावत जितने दिनोतक कर देते रहैगे उतने दिनोतक आमेरराज किसी प्रकार भी शेखावत् देशपर सेना नहीं भेज सकैगे, ऐसा प्रवध सदा रहैगा। सारांश यह है कि संधिकी उस धाराको भंग करके आमेरकी सेनाने जव शेखावत् देशमे प्रवेश किया तव वाघसिह अपने वाहुवलसे उसी समय जन्मभूमिकी रक्षाके लिये कृतसकल्प हुए। वाघसिहके उक्त मन्तव्यके प्रकाश होते ही खेतरीके पॉचसौ राजपूत आकर उनके साथ मिले। वाघसिहने उस सेनादलके साथ सीकरके अधीश्वरके निकटसे सिहाना और फतेपुरका दंडस्वरूप धनसंग्रह करके इस समयके सुप्रसिद्ध जार्ज थामस नामक यूरूपीय सेनापतिको अपने पक्षमे नियुक्त करलिया। जार्जथामस स्वय इस समय इस विवादमान राजपूत जातिके किसी एक पक्षमे नियुक्त होकर धन उपार्जनके लिये व्यग्र होरहे थे। जार्ज थामसने अपनी शिक्षित सामान्य संख्यक सेनाके साथ वाघसिहके साथ मिलकर शीघ्र ही आमेरकी सेनाके साथ युद्धका प्रस्ताव किया। यद्यपि इस समय जयपुरराजकी समस्त वेतन भोगी सेना और उनके अधीनके सामन्तोकी सेना एकसाथ मिलनेसे उनकी संख्या वाघसिह और थामसकी सेनाकी सख्याकी अपेक्षा अधिक होगई थी। परन्तु

जार्ज थामस अपनी उस सामान्य संख्यक शिक्षित सेनाकी सहायतासे इस समय समस्त रजवाड़ेमे सभीके भयके कारण स्वरूप होगये थे । इस कारण जब उन्होंने स्वयं अपनी सेनाके साथ वाघसिहका पक्ष अवलम्बन किया, तब राजपक्षकी सेना संख्यामे अधिक होनेसे भी बलमे हीन होगई । जार्ज थामसने इस प्रकारसे बल विक्रमके साथ जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, कि जयपुरके सेनापति रोड़ारामने उस आक्रमणके वेगको किसी प्रकार भी सहन न करके खेत छोड दिया । उसी समय जार्ज थामसने जयपुरके कितने ही तोपखानोको लूट लिया । प्रधान सेनापतिकी भीरुतासे जयपुरके पक्षमे जो कलंक लगा उसको दूर करने और तोपखानेको फिर अपने अधिकारमे करनेके निमित्त आमेरराजकी तरफसे चौमूके सामन्त रणजीतसिहने सम्पूर्ण सामन्त सेनाको इकट्ठा करके प्रबलरूपसे दल बाँधकर स्वयं जार्जथामस पर आक्रमण किया । उस प्रबल समरमे रणजीतसिंहकी ही विजय हुई, यद्यपि रणजीतसिहने तोपखानेको छीन लिया । परन्तु वह अधिक घायल हुए और सेना भी बहुत सी मारीगई । खांगारोत सम्प्रदायके दो नेता बहादुरसिह और पहाड़ सिंह भी गोलोके आघातसे हत हुए। परन्तु जार्जथामस शेषमे एकबार ही परास्त हो गये, और प्राणोके भयसे उनकी सारी सेना भाग गई ।

उपरोक्त समरमे वाघसिहके पराम्त होनेसे आमेरराजने उनको खंडेलामे प्रबल बलशाली देखकर अपने हस्तगत करलिया, इधर जयपुरके कारागारमे बंदी दशामे पडे हुए खडेलाके दो अधीश्वर नरसिह और प्रतापसिह वाघसिहको उद्योगी और प्रभावशाली जान कर स्वयं सरलतासे मुक्तिकी आशा करने लगे । और जिससे उनकी वह आशा पूर्ण होजाय इस लिये उनके पास उत्साहसूचक अनुरोध भी भेजा। जिससे रोड़ाराम उनके ऊपर अनुकूल होकर सहायता करै इसलिये उनके साथ भी वह गुप्तभावसे प्रस्ताव चलाने लगे । रोड़ारामने कहला भेजा कि यदि एक दल प्रबल रायसालोतकी सेनाका मेरे साथ मिलजाय तो मै आपकी आशाको पूर्ण करसकता हूँ । इस प्रस्तावसे वाघसिहको ही प्रतिनिधि नेतारूपसे नियुक्त किया गया । वाघसिहने अपनी सामर्थ्यके बलसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी । जो राजपुरुष आमेरराजकी ओरसे इस समय खडेलाको शासन करते थे, वे एकमात्र वाघसिंहके उस प्रभुत्वकी सहायतासे खंडेलां देशका कर सग्रहकर भूमिके सम्बन्धमे नवीन विधिकी व्यवस्था करनेमे समर्थ हुए थे । इससे उनको हस्तगत कर रखनेके लिये शासकने खंडेलाके किलेमे रहनेकी आज्ञा दी थी । वाघसिह बहुत थोड़ी सी सेनाके साथ खडेलाके महलमे निवास करते थे । इस समय जयपुरके सेनापतिने वाघसिहको एक स्वजातीय सेनादलके साथ मेल करनेकी आज्ञा दी, वाघसिह अपने अनुज लक्ष्मणसिहको अत्यन्त स्नेहके साथ खंडेलामे रखकर आप जयपुरके सेनापतिके साथ मिले ।

खंडेलाके दूसरे शासक राज्यबंदी प्रतापसिहके पुत्र हनुमन्तसिहने जब सुना कि वाघसिह राजाकी सेनादलके साथ मिल गये है तब उन्होने शुभ सुअवसर जानकर खंडेलाके किलेको जीतनेका विचार किया । रात्रि होगई थी, हनुमंतने कितनी ही

अस्त्रधारी सेनाके साथ खंडेलामे जाकर दुर्गकी दीवारोंको उल्लघन करके किलेमे प्रवेश कर सावधानीसे समस्त सेना और लक्ष्मणसिहकी हत्या करके किलेको जीत लिया। वाघसिह इस समयमे रानोलीमे निवास कररहे थे। उन्होने हनुमन्तसिहको अपने अनुज लक्ष्मणसिहकी हत्या और खंडेला पर अधिकार करते हुए सुनकर शीघ्रतासे खडेलामे जाकर उसको घेर लिया। वाघसिह वाहरसे ही अस्त्र चलाने लगे और हनुमन्तसिहने किलेके भीतरसे गोला वर्षाना प्रारंभ किया। परन्तु हनुमन्तसिहने वहुत थोड़ी अवस्थावाले लक्ष्मणकी हत्या की थी इससे नगरनिवासी उस हत्याकांडसे उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। इस कारण वे इस समय आग्रहके साथ वाघसिहकी सहायता करने लगे। अधिक क्या कहे, स्त्रियाँतक किलेको जीतनेके लिये सेनाकी विशेप सहायता करने लगीं। वाघसिह प्रबल विक्रमके साथ किलेको जीतनेके लिये प्रवृत्त हुए। हनुमंतकी सेनाने अपने प्रभुपर भयंकर विपत्ति देखकर प्राण पणसे युद्ध किया। परन्तु जयकी आशा न देखकर अंतमे उन्होने प्रचलित रीतिके अनुसार संधिका प्रस्ताव सूचक स्वेत पताका दिखा कर किलेका दरवाजा खोल दिया। वाघसिह सानन्द किलेमे पैठ गये। वहां जाकर उन्होने चाहा कि अपने सुकुमार भाईकी हत्या करने-वाले हनुमंतसिहसे उचित्त वदला ले किन्तु वह पहिले ही किलेसे निकल भागा था। इस लिये वाघसिहकी वह प्रतिहिंसक अभिलाषा मनकी मनमे ही रह गई।

उधर दीनाराम जयपुरके राजमंत्रीपदसे उतार दिये गये। और मानजीदास उस पदपर नियुक्त हुए। रोड़ाराम पूर्व कथित युद्धमे पराजित और कलंकित नही हुए थे। इससे वह इस समयतक शेखावाटी देशके करसंग्रहके पदपर नियुक्त थे। उन्होने खंडेलादेशके एक ब्राह्मणो वार्षिक वीस हजार रुपयेकी जमावन्दी पर नियुक्त किया था। उक्त ब्राह्मणने प्रथम वर्षमे विलक्षण लाभ दिखाया। इसीसे उसे फिर दो वर्षका ठेका दिया गया। इस समय जयपुरराजकी सिलहपोश सेना उक्त ब्राह्मणके अधीनमे नियुक्त थी। वह ब्राह्मण उक्त सेनाकी सहायतासे खंडेलाके जो समस्त सामन्त अवतक स्वाधीनभावसे रहते थे, उनके पाससे भी वलपूर्वक करसंग्रह करनेमे प्रवृत्त हुआ। जो लोग कर देनेमे असम्मत हुए उसने सेना सहित उनपर आक्रमण करके उनके कितने ही किलोपर अधिकार कर लिया। यद्यपि जयपुरपतिने नरसिह और प्रतापसिहको वदी करके समस्त खडेलाराज्य पर अधिकार करलिया था, परन्तु प्रताप और नरसिहकी खास अधिकारी भूमिके अतिरिक्त अन्य सम्पूर्ण देशोके सामन्तोके साथ संधिवधन करके उनसे नियमित कर लेते आये थे। इस समय उक्त ब्राह्मणने उन सामन्तो पर भी आक्रमण करके उनके ऊपर इस प्रकारके अत्याचार करने प्रारभ किये। खंडेलाके रायस्मल वंशोद्भव समस्त सामन्त महाक्रोधित हुए, और वदला देनेके लिये सहारमूर्तिसे सेनासहित सुसज्जित हुए। उन्होने नरसिह और प्रतापसिहके निकटसे यह समाचार पाया कि जयपुरके महाराजके निकटसे उनको कारागारसे मुक्त होनेकी अव कोई आशा नहीं है, इस कारण सामन्त और भी उत्तेजित हुए। राजपूत जाति समस्त आशाओके लुप्त होते ही जिस प्रकार महाक्रोधित हो भयकर काण्ड उपस्थित कर देती है, इस समय वह लोग उसी

प्रकारसे खंडेला देशपर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित करनेके साथ वदला लेनेके लिये अग्रसर हुए । उन्होने सबसे पहिले महा वेगसे उस ब्राह्मणके अधिकारी खंडेला नगर पर आक्रमण किया। और वहाँ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित कर दी । ब्राह्मणकी ओर सात सहस्र दादूपन्थीसेना थी, तथापि सम्मिलित सामन्तोने उस सेनाको विध्वंस कर ब्राह्मणको भगाकर नगरको लूट लिया । उन्होने सबसे पहिले इस प्रकारसे जयलक्ष्मीका आलिंगन करके अंतमे गगनभेदी जयशब्दसे शेखावाटीको कंपायमान करके जयपुर राज्यमे जाकर ग्राम और अनेक नगरोंको लूट लिया। अधिक क्या जयपुरकी महाराणीके खास अधिकारी देशोंमे जाकर वे उनको विध्वंस करने लगे । इससे जयपुरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए, और उनको दमन करनेके लिये उन्होंने फिर एक नवीन सेना भेजी, दोनो ओरमे महा संग्राम उपस्थित हुआ । अंतमे सामन्तोकी सम्प्रदाय अत्यन्त हीनवल होगई । रानोली और अन्य कितने ही देशोंके सामन्तोने अन्तमे जयपुर पतिके साथ संधि स्थापन कर वश्यता स्वीकार कर ली । परन्तु रायसालकी कनिष्ट शाखामे उत्पन्न हुए सामन्तोने किसी प्रकार भी वश्यता स्वीकार न की । उन्होंने अपने देशको छोड़कर वीकानेर और मारवाड़मे जाकर वहाँके दोनो अधीश्वरोकी शरण ली। प्रताप-सिहके जाति भ्राता सूजावासके सामन्त संग्रामसिह मारवाड़मे और वाघसिह और सूर्यसिह वीकानेरमे चले गये, वहांके दोनो राजाओने उनको अभय देकर उनके भरण पोषणके निमित्त उन्हें जगीरे लगा दीं । वे कुछ समयतक वहाँ इस प्रकारसे रहे, और फिर प्रवल दल वाँधकर जयपुरको विध्वस करनेके लिय चले।

वीरश्रेष्ट संग्रामसिह उस निर्वासित सामन्त वृन्दके नेता पदपर नियुक्त होकर शीघ्र ही आमेरमे गये । और उस राज्यके बहुतसे देशोंको लूटकर विध्वंस करने लगे । अनेक स्थानोके निवासियोसे दंडकर लेकरके जिस जिस स्थानपर जयपुरराजके छोटे २ किलोमे सेना निवास करती थी, उन्ही २ किलोपर आक्रमण करके निर्दयीभावसे राज्यकी सेनाका विनाश करने लगे । उक्त सम्मिलित सामन्तोने इस प्रकारसे चारो ओर अशान्ति स्थापित करते २ अन्तमे जयपुरकी राजधानीके वहुत ही निकट खोह नगरमे जाकर उस नगरको लूट वहांसे वहुतसे घोड़े चुराकर अपनी सेनाके लिये लेगये। नेता संग्रामसिह इस समय क्रमानुसार जयप्राप्त करके इतने वलवान् होगये कि वह मनमे आते ही किसी असीम साहसके कार्यपर हाथ डालदेते थे। इनके इस उपद्रव और अत्याचारोसे प्रजाको महान् कष्ट उपस्थित हुआ, और अन्तमे जयपुरपतिके यहाँ लोग चारो ओरसे हाहाकार मचाने लगे । और उनके द्वारा अपना सर्व-नाश वताकर सहायताके लिये प्रार्थना करने लगे । इस समाचारसे जयपुरके महाराज भयभीत हो शीघ्र ही विद्रोही-नेता सग्रामसिहके साथ सधि करनेके लिये अग्रसर हुए । विसाआदेशके सिद्धानी सामन्त श्यामसिहने जयपुरके महाराजके प्रतिनिधिस्वरूपसे संग्रामसिहके पास जाकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया, और भविष्य जयपुरेश्वरका कोई अनिष्ट न करनेके लिये उन्होने राजपूत रीतिके अनुसार संग्रामसिहको वचन वद्ध करलिया । संग्रामसिंहने उक्त वचनोपर विश्वास कर अन्तमे

जयपुरकी राजधानीमे जाकर जयपुरपतिके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की। कई दिनोमे वीर तेजस्वी संग्रामसिंहने अपनी विजयी सेनाके साथ जयपुर नगरमे प्रवेश किया। नगरमे जाते ही अनेक सम्प्रदायोके लोग इकट्ठे होकर उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि डालने लगे। विशेष करके वेतनभोगी सिक्खोने देखा कि संग्रामसिहने उनमेसे किसीके घोड़े और किसीके ऊँट इत्यादि छीन लिये थे, उन्होने उन सबको लेकर राजधानीमे प्रवेश किया है। परन्तु संग्रामसिहने इस प्रकार बलविक्रमके साथ गर्वित हो राजधानीमे प्रवेश किया कि, उक्त सेना वा अन्य सर्व साधारण संग्रामसिहकी सेना अपने २ घोड़े ऊँट वा अस्त्र देख कर भी प्रार्थना करने वा उनका दावा करनेका साहस न करसके।

राजमंत्री मानजीदासने मनही मन स्थिर किया था कि संग्रामसिहके राजधानीमे प्रवेश करते ही किसी न किसी उपायसे उनको बदी करके कॉटेको उखाड़ दिया जाय और मत्रीके अनुरोधसे ही जयपुरपतिने शपथ की थी, कि वह संग्राम-सिहके शरीरपर हस्ताक्षेप नही करेगे। परन्तु मानजीदासने जयपुरके महाराजकी प्रतिज्ञा भंग करनेसे महाकलंक लगैगा यह जानकर भी संग्रामको बदी करनेके लिये उद्योग किया। श्यामसिह जो राजाके वचनोपर विश्वास करके संग्रामसिहके निकट वचनवद्ध हुए थे उन्होने मत्रीके उस गुप्त अभिप्रायको जानकर तुरत ही संग्रामसिहसे समस्त समाचार कहदिया। ४८घंटेके पीछे जयपुरके महाराजने समाचार पाया कि संग्रामसिह जयपुरको छोड़कर तंवरावाटीको चलेगये और तंवर और लाड़खानी भी उनके साथ मिल गए है। संग्रामसिह इस समय एक हजार अश्वारोही सेनाके नेता हुए थे।

संग्रामसिहने अपनी सेनाका बल बढ़ाकर असीम साहसके साथ जयपुरपतिके खास अधिकारी देशोमे जाकर शीघ्र ही ग्राम और नगरोको लूटना प्रारंभ कर दिया। वह सबसे पहिले दंडस्वरूपमे एक २ नगर और ग्राम निवासियोके निकटसे कर मांगनेके लिये दूत भेजने लगा। जो लोग उसकी प्रार्थनाको पूर्ण करने लगे उनके ऊपर तो किसी प्रकारका अत्याचार नही किया। परन्तु जो कर देनेमे राजी नही हुए उनके प्रधान २ नेताओको वंदी करके लेजाने लगा, शेपमे करके पाते ही उनको छोड़नेमे भी उसने किंचित् भी विलम्ब न किया। परन्तु जिन्होने किसी प्रकारसे भी कर नही दिया उनके ग्राम और नगरोको लूट कर समस्त धन रत्न ऊँटोपर लदवाकर वह लेजाने लगा। संग्रामसिंहने इस प्रकारसे जयपुरराजके खास पृथ्वीके अधिक स्थानोको लूटकर अंतमे जयपुरकी दूसरी रानीके अधिकारी माधोपुर नगरको जा घेरा। वहाँ भयकर युद्धके समय अचानक एक गोली संग्रामसिहके मस्तकमे आकर लगी, और इसी आघातसे उन्होने प्राण त्याग दिये। उनका शव शीघ्र ही रानोलीमे लाकर भस्म किया गया। संग्रामके मारेजाने पर उनका पुत्र पिताकी मृत्युका वदला लेनेके लिये पिताकी समान महा तेजस्वी हो चारो ओर अत्याचार करके लूटमार करने लगा। अतमे जयपुरपतिने उसके साथ संधि करके पिताका अधिकारी देश सूजावास उसको देदिया, और उक्त लूटनेवालोका दल भग कर दिया।

जिस समय यह घटना हुई थी उस समय आमेरके सिंहासन पर महाराज जगत्‌सिंहजी विराजमान थे, तथा रायचंद आमेरके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त थे। इस समय रजवाड़ेमे फूलनलिनी कृष्णाकुमारीके जन्मलेनेसे समस्त राजस्थानमे महा युद्धानल प्रज्वलित होगया था। उसी युद्धके होनेसे शेखावाटीके अधीश्वरोकी पूर्व शोचनीय अवस्था इस समय और भी बढ़ गई थी। इसी समय पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने मारवाड़पति भीमसिंहके पुत्र धौकलसिंहको अपने साथ लेकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया था। प्रधान मंत्री रायचंदने यथासाध्य इस बातकी चेष्टा की कि जिसमे जगत्‌सिंह कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेमे समर्थ होजॉय। उसने अपने प्रभुकी सेना-को बढ़ानेके लिये शीघ्र ही इस समय शेखावाटीके असतुष्ट सामन्तोको अपने हस्तगत करनेका यत्न किया। मत्रीवर रायचंदने सबसे पहिले अपने भाईके पुत्र कृपारामको शेखावाटीके अधीश्वरोके निकट भेजा। कृपारामने वहॉ जाकर शेखावाटीके अधीश्वरो मे कृष्णसिंहको अपने प्रतिनिधि पदपर नियुक्त किया, और उन्हीके अधीनमे सब शेखा-वत् सेनासहित उदयपुरके मार्गमे इकट्ठे होने लगे।

इस शुभ सुअवसर पर आमेरराजकी विशेष कृपासे अपनी पूर्वस्वाधीनता प्राप्त करनेमे समर्थ होकर उक्त सामन्त वर्ग अपने सर्वश्रेष्ठ नेता खंडेलापति नरसिंह और प्रतापसिंहका बंदी अवस्थासे उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा करने लगे। महाराज जगत्-सिंहने अपने स्वार्थसाधनके लिये शीघ्र ही शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोकी कामनाको पूर्ण करदिया। कृपारामने तुरन्त ही आमेरपति महाराज जगत्‌सिंहकी ओर से सधि करली। सधिपत्रके नियुक्त होते ही खडेला राज्यके सम्मिलित अधीश्वर नर-सिंह और प्रतापसिंहको मुक्ति देकर उनका वह राज्य उन्हीको लौटा दियागया। उसी समय इस प्रकारकी सधि भी होगई कि जबतक दूसरे शेखावतोके नेता आमेर-पतिको कर देते रहैगे, तबतक आमेरराज किसी प्रकार भी उक्त देशके भीतरी शासन पर हस्ताक्षेप नही कर सकेगे। कृपाराम और कृष्णसिंहने जयपुरकी राजधानीमे जाकर महाराज जगत्‌सिंहके सम्मुख वह संधिपत्र रक्खा, महाराजने तुरन्त ही उसपर हस्ताक्षर कर दिये, उक्त संधिपत्र पर हस्ताक्षर होते ही शेखावाटीके नेता दश हजार सेना इकट्ठी करके आमेरपतिके अधीनमे युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। महाराजने यह भी स्वीकार किया कि जितने दिनोतक वे लोग रणक्षेत्रमे रहैगे उतने दिनोतक महाराज ही उनको सब खर्च देते रहेगे।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंह धौकलसिंहको लेकर पहिले ही खेतड़ी नामक स्थानमे आ गये थे। इस समय शेखावत् नेताओके साथ संधिबन्धन समाप्त होगया तब पोकरणके सामन्तके भ्रातृपुत्र श्यामसिंह चॉपावत् कृपारामके साथ खेतड़ीमे जाकर वहांसे धौकलसिंहको ले उन सम्मिलित शेखावतोके डेरोमे आये। आमेरके भूतपूर्व महाराज प्रतापसिंहकी कन्या महाराणी आनन्दकुमारी और मारवाडपति भीमसिंहकी रानी महारानी आनन्दकुमारीने अपने सेवकोके साथ उन्ही डेरोमे जाकर धौकलसिंहको अपने

दत्तकपुत्रस्वरूपसे गोद लेलिया। इसके पीछे सब लोग राजधानी जयपुरमे आ गये। और वहांसे एक लाखसे भी अधिक सेना संहारमूर्ति धारणकर मारवाडको जीतनेके लिये रवाना हुई।

सम्मिलित सेनादल खण्डेलासे दशकोश दूर खट्टू स्थानमे पहुँचा वहां बीकानेरके महाराज तथा अन्यान्य योगदेनेवालोके आनेकी बाट देखने लगे। इसी समयमे शेखावाटीके सम्मिलित नेताओने आमेरके महाराजसे यह प्रार्थना की कि "हमारे यथार्थ स्वामी दोनो अधीश्वर नरसिह और प्रतापसिहको छोड़ दिया जाय। सम्मिलित अन्य ख्यातनामा वीरोकी समान उन प्रसिद्ध वीर दोनो नेताओके अधीनमे हम रहनेकी इच्छा करते है"। परन्तु सम्मिलित शेखावतोके नेताओकी उक्त प्रार्थनाको अस्वीकार करनेसे महा सकट उपस्थित होनेकी सम्भावना थी, इस कारण आमेरपतिने शीघ्र ही उनके मनोरथको पूर्ण करदिया। बहुत दिनोतक बंदीभावमे रहकर नरसिह और प्रतापसिह मुक्ति प्राप्त करके अपनी सेनाके साथ आकर मिले। खण्डेलाके भूतपूर्व अधीश्वर वृन्दावनदास जो इतने दिनोतक कई ग्रामोका अधिकार पाकर इकले रहते थे। इस जातीय युद्धको उपस्थित देखकर वृद्धावस्थामे वह भी तलवार हाथमे लेकर आमेरकी सेनादलके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए। महाराज जगत्सिह इस समय इतने अधिक संख्यक "शेखाजी" के वंशधरोसे युक्त हुए कि किसी समय भी कोई आमेरपति इस प्रकारके वहु सख्यक रायसालोत सिद्धानी, भोजानी, लाड़खानीको एकत्र करके अपने अधीन मे रखनेको समर्थ न हुए थे। शेखावतोके सब अधीश्वर शीघ्र ही जगत्सिहके साथ मारवाड़मे जानेके लिये तैयार हुए। कृष्णकुमारीके लिये जगत्सिहके साथ मारवाड़पति मानसिहका जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन पाठकोने मारवाड और जयपुरके इतिहासमे भलीभाँतिसे पाठ किया होगा। इस कारण अब यहाँ दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नही है। हम यहाँ केवल इतना कह सकते है कि इस युद्धमे शेखावतोकी सेनाने जैसी वीरता प्रकाश की थी, जगत्सिहके भागजानेसे अन्तमे उसी प्रकारका कलंक भी सचित किया। अत्यन्त दु:खका विषय है कि उस युद्धमे खण्डेलाराज नरसिह और वृद्ध वृन्दावनदास दोनोने ही प्राण त्याग किये।

नरसिहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र अभयसिह पिताके पदपर स्थित हुए, और उन्होने खण्डेलाकी सेना पर अपना अधिकार किया। अन्तमे महाराज जगत्सिह मारवाड छोडकर अपने राज्यकी ओरको चले आये। वह भी शेखावतोकी सेना लेकर ख [illegible] लौट आये। परन्तु महाराज जगत्सिह इस समय पहिली संधिको भंग करके अ [illegible] य सिहको खण्डेलाका राज्य देनेमे असम्मत हुए, तब अभयसिहने दुखित चित्तसे माचेड़ के राजा वख्तावरसिहके यहां आश्रय लिया। परन्तु वख्तावरसिहने उनके ऊपर अप्रिय व्यवहार किया अभयसिहने उससे अपना अधिक अपमान जानकर एक स [illegible] पीछे माचेडीको छोड़ दिया। इस समय ढिवसा स्थानमे महाराष्ट्रोके नेता वापू से [illegible] निवास करते थे, खण्डेलाके दूसरे अधीश्वर प्रतापसिह अपने पुत्रके साथ उनके नि [illegible]

जाकर उनकी शरणमे हुए। इधर हनुमन्तासिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध विक्रमसे इस समय फिर गोविन्दगढ पर अधिकार करनेके लिये उद्योग करने लगे। उन्होंने समस्त समाचार जानकर वीर तेजस्वी ६० अस्त्रधारियोंको संध्याके समय एक नदीके किनारे छिपा रक्खा, पीछे आधीरातके समय वे पहाड़ी मार्गसे एक एक करके किलेकी तरफ जाने लगे। और चुपकेसे किलेकी दीवारो पर चढ़कर उन्होंने दुर्ग रक्षक सेनाका संहार करना प्रारंभ किया। थोडे ही समयके बीचमे किलेकी सेनाके जागते ही घोर युद्ध होने लगा। वीर विक्रमी हनुमतसिंहने उस शत्रुदलकी सेनाका संहार करके शेष सेनाको भगाय शीघ्र ही गोविंदगढ़ पर अधिकार करलिया। किलेको जीतते ही उस गभीर रात्रिके समय शेखावतोंने आनंदित होकर नक्कारेको बजाया, लाड़खानी मीना और निकटवर्ती अन्यान्य जातीय राजपूत लोग जातीय शब्दसे आनंदित हो शीघ्रतासे किलेमे घुसपडे। हनुमतकी जयध्वनिसे गोविंदगढ कपायमान होगया। कई सप्ताहके पीछे महावीर हनुमतने दो हजार सेना इकट्ठी करके आमेरके महाराजके साथ सब प्रकारसे सामना करनेका साहस किया। उन्होंने खडेला और निकटवर्ती अन्यान्य स्थानोंको एक २ करके अपने हस्तगत कर लिया। जयपुरके महाराजकी जो सेना किलेमे रहती थी वह विजयी हनुमतके आनेका समाचार पाकर प्राणोंके भयसे चारो ओरको भागने लगी। खुशियाली नाम एक दरोगा प्रसिद्ध षड्यत्रकारी इस समय खडेला पर शासन करनेके लिये आमेरपतिके द्वारा नियुक्त हुआ था। उसने प्राणोंके भयसे भयभीत हो आमेरमे जाकर जयपुरके महाराजके सम्मुख अपनी पराजयका वृत्तान्त कह सुनाया। यद्यपि वह दरोगा खण्डेलाके किलेमे एकसौ सेना रखनेके लिये आमेरपतिके निकटसे वेतन लेता था, परन्तु वह तीस मनुष्योंकी रक्षामे रखकर वचेहुए समस्त धनको अपने अधिकारमें करता था। विजयी हनुमतसिंहने इसी कारणसे सरलतासे विजय प्राप्त की थी।

हनुमंतसिंहने अपने बाहुबलसे ही खण्डेलाको विजय कर लिया है, खुशहाली दरोगाके मुखसे यह समाचार सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और खण्डेला पर फिर अधिकार करनेके लिये रतनचँद नामक एक सेनापतिके अधीनमे दो दल पैदल सेना और एक दल गोलन्दाज खुशहाली दरोगाके साथ भेजे। महाराजने यह आज्ञा भी सुना दी थी कि यदि खण्डेलाको खुशहाली न जीत सके तो उसको उचित दड दिया जायगा। खुशहाली इस समय नवीन सेनाके बलसे बलवान होकर मारे गर्वके आगे बढा है यह सुनते ही महावीर हनुमन्तासिंहने प्रतिज्ञा की कि मै अपने जीतेजी शत्रुसेनाको नगरमे न घसने दूंगा, और अपनी सजी हुई सेनाके साथ वह खुशहाली के आनेकी बाट देखने लगा। इसी अवसरमे खुशहालीकी सेनाका दल सम्मुख आया, हनुमन्तसिंहके अधीनकी सम्पूर्ण सेनानें प्रबल विक्रमके साथ युद्ध करते २ खुशहालीकी सेनाको भगादिया। अंतमे जिस समय हनुमंत सम्पूर्ण रूपसे विजय पानेके लिये उद्यत हुए, ठीक उसी समयमे उन्होंने दुर्भाग्यसे घायलहो शीघ्र ही अपनी सेनाको खंडेलाके किलेमे भेज दिया। खुशहालीराम दरोगाने सेनासहित किलेको घेर लिया और घायल हुए वीर हनुमतने दूसरी बार शत्रुओंकी सेनापर आक्रमण करके सिलहपोस सेनाके ३०

मनुष्योंको मारडाला। यद्यपि खुशहाली किसी प्रकारसे भी किलेको न जीत सका था, परन्तु किलेमें जो पानी था उसके समाप्त होजानेपर हनुमंतसिंहने अन्तमें आत्मसमर्पण करना निश्चय करलिया,। परन्तु आत्म समर्पण करनेके पहिले ही जयपुरके महाराजकी ओरसे खुशहाली दरोगाने हनुमतसिंहको पांच ग्रामोंके अधिकार देनेका प्रस्ताव किया, हनुमंतसिंहने शीघ्र ही उन पाँचग्रामोंको पाकर किलेको छोड़ दिया।

विख्यात् खुशहालीराम बोहरा इस समयकी अर्द्धशताब्दीके पहिलेसे आमेरराजदरबारमें विलक्षण प्रताप और प्रभुत्वको चलाता आया था, राजा प्रतापसिंहने उसको अत्यन्त दुश्चरित्र जानकर जन्मभरतक कारागारमें रखनेकी आज्ञा दी, और उसके वंशके किसी बोहराके परिवारमेंसे किसी मनुष्यको भी राजमंत्री पदपर नियुक्त नहीं किये जानेकी इच्छाकी। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं खुशहालीराम उस समय कारागारमें वृद्धावस्था बिता रहे थे इस समय सौभाग्यवश महाराजने इनको फिर छोड दिया, और वह राजमंत्री पदपर फिर स्थित हुए। शेखावाटीके अधीश्वरोंकी सम्प्रदायने कितने ही प्रतिनिधियोंको उनके पास भेज कर प्रार्थना की कि "आप कृपा करके हमारे पिताके अधिकारी देशोंको हमें फिर देदीजिये।" सौभाग्य बलसे खुशहालीरामने सामन्तोंकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेके लिये आमेरके महाराजके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि "सामन्त ही राज्यके प्रधान बल हैं, उनके संतुष्ट रहनेसे ही राज्यका मंगल है। यद्यपि शेखावाटीके सामन्त बहुत समयसे अवाध्यता प्रकाश करके राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव करते थे, परन्तु जब कभी जाति साधारणका अधिकार लेनेके लिये कोई झगड़ा होता है तभी वह महाराजकी वश्यता स्वीकार करके अपना पक्ष समर्थन करनेके लिये सेनाकी सहायता करनेमें भी त्रुटि नहीं करते। मारवाड विजयके समय शेखावाटीके सामन्तोंने दश हजार सेनाके साथ आमेरकी सेनामें मिलकर महाराजके अनेक उपकार किये थे। विशेष करके शेखावाटीके सामन्तोंके साथ महाराजका सद्भाव न होनेसे किसी कुअवसर पर कठिन महाराष्ट्रोंका आमेरराज्यमें आकर अत्यन्त हृदय विदारक जघन्य उपद्रव करनेकी आशंका है, इस कारण हमारे मतसे इन सामन्तोको सब प्रकारसे सतुष्ट करके उनको अपने हस्तगत रखना ही उत्तम बात है"। खुशहालीराम बोहराके उक्त वचनोंको सुनकर आमेरके महाराजने कहा कि "आप जो अच्छा समझें सो करें"। राजाकी आज्ञा पाकर खुशहालीरामने शीघ्र ही शेखावत् सामन्तोंके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त किया। उस सधिपत्रके मतसे यह निश्चय हुआ कि रायसालोत्गण वार्षिक६० हजार रुपया करमें दिया करें और इस समय भेटमें ४० हजार रुपया दें। इसपर सब सामन्त सम्मत होगये, और खडेला नगर तथा उनके अधीनके देशोंके अधीश्वरोंको फिर नवीन शासनकी सनद दीगई। इस प्रकारसे निकाले हुए खडेलाके दोनो अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंह फिर अपने पिताके अधिकारको पा गए।

यद्यपि नवीन शासन सनदपत्रपर आमेरके महाराज और उनके प्रधान मंत्रीने अपने हस्ताक्षर कर दिये, परन्तु इस समय जितनी नागा सेना खडेलाके किलेमें

और शेखावत् देशकी सीमामे स्थित किलोपर अधिकार किये हुए थी वह किसी प्रकारसे भी अभयसिह और प्रतापसिहको उक्त देश देनेके लिये राजी न हुई। वीरश्रेष्ठ हनुमतसिहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि खुशहालीराम बोहरा ने चतुरतासे चालीस हजार रुपया भेटमे संग्रह करके इस समय धोखा देनेके लिये गुप्तभावसे इस प्रकारकी आज्ञा दी है। तब हनुमन्तसिहने विशेष चिन्ता करनेके पीछे खण्डेलाके दोनो अधीश्वरोके निकट यह प्रस्ताव किया कि "आप हमको कितनी सेना देंगे? मै जिस उपायसे भी होगा, उसी उपायसे खण्डेलाको अपने हस्तगत करलूँगा"। अभयसिह और प्रतापसिहके अधीनमे इस समय पाँच सौ अस्त्रधारी सेवक थे, हनुमन्तसिह उनमेसे बीस वीर तेजस्वी मनुष्योको चुनकर उदयगढके द्वारपर जा पहुँचा। उसने अपनेको छिपाकर किलेमे कहला भेजा, कि मै हनुमन्तसिहका दूत हू, और उन्हीके पाससे आया हूं। किलेके अध्यक्षने उसको बीस अस्त्रधारियोके साथ किलेमे जाने दिया, पश्चात् बीस अस्त्रधारी उनके पीछे और आये। उन्होने भी किलेमे प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त किया। कुछ समयके पीछे अभय और प्रतापसिहके अन्य अस्त्रधारी उनके पीछे २ किलेके द्वारपर आकर इकट्ठे हुए। हनुमन्तने कुछही कालके पीछे दुर्गाध्यक्ष नागाके निकट अपना परिचय देकर आमेरके अधीश्वर और राजमंत्रीके हस्ताक्षर सहित नवीन शासनकी सनद दिखा कर उनसे कहा कि "यदि तुम इसी समय किलेसे न चले जाओगे तो इसी तलवारके बलसे मै एक २ के प्राणोका नाश करूँगा" वीर श्रेष्ठ हनुमन्तको इस प्रकारसे बलवान और दृढप्रतिज्ञ देखकर नागागण शीघ्र ही प्राणोके भयसे किलेको छोड़ कर भाग गये। अभय और प्रतापने बहुत दिनोके पीछे फिर अपने पिताके विध्वंस हुए देश पर अधिकार किया। जिस हनुमन्तसिहके बल विक्रम और साहस तथा शूरवीरताके बलसे अभयसिह और प्रतापसिहको इस प्रकारसे पैतृक अधिकार प्राप्त हुआ, वह दोनो ही उन हनुमन्तसिहके प्रस्तावके मतसे प्राचीन शत्रुताको छोडकर सरल स्वभावसे रहने लगे।

अभयसिह और प्रतापसिहको पैतृक राज्य मिलनेके कुछही काल पीछे विख्यात पठान दस्युनेता अमीरखाँ कालान्तक कालकी समान आमेरराज्यमे आया। महाराज जगत्सिहने उसको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ अधीन सामन्तोकी सेनाको एक साथ मिलालिया। पूर्वसंधिके मतसे इस समय खडेलापति अभय और प्रतापकी सेनाने भी उक्त सेनादलके साथ मेल कर लिया। अमीरखाँके प्रधान सेनापति मोहम्मदशाहखाँके विरुद्धमे शीघ्र ही वह सम्मिलित सेनादल दूनीके सामन्त राय चाँदासिहके अधीनमे वीरदर्पसे अग्रसर हुआ। धोसगढमे मोहम्मदशाह रहता था सेनाने उस किलेको घेर लिया। अंतमे किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण सभावना होगई पर एक सामान्य कारणसे ही राजपूत सेनाके सब प्रधान उद्देश व्यर्थ होगये।

शेखावत्सेनाके एकदलने इस समय टोकके अधीनमे स्थित एक नगरको जीत कर लूट लिया। उसीमे एक गोगावत सम्प्रदायका निवासी निहत हुआ। विजयी शेखावतोकी सेनाने उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। उन मारे हुए मनुष्योके पुत्र

शीघ्र ही गोगावतोंके नेता प्रधान राय चँदसिंहके पास गये। और उनको समस्त वृत्तान्त सुनाकर उनसे सहायता मांगी। चाँदसिंहने उनको पैतृक सम्पत्तिपर फिर अधिकार करनेके लिये कितनी ही वर्माावृत्तिसेनाको उनके साथ भेजा। शेखावत् किसी प्रकारसे भी उनकी सम्पत्ति देनेमे राजी नही हुए, और अपना दल प्रबल करलिया। इस समाचारसे चाँदसिंहने भी महा क्रोधित होकर उन बालकोंका पक्ष समर्थन करनेके लिये अपनी सेनाकी संख्याको बढ़ा लिया। इस प्रकारसे शेखावत् और गोगावतोंमें परस्पर युद्ध होनेकी संभावना होगई। शेखावाटीके दो अधीश्वरोंने समस्त शेखावत् सामन्तोंकी सेना लेकर विवाद स्थानमे आकर दर्शन दिया। चांदसिंहके साथ उस बालकका विशेष सम्बन्ध था, दूसरे यह चाँदसिंह उस समस्त सम्मिलित सेनाके ऊपर अध्यक्षरूपसे भेजे गये थे, इस कारण उन्होंने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये किलेको घेरनेवाली सेनामेसे बहुतसी सेनाको विवाद स्थल पर भेज दिया। तुरन्त ही आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंके अधीनमे स्थित सेनाने आत्मविग्रह उपस्थित करके महा समरानल प्रज्वलित करदी। केवल सीकरके सामन्त ही इस विवादसे दूर रहे। अतमे झगड़ा अधिक बढ गया। तब खाङ्गारोत् सम्प्रदायके नेताने मध्यस्थ होकर कहा, कि जिससे दोनो ओरका सम्मान बना रहै ऐसा कार्य करना उचित है। यद्यपि खडेलापतिने गोगावतोंकी सम्पत्ति लूटली, और वह उसे अपने राज्यमे लेगये है, पर वे समस्त सपत्तिको प्रधान सेनापतिके पास फिर भेजदे इससे दोनो ओरका सम्मान रह जायगा। शेखावत इसमे उसी समय सम्मत होगये। यद्यपि यह झगड़ा मिट गया, परन्तु चांदसिंह सतुष्ट न हुए। जो हो सम्मिलित सेनादलमे उक्त प्रकारसे आत्मविग्रह शांत हुआ, इसीसे भीमगढ़का अवरोध छोड़ दिया गया, सामन्त अपने २ देशको चले गये। सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह जो इस झगडेमे सामिल नहीं हुए थे, शेखावाटीके दोनो अधीश्वरोंको असरल मार्गसे खंडेलाके नगरकी ओरको जाता हुआ देखकर अच्छा सुअवसर जान शीघ्रतासे अपनी सेनाको सीकरमे ले जाकर फिर इस समय खडेलाके अधीश्वर पदको पानेके लिये आगे बढे। इन्होने सबसे पहिले सीसोह[1] नामक स्थानको घेर लिया, और अनेक प्रकारकी चतुराई तथा छलबलसे उस पर अपना अधिकार करलिया। जिन पठानोंके विरुद्ध सीकरपति कितने दिनोंके पहिले युद्धमे नियुक्त थे, अन्तमे उसी पठानको दो लाख रुपया देनेकी प्रतिज्ञा कर उससे सहायता पानेके लिये उन्होंने कहला भेजा। मन्नू और महताबखाँ दो पठान सेनापति उस धन पानेके लिये शीघ्र ही सेना सहित सीकरपतिके साथ गये। सीकरपति लक्ष्मणसिंह खडेलापर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए है यह समाचार वीर श्रेष्ठ हनुमन्तसिंहने पहिले ही सुन लिया था। इस लिये उन्होने इस भारी विपत्तिमे अभयसिंह और प्रतापसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये पठान सेनापति महताबखांको ५० हजार रुपये देनेको कहा कि वह किसी प्रकारसे भी खडेलापतिके साथ युद्ध न करे, और न खडेलामे जायँ। परन्तु दुराचारी महताबखाँ ने उस प्रतिज्ञाको भग करके शीघ्र ही अधिक धन पानेके लिये लक्ष्मणसिंहके साथ मेल करनेमे कसर न की।

वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिह पठानसेनापति महतावखांको ५० हजार रुपया लेकर भी प्रतिज्ञा भंग करते हुए देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए, और वह शीघ्र ही खंडेलाकी रक्षाके लिये उपयुक्त युद्धकी तैयारी करने लगे। परन्तु विपक्षियोके नेता लक्ष्मणसिहने अपने पितृसंचित अगणित धनकी सहायतासे इस समय अपने पक्षको धीरे २ अनेक उपायोसे प्रवल करलिया था। उसने शीघ्र ही उस धनवृष्टिके द्वारा रेवासो और अन्यान्य नगरो पर अपना अधिकार करलिया। विजयी लक्ष्मणसिहने शीघ्र ही प्रवल सेनाके साथ खण्डेला नगरमे जाकर नगरपर अधिकार करलिया, परन्तु वीरश्रेष्ठ हनुमन्त खण्डेलाके किलेमे भलीभाँतिसे रहकर दूरवर्ती कोटेके किलेमे वहुत दिनोके लिये बहुतसे खाद्य द्रव्योको गुप्तभावसे अन्य मनुष्योद्वारा सचित कराने लगे। शेषमे तीन सप्ताहतक उस प्रवल विपक्षियोकी सेनाके हाथसे खण्डेलाके किलेकी रक्षा करके जब उन्होने इनके मुखसे सुना कि कोटेका किला सव प्रकारसे धन सम्पत्तिसे पूर्ण करलिया गया है; तब वह सेनासहित नगी तलवारे हाथमे ले विपक्षियोके द्वारा विध्वंस होनेवाले खण्डेलाके किलेको छोड़ कर शत्रुओका सहार करने लगे, और शत्रुओंके डेरोको भेदन कर सेनाके साथ कोटेके किलेमे चले गये। सम्पूर्ण सामन्तोने अभय और प्रतापसिहके लिये अपने प्राणतक देनेका निश्चय कर लिया था, और इसीसे वह लोग पहिलेसे ही इस कोटेके किलेमे इकट्ठे होगये थे।

सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिह और शेखावाटीके प्रभु दोनो अधीश्वर अभयसिह और प्रतापसिहके नीचे पदपर स्थित सामन्त मात्र थे। इनके नीचे पदपर स्थित होकर उपरितन प्रभुके अधिकारको लोप करते हुए देखकर अन्यान्य सामन्त महाक्रोधित होगए, और बहुतसे अभय और प्रतापसिहकी सहायता करने लगे। परन्तु चतुर लक्ष्मणसिहने उनमेसे अनेकोका बहुतसा धन अपने हस्तगत करलिया। जिन्होने धन नही दिया लक्ष्मणसिहने उनके अधिकारी देशोमे पठानोकी सेनाको भेजा, इससे उन लोगोने अन्तमे अपना सर्वनाश जानकर निरपेक्षतासे रहना स्वीकार किया। यद्यपि किसी २ सामन्तने आमेरराजके निकट यह प्रार्थना की कि सीकरपतिने अन्यायाचरणसे खण्डेलापर आक्रमण किया है, परन्तु आमेरराजने उनकी प्रार्थनाको नही सुना, शेखावाटीके दोनो अधीश्वरोके दोषसे ही भोमगढ़का अवरोध व्यर्थ होगया है यह जानकर आमेरके महाराज उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए। इस कारण शेखावाटीके दोनो अधीश्वरोका पतन आमेरराजकी इच्छासे ही हुआ।

वीरश्रेष्ठ हनुमन्तसिह कोटेके किलेमे आकर शीघ्रतासे किलेके वाहरकी दीवारोको बनाकर कई सौ सेनाके साथ प्रवल बलशाली लक्ष्मणसिहकी बाट देखने लगे। लक्ष्मणसिहने पठानोकी सेनाकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार करनेके पीछे कोटेको भी जा घेरा, हनुमन्तसिहने किलेमे न जाकर उस बाहिरी किलेमें रहकर क्रमानुसार तीन महीनेतक शत्रुओकी आशाको व्यर्थ किया। अंतमे तीन महीनेके पीछे शत्रुओने अतुलविक्रमके साथ उस वाहिरी किलेपर आक्रमण किया। सभीने हनुमन्तको मूलकिलेमे

जानेके लिये अनुरोध किया, परन्तु वीर विक्रमी हनुमन्तने कहा, " जब कि खंडेला चिरकालके लिये शत्रुओंके हाथमे पड़ गया है, तब अब किलेके भीतर जानेका प्रयोजन क्या है ? " उन्होने शीघ्र ही अपनी सेनाको राजपूतस्वभाव सुलभ तेजस्विताके साथ उद्दीपित करके कहा, " क्या तो आप शत्रओका संहार करिये, और नही तो आओ अपने जीवनका वलिदान करें । " उसी मुहूर्त्तमे सेनासहित हनुमन्तसिहने नगी तलवार हाथमे लेकर बड़े वेगसे शत्रुओपर धावा किया और उन्हे परास्त कर दिया। और बाहिरी किलेको पुनः अपने हस्तगत कर लिया । पर भागीहुई शत्रुसेना फिर सहसा आगई और प्रभातकालसे लेकर संध्यातक दोनोमे घोर युद्ध होता रहा । हनुमन्तसिह ने अतिम वलके साथ फिर प्रचंडवेगसे शत्रुदलके व्यूहको भेदकर सब सेनाको भगा दिया । असीम साहसी हनुमन्तसिहने इस समय शत्रुदलको भागा हुआ देखकर उनका पीछा किया, किन्तु खेद है कि उनके तोपखानेके सम्मुख तक पहुँचते ही अचानक एक गोलेके आघातसे उसी क्षण उनके प्राण पखेरू पयान कर गये । हनुमन्तकी मृत्यु होते ही उसी समय शत्रुओंकी जय होगई। परन्तु नेताकी मृत्युसे उस अवरुद्ध सेनादलने शीघ्र ही बाहिरी किलेको छोड़कर भीतरके किलेका आश्रय जा लिया। उक्त समरमे पॉचसौ पठानो की सेना और सीकरपतिके अधीनकी सेनाके सिवाय हनुमन्तके अधीन मे अधिक सेना नही थी, दूसरे दिन प्रभात होते ही हनुमन्तका शव संस्कार करने और घायल मनुष्योको अन्य स्थानपर भेजनेके लिये किलेमे स्थित सेनादलने लक्ष्मणसिहसे कुछ कालके लिये समरको स्थित रखनेकी प्रार्थनाकी , लक्ष्मणने उसमे अपनी सम्मति प्रकाश की, और उसी अवसरमे अभय और प्रतापसिहके साथ सधिका प्रस्ताव उपस्थित किया गया । परन्तु अभय और प्रतापसिहने अवज्ञाके साथ उस प्रस्तावको अस्वीकार किया । हनुमंतके मारेजानेका समाचार पाते ही उदयपुरके अधीश्वर जो पहिलेसे ही अभय और प्रताप-सिहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होने फिर कितनी ही सेनाके साथ भोजनकी सामग्रीको किलेम भेज दिया। खेतड़ीके सामन्त इस समय उपस्थित होते तो वह अवश्य ही सहायता करते, परन्तु वह इस समय जयपुरमे थे । यद्यपि उन्होने अपने पुत्रसे कह दिया था कि बिसाऊ देशके सामन्तकी सम्मतिसे कार्य करना परन्तु बिसाऊ देशके सामन्तने लक्ष्मणसिहसे घूस लेने और अंतमे खंडेलाराज्यके कितने ही अश पानेकी आशासे लक्ष्मणसिहका ही पक्ष समर्थन किया था । इसी कारणसे खेतडीके सामन्तपुत्रोने अपने पिताके कहनेके अनुसार अभय और प्रतापसिहकी सहायता नही की । अभय और प्रतापसिहके अधीनकी सेना कही भी सहायताके न मिलनेसे वीर स्वभाव राजपूतोकी समान केवल साधारण बाजराकी रोटी खा करके और भी पाँच सप्ताहतक किलेकी रक्षा करती रही । अंतमे आहारके अभावसे किलेमे सेनाके प्राण नाशकी सभावना होगई । तब सब कोई आत्मसमर्पण करनेके लिये चिन्ता करने लगे । इसी समयमे अवरोधकारी लक्ष्मणसिहने प्रस्ताव कर भेजा कि वह अभय और प्रतापसिहको दश ग्रामोका अधिकार देनेके लिये तय्यार है, इसी पर किलेमें की सेनाने आत्मसमर्पण कर दिया। प्रतापसिहने तो पाँच

ग्रामोंका लेना स्वीकार किया, पर अभयसिह अपने वंशगौरवको स्मरण करके पैतृक तेजके साथ उन पाँच ग्रामोके लेनेमे राजी न हुए। यद्यपि प्रतापसिहने पाँच ग्रामोको लेलिया परन्तु कुछही दिनके पीछे दुराचारी लक्ष्मणसिहने उनको उन ग्रामोके अधिकारसे वचित करदिया। इतिहासवेत्ता टाड् साहव सन् १८१४ ईसवींमे लिखते है कि जिस समय खण्डेलाके शेष शेखावत् दोनो अधीश्वर अभय और प्रतापसिह झुंझुनू नामक स्थानमे अत्यन्त दीनभावसे थे। उस समय सिद्धानीके सामन्तोने सभीसे चदा सग्रह किया, और उस महाविपत्तिमे उनको वह प्रतिदिन पाँच रुपया दिया करते थे।

सन् १८१४ ईसवींमे जिस समय आमेरके राजमत्री पदपर मिश्र शिवनारायण विराजमान थे, उस समय अफगान लोगोने अमीरखाँ महाराष्ट्रनेताकी ओरसे जयपुरपतिके पाससे दंडमे नौ लाख रुपया माँगा। आमेरके राजाका खजाना इस समय एकबार ही खाली होगया था। राजमंत्रीने अन्य कोई उपाय न देखकर अतमे सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिहकी ओर दृष्टि डाली। लक्ष्मणसिहने जयपुरपतिके मतको ग्रहण न करके वलपूर्वक खण्डेलापर अधिकार कर लिया था और इस समयतक जयपुरेश्वरके पाससे खण्डेलाके शासनकी सनद न मिली थी। उसने वहुत दिनोतक शासनकी सनद संग्रह करनेके लिये भलीभाँतिसे चेष्टा की थी, इस समय विशेप सुभीता पाकर मिश्र शिवनारायणने लक्ष्मणसिहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि यदि वह स्वयं पाँच लाख रुपया दे और जयपुरकी सेनाकी सहायताके लिये सिद्धानीके सामन्तोके पाससे चार लाख रुपया इकट्ठा करके अमीरखाँको देदे तो उनको खण्डेलाकी शासनसनद दीजायगी। लक्ष्मणसिह उक्त प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेको राजी होगये। इस समय अमीरखाँ रानोलीमे निवास करता था। लक्ष्मणसिहने वहाँ जाकर उसके हाथमे नौ लाख रुपया देकर उसकी रसीद जयपुरपतिके यहाँ भेजदी, जयपुरके महाराजने भी लक्ष्मणको खण्डेलाका पट्टा देदिया।

लक्ष्मणसिह पट्टेको पाकर महा आनन्दित हो जयपुर राजधानीमे गये और वहाँ जाकर खण्डेलाका एक वर्षका राजस्व उन्होने अग्रिम देदिया, जयपुरपति महाराज जगत्सिहने उनका दियाहुआ राजस्व वार्षिक ५७ हजार रुपया नियुक्त कर उन्हे खिलत अर्थात् (सिरोपा) पोशाक और आभूपण देकर उनको अपने हाथसे अभिपिक्त करदिया। इस प्रकारसे रायसलके शेप वंशधर अभय और प्रतापका पैतृक अधिकार सर्वदाके लिये लोप हो गया, खण्डेलादेश शेखावतोकी एक नीची शाखामे उत्पन्न हुए लक्ष्मणके अधिकारमे होगया।

पाठकोको स्मरण होगा कि एक ब्राह्मणने खडेला देशको जयपुरपतिके पाससे जमावंदीमे ले लिया था। उसने प्रजाको पीडित करके और निकटके देशोके सामन्तोपर आक्रमण करके अत्यन्त दुःख दिया था। इस समय उस ब्राह्मणने अपमानित होकर अपने भाग्यके उद्धारके लिये विशेप चेष्टा करके अपने पोपक राजमंत्री मिश्र शिवनारायणके पास जाकर आश्रय लिया। अतमे चातुरी और षड्यत्रजालका विस्तार करके,

शिवनरायणको राजाके समीप इस प्रकारसे कलंकित किया कि अंतमें उसी कारणसे उन्होने आत्महत्या करली। ब्राह्मणने पीछे असीम साहसके साथ षड्यत्रके वलसे शेषमें आमेरके मंत्रीपद पर अधिकार करलिया। लक्ष्मणसिह जिस समय आमेरकी राज-सभामे आये तव इन्होने अपनी बुद्धिमानीसे वहाँ अपनी प्रभुताईका विस्तार किया, वह ब्राह्मण उस समय मंत्रीपदपर प्रतिष्ठित था। उस चतुर ब्राह्मणने लक्ष्मणको इस प्रकारसे अपना प्रभुत्व बढ़ाते देख कर अपनी सामर्थ्य और अधिकारके लोप होनेकी आशंका की और शीघ्र ही उसने लक्ष्मणको किसी न किसी उपायसे राजकोपमे डालने की चेष्टा की। ब्राह्मणने यह स्थिर कर लिया कि कुछ ऐसा उपाय करना उचित है, कि जिससे लक्ष्मण राजाके विरुद्धमे खड़ा होजाय, उसने लक्ष्मणसिहके नवीन अधिकार भुक्त खंडेलादेशपर आक्रमण करनेके लिये गुप्तभावसे आज्ञा दी। सिद्धानी राजपूत गणोने फिर अपने पूर्व अधिकार प्राप्तिकी संभावना विचार कर शीघ्र ही उक्त ब्राह्मण राजमंत्रीके अधिकारमे स्थित जयपुरकी सेनाके साथ मिल कर खडेलापर आक्रमण किया। ब्राह्मण मंत्री अपने उस आक्रमणकार्यमे नैतृत्व करने लगा परन्तु चतुर लक्ष्मणसिहने इस समय इस प्रकारके राजनैतिक उपायका अवलम्बन किया कि जिससे ब्राह्मण सफलमनोरथ न होसका लक्ष्मणसिह खंडेलाकी रक्षाके लिये स्वयं वहाँ न जाकर जयपुरमें ही रहने लगे। परन्तु उन्होने अत्यन्त गुप्तभावसे पठान नेता जमशेदखांके पास वहुतसा धन भेजा जमशेदने शीघ्र ही सेना सहित जाकर ब्राह्मणमत्रीके डेरोपर अधिकार करके और उसको महाभय दिखाकर उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। मत्रीने अकस्मात् आई हुई विपत्ति देखकर शीघ्र ही अवरोधको त्याग महाक्रोधित हो राजधानी जयपुरकी ओरको कूच किया। क्रुद्ध हुए मत्रीने राजधानीमे जाकर अपने शत्रु लक्ष्मणसिहको पकड़नेके लिये पीछा किया लक्ष्मण सिह शीघ्र ही प्राणोके भयसे केवल पाँचसौ अश्वारोही साथ लेकर राजधानी छोडकर शीघ्रतासे भाग गये। राजमत्रीने कुछ दूरतक पीछा किया। अंतमे मत्रीने राजधानीमे जाकर लक्ष्मणसिह और उनके पक्षके समस्त सामन्तोकी धन सम्पत्ति पर अपना अधिकार करलिया। इतिहाससे जाना जाता है कि उक्त ब्राह्मण मंत्री जमशेदके आक्रमणके भयसे डेरोको छोडकर भाग गया, और सम्मिलित सिद्धानी सामन्त अभयसिहको नेता पदपर वरण करके उसने फिर अन्तिम वलके साथ खडेलापर आक्रमण किया, परन्तु अतमे परास्त होकर भागगया। इस प्रकारसे अभयसिहकी शेप आशा एकवारही दूर होगई।

इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लक्ष्मणसिहके पूर्व पुरुपोके विपयमे वर्णन किया है। वह लिखते है कि "यह स्मरण होसकता है कि शेखाजीके पुत्रोमे सवसे वड़े राजा रायसलके सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमे चौथे पुत्र तिरमल थे, रावकी उपाधि पाकर उन्होने कासली देश और ८४ ग्रामोंका अधिकार प्राप्त किया। तिरमलके पुत्र हरीसिंहने अपने वाहुवलसे फतेपुरके कायमखानियोके पाससे धीलाडा नामक स्थान और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंपर अधिकार करलिया।

और कुछही समयके पीछे रेवासोके और भी २५ ग्रामोपर वलपूर्वक अधिकार करलिया। हरिसिंहके पुत्र श्योसिंह कायमखानियोके प्रधान स्थान उक्त फतेपुरको जीत कर वहाँ निवास करते थे। श्योसिंहके पुत्र चाँदसिंह सीकरनगरके स्थापनकर्ता थे। उन चाँदसिंहके वंशोत्पन्न देवीसिंहने अपने अत्यन्त कुटुम्बी साहपुराके ठाकुरके पुत्र उक्त लक्ष्मणको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। लक्ष्मणसिंहने जिस समय सीकर पर अधिकार किया उस समय सीकरकी अवस्था वहुत अच्छी थी। लक्ष्मणसिंहने अपने बुद्धिवलसे देशकी अवस्थाको और भी सुधारलिया था। लक्ष्मणने खण्डेलापर अधिकार करनेके पहिले ही अपने अधीनमे स्थित प्रत्येक करद सामन्तको हीन वल करने के लिये उनके प्रत्येक अधिकारी देशोके किलोको विध्वंस करादिया। अधिक क्या कहै, उसने अपनी पितृभूमि साहपुराके दुर्ग और वीलाडा भटौती और पासलीके किलोको भी गिराकर सम करादिया। लक्ष्मणसिंह इस प्रकार प्रचंड प्रतापसे शासन करते थे कि उक्त साहपुराके ठाकुर उनके जन्मदाता पिता भी अत्यन्त दुःखित होकर अपने अधिकारी देशोको छोड़कर जोधपुरको चले गये, और वहीं महाराणाके आश्रयमे रहने लगे।

साधु टाड् साहवने लिखा है, "लक्ष्मणसिंहके अधिकारी देश इस समय एकत्र सम्बन्ध और उन्नत अवस्थामे थे। ग्राम और नगरोकी सख्या पंद्रहसौ थी, और उनसे वार्षिक आठ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। लक्ष्मणने अपने नामको अक्षय करनेके लिये "लक्ष्मणगढ नामका एक किला वनवाया तथा अन्यान्य अनेक स्थानोको दुर्गवद्ध किया। अधिकारी देशोकी रक्षाके लिये उन्होने अलीगोल नामके वन्दूकधारी आठदल सेनाकी सृष्टि की थी। प्रत्येक दलमे एक २ दल गोलन्दाज थे। इसके अतिरिक्त उनके अधीनमे एक हजार शिक्षित अश्वारोही सेना थी। इसमे पाँचसौ वेतनभोगी और पाँचसौ भूवृत्ति पानेवाले थे। लक्ष्मणसिंह जिस प्रकार प्रबल वलशाली थे, यदि जयपुरपति अंग्रेज गवर्नमेण्टके सधिवंधनके कारण उनकी लूटनेकी रीतिको दूर न करते तो लक्ष्मणसिंहने जिन पठानोके दस्युदलकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार किया था उन्हीकी सहायतासे यह समस्त शेखावाटी पर अपना अधिकार कर सकते थे"।

अर्द्धशताब्दीके वहुतकाल पहिले कर्नल टाड् साहबने खडेलादेशका जो इतिहास वर्णन किया है अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम अनेक कारणोसे इससे आगे उसको यहांपर नही लिख सकते उन्होने इतना ही लिखा है।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेमे लिखा है कि "संवत् १८६२ सन् (१८०६ ईसवी) मे सबसे ऊँचे शिखर अर्थात् किसी प्राचीन किलेके ध्वंसे होनेसे बेच हुए शिखरके ऊपर यह लक्ष्मणगढ बनाया गया था, यह नगर भी जयपुरकी समान श्रेष्ठ रीतिसे बनाया गया था"।

(२) टाड् साहबने कहा है कि खोकर राजपूतोसे खंडेला नामकी उत्पत्ति हुई है खंडेला नगरमे ४ हजार घर हैं, और उनके अधीनके ग्रामोकी सख्या ८० है,

खडेलाके राजवंशका वर्णन करके इतिहासवेत्ताने अंतमे शेखावाटीकी और एक प्रवलशाखा सिद्धानियोका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँपर वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है, कि "रायसालके तीसरे पुत्र भोजराजसे सिद्धानियोकी उत्पत्ति हुई है। रायसालने जिस समय सातपुत्रोमे अपने राज्यको विभक्त करदिया था उस समय भोजराजको उदयपुर नगर और उनके अधीनके देश मिलगये थे। भोजराजके वंशधरो की संख्या अधिक थी, समयपर वह भोजानी नामसे विदित हुए, परन्तु किस कारणसे यह प्रकाशित नही हुआ कि वह उदयपुर अत्यन्त पूर्वकालसे शेखावतोका प्रधान समिति स्थानरूपसे प्रसिद्ध होगया था। इसी उदयपुरमे अनेक समयपर शेखावत् नेताओ ने इकट्ठे होकर जातिकी एकता की थी"।

भोजराजकी कई पीढ़ियोंके पीछे जगराम उनके वंशधर उदयपुरकी गद्दीपर बैठे थे। उनके छ पुत्रोमे सबसे बड़ेका नाम साधु था। यह दशहरेके पर्वोत्सवके समय किसी कारणसे पिताके साथ झगड़ा करके पिताके राज्यको छोड़ कर अन्य स्थान पर सौभाग्य उपार्जन करनके लिये चला गया। इस समय सिद्धानी गण जिन समस्त भूखडोपर निवास करते थे। यह देश फतेपुर (प्राचीन नाम इसका झुझुनू था) नामक देशके अफगान जातीय कायमखानी सम्प्रदाय नव्वावके आधीनमे था। वह नव्वाव दिल्लीके सम्राट्के अधीनमे कर देकर उस देशका शासन करते थे। साधु घरसे निकलकर उक्त नव्वावके पास गया। तब नव्वावने इनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करके अपने घरमें रक्खा। साधु अपने बाहुवल और वुद्धि वलसे शीघ्र ही इस प्रकारसे नव्वावका विश्वासभाजन और प्रियपात्र होगया कि जिससे नव्वाबने इसको फतेपुरके समस्त कार्योंका भार अर्पण करदिया। इस विषयमे दो विवरण प्रकाशित हुए है और दोनो ही विश्वास योग्य है। एकसे जाना जाता है कि नव्वावके कोई पुत्र नही था, इसी कारणसे उन्होने साधुको दत्तक स्वरूपसे ग्रहण करके उसको उक्त झुझुनूदेश और उसके अधीनके ८४ ग्राम देदिये। दूसरा यह कि नव्वावकी मृत्युके पीछे साधुका ही अधिकार हुआ था। इसके सम्बन्धमे एक प्रवाद प्रचलित है, उससे जाना जाता है कि साधुने उक्त नव्वावके अधिकारी देशोपर अपना अधिकार भली भाँतिसे करके एक समय वृद्ध नव्वावसे कहा कि आपने मुझे जो शासनका भार अर्पण किया है उसको मै अपने हाथमे रखनेकी इच्छा करता हूँ। आपके निवासके लिये मैने जो अमुक ग्राम नियुक्त कर रक्खे है आप उनमे जाकर अपने पदोचित वृत्तिको भोग करते रहे। नव्वावने देखा कि साधूने जिस भाँतिसे अपने अधिकारोको फैला लिया है इससे इस समय राज्यमे किसी प्रकार भी अपने पक्षका संग्रह करके साधुके विरुद्धमे खडेहोनेका कोई उपाय नहीं है।

(१) उदयपुरका प्राचीन नाम काइस है, और इसके अधीनमे चार नागोंमे विभक्त ४५ गांव है।

(२) कायमखानी अफगान नहीं है चौहान जातिके मुसल्मान राजपूत हैं।

यह विचार कर नव्वावने शीघ्र ही झुञ्झुनूसे फतेपुरमे जाकर वहाँके निवासी अपने कुटुम्बियोके अधीनके शासनकर्ताका आश्रय लिया। वह कुटुम्बी शीघ्र ही साधुको झुञ्झुनूसे भगानेके लिये अपनी सेनाको सजाने लगा। साधुने उस विपत्तिमे पड़कर अंतमे अपने पितासे सहायता माँगी। यद्यपि पिता इसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए थे, परन्तु उन्होने पुत्रकी सहायता करना स्थिर किया। उदयपुरपति जगरामका और एक पुत्र इस समय मिरजा राजा जयसिहके अधीनमे सेना सहित रहता था। जगरामने उस पुत्रको लिख भेजा कि वह तुरन्त ही आमेरके महाराजसे सहायताके लिये अपने साथ सेना लेकर साधुके साथ जामिलै। वह पुत्र उस पत्रको पाकर आमेरके महाराजके अनुग्रहसे कितनी ही शिक्षित सम्राट्की सेना और तोपखानेको साथ लेकर साधुके पास पहुँच गया। साधुने अपने भाईको आताहुआ देख शीघ्र ही फतेपुरतक अपना अधिकार करके झुञ्झुनूको अपने अधीनमे करलिया। साधुने इस प्रकारसे कायमखानी नव्वावको दूरकर अपने देशके समान मूल्य विशिष्ट उक्त फतेपुर और उसके अधीनके समस्त देश उक्तभ्राताको देकर दोनोने ही पूर्व प्रस्ताव के अनुसार आमेरके महाराजको अपना प्रभु स्वीकार किया। और अपने वंशधरोमे प्रत्येकके अभिषेकके समयमे भेटमे कर देना स्वीकार किया। वीरश्रेष्ठ साधुने कुछ काल के पीछे और एक सम्प्रदायके अधिकारी सिहाना देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमे करलिया। इस देशके अधीनमे १२५ ग्राम थे। साधुने इसके पीछे गौड राजपूतोंके अधीनमे स्थित ८४ ग्रामोमेसे बचेहुये सुल्तानो नामक ग्रामपर अधिकार करलिया। अन्तमे साधूने दिल्लीके अत्यन्त प्राचीन सम्राट् तूंअरवशमे उत्पन्न हुये खेतड़ीके अधिपतिके अधीनमे स्थित सम्पूर्ण ग्रामो को अपने हस्तगत कर लिया, इस प्रकारसे साधुके अधीनमे सहस्र से अधिक ग्राम और नगर होगये। मृत्युके कुछ काल पहिले साधुने उन समस्त देशोको अपने पाँचो पुत्रोमे बॉट दिया। पुत्रोके नाम इस प्रकार थे (१) जोरावरसिह, (२) किशनसिह (३) नवलसिह, (४) केसरीसिह और (५) पहाड़सिह। इनके वंशधर साधुके नामके अनुसार ही सिद्धानी नामसे विदित हुए"।

साधुके वडे पुत्र जोरावरसिहको पैतृक अंशके अतिरिक्त सबसे बडे चोकेड़ी नामक नगर और उसके अधीनके वारह ग्राम तथा सर्वोच्च मंत्रमूलक चिह्नस्वरूप हस्ती और अनेक सवारी आदि प्राप्त हुई। परन्तु समयपर साधुके मध्यमपुत्र किशनसिहके वंशधर ने जोरावरके वंशधरोको पैतृक अधिकारसे रहित करके उनके समस्त देशोको अपने अधिकारमे करलिया। ज्येष्ठ शाखा जोरावरके वंशधर इस समय केवल सामान्य चोकेड़ी देशके अधिकारको भोग करते थे। यद्यपि किशनसिहके वंशधर एकमात्र चोकेड़ीके अधीश्वर थे तथापि वह अपने वंश और पदमर्यादामे सबसे श्रेष्ठ गिने जाते थे।

"साधुके अन्य चार पुत्रोके वंशधरोंमे निम्नलिखित सिद्धानी सम्प्रदायोमे सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवान् गिने गये—

१ खेतड़ीके अभयसिह।	३ नवलगढ़के ज्ञानसिह।
२ विसाओके श्यामसिह।	४ सुलतानोके शेरसिह"।

"साधुने अपने बड़े पुत्रको जिस भाँति कितने ही देश दिये थे, उसी प्रकारसे कनिष्ट शाखाके लिये सिहाना, झुझुनू और सूर्यगढ़ (प्राचीन उडैछा) आदि कई एक देश दिये। खेतड़ीके अभयसिहने उक्तसिहाना और उसके अधीनके १२५ ग्रामोको अपने अधिकारमे कर लिया था। परन्तु उन कनिष्ट शाखाके वंशधरोकी संख्या क्रमश दिन २ बढती गई थी, और अन्य देश तथा ग्राम भी क्रम २ से खण्ड २ मे विभक्त होते गये "।

"सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिहने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे अनेक भाँतिके असत् उपायोसे रायसालोत् पर अपनी प्रधानता तथा प्रभुताका विस्तार कर लिया, उक्त अभयसिहने भी उसी प्रकारसे अपने बाहुबलसे वा घृणित उपायोसे सिद्धानियोमे उसी प्रकार मस्तक उठाया। सीकरके सामन्तने केवल खण्डेलाकी श्रेष्ठ शाखाको एकदार ही लुप्त करदिया, परन्तु खेतड़ीके सामन्त अभयसिहने केवल साधुकी श्रेष्ठ शाखाको ही नही वरन साधुकी कनिष्ठ शाखाका भी सर्वनाश करनेमे कसर न की। शेरसिहके वंशधर किस प्रकार सुलतानोदेशके अधिकारसे उतार दिये गये ? उस लोमहर्षण वृत्तान्त को पढ़नेसे पाठक सरलतासे जान सकैगे कि उस भूमिपर अधिकार करनेके लिये राजपूतोने कहांतक शोचनीय काण्ड उपस्थित किये थे "।

"वीरश्रेष्ठ साधुके सबसे छोटे पुत्र पहाडसिहके औरससे भूपाल नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भूपालसिहके लुहारूकी विजयके समय निहत होनेसे पहाड़सिहने अपने भ्राताके पुत्र खेतडीके सामन्त बाघसिहके सबसे छोटे पुत्रको दत्तकरूपसे ग्रहण किया। पहाड़सिहकी मृत्युके पीछे दत्तक पुत्रने सुलतानोके सामन्त पदको ग्रहण किया। परन्तु उसकी अवस्था उस समय बहुत थोड़ी थी, इसे वह शीघ्र ही पिताके घर जाकर निवास करनेलगा। परन्तु दुराचारी बाघसिहने बारह वर्षके पीछे प्राण त्याग किये। जिस समय उसका शवदाह करनेके लिये बाहर किया गया उस समयमे भी उसके समस्त कुटुम्बियोने उससे अत्यन्त घृणा की थी "।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब रायसालोत् और सिद्धानियोके पूर्वोक्त विवरणको वर्णन करके अंतमे लाडखानियोके सम्बन्धमे लिखते है कि " लाडखानी शब्दका अनुवाद प्रियतम प्रभु है" परन्तु लाड़खानीगण राजपूतानेमे विख्यात् दस्युरूपसे विदित थे, इस नामका अप्रयोग किया गया है। लाड़ला शब्दका प्रयोग सर्वसाधारणमे बालकोपर स्नेह प्रकाशके लिये किया जाता है। रायसलके उक्त पुत्रके इस नामके साथ खाँशब्दका

(१) बाघसिहने अपने बेटेको मारकर सुलतानोको खेतडीमें मिलालिया। इसका फल भी उसको इस पापकर्मके अनुसार ही मिला। प्रत्येक कुटुम्बीने उससे घृणाकी उसके मुहेपर थूका उसके शिरपर धूल डाली यहां तक कि वह इस लायक नहीं रहा कि किसीको अपना मुहं दिखावे। उसकी स्रीने भी उसका मुह देखना छोड दिया। तब उसने अपने बेटे अभयसिहके नामसे जो विद्यमान है राज करना शुरू किया इसके पीछे बाघसिंह बारह वर्षतक जीता रहा मगर कभी खेतडीके किलेमें अपने मकानसे बाहर नहीं निकला।

क्यो सयोग हुआ और उनके कनिष्ट पुत्रका नाम " ताजखां " क्यो रक्खा गया, यह जाना नही जाता। क्या अन्य एक मुसन्मान फकीरके समानके निमित्त खां शव्दका सयोग किया गया था यह हमे विदित नही है। उक्त लाड़खांने मारवाड़ राज्यकी सीमामे स्थित आमेरके अधीन दॉतारामगढ़ नामक देशको अपने वाहुवलसे अधिकारमे कर लिया, उनके पिता वादशाहकी सभामे अधिक सम्मान पाते थे, इसी कारण उन लाडखॉको उक्त देशका मिलना सम्भव होसकता है। उक्त देशके अतिरिक्त उन्हे तप्पनोसल प्राप्त हुआ, सव मिलाकर ८० नगर इसके अधिकारमे हुए। इनमे कितने ही मारवाड और वीकानेरके दोनो राजाओने अपने अधीनमे कर रक्खे थे। लाडखानी गण जिससे उक्त दोनो राज्योके लूटनेमे नियुक्त न हो इस कारण यह देश उन्हे रक्षाके लिये दिये गये थे। लाड़खानीगण इस देशके पिडारी आदिकी समान भयंकर तस्कर जाति गिने जाते थे। वह इच्छा करते ही पॉचसौ अश्व इकट्ठे कर सकते थे यह सभी भयके कारणस्वरूप थे, इनके अधीश्वर जयपुरके महाराज यद्यपि समय २ पर इनसे अपने २ करकी प्रार्थना करते थे परन्तु यह जिस देशमे निवास करते थे। वह अत्यन्त दुर्गम और इनके अधिकारी रामगढ नामका किला अत्यन्त दुर्भेद्य था। यह अनायास ही जयपुरके महाराजके निकट उस प्रार्थनाकी उपेक्षा करजाते पर समय २ पर अमीरखॉकी समान तस्करोका दल सेना सहित वहॉ पहुँचता तव इनको विवश होकर करका वार्पिक वीस हजार रुपया देना पड़ता था।" इतिहासवेत्ता टाड् साहबने उक्त सिद्धानी और लाडखानियोके जिस विवरणको वर्णन किया है, इसका पाठकोको स्मरण होगा कि उन्होने उसे सन् १८१४ ईस्वीमे लिखा है, इस कारण आजकलके समयमे उक्त दोनो संप्रदायोकी अवस्था अत्यन्त परिवर्तित होगई थी।

कर्नल टाड़ साहव शेखावाटी राज्यके इतिहासके उपसहारमे उन देशोंके राजस्वी की एक तालिकाको प्रकाशित कर गये है। हमने भी यहॉ पर उस तालिकाको प्रकाशित किया है।

" सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिहको खडेलाकी आमदनी

सीकर सहित . ..	८००००	रुपये।
खेतडीके अभयसिहको लार्डलेककी दी हुई कोटपूतलीकी आमदनी सहित	६०००००	,,
वसाओके श्यामसिह और उनके भ्राता रणजीतसिह जिन्होने उनकी हत्या की थी उनकी ४००० आमदनीके सहित	१९००००	,,
नवलगढ़के ज्ञानसिह मडावाके ५० ग्रामो सहित... ..	७००००	,,
मेदसरके लक्ष्मणसिह	३००००	,,
साधूके वड़े पुत्र जोरावरसिहके २७ प्रपौत्रोके अधिकारी ताइन और उससे लगी हुई भूमिकी आमदनी ..	१०००००	,,
उदयपुरवाटी	१०००००	,,

मनोहरपुर[1]	३००००	रुपया.
लाड़खानियोकी आमदनी	१०००००	,,
हररामजीगण	४००००	,,
गिरिधर पोताओकी आमदनी	४००००	,,
छोटे सामन्तोके अधिकारी देशोकी आमदनी ..	२०००००	,,

कुल २३००००० रु० ।

जयपुरके महाराजको निम्नलिखित देशोसे नीचे लिखा हुआ कर मिला करता है ।

सिद्धानीगण	२०००००	रुपया.
खंडेला ...	६००००	,,
फतेपुर	६००००	,,
उदयपुर और ववाई ..	७२०००	,,
कासली ...	४०००	,,

३५०००० रुपया थी ।

उपसहारमे हम केवल इतना ही कहते है कि शेखावाटीके सामन्तोके उक्त राजस्व और करके सम्बन्धमे गत पचास वर्षोमे अधिक परिवर्तन होगया है ।

शेखावाटीका इतिहास समाप्त ।

---

(१) मनोहरपुरके अधीश्वरके जयपुरपतिके विरुद्धमे उत्तेजित होनेसे महाराज जगत्सिंहने उनके प्राणोंका नाश करके उनके अधीनमे स्थित समस्त देशोपर अपना अधिकार करलिया था, और शेखावाटीके अन्यान्य सामन्तोमें विभाग करदिया था ।

श्रीः ।

जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट ।

जयपुरके इतिहासका भाषान्तर और इसके मुद्रित होनेके पीछे हमें जयपुरके दरवारके एक उच्च मनुष्यकी कृपासे "जयवंश" नामका एक महाकाव्य मिला, यह सीताराम नामक एक कविके द्वारा सस्कृत भाषामे रचागया है। इस काव्यमे कुशावह वा कछवाहे राजवंशके आदि पुरुष सोढदेवसे तीसरे जयसिहके शासनतकका वृत्तान्त प्रवाहित धाराकी समान वर्णन किया गया है । हमने आदिसे अततक पढकर देखा कि कितने ही स्थानोपर इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहबके लिखेहुए इतिहासक साथ उक्त काव्यके मतका भेद और असमजस विराजमान है । इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि कर्नल टाड्ने अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालके पहिले कछवाहोके द्वारा लिखे हुए अत्यन्त प्राचीन अनेक ग्रंथोको देखकर जयपुरके इतिहासको वर्णन किया है । और "जयवंश"के प्रणेता कविश्रेष्ठ सीतारामने जयपुरके महाराजके तीसरे जयसिहकी आज्ञासे सम्वत् १९४२ मे उक्त ग्रंथको वर्णन किया है । कविने भी अवश्य ही जयपुरके महाराजके महलमे स्थित प्राचीन ग्रथ और राजकीय कागजपत्रोको देखकर अपने ग्रंथोको निर्माण किया है, यह भी मानना होगा, इस कारण इस प्रकारके स्थलोपर दोनोमे जिस २ स्थानपर मतभेद विराजमान है उस स्थानपर किसका वर्णन अभ्रान्त है इसका निसन्देह निर्णय करना कोई सहज बात नही है ।

कर्नल टाड् साहबने यथार्थ इतिहासवेत्ताकी समान निरपेक्षभावसे जयपुरके राजनैतिक इतिहासका वृत्तान्त वर्णन किया है, परन्तु "जयवंशके प्रणेताने सोढदेवसे जयसिहके शासनतकका वृत्तान्त वर्णन करके निरपेक्षभावसे समस्त अंशोको प्रकाशित नही किया । उनका काव्य भारतवर्षके प्राचीन कविकुलकी लेखनीसे निकलेहुए काव्यकी समान कल्पनासे जड़ित और ऊंची प्रसंसासे परिपूर्ण है। अनेक प्रयोजनीय ज्ञातव्य राजनैतिक विषयोको उसमे एकवार ही छोड दिया है । जयपुर राजवंशके साथ दिल्लीके सम्राट् वशकी जो विशेप आत्मीयता और घनिष्ठ सम्वन्ध स्थापित हुआ था, जयपुरके महाराजको जिस सम्राट्वंशकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी इस काव्यमे उसका कोई उल्लेख नही हुआ है । इस कारण कर्नल टाड् साहबने निरपेक्षभावसे जिन समस्त ऐतिहासिक सत्य और तथ्यको प्रकाशित किया है, उन सबको इस काव्यमे स्थान नहीं मिला। पर हम ऐसा भी निश्चय नही कर सकते कि यह सब काव्य भ्रान्तिसे परिपूर्ण है । तव दोनोने जिन २ विषयोका उल्लेख किया है उसी२ स्थानपर सावधानीके साथ हमै किसी एक पक्षका अवलम्वन करना ही होगा ।

कर्नल टाड् साहव सस्कृतभाषाके विद्वान् नही थे। उन्होने अपने ग्रथोमे अनेक स्थानोपर इस वातको स्वीकार किया है । उनके गुरु यति ज्ञानचंद्र प्राचीन ग्रथोको

पढ़कर मुखसे उसकी व्याख्या करके अर्थ करते जाते थे,और वह उसी समय उन सबको अंग्रेजी भाषामे लिख लेते थे। यद्यपि यति ज्ञानचंद्र बड़े भारी पण्डित थे तथापि शीघ्रतासे व्याख्याके समय किसी स्थानपर उनसे कही भी भ्रम न हुआ हो अथवा उन्होने भ्रमसे किसी स्थानको भी नही छोड़ा हो अथवा कर्नल टाड् साहबने भाषान्तर करनेके समयमे किसी स्थान विशेषका नाम वा किसी कविताका कोई अंश भ्रमसे विपरीत अर्थमे न लिखा हो यह असम्भव नही होसकता। मुनियोको भी भ्रम होजाता है, सारांश यह है कि जती ज्ञानचंद्र वा कर्नल टाड् साहबको भ्रम न हुआ हो यह कदापि सम्भव नही होसकता। जयवंशके कर्ताको भ्रम न हुआ हो यह भी असम्भव नही है पर वह संस्कृतके एक विख्यात पंडित थे । उन्होने स्वयं राजमहलके अनेक ग्रंथोको देखकर जयपुर-राजवंशके प्राचीन राजाओकी संक्षिप्त जीवनीको संग्रह किया था, इस कारण इसके सम्वन्धमे उनके अल्पभ्रम होनेकी सम्भावना है ।

जिस २ स्थान पर दोनो मत और घटनाओकी एकता नही है हम अत्यन्त संक्षेपसे उन कई एक घटनाओके उल्लेख करनेकी अभिलाषा करते है। जयपुरके इतिहासके प्रथम अध्यायको पाठक पढ़कर भली भाँतिसे जान सकेगे कि टाड् साहबने लिखाहै कि "राजा नलसे ३३ पुरुष पीछे नरवरके महाराज सूरसिंहके[1] प्राण त्याग करने पर उनके भ्राताने वलपूर्वक सिंहासन पर विराजमान होकर कुमार भाईके पुत्र दूलेरायको अधिकारसे रहित करदिया " इत्यादि जयवंशकाव्यमे अन्य प्रकारका वर्णन देखा जाता है, कविने जो लिखा है उसका सारा मर्म यह है कि निषधदेशके अन्तर्गत वरली राजधानीमे ईशसिंह राज्य करते थे। ईशासिंहके औरससे सोढदेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । सोढदेवने युवा होकर अपने पिताकी आज्ञासे गुर्जर देशके अधीन योधानामक राज्यपर आक्रमण किया। प्रवल युद्धके समयमे उक्त राज्यको जीतकर उसने वहाँ अपनी आधिपत्यताका विस्तार कर अपने पिताको वहाँ जानेके लिये कहा, पिता ईशसिंह अपने कुटुम्बसहित नवजीत राज्यमे जाकर वहाँ निवास करने लगे। सोढसिंह कुछ समयके पीछे पूर्वाञ्चलके माचीके महाराजके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचीके राजा और उनके अधीनमे स्थित छोटे २ राजाओके साथ सोढदेवका भयंकर युद्ध हुआ। सारेदिन संग्राम होनेके पीछे रात्रिके समय जब कुलदेवी प्रसन्न हुई तव देवीने सोढदेवको प्रत्यक्ष दर्शन देकर अभय दी। दूसरे दिन प्रभात होते ही फिर प्रवल युद्ध हुआ, देवीके वरसे सोढदेवने विपक्षी माचीपतिके तथा अन्य राजाओके जीवनको नाश कर जय प्राप्त की । माची नगरमे सोढदेवने देवीका एक मंदिर वनाया। माचीदेशके जीतनेके पीछे सोढ़देवने खोह[2] नामक देशको जीतकर वहाँ अपना अधिकार किया। पिता ईशसिंहकी

(१) कर्नल टाट् साहबने सूरसिंह लिखा है। अंग्रेजी भाषामे " ढ " वर्ण नहीं है, इस कारण अंग्रेजीमे लिखनेके समयमे उन्होंने (R) (र) शब्दको ही प्रयोग किया हो।

(२) पाठकोंको जयपुर इतिहाससे विदित हुआ होगा कि सोढदेवके पुत्र दूलेरायने आश्रय-दाता मीनाके अधीश्वरकी हत्या करके खोहगाँवपर अधिकार किया। परन्तु जयवंशकार कहते हैं कि सोढदेवने खोह देशको जय किया था। खोह शब्दकी दूसरी विभक्तिसे खोह हुआ। ऐसा जाना जाता है कि कविने ज्ञानचंद्रके मुखसे खोह शब्दको सुनकर भूलसे खोहगांव लिख दिया है।

आज्ञासे सोढ देवने उस नवजीत खोहदेशमे निवास किया। कुछही समयके पीछे उनके पिता ईशसिहने इस ससारसे विदा ली, तब सोढदेव सवत् १०२३ मे पिताके राज्यपर अभिषिक्त होकर प्रवल प्रतापके साथ राज्य करने लगे।

इस समय देखा जाता है कि इतिहासवेत्ता टाड् साहवने सोढसिहके शासनका कोई उल्लेख नही किया, केवल उन्होंने उनके पुत्रके द्वारा खोहकी जयका उल्लेख किया, परन्तु जयवशकार कहते है कि सोढसिहने स्वय खोहको जय किया, हमे ऐसा अनुमान होता है कि यती ज्ञानचद्रके अनुवादके दोपसे ही टाड् साहवने इस प्रकार लिखा है, अथवा टाड् साहवने जिस ग्रथसे सहायता ली थी उसीमे इस मतका वर्णन होगा।

कर्नल टाड् साहवने सोढदेवके पुत्र दूलेरायके सम्बन्धमे जो कुछ लिखा है जयवंशकारने उसका समर्थन नही किया। पहिली बात यह है कि टाड् साहवने सोढदेव के पुत्रका नाम " दूलेराय लिखा है, परन्तु कविने उनका नाम दुर्लभ लिखा है दुर्लभ के बदलेमे दूले होना कभी संभव नही होसकता, तब टाड् साहवने अनेक स्थानोमे नामोका अदलबदल किया है, जयवशकारने लिखा है कि सोढदेवके प्राण त्याग करने पर उनके पुत्र दुर्लभसिह पिताके राज्यपर विराजमान हुए। दुर्लभ अतुल विक्रमके साथ राज्यशासन करते थे, टाड् साहवने जिन दूलेरायकी विपत्तिका विवरण और उनके द्वारा खोह देशके मीनाके अधीश्वरका आश्रय ग्रहण करना तथा मीनापतिके प्राणनाशका वृत्तान्त वर्णन किया है, कविने उसका कोई उल्लेख नही किया। टाड् साहव लिखते है कि "दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम कांकिल रक्खा गया।" परन्तु जयवंशके प्रणेताने लिखा है, कि "दुर्लभसिहके औरस से काकिल नामवाला पुत्र उत्पन्न हुआ। जब काकिल स्याना हुआ तब राजा दुर्लभसिहने उसको भांडारेजको जीतनेके लिये भेजा। कुमार काकिलने अपनी प्रबल सेनाकी सहायतासे भांडारेजपतिको परास्त करके वहाँ अपने पिताके अधिकारका विस्तार कर फिर पिताकी राजधानीमे लौट आये। इस स्थान पर दोनोके मतका भेद फिर दृष्टि आता है। किस ओरकी वात ठीक है इसका निणय करना कोई सरल वात नही है।

इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लिखा है, कि उन्होने काकिलका भ्रमवश हो (कंकाल लिखा है) पुत्र माईदल अथवा मादल पिताके सिहासन पर विराजमान हुआ, इसके पीछे उनके पुत्र हनूने राजासिहासनको प्राप्त किया। जयवशकाव्यमे माईदल वा मादल नामका आजतक कोई उल्लेख नही है। कविने काकिलका पुत्र हनूदेव लिखा है।

साधु टाड् साहब लिखते है कि हनूदेवके पुत्र कुण्डलको पीछे राज्य प्राप्त हुआ, जयवंशके प्रणेताने लिखा है कि हनूदेवके पुत्र ज्ञानदेव थे। यहांपर फिर भेद देखाजाता है।

महामान्य टाड् महोदयने लिखा है कि पीछे पंजन वा पजून कछवाहोके सिहासनपर विराजमान हुए। कविने उस नामको "प्रजोन" लिखा है। पर हमको पजवन ज्ञात हुआ है। यहां भी भ्रम है।

टाड् साहवने मलेसीके पीछे जिन ग्यारह राजाओंकी नामावली प्रकाश की है, उसके साथ जयवशके प्रणेताके ग्रथमे मलेसीके परिवर्ती जो १० नाम लिखे है, हमने क्रमानुसार उनकी नामावलीको प्रकाशित किया है,–

टाड् साहबकी लिखी ।	जयवंशके प्रणेताकी लिखी हुई ।
(१) बीजल	(१) बीजर।
(२) राजदेव	(२) राजदेव।
(३) कल्याण	(३) कोलन।
(४) कुन्तल	(४) कुतिलक ।
(५) ज्वानसिह	(५) जूनसी।
(६) उदयकरण	(६) उदयकरण
(७) नरसिह	(७) नृसिंह ।
(८) वनवीर	...
(९) उद्धारण	(८) उद्धरण ।
(१०) चन्द्रसेन	(९) चन्द्रसेन ।
(११) पृथ्वीराज	(१०) पृथ्वीराज।

उपरोक्त दोनो तालिकाओमे किस प्रकारका भेद पडा है, यह तो सरलतासे ही जानाजासकता है। टाड्ने जिन ११ जनोके नाम लिखे है कविने दशहोके नाम लिखे है। कविने वनवीरके नामको आजतक प्रदान नही किया । उसने अपने ग्रथमे स्पष्ट लिखा है कि नृसिहके औरससे उद्धरणका जन्म हुआ परन्तु हम कभी यह अनुमान नही करसकते कि कर्नल टाड् साहवने इच्छानुसार ही नृसिहके पुत्रको वनवीर लिख दिया हो, उन्होने जिस ग्रंथके आश्रयसे इस तालिकाको प्रकाश किया है उस ग्रंथमे अवश्य ही वनवीर नाम होगा ।

जयवंशके प्रणेताने पृथ्वीराजके एकमात्र पुत्र भारमल्लका वर्णन किया है। टाड् साहवने पृथ्वीराजके सत्रह पुत्रोकी कथा लिखी है, परन्तु उक्त कविने उसको नही लिखा। पृथ्वीराजके भारमल्लके अतिरिक्त और भी पुत्र थे, उनके अनेक प्रमाण विराजमान है। पृथ्वीराजने आमेरराज्यको वारह अशोमे विभाग करके उन वारह पुत्रोको देदिया, इसको सभी जानते है, और उसीके अनुसार आमेर "वाराकोटारि" अर्थात् वारह प्रधान सामन्तोकी सम्प्रदायमे विभक्त है। हमै ऐसा वोध होता है कि जयवशकारने इस ऐतिहासिक तत्थ्यको इच्छानुसारही छोड दिया था।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि पृथ्वीराजके दूसरे पुत्र भीमने अपने पिता पृथ्वीराजके प्राण नाश किये। जयवंशकारने इसको नहीं लिखा । उन्होने पृथ्वीराजकी स्वाभाविक मृत्युका उल्लेख किया है, हमै ऐसा विदित होता है कि कविने राजवशके कलंकको गुप्त रखनेके लिये ही उक्त दुःखदाई घटनाका उल्लेख नही किया।

राजवशके प्रणेताने लिखा है कि भारमल्लके पुत्र भगवतदास थे टाड् साहवने इनके नामको भगवानदास लिखा है " परन्तु साधु टाड् साहवने भगवानदासके साथ

दिल्लीके वादशाह अकवरकी मित्रताके विपयमे जो उल्लेख किया है, उस विपयमे जयवंशकार तो एकवार ही मौन रहे। कविने भूलसे भी किसी स्थानमे एक पंक्तिमे भी यह नहीं लिखा कि यवन वादशाहके साथ जयपुरके महाराजकी मित्रता थी, या आत्मीयता वा करदका कोई सम्बन्ध था। भगवान्दासकी कन्याके साथ कुमारसलीमके विवाहका वृत्तान्त केवल कर्नेल टाड् साहवने ही नही वरन अन्यान्य इतिहास लेखकोने भी लिखा है, परन्तु कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया।

"इतिहासवेत्ता टाड् साहवने लिखा है कि भगवान्दासके चचाके पुत्र और उत्तराधिकारी मानसिह थे"। "परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि मानसिहने भगवान्दासके औरससे जन्म लिया। यहांपर केवल टाड् साहवका ही भ्रम विदित होता है। टाड् साहवने लिखा है, कि भगवान्दासके अन्य तीव भ्राता थे, उनके नाम सूरतसिह, माधोसिंह और जगत्सिहके पुत्र थे।" कविने लिखा है, कि मानसिहके औरससे कनकावती रानीके गर्भसे जगत्सिहका जन्म हुआ।" हमै ऐसा वोध होता है कि टाड् साहवने भ्रमसे ही जगत्सिहको मानसिंहका पुत्र न लिखकर मानसिहको जगत्सिहका पुत्र लिख दिया था। जगत्सिह मानसिहके पुत्र थे इसका वृत्तान्त अनेक स्थानोमे पाया जाता है।

जयवश प्रणेताने लिखा है, "कि राजा भगवत्दासने अपने पुत्र मानसिह और पौत्र जगत्सिहके साथ भारतवर्पके अनेक देशोके युद्धमे जयप्राप्त की। मानसिहकी समान जगत्सिह एक महावलवान धनुर्द्धारी थे। वह पिताके साथ अनेक स्थानोपर जय प्राप्त करके विशेप यशस्वी हुए। परन्तु अकालमे ही वह संसारसे विदा होगये, भगवत्दास और मानसिह महान् शोक सागरमे निमग्न हुए, कुछ दिनोके पीछे मानसिह गुर्जर देशको जीतनेके लिये गये; राजा भगवान्दास उस समय ससार छोड गये। इसके पीछे मानसिंह आमेरके सिहासन पर विराजमान हुए और अपने पोते (जगत्सिहके पुत्र) महत्सिहके साथ अनेक देशोको जीतनेके लिये गये। दुर्भाग्यसे महत्सिहकी मृत्यु अकालमे होगई, इस प्रवल शोकसे थोड़े दिनोके पीछे ही मानसिहनें भी अपने प्राण त्याग किये।" टाड् साहवकी अपेक्षा कविकी यह उक्ति सत्यतासे पूर्ण विदित होती है।

अंतमे टाड् साहवने लिखा है, कि जगत्सिहके पोते जयसिह आमेरके सिहासनपर विराजमान हुए। कविने भी इस वातको माना है, उनके पुत्र रामसिह आमेरके राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए, यह दोनो ग्रथोसे प्रकाशित होता है। टाड् साहवने लिखा है कि "रामसिहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विशन वा विष्णुसिह आमेरके सिहासनपर प्रतिष्ठित हुए।" परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि रामसिंहके पुत्र कृष्णसिह थे। उनका वर्ण काला था, इसीसे उनका नाम कृष्णसिह रक्खा गया। रामसिहने अपने पुत्र

---

(१) जयपुरके इतिहासकी टिप्पणी १ अध्यायकी देखो।

(२) टाड् साहवने लिखा है कि महासिहके पुत्र भावसिंह थे, परंतु कविने भावसिहके नाम का उल्लेख नहीं किया।

कृष्णसिंहके साथ दक्षिणके युद्धमे गमन किया। रणभूमिमे रामसिंह शत्रुओके आघातसे घायल हुए, कृष्णसिंहने आघात करनेवालेकी ओरको महाक्रोधित हो अस्रोकी वर्षा की। इसी कारणसे शत्रुओके आघातसे कृष्णसिंह रणभूमिमे मारे गये। उन्ही कृष्ण-सिंहके पुत्र विष्णुसिंह है। रामसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके पोते उक्त विष्णुसिंह आमेरके महाराजा हुए।" विष्णुसिंहके पुत्र जयसिंह और विजयसिंह थे। यह दोनो ग्रंथोमे प्रगट है। टाड् साहवने लिखा है कि जयसिंह अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये गये थे, परन्तु कवि सीतारामने लिखा है कि उन्होने महा समारोहके साथ अश्वमेध यज्ञको पूर्ण किया था। इसके उपलक्षमे महाराजने वहुतसा धन खर्च किया था।

कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि जयसिंहके वड़े पुत्र ईश्वरीसिंहने शत्रुओके भयसे विषपान करके आत्महत्या की, परन्तु कवि लिखते है कि ईश्वरीसिंहने मल्लारी देशको जीत कर वहांके महाराजको पैरोंसे प्रहार किया, उसी मल्लारीपतिने उनको विष देकर मारडाला। कवि सीतारामने अपने काव्यमे सव प्रकारसे जयपुर राजवंशकी हीनताकी कथाको प्रकाशित नही किया था, इसी कारणसे उसने ईशरीसिंहके गौरवकी रक्षाके लिये उक्त विवरणको प्रकाशित न किया हो ऐसा अनुमान करना असंगत नही है। जयपुरका सिंहासन लेकर ईश्वरीसिंहके साथ माधवसिंहका प्रवल विवाद और संग्राम हुआ था; कविने उसका भी कोई उल्लेख नहीं किया।

ईश्वरीसिंहके पीछे माधवसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए, यह दोनो ग्रंथोमे प्रकाशित है, माधवसिंहके दोनो पुत्र पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह हुए। कविने लिखा है कि पृथ्वीसिंहने एक वर्ष ही राज्य करके शरीर त्याग दिया, तव प्रतापसिंह राजा हुए, प्रतापसिंहके पुत्र जगत्‌सिंहके विषयमे कविने कुछ भी नही लिखा है। अंग्रेजी गवर्न-मेण्टके साथ जगत्‌सिंहका जो सधिबंधन हुआ है कविने उसका उल्लेख नही किया। जगत्‌सिंहके पुत्र जयसिंह थे कवि सीतारामने इन्हींकी आज्ञासे "जयवंशक" नामक एक महा काव्यको निर्माण किया है।

तीसरे जयसिंके पुत्र रामसिंह और उनके दत्तक पुत्र वर्तमान महाराज माधोसिंह है।

जयपुरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—वंबई.

राजस्थान.

दूसराभाग.

बूँदीराज्यका इतिहास.



बून्दी ।

H. H. Maharao Raja Sir Raghabir Singh Bahadur,

G. C I E, K. C. S. I.

of Bundi

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

बूँदीराज्यका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

हाड़ौतीप्रदेश–अग्निकुलकी उत्पत्तिका वृत्तान्त–आबूपर्व्वत–चौहान जातिको मैहकावती(मैकावती) गोलकुटा और कोकनदेशकी प्राप्ति–अजमेरकी प्रतिष्ठा–अजयपाल–माणिकराय–प्रथम वार यवनोंका आक्रमण–अजमेरपर अधिकार–सभरके लवणह्रदकी उत्पत्तिका विवरण–माणिकरायका वश–चौहानोंका राजपूतानेमें प्रवेश–मुसल्मानोंके साथ युद्ध–अजमेरका वीलनदेव–गोगाकी वीरता–मैडीका चौहान–महमूदका उभयकी हत्या करना–उनके अधीन राजाओंका सेना सहित इकट्ठे होना–उनका समय निश्चय करना-हाड़ा जातिकी उत्पत्ति–अनुराजका आसेर देशको प्राप्त करना–उनका राज्य नाश–अस्थिपालका आसेरदेशको प्राप्त करना–रावहमीर–रावचन्द–अलाउद्दीनका आसेर पर अधिकार–वहाँ निवास–उनके पुत्र कोल्हनका पठार देशपर अधिकार करना–राववागा–उनका मयनालपर अधिकार करना–ववावदाके किलेका वनवाना–दिग्विजय–रावदेवा–बूंदीकी राजधानीकी स्थापना।

राजस्थानके जो अंश हाडौती नामसे प्रसिद्ध है, उन अंशोमे दो राज्य स्थापित है, एकका नाम बूंदी और दूसरेका नाम कोटा है। बूँदी कोटा पहिले एक ही राज्य था, तीनसौ वर्षसे इसके दो भाग हो गये है। चम्बल नदी इन दोनो राज्योके बीचमे बहती है,इस कारण इस तरगिनीने दोनो राज्योका सीमा नियत कर दी है। हाडा वंशीय राजपूत इस देशके निवासी है, उन्हीके नामके अनुसार इस देशका नाम हाडौती हुआ है। इसी हाडौती देशमे, बूँदीराज्यके इतिहासको लिखनेका हम आगे बढ़े है।

चौहान राजपूतोकी चौबीस शाखाओमे यह हाड़ा नामकी शाखा ही श्रेष्ठ गिनी गई है। अजमेरके अधीश्वर माणिकरायके पुत्र अनुराज इस शाखाके आदिपुरुष है। माणिकरायने सम्वत् ७४१ सन् ६८५ ई मे सबसे पहिले भारतीय राजाओके साथ भारतके विजयकी इच्छासे मुसल्मानोके साथ महायुद्ध किया था।

इतिहासलेखक कर्नल टाड् साहबने चौहान जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमे विख्यात कवि चन्दका आश्रय लिया है। चंदकविने अपनी अमृतमयी लेखनीसे अग्निकुलकी

उत्पत्तिके सम्बन्धमे जो कुछ वर्णन किया है, उसकी सत्यताके सम्वन्धमे वर्तमान समयमे संदेह उपस्थित होनेपर भी यहॉपर उसका वर्णन करना हमने अत्यन्त आवश्यक समझा है। चद कवि लिख गये है कि "वीर तेजस्वी क्षत्री राजा अनाचार युक्तहो परशुरामके क्रोधमे निमग्न हुए। परशुरामने इक्कीस वार पृथ्वीको क्षत्रिय हीन किया, उस समय वहुतसे क्षत्रियोने अपने जीवनकी रक्षाके लिये अपनेको क्षत्री न बताकर उसके बदलेमे कवि जातिका परिचय दिया था, और बहुतोने स्त्रियोका स्वरूप धारण कर परशुरामके हाथसे छुटकारा पाया। इस प्रकारसे बहुतसे क्षत्रियोने अपने प्राणोकी रक्षा की। परशुरामने समस्त राज्य ब्राह्मणोको शासन करनेके लिये अर्पण किया। नर्मदानदीके किनारे माहेश्वर नगरके हहय जातिके राजा सहस्रार्जुनने, परशुरामके पिताका सहार करके शेप युद्ध उपस्थित किया था।

"ब्राह्मणोके प्रधान अस्त्रोमे केवल अभिशाप और आशीर्वाद ही सबसे प्रधान। राज्यपालन शान्तिरक्षा, और दुष्टोको दमन करनेमे किसीकी भी सामर्थ्य न थी, इसी कारणसे राज्यमे शीघ्र ही अराजकता विराजमान होगई। अशान्तिरूपी भयकर अग्नि प्रज्वलित होगई। राज्यमे सर्वत्र मूर्खता और अधार्मिकता फैल गई, पवित्र धर्मग्रन्थोको मनुष्य पापमार्गसे दलन करने लगे, और तस्कर असुर चोर तथा दानव मनुष्योके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे। आयुध-गुरु महर्पि विश्वामित्रने उस अशान्ति और अत्याचारोको देखकर दुःखित हो, मनही मन विचार किया कि फिर क्षत्रियोकी सृष्टि करना कर्तव्य है। आवू शिखरके जिस स्थान पर ऋषि मुनि निवास करते थे और तप योग यज्ञ तथा योगके साधनसे जिस शिखरको पवित्र किया था, महर्पि विश्वामित्रने उस स्थानमे जाकर क्षत्रियोकी सृष्टिके लिये यज्ञ करनेका विचार किया। पीछे समस्त ऋपि मुनि क्षीरोद समुद्रके किनारे जाकर सृष्टिकर्ताकी आराधनामे नियुक्त हुए। सृष्टिकर्ताने उनको फिर वीर क्षत्रिय जातिकी सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। ऋपि मुनि उस आज्ञाको पाते ही इन्द्र, ब्रह्मा रुद्र, विष्णु और अन्यान्य देवताओके साथ आवू शिखरपर आये। शीघ्र ही यज्ञ प्रारम्भ होगया। पवित्र गंगाजीके जलसे यज्ञकुंडको पवित्र कर यज्ञकार्य होनेके पीछे देवताओने आपसमे सलाह की। देवराज इन्द्रने नवीन दूवसे एक पुतली बनाकर उसकी प्राणप्रतिष्टा कर उसे उस प्रज्वलित यज्ञकुडमे डाल दिया। इसके पीछे सजीवन मत्रका पाठ करते ही उस कुडमेसे दहिने हाथमे गदा धारण किये एक वीर पुरुप "मारमार" शब्द करता हुआ वाहर निकला। उस वीर पुरुषका नाम प्रमार रक्खा गया, और देवताओने उसको आवू धार, तथा उज्जयिनी देश शासन करनेके लिये दिये"।

---

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर लिखा। कि चंदने जिन चोर और तस्कर जातियोका उल्लेख किया है, यह उत्तर पश्चिमाचलकी भारतकी सीटियन जाति होगी। यह ब्राह्मणोके ऊपर किसी प्रकारकी दया नहीं करती थी"। परन्तु हमारा ऐसा अनुमान है कि कविने इस स्थानपर भारतवर्पको वन्यमीना इत्यादि जातियों पर ही लक्ष्य किया है। त्रेता युगमे परशुरामके समयमें भारतमे सीदियन जाति थी, इसका प्रमाण शास्त्रमे नही पाया जाता।

"इसके पीछे सभी मिलकर पितामह ब्रह्माजीसे अपने अङ्गसे एक क्षत्रियकी सृष्टि करनेकी प्रार्थना करने लगे। तव पद्मासन ब्रह्माजीने सभीके अनुरोधसे दूर्वाकी एक पुतली वनाकर अग्निकुंडमे डाली। पुतली कुंडमे डालते ही उसमेसे एक वीर पुरुष निकला। इसके एक हाथमे खड्ग और दूसरे हाथमे वेद शोभायमान थे। उसका नाम चालुक वा सोलंकी रक्खा गया। अनलपुर पत्तनदेशका उसको राज्य मिला"।

' देवादिदेव रुद्रने उसके पीछे और भी एक वीर पुरुषकी सृष्टि की। देवादिदेव महादेवने दूर्वादलकी बनीहुई पुतलीको पवित्र गंगाजलमे स्नान कराकर यज्ञकुडमे डाल दिया, और आप मत्र पढने लगे, मंत्रके पढ़ते ही धनुप बाण हाथमे लिये कृष्णवर्ण भयंकर मूर्तिका एक वीर पुरुष सम्मुख आया। असुरोके साथ युद्ध करनेको जानेके समय उस वीर पुरुपका पदस्थल न हुआ इसीसे उसका नाम प्रतिहार रक्खा गया, उसको देवतारूपसे नगर तोरणकी रक्षाका भार मिला, और मरुस्थलोके नौ देश उसको दिये गये"।

"सबसे पीछे विष्णु भगवानने चौथे वीरको उत्पन्न किया, विष्णु भगवानके दूर्वादलकी वनीहुई पुतलीको अग्निकुण्डमे मत्र उच्चारण करडालते ही उनके अवयव स्वरूप चार हाथ युक्त अस्त्रधारी एक वीर पुरुषने जन्म लिया। चार हाथ होनेसे उसका नाम चतुर्भुज चौहान हुआ। समस्त देवताओने आशीर्वाद देकर उसको मैहकावती नगरीका राज्य दिया। इस समय जो स्थान गढामंडला नामसे विख्यात् है द्वापरयुगमे वह मैहकावती नामसे प्रसिद्ध था"।

चदकवि इसके पीछे लिखते है कि "जिस समय यज्ञकार्य समाप्त हो रहा था उस समय असुर और दानव उसकी दृढ दृष्टिसे देख रहे थे, उनके दो नेता अग्निकुडके बहुत धोरे खड़े हुए थे, परन्तु यज्ञकार्यके समाप्त होते ही क्षत्रियोकी सृष्टिका कार्य भी समाप्त होगया। वह चारो वीरक्षत्री उन दानव और असुरोके साथ युद्ध करनेके लिये भेजे गये। दोनो ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु जैसे २ वह क्षत्रिय वीर अस्त्राघातसे असुरोको मारते जाते थे वैसे २ उन मृतकोके रुधिरसे फिर नवीन असुर जन्म लेकर युद्ध करते जाते थे। इस प्रकार किसी भाँति भी दानवोकी सेनाकी घटती नही हुई। अंतमे उस नवीन सृष्टिके चारो वीरोकी कुलदेवी अनुचरोके साथ रणक्षेत्रमे जाकर उन निहत असुरोका रक्तपान करने लगी। इस कारणसे उस रुधिरसे उत्पन्न होनेवाले असुरोकी सख्या एकवार ही समाप्त होगई"।

उन चारो देवियोके नाम इस भाँति चंदकविके ग्रन्थमे लिखे गये है,—

चौहानोकी कुलदेवी . आशा पूरा।
पड़िहारोकी कुलदेवी गाजनमाता।
सोलङ्कियोकी कुलदेवी ... खींवजमाता।
प्रमारोकी कुलदेवी ... . सिचियायमाता।

इसके पीछे कवि लिखते है कि " समस्त दैत्योके निहन होते ही जयध्वनिसे आकाशमंडल कम्पायमान होने लगा। स्वर्गसे देवता फूलोकी वर्षा करने लगे, और उस जयप्राप्तिसे महा सतुष्ट होकर देवता अपनी २ सवारी पर चढ़ कर रणभूमिमे जा विजयी वीरोको धन्यवाद देने लगे "।

चौहानोके प्रधान कविचंद वरदाईका शेष कहना यह है कि " छत्तीसकुली क्षत्रियोमे अग्निकुल सबसे श्रेष्ठ है, शेष सभी स्त्रियोके गर्भसे उत्पन्न है, ब्राह्मणोके द्वारा सृष्टि हुए चौहानोमे गोत्रोचार यथा सामवेद सोमवश माध्यंदिनी शाखा, वत्स गोत्र, पंच प्रवर जनेऊ, चन्द्रभागा नदी, भृगु निशान, अम्बिकाभवानी, वालनपुत्र, कालभैरव आवू अवलेश्वर महादेव चतुर्भुज चौहान "।

"इतिहासवेत्ता टाड् साहवने चंदकविके महाकाव्यसे उक्त अंशको उद्धृत करके कहा है, कि जिस समय भारतवर्षमे सर्वत्र व्याप्त धर्म–द्रोहियोको दमन करनेके लिये भारतकी वीर जातिकी पुन. सृष्टिकी अभिलाषासे आवूके शिखर पर देवताओकी महा समिति हुई, उस समय हिन्दूजातिका दूसरा युग होगया था, इसके सम्बन्धमे हम किसी प्रकारका तर्क करनेकी इच्छा नही करते। इतिहासका अनुसरण करनेके पहिले यहॉ पर इसकी खोज करनी होगी कि ब्राह्मणोके पक्षको समर्थन करनेके लिये इस नवीन जातिकी सृष्टि हुई, और हिन्दूसमाजमे ग्रहण की गई, यह वीर किस जातिके थे। या तो वह लोग अवश्य ही यहॉके आदिम पतित निवासी होगे और ब्राह्मणोने उनको फिर हिन्दूजातिमे ग्रहण किया होगा, या वह लोग विदेशी होगे और ब्राह्मणोने उनको वलवान् देखकर अपने धर्ममे दीक्षित करलिया होगा। यदि यहॉकी आदिम पतित जाति और विदेशियोकी आकृतिकी तुलना कीजाय तो इस प्रश्नका विचार सरलतासे हो सकता है। यहॉके आदिम पतित निवासी काले शरीरके होते है, खर्व और श्री हीन होते है, अन्य पक्षमे अग्निकुली क्षत्री प्राचीन राजाओकी समान सवल, सुन्दर और वीर मूर्तियुक्त थे। अतीव पूर्वकालमे सिदियोमे जिस प्रकार वीररसका स्रोत वहता था, अग्निकुल सम्भूत क्षत्रियोके हृदय भी उसी रसमे प्रवल है "। कर्नल टाड् साहव उक्त मन्तव्यको प्रकाश करनेके साथ ही साथ यह सिद्धान्त कर गये है कि जव परशुरामने क्षत्रियोको विध्वंस कर दिया तव कुछ दिनोके लिये ब्राह्मणोने राज्य किया था, परन्तु वह लोग अत्यन्त दुर्वल थे। इस कारण भारतवर्षके सिदियोने

---

(१) कविचदने रासोमे एकमात्र गोत्रके सिवाय वेद प्रवर आदि किसीका वर्णन नहीं किया हे रासोंमे केवल इतना ही लिखा है।

आसापूर कहै मो नामं, पुज्जै पुत्र पौत्र धन धाम
कुलह गोत्र मुझ थप्पै नाम, अप्पौं ऋद्धि अचलह तामं

किन्तु चाहुआणोंका सही शिखासूत्र इस प्रकारसे है.–वत्सगोत्र सामवेद–कौथमीशाखा–गोभिलसूत्र,–आप्नवान, यामदग्नि, च्यवन, भार्गव और्व, पाचप्रवर,–आशापूरा कुलदेवी–श्री कृष्ण कुलदेवता–चन्द्रभागा नदी,–मयूरपक्षी,–वामशिखा, वाम पाद–ध्वजरक्षक गरुड, और आयुध खड्ग।

ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे । ब्राह्मणोंने उस महा विपत्तिमें पड़कर भारतसिदियोंके एक दलको हिन्दूधर्ममें दीक्षित कर उनको राज्यशासनका भार दिया, और वही चौहान पड़िहार, सोलंकी और प्रमार नामसे गिने गये ।

इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा । चौहान पड़िहार सोलंकी और प्रमार इन चारो अग्निकुल राजवंशोंमें चौहानोंने सबसे अधिक विस्तारित राज्य पाया था । प्रमार राजवंशका आधिपत्य सर्वत्र फैलरहा था, यह प्रवाद वाक्य आजतक विख्यात् है, परन्तु चौहानोंका आधिपत्य जैसा अधिक था वह कठिनाईसे जाना जा सकता है, क्योंकि जिस समय प्रमारवंशियोंकी गौरव गरिमा मध्याह्नकालके सूर्यकी समान भारतके प्रत्येक प्रान्तमें विभासित होरही थी, उस समय चौहानोंके गौरवका सूर्य धीरे२ अस्ताचलकी ओरको चलने लगा था ।

चौहानोंके जातीय इतिहासमें देखा जाता है कि एक समय उन्होंने सबके ऊपर अतुल सामर्थ्य और प्रभुत्वका विस्तार किया था, परन्तु वह अधिक कालतक स्थाई नहीं रहा । मेहकावतीसे माहेश्वरीपुरी तक नर्मदाके दोनो किनारोंके उत्तर और दक्षिणमें

---

(१) हम इस बातको कह सकते हैं कि कर्नल टाड् साहबने भ्रममें पडकर यह सिद्धान्त किया है । जब कि वर्तमान कलियुगमें हिन्दूधर्मकी शोचनीय दुर्दशा होनेपर भी कोई विधर्मी विजातीय हिन्दूधर्मको ग्रहण कर हिन्दूसमाजमें युक्त होनेके लिये समर्थ नहीं हुआ, तब अत्यन्त प्राचीन समयमें हिन्दूधर्म परमपवित्र रूपसे प्रबलताके साथ भारतवर्षमें फैलरहा था, उस समय विश्वामित्र आदि ऋषि अथवा ब्राह्मणोंने भारतवर्षके बहिर्स्थित भारतसिदियोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर उनके हाथमें राज्यभार अर्पण किया हो यह कभी संभव नहीं होसकता । कहीं किसी जातिके किसी मनुष्यने जगत्के किसी धर्ममें प्रवेशका अधिकार प्राप्त किया हो परन्तु हिन्दूधर्ममें विजातीय किसी मनुष्यको भी प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है । यदि कहो मुसलमान इत्यादि विजातीय मनुष्योंने वैष्णवधर्म स्वीकार किया था । परन्तु वह वैष्णवधर्मावलम्बी कोई मुसलमान भी हिन्दू समाजमें भुक्त नहीं होसका था । इस कारण भारतसे विताड़ित हुए विजातियोंको ब्राह्मणोंने हिन्दूओंके धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा, यह कभी सम्भव नहीं होसकता । और दूसरी बात यह है कि चंदकविने जिन चार नवीन क्षत्रियश्रेणीकी उत्पत्तिका विषय वर्णन किया है यदि हम उसको सब प्रकारसे कविकी कल्पना भी माने तो भी यह ठीक ही है कि पितामह ब्रह्माजीने प्रथम सृष्टिके समय ब्राह्मण–क्षत्रिय वैश्य और शूद्रकी सृष्टि करनेके पीछे परिणाममें फिर किसी जातिकी सृष्टि की हो, हमनें इस प्रकारका उल्लेख किसी शास्त्रमें नहीं पाया । हमै अनुमानसे भी यही विदित होता है कि परशुराम किसी प्रकारसे भी एक ही समय प्रत्येक क्षत्रियको संहार करनेमें समर्थ नहीं हुए थे । यद्यपि उन्होने बराबर युद्धोंमें अनेक क्षत्रियोंका प्राण नाश किया था, तथापि भारतके प्रत्येक प्रान्तोंमें अनेक क्षत्रिय राजा उस समय जीवित थे इसका भी प्रमाण है, उस अंशसे भारतके असभ्य जंगली जातियोंने ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार कर हिन्दूधर्मको विशेष हानि पहुँचाई हो और ब्राह्मणोंने जीवित बचे हुए क्षत्रियोंके वंशधरोंमेंसे चार प्रधान वीरोंको नवीन यज्ञमें दीक्षित कर चार देशोंका राज्यभार दिया हो तो इसमें क्या आश्चर्य है अथवा मन्त्रबलसे भी चार वीरोंको उत्पन्न होना तो हिन्दूशास्त्रके अनुसार असंभव नहीं है" ।

स्थित समस्त देशोमे चौहानोका आदि राज्य था। राजवंशधरोकी संख्या प्रबल होनेसे क्रमशः समस्त द्वीपोमे माण्डू आसेर गोलकुंडा और कोकन तक तथा उत्तरमे गगाजीके किनारे तक उनके राज्यकी सीमा फैल रही थी। कविश्रेष्ठ चंदचौहानोके राज्यके सम्बन्धमे लिख गये है कि " राजधानी मेहकावतीके ५२ किलोमे चौहानराजके अनुकूल शपथ सुनाई जाती थी। चौहानोने अपने बाहुबलसे ठट्ठा, लाहौर, मुलतान, पेशावर आदि देशोपर अधिकार कर अतमे भारतके शिखर तक अपना अधिकार कर लिया था। विधर्मी असुर चौहानराजके भयसे भाग गये थे। दिल्ली और काबुलमे चौहानराजका शासन स्थापित था, तथा उनकी जय विघोषित होती थी। चौहानराजने ही नैपालका राज्य माल्हनको प्रदान किया था। देवताओसे वर और आशीर्वादको पाकर चौहान-राज अपनी राजधानी मैहकावतीको लौट आये। " और माल्हनको साथ न लाये।

कर्नेल टाड् साहब लिखते है, कि यह तो पहिले ही जाना गया है कि गढ़मंडलाका प्राचीन नाम मैहकावती था। उस मैहकावतीके राजा बहुत कालसे "पाल" उपाधिधारी थे। ऐसा विख्यात् है कि वह लोग पशुओका पालन करते थे इसीसे इनको यह उपाधि दी गई थी। अहीर–लोगोने एक समय समस्त मध्य भारतपर अधिकार किया था। वे परिणाममे केवल एकमात्र "अहीरवाड़ा" अपना चिह्न छोड़ गये है। यह अहीरशब्द पाल शब्दके अन्य अर्थका बोधक है, और यह अहीरजाति उक्त जातिकी एक शाखामात्र है। पाल अथवा पालियोके द्वारा जो समस्त प्राचीन नगर प्रतिष्ठित हुए थे, उनमे भेलसा, भोजपुर, दाप, भूपाल, आइरण, गार्सपुर यह कितने ही प्रधान है[३]।

---

(१) कर्नेल टाड् साहब अपने टीकामे लिखते है कि मुसलमान इतिहासवेत्ताने इस घटनाकी सत्यताको स्वीकार किया है। संवत् ७४६ में मुसलमान जिस समय प्रथम भारतवर्ष पर अधिकार करनेको आये थे उस समय लाहौर और अजमेरके हिन्दू राजा इसी चौहानजातिके थे। वह अपने प्रबल पराक्रमके साथ यवनोके विरुद्ध युद्ध करनेको सन्नद्ध हुए थे। यह हम निस्संदेह जानते हैं कि उस समय अजमेर चौहानोकी प्रधान राजधानी थी "।

(२) टाड् साहब लिखते हैं, कि " माल्हन चौहानोकी एक शाखा है। अलिकजेंडरके भारतपर आक्रमण करनेके समय समुद्रके किनारे मल्लारी नामके जिस राजाने उसपर आक्रमण किया था, ऐसा बोध होता है कि वास्तवमे वही माल्हन होंगे। इस शाखाका इस समय लोप होगया है। पाच शताब्दी पहिले इसके अस्तित्वको कोई नहीं जानता था। हाड़ा जातीय बूदीके एक अधीश्वरने एक माल्हन स्त्रीका पाणिग्रहण किया। परन्तु अन्तमे एक चतुर भाटने प्राचीन ग्रन्थसे प्रमाणित किया कि उक्त माल्हन स्त्री उसकी स्वगोत्रिया थी। तब बूदीके महाराजने उस स्त्रीको त्याग दिया था।

(३) टाड् महोदयने अपने टीकेमें लिखा है कि कितने ही नगर, विशेष करके दीय भोजपुर और भेलसामें बहुतसे प्राचीन स्मृति चिह्न विराजमान थे, बीस वर्षके पहिले हम भ्रमण करनेके लिये आईरन नगरमे गये थे, उस नगरीमें दो नदियोके मुहानोपर एक बड़ा भारी खंभ स्थित देखा। यह तीस फुट ऊंचा था, इसके ऊपर एक मनुष्यकी मूर्त्ति विराजमान थी। उस मूर्त्तिके शिरपर मुकुट शोभायमान था, और स्तभके नीचे एक बैलकी आकृति खुदी हुई थी,–

"अजयपाल नामक मैहकावतीके एक राजवंशधरने अजमेर राज्य स्थापन कर वहाँ तारागढ नामवाला एक अभेद्य किला बनाया। प्राचीन राजाओंमे अजयपालका नाम आजतक भलीभाँतिसे प्रसिद्ध है, वह राजा चक्रवर्ती अर्थात् वहुत राजाओके अधीश्वर थे, यह भी उसी सूत्रसे जाना जाता है, वह किस समय राज्यशासन करते थे, उसका निश्चय करना कठिन है।

"पालीभाषामे लिखे हुए ताँबेके अनुशासनपत्रोमे और पत्थरके स्तभोपर खुदी हुई अनुलिपियां पाई जातीहै परन्तु वह भाषा जबतक हमारे हस्तगत न हो तबतक उक्त समयका निश्चय करना कोई साधारण बात नही है। मैहकावतीसे कुमार पृथ्वी पहाड़ अजमेरमे आये यद्यपि यह निश्चय नही कहा जा सकता कि वह किस कारणसे आये थे परन्तु ऐसा जाना जाता है कि राजाके पुत्र नही था इसीसे वह पृथ्वीपहाड़ अजमेरमे आये थे। उनकी एकमात्र स्त्रीके गर्भसे (इस समय इस जातिमे अनेक विवाह प्रचलित नही थे) चौवीस पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेसे एकके वंशधर माणिकराय। संवत् ७४१सन् ६८५ ई० मे अजमेर और सांभरके अधीश्वर हुए"।

कर्नल टाड् साहवने इसके पीछे लिखा है, कि माणिकरायके समयसे चौहान जाति के इतिहासने घोर अंधकारसे मुक्ति प्राप्त की। इसी समय संवत् ७४१ हिजरी सन् ६३ मे सवसे पहिले मुसलमानोने राजपूतानेमे सेना सहित प्रवेश किया था। अजमेरके सिहा-सन पर इस समय दुर्लभ वा दूलेराय विराजमान थे। यवनोके साथ युद्ध करके अजमेर-पति दुर्लभ मारेगये। इनका इकलौता सात वर्षकी अवस्थाका पुत्र किलेकी छत्तपर खेल रहा था, वह भी शत्रुओके आघातसे अकालमे ही मृत्युको प्राप्त हुआ। दुर्लभराय ने रोशनअली एक मुसलमान धर्मप्रचारकके प्रति घोर अत्याचार किये थे, इसीसे यवनो ने सिन्धुदेशसे अजमेरमे जाकर यह युद्ध उपस्थित किया और इसी कारणसे मुसल्मानो मे यह धर्मयुद्ध कहकर विदित हुआ है। ऐसा भी प्रसिद्ध है कि उक्त रोशनअलीके अंगूठेको काटा गया था, वह अंगूठा देकर मक्केको चला गया, और राजपूत पौत्तलियो के विरुद्धमे इस अत्याचारका वदला चाहा, शीघ्र ही यवनोकी सेना अश्व व्यवसाईरूपसे भेष बदलकर अजमेरमे आई। उसने दुर्लभराय और उनके पुत्रोका प्राण नाश कर गढबीटली और महलो पर अधिकार कर लिया।" कर्नल टाड् साहबने कहा है कि "यद्यपि

—उसी समय मिस्टर कोलब्रुकके पास हमने उसकी प्रतिमूर्तिको भेज दिया परन्तु इस समय हमारे पास उसकी कोई अनुलिपि नही है"।

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामें लिखा है कि "यह स्थान अन्यरूपसे अजयमेर अर्थात् अजेयशिखर और अजयगढ़ अर्थात् अजेय दुर्ग नामसे विदित हुआ है। परन्तु ऐसा विख्यात् है कि राजपूतानेके प्रवेशके द्वारस्वरूप इस स्थान पर युवक चौहान–राज अजयपाल निवास करते थे इसीसे इसका नाम अजमेर हुआ।" परन्तु देशियोका यह विचार है कि पुराणोक्त विख्यात् राजा अजमेरसे इसका नाम अजमीढ़ हुआ और इस समय उसीका अपभ्रंश अजमेर हुआ है।

यह समर सम्बन्धी प्रवाद बालककी उक्तिकी समान जाना जाता है, परन्तु दूसरी प्रकृत सत्यताके द्वारा यह घटना प्रमाणित हुई है। खलीफा उमरने ठीक उसी समय सिन्धुदेशसे एक सेना भेजी थी। उस सेनादलके नेता अतुलआस प्राचीन राजधानी आलोरपर अधिकार करनेके समय मारे गये, ऐसा जाना जाता है कि उस सेना दलने स्वजातीय धर्म प्रचारकके उक्त अपमानसे महा क्रोधित और धर्मके नामसे उत्तेजित होकर मरुक्षेत्रमे जाकर अपमानकारी राजपूतोंपर आक्रमण किया था"।

जिस कारण वा जिस उपायसे अजमेरके अधिकारी दुर्लभराय मारे गये, और अजमेर छीना गया, वह घटना चौहानोके हृदय पट पर भलीभाँतिसे अंकित होगई। चौहान उक्त समरके स्मृति–चिह्न स्वरूप दुर्लभरायके मृतक पुत्र लौठको आजतक देवता की समान पूजा करते है। अधिक क्या कहै लौठ अपने पैरमे जिन घूंघरुओंको पहिने हुए था चौहान उन्हींकी देवालंकाररूपसे पूजा करते है, और उन्ही लौठके सम्मानके लिये वह अपने २ बालकोंके पैरोमे और घूंघरू नही पहिनाते।

कविश्रेष्ठ चदंकवि लिख गये है कि "चौहान जातीय दुर्लभरायके उत्तराधिकारी लौठदेव, शिवकी इच्छानुसार ज्येष्ठ मासकी बारहवी तिथि सोमवारके दिन स्वर्गवासी हुए"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने फिर लिखा है कि चौहानोकी स्त्रियॉ आजतक जिन लौठदेवकी पूजा करती है उन्हीं लौठदेवके चाचा माणिकराय यवनोंके अजमेर पर अधिकार करनेसे, सम्वत् ७४१ मे स्वर्गवासी हुए थे[२]। माणिकराय उस विपत्तिमे पड़कर देवीके वरसे निर्भय होगये, राजपूत कविने यहाँपर इस प्रकार वर्णन किया है, कि माणिकराय निर्दयी शत्रुओंके हाथसे प्राणरक्षा करनेके लिये भाग गये। उस समय शाकम्भरी देवीने दर्शन देकर माणिकरायसे कहा कि हे वत्स! मैने तुमको यहाँपर दर्शन दिया, तुम इस स्थानपर अपना राज्य स्थापन करो, आज तुम घोड़े पर सवार होकर जितनी दूरतक जासकोगे उतनी ही दूरतक तुम्हारे राज्यकी सीमाँका विस्तार

---

(१) पृथ्वीराज रासोमे इस बातका कहीं भी कोई जिक्र नहीं आया। कहीं अन्यत्र कविचदने इस विषयमें कुछ लिखा हो तो कह नहीं सकते। मीर रोशन अलीके कारण मुसल्मान और चौहानोके युद्धके विषयमे मीरां समय नामसे एक पद्य पुस्तक और भी है जिसे महा कविचंदवरदाईकृत पृथ्वीराजरासोका एक अंश कहा जाता है क्योंकि उसमे इस घटनाका होना पृथ्वीराजके समयमें वर्णन किया गया है परन्तु यह किसी अन्य कविकी कपोल कल्पना मालूम होती है क्योंकि कन्नौज समयमें उसी घटनाको पृथ्वीराजके परपिताके समयमें होना बतलाया गया है।

(२) राजपूत कविकी निम्नलिखित कवितासे प्रमाणित होता है कि माणिकराय वास्तवमें सवत् ७४१ में साभरको गये थे।

(३) बूंदीराज्यवशावलीमें लिखा है कि देवीने यह वरदान दिया था कि घोडेपर चढकर तुम जितनी पृथ्वीका परिक्रमा कर आवोगे वह सब चादीकी होजायगी परन्तु दुर्भाग्यवश—

होगा, परन्तु जवतक तुम यहाँ न लौट आओ तवतक घोड़ेपर चढ़कर जानेके समय कभी पीछा फिर कर न देखना ” । “माणिकरायने अपने घोड़ेको अधिक बलशाली और बहुत दूर तक जानेमे समर्थ देखकर देवीकी आज्ञानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करना प्रारम्भ किया। कुछही दूर चलनेके पीछे वह देवीकी आज्ञाको भूल गये, जैसे ही उन्होने पीछे फिरकर देखा कि वैसे ही इनको महा आश्चर्य हुआ कि समस्त प्रदेश ऊसर होगया है। रजवाड़ेके विख्यात् लवणह्रदकी उत्पत्तिका यही कारण है। माणिकरायने देवीकी आज्ञानुसार उक्त ह्रदयका नाम शाकम्भरी ह्रद रक्खा, और उस ह्रदके निकट ही एक छोटेसे द्वीपमे देवीकी प्रतिष्ठा की। वह प्रतिमा आजतक वहाँ विराजमान है। प्रतिमाका शाकम्भरी नाम विगड़ते २ इस समय सांभर होगया है ”।

माणिकराय जिनको हम उत्तर देशके चौहानोके आदिपुरुष मानते है, उन्होने समय पर फिर अजमेर पर अधिकार करलिया। उनके अनेक सन्तान उत्पन्न हुई। उनके वंशधरोने पश्चिम रजवाडेमें फैलकर वहुतसी सम्प्रदायोकी सृष्टि की है, अधिक क्या कहे सिन्धुतक एक २ सम्प्रदायका विस्तार होगया है। खीची, हाड़ा, मोयल, निरवान, भदौरिया, भूरेचा, धनेरिया (धुंधेरिया) और वागड़ेचा इत्यादि समस्त सम्प्रदाय इन्ही माणिकरायसे उत्पन्न हुई है। खीची सम्प्रदायने बहुदूरवर्ती दोआब नामक स्थानमे जो सर्वसाधारणमे सिन्धु सागर नामसे विख्यात् है, वहाँ जाकर बास किया, इस देशकी भूमिका परिमाण वेतवासे लेकर सिन्धुतक६८ कोस परिमित है और उनकी राजधानीका नाम खीचीपुर पाटन था। हाड़ा सम्प्रदायने हरियानादेशके मध्यस्थ असि वा हांसी देशको जीतकर वहाँ निवास किया, और एक सम्प्रदाय गोवाल कुंड जो इस समय गोलकुडा नामसे विदित है वहाँ गई, और अन्तमे वहाँसे चलकर आसेर नामक स्थान पर अधिकार करलिया। मोयलोको नागौरके चारो ओरके देश मिले। भदोरियो को चम्वलके किनारेका एक देश प्राप्त हुआ। वह देश उन्हीके नामके अनुसार भदावर नामसे विदित है, और आजतक वह देश उन्हींके अधीनमे है। धुंधेरियोंने शाहावाद

—माणिकरायने देवीकी आज्ञा भंग करके जो पीछेको देखा तो चादीके स्थानमे सारी भूमि नमककी होगई थी।

(१) “संवत् सातसौ एकतालिस, मालँत वाली वेश। साँभर आयो तुतिसरस, माणिकराय नरेश ॥ टाड् साहबने अपने टीकामें लिखा है “ कि दिल्लीमें फीरोजशाहके मकानके निकट इस वंशके एक राजाका स्मृतिस्तंभ है, उसके गात्रमें शाकम्भरी शब्द खुदा हुआ है। सरविलियम जोन्स, मि० कोलब्रुक और कर्नल विलफोर्डने उसमे कितने ही भ्रान्त अनुमान किये है ”।

(२) वंशभास्करके आधारपर लिखित बूंदी राज्य वंशावलीमे लिखा है कि चाहुआणवंशके आदि पुरुषसे १२२ वीं पीढ़ीमें माणिकरायजीका जन्म हुआ। उनके १० पुत्र थे। तीसरे हरिसिंह जीने सिन्धुदेश जीत कर वहां राज्य किया, और उनकी संतानके लोग धुन्धेरिया चाहुआण कह लाये। परन्तु आजकल धुंधेरिये चाहुआण अधिकांश बुन्देलखण्ड और चंवलके किनारे मालवेमे ही अधिक पाये जाते हैं। बुन्देलखण्डके धुंधेरिये धंधेरे नामसे प्रसिद्ध है और उनका व्यवहार बुन्देलोमें है (पर यह भी तो होसकता है कि सिन्ध पर मुसलमानी आक्रमण होनेके समय ही ये लोग वहासे भगाकर शाहाबादमे आ रहे हो)।

नामक स्थानमे जाकर निवास किया, परन्तु समयके फेरसे वह देश कोटेकी हाड़ा सम्प्रदायके हस्तगत होगया, और एक सम्प्रदायने नारोलमे निवास किया, परन्तु उनका चौहान नाम कभी भी परिवर्तित नहीं हुआ।

टाड् साहब लिखते है कि इस वंशके बहुतसे वीर पुरुष मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोमे फैल गये थे। अनेक स्थानोमे उन्होने अपने २ बाहुबलसे देशोपर अधिकार करनेके साथही साथ स्वाधीनता सभोग की थी, और बहुतसे अपनी अपेक्षा बलवान् स्वजातियोके अधीनके देशोको शासन करनेमे नियुक्त हुए। उनका इतिहास विशेष प्रयोजनीय होनेपर भी यहाँ उसका प्रकाश करना अप्रसंगिक विचारा गया है। जागा ग्रन्थमे माणिकरायसे वीसलदेव तक ग्यारह राजाओके नाम लिखे है। उन ग्यारहोंमेसे हर्षराजके विषयका उल्लेख करनेका इस स्थानपर विशेष प्रयोजन है, कारण कि उक्त जागा ग्रन्थमे तथा हमीररासा ग्रथमे हर्षराजके विशेष बल विक्रमकी कहानी ऊची प्रशसाके साथ वर्णन की गई है। वीरश्रेष्ठ हर्षराजका आधिपत्य अरवलीके शिखरसे आबूके शिखर तक तथा पूर्वमे चम्बल तक विस्तारित था। उन्होने सम्वत् ८१२से८२७ तक हिजरी १३८से १५३ तक राज्यशासन किया। यह रणभूमिमे शत्रुओका संहार करके "अरिमर्दनकी उपाधि प्राप्त कर अन्तमे रणभूमिमे ही मारे गये। तवारीख फरिस्तामे लिखा है कि सन् १४३ हिजिरीमे मुसलमानोकी संख्या अधिकतासे बढ़ गई थी। उन्होने पर्वतो परसे उतरकर किरमान, पेशावर और और भी आसपासके सभी देशोपर अपना अधिकार करलिया। अजमेरके राजाके स्ववंशीय लाहौरके राजाने उक्त अफगानोके विरुद्धमे

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामें लिखा है, कि नाडोल एक समय अत्यन्त समृद्धिशाली देश था, स्थानयि इतिहास और उक्त देशकी तांबेकी अनुशासन पत्रावलीसे इसका प्रमाण मिला हैं। आठवीं शताब्दीमें उक्त राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे बारहवी शताब्दतिक उस देशके पतन समयके मध्यमे वहाके सिंहासन पर संवत् १०३९ सन् ९८३ ईसवी मे राव लाखनसी विराजमान थे, उन्होने नहरवालाके अधीश्वरके साथ घोर विक्रम प्रकाश करके युद्ध किया। निम्नलिखित कविता उस भावको प्रकाश करती है।

संवत् दश सौ उनचालीस, वारइखोता पाटन।
दानचौहान अगावी, मेवाडधानी दण्डभरि॥
तिसवार राव लक्ष्मण थप्पी, जो आरभै सो करि।

इसका अर्थ यह है कि संवत् १०३९ मे पाटन नगरके शेष तोरनद्वारमे चौहानराजने वाणिज्य शुल्क संग्रह किया और मेवाडपतिसे भी उन्होने कर ग्रहण किया। उनके मनमें जो अभिलाषा होती उसको पूर्ण करनेमें वह समर्थ होते।

सुबुक्तगीन और उसके पुत्र महमूदने लक्ष्मणके शासनकालमे नाडोलको आक्रमण करके उसे लूटा और किलेको विध्वस कर दिया, किन्तु समय पर नाडोलराजने फिर अपने लुप्त प्रतापको संग्रह कर लिया। तेरहवीं शताब्दीमे इस वंशकी बहुतसी सेना अलाउद्दीनके साथ समर करके नष्ट हुई थी, शहाबुद्दीन जिस समय भारत जय करता था, उस समय नाडोलपति भी कर देकर उसके अधीन हुए।

अपने भ्राताको युद्ध करनेके लिये भेजा, उस राजभ्राताके साथ काबुलकी खिलजी और गौरी जातिने उसके साथ मिलकर युद्ध किया, पर पीछे उनको मुसलमान धर्म स्वीकार करना पड़ा। इतिहासवेत्ता लिखते है कि पाँच महीनेके वीचमे सात युद्ध हुए। इसीसे राजपूतगण एकवार ही परास्त होकर भाग गये। परन्तु शीतकालके व्यतीत होते ही राजपूत फिर नवीन सेनादलके साथ पेशावरके मध्यस्थानोंमे आपहुंचे। फिर भयकर समरानल प्रज्वलित होगई। उस युद्धमे कभी तो राजपूत विजयी होकर मुसलमानोको भगा कर कोहिस्थान तक अधिकार करलेते, और किसी समय मुसलमान नवीन सेनाका संग्रह कर वाणोके आघतसे उनको फिर भगा देते थे"।

इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है कि "अजमेरके अधीश्वर स्वयं उन दूरवर्ती देशोके युद्धमे लिप्त हुए थे या नही, राजपूतोके इतिहाससे यह कुछ नही जाना जाता। हमीररासेसे जाना जाता है कि हर्षराजके पीछे दुजगनदेव वा दुर्जदेवने राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया। उनकी अग्रगामी सेनाके डेरे भटनेर तक स्थापित हुए थे। दुजगनदेवने नासिरुद्दीन नामक मुसलमाननेताको युद्धमे परास्त करके उसके बारह सौ अश्व बलपूर्वक छीन लिये, इसीसे उन्हें "सुलतानग्राह" अर्थात् राजाको वंदी करनेवालेकी उपाधि प्राप्त हुई। विख्यात महमूदके पिता सुबुक्तगीनका ही नाम नासिरुद्दीन था, अलप्तगीनके पन्द्रह वर्ष तक शासनके समयमे सुबुक्तगीन क्रमानुसार भारतपर अधिकार करनेके लिये आया।

महात्मा टाड् साहबने अजमेरके अन्यान्य राजाओके शासन वृत्तान्तको छोड़कर अन्तमे एकवार ही वीसलदेवके शासन समयके इतिहासका वर्णन करना आरम्भ किया है। छोड़ेहुए राजाओके शासन समयमे केवल मुसलमानोके साथ संग्राम हुआ, इसके सिवाय और कोई वृत्तान्त नही है, यही उन्होने कहा है अजमेरपति वीसलदेवके सम्बन्धमे टाड् साहबने लिखा है, कि हाड़ा जातिकी कारिकाकारोके मतके अनुसार वीसलदेवके पिताका नाम धर्मगज था, परन्तु जागाकी कारिकामे वीर वेलनदेव लिखा गया है। इससे ऐसा वोध होता है कि उनका वीरवेलनदेव ही यथार्थ नाम था। वह अत्यन्त धार्मिक थे, इसीसे उनको "धर्मगज" की उपाधि मिली थी, दिल्लीके विजयखम्भमे जो खोदी हुई लिपि है, उससे भी इसी अनुमानका समर्थन होता है। वीर वीलनदेवके शासन समयमे सुल्तान महमूदने पिछली बारमे भारतवर्षपर आक्रमण किया था। वीलनदेव उस समय दुर्द्धर्ष बलशाली थे, उन्होने विजेता महमूदको एकसाथ ही परास्त कर अजमेरसे भगाकर अतुल यश प्राप्त किया था, परन्तु उस समरमे वह भी स्वय मारेगये।

वीसलदेवके शासन वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले इतिहास लेखक टाड् साहबने इस स्थानपर एक चौहान वीर पुरुषकी वीरताकी कहानीको वर्णन किया है। जब सुलतान महमूद पहिली बार भारतको लूटनेको आया, उसी समय इस चौहान

(१) महमूद गजनवी जिसने सन् १०१० ई० से सन् १०२४ तक हिन्दुस्तान पर बारह हमले किये और काशीतक मुसलमानी दीनका प्रभाव डाला था। महमूद गजनवीके बारह हमले हिन्दुस्तानके इतिहासमें प्रसिद्धि है।

वीरने महा वीरता प्रकाश करके अपने नामको अक्षय किया था। टाड् साहबने लिखा है कि विख्यात् चौहान राजा वाचाके गोगा नामवाला एक पुत्र था। उस राजा गोगाने सतलजसे हरियानेतकके विस्तारित देशोंके समस्त "जांगल देश" को शासन किया। सतलजके किनारे महलावा "गोगाकी मैडी" नामकी उसकी राजधानी थी। वीरश्रेष्ठ गोगाने सुलतान महमूदके करालग्राससे अपनी राजधानीकी रक्षाके लिये भयकर युद्धसागरमें निमग्न हो अतुलनीय वीरता प्रकाश करके पीछे अपने ४५ पुत्र और ६० भतीजोके साथ उस युद्धमे प्राण त्यागन किये। रविवार नौमी तिथिमे गोगाने इस चिरस्मरणीय लीलाको समाप्त किया था, समस्त राजस्थानकी छत्तीस राजपूत संप्रदाय उस तिथिको परम पवित्र जानकर गोगाके समाधिमदिरमे इकट्ठे होते है, विशेष करके मरुक्षेत्रके निवासियोने गोगाको सबसे अधिक भक्तिके साथ स्मरण किया है। मरुस्थलीमे "गोगाका थल" आजतक विराजमान है। गोगाके "जवादिया" नामका रणाश्व था, इसीसे राजपूत अपने २ पराक्रान्त समरके घोड़ोको आजतक 'जवादिया' नामसे पुकारते है।

साधु टाड् साहवने ऐसा अनुमान किया है, "कि यह सम्भव होसकता है कि महमूदके शेप भारतको जयकरनेके समय उक्त युद्ध हुआ हो, उस समय महमूद सुलतान बरावर मरुक्षेत्रमे होकर अपनी सेनाको लेगया होगा। महमूदके अजमेर पर आक्रमण करते ही चौहानराज उस स्थानको छोड़कर भाग गये, यवनोकी सेनाने अजमेर और उसके आसपासके सभी देशोको लूट कर विध्वंस करदिया। परन्तु राजपूतराजने प्रवल पराक्रमके साथ गढ़वीठली नामक किलेकी रक्षाकी। उसीसे महमूद परास्त और घायल होकर अन्य चौहानराजके अधिकारी नाडोलको भाग गया, परन्तु भागनेके समय महमूदने नाडौलको लूटकर समभूमि कर नहरवाला

---

(१) कर्नल टाड् साहव अपने टीकामें लिखते है कि राजपूत इतिहासलेखकने कहा है कि गोगाके पहिले एक भी पुत्र नहीं था इस लिये वह अत्यन्त दु:खित होकर समय व्यतीत करते थे। एक समय उनकी कुलदेवीने प्रसन्न होकर गोगाको दो जव प्रदान किये, गोगाने उनमेसे एक जव अपनी रानीको और दूसरा अपनी घोड़ीको दिया, उस जवके खानेसे युक्त घोड़ीने एक वछेड़ा दिया। जव खानेसे उत्पन्न होनेके कारण गोगाने उस वछेड़ेका नाम "जवादिया" रक्खा। उदयपुरके राणाने ग्रथकारको (कर्नल टाड्को) काठियावारका एक रणास्व उपहारमे दिया था, उसका नाम भी जवादिया था। यद्यपि वह घोड़ा देखनेमे विलकुल सीधा सादा था, परन्तु सवारी होने पर वह अपनी प्रचड शक्तिको भली भाँतिसे प्रकाश करना जानता था। इस समय शिक्षित अश्व दिखाई नहीं देते। टाड् महोदय उस जवादिया और मृगराज नाम एक अश्वको अपने देशमें लेजानेके लिये उदयपुरसे समुद्रके किनारे तक लेआये, परन्तु समुद्रकी यात्राके समय घोर अनिष्ट होनेकी आशकासे उन्होने मृगराजको एक मित्रको उपहारमें भेज दिया, और जवादियाको ७ सौ मील मार्गकी दूसरीसे उदयपुरके राणाके पास यह कहकर भेजा कि दशहरा अर्थात् विजयादशमी तिथिको जो रणोत्सव होता है उस उत्सवमे इस जवादियाकी सबसे पहिले पूजा कीजाय। यह मैं (ग्रन्थकार) आशा करता हू राणाने उनकी इस आज्ञाको पालन किया होगा।

राज्यपर अधिकार करलिया । सुलतान महमूदने अधिकारी देशोके निवासियोके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारम्भ किये,इससे सभी जातियां इसके विपरीत होगई,तब महमूद प्राणोके भयसे मरुक्षेत्रके पश्चिम ओर होकर समुद्रकी उपत्यकाकी ओरको भागा ।

दिल्लीपति पृथ्वीराजके सर्व प्रधान कवि चदवरदाईने अपन विख्यात् रासाकाव्यमे राजा वीसलदेवकी वीरताकी कथाको भली भॉतिसे वर्णन किया है।—

कविचन्दने वीसलदेवका शासन समय सम्वत् ९२१ मे लिखा है परन्तु महात्मा टाड् साहव उसे भ्रान्त कहते है ।

वीसलदेव उस समयके हिन्दू राजाओके सर्वप्रधान नेतारूपसे माने जाते थे । कविचन्दने लिखा है, कि "वीसलदेवको हिन्दू जातिके नेता जानकर यवन लुटेरे महमूदके साथ युद्ध करनेके लिये आये राजाओने उनके अधीनमे सेना सहित गमन किया था । उस समय राजाओमे एकमात्र अनहलवाडेके चालुक्य राजाके अतिरिक्त और सभी राजा उस जातीय महासमितिमे गये थे, अनहलवाडेके अधिपति वीसलदेवके अधीनमे कौन २ राजा सेना सहित आये थे, सो कविचन्दके लिखे हुए काव्यमे भलीभॉतिसे इसका वर्णन हुआ है ।

कविकुल केसरीचंदवरदाईने लिखा है कि "जयतके हाथमे वीसलदेवने अजमेरकी रक्षाका भार अर्पण करके कहा कि "मैने आपको विश्वास पालनके ऊपर निर्भर किया । अनहलवाडेका राजा चालुक्य भागकर कहां जायगा?" वीसलदेवने यह कहकर अपनी सेनाके साथ अजमेरनगरीको छोडदिया और वीसलताले नामक सरोवरके किनारे जाकर वहॉ डेरे स्थापन कर अनुमत और ऋणिराजाओको सेना सहित शीघ्र इकट्ठे होनेके लिये भेजा । मोहनसी मण्डोरके पड़िहारने सेनादलके साथ आकर उनके चरणोकी वंदनाकी । इसके पीछे वीरोके अलकारस्वरूप गहिलोत एव तुवारके (१) साथ पावासरके, एवं मेवातके अधीश्वरके मेवके (२) साथ गौडजातिके राम (३)

(१) यद्यपि वीसलदेवने सहस्र वर्ष पहिले यह बहुत बडा सरोवर तैयार करवाया था, परन्तु आजतक यह वीसलताल नामसे विख्यात् है। बादशाह जहॉगीरने इस "वीस ताल" के किनारे एक बड़ाभारी मकान बनवाया था, और इगलैडराज प्रथम जेमसके भेजेहुए दूतको उन्होने इसी महलमे ग्रहण किया था ।

(२) इससे जाना जाता है कि पडिहारजाति अजमेरके चौहान अधीश्वरोंके अधीनमे थी ।

(३) चदकविने चीतोडके महाराजको "वीरेन्द्रोका अलंकार" कहकर उल्लेख किया है । यह गहिलोत जाति चीतोडराज अजमेरपतिके समीप मित्ररूपसे सेना सहित यवनोके विरुद्धमें आये थे । कर्नल टाड् साहब लिखते है कि वीसलदेवके साथ चीतौड़के महाराज तेजसिहका जिस प्रकारसे मित्रता मूलक समिलन हुआ है, वारहवीं शताब्दीमे उसी प्रकार वीसलदेवके वंशधर दिल्लीके महाराज पृथ्वीराजके साथ तेजसिंहके पौत्र समरसिहका समिलन हुआ था, तथा दोनो महाराजोने उसी प्रकार सेना सहित अनहलवाडेके अधीश्वरके विरुद्ध युद्ध किया था । कर्नल टाड् साहव लिखते है कि उक्त तेजसिह संवत् ११२० (सन् १०६४ई०) मे चीतोड़के राजसिहासन पर विराजमान हुए, वे वीसलदेवके साथ मिलकर यवनोके साथ युद्धमे मारे गये । कविचंदकी उक्त सूचीमे उदयादित्यके नामका उल्लेख पाया जाता है । कर्नल टाड् साहवने उक्त तॉबेके—

उपस्थित हुए। द्रोनपुरके मोयल (४) ने अधीश्वरके पास करको भेज कर उपस्थित न होनेके कारण क्षमा माँग भेजी। वालोच राज (५) ने हाथ जोड़कर दर्शन दिया। वामनीके अधीश्वर (६) सिन्धुको छोड़कर वहाँ आये। पीछे भटनेर (७) से कर, और ठट्ठा (८) और मुलतान (९) से नालवनी उपस्थित हुए। देरावरके भूमिया भट्टीगण (१०) वीसलदेवकी आज्ञा पाते ही इकट्ठे होगये। मालनवासके दो जादव (११) भी तुरन्त ही उपस्थित हुए। मोरी (१२) बडगूजर (१३) अन्तवदके कछवाहे (१४) योग देनेमे शान्त न हुए। मेरगण वीसलदेवके चरणोकी पूजा करते हुए आये (१५) इसके पीछे जयतके अधीनमे ताखतपुरकी सेना उपस्थित हुई (१६) निरवाण (१७) डोडे (१८) चदेला (१९) एवं दाहिमाके अधीश्वरोके (२०) साथ उदय प्रमार आदि राजालोग (२१) घोड़ो पर चढ़चढ़ कर शीघ्रतासे आ पहुचे।

—अनुशासन पत्रोको देखकर उनका जो समय स्थिर किया है वह रायल एसियाटिकसोसाइटीके १ वाल्यूमके ३२३ पृष्ठमे प्रकाश होचुका है।

(१) टाड् साहबने ऐसा अनुमान किया है कि यह तूवर राज अवश्य ही दिल्लीके तूवर सम्राट्के अधीनके कोई राजा होगे।

(२) मेवातके मेवजातिका विषय सर्वत्र विख्यात है, इस जातिने पीछे मुसल्मानी धर्म ग्रहण किया था।

(३) गौड़जाति विशेष प्रसिद्ध थी, और चौहानके करद राजाओमे महावीर गिनी जाती थी।

(४) मोयलोका विषय भलीभाँतिसे कहा गया है।

(५) टाड् साहबने कहा है कि इस वलोचजातिने पीछे मुसलमान धर्म ग्रहण किया है।

(६) वामनी देशका अन्यत्र वा मनवासा नाम कहा गया है, इसका मूल नाम ब्राह्मणवाद, वा देवल था। उसी स्थानपर ठट्ठा नगर स्थापित है।

(७) जयसलमेरके इतिहासको देखो।

(८–९) उक्तदेशके सोढा समा और सोमरा इत्यादि जातिके ऊपर चौहान अधिकार करते थे,

(१०) इसका विषय यथास्थान पर पहिले ही वर्णन हो चुका है।

(११) मलनवास कहाँ था टाड् साहब इसको नहीं जान सके।

(१२–१३–१४) पाठकोको इसका वर्णन यथास्थान विदित हो चुका है।

(१५) मेरगण आडावलाके शिखर पर निवास करते थे।

(१६) इस स्थानका वर्तमान नाम टोडा है, यह टोकके निकट स्थापित है, इस स्थान पर अनेक प्राचीन कीर्तिस्तभ विराजमान है।

(१७) शेखावाटीके इतिहासमे जाना जाता है कि निरवाण अजमेरके महाराजाओंको कर देते थे।

(१८–१९) डोड एव चन्देल जाति प्रसिद्ध है। चन्देलोने एक समय पर पृथ्वीराजके साथ युद्ध किया था। पृथ्वीराजने उनसे महोबा और कालिजर तथा समग्र बुन्देलखड छीनकर अपना अधिकार करलिया था।

(२०) दाहिमा वियानाके अधीश्वरका नाम है। वह धरणीधर नामसे भी पुकारे जाते थे।

(२१) उदयादित्यने समस्त भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

चंदकवि भारतवर्षके शेष चौहान राजा पृथ्वीराजकी सभामे "राजकवि" थे । उनके रचेहुए प्रसिद्ध काव्यमे पृथ्वीराजके गुण भलीभाँतिसे परिपूर्ण है । कविचदने पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोकी नामावली और कारिकाको प्रकाश करके उक्त सूचीको सबसे पहिले संग्रह किया था । अत्यन्त प्राचीनकालके कवियोंके ग्रन्थोसे कविचंद इत्यादिने राजपूत कवियोके उक्त श्रेणीके जिन इतिहासोको उद्धृत किया है, वह सब राजपूतानेके प्राचीनकालके राजाओके वशकी सूचीके निर्णय करनेमे विशेष सुभीता देनेवाले है ।

कर्नल टाड् साहब कहते है कि मेवाड़के अत्यन्त प्राचीनकालके एक इतिहास मूलक काव्यसे उक्त प्रमार वशकी कारिकाको उद्धृत कर मुसलमानोके आक्रमणके वृत्तान्तको उद्धृत किया है । महात्मा टाड् साहबने इसके पीछे माणिकरायसे चौहान सम्राट् पृथ्वीराजतकके जिन प्रधान २ राजाओके नाम लिखे है, उनमे सबसे अधिक तेजस्वी वीर वीसलदेवके समयका निर्णय करना इस स्थानपर विशेष प्रयोजनीय हुआ है । उन्होने सबसे पहिले आनलसे लेकर लाखनसीतककी जो सूची प्रकाश की है हमने यहां पर उसीको ग्रहण किया है ।

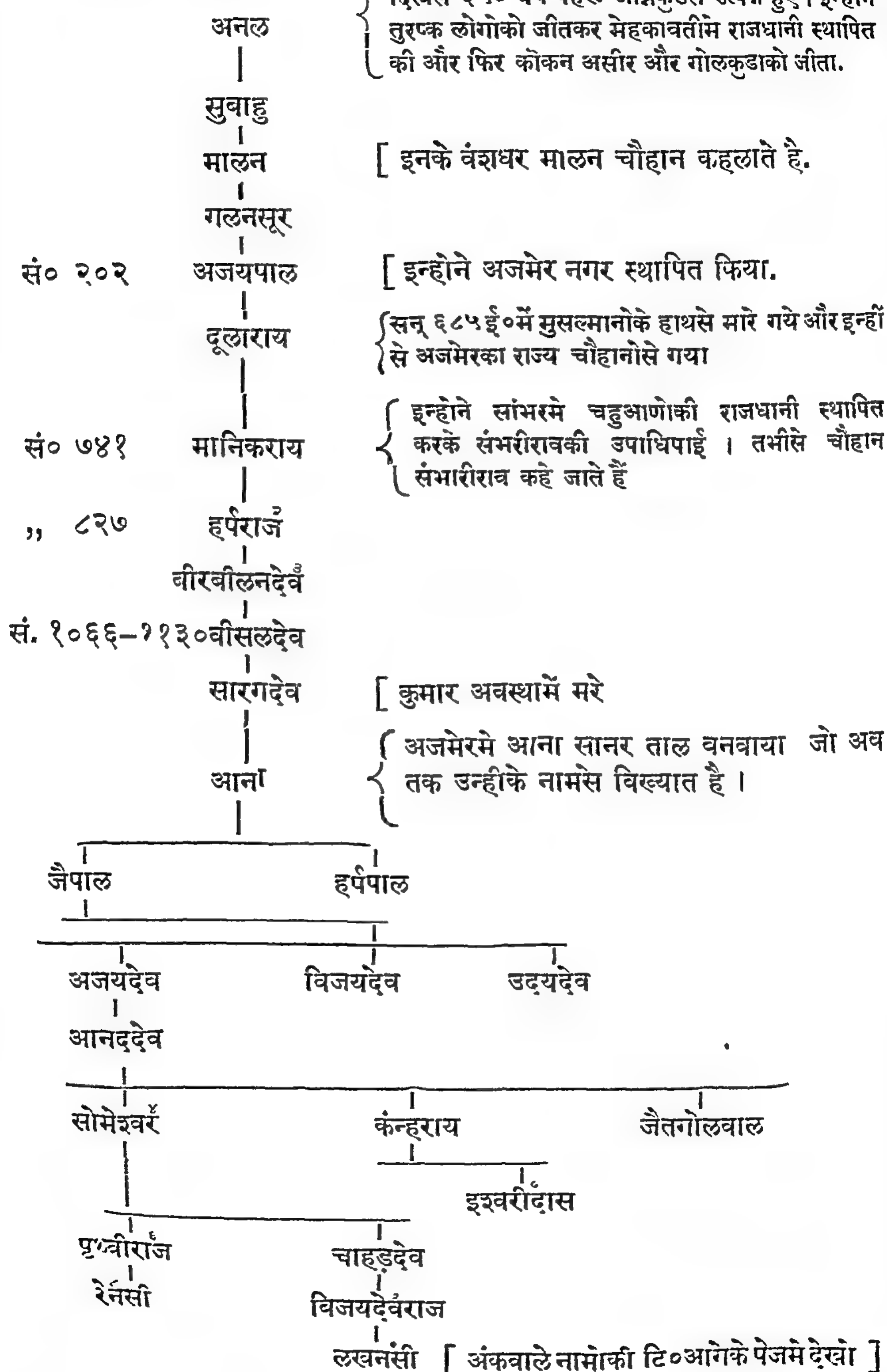
महाकविचदने वीसलदेवके शासनका समय ९२१ लिखा है परन्तु टाड् साहबने इसको उनकी भूल कहकर इस स्थानपर अनेक प्रमाणोका प्रयोग कर सिद्ध किया है कि वीसलदेवने सम्वत् १०६६ से ११३० तक राज्य किया, इसके सम्बन्धमे उन्होने जिन युक्तियोका प्रयोग किया है हमने सबसे पहिले उन्हींको प्रकाशित किया है । चद-कविने अपने ग्रथमे लिखा है कि चौहानराज वीसलदेवकी वीरताके स्मरण करनेके निमित्त निगमबोध स्थानमे एक कीर्तिस्तभ स्थापित किया गया था। टाड् साहब कहते है यह निगम बोध दिल्लीसे थोडी दूर यमुनाके किनारे है । उन्होने कहा कि " दिल्लीके फारो-जशाहके महलके सम्मुख जो विख्यात् कीर्तिस्तभकी चोटी पर विशालदेव वा वीसलदेव का नाम खुदा हुआ है, यही स्तंभ कवि श्रेष्ठ चन्द लिखित निगम्बोध नामक स्थानका कीर्तिस्तभ है, यह अवश्य ही उस निगमबोधसे उखाडकर इस स्थानपर स्थापित किया गया है ।

---

(१) यहापर कविचदका भ्रम नहीं है वरन टाड् साहबका स्वय भ्रम नाश नहीं हुआ है। वह ९२१ नहीं संवत् ९३१ है उसमें यदि ९१ जोडे जायँ तो १०२२ होते है और यह सवत् वीसलदेवजीके पाट बैठनेका है रासोमे आगे लिखा है कि " चौसठि वरस वर राज कीन " इससे १०२२ मे ६४ जोड़ देनेसे वीसलदेवजीका समाप्तिकाल १०८६ निश्चित होता है ।

मूल संवतमे ९१ जोडनेसे यहँ मतलब है कि पृथ्वीराज रासोमें जितने संवत् दिये है वे अनन्द शक है यथा एकादशसे पंचदह, विक्रम शाक आनद (१००–९–९१)

(२) एसियाटिकरिसर्चेज पहिला वालम ३७९ पृष्ट और ७ वालम् १८० पृष्ट और पहिलावालम् ४५३ पृष्ट, कर्नल टाड् साहबने इसके सम्बन्धमे जो मन्तव्य प्रकाश किया है वह देखने योग्य है ।


(चौहानोका वंशवृक्ष।)
अनल
या अग्निपाल, चाहुआन वंशके आदि पुरुष जो विक्रमादित्यसे ६५० वर्ष पहले अग्निकुंडसे उत्पन्न हुए। इन्होने तुरष्क लोगोको जीतकर मेहकावतीमे राजधानी स्थापित की और फिर कोकन असीर और गोलकुंडाको जीता.
सुबाहु
मालन
[इनके वंशधर मालन चौहान कहलाते है.
गलनसूर
सं० २०२ अजयपाल
[इन्होने अजमेर नगर स्थापित किया.
दूलाराय
सन् ६८५ ई०में मुसल्मानोके हाथसे मारे गये और इन्हींसे अजमेरका राज्य चौहानोसे गया
सं० ७४१ मानिकराय
इन्होने सांभरमे चहुआणोकी राजधानी स्थापित करके संभरीरावकी उपाधिपाई । तभीसे चौहान संभारीराव कहे जाते हैं
,, ८२७ हर्षराज
बीरबीलनदेव
सं. १०६६–११३० वीसलदेव
सारगदेव
[कुमार अवस्थामें मरे
आना
अजमेरमे आना सागर ताल बनवाया जो अब तक उन्हींके नामसे विख्यात है ।
जैपाल
हर्षपाल
अजयदेव
विजयदेव
उदयदेव
आनंददेव
सोमेश्वर
कंन्हराय
जैतगोलवाल
इश्वरीदास
पृथ्वीराज
चाहड़देव
रेनसी
विजयदेवराज
लखनसी
[अंकवाले नामोकी टि०आगेके पेजमे देखो]

इतिहासवेत्ता टाड् साहब फिर लिखते है कि " उक्त कीर्तिस्तभके गात्रमे अंकित श्लोकके पहिले और अंतमे एक प्रकारका सन् और तारीख लिखी गई है, यथा- १५वैशाख संवत् १२२० यदि अनुलिपि शुद्ध है तो वीसलदेवके साथ इसका कोई ससर्ग नही। केवल इतना ही संसर्ग है कि विशालदेव (वीसलदेव) चौहान तिलक शाकम्भरी पृथ्वीराजे भूपतिके आदि पुरुष थे, पृथ्वीराजने संवत१२२०मे दिल्ली को शासन किया, और सवत् १२४९ मे मारे गये। दूसरी कविताकी ओर देखनेसे हम अवश्य ही इस स्मृतिस्तंभके गात्रमे प्रथम जो समय अंकित हुआ है, उसको भ्रामक कह सकते है। संवत् १२२० के वदलेमे संवत् ११२० पढ़ना न्याय सिद्ध है, और उसी समय ही वीसलदेवने आर्यावर्तसे यवनोको भगाया था, संस्कृत भाषामे एक दो अंक प्रायः एकसे है, इसी लिये सरलतासे भूल होनेकी संभावना है। परन्तु अन्य पक्षमे यदि यह निश्चय हुआ कि संवत् १२२० है, ऐसा माना जाय तो यह केवल चौहानपति पृथ्वीराजके स्मरणका स्तंभमात्र है"।

वीसलदेवसे पृथ्वीराजके शासनसमयके मध्यमे और भी छःराजाओके नाम लिखे है। स्तंभके गात्रमे प्रथम जो कविता वर्णन की गई है ऐसा बोध होता है कि वह पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोने वीसलदेवके नामके उल्लेखके लिये ही वर्णन की है और उस पर खुदी हुई तारीख भ्रमवश ठीक नही लिखी गई"।

इसके पीछे इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है, कि "हमारी समझमे पहिले कवितामे (वीसलदेव) विशालदेवके सम्बन्धमे लिखा है, और दूसरीमे उनके वंशधर

---

(१) अग्निपाल प्रमार कुलके आदिपुरुपका नाम था। चाहुआण कुलके आदि पुरुपका नाम चतुर्बाहुमानजी या चुहाणजी था। इसके बाद जो सुबाहु और गिलनसूर दो नाम दिये हैं वे भी गलत हैं। इसमें रासोके आधार पर नाम लिखे गये है पर रासोके छन्द समझमे न आनेसे ऐसा हुआ है। यह कारिका न तो रासासे ठीक मिलता है न वंशभास्करके आधारपर बनी हुई बूँदी राज वंशावलीसे मिलती है। (२) इन्होने नाजिमुद्दीन या सुवक्त दीनको शिकस्तदी। (३) महमूद गजनवीके विरुद्ध अजमेरकी रक्षामे मारे गये। इनका दूसरा नाम धर्म गज भी है। (४) दिल्लीके तूअर राजा अनंगपालकी बेटी रूकाबाईसे व्याह किया। (५) इन्होने दिल्लीका राज्य प्राप्त किया और सन् ११९३ में शहाबुद्दीनके द्वारा मारे गये। (६) मुसलमान होगये। (७) दिल्लीकी रक्षामें काम आये। (८) पृथ्वीराजके दत्तक पुत्र इनका नाम दिल्लीके एक स्तूपपर खुदा हुआ है। (९) लखनसीके २२ पुत्र हुए जिनमे ७ असली थे, उनसे चाहुवाणोंके सात वंश प्रख्यात हुए, नीम राणाके सरदार नन्दसिंह उक्त लखनसीसे २६ वी पीढीमें हैं यही अजैपाल या पृथ्वीराजके मूलवंशधर है।

(१) कर्नल टाड साहब लिखते है कि "चौहानराजका आदि वासस्थान हासी, वा असि था। इस स्थानके ध्वंसावशेषसे संवत् १२२४ की खुदी हुई अनेक अनुशासन लिपियोको संग्रह किया था।" इसके सम्बन्धमे टाड्ने रायल एसियाटिकसोसाइटीके पहिले वालमके १३३ पृष्ठमे जो कुछ लिखा है वह द्रष्टव्य है।

(२) प्राचीन नाम विशालदेव ही ठीक मालूम होता है और वीसलदेव उसका अपभ्रंश मात्र है।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमे लिखा है। ऐसा विदित होता है कि पृथ्वीराजने अपने पूर्वपुरुष वीसलदेवके वार्षिक जयोत्सवके समयमे उक्त स्मरण स्तंभमे अपनी कीर्तिकी कविताको अंकित करवाया था। पृथ्वीराजने अवश्य ही वीसलदेवकी समान भारतवर्षमे यवनोको अपने वलविक्रमसे वारम्बार परास्त किया। अधिक क्या कहै यवन इतिहासवेत्तागणोने स्पष्ट ही लिखा है कि उत्तर भारतवर्षको सव प्रकारसे जय करनेके पहिले शहावुद्दीन वारम्वार युद्धमे परास्त हुए थे"।

"मै जिस प्रकारका अनुमान करता हूॅ कि यही प्रथम कविता वीसलदेवके सम्वन्धमे लिखी गई है, और वीसलदेवने सम्वत् २१२० सन् १०६४ ई०मे कविचंदके द्वारा लिखेहुए मतसे यवनोको भगानेके लिये वहुतसे वीरोको इकट्ठा किया था, और उसी घटनाके स्मरणके लिये उक्त स्तंभ स्थापित हुआ है"।

वीसलदेवके अधीन जो राजा सेनासहित इकट्ठे हुए थे कविचंदके ग्रन्थोमे उनकी नामावली प्रकाश की गई है, उनमेसे चार राजाओके समयका निर्णय हुआ है, पर हम प्रत्यक्षरूपसे एक ही नामके समयको यथार्थ निर्णय कर सकते है, और तीन नाम समयके निश्चय करनेके पक्षमे अप्रत्यक्षतामे सहायता करते है । पहिले राजा भोजके पुत्र धारनगरके अधीश्वर प्रमार उदयादित्य थे। मैने वहुतसे ताम्रानुशासनं लिपियोसे प्रमाणितकिया है कि उदया दित्य ११०० सवत ११४० के मध्यमे थे, इस कारण उदयादित्य जिस समय वीसलदेवके साथ सेना सहित आये थे वह उसके शासनके समय थे । और भी दो अप्रत्यक्ष अथवा प्रवल प्रमाण है—

प्रथम 'देरावरके भूमियाभट्टी लोग आये' ऐसा लिखा है। कविचदकी उक्तिसे ही यह प्रमाण सिद्ध हुआ। तथा भाटियोकी वर्तमान राजधानी जयसलमेरका उल्लेख भी दृष्टि गत हुआ है।

द्वियीय–यमुना और गगाजीके मध्यवर्ती अन्तरवेदसे कछवाहे आये, ऐसा लिखा गया है। कारण कि नरवरसे कछवाहोने आमेरमे जो राजधानी स्थापन की थी वह इस समय प्रसिद्ध नही हुई थी।

तीसरा प्रमाण–मेवाडकी खुदीहुई अनुशासनलिपि । उन अनुशासन पत्रोमे अकित हुई है, समरसिहके पितामह तेजसिह वीसलदेवके मित्र थे। ऐसा जाना जाता है कि वीसलदेव ६४ वर्पतक जीवित रहे। यदि ऐसा अनुमान कियाजाय कि उक्त सवत ११२० उनके शासनका मध्य समय था, तो यह स्थिर किया जाता है कि वह सवत् १०८८ से सवत् ११५२ तक अर्थात् १०३२ ई० से १०९६ ई० तक जीवित थे, किन्तु जव यह प्रकाश हो चुका है कि वीसलदेवके पिता धर्मगज वा वीर वीलनदेव, हमीर रासाग्रन्थमे इनका नाम मालनदेव लिखा है, महमूदके शेप आक्रमणके समय अजमेरकी रक्षामे मारे गये, तव अवश्य ही वीसलदेवके जन्मका समय (उक्त

(१) डाट साहवने वीसलदेव और विशालदेव दोनों ही नाम लिखे हैं।

युद्धके समय वह बालक थे ऐसा अनुमान होसकता है, और भी दश वर्ष पहिले अर्थात् संवत् १०७८ निश्चित होता है"।

इसके पीछे टाड साहब कहते है कि "वीसलदेव दिल्लीके तुंअर राजा जयपाल, गुजरातके राजा दुर्लभ और भीम, धारके दोनो अधीश्वर भोज और उदयादित्य, मेवाड़के दोनो महाराणा पद्मसिंह और तेजसीके समसामयिक थे, और वह जो प्रबल-सेनादलके नेतारूपसे यवनोंके विरुद्धमे खडेहुए वह यवननेता अवश्य ही महमूद था। वीसलदेवने उस महमूदको राजपूतानके उत्तरांशसे निकाल दिया था, तभीसे आर्यावर्तमे फिर आर्यधर्मकी रक्षा हुई। महमूद पिछली बार भारतवर्षसे सिन्धुदेशको भागा और उसके विरुद्धमे जो वीरमदेव अजमेरके अधीश्वरोके साथ मिलकर उनके विरुद्धमे खड़े हुए वह युद्ध हिजरी ४१७ सन् १०२६ ईसवी वा सम्वत् १०८२ मे हुआ। परन्तु चँदकवि लिखते है कि संवत् १०८६ मे हुआ था"।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते है कि वीसलदेवने गुजरात राजके विरुद्धमे समर उपस्थित कर उसमे जो जय प्राप्त की थी, और अपने बाहुबलसे शत्रुओके साथ जिस स्थान पर विजय प्राप्त की थी, उस स्थान पर जयचिह्नस्वरूप वीसलनगर की प्रतिष्ठा की, हम उसे इस स्थान पर विस्तारसहित वर्णन करते परन्तु जगन्विख्यात् पृथ्वी-राजके शासन–वर्णनके समय उस सबका वर्णन किया जायगा, इसीसे यहाँ उस प्रसगको नही कहते। कालिक जुहनेर स्थानमे जो वीसलदेवका धोध अर्थात् तपस्या का स्थान था उसके विषयमे हमारे पाठक इतिहासके कितने ही स्थानोमे पढ चुके होगे।

हाड़ाजातिके राजकवि गोविन्दरामके बनाये हुए "राजग्रन्थ" मे लिखा है कि वीसलदेवके पुत्र अनुराजसे हाड़ाजातिकी उत्पत्ति है। परन्तु खीची राजवशके कवि मगजीने अपने ग्रथमे लिखा ह कि अनुराज माणिकरायके पुत्र थे और वह खीची वशके आदिपुरुष थ। हाडा कविने गोविन्दरामका अनुसरण किया होगा।

गोविन्दराम कहते ह कि अनुराजको सीमान्तवर्ती असि (सर्वसाधारणमे विख्यात हाँसी) नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। अनुराजके पुत्र अस्थिपाल एव सिन्धुसागर देशके अन्तर्गत खीचीपुर पाटनके आदि प्रतिष्ठाता और अजयराजके पुत्र अगनराज दोनो मिलकर अपने सौभाग्यके उपार्जनकी इच्छासे गोलकुडाके चौहान-राज रणधीरके अधीनमे नियुक्त होनेके लिये सजे। परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय कजलीवनके वर्वरोने एकसाथ ही असि और गोलकुंडापर आक्रमण किया। उस समय चौहानराज रणधीरने पुत्रोके साथ असीम बलविक्रम प्रकाश करके रणक्षेत्रमे प्राण त्याग किये। उनके वशमे केवल एकमात्र सूरावाई एक कन्या प्राणरक्षामे समर्थ होकर शत्रुओके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये गोलकुडाको छोड कर आश्रयके निमित्त असिकी ओरको भागगई। परन्तु उक्त वनवासी वर्वरोने इस समय उस असिप्रदेश पर भी महाविक्रम प्रकाश करके आक्रमण किया। शत्रुओके आगमनका समाचार पाते ही असिपति अनुराज भी भाग गये, परन्तु उनके उक्त पुत्रोने शत्रुओके आक्रमणकी

प्रतीक्षा न करके वीरपुरुषोकी समान असीम साहससे आगे वढ सेना सहित उन पर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गयी, उस घोर युद्धमे शत्रुपक्षके नेता अस्थिपाल अस्त्रोके आघातसे घायल हुए, तुरन्त ही शत्रुओकी सेना प्राणोके भयसे भागने लगी यह क्षत विक्षत देह उस शत्रुओकी सेनादलके पीछे २ चले। परन्तु वहुत दूर चलनेके पीछे मार्गमे ही अचेतन होकर गिर गये। इस ओर सूरावाई भी आश्रय पानेके लिये इकली असिकी ओरको चली, अंतमे थकित होकर मार्गमे ही संज्ञा हीन (क्षुधा तृष्णासे कातर और जीवनकी आशासे वंचित) होकर एक वृक्षकी जडके नीचे गिर गई। उस समय सूरावाई अपनी मृत्युको अत्यन्त समीप देख रही थी। जिस समय वह अश्वत्थ वृक्षकी जड़मे गिरी थी, उसी समय उस वृक्षके दो खड होगये और उसमेसे चौहानोकी कुलदेवी आशा पूरामाताने वाहर निकल कर उसको दर्शन दिया। देवीका दर्शन पाते ही सूरावाई विचलित हृदयसे नेत्रोमे जलभर कर देवीके चरणोमें हृदयको भेदन करनेवाली अपनी विपत्तिको वर्णन करने लगी। कजलीवनके वनवासी वर्वरोके हाथसे राजधानी गोलकुंडाकी रक्षाके लिये किस प्रकारसे उसके पिता और वारह भ्राता युद्धमे मारेगये और किस प्रकारसे वह इकली भाग कर आई, उसने एक २ करके सभी वातोको निवेदन किया। तव देवीने उसको अभय देकर कहा, "हे वत्से! अव तुम्हे कुछ भय नहीं है, तुम्हारे स्वजातीय एक चौहान वीरने उस शत्रुपक्षके नेताको अपने हाथसे मार डाला है, और वह बहुत ही समीप स्थित है।" यह कह कर देवी उस सूरावाईको अपने साथ ले, घायल हुए अस्थिपाल जिस स्थान पर अचेत अवस्थामे पडे थे वहां लेगई, देवीके वरसे उनका शरीर ज्योंका त्यो होगया और फिर वल पाकर चैतन्य हो अस्थिपाल अन्तमे चौहानोके विख्यात पैतृक अभेद्य किले आमेरगढ़को चले गये[१]।

इस स्थान पर कर्नल टाड् साहव लिखते है कि "हाडा जातिके आदि पुरुष अस्थिपालको सम्वत्[२] १०८१ १०२५ ई० मे असिका किला मिला था। अव जाना जाता है कि सुलतान महमूद भारतपर शेष आक्रमण करनेके लिये मुलतान होकर मरुक्षेत्रको मध्यमे, छोड़ अजमेरमे, हिजिरी ४१७, सन् १०२२ ईसवीमे आया था, तव हम अवश्य ही इस वातको स्थिर कर सकते है कि अस्थिपालके पिता अनुराजने गजनीके महमूदके साथ युद्ध करके अपने जीवन और असि नगरको खोदिया था। इसी समयमे मुसल्मान विजेता महमूदने अजमेरको भी विध्वंस किया।

---

(१) टाड् साहव अपने टीकेमे लिखते है कि "इस प्रकारकी गप्प प्रचलित है कि सूरावाईने अस्थिपालके छिन्नभिन्न हाथ पैर यथास्थान जोडे और देवीने अभिमन्त्रित जल छिडक कर अस्थिपालको प्राणदान दिया। उक्त प्रकारसे सव हाडोके एकत्र होनेसे अस्थिपालको जीवन प्राप्त हुआ, इसीसे उनके वंशधरोंको हाडाकी उपाधि प्राप्त हुई। परन्तु इसीकी अपेक्षा यह भी सम्भव होसकता है कि उन्होने असिराज्यको खोदिया था इसीसे हारा नाम प्राप्त हुआ हो।"

(२) हाडा जातिके कविने अपने ग्रन्थमें उक्त घटनाका समय सवत् ९८१ लिखा है, परन्तु टाड् साहवने कहा है कि वह भूल है।

हिन्दू कविने इसको "कजलीवनका असुर" कहकर अपने काव्यमे लिखा है। यद्यपि कर्नल टाड् साहबने इस मन्तव्यको प्रकाशित किया है, परन्तु मुसलमान इतिहासवेत्ताने भ्रमसे भी इसका उल्लेख नही किया कि सुलतान महमूद सेना लकर किस समय दक्षिणमे आया था, और किस समय उसने गोलकुडेको जय किया था। परन्तु कवि गोविन्द-रामने जो कजलीवनकी वर्वरजातिका उल्लेख किया है, सुलतान महमूद उसी कजली-वनका वर्वरनेता था, यह विश्वास सरलतासे नही हो सकता। यद्यपि यदुवंशीय राजा गजसे गजनीकी सृष्टि हुई है, परन्तु महमूदके दक्षिणात्यमे जानेपर मुसलमान लेखको-मेसे कोई न कोई अवश्य ही उसका उल्लेख करता। हमारा ऐसा विचार है कि दाक्षिणके किसी पर्वतीदेशका कजलीवन नाम हो। वह कजलीवन कहां था, इसका निर्णय करना सामर्थ्यसे बाहर है। टाड् साहबने इस स्थान पर और भी एक मन्तव्य प्रकाशित किया है कि "उत्तर और दक्षिण देशके जो समस्त राजपूत राज्य थे, उन्ही राजवशधरोने वहाँके आदिम निवासियोके साथ मिलकर नूतन मिश्र महाराष्ट्र जातिको जन्म दान किया, महाराष्ट्रोने राजपूताका समान वीरविक्रमी होकर भी जादव तुवर पवार इत्यादि प्राचीन राजपूतवशके नामकी रक्षा न करके जिस देशमे जन्म ग्रहण किया उसी देशके नामसे वह निमालकर, फालकिया और पाटनकर इत्यादि नामसे परिचित हुये।

अस्थिपालके औरससे चन्द्रकरण नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। चंदकरणके पुत्रका नाम लोकपाल था। लोकपालके दो पुत्र हुए, एकका नाम हमीर और दूसरेका गभीर था। यह दोनो महापुरुष थे। दिल्लीपति पृथ्वीराजके शासनसमयमे यह उनके अधीनमे थे उस समय इन्होने अनेक युद्धोमे महावीरता प्रकाश की थी। दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीनमे जो १०८ करद राजा थे, इन दोनो वीर भ्राताओने उन सबोमेसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। इससे हमे ऐसा अनुमान होता है कि असिदेश यद्यपि दिल्लीके बादशाहके सब प्रकारसे अधीनमे न था तथापि चौहानवंशीय असिदेशके अधी-श्वर उनका अधिक सम्मान करते थे।

चौहानवंशके शिरोमणि राजा पृथ्वीराज जिस समय कान्यकुब्जपति जयचंदके साथ घार सग्राम कर उनकी कन्या अनंगमजरी (संयोगिताको) बलपूर्वक हरण करके ले आये थे, चन्दकविने अपने ग्रन्थमे उसका विवरण भलीभांतिसे वर्णन किया है, उन्होने उसमे वीर श्रेष्ठ हमीर और गंभीरके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा करनेमे त्रुटि नही की है।

---

(१) कर्नल टाड् साहब लिखते है, " कि कजलीवनका अर्थ हस्तीका जंगल है। राजपूत कहते है कि गिजनीका प्रकृत नाम गजनी है, और वह यदुवंशीय राजा गजके द्वारा स्थापित हुई। हमने रायलएसियाटिक सुसाइटीको एक प्राचीन हिन्दू भूवृत्तान्त प्रदान किया है, उस भूवृत्तान्तसे गगाजीके तीरवर्ती समस्त पहाडी देश 'कजलीवन' वा गजलीबू' नामसे लिखे गये है। उसका अर्थ हाथीका जगल है। अबुलफ़ज़ल लिखते है बजौर अचल पर गजलीगढ नामका एक देश है वहाँ सुलतानो यादो और योसुफ़ज़ई जाति निवास करती है"।

कविचंदकी उक्ति है कि "इसके पीछे हाड़ाराव हमीर अपने अनुज गंभीरके साथ रण तुरंगिनीपर चढ़कर अपने अधीश्वर पृथ्वीराजके सम्मुख जाकर बोले, "जंगलेश[1] हम जयचदकी सेनाको विध्वंश करनेमे प्रवृत्त हुए है, आप निर्विघ्नतासे चलिये। नौका जिस प्रकारसे सागरके वक्षस्थलको विदलित करती हुई चलती है उसी प्रकारसे हमारे रणतुरंगोंके खुरोंसे युद्धक्षेत्र कर्षित होगा"।

कविकी पिछली उक्तिसे जाना जाता है कि "जयचंदके अधीनमे इकट्ठे हुए महा बली राजाओंमे जो काशीराज सेनासहित उपस्थित थे, उक्त दोनो वीर भ्राताओंने उनपर आक्रमण किया। वीर श्रेष्ठ हमीरने वीरगर्वसे आगे बढ़कर इस प्रकार सिहनाद किया कि कैलाशके शिखर पर भगवती दुर्गाजीका सिहासन तक उच्चस्वरसे कंपायमान हो गया।" ककिचद लिखते है कि उन दोनो वीर भ्राताओंने अतुल बल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे उस समरभूमिमे प्राण त्याग किये।

हमीरके कालकर्ण नामक एक पुत्र था। शहाबुद्दीनने जिस समय कग्गरोके युद्धमे भारतकी स्वाधीनताको हरण किया उस समय वह वीर श्रेष्ठ कालकर्ण पृथ्वीराजके अधीनमे उनके विपक्षमे नियुक्त होगये थे। कालकर्णके पुत्रका नाम महामुग्ध था। उनके औरससे राववाचाने जन्म ग्रहण किया। उनके पुत्रका नाम रावचंद था।

कठिन यवनअलाउद्दीनने चौहान जातिके समस्त स्वाधीन राजाओके शासनको लुप्त कर दिया, उन्होमे यह रावचद भी एक थे। आसेरगढका किला अत्यन्त अभेद्य गिना जाता था, इसीसे अलाउद्दीनने बलपूर्वक उस किलेको फतह कर रावचदको वंश सहित निहत किया। केवल रावचदके ढाई वर्षकी अवस्थाका रैनसी[2] नामका एक पुत्र था। वह बालक चीतौडपति महाराणाका भानजा था इस कारण अलाउद्दीनके किलेको जीतनेके पीछे वह बालक चीतौड़के महाराणाके निकट भेज दिया गया। रैनसी मामाके यहाँ जाकर सब व्यवहारोको जान गये, एक समय इन्होने अपनी सेना सहित जाकर भेसरोड़ नामक देशके विध्वंस हुए किले पर आक्रमण करके वहाँके दूंगानामक भील नेताको वहाँसे भगा दिया।

यह भैसरोड़ पहिले मेवाडके अधीनमे था, अलाउद्दीनने चित्तौडपर आक्रमण करनेके समय इस देशको विध्वस कर दिया था, और उक्त दूगाने सुविधा पाकर उस स्थान पर अपना अधिकार कर लिया।

रैनसी वा रैनसिहके औरससे कुलन और कनकल नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। बडा पुत्र कोल्हण दुरारोगसे ग्रसित होकर गगाजीके किनारे केदारनाथकी तीर्थयात्रा करनेको गया, इससे उसे शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त हुई, केदारनाथका बहुत दिनोंका मार्ग था, परन्तु यह न तो पालकी की सवारी पर चढ कर गये और न घोडे पर ही गये, यह देवादिदेव केदारनाथ, जिससे अधिक प्रसन्न हो इससे किसी सवारी पर

(१) पृथ्वीराजकी एक उपाधि जगलेशकी भी थी।

(२) वंशभास्करमें रतनसिंह लिखा है।

न चढ़ कर केवल साष्टांग दंडवत करते हुए राजधानी भेसरोडसे केदारनाथके मंदिरतक गये। इस वातको तो सभी जानते है कि यह तीर्थयात्रा महा कठिन है। इसी रीतिसे छ. महीने तक वरावर चलनेके पीछे वह वूंदीके समीपमे आपहुँचे। उस स्थान पर एक पर्वतके शिखरसे निकली हुई वाणगंगा नदीमे जाकर इन्होने स्नान किया, और स्नान करते ही समझ गये कि मै आरोग्य होगया। उस स्थान पर ही देवादिदेव केदारनाथने उनको आज्ञा दी कि हे वत्स! मै तुम्हारी भक्तिसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूं तुम अव सव भाँतिसे अयोग्य हो गये हो। आजसे तुम पठार देशके अधीश्वर हुए "। उक्त समस्त पठारदेश पहिले चित्तौड़के राणाके अधिकारमे था, परन्तु दुराचारी अलाउद्दीनने उस विख्यात किलेको लूट कर वहाँके अगणित गेहिलोतोको निहत कर इस देशसे राणाकी प्रभुता घटादी, यहाँके आदिम निवासी मेरगणोने इस सुअवसरमे अपने इस आदिम पर्वतके स्थान पर अपना अधिकार करलिया।

यह प्रसिद्ध है कि पूर्वकालमे प्रमारजातिके राजा हूंन इस पठारदेशके अधिपति थे, और मैनाल नामक स्थानमे उनकी राजधानी थी। उक्त मैनाल नामक स्थानमे उस प्राचीन हूणाराजाके अनेक स्मृति चिह्न विराजमान है। ऐसा प्रगट है कि आठवी शताब्दीमे जिस समय चीतौड पहिले पहिल आंक्रात हुआ था उस समय हूनपति अगतसीने अपनी सेनाके साथ इन महाराणाकी सहायता की थी और ऐसा कहा जाता है कि विख्यात वारौलीका मदिर इन्ही हंस राजका वनवाया हुआ है।

कोल्हनके पुत्र राव वांगाने उस पुराने मैनालपर अधिकार करलिया उन्होने पठारके पश्चिमकी ओर एक शिखर पर वंवावदा किला वनाया, पूर्वमे भैसरोड पश्चिममे वंवावदा और मैनाल यह सव पठार देश हाडाजातिके अधिकारमे होगये, इसके पीछे मांडलगढ़ विजोलिया वेगू रत्नगढ़ और चौराइतगढ इत्यादि पर अधिकार करनेसे राज्यकी सीमा क्रमशः वढगई।

राव वांगाके वारह पुत्र हुए उन सभीने पठार देशका विस्तार करके अपने वंशको वढ़ाया, राव देवा राव वागाके पीछे राजसिहासन पर विराजमान हुए। राव देवाके हरराज हथेजी और समरसी यह तीन पुत्र हुए।

हाडानेरशोने उक्त प्रकारसे अपने अधिकारको स्थापन कर प्रसिद्धि प्राप्त की। तब दिल्लीके वादशाहका ध्यान इनकी ओर गया। सिकन्दरलोदी इस समय दिल्लीके सिहासन पर स्थित थे। उन्होने हाडा नरेशको दिल्लीमे वुलाया। रावदेवा दिल्लीश्वरकी आज्ञा

---

(१) मध्य भारतवर्षका नाम पठार था, कवि लिखते है कि कोल्हणको जो देश मिले थे उनके दश अशोंमेका एक अश उन्होने अनुजको देदिया था।

(२) हरराजके वारह पुत्र जन्मे, हावुके वीरताका वर्णन टाड् साहवके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमे प्रकाशित होगा यह हांवु सवमे वड़ा था। वंबावदाका अधिकार इसे ही मिला था।

(३) ये गलत लिखा हैं क्योंकि सिकंदरलादी तो देवायतजीके समय मे२०० वरस आसर पीछे हुवा है अौर उस समय देवायतजीकी ओलादम राव नारायणदास वंदीके राजा थे।

को शिरपर धारण कर अपने ज्येष्ठ पुत्रको बंबावदाके सिंहासन पर अभिषिक्त कर छोटे पुत्र समरसीके साथ दिल्लीको गये। हाड़ाजातीय कविने लिखाहै कि राव देवा वहुत दिनतक दिल्लीमे रहे, अन्तमे जब रावदेवाके घोड़ा लेनेकी दिल्लीपतिकी प्रवल इच्छा हुई और राव देवाने किसी प्रकार भी उसको देना न चाहा और अपने देशको जानेकी तैयारी की। उस घोडेका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट्के मन्दोराका एक अश्व था, " वह नदीके पार होजाता परन्तु उसके पैरमे एक बूँद जल भी नही लगता था, रावदेवाने सम्राट्के प्रधान अश्वपालको रिश्वत देकर वशीभूत किया, और पठारदेशकी एक अश्वनीके गर्भसे उक्त अश्वद्वारा एक बछेड़ा उत्पन्न कराया। वह अश्वका बच्चा धीरे २ बढ़कर पूरा घोडा होगया। बादशाहने उस घोड़ेको लेनेके लिये अत्यन्त अभिलाषा प्रगट की। रावदेवाने वादशाहकी अभिलाषाको जानकर धीरे २ दिल्लीसे अपने परिवार और परिषदोंको एक २ करके सभीको गुप्तभावसे विदा दी, और अन्तमे आप तलवार हाथमे ले उसी श्रेष्ठ घोड़े पर चढ़कर वादशाहके महलके सम्मुख पहुँचे। बादशाह उस समय बरामदेमे विराजमान थे। रावदेवाने नीचेसे ही उस घोड़े पर चढ़े रहकर बादशाहको अभिवादन करके कहा, "जहाँपनाँह! यह शेष अभिवादन जानिये। मेरा यह निवेदन है–कि आप राजपूतोसे तीन वस्तुओकी इच्छा न करै, प्रथम उनका अश्व 'दूसरा उनकी स्त्री' और तीसरी उनकी तलवार।" यह कहते ही रावदेवाने बडी शीघ्रतासे अश्वको चलाया, और शीघ्र ही निर्विघ्नतासे वह पठारमे आपहुँचे।

रावदेवा बंबावदा देशका समस्त अधिकार अपने बड़े पुत्र हरराजको पहिले ही देगये थे, इस कारण उन्होने वहाँ न जाकर, बुंदानाल नामक जिस स्थान पर उनके पूर्व पुरुषोने कठिन रोगसे आरोग्यता प्राप्त की थी उसी स्थानपर आपहुँचे। इस देशमे मीना और उसाराजाति उनके अधीश्वर जेताके अधीनमे निवास करती थी। उस समय उस देशमे एक भी रीतिके अनुसार नगर नही था, केवल उपत्यकी वाहरी सीमाके अन्तर चारो ओर पाषाण प्रकार और तोरणसे युक्त था, एव उसके मध्यवर्ती किसी स्थानमे इच्छानुसार मीनागणोने कुटी वनाई थी उसीमे आप निवास करते थे। यहाँके निवासी चितौड़के विध्वंस होनेके पहिले महाराणाकी अनुगत्यता स्वीकार कर उनके अधीनमे वास करते थे, परन्तु इस समय राणाकी सामर्थ्य घट गईथी इसीसे रामगढ़के खीचीजातिके अधीश्वर राव गांगा इस देशमे जाकर अपने बाहुवलसे प्रत्येक निवासियोके निकटसे वलपूर्वक कर लेते थे। रावगांगाके उत्पीडन और अत्याचारोसे अपनी रक्षा और बुंदादेशकी रक्षाके लिये उसारा और मीना जाति शीघ्र ही रावगागाके साथ इस प्रकार सन्धिवन्धनमे आवद्ध होगई कि वह प्रति दो महीनेके वीचमे पूर्णिमाके दिन बुंदाकी सीमाके वाहर करस्वरूप चौथ दिया करते थे। उन्होने इस सधिके मतसे अनेक दिनतक चोथ दी। अंतमे रावदेवा उक्त समयमे वहाँ पहुँच गये, सब वात जानकर उन्होने मीना और उसारा-

(१) " थल " और " नाल " शब्दका अर्थ उपत्यका है। नाल शब्दमे गिरि-संकटको समझना।

दिकोंको रावगांगाके उत्पीड़नसे उद्धार और कर देनेसे रहित करनेकी प्रतिज्ञा की। रावदेवाको वीर पुरुष जानकर उसारा और मीनागण उनके ऊपर विशेष विश्वास स्थापन कर उनके द्वारा रावगांगाके हाथसे अपने उद्धार प्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करने लगे।

यथासमयमे रावगांगा सेनासहित बुंदी देशकी सीमामे पहिलेकी समान कर ग्रहण करनेके लिये पहुँचे। ठीक समय पर करको आयाहुआ न देखकर वह अत्यन्त विस्मित हुए अन्तमे उन्होने दूरसे सेनासहित रावदेवाको उस श्रेष्ठ घोड़ेपर आताहुआ देखकर पूछा, "कौन आरहा है?" कुछही समयसे उत्तर आया "पठारके महाराज आरहे है"। राव गांगा जिस अश्वके ऊपर सवार थे वह अश्व भी राव देवाके उक्त अश्वकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट नही था, कवि लिखते है कि रामगढ़के निकटवर्ती पार्वती नदीके किनारे खीचीराज रावगांगाकी एक घोड़ी एक समय विचरण कर रही थी, इसी अवसरसे पहाडी नदीके गर्भसे एक घोड़ेने आकर उस घोडीको गर्भाधान कराया, उसीसे उस अश्वका जन्म हुआ, रावगांगा उसी घोडेपर चढकर गये थे। वह घोड़ा जैसा अद्भुत सामर्थ्यवान् था वैसा ही सुशिक्षित भी था। राव गांगा उस घोडे पर चढ़कर महावेगसे पठारपति राव देवाकी ओरको चले।

शीघ्र ही दोनो ओर भयकर युद्धानल प्रज्वलित होगई। उस युद्धमे पठारपति रावदेवाकी विजय होनेसे राव गॉगा युद्धभूमि छोडकर भाग गये। पठारपति राव गांगाके अश्वके बल और उसके गुणकी परीक्षाके लिये उसके पीछे२ गये। राव गांगाने उपत्यका को छोडकर शीघ्र ही चम्बल नदीमे प्रवेश किया। रावदेवा अत्यन्त विस्मित होकर चारो ओरको देखने लगे, कुछही समयमे राव गांगा चम्बल नदीके पार होगये है। यह देखकर रावदेवाने अत्यन्त विस्मित होकर कहा, "राजपूत तुम धन्य हो! आपका नाम क्या है?" तुरन्त ही उत्तर आया "गांगारखींची" राव देवाने कहा "हमारा नाम देवाहाड़ा है, हम दोनो जातिके भ्राता है, हममे परस्पर कभी शत्रुता नही होसकती, यह चम्बल नदी हम दोनोके राज्यकी सीमा है"।

कर्नल टाड् साहब लिखते है "कि संवत् १३९८ (सन् १३४२ ई०) मे मीना और उसारादिकोके अधीश्वर जैतने रावदेवाको अपना अधीश्वर राजा स्वीकार किया। रावदेवाने उस बुंदानाल नामक देशके मध्यस्थलमे बून्दी नामके एक नगरकी प्रतिष्ठा की, और अंतमे वही हाड़ाजातिकी राजधानीके नामसे परिणत हुई। पूर्वोक्त घटनासे यद्यपि चम्बल नदी उस समय इसकी पूर्वसीमारूपमे निश्चित हुई थी, परन्तु शीघ्र ही बीचमे हाड़ाजातिने बलविक्रमसे उस सीमाको लांघकर चम्बलके उस पारके बहुत देश बूँदीके अधीनमे कर लिये। कुछही कालके पीछे हाड़ाजातिका बलविक्रम दिल्लीके बादशाहने सुना, बादशाहके सेनापतिके साथ मिलकर हाडाजातिने अपना अधिकार यहॉतक फैला दिया, ओर बादशाहसे इतनी भूमि प्राप्तकी कि बूँदीराज्यकी सीमाका विस्तार मालवेतक होगया। यही विस्तृत समस्त देश पीछे हाडवती हाड़ोती नामसे विख्यात हुआ है।

द्वितीय अध्याय २.

रावदेवाका बूँदीमें राजधानीकी प्रतिष्ठा करना–उसारा जातिकी हत्या–रावदेवाँका राज्य-त्याग–समरसीका अभिषेक–चम्बलके पूर्वाञ्चलतक उनके शासनका विस्तार–कोटिया भीलपर आक्रमण और उसका माराजाना–कोटेकी उत्पत्तिका वृत्तान्त–नापाजीका अभिषेक–टोडासोलंकीराजके साथ विवाद नापाजीका हत्याकाण्ड–हामाका अभिषेक–पठारदेशमें चीतौड़-पति राणाका अपने अधिकारके विस्तारनेकी चेष्टा करना–हामाका राणाकी सम्पूर्ण अधीनता स्वीकार करनेमें असम्मति-हामाका राणापर आक्रमण-राणाकी प्रतिज्ञा–प्रतिज्ञापालनमें विचित्र प्रवाद वरसिह–वैरीसाल रावभांडा दुर्भिक्ष–इनके सम्बन्धमें प्रवाद–वदूके भाडाके दोनो भाइयोका समर और अमरका बूँदीपर अधिकार–नारायणदासका यवनधर्माक्रान्त चाचाके साथ समर और अमरकी हत्या–नारायणदासका बूँदीपर अधिकार–उनके चरित्रोंके सम्बन्धमे झगडा–नारायणदासका चीतौड़के राणाकी सहायता करना–नारायणदासकी विजय–राणा रायमलकी भतीजीके साथ नारायणदासका विवाह–उनकी मृत्यु–राव सूर्यमल–राणा रत्नसिहकी भगिनीके साथ उनका विवाह–मृगया–राणा रत्नसिंहका सूर्यमलके प्राणनाश करना–सूर्यमलकी प्रतिहिंसादान–राव सुरतान–उनको सिंहासनसे उतारना–राव अर्जुनका अभिषेक–उनकी प्रशंसनीमृत्यु–बूँदीके सिंहासन-पर राव सुरजनका अधिरोहण—

"रावदेवाने सम्वत्१३९८, सन् १३४२ई० मे मीनादिकोंसे बुंदी नामक उपत्यका लेकर वहॉ बूदीनामक राजधानीकी प्रतिष्ठाकी। इसी समयसे समस्त देश हाड़ोती नामसे विख्यात हुआ हाडाजातिके राजकवि लिखगये है कि इसी समय रावदेवाकी हाडाजातीय प्रजाकी अपेक्षा मीना प्रजाकी संख्या वहुत अधिक थी यद्यपि मीनागण रावदेवाको अपना अधीश्वर मानते थे, परन्तु उनके राजकी सामर्थ्यको घटानेका यत्न होरहा था। दूसरी ओर मीनाजातिके नेताने रावदेवाकी एक कन्याके साथ विवाह करनेके लिये वडे साहसके साथ उनके समीप यह प्रस्ताव उपस्थित किया। असभ्यनीच जाति मीनानेताको यह अनुचित प्रस्ताव उपस्थित करते हुए देखकर राव देवाने महा-क्रोधित हो मीनोंको उच्चित दड देनेका विचार किया। इसी कारणसे मीनोके साथ उनका विवाद होगया। रावदेवाके अधीनमे इस समय जो वहुत सी हाड़ाजातीय सेना थी, उसकी अपेक्षा निवासी मीनोकी संख्या अधिक होनेसे रावदेवाने शीघ्र ही वबावदासे हाडाजातिको और टोडासे सोलकीजातिको बुलाकर ओसाराजाति और मीनोको एकवार ही विध्वसकर दिया। प्राय सभी मीना इस कारण मारेगये"।

"कविने लिखा है, कि मीनावंशध्वसके पीछे बूँदीराज देवाने दूसरीवार अपने पुत्रके हाथमे यह दूसरा राज्यभार अर्पण किया। वे पहली वार अपने वडे पुत्र हरराजके हाथमे वबावदाराज्यको अर्पण कर दिल्लीको चले गये थे। फिर वे वबावदामे नहीं आये इस समय उन्होने यह नवीन राज्यबूँदी देश अपने छोटे पुत्र समरसीको देदिया। राव देवाने किस कारणसे दूसरीवार राज्यको त्याग किया उसका कोई

विशेष भेद नही पाया जाता तब केवल इतना अनुमान होसकता है कि मीनोंके वंशको विध्वंस करके राव देवाका हृदय अत्यन्त व्यथित हुआ था, और इसी कारणसे उनको फिर राज्य करनेकी अभिलाषा नही हुई" पुत्रको राज्यपर अभिषिक्त करनेपर राजपूत राजा फिर उस राजधानीमे नही रहते। कारण कि उस समय वृद्ध राजाको राज्यशासनकी कोई सामर्थ्य नही रहती है। पुत्र ही प्रकृत राज्यरूपसे समस्त शासन शक्तिका प्रयोग करता है। ऐसी अवस्थामे वृद्धराजा शासन शक्तिका त्याग कर राजधानीमे प्रजारूपसे रहना न्याय संगत नही समझता। उसी प्राचीन रीतिके अनुसार राव देवा बूँदी छोड़कर वहाँसे पाँच कोशकी दूरीपर अमरथून नामक एक ग्राममे रहने लगे फिर वह कभी बूँदी वा बंबावदामे नही गये। राजपूत जातिमे इस प्रकारकी रीति प्रचलित है कि राजा वृद्ध होने पर पुत्रको राज्यभार देकर राजधानीसे चले जाते है क्षत्रियोमे जिस भाँति बारह दिनतक अशौच रहता है, उन्ही बारह दिनोके पीछे उस शासनशक्तिसे रहित वृद्ध राजाकी एक प्रतिमा निर्माण कर रीतिके अनुसार उसकी दाह क्रिया कीजाती थी। रावदेवाके छोटे पुत्र समरसीके हाथमे बूंदीका राज्यभार अर्पण किया गया, बूँदी और बंबावदा यह दोनो देश स्वतंत्र दोनो राजाओके द्वारा शासित होते थे।

समरसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए ज्येष्ठ नापाजी, यह बूँदीके सिंहासन पर विराजमान हुए, (२ हरपाल) यह जजावर गांवको प्राप्त कर वही रहने लगे, और इनके अगणित वंशधर हरपालपोता नामसे पुकारे गये, तीसरे जैतसिह इन्होने सबसे पहिले चम्बलके बाहर हाड़ाजातिके प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करदिया। कवि लिखते है "कि जैतसिहने एक समय अस्त्रधारी अनुचरोके साथ केतून देशके तुंवर अधीश्वरके साथ साक्षात् करनेके लिये, आनेके समय मार्गमे नदीके पार्श्वमे स्थित गिरिसंकटवासी भीलोके अधिकारी देश पर सहसा आक्रमण किया और उनको परास्त कर दिया। हाडाजातीकी सनाके महा विक्रमके सम्मुख बहुतसे भीलोका जीवन नष्ट होगया। उक्त गिरिसकट प्रवेशके मार्गमे बाहर एक किला था, जैतसिहने उसी स्थानपर भीलोके नेताके प्राण संहार किये। उनके स्मरणके अर्थ उन्होने इस स्थान पर रणदेव भैरवके उद्देशसे एक विराट्काय पत्थरका हाथी स्थापन किया। वह हाथी कोटा-राजधानीके किलेके चार झोपरा नामक स्थानके निकट स्थापित है। कोटिया नामक एक श्रेणीके भीलसे कोटा नामकी उत्पत्ति हुई है।

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड् साहब अपनी टीकामे लिखते है कि "जैतसिह और उनके वंशधरगणोके कई एक पुरुषोंने जब उक्त किले और आसपासके देशपर अधिकार करलिया था। पचम पुरुष भोनगसीके शासन समयमे बूंदीके राव सूर्यमल्लने उसपर अधिकार किया। जैतसिंहके सुरजन नामका एक औरस पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने भीलोके आदि वासस्थान उक्त देशका नाम कोटा रक्खा, और चारो ओर उसके दीवारे बनवादीं। सुरजनके पुत्र धीरदेवने बडे २ बारह सरोवर खुदवाये, और नगरके पूर्व प्रान्तमें बाँध बंधनसे एक बड़ाभारी हृद तैयार—

समरसीके स्वर्ग चले जानेपर नापाजी बूंदीके राजसिंहासन पर विराजमान हुए। राजपूतकविने अपने ग्रंथमे नापाजीकी वीरताकी कथा बहुतसी वर्णनकी है। नापाजीने टोडा देशके सोलंकी अधीश्वरकी एक कन्याके साथ विवाह किया। वह सोलंकी राज अन्हलवाडाके अत्यन्त प्राचीन राजाओके वंशधर थे। एक समय नापाजी टोड़ा राज्यमे

—करवाया। यद्यपि वह इस समय किशोर सागर नामसे पुकारा जाता है परन्तु यह सभीको विदित है कि वह किसके द्वारा बनाया गया है। धीरसिंहके पुत्र खंधल खंधलके पुत्र भोनगसी थे, भोनंगसीने कोटाराज्यको खोकर फिर उसपर निम्नलिखित उपायोसे अधिकार कर लिया। धाकर और केसरखॉ नामके दो पठानोने कोटेपर आक्रमण किया, भोनंगसी इस समय अफीम अधिकतासे सेवन करता था और मदिरा भी पीता था इसीसे उसे उन्माद होगया, इस कारण उसको बूंदीसे निकाल दिया, उसकी स्त्री अपने स्वामीकी समस्त सेनाके साथ केतून देशको चली गई। उस केतूनदेशके निकट ३६० ग्राम हाडाजातिके अधिकारमे थे। भोनगसी निर्वासित अवस्थामें कुछ दिन रहकर क्रमानुसार चैतन्यता प्राप्त होने पर अधिक नशा सेवन करनेसे अत्यन्त दुःखित हुए, अंतमे उन्होने कहा कि अब हम अफीम और मदिराका पान नहीं करेंगे और मै इसी समय केतूनमे स्थित अपनी स्त्री, तथा अपने कुटुम्बीजनोके साथ मिलनेकी इच्छा करता हूं। भोनंगकी स्त्री अपने स्वामीके ज्ञान प्राप्ति होने और उनका आगमन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। बुद्धिमती राजपूतस्त्रीने उस समय एक विचित्र उपायसे कोटाराजधानी पर अधिकार करनेका विचार कर अपने स्वामीको उस कार्यमे लिप्त होनेकी सलाह दी। सेनाबलके द्वारा पठानोंके हाथसे कोटेपर अधिकार करते ही जडसे नष्ट होना होगा, यह निश्चय जानकर भोनंगकी रानीने केवल साहस और चतुरतासे अपने मनोरथको सिद्ध करनेका विचार किया। वसन्तऋतुमे फाल्गुनोत्सवके समीप आते ही जिस उत्सवके कुछ दिनके लिये क्षत्रिय राजपूत समाजमे सामाजिक रीति भीति एकबार ही दूर हो जाती है, जिस उत्सवमें स्त्री पुरुष सभी स्वाधीनभावसे स्वेच्छाचारका एक शेष प्रदर्शन किया करते है। अश्ललिता की श्रद्धासे उस उत्सवके उपलक्षमे भोनंगकी रानीने केतूनकी समस्त राजपूत युवतियोको अपने यहॉ बुला भेजा कि "हम सभी कोटेके पठानोके साथ होली खेलेंगी"। अन्य पक्षमें भोनंगरानीने पठानोसे भी कहला भेजा, कि वह समस्त राजपूतोकी स्त्रियोंके साथ मिलकर होलीक्रीडा करें पठानोंने कोटेकी भूतपूर्व रानीके इस आमंत्रणसे अत्यन्त प्रसन्न होकर किंचित् भी विलम्ब न करके उस आमंत्रणको स्वीकार कर लिया। इधर भोनंगकी रानीने अत्यन्त गुप्तभावसे तीनसौ अत्यन्त सुन्दर हाडाजातिके अल्प अवस्थावाले युवकोको स्त्रीवेशसे सजाकर वृद्धाधात्रीके साथ भेज दिया। ठीक समय पर वह तीनसौ छद्मवेशीयुवक अबीर हाथमे लेकर ताली बजाते हुए होली खेलनेके लिये आगे बढ़े। जिस समय वह छद्मवेशी युवक कोटेमें जाकर पठानोंके मुख और शरीर पर अबीर छिडकने लगे, उस समय वृद्धाधात्रीने भोनगको लेकर पठाननेता केसरखांके निकट उपस्थित किया। छद्मवेशी भोनगने पठाननेताके निकट आते ही अपने हाथमेंके अबीर पात्रको उनके मस्तक पर देमारा। उसी ससय पूर्वसंकेतके अनुसार वह तीनसौ हाडायुवक घाघरेमेंसे तलवार निकाल कर पठानोका संहार करने लगे। कुछही समयके पीछे पठाननेता और उनके अधीनके समस्त पठान यमराजके यहॉ पहुंच गये और भोनंगने कोटेपर अधिकार करलिया। पठाननेता केसरखॉने नगरमें जो मसजिद बनवाई थी आजतक वह विद्यमान है। भोनंगकी मृत्युके पीछे डूंगरसी कोटेके अधीश्वर हुए। बूंदी अधीश्वर राव सूर्यमल्लने उनको शासनकी सामर्थ्यसे रहित कर कोटेको बूंदीराज्यके अन्तर्गत कर लिया।

गये वहाँ इन्होने एक अत्यन्त सुन्दर सगमर्मरके पत्थरका स्तंभ देखा । तब उसको लेनेके लिये अपनी स्त्रीको आज्ञादी कि तुम अपने पितासे इसको मांगलेना । हाड़ाराज-रानीने अपने पिताके निकट उक्त कामनाको प्रकाशित किया, सोलंकी राजने उसकी आज्ञा पूर्णकरना तो दूर रहा, वरन उसको विशेष अपमान कारक उत्तर दिया । उन्होने कहा, " कि यो तो एक दिन हाड़ाराज नापाजी हमारी स्त्रीतकको मांगलेगे । " वह केवल इतना कहकर ही शान्त न हुए, वरन जामाता नापाजीको टोडा छोड़ जानेके लिये आज्ञा दी । यद्यपि नापाजी इस अपमानसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, परन्तु उन्होने प्रगटमे अपने श्वशुरके साथ झगडा करना न विचारा, इसलिये वह अपने राज्यको चले आये, और तभीसे सोलकी रानीका तिरस्कार कर उससे घृणा करने लगे, अधिक क्या उन्होने रानीको अपने शयनागारमे आनेतकका निषेध कर दिया । सोलंकी रानीने इस प्रकारसे अपने स्वामीके क्रोधमे पडकर कुछ दिनके पीछे अपने पिताके निकट समस्त वृत्तान्त कहला भेजा ।

श्रावणमासकी तृतीया तिथि राजपूतोमे कजलीतीज नामसे विदित है । इस दिन प्रत्येक राजपूत निश्चय ही अपनी २ स्त्रियोके निकट विहार करनेके लिये जाते है । हमारे देशमे जिस भांति षष्ठीदेवी परम आराध्य है, उक्त कजलीतीजको राजपूत जनक जननी उसी प्रकार षष्ठीदेवीकी पूजा करती है । बूंदीराज नापाजीने चिर प्रचलित रीतिके अनुसार उस तिथिमे अपने अधीनसे स्थित समस्त सामन्तोको अपने अपने देशमे स्त्रियोके पास जानेकी अज्ञा दी, और उनको विदा किया । इस कारण उसी दिन बूँदीराजधानी एकवार ही सामन्तोसे शून्य होगई, इस शुभ सुअवसरको पाकर उक्त सोलकी रानीके भ्राता टोड़ा राजकुमार अपने कितने ही विश्वासी अस्त्रधारियोके साथ रात्रिके समय अत्यन्त गुप्तभावसे बूँदीकी राजधानीमे आये और महलके भीतर जा अपनी तीक्ष्ण तलवारसे नापाजीके शरीरको खडखड करके उनके जीवनको समाप्त कर बूँदीसे भाग गये । उस दिन जितने सामन्त बूँदीराज्यसे विदा हुए थे उनमेसे एक सामन्तकी स्त्री अत्यन्त पीड़ित थी, इस कारण उस सामन्तने ऐसी अवस्थामे स्त्रीको देशमे लेजाना उचित न जाना और वह बूँदी नगरके वाहर राजमार्गमे वैठकर अफीम सेवन कर रहा था । इसी समयमे टोड़ाके राजकुमार नापाजीका जीवन समाप्त कर अपने सेवकोके साथ उस मार्गसे हँसते २ जारहे थे और जिस भाँतिसे उनका प्राण हरण किया था, उसकी सब वार्तालाप करते जाते थे । बूँदीके उक्त सामन्तने उसी समय इस वृत्तान्तके सुनते ही अपनी कमरसे तलवार निकाल कर नापाजीके जीवन हन्तकारी टोडाके राजकुमारके ऊपर वार किया । राजकुमारका एक हाथ तलवारके आघातसे कटकर राजमार्गमे गिरपड़ा सोलकी राजकुमारके सेवकोने राजकुमारको लेकर उसी समय वडी शीघ्रतासे घोडा चलाया । सामन्त राजकुमारके ककणसहित कटेहुए हाथको ले अपने दुपट्टेमे बाँधकर उसी समय बूँदीकी राजधानीमे आये ।

सामन्तने बूँदीमे आकर देखा कि सर्व नाश होगया है नापाजी मारे गये है, तथा राजमहलमे हाहाकार मचरहा है। सोलंकी रानी जिसके भ्राताने उसके स्वामीका

प्राण नाश किया है वह शीघ्र ही राजपूतरीतिके अनुसार स्वामीके मृतक शरीरको लेकर चितापर चढ़नेके लिये तैयार हुई। परन्तु उन्होंने जिस वीरवंशमें जन्म लिया था, उसी वीरवंशके उग्रतेजके बलसे इस महाशोकके समयमें भी वह अपने भ्राताको महावीर कहकर उसकी ऊँची प्रशंसा करने लगीं। उनके भ्राताने तलवारके आघातसे नापाजीके शरीरमें सहस्रों घाव करदिये थे। सोलंकी रानी उस प्रत्येक स्थलको नापाजीका मुख जानकर उस प्रत्येक मुखमें जिससे ताम्बूल देसके इस निमित्त देवतोंसे प्रार्थना करने लगी। सोलंकनी जिस समय पतिके शवके साथ चितापर चढ़नेके लिये सज रहीं थीं उसी समय उक्त सामन्तने आकर हत्याकारी जो टोडा राजकुमारका कंचन सहित कटाहुआ हाथ कपड़ेमेंसे निकाल कर उनके हाथमें अर्पण किया। सोलंकनी कंकनको देखते ही तुरन्त पहचान गई कि यह उसके भाईका हाथ है। इससे वह कुछ भी शोकित न हुई, और चितापर चढ़नेके पहिले कलमदवात लेकर अपने भ्राताको इस मर्मका एक पत्र लिखा कि आपके हाथ कटजानेसे आपके वंशमें महाकलंक लगा है। आप जिस भांतिसे हो इस कलंकको, दूर करनेका उद्योग करिये। नहीं तो आपके वंशधरोंका सभी एक हाथवाले सोलंकीके वंशधर कहकर उपहास करैंगे। कवि लिखते है टोड़ा राजकुमारने अपनी सती भगिनीके उक्त मंत्रको पढ़कर उस कलंकको दूर करना असंभव जान शीघ्र ही थंभपर अपना मस्तक बड़े वेगसे दे मारा उसीसे उनका मस्तक चूर्ण २ होगया। और वह इस संसारसे विदा हो गये।

नापाजीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) हामाजी, (२) नौरंग, वा नवरंग और (३) थर सवन् १४४० मे हामाजी पिताके सिहासनपर विराजमान हुए। नवरगके वंशधर नवरंग पोता और थरके उत्तराधिकारी थरु हाड़ा नामसे विदित हुए।

यह तो हम पहिले ही कह आये है कि रावदेवाने जिस समय बूँदी राज्यकी प्रतिष्टा की उसके पहिले उन्होंने पटार देश और बंबावदाका किला बड़े पुत्र हरराजको दे दिया था। हरराजके बड़े पुत्र हालूहाड़ा पिताके वियोगके पीछे पठारके अधीश्वर हुए परन्तु हालूके साथ चीतौडके महाराणाका विवाद उपस्थित हुआ, महाराणाने उक्त पटार देशको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर बंबावदाके किलेको एकसा कराढिया। इस प्रकार स्वतंत्र स्वाधीन पठार राज्य एकबार ही लुप्त होगया।

अलाउद्दीनके द्वारा चीतौड़ विध्वंस होकर राणाके प्रबल प्रतापके लुप्त होनेके पीछे राणाओंने बहुत समय तक हीनवीर्य होकर चीतौड़का शासन किया था। चीतौड़के अधीनके सामन्त और छोटे २ राजाओंने राणाके इस दुःखमय समयमें मस्तक उठाकर स्वाधीताको संग्रह कर पिताके देशोंपर अधिकार कर लिया। कुछही दिनोंके पीछे चीतौडके महाराजका बलविक्रम पहिलेकी समान बढ़गया, वह सबसे पहिले उक्त सामन्त और

(१) उर्दू तर्जुमेंमे यों लिखा है कि वे यह प्रार्थना करतीं थीं कि जितने जखमके मुह उसके भाईने पतिके शरीरमे बना दिये है उतने ही हाथ उसके होजावें तो एक एक हाथमे एक एक मुहमें पान देवे।

छोटे २ राजाओंको दंड देने और उनको अधीनताकी जंजीरमे बाँधनेके लिये अग्रसर हुए। चीतौडके महाराजने सबसे पहिले बूँदीके अधीश्वर हामाजीकी ओर तीक्ष्णदृष्टिसे देखा। महाराणाने हामाजीसे कहला भेजा कि जिस देशमे बूँदीराजधानी स्थापित हुई है वह देश राणाके अधिकारमे है, इस कारण बूँदीराजके राणाकी वश्यता स्वीकारकर नियमित कर देकर राणाकी आज्ञा पालन करनेके लिये नियमित समयपर चीतौडमे उपस्थित होना होगा। राणाके निकटसे उक्त पत्रको पाकर बूँदीराज हामाजीने कहला भेजा "मै किसी समयमे भी किसी प्रकारसे चीतौड-पतिके अधीनका सामन्त नही हू। यद्यपि मै चीतौड़पतिके प्रभुत्वको स्वीकार करनेमे नित्य तैयार रहता हूँ, परन्तु अपने अधीनके देशोका हमने राणाके अनुगत रूपसे पट्टा ग्रहण नही किया, हमने तलवारके वलसे पठारके मीनोके निकटसे इस राज्यको जीता है"। वास्तवमे महाराणा और हामाजी इन दोनोकी उक्ति कहाँतक सत्य है, यह विचारकी वात है। हामाजीके पूर्वपुरुष रणसीवा रायसी असीरगढसे निकाल-दिये गये थे, उस समय चीतौड़पति राणाने ही उनको आश्रय दिया था और उन्होने भैसरोडपर अधिकार करनेमे सहायता की थी,तथा अलाउद्दीनके चीतौड़पर आक्रमण करने के पहिले समस्त पठार देश सिसोदीया राजमहाराणाके अधिकारमे था। अल्लाउद्दीनके चीतौड़को जयकरनेके पीछे राणाका प्रताप और प्रभुत्व एकवार ही लुप्त होगया। और उसी सुअवसरमे भूमियाँ आदिम मीना इत्यादि जातिने अपने पिताके देशपर अधिकार करलिया, और शेषमे उनसे हाड़ाजातिके पठारदेशको हस्तगत करनेका संकल्प किया।

यद्यपि हामाजीने कहला भेजा था कि उनके पूर्वपुरुषगण तलवारके वलसे बूँदी राज्यको स्थापन कर गये है, परन्तु महाराणाने कहा, कि कुछ समयके लिये हमारा शासन रहित होगया था, पर कोई भी वलसे हमारे पूर्वाधिकारी देशोपर अधिकार करने मे समर्थ नहीं है। राणाने फिर हामाजीसे कहला भेजा, कि वे तुरन्त ही बूँदी राज्यके कारण वश्यता स्वीकार करे। हाड़ाराज हामाजीने वहुतसी चिन्ता करनेके पीछे स्वीकार किया कि वह प्रत्येक दशहरा तथा होली पर्वके समय सेनासहित चीतौड़मे जाकर राणाकी आज्ञा पालन करेंगे और अभिषेकके समय राणासे राजतिलक ग्रहण करनेके लिये तैयार है, परन्तु वह नित्य चीतौड़मे जाकर सामान्य सामन्तोकी समान कभी नही रह सकते। हामाजीके इस उत्तरसे महाराणा किसी प्रकार भी संतुष्ट न हुए। और उन्होने उनको एकवार ही अधीनताकी जंजीरमे बाँधने वा रावदेवाके वंशका पठार से एकवार ही दूर करनेका विचार किया। बूँदीराज हामाजी राणाके अभिप्रायको जानकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन् उन्होंने यह स्थिर किया कि इस समय प्राणपण से स्वाधीनताकी रक्षा करना कर्तव्य है।

चीतौड़के महाराणाने शीघ्र ही अपनी सेना और सामन्तोके साथ बूँदीको जय-करनेके लिये वाहर जाकर बूँदीसे कई कोश दूर निमोरिया नामक स्थानमें अपने डेरे डाले। महाराणाके आगमनकी वार्ता सुनकर हामाजीने शीघ्र ही स्वजातीय पाँचसौ वल-वान् सेनाको सुसज्जित किया। नेता हामाजीके अधीनके वीर लालवर्णके वस्त्र धारण

करके सहारमूर्तिसे आगे बढे। घोर रात्रिके समय अत्यन्त संतापित हो उन पाँचसौ वीर पुरुषोंने निमोरिया नामक स्थानमे राणाके डेरोमे जाकर विना सावधान हुई सिसोदीय सेनाका सहार करना प्रारंभ कर दिया। राणा अचानक एकाएक शत्रुदलसे अपनेको घिराहुआ देखकर प्राणोके भयसे चीतौड़को भाग गये, और हाडादलकी तीक्ष्ण तलवारसे अगणित सिसोदियासेना और बहुतसे सामन्त मारे गये। हामाजी विजय प्राप्तकर महा आनंदितहो बूँदीकी राजधानीको लौट आये।

इसके पीछे कविने लिखाहै कि हिन्दूकुलतिलक महाराणा उस अति सामान्य सेनासे परास्त और अपमानित होकर राजधानीमे आ बूँदीराजसे बदला देनेके लिये महा क्रोधसे उन्मत्त चित्त हो सेनाका संग्रह करने लगे, और यह प्रतिज्ञा की कि जबतक मै उनको न जीत लूगा तबतक अन्न जल नही ग्रहण करूँगा राजपूत महा-राजने एकबार जो प्रतिज्ञा की है प्राण रहते हुए वह प्रतिज्ञा किसी प्रकार भी अपूर्ण नही होगी। चीतौड़के महाराज विना बूँदीको जय किये हुए अन्नजल नहीं करैगे ऐसी प्रतिज्ञा की है, यह सुनते ही मत्री समाज और सामन्त अत्यन्त उत्कंठित हुए। उनकी उत्कठाका कारण यह था कि बूँदी राजधानी चीतौड़से ३० तीस कोश दूर है, और महा पराक्रमी हाडाजाति प्राणपणसे बूँदीकी रक्षामे नियुक्त है। इस कारण सरलतासे बूँदीको जय करना असंभव है, इसलिये राजाकी प्रतिज्ञा पालन करना भी अत्यन्त दुष्कर है। इसी निमित्त मंत्री और सामन्त महाराजको ऐसी कठिन प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये वारम्वार निषेध करने लगे, परन्तु चीतौडके राजाने जव इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की है तव अव किसी प्रकारसे भी वह प्रतिज्ञा रहित नही होसकते विना प्रतिज्ञाका पालन किये महाराज किसी भाँति अन्नजलको ग्रहण नही करैगे। अंतमे कुटुम्बियोने एक विचित्र उपायसे चीतोड़के महाराजको उस कठोर प्रतिज्ञाके पाशसे मुक्त करलिया। मत्रियोने महाराजके समीप प्रस्ताव किया कि चीतौडमे हम एक कृत्रिम बूँदी दुर्ग बनाये देते है आप सेनासहित उस किलेपर अधिकार कर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर लीजिये। सामन्तोकी सम्मतिसे महाराज शीघ्र ही सम्मत हुए। शीघ्र ही चीतौडमे कृत्रिम बूँदी दुर्ग तैयार होगया सच्चे बूँदीके किलेमे जितने अग तथा वह जिस नामसे पुकारा जाता था तथा जो स्थान जिस भावसे स्थित थे शिल्पीदलने अविकल ठीक ज्योका त्यो किला बना कर तैयार करदिया। चीतौडके महाराजके यहाँ पाथर हाडा पठार हाडाजातिकी सेनाका एक दल था कुम्भावैरसी उस दलके प्रधान नेता थे। वैरसी शिकार खेल कर लौट रहेथे कि मार्गमे उस कृत्रिम किलेको वनता हुआ देखकर कौतूहलके वशीभूतहो उसके निकट गये वैरसीने सुना कि इस कृत्रिम बूँदीके विना जय किये हुए महाराणा अन्न जल ग्रहण नही करैगे। यह सुनते ही वैरसीके हृदयमे जातीय गौरवकी कामना उदय हुई, उन्होने कहा कि बूँदीके किलेके कृत्रिम होनेसे भी हम इसकी महाराणाके हाथसे रक्षा करैगे।

किलेका वनना समाप्त होगया, राणाके पास समाचार भेजा गया। राणा सेना लेकर उस कृत्रिम किलेपर अधिकार करके अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये आगे

वढ़े । महाराणाने आज्ञा दी थी कि किलेमे सभी सिसोदिया सेना रहकर खाली बदूको का फेर करे, और वह बल प्रकाश करके किलेकी रक्षा करनेमे नियुक्त रहे । परन्तु जैसे ही महाराणा किलेके समीप गये कि वैसे ही उस शब्दके बदलेमे सन् सन् शब्द करती हुई यथार्थ गोली किलेके भीतरसे निकल कर राणाकी सेनादलके ऊपर गिरने लगी । राणाने इस आश्चर्यदायक घटनाकी खोज करनेके लिये किलेके भीतर एक दूतको भेजा । वैरसीने उस मट्टीके बनेहुए किलेके द्वारपर दूतके आते ही उससे कहा " कि तुम राणासे जाकर कह दो कि हाडाजातिके इस कृत्रिम किलेको भी सरलतासे जय करके हाड़ाजातिके मस्तक पर कलंकका टीका नही देसकते । " हाड़ाजातिके नेता वैरसीने महाराणाके प्रति सम्मान दिखा कर शीघ्र ही उस छोटे किलेके द्वारपर अपनी पगड़ी बिछाकर किलेपर अधिकार करनेके लिये बुला भेजा। शीघ्र ही प्रवल समर उपस्थित होगया । जातिके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये वैरसी और उनके अधीनकी सेनाने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके अन्तमे सभीने उस अगणित सिसोदिया सेनादलके द्वारा आक्रान्तहो अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये जीवन त्याग किया ।

कविने लिखा है कि हिन्दूपति राणाने उक्त प्रकारसे कृत्रिम बूँदीको जय करनेके पीछे फिर यथार्थ बूदीपर अधिकार कर हामाजीको दंड देने वा पठारसे हाड़ाजातिको दूर करनेकी अभिलाषा नही की, कारण कि उन्होने यह निश्चय जान लिया था कि हाड़ाजाति अत्यन्त बलशाली और असीम साहसी है इससे यह विपत्ति आनेपर भली भाँतिसे सहायता करैगी, इसीसे हाड़ाजातिको असतुष्ट न किया । वरन हामाजी जहांतक वश्यता स्वीकार करनेको सम्मत हुए उसीसे महाराणाने भलीभाँतिसे तृप्त होना अपना कर्तव्य जाना ।

वीरश्रेष्ठ हामाजी सोलह वर्षतक बूँदीके सिहासन पर बैठकर स्वर्गको चले गये । हामाजीके दो पुत्र उत्पन्न हुए नरसिह और लाला । लालाको खुटकड नामवाला देश मिला, लालाके नोवर्म और जैता नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनके अगणित वशधर नोवर्मपोता और जैतावत् नामसे विख्यात हुये । हामाके बड़े पुत्र वरसिहने बूँदीके राजछत्रके नीचे पद्रह वर्षतक बैठकर राज्य किया । उनके तीन कुमार उत्पन्न हुए वैरीसाल जवद और तीसरे नीमा। जवदसे तीन शाखाओकी उत्पत्ति हुई, और नीमाके वशधर नीमावत नामसे विख्यात हुए । वीरसिहके बडे पुत्र वैरीसालने एकादि क्रमसे पचास वर्षतक राज्य करके पीछे संवत् १५२६ मे प्राण त्याग किये । उनके औरससे निम्नलिखित सात

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड साहब इस स्थान पर लिखते है कि फ्रासके एक बादशहाका इतिहास इस घटनासे बहुत मिलता जुलता है । "फ्राससे बाइसडी बलुगन" स्थान है उसे मडरिड कहते हैं । जब कि फ्रासिस १ को राजधानीको लौटनेकी आसा हुई तो उसने "मडरिड" का सर्व नाश करनेकी प्रतिज्ञाकी, परन्तु सौभाग्य वश उसका पैरिसमे आजाना ही वडे आनन्दकी वात थी, अतएव उस समय इसके मंत्रियोने उसे ऐसी ही सलाह दी थी जैसी कि राणाके मंत्रियोने राणाको दी ।

पुत्र उत्पन्न हुए। (१) राव भांडा, (२) राव सांडा, (३) अखैराज, (४) राव ऊधो, (५) राव चूडा (६) समरसिह और (७) अमरसिह। टाड् साहब लिखते है कि पहिले पांच वीरोसे पॉच वशोकी शाखाओका विस्तार हुआ। परन्तु समर और अमरसिहने हिन्दू धर्मको छोड कर यवन धर्मको अवलम्बन किया था।

राव भांड दान वीरता और चतुराईके बलसे समस्त रजवाड़ेमे अपना नाम अक्षय करगये है। उनकी समान नि.स्वार्थ दाता इस समय रजवाड़ेमे दूसरा नही था। सवत् १४४२, सन् १४८६ ई० मे जिस समय समस्त राजस्थानमें दुर्भिक्षकी अग्नि प्रबलतासे प्रज्वलित होकर अगणित जीवोका प्राण संहार करती थी, राव भांडाने उस समय मुक्तहाथसे अन्न और धन दान करके अपनी अक्षय कीर्तिको उज्ज्वल किया था। कविने लिखा है, कि उस समस्त भारतवर्षव्यापी दुर्भिक्ष होनेके एक वर्ष पहिले बूँदीराज रावभांडा स्वप्न देखकर जान गये थे, अर्थात् उन्होने स्वप्नमे महाकाल पडा हुआ देखा था। उन्होने स्वप्नमें देखा कि अत्यन्त काले वर्णके भैसे पर सवार हुआ काल आकर उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। रावभांडाने कालको स्वप्नमे देखकर उसी समय ढाल तलवार लेकर कालपर आक्रमण किया। कालने कहा, "धन्य भांडा! मै काल हूँ मेरे शरीरमे तुम्हारी तलवारका आघात नही लगेगा सृष्टि भरमे एकमात्र तुम्हींने साहसमे भरकर मुझपर आक्रमण किया है। इस समय मै जो कहता हूँ उसे श्रवण करो। मै सम्वत् १५४२ मे दर्शन दूँगा, समस्त भारतवर्ष मरुभूमि होजायगा, तुम पहिलेसे ही धन धान्यका संग्रह करना प्रारंभ करना और जब दुर्भिक्ष पडैगा उस समय उस धान्यके द्वारा सबकी सहायता करना, कभी तुम्हारा धान्य समाप्त नही होगा।" यह कहकर काल उसी समय अन्तर्ध्यान होगया। राव भांडाने कालकी इस आज्ञापालन करनेमे शीघ्रतासे यत्न किया। उन्होने आसपासके प्रत्येक राज्योसे बहुतसा धान्य संग्रह कर लिया। इस प्रकार एक वर्ष वीतगया। फिर इसी प्रकारसे दूसरा वर्ष व्यतीत हुआ, परन्तु इस वर्षमे वर्षा न हुई इससे शीघ्र ही समस्त भारतवर्षमे महा दुर्भिक्षने आकर दर्शन दिया। राव भांडा पहिला संग्रह किया हुआ धान्य जौ गेहूँ, चावल इत्यादि नाज बराबर अनाहारी प्रजाको दान करने लगे। अन्तमे भारतवर्षके दूरवर्ती देशके राजाओने राव भांडाके निकटसे धान्यकी सहायता मॉगी। राव भांडाने उनकी वह कामना पूर्ण करनेमे किंचित् विलम्ब नही किया। यद्यपि उस महा दुर्भिक्षके समयमे भारतके अगणित देशोके बहुतसे मनुष्योने प्राण त्याग किये परन्तु बूँदी राज्यके सब श्रेणीके मनुष्य राज्यकी सहायतासे दुर्भिक्षके प्रबलकोपसे अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हुए। राव भांडाके स्मरणके अर्थ आजतक "लंगरका गूघरी" नामसे बूँदीमे दीन दुःखियोको धान्य वितरण किया जाता है।

यद्यपि राव भांडा परम दयाशील और परोपकारी पुण्यवान राजा थे, परन्तु विधाताने उनके भाग्यमें अन्तसमयमे अत्यन्त दुःख भोगना लिखा था। राव भांडाके

दो भाई इनसे छोटे थे समरसिंह और अमरसिंह, यह मुसलमान धर्मका अवलम्बन करनेसे दिल्लीश्वरके प्रियपात्र होकर दिल्लीश्वरकी सहायतासे बूंदीराज्यको जय करनेमें अग्रसर हुए । राव भांडा प्रबल बलशाली होकर भी सम्राट्की शिक्षित सेनाके अधिक होनेसे कुछ न करसके। शीघ्र ही समर और अमरने बूँदीराज्यको जयकर लिया। यवन धर्मावलम्वी दोनो भ्राताओके हाथमे बूँदीके पड़ते ही अन्तमे राव भांडाने मातोदा नामक स्थानमे जाकर पर्वत शिखर परसे गिरकर प्राण त्याग दिये, उन्होने सब मिलाकर इक्कीस वर्षतक राज्य किया था । उक्त समर और अमरने यवन होकर समरकंदी और अमरकंदी नाम धारण कर एक साथ मिलकर ग्यारह वर्षतक बूँदीका राज्य किया था ।

राव भाडा दो पुत्र छोड़ गये थे, एकका नाम नारायणदास था और दूसरेका नाम नरवद था। नरवद अन्तमें मातोदा ग्रामके अधीश्वर हुए। नारायणदास उस मातोदा गाँवमे रहकर जब अवस्था पर पहुँचे तभी इनके वीर हृदयमें पिताके राज्यके उद्धार करनेकी कामना प्रबल होगई। नारायणदासने शीघ्र ही पठार देशकी समस्त हाडाजातिको इकट्ठा करके कहा, कि हम क्या तो बूँदी राज्यपर अधिकार करेंगे, और नहीं तो रणभूमिमे अपना प्राण त्याग देंगे। सभी हाड़ाजातिके प्रत्येक वीरने नारायणदासकी समान उक्त प्रतिज्ञाके करनेमे किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। थोड़े ही दिनोके पीछे नारायणदासने उक्त बूँदीपति दोनो यवन चचाओके पास कहला भेजा, " कि मै आपसे साक्षात्कर आपके चरणवंदन करनेकी अभिलापा करता हूं। " नारायणदास अशिक्षित है, और एक सामान्य देशमे रहकर इतने बड़े हुए है, इस कारण उनसे कुछ अनिष्टकी संभावना नही है, यह विचार कर दोनो चचाओने नारायणदासको बूँदीके महलमे चले आनेमे सम्मति देदी।

दोनो विधर्मी चचाओकी अनुमति पाकर नारायणदास अत्यन्त अल्प संख्यक परम विश्वासी और महावली कितने ही अस्त्रधारी अनुचरोके साथ बूँदी नगरके चौकमें आकर दिखाई दिये। वह अपने सेवकोको वहाँ ही गुप्तभावसे रखकर इकले महलकी ओरको चले। नारायणदासके दोनो चचा विपत्तिकी कुछ भी आशंका न करके अस्त्रहीन हुए एक कमरेमे बैठे थे। नारायणदासके हृदय पर प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित होरही थी। इस कारण खड्ग हाथमे लिये हुए उसकी संहारमूर्तिको देखते ही उनके दोनो चचा प्राणोके भयसे सुरगके रास्तेसे भाग जानेके लिये बड़ी शीघ्रतासे कमरेसे चल दिये। नारायणदासने दोनो विधर्मी चचाओके अभिप्रायको जानकर उसी समय क्रोधित हुए सिंहकी समान छलांग मारकर आगे बढ. खड्गके प्रहारसे अपने चचा समरको पृथ्वीपर गिरादिया। उस अवसरमे अमर दूसरे कमरेमे न जासका था कि इसी अवसरमे नारायणदासने अपने तीक्ष्णभालेसे अमरके शरीरको वेध दिया। उसी समय वीर नारायणदासने अपने खड्गके आघातसे दोनोका शिर काट कर उस रुधिरसे भीगेहुए शरीरको बूँदीमे लेजाकर देवीके मंदिरमे देवीके सन्मुख मुंडोका

उपहार दिया और जयशब्दका उच्चारण कर चौकमे स्थित अपने अनुचरोंको बुलालिया। अनुचर गण पहिले इशारेसे नारायणदासके बुलाते ही नगी तलवारे लिये हुए नगरमे आये और उन्होने वड़ी शीघ्रतासे यवनोका विध्वंस करना प्रारभ कर दिया। इस समय नगरवासी प्रत्येक हाडाजातिकी प्रजाने नारायणदासके साथ मिलकर बूंदीमे रहनेवाले प्रत्येक यवन वीरका प्राण नाश करके अवज्ञाके साथ उनके शवोको नगरकी हद्दसे दूर फेक दिया। राव नारायणदासने अतुल वीरताके साथ यवनोका सहार करके अपने पिताकी राजधानी बूंदीपर अधिकार करलिया था, इसके स्मरणार्थ हाड़ा गण राव नारायणदासने महलके भीतर जिस कमरेमे समरके मारनेके समय खड्गका आघात किया था, तथा उस हत्याके समय कमरेमे स्थित जिस पत्थर पर वह खड्गके आघातसे गिरे थे। दशहरा पर्वोत्सवके समयमे उस आघात चिह्न युक्त रुधिरसे सने हुए पत्थरकी पूजा की जाती है[१]।

कविके वर्णनसे जानाजाता है कि नारायणदास एक विराट्काय महा वलवान् वीरपुरुष थे। प्राचीन राजपूत वीरोमे वहुतसे वीर भय किसको कहते है, इसको जानते ही नही थे नारायणदासके साथ भी भयका इसी प्रकारका सम्बन्ध था। वह कहाकरते थे, कि मै बड़ा हूं, विपत्ति छोटी है। वास्तवमे नारायणदासने यौवन समयसे मृत्युतक जैसे असीम साहससे अपने बलविक्रमको प्रकाशित किया था इससे उनका वह गर्व-पूर्ण वचन सत्य बोध होता है, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह असीम साहसी वीर पुरुष होकर भी एकमात्र अधिक अफीमके सेवन करनेसे समय २ पर अपनी सद्गुणावलीको भली भॉतिसे प्रकाशित न कर सके। वरन उनके उसी व्यसनके कारण एक २ समय पर अत्यन्त अप्रीतिदायक कारण उपस्थित होजाते थे। नारायणदासके समयमे समस्त रजवाडेमे अफीम सेवनकी रीति अत्यन्त प्रबल होगई थी। सर्वसाधारण राजपूत एक पैसेके मूल्यकी अफीमको सेवन करते थे। अनभ्यासियोके पक्षमे उस बूंदी राज्यमे प्रचलित एक पैसेकी अफीमसे प्राण नाश होजाते थे परन्तु वीर तेजस्वी नारायणदास एक दफेमे सात पैसेकी अफीम खाते थे। इसी कारण अधिक अफीमके सेवन करनेसे अनेक प्रकारके अप्रार्थनीय काण्ड उपस्थित होजाते थे, इसीसे बूंदीमे आजतक नाना भॉतिके प्राचीन प्रवाद प्रचलित देखे जाते है।

नारायणदासके सम सामयिक राणा रायमल्ल जिस समय चीतौडके सिंहासन पर विराजमान थे, उस समय मांडू देशके पठानोने चीतौडपर आक्रमण कर किलेको घेर लिया, पूर्वसंधिके मतसे चीतौड़ पतिने नारायणदासको सेनासहित सहायता करनेके लिये बुला भेजा, वीर वपु नारायणदासने हाड़ा सेनादलके मध्यमेसे ५०० वीरोको चुन लिया और उन्हीके साथ आप चीतौडकी ओरको चले। बूंदीसे चलकर पहिले दिन मार्गमे विश्राम करनेके लिये नारायणदास एक वृक्षके नीचे नित्त नियमानुसार

---

(१) कर्नल टाड् साहव लिखते है कि बूंदीके प्राचीन महलमे सीटीवाले कमरेके पार्श्वमें उन्होने वह पत्थरका टुकड़ा देखा था।

अफीम सेवन कर नेत्रोको मूँद कर सोरहे थे, और मक्खियाँ आ आ कर उनके मुखमे घुसरही थीं। इसी अवसरमे एक तेलीकी स्त्री कुएँसे जल भरनेके लिये उसी वृक्षके नीचे आकर खडी हुई। उसने नारायणदासको देखकर एक सेवकसे पूछा कि "यह कौन है?" उत्तर मिला कि "यही बूँदीके महाराव है, चीतौड़पतिकी सहायताके लिये वहाँ जारहे है।" इस पर उस रमणीने नारायणदासकी उस अवस्थाको देख कर कहा कि "हा भाग्य ऐसा बोध होता है कि महाराणाको और किसीकी सहायता न मिली जो कि इस नशेखोरकी सहायता माँगी है।" रजवाड़ेमे इस प्रकारका प्रवाद प्रचलित है. कि अफीमके सेवन करनेवाले नेत्र मूँदे रहते है. पर जो कुछ बात उनके कानमे कही जाती है उसको वह बड़ी जल्दी सुन लेते है। वास्तवमे उस स्त्रीकी उक्त उक्तिको सुनते ही अधखुले नेत्रोसे मुख फैलाये हुए उस वीर श्रेष्ठ नारायणदासने शय्यासे उठकर उस स्त्रीके पास जाकर गभीरस्वरसे पूछा "कि तुम क्या कहरही हो?" तब वह नारायणदासकी भयकर मूर्तिको देखकर भयभीत हो क्षमा मांगनेके लिये उद्यत हुई, नारायणदासने कहा कि "कुछ भय नही है, क्या कह रही थी सो कहो"। अत: उस स्त्रीके हाथमे एक दीर्घ कठिन लोहेका दड था, नारायणदासने उस दंडको लेकर दोनो ओरसे पकडकर थोडे बलसे ही झुकाकर उस स्त्रीके गलेमे अलंकारकी समान पहरा दिया, वह अत्यन्त कठिन लोहेका दंड दोनो ओरसे परस्परमे मिलकर स्त्रीके गलेमे हारकी समान पड गया, वीरश्रेष्ठने उसी समय स्त्रीसे कहा कि "मै जब तक राणाकी सहायता करके न लौट आऊं तबतक तुम उस लोहेके अलंकारको पहिरे रहना। यदि यवनोमे ऐसा कोई वीरहो जो कि तुम्हारे गलेमेसे इसे निकाल सकै तो उससे इसको निकलवा लेना।" वास्तवमे तेलीकी स्त्रीके उस लोहके अलंकारको निकालनेका योग्य पात्र एक नारायणदासके अतिरिक्त दूसरा कोई नही था।

जो हो, पठानगणोने इस समय सेनासहित चीतौड़को चारोओरसे इस प्रकारसे घेर लिया था कि चीतौडसे एक प्राणीको भी बाहर होनेकी आशा नही थी। बूँदीके रावनारायणदासने पठारके गिरिसकटमे होकर पाँचसौ वीर सेनाले रात्रिके समय हठात् पठानोके डेरोमे जाकर शत्रुओका संहार करते २ पठानोके सेनापतिके डेरोमे प्रवेश किया। उनकी उस विराट्मूर्ति और हाड़ासेनादलका वह भयंकर हुकार और संहार-मूर्ति देखकर पठानोकी सेना महाभयभीत हो डेरोको छोडकर चारोओरको भागने लगी। वीर नारायणदास और उनके अधीनके हाड़ादलने उस समय मनकी साधसे पठानोका संहार करनेमे कसर न की। पाठानोने चीतौडके घिरते ही भागना प्रारभ कर दिया, बूँदीके राजमे नगारे बजने लगे, चीतौड़के राजा रायमल्लने दूसरे दिन प्रातःकाल ही चीतौड़के किलेकी दीवार परसे देखा कि समस्त पठान भाग रहे है, और राव नारायण दास सेना सहित आ पहुँचे है। महाराणा रायमलने महा आनंदित होकर उसी समय चीतौड़से बाहर जा नारायणदासको बड़े आदरभावके साथ ग्रहण कर जयजयकार करते हुए चीतौड़मे प्रवेश किया। बूँदीके अधीश्वर नारायणदासके केवल पाँचसौ हाड़ा

सैन्यकी सहायतासे पठानोंको भगानेसे राणाके अधीनके सिसोदिया वीरसामन्त प्रगट रूपसे उनकी वीरताकी ऊँची प्रशंसा करने लगे । शीघ्र ही महलमे नारायण दासके सम्मानके लिये एक बड़ी भारी सभा हुई । उस सभामे मेवाड़के सभी सामन्तोने बूँदीके महारावके प्रति सम्मान दिखाया, जिन महावीरकी सहायतासे चीतौड़की रक्षा हुई उन वीरको देखनेके लिये राणाके रनिवासकी स्त्रिया परदेके भीतरसे उनकी उस विराट्मूर्तिको देखने लगी । यद्यपि नारायणदास अफीमको अत्यन्त सेवन करते थे, और अफीम सेवन करनेमे अधिक प्रसिद्ध होगये थे, यद्यपि उनकी मूर्ति यथार्थ भीमकी समान थी, परन्तु राणाके भाईकी कन्याने उन महावीरको पतिरूपसे वरण करनेके लिये सखियोके सामने अपनी अभिलाषाको प्रकाशित किया। दूसरे दिन यह समाचार राणाके कानमे भी पहुँचा । वीरश्रेष्ठ नारायणदासके द्वारा जिस प्रकारके उपकार हुए है, उनकी कृतज्ञता प्रकाश करनेके लिये अपनी भतीजीको उनके करकमलमे अर्पण कर उनका सम्मान बढ़ाना अवश्य कर्त्तव्य है, राणाने यह सिद्धान्त करलिया । इधर बूँदीके महाराज नारायणदासने भी महाराणाके वंशसे कन्या लेनेमे अधिक सम्मान जानकर शीघ्र ही उस विवाहमे अपनी सम्मति दी, बड़ी धूमधामके साथ विवाह होगया । नवीन विवाहिता बहूके साथ वीरश्रेष्ठ नारायणदास गौरवके साथ बूँदीको लौट आये । ऐसा भी प्रसिद्ध है कि वीरश्रेष्ठ नारायण दास दिनपर दिन अधिक अफीम सेवन करते थे, और इसी कारणसे नशेकी तरंगमे एक समय उन्होने रात्रिको मेवाड़की राजकुमारीके अगको क्षत विक्षत करके उसके अनुपम सौन्दर्यको नष्ट करादिया था । जब दूसरे दिन प्रातःकाल उन्हे चैतन्यता हुई तो देखा कि मेवाड़की राजकुमारी कुछ भी दुःखित नही हुई है, और उसने मेरा कुछ भी तिरस्कार नही किया है, तब उन्होने स्वय अपनेको धिक्कार दिया, और जिस पात्रमे अफीम थी उस पात्रको स्त्रीके हाथमे देकर कहा कि अब मै कभी इस प्रकारसे अधिक अफीम सेवन करके ऐसा कुकर्म नही करूँगा । इस प्रकारसे वीर तेजस्वी नारायणदासने अपने पिताके राज्यको अधिक बढा लिया था, और शांति स्थापन कर बत्तीस वर्षतक उस राज्यको शासन करके आप स्वर्गको चले गये।

नारायणदासके स्वर्ग चलजाने पर उनके एकमात्र पुत्र सूर्य्यमल संवत् १५९० सन् १५३० ईसवीमे बूँदीके सिहासन पर विराजमान हुए, कवि कर्णीदानने इस बातको भलीभाँतिसे लिखा है कि सूर्यमल भी अपने पिताकी समान दृढ़ बलिष्ठ और असीमसाहसी पुरुष थे, कवि लिखते है कि रामचन्द्र और पृथ्वीराजकी जिस भाँति जानुतक लम्बी भुजा थी सूर्यमलकी भी दोनो भुजाएं उसी प्रकारसे महावीरोकी समान जानुतक लम्बी थी ।

सूर्यमल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए, मेवाड़के राणाके वशके साथ फिर एक वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ। राव सूर्यमलने सूजाबाई नामकी अपनी एक भगिनीको चीतौड़के महाराज राणा रत्नसिहके करकमलमे अर्पण किया, और राणा

---

(१) इस प्रकार लंबी भुजाओवाले पुरुषको आजानुबाहु कहते हैं ।

रत्नसिंह भी अपनी वहिनको राव सूर्यमलके करकमलमें अर्पण कियां । इस दोनो ओरके विवाह होनेसे मेवाडके महाराजके साथ बूँदीराजकी दृढ़ आत्मीयता स्थापित होगई । परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि यह आत्मीयता अन्तमें महा शत्रुतामें परिणत हुई । कवि लिखते है कि राव सूर्य्यमल अपने पिता नारायणदासकी समान अत्यन्त अफीमची थे। एक समय राव सूर्यमल चीतौडकी राजधानीमें जाकर राजसभामें अधिक अफीम सेवन करनेसे नेत्रोंको मूँदे हुए बैठे थे। कि इसी समयमें मेवाड़के पूर्वदेशके एक सामन्तने सूर्यमलको सोया हुआ जान कर हँसीसे इनके कानमें एक तिनका कर दिया। तुरन्त ही सूर्य्यमलने अपने दोनो नेत्र खोले और क्रोधित हुऐ सिंहकी समान उठकर अपनी तलवारके एक ही आघातसे उस सामन्तके शिरके दो खंड कर दिये । उस मृतक सामन्तके पुत्रके हृदयमें वदला लेनेकी अग्नि प्रवलतासे भड़क उठी । परन्तु सूर्यमलके अत्यन्त बलशाली वीर और महाराणाका परम आत्मीय जानकर उस समय उसने किसी भांति भी वदला लेनेका साहस न किया,परन्तु उसी समयमें उसके मनही मनसे प्रतिहिंसाकी अग्नि प्रवल होने लगी। मृतकसामन्तके पुत्रने सवसे पहिले सूर्यमलके प्रति महाराणा रत्नसिंहके विजातीय कोपको उत्तेजित करनेके लिये चेष्टाकी।उसने राणा रत्नसिंहसे कहा कि"सूर्यमल केवल अपनी भगिनी सूजावाईके साथ साक्षात् करनेकी इच्छासे आपके रनिवासमें नही गये है, उनके हृदयके भीतर अवश्य ही अन्य कोई दुरभिसंधि है।" पिछली एक घटनासे राणाके हृदयमें वह कथा प्रवलरूपसे अंकित होगई ।

सुन्दरी सूजाबाईने अपने स्वामी और भ्राताको परितोषरूपसे भोजन करानेके लिये स्वयं अनेक भांतिके व्यंजन वनाकर दोनोको भोजन करनेके लिये रनिवासमें बुला भेजा। राणा रत्नसिंह, और सूर्य्यमल रनिवासमें भोजन करनेके लिये गये, सूजावाई दोनोंको भोजन परोसकर स्वयं व्यंजन करनेके लिये बैठी।राजपूतानेमें नारी कुलमें सभीने जिस वंशमें जन्म लिया है वह पतिके वंशकी अपेक्षा उस पिताके वंशके गौरव और सम्मानकी रक्षा करना मुख्य जानती है। पिताके कुलकी यदि कोई निन्दा करने लगे, तो वह उसको कदापि सहन नही करसकती। इसीसे पहिलेसे ही राजवाड़ोंमें अनेक अनिष्ठ होते आये है। जव राणा और राव दोनो भोजन करचुके तव सूजाबाईने व्यंग वचनसे कहा, कि "हमारे भ्राताने सिंहके समान भोजन किया है, परन्तु मेरे स्वामीने तो मानों वालककी समान अन्न और व्यंजन लेकर खेल किया है"। जैसे ही राणाने यह वचन सुने कि वैसे ही वह अपने मनमें अत्यन्त क्रोधित हुए। उन्होंने समझा कि मानो उनके

---

(१) यह बात असंगत मालूम होती है। पहिले तो जब कि राणारायमलकी भतीजी नारायणदासको व्याही गई थी तब नारायणदासकी पुत्री सूजाबाईका व्याह राणा रत्नसीके साथ होना अनुचित है फिर हिन्दूशास्त्रका राजपूतरीतिके अनुसार यह तो और भी अयोग्य सबध है कि राणा रत्नसी भी अपनी बहिन सूर्य्यमलको व्याह दें। इसमें कवियोंकी कुछ गढत अवश्य है और विदेशी होनेके कारण टाड् साहब इस बातको समझ नहीं सके।

अपमानके लिये ही रानी सूजावाई और राव सूर्यमलने इस प्रकारसे व्यंग किया है। यह अनुभवकर वह प्रतिहिंसाका वदला लेनेके लिय उत्तेजित हुए। परन्तु राजपूतजातिके पक्षमें अतिथिके प्रति अभद्र आचरण वा उसका जीवन नाश करना महाकलंककारी जानकर राणाने उस समय उनसे वदला नही लिया। कुछही दिनके पीछे इस रहस्यसे ही सूजावाई अकालमे इस लोकको छोडकर परलोकवासिनी हुई, और राव सूर्यमल भी मारे गये। और इसी काण्डकी प्रतिक्रियास्वरूपमे राणा रत्नसिहने स्वयं भी प्राण त्याग किये।

राव सूर्यमल चीतौडसे विदा होकर बूँदीको जानेके लिये तैयार हुए तव राणा रत्नसिहने सूर्यमलसे कहा कि "आगामी वसन्तऋतुमे फाल्गुनोत्सवके समयमे हम बूँदीके वनमे शिकार खेलनेके लिये आवैगे।" राव सूर्यमलने यह सुनकर आनद प्रकाश कर राणाको निमंत्रण भेजा। कुछ दिनके पीछे फाल्गुनोत्सवके आनेपर राणा रत्नसिह अपनी सेना और सामन्तोके साथ पठारके मार्गसे बूँदीकी ओरको चले। चम्बल नदीके पश्चिम किनारे नान्दता नामक स्थानके गहनवनमे मृगयाकी जायगी पहिले यह निश्चय होगया था। उस वनमे अगणित पशु थे सिहसे लेकर सामान्य खरगोश तक रहते थे। राणाके वहाँ पहुँचते ही बूँदीके अधीश्वर राव सूर्यमल भी सेनासहित उनसे आमिले। तुरन्त ही दोनो महाराज सेनासहित मृगया करनेके लिये वाहर चले। सवसे पहिले सेनादल दो भागोमे विभक्त होकर आगे २ भयंकर नादसे चीत्कार करते हुए जगलमे जाने लगे। उनके उस भयंकर स्वरसे तथा ताडनासे सिह व्याघ्र, भालू अनेक जातिके मृग, नीलगाय, शृगाल, खरगोश, और छोटे २ वनके कुत्ते शीघ्र ही व्याकुल होकर चारों ओरको भागने लगे।राजपूतवीर उस भयंकर हिंस्रकजन्तुओं से युक्त गहन वनमे जाकर महा आनंदित हुए।

उसी सघन वनमे कापुरुष राणा रत्नसिहने अपनी पहिली प्रतिहिंसाको सफल करनेकी चेष्टा की। दोनोके अधीनकी सेना दो भागोमे विभक्त होकर वनके दोनो ओरसे पशुओंको भगाने लगी। और दोनो राजा वनके अन्य प्रान्तमे इस प्रकारके स्थानमे घोड़े पर खडेहुए कि भागेहुए सभी पशु उनके सम्मुखसे निकलै। उस समय दोनो राजाओके साथ केवल दो दो चार २ सेवक थे, पाठकगणोको स्मरण होगा कि बूँदीके रावके कानमे तिनका देनेसे उन्होने मेवाडके पूर्वदेशके एक सामन्तकी हत्या की थी और उससामन्त पुत्रने वदला लेनेके लिये मनही मनमे दृढ की प्रतिज्ञा थी। इस घटनास्थलमे राणा रत्नसिहके साथ वह सामन्त पुत्र भी उपस्थित था। राणा रत्नसिह उस सामन्तपुत्रको वुलाकर वोले कि "समय आगया है वराहका शिकार करिये"। कुछही समयके पीछे उस सामन्त पुत्रने धनुष खैचकर तीव्र वेगसे राव सूर्यमलकी ओरको एक वाण छोडा, परन्तु तीक्ष्ण दृष्टि राव सूर्यमलने उसकी ओरसे वाण आता हुआ देखकर उस वाणको अपने धनुपसे वाण छोड़कर व्यर्थ करदिया। उन्होने उस समय भी यह नहीं विचारा कि वदला लेनेके लिये राणा और उक्त सामन्त पुत्रने

षड्यंत्र करके इस वाणको छोड़ा है। परन्तु प्रथम वाणको व्यर्थ हुआ देखकर राणाके धाभाई (धात्री) पुत्रने सूर्यमलकी ओर दूसरा वाण छोड़ा,तव तो सूर्यमल चैतन्य होगये, और उन्होने समझा कि हमारा प्राण नाश करनेके लिये इस षड्यंत्र जालका विस्तार हुआ है। राव सूर्यमलके उस दूसरे वाणको व्यर्थ न करते २ कापुरुष राणा रत्नसिंहने घोडेको शीघ्रतासे आगे बढ़ा वदीके अधीश्वर राव सूर्यमलको खांड़ेके आघातसे पृथ्वीपर गिरा दिया। भलीभाँतिसे घायल होकर राव सूर्यमलने पृथ्वीपरसे उठ अपने घावो पर पट्टी बाँधी, वदला भलीभाँतिसे लेलिया है यह विचार कर राणा उसी समय उस स्थानको छोड़नेके लिये उद्यत हुए, राव सूर्यमल उसी अवस्थामे सिंहकी समान शब्दसे बोले "भागते क्यो हो! निश्चय जानलो कि अव मेवाडका पतन बहुत पास आगया है।" राणाने इनकी वातपर कुछ भी ध्यान न देकर शीघ्रतासे घोड़ा चला दिया, पूर्वोक्त सामन्तपुत्रने उनके पीछे २ जाकर कहा "अभी कार्य सम्पूर्णतासे शेष नही हुआ है, राव सूर्यमल अभी जीवित है। तुरन्त ही कायर पुरुषोकी समान राणा रत्नसिंहने घोड़ेपरसे गिरेहुए सूर्यमलकी ओरको अपना घोड़ा चलाया। राणाने सम्मुख आकर जैसे ही फिर सूर्यमलके प्राण नाश करनेके लिये दूसरी वार खड्ग उठाया कि वैसे ही क्रोधित हुए सिंहकी समान घायल सूर्य्यमलने अन्तिम वलके साथ उठकर राणाके पिछले भागको पकड़ कर वडी शीघ्रतासे उनको घोड़े परसे पृथ्वीपर गिरा दिया, वहुत देरतक दोनो वीरोकी कुस्ती होती रही फिर कुछही समयके पीछे राणाके वक्षस्थल पर वैठकर वीर तेजस्वी सूर्यमलने एक हाथसे तो राणाका गला पकड़ा और दूसरे हाथसे अपनी कमरमेसे तलवार निकाली, देखो, कैसा वदला लिया कि कुछही समयके वीचमे घायलहुए राव सूर्यमलने हत्याकी अभिलाषा करनेवाले राणा रत्नसिंहके हृदयमे अपनी उस तीक्ष्ण धारवाली तलवारको घूँस दिया। राणाका प्राणपक्षी तुरन्त ही उड़गया। यद्यपि वीर सूर्यमलकी प्रतिहिंसा सफल होगई थी, परन्तु उन्होने उसी समय शत्रुके मृतक शरीरके ऊपर गिरकर प्राण त्याग कर दिये।

कवि लिखते है कि "शीघ्र ही यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद बूंदी नगरके रनिवासमे जा पहुचा। वीरश्रेष्ठ राव सूर्य्यमलकी माता पुत्रके मृतक होनेका समाचार सुनकर वीरांगनाओकी समान बोली, "क्या सूर्य हतहोगया है? क्या वह इकला ही मृतक हुआ है, अवश्य ही किसी शत्रुके प्राण लेकर वह इस संसारसे विदा हुआ होगा।" रानीजिस समय वीरमाताकी समान यह वचन कहने लगी थी, इस समय असीम मातृस्नेह उद्वेलित होगया, और उसके दोनो स्तनोसे दूध निकल कर प्रवलवेगसे पृथ्वीको प्लावित करने लगा"।

रानी केवल पुत्रके मारे जानेका समाचार सुनकर अधीर होगई थी और पुत्र शत्रुका संहार न करसका यह विचारकर स्वामीवंशको कलंकित होता हुआ देखकर अपने मनमे अत्यन्त दुखित हुई थी, परन्तु उसी समयमे एक मनुष्यने रनिवासमें जाकर वृद्धारानीसे कह दिया कि राव सूर्यमलने अपने शत्रु राणा रत्नसिंहके प्राण

किलेके एक बुर्जकी रक्षामे नियुक्त होनेके समय शत्रुओकी गोलीसे भस्मीभूत होगई थी, मेवाडके इतिहासमे उसका वर्णन होचुका है। यह राव अर्जुनही वह असीम साहसी हाडाराज थे। यह राव अर्जुनही जिस समय प्रबल पराक्रमके साथ चीतौडके एक बुर्जकी रक्षामे नियुक्त थे, उस समय बहादुरशाहने बुर्जके नीचेके भागमे सुरग लगवाई, और उसके भीतर बारूद भरकर आग लगादी। राव अर्जुनने सम्मुख विपत्तिको आया हुआ देखकर कही न जाकर नंगी तलवार हाथमे ले वही प्राण त्याग दिये। हाडा कविने वीरश्रेष्ठ अर्जुनकी वीरताकी अत्यन्त ही प्रशंसा की है। मेवाड़के कवियोने भी उस वीरकी कीर्तिको कीर्तन करनेमे त्रुटि नही की है। कवि लिखते है,–

सोर(१) कियो बहुजोर। धर परवत आडी सिला ॥
तै काटी तलवार। अधिपतिया हाडा अर्जा(२) ॥

इसका अर्थ यह है कि अर्जुनने उस सुरगसे निकलीहुई अनलराशिमे एक पत्थर को रख उस पर बैठकर तलवार निकाली, समस्त जगत्‌मे उनका वह स्वर्गारोहण, अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा।

अर्जुनके चार पुत्र उत्पन्न हुए, इनमे सबसे बडे सुरजन सवत् १५९८, सन् १५५५ ई० मे पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए।

तीसरा अध्याय ३.

राव सुरजनको रणथंभौरके किलेकी प्राप्ति–बादशाह अकबरका उक्त किलेको घेरना–विचित्र उपायसे अकबरका उक्त किलेमे प्रवेश–राव सुरजनका बादशाहको उस किलेका देना–राव सुरजनका अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार करना–संधिबधन–अकबरका सुरजनको राव राजाकी उपाधि देना–गोंडवानाको जय करनेके लिये सुरजनका जाना–जयप्राप्ति–बादशाहका सम्मान प्रदान–राव भोजका अभिषेक–अकबरका गुजरातको जय करना–हाडाराज भोजका सूरत और अहमदनगरको जीतनेके समय महावीरता प्रकाश करना–भोजका अपमान–राव रतन–सम्राट् जहाँगीरके

(१) सोर शब्दका अर्थ "बारूद" है।
(२) कविने छन्दके सुभीतेके लिये अर्जुन * शब्दको अर्ज कह कर लिखा है।

* अर्जुनके दूसरे पुत्रका नाम रामसिंह था, इनके वंशधर राम हाड़ानामसे विख्यात थे। चौथे पुत्रका नाम अखैराज था, इनके वंशके अखैराज पोता नामसे विख्यात है छोटे कुमारका नाम कांदल था उनके वंशज जसाहाड़ा नामकी सम्प्रदायसे विख्यात है।

विरुद्धमे विद्रोह—राव रतनका विद्रोहियोको पराजित करना—हाड़ावतीका विभागकरण—माधवसिंहको कोटेराज्यकी प्राप्ति—राव रतनका प्राणनाश—उनके उत्तराधिकारी गोपीनाथकी हत्याका वृत्तान्त—राव छत्रशालका अभिषेक—छत्रशालको आगरेके शासनकर्त्ताकी पदप्राप्ति—दक्षिणमे गमन—दौलताबादके किले पर अधिकार—गुलवरगा—धामूनी—शाहजहांके पुत्रोंमें युद्ध—हाड़ाराजका विश्वासपालन—उज्जयनी और धौलपुरका युद्ध—छत्रशालकी विषम वीरताका प्रकाश करना—छत्रशालकी मृत्यु—राव भावसिंहका अभिषेक—बूंदीपर आक्रमण—बादशाहकी सेनाकी पराजय—राव भावसिंहका फिर बादशाहकी कृपापाना—उनका औरंगाबादके शासनकर्ता पदपर नियोग—उनकी मृत्यु—राव बुधसिंहका जाजौ नामक स्थानमे समर—कोटाराजकी मृत्यु—राव बुधसिंहका वीरता प्रकाश करना—बहादुरशाहके पक्षमे जयप्राप्ति—बूंदीराजकी राजभक्ति—भागजाना—आमेरराजके साथ विवाद—विवादका कारण—आमेरराजकी ऊंची आशा—आमेरराजका षड्यंत्र—समर—रावबुधसिंहका भागना—कोटेराजका बूँदीके बहुतसे देशोको अपने अधिकारमें करना—बुधसिंहकी मृत्यु—उनके दो पुत्र।

राव सुरजनसिंहके अभिषेकके समयसे बूँदीकी राजनैतिक अवस्था बदल गई। बूँदीके महाराज इतने दिनोतक अपने राज्यमे सब प्रकारसे स्वाधीनताको भोगते आये थे; कोई भी किसी राजाके अधीनकी जंजीरमे नहीं बँधा, केवल स्वजातीय और आत्मीय जानकर उन्होने मेवाड़के महाराणाके प्रति सम्मान दिखाया था, और महाराणाके विपत्तिमें पड़ने पर वे सेनासहित उनकी सहायता करते थे। परन्तु राव सुरजन पिताके सिंहासन पर विराजमान होकर अपने पूर्वपुरुषोकी समान केवल बूँदीराज्यमे ही नही, एक मात्र रजवाड़ेमे ही नही, वरन समस्त भारतसाम्राज्यमे राजनैतिक अभिनय करनेके लिये सबसे पहिले अग्रसर हुए। उनके समयसे बूंदीके राजवंशने यवनशासनके समयमे भारतसाम्राज्यके राजनैतिक क्षेत्रमे ऊंची प्रशंसाके साथ अपने वंशके गौरवकी गरिमा को और बूदीके सामर्थ्यकी प्रतिपत्तिको धीरे २ बढ़ालिया था।

बूँदीके राजवंशकी कनिष्ट शाखामे उत्पन्न सामन्तसिंह नामक एक सामन्त इस समय बूंदीराज्यका विशेष विख्यात मनुष्य था। सेरशाहका शासन लुप्त होनेके पीछे उक्त सामन्तने वेदलाके चौहान सामन्तके साथ मिलकर रणथंभोर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध किलेके अफगान शासनकर्ताओके किलेको छोड़ देनेके लिये पत्र लिखा। अफगान शासनकर्ताने विशेष चिन्ता करनेके पीछे शीघ्र ही उस किलेको सामन्तसिंहके हाथमे अर्पण करदिया। सामन्तसिंहने राव सुरजनसिंहको वह किला देदिया। बूदीराजके अधीनमे ऐसा अभेद्य और प्राचीन प्रसिद्ध किला उनके अधीनके भूखडमे दूसरा नही था। उस कारण राव सुरजनसिंहने उस देश और किलेको पाकर सामन्तसिंहसे विशेष सतुष्ट हो उनको नगरके निकट भूवृत्तिदान की। सामन्तसिंह एक महाबलशाली वीर थे उनके वंशधर उनके नामसे सामन्त हाड़ा नाम प्रसिद्ध है।

वेदलाके जिन चौहान सामन्तोने उक्त किलेको लेनेके समयमे विशेष सहायता की थी, उन्होने राव सुरजनके समीप यह प्रस्ताव किया कि राव सुरजनको मेवाडके अधीन रूपसे उक्त किलेकी रक्षा करनी होगी। राव सुरजनने इसमे सम्मत होकर रणथंभोरके किलेपर अधिकार करलिया। यह रणथंभोरका किला और उसके

अधीनके देशके बहुतसे पुरुष अजमेर राज्यके अधीनमे थे, चौदहवी शताब्दीमे बीसलदेव के वंशमे उत्पन्न महावीर हमीरके शासन समयमे यह किला उनके पाससे प्रबल युद्धके पीछे छीन लिया गया था। इस समय वही किला उक्त प्रकारसे उस चौहानजातिके हस्तगत होगया।

मुगल कुलतिलक अकबरने भारतके सिहासन पर विराजमान होकर इस प्राचीन किले तथा रणथंभोरपर अधिकार करनेके लिये विशेष अभिलाषा कर स्वय सेना सहित उस किलेको जाघेरा। वीर तेजस्वी सुरजनने अपने असीम बलविक्रमको प्रकाश करके यवन बादशाहकी अगणित सेनाके आक्रमणसे उस किलेकी रक्षा की थी। बादशाह अकबर कुछ कालतक सेनासहित उक्त अभेद्य किलेकी दीवारोको विध्वंस करते रहे, अंतमे जब देखा कि इसमे प्रवेश करनेका कोई उपाय नही है और राव सुरजनने भी आत्म समर्पण करनेके कुछ चिह्न न दिखाये, तब यह हतउद्योग होगये। और कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत किये; तब आमेरके महाराजा भगवान् दासने तथा उनके पुत्र मानसिहने इस समय दिल्लीके बादशाह अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार की, और इसी समय भगवान्दासने अकबरको अपनी एक कन्या देकर राजपूतजातिके पवित्र रुधिरको कलंकित करदिया।

बादशाह अकबर किसी प्रकार भी रणथंभोरपर अधिकार न करसके। मानसिह अन्य उपायसे राव सुरजनको चीतौडपतिकी अनुगत्यता छुटा कर उक्त किलेको बादशाहको अर्पण करनेके लिये तैयार हुए। यदि प्रबल शत्रु भी आतिथ्यकी प्रार्थना करता तो राजपूत जाति प्राणतक देकर उसके अतिथिसत्कारमे तथा आश्रय देनेमे किसी प्रकार की कसर न करती। मानसिहने राव सुरजनसे आतिथ्यकी प्रार्थना की, बूँदीके महाराजने उनको स्वजातीय राजपूत और राजवंशधर जानकर बिना कुछ कहे सुने रणथंभोरके किलेमे बुलालियां। बादशाह अकबरने कपटभेष धारण कर साधारण अनुचरोकी समान सोटा हाथमे लिये मानसिहके साथ बिना बाधाके उस किलेमे प्रवेश किया। मानसिह किलेमे जाकर जिस समय राव सुर्जनके साथ बातचीत कररहे थे, उस समय राव सुर्जनके चाचाने कपटभेषधारी अकबरको पहिचान लिया और तुरन्त ही उनके हाथसे सोटा छीन कर उनको एक ऊंचे सिहासन पर बैठाया। धीरचेता अकबरने उसी समय सुरजनको बुलाकर कहा, "राव सुरजन! इस समय क्या करना उचित है?" राजा मानसिहने राव सुरजनसे कहा कि "आप चीतौडपति राणाकी अधीनता छोड़कर रणथंभोरके किलेको बादशाहके करकमलमे अर्पण कीजिये। आपको बादशाहकी

---

(१) प्रसिद्ध चंदकविके एक वंशधरने उक्त हमीरकी वीरता प्रकाशक एक महाकाव्य लिखा है, वह काव्य हमीररासा नामसे विदित है।

(२) हाडा जातिके कविने इस स्थानपर मानसिंहको कलियुगकी प्रतिकृतिरूपसे वर्णन किया है, वह लिखते है कि मानसिंहने यवन सम्राट्की अनुगत्यता स्वीकार की थी, और उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन होनेसे राजपूतोके पवित्र चरित्र और सामाजिक आचार व्यवहार बदल गये थे।

वश्यता स्वीकार करते ही महा ऊँचा सम्मान प्राप्त होगा। आपको ५२ देशोके शासन कर्त्ताका पद दिया जायगा, आप उन सवदेशोकी समस्त आमदनीको उपभोग करेंगे, वादशाह उस आमदनी और खर्चका कोई हिसाव आपसे नहीं लेगे, परन्तु नियमित रूपसे आपको समस्त सेनाके साथ वादशाहकी आज्ञापालन करनी होगी। इसके अतिरिक्त आप और जो कुछ न्यायसंगत प्रार्थना करेंगे, वादशाह उसको पूर्ण करनेके लिये तैयार है" वास्तवमे राजा मानसिहने वादशाहकी ओरसे जो अनेक प्रकारके लोभ दिखाये उनको अवश्य ही ऊचा कहना होगा। शीघ्र ही उस स्थानपर संधिपत्र लिखना प्रारभ हुआ। वादशाह अकवरने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। उस संधिपत्रका सारामर्म नीचे लिखा गया है, पाठक इसको पढ़कर भली भातिसे जान जांयगे कि राव सुर्जनने किस प्रकारके उपायसे जातीय स्वाधीनता और अपने स्वत्वकी रक्षा की थी।

सधिपत्रकी पहिली धारा—कि वूंदीके राजा किसी समय भी दिल्लीके साम्राट् वंशको कन्या नही देगे।

दूसरी धारा—जिजियाकर नहीं दिया जायगा।

तीसरी धारा—वूंदीके महाराजको वादशाह कभी भी अटकके वाहर युद्ध करनेके लिये न भेज सकैंगे।

चौथी धारा—नौरोजा पर्वके उपलक्षमे दिल्लीके वादशाहके महलमे जो मीना वाजार नामकी सामिति है, और उस समितिमे जो राजपूत राजा तथा सामन्तोकी अतःपुरवासिनी स्त्रियोको भेजनेकी विधि है, वूदीके अधीश्वर, और उनके अधीनके सामन्तोकी अतःपुरवासिनी स्त्रियोको उस मीनावाजारमे नहीं वुलाया जायगा।

पाचवी धारा—वून्दीके महाराज दीवान आथसे हाथियारोसे सजे हुए जासकेंगे।

छटवी धारा—उनके पवित्र देवस्थोपर कोई व्यावात न किया जायगा।

सातवी धारा—वूदीके अधीश्वर और उनके अधीनके सामन्त किसी समय सेनाके साथ किसी हिन्दूराजाके अधीनमे नियुक्त नही होसकैगे।

आठवी धारा—सम्राट्के अधीनस्थ राजाओकी अश्वारोही सेनादलके अश्वोपर जो वादशाहका चिह्न अंकित किया जाता है वूदीके अश्वारोहियोके अश्वोपर उस प्रकारका चिह्न नहीं दिया जायगा।

नौवी धारा—जव वूंदीके महाराज दिल्लीमे जॉयगे तो दिल्लीके राजमार्गसे तथा महलके लाल दरवाजे तक नगाड़े वजनेके साथ २ जासकैगे।

दशवी धारा—वूंदीके महाराज जिस समय वादशाहके सम्मुख जॉयगे उस समय वह घुटने झुकाकर सम्मान नहीं दिखावैगे।

उपरोक्त सधिपत्रके तैयार होजाने पर वादशाह अकवरने राव सुरजनको पुरस्कारस्वरूपमे हिन्दुओके पवित्र तीर्थक्षेत्र काशीधाममें एक महल वनानेकी आज्ञा

---

(१) कर्नल टाड् साहवने वूंदीके रावराजाके द्वारा लिखेहुए जिस इतिहासको पाया था। उन्होंने उसीका अविकल अनुवाद इस स्थानपर किया है, पिछले समस्त अंश रावराजाके द्वारा लिखे हुए है।

दी। हिन्दूराजाओंके पक्षमे तीर्थक्षेत्रमे रहनेके लिये अज्ञानकी प्राप्ति कोई सामान्य नहीं थी। राव सुरजनके पितृपुरुष अवतक मेवाडपति राणाकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे, राव सुरजनने इतने दिनोके पीछे उस अनुगत्यताकी जजीरको खोल कर यवन बादशाहकी अधीनता स्वीकार की। वास्तवमे इस समय प्रबल प्रताप-शाली अकवरके प्रचड शासनसे मेवाडपति वीरोमे शिरोमणि महाराणा प्रतापसिह, राज्यसे रहित होकर वनमे निवास करते थे। इस कारण राव सुरजनने उनकी उस दुर्गतिको देखकर मुगलबादशाहकी सहायतासे अपने भाग्यके सूर्यको उदयकर भविष्यके वशधरोके गौरवकी गरिमाका मार्ग साफ करदिया, बूँदीके अधीश्वरगण यहाँतक केवल " राव " की उपाधि धारण करते आये थे। किन्तु इस समय बादशाह अकबरने सुरजनको " रावराजा " की उपाधिसे विभूषित किया। राव राजा सुरजन इसी समयसे राजनैतिक क्षेत्रमे प्रशंसनीय अभिनय करनेके लिये प्रवृत्त हुए।

सम्राट् अकबरने सबसे पहिले रावराजा सुरजनको सेनासहित सेनापति पदपर वरणकर गौड़पतिको दमन करके उनके वासस्थान गोंडवाना देशको जय करनेके लिये भेजा। वीरश्रेष्ठ सुरजनने बलशाली हाड़ादलके साथ प्रबल युद्धके पीछे गोंड़वाना पर आक्रमण कर गोंडोकी राजधानी बाड़ीपर अधिकार करलिया। उस गोंडवानाके जयके चिह्न स्वरूपमें राव सुरजने उक्त राजधानीमे अपने नामसे " सुरजनपोल " नामका एक बडा दरवाजा बनवा दिया। वह आज भी उसी नामसे पुकारा जाता है। गोंडवानाकी जयके पीछे राव सुरजन गोंडोके प्रधान २ नेताओको बदी करके सम्राट् अकबरके सामने लेगये। परन्तु उन्होने दयालुचित्तसे उनको मुक्तिदान तथा राज्यके कितने ही अंश प्रदान करनेके लिये बादशाहसे अनुरोध किया, शीघ्र ही उनकी प्रार्थना पूर्ण की गई। राव सुरजनने उक्त पहिले युद्धमे प्रशंसनीयरूपसे जय प्राप्त की इससे बादशाह अकबरने उनसे अत्यन्त सतुष्ट होकर उनको पवित्र तीर्थ वाराणसी और चुनार यह दो स्थान तथा और भी पॉच देशोका अधिकार दिया। सवत् १६३२, सन् १५७६ ई० म अर्थात् जिस वर्षमे मेवाडके राणा प्रतापने शाहजादा सलीमके[1] विरुद्ध हलदीघाटीपर चिर स्मरणीय महा युद्ध उपस्थित किया था, उसी वर्षमे राव सुरजनको यह पुरस्कार मिला।

रावराजा सुरजनने नव प्राप्त वाराणसीधाममे रहकर इस प्रकारके नियमसे शासनकार्य चलाया कि क्या प्रशंसा करै, ऐसी दया, ऐसे विचार और उदारताके साथ शासनकार्यकी रीति नियत की कि उससे समस्त हिन्दूजातिका महा उपकार हुआ। एक ओर तो हिन्दूधर्मके प्रति अत्याचार लोप होगये और दूसरी ओर हिन्दू निश्चिन्त भावसे रहने लगे। पहिले इस देशमे चोर और डॉकुओका भयानकरूपसे प्रादुर्भाव था,

---

(१) शाहजादा सलीम इस लड़ाईमे नहीं था। उस समय उसकी अवस्था केवल छ वर्षकी थी।

धन प्राण लेकर सभी शंकितभावसे रहते थे, परन्तु राव सुरजनके शासन गुणसे वह चोर तस्करोका भय एकवार ही दूर होगया और चारोओर स्थायी शान्ति स्थापित होगई। राव सुरजनने वाराणसी नगरमे और विशेष करके वाराणसीके जिस स्थानमे वह रहते थे, उस स्थानमे अत्यन्त रमणीय महल और सर्वसाधारणका उपयोगी ८४ भिन्न स्थान वना दिये, तथा गंगाजीके किनारे स्नान करनेके लिये २० घाट वनवाये। इससे उनका वहुत धन खर्च हुआ अधिक क्या कहै, राव सुरजन अपने शासनगुणसे सभीके प्रियपात्र होगये। उन्होने उसी वाराणसी धाममे प्राण त्याग किये उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव भोज, (२) दूदा, सम्राट् अकवर इनको लकडखां नामसे पुकारा करते थे, और (३) रायमल। रायमलको पलायता नगर, और उसके अधीनके देश प्राप्त हुए और किसी समयमे उनके अधीनमे कोटा राज्य होगया।

पूर्वोक्त समयमे वादशाह अकवर दिल्लीसे राजधानी उठाकर आगरेमे लेगये। अकवरने आगरेको विस्तारित और शोभायमान करके अपने नामके अनुसार उसका नाम अकवरावाद् रक्खा। अकवरावादमे जानेके पीछे वादशाह अकवरने गुजरातको जीतनेका विचार किया, और वहां वहुतसी सेना भेजी। पीछे स्वयं कितनी ही निर्वाचित ऊंटपर चढ़ीहुई सेनाके साथ वहां गये। मरुक्षेत्रके राजपूत राजगण जिस प्रकारकी रीतिसे एक २ ऊंटकी पीठ पर दो २ आसन स्थापन कर, दो २ जनोके साथ सेनाको वैठाल कर लेजाते है, अकवर उसी रीतिसे पांचसौ सेना प्रधानत. राजपूतसेनाको भी ऊटोपर चढ़ाकर लेगये, और उसी सेनादलके नेतापदपर रावभोज और उनके भ्राता दूदा नियुक्त होकर गये। वादशाहकी प्रधान सेनाने पहिले आगे वढकर सूरतको घेर लिया था।परन्तु वादशाह भी उक्त सेनाके साथ शीघ्रतासे वहां जाकर प्रधानसेनाके साथ मिल गये। क्रमानुसार भयंकर युद्ध उपस्थित होगया। उस युद्धमे राव भोजने असीम साहस करके शत्रुओंके प्रधाननेताओंका मस्तक काटलिया। वादशाहने सरलतासे जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर संतुष्ट हो राव भोजसे पूछा कि " आप क्या पुरस्कार चाहते है ? " राव भोजने कहा, कि " प्रतिवर्षमे वर्षा ऋतुके आनेपर म जिससे अपनी राजधानी वूँदीमे जाकर वर्षाऋतुको वहाँ व्यतीत करसकूँ ऐसी आज्ञा चाहता हूँ। " वादशाह अकवरने राव भोजकी वह प्रार्थना तत्काल पूर्ण की।

इतिहाससे जाना जाता है कि महावली अकवरने एक २ करके अनेक राज्य जीते, और अपने अधिपत्यका विस्तार करताथा साम्राज्यकी शक्तिको वढ़ानेके लिये पहिलेसे जिस २ स्थानपर युद्ध उपस्थित किया, उसी २ युद्धमे राजपूतराजाओने नियुक्त होकर अपने वल विक्रमको प्रकाश करनेके साथही साथ अपने गौरवकी गरिमाको वढ़ा लिया।उनमे वूंदीके महाराज राव भोजने भी वहुतसे युद्धोमे अतुलनीय विक्रम प्रकाश कर वडा ऊंचा पद पाकर सम्मान प्राप्त किया था। अहमदनगरके प्रसिद्ध युद्धमे चांदावेगमने सातसौ अस्त्रधारिणी स्त्रियोंके साथ वादशाहकी अगणित सेनादलके विरुद्धमे भली भातिसे वीरता प्रकाश कर और उस युद्धमे जीवन दानकर भारतके इतिहासमें अपनी

अक्षय कीर्तिका परिचय दिया है। उस अहमदनगरको जीतनेके लिये बादशाहने राव भोजको प्रधान सेनापति पदपर नियुक्त करके भेजा। वीरश्रेष्ठ भोजने असीम साहसके साथ अहमदनगरके किलेकी दीवारको लांघकर सेनासहित उसमे प्रवेश कर किलेको जीत लिया। बादशाह अकबरने इससे महा संतुष्ट होकर राव भोजके पदसम्मान बढ़ानेमे और उनको पुरस्कार देनेमे कुछ भी विलम्ब न किया। विशेष करके अहमद नगरके युद्धमे राव भोजने अतुलनीय वीरता प्रकाश करके जिस किलेके बुर्जपर आक्रमणकर अधिकार कर लिया था, बादशाह अकबरने भोजके सम्मानके लिये उसी स्थानपर एक नवीन बुर्जबनाकर उसका "भोज बुर्ज" नाम रक्खा।

हम इतिहासमे देखते है कि बूँदीके राव राजाभोजने सम्यक् प्रकारसे बादशाह अकबरके अनेक उपकार किये थे। और इसी कारणसे वह उनके अत्यन्त प्रियपात्र होगये थे। तोभी वह एक समय बादशाहके भयंकर कोपमे गिरे। जब अकबरकी राजपूत रानी जोधबाईकी मृत्यु होगई तब बादशाहने समस्त राजपुरुष और देशीय राजाओको उस रानीके अशौच ग्रहण तथा उसके शोकचिह्न धारण करनेकी आज्ञा दी। बादशाह अकबरने राजपूत राजाओंकी समान मुसलमान और अमीर इत्यादियोको भी आज्ञा दी कि तुम सभीको मृत रानीके सम्मानके लिये डाढी मुड़वानी होगी। जिससे सभी बादशाहकी इस आज्ञाको पालन करै, इसलिये बादशाहकी हजामत करनेवाला नाई बादशाहकी आज्ञासे उक्त मनुष्योंकी हजामत करनेमे नियुक्त हुआ। राजाका नाई अंतमे बादशाहकी राजधानीमे स्थित बूँदीराजके यहाँ जाकर बादशाह की आज्ञापालन करनेके लिये उद्यत हुआ। राजाके सेवकोने उस नाईको मारकर भगा दिया। रावभोजके शत्रुओने शीघ्र ही यह समाचार बादशाहतक पहुँचा दिया। राव भोजके विरुद्धमे यह अनृतयोग उपस्थित किया कि "राव भोजने केवल नाईको मारकर ही शान्ति नही पाई है वरन उन्होने मृतक महारानीको भी अनेक प्रकारके कटु वचन कहे है" शोकसे आतुर हुए अकबरने यह समाचार सुनते ही उसी समय राव भोजके समस्त गुणग्रामोको भूलकर तुरन्त ही आज्ञा दी कि "राव भोजको बाँधकर बलपूर्वक उनकी डाढ़ी मूँछोको मुडवा दो।" बादशाहकी इस आज्ञाको सुनते ही राव भोज और उनकी सेना क्रोधित हुए सिहकी समान उन्मत्त होकर शीघ्र ही तलवार निकालकर भयंकर काण्ड उपस्थितके पूर्वलक्षण प्रकाश करने लगे, परन्तु बादशाहने उक्त आज्ञा देनेके पीछे जब समझा कि हमने अत्यन्त अन्यायकी आज्ञा दी है तब वह स्वयं शीघ्रतासे हाथी पर चढ़कर राव भोजके यहां गये। यदि बादशाह इस समय न जाते तो निश्चय ही हाड़ाराज भोज और उनके सैनिक राजधानीमे रुधिरकी नदी बहादेते, इसमे कुछ भी संदेह नही। बादशाह हाथीपरसे उतरकर राव भोजके विक्रमकी भलीभाँतिसे प्रशंसा करके उनको धीरज देने लगे और रावभोजने स्वय बादशाहके सम्मुख आकर विशेष विचारके साथ कहा, कि "अपने स्वर्गीयपिताके नामसे मै क्षमा प्रार्थना करता हूँ। मै अत्यन्त निर्बोध हूँ, मृतरानीके सम्मानके लिये क्षौरकर्म करानेके योग्यपात्र भी मै नही हूँ।" बादशाह

अकबर यह वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और राव भोजको साथ लेकर अपने स्थानको लौट आये । बादशाह अकबरकी मृत्युके पीछे राव भोजने अपनी राजधानी बूँदीमे जाकर कुछ कालतक वहाँ रहनेके पीछे प्राण त्याग किये । राव राजा भोजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव रतन (२) हिरदेव नारायण[1] और (३) केशवदास[2]।

अकबरकी मृत्युके पीछे जहाँगीर मुगल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए। वह अपने पुत्र परवेजको दक्षिणके शासन कर्ता पदपर नियुक्त कर बुरहानपुरमे शासनकी सनद देकर उत्तरकी ओरको चले आये । परन्तु जहाँगीरके दूसरे पुत्र कुमार खुर्रमने भ्राताके सौभाग्यसे वैरभावके वश हो षड्यंत्रजालका विस्तार करके उनके प्राण नाश करनेमे किंचिन्मात्र भी त्रुटी न की। कुमार खुर्रम अपने सौतेले भाईका प्राण सहार कर अपने जन्मदाता सम्राट् जहाँगीरको सिंहासनसे रहित करके स्वय भारतके साम्राज्यका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुए । कुमार खुर्रम राजपूत राजनंदिनीके गर्भसे उत्पन्न थे । इस कारण उन पितृद्रोहीकी सहायताके लिये बाईस राजपूत राजा मिलकर जहांगीरको सिंहासनसे उतारनेके निमित्त उनके अधीनमे सेनासहित इकट्ठे हुए । परन्तु एकमात्र बूँदीके अधीश्वर राव रतनने उस दु.खके समयमे बादशाह जहाँगीरके पक्षका अवलम्बन कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी।इसके सम्बन्धमे हाडा कविने लिखा है।

" सरवर फूटा जल वहा, अब क्या करो यतन्न ?
जाता घर जहाँगीरका, राखा राव रतन्न " ।

इसका अर्थ यह है कि सरोवरका जल उबलकर प्रबल तरंगोसे बहरहा है, इस समय अब क्या यत्न करना होगा ? जहाँगीरका शासन लुप्त होगया था, राव रतनने उसकी रक्षा की है ।

बूँदीराज रतनसिंहने माधवसिंह तथा हरिसिंह नामक दोनो पुत्रोके साथ सेनासहित जहाँगीरके उस महादु:खसमयमे बुरहानपुरमे जाकर[3] पितृद्रोही खुर्रम और उनके अधीनके राजपूत राजाओके साथ प्रबल सग्राम करके उनको एकबार ही परास्त करादिया । बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि सवत् १६३५ सन् १५७९ई०मे कार्तिक शुक्ल मगलवारके दिन यह स्मरणीय सग्राम हुआ था, और उसी रणक्षेत्रमे राव रतनके उक्त दोनो पुत्र भयकररूपसे घायल हुए । बुरहानपुरके युद्धमे राव रतन और उनके दोनों पुत्रोने घोर वीरता प्रकाश की थी और बादशाहके अनुकूल विजय प्राप्त की ।

---

(१) हिरदेवनारायणको बादशाहसे कोटेराज्यके शासनकी सनद मिली थी इन्होने १५ वर्षतक इसे शासन किया ।

(२) इन्हे चाम्बलके किनारे डीपरी नगर और उसके अधीनमे २७ ग्रामोका अधिकार मिला।

(३) तर्जुमेमे सवत १६८१ सन् १६२५ लिखा है और यही सही है क्योकि स १६३५ मे तो अकबरबादशाह था, जहांगीर सम्वत १६६२ मे बादशाह हुआ था ।

इसमें दिल्लीके महाराजने प्रसन्न होकर पुरस्कार स्वरूपमें राव रतनको बुरहानपुरके शासनकर्ता पदका भार अर्पण किया और उनके दूसरे पुत्र माधवके कोटानगर और उनके अधीनके समस्त देशोंके अधिकारकी सनद वंशानुक्रमसे साक्षात् दिल्लीश्वरके अधीनमें संभोग करनेकी प्राप्त हुई । इसी समय हाड़ोती देश रीतिके अनुसार दो भागोंमें विभक्त होगया । राव रतनने बादशाहके अनेक उपकार किये थे, इससे इसका अनुमान तो सरलतासे होसकता है कि उनको कितना पुरस्कार मिला था ।

टाड् साहब लिखते हैं कि जहाँगीरने एक प्रबल गुप्त राजनैतिक कारणसे इस प्रकारके अन्यायका कार्य किया था । वह राव रतन और उनके पुत्रको अत्यन्त बल-शाली योधा देखकर अपने मनही मनमें भलीभाँतिसे जान गये कि यदि यह दोनों वीर पिता पुत्र एक साथ मिलकर असीमसाहसी स्वजातीय सेनादलका नैतृत्व करेंगे तो यह दोनों एक मत होकर जिस किसी विषयमें सरलतासे प्रधानताका विस्तार और राजनैतिक विपत्तिको उपस्थित करनेमें समर्थ होजांयगे,इस कारण पिता पुत्रमें भेद साधन करके प्रबल सामर्थ्यको विभक्त करदेना उचित है । बादशाहने उसी अभिप्रायसे राव रतनको केवल बुरहानपुरके शासनका भार देकर उनके पुत्रको स्वाधीनभावसे कोटा राज्य देदिया । शाहजहाँने माधवसिंहको जिस प्रकार कोटेके राज्यसंभोगकी सनद दी उसका वृत्तान्त कोटेके इतिहासमें वर्णन किया जायगा ।

राव रतन जिस समय बुरहानपुरके शासन करनेमें नियुक्त थे, उस समय उन्होंने वहां एक नगर स्थापन कर अपने नामके अनुसार उसका नाम "रतनपुर" रक्खा । बूँदीके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने फिर एक ऐसा कार्य किया कि जिससे एक ओर तो दिल्लीके बादशाह प्रसन्न हुए और दूसरी ओर बूँदी राजवंशने पहिले जिन मेवाड़पति राणाओंकी अनुगत्यता स्वीकार करके उनसे विशेष शांति प्राप्त की थी वे भी प्रसन्न हुए ।

दरियाखां नामक एक मुसल्मान अमीरने बादशाहकी आज्ञा न मान कर मेवाड़राज्यमें जाकर सेनासहित प्रजापुञ्जके ऊपर अत्यन्त अत्याचार किये थे । राव रतन सेनासहित वहां जाय दरियाखांपर आक्रमण कर युद्ध होनेके पीछे उसको पकड़कर बादशाहके सम्मुख लेगये । दरियाखां कठिन वीररूपसे प्रसिद्ध था, इस कारण उसको पकडनेसे राव रतनका बल विक्रम विशेषरूपसे विदित होगया । बादशाहने उनकी उस वीरतासे महासंतुष्ट होकर पुरस्कारमें उनको एक दल नौबतके बाजेका दिया और रतनके स्थानपर लालपताका उड़ानेकी आज्ञा दी । तथा वह जिस समय सेनासहित बाहरहो उस समय एक बडी पीले वर्णकी पताका उनके समीप उड़ाई जाय । राव रतनके उत्तराधिकारी आजतक उस राजसम्मानसूचक पताकाको रखते आये हैं । राव रतनने केवल स्वजातिके निकटसे ही महा ऊंचा सम्मान नहीं पाया था वरन भारतवर्षकी समस्त हिन्दूजाति हिन्दूधर्मके रक्षकस्वरूपसे उनके प्रति सम्मान दिखाती थी । बादशाहके यहाँ उन्होंने जिस प्रकारकी सामर्थ्य और प्रतिपत्ति प्राप्त की

थी, उससे उनकी हिन्दूजातिकी मुसल्मानोके अत्याचारोसे सरलतासे रक्षा होसकी थी। वह जिस किसी स्थानमे भी रहते मुसल्मानोको किसी प्रकारसे उस स्थानपर गोहत्या करनेका साहस नही होता था। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने युद्धमे बहुतसी वीरता प्रकाश कर प्रशंसनीय यश संग्रह किया था, केवल हाड़ाजाति ही नही वरन समस्त हिन्दूजातिमे महा ऊंचा गौरव संग्रह करके अंतमें बुरहानपुरके एक भयंकर युद्धमे वह मारे गये। हाड़ाजाति आजतक सबसे पहिले राव रतनसिंहके नामको स्मरण करती है।

राव रतनके चार पुत्र उत्पन्न हुए (१) गोपीनाथ, (२) माधवसिंह, (३) हरिजी और (४) जगन्नाथ। यह तो हमारे पाठकोको पहिलेहीसे ज्ञात होगया है, कि माधवसिंहने कोटेराज्यको पाकर उसे स्वाधीनभावसे शासन किया था। तीसरे पुत्र हरिजीको गूँगेर नामक देश प्राप्त हुआ। कर्नल टाड् साहबके समयमे हरिजी वंशोत्पन्न प्रायः पचास आदमियोका कुटुम्ब नीमोदा नामक स्थानमे रहता था। चौथे जगन्नाथने पुत्रहीन अवस्थामे प्राण त्याग किये। सबसे वड़े और उत्तराधिकारी गोपीनाथ पिताकी मृत्युके पहिले ही मारे गये। युवराज गोपीनाथकी मृत्युका वृत्तान्त पढ़नेसे राजपूतोके चरित्रोका और भी एक विचित्र निदर्शन पाया जाता है।

युवराज गोपीनाथ बूँदीके बलदिया जातीय एक ब्राह्मणकी अत्यन्त सुन्दरी स्त्रीके प्रेममे मोहित होकर अत्यन्त गुप्तभावसे अपनी प्रेमपिपासाकी निवृत्ति करते थे। गोपीनाथ प्रतिदिन रात्रिके समय उस ब्राह्मणके घर दीवार लाँघकर जाया करते थे। और चुपचाप अपनी कुप्रवृत्तिको चरितार्थ कर आते थे। कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत हुए, एक समय उक्त ब्राह्मणने उनको रात्रिके समय अपने घरमे आया हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो उनके हाथ पैर बाँधकर घरमे रखलिया, और राजमहलमे जाकर राव रतनके सम्मुख निवेदन किया, कि "एक चोरने हमारे यहा रात्रिमे आकर हमारी स्त्रियोके सतीत्व नाश करनेकी चेष्टा की थी। हमने उसको पकड़ लिया है।" "उसको क्या दंड दिया जायगा सो आप निश्चय कीजिये।" बूंदीराज रतनसिंहने उसी समय कहा कि "उसको जानसे मार डालना ही उचित दंड होगा"। ब्राह्मणने तुरन्त ही अपने घर आकर एक खड्ग लेकर युवराज गोपीनाथका मस्तक चूर्ण करदिया। गोपीनाथने उस दारुण आघातसे प्राण त्याग किये, ब्राह्मणने युवराजकी लाशको राजमार्गमे फेक दिया। शीघ्र ही राव रतनके पास यह समाचार गया कि युवराज गोपीनाथ मारे गये है। यद्यपि राव रतनने इस समाचारसे पहिले तो भयंकररूपसे क्रोधित हो हत्याकारीको पकडकर उसको उचित दंड देनेकी आज्ञा दी थी, परन्तु जब उन्होने सुना कि उनकी आज्ञानुसारही ब्राह्मणने गोपीनाथकी हत्या की है तब राव रतनने बिना कुछ कहे सुने पुत्रशोकको सहन किया।

युवराज गोपीनाथके बारह पुत्र उत्पन्न हुए थे। राव रतनने उन सबको एक २ देश दिया, वह राज्यके प्रधान सामन्त श्रेणीमे गिने गये। उन बारहमेसे गोपीनाथके सबसे बड़े पुत्र छत्रशालको बूँदीका राजासिहासन प्राप्त हुआ, और वे नीचे लिखे हुए चार देशोके अधीश्वर हुए:-

१-इन्द्रासिह- इन्होने इन्द्रगढ़को स्थापन किया-

२-वैरीशाल- इन्होने बलवान और फिलोदी नामक दो नगरोको स्थापन किया, और करवर तथा पिपलोदा दो देश भी इनको मिले।

३-मोखिमसिह-१ इनको आंतरदा ग्राम प्राप्त हुआ।

४-महासिह- इनको थाना[२] ग्राम प्राप्त हुआ।

गोपीनाथके अन्य कईएक पुत्रोका वंश लोप होगया है, यहां पर उनके नामोका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राव रतनके स्वर्ग जानेपर गोपीनाथके बड़े पुत्र शत्रूशाल (छत्रसाल) पिताके सिहासन पर विराजमान हुए। बादशाह शाहजहाने स्वयं बूँदीकी राजधानीमे जाकर शत्रूशालका अभिषेक किया और उनका सम्मान बढ़ानेके लिये उन्हे दिल्ली राजधानीके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। शाहजहाने जितने दिनोतक राज्य किया था, राव शत्रूशाल उतने दिनोतक उक्त पदपर नियुक्त रहे। बादशाह शाहजहांने जिस समय अपने विस्तारित भारतसाम्राज्यको चार भागोमे विभक्त कर अपने चारपुत्रो दारा औरंगजेव सुजाय और मुरादको चार भागोके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त करके भेजा, उस समय राव शत्रूशाल औरगजेवकी एक प्रधान सेनाके सेनापति पदपर नियुक्त होकर दक्षिणको गये। औरगजेवने दक्षिण प्रान्तके भिन्न २ प्रान्तोमे प्रवल समरानल प्रज्वलित करके कई किलोको घेर लिया तथा उन्हे आक्रमण कर अपने अधिकारमे कर लिया। विशेष करके दौलताबाद और वीदर नामक किलेपर अधिकार करनेके समय हाड़ाराज शत्रूशालने अतुल बल विक्रम प्रकाश कर अपने बाहुबलका चूडान्त बल दिखा दिया। वीर श्रेष्ठ शत्रूशालने स्वयं सेनासहित वीदरके किलेपर आक्रमण कर तथा उसको जीत शत्रुकी समस्त सेनाको तलवारसे नाश करके यमराजके यहाँ भेज दिया। सम्वत् १७०९,

---

(१) इन्द्रगढ वलवन और आन्तदा यह तीन प्रधान देश कोटेके जालिमसिहने अपने षड्यंत्रसे बूँदीसे छीन लिये थे।

(२) उर्दूतर्जुमेमें "थानवा" लिखा है।

(३) टाड् साहब अपनी टीकामें लिखते है कि "यह थाना ग्राम पहिले युजावर नामसे विदित था। गोपीनाथके बारह पुत्रोंमें केवल थानाके अधीश्वर आजतक बूंदीके अधीश्वरकी अनुगतता स्वीकार करते आये थे, महासिहके वंशधर महाराज विक्रमसिह इस समय इसी थानाके अधीश्वर है, यदि वह जीवित होते तो हम कह सकते है कि इस संसारमे उनकी समान सम्माननीय साहसी और सरलचित्त राजपूत दूसरा नहीं था, वह अपने अधीश्वरके अत्यन्त प्रियपात्र और हमारे सच्चे मित्र थे, इनका सिंहके साथ युद्धका वृत्तान्त हमारे भ्रमण वृत्तान्तमे पाया जायगा।

सन् १६५३ ई० में प्रवल युद्धके पीछे कलवर्णका पतन हुआ, और शत्रूशालने फिर असीम साहसके साथ किलेकी दीवारको लांघकर उसको जीत लिया । धामूनीनामक स्थानके किलेको जीतनेके पीछे दक्षिणमे पूर्णरूपसे शांति विराजमान होगई ।

बूँदीके राजमहलमे स्थित ग्रंथके देखनेसे जाना जाता है कि "जिस समय दक्षिणमे यह सब घटनाऐं हुई उसी समय यह जनरव हुआ कि सम्राट् शाहजहां ने प्राण त्याग किये है । विशेप करके बादशाहके वरावर वीस दिनतक सभामे न वैठनेसे उस समाचारको सभीने सत्य मान लिया था । बादशाहके पुत्रोमे एकमात्र दाराशिकोह इस समय राजधानीमे रहते थे । उनके अन्य भ्राताओने जब यह समाचार सुना तब वह सिंहासन पानेके लिये वडे आग्रहके साथ राजधानीकी ओरको गये । जिस समय शुजाने वगदेशसे यात्रा की, उस समय औरंगजेबने भी दक्षिणको छोड़नेके लिये तैयार होकर मुरादको सेनासहित योग देनेके लिये अनुरोध किया । औरंगजेबने मुरादसे यह कहला भेजा कि "मै एक उदासीन विरागी हूँ सिंहासन वा संसारके किसी भी सुखकी मुझे लालसा नही है, केवल निर्जनमे रहकर मोहम्मदकी आज्ञानुसार धर्मका साधन करना मेरे जीवनका मुख्य उद्देश है । दारा एक नास्तिक है, मै उदासीन हूँ, इस कारण वादशाह शाहजहाँके पुत्रोंमे एकमात्र आपही सब अशोमे योग्यपात्र है । आपहीको राजसिंहासन पर वैठालनेके लिये हम विशेप रूपसे तय्यार हैं[1] ।

"वादशाह शाहजहाँने औरगजेवकी पापकामनाको जानकर शुभभावसे हाडाराज शत्रूशालको राजधानीमे सेनासहित आनेके लिये बुलाभेजा । शत्रुशालने बादशाहकी यह आज्ञा पाकर विशेप विचार कर यह कार्य किया, कि मै जब वादशाहके अनुगत अधीन हूँ, तब उनकी आज्ञापालन करना ही मुझे सवसे पहिले कर्तव्य है । अत' शत्रूशाल शीघ्र ही दक्षिणके डेरोके छोड़नेकी तैयारी करने लगे । राव शत्रूशाल डेरोको छोड़नेके लिये उद्यत होगये है, औरंगजेबने यह समाचार पाते ही पूछा कि "इतनी शीघ्रतासे डेरोको छोडनेका कारण क्या है कुछ दिन और ठहरिये, हम सभी एक साथ राजधानीमे चलैगे । बूँदीके अधीश्वर शत्रुशालने सिंहासन पर बैठे हुए वादशाहकी आज्ञाका पालन करना हमारा प्रथम कर्तव्य कार्य है । " यह कहकर बादशाह शाहजहाँने उनके निकट जो आज्ञापत्र भेजा था, उसे औरगजेबके हाथमे अर्पण किया । परन्तु पापाचारी औरगजेवने उस आदेशपत्रको पढते ही शत्रुशालको आज्ञा दी, कि आप किसी प्रकारसे इस समय डेरोको न छोडिये' । दूसरी ओर औरंगजेबने आज्ञा दी कि "राव शत्रुशालके डेरोको जिस प्रकारसे होसके उखड़ने न दो' । परन्तु बुद्धिमान् शत्रुशालने ऐसा होगा जानकर पहिलेसे ही अपने समस्त द्रव्य संभार और कितनी ही सेनाको आगे भेज दिया था । उन्होने इस समय औरगजेबकी

(१) राजपत इतिहास लेखकने औरगजेबकी इस उक्तिको प्रकाशित किया है, अन्यान्य इतिहासवेत्ताओने भी अविकल इसी भावको लिखा है ।

आज्ञाको अग्राह्य करके अपनी बची बचाई सेना और जो राजा शाहजहाँके पक्षावलम्बी थे, उनको एकत्र दलबद्ध करके वीर तेजसे डेरोको छोड़कर नर्मदाकी ओरको गमन किया। यद्यपि औरंगजेबकी सेना उनके पीछे २ गई परन्तु किसी प्रकारसे भी उन असीम साहसी और महाबली राजपूतोको आक्रमण करनेका साहस प्राप्त न हुआ। इस समय प्रबलवर्षाके उपस्थित होनेसे नर्मदा नदीने भयंकरी मूर्ति धारण की थी। राव शत्रुशाल उस नर्मदा नदीके किनारेके कितने ही देशोके सोली राजाओकी सहायतासे उस भयंकर तरगोसे समायुक्त नर्मदानदीके पार होगये। तब भी औरंगजेबने निराश होकर शत्रुशालका पीछा करनेमे त्रुटि न की। राव शत्रुशाल निर्विघ्नतासे अपनी राजधानी बूँदीमे चलेआये। राव शत्रुशालने अपनी राजधानीमे कई दिन तक रह कर राज्यके अनेक विषयोकी प्रयोजनीय व्यवस्था कर दिल्लीकी ओरको सेनासहित गमन किया। वृद्ध बादशाहके पुत्रोको कुलांगारकी समान उनकी जीवितदशामे ही राजसिंहासन ग्रहण करनेकी इच्छासे बादशाहके करसे राज दंड छीनने और उनके जीवनमे हस्ताक्षेप करनेको अग्रसर हुआ देखकर राव शत्रुशालने उस वृद्ध बादशाहकी विपत्तिमे सहायता करनेके लिये शीघ्रतासे दिल्लीको गमन किया।

"टाड् साहब लिखते है, कि पितृद्रोही पापात्मा पिशाच औरंगजेब छलना, चातुरी और षड्यंत्रजालका विस्तार कर फतेहाबादमे जा पहुँचा। मारवाड़के महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने सेनादलके साथ उस फतेहाबादमे भयकर समरानल प्रज्वलित कर दी। परन्तु कूट षड्यंत्रजालका विस्तार कर औरंगजेबने सरलतासे उस युद्धमे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त कर भारतके सिंहासन पर चढनेका मार्ग साफ करलिया। राव शत्रुशालको हमने उस युद्धमे बादशाहके पक्षमे नियुक्त होता नही देखा, बादशाह अकबरके साथ बूँदीके अधीश्वर राव सुरजनका जो पहिला संधिबंधन हुआ था, उस संधिबंधनके अनुसार वह वा उनके भविष्य उत्तराधिकारी किसी हिन्दूराजाके अधीनमे किसी रणभूमिमे गमन नही करेगे ऐसा नियम था। बोध होता है कि उस संधिके मतसे राव शत्रुशाल महाराज मानसिंहके अधीनमे फतेहाबादके रणक्षेत्रमे न गये। परन्तु बूँदीके राजवंशोत्पन्न कोटेके अधीश्वर अपने चार भ्राताओके साथ सेनासहित उस फतेहाबादके संग्राममे बादशाहकी ओरसे नियुक्त होकर आये थे विषमवीरता प्रकाश करनेके पीछे चारो भ्राताओने उस संग्राममे अपना प्राण देकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई।

दुराचारी औरंगजेबने पिताके सिंहासन पर अधिकार करनेके पहिले अपने बड़े भ्राता दाराके साथ धौलपुरमे फिर युद्धकिया। उस धौलपुरके युद्धमे बूँदीके अधीश्वर राव राजा शत्रुशालने कुंकुमवर्णके भेष और विवाहके समयका जिस प्रकार पहरावा राजपूतजातिमे व्यवहार किया जाता है, उसी प्रकार पहरावा धारणकर क्या तो नंगी तलवार हाथसे लेनी होगी नही तो जीवन त्याग दिया जायगा, यह दृढ़प्रतिज्ञा करके वीरदर्पसे दाराके समस्त सेनादलमे सबसे आगे जाकर औरंगजेबके साथ भयंकर

समरानल प्रज्वलित कर दी । प्राच्य जगत्की चिर प्रचलित रीति यह थी कि युद्धके समय दोनो ओरके राजा वा प्रधान सेनापति रथ वा हाथीपर चढ़कर जब युद्धभूमिमे जाते थे तब सेनादल उस राजा अथवा सेनापतिको जबतक युद्धसे जाता हुआ न देखते तबतक प्राणोंकी बाजी लगाकर दुगने उत्साहके साथ युद्ध करते रहते थे । उसी रीतिके अनुसार दारा एक हाथी पर चढ़कर उस भयंकर रणभूमिमे जाने लगा । यदि वह और कुछ समयतक साहसमे भरकर उसी भावसे वहाँ विराजमान रहता तो अवश्य ही शाहजहाँ बादशाहको वृद्धावस्थामे कुलांगार पुत्र औरंगजेबके द्वारा वन्दी होकर राज्यसे च्युत होना नही पड़ता, दाराके हठात् रणभूमसे जाते ही उसकी समस्त सेना संग्रामको छोड़कर चारो ओरको भागने लगी । वीर तेजस्वी शत्रुशालने भीरु कापुरुष दाराको भागता हुआ और उसी कारणसे उसकी सेनाको भी भागता हुआ देखकर अपने अधीनके सामन्त और सेनासे गर्वपूर्ण यह वचन कहे "कि जो कोई युद्धभूमिसे भागेगा वह नरकको जायगा । मै बादशाहके अधीन हूँ, मैने युद्धभूमिमे चरण रक्खा है, यह चरण मेरा अटल है, क्या तो इस समय विजय ही होगी, और नही तौ प्राण त्याग दूँगा " । इन प्रकाशमान वचनोसे सामन्त और सेनाको उत्साहित करके, शत्रूशाल अपने हाथीपर चढ़कर अपने आदर्शसे जिस समय सेनाको शत्रुपक्षकी ओरको चलारहे थे, उसी समय शत्रुओकी ओरसे एक जलता हुआ गोला आकर उनके हाथीके ऊपर गिरा । हाथीने घायल होनेसे उन्मत्त हो रण-क्षेत्रको छोड़कर भागना प्रारंभ करादिया, परन्तु महावीर शत्रुशाल तुरन्त ही उस भागते हुए हाथीकी पीठ परसे छलांग मारकर कूद पडे, और घोड़े पर चढ़ कर अपनी समस्त सेनाको चक्राकारमे मिलाकर जयस्वरसे रणभूमिको कम्पायमान कर कुमार मुरादके साथ संग्राम करनेके लिये उसकी ओरको चले । राव शत्रुशाल मुरादके अत्यन्त निकट जाकर अपने विषम भालेसे मुरादके बाहुबलकी परीक्षाके लिये जिस समय उद्यत हुए उसी समय शत्रुओकी ओरसे एक गोली आकर उनके मस्तकमे लगी । राव शत्रुशालने उसी गोलीके आघातसे अपने जीवनकी लीला समाप्त की । राव शत्रुशालके छोटे पुत्र भारतसिह उस रणभूमिमे उपस्थित थे । पिताके मरनेसे वह महा क्रोधसे उन्मत्त हुए और केशरीकी समान मुरादके साथ प्रबल संग्राम करने लगे, शत्रुशालके भ्राता मोखमसिहने अपने दोनो पुत्र और उदयसिह नामके भतीजे सहित संहारमूर्ति धारण कर युद्ध करना प्रारभ किया, प्रबल युद्धके पीछे बहुतसे शत्रुओका सहार करके भारतसिह और उक्त कई जने राव शत्रुशालकी समान युद्धभूमिमे प्राणदान दे सूर्यलोकको चले गये । कर्नल टाड् साहब कहते है कि "उज्जैनी और धौलपुर इन दो

---

(१) राजपूत वीर किसी युद्धमे जयका सदेह होनेपर, अथवा किसी प्रकारसे भी हो शत्रुसे जय प्राप्त करना अथवा शत्रुका संहार करना कर्त्तव्य है ऐसी प्रतिज्ञा करने पर उक्त प्रकारका वर वेश धारण कर युद्धमे प्रवेश किया करते है। और युद्धभूमिमें मरते ही सूर्यलोकको या अप्सराओकी सभामे होजायगे, इसी विश्वाससे वह उक्त वर वेशका व्यवहार क.ते हैं ।

स्थानोके संग्राममे बारह राजपूत राजवंशीय और हाडा सम्प्रदायके प्रत्येक नेताने अपना जीवन त्याग कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी, हमने ऐसा दृष्टान्त और कहीं नहीं पाया ? "।

बूँदीके इतिहासमे पीछे वर्णन किया गया है कि राव शत्रुशाल समस्त जीवनमे ५२ युद्ध करके असीमसाहसका चूडान्त निदर्शन और विश्वासकी अक्षय कीर्ति स्थापन करगये है। राव शत्रुशालने बूँदीके राजमहलका विस्तार कर "छत्रमहल" नामका एक अंश निर्माण किया था, पाटन नामक स्थानमे "केशवराय भगवान्" का एक रमणीक मंदिर उन्हींके व्ययसे बना है। संवत् १७१५ मे राव शत्रुशालने प्राण त्याग किये। राव शत्रुशालके औरससे चार पुत्र उत्पन्न हुए,–(१) राव भावसिंह, (२) भीमसिंह, (३) भगवन्तसिंह, (४) और भारतसिंह। भीमसिंहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ, भगवन्तसिंह मउनामक स्थानके अधिकारी हुए, भारतसिंह धौलपुरके युद्धमे मारे गये, इसका वर्णन पहिले ही करचुके है। राव शत्रुशालकी मृत्युके पीछे बूँदीका राजमुकुट उनके बडे पुत्र राव भावसिंहके मस्तक पर शोभायमान हुआ "।

हिन्दूजातिके परम शत्रु औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासन पर विराजमान होकर बूँदीश्वर राव शत्रुशालके प्रति उसका जो कुछ कोप क्रोध और शत्रुता थी उसे उनके पुत्र राव भावसिंहके प्रति प्रयोग करनेमे कसर न की। शिवपुरदेशके राजा आत्मारामको बुलाकर औरंगजेबने उनको आज्ञा दी कि "उद्धत स्वभाव और सदा असन्तुष्ट हाडा जातिको भलीभांतिसे दंड देकर बूँदीराज्यको रणथम्भोरके अधीनमे स्थापित करो। बूँदीको जय और हाडाजातिको दंड देने ही दक्षिणमे जानेके समय बूँदी राज्यमे प्रवेश करके इस जय प्राप्तिसे आपको सम्बन्धित करूंगा। " राजा आत्मारामने बादशाहकी आज्ञानुसार शीघ्र ही बारह हजार शिक्षितसेनाके साथ हाड़ौती देशमे जाकर तलवार तथा अग्निकी सहायतासे चारोओर अत्याचार कर देशका सर्वस्व विध्वंस करना प्रारंभ करादिया। जैसे ही राजा आत्मारामने बूँदीके सबमे प्रधान सामन्तके अधीन इन्द्रगढ़के मध्यमे स्थित खातौलीनगरको घेरा कि वैसे ही हाडाजातिने चुपचाप दल बांधकर गोठड़ा स्थानमे राजा आत्मारामके अधीनमे स्थित उस बारह हजार शिक्षित सेनाके साथ भयंकर युद्ध करना प्रारंभ किया, उस युद्धमे राजा आत्माराम एकबार ही परास्त होकर प्राणोके भयसे भाग गये। विजयी हाड़ासेनाने उस भागेहुए राजा आत्माराम और बादशाहकी सेनापर फिर आक्रमण करके समस्त युद्धके द्रव्य तथा बादशाहकी चिह्नात्मक पताका आदि छीन ली। हाड़ाजातिने इससे भी संतुष्ट न होकर हतभाग्य राजा आत्मारामसे अत्याचारोका बदला लेनेके लिये उसके शिवपुरको जा घेरा। परास्त और अपमानित राजा आत्माराम कलंकका भार शिरपर लेकर बादशाह औरंगजेबके निकट गये और जाकर हाड़ाजातिका बलविक्रम तथा अपने उद्धत स्वभावका नवीन परिचय दिया। औरंगजेबने राजा आत्मारामसे अत्यन्त घृणा प्रकाश की। और इनका उचित तिरस्कार किया।

कपटी औरंगजेबने हाड़ाजातिके वीर विक्रमका विशेष परिचय पाकर हाड़ा राजको अपने हस्तगत करनेके लिये प्रकाशमे हाडाजातिकी वीरतासे संतोष प्रकाश करतेहुए उनको सब प्रकारसे क्षमाकर अपनी राजधानीमे आनेके लिये बुला भेजा । राव भावसिह, पहिले किसी प्रकारसे भी कुचक्री औरंगजेबकी वातपर विश्वास करके दिल्ली जानेके लिये सम्मत न हुए, परन्तु वादशाहने वारम्वार प्रतिज्ञा पूर्ण पत्र भेजकर "मुझसे आपका कोई अनिष्ट नही होगा इस वातकी" शपथ की इसी कारणसे वीरतेजस्वी राव भावसिह अन्तमे सेनासहित दिल्लीको गये । वादशाह औरंगजेव ने राव भावसिहको वड़े आदरभावके साथ ग्रहण कर कुमार मोअज्जिमके अधीनमे उनको औरंगावादके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त करदिया ।

हाडाजातिके इतिहाससे जाना जाता है कि राव भावसिहने औरंगावादके महा ऊँचे पदपर प्रतिष्ठित होकर स्वजातीय राजपूतोकी औछडा एवं दतियाके बुन्देला सेनादलके साथ बहुतसे युद्धोमे अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश किया था । वाकानेरके राजा करणके प्राणनाश करनेके लिये इस स्थान पर जो षड्यत्रजालका विस्तार हुआ था, राव भावसिहने ही अपने असीम साहससे उस षड्यन्त्रजालको नष्ट कर बीकानेरके महाराजके जीवनकी रक्षाकी । राव भावसिहने औरगावादमे सर्वसाधारणके हितकारी बहुतसे महल वनवाये । उक्त इतिहासके पढ़नेसे जाना जाता है, कि उन्होने अपने साहस, वीरता दया, और अपने पवित्र स्वभावके वलसे औरंगाबादकी सब जातियोके हृदयपर इस प्रकारका अधिकार करलिया था कि इनके ऊपरपूर्ण विश्वास और भक्तिके वलसे ही वहुतसे असाध्य रोगियोने इनके द्वारा पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की थी । सम्वत् १७३८, सन् १६८२ ई० मे राव भावसिहने इसी औरंगाबादमे प्राण त्याग किये ।

राव भावसिहके कोई पुत्र नही था । इस कारण उनके भ्राता भीमसिहके पुत्र अनिरुद्धसिह वूँदीके सिहासनपर विराजमान हुए । भीमसिहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था । उन्ही भीमसिहके पुत्र किशनसिह थे । दुराचारी औरगजेवने पहिले ही इन किशनसिहका प्राण नाश किया था । उनकी मृत्युसे उनके स्थलाभिषिक्त राव अनिरुद्धसिहको राजसम्मान दिखानेके लिये अभिषेकके समय मूल्यवान् ही उपहार और अपना एक अति उत्तम हाथी सजाकर उनके पास भेजा राव अनिरुद्धसिहने वूँदीके सिहासन पर अभिषेकके कुछही समय पीछे दिल्लीमें जाकर वादशाहके प्रति सम्मान दिखाया, कुछ दिन पीछे वादशाह औरगजेवने जव सेनासहित दक्षिणमे युद्ध करनेके लिये गमन किया, तो राव अनिरुद्धसिह भी सेनासहित उनके साथ गये । दक्षिणके एक प्रवल युद्धमे एक समय शत्रुपक्षकी सेनाने, वादशाह औरंगजेवके महलकी वेगमे जिन डेरोमे निवास करती थी, उन डेरोपर आक्रमण किया तव राव अनिरुद्धसिहने विषम वीरता प्रकाश करके उन शत्रुओको विताडित कर राजरानियोका उद्धार किया । इससे औरगजेवने उनके प्रति अत्यन्त सतुष्ट होकर उनसे पूछा, "कि आप क्या पुरस्कार चाहते है ?"

वीरश्रेष्ठ अनिरुद्धने कहा, "मै अन्य कोई पुरस्कार नही चाहता, मै इस समय आपके पीछे चलनेवाली सेनादलके अधिनायक पदपर नियुक्त हुआ हूँ, आप उसके बदलेमे मुझे सबके आगे सेनादलके नेताका पद दीजिये। औरंगजेबने तुरन्त ही उस वीरकी वह प्रार्थना पूर्ण की। बादशाह औरंगजेब बीजापुरके जीतनेमे नियुक्त हुए, राव अनिरुद्धने उस समय भी अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश कर बडे साहसके साथ बादशाहको संतुष्ट किया था।

बूँदीके इतिहासमे फिर लिखा गया है कि बूँदीके प्रधान सामन्त दुर्जनसिंहके साथ विवाद होनेसे राव अनिरुद्धसिंह विपत्तिके मुखमे पड़े। विवादके पीछे दुर्जनसिंहने शीघ्रतासे दक्षिणके डेरोको छोड़ अपने अधिकारी देशमे आकर स्वजातीय सेनाको सजाकर बूँदीकी राजधानीमे आय बलवन्तसिंहके मस्तक पर बूँदीका राजतिलक दिया। बादशाह औरंगजेबने यह समाचार पाकर शीघ्र ही राव अनिरुद्धसिंहके अधीनमे एक शिक्षित सेनाको भेजकर दुर्जनसिंहको भगाने और उनके अधिकारी देशोको बूँदीराजके अधिकारमे करनेके लिये भेजा। अनिरुद्धसिंहने सेनासहित बूँदीमे आकर दुर्जनसिंहको उचित दंड दे तथा बलवन्तको सिंहासनसे भ्रष्ट करके उनके अधिकारी देशोको राज्यके अधिकारमे करलिया, इसके पीछे राव अनिरुद्धसिंहने राज्यशासनकी सुव्यवस्था की। बादशाहके पुत्र शाहआलम भारतसाम्राज्यके उत्तरविभागके शासनकर्तारूपसे नियुक्त होकर लाहौरको गये। राव अनिरुद्धसिंह वहॉ शान्ति स्थापन करनेके लिये गये। आमेरके महाराज विष्णुसिंह भी उसी कार्यके लिये वहॉ भेजे गये थे। राव अनिरुद्धसिंहने वहॉ कुछ काल निवास करके पीछे प्राण त्याग किये।

उक्त इतिहास लेखकने लिखा है कि "राव अनिरुद्धसिंहने बुधसिंह और जोधसिंह नामवाले दो पुत्र छोडे, बड़े पुत्र बुधसिंह थे, इन्हींको पिताका राज्य सिंहासन प्राप्त हुआ। बादशाह औरंगजेब बुधसिंहके अभिषेक होनेके कुछ ही दिन पीछे औरंगाबाद नामक जिस स्थानमे रहते थे, वहॉ घोररूपसे पीडित हुए, यहॉतक कि उस रोगसे इनके जीवनमे भी सन्देह हुआ। इनकी मृत्युकी सम्भावना जानकर राज्यके सभी सामन्त राजपुरुष तथा अमीर उमराओने बादशाहसे विशेष आग्रहके साथ कहा कि आपके सिंहासन पर उत्तराधिकारी स्वरूपसे कौन बैठेगा, उसको आप इसी समय नियत कर दीजिये। मृत्युके मुखमे पडेहुए बादशाह औरंगजेबने कहा, कि किसके मस्तक पर राजमुकुट शोभायमान होगा, यह जगदीश्वरकी इच्छा है। मै जगदीश्वरकी इच्छानुसार ही इच्छा करता हूँ कि मेरा पुत्र बहादुरशाह आलम मेरे सिंहासनका उत्तराधिकारी हो, परन्तु मुझे ऐसा अनुमान होता है कि कुमार आजिम भी अपने शस्त्रबलसे भारतके सिंहासन पर बैठनेकी चेष्टा करैगा। वास्तवमे बादशाहने जो बात कही थी अन्तमे वही हुआ। आजिम शाह दक्षिणी सेनादलकी सहायतासे अपने बलको प्रबल जानकर सिंहासन लेनेके लिये अपने बड़े भ्राताके साथ सामना करनेके

लिये तैयार हुआ। इसने अपने बड़े भाईको रणभूमिमे राजमुकुट लेकर भाग्यकी परीक्षाके लिये धौलपुरमे बुला भेजा। जो हिन्दूराजा बहादुरशाहकी ओर थे उन सभी राजाओंको बुलाकर राजनैतिक व्यवस्थाको सुनादिया। उन आयेहुए राजाओमे बूँदीके राव बुधसिह भी थे।उस समय बुधसिहकी अवस्था बहुत थोड़ी थी, परन्तु उस समय यह अपने अनुज जोधसिहकी मृत्युसे अत्यन्त शोकित थे।जोधसिहकी मृत्युका समाचार पाते ही बादशाह बहादुरशाह आलमने बुधसिहको अपनी राजधानी बूँदीमे जाकर श्राद्ध करनेकी आज्ञा दी, राव बुधसिहने कहा, "बादशाहकी ऐसी अवस्थाके समय मुझे बूँदीमे जाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है, धौलपुरके रणक्षेत्रमे–कि जहाँ बहुतसे युद्धोमे अनेक वीरोंने अपना बलविक्रम प्रकाश करके प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस रणभूमिमे मेरे पूर्वपुरुष शत्रुशालने जीवन त्याग किया था, उसी पवित्र रणभूमिमे जाकर बादशाहकी विजय प्राप्तिके लिये मै अस्त्र धारण करके अपने पूर्वपुरुषोकी कीर्तिकी रक्षा करूँगा, इस समय मै अपना यही कर्तव्य समझता हूँ।"

"शाह आलम सेनाके साथ लाहौरसे और आजिम अपने पुत्र वेदारवक्तके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। दोनो ओरकी सेना शीघ्र ही धौलपुरके समीप जाजौ नामक स्थानमे सम्मुख हुई, तत्काल भयकर युद्धकी आग भड़क उठी, भारतवर्षके इतिहासमे इस प्रकारका लोमहर्षण घोरयुद्ध और कभी नही हुआ था। यदि केवल एकमात्र बादशाहके कुमार ही सिहासनप्राप्तिके लिये मुसल्मानोकी सेनाकी सहायतासे रणभूमिमे उपस्थित होते तो ऐसे युद्धका अंतिम फल जैसा होना उचित था वैसा ही होजाता, अर्थात् प्रबल युद्धके पीछे एक ओरकी सेनाका दल विश्वासघातकताका कार्य करके युद्धको विध्वंश करदेता, परन्तु इस युद्धमे ऐसा नही हुआ। राजपूतानेके प्रत्येक राजा ही अपनी २ सेनाके साथ शाहआलम और आजिम इन दोनोके सिहासन प्राप्तिमे एक एककी सहायता करके परस्पर स्वजातीय सेनादलके साथ युद्ध करनेमे नियुक्त हुए। दोनो मुसल्मानोको सिहासन पानेकी आज्ञाको पूर्ण करनेके लिये राजपूत राजाओने आपसमे ही युद्ध करके अपना नाश करनेमे कुछ भी कसर न की। दतिया और कोटा राज्यके दोनों राजा दीर्घकालतक कुमार आजिमके अधीनमे दक्षिणके युद्धमे नियुक्त थे। कुमार आजिम उनके ऊपर विशेष संतुष्ट रहते थे, इस कारण उक्त दोनो राजाओने बादशाह औरंगजेबकी अन्तिम इच्छाकी ओर दृष्टि न रखकर अन्यायके साथ छोटे कुमारको सिहासनपर बैठालनेके लिये आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजके साथ दतियाके अधीश्वरकी विशेष मित्रता थी, और दोनोंने ही दक्षिणके युद्धमें विशेष वीरता प्रकाश करके प्रशंसा प्राप्त की थी, परन्तु इस समय दतियाके महाराज अपने प्यारे मित्र अनिरुद्धके पुत्र बुधसिहके विरुद्धमे खड़े होते हुए कुछ भी लज्जित न हुए। कोटेके

(१) जोधसिहकी मृत्युका वृत्तान्त कर्नल टाड् साहबके दूसरी बारके भ्रमण वृत्तान्तमे वर्णन किया जायगा।

(२) मित्रके पुत्रके सम्मुख शस्त्र धारण करनेमे लज्जा कैसी? राजपूत जिस पक्षका अवलम्बन करते है उसके लिये सगे पिता पुत्र भी एक दूसरेके सम्मुख शस्त्र धारण करते है आलो—

महाराज रामसिंहने एक गुप्तकार्यके वशीभूत होकर शाहआलमके विरुद्ध आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजने चिरकालसे हाड़ाजातिके सबमे प्रधान नेतारूपसे बादशाहकी सभा तथा सभी स्थानोमे सबसे ऊँचा सम्मान प्राप्त किया था। उसी कारणसे कोटेके महाराजके हृदयमे भयंकर विद्वेषने आश्रय लिया था। कोटेके महाराज रामसिंहने हाड़ाजातिके शिरस्थानीय पदको प्राप्त करने तथा सम्मानपानेकी आशासे ही आजिमका साथ दिया। बुधसिंह शाह आलमके पक्षमे नियुक्त थे, इस कारण आजिमकी विजय होते ही बुधसिंहको दंड दिया जायगा, और उनको अपना प्रार्थित फल मिल जायगा, इसी कारणसे उनके हृदयमे अनेक शंकाएँ उदय होती थी। वास्तवमे जय प्राप्तिके पहिले ही, आजिमने कोटेके महाराज रामसिंहको हाड़ाजातिका शिरमौर कह कर उनको पद और सम्मान दिया था। युद्ध होनेके पहिले कोटेके महाराज रामसिंहने बुधसिंहके निकट इस मर्मका एक पत्र लिखा कि जिससे वह शाहआलमका पक्ष छोडकर आजिमकी ओर आ मिलें, उस पत्रको पाते ही राव बुधसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर यह उत्तर दिया, कि "हमारे पूर्वपुरुषोने रणक्षेत्रमे असीम वीरता प्रकाश करके प्राण त्याग किये है, उसी युद्धभूमिमे मै अपने न्यायके अनुसार बादशाह शाह आलमका पक्ष छोड़कर अपने वंशमे कलंकका टीका लगाना नही चाहता। इसीसे जाजौके रणक्षेत्रमे दोनो बादशाह कुमारोकी समान राजपूत राजाओने भी एक २ के पक्षका आश्रय ले भविष्यमे अपने भाग्यकी उन्नति करनेके लिये नंगी तलवारे हाथमें ले महासंग्रामकी अग्निको प्रज्वलित कर दिया"।

"राव बुधसिंहने रणभूमिमे बादशाह शाहआलमके द्वारा एक प्रधान सेनाके नेता पदपर नियुक्त हो इस प्रकारका अतुलनीय साहस और शूरवीरता प्रकाश की कि उसीसे बादशाह बहादुरशाह आलम रणमे विजय पाय शत्रुओसे शून्य होकर भारतके राज्यसिंहासन पर शोभायमान हुए। दोनो ओरकी राजपूत सेनाओने इस युद्धमे विशेष आघातोको सहन किया। कोटेके हाड़ाजतिके अधिराज रामसिंह और बुन्देलोंके अधिपति दतियाके दलीप यह दोनो ही उस रणभूमिमें आजिमके स्वार्थकी रक्षाके कारण मारेगये। आजिम और बेदारबक्त इन दोनोने भी मृत्युके साथ ही साथ सिंहासनकी आशाको छोड दिया"।

"जाजौके युद्धमे हाड़ावीर बुधसिंहने विशेष वीरता प्रकाश की थी, इसी कारणसे बादशाह बहादुर शाह आलमने उनको राव राजाकी उपाधि दी, और उनको अपना परममित्र बनालिया। बादशाह जितने दिनोतक जीवित रहे उतने दिनो-तक उनकी वह मित्रता अचल रही। बादशाह बहादुरशाहकी मृत्युके पीछे सिंहासन लेनेके लिये राज्यमे फिर हलचल पड़गई। उसी कारणसे औरंगजेबके सभी पोते मारे गये। पीछे फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासन पर बैठते ही बाराके

—चक महाशयने आलोचना अच्छी की पर खेद है कि उन्होंने फिर भी राजपूत जातिके धर्म और स्वभावके मर्मको न जाना।

सैयद दोनो भ्राताओने उनके अधीनमे असीम शासन सामर्थ्य प्राप्त करके राज्यमे घोर अत्याचार कर धन आदिको लूटकर राज्यको नष्ट भ्रष्ट करदिया। सैयदके दोनो भ्राताओने जिस समय बादशाह फर्रुखसियरको सिहासनसे उतार कर उनको मार डालनेके लिये जिस षड्यंत्रजालका विस्तार किया था, उस समयमे स्वयं बूँदीके महाराज यथार्थ राजभक्तकी समान बादशाह फर्रुखका उन नराधम दोनो सैयदोके हाथसे उद्धार करनेके लिये आगे बढ़े। उस उद्धार करनेवाली सेनाके जाते ही हाडा सेनादलके साथ दोनो सैयदोकी सेनाने दिल्लीकी राजधानीमे घोर युद्ध किया। और उस घोरयुद्धमे बुधसिहके चचा जयतसिह तथा और भी बहुतसे सामन्तोने अपने जीवनका बलिदान किया।"

"जाजौकी युद्धभूमिमे कोटा और बूँदी दोनो देशोके राजाओमे जो शत्रुता उत्पन्न हुई, और जिस संग्राममे कोटेके महाराज रामसिह मारे गये, उसी युद्धके समयसे दोनो राजवंशोमे वही शत्रुता प्रबल होगई थी। विशेष करके कोटेके महाराज भीमसिह पिताका बदला लेनेके लिये अपने मनही मनमे बहुत दिनोसे उपाय सोच रहे थे। इस समय सैयदके दोनो भ्राताओको क्रोधित होताहुआ देखकर भीमसिह दोनो सैदयोको संतुष्ट करनेके साथ बदला देनेके लिये राजपूत जातिके जातीय धर्मको भूलकर अत्यन्त कापुरुषोकी समान अभिनय करनेको तय्यार हुए। राव राजा बुधसिह इस समय दिल्लीकी राजधानीके वहिर्देशमे स्थित अपने घोड़ोको शिक्षा दे रहे थे। उस समय कोटेके महाराज भीमसिह ठीक समय विचारकर अपने अनुचरोके साथ वहाँ जाय राव राजा बुधसिहको पकड कर उन्हे दोनो सैयदोके हाथमे देनेके लिये तैयार हुए। यद्यपि उस समय बुधसिहके साथ बहुत थोड़े सेवक थे तथापि उन्होने बुधसिहको घिरा देख कोटाके महाराजके साथ युद्ध करते २ निर्विघ्नतासे उनकी रक्षा की थी। राव बुधसिहने देखा कि इस समय दोनो सैयद अत्यन्त बलवान् होगये है, बादशाह फर्रुखसियरके उद्धारका अब कोई उपाय दृष्टि नही आता, तब अन्तमे वह अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानी छोड़कर भाग गये। बहुत थोड़े दिनोके पीछे ही बादशाह फर्रुखसियरको दोनो सैयदोने मार डाला, राज्यके चारोओर अशान्तिका राज्य होगया, इस समय उन पिशाच बुद्धि दोनो सैयदोंका यह लोमहर्षण कार्य देख कर अपने २ प्राणकी रक्षा करनेके लिये एक २ करके सभी देशीय राजा अपने २ राज्योको चले गये।"

उक्त इतिहासमे वर्णन किया गया है कि "इस समय आमेरके महाराज जयसिहने बूँदीके महाराज बुधसिहको सिहासनसे उतारनेके लिये चेष्टा की। राव बुधसिह इस समय आमेरके महाराजके यहाँ आतिथ्यता स्वीकार कर उनके यहाँ स्थितिकर रहे थे। आमेरके महाराजके साथ बुधसिहके झगड़ेका कारण यह था कि राव बुधसिहने जयसिहकी एक भगिनीके साथ विवाह किया था। और पहिले यह बात स्थिर हो चुकी थी कि जयसिंहकी उसी भगिनीके साथ बादशाह बहादुरशाह आलमका विवाह होगा। परन्तु जाजौके युद्धमे बुधसिहके अतुलबल प्रकाश करनेसे

बादशाह शाहआलम अपने मित्र बुधसिंहसे अत्यन्त ही संतुष्ट हुए, और अपने साथ उस सुन्दरी राजकुमारीका विवाह न करके बुधसिंहके साथ उसका विवाह करनेके लिये कहा। जयसिंहने शीघ्र ही बादशाहकी आज्ञानुसार बुधसिंहके साथ अपनी बहिनका विवाह करदिया। दुर्भाग्यसे जयसिंहकी भगिनीके कोई पुत्र नहीं हुआ। पहिले बुधसिंहने मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोंमे बेगूके काला मेघकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उस रानीके गर्भसे बुधसिंहके दो सन्तान उत्पन्न हुई थी उन छोटे २ सौतेले लड़कोंको देखकर जयसिंहकी भगिनीके मनमे ईर्षाकी आग भड़क उठी। बुधसिंहके परदेश चले जाने पर जयसिंहकी उस भगिनीने अपनेको गर्भवती कहकर प्रकाशित किया। और एक छोटेसे लड़केको गुप्तभावसे लेकर, मेरे गर्भसे यह कुमार जन्मा है, यह सबमे प्रगट कर दिया। जब राव बुधसिंह अपनी राजधानीमे आये तब तुरन्त ही उनको वह पुत्र खिलानेके लिये दिया। बुधसिंह यह समस्त वृत्तान्त जान गये, और रानीके इस आचरणसे महा क्रोधित हुए। अपने उन दोनो पुत्रोंके इससे अनिष्ट होनेकी संभावना विचार कर उन्होने यह समस्त समाचार जयसिंहको लिख भेजा। महाराज जयसिंह यह समाचार सुनकर महा क्रोधित हो अपनी सौतेली बहिनका तिरस्कार करने लगे। परन्तु उनकी बहिन उनके इस तिरस्कारसे कुछ भी लज्जित न हुई, वरन उसने समझा कि स्वामी महाराज बुधसिंह और भ्राता जयसिंहने मेरे सतीत्वमे सन्देह किया है अथवा इसने छल करके दूसरेके पुत्रको अपना पुत्र बनाया है उनको यह दृढ विश्वास होगया है, यह अनुमान करके वह उसी समय अपने भाई जयसिंहकी कमरसे तलवार निकाल कर उन्हीका संहार करनेके लिये तैयार हुई। तब जयसिंहने तुरन्त ही वहाँसे भागकर अपने प्राणोको बचाया"।

बूँदीके इतिहासमे आगे लिखा है कि बुधसिंह तथा उक्त भगिनीके द्वारा अपमानित होकर आमेरके महाराज जयसिंहने राव बुधसिंहको बूँदीके सिंहासनसे उतारनेके लिये दृढ़ प्रतिज्ञा की। जयसिंहने सबसे पहिले बूँदीके प्रधान सामन्त इन्द्रगढ़के अधीश्वर देवसिंहको बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। इसमे राजभक्त देवसिंहने सब प्रकारसे अपनी असम्मति प्रगट की। पीछे जयसिंहने करवरके सामन्त सालिमसिंहको बूँदीका राजपद देना चाहा, उन्होने उसके ग्रहण करनेमे कुछ भी असम्मति प्रगट न की। सालिमसिंह बूँदीके राव बुधसिंहके अधीन सामन्त तथा तारागढके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि महाराज जयसिंह अपने बहिनोई बूँदीराज राव बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये तैयार हुए थे, यह उनका और भी एक चिर अभिलाषित राजनैतिक षड्यंत्रका अंशमात्र था, इस समय महाराज जयसिंह मुगल-बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे मालवा अजमेर और आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे। उन्होने उस महान् ऊँचे पदपर स्थित होकर आस पासके निवासी अन्यान्य

राजाओंके ऊपर अपनी प्रवल सामर्थ्यका विस्तार कर उनको अपने अधीनमें करनेकी अभिलाषा की, विशेष करके दिल्लीका सिंहासन लेनेसे इस समय मुगल सम्राट् वंशमें आत्म विग्रह उपस्थित होनेके कारण महाराज जयसिंहने इस सुअवसरमें अपनी बहुत दिनोंकी इस अभिलाषाको पूर्ण करनेका विचार किया। शीघ्र ही बादशाह फर्रुखसियरके सिंहासनसे रहित होते ही महाराज जयसिंहने अपने उस आशयको सफल करनेका यथार्थ अवसर जानकर दिल्लीसे अपने राज्यमें आकर कार्य करना प्रारंभ किया"।

इस समय आमेरराज्यकी भूमिका परिमाण बहुत थोड़ा था, सबसे पहिले महाराज जयसिंहने अपने राज्यकी सीमाके जितने भी देश थे उन सबको अपने अधिकारमें करनेका विचार किया। और दूसरी ओर जिन छोटे २ राजाओंकी सेना मुगलबादशाहकी आज्ञानुसार महाराज जयसिंहके अधीनमें नियुक्त थी, जयसिंहने उनको अपने अधीन पदपर वरण कर लिया।

पूर्व वर्णित युद्धमें आमेरराजकी सीमामें लालसोढके पचवाना चौहान, गोरा, नीमराणा इत्यादि अनेक अनधीन सामन्त थे। वह जयपुरके महाराजको न तो कर देते थे और न उनके अधीनमें कोई कार्य करते थे, परन्तु आवश्यकतानुसार उस प्रत्येक सम्प्रदायमें अपनी २ सेनाके साथ आमेरके अधीनमें मिलकर रणभूमिमें जाते थे, परन्तु सेखावाटीके सामन्त उस प्रकारसे सेनाके साथ आमेरके महाराजके साथ नहीं मिलते थे। राजौरके बड़गूजर और बियानाके जादौ इत्यादि प्राचीनकालके सामन्त गण भी पहिलेकी समान स्वाधीनभावसे रहते थे, परन्तु मुगलोंके शासनके पतन समयमें उन्होंने शत्रुओंके कराल ग्राससे रक्षा करनेमें अपनेको असमर्थ जानकर अन्तमें अपने २ उन प्राचीन स्वाधीन देशोंको आमेर राजके अधीनमें स्वीकार कर उनकी आज्ञा पालन और आवश्यकतानुसार सेनाकी सहायता करना स्वीकार किया था। यद्यपि महाराजने उक्त अधीश्वरोंको अपने हस्तगत करलिया था, परन्तु उन्होंने उसी प्रकार सरलतासे बूंदीके महाराजको हस्तगत कर अपनी अनभिज्ञताका परिचय दिया। बिना रुधिर बहाये बूंदीके महाराज राव बुधसिंहको अपने अधीनताकी जंजीरमें बांधना कठिन जानकर महाराज जयसिंह बुधसिंहको सिंहासनसे उतारकर उनके पदपर अपने अभिलाषित मनुष्यको अभिषिक्त करनेमें प्रवृत्त हुए।

जिस समय महाराज बुधसिंह अपने साले जयसिंहकी राजधानी आमेरमें उनकी आतिथ्यता स्वीकार करते थे, उस समय जयसिंह गुप्त षड्यंत्रजालका विस्तार करके बुधसिंहके सर्वनाश करनेकी चेष्टा कररहे थे। सबसे पहिले जयसिंहने बुधसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया, "कि आप जो आमेरराज्यमें निवास करते रहें, तो मैं प्रतिदिन आपको तथा आपके सेवकोंके लिये पाँचसौ रुपया देता रहूँगा।" बुधसिंहके चचा जयतसिंह जो आगरेके चौकमें सैयदोंकी सेनाके साथ संग्राममें मारे गये थे, और जिन्होंने अपना जीवन देकर बुधसिंहके प्राणोंकी रक्षा की थी, उनके

एक भ्राता इस समय बुधसिंहके साथ जैपुरमे निवास करते थे। जयसिंहने जो यह प्रस्ताव उपस्थित किया; उसका गुप्त उद्देश क्या था इसको वह भलीभाँतिसे समझ गये। उन्होने शीघ्र ही इस भावका एक पत्र बूँदीको भेजा, कि बेगूवाली रानी (बुधसिंहने बेगूके जिस सामन्तकी कन्याके साथ विवाह किया था) शीघ्र ही अपने पुत्रोके साथ अपने पिताके यहाँको चली जायँ। कुछ दिनोके पीछे उन्होने बुधसिंहके समस्त अनुचरोंको अत्यन्त गुप्तभावसे जैपुरके बाहर इकट्ठा करके बुधसिंहकी समस्त विपत्तियोका समाचार कह सुनाया। राव राजा बुधसिंह जयसिंहकी विश्वासघातकता और मारनेकी चेष्टा जानकर शीघ्र ही तीनसौ हाड़ा सेनाको साथ ले जैपुरके बाहर हुए। यद्यपि उनके साथ उस समय केवल तीनसौ सैनिक थे तथापि उस वीरके हृदयमे इस समय इस प्रकारकी प्रबल आशा विराजमान थी कि इस तीनसौ सेनाकी सहायतासे ही मै इस महाविपत्तिसे अपना उद्धार करसकूंगा। राव राजा बुधसिंहने उन तीनसौ अनुचरोके साथ अपनी राजधानी बूंदीकी ओरको यात्रा प्रारभ कर दी। परन्तु उनके पंचोला स्थानमे जाते ही आमेरराज जयसिंहकी पूर्व आज्ञानुसार जैयपुरके प्रधान पाँच सामन्तोंने सेनासहित राव राजा बुधसिंह पर आक्रमण किया। वह तीनसौ सैनिक शीघ्र ही शत्रुओकी सेनाके द्वारा घेर लिये गये। राव बुधसिंह उस विपत्तिसे कुछ भी भयभीत न हुए। उस बहुत थोड़ी सेनाके साथ उन्होने युद्ध करना प्रारंभ किया। उन राजपूतोंने युद्धमे अपनी २ वीरताकी पराकाष्ठा दिखानेमे किसी भाँतिकी कसर न की, परन्तु राव राजा बुधसिंह असीम साहसी केवल तीनसौ हाडासेना साथ लेकर इस प्रकार महा पराक्रमके साथ युद्ध करने लगे। जैपुरके उक्त ईशरदा, सेवाड़ और भावर इत्यादि स्थानोके पाँच सामन्त और उनके अधीनकी नीची श्रेणीके बहुतसे सरदार मारे गये। आजतक उन सामतोके समाधिमंदिर उस स्थानमे विराजमान होकर बुधसिंहकी प्रतिहिंसाकी साक्षी देरहे है। परन्तु उपरोक्त युद्धमे राव बुधसिंहके उक्त चचा भी मारे गये। इस समय बुधसिंहकी सेनाकी संख्या बहुत घट गई थी, इससे वह उस थोड़ीसी सेनाकी सहायतासे शत्रुओकी सेनामेसे निकल बूँदीमे न जासके, इसीसे वह निर्विघ्नतासे पहाडी रास्तेसे चले गये। जयसिंहने इस प्रकारसे राव बुधसिंहको भगाकर कारड़के सामन्त दलेलसिंहके साथ अपनी कन्याका विवाह करके उनको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया।

"इसका वर्णन तो पहिले ही करचुके है कि कोटाराजवंशके साथ बूँदीके राजवंशकी घोर शत्रुता होगई थी। यद्यपि दोनो राजवंशोका जन्म एक ही मूलसे हुआ था, और बूँदीका राजवंश श्रेष्ठ तथा कोटेका राजवंश छोटा था, यद्यपि दोनो राजाओकी नाड़ियोंमे एकही रुधिर बहता था, परन्तु जातिमे वैरभावके कारण एक दूसरेका विनाश करनेमे विशेष तत्पर थे। राव बुधसिंहको महाविपत्ति ग्रस्त देखकर कोटेके महाराज भीमसिंह इस समय अत्यन्त आनन्दित हो मारवाडके अधीश्वर महाराज अजितसिंह और दिल्लीके बादशाहके दोनो सैयद मन्त्रियोके साथ दृढ़ मित्रता करके उनकी सहायतासे भरवार, हाड़ोती इत्यादि देशोमे अपनी प्रधानता विस्तार करनेमें लगे। उन्होने इस

समय निर्भय हो चम्बलनदीको अपने राज्यकी सीमामे निर्देश करके उक्त नदीके पूर्व तीरवर्ती बूँदी राज्यके खास अधिकारी देशके पृथ्वीके भागोंको शीघ्रतासे कोटेके राज्यके अधिकारमे करलिया ”।

राव बुधसिहको इस प्रकारसे चारोओरसे शत्रुओने घेर लिया, यह महाविपत्तिके समुद्रमे मग्न होकर राजपूत जातिके स्वाभाविक पराक्रमके साथ अपने पिताकी राजधानी पर फिर अधिकार करनेके लिये बारम्बार चेष्टा करने लगे। अधिक क्या, इसी कारणसे बारम्बार युद्ध हुआ और उन युद्धोमे वहुतसी हाड़ा सेना मारी गई। परन्तु अभागे बुधसिहका किसी प्रकार भी मनोरथ सिद्ध न हुआ। अन्तमे मनके दुःखको मनहीमे रखकर सुसरालमे ही निवास करनेके पीछे उन्होने प्राण त्याग दिये। राव बुधसिहने दो पुत्र छोड़े, वड़ेका नाम उमेदसिह और छोटेका नाम दीपसिह था।

राव बुधसिहके परलोक जानेके पीछे उनके दोनो कुमार भी महाविपत्तिके मुखमे पड़े। उनके वंशके शत्रु आमेरके महाराज जयसिहकी आज्ञानुसार मेवाडके महाराणाने वेगूदेशको अपने अधिकारमे करके उमेदसिह और दीपसिहको मामाके यहांसे निकाल दिया। निःसहाय आश्रयहीन विपत्तिमे पड़ेहुए राजकुमार दोनो बालक उमेदसिह और दीपसिह एकमात्र साहसमे भरकर निर्भयहो अपने पिताके कितनेही वीश्वासी सेवकोंको लेकर पुचैल नामक गहन देशको चले गये। कुछ दिनोके उपरान्त कोटेके महाराज भीमसिहके प्राण त्याग करते ही राजा दुर्जनशाल कोटेके सिहासन पर अभिषिक्त हुए। अनाथ उमेदसिंह और दीपसिहने उस विपत्तिमे पड़कर कही भी सहायताकी आशा न जान अन्तमे अपनी जातिके उक्त दुर्जनशालके निकट अपनी वह शोचनीय अवस्था सुनाकर उनसे सहायताकी प्रार्थना की। कोटेके महाराज दुर्जनशाल अत्यन्त उदार और दयालु हृदय थे उन्होने जातिके वैरभावको भूलकर उमेदसिह और दीपसिहका उद्धार किया, वरन वह इतना करके भी शान्त न हुए जिससे इनको फिर बूँदीका राज्य मिलजाय, इसमे भी उनकी सहायता करनेमे तत्पर हुए,।

चतुर्थ अध्याय ४.

उमेदसिहका जयपुरकी सेनाको परास्त करना–डबलाना नामक स्थानमे युद्ध–उमेदकी पराजय और भागना–उनके घोडेकी मृत्यु–चम्बलके ध्वंसस्तूपमे उमेदका आश्रय लेना–उमेदका बूँदीको जय करना–फिर बूँदीसे उमेदका भागना–उनकी विमाताका उमेदके साथ साक्षात् होना–उक्त विमाताका हुलकरसे सहायता मागना–हुलकरका उमेदको बूँदीके सिहासन पर अभिषिक्त करनेकी प्रतिज्ञा करना–युद्धके लिये तैयार होना–जयपुरके महाराजका उमेदको बूँदीका महाराज कहकर स्वीकार करना–उमेदको बूँदीके राज्यकी प्राप्ति होना–महाराष्टोका अत्याचार करना–इन्द्रगढ के अकृतज्ञ सामन्तोका प्राण नाश–उमेदका राज्य त्याग करना–अजितसिंहका अभिषेक–पितामह

उमेदसिहके प्रतिपोते विष्णुसिहका अविश्वास प्रकाश करना-फिर परस्परमे मिलन होना-हाडोती राज्यको छोडकर अंग्रेजी सेनाका भागजाना-उमेदका उस सेनाकी सहायता करना-उमेदसिहकी मृत्यु-बूँदीके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका संधिबंधन-संधिपत्र-विष्णुसिहके प्रति गवर्नमेण्टका अनुग्रह प्रकाश करना-विष्णुसिहकी मृत्यु-उनके चरित्रोंकी समालोचना करना-राव राजा रामसिहका अभिषेक--

संवत् १८९० सन् १७४४ ईस्वीमे जिस समय उमेदके पिताके शत्रु महाराज जयसिहने प्राण त्याग किये थे, उस समय उमेदसिहकी अवस्था केवल तेरह वर्षकी थी-जब उमेदसिहने जयसिहकी मृत्युका समाचार पाया तब उस बालावस्थामे ही उन्होने असीम साहसके साथ अपनी जातिके बहुत थोड़े अनुचरोके साथ बाहर जाकर सबसे पहिले पाटन और गेनोली दोनो देशोपर आक्रमण करके अपना अधिकार करलिया। जब इस बातका सर्वत्र हाड़ोती देशमे प्रचार होगया कि बूँदीके मृतक महाराज बुधसिहके बालक पुत्र उमेदसिह अपने पिताके अधिकारको सग्रह करनेके लिये बाहर हुए है, तब प्राचीन हाडाजातिके दलके दल चारोओरसे आकर उमेदकी विजय पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। कोटेके उदारचित्त अधीश्वर दुर्जनशालको जब यह समाचार ज्ञात हुआ कि एक तेरह वर्षका बालक उमेदसिह राजपूतवीरकी समान राजनैतिक रगभूमिमे आकर वीरता दिखारहा है, तब उन्होने तुरन्त ही महा आनदित होकर उमेदकी सहायताके लिये अपनी सेनाको भेज दिया।

जयसिहकी मृत्युके पीछे महाराज ईश्वरीसिह जयपुरके सिहासन पर विराजमान होकर पिताकी निर्दिष्ट राजनैतिक नीतिको चलानेमे प्रवृत्त हुए। उन्होने विचार किया कि हाडाजातिकी श्रेष्ठशाखा बूँदीके राजवंशकी समान छोटीशाखावाले कोटेके राजवंशको भी अवश्य ही जैपुरकी अधीनता स्वीकार करनी होगी। कोटेके महाराज दुर्जनशाल जयपुरके महाराज ईश्वरीसिहकी उस अन्यायकारी ऊँची अभिलाषाके प्रति घृणा दिखाकर उमेदकी सहायता करनेमे प्रवृत्त हुए, ईश्वरीसिहने शीघ्र ही कोटेके महाराजके विरुद्ध युद्ध करनेका विचार कर कोटेराज्यपर आक्रमण किया। इस कोटेके आक्रमणका शेष फल क्या हुआ, वह इस बूँदीके इतिहासमे प्रकाशित नहीं किया गया, वह हमारे पाठकोको कोटेके इतिहासमे मिलेगा।

ईश्वरीसिहने कोटेसे भागनेके समय एक दलवृद्ध लोहारी नामक पन्थी सेनाका नामक जिस स्थानमे उमेदसिह जारहे थे वहा उनपर आक्रमण करनेके लिये भेजा उस लोहारीनामक स्थानके मीनाजाति उक्त पहाड़ी देशके आदिमनिवासी थे, यद्यपि हाड़ाजातिने उनकी स्वाधीनता हरण करली थी तथापि उन मीनागणोंने हाडाराजके अनेक समय पर बहुतसे उपकार किये थे तथा वे उनके साथ युद्धोमे भी गये थे।बालक उमेदसिह की विषम वीरता और साहसको देखकर तथा उनकी शोचनीय दुर्दशा देखकर उस मीना जातिका हृदय भी इनकी ओरको खिच गया। पाँच हजार धनुषधारी मीना उमेदसिहका पक्ष समर्थन कर उनकी सहायता करनेके निमित्त इकट्ठे होकर उमेदसिहके अधीनमे युद्ध-

भूमिमे जानेके लिये विशेष आग्रह प्रकाश करने लगे। वीर बालक उमेदसिहने उस मीना सेनाकी सहायतासे महा पराक्रमके साथ अग्रसर विचोरीनामक स्थानमे शत्रु-ओके साथ समरानल प्रज्वलित कर दी। मीनाजाति अपने प्रबल पराक्रमसे शत्रुओके ऊपर जाकर जिस समय उनके डेरोंको लूटने लगी उस समय उमेदसिह नगी तलवार हाथमें लेकर हाड़ासेनाकी सहायतासे जयपुरकी सेनादलपर आक्रमण करके उसका संहार करने लगे। उस समय अगणित शत्रुओकी सेना मारी गई। उमेदसिहने रण डंके और राजपताका पर अधिकार कर लिया। अंतमे जयपुरका सेनादल उस बालक वीरसे परास्त होकर अपने प्राणोके भयसे भाग गया।

जैपुरके महाराजने उस वीर बालक उमेदसिहकी वीरताका समाचार सुनकर तथा अपनी सेनाकी पराजय सुनकर उमेदसिहको एकबार ही परास्त करनेके लिये नारायणदास खतरीके अधीनमे फिर अठारह हजार सेनाको भेजा। विचोरीनामक स्थानके युद्धमे जय प्राप्त करके उमेदसिह भविष्य आशाको अलक्ष्यमे देखने लगे। जिस हाडाजातिके सामन्त वीरोने अबतक सहायता नही की थी उमेदसिहकी जयप्राप्तिसे वही इस समय महा आनंदित होकर दलके दल उनके साथ आकर मिलने लगे। उमेद-सिह इस समय पिताके सिहासनको पानेके लिये इतने उत्तेजित हुए थे कि उन्होने उस महा युद्धमे प्राणतक भी उत्सर्ग कर देनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस समय जयपुरके महा-राजकी भेजीहुई अठारह हजार सेना डबलाना नामक स्थानमे आकर इकट्ठी हुई। युद्धकरनेके पहिले उमेदसिह कुलदेवी आशापूरा माताके मंदिरमे गये और भलीभांतिसे पूजा तथा प्रार्थना करके लौट आये, परन्तु मंदिरसे लौटते समय यह प्रतिज्ञा की कि क्या तो बूंदी पर ही अपना अधिकार होगा और नही तो मै रणभूमिमे अपने प्राण खो दूंगा।

असीमसाहसी हाड़ा दलने भी उमेदकी समान प्रतिज्ञा की कि क्या तो विजय ही होगी नही तो युद्धक्षेत्रमे प्राण त्याग करेगे। दिल्लीके बादशाह जहाँगीरने बूँदीके अधीश्वर राव रतनको जो राजपताका दी थी; उमेदसिह इस समयके युद्धमें उस पताकाको लेआये थे, हाडा सेनादल बूँदीकी उस प्राचीन राजपताकाके अधीनमे शीघ्र ही इकट्ठा हुआ, सम्मिलित हाडादलने संहारमूर्तिसे डबलाना सीमाको लांघते ही देखा कि प्रवल शत्रुओकी सेना उनको आक्रमण करनेके लिये आगे आरही है। वीरश्रेष्ठ उमेद-सिह शत्रुओकी सेनाको अधिक देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन अपनी सेनाको चक्राकारसे सजाकर भाला हाथमे लेकर शत्रुओके व्यूहको भेदनेके लिये आगे वढ़े। शीघ्र ही दोनो सेनाओका परस्पर मुकाबला होगया। परन्तु हाडादलने इस प्रकार असीम साहसके साथ अपना अतिम वल प्रकाश करके शत्रुओके व्यूहपर आक्रमण किया कि वह प्रवल शत्रुओकी सेना दृढ़ दल बाँधकर भी इस समय छिन्न भिन्न होगई, परन्तु कुछही कालके पीछे शत्रुओकी सेनाने फिर एक दल बाँधा, और उमेद-सिहके जानेके मार्गमे भयंकर गोले वर्षाने लगी, परन्तु उमेदने उन गोलोंकी वर्षापर

कुछ भी ध्यान न दिया फिर नंगी तलवार हाथमे लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। हाडासेनाने केवल तलवारसे ही शत्रुओंकी सेनाका संहार किया। परन्तु हाडादलने जितनी वार जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, उतनी ही वार उसकी अधिक हानि हुई। प्रथम आक्रमणमे उमेदसिहके मामा पृथ्वीसिह मारे गये। इसके पीछे मोटराके महाराज मर्जादसिह नामक हाडाजातिके अधीश्वरके जिस समय जयपुरके सेनापति नारायणदास खतरीके मस्तकको काटनेके लिये चक्रमे भेजा था, उन्होने भी उसी समय रणभूमिमे जाकर शयन किया। सारनके सामन्त प्रागसिह तथा अन्यान्य नीचीश्रेणीके वीर भी धीरे २ प्राण त्याग करने लगे। अपने प्रधान २ वीरोके मारे जाने पर भी वह अल्पवयस वालक वीर उमेदसिह कुछ भी भयभीत न हुए। वरन अपना अतुल वल विक्रम प्रकाश करते हुए शत्रुओका सहार करने लगे। परन्तु अतमे अपने दुर्भाग्यसे उमेदसिहका घोडा गोलेके आघातसे घोररूपसे घायल हुआ, उसकी देहसे रुधिरकी धारा वहने लगी। बूँदीके इतिहासलेखकने लिखा है कि यद्यपि उमेदसिह तथा उनकी सेनाने घोररूपसे वलविक्रम प्रकाश किया था परन्तु अन्तमे शत्रुओंकी सेनाके अधिक होनेसे शीघ्र ही इनकी पराजय होगई। वीर सामन्तोने उमेदको शत्रुओंके मुखमे पडाहुआ देखकर कहा, कि "यदि आपका प्राण रहैगा तो किसी न किसी समय अवश्य ही बूँदी पर अपना अधिकार होजायगा, और यदि अपने ही इस रणभूमिमे अपने प्राणोका वलिदान किया तो सभी आशाए लोप होजायँगी, इस लिये आप युद्ध करना छोड दीजिये।

इतिहासलेखकने लिखा है कि वरिश्रेष्ठ उमेदसिंहने महाशोकित और दुःखित होकर शीघ्र ही युद्धभूमिको छोड दिया। उमेदसिह हताश होकर अपनी वचीवचाई सेनाको साथ लेकर सवाली नामक घाटी मार्गसे आये, इन्द्रगढको वहुत पास जानकर उस घायल हुई घोड़ीको विश्राम करानेके लिये आप उसपरसे उतर पड़े। परन्तु जैसे ही इन्होने उसका साज खोला कि वैसे ही उसने प्राण त्याग दिये। वीरश्रेष्ठ उमेदसिहका हृदय शोकके आघातसे चलायमान हुआ, विचारे उमेद उस घोडीके सिरहाने वैठकर रुदन करने लगे। उस घोडीका नाम हुजा था, वास्तवमे वह घोडी अधिक सम्मानके योग्य थी। यह घोड़ी ईरान देशकी थी, दिल्लीके वादशाहने उमेदके पिता वुधसिहको वह घोडी उपहारमे दी थी और वुधसिहने उस पर चढकर बहुतसे युद्धोमे विजय प्राप्त थी"। फिर जो उस घोडीका शोक हाडाराज उमेदसिहने इस प्रकारसे किया तो इसमे कुछ आश्चर्य नही ? कर्नल टाड् साहव लिखते है कि "भविष्यतमे उमेदसिंहने बूँदीके सिंहासनको प्राप्त कर सबसे पहिले इस घोडोकी एक सुन्दर पत्थरकी मूर्ति वनवा कर बूँदीकी राजधानीके चौकमे स्थापित की। प्रत्येक हाडाजातिके वीरने ही उस मूर्तिका महान् ऊँचा सम्मान किया था"[1]।

---

(१) कर्नल टाडू साहवने अपने टीकामें लिखा है कि "मैंने हुंजाकी मूर्तिको देखकर उसको सलाम किया था। यदि मै हाडाजातिमे निवास करता तो राजपूतोके प्रत्येक युद्धके उत्सवके समय मे हाड़ाजातिकी समान मै भी उस मूर्तिके गलेमे माला पहराता"।

महा दुःखित हो उमेदसिह इन्द्रगढ़मे आये। यह इन्द्रगढ़ बूँदीके प्रधान सामन्तो के अधिकारमे था। इन्द्रगढपति उमेदके पिताके आज्ञावाहक अधीन सामन्त थे, इन्होने राजभक्तिके मस्तक पर कुठाराघात करके विश्वासहन्तास्वरूपसे आमेरके महाराजकी अधीनता स्वीकार की थी। उमेदसिह इनके पास गये, इन्द्रगढ़के महाराजका सम्मान दिखाना तो दूर रहा वरन उन्होने अत्यन्त नराधमकी समान उमेदसिहकी प्रार्थनानुसार उनको एक घोड़ा भी नही दिया, वरन उनको शीघ्र ही इन्द्रगढ छोड़देनेके लिये कहा। उमेदसिह इन्द्रगढके अधिपतिके इस व्यवहारसे अत्यन्त दुःखित और क्रोधित हो मनका क्रोध मनहीमे रखकर इन्द्रगढमे जलतकको भी ग्रहण न करके करवान देशकी ओरको चले गये। उस देशके अधीश्वर इन्द्रगढ़के महाराजकी समान अराजभक्त विश्वासहन्ता नही थे। वह उमेदसिहके आनेका समाचार सुनते ही बडी प्रसन्नतासे आगे वढ उनको वडे सम्मानके साथ ग्रहण करके अपने यहां लिवा लाये, और एक घोड़ा देकर वह अपनी सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करनेके लिये भी तय्यार हुए। उमेदसिहने उस समय देखा कि इस समय शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके साथ युद्ध करना असंभव है तो जितने विश्वासी हाड़ाजातीय वीर इनके पास थे उन सबको यह कहकर विदा दी कि "इस समय अपने२ स्थानको जाओ फिर सुअवसर आनेपर आपकी सहायता ग्रहण करूंगा।" उमेदसिह इस प्रकारसे सबको विदा करके चम्बलके किनारे रामपुरा नामक स्थानके प्राचीन विध्वस्त महलमे जाकर रहने लगे।

परन्तु वीरतेजस्वी उमेदसिहको उस भावसे अधिक दिनतक रहना नही हुआ। कोटेके महाराज उदार हृदय दुर्जनशालने कि जिन्होने अपने प्रवल पराक्रमसे आमेरके महाराज ईश्वरीसिह और उनके सहयोगी महाराष्ट्रनेता आपाजी सेधियाके करालग्राससे कोटेराज्यकी रक्षा तथा अतमे ईश्वरीसिह और आपासिंधियाको परास्त कर भगादिया था इस समय उन्होने सवसे अधिक उमेदसिहकी सहायता की। इधर हाड़ावतीके एक ऊंची श्रेणीके कविने उस वालक उमेदसिहका पराक्रम और साहस देखकर अत्यन्त मोहित हो जिससे वीरश्रेष्ठ उमेदसिहको उनके पिताका सिहासन मिलजाय इसमे विशेष यत्न किया। राजपूतकविके हाथमे केवल लेखनी ही शोभा नही पाती थी वरन तलवार भी भलीभाँतिसे उसके करकमलमे शोभायमान होती थी। लेखनीकी समान तलवारके चलानेमे भी राजपूत कवियोको अभ्यास था। वह राजपूतकवि एक ओर तो लेखनीके वलसे इस प्रकार हृदयको उत्तेजित करनेवाली वीर गाथावलीमे उमेदकी वीरताका अभिनयरूपी काव्य वनाकर हाड़ाजातिको उत्तेजित करने लगे, और दूसरी ओर वह उसी प्रकारसे स्वय अपनी तलवारके वलसे उमेदके सौभाग्यके सूर्यको उदित करनेके लिये आग्रहके साथ कार्य क्षेत्रमे चले। उन कविकी प्रार्थना पर कोटेके महाराज दुर्जनशालने शीघ्र ही अपनी सेनाको उन कविश्रेष्टके अधीनमे बूँदीको जीतनेके लिये भेजा। वीरतेजस्वी उमेदसिहने फिर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये अपने कुटम्वी जनोके साथ कोटेकी सेनाका योग देकर नवीन अवस्थामे संहारमूर्तिसे शत्रुओका पीछा किया।

निरन्तर घोरयुद्ध होनेके कारण बूँदीके नगरकी दीवारै एक प्रकारसे विध्वंस होगई थी। विश्वासघाती अराजभक्त दलेलसिंह जिनको जयसिंहने बूँदीके सिंहासन पर अभिषिक्त किया था, वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनकर नगरकी रक्षा करनेके लिये वाहर हुए तो थे परन्तु किसी प्रकारसे भी सफल मनोरथ न हुए, वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने वडी सरलतासे नगर पर अधिकार करलिया। अंतमे दलेलसिंह अपनी रक्षा करनेके लिये बूँदीके प्रधान किले तारागढमे चलेगये। उमेदसिंहने तारागढके घेरनेमे किंचित् भी विलंव नहीं किया, जिस वीरकविके कल्याणसे उमेदसिंहने इस भाग्यकी परीक्षा की थी अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि जिस समय सेनादल तारागढपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुआ, उस समय उक्त कविश्रेष्ठ अपने जातिके एक विश्वासघाती मनुष्यके द्वारा मारेगये। उनकी मृत्युका समाचार गुप्त रक्खा गया, इनके शिरके ऊपर एक सफेद चादर उढादी जिससे कोई जान न सके। अन्तमे उमेदसिंह घोर पराक्रमके साथ किलेपर अधिकार करनेके लिये तत्पर हुए, दलेलसिंह महा भयभीत होकर किलेको छोड़कर भागगये और उमेदसिंह किलेके जीतनेके पीछे पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए।

दलेलसिंहने भागकर शीघ्रतासे जयपुरमे जा ईश्वरीसिंहको अपनी पराजयका समाचार सुनाया। जयपुरके महाराज उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए, और शीघ्र ही विख्यात वीरश्रेष्ठ खत्री केशवदासके साथ एक सेनाको फिर बूँदीपर अधिकार करनेके लिये भेजा। उमेदसिंहने उस विध्वंस हुए नगरकी दीवारो तथा किलेकी मरम्मत करानेका अवसर न पाकर आमेरकी सेनाके आनेका समाचार पाकर महायुद्ध आरंभ किया। यद्यपि उमेदसिंह वडे कष्टसे बूँदीको जयकर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए थे परन्तु वह समयके न मिलने पर उचित तैयारी न करसके, इसी कारण सरलतासे आमेरकी शिक्षित सेनाने उस युद्धमे जय प्राप्त की। यद्यपि आमेरकी राजपताका फिर बून्दीके किलेके शिखरपर उड़ी परन्तु आमेरके महाराजकी ओरसे जव दलेलसिंहको फिर बूँदीके सिंहासन पर वैठानेका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, तव दलेलसिंह पहिले कलंकको स्मरण करके फिर राजसिंहासनपर बैठनेके लिये किसी प्रकार भी राजी न हुए।

उमेदसिंह फिर दुर्भाग्यरूपी अगाध समुद्रके जलमे निमग्न हुए। इन्होने पिताके सिंहासन पर अधिकार करनेके लिये मारवाड और मेवाडके महाराजसे सहायता माँगी। परन्तु किसीने भी इनको सहायता न दी, जिन विश्वासी सेवकोने इस समय तक उमेदसिंहका साथ नहीं छोड़ा था उमेदसिंह उन्हीका दल वाँधकर निरन्तर गतिसे बूँदीके सिंहासन पर अन्यायसे बैठेहुए मनुष्यका अनिष्ट साधन करने लगे। ग्रामोको लांघते हुए अंतमे अपने पिताके राज्यमे जा पहुँचे। जिस समय यह उस कार्यमे दत्तचित्त हो विनोदियानामक ग्राममे आये। इसी ग्राममे इनके पिता तथा इनकी सम्पूर्ण विपत्तियोको पहुँचाने वाली सौतेली माता

जयसिहकी भगिनी निवास करती थी । उक्त कछवाही रानीने अपने दोषसे अपने स्वामी और सौतेले पुत्रका सर्वनाश किया, इस दुःखसे महा दुःखित होकर मनके दुःखको मनहीमे रखकर समय व्यतीत करती थी । उमेदासिहने माताका वहाँ निवास सुनकर शीघ्र ही उनके साथ साक्षात् कर चरणवंदना की । उमेदको देखते ही महारानीके मनमें अनुतापकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित होगई । उमेदकी ऐसी शोचनीय अवस्था तथा ऐसा कष्ट देखकर रानीके हृदयमे स्वभावसे ही दुःख और सहानुभूति उत्पन्न होनेलगी । रानीने इतने दिनोके पीछे परितापानलसे विदग्ध हुये हृदयमे चिन्ता करनेके पीछे स्थिर किया कि एकमात्र उसीके व्यवहारसे जिस प्रकार बूँदीके राजवशका सर्वनाश हुआ है उसी प्रकार अपनी सामर्थ्यके अनुसार बूँदीके राजवंशकी अवस्थाका परिवर्तन करना उनके पक्षमे एकान्त कर्त्तव्य है । रानीने उमेदासिहके साथ बहुतसी बात चीत करनेके पीछे निश्चय किया कि तुम स्वय दक्षिणमे जाकर महाराष्ट्रनेतासे सहायता मांगो । और जिससे उमेदासिहको महाराष्ट्रोकी सहायतासे पिताका सिहासन प्राप्त हो, इसके लिये यथेष्ट चेष्टा करनी होगी । रानी शीघ्र ही उक्त प्रस्तावके अनुसार दक्षिणकी ओर चली, थोड़े दिनोके पीछे ही रानी अपने पुत्रके साथ दक्षिणके महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरके डेरोंमे जा पहुँची । निकाले हुए उमेदसिहके भाग्यको बदलनेके लिये जयसिहकी भगिनी उक्त बुधसिहकी रानीने मेषपाल जातिके हुलकरकी शरणमे जाकर उनसे सहायता मांगी और जिससे हुलकर बूँदीका उद्धार करदे रानीने इसीके लिये हुलकरके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापित किया ।

यद्यपि मल्हारराव हुलकरने नीच वशमें जन्म लिया था परन्तु ऊँचे वशमे उत्पन्न हुए मनुष्यकी समान उसमे अनेक गुण थे; इस कारण वह रानीकी इच्छानुसार बूँदीपर अधिकार करनेके लिये तय्यार हुए । बूँदीके इतिहाससे जानाजाता है कि पहिले वृद्धारानी हुलकरके साथ सेनासहित बूँदीका उद्धार किये बिना ही पहिले उसको जयपुरमे लेगई । आमेरके महाराज ईश्वरीसिहको युद्धमे परास्त किया जायगा तो वह स्वय अपने बराबर तथा प्रतिनिधियोके पक्षसे बूँदीका अधिकार एकबार ही छोडकर सधिपत्र पर हस्ताक्षर करदेगे। इसी लिये रानी सबसे पहिले महाराष्ट्र नेताको जयपुरमे लेगई । आमेरके महाराज ईश्वरीसिह महाराष्ट्रोके आनेका समाचार पाकर युद्ध करनेके लिये सेनासहित राजधानीको छोडकर आगे बढे । ईश्वरीसिहने इससे पहिले अपने मत्री केशवदासकी हत्या की थी । केशवदासके दो पुत्र हरसहाय और गुरुसहाय थे । अतमे यही दोनो भ्राता पिताके हत्या करनेवाले ईश्वरीसिहको उचित दड देनेके लिये इस समय गुप्त षड्यत्रमे लिप्त होकर, ईश्वरीसिह जिससे प्रबल महाराष्ट्रोके साथ युद्धमे प्रवृत्त हो उसकी चेष्टा करते थे । दोनो भ्राताओने ईश्वरीसिहसे कहा कि महाराष्ट्रोकी सेनाकी संख्या अत्यन्त सामान्य है इस कारण आप युद्धभूमिमे जाकर उनको परास्त करिये । परन्तु वास्तवमे महाराष्ट्रोके सेनाकी सख्या सामान्य नहीं थी उन दोनो भ्राताओने केवल ईश्वरीसिंहको विपत्तिमे डालनेके लिये ही उनसे शत्रुओकी सेना–सख्याको सामान्य बताया था । बिचारे ईश्वरीसिह उक्त दोनो

भ्राताओकी बातपर विश्वास करके आमेरके अधीनमे बगरू नामक स्थानतक गये तब जाना कि हम धोखेमे आगये है, हरसहाय और गुरुसहायके प्रति उन्हे जो विश्वास होगया था, उसके उचित फलको निकटवर्ती हाड़ाजातिके एक कविने इस स्थानपर लिखा है,—

मंत्री मोटो मारियो, खतरी केशोदास ।
जवहीं छोड़ी ईशरी, राज करनकी आस ॥

इसका अर्थ यह है कि ईश्वरीसिहने जिस दिन मत्री केशवदासका प्राण नाश किया उसी दिनसे उन्होने राज करनेकी संपूर्ण आशा छोड़ दी थी ।

ईश्वरीसिह बहुत थोड़ी सेना लेकर युद्ध करनेके लिये गये थे, इस कारण शत्रु-पक्षकी सेनाकी संख्या अधिक देखकर उनके साथ युद्ध करना असभव जान आमेरराजने उक्त बगरूदेशके सामन्तके अधिकारी किलेका आश्रय लिया । महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरने शीघ्र ही बगरूके किलेको जा घेरा, ईश्वरीसिह दशदिन तक किलेमे रहे, अन्तमे अपनी रक्षा असभव जानकर शत्रुके साथ संधि करनेको राजी हुए । मल्हाररावके प्रस्तावके अनुसार ईश्वरीसिहने अपनी और भविष्यके उत्तराधिकारियोकी ओरसे बूँदीराज्य पर अपना सब प्रकारसे अधिकार छोडकर बूँदीके संपूर्ण अधिकार उमेदसिहको देदिये । उन्होने केवल उसी त्याग स्वीकारपत्रको देकर छुटकारा नही पाया वरन उस स्थानपर उन्होने उमेदसिहको बूँदीका महाराज भी स्वीकार किया । हुलकर उक्त त्याग स्वीकारपत्र और कोटेकी सेनादलके साथ शीघ्र ही उमेदको साथ लेकर बूँदीमे आ पहुँचे । जो विश्वासघाती बूँदीके सिहासन पर विराजमान था उस मनुष्यको भगानेमे किंचित्मात्रका भी विलब नही किया । थोड़े ही दिनोके पीछे बूँदीकी राजधानीमे बडी धूमधामके साथ उमेदसिहका अभिषेक किया गया । इस अभिषेकके समयमे रावराजा उमेदसिहने समाचार पाया कि उनके शत्रु आमेरके महाराज ईश्वरीसिहने महा अपमानके कारण आत्मघृणासे विषपान कर प्राण त्याग किये है ।

इस प्रकारसे संवत् १८०५, सन १७४९ ईसवी मे उमेदसिह क्रमानुसार चौदह वर्षतक वन वन पर्वत २ पर भ्रमण कर अनेक कष्टोको सहन करनेके पीछे पिताके सिहासन पर विराजमान हुए । मल्हारराव हुलकर, जिसने बुधसिहकी विधवा रानीकी प्रार्थनासे उमेदसिहके इस सौभाग्यरूपी सूर्यको चमकाया, उसने इसके पुरस्कारमे उमे-दसिहसे चम्बलनदीके किनारेवाले पाटन देश और उसके अधीनके सामन्त ग्रामोको मांगा, उमेदसिहने तुरन्त ही रीतिके अनुसार दानपत्र लिखकर वह ग्राम उसीको दे दिये ।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकामे लिखा है कि सन् १८१७ ईसवीमे अंग्रेजी गवर्नमेण्टने महाराष्ट्रो से यह देश लेकर फिर बूँदीके महाराज (उमेदके पौत्र) को देदिये, बूँदीके महाराज इससे अत्यन्त सतुष्ट हुए । कर्नल टाड् साहबने बड़े यत्न और घोर परिश्रम करके यह कार्य किया था ।

बूँदीका राज्य जो चौदह वर्षसे दूसरेके हस्तगत था, उस दीर्घसमयमे निरन्तर युद्ध होनेसे तथा अनेक कारणोसे श्री भ्रष्ट होगया था। दलेलसिंहने उस दीर्घयुद्धमे केवल राजमहलमे और तारागढ़ नामक किलेके चारो ओर दीवारे बनवादी थीं, वही उस दीर्घ कालमे एकमात्र उन्नतिका कारण हुई। उमेदसिह पिताके सिहासन पर विराजमान होकर सबसे पहिले राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण करनेके लिये नियुक्त हुए, परन्तु जो कि वह महाराष्ट्र जातिकी सहायतासे पिताके सिहासन पर बैठनेमे समर्थ हुए थे, इस समय समस्त रजवाड़ेमे उस महाराष्ट्रदलके प्रवल प्रादुर्भाव होनेसे उमेदसिहके समस्त उद्योग उद्दीपना, तथा मंगल आशामे भयकर आघात लगने लगा। राजपूतजाति इस समय विचारने लगी कि बीच बीचमे जो पंगुपालकी समान महाराष्ट्रदल इनके राज्यमे आकर अत्याचार और लूटमार करते है चिरकाल तक यह व्यवहार नही रहैगा। उन्होने इस महा भ्रान्तिरूपी कुएँमे पडकर अपना सर्वनाश किया। विशेष करके राजपूत जाँति आत्मविग्रहके समय उस महाराष्ट्र दलका आश्रय लेनेसे और भी बलहीनताको प्राप्त हुई, और उन्होने सरलतासे अपने प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार करलिया। समस्त राजपूतजातिमे बूँदीकी हाडाजातिकी महाराष्ट्रोके प्रादुर्भावसे अधिक हानि हुई थी। यदि वीरश्रेष्ठ उमेदसिह जन्मभरतक अपने स्वाभाविक साहस और पराक्रमके साथ बूँदी राज्यका शासन करते, यदि वह असमयमे अपनी इच्छासे राज्यशासनका भार न छोड देते तो कभी भी महाराष्ट्रगण हाड़ाजातिके प्रति इस प्रकारकी प्रवलताका विस्तार नही करसकते थे।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि " उमेदसिह स्वभावसे ही धार्मिक थे, परन्तु एक प्रतिहिसाके करनेसे उनके निर्मल चरित्रोमे कलंक लग गया था, यदि उनमे वह कलंक न होता तो हम राजपूतजातिके इतिहासमे उनको अत्यन्त साहसी ज्ञानी और निर्मल चरित्रोवाला लिखसकते थे।" " परन्तु हम टाड् साहबके उक्त मन्तव्यको सब प्रकारसे समर्थन नही करसकते। इसको हमारे पाठक पहिले ही पढ चुके है, उमेदसिह डबलानाके अधीश्वर देवसिहके पास गये, देवसिहने इनके साथ किस प्रकारका घृणित व्यवहार और कैसा अराजपूत–उचित कायर पुरुषोकी समान व्यवहार किया। उमेदसिह बूँदीके सिहासन पर बैठकर विचार करते तो बड़ी सरलतासे उस कायरपुरुष देवसिहको उचित दंड देसक्ते थे। परन्तु उन्होने आठ वर्षतक उस हिसाकी बातको भूल कर भी मनमे न आने दिया। इससे सरलतासे जाना जासकता है कि उमेदसिहने सामर्थ्यवान् होकर भी जब आठवर्ष बदला न लिया तब तो वह अवश्य ही एक ऊंचे हृदयवाले पुरुष थे, परन्तु अन्य पक्षसे यह भी जाना जाता है कि जिन इन्द्रगढ़पति देवसिहने अपने अधीश्वर प्रभुको महाविपत्तिमे भी आश्रय नहीं दिया, अथवा उनको एक घोड़ा भी नहीं दिया और आत्मघृणा तथा अनुताप प्रकाशके बदलेमे अत्यन्त कायरपुरुषोकी समान व्यवहार करता रहा, उमेदसिंहने अपने अभ्युदयमे उस देवसिहको क्षमा करके

उससे बदला नहीं लिया, इसीको स्मरण करके वह मनुष्य अपने मनही मनमे उमेदकी ओर घृणा करता था। वह इतना करके ही शान्त न हुआ, वरन किस प्रकारसे उमेद-सिहका अनिष्ट साधन करूँ इसी चिन्तामे नित्य लिप्त रहता था। इतिहाससे जाना जाता है कि उमेदसिहने सिहासन पर बैठनेके आठ वर्ष पीछे जयपुरके महाराज माधोसिंहके साथ अपनी भगिनीके विवाहका सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये अपनी जातीय रीतिके अनुसार नारियल भेजा। माधोसिहने राजसभामे अपने सामन्त और कुटुम्बियोके साथ बड़े सम्मानसे उस नारियलको ग्रहण किया। दैवयोगसे उस समय उक्त इन्द्रगढ़पति देवसिह आमेरमे जा पहुँचे। आमेरराज माधोसिंहने उनसे पूछा कि बुधसिहकी कन्या किस प्रकारकी सुन्दरी है और उसके गुणोकी प्रशंसा किस प्रकार है?" नीच बुद्धि देवसिहने उचित सुअवसर पाकर उमेदसिहके अनिष्ट साधनकी इच्छासे ऐसा घृणित अनृतपूर्ण उत्तर दिया कि वह केवल एकमात्र उनकी समान कायर पुरुषोके पक्षमे ही शोभा पाता है। देवसिहने कहा कि वह कन्या बुधसिहके औरससे उत्पन्न नही हुई है। जो राजपूत राजा विवाहका प्रस्ताव स्वीकार कर फिर उस नारियलको कन्याके पक्षवालोके पास फेरकर भेज दे तो राजपूतोके लिये इससे अधिक अपमान दूसरा नही है। माधोसिहने देव-सिहके मिथ्या वचनोपर विश्वास करके बूँदीमे नारियल फिरवाभेजा, उस समय उमेदसिहके हृदयमे कैसा बाण लगा था, उसका अनुमान सरलतासे होसकता है, परन्तु अत्यन्त सतोपका विषय है कि मारवाडके अधीश्वर महाराज विजयसिहने शीघ्र ही उमेदसिंहकी उस भगिनीका विवाह करके देवसिहकी उक्तिको असत्य कर दिया।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि "सवत् १८१३, सन् १७५७ ई०मे उमेदसिह करवरके समीप विजयसेनी माताके मंदिरमे पूजा करनेके लिये गये। यह स्थान इन्द्रगढके समीप था इस कारण उमेदसिहने आकर इन्द्रगढपति देवसिहको पुत्रोसहित इकट्ठे हुए सामन्तोसे मिलनेकी आज्ञा दी। औरोके निषेध करनेपर भी देवसिहने उमेदकी आज्ञानुसार अपने पुत्र और पोतेके साथ उपस्थित होनेमे किंचित्मात्रका भी विलम्ब नही किया। वहां उन्होने प्रत्येकका संहार करके देवसिहके वंशको लोप करदिया, उनके चिताके धुँएसे जिससे आकाश कलंकित न हो इस कारण उमेदसिहकी आज्ञासे उनके शव नदीमे डाल दिये गये। उमेदसिहने इन्द्रगढ़ देवसिहके भाईको दे दिया।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने उक्त घटनाको ही उमेदसिहके चारित्रोमे महाकलंक बताकर वर्णन किया है। परन्तु जब हम विचार करते है कि प्रतिहिसा दान वीर तेजस्वी राजपूत जातिका स्वाभाविक धर्म है, बिना प्रतिहिसा दान किये वह कायर पुरुष समझे जाते है तब उमेदसिहका यह प्रतिहिसा दान महा कलंकदायक नही समझा जाता।

"देवसिहने प्रथमसे ही उमेदके साथ जैसा व्यवहार किया ससारमे इनकी समान सामर्थ्यवान् राजा बहुत कम पाये जॉयगे कि जो उमेदकी समान आठ वर्ष तक प्रतिहिसा देनेमे शान्त रहसके। दूसरी बात यह है कि जो राजपूत स्त्री सती नामसे

गिनीजानेके लिये प्रज्वलित चितानलमे प्राण त्याग करती थी" उस राजपूत स्त्रीके सतीत्वमे दोषारोपकी अपेक्षा महापापका विषय और क्या होसकता है ? देवसिहने जब सबके सम्मुख सभामे कहा कि उमेदसिहकी भगिनी वास्तवमे बुधसिहकी औरस–जात कन्या नहीं है तब उमेदसिहकी माताके सतीत्वके ऊपर भयंकर वज्रपात हुआ । संसारमे ऐसे कितने राजा है जो अपने अधीनके सामन्तोको अपनी माताके सतीत्व पर कलक लगाते हुए देखकर चुप रह सकते है । उमेदसिहने जो उसे प्रतिहिसा दान की तो उन्होने अवश्य ही वह वीर राजपूतोके उचित कार्य किया । वह कभी कलंकदायक नही होसकता । तब यह बात अवश्य ही कही जासकती है कि देवसिहके अपराधके कारण उनके पुत्र और पोतेके प्राणोका नाश करना उचित नही हुआ । परन्तु उक्त कारणसे उमेदसिहने अंतमे जिस मार्गका अवलम्बन किया उसीसे उनके समस्त पापोका प्रायश्चित्त होकर उनके यशकी चंद्रिकाको निर्मल कर उनके चरित्रोको संसारमे प्रकाशित करदिया ।

एक एक करके अनन्तकालके समुद्रमे पंद्रहवर्षरूपी उपद्रवकी धारा बही । वीर तेजस्वी उमेदसिह उस पंद्रहवर्षतक राज्यके अविश्रान्त संघटित नानाप्रकारसे राजनैतिक उपद्रवोको निवारण तथा सुशासनमे लिप्त रहकर वर्षोको लॉघने लगे । परन्तु वह राजनैतिक विप्लव वह शासनके गोलयोग, उस विभिन्न विभ्राटमे उमेदसिहके हृदयमे वह एक घटना, उस देवसिहके प्राण नाश करनेका विचार दिन २ जागरित रहकर उनके हृदयको वेधने लगा । यद्यपि सभीने उस घटनाको विस्मृतिके जालमे डाल दिया था, यद्यपि किसीने भी उस घटनाके विरुद्धमे किसी प्रकारका असंतोष प्रकाश नहीं किया, यद्यपि उमेदसिह जानते थे कि दुराचारी देवसिहने जो अपराध किया था उससे उनको प्राणदंड देना ठीक ही हुआ था, परन्तु तौभी उनका उदार और साहस पूर्ण हृदय उस हत्याकांडके लिये अत्यन्त व्यथित होता था । उन्होने अपनेको उस हत्याकाण्डके सम्बन्धमे महा अपराधी जानकर उस पापनाशके लिये पंद्रह वर्षके पीछे इच्छानुसार पायेहुए पिताके राज्यको छोड़नेकी अभिलापा की । उमेदसिहने सिंहासन छोडकर तीर्थयात्राके लिये भारतवर्षके प्रत्येक तीर्थोमे जाकर जीवनके शेष कईएक वर्षोंको केवल धर्माचरण और अनुतापसे उक्त पापके प्रायश्चित्त करनेका संकल्प किया ।

संवत् १८२७ सन् १७७१ ई० मे उमेदसिहका राजनैतिक अस्तित्व लुप्त होगया । राजपूत राज्यकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार शीघ्र ही समस्त अनुष्ठान होने लगे । उमेदसिंहके पुत्र अजितसिहने अपने पिताकी एक मूर्ति बनाकर जिस नियमसे चितामे दाह किया जाता है उसी नियमसे उस मूर्तिको अग्निपर रखकर प्रज्वलित चितानलमे भस्म कर दिया, और पिताके वियोगमे जिस प्रकार अशौचकी व्यवस्था है उसी प्रकार अशौचको ग्रहण किया । राजाके अतपुरमें हाहाकार मचगया, सभी जगह रोनेका शब्द सुनाई आने लगा । नियतहुए अशौचकालके बीतने पर अजितसिहने क्षौरकर्मके पीछे पिताकी

श्राद्धक्रिया समाप्त की। सारांश यह है कि यथार्थ मृत्युके होनेसे जैसा कार्य किया जाता है, वह सभी कियागया, श्राद्धके होजानेके पीछे अजितसिंह बड़ी धूमधामके साथ बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

उमेदसिंह राज्यभारको छोड़कर एकमात्र श्रीजी। (वह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनोंतक श्रीजी नामसे पुकारे गये) उपाधि धारण कर उक्त अनुष्ठानके पहिले ही बूँदीकी राजधानीको छोडकर, पठारके आदिम प्रधान अधीश्वरने जिस तीर्थमें विचित्ररूपसे आरोग्यता प्राप्त की थी, उसी केदारनाथ तीर्थमें जाकर वहा बास करने लगे। उन्होंने राज्य छोडनेके समय विचारा था कि एकमात्र योगीभेषसे तीर्थोंमें भ्रमण करने और इष्टदेवताके ध्यानसे सब प्रकारसे शान्ति प्राप्त होगी, और जो हमने हत्या करके पापसंग्रह किया है उस अपराधसे भी छुटकारा मिल जायगा। उमेदसिंहने वीर राजपूत वेशको त्याग कर तीर्थयात्रीका वेश धारण किया था, यह जिस महान् ऊंचे वंशमें जन्म लेकर महा ऊंचे पदपर प्रतिष्ठित थे उस वंशका गौरव और पदोचित महा ऊंचा मानसिक भाव उनके हृदयसे दूर नही हुआ। उन्होंने धर्मकी खोजमें भारतके जिस २ प्रान्तके जिस २ तीर्थमें सन्यासी योगी, यति ब्रह्मचारी इत्यादि पवित्रचेता साधुओंके साथ मिल कर शास्त्रकथा और धर्मोपदेश सुने थे, उन्हीं २ साधु भक्तवृन्दोंके सम्मुख यह परम विज्ञानी पूर्वचेता साधु और महात्मारूपसे माने गये और उन्होंने इनका महान् सम्मान किया था। उमेदसिंहने स्वदेशी और विदेशी राज्यके इतिहासको पढ़ा था कि "राज ऐश्वर्य और आडम्बर सम्मान केवल आत्माके विनाशका कारण स्वरूप है। जो राजा सुअवसरमें ऐश्वर्य आडम्बरको छोडकर देवाराधना और पुण्य संचय करनेमें नियुक्त होते है वही यथार्थ सुखी है"। बुद्धिमानी और सामाजिकरीतिके वशीभूत होकर उमेदसिंह भलीभाँतिसे जानगये थे कि केवल श्रीकृष्णजीके मंदिरमें वा गंगाजीके किनारे रहनेकी अपेक्षा समस्त भारतवर्षमें भ्रमण करके भगवान्‌की अनन्त महिमा और सृष्टिका चूडान्त निदर्शनके साथ ज्ञानका संचय करना श्रेष्ठ है, इस कारण जातीयशास्त्र पुराण और महा काव्योंमें भारतके जिन पुण्यतीर्थ और पवित्र स्थानो का वर्णन पढा था उन्होंने उन सबको अपने नेत्रोंसे देखनेका दृढ़ संकल्प किया। परन्तु उमेदसिंहका अतीत जीवन केवल वीर रसके सोतेसे ही आजतक सींचा गया था, इसी कारण वह भारतके तीर्थयात्री व्रतको ग्रहण करके भी सम्पूर्णरूपसे संन्यासीवेश करके बाहर नही गये। वह उस तीर्थयात्री वेशसे ही वीरोंकी समान अस्त्रोंके आभूषणोसे सुसज्जित होकर बाहर गये थे। उस समय तीर्थकरनेवाले मनुष्योंको मार्गमें अनेक प्रकारके विघ्न होते थे। इस कारण उमेदसिंहने अस्त्र लेकर अपने बाहुबलसे उन विघ्नोंको दूर करके अपने मनोरथको सिद्ध करना कर्तव्य विचारा। तीर्थोंमें भ्रमण करनेके समय अनेकप्रकारके शारीरिक कष्टोंको भोग करना अधिक पुण्यदायक विचारा। तीर्थयात्रामें उमेदसिंहने जो बड़े २ भारी अस्त्र शस्त्र धारण किये थे, दो राजपूतवीर उन अस्त्रोंको बड़े कष्टसे धारण कर सकते थे। इन्होंने सबसे पहिले अस्त्राघातको रोकनेके लिये रुई पूर्ण अँगरखेसे शरीरढका उसके पीछे

बड़ीभारी ढाल, बन्दूक एक भाला, एक तलवार एक छोटी तलवार और उस समयके उपयोगी एक बड़ी भारी छुरी, और छोटी २ युद्धके उपयोगी पूर्ण खलीते बारूद पूर्ण बड़े शृंग रण कुठार, बर्छा, कटारी, तीक्ष्णधारवाले लोहेके चक्र, धनु और बाण तूणसे अपने शरीरको शोभायमान किया। उस समय ऐसा देखा गया कि सत्तर वर्षकी अवस्थावाले वीर उमेदसिंहने इन बड़े २ भारी अस्त्रोंको ढालमे रखकर खेल करतेहुए उसको एक हाथसे उठा लिया हो, यही नही वरन वह कितनी ही देरतक उसको अपने हाथमे लिये रहे थे।

वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह बहुत थोड़े विश्वासी सेवक साथ लेकर कई वर्षतक तो उत्तरमे गंगोत्तरी स्थान, दक्षिणमे सेतुबंधरामेश्वर और अराकानमे गरम सीताकुंड तथा उड़ीसासे भारतकी शेष सीमा द्वारकातक घूमते रहे। यही नहीं कि वह केवल हिन्दुओंके ही तीर्थमे गयेहो वरन प्राकृतिक सौन्दर्य पूर्ण प्रत्येक प्रसिद्ध स्थान और पंडितोके रहनेके स्थानमे भी वह गये। बीच २ मे एक २ देशमे भ्रमण करनेके पीछे वह अपने पैतृक राज्यकी सीमामे आ पहुँचे, उस समय उनके स्वजातीय नहीं वरन प्रत्येक राजा, तथा रजवाडेके प्रत्येक राजपूतोने उनको बड़े सम्मानके साथ अभिनदन किया था। वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह भ्रमण करतेहुए जिस राजाके राज्यमे जाते, वही राजा इनके आनेसे अपनेको पुण्यवान् मानता था, और उमेदके आनेसे ही राजमहलको पवित्र मानता था। इस समय संसार और राज्यसे विरागी हुए उमेदसिंहको रजवाड़ेके सभी मनुष्य भविष्यत्वक्ता देवताकी समान जानते थे, तथा उमेदके ज्ञान शिक्षा और अभिज्ञताको अतुलनीय जानकर सभी उनके उपदेशके अनुसार कार्य करते थे। उमेदसिंह जिसको जिस विषयमे उपदेश करते थे वह प्राणपणसे उसको अभ्रान्त जानकर पालन करता था। उमेदके प्रत्येक उपदेशके वचनोको सभी वर्णबद्ध करके रखते थे। उमेदसिंहकी जीवित अवस्थामे उनके साथ हाडाजातिके प्रत्येक राजपूतने जिस प्रकारका ऊँचा सम्मान दिखाया और उनकी देवताकी समान भावसे पूजा की उनके वियोगमे भी हाडाजातिने उसी प्रकारसे उनके प्रति महान् ऊँचा सम्मान दिखाया।उमेदसिंह जिस समय जो बात कहते थे हाड़ाजाति उसको धर्मविधानकी समान पालन करती थी, और उनके स्मृति चिह्नस्वरूपमे हाड़ाजातिने जो कुछ पाया था उसको देवताके द्रव्यस्वरूपसे भक्तिसहित रखती आई थी। उमेदसिंह सबसे पीछे भारतवर्षकी सीमाके बाहरे मकरानके तीरवर्ती हिङ्गलाजनामक स्थानमे गये; और अग्नि-देवके तीर्थमे जाकर फिर द्वारकाको गये, जब यह वहाँसे लौट रहे थे तब रास्तेमे एक कावा नामक चोरोके दलने इनको घेर लिया। परन्तु वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने उन चोरोके दलके साथ अपना बाहुबल दिखाकर उनको एकबार ही परास्त करके चोरोके सरदारको बंदीकर लिया, चोरोके सरदारने अपनेको छुटानेके लिये सौगधकी कि मै आजसे कभी भी द्वारकाके यात्रियोपर आक्रमण नहीं करूँगा।

यद्यपि वीर वेशधारी उमेदसिंहने उपरोक्त प्रकारसे दीर्घकालतक तीर्थोमे भ्रमण करके पुण्यके साथही साथ ज्ञानको भी सचय किया था, यद्यपि उन्होने अपने मनमे इस

बातका निश्चय कर राजसिंहासनको त्याग किया था कि हम अब कभी राजसिंहासनको ग्रहण नहीं करेंगे। परन्तु एक वियोगान्त घटनासे वह उस तीर्थभ्रमणसे कुछ कालके लिये वंचित हुए। वह घटना यह थी कि उनके इकलौते पुत्र रावराजा अजितसिंहकी मृत्यु होगई, तब उमेदसिंह अपने अज्ञानी पोतेको शिक्षा देने और प्रतिनिधिरूपसे राज्य चलानेको बाध्य हुए। हमने जो शोचनीय वियोगान्त घटनाकी बात कही वह मेवाड़ और हाडाजातिके इतिहासमें लिखी गई है। और बहुत शताब्दीके पहिले बम्बावदाकी सती रानीने प्रज्वलित चिताकी अग्निमे प्राण त्याग करनेके समय जो निषेध वाक्य कहे थे वह इस प्रकार थे कि " यदि राव और राणा कभी भी बसन्ती उत्सव (अहेरके) होनेके पहिले परस्परमे एकसाथ मिलैंगे तौ अवश्य ही दोनोकी मृत्यु होगी। " उपरोक्त घटना उस सती साध्वीकी उक्तिका सामर्थन करती है। वह घटना अवश्य पढ़नेके योग्य है।

बीलहठा नामक ग्राममे एक मीनाओकी सम्प्रदाय रहती थी और वहाँ आमके वृक्षोमे बहुतसे उत्तम आम लगते थे,वही इस झगड़ेका मूलकारण हुए बूँदीके महाराज अजितसिंहने उस विलहठा नामक ग्रामको अपने राज्यभुक्त जानकर अथवा राज्यमे भुक्त करनेके लिये उसके चारोओर किला बनवा दिया। मेवाड़के बहुतसे सामन्तोके भडकानेसे एक चोरोका दल उस ग्रामपर आक्रमण करनेके लिये तय्यार हुआ। अजितसिंहने उनको भय दिखानेके लिये उस किलेमें एक सेना रख दी। राणाने यह समाचार पाकर महाक्रोधित हो अपने समस्त सामन्त और वेतनभोगी सैन्धवी सेनाके साथ उक्त विवादके स्थानमे जाकर बूँदीके महाराज अजितसिंहको अपने डेरोमे बुलाभेजा। अजितने आते ही अपने व्यवहार और मधुरवचनोसे तथा सच्चरित्रता और उदारतासे राणाको ऐसा मोहित किया कि राणा विलालइताकी बातको एकबार ही भूलगये। सम्मुख ही बसन्तकाल उपस्थित था, मधुर फाल्गुणके महीनेमे राजपूत वीर गौरीदेवीके आशयसे वराहका शिकार करते थे। युवक हाडाराज अजितने राणाके निकटसे सदय व्यवहार पाकर उसके बदलेमे राणाको यह कहकर बुला भेजा कि बूँदीके रक्षित राजवनमे जो उत्सव होगा उसमे आप अवश्य ही आवै। राणाने उसी समय उस आमत्रणको स्वीकार किया। सीसोदियोके अधीश्वर राणा प्रचालितरीतिके अनुसार दूसरे दिन सामन्तोको हरे वर्णके वेशसे सजाकर बूँदीके अधीनमे स्थित नन्दता नामक पहाड़ी देशमे आमत्रणकी रक्षा करनेके लिये जा पहुँचे।

इस समय उमेदसिंह बदरीनाथसे लौटेहुए आरहे थे, जब उन्होने यह सुना कि राणाके साथ उनके पुत्र अजितसिंहने शूकरके शिकार करनेका विचार किया है, तब इन्होने तुरन्त ही पुत्रके पास एक मनुष्य भेजकर उस सती स्त्रीकी उक्तिको स्मरण कराकर राणाके साथ मिलनेको मना करा भेजा। अजितसिंहने उसके उत्तरमे कहला भेजा कि इस समय मै कायर पुरुषोकी समान आचरण कभी नही करसकता। क्रमानुसार निश्चित उत्सवके दिन प्रभाकर भगवान्ने पूर्वकी ओरको दर्शन दिया। राणा युवक राव अजितके साथ मित्रभावको प्रकाश कर एकसाथ शिकार खेलनेके लिये चले। परन्तु इसके पहिले दिन तीसरे पहरके समयमे मेवाड़के राजमंत्रीने राव अजितके सम्मुख जाकर अत्यन्त

अपमानकारक वचनोमे राव अजितसे कहा कि " वीलहठा राणाको लौटा देना होगा, और यदि ऐसा न करोगे तौ मै एक सिन्धी सेनाको भेजकर आपको बंदी करूँगा। " मत्रीने अजितसे यह भी कहा कि मैने राणाकी आज्ञानुसार तुमसे समस्त समाचार कहा है, राव अजितने मेवाड़के मत्रीके उन अपमानकारक वचनोको सुनकर उसके इस व्यवहारसे मनही मनमे समस्त रात्रिमे घोर क्रोध संचय किया था। दूसरे दिन उक्त मृगयाका कार्य समाप्त होते ही राणाने अजितको बिदा किया कि इसी अवसरमे अचानक अजितके मनमे राणाके मंत्रीका वह अपमान याद आया, यद्यपि वह राणासे बिदा होकर कुछ दूरतक चले गये थे, परन्तु हमै राणा बंदी करैगे यह विचार कर वह फिर राणाके सम्मुख गये। अजितको फिर आयाहुआ देख कर राणा किसी प्रकार भी स्थिर न रहसके उन्होने हँसते हुए फिर अजितको बिदा कर दिया। दोनोने फिर परस्पर मे साक्षात् किया। अजित उस समय भी क्या करै इसका कुछ भी स्थिर न करके राणाके दयालु व्यवहारसे मोहित हो फिर राणाके सम्मुखसे चले आये, परन्तु अजित के फिर कुछ दूर आते ही उनके हृदयमे प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई। अजितने उसी समय तीक्ष्ण भालेको हाथमे लेकर वड़े वेगसे वलपूर्वक राणाके ऊपर भाला चलाया। उस भालेने राणाकी देहको भेदकर उनके घोडेको भी जा भेदा, दारुणरूपसे घायल हुए राणा जिस अजितको अपना परमप्यारा मित्र जानते थे उसको प्राणघाती देखकर केवल इतना ही कहकर प्राण त्याग किये, "ओह हाड़ा! क्या किया?" घायलहुए राणाके घोड़े परसे गिरते ही इन्द्रगढ़के सामन्तने तलवारके आघातसे राणाका जीवन एकबार ही समाप्त कर दिया। हाड़ाराज अजित इस कार्यसे अपना महान् गौरव जानकर मेवाड़के महाराजकी " छत्रझांगी " अर्थात् गोलाकार मोरकी पूँछके चक्रमे सुवर्णके सूर्याङ्कित राजचिह्नोको लेकर अपनी राजधानी बूँदीमे चले आये। वह मेवाडके राजचिह्न बूँदीके महलमे रक्खे गये। उमेदसिहने जो देवसिहके प्राण नाश करनेके लिये राज्यसुखको छोड़कर सन्यासीकी समान अनेक देशोमे भ्रमण कर अपने पापोका नाश किया था उन्होने जब यह समाचार सुना कि हमारे पुत्र अजितने मेवाड़के महाराजके प्राण नाश किये है तब उनके हृदयमे प्रवल आवेग उछलने लगा। उन्होने अपने वंशमे फिर महापाप संचय होताहुआ देखकर अत्यन्त दु:ख प्रकाश किया, उन्होने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि अब जन्मभर पुत्रका मुख नही देखूगा।

बूँदीके जातीय इतिहासमे लिखा जा चुका है कि कृष्णगढके राजाओकी दो कन्याओके साथ राणा और बूँदीराज अजितका विवाह हुआ था, इसीसे दोनो दृढसांसारिक सम्बन्ध बन्धनमे बँधरहे थे, बूँदीराज अजितसे उनका कुछ अमगल होगा राणाके हृदयमे यह विचार भूलसे भी उदय नहीं हुआ। परन्तु राणाकी स्त्रीने अपने स्वामीको यह कहकर पहिलेसे ही सावधान करदिया कि जिससे वह किसी प्रकारसे भी अजितके ऊपर विश्वास न करै। कई पीढी पहिले मेवाड और बूँदी दोनो राज्यके राजा जो परस्परमे आक्रमण करके इस मृगयाक्षेत्रमें मारेगये थे, उस वृत्तान्तके

हमारे पाठक पहिले ही पढचुके है परन्तु इस घटनाके होचुकने पर दोनो राजवशोमे प्राचीन शत्रुताका एकवार ही लोप होगया था। जिस दिन अजितसिहने राणाके प्राणनाश किये, उसके पहिले दिन मेवाड़के राजमंत्रीने एक भोजदान किया था। उस भोजसभामे दोनो राजा और उनके सामन्तोने उपस्थित होकर अकपट मित्रताके साथ परस्परमे साक्षात् किया था। परन्तु इतिहाससे जानाजाता है कि मेवाड़के सामन्त अपने अत्याचारी अधीश्वर राणाके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। उनके सिखानेसे ही यह शोचनीय वियोगान्त अभिनय हुआ था, ऐसे वहुतसे प्रमाण विराजमान है। मेवाडके राजमत्रीने भी अजितको महाभय दिखाकर अपमान करनेवाले वहुतसे कटु वचन कहे थे, इसका वर्णन भी पहिले होचुका है। जिस समय अजितसिहने भालेके आघातसे राणाका प्राण नाश किया उस समय एकमात्र नीचे पदवाले अनुचरके अतिरिक्त मेवाड़के किसी सामन्तने भी राणाके प्राणोकी रक्षा करनेके लिये चेष्टा नही की थी, मेवाडके सामन्तोने राणाके जीवनकी रक्षा न की न अजितको पकडा, और राणाके घायल होते ही सभी अपने २ प्राणोके भयसे राणाके मृतक शरीरको छोडकर अपने२ डेरोमे भाग गये। इससे यह जाना जाता है कि राणाके प्राणनाशके सम्बन्धमे मेवाडके सामन्तोकी भी गुप्तभावसे सम्मति थी।

राणाके मृतक होते ही केवल राणाकी एकमात्र उपपत्नी राणाकी उर्द्ध दैहिक क्रिया करनेके लिये उस समय वहॉ विद्यमान थी। वह वहुतसा धन खर्च करके चिता सजानेकी आज्ञादे स्वय राणाके शवके साथ भस्म होनेके लिये स्वर्गमार्गमे जानेको तैयार हुई। प्रज्वलित चिताकी अग्निमे राणाका शव आलिगन करके उस स्त्रीने यह शाप दिया कि "अजितसिहने यदि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये षड्यंत्र करके राणाका प्राण नाश किया है तो उस हत्या करनेवालेको दो महीनेके भीतर उचित फल मिल जायगा, और यदि प्राचीन वशसे परस्परमे चली आई हुई शत्रुताका वदला लेनेके लिये यह कार्य किया है तो मेरा शाप उसको नही लगेगा"। बूँदीके हाड़ाजातीय इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "उस स्त्रीके इस प्रकार शाप देते ही उसके वचनको समर्थन करनेके लिये उसके पासके वृक्षकी सहसा एक शाखा टूटकर पृथ्वीपर गिर पडी, तथा राणा ओर सतीकी चिताभस्मसे विलाईता सफेद वर्णका होगया"।

हाड़ाकविने लिखा है कि सती स्त्रीके शापके अनुसार दो महीनेमे ही उसकी भविष्यद्वाणी पूर्ण होगई, बूँदीराज अजितके शरीरसे आपसे आप मांसके टुकड़े २ होकर गिरने लगे, इस प्रकारसे महान् कष्टको भोगकर सबमे घृणाके योग्यहो उन्होने अतमे प्राण त्याग किये।

अजितसिहके एकमात्र पुत्र विशनसिह इस समय अज्ञान वालक थे। उमेदसिहको अन्तमे राज्यमे सुशासन स्थापन करनेको वाध्यहोना पड़ा। उमेदसिहने बूँदीकी राजधानीसे चिरकालके लिये विदा ग्रहणकी थी। सारांश यह है कि उन्होने राजधानीमे विना गये ही दूरही रहकर एक बुद्धिमान् धाभाई अर्थात् धात्री पुत्रीको राज्यके प्रधान तत्त्व विधायक

---

(१) चिता भूमिका नाम।

पदपर नियुक्त करके यह बता दिया कि किस रीतिसे राज्यशासन होना चाहिये। सुशासन स्थापन होजानेके पीछे उमेदसिंह फिर तीर्थ करनेके लिये चले गये। एक२ समयमे उन्होने बराबर चार वर्पतक बूँदीमे न जाकर अनेक तीर्थोंमे भ्रमण करना प्रारंभ किया। अंतमे उनका शरीर वृद्धताके आनेसे अत्यन्त क्षीण होगया, मृत्युके कई वर्प पहिले यह केदारनाथ तीर्थमे निवास करनेको वाध्य हुए।

अत्यन्त ही दुःखका विपय है कि उक्त घटनाके कई वर्प पीछे उमेदसिंह जिस समय अत्यन्त वृद्ध होकर संसारसे जानेकी बाट देखरहे थे, उस समयमे उनके पोते विशनसिंहने उनको राज्यका लोभी और विश्वासघाती जानकर उनके साथ अत्यन्त ही शोचनीय व्यवहार किया उमेदसिंहके पीछेही विशनसिंह युवा अवस्थापर पहुँचे तब उस समय राज्यके कितने ही दुश्चरित लोभी मूर्ख सामन्त और राजकर्मचारियोने उमेदके विरुद्धमे षड्यंत्रजालका विस्तार किया। वह भलीभाँतिसे जानगये थे कि उमेदसिंहकी समान नीतिज्ञ और शासनज्ञाता तथा बुद्धिमान मनुष्यकी यदि विशन-सिंहके ऊपर दृष्टि रही तो अवश्य ही यह उमेदसिंहकी परामर्शके अनुसार चलेगे, तब हमारा मनोरथ किसी प्रकार सिद्ध नही होसकेगा, इस कारण वह सभी इकट्ठे होकर उमेदकी और जिससे विशनसिंहको अविश्वास और अभक्ति उत्पन्न होजाय विशनसिंह जिससे उमेदको बूँदीसे निकालदे। वह यही उपाय करने लगे। नवयुवक विशनसिंह ऐसे बुद्धिमान् वा शिक्षित नही थे वह उन पापियोके वचनोपर विश्वास करके अपने पितामह उमेदसिंहके साथ घृणित व्यवहार करनेके लिये आगे वढे। विशनसिंहने अपने एक सेवकके हाथ दादासे यह कहला भेजा " कि आप बूँदीको छोड़कर वाराणसीमे जाकर रहिये "। जो सेवक उस पत्रको लेकर गया था उसने उमेदसिंहको नये शहर जानेमे तत्पर देखकर कहा कि " आपकी शवभस्म आपके पूर्व पुरुषाकी शवभस्मके साथ नही रक्खी जायगी "। परन्तु उमेदसिंहका रजवाडे मे वड़ा सम्मान था तथा इनकी देवताकी समान पूजा होती थी, कारण कि इन्होने वहुत समय तक तीर्थोंमे भ्रमण किया था इसी कारणसे सर्वसाधारण मनुष्य इनको साधु मानकर सम्मान करते थे। विशनसिंहकी इस आज्ञाके प्रचार होते ही रजवाड़ेके प्राय. सभी राजा वड़े आग्रहके साथ उमेदसिंहको अपनी २ राजधानीमे सम्मानके साथ लानेके लिये तैयार हुए। उमेदके युवा अवस्थाकी वीरताने वुढापेके पुण्यपवित्रताने आमेरराज प्रतापसिंहके हृदयपर महा ऊँचा सम्मान सूचकभाव प्रकाश किया था। महाराज प्रतापसिंहने श्रीजी उमेदसिंहके समीप पुत्र और सेवकरूपसे अपना परिचय देकर उनके चरणदर्शन करनेके लिये कछवाहोकी राजधानी जयपुरमे लेजानेके निमित्त प्रार्थना की। श्रीजी (उमेदसिंह) तुरन्त ही आमेरमे जानेके लिये राजी होगये। परन्तु प्रतापसिंहने जो उनको वड़े सम्मानके साथ ग्रहण करना चाहा था वह उस सम्मानके ग्रहण करनेमे राजी न हुए।

उमेदसिंहके आमेरराज्यमे जाते ही महावीर प्रतापसिंहने वड़े आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। उमेदसिंहके साथ विशनसिंहने जो कुव्यवहार किया था उससे

प्रतापसिंहके हृदयमें ऐसा क्रोध उदय हुआ कि उन्होंने उमेदसिंहसे कहा कि "यदि आपके हृदयमें इस समय भी कोई संसारकी वासना वा राज्यकी कामना हो तो कहिये, मैं अपने बाहुबलसे उसी समय आमेरकी समस्त सेना दलके साथ आगे बढकर बूँदी और कोटेको जीतकर आपके करकमलमें अर्पण करसकता हूँ।" बुद्धिमान् श्रीजीने कहा " यह दोनों राज्य तो हमारे ही हैं, एकमें मेरे पोते और दूसरेमें भतीजे राज्य करते हैं। पवित्र चित्त श्रीजीके यह वचन सुनकर मुक्तकंठसे सभी इनको धन्यवाद देने लगे।

उमेदसिंहने अपने अबोध पोतेके द्वारा इस प्रकारसे अपमानित होकर आमेरराज्यमें जानेके समय कोटेके प्रसिद्ध नीतिज्ञ राजमंत्री जालिमसिंहने मध्यस्थ स्वरूपसे कार्यक्षेत्रमें दर्शन दिया। उसने बूँदीमें जाकर विशनसिंहने जो उमेदसिंहसे अपने स्वार्थनाशका भय किया था उसको उनकी भूल बताकर खंडन किया। जालिमसिंहकी उक्तिसे विशनसिंह सब प्रकारसे समझ गये कि स्वार्थपरायण अबोध सामन्त और राजपुरुषोंके कहनेसे उन्होंने अपने पितामहकी ओर अविश्वास कर उनका तिरस्कार करके महा कलंक संचय किया है। जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार उन्होंने अपने दादाके चरणोंमें क्षमा प्रार्थना की। जालिमसिंहने विशनसिंहको अनुतापित और क्षमा प्रार्थना करते हुए देखकर शीघ्र ही वृद्ध उमेदसिंहको आमेरसे बुलानेके लिये लालजी पंडितको भेजा।

उदार हृदय उमेदसिंह स्नेहाधार पोतेके समस्त अपराधोंको विस्मृतिके जलसे डालकर तुरन्त ही बूँदीमें चले आये। शीघ्र ही परस्पर दोनोंका मिलन होगया। उस मिलनसे जैसे दृश्य देखनेकी संभावना हुई थी। वैसा ही हुआ सभीका हृदय उफन उठा, सभीके नेत्रोंसे झर २ आँसुओंकी धारा बहने लगी। प्राणप्यारे पोते विशनसिंहको आलिंगन करके वृद्ध उमेदसिंहने सजलनेत्रोंसे उसके हाथमें तलवार देकर कहा कि " यह तलवार लो, मैं तुम्हारा अनिष्ट करनेवाला नहीं हूँ, यदि तुमको विश्वास है कि तुम्हारा अशुभ चिन्तक हूँ तो तुम अपने हाथसे इसी तलवारसे वृद्धके निर्वाणोन्मुख जीवनको समाप्त कर दो, मुझे वृथा कलंकित न करना।" युवक विशनसिंह ऊंचे स्वरसे रोते २ नेत्रोंमें जलभरकर पितामहके चरणोंको पकड़कर क्षमा प्रार्थना करने लगे। उमेदसिंहने क्षमा करनेमें किंचित्मात्रका भी विलम्ब न किया, विशनसिंहने बारम्बार उनसे बूँदीके राजमहलमें रहनेके लिये प्रार्थना की, पर उमेदसिंह इसमें किसी प्रकार भी राजी नहीं हुए। इस प्रकारसे पितामह और पोतेमें फिर सद्भाव स्थापित होगया, षड्यन्त्रियोंके पापकी आशा व्यर्थ हुई यह देखकर मध्यस्थ जालिमसिंह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। उक्त घटनाके पीछे आठ वर्षतक उमेदसिंह जीवित रहे, उनकी मृत्युका समय सम्मुख आते ही विशनसिंहने विनय पूर्वक उनके चरणोंमें यह प्रार्थना की कि "आप बूँदीके महलमें चलिये, उसी स्थानपर आपके पूर्वपुरुषोंकी शय्या बिछी हुई है उसी पर शयन करके आप स्वर्गको जाँय"। उमेदसिंहने स्नेहके वशीभूत होकर विशनसिंहकी प्रार्थनाको पूर्ण किया, सुखपालपर

चढ़कर उमेदसिंह बूँदीके महलमे चले गये। और उसी रात्रिमे महावीर महाज्ञानी महापुण्यवान् पवित्र चित्त उमेदसिंहका शरीर बूँदीके राजमहलमे छूट गया। सम्वत् १८६० (सन् १८०४ ईसवी) मे उमेदसिंहके जीवनका सूर्य सर्वदाके लिये अस्त होगया। बूँदीराजके भाग्यका आकाश घनघोर मेघजालसे ढक गया। उमेदसिंहने तेरह वर्षकी अवस्थाके समयमे जिस दिन प्रज्वलित उत्साहसे सामान्य सख्यक अनुचरोके साथ अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश करके पिताके हरेहुए राज्यको उद्धार करनेके लिये पाटन और गेनोलीको अपने अधिकारमे किया, उस समयसे वह साठ वर्ष तक इस संसारमे रहे थे। उमेदसिंहकी समान वीर नीतिज्ञ और साधु राजा इस संसारमे बहुत थोड़े उत्पन्न हुए है, इस बातको हम मुक्तकठसे स्वीकार करते है।

जिस समय उमेदसिंह इस ससारसे विदा होगये उस समयके हाडाजातिके इतिहासको एक घटना पूर्ण युग कहना होगा। कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "इसी समयमे एक दल अंग्रेजी सेनाका मॉनसनके अधीनमे इस देशमे पहिले गया था, समस्त राजपूतजातिके और विशेष करके बूँदीके प्रधान शत्रु हुलकरको परास्त और निर्मूल करनेके लिये गया था, परन्तु उस समयमे वृद्ध उमेदसिंह जीवित थे या नही, अथवा उन्हीकी परामर्शके अनुसार यह कार्य हुआ था या नहीं इस बातको हम नही कह सकते। परन्तु हमने बूँदीके लिये कुछ किया या नही बूँदीराजने भी तो सेनाकी सहायता करनेमे कसर नही की थी। जिस समय हमारी सेना जयकी इच्छासे उत्साहित होकर बृटिश पताकाको उड़ातीहुई आगे बढ रही थी, उसी समयमे नही, वरन जिस समय हमारा सेना प्राणोके भयसे भागनेको बाध्य हुई उस समय बूँदीके महाराजने केवल हमारी सेनाको अपने राज्यमे होकर जानेकी आज्ञा दी हो, इतना ही नही, वरन उन्होने अपनी भविष्य विपत्ति और अनिष्टकी संभावना जानकर यथाशक्ति हमारी सेनाको सहायता दी थी। वास्तवमे बूँदीके महाराज हमारी सहायता करनेके कारण ही महाराष्ट्रनेता हुलकरसे आक्रान्त हो घोर विपत्तिमे पड़े थे, परन्तु अपनी उस समयकी सकीर्ण राजनीतिके कारण हमको उसका कुछ भी पता न मिला, और न उसकी ओर कुछ ध्यान दिया"। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि कर्नल मानसन जिस समय हुलकरके आक्रमण करनेसे प्राणोके भयसे सेना सहित भागे उस समय उमेदसिंहने उनकी और उस भागीहुई सेनाकी सहायता की थी या नहीं। यह उन्हे ज्ञात नही हुआ। परन्तु हमने आचिसन साहबके ग्रन्थमें इसके सम्बन्धमे जो कुछ वर्णन हुआ है इस स्थानपर उसका अनुवाद करते है पाठक उसको पढ़कर उसके यथार्थ मर्मको जानसकेंगे। आचिसन साहबने लिखा है कि "बूँदीमे पहिले जिस राजाके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका प्रथम सवन्ध स्थापित हुआ उसका नाम उमेदसिंह है। सन् १८०४ ईस्वीमें कर्नल मानसनके अधीनकी सेना जिस समय हुलकरसे परास्त होकर भागी थी, उस समय उमेदसिंहने अपनी सामर्थ्यके अनुसार हमारी सहायताकी, और इसी कारणसे हुलकर उनके ऊपर महाक्रोधित हुआ था। उन्होने पचास वर्षसे अधिक समय तक राज्यशासन

करनेके पीछे सन् १८०४ ईस्वीमे प्राण त्याग किये।" * आचिसन साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि उमेदसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टको उस महा विपत्तिके समयमे यथेष्ट सहायता की थी। परन्तु अत्यन्त दु.खका विषय है कि बूँदीके महाराज जो अंग्रेजोकी सहायता करनेके लिये गये इसी कारणसे उस समय महाराष्ट्र नेता हुलकर और सेन्धियाके महाकोपमे पतित हुए, जिस समय महाराष्ट्रोंने बूँदीराज्यमे जाकर सर्वस्व लूटकर राज्यके समस्त करोको अपने हस्तगत किया था, जिस समय बूँदीके किलेकी चोटीपर माहाराष्ट्रोकी पताका उड़ीथी, और बूँदीके महाराजको उन्होंने अत्यन्त हीन दशामे डाला था, वृटिश गवर्नमेण्टने उस समय बूँदीके महाराज विशनसिंहकी सहायता करनेके लिये एक पग भी नही बढ़ाया।

कर्नल टाड्साहब लिखते है, कि "इतना ही कहना बहुत होगा कि सन् १८१७ ईसवीमे जिस समय अत्याचार और उपद्रवोको दूरकरनेके लिये समस्त राजपूत जातिको सेनासहित अंग्रेजोने मिलनेको बुलाया था। उस समय सबसे पहिले बूँदीके महाराजने ही आगे बढकर हमारे साथ मित्रताकी डोरी बांधी थी। ऐसा होना भी उनके पक्षमे उचित ही था, कारण कि इस समय महाराष्ट्रोकी विजयपाताका बूँदीकी राजपताकाके साथ मिलकर किलेकी चोटी पर उड़ रही थी, तथा दूसरी ओर बूँदीके महाराज प्रजासे इस समय जितना कर लेनेके अधिकारी थे, वह उनकी आत्मरक्षाके किसी प्रकार भी उपयुक्त नही था। सन् १८०४ ईसवीमे जिस समय बूँदीके महाराजने यथाशक्ति हमारी सहायताकी, इस समय महाराष्ट्रोंने उस सहायता देनेवाले बूँदीके महाराजपर आक्रमण किया। पर हमने बूँदीके महाराजकी कुछ भी सहायता न की इसीसे बूँदीके अधीश्वरकी यह शोचनीय दुर्गति हुई थी। सन् १८११ ईसवीके युद्धके समयमे बूँदीके महाराज सब प्रकारसे हमारी आज्ञा और इच्छानुसार कार्य करते थे, बूँदीके महाराज और उनके अधीनके सभी अस्त्रधारी वीर हमारी आज्ञाको पालन करते थे और जिस समय सब ओरसे हमने विजय की उसके पीछे शान्ति स्थापित होते ही हम राव राजा विशनसिंह को नही भूले। महाराष्ट्र नेता हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोको बलपूर्वक अपने अधिकारमे करलिया था, जो देश प्रायः आधी शताब्दीसे अधिकतक उनके हस्तगत रहे थे, हमने उसी हुलकरको युद्धमे जीतकर उन सब देशोको अपने हस्तगत कर लिया, और वह समस्त देश एकबार ही बूँदीके महाराज विशनसिंहको देदिये। और भी महाराष्ट्रदलके अन्यतर नेता सेन्धियाने बलपूर्वक जो देश बूँदीसे छीन लिये थे, हमने मध्यस्थ होकर वह सब देश भी बूँदीके महाराजको फिर दिलवा दिये, परन्तु उन सब देशोके लिये बूँदीके महाराजने हमारे द्वारा वार्षिक निर्द्धारित कियेहुए रुपये जो पिछले दश वर्षोंकी आमदनीके थे, सेंधियाको दिये, इसके निमित्त महाराज विशनसिंहजीने पवित्र हृदयसे असीम कृतज्ञाता प्रकाश की। उन्होने कहा मैने एकबार ही जो प्रतिज्ञा की है वह प्रतिज्ञा किसी समय भी भंग नही होगी। आप

---

* Aitchison's Treaties & Vol IV

जब आज्ञा देंगे तभी उस आज्ञाको पालन करनेके लिये मै अपना मस्तक देदूंगा। यह बातें अर्थशून्य कृतज्ञाताकी प्रकाश करनेवाली उक्ति नही थी, वास्तवमे यदि हम उनके विश्वासकी परीक्षा लेते तौ निसन्देह वह और उनके अनुगत सामन्त सभी हमारी आज्ञा पालन करनेके लिये अपने प्राण देदेते। यद्यपि बूंदीके महाराजके ऊपर बहुतसे उपकारोंकी वर्षाकी गई थी; यद्यपि उनके लिये बूंदीके महाराजने गंभीर कृतज्ञता प्रकाश की थी, तथापि उनमेसे एक विषयका भी सुविचार नही किया गया। कोटेके वृद्ध राजमंत्री जालिमसिहने राजा विशनसिहके पहिले अपनेको अंग्रेजी सरकारके क्रीतदास नामसे परिचित इन्द्रगढ़ बलवान आनरदा और खातोली इत्यादि बूंदीके प्रधान २ सामन्त शासित देशोको कोटाराज्यके अधीनमे करनेका विचार किया।

वास्तवमे जालिमसिहके बूंदीके अधीनवाले उक्त देशोको अधिकारमे करनेसे राव राजा विशनसिह अत्यन्त ही संतापित हुए। कर्नल टाड् साहबने इसके सम्बन्धमे लिखा है कि "गवर्नमेण्टने जालिमसिहके करकमलमे उक्त कई देशोको अर्पण करनेकी जो व्यवस्था की, इससे साहसी और सरलचित्त राव राजा विशनसिहने अत्यन्त व्यथित होकर निष्कपट भावसे कहा कि "इस व्यवस्थाके द्वारा हमको पक्षहीन किया गया"। वास्तवमें ही यह व्यवस्था ठीक नही हुई, न्यायविचार और राजनैतिक मगलसाधन करनेके लिये इस व्यवस्थाका परिवर्तन करना श्रेष्ठ था। गवर्नमेण्टके पक्षमे उक्त अनुगत छोटे राज्यके प्राप्त उक्त देशोको लौटा देना ही उचित है"।

आचिसन साहबने अपने ग्रथमे इसके सम्वन्धमे जो कुछ लिखा है, हम यहाँ पर उसका प्रकाश करना उचित जानते है, उन्होने लिखा है, कि "बूंदीराज्य जिस स्थानमे स्थापित था उससे सन् १८१७ ईस्वीके युद्धमे पिंडारोके पलायन् निवारणके लिये वह बूंदीराज्य विशेष प्रयोजनीय स्थान विचारा गया है, और यथेष्ट उपकारी दृष्टि आता है, बूंदीके महाराव राजा विशनसिहने सबसे पहिले वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मित्रता की और सन् १८१८ ईस्वीकी १० दशमी फर्वरीको दोनोका सधिवधन हुआ। यद्यपि बूंदीके महाराजकी सेना–संख्या अधिक नही थी परन्तु इन्होने अत करणसे उक्त समरके समयमे वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। महाराष्ट्रोने बूंदीके महाराजको जो अत्यन्त ही शोचनीय दशामे डाला था वृटिश गवर्नमेण्टके साथ सधिवधन होते ही गवर्नमेण्टने बूंदीराजको उस शोचनीय दशासे उद्धार कर दिया।" कर्नल टाड् साहबकी समान आचिसन साहबने भी जिस भावसे मुक्तकठसे बूंदीराज विशनसिहके द्वारा वृटिशसिहकी सहायता करनी स्वीकार की थी, उससे अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि बूंदीराज सब प्रकारसे गवर्नमेण्टके अनुग्रहका अधिकारी हुआ था।

वृटिश गवर्नमेण्टके साथ बूंदीके महाराज महाराव राजा विशनसिहका जो सधिबंधन हुआ था हमने इस स्थानपर उस सधिपत्रको प्रकाशित किया है। उदार-

हृदय कर्नेल टाड् साहबने (उस समय कप्तान थे) अंग्रेजोकी ओरसे यह संधिपत्र तैयार कराया ।

संधिपत्र ।

महामहिमवर मार्किस अफ़ हेष्टिस के० जी० गवर्नर जनरल वहादुरकी दी हुई सम्पूर्ण सामर्थ्यके अनुसारमे कप्तान जेमसटाड् माननीय अंग्रेजी कम्पनीकी ओरसे और बूँदीके महाराजकी दी हुई पूर्ण सामर्थ्यके अनुसार उक्त राजाकी ओरसे वोहरे तुलारामके द्वारा माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डियाकम्पनी और बूँदीके राजा महाराव राजा विशनसिंहकी संधि हुई ।

प्रथम धारा–एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर बूँदीके महाराजा और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोमे चिरस्थाई मित्रता समस्वार्थता और आत्मीयता विराजमान कीजाय ।

दूसरी धारा–बृटिश गवर्नमेण्ट बूँदीके राजाके अधीनमे स्थित समस्त राज्यको शत्रुओके द्वारा आक्रमणसे रक्षा करनेका भार लेगी ।

तीसरी धारा–बूँदीके महाराजाने चिरकालके लिये बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार की है,और बृटिश गवर्नमेण्टकी चिरकालके लिये सहकारिता मानी है, बृटिश गवर्नमेण्टकी अनुमतिके अतिरिक्त बूँदीके अधीश्वरका और किसीके साथ किसी प्रकारका संविधन नही होगा । यदि दैवात् अन्य किसी राजाके साथ विवाद अथवा मतान्तर उपस्थित होगा तो उसकी मध्यस्थताका भार अथवा दंड देनेका भार बृटिस गवर्नमेण्टपर होगा राजा अपने राज्यके सब प्रकारसे अधीश्वर रहैंगे, और उक्त राज्यमे बृटिश गवर्नमेण्टके शासनकी सामर्थ्यका विस्तार नही होसकैगा ।

चौथी धारा–राजा, महाराज हुलकरको जो कर देते आये है, महाराज हुलकरने बृटिश गवर्नमेण्टको उस करके लेनेका अधिकार एकवार ही देदिया है।बृटिश गवर्नमेण्टने अपनी इच्छानुसार राजा और उनके उत्तराधिकारियोको उस करके देनेसे छुटकारा दिया महाराज हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोको अपने अधिकारमे किया था, उनसे मिलेहुए प्रथम सूचीके अनुसार उन सब देशोको बृटिश गवर्नमेण्टने बूँदीके महाराजको देदिया ।

पांचवीं धारा–बूँदीके राजा इतने दिनोतक महाराज सेंधियाको जो कर और राजस्व देते आये है उन सबके साथ दूसरी सूचीके अनुसार वह कर और राजस्व बृटिस गवर्नमेण्टको देनेके लिये, बूँदीके महाराज स्वीकार करते है ।

छठवीं धारा–बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधसे बूँदीके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टको सेनाद्वारा सहायता करैगे ।

सातवीं धारा–यह सात धाराओ युक्त संधिपत्र बूँदीमे निर्द्धारित हुआ और कप्तान जेमस टाड् और वोहरा तुलारामके हस्ताक्षरसहित तथा मोहरांकित होकर महामान्यवर गवर्नर जनरल और बूँदीके महाराव राजा आजकी तारीखसे लेकर एक महीनेके वीचमे इसको निर्द्धारित करके परस्परमे परिवर्तन करलेगे ।

बूँदी, आजकी तारीख १० वी फर्वरी, सन् १११८, चौथी रविउलसानी हि०सन् १२२३,५ माघ, सम्वत् १८७४।

यह संधिपत्र महामान्यवर गवर्नर जनरलके आदेशसे कानपुरके निकट डेरोमे आज १८१८ ईसवीकी मार्च महीनेकी पहिली तारीखको स्वीकार किया गया।

गवर्नर जनरलकी मोहर	हस्ताक्षर हेष्ट्रिंग्स "।

प्रथम सूची।

संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार जो देश वृटिश गवर्नमेण्टने राव राजा विशनसिंहजीको दिये थे उनकी सूची इस प्रकार है।

परगना	वामणगांव
"	लाखेरी।
"	कारवरका अर्द्धांश
"	बरोधनका अर्द्धांश
"	पाटणका अर्द्धांश

बूँदीका चौथ अर्थात् राजस्वके चार अंशोमेका एक अंश।

दूसरी सूची।

महाराज सेन्धिया अवतक बूँदीके राज्यसे जो राजस्व और कर लेते है, बूँदीके संधिपत्रकी पांचवी धाराके अनुसार इसके पीछे वह सब बूँदीके महाराज वृटिश गवर्नमेण्टको देगे उसकी सूची इस प्रकार है,-

दिल्लीके सिक्केका .... ८०००० रुपया
परगने पाटनके तीन अंशोमेका दो अंश राजस्व ... ४०००० "
परगना डर्सिला।
ऐ समेदी।
ऐ करवरका अर्द्धांश।
ऐ वरूधनके तीन अंशोमेका एक अंश।
बूँदी और अन्यान्य स्थानोका चौथ . .. ४०००० रुपया।

राजाकी मोहर	जेम्स टाड् बोहरा तुलाराम।"

उदार हृदय कर्नल टाड् साहबने अंग्रेजी गवर्नमेण्टकी ओरसे बूँदीके महाराज राजा विशनसिंहके साथ उस संधिपत्रको तैयार कर लिया, उन्होने अपने आप इसके

सम्बन्धमे अपने ग्रथमे एक स्थानमे लिखा है कि सन् १८१८ ईसवीके फर्वरी मासमे बूँदीके साथ संधिबंधन समाप्त करके ग्रन्थकारने (टाड् साहबने) अत्यन्त आनंद अनुभव किया "।

आचिसन साहवने उक्त संधिबंधनके सम्बन्धमे अपने ग्रन्थमे लिखा है कि "बूँदीके महारावराजाने इतने दिनोतक हुलकरको जो कर दिया था,तथा हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोको अपने अधिकारमे कर लिया था, सन् १८१८ ई०के संधिपत्रके अनुसार महाराजको उस कर देनेसे छुटकारा मिला, और हुलकरके अधिकारी समस्त देश भी महाराजको लौटा दिये गये। इधर महाराज इतने दिनोसे सेधियाको जो कर देते थे वह कर बृटिश गवर्नमेण्टके देनेको राजी हुए। वह देय करका ८०००० रुपया निश्चय किया गया। इसमे सेन्धिया पाटन देशके जो तीन अशोमेसे दो अशोके अधिकारी थे, उन देशोके कारण उन रुपयोमेसे आधे रुपये निश्चित हुए,अथवा पाटन देशके बचेबचाये तीन अशोमेसे जो एक अश हुलकरके अधिकारसे था वह संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार बूँदीके महाराजको लौटा दिया। बृटिश गवर्नमेण्टकी ऐसी इच्छा थी कि सेन्धिया और हुलकरने बलपूर्वक बूँदीके जिन समस्त देशोपर अधिकार करलिया था वह सभी महाराजको लौटा दिये जॉय और सेधियाने पाटन देशके तीन अशोमेके जो दो अंश बलपूर्वक अपने अधिकारमे कर लिये है वह गवर्नमेण्टकी धारणाके अनुसार संधिपत्रकी सलग्न सूचीमे सन्निवेशित किये जायॅ। उस समय गवर्नमेण्ट नही जानती थी कि नाना फड़नवीस जिस समय व्यवहारोको नही जानते थे, उस समय अन्य जिस मनुष्यने वून्दीके सिंहासन पर अधिकार किया था, उसको भगाकर बून्दीके यथार्थ अधीश्वर (उमेदसिह) को वून्दीके सिहासन पर बैठाल दिया। बूँदीके महाराजने समस्त पाटन देश पेशवाको देदिया, और पेशवाने उस पाटन देशके तीन अंशोमेसे दो अंश सेधियाको और बचेहुए अंश हुलकरको देदिये। अतमे यह यथार्थ विवरण प्रकाशित होगया, और पाटन देशके तीन अशोके दो अंशोका कारण जो ४०००० रुपया कर ठहरा था वह बूदीके महाराजसे कभी नही लिया गया। पाटनदेशके जो अंश हुलकरके अधिकारमे थे, उनके उस अधिकारका नाश होगया, और बृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा उन्हे वार्षिक ३०००० रुपया कर मिलना निश्चय होगया "।

इतिहासलेखक टाड् साहवने लिखा है कि वून्दी राज्यका कल्याण करनेके लिये हमने जिस आग्रहके साथ यत्न किया है वह सम्पूर्ण सफल होगया। अन्य राज्य जिस प्रकार किसी न किसी कारणको उपस्थित करके गवर्नमेण्टको क्रोधित कर कष्ट उत्पन्न कर लेते ह। परन्तु बूँदीके महाराजने अन्य किसी राज्यके साथ किसी प्रकारका उपद्रव न करके चुपचाप उपयुक्त उन्नतिकी ओर दौडकर अपनी स्वाधीनताका सुख भोग किया था। राव राजा विशनसिह फिर अपनी लुप्तहुई स्वाधीनताकी प्राप्तिके पीछे बहुत थोडे समय अर्थात् चार वर्ष तक जीवित रहे। उस कुछ समयके पीछे ही विशनसिंहने कालरामार्बस (chalera morbus) गोला रोगसे जर्जर

होकर प्राण त्याग किये । इस भयकर रोगके नामसे दृढ़ वली और असीम साहसी मनुष्य भी कम्पित और भयभीत होजाते है, यह वहुत शीघ्र मनुष्यको हीनवीर्य करदेता है इसी रोगसे आक्रान्त होकर विशनसिहने परलोक यात्रा की, और अपनी स्त्रीसे सती होनेका निषेध कर अपने अजानबालकपुत्रके अभिभावक पदपर वृटिश गवर्नमेण्टको प्रातिनिधि करनल टाड्को नियुक्त किया विशनसिहने युवावस्थामे ही प्राण त्याग न किये, उन्होने सत्रह वर्षतक राज्य किया । सन् १८२१ ईसवी १४ जौलाईको इनका स्वर्गवास हुआ ।

कर्नल टाड् साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ महाराव राजा विशनसिहके शासन इतिहासका उपसंहार किया है, दो चार वातोसे विशनसिहके चरित्रोकी समालोचना होसकती है, वह एक अकपटचित्त और अशोमे यथार्थ राजपूतोकी समान मनुष्य थे । यद्यपि इनका राज्यशासन उज्वल नही था, तथापि इनका हृदय उदारतापूर्ण और चित्त उद्यमशील था । उनकी अभिज्ञतासे शक्तिका अभाव दृष्टि नही आता था और उनका शुभाशुभ वा हिताहित ज्ञान विलक्षण था । जिस समय महाराष्ट्रोने धीरे २ उनके राज्यका समस्त राजस्व ग्रास कर उनकी शासन सामर्थ्य और सुखस्वच्छन्दताको घटा दिया था, उस महाविपत्तिके समयमे भी उन्होने भलीभाँतिसे प्रमाणित करादिया कि उन्होने किस प्रकार सरलतासे अपनी सुखस्वच्छन्दता और स्वार्थके प्रति उपेक्षा देखाई थी । उस समय इन्होने एकमात्र वीर राजपूतोकी समान मृगया करके अपने चित्तमे संतोष प्राप्त किया था । वह अत्यन्त मृगया प्रिय थे, और क्या कहे वह सिहकी खोजमे वाहर जाकर बराबर तीन चार दिनतक सिहके विवरके पास पड़े रहते और जवतक उस सिहका वध न करलेते तबतक उस स्थानको नही छोड़ते थे । वह प्रधानता पशुराजसिहको ही अपने शिकारका उपयुक्त पात्र जानते थे, अन्य पशुको ओर उनकी दृष्टि नही थी, उन्होने इकले ही समस्त जीवनमे अपने हाथसे सहस्रो सिहोका शिकार किया था, इसके अतिरिक्त अगणित हिंस्र व्याघ्रोको भी अपने वर्छेके आघातसे मारा । इस वीर श्रेष्ठके सकटापन्न तथा आनन्ददायक मृगयामे लिप्त रहनेके कारण इनका एक पैर टूट गया था उसीसे चिरकालतक वह लॅगड़े रहे थे. और छोटे दिखाई पड़ते थे । जब घोड़ेपर सवार होकर वीरमूर्तिसे अपने मस्तकके ऊपर भाला घुमाया करते थे, उस समय वलविक्रम और शूरवीरता पूर्णरूपसे उनके मुखपर दिखाई पडती थी । उस दृश्यको देखकर सरलतासे जाना जाता है कि विशनसिहके महावीर पूर्वपुरुषोने जिस प्रकार एक समय जहाँगीर और शाह आलमके लिये रणक्षेत्रमे महावीरता प्रकाश की थी, उसी प्रकारसे विशनसिह भी हमारे लिये तलवार धारणकी सामर्थ्य रखते थे । वह इसी कारणसे अपने इस छोटेसे राज्यमे अविकृतासे इच्छानुसार विचरण करते थे, कारण कि वह इस वातको जानते थे कि शासित होनेवालोके निकटसे और विशेष करके राजकर्मचारियोसे सम्मान संग्रह करनेमे स्वेच्छा चारिताका प्रयोजन है ” ।

साधु टाड् साहबने यहांपर महाराव राजा विशनसिंहजीके चरित्रके सम्बन्धमे एक प्रवाद कथा लिखी है कि राजाके यहाँ एक स्वतंत्र धन संग्रहका भंडार था । बूँदीके राजमंत्रीको प्रतिदिन उस भंडारमे १०० मुद्रा डालनी होती थी । मंत्री यदि अन्य किसी कार्यमे अवहेला कर जाते तो राजा चाहे उस अवहेलाके कारणकी साधारण पूछपाछ करते पर यदि भडारमे सौ मुद्रा न पड़ती तो मंत्रीको इन्द्राजितका भय दिखाकर अपमानित कियाजाता । यह इन्द्रजित् किसी देवताकी मूर्ति नही थी वरन एक बडे आकारके काष्ठकी पादत्रानकी समान था, भडारके स्थानमे एक लोहेकी कीलके ऊपर यह इन्द्राजित टँगा रहता था, अन्य राजाके वहाँ आनेपर उस स्थानमे राजदंड रक्खा जाता था, विशनसिंहने मंत्रीको डरानेके लिये ही यह रख छोड़ा था, यह प्रवाद कहाँतक सत्य है हम सरलतासे इसका विश्वास नही कर सकते, राजमंत्रीके लिये पादुका प्रहारके भयकी अपेक्षा और अपमान क्या होसकता है ।

साधू टाड् साहबने फिर लिखा है कि दूसरे राजपूत राज्योकी समान विशेष कर बूँदी राज्यके राजपुरुषोकी संख्या भी वहुत सामान्य है । नीचे लिखे चार पुरुषोके हाथमे शासनकी सामर्थ्य रहती है (१) दीवान वा मुसहिब, (२) फौजदार वा किलेदार, (३) वख्शी, (४) रिसाले वा हिसाव विभागके तत्त्व विवेचक । दिल्लीके वादशाहके साथ जो बूँदीके महाराजोका समिलन हुआ था, जैसे जयपुर नरेशने वादशाहके दरवारकी समान अपने यहाँ कितने ही नियम चलाये थे इसी प्रकार बूँदी नरेशने भी अपने यहाँ वैसे ही नियम चलाये । प्रधान मत्री दीवान वा मुसाहिवके नामसे पुकारे जाते थे, उनके हाथमे ही राज्यका समस्त शासन, और राजधनका भार था । फौजदार वा किलेदार बूँदीके किलेका अध्यक्ष था, इस पदपर कोई और राजपूत नियुक्त नही होता, बूँदीके राजाका कोई दृढ सम्बन्धी वा धाई भाई इस पदपर नियुक्त होता है, वह राजसेना, वेतनभोगी सेना और सामन्तोकी सैन्य समूहका सेनापति होता है, वख्शी साधारणतः सब विभागोकी जांच करता है हिसाव देखता है, रिसाले और राजदरवारके हिसाबकी जांच करता है । मृतराजा विशनसिंह अपने धनागारको केवल जमा न करके उस धनसे व्यापार करते थे, उस वाणिज्यसे जितनी आमदनी होती राजा उसका अंश ग्रहण करते । यद्यपि मत्री उसका हिसाव करके सैकडे पीछे पन्द्रह रुपयेकी वढ़ती दिखाते थे, पर वास्तवमे तीस रुपये सैकडा आमदनी होती थी, इस वाणिज्यकी आमदनीसे सेना तथा राजअनुचरोको वेतनके हिसावसे अन्न तथा दूसरे पदार्थ मिलते थे । राजा स्वय इस वाणिज्यके अंशभागी थे इस कारण मत्रीने जिस पदार्थका जो मूल्य निश्चय करदिया वह चाहे ठीक न हो पर वही निश्चित रहता, यदि सेना वा सेवक उस पर विनयपत्र देते तो राजाके स्वयं अंश भागी होनेके कारण उसका कोई फल नही होता और इसीसे मत्री सव प्रजाके प्रियपात्र न होसके ।

कर्नल टाड साहबने निम्नलिखित उक्तिसे बूँदीराजके इतिहासका उपसंहार किया है, " विशनसिंह दो पुत्र छोड़ गये, इनमे सवसे वड़े राव राजा रामसिंह थे, यह

सन् १८२१ ईसवी अगस्त मासमे ग्यारह वर्षकी अवस्थामे पिताके सिहासन पर अभिषिक्त हुए। छोटे महाराज गोपालसिह राव राजा रामसिहकी अपेक्षा कई महीने छोटे थे। राव राजा रामसिह अपने पिताकी समान मृगयामे रत रहते थे, अधिक क्या कहे इस छोटी अवस्थामे ही इन्होने सवसे पहिले वनैले वराहका शिकार किया, उसके लिये उनके सामन्तोने महा प्रसन्नता प्रकाश करके उनको नजरे दी थीं। इसके पहिले यह छोटीसी तलवार लेकर वकरे और भेडोका वध करते थे। इनकी माता कृष्णगढ़की राजकुमारी थी, यह जिस भांति बुद्धिमान और सुलक्षणा थी उसी प्रकारसे पुत्रके मंगलकी कामना करती रहती थीं। यह विशेष आशा होती है कि जिस गवर्नमेण्टने इस वूंदीराज्यका शोचनीय दशासे उद्धार किया था उसी गवर्नमेण्टके आश्रयसे यह वूंदी राज्य पूर्वकालकी समान श्रीवृद्धियुक्त होगा। हम शुद्ध अंतःकरणसे हाडाजातिके मंगल और उन्नतिकी कामना करते है"।

पंचम अध्याय ५.

महाराव राजा रामसिह–कर्नल टाड् साहवका महारावके अविभावक पदको ग्रहण करना–राज्यके सुशासनकी व्यवस्था करना–मंत्री कृष्णराम–रानीके साथ महाराजके अन्यान्य व्यवहारोंको निवारण करनेके लिये जोधपुरसे सामन्तोंका आना–कृष्णरामकी शोचनीय मृत्यु–खंडसमर–हत्याकारियोका प्राण नाश करना–जोधपुरके महाराजके साथ समरकी सूचना करना–वृटिश गवर्नमेण्टकी मध्यस्थतासे उसका निवारण करना–महाराव राजा रामसिहका अपने हाथमे राज्यभार ग्रहण करना–पाटनदेशके सम्बन्धमें नवीन व्यवस्था–सन् १८५७ ईसवीमे सिपाही विद्रोहके समय महाराव राजा रामसिहका वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमे असम्मति देना–वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव राजा रामसिहका राजनैतिक सम्बन्ध छेदन होना–फिर सद्भाव स्थापन–वृटिश गवर्नमेण्टका महारावको दत्तक पुत्र ग्रहण करनेकी अनुमती देना–दिल्लीके दरवारमें महाराव राजा रामसिहका जाना–प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्र और भारतेश्वरीके भारत साम्राज्यमत्री की उपाधि प्राप्त करना–सलामीकी तोपोकी संख्या वृद्धि–वूंदीका शासन समाज–प्रजाके जलकष्टको निवारण करनेके लिये अनुष्ठान करना–वूंदीके राजकुमारोंका विवाह–विवाहमे व्यय–यौतुक–राजकुमारोंके शिक्षाकी अवस्था–महाराव राजा रामसिहके चौथे पुत्रका जन्म–वूंदीराज्यकी आमदनी और खर्चेकी सूची–शासनविभागकी उन्नति–शान्तिरक्षाका विभाग–वाणिज्य शुल्कसंस्कार–वूंदी-राजका प्रजाकी शिक्षाकी व्यवस्था करना।

---

(१) विशनसिहने मृत्युके समय कर्नल टाड् साहवको अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त किया। कर्नल टाड् साहव जितने दिन रजवाडेमें थे उतने दिनोतक इन्होंने अपने कर्त्तव्यको संतोषसे पालन किया। साधु टाड् साहवने राव राजा रामसिहको भतीजा कह कर पुकारा था, और इसी प्रकारसे चचा भतीजेका सम्बन्ध स्थापित किया। साधु टाड् साहवने राव राजा रामसिहको भतीजा कहकर पुकारा तथा इसी प्रकारसे स्नेह दिखानेमें भी कसर न की। उक्त प्रथम मृगया—

महात्मा टाड् साहबने जहाँतक बूँदीराज्यके इतिहासको अपने ग्रथमे सग्रह किया था, उसको चोथे अध्यायतकमे लिखकर इस समय उसके पिछले समयके इतिहासको हम विश्वासी प्रमाणोसे सकलन करके पाठकोको आदरपूर्वक वडे सम्मानके साथ उपहार देनेके लिये अग्रसर होते है।

जो महाराव रामसिह जी० सी० एस० आई० सी० आई० ई० बहादुर इस समय बूँदीके सिहासनको उज्ज्वल कर रहे है वह अपने पिता महाराव विशनसिहकी मृत्युके समय केवल ग्यारह वर्षके थे। महाराव विशनसिह बहादुरने उदारहृदय महदआशय कर्नल टाड् साहबको अपने अप्राप्त व्यवहार कुमारके शिक्षातत्त्वविधायक और उनके अविभावक पदपर नियुक्त किया था, उनकी मृत्युके समय कर्नल टाड् साहब मेवाडकी राजधानी उदयपुरको गये थे। वह महाराव विशनसिहकी मृत्युका समाचार पाकर और विशनसिहकी विधवा रानीके बुलानेका पत्र पाते ही शीघ्रतासे बूँदीराज्यकी ओरको चले गये। कर्नल टाड् साहबने बूँदीमे जाकर विधवा रानीके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापन करके बालक रामसिहकी शिक्षा और तत्त्वावधानका भार और बूँदीराज्यमे सुशासन स्थापनका भार अपने हाथमे लिया। राजपूतजातिके परम मित्र कर्नल टाड् साहबने अपनी स्वाभाविक दयाके वश होकर विधवा रानीको बहिन कहकर रामसिहको अपना भानजा माना मृतक महाराज रामसिहकी अंतिम आज्ञा पालन करनेमे किचिन्मात्र भी विलम्ब न किया। इन्होने शीघ्र ही अपने भानजे महाराव रामसिहके मंगलकी इच्छासे बूँदीकी राजधानीमे सर्वत्र सुशासन स्थापन करनेके लिये अच्छा प्रबन्ध करदिया और कुछ समय तक आपने स्वय बूँदीमें रहकर सब विषयोपर ध्यान दिया, और उन सब विषयोको स्थिर सिद्धान्त करनेमे किचित्मात्रका भी विलम्ब न किया। कर्नल टाड् साहब जबतक भारतवर्षमे रहे तबतक बराबर महाराव रामसिहका कल्याण साधन करते रहे। और यह अपने देशमे जाकर भी अपने भानजे महाराव रामसिहके कल्याणकारी विचारोमे लगे रहे।

महाराव विशनसिहके स्वर्ग चले जानेके पीछे उच्च आशय, विद्वान् बुद्धिमान् कृष्णराम नामके एक मनुष्य बूँदीके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त हुए। जबतक कर्नल टाड् साहब रजवाडेके बृटिश एजेण्ट पदपर नियुक्त थे, कृष्णराम उतने दिनोतक उनके परामर्शके अनुसार समस्त भारी प्रश्नोकी मीमांसा कर लेते थे। साधु टाड् साहबके अपने देशको जाते ही मत्री श्रेष्ठ कृष्णरामने अपनी चतुराई और नीतिज्ञताके बलसे बालक महाराव रामसिहका स्वार्थ साधन किया। कर्नल स्यालिसन अपने ग्रथमे लिखते है, कि "जब साढे छ वर्षतक कृष्णराम शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे उस समय बूँदीके राज्यका समस्त बाकी ऋण चुका दिया गया, उन्होने नियमपूर्वक

—के उपलक्षमे सामन्तोकी समान साधु टाड् साहबने भी राजा रामसिहको सम्मान सूचक उपहार दिया था।

(१) इसका विवरण कर्नल टाड् साहबके दूसेर भ्रमण वृत्तान्तमे देखो।

हिसाव किताव रक्खा, और राजस्वका एक रुपया तक वसूल कर कोशागारमे दे दिया। उन्होंने राजस्वके हिसावसे तीन लाखसे पॉच लाख रुपया वढ़ा दिया, उनके शासनमे खर्च करके दो लाख रुपया वचता था, उन्होने राजकार्यके प्रत्येक विभागकी अवस्था सतोपदायक कर दी, और वह सेनाको नियमसहित वरावर वेतन देते गये "।

अत्यन्त दु खका विशय है कि वह सर्व गुणसम्पन्न मंत्री कृष्णराम अधिक दिनतक वूॅदीराज्यका कल्याण न करसके। उनके शासन भारको ग्रहण करनेके साढ़ छ. वर्ष पीछे एक घोर घटनाके होनेसे वह अत्यन्त शोचनीयरूपसे मारे गये, उनके वियोगसे समस्त राज्यको जो कष्ट हुआ उसका लिखना लेखनीकी शक्तिसे वाहर है।

कर्नल स्यालिसनने लिखा है कि "महाराव रामसिहका कोई नौ वर्ष राजासिहासन पर बैठे हुए होगे कि इसी वीचमे एक ऐसी घटना हुई कि यदि वृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थ होकर अपनी शक्तिका प्रयोग न करती तो वूदीके साथ जोधपुर राज्यका युद्ध उपस्थित होजाता। राव (रामसिहने) जोधपुरकी राजनंदिनीके साथ विवाह किया था, वीचमे ऐसा जाना जाता है कि उन्होने उस स्त्रीके साथ अत्यन्त निठुर व्यवहार किया था, जिससे वह जोधपुरकी राजकुमारीके साथ इस प्रकारके व्यवहार न करसकै,उसका उत्तम प्रवंध करनेके लिये सन् १८३० के पहिले महीनेमे जोधपुरसे वहुतसे सामन्त सेवकोको साथ लेकर वूॅदीकी राजधानीके पास आ पहुॅचे। उनके आनेके तीसरे दिन उन आयेहुए जोधपुरियोमेसे एक सामन्तके द्वारा अत्यन्त वुद्धिमान निष्कलंक चरित्र वूॅदीके राजमंत्री कृष्णराम मारेगये, युवक राव रामसिहने इससे महा क्रोधित होकर हत्या करनेवालोको उचित दंडदेनेका दृढ़रूपसे विचार किया। जोधपुरके जो मनुष्य किलेके भीतर वंदीभावसे रहते थे उस स्थान पर क्रमानुसार गोलोकी वर्षाहोने लगी, और जिससे उनको पानी न मिलसकै ऐसे उपाय भी किये गये। उस जोधपुरकी सेनाके दो नेता और जिन मनुष्योके कुपरामर्शसे हत्याकाण्ड हुआ था, वह लोग भागनेके समय पकडे गये। रावराजाकी आज्ञानुसार उनको प्राणदंडकी आज्ञा दीगई। अतमे नीचे पदपर स्थित मनुष्योके क्रमसे आत्म समर्पण करते ही उनको वूॅदीराज्यकी सीमासे निकाल दिया गया। छः दिनमे जोधपुरके एक सामन्त वभूतसिहं जिसने वॅूदीके मत्रीको मारडाला था वह भी युद्धमे मारागया। उस वभूतसिहके और दो नेताओके प्राण नष्ट होते ही वूॅदीके अधीश्वरने अपने मंत्री श्रेष्ठके प्राणनाशका उचित वदला होगया, यह मानालिया।

"उपरोक्त कारणसे ही जोधपुरके साथ युद्ध होनेकी सम्पूर्णत सभावना थी, परन्तु गवर्नमेण्टने वहाॅ अपने एजेण्टको भेजकर युद्धमे असम्मति प्रकाश कर सरलतासे शान्ति स्थापित की।" आचिसन साहवने लिखा है कि "महाराज रामसिहके सुदीर्घ अप्राप्त व्यवहारके समयसे वृटिश गवर्नमेण्टको एक साथ ही अधिकतर वॅूदीराज्यके आभ्यन्तरी शासनके विपयमे हस्ताक्षेप करना पड़ा था"।

---

(१) गॉव वाजोली मारवाडके मेडतिया ऐठोड था।

मन्त्री श्रेष्ठ कृष्णरामके वियोग होनेके कुछही दिन पीछे महाराव रामसिहने अपने हाथमे बूँदीका राज्य लिया, और आजतक वरावर उसको शासन करते रहे "।

आचिसन साहवके ग्रंथमे लिखा है कि "गवर्नमेण्टकी रक्खीहुई सेनाका खर्चा देनेके लिये सन्१८४४ ईसवीमे महाराज सेन्धियाने पाटनदेशके तीन अंशोमेसे यह जिन अंशोके अधिकारी थे वह अंश गवर्नमेण्टको देदिये, उसी कारणसे बूँदीके महाराजने उक्त देशके अंशोकी प्राप्तिके लिये प्रश्न उपस्थित किया। सेधिया उक्त देशके अधिकार देनेके लिये राजी न हुआ, परन्तु सन् १८४७ ईसवीमे ग्वालियरके महाराज सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार जो नवीन संधि की हुई उसके अनुसार बूँदीके महाराजने ग्वालियरके महाराजको वार्षिक ८०००० रुपया कर देना स्वीकार किया था, इसी कारणसे उक्त देश चिरकालके लिये बूँदीके महाराजका समझा गया, सन् १८६० ईसवीमे सेन्धियाके साथ जो संधि हुई थी उसीके अनुसार पाटनदेशका राजस्व भी गवर्नमेण्टको मिलता था। इस प्रकार बूँदीके महाराजने उस पाटन देशको गवर्नमेण्टके अधीनमे भोग किया था, बूँदीके महाराज सन् १८१८ ईसवीकी संधिके अनुसार बूँदी और अन्यान्य देशका चौथस्वरूप गवर्नमेण्टको जो वार्षिक ४०००० रुपया करका देते थे, उक्त देशके कारण उसके सिवाय और भी ८०००० रुपया करस्वरूपमे दिया करते थे।

इस वातको हमारे पाठक पहिले ही जान चुके है कि भारतवर्षके देशीय राजाओमे बूँदीके महाराज उमेदसिहने सबसे पहिले गवर्नमेण्टकी मित्रभावसे सहायता की थी और सन् १८१८ ईसवीमे महाराव विशनसिहने गवर्नमेण्टके साथ संधिवधन करके मित्रभावका चूडान्त परिचय दिया था। परन्तु अत्यन्त ही दु:खका विषय है कि सन् १८५७ ईसवीमे जिस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे विद्रोहकी आग भडक उठी थी उस समय विपत्तिका समुद्र अपनी तरगमालाको विस्तार करता हुआ भारतसे अंग्रेजी राज्यको लुप्तकरनेके लिये तैय्यार हुआ, उस महाविपत्तिके समयमे बूँदीके महाराज रामसिह वहादुरने सन्१८१८ई०के संधिपत्रके अनुसार गवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता नही दी। जो राजवंश गवर्नमेण्टका परम मित्ररूपसे प्रसिद्ध था, महाराव रामसिहने उसीके वंशधर होकर उस वंशके गौरवकी रक्षा न की। इससे गवर्नमेण्ट अत्यन्त दु:खित हुई, और तुरन्त ही गवर्नमेण्टने क्रोधित होकर बूँदीके महाराजके साथ समस्त सम्बन्ध तोड़ दिये। परन्तु सतोषका विषय है कि बूँदीके महाराजको इस भावसे अधिक दिनतक वृटिश गवर्नमेण्टका अप्रियपात्र होकर न रहना पडा। सन् १८६० ईसवीमे फिर बूँदीके अधीश्वर महाराव रामसिहके साथ गवर्नमेण्टका राजनैतिक सम्वन्ध स्थापित हुआ और उसी समयसे वर्तमान समयतक महारावके साथ गवर्नमेण्टकी पूर्ण प्रीति रही है।

यद्यपि वर्तमान समयके महाराव रामसिह बहादुरने सिपाहियोके विद्रोहके समय गवर्नमेण्टकी सहायता नही की थी, परन्तु विद्रोह वासनाके पीछे वृटिश गवर्नमेण्टने अन्य राजाओकी समान महारावको वंशानुक्रमसे दत्तकरूपसे पुत्र ग्रहण करनेकी सनद थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको ग्रेट ब्रिटेन और आयर्लैंण्डकी अधिराज्ञी विक्टोरियाने दिल्लीके प्रकाश्य महान् दरवारमे जो भारतकी राजराजेश्वरीकी

उपाधि धारण की, महाराव रामसिह वहादुरने उस दरवारमे आमन्त्रित होकर वहां जाकर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनके द्वारा अन्यान्य राजाओकी समान स्वय सम्मान ग्रहण किया। अन्यान्य भूपालोकी समान महारावको उक्त उपाधि धारण करनेकी स्मारक पताका और स्मारक पदक भी मिला था, महाराव रामसिहके साथ गवर्नमेण्ट की जो इस समय महा मित्रता हुई है उसका दूसरा प्रमाण यह है कि वृटिश गवर्नमेण्ट ने " ग्रान्डकमान्डारस्टारआफ इण्डिया " नामकी जो ऊँची श्रेणीकी भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि करके देशीय राजाओको उस उपाधिका पदक दिया था, बूँदीपति महाराव रामसिह वहादुरको भी गवर्नमेण्टने उक्त दरवारमे उस प्रथम श्रेणीके भारत नक्षत्रकी उपाधि और कौन्सिलरआफदि एम्प्रेस, नामक भारतेश्वरीके मंत्री नामकी नवीन उपाधिके भूषणसे विभूपित किया, और महारावका सम्मान बढ़ाकर तोपोकी सलामी की संख्या भी वढा दी थी। महारावको इस समय वृटिश शासित देशमे जाने आनेके लिये सत्रह तोपोकी सलामी होती थी। वृद्ध महाराव रामसिहके साथ गवर्नमेण्टका यह प्रीति पूर्ण सम्वन्ध अवश्य ही आनंददायक हुआ।

आजकल भारतवर्पके प्रत्येक देशीय राज्यमे गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि रेसिडेण्टकी उपाधि धारण करनेवाले अग्रेज निवास करते है। वृटिश शासनकी राजनीतिके अनुसार वह रेसिडेण्ट ही इस समय देशीय राज्योके यथार्थ शासनकर्ता रूपसे विदित है। राजालोग स्वाधीन होकर भी उन्हींके अधीन है और उन रेसिडेण्टोके द्वारा उनकी स्वाधीनता वहुतायतसे घट गई है, वह रेसिडेण्ट प्रत्येक वर्पमे देशीय राजाओका एक शासन विवरण तय्यार कर गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजते है। एजेण्ट एक २ विस्तारित देशके राजाओके ऊपर राजनैतिक कर्मचारी होते है। वह उन समाचारोको पाकर उसमे अपना मन्तव्य मिलाकर राजप्रतिनिधिके यहाँ उसको भेजते है। भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके विदेशिकमंत्री उसे पुस्तकाकार छपाकर सर्वसाधारणमे उसका प्रचार करदेते है। राजपूतानेके पोलिटिकेल एजेण्टने सन् १८८१ ८२ ईस्वीमे बूँदीके इतिहासमे जो कुछ लिखा है उसकी समालोचना सन् १८८३ ईस्वीकी १८ मईके इण्डियन मिरर नामक अग्रेजी दैनिकपत्रमे निम्नलिखित प्रकारसे प्रकाशित हुई थी।

गतवर्प बूँदीके महाराव राजा अत्यन्त रोगी होगये थे, अधिक पीडाके होनेसे महाराव राजाने राज्यका समधिक शासनभार कामदार पंडित गगासहायके हाथमे सौंप दिया था। महारावने राज्य शासन करनेके लिये एक मंत्रीसमाज तय्यार किया। उसमे छ· सदस्य नियुक्त थे। उक्त पडितजी उस समाजके सभापति हुए। एक पुरुप समरविभागमे, एक मनुप्य साधारण विभागमे, एक एजेन्सीविभागमें एक शान्तिरक्षा विभागमे और एक अपीली मुकदमोके विभागमे नियुक्त हुआ। महाराव राजाने अपने राज्यकी प्रजाके जलकष्टको दूर करनेके लिये यथेष्ट तय्यारी की और महारानीने भी हिन्दूस्त्रियोंकी समान प्रजाको जल देनेके लिये एक

बड़ा अनुष्ठान किया है । उनके व्ययसे दो कुण्ड तैयार हुए महाराव राजा भारतवर्षके अन्य राजाओमे अत्यन्त रक्षण शील मतके है । निज राज्यमे अग्रेजीशिक्षाके विस्तारकी ओर उनका ध्यान नही गया उन्होने एक छोटासा विद्यालय स्थापित किया, उसमे१२०विद्यार्थी पढ़ते है । परन्तु हमै ऐसा विश्वास है कि महाराजने संस्कृत शिक्षाका प्रचार करनेके लिये वहुत यत्न किया है, इस कारण इस प्रकारके राजा हमारे अधिक सम्मान योग्य है* ।

वृटिश पोलिटिकल एजेण्टने सन्१८८३ ईसवीकी ३ तीसरी मईको बूँदीके शासन सम्वन्धी विवरणमे जिस मन्तव्यको राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजा था । और जो भारतवर्षीय गवर्नमेण्टके द्वारा सन् १८८२–८३ ईसवीमे रजवाड़ेकी शासन वृत्तान्त पुस्तकमे प्रकाशित हुआ है, हमने उन सवके अशोका भाषान्तर किया है पाठक इसको पढ़कर बूँदीराज्यके वर्तमान शासनका आयव्यय और शिक्षा उन्नतिकी विशेष अवस्थाको जान सकैगे ।

एजेण्टने लिखा है, कि "हम वडे आनंदके सहित कहते है कि महामान्य महाराव राजाने विशेष स्वस्थता प्राप्त की है । मारवाडकी राजवंशीय तीन स्त्रियोके साथ महाराव राजाके तीनो पुत्रोका विवाह करनेके लिये गत वर्षमे अधिक तैयारी करनेमे मन लगाया गया, गत वर्षके विज्ञापनमे लिखा गया है कि यह विवाहका कार्य शीतकालमे होगा । यह निश्चय हो गया है । महामान्य महाराव अपने पुत्रोसे इतना स्नेह करते है कि दिसम्वर महीनेके पहिले जव मैने उनसे साक्षात् किया तव यह जाना गया कि विशेष वृद्धावस्था और अस्वस्थ शरीर होकर भी वह स्वयं पुष्करजीतक पुत्रोके साथ जाकर वहाँ उनके लिये अपेक्षा करते रहे और जो व्यवस्था वहाँ रहनेकी स्थिर की उस व्यवस्थासे उनके दो उद्देश सिद्ध हुए ।

प्रथम पुत्रका साथ वहुत थोड़े समयमे विच्छिन्न होजायगा, दूसरे तीर्थस्थानमे जाकर कुटुम्वके मगलकी इच्छासे देवताकी पूजा भी कर सकैगे । परन्तु मारवाडके महाराजके दृढरूपसे वारम्वार अनुरोध करने पर महाराव राजा रामसिह वहादुर अंतमे कुटुम्वसहित छठी जनवरीको बूँदी छोडकर २५ जनवरीको जोधपुर पहुँचे, पिछले दो दिनोमे वडे उत्सवके साथ विवाहकार्य किया गया । महारावके वडे पुत्रके साथ मारवाड़पतिकी एक भगिनीका और मध्यम तथा तीसरे पुत्रसे मारवाडके महाराजकी दो भतीजियोका विवाह हुआ, इसके अतिरिक्त महाराव राजा रामसिहने अपने मृतपुत्र भीमसिहके पुत्रके साथ महाराज वख्तसिहकी पोतीका विवाह किया । मारवाडके महाराजने जिस प्रकार वडे आदरभावके साथ महाराव राजा रामसिहकी सम्वर्द्धना और

---

* Report of the poletecal Adminition of the Rajpootana states for the 1882–83

(१) यह बात विलकुल गलत लिखी गई है क्योकि न तो भीमसिहके कोई वटा था और न महाराजा वख्तसिहकी पोती थी, न कोई ऐसा विवाह उस समय हुआ था ।

अभिनंदन किया उससे वह अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु उस समय मारवाड़के महाराज अस्वस्थ थे, इसीसे उन्होने असुख माना । ठीक ५८ वर्ष वीते कि महाराव रामसिह वहादुरने चौदह वर्षकी अवस्थामे जोधपुरमे जाकर अपनी मृत पहली रानी जोधपुरके मृत महाराज मानसिहकी कन्यासे विवाह किया था, उसी रानीके गर्भसे कुमार भीमसिहने जन्म लिया, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि सन् १८६८ ईसवीमे कुमार भीमसिहकी मृत्यु अकालमे होगई, सारा बूंदीका राज्य शोकके समुद्रमे डूवगया था । महाराव राजाके जोधपुरमे जाते ही उसी समयमे महाराजको " द्वारका नाथ " नामक बागके महलमे उतारा गया । महाराव राजाने कृष्णगढके राजाके साथ इस समय साक्षात् किया । विवाह होजानेके पीछे वह ११ फर्वरीको जोधपुर छोडकर कुटुम्बसहित अजमेरको चलेगये और वहाँ राजपूतानेके स्थित गवर्नर जनरल एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डके साथ साक्षात् कर पुष्कर तीर्थका दर्शन करनेके पीछे पहिली मार्चको अपनी राजधानी बूँदीमे चले आये " ।

" इस विवाहमे और आनेजानेमे बूँदीके महाराजका ढाई लाख रुपया खर्च हुआ था, और विवाहके यौतुकमे अनेक प्रकारके द्रव्य और अश्वादि सव मिलाकर डेढ लाख रुपया मिला था " ।

राजकुमारोकी शिक्षाके सम्बन्धमे उक्त विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि " महामान्य महाराव राजा रामसिहके तीनो कुमारोकी अवस्था क्रमसे इस समय साढ़े तेरह वर्ष ग्यारह वर्ष और नौ वर्षकी है । प्राचीन कालकी हिन्दूरीतिके अनुसार बड़े यत्नसे राजकुमारोको शिक्षा दीगई है, ऐसी आशा की जाती है कि बड़े राजकुमार इस समय संस्कृत विद्यामे इतने विद्वान् होगये है कि इसके दो वर्षके पीछे उन्होने संस्कृतको समाप्त कर उर्दूभाषा का पढना प्रारंभ किया । परन्तु इसी अवसरमे उनको राजकार्यके शासनकी शिक्षा करनी पड़ी है। तीनो राजकुमारोने शारीरिक व्यायाम और युद्धकी शिक्षा भी प्राप्त की है, एक समय हमने महारावके साथ साक्षात् करनेके लिये महलमे जाकर देखा कि महाराव स्वयं महलके एक कमरेमे वैठे हुए पिस्तौल चलानेकी शिक्षा राजकुमारोको देरहे है। मध्यम और तीसरे राजकुमारोके कारण इतिहासमे बूँदीराज्यकी प्रचलित रीतिके अनुसार वार्षिक २०००० हजार रुपयेकी आमदनीकी भूमि नियत करदी है, और उन दो जनोके लिये जो दो महल वनाये जानेका विचार हुआ था उनमेसे एक तो वनकर तैयार होगया है और दूसरेके वनानेकी समस्त सामग्री तैय्यार धरी है " ।

" गत जौलाई मासकी चौथी तारीखको महाराव राजा रामसिहके और एक पुत्रने जन्म लिया, इनका नाम रघुवरसिह रक्खा गया । " यह महाराजके चौथे पुत्र है ।

बूँदीराज्यके वर्तमान आयव्ययके सम्वन्धमें अंग्रेज पोलिटिकल एजेन्टने लिखा है कि " महारावने जो राज्यके आय व्ययकी सूची हमै दी है । प्रकाशमे तो यह संवत्

---

(१) यह भी गलत लिखा है चौथा पुत्र कोई नहीं हुआ रघुवीरसिह नाम वडे पुत्रका है जिसकी शादी जोधपुरमे हुई थी वही अव वूँदीके रावराजा है ।

१९३८ (जो गत १ पहिली जौलाईको समाप्त हुआ है) की अभ्रान्त अनुमान की हुई सूची है यथार्थ आयव्ययकी सूची और भी कई एक महीने बीतने पर तैयार होगी। महाराव राजाके पुत्रोके विवाहमे बहुतसा धन खर्च हुआ है, महारावने ऐसा अनुरोध प्रकाशित किया है कि गवर्नमेण्टको जो नियमित वार्षिक कर दिया जाता है वह रुक गया है। उन्होने उस करको कईवार करके दो तीन वर्षके भीतर ही बिना सूद चुकानेको कहा है। उनका यह प्रस्ताव विचारके अधीनमे ग्रहण किया गया है।"

सम्वत् १९३८ अर्थात् (१८८२–१८८३ ईसवीमे) बूंदीराज्यके आयव्ययकी सूची नीचे दीगई है।

आमदनी।

भूराजस्व और अनेक छोटी २ तहसीलोकी आमदनी	४७५००० रुपया।
कापरेन और अन्यान्य देशोके जागीरदारोके समीपसे आया हुआ कर	२८००० "
जेला, विझा, अर्थात् वाणिज्य शुल्क, वन विभाग, उद्यान, कोटपाला, टकसाल इत्यादिकी आमदनी	९०००० "
नाना प्रकारकी छोटी २ आमदनी .	३५००० "
सब	६२८००० रुपया।

खर्च।

महाराव राजका स्वकीय और कुटुम्बका खर्च .	४५०९० रुपया।
पुण्य वा दातव्य व्यय	२२००० "
सेनादलका खर्चा	८८००० "
राजकर्मचारी और— परिवारिक कुटुम्बियोके नौकरोका वेतन	७२००० "
रथ–घोडे खाना तथा राज्यके— अन्यान्य कार्यालयोका व्यय	७२००० "
हवाला और तहसील खर्च	५५००० "
और भी अनेक प्रकारका खर्च	७८००० "
अंग्रेज गवर्नमेण्टको देयकर–तथा पूर्तकार्य विभाग विचारालयमे पुरस्कारादि देना इत्यादि	१२८००० "
फुटकर	३८००० "
	५९८००० "
उद्धृत	३०००० "
सब जोड़	६२८००० रु०

वृटिश एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "महारावने परिचारके अनेक विषयोमे भलीभाँतिसे मनलगाया है। इस्से महामहिमवरके राज्यके आभ्यन्तरीय शासनके सम्वन्धमे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ"।

"खालसा भूमि समूहकी जमावंदीके विपयमे विशेष उन्नति नही हुई। गतवर्षमे केवल पचास ग्राम जमावंदी किये गये है। पहिले वर्षके साथ मिलान करनेसे इनकी संख्या केवल १५० हुई है। इसका फल अधिक असतोष दायक नहीं हुआ"।

"प्रकाशमे कहागया है कि शान्तिरक्षा विभागकी अवस्था पहिलेकी समान असंतोषदायक रही है परन्तु सतोषका विषय यह है कि महामान्यवर महारावने १०० मीनोको विशेष शांति रक्षक पदपर एक जमादार और दो उपजमादारोके अधीनमे नियुक्त करके डकैती निवारण करने पर ध्यान दिया है"।

गतवर्षके विज्ञापनमे वूँदीके शुल्कविभागके साधनका जो उल्लेख हुआ है इस वर्षमे उसका फल यह हुआ है, कि इससे राज्यकी आय ८०००० रुपया वढी है। यह एक जानने योग्य वात है, राज्यके वाणिज्य शुल्कके संस्कारसे, प्रजा और राजा दोनोहीकी सुभीतेके साथ आमदनी वढी है।

वूँदीराज्यकी पृथ्वीका परिमाण २३०० मील है, प्रजाकी सख्या२२४०००, सेनामे पैदलोकी सख्या १३७५, अश्वारोहियोकी संख्या १०० और तोपोकी सख्या ८८ है।

वूँदीराज्यकी सर्वसाधारण प्रजामे शिक्षा विस्तारके सम्वन्धमे वूँदीमे स्थित पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "राजधानीमे जो राजविद्यालय स्थापित है, मे दुखित होता हूँ कि मै उन विद्यालयोके सम्वन्धमे उन्नतिमूलक विवरणको प्रकाश करनेमे असमर्थ हूँ, उन विद्यालयके विद्यार्थियोकी संख्या उपयुक्त नहीं है। प्रायः १२० विद्यार्थी पढा करते है। जो बारह हिन्दू विद्यालय विभिन्न ग्रामोमे स्थापित है उन सवमेके विद्यार्थियोकी संख्या ४२९ है।" सारांश यह है कि रजवाडेके अन्यान्य राजाओकी प्रजामे जिस भाँति शिक्षाका विस्तार हुआ है, अत्यन्त दुखका विषय है कि वूँदीराज्यमे आजतक शिक्षाके विस्तारके विषयमे ऐसा यत्न नही किया गया। कर्नल ब्राडफोर्ड लिखते है कि वूँदीराज्यकी शिक्षा इस समय शैशव अवस्थामे है, परन्तु जव शिक्षा विस्तारकी सूचना हुई है तव ऐसी आशा की जाती है कि किसी समय इसके द्वारा अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

वूँदीराज्यका इतिहास समाप्त हुआ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–वंबई



कोटा ।

एच् एच् महाराव मेजर सर उमेदसिंहजी बहादुर
जी. सी. आइ. ई. के सी. एस. आइ.



कोटा।

(१) माधोसिंह, १६२५
(२) मुकुन्दसिंह, १६३१
(३) जगतसिंह, १६५८
प्रेमसिंह, १६७०, (तसवीर नहीं है)
(४) किशोरसिंह, १६७०
(५) रामसिंह, ११८६
(६) भीमसिंह, १७०८
(७) अर्जुनसिंह, १७२०.
(८) दुर्जनसाल १७२४.
(९) अजीतसिंह १७४७,
(१०) छत्रसाल. १७४१.
(११) गुमानसिंह १७५६
(१२) उम्मेदसिंह, १७७१,
(१३) किशोरसिंह, १८२०,
(१४) रामसिंह, १८२८.
(१५) छत्रसिंह. १८६६,
(१६) महाराव उम्मेदसिंह १८८९,

राजस्थान.

दूसराभाग.

कोटाराज्यका इतिहास.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

कोटाराज्यका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बूँदीसे कोटाराज्यका भिन्न होना–कोटिया भील–भील जाति–कोटेके प्रथम राजा माधोसिंह–कोटाराज्यमे सामन्त मडलीका स्थापित होना–माधानी–राजा मुकुन्द–रणभूमिमे चारो-भाइयोका सम्राट्के लिये प्राण देना–जगत्सिंह–प्रेमसिंह–उनका सिंहासनसे उतरना–किशोरसिंह–अरकाटमे उनका मारा जाना–रामसिंह–जाजवमे उनकी मृत्यु–भीलोका अधिपति चक्रसेन–ऊमटवश भीमसिंह–भीमसिंहका निजामुलमुल्कपर आक्रमण–भीमसिंहका माराजाना–भीमकी सचित्र समालोचना–बूँदीके राजाके साथ उनकी शत्रुता–राव अर्जुनका सिंहासन पर बैठकर कुम्बियोसे कलह–श्यामसिंहका माराजाना–महाराव अर्जुनशाल–महाराष्ट्रोका प्रथम अभ्युदय–कोटेपर आक्रमण–हिम्मतसिंह झालासे कोटेकी रक्षा–जालमसिंहका जन्म–महाराष्ट्रोको कर देना–दुर्जनशालका माराजाना–उनके चरित्रकी समालोचना–उनकी शिकार–उनकी रानियोकी शिकार–हिम्मतसिंहका व्याघ्रकी शिकार–महाराव अजित–राव छत्रशाल–जयपुरके राजा माधोसिंहका कोटेपर आक्रमण–भटवाड़का समर–जालिमसिंह झाला–हाडाजातिका जय पाना–आमेरकी सेनाका भागना–कोटेका स्वाधीन होना–छत्रशालका माराजाना ।

कोटेका हाड़ा राजवश बूँदीराज वंशधरोकी छोटी शाखा है, अतएव कोटेकी हाडा जातिका पहिला इतिहास बूँदी राज्यके इतिहासके साथ मिला हुआ है । बादशाह शाहजहाँ जिस समय भारतवर्षके सिंहासन पर बैठा था उस समयमे बुरहानपुरके समरमे बूँदीके राव राजा रत्नसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहने अपने प्रबल पराक्रमसे बादशाहकी ओरसे जयप्राप्त की, तब बादशाह शाहजहाँने प्रसन्न होकर उक्त कोटा प्रदेश और उसके अधीनवाले सब गांव नगर उनको देदिये । उसी समयसे माधोसिंह पिताके बूँदीराज्यको छोड़कर स्वाधीनभावसे कोटेराज्यका शासन करने लगे । तबसे कोटा और बूँदी दो पृथक् २ राज्य गिने गये । हाड़ाजातिके इतिहासमे लिखा है कि माधोसिंहका जन्म सम्वत् १६२१ सन् १५६५ ई० मे हुआ था, चौदह वर्षकी अवस्थामे माधोसिंहने बुरहानपुरकी लड़ाईमे अपने साहस और पराक्रमसे ऐसी विजय पाई कि जिससे प्रसन्न हो बादशाह शाहजहाँने उनको तीनसौ साठ नगर और

गांवोसे पूर्ण कोटाराज्य पुरस्कारमे देदिया। पहिले यह कोटाराज्य बूँदीराज्यके प्रधान सामन्तोके अधीनमे था और उसका राजकर दो लाख रुपये मिलते थे। माधोसिहने वादशाहसे "राजा" की उपाधि प्राप्त की और वह उक्त कोटेराज्यका स्वाधीनभावसे शासन करने लगे।

बूँदीराज्यके इतिहासमे पाठक पढ़चुके है कि असिश्र आदिम कोटिया भीलका सबसे पहिले इस प्रदेश पर अधिकार था। उन प्रथम निवासी भीलोके हाथका जलतक राजपूत नही छूते थे। जिस समय कोटे पर अधिकार किया गया उस समय उस प्रदेशके स्थान २ मे केवल कुटी ही थी। कोटाके राजा कोटेसे पॉच कोश दक्षिणमे इकेलगढ़ नामक वडे पुराने किलेमे रहते थे। किन्तु जिस समय माधोसिहने दिल्लीके बादशाहसे कोटाप्रदेशकी शासनसनद प्राप्तकी उस समय कोटाराज्यकी सीमा चारो ओरसे वढ़ाई गई। उस समय कोटेके दक्षिणमे गागरौन और घाटौली प्रदेश था। खीची जातीयगण उस प्रदेशके स्वामी थे। पूर्वीय सीमामे गोडजातिके अधीनमे मांगरोल और राठौड राजपूतोके स्वामीके अधिकारमे नाहरगढ था। नाहरगढके अधिपति राजपूत होनेपर भी वह अपने अधिकारी प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये मुसलमानी धर्मका अवलम्बन कर नव्वावकी उपाधिसे भूषित थे। उत्तरमे कोटेकी सीमा चम्वल नदीके किनारे किनारे सुलतानपुरतक थी, चंवल नदीके पारमे नाशता नामक एक स्वतंत्र छोटा राज्य विराजमान था। इस चारोओरकी सीमामे बँधे प्रदेशके बीचमे ३६० नगर और गॉव थे और बहुत सी नदियोके द्वारा पृथ्वीकी उपजाऊ शक्ति भी बड़ी थी।

कोटेके राजा माधोसिहने वादशाहके वलसे वलवान् होकर थोडे ही दिनोमे कोटेकी राज्यसीमा वहुत वढ़ाली। माधोसिहके मरनेके समय मालवा और हाड़ौतीकी सीमातक उनकी शासनशक्तिका विस्तार था। माधोसिंह संवत् १६८० मे पांच योग्य पुत्रोको छोड परलोक सिधारे। उनके चार पुत्र कोटाराज्यके चार प्रधान सामन्त पदोपर नियुक्त थे। बूँदीके प्रधान हाड़ा शाखाके साथ उक्त माधोसिहके उत्तराधिकारी गणोकी पृथकृता दिखानेके लिये दोनो राजवशोके आदि पुरुषोके नामसे दोनो वंश प्रसिद्ध होते है। माधोसिहके वशधरगण माधानी नामसे परिचित है।

माधोसिहके पांच पुत्रोके नाम।

१ मुकुन्दसिह कोटेके अधीश्वर हुए।
२ मोहनसिह, इन्होने पलायता प्रदेशको प्राप्त किया।
३ जुझारसिह इन्होने कोटड़ा आर उसके पीछे रामगढ़ रेलावन प्राप्त किया।
४ कनीराम, इन्होने कोयलाप्रदेशको प्राप्त किया। इसके सिवाय दिल्लीके वादशाहसे स्वतत्र शासनपत्र प्राप्त देह और जोरा प्रदेश प्राप्त किया।
५ किशोरसिह इन्होने सागोप्रदेश प्राप्त किए।

माधोसिहके मरनेके पीछे उनके बड़े बेटे मुकुन्दसिहके मस्तक पर राज्यमुकुट शोभित हुआ। इतिहास कहता है कि जिस सीमाके अन्तमे स्थित पहाड़ो मार्ग

हाड़ोतीसे मालवेको अलग करताहै वही इन मुकुन्दसिहने एक घाटा बनाया और इन्हींके नामानुसार इसका नाम " मुकुन्ददर्रा " वा " मुकुन्दद्वार " हुआ है । इसी मार्गसे सन् १८०४ ईसवीमें ब्रिगेडियर मानसूनकी आज्ञाकारी बृटिश सेना रणमेसे मुँह छिपाकर प्राणोंके भयसे भागी थी कोटेके जातीय इतिहासमे मुकुन्दसिहकी कीर्तिकी प्रशसा पाई जाती है । उन्होने अपने राज्यके अनेक स्थानोपर अनेक अभेद्य किले और सर्वसाधारणके उपकारी तालाव बनवाये है । आणता नामक स्थानकी मनोहर दीवारे और " पेट्रा " उन्हींने बनवाई है ।

राजा मुकुन्दसिह अपने पिताके समान ही प्रवल पराक्रमी और असाधारण साहसी थे । राजवाड़ेकी राजपूत जाति पहिलेसे ही दिल्लीके मुसल्मान बादशाहोके बीच न्यायसे सिहासनके अधिकारियोंके अधिकारके लिये जिस भांति अनेक वार सेनाके साथ जीवन-दान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठाको दिखा गई है मुकुन्दसिंह भी उसी भाँति इतिहासमे पूर्वजोकी समान राजभक्तिकी प्रज्वलित ज्योति दिखा गये है । जिस समयमे पापात्मा औरंगजेबने अपने जन्म देनेवाले पिताको कैद किया और राज्यसिहासनसे हटानेके लिये पिशाचकी मूर्ति धारण कर सेनाके साथ आगे बढ़कर अपने षड्यन्त्रके जालको फैलाया, उस समय प्रायः प्रत्येक राजपूत राजाओने अपनी २ सेनाके साथ बुड्ढे बादशाह शाह-जहांके अधिकारकी रक्षा करनेके लिये तलवार पकड़ी थी। उनमें राठौर जाति,बूँदी और कोटेकी हाड़ा जाति सबमे आगे हुई थी । कोटेके स्वामी माधोसिहके पुत्रोंने बादशाह शाहजहांको उस महाविपत्तिके समयमे विलक्षणतासे स्मरण किया, कि अब बादशाह शाहजहाके पक्षको लेना चाहिये, केवल राजभक्तिसे ही नही वरन बादशाह शाहजहांके अनुग्रहसे ही पिता माधोसिंहने कोटेका राज्य स्वाधीनभावसे पाया है। अतएव माधोसिहके पांचो पुत्र बादशाह शाहजहांके सिंहासनकी रक्षाके लिये जीवन देनेमे विमुख नही है । संवत् १७१४ मे उज्जयनीके समीपवाले प्रदेशमें नरापिशाच औरंगजेबके साथ राजपूत गणोने बादशाह शाहजहांकी सेनामें मिलकर भीषण समरकी आगको प्रज्वलित करादिया। उस संग्राममे औरंगजेबने जय पाई, और उस स्थानका नाम फतेहाबाद रक्खा गया । इतिहास बतलाता है कि राजपूत वीरगण यातो समरमे जय प्राप्त करेंगे, नहीं तो अपना जीवन देगे,परन्तु किसी भाँति कोई राजपूत युद्धसे भागैगा नही, ऐसी प्रतिज्ञा करके युद्ध-क्षेत्रमे जाते समय प्रत्येक राजपूतने अपने शिरपर विवाह समयका मौर धारण कर वरके भेषसे गमन किया, माधोसिहके उक्त पांचो पुत्र उसी प्रकार अपने शिरपर मौर धरकर नंगी तलवारे हाथमे ले सेनासहित युद्धक्षेत्रमें उतरे । किन्तु चतुर्गमे श्रेष्ठ राठौर सेना-पतिके दोषसे उक्त पाँचो भाई यद्यपि समरमे जय न पासके किन्तु रणक्षेत्रमे जीवन विसर्जन करके उन्होने असीम वीरताके साथ अपने प्रणको रक्खा । युद्धके अन्तमे सबसे छोटे किशोरसिहको उ[illegible] समरभूमिसे लौटना पड़ा, यद्यपि उनके समस्त शरीरमे सांघातिक क्ष[illegible] थ, किन्तु विशेष यत्नसे चिकित्सा होनेपर वह पुनः जीवित हुए । इन किशोरसिंहने ही अन्तमे दक्षिणके समरमे विशेष कर बीजापुरको अधिकारमे करते समय राजपूतोके बीच सबसे बढ़कर वीरता प्रकाश कर युद्ध

कौशलमे प्रतिष्ठा और सम्मान पाया । किन्तु दुर्भाग्यसे किशोरसिहकी समान सिह बिक्रमी वीरोसे किस भाँति आचरण करना चाहिये उसको बादशाहके कुमार नही जान सके अतएव अन्तमे बडा शोचनीय दृश्य उपस्थित हुआ ।

राजा मुकुन्दसिह रणक्षेत्रमे मारेगये । उनके पुत्र जगत्‌सिह कोटेके राजसिहासन पर बैठे और दिल्लीके बादशाहकी अधीनतामे दो हजार सेनाके "मनसबदार" अर्थात् सेनापतिके पदपर नियुक्त हुए । सवन् १७२६ तक जगत्‌सिह दक्षिणके समरमे नियुक्त थे । उक्त संवत्‌मे ही वह अपुत्रावस्थामे स्वर्गवासी हुए, तब माधोसिहके चौथे पुत्र कनीराम जिन्होने कोइला प्रदेशका अधिकार पाया था, उन्हींके पुत्र पेमसिह कोटाके राजसिहासन पर शोभित हुए । किन्तु छः महीने भी उन्होने राज्यकार्यको नही चलाया था कि इतनेहीमे पेमसिह अपने निन्दनीय कार्यसे प्रजाकी दृष्टिमे घृणित हुए । कोटाके पंचायत समाजने उनको सिहासनसे उतार कर फिर पिताके प्रदेश कोइलामे भेज दिया । उनके वंशधर अभीलो उसी प्रदेशमे विराजमान है । माधोसिहके पचम पुत्र किशोरसिह जो रणक्षेत्रमे बडे घायल होकर दैवयोगसे बच गये थे, सामन्त समाजने उन्हीको कोटाके राजसिहासन पर बैठाया । जिस समय औरगजेबने दिल्लीके सिहासन पर अधिकार करलिया, उसी समय कोटेके राजा किशोरसिह औरंगजेबकी सेनाके साथ अपनी सेना लेकर दाक्षिणात्यमे मरहटोको दमन करनेके लिये नियुक्त हुए । मरहटोके साथ युद्धमे उनके बलकी और साहसकी सभीने मुक्तकंठसे प्रशसा की थी । अन्तमे संवत् १७४२ मे अरकाटगढ किलेके अधिकारके समय किशोरसिह मारेगये । किशोर सिह हाडाजातिके आदर्श वीर पुरुषस्वरूप थे, कहा गया है कि अनेक समरोमे उनके शरीरमे पचास घावोके चिह्न अङ्कित होगये थे । वह मरते समय तीन पुत्रोको छोड गये। (१) विशनसिह, (२) रामसिह, (३) हरनाथसिह ।

राजपूतोकी रीतिके अनुसार बडे पुत्र विशनसिहको कोटेका राज्यसिहासन प्राप्त होना चाहिये था किन्तु किशोरसिह जिस समय दक्षिणात्यमे सेना लेकर गये थे उस समय विशनसिहको पीछेसे आनेको कहा था, परन्तु विशनसिहने उनकी आज्ञा नही मानी, वह न गये तब किशोरसिहने क्रोधित होकर उनको भविष्यमे राज्य पानेसे हटा दिया । विशनसिहने उत्तराधिकारीके अधिकारसे हीन होकर केवल आणता नामक स्थानको पाया । विशनसिहके औरससे पृथ्वीसिहने जन्म लिया । वही पीछे आणता प्रदेशके सामन्त हुए । उनके पुत्रका नाम अजीत हुआ, अजीतसिहके तीन पुत्र हुए (१) छत्र साल, (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह ।

किशोरसिहके दूसरे पुत्र रामसिहने अपने पिताके साथ दाक्षिणात्यमे जाकर मरहठों के प्रत्येक युद्धमे लिप्त रहकर अपने पिताकी समान प्रशसा पाई थी । पिताके मरजाने पर वही पिताके पद सम्मानको प्राप्त हुए।औरगजेबके मरने पर जिस समय दिल्लीके सिहासन के लिये उसके उत्तराधिकारियोमे झगडा हुआ उस समय कोटेके स्वामी रामसिहने बडे शाहजादे मोआजिमके विरुद्ध दाक्षिणात्यके राजप्रतिनिधि कुमार आजिमका पक्ष अवलम्बन

किया और संवत् १७६४मे जाजव नामक स्थानके समरमे इन्होने प्राण गँवाये। उक्त समरमे बूँदीके राजाने कुमार मोआजिमके पक्षको लिया था, पाठकगण बूँदीके इतिहासमे उसको पढ़ चुके हैं। उस समय उसी युद्धमे रामसिंहने अपनी ज्ञातिवाले बूँदीके राजाके साथ युद्ध किया। रामसिहके हृदयमें ऐसी प्रबल कामना उदय हुई थी कि बूँदीके राजाको परास्त करनेमे प्रतिष्ठा पाई और उसीसे उन्होने बूँदीके राजाके अनिष्ट साधनमे त्रुटि नही की, किन्तु दुर्भाग्यसे जाजव नामक स्थानके समरमे ही गोलोके आघातसे वह मारे गये।

रामसिहके मरनेके उपरान्त भीमसिह कोटेके राजा हुए। हाड़ाजातिके इतिहासमे लिखा है कि भीमसिहके शासन समयसे ही कोटाराज्य धन, सम्मान, सामर्थ्य और प्रभुतामे भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राज्यकी योग्यताको प्राप्त होगया था। अभीतक कोटा तीसरी श्रेणीके राज्योमे गिना जाता था। किन्तु चतुर बुद्धिमान् भीमसिहके अभ्युदयके साथ ही साथ कोटा राज्यकी भी उन्नति होगई। बादशाह बहादुरशाहके मरने पर फर्रुखसियरके दिल्लीके सिहासन पर बैठते हुए जिस समय दोनो सय्यद भाई प्रबल शक्तिसे भारतका शासन करते थे, कोटेके राजा भीमसिहने उन दोनो सय्यदोके पक्षका अवलम्बन किया और उनकी ही नीतिका पालन करतेहुए अपनी उन्नतिके दरवाजेको खोल लिया। माधोसिहके समयसे कोटेके राजा तीसरी श्रेणीके राजाओ मे दिल्लीके बादशाहके अधीनमे दो हजार सेनाके मनसबदार होते आये थे। किन्तु उक्त दोनो सय्यद भीमसिह पर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होने भीमसिहको भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राजाओको प्राप्त सम्मान सूचक "पॉच हजारी" अर्थात् पॉच हजार सेनाके मनसबदारका पद देदिया। हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीके राजा बादशाह फर्रुखसियरके पक्षका अवलम्बन करके उक्त अत्याचारी दोनो लड़कोकी सर्वसहारिणी नीतिके विरुद्धमे खडे हुए, अतएव छोटी शाखासे उत्पन्न कोटेके राजा भीमसिह उक्त दोनो मन्त्रियोके पक्षको लेकर जाजवके समरमे दोनो राजवंशोके बीच शत्रुताकी आगमे जलने लगे। बूँदीके इतिहासमे पाठक भलीभॉतिसे पढ़ चुके है कि कोटेके राजा भीमसिहने किस प्रकार कायरपुरुषोकी समान घृणित उपायसे बूँदीके राजा बुधसिहका जीवनरूपी दीपक बुझानेकी चेष्टा की थी। राजा भीमसिहने उक्त सय्यद मंत्री और आमेरके राजा जयसिहसे मिलकर सभी निन्दित कामोमें सलाह दी थी, अतएव जयसिहने जिस समय बूँदीके राजा बुधसिहका सर्वनाश किया उस समयमे भीमसिहने उनकी सब प्रकारसे सहायता की, इसका भी वृत्तान्त पाठक पढ चुके है। दोनो सय्यदोके प्रियपात्र होकर भीमसिहने उनके अनुग्रहसे पश्चिममे कोटेसे और पूर्वमे अहीरवाड़ेसे पठारकी समस्त पृथ्वीका सनदपत्र पालिया। उस बड़े भूखण्डके बीचमे खीची जातिकी और बूँदी राज्यकी बहुतसी भूमि थी। उन्होने उक्त उपायसे हाड़ौती प्रदेशके बीच सबसे श्रेष्ठ गांगरोनका किला प्राप्त किया, और अलाउद्दीनके आक्रमणके विरुद्धमे बडे साहस और बलसे उस किलेकी रक्षा कर उसकी कीर्तिको बढा लिया। मऊ, मैदाना, शेरगढ़, बारा, माङ्गरौल और बडोदा आदि चम्बलके पूर्ववाले किले भी अपने अधिकारमे करलिये।

हाड़ौती राज्यकी दाहनी सीमामे विराजमान कुछ एक गिरिसंकट प्रदेशोपर, अमिश्र आदिम भीलोने अपनी पैतृक सम्पत्ति स्वरूप मानकर, अपना अधिकार प्राप्त करलिया। उन सब देशोके बीचमे मनोहर थाना अब भी कोटेराज्यके शेष दक्षिण सीमा स्वरूप है, उसमे भीलोने अपनी राजधानी बनाई,और भीलोके राजा चक्रसेन वहाँपर रहकर राज चलाते थे। भीलोके राजाके अधिकारमे पाँचसौ घुड़सवार और आठसौ धनुषधारी सेना थी, मेवाड़से लेकर शेष सीमातक सभी स्थानोके भील उनको अपना स्वामी मानते थे। यह आदिम अधिवासी भील बारके राजा भोजके समयसे कोटेके राजा भीमसिहके समय तक राजनैतिक विप्लवोमे अपनी जातीय स्वाधीनताकी रक्षा करते आये थे,किन्तु कोटेके राजा भीमसिहने उनके अधिकारी देशोपर चढाई कर भीलवंशको ध्वंशकर उनके सब देशोको अपने कोटेराज्यमे मिलालिया। नरसिहगढ़ पाटनको भी लेलिया। राजा भीमसिह यदि और कुछ दिन जीवित रहते तो कोटे राज्यकी सीमा पर्वत मालाके बाहर तक निःसंदेह बढ़ा लेते। अनारसी डिग पड़ावा और चंद्रावतोके अधिकारी प्रदेश भी कोटाराज्यमे मिलाये, किन्तु भीमसिहके परलोकवासी होनेपर वह सब प्रदेश कोटाराज्यसे निकल गये।

कोटेके इतिहाससे जाना जाता है कि प्रसिद्ध कुलीचखॉ जिसने पीछे इतिहासमे निजामुलमुल्क नामसे प्रगट होकर दक्षिणमे स्वाधीनभावसे हैदराबाद राज्य स्थापन किया। उसने दिल्लीके बादशाहकी अधीनता न मान जिस समय अपनी सेनाके बलसे बादशाहके विरुद्धमे खड़े हो स्वाधीनभावसे दिल्लीके अधिकारी देशोको लूटकर पलायन किया उस समय दिल्लीके बादशाहने अपने प्रतिनिधि स्वरूपमे आमेरके राजा जयसिंह, कोटेके राजा भीमसिह और नरवरके राजा गजसिंहको यह आज्ञा दी कि तुम सब भागेहुए कुलीचखॉको कैद करके लाओ। उक्त निजामुलमुल्कके साथ भीमसिहने आपसमे पगड़ी बदलकर भाईका सम्बन्ध स्थापित किया था, कुलीचखॉने जयसिहसे पूर्वोक्त बात सुनकर भीमसिहको मित्रभावसे एक पत्र लिखा दिया कि मैने बादशाहका किसी प्रकारसे धन रत्नादि नही लूटा है, अतएव मेरे विरुद्धमे जो सब अन्याय और अपवादकी बाते उठ रही है आप उन सबको मिथ्या जानो, यही मेरा अनुरोध है, जयसिह एक षड्यन्त्री है, वह हमारे नाश करनेकी निरन्तर चेष्टा करते है। इस लिये आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप उनकी बातका विश्वास न करना, और मेरी दक्षिण यात्रामे रोक टोक नही करना। निजामुलमुल्कका यह पत्र पाकर हाडा राज भीमसिहने यह उत्तर लिख भेजा कि " स्वामीकी आज्ञाका पालन और मित्रताकी रक्षाके बीचमे एक रेखा है वह मै जानता हूँ, आपके मार्ग रोकनेको मुझे आज्ञा मिली है और उसीसे मैं इतनी दूर सेना लेकर आया हूँ, इसको बादशाहकी आज्ञा जानो, आपके साथ हमको अवश्य युद्ध करना होगा और कल प्रातःकाल मै आपपर आक्रमण करूँगा "।

"कल आपपर आक्रमण करेगे " यह बात वीर तेजस्वी भीमसिहने लिख कर मित्रको सावधान करदिया, और अपने वीरभावको भी प्रकाश कर दिया,चतुर मुसलमान कुलीचखा स्वामिभक्त राजपूतको राजभक्तिसे मित्रताका बलिदान करते देख कर छलबल

और कौशलसे अपनी रक्षाके लिये युद्ध करनेको तैयार हुआ। निजामने सिंध–नदी प्रदेशके कुरवाई भौरासा नामक नगरके समीपवाले गिरिसंकटके मार्गमे अपना डेरा डाला। यदि इस समय कुलीचखॉ पर आक्रमण किया जाय तो उसी एक पहाड़ी मार्गमे होकर जाना होगा नही तो राजपूत लोग ढूंढ़कर चले जॉयगे। और पता नही लगेगा वह अवश्य ही इसी मार्गसे आवैगे, इस बातको निश्चय जान निजामने उस गिरिसकटके सामने तोपे लगाकर उन्हे वृक्षोको लताओसे ऐसी तरह छिपा दिया कि सम्मुखसे कोई तोपोका अनुमान भी न करसके और भीतरसे तोपका गोला सीधा चलाजाय।

दूसरे दिन प्रात कालही वीरवर भीमसिह अपने अधिकारकी सब सेनाका कच्छवाही सेनादलके साथ मिलाकर अफीसखानेके पीछे निजाम पर आक्रमण करनेके लिये एक दल बॉधकर भालेको हाथमे ले बाहर निकले। वह निजामकी सेनाके साथ भिड़ने ही वाले थे, यदि और कुछ आगे बढ़ जाते तो राजपूतोका नाम भी न रहता। राजपूतोको अपनी सेनाके पास आतेहुए देख निजामने तोपोमे बत्ती लगवा दी, गोलोकी ऐसी वृष्टि हुई कि उसके द्वारा हाथी सहित राजा भीमसिह और राजा गजसिह दोनो ही मारे गये। दोनोके मारेजानेसे सब पैदल और घुडसवार इधर उधर भाग निकले। कुलीचखॉने इस भॉंति जय पाकर दक्षिणकी ओर कूच किया, और निसन्देह स्वाधीन भावसे जाकर हैदराबादमें राजकार्य करने लगा। हैदराबाद आजतक कुलीचखॉके वंशधरोके शासनमे चला आता है।

इतिहासमे लिखा है कि उस समयमे कोटेकी हाड़ाजातिपर दो विपत्तियां पड़ीं; एक तो राजा भीमसिहका मरना दूसरे कोटेके राजवंशियोके पूज्य विग्रह वृजनाथका अन्तर्धान होना। प्रत्येक राजपूत राजा ही सदासे प्रत्येक समरक्षेत्रमे अपने इष्टदेवकी मूर्ति लेजाते है, यह मूर्ति तर्कसमे रक्षित रहती है। युद्धके आदिमे राजासे लेकर सामान्य दरजेके सैनिक तक उसी देवविग्रहके नामसे जयध्वनि करके शत्रुपर आक्रमण करते है। कोटेराजवशके उक्त वृजनाथजीकी मूर्ति स्वर्ण निर्मित और छोटे आकारकी थी और उस विग्रह (मूर्ति) ने अनेक युद्धोंमे जय लाभ और असंख्य मनुष्योंका विनाश देखा था। कोटाराज्यकी सेनाने " जयवृज-नाथ' " की इस शब्दसे चारो दिशाओमे गुंजारकर शत्रुकी सेनापर आक्रमण किया था, परन्तु उस समय वृजनाथ जाने कहॉ अदृश्य होगये उनका कुछ पता नही चला। इतिहासमे लिखा है बहुत समय तक खोजनेके पीछे उस मूर्तिकी समान और एक मूर्ति प्राप्त हुई उनको महा समारोहके साथ कोटेकी राजधानीमे लाये। कोटावासियोने वह मूर्ति पाकर बड़ी खुसी मनाई। जोहो भीमसिह १५ वर्ष तक राज्य करके सवत् १७७६ मे (सन् १७२० इसवीमे) उक्तरीतिसे मारेगये। किन्तु उन १४ वर्षोंमे भीमसिंहने जिस रीतिसे राज्यके कार्यको चलाया उसीसे उसकी अवस्था बदली थी, यह निश्चय उनकी वीरता और राजनीतिज्ञता मानी गई।

दोनोंके एकवंशमें उत्पन्न होनेपर भी बूँदीके राजा बुधसिंहके साथ कोटेके राजा रामसिंहकी जो लड़ाई हुई सो धौलपुरके रणक्षेत्रमें हाड़ा जातीय दोनों राजाओंने एक दूसरे पर आक्रमण करके जातिकी विद्वेषताको चरितार्थ करदिया। कोटेके राजा भीमसिंह ने समय पाकर बूँदीके राजाका सर्वनाश करनेमे त्रुटि नही की थी । राजा भीमसिंहने बादशाह फर्रुखसियरकी ओरसे राजा बुधसिंहके मारनेके लिये जो कायरपुरुषोंकी समान उनपर आक्रमण किया था पाठकमंडली उसको पहिले ही जानचुकी है । उसी लडाईके कारण हाड़ाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीका राजवंश निधन होकर महाविपत्तिमे पड़ा। राजा भीमसिंहने दोनो सय्यदोंकी सहायतासे बलवान होकर अपने कुटुम्बी बुधसिंहको मारनेमें कोई त्रुटि नही की थी, आमेरके राजा जयसिंहसे जिस समय बुधसिंह सिंहासनच्युत और विताड़ित हुए, ऐसे शुभ योगको पाकर राजा भीमसिंहने बूँदीपर आक्रमण किया, और वहाँ पर छिपे हुए राजचिह्न, बूँदीराज्यका नगाड़ा और प्राचीन समयका संचित प्रसिद्ध रण शंख प्रभृति लूटकर कोटेराज्यमे लेआये । बादशाह जहाँगीरने बूँदीके राजा रत्नसिंहको जो पीली राजपताका दी थी, जिस पताकाके मूलदेशमे हाड़ासेनाके अनेक बार समरमे बड़े पराक्रम प्रकाशके चित्र अंकित थे, भीमसिंहने उस राजपताका तकको बूँदीके राजमहलोंमेंसे लाकर अपने यहाँ उसका व्यवहार किया । बूँदीके इतिहासमे लिखा है कि कोटेसे बूँदीराज्यके उक्त समस्त राजचिह्न फिर प्राप्त करनेके लिये बूँदीके राजाने बारंबार चेष्टा की किन्तु किसी प्रकारसे भी वह नही पासके, बूँदीके राजाने कोटेके प्रधान दरवाजे और किलेमे प्रवेश होनेवाले दरवाजेकी भी ताली बनवा कर पहरेदारको लालच देकर गुप्तभावसे उन चीजोंके लानेकी चेष्टा की. किन्तु प्रकाश हो जानेसे उनकी चेष्टा निष्फल हुई । कर्नल टाडने लिखा है कि "उस समयसे आज तक प्रति दिन सायंकालके उपरान्त कोटेका नगर द्वार बंद होजाता है और यहाँ तक कि स्वयं कोटेके राजा यदि संध्याके उपरान्त आना चाहै तो उनके लिये भी दरवाजा नही खुलता । इसके सम्बन्धमे कोटाके हाड़ा जातीय कविने लिखा है कि एक दिन कोटेके राजा दुर्जनशाल युद्धमे परास्त होकर थोड़ेसे सेवकोंके साथ आधीरातके समय नगरके दरवाजे पर आये और द्वाररक्षक पहरेदारसे बोले कि दरवाजा खोलो, परन्तु पहिले उन्होंने ही आज्ञा दे रक्खी थी कि किसी प्रकारसे भी किसीको रात्रिके समयमे दरवाजा नही खोलना, अतएव पहरेवालेने उनकी आज्ञाका पालन किया, तब राजा दुर्जनशालने स्वयं दरवाजेपर आकर अपना परिचय दे पहरेदारसे द्वार खोलनेको कहा उस समय पहरेदारने समझा कि कोई दूसरा राजा आकर द्वार खुलाना चाहता है, अतएव पहरेदारने द्वारके भीतरसे कहा कि राजाको इस रात्रिके समय दूसरे स्थान पर रहना चाहिये, यह सुनकर राजाने फिर कहा तब पहरेदारने बन्दूक दिखाकर कहा चले जाओ, हम नही खोलेंगे, यदि आप नहीं मानेंगे तब हमै विवश हो गोली चलानी पडेगी । दुर्जनशालने अपनी प्रथमकी आज्ञाके अनुसार पहरेदारको बन्दूक चलानेमे उद्यत देखकर दरवाजेसे हटकर दूसरे स्थानपर जाय शेष रात्रि बिताई । दूसरे दिन प्रातःकाल दरवाजा खोला गया. जो पहरेदार रात्रिमे द्वार रक्षक था वह

रात्रिका समाचार अपने जोडीदारसे कहही राहा था कि सामनेसे राजा दुर्जनशाल आतेहुए दृष्टि पड़े। राजाको देख वह पहरेदार विस्मयके साथ डरने लगा, और धीरे २ चलकर अपने हाथकी बन्दूकको राजाके चरणोके आगे धरकर दोनो हाथ जोड़ घुटने झुकाय पृथ्वीपर मस्तक रख दंड पानेके लिये उसने निवेदन किया। तव राजा दुर्जनशालने उसका हाथ पकड कर उठाया और अपनी पूर्व आज्ञाके पालन करनेसे उसकी विशेष प्रशंसा करते हुए स्वयं जो कुछ उत्कृष्ट वस्त्रादि पहरे हुए थे वह सब उतार पुरस्कार स्वरूपमे उसे देदिये।

हाडा इतिहासके जाननेवालेका लेख है कि राजा भीमसिंहके समस्त शरीरमे शस्त्रो के आघातके चिह्न थे, उनके शरीरको देख मनुष्य कुरूपीकहेगे इस कारण वह किसीके सामने अपने शरीरपरसे वस्त्रोको नही उतारते थे। कुरवाईके युद्धक्षेत्रमे जिस समय कुलीचखाँके गोलेसे घायल हुए थे केवल उसी समयमे उनके शरीरमे अगणित शस्त्रोंके चिह्न देख एक नौकरने उनसे पूछा, तो भीमसिहने उस अवस्थामे उसको उत्तर दिया " जो हाडाजातिके शासनके लिये जन्मा है,और जो पैतृक राज्यकी रक्षा करनेके अभिलाषी है उनको इसी प्रकारसे अस्त्रशस्त्रोके चिह्न धारण करने पड़ैंगे। कोटेके राजाओंमे राजा भीमसिहने सबसे पहिले दिल्लीके बादशाहसे वड़े सम्मान सूचक " पञ्चहजारी मनसबदार " अर्थात् पाँच हजार सेनाके नायकके पदको धारण किया। उसी प्रकार उन्होने सबसे पहिले " महाराव " की उपाधि पाई। उक्त उपाधि यद्यपि दिल्लीके बादशाहने उनको नहीं दी थी किन्तु राजपूत जातिके मुकुटमणि हिन्दूकुलपति मेवाडके महाराणाने दी थी। और दिल्लीके सम्राट्ने भी उस पदवीको स्वीकार किया था। बूँदीके गोपीनाथके वंशवाले हाडौतीके प्रधान सामन्तोमे गिने जाते थे, उनके सम्मान सूचक " आपजी " शब्दका व्योहार होता था, किन्तु जिस समयमे इन्द्रशाल उदयपुरमे गये उस समय उनको महाराणाकी ओरसे अपने भाइयोमे सम्मानके लिये " महाराज " की पदवी व्यवहारमे लानेकी आज्ञा हुई। उस समयसे उक्त सम्मान सूचक आपजी शब्द केवल कोटेके दूसरी श्रेणीके माधानी सामन्तोके सम्मानके अर्थ व्यवहारमे चला आता है। राजा भीमसिह अपने तीन पुत्रोको छोड परलोक सिधारे, उनके पुत्रोके नाम इस भाँति है (१) अर्जुनसिह (२) श्यामसिह (३) दुर्जनशाल।

महाराव अर्जुनसिहका विवाह कोटाराज्यके भविष्यमे होनेवाले मंत्री जालमसिह झालाके पूर्वपुरुष माधोसिहको वहिनके साथ हुआ। किन्तु अर्जुनसिह चार वर्षतक कोटेका राज्य करके नि:सन्तान अवस्थामे ही परलोक सिधारे। अर्जुनसिहके मरनेके पीछे कोटेके राजसिंहासनके लिये श्यामसिह और दुर्जनशाल दोनो भाइयोमे युद्धरूपी अग्नि प्रज्वलित हुई। उस जातीय विवादमे कोटेकी सामन्त मंडली भी दोनो पक्षकी ओर होनेसे महा दुःखी हुई। उदयपुरके रणक्षेत्रमे दोनो राजभाइयोने अपने २ पक्षकी सेना और सामन्तोके साथ आपसमे राजसिंहासनके लिये रुधिरकी नदी वहादी। भयानक युद्धके पीछे श्यामसिहके मारे जानेसे लडाई शांत हुई। हाड़ा जातीय

कविने अपने ग्रन्थमे लिखा है कि श्यामसिहके मरनेपर दुर्जनशाल भ्रातृ वियोगके शोकमें मग्नहो रोताहुआ हाहाकार करने लगा। मै बुरे मुहूर्तमे अनुचित आशाके वश होकर सिहासनके लिये भाईके साथ युद्धकर उसकी मृत्युका कारण हुआ, ऐसा हृदयसे अनुताप करने लगा। जिस समय कोटेराज्यमे यह दुर्घटना हुई इसी समय कोटेके राज्यमे एक और हानि हुई। दिल्लीके बादशाहने जो भीमसिह पर प्रसन्न होकर पुरस्कारस्वरूपमे रामपुरा, भानपुरा, और कलापति नामक तीन धनशाली प्रदेश वहाँके आदिम राजाओसे छीन कर दिये थे सो कोटेमे आपसकी लड़ाईके समय उन २ प्रदेशोके स्वामियोने अपने २ देशोको अपने राज्यमें मिला लिया।

दुर्जनशाल संवत् १७८० (सन् १७२४ इसवी) मे कोटेके राजा हुए। इस समयमे तैमूरवशके शेष सम्राट् मोहम्मदशाह दिल्लीके सिहासन पर विराजमान थे। दुर्जनशालको उन्होने सम्मानके साथ दिल्लीमे बुलाया और खिलत दी। दुर्जनशालकी प्रार्थनासे बादशाह मोहम्मदशाहने उस आज्ञाका प्रचार किया कि हाडा जाति यमुनाके तीर २ जिन २ स्थानो पर बसती है उन स्थानो पर गोहत्या न होने पावे। दुर्जनशाल अपनी जातिके इतिहासकी अनेक घटनाओके समयमे राजसिहासन पर विराजमान थे। उन्हीके शासन समयमे सबसे पहिले बाजीरावने अपनी मरहटोकी सेनाके साथ उत्तर भारतवर्ष पर अधिकार करनेके लिये चढाई की। उस स्मरणीय घटनाके समयमे [१] बाजीरावने हाड़ौती देशकी पूर्वीय सीमाके अन्तमे तारज पास नामक पर्वती मार्गमें जाते समय नाहरगढ़के किलेको जीतकर दुर्जनसिहको देदिया। उक्त किला और उसके अधिकारी प्रदेश एक यवनके पास थे। संवत् १७७५ (सन् १७२९ ईसवी) मे यही प्रथम मरहठोके साथ हाडा जातिका पहिला सम्मिलन हुआ। हाड़ाराज दुर्जनशालने उक्त किलेको पाकर उसके बदलेमे पेशवा बाजीरावकी सहायताके लिये तथा उनके पक्षमे उस समय विशेष प्रयोजनीय सामरिक द्रव्यावली और सेनाके लिये भोज उपहारस्वरूपमे दिया। महाराष्ट्रपति बाजीरावके साथ दुर्जनशालकी वह जो मित्रता हुई, दुःखका विषय है कि कई वर्षके पीछे वह मित्रता महाराष्ट्रपतिने एक साथ विस्मृतिके जलमे बहा दी।

बूँदीराज्यके इतिहासमे पाठक पढचुके है कि आमेरके राजा जयसिह दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे असीम शासनशक्तिको पाकर अपने राज्यकी सीमा बढाने और शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये बूँदी आदि नरेशोको राज्यसे हीन बल बनाकर सामन्त पदपर नियुक्त करनेका विचार करने लगे। उनके उत्तराधिकारियोने भी उसी ऊची आशाके वश होकर बूदीके राजा बुधसिहको सिहासन च्युत करके निकाल दिया। बुधसिहने वृद्धावस्थामे राज्यके शोकमे अपने प्राण छोड दिये। किन्तु आमेरनरेशने अन्तमें महाराष्ट्रोंके दलसे परास्त होकर अपनेको धिक्कारकी अग्निमे जलाकर

---

(१) कर्नल टाड्ने टिप्पणीमें लिखा है कि "इस वर्षमे जिस समय बाजीराव हाडोती प्रदेशमे होते हुए हिन्दुस्तान पर अधिकार करनेको आये उस समय हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार थे। इस वर्षमे शिवसिंह और अगले वर्षमें जालिमसिहका जन्म हुआ"।

आत्महत्या की। यह भी पाठकोंको स्मरण होगा। उस आमेर नरेशने बुधसिंहको बूंदी से निकाल कर अपने एक सामन्तको बूंदीके सिंहासन पर बैठाया था और उसे कर देनेको कहा। उसी समय वह विजय पानेके गर्वसे कोटाराज्यमें अधिकार बढ़ानेके लिये आगे बढे। इस समय दुर्जनशाल कोटेके सिंहासन पर बैठे थे। संवत् १८०० में आमेर नरेश ईश्वरीसिंहने कोटेको जीतनेकी इच्छासे तीन महाराष्ट्र वीर नेता और जाटपति सूर्य्यमल्लको सेनासहित बुलाकर अपनी २ सेनाके साथ कोटेपर अधिकार करनेकी तय्यारी की। कोटड़ी नामक स्थानमें महा समरके पीछे जयपुरके राजाने सेनाके साथ कोटेकी राजधानी घेर ली। क्रमानुसार तीन महीने तक राजधानी घिरी रहने पर उसके जीतनेके लिये अनेक उपायोंका अवलम्बन करनेपर भी वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने उनकी उस अभिलाषाको पूर्ण न होने दिया। अन्तमें निराश होकर आमेर नरेश ईश्वरीसिंह उप नगरके वृक्षोंको और राज्यके उद्यानको ध्वंस करके अपने राज्यको लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रदलके दूसरे नेता जयआपा सेंधियाका एक हाथ गोलेसे उड गया।

शत्रुदलने जिस समय कोटेको घेरा था उस समय झाला जातिके राजपूत हिम्मतसिंह जो कोटेके फौजदार अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अपनी वीरता और युद्धकौशलसे कोटेके राजा दुर्जनशालके साथ स्वामिभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई। उनके ही परामर्शसे और मध्यस्थ होनेसे दुर्जनशालको बाजीरावसे नाहरगढ़का किला मिला था। संवत् १७९५ से १८०० के बीचमें पूर्वोक्त दोनों घटनाओंके समय जालिमसिंहका जन्म हुआ। जालिमसिंहने इतनी कीर्ति प्राप्त की कि उनके साथ कोटे राज्यके इतिहासका इतना घनिष्ट सम्बन्ध हुआ कि कर्नल टाड्ने कोटाराज्यके इतिहासमें उनकी बडी प्रशंसा की है।

जयपुरनरेश ईश्वरीसिंहके कोटेके जीतनेमें असमर्थ होकर लौटाते समय वीर तेजस्वी दुर्जनशालने पैतृक लडाईकी शत्रुताको विस्मृतकर बुधसिंहके पुत्र उमेद-सिंहको उसके पैतृकराज्य बूंदीके सिंहासन पर बैठानेके लिये बड़ी सहायता की। महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायताके बिना ईश्वरीसिंहको परास्त करके बूंदीके अधिकारको न पाते देख दुर्जनशालने उमेदको हुलकरका आश्रय लेनेकी सलाह दी। संवत् १८०५ सन् १७४९ में जिस समय उमेदसिंहने हुलकरकी सहायतासे बूंदीका राज्यसिंहासन पाया तब पाटणप्रभृति प्रदेश महाराष्ट्रनेता हुलकरको दिये, उस समय उन्हीं हुलकरने कोटेके राजा दुर्जनशालसे भी कर लेना आरम्भ करदिया। उमेदसिंहका उपकार करनेको गये हुए दुर्जनशाल स्वयं बलशाली हुलकरको कर देनेके लिये बाध्य होगये।

वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने अपनी भुजाओंके बलसे अनेक प्रदेशोंको जीतकर कोटाराज्यमें मिला लिया, खीचीजातिके अधिकारी फूलबरोद नामक प्रदेशको भी उन्होंने अपने राज्यमें मिला लिया था। गूगोर नामक किलेको जीत कर हाड़ाजातिके साथ खीची जातिका भयानक युद्ध आरम्भ हुआ। गूगोरके स्वामी बलभद्रने

असीम साहससे उस किलेकी रक्षा की, इतिहासमे लिखा है कि बलभद्रपुरा रामपुरा और शिवपुर प्रभृतिके सामन्तोको अपने दलमे मिलाकर हाड़ाजातिके विरोधमे खड़े हुए थे। संवत् १८१० मे चौहानवंशसे उत्पन्न हाड़ा और खीची यह दोनो जाति उस समररूपी अग्निमे जलने लगी। बूँदीके राजा महावीर उमेदसिंहने इस समय कोटेके राजा दुर्जनशालके पक्षमे बड़ी वीरता प्रकाशकी। एकमात्र उमेदसिंहकी ही वीरतासे कोटेकी राजपताकाका उस रणक्षेत्रमे विपक्षी खीची गणोके हाथसे उद्धार हुआ। उससे तीन वर्ष पीछे दुर्जनशालकी प्राणवायु पंचभूतमे लय होगई। कर्नल टाड्ने लिखा है कि वह एक साहसी राजा थे, और जिन गुणोकी राजपूतोमे आवश्यकता होती है वह सभी गुणमे विराजमान थे। अमायिकता उदारता और साहस आदि किसीकी भी उनमे कमी नही थी। वह शिकार बड़े चावसे खेलते थे, अधिक करके शेर और बाघकी शिकार उनको प्यारी लगती थी। उनके राज्यके प्रत्येक प्रान्तमे शिकार खेलनेके लिये सिह व्याघ्रादि भयानक जानवरोसे वन परिपूर्ण रहता, और उन सभी वनोमे शिकार खेलनेका स्थापन पड़ाव, बना हुआ था।

जिस समय दुर्जनशाल शिकार खेलनेको निकलते थे इतिहास कहता है कि उस समय वह अपनी रानियोको भी साथमें ले जाते थे। वह राजपूत वीराङ्गनाएं भी उत्तम रीतिसे बन्दूक चलानेकी शिक्षा पाये हुए रहती थी। शिकार खेलनेके मञ्चपर सबसे ऊपरके दरजे पर गोली भरीहुई बन्दूक हाथमे लेकर वह बैठती थीं। जिस समय शिकार खेलनेवाले वनमे से सिह व्याघ्रादिकोको घेरकर उस मंचपर लाते तभी वह वीराङ्गना बन्दूककी गोलीसे इस सिह व्याघ्रादिका वध करती थीं।

कोटेके इतिहासमे लिखा है कि एक दिन शिकार खेलते समय फौजदार हिम्मतसिंह झाला शिकार खेलनेके मंचके नीचे पृथ्वीपर खडे थे; उसी समय एक व्याघ्र सेनादलसे और शिकारी लोगोसे महा क्रोधित होकर मुह फैलाये वहाँ आकर खडा हुआ, किन्तु राजा दुर्जनशालने तब भी उसको गोलीसे मारनेकी आज्ञा नही दी, किसीने विना राजाकी आज्ञा उसके मारनेका साहस भी नहीं किया। अवसर पाकर विकट आकारवाले बाघने बड़ी तेजीसे हिम्मतसिहपर आक्रमण किया। तब उन्होने ढालसे अपनी रक्षा की और तुरन्त ही तड़प कर बाघके समीप जाय अपनी तलवारसे उसके मस्तकके दो खण्ड कर दिये। ऐसे असीम साहस और वीरताको देख दुर्जनशाल और सामन्त मण्डलीने हिम्मतसिहकी बड़ी प्रशसा की।

दुर्जनशालने अपुत्रकावस्थामे प्राण त्यागे। उन्होने मेवाड़के राणाकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। दुर्भाग्यसे अपने कोई पुत्र न होताहुआ देख हताश होकर मरनेके तीन वर्ष पहिले वह रानीसे बोले कि "देखो भगवानकी इच्छासे जो मेरा औरसजात कोई पुत्र कोटेके सिहासन पर नहीं बैठेगा, तो इस समय एक पुत्रको गोद लेना चाहिये।" पाठकोको स्मरण होगा कि कोटेके भूतपूर्व राजा महाराव राम-

सिहके बडे पुत्र विशनसिह अपनी माताकी आज्ञासे दक्षिणकी लडाईमे न जानेके कारण कोटेके राजसिहासनसे च्युत होकर केवल चम्बलके किनारेवाले आणता नामक प्रदेशमे शासन करते थे। जिस समय दुर्जनशालने दत्तक पुत्रके लेनेकी इच्छा प्रकट की, उस समयमें उक्त आणता प्रदेशमे उपरोक्त विशनसिहके पौत्र वृद्ध अजीतसिह विद्यमान थे। अजीतसिहके तीन पुत्र थे। उनमे सबसे बड़े छत्रशालको दुर्जनशालने दत्तक स्वरूपमे लेकर महारानीकी गोदमे बैठा दिया। इतिहासमे लिखा है कि यद्यपि दुर्जनशालने छत्रशाल को अपने पुत्र और भविष्यमे उत्तराधिकारी स्वरूपसे राज्यमे प्रकाशित करदिया, यद्यपि सामन्तमंडली और समस्त प्रजाने छत्रशालको भविष्यमे अपने राजा स्वरूपसे मानलिया किन्तु दुर्जनशालके मरनेपर फौजदार हिम्मतसिह झालाने अपनी प्रबलशक्तिसे उस व्यवस्थाको व्यर्थ कर दिया, उस समय आणताके वृद्ध राजा अजीतसिह जीते थे। हिम्मतसिंह उनके पक्षको लेकर सबके सामने बोले कि "पुत्रको राजसिहासन पर तिलक हो और पिता अधीन प्रजाके समान आज्ञा पालन करे, यह कभी नही हो सकता है। यह प्रकृतिके विपरीत बात है।" जो कुछ हो झाला हिम्मतसिह अपने किसी गुप्त स्वार्थसाधनसे हो अथवा छत्रशालके प्राप्त व्यवहारकी अवस्थामे राज्यकी कोई होनहार नैतिक अनिष्टकी आशंकासे हो, उन्होने उन अजीतसिहको ही राजसिहासन पर बैठालनेका उद्योग किया। किसीने उनकी बातके विपरीत खड़े होकर कुछ न कहा। उन्होंने उन वृद्ध अजीतसिहको कोटेके राजसिहासन पर शोभित कर दिया। ढाई वर्ष तक राज्यको चलाकर अजीतसिह स्वर्गको सिधारे। उनके तीन पुत्रोके नाम यह है (१) छत्रशाल (२) गुमानसिह (३) राजसिहँ।

अजीतसिहके स्वर्गपधारने पर सबसे बड़े पुत्र छत्रशालको कोटेका राजसिहासन मिला। विख्यात हिम्मतसिह झाला इसके प्रथम ही मरचुके थे, अतएत फौजदारके पद-पर उनके भतीजे जालिमसिह नियुक्त हुए।

इसी समय अपने सौतेले भाई ईश्वरीसिहकी आत्महत्या करके माधोसिह जैयपुरके सिहासन पर बैठे। किन्तु ईश्वरीसिहने ऊंची आशाके अनुसार हाड़ा जातिपर प्रताप और अधिकार एवं बूंदी और कोटा राज्यको जय करनेके लिये जो चढ़ाई की थी उसका फल यह हुआ कि स्वयं युद्धमे परास्त और अपमानित होकर उनको आत्महत्या करनी पड़ी, इसको देखकर भी माधोसिहके नेत्र नही खुले वह फिर कोटाराज्यपर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए। राजपूत राजपूतोके साथ युद्ध, तथा एक ओरसे दूसरे पर अधिकार करने और दूसरी ओरसे अपनी रक्षा करनेके लिये तैयार हुए। माधोसिह बोले कि आमेरनरेश जिस समय दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपसे शासनकर्ताके पदपर नियुक्त है तब बूंदी और कोटेके राजाओको हमारी स्वाधीनता माननी होगी। किन्तु हाड़ा जातिने इस बातसे घृणा दिखाई और जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये दूने उत्साहके साथ आपसमे बाहुबल दिखानेके लिये उन्होने बडी शीघ्रतासे तैयारी की।

आमेरके राजा माधोसिंह संवत् १८१७ सन् १७६१ ई० मे अपनी सपूर्ण सेनाको सजाकर हाड़ाजातिपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए। इस समय अब्दालीके आक्रमणसे महाराष्ट्र वीर एक साथ तेजहीन और उत्साहरहित होगये थे, अतएव कछवाहे और हाड़ाजाति निर्भय होकर जातीयसंग्रामके लिये प्रवल वलके साथ आगे बढी। माधोसिंहने हाड़ौती प्रदेशपर सेनासहित चढ़नेके लिये यात्रा करनेके समय सबसे पहिले उनियारा प्रदेश पर आक्रमण और अधिकार कर उसे अपने राज्यमें मिलालिया। उसके पीछे उन्होने लाखेरी प्रदेशमे जाकर हतबल मरहटोको भगाकर उसको भी अपने राज्यमे करलिया। इस भाँति विजय पाकर हृदयमे प्रसन्न हो पार और चम्बल नदीके बीचमे पालीघाटपर उतरे। सुलतानपुरके हाडा जातिके सामन्त पर उक्त नदीके प्रदेशकी शत्रुओसे रक्षा करनेका भार समर्पित था, किन्तु माधोसिंहने शीघ्रतासे उन पर आक्रमण कर अपना अधिकार कर लिया। सुलतानपुरके रक्षकने बड़ी वीरतासे किलेसे वाहर निकल कर अपने कुटुम्बियोके सहित प्रवल समररूपी अग्निमे जल जीवनरूपी आहुतिको दे पराजयके कलंकसे छुटकारा पाया। जिस समय सुलतानपुरके स्वामी युद्धक्षेत्रमे गिरे उस समय उन्होंनें अपने दोनों हाथोसे पृथ्वीको पकड़ा, विजेताओमेसे कोई २ इसको देखकर हँसे किन्तु विचारवानोका कथन है कि राजपूत मरते समय भी जन्मभूमिका आलिङ्गन करते है।

फिर जय प्राप्त करके महा दर्पित और उत्साहित होकर विजयी कछवाहादल कोटाराज्यके वीच माधोसिंहकी जय शब्दसे आकाशको गुजारता आगे बढ़ा। अन्तमे भटवाड़े नामक स्थानमे जाकर देखा कि एक वंशमे उत्पन्न पॉच हजार हाड़ा जातीयसेना उनकी गति रोकनेके लिये संहारमूर्तिको धारे खड़ी हुई है। कोटाराज्यकी सेनाकी सख्या माधोसिंहकी सेन–संख्यासे यद्यपि कमती थी, परन्तु वह वीरपुरुष राजपूत राजपूतजातिकी परम प्रिय स्वाधीनता की और जन्मभूमिकी रक्षा करनेके लिये जीवन उत्सर्ग करनेको ही खडे हुए थे। सवसे पहिले कछवाहेराजकी अगणित घुडसवारसेनाने हाड़ाजातिकी सेना पर आक्रमण किया। कोटाराज्यकी घुडसवारसेना अवश्य कमती थी कछवाही सेनाके सम्पूर्ण घोड़े पहिलेसे ही थके हुए थे, तिस पर भी उन्होने समरमे निश्चय जीतेगे यह विचार कर विना विश्राम लिये ही आक्रमण किया। थोड़ी सख्यावाली हाड़ासेनाने उनके उस प्रवल आक्रमणके अनायास ही सहलिया और किसी भाँति भी अपने व्यूहको भग नही होने दिया। तुरन्त ही माधोसिंहने रणभूमिमे नई सेना खड़ीकी। तव घुडसवारोके साथ पैदल भिडजानेसे रणक्षेत्रमे रक्तकी नदी वह निकली। ठीक इसी समयमे कोटेके फौजदार जालिमसिंहने चतुराईसे राजनैतिक जाल फैलाया इस समय जालिमसिंहकी अवस्था इकीस वर्षकी थी, हिम्मतसिंहने उनको पोष्य पुत्रके रूपसे ग्रहण किया था, अतएव जालिमसिंह इस समय हिम्मतसिंहके पदपर विराजमान हो कोटेके फौजदार हो रणक्षेत्रमे उपस्थित हुए थे। जिस समय क्रमानुसार युद्ध प्रवल होगया, उस समय

वीरश्रेष्ठ जालिमसिंह घोड़ेसे उतर पैदल ही अपनी सेनाके साथ असीम साहस और वीरताके साथ शत्रुओंपर आक्रमण करने लगे । जालिमसिंहका जिस बुद्धिमानीके कारण जीवन प्रसिद्ध हुआ था, इन्होंने सबमें पहिले महा संकटके समय उसी चतुराई को दिखाया ।

महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकर इस समय उक्त रणक्षेत्रके समीप ही थे, किन्तु पानीपतके समरके पीछे वह ऐसे बलहीन होगये थे कि किसी प्रकारसे दोनो ओरमें किसीकी ओर भी नहीं होसक्ते थे । जिस समय माधोसिंहकी सब प्रकारसे जीत होनेकी सम्भावना हुई उसी समय चतुर जालिमसिंहने अपने घोड़े पर चढ़; बड़ी शीघ्रतासे हुल-करके डेरोंमे जाय यह प्रार्थना की कि आप यदि युद्ध करनेको राजी नहीं है तो एकबार अपनी सेनाको लकर इस सुयोग पर माधोसिंहके डेरोंको लट लीजिये । हुलकरने यह बात बडे प्रेमसे मानली ।

डेरोंपर आक्रमण होते ही कछवाही सेनाका दल मारे भयके रणभूमिको छोड़ भाग निकला । हाड़ाजातीय कविने लिखा है कि “ हाड़ाजातिकी सेनाने अपनी नंगी तलवारको शत्रुओंके रुधिरसे स्नान कराकर संग्रामरूपी तीर्थकी क्रियाको समाप्त किया ।

माचेड़ी ईशरदा, बातका, वारोल, अचरोल प्रभृति जयपुरके अधिकारी प्रदेशोंके समस्त सामन्त उस पांच हजार हाड़ाजातीय सेनासे परास्त होकर भाग गये । बूँदीकी सेनाका दल कोटेकी सेनाके साथ मिलनेको आया था किन्तु इस समय तक उसने, आमेर नरेशने जो बूँदीके प्रदेशोंको जीत लिया था,उनका उद्धार नहीं करने पाया था। जो हो उक्त संग्राममें कछवाही जातिकी पंचरंगी पताका कोटेकी सेनाके हाथमें आगई कोटेके कविने उक्त हाड़ाजातिकी सेनाकी जीतमें और जालिमसिंहकी वीरता मूलक कविता मालाके गूथनेमें विलम्ब नहीं किया । हाड़ाजाति आजतक गौरवके साथ उस कविताका गान करती है । कवितामें एक स्थान पर लिखा है,

“ जङ्गभटवाड़ारोजीत । नारोजालिमझाला ।
रङ्ग एक रङ्ग चढ़ा । रङ्ग पँचरंगका ।

इसका अर्थ यह है कि भटवाड़ाके युद्धमें जालिमसिंहका सौभाग्यरूपी सितारा उदय हुआ। उस रणक्षेत्रमें (रङ्ग) एक रमा रहा, पचरंग पताकाको दाव दिया, अर्थात् आमेरकी राजपताका रुधिरसे रँग गई ।

उक्त भटवाडेकी लडाईसे ही आमेरनरेशकी प्रभुता जाती रही । इतने दिनोंसे बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपमें कछवाहे नरेश जिस प्रभुताको पाये चले आये थे, इस समय वह प्रभुता एकसाथ जाती रही। इस लड़ाईके पीछे आजतक आमेर नरेशोंमें हाड़ाजातिके ऊपर अपना अधिकार करनेका साहस नहीं हुआ, कर्नल टाड्ने लिखा है

टिप्पणीमें लिखा है कि “ यह विचित्रता है कि जिस वर्षमें नादिर. शाहने भारत पर आक्रमण किया, जालिमसिंह उसी वर्षमें जन्मे और अबदालीके आक्रमणके समय उन्होंने राजनैतिक रंगभूमिमें प्रथम प्रवेश किया ” ।

कि जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिकी रक्षाके लिये हाड़ाजातिने भटवाड़ेके रणक्षेत्र मे जिस असीम वीरतासे जय प्राप्त की प्रतिवर्षमें उसके स्मरणार्थ एक सामरिक महोत्सव होता है, हाडाजाति एकत्रित होकर एक कृत्रिम आमेरका किला बनाय जय जय करके उस किलेपर अधिकार करके उसको ध्वस करती है"। उपरोक्त लड़ाईके पीछे छत्रशाल वहुत दिन नही जिये। उनके कोई पुत्र न होनेसे उनके भाई कोटेके राजसिहासन पर बैठे।

द्वितीय अध्याय २.

महाराव गुमानसिह—जालिमसिह—उनका जन्म और वंशविवरण—जालिमसिंहका पद—उनका सम्मान पाना—झालावंशके फौजदारपदको वंश परम्परासे पाना—जालिमसिहके अन्यायसे प्रभुता करने पर महाराव गुमानसिंहको असतोष होना—जालिमसिहका पदसे च्युत करना—महारावका जालिमसिहकी सब सम्पत्तिका हरलेना—जालिमसिंहका कोटेको छोड़देना—मेवाड़मे जाना—राणाकी अधीनतामे रहना—राणासे उनको "राजराणा" उपाधि और भूसंपत्ति मिलना—मरहटोंके विरोधमें युद्ध—रणभूमिमे जालिमसिहका घायल होकर वंदी होना—उनका फिर कोटेमें आना—मरहटोंका कोटेराज्यपर आक्रमण करनेकी चेष्टा—बुकायनीका युद्ध—प्रशंसनीय वीरताका प्रकाश—जालिमसिहपर फिर गुमानसिहका दयालु होना—जालिमसिहके द्वारा महारावकी ओरसे मरहटोंके साथ सधि करना—जालिमसिहका मनोरथ सफल होना—मृत्युशय्यामे पडेहुए गुमानसिहका जालिम सिहके द्वारा अपने पुत्र उमेदसिंहके लिये राज्यसिंहासन देनेको कहना—महाराव गुमानसिंहकी मृत्यु—उमेदसिंहका राज्यतिलक होना—टीका दोडकैलवाड़े पर अधिकार—जालिमसिंहके विरोधमे षड्यंत्र—षड्यन्त्रभेद—हाडाजातिके सामन्तोंका निकालना—मोसेनके सामन्तका षड्यन्त्र—षड्यन्त्र, भेद—वहादुरसिहकी मृत्यु—राजभाइयोंका कारागार भोगना—जालिमसिहके विरोधमे वहुतसे षड्यन्त्र-वीराङ्गनाओका वीरभेषसे जालिमसिहके मारनेकी चेष्टा करना—जालिमसिंहका उद्धार पाना—जालिमसिहकी सावधानता।

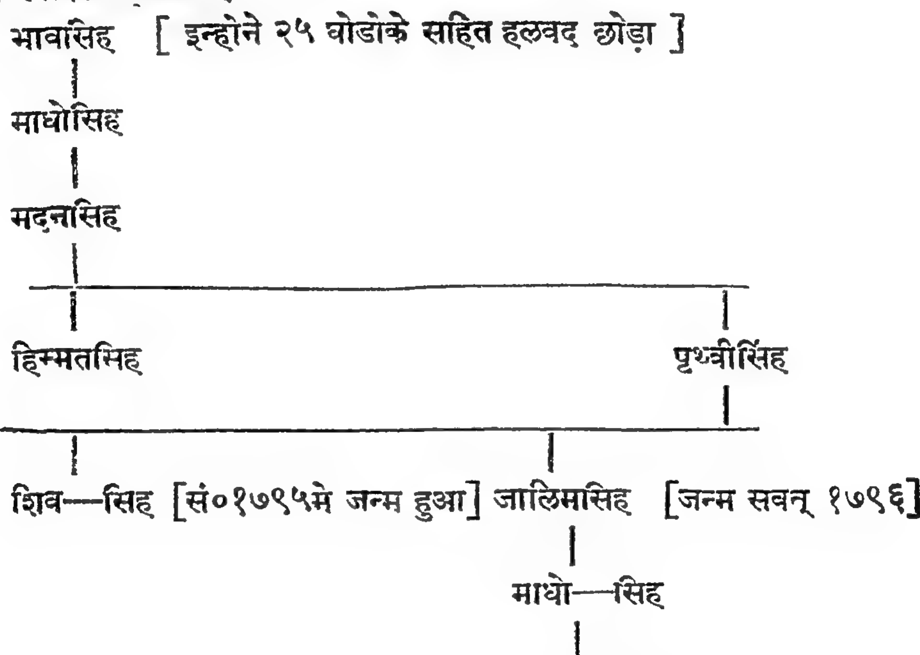
संवत् १८२२ सन् १७६६ ईसवीमे गुमानसिह पिताके सिहासनपर बैठे। गुमानसिंहके मस्तक पर जिस समय कोटेका राजछत्र शोभित हुआ, उस समय वह पूर्ण युवक वड साहसी और बुद्धिमान थे। इसी समयमे दक्षिणके महाराष्ट्रदलने पङ्गपालकी समान राजपूतानेमे आकर राजपूतजातिके जो सर्वनाश करनेका उद्योग किया था, गुमानसिंह उनके उस आक्रमणसे अपने राज्यकी रक्षा करनेमे सब भॉति समर्थ थे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि थोडे ही दिनतक राज्यका सुख भोगने पर उनको एकबालकके हाथमे राज्यका भार दे देना पडा। गुमानसिहकी उस शासनप्रणालीको वर्णन करनेके प्रथम हम और चिरस्मरणीय महानीतिज्ञ मनुष्यको उपस्थित करना चाहते है। वह राजपूत नीति शास्त्रके जाननेवालोंमे प्रधान जालिमसिहकी जीवनी ही कोटेके भविष्य इतिहासका

स्वरूप है, जालिमसिहको लेकर ही कोटा है, और कोटेके इतिहासके प्रत्येक पत्रेमे हरएक राजनैतिक घटनाके साथ ही नही वरन आधी शताब्दीतक समस्त राजपूतानेके इतिहासके साथ जालिमसिहका पवित्र नाम मिला है। " माननीय टाड्ने लिखा है कि " जालिमसिह भारतके जिस स्थान पर रहे वह उस स्थानकी श्रेष्टनीतिको जानते थे, उनकी उस नीतिकी प्रतिभाके प्रकाशके लिये वह सीमा बद्ध प्रदेश कभी योग्य नही था, सुभीता और अवसर पानेसे वह किसी एक महादेशकी महान् जातिका शासन नि'सन्देह कर सक्ते थे। " वास्तवमे कर्नल टाड्का यह कथन आगेके इतिहासको विलक्षणतासे प्रमाणित करता है।

जालिमसिह झालाजातिके राजपूत थे। संवत् १७९६ सन् १७४० ईसवीमे भारतवर्षकी एक चिरस्मरणीय घटनाके समय जब विजयी नादिरशाहने अपनी प्रबलसेना दलके साथ भारतमे आकर दिल्लीके सिहासन पर बैठे हुए तैमूरके शेष-वशधरोके शासनके विरोधमे अन्तिम युद्ध किया था, उस समयमे जालिमसिहका जन्म हुआ। यद्यपि उस समय तैमूरके वंशधरोकी शासनशक्ति प्रबल प्रतापसे बढ़नी असम्भव थी, यद्यपि दुरात्मा औरंगजेबके कठोर शासनकी नीतिसे यवन बादशाहीकी जड उखाडनेका बीज बोया जाचुका था, किन्तु इस समयमे नादिरशाहके भारतपर अधिकार करनेके लिये न आने पर दिल्लीके बादशाहकी शासनशक्ति और भी कुछ दिनतक प्रबल रहसक्ती थी। नादिरशाह जिस समय भारत विजय करनेको आया, उस समयमे महम्मदशाह दिल्लीके सिहासन पर और महावीर दुर्जनशाल कोटेके राज सिहासन पर बैठे हुए थे। जालिमसिहके जन्म लेनेके समयसे क्रमा अनुसार पॉच राजा कोटेका राज्य करके परलोक सिधारे, और छठवे राजाके सिहासनपर बैठने तक जालिमसिह जीवितथे। उक्त राजाओके बीचमे एक महाराव किशोरसिहने अवश्य ५० वर्ष तक राज्य किया था। यद्यपि जालिमसिह एक नेत्रसे हीन थे किन्तु भटवाडेके रणक्षेत्रमे उन्होने सबसे पहिले जैसी असीम नीतिज्ञता और वीरता दिखाई थी उनकी राजनैतिक दृष्टि चिरकाल तक वैसी ही बनी रही।

जालिमसिहके पूर्व पुरुष सौराष्ट्र देशके अन्तर्गत झाला प्रदेशके बीच हलवद नामक स्थानके सामान्य शक्तिवाले सामन्त थे। भावसिह नामक उस परिवारके छोटे पुत्रने कुछ विश्वासी सेवकोके साथ अपने सौभाग्यकी परीक्षा करनेके लिये पिताकी भूमिको छोड विदेश यात्राकी। इस समम औरगजेबके वशधरोमे दिल्लीके सिहासन पानेके लिये लड़ाईकी आग प्रज्वलित होरही थी, उस समय अनेक स्थानोसे अनेक वीर आ आकर दोनो ही की ओर हो हो कर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेमे लगे हुए थे। भावसिहने भी उनमे से एकका पक्ष लिया। जिस समय महाराज भीमसिह कोटेके सिहासन पर बैठे हुए दोनो सय्यद मंत्रियोको सहायतासे बडे पराक्रमसे शक्तिको बढा रहे थे, उस समय उक्त भावसिहके पुत्र माधोसिह कोटेमे आये। यद्यपि उस समय माधोसिहके साथ केवल पचीस घुड़सवार थे, किन्तु महाराज भीमसिह उनको माननीय

झाला वंशी जान वड़े आदरसे ग्रहण किया और पीछे मित्रता ही नही जोड़ी वरन अपने पुत्र अर्ज्जुनके साथ माधोसिहकी भगिनीका विवाह करके उन्हे अपना सम्बन्धी वना लिया। थोड़े ही दिन पीछे कोटाराज्यके भीमसिहने माधोसिहके रहनेके लिये नाणता प्रदेश देदिया और उन्हे कोटेकी समस्त सेनाका प्रधान सेनापति वनाया एव कोटानरेश जिस किलेके महलोमे रहते थे, उसी किलेके अध्यक्ष पदपर उनको सुशोभित किया। माधोसिहने कोटाराज्यमे वड़ी शक्ति और सम्मान पाया, उनके मरनेपर मदनसिह नामक उनके पुत्रने अपने पिताके पद अनुसार कोटेके फौजदारका पद पाया। उनके दो पुत्र हुए (१) हिम्मतसिह और (२) पृथ्वीसिह। हम यहाँ भावसिहके वंशकी कारिका लिखते है।



राजपूतोके राज्योमे प्रधानमन्त्री, दीवान, प्रधानसेनापति आदिके प्रत्येक पदको उनकी सन्तान क्रमानुसार पाती है, अतएव मदनसिहके मरनेपर हिम्मतसिह झाला कोटाराज्यके फौजदार हुए। हिम्मतसिह जैसे महावीर नीतिमे कुशल और शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे पाठकोको वह पहिले ही ज्ञात हो चुका है। जिस समय जयपुरके राजाने महाराष्ट्र दलके साथ मिलकर कोटेपर आक्रमण किया, उस समय इन्ही हिम्मतसिहने अपनी वीरताको दिखाकर कोटेके किलेकी रक्षा की, किन्तु चारों ओरसे विपमविपत्तियोंको देख इन्होने पहिले ही मरहटोसे संधिकरके उनको कर देना स्वीकार करलिया। महाराज दुर्जनशालके मरनेके पीछे इन्हीं हिम्मतसिहने अपनी शक्तिसे अजीतसिहको कोटेके सिंहासनपर वैठा दिया। हिम्मतसिहके कोई पुत्र नही था, इस कारण उन्होने अपने भतीजे जालिमसिहको गोद लेलिया था। हिम्मतसिहके परलोक सिधारने पर

(१) यह वर्तमान झालावाड़ राज्यके प्रथम राजा हुए।

जालिमसिंह कोटेके फौजदार हुए। जालिमसिंहने युवा अवस्थामे भटवाड़ेके रणक्षेत्रमे जिस वीरता और साहससे कोटाराज्यको आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये छुटा लिया। राजनैतिक रंगभूमिमे वही उनका सबसे प्रथम प्रशंसनीय अभिनय हुआ। किन्तु परितापका विषय है कि उक्त घटनाके थोड़े ही दिन पीछे जालिमसिंहका प्रकाशित यशरूपी सूर्य हठसे घोर बादलोसे छिप गया।

गुमानसिंहके राजासिंहासन पर बैठनेके कुछ दिन पीछे जालिमसिंह कुछ अधिक शक्ति और प्रभुता दिखानेके कारण उनकी आखोमे खटके। महाराज गुमानसिंह उसीसे जालिमसिंह पर इतने क्रुद्ध हुए कि नान्दता प्रदेश जो महाराज भीमसिंहने जालिमसिंहके प्रपितामह माधोसिंहको दिया था, वह उनसे प्रदेश छीन लिया। उक्त नान्दता प्रदेश चम्बल नदीके किनारे है, और अब भी वह झाला परिवारके अधीन है। उस समय कोटेका राजवंश बूँदीके अधीन सामन्तोसे शासित देशके रूपमे गिना जाता था। महाराज गुमानसिंहने उक्त फौजदारका पद और नान्दता प्रदेश जालिमसिंहके मामा वाकड़ोत जातीय भूपतसिंहको दे दिया।

अपने स्वामी गुमानसिंहके अधीनमे फिर अपना पूर्वपद और नान्दता प्रदेश जाता देख जालिमसिंहने अपने उस अपमान स्थान कोटाराज्यको छोड़ अन्यत्र भाग्योदयकी कामना की। वह किस मार्गका अनुसरण करै, अधिक दिनतक उनको विचार करना नही पड़ा। आमेरराज्यमे उनका प्रवेश द्वार भटवाड़ा की लड़ाईसे पहिले ही बंद होगया था, दूसरे मारवाड़राज्य उनको स्वयं उपयुक्त नही जान पडा। इस समय जालिमसिंहके जाति और वर्णका एक प्रधाननेता मेवाड़के राजा महाराणाकी सभामे विराजमान था। मेवाडके सामन्त दोदलोमे बटकर एक दल महाराना अड़सी और दूसरा दल एक अन्य मनुष्यके सिंहासनकी अभिलाषासे पक्षको लेकर अड़सीको सिंहासन पर नही बैठने देता था। मेवाड़के पहली श्रेणीके सोलह सामन्तोके बीचमे जालिमसिंहके उक्त स्वजातीय देलवाड़ाके झाला सामन्तने अड़सीके पक्षको लेकर उनको मेवाड़के सिंहासन पर बिठा दिया। अड़सीने उन सामन्तोकी सहायतासे पिताके सिंहासनको पाय उन सामन्तोके प्रताप और प्रबलशक्तिके विरोधमे कुछ बाधा नही दी। झाला सामन्तोने राणाके ऊपर इतना प्रभाव डाललिया कि उन्होने वेतनभोगी विजातीय सेनाके दलको राणाकी शरीररक्षाके लिये नियुक्त किया दूसरी ओरसे जो सब शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे वे भी उनकी ओरसे नीतिको समर्थ न करते थे। झाला सामन्त राणाके मतको न लेकर अपनी ही इच्छानुसार उन सब मनुष्योको जागीरे देते थे, सो राणाने अपनी खास भूमि और जो सामन्त अपने विरोधी थे वा अपने विपरीत करनेवाले थे उनके अधिकारी प्रदेशोको छीन कर अपने राज्यमे मिला लिया। इस कारण राज्यकी आमदनी बहुत बढ़ गई, और कोई साहससे उन झाला सामन्तोकी उस इच्छाके विरोधमे किसी भाँतिकी आपत्ति भी नही करसका।

(१) उर्दूतरजुमेमे बालावत्।

जिस समय झाला सामन्तोने मेवाड़के महाराणाकी सभामे उक्त प्रकारसे अपने प्रबल प्रतापको बढ़ाया था उस समय कोटेके पदसे गिरे हुए फौजदार युवक जालिमसिह अपने सौभाग्यकी परीक्षाके लिये मेवाड़मे आये। जालिमसिहकी प्रबलवीरताकी सूचना पहिले ही महाराणा अडसी पाचुके थे। इस कारण जालिमसिहके आते ही महाराणाने उनको सम्मानपूर्वक ग्रहण किया। साहस, नीतिज्ञता, वीरता और प्रतिभासे जालिमसिह शीघ्र ही महाराणाके प्रियपात्र और विश्वासभाजन हो गये। महाराणा झाला सामन्तोके खिलौने बन रहे थे, किन्तु किसी प्रकारसे वह उनके हाथसे अपना उद्धार न पाते देख मनही मनमे विषम वेदनाका अनुभव भी करते रहते थे। इस समय युवक जालिमसिहको पाकर उनको भलीभांतिसे योग्यपात्र जान महाराणाने उनके हाथमे अपने उद्धारका भार दिया, जालिमसिहने अपनी चतुरता साहस, नीतिज्ञता और वीरतासे शीघ्र ही सामन्तो पर आक्रमण कर महाराणा अडसीको उस विपत्तिके मुखसे निकाल दिया। झाला सामन्तोने उस युद्धमे अपने प्राण त्याग दिये। महाराणाने जालिमसिहकी सहायतासे पूर्ण स्वाधीनता पाली, और अधीन सामन्तोके अन्यायको अपनी प्रभुतासे दूर करके सन्तोषित हो जालिमसिहको "राजराणा" की उपाधि और मेवाडके दक्षिणसीमावाला चित्र खाडिया नामक प्रदेश पुरस्कारस्वरूपमे दिया। उस समयमे जालिमसिह मेवाडके दूसरी श्रेणीके सामन्त हुए। यद्यपि झाला सामन्तोंके मरजानेसे महाराणा अनेक प्रकारसे निष्कंटक होगये थे किन्तु उनके प्रधान शत्रु जो वंशधर सिहासनके अभिलाषी थे वह कुछ सामन्तोके साथ उनको वध करनेके लिये यत्न करते थे। उन्होने इस समय पूर्वकी समान विद्रोह उपस्थित कर शेषमे मरहठोकी सहायतासे सिंहासनपर अधिकार करनेका उद्योग किया। जालिमसिहकी सम्मतिसे महाराणाने शीघ्र ही एकदल प्रबल सेनाका एकत्रित कर उन्हीं मिलेहुए विद्रोही और मरहठोके साथ समररूपी अग्निको प्रज्वलित कर दिया, उस समरका हाल पाठकोको विदित ही है। जिस समय जय लाभकी सम्पूर्ण आशा हुई उसी समय दुर्भाग्यसे शत्रुओके जीतजानेसे जालिम घायल होकर मरहठोके द्वारा कैद होगये। सुविख्यात महाराष्ट्र सेनानी अम्बाजी इंगलियाके पिता त्र्यम्बकरावने जालिमसिहको कैद कर लिया। अन्तमे दोनोने परस्पर मित्रता करली और उस मित्रतासे अन्तमे जालिमकी राजनैतिक अभिनयके अनेक उपकार हुए।

उपरोक्त सग्राममे पराजय पानेसे महाराणा अडसा और सम्पूर्ण मेवाड़राज्य विजेताओकी दयाके अधीनतामे आये। विजेताओके उदयपुर घेरनेपर राजपूतोने अपनी वीरता दिखाकर आत्मसमर्पण करनेकी मनमे ठानी। अन्तमे सन्धिके होजानेसे वह गालयाग जाता रहा। घायल जालिमसिहने आरोग्यता प्राप्त कर विशेष विचार करके यह निश्चय किया कि लुप्तप्रताप हीनबल महाराणाके अधीनमे रहकर भाग्योदयकी

(१) उदंतासुनेमें जनरेडा—

(२) मेवाडके इतिहासमे अडसीकी शासनप्रणाली देखो।

इच्छा नहीं करनी चाहिये, अतएव वह उदयपुरमे अधिक दिन न रहकर अपने भावी सौभाग्य सहचर पण्डित लालाजीवल्लालके साथ फिर कोटेमे आये। बुकाचनीकी लड़ाईमे वहुत सी महाराष्ट्र सेनाके मारे जानेसे महाराष्ट्र नेता मल्हारराव हुलकर अत्यन्त साहस-हीन होगये थे। किन्तु और भी एक लड़ाईमे समस्तरूपसे जीतनेको समर्थ होकर वह महा दर्पके साथ कोटेपर अधिकार करनेके लिये आगे बढ़े। विपत्तिको शीघ्र ऊपर आते देख कोटानरेश गुमानसिंहने अपने पक्षको निर्बल जान कर हुलकरसे सन्धिकर विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होनेका एक यही उपाय निश्चय किया। राजा गुमानसिंहने शीघ्र ही वाङ्कड़ोत फौजदारको सन्धि करनेक लिये मरहठोंके डेरोंमे भेजा। किन्तु वह विफलमनोरथ होकर लौट आये।

जालिमसिहके कोटेमे आने और आगे होने वाली घटनाके सम्बन्धमे इतिहास कहता है कि नीतिके जाननेवाले जालिमसिंहने जिस समय देखा कि कोटाराज्यके भाग्यरूपी आकाशमें घनघोर राजनैतिक वादल छाये हुए है। इस कारण कोटेके क्षेत्रमें राजनैतिक अभिनयका वास्तवमे समय उपस्थित है, जालिमसिंह अपनी नीति वीरता और साहससे कोटेके उस दुर्दिनको हटावेगे इसी आशासे वह कोटे राज्यमें आये है।

जालिमसिंह यद्यपि कोटेमे आतो गये किन्तु महाराज राजा गुमानसिंह उस समयतक जालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध थे कि वह जालिमसिंहके अपराध क्षमा कर राजसभामे आनेके लिये राजी नहीं हुए। उन्होने, भाग्यसे एकवार किसी भाँति से हो, गुमानसिंहसे मिलनेकी मनमें ठान ली। सौभाग्यसे इसी अवसर पर यह घटना हुई कि जिस कारणसे कोटानरेश गुमानसिंहने क्षमा ही नहीं किया वरन उनको अपने अधीनमे नियुक्त करलिया।

इस समय महाराष्ट्रदलने कोटाराज्यकी दक्षिणसीमामे आकर बुकायनी प्रदेशके किलेको घेरलिया। सामन्त हाडा सम्प्रदायके नेता माधोसिंह चारसो असीम साहसी हाड़ा सेनाके साथ उस किलेकी रक्षा करनेमे नियुक्त थे। मरहटोने किलेका घेर कर उसे जय करनेकी वारम्वार चेष्टा की परन्तु किसी भाँतिसे भी वह किलेकी दीवारको लांघ कर भीतर नहीं जासके। किलेको तोडनेके लिये जिन २ वस्तुओंकी आवश्यकता होती है मरहटोंके पास इस समय वह कुछ भी नहीं थी। तब एक वडे हाथीके द्वारा किलेकी दीवारको तोड मरहटोंने किलेको ध्वंस कर अपना अधिकार करलिया। बुकायनीके किलेके दरवाजेको तोड़नेके लिये मरहठोंने अन्तमे यही उपाय किया। हाडासेना नायक माधोसिंहने जब देखा कि अब किलेकी रक्षा करना असभव है, और शीघ्र ही हाथीके विषम आघातसे दरवाजा टूट जायगा तब वह अमानुषिक वीरता दिखानेको उद्यत हुए। जिस समय शत्रुका हाथी किलेके दरवाजे पर प्रवलवेगसे अपने मस्तककी टक्कर लगाकर फाटक तोडने लगा। उस समय माधोसिंह नगी तलवार लेकर किलेपरसे हाथीकी पीठपर कूद पडे और तुरन्त ही फीलवानको मार गिराया। पीछे हाथीके टुकडे २ कर डाले। माधोसिंह इकले जिस समय शत्रुओंमें किले परसे

कूदे तब निश्चय ही उनके जीवनकी आशा नही थी, किन्तु किलेकी हाड़ासेनाने अपने नायकको ऐसी वीरता दिखाते देख फिर विलंव नही किया। हाडासेना उस समय किलेका दरवाजा खोल प्रबलसागरके तरंगोकी समान महा वेगसे शत्रुसेनाके संहार करनेको प्रवृत्त हुई। किन्तु शत्रुसेनाके अधिक और प्रवल होनेसे शीघ्र ही हाड़ा सेनाने प्रशंसनीय वीरताको दिखाय अपने जीवनको विसर्जन किया किन्तु हाड़सेनाने बिना शत्रुसेनाको संहार किये अपने जीवनको नही छोडा। जो हो, मरहटोने अन्तमे विजय लक्ष्मीको पाकर कोटाराज्यकी सीमामे अत्याचार करते पीड़ा देते और लूटते हुए सुकेत नामक किलेको घेर लिया। कोटानरेश गुमानसिहने उक्त सम्वादको पाकर सुकेत किलेके रक्षकको लिख भेजा कि "सेनाके साथ अपनी रक्षा करनी चाहिये। मातृभूमि की रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करते हुए जीवन विसर्जन करना ही श्रेष्ट है, वुकायनी के समरमे हाड़ाजातिकी सेनाने विलक्षणरूपसे वीरता दिखाई है, कोटेकी रक्षा करना ही परम धर्म और प्रयोजनीय है।" राजाकी इस आज्ञासे किलेके रक्षकने कोटाराजधानीमे जानेके लिये आधीरातके समय गुप्तरीतिसे समस्त सेनाके साथ किलेमेंसे निकल कर यात्रा की। किन्तु दुर्घटनासे हो वा षड्यन्त्रसे हो जिस मार्गसे यह सव चले उस मार्गके दोनो ओर सूखे तिनकोमे आग वल रही थी तिस पर महाराष्ट्र सेनाने जागकर उन पर आक्रमण किया। अगणित शत्रुसेनाको भेदकरते हुए जो बहुतसी हाड़ासेना गई उसका कहना वाहुल्यमात्र है।

राजा गुमानसिहके इस महाविपत्तिके समय जालिमसिह अपने नष्ट भाग्यके उद्धारके लिये गुमानसिहके पास विना वुलाये ही पहुँचे। जालिमसिहने जाकर इस समय गुमानसिंहको निश्चय करादिया कि इकले जालिमसिहके ही भुजवलसे और राजनीतिसे भटवाडेकी लड़ाईमे हाड़ाजातिकी सेनाने जय पाई थी और उनकी ही राजनीति के द्वारा कोटाराज्य आमेरनरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये वचा था। एवं जो हुलकर मल्हारराव आजदिन कोटेपर अपना अधिकार करनेके लिये वीररूपसे आगे बढे है उन्ही हुलकरकी सहायतासे वह कोटराज्यकी रक्षा कर चुके है। राजा गुमानसिहने समझ लिया कि इस विपत्तिरूपी सागरसे उद्धार पानेका उपाय एक जालिमसिह ही मल्लाहस्वरूप है। अतएव उन्होने जालिमसिहके सब अपराधोको क्षमा कर उन्हीके हाथमे परस्पर सन्धि स्थापन करानेका भार अर्पण करके उन्हे मरहठोके डेरोमे भेजा। चतुरनीति शास्त्रके जाननेवालोमे श्रेष्ठ जालिमसिहने शीघ्र ही मल्हाररावके पास सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित कर संतोप जनक फलको प्राप्त करलिया अर्थात् कोटानरेश गुमानसिहके छ लाख रुपये देने पर हुलकर मल्हारराव अपनी सेना सहित लौट जॉयग। इस संधिको होता हुआ देख जालिमसिहके द्वारा कोटेकी रक्षा हुई, यह जान गुमानसिहने प्रसन्न होकर उनके जो अधिकारी प्रदेश छीन लिये थे वह शीघ्र ही उनको दे दिये। और वाङ्कड़ोतके सामन्त सवि स्थापन करनेमे असमर्थ हुए थे, इस कारण उनको पदसे हटा कर जालिमसिहको ही उनके पैतृक कोटाके फौजदारका पद देदिया, किन्तु जालिमसिहने जिस समय अपने पैतृक पदको पाया उससे कुछकाल पीछे कोटानरेश गुमान-

सिंह रोगसे ग्रसित हुए, और सब जनोंने उनके जीवनकी आशा छोड़ दिया। मृत्युकी शय्यापर पड़ेहुए गुमानसिंहको यह चिन्ता हुई कि इस समय अपने पुत्रोंका भार किसके हाथमें दिया जाय परन्तु इस चिन्तासे उनको कष्ट नहीं हुआ; उन्होंने तुरन्त ही यह विचारा कि दो बार जालिमसिंहके हाथसे कोटाराज्यकी रक्षा हुई है इस कारण गुमानसिंहने उनको एक विश्वासी और योग्यपात्र जान अपने सब सामन्तोंको बुलाय दशवर्षके कुमार उमेदसिंहको जालिमसिंहकी गोदमें बैठा दिया। और सबके सम्मुख जालिमसिंहको ही अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त कर दिया।

राजा गुमानके मरनेसे संवत् १८२७, सन् १७७१ ईसवी में उमेदसिंह कोटेके राजसिंहासन पर बैठे। सदासे राजपूत जातिमें यह रीति चली आती है कि कोई नवीन राजा यदि राज्यसिंहासनपर बैठे तो उसको शीघ्र ही दिग्विजयके लिये जाना पड़ता है और वह समरमें जय पाकर अभिषेककी क्रियाको समाप्त करता है। उसी पुरानी रीतिके अनुसार उमेदसिंहने राजतिलकके पीछे अपनी सेनादलके साथ नरवर राजवंशीय कैलवाड़ेके स्वामीके साथ युद्ध करके उक्त प्रदेशको कोटाराज्यमें मिला लिया। जालिमसिंहने उमेदसिंहके अविभावक रूपमें जो सबसे पहिले यह प्रशंसनीय काम किया, उसके आगेके शासनमें इसी भांति उनकी ऊंची प्रतिभाका पूर्ण परिचय पाया जाता है। जालिमसिंह अप्राप्त व्यवहार कोटाराज्यके अविभावक पदको ग्रहण करनेके कुछ समय पीछे भयानक विपत्तिके जालमें पड़ गये। जालिमसिंह एक ऊचे दरजेके कूट राजनीतिके जाननेवाले थे, उसी कूटनीतिके बलसे उन्होने अपनी प्रबलशक्तिको जीवनपर्यन्त बनाये रक्खा। जालिमसिंह मृत महाराज गुमानसिंहके बडे विश्वासी मित्र स्वरूपमें गिने जाने पर भी कोटेके संपूर्ण सामन्तोंके प्रियपात्र नहीं थे। उनका अभ्युदय और प्रताप प्रतिपत्ति अनेक सामन्त एवं राजपुरुषोंके नेत्रोंमें खटकता था। इस कारण जालिमसिंह महाराजके अविभावक पदको पाकर जिस भाँति धीरे २ सबके ऊपर अपने प्रतापको फैलानेमें प्रवृत्त हुए इसी प्रकारसे सामन्त समाज उनकी उस शक्ति और प्रतिपत्ति संचयके विरोधमें अनेक विघ्न और बाधाओंको डाल शत्रुता करने लगे। जालिमसिंह जो पहिले कोटेके फौजदार थे। वह केवल सामरिक शक्ति मूलक पद था उस पदसे यद्यपि जालिमसिंह किलेके महलोंके अध्यक्ष थे और उससे उमेदसिंह रहा करते थे, किन्तु कुछ दिन पीछे जालिमसिंहके साथ दीवानी विभाग अर्थात् राज्यके शासन विभागके मन्त्री समाजके साथ उनका किसी २ विषयमें एक ही कार्य हो जाता था, परन्तु ऐसा होने पर भी जालिमसिंहको प्रचलित व्यवस्थाके अनुसार किसी प्रकारसे भी शासन विभागमें हस्तक्षेप वा बाधा डालनेका अधिकार नहीं था। दीवानी विभागमें राय अखैराम नामक एक मनुष्य सब भाँतिसे योग्य और ऊंचे दरजेकी शासननीतिको जाननेवाला नियुक्त था। अतएव जालिमसिंह जिस समय फौजदारके पदपर नियत हुए, उस समयमें भी अखैराम प्रधानमन्त्री थे। इतिहासमें लिखा है कि धीर अखैरामके सुपरामर्शसे और सुशासनके गुणोंसे कोटाराज्यने बड़ी क्षमता, प्रताप, शान्ति और उन्नति पाई।

किन्तु परितापका विषय है कि अखैरामसे राज्यकी उन्नति होने पर भी वह गुमानसिहके मरनेके उपरान्त थोड़े ही दिनोमे अन्यायसे मारेगये । जालिमसिहकी सलाहसे अखैराम मारे गये वा नहीं इसका निश्चय नहीं हुआ। इन अखैरामके मरनेके उपरान्त जालिमसिह कोटाराज्यके सामरिक और शासन विभागमे सबके ऊपर अधिकार करनेको जब उद्यत हुए तब उनके विरोधी बहुत ही कम थे। किन्तु तब भी जालिमसिंह विषम विपत्तियोको बिना दूर किये अपनी अभिलाषाको पूर्ण नही करसके।

जालिमसिहने गुमानसिहके मरनेके पीछे ही अपनेको राजप्रतिनिधिरूपसे प्रकाशित किया, और समर तथा शासनविभागके सब अधिकारोको स्वाधीन करनेको वह उद्यत होगये। इसपर जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे, वह बोले कि स्वर्गवासी गुमानसिंहने जालिमसिंहके हाथमे इतने अधिकार नहीं दिये है उन सामन्तोमें महाराज स्वरूपसिह और बाङ्कड़ोतके सामन्त भी थे । पाठकोको स्मरण होगा कि इन बाङ्कड़ोतके सामन्तको पदच्चुत करके जालिमको फौजदारका पद मिला था। इन दोनो मनुष्योको छोड़ राजा उमेदसिहके धाभाई जशकर्ण भी जालिमसिहके विपक्षमे थे। जशकर्ण चतुर और नीतिके जाननेवाले थे। वह बालक महाराजके समीप रहते थे और उसी कामके लिये नियुक्त थे। जो सब मनुष्य जालिमसिहके विरोधी हुए उनको उस धाभाईकी सहायतासे अपने मनोरथके पूर्ण होनेमे विशेष सफलता प्राप्त हुई। जालिमसिहने अविभावक पद पाकर पूर्णशक्तिसे कार्य चलाना आरंभ किया, तो वह सबसे पहिले उक्त विरोधियोके मुखमे पतित हुए। किन्तु विपक्षियोके षड्यन्त्र बिना बढे ही जालिमसिहने अपनी चतुराई और कूटराजनीतिके बलसे उस षड्यन्त्रको छिन्न भिन्न करदिया। धाभाई जशकर्णके द्वारा ही महाराज स्वरूपसिह मारेगये; बाङ्कड़ोतके सामन्त अपने प्राण बचाकर भाग गये और बाकी हत्या करनेवालोको धाभाई अपने साथ लेगये । जालिमसिहने इस भाँति शीघ्रतासे इस अभिनयको कर डाला कि उसको देख राज्यके चारोओरके मनुष्य डर गये। जालिमसिहने काँटेसे ही काँटेको उखाड़ डाला। महाराज स्वरूपसिह धाभाई पोकर्ण और बाङ्कडोतके सामन्त यह तीनो ही जालिमसिहके प्रधान शत्रु थे । जालिमसिहने सबसे पहिले धाभाईको हस्तगत कर उन्हींसे अपने उद्देशको पूरा कराया और पीछेसे उसे भी निकाल देनेपर सभी विस्मित हुए और जालिमसिहके असीम साहस और चतुराईको देख महा व्याकुलहो अन्य शत्रुगण अपने महा अनिष्टकी सम्भावना कर डर गये।

महाराज स्वरूपसिहके साथ धाभाईके विवादका ऐसा कोई भी कारण नही था जिसके लिये धाभाई उनका प्राणले, किन्तु जालिमसिहकी कूटनीतिसे युद्ध होकर धाभाईने एकदिन बृजविलास नामक राज उद्यानमे महाराज स्वरूपसिहपर आक्रमण किया, और अपनी तलवारसे उनका शिरकाट डाला । जालिमसिहने धाभाई पर

स्वरूपसिहको मारडालनेके अपराधमे वड़ा क्रोध प्रकाश किया और उसी अपराधमे उसको कैद्कर अन्तमे हाडौतीसे एक साथ ही निकाल दिया । जालिमसिहने इस भाँति अपने मनका भाव प्रगट किया कि जिससे यह जाना गया कि वह इस हत्याकाण्डमे सम्मिलित नही थे. यही नही वरन उनकी सलाह भी नही थी, किन्तु पापकर्म किसी प्रकारसे भी छिप नही सक्ता अतएव शीघ्र ही यथार्थ वात प्रकाशित होगई । धाभाई जशकर्णने निकल कर अपमानके होनेसे जयपुरमे प्राण त्यागे । अन्तमे प्रगट हुआ कि जालिमसिहने ही धाभाईसे कहा था कि महाराज स्वरूपसिह राजसिंहासन पर अपना अधिकार किया चाहते है इसीसे वह विरोध करते है और अप्राप्त व्यवहार महाराज उमेद्सिहके मारडालनेका उनका मुख्य उद्देश है । धाभाईने इसकी विशेष खोज न करके जालिमसिहकी उसी वातको सत्य मान महाराज स्वरूपसिहको राज्यका अभिलाषी जान उनका वध कर डाला । इस विषयमे कुछ भी हो जालिमसिहने जिस नियतसे वह वियोगान्त अभिनय किया शीघ्र उनका वह उद्देश पूरा हुआ । उक्त हत्याकाण्डके पीछे ही कोटेके जो सामन्त जालिमसिहके विरोधी थे उन सवने विरोधको छोडदिया उसी समय कोटेके वहुतसे सामन्त और धनियोने अपने प्राणभयसे जन्मभूमि एव अपने २ अधिकारी प्रदेशोको छोड़ कर दूसरे राज्योमे जाकर वास किया । जालिम-सिहने उन सामन्तोके भाग जानेमे कोई वाधा नही दी, वरन भागनेके समय यह कह-गये कि इसका दंड हम जालिमसिहको अवश्य देगे । वह भागेहुए सामन्त जयपुर और जोधपुरमे जाकर वहॉके अधीश्वरोका आश्रय लेने लगे, और जाकर उन्होने रज-वाडेके अन्य राजाओसे मिलकर जालिमसिहके अन्याय और अत्याचारोको रोकनेके लिये तथा जालिमसिहकी सामर्थ्यको रोकनेके लिये विशेष चेष्टाकी, परन्तु उसी समयमे महा-राष्ट्रोके दलने रजवाडेके समस्त राज्योमे जाकर जिस प्रकारके उपद्रव करने प्रारभ किये थे, उससे कोई राजा किसी प्रकार भी अपनी इच्छानुसार जालिमसिहके विरुद्धमे जानेके लिये तैयार न हुए । इधर चतुर जालिमसिहने सुअवसर पाकर जयपुर और जोधपुर इत्यादि जिन राजाओके यहॉ जाकर कोटेके सामन्तोने आश्रय लिया था उनसे कहला भेजा कि यह सामन्त कोटेराज्यके विपक्षी विद्रोही है इस कारण विद्रोहियोको आश्रय देना किसी प्रकार उचित नही है । ऐसा होते ही वह भागेहुए सामन्त सव निराश हो गये । किसी २ सामन्तने तो विदेशमे जाकर अत्यन्त दुःखितहो प्राण त्याग कर दिये और किसी २ ने विदेशी राजाओके आश्रयमे रहकर उनके अन्नसे जीवन धारण करनेकी अपेक्षा अपने देशमे चला आना अच्छा माना । तव उन्होने जालिमसिहसे कहला भेजा कि हम लोगोको जन्मभूमिमे आनेका अधिकार दीजिये । जालिमसिहने उनकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेमे असम्मति प्रगट न की, परन्तु उनके कोटे राज्यमे आते ही अपने अधीश्वर और जन्मभूमिके छोड़नेसे उनकी गणना विद्रोहियोमे की गई, जिस समय सामन्त भाग गये थे उस समय उनके समस्त अधिकारी देश जालिमसिहने अपने अधि-कारमे करलिये थे, इसीसे इस समय उनको वह समस्त देश नही दिये, और दयाके वशीभूत हो उनके जीवन धारण करनेके लिये सामान्य भूखड दिये गये । इस प्रकारसे

जालिमसिहने कोटेराज्यके सर्वमय कर्त्तापद पर अधिकार कर सबसे पहिले इस प्रकारसे असीम साहस कर कूटनीति और चातुरी जालका विस्तार कर शत्रुओंके चक्रको भेदन कर अपनी प्रवलताका विस्तार कर लिया, परन्तु उनके इस राजनैतिक अभिनयसे कोटेकी उद्धत सामन्त समाज किसी प्रकार भी नम्र नही हुई वरन यह सब उपद्रव जालिमसिहके ही है यह जान कर वह सर्वदा शंकित भावसे रहने लगे। परन्तु शीघ्र ही फिर उनके मनका भाव बदल गया।

जालिमसिहके विरुद्धमे जो दूसरी वार षड्यन्त्रजालका विस्तार हुआ वह पहिलेकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल और दुर्भेद्य था। आथून देशके सामन्त देवसिहने उस षड्यत्रीदलके प्रधाननेतापदको ग्रहण किया। वह सामन्त छ. हजार रुपयेकी आमदनीवाले देशके अधीश्वर थे। देवसिह जालिमसिहकी सामर्थ्यको देख कर उनके विरुद्धमे शीघ्र ही शत्रु होकर खडे हुए। इन्होने अपना बहुतसा रुपया खर्च करके किलेको भलीभाँतिसे सजाया था जो कि समस्त सामन्त जालिमसिहके ऊपर महा विरक्त हुए थे, वह शीघ्र ही आकर देवसिहके साथ मिले। चतुर जालिमसिहने सब सामन्तोको एक स्थानपर खड़ा देखकर जाना कि केवल राजकी सेनासे उनको परास्त करना सहज वात नही है, अतएव दूसरे उपायसे इस विपत्तिको हटाना चाहिये। इस समय दिल्लीके बादशाहका प्रभाव लोप हो जानेसे चारो ओर अशान्ति फैली हुई थी। मरहठोके दल अपने अभ्युदयके साथ ही साथ फरासीसी पठानजातिका एक वीर एक सेनाका दल लेकर राज्यके किसी प्रदेश पर आक्रमण कर सर्वस्व लूटलेते और कभी किसी दो राज्योमे झगड़ा होनेसे एकके पक्षको लेकर द्रव्यसंग्रह करलेते थे। मौसेज नामक एक श्रेणीके एक मनुष्य नेताको जालिमसिहने बुलाकर उसको आथूनके किलेपर अधिकार करनेके लिये और विद्रोही सामन्तोके दमन करनेको नियुक्त किया। मोसेजने द्रव्यके लोभसे शीघ्र ही आथूनके किलेको घेर लिया। वहाँके सामन्त गणोने किलेमेसे निकलकर शत्रुओपर आक्रमण किया, परन्तु जय लाभ नही करसके। इसी प्रकारसे कई महीने तक मोसेजके प्रबल पराक्रमसे किलेके घिरे रहनेके कारण किलेमे जितना भोजनका सामान था वह सब चुकगया तब सब सामन्त मिलकर प्राण वचानेके लिये चेष्टा करने लगे। जालिमसिहकी सम्मतिसे मोसेजने घिरेहुए सामन्तोकी प्रार्थनासे उनको किलेमेसे सुखपूर्वक वाहर निकलजाने दिया। उन सामन्तोने हताश होकर अपनी सेनाके साथ कोटा राज्यको छोड़ दूसरे राज्यमे प्रवेश किया। इस भांति चतुर जालिमसिहने इस दूसरे षड्यन्त्रको भी छिन्नभिन्न करादिया। कोटेके सब सामन्तोके चलेजाने पर जालिमसिहने उनके अधिकारी प्रदेशोको कोटेराज्यमे मिला लिया। विरोधियोके प्रधान नेता देवसिहने विदेशमे जाकर दुःखसे प्राण छोड दिये। देवसिहके पुत्रने कई वर्षोंके पीछे विदेशसे आकर अन्तमे जालिमसिहसे अपनेको निरपराधी वता आश्रय पानेकी प्रार्थना करी, तब जालिमसिंहने उसपर दया

(१) उर्दू तर्जुमेमें ६० हजार।

प्रकाश कर उसको पैतृक सब प्रदेश तो नहीं दिये परन्तु वार्षिक पन्द्रह हजार रुपयेकी आमदनी वाला नामोलिया प्रदेश देदिया। बीचके और नीचे दरजेके जो सामन्त विद्रोही हुए थे, जालिमसिहने उनके प्रति क्षमा प्रकाश की। और कोटे राज्यमे उन्हे पुन. वसनेकी आज्ञा तो दी, परन्तु उनकी शक्ति इतनी घटा दी कि जिसमे वह फिर किसी प्रकारका अनिष्ट न करसकें, इन दोनो घटनाओंसे जान पड़ता है कि जालिमसिह कैसे चतुर और राजनीतिके जाननेवाले थे, और किस प्रकारसे उन्होने कोटे राज्यमे अपना अखड प्रताप फैलाया था।

उपरोक्त प्रकारसे उभरे हुए शत्रुदलके विरोधमे समर और उनके षड्यन्त्रके भेदन करनेमे एवं अपनी शक्तिके फैलानेमे जालिमसिहका अधिक समय लगा। जालिमसिहने मेवाड़के महाराणाके वशकी दूरवाली एक शाखाकी कन्यासे विवाह किया था। उस कन्याके गर्भसे जालिमसिंहके पुत्र एवं उत्तराधिकारी माधोसिह उत्पन्न हुए। जालिमसिहने कोटेके शासन करते समय चारोओरकी विपत्तियोसे घिरे रहनेपर भी मेवाड़के दु समयमे दृष्टि रखते हुए मेवाड़की मगलकामनाका सदा ध्यान रक्खा था। संवत् १८४७ सन(१७९१ ई०)मे जिस उद्देशसे जालिमसिहने कोटेकी अपेक्षा मेवाडके स्वार्थ साधन और उन्नतिका विशेष व्रत किया था, वह पाठक मेवाड़के इतिहासमे पढ चुके है। जालिमसिहने अपने राजनैतिक स्वार्थके लिये कोटेकी सेना सामन्त और राजभण्डारको जिस मेवाड़के लिये वृथा नियुक्त करके कोटेके अलक्षमे अनिष्ट साधन किया, पाठक उसको भी पढ़चुके है। सम्वत् १८४७ से १८५६ तक जालिमसिहने जो राजनैतिक अभिनय किया वह मेवाडके उक्त इतिहासमे लिखा जाचुका है, इस कारण हम यहाँपर उसको फिर लिखना उचित नही समझते।

सवत् १८५६ मे कोटेके सामन्तगणोने जालिमसिहके उस शासन और स्वेच्छाचारको न सहकर फिर उनके मारनेके लिये पड्यन्त्र किया। जालिमसिहके जीवनरूपी दीपकके बुझानेके लिये अनेक समय पर गुप्तरीतिसे वहुतसी चेष्टाएँ हुई, किन्तु जालिमसिहके सदा सतर्क रहनेके कारण मारनेवालोकी आशा किसी समय भी पूरी न हुई। संवत् १८३३ मे आथूनके सामन्त जालिमसिहके विरोधमे हुए, अन्तमे उनको देशसे निकाल देनेके पीछे फिर २० वर्पतक किसीने जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा नही की। वीस वर्पके पीछे संवत् १८५६ मे दस सहस्रकी आयुवाले मोसेन देशके सामन्त वहादुरसिहने जालिमसिहके विरोधमे पड्यन्त्र रचा।जालिमसिहके प्रवल प्रतापसे कोटेके जिन सामन्तोकी सव सम्पत्ति छीनी गई थी अव वह सव सामन्त वहादुरसिहके साथ मिल गये। उन्होने वडे गुप्तभावसे पड्यन्त्रको चलाया, कि जिससे उसकी पवनको भी कोई स्पर्श न करसकै, जिस दिन उन्होने अपने उस षड्यन्त्रके कार्यको पूरा करनेका संकल्प किया, उस दिन दोपहरके समय केवल जालिमसिहको उसकी खबर मिल गई। षड्यन्त्र रचनेवाले किसर को मारेंगे, अति गुप्तभावसे उनके नामोकी एक सूची बनाली। उसमे सपरिवार जालिमसिहको,उनके मित्र और उपदेष्टा पण्डित लालाजीको मारडालनेके

सम्बन्धमें लिखा था। षड्यन्त्री गणोका विचार था कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमे बैठे हो उसी समय सबके सामने यह हत्याकाण्ड हो। कहाजाता है कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमे बैठे थे उसी समय उन्होने षड्यन्त्र रचनेवालोके गुप्तभेदको पाकर क्षणमात्रमे ही अपनी रक्षाके लिये उपाय करलिया। जो पहरेदार उनके शरीरके रक्षक थे उन सबोको हटाकर उन्होने "पायेगा" नामक प्रबल पराक्रमी अश्वारोही सेनाको बुलाकर अपनी रक्षाके लिये नियुक्त किया। अतएव हत्याकी अभिलाषासे षड्यन्त्र रचनेवालेने जिस समय दरबारपर आक्रमण किया उसी समय वह दरबारमे शस्त्रधारी घुड़सवार-सेना देखकर हताश होगये। तब घुड़सवारोने शीघ्र ही उनपर आक्रमण किया, और वह भाग निकले, तिसपर भी बहुतोको पकड लिया और बहुत भाग गये। षड्यन्त्रके नेता बहादुरसिंहने भागकर चम्बल नदीके किनारे पाटननामक स्थानके बीच हाड़ा-जातिके कुलदेव केशवरायके मंदिरमे शरण ली। उन्होने विचारा कि पुरानी रीतिके अनुसार जब केशवरायके मंदिरमे आश्रयलेता हूँ तब जालिमसिंह कभी बूँदीराजके बीच इस मंदिरमे बलपूर्वक आकर मुझे नही पकड़ेगा। किन्तु उनकी वह आशा शीघ्र ही भ्रान्तिके रूपमें बदल गई। उग्र प्रतापी जालिमने सरलतासे मंदिरकी पवित्र प्रथाको नष्ट कर उसमेंसे बहादुरसिंहको पकडवाकर मरवाडाला।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहके अनुकूल पक्षको लेनेवालोका कथन है कि जालिमसिंहने अपनी रक्षा वा अपने स्वार्थके लिये बहादुरसिंहको नही मारा, उनके हाथमे जो गुरुभार अर्पित था उस गुरुभारको पालन करने अर्थात् कोटाके महाराव उमेदसिंहके स्वार्थ और जीवनकी रक्षाके लिये ही उन्होने इस कठोर व्यवहारको किया था। षड्यन्त्र करने-वालोका यह आशय था कि हत्याकाण्डका अभिनय करके महाराव उमेदसिंहको सिंहासनसे हटाकर महाराजके एक छोटे भाईको कोटेके राजसिंहासन पर बैठा दे। यह बात कहाँ। सत्य है, इसका विशेष प्रमाण नहीं मिलता। किन्तु जालिमसिंहने जैसे कठोर शासनके दंडको चलाकर सामन्तोके हृदयको चूर्ण किया था और महाराव उमेदसिंहको जैसे अपना खिलौना बनाया था उससे यह बात सत्य कही जासक्ती है। इस समय कोटाके राजपरिवारके बीच महाराव उमेदसिंहके चचा राजसिंह, और दोनो भाई गोवर्द्धन सिंह एवं गोपालसिंह जीते थे। आथूनेके सामन्त गण जिस समय महा षड्यन्त्रके जालको फैला कर जालिमसिंहके विरोधमे खडे हुए थे, उसी समय गोवर्द्धन और गोपालसिंह सिंहासन पानेकी इच्छासे उस षड्यन्त्रमे लिप्त थे, इस बातके प्रकाश होनेसे जालिमसिंहने तुरन्त ही उन दोनो भाइयोको भी कैद करलिया। बडे गोवर्द्धन दशवर्षतक कैदमे रहकर परलोक सिधारे, और छोटे गोपाल भी बहुत दिनोतक कैदमे रहकर परलोकवासी हुए। महारावके चचा राजसिंह वृद्ध होकर बहुत दिनोतक जीते रहे किन्तु राजनैतिक किसी षड्यन्त्रमे, किसी गोलयोगमे युक्त नही होते थे, इसीसे जालिमसिंह उनकी ओर नेत्र उठाकर नही देख सक्ते थे। राजसिंह नगरके बीच देव मन्दिरकी श्रेणीके बाहर कभी नही जाते थे।

कर्नल टाड् लिखते है कि "जालिमसिहकी शक्तिको हटाने और उनके जीवनको नष्ट करनेके लिये अनेक प्रकारके उपाय उनके विरोधियोने किये। सब मिलाकर अठारह वार उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र रचे गये, किन्तु प्रत्येक वारमे जालिमसिहके बुद्धिवलने विरोधियोके उद्देशको व्यर्थ कर दिया। कहा जाता है कि प्रकाशमे और गुप्तरीतिसे वलसे, विपसे और अस्त्र शस्त्र आदिसे उनके मारनेके उपाय रचे गये। किन्तु राजमहलोमे राजपूतोकी स्त्रियोने जो जालिमसिहके वध करनेकी अभिलाषा की थी, वह षड्यन्त्र वड़ा भयानक था। जालिमसिंहके रूप सौन्दर्य्यपर मोहित राजमहलमे रहनेवाली एक रमणी यदि अपनी चतुराईसे सहायता न करती तो जालिसिह अपनी रक्षा उस समय नही करसते थे। एक समय की बात है, छोटे राजकुमारकी माताने जालिमसिहको राजमहलमे वुलाया। जालिमसिह राजमाताके वुलानेसे उनके महलके समीपवाले घरमे पहुँचे, इस समय वहुतसी राजपूत रमणीगणोने नंगीतलवार लिये अनेक अस्त्र शस्त्रोसे सजीहुई अवस्थामे जालिमसिह पर आक्रमण किया। और शीघ्र ही जालिमसिहको वॉधकर कैद कर लिया। राजपूत रमणी कैसी वीर नारी है अस्त्र चलानेमे कैसी चतुर है, कैसे साहस और वलशालिनी है जालिमसिह इसको भलीभॉति जानते थे। अतएव उन शस्त्रधारिणी महाशक्तियोसे जालिमसिह वॅध गये, और उन्होने जाना कि अव किसी भॉतिसे भी यहॉसे छुटकारा नहीं मिल सक्ता। सौभाग्यसे जालिमसिंहको एक साथ न मारा और जालिमसिंहसे उनके प्रधान २ जीवनचरित्रोको पूँछने लगी। उनकी यही इच्छा थी कि जालिमको प्रश्नोके उत्तर देते समय अचानक मारडालेगी। वीरवालागण जालिससे एक२ करके पूँछती थी, इसी समय प्रधानरानीकी अत्यन्त वलशालिनी प्रधानदासीने महाकालभैरवीकी मूर्त्तिसे आकर जालिमसिहको अनेक तिरस्कार और कटुवचनोसे धिक्कार कर वलके साथ उन सव वीरनारियोको क्रमसे निकाल दिया। जालिमसिहने उस महा विपत्तिसे उद्धार पाया और जाना कि प्रधानदासी यदि इस चतुराईसे मेरी सहायता न करती तो अवश्य ही आज प्राण त्यागने पड़ते।

"इतिहास जाननेवाले टाड् साहवने लिखा है कि जालिमसिहके विरोधमे जैसे क्रमानुसार षड्यन्त्र रचे गये उसमे शत्रुओको विफलमनोरथ कर यदि अन्य मनुष्य होता तो निश्चय ही उन्मत्त होकर प्रत्येक शत्रुसे वदला लेता, किन्तु जालिमसिहने कभी किसीके साथ अपने वदला लेनेकी इच्छा नही की। यद्यपि वह रात्रिके समय एक वडे मंदिरसे शयन करते थे परन्तु कभी अप्रयोजनीय भयजालमे नही फॅसे। अपनेको वह सभी प्रकारसे छोटा मानते थे एवं सरलतासे इस बातको जान लेते थे कि कौन उनका स्वार्थ नष्ट करनेकी इच्छा रखता है, अतएव वह पहिले ही सावधान हो जाते थे। उनके अधिकारमे पुलिस अर्थात् शान्तिरक्षा विभाग इतना चतुर था कि अनेक स्थानोमे वैसी पुलिस नहीं थी। वह कर्म्मचारियोको उचित तनख्वाह देते और काम करनेवालोको वड़ा पुरस्कार देते थे। वह अपने सव विभागोके ऊपर वड़ी दृष्टि रखते थे। किसी पर भी वह पूर्ण विश्वास नही करते थे। वह अपनी चतुरता,

नीतिज्ञता और विलक्षणताके साथ राज्यके सब विभागोमे दृष्टि रखते थे, इसीसे चारोओर अत्याचार, उपद्रव, राजनैतिक गोलयोग, षड्यन्त्र और बड़े २ युद्ध होनेपर भी उन्होने आधी सदीतक अपने प्रबल प्रतापसे और अतुल शक्तिसे राजकार्यको चलाया। ” कर्नल टाड्की यह युक्ति सत्य पूर्ण इतिहासको प्रमाणित करती है।

तीसरा अध्याय ३.

जालिमसिंहकी शासननीति–मेवाड़के सम्बन्धमे जालिमसिंहके राजनैतिक गुप्त उद्देश–मेवाड़के कल्याणके लिये जालिमसिंहसे कोटेका स्वार्थ नाश होना–जालिमसिंहके अत्याचार–जालिमसिंहका राजमहलोको छोड राज्यमे घमना–वस्त्रावासमे रहना–नवीन शिक्षित सेनाको तैयार करना–सेनाके दलको विलायती अस्त्र देना, और शिक्षा देना–कोटेकी राजप्रणालीका सस्कार–पटैलकी रीति–करलेनेकी रीतिको बदलना–पटैलोको पुन पद मिलना–पटैल समिति–उनके शासनकी शक्ति–बोहारागण–नूतनपटैलोसे किसानोको कष्ट पहुँचना–पटैलोको कैद करके उनको अर्थ दंड देना एवं पदसे हटाकर पटैलकी रीतिको तोड़ देना।

हम कोटाराज्यके जिस समयके इतिहासको वर्णन करते है वास्तवमे महाराज राणा जालिमसिह ही उस समय कोटेके स्वामी थे, और महाराव उमेदसिह उनके खेलके खिलौनेस्वरूप सिहासन पर विराजमान थे। जालिमसिहके राजनैतिक अभिनयका कुछ विवरण हम पहिले अध्यायमे लिख आये है, उन्होने शासनकर्त्ता एवं विधानकर्त्ताके रूपसे किस प्रकार अभिनय किया अब उसका ही वर्णन करते है। जालिमसिहने कोटाराज्यके ऊपर अपनी महान् राजनैतिक ऊची अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये कोटाराज्यकी धन-सम्पत्ति और सेनाकी शान्ति सभीको नष्ट किया। सवत् १८२१ मे जिस समय मेवाडके महाराणाके साथ जालिमसिहकी वातचीत हुई उसी समयसे सवत् १८५६ तक राज-राणा जालिमसिहने कोटाराज्यपर जिस भॉति अपना प्रताप फैला रक्खा था, मेवाड-राज्यके ऊपर भी उसी प्रकारसे अपना प्रबल प्रताप और अधिकार बढानेके लिये वह दृढ चेष्टा करते थे। उन्होने उस महान् नैतिक आशाको पूरा करनेके लिये कोटाराज्यका सर्वनाश कर किसानोको खरीदे हुए दासकी समान करडाला। सवत् १८४० मे अत्याचार और पीड़ा भयङ्कर रूपसे बढ़गई, सब कुछ लेकर भी किसानोपर जालिमसिहने उनकी आमदनीके ऊपर जो कर बांध रक्खा था उसके देनेमे स्वभावसे ही किसान असमर्थ थे। तिस पर जालिमसिहके नौकर जब कर वसूल करनेजाते और किसानो से न पाते तो उनके हल, गऊ आदि उस करके नामसे ले आते थे, इस कारण किसान लोग एक साथ अपने जीवनकी आशा छोड़ चुके थे। बहुतसे किसान

भूखों मरने लगे, कोई २ भागगये किन्तु उस समय रजवाड़ेके चारोंओर विपत्तियोंका सोता वहनेमे वह किसका आश्रय ले ? राजराणा जालिमसिंहने उन किसानोंके जो पिताके क्षेत्र थे, उनको और हल इत्यादि खेती करनेकी सामग्री और बैल आदि पशुओंको छीन लिया था, इससे वहुतसे किसान दूसरा उपाय न देखकर कुछ सामान्य वेतन लेकर दासस्वरूपसे अपने पासके पहिले ही खेतोंमे उन हल आदिसे खेती करनेमे सम्मत हुए ! कोटेके प्रायः सभी किसानोंके भाग्यमे इस प्रकारका शोचनीय व्यापार हुआ, इस कारण राजराणा जालिमसिंहने महाराव राजा उमेदसिंहकी ओरसे कोटेराज्यके समस्त कृषि क्षेत्रोंके अधीश्वर होकर जो पृथ्वी अवतक परित्यक्त भावसे पड़ी थी उस सबमे कृषिकार्य करना प्रारंभ करदिया और आप स्वयं कृषकपति पदपर प्रतिष्ठित हुए ।

यद्यपि जालिमसिंह मेवाडराज्य पर आधिपत्य विस्तार करनेके लिये वरावर कई वर्षसे चेष्टा करते आये थे, और उसी उद्देशको पूर्ण करनेमे उन्होने कोटेका सर्वनाश किया था, परन्तु अंतमे एक भयंकर घटनाके होनेसे उनकी उस ऊंची अभिलाषाकी जडमे भयंकर आघात लगा । महाराष्ट्र नेता इंगलिया परिवारके साथ जालिमसिंहकी अधिक मित्रता थी । उसी इंगलियाके वंशधर वालाराव मेवाड़के महाराणाके द्वारा बंदी होकर उदयपुरके कारागारमे रक्खे गये, जालिमसिंह उन्हीं झालारावका उद्धार करनेके लिये गये, उसीसे महाराणाका कोप इनके ऊपर हुआ इस कारणसे उन्होने महाराणाको अपने हस्तगत करके मेवाड़मे अपनी प्रवलता विस्तार करनेके अपने हृदयरूपी वगीचेमे जिस आशाके वृक्षको यत्नरूपी जल सींचकर वढ़ाया था, वह एकवारही चिरकालके लिये जडसे उखड़ गया। तवतो जालिमसिंहको चैतन्यता हुई, वह यह समझ गये कि अपने स्वार्थ-साधन करनेके लिये काल्पनिक भ्रान्त आशाको पूर्ण करनेके लिये उन्होने अन्याय और अकारणसे कोटेकी प्रजा और कोटेके अधीश्वरका सर्वनाश किया है । चतुर राजनीतिज्ञ जालिमसिंह सावधान हो पूर्वोक्त हानिको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही नवीन अनुष्ठान करनेमे प्रवृत्त हुए ।

संवत् १८५६ मे मोसेनके सामन्तके द्वारा षड्यन्त्र जालका विस्तार होनेके पूर्वतक जालिमसिंहने किलेके महलमे निवास किया था परन्तु संवत् १८६० सन् (१८०३–४ ई०) मे उन्होने झाला रावको छोडकर मेवाड़से लौटते ही उस महलमे निवास न कर अन्यत्र वास करनेकी इच्छा की । उस समय वृटिश सेनाने सम्मिलित महाराष्ट्र दलके विक्रम और प्रतापकी जड़मे विषम आघात किया और महाराष्ट्रोंके अधिकारी वहुतसे देशोंको छीन लिया, तव महाराष्ट्र शीघ्र ही दल भंग करके भारतवर्षके अनेक प्रान्तोंमे जाकर लूटमार और अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे । जालिमसिंह अपनी तीक्ष्णवुद्धिके वलसे समझ गये कि महाराष्ट्रोंके इस प्रकारके अत्याचारके समयमें राजधानीके महलोंमे न रहकर जिस स्थान पर उनके द्वारा आक्रमण होनेकी संभावना है उसके ही निकट रहना इस समय उचित है । उनके उस महलके छोड़नेमे

दो प्रधान उद्देश थे-पहिला तो कोटेकी राजस्वरीतिका संस्कार साधन, दूसरा महाराष्ट्रोंका दल कोटेराज्यके जिस प्रान्तमे जाकर पड़ैगा उसी प्रान्तमे जाना। यद्यपि हमारा यह विश्वास था कि बुद्धिमान जालिमसिंहने उन दोनों उद्देशोके वशवर्ती होकर महलको छोड़नेका आग्रह किया था, परन्तु कोटेके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि एक समय रात्रिमे महलके ऊपर बैठकर एक(पेचक) उल्लूने विकटस्वरसे चीत्कार किया था, जालिमसिहने राजधानीके समस्त गणक और ज्योतिपियोको बुलाकर पूछा, उन्होने गणना करके कहा कि "इस महलमे निवास करना अब किसी प्रकार भी उचित नहीं, अब इसमे निवास करनेसे आपके भविष्यतमे अमंगल और अनिष्ट होनेकी पूरी संभावना है।" जालिमसिहने ज्योतिषियोके उस उपदेशसे महलको छोड़ दिया, हाड़ाजातिके इतिहास लेखककी यही उक्ति है, परन्तु हमारा यह विश्वास नहीं है कि जालिमसिंहने महलके ऊपर कुलक्षण युक्त पेचकके चीत्कार करनेसे ही महलको छोड़दिया था।

गणकाचार्योंने महलको अपवित्रताके विषयमे एक वाक्य प्रकाशित किया था इससे राजराणा जालिमसिह शीघ्र ही महलको छोड़कर अनुचरोको साथले कोटेराज्यमे भ्रमण करने और इतने दिनोके पीछे उस राज्यमे अपनी राजनैतिक ऊची अभिलाषाको बांध रखनेमे प्रवृत्त हुए। जालिमसिह भ्रमण करनेके समय भलीभांतिसे जानगये, और उन्होने स्वयं अपने नेत्रोंसे देख लिया अपने स्वार्थसाधनके लिये मेवाडके निमित्त जो कुछ अनुष्ठान किया था उससे कोटेराज्यका किस प्रकारका अनिष्ट साधन हुआ और प्रजा किस प्रकारकी शोचनीयदशामे पडी है, वह और भी जानगये कि उनकी कठोर राजनीतिके दोषसे कोटेराज्यके तीन अंशोमेसे एक एक अंशकी बराबर किसान एकबार ही सर्वध्वांत हो गये है, तथा और भी दो अंश एकबार ही भरोसाहीन और घोररूपसे असतुष्ट हुए है। इस समय कोटेके राजस्वकी अवस्था भी जैसी शोचनीय होगई है उससे भी उनको अपने पूर्वानुष्ठित नीतिके कुफलका भलीभांतिसे परिचय मिलगया। इस समय वैश्य और महाजन समाजमे उसकी प्रतिपत्ति कुछ भी नही थी, कोई वैश्य वा महाजन उनकी बात अथवा उनके हस्ताक्षरकी हुंडीपर विश्वास नहीं करता था। इतने दिन कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा किसी विषय पर कुछ भी अभियोग उपस्थित करती थी कारण यही था कि वह उसपर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे, जिस उपायसे हो धनका संग्रह करनाही उनका मुख्य उद्देश था, इस कारण वह किसीकी कुछ सुनते न थे, प्रजाके अतिरिक्त कर देनेमे असमर्थ होते ही यह उनका सर्वस्व छीन लेते थे। परन्तु शीघ्र ही प्रकाशित होगया कि कठोर और अन्याय राजनीतिकी प्रबलताके निवारण न करने पर समयपर राज्यकी विपत्तिके समयमे प्रजासे सहायता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन होगया है, इस कारण ऊची प्रतिभाशाली जालिमसिंह शीघ्रही उस प्रबल राजनैतिक रोगका प्रतिकार साधन करनेके लिये अनेक प्रकारकी औषधियोंका अविष्कार करनेमें प्रवृत्त हुए। वह सबसे पहिले गागरौलके अभेद्य किलेके निकट एक स्थायी डेरा स्थापन करके वहाँ रहने लगे, किसी महलमे न रहकर उन्होंने केवल उसी डेरेके ऊपर एक सामान्य शामियाना

बना लिया। इनको इस भांति सामान्य भावसे रहता हुआ देखकर अन्यान्य सम्भ्रान्त सामन्त और राजपुरुष भी उसी भावसे रहने लगे। उन्हीं सामान्य डेरोमे समस्त राज-कार्य भी होने लगे।

चतुर जालिमसिहने जिस स्थानपर डेरे स्थापन किये थे वह स्थान भी उनके राज-नीतिक उद्देश साधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे उपयुक्त था। दक्षिणाञ्चलसे कोटेराज्यमे जानेके लिये जो दो प्रधानमार्ग है उन स्थानोके वह ठीक बीचमे था, और दूसरी ओर कोटेके अधीनके जिन देशोमे कठिन भील जाति वास करती थी वह स्थान भी निकटही थे, शेरगढ़ और गागरौल नामक दो प्रबल किलेके कुछही दूर होनेसे उनको अपनी रक्षा करनेका विशेष सुभीता होगया था। जालिमसिहने अपनी समस्त धनसम्पत्ति और सामरिक उपकरण शेषोक्त किलेमे रख लिये और अपनी सामर्थ्यके अनुसार दोनो किलोंको अभेद्य करनेमे भी कसर नही की। इन्होने शीघ्र ही एक नवीन सेनाकी सृष्टि करके अंग्रेजी रीतिके अनुसार उनको शिक्षादान और अस्त्रदान करके एक एक सेनादलको एक एक जन "कप्तान की उपाधिकारी सैनिक पुरुषोके अधीनमे रक्खा। अन्य पक्षमे "राज-पल्टन" नामक राजकीय सेनाको भी उन्होने इस प्रकारसे शिक्षा दी कि उसने अनेक युद्धोंमें विशेष वीरता और असीम साहस प्रकाश किया। जालिमसिहने सेनादलको इस भावसे शिक्षित और सजाकर रक्खा कि वह दल आज्ञा पाते ही एक मुहूर्त्तमे जिस प्रान्तमे शत्रु आते उसी प्रान्तमे जाकर युद्ध उपस्थित करसकता था, इस भावसे सेना तैयार रहती थी। राजधानीमे राजमहलोके भीतर रहनेसे इसके सम्बन्धमे अधिक विलम्ब होनेकी जो सभावना थी, इस स्थान पर वह सब विलम्बके कारण भी दूर होगये।

जालिमसिहको अपने जीवनके इस समयतक राजनैतिक षड्यन्त्ररूपी समुद्रकी प्रबल तरंगोमे निमज्जित होनेसे भूमिकी अवस्थाके सम्बन्धमे और राजस्वके सम्बन्धमे कोई विशेष अभिज्ञता प्राप्त करनेका अवसर नही मिला था। वह अबतक चिरकालसे प्रचलितरीतिके अनुसार राजस्वक बदलेमे क्षेत्रोत्पन्न द्रव्य निर्द्धारित परिमाणके अनुसार ग्रहण करते आये थे। परन्तु वह इस समय भली भाँतिसे जानगये कि यह रीति सभी अंशोंमे असुविधा जनक थी, एक ओर इस रीतिसे राजस्व संग्रह करनेवालोने जिस प्रकार प्रजाके ऊपर अत्याचार और उपद्रव किये थे, अधिकतासे द्रव्यको ग्रहण करके अपने उदरको पूरण किया था, दूसरी ओर किसी २ प्रजाने भी इसी कारणसे राज प्राप्य राजस्वदानके समयमें भी वंचना की थी, इसी रीतिको राजाके पक्षमे सम्पूर्ण अहितकारी जान कर उसे केवल कर संग्रह करनेवाले पटेलोक उदर पूर्णका उपायस्वरूप देखकर वह शीघ्र ही उन प्रजाकी अनिष्ट मूलक तथा राजकी क्षति मूलकरीतिको एकबार ही दूर करनेमे प्रवृत्त हुए।

राजमंत्री जालिमसिहने सबसे पहिले बटाई अर्थात् राजस्व कर और शुल्कके बदलेमें क्षेत्रसे उत्पन्न हुए द्रव्य ग्रहणका समस्त तथ्य, एवं विवरण संग्रह किया, और किस उपायसे पटेलोने प्रजाके ऊपर अत्याचार करके अपना पेट भरा था, उसको अत्यन्त गुप्तभावसे

जानकर कोटेराज्यके समस्त देशके पटेलोको अपने यहॉ बुला भेजा। पटेलोके आते ही उन्होने प्रत्येक पटेलको उनके अधीनमे कितनी भूमि है? कितने किसान कर आदि देते है? किस प्रकारके उपायसे कर लिया जाता है, और उनकी निजकी अवस्था कैसी है? आमदनी कितनी है? संगत कहॉतक है? इसको लिखकर सरलतासे जानलिया कि समस्त राज्यमे कितने किसान और कितने कृषिक्षेत्र है, और कितना राजस्व संग्रह होता है, जालिमसिह समस्त ज्ञातव्य विवरणको संग्रह करके देशमे भ्रमण करनेके लिये बाहर हुए। भ्रमणकरनेके समयमे प्रत्येक ग्राम चकबन्दी अर्थात् भूमिका परिमाण निर्द्धारण करके उस भूमिमे किस २ नदीसे खेती होती है, और किस २ भूमिकी खेती वर्षाके ऊपर निर्भर करती है, किस २ भूमिमे खेती सरलतासे होती है, किस २ भूमिमे खेती कठिनतासे होती है, और कौन २ भूमि पहाड़ी है तथा किस २ भूमिमे पशु आदि चराये जाते है उसको वह स्वतन्त्र २ रूपसे विभक्त करने लगे। उन्होने पिछले कई वर्षोका हिसाब देखकर भूमिकी सब आमदनी कितनी होती थी उसका अनुमानसे एक २ का हिसाब कर दिया। उसके पीछे पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार और राजस्वके बदलेमे प्रजासे धान्यादि उत्पन्न अनाज नही लिया जायगा सभीको उसके बदलेमे नगदरुपया देना होगा यह निर्धारण किया।

नीतिविशारद जालिमसिहने इस प्रकारसे समस्त भूमिका कर नियत करके अन्तमे कर संग्राहक पटैलगणोको परिश्रम स्वरूपसे प्रत्येक पटेलके अधीनमे जितने बीघे जमीन होगी पटेलको उस जमीनके प्रत्येक बीघेके ऊपर डेढ़ आना कर देना होगा इस प्रकारका नियम निश्चय करदिया, परन्तु पटेलोको यह भी विदित कर दिया कि उनसे अपनी अधिकारी भूमिका साधारण प्रजाके कर देनेकी अपेक्षा बहुत कम कर लिया गया है। तब जो कोई पटेल प्रजासे प्राप्त उस डेढ़ आनेके अतिरिक्त और कुछ ग्रहण करेगा तो उसके अधिकारकी भूमि राजा अपने अधिकारमे कर लेगा। इस नवीन व्यवस्था के अनुसार किसी पटैलको वार्षिक५रुपये१५रु० सहस्र मुद्रा कर सग्रह करनेके परिश्रम स्वरूपसे मिलेगी। यह जाना जाता है कि पहिले पटेलोने फिर अपने २ पदपर अभिषिक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की और एक एक जनने जालिमसिहको नजरमे दश २ बीस २ इस प्रकार करके पचास हजार रुपया दिए, इस उपायसे जालिमसिहने नजरानामे दश लाख रुपया पाया और उसको अपने शून्यराजभण्डारमे मिला लिया।

उक्त प्रकारसे नवीन व्यवस्थाको देखकर किसानलोग आशा करने लगे, और इतने दिनोके पीछे समझा कि उनके सुखका सूर्य उदय होगया, कारण कि जो कर दिया जाता था उसके बढ़नेसे यह जान गये कि पटैलोके अत्याचार उत्पीड़न और अन्याय कर दानके हाथसे अब एकबार ही छुटकारा मिलेगा। परन्तु उनकी उस आशाके साथ ही साथ और एक भयंकर कारण दिखाई दिया। जालिमसिहने यह आज्ञा प्रचार कर दी, कि पहिले जिस भॉति किसी २ जमीन पर वर्षाके न होनेसे प्राय और किसी नैसर्गिक कारणसे फसलके न होनेसे उसका कर घटाया जाता

था; इस समय वह नहीं होगा, और जिस जमीनको किसानोने अबाद नहीं किया है पटैल उस जमीनको अन्य मनुष्यको नवीन व्यवस्थाके अनुसार खेती करनेके लिये देदे, यदि कोई उस जमीनको न ले तो वह जमीन जालिमसिंहकी खास जमीन रूपसे परिणत होगी और दूसरी ओर जालिमसिहने राजस्वके लेने न लेनेका समस्त भार एकमात्र पटैलोके ऊपर ही अर्पण किया।

इतने समय तक पटैल लोग किसानोके ऊपर इच्छानुसार व्यवहार करते, और केवल वार्षिक वा त्रिवार्षिक पटैलवराके नामसे कर देते थे, इस समय जालिमसिहने उस करको दूर करनेकी आज्ञा देदी, यदि पटैल प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करके कर देते हों तो राजदरवारसे इनको आश्रय देकर सम्मानित किया जायगा। इस प्रकारसे पटैल लोग ग्राम समारोहके प्रतिनिधि और प्रजाके रक्षकरूपसे राजकीय कर्मचारीरूपमे गिनेगये। इन पटैलोको सतुष्ट करके राज्यके अभ्यन्तरिक उत्कर्पसाधनमें उनको उत्साहित करना जालिमसिहका आभ्यान्तरिक उद्देश था, इस कारण इस नवीन व्यवस्थासे उस उद्देशके पूर्ण होनेके विशेष लक्षण प्रकाशित होने लगे। जालिम-सिहने नव नियोजित पटैलोको सम्मानस्वरूपमे सुवर्णके कंगन और पगड़ी देकर सबको यथास्थान पर भेज दिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिहने उन बहुतसे पटैलोमेंसे चार बुद्धि-मान चतुर पटैलोंको एक समितिके सदस्य पदपर नियुक्त करके अपने यहाँ रक्खा था। सबसे पहिले वह चारो पटैल एकमात्र राजकीय विषयक कार्योमें नियुक्त हुए, शीघ्र ही शान्तिरक्षा अर्थात् पुलिस विभागके कार्य भी उनके हाथमे सौपे गये, सबसे पीछे जालिमसिह राज्यके भीतरी विषयमे भी उनका परामर्श लेकर कार्य करते थे। ग्राम समाहार, नगर समूह और राजधानीके पंचोसे जिन विषयोकी मीमांसा होती थी जो सब विचार निष्पन्न होते थे, उन सबके पुनर्विचार होनेका भार तक उसी समितिके हाथमे अर्पण किया गया।

इस प्रकारसे कुछही समयमे उस समितिका राजस्व, विचार, और शान्तिरक्षा तीन विभागोपर अधिकार होगया। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "समस्त जगत्मे जालि-मसिहके शान्तिरक्षा विभागकी समान अन्य किसी राज्यमे शान्तिरक्षाका विभाग किसी समय भी नही था, कोटराज्यमें सभी जगह गुप्त चरित्र रूपी जालका विस्तारित था, और उस जालके बाहर कोई नही भाग सकता था।

यथार्थ पक्षमे उक्त नवनियोजित पटैलोने सर्व साधारण प्रजाके स्थानीयप्रभू होकर भली भाँतिसे जान लिया कि प्रजाके ऊपर अर्थ दंड वा बलपूर्वक प्रजासे जो कुछ लेते थे वह सरलतासे प्रकाशित होजायगा फिर प्रजाके ऊपर उत्पीड़न कैसे करें इस कारण वह अर्थ पिशाची पटैलगण अन्य उपायसे अपने उदर पूर्ण करनेके लिये उद्यत हुए, और विचारने लगे कि इस उपायके करनेसे उनके अत्याचार और उपद्रव शान्त नहीं होगे और कार्य सिद्ध होजायगा। रजवाड़ोमे वोहरानामक एक श्रेणीके

बनिये है, वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते है, पटैलोने अनेक चिन्ता करनेके पीछे उन्ही महाजनोसे कार्य-कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके बोहरोके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहबने लिखा है कि "बोहरागण किसानोके कृषिकार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गो कर्पण यन्त्र बीज आदि देते थे, और जबतक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तवतक सहायतादेते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोंके साथ बोहरोका यह नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही बोहराने जो कुछ धनकी सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्ही बोहरोसे किसानोको विशेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। विशेप करके बोहरागण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नही करते थे, और किसान भी बोहरोको असतुष्टके लिये चेष्टा नही करते थे, कारण कि बोहरा इस वातको भलीभॉतिसे जानते थे कि अत्या-चार और उत्पीड़न करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नही लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक बोहराको ठकानेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नही करेगा, इस कारण दोनो ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहे एक २ ग्रामका बोहरा सदा एक २ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके बोहरोंको छोडकर अन्य किसी ग्रामके बोहरोका आश्रय नही लेता था"।

राजराणा जालिमसिहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करने की रीति एक वार ही दूर करके उसके वदलेमे नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्वतक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोने इस समय देखा कि एकमात्र नियमित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिह सर्वनाश साधन करेगे, इस कारण वह सब लोग षड्यत्र करके उक्त बोहरोका नाश करके आप स्वयं महाजनोका कार्य करनेके लिये तैयार हुए। प्रकाश्य रूपसे बोहरोके कार्यमे बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होगे यह जानकर उन्होने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्बन किया। क्षेत्रमे धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोने धान्यको काटनेके लिये पटैलोके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, "पहिली पहल राजाका कर देदो पीछे धान्य काटना।" दीन किसान धान्य काटकर विना वेचेहुए कहॉसे रुपया दे? इस कारण वह महा विपत्तिमे पड़े और उन्होने जाकर बोहरोका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोने बोहरोसे जतादिया कि "जिन किसानो पर राजाका प्राप्त कर बाकी है तवतक वह किसानोको किसी प्रकार भी ऋण न देसकेगे।" बोहरागणने पटैलोके इस निपेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोको आगे ऋणदान नहीं किया,

इस कारण किसान अन्य उपाय न देखकर अंतमे उन पटैलोकी शरणागत हुए, किसानोने अपने २ उत्पन्नहुए धान्यके कितने ही अंश पटैलोके समीप बंधकर रक्खे। पटैलोका उद्देश भी यही था, वह अपनी २ इच्छानुसार उत्पन्न हुए धान्यका मूल्य निर्णय करके उनको राज्य प्राप्य कर मिलगया है इसकी रसीद देने लगे। दूसरी ओर किसानोने पटैलोके प्रस्तावके अनुसार इस मर्मके एक पत्रमे हस्ताक्षर करदिये, कि "राजप्राप्य कर देनेके लिये यथेच्छ द्रव्य न होनेसे और उस अर्थके अन्यत्र संग्रह करनेका कुछ सुभीता न होनेसे मै अपनी इच्छानुसार धान्यका उपयुक्त मूल्य निश्चय करके धान्यके कितने अंश अमुक पटैलके समीप रेहन रख कर रुपया लेता हूँ"।

किसानोसे इस प्रकारके भावमे लिखवा लेनेका कारण यह है कि जालिमसिह उक्त पत्रको देखकर समझ लेगे कि किसानोने अपनी २ इच्छानुसार पटैलोकी सहायता ग्रहणकी है, पटैलोने अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारका अत्याचार वा वल प्रयोग नही किया है ? इस भांति पटैल उक्त उपायसे बोहरोके कार्यका नाश करके वहुतसा धान्य प्रतिवर्षमे संचय करने लगे। राजवाड़ोमे कोटाराज्य ही धान्यका प्रधान स्थान गिना गया है, पटैल उस समस्त धान्यको बेंचकर वहुतसा धन उपार्जन करने लगे। इधर किसानोकी अवस्था दिन २ शोचनीय होने लगी। यद्यपि थोडे ही समयमें पटैलोका यह अत्याचार सवाद राजराणा जालिमसिहके कान तक पहुँचा, तथापि चतुर पटैलोने यथासमय पर्याप्त करको संग्रह करके राजभंडारको पूर्ण करादिया, और वहुतसे खेतोको जप्त करके जालिमसिहके अधिकारमे करा दिया; जालिमसिहने पहिले इन अत्याचार और उपद्रवोकी ओर ध्यान न दिया था। संवत् १८६७ (सन् १८११ ई०) तक इस भाँति कार्य चलता रहा। इसके पीछे सहसा विना मेघके वज्र पातकी समान जालिमसिहने कोटेराज्यके प्रत्येक पटैलको वंदी करनेकी आज्ञा दी और प्रत्येक पटैल वंदी होकर इनके समीप आये। जितने पटैलोने इतने दिनोतक असत् उपायसे वलपूर्वक प्रजाका सर्वनाश करनेके साथ वहुतसा धन उपार्जन किया था उस सबको जालिमसिहने खजानेमे मिला लिया। विचार होजानेके पीछे वहुत रुपया जुर्माना किया गया। केवल एकमात्र पटैलने अपना उपार्ज्जित सात लाख रुपया अन्यराज्यमे भेज दिया। इस एक मनुष्यके दृष्टान्तसे ही हमारे पाठक इतना अनुमान कर सकते है, कि पटैलोने इतने दिनोमे किस भावसे किसानोका सर्वनाश किया था।

जालिमसिहने नवीन प्रचलित पटैलरीतिसे अनिष्ट कारक फल उत्पन्न होता हुआ देखकर फिर कोटे राज्यमे पूर्वकालकी प्रचलितरीतिका अवलम्बन किया, और उसके साथ हीसाथ वह अपने कृषिकार्य करनेमे लगे। उस बाहुल्य जनक कृषिकार्यसे उनको निजकी जो बहुतसी आमदनी हुई थी उसका वर्णन पिछले अध्यायमे किया गया है।

वनिये है, वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते है, पटैलोने अनेक चिन्ता करनेके पीछे उन्ही महाजनोसे कार्य- कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके वोहरोके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहबने लिखा है कि "वोहरागण किसानोके कृषिकार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गो कर्पण यन्त्र वीज आदि देते थे, और जबतक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तवतक सहायतादेते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोके साथ बोहरोका यह नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही बोहराने जो कुछ धनकी सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्ही वोहरोसे किसानोको विशेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है । विशेप करके बोहरागण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नही करते थे, और किसान भी वोहरोको असतुष्टके लिये चेष्टा नही करते थे, कारण कि वोहरा इस वातको भलीभॉतिसे जानते थे कि अत्या- चार और उत्पीड़न करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नही लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक वोहराको ठकानेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नही करेगा, इस कारण दोनो ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहै एक २ ग्रामका बोहरा सदा एक २ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके वोहरोंको छोडकर अन्य किसी ग्रामके बोहरोका आश्रय नही लेता था"।

राजराणा जालिमसिहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करने की रीति एक वार ही दूर करके उसके वदलेमे नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्वतक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोने इस समय देखा कि एकमात्र नियमित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिह सर्वनाश साधन करेगे, इस कारण वह सव लोग षड्यत्र करके उक्त बोहरोका नाश करके आप स्वयं महाजनोका कार्य करनेके लिये तैयार हुए। प्रकाश्य रूपसे बोहरोके कार्यमे बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होगे यह जानकर उन्होने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्बन किया। क्षेत्रमे धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोने धान्यको काटनेके लिये पटैलोके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, "पहिली पहल राजाका कर देदो पीछे धान्य काटना।" दीन किसान धान्य काटकर विना वेचेहुए कहॉसे रुपया दे? इस कारण वह महा विपत्तिमे पड़े और उन्होने जाकर वोहरोका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोने वोहरोसे जतादिया कि "जिन किसानो पर राजाका प्राप्त कर वाकी है तवतक वह किसानोको किसी प्रकार भी ऋण न देसकेगे।" बोहरागणने पटैलोके इस निषेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोको आगे ऋणदान नहीं किया,

इस कारण किसान अन्य उपाय न देखकर अंतमे उन पटैलोकी शरणागत हुए, किसानोने अपने २ उतपन्नहुए धान्यके कितने ही अंश पटैलोके समीप बंधकर रक्खे। पटैलोका उद्देश भी यही था, वह अपनी २ इच्छानुसार उतपन्न हुए धान्यका मूल्य निर्णय करके उनको राज्य प्राप्य कर मिलगया है इसकी रसीद देने लगे। दूसरी ओर किसानोने पटैलोके प्रस्तावके अनुसार इस मर्मके एक पत्रमे हस्ताक्षर करदिये, कि "राजप्राप्य कर देनेके लिये यथेच्छ द्रव्य न होनेसे और उस अर्थके अन्यत्र संग्रह करनेका कुछ सुभीता न होनेसे मै अपनी इच्छानुसार धान्यका उपयुक्त मूल्य निश्चय करके धान्यके कितने अंश अमुक पटैलके समीप रेहन रख कर रुपया लेता हूँ"।

किसानोसे इस प्रकारके भावमे लिखवा लेनेका कारण यह है कि जालिमसिंह उक्त पत्रको देखकर समझ लेगे कि किसानोने अपनी २ इच्छानुसार पटैलोकी सहायता ग्रहणकी है, पटैलोने अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारका अत्याचार वावल प्रयोग नही किया है? इस भांति पटैल उक्त उपायसे बोहरोके कार्यका नाश करके वहुतसा धान्य प्रतिवर्षमे संचय करने लगे। राजवाड़ोमे कोटाराज्य ही धान्यका प्रधान स्थान गिना गया है, पटैल उस समस्त धान्यको बेंचकर वहुतसा धन उपार्जन करने लगे। इधर किसानोकी अवस्था दिन २ शोचनीय होने लगी। यद्यपि थोडे ही समयमें पटैलोका यह अत्याचार सवाद राजराणा जालिमसिंहके कान तक पहुँचा, तथापि चतुर पटैलोने यथासमय पर्याप्त करको संग्रह करके राजभंडारको पूर्ण करादिया, और बहुतसे खेतोको जप्त करके जालिमसिंहके अधिकारमे करा दिया; जालिमसिंहने पहिले इन अत्याचार और उपद्रवोकी ओर ध्यान न दिया था। संवत् १८६७ (सन् १८११ ई०) तक इस भाँति कार्य चलता रहा। इसके पीछे सहसा विना मेघके वज्र पातकी समान जालिमसिंहने कोटेराज्यके प्रत्येक पटैलको वंदी करनेकी आज्ञा दी और प्रत्येक पटैल वंदी होकर इनके समीप आये। जितने पटैलोने इतने दिनोतक असत् उपायसे बलपूर्वक प्रजाका सर्वनाश करनेके साथ वहुतसा धन उपार्ज्जन किया था उस सबको जालिमसिंहने खजानेमे मिला लिया। विचार होजानेके पीछे बहुत रुपया जुर्माना किया गया। केवल एकमात्र पटैलने अपना उपार्ज्जित सात लाख रुपया अन्यराज्यमे भेज दिया। इस एक मनुष्यके दृष्टान्तसे ही हमारे पाठक इतना अनुमान कर सकते है, कि पटैलोने इतने दिनोमे किस भावसे किसानोका सर्वनाश किया था।

जालिमसिंहने नवीन प्रचलित पटैलरीतिसे अनिष्ट कारक फल उत्पन्न होता हुआ देखकर फिर कोटे राज्यमे पूर्वकालकी प्रचलितरीतिका अवलम्बन किया, और उसके साथ हीसाथ वह अपने कृषिकार्य करनेमे लगे। उस बाहुल्य जनक कृषिकार्यसे उनको निजकी जो बहुतसी आमदनी हुई थी उसका वर्णन पिछले अध्यायमे किया गया है।

चतुर्थ अध्याय ४.



जालिमसिंहकी कृषिप्रणाली–कृषिकार्यका विस्तार–कृषिविभागकी उन्नति–उसका विवरण–कोटेका कृषिक्षेत्र–उत्पन्न धान्यका परिमाण–मूल्य–खलिहान–सुभिक्ष और दुर्भिक्ष–समयके धान्यका मूल्य–जालिमसिंहका एक वर्षके बीचमे एक करोड़ रुपयेका धान्य बेचना–रवानगी धान्यके ऊपर शुल्क स्थापन–शुल्क संग्राहक–उस शुल्कके प्रचार होनेसे अत्याचार और उपद्रवोंका होना–कोटेराज्यकी सब आमदनी–जालिमसिंहका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय–विधवा विवाहके ऊपर कर स्थापन–संन्यासियोंके ऊपर कर स्थापन–समाज्र्जनीके ऊपर करका प्रचार करना–जालिमसिंह और कवि–जालिमसिंहके शासनमे कोटेकी अवस्थाकी समालोचना।

जालिमसिंहके आभ्यन्तरी शासनकी रीतिको उनके एक चेटिया कृषि व्यवसायको वर्तमान अध्यायमे वर्णन किया है । एक मात्र एक चेटिया कृषि कार्यसे जालिम सिंहने समस्त प्रसिद्धि प्राप्त की। जिस समय जालिमसिंहने कृषिकार्य करके कोटेके क्षेत्रोकी अवस्थाको बदल लिया उस समय किसी पर्यटन करनेवालेने कोटे राज्यमे जाकर सर्वत्र श्यामल शस्य पूर्ण क्षेत्रोको देखकर विचारते कि कोटेकी प्रजाकी अवस्था अवश्य ही प्रीतिपूर्ण है । परन्तु किसी कारणसे ही कोटेके कृषि विभागके इस प्रकारके रूपका रूपान्तर हुआ, तथा उस कृषिकार्यका प्रधान फलभोगी कौन था इसका यथार्थ तथ्य जाननेसे अवश्यही उसके मनका भाव बदल जाता। सबसे पहिले जालिमसिहने मेवाडका मंगल साधन किया और मेवाड़में अपनी प्रवलता विस्तार करके कोटेका सर्वनाश किया, इसीसे उन्होने कोटेके किसानोके ऊपर अत्याचार और उपद्रव करके उनके ऊपर कर स्थापन करके किसानोके रुधिरको सुखा दिया था, इसीसे किसानोंके कुलका नाश होगया, कृषिक्षेत्र सब बेजुते बोये छोड़ दिये गये और अन्तमें समस्त प्रजाने दूसरे देशोमे जाकर आश्रय लिया। जालिमसिहने जब देखा कि प्रजाका नाश करनेके लिये उन्होने भयानक अमंगल किये हैं, जब यह जान लिया कि उनकी अवलम्बित अर्थशोषक नीतिने राजभंडारके भविष्यका अनिष्ट किया है तब उन्होने करस्वरूप जो किसानोके हल और अन्यान्य कर्षणके यत्र तथा किसानोकी पैतृक भूमि पर अधिकार करलिया था, उस समस्त उपकरणसे आप स्वयं उन क्षेत्रोमे कर्षण करनेके लिये प्रवृत्त हुए, उसीसे कोटेराज्यका कृषिकार्य इतना अधिकतासे साधित हुआ कि पहिलेकी समान किसी समय भी दिखाई नही आया, जालिमसिहने कोटेराज्यके प्रत्येक प्रान्तकी जिस किसी भूमिमे खेती होना संभव था उसी प्रत्येक भूमिमे ही अधिक क्या गहनवनको भी कृषिक्षेत्र कर दिया, और जिस पथरीले देशमे हल चलाना असम्भव था उस कठोर पहाड़ी भूमिमे भी कुदालके द्वारा खेती करना प्रारंभ करदिया, इस कारण वहुत थोड़े समयमे समस्त कोटाराज्यमे वहुतायतसे धान्य उत्पन्न हुए थे।

संवत् १८४०, सन् १७८४ ई०मे जालिमसिहके निजके तीन वा चार सौ हल थे, परन्तु कई वर्षोंसे उनकी संख्या आठसौ थी, जालिमसिहने जिस समय प्रचलित रीतिको रहित करके नवीन पटैलोकी रीतिको चलाकर उत्पन्न हुए द्रव्यके बदलेमें नगद् रुपया राजस्व स्वरूपसे ग्रहण करना आरंभ किया, उस समय उक्त हलोंकी सख्या एक हजार छः सौ थी, और कर्नेल टाड् साहबने लिखा है कि सन् १८२१ ईसवीमे जालिमसिहके निजके व्यक्तिगत सम्पन्ति स्वरूप क्षेत्रोंमे चार हजार हल चलते थे और उनमें सोलह हजार बैल नियुक्त थे। इससे हमारे पाठक समझ सकते है कि जालिमसिहने कृषि विभागमे किस प्रकारका श्रेष्ठ उपाय किया था । जालिमसिंहके निजके उक्त संख्यक हल और बैलोके अतिरिक्त कोटेके अधीश्वरोके निजके और राजवंशके निकट आत्मीयोकी स्वतंत्रताके सब मिलाकर एक हजार हल और चार हजार बैल कृपिकार्यमे नियुक्त थे।

राजराणाजालिमसिहने जिस रजवाड़ेमें यश प्राप्त किया वह केवल एकमात्र विस्तारित कृषिकार्यके कारण ही इतने यशस्वी हुए थे, और उन्होने इसी उपायसे कृषिक्षेत्रसे बहुतसा धन उपार्जन किया था, जिस समय रजवाड़ेमें प्रधान २ राज्य महाराष्ट्रोके अभ्युदय और उत्पीड़नसे एकबार ही उन्नतिके ऊँचे शिखरसे अवनतिके अगाध जलमे गिरे थे, उस समय एकमात्र जालिमसिहके कल्याणसे ही यह अवश्य संभव था कि कोटाराज्य उस ध्वंसताके हाथसे अवश्य छुटकारा पालेता परन्तु जालिमसिहके प्रबल-शासनसे यद्यपि कोटेमे धनधान्यकी रक्षा भली भाँतिसे हुई थी परन्तु उसके अतीव कठोर शासनसे राज्यके सम्भ्रान्त सामन्तोसे दीन किसानतक सभी उत्पीड़ित होकर उनके ऊपर अत्यन्त विरक्त होगये थे, और उनके शासनके विनाशकी कामना स्वभावसे ही सब श्रेणीके मनुष्योके हृदयमे प्रबल होगई। वीर विक्रमी हाड़ासामन्तोकी अधिकारी भूमिको अपने अधिकारमे कर कठोर शासन और रक्तशोषक कररूप रुधिरके ग्रहण करनेसे किसानोकी श्रेणीने अन्य उपाय न देखकर सर्वस्वान्त हो अपने पैतृक कृषि क्षेत्रोको छोड़ दिया, और उन पर जालिमसिहने अपना अधिकार करके स्वयं कृषिकार्यका विस्तार किया था, जो किसान चिरकालसे चिर प्रचलित रीति नियम और विधानके अनुसार पैतृक भूमिपर अधिकार और उसमे खेती करते आये थे, जिन खेतोंमे कृषक कुलका अविनाशी अधिकार था वह समस्त किसान उन सब क्षेत्रोके कारण जालिमसिहके विधानके अनुसार महान् ऊंचा कर देनेमे असमर्थ थे, जालिमसिहने वह प्राचीन रीति, नियम और विधान भंग करके इच्छानुसार उस सब भूमिपर अधिकार करलिया ।

इतिहाससे जाना जाता है कि वह जिस क्षेत्रको अत्यन्त उपजाऊ जानते थे उन्हींको छल बल और चतुरतासे उसके यथार्थ अधिकारीके अविनाशी स्वत्वाधिकारको लोपकर उस पर अपना अधिकार करलेते थे। यद्यपि कोटेके कृषिकार्यकी उन्नति एक पक्षमे प्रीतिदायक थी, परन्तु जब हम विचारते है कि दीन किसानोकी मंडलीका सर्वनाश करके जालिमसिहने उन किसानोके पैतृक अविनाशी स्वत्वको अन्यायसे नाश

करके उस क्षेत्रपर अपना अधिकार कर लिया तव उन किसानोको पैतृक अधिकारको खोकर क्रीतदासकी समान जालिम सिहके अधीनमे रहकर उन क्षेत्रोंमे कृपिकार्य करके सामान्य परिश्रमिक धान्य मिलने लगा, तव हम इस उन्नतिको कभी मंगलकारक नहीं कह सकते।

समस्त राजस्थानमे जो स्वदेशानुराग और भूमिके ऊपर विशेप अनुरक्ति चिरकालसे अत्यन्त प्रवल थी। इसीसे किसानोने क्रीत दासस्वरूपसे पैतृक भूमिमे खेती करना स्वीकार किया, परन्तु अन्यत्र जाकर सुख भोग करनेकी इच्छा नही की। जालिमसिहने अत्याचार और उपद्रव करने प्रारंभ कर दिये, समस्त प्रजा अनेक कष्ट जानकर यद्यपि अन्य देशको चली गई थी परन्तु इस समय राजस्थानके चारोओर महाराष्ट्रोके अत्याचार और उपद्रवोका स्रोता अत्यन्त प्रवल होगया कहीं भी उनको आश्रय ग्रहण करनेकी आशा नही रही, इस कारण वहुतोने जालिमसिहके उपद्रवोको सहन करके स्वदेशमे ही अपनी पैतृक क्षेत्रमे क्रीतदासस्वरूपसे कृपिकार्य करने आरंभ किये थे। और महाराष्ट्रो इत्यादिके उपद्रवसे अन्य निकटके स्थानोमे वहुतसे किसान जो प्राणोके भयसे भाग गये थे, वे फिर कोटेमे आकर जालिमसिहके अधीनमे नियुक्तहो कृपिकार्य करने लगे।

इतिहास लेखक टाड् साहवने अपने नेत्रोसे जालिमसिहके कृषिकार्यको देखकर जो वृत्तान्त लिखा है हमने इस स्थान पर उसीको ग्रहण किया है। वह लिखते है, कि "कोटेके कृपिक्षेत्रकी मट्टी निम्न मालवेकी मट्टीकी समान उर्वर और कठोर है, एकमात्र हलसे उस क्षेत्रकी पीठको विदीर्ण करना वड़ा कष्ट साध्य है, इस कारण जालिमसिहने कोकनदेशमे प्रचलितरीतिके अनुसार दो हलोको एक साथ व्यवहार किया था। उनके वैल आदि पशु प्रथम श्रेणीकी समान श्रेष्ठ और उनके हलकी समान तोपै चलाने मे भी समान उपयुक्त थे। उन्होने पासके वाजारोसे प्रधानतः अपने राज्यमेसे इन सव पशुओको मोल लिया था,और उनके प्रियस्थान झालरापाटन पर जो वार्पिक मेला होता है उसमेसे अनेक पशु खरीदे थे। मारवाड़ और अन्यान्य स्थानोके मरुक्षेत्रके स्थानोमे जो सव वैल श्रेष्ठ जातिके माने जाते थे जालिमसिंहने उनको भी मोल लेकर कृपि-

(१) वूंदीराज्यमे किसानोका भूस्वत्व अविनाशी था। किसी कारणसे भी राजा वा अन्य कोई मनुष्य भी किसानोके उस अधिकारको नाश न करसके। किसानलोग अपनी २ इच्छानुसार अपने २ क्षेत्रको गिरवी रख सकते अथवा वेच सकते थे। ऐसा भी-सुना जाता है कि पूर्वकालमे वूंदीके एक अधीश्वरने समस्त भूस्वत्वको वेचकर एकमात्र कर ग्रहण करके अपने स्वत्वकी रक्षा की थी उसीसे भूमिके ऊपर किसानोका अविनाशी अधिकार उत्पन्न हुआ। यदि वूंदीमें कोई किसान नियमित कर देनेमे असमर्थ होता तो राजा उस भूमिपर अपना अधिकार नहीं कर सकता था, किसान दूसरेको वह भूमि देदेता था। यदि कोई किसान किसी अपराधसे निकाल दिया जाता तो भी भूमिके ऊपर उसका जो अधिकार था वह विनष्ट नहीं होता, और दूसरा उस पर अधिकार कर लेता था।

कार्यमे नियुक्त किया था, परन्तु वह समस्त पशु वालुमय क्षेत्रके उपयोगी होने पर भी कोटेके क्षेत्रोके उपयुक्त नहीं थे। इसीसे उनको त्याग दिया था"।

पीछे टाड् महोदय लिखते हे कि "प्रत्येक वर्पमे दो वार करके खेती होती थी। प्रत्येक हलसे एक सौ वीघेकी भूमिमे खेती होती थी, इस कारण ४००० हलोसे प्रत्येक वारमे ४००००० वीघा खेती होनेपर प्रतिवर्प दो वारमे ८००००० वीघा जमीन अर्थात् अंग्रेजी प्राय: ३००००० एकड जमीन जोती जाती थी, जिस जमीनमें प्रत्येक वीघेके प्रति सातसे दशमन तक गेंहू और पॉचसे सातमन तक वाजरा उत्पन्न न हो तो उस जमीनकी मट्टी अच्छी नहीं मानी जाती। इस कारण अत्यन्त कम करनेसे यदि हम प्रत्येक वीघे प्रति चारमन गेंहूके उत्पन्न होनेका हिसाव करे तो इसका दुगना हिसाव करनेपर भी अतिरिक्त नहीं होगा"। तव ३२००००० मन गेंहू और वाजरा उत्पन्न होना यह ठीक होगा। इसका मूल्य उस समय कितना था उसका निश्चय करना होगा जिस वर्पमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न हुआ है उस वर्पमे एक[1] मानी गेंहूका मूल्य वारह रुपया होता है।

अन्य वर्पमे १८ रुपया करके एक २ मानी वेची जाती है, यदि हम गढ़मे सभी समयमे धान्यका मूल्य १२ रुपया करते तो इससे वार्पिक ३२ लाख रुपयेकी आमदनी होती है"।

कर्नल टाड् साहव कहते है कि कृपिकार्यमे जालिमसिंहका निम्न लिखित खर्चा होता था;—

गौ आदि पशुओका आहार, किसानोका वेतन क्षेत्रकी सफाई हलआदिके संस्कारमे व्यय	४००००० रुपया।
बीजके खरीदनेमें	६००००० "
गौ आदिके अव्यय हार्यहोनेपर नवीन गौ आदिके मोल लेनेमे	८०००० "
फुटकर खर्च...	२०००० "
कुल	११००००० रुपया।

ऊपर लिखी हुई सूचीसे जाना जाता है कि कृपिकार्यसे जालिमसिहको जितनी आमदनी होती थी, खर्चा उसका सव मिला कर उसके कुल तीन अंशोमेका एक अंश भी दिखाई नहीं पड़ता।

हमारे देशमे जिस प्रकार खलिहान (खत्ते) मे धान्यादिकी रक्षा होती है कोटेमे भी उसी प्रकारसे धान्यादिके रक्षा करनेकी रीति प्रचलित है, परन्तु वहॉका खत्ता अन्य प्रकारसे वनता है। कर्नल टाड् साहव लिखते है कि प्रधानत: ऊंची और सूखी भूमिके ऊपर खत्ता अनेक आकारसे वनाया जाता है। वेष्टनीके नीचेके भागमे एक प्रकारसे घास पत्ते वहॉ जला कर फिर इसके पीछे भूसा लगाया जाता है, तव इसके

(१) राजपूतानेमे ४३ सेरका १ मन, १२ बारह मनकी एकमानी १०० मानीका एक मनासा होता है।

ऊपर धान्य रखकर उसके ऊपर भूसा रखकर चारोंओर वन्द कर दिया जाता है। उसके ऊपर एक इञ्च चौड़ी मट्टीका लेहसन देकर उसको मट्टी और गोवरसे लीपकर वह खत्ता ऐसा दृढ़ होजाता है कि प्रवल वर्षा भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकती, और कई वर्ष तक रखने पर भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं होता। जालिम-सिहने प्रायः इस प्रकारसे राज्यके अनेक स्थानोंमें ५० लाख मनका अनल्प धान्य संचित रक्खा रहता है, और जिस वर्षमे अन्न अधिक उत्पन्न नही होता उस वर्षमे आवश्यकतानुसार यह सब धान्य वाहर किये जाते है, उस समय एक २ मानी परिमित मूल्य ४०, रुपया था और दुर्भिक्षके समयमे वह ६० रुपयेको बेचा जाता है। यह सब खत्ते उस समय स्वर्णखानकी तुल्य गिने जाते थे। जालिमसिह प्रायः प्रत्येक वर्षमे ६० लाख मन धान्य बेचा करते थे। संवत् १८६०, सन् १८०४ ई० मे जिस समय हुल-कर भरतपुरराज्यमें आया और सर्वस्व लुन्ठनकारी महाराष्ट्रदल रजवाड़ेके प्रत्येक प्रान्तमे विस्तीर्ण होगया, और उसीसे समर और दुर्भिक्षने एकसाथ मिलकर रजवाड़ेको विध्वंस किया था, उस समय एकमात्र कोटेराज्यके ही उत्पन्न हुए अन्नसे समस्त रजवाड़ो और उक्तदलने जीवनधारण किया था, उस समय धान्यका मूल्य मानी प्रति ५५ रुपये था, जालिमसिंहने धान्यको बेचकर एक करोड़ रुपया प्राप्त किया"।

राजराणा जालिमसिहने कोटेराज्यमे जो अनेक प्रकारके वड़े २ कर प्रचलित करके प्रजाका रुधिर सुखा दिया था, उसके सम्वन्धमें कर्नल टाड् साहबने अपने इति-हासमे लिखा है, कि "एकमात्र जमाके कागद पत्रोंको देखनेसे जाना जाता है कि कोटेराज्यमे राजाको करस्वरूपमे जो समस्त उत्पन्न हुआ द्रव्य मिलता है, उसका परि-माण केवल २५ लाख रुपया है। जालिमसिहने कहा है कि एकमात्र किसानोंको उन्होंने अपने व्यक्तिगत सम्पत्तिस्वरूपसे जो सब जमीन देदी थी उससे उनको उक्त परिमित रुपया मिलता था"।

"संवत् १८६५ मे जालिमसिहने कोटेराज्यसे जितने धान्य रवाना होते थे, उसके ऊपर एक नवीन कर प्रचलित किया, प्रत्येक मानी धान्यके ऊपर डेढ़ रुपया कर नियत हुआ। इसी करसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रवल होगये। पहिले पहल यह शस्योत्पादनकारियोंके ऊपर ही स्थापित हुआ था, परन्तु अप्रत्यक्षमे यह मोल लेनेवालोंके ऊपर भी जाकर पड़ा। शुल्क संग्राहकोंके प्रधान अध्यक्षने इस करके प्रचालित होनेसे महा सतुष्ट हो जालिमसिहको यह परामर्श दी कि किसान और क्रेता दोनोंके ऊपर ही यह कर स्थापित करना कर्त्तव्य है, तथा जालिम सिहने शीघ्र ही उस प्रस्तावके अनुसार कार्य करना प्रारंभ किया। इससे एक साथ ही दश लाख रुपयेकी प्राप्ति हुई। उस नवीन करके प्रचलित होनेसे एक अनाजके ऊपर अनेक स्थानोंमे तीन चार पाँच वार तक कर लिया जाता था और तव वह क्रेताके घर लाया जाता था। यद्यपि कोटेराज्यमे अधिकतासे धान्य उत्पन्न होता था तथापि इस करकी अधिकतासे ही प्रजा वड़े कष्टसे अपना समय व्यतीत करती थी, कोटेराज्यके

सामन्त उनके अधीनके मनुष्य वा किसान किसीको भी कर देनेसे छुटकारा नहीं मिला था प्रधान शुल्क संग्राहकोने अपनी २ इच्छानुसार प्रत्येकके ऊपर ही वह कर नियत कर दिया, और उस करके नियमके विरुद्धमें किसीकी कुछ भी आपत्तिको न सुना। जिस समय वृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यके मैत्री बन्धनकी सूचना हुई थी उसी समय उस करके ग्रहण करनेसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल होगये थे, उन कर संग्राहकोने जालिमसिहकी आज्ञा उल्लंघन करके लोगोका इतना उत्पीड़ित किया था कि जालिमसिह यदि किसी समय भी कहते कि " एक लाख रुपया चाहिये" कर संग्राहक उसी समय कहते जो आज्ञा और तुरन्त ही उसे संग्रह कर देते। कर संग्राहक उक्त आज्ञाको पाते ही उसी समय बाकी करकी एक सूची बनाकर शीघ्र ही क्या मित्र क्या शत्रु, क्या राजकर्म चारी, क्या महाजन, क्या वैश्य, क्या व्यवसायी क्या किसान, प्रत्येकके समीपही एक आज्ञापत्र भेज देते थे। कोई भी उस आज्ञाके बिरुद्धमे आपत्ति नहीं करता था, कारण कि आपत्ति करनेपर यही नही कि वह ग्राह्य नही होता वरन उनका विशेप अनिष्ट होता था। किसीको भी उस करके देनेसे छुटकारा नही मिलता था, अधिक क्या कहै जालिमसिहके प्राचीन मित्र पंडित बेलालने उस सूचीके अनुसार एक समयमे २५ लाख रुपया, एक विश्वासी सामन्तके अधीनवाले एक मनुष्यने पॉच हजार रुपया, उनके विदेशिक मन्त्रीने पांच हजार रुपया और नगरके महाजनोमेसे बहुतोने प्रत्येकको चार पांच और दश लाख रुपया दिया था, इसी करके ग्राहण करनेसे इस प्रकारके उपद्रव और अत्याचार प्रबल होगये, प्रत्येक मनुष्य ही जालिम सिहके ऊपर इतने विरक्त हुए कि जिससे जालिमसिंहके शासनके लोप होनेकी संभावना होगई, कारण कि सर्वसाधारण प्रजाके असंतोष प्रकाश करतें ही कोटेके महाराज अत्यन्त विरक्त होकर जालिमसिहके अधीनमें अपनी रक्षा न करके स्वाधीनता उपार्जन करनेके लिये व्याकुल होगये "।

इतिहास वेत्ता टाड् साहबने लिखा है कि " जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ रजवाड़ेका राजनैतिक सम्बन्ध बंधन उपस्थित हुआ था उस समय गवर्नमेण्टके मूलशासनकी नीतिके उद्देशके अनुसार जब मत प्रचलित हुआ तब क्या प्रजा क्या शासक सभीको अंग्रेज गवर्नमेण्टने समान दृष्टिसे देखा था उस समय बुद्धिमान् जालिमसिह भलीभांतिसे समझ गये कि अब प्रजाके ऊपर अत्याचार न करके प्रजाकी अवस्थाको सुधारना कर्त्तव्य है, यदि ऐसा न किया जायगा तो अंग्रेज गवर्नमेण्ट विरक्त होजायगी इस कारण उन्होने उस रक्तशोषक करको एकबार ही घटाकर किसान विक्रेता और क्रेताओके ऊपर उचित कर लेनेकी व्यवस्था करदी, परन्तु तब भी उक्त करसे पॉच लाख रुपये संग्रह होते थे "।

" इस प्रकार जालिमसिहकी कठोर रीतिसे क्षेत्रोंसे सबमे पंद्रह लाख रुपया लिया जाता था। इसके अतिरिक्त उसके कुटुम्बी स्वजन और कोटेराज्यके क्षेत्रोंसे और भी पॉच लाख रुपयेकी आमदनी होती थी, और उसीसे उनके घरका खर्चा चलता था"।

सत्यप्रिय टाड् साहब इस स्थानपर स्वदेशी किसानोको सम्बोधन कर कहते है " विलायतके बहुतसी सामर्थ्यवाले एवं अभिज्ञ किसानोने जालिमसिहके चौवालीस वर्ष-तक इस कठोर और राजनैतिक उपद्रवोके समयमे कृपिकार्यको सावधानीसे करते हुए देखकर क्या विचार किया होगा ? जालिमसिहकी प्रबल मानसिक शक्तिके सम्बन्धमे कि जिस जालिमने अस्सी वर्पकी अवस्थासे भी एकाक्ष और गति शक्ति हीन होकर उक्तरीतिसे सावधानता की थी उसके सम्बन्धमें वे क्या मन्तव्य प्रकाश करैगे ? कि जालिमसिहकी स्मरणशक्ति प्रस्तरांकितकी समान उनके चित्तपर अंकित है जिसने राज्यके प्रत्येक प्रान्तके प्रत्येक कृपिक्षेत्र, प्रत्येक शस्याधार गोलेकी अवस्था स्मृति दर्पणमे नियत प्रतिविम्बित कर रक्खी थी, जिसको किसी विषयमे भी भ्रम नहीं होता था। और जो उस वृद्ध अवस्थामे भी नेत्र हीन होकर राज्यके जिस प्रान्तके जिस क्षेत्रमे जिस प्रकारका धान्य उत्पन्न होता है उसे अनायास ही स्थिर कर सकता था उसी जालिमसिहके सम्बन्धमे उन्होने क्या कहा " ?

" यही नही कि एकमात्र कोटेराज्यके कृपिकार्यमे ही जालिमासिहका समस्त समय व्यतीत होता हो, वरन उनके कार्योमेसे यह उनका एक अंशमात्र था। उन्होने जिस भावसे राज्यशासन किया उसमे प्रबल शक्ति और विशेष सावधानताका प्रयोजन था, बीस हजार सेनाकी सृष्टि, उसका पालन और शिक्षादान तथा किलोकी सावधानी अस्त्रादिका संग्रह एवं निर्माण और समर विभागके प्रत्येक विपयमे दृष्टि रखना इसमे शासनकर्ताका समस्त समय लगता था, राज्यके कई सौ पुलिस कर्मचारियोके निकटसे प्रतिदिन प्रयोजनीय गुप्त और सत्य सम्वाद संग्रह करना एव राज्यके प्रत्येक जिलेके एक शासनकर्ताके निकटसे आये हुए वृत्तान्तका सुनना और उसके सम्बन्धमे आज्ञा देना इस विचारमे अन्य किसी शासनकर्ताके विचारकी शक्ति अवश्य विकृत होजाती। परन्तु इस समय जाना जाता है कि उक्त कठोर श्रमसाध्य कार्य करनेके अतिरिक्त जालिम सिह वाणिज्यकार्य भी करते थे, महाजनी कार्यमे लिप्त थे और शिल्प कौशलका उत्साह दिलाते थे, विदेशी वैश्योको भी उत्साह देते थे, और क्या कहै अनेक प्रकारके फलवान वृक्षोकी भी खेती करते थे। तब उनके साथ किसकी तुलना की जासकती है ? साहित्य, न्याय, दर्शन और ऐतिहासिक पुराणोके सुननेमे वह अपना समय व्यतीत करते थे। उन्होने जिस राज्यके अन्नका भाव जैसा देखा अपने यहाँके अनुसार निकटके बाजारोका भी कर लिया उससे केवल कोटेके धान्यका मूल्य उनके द्वारा घटता बढता था, यह नहीं वरन समीपके राज्योमे धान्यका मूल्य भी इसी कारणसे घट बढ जाता था। गवर्नमेण्टने जिस समय समस्त मालवादेशमे अफीमकी खेतीकी सब पैदावारको अपने अधीन कर लिया उस समय जालिमसिहने भी उस अफीमके क्रय विक्रय कार्यमे लिप्त होकर अपनी इच्छानुसार इसका मूल्य घटा बढ़ा दिया था। कोटेराज्यके अनेक स्थानोमे उन्होने बहुतसे बाग बनाये थे, और उन बगीचोके अनेक भाँतिके फल मूल कोटेके अनेक स्थानोके बाजारोमे बेचेजाते थे

और उनके रक्षित वनसे काष्ठ संग्रह होता था उसको सर्वसाधारण प्रजाके ईधनके लिये वेचा जाता था "।

साधू टाड् साहबने जालिमसिहके द्वारा स्थापित अन्यान्य करके सम्बन्धमे लिखा है कि " जालिमसिहने इस भावसे कर स्थापन किया था कि किसी विषयमे भी कोई छुटकारा नही पासकता था, जो कोई विधवा पुनर्विवाह करेगी उसको कर देना होगा। जो संन्यासी भिक्षा वृत्तिसे जीवन व्यतीत करते है जालिमसिहने उनको भी अपने कर लेनेसे न छोडा। गिरि कन्दरमे अथवा जिस २ स्थानमे संन्यासी वास करते थे, जालिमसिहके मनुष्य प्रत्येक वर्षमे वहाँ जाकर उनसे यह पूछा करते कि भिक्षावृत्ति करनेसे तुम्हे कितना धन प्राप्त हुआ है, उसका यथार्थ पता लगाकर उस पर कर स्थापित कर आते। एक वर्ष तक संन्यासियोके ऊपर कर प्रचलित रहा, अंतमे मित्रोके कहने सुनने से जालिमसिहने उस करको उठा दिया, जालिमसिहने " झाड्वराके " अर्थात् सम्माजनोके ऊपर भी कर स्थापित करनेमें लाज न मानी थी। कोटेके भाटोने जालिमसिह के ऊपर व्यङ्ग व्यञ्जक अनेक गीत वनाये, जालिमसिहके पुत्र माधोसिहने अंतमे इस घृणित करको उठा दिया "।

रजवाड़ेके प्रत्येक राजा, प्रत्येक सामन्त अधिक क्या प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही भाट चारण और कवियोका विशेष सम्मान करते थे। और विवाह श्राद्ध इत्यादिके समयमे उनको यथाशक्ति धन देते थे। वे उस धनको पाकर मनमोहनी कविता वनाकर दाताका यश गान करते थे, वह सव गीत वंशानुक्रमसे रजवाड़ेके अनेक स्थानोमें गाये जाते थे। टाड् साहवने कहा कि जालिमसिह भाट चारण वा कवि श्रेणीके प्रियपात्र नहीं थे। कवि भी जालिमसिहकी प्रशसा कीर्तन नही करते थे। टाड् साहवने एक उदारण दिया है " कि एक दिन एक प्रसिद्ध कविने जालिमसिहके सामने प्रशसा व्यंजक गीत गाया। परन्तु जालिमसिहने उससे सन्तोष न प्रकाश करके आग्रहके साथ कहा कि कविलोग केवल मिथ्या वर्णन करते है, यदि सत्य वर्णन करते तो मै आनन्दके साथ उसको सुननेकी इच्छा करता। " कविने यह सुनकर उसी समय उत्तर दिया कि " वाजारमे सत्यका आदर वहुत थोड़ा है, मै कितनी ही सत्य विवरण पूर्ण कविता जानता हूँ, उसको भी सुनाता हूँ। " कविने अन्तमे जालिमसिहके समीप अभय और क्षमाकी प्रार्थना करके जालिमसिहके चरित्रोके सम्बन्धमे इस प्रकार सत्य पूर्ण विषमय तूलिका चित्रित कविताकी आवृत्तिकी, कि जालिमसिहने इससे महाक्रोधित हो उस कविके समस्त पैतृक भूसम्प्रदायको जप्त कर लिया, और उसी दिनसे किसी कविको फिर अपने यहां न आने दिया "।

राजस्थानके राजा और शासनकर्तागण हिन्दूधर्मके अनुसार ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति अधिक दया दिखाना और ब्राह्मणके किसी अपराधसे अपराधी होनेपर उसको अनेक परिमाणसे बहुत थोड़ा दंड देते थे। परन्तु साधु टाड् साहब लिखते है, " यद्यपि जालिमसिह हिन्दूधर्मानुमोदित प्रत्येक कार्य और

प्रत्येक अनुष्ठान करते और प्रत्येक कर्म विधानको ग्राह्य करके चलते परन्तु तौ भी उन्होने ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति राजनैतिक व्यापारमे कभी भी दया प्रकाश नही की। जो कोई मनुष्य ब्राह्मणहो अथवा अन्य वर्णका मनुष्य हो राजाके विरुद्धमे यदि अपराध करै तो किसी प्रकारसे भी उसको छुटकारा नहीं मिलसकता था, एवं वह ब्राह्मण क्षत्रिय वाणिज्य व्यवसायमे नियुक्त होता तो ब्राह्मण बताकर उसके ऊपर सर्वसाधारणकी समान शुल्क स्थापनसे क्षमा नही होता था "।

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ वर्तमान अध्याय का उपसंहार किया है, "राजप्रतिनिधि जालिमसिहके कोटे राज्यके आभ्यन्तरिक शासन की व्यवस्था ही इसका संक्षिप्त चित्र थी। जिस समय जालिमसिहको कोटेके शासनका भार मिला था, उस समय कोटेराज्यकी सीमा पूर्वप्रान्तसे कैलवाड़े तक विस्तारित थी, परन्तु उन्होंने पीछे उसी सीमाको पहाड़ी उपत्यका तक विस्तीर्ण कर लिया, और जो दुर्ग श्रेणी उस सीमान्तसे रक्षित थी उसको महाराष्ट्रोंके बलसे उद्धार करके कोटेमे मिला लिया था। उन्होने राज्यभार पाते ही देखा कि राज्यका खजाना शून्य है और राज्यपर ३२ लाख रुपया ऋण है दूसरी ओर उन्होंने देखा कि विदेशिक आक्रमणसे राजरक्षाके पक्षमें केवल कितने ही टूटे हुए किले और सामन्तोके अधीनमे बेकाबू वीर सेना है। तब बहुतसा रुपया लगाकर टूटे हुए किलोका फिरसे संस्कार करके कितनी ही तोपोसे उसको सजादिया। उन्होने चार हजार अश्वारोही सेनाके स्थानमे बीस हजार सेना संग्रह करके उसको शिक्षित किया था, और १०० तोपे संग्रह की थी। इसके अतिरिक्त सामन्तोके अधीनमे बहुतसी सेना थी "।

यद्यपि जालिमसिह हाड़ाजातिमे एक विख्यात पुरुष है, परन्तु जैसा अन्न कोटेमे पदा होता है जो उनकी आराजीमे है उससे कोई सूरत उत्तमताकी दृष्टि नहीं आती और न सेना ही वैसी सजधजकी गिनी जाती है, कारण कि उनके हृदयके भावमे बिकार उत्पन्न होगया है। हिस्सेवालोको भाग नही मिलता है। जबतक यथायोग्य विभाग उन भागवालोंको न दियाजायगा तबतक जो यह सब प्रबन्ध दृष्टि गोचर होता है यह सब ऐसे मूलपर नियत हुआ है कि जिससे आगेके विशेषमे विपत्तिकी आशंका है।

पंचम अध्याय ५.

जालिमसिंहकी राजनैतिक प्रणाली—उनकी वैदेशिक राजनीति—रजवाड़ेमें उनकी प्रबलता—अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ उनका पहिला सम्बन्ध—मानसनका भागना—कोयेलाके सामन्तों की महावीरता दिखाना—उनका प्राण त्यागना—जालिमसिंहका अंगरेज गवर्नमेण्टकी सहायता करना—हुलकरका क्रोध—हुलकरका कोटेमें आना—राजधानीपर आक्रमणका उद्योग—जालिमसिंहके साथ हुलकरकी मुलाकात होना—दोनोंमे सन्धि होना—जालिमसिंहका विदेशीय राजाओंकी सभामें दूत नियुक्त करना—अमीरखां और पिण्डारे नेताओंके साथ जालिमसिंहका सद्भाव—जालिमसिंहकी गुप्तराजनीति—महाराव राजा उमेदसिंहका चरित्र—महारावके साथ जालिमसिंहका आचरण—पठान दलेलखां—झालरापाटन नगरका स्थापन—मेहरावखां।

इतिहासको जाननेवाले टाड्ने कहा कि जालिमसिह बड़े चतुर और परम राजनीतिके जाननेवाले थे। यदि जालिमसिंह विलायतमें पैदा होते तो अपनी राजनैतिक कार्यावलीसे अक्षय कीर्ति पाते। वास्तवमे टाड् साहबकी यह कहावत ठीक है क्योंकि टाड् साहब जालिमसिहकी राजनैतिक ऐंतिहासिक घटनाओंको लिख गये है। वह इतिहास दो हिंस्सोमें वटा हुआ है पहिला वैदेशिक और दूसरा आभ्यन्तारिक। राजनीतिके सुभीतेके लिये ही टाड् साहबने जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयको दो भागोमे बाँटा है।

जालिमसिंहकी शासन-प्रणाली प्रायः भेदनीति पर स्थिर थी, वह अपने अधीनस्थ दरवारियो या राज कर्मचारियोको इस बातका अवसर नही देते थे कि वे एक दूसरेसे मिलकर किसी प्रकार शक्तिसंपन्न होसके। जालिमसिह इस तरहसे स्वयं प्रत्येक कर्मचारी पर अपनी ही प्रभुत्व रखते थे और इसीसे उनमे यह सामर्थ्य थी कि यावत् अनुगत लोगोको अपने पक्षमें रखते और लकड़ीके बल वंदर नचाते थे।

कोटाराज्य भारतके ठीक हृदय स्थानमें स्थापित है। कई वर्षसे जबतक इस कोटेके चारोओर राज्यमे अत्याचार उत्पीड़न, विद्रोह, राजशक्तिका नाश एवं प्रजाशक्तिका विप्लव होता था। यद्यपि उन सब देशोकी समान इस कोटेराज्यकी धनसम्पत्तिसे आकृष्ट होकर महाराष्ट्र एवं पिंडारे इत्यादि लूटनेवाले व्यवसायी अत्याचारी दलोने कोटेके लूटनेका उद्योग किया। परन्तु जालिमसिहने अपने विरोधित उग्र तेजसे इस प्रकार शासनदंड चलाया कि उन्होने उसीसे अर्द्धशताव्दीतक सबको भय उत्पन्न करनेवाली उन मरहठोकी उस आशाको व्यर्थ करदिया। इस कारण उस अर्द्धशताव्दीमे कोटेराज्यमे कोई डॉकू चोर लूटनेवाला साहसके साथ प्रवेश न करसका। यद्यपि दीर्घकालसे अबतक राजपूतानेके समस्त राज्योमे राजनैतिक विप्लव, राजनैतिक परिवर्त्तन, सेना विनाश, क्रमानुसार शासनशक्तिका लोप, दुर्भिक्ष महामारी और

नैतिक बल क्षयके साथ शोचनीयकाण्ड उपस्थित हुए और रजवाड़ा विध्वंस हुआ परन्तु उस दीर्घकालमे ही एकमात्र जालिमसिहने पच्चीस वर्षकी अवस्थासे प्राय नव्वे वर्षकी अवस्थातक अपनी विज्ञता वीरता, उद्यम और विवेचना शक्तिसे अपने हाथमे समर्पित हुई राज्यनौकाको उस भयंकर विपद संकुल घोर राजनैतिक तरंगावर्त्तमे जरा भी न डगमगाने दिया।

साधू टाड् महोदय लिखते है " कि रजवाड़ेमे ऐसा कोई भी राजा नही था, अधिक क्या लुटेरोमे भी इस प्रकारका नेता नही था जिसने कि किसीन किसी प्रकारसे जालिमसिहके परामर्शके अनुसार और मन्तव्यके अनुसार कार्य न किया हो। प्रत्येक राजाकी सभामे उनका एक २ दूत रहता था। जहॉ उनके किसी प्रकारके स्वार्थ साधन की सभावना होती उसी स्थानपर वह किसी न किसी प्रकारसे उस स्वार्थको सिद्ध करलेते। दुर्बल शून्य सम्मानकी अभिलाषा करनेवाला जो कोई मनुष्य भी होता उसको यह तुरन्त ही अपने पक्षमे मिलालेते, इन्होने राजसिहासन पर वैठेहुए मनुष्यसे लेकर पिडारी-दलके नेतातक सभीके साथ पिता, चचा वा भ्राताका कोई न कोई सम्वन्ध वंधन आवद्ध कर लिया था। सारांश यह है कि अपने राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये इन्होने अनेक उपाय किये थे "।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिह एक क्रूर स्वभाव अत्यन्त क्रोधी और अहकारी थे, परन्तु एक २ समयमे कार्यगतिसे इन्होने यथेष्ट अवनत भाव भी प्रकाश किया था। वह जहॉ देखते कि विनीतभावके विना प्रकाश हुए कार्यके उद्धार होनेका उपाय नहीं है उसी स्थान पर अपनी पदमर्यादा और सामर्थ्यके विस्तारित होनेसे वह उसमे विनीतभाव प्रकाश करते। और क्या कहै सामान्य पिडारी इत्यादिके नेताके निकट भी समय २ पर वह अत्यन्त विनीतभावसे पत्र लिखकर नम्रताके साथ वातचीत करके कार्य करलेते। और यह जहॉ देखते कि यहॉ युद्ध होनेके अतिरिक्त इस विवादके विचार होनेका उपाय नही है, उस संस्थान पर जो वीर अथवा जो कोई सामर्थ्यवान् राजा होता उसीके साथ युद्ध करनेको आगे वढ़ते थे। रजवाड़ेके चारोओर जब अशान्ति और समर इत्यादि होते रहते थे उस समय यह कोटेराज्यके शासन करनेमे नियुक्त हुए, इस कारण उनको उस समय अन्यान्य विवाद मान राजाओके साथ शीघ्र ही राज-नैतिक चातुरीमूलक व्यवहार करना होता था। सन् १८०६ एवं १८०७ इसवीमे जिस समय जोधपुरके साथ समरानल प्रज्वलित हुई उस समय तीन अन्य राजाओने इनसे सहायता मागी, इसी कारण तीनोको संतुष्ट करना एकवार ही असम्भव होगया। इन्होने तीनोके पास दूत भेजकर तीनो जनोकी ओरसे विवादकी मीमांसा होनेकी चेष्टा की, और किसीको भी किसी प्रकारसे सेनाकी सहायता न दी, यह सामान्य नीतिज्ञताका परिचय नही है।

जालिमसिहके विदेशिक राजनीतिके इतिहासके संग्रहको सव भांति निष्फल जानकर साधु टाड्ने उससे एकवार ही शान्त हो, सन् १८०३। ४ ईसवीमे वृटिश

गवर्नमेण्टके साथ उनको जो पहिला साक्षात् सम्बन्ध स्थापित हुआ था उसीको वर्णन किया है। इतिहासवेत्ता टाड् साहब लिखते है कि "हुलकरको आक्रमण करनेके लिये जिस समय जनरल मानसन एक बृटिश सेनादलको साथ लेकर मध्य भारतवर्षकी ओरको गये, उस समय जालिमसिह अंग्रेजोकी सामर्थ्यको अजेय जानकर उस सेनाके कोटेराज्यमे आते ही इन्होने उस सेनादलके आहार्य सरवराह और अनुचरोंको संग्रह करनेमे कुछ भी विलम्ब नही किया। परन्तु जिस समय वह बृटिश सेनादल दुर्भाग्य वश समरमे परास्त होकर भाग गया, उस समय बृटिश सेनापति जनरल मानसनने पूर्वमतसे कोटेराज्यमे होकर जानेके लिये प्रार्थनाकी, जालिमसिहने निम्नलिखित उक्तिसे एकवार ही असम्मति प्रकाश की। उन्होने कहा कि "हमारे शान्ति पूर्णराज्यमे शांति संभोगकारी प्रजामे आप अपनी छिन्नभिन्न सेनाको लावेगे तो अराजकता उपस्थित होजायगी। आप अपनी सेनाको हमारे राज्यकी सीमामे ठहराइये मै सब रसद संग्रह कर दूंगा और मेरी जितनी सेना है सब सेनाको लेकर आपको आपके शत्रुदलमेसे लेजाऊँगा और आपका शत्रुदल यदि मेरे ऊपर आक्रमण करेगा तो मै इकला ही उस आक्रमणको सहलूंगा।' मानसनने जालिमसिहके कथानुसार कार्य नही किया वह बून्दी और जयपुरराज्यमे होकर चले गये, किन्तु अन्तमे उस समस्त सेनामे एकमात्र इकले ही बचकर जनरल लेकके पास गये, और अपनी शोचनीय पराजयका समाचार कहा। अपमानित निगृहीत, पराजित और पलायित जनरल मानसनने अपने उपरितन प्रभुके निकट उस घोर कलकदायक पराजयका समाचार देनेके समय, अपने अपराधको थोडा करनेके लिये अन्य मनुष्योको भी उसी अपराधसे अपराधी और उस भागनेका कारण स्वरूप बताकर घोषणाकी। यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। जनरल मानसनने जालिमसिंहके विरुद्धमें दृढ अनुयोग उपस्थित करके उनके शिरपर भारी कलंक लगानेकी चेष्टा करके कहा कि जालिमसिहने शत्रुदलके साथ षड्यत्र करके हमारे भागनेके समयमे कुछ भी सहायता न की? दुःखका विषय है कि बृटिश कर्तृपक्ष गणने दीर्घकालतक मानसनकी इस उक्तिको सत्यमात्र माना था। परन्तु जालिमसिह तो सम्पूर्ण निर्दोषी थे, उन्होने जनरल मानसनकी प्राण रक्षाके लिये विशेष चेष्टा की थी उनकी ही आज्ञानुसार मुकुन्दराकी घाटीसे कोयेलाके सामन्त लखन महाराष्ट्र दलकी गतिको रोकनेके लिये जाकर सेनासहित मारेगये, उनका प्रत्यक्ष उदाहरण आजतक विराजमान है"।

साधु टाड् साहबने पीछे लिखा है कि "जनरल मानसनके भागनेकी सुविधाके लिये जो हाड़ा सेनाने महाराष्ट्रदलके साथ युद्ध किया, कोयेलाके सामन्तके अतिरिक्त अन्य अनेक सेनाने भी उस समरमे निहत होकर बखशी अर्थात् प्रधान सेनानायक उस युद्धमे विपक्षी महाराष्ट्रोके द्वारा वंदी होगये, जालिमसिहके अधीनकी उस सेनाने बृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त प्रकारसे सहायता की थी, इसीसे महाराष्ट्रनेता हुलकरने उस बखसीके निकटसे दश लाख रुपयेका एक खत लिखकर बखशीको मुक्ति देकर कहा कि शीघ्र ही दश लाख रुपया न देनेसे समस्त कोटे देशको तलवार और तोपोके मुखसे विध्वंस करदूंगा, पराजित बखशीने जालिमसिहके समीप जाकर जब

उक्त दश लाख रुपयेके खतका उल्लेख किया तब उन्होने उसको सामनेसे हटाकर कहा, "कि तुम जो दश लाख रुपयेका खत लिखकर दे आये हो, उसके हम देनदार नहीं है।" जालिमसिहने उसके पीछे वखशीको फिर हुलकरके समीप भेजनेके लिये कहा वह जिस प्रकारसे करसके उस प्रकारसे वखशीके पाससे दश लाख रुपया लेकर उनको छोड़ दे। हुलकर जालिमसिंहके उस व्यवहारसे उस समय केवल भय दिखाकर ही शान्त न हुआ वरन, पीछे सुभीता होनेपर कोटेराज्यमे जाकर उसने राजधानीके वहुत पास ही डेरे डालदिये"।

वीर तेजस्वी जालिमसिह हुलकरको उपस्थित देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, उन्होने नगरकी दीवारोके ऊपर समस्त तोपै सजाकर सेनाको सजानेकी आज्ञा दी। उन तोपोकी श्रेणीके इस भावसे सजते ही गोलोकी वर्षा होनी आरंभ होगई, नगरके बाहर स्थित समतलक्षेत्रके समस्त आवास ही एकबार समभूमि होजाते। उधर जालिमसिंहकी गुप्त आज्ञाके अनुसार पहाड़ी भी हुलकरके डेरोके पिछले भागपर आक्रमण करने और समस्त द्रव्य लूटने तथा रसद प्राप्तिमे व्याघात देनेके लिये तैयार हुए। हुलकरने डेरोको स्थापित करके वखशीके द्वारा हस्ताक्षर युक्त उस दश लाख रुपयेके खतको फिर जालिमसिहके पास भेजादिया, जालिमसिहने शीघ्र ही उस खतके लेखानुसार रुपया देनेमे असम्मति प्रगट की। तब समरका होना अनिर्वाय विचारा गया, उस समय दोनों ओरके मंत्रियोने यत्नवान होकर परस्परमे साक्षात् करनेके लिये प्रस्ताव उपस्थित किया। परन्तु जालिमसिह महाराष्ट्र नेता हुलकरका सब प्रकारसे अविश्वास करते थे, इस कारण उन्होने कहला भेजा कि अपनी अभिलाषित व्यवस्थाके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे वह साक्षात् करनेके लिये तैयार नही है। जालिमसिहकी वह मनोगत व्यवस्था अत्यन्त विचित्र थी। उन्होने कहला भेजा कि युद्ध वा संधि सम्बधी प्रस्ताव चम्बलनदीके ऊपर नौकाके वक्षमे उपस्थित करने होगे, हुलकर इसीमे सम्मत हुए। जालिमसिह उक्त उद्देशसे दो नौका सजाकर प्रत्येक खानेमे २० अस्त्रधारी सैनिक रखकर आप स्वयं एक छोटी नौकामे चढ़कर चम्बलनदीके मध्यस्थलमे जा पहुँचे। हुलकर भी शीघ्र ही अपनी कितनी शरीर रक्षक सेनाके साथ नदीके किनारे आकर एक नौका पर चढकर उस नदीके मध्यस्थानमे जालिम सिहके समीप जा पहुँचा। शीघ्रतासे नदीके ऊपर सुन्दर गलीचा विछाया गया, वह दोनो अद्भुत पुरुष जिनमे केवल एक आँख थी असीम सामर्थ्यवान राजनीतिज्ञ शान्ति स्थापन करनेके लिये प्रस्तावका आन्दोलन करने लगे। हुलकरने जालिमसिहको 'काका' और जालिमने हुलकरको 'भ्रातृपुत्र' कहकर पुकारा। परन्तु दोनोके पक्षमे तटस्थ सेनाका दल इस प्रकारके भावसे तैयार था कि जो कोई एक ओरसे विश्वासघातकता का

---

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमे लिखते है कि इस अभागे वखशीने अपमानसे अत्यन्त दुःखी होकर विषपान करके आत्महत्याकी ऐसा अनुमान होता है।

(२) टाड् साहबने यहाँ जालिमसिहको अंधा और हुलकरको एकाक्ष समझ कर दोनोंमें एक आँखवाला कहा है।

लक्षण देखता-तो तुरन्त ही आक्रमण करनेके लिये उद्यत होता। हुलकर इस समयमें जितनी जल्दी कोटेको त्याग देगा उसके लिये उतना ही सुभीता होगा, इस कारण जालिमसिहके प्रस्तावके अनुसार शेषमे हुलकरको तीन लाख रुपया लेकर, जाना पड़ा। बुद्धिमान् जालिमसिहने इस प्रकारसे तीन लाख रुपया देकर हुलकरके आक्रमणके हाथ से राज्यकी रक्षा करली।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते है कि जालिमसिहका समस्त समय कोटेके शासन कार्यमे व्यतीत होता था, उनको प्रतिवासी राजाओके राज्यकी ओर दृष्टि रखनेका अवसर नही मिलता था, यह सरलतासे अनुमान किया जासकता है, परन्तु उन्होने कोटेराज्यके प्रत्यक्ष स्वार्थ साधनके लिये हुलकर और सेन्धियाके अधिकारी देश जो कोटेकी दक्षिण सीमाके साथ लगे हुए थे उन देशोमे कृषिकार्यसे विशेष प्रतियोगिता दिखाई थी जालिमसिहने सेन्धियासे पॉच महल नामक देश, और हुलकरके निकटसे डिग पिडावा इत्यादि चारजिले जमामे ग्रहण किये। जिस समय वृटिश गवर्नमेण्टने हुलकर और सेन्धियाके साथ युद्धमे जय प्राप्त की उस समय वृटिश गवर्नमेण्टने उक्त देशका एकबार ही कोटेके अधीश्वरको देदिया। जालिमसिह उक्त दोनो जने महाराष्ट्र नेताओके साथ सद्भाव स्थापन और स्वार्थ सम्बन्ध स्थापन करके ही शान्त न हुए, वरन उन दोनों महाराष्ट्र नेताओके विश्वासी मंत्रियोके प्रति गुप्तभावसे तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उन्होने एक दूत नियुक्त करादिया था। उस दूतने मंत्रियोके प्रत्येक कार्यको गुप्तभावसे देखकर जालिमसिहसे कह दिया। इधर जालिमसिहने भी कितने ही प्रथम श्रेणीके नीतिज्ञ महाराष्ट्र पंडितोको अपने यहॉ नियुक्त कर रक्खा था, और उनके द्वारा ही महाराष्ट्र जातिके जिस किसी राजनैतिक अनुष्ठानको वह जान सकते थे। जो जैसा मनुष्य होता जालिमसिह उसके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते थे। विख्यात अमीरखांके साथ जालिमसिहने विशेष सद्भाव स्थापित करके उसको अपने हस्तगत कर रक्खा था। लुटेरा अमीरखॉ भी आवश्यकतानुसार जालिमसिहके पाससे समरके उपकरण लेलेता था। विशेष करके अमीरखांके रहनेके लिये जालिमसिहने शेरगढ़ नामक किला देदिया था, अमीरखॉ सन्तुष्ट चित्त होकर जालिमसिहका शुभ साधन करता था, जालिम सिह समझ गये थे कि अमीरखॉको विना हस्तगत किये उससे विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना थी, इस कारण उन्होने उसको हस्तगत किया था, जालिमसिहके हस्तगत हुआ मनुष्य कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्ट नहीं करसका।

पिडारी नामक लुटेरोका दल भी चतुर जालिमसिहकी ओर विशेष सद्भाव प्रकाशित करता था। प्रधान २ पिडारे नेताओके प्रति सम्मान दिखानेसे वे कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्टासाधन नही करते थे। पिडारियोके अनेक नेता जालिमसिहसे भूवृत्ति पाकर कोटेमे निवास करते थे, इन पिडारियोके साथ जालिमसिहका यहातक सद्भाव स्थापित हुआ था, कि सन् १८०७ ईसवीमे जिस समय सेधियाने विख्यात पिडारी नेता करीमखॉको वंदी करके ग्वालियरके किलेकी रक्षा की, उस समय जालिमसिह उस करीमखॉकी

मुक्तिके लिये केवल बहुतसे रुपये देकर ही शान्त नही हुए थे, वरन करीमखाँके भविष्यम सच्चारित्रताके लिये वह उसके साक्षी भी हुए। यद्यपि उनके साक्षी होनेके समयमें उनकी अविवेचकताने प्रकाश पाया परन्तु उसीसे सेन्धियाने जो यथेच्छाचार किये थे उसका फल उसने पाया।

शरणागतका प्रतिपालन करना राजपूत जातिका परम धर्म है। अधिक क्या शत्रुके भी शरण आनेपर राजपूत जाति तन मन धनसे उसको आश्रय देकर उसकी रक्षा करती थी। अन्यान्य राज्योंके प्रधान २ सामन्त अथवा माननीय मनुष्य भी विपत्तिमे पड़कर कोटेमे आय जालिमसिहके शरणागत होकर आश्रय लेते थे। जालिमसिह किसी प्रकारसे भी आश्रय देकर शान्त नहीं होते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह अपनी सामर्थ्यसे भी परे शरणागतका प्रतिपालन कर उसको आश्रय देते थे। मारवाड़ और मेवाड़के बहुतसे सामन्त उसी राज्यके राजकोटमे पड़कर जालिमकी शरणागत हुए, जालिमसिहने उनको इस प्रकारसे भूवृत्ति दानकी कि वह सामन्त अपने २ देशमे जितनी भूवृत्तिको भोग करते थे वह उसकी अपेक्षा समधिक थी। जिस जातिमे शरणागतका प्रतिपालन करना तथा आश्रय देना महान् धर्म और पुण्यदायक विचारा जाता था, उस जातिमे जालिमसिहके इस व्यवहारसे वह जितने अधिक प्रशंसित होगे इसका अनुमान सरलतासे होसकता है। यही नहीं था कि जालिमसिह उन शरणागतोको केवल अभय देकर ही ग्रहण करते हो वरन वह अभयप्रार्थियोके साथ उनके राज्यके विवाद विसम्बादोको भी मिटादेते थे। इसी कारणसे वह रजवाड़ेके सर्वसाधारण मनुष्योमे "मध्यस्थ" और "शान्ति स्थापक" नामसे विख्यात हुए थे। सद उपदेशके वशसे हो या किसी राजनैतिक उद्देशके अनुवर्ती होनेसे हो जालिमसिहने उस मध्यस्थताको करके विशेष यश प्राप्त किया था। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिह कहते है, "कि सभी मनुष्य वृद्ध जालिमसिहके समीप विपत्तिमे पडकर गये, उनका यह विचार था कि जालिमसिह इस सामान्य भूखंड कोटेसे सरलतापूर्वक सबकी पालना करनेमें समर्थ है।

इस समय जालिमसिहके आभ्यन्तरीय राजनीतिके सम्बन्धमे कुछ कहना है। जालिमसिहके आभ्यन्तरिक शासनकी नीतिको यथास्थानमे वर्णन किया गया है, उसी शासन नीतिको पढ़कर हमारे पाठक अनेक प्रकारसे उनकी आभ्यन्तरीय राजनीतिका परिचय पाचुके है। हम यहाँतक जालिमसिहके दीर्घ शासनके इतिहासको वर्णन करते आये है, उसमे एकवार भी कोटेके अधिराज महाराव उमेदसिंहके नामका उल्लेख करनेका अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इसका प्रधान कारण यह था कि यद्यपि महाराव राजा उमेदसिह कोटेके सिहासनपर विराजमान थे, परन्तु मूलतः जालिमसिंह सर्वमय कर्तास्वरूपसे अतीत दीर्घकालतक कोटेको शासन करते आये थे। कहा गया है कि राजा उमेदसिंह कोटेके नाममात्रके अधीश्वर थे वह जालिमसिंहके खिलौने या साक्षी गोपालस्वरूप थे–और चतुर चूडामणि जालिमसिहही कोटेके अधीश्वर थे। जालिमसिहकी आभ्यन्तरी

राजनीतिका उल्लेख करते हुए यहाँपर फिर महाराव राजा उमेदसिहको उपस्थित करनेकी आवश्यकता होती है ।

पाठक गण ! महाराव राजा गुमानसिहने मृत्युके समय अप्राप्त व्यवहार उमेदसिह को कोटेके सिहासन पर बैठाल कर जालिमसिहको उनके अविभावक स्वरूपसे स्थापित किया था, हम जिस समयके इतिहासको इस समय लिखते है वह इसके परवर्ती अर्द्धशताब्दीके अधिक कालकी कथा है । इस दीर्घकालके पीछे भी हम उसी महाराव राजा उमेदको उस अप्राप्त व्यवहारकी समान उन जालिमसिहके रक्षणावेक्षणपर स्थित देखते है । जिस दिन मृत्युशय्यापर शायित गुमानसिहने जालिमसिहकी गोदीमे उमेदको स्थापन कर उनको उमेदका अविभावक पद दान किया । उसी दिनसे चतुर चूड़ामणि जालिमसिंह उमेदकी ओर जैसा व्यवहार करते आये थे, और उमेदसिहके चरित्रोंकी प्रकृति जैसी थी उससे वह एक दिनके लिये भी जालिमसिहके उस प्रभुत्वको लुप्त करनेके अभिलाषी नही हुए । सारांश यह है कि जालिमसिह जैसी प्रकृतिके मनुष्य थे उसी उच्च क्षमता और स्वाधीनताके साथ राज्यशासन करनेके अभिलाषी थे । उमेद-सिह भी उनके ठीक उसी प्रकार मनोगत पात्र हुए थे । यद्यपि जालिमसिह राजकीय प्रत्येक विषय पर महाराव उमेदसिहका मत ग्रहण करते और उनसे परामर्श करते थे । परन्तु ऐसा होनेपर भी जालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही समस्त कार्य करते थे, साधु टाड् साहव लिखते है कि महाराव उमेदसिंह एक ऊँची श्रेणीके चिन्ताशील मनुष्य और राजपूत स्वभाव सुलभ अनेक गुणोसे विभूषित थे । इनको शिकार खेलनेका अधिक शौक था और श्रेष्ठ घोड़ेपर चढ़कर बंदूक चलानेमे अच्छी सामर्थ्य रखते थे । जालिमसिहने इनके प्रति यहांतक आधिपत्यका विस्तार किया और उनको यहांतक अपने हस्तगत किया कि वह कभी भी जालिमसिहके हाथसे अपने उद्धार करनेके अभिलाषी हुए थे या नही इतना संदेह है । जालिमसिह किसी प्रकारसे भी किसी विषयमे महाराव उमेदसिहके ऊपर कभी बल प्रकाश नही करते थे, इधर उमेदसिहकी भी जितनी अवस्था बढ़ती जाती थी उतने ही वह धर्मके अनुशीलनमे लिप्त होते जाते थे, इस कारण उन्होने कठोर राजकार्यसे छुटकारेकी अधिक चेष्टा की । बुद्धिमान महाराव उमेदसिंह इस बातको भलीभाँतिसे जान गये कि सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करनेमे ऐसा विशेष प्रयोजन नहीं है, इस कारण उन्होने शीघ्र ही उस आशाको छोड दिया । उमेदसिह जितना ही राज्यशासनसे वैराग्य दिखाते थे इतना ही जालिमसिहकी अनुगत्यता स्वीकार करते जाते थे, जालिमसिहकी क्षमता तथा प्रतापका अधिपत्य उतनी ही अधिकतासे बढ़तागया ” ।

बुद्धिमान् जालिमसिह महाराव उमेदसिहके साथ कैसा व्यवहार करते थे उसके सम्बन्धमे इतिहाससे जाना जाता है कि यदि किसी भिन्नराज्यसे कोई राजदूत कोटेमे चला आवै तो सबसे पहिले उसको महाराव उमेदसिंहके समीप जाना पड़ता था । दूत उमेदसिहको अपना परिचय देकर उन्हींसे उत्तर पाता था, परन्तु वह उत्तर उमेदसिंह

अपनी इच्छानुसार नहीं देते थे । मंत्री जालिमसिंह जो कुछ लिख देते थे वही दिया जाता था । रजवाड़े वा अन्य किसी स्थानका कोई उच्च सामन्त निकाली हुई अवस्थामे यदि कोटेमे आकर आश्रय अथवा सहायता मॉंगता तो महाराव उमेदसिंहही उसको आश्रय वा सहायता देते थे, परन्तु सहायताका परिमाण जितना जालिमसिंह नियत करदेते थे उमेदसिंह उसको नहीं बढ़ा सकते थे । इधर जालिमसिंहका पुत्र अपनी भूवृत्तिको बढ़ानेके लिये प्रार्थना करता तो महाराव उमेदसिंहके विशेष अनुरोध न करनेपर जालिमसिंह उसे नही देसकते थे । बुद्धिमान् जालिमसिंह सभी विषयोमे महाराव उमेदका मत यहांतक ग्रहण करते कि वह अपने निजका व्यय बढ़ाने पर भी महाराव उमेदसिंहके बारम्बार अनुरोध प्रकाश करने पर भी वह उस व्ययको पूरा करनके लिय अपनी आमदनीको बढ़ाते थे । यदि परदेशस कोटेकी राजधानीमे व्यापारीगण बेचनेके लिये घोड़े लाते तो जालिमसिंह सबसे पहिल सर्वोत्तम घोडेको खरीद कर महाराजा और उनके पुत्रको देदते । चिरप्रचलित रीतिके अनुसार राजयकीय समस्त कागज पत्र पुस्तक मोहर और सब प्रकारके राजचिह्न महलके भीतर महारावके निजके सेवकोंकी सावधानीमे रक्खे जाते थे, परन्तु जालिमसिहकी अनुमतिके बिना कोई भी उसे प्रियोग वा व्यवहार नही करसकता था । एक दिन महाराव उमेदसिंहके पुत्र कुमारकिशोरसिह जालिमसिहके एकमात्र पुत्र माधोसिहके साथ एक क्षेत्रमे जिस समय अपने २ घोड़ोंको शिक्षा देरहे थे उस समय किशोरसिहके प्रति माधोसिंहने अनादर दिखाया, जालिमसिहने दंडस्वरूपमे अपने पैतृक देश नाणतामे माधोसिहको भेज दिया । जालिमसिहके इस व्यवहारसे अवश्य ही उनके सुविचार और राजभक्तिने प्रकाश पाया । महाराव उमेदसिहके बारम्बार अनुरोध करने पर उन्होने पुत्रको क्षमा नही किया ।

जालिमसिहने महाराव उमेदसिहके साथ प्रकाशमे जिस राजभक्तिको प्रकट किया था उसके सम्बन्धमे बहुतसे प्रवाद प्रचलित है । एक समय जालिमसिह महलमे बैठे हुए राजकीय देवमंदिरमे पूजा कररहे थे। इसी समयमे महाराव उमेदसिहके पुत्र वहॉं गये । वह यह नही जानते थे कि जालिमसिंह वहॉं पूजा कररहे है । उस समय शीतकाल था मंदिरकी जमीन कुछ एक भीग रही थी । जालिमसिह जिस रजाईको कधेके ऊपर रक्खे हुए पूजा कररहे थे उसी रजाईको पृथ्वीपर आसनकी जगह उन्होने बिछा दिया, और राजकुमारको उस पर बैठकर पूजा करनेके लिये कहा । जब पूजा समाप्त होगई तब राजकुमार चले गये जालिमसिहका जो सेवक उस स्थान पर था उसने विचारा कि जब राजकुमार इस रजाईके ऊपर बैठ गये है तो हमारे स्वामी इसको अपने व्यवहारमे नही लावेगे । इस कारण वह उस रजाईको निकम्मी जानकर एक कोनेमे फेक देनेके लिये उद्यत हुआ, परन्तु जालिमसिंहने उसके मनके भावको जानकर उसी समय उस रजाईको उसके हाथसे लेलिया, और अपने शरीरपर डालकर "राजकुमारके चरणोसे यह पवित्र होगई" भक्तिके साथ यह बात कही । इसका सरलतासे अनुमान होसकता है कि अत्यन्त सामर्थ्यवान् मनुष्य यदि ऐसा आचरण

करै तो अत्यन्त विचित्रता है। जालिमसिहने जिस प्रकार विनय और नम्रता प्रकाश करके अपने प्रबल आधिपत्यका विस्तार किया, ऐसा अन्यत्र दृष्टिमे नही आता । सारांश यह है कि चतुरता और नीतिज्ञता ही इसका मूल है ।

जालिमसिह जैसे परम ज्ञानी विख्यात थे अपने यहाँ सेवक और कर्मचारियोके रखनेमे भी उसी प्रकारसे विशेष प्राज्ञता दिखाते थे । उनमे इस प्रकारकी एक शक्ति थी जिससे उन्होने अपने कर्मचारी और सेवकोको अपने वशीभूत कर रक्खा था । और वह कर्मचारी और सेवकोके ऊपर विशेष दया प्रकाश करते थे, और उनके साथ मित्रता होजानेसे कोई भी इनका किसी प्रकारका अनिष्ट नही कर सकता था, यद्यपि जालिम उन कर्मचारी और सेवकोके प्रति प्रयोजनीय समस्त अभावको पूरण कर देते थे, और न्यायके साथ उनको प्रत्येक विषयमे सीमाबद्ध स्वाधीनता देते थे । परन्तु उनको किसी प्रकार भी स्वेच्छाचारी नही होने देते थे । वह उन कर्मचारियोको उनके आत्मीय स्वजनोके प्रतिपालन करनेके समस्त अनुष्ठान करदेते थे, पर्वोत्सवमे, विवाहमे जन्म और मृत्युके समयमे मुक्तहाथसे उनको रुपया देते थे, परन्तु कभी भी उनको इच्छानुसार बलसे वा अन्यायसे धन उपार्जन नही करने देते थे । इतिहाससे जाना जाता है कि पठान और महाराष्ट्र पंडित ही उनके यहां सबसे अधिक विश्वासी कर्मचारी थे । इन्होने पठानोंको सामरिक पदपर नियुक्त किया और मरहठोको राजनैतिक कार्यपर नियुक्त किया । यह अपने स्वजातीय मनुष्यको किसी कार्यमे नियुक्त नहीं करते थे । उनके शासनके शेष समयमे एक मात्र शक्तावत् सम्प्रदायके विशनसिह कोटेकी फौजदारी पदपर नियुक्त थे । दलेलखाँ और महरावखाँ नामक दो मनुष्य जालिमके अत्यन्त विश्वासी कर्मचारी और मित्र थे । कोटेका विराट किला आगरेके किलेके अतिरिक्त भारतवर्षमे जिसकी बराबर दूसरा नही है वही किला दलेलखॉने बनवाया था । उसी दलेलखॉने झालरापाटन नामका अत्यन्त रमणीक नगर बनवाया । कोटेके अन्यान्य समस्त किलोका भी संस्कार इसी दलेलखाँने करवाया था, जालिमसिंह दलेलखॉको इतना प्यार करते थे वह कहा करते थे कि "दलेलखॉकी मृत्युके पहिले मानो हमारी मृत्यु होजायगी" । महरावखॉ कोटेके पैदल दलके नेता थे । इन्होने अपनी सुशिक्षासे उस सेनाको अत्यन्त ही रण निपुण कर दिया थां । कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "वह सेनादल प्रत्येक मासमे बीसरोज अर्थात् बीस दिनका वेतन पाता था, और दो वर्षके शेष होनेपर बाकी सब वेतन मिल जाता था" ।

---

(१) कर्नल टाड् साहबने इस स्थानपर टीकेंमे लिखा है कि हमारे अधीनमें जालिमसिहने एक सेनादल इस महरावखॉके अधिनायकत्वमें दिया, उस सेनादलने आठ दिनमें हाड़ौतीसे लगे हुए हुलकरके अधिकारी समस्त देशोंपर अधिकार करलिया था । उस सेनादलने जनरल सरजान मालकामके अधीनमें स्थित सेनादलके साथ मिलकर "सौदी" किलेकी दीवारको लांघकर विशेष वीरता दिखाई थी ।

छठवां अध्याय ६.



कोटेराज्यकी नवीन राजनैतिक अवस्थाका परिवर्तन–बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यकी संधिका सूत्रपात–संधि स्थापनमें जालिमसिंहका अभिमत–पिडारियोंको दमन करनेके लिये संधिका प्रस्ताव–सधिवंधन–संधिपत्र–महाराष्ट्नेता कोटेराज्यसे जो कर लेते थे, अंग्रेजी गवर्नमेण्टका वह ग्रहण करना–करकी सूची–पिडारियोंका युद्ध–उस युद्धमे जालिमसिंहका सहायता करना–उसके पुरस्कारमे कोटेराज्यको बृटिश गवर्नमेण्टका कईएक देश देना–जालिमसिहके वंशानुक्रमसे कोटेके शासनकर्ता पदपर नियोगपत्रमें गवर्नमेण्टकी सम्मति देना और उसपर हस्ताक्षर करना–उसके सम्बन्धके नियोगपत्र–गवर्नमेण्टके द्वारा कोटेराजको प्रदत्त देशकी राजसनद–दानपत्र–कोटाराज्यके महाराव राजा उमेदसिंह–कोटाराज्यका परिवार–किशोरसिह–विशुनसिह–पृथ्वीसिंह–राजकुमारोंके स्वभाव और चरित्र–जालिमसिहके दो पुत्र माधोसिंह और गोवर्धनदास–दोनोंके स्वभाव और चरित्र–भ्रातृविच्छेद–पिताकी सामर्थ्य घटानेके लिये गोवर्धनदासकी चेष्टा करना–किशोरसिहके साथ पृथ्वीसिह और गोवर्धनदासका मिलन–षड्यंत्र–माधोसिहको फौजदारपदकी प्राप्ति–महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु–कर्नल टाड्का कोटेमे आगमन–कर्नल टाड्का राजदरबारमे षड्यंत्रका समाचार पाना–जालिमसिहको भयंकर पीड़ा होना–आरोग्यप्राप्ति–कर्नल टाड्के द्वारा जालिमसिहको षड्यंत्रका सम्वाद ज्ञात होना–राजनैतिक विभ्राट–कर्नल टाड्का राजनैतिक आचरण–जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये प्रकाशरूपसे चेष्टा करना–कोटेके राजा किशोरसिहको कर्नल टाड् और जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार सेनाके द्वारा महलमे बंदकरना–किशोरसिंहका महलको छोड़कर बाहर जाना–कर्नल टाड्का महाराव किशोरसिहको फिर महलमें लाना–गोवर्धनदासको कोटेसे निकलवाना–कर्नल टाड्के उद्योगसे महाराव किशोरसिंहके साथ जालिमसिहका फिर संमिलन–महाराव किशोरसिहका अभिषेक–जालिमसिंहका कोटेसे दंड नामक करको रहित करना ।

इस समय हम कोटेराज्यके इतिहासका एक नवीन अध्याय अंकित करनेके लिये आगे बढ़े है । यवन शासनके पीछे मरहठे पिडारी इत्यादि अत्याचारी लुटेरे भारतवर्षके शांति–नाशकोंके प्रवल प्रतापके समय चतुर नीतिज्ञ जालिमसिह कोटेराज्यकी किस भावसे रक्षा करते आये है, पहिले अध्यायमे उसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है । जिस समय सामान्य वाणीकीवेशी ईस्टइण्डियाकम्पनीने जगदीश्वरकी कृपासे समस्त भारतमे अपने प्रवल प्रभुत्वका विस्तार कर शासनशक्तिको दृढ़ कर लिया, और देशीय राजाओंकी अवस्थामे अन्तर उपस्थित करादिया इस समय हम उसी समयके इतिहासको वर्णन करनेमे प्रवृत्त हुए है । जिस कार्यसे रजवाड़ोके राजा एक समय प्रवलप्रतापसे राज्यशासन कर अक्षयकीर्ति संचय करगये है, जिन राजपूत राजाओने अप्रमेय वीरता, असीम साहस अनुपम शूर वीरता और प्रवल पराक्रम प्रकाश करके अफगानिस्थानतकको जीत लिया था, जिन राजपूतराजाओने एक समय एक २ पराक्रमी यवन बादशाहकी शासनशक्तिको विचलित किया था, जिन राजपूतराजाओंकी सहायतासे अकबर, शाहजहां औरंगजेव इत्यादि बादशाहोने भारतके प्रत्येक प्रान्तमे अपनी शासनशक्तिको फैला

दिया था, जिन राजपूत राजाओसे यवन बादशाह मनही मनमे अधिक भयकरते थे,जिन राजपूतराजाओंके प्रचंड वाहुवलसे भारतवर्षकी अन्य सभी जातियां थर २ कांपती थी वही राजपूतराजो वही राजपूतजाति, बिना युद्ध और विना रुधिर बहाये तथा बिना आपत्ति किये किस प्रकारसे वृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनके लिये तैयार हुए, हमारे बुद्धिमान् पाठक कर्नल टाड् साहबकी उक्तिको पढ़ कर इसका अनुमान सरलतासे करसकेगे '।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि "सन्१८१७ईसवीमे जब कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल मार्किस आफ हेष्टिंगसने पिडारियोंके साथ युद्ध करनेकी घोषणा की उस समय घोषणापत्रमे लिखा था कि, पिंडारी लुटेरे दस्युदलके नेता तथा लूटमारकी प्रथा चलानेवालोका यह उदय हुआ है, यह प्रकाश किया जाता है कि कोई भी इस युद्धके समयमे निरपेक्षभावसे नही रह सकैगा" और यह भी घोषणा किया गया कि भारतवर्षके समस्त देशीय राज्योके सर्वसाधारणकी मंगल कामनाके लिये जब उन लुटेरे पिडारियोके नाश करनेकी आवश्यकता हुई है, तब जो कोई अंग्रेजोको सहायता न देगा उसे अंग्रेजोका शत्रु समझा जायगा। राजपूत राजा हमारी समान शांति और सुशासन स्थापन करनेके विशेष अभिलाषी थे, इस कारण उनको हमारे साथ रक्षण, पीड़न संधि स्थापन करनेके लिये इस प्रकारसे बुलाया गया। और इस संधिवंधनसे वह चिरकालके लिये लूटनेवाले तस्करोके हाथके छुटकारा पासकेंगे यह भी उनको सूचना दीगई, और इसी उपकारके बदलेमे वे हमारी शासनशक्तिकी अधीनता स्वीकार करै, और हम उनके राज्यकी रक्षाका भार ग्रहण करते है, इस कारणसे उनको राज्यकी आमदनीके कितने ही अंश कर स्वरूपमे देने होगे,यह भी कहा गया"।

कर्नल टाड् साहबकी उक्त उक्ति भलीभॉति प्रकाश कररही है कि राजपूत राजाओकी अवस्था शोचनीय होगई थी, इसीसे राजपूत जातिका वह जगत्विख्यात साहस, शूरता वीरता पराक्रम एकबार ही लुप्त होगया था। उन्ही राजपूतोके सिंहासनो पर राजपूत राजाकी वीरता पर दोष लगानेवाले बैठे थे। गवर्नमेण्टने बिना युद्ध किये इसीसे उन सबको वड़ी सरलतासे अपनी अधीनतामे बॉध लिया। राणा प्रताप-महाराज जसवन्त महाराज जयसिह इत्यादिकी समान चिरस्मरणीय राजपूत राजा यदि उस समय जीवित होते तो पिंडारियोके भयसे ऐसी अधीनताको न स्वीकार करते।

सरकारके बुलानेसे राजपूत राजाओने एक एक करके वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधनमे आवद्ध होकर करद पदको ग्रहण किया। राजस्थानके अन्य राज्यके इतिहासमें पाठक उसको पढ़चुके है। उक्त आवाहन पत्रको पाकर जालिमसिहने किस प्रकारका व्यवहार किया, उसके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "सूक्ष्म दृष्टि जालिमसिह शीघ्र ही समझ गये थे कि वृटिश गवर्नमेण्ट उस प्रस्तावको पूर्ण करनेमे यथेष्ट उपकार दिखावैगी, और उस प्रस्तावके पूर्ण करनेमे सम्मान भी अधिक प्राप्त होगा। उसीके अनुसार उनके दूतने सबसे पहिले अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ संधि-वंधन स्थापित कर लिया। शीघ्र ही समस्त रजवाडे भी वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मिलगये।

"उस संधि बंधनके सम्बन्धमे आचिसन साहबने अपने ग्रंथमे लिखा है, कि सन् १८१७ ईसवीमे पिडारियोका नाश करनेके लिये जिन समस्त राजपूत राजाओने बृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता की थी। जालिमसिहके द्वारा सन १८१७ ईसवीके दिसम्बर मासमे कोटेके अधीश्वरके साथ एक संधिबंधन तैयार हुआ।उस संधिमे बृटिश गवर्नमेण्टने बाहरी शत्रुओंके आक्रमणसे कोटे की रक्षाका भार ग्रहण किया, कोटेसे मरहठोको जो कर पहिले मिला करता था अब वह कर बृटिश गवर्नमेण्टको मिला करेगा। यह नियत किया गया। सेंधियाको कोटेसे जो करांश मिलता था बृटिश गवर्नमेण्टने उसके सम्बन्धमे उसके साथ स्वतंत्र व्यवस्था की, और महाराव आवश्यकतानुसार अंग्रेजगवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता देंगे, यह भी निश्चय हुआ" । *

हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे इस संधिपत्रको नीचे प्रकाशित किया है, ।

संधिपत्र ।

पहली धारा-एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर महाराव उमेदसिहबहादुर और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिशिक्तोमे चिरस्थाई मित्रता संधि सम्बन्ध और समस्वार्थ विराजमान किया जायगा।

दूसरी धारा-इस संधिपत्रमे हस्ताक्षर करनेवालोके शत्रु मित्र एक दूसरेके शत्रु-मित्ररूपसे गिने जांयगे।

तीसरी धारा-बृटिश गवर्नमेण्ट कोटाराज्य और उनके अधीनके देशोसे अपने अधीनमें रक्षण वे क्षणका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुई है।

चौथी धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरकालतक बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार करेंगे और इससे पहिले कोटाराज्यका जो अन्य सब राज्योंके साथ सम्बन्धबन्धन था वह सब राजा अथवा राज्य इसके पीछे कोई सम्बन्ध नहीं रख सकेंगे।

पांचवी धारा-बृटिश गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त महाराव और उनके उत्त-राधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण अन्य किसी राजा वा राज्यके साथ किसी प्रकारका संधिबंधन स्थापन नहीं करसकेंगे। परन्तु वह अपने मित्र और कुटुम्बी राजाओंके साथ सांसारिक पत्रव्योहार करसकेंगे।

छठवीं धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण किसी राज्यपर अत्याचार वा आक्रमण नही करसकेंगे, और यदि दैवात् किसीके साथ कुछ झगड़ा उपस्थित होजाय तो वह झगड़ा चाहै महारावकी ओरसे हो चाहै अन्य किसी राजाकी ओरसे उस विवादकी मध्यस्थताका भार बृटिश गवर्नमेण्टको ही रहेगा।

सातवी धारा-कोटेराज्यसे इतने दिनोतक जो कर महाराष्ट्र राजाओको अर्थात पेशवा, सेंधिया, हुलकर और पवारों देते थे,इसके पीछे चिरकालके लिये वह समस्त कर दिल्लीमें बृटिश गवर्नमेण्टके उसके साथ लगी हुई सूचीके अनुसार देने होंगे।

---

* Aitchisonr?s Treaties

आठवीं धारा–अन्य कोई राजा कोटेराज्यसे और किसी प्रकारके करका दावा नहीं करसकेगा; और यदि अन्य कोई राजा उस प्रकारके करके लिये दावा करेगा तो वृटिश गवर्नमेण्ट उस दावीको उत्तर देगी ऐसा निश्चय होचुका है।

नववीं धारा–वृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधके अनुसार कोटेको यथाशक्ति सेनाकी सहायता करनी होगी।

दशवीं धारा–महाराव, उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तगण उनके राज्यमें पूर्ण शासक क्षमता युक्त अधीश्वररूपसे रहैगे, और वृटिश गवर्नमेण्ट अपनी दीवानी और फौजदारीकी शासनशक्ति कोटेराज्यपर नहीं फैला सकैगी।

ग्यारहवीं धारा–ग्यारह धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र दिल्लीमे लिखा गया और एक ओर मिष्टर चार्ल्स थियोफिलास मेटकाफ और दूसरी ओर महाराज शिवदानसिह, साह जीवनराम, और लाला फूलचंदके हस्ताक्षर सहित यह मोहरांकित हुआ। और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल, और महाराव उमेदसिह और उनके शासनकर्ता राजराणा जालिमसिहके स्वीकार करने पर आजकी तारीखसे एक महीनेमे लिया जायगा।

दिल्ली
२६ दिसम्बर सन् १८१७

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।
रेसिडेण्ट।
महाराज शिवदानसिह।
फूलचँद।
रावराजा उमेदसिहबहादुर।
राजराणा जालिमसिह।
(हस्ताक्षर) हेष्टिंग्स्।

सन् १८१८ ईसवींकी २६ जनवरीको ऊचरनामक स्थानके डेरोमे महामान्यवर गवर्नर जनरलसे यह संधिपत्र स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे०आडाम।
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी।

ऊपर लिखा हुआ संधिपत्र प्रकाशित करता है कि सन् १८१८ ईसवीकी २६ वी जनवरीसे कोटेराज्यने उमेदसिहके वंशानुक्रमसे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी अधीनता स्वीकार करली, और इतने दिनसे जो महाराष्ट्रदल बलपूर्वक उनके राज्यपर अत्याचार और उपद्रव करता था, और उनसे कर लेता था, इतने दिनोंमे उसकी शान्ति होगई, सेन्धिया हुलकर पँवार और पेशवा यही चार प्रधान नेता कोटेराज्यसे जो कर ग्रहण करते थे कोटाराज उस करको नवीन प्रभु अंग्रेज गवर्नमेण्टको देनेके लिये तैयार होगा। महाराष्ट्रगण कोटेराज्यसे कितना कर लेते थे हम आचिसन साहबके ग्रन्थसे उसकी सूची नीचे प्रकाश करते है।

(महाराष्ट्रोंको इससे पहिले जो कर दिया जाता था–उसकी सूची।)

(१) कोटा, (२) ७ काटडियो और (३) शाहाबाद इन तीन परगनोके लिये स्वतंत्र करदेना होता था।

कोटेका कर।

नगद मुद्रा ... ... २००००० रुपया।
द्रव्यादि .. .. १००००० ,,

जोड़ ३००००० ,,

द्रव्यके हिसाबसे घटाकर मूल्य २०००० ,,

नगद बचत २८०००० रुपया।

दो लाख अस्सी हजार, चांदोड़ी उज्जयनी, एवं इन्दोरी रुपयेके कारण प्रतिसैकड़ा ८ रुपया बट्टेके हिसाबसे घटत २२४०० रुपया।

शेष बचा २५७६०० रुपया।

दो लाख सत्तावनहजार छः सौ गुमानसाही रुपया, दिल्लीका दो लाख चौवालीस हजार सातसौ रुपयेकी समान।

उक्त रुपया निम्नलिखित प्रकारसे विभक्त होता था।

सेन्धियाका अंश।

नगद . ... ७७००० रुपया।
द्रव्य ... ... ३८५०० ,,

जोड़ ११५५०० ,,

द्रव्यके हिसाबसे रुपये करनेम कमी . ... ७७०० ,,

नगद .... १०७८०० ,,

एक लाख सात हजार और आठसौ उज्जयनी चांदोड़ी एव इन्दौरी रुपया। उक्त रुपया आठ रुपया सैकड़े बट्टे पर बना .... ८६२४ ,,

बाकी गुमानसाही रुपया ९९१७६ रुपया।

हुलकरका प्राप्त कर उक्त प्रकारसे सेन्धियाकी समान था।

पँवारका अंश।

नगद . ... ४६००० ,,
द्रव्य ... . २३००० ,,

६९००० ,,

द्रव्यहिसाबसे रुपया वनानेमे घटी ... . ४६०० ,,

नगद ... ... ६८४०० ,,
प्रतिसैकडा आठ रुपया घटीसे देशी रुपया वनानेमे घटी। ५१५२ ,,

शेष गुमानशाही ५९२४८ रुपया।

सातोकोटड़ियोका देय कर।

नगद	बूँदीका	२२१५८ रुपया।
घटी सैकड़ा ५ के हिसावसे		११०८ ,,
		२१०५० रुपया।
	गुमानसाही	२११०५० ,,
	दिल्लीके सम तुल्य	१९९९७॥० रुपये।

विशेष विवरण।

प्रथम कोटरि

आंतरदाका कर .. .. बूँदीका	३८०० रुपया।
घटी (५ सैकड़ा हि०)	१९० ”
वाकी गुमानसाही रुपया	३६१० ”

उक्त रुपया निम्न लिखित दो बरावर अंशोंमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१८०५ रुपया
हुलकरका अंश	१८०५ ”
	३६१० ”

दूसरी कोटरि

वलवानका कर .... बूँदीका	१००० रुपया.
घटी	५० ”
गुमानसाही	९५० ”

उपरोक्त रुपया निम्नलिखित तीन भागोमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	४०० रुपया.
हुलकरका अंश	४०० ”
पंवारका अंश	१५० ”
	९५० ”

३,४, एव पांचवी कोटरि

करवर गैता और पीपलादाका कर ...	बूँदीका	३५६० रुपया.
घटी ५ सैकड़ा हिसाबसे...		१७८ ”
गुमानसाही रुपया		३३८२ ,,

उक्त रुपया निम्नलिखित अंशोमे विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१५२० रुपया.
हुलकरका अंश	१५२० ,,
पँवारका अंश	३४२ ”
	३३८२ रुपया.

छठवीं और सातवी कोटरि

इन्द्रगढ़ और खातोलीका कर	....	१३७९८	रुपया.
५ सैकड़ा हिसाबसे बट्टा	....	६९०	"
गुमानसाही		१३१०८	"

सेधिया और हुलकर उक्त रुपया बराबर दो अंशोमें विभाग करलेते थे।

शाहबाद देशका कर।

पेशवाको उक्त परगनेसे ठीक कितना रुपया कर मिलता था इसका निश्चय नही जाना जाता परन्तु ऐसा अनुमान है कि वे २५००० रुपये लेते थे, उसका आधा अंश नगद और अपरार्द्धांश द्रव्य लिया जाता था।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ।
राव राजा उमेदसिंह।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचँद।

ऊपर लिखेहुए संधिपत्रको पढ़कर पाठक भलीभाँतिसे जानगये होंगे कि सन् १८१८ ईसवीके शेष भागमे रजवाड़ेके अन्यान्य राज्योकी समान कोटेके भाग्यका चक्र भी बदल गया था।

मरहठे, पठान और पिंडारियोकी अधीनताकी जंजीरको तोड़कर जालिमसिंह वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन हुए। यद्यपि सरकारने देशीय राजाओको मरहठे और पिंडारियोके हाथसे उद्धार कर लिया था परन्तु इतिहास इसको प्रमाणित करता है कि गवर्नमेण्टने केवल अपनी सेनाके द्वारा ही नहीं वरन अपनी राजनीतिके बलसे देशीय राजाओकी सेनाकी सहायता लेकर पिंडारियोका नाश करके अपना प्रताप प्रबल करलिया था जो राजपूत राजा गवर्नमेण्टके साथ संधि करके उनकी अधीनताके पाशमे बँधगये; और चिरकालतक उनकी अधीनतामें रहना स्वीकार किया, उनकी अवस्था शोचनीय होने पर भी वह यदि एकता अवलम्बन करके महाराष्ट्र और पिंडारियोपर आक्रमण करते तो सरलतासे महाराष्ट्र और पिंडायोका प्रताप और प्रभुत्व लुप्त करसकते थे, पर इनके लिये एकता होना असम्भव था। जैसे भी हो इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा।

कर्नेल टाड् साहबने उक्त संधिबंधनका उल्लेख करके लिखा है; कि इस समय अवसर पाकर समस्त भारतवर्ष हाथमे अस्त्र लेकर उठा। दो लाख मनुष्य एक उद्देशसे एक साथ मिलकर भारतवर्षसे लुटेरे अत्याचारी और पीडित करनेवालोकी रीतिको जड़से उखाड़नेके लिये धावमान हुए। हाड़ौती देशकी सीमामे ही सबसे पहिले पहिल समर होनेकी सम्भावना थी, इस हेतु जालिमसिंहके समीप एक अंग्रेज एजेण्टका भेजना अत्यन्त आवश्यक हुआ, कोटेके राज्यसे सेना सामन्त और रसद आदि जहाँतक मिल

सके उसको संग्रह करके शत्रुके साथ उन सबका प्रयोग कर शत्रुओको कोटे वा उसके आसपासके देशोसे भगानेके लिये उक्त एजेण्ट तैयार हुआ, कोटेसे उक्त एजेण्टको इतनी सहायता मिली कि उसने जालिमसिहके डेरोमे पहुँचते ही पांच दिनमे कोटेराज्यके प्रत्येक घाट वा प्रधान २ मार्गके मुखपर सेनाके डेरे स्थापित किये, इसी समयमे जनरल सर जान मालकम नर्मदाके पार होकर दक्षिणसे बहुत थोड़ी सेनाले अगणित शत्रुओसे घिर-कर भी उत्तरकी ओरको जारहे थे, कोटेसे पांच सौ पैदल अश्वारोही और चार तोपै उक्त जनरलकी सहायताके लिये गई थी, बृटिश भारतके शासन इतिहासमे इस उज्वल और घटनापूर्ण समयमे जब गंगाजीके किनारसे समुद्रतकके विस्तारित देश रणमदसे उन्मत्त होगये थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके डेरोमे ही समर चलानेका प्रधान केन्द्रस्थल होगया, उस समय जालिमसिहने अंग्रेज गवर्नमेण्टकी यथाशक्ति सहायता करनेमे कसर नही कि। सेनासे घोडोसे और रसदआदिके द्वारा उन्होंने उस समय पिडारियोका नाश करनेके लिये सब प्रकारसे सरकारकी सहायता की"।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिहने प्रतापशाली बृटिश गवर्न-मेण्टके साथ कोटेका भाग्य विजड़ित किया था परन्तु उनके अधीनमे जो मरहठे मंत्री और कर्मचारी नियुक्त थे उन सभीने एक मुखसे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रताके न करनेका अनुरोध किया। परन्तु जालिमसिह भलीभांतिसे जानगये थे कि अंग्रेजोकी शासनशक्ति क्रमशः जिस भावसे प्रवल होगई है उससे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रता किये विना अन्तमे अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। इसी लिये अपनी तीक्ष्णवुद्धिसे भारतवर्षकी राजनैतिक अवस्था परिवर्तनोन्मुख देखकरही उन्होंने पिडा-रियोका नाश करनेमे सम्पूर्ण सहायता की। पिडारियोका नाश करनेके पीछे गवर्न-मेण्टने जिन देशोंपर अपना अधिकार करालिया था उनमे हुलकरके अधिकारी चार देश जो जालिमसिहने हुलकरसे जमामे लिये थे, उन चारो देशोका राजस्वत्व जालिमसिहको गवर्नमेण्टने देदिया। परन्तु नीतिज्ञ जालिमसिहने अपने पुरस्कार स्वरूप उन चारो देशोको किसी प्रकारसे भी न लेकर अपने प्रभु कोटापति महाराव राजा उमेदसिहके नामसे उनको देनेके लिये कहा। गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके इस विश्वासी व्यवहारको देखकर अत्यन्त संतुष्ट हो शीघ्र ही उनकी कामनाको पूर्ण करदिया।

सन् १८२७ ईसवीके २६ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके साथ जिस समय कोटेराज का संधिबंधन समाप्त होगया। उस समय जालिमसिंहके मन्त्रित्व पक्षमे गवर्नमेण्टने

---

(१) महात्मा टाड् साहव ही अंग्रेजोके एजेण्ट होकर कोटेमें भेजे गये थे, वह इस स्थानपर अपने टीकेमे लिखते है कि "हम इतिहासके लेखक उस समय सेन्धियाकी सभामें एसिस्टण्ट रेसिडेण्ट पदपर नियुक्त थे, लार्ड हेष्टिंगसने उनको राजराणा जालिमसिहके निकट भेजा। वह (टाड् सन १८१७ ईसवीकी १२ वीं नवम्बरको ग्वालियर छोडकर २३ तारीखको कोटेसे वारह कोश दक्षिणके पूर्वमें रेउता नामक स्थानमें जालिमसिंहके डेरोंमें गये "।

किसी प्रकारका भी हस्ताक्षेप नही किया, ऐसी विधि, वा संधिमे ऐसी कोई धारा नही रक्खी गई। परन्तु जालिमसिंहके द्वारा गवर्नमेण्टने विशेष सहायता पाकर सन् १८१८ ईसवीकी २६ फरवरीको उक्त संधिपत्रमे निम्नलिखित धाराको और भी नियुक्त किया।

"संधि बंधनमे आवद्ध होकर दोनो पक्ष इस वातको स्वीकार करते है कि कोटेराजके अधीश्वर महाराव उमेदसिहके परलोक जानेके पीछे कोटाराज्य उनके बड़े पुत्र और उत्तराधिकारी महाराज किशोरसिहके वर्तमानमे और अवर्तमानमे उनके वंशधर उत्तराधिक्रमसे चिरकालतक उस राज्यको भोगते रहेगे, और कोटेराज्यकी समस्त विभागकी शासन सामर्थ्य राजराणा जालिमसिहके ही हाथमे रहेगी, और उनके परलोक जानेके पीछे उनके बड़े पुत्र कुमार माधोसिह और उनके पीछे उनके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे उक्त शासन सामर्थ्यको पावैगे।

दिल्ली,
२० फरवरी सन १८१८ ई० }

(हस्ताक्षर) सी टी. मेटकाफ।
महाराव राजा उमेदसिह बहादुर।
राजराणा जालिमसिह।
महाराज शिवदानसिह।
फूलचंद।
गोविन्दराम।

मन्तव्य—यह अतिरिक्त धारा महामाहिमवर गवर्नर जनरलसे न्स१८१८ईसवीकी १ मार्चको लखनऊमे स्वीकृत हुई।

(हस्ताक्षर) जे. आडाम.
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी.*

इस अतिरिक्त धाराने जितनी अधिकतासे कोटेराजका महान् अनिष्ट किया, पाठकगण उसको यथास्थान पढेंगे।

पिडारियोके नाश करनेके सम्बन्धमे विशेष सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट जालिमसिहको चार परगनोका राजस्वत्व एक बार ही देनेके लिये तय्यार हुई थी, उसे हमारे पाठक पहिले ही पढ़ चुके है।

परन्तु जालिमसिहके स्वयं उस पुरस्कारको ग्रहण करनेमे असम्मत होनेसे उनकी कामनाके अनुसार कोटेराज उमेदसिहको वह पुरस्कार दिया गया, हमने यहांपर उसकी सनद प्रकाश की है।

सनद।

"जिस कारणसे गवर्नमेण्ट और कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिहमे मित्रता स्थापित हुई है, और उक्त महारावने अंग्रेज गवर्नमेण्टसे जो विशेष सहयोगिता की है वह सर्वसाधारणमें विशेषरूपमे विदित है। उस मित्रताके चिह्न स्वरूप महामहिमवर मार्किस आव हेष्टिंगस सकोन्सिल गवर्नर जनरल वहादुरने कप्तान टाड्के द्वारा निम्नलिखित

* Aitchison's treaties Vo IV.

परगनोका राजस्वत्व ऊपर लिखे हुए महारावको दिया है और उसके साथ सन् १८१८ ईसवी २६ दिसम्बरको दिल्लीमें जो संधिवंधन होगया है उसीके अनुसार महारावके समीपसे शाहाबाद परगनाका जो कर मिलता है उस करके देनेसे उनको छुटकारा मिलगया है, वह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गण उसे वंशानुक्रमसे भोग करे।

इसके पीछे महाराव उक्त स्थानोके प्रभूस्वरूपसे अपनेको विचारैगे, और दयालुताके व्यवहारसे वहांकी प्रजाके अनुराग भाजन होकर उनको अपने शासनके अधीनमें रक्खैगे। अन्य कोई भी उसमे हस्ताक्षेप नहीं करसकेगा।

परगना	डीग।
"	पचपाड़।
"	अहवार।
"	गंगरा।

सन् १८१९ ईसवीकी २५ वीं सितम्बरको सकौन्सिल गवर्नर जनरलके द्वारा हस्ताक्षर सहित और मोहरांकित हुआ "।

यद्यपि गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेके पहिले राजराणा जालिमसिह कोटेराजकी समस्त राजशक्तिको अपने हाथमे रखकर एकाधिपत्य करते आये थे, परन्तु ऐसा होनेपर भी महाराव उमेदसिह वहादुर अपनेको जालिमसिका खिलौना नही जानते थे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टके. साथ संधिवंधन समाप्त होनेपर जिस दिन महाराज उमेदसिहको कोटेका नाममात्रका अधीश्वर और जालिमसिह तथा उनके वंशधरोका कोटेकी समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर कहकर स्वीकार करालिया उसी दिनसे महाराव उमेदसिह मानो प्रकृत क्रीड़ामे विघोषित हुए, वृद्ध महाराव उमेदसिहने यद्यपि उसी कारणसे किसी प्रकारका उपद्रव वा आपत्ति उपस्थित नही की, तथा अपना तिरस्कार जानकर किसी प्रकारसे भी असंतोष प्रकाश नहीं किया, और अपने भविष्यके उत्तराधिकारियोपर महा अनिष्टकारक बीज बोताहुआ देखकर किसी प्रकारका प्रतिवाद भी नही किया, परन्तु अन्तमे उसी सूत्रसे कोटेराज्यमे महा विभ्राट उपस्थित हुआ।

कर्नल टाड् साहब लिखते हे कि" सन् १८१९ ईसवीके नवम्वर मासतक सम्पूर्ण शांति विराजमान रही, परन्तु उसके पीछे महाराव उमेदसिहकी मृत्यु होनेपर सिहासनके अधिकारियोके हृदयमे नवीन भावका उदय होनेसे राजराणा जालिमसिह ऐसी शोचनीय अवस्थामे पड़े कि वह ठीक समयमे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायता न पाकर एकमात्र अपनी चतुरबुद्धिके बलसे किसी प्रकार भी उस विपत्तिसे उद्धार प्राप्त न कर सके।" महाराव उमेदसिहकी मृत्युके समयमे कोटेराजके परिवारकी अवस्थाके सम्बन्ध में साधू टाड् साहब लिखते है, " समय महाराव उमेदसिहके तीन कुंमार (१) किशोरसिह (२) विशनसिह और (३) पृथ्वीसिंह जीवित थे। युवराज किशोरसिहकी अवस्था इस समय चौवालीस वर्पकी होगई थी। उनके स्वभाव चरित्र

मृदु और नम्र थे, यद्यपि उन्होने बाल्यावस्थासे ही उत्तम शिक्षा पाकर मनुष्य समाज से पृथक् हो सरलतासे स्वजातीय धर्म कर्म पद्धतिके सम्बन्धमे अद्वितीय ज्ञान प्राप्त किया परन्तु मनुष्य समाजके सम्बन्धमे वैसी अभिज्ञता प्राप्त करनेमें समर्थ न हुए। वह अपने एक महोच्च पैतृक वीरवंशके इतिहासके एक गाढ पंडित थे, और जातीय गौरव और जातीय महोच्चभाव उनके हृदयमे इस प्रकारसे भर रहा था कि वह सरलतासे अपने वंशके पूर्व गौरवको स्मरण कर गर्व कर सकते थे, परन्तु वह स्वभावसे ही नम्रतादि गुणो और शिक्षासे विभूषित हो अपने धीरस्वभाव पिताकी समान शान्त बुद्धि होगये थे, इस कारण उन्होने गौरवगरिमाकी सामर्थ्य और प्रभुत्वकी ओर ध्यान न देकर कोटा राजको जालिमसिहके द्वारा शासित होनेमे कोई आपत्ति न की।

दूसरे राजकुमार विशनसिह किशोरसिहकी अपेक्षा तीन वर्ष छोटे थे, और वह भी बड़े भाईकी समान नम्र प्रकृति विद्वान् और सीधे थे। वह भी जालिमसिहकी भॉति सरल और श्रद्धालु थे पर तीसरे राजकुमार पृथ्वीसिह जिनकी तीस वर्षकी अवस्था से कम थी, वह वीर तेजा हाडाजातिके आदर्शस्वरूप और राजपूतस्वभाव सुलभ शस्त्र भक्त थे।

महाराव उमेदसिहके तीनों कुमारोंमे एकमात्र पृथ्वीसिह ही जालिमसिंहको राज्य का सर्वमय कर्ता हर्ता देख कर और पिता उमेदसिहको क्रीड़नस्वरूपसे जालिमसिह की आज्ञापालनमे नित्य तत्पर देखकर मन ही मनमें महा असंतुष्ट हुए, और वह अपने नेत्रोमे उनको तुच्छ देखने लगे। इस लिये उन्होने जालिमसिंहके हाथसे अपना और अपने वंशका उद्धारसाधन करने वा उनके लिये जीवनतक देनेका संकल्प किया। तीनो राजकुमार परस्पर परम शोभाकी श्रृंखलामे बॅधकर प्रीति और स्नेहसे अपना समय व्यतीत करते थे। परन्तु दूसरे राजकुमार विशनसिंह जालिमसिहके पुत्र और उत्तराधिकारियोके प्रति अधिक सद्व्यवहार करते थे, बहुतोके मनमे इस प्रकारके संदेह उपस्थित होते थे कि इनमे अवश्य ही कोई भीतरी भेद है। प्रत्येक राजकुमारको वार्षिक पचीस हजार रुपये आमदनीवाली भूमिका अधिकार मिला था, वह अपने २ कर्मचारियोको उन देशोमे सावधानीसे रखते थे।

राजराणा जालिमसिहके दो पुत्र थे। माधोसिंह और गोवर्धनदास। बड़े माधोसिंह उनकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे और गोवर्धनदास एक जार स्त्रीसे थे। परन्तु गोवर्धनदाससे जालिमसिह अधिक स्नेह करते थे, और उन्होने अपने भविष्य उत्तराधिकारी माधोसिंहकी समान उनको भी अधिक सामर्थ्य दी थी। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते है उस समय माधोसिंहकी अवस्था ४६ वर्षकी थी। माधोसिंहकी मूर्तिको देखकर उनको प्रतापशाली कहनेका बोध नहीं होता था वरन् आलसी और गर्वित कहना ठीक होता था। विशेष करके महाराव उमेदसिह माधोसिहको बालकपनसे ही अधिक श्रेष्ठ जानते थे, और माधोसिंहकी प्रत्येक प्रार्थना विना बाधा दिये पूर्ण करते थे, इसीसे उनके चरित्र इस प्रकारके हुए, विशेष करके

थोड़ी अवस्थामे ही माधोसिह शासनशक्तिको प्राप्त होकर अर्थात् जिस समय जालिमसिह मेवाडसे चलकर महलको छोड कोटेराज्यमे भ्रमण करनेके लिये गये उस समय माधोसिहको कोटेका फौजदार पद दिया गया था, इससे वह अधिक गर्वित होगये । उनके उस फौजदार पदपर नियुक्त होते ही समस्त सेनाके वेतन आदि देनेका भार उनके हाथमे सौपागया । उसी कारणसे वहुतसा धन उन्होने अपने हाथमे रक्खा, परन्तु राज्यके अन्यान्य कर्मचारियोके ऊपर जैसी शासन दृष्टि थी माधोसिहके ऊपर वैसी दृष्टि नही थी । काई भी साहस करके माधोसिंहके विरुद्ध कुछ कह नहीं सकता था । इधर माधोसिहने वहुतसा धन अपने हस्त-गत देख उस साधारण धनका जिस भॉति अपव्यय किया उस कारणसे इनके ऊपर वहुतोको संदेह हुआ । इन्होने उस धनसे अत्यन्त सुन्दर रमणीक वगीचा वनवाया, उत्तम घोड़े मोल लिये, जलविहार करनेके लिये सजीहुई नौकाएं वनवाई, राजकुमार यह देखकर अपनी उन सव विपयोमे हीनता मानते थे । उधर माधोसिह भी जैसे महा मूल्यवान् वस्त्रोका व्यवहार करते थे, महाराव उमेदसिह भी उस प्रकारके वस्त्र नही पहरते थे । ऐसा जानाजाताहै कि माधोसिहके पिता जालिम-सिह अपने पुत्रको इस प्रकार विलासी और अधिक खर्चालू देखकर नित्य उपदेश देते थे परन्तु उनके इस उपदेशका कुछ फल नही हुआ ।

उस समय गोवर्द्धनदासकी अवस्था सत्ताईस वर्षकी होगई थी । गोवर्द्धनदास एक चतुर, साहसी, वुद्धिमान् और चंचल पुरुप थे । माधोसिह राजपरिवारके साथ जैसा असद्व्यवहार करते थे उसी भांति गोवर्द्धनदास राजपरिवारके प्रति भक्ति प्रीति और स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे, उसीसे गोवर्द्धदासके साथ राजकुमारोकी विशेष मित्रता होगई । विशेप करके वीरतेजस्वी पृथ्वीसिंहके चरित्रोके साथ गोवर्द्धन-दासके चरित्रोकी ऐक्यता होनेसे दोनोमे विशेष मित्रता उत्पन्न हुई, गोवर्द्धनदास जालिमसिहकी वृद्ध अवस्थाके पुत्र थे, इस कारण जालिमसिह स्वभावसे ही माधो-सिहकी अपेक्षा गोवर्द्धनदाससे अधिक स्नेह करते थे । इसी कारणसे उन्होने गोवर्द्धनदासको "प्रधान" पदपर नियुक्त किया और गोवर्द्धनदास राज्यके कृपि विभागके कर्ता हुए । गोवर्द्धनदासके उस पदपर प्रतिष्ठित होते ही राज्यका समधिक धन उनके हाथमे प्राप्त हुआ । अधिक क्या कहै माधोसिह और गोवर्द्धनदासमे परस्पर कुछ भी सद्भाव नही था। वरन वे सदा परस्परमे शत्रुता और झगडा करते रहते थे।कर्नल टाड साहव लिखते है कि जालिमसिहने चतुर और राजनीतिज्ञ होकर भी दोनो पुत्रोंको रीतिके अनुसार शिक्षा न दी इसीसे अतमे उनको वहुत दुःख उठाना पड़ा था।

हमने ऊपर जिस समयके राजपरिवार और जालिमसिहके परिवारका वृत्तान्त वर्णन किया है, उस समय अर्थात् सन् १८१७ ईसवीके नवम्वर मासमे कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिह वहादुरने प्राण त्याग किये । उनके स्वर्ग चले जानेके पहिलेसे राजपरिवारमे अति गुप्तभावसे जो राजनैतिक षड्यत्रका वीज वोया जाकर

अंकुरित हुआ था वह इस समय प्रकाशित होगया,और इसीसे अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक घटना हुई। महाराव उमेदसिह जिस समय इस संसारमे विदा हुए उस समय राजराणा जालिमसिह गागरौनके डेरोमे थे, इन्होने मृत्युका समाचार पाते ही जिससे महारावकी प्रेतक्रिया यथारीतिसे होजाय और युवराज किशोरसिह कोटेके राजपदपर अभिषिक्त हो, उनकी सुव्यवस्था करनेके लिये शीघ्र ही राजधनीको कूच किया।

कर्नल टाड् साहब लिखते है कि " जिस समय पोलिटिकल एजेण्ट (कर्नल टाड्) मेवाडसे मारवाडमे गये थे उस समय उन्होने उक्त मृत्युसंम्वाद पाकर इस सम्बन्धमे क्या करना कर्तव्य है इसको जाननेके लिये गवर्नमेण्टके निकट एक प्रार्थना पत्र भेजा। इसी अवसरमे इन्होने कई दिनतक उदयपुरमे विश्राम कर कोटेके राजपरिवारकी आभ्यन्तरिक अवस्था और राजकुमारोके मनही मनमे जो गुप्त राजनैतिक उद्देश बदल गये थे, और जिस उद्देशको अनिष्टकारक विचारा था, उसका विशेष तत्त्व जाननेके लिये वह कोटेकी राजधानीको गये। टाड् महोदयने कोटेमे जाकर देखा कि वृद्ध जालिमसिह उस समय तक महलके निवास सुखको छोड़कर राजधानीसे आध कोश दूरीपर अपने विश्वासी सेवकोके साथ डेरोमे जारहे है, उनके पुत्र और उत्तराधिकारी माधोसिह रात्रिके समय अपने महलमे रहते है। उन्होने और भी देखा कि कोटेके नवीन महाराव और उनके दोनो छोटे भ्राता पहिलेकी समान किलेके महलमे निवास करते है, और गोवर्धनदास तथा पृथ्वीसिह नवीन अधीश्वरको अपनी इच्छानुसार सलाह देकर अपने हस्तगत कर रहे है, और कुमार विशुनसिहको उस चक्रसे बाहर कर दिया है। यदि महाराव उमेदसिहके प्राण त्याग करनेसे पहिले जालिमसिहके दोनो पुत्रोमे बहुत दिनोसे ठनाहुआ झगड़ा प्रकाशित होजाता और उससे महलमे ही दोनोके साथ समर होना संभव था, परन्तु जालिमसिह उस समय तक उस झगड़ेको अंशमात्र भी न जानसके।

---

(१) सन् १८१९ ईसवीकी २१ वी नवम्बरको राजराणा जालिमसिंहने जिस पत्रमे अपने स्वामीकी मृत्युका समाचार कर्नल टाड् साहबको भेजा था उसी पत्रका अनुवाद इस स्थानपर दिया गया है।

" रविवारके दिन अपराह्न समयतक महाराव उमेदसिहका स्वास्थ्य सबप्रकारसे उत्तम था। सूर्यास्तकी एक घडीके पीछे वह श्रीव्रजनाथजीके दर्शन करनेके लिये गये। महाराव भी मूर्तिके समीप छ वार साष्टाग प्रणाम करके सातवीं वार जैसे प्रणाम करनेके लिये चले कि वैसे ही मूर्छित होकर अचेत होगये, उस अवस्थामें उनको महलमे लाकर शय्यापर लिटा दिया। उस समय यथाशक्ति चिकित्सा करनेमे भी कसर न की गई परन्तु सभी चेष्टाएँ विफल होगई, रात्रि दो घड़ी जानेपर महाराव स्वर्गवासी हुए।

शत्रुको भी ऐसा महाशोक प्राप्त न हो, परन्तु भगवानकी इच्छाके विरुद्धमे क्या होसकता है ? आप हमारे बंधु हैं, और महाराव जिन राजकुमारोंको छोड़ गये हैं उनका सम्मान और मंगल भार आपके हाथमें अर्पित है, मृत महारावके बड़े पुत्र महाराव किशोरसिंह सिंहासनपर अभिषिक्त हुए हैं। मित्रकी अवगतिका कारण प्रकाश किया "।

जिस समय महाराव उमेदसिंह परलोकवासी हुए उसके कुछही दिनो पीछे जालिमसिंह भयंकर रोगसे पीडित हुए। राजदरबारमे जो जालिमसिंहकी शासनशक्ति को लुप्त कर महाराव किशोरसिंहके हाथमे राज्यका समस्त भार अर्पण करनेके लिये गुप्तरूपसे तैयारियाँ कर रहे थे, वह लोग जालिमसिंहकी उस कठोर पीड़ासे मनही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और अपनी आशाको सरलतासे पूर्ण हुआ जानकर बहुत प्रसन्न होरहे थे, परन्तु कुछ दिनके पीछे जालिमसिंहने सम्पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की। तब वह परम दु खित हो शोकसागरमे निमग्न हुए, परन्तु उस पीड़ाके अवसरमे उन्होंने अपनी अभिलाषित कार्य सिद्धिके समस्त अनुष्ठान तैयार कर लिये। उनकी वह कामना उनके वह अनुष्ठान सर्वसाधारणमे विदित होनेपर भी वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक उसको बिन्दुमात्र भी नहीं जान सकते थे। वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड् साहबने सबसे पहिले यह समाचार वृद्ध जालिमसिंहसे कहा, उन्होने कहा "कि आपके दोनो पुत्र परस्परमे अनिष्ट साधन करनेके लिये समरकी तैयारी कररहे हैं और महाराव किशोरसिंहकी अभिलाषा है कि भगवानकी इच्छानुसार आपकी मृत्यु होते ही आपका शासन दण्ड भी आपकी चिताके साथ भस्मीभूत होजाय।"

शीघ्र ही कोटेमे भयंकर राजनैतिक विभ्राट उपस्थित हुआ। राजराणा जालिमसिंह साठ वर्षतक अपने कठिन प्रतापसे कोटेको शासन कर अतुलसामर्थ्यवान् होकर रहे थे, परन्तु इस समय उनके उस प्रताप और उस सामर्थ्यकी जड़मे विषम आघात लगना आरंभ हुआ। वृटिश गवर्नमेण्टने राजराणा जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर जिस अतिरिक्त सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किये उसका विषमय फल इस समयसे प्रारंभ होने लगा। गवर्नमेण्टने उस नवीन संधिकी धारापर हस्ताक्षर कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वमय कर्तापद भोग करनेकी सामर्थ्य दान की। यह किस प्रकार अविवेकता और कैसी अविचारिता दिखाई गई। इसी समयसे यह प्रमाणित होने लगा।

"कर्नल टाड् साहबने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पददान सम्बन्धी अतिरिक्त संधिपत्रको दृढ़तासे समर्थन किया है। उनके मतसे गवर्नमेण्टकी ओरसे यह कर्त्तव्य कर्म हुआ है, उन्होने इस कार्यसे केवल इतना ही कारण दिखाया कि पिंडारियोके युद्धके समयमे जालिमसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टके अनेक उपकार किये थे, इस कारण उन कार्योंके पुरस्कारमे उक्त वंशानुक्रमसे उपभोग्य पद देना अन्याय कारक नही है। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम कर्नल टाड् साहबके इस मतको पोषण नही करसकते। हम पूछते है कि भिन्न स्वाधीन राज्यके राजमंत्री वा प्रधान शासन कर्तापदको एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये सनद देनेकी क्या वृटिश गवर्नमेण्टको सामर्थ्य थी? कभी नहीं। महाराव उमेदसिंह यदि उस समय अपने भविष्य उत्तराधिकारियोके मंगलकी ओर दृष्टि रखते, यदि वह यथार्थ राजपूतोकी समान वीर तेजस्वी और नीतिज्ञ होते तो क्या गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको उक्त अधिकार देसकती थी?

उमेदसिहके आपत्ति करने पर क्या वृटिश गवर्नमेण्ट फिर भी बलपूर्वक जालिमसिहको न्यायके अनुसार वंशानुक्रमसे कोटेका हर्ता कर्ता विधाता पद देनेमे समर्थ होती ? गवर्नमेण्ट विलायतके किसी राज्यके किसी अमात्यको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देसकती थी ? विलायतकी बात तो दूर जाने दो इस भारतवर्षमे हैदराबाद, हुलकर, सेन्धिया इत्यादि राज्यके किसी प्रधानमंत्रीको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देनेमे समर्थ होती ? हम इसको कह सकते है कि जालिमसिहको उस भावसे उक्त पद देनेको सरकारको कोई सामर्थ नही थी, केवल महाराव उमेदसिहको अत्यन्त निरीह देखकर कौशलतासे पूर्ण उस प्रकार कार्य हुआ था । मानते है कि जालिमसिहने गवर्नमेण्टकी विपत्तिके समयमे विशेष सहायता की थी परन्तु इन्होने जो सेना सामन्त रसद धनादि दिया था वह किसका था ? क्या वह महाराव उमेदसिंहका नही था ? अवश्य ही मानना होगा कि कोटेके अधीश्वरकी सेना सामन्त लेकर जालिमसिहने गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। चतुर राजनीतिज्ञताके बलसे जालिमसिह कोटेके प्रबल सामर्थ्यवान् प्रधानमन्त्री होकर भी उस समय महाराव उमेदसिहके वेतनभोगी सेवक थे, उस अवस्थासे भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके गवर्नमेण्टने जालिमसिहको वंशानुक्रमसे कोटेका समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर पद देकर महाराव उमेदसिहको वंशानुक्रमसे नाममात्रका राजपद रहने देकर अत्यन्त ही अज्ञताका कार्य किया था । इसके फलस्वरूपमे थोडे दिनोमे ही कोटेराज्यमे जो अत्यन्त शोचनीय काण्ड सघटित हुआ । पाठक पीछे उसको भलीभांतिसे पढ़ चुके है ।

उपस्थित राजनैतिक विभ्राटमे कर्नल टाड्ने जिस राजनीतिके अनुवर्ती होकर जिस भावसे कार्य किया उससे हम अत्यन्त प्रसन्न नहीं, उन्होने पहिलेसे ही जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये प्राणपणासे चेष्टा की । उन्होने उस संधिपत्रकी अतिरिक्त धाराको सम्पूर्ण प्रबल करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोका प्रयोग किया था, परन्तु उन्होने इसके सम्बन्धमे जो एक बात कही है वह अवश्य ही विचारने योग्य है। वह लिखते है कि वृटिश गवर्नमेण्टने जब जालिमसिहको वंशानुक्रमसे कोटेका सर्व शक्तियुक्त शासनकर्ता पद देकर दानपत्र पर हस्ताक्षर किये थे। तब किसी प्रकारसे उसे प्रबल रखना गवर्नमेण्टका प्रधान कर्म था । यदि ऐसा न करती तो राजपूत राजा कभी गवर्नमेण्टकी उक्ति और प्रतिज्ञा पर विश्वास नहीं करते। सारांश यह है कि इससे गवर्नमेण्टके गौरवकी हानि होनेकी सम्पूर्ण संभावना थी । इस लिये जालिमसिह का पक्ष समर्थन करना अवश्य कर्तव्य होगया। कर्नल टाड् साहबने अवश्य ही सरलभावसे इस कथाको लिखा है । वृटिश गवर्नमेण्टको प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये ऐसा करना अवश्य ही प्रशंसनीय और प्रार्थनीय था, परन्तु कर्नल टाड् यदि आजतक जीवित रहते, वह यदि भारतेश्वरीके सन् १८५७ ईसवीके विख्यात घोषणापत्रकी प्रत्येक प्रतिज्ञाको देखते तो वह कभी भी उस प्रतिज्ञाकी रक्षाकी दुहाई देकर अज्ञानता मूलक पक्षका समर्थन नहीं कर सकते थे ।

इस समय यथार्थ घटनाका ही अनुसरण करना ठीक होगा, राजकुमार पृथ्वीसिह और मंत्रीपुत्र गोवर्द्धनदास दोनो ही क्षत्रिय स्वभाव सुलभ वीरता वल विक्रममे बलवान दोनों ही साहसी और दोनो ही राजनीति विद्यामे पारदर्शी थे। उन्होंने नवीन महाराव किशोरसिहको भलीभांतिसे समझा दिया कि वृद्ध जालिमसिहने अन्यायसे राजनैतिक स्वाधीनताको संग्रह करके राज्यके यथार्थ अधीश्वर पदको ग्रहण किया है और इसी प्रकार अन्याय वृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता कर एक अतिरिक्त मधिधारा पर हस्ताक्षर करके वड़े पुत्र माधोसिहको वंशानुक्रमसे सर्वशक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद दिया है। अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिहका पहिला जो संधिपत्र नियत हुआ था, उन्होंने उसी संधिपत्रको उपस्थित करके महारावको उसका समस्त अर्थ व्याख्या करके समझा दिया, और उसी कारणसे भलीभांतिसे उनके हृदय पर इस भावको अकित कर दिया। मूलसंधिपत्रके अनुसार राजराणा जालिमसिह किसी प्रकार भी कोटेके सर्वशक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद वंशानुसार भोग नहीं करसकते थे। उन्होने महाराव किशोरसिह से कहा कि आप गवर्नमेण्टके समीप यह प्रस्ताव करिये कि जिससे गवर्नमेण्ट मूल संधिपत्रके अनुसार कार्य करनेको तैयार हो। उन्होने मूलसंधिपत्रकी दशमी धाराका उल्लेख करके कहा कि इस धारामे लिख रहा है कि " महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यके पूर्ण शासन क्षमतापन्न अधीश्वररूपसे रहैगे। इस कारण गवर्नमेण्ट मूलसंधिपत्रमे इस प्रकार लिखकर उसके पीछे किस प्रकारसे अतिरिक्त धारासे जालिमसिहको वंशानुक्रमसे कोटेके पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न मत्रीका पद देसकती ? उन्होने और भी कहा कि मूलसंधिपत्रमे महाराव उमेदसिह और गवर्नमेण्ट सभीके हस्ताक्षर और मोहर लगी है, परन्तु अतिरिक्त धारामे यह नहीं है, और महाराव उमेदसिह उस अतिरिक्त धाराके अस्तित्व तकको नही मानते।

नवीन महाराव किशोरसिहके साथ राजराणा जालिमसिह और उनके वड़े कुमार माधोसिहके शीघ्र ही साक्षात् होनेसे रहित मित्रताकी जंजीर छिन्नभिन्न होजायगी। कर्नल टाड् साहबने वृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेण्टरूपसे इस समय विचित्र अभिनय आरंभ किया। उन्होने इस समयसे जालिमसिहके अनुकूल पक्षका अवलम्बन करके, जिससे जालिमसिह वंशानुक्रमसे उक्त सामर्थ्यको संभोग करसकै और जिससे किशोरसिह और उनके उत्तराधिकारीगण चिरकाल तक नाममात्रके कोटेके अधीश्वर पदपर स्थित रहै, वह इस लिये अपनी समस्त शक्तिको प्रयोग करने लगे। उन्होने दोनो पक्षोमे राजनैतिक विवादानलको प्रज्वलित देख कर प्रकाशरूपसे महाराव किशोरसिहसे कह दिया कि " जब कि हमने जालिमसिहके समीप प्रतिज्ञा की है तव हम नाममात्रके राजाकी उपाधि धारण करनेवाले कोटेके अधीश्वरकी कोई भी ऊँची अभिलाषाका पक्ष समर्थन नही कर सकते। एकमात्र जालिमसिह ही कोटेराज्यके यथार्थ अधीश्वररूपसे गिने जाते है आप केवल नाममात्रके राजा है। कोटेके शासनकर्ता नही है। " यह सरलतासे जाना जासकता है कि कर्नल टाड्ने केवल अपने प्रभु वृटिश गवर्नमेण्टकी अवलम्बित नीतिका पक्ष समर्थन करनेके लिये कहा था।

परन्तु महाराव किशोरसिहने टाड् साहबकी उस उक्तिकी ओर इस समय तक ध्यान नही दिया। कर्नल टाड्ने जालिमसिहके प्रति महाराव किशोरसिहको उस भावसे दृढ़ प्रतिज्ञ होते देखकर, अंतमे स्थिर किया कि पृथ्वीसिह और गोवर्द्धनदासकी परामर्शके अनुसार महारावने यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित किया है, उन दोनोको अन्य स्थानपर विना भेजेहुए किसी प्रकार भी शान्त प्रकृति महाराव किशोरसिंहको हस्तगत नही कर सकते, इस कारण उन्होने पहिले उस उद्देशको सिद्ध करनेका यत्न किया।

कर्नल टाड् और जालिमसिहने उस अत्यन्त निन्दनीय और अप्रयोजनीय उद्देशको साधन करनेके लिये सवसे पहिले स्थिर किया। जिस किलेमे पृथ्वीसिह और गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिहके साथ रहते है, उस किलेकी दीवारको लांघकर दोनोको वंदी कराजाय। परन्तु वह उसी समय समझ गये कि ऐसा करनेसे महा गडवड़ होगी, और अन्तमे युद्ध होनेसे महाराव किशोरसिह तक मारे जायँगे, इस कारण उन्होने इस प्रस्तावको छोडकर अन्तमे यही निश्चय किया कि सेनासे किलेकी दीवारोको चारोओरसे घेर रक्खो और जिससे किलेमे भोजनकी सामग्री न पहुँच सके ऐसा उपाय करो ऐसा होनेसे जव भोजनके अभावसे महा कष्ट होगा तव महाराव किशोरसिह अवश्य ही आत्मसमर्पण करेगे। वास्तवमे कर्नल टाड् और जालिमसिहकी उक्त परामर्शके अनुसार शीघ्र ही वह उपाय किया गया। कोटेके न्यायसंगत अधीश्वर किशोरसिंह वृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये अपनी राजधानीमे अपने महलमे अपनी ही सेनाके द्वारा परिवेष्टित हुए। वृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है। परन्तु कर्नल टाड् और जालिमसिहकी आशा पूर्ण न हुई, भोजनके अभावसे आत्मसमर्पण न करके महाराव किशोरसिह प्रजाके ऊपर विश्वास स्थापित कर अपने पैतृक राज्यकी पूर्ण शासन सामर्थ्यको प्राप्त करनेकी आशासे पॉच सौ अश्वारोही हाड़ासेनाके साथ अपने कुलदेवताको तूणमे रखकर विजयपताका उडाय रणवाजेके शव्दसे चारो दिशाओको कंपायमान करतेहुए साहसमे भरकर किलेसे वाहर हुए। जिस सेनाने कर्नल टाड् और जालिमसिहकी आज्ञासे किलेको घेर रक्खा था उसने किसी प्रकारकी भी वाधा न देकर भयभीत हो मार्ग छोड़ दिया, और महाराव किशोरसिह विना वाधा दिये किलेको छोडकर उस पॉच सौ सेनाके साथ दक्षिणकी ओरको चले गये।

कर्नल टाड् साहवने अपने परवर्ती घटनाके सम्वन्धमे लिखा है "कि महाराव किशोरसिहके वाहर जानेकी वार्ता सुनते ही एजण्टने शीघ्रतासे जालिमसिहके डेरोमें जाकर देखा कि महा गोलमाल उपस्थित हो रहा है, तव उन्होने वृद्ध जालिमसिहसे पूछा कि राज्यमे अशान्तिके विस्तारको रोकनेके लिये तुमने किस उपायका अवलम्वन किया है अथवा क्या करनेकी इच्छा करते हो ? इस समय जालिमसिहने जैसा व्यवहार किया वह अत्यन्त ही कष्टदायक था। सत्य हो वा काल्पनिक हो सन्देहसे चलायमान जालिमसिहके मुखसे एजेण्टने इस समय कृत्रिम

न होकर असामयिक राजभक्तिको प्रकाश करनेवाली उक्तिको श्रवण किया। जालिम सिंहने कहा, मै महारावके अधीनमे रहकर राजकर्म करूँगा, नाथद्वारेके मंदिरमें जाकर जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करूँगा, तथापि अपने प्रभुका विश्वासहन्ता होकर कलंकका टीका नही लगाऊँगा।" एजेण्टने जालिमसिंहके यह वचन सुन कर विचारा कि इससे हमारे राजनैतिक उद्देशमे कोई विघ्न नहीं होगा, इस कारण उन्होने बड़े आग्रहके साथ कहा कि "आपका उद्देश साधनके विरुद्धमे इस राज्यमे कोई बाधा नही है"। परन्तु उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्के समय दो भावसे कार्य करने पर महा अनिष्ट होनेकी संभावना है, यह उन्होने जालिमसिंहसे कह दिया। महाराव किशोरसिंहके साथ जो पाँच सौ अश्वारोही सेना गई थी, वह जिससे राज्यमे सर्वत्र विस्तार कर महा विभ्राट् उपस्थित न कर सके, इसके लिये जालिमसिंहसे विदा लेकर घोड़े पर सवार हो टाड् साहब महाराव किशोरसिंहका पीछा करनेके लिये बाहर चले। इन्होने राजधानीसे तीन कोश दक्षिणमे "रंगवाड़ी" नामक ग्रामके महलमे जाकर देखा कि महारावके अनुचर और सवार श्रेणीदलके दलमे विभक्त होकर बागकी दीवारके बाहरको जारहे है, और महाराव किशोरसिंह, अपनी सामन्तमंडली और उपदेष्टा महलमे भविष्यत्मे क्या करना कर्त्तव्य है इसके सम्बन्धमे परामर्श कर रहे है यथारीतिसे पहिलेसे समाचार देनेका अब समय नही था, इस कारण वह शीघ्र ही सभास्थानमे जा पहुँचे। उस सम्भावित विवादमें मान्य दिखा कर अभिवादन की रीतिको भंग नही किया, यद्यपि बहुत थोडी देर सम्मानके साथ वार्तालाप हुई, परन्तु टाड् साहबने बड़े आग्रहसे महाराव किशोरसिंह और सामन्तोको बुलाकर उपस्थित अवस्थाको समझा दिया। उन्होने सामन्तोसे कहा कि "आपने जिस पक्षका अवलम्बन किया है, उससे आप प्रकाशमे गवर्नमेण्टके शत्रु हुए है, और इससे आपके अधीश्वरका कोई मंगल नहीं होगा वरन इससे आपके विध्वंस होनेकी संभावना है,। सामन्तोने प्रीति और सतोषके बदलेमे यह अत्यन्त कष्टदायक तिरस्कार पाया और एजेण्टने गोवर्द्धनदासकी ओर आगे बढ़कर कहा कि "आप ही अपने पिताके विश्वासहन्ता शत्रु है, और आपसे महारावका किसी प्रकारका अमंगल प्राप्त नहीं होगा, आपने केवल स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये इस विभ्राट्को उपस्थित किया है, इस कारण इसके फलमे आपको यथेष्ट दड मिलैगा। तुरन्त ही गोवर्द्धनदासने अपनी तलवार निकाल कर हाथमे लेली, परन्तु एजेण्टने कुछ एक हँसते हुए उनकी ओर अवज्ञा दिखाकर गोवर्द्धनदासके गर्वित उत्तरकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर महाराव किशोरसिंहके समीप आगे बढ़कर उनसे कहा कि "महा-राव इस समय भी समय है। इस समय भी विशेष करके भविष्यतकी चिन्ता करनेका समय है आप जिस मार्गपर अग्रसर हुए है वह किसी प्रकार भी मंगलकारक नहीं है, मै प्रतिज्ञा करता हूँ कि न्यायसगत और आपके पदोचित जिस किसी प्रार्थनाको पूर्ण कर दूँगा, परन्तु केवल जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप नही करसकता, कारण कि सर्वसाधारणके विश्वासकी रक्षाके लिये हम उनकी उस शासनसामर्थ्यको अक्षत रखनेमे

बाध्य है, परन्तु आपके पद सम्मान और सुखस्वच्छन्दताकी ओर हम सम्पूर्ण दृष्टि रखते हैं, । एजेण्टके यह वचन सुनकर महारावका जिस समय इधर उधर कर रहे थे, उस समय एजेण्टने ऊँचे स्वरसे "महारावका घोडा ले आओ" यह कहकर महाराव किशारसिंहकी बाहु पकडी और दोनो सभाके कमरेसे बाहर हुए । महाराव किशोरसिंहने कुछ भी आपत्ति नही की । अतमे उन्होंने घोडोकी पीठ पर चढकर एजेण्टसे केवल इतना कहा, कि " मै आपकी ही मित्रताके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर हूँ, । महारावके भ्राता पृथ्वीसिंहने भी उस समय अपने मनके भावको प्रकाशित किया था, परन्तु सामन्त मडली मौन रही, गोवर्द्धनदास और उनके दो एक राजपरिपदोने उस समय जो एक बात कही एजेण्टने उसपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । एजेण्ट (टाड्) अपने परिपदोसे युक्त होकर महाराव किशोरसिंहके साथ घोड़े पर चढ़कर चले । सभी चुपचाप थे, कोई कुछ न बोल सका, इस प्रकारसे उन सबने किलेमे प्रवेश किया । एजेण्टने महाराव किशोरसिंहको राजसिंहासन पर बैठाकर पूर्व प्रतिज्ञाकी पुनरावृत्ति करके कहा कि " वर्तमान संकटावस्थामे महाराव विशेप सुविचारके साथ कार्य करे, उन्होंने और भी महारावसे कह दिया कि " महारावके भ्राता पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदास दोनो ही महारावके पाससे अलग रहेगे । गोवर्द्धनदासको हाड़ोतीसे एक बारही बाहर करना होगा । इसी निश्चयके अनुसार जून मासमे गोवर्द्धनदास राज्यविद्रोहके अपराधमे दोपी ठहराकर निर्वासितरूपसे दिल्लीमे रख दिये गये । और सपरिवार उसके भरण पोषणका प्रबध रयासतसे कर दिया गया । उसी समयसे महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमे फिर पूर्ववत् सद्भाव स्थापित होगया ।

" महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमे फिर सद्भाव स्थापन करनेके लिये महामहोत्सवकी तैयारी की गई । उसके उपलक्षमे सर्वसाधारण प्रजा स्वत प्रवृत्त होकर महा आनन्द ध्वनि करती थी । महलमे गन्तव्य मार्गसे सब दलके दल इकट्ठे होकर जालिमसिंह और उनके पुत्रको अभिवादन करते थे । पूजनीय जालिमसिंह इस सम्मिलन स्थानमे पितृ स्थानीय रूपसे गये, और राजकुमार अपराधी सन्तानकी समान क्षमा मागनेके लिये अग्रसर हुए । उन्होंने आगे बढ़कर जालिमसिंहकी जानु आलिंगन करनेके लिये चेष्टा की, जालिमसिंहने उस सन्मान प्रदर्शनको रहित करनेमे वृथा चेष्टा की । और उस प्रकार नम्रभावसे अपने अधीश्वरके प्रति सम्मान दिखानेमे कसर न की । पीछे परस्परके प्रति विश्वास विज्ञापन और सद्भाव प्रकाशक वार्तालाप होने लगी ।

एकमात्र कर्नल टाड्के राजनैतिक कौशल यत्न और उद्योगसे महाराव राजा किशोरसिंह, पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासके न्यायसंगत उद्योगके व्यर्थ होजानेपर निरीह स्वभाव महाराव किशोरसिंह फिर साक्षी गोपालस्वरूपसे राजसिंहासन पर विराजमान होनेके लिये तैयार हुए । वीर तेजस्वी गोवर्द्धनदासके निकाले जाने पर कर्नल टाड्ने जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका सद्भाव स्थापित करा दिया, ऐश्वर्य आडम्बर

और राजसम्मान दिखाकर किशोरसिंहको जालिमसिंहने हस्तगत करनेका उद्योग किया। सत्यप्रिय साधु टाड्ने एकमात्र वृटिश राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये कोटेके क्षेत्रमे यह विचित्र अभिनय किया। उन्होने आत्मविवेक बुद्धिका अपमान करके कूट राजनैतिक कौशल जालका विस्तार कर महाराव किशोरसिंहकी संमान स्वत्व स्वाधीनता और क्षमताको लोप कर जालिमसिंहका पक्ष समर्थन किया। जो हो कर्नल टाड्ने किशोरसिंह और जालिमसिंहमे सद्भाव स्थापित कराके प्रकाशरूपसे महाराव राजा किशोरसिंहके राज्याभिषेककी तैयारी की। सन् १८२० ईसवी अगस्त मासकी सत्रह तारीखको वड़ी धूमधामके साथ वह अभिषेक कार्य किया गया। राजपुरोहितने सवसे पहिले महाराव किशोरसिंहके मस्तक पर राजतिलक दिया, राजटीका देते ही कर्नल टाड् साहवने सवसे आगे वढ़कर राजाके मस्तक पर राजातिलक देकर महाराज किशोरसिंहको अनेक भांतिके हीरोका अलंकार पहरा कर उनकी कमरमे राजदडस्वरूपसे तलवार वांध दी। महारावने भेटमे गवर्नमेण्टको एकसौ सुवर्णकी मोहर उपहारमे दी। इस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरलके नामसे कर्नल टाड्ने राजराणा जालिमसिंहको महामूल्यवान राजवेश खिलत दिया। जालिमसिंहने उस वेशको पाकर उपयुक्त भक्तिसे कृतज्ञता प्रकाशके साथ नजरमे गवर्नमेण्टको पच्चीस सुवर्णकी मोहरे और भी दान की।

इस प्रकारश्य अभिषेकके उत्सव अनुष्ठानका एक गुप्त उद्देश था। कर्नल टाड्ने इस समय उस उद्देशको सिद्ध कर लिया। पहिले प्रस्तावके अनुसार माधोसिंहने आगे वढ़कर कोटेके फौजदाररूपसे महाराव किशोरसिंहके मस्तक पर राजतिल देकर कमरमे तलवार वाव दी, और नजर दी, प्रचलित रीतिके अनुसार महारावने उस भेटको लौटा कर माधोसिंहको खिलत देनेके साथ उनको वंशानुक्रमसे कोटेके फौजदारी पदकी सनद दान की। इस सनदके लिये ही इतनी तैयारी और उद्योग था। वह उद्योग इतने दिनोमे सफल हुआ। कर्नल टाड साहवने लिखा है "कि सवमे जो सद्भाव पुन स्थापनका सूत्रपात हुआ, उसको वढ़ानेके लिये एजेण्ट (टाड्) उक्त अभिषेकके उत्सवके पीछे और एक महीने तक कोटे राज्यमे रहे। उन्होने इस समय महारावको समझा दिया कि वह जैसी अवस्थामे पडे है उसीके अनुसार कार्य करना सव प्रकारसे कर्त्तव्य है, और उधर उन्होने माधोसिंहको समझा दिया, कि पवित्र संधिपत्रसे उनके ऊपर जो भारी दायित्व अर्पित हुआ है वह जिससे दुर्व्यवहार और निर्बुद्धिता वा असावधानतासे उस संधिको भंग न करे। कोटेको छोड़नेके पहिले ४ सितम्बरको एजेण्टने फिर सवको एक समितिमे इकट्ठा किया, और उसीमे सवने अकृत्रिम सद्भाव स्थापित किया। जालिमसिंह महाराव और माधोसिंह परस्परमे अतीत घटनाके लिये परस्पर एक दूसरे क्षमा करके भविष्यत्मे मित्रभावसे रहै ऐसी प्रतिज्ञा की"।

---

(१) कर्नल टाड् साहवने अपने दूसरी बारके भ्रमणवृत्तान्तमे इस अभिषेकके उत्सवको वर्णन किया है। वह भ्रमणवृत्तान्तमे देखो।

" सत्यकी जय अवश्य ही होगी। यद्यपि कर्नल टाड् साहबने प्रबल वृटिश शक्तिकी सहायतासे कोटेके न्यायमत अधीश्वर महाराव किशोरसिहकी सामर्थ्यको लोप कर जालिमसिहको वंशानुक्रमसे राजशक्ति दी, परन्तु भविष्यत्मे उस अन्याय और असत्यकी पराजय भली भॉतिसे होगई।

कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि " उपरोक्त साक्षात् शेष होनेके समय राजराणा जालिमसिंहने अपने राजनैतिक जीवनके शेष अभिनय स्वरूप दो उपयुक्त कार्य किये, उन कार्योंसे उनके अधीश्वर प्रभु और कोटेकी प्रजाके प्रति उनकी विलक्षण सज्जनताने प्रकाश पाया। अपनी मृत्युके पीछे अपने प्राचीन विश्वासी सेवकोके लिये उन्होने एक प्रतिभू पत्र तैयार करके महाराव किशोरसिह, पुत्र माधोसिह और एजेण्टसे यह कह-कर उनको हस्ताक्षर करनेका अनुरोध किया कि " यदि हमारे उत्तराधिकारी प्राचीन कर्मचारियोको कार्यमे नियुक्त करनेमे असम्मत हो तो उनको सम्पूर्ण स्वाधीनता देनी होगी, और उसके अतीत किसी कार्यके लिये भी उनसे जवाबदेही नही ली जायगी, और वह अपनी उच्छानुसार निवास कर सकेगे। " महाराव और माधोसिहने उस पत्रपर हस्ताक्षर करके जालिमसिहकी अभिलाषाके अनुसार वृटिश एजेण्टने भी उस पत्रके मतसे जिससे भविष्यत्मे कार्य हो उसके प्रतिभू स्वरूप हो स्वय उस पर हस्ताक्षर करदिया "।

जालिमसिहके और शेष कार्योंके सम्बन्धमे कर्नल टाड् साहबने लिखा है, " कोटे राज्यमे जालिमसिहने जिस अत्यन्त कष्टदायक दंड नामक करका प्रचार किया था उस करको एक बार ही दूर कर दिया। " इस रक्त शोषक करके रहित होनेसे जालिम-सिह एक और जैसे कोटेकी सर्व साधारण प्रजासे वृद्धावस्थामे प्रशसाको प्राप्त हुए, उधर गवर्नमेण्ट भी उसी प्रकारसे इस कार्य द्वारा जालिमसिहसे अत्यन्त सतुष्ट हुई। जालिम-सिहने अपनी कीर्तिकी रक्षाके लिये " दंडकर " रहितके स्मरण करनेके अर्थ कोटे-राज्यके प्रत्येक प्रधान २ नगरमे पत्थरका स्तभ स्थापित करके उसपर कर रहित की आज्ञा लिखवादी।

सप्तम अध्याय ७.



राजनैतिक विभ्राट्मे कर्नल टाड्का व्यवहार-बृटिश गवर्नमेण्टका जालिमसिंहका पक्ष समर्थन-गोवर्धनदासको निर्वासन दंड-मालवादेशमे गोवर्धनकी उपस्थिति-कोटेमे फिर राजनैतिक महा विभ्राट्-महाराव किशोरसिंहके साथ सेनाका योगदान-जालिमसिंहका महलके ऊपर गोले वर्षाना-महाराव किशोरसिंहका किलेको छोड़कर बाहर जाना-महारावका बूंदीमे जाना-राजभ्राता विशनसिंहका जालिमसिंहके साथ योगदान-गोवर्धनदासका महारावके साथ योगदेनेकी चेष्टा करना-उसका व्यर्थ होना-महारावका बूंदीको छोड़ना-महारावके प्रति हाड़ाजातिका सहानुभूति प्रकाश करना-महारावका वृन्दावनमे आगमन-गोवर्धनदास और बृटिश गवर्नमेण्टके अधीन मे स्थित राजपुरुषोका षड्यन्त्र-महारावका सेना सहित कोटेकी ओरको जाना-महारावका घोषणापत्र प्रचार करके हाड़ाजातिको अपने पक्षमे योग देनेके लिये बुलाना-महारावका बृटिश गवर्नमेण्ट के निकट अपना प्रस्ताव भेजना-जालिमसिंहका आचरण-महारावके विरुद्ध जालिमसिंहकी सेनाके साथ बृटिश सेनाका अग्रसर होना-सम्मिलित सेनाका महाराव पर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका जालिमसिंहके व्यूहको भेदन करना-अंग्रेजी सेनाका उस कार्यमे बाधा देना-अंग्रेजोके विरुद्ध समर करनेकी अनिच्छासे महारावका सेनासहित रणक्षेत्र त्याग करना-अंग्रेजी सेनाका फिर महाराव की सेना पर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका उस आक्रमणको व्यर्थ करना-महारावका सेनासहित प्रस्थान-अंग्रेजी सेनाका महारावके पैदलदलका नाश करना-कुमार पृथ्वीसिंहकी मृत्यु-दो वीरोका वीरता दिखाना-कर्नल टाड्का महारावके साथ संयुक्त सामन्तोके साथ क्षमा प्रदर्शन मूलक घोषणापत्रका प्रचार करना-सामन्तोंका अपने २ स्थानको चले जाना-समरका फल-अनुसंगिक घटनावली-महारावके साथ फिर संधिबंधनकी चेष्टा करना-नूतन संधिपत्र-महारावके लिये निर्द्धारित वृत्तिकी सूची-कर्नल टाड्की व्यवस्था-व्यवस्थापत्र-महारावके कोटेमें आनेके समय व्याघातमूलक घटना-महारावका फिर अपने राज्यमे चलेजाना-विशुनसिंहका राजधानीसे दूसरे स्थानको भेजना-जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका संमिलन-माधोसिंहके साथ महाराव की प्रीति स्थापन-जालिमसिंहकी मृत्यु-उनकी जीवनीकी समालोचना।

कर्नल टाड्की समान राजपूत बान्धव अंग्रेज यहाँतक भारतमे कोई भी नही आया। यह पाठकोंको मुक्तकंठसे स्वीकार करना होगा। राजपूतजातिके प्रति साधु टाड्का यहाँतक अनुराग, प्रीति और स्नेह था कि उन्होने सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये समय २ पर एकमात्र उस अनुराग, प्रीति और स्नेहसे परिचालित होकर अपने प्रभू गवर्नमेण्टके द्वारा अनुष्ठित राजपूत जातिके अपकारमूलक कार्यका प्रतिबाद, निन्दा और कठोर समालोचना करनेमे भी कसर न की। देशियोके पक्षका अवलम्बन करनेसे किसी अंग्रेज कर्मचारीको भी आजतक उस भावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेका साहस नही देखा। हम प्रत्येक पगपर इस इतिहासमें यथास्थान कर्नल टाड् साहबके साधु व्यवहार, उदार आचरण और निरपेक्ष न्याय विचार और श्रेष्ठ अनुष्ठानकी मुक्त कंठसे ऊँची प्रशंसा करते आये हैं। परन्तु अत्यन्त दुःखित हृदयसे वर्तमान प्रबन्धमें उनके एकमात्र राजनैतिक अभिनयका विषमय फल देखकर हम यहां दुःखी हुए है।

यद्यपि हम भलीभाँतिसे जान गये है, कि कर्नल टाड् अपने उपरितन प्रभू भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी आज्ञासे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी राजनीतिकी आज्ञापालन करनेके लिये यह शोचनीय अभिनय करनेके लिये वाध्य हुए,तथापि हमारा ऐसा विचार है कि वह स्वयं जिस कार्यमे मध्यस्थ थे और स्वय ही जिस कार्यके एक प्रधान नेता थे वह चाहते तो अवश्य ही उस शोचनीय अभिनयको अन्य प्रकारसे रहित कर सकते थे।

महाराव राजा उमेदसिहके साथ वृटिश गवर्नमेण्टका संधिवंधन जिस समय हुआ था, उस समय राजराणा जालिमसिहने कोटेके सर्वमय प्रभू स्वरूपसे असीम सामर्थ्य चलाई थी, इसको कौन नही मानेगा ? परन्तु तव उन जालिमसिहको कोटेमे सर्वमय प्रभू स्वरूपसे वंशानुक्रमसे रहनेका अधिकार देनेमे वृटिश गवर्नमेण्ट किसी प्रकार भी सामर्थ्यवान् न हुई, इस बातको कौन नही मानैगा ? जालिमसिंहने पिडारियोके युद्धके समयभ और उससे पहिले अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सम्पूणरूपसे सहायता की थी, परन्तु कोटेके प्रकृति राजशक्ति सम्पन्न उमेदसिहको वंशानुक्रमसे साक्षी गोपाल स्वरूपसे रखकर उनकी वंशानुक्रमसे समस्त शासनशक्तिको हरण कर जालिमसिहको उस शासनशक्तिका देना कौन राजनीतिक सगत था ? कौन धर्मशास्त्र संगत था ? कौन सभ्यता-विधि संगत था ? जालिमसिह तो महाराव उमेदसिहके वेतनभोगी भृत्यमात्र थे, उन्होने जो सेनाकी सहायता, रसदकी सहायता और जो आर्थिक सहायता की थी, वह सभी उमेदसिहकी थी, जालिमसिहकी निजकी कुछ भी नही थी, इस अवस्थामे उन जालिमसिहको वृटिश गवर्नमेण्टने पुरस्कार स्वरूपमे किस प्रकार यथार्थ नरपतिकी शक्तिको हरण करके उनको उसे वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये दिया था? किसी राज्यके इतिहासमे हमने ऐसी घटनाका दूसरा प्रमाण नही पाया । एक राज्यके प्रधान मंत्रीद्वारा अन्य राजाको उपकार प्राप्त हुआ है इसीसे क्या उस अन्य अन्य नरपतिके न्यायके वक्षस्थल पर, धर्मकी छातीपर, सत्यके वक्षस्थल पर पदाघात करके उस प्रधानमंत्रीको एक राज्यकी शासन सामर्थ्य वशानुक्रमसे उपभोग करनेके लिये दी जा सकती है, जालिमसिहके द्वारा कोटेराज्यके वहुतसे उपकार हुए थे यह उन्होने वेतनभोगी कर्मचारी स्वरूपसे अपने कर्त्तव्यको पालन किया था, उसके लिये वह कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे भोग करनेके अधिकारी नहीं होसके, गवर्नमेण्टने न्याय न करके वलपूर्वक महाराव उमेदसिहको अत्यन्त निरीह और नम्र देखकर जालिमसिहको वंशानुक्रमसे कोटेका प्रकृत अधीश्वरपद प्रदान किया,इसको कौन नही मानेगा। यदि एकमात्र जालिमसिहको ही जन्मभर तक उक्त शासनशक्ति चलानेकी सामर्थ्य देते तो इतनी हानि नही होती, वशानुक्रमसे उस शासनशक्तिका देना किस प्रकार युक्ति सगत होसकता था ? जालिमसिह वुद्धिमान् नीतिज्ञ और शासनकार्यमे सुदक्ष थे, इससे उनके उत्तराधिकारी भी इनकी समान होगे यह गवर्नमेण्टने किस प्रकार स्थिर किया था ? और जालिमसिंहकी समान उनके उत्तराधिकारी भी केवल शासनशक्तिको पाकर सतुष्ट होगे, कोटेके यथार्थ अधीश्वरकी कभी भी अनिष्ट कामना नही करेंगे, यह किस प्रकारसे विचार हुआ था ? राजनीतिज्ञ कर्नल टाड् साहवने अवश्य ही जालिमसिहको

उक्त अधिकार देनेके समय यह विचार लिया था। परन्तु उन्होने ऐसा विचार करके भी न्यायसगत कार्य नहीं किया । वरन वृटिश गवर्नमेण्टके उस विचारहीन अनुष्ठानके कार्यको परिणत करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोको प्रयोग कर इतिहासमें अपनी एकमात्र पक्षपातकी रेखाको अंकित किया है।

जालिमसिंहको अन्यायरूपसे कोटेकी शासनशक्तिको वशानुक्रमसे उपभोग करनेका अधिकार देकर जो विषैला फल फला था वशानुक्रमसे उसीसे कोटेकी शोचनीय अवस्था हुई। वह हमारे पाठकोको परवर्ती इतिहाससे विदित होसकैगा। उस शोचनीय अभिनयके लिये हम इतने दुःखित नही है, परन्तु इसी एकमात्र अनुष्ठानसे अंतमे कोटाराज दो भागोमे विभक्त होजायगा, कोटेके मूलराजकी शक्ति एकबार ही हीन होजायगी, जालिमसिंहके उत्तराधिकारी कोटेके प्राय. आधे अंशके अधीश्वर होगे! वृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिको फलस्वरूप हाड़ावती देशके सामान्य झालापरिवार भी महान् ऊँचे राजपद पर प्रतिष्ठित होगे यह कौन जानता था ।

पूर्व अध्यायमे वर्णन कर आये है कि वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड्ने मध्यवर्ती होकर वृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंहको सम्मत कराकर उनको साक्षी गोपालस्वरूपसे कोटेके सिंहासन पर बैठाल कर जालिमसिंहको कोटेके हर्ता कर्ता पदपर दृढरूपसे नियुक्त कर दोनोमे प्रीति स्थापन करके कोटेराज्यको छोड दिया। कर्नल टाड् साहबने विचारा था कि वृटिश गवर्नमेण्टने इस कार्यको जब न्यायमूलक कहकर उसे प्रबल रखनेमे यत्न करना चाहा है तब महाराव किशोरसिंह भी अवश्य ही उस कार्यको न्यायमूलक विचार कर अपने समस्त स्वार्थके नष्ट होनेपर भी जालिमसिंहके साथ चिरकाल तक सद्भावसे रहैगे, परन्तु शीघ्र ही उनका वह अनुमान व्यर्थ होगया। शीघ्र ही फिर किशोरसिंहके न्यायसगत स्वार्थके साथ जालिमसिंहके अन्यायमूलक स्वार्थका भयकर संघर्षण हुआ।

जालिमसिंहके पुत्र गोवर्द्धनदासको समस्त षड्यन्त्रका मूल और उसके द्वारा परिचालित होकर महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहकी शक्ति लोप करनेके लिये उद्यत जानकर कर्नल टाड् और जालिमसिंहने उस गोवर्द्धनदासको कोटेराज्यसे एकबारही निकाल दिया। गोवर्द्धनदासने राजनैतिक बंदीस्वरूपसे दिल्ली और इलाहाबाद इन दोनो नगरोमेसे दिल्लीमे रहनेकी इच्छा की इस कारण उसकी प्रार्थनाके अनुसार उसको दिल्लीमे ही बंदीभावसे रक्खा गया। कर्नल टाड् साहबने लिखा है "कि दिल्लीमे वह अपने कुटुम्बसहित रहे थे, और उनका भरण पोषण करनेके लिये उचित वृत्ति नियत करदी गई थी, वह जिस स्थान पर रहे वहाँ उनके भ्रमण और व्यायाम करनेके लिये विस्तारित स्थान दिया गया। और उस स्थानपर अंग्रेजोने उनकी ओर दृष्टि रखनेके लिये कितनी ही अश्वारोही सेनाका नियुक्त रक्खा था"।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "जाबुआके महाराजकी एक जारज कन्याके साथ विवाह करनेके लिये निकालेहुए गोवर्द्धनदासको सन १८२१

ईसवीमे मालवादेशमे जानेकी आज्ञा देकर अत्यन्त अज्ञानताका कार्य किया गया। गोवर्द्धनदासके उस नगरमे पहुंचते पहुंचते सब प्रकारसे शांतिके बदलेमे कोटेराज्यमे उत्तेजनाके लक्षण प्रकाशित होगये। कोटे और बूँदीराज्यमे षड्यंत्रमूलक पत्रादिके प्रकाशित न होते २ जालिमसिंहके प्राचीन विश्वासी वीरोमे विद्रोह और उत्तजना दिखाई दी। सैफअली नामक तीस वर्षके पुरातन सेनानायक जो "राजपलटन" अर्थात् नरपतिके खास सेनादलके नेता थे, और जो विश्वासी वीरता और दक्षताके लिये विशेष विख्यात थे ऐसा जाना जाता है कि पहिले उन्होने अपने नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) का पक्ष अवलम्बन किया था। पहिले इस सम्बादको मिथ्या अनुमान किया गया, परन्तु ज्ञानी जालिमसिंहने इसमे विश्वास न करके वह असंतुष्ट सेनादल जिससे महलमे स्थित महारावके साथ न मिलसके, इस कारण दोनोके मध्यस्थलमे एक सेनाको रक्खा। शीघ्र ही महाराव जलमार्गसे जाकर सैफअली और उनके अधीनमे स्थित कितनी ही सेनाको महलमे ले आये, इस समाचारके प्रचारित होते ही एक नेत्र हीन जालिमसिंहने तामयानपर चढ़कर अपनी सेनाके साथ सैफअलीकी शेप सेनापर आक्रमण किया, और दो बड़ी २ तोपोको ऊँचे स्थानपर इस भावसे रखकर गोलेका चलाना प्रारभ किया कि उससे एकमात्र राजधानी ही नहीं वरन चम्बल नदीके दोनों किनारेके देश और मकानोके ऊपर गोलोकी वर्षा होने लगी। इस गोलोकी वर्षासे महाराव, उनके भ्राता पृथ्वीसिंह और उनके अनुचर नौकापर चढ़ कर नदीके पार हो बूँदीको चले गये। इस ओर बचीबचाई सेनाने अस्त्र छोड कर आत्मसमर्पण किया। प्रवल उद्योगके साथ इस अनुष्ठानको करके जालिमसिंहने महारावके द्वारा अपने प्रभुत्वके नाशकी चेष्टा व्यर्थ करदी, और हाड़ाजातिका राजसिंहासन शून्य होगया। उस युद्धके समय बिशनसिंहने दोनो भ्राताओसे अलग होकर जालिमसिंहके साथ मेल किया, जालिमसिंहने इस समय बिशनसिंहके साथ गुप्तभावसे जैसा सम्मान करते हुए व्यवहार किया उसी प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया, वह सरलतासे जाना जाता है"।

कर्नल टाड् साहबकी उक्त उक्तिमे पाठक भलीभांतिसे जान गये होगे कि चतुर चूड़ामणि जालिमसिंह कैसे पुरुष थे, और उन्होने विश्वासघातीके समान कैसा कार्य किया था। जो किशोरसिंह न्यायके अनुसार धर्मके मतसे जालिमसिंहके अधीश्वर थे जालिमसिंहने उन्हीं अधीश्वर किशोरसिंहके विरुद्धमे "तोपै चलानेमे एक मुहुर्त्तमात्रका भी विलम्ब नहीं किया। जिस कोटेराज्यमे सूचीके अग्रभागमात्र भूमिमे जालिमसिंहका न्यायके अनुसार कोई भी अधिकार नहीं था, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरकी करुणादयासे जालिमसिंहने कोटेमे प्रवेशका अधिकार प्राप्त कर फौजदार पदको प्राप्त किया, जिस कोटेराज्यसे जालिमसिंह एक समय सर्वस्वान्त होगये थे, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरने फिर उनको क्षमाकर उनको ग्रहण किया और अपने पुत्रका अभिभावक पदका प्रदान किया था, वही जालिमसिंह उन नरपतिके पोतेके विरुद्धमें तोपै चलाकर अपने स्वार्थ साधन करनेके लिये अग्रसर हुए। यह क्या विचित्र राजनीति नहीं कही जायगी, यह

बात क्या अत्यन्त अन्याय अत्यन्त अधर्ममूलक नहीं समझी जायगी। जालिमसिंहने जो आचरण किया वह सरकारके बलपर ही किया। जालिमसिंह किशोरसिंहको कोटेसे निकाल करही शान्त न हुए, वरन उन्होंने महारावके भ्राता विशनसिंहको कि जिन्होंने राजसिंहासन प्राप्तिकी इच्छासे जालिमसिंहका पक्ष अवलम्बन किया था, धर्मके मस्तक पर पदाघात करके वृटिश एजेण्ट करनल टाड्‌ महोदयके सम्मुख उन विशनसिंहको कोटेके अधीश्वरपदपर अभिषेक करनेक लिये प्रस्ताव किया। परन्तु साधु टाड्‌ साहबने किसी प्रकारसे भी जालिमसिंहके उस घृणित प्रस्तावमें अपनी सम्मति नहीं दी। कर्नल टाड्‌के विषयमें अवश्य ही यह प्रशंसाकी बात कहनी होगी। परन्तु महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको प्राप्त करनेके लिये यह दूसरी वार उद्योग किया। यद्यपि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये इससे पीछे कर्नल टाड्‌ने जो राजनैतिक अभिनय किया उस अनुष्ठानसे जालिमसिंहका मत अन्याय क्षमताके लोभसे विश्वासहन्ता हो सकता था, परन्तु उदार हृदय सत्यप्रिय टाड्‌के पक्षमें यह कभी शोभा नहीं देता।

महाराव किशोरसिंह वृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षर सहित पहिले संधिपत्रके मतसे कोटेकी सम्पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न राजशक्तिको पानेके लिये वीर तेजा हाड़ा-जातिके समीप प्रतिवासी राजाओंसे सहायता लेनेको गये। इसके पीछे जालिम-सिंहके परामर्शके अनुसार कर्नल टाड्‌ और गवर्नमेण्टने उस महाराजके विरुद्धमें जैसा अनुष्ठान किया उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेके पहिले कर्नल टाड्‌ने अपने हाथसे इतिहासमें जो वर्णन किया है हम इस स्थानपर सबसे पहिले उसको प्रकाश करना उचित जानते है। कर्नल टाड्‌ साहब लिखते है कि "उपस्थित उपद्रवोंके निवारणके पक्षमें एकमात्र संधिकी धारासे कार्य परिणत कर सर्व साधारणमें दृढ़रूपसे शांति रखनेका उपाय था। बूँदीके अधीश्वरके निकट यह कहकर पत्र लिखा गया कि भागेहुए किशोर-सिंहको अतिथि स्वरूपसे ग्रहण कर उनके साथ कुटुम्बियोंकी समान व्यवहार करनेका कुछ निषेध नहीं है, परन्तु यदि जालिमसिंहके विरुद्धमें किशोरसिंह समर करनेके अभिप्रायसे सेना इकट्ठी करें तो बूँदीराजको उसके लिये सम्पूर्ण दायी होना होगा, उस समय नीमच नामक स्थानपर जो वृटिशसेनादल रहता था उस सेनादलके अंग्रेज सेनापतिको यह आज्ञा दीगई, कि जाबुआ और बूँदीराज्यके मध्यस्थ मार्गमें एक सेना स्थापित करो। गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ मिलनेकी चेष्टा करें तो वह दल गोवर्द्धनदासको मृत वा जीवित अवस्थामें बंदीकर ले। उसको पकड़नेके लिये जो उत्तम अनुष्ठान किया गया, गोवर्द्धनदासने गिरिसंकटसे गुप्त पन्थद्वारा भागकर उस अनुष्ठानको व्यर्थ करदिया। किन्तु बूँदीराजको उस समय भयभीत और इधर उधर करतेहुए देखकर वह बराबर मारवाड राज्यमें भाग गये। किन्तु मारवाड़पति गोवर्द्धन-दासको किसी प्रकार भी आश्रय देनेमें सम्मत न हुए, तब वह शीघ्र ही दिल्लीमें आनेको बाध्य हुए, गोवर्द्धनदास दिल्लीमें गये तब उनको दृढ़रूपसे बंदीभावसे रक्खा गया। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि पहिले गुप्त षड्यन्त्रके मतसे ही

गोवर्द्धनदासने दिल्लीमे आकर आत्मसमर्पण किया था, कारण कि शीघ्र ही महाराव किशोरसिह बूँदीको छोडकर वृन्दावनकी ओरको तीर्थयात्रा करनेके लिये गये और उस समय ऐसी आशा की थी कि हमको अपने पैतृक कुलदेवता व्रजनाथजीके मंदिरमे अवश्य शाति और संतोष प्राप्त होगा, इसीसे उन्होने जीवनके शेष समयको धर्मकी आलोचनामे व्यतीत करनेकी अभिलाषा की थी । वह जितने दिनोतक बूँदीमे रहे थे उतने दिनोतक सर्व साधारणमे किसी प्रकारके राजनैतिक उपद्रव होनेकी सम्भावनाका अनुमान नही था। कोटेसे बूँदी बहुत पास थी, इस कारण सबने विचारा कि महाराव क्रोधके वश यद्यपि बूँदीमे गये है पर फिर शीघ्र ही लौट आवैगे। परन्तु महाराव किशोरसिहके बूँदीको छोडकर उत्तरकी ओरको जाते ही सरलतासे प्रकाशित होगया कि बूँदीसे न सही वह अन्य देशसे अपने स्वार्थसाधनके लिये सम्पूर्णरूपसे सहायता पालेगे। रजवाड़ोके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान २ सामन्तने महारावको उस विपत्तिके समयमे सहानुभूति प्रकाश करनेवाला पत्र लिखकर धीरज दिया था, और वह जिस जिस राज्यमे होकर गये थे उसी राज्यके अधीश्वरने महाराव किशोरसिहको कोटेके अधीश्वर रूपसे महा आदरसे ग्रहण करके उनके प्रति यथेष्ट सम्मान दिखाया था, “ केवल जो भरतपुरराज्य कोटे राज्यके अत्यन्त समीप था, उस राज्यके अधीश्वरने ऐसा ऊचा सम्मान नहीं दिखाया। विख्यात् भरतपुरके अधीश्वरने कितने ही प्रतिनिधियोको महाराव किशोरसिहके समीप भेजकर क्षमा प्रार्थना की, उन्होने कहा कि वह अत्यन्त वृद्ध और दृष्टिशक्ति हीन होनेसे महारावके निकट स्वय नही आसके है । जाट जमीदारने सौभाग्यवलसे ऊचा पद पाया है, इस कारण उनके निकट जिस प्रकारका सम्मान प्रकाश करना उचित था जाटपतिको उसे न करते देखकर महाराव किशोरसिहने अवज्ञाके साथ उनके प्रतिनिधिको विदा देकर उपहार द्रव्य फेर दिये। महारावके इस गर्वित आचरणके कारण जाटपतिने शीघ्र ही महारावको भरतपुर राज्यकी सीमा छोडनेकी आज्ञा दी। महाराव किशोरसिहने कुछ समय तक वृन्दावनधाममे “व्रजकुंजमे” निवास किया। उस समय भलीभांतिसे प्रकाशित होने लगा कि जयदेवकी मधुर पदावलीने महारावके हृदयमे सामन्य राजमुकुटकी असारताको प्रतिपादित किया है आर राधाकृष्णकी विचित्र लीलाके स्थानमें वीर कविचंदकी उत्तेजक वीरगाथा और चौहानकुलकी वीरताकी कहानी और गौरवगरिमा स्मृति महारावके हृदयसे एकबार ही निकल रही है, इस कारण महारावने इस समय इच्छानुसार ठहरनेकी इच्छा प्रगट की। सर्व साधारणके पहिले अनुमानके मतमे महाराव शीघ्र ही अपने जीवनकी अतीत और वर्त्तमान अवस्थाको समझगये, उन्होने अपनेको विदेश भूमिमे केवल धनके लोभियोके द्वारा घिरा हुआ देखा। परन्तु महाराव अप्रैल मासमे वृन्दावनसे कोटेको जानेके लिये फिर तैयार हुए । उनको शैतानस्वरूप गोवर्द्धनदासने स्थिर कर दिया कि महाराव यहां इस भावसे नहीं रहसकेगे। गोवर्द्धनदासके प्रति तीक्ष्ण दृष्टि रखी गई थी यह सत्य है, पर उन्होने अपराधीकी समान कारागारमे वद होकर भी महोच्चपदपर स्थित देशीय कर्मचारियोद्वारा महारावके समीप अत्यन्त गुप्तरीतिसे पत्रव्यवहार किया था। यह वात पीछे प्रकाश हुई”।

क्रमश राजनैतिक विभ्राट् प्रबल होगया। कर्नल टाड् इसके पीछे लिखते है "कि क्रमानुसार षड्यंत्रजालका विस्तार और महारावके दुष्टचरित्र चरोंके द्वारा वृथा आश्वास, वृद्धिको प्राप्त होने लगे। महारावने अतिरिक्त सेना और अनुचरोंको इकट्ठा करके हाड़ौतीकी ओरको यात्रा की। वह जिस २ राज्यमे जाने लगे उसी २ राज्यके अधिपतिसे कहने लगे कि गवर्नमेण्टकी इच्छाके अनुसार अपनी राजशक्तिको फिर ग्रहण करनेके लिये जाता हूँ। ऊँचे पदवाले कितने ही देशीय राजकर्मचारियोंके कितने ही चिह्नित अनुचर और दिल्लीके कोषागारमे देशीय धनरक्षक जिन्होंने महाराव को धनकी सहायता दी थी, उनका एक एजेण्ट इस समय महारावके साथ गया। सर्वसाधारणने इसका अनुमान सरलतासे करलिया, कि महाराव निश्चय ही गवर्नमेण्ट-की इच्छानुसार जा रहे है, इस कारण सर्वसाधारणने इस समय महारावकी जिसके आशा पूर्ण हो, ऐसी कामना प्रकाश की। महाराव जितने आगे बढ़ने लगे उतने ही उनकी सेनाकी संख्या भी बढ़ने लगी। सन् १८२२ ईसवीकी वर्षाऋतुके शेष भागमे प्राय: तीन हजार सेना साथ लेकर चम्बल नदीके किनारे महाराव किशोरसिह जा पहुँचे। नदीके पार होकर महाराव किशोरसिहने इस प्रकारकी स्वजाति भाषासे अपनी प्रजामे घोषणा प्रचार कर दी कि राजपूत सरलतासे उसका अर्थ समझले और कोइ महारावके उस आह्वानपत्रके अग्राह्य करने और महारावके पक्षका अवलम्बन करनेमे असम्मत न हो। महाराव किशोरसिह संधिपत्रके अनुसार न्याय विचारकी आशा करनेके लिये उतारू है, इसीसे सबको उसमें योग देनेके लिये बुलाया है, प्रत्येक हाड़ा-राजपूत आमंत्रणके अनुसार आने लगे। राजपूतजाति कैसी विश्वासी राजभक्त थी। महाराव किशोरसिहकी वर्तमान अवस्थामे उसका प्रबल प्रमाण दिखाई दिया। जालिम-सिहके साथ जो मनुष्य समरक्त सम्बन्ध बन्धनमे बँधे थे, जिन्होने जालिमसिहके द्वारा बहुतसे उपकार प्राप्त किये थे, उन तकने इस समय जालिमसिहको छोड़कर न्यायके अनुसार अपने अधीश्वर महाराव किशोरसिहके साथ योग देनेको गमन किया। उनमेसे बहुतोंने तो महाराव किशोरसिहको नेत्रोंसे भी नहीं देखा था और बहुतसे मनुष्य उनके विषयमे कुछ भी नहीं जानते थे।" यहाँ पर हमारा यह प्रश्न है कि एकमात्र जाटराजके अतिरिक्त समस्त रजवाड़ेके प्रत्येक राजा प्रत्येक सामन्त प्रत्येक राजपूतने किस कारणसे महाराव किशोसिहके प्रति सहानुभूति दिखाई थी ? किस कारणसे प्रत्येक हाड़ाजातीय वीरने महारावका साथ देकर उनका पक्ष समर्थन किया था ? किस कारणसे जालिमसिहके आत्मीय अनुगत मनुष्योंने भी उनको छोड कर किशोरसिहका साथ दिया था ? किस कारणसे वृटिश गवर्नमेण्टके अधीनस्थ देशीय उच्चपदवाले कर्मचारियोंतकने महारावका साथ दिया था ? कर्नल टाड्ने स्वय इस बातको स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिहको कोटेका न्यायके अनुसार शासनशक्ति युक्त अधीश्वर जानकर ही सबने महारावका पक्ष अवलम्बन किया। तभी यह प्रश्न उठता है कि रजवाड़ेके प्रत्येक मनुष्यने जब कि किशोरसिहको न्यायके अनुसार अधीश्वर जानकर उनका पक्ष अवलम्बन किया था, तब गवर्नमेण्टने उस न्यायके अनुसार

अधिकारकी शासनशक्तिको एक बहिस्थ मनुष्यको देकर क्या उस न्यायके वक्षस्थल पर पदाघात नही किया ? ।

महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको पानेके लिये स्वजातिसे सहायता मॉगी,सभी उचित आशाकी संभावनासे सहायता करने लगे। महाराव किशोरसिंहको कुछ भी इच्छा नहीं थी, कि गवर्नमेण्टके साथ विवाद विसम्बाद करके अपने पूर्वअधिकार पर बलपूर्वक अधिकार करलिया जाय । गवर्नमेण्टने जिस महा भ्रममे पड़कर अत्यन्त अविचारसे उनके पैतृक अधिकारको लोप करनेके लिये एक मनुष्यको वह अधिकार दे दिया और उस दानको प्रबल रखनेके लिये पक्षपातसे उस मनुष्यका पक्ष समर्थन किया है। उस गवर्नमेण्टको समझानेके लिये किसी प्रकारसे कसर न की। महारावने सरलतासे उन उपद्रवोका विचार करानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की । पर गवर्नमेण्टके साथ समस्त सद्भावकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिह यथाशक्ति यत्न करके भी कृतकार्य न होसके। सन् १८२२ ईसवीकी १६ वी सितम्बरको महाराव किशोरसिहने बृटिश एजेण्ट कर्नल टाड्के पास एक पत्र भेजकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया । उसे पढ़कर महारावके मनका भाव भलीभांतिसे जाना जाता है। उस पत्रको हम इस स्थानपर प्रकाशित करते है, ।

"हमारे मनका भाव क्या था उसको प्रकाश करनेके लिये कवि चांदखांने वार-म्बार जाननेकी इच्छाकी। अपने दो वकील मिरजा मुहम्मद अलीवेग और लाला शालि-ग्रामके द्वारा मैने अपनेको परिज्ञान कराया है। मैने फिर आपके पास सधिका धाराको भेजा है । आप उसीके अनुसार कार्य कीजिये। यही हमारी इच्छा है। गवर्नण्टके प्रति-निधिस्वरूप होकर आप हमारे प्रतिन्याय विचार करिये । प्रभू, प्रभुकी समान, सेवक सेवककी समान रहे, सर्वत्र ही ऐसा हुआ है, और यह आपसे कुछ छिपा नही है "।

१–महाराव उमेदसिहके समयमे दिल्लीमे जो संधिवंधन हुआ है, मै उस संधिपत्रके मतसे समस्त कार्य करूँगा ।

---

(१) महाराव किशोरसिहके उक्त पत्रसे क्या प्रकाशित होता है ? गवर्नमेण्टके साथ सम्पूर्ण सद्भावकी रक्षा करके उस गवर्नमेण्टके निकट उन्होने जिस न्याय विचारको प्रार्थना की वह क्या न्यायसंगत नही थी? "प्रभू, प्रभूकी समान और सेवक सेवककी समान रहैं. यह सर्वदाही सम्मत इसे कौन सी सरकार अस्वीकार कर सकती है। सब जगत् महारावके इस न्याय और धर्मयुक्त कथन को समर्थन कर सकता है। महाराव किशोरसिहने न्याय विचारकी प्रार्थना करके कर्नल टाड्के निकट जो संधिपत्रकी धाराओंको भेजा था, उसके प्रति दृष्टि रखनेसे महारावके उदारहृदयका वृत्तान्त स्पष्ट पाया जाता है । महाराव संधि धाराको प्रबल रखनेके लिये अपनी अनेक स्वार्थोंकी हानि स्वीकार करके भी राजराणा जालिमसिहको पूर्वपद पर रखनेके लिये सम्मत हुए । उद्धतस्वभाव [illegible] और दुर्विनीत माधोसिहको लेकर यह राजनैतिक विवाद उपस्थित हुआ है. इसी लिये [illegible] उसको दूसरे स्थान पर भेजना चाहते हैं. और [illegible] यहां रखकर [illegible] रक्षा करनेके लिये सम्मत है । [illegible] बृटिश गवर्नमेण्ट [illegible] किया । महारावने जो संधिपत्रकी धारा भेजी थी वह आगे लिखी है ।

२–नानाजी जालिमसिहके ऊपर हमै सम्पूर्ण विश्वास है। वह महाराज उमेदसिह के अधीनमे जिस भावसे कार्य करते थे, हमारे अधीनमे भी उसी भावसे कार्य करेगे उनके हाथमे राज्यशासनका भार अर्पण करनेके लिये मै सम्मत हूं, परन्तु मुझे माधोसिहपर सदेह और संशय उपस्थित हुआ है, हम किसी समय भी एक मत नही हो सकते, इस कारण मैने उनको एक जागीर दी है वह वहॉ रहैगे। उनके पुत्र बापालाल मेरे निकट रहैगे, और अन्यान्य मंत्री जिस प्रकार राजाके समीप रहकर राजकार्य करेगे वह भी उसी प्रकार मेरे निकट काम काज करैगे। मै उनका प्रभू हूँ और वह मेरे भृत्य स्वरूप रहेगे, और यदि वह भृत्यकी समान कार्य करैगे तो यही वंशानुक्रम उसी भावसे चलता रहैगा।

३–अंग्रेज गवर्नमेण्ट अथवा अन्यान्य राजाओके समीप जो पत्रादि भेजने होगे वह हमारी सम्मति और उपदेशके अनुसार लिखने होगे।

४–अग्रेज गवर्नमेण्ट हमारे और उनके जीवनके लिये अवश्य ही प्रतिभू रहेगै।

५–पृथ्वीसिहको मैने एक जागीर दी है और वह वहॉ निवास करैगे, उनके साथ और मेरे अन्य भ्राता विशनसिहके साथ जो मनुष्य नियुक्त रहैगे मै उनको मनोनीत करदूंगा, इसके अतिरिक्त मेरे स्वजाति और कुटुम्बियोको उनकी पद मर्यादाके अनुसार जागीरदान की जायगी, और चिर प्रचलित प्राचीन रीतिके अनुसार वह मेरे समीप रहैगे।

६–मेरे शरीर रक्षक खास तीन हजार सेनाके साथ बापालाल (जालिमके पोते) मेरे समीप उपस्थित रहैगे।

७–राज्यका समस्त राजस्व प्रथमत साधारण कोषागारमे जमा करना होगा, इसके पीछे वहांसे समस्त खर्चा किया जायगा।

८–समस्त किलेदार अर्थात् दुर्ग रक्षक मेरे द्वारा नियुक्त होगे और सारी सेना मेरी आज्ञामे रहैगी। वह राजकर्मचारियोको उनकी आज्ञा पालनके लिये अनुमति देते रहैगे परन्तु उसमे मेरे उपदेश और सम्मतिका प्रयोजन होगा।

मै इन धाराओका प्रस्ताव करता हूँ, और इसी राजनीतिका अनुयायी हू। आसौज पचमी सवत् १८७८ सन १८२२ ई०।

महाराव किशोरसिहने सरकारके निकट जो ऊपर लिखा हुआ प्रस्ताव भेजा था कोई साधारण पुरुष भी इसको अनुचित नही कह सकता, परन्तु उनका प्रस्ताव सरकारने स्वीकार नही किया एक महीना इस प्रस्तावकी प्रतिज्ञाके बीच गया, परन्तु वृटिश सरकारने एकमात्र जालिमसिहके स्वार्थकी रक्षामे दृष्टि देकर मंत्रीके प्रस्तावके अनुसार शोचनीय राजनैतिक दृश्य आरभ कर दिया। उदारचित्त सत्यप्रिय टाड साहबने भी अपने प्रभुकी आज्ञानुसार उस कार्यमे सब प्रकारसे योगदान करनेमे कसर न की। कर्नल टाड्ने अपनी परिवर्ती घटनाका जो वृत्तान्त वर्णन किया है, हम यहॉ पर उसीको प्रकाश करना उचित जानते है। कर्नल टाड् साहब लिखते है, कि

" जालिमसिहको उनकी विश्वासी सेनाके ऊपर भी निर्भर नहीं किया जाता, उन्होने स्वय ही कहा ह कि सेनाके ऊपर उनका सम्पूर्ण विश्वास नहीं है। उनका शासनकार्य किस प्रकार कठोरताके साथ होता था इस समय उसकी विलक्षण साक्षी मिली है। जिस जालिमसिहने स्वदेशी और विदेशी प्रत्येक सेनाका अपने हाथसे पालन किया था, उसी सेनादलके प्रत्येक पुरुप उनके विरुद्धमे न्यायके अनुसार अधिकारियोका पक्ष अवलम्बन करनेके लिये तैयार होते देखा। इस राजनैतिक उपद्रवोके समयमे सभीको उन्होने यहांतक अविश्वासका आविर्भाव दिखाया, कि उन्होने विपत्तिसे मुक्त होकर कहा " कि मेरे शरीर पर पहिरे हुए वस्त्रोंतकमे मानो पड्यंत्रकी गंध आगई है"। जालिमसिह चारोओर उस अविश्वासताको देखकर विरक्त हुए, और सहज ही ऊंची सामर्थ्य प्राप्तिकी आशाको छोडनेके लिये उद्यत होते, तो उससे बृटिश गवर्नमेण्ट भी अत्यन्त कष्टदायक विपत्ति ग्रस्त अवस्थासे उद्धार पानेमे समर्थ- होती। जालिमसिहके समीप इस राजनैतिक कठोर ग्रंथिको छेदन करनेके लिये यथेष्ट सुअवसर दिये थे, और इशारोसे यह विदित किया था कि यदि वह विचारेगे तो इस ग्रंथिको काट सकेगे, नही तो तलवारसे अवश्य ही यह राजनैतिक विभ्राट् ग्रंथिछेदन की जायगी। परन्तु सभी चेष्टाएँ निष्फल होगई, जालिमसिहने संधिपत्रके मतसे कार्य करने और स्वयं शासनकी सामर्थ्यको जिस प्रकारसे ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा की, जालिमसिहके नाममात्रके प्रभु महाराव किशोरसिह भी उसी प्रकारकी भित्ति पर खडे हुए, और अग्रेज गवर्नमेण्टके साथ निर्द्धारित पूर्व संधिपत्र की एक लिपिको एजेण्टके निकट भेजकर पूँछा कि वह सन्धिपत्र स्वीकार होगा या नही ? जालिम सिहको वशानुक्रमसे शासनशक्तिको देनेके लिये जो अतिरिक्त संधिधारा नियुक्त हुई थी वही धारा यदि मूलसधिपत्रमे नियुक्त कीजाती तो यह समस्त उपद्रव सरलतासे दूर होसकते थे। ऐसा होनेसे सधिपत्रका मूल मर्म और अर्थ कभी भी दो भावोसे ग्रहण नही किये जाते, और गवर्नमेण्टने अविचारका कार्य किया है इसकी कोई विवेचना नही कर सकता। वास्तवमे कोई भी उस विश्वासघातके दोपसे कलकित नही होते कारण कि जिन्होने आदि सधिपत्र पर हस्ताक्षर किये है अतिरिक्त सधिपत्र पर भी उन्हींके हस्ताक्षर थे। एक राज्यमे एक मनुष्यको नाममात्रके राजा और दूसरेको समस्त शासनशक्तियुक्त राजा कह कर हमने जिस बातको स्वीकार किया है, उसके बदलेमे जालिमसिहके द्वारा उपकृत होकर हमारे उस उपकारके लिये किसी प्रकारका पुरस्कार देना उत्तम नही होसकता, इस विवादसे यह प्रश्न उपस्थित हुआ है। बडे सौभाग्यकी बात है कि नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिह) ने इस समय जिस प्रश्नको उपस्थित किया है वह गवर्नमेण्टके प्रस्तावमे सम्पूर्ण विपरीत दिखाई पड़ा और वह आदि और अतिरिक्त सधिपत्रके मूल उद्देशके मतसे काम करनेमे प्राय. प्रकृत पक्षमे असम्मत हुए। महाराव किशोरसिहने प्रस्ताव किया कि उनके स्वजातीय तीन हजार शरीर रक्षक उनके पास नियत रहे, और वह अपनी इच्छानुसार सामन्तोको जागीरे देगे, और सेनादलके नेता पदपर स्वय नियुक्त रहैगे। यह सब प्रस्ताव

मित्रतामूलक संधिके प्रत्येक मौलिक नियमके विपरीत हुए, और अन्य पक्षमे जालिमसिहके उत्तराधिकारियोंके राज्यकी शासनशक्तिकी प्राप्ति की आशा केवल उनकी दयाके ऊपर निर्भर रहेगी"।

शीघ्र ही रणभेरी वाजा वजा!—वृटिश गवर्नमेण्टने जालिमसिहके द्वारा उपकार पाकर उस उपकारका पुरस्कार देनेके लिये भारतवर्षके एक प्राचीन उच्च राजपूत राजदरबारकी शासनशक्तिको लोप करके वह शक्ति जालिमसिहको देनेकी इच्छा की और महारावके विरुद्धमे शीघ्र ही सेनाको चलाया। महाराव किशोरसिहके पितामह महाराव गुमानसिहके द्वारा प्रतिपालित आश्रयप्राप्त अनुग्रहीत जालिमसिह भी अपनी राजभक्तिका चूडान्त परिचय देनेके लिये सेनासहित महाराव किशोरसिहके साथ युद्ध करनेके लिये चले। कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "हतबुद्धि महाराव किशोरसिहको कुचक्री और कुमंत्रणदाताओके हाथसे उद्धार करनेके लिये, एव प्रतिदिन उनकी पताकाके नीचे जो समुत्तेजित राजपूत वृन्द इकट्ठे होते थे, उनके हाथसे उनको उद्धार करनेके लिये उनकी समस्त चेष्टाएं व्यर्थ और निराश करनेके जो अंग्रेजी सेना का दल सधिको प्रवल रखनेके लिये वुलाया गया था, वह जालिमसिहकी सेनाके साथ मिलकर आगे वढने लगा। सेनादल कालीसिन्धुनामक स्थानमे इकट्ठा हुआ, वह स्थान दोनो रणोन्मत्त सेनादलके मध्यवर्ती था। सेनादलके वहां पहुँचते ही कई दिनतक वरावर घोर वर्षा होनेसे जलके द्वारा समस्त स्थान प्लावित होगये, सेनाको उस नदीके पार होना असम्भव था, इस कारण कई दिनका विलम्व होनेसे महारावको उपस्थित सर्वनाशसे उद्धार करनेके लिये मित्रता और सुमंत्रणसे, यथेष्ट सुभीता मिलनेका अवसर मिला भी परन्तु वह सभी व्यर्थ होगया। सामने घोर विपत्तिको देखा पर निराशाके साथ उस विपत्तिके आगमकी प्रार्थना करने लगे, और उन्होने वृटिश गवर्नमेण्टके सम्मुख अत्यन्त अनुगत्य घोषणा करके गवर्नमेण्टके प्रतिनिधिकी मित्रता और श्रेष्ठ उपदेशके ऊपर अपना पूर्ण विश्वास स्थापित किया, परन्तु प्रत्येक प्रतिवादके समय वह यह उत्तर देते जाते थे कि सम्मानशून्य जीवनका क्या प्रयोजन है? शासनशक्ति हीन राज्यका क्या फल है? क्या तो मृत्यु ही होजाय और या पूर्णतया: पैतृक राजशक्ति मिल जाय"।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहबने लिखा है, कि जालिमसिंहके आचरण भी इस समय महारावके आचरणोकी अपेक्षा कुछ अल्प विरक्तिके नही थे, कारण कि एक ओर तो वह प्रगटमें यद्यपि महारावके प्रति राजभक्ति प्रकाश करते थे, और अपने सफेद वालोपर कलंक लगानेकी उनकी अभिलाषा नही थी, परन्तु आत्मस्वार्थ साधन करनेके लिये संधिपत्रके धारा स्वरूप को भी अपने सामने रक्खा था, उन्होने आशा की कि सधिपत्रकी धारा पालन करनेके लिये उनको स्वयं किसी विशेष दायित्वका भार ग्रहण करके कोई प्रवल तैयारी नही करनी होगी। इस समय उस प्रकारसे दायित्व विहीन होनेकी चेष्टा किसी प्रकार भी सहन नही हो सकती।

उन्होने प्रकाश किया कि उनको सेनादलके ऊपर विश्वास नही है, सेनादल समरके समयमे अवश्य हमारे विरुद्ध अस्त्र चलावेगी। इससे हम उससे कहे देते है कि हम उस विपत्तिको सहन करनेके लिये तैयार हैं। उसने और भी कहा कि हमको वंशानुक्रमसे जो अधिकार भोगनेके लिये दिया गया है, उस अधिकारकी किसी प्रकारसे रक्षा करनी ही होगी इससे उसको रक्षण पीडन दोनो प्रकारके कार्योंमे योगदान करना होगा कि जिससे किशोरसिहके प्रति राजभक्ति प्रकाशके साथ शॉतिके सहित अपनी सामर्थ्यकी रक्षा प्राप्त रहै। चतुर जालिमसिहने उस समय कहा कि हम गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेसे जो कुछ सहायताकी आशा करते है, हमारी उस शासन सामर्थ्यको अक्षत रखनेके लिये सहायता करनी होगी। एजण्ट (टाड्) ने शेष मुहूर्त्त तक आशा की थी कि जालिमसिह जो सब मनुष्योके रक्षकस्वरूप है वे उनको रणके मुखमे डालनेसे जगत्मे कलंक, और तिरस्कारको सचय और सद्धर्मके नाशसे अपमानका सचय न करैगे, परन्तु वह पृष्टपद होकर अपनी शक्तिकी खर्वता साधन करनेके लिये अग्रसर हुए, उनके क्रमशः इधर उधर करनेसे और मनमे एकभाव तथा प्रकाश्यमे अन्यभाव प्रकाश करनेसे उसमे केवल विपत्तिहीकी वृद्धि होती थी इस कारण ऐजेण्टकी वह आशा शीघ्र ही लुप्त होगई, यद्यपि उस समय जालिमसिहके भीतर ही भीतर विपम संशय विराजमान था परन्तु राज्यप्राप्तिकी इच्छासे अंतमे उन्होने सभीको दूर कर दिया "। कर्नल टाड् साहबकी उक्त उक्तिसे भलीभांति जाना जाता है कि केवल जालिमसिहको संतुष्ट करनेके लिये इसके पीछे यह शोचनीय राजनैतिक अभिनय प्रारंभ हुआ। कर्नल टाड् यदि इस समय सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये जालिमसिहको समझाकर महाराज किशोरसिहके पक्षका अवलम्बन करते तो जालिम-सिह कभी सुअवसर पाकर संधिकी धाराका उल्लेख करके बृटिश गवर्नमेण्टको उसके पालन करनेके लिये उन्हे अन्यायके युद्धमे लिप्त नही करसते थे।

इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "जालिमसिह और उनकी सेना आगे और अंग्रेजसेना उनकी सेनादलके पीछे होकर युद्धके सम्मिलनका प्रस्ताव उपस्थित किया गया और जिससे दोनो सेना एकभावसे कार्य करसके उसके लिये जालिमसिहके अनुरोधसे अंग्रेजी सेनापतिको उनकी सेनादलपर नियुक्त किया गया। अक्टूबर मासकी १ तारीखको सेनादल आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हुआ। जालिमसिहकी सेनामे ८ दलपैदल ३२ तोपै और चौदह रिसाले प्रबल अश्वारोही सेनाके थे, उस सेनादलमे पॉच दल पैदल, १४ तोपै और दश दल अश्वारोही दल सबसे आगे चलो। और वाकी समस्त सेनाके साथ जालिमसिह उसके पीछे हजार हाथ दूरी पर चलने लगे, बृटिश सेनामे दो दल पैदल और छः दल अश्वारोही और एक दल अश्ववाहित (गोलन्दाज) महारावकी सेनादलके निकटवर्ती होकर जालिमसिहके

(१) पाच रजमट देशी पदाति दलके मालिक लफटिनेण्ट मि० मिलन थे और उन साहसी वीरसे जैसे कार्यकी आशा थी वैसा ही उन्होने किया।

दक्षिण ओर जाने लगा। सेनादल सबसे पहिले एक विस्तारित क्षेत्रमे जाकर शेषमे एक छोटा नदीके किनारे ऊँची भूमिपर जा पहुँचा। महाराव किशोरसिहकी सेनाका दल नदीके दूसरे पारसे कुछ दूर एक ऊँचीसी भूमिपर इकट्ठा हुआ था। शत्रुओकी सेनाके आनेसे महारावने नदीके पारसे अपने डेरोको पूर्वमतसे रक्षित रखकर अपनी सेनाको नदीके इस पार लाकर इकट्ठा किया था। "राज पलटन" नामक सेनाको उसके नेता सैफअली कि जिसने अपने प्राचीन प्रभू जालिमसिहको छोड़कर महारावके साथ योग किया था, उसकी सेनाको बॉईओर रखकर महाराव किशोरसिह स्वय सामन्तोंके साथ पॉचसौ हाड़ा अश्वारोही लेकर दक्षिण भागको गये, और मध्यभागमे समरमे अशिक्षित अस्त्रधारी राजपूत रक्खे गये। युद्ध वा भागनेका बिन्दुमात्र भी चिह्न न दिखाकर अंग्रेजी सेना और जालिमसिहकी सेना शत्रुओसे चारसौ हाथके समीप अपने २ डेरोसे निकलकर स्थित हुई। इस समय एजेण्टने कुछही समय पाकर हतबुद्धि महाराव और उनके अनुरक्त अनुचरोको सम्मुख विपत्तिसे उद्धार करनेके लिये अन्तिम चेष्टा करनेकी कामनासे बृटिश सेनापतिको अनुरोध किया कि समस्त सेनादलको विश्राम करनेकी आज्ञा दीजाय। एजेण्टने दोनो ओरकी सेनाके मध्यस्थान तक जाकर पहिले जिस संधिका प्रस्ताव किया था। उसी प्रकारके प्रस्तावसे सबको क्षमा करैगे, यह मत प्रकाशित किया और महाराव किशोर सिहको फिर राजधानीमे लेजाकर उनको पिताके सिहासन पर अभिषिक्त करैगे यह भी कह दिया। परन्तु महाराव अपने नेत्रोके सम्मुख केवल भावी सर्व नाशको देख रहे थे, तथापि उन्होने अपने पहिले जो संधिका प्रस्ताव किया था उसकी एक धाराको भी त्यागन करना नही चाहा, वह अपने प्रस्तावोको ऊपर ही अधिक हठ करने लगे, और तीन हजार स्वजातीय हाड़ा राजपूतोके साथ यदि कोटेमे प्रवेश करसकै तो वह कोटेमे चलेगे नही तो नही जायँगे, यह बात प्रगट करदी। सुविचारके लिये उनको आधे घटेका समय देने पर पीछे दोनो ओरकी सेना युद्धके लिये आगे बढ़ने लगी। महारावकी निर्वाचित सेना दहिनी ओरको इकट्ठी होकर जालिमसिहके आगे जानेके मार्गमे खड़ी हुई, दूसरी ओर बृटिश सेनादल उनका दल भग करनेके लिये उसी भावसे उस ओर इकट्ठा हुआ"।

"पूर्वोक्त आधे घंटेका समय बीतने पर और महारावके अन्यायकी आकाक्षाकी कुछ भी निवृत्ति न होनेसे पूर्व प्रस्तावके मतसे सकेत करते ही जालिमसिहके अधीनकी सेनाने अस्त्र चलाकर तोपोके द्वारा गोलोकी वर्षा करनी प्रारंभ करदी, और उसके पीछे अश्वारोही सेनाका दल आक्रमण करनेके लिये आगे बढा। फतेहाबाद और धौलपुरके विख्यात समरमे हाड़ाजातीय सेनाने जैसी विषम वीरता दिखा कर यश संग्रह किया था, महारावकी सेनादलने उसी प्रकारके बल विक्रमसे जालिमसिहकी सेना पर प्रबल वेगसे आक्रमण किया, और उसी कारणसे कितनी ही हाड़ासेना तोपोके मुखमे पडी, परन्तु उस समय यदि तीन दल बृटिश सेनाके आगे बढ़कर महारावकी उस सेनापर आक्रमण न करते तो अवश्य ही महारावकी वह सेना जालिमके वाम भागकी सेनाको

भगाकर जालिमसिंह स्वयं जिस स्थान पर सेनादलके साथ ठहरे थे वहाँ आपहुँचती। परन्तु अंग्रेजी सेनादलके आनेसे उनकी वह चेष्टा व्यर्थ होगई, और अंग्रेजी सेनादलके साथ समर करना असम्भव जानकर वह शीघ्र ही भागनेके लिये तैयार हुई। और महाराव किशोरसिंह स्वजातीय चारसौ अश्वारोही वीरोंके साथ नदीके पार होकर आधकोश दूर उस ऊँची भूमिपर स्थित हुए। इस ओर उस युद्धमें उनकी पैदल सेनादल भंग करके चारोंओरको फैल गई, बृटिश सेनादल शीघ्रतासे नदीके पार होगया, और पैदल सेनाने जिस समय महारावकी सेनादलके दहिनी ओरके भागनेका मार्ग घेरा था उस समय अन्य और दो सेनादलोंने महाराव पर आक्रमण किया। इस समय भी महाराव बृटिशसेना पर आक्रमण नहीं करेंगे यह स्थिर कर इस महा विपत्तिके समयमें भी वह अपनी पूर्व प्रतिज्ञाको दृढ़ रखनेके लिये खड़े रहे, और बृटिश सेनादल शीघ्रतासे प्रबल वेगसे आक्रमण करनेके लिये आगे वढ रहा है यह देखकर भी महारावकी सेनाके दलने भागने वा आत्म समर्पणके कुछ भी चिह्न न दिखाये, और सब इकट्ठे होकर अचल पर्वतकी समान खड़े रहे। एक बृटिश सेनापति प्रत्येक सेनाको चलाकर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ने लगा, उन सेनापति और बृटिश सेनादलने भारतके अनेक स्थानोंके युद्धोंमें शत्रु पक्षको नित्य बृटिशके आक्रमणसे भागता हुआ देखा था, परन्तु राजपूत नहीं भागे बरन पिंडारी ही भाग गये थे। राजपूत अभेद्य विराट् पर्वतकी समान खड़े रहे, और हमारी सेना उस हाडासेनादलपर आक्रमण करनेके लिये जाकर प्रत्येक संघातसे पीछेको हटगई, और दोनों साहसी अंग्रेज सेनानायक उसी कारणसे रणभूमिमें मारे गये। उसी सेनादलके साहसी प्रधान अंग्रेज सेनापति संघातके समयमें अत्यन्त आश्चर्य रूपसे जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। शत्रुपक्षके एक वीरके भयंकर अस्त्रके आघातसे जिस समय उन प्रधान सेनापतिका शिरस्त्राण भेद कर दूसरी बार अस्त्रका आघात करनेके लिये उद्यत हुए, उसी समय प्रधान सेनापतिके एक परिषदने पिस्तौलके आघातसे उन आक्रमणकारियोंका प्राण विनाश कर दिया। एक मुहूर्त्तके बीचमें ही यह कार्य हुआ था, महाराव किशोरसिंहने विचारा था कि बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलावेंगे, उन्होंने उसी विचारसे केवल बृटिश सेनादलके आक्रमणको व्यर्थ करके संतोष चित्तसे रणक्षेत्रसे धीरतापूर्वक अपनी सेनाको चलाया। परन्तु बहुत थोडी देरके पीछे घुडसवारी गोलन्दाज दलने फिर महारावकी सेनाके समीप जाकर उनकी

---

(१) टाड साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि "जालिमसिंहकी सेनाके दो भाव प्रकाशित थे, या तो समर करैगी या भाग जायगी, इस चिन्तासे इधर उधर करते हुए देखकर जिससे वह भाग न सके उसके लिये टाड् साहब स्वयं जालिमकी वाहनीके सबसे पीछे खडे थे। मेजरकेनेडिके इस समय अग्रसर होते ही महारावकी सेनाका वह आक्रमण व्यर्थ होगया"।

(२) यह लफटिनेण्ट क्लार्क और रीड ४ चौथे अश्वारोही दलके नेता थे।

(३) मेजर लफटिनेण्ट करनल जे रिज सी वी.

सेनाके ऊपर गोलोकी वर्षा प्रारंभ कर दी, महारावकी सेना शीघ्रतासे चलने लगी, और कुछही समयके पीछे नूतन वृटिश सेनादल फिर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुआ कि महारावकी सेना मक्काके दीर्घाकार शस्यपूर्ण क्षेत्रमे जाकर अदृश्य होगई।

कर्नेल टाड् साहवकी लेखनीने इसके पीछे निम्नलिखित हृदयभेदी घटनाको वर्णन किया है। महाराव किशोरसिंहके कनिष्ट भ्राता पृथ्वीसिंहने हाडाजातिके स्वभाव सिद्ध बल विक्रमकी उत्तेजनासे उत्तेजित होकर और अब जीवित दशामे हाड़ौतीके डेरोंमे निवास नही कर सकेगे यह जान कर उस मातृभूमिमे जीवन त्याग करनेका विचार किया। पृथ्वीसिंह केवल पचीस जन सेनाके साथ मृत्युके मुखमें निश्चित पतित होनेके लिये फिर लौट कर वृटिश सेनापर आक्रमण करनेको चले। वृटिशसेना जिस समय आगे बढ़ रही थी उस समय एक बाजरेके खेतमे पृथ्वीसिंहको घायल अवस्थामें पड़े हुए देखा। उनको एक नरयानमे स्थापन कर अश्वारोही सेनादलके कितने ही सैनिकोके द्वारा डेरोंमे भेज दिया। वृटिश डेरोमे लेजाकर इनकी भलीभांतिसे शुश्रूषा की गई परन्तु उनकी रक्षा किसी प्रकार भी न होसकी, उन्होने दूसरे दिन प्राण त्याग दिये। उस अंतिम समयमे उन्होने यथार्थ वीरकी समान आचरण किया, और उन्होने अपने भाग्यके ही ऊपर समस्त दोष रक्खा, अपने जीवनके लिये एकबार भी आशाको प्रकाश नही किया और डेरोके समीप एक वृक्ष देखकर कहा कि हमारी प्रेतात्मा इस वृक्षका आश्रय पाकर अपने पैतृक राज्य को देखकरही संतुष्ट रहैगी। एक सैनिकने उनकी तलवार और अंगूठी लेली, किन्तु उनकी छुरी, मोतियोकी ताला और अन्यान्य मूल्यवान् अलंकार उन्होने एजेण्टके हाथमे सौंप दिये, और उनके हाथमे ही पृथ्वीसिंहने अपने पुत्रकी रक्षाका भार दिया, एकमात्र उन्ही पृथ्वीसिंहके पुत्र कोटेराजसिंहासनके क्षमता शून्य नाममात्रका नरपति पद पानेके भावी अधिकारी थे"।

वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहकी मृत्युके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहब लिखते है कि "अंग्रेजी सेनाके किसी सैनिकके हाथसे पृथ्वीसिंहके वह संघातिक अस्त्रका आघात नही लगा, किन्तु भालोकी वर्षाके द्वारा ही वह आघात लगा था, और वह आघात पीछेसे इस भावसे बड़े वेगसे लगाया गया था कि जिससे पृथ्वीसिंहकी पीठ भेदकर वक्षस्थलपर्यन्त विदीर्ण होगया था। पृथ्वीसिंहने कहा कि किसी शत्रुने प्रतिहिंसा सफल करनेके ही लिये यह अंतिम आघात लगाया था, कारण कि उन्होने कहा कि बर्छा हमारे शरीरको भेदकर इस भावसे चलाया गया है और वह बर्छा हमारे शरीर मे इस प्रकार घुमाया गया है कि जिससे हमारे जीवनकी कोई आशा नही है। यद्यपि जालिमसिंहकी सेनाने अंग्रेजी सेनाके साथ मिलकर महारावकी सेनादलका पीछा किया था, परन्तु उन जालिमकी सेनादलमे एक भी महारावकी सेनाके समीप जानेका साहस न करसकता था, इसी कारणसे अनुमान किया जाता है कि किसी विश्वासहन्ता मनुष्यने महारावकी सेनाके साथ मिलकर पृथ्वीसिंहको उस भावसे सांघातिक अस्त्राघात कर जालिमसिंहके पुत्र और उनके उत्तराधिकारियोको आगेके

लिये निश्चिन्त करदिया।" यद्यपि हम इस बातको मानते है कि किसी अंग्रेजी सैनिकने पृथ्वीसिंहका प्राणनाश नहीं किया तथापि टाड्की उक्तिसे अवश्य ही अनुमान कर सकते है कि जालिमसिंहकी ओरके किसी विश्वासहन्ताने ही इस वीरके जीवनका नाश करके जालिमका स्वार्थ साधन किया था, इस हत्याकारीकी समान जालिमसिंह भी अपने प्रभू भाईका प्राणनाश करके उस पापके भागी हुए थ, इसमे किञ्चितमात्र भी संदेह नहीं है।

सत्य और न्यायकी जय अवश्य होगी। पाशविक बलके द्वारा चाहे कितना ही धर्मके वक्षस्थल पर न्यायकी छातीपर पदाघात क्यो न हो, कितना ही न्यायको और धर्मको पाप पदसे विदलित क्यो न किया जाय, परन्तु समय पर उस धर्म और न्याय की जय अवश्य ही होगी। लोभी विश्वासहन्ता जालिमसिंह चिर दिनसे जिस प्रभूके अन्नसे प्रतिपालित हुए थे, उन ही प्रभुवंशीय और प्रभुस्थानीय किशोरसिंहके साथ उन्होने यह संग्राम उपस्थित कर दिया, परन्तु टाड्की उक्तिसे जाना जाता है कि यदि विक्रान्त वृटिश गवर्नमेण्ट न्याय और धर्मकी परवाह न करके जालिमके अन्याय पक्ष को समर्थन करनेके लिये सेनाके द्वारा सहायता न करती तो इस समरक्षेत्रमे झाला जालिमसिंहको स्ववंश सहित विध्वंस होकर धर्मके समीप उचित दंड मिलता, इसमे कुछ भी सन्देह नहीं। परन्तु हम यह भी कहते है कि महाबलशाली वृटिश वाहनी जो जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये गई थी इसीसे उस प्रकार केवल चारसौ हाड़ाजातीय सेनाके द्वारा परास्त होकर पीछा दिखा गई यह घटना जिस प्रकार उस सेनाको कलंककारक हुई उसी प्रकारसे किशोरसिंहको न्यायसंगत कामनाका समर्थन करती है। और एक बात हम बड़े दुःखके साथ कहते है कि इसमे संलिप्त होकर कर्नल टाड् साहबने जो अभिनय किया कि जिससे जालिमसिंहकी सेना न भाग जाय उस अभिप्रायसे उसके समीप रहकर अत्यन्त ही अन्याय पक्षका समर्थन किया। उन्होने जो बारम्बार कहा था कि दोनो पक्षमे संधिबंधन स्थापन करनेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की गई, हम इस बातको कह सकते है कि वह भी निर्मूल थी। उन्होने महारावके प्रस्तावोमेसे एक बातको भी नहीं सुना। जब जालिमकी प्रार्थनाके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे अतिरिक्त संधिकी धाराको प्रबल रखनेकी चेष्टा की थी, तब हम किस प्रकारसे मानले कि वास्तवमे ही उन्होने प्रकृत मध्यस्थकी समान दोनो ओरके स्वार्थकी ओर दृष्टि रक्खी थी। इसी लिये हम कह सकते है कि राजपूतजातिके अकृत्रिम बांधव कर्नल टाड्के जीवनमे यह जालिमसिंहके सम्बन्धका एकमात्र अभिनय ही अनुचित कार्य है"।

इस समय पिछली घटनाका ही अनुसरण करते है। कर्नल टाड् लिखते है कि महाराव किशोरसिंहने एकमात्र घनघोर मकईसे परिपूर्ण क्षेत्रमे आश्रय लेकर इस विपत्तिके हाथसे छुटकारा पाया। वह मकईके वृक्ष इतने घने और बडे थे कि उनमे महारावका हाथीतक नही दिखाई देता था। पाच मील तक यह खेतो खेत बराबर चले गये थे। महाराव

कोटेराज्यके वाहरी भागमे भाग गये है उनका पीछा न करना ही उचित है कारण कि एकमात्र कोटेमे ही उनका जाना विपत्तिकारक गिना गया था। महारावकी पैदल और अन्य देशकी सेनादल भग करके चारोओरको भाग गई, और हमारी अश्वारोही सेनाके द्वारा उनमेसे वहुतसे मारेगये "।

कर्नल टाड् साहवने इस वातको स्वय ही स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिहने पहिलेसे ही वृटिश सेनाके विरुद्धमे अस्त्र नही चलाया था, वह ऐसा विचारते थे और अंततक अपनी उस प्रतिज्ञाको पालन भी किया था। इस कारण हम सरलतासे अनुमान कर सकते है कि केवल चारसौ हाड़ा सेनाने वृटिश गोलन्दाज, पैदल अश्वारोहियोको जव प्रथम सघातमे ही विताड़ित कर दिया था, तव उनके वीर विक्रमसे रणभूमिमे उस वाहनीके विरुद्धमे राजपूत स्वभाव सुलभ तेजसे समर करने पर वृटिश वाहनीके भाग्यमे अवश्य ही शोचनीय घटना होसकती थी। महात्मा टाड् साहवने इस स्थानपर महारावकी वीरताके सम्वन्धमे लिखा है कि " महाराव और उनके स्वजातियोकी धीरता और निर्भीकता और वीरता देखकर इनके शत्रुओकी ओरके वीरोने भी ऊँची प्रशसा की थी, और उस दिन महारावके विपक्षमे जो सब सेना नियुक्त हुई थी उनमेसे वहुत थोडी सेनाने जाना था कि महाराव और उनके अधीनकी सेना किस प्रकार नैतिक वलसे वलवान हुई थी। उस नैतिक वलने किस प्रकारसे उनको अभेद्य जंजीरमे वॉध रक्खा था।

कर्नल टाड् साहवने इस स्थानपर दो राजभक्त वीरोकी विचित्र वीरताकी कहानी प्रकाश की है, उन्होने लिखा है कि " हाडा जातिके इतिहासमे जो समस्त वल विक्रम की कहानी वर्णन की गई है, और एकमात्र जो वल विक्रम ही हाड़ाजातिकी पैतृक सम्पत्ति इस समय गिना गया था, महाराव किशोरसिह और उनके स्वजातियोने इस समय पूर्वपुरुषोके मतसे उस प्रकार वल विक्रमको प्रकाश किया, परन्तु इस समरमे दो राजपूतोने राजभक्तिकी जो पराकाष्ठा दिखाई, हम इस स्थान पर उसका उल्लेख किये विना नही रहसकते। वह राजभक्ति ग्रीस और रोमके प्राचीन वीरोकी वीरताकी कहानीकी अपेक्षा हीन नही है। जिस स्थान पर उक्त युद्ध हुआ था उस स्थानका भौगोलिक विवरण इसके पहिले प्रगट होचुका है। वह स्थान समतलक्षेत्र है परन्तु शेषमे जिस स्थानमे नदीके किनारे वह स्थान शेष हुआ है वह स्थान सकीर्ण और नदीके पारस्थ भूमि और क्रमशः ऊँचा होकर भूधराकार दृष्टि आता है। जालिमसिहकी सेना उस सकीर्ण स्थानसे होकर जिस समय जारही थी उस समय नदीके परपारवर्ती ऊँची भूमिसे अचानक कितनी ही गोलियां आकर उनके ऊपर गिरी, विना अनुमतिके समस्त सेना अचानक उन गोलियोके शब्दसे चलनेसे रुककर खडी होगई, और देखा कि दो मनुष्य उस ऊँची भूमिके ऊपर बंदूक हाथमे लिये हुए गोली चला रहे है। सभी दो मिनटतक चुपचाप विस्मय चित्त होकर खडे रहे फिर सेनाको आगे बढ़नेके लिये आज्ञा दी परन्तु उस आज्ञाके न देते २ अग्रवर्ती सेनाके कई जने उस गोलीके आघातसे घायल

होकर पिछले भागमे भाग आये। और उस समय वह दोनो मनुष्य बिना श्रमके घन २ गोली चला रहे थे। हमारी सेना एकबार भी जितने समयमे गोली न चला सके उतने समयमे वह बीस बार गोलियोकी वर्षा करने लगे। उन दोनो वीरोको बड़ी २ बदूकोसे घन २ गोलिये निकलकर हमारी विस्तारित सेनादलके ऊपर गिरने लगी, परन्तु वह मानो इन्द्रजालके बलसे सरलतासे अपने शरीरकी रक्षामे समर्थ हुए। हमारी गोलिये भी उनके चारो ओरसे विस्तीर्ण होकर गिरने लगी, उनके शरीरमे वह स्पर्श तक भी न करसकी, इन दोनो वीरोमे एक मनुष्य बंदूकको फिर भरने लगा और अव्यर्थ निशानेसे छोड़ने लगा। अन्तमे हमारी दोनों तोपोसे उन दोनो वीरोको लक्ष्य करके गोलोकी वर्षा की गई समस्त गोले उनके धोरे होकर निकल गये, वह दोनो जने उस ऊचे स्थानपर खड़े होकर व्यंगभावसे हमें सलामी करके शेपमे अपने पूर्वमतसे सेनादलके ऊपर गोलियोकी वर्षा करने लगे। हमारी समस्त सेना उसी कारण उन दोनो व्यक्तियोद्वारा अविरुध्यगतिसे जाने लगी। यद्यपि उक्त दोनो वीरोद्वारा हमारी अनेक सेना घायल हुई तथापि उनके बल विक्रमको देखकर उनके प्राणोकी रक्षा करनेकी अभिलाषा उत्पन्न हुई। सेनाको गोलिये वर्षानेका निषेध किया गया, और आज्ञा दी कि आगे बढ़ो और सेनादलके बीचमे यदि कोई दो साहसी वीर अग्रसर होकर उन दोनो वीरोंपर आक्रमण करना चाहे तो आक्रमण करसकेगे, उस शेष आज्ञाको पाते ही दो रुहेले नंगी तलवारे हाथमे लेकर दोनो वीरोके सम्मुख होनेके लिये आगे बढे। सभी कौतूहल चित्तसे प्रतिक्षा करने लगे। उन दोनो वीरोंका शारीरिक बल बहुत थोड़ा था, या यह समझो कि वह गोलोके आघातसे पहिले ही हत तेज होगये थे, या वह जिस स्थान पर स्थित थे वह द्वन्द्वयुद्धके योग्य नही था, वह अंतमे दोनो रुहेलो के हाथसे मारे गये। बड़े आश्चर्यकी बात है कि केवल इन्ही दोनो हाड़ा वीरोने जालिमसिहके दश दल पैदल और बीस तोपोके साथ गोलन्दाजकी गतिको रोक लिय" था। यह दोनो हाडावीर जालिमसिहके द्वारा सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदीसे रहित हो...र्थन प्रतिहिसा देनेके लिये इस प्रकारकी वीरता प्रकाश करके परलोकगामी हुए थे"। ...क लिये

साधू टाड् साहबने इस स्थान पर लिखा है कि हाड़ौतीके समस्त साम... । उन्होने समस्त निवासियाने महाराव किशोरसिहका पक्ष समर्थन करनेके लिये जो से... अनुसार योगदान किया उसीके द्वारा राजपूत जातिके प्रधान गुण और सम धर्मकी रक्षा... थी, चूडान्त प्रमाण पाया जाता है, और उसके साथ ही साथ यह भी जाना जाता है कि... मान जालिमसिहका शासन कहॉतक कठोर था, और वह सर्व साधारणको कितने अप्रिय... स- थे। जिस सामन्तने संधिकार्यकी मध्यस्थता की थी और जालिमके अनुग्रहसे भूवृत्ति भी पाई थी, जिसका एक पुत्र उस युद्धमे घोररूपसे घायल हुआ, जालिमसिहके साथ वैवाहिक सम्बन्धबंधनमे बंधकर भी उसने महारावका पक्ष समर्थन किया, "कर्नल टाड् साहबने कोटेके सैकडो स्थानोंमे स्वीकार किया है कि जालिमसिहके कठोर शासनसे समस्त कोटेके प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही महाविरक्त और असतुष्ट थे, तथापि उन्होने वृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे उन जालिमसिहको अन्याय

रूपसे वंशानुक्रमसे शासनकी सामर्थ्य देनेके लिये महाराव किशोरसिहके साथ युद्ध किया। राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है"।

टाड् साहब लिखते है कि–"महाराव किशोरसिह पर्वती नदीके किनारे जाकर सन्तरणसे उस नदीके पार होगये, उनके घोड़ेने नदीके पार जाते ही पहिली गोलीके आघातसे प्राण त्याग दिये।" (इससे समझा जाता है कि महाराव किशोरसिहका जीवन नाश करनेके लिये सेनाने गोली चलाई थी। उधर इन महारावने यह प्रतिज्ञा की थी कि मै अंग्रेजी सेनाके विरुद्धमे तलवार नही चलाऊगा, इसी लिये यह रणभूमिसे चले आये) टाड् फिर लिखते है कि "प्रायः तीन सौ अश्वारोही सेनाके साथ महाराव किशोरसिह बड़ोदाको चले गये, हमारी प्रतिहिंसा देनेका और कोई प्रयोजन नही था, उसी कारणसे जिन सब साहसी वीरोने राजभक्ति प्रकाश कर समधर्म पालन करनेके लिये अपनी वासभूमि अपना आवास और अपने परिवार तकको त्याग कर महारावके पक्षका अवलम्बन किया था।

हमने अपने प्रबल शत्रु महाराष्ट्रोकी समान उन हाडावीरोके पीछे धावमान होकर उनका विनाश करना कर्त्तव्य न जाना, यह बात सत्य है कि वह रणभूमिमे हमारे सम्मुख हुए थे, परन्तु आक्रमणके लिये नही वरन अपनी रक्षाके लिये सम्मुख हुए थे, और उनका वह कार्य अवश्य ही सम्पूर्ण नीतिसंगत है।" कर्नल टाड्का यह मन्तव्य अवश्य ही प्रीतिदायक है। अन्य अंग्रेजके होनेसे उन सामन्तोके विनाशमे कुछ भी विलम्ब नही होता।

कोटेराज्यके न्यायसंगत अधीश्वर महाराव किशोरसिहको भगाकर कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "मूलसधिपत्रके विरुद्धमे इतने दिनोसे जो अन्यायरूपसे उत्तेजना प्रकाश की गई थी, उसने एकबार ही दूर होकर ऊँची आकांक्षाको विध्वंशकर दिया। इस विद्रोहके प्रधान षड्यन्त्री दोमे से एक पृथ्वीसिह मारे गये, और दूसरे गोवर्द्धनदास निकाल दिये गये। उधर जालिमसिहका शिक्षित नियमित सेनामे जिन्होने जालिमसिहका पक्ष त्याग कर महारावका पक्ष अवलम्बन किया था, उनको इस प्रकार दृड मिला कि जिससे जालिमके अधीनमे स्थित बचीहुई सेनाके पक्षमे उस प्रकारसे जालिमसिहका पक्ष त्यागनेकी कामना अवश्य ही विलुप्त होगई। उस दिनके युद्धमे उस प्रकारकी पराजय होगी, सामन्तोने पहिले इस प्रकारका अनुमान नही किया था, इसी कारण उन्होने उसके लिये पहिले कोई तैयारी नही कर रक्खी थी। इस समय हमारी आज्ञा होनेपर समस्त रजवाडेमे उनको कही भी आश्रय नही मिलता, परन्तु उनकी समस्त धनसम्पत्ति छीन कर उन सबका नाश करना हमने कर्तव्य नही जाना, कारण कि हम जानते है कि उन्होने अनेक कारणोसे महारावका साथ दिया था, इन सब कारणोको निवारण करना उनकी सामर्थ्यसे बाहर था। महारावके डेरोमे अरक्षितभावसे रहनेके कारण हमने

(१) कर्नल टाड् साहबने टीकेमे लिखा है कि "कितने ही प्रधान २ सामन्तोने एजेण्टके द्वारा जालिमसिहके पासको जो पत्र लिखे थे इसमे उन्होने कहा है कि महारावके विश्वासी मन्त्रीके उपदेशके अनुसार उन्होने महारावकी आज्ञानुसार योगदान किया था"।

उनके समस्त गुप्त कागज पत्र अपने हस्तगत करलिये । उन कागज पत्रोंके पढनेसे जाना जाता है, कि ऐसे प्रबल षड्यन्त्र जालका विस्तार कर ऐसी शठता मूलक तैयारी की थी, उसी कारणसे महाराव और उनके समस्त साहसी वीरोने उनकी ऊंची आकांक्षा को पूर्ण करनेमे सहायताके लिये जाकर पूर्ण हानि उठाई और वह प्रत्येक ही कठोर दंडके उपयोगी हुऐ "।

साधू टाड् साहब भली भांतिसे जान गये थे कि एकमात्र संधिकी धाराको प्रबल रखनेके लिये यह जो राजनैतिक अभिनय किया गया है यह अत्यन्त ही अन्याय मूलक और शोचनीय है। टाड् साहबने इस स्थान पर लिखा है, कि "इस विशद-रूपसे वर्णित हुई घटनाओमे ग्रंथकार (टाड्) ने शोचनीय कर्तव्यको पालन किया वह हाड़ा जातिके अतीत इतिहासको जानते थे, ओर विभिन्न घटनाओंके प्रकृत मूलकी अवस्थाको जानते थे, उनके उस कर्तव्य पालनके समय एक ओर जैसे उस अभिज्ञताके बलसे सहायता प्राप्त थी, दूसरी ओर उसी कारणसे उसको विव्रत होना हुआ था। वास्तवमे उस अभिज्ञताका न होना ही अच्छा था– केवल मूल संधिपत्रकी धाराका मर्म जानकर दृढतापूर्वक उस धारासे कार्य परिणत करनेमे दृढ़ यत्नवान् होने पर कोई उपद्रव नहीं होता। किसी पक्षके प्रति सहानुभूति वा न्याय विचार करना सर्व-साधारणकी राजनीतिका उद्देश नहीं था, इस कारण यहॉपर अवस्थान अभिज्ञताके द्वारा अनेक उपकार देखे जाते थे । परन्तु कठोर कर्तव्य पालनमे दृढ़ आज्ञाके प्रति दृष्टि रखकर भी उन्होने विचार किया कि वृटिशके प्रभुत्वकी रक्षाके लिये जिससे अत्याचार और उपद्रव किसी प्रकार न हो, और हाड़ाजातिकी जो कुछ भी जातीय स्वाधीनता है, वृटिश राजनीति वा वृटिश गवर्नमेण्टके भयसे जालिमसिह उस स्वाधीन ताके भारपर हस्ताक्षेप नहीं करसकै और वह स्वाधीनता भी जिससे नष्ट न हो। उन्होने इसीसे उक्त समरके कुछ दिन पीछे अपने ऊपर समस्त दायित्वका भार लेकर समस्त सामन्तोके ऊपर क्षमा दिखाकर उनको अपने २ स्थानो पर जानेके लिये घोपणपत्रका प्रचार किया। उन्होने जालिमसिहसे कहा कि सामन्तोके ऊपर यह तो साधारण क्षमा दिखाई है, यदि किसी प्रकारसे उस क्षमाके दिखानेमे कसर होगी तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त असन्तुष्ट होगी। सामन्तमडली इस घोषणापत्रको पाकर शीघ्रतापूर्वक अपने२ स्थानोंको लौट आई। इस प्रकार सब ओर उस क्षमाका प्रचार पर सतोषदायक फल उत्पन्न किया गया तथा सर्व साधारणमे जो उस घोर विभ्राट्से महा सकटके कारण तथा राजनैतिक सघर्पणसे जो घाव पहुचा था इस क्षमाको दिखानेसे घोपणारूप अव्यर्थ औपधीने उस घावको सब प्रकारसे भरदिया। टाड् साहब जिस कठोर कार्यसाधनमे वाध्य हुए थे इसके मध्य भी अनेक स्थानोमे वह अभिनदित हुए

(१) कर्नल टाड साहबने लिखा है कि " दिल्लीके जो देशीय वन रक्षक इस षड्यन्त्रमे लिप्त थे, वही खोज करनेके पीछे उनको पदसे रहित किया गया। और गवर्नमेण्टके प्रधान कार्य स्थानके फारसी भाषाके सेक्रेटरीमुनशीके भाग्यमे भी वह दड प्राप्त हुआ था।

थे उसके सम्बन्धमे उन्होने राजपूतोके चरित्रोको प्रकाश करनेवाली एक घटनाका इस स्थानपर उल्लेख किया है। सन् १८०७ ईसवीमे जिस समय ग्रंथकार (टाड् साहबने) राजनैतिक कार्यमे सबसे पहिले प्रवेश किया था उस समय वह इकले ही इस कोटे-राज्यके अनेक स्थानोमे भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर हाड़ौतीके भूवृत्त और इतिहासको संग्रह करनेमे प्रवृत्त हुए। वह (टाड्) राहतगढसे सेधियाके डेरोको छोड़ अत्यन्त सामान्य अनुचरोको साथले चन्देरीके गहन वनसे युक्त देशमे होते हुए समान पश्चिमकी ओरको आगे बढ़कर वेतवा और चम्बल नदीके मध्यवर्ती समस्त नदियोके उत्पत्ति स्थानको ढूढ़ते हुए गये । बारा नामक स्थान पर जाकर इन्होने अपने डेरे डाल दिये। हाड़ौती देशसे साढ़े आठकोश दूर कालीसिन्धु नामक नदीके किनारे जाकर अपने सेवकोकी इच्छानुसार विश्राम करके आनेके लिये कहा, और आप शीघ्रतासे घोड़ेपर सवार होकर लौटने लगे। वह बमोलिया नामक नगरसे होकर जिस समय जा रहे थे, उस समय एक मनुष्योके दलने बड़ी शीघ्रतासे बाहर होकर उनको पकड़ा। उन्होने कहा कि आपको अधीश्वरके निकट अवश्य ही जाना होगा। यद्यपि उस समय वह अत्यन्त क्लान्त होगये थे, तथापि उस समय उनके उन वाक्योकी रक्षा न करनेसे अत्यन्त ही अविवेचकताका कार्य होगा । इससे टाड् साहब उनके वाक्यकी रक्षा करनेमे सम्मत होकर एक बगीचेमे गये । उस बगीचेके मध्यस्थलमे एक सघन पल्लव समाकीर्ण वृक्षोकी छायासे ढकेहुए स्थानमे एक ऊँचे मचानको देखा । उस मचानके ऊपर मनोहर गलीचे पर बमोलियाके अधीश्वर परिषदोके साथ बैठे थे । उन्होने ग्रंथकार (टाड्) को बड़े सम्मानके साथ ग्रहण किया। सबसे पहिले ग्रंथकारने बूट (जूतेके) खोलनेकी चेष्टा की, परन्तु उस समय वह अत्यन्त क्लान्त थे इससे उनकी वह चेष्टा सफल न हुई, इससे पीछे उनके सम्मुख खाद्यादि रक्खा गया, और उनके हाथ मुँह धोनेके लिये एक ब्राह्मण जल ले आया । यद्यपि वह उस समय राजपूत जातिके आभ्यंतरिक आचार व्यवहारको भली भाँतिसे नही जानते थे, वह उसके पालनमे वीतरागी थे, तथापि एक घड़ी तक वहाँ बड़े आनन्दसे निवास किया, और उस समय वार्तालाप होनेमे एक वार भी विश्राम नही मिला । शीघ्र ही वह स्थान मनुष्योसे भर गया, और अनेक सुन्दरी कृष्णनयना रमणी निर्भय होकर मुस्कुराती हुई उनकी ओरको देखने लगी, टाड् साहब यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, कारण कि वह स्त्री जातिकी सामाजिक अवस्थाके सम्बन्धमे कुछ भी नही जानते थे। टाड् साहब की घोड़ी लंगड़ी होगई थी । बमोलियाके अधीश्वरने उसे देखा और जिस समय टाड् साहब जानेके लिये तैयार हुए उस समय उन्होने देखा कि उनके लिये एक उत्तम घोड़ा सजासजाया तैयार खडा है, परन्तु उन्होने उस घोडेको ग्रहण नही किया। ग्रंथकारने अपने डेरोमे आकर कितनेक ही छोटे २ द्रव्य सम्मानसे उपहार स्वरूपमे उन सामन्तोके पास भेजे। उस घटनाके चौदह वर्ष पीछे मांगरोलमे जिस दिन महा-राव किशोरसिहके विरुद्धसे युद्ध हुआ था उसके दूसरे दिन बमोलियाके सामन्तोकी

माताके समीपसे उनको एक पत्र मिला। सामन्त जननीने उस पत्रपर उनको आशीर्वाद लिखकर पूर्व मित्रताको स्मरण कराकर उनसे यह प्रार्थना की थी कि हमारे पुत्रने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये महारावका साथ दिया था, हमारी सन्तानकी रक्षा करनी होगी। ग्रंथकारने बड़े सन्तोषके साथ सामन्त माताके निकट उस पत्रका उत्तर भेजा। पत्रवाहकके तुम्हारे पास न पहुँचते २ आपका पुत्र आपके पास पहुँच जायगा। स्मरण होगा, कि जालिमसिहको जब सबसे पहिले कोटेके शासनकर्ताका पद मिला था उस समय आथूनके जो सामन्त जालिमसिहके प्रधान शत्रुरूपसे उनके विरुद्धमें खडे हुए, यह बमोलियाके सामन्त उनके ही उत्तराधिकारी थे"।

कर्नल टाड् साहब लिखते है कि "महाराव किशोरसिह इसके पीछे मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमे गये, इससे प्रमाणित होता है कि ऊँची आकांक्षाके स्थानपर एकमात्र धर्म भाव ही अधिकार कर सकता है। जो मनुष्य अपने घृणित उद्देशको साधन करने के लिये कुसन्मति देकर महारावके भाग्यको विध्वंश करनेके लिये उद्यत हुए थे, इस समय वह उनको छोड़कर चले गये, महारावके नेत्रोंसे आवरणके उतरते ही उन्होंने देखा, कि यह कैसी अवस्थामे पड़ कर किस भावसे जीवन व्यतीत कर रहे है। मूल संधिपत्र और अतिरिक्त धाराके विरुद्धमे जो सब आपत्ति और उपद्रव होरहे थे, थोड़े ही समयमे उन सभीको महारावने छोड़ दिया। उस समय जालिमसिहकी सम्मतिके अनुसार महारावके निकट एकपत्र भेजा गया, और कैसी व्यवस्थाके करनेसे वह फिर कोटेराज्यमे आसकेगे वह भी उस पत्रमे लिख दिया गया। उस व्यवस्थामे महारावकी सम्मतिसे उत्तर भेजने पर, एजेण्टने मूल संधिपत्रको तैयार कर दिया, उस संधिपत्रमे केवल महाराव और जालिमसिहका प्रकृतपद निर्द्धारित हुआ हो यही नही–वरन भविष्यत्मे जिससे किसी प्रकारका संघर्षण न हो उसके लिये केवल नाममात्रके राजाके उपाधिधारी महारावके साथ जालिमसिहकी क्षमता और सत्वाधिकार निर्देश करदिया गया था। मूल प्रधान उद्देश महारावके पदकी मर्यादा शांति और आत्मरक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करना था, सो उसका अत्यन्त उदारभावसे निश्चय किया गया था। महारावके पिता वा कोटेके भूतपूर्व किसी राजाको वृत्ति प्राप्त नही हुई पर उनको वृत्ति देनी होगी। समस्त राजपूत जातिके प्रकृत शिरस्थानीय मेवाड़के महाराणाके दरबारमे जो व्यय नियत हुआ है; महारावके लिये भी इसी प्रकारका व्यय नियत किया जायगा"।

(महात्मा टाड्ने अपने इतिहासमे महाराव किशोरसिंहके इस शेष स्वाधीनता विनाशक सधिपत्रको प्रकाशित नहीं किया है, हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे सग्रह करके उसको यहापर प्रकाशित किया है)।

सन्धिपत्र।

"मै महाराव किशोरसिह—गत दो वर्षतक विशेपतः सम्प्रति जो समस्त काड उपस्थित हुआ है, उस सबका फल विशेपरूपसे अनुसधान कर और उस प्रकारके आचरणसे अत्यन्त कुफल फला है, उसीसे वृटिश गवर्नमेण्ट असन्तुष्ट हुई है कोटे राज्यका

अमंगल हुआ है और हमारे निजकी सुखशांतिमें आघात लगा है। इसको भलीभांतिसे जानकर मैने आजकी तारीखसे निम्नलिखित धाराओसे युक्त संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये और उसको मोहरांकित करदिया। इस सधिपत्रके मतसे मै भविष्यत्मे सब कार्य करूंगा। मेरी मानसिक श्रेष्ठ इच्छाके श्रीनाथजी साक्षी रहैगे। यदि मै भविष्यत्मे इस संधिपत्रकी किसी धाराको भगकरूं तो मै वृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे भविष्यत्मे किसी प्रकारका अनुग्रह नही पासकूंगा।

पहिली धारा– वृटिश गवर्नमेण्ट जिस प्रकारकी आज्ञा देगी मै आनंदित होकर उस सबका पालन करूंगा और मेरे भविष्यत्मे सुख शान्ति स्वच्छन्दता तथा सांसारिक विषयके सम्बन्धमे आपकी (टाड्) मध्यस्थतामे जो निर्द्धारित होगा, मै उसके विरुद्धमे किसी प्रकारकी आपत्ति नही करूंगा।

दूसरी धारा–मेरे पिता राजा उमेदसिहकी जीवित दशामे नानाजी जालिमसिह जिस प्रकार राज्यके समस्त राज्यकार्यको निर्वाह करते आये है, दिल्लीके संधिपत्रके मतसे हमारे नामसे तथा हमारी ओरसे ओर हमारे उत्तराधिकारीकी ओरसे नानाजी जालिम-सिह और उनके उत्तराधिकारियोको उसी प्रकारसे शासनका भार प्राप्त होगा, अर्थात् राज्यशासन, राजस्व, सेनादल, दुर्गसमूह, कर्मचारी नियोग, कर्मचारियोके पदच्युतिकी सामर्थ्य उन्हीके हाथमे रहैगी, सभी विषयोमे उनकी सामर्थ्य चूडान्तरूपसे गिनी जायगी, उसके सम्बन्धमे हम हस्ताक्षेप नही करेगे।

तीसरी धारा–शांति भंग करनेवालोको उचित दंड प्राप्त होगा। मेरे सभी कुपरामर्श देनेवाले चले गये है, वा आपकी आज्ञानुसार मैने उनको निकाल दिया है। गोवर्द्धनदास, सैफअली, महाराज बलवन्तसिह, काजी मिरजामोहम्मद अली, सेखहबीब और अन्यान्य व्यक्तिगण, जिनकी कुपरामर्शसे मै चला था। मै उनके साथ भविष्यत्मे अब किसी प्रकार सम्बन्ध वा उनके साथ पत्रव्यवहार नहीं करूंगा।

चौथी धारा–हमारे शरीरकी रक्षाके लिये जो सेना नियत होगी, उसके अतिरिक्त हम किसी समयमे भी अतिरिक्त सेनाके रखनेकी चेष्टा नही करेगे। जो मनुष्य शासनकर्त्ताके विपक्षी वा अन्य सब मनुष्य उन सब मनुष्योंके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध रक्खेगे, मै अपने दरबारमे उनको नही आने दूंगा।

नाथद्वारा, २२–नवम्बर, सन् १८२१ ईसवी "।

(हस्ताक्षर) महाराव किशोरसिह *।

जो महाराव किशोरसिह प्रकृत राजपूत वीरकी समान जालिमसिहके विरुद्धमे खड़े हुए थे। पैतृक शासन स्वत्वकी स्वाधीनता पानेके लिये समरमे अवतीर्ण हुए थे उन्ही महाराज किशोरसिहको इस समय संधिबधनमे बँधा हुआ देखकर और उनको वृटिश गवर्नमेण्टके क्रीतदास स्वरूपसे वश्यता स्वीकार करते हुए देखकर किसीने उनको कायर पुरुप विचारा था। परन्तु हम कह सकते है कि जो महाराव

* Aitchison's treaties Vo IV.

किशोरसिंहको इस प्रकारकी उपाधि देनेमे अग्रसर हुए थे वह इस समय भ्रान्त थे। महाराव यदि अपना पैतृक अधिकार और स्वाधीनता प्राप्तिके लिये वीर पुरुषोंकी समान खड़े न होते तो हम उनको यथार्थ कापुरुष कह सकते थे। वह गवर्नमेण्टको जालिमसिंहका सब प्रकारसे पुष्टपोषण करतेहुए देखकर जिस जातीय अभ्युत्थानको उपस्थित करके वह समरसागरमे कूदे थे, उसके लिये वह अवश्य ही प्रशंसाके पात्र हुए। कौन कह सकता है कि प्रवल वलशाली वृटिशसिंहको जालिमसिंह का पक्ष समर्थन करते हुए देखकर और भावी फल क्या होगा, महारावने इसका अनुमान न किया था, तब युद्धका न करना ही उचित था। हम कह सकते है कि महाराव यद्यपि जानते थे कि गवर्नमेण्ट विपुल विक्रमशाली है तथापि उन्होने नही विचारा था कि जगत्‌मे सर्व प्रधान वृटिश गवर्नमेण्ट वास्तवमे ही उस भावसे न्यायके मस्तक पर धर्मके मस्तक पर राजनीतिके मस्तक पर पदाघात करके जालिमका पक्ष समर्थन करनेके लिये उनके विरुद्धमे सेनाको चलावैगी। उन्होने विचारा था कि समस्त हाडा-जाति तथा जालिमसिंहके कुटुम्बी तकको जालिमके विरुद्धमे खड़े होते देख वृटिश गवर्नमेण्ट अवश्य ही अपना कार्य अनुचित जानकर हमारे पक्षको समर्थन करेगी। पर यह न हुआ वृटिश गवर्नमेण्टके साथ उनकी कोई शत्रुता नही थी, इसी लिये मांगरोलके समरमे वृटिश सेनादल उनको आक्रमण करनेके लिये धावमान हुआ, पर उन्होने केवल अपनी रक्षाके लिये ही उस वृटिशसेनाके आघातको व्यर्थ करके रणक्षेत्र को छोड़ दिया। उक्त संधिपत्रसे भलीभाँति प्रमाणित होता हैं कि महारावने अत्यन्त अनिच्छासे उस संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये थे, उन्होंने उपस्थित अवस्थाको समझ कर वृटिश एजेण्टको अत्यन्त ही अविचार करते हुए देखकर भविष्यत्‌मे अपना उद्देश साधनके लिये किसी उपायको न जानकर उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये। परन्तु वृटिश सरकारने एक राज्यमे एक नाममात्रके राजा और एक जनेको शासनशक्तिशाली राजाकी उपाधिसे हीन अधीश्वर नियुक्त रखकर अत्यन्त अविचारका कार्य किया, संधिके ऊपर संधि करके स्वपक्षके उस अनुचित कार्यको चिर दिनतक प्रबल रखनेके लिये जो चेष्टा की, समय पर वह सब प्रकारसे व्यर्थ होगई, और उस अज्ञानताका चूडान्त प्रमाण प्रकाशित होगया।

इस प्रकार महाराव किशोरसिंहको फिर शासनक्षमता हीन नरपति पदपर प्रतिष्ठित करके उनके लिये जो अर्थ नियत हुआ था कर्नल टाड्‌ने उसे प्रकाशित नही किया, इतिहासके अंगको पूरण करनेके लिये हम उन सूचियोको आचिसन साहबके ग्रथसे लेकर यहाँ लिखते है।

पहिली संख्याकी सूची।

महाराव किशोरसिंहको उनके दरवार और कार्यकारक वर्गोंके लिये निम्नलिखित वृत्ति सन् १८२२ की ८ वीं जनवरीसे आरंभ करके प्रत्येक महीनेमे समय पर कोटेके शासनकर्ताके द्वारा मिलेगी।

	वार्षिक ।	
१ श्रीव्रजराजजीकी सेवामे	४८०० रुपया ।	
२ महारावका दान दातव्य	२२००	,,
३ रसोई १५) रोजाना	५४००	,,
४ राजमहलका व्यय...	९३०६॥-॥।	
५ रानियोके अलंकार	१२०००	
६ महाराव और महारानियोकी पौशाक वेश और दातव्य वस्त्रक्रय	१८०००	,,
७ हाथखर्च वा गुप्तव्यय	२४०००	,,
८ राजसेवकादिका वेतनादि	१२०००	,,
९ तबला	६७९६॥	,,
१० फीलखाना (हस्तीशाला)	३२७६॥-	,,
११ रथगाडी, नरयान इत्यादि	१४०३।-॥	,,
१२ पालकीके कहार	१२३९	,,

प्रासादरक्षक सेनाका व्यय ।

१३-१०० अश्वारोही (प्रत्येकको २५) हिसाबसे... ...	३०००० रुपया ।	
पैदल २०० (सूबेदार २ प्रत्येकको २० मासिकके हिसाबसे २ जमादारको मासिक १२) पताकाधारी मासिक ८) पदातिको ७ के हिसाबसे	१७५८०	,,
१४ ऊंट ५	३१७	,,
१५ सांडनी ४	४८८≡।।।	,,
१६ ईंधनकी लकड़ी	७२०	,,
१७ घास	८५०	,,
१८ रोसनाई तेल बत्ती काली आदि	१८००	,,
१९ रंग	७००	,,
२० इमारत सत्कार	३००	,,
२१ घोडा गाय बैल ऊँटकी खरीददारीके वास्ते .	६००	,,
२२ फराशरंगना अर्थात् पर्दागलीचे डेरावगैरा ...	१०००	,,
२३ चिकित्सालय औषधीकी खरीददारी	४००	,,
२४ लंगरखाना	६००	,,
वार्षिक जोड़	१६४८७७॥=)	

वा मासिक १३७३९॥।)॥

हस्ताक्षर माधोसिंह ।

दूसरी सूची।

पृथ्वीसिहके पुत्र नानालाल और उनके कुटुम्बके भरण पोषणके लिये कोटेके शासनकर्ता द्वारा सन् १८२२ ईसवी आठ ८ जन्वरीसे प्रत्येक महीनेमे निम्नलिखित वृत्ति दीजायगी।

वार्पिक कोटेशाही रुपया	१८०००	"
वा मासिक	१५००	"

हस्ताक्षर माधोसिंह ::

कर्नल टाड् साहबने मध्यस्थ होकर किशोरसिहकी वृत्ति नियत कर राज्यमे उनकी जो क्षमता और शक्ति निर्द्धारण करके उसे लिपिबद्ध कर कुमार माधोसिह जिससे चिरकाल तक उसी नियमके अनुसार कार्य करै, इसके लिये उनसे हस्ताक्षर करालिये। उस पत्रको इतिहासमे प्रकाशित नही किया है। हमने उसे भी विशेष प्रयोजनीय जानकर आचिसन साहबके ग्रथसे इस स्थानपर प्रकाशित किया है।

" पहिली धारा—कोटेकी राजधानी और उनके निकट प्रासाद विश्राम स्थान और उद्यान समूह यथा राजधानीके मध्यस्थ महल, उमेदगंजस्थ महल, रंगवाड़ी जगपुरा मुकुन्दरा ब्रजराजजी नामक उद्यान, गोपालनिवास, और ब्रजविलास नामक उद्यान महारावके अधिकारमे रहैगे, महाराव उन सबके सम्बन्धमे जो कोई आज्ञादान वा कार्य करेगे, शासनकर्ता उन पर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नही कर सकेगे।

राजधानीके मध्यस्थ राजमहलके जिन अंशोके कितने ही हर्म्य राजराणा जालिमसिहके परिवार और सेवकोके निवास करनेके लिये नियत है, वह मूलमहलसे पृथक् कर दिये गये है, नव्यवजे किलेसे खेतर द्वार तक जो गली गई है उन दोनो मार्गोमे सीमा चिह्न स्वरूप होरही है। उस सीमाके बाहर कोई पक्ष भी नही जा सकेगा। शासनकर्ता उक्त हर्म्य और उससे लगेहुए स्थानोकी रक्षाके लिये ५० जनोसे अधिक चौकीदार नियुक्त नही करसकेगे।

दूसरी धारा। प्रथम संख्यक तालिकाके मतसे महाराव और उनके परिजनोके भरण पोषणके लिये वार्षिक कोटाशाही एक लाख चौसठ हजार आठसौ सत्तर रुपया दश आना तीन पाई वा मासिक १३७३९।।।)।।। १३— देना होगा। राजराणा जिस महाजनको स्थिर कर देगे, उनको उक्त प्रतिमासका रुपया मध्य समयमे मिलैगा, महाराव उस रुपयेकी प्राप्तिपदपर हस्ताक्षर करदेगे, और हिसावकी रक्षाके लिये उनको एक अनुलिपि वृटिश गवर्नमेण्टके निकट भेजनी होगी।

प्रथम संख्याकी सूचीका जो निर्देश किया गया है वह महारावके अंत:पुरका व्यय है, राजदरवारके सेवकादिका वेतन और प्रासाद रक्षक सेनाके वेतनके सम्बन्धमे महाराव अपनी इच्छानुसार समस्त व्यय करेगे।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV.

तीसरी धारा–राजग्रहमे विवाह और जन्म इत्यादि उत्सवके समयमे जो कुछ व्यय आवश्यक है, शासन कर्ताके द्वारा वह प्राचीनरीतिके अनुसार राजपदोचित रूपसे दिया जायगा । यदि महारावके कोई उत्तराधिकारी जन्म लेगा तो अवस्थानुयायी और प्राचीन रीतिके अनुसार भरण पोपणके लिये और भी अतिरिक्त वृत्ति नियत करदेनी होगी ।

चौथी धारा–दशहरा, जन्माष्टमी इत्यादि साधरण उत्सवोके समयमे महाराव और उनके परिवारको अबतक जिस भावसे सम्मान मिलता है उसी भावसे सम्मान मिलेगा, कर्तृत्व करेगे, और दान पुण्य इत्यादि जो समस्त व्ययजनक कार्य सांसारिक गिने जाते है उन सबके ऊपर भी महाराव कर्तृत्व करेगे और समस्त राजचिह्न इतने दिनोतक जिस भावसे रहते आये है इसके पीछे भी उसी भावसे रक्खे जॉयगे ।

पॉचवी धारा–जिस समय महाराव वायु सेवन करनेके लिये बाहर जॉयगे उस समय पूर्ववत् समान राजचिह्न सभी उनके साथ भेजे जॉयगे, और राज्यका एक सेनादल भी उनके साथ जायगा ।

छठवी धारा–प्रथम सख्यक सूचीके अनुसार १०० अश्वारोही एव २०० पैदल जो उनके शरीर रक्षक और प्रासाद रक्षकरूपसे निर्दिष्ट हुए है वह सम्पूर्ण रूपसे महारावके अधीनमे रहैगे । अन्य कोई भी उनके ऊपर किसी प्रकारका कर्तृत्व नही कर सकैगा । उक्त सेनादलके और राजदरबारके अन्य किसी प्रकारके भृत्य वा परिषद जो तालिकाके निर्दिष्ट अर्थमे प्रतिपालित और रक्षित होगे महाराव उनके एकमात्र प्रभूस्वरूपसे रहैगे ।

सातवी धारा–पृथ्वीसिहके पुत्र नानालालजी और उनके कुटुम्बके तथा उनके पिताके और कुटुम्बियोके भरण पोपणके लिये वार्पिक १८००० रुपयेकी जो वृत्ति नियत हुई है, महारावकी वृत्ति जिस समय जिस नियमसे दीजाती और स्वीकृत होती है, वह भी उसी समय उसी नियमसे दी जायगी और स्वीकार की जायगी । उनके प्रथम विवाहके समयमे कोटेके शासनकर्ता उनके पदके उपयोगी समस्त व्यय प्रदान करेगे ।

आठवी धारा–कोटेके शासनकर्ता जो समस्त सिपाही और मुसद्दीको पदसे रहित करेगे वा जो अपनी इच्छानुसार पद त्याग करेगे, महाराव उनको अधीनमे नियुक्त अथवा आश्रय नहीं देसकेगे । दूसरी ओर कोटेके शासनकर्ता उसी प्रकारसे महारावके निकाले हुए उन श्रेणीके किसी मनुष्यको अपने अधीनमे नियुक्त वा आश्रय नही देसकेगे ।

नौमीं धारा–गवर्नर जनरलके एजेण्टकी ओरसे एक विश्वासी मनुष्य नित्य महारावके समीप हाजिर रहैगा और उसके द्वारा पत्रादि भेजकर कथोपकथन चलैगा ।

दसवी धारा–पिछले उपद्रवोके समय महारावने जिस प्रकारका ऋण किया है

अथवा इसके पीछे जो कोई ऋण करेंगे उस ऋणके चुकानेको खजानेसे किसी भाँति भी रुपया नहीं दिया जायगा।

(हस्ताक्षर) माधोसिंह।

फाल्गुन सम्वत् १८७६।७ वीं फर्वरी सन् १८२२ ई०

"जो लिखा गया है उसमें कुछ भी व्यतिक्रम नहीं होगा*"।

भविष्यत्में जिससे अब किसी प्रकारका उपद्रव न हो इसके लिये टाड् साहबने यह व्यवस्था कर दी थी। परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने एक ऊंची श्रेणीके राजनीतिज्ञ होकर भी इस स्थान पर परिणामकी चिन्ता नहीं की। एक राज्यमें एक नाममात्रका राजा, और एक पूर्ण शासन शक्ति युक्त व्यक्ति वंशानुक्रमसे व्यवस्था न करें। यह व्यवस्था कभी भी चिर दिनतक नहीं चल सकती, इस बातका टाड् साहबने विचार नहीं किया। कर्नल टाड् साहब लिखते हैं कि "संधिकी पूर्व व्यवस्था सतोषदायक होने पर भी जिस सधिपत्रकी धाराको भंग करके उनकी उससे अधिक दुर्दशा हुई है उस संधिपत्रकी रक्षाके लिये जिसमें दृढ़तासे मन लगाया जाय उसके मंगल और सुख शांति के लिये उसी प्रकार विशेष मन लगाना होगा। कुपरामर्श पाये हुए महारावके हृदयमें उस विश्वासका प्रवल करना आवश्यक होगया है, उन्होंने पहिले जो व्यवहार किया उसके अनेक कारणोंमें यह एक कारण दिखाया कि उन्होंने अपने जीवनके भयसे ही यह किया था, वास्तवमें यही उनके भयका कारण था, और इसी लिये उनके उस भयके दूर करने और मंगल साधन करनेके लिये चेष्टा की गई है। अधिक क्या कहें, जिस दिन उन्होंने समस्त पूर्व भीति और अविश्वासको दूर कर नाथद्वारेको छोड़ कर कोटेमें जानेका उद्योग किया उस दिन उनको फिर सिंहासन पर अभिषिक्त करनेकी इतनी चेष्टा और व्यवस्था की गई थी, उस चेष्टाको व्यर्थ करनेके लिये एक भयानक षड्यंत्र प्रकाशित हुआ। एक दुश्चरित्र लँगड़ेने अपनेको महारावके भ्राता विशनसिंहके नामसे परिचय दिया' और प्रकाशित किया था कि जालिमसिंहके पुत्रकी आज्ञासे मुझको लँगड़ा किया गया है"। वह दुराचारी महारावके वासस्थानके एक कोश निकट तक जानेका साहसी हुआ था, विशन सिंहकी आकृतिके साथ उसकी आकृतिका अत्यन्त सामान्य सादृश्य था इसीसे उसकी चातुरी सरलतासे प्रकाशित होगयी और उसकी वह प्रतारणा शीघ्रतासे जानी गई, परन्तु जिस उद्देशसे वह मनुष्य इस कार्यको करता था उसके सफल होनेमें कुछ विलम्ब नहीं हुआ। महाराव माधोसिंहके द्वारा अपने प्राणनाशके भयसे भयभीत होगये। अन्तमें बडे कष्टसे उनका वह भय दूर कियागया। उदयपुरके महाराणाने महाराव किशोरसिंहकी भगिनीके साथ विवाह किया था जिससे किशोरसिंहको फिर अपना सिंहासन मिलजाय इसके लिये उन्होंने विशेष यत्न किया। उन्होंने उक्त समाचारको पाकर समस्त चेष्टा और यत्न व्यर्थ होता हुआ देखकर शीघ्र ही उस प्रतारकको पकड़वाकर उदयपुर राजधानीमें मंगवा लिया उस प्रतारकके उस व्यवहारसे सर्वत्र

---

* Aitchison's Treaties Vol IV.

महा उत्तेजना दृष्टि आई। किसलिये उस मनुष्यने ऐसा कार्य किया था, किसी प्रकार भी वह प्रकाशित न हुआ, इस षड्यंत्रका मूल क्या था, वह चिर दिनके लिये गुप्त रक्खा गया, और शीघ्र ही उसको प्राण–दंड दिया गया। उसके सम्बन्धमे केवल इतना ही प्रकाशित हुआ है, कि वह मनुष्य जयपुर राज्यका निवासी था और किसी घोर अपराधके करनेसे उसको दंडमे लंगड़ा कर दिया गया था।

" उक्त शेष अभिनयके समाप्त होते ही महाराव कन्हैयाजीके मंदिरको छोड़कर अपने पिताके राज्यकी ओरको चले। वर्षके शेष दिनमे जालिमसिह एजेण्ट (टाड्) के साथ महारावको राजधानीमे बुलानेके लिये आगे बढ़े। महारावके जानेके समय सर्वसाधारण प्रजाने महा आनंद प्रकाश किया। यह देखकर जाना जाता है कि अन्य प्रकारसे कोई भी व्यवस्था करनेपर मंगल नही होसकता था। दो वार जिस सिंहासनको छोड दिया था उस दिन महाराव फिर उसी सिहासन पर बैठे, परन्तु अबकी वार उनके हृदयसे समस्त ऊँची आकांक्षाएँ या उपद्रवोके बँधानेकी आशाएँ एकबार ही लोप होगई "।

महारावको अपने व्ययके सम्बन्धमे जो सम्पूर्ण एकाधिपत्य मिला है, उसके अतिरिक्त राजभंडारके अर्थसे जो सब अनुष्ठान होते है, अर्थात् दानपर्वोत्सवमे उपहार देने और सामरिक उत्सवोके प्रति भी उनका कर्तृत्व हुआ। जिस प्रकार चिरकालसे राजमहल मे समस्त राजचिह्न रहते थे, इस समय भी उसी प्रकारसे वहॉ रहैगे, वाद्यकदल प्रधान तोरणके ऊपर रहैगे यह नियत होगया। महारावके भ्राता विशनसिह जो अपने आचरणके दोषसे महारावके कोपमे पतित हुए थे महारावके संतोष साधनके लिये उनको राजधानीसे निकाल कर उनके परिवारिके वासस्थान राजधानीसे दश कोश दूर अणता नामक स्थानमे रक्खा गया। उसी समयमे महारावने भी अपनी इच्छानुसार उनकी जागीर बढादी "।

किशोरसिहके साथ जालिमसिहका पहिली वार राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित होनेपर कर्नल टाड्ने जिस प्रकार कोटेराज्यमे एक महीने तक रहकर दोनोके बीचमे मध्यता स्थापित की, इस दूसरी वार शोचनीय और कष्टदायक राजनैतिक अभिनयके पीछे वह उसी प्रकारसे चिरस्थायी सख्यता स्थापन करनेके लिये एक महीने तक कोटेकी राजधानीमे रहे। टाड् साहब लिखते है कि " उन्होने किशोरसिह और माधवसिहमे पुनः सद्भाव स्थापित किया था। उस संमिलनके समय महारावने विशेष बुद्धिके साथ अत्यन्त शोचनीय घटनाओके समस्त अपराध ग्रहण किये। दोनोने दोनोका करस्पर्श करके भविष्यमे मित्रताके लिये शपथ की, और महारावने जिन माधोसिंहको अपने दुर्भाग्यका एकमात्र कारण बताकर अनुयोग किया था, उन्ही माधोसिहको अयोचित रूपसे आलिगन किया। इसी समय महारावकी सुख स्वच्छन्द और पद मर्यादाके प्रति और किसीको क्षमता चलानेका कुछ अधिकार नही था। जिससे महारावको किसी विषय पर कुछ भी कष्ट न हो, अथवा किसी प्रकारकी त्रुटि न हो इस निमित्त

ध्यान रखनेके लिये एक अभिभावकको नियुक्त किया । इस पुनः समिलन और सख्यता स्थापनसे वृद्ध जालिमसिह सन्तुष्ट हुए । अथवा इस प्रकारका सतोष प्रकाश करनेवाला भाव प्रकाशित किया । जालिमसिहके आचरणसे जो नैतिक कलंक लगा था उसके लिये वह मनही मनमे अत्यन्त दु.खित हुए और उन्होने उसीके लिये माधोसिहको बुलाकर कहा, " तुम्हारे पापसे हमै दंड भोगना होगा "।

साधू टाड् साहबने इस स्थानपर लिखा है " कि ६० वर्ष पहिले भटवाड़ेके रण-क्षेत्रमे जिन जालिमसिहका प्रवल अभ्युदय हुआ, उसी रणक्षेत्रके निकट मांगरोलमें जालिमसिहने अपने जीवनका यह शेप राजनैतिक अभिनय किया, यह अत्यन्त विचित्र घटना हुई । जालिमसिहके मनमे अपने उस अभ्युदयके दिनकी घटनाको स्मरण कर इस शेप स्मरणीय घटनाका विषय विचारनेसे कैसे दो भिन्न भावोका उदय हुआ था । अपनी जिस तलवारसे जालिमसिहने आमेरराजकी अधीनताकी जजीरको काटकर कोटेका उद्धार किया था, उसी कोटेराज्यके अधीश्वरने उनको पुरस्कारमे राज्यका सबसे श्रेष्ठ पद प्रदान किया,जालिमसिहने उसी राजाके पोतेके ऊपर अपनी तलवार चलाई। " टाड् साहबने उस भावसे उन बातोको क्यो न कहा, हम कह सकते है कि सुसभ्य वृटिशगवर्नमेण्ट यदि जालिमसिहका पक्ष समर्थन न करती तो जालिमसिंह कभी भी महाराव किशोरसिहके विरुद्धमे खड़े नही हो सकते थे । महाराव किशोरसिहके विरुद्धमे तलवार चलाकर जालिमसिहने जो अन्याय किया इतिहासमे चिरकालतक पाठक उसे स्मरण करेगे ।

यह अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक अभिनय होनेके पीछे फिर शाति स्थापित हुई । टाड् साहबने लिखा है कि " इस शोचनीय समाप्तिके कुछही समयके पीछे जालिमसिह अपने निर्दिष्ट छावनीमे आकर राज्यके चारोओर जो अशान्ति, उपद्रव, और शासन विशृंखला उपस्थित हुई थी उसके दूर करनेके लिये फिर एक बार राज्यमे भ्रमण करनेके लिये गये । वह शीघ्र ही प्रार्थनीय शांतिकी शृखला स्थापित करनेमे समर्थ हुये और जो राजनैतिक विभ्राट् समाजको एक बार ही विध्वंस करने और राज्यमे रक्तकी नदी बहानेके लिये उद्यत हुआ था शीघ्र ही उसके चिह्न दूर हो गये । उक्त घटनाके पीछे जालिमसिह और पॉच वर्षतक जीवित रहे थे । "

कर्नल टाड् साहबने पीछे जालिमसिहकी जीवनीकी समालोचना करते हुए निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाशित किये है " यदि इस असाधारण मनुष्यके चरित्रकी समालोचना वा वर्णना करनेको इतिहासमे तैयार होते तो हम उसको किस दृष्टिसे देखते ? हमने उसके जीवनके जिन कार्योंको अकित किया है उससे बहुतोंका कौतूहल निवृत्त हो सकता है परन्तु अपने चरित्रोके समस्त चित्रोंको अंकित करनेका उन्होने कुछ सुभीता दिया हो ऐसा नही हुआ। उनके हृदयका गुप्तभाव एकमात्र सर्वान्तरयामी जगदीश्वरके अतिरिक्त और किसीको भी ज्ञात नहीं था । कोई मनुष्य किसी समय राजस्थानमे इनकी समान विश्वासपात्र नहीं हो

सका। जालिमसिंह अपने राजनैतिक जीवनकी उषासे, उस राजनैतिक जीवनके विनाश तक अस्सी वर्षसे भी अधिक काल तक नित्य कहा करते थे कि हमारे हृदयकी कथा हमारे मनके भावके बल हमीं जानते है। उनके चरित्रोमे एकमात्र यही गुण उनके नाना विपदोसे युक्त जीवनमे उनके चरित्रोकी मौलिकता प्रमाणित कर रहे है। सुख विलासके आवेगसे, सफलता वा सहानुभूतिके उद्योगसे अत्यन्त कठोर स्वभावके मनुष्य भी बीचर मे अपने हृदयकी बात प्रकाशित कर देते है परन्तु जालिमसिंह ऐसा नही करते थे और हठात् मनके उल्लाससे, आनन्दसे, शोकसे आगा व प्रतिहिंसाके समयमे भी जालिमसिंह के मनकी बात बाहर नही होती थी। यदि उनकी कोई कल्पना निश्चय सिद्ध होगी तौ भी उसकी प्रबल धारना करते थे। यद्यपि वह अत्यन्त ही उग्रभाव युक्त थे' परन्तु उन्होने अपने स्वाभाविक दोषको सरलतासे बंद कर रक्खा था, वह धीरचित्तसे अपने कल्पनाके फलकी प्रतीक्षा करते थे, अधिक क्या कहै उन्होने युवा अवस्थामे भी अपने जीवनको निजाधीन कर रक्खा था, उन्होने पहिलेसे ही शिक्षा और सावधानतासे अनेक षड्यन्त्र जालोसे अपने जीवनकी रक्षा की थी और उनकी विपत्तिकी राशि जिस भाँति क्रमशः बढ गई थी, उन्होने उसी भाँति कार्यमें सफलता प्राप्त की।ऐसा कौन सा कार्य था, ऐसा कोई भी अवनत भावको प्रकाश करनेवाला कार्य नही था जिसे वह करनेके लिये कातर होते, वह बाहरी सरलता जो प्रकाशित करते उससे नम्र भावका ही प्रकाश होता था और आवश्यकतानुसार वह उस चातुरीसे सहाय लेते उधर वह अपने स्वजातीय धर्म-विधानके प्रत्येक अंगको पालन करते थे। वह जिस किसी विषयमे शपथ करते मनुष्य उस विषयमे संदेह नही कर सकतेथे उनकी गंभीरता उनके मन्तव्य और विचार बहुतायतसे बढ़े हुए थे और सुशीलताके द्वारा वे सरलतासे अपने अधीनके कर्मचारियोका सम्मान संग्रह कर सकते थे, और वह तोपा मोदक कार्यमे भली भाँतिसे निपुण थे, इस कारण वह जिस प्रकारकी चतुरतासे तोषामोद करते इस्से उनके ऊपरवाले मनुष्य मोहित होजाते सारांश यह है कि उन्होने गुप्त कितनी ही बातोसे मनके भावको इस भाँति प्रकाशित किया कि बातचीतके समयमे भी श्रोता उनको धन्यवाद देते थे। सुमन्तव्य पुरस्कारके संग्रहके विषयमे इन्होंने विशेष चेष्टा की थी और उसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानते थे। उपरोक्त घटनाके पूर्व समयतक उन्होने अपने आचार उत्पीडन और प्रतिहिंसा मूलक कार्यके ऊपर चातुरीजालका आवरण फैला दिया था। जिस समय उन्होने हाडा सामन्तोके अधिकारी देशोपर अधिकार किया, उस समय उन्होने सभी पृथ्वीको धान्यसे परिपूर्ण कर दिया, अनेकता और परिश्रमका फल क्या होता है, उसके द्वारा प्रकाश कर अपनी प्रशंसाको संग्रह किया। जिस समय उन्होने राजशक्ति तक पर अधिकार किया उस समय उन्होने राजगौरवरके सूर्यके कमनीय मडलको प्रकाश कर उसकी सुन्दरताको प्रकाश करदिया, जिस प्रकार उन्होने अपने गौरवको प्राप्त किया था, इस प्रकार उनके पूर्व पुरुषोको कभी प्राप्त नही हुआ, उनके प्रत्येक कार्यसे ही प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य चरित्र और उनके लक्षण ज्ञानके सम्बन्धमे उनकी चूडान्त बुद्धि उत्पन्न हुई थी, वह धूर्त महाराष्ट्रियोको धोखा देसकते थे, वीर तेजस्वी राजपूतोको शान्त और

दमन कर सकते थे, और अंग्रेज एशियावासी जो किसीके गुणको स्वीकार नही करते उन्हीं अंग्रेजोके निकटसे उन्होने प्रशंसा संग्रह की थी। उन्होने स्वजातीय सामाजिक और धर्म विषयोको भलीभाँतिसे पालन किया था, इसीसे अपने समाजमे माननीय थे परन्तु विचित्रता यह है कि उन्होने जिन विधानोको भंग किया उनका ऐसे अलक्ष्यमे भंग किया था कि बहुत थोड़े लोगोने उनको जान पाया। एक ओर दाता दूसरी ओर कृपण एक ओर अत्याचारकारी और दूसरी ओर आश्रयदाता रूपसे वह खड़े रहते थे। एक हाथसे यह सुवर्णके अलंकार दान करते, और दूसरे हाथसे संन्यासियोके भिक्षा लब्ध धनका दशमा अंश ग्रहण करते थे, इधर वह कोटेके प्राचीन सामन्त वंशको निकालकर उनके सर्वस्व पर अधिकार कर लेते दूसरी ओर यदि परदेशी कोई सामन्त आश्रयकी प्रार्थना करता तो उसको बड़े आदर भावके साथ ग्रहण करके उसे यथाशक्ति सहायता देकर आश्रय देते थे"।

इसके पीछे कर्नल टाड् साहवने लिखा है कि "हम पहिले ही वर्णन कर आये है कि कवियोके ऊपर उनका भलीभाँतिसे विराग था और रसायनिक वा जादूगरोके ऊपर भी इनकी बडी शत्रुता थी, उन्होने दोनो संप्रदायोको ही कोटेराज्यमे अपना २ व्यवसाय नही करने दिया, परन्तु जालिमसिहके शत्रुओने कहा है जालिमसिहने उक्त सम्प्रदायोका कार्य अच्छा नही माना था, इसीसे उनके साथ ऐसा व्यवहार नही किया गया, यह बात नही थी वरन वह एक जादूगरके मन्त्रोसे छलनामें आये थे, और दूसरी ओर कवियोकी सत्यता पूर्ण गीतावलीके द्वारा निन्दित हुए थे, इसीसे उन्होने ऐसी शत्रुता की। उन्होने "डाँकन वा डायनोके ऊपर जैसा अत्यन्त कठोर व्यवहार करके दंड दिया उसकी अपेक्षा प्राणदंड अच्छा था। तापित लोहेका गोला उनके हाथमे अर्पण किया गया, पर सर्वसाधारण जानते थे कि डॉकन ऐसे द्रव्यका व्यवहार करती थी कि जिससे वह लोहेका गोला उनके हाथको दग्ध नही कर सकता था उनको जलमे डालकर एक और प्रकारकी परीक्षा लीजाती थी, यदि वह जलमे डूबजाँय तौ निर्दोष गिनी जाती थी अर्थात् उनको डॉकन नही कहा जाता था, और वह जो जलमेसे ऊपरको उठ आती तौ उनको डॉकन वताकर दंड दिया जाता। जिसको डॉकन बताया जाता तो उनकी परीक्षाके लिये चनौके थैलेसे मुख बॉधा जाता, यदि उनका श्वॉस न रुका तौ उन्हे डाँकन गिना जाता। उधर सर्व साधारण मनुष्य उनके नेत्रोंमे सूखीमिर्चपीस करडालते यदि उससे उनके नेत्रोमेसे जल न निकलता तौ उनको डॉकनरूपसे दंड मिलता, और ऐसा जाना जाता है कि यह डॉकन जव अपनी शक्तिको मनुष्योके अस्त्रोके ऊपर प्रयोग करती तो वह अपने जादूके मन्त्रोसे धीरे २ उनके अस्त्रोको क्षय कर देती थी। सर्वसाधारण मनुष्योको यह विश्वास था कि डॉकनोने यदि एक वार भी देखलिया तौ अवश्य ही मृत्यु होजायगी परन्तु कोटेराज्यमे ऐसी डॉकन कोई भी नही थी। किसी २ वृद्धने भी अपने

---

(१) डायनोंकी परीक्षा इसी प्रकार करते है।

दुर्भाग्य वशसे मनुष्योंके द्वारा ऐसी डॉकनोंकी उपाधि पाई थी।" अबुलफजलने इसको जिगरखोर लिखा है कि सुबहके समय यह बालकोंका कलेजा चाटती है।

"जिस समय तक जालिमसिंहकी अवस्था ८५ वर्षकी होगई थी उस समय भी वह यह नही जानते थे कि आलस्य किसको कहते है, वह इस बातको जानते थे कि राजपूतोंको सिंहासनकी नित्य अपने घोड़ेके पीछे रक्षा करनी होती है। जिस समय उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही लुप्त होगई, तब वह एक साथ अंधे होगये और घोड़े पर चढ़कर शिकार करनेमें असमर्थ होगये, तब वह पालकी पर सवार होकर मृगया करनेको जाते और उनके पीछे कई हजार सेना जाती। शिकारके समयमें वह अपने अधीनके सामन्तोकी लज्जा और भय सबको दूर कर देते थे, और उस आनन्दके समयमें वह बहुतसी बाते किया करते थे। उस शिकारके समयमें अनुचरोंके परस्परमें सम्भाषणके समय मनकी कथाको सुना करते, और जिस राजपूत जातिके पक्षमें मृगया एक प्रधान आनंददायक व्यापार गिना गया था, और जिस मृगयाके अतिरिक्त उनका जीवन विपाद्-मय होता है, यह उसी मृगयाका अनुष्ठान करके उन राजपूतोंकी प्रीति संग्रह करनेमें समर्थ होते। मृगया करनेके पीछे वह उस सघन वनमे सैकड़ो सेवकोंके साथ बैठते थे, और मृगयाके समयकी अनेक घटनाओंका वर्णन कर हास्य परिहाससे सबको संतुष्ट करते थे, इस मृगयाके समयमें ऊँटोपर बहुतसी मैदा, घी, चीनी, तरकारी और अन्यान्य अनेक प्रकारके द्रव्य इस स्थानमें लाये जाते थे, और उन सबका भोजन बनाकर परमानन्दसे भोजन करते थे, उस उत्सव और आनन्दमें भी जालिमसिंह अपने राजकार्यके अनेक विषयोंका आन्दोलन–वाणिज्य नीति–विदेशिक नीतिका आलोचना और कृषिविभाग, शांति रक्षाविभाग और समरविभाग इत्यादि अनेक कार्य इस स्थान पर करते और हमारे एलफ्रेड्याफ्रैकके एसटीलोयसकी समान जिस समय मृगयाका प्रबल उत्साह उद्वेलित होता था, जिस समस चारोंओर बाणोके ऊपर बाणोकी प्रबल वर्षा होती थी, उस समय किसी एक पीपलके नीचे बैठ कर जालिमसिंह विचार कार्य करके अपराधीको दंड देते थे। इसी तरह सारा दिन मृगयामें व्यतीत होता था पुराणका पाठ वा धर्मसम्बन्धी गीत भी होते थे। पर वह सब कार्य कर-नेका अवसर पाते थे किसी समय भी किसी विषयमें शीघ्रता नहीं करते थे, उनकी दृष्टि शक्ति एकबार ही दूर होगई थी वह उस समय अपने हाथसे अपना नाम नही लिख सकते थे, उस समय उन्होने अपने हस्ताक्षरके अनुरूप अपने नामके अक्षर खुद वा लिये थे। वह एक विश्वासी मनुष्यके निकट रहते थे, और वह जिस समय आज्ञा देते तौ वह किसी पत्रमें अंकित कर देते थे। परन्तु उनकी एक इन्द्रियके एक साथ नष्ट होनेसे उनकी इससे अधिक और कोई हानि नही हुई, और कोई भी उनको किसी प्रकारका धोखा नही देसका, कारण कि जिस समय वह अन्धे होगये तब उनको किसी प्रकारका दुशाला वा कपडा भले बुरेकी परीक्षाके लिये दिया जाता, तो वह हाथसे देख कर ही उसे अच्छा बुरा बता देते थे"।

कर्नेल टाड् साहबके सम्मुख जालिमसिहने जो कार्य और गुण दिखाये गये थे वह उनके किसी भी उल्लेखको नही भूले। उन्होने फिर लिखा है, कि देशके जिस स्थान पर कभी भी धान्य उत्पन्न नहीं हुआ, उस स्थान पर जो मनुष्य धान्यको उत्पन्न करनेमे समर्थ हो, वही देशके यथार्थ धन्यवादके पात्र है। यह कहना यदि सत्य है तो जालिमसिहने कोटेराज्यके जिन २ स्थानोमे कभी भी तृण उत्पन्न नही हुए थे उन्ही २ स्थानोतकमे बहुतसे अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल मूलोसे पूर्ण वृक्ष लगाए थे, राजधानी के चारोओर कठोर पर्वतोके ऊपर मट्टी डलवा करके सिहल, तथा पश्चिम महा सागरके द्वीपोसे अनेक प्रकारके फलवान् वृक्ष मगाकर लगाये थे, और यह प्रमाणित कर दिया था, कि यह वृक्ष इन देशोमे लगानेसे अवश्य ही फल उत्पन्न करेगे, इस कारण उनकी प्रशंसा जिस प्रकार हो सकती है? जालिमसिहके बागमे काबुलके सेब मारवाडके विख्यात कॉगेके बागके अनार और सिलहटकी सब प्रकारकी नारगी, मॉऊ गॉवके आम, और राजपूतानेके समस्त प्रधान २ फलोके अतिरिक्त दक्षिणकी स्वर्णकदलीतक (चम्पा केला) पाई जाती थी। उन बागोमे उन वृक्षोमें जल देनेके लिये जो पर्वतोके वक्षस्थलको विदीर्ण कर उन्होने कूप खुदवाये थे, उन प्रत्यक कुएँको खुदवानेमे एक २ मे तीस तीस हजार रुपये खर्च हुए थे, वह भी अपने मित्रोको भी अपना अनुकरण करनेकी परामर्श देते, वह भी कार्य करते रसायन विद्यामे भी वह भलीभॉतिसे प्रसिद्ध होगये थे। वह स्वयं अतर, गुलाब जल, केतकी और केवडा तैयार करते थे वह इतर सर्वसाधारणमे प्रचलित अतर इत्यादिकी अपेक्षा श्रेष्ठ होते थे। इन्होने कश्मीरसे पशम बुननेके यन्त्र और बुनानेवालोको कोटेराज्यमे लाकर श्रेष्ठ दुशाले तैयार कराये थे। अपने विचारसे तलवार और अन्यान्य अस्त्रोके बनवानेमे भी उन्होने विशेप प्रशंसा प्राप्त की थी"।

"जेठी नामका जो एक दल व्यायाम क्रीड़क वा पहलवानोका उनके अधीनमे नियुक्त था उसके लिये उन्होने एक ओर जैसी प्रशंसा की थी, दूसरी ओर उसी प्रकारसे कलंक भी संचय किया था, इसके लिये उनका वार्षिक पचास हजार रुपया खर्च होता था, परन्तु उनके अधिनमे स्थित उन पहलवानोने रजवाडो के समस्त राजदरबारोके पहलवानोको परास्त किया था। अन्यान्य राज्यके पहलवान कोटेमे आते ही इनके द्वारा परास्त होजाते थे, जालिमसिह जिस समय युवक थे, उस समय यह केवल अपने पहलवानोको एकमात्र अपने बाहुबलसे परस्पर परास्त करके संतुष्ट नही होते थे उन्होने उस समय पहलवानोके हाथमे बाघनख, नामक यथार्थ व्याघ्रनखके द्वारा बना एक प्रकारका अस्त्र विशेप दिया था और इसीसे युद्धमे उनके अग क्षतविक्षत होजाते थे, बूँदीके विख्यात वीर महाराज उमेदसिंह बहादुरने इस अत्यन्त लोमहर्षण करनेवाली रीतिको एकवार ही दूर कर दिया था। महाराज उमेदसिंह एक समय द्वारकाजीसे होकर लौटते समय कोटेराज्यमे आये उस समय जालिमसिह अखाड़ेमे बैठेथे, और दो दीर्घाकार पहलवान उस "बाघनख" को हाथमे लेकर परस्पर युद्ध कर रहे थे, महावीर उमेदसिंहको हठात् उस स्थान पर आयाहुआ देख कर वह

रक्ताक्त युद्ध कार्य निवारण होगया। उमेदसिहने क्रोधित होकर जालिमसिहको विलक्षण भर्त्सना करके कहा कि इस रुपयेको ज्ञातिभाइयों वा दीन दरिद्रोमे खर्च न करके इन लोगोको देते हो फिर इस प्रकार इनका अकारण रक्त पात करना अत्यन्त अन्यायकी वात है, जालिमसिहने उनकी वात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, परन्तु उमेदसिंह ऐसे क्रोधित होगये थे कि वह उसी समय अपनी ढालको पृथ्वीपर रख कर अपने शरीरमे जितने अस्त्र थे उन सबको एक २ करके ढालके ऊपर रख दिया, अर्थात् उन्होने स्वभाव से तलवार, वंदूक, छुरी, रणकुठार इत्यादिका व्यवहार किया था, उन सबको स्थापन कर उन इकट्ठे हुए पहलवानोको बुलाकर कहा, कि तुममेसे किसमे इतना वल है जो एक हाथसे इस ढालको उठाले, महाराज उमेदसिहके बुलानेसे समस्त पहलवान एक २ करके आगे बढे, और उस ढालको पृथ्वीपरसे उठानेकी चेष्टा करने लगे, परन्तु कोई भी उठानेको समर्थ न हुआ, शेपमे साठ वर्षकी अवस्थाके महाराज उमेदसिहने सबके सामने एक हाथसे उठा लिया और कितनी ही देरतक उसे लिये खड़े रहे। सभी हाड़ा-जाति उस वृद्धस्वजातीय महावीरके उस कार्यसे महा आनंदित हुए, और पहलवानोने लज्जासे नीचेको मुख करलिया। जालिमसिहने उसी दिनसे वह दृश्य देखकर उन पहलवानोके प्रति फिर पूर्वकी समान सदय दृष्टि नहीं की। परन्तु उनके यह सब दोष उनकी युवा अवस्थामे ही थे वृद्धावस्था तक नही रहे"।

कर्नल टाड् साहबने यह कह कर, जालिमसिहकी जीवनीके उपसंहारके साथ ही साथ कोटे राज्यके इतिहासका उपसंहार किया है जालिमसिहने एकमात्र अपने सम्मानकी रक्षा और शासनशक्तिकी रक्षाके लिये उस वृद्धावस्थामे भी राजकार्यको नही छोडा। उन्होने एकाविक्रमसे एवं विदेशीय समस्त शत्रुओका नाश किया था, और हाड़ौती राज्यके सम्बन्धमे उनके मनमे जो सव अभिलाषाएँ थी वह सभी पूर्ण होगई थी। शासनशक्तिके त्याग करने पर सर्व साधारणको यह विदित होगा कि वह निकाले गये है, यही विचार कर उन्होने उस शक्तिको हाथसे अलग नही किया। वृद्धावस्थामे जिस समय उनका स्वास्थ एकबार ही नष्ट होगया, उस समय भी विश्रामकी इच्छा और धर्मधनकी वासनाका उनके मनमे उदय न हुआ, यदि उस समय वह अपनी शासनशक्तिको हाथसे अलग करदेते तो यथेष्ट सम्मान पासकते थे।

अष्टम अध्याय ८.

माधोसिंहको कोटेके पूर्ण क्षमता युक्त शासनकर्ता पदकी प्राप्ति–उनके सम्बन्धमें महाराव किशोरसिंहका सुव्यवहार–महाराव किशोरसिंहकी मृत्यु–महाराव रामसिंहको सिंहासन की प्राप्ति–माधोसिंहकी मृत्यु–उनके पुत्र मदनसिंहका कोटेकी शासन क्षमताका ग्रहण करना–महाराव रामसिंहके साथ मदनसिंहका मनान्तर–मदनसिंहके व्यवहारमे कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा का महाक्रोध–उनको निकालनेके लिये जातीय अभ्युत्थानका उद्योग–बृटिश गवर्नमेण्टका कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीनकर झालावाड़ नामक नवीन राज्यकी सृष्टि करके उसे मदनसिंहको देना–महाराव रामसिंहकी उसमें अनिच्छासे सम्मति देना–नवीन संधिपत्र–सत्रह परगनोंकी सूची–बृटिश गवर्नमेण्टका व्यवहार–कोटेके महाराजके साथ बृटिशके अधीनमे सेनाकी रक्षा और उसके व्यय देनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका प्रवल आदेश–अत्यन्त अनिच्छासे महाराव रामसिंहका उस व्यय देनेमें सम्मति देना–सन् १८५७ ईसवीके सिपाही विद्रोहके समय उस नवीन सृष्टिसेनादलका अभ्युत्थान–पोलिटीकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंका प्राण नाश–महारावके प्रति अंग्रेज गवर्नमेण्टका असंतोष प्रकाश करना–अंग्रेज राजप्रतिनिधिका महारावको वंशानुक्रमसे पोष्य पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना–महाराव रामसिंहकी मृत्यु–उनकी रानियोंका प्रज्वलित चितामें प्राण त्यागकी चेष्टा करना–पोलिटिकल एजेण्टका इस विषयमें व्याघात देना–महाराव छत्रशालसिंहका अभिषेक–सामन्तोंके ऊपर शासनभार डालना–बृटिश गवर्नमेण्टका कोटेके शासन भारको ग्रहण करना–

महात्मा टाड् साहवने अपने विस्तारित ग्रन्थमे कोटेराज्यके जिस समय तकके इतिहासको प्रकाशित किया है हमने पहिले अध्यायमे उसका वर्णन किया है, इस समय इतिहासके अंगको सम्पूर्ण करनेके लिये हम परिवर्ती समयके इतिहासको संग्रह करनेमे प्रवृत्त हुए है।

जिस जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेके प्रकृत अधीश्वररूपसे स्वीकार किया। जिस जालिमसिंहके स्वार्थसाधनके लिये सबकुछ किया उन्हीं जालिमसिंहने सन् १८२२ ईसवीकी २५ वी जूनको प्राण त्याग किया। महाराव किशोरसिंहने पहिलेहीसे वचन देदिया था। उन्होने माधोसिंहको पितृपदपानेके विरुद्धमें किसी प्रकारका उपद्रव व बाधा उपस्थित न की, यद्यपि माधोसिंह पितृपद पानेके लिये सम्पूर्ण अयोग्य थे, तथापि महाराव किशोरसिंहने इस समय किसी प्रकारकी आपत्ति उपस्थित न की। आचिसन साहवने अपने ग्रन्थमे लिखा है कि " जालिमसिंहने सन् १८२४ ईसवीमें प्राण त्याग किये, और उनके पुत्र माधोसिंह उस पदपर विराजमान हुए। माधोसिंह उस पदकी अयोग्यतामे भलीभाँतिसे विख्यात होगये थे, तथापि उन्होने सधिपत्रके अनुसार बिना किसी बाधाके शासनभारको प्राप्त किया *। कर्नल म्यालिसनने इसके सम्बन्धमे अपने ग्रन्थमें मन्तव्य प्रकाश किया है, " यह मनुष्य (माधोसिंह) शासनकर्तृत्व पदके अयोग्य है, यह भलीभाँतिसे विख्यात है।

* Aitchison's Treatics Vol V

परन्तु सन्धिकी धारा अवश्य ही पालन करनी होगी, इसी कारणसे उनको उस पद पानेमे किसीने कुछ बाधा नहीं दी+" किसी राज्यके किसी एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे मंत्रित्व वा शासन कर्तृत्वका भार देना अत्यन्त अविचारका कर्म है इस व्यवस्थासे जैसा बुरा फल होता है यह जान कर भी किस प्रकारसे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनकर्ताका भार दिया था, हम इस विचारको भी स्थिर नहीं कर सकते । इस समय देखा जाता है कि माधोसिंह शासनकार्यके लिये सम्पूर्ण अयोग्य रूपसे सर्वसाधारणके निकट परिचित थे, तथापि उनके हाथमे कोटेका शासनभार अर्पण किया गया ।

माधोसिंहके सब प्रकारसे अयोग्य होने पर भी वह जानते थे कि बृटिश गवर्नमेण्टने जब संधिबंधनमे आवद्ध होकर उनको और उनके भविष्यत् वंशधरोको सदा उस पदपर स्थित करनेका विचार किया है तब अब भय क्या है ? इस कारण माधोसिंहने निर्भय होकर अपनी इच्छा–शासनके द्वारा अपनी अयोग्यताका चूडान्त परिचय देकर राज्यके अनिष्टसाधन मे कसर न की । बृटिशगवर्नमेण्ट भी उस स्वेच्छाचारसे कोटे राज्यका अनिष्ट होता हुआ देख मौनभाव किये रही । सधिपत्रमे माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये बृटिश सरकार वचनवद्ध थी। इस कारण किसी बातके भी कहनेकी सामर्थ्य उसकी नही थी ।

महाराव किशोरसिंहने देखा कि बृटिश गवर्नमेण्टने माधोसिंहको सब प्रकारसे अयोग्य देख कर भी जब चुपचाप स्थिति की है, एवं कोई भी प्रतिविधान करनेमे लिये तैयार नहीं है, और किसी प्रकारका अनुयोग उपस्थित करनेसे फिर संधिका उल्लेख करके भय प्राप्त होगा । तब मौन रहनाही कर्तव्य जाना, इस कारण वह हृदय की ज्वालाको हृदयमें ही सहन करते थे, परन्तु उनको अब अधिक दिनतक अपने पैतृक राज्यकी ऐसी दुर्दशा नहीं देखनी पड़ी, महाराव किशोरसिंहने सन् १८२८ईसवीमे प्राणत्याग किये । उनकी जीवनीके सम्बन्धमे हम अधिक कुछ कहनेकी इच्छा नहीं करते । वह जैसे विद्वान् धीर और नम्र थे, उसी प्रकार प्रबल पराक्रमशाली बृटिश सरकारके भक्त थे । जालिमसिंहका दृढ़ पक्ष समर्थन करने पर भी उन्होने उसके विरुद्धमे सेनासहित खड़े होकर अपने साहसका चूडान्त परिचय दिया था, और सामयिक अवस्थाको विचार कर अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ फिर संधिबधनमे आवद्ध हो राजनीतिज्ञताका भी अल्प परिचय नहीं दिया ।

कोटेपति महाराव किशोरसिंहने अपुत्रावस्थामे प्राण त्याग किये थे, इस कारण कुमार पृथ्वीसिंहके एकमात्र पुत्र नानालाल रामसिंहके नामसे पुकारे जाकर कोटेके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए ।

महाराव रामसिंहके अभिषेक कार्य होनेके कुछही दिन पीछे राजराणा माधोसिंहने प्राण त्याग किये । माधोसिंह जैसे विलासी, अयोग्य और अहंकारी थे उसी प्रकार उनकी स्वेच्छाचारिताके कारण कोटेके बहुतसे अनिष्ट हुए थे । एकमात्र

+ Maleson's Native states.

माधोसिंहकी उत्तेजनाके अनुरोधसे जालिमसिंहने अपने वंशानुक्रमसे फौजदार वा कोटेको समस्त राजशक्तिको अपने हाथसे ग्रहण करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की, और उसीसे कोटेराज्यका सर्वनाश हुआ । इस स्थान पर उसके पुनर्वार उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है, माधोसिंहकी मृत्युके साथही साथ कोटेकी सुख शांतिका विषम कंटक उखड जायगा । पाठकगण ऐसा विचार न करै, माधोसिंहकी मृत्युके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके अनुसार उनके पुत्र मदनसिंह राजराणाकी उपाधिको पाकर पिताके पदपर प्रतिष्ठित हुए । जालिमसिंह और माधोसिंह यद्यपि कोटेराज्यकी केवल राजशक्तिको ही हरण करके संतुष्ट हुए थे, परन्तु मदनसिंहके शासन समयमें कोटेराज्यके चिरस्थाई महा अनिष्ट हुए, किन्तु एक ओर उस सर्वनाशके होनेसे कोटेके अधीश्वर चिरकालके लिये उस हानिकारक संधिपत्रके हाथसे अपना उद्धार करनेमें समर्थ हुए। कर्नल स्यालिसनने लिखा है,कि "इस प्रधानमंत्री और महाराव (रामसिंह) में किसी समय भी सद्भाव नहीं था, एवं सन् १८३४ ईसवीमें दोनोंके बीचमें ऐसा विवाद प्रवल होगया कि प्रधान मंत्री पदके सम्बंधमें फिर नवीन व्यवस्था करना कर्तव्य होगया।" आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि सन् १८३४ ईसवीमें रामसिंह और उनके मंत्री माधोसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारी मदनसिंहमें फिर विवाद उपस्थित हुआ । मंत्री को निकालनेके लिये सर्वसाधारण प्रजाके अभ्युत्थान होनेसे महा विपत्ति होनेकी संभावना होगई, और इसी कारणसे कोटेके अधीश्वरकी सम्मतिके अनुसार कोटेराज्यको दो खण्डोंमें विभक्त करके जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंका भरण पोषण करनेके लिये झालावाड़ नामक एक स्वतंत्र नूतन राज्यकी सृष्टि करना उचित विचारा गया । वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीवाले सत्रह परगने मदनसिंहको दिये जांयगे । इस नवीन बन्दोबस्तके अनुसार कोटेराज्यके साथ फिर नवीन संधिबंधन हुआ "।

एक राज्यमें एकभाव राजा और एक समस्त शासन शक्ति युक्त मनुष्य वंशानुक्रम से नहीं रह सकता, अंग्रेज़ गवर्नमेण्टने इसको भलीभाँतिसे जान कर भी कोटेके शासनकर्ताका पद वंशानुक्रमसे उपभोग करनेको दिया इस कारणसे विषमय फल उत्पन्न होता हुआ देख कर भी गवर्नमेण्टने अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग करके अब तक उस बात को सिद्ध रक्खा, परन्तु इतने दिनोंके पीछे सरकारने कार्यद्वारा स्वीकार किया कि जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्ति देकर भूलका कार्य किया है । उसके लिये इस समय गवर्नमेण्टने फिर एक नवीन कार्य किया । कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर जालिमके उत्तराधिकारी सब अंशोंमें अयोग्य सर्व साधारणके अप्रिय मदनसिंहको देकर नवीन झालावाड़ राजके सिंहासन पर उनको बैठाल दिया । जालिमसिंहने गवर्नमेण्टके बहुतसे उपकार किये थे इस कारण वह उनके समीप कृतज्ञताके ऋणमें बँधी थी कोटेराजसे यह परगने लेकर उस कृतज्ञताका ऋण चुकाया गया ।

जब कि शरीरके किसी अंगमें घाव होजाय और उसकी चिकित्सा करनी कठिन होजाय, और उससे समस्त शरीरके नाश होनेकी सम्भावना होजाय,तब शरीरकी

रक्षाके लिये उस अंगको कटवा देना ही उचित है। महाराव रामसिंहने जालिमके वंशधरोके द्वारा कोटेरूपी कमलको भीतर ही भीतर अंतःसार शून्य होते हुए देखकर शीघ्र ही वृटिश गवर्नमण्टके प्रस्तावके अनुसार अपने पैतृक राज्यके वह सत्रह परगने छोड़ दिये। शीघ्र ही सुसभ्य न्यायपरायण सरकारकी कृतज्ञताके ऋण चुकानेमे सहायताके लिये उस त्यागको स्वीकार किया। परन्तु उसके उपलक्षमे नवीन संधि बंधनके समय महाराव रामसिहके मस्तक पर और एक भारी भार अर्पण किया गया।

वृटिश गवर्नमेण्ट और महाराव रामसिंहमें संस्थापित संधिपत्र।

१ दिल्लीके संधिपत्रकी अतिरिक्त धारासे राजराणा जालिमसिह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोको कोटेराज्यकी जो शासनशक्ति दीगई है, राजराणा मदनसिहने उसी शासनशक्तिको छोड़कर महाराव रामसिहकी उक्त अतिरिक्त धाराके रहित पक्षमे सम्मति दी है।

२–वृटिश गवर्नमेण्टकी सलाहसे महाराव सूचीके अनुसार समस्त परगने राजराणा मदनसिह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणको प्रदान करनेमें सम्मत हुए है।

३–इस सूचीके अनुसार इन परगनोंके पृथक् करनेको हस्तान्तर करनेकी व्यवस्थामे जो धन व्यय होगा उसको महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त गण पूरा करेगे।

४–राजधानी कोटेसे अभीतक जो कर दिया जाता था, महाराव अपने उत्तराधिकारी गणोके साथ तथा स्थलाभिषिक्तोके साथ सम्मत हुए हैं, कि उस करमेसे वार्षिक ८०००० रुपये छोड़ कर शेष सब कर सरकारको हम देगे, वृटिश गवर्नमेण्ट उक्त ८०००० रुपये करस्वरूपसे राजराणा मदनसिह तथा उनके उत्तराधिकारियोसे लेनेमे सम्मत है। राजराणाने संवत् १८९५ के पहिले उक्त कर देना। प्रथम आरम्भ किया। संवत् १८९४ के प्रथम वर्षके कारण वर्तमान देय कर १३२३६० रुपये कोटा राज्यसे दिये जाते थे।

५–महाराव अपनी ओरसे और उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोकी ओरसे कहते है कि एक दल नवीन सेनाका रखना होगा और वृटिश गवर्नमेण्ट यदि कर्त्तव्यको विचार करेगी तो वह सेनादल एक वृटिश सेनापतिके अधीनमे रक्षित होगा– इस स्थान पर इसको स्पष्टरूपसे प्रकाशित करना उचित है कि इस प्रकार सेनाकी रक्षा होनेसे महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोके कोटेराज्यमे आभ्यन्तरिक शासनशक्तिको चलानेके पक्षमे किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं होगा।

६–उस सेनादलका व्यय किसी समय भी वार्षिक तीन लाख रुपयेसे अधिक नहीं होगा।

७–यदि उस सेनादलकी सृष्टि हुई तो उस सेनादलका व्यय महाराव और उनके उत्तराधिकारी स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टको जो कर देते है उसके साथ प्रति छः मासके भीतर सरकारको देगे। और किस समयसे प्रथम अर्थ दान आरंभ होगा। वृटिश गवर्नमेण्ट उसे स्थिर करदेगी।

८–यह भी स्पष्टरूपसे प्रकाशित रहै कि सन् १८१७ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरसे वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिह बहादुरका दिल्लीमे जो संधिपत्र नियत हुआ है वर्तमान संधिपत्रके द्वारा उस संधिपत्रकी जिन २ धाराओसे कोई संश्रव नही रहा है वह २ धाराएँ प्रवल रहैगी।

९–वृटिश गवर्नमेण्ट और कोटेके महाराव रामसिहमे इस संधिपत्रकी उपरोक्त धाराओका निर्णय होने पर इसमे एक ओर तो अफिसिएटिग पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान जान लाडलो, एव राजपूतानेमे स्थित गवर्नर जनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट एल आलवीसके हस्ताक्षर और मोहर लगा कर महाराव रामसिहके भी हस्ताक्षर सहित मोहर लगादी गई, और आजकी तारीखसे दो महीनेमे महा महिमवर गवर्नर जनरल द्वारा प्रत्यर्पित होगा।

(हस्ताक्षर) जे लाडलो।
कोटा, १० वी अप्रैल, सन् १८३८ ईसवी।
अफिसिएटिग पोलिटिकल एजेण्ट।

महाराव रामसिहकी मोहर.

एन. अलवीस।
गवर्नर जनरलके एजेण्ट।

सूची।

राजराणा मदनसिह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोके कारण संधिपत्रके मतसे झालावाढ नामक जो नवीन स्वतत्र राज्यकी सृष्टि होगी, उसके लिये निम्नलिखित परगने निर्धारित हुए।

१–चॉईहाट
२–सकेत
३–चोमहला
पचपाड
अवहोर
डिग
गंगराड
४–झालरा पाटन,
५–रमचवा
६–कोटड़ाभट्टा
७–सुरेरा।

८–रखाई ।
९–मनोहर थाना ।
१०–फूलबड़ोद
११–चाचुरणी ।
१२–कंकुरनी ।
१३–छीपावड़ोद ।
१४–शेरगढ़के कुछ अंग पूर्वमें ।
१५–परवन. ।
१६–निवाजके पूर्वांश ।
१७–शाहावाद ।

यह प्रकाशित रहे कि नरपतिसिंह झालावाड़ राज्यसे महारावके राज्यमें उठ आवेगा और उनकी समस्त भूमि राजराणाको प्राप्त रहेगी ।

कोटा, १० अप्रैल सन् १८३८ ईसवी ।
जे. लाडलो ।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट ।
ग्न अलब्रीस गवर्नर जनरलके एजेण्ट ।

राजराणा मदनसिंहकी मोहर ।

विदेशी विधर्मी यवन सम्राट् शाहजहाँने जिस कोटे राज्यकी सृष्टि करके हाड़ा राजपूत माधोसिंहको दिया था, सुसभ्य बृटिश गवर्नमेण्टने अपनी कृतज्ञताका ऋण चुकानेके लिये उसी राज्यको दो खंडोंमें विभक्त कर दिया–जालिमसिंहके अयोग्य उत्तराधिकारीने वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीका स्वतंत्र नवीन राज्य पाया, और कोटेके यथार्थ अधिकारीको केवल वह वार्षिक बारह लाख रुपया नहीं वरन सरकारके अधीनमें रक्षणावेक्षणके लिये सेनाको रखकर वार्षिक तीन लाख रुपया और देना पडा । इससे वार्षिक पन्द्रह लाख रुपया चिरकालके लिये कोटेपतिका चला गया ।

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेके महाराज उमेदसिंहका जब प्रथम संधिबंधन हुआ था,तब उक्त प्रकारसे सेनाके व्यय दानका कोई उल्लेख नहीं था, परन्तु इस समय सुअवसर पाकर उक्त सेनाकी सृष्टिके विषयमें महारावको सम्मत कर लिया गया । सेनादलका व्यय महाराव देंगे, परन्तु वह महारावकी आज्ञा पालन नहीं करेगी । अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सेनारूपसे रहेगी । यद्यपि महारावने इस नवीन संधिके समयसे वार्षिक ८०००० रुपया कर देनेसे छुटकारा पाया, परन्तु उस स्थान पर वार्षिक तीन लाख रुपया विशेष देनेको तैयार हुए। महाराव रामसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि विचार करानेसे अब कुछ न होगा विशेष चेष्टासे कदाचित् शेष अंशमें भी हानि पडे, इस कारण वह उस प्रबल पक्षकी आज्ञा पालन करके पैतृक राज्यके नामकी रक्षा

करनेको आध्य हुए। परन्तु थोड़े ही समयमे महाराव जानगये कि अंग्रेज गवर्नमेण्टको नियमित ' वार्षिक कर देनेके सिवाय सेनाके लिये वार्षिक तीन लाख रुपया देना सब प्रकारसे असम्भव है, इस कारण उन्होने शीघ्र ही दीनभावसे अंग्रेज सरकारके समीप इसके सम्बन्धमें प्रार्थना की। कर्नल म्यालिसन लिखते है कि "पहिले भी अत्यन्त अनिच्छासे महाराव इस सेनासृष्टिके विषयमे असम्मत हुए थे और बारम्बार अनुयोग उपस्थित करनेके कारण सन् १८४४ ईसवींमे उक्त सेनादलके व्ययमेसे एक लाख रुपया क्षमा करके दो लाख रुपया नियत किया गया। उसी समय यह विचार हुआ कि यदि इस रुपयेसे सेनादलके व्ययकी पूर्त्ति न हो सकैगी, तौ कोटेके करमेसे वह रुपया दिया जायगा और उस समय महारावको सावधान करना होगा कि, यदि वह ठीक समय पर रुपया न देसकेगे, तो उक्त सेनाके लिये जो रुपया दिया गया है वह और करके निमित्त जो कितने ही ग्राम है उनको प्रति भूस्वरूपसे रखना होगा।" * महाराव रामसिहने इस शेष व्यवस्थासे अपनेको सौभाग्यवान् जान लिया।

वृटिश गवर्नमेण्टने कोटेपतिके पाससे समस्त व्यय लेकर उपरोक्त सेनादलकी सृष्टिकर उसको अपने अधीनमे रक्खा। सन् १८५७ ईसवीके विख्यात सिपाही विद्रोहके समय उस सेनाने अंग्रेज् गवर्नमेण्टके विरुद्धमे खड़े होकर पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोको मारडाला। अंग्रेज इतिहासवेत्ताने कहा है कि महाराव रामसिहने उस विद्रोही सेनाको दमन करनेके लिये किसी प्रकार सहायता नही की परन्तु हम कह सकते है कि प्रभुता हीन महाराव रामसिहमे उस प्रबल विद्रोहके निवारण करनेकी कुछ सामर्थ्य थी या नहीं इस विषयमे हमै सन्देह है। वृटिश गवर्नमेण्टने उनसे असंतुष्टहोकर उनके सम्मानके लिये जो सत्रह तोपे नियत की थी उनमेंसे चार घटा कर तेरह तोपोकी सलामी नियत की। परन्तु उदार हृदय अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिगने सिपाही विद्रोहके पीछे जिस समय भारतवर्षमे प्रत्येक देशीय राजाको वंशानुक्रमसे पुत्रके अभावमे दत्तक पुत्र ग्रहण की सामर्थ्य दी थी- उस समय महाराव रामसिहको भी उस सनदके देनेमे त्रुटि न की।

महाराव रामसिह बहादुरने सन् १८६६. ईसवी २७ मार्चको अपराह्न समयमे ६४ वर्षकी अवस्थामे प्राण त्याग किये। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि जब सर्वसाधारणमे प्रचार होगया कि महारावकी मृत्यु निकट है, तब सर्वत्र यह जनरव उठा कि उनकी विधवा रानियोमेसे एक रानी महाराजके साथ सती होनेकी अभिलाषा करती है। जिससे ऐसी घटना न हो उसके लिये पोलिटिकल एजेण्टने उसी समय उपयुक्त व्यवस्था की, उन्होने राजमहलका द्वार बंद करके ताला लगा दिया और उसकी रक्षाके लिये सेना नियुक्त कर दी, और यह आज्ञा दी कि जहाँतक सम्भव होसके

* Malleson's Natve stntes.

(१) दत्तक पुत्रकी सनदप्राप्तिका वृत्तान्त मेवाड़ और मारवाड़के इतिहासमें देखो।

वहाँतक महारावकी मृत्युका समाचार रनिवासमे मत जाने दो। रानियां चार घंटे तक महारावकी मृत्युका समाचार न जान सकी। इसके पीछे एक रानीने कहला भेजा कि मै स्वामीके साथ चितामे जलूंगी और उन्होंने यहाँतक बल प्रकाश किया कि उस बंद दरवाजेको भी तोड़ डाला, परन्तु उनको किसी प्रकारसे भी राजमहलसे बाहर न होने दिया। दूसरे दिन प्रभात होते ही निर्विघ्नतासे महारावका मृतक कार्य किया गया। समयकी कैसी विचित्र महिमा है, एक समय जो राजपूत रानियां स्वामीका अनुगमन कर अपने सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाती थीं, भारतके गौरवकी रक्षा करती थीं, आज उस सती कुलकी स्वर्गीय आशाकी जड़मे दारुण कुठाराघात लगा।

महाराव रामसिहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र भीमसिंह छत्रसालसिह नामसे कोटेके सिंहासन पर अभिषिक्त होकर आजतक उस सिहासनकी शोभाको उज्ज्वल कर रहे है। महाराव छत्रसालसिह सिहासन आरूढ़ होनेके समयमे बहुत थोड़ी उमरके थे। बृटिश गवर्नमेण्टने महाराव रामसिहसे असंतुष्ट होकर सन् १८५७ ईसवीके पीछे उनकी जो तोपोकी सलामी घटा दीथी इन नवीन महारावके सिहासनपर आरूढ़ होनेके समय फिर संतुष्ट हो पहिलेकी समान सत्रह तोपे नियत करदी।

महाराव छत्रशालसिह अप्राप्त व्यवहार थे, इससे महाराव रामसिहकी मृत्युके पीछे राज्यका शासनभार प्रथमकी समान कई एक उच्च सामन्त और राजकर्मचारियों के ऊपर पड़ा, परन्तु अंग्रेज इतिहासवेत्ताने लिखा है कि उनके शासनमे राज्यमे अनेक शोचनीय घटनाएँ उपस्थित हुई। राज्यकी आमदनीका घटना, ऋणवृद्धि इत्यादि होनेसे अन्तमे बृटिश गवर्नमेण्टको राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्यमे हस्तक्षेप करना पड़ा। कोटाराज्य उस समय तक बृटिश गवर्नमेण्टकी सावधानतासे शासित होता रहा। सन् १८७४ ई० मे जयपुर राज्यके भूतपूर्व प्रधानमंत्री नवाब सर मुहम्मद फ़ैज़अलीखाँ के. सी. एस. आई. कोटेके प्रधानमन्त्री और सर्वशक्ति सम्पन्न कर्ता पदपर नियुक्त हुए। उन्होने सभी विषयोमें गवर्नर जनरलके एजण्टके मन और परामर्शके अनुसार कार्य किया।

अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सावधानीसे कोटेके आभ्यन्तरिक शासनमें विशेष परिवर्तन होगया है। सभी विभागोमे अच्छे बंदोबस्त और न्याय विचारकी सुव्यवस्था कीगई है। वर्तमान महाराव छत्रशालसिह बहादुर इस समय केवल वार्षिक १५०००० रुपया पाते है। उनको शीघ्र ही राजकाज जानने पर अपने राज्यके सम्पूर्ण शासनका भार मिल जायगा।

नवम अध्याय ९.



कोटेके वर्तमान शासनकी रीति–शासन समिति–आयव्ययकी व्यवस्था–आयव्ययकी सूची–राजऋण–राजसमृद्धिके सम्बन्धमे नवीन बन्दोबस्त–विचार विभाग–फौजदारी अपराधकी सूची–उसके सम्बन्धमे पोलिटिकल एजेण्टका मन्तव्य–कारागारविभाग–शिक्षाविभाग ।

कोटाराज्य इस समय गवर्नमेण्टकी सावधानीसे अंग्रेजी रीति और अंग्रेजी व्यवस्थाके अनुसार अंग्रेजीभावसे शासित होता है, कोटेराज्यके हर्ता कर्ता विधाता असीम सामर्थ्यशाली इस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट है । महाराव छत्रशालसिह इस समय अप्राप्त व्यवहार है, इसी कारण वह राज्यशासनके किसी विषयको भी अपनी इच्छानुसार पूर्ण सामर्थ्यसे नही चलाते है । महाराव सामर्थ्यको पाकर अवश्य ही पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करेगे । अवश्य ही आभ्यन्तरिक शासनकार्यमे उस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट फिर हस्ताक्षेप नही करेगे ।

हम अवश्य ही इस बातको मानते है कि वर्तमान समयमे अंग्रेजोके अधीनमे कोटेराज्यने शासित होकर अनेक विषयोमे बहुतसे उपकार प्राप्त किये है । विचार विभाग राजस्व–विभाग शांतिरक्षा–विभाग स्वास्थ्यविभाग इत्यादि इस समय सम्पूर्णरूपसे यथायोग्य व्यक्तियोके तत्त्वावधानसे उत्तम रीतिसे परिचालित होते है ।

कोटाराज्य प्रधानतः एक कौन्सिल वा समितिके द्वारा शासित होता है । कई जन उच्च मनुष्य राज्यके एक २ विभागका शासनभार लेकर उस समितिके सभासद पदपर नियुक्त रहते है । अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट उसी समितिके सभापति है. उन्हींकी परामर्श और सम्मतिके अनुसार कौन्सिलके सभ्य गण कार्य निर्वाह करते है । राजपूतानेके सन् १८८२ । १८८३ ईसवीके शासनविज्ञापनमे राजपूतानेमे स्थित गवर्नर जनरलके एजेण्ट लफटिनेण्ट कर्नल ब्राड्फोर्डने लिखा है कि " इस राज्यका शासनकार्य पूर्व कार्यके समान लेफ्टिनेण्ट कर्नल सी. ए वेलीके सभापतित्व पर एक कौन्सिल द्वारा शासित होता है * " । उक्त विज्ञापनमे पोलिटिकल एजेण्टने स्वयं लिखा है कि " कौन्सिलके सभ्यगणोके सम्बधमे किसी प्रकारका परिवर्तन नही हुआ है, सभ्यगण अपने कार्यको संतोपके साथ पूरा करते है, और राज्यके शासन सम्बन्धमे परामर्श दाता स्वरूपसे हमारी यथेष्ट सहायता करते है+" ।

राज्यकी आयव्ययकी व्यवस्थाके जानते ही उस राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था भलीभाँतिसे जानी जा सकती है । राजराणा जालिमसिहके शासनसमयमे कोटेराज्यकी

---

* The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882 83.

+ The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882-83.

आमदनी किस प्रकार थी–वह हमारे पाठकोको यथास्थानमे ज्ञात हुई है। बृटिश राजनीतिसे कोटाराज्य दो भागोमे विभक्त हुआ, इस कारण वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनी सरलतासे लुप्त होगई, इस समय बृटिश सरकारकी सावधानतासे राज्यकी आमदनी और खर्चा किस प्रकारसे होगया है सो परवर्ती सूचीमें उसे प्रकाशित करते है।

कोटेराज्यके आयव्ययकी सूची।

संवत् १९३८।

(आमदनी)

	प्रकृत आमदनी सन् १८८१–८२ ई०	आनुमानिक आमदनी सन् ८२–८३ ई०
	रु०	रु०
भूराजस्वचालित	१७७३२१७॥–११पा०	१८५००००
बकाया	५१४७८॥=११पा०	५००००
लवणका शुल्क बृटिश गवर्नसेण्ट के समीपसे प्राप्त क्षतिकी पूर्ति		१६०००
कोटाराज्य जागीरदारगण		३१७५
छूट	६१५५३।॥)	९००००
कानूनगो	९५४०॥–) ७ पा.	१००००
उद्यानविभाग	४२९०।≡)५ पा.	३५००
(वनिविभाग)		
तृण	८६५३॥≡)९ पा.	६०००
काष्ठ	१४४४१≡) ९ पा.	१३०००
कर	५६४८०।=)	६००००
तलवाना	३३५८६४॥≡)५पा.	२७५०००
आवकारी	१२६२८।=)	१२०००
टकशाल	१३०५।=)५ पा.	३०००
जुरमाना	१२१४५॥) ३ पा.	१५०००
फीस	७२३=) १०पा.	१०००
स्टाम्प	२०६४९।)	२००००
तकावी	३७६॥≡)६पा.	१०००
नानाविध	४४५६४।॥–)९पा.	१०००
वार्तावह विभाग	४१९।–) ९ पा.	५००
काराविभाग	१९३३।॥)८पा.	१५००
वेतन वचा हिसाव	१८९२२।) ७ पा.	१५००

विनिमय एवं सूद	२०९२७॥≡)५पा.	२००००
विविध प्रकार	४६०९२॥=)८पा.	५०००
जोड़ साधारण आमदनी	२४९७१६६॥)५ पा.	२५२७१७५

अतिरिक्त आमदनी।

सन् १८७९ ईसवीकी पहिली अगस्तसे सन् १८८२ ईसवी ३१ जौलाई तक लवणका शुल्क रहित करके उसके बदलेमे बृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे क्षति पूर्ण प्राप्ति–	४८०००	
२० वर्षके कारण जागीरदारियोको माफ करके उक्त गवर्गमेण्टके निकट से क्षति पूर्ण प्राप्ति–	१५९०५	
सन् १८८१ ईसवीकी पहिली अगस्तका जेर	४४४८०७–)७ पा.	६३९०५
सब मिलाकर आमदनी	२९४१९७३॥=)	२५९१०८०

(व्यय)

	प्रकृत। ८१–८२ ईसवी	अनुमानिक ८२–८३
वृटिश गवर्नमेण्टको देय कर	३८४७२०	३८४७२०
जयपुरके महाराजको देयकर	१४३९७॥–)	१४३९७॥–)
महारावकी निज वृत्ति और रानवासका व्यय	१५७०००	१५७०००
पोलिटिकल एजेन्सी	३०२२२॥≡)५ पा	३०५९४
अश्वशाला	३३१६८) २ पा	३९१००।–)
हस्तीशाला	१७३८९≡) १ पा.	१४५७७॥)
गोशाला	७६६०॥=) ३ पा.	९८९३।–)
उष्ट्रशाला	९०१२	१०३६०
फर्रासखाना	६६७८।–	५२७९
खड, घास, काष्ट	६१४॥=) ३ पा	७८७॥)
अन्यान्य विभाग	६४५५॥) ३ पा.	८०२८=
कौन्सिलके–सभ्यगणोंका वेतन	१८०४८	१८०४८

आफिस खर्च और कर्मचारि-योंका वेतन	४६२६=)६ पा.	४८०५

(राजस्व विभाग).

माल सरदार	१७२०९॥)९ पा.	१७६९॥≡
विजामत	१०११९२।≡	११३९०६
वनविभाग	४४९५॥-)६पा.	६५५५=
छूट	७५३०५=	९००००
कानूनगो हक	३१२४॥)५ पा.	४५००
शुल्कसंग्रह विभाग	१६७०१≡)९ पा.	१९८८४
वार्तावह विभाग	५१९७≡	५२७३॥)
हिसाब रक्षा विभाग	७०२६	७५९६
धनागार रक्षाविभाग	३९५८	५५२४
अम्बर	३५४४	३६०८॥)
टकशाल	८२१	१३२
अपील अदालत	६२१८	६५१६
दीवानी	४११५	४११९
फौजदारी	३९७६	४०८६
पुलिस विभाग	१३४०५॥)१पा.	१३५२७।)
थानासमूह	१४७४७॥≡	१०५२८
ष्टाम्प विभाग	५४३।=)१प.	७००

(समरविभाग)

कार्यालयका विभाग	८०७१।-	८१६०
गोलन्दाज दल	६०२६६।-)९ पा.	६१८९९॥
दुर्ग रक्षक सेनादल	३०८१६।) ६ पा	२९१८९॥
नियमित अश्वारोहीदल	७३८९४॥≡)९पा.	७५४२०
अनियमित अश्वारोहीदल	३१०४९≡	३१०५६
नियमित पैदल	७८४८१॥=	६९०६७
अनियमित पैदल	१३६५१७) १ पा.	१४११८०।
वृत्ति	५००५।-	५६७४॥=
पूर्वकार्य विभाग	३३०२२	२९९१९६
काराविभाग	१४५६५॥)१ पा	१५२२४॥
उद्यानविभाग	७२५४।=	८००७=
चन्दोवस्ती विभाग	४९०२९	३९५२८॥

वकीलोंका वेतन	८१७५॥=)१०पा.	८७०९।
धर्मसम्बन्धी और दातव्य	१३१११७) ९ पा.	५५००
पर्वोत्सव	६३०९॥	६६०३।=
विवाहका व्यय	५४१२।-)९ पा.	५५००
श्राद्धमे सहायता देना	३९५८॥।)	४००००
अतिथिसत्कार	१८३१≡ ९ पा.	२०००
नानाविध	३४८५।≡) ६ पा.	३५००
सरजाम	८९८९) १ पा.	९३७६
तकावी	१०	५००
अन्यान्य खर्च	४८०॥) ८ पा.	५००
शिक्षाविभाग	३९०४।≡	५४५५
चिकित्सा विभाग	१०२३८॥।≡)८ पा.	१०४६२
विनिमय शुल्क और सूद	८८२।-) ८ पा.	१०००
वकीयत	१२४८	१२४८
इजलाईका व्यय	१५७०	१९०८
जुरमाना प्रतिप्रदान	३३४६।≡(३ पा.	२५००
लवणका कर नही लेनेसे सामन्तोकी क्षति पूर्ण ...	... .	३१७५
भत्ता	६०००	७०००
अनेक प्रकारका व्यय	२५७५५=) ९ पा.	३५०००
घरका सत्कार	१००००≡)	१००००
मेउ कालिज़का वोर्डिंगहौस	२५०१४॥।) ६ पा.	२५००
कुल साधारण व्ययका जोड़	२०५५३२२।-) २ पा.	२०५०७०२।-)
अतिरिक्त व्यय अजमेरका कैसरबाग उद्यानके वृक्ष वावड़ीके वनानेका व्यय	६२२७॥-)९ पा.	
२०वर्षके कारण लवणके माप रहित करनेमे जागीरदारोकी क्षति पूर्ण–		
ऋणशोध	३३५११८) ७ पा.	१५९०५)
कुल व्यय	३३९६६६६≡)६ पा.	२०६६६०७।-)
सन् १८८१ ईसवी ३१ जुलाई तक	५४५३०५।=)६पा.	
कुल	३९४१९७१॥=)	

जिस दिनसे वृटिश गवर्नमेण्टने कोटेराजधानीके दो भाग कर झालावाड़की राजधानी वनाई है, जिस दिनसे कोटेराजके वार्षिक पन्द्रह लाख रुपये आमदनीमेसे घट गये । उसी दिनसे कोटेके राजा महाराव रामसिहजी अपने पैतृक पदके सम्मानकी रक्षा करनेसे ऋणी होगये । उनकी मृत्युके पीछे सामन्त मंडलीने जिस समय कोटेके शासन भारको लेकर राज्य चलाया उस समयमे भी ऋण वढता गया । वर्तमान समयमें वह ऋण प्राय: दिया जाचुका है, यह वड़े संतोषकी बात है । पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि " ऋण चुकानेमे जो रुपये दिये जाते है वह व्ययके बीचमे नही गिने जाते । सन् १८८० और १८८१ ईसवीमे ऋण देनेवालेको असल और सूदके हिसावसे ३३५११८) रुपये दिये गये है। आगामी ३१ जुलाईमे वर्तमान वर्षका जो शेष होगा उसमे ऋणके हिसाबमें चार लाख रुपये दिये जॉयगे। अतएव राज्यका ऋण चुकनेमे और प्राय. तीन लाख रुपये वाकी रहैगे । राज्यको ऋणसे मुक्त करके अवश्य ही गवर्नमेण्ट धन्यवादकी पात्र होगी ।

राज्यकी आमदनी वढ़ानेमे वर्तमान शासकोकी दृष्टि हो रही है । राज्यकी भूमिका नाप मानचित्र बनाकर उसके द्वारा पृथ्वीपर कर बढ़ाया जाता है, पोलिटिकल एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल वेली साहब उक्त विषयके सम्बन्धमे लिखते है, कि "इस विषयका यथोचित उत्कर्ष साधित होता है, यह मै खुशीके साथ सूचित करता हूँ; दश निजामत वा परगनोका नवीन राजकर निर्द्धारित हो चुका है, एवं उनमे नौ परगनोसे नवीन राजकर वसूल होता है, दूसरे दो निजामत् वा परगनोका राजकर निर्द्धारित करनेका कामचल रहा है उसके समाप्त होनेपर और २ परगनोका नूतन कर निर्द्धारित करना शेष रहैगा । उपरोक्त नौ परगनोके नूतन वन्दोवस्तसे वार्षिक ६४१६०) रुपयेका राजकर अर्थात् ५॥ रुपये सेकड़ा बढ़ाया हुआ आता है । " पंडित शिवबक्स इस बन्दोवस्ती विभागके अध्यक्ष है; उनके निरीक्षणमे पोलिटिकल एजेण्टको बड़ा संतोष है, इस नये बन्दोवस्ती विभागके व्ययके सम्बन्धमे पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, कि " गत मार्चके अखीर तक इस वन्दोवस्ती कार्यमे कुल ३२७४१५) रुपये खर्च हुए है इसमेसे जरीफके कार्यमे ९३४८८) रुपये उठ है, जरीफका काम समाप्त होगया है " ।

समस्त प्रजाके साथ न्यायका विचार हो इस बातपर बड़ा ध्यान रक्खा गया है सैयद जाफर हुसेन कोटेके सबसे प्रधान विचारपति है । उनके सम्बन्धमे पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " पहिली रिपोर्टमें मैने सैय्यद जाफर हुसेनके सम्बन्धमे जो मन्तव्य प्रकाश किया था वर्तमान रिपोर्टमे भी उसी प्रकार संतोपके साथ प्रीति जनक मन्तव्य प्रकट करता हूँ ।

× The Report of the political Administration of the Rajputanu states 1882—83-

(१) वर्तमान अध्यायमे उद्धृत समस्त अश सन् १८८२—८३ ईसवीके राजपूतानेकी शासन रिपोर्टसे लिये है ।

वह बड़ी सावधानी और न्यायसे कोटेके सामन्तोके अभियोगकी मीमांसा करते है। वह कोटेकी अपील अदालतके जजका काम भी करते है"।

पुलिस विभागकी रिपोर्ट देखनेसे राज्यके भीतरी शासनका यथार्थ हाल जाना जाता है। हम इसी स्थलपर कोटेराज्यके फौजदारी अपराधोकी सूची प्रकाशित करते है।

कोटा राज्यके फौज़दारी अपराधोंकी सूची।

सन् १८८२–८३ ईसवी

अपराध	संख्या	अभियोग उपस्थित	पकड़े गये	दंड	मुक्ति	हरणकीहुई संपत्तिका मूल्य	आदाय		
							पशु.	रुपये	पशु
हत्याकांड	२	१	६	१	५	...			
हत्याचेष्टा	४	३	२	१	२	...	३५	२१५)	०
अन्यभाति	२७	८	२१	७	१४	१५२११=)।	१६	१७३॥।–)॥	१
पशुचोरी	७६	५२	१०२	७६	२६	...	४७४	०	३३५
अन्य विधचोरी	२६२	१५२	३०४	१८२	१२२	२१७५४।≡)॥	०	१९५०॥≡)।।।	०
आत्म हत्या	४७	२६	४७	३१	१६	..	...	...	...
विष प्रयोग	५	५	५	३	२	..	...	...	...
विशेष आघात	१७	११	१३	९	४	..	...		...
मनुष्य विक्रय	२	२	६	५	१	..	...	...	...
मनुष्य चोरी	२८	२१	५२	३०	२२	४५९)	...		...
भ्रूण हत्या	६	५	११	४	७	...	..	.	
शिशुकन्या हत्या	१	१	१	१	०	...	.	...	
जेलसे भागना	५	४	५	५	०		...	...	.
चोरीका माल लेना	१४	८	९	४	५	.	.	६२।–)॥	...
घरमे आग लगाना	३	२	३	२	१	...	...	...	...
अन्य अपराध	६२४	३११	५२७	३८४	१४३	१०२४।	१७	२५८॥)	१०
डकेती	७	१	१	१	०	२४९०।)।	..		
	११२१	६१३	१११६	७४५	३७१	३७२५९।=	५४२	२६६९।=)।	३४६

लेफटिनेण्ट कर्नल वेलीने लिखा है, सन् “ १८८२। ८३ ईसवीमें जो अपराध हुए है उन सबकी संख्या ११३१ है, अतएव पहिले वर्षके सब अपराधोकी संख्या १००७ के साथ मिलाई जाय तो इस सालकी कुछ अधिक जान पड़ती है। विशेष कर पशु और सामान्य चोरीके अपराध अधिक हुए है। पहिले वर्षोंकी अपेक्षा इस वर्षमें अनाज कम हुआ, इसीसे ऐसा हुवा, कारण लुटेरोंके दलने उक्त दशामे अधिक अपराध किये, इस राज्यकी समिाके अन्तमे जैसे घोर भयानक और बड़े जंगल है उसमे ऐसे अपराधोका एक साथ दूर करना कठिन है ”।

गत वर्षमे डकैती हुई। पहिले वर्षमे नौ डाके पड़े, यदि इसके कई वर्ष पहिलेके डांकोकी संख्याके साथ तुलना की जाय तो यह फल अवश्य ही संतोष जनक होगा, कारण कि पूर्व वर्षोंमे हिसाबसे ५० से भी अधिक डॉके पड़े है ”।

“ ८ डॉकोमेसे ५ तो सामान्य है कारण कि उनमे अति सामान्य मूल्यकी सम्पत्ति नष्ट हुई है ”।

हम इस वातको मुक्तकंठसे कहते है कि कोटेराज्यकी डकेतीके दमन करनेमे पुलिसने वड़ी प्रशंसाका काम किया है। पहिले धनवान् प्रजा शंकित रहती थी अव पुलिसके कठोर शासनसे सव प्रजा निर्भय रहती है।

वर्तमान शासन समितिके तत्त्वावधानमे अन्य विभागोकी समान कोटेके जेल खानेकी अवस्था बहुत सुधर गई है। पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, “ नया जेलखाना वड़ा सन्तोषदायक बना है और आगरेके सेटलजेलके तत्त्वावधायकसे जो एक दारोगा प्राप्त हुआ है उसके द्वारा जेलखानेके समस्त कार्य बड़ी उत्तमताके साथ चलते है। कैदियोका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

सन् १८८१ ईसवीमे इस नये जेलमे कैदियोंके आने पर उनका स्वास्थ्य जो अच्छा हुआ है वह नीचे लिखी सूचीसे जाना जासकता है।

सन्	१००० पर मृत्यु संख्या।
७९–८० ईसवी	९१
८०–८१	६२
८१–८२	२९–९६
८२–८३	१०

प्रतिदिन जेलमे औसतसे निम्न लिखित कैदी थे.

दण्ड प्राप्त कैदी–	२८४
विचाराधीन	२१

शिक्षा विभाग सम्बन्धमें उक्त रिपोर्टमे लिखा है कि बाबू यदुनाथ घोषके प्रवंधसे कोटेके विद्यालयने क्रमशः उन्नति पाई है। प्रतिदिन औसत २४६ विद्यार्थी उपस्थित होते है पहिले वर्षोंसे इनकी संख्या बढ़ी है, इससे राज्यसे मिले हुए गवर्नमेण्टके अधिकारी

प्रदेशोंके रहनेवाले मनुष्य शिक्षा विषयमे जितना मन लगाते है वैसा कोटेके रहनेवाले मन लगा कर नही पढ़ते ।

" कोटेराज्यके वीच एक प्रधान नगर वारनमें एक नया विद्यालय खुला है और साधारण मनुष्योके लिये उसी भांति जिलास्कूल बनाये जारहे है " ।

"कोटेके विद्यालयके विद्यार्थी और शिक्षकोकी सख्या नीचे लिखी जाती है " ।

	अंगरेज़ी विभाग	फ़ारसी विभाग	सस्कृत विभाग	हिन्दी विभाग	कुल
विद्यार्थी	३८	१५२	२६	२०२	४१८
शिक्षक	२	४	१	४	११

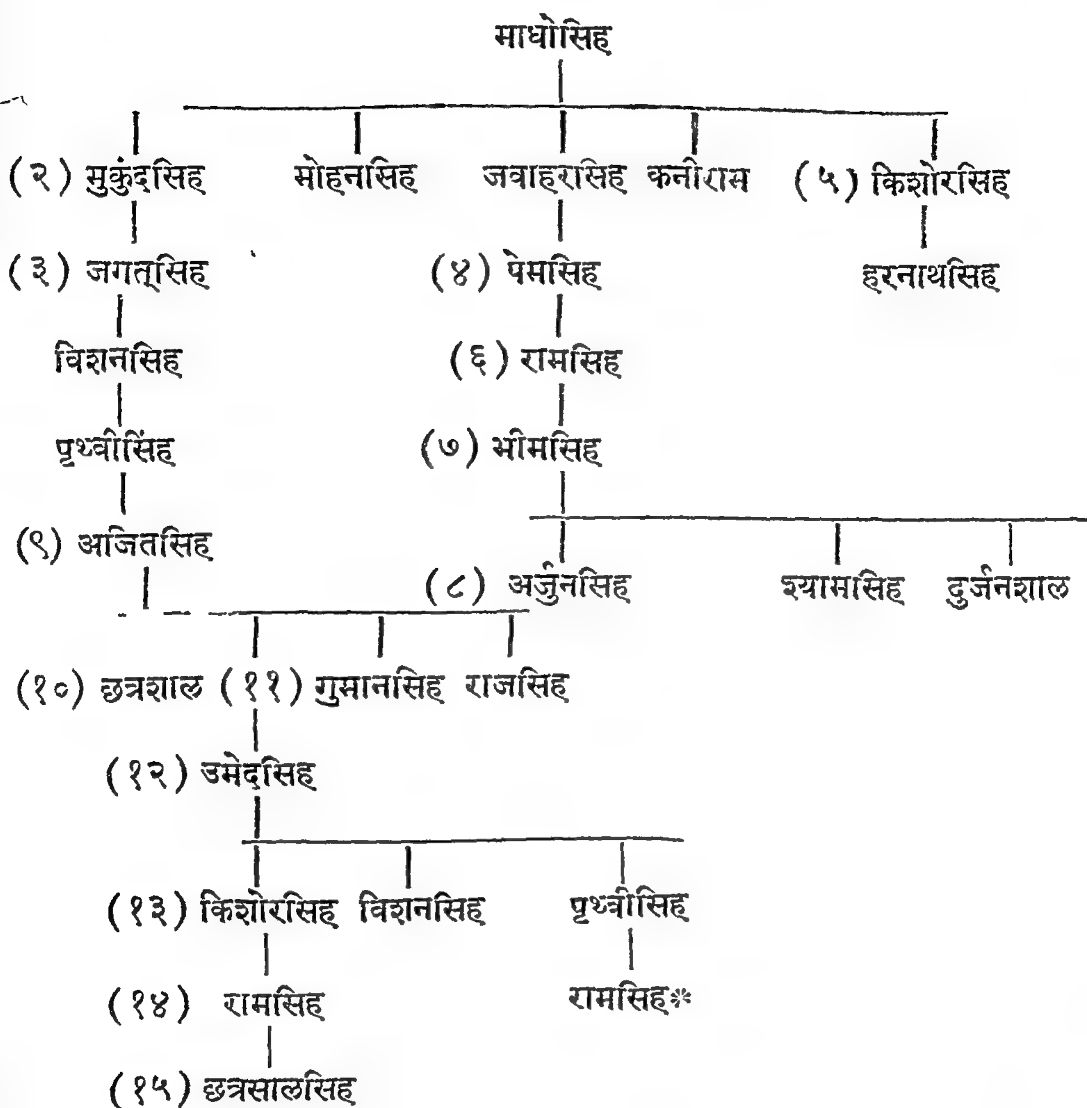
कोटेके पोलिटिकेल एजेटकी यह बात यद्यपि हम मानते है कि कोटेके रहनेवाले मनुष्योका विद्योपार्जनमे बड़ा अनुराग नही है तो भी हम कहसकते है कि वर्तमान शासन समिति राज्यके भिन्न विभागके लिये जैसा व्यय निर्देश करती है, उसके, साथ मिलान करनेसे जान पड़ता है शिक्षा विभागका व्यय वहुत ही कम है। जातिकी उन्नति शिक्षा पर ही निर्भर है । उस स्थाई यथार्थ उन्नतिका साधन करना यदि वर्तमान शासन-समितिका वास्तवमे उद्देश हो तो शिक्षा विभागका व्यय शीघ्र ही वढा देना चाहिये ।

कोटेराज्यका परिमाण पॉच हजार वर्ग मील है, अधिवासियोंकी संख्या कुछ कम पॉच लाख है । सेनामे ४६०० पैदल, ७७०० घुडसवार और ११९ तोपे है । सम्पूर्ण सेना आजकल महारावके तत्त्वावधानमे है ।

(कोटेराज्यका इतिहास समाप्त

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बंबई.

कोटेका राजवंश।



* महाराज किशोरसिहके बाद गद्दीपर बैठे।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त ।

प्रथम अध्याय १.

उदयपुरसे यात्रा–खैरोदाका सर–मानदेश्वरका प्राचीन मंदिर–भारतीवार–वहॉके जैनमंदिर–खैरोदा–मेवाडके आत्म विद्रोह सम्बन्धकी कहानी–संग्रामसिंहकी वीरता–उनका खैरोदा लाभ–संग्राममें दत्तकपुत्र जयसिंह–विलायतमें राजनैतिक संधिबंधनके समय दोनों ओर धीरता प्रकाश करना–खैरोदाके कृषिवाणिज्यका विवरण–हिन्ता–धर्मके आशयसे बहुत विस्तारित पृथ्वीका देना–देवताके निमित्त अर्पित पृथ्वीमे हिन्ता और दूदियाका स्थापन–राजा मान्धाता–उनके सम्बन्धी प्रवाद–अश्वमेध यज्ञ–उनके द्वारा ऋषियोको माइनाद देश मिलना–महाराष्ट्रोके विरुद्धमे राजसिंह की वीरता प्रकाश करना–मेवाड़के राज्यकी सीमा–मसवन–कर्नल टाड साहबके हृदयकी कथा—

कर्नल टाड् साहबने राजस्थानके समस्त इतिहासको वर्णन करनेके पीछे स्वयं अपने भ्रमण वृत्तान्तको भी वर्णन किया है, और उसी भ्रमण वृत्तान्तकी समाप्तिके साथ यह बड़ाभारी इतिहास भी समाप्त किया गया है। दयालु पाठकगण धीरे २ हमारा अनुसरण करके इस समय इस विशाल इतिहासके शिखरकी अंतिम चूड़ापर पहुँच गये है। इस अंतिम स्थानमें हमारा अंतिम अनुरोध यही है कि पाठकगण किञ्चित् धैर्य धारण करके इतिहासरूपी कल्पवृक्षके शिखरपर पहुँच कर अमृतमय संतोपरूपी फलको प्राप्त करनेमे समर्थ होगे और उसके साथहीसाथ हमारा भी परिश्रम सफल होगा, और पाठक भी अपने समयको सफल हुआ जानेंगे—हमारा यही आन्तरिक अनुमान है।

राजस्थानके प्रथम कांडमें कर्नल टाड साहबने तथा मारवाड़में जाकर वहाँसे लौटकर रजवाड़ेके अनेक देशोकी प्राकृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और शासन सम्बन्धी कहानी पाठकोको विदित कराई थीं। इतिहासवेत्ता कर्नल टाड् साहब उक्त भ्रमण समाप्त करनेके पीछे सन् १८२० ईसवीकी २९ जनवरी तक उदयपुरकी राजधानीमे रहकर विशेष राजनैतिक घटनाओंके होनेसे बूँदी और कोटेराज्यको चले गये। बूँदी और कोटा इन दोनो राज्योंके राजनैतिक विषयोंके देखनेका भार गवर्नमेण्टने

इनके हाथमे सौप दिया था। कोटा और बूँदीराज्यमे कर्नल टाड् साहवके पहले और कोई अङ्गरेज नही गया था। इस स्थानसे हम कर्नल टाड् साहवके अनुगामी हुए।

" उदयपुर—२९ जनवरी सन् १८२० ईसवीमें यद्यपि हम उदयपुरमे जाकर वहाँ एक महीने भी विश्राम न करसके, तथापि शीतऋतुके आते ही भारतवर्षकी प्रकृतिने अत्यन्त आनन्ददायक मूर्ति धारण की, हमारे हृदयमे उसी समय भ्रमण करनेकी अभिलाषा हुई। अग्रेज लोग भारतके प्रचंड ग्रीष्ममे तथा कष्टदायक वर्षाऋतुके विशेष क्लेश भोगनेके पीछे, शीतऋतुको स्वास्थ्यके लिये उपयोगी और सुखदायक मानते है।

खैरोदा–२९ जनवरीको हमने तूप शिखरसे चलकर छः कोशपर जाय खैरोदाके विस्तारित ह्रदके किनारे डेरे डाल दिये, हम जिस मार्गसे होकर आये थे वहाँकी भूमि उत्कृष्ट और भलीभांतिसे जलयुक्त थी। परन्तु वहुत समयसे वहाँ खेती नहीं हुई। दुबोक नामक स्थानसे डेढ़ मील दूरीपर हम वैरस नदीके पार हुए, दोरौली नामक ग्राममें उस नदीसे एक स्रोता निकल कर एक झील अथवा तालावके आकारकी समान हो गया है। उस नदीके किनारे मानदेश्वर नामक महादेवका एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर बिराजमान है। उस मन्दिरके गठनकी रीति देखनेसे उसकी प्राचीनताका अनुभव किया जा सकता है। यह आवू शिखरके समीप चन्द्रावतीके प्रसिद्ध मन्दिर के सामने बना हुआ है, और इससे यह प्रवाद वाक्य प्रमाणित होता है कि पूर्व-कालमे सर्वत्र ही मन्दिर एकभावसे बना करते थे और यह रीति अचल थी।

हम दक्षिणसे आध कोश दूर सूरजपुराकी सरायको लांघ कर भारतीवारके दल-दलमे फँस गये, यह नगर चारोओर जलभूमि पूर्ण है, मेवाड़के सोलह जनोमे सवमे प्रधान कनोराके सामन्त इस नगरके अधीश्वर है, और यह नगर अत्यन्त प्राचीन कह-कर विख्यात है। ऐसा प्रगट है कि राजा विक्रमाजीतके बड़े भाई भर्तृहरिने इस नगर की प्रतिष्टा की थी। यहाँ ऐसा प्रवाद प्रचलित है कि एक समय इस नगरमें सातसौ पचास (७५०) जैन मन्दिर थे, और एक साथ ही सवमे घंटा बजता था। मन्दिरोमेसे टूटे फूटे कुछेक मन्दिर पाये जाते है और उनको देखनेसे उनकी प्राचीनताका सरलता से अनुभव होता है, परन्तु सावित मन्दिर कोई भी नही है। खैरोदाके आधकोश पीछे हम खैरसना नामक ग्राममे गये, वह ग्राम ब्राह्मणोके अधिकारमे था इसीसे यह ब्रह्मोत्तर कहाता है।

खैरोदा एक समृद्धिशाली स्थान है; चारोओर गढ़ किला है, तथा उस गढ़के वाहर दो खंदक है, उन दोनो खातोंमे इच्छानुसार नदीका जल भरा जा सकता है। मेवाड़की प्राचीन राजधानी चीतौड़ और नवीन राजधानी उदयपुर इन दोनोके सम मध्य स्थानके ऊपर यह खैरोदा और किला स्थापितहै, मेवाडके आत्मविद्रोहके समय इसी स्थान पर विवाद विसम्वाद हुआ करता था। सन् १७४८ ईसवीमे जिस समय मेवाड़में भयंकर आत्मविद्रोहकी आग भड़क उठी थी, उस समय शक्तावत् संग्रामसिहके पोष्य पुत्र और लावाके रावत जयसिंह जो उस विद्रोहके एक प्रधान नेता थे, उन्हींके अधीनमे

यह देश था । इस देशको विशेष आय मूलक जानकर और विशेष प्रयोजनीय स्थानमे स्थापित होनेके कारण इस देशको किसी सामन्तके हाथमे विश्वास पूर्वक अर्पण करना उचित न विचार कर अब यह महाराणाके ही अधीनमे है । परन्तु लावाके सामन्तने ४ मईके संधिपत्रमें * वहुतसी आपत्तियो के पीछे हस्ताक्षर करके यह खैरोदाका किला जो उनके कुटुम्वियोके रक्तपातसे उनके हस्तगत होगया था वह महाराणाको अत्यन्त अनिच्छासे लौटा दिया।

खैरोदाके इतिहासमे मेवाड़के आत्मविवादका उत्कृष्ट चित्र अंकित पाया जाता है । उस आत्मविवादमे मेवाड़की श्रेष्ठ सम्प्रदायके शक्तावत् संग्रामसिह और चन्द्रावत् भैरोसिहकी ओरके बहुतसे वीर मारेगये । सन् १७३३ईसवीमे संग्रामसिह जिस समय अल्प वयस्क युवक थे उनके पिता श्योगढ़के रावतलालजी उस समय जीवित थे, उस समय उन्होंने अपने अधीश्वर राणाके अधिकारसे खैरोदाको छीन लिया और क्रमानुसार ६ वर्ष तक अपने शासनके अधीनमे रक्खा । सन् १७४० ईसवीमे देवगढ़ आमोत कोरावर, इत्यादि शत्रुपक्षकी सम्प्रदाय सामन्त अपने नेता सालूंबरके सामन्तोके अधीनमे जाकर महाराणाके दीपरा मंत्रीके साथ शक्तावत्को उक्त खैरोदासे भगानेके लिये इकट्ठे हुए । शक्तावत् नेताने चार महीनेतक उन आक्रमणकारियोके हाथसे किलेकी रक्षा कर अन्तमे एक समय किलेकी चोटीपर एक संधि प्रार्थनाकी सूचना देनेवाली सफेद पताका उड़ा दी, इस प्रकारसे वह किलेको समर्पण करनेके लिये तैयार हुए । वह अपने सेवक और कुटुम्ब तथा धन सम्पत्तिको लेकर शक्तावतोकी राजधानी भीदर नामक स्थानको चले गये । शत्रु उनका कुछ भी अनिष्ट न करसके, अवरोधकारियोके उक्त प्रस्तावमे सम्मत होते ही श्योगढ़के उत्तराधिकारी संग्रामसिह भीदरमे जा पहुँचे । इन्होंने वहाँ जाकर अपने शत्रुओका नाश करनेके लिये संहारमूर्तिसे चारोओर महा उपद्रव और अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये । उसके सम्बन्धमे मेवाड़मे वहुतसे प्रवाद और गल्प आजतक प्रचलित है । इन्होंने एक समय गुरलीनामक स्थानमे जाकर वहांके समस्त पशु और निवासियोको वन्दी करालिया । कोरावरके सामन्तके पुत्र जालिमसिह उक्त स्थानके निवासियोंकी सहायताके लिये गये । परन्तु संग्राममे भयंकर भालेके आघातसे उनके प्राण नष्ट होगए । उनकी इस मृत्युका वदला लेनेके लिये उस देशके प्रत्येक चॉदावत सालूंवरके सामन्तोकी पताकाके नीचे इकट्ठे होनेलगे । महाराणाने स्वयं उन चन्दावतोके पक्षका अवलम्वन कर अपनी वेतनभोगी सेन्धवीसेनाको शीघ्र ही भेजा और उसने तुरन्त ही भींदरको जा घेरा । जिस समय भीदरपर आक्रमण किया था, उस समय कोरावरके सामन्त अर्जुन सिहने अपने पुत्रनाशका वदला लेनेके लिये अचानक वहॉसे श्योगढमे जाकर वहाँ अधिकार कर किलेमे रहनेवाले प्रत्येक स्त्री पुरुषका प्राण नाश किया । खैरोदा कई वर्षतक महाराणाके खास अधीनमे था, अन्तमें उन्होने परिणामको न विचार कर झगड़ेका मूल कारणस्वरूप वह किला भदेसरके चंदावत सामन्त सरदारसिहको देदिया ।

---

(१) प्रथम काण्डमे यथास्थान प्रकाशित होचुका है ।

संवत् १७४६ में चंदावत् सरदार महाराणाके विरुद्धमे विद्रोही होनेसे उनकी कोपदृष्टिमे पड़कर पग २ पर अपमानित हुए । उनके चिरशत्रु शक्तावत् उस अवसरमें भींदरके सामन्तोके नेताके अधीनमे अपनी २ सेनाके साथ हो जो सेन्धवीसेना उस किलेमे रक्खी थी उसके निकालनेके लिये इकट्ठे हुए । कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंह, उस समय सेन्धवीदलके नायक कुलीखांके साथ किलेमेकी सेनाकी सहायता करनेके लिये गये । किलेके समीप ही प्रबल समरानल प्रज्वलित होगई । उस संग्राममें अपने हाथसे कोरावरके दो अधीन सामन्त सीकरवाल गोमान और राणावत् भीमजीका प्राण नाश किया गया । परन्तु अंतमे चांदावतोने ही रणक्षेत्रमे जयलक्ष्मीका आलिगन किया, शक्तावत् शीघ्र ही भीदरसे चले गये । इस समय कोटेके जालिमसिंह जिन्होने इन दोनो सम्प्रदायोमे वैरभावको भलीभांतिसे प्रज्वलित करादिया था, जिन्होने इस विवाद करती हुई दोनो सम्प्रदायोके हाथसे अन्तमे स्वयं उस किलेको अपने हस्तगत करनेका विचार किया था, उन्होने इस समय शक्तावतोकी सहायता करनेके लिये एक दल अरब सेनाका भेज दिया । शक्तावत् उनके साथ मिलकर फिर चांदावतोपर आक्रमण करनेके लिये धावमान हुए । चांदावत् इस समय अकोलाके समतलक्षेत्रमे स्थित थे, वह शीघ्र ही रणक्षेत्रमे जा पहुँचे, परन्तु अतमे परास्त होगये । उस समय सैन्धवी सेनाके नायकके मरते ही सेना छत्रभंग होकर भाग गई । संग्रामसिंह शत्रुओके विरुद्ध मे उस समर तथा अन्यान्य युद्धोमे नायक बने इसीसे उनके शरीरमे तीन स्थानोमे भयंकर आघात लगे । परन्तु वह उस भयंकर आघातोसे किञ्चित् भी दुःखित न हुए, वरन उन्होने राणाके समीपसे अधिक सम्मान पाया, और शत्रु चांदावतोको भगा दिया । इस प्रकारसे उस युद्धके पीछे खैरोदाका किला संवत् १७५८ सन् (१८०२ई.) तक महाराणाके अधीनमे था, इसके पीछे संग्रामसिंहने दशहजार रुपया महाराणाको भेटमे देकर उस किलेको अपने अधिकारमे कर लिया । सन् १८१८ ईसवीमे जिस समय हम (गवर्नमेण्ट) महाराणा और उनके सामन्तोमे संधि स्थापन और मध्यस्थता करनेमे नियुक्त हुए उस समय तक उक्त खैरोदाका किला शक्तावतोके असीम साहस, वीरता और जयचिह्नस्वरूपसे उनके अधीनमे था । संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र लावाके रावत जयसिंहने उस समय खैरोदाके किलेको महाराणाको देनेमे असम्मति प्रकाश की, यह कुछ आश्चर्यकी बात नही है । वह यहाँतक आगे बढ़े कि उन्होने किलेकी दीवारके नीचे सेनाको इकट्ठा करनेकी आज्ञा दी । और जिससे उनमे का कोई भी मनुष्य किलेके बाहर महाराणाकी ओरके किसी मनुष्यके साथ बात चीत न करे, ऐसा भी प्रबन्ध किया गया । अत्यन्त सूक्ष्म कारणके उपस्थित होनेपर दुर्गके घेरने और अधिकारके उद्योगसे उस समय मेवाड़के समस्त चांदावत् आनन्दित हो इनके समीप सहायक हो आये थे । और जिस समय महाराष्ट्रोके अत्याचार उत्पीड़न तथा राज्यग्रासके मुखसे मेवाड़का उद्धार किया था उस समय फिर प्राचीन शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित होगई थी ।

परन्तु जिस समय यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया था, उस समय खैरोदाके अधीश्वर जयसिंह आप उदयपुरकी राजधानीमे महाराणाके यहाँ उनके अनुचर स्वरूप

से रहते थे। यदि जयसिहका कोई सेवक किलेके बाहर जाकर महाराणाकी ओरके मनुष्यके साथ साक्षात् करता तो जयसिहकी सेना अवश्य ही उसकी हत्या करदेती। यद्यपि हमारे विचारसे जयजिह उस समय महाराणा और वृटिश गवर्नमेण्टके समीप विद्रोही रूपसे गिने जाते थे परन्तु उस समय कोई कार्य भी विद्रोहकी सूचना करने वाला नही हुआ तथा राणा और रावत दयालु अधीश्वर एव राजभक्त सामन्त भावसे रहते थे, अन्य किसी प्रकारका विरुद्धभाव दिखाई नही देता था। उक्त खैरोदाके किले-को हस्तगत करनेका कार्य सरलतासे होजाय, इस प्रस्तावसे मीमांसाका भार राणा और रावतके पक्षके कामदार वा प्रतिनिधियोके हाथमे सौपा गया। उन प्रतिनिधियोमेसे किसी प्रकारका विरुद्ध ज्ञापक व असंतोषदायक आचरण दृष्टि नही आया, वरन सरलता से मीमांसा होनेकी आशा दृष्टि पड़ी थी। एशियाके निवासी सूचना और उसकी परिणतिमें समयको विवादवाला नही जानते, परन्तु शीत प्रधान देशके मनुष्य उसे वैसा जानते है। किसी प्रकारके विवाद विसम्वादकी मीमांसाके समय एशियावासी अधिक धीरता प्रकाश करके अपनी मर्यादाकी रक्षा करनेमे खूब शिक्षित है।

खैरोदादेश मेवाड़की प्रथम श्रेणीके खालिसा विभागका एक पट्टा वा उपविभाग है। छोटे २ ग्रामाके अतिरिक्त इसमे १४ शहर भी है इन सबके उप विभागका वार्षिक १४५०० रुपया राजकर है, एकमात्र खैरोदाका वार्षिक राजस्व ३५०० रुपया है।

यहाँकी भूमि साधारणतः तीन श्रेणियोंमे विभक्त है (१) पेविल भूमि, कूपोदकसे इसका कृषिकार्य होता है, (२) गुरसाभूमि, इसमे भी जल सींचा जाता है (३) मार वा मालभूमि, इसमे खेती वर्षाके जलके बिना नही होती। यहाँ केवल दो ऋतुओ मे धान्य उत्पन्न होते है। पहिले उनालू, अर्थात् ग्रीष्म कालीन धान्य, दूसरे शीयालू वा शीतकालीन धान्य। प्राचीन हिन्दूशासनकी समान महाराणा यहाँका भी कर स्वरूपमे उस उत्पन्न हुए धान्यमेसे अपना भाग लेते है। ग्रीष्मकालमे गेहूं, जौ, चना उत्पन्न होते है। सौ सौ मन करके रीति अनुसार उसका भाग कर खलिहानमे जमा होता है पीछे उसे २५ मनसे चार भागोमे विभक्त किया जाता है, उन चारो भागोमेंसे प्रथम ग्रामके समस्त मनुष्योको जो मिलता है वह उनसे मनके ऊपर एक २ सेर करके लेते है। (१) पटेल वा ग्रामाध्यक्ष (२) पटवारी वा हिसाबरक्षक (३) साना वा प्रहरी (४) बुलाई वा सम्बाद वाहक एवं साधारणतः पशु पालक[1], (५) काछी सूत्र-धर (६) लुहार वा कर्मकार (७) कुंभकार (कुम्हार) (८) रजक (धोबी) (९) चमार और (१०) नाई इन दश मनुष्योको मन पीछे एक सेरके हिसाबसे प्रत्येकको २॥ मन करके धान्य मिलता है, तब मूल चार अंशोमेका एक अंश उठ जाता है। शेष तीन अंशोमेका एक अंश (२५ मन) राजमे करस्वरूपसे लिया जाता है। बाकी दो भागोंमेसे युवराजके नामका दो मन दिया जाता है, और शेष समस्त धान्य

---

(१) जो मनुष्य समस्त ग्रामके पशुओंको चराता है, तथा जिससे पशु खेतका अनिष्ट न करै वह उस विषयमें दृष्टि रखता है।

किसानको मिलता है, उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको जो धान्य मिलता है अल्पकालसे उसके ऊपर भी हस्ताक्षेप किया गया है, प्रत्येक मनके ऊपर तीनसेर काट लिया जाता है। युवराजके नामका एकसेर राणाके प्रधान अश्वपालके नामका एक सेर, एवं मोदी अर्थात् शस्यरक्षा बिभागके अध्यक्षके नामका एक सेर लिया जाता है। वह समस्त धान्यही राजाके यहां भुक्त होता है। इसके पहिले जैसा चार अंशोमेका एक अंश राजाको मिलता था, इस समय उसके बदलेमे दश अंशोमेका तीन अंश मिलता है, परन्तु धान्य कटनेके पहिले ग्रामके मनुष्य और एक बार धान्य ले जाते है, जो धान्य वोते है वह भी दो तीन सेर लेते हैं।

शीयालू वा शीतकालमे मकाई, ज्वार, और बाजरा उत्पन्न होता है उसके विभाग का कार्य निम्नलिखित प्रकारसे किया जाता है। प्रति सौमन पर ४० मन राजाका करस्वरूप रखकर उक्त ग्रामके दश मनुष्योको मनपर एक २ सेर देकरबाकी जो बचता है वह सब किसानको मिलता है।

गन्ना, रुई, नील, अफीम, तमाखू, तिल इत्यादिकी खेती भी यहां होती है, इस परसे नियमित रुपया करस्वरूपमे लिया जाता है। प्रति वीघेके ऊपर दो रुपयेसे दश रुपयेतक कर लिया जाता है।

हिन्ता-३१ जनवरी। जिस माल शब्दसे इस देशका नाम मालवा हुआ है। उसी माल नामक श्रेष्ठ कर्षण की हुई भूमिके ऊपरसे होते हुए तीन कोश लांघकर हम आगये। हम सूर्य भगवानके उदय होनेसे बहुत पहिले घोड़े पर सवार हो बाहर हुए,

वह प्रभात कालीन पवन जैसी शीतल थी वैसी ही आनन्ददायक थी इस समय किसान खेतमे गेंहू, जौ, चने इत्यादि नवीन श्यामल शस्यको देखकर हँसते हुए विचार रहे थे कि अवकी बार भगवानने दयालु होकर खेती बहुत अच्छी की है; अब इसका कोई कुछ अनिष्ट नही करसकेगा। ग्रामकी कुटियां सब नवीनतासे छागई थी। नवीन दीवारे इत्यादि निकले हुए ग्रामवासियोके फिर आगमनका परिचय देरही थी। उससे हमारे अभिनन्दनके साथ हमारे कल्याणकी कामना तथा हर्ष और विषादित नेत्रोंसे देख रही है। खैरोदाके उपविभागके अधीन हम अमरपुरा नामक छोटे ग्राममे गये। हमारी बाई ओरको मानियास नामक शहर दिखाई पड़ा। एक सम्प्रदायने ब्राह्मणके अनुशासनपत्रके

---

(१) इस प्रान्तमें गन्नेकी खेती बड़ी अनिश्चित है और इससे किसानोको लाभके बदले हानि होती है। अव्वल तो इसकी फसल पूरे सालभरमे तैयार होती है यानी जिस जमीनमे अफीम या साधारण अनाजकी दो फसलकी पैदावार होजाती है वहाँ गन्नेकी केवल एक फसल तैयार होती है दूसरे सरकारी मालगुजारके ठेकेदारोंके ऊपरी लागान और जमीजोतके महसूलके कारण गन्नेकी खेतीमें किसानको सदा हानि उठाना पड़ती है। यानी एक बीघा पर लगान जमीन निदाई गुडाई बीज, बैल और किसानकी खवाई, खुराक, गन्नेकी कटाई आदिका कुल खर्च २२८ रु० होता है तो प्रति बीघा ज्यादासे ज्यादा २० मन गुड तैयार होनेपर फी रुपया १० सेरके हिसाबसे कुल २००) की आमदनी होती है।

अनुसार उस नगर पर अधिकार किया है। यह स्थान मेवाड़के राणावंशके " पूर्व पुरुषोके न्यायदान सोण्डताका " उत्तम रूपसे प्रमाण देता है। राणाके अधिकारकी पांच हजार वीघा श्रेष्ठभूमि समाजके अकर्मियोको वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये दी है। यद्यपि ऐसा जाना जाता है कि त्रेतायुगमे राजा मान्धाताने पवित्र उपनिवेशमे ब्राह्मणोको स्थापन किया था, एवं उस सम्प्रदायमे केवल २५ परिवार विराजमान है, परन्तु वह कुटुम्ब आजतक उस भूमिमे कृषिकार्य नही करता, वह खाली पड़ी है, परन्तु वह सब भूमि जप्त नही होसकती ऐसा करनेसे साठ हजार वर्ष नरकमे रहना होगा, यह वास्तवमे सुखकी बात नही है, और जो मनुष्य इस पर विश्वास करते है उनके जीसे यह बात हटानी बड़ी कठिन है, देवोत्तर भूमिग्रहणके महापापसे मुक्तिलाभ करना राजपूत आत्माके पक्षमें बड़ी ही कष्टदायक बात है ?

परन्तु मैं देखकर अत्यन्त आनन्दित हुआ कि शक्तावत् सम्प्रदायके कई परिवारोने अपने वंशकी वृद्धि होनेसे स्थानके न मिलनेसे विदेशमे वास करनेके लिये जानेके वदले में उक्त नरक वाससे भयभीत न होकर उक्त देवोत्तर भूमिके ऊपर हिन्ता और दूंदिया नगर स्थापन किये है[२]।

"प्रत्येक सम्प्रदायके प्रत्येक प्रकारके स्वार्थ रक्षा करनेके अभिलाषी होकर मैने यह प्रस्ताव किया कि यदि महाराणा ब्राह्मण परिवारके प्रयोजनके अनुसार भूमि इनके अधीनमे रखकर शेष सब भूमिको राज्यके अधिकारमे कर लेते तो उसका जो कुछ पाप है अथवा भविष्य दंडके भारको मै अपने शिरपर ग्रहण करनेको तैयार हूं। मैने प्रस्ताव किया कि उत्कृष्ट एक हजार बीघा भूमि उन ब्राह्मणोको दीजाय, उनको केवल गौ आदि पशु देकर ही काम न चल सकेगा वरन उनको खेती करनेके लिये प्राचीन कूपोके समस्त संस्कार और नवीन कुएँ भी खुदवा देने होगे। इस समय एक ज्योतिषीजी राणाकी सभामे बैठे थे और वह कुछ वैद्यक भी जानते थे, ब्राह्मण वंशमे इनका जन्म हुआ था इसी कारण उन्होने मानियार कारके स्वजातीय ब्राह्मणोके स्वार्थ की रक्षामे दृढ़ सहायता की परन्तु मानियारके ब्राह्मण उक्त भूमिके दानके कारण प्राचीन ताम्रके अनुशासन पत्रको उपस्थित न करसके"।

कर्नल टाड् साहबने इसके पीछे लिखा है, कि राजा मान्धाता जिनका नाम इस देशमे अक्षय वर्तमान है वह प्रमार जातीय और मध्य भारतवर्षके राजा थे। धार और उज्जयनी उनका राजधानी थी। यद्यपि किसी समयमे कोई मनुष्य उनको नहीं जान सके थे परन्तु प्रवादसे सबने उनको विक्रमादित्यका पूर्ववर्ती कहा है। विक्रमा-

(१) राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे। यह त्रेतायुगके आरंभमे हुए, इनका दूसरा नाम त्रसदस्यु भी था। इनको लवणासुरने मारा.

(२) विजातीय टाड् साहबने इसमें आनन्द प्रकाश किया तो था, परन्तु यथार्थ हिन्दू इससे व्यथित हुए थे। जिन शक्तावतोंने देवोत्तर भूमिको अपने अधिकारमें करलिया था उन्होंने कभी क्षत्रीधर्मका पालन नहीं किया, इससे वह अवश्य ही ब्राह्मणस्व हरणके अपराधी हैं।

जीतका संवत् समस्त भारतवर्षमे प्रचलित है । नर्मदाके किनारे बहुतसे स्थानोंमे उनकी अधिक कीर्ति विराजमान है । प्राचीन कालमे चित्तौर और उनके अधीनके समस्त देश धारराज्यके अन्तर्भुक्त थे । इन देशोके समस्त स्थानोमे उन प्रमारोंके एकाधिपत्यके बहुतसे प्रमाण विराजमान है। और जिस देशसे होकर मै यहाँतक आया हूँ , पुरातन तत्त्वके जाननेवाले यहांके बहुतसे प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको सरलतासे संग्रह कर सकेगे । हिन्ता और दूदा इन्ही दोनो देशोके साथ मान्धाता नामका संश्रव देखा जाता है । महाराजा मान्धाताने दूंदिया नामक स्थानमे बड़ी धूमधामके साथ अश्वमेध यज्ञ किया था। उस स्थानपर आजतक वह यज्ञकुण्ड देखा जाता है । हिन्ता के दो ऋषि उस यज्ञकार्यमे नियुक्त हुए थे । राजाने पहिले उनको धन दिया, उन्होंने धन लेना स्वीकार नही किया । परन्तु उन्होने जिस समय राजासे विदा ली उसी समय राजाने बड़ी चतुरताके साथ विदाईके ताम्बूलके साथही साथ मीनारदेशका अनुशासन पत्र उन ऋषियोके हाथमे दिया । यद्यपि ऋषियोने अयाचित होकर भी उस दानपत्रको ग्रहण किया था, परन्तु उस दानके लेते ही उनकी पवित्रता एक वार ही नष्ट होगई और इतने दिनोतक उन्होने जिस पवित्रताके बलसे इन्द्रजालिक कांड किया था उनकी वह सामर्थ्य भी लोप होगई । पाठक गण क्या आप उस इन्द्रजाल सम्बन्धीय किसी बिवरणके जाननेकी इच्छा करते है ऋषियोने स्नान करनेके पीछे अपनी धोतीका जल निचोड़ कर उसे मस्तकके ऊपर शून्यमार्गमे वायुके ऊपर फैला दिया था। वह उसी भावसे रहकर सूर्यकी किरणोसे उनकी रक्षा करती थी । उक्त दोनो ऋषियोके उस सामर्थ्यके लोप होते ही उनके वशधर कृषिकार्य करने लगे । उनके उत्तराधिकारी आजतक उक्त मीनारदेशके स्वत्वाधिकारीरूपसे रहते है। और बड़े चौवीसा अर्थात् बड़े चौवीस नामक स्थानोमे विस्तीर्ण हुए है " ।

कर्नल टाड् साहबने जो इन्द्रजाल इत्यादिका उल्लेख किया है उसके सम्बन्धमे कुछ कहनेकी आवश्यकता नही है । कारण कि यहांके शिक्षित मनुष्य जब योगकी वातोपर हसते है तथा योगवलसे जिन ऋषि मुनियोने अनेक असाध्य कार्य साधन किये है उस पर वह विश्वास नहीं करते तब विजातीय टाड् महोदयने जो उस विषयमे उपहास कर योगक्रियाको इन्द्रजाल कहा तो इसमे क्या आश्चर्य है? परन्तु कर्नल टाड् साहबने जो प्राचीन अविश्वास प्रवादको सुनकर उक्त मन्तव्यको वर्णन किया है, उसमे कुछ संदेह नही । दोनो ऋषियोने अयाचित होकर ताम्बूलके साथ भूमिका दानपत्र ग्रहण किया था इसीसे उनका तप और योगवल नष्ट होगया, इसका कौन विश्वास करसकेगा? हमारे टाड् महोदय अनेक स्थानोपर इस प्रकार प्रवादके ऊपर विश्वास करके महा भ्रममे पड़े है ।

---

(१) मान्धाता नामके दूसरे राजा प्रमारवंशमें होगये है। इनका वर्णन धार देवासकी वंशावलीमे लिखा है। धारके अधीश्वर प्रमारवशी क्षत्री है और वे अपनेको शकाब्द राजा विक्रमादित्यकी ही शाखामे प्रमाणित करते हैं। धारराज्यके व्यवस्थापकका नाम सावूसींग प्रमार था.

इतिहासवेत्ता टाड् साहबने इसके पीछे लिखा है कि "आज प्रात:कालकी यात्राके समय हम वामोनियो नामक ग्राममे गये। उस ग्राममे एक परम रमणीक सरोवर है उसके चारोओर पत्थरकी दीवारोकी कतार लग रही है। उस ग्रामके अधीनमे चार हजार बीघे जमीन है। पहिले यह राणाके खास अधिकारमे थी। परन्तु महाराष्ट्रोंके आक्रमण तथा राणाकी सामर्थ्य घटनेके समय यह दूसरोके अधिकारमे चली गई और यह स्थान अत्याचार और उपद्रवोके होनेसे जनशून्य होगया था, इसकी ओर देखातक नही जाता था। इस समय यह मोती पाशवान नामकी राणाकी एक प्रिया उपपत्नीके अधिकारमे है। मोतीने कहा है कि वह उसके पास गिरमी रक्खा गया है। परन्तु कौन आईन मत बंधक दानका अधिकारी है जो उसको वह नही दिखा सकती।

यह हिन्तादेश आत्मविद्रोहके समय एक विख्यात स्थान था। यह स्थान इस समय अधीनस्थ शक्तावत् सामन्तोके अधिकारमे है। संवत् १८१२ मे जिस समय 'सत्वा' नामक महाराष्ट्रनेता दश हजार महाराष्ट्रोंकी सेना लेकर मेवाडपर अधिकार करनेके लिये आये थे। उस समय इस हिन्तादलके वीरश्रेष्ठ राजसिहने महावीरता प्रकाश की थी। राजसिंह झाला जातीय एवं सादरीके सामन्त थे। राजपूतानेके राजाओमे शिरोमणि राजा प्रतापसिंहकी जिन राजपूत वीरोने पहिले रक्षा की थी यह राजसिह उन्हींके वंशधर है। राजसिंह जिस समय राजधानीसे सादरी देशको जानेके लिये इस हिन्तामे आये थे उस समय उन्होने सुना कि शत्रु महाराष्ट्रोका दल डेढ़ कोश दूर सानाई नामक स्थानमें आगया है। शत्रुदलके आनेका समाचार पाकर उनके किसी पारिषदने कहा कि सोजामार्गसे सादरीमे जातेहुए महाराष्ट्रोके साथ साक्षात् होनेकी सम्भावना है, इस कारण कुछेक घूमकर भीदरमे जाना उचित है। परन्तु राणा राजसिहने कुछ भी विपत्तिकी आशंका न करके बराबर पहिलेकी समान यात्रा की।उनके कुछही दूर पहुँचने पर महाराष्ट्रोने प्रबल आक्रमण करके राजसिहके उन अल्पसंख्यक अश्वारोहियोको लूटनेका उचित पात्र जान लिया।उनके दलने बड़ी शीघ्रतासे उनको पकड़ कर उनके समस्त वस्त्राभूपण उतार कर उनका धन छीन लिया आर उन्हें घोड़ो परसे उतरनेकी आज्ञा दी। इस प्रकारसे महाराष्ट्रोके हाथमे आत्मसमर्पण वा समस्त द्रव्य देनेकी अपेक्षा मृत्युका होना श्रेष्ठ है, वीर तेजस्वी राजसिहने यह निश्चय करके अपनी केवल तीनसौ सेनाले उस दश हजार महाराष्ट्रसेनाके साथ युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। राजसिंह और उनकी सेनाने घोर पराक्रम करके शत्रुदलके साथ संग्राम करते हुए शत्रुओके व्यूहको भेद डाला। राजासिह अकथनीय वीरता प्रकाश करके शत्रुओसे छुटकारा पाय अपनी बचीबचाई सेनाको साथ लेकर हिन्ताके किलेमे आ पहुँचे। भीदरके सामन्त खुशियालसिहके साथ राजासिहका वैवाहिक सम्बन्ध बंधन और मित्रता थी, वह इस समाचारको पाते ही राजपूत जातिके स्वभावके अनुसार बलविक्रमसे उत्तेजित हो शीघ्र ही एक विश्वासी सेनाको संग्रह करके अपने वन्धुराजसिहका उद्धार करनेके लिये वाहर हुए। उस सेनाकी संख्या केवल पांच सौ थीं; और वह सभी शक्तावत् सम्प्रदायके राजपूत थे। सेनादलके

चार अंशोंके तीन अंश पैदल और एक अंश अश्वारोही था । पैदल सेना रात्रिके समय मशाल बांलकर एक दल बांधकर चली और अश्वारोहीदल दोनो ओर उसकी रक्षा करता हुआ चलता था । खुशियालसिह सबसे आगे नेता बनकर सेनाको ले चले । जो मनुष्य दलभंग करके चलैगा उसे बिना पूछे बंदूकसे उड़ा दिया जायगा, इस आज्ञाका प्रचार किया गया । असीम साहसी वह पांचसौ राजपूतोंकी सेना दश हजार महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे स्वजातीय राजसिंहका उद्धार करनेके लिये चली । उसके इस प्रकारसे कुछही दूर बढ़ने पर महाराष्ट्रोंके अश्वारोही दलने पगपालकी समान आकर चारोओरसे घेर लिया । परन्तु वह सामान्य राजपूतोंकी सेना कुछ भी भयभीत न हुई, और भीदर तथा हिन्ताके बीचसे विस्तारित क्षेत्रमे जाकर हिन्ताके नगर द्वारपर जापहुँची।जब महाराष्ट्रोंने देखा कि राजपूत हमारे ग्राससे निकले जाते है तब उन्होने " बर्छी दे " शब्दसे प्रान्तको कम्पायमान किया।उस शब्दसे शीघ्र ही बारह फुट लम्बे सैकड़ो बर्छे शक्तावतोंके ऊपर पड़ने लगे । खुशियालसिह अपनी सेनाको वहाँ खड़ा करके अपने अश्वारोही और पैदलदलोंके पीछे आये । महाराष्ट्रदलके समीप आते ही राजपूत अश्वारोही दलने इस प्रकारसे उसपर आक्रमण किया कि जिससे महाराष्ट्रोंका दल स्तंभित होकर भंग होगया । इस अवसरमे राजपूत अश्वारोही फिर अपने पूर्वस्थानमें आकर बन्दूकोमे गोली भरकर महाराष्ट्रोंके आनेकी प्रतिक्षा करने लगे । इसी अवसरमे पैदल दल हिन्ताके किलेके द्वारपर जा पहुँचा, इसके आते ही सादरीके सामन्त बड़ी प्रसन्नतासे मिले । अपना मनोरथ सफल हुआ जान विजयी हो महाराज खुशियालसिहने स्थिर किया कि शत्रुओके द्वारा बंदी होकर हिन्ताके किलेमे रहना और अन्तमे आहारके अभावसे आत्मसमर्पण करनेकी अपेक्षा शत्रुके व्यूहको भेदकर चले जाना उचित है । समस्त राजपूतोने महाराजके इस मन्तव्यको समर्थ न किया और तदनुसार वह लोग तुरन्त ही सामान्य हानि उठाकर भीदरमे आ पहुँचे । यह वीरताकी कहानी समस्त रजवाड़ेमे प्रसिद्ध है । और शक्तसिंहके उत्तराधिकारी अगणित वीरोमे भी यह अतुलनीय गौरवजनक वार्ता कहकर प्रसिद्ध हुए थी । शक्तसिहके वंशधरोमे महाराज खुशियालसिहकी वीरता और उनकी योग्यता प्रशसनीय थी " ।

" मोरवन वा मोरौ—३१ जनवरीके शेष दिन हम मेवाड़की शेष सीमाके अन्तमे आपहुँचे, मेवाड़की वह उत्कृष्ट उपजाऊ भूमि दूसरेके अधिकारमे थी, तथा नीच बुद्धि महाराष्ट्र और निष्ठुर पठानोका राजपूत सामन्तोंके स्वत्वपर अधिकार देखकर मै अत्यन्त ही शोकित हुआ । राजवाड़ेके पूर्ववीरोकी अपेक्षा इस समयके वीरोको अयोग्य देखकर अत्यन्त हताश और विरक्त होनेपर भी मुझे उनके पूर्वपुरुषोकी ओर श्रद्धा उत्पन्न हुई, यद्यपि वर्तमान वंशधर पूर्व पुरुषोकी अपेक्षा अयोग्य थे, परन्तु सम्पूर्णतः असार और अयोग्य नहीं थे उदयपुरके राणाकी सभामे वर्तमान वंशधरोमे कोई एक शिथिल स्वभाव कोई २ कदाचारी षड्यंत्री थे और सब सभी उद्योग रहित थे—इस विचारसे अचेतनताके कारण मेरा स्वास्थ्य भलीभांतिसे नष्ट होगया । मैं मेवाड़के राज्यको अपनी जन्मभूमिस्वरूप जानता हूँ, और इसी

मेवाड़के साथ हमारे योवनके जीवनकी आशावली विजड़ित है, और वह समस्त आशा प्रकृतरूपसे पूर्ण हुई है, उससे मै मेवाड़के वीर और उनकी अवाध्य सन्तानोके सम्बन्धमे केवल यही कहनेके लिये तैयार हुआ हूं।

Mewar with all faults, I love thee still.

मेवाड़! तुममे हजार दोष होनेपर भी मै तुम्है स्नेह करता हू।

एक मेवाड़का ही नही वरन समस्त राजपूतानेके वर्तमान सामन्त सम्प्रदायकामे भली भांतिसे ऋणी हूं, और यह आशा करता हूं कि होनेवाले उदीपमान वशधर जन्मभूमिकी रक्षामे तीक्ष्ण दृष्टि रक्खकर अफीम, और महुआके सेवनके बदलेमे उद्योगी हो, और पानदोषकी और अनाशक्ति दिखावे। वृथा गप्प, गीत बाजेके बदलेमे युद्धकी शिक्षाका अभ्यास करै। मैने इस प्रकारसे कई प्रकारकी अनिष्ट मूलकरीतिका नाश, अफीम सेवन और मद्यपान दोप इत्यादिके निवारण करनेकी चेष्टा की। राजसिहासनके भावी अधिकारोसे तथा एक चरख परिमाण भूमि भी जिनकी है, जिनको भविष्यत्मे अधिकार पानेकी आशा है उनतकसे यह प्रतिज्ञा कराली है। वह कभी भी इस अनिष्टकारी अफीमका सेवन न करेगे। उनमेसे किसीने तो उस प्रतिज्ञाको भंग किया, परन्तु बहुतोने विशेप करके जिनके अप्राप्त व्यवहारके समयमे हमारे द्वारा उनके स्वार्थ और सम्पत्तिकी रक्षा हुई है। अर्थात् बुसाइयोके युवक सामन्त अर्जुनसिह और चंदावत् सम्प्रदायके संगावत श्रेणीके सामन्तोने अवश्य ही उस प्रतिज्ञाकी रक्षा की। अर्जुनसिहके पितामह वख्तसिहने (इनके पिता पहिले मरगये थे) महाराष्ट्रोके द्वारा वारम्वार विशेप रूपसे आक्रान्त होने पर भी अपने किले और महलकी उनके करालग्राससे रक्षा की थी, परन्तु उन्हींकी सम्प्रदायके नेता सालूंबरके सामन्त भीमसिह किसी कारणसे उनके ऊपर क्रोधित हुए, उन्होने समस्त देशोपर अधिकार कर, संवत् १८४६ मे बुसाइयोकी एक छोटी शाखाके एक मनुष्यको दे दिया। परन्तु उद्यमशील तख्तसिह फिर अपने हरण किये हुए स्वत्व पर अधिकार करके मेवाड़मे आत्मविद्रोह और विदेशीय शत्रुओके आक्रमण समाप्तिके पीछे सन् १८१८ ईसवीमे, जिस समय वृटिश गवर्नमेण्टके साथ मेवाड़का सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ था उस समय तक उसी स्वत्वकी रक्षा करते रहे। उस संधिवधनके होजानेके पीछे जिस समय मेवाड़के सामन्त मिलकर महाराणाकी ओर सम्मान दिखाने के लिये गये। वीर तेजस्वी तख्तसिह भी उस समय वहाँ गये थे। सेनाकी दशा और प्राचीन शत्रुताके लिये सालूंवरके सामन्त वरोदसिहको जो तख्तसिहके पदपर प्रतिष्ठित किया था उनकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई, मेवाड़के सवमे प्रधान सामन्त सालूंवर के सामन्तने हमारे साथ मित्रता करके अपने आज्ञाकारी सेवक वरोतसिह (वर्तसिह) के स्वार्थकी रक्षा के लिये चेष्टा करके, वृद्ध तख्तसिहने जिस प्रकार अपने पोते अर्जुनको हमारे पास नियमितरूपसे भेजा था, उन्होंने भी इसी प्रकारसे वरोतसिहको हमारे पास भेजा था। उस समय अर्जुन और वरोतसिह इन दोनोकी अवस्था वरावर थी। वरोत सिंह देखनेमें श्रीमान् और वलवान् थे—अर्जुनसिह दुर्वल और कृष्ण वर्ण थे परन्तु

बुद्धिमान् थे। गुण और न्याय एक पक्षमें, एवं निर्बुद्धिता और शक्ति अन्य ओर दीखती थी। कर्तव्य कर्म अवश्य ही पालन करना होगा। वृद्ध ठाकुर तख्तसिंहकी प्रार्थना निष्फल नहीं हुई। वृद्ध सामन्तने अपनी तलवार पर हाथ रखकर कहा, "सम धर्म और यह तलवार यहाँ तक हमारे स्वत्वकी रक्षा करती हुई आई है. परन्तु इस समय यह बालकके स्वार्थके लिये महाराणा और आपके हाथमे अर्पित है। परन्तु राणाकी सभामे धनसे विचार मोल लिया जाता है,तथा राजाकी कृपापर स्वत्व निर्भर होते है"। राणाने यद्यपि सालूंबरके सामन्तके मतमे ही अपनी सम्मति दी परन्तु अंतमे इसकी मीमांसाका भार हमारे ही हाथमे अर्पण किया गया। दोनो पक्षको अपने समक्ष उपस्थित कर उनके सम्मुख उनकी उक्तिके अनुसार उनका एक वंश वृक्ष तैयार किया।वरोतसिंह वहुत दूरवर्ती शाखासे उत्पन्न है जिससे राणा किसी सम्प्रदायके चक्रमे न पड़ उसी प्रकार यह सुविचार किया। इस कारण उन्होने तीन वर्ष पहिले अर्जुनसिंहको जो शासनसनद दी थी उसीको मानकर अर्जुनकी कमरमे तलवार बाँधकर अभिषेक कर दिया। यह स्वत्व सम्बन्धीय झगड़ा अर्जुनके पक्षमे विशेष हितकारी हुआ। उनके पितामह तख्तसिंह सीमापर स्थित जिहाज पुरके किलेकी रक्षाके लिये नियुक्तसेनादलके नेता स्वरूपसे भेजे गये थे, उन्होंने उस कार्यको बड़ी चतुरताके साथ पूर्ण किया। उस समय उनके पोते अर्जुनसिंह भी उनके साथ गये थे। तख्तसिंह प्रायः बीच २ मे अपने अधिकारी देशोमे आया करते, अर्जुनसिंह भी सेनापतिका कार्य करते, यह दोनो ही जने चीतौड़मे मेरे साथ साक्षात् करनेके लिये आये। अर्जुनसिंह जब दो वर्षतक अपने पिताके वासस्थानमे नहीं गये तब उन दो ही वर्षोंमे इन्होने विशेष उन्नति प्राप्त की थी, और जिस सम्प्रदायमे उन्होने जन्म लिया था उनके द्वारा अंतमे उस सम्प्रदायका जैसा सम्मान रहैगा उसके पूर्ण लक्षण भी उन्होने प्रकाशित किये थे। मैने उनसे अनेक प्रश्न करके पूछा "आपने अमल (अफीम) का सेवन किया है क्या?" उन्होने उसी समय उस प्रश्नका उत्तर दिया, आपने जिसका निषेध किया था और जिसकी हमने प्रतिज्ञा की थी, उस प्रतिज्ञाके भंग होते ही अवश्य हमारा सौभाग्य नष्ट होगा।

कर्नल टाड् साहबने वर्तमान अध्यायके उपसंहारमे लिखा है कि, ग्रामकी समस्त पंचायत आधे घंटेतक इस बड़ेभारी वटवृक्षके नीचे बैठी हुई मेरे आनेकी वाट देख रही थी। मेरे जाते ही उसने सरल सत्य भाषामे कहा, "खुश है कंपनी साहवके प्रतापसे" मै जिस प्रकार हजार वर्षतक जीवित रहूँ, ऐसी इच्छा भी प्रकाश की। इस स्थानको मै उपन्यास कहसकता हूँ। मैने वड़ी धीरतासे रात्रितक उस पञ्चायतमे बैठकर हृदयको भेदन करनेवाले उपजाऊ क्षेत्रसमूहका वृत्तांत, धननाश, और निकालेहुओका आगमन, और पार्वत्य भीलोंके द्वारा उपद्रव मचानेका समस्त वृत्तान्त सुना था।

द्वितीय अध्याय २.



हिन्ताके सामन्त–राणाके खास अधिकारसे हिन्ताको छीन कर उसके सम्बन्धमे राजनैतिक वाधा–शक्तावत् मानसिंह–उनका इतिहास,–नथाराके लालजी–रावत दूदिया (दूदिया) वंशका आदि विवरण–मेवाड़के राणा जगत्सिंह–चन्द्रभानु राजसिंह–और सरदारसिंह–सरदारसिंह को तीन दिनके लिये राणाकी पदप्राप्ति–अन्तमें लावादेशका पद प्राप्त होना–दूदिया देशका पतन–मानसिंहकी प्रार्थना–सीमामें भीलोके द्वारा हत्याकाण्ड–उसका फल।

कर्नल टाड् साहबने पञ्चायतमे बैठकर बातचीत होनेके पीछे उसके फलके सम्बन्धमें लिखा है, " कि रात्रि अधिक होनेपर भी मै अपने कई दर्शकोको अपने पाठकोके सम्मुख परिचित करनेको अभिलाषा करता हूं। हिन्ता देशके सामन्त जो छप्पन नामक शिखरके ऊपर अपने पिताकी वासभूमि कून नामक स्थानमे इस समय रहते थे, उन्होने स्वयं न आकर अपने भ्राता और कर्मचारियोको मेरा अभिनन्दन और अभिवादन प्रकाश करनेके लिये भेज दिया, अथवा आप स्वय आकर हिन्तामे मेरी अभ्यर्थना न कर सके थे इसमे उनको दुःख प्रकाश करनेके लिये भेज दिया। हिन्ता हमारा ही देश है, उन्होने यह कहला भेजा। वास्तवमे यह बात केवल प्रचलित सौजन्यता की प्रकाश करनेवाली नही थी। संवत् १८२४ मे मेवाड़मे आत्मविग्रहके उपस्थित होते ही शक्तावतोने इस हिन्तापर अधिकार करलिया था। सन् १८१८ ईसवीके मई महीनेकी चौथी तारीखको साधारण व्यवस्थापत्रके अनुसार इस हिन्ता देशको शक्तावतोके हाथसे राणाके अधिकारमें करनेका प्रस्ताव किया। यद्यपि हिन्ताके सामन्तोने भलीभांतिसे प्रमाणित करदिया कि उन्होने पिछली अर्धशताब्दीतक हिन्तादेशपर अधिकार किया है, तथापि जिस मूल व्यवस्थासे इस समय कार्य किया उस मूल व्यवस्थाको विना भङ्ग किये हुए सामन्तोंका हिन्तादेशका अधिकार देना असंभव है।

हिन्ताके सम्बन्धका प्रस्ताव बड़े आग्रहके साथ उठा था। शक्तावत् संप्रदायके नेता भींदरके सामन्त जोरावरसिह अन्य दश अच्छी आमदनीवाले नगरोके अधिकारको छोडनेसे वह इतने दुःखित नहीं हुए थे कि जितने दुःखित प्राचीन विवाद विसम्बादके चिह्न स्वरूप इन देशोके ग्रहण करनेके प्रस्तावसे हुए थे। अधिक क्या कहै उनके सहोदर भ्राता फतेसिहके द्वारा जो वहुतसे उपजाऊ गांव स्वजातीय वीरोके रक्तपात होनेसे उनके हस्तगत हुए थे उन देशोंको राणापर लौटा देनेसे भी वह ऐसे दुःखित नही हुए जैसे इस हिन्ताके विषयमे दु.खी हुए। उक्त प्रस्तावके आन्दोलनके समयमे भींदरके सामन्तने कहा, " हिन्ता देश भींदरके प्रदेशका द्वार है "। उनके भ्राताने कहा, "बहुत समयसे इस पर शक्तावतोका अधिकार है "। फिर एक मनुष्यने कहा, " राणावतूने अन्याय करके इस पर अधिकार किया है,। भींदरके सामन्तने हृदयको

आकर्षण करने वाला वचन कहा, "हिन्ता देश हमारा वापोता है,अर्थात् हमारे पिताकी भूमि है, ऐसी अवस्थामे इन प्रश्नोकी मीमांसा करनी कोई सरल बात नही थी। विशेष करके अन्य पक्षमें व्यवस्थापत्र की प्रधान धारामे लिखा है कि संवत् १८२२, सन्१७६६ ईसवी मे मेवाड़के आत्मविद्रोहके समयसे राणाके अधिकारी जितने किले जितने देश, सामन्तोंने अनेक उपायोंसे अपने अधिकारमे किये थे वह सभी पूर्ण ग्रहण पूर्वक राणाको लौटा देने होगे। शान्ति स्थापन करनेके लिये जो अनुष्ठान विचारा गया था विशेष सावधानी और धीरताके साथ उस अनुष्ठानका करना कर्तव्य विचारा गया। शक्तावत स्वदेश हितैषिताके वश होकर आदिसे अंततक विशेष धीरताके साथ उस व्यवस्थापत्रके अनुसार प्रत्येक प्रयोजनीय किले और देश राणाको लौटानेमे सहायता करते है, इसीसे अन्तमे यह व्यवस्था की गई थी। उक्त हिन्ता देश एक वर्षतक राणाके खास अधिकारमे रहै और फिर उसे जोरावरसिहको देदिया जाय; परन्तु हिन्ताके साथ जो दूदिया देश तथा उससे लगी हुई बारह सौ एकड़ परिमित भूमि है वह प्राचीन सूचीके अनुसार एक स्वतंत्र विभिन्न देश कहाकर प्रमाणित होगई, उसे हिन्तासे पृथक करलिया जायगा। सामन्त जोरावरसिहने दश हजार रुपया भेटमें राणाको दिया, राणाने उनके अभिषेक स्वरूपमे कमरसे तलवार बॉधकर उनके पिताकी भूमि उन्हे देदी। तब शक्तावतोने सर्व साधारणके सम्मुख महा आनन्द प्रकाश किया।

पाठ्य पुस्तकमे हिन्ताका मूल्य सात हजार रुपया निश्चय हुआ था। हिन्तादेशकी आमदनीसे सामन्त चौदह अश्वारोही और चौदह पैदल सेना रखकर आवश्यकतानुसार राणाको वह सेना सहायता करनेके लिये भेजते थे, परन्तु इस देशकी आमदनीके घटजानेसे सामन्तोको उसके बदलेमे पॉच अश्वारोही और आठ पैदल सेना रखनेका अवसर आया। हिन्ताके वर्तमान सामन्त कून नामक देशके सामन्तके पुत्र थे। हिन्ता के भूतपूर्व सामन्तने इनको गोद लेलिया था। राजपूतरीतिके अनुसार दत्तक पुत्र कभी भी अपने जन्मदाता पिताकी सम्पत्तिको नही पासकता। परन्तु यह उस रीतिके प्रबल स्वत्वपर भी कून और हिन्ता दोनो देशोके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे। इस देशके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेसे कून देशके सामन्त स्वरूपसे यह गोल नामक तीसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे गिने गये, और इसी कारण यह प्रतिदिन राणाके सम्मुख जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे। हिन्ताके सामन्त होनेसे यह स्वदेशमे अथवा विदेशमे केवल सेनाकी सहायता करते थे। सामन्तोको प्रतिदिन राणाके यहॉ जाना होता था, हिन्तादेशके देय सेनादलके नैतृत्वका भार मानसिह नामवाले शक्तावत सम्प्रदायके एक नीची श्रेणीके सामन्त पर आया, और बनैले भील जिससे मालवाकी सीमाके अन्तमे अत्याचार और उपद्रव न करसकै इसके लिये उन्होने वहांके छोटे सादिरके थानेको भेज दिया। परन्तु मानसिहने अपने कर्तव्यकार्यको भलीभातिसे साधन नही किया। तब राणाने मेरे द्वारा कहला भेजा, कि यदि तुमने इसके पीछे अपने कर्तव्य पालनमें विलम्ब किया तो उस देशको फिर राणा अपने अधिकारमे कर लेंगे। मुझे जिस कर्तव्यका भार मिला है उससे मै इस स्थानके बहुतसे शोचनीय वृत्तान्त

जान गया हूँ। यह मानसिह किस कारणसे अपना कर्तव्य न पालसके,यह भी विदित है। वह विवरण मेवाड़के सामन्त शासनकी रीतिसे उस सामन्त श्रेणीकी सृष्टिका शोचनीय फल प्रकाश करता है।

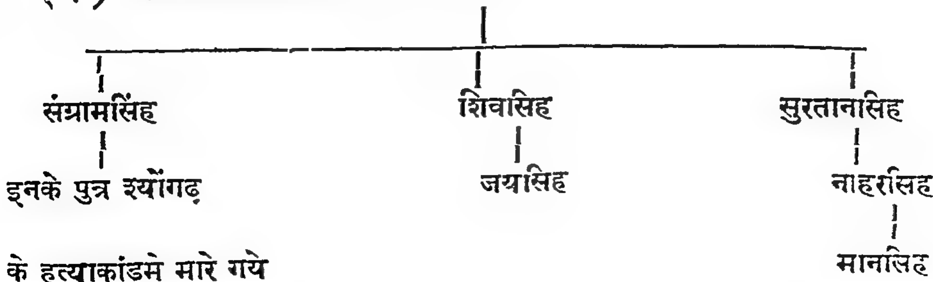
मानसिह शक्तावत् लावाके सामन्त परिवारकी छोटी शाखामे उत्पन्न थे। कोरावरके सामन्तोके साथ जिस समय भयंकर शत्रुता हुई, तथा कोरावरके सामन्तोने उसी कारणसे श्योगढ़के किलेमे जाकर लालजी रावत तथा अन्य समस्त परिवारकी हत्या करके प्रतिहिंसा सफल की। उस हत्याकांडसे जिन कई बालकोके प्राण बचे थे उन्हींमेसे एक मानसिह भी है। मानसिंहके स्वत्वका निर्णय तथा दावाके स्थिर करनेमे हमको और भी पूर्ववर्ती समयकी अर्थात् जिस समय लालजी रावत नथारादेशके सामन्त थे उस समय तककी वात कहनी होगी। किसी अपराधके कारणसे हो अथवा राणाकी सभाके षड्यन्त्रसे हो, उक्त नथारादेश राणाने लालजीसे लेकर प्रतिद्वंदी चांदावत् सम्प्रदायके एक नेताको देदिया था। लालजी भीदरके सामन्त वंशके प्रथम उपवंशीय थे,इसीसे उन्होने अपने कुटुम्बको पालन करनेके लिये भूवृत्ति पाई थी। यह नथाराके अधिकारसे अलग होते ही डूगरपुरके सामन्तके निकट गये। वहांके अधीश्वर रावलने लालजीको दो राज्योके मध्यस्थ सीमान्तमे दुर्गम श्योगढ़ देश देदिया। इस प्रकारसे लालजी शत्रुओके द्वारा निकाले जाकर अन्यत्र चले गये। उन्होने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके अपने पुत्रोके साथ वरवटिया अर्थात् दस्युकी समान मेवाड़ राज्यमें जाकर अत्याचार करने प्रारम्भ करदिये। वह अपनी सम्प्रदायके नेता भीदरके सामन्तको अपना प्रभु जानकर उनके साथ जा मिले और उनके प्रतिद्वंदियोके अधिकारी देशोमे जाकर सारी धन सम्पत्तिको लूटते थे। पीछे जिस समय उनके प्रतिद्वंदी राणाकी सभामें प्रताप प्रतिपत्तिसे हीन हो गये, एवं उसी कारणसे जिस समय शक्तावत् सम्प्रदायने राणाके प्रियपात्र होकर सामर्थ्य प्राप्त की तो, लालजी उसी समय फिर अपनी सम्प्रदायके नेताके साथ मिलकर राजसिंहासनकी रक्षाके लिये गये। उन्होने इस प्रकारसे एक समय अराजभक्त और अन्य समयमे राजभक्तरूपसे अपना समय व्यतीत किया था, शेषमे श्योगढ़के हत्या कांडमे कोरावरके सामन्तने उन्हे मारडाला।

लालजीके बड़े पुत्र संग्रामसिहने अपने भतीजे जयसिह और नाहरसिंहके साथ श्योगढमें न जाकर प्रतिहिसा दानार्थी कोरावरके सामन्तोके हाथसे प्राण रक्षा पाई थी।

---

(१) इसका वृत्तान्त राजस्थानके प्रथम काण्डमे वर्णन किया गया है।

(२) लालजीकी वशावली यथा—लालजी



परन्तु कोरावरके सामन्तने श्योगढ़मे जाकर संग्रामके वृद्ध पिता, माता, भ्राता और उनके पुत्रोका संहार किया । संग्रामसिहको समय पर श्योगढ़का किला निल गया । पिताकी शत्रुताको भी वह नही भूले थे । खेरोदाकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करके लावाके किलेकी दीवारको लांघ एवं उसपर अधिकार कर वह संग्राममे नियुक्त हुए थे, उनके भतीजे नाहरसिह आदि सभी जने उनके साथ गये थे । संग्रामसिहने लावाके किले पर अधिकार करलिया, राणाने केवल उनको क्षमा ही नही किया वरन उन्होने संग्रामके शत्रुओकी अपेक्षा अपनी सभामे इनको विशेप पद सम्मान दिया था।

शक्तावत् संग्रामसिहने दूदिया संग्रामसिहके निकटसे लावाके किलेपर अधिकार कर लिया । दूदिया प्राचीन राजपूत जाति थे, परन्तु अन्यान्य राजपूत श्रेणीकी समान सर्व साधारणमे परिचित नही थे । हम इस समय जिस समयकी एक लिखित घटनाको वर्णन करनेके लिये आगे बढ़े है, केवल उसी समयसे कुछ कालके लिये यह दूदिया जाति यश गौरवसे प्रभावशाली हुई थी । इस दूदियावंशके अकस्मात् अभ्युदय होनेसे मेवाड़के कविने परम रमणीक गाथा तैयार करके अपने इतिहासमे अंकित की है । चन्द्रभानु नामक एक मनुष्यके नाहरमृग अर्थात् व्याघ्र पर्वतकी उपत्यकामे कई वीघे जमीन थी । चन्द्रभानु केवल दोही बैल लैकर उस जमीनमे खेती करते थे । उस क्षेत्र और दोनो बैलोके अतिरिक्त और कुछ सम्पत्ति नहीं थी । चंद्रभानुके उस खेतके समीप ही राणाका रक्षित वन था । राणा उस वनमे व्याघ्रादिका शिकार करनेके लिये जाया करते थे। एक समय हैमन्तिक शस्यकी खेती करके दूदिया चन्द्रभानु समस्त दिनके पीछे दोनो बैल लेकर जिस समय अपने घरकी ओरको आरहे थे, उस समय वनमेसे एक मनुष्यके बुलानेका शब्द उनके कानमे सुनाई पड़ा । दूदिया चन्द्रभानु उत्तर देकर जिस ओरसे वह स्वर आया था उसी शब्दकी सीधपर गये और जाकर देखा कि एक अपरिचित उच्च मनुष्य वहां खडा हुआ है और उसका घोड़ा वहुत परिश्रम करनेके कारण जल्दी २ श्वांस ले रहा है । उस अपरिचित मनुष्यने दूदियासे पूछा, “ तुम कौन जाति हो ? ’ चन्द्रभानुने गर्वसहित उत्तर दिया “ राजपूत है ” तब अपरिचित मनुष्यने विनयपूर्वक कहा ‘ मै वड़ा प्यासा हूॅ ’ मुझे थोडासा पीनेके लिये जल लादो । अतिथिका सत्कार करना राजपूत जातिका परम धर्म है, इस कारण उस दीन हीन किसान राजपूतने शीघ्र ही एक पात्र जलका लाकर उस पुरुपके सामने रख दिया, और अपने मलीन वस्त्रमेसे दो रोटी मक्काकी और चनेकी दाल और कुछ घी लाकर उनके हाथमे शुद्ध अन्त कारणसे अर्पण किया । उदार मनुष्यने कुछ घृणा न करके आनन्द प्रकाश करते हुए उसे ले लिया । दूदिया अतिथिसेवा करनेके पीछे उस अपरिचित मनुष्यको अभिवादन कर वहासे जानेका उपाय करने लगा, कि इतनेमे ही मे एक अश्वारोहीदल तीक्ष्णगतिसे अपनी ओरको आताहुआ देखकर खडा होगया । अश्वारोही आकर सभी उस अपरिचित मनुष्यके निकट महा सम्मान दिखाने लगे, यह देखकर चन्द्रभानुने अपने मनमे विचारा कि यह मेरा अतिथि कोई साधारण मनुष्य नही है ।

वास्तवमे वह अतिथि और कोई नही था, वह स्वयं मेवाड़ेश्वर महाराणा जगत्सिंह बहादुर थे। वह उस दिन शिकारसे महा आनन्दित हो इसके नाहर मगरा नामक शिखर पर महा सकटमे पड़े थे, और अन्तमे दूदिया किसानके समीप आये थे। पीछे जिस समय दूदिया चन्द्रभानुने महाराणाके समीप अपना परिचय दिया, चन्द्रभानु उस समय कुछ भी विस्मित वा आनन्दित नहीं हुआ। उस समय चन्द्रभानुसे जो प्रश्न किया जाता था, राजपूत स्वभाव सुलभ गर्वसहित उन सब प्रश्नोंका उत्तर वह गौरवके साथ देता जाता था, वास्तवमे राजपूत जातिमे चाहै कैसी ही दीनदशा क्यो न हो परन्तु जातीय गौरव सभीके हृदयमे सरलभावसे पूर्ण रहता है। महाराणा उस निरीह किसानके आचरण और सरल वचनो से अत्यन्त प्रसन्न हुए, और शीघ्रतासे एक घोड़ेको लानेके लिये आज्ञा दी। घोड़ेके आते ही उन्होने दूँदिया चन्द्रभानुसे कहा कि, यहाँसे पॉच कोश दूर तक हमारी राजधानीमे तुमको चलना होगा। किसान वेषधारी चन्द्रभानु शीघ्र ही घोड़े पर चढ गये, वह मनुष्य घोड़ेपर चढनेमे कैसा दक्ष था यह भी विदित होने लगा, दूसरे दिन दूदिया चन्द्रभानु महाराणाकी सभामे आये। महाराणाने अपनी एक वडी कीमती पोशाक उनको राजप्रसाद स्वरूपमे दी। वास्तवमे राणाकी व्यवहार की हुई पोशाकका मिलना अत्यन्त सौभाग्य और बड़े सम्मानका चिह्न माना जाताहै। इसके पीछे महाराणाने कोआरियो नामक देश और उसके लगेहुए समस्त भूखड वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये चन्द्रभानुको दिये"।

कर्नल टाड् साहव फिर लिखते है कि "चंद्रभानु और उसके हितकारी प्रभु महाराणा जगत्सिंहने एकही समयमें प्राण त्याग किये। राणा राजसिंह मेवाड़के राजसिंहासन पर विराजमानहुए, चद्रभानुके पुत्र सरदारसिंह कोआरिओके सामन्त भावसे उनके समीप नित्य जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे। दोनो ही की अवस्था छोटी थी इसी कारणसे दोनोमे अधिक प्रीति होगई थी। वह अल्प अवस्थाके महाराणा राजसिंह अपनी वरावरके सामन्तको साथले राजधानीसे एक कोश दूर सुहेलियाकी वाड़ी नामक एक अत्यन्त रमणीक वगीचेमे गये, और वहाँ कुंडमे स्नान कर विशेष आनन्दित होरहे थे। उसी वनविहारके समयमे राणाने सब प्रकारसे सामन्तको स्वाधीनता दी, सभी परस्परमे मस्त होकर आमोद प्रमोद कर रहे थे। अल्पवयस दूदिया सरदारसिंहके कोई शारीरिक कुलक्षण था उसे देखकर राणा

(१) कर्नल टाड् साहव अपनी टिप्पणीमे लिखते हैं कि "जिस समय मै इन देशोके सम्बन्धमे अज्ञानी था, जिस समय मै इकला किसी अपरिचित स्थानमे जाता उस समय किसानसे रास्ता पूछनेकी अभिलाषा होती, मेरे विना कुछ पूछे पाछे किसान उत्तर दे देता "मैं राजपूत हूं" इससे मै अत्यन्त आनन्दित होताथो और उसके प्रति सम्मान दिखाता तव वह वारम्वार उसी शब्द का प्रयोग करते। उसका यथार्थ अर्थ यह है "कि मै राज वंशीय हूं"। वास्तवमे उन मनुष्योंके किसान होनेपर भी उनके कार्य की रीति अन्य जातियोकी अपेक्षा विभिन्न थी और उनका व्यवहार सम्मान सूचक था।

तथा अन्य सभी मनुष्य हँसने लगे। निम्नलिखित घटना उस हासपरिहासका कितना आभास प्रकाश करती है।

एक समय बात २ मे यह बात आई कि सरदारसिंह जब कुंडमे नीचे उतरे तब उन्होने अपनी पगड़ीको नही खोला, इस कारण सभीने अनुमान किया कि अवश्य ही सरदारसिहके शिरपर बाल नही है। यह बात सत्य है या नहीं इसको जाननेंके लिये एकें दिन महाराणा राजसिहने सरदारसिंहके समीप यह प्रस्ताव किया कि आओ हम तुम दोनो जने जलमे मल्ल युद्ध करै। शीघ्र ही राणाके प्रस्तावके अनुसार जलक्रीडा प्रारम्भ हुई, सरदारसिहके शिरपरकी पगड़ी खुलकर जलमे गिरपड़ी, सरदारसिहका केश हीन शिर देखकर सभी लोग एक साथ हँस पड़े। परन्तु वह इस हंसीसे अपने मनमें कुछेक क्रोधित हुए। राणाने हँसते हुए पूछाकि "आपके शिरपरके बाल क्या हुए" सरदारसिहने धीरेसे उत्तर दिया कि पूर्व जन्ममें मै महा राणाका चेला था और आप योगी थे। बदरीनाथके शिखर पर जिस समय आप तपस्या करते थे उस समय यज्ञ कुण्डके लिये लकडी शिरपर रखकर मै लाया करता था पूर्व जन्ममे उस काष्ठभारके शिरपर रखनेके कारणसे ही मेरे बाल सब लयको प्राप्त हो गये। सरदारसिहके इस उत्तरसे महा राणा कुछ एक क्रोधित हुए और विचारने लगे कि सरदारसिहने स्वाधीनता लेकर अपमानसूचक उत्तर दिया है। इस कारण उन्होने शीघ्र ही कहा, कि "या तो सरदार इस बातका प्रमाण दे और नही तौ इनको दंड मिलैगा"। युवक सामन्त सरदारसिंहने इसके उत्तरमे काहा, "कोआरिओके मंदिरमे जो देवता है वही मेरे इस उत्तरकी सत्यता प्रमाणित करदेगे"। सामान्तने देवताको शाक्षी बनाया महाराणाने फिर कोई बात नहीं कही, इस कारण उन्होने प्रमाण लानेके लिये सामन्त सरदारसिहको बिदा किया।

को आरियोदेशके अन्तर्गत गोपालपुर ग्राममे वागरावत नामकी एक सम्प्रदाय रहती थी। उनके जातिय देवताका एक मंदिर उस ग्राममे था। देवताका मुख व्याघ्रकी समान था। सामन्त सरदारसिहने उसी देवताके समीप जाकर आराधना की, इससे देवताने प्रसन्न होकर उनके हाथमे एक फूल दे देववाणी द्वारा आज्ञा दी "कि तुम इस फूलको लेकर महाराणाके हाथमे दो यही तुम्हारे वाक्यका प्रमाण देगा"। सामन्तने देवताकी आज्ञानुसार वह फूल लेकर महाराणाके हाथमे दिया राणाने देवताके दिये हुए उस फूलको लेकर तथा और मनुष्योके मुखसे उस फूल देनेका वृत्तान्त जान कर फिर कोई सन्देह नही किया। सरदारसिह पूर्व जन्ममे उनके चेले थे, इस वातका विश्वास राणाको भली भाँतिसे होगया, उन्होने प्रसन्न होकर सरदारसिहको पुरस्कार देनेकी अभिलापासे उनसे कहा, "आप क्या पुरस्कार चाहते है"? सामंतने कोआरियोदेशसे लगाहुआ लावादेश और उसके समीपकी भूमि माँगी।

राणा उस समय तक वालक थे, उनकी माता ही उस समय उनके नामसे राज्य-शासन करती थीं इस कारण वचनवद्ध होकर उस ऋणको चुकानेके लिये शीघ्र ही माता

के समीप जाकर उन्होंने समस्त वृत्तान्त कहदिया, दुर्भाग्यवश लावादेश उस समय महाराणीकी खास भूमि स्वरूप था। यद्यपि महाराणीने सरदारसिंहकी उस पूर्वजन्मकी बातपर तथा देवताके दिये हुए पुष्पपर कुछ भी अविश्वास नहीं किया, तथापि पुत्रसे कहा कि दूदिया सरदारसिंह हमारी खास भूमिको न लेकर और किसी भूमिको लेसकते है तुम्हारी इच्छा हो तो समस्त मेवाड़राज्य उनको दे दिया जाय"। माताके यह वचन सुनकर महाराणाने असंतुष्ट होकर उसी समय कहा "अच्छा! मैने उनको मेवाड़ राज्य दिया"। राजाकी प्रतिज्ञा कभी भंग न होगी, उन्होंने शीघ्र ही सरदारसिंहको बुलाकर कहा मैने तीन दिनके लिये समस्त मेवाड़का राज्य आपको दिया, उन तीन दिनमे आपकी जो इच्छा हो सो करिये। मेरा सिलहखाना, अस्त्रागार, मेरा खजाना, मेरी अश्वशाला, मेरा सिंहासन, और मंत्री यह तीन दिनके लिये सभी, आपकी इच्छाके अधीन हुए।

तीन दिनके लिये राणाके पदपर अभिषिक्त हो कर असीम सामर्थ्य प्राप्त कर सरदारसिंहने समस्त द्रव्य और सम्पत्ति अपने अपने देश कोआरिओको भेज दी। उन तीन दिनोमे सरदारसिंह यथार्थ राणाकी समान शून्यसिंहासनके एक ओर बैठ कर समस्त सामन्तोसे व्याप्त होकर सभाका कार्य करते थे। तीसरे दिन राणाकी माताने लावादेश के शासनकी सनद अपने पुत्रके समीप भेज दी। चौथे दिन दूदिया सरदारसिंहने राजशक्तिको फिर राणाके हाथमे देदिया।

कोआरिओंके परम सौभाग्यवान् सामन्त सरदारसिंहने इस प्रकारसे धन प्राप्त किया। इसमें नौ लाख रुपया खर्च करके इन्होने अपने नवीन अधिकारी देश लावामें एक किला बनाया और उसमे एक बड़ाभारी महल भी उपवन। किलेमे एक परम रमणीक कृत्रिम ह्रद बनाया और एक लाख रुपया खर्च करके किलेमे एक उपवन भी बनाया। इन्होने जो उत्कृष्ट महल बनाया था उसमेके दर्पणागार इत्यादिकी आजतक प्रशंसनीयरूपसे कीर्ति छारही है। परन्तु अन्तमे एक दिन बारूद गुदाममे आग लग जानेसे आधा किला विध्वंस होगया था। यद्यपि बहुतसा धन खर्च करके फिर उस किलेकी मरम्मत कराई गई, परन्तु महाराष्ट्रनेता हुलकरने तोपोसे उसकी अधिक शोभाको नष्ट करदिया। लावाके महल समस्त मेवाड़मे आजतक एक श्रेष्ठ महल गिने जाते है"।

"जगन्मंदिरके आदर्शसे उदयपुरकी राजधानीमे ह्रदके किनारे जो महल श्रेणी बनी हुई है, सरदारसिंहको उसमेसे एक महलमे वास करनेकी सनद मिली। यद्यपि इस समय उस महलमें आमायतके सामन्त रहते थे परन्तु वह आजतक दूदियाका महल कहलाता है, इस समय उस महलके कमरेमे चिमगादड़ और उल्लू निवास करते है, और उसमे बटका वृक्ष कमरेको भेदकर निकला है। लावामे महल बनानेके पीछे सरदारसिंह बीसवर्षतक जीवित रहे। उन्होने अपने एकमात्र पुत्रको छोड़कर संवत १८३८, सन् १७८२ई०मे प्राण त्याग किये। उन्होंने युवा अवस्थामे जिस प्रकारका सम्मान प्राप्त किया था शेष जीवनमे भी उनका वैसा ही सम्मान और पद अक्षत था। परन्तु

इनकी मृत्युके साथही साथ उनके वंशके गौरवकी कीर्ति भी लुप्त होगई थी। शक्तावत् संग्रामसिहने उन सरदारसिहके पुत्र संग्रामसिहको निकाल कर लावापर अधिकार करलिया, सरदारसिहके पुत्रने अनाश्रय होकर अति दीनदशामे प्राण त्याग किये, चद्रभानुके प्रपौत्र, सरदारके पोते एवं संग्रामके पुत्र इस समय मेवाडके वर्तमान युवराज जवानसिहके समीप रहकर मासिक वृत्ति पाकर जीवन व्यतीत करते है, उनके पास अपनी निजकी भूमि कुछ भी नही है "।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते है, कि "शक्तावत् सरदारसिहको महाराणाके यहासे उक्त लावादेशका वार्षिक २४ हजार रुपया राजस्वकरका स्थिर कर रीतिअनुसार शासन सनद मिली। और कोआरिओदेश फिर राणाके अधिकारमे होगया। लावादेशके दीर्घ ह्रदके जलसे कई कोसतक खेती करनेका विशेष सुभीता था, इसी लिये उस एक ही कारणसे यह स्थान मेवाड़मे दूसरी श्रेणीका देश गिना जाता है । संग्रामसिहकी समस्त सतान श्योगढ़के शोचनीच हत्याकांडमे मारी गई थी, उनकी मृत्युके पीछे उनके मध्यम भ्राता श्योसिंहके पुत्र जयसिहने लावाके सामन्त पदको प्राप्त किया। संग्रामसिह जितने दिन तक जीवित थे, उतने दिनोतक उनके लिये किसी प्रकारकी सम्पत्तिका भाग नहीं मिला। सभी एक अन्नसे समय व्यतीत करते थे। संग्रामसिहके छोटे भ्राता सुरतानसिहके पुत्र नाहरसिंह, (मानसिहके पिता) जिन्होने संग्रामसिहके साथ प्रथम अनेक वीराभिनय किये थे उन्होने अपने बाहुबलसे वनबल देश पर अधिकार करलिया। इसीकारणसे उस विषयमे विभाग करनेका कोई प्रयोजन नहीं हुआ परन्तु वनबलदेश पहिले राणाके खास अधिकारमे था इसीसे सन् १८१८ ईसवीमे वह फिर खालसा होगया, नाहरके पुत्र मानसिहने शीघ्र ही अनन्य उपाय होकर लावाके राणा जयसिहसे यह वचन कह कर लावाके अंशकी प्रार्थना की कि लावादेश जब कि सभीके बाहुबलसे प्राप्त हुआ है, तब मै भी उसका अशले सकता हूॅ तिसपर फिर मै संग्रामसिंहके छोटे भ्राताका पुत्र हूॅ, इस कारण मेरा अधिकार अवश्य ही सामाजिक रीतिके अनुसार प्रबल है। मानसिहकी इस प्रार्थना पर पहिले जयसिहने कुछ भी ध्यान नही दिया। परन्तु अन्तमे सामाजिक रीतिके अनुसार इन्होने वार्षिक पॉचसौ रुपयेकी आमदनीवाले जैतपुरका अधिकार नाहरसिहके पुत्र मानसिहको दे दिया। मानसिहने जबतक अपने अधीश्वर लावाके सामन्तकी आज्ञा पालन की तबतक लावाके ऊपर उनका स्वत्वाधिकार किसी प्रकार भी लोप न होसका। एकमात्र अपने कर्त्तव्य पालनमे ढील होनेसे उनके उस स्वत्वके लोप होनेकी सम्भावनाथी। जयसिंहने मानसिहको जो सनद दी थी वह सनद पत्र उक्त उक्तिका समर्थन करती है। सनदपत्रमें जैसे " महाराव श्री जयसिह वचन वद्ध होकर कहते है धर्मको साक्षी देते है"।

इस समय भतीजे मानसिह मैने तुम्है इच्छानुसार जैतपुरा नामक ग्राम और उसके आधीनकी समस्त भूमि दान की। तुम्हारे वंशधर सुपुत्र हो अथवा कुपुत्र हो, इसे वह भोग करेगे, मेरे इस दानकार्यमे चतुर्भुजा देवी साक्षी है। तुम मेरे भतीजे हो

इस समय जिस स्थान पर मै तुमको जो कुछ आज्ञा दूँगा तुम्हे उसको पालन करना होगा, यदि तुम उसे नहीं करोगे तो उसका फल तुम्है भोगना होगा" ।

" मानसिह अपने कर्तव्य पालनमें असमर्थ होगये थे इससे हो अथवा अन्य किसी कारणसे हो, जयसिहने फिर जैतपुरादेश अपने अधिकारमे करलिया । मानसिंहने मंत्रियो के द्वारा उसे प्राप्त करनेकी विशेष चेष्टा की परन्तु सफलता न हुई । अन्तमे उन्होने मेरे समीप आकर इस विपयमे सुविचार करनेकी प्रार्थना की । खैरोदादेश व लावाके अधीश्वर जयसिहके समीपसे लेकर राणाके अधिकारमे किया गया था, इससे जयसिहकी आधी आमदनी घट गई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है, इसी कारणसे जयसिहके सामान्य अपराध पर जैतपुराको अपने अधिकारमे करलिया । सन् १८२० ईसवीमे मै जब मेवाड़ मे गया उस समय उन्होंने पत्र द्वारा मुझे विदित किया कि "जयसिहने मुझे जैतपुरा लौटा देने की आज्ञा दी है" । मै इसका उत्तर चाहता हूँ एकमात्र राणा ही इस विषयमे विचार कर सकते है । मेरे ऐसा कहनेपर वह फिर राणाकी सभामे गये । परन्तु वहाँ जाकर सफलमनोरथ न होसके, अन्तमे उन्होने फिर मेरा ही अनुसरण किया । मान-सिहने फिर मेरे वचनानुसार सादरीकी सीमान्तमे सेनादलके नेतृत्व पदको प्राप्त किया था, परन्तु उन्होने विशेष मन लगाकर अपने कर्तव्यको पालन नही किया, इसीसे मैने उनको उस प्रकार आग्रहके साथ ग्रहण नहीं किया । उसी कारणसे वह आत्मसमर्पण करनेके लिये और भी आग्रह युक्त होगये और कहा कि वह प्रबल व्यक्ति गत कारणसे मीमांसाके अंतमे अपने कर्तव्य पालनमे समर्थ नही हुए । पचीस वर्षके अवस्थावाले वीरकी समान दीर्घाकार वलिष्ट साहस प्रकृति और स्वाधीनताकी तेजपूर्ण मूर्तियुक्त मानसिह अपने सनदपत्रको पढ़नेके लिये मेरे हाथमे देकर बोले– मै लावा के अधीश्वर के निकट जिस बाध्यताकी जंजीरमें बंध रहा हूँ यदि उसको तोड़ डालूं तौ यह अवश्य ही जैतपुराका ग्रहण करनेमे न्यायसहित समर्थ होंगे; वनवल देशको मेरे हाथसे छीननेके लिये जयसिहके इशारेके अनुसार मेरी सेनाकी संख्या उनकी बराबर कीगई है, इस कारण जैत पुराको प्रतिग्रहण करनेकी उनको क्या सामर्थ्य है ? जिस समय संग्रामसिहने प्राणत्याग किये थे, उस समय लावा हमारे ही हस्तगत था यदि मेरी इच्छा होती तौ मै लावाको सरलता से अपने आधीनमें रख सकता था, उस समय मेरे हाथसे लावा लेनेकी किसको सामर्थ्य थी? जयसिंहके आधीनके सामन्तोने कभी नही देखा था । वह जयसिहके बदलेमे मुझको अधीश्वर माननेके लिये तैयार होजाते । यद्यपि इस समय तक बलपूर्वक मेरे अधिकारको लोप नही करसकते थे, तथापि उस समयमे ही उनको लावाका अधीश्वर मान उनके स्वत्वका अधिकार मान्य करके चला, जब आमाइतके ठाकुरने राजधानीमे जानेके समय लावाकी सीमामे नगाड़ा बजाया, तब क्या मै सेनादलको इकट्ठा कर आमाइतके सामन्तो द्वारा अपने अधीश्वर जयसिहका अपमान जानकर उस ठाकुरको उसका फल नही देता? मेरा मस्तक जयसिहके हाथसे लावाके किलेकी दीवारके ऊपर स्थापित है । यदि लावाके सामन्तके ऊपर राणाके ऊपर और आपके ऊपर हमारी भक्ति न होती तो वह कभी बल पूर्वक जैतपुराको अपने अधिकारमे नहीं कर सकते थे केवल आपके ऊपर मेरी प्रबल

भक्ति है, इसी कारणसे मै चुपचाप सब कुछ सहन कररहा हूँ । आप मुझे जैतपुराके ग्रहण करनेकी आज्ञा दीजिये यदि मै आज ही उसको अपने अधिकारमे न करलूं तो मै नाहरसिहका पुत्र नही। इसी हाथसे जैतपुराका जो छोटा किला बनाया था । उस किलेमे मेरे स्त्री पुत्रोको आश्रय मिला था, इस समय उन्होने हमारी उस पितृभूमिसे निकलकर अन्यत्र आश्रय लिया है। वनबलके बदलेमे मुझे जो भूमि दी है वह वनपूर्ण पतित देश है उस भूमिसे यदि मै एक रुपयेकी भी आमदनी की इच्छा करू तो उस भूमिमे मुझे पहिले रुपया खर्चना होगा। एकमात्र जैतपुरासे मैने उस भूमिको उत्कर्ष साधनके लिये, धन संग्रह करनेके लिये आशा की थी, उसी आशासे मैने उक्त देशके कारण पट्टा द्वारा लिखित ढाई हजार रुपया दिया, और जबतक उस पतितभूमिसे आमदनी न हो तबतक मै जैतपुराकी आमदनीसे परिवारका पालन करूंगा ऐसी आशा की थी । जब जैतपुरा हमारे हाथसे छीन लिया गया तब मेरे ऋणदाता महाजनोने ऋण चुकानेके लिये मुझपर आक्रमण किया, और मेरे पास जितने मूल्यवान् द्रव्य थे वह सब और मेरी स्त्रीके समस्त आभूषण तक और जिस घोड़ेपर चढकर गंगापुरमे मै आपके साथ साक्षात् करनेके लिये गया था, उस घोड़े तकको बेचकर अपना ऋण चुका दिया। मैने इस शोचनीय अवस्थाको पृथ्वीनाथ महाराणाके निकट निवेदन किया, उन्होने सब वृत्तान्त सुनकर मेरे अनुकूल सम्मति दी । मेरे पाससे पट्टेके कारण पॉच हजार रुपया मांगा मैने कहा मेरी आशा सफल होगी, इस प्रकार वचन वद्ध होकर मै वह भी उसी समय देनेके लिये तैयार हुआ था।

बीकानेरीजीके[1] नामसे वह वचन दिया था, परन्तु लावाके सामन्त पर जितनी धन सम्पत्ति थी, जैतपुराके सामन्त पर उतनी नही थी, इस कारण लावाके सामन्तने एक हजार रुपया देकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। इसी कारण अन्तःकरणके दुःखित होनेसे मै सीमान्तकी रक्षा उस प्रकार न कर सका । उसी सूत्रसे पठानोने उत्तेजित होकर सालाइराह नामक स्थानके खेतमे मेरा जो कुछ धान्य उत्पन्न हुआ था, उस सबको हरलिया, और वन्येरा भेरोंवी नामक ग्रामको भी अधिकारमे करलिया है[2] । मेरी यह अवस्था है; यदि मैने अन्यायसे मांगा है, यदि रीतिके विरुद्ध कोई प्रार्थना की है तो आपके विचारमें जो दंड हो उसे दीजिये" । यह वचन कहकर ठाकुर मानसिहने अपने मनकी बात समाप्त की । मानसिह केवल अपनी जातिके नही–यह मनुष्यसमाजमे ऊचे आदर्शके मनुष्य थे, इन्होने जो प्रार्थना की वह अकाट्य थी। जो लोग उनकी भाषा नहीं जानते, वह भी उनके उस समयके मानसिक भाव और आग्रहको देखकर अवश्य ही विचलित हुए थे । परन्तु मै सहसा कोई प्रतिज्ञा करके ही शान्त न हुआ–वरन जिससे मै राणाके समीप उनका पक्ष समर्थन करनेके लिये सरलतासे समर्थ हूँ,उसके लिये मैने उनसे कहा कि " आप शीघ्रतासे सीमान्तमे अपने कार्य स्थानमे जाइये, और

---

(१) राणाकी एक रानी–बीकानेरके राजाकी कन्या थी ।
(२) मानसिहने वनवलके बदलेमें सालाइरोह भैरवी नामवाले दो ग्राम पाये थे ।

आपके न होनेसे वहॉ जो एक शोचनीय हत्याकांड होगया है, आप उस हत्याकांडके नेताको उचित दंड देकर राणाके कृपापात्र होनेकी चेष्टा करिये। मैने उनको एक पिस्तौल उपहारमे देकर विदा ग्रहण की।

सीमान्तकी उस शोचनीय हत्याकांडके सम्वन्धमें इतिहासलेखकने लिखा है, "छोटी सादरीकी सीमान्तमे-जैसे सेनादलके साथ मानसिह सीमान्त रक्षामें नियुक्त थे-उस सीमान्तमे गंभीरवन जंगल पूर्ण एक पहाड़ी देश है, आधेमें मीना और भीलगण वहॉ वास करते है, उस पहाडी देशसे लगेहुए कितने ही देशोमें बहुतसी नीची श्रेणीके सामन्त वास करते है, जिससे भील और मीना अत्याचार व किसी प्रकारके उत्पात न करसकै, उन सामन्तो पर इस प्रकारका भार सौंपा गया है। परन्तु हम जिस समयकी वात कहते है, उस समय वह सामन्त भीलोको दमन न करके वरन उनके आसपासके देशोमे चोरी और लूटमार कार्यसे उत्साहित करके उस लूटीहुई धनसम्पत्तिमेका एक अंग आप लेते थे। उन उत्साहदाताओमे कालाकोटाके सामन्तोके घरके प्रधान कर्म कर्ता एक प्रधान नेता थे। चम्पान नामक वनकी ओर गिरिसंकटके ऊपर विलोई नाम एक खंडभूमिमे एक राठौर राजपूत निवास करते थे। उन्होने कई बीघे पर्वती भूमि लेकर कई कुएँ खुदवाये और उनसे उसी भूमिमे खेती करते थे। राजपूत राठौरने घोर परिश्रमसे उस कठोर भूमिमे नाज उत्पन्न कर उससे अपनी स्त्री और उस भूमिके एकमात्र उत्तराधिकारी अपने पुत्रके निमित्त अन्न संस्थापन किया था। एक दिन वह राठौर राजपूत कृषिकार्य करनेके पीछे अपने घरकी ओरको जारहे थे कि इसी समयमे उनकी स्त्रीके रोनेका शब्द उनको सुनाई पडा, स्त्रीने नेत्रोमे जलभर कर अपने स्वामीसे कहा कि वनैले भीलोने आकर तुम्हारी कुटीको लूटलिया। सारे पशुओको लेकर एकमात्र पुत्र और उस पुत्रके सहचर एकमात्र युवक योगीको भी बांधकर ले गये है। राठौर राजपूतने महा शोकित हो बिना कुछ कहे सुने वन्दूकमे गोली भरी, और वंदूक लेकर आप कालाकोटकी ओरको गये। अत्यन्त दुःखका विषय है कि राठौरराज जिस समय कालाकोट ग्राममे गये उसी समय उस ग्रामके प्रवेश मार्गपर अपने प्राण धन पुत्र और उस योगीका शिर शून्य देह उनके पैरोके नीचे आया। उन्होने बहुत खोज करके जाना कि कालकोटके सामन्तोंके अनुगत भीलोने यह कार्य किया है। भील तस्कर जिस समय उस पुत्र और योगीको पशुओके साथ यहां लाये उस समय उस पुत्रने कालाकोटेके कर्माध्यक्षको देखकर कातरस्वरसे कहा, "मामा मेरी रक्षा करो, मेरे प्राणके वदलेमे जितना रुपया तुम चाहोगे बाबा मेरे उतना ही तुम्हे देगे।" वास्तवमे राठौर राजपूतके निकटसे रुपया लेनेके लिये ही पुत्रको बांधकर लाये थे। परन्तु जब समाचार फैल गया कि यह पाखंडी कर्माध्यक्षही इस कांडका मूल है,तब अपनी रक्षाके लिये उस पुत्र और योगीके प्राण नाश किये गए। राठौर राजपूत यह समाचार पाते ही उस नर घातीकी खोज करनेके लिये कालाकोटेमें गये। उस शोकसे संतापित हुए पिताको देखकर उस पातकीने कहा, मै इस हत्याकांडको कुछ नही जानता। अन्तमे राठौरके दुःखमे शोक प्रकाश करके उसने कहा कि तुम्हारे जितने पशु चोरी गये है उनका चौगुणा

मूल्य और जो तुम्हारी धन सम्पत्ति नष्ट हुई है उसका दुगुना मूल्य तथा इसकी खोज करनेमे जितना रुपया तुम्हारा खर्च हुआ है उससे दुगुना मै तुम्हे देता हूँ। शोकित और दुःखित पिताने कहा, " तुम जीवित अवस्थामे मेरे पुत्रको देसकते हो ? मै न्याय विचारसे प्रतिहिंसा चाहता हूँ, रुपया नही चाहता। मुझे अब धन लेकर जीवन धारण करनेका क्या प्रयोजन है " ?

कर्नेल टाड् साहब फिर लिखते है, " कि किसी भाँति भी धीरजके वचनोसे उन राठौर राजपूतका शोक दूर नही हुआ। उन्होने यही प्रतिज्ञा करी कि प्राणघातीका प्राण लेकर ही मेरा मन शांत होगा, उस विषयमे आशा देकर उनको मानसिहके हाथमे सौप कर कहा कि यदि हत्या करनेवालेको आप बंदी करसके तौ आपका मनोरथ भी इसी कारणसे पूर्ण होगा। इस वचनको सुनकर राठौर राजपूतने कितनी बार धीरज प्राप्त कर मुझसे विदा ली। वह मेरे डेरोको छोड़कर अपने घरको जाने नही पाये थे कि इतनेहीमे यह समाचार आया कि उस शोचनीय हत्याकाण्डके प्रधाननेता कालाकोटके सामन्तको उस कर्मका सबके दंडदाता भगवानने दंड दिया है। कालाकोटके सामन्तने उस हृदयभेदी शोकसे विचलित होकर उक्तकर्मकर्ताकी भलीभाँतिसे भर्त्सना कर वह जिस २ महापापका भागी है, उसे २ स्वीकार करनेको कहा। परन्तु उस मनुष्यने प्रतिज्ञा करके कहा, कि " भगवानका नाम लेकर कहता हूँ। कि मै अपराधी नही हूँ अन्तमे वह देवताके मंदिरमे जाकर शपथ करनेके लिये तैयार हुआ। उसकी बात पर सम्मत होकर उसको सामन्तने देवताके मंदिरमे शपथ करानेके लिये भेजा। वह पापी घोड़ेपर चढ़कर देव मंदिरके सामने पहुँचा ही था, कि वैसे ही उसकी मृत्यु होगई। उसकी अचानक मृत्यु को देखकर सभी कहने लगे कि देवताने स्वयं ही इससे बदला लेलिया। इस समय उस हत्याकाण्डमें और भी जितने सहायक थे, उन सबको पकड़ कर उक्त राठौर राजपूतको संतोषके कारण जिससे कोई फिर आगेको ऐसा कार्य न करसकै इससे उनको उस बीलिओके गिरिसंकटमार्गमे फाँसी पर लटका दिया। इससे मै अत्यन्त आनन्दित हुआ "।

तृतीय अध्याय ३.

मोरवन–उस देशकी जनशून्यता–महाराष्ट्रोंके द्वारा अत्याचार और उत्पीडन–महाराष्ट्रोके प्रति अन्याय–दया प्रकाश–मोरवनका प्राचीन इतिहास–खोदित लिपि–जैन मंदिर–व्याघ्र का एक बालक पर आक्रमण–देवताके मंदिरके सम्बन्धका प्रवाद–प्रयोजनीय खोदित लिपि–चारण रमणियोंके द्वारा कर्नेल टाड्की अभ्यर्थना–उस अभ्यर्थनाके सम्बन्धकी प्राचीन रीति–मेवाड़मे चारणोके आगमनका इतिहास–सती वाक्य।

कर्नल टाड् साहबने पहिली फरवरी शनिवारको मोरवन वा मरवन नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " लावाके विवाद विसम्वाद और उसके सम्बन्धकी घटनावलीको, वर्णन करनेके उपलक्ष्यमे गत दिनको मानसिहने मेरे सभी समयको ग्रहण किया था। इस स्थानके आसपासके जो कितने ही देश राणाके खास अधिकारसे छिन गये थे उस विषयमे विशेष खोज करनेके लिये मुझे इस स्थानपर विश्राम करना पड़ा। मोरवन वा मरवन पहिले एक समृद्धिशाली नगर था, तथा यह जिलेमे एक प्रधान उपविभाग रूपसे गिना जाता था। इसका वार्षिक राजस्व सात हजार रुपया था। यह नगर रमणीक ऊंचे शिखर पर स्थापित है और इसके पश्चिम ओर जो एक बड़ा भारी कृत्रिम हौद है, वह देखनेमे अत्यन्त सुन्दर है। और उसके दोनों ओर किनारो पर बड़े २ इमलीके वृक्ष लगरहे है। यहाँकी भूमि भी उपजाऊ है, विशेष करके खेतीके लिये जलका भी बड़ा सुभीता है, परन्तु हाय ! इस समय खेती करनेके लिये यहां मनुष्य नही है। नगर सभी ओरसे विध्वंस होकर मनुष्योसे हीन होरहा है।

जिन वर्वर पठानोने इस रमणीक नगरको विध्वंस किया है, उन्हींके हाथमे फिर यह देश जायगा! मेरे मनही मनमे महा दुःख हुआ। युद्धके समय व्यय वा दंडस्वरूपसे जिन सब देशोको राणाके निकटसे गिरवी स्वरूप शत्रुओने अपने हाथमे रक्खा था यह मोरवन देश भी उन्हींमेंसे एक है। अन्यान्य भूमिके साथ यह भी महाराष्ट्रोंके अधीनभे हो गया था। और धनके लोभी महाराष्ट्र सेवकोंने इस देशपर अपनी इच्छानुसार अत्याचार किये थे। यह अत्यन्त शोचनीय विषय है। अपने परम शत्रु महाराष्ट्रो की ओर हमने अन्यायसे उदारता दिखाई, नहीं तो यह सभी देश न्यायके अनुसार मूल अधिकारियोको लौटा देने होते, विशेष करके उन्होंने भी हमारे न्याय अत्याचर और चोरी लूटके रोकनेमे विशेष सहायता की। यदि महाराष्टोको मध्य भारतवर्षसे एकबार ही निकाल दिया जाता तो न्यायविचार सुराजनीति और सहृदयता भलीभाँतिसे प्रकाश पाजाती। जब मैने इस छिनेहुए देशके साथ उदयिमान उन्नतिके चिह्न युक्त राजपूत देशकी बराबरी करी तब मैने मनही मनमे इस कारणसे आनन्दका अनुभव किया था कि अत्याचारी अधिकारी लोग इन सब देशोसे कुछ भी लाभ न उठा सकैगे, इन बड़े खेतोमे घास और वृक्षोके सिवाय कुछ न होगा"।

इतिहासवेत्ता मोरवन देशके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमे लिखते है कि मोरवनदेश प्राचीन ऐतिहासिक देश गिना जाता था। मोरी जातिसे इसका नाम मोरिवन हुआ है। मोरीजाति चित्तौरको जीतनेके पहिले इस स्थानमे शासनकार्य करती थी, चित्राङ्ग प्रासाद नामवाला एक प्राचीन टूटा फूटा किला इस समय तक विराजमान है चित्तौर नगर स्थापन करनेके पहले उस किलेमे मोरी जाति वास करती थी, ऐसा प्रकाशित होता है। इसके सम्बन्धमे आजतक यह वात विख्यात है कि चित्राङ्गधार राज्यका एक प्रधान करद स्वरूप मोरवन और उससे लगे हुए देशका शासन करते थे। चित्राङ्गकी

एक जन प्रजा एक समय खेती करती थी, हठात् उसके लाङ्गलके फलपर एक कठिन द्रव्यका सघात हुआ, उन्होने उसी द्रव्यको उठाकर देखा कि इसके स्पर्शसे उसका हल एक बार ही सुवर्णका होगया है।वह कठिन द्रव्य और कुछ भी नही है–पारस पत्थर है। वह किसान शीघ्र ही उसे अपनेस्वामी चित्रांगके पास ले गया, और जाकर स्वामीको दिया। चित्रांगने उस पारस पत्थरकी सहायतासे बहुतसा सुवर्ण पाकर उस धनसे मोरवन नगरमे बड़े २ महल बनवाकर अन्तमे चित्तौरकी राजधानीको निर्माण किया। धौलकोट वा मोरिकापट्टन नामक जो राजधानी वर्तमान मोरिवनके पश्चिम दूर पर थी. उसके चिह्न भी इस समय तक देखे जाते है, परन्तु उक्त स्थानके निवासियोकी निर्बुद्धिता के कारण उसमें अग्नि लगनेसे वह विध्वस होगये है, कारण यह था कि वहॉ एक ऋषि धोरेके वनमे तपस्या कररहे थे, बहुतसे मनुष्य उनके शिरपर एक प्रकारका जगली वृक्षोंके जडका वोझा रखकर उनको बाजारमे बलपूर्वक लेआये। उस ऋषिके क्रोधसे नगर विदग्ध होगया। परन्तु इस वचनसे यही अनुमान होता है कि इस देशमे पहिले भूगर्भसे अग्नि निकलती थी। मोरवनमे इस समय तीन प्राचीन मंदिर विराजमान है, इनमे एकमे शेपनागकी मूर्ति है। उस सहस्र शिर देवताने पृथ्वीको अपने मस्तक पर धारण किया है। पहिले केवल कुंकुम ही उस देवताको चढ़ाया जाता था, परन्तु इस समय उसके बदलेमे उनकी देहमे चंदन लगाया जाता है।

इस स्थानके दक्षिण पश्चिममे ढाई कोश दूरी पर उनेर नामक ग्राममे एक प्राचीन खोदी हुई लिपि है। यह सुनते ही मैने उस प्राचीन गुरूको वहॉ भेजकर उस लिपिको लानेकी आज्ञा दी। वह उसको लेआये, उसके देखनेसे जाना गया कि उस खोदी हुई लिपिमे यह लिखा था कि कालीन और उनेरके ग्राम ब्राह्मणोको दिये गये है। राणा सग्रामसिहने सवत् १५७० सन् १५१४ ईसवी मे ग्राममे जो चतुर्भुजाका मंदिर बनवाया था, उसमे वह रक्खी हुई है। राणा जगत्सिहने उस खोदी हुई लिपिके नीचे अपना नाम खोद कर यह लिख दिया कि जिससे कोई भी इस ब्रह्मोत्तरकी ओर हस्तक्षेप न करै। उस मंदिरके और एक खंभ पर ग्रामकी पंचायतकी इच्छानुसार प्रत्येक नवीन धान्य काटनेके समय वासन्तिक और हैमन्तिक धान्यमेसे प्रत्येक खेतसे ढाई सेर धान्य देवताको दिया जाय, यह भी उसमे खुदा हुआ है।

संवत् १८४५ मे जिस समय मेवाड़के चारोओर युद्ध हुआ था ऐसा जाना जाता है कि उसी समय पंचायतने उक्त दानको नियत किया था। चतुर्भुजादेवीके मंदिरके ठीक सामने एक जैनमंदिर है। संवत् १७७४ मे यह बना था, जिस स्थान पर यह मदिर बना था वहॉकी भूमि खोदनेके समय एक पारसनाथकी मूर्ति निकली थी। उसी मूर्तिकी स्थापना उस मंदिरमे हुई। यहांके अनेक स्थानोमे प्राचीनकालके बहुतसे स्मृतिचिह्न पाये जाते है।

इस दिन कप्तान वा साहब शिकारको गये, और नील गायके पीछे घोड़ा दौड़ाया पर यह एक जगलमे घुस गई, और साहबके कुछ चोटआई, उस दिन हमने बड़ा चीतर देखा, यह जानवर बहुत खूबसूरत होता है।

२ फर्वरी-फिर कर्नलटाड् साहब लिखते है कि "आज प्रातःकाल ही हमारे वार्षिक समस्त विलायती द्रव्य आये। हम भोजन करनेके पीछे एक बोतल बरांडी पान करते थे कि इसी समयमे ग्रामकी ओरसे एक भयंकर चीत्कार शब्द सुनाई आया, जिसको सुनकर हम विचलित होगये। हम उसी मुहूर्तमे खड़े होगये, और जिस स्थानसे चिल्लानेका शब्द आरहा था उसके सम्बन्धमे खोज करने लगे, कि इसी समयमे दो हलकारे और एक बालक शिरपर दूधका घड़ा लियेहुए मेरे सामने आये, उन्होने मेरी वह उत्कठा दूर की। प्रतिदिन दूध संग्रह करनेके लिये वह कई कोश दूरतक ग्राममे जाते थे। वह वहाँसे लौटते समय हमारे डेरोके समीप आये, दोनो हलकारे कुछ आगे बढ़गये थे, और बालक पीछे था। उस बालकने सहसा ऊंचे स्वरसे कहा "मामा मुझे छोड़ दो, मै तुम्हारा भानजा हूँ, मामा छोड़ दो, मामा छोड़ दो।" यह कहताहुआ चिल्ला रहा था। उन दोनो हलकारोने समझा कि यह बालक पागल है। विशेष करके उस समय उन दोनो जनोने अंधे होकर बालकसे शीघ्र ही आनेके लिये कहा। परन्तु बालक पहिलेकी समान क्रमानुसार भयकर चीत्कार करता था, तब उन्होने दौड़ कर जाकर देखा कि एक बड़ाभारी व्याघ्र बालकके अँगरखेको पकड़ रहा है। तब इन दोनों हलकारोने शीघ्र ही एक लोहेसे मढ़ीहुई लकड़ीसे उस व्याघ्रको मारा उसके भयंकर चीत्कार शब्दसे सारे ग्रामवासी मनुष्य अस्त्र शस्त्र हाथमे लेकर वहाँ आगये। उनके चिल्लानेसे मेरी निद्रा भी भंग होगई।

मोरवन और मुगरवार नामक स्थानके मध्यस्थ काले पहाड़ नामक शिखर पर वह प्राचीन व्याघ्र वास करता था। इस प्रदेशमे यह बहुत समयसे रहता था, और वह किसानोके पशुओका नाश करता था, परन्तु अभीतक इसको कोई भी न मार सका था। दो दिन पहिले वह व्याघ्र मोरवनके एक तेलीके बैलको मारकर भाग आया था। व्याघ्रको कभी कोई बंदूक वा किसी प्रकारके अस्त्रसे नही मारता था, सभी उस पर दयाभाव रखते थे, और ऐसा जाना जाता है कि वह कभी किसी मनुष्य पर आक्रमण भी नहीं करता था, और यदि करता भी तो "मामा मुझे छोड़ दो" इतना कहते ही वह उसको छोड़ देता था, वह बालक यह जानता था इसीसे उसने 'मामा, कहकर इस प्रकारकी प्रार्थना की थी। परन्तु अज्ञान हलकारोने विचारा कि वास्तवमे ही इस बालकको मामाने पकड़ लिया है, और इसीलिये वह पहिले उसकी सहायताके लिये न गये"।

३ री फर्वरी-आज कुहरा बहुत था हमारे साथी साहबकी तबियत खराब थी, इससे हम यही रहे।

४ फर्वरी-हमारे बन्धु पालोदसे लौट आये। मैने उनको वहांके देवमंदिरमेसे एक खोदित स्तंभकी लिपिको लानेके लिये भेजा था उन्होने आकर जो कुछ कहा वह नीचे लिखते है।

वह मंदिर पहिले एक धनवान जैनका बनाया हुआ था। जेनोने उस मदिरमे अपने इष्टदेवताकी मूर्ति स्थापन करनेकी अभिलाषा प्रगट की, परन्तु मंदिरके तैयार होते ही

मानवदेव (देवजननी) ने स्वयं उस जैनके सम्मुख जाकर कहा कि इस मंदिरमे मै वास करनेकी इच्छा करती हूं । जैन यद्यपि हिन्दूधर्मका विरोधी था परन्तु माताकी इस इच्छाको अपूर्ण न करसका, जैनने कहा कि मै कभी आपकी मूर्तिके सामने अपने हाथसे किसी पशुका बलिदान नहीं करूगा देवीके मंदिरमे निवास होनेके समाचारको सुनकर संतुष्ट हो कहा कि " तुम चित्तौड़के सौनगड़ेके पास जाओ, वही बलिदानादि कार्यको निर्वाह करेगे । जैनदेवीकी आज्ञानुसार वह सोनगडेके निकट गये और पीछे उस मंदिरके निकट पार्श्वनाथका एक मंदिर बनवादिया । मेरे वृद्ध बन्धुने माताजीके मंदिरमे एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक तत्थ्यका आविष्कार किया । उन्होने एक प्राचीन खोदीहुई लिपिको पढ़ा उसकी जो अनुलिपि लाये थे उससे सौलङ्की राजवंशके समयके निर्द्धारणके सम्बन्धका प्रमाण पाया जाता था । मुझे पीछे चित्तौड़से एक खुदा हुआ पत्र मिला उसके साथ इस पत्रका समय सम्पूर्णत: एक हो गया। उन दोनो पत्रोसे भलीभांति जाना जाता है कि सौलङ्की राजाने एक समयमे वास्तवमे ही गिह्लोतकी राजधानीको अपने अधिकारमे करालिया था । पालोदसे जो खुदाहुआ पत्र मिला था उसमे केवल यही लिखा हुआ देखा कि कुमारपाल सवत् १२०७ मे पूसके महीनेमे पालोद माताजीके मदिरमे पूजा करनेके लिये आये । परन्तु शीशोदियोने अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये कहा था, सदराजने जिस समय कुमारपालको निकाल दिया था, उस समय कुमार पालने चित्तौडमे आकर आश्रय लिया, और दिल्लीके चौहानपृथ्वीराजके वहनोई राणा समरसिंह जो चित्तौड़के अधीश्वर थे अन्तमे उनके अधीनमे मन्त्रीके पदपर नियुक्त हुए। छठीफर्वरी मार्गमे व्यतीत हुई ।

भ्रमणाकारी कर्नल टाड् साहब ७ वी फर्वरीको निकुपनामक स्थानसे चलकर ८ तारीखको मुरलानामक स्थानमे आये । वह लिखते है, "कि मुरला एक श्रेष्ठ ग्रामहै, यहॉ कृचौलिया जातिके चारण लोग निवास करते है। यद्यपि वह लोग भाटवंशके है परन्तु इस समय वह वाणिज्य द्रव्य रक्षकके कार्यसे अपना निर्वाह करते है । यह चारण इस देशमे सभी श्रेणी और सब वर्णोके समीप पूजनीय है, और सभीकी भक्तिके पात्र है, इसी कारणसे कोई भी इनके प्रति किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकता, और इसी कारणसे वह निष्कर भूमि सम्भोग और निर्भय हो चोरोसे भरे हुए मार्गमे वाणिज्य द्रव्य भेजते है । चोर डाकू भी इनके रक्षित किये हुए द्रव्योको मार्गमे नही लूटते । यह समस्त राजपूतानेमे एकमात्र स्वाधीन होकर वाणिज्य करते है, कारण कि राजा भी इनसे वाणिज्य पर कर नही लेता है । यह चारण सम्प्रदाय हमारी जिस प्रकारसे अभ्यर्थना करती है उससे हम अत्यन्त आनन्दित हुए । उन्होने नगरसे दलवद्ध होकर आगे वढ हमारा अधिक सत्कार किया । सवसे आगे ग्रामके बाजा बजानेवाले मनुष्योका एक दल वाजा वजाता हुआ चला । इसके पीछे सुन्दरी चारणी स्त्रियॉ धीरे २ समीप आकर अंगके उत्तरीय समान्दोलनसे हावभाव कटाक्ष करती हुई धीरे २ नृत्य करती थी। अन्तमे मुझे मुरलाकी उन स्त्रियोने वदी कर लिया, तव वह शान्त हुई। यह दृश्य जैसा नवीन था उसी प्रकारसे चित्तको हरनेवाला था । वीरवपु चारणोने सुन्दर वस्त्र पहर कर शिरपर पगड़ी

बाँध और उसमे माला लटका कर दर्शन दिया था। नायक वा नेता गणोके गलेमे सुवर्ण के अलंकार थे और उनमे पृथ्वीश्वरकी मूर्ति अंकित थी, उनकी वह धीर गंभीर मूर्ति स्त्रियोका दृश्य प्रकाश करती थी। सभी स्त्रियें पाटल वर्णका घाँघरा और कुरता पहर रहीं थीं, उनके वह श्रेष्टबाल घन कृष्ण जलधि जालकी समान थे, अंगमे रमणीय आभूषण थे, हाथमे चूड़ी अतुलनीय शोभाको प्रकाश कर रही थी। संसारके अनेक चित्रकारोके पास इस चित्रकी समान योग्य चित्र दूसरा नहीं था। स्त्रियोकी मण्डली जिस भाँति अपने हावभाव कटाक्ष फेंकती थी- जिस भाँति मधुरभावसे अंगको चलाती हुई अभ्यर्थना करती थी, उससे भलीभाँति विदित होता है कि वह उस अभ्यर्थनाकी ओरसे कुछ पुरस्कारकी आशा करती है।

"अपराह्नके समय नायक मेरे डेरोंमे फिर आये-उनके आते ही मै जानगया कि मैने सुन्दरी स्त्रियोके द्वारा बंदी होकर उनके हाथसे जो उद्धार पाया है उस उद्धारका मूल्य किस प्रकार है,पिछले पांच सौ वर्ष पहिले मेवाडसे कोई राणा मुरलामे गये थे, इन चारणियोकी सम्प्रदायने उनको इसी प्रकारसे बंदी किया था; और जबतक राणाने उन सुन्दरी चारण कामिनियोको भोजन न दिया, तबतक उन्होने बंदीदशासे किसी प्रकार भी छुटकारा नहीं पाया। जिस जजीरने उनको बंदी किया-वह जंजीर जैसी अमृतमय है बंदीको भी उसी प्रकारसे उस अवस्थामे अधिक दिनतक रहना नही होता। चारणियोके प्रधान नेताने मुझसे कहा कि, मै राणाका प्रतिनिधि स्वरूप होकर यहाँ आया हूँ मै उन चारण स्त्रियोके द्वारा वदी होनेके समय महा विपत्तिमे पड़ा था। उसने और भी कहा कि मैं इस चिरप्रचलित रहस्यको किस भावसे ग्रहण करू, क्रोधित होगी या प्रसन्न होगी, यह स्थिर न करसका, इसी समय स्त्रियोने मुझे छोड दिया। उसी कारणसे उनको भोज्य भी न मिलसका। परन्तु मैने उन नायकसे कहा कि प्राचीन रीतिकी रक्षा करके मै अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ, और तुरन्त ही मैने उस चारण कामिनियोके समीप प्रत्यभिनन्दन वचनोके साथ भोजके लिये रुपये भेज दिये। प्रधाननेता एवं अन्यान्य नायकोने अपने पुत्रोको लेकर वहुत समय तक मेरे साथमे प्राचीन कालके अनेक विषयोकी बातचीत की थी"।

कर्नल टाड् साहब चारणोंके सम्बन्धमे फिर लिखते है कि "इस छोटी चारण सम्प्रदायके आदिपुरुष राणा हमीरके शासनकालके प्रथम समयमे उनके साथ गुजरातसे यहाँ आये थे। यद्यपि उस समयसे अबतक पाँच सौ वर्ष व्यतीत हुए है,तथापि चारण गणोने अपनी जातिका कोई लक्षण रीति अधिक क्या आचार व्यवहार और पहरावेमे भी किसी प्रकारका अदल बदल नही किया। वह इस समय जिस जातिमे वास करते है, उस जातिका उनका किसी विषयके साथ कुछ भी सादृश्य दिखाई नहीं पड़ा। वास्तवमे वह सभी भारतवासियोसे विपरीत दिखाई पड़े, यद्यपि उन्होने हिन्दुओमे ऊंचा सामाजिक पद प्राप्त किया था, तथापि पारस राजवासियोके साथ उनकी सदृश्यता विराजमान है। उन पारसवासियोका मेल चाल-ढाल, पहरावा ऊंची पगड़ीको देखकर

गुवरेसके मंदिरके उपासकोकी समान जाना जाता है, इसको देखकर हिन्दुओके चारों वर्णोंमेसे किसी एक वर्णके कहनेका बोध नही होता, वह लोग किस कारणसे और किस प्रकारसे मेवाड़मे आये और यहाँ आकर निवास किया था, इस स्थान पर मै उनके विस्तारसहित इतिहासको प्रकाशित करनेकी अभिलाषा करता हूँ। मेवाड़के इतिहासमें ख्यात नामा-राणा हमीरके एक हाथके एक स्थान पर कुष्टरोगका चिह्न था, वह उस रोगसे आरोग्यता प्राप्त करनेके लिये मेकराणाके किनारे हिगलाज तीर्थमे गये। यह कच्छभुजदेशकी सीमामे जाकर टांड़मे चारणोके वासस्थानके निकट जैसे ही घोड़े परसे उतर कि वैसे ही एक चारणी युवती रसोई करनेसे उठकर आगे बढ़ राणाके घोड़ेकी रक्षाकार्यमे नियुक्त हुई। युवतीको अयाचित होकर उस भावसे अपनी सहायता करते हुए देखकर राणा हमीरने उसे धन्यवाद देकर कहा, आपने जो रसोई बनाई है, मेरे सेवक इसको पाकर भलीभांतिसे तृप्त होगे। युवतीने उसी समय कहा, मैने जो रसोई तैयार की है उसके देनेके लिये तइयार हूँ। यह सुनकर राणाने कहा, हम लोगोमेसे सभी भूँखे है, इस सामान्य अन्नसे किसीको भी शान्ति नही होगी। युवतीने उसी समय कहा किं "हिगलाजोके आशीर्वादसे सबकी क्षुधा निवृत्त होजायगी" यह कहकर राणा और उनके सेवकोको बैठाल कर उसने भलीभांतिसे सबको भोजन कराया, सभी भोजन कर तृप्त होगये। बहुत ही पास युवतीने जो एक छोटासा कुँवा खुदवाया था उसका जल पीते ही सभीकी तृष्णा दूर होगई। इससे सर्वसाधारणको विश्वास हुआ कि हिगलाज तीर्थकी अधिष्ठात्री देवीने ही इस चारणी रमणी द्वारा राणा हमीरके ऊपर दया प्रकाश की है। वास्तवमे राणा हमीरने उस तीर्थके जलमे स्नान कर शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्तकी। आरोग्य प्राप्तिके पीछे राणा हमीर उक्त चारणी स्त्रीके पिता माता और कुटुम्बियोको साथ लेकर मेवाड़मे आये। और उन चारणोके रहनेके लिये यह मुरलादेश देदिया। चारणोके पाससे किसी समय भी वाणिज्य पर महसूल नहीं लिया जाय यह आज्ञा भी देदी। चारणास्त्रीने राणा हमीरको इस प्रकारसे भोज दिया था, इसीसे उनके स्मृति चिह्न स्वरूपसे व्यवस्था कीगई है कि जो कोई राणा मुरलामें आवैगा चारणोकी स्त्रिये उसको इसी प्रकारसे बंदी करकें उसके समीपसे भोज पासकेगी।

इतिहासवेत्ता टाड् साहव फिर लिखते है कि "इस मुरलादेशमे इस समय कई हजार नरनारी वास करते है। यद्यपि इन चारणोकी वासभूमिके चारोओर कहीं कृपिकार्यका कुछ भी चिह्न दिखाई नही पड़ता तथापि वह लोग कैसे सुख स्वच्छन्दतासे जीवन व्यतीत करते है, इसको देखकर महान् आश्चर्य होता है। जितनी २ चारणोके वंशकी वृद्धि होतीहै उतनी २ उस कच्छेदेशकी प्रचलित रीतिके अनुसार खड२मे चारणोके परिवारमे भी विभक्त होती है। अन्तमे उसीसे एक समय चारणोमें उसके लेनेमे महा झगड़ा उपस्थित हुआ, उसीसे आपसमे विद्रोह दिखाई दिया। उस जातीय युद्धमें वहुतसे चारण मारे गये; उनकी स्त्रिये प्रज्वलित चितामे चढकर जिससे आगेको फिर ऐसा समर उपस्थित न हो इसलिये यह निपेध वाक्य कह गई कि इस मुरलामे कोई भी खेती न करे। उसी समयसे सती स्त्रियोके निपेध वाक्यके अनुसार मुरलामे आजतक खेती

नहीं होती है, कहीं कोई क्षेत्रको कर्षण नहीं करता। जिस सती दाहकी रीति इस समय इस ससारसे दूरहोचली है उन सतियोंके निषेध वाक्यकी ओर चारणोकी आजतक किस प्रकारसे भक्ति विराजमान है? चारणोमे सती नामकी शपथ अर्थात् "महा सतियोंकी आन, शपथ सबसे आधिक श्रेष्ठ है। राजकीय सनदपत्रमें यह शपथ वाक्य अधिकतासे प्रयुक्त होता है"।

यहाँसे सात मील निम्बेरा है, यहाँसे रानी खेड़ेमे गये यह शहर बहुत बडा है, यहाँकी रानीने बहुत रुपया खर्च करके यह शहर बनवाया था, तथा मंदिर बावली बनवाये थे, वहाँके लोगोने भंगीके सरावनकी शिकायत की कि उसने एक सुअर मारकर बावड़ी मे डाल दिया जिससे लोग उसका पानी नहीं पीते और उनको दूर जाना पडता है, यह काम एक भगीने अपने कर्ज देनेवालेको दिक्क करनेको किया था, और वह भींदरको चला गया, उसको यह सजा मिली थी कि काला मुंह करा गधेपर चढाय जूतियोंका हार उसके गलेमे डाला गया और उस बावड़ीका जल निकाल कर उसमे गंगाजल डाल कर और ब्रह्मभोज कराकर उसको शुद्ध किया गया, हमने रानीखेड़ेको देखा हमारे पास लोग नक्काशीके कामकी चीजै लाये, पीछे वहाँके एक रईस खान साहबसे मुलाकात हुई, वह हमको अपने स्थान पर ले गया और खातिरदारीके साथ हम उससे बिदा हुए, शामको वह अपने डेरोमे आए और हमसे अपनी इच्छाये प्रगट कीं जिसका उत्तर हमने यथोचित दिया।

निम्बेरा वड़ा शहर है, इसकी दीवारें बड़ी दृढ़ है, यहाँका व्यापार अच्छा है, यहाँकी आमदनी तीनलाख रुपया है।

चतुर्थ अध्याय ४.

पाठार देश–पाठारके शिरोभागसे रमणीय दृश्य दर्शन–नहर खुदवानेका प्रस्ताव करना–शुकदेवका मंदिर–दैत्यका हाड़–वीरझम्प–अफीमकी खेती–बाबर अकबर और जहाँगीरका विदेशमे भारतमें विविधप्रकारके फल फूल और वृक्षोका लाना–अफीमकी खेतीकी रीति–अफीमसे राजवाड़ेका अनिष्ट साधन–बृटिश गवर्नमेण्टका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय–एक चेटियाका विषमय फल।

भ्रमणकारी कर्नल टाड् साहब फर्वरी महीनेकी १३ वीं तारीखको कनेरो नामक स्थानमे जाकर लिखते है कि "आज मेवाड़राज्यका एक नवीन दृश्य मेरे नेत्रोके सामने आया। कई कोश जानेके पीछे मै मेवाड़के पूर्व सीमानेके स्वाभाविक दुर्ग प्राकारस्वरूप मध्य भारतके पाठार नामक स्थानमे पहुँचा। जितना मै पाठारके सम्मुख जाता था, उतनी

ही आरावली शिखरकी अपेक्षा उसकी ऊंचाई घटती जाती थी, इसको दूसरी श्रेणीका शिखर वा ऊंची समतल भूमिके कहनेका अनुमान होता था। यद्यपि यह पश्चिमकी भूपृष्ठसे चारसौ फुटसे अधिक ऊंचे नही थे, तथापि इसके ऊपरके भाग पर खड़े होनेसे नैतिक, राजनैतिक और प्रकृतिके सम्मुख ऐसा रमणीय दृश्य दिखाई देता था कि मैने पहिले कभी ऐसा हृदयको हरण करनेवाला दृश्य नहीं देखा। इस स्थान पर खडे होते ही मेवाड़के इतिहासकी समस्त प्रधान रंगभूमि मनके सम्मुख दिखाई पड़ती है। हमारे दक्षिणभागमे समस्त हिन्दू जातिके गौरवका स्थान चित्तौड़ विराजमान है। पश्चिमकी ओर आकाशको भेदन करनेवाले पहाड़ खड़े होकर नवीन राजधानी उदयपुर और उसके वीरोकी रक्षा कररही है, और इस स्थान परके हम जिस स्थान पर खड़े हुए है, उसके चरणोके नीचे जावदा, जीरण, नीमच, निम्बेड़ा, खेरी और रत्नगढ़ इत्यादि देशोको देखा जो पठान और महाराष्ट्रोके द्वारा छीने जाकर उनके हस्तगत होगये है, इस रमणीक देशके निमित्त यथार्थ राजपूतके समान चित्तवालेके हृदयमे किस प्रकारके भावका उदय होसकता है–किस प्रकारकी आकांक्षाका उदय होगा सो पाठक स्वयं जान सकते है। मै तो अंग्रेजी सत्तर मील एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमे घूमता आया हूँ। वह परम सुन्दर प्रदेश कहाता है। मृदुल नादिनी बहुतसी नदियां पहाडोके शिखर पर नृत्य करती हुई चारो ओरको वह रही है, चारोओर प्राचीन सौधावलीसे व्याप्त होकर ग्राम और नगरकी सुन्दरताको प्रकाश कर रही है। एक समय यह समस्त ग्राम और नगर मनुष्योसे परिपूर्ण थे, परन्तु हाय! इस समय वह मनुष्योसे शून्य हो रहे है। परन्तु किसी २ स्थान पर मानो फिर भी शक्ति और समृद्धिके पूर्व लक्षण दिखाई पड़ते है। इस ऊंचे स्थान पर खड़े होकर मुझे एक विशेष प्रयोजनीय कल्पनाका आन्दोलन हुआ था। मेवाड़की प्राचीन राजधानी उदयपुर तक एक विस्तारित नहर खुदवानेका प्रस्ताव मेरे मनमे उदय हुआ, उस नहरें खुदवानेके कामसे मेवाड़के समस्त क्षेत्रोमे दश गुणा अधिक धान्य उत्पन्न होगा और यह दुर्भिक्षकी रीति सर्वदाके लिये दूर होजायगी। मुझे ऐसा विचार हुआ। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध होनेका उपाय क्या है? धन कहाँ है? उस धनके अभावसे हमारी इस प्रकार अनेक आशाएं मनकी मनमे ही लीन होगई है। परन्तु हमारा इस समय भी यही विचार है कि यदि यह नहर खुदाई जायगी तो राणा जो केवल अपना देय करदेते है वह बचैगा यही नही वरन वह अपनी प्रजाके ऊपर विशेष

---

(१) कर्नल, टाड् साहब सर्वदाके लिये राजस्थानको छोडकर अपने देशमे आये और आकर इतिहासको प्रकाश करनेके समय इस स्थानपर अपने टीकेमें लिखते है, "इस समय मैं अपनी स्मारक पुस्तकको देख कर इस इतिहासको लिखता हूँ मैं इस समय भी (इतिहासका छपना समाप्त होनेपर) कई वर्षके लिये इस सुखदाई उपत्यकायमें जाकर इस नहरके खुदवाने का समस्त दाइत्व भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हू। यद्यपि मैं मेवाडमे एक दिनके लिये भी स्वस्थ नहीं था, तथापि मैं जानेके लिये तैयार हू" राजपूतोके बांधव टाड् साहबकी उदारता कैसी अद्वितीय है।

दया करेंगे, प्रजाके मंगल साधन करनेके लिये विशेष चेष्टा करना हमारा प्रधान कर्तव्य है"।

"यह पाठार नामक सम उच्च देशका शीर्षस्थल उपजाऊ और सजल मट्टीसे पूर्ण है, यहाँ आम, महुआ, और नीम बहुतायतसे उत्पन्न होते है, इस ऊंचे विस्तारित देश के अनेक स्थानोंमें धर्मसम्बन्धीय बहुतसे प्राचीन स्मृति चिह्न विराजमान है। जहाँ कहीं स्वाभाविक झरने उपत्यका पर दृष्टि आते है, उसी स्थान पर महादेवका लिंग स्थापित देखा जाता है, मैं जिस ऊंचे पर्वत पर चढ़ा था उसके एक कोश दूरीपर अंधकारमय पहाड़ी मार्गमें शुकदेवका आश्रम है, मैं इस मार्गको नहीं जानता था, तिस परमेरे साथमें घोर परिश्रम करनेवाला ब्राह्मण रामगोविन्द भी उस समय नहीं था इसी कारणसे मैं शुकदेवके आश्रमको न देखसका। परन्तु मैने और २ मनुष्योंसे उस आश्रमके सभी जानने योग्य विषय पूछ लिये। शुकदेवका आश्रम जिस भाँति जन मानव शून्य और निराला है, उसी प्रकार अनेक भांतिके पुष्पोंसे शोभायमान है, पहाड़ोंके शिखरोंसे निकली हुई अनेक तरंगिनी आश्रमकी ओर वह रही है। उस पहाड़के शिखर पर शुकदेवजीकी मूर्ति स्थापित है, उस नदीकी एक ओर "दैत्यका हाड़" नामवाला एक ऊचा श्रंग है। यात्री किसी एक विषयका विचारकर अथवा पारलौकिक पुण्यका विचार कर उस ऊंचे दैत्यके हाडपरसे नीचे नदीमें कूदते है। उसको वीर कूदना कहते है यद्यपि उस परसे कूदकर सभीकी मृत्यु होजाती है परन्तु कोई २ बच भी जाता है। अधिकतर बहुतसी स्त्रियोंने पुत्रकी इच्छासे इस प्रकार नदीमें गिरकर प्राण त्याग किये है। एक मनुष्यने मुझसे कहा कि एक स्त्रीने शपथ की थी कि यदि मेरे पुत्र हुआ तो उसको गोदीमें लेकर मैं नदीमें गिरूँगी। ईश्वरकी इच्छासे उसके पुत्र होगया तब वह पुत्रसहित उस नदीमें गिरगई थी। आश्चर्यकी बात है कि दोनोंहीके प्राण बच गये। एक तेली कूदा था वह भी बच गया, इसी प्रान्तमें ओंकार नाथका मंदिर है।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते है कि "६०वर्ष बीते है कि चम्बल तक यह समस्त पाठार देश मेवाडराज्यके अन्तर्गत था, परन्तु इस समय कुनेड़ोंके अतिरिक्त और सभी अंश सेंधियाके हस्तगत होगये है। बाईस गामोंमें कनेरी एक प्रधान नगर है, सौभाग्य वश वह किसी कारणसे फिर राणाके हस्तगत हो गया है। परन्तु बड़े कष्टसे महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे इसका उद्धार हुआ है।पहिले इसको अधिकारमें करके शेषमें स्वत्वके लेनेका विचार किया गया। हम इस प्रकारसे समस्त पाठारदेशको प्राप्त करते तो अच्छा होता परन्तु दुर्भाग्य वश उन समस्त अंशोंको वृद्ध जालिमसिंहके मित्र और शान्तिप्रिय लाला जीवेलालने जमा कर लिया है। मैं फिर कहता हूँ कि सेन्धियाने इन समस्त देशोंको केवल युद्ध व्ययके प्रतिभूस्वरूपमें राणासे अपने अधिकारमें करलिया था, यद्यपि वह सामरिक व्यय बारम्बार चुका दिया था तब भी सेन्धियाने इस देशको नहीं छोड़ा। सुभीता मिलने पर चम्बलके समस्त पश्चिमांसके पाठार प्रदेश फिर मेवाड़के महाराजको देदिये जायँगे"।

राजस्थानके परम हितैषी टाड् साहबने राजपूत किसानोमे अफीमकी खेतीकी अधिक वृद्धिको देखकर महा दु:खित होकर कहा था, " विशेष प्रयोजनीय धान्यके बद-लेमे अफीमकी जो खेती क्रमश. बढती जाती है, प्रबल कानूनके द्वारा इसकी गतिका रोकना अवश्य कर्तव्य है। जब इस देशमे प्राचीन राजाकी प्रजामे पिता पुत्र सम्बन्ध मूलक रीतिके अनुसार शासनकार्य होता था, उस समय कृषिकार्यसे राजाका प्रधान कर लिया जाता था, और राजा इसका निश्चय स्वयं करदेते थे कि किस २ भूमिमें किस २ चीजकी खेती होगी । मेवाड़के प्राचीन कृषक विधानके सम्बन्धमे एक व्यवस्था यह भी थी कि प्रत्येक किसानकी भूमिमे एक बीघा (पोस्त) अफीमकी खेती होगी । परन्तु हमारे (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) द्वारा इस अफीमका वाणिज्य एक चेटिया कर लेनेसे अफीमकी खेती सब जगह बहुतायतसे बढ़गई है, अधिक क्या कहे जिस देशके किसान किसी समय भी अफीमकी खेती नही कर सकते थे इस समय वह भी अफीमकी खेतीकी ओर भलीभांतिसे मन लगाते है । हमारी राजनीतिका फल ऐसा नही पर इसीसे किसान प्रकृत आहार्य धान्यकी ओर ध्यान न देकर धनके लोभी होकर आप अपने स्वार्थका नाश करते है " ।

साधु टाड् साहब फिर लिखते है " कि महामारी और युद्धके द्वारा इस देशके निवासियोकी जितनी शारीरिक और नैतिक अवनति हुई है, एकमात्र इस अफीमके द्वारा उससे भी अधिक बहुत अंशोमे अनिष्ट हुए है । इस कारण किस प्रकारसे वह सर्वनाश करनेवाली अफीम इस देशमे प्रचलित हुई, और किस प्रकारसे उसकी खेती हुई, इस स्थान पर उसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नही है । बाबर, अकबर, एवं जहांगीर इत्यादिकी समान अपनी जीवनीके लिखनेवाले बादशाहोकी उस आत्मजीवनीको पढ कर हम जान गये है कि देशदेशान्तरोसे अनेकभांतिके फलफूलोके वृक्ष तथा वृक्षोकी लता इस भारतवर्षमे वही लाये थे । उनके इस उपकारसे हम उन बादशाहोके निकट अवश्य ही ऋणी है । यद्यपि तैमूरके वंशधर अपने जन्म और शिक्षाके दोषसे अत्यन्त स्वेच्छाचारी थे, और उन्होने राजपूतानेका महान् अनिष्ट साधन किया था, तथापि उनको हम सच्चरित्र, इतिहासलेखक, नीतिके जाननेवाले तथा योधासरूपसे जगत्मे अपने सम सामयिक समस्त राजाओकी प्रशंसाको संग्रह करते हुए देखकर अवश्य ही उनकी कीर्तिका कीर्तन करके गौरवका अनुभव करते है । मनुष्य जीवनके सुख, स्वच्छन्दता और विलासिता सम्बन्धी सब विषयोमे तैमूरके वंशधरो ने राजपूतोके ऊपर सम्पूर्ण विधानता विस्तार की थी । राजपूत केवल कुसंस्काररूपी वेष्टनीमे पडकर इसके सम्बन्धमें कोई उत्कर्ष साधन करनेमे समर्थ न हुए । [illegible] कंदकी राजसभाके साथ करगणाके राजाओकी विशेष मित्रता थी, उस [illegible] राजाओने अवश्य ही ऐश्वर्य आडम्बर और तीक्ष्ण बुद्धिके बिषयमे संसारमें [illegible] नता प्राप्त की थी । परंतु भारत विजेता अवश्य ही उस स्थानसे वंशगत [illegible] ऊपर देश भ्रमण और जगत्के अन्यान्य प्रान्तोके साथ क्रमशः वार्तालाप [illegible] और संश्रव द्वारा अपनी उस सम्पूर्ण शिक्षाको भली भाँतिसे बढ़ाकर अभिलाषाके [illegible]

वलवान हुए थे। और इसीसे जिस समय वह प्रतिज्ञाके द्वारा हिमानी मंडित काकेशससे हिन्दुस्थानके समतलक्षेत्रमे आये, उस समय हजरत तैमूरके वंशधर वावरने अपनी डायरी (दैनिक पुस्तक) मे भारतवर्षका कोई दृश्य अथवा कोई घटना उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन वोध होती तो उसीको वह अपने हाथसे लिख लेते थे, किसी लिखनेको वह नही भूले थे। उन्होने मध्य एशियासे इस सुवर्णभूमि भारत वर्षके समस्त विषयोको भलीभांतिसे देखकर अपनी निरन्तर लेखनी चलाई थी। पृथ्वीके जिस किसी राजाने अपने हाथसे किसी ग्रन्थको निर्माण किया है तो उसमे वावरका वह आत्मभ्रमण वृत्तान्तरूप साहित्य ही संसारमे अत्यन्त प्रशंसनीय है। इसमे कुछ संदेह नही कि प्राणीके सम्वन्धसे हो अथवा उद्भिज सम्बन्धसे हो जो उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन जचता था, उसके सम्वन्ध तकको वह इस पुस्तकमे वर्णन कर गये है। वावरने जिस प्रकार वह भ्रमण वृत्तान्त और व्याख्या लिखी है, उस प्रकारसे किसी देशकी किसी पुस्तकमें भी वह सरलभाव और थोड़ेसे स्थानमे प्रयोजनीय समस्त विषयोंकी रचना दूसरी पुस्तकमे नही देखी गई, विशेष करके उन्होने जिस देशके वृत्तान्तको वर्णन किया ठीक वैसा ही लिखा। उस समय लेखको अतिरंजित करके वर्णन करना एक चिर प्रचलितरीतिरूपसे गिना जाता था। पर उसने वैसा न किया। वावरने जिस २ समय युद्ध किया उसी समयमे उनके जीवन और भविष्य उन्नतिके वक्षस्थल पर आघात हुआ, और जिस २ युद्धमे उन्होंने भारतवर्षके सिंहासन पर अधिकार पाया था उन सभी युद्धोका वृत्तान्त उसमे वर्णन किया गया है"।

वादशाह वावरके गुणोके वंशको कीर्तन करनेके पीछे टाड् साहब लिखते है कि "अकवर वावरके वताये हुए मार्ग पर चले थे, तथा फारिस और तातारदेशके किसान और उद्यानपालकोको भारतमे लाकर उनके द्वारा फारिस और तातारदेशके पिश्ता, शफतालू वादाम, इत्यादि अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल उत्पन्न किये थे वह सब फल रजवाडेमे आजतक नही थे। वादशाह जहाँगीरके द्वारा लिखीहुई आत्मजीवनीको पढनेसे जाना गया है कि उनके शासन समयमे भारतवर्षमे तमाखू व ताम्रकूट आया था परन्तु सबसे पहिले पोस्तकी खेती किसके द्वारा भारतवर्षमे प्रथम आरंभ हुई और इससे फिर अफीम बनकर तैयार हुई इसका हमने कही भी कुछ वर्णन नही पाया[1]। इसका औषध रूपमे व्यवहार बताकर कीतनी ही प्राचीनता प्रकाशित कीजाय, किन्तु थोड़े दिनोसे

(१) बहुतसे लोग कहते है कि अफीम, बावर, अकबर व जहाँगीर सम्राटोंके द्वारा भारतवर्षमे लाई गई, सो यह उनका भूल है, प्राचीन समयमे भारतमे अफीमकी खेती होती थी, आयुर्वेदके मतसे इसका औषधि स्वरूपमे व्यवहार होता था, संस्कृतभाषामे इसको "अफेनम्"! खसखसरसम्" "निफेणम्" और "अहिफेणकम्" कहते है, इसका गुण राजनिघन्टु नामक प्राचीन पुस्तकमें लिखा है, "सन्निपात नाशित्वं" शुक्र, बल, मेह कारित्वञ्च।" यह अफीम चार प्रकारकी होती है, जैसे शुभ्रेत वर्ण ? अन्नजीर्णता कारक इसको जारण कहते है (२) कृष्णवर्ण–यह मृत्यु कारक है, और इसको स्मारण कहते है (३) पीतवर्ण। यह वय स्तंभन कारक है, इसको "धारण" कहते हैं; (४) करघूवर्ण–यह मलसारक हैं, और इसको "सारण" कहते है।

संसारमे वुरे व्यवहारोमें वर्ती जाती है, तीन सौ वर्षके पहिले यह संसारमें नशेके लिये नही व्यवहार होती थी, हिन्दुस्थानके किसी प्राचीन वीर इतिहास, वा, काव्यके वीचमे इस अफीमका कोई लेख नही मिलता। आमंत्रित गणोको पहिले "मनौआ का प्याला" नामक पान पात्र दियाजाता था, किन्तु उसमें अमल पानी वा अफीम नही दी जाती थी, मनौआ वा मनोहर प्याला अथवा पीनेके पात्रमे पहिले फूलका अर्क वा पुष्पका मधु ही पीनेको दिया जाता था, आजकल उसके स्थानपर अफीम दीजाती है। वर्तमान समयके अनुसार अफीम शुद्ध करनेकी रीतिके पहिले पोस्तकी डंडीके द्वारा जलके योगसे पीते थे। सभी लोग उसको तिजारो कह कर पुकारते थे-राजपूतानेके दूरदेशोमे अव भी मनुष्य कुसंस्कार वशसे वर्तमान रीतिको न जानकर उक्त प्राचीनरीतिसे अफीम खाते है। अफीमकी खेतीके सम्वन्धमे कर्नेल टाड् लिखते है, "पहिले चम्वल और सिप्राके बीचवाले भूखंडमे दोनो नदीके उत्पत्ति स्थानसे मिलनेके स्थानतक जो प्रदेश दुआव नामसे पुकारा जाता है, वहाँ अफीमकी खेती होती थी। यद्यपि पुरानी कहावतसे हम मध्य भारतके उक्त स्थानको अफीम का आदि क्षेत्र कह सक्ते है किन्तु अबतो केवल वही नही वरन समस्त मालवे और राजपूतानेके अनेक स्थानोपर विशेप कर मेवाड़ और हाड़ोती प्रदेशके बहुतसे भागमे अफीमकी खेती होती है। कुम्भी, जाट, वनिये और व्राह्मण यह सभी अफीमकी खेती करते है। परन्तु कुम्भियोसे और सव लोग इसमे हार जाते है, कारण कुम्भी ही पहिले पहिलके अफीमकी खेती करनेवाले है, इसीसे वह अफीमकी खेतीकी रीतिको भली भांतिसे जानते है अतएव वह अन्य अफीमकी खेती करनेवालोसे अफीमके वृक्षसे पांच अंशका एक अंश अधिक अफीम निकालते है"।

यह एक आश्चर्यका विपय है कि जैसे २ रजवाड़ेमे सुख और शांति दूर होती जाती थी, वैसे २ अफीमकी खेती भी वढ़ती जाती थी। युद्ध और महामारी और दुर्भिक्ष ने जितना अपना प्रताप फैलाकर रजवाड़ेको जनशून्य कर दिया, इस सर्वनाशक अफीमकी खेतीसे भी उतना ही उत्कर्प साधन हुआ था। मुगलशासनके सूर्यास्त होनेके पीछे जिस प्रकार महाराष्ट्रीने भारतवर्षमे अपना बल विस्तार करके राजपूतानेको विध्वंस करदिया था, उसी प्रकार किसान लोग धीरे २ अन्य खेतीके वदलेभे केवल गेहूँ, जौ, और चनेकी खेती करनेमे प्रवृत्त हुए थे, अन्तमे जब मरहठे पठान और पिंडारियोके अत्याचार इतने वढ़ गये कि किसानोंने सव खेतीको छोड़कर केवल अपने कुटुम्बको पालने योग्य गेहूँ आदिककी खेती की, और सब प्रकारकी खेती छोड़ कर एकमात्र अफीमकी खेतीमे मन लगाया। अफीमकी खेती बहुत थोड़ी भूमिमे होजायगी, और महाराष्ट्रोके अत्याचार और उपद्रवोसे इसकी रक्षा भलीभातिसे कर सकैगे, जव लूटनेवाले पठान इसको लूटनेके लिये आवेगे, तव इसके वदलेमे कुछ थोड़ासा रुपया देदिया जायगा, परतु गेहूँ इत्यादिकी खेती करनेमे उसकी रक्षाके लिये वहुतसे मनुष्योका प्रयोजन है और जव महाराष्ट्रोकी अश्वारोही सेनाका दल एक साथ ही खेतमे आ जायगा, तव समस्त धान्यके नष्ट होनेकी सम्भावना होगी, इसीसे किसानोंने एकमात्र अफीमकी

खेतीको ही महाराष्ट्रोके उपद्रवके समयमे उपयोगी जाना था। मेवाड़की सर्वसाधारण प्रजा पर जितने अत्याचार आरम्भ हुए थे आश्चर्यका विषय है कि मालवेमे उस प्रकारसे अफीमकी अधिक खेती होती थी। सवत् १८४० सन् (१७८४ ईसवी) मे अत्याचार और उपद्रवोके आरंभ होनेसे प्रजाने अन्यत्र भागना प्रारम्भ किया, संवत् १८५७ सन् १८०० ई० में प्राणभयसे अन्य देशमे भागनेवाले मनुष्योकी संख्या अत्यन्त वढ़गई एवं क्रमसे संवत् १८७४ सन् १८१८ ई० मे सारा देश एकवार ही जनशून्य होगया। जितनी अफीम तैयार होती थी उतना ही उसका व्यवहार भी बढ़ता जाता था। विशेष करके विदेशमे भी इस अफीमकी खानगी बहुतायतसे बढ़ गई"।

"भागनेवाले मनुष्योने चम्बलके किनारे मन्दसोर खाचरोदा नील और अन्यान्य निम्न मालवेदेशमे गमन किया। उन्होने वहाँ जाकर आपासाहब और उनके पिताके आश्रयमे शान्ति सहित निवास किया, आपा साहबने उस उपजाऊ मालवेमे स्वयं जाकर खेती की थी। आपा साहवने पहिले जो सब कूपादि खुदवा कर समस्त कृषि क्षेत्रका उत्कर्ष साधन और उन सब कूपादिसे कृषि कार्य किया था; नवीन किसानोको उन सब क्षेत्रोमे खेती न करने दी थी तब इन्होने उनको रुपया दिया, और जिस भूमि पर उपजाऊ न होनेके कारण उसमे किसान खेती नही करते थे वही सब भूमि उनको खेती करनेके लिये दी। उन्होने उसी धनसे कुएँ खुदवा कर खेती करनी प्रारम्भ करदी। इन उपनिवेशी किसानोने गेहूं जौ इत्यादिकी खेतीको एकवार ही छोड़कर केवल मकईकी खेती की थी, और उसी खेतमे अफीम और गन्नेकी खेती आरम्भ करनी करदी"।

किस प्रकारसे अफीमकी खेती होती है उसके सम्बन्धमे साधू टाड् साहब लिखते है "खेतमे मकई तथा सनकी खेतीके होचुकने पर उसकी जड़ें उखाड़ कर पहिले जलादी जाती है। और पीछे सब खेतमे जल देकर उसको भली भांतिसे सीचते है, तब उसमे हल चलाया जाता है।

गोवरके खादको बहुत दिन पहिले तैयार कर रखते है। वर्षाऋतुमे एक बड़ा भारी गड्ढा खोदकर उसमे गोवरको रखते है, और बीच १ मे बाँससे उस गोवरके छूछड़ोको मिला देते है। जब उस गोवरका रस बनजाता है तव उसको खेतमे देते है, जिन किसानोके गौ नहीं होती और जो गोबर मोल लेनेको समर्थ नहीं होते वह खाद देनेके लिये पशुपालकोक साथ वंदोवस्त करके एक २ दल बकरी भेड़ोका रात्रिके समय खेतमे बांध रखते है। इसी कारण नियमित आहारसे पशुपालकोको पैसा देते है। वह पशु खेतमे जो मल त्याग करते है उसीका खादरूपसे व्यवहार होता है। छ सात बार हल और मोया दिया जाता है। जिससे जल सुभीतेके साथ जासकै इस लिये कुछेक ऊँचा करके मट्टीकी खाद दीजाती है। पीछे उसमे बीज वोकर जल देते है। उक्त जलदानके सातवे दिन पीछे या ग्यारहवे दिन बीज अंकुरित होता है, और पच्चीस दिनमे नये २ पत्ते निकल कर शोभायमान होजाते है, और जब सूखी हुई देखते तभी उसमे फिर जल देते है।

मट्टीके कुछेक दूर होने पर किसान अपने कुटुम्बसहित खेतमे आकर प्रत्येक वृक्षको उखाड़ कर श्रेणी वद्धभावसे आठ इञ्च अलहदा एक २ वृक्षको लगाते है। और वृक्षोके चारोओर मट्टी लोहेकी शलाकासे भर देते है। इस समयमे वृक्षोका परिमाण तीन इञ्च ऊंचा होता है। एक महीनेके पीछे कुछ थोड़ा २ जल देना प्रारंभ करते है, मट्टीके सूखते ही फिर वृक्षोके चारोओरकी मट्टी गोड़दी जाती है, दस दिनके पीछे फिर एक वार जलसे सींची जाती है, दो चार दिनके उपरान्त वृक्षके दो एक स्थानों पर कलिये निकल आती है। कलियोके निकलने पर फिर एक वार वृक्षकी जडमे जल दिया जाता है। जल देनेके २४ वा ३६ घंटे पीछे वृक्षके समस्त फूल खिल जाते हैं फूलकी आधी पखड़ियोके गिरते ही किसान फिर वृक्षकी जड़मे जल देते है। जल देनेके पीछे सभी फूलोकी वची बचाई पखड़िये गिर पड़ती है, तथा फूलके नीचेका वीजाधार क्रमशः शीघ्रतासे वढ़जाता है। थोड़े ही समयमे उन सव फूलोके गिरिजाने पर उस बीजाधारके गात्र पर एक प्रकारका सफेद चूर्ण दिखाई देता है, किसान उसको देखकर जान जाते है कि अब शीघ्र ही पोश्तकी डंडीको भेदन करना होगा।"

उस डडीको तीन भागोमे विभक्त करते है। एक भागमे तो उस प्रकारसे बीजके आधारका गात्र वेधन किया जाता है। जिस अस्त्रसे छेदन करते है वह छोटा त्रिमुखा और शलाकाकी समान होता है। जिससे वह अस्त्र भलीभॉतिसे बीजाधारमे प्रवेश न कर सकै और जिससे सार रस बीजाधारमे न रहने पावै, इस कारण वह बड़ी सावधानीसे उस भेदनकार्यको समाप्त करते है। बीजाधारके नीचेसे ऊपरके भागतकको जब चीर डालते है तब दूधकी समान रस निकल कर बीजाधारके ऊपर जमता जाता है। क्रमानुसार तीन दिनकत सूर्यके उत्तापके समय प्रत्येक वृक्षमे तीन वार करके उपरोक्त प्रकारसे भेदन कार्य करते है। प्रातःकाल ही उस रसको छुरीसे उस वजिाधर परसे छुटाते है। चौथे दिन प्रत्येक बीजाधार पर फिर एक वार पूर्व प्रकरणके अनुसार भेदन करके देखते है कि इसमे और भी रस है या नहीं। वह जमाहुआ रस जिससे सूख न जाय, इस लिये प्रतिदिन प्रातःकाल ही मसीनाके तेलके वर्तनमे भिगोकर रखते है, वीजाधारसे समस्त रस जब बाहर होजाता है तव उसमे केवल वीज ही रहजाता है। उस समय समस्त बीजाधारके वृक्षोको उखाड़ कर किसान अपने २ घर लेजाते है और मट्टीमे रख कर उसके ऊपर कुछ एक जल सीच एक वस्त्रसे ढक कर उस भावसे प्रात.काल तक रखते है। पीछे प्रात.काल ही पशुओके पैरोसे उन सब बीजाधारोको दबाया जाता है, तव उसमेसे सव बीज बाहर निकल आता है। किसान उस बीजको पोश्तका तेल तय्यार करानेके लिये तेलीके घर भेज देते है, और वीजका अन्य पतित अंश जला डालते हैं, कारण कि पशुओंके उस विषैली वस्तुके खानेसे घोर अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। मेवाड़के अन्य तेलोंकी अपेक्षा वह तेल अधिक प्रकाश देता है। किसानोने जो हिसाव किया है कि एक मन वीजसे दो सेर अफीमका रस तैयार होता है, एकसौ वारह मन वीजका मूल्य इस समय १२५) रुपया है"।

कर्नल टाड् साहब फिर लिखते है कि मालवेकी एक बीघा जमीनमे पावसे पौन-सेर तक अफीमका रस बनता है। किसान इस प्रकारसे रस संग्रह करके व्यापारियोको प्रचलित मूल्यके अनुसार अफीम बेचते है। वह व्यापारी उस अफीमके रसको कपड़ेकी थैलीमे रख कर घर लेजाते है, खरीदनेवाले पहिले पोस्तके पत्तोका संग्रह कर लेते है, दो तीन इञ्च पोस्तके पत्ते बिछाकर उस पर पोस्तके डोरोंमेसे अफीमको बिछा कर उन पत्तोको मोड़कर ढक देते है, और पाँच महीने तक इसी अवस्थामे रहने देते है, यदि रस पतला है, वा तेल मिला है तो दश अंशका सात अंश सार पदार्थ रह जाता है, और यदि शुद्ध रस हो तो उसमे सार पदार्थ आठ अंश निकलता है। व्यापारी लोग पीछेसे उस सार पदार्थको राजपूतानेमे से खरीदते और विदेशमे लेजाकर बेचते है। मध्यम दरजेकी अफीमके सम्बन्धमे टाड् साहबने पीछेसे लिखा है कि "माही नदीके किनारे कन्थल नामक प्रदेशमे (जिसमे प्रतापगढ़ देवलिया शामिल है) बहुतायतसे अफीम होती है, और वहांके किसान लोग उसमे एक वस्तु मिलाते है, वह मिलीहुई अफीम चीनमे मालवेकी अफीम कहा कर बिकती है, और उसका मूल्य भी कम मिलता है, नीचे लिखी हुई रीतिसे वह द्रव्य मिलाया जाता ह, उत्तम गुड और गोंद बराबरले, उससे आधी उसमे अफीम मिलाय चूल्हे पर चढ़ाते और नीचे भलीभांतिसे अग्नि प्रज्वलित करते है, उन सब वस्तुओके भलीभांतिसे मिलजाने पर कढ़ाईको उतार लेते है, ठंढी होने पर उसको पोस्तके बीचमे रखकर तेलकी हांड़ीमे रखते है, यह अफीम अत्यन्त हानिकारक है, राजपूतानेके लोग इसका कभी सेवन नही करते"। संवत् १८५७ मे अफीमका बाजार १६ से इक्कीस रुपये सलीमशाही एक ओलियन था संवत १८७६ मे ३८ वा ३९ रुपये तक है।

टाड् साहब फिर लिखते है, "पिछले चौवालीस ४४ वर्षसे इस हानिकारक अफीमकी खेती जो इस देशमे प्रबल हो चली है, ऊपर जिसका विवरण लिख आया हूँ वही अनिष्टकारक अफीमका विवरण है, वृटिश गवर्नमेण्ट इस समय अपनी इस अफीम की खेतीको बढाना चाहती है, किन्तु उसमेसे इस रीतिको छोड़ एक कानून बनावै और उसके जरियेसे यह महाहानिकारक अफीम तैयार न होसकै ऐसी व्यवस्था करदे। ४४ वर्षोसे विना मिलावकी अफीम जिस भांति बनती आई है इस रीतिके चलानेकी धारा जारी करै तौ आगे होनेवाले राजपूत इसका सेवन न करेगे। और सद्व्यवहार और सुन्दर व्यवस्थाके होजानेसे अवश्य ही मेरी प्रशंसा करैगे।

हमारी खमेली अफीमके व्यवसायको छोड़ देनेसे हानि होगी, यह नही मानना चाहिये, वरन इस कामको करना हमारा धर्म है यह मानना चाहिये, अफीमके सेवन करनेसे प्रजाकी शारीरिक और आर्थिक हानि होती है, और प्रतिदिन अवनति ही होती जाती है, इस खेतीके बदले रुई नील, ईख और उत्तम फसलकी खेतीके बढ़ानेमे सहायता करनेसे सर्व साधारणकी आयु, धन, और बलकी वृद्धि हो सकैगी। मै राजपूतानेको राजनैतिक पतनके मुखसे उद्धार किया चाहता हूँ-किन्तु केवल

राजपूतानेकी स्थाई रक्षा करनेसे क्या होगा, उसके नैतिक बल और उसके अन्य स्थानो मे भी इसकी खेती रोकनी चाहिये, कविवर वैरन साहबने ग्रीसके सम्बन्धमे कहा है ।

"T' is Greece but living Greece no more"

इसको ग्रीस कहते है–किन्तु जीवित ग्रीस अब नही है, हम भी उन्हींके समान रजवाड़ेके सम्बन्धमे कह सकते है कि यह रजवाड़ा कहा जाता है, परन्तु यह जीवित रजवाड़ा नही है ।

अफीमके सेवनसे युवा अवस्थामे ही मन और बुद्धिकी स्फुरणशक्तिकी हानि होती है– शरीर आलसी और असाहसी होजाता है, मै अपनी बुद्धिके अनुसार जो इस विषयमे कहता हूँ उसको अपनी शक्तिके अनुसार पूर्व कहीहुई बातको काममे लानेकी चेष्टा भी करता हूँ । मैने सिहासन पर विराजमान राणासे लेकर सामान्य दरजेके मनुष्य तकसे इस बातकी शपथ कराली है कि वह कभी भी अपनी प्यारी संतानको इस प्राणनाश करनेवाली अफीमका सेवन न करावै । किन्तु केवल शपथ करा लेनेसे ही क्या होगा जब तक कि वह अफीमकी खेतीका करना न छोड़ेगे ।

यदि किसान लोग इस जमीनमे इस खेतीके बदले अन्न गेहूँ आदिकी खेती करै तो इसमे बड़ा लाभ हो ।

पंचम अध्याय ५.

धारेश्वर–रत्नगढ़ खेरी–चारणोका उपनिवेश–छोटा अतवा–डूंगरसिंह–शिवसिंह–कालामेघ–उमेदपुरा–वहाँके सामन्त–सिङ्गोली–भवानीका मंदिर–राणा मुकुलकी स्मारक लिपि–हाड़ाजातिका प्रवाद वाक्य–आलूहाड़ा ।

महात्मा टाड् साहबने १४ फर्वरीको धारेश्वर नामक स्थानमे जाकर लिखा है कि "कुनेरोसे धारेश्वरतक डेढ़ कोशका रास्ता क्रमानुसार नीचेको आया है, उस डेढ़ कोशके रास्तेमे आधे स्थानकी मट्टी उपजाऊ है, और आधे स्थानमे पत्थरोके बड़े २ टुकड़े पाये जाते है । धारेश्वर ग्राम एक अत्यन्त सुन्दर रमणीक स्थानमे बसा हुआ है, सामने ही निर्मल जलवाली नदी बहरही है, इसके दाहिनी ओर ऊंचे २ वृक्षोका शोभायमान वन है । कितने ही कछवाहे राजपूत यहांकी पृथ्वीके अधिकारी है । परन्तु वह करस्वरूपसे बहुतसा रुपया कुनेरोके अधीश्वरको देते है । सूर्योदयके होते ही हम बहुतसी छोटी २ कुटियोसे पूर्ण ग्रामको लांघ कर आये, देखा कि बहुत सी हरिणियां हमारी ओरको देखती हुई धीरे २ जारही है, वह मार्ग इतना पथरीला है कि उस पर घोड़ेपर सवार होकर हरिणियोको शिकार करना असम्भव है" ।

रत्नगढ़ १५ फर्वरी–रत्नगढ़ खेरी, यहांसे साढ़े आठ कोश दूर है। धारेश्वरसे एक कोश दूर कुनेरोंकी सीमाका अन्त हुआ और खैरीके चौरासी ८४ ग्रामोंकी सीमा आरम्भ हुई है, यहांसे खेरी तक मार्ग क्रमानुसार धीरे २ ऊँचा होगया है, परन्तु उसकी ऊंचाई मेवाड़के आभ्यन्तरिक समतल क्षेत्रमे एकसौ फुट ऊंची नही होगी। मार्गके चारोओर जंगल है, और पत्थरोंके टुकडे उसमे विराजमान है, परन्तु स्थान २ पर मार्गके आस-पास काले रगकी श्रेष्ठ मट्टी पाई जाती है। हम बराबर धारेश्वर "नाला" नामक एक छोटी नदीके किनारे होकर गये, वह नदी एक ऊचे शिखर परसे बड़े तीक्ष्ण वेगसे नीचेको गिरकर अद्भुत दृश्य दिखा रही है, कितने ही छोटे२ ग्रामोंमे होते हुए हम अन्तमे चारणोके एक उपनिवेशमे जा पहुँचे। वहाँ मुरलाके रहनेवाले कितने ही बन्धुओके साथ हमारा साक्षात् हुआ। जो चारण वंदी करनेके स्वत्वसे स्वत्ववान थे, वह लोग उसको नही भूले केवल यहांको चारण स्त्रियोमे सभीको वृद्धा कहकर उनके द्वारा उस प्रकार संगीत करते हुए वह हमको वंदी न करसके–इसीसे वह उतने प्रसन्न नही हुए। मै यहाँकी वृद्धाचारण स्त्रियोंके कलशेमे पाँच रुपये भोजन करनेके लिये देकर इस स्थानसे चला आया खेरीके किमासदार शिखर परके रहनेवाले अपने किलेमेसे दोसौ अश्वारोही और पैदल सेना लेकर हमारा सत्कार करनेके लिये आगे बढ़े, वह वृद्धलाल-जीवेलालके कुटुम्बी थे, वह जैसे बुद्धिमान् थे उसी प्रकार भद्र मनुष्य थे। हमारे सब डेरे नगरके पास ही पड़े हुए थे। वह पंडित मुझे बड़े आदर सत्कारसे वहाँ लेगये। हमारे परम मित्र लालजीने तथा उनके अधीश्वर प्रभुने सेधियाके प्रतिनिधि स्वरूपसे (जिन सेन्धियाके डेरोंमे हम बारह वर्षतक रहे थे) अभ्यर्थना करके विदा ली। और जानेके समय वह मुझे किलेमे आनेके लिये कह गये, परन्तु उस किलेमे प्राचीन कोई वस्तु देखने योग्य नही थी, और इनका निमन्त्रण स्वीकार करनेसे इनके अधीश्वर मनही मनमे विरक्त होगे, इस कारण मैने उस निमन्त्रणको स्वीकार नहीं किया"।

"रत्नगढ खेरीके चौरासी ग्राम है संवत् १८२८ सन् १७७२ईसवीमे युद्धके खरचे के पलटेमे माधोजीने सेन्धियाको यह देश दिया था, संवत् १८३२ तक उनके राजस्व की रीतिके अनुसार हिसाब किताब रक्खा गया। इसके पीछे वह देश सेन्धियाके जामाता वरजी तापको देदिया, इसी कारणसे वह मेवाड़से सर्वदाके लिये छीना गया है मेवाड़के सोलह सर्वप्रधान सामन्तोमेसे वेगूके सामन्तकी विश्वासघातकताके कारण यह देश राणाके अधिकारसे निकल गया। यह स्थान उक्त वेगूके सामन्तके अधिकारी देश से लगाहुआ था, सामन्तने राजभक्तिकी जड़में पदाघात करके इसको अपने अधिकारमे कर लिया, राणाने सेधियाके उक्त सामन्तको निकाल कर चौरासी पर अधिकार करनेके लिये सहायता करनेको कहा। महाराष्ट्रनेता सेन्धियाने उस सुअवसरमे केवल चौरासी पर ही नहीं वरन वेगू देशतकको अपने अधिकारमे करलिया। और अन्तमे वेगूके सामन्तसे वहुतसा धन ग्रहण किया, और सामरिक व्यय करनेके लिये वेगू देशके ४० ग्राम गिरोरूपसे अपने हाथमे कर लिये। इस स्थानसे प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त रमणीक दिखाई देता है। पंडितजीने ऊँचे शिखर परसे खड़े होकर नीचेको खेरी तक देखा (वह

कह सकता था कि मैं उन सबका राजा हूं जो मेरी दृष्टिके नीचे है) यदि सफल होनेकी संभावना होती तो इस देशमे उसका कैसा अधिकार है उसके सम्बन्धमे मै विवाद कर सकता था "।

कर्नल टाड् साहब चार कोश दूर छोटे अतवा नामक स्थानमे जाकर लिखते है, "कि यहाका किला पर्वतकी जड़मे बना हुआ है, और भलीभांतिसे उत्तम रीतिसे बना हुआ दिखाई आता है। किलेके जिस ओर सरलतासे जाया जाता है, उसी ओर फिर नवीन गठन हुआ है। राज्यकी साधारण शांतिके भंग होनेके समय इसका गठन कार्य स्थापित था। परन्तु वास्तवमे यदि दो तोपोसे इस किलेके ऊपर क्रमानुसार गोलोकी वर्षा की जाती तो यह सदह होता है कि २४ घंटे तक इस किलेकी रक्षा होसकती है या नही, कारण कि किलेके बहुत धेरे ही शिखरके ऊपरी भागसे किलेके बीचका हिस्सा सब दीखता था। हम पथ प्रदर्शकसे पूछते है कि यह किला किसी समय शत्रुओसे घिरा था, या नहीं, उसने कहा कि नही, यह किला तो कुमार है जबतक कोई किला शत्रुओसे न घेरा जाय तबतक वह किला कारा रहता है।" हमने शिखरके ऊपरी भागपर खड़े होकर प्रकृतिका परम रमणीय दृश्य देखा ।

"उस किलेसे दो कोश दूर पर हम और एक ऊंचे शिखर पर स्थापित अमरो नामक ग्राममे गये, वहांसे बांई ओरको तारागढ़ देखा । उस किलेमे एक प्राचीन खुदी हुई लिपि है यह जानकर एक पण्डितको उस लिपिके लानेके लिये भेजा । आधे कोशसे चलकर हमने और भी कुछ एक ऊंचे शिखरको देखा, और सुना कि उस शिखरसे क्रमशः पठारकी सीमा चम्बलके किनारे तक समाप्त हुई है "।

" छोटा अतवा देश भी वेगूके मेघावत सम्प्रदायके अधिकारमे था, अधीश्वरका नाम डूंगरसिह है। यह भी मेरे साथ यहॉ आकर मिले। यही कुछ काल पहिले पाठारमे सर्व प्रधान दस्युरूपसे गिने जाते थे। उन्होने अत्यन्त तस्करता करनेके लिये यद्यपि इस समय कुछ गर्व नही किया, परन्तु उस कामसे मनुष्य उन पर घृणा करेंगे यह भी नहीं विचारा। यद्यपि वह उस देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक सबोपर छापा मार लूटते रहते थे, परन्तु विशेष कर मरहठो पर ही अधिक अत्याचार और उपद्रव करते थे। उनके पूर्व पुरुष ' कालामेघ ' कहला कर प्रसिद्ध हुए थे। इन्होने भी उसी भाति कीर्ति पाई। इनके नामसे आजलो इस प्रदेशके मनुष्य कॉपते है—"डूंगरसिह आया " इस शब्दसे सभी व्याकुल हो अपने धन और प्राणोकी रक्षाके लिये उद्योग करते है । मरहठोके साथ इन डूंगरसिहके विवादका विशेष कारण था, मरहठोने ही उनके पितासे नादोला और उक्त चौरासी गांव छीन लिए थे। और सेन्धियाने उनके पहाडी देश अपने हस्तगत करलिये थे, इसी प्रकारसे अन्तमे हुलकरके हस्तगत हुए। परन्तु डूंगरसिहके पिताने हुलकरको ऐसा भड़का दिया कि उसने अपने नौकरोके साथ मिलकर प्रजापर घोर अत्याचार करने प्रारंभ करदिये । अतमे हुलकरने उनको चारोंग्रामोका अधिकार वंशानुक्रमसे देदिया। वीस वर्षके

बीतने पर वह चारोंग्राम फिर छीन लिये गए तब वह अस्त्र शस्त्र धारण कर अपने पुत्र डूंगर सिहको लेकर सुसज्जित हुए। यह अपने कुटुम्बकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेके लिये महापुराके राजाके समीप जाकर नंगी तलवार हाथमे लिये शत्रुओंसे बदला लेनेको प्रवृत्त हुए। पिता श्योसिह, पुत्र डूंगरसिह, और भी अनेक वीर तेजस्वी राजपूत संहारमूर्ति धारण कर बदला देनेके लिये प्रत्येक ग्रामको लूटते हुए अंतमे मालवेके भीतर जा घुसे। और वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटकर अपनी पार्वत्य वासस्थली छोटे अतवामे ले आये। परन्तु श्योसिह घोर शत्रुओसे घिर रहे थे। उनके शत्रु उनको विपत्तिमे रखनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। एक दिन श्योसिह अपने पुत्रसहित बहुतसे श्रेष्ठ बैल लिये अपने ग्रामको जा रहे थे, कि इसी अवसरमे महाराष्ट्र नेता भाउसिहने गुप्तभावसे रक्खी हुई एक अश्वारोही सेनादलके साथ अचानक आकर इन पर आक्रमण किया। पिता पुत्र दोनो ही उत्तम घोड़ो पर सवार थे, इस कारण शत्रुसेनाकी संख्या अधिक देखकर बड़ी शीघ्रतासे घोड़ा चलाकर मंड़लगढ़ नामक ग्रामकी ओरको चले। उस महाराष्ट्री घुड़सवारी सेनाने भी उनका पीछा किया। परन्तु पिता पुत्र दोनोने ही एक नालेके भीतरको घोड़े चला दिये, पिता श्योसिहका घोड़ा जलमे डूबगया। इस कारण वह महाविपत्तिमे पड़े, यह बारंबार जलमेसे उछलते कूदते थे कि इसी अवसरमे एक महाराष्ट्रने एक बड़ा तीक्ष्ण भाला इनकी कमरमें मारा, जिसके लगते ही इनका प्राणपक्षी उड़गया। युवक डूंगरसिह अपने पिताकी अपेक्षा सौभाग्यशाली थे इस कारण वह शत्रुओंका तिरस्कार करतेहुए सबके देखते देखते नालेके पार होगये। महाराष्ट्रोंको उस प्रकारसे नालेके पार होनेका साहस न हुआ। अन्तमे डूंगरसिहने नालेसे अपने पिताकी ल्हाशको निकालकर एक कपड़ेमे बांधकर घोड़े पर रख लिया, और आधी रातके समयमे वहांसे चल कर अपनी पितृभूमि नदोवाईमे आकर उन्होने पिताके शवका सत्कार किया। यद्यपि मरहठोने वीर तेजस्वी शिवसिहके प्राणनाश किये थे परन्तु उससे अशान्तिकी कुछ भी घटती न हुई, वरन डूँगरसिहके हृदयमें प्रतिहिंसाके प्रज्वलित होते ही वह अशान्ति और भी बढ़ गई, अंग्रेज गवर्नमेण्टके इस शांति स्थापनके पूर्व कालतक डूँगरसिहने उसी प्रकारसे घोर अत्याचार मरहठो और प्रजापर किये। जब डूँगरसिहसे टाड् साहबने कहा कि नादोवाईके प्रधान कर्मचारी गणोके साथ आप अनेक प्रकारके कठोर उपद्रव करते है, तब उन्होने बड़ी सरलतासे उत्तर दिया कि जैसे होगा वैसे हमै अन्त तो संग्रह करना होहीगा? महाराष्ट्रगण हमारी पितृभूमि पर अधिकार किये है, इसी कारण उन्होने चोरी करनी प्रारंभ की है। मैने महाराष्ट्रोसे कुछ थोड़ी सी भूमि लेकर फिर डूंगरसिहको देदी"।

साढ़े चार कोश दूर सिङ्गोली नामक स्थानमे १७फर्वरीको जाकर कर्नल टाड् साहब ने लिखा है "कि यह आंतरी नामक जिलेका एक उपविभागका पट्टेका प्रधान नगर है। इसके चारोओर पर्वत शोभायमान है। भामूनी नदी इस देशमें बहती है। यहाँकी भूमि उपजाऊ है इस कारण अनेक प्रकारका धान्य यहाँ उत्पन्न होता है। पाठार ग्रामकी कुटियोंकी दीवारे मट्टीकी बनी हुई बड़ी ऊँची है, और उनकी छत्तै फूससे छाई

हुई है। अधिक क्या कहें उमेदपुरा नामक जिस ग्राममें स्थानीय सामन्तके चचा रहते है, उनके रहनेका स्थान भी सर्वसाधारणकी समान है। जिस कुटीमें विलायतके दीन दरिद्री किसान तक भी नहीं रह सकते। अत्यन्त दीनदशा और शोचनीय अवस्था होने पर भी स्थानीय सामन्त अपने अधीश्वर प्रभू वेगू सामन्तके सहित वृटिश एजेण्टकी ओर सम्मान दिखानेके लिये अपने पुत्र भतीजे और पन्द्रह कुटुम्बियोंके साथ आये, इतनी शोचनीय अवस्था क्यों थी वह यही कि ऊंचे वंशमें जन्म था, और वंशका ऊंचा भाव किसी प्रकार भी लुप्त नहीं होसकता, यह वात उमेदपुरावाले पहाड़ी सामन्तोंके द्वारा विलक्षणरूपसे प्रमाणित हुई है। राजपूत मृगयाके समयमें जिस प्रकार शब्जरंगका अंगरखा और उसी रंगकी पगड़ी बाँधते थे, उमेदपुराके सामन्त भी उसी वेशसे बर्छी हाथमें लेकर एक बलवान घोड़े पर सवार होकर आये थे। घोडेका पहरावा भी उनके प्रभुकी समान आडम्बर शून्य था। उन सामन्तके नौकर भी उनके साथ पैदल आये, वे सब पाठारकी वनैली हरिणियोंकी समान सदा प्रसन्न चित्त थे, और विचार उनका चिन्ता हीन था, इस वातको वह कुछ भी नहीं जानते थे कि विलासिता किसको कहते है, वह डेरोतक हमारे साथ आये, तव मैंने सामन्त और उसके पुत्र और भतीजेको बहुत सुन्दर लालरंगकी पगड़ी और कितनी ही विलायती वारूद उपहारमें देकर उसको विदा किया। उन्होने भी महा प्रसन्न होकर मुझसे विदा ग्रहण की। वीचौरसे जो मार्ग मेवाडके मैदानसे पाठारको जाता है उसका यह काला-मेघ वेगूवाला अधीश्वर है।

"सिङ्गौली जैसा स्थान है अथवा यह जिस भावसे स्थापित हुआ है, इस्से इसको एक अच्छा नगर कहा जासकता है। इसके चारोओर अभेद्य दीवारें हैं, यहां पन्द्रह सौ मनुष्योंके घर वने हुए है। यहांके अधीश्वर पंडित है। सुशासनके प्रभावसे इस देशके चारोओर अराजकताके विराजमान होने पर भी इन्होंने अपने अधीनके देशको सर्व गुण सम्पन्न कर दिया था। नगरके बीचोबीचमें आलूहाड़ाका बनाया हुआ किला विराजमान है। पण्डितजीने उसीकी दीवारसे लगाकर एक नवीन सुन्दर महल बनाया उस महलके चारों ओर ऊँची २ दीवारें है। इसका व्यास प्रायः एक कोशका है। उत्तर पश्चिम प्रान्तसे आध कोश दूरी पर विजयसेनी भवानीका मंदिर टूटा फूटा दिखाई पड़ता है। मैंने एक खुदी हुई पत्थर पर लिपिको देखा, उसमें मेवाडके अधीश्वरका निम्नलिखित दान खुदा हुआ है, संवत् १४७७, सन् १४२१ ई० आश्विन भृगुवारको महाराज श्रीमुकुलजीने विजयसेनी भवानीके मंदिरमें प्रकाश करनेके लिये तथा उनका निर्वाह करनेको डेढ वीघा जमीन दी। जो कोई मनुष्य इस भूमिको लेगा देवी उसका विध्वंस करेगी, मेवाड़के प्रसिद्ध राणा मुकुलजीने देवीके मंदिरमें दीपक जलानेके लिये यह भूमि दी थी, मुकुलजीने शीशोदियोंके कुलमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। रायपुर नामक स्थानके घोर युद्धमें इन्होंने दिल्लीके बादशाहके एक पुत्रको मारडाला था। विख्यात लालवाई इनकी कन्या थी"।

" इस पाठार देशमें हाड़ाजातिके बल विक्रम तथा शासनके सम्बन्धमे बहुतसे प्राचीन वाक्य आजतक सुनाई देते है। बहुत पहिले हाड़ाजातिने इस पहाड़ी देशमे निवास करके इस राज्यकी रक्षा करनेके लिये स्थान २ पर बारह किले बनाये थे, उन सब किलोके टूटे फूटे अंस आजतक दिखाई देते है। यद्यपि हाड़ाजातिके राजा, " पाठारके अधीश्वर " नामसे पुकारे जाते थे तथापि मेवाड़के राजाको अपना प्रभू जान कर वे उनकी आज्ञाका पालन करते थे, उन बारह किलोमेसे रत्नगढ़ नामका किला एक बार भी विध्वंस नहीं हुआ, पाठारके दिलवार गढ़ नामक किलेका टूटा फूटा अंश इस समय तक भी दिखाई पड़ता है। उसी किलेको लेनेके लिये एक समय बेगूके मेघावत सम्प्रदायके साथ ग्वालियरके शक्तावतोका भयंकर विवाद और युद्ध हुआ था। परा नगर वा पारोली नामका किला उस स्थानसे कुछही दूर है। इन किलौमे बमोदाका किला सबसे अधिक प्रसिद्ध है, वह पश्चिमकी सीमामे स्थापित है, उस किलेके ऊपरसे मेवाड़के समस्त समतल देश दीखते है। यद्यपि कईसौ वर्ष पहिलेसे हाड़ा जाति इस पाठार देशसे भाग गई थी, किन्तु तौ भी बमौदाके आलूहाड़ाका नाम आजतक यहाॅ विख्यात है, और जो वनके भील पशुओकी समान केवल जंगलके वनके फल मूलादिका आहार करके समय व्यतीत करते थे। उनमे भी आलूहाड़ाका नाम भली भांतिसे विदित है। हमारी यह इच्छा है कि अन्य मार्गसे होकर आनेके समय पाठारके आलूहाड़ाका वासस्थान देखे इसी कारणसे मैने आलूहाड़ाके बलविक्रमकी एकमात्र कहानी इस स्थानपर वर्णन की है।

" एक समय आलूहाड़ा मृगयासे लौट कर आरहे थे कि इसी अवसर पर मार्गमे एक चारण इनको मिला और उसने इनको आशीर्वाद दिया। परन्तु उस आशीर्वादके बदलेमे चारणने कहा कि " आपके शिरपर जो पगड़ी बॅध रही है वह मुझे दीजिये और कुछ मुझे नही चाहिये "। आलूहाड़ा उसके यह वचन सुन कर महा आश्चर्यमे हुए परन्तु कविके क्रोधित होनेसे पाठारमे बड़ी निन्दा होगी, इस भयसे उन्होने उसी समय अपने मस्तकसे पगड़ी खोल कर चारणको देदी। चारणने बडी शीघ्रतासे उसे अपने शिरपर बाँधकर आशीर्वाद दिया कि " आप हजार वर्ष तक जीवित रहै " यह आशीर्वाद देकर विदा हुआ। चारण शीघ्र ही मरुदेशकी राजधानी मंडोरमे आया। मंडोरपतिके निकट आकर चारणने राठौर जातिकी जय उच्चारण कर बॉये हाथसे उस पगड़ीको उतार अपनी बगलमे रखकर दहने हाथसे मंडोरपतिको आशीर्वाद दिया। चारणको इस प्रकार अनियमित रूपसे दहने हाथसे अभिवादन करते हुए देखकर मंडोरपतिने कारण पूछा, यह क्या? चारणने कहा, ' आलूहाड़ाकी पगड़ी संसारमे किसीके निकट नही झुक सकती मेवाड़के पहाड़ी देशके एक अत्यन्त सामान्य अपरिचित सामन्तके प्रति चारणको ऐसा सम्मान दिखाते हुए देख कर मरुदेशके प्रभुने अत्यन्त क्रोधित होकर चारणके हाथसे वह पगड़ी लेकर सभाके कमरेसे बाहर डालदी। आलूहाड़ाने चारणको जो पगड़ी दी थी वह बात वह एक बारही भूलगये थे। वह एक समय विश्रामके लिये सुखभोग रहे थे कि इसी समयमे सूने मस्तक तथा उस कमरेमेसे पगडीको लेकर वह चारण उनके पास आकर खड़ा होगया। और वीरश्रेष्ठ आलूहाड़ाके निकट जाकर मंडोरके राठौर अधीश्वरने

जिस प्रकार अपमान किया था वह सभी समाचार कह सुनाया। आलूहाड़ा जिससे शीघ्र ही राठौरपतिको इसका वदला दे इसके लिये वारम्वार जिद करने लगा ”।

“ वीर श्रेष्ठ आलूहाडा चारणके प्रति महाक्रोधित हुए। चारणने अपनी बुद्धिके दोषसे इस महा अपमानकारक समुद्रमे उनको डुबोदिया, उन्होने क्रोधित होकर कहा “ क्या मैने आपसे यह नही कहा कि आप मुझसे भूमि मॉगै गाय इत्यादि पशुकी प्रार्थना करै, अथवा धन मॉगै इन सबको मै देनेके लिये तैयार हूँ आप मेरे मस्तक परके इस सामान्य वस्त्रके टुकड़ेके अतिरिक्त और कुछ भी लेनेको तैयार न हुए किसीसे भी सतुष्ट न हुए । इस समय इस वस्त्र खंडकी अवमाननाके लिये मुझे अपना मस्तक देना होगा। मारवाड़के ठाकुर तक भी मेरी इस पगड़ीके, ऊपर इस प्रकारका अपमान करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, फिर विचारे मडोरपति तो कौन चीज है? वीरश्रेष्ठ आलूहाडाने शीघ्र ही अपनी सम्प्रदायके समस्त वीर और अपनी सेना-दलको बुला भेजा। शीघ्रतासे एक वंशके पांचसौ वीर वमौदाके किलेमे इकट्ठे होगये, और उन्होने यह कहा कि हमै आलूहाड़ाके अधीनमे किस युद्धमे जाना होगा? आलूहाड़ाने उन आये हुए सामन्तोको समझा दिया कि, मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये जाना कोई साधारण वात नही है–असीम साहस और अतुल पराक्रमके प्रकाश करनेका प्रयोजन है, फिर भी उस युद्धसे लौटनेकी आशा नही है। परन्तु सभी आलूहाड़ाके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये युद्धमे जाकर जीवन देनेके लिये तैयार हुए। शीघ्र ही जौहर व्रतका अनुष्ठान हुआ। उस जौहर व्रतसे समस्त वीरवृन्द अपना २ जीवन देनेके लिये तैयार हुए, युद्धयात्राका दिन निश्चय होगया। आलूहाड़ाके कोई पुत्र नही था, इससे इन्होने अपने भतीजेको गोद लेलिया था। उस भतीजेकी रक्षाके लिये उन्होने उसको वमौदाके किलेके सात द्वार पार होकर इन सवके बीचमे जो महल था उस महलमे रख दिया। कुछ काल तकके लिये भोजनकी उपयोगी सभी सामग्री भी संग्रह करके उसके भीतर रखदी एक एक करके सातो द्वारोपर ताला लगाकर आप स्वयं उसकी चावी लेगये। मंडोरपति तथा अन्य कोई शत्रु सहसा किलेमे आकर जिससे उक्त पुत्रका प्राण नाश न करने पावै, इस कारण आलूहाड़ाने भलीभांतिसे प्रवंध करादिया”।

मडोरके अधीश्वर भी जानगये थे कि उन्होने आलूहाड़ाकी पगडीके प्रति अपमान करके आलूहाड़ाकी क्रोधाग्निको प्रज्वलित करादिया है, परन्तु पर्वती वीर आलूहाड़ाके द्वारा भविष्यत्मे किस प्रकारका कांड होगा इसका कुछ भी विचार न करसके, पर उसने यह प्रचार कर दिया कि आलूहाड़ाकी सेना राज्यके जिन अंशोसे होकर आवैगी वह सभी ग्राम ब्राह्मणोको दिये जॉयगे। परन्तु आलूहाड़ा वीर साजसे सुसाज्जित हो अपने पहाड़ी देशसे वाहर होकर शेषमे कौशल करनेके लिये अपने अनुचर और सेनादलके शस्त्र शकटोमे रखकर घोडोको वेचनेके लिये जिस भावसे लेजाया करते हैं उसी भावसे लेकर मडोरकी राजधानीमे आये। यह कोई भी न जानसका

कि आलूहाड़ा इस प्रकारके कपट वेषसे आ रहे है। आलूहाड़ा रात्रिके समय राजधानीम आये, और विश्राम करके तरुण अरुणोदयके साथही साथ नगाड़ा बजाकर सेनाको रणसाजसे सजाय वीररूपसे बाहर हुए, नगाडेके बजते ही सोते हुए मंडोरपतिकी निद्रा भंग हुई, वह महा क्रोधसे उन्मत्त होकर परिषदोसे बोले " किस हतभाग्यने साहस करके मंडोरमे नगाड़ा वजाया है ? " उत्तर मिला "वमोदाके आलूहाड़ा है "।

राजा मारूकी माता (चौहान स्त्री) ने आलूहाड़ाको कपट वेषसे आता हुआ देख कर अपने पुत्रसे पूछा, " वत्स ! तुमने जो प्रतिज्ञा की थी कि आलूहाड़ा मंडोरके जिस ग्रामसे होकर आवेगे वही ग्राम ब्राह्मणोको दान करदूँगा, इस समय किस प्रकारसे उस प्रतिज्ञाका पालन करोगे ? आलूहाड़ा कपटवेष धारण कर न जाने किस मार्गसे होकर आये है और कौन २ सा ग्राम इनके रास्तेमे पड़ा है, यह तो कुछ भी नही जाना जाता ? " मंडोरपतिने उस प्रतिज्ञामे वाधा हुई देखकर अन्तमे स्थिर किया कि अन्य उपायसे प्रतिज्ञा पालन की जायगी, उन्होने कहा कि यद्यपि शत्रु आलूहाड़ा पाँचसौ सेना साथमे लेकर आये है तथापि मै वहुतसी सेना लेकर उनके साथ युद्ध न करूँगा। मंडोरपतिने शीघ्र ही प्रस्ताव करके आलूहाड़ाके समीप कहला भेजा कि दोनो ओरकी वरावर सेना तलवार लेकर युद्ध करैगी । आलूहाड़ाने शत्रुके इस दयालुताके व्यवहारसे महा आनन्दित हो मंडोरपतिको धन्यवाद देकर अपनी सेनासे कहा कि " हमलोग जय प्राप्त कर सकेगे । अब पाँचसौ राठौरोकी सेनाका संहार करके अपना वदला लेसकेगे ! " शीघ्र ही पाँचसौ राठौरोकी सेना पाँचसौ हाड़ासेनाके साथ तलवार लेकर युद्ध करनेके लिये रणवेपसे सुसज्जित होकर मंडोरपतिके सम्मुख आई । इधर श्योजी राठौर सैफ हाथमे ले पाँचसौ सेनाके साथ तैयार हुए । उस सहस्र सेनाके तैयार होनेपर दोनो ओरके दोनो प्रधान नेता जैसे ही युद्ध आरम्भ करनेके लिये घोड़ा बढ़ानेके लिये अग्रसर हुए कि वैसे ही अचानक कहीसे वड़ी शीघ्रतासे घोड़ा चलता हुआ एक युवक उस स्थान पर आ पहुँचा । उस युवकको सभी विस्मित होकर देखने लगे, तब उस वीर युवकने राठौर नेताके साथ युद्ध करनेकी प्रार्थना की । उस युवककी वह प्रार्थना दोनो ओरके नेताओकी अवनतिका कारण थी । परन्तु कुछही समयमे आलूहाड़ाने युवकको देखकर कहा, हाय ! न मारने योग्य युवक ! तुम क्या हाड़ावंशको लोप करनेके लिये यहाँ आये हो ? युवकने उसी समय उत्तर दिया, "काका ! जब आप विपत्तिमे पड़े है उस विपत्तिमे यदि मै आपके निकट उपस्थित न हो सकता तो वंश लोप हो सकता था " । पाठक ! यह वही युवक वमोदाके सामन्त आलूहाड़ाके भतीजे है । युवककी सगर्व वीरोचित वाणी सुनकर तथा उनको भाला हाथमें लिये युद्धके लिये तैयार देखकर वीर राठौर नेताके अधरोपर हंसीकी रेखा दिखाई दी । हाड़ा युवक भी उसीकी समान हँसते हुए युद्धके लिये आगे बढ़े । थोड़ेही समयमें युवककी तलवारके आघातसे राठौर नेताने प्राण त्याग किया; शीघ्र ही फिर एक राठौर योधाने हत वीरके स्थानमे आकर युवकके साथ सग्राम करना प्रारम्भ करादिया, पहिले वीरकी समान इस दूसरे राठौरके भी युवककी तीक्ष्ण तलवारसे दो टुकड़े होगये फिर एक और राठौर युद्ध करनेके लिये तैयार हुआ

हाड़ा युवकने उसका भी प्राण नाश कर दिया । इस प्रकारसे एक २ करके पचीस जने राठौर उस हाड़ा युवकके हाथसे मारेगये. परन्तु उसकी देहमे कुछ भी आघात न लगा । ऐसा बोध होता था कि विजयसेनी माता जिनकी प्रतिमूर्ति वमोदाके किलेकी रक्षामे नियुक्त है, उन्होने ही इस किलेके सातों द्वारोको खोलकर युवकको मुक्ति देकर उसके गलेके अतिरिक्त और सभी शरीरको आच्छादित कर दिया था, उसको आलूहाड़ाकी सहायताके लिये भेजकर युवकको हाडा जातिका गौरव वढानेकी आज्ञा दी । प्रवल युद्धके पीछे अंतमे एक राठौर वीरकी तलवारसे युवकका शिर दो टुकड़े होगया आलूहाड़ाने देखा कि मेरा प्राणप्यारा भतीजा सर्वदाके लिये पृथ्वीपर सोरहा है । राठौरकी राजमाता स्वयं इस द्वंद युद्धको देख रही थी, उन्होने विचारा कि युवककी मृत्युसे जीवनकी आशासे निराश हो हाडागण उन्मत्त होकर भयकर कांड उपस्थित कर सकते है, इस कारण उन्होंने अपने पुत्र मडोरपतिको आज्ञा दी कि अव शीघ्र ही युद्ध करना छोड़ दो, और पाठारपति आलूहाडाको सतुष्ट करनेके लिये एक राजकन्या विवाह करनेको दीजायगी । राजमाताकी आज्ञानुसार शीघ्र ही कार्य होगया, आलूहाडाके समानकी रक्षा हुई। विवाह करके आलूहाड़ा अपनी नवीन वधूको लेकर वमोदाको चले गये। उस विवाहके फलस्वरूपमे उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्याकी युवा अवस्था होनेपर वड़ी धूमधामके साथ उसके विवाहकी तैयारी की गई । विवाह होजानेके पीछे आलूहाड़ाकी कन्या तथा मित्र वंधु बांधव और समस्त कुटुम्बरके साथ देवमंदिरमे गये वहाँ वडा उत्सव होता था, अनेक स्थानोसे बहुतसे संन्यासी यती, दंडी और भिक्षुक आकर इकट्ठे हुए। एक वृद्धाभिखारिन भी इस मंदिरमें घुसनेके लिये तैयार हुई, पहरे वालेने उसको भगाकर मंदिरमे न घुसने दिया, वृद्धाने वारवार कहा कि आलूहाड़ाने स्वयं मुझे निमंत्रण देकर बुलाया है, इसी लिये मै आई हूं, मुझे द्वार छोड़ दो । द्वारपालने इस वृद्धाकी वातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको वहांसे भगादिया, वृद्धा महा क्रोधित होकर आलूहाडाको शाप देती हुई चली गई, ऐसा विदित होता है कि यह वृद्धावेषधारी स्वयं विजयसेनी माता ही कपट वेष धारण करके आई थीं । उनके उस शापसे आलूहालाका वंश लोप होगया ।

तारीख १८ जनवरी मुकाम डूगरमऊ आठ मील यद्यपि कई मार्ग यहांसे थे पर हम भिसरौरके मार्गसे चले, यह मार्ग आंतरी और भामूनी नदीके मध्यका था यहां वहुत जंगल और वड़े वड़े नाले है एक स्थान रानीवोरका खाल कहलाता है ।

डूंगरमऊ वरांव यह बारह मौजेका छोटा पट्टा है। १५००० सालाना पैदावार और कर है, यह अव विभक्त होगया है। डूगरमऊ वाला कोटेके अधीन है, अभी उसको तलवार वँधाई गई है, भामूनी नदी इसके किलेकी दीवारके नीचे बहती है यहाँ हरियाली वहुत है। यहाके पर्वतो पर मेघोकी भाँति भाँति की आकृति दिखाई देती है ।

षष्ठ अध्याय ६.



भिसरोरगढ़-रघुनाथसिंह-भिसरोर दुर्गप्रासाद-भिंसरोर नामकी उत्पत्तिका विवरण-मेहोवके युवक सामन्त-जयसलमेरके महाराजके विरुद्धमें उनका युद्धके लिये जाना-जयसलमेर के महाराजका मुंडच्छेदन-उक्त युवक सामन्त स्त्रीकी शोचनीय आत्महत्या-उक्त सामन्तका निर्वासन दंड-भिसरोरदेशके प्रमार सामन्त-प्रमार सामन्तवंशका शासनलोप-नाथजीकी हत्या करना-लालसिंह चान्दावत्को भिसरोरकी प्राप्ति-देशकी तवाही-सन्तरा-उत्सव होली-कोटा-उसका वर्णन।

कर्नल टाड् साहव १९ फर्वरीको भिसरोरगढ़ नामक स्थानमें जो डूंगरमऊसे १० मील चार फरलांग था, जाकर लिखते है. कि " मै डूंगरमऊसे तीन कोश दूरीपर एक मुसलमान साधूके समाधि मंदिरके समीप गया। जीवित अवस्थामे ही उस साधुने समाधि ली थी। वह समाधि मंदिर ऊंचे स्थान पर वना हुआ था; उस स्थान परसे चारों ओर प्रकृतिका परमप्रिय दृश्य दिखाई पड़ता था। उस समाधि मंदिरके पास ही एक कुंड है; इस कुंडके चारोओर अनेक सुन्दर २ वृक्ष विराजमान है। वहां प्रतिसप्ताहमे एक दिन मेला हुआ करता है। वहां हिन्दू मुसलमान सभी जातिके मनुष्य आते है। फिर हम भामूनी नदीका शब्द सुनते आगे वढ़े और अम्वार संगपर पहुँचे और मीना जाति करारकी रहनेवालेके स्थान पर गये, उनका एक प्रसिद्ध पुरुष यहां मारा गया था, प्रत्येक पथिक यहां एक पत्थर रखता है और हमने भी वहां एक पत्थर रखदिया।

मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोंमे रघुनाथसिंह भी एक है। यही भिसरोरके सामन्त है, इन्होने यहां राजपूतानेमे वहुत समयसे प्रचलित रावतकी उपाधि पाई थी। भिसरोर देश मेवाड़मे श्रेष्ठ देश गिना जाता है। इसका वार्षिक भूराजस्व एक लाख रुपया है। चम्वल, मालवा, हाड़ावती और मेवाड़के वाणिज्यका कार्य भी सभी इस देशमे होता है। वैश्य लोग इस भिसरोरसे ही होकर आते जाते है। इसी कारणसे वाणिज्य महसूलकी यहाँ विशेष आमदनी होती है। यहाँका किला एक वडे ऊंचे शिखर पर स्थापित है, वह स्थान जैसा रमणीक है युद्धके समय उसी प्रकार अभेद्य भी है। भिसरोरकी सृष्टिके सम्वन्धमे एक प्रवाद वाक्य आजतक प्रचलित है, यह भी सम्भव होसकता है कि विक्रमाजीतकी दूसरी शताब्दीमे इसकी सृष्टि हुई हो, और कोई २ ऐसा भी कहते है कि विक्रमाजीतके राजत्वके पहिले इसकी सृष्टि हुई थी, इस भिसरोरकी सृष्टि-सम्वन्धीय प्रवाद वचनोसे यह प्रमाणित होता है कि यहाँके चारण वा कवि जिस भाँति विना महसूलके वाणिज्यका आमदरफ्त कर सकते है; उस समय भी वह उसी प्रकारसे करते थे। भिसरोरदेशकी सृष्टि किसी वलवान राजासे नहीं हुई। भिंसियाशाह नामक एक वणिक और रोरा नामका एक चारण दोनो ही मिलकर वाणिज्य कार्य करते थे। वह वाणिज्य द्रव्योसे शकटोंको भरकर जिस समय इस देशमे होकर जाते उस समय पहाड़ी लोग चोर डकैत जिससे इसको न लूट सकै

इसका भलीभांतिसे प्रबंध कर लेते थे। उस भिसा और रोरा नामके संयोगसे इस देशका नाम भिसरोर हुआ है, यह पाठारदेश हाड़ा जातिके आनेके कितनी ही समय पहिले तक उक्तभावसे था, यह नही जाना जा सकता, परन्तु प्रमार, दूदिया राठौर शक्तावत्, तथा चांदावतोंके स्मृति चिह्न यहाँ अधिकतासे विराजमान है, दूदिया लोगोंके पीछे राठौर सामन्तोंको इस देशका आधिपत्य प्राप्त हुआ। मरुक्षेत्रके लवणहृदके किनारे महौबदेशके एक राठौर सामन्त मंडोरके राठौर अधीश्वरके अधीनमे थे, इनको कान्यकुब्जके सम्भ्रान्त राजवंश जानकर मेवाड़के राणाने उनकी भगिनीका पाणिग्रहण किया। उस नव विवाहिता राठौर नन्दिनीके साथ उनके छोटे भ्राता चित्तौरमे आये। उस विवाहके कुछ दिन पीछे जयसलमेरके अधीश्वर, राजपूत जातिके शिरमौर मेवाड़की महाराणाके विरुद्धमे उठे। जयसलमेरपतिको दमन करनेके लिये शीघ्र ही मेवाडके सेनाके सामन्त सजकर तैयार हुए। महाराणाने बीड़ा अर्थात् ताम्बूल हाथमे लेकर सामन्तसमितिमे प्रस्ताव किया कि आप लोगोंमेसे कौन साहस करके जयसलमेरके महाराजके साथ युद्ध करनेको तैयार है, जो तैयारहो वह आगे बढ़ै। राणाके इस वचनको सुनकर महोबके थोड़ी अवस्थावाले सामन्त राणाके नवीन सालेने वीर गर्वसे अग्रसर होकर सेनापतिके पदको ग्रहण करनेके लिये उस ताम्बूलको ग्रहण किया। उसकी अवस्था उस समय केवल पद्रह वर्षकी थी, इस कारण उस अल्प अवस्थावाले राठौरको इस युद्धमे जानेके लिये उस भावसे उत्तेजित देखकर सभीने निषेध किया, परन्तु राठौर युवकने किसी भांति भी न माना। युवकने महा-राणाके समीप प्रार्थनाकी कि " हमारे दोनो मित्रोको हमारे संग करो। और मैने जो अपनी पाँचसौ अश्वारोही सेना नियत की है उसको मेरे साथ युद्ध करनेके लिये भेजिये। वह थोड़ी अवस्थावाला राठौर कुमार किस प्रकारसे मरुभूमिके पार होकर जयसलमेरमे गया था और किस भांतिसे भट्टीजातिके शीर्षस्थानीय जयसलमेरके राजाके सम्मुख खड़ा हुआ था उसका कुछ वृत्तान्त नहीं जाना जाता, परन्तु ऐसा विदित होता है कि उस राठौर युवकने जयसलमेरके महाराजका छिन्न मस्तक लाकर चित्तौरके महाराणाको उपहारमे दिया। महाराणाने युवककी इस वीरतासे प्रसन्न होकर तथा उसको प्रतिहिंसा देनेमे सफल देखकर उसको साल्लुंवरदेशका अधिकार देदिया। उस समय किसी एक देशका अधिकार किसीको भी सदाके लिये नही दिया जाता था, इस कारण कुछ समयके पीछे राणाने उस राठौर सामन्तको साल्लुंवरके बदलेमे यह भिसरोर देश देदिया, राठौर युवक क्रमश. अपने बलविक्रमको प्रकाश करनेसे राणाके परम प्रियपात्र होगये। अंतमे राणा उनके ऊपर इतने संतुष्ट हुए कि अपनी भतीजीके साथ उसका विवाह कर दिया। परन्तु उस विवाहका फल परिणाममें वियोगान्त लीला करके समाप्त हुआ। एक समय युवक सामन्त अपने इष्टमित्र और कुटुम्बियोके साथ कमरेमे बैठे हुए नृत्य देख रहे थे, कि इसी समयमे उनकी स्त्री किवाड़की ओटसे नृत्य देखनेके लिये उद्यत होरही थी, सामन्तने उस सभामें यह व्यवहार देखकर ऊंचे स्वरसे एक सेवकसे कहा " ठकुरानीसे जाकर कहदो उनको यहाँ आनेकी इच्छा है तो वह चली आवे

हमलोग चले जायँगे "। सेवकने इनकी आज्ञाको पालन किया। सामन्तकी स्त्रीने महादुःखित होकर कहा, मै नृत्य देखनेके लिये नहीं गई थी, मेरी एक सेविका गई थी, मै इस प्रकारसे तिरस्कार करनेके योग्य नहीं हूं, पर ठाकुरको विश्वास नहीं हुआ, तब रानीने दुःखके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो भिसरोरकी दीवार परसे चम्बल नदीमे गिरकर प्राण त्याग दिया, वह स्थान आजतक रानीगता नामसे विख्यात है। किसी प्रकारसे यह समाचार चित्तौरके महाराज तक पहुँच गया, उन्हो ने छानवीन करके कि राठौर सामन्तने विना कारणसे रानीके चारित्रोपर अपवाद लगाया था, इसीसे मेरी भतीजीने आत्महत्याकी है, इसके दंडमे राठौर सामन्तको मेवा-ड़से सर्वदाके लिये निकाल दिया। परन्तु राठौर सामन्तने अपने बल विक्रमसे राणाके पहिले अनेक उपकार किये थे, अन्तसे उस कठोर दंडके बदलेमे उसको भिसरोरके अधिकारसे रहित करके उक्त स्थानके निकटवर्ती पाठार देशके मध्यस्थ नीमरी नामका वीस ग्रामवाला एक छोटा देश देदिया। उसी राठौर युवकके वंशधर विजयसिंहने आज यहाँ आकर मेरे साथ साक्षात् किया "।

" उक्त राठौर सामन्तके पीछे एक सामन्तको भिसरोर देशका अधिकार मिला। परन्तु प्रमार वंशीय सामन्तने कबतक भिसरोरदेशको शासन किया, इसका कोई विशेष वृत्तन्त नही जाना जाता, परन्तु अंतमे प्रमार सामन्त किस कारणसे मारेगये, और भिसरोर देश प्रमारवंशके हाथसे निकल गया, घटना जातीय चरित्रका और एक निदर्शन दिखाती है। अन्तमे भिसरोरके प्रमार सामन्तने अपने प्रतिवासी वेगू सामन्तकी एक कन्याके साथ विवाह किया। उस सानन्तने स्त्री सहित कइ वर्षतक परम सुखसे जीवन व्यतीत किया था, अन्तमे एक दिन दोनो पचीसी क्रीड़ामे मतवाले थे, सामन्तने उस क्रीड़ाके समयमे विवाद करते २ अपनी स्त्रीके वंशकी निन्दा की, राजपूत स्त्री उससे अत्यन्त क्रोधित हुई, और दूसरे दिन अपने पिताके निकट उसने समस्त समाचार लिख कर भेज दिया। वेगूके सामन्तने अपनी पुत्रीका पत्र पाते ही सेनाको बुलाया और अपने जमाईका वह आचरण सबको सुना दिया, इसका बदला लेनेके लिये सभी तैयार होगये। शीघ्र ही वेगूके सामन्तने उस सेनादलको साथले, अंतरीदेशके वनमे होते हुए भिसरोर देशसे कुछ दूर पर आकर अपनी उस सेनाको दो दलोंमें विभक्त किया। वेगूके सामन्त भामूनी नदीपर होकर गये और उनके पुत्र सोजाके मार्गसे भिसरोरकी ओरको गये। परन्तु वेगूके सामन्त भिसरोरमे पहुँचने भी न पाये थे कि उनके पुत्रने भिसरोर पर आक्रमण करके रणभूमि में अपने बहनोईका मस्तक काट डाला। अन्तमें मेघावत् सामन्त नन्दिनीने अपने पतिके मृतक शवको गोदमे ले भामूनी और चम्बल नदीके संगममे चिता प्रज्वलित करके अपना प्राण त्याग किया। उसके स्मरणके चिह्न जो स्थापित हुए थे मैने उनसे कुछही दूर अपने डेरे डाले थे "।

कर्नल टाड्र साहब फिर लिखते है कि "वेगूसामन्तके उक्त छोटे कुमार अपने बहनोईका प्राण नाश कर पिताके सम्मानकी रक्षामे समर्थ हुए। वेगूके वृद्ध सामन्त

इससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होने रजवाड़ेकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बड़े पुत्रके अधिकारको लोप करके उस छोटे पुत्रको अपने भावी उत्तराधिकारी पदको देदिया । मेवाड़के राणाने भी उस उत्तराधिकारीके परिवर्तनमें अपनी सम्मति दी थी, वेगूके सामन्तके बड़े पुत्रको चिथाना जिसमे वर्तमान जादो देश संयुक्त था दिया गया ।

"प्रमारोके पीछे कृष्णावत् सम्प्रदायके एक चन्द्रावत् लालजी जो सालूवरके सामन्तक छोटे पुत्र थे वही भिसरोरके अधीश्वर हुए । लालजीको अपने प्यारे मित्र नाथजी जो राणाके चचा थे उनका ही प्राण नाश करके भिसरोर मिला था । मेवाड़के अधीश्वर महाराणा संग्रामसिहके अनेक पुत्रोमेसे महाराज नाथजी भी एक पुत्र है। मेवाड़के राणा जगत्सिहके भाई थे । जगत्सिहकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र राजसिहको सदेह करके मनुष्योने जारज कहा था, इससे लालजी मेवाडके सिहासन पर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राजसिहकी मृत्यु होनेसे नाथजीकी आशा व्यर्थ होगई।राजसिहके छोटे पुत्रने मेवाड़के सिहासनकी प्रार्थना की । उनके चचा (अरसी) अरीसिहने कैसा राजनैतिक षड्यंत्र जाल विस्तार करके मेवाडमे भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित कर दिया था, उसका वर्णन मेवाड़के इतिहासमे भलीभांतिसे किया गया है। (आरसी) अरिसिंहने सिहासन पर अधिकार करके अपने चचा नाथजी पर संदेह प्रगट किया था । नाथजी उनके शत्रु है, तथा उन्होनेही मेवाड़के राणा पदको ग्रहण करनेके लिये गुप्तरीतिसे उद्योग किया है । यह विचार कर अरिसिह नाथजीकी कामनाको व्यर्थ करनेके लिये तैयार हुए । नाथजीने जिस दिन सुना कि अरिसिहने मेरे ऊपर संदेह किया है वह उसी दिन सिंहासनकी आशा छोड़कर बागोर नामक देशमे जा एकान्तमे वास करने लगे, और शास्त्रका विचार कर प्रियकार्य कविता रूपी मालाको गूँथने लगे । नाथजीका वह धर्मभाव, वैराग्यभाव तथा उदारभाव ही उनके विध्वंसका कारण होगया । नाथजी घोर रात्रिके समय एक मात्र अपने सेवकको साथले मट्टीका कलश ले सरोवरमेसे जल लाकर उस जलसे अपने कुलदेवता जगन्नाथजीकी पूजा करते थे । शीघ्र ही राणा अरिसिहके निकट परिषदोने कहा कि नाथजी कठोर धर्मानुष्ठान करके देवताको प्रसन्न कर रहे है, इससे मेवाड़का सिंहासन अवश्य ही उनको मिल जायगा । अरिसिह यह सुनते ही महा भयभीत हुए और एक दिन उसकी सत्यताकी परीक्षा करनेके लिये वेश बदलकर एक विश्वासी सामन्तको साथले बागोरके उक्त देवमंदिरकी सीढ़ियोपर आकर अपेक्षा करने लगे । शीघ्र ही नाथजी कलश हाथमे लिये हुए पूजा करनेके लिये वहाँ आये, अरिसिहने अपनेको प्रगट करके कहा " इतनी धर्ममे वुद्धि और इतनी पवित्रता क्यो है ? चाचा ! यदि आप सिंहासनकी इच्छा करते है तो इस सिहासनको ग्रहण कीजिये " । नाथजीने शीघ्रतासे उत्तर दिया, " तुम मुझे पुत्रकी समान हो, मै देवताकी पूजा केवल तुम्हारे कल्याणके लिये करता हूँ । " यद्यपि इस सरल उत्तरसे राणाके मनके समस्त संदेह दूर होगये, परन्तु सामन्तोके भड़कानेसे इन्होने अंतमे अपने चचा नाथजीके प्राण नाश करनेका संकल्प किया । नाथजीका प्राण नाश करना सरल वात न जानकर अरिसिंहने दूसरा उपाय निश्चय किया । पूर्वोक्त लालजीके साथ महाराज नाथजीकी विशेष मित्रता थी ।

दोनोंने ही देवताके मंदिरमे जाकर देवताके सम्मुख मित्रता स्थापित की थी। एक दूसरेके प्रति दोनोंको दृढ़ विश्वास था। अरिसिंह उस लालसिंहके द्वाराही नाथजीके जीवनको नाश करनेके लिये उद्यत हुए। एक दिन नाथजी मध्यरात्रिके समय देवमंदिरमें पूजा करनेके लिये बैठे थे, इसी समयमे नाथजीके मित्र उक्त लालजीने मंदिरके द्वारे आकर नाथजीको बुलाया। इस समय इस प्रकारसे नाथजीको किसी मनुष्यने बुलानेका साहस नही किया था नाथजीने मित्र लालजीका स्वर पहचान कर उसी समय कहा, "क्यो भाई लालजी ? आओ, इतनी रात्रिमे क्या विचार कर आये हो ? " परन्तु हाय ! नाथजीने यह बात कह कर जैसे ही देवताको प्रणाम करनेके अभिप्रायसे मस्तक झुकाया कि वैसे ही परम मित्र लालजीकी तीक्ष्ण तलवारने नाथजीके शिरके दो टुकड़े करदिये ? नाथजीके रुधिर से महादेवजीके विग्रहने स्नान किया ! लालजी उस मित्रताका चूड़ान्त निदर्शन करके राणा अरिसिंहके परम प्रियपात्र होगये। राणा अरिसिंहने लालजीके उस कार्यसे संतुष्ट होकर उनको भिंसरोरदेश दिया और उनको मेवाड़के सोलह प्रधान सामन्तोमे ग्रहण किया। मेवाड़मे बहुत दिनोसे सोलह जने प्रधानरूपसे गिने जाते थे, इसके अतिरिक्त होनेका नियम नहीं है। अरिसिंहने वंशीदेशसे शक्तावत् सामन्तको उस प्रधान श्रेणीसे च्युत करके लालजीको उस श्रेणीमे भुक्त कर लिया। परन्तु नाथजीके इस हत्याकाण्डसे मेवाडमे भयंकर समरानल प्रज्वलित होगई, चन्द्रावत् और शक्तावतोमे फिर प्राचीन सम्प्रदायिक शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित होगई इस अग्निने मेवाड़को छार खार करदिया। परन्तु महापापी दुष्ट लालजीने अंतमे कुष्टरोगसे महा व्याकुल हो अपार कष्ट भोगा था पीछे इनका पुत्र मानसिंह भिसरोरकी गद्दीपर बैठा, यह एक युद्धमे मरहटोंका बंदी हुआ। पर उसको नाच देखनेके समय एक राजपूत आहत अवस्थामे अपनी कमर पर धर लाया और दूसरा पुरुष उस स्थान पर सोगया जब यह अपने स्थानमे पहुँच गया तोपै सर हुई तब मरहटोको सुधि आई। इसकी छतरी चम्बल भामूनी और खालके संगममे अद्भुत बनी है।

मानसिंहके पीछे रघुनाथसिंह गद्दीपर बैठे, पर इन पर बहुत आक्रमण हुए इससे इनको भिसरोर छोड़कर भागना पड़ा। जब महाराज वा रईसोकी सालगिरह होती तो हम भी उसमें शामिल होते थे और वहाँका नाच गाना देखते सुनते थे। एक दिन नाथजीके अधिकारी महाराजा श्योदानसिंहके यहाँ इस उत्सव पर बैठे थे रीतिके अनुसार जो आता उसका नाम लिखा जाता था पर इस बात पर हमको बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब चोबदारने ऊंचे स्वरसे कहा कि महाराज सलामत रावत रघुनाथसिंह-जीका मुजरा लीजो। हमको बड़ा आश्चर्य हुआ कि जिसके दादाने जिस वंशके प्रसिद्ध पुरुषकी जानली उसके पोतेको यह मुजरा कैसा, पर पीछे समझमे आया कि यह न्यायकी बात है जिससे ऐसा हुआ और यही एक मनुष्यका दयाभाव है, आगे भिस-रोरमें हमने क्रूरमूर्ति अलाउद्दीनकी चढ़ाईके चिह्नखोज किये, पर हमै कुछ न मिले केवल दो पत्थर और मिले जिन पर संवत् ११७९ खुदा था अक्षर जैन सम्प्रदायके थे और दूसरेमें लिखा था पर्वश्यो रात्रिमें महाराणा नवरायसिंह देवने रामेश्वरके नाम

मौंजे तितागढ़ पट्टनमे दिया, जो इस वचनको स्थित रक्खेंगे वह इसका फल पॉयगे वह वचन यह है।

जिस्सा जिस्सा जिध हो भूमि तिस्सा तिस्सा नधो फलंग।

संवत् १३०२ में यह रीति प्रचलित थी और यह प्रमारधारका जागीरदार था आगे गतेश्वर महादेवके मंदिरको देखनेके लिये हमने वहॉ अपने गुरूको भेजा।

२० जनवरी–मुकाम दानी, २० मील इसके रास्तेमे जंगल और साखूके पेड़ वहुत है। हम एक नालेको पार कर चले यह नदी गिरनेका उत्तम दृश्य है। दानी वूँदीकी रयासतमे है यहां पत्थरकी एक चारनकी वर्च्छा हाथमे लिये भयंकर मूर्ति देखी जो कभी उस स्थानमे मारा गया था, हमारे साथीने कहा पहिले कोई इस मार्गसे नही जाता आता था। परन्तु अब यह मार्ग स्वच्छ होगया है।

मुकाम करीपुर–२१ फरवरी, साढ़े नौ मील इसका पहाड़ी रस्ता बड़ा कठिन है हम इसमे होकर गये, फिर सन्तरा नगर देखा, इसमे कई खोदित लिपि मिली। एक संवत् १४२२की देवलाने जो भूमि ब्राह्मणोंको दी थी, एक संवत् १४४६ आषाढ़ वदी पडवाको प्रमार ऊदां और कोलाके भूमिदानकी लिपि थी, तीसरी संवत् १४६६ आषाढ़ वदी पड़वा संतराके चावड़ाका दानपत्र था, एक पत्थर पर संवत् १३७० मे आषाढ़ शुदी पड़वाका लिखा है कि वादशाह अलाउद्दीनने तीन हजार हाथी दश लाख सवार जंगी रथ असंख्य प्यादोको लेकर सांभर मालवा कर नाटक कनौड़ा झालौर जैसलमेर देवगढ़ तैलंग चंदपुरी आदिको जय किया, सतरामे एक वड़ा दृढ किला है।

२२ फरवरी–कोटासे ११ मील किनारा चम्बल–यहांसे मार्गमें बड़ा कोहरा पड़ा जंगलमे भीलोके देवताका मंदिर है यहां प्रार्थनाके चीर चढाये जाते है, होलीका त्यौ–हार इस वर्ष अच्छा नही रहा, एक बल्ली पर घासका वोझा बांध कर उस पर झंडा लगाते है और उत्सव मनाते है, कोटेकी आकृति मनोहारिणी है। दृढ़ दीवार बुरजो सहित चारो ओर है। किलेके भीतरका शहर इससे अलग है। नदीके दोनो ओर वहांके निवासी अपने काम धन्देमे लगे रहते है।

सप्तम अध्याय ७.

कोटे राज्यमें महामारी-नन्दता-बूंदीमें जाना-बूंदीका राजमहल-सीतुरका कर्नल टाड् साहब की मृत्युके मुखसे उद्धार पाना-मंगलगढ़की उत्पत्तिका वृत्तान्त।

इतिहास लेखक टाड् साहबने छः महीने तक कोटेराज्यमे रहनेके पीछे,सन् १८२१ ईसवीकी १० सितम्बरको लिखा है कि " हमारे कोटेमे रहनेके शेष चार महीनेमे केवल हैजा महामारी और प्रवल ज्वरने भयंकर विक्रम प्रकाश किया। कोटेमे ऐसी भयंकर महामारी कभी पहिले हुई थी या नही, यहांके मनुष्योको इसका स्मरण नहीं है हम इन दिनो इधर उधर कई स्थानोंमे घूमते फिरे पर बीमारीने हमारा पीछा न छोड़ा। हमको बीमारीने वहुत सताया पीछे हम जालिमसिहके पास गये और उनसे रुखसत हुए, रास्तेमे जिस हाथीपर सवार थे वह वहुत विगड़ा पर परमात्माने कृपा की "। कोटेको छोड़ कुनारो नामक स्थानमे आकर लिखा है कि " राजराणा जालिमसिहके आत्मीय राजा गुलावसिंहके अधिकारमे कुनारो नामका देश होगया है, जिसमे हम आये है। यह स्थान अत्यन्त रमणीक है, ऊंचे २ महलोंकी शोभाको देखनेसे नेत्रोको अपार आनन्द प्राप्त होता है "।

जालिमसिहके पिताके वासस्थान नन्दता नामक स्थानमें आकर टाड् साहबने लिखा है कि राजपूत सामन्तोके रहनेके स्थानमे नन्दता एक अत्यन्त ही श्रेष्ठ आदर्शका स्थान है। मै एक तोरणमे होकर नन्दतामे गया। उस तोरणके ऊपर नौबत बज रही थी। तोरण (फाटक) से उतरकर चारोओर स्थूलकाय स्तंभोसे शोभायमान एक विस्तारित कमरेमे गया, वहाँ सरदारोको इकट्ठा हुआ देखा, इसके पीछे महलसे अलग मनोहर सभामंदिरमे गया, वहाँ चारोओर तोपै और बंदूकोंका शब्द होरहा था। अभिवादन और प्रत्याभिनन्दन करनेके पीछे मैने आसनको ग्रहण किया, दो सारंगी बजानेवालोने आकर पंजाबी टप्पा गीत गाना प्रारम्भ किया "।

११ सितम्बरको तेरामे गये, १२ सितम्बरको नौगांव देखा.।

१३ वी सितम्बरको बूँदीराजधानीमे जाकर इतिहास लेखकने लिखा है कि मै हाड़ाजातिको राजधानीके समीप गया. दूरसे ही धूलि उडती हुई दिखाई दी जिससे चारोओर अंधकार होगया, उसको देख कर मैने जाना कि कोई राजा आरहे है। शीघ्र ही बाजोंका शब्द भेरीका शब्द तथा घोड़के खुरोंका शब्द सुनाई आया। कुछही समयके पीछे सांड़नी सवारने राजाके आनेका समाचार कहा। राजा घोड़ेपर चढ़े हुए आ रहे थे, मै भी हाथी पर सवार था, परन्तु राजाके घोड़ेपर सवार होनेसे मुझे हाथीपर सवार होना शोभा नही देगा, इसी कारणसे मैं उग्रतेजस्वी घोड़ेपर सवार होकर आगे बढ़ा। महाराजके साथ शाक्षात् होते ही दोनोने घोड़ोकी

पीठसे उतर कर परस्परमें आलिंगन किया और २ सामन्तोंको भी मैंने उसी प्रकारसे आलिंगन किया, इसके पीछे महाराजने मुझसे कहा, कि " यह आपहीका राज्य है इतने दिनोंके पीछे आप यहाँ आये। " यह कह कर सम्वर्द्धना करनेके पीछे विदा लेकर आगे बढ़े। मैं अपने डेरोंको चला आया " ।

बूँदीके महलोंके सम्बन्धमें टाड् साहबने लिखा है, कि " समस्त भारतवर्षके महलोंमें बून्दीके राजमहल सबसे अधिक श्रेष्ठ है। महलोंके निर्माणकार्यके अतिरिक्त जिस स्थान पर यह बना है उस स्थानके योगसे इसकी शोभाने और भी वृद्धि पाई है। यद्यपि बूँदीके भिन्न २ समयोंमें अनेक राजा इस महलके अंगको बढ़ागये है, परन्तु एक ही रीति और एक ही भावसे बने होनेके कारण इसकी शोभाकी वृद्धि कमती नहीं हुई। छत्रमहलका अंश राजा छत्रशालका बनाया हुआ है वह जैसा विस्तारित है उसी प्रकारसे सुन्दर भी है। "

एक सप्ताह तक रहनेके पीछे बून्दीको छोड़कर २६ वीं सितम्बरको मैज नदीके किनारे आकर टाड् साहबने लिखा है कि "आज मैंने आतिथेय मित्र राव राजासे विदा ली। मैंने डेरोंको छोड़ते ही देखा कि थानोंके महाराज एक अश्वारोही सेनाके साथ मेरी बाट देख रहे है। मुझे सीमातक पहुँचानेके लिये वह सजकर आये थे। " सतूर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " हाड़ा जातिके इतिहासमें सतूर देश एक पवित्र देश गिना जाता है। यह स्थान हाड़ा जातिकी कुलदेवी आशापूर्णाका अधिष्ठान क्षेत्र है। हाडा जातिने सतूर देशका अत्यन्त प्राचीन और पवित्र कह कर उल्लेख किया है। यहाँके प्रधान मंदिरमें भवानीकी एक मूर्ति है। उस मंदिरके समीप बहुतसे योगी और संन्यासी निवास करते है।

२७ सितम्वर मुकाम थानोमे रहे, यहाँके महाराज सावन्तसिंहसे भेट हुई।

२८ सितम्बरके सुबहको जहाजपुरके लिये रवाना हुए, यहाँ मीना रहते है हाड़ा-जाति विशेषरूपसे निवास करती है यह मेवाड़का द्वार कहलाता है। दूसरा नाम इसका जिला चौरासी है, इसमे चौरासी शहर है, तीन सौ साठ मौजे है वास्तवमे सौ शहरसे विशेष इसमें न होगे यहाँके निवासी वीर है, जालिमसिंह इसका परिचय पाचुके है रानाके इसमे दो तालाव बूद लुहारी है। हमारी मुलाकातको यहाँ सोभाराम आया। अब हमारा यह इरादा है कि हम कुछ दिन यहाँ निवास कर शरीरको स्वस्थ करें।

अष्टम अध्याय ८.

टाड् साहब पर रोगका आक्रमण–मंगलगढ़–करार किला–अमीरगढ–मानपुरा–मंगलगढ़मे जाना–उसका ऐतिहासिक वृत्तान्त–स्थान वजेठा–हमीरगढ़–सोनवार–पार्श्वनाथका मंदिर–करेराभोली नहर–अंगरा–मेरताकी ऊँचाई–समाप्ति भ्रमण दूसरेकी।

पहली अक्टूवर वरको जिहाजपुर नामक स्थानमे जाकर साधू टाड् साहबने लिखा है "कल दिन हमारे प्राण निकलना ही चाहते थे कि डंकन और केरी साहब पोडित अवस्थामें शय्यापर लेटे थे. हमारे सम्बन्धी कप्तान वाह मेरे साथ भोजन करनेके लिये वैठे थे किन्तु ज्वर और क्रान्तिके होनेसे मुझे बिलकुल भूंख नही थी, इस कारण मैं कुछ भी न खा सका। मैने उसमेंसे केवल मकईकी रोटीके दो एक ग्रास खाये कि मेरे शरीरमे मानो भयंकर आन्दोलन होने लगा। मुझे ऐसा बोध हुआ कि मेरा मस्तक धीरे २ भयानकरूपसे पीड़ित होरहा है, मानो समस्त माथेमे सूजन भरी आरही है। मेरी जिह्वा और होठ सूख कर काठकी समान होगये। यद्यपि मैने कुछ भी भय नही माना और इससे मेरी चैतन्यता कुछ भी लोप नहीं हुई, तथापि इतना स्मरण हुआ कि कई वर्ष पहिले इस प्रकारसे मैने एक बार मृत्युके मुखसे रक्षापाई थी। मैने कप्तान वाहको अपने पाससे जानेके लिये कहा, परन्तु वह जाने भी न पाये थे कि इसी अवसरमे मेरा कठ सूख गया। मैने विचारा कि मेरी मृत्यु अब निकट आगई, मै उसी समय उठा और तम्बूके खंभोको पकड़ कर खड़ा होगया। शीघ्र ही मेरे उक्त मित्र चिकित्सकको ले आये, मैनें उनसे कहा कि मुझे आप विरक्त न करिये। मै स्थिर होनेकी इच्छा करता हूं परन्तु उन्होने मेरी बात पर कुछ भी ध्यान न दिया, और कुछ औषधी मेरे मुखमे डाली। मैने तुरन्त ही भयंकर उल्टी करदो। फिर तुरन्त ही शय्याका आश्रय लेकर अचेत होगया। कोई दो घंटे रात्रि जानेके समय नींद टूटी तो देखा कि मेरे सारे शरीरमे पसीना आरहा है, किन्तु पीड़ाका फिर कोई चिह्न दिखाई नही पड़ा। इसका विचार और निर्णय करना कठिन होगया कि ऐसा क्यो हुआ? चिकित्सकने अनुमान किया कि किसीने मुझे विष खिलाया था, परन्तु मैने इस वात पर विश्वास नहीं किया, यदि मैने विष खाया था तो अवश्य ही उस ११ रोटी मे विष था यह स्थिर होता तौ इस अवस्थामे शीघ्र ही पाचकको विदा दी जाती, मेरे मेवाड़मे आनेके समयसे अबतक चार बार मेरी यह दशा हुई। मुकाम खजूरी ता० २ अक्टूबरको मुझे ज्वरने बहुत पोड़ित किया था इस कारण पालकीमे सवार होकर मै चला। मीना अपना सत्व मिलनेसे प्रसन्न होगये थे, उनके अफसर हमारे पास मिलने आये हमने उनको सुर्ख पगड़ी और रूमाल पुरस्कारमे दिये, हम घाटीके मार्गसे खजूरीमे पहुँचे, यहाँ ब्राह्मणोको धर्मार्थ दी हुई बहुत सी जागीर है।

३ अक्तूबरको मुकाम कचोरा–इसका मार्ग दुस्तर है इसके आधे मार्गमे अमरगढ़का किला है, यहाँके रावत दलेलसिह जहाजगढ़मे कारगुजारी करते है. उनका साथी

पहाड़सिंह हमसे साक्षात् करनेको आया। बीमारीके कारण मैं उसके दुरूह दुर्गको देखने न जासका, उसका मार्ग बड़ा पेचदार है, इस मार्गमें अनियमित पर्वतोकी शोभायमान पंक्तियां है, मुझे पहाड़सिंहने सलामी दी । यहांके भूमिया प्रशंसाके योग्य है ।

यह कचोरा शहर छः हजार रुपये वार्षिककी आयका है । पहिले यह बड़ा शहर होगा, हमने इस मुल्कको मरहटोंके अधिकारसे बचा दिया है । मुकाम दामीनो ९ अक्टूबर–कचौरामे हम इस समय तक जाड़ा बुखारके कारण ठहरे रहे नौ अक्टूबरको दमीनोमे आये यहाँ एक सप्ताह ठहर कर पन्द्रह तारीखको मानपुरामे आये। यह बनास नदीके किनारे है, यहाँके सब प्रतिष्ठित पुरुष हमसे मिलने आये । मै सबसे मिला परन्तु तबियत आज भी खराब थी । यहाँसे तीन कोश मंडलगढ़ है, १७ तारीखको यहाँसे चलकर शहरसे आधकोश पर डेरेडाले, यहाँके हाकिम मुझसे मिलने आये और आज विजयादशमी है, बीमारीके कारण हमारा निमन्त्रण भी व्यर्थ गया, नौ दिनसे भोजन नही किया है कप्तान वाह आज मेरे पास आगये, मेरे सभी साथी अलील थे। आज मैने पसली पर जोक लगाई थी, मंडलगढ़को बालनोतके एक सामन्तने बनवाया था "सौलङ्की वा चालुक्य जातिसे उत्पन्न बालनोत नामक सम्प्रदायके एक सामन्तने इस मंडलगढ़की पुनः प्रतिष्ठा की । उसी सौलङ्की वा चालुक्य वंशसे अनहलवाड़ेसे राजवंशकी उत्पत्ति है । वह राजवंश दशसे चौदह शताब्दी तक पश्चिम भारतवर्षके समुद्रके किनारे वाले देशको अपने प्रबल प्रतापके साथ शासन करते रहे । बुनास नदीके किनारे वाले देशको अपने प्रबल प्रतापके साथ शासन करते रहे । बुनास नदीके किनारे टंकथोदा नामक स्थानके राजवंशसे बालनोतसम्प्रदायने उत्पन्न होकर अपनेको तक्षक वंशीय कहकर परिचय दिया । यद्यपि इस प्रवाद वाक्यसे जाना जाता है कि थोदासे सौलङ्की जाति बारह शताब्दीके धर्मयुद्धके समय पाटन देशको छोड़ कर अन्यत्र चली गई, परन्तु यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि बालनोतकी सम्प्रदाय इससे पहिले गई थी । पंजाबके अन्तर्गत लोकोत् नामक देश उनके आदि सुख समृद्धि प्राप्तिका स्थान कहा जाता था । मंडलगढ़के बालनोत सम्प्रदायके आदि पुरुषोने सबसे पहिले लालपुरा नामक एक अत्यन्त प्राचीन देश पर अधिकार किया । उस आदि वीरके अधीनमें एक भील सेवक था। एक समय उस भीलने बनैले शूकरोके उत्पात निवारण करनेके लिये ईखरके पहरेमे नियुक्त होकर देखा कि एक बनैला शूकर एक पत्थरके टुकडेके सहारे सोरहा है । भीलके हाथमे जो बाण फलवाला था वह तेज धारवाला नही था, इस कारण उस पर धार धरनेके लिये उसको पत्थर पर घिसा, घिसते ही वह समस्त लोहमय बाणकी फलक सुवर्णकी होगई ! भील सेवकने तुरन्त ही अपने प्रभुके पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह दिया, प्रभुने उसी समय बड़ी शीघ्रतासे सेवकके साथ उस स्थान पर जाकर देखा कि वह पत्थर उसी प्रकार रक्खा है, और शूकर भी उसी भावसे सो रहा है। प्रभुके पत्थरके टुकड़े लेनेके लिये उपाय करते ही शूकरकी निद्रा भग होगई, वह जागते ही तुरन्त भाग गया, प्रभुने उस पत्थरको लेकर उस पत्थरके गुणसे बहुतसा सुवर्ण तैयार किया, और बहुतसा रुपया खर्च करके एक नवीन राजधानी

निर्माण की और उस भीलके नामके अनुसार ही उसका नाम मंडलगढ़ रक्खा । परन्तु एक अत्याचारके होजानेसे वह अन्तमे चिरकालके लिये मंडलगढ़से रहित होगये । मंडलगढ़की प्रजामे एक योगी प्रजा थी, उस योगीके एक अत्यन्त शीघ्र चलनेवाला घोड़ा था, अधिक क्या कहै वह घोड़ा मृगकी समान महावेगसे जाता था । मंडलगढ़के महाराजने उस योगीसे वह घोड़ा बलपूर्वक छीन लिया, योगीने उसके नाम पर राजाके यहाँ अभियोग उपस्थित किया । राजाने एक सेनाको भेज कर उस बालनोतके सामन्तको मंडलगढ़से निकाल दिया । उस सामन्तके उत्तराधिकारी आज तक जावोन और वाकरोद नामक स्थानमे नीची श्रेणीके सामान्य भूमियारूपसे निवास करते है, परन्तु तौभी वह अपनी प्राचीन पैतृक "राव" की उपाधिका व्यवहार करते है " ।

बादलीसे हमको दो खोदित लिपियां मिली, जिनमे सोलंङ्की वंशका कीर्तन था, उसमे राजा भीम तथा उनके पुत्र वर्ण अनहलवारका वर्णन है उससे कई वंश निर्गत हुए है; उसमे अर्जुनसे दो वर्ण वैश्य और शूद्रोके प्रगट होनेका भी वर्णन है, उससे बघेलवाल महाजन जिन्होने जैनमत स्वीकार किया था उत्पन्न हुए तथा गूजर सून्ती कतोरे व सुनार कोकन भील अग्नि पनोरा और मङ्ग मैदानप्रान्त कोटाके हुए, बघेलवाला महाजनोकी साढ़े बारह जातिमेंसे है, पर यह सब राजापूतोंसे उत्पन्न है ।

संवत् १७५५ मे निर्दयी औरंगजेबने मंडेलगढ़को पिसानगढ़के रईस दूदाजी राठौर को देदिया, उसने इस इलाकेको अपने भाइयोमे विभक्त कर दिया और भूमियां भाइयो पर काम चलानेको कुछ कर नियत किया । पर रानाने उस पर अधिकार किया और प्रत्येक पाँचसौ रुपये पर एक सवार और एक पैदल की वेतन नियत की और बहुत थोड़ा रुपया अपना अधिकार जतानेको रक्खा, रानावत् कनावत और शक्तावतो पर जिन्होने इस पर स्वत्व किये थे, बादशाहके नियमकी समान उनसे भेंट चाही, जिनके पास एक ग्राम था उनसे एक वर्षका जिनके पास एकसे अधिक ग्राम थे उनसे तीन वर्पमे कर लिया जाता था, अमरगढ़ २५०० रुपये पर, अमलदा १५०० और तिन्तरो १३०० सौ पर झूंजराल्र १४०० सौ पर नियत हुआ और जो कुछ नहीं देते थे घटनाके समय उनको सहायता देनेका नियम था । इसी समय दूसरे राजसिहके समयमे उमेदसिह शाहपुरा वालेको पाँचवे हिस्सेका मंडलगढ़का इलाका ३२५० वार्षिक ५०० भेट नायब और २०० रुपये भेट चौधरी पर मिला, संवत् १८४३ तक इनके वंशवालोके पास यह इलाका रहा, पीछे सोमजी दीवानने सहायता प्राप्त होनेसे उनको चन्दावतोके साथ युद्ध करनेसे देदिया, और दूगामऊ तथा पुरावा दो जागीर पृथक् नियत की और ४०० अश्वारोही समय पर उनसे लेनेका नियम किया, पर अब इसमे बहुत परिवर्तन होगया है रईस ऐसे निर्धन होगये कि अब एक घोड़ा भी नही देसकते ।

मुकाम वजीत १८ तारीख फासला ८ मील–यह बेरस नदीके किनारे एक ग्राम है यहाँ घास बहुत होती है । १९ तारीखको बरसलवास पहुँचे यहाँके महाराज हमारी मुलाकातको आये, यह रानावतवंशके बड़े योग्य पुरुष है इनके पास पाँच मौजे है, राना

अमरसिंहके वंशधर जो शाहजहाँकी सहायतामें औरंगजेबके द्वारा नियत हुए थे उस समय उनका नित्यका स्वत्व जाता रहा उनके पुरुषाओंकी छतरी यहां बनी है ।

२१ तारीख अम्बाह–दूरी साढे छ. मील यहां कई एक खोदित लिपिकी नकली हमने मंगाई बहुधा लोग हमारी भेंटको आये. पर ज्वर जाड़ेने हमको तंग कर दिया है हमारी डायरी बाबू महेश रखता है और उसकी चतुराई पर हमको विश्वास है ।

हमीरगढ १२ तारीख–यह शहर वीरमदेवके अधीन है जो रानावत सम्प्रदायका है। तथा धीरजसिंहका पुत्र है जो संवत् १८४३ के समय सालूम्बरके सामन्तोंका सम्मति दाता था, उसको यह मिला था, इस समयका अधिकारी कुछ जनूनी है और जो कि उसने एक दरजीको अपनी सेवासे पृथक् नही किया इसीसे ७००० रुपयेकी आयवाले दो शहर उससे छीन लिये गये, इसमें ८०० घर सक्की जातिके है। छीट दुपट्टे यहांके विख्यात है, एक उमदा तालाब है उसमे बहुत सी बतकै है उनको कोई नही मारता सिघाड़े बबूले उसमे बहुत होते है ।

२३ तारीख मुकाम सियानो दूरी आठ मील तीन फरलांग–हम अब बीच मेवाड़मे है, यहाँ मैदान ही नजर आते है, यहाँ बड़ा कौतूहल दिखाई देता है, यहाँ एक मीराज जानवर बड़ा सुन्दर होता है, यहाँके लोग हमारी भेटके लिये आये, हमने पूछा तुम इतनी दूर अपने स्थानसे आये. उत्तर जब आप यहाँ पहिले आते थे तो सारे शहरमे २०० घर भी आबाद न थे. अब बारह सौ घर आबाद है। राना हमारा राजा है आप हमारे परमेश्वरके बराबर है व्यापार उन्नति पर है, हमसे महाराजा विवाहके समय कर भी वसूल नहीं करते है हम बहुत प्रसन्न है जो आपने हमारे साथ सलूक किया है, उसके सामने पाँच कोश क्या पांचसौ कोश भी कोई वस्तु नही है। मैने उनको उपदेश किया और वे प्रसन्नतासे विदा हुए, उनके चले जाने पर बाबा संगरौतवाला और ठाकुर रावरदोवाला हमसे बातचीत करते रहे इस ठाकुरके पुत्रको हमने अजमेरके किलेसे छुटाया था, वह बहुत देर तक बातचीत करके विदा हुए ।

रस्मी २३ अक्टूबर रास्ता साढ़े १३ मील–हम फेरके रास्तेसे चले, इस कारण हमै १५ मील जाना पड़ा, मार्गमे मरोली स्थान देखा यह जंगलमे बसा हुआ है । पहिले यहा बीस घर थे और अब सत्तर घर है यह रस्मी बहुत सुन्दर स्थान है इसको राजा चंदसे निर्मित मानते है, पर यह विदित नहीं कि यह चन्द्र कौनसे है, यहाँके लोगोने एक तख्त लगाई है उसका विषय यह है कि मुहरा व्यापारी महाजन नकाश और रस्माको सब पचायत नियत करती है कि तहसीलदारने पाकरके व्यापार पर और अन्न पर अधिकतर महसूल लगा दिया, इससे उन्होने यह स्थान छोड़ दिया । पर जो कि रयासतके अहलकारने इस प्रकारकी कसम खाई कि आगेसे वह ऐसा न करेगे तब उसको फिर लाकर आबाद किया और ईश्वरकी साक्षी की, इससे हम सबने यह तख्ती लगाई कि यादगार रहै । मिती आषाढ़ वदी तीज संवत १८१९ ।

जसैमू तारीख २४ फेरसे मार्ग चौदह मील सीधे रास्तेसे बारह मील–पहिले यह विख्यात नगर था, पानी धोरे है पहिले यहां कुछ भी आवादी न थी अब यहाँ अस्सी घार आवाद है हमारा गमन मसका न्हाय स्थान दरीबेमें हुआ पर यहाँकी सब लिपियां पानीमे डूबी हुई है।

मुकाम शनिवार तारीख २५ सीधा रास्ता लोनीसे साढ़े बारह मील हम फेरके मार्गसे इस लिये गये कि वह स्थान देखै कि जहाँ रावल समरसी चित्तौड़वाले और भोला मीम अनहलवाडेसे युद्ध हुआ था इस मैदानमे ढाका बहुत है, इसका वर्णन लोगोने कवितामे किया है।

उसने लिखा है कि युद्ध करेराक्षेत्रमे हुआ था और सोलंकी पराजित होकर नदी पार होगये यहां जहां बनास और बेरसका संगम है वहां एक महादेवजीका मंदिर है।

करेरा यहाँ एक मदिर तेतीस अवतार जैनियोका है यहाँ कई लिपियां है कोई संवत् ११०० कोई १३०० और कोई १३५० का बना हुआ इसको प्रगट करती है पुजारी यहाँके निर्धन है पर मंदिर बहुत सुन्दर है स्तम्भोपर जैन सम्प्रदायोके अक्षर खुदे है शिखर तीस ३० फुट ऊचे है, चालीस फुट ऊचे शिखरमे पार्श्वनाथकी मूर्ति है दूसरे स्थानोमे उनके शिष्योकी मूर्तिये है। ३० वर्ष हुए कि पहिले यहाँके मैदानोमे ज्वारकी खेती होती थी कि उसमे हाथी भी समाजाय। मार्ग सर्वथा लुप्त है हमारी पालकी कठिनाईसे चली यहाँ पहिले छः सौ ६०० घर थे, अब ६० घर है यहाँकी स्त्रियाँ पानीके साथ हमको धन्यवाद देने आई, रसमीसे करारा तक सात मीलका मार्ग बडा कटीला है वहांसे सुन्वार तक नौ मील है। सुन्वार एक मेवाड़के वंशधरके अधिकारमे है महाराज दौलतसिंह कमलमेरवालेके अधिकारमे है, यहाँ एक किला भी है, यहाँ संवत् १८२६ मे तमाखूका व्यापार बंद होगया था। मादली २६ तारीख साढ़े सात माल पहिले यह सात हजार रुपये वार्षिक की आमदनी वाला बड़ा शहर था अब उसमे सात सौ भी नही बैठते। इसमे अब ८० अस्सी घर है अब यहाँ खेती होती है प्रबन्धकर्ता उत्तम नही है यहाँ वाईजी अर्थात् इस समयकी राजमाताने एक सुन्दर संगमरमरका स्थान बनवाया है, संवत् १७३७ की जैनधर्मकी खोदित एक लिपि है।

तूस और मेहता, २७ तारीख चौदह मील–आज बड़ी कमजोरी है इस जंगलमे नाहर पाये जाते है, हमारे राजाके घोड़ेने जो हमारे साथ था समझ लिया कि अब हमारी यात्रा पूर्ति पर है इसी स्थान पर हरत दानाने मार्गने जादूकी माल ग्यारह सौ वर्ष हुए शिशोदियाके मारी थी। एक बडा शूकर हमारे मार्गसे निकल गया, हम आराम चाहते थे यहाँके मनुष्य हमारी अगौनीको आये उनके आगे नगाड़े बजते थे, स्त्रियाँ, अपना लोटा लिये हुए आई। हमै धन्यवाद दिया, हमने उनके लोटोमे एक एक रुपया डाल दिया और विश्राम स्थान पर आये हमारा मिस्तरी बड़ा कमजोर होगया है, उसकी अस्थिमात्र शेष है।

नवम अध्याय ९.

कर्नल टाड् साहबकी अपने देशमें जानेकी इच्छा–स्वदेशमें जानेको रोक कर बूंदीराज्यमें जाना–बूंदीके महाराजका प्राण त्याग करना–उनका कर्नल टाड् साहबको अपने पुत्रके अविभावक पद पर नियुक्त करना–हैजा–पौहाना–भीलवाड़ा–जहाजपुर–कर्नल टाड्का बूंदीमे आना–राजपरिवारके साथ साक्षात् करना–राजपरिवारके साथ आत्मीयता।

निरन्तर घोर परिश्रम करने तथा–रजवाड़ेकी राजनैतिक–आर्थिक एवं नैतिक उन्नति साधन करनेकी निरन्तर चिन्ताके करनेसे सन् १८२१ ईसवीमे कर्नल टाड् साहब का स्वास्थ एकबार ही भंग होगया। इस समय उनकी वीरता एकवार ही दूर होगई। इस समय उन्होने चिकित्सकके परामर्शके अनुसार अपनी प्राणरक्षाके लिये "प्यारी जन्म-भूमिमे जानेकी अभिलाषा प्रगट की। परन्तु रजवाड़ेकी ओर २ राजपूत जातिकी ओर उनकी कैसी माया और अकृत्रिम स्नेह उत्पन्न हुआ था, कि वह अपने शरीरकी ओर तथा अपने जीवनकी ओर ध्यान न देकर केवल राजस्थानकी शान्ति और राजपूत जातिके मंगलसाधनमे लिप्त हुए। देशदेशोमे जाकर किसी न किसी एक घटनाने उनको बाँध रक्खा। रजवाड़ेके समस्त राजवंश और सामन्त वंशोके साथ उनका भाई मामा, और चाचा इत्यादिका सम्बन्ध स्थापित हुआ था, इसी कारण वह किसी प्रकार भी माया ममताको छोड़ कठोर हृदय साधारण अंग्रेजकी समान राजस्थानको न छोड़ सके। सन् १८२१ ईसवीके जौलाई मासमे उन्होने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि वर्षाऋतुके समाप्त होने पर अपने देशमे जानेका निश्चय किया था। परन्तु डंकन साहबकी भविष्य वाणी कि तुम अभी स्वदेश न जा सकोगे पूरी हुई कि उसी समय बूँदीके महाराजकी अचानक मृत्यु होगई, इस लिये उनके वह मनकी आशा मनहीमें लोप होगई, वह लिखते है कि " कई दिन बीतने पर मुझे बूँदीका समाचार मिला कि मेरे प्यारे मित्र बूँदीके महाराजने प्राण त्याग किये है, और अपनी मृत्युके समय मुझे अपने शिशुपुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त करके उस पुत्र और बूँदीराज्यके मंगल साधनका भार मेरे ऊपर अर्पण कर गये है।" उदार हृदय राजपूत बांधव टाड् अपने राजपूत मित्रकी मृत्युसे कातर हृदय होकर उनकी उस अंतिम आज्ञाको पालन करनेके लिये दुःखित होकर शीघ्र ही बूँदीकी ओरको चले।

इस समय यहाँ महामारी हैजा फूट निकला था, वड़े २ यत्न किये जाते थे हमने देखा कि यन्त्रशास्त्री मन्त्र पढते और हवन करते थे शहरसे वाहर दक्षिणकी ओर गंगाजल टपकाया जाता था लोग व्याकुल थे ऐसे समय हमने अपनी यात्रा वर्षामे ही आरम्भ की।

स्थान पोहोना, २५ जौलाई–यह वड़े दुःखका दिन था, हम उदयपुरसे वर्षा-कालमे चले थे, मेहता और वादलीके वीच मार्गमे हमने देखा कि हमारा हाथी मरा

पड़ा है, इस दिन बडी ठंढ़ी हवा थी जिससे बड़ा कष्ट हुआ। हमारी इच्छा भीलवाड़ा देखनेकी थी इससे उसी मार्गसे चले।

२६ जौलाई भीलवाड़ा—दो दिनसे इन्द्रदेवने कृपा की है धूप निकलती है, यहाँके पुरुष और स्त्रियाँ, कलशोमे जल लेकर हमारी अगौनीको आये, यह लोग हमैं शहरमे लेगये बाजार सजाया गया था। हम उसे देखकर लौट आये, भोजन किया फिर लोग हमारे पास आये, हमने इतर इलायची देकर उनको विदा किया, थोडे ही दिनसें यहाँ मडी जुड़ी है और तीन हजार घरोमेसे बारह सौ घर व्यापारी जनोके है। सब स्थानोकी वस्तु यहा मिलती है। यदि कोई कुप्रवन्ध न हुआ तो इसकी बड़ी उन्नति होगी, २८ तारीखको भो लोगोने हमको वही रक्खा २९ तारीखको बहुत थोडा असबाब लेकर यहाँसे चले मार्ग सब विगड गये थे, पानी वर्ष रहा था साथी लोग गिर २ पड़ते थे इस प्रकार जहाजपुर जाकर पहुँचे।

कर्नेल टाड् साहब विना विश्राम किये बराबर चलते ही गये और ३० तारीख को बूँदीमें पहुँच गये। उन्होने लिखा है कि "मै जिस पथिकके वेषसे बूँदीमे गया उसी वेषसे शोकसे संतापित हुए राजपरिवारको धीरज देनेके लिये सबसे पहिले राजमहलमे गया और वहां जाकर सबको धीरज दिया। मैने महलमे जाकर नवीन महाराज और उनके अनुज गोपालसिंहको परिषद मंडलीसे व्याप्त देखा। जाते समय दोनो ओर शोकसे सतापित होकर भी मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये आग्रह करते हुए सेवकोको देखा"।

"मृतक महाराजके वियोगसे मेरे हृदयमे जो अपार शोक उपस्थित हुआ था मैने उसे प्रकाश करके कहा, और साथमे यह भी विदित किया कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल वहादुर भी महाराजके वियोगसे दुःखित हुए है और नवीन महाराज जबतक राजकार्यमे समर्थ न होंगे, गर्वनर जनरल वहादुर तवतक उनके पिताकी जगह होकर उनके कल्याणकी कामना करेगे। राजकार्यमे अज्ञान नवीन महाराजने धीर और गंभीरभावसे उत्तर दिया कि मेरे पिता मुझे आपकी गोदमे बैठाल गये है, उन्होने मेरे मंगलका भार आपके हाथमे दिया है"। मै भी इसी प्रकारसे धीरज दे सामन्तोके साथ वार्तालाप करनेके पीछे अपने ठहरनेके लिये जो मकान महलसे कुछही दूर पर था वहाँ गया। मैने बैठ कर देखा कि मुझे जिन २ प्रयोजनीय वस्तुओकी आवश्यकता थी वह सभी वस्तुये तैयार रक्खी है, और मैने बिना पोशाक उतारे ही देखा कि मेरे लिये भोजनकी सभी सामग्री तैयार रक्खी है। राजमाताने वह भोजन भेज दिया था, और मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये एक ब्राह्मणके हाथ महलसे यह सब सामान भेजा था, उसके आगे २ एक ब्राह्मण गगाजल छिड़कता हुआ आया था। पीछे किसीकी दृष्टि न लगै, अथवा कुछ अशुभ न हो यह काम इसीलिये किया गया था"।

दशम अध्याय १०.

राज्याभिषेक–राजभ्राताओंकी योग्यता–राजमाताका समाचार–वलवन्तराव–राज्यका प्रवन्ध करना–रानीसे साक्षात्–बूंदीकी आय–कोटेमे गमन–रावता–

कर्नल टाड् साहबने ५ पांचवीं अगस्तको लिखा है, " कि मुझे बूँदीमे आया हुआ सुन कर राजमाताने नवीन महाराजका राजतिलक देने वा अभिषेक कार्य करने का निश्चय किया, और श्रावणमासकी तृतीयाको महापर्वको निकट जान उसके दूसरे दिन अभिषेक होनेका निश्चय किया। राजमाताने मेरे समीप एक लेखकके द्वारा यह कहला भेजा कि तृतीया तिथिको जो जातीय पर्व होता है, उस दिन मुझे नवीन महाराजके साथ राजयात्रा करनी होगी। राजमाताने मेरे समीप यह भी कहला भेजा कि रजवाड़ेमे ऐसी रीति प्रचलित है कि बूँदीके राजाकी मृत्यु होनेपर उनके कुटुम्बी तथा सम्बन्धी वा प्रतिवासी वारह दिन अशौचके पीछे नवीन महाराजको अशौच चिह्न छोड़ कर शुद्ध होनेके लिये आग्रह करते है। उनके वचनानुसार मैने शीघ्र ही महाराजके लिये रंगेहुए कपडे और पगडी तथा हीरोके लगे हुए शिरपेच मोल लेकर राजमहलमें भेज दिए। उन्होने अशौच चिह्नस्वरूप सफेद वस्त्रको त्याग कर इन रंगेहुए वस्त्रोको धारण किया। मेरे उस अनुरोधके अनुसार बारह दिनके पीछे नवीन शिशु महाराज मेरे दियेहुए कपड़ोको पहर कर शुद्धहो बाहर हुए, मै उनके साथ बूँदीके प्राचीन महलमे गया। उसी स्थान पर समस्त क्रिया कर्म हुए थे "।

" दूसरे दिन महाराजका अभिषेक किया गया–राजमहल नामक महलमे जहां बूँदीके राजाको अभिषेक होता है मै वही गया। मै जिस रास्तेसे गया, उसी रास्तेसे सुन्दर वस्त्रधारी अगणित प्रजा इकट्ठी होकर मेरा अभिनन्दन करती थी महलके सामनेके भागमे इसी भांति अगणित राजपूतोने चारोओर इकट्ठे " जयजय " स्वरसे महा आनन्द प्रकाश किया, महलके भीतर जिस स्थान पर महाराज अभिषेक यज्ञमे नियुक्त थे वहां भी वहुतसे सामन्तादि इकट्ठे हुए थे। मै वहाँ जा पहुँचा और उन सामन्तोसे बातचीत करने लगा, उसके पासहीके एक कमरेमे पूजा और हवन होरहा था पूजाके समाप्त होते ही आज्ञानुसार मैने नवीनमहाराजको उस यज्ञ स्थानसे बुलाकर दूसरे कमरेमे एक आसन पर बैठाया, उस स्थान पर फिर पूजादि हुई, महाराजने अपने पुरोहितके माथे पर टीका लगाया। उक्त कार्यके समाप्त होजाने पर सबकी आज्ञानुसार मै प्रसन्न हो सभास्थानके एक ऊंचे मञ्चान पर स्थित राजसिंहासनकी ओरको महाराजको लेगया। मंचान ऊंचा था, इस कारण सुकुमार महाराज उसके ऊपर चढ़नेमे समर्थ न हुए, मैने उनको उसके ऊपर चढा दिया। इसके पीछे पुरोहितने चदन लगाया, मैने मध्यमा उगली से नवीन महाराजके मस्तकपर तिकल दिया। इसके पीछे उनकी कमरमे तलवार बाँधकर अपनी गवर्नमेण्टके नामसे महाराजको अभिनन्दन कर, जिससे सभी सुन सकै

एसे ऊंचे श्वरसे कहा कि वृटिश गवर्नमेण्ट सदाके लिये बूँदी राज्य और राजदरवारके मंगलकी कामना करैगी। मेरे इस वचन पर सुन्दर वस्त्रधारी हजारो मनुष्य महा आनन्द प्रकाश करने लगे, और उसी समयमे तारागढ़के किलेसे तोपें छूटनेका शब्द हुआ। इसके पीछे मैने महाराजके शिरपर पगड़ीमे हीरोंका शिरपेच, गलेमे मोतियोंकी माला, हीरेजडे खँडुए देकर राजपूतोमे प्रचलित रीतिके अनुसार इक्कीस दुशाले, तथा वड़े कीमती मूल्यवान् अनेक प्रकारके वस्त्रादि उपहारमे दिये। चाँदीके आभूषणोसे सजा हुआ एक हाथी और दो काले घोड़े भी लाकर उपहारमे दिये गये। उपहार दानकार्यके समाप्त होजाने पर मै अपने नवीन महाराजके पिताके मित्र और उनके अभिभावकस्व-रूपसे उनका अभिनन्दन और मंगल कामना करके महाराजसे कुछ दूर जाकर खड़ा हुआ, उस समय राजाके प्रधान २ सामन्त उपहार देकर अभिनन्दन करने लगे, इस समय राजभ्राता गोपालसिहने आकर मुझसे कहा कि आपके अतिरिक्त मेरा और कोई अभिभाविक नही है"। समस्त सामन्त भी एक २ करके महाराजको अभिनंदन कर मेरे पास आये, और मेरे पास आकर मेरे इस अभिषेक कार्यमे मिले और इस कार्यको स्वयं करके आनन्द प्रकाश करते हुए वृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूपसे उन्होने मुझे नजरे दीं। पीछे मैं महाराज और सामन्तोको अभिवादन कर वहाँसे चला आया। नवीन महाराज इसके पीछे सेना और सामन्तोको साथ लेकर नगरमे घूमते हुए सीतर की भवानीके मंदिरमे पूजा करनेके लिये गये"।

दूसरे दिन राजमाताका समाचार हमारे पास आया। हमने उनके कहनेके अनुसार सव प्रवन्ध कर दिया। उनको वलवन्तसिहकी ओरसे कुछ शका थी, एक समय बारह वर्ष हुए कि इसने आक्रमण किया था। रानी साहिबा अपने दीवान भूरा शभूनाथसे भी राजी न थीं, इससे वड़े धर्ममे विश्वासी गोविन्दराम वकील, तथा धाभाई किलेदार तारा-गढ़ तथा चन्द्रभान नायक यह जो वड़े ईमानदार थे भूराके ऊंपर दृष्टि रखनेके लिये नियत हुए।

मैने सव प्रवन्ध करके आज्ञा दी कि जो रुपाय आमदनीका हो वह सब महलके खजानेमे रक्खा जाय, और ऊपर लिखे पुरुषोको रसीद तथा हिसाबका उत्तर दाता किया, और वलवन्तसिहको भी विदा करनेका प्रवन्ध किया।

इसी समय श्रावणी पूर्णिमा पर राखीका त्योहार आया। रानी साहिबाने मुझे भाई मान कर अपने गुरूके हाथ मेरे पास राखी भेजी, इस सम्बन्धसे ग्यारह वर्षके कुमार मेरे भानजे हुए, तब मैने दीवानकी मारफत कुछ प्रवन्ध विपयक बातचीतकी इच्छा की, और विश्वासी सेवकोके साथ महलमे गया। कई घंटे तक बातचीत हुई, रानी साहिवा एक पर देके वीचमे थी उनकी बातचीतसे राज्यप्रवन्ध विषयक उनकी बड़ी योग्यता प्रतीत हुई, हमने उनको समझा दिया कि तुम पृथक् लिखा पढ़ी न करना, और हर किसीसे अपने मन की वात न कहना। हमारी गवर्नमेण्ट सदा तुम्हारी सहायक रहैगी। फिर रानीने एक सहे-लीके द्वारा हमारे पास इत्रपान भेजे, और बार २ यही कहकर विदा किया कि लालजी को भूल मत जाना।

मै आनन्दपूर्वक लौट आया; और रानीकी योग्यतासे मै वड़ा प्रसन्न हुआ । मुझे और रानियोसे इनमे विशेष योग्यता प्रतीत हुई ।

हम अगस्त तक रयासत बूँदीमे रहे, जव चलने लगे तव यही उपदेश दिया कि हम आप सब लोगोको इस रयासतका प्रवन्ध कर्त्ता नियत करते है, यदि हम प्रतिवर्ष हिसाव मॉगै तो आप इस पर आश्चर्य न करै और भूराको भी समझाया कि वह आगे से उन्नतिका मार्ग स्वीकार करै जिसको उसने साथियो सहित स्वीकार किया ।

सफरमे हमारे पास उनके समाचार आते रहे, तथा देवनागरी और फारसीमे महाराज वालकका लिखा पत्र भी हमारे पास आता रहा । जव हम वही थे तभी वालक महाराज डेरके सामने अपनी चातुरी दिखाते हुए घोड़े फेरते थे, एक समय महारानीने हमको धन्यवाद दिया कि आज वालक महाराजने शूकरका शिकार किया है। इस रीतिपर वड़ा दान पुण्य किया गया। यह वह समय था कि जवतक जंगली शूकर न मारा जाय तव तक वीरोसे प्रतिष्टा नही मिलती थी ।

हम जहां कही रहते पुरानी खोदित लिपियोकी खोज करते थे, बूँदीके राजपुरुषोको इसमे वड़ा आश्चर्य होता था ।

बूँदीकी खालिस आमदनी तीन लाखसे विशेष नही थी, अब थोड़े ही समयमे पॉच लाखसे विशेष होगी और खालसे इलाकोको सिवाय ८०००० हजार रुपये वार्षिक जो सरकार अंग्रेजको दिया जाता है जो पहिले सेधियाके अधिकारमे था, जो उसने सन् १८१८ ई० के नियम पत्रके अनुसार छोड़ दिया था उसके सिवाय महाराजके पास सातसौ सवार सजातीय, फौज किलेदारीके सहित तथा गोलन्दाज बारह तोप और २७०० पैदल तनख्वाहदार थे तथा किलेदारी और प्रान्तोकी सेना इससे पृथक् थी जिनकी आमदनी उनके खर्चको पूर्ण थी ।

१९ नवम्बर स्थान रोहता–चौदह अगस्तको हम कोटेको चले । बूँदीकी प्रजा तथा हम भी उस समयके ज्वर जाड़ेसे पीड़ित होगये थे । सन् १८१७ और १८ मे हमने इसी स्थान पर शत्रुओके साथ सग्रामको सेना सजाई थी और यह युद्ध पिंडारोके साथ हुआ था, और उनकी लूटका जो रुपया आया उससे लार्ड हैसस्टिंगसके नामसे पुल वनानेका विचार हुआ था उसमे प्रति देशका अस्वाव था । अनेक प्रकारसे४००० पशु थे और हमारी इच्छानुसार एक पुल १५ महरावका कोटेके पूर्वकी ओर बनाया गया, यह एक सहस्र फुट लम्बा था एक वीर सिपाही जिसने उस युद्धमे महा सहायता की थी तथा दूसरे साहवोकी मानो यह स्मृति चिह्न है ।

जो कि हम हाड़ौतीके मुख्य मार्गके समीप थे, उस समय राजरानाने कहा कि वह हमको यह स्थान दिखाता है जहॉ वड़ा शिकार होता है । जहॉ पर्वतोकी श्रेणी वरावर चली जाती है, वही स्थान इसके लिये निश्चित हुआ । जो हाड़ौतीको मालवेसे पृथक् करता है, तीसरे पहरको हम शिकारको चले । शिकारियोके शब्दसे जंगलके जीव जन्तु हरिण आदि कूदते फांदते चलने और भागने लगे । लाल दागदार बारहसिंगे

जंगली सुअर भागते दीखने लगे। जानवरोंका भयसे भागना एक अद्भुत दृश्य दिखाता था, इस दिन हमारे डेरोपर हरिण मार कर लाये गये थे।

कहा जाता है कि रियासतका शिकारमे दो लाख रुपया खर्च होता है।२५ सवारी २०० हॉकनेवाले और ५०० शिकारी समय पर कामके लिये रक्खे जाते है, पर विशेष व्यय शिकारके उपरान्त भोजमे होता है । लोगोंको इनाम बॉटा जाता है, यह काम राजरानाने हाड़ा जातिके प्रसन्न करनेको किया था पर तौ भी इतने समय तक राजकाज करने तथा कठोर व्यवहार करनेवाले परसे विरक्तता किसीकी न देखी गई।

जबतक महाराव मेवाड़से लौट कर आवै तबतक हम मालवेमे दौरा करेंगे, जहॉ भितराकम जंगलमे चम्बल गिरती है।

एकादश अध्याय ११.

मुकन्दरामे जाना–चम्बलका दृश्य–वंजारोके लगानेके चिह्न–जोगियोंके स्थान–टाड् साहबका एक जोगीका शिष्य होना–शिशोदियाका वृत्तान्त–योगियोंके सरदारका वर्णन–बरौली और उसके मंदिरोका वर्णन।

बूँदीके नवीन महाराजका अभिषेक होजाने पर वहां कुछ दिन रहकर शांति स्थापन और सुशासनकी व्यवस्था करके महात्मा टाड् साहब बूँदीसे चले गये, उन्होने मुकन्दराके पास जाकर लिखा है “ मै बहुत सवेरे प्रसिद्ध मुकन्दरा नामक पहाड़ी मार्गसे होकर आया और दूरसे ही मालवेके अत्यन्त रमणीक समतलक्षेत्रको देखा। मै पीछे बाई ओरका जाकर जो पर्वत हाड़ावतीको मालवेसे विच्छिन्न करते है उनकी एक ओर होकर गया। मेरे पर्वतोपरसे उतरते ही नवीन सूर्य कमनीय मूर्तिसे उदय हुए । वहॉ एक स्थान पहला भीलोके राजाके कर ग्रहणका है जिसको बंजारोने चिह्न स्वरूप मान लिया है देखा मै क्रमशः नीचे उतर कर भिसरोरके सामन्तके स्थापित अतीत नामक स्थानके झलका नामक मंदिरमे गया। उस मंदिरके सामने जटाजूटधारी विभूति लगाये हुए अनेक संन्यासी दिखाई पड़े; उन सन्यासियोमेके प्रधान नेताकी अवस्था ६० वर्षकी होगी, उन्होने आगे बढ़कर मुझे आशीर्वाद दिया। सबसे पहिले उन्होने मेरे मस्तक पर विभूतिका टीका लगाया, और मुझको अपना चेला बना लिया । मैने उपयुक्त सम्मान दिखानेके साथही साथ उस टीकेको ग्रहण किया। यह वृद्ध संन्यासी प्राचीन विवाद तथा इतिहासको बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने आदिसे देवता दैत्योंके युद्धकी कथा कहते सब रामायणकी कथा कही। मेवाड़के राजपूतोका नाम शिशोदिया क्यो हुआ, उसके सम्बन्धमे उन्होने एक विचित्र कहानी कही। उन्होंने कहा कि इस पहाडी वनके देशमें एक समय चित्तौड़के महाराणा मृगया करनेके पीछे भोजन करने बैठे उस समय

वह क्षुधासे व्याकुल थे। बड़ी शीघ्रतासे उन्होंने एक मांसका टुकड़ा मुखमे ड़ाला उसमे एक वनैला डॉस कहीसे प्रविष्ट होगया। उस डॉसने मांसके साथ राणाके उदरमे जाकर भयंकर वेदना उत्पन्न की। राणाकी आज्ञासे वैद्य आये उनसे सव समाचार कहा गया, वैद्यने राणाके प्राणोकी रक्षा करनेके लिये एक उपाय स्थिर किया, और राणाके सेवकसे गुप्तभावसे कहा कि एक गौके कानका थोड़ा मॉस काट कर लाओ, सेवकने उस आज्ञाको पालन किया, वैद्यने उस मॉसको एक कपड़ेमे वॉध कर उसे बडे डोरेमे वॉध राणाको गलेमे डालनेके लिये कहा। राणाने इसी प्रकार कार्य किया, वह उदरमेका डॉस इस गोमॉससे वॅध गया, वैद्यने डोरेको खैच कर बाहर किया, राणाके प्राणोकी रक्षा हुई। राणाने महा संतुष्ट होकर वैद्यको यथेष्ट पुरस्कार दिया परन्तु किस उपायसे वैद्यने हमारे प्राणोकी रक्षाकी इसको वह वारंवार पूछने लगे, तव वैद्य ने समस्त वृत्तान्त कह दिया। राणाने जव सुना कि मेरे उदरमे गोमांस डाला था तव कहा कि यहतो महा पाप किया है– इसका मै प्रायश्चित्त अवश्य ही करूंगा। अज्ञानतासे गोमॉस खाया था इस महापापका दंड निश्चय हुआ कि महाराणाको जलता हुआ शीशा निगलना होगा। शीघ्र ही प्रज्वलित शीशा तैयार हुआ महाराणाने निर्भय होकर उसको पी लिया। उससे कुछभी क्लेश न हुआ, उसी दिनसे वह राजपूत राजवंशधर आहारियोके बदलेमे शिशोदिया नामसे पुकारे जाते है। यह प्रवाद वाक्य सर्वदा सत्य है प्राचीन योगीको ऐसा दृढ़ विश्वास था। योगीके साथ इस प्रकार वार्तालाप करते २ मै आगे वढ़ा, दूरसे ही वृक्षोसे घिरी हुई वारौलीके विख्यात मंदिरका शिखर मुझे दिखाई पड़ा। वह दृश्य नेत्रोको आनन्द देनेवाला था। मै एक छोटीसी नदीके किनारे होकर उस मंदिरकी ओरको गया। मै जैसे ही उस पवित्र मंदिरके समीप पहुॅचा कि वैसे ही देखा कि बड़े २ आमके वृक्ष मानो आकाशको भेदन कररहे है, वह वृक्ष अत्यन्त प्राचीन थे। मै शीघ्र ही घोड़ेपरसे उतरकर मंदिरके आंगनमे आया। उस बड़े लम्वे चौडे मंदिरकी शोभाका वर्णन करना सम्पूर्ण असम्भव था। एकमात्र चित्रकार ही इसमे चित्र लिखनेकी सामर्थ्य रखते थे, शिलिपयोने इसमे अपनी शिलपशक्तिका चूडान्त दिखा दिया था, इसको देखकर पहिले मेरे मनमें इस बातका उदय हुआ कि प्राचीन हिन्दुओंके मंदिरोमे यह शिलपकार्य जैसा रमणीय है, उसी प्रकार अतुलनीय भी है। खंभोकी पंक्तिके ऊपर और नीचेका भाग एवं छत्त सभी मानो एक २ आदर्शमदिरके स्वरूप थे सबसे ऊपर सुवर्णका कलश हमारी दृष्टिको आकर्षण करता था। प्रत्येक खंभ और शीर्ष भागके वर्णन करनेमे एक वड़ी पुस्तक तैयार हो जायगी; यद्यपि यह मंदिर वहुत पुराना था, तथापि आजतक इसका चमत्कार भलीभांतिसे विराजमान है। इसकी दीर्घस्थाइताके दो कारण जाने जाते है। पहिला प्रत्येक पत्थर वडे पत्थरसे खोदकर वनाया गया है, इस कारण वह जैसा कठिन है उसी प्रकार उसका शिलपकार्य भी अत्यन्त श्रमसाध्य है। और दूसारा मंदिर पिसे हुए पत्थरसे रॅगा हुआ था, इस कारण वहुत समयकी वर्षाके होनेसे उसका रंग किसी २ स्थानका दूर होगया था–और उसके सव अंश श्रेष्ठ अवस्थामे है"।

"वारोलीके इस महान् मंदिरमे महादेवजी विराजमान है। केवल एक ही स्थानमें नहीं, वरन मंदिरके अनेक स्थानोमे शिवलिग विराजमान है। लगभग पॉच सौ हाथकी चौकोर भूमिमे यह मंदिर बना हुआ है, इसके चारोओर पत्थरकी दीवारे है। उन दीवारोंके वाहर वड़े २ वृक्ष है, और छोटे २ मदिर विराजते है। मंदिरके आंगनमे [illegible]ते ही सबसे पहिले एक स्तम्भ मुझे दिखाई पड़ा, एक सर्प उस स्तम्भको पकड़ रहा [illegible]। जानेका द्वार अवश्य ही अत्यन्त रमणीक था परन्तु वह इस समय नष्ट होगया है, कारण कि उसके कुछेक अंश इस समय भी विद्यमान थे, जो देखनेसे अत्यन्त ही चमत्कारिक वोध होते थे। मंदिरमे प्रधान विग्रह महादेवजी पार्वती और उनके अनुचरके थे। महादेवजी एक कमलके ऊपर खड़े हुए है, और एक सर्प मालाकी समान उनके गलेमे पड़ा हुआ शोभा पारहा है, उनके दांये हाथमे डमरू और बांये हाथमे मनुष्योकी खोपड़ी है। दुःखका विषय है कि मुसलमानोने उनके दोनो हाथ खंडित् कर दिये है, मुसलमानोने जो इस मूर्तिको सब नही तोड़ा इससे जाना जाता है कि वह पाषाण हृदय यवन भी इस मंदिर और विग्रहके शिल्पकौशलको देख कर मोहित होगये थ। पार्वतीजीकी मूर्ति शिवजीके वाई ओर स्थापित है वह एक कूर्मके ऊपर खड़ी हुई है, मदिरमे और भी वहुत सी मूर्तिये है। शृंगके ऊपर एक प्रकारके सिंहकी मूर्ति दिखाई देती है, उसका नाम ग्रास है। अन्यान्य मूर्तियोमेसे बहुत सी टूटफूट गई थीं। एक स्थान पर एक योगी वीणा बजा रहा है, और दो हिरनिये ऊपरको कान उठाये धीरभावसे मानो वीणाकी झंकारको सुनरही है, इस भावसे वह खुदी हुई थी"।

"प्रधान मंदिरके बहुत ही पास और एक छोटा मंदिर विराजमान है। उसमे चतुर्भुजा देवीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है, परन्तु मुसलमानोने उसके भी दोनो हाथ तोड़ दिये, भील उनकी दो भुजा रूपसे पूजा करते है। भीलही इस मूर्तिके परम भक्त है।

"प्रधान मंदिरकी बाई ओरको ३० फुट ऊंचे एक मंदिरमे अष्टमाता अर्थात् अष्टभुजा देवीकी मूर्ति है। परन्तु मुसलमानोने देवीके सात हाथ एकवार ही तोड़ दिये है, केवल जिस हाथमे उनके ढाल थी उसीको नहीं तोड़ा है। अन्य पक्षमे देवीके मस्तक को एकबार ही चूर्ण करदिया है। वह मूर्ति महादेवकी छातीपर खड़ी हुई है, परन्तु महादेवजीकी मूर्तिका टूटा हुआ मस्तक दूरसे ही दृष्टि आता है। योगिनी और अप्सराओकी मूर्तियां पर यवनोने हस्ताक्षेप नहीं किया है। दहिनी ओर त्रिमूर्तिका मंदिर है, इसमे एक मूर्तिमें ब्रह्मा, विष्णु और महादेव इन तीनो देवताओका मस्तक लगा है, महादेवजीके अतिरिक्त ब्रह्मा और विष्णुजीका मस्तक भी यवनोने भंग करडाला है, इन तीनो मूर्तियोपर जो वड़ा एक मुकुट था वह आज तक विराजमान है, और उसका शिल्प कार्य अत्यन्त मनोहर और प्रशंसनीय है। ऐसा चमत्कार आर शिल्पकार्य अब नहीं होसकता"।

"हमने पीछे प्रधान मंदिरमे जाकर देखा कि यह ५८ फुट ऊंचा है इस मंदिर के वाहरी भागमे तथा भीतरी भागमे सर्वत्र देवी देवताओंकी मूर्तियां खुदी हुई थीं

मंदिरके बाहर दाहिनी ओर एक गुम्मठमे महादेवजीकी मूर्ति है, उसके गलेमें मुंडोकी माला तथा सात हाथोमे सात ही प्रकारके अस्त्र है। उनके शिरपर नृकपाल युक्त सर्प विजड़ित मुकुट है, उसके बाई ओर एक योगिनी रुधिर पान कर रही है और उनके दाई ओर नीचेके आसन पर मृत्युकी मूर्ति है उसका शरीर जीर्ण शीर्ण है।

पश्चिमकी ओर महादेवजीकी और एक प्रकारकी मूर्ति है, वह मूर्ति जैसी धीर और सुन्दर है उसी प्रकार रमणीक है पार्वतीका विवाह करनेके लिये जिस समतिसे गये थे यह वही मूर्ति है। महादेवकी मूर्ति जैसी भयंकर है उसी भाँति मनुष्योके मुंडोकी मालासे शोभायमान है, उसके पास ही मृत्यु मुखमे पड़ी हुई दो मनुष्य मूर्ते है, वह मूर्ति दोनो अविकल समंकित हुई है"।

उत्तरसे एक मूर्ति है जो काल और उसके साथियोंकी है, देहाती उसको भूका माता कहते है, वह वृद्धा और खोपड़ियोका हार पहिरे है, दो मनुष्य उसके साथ है, जो टेढ़ी आकृतिके हैं। मृतक होनेसे उनकी ऑखे वंद है मुखकष्ट पाये हुए सा प्रतीत होता है। और एक मांसाहारी पशु उनके समीप आरहा है।

मंदिरका सभामंडप कई फुट आगे तक है, दोनों ओर चौकोन स्तम्भे वने हुए है, इन स्तम्भोमे स्त्री पुरुषोकी वहुत सी मूर्तिये है। महरावे वड़ी अद्भुत है। मूर्ति खड्ग हाथमे लिये ऐसी बनी है कि ऊपर पैवस्त होगई है, यहाॅ एक हाथीकी मूर्ति है। हम कह सकते है कि हमने ऐसी मूर्ति कहीं नहीं देखी.

इसकी छत बड़ी मनोहर है हमारे घासीने उसका मानचित्र लिया है, पवित्र स्थान पर देवताकी मूर्ति है जिसको यहाॅवाले रोरी व रोली कहते है, दूसरा नाम इनका वालनाथ है, पंडे इनकी स्तुति श्लोकोसे करते है, यहाॅ एक पत्थर चम्वलके रगड़से गोल होगया है, इसीके समीप मंदिर है। एक महापुरुषने इनके समीप पार्वतीकी मूर्ति बना कर स्थापित की है पर देवताको यह स्वीकार न हुआ उसको वड़े कष्ट पडे उसकी भार्या मरी पुत्र मरा और उसका दिवाला होगया।

इस मंदिरके समीप वीस गजपर एक और स्थान सिंगार चोरी है। इसका यह चालीस फुट मुरब्बा है। वड़े २ स्तम्भो पर स्थापित है सब औरसे खुला है उसमें भी वहुत मूर्तियाॅ है। सहनमें वारह फुटका एक चौतरा है यहाॅ राजा हूनका विवाह एक राजपूत की पुत्रीसे हुआ था उसीकी यादगारमे यह बना है।

मंदिरके बीचमे एक स्थान नंदेश्वरका बना हुआ है, एक पुरुप ईश्वरकी प्रार्थना करता है, महादेवजीके समीप छोटे २ मंदिरोमें महादेवजी तथा अन्य देवताओकी मूर्तियां है, उत्तरकी ओर गणेशजी तथा दूसरे देवताओकी है, परन्तु यवनोने इन मूर्तियोको भंग कर दिया है, आगे दो स्तम्भ है एक खड़ा है दूसरा गिरा है शायद नारायणके पालनेके निमित्त हो; यहाॅ एक जलपानके लिये वावली वनी है, यहाॅसे चलकर हम एक कुंड पर पहुॅचे, यह कुंड साठ फुट लम्बा चौड़ा है इसमे पानी लवालव भरा रहता है, इसके समीप एक मंदिर जलके देवताका है। कुंडके निकट जो मंदिर है उनमे भी

अद्भुत शिल्प है, एक मंदिरमे पानीमे तैरती हुई नारायणकी मूर्ति देखी । नारायण शेषनगार पर शयन करते है वह सहस्र फनोसे उन पर छाया किये है, चरनोमे लक्ष्मी बैठी है, मत्स्य और नराकार पुरुष नारायणका सिहासन उठाये हुए है। उनके बीचमें एक घोडा खड़ा है उसके समीप सिह है, पलंग बना हुआ है। ऊपरके भागमे देवताओके चित्र है। एक स्थान पर नरसिहजीका चित्र है तथा और भी बहुत सी मूर्तियां है ।

नारायणकी मूर्ति शयन किये हुए है। एक हाथ शिरके नीचे है शख चक्र गदा पद्म लिये है । यह शंख दक्षिणावर्त कहाता है उनकी नाभिसे एक कमल निकला है और उस पर ब्रह्माजी बैठे हुये है। लक्ष्मीजी चरण दाब रही है,यह सब वस्तुएं बड़ी शिल्प-चातुरी प्रगट करनेवाली है । शेषनागके बीच शरीरसे सोती हुई मूर्ति यह बड़ी अद्भुत है, और शेषजी तौ असली सर्प ही विदित होते है; उनके शरीरके दाग तथा दरयायी घोड़े अद्भुत हैं; नारायण जिस पलंग पर सोते है वह आठ फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा तीन फुट ऊंचा है, और वह मूर्ति मुकुटसे चरणोंतक चार फुट है, हमारी इच्छा इनको दूसरे स्थानमे लेजानेकी हुई ।

कुंडके आसपास १२ मंदिर है, यहॉ एक स्त्री पुरुषकी मूर्ति अद्भुत है। यदि कुछ कारीगर छः महीने परिश्रम करै तो कुछ खाका इस बरौलीके अद्भुत शिल्पका खैच सकते ।

बरौलीके नामकरणका कोई इतिहास नहीं मिलता, पर राजा हूनजो अंगदसीके नामसे विख्यात है उनका इससे सम्बन्ध पाया जाता है । ऐसा विदित होता है कि जब यूनानी बादशाह सलूकसने फौज भारतमे उज्जैनको भेजी थी उनके आनेसे विदित होता है कि कमलमेरका मंदिर उन्होने बनाया हो, हमको दो खोदित लिपियोसे पता लगता है कि सात आठ सौ वर्ष पहिले वह यहॉ आये थे, उसमें एक नाम बलनसीके पुत्रका है जो वहॉ बल नगरीसे आया था, दूसरा जैन भाषामे उसकी तिथि सवत् ९८१ इसमे सिद्धेश्वर महादेवकी प्रार्थनाके पांच श्लोक है, हमारे गुरू अपना व्याकरण उदयपुर छोड आये थे इससे वह इनका पूरा अर्थ नही करसके। यह एक समयकी आमदनीसे नही बना कारण कि इसका व्यय राजपूताने भरके एक सालकी आय होगी ।

यहॉ पत्थरकी दो छतरी बनी हुई है, बरौली उस भागमे बसा हुआ है,जो चम्बल-नदी और घाटीके बीचका भाग है जिसमे सदेहात भिसरोरके समीप तीन मीलकी दूरी पर पश्चिमकी ओर आबाद है, और यह बड़ा विचित्र स्थान है ।

द्वादश अध्याय १२.

चम्बलका पूर्णित जल–रमणीय प्रकृतिका हृदय–जलप्रपात–विहारभूमि–उसका रमणीय दृश्य–नावलि–धूमारकी गुहावली–गुहाश्रेणीका वर्णन–विग्रह समूहका वर्णन–जैनविग्रह चिह्न–भीमका बाजार–जसवन्तराव हुलकरकी छतरी–ताकाजीका कुंड ।

कर्नल टाड् साहवने ३ सितम्बरको लिखा है कि " वरौलीके मंदिरके अनुपम सौन्दर्यको भलीभांतिसे देखनेके लिये मै वहॉ कई दिन तक रहा, और स्वभावसे एक महान् दृश्य चम्बलके भँवरवाले जलको देखनेके लिये गया । डेढ़ कोश चलने पर वडी प्रबलतासे जलके गिरनेका शब्द सुनाई आया, अन्तमे मै नदीके किनारे गया, वह शब्द वहांसे भलीभांति सुनाई पडता था । मेरे छोटे २ डेरे एक ऊंची जमीनके ऊपर गड़े थे, वहांसे जो दृश्य दिखाई देता था, वह स्वभावतः परम रमणीय दृश्य था, उस दृश्य को वर्णन करनेकी मनुष्यमे सामर्थ्य नही है । हमारे डेरोके पीछे सघन वन था, सम्मुख ही पहाड़ोके शिखर दिखाई पड़ते थे, वांई ओर नदी विस्तारित होकर मानो एक हौदकी समान होगई थी, उसके चारोओर वेले छा रही थी, इससे कुछेक दहिनी ओर एक प्रसिद्धा नदी बह रही थी । उसका पाट इतना छोटा था, कि मनुष्य छलांग मारकर सरलतासे उसके पार होसकता था । डेरोमेसे वह विस्तारित तरंगकी क्रीड़ा भली भांतिसे दिखाई पड़ती थी । मैने हौदके प्रथम मुहाने पर जाकर देखा कि उस नदीका तीक्ष्ण चलनेवाला जल पहाड़ोको भेदन करता हुआ जा रहा है, इस स्थानसे जलके गिरनेका आरम्भ हुआ । जल राशि उस चम्बलसे महा तीव्र वेगसे पत्थरको भेदन करके नीचेको विकट शब्दसे गिर कर नदीके आकारमे नक्षत्र गतिसे चल रही है । अन्तमे वह कुछही दूर जाकर स्वतंत्र चार तरंगनीरूपसे चारोओरको चली गई है । इसीके मध्यस्थलमे एक ऊंचा पत्थरका स्थान है इसके ऊपर सफेद सूर्यकी किरणे विचित्र क्रीडा कररही है । इस स्थान पर चार नदियां चार खाड्योमे गिरकर उस पत्थरके देशको संघर्षण करती हुई भयकर शब्दसे फिर एक स्थान पर जाकर चारो एक रूपमे होगई है । जिस स्थान पर वह सम्मिलन हुआ है उसका जैसा विस्तार है उस स्थान पर घूर्णित जलकी ध्वनि भी उसी प्रकार भयंकर है । उस स्थानसे फिर दो स्वतंत्र तरंगिनीरूपसे दो तरफको चल कर उक्त पत्थर देशको पकड़ कर उत्तरांशसे फिर अंग २ मे मिलकर एक मूर्तिहो प्रवल तेजीके साथ फिर एक स्थान पर विचित्र सौन्दर्य प्रकाश कररही है" ।

"तरंगनियोसे वेष्टित उक्त पत्थरके स्थान पर जानेके लिये एक पुल बनवा दिया है, उस पाषाण प्रदेशका नाम भिसरोरके ठाकुरकी विहार भूमि है । वह ठाकुर ग्रीष्मऋतु के समय उस परम रमणीय देशमे प्रीतिभोजानुष्ठान और विहार किया करते है । यह स्थान भोज विहारके लिये अत्यन्त उपयोगी है । इसका अनुमान तो सरलतासे होसक्ता है । इसके चारोओर जलके गर्जनका शब्द सुनाई पड़ता है,–प्राकृतिक रमणीय दृश्यको कौन भूल सकता है ? यद्यपि यह देश वनमे है परन्तु वड़ाभारी है । यदि मेवाड राज्यमे हमै कोई यह देश देदेता तो हम इस भिसरोरको पाकर अत्यन्त आनन्दित होते, अथवा चम्वलके इस जलप्रपात घूर्णितजल प्राकृतिक दृश्य पूर्ण, इस स्थानमे निवास कर प्रीति भोजन कर महा आनन्द सम्भोग करते " ।

तारीख चौथी दिसम्वर–कुछ दिनोसे व्यापारी इस मार्गको स्वच्छ करते है जो गगा मेवा स्थान स्वच्छ किया जाता है, यह जंगल है और यहां वस्ती नही है। यहां एक

स्थान रानाकोट भी खाली पड़ा है।सवेरे ही हम खेरली ग्राममे पहुँचे यहाँसे हम दक्खिन पश्चिमकी ओर चले । यह मार्ग सर्वथा झाड़ी और पहाड़ोमे था गंगा भेव यात्रियोके आराम करनेका स्थान है।

यहाँ त्रिकोन मंदिर नजर आते है, जो छतरियोकी समान बने है और इनमे भी बड़ी कारीगरी है।असली मदिरको तोड़ फोड़ कर एक और मंदिर सदा बनाया गया है इसका केवल जगमोहन अच्छा है, इसमे एक स्थानसे पानी निकल कर बहता रहता है इसीसे इसका नाम भेवगंगा पड़ा है । इस पानी पर फूल बहुत चढ़ाये जाते है और वह कामधेनु नामवाले कनलके फूल हैं ।

असल मंदिरका ढाँचा बरौलीके मंदिर कैसा है। महादेव-पार्वतीजीकी इसमे मूर्ति है जोगिनी नागिनी आदि सब बने हुए है इसके फर्समे एक यात्रीका नाम खुदा देखा जिसमे संवत् १०११ खुदा था । इसकी छत मीनारदार बहुत अच्छी है । इस स्थानके कोनोमे पाँच मंदिर बने हुए है, पर वे सब टूट फूट गये है, चहारदीवारीमात्र शेष है वड़े मदिरमे एक चबूतरा है जिस पर महादेवजी स्थित है, यद्यपि बरौलीकी बराबर कारीगरी नही पर इस समयकी कारीगरीसे कहीं अधिक है, इस समय यह स्थान बनैले जन्तुओके रहनेका होगया है, वहाँ बड़े २ वृक्ष हैं । मंदिरमे होनेसे उनकी जडोने बहुत स्थान खिला दिये है, एक वृक्ष यहा सहस्र वर्षका विदित होता है एक ही वृक्षने सब मंदिरो पर अपनी छाया करदी है, इसमे बाहर और भीतरकी ओर दो होते है । भीतर भी वृक्ष है उनपर अमरवेल चढ़ी हुई है, यह महादेवजीको पसंद है । यहाँ केतकी बहुत होती है, बानर ही वहाँके निवासी है, यहाँ सतियोकी छतरी भी है उनकी संख्या भी इनसे विदित होती है, यहाँकी सब जाँचमे एक महीना लग जाय, पर हमने अपना मार्ग स्वच्छ करनेकी आज्ञा दी ।

नावली यहाँसे बारह मील है मार्ग बराबर जंगलका बड़ा कठिन और दुस्तर है ।

५ वी दिसम्बरको नावली नामक स्थानमे जाकर कर्नल टाड् साहबने लिखा है कि "नावली एक अत्यन्त सुन्दर ग्राम है, इसके पश्चिम अंशमे एक प्राचीन किला टूटा फूटा हुआ है । तीसरे पहरके समयमे तक्षकजीके कुंडको देखनेके लिये गया, यह कुंड नावलीके एक कोश पूर्वमे स्थापित है । वहाँ दो मंदिर है एकमे तक्षककी मूर्ति है । और दूसरेमे धन्वन्तरिजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है । दक्षिणको कुंड विराजमान है, यहाँके मनुष्य कहते है कि यह अतल है" ।

पश्चिमकी ओरसे एक नदी निकलती है, इसको तखेली कहते है यह कई मील तक पेचखाती हुई सौ फुट नीचे पठारके हिंगलाजगढ़के पूर्वी भागको धोती है । पीछे हमजारमें मिल जाती है, हमारे घासीने यहाँके चित्र लिये है, और जिसकी प्रशंसा लार्डलेकने की है, हम किला हिंगलाज देखते है जिस पर कप्तान हिचस साहबने तोपखानेके साथ अधिकार किया था ।

भानुपुरा ६ दिसम्बर ८ मील-यह स्थान बहुत रमणीक है। दो मील जंगलमे चलकर घाटी द्वारा भानुपुराके समीप पहुँचे। यहाँ एक घाट पर एक दुर्गके चिह्न पाये जाते है, जिसको इन्दौरगढ़ कहते है यह किला चन्द्रावतोंके अधिकारके समयका होगा यहाँ कोई खोदित लिपि न मिली पर अब भी यहाँ कुछ दस्तीकतके चिह्न पाये जाते है। इसकी हमको प्रसन्नता है।

भानुपुराके समीप हम एक नदीके पार हुए जो अलवा कहलाती है और ए घाटीसे निकलती है। यहाँ भी जसवन्त राव हुलकरकी एक छतरी है। यहाँ उसने सरकार अंग्रेजसे युद्धकी तैयारी की थी, इसमे दृढताके सिवाय कोई शिल्प नही है इसमे इस निर्भय हुलकरकी मूर्ति बैठी हुई बनी है एक स्थान यहाँ गुम्मजदार धर्मशाला सा है जहाँ जसवन्त रावका शव रक्खा गया था।

वहाँकी छतरीसे सीधी दूर पर एक और छतरी उसकी बहिनकी है जो जसवन्त रावके मरनेके बहुत दिन पीछे मरी थी, इसके दरवाजे पर काली नामक एक तोप रक्खी है,एक और थोड़े दिनोंके बने मकानमे जसवन्त रावके निमित्त निरन्तर पूजा होती है। एक मूर्ति श्वेत वस्त्र धारण किये यहां खड़ी है, उसके पीछे दीवार पर जसवन्त रावका चित्र है जो अपने विख्यात मीहू घोड़े पर सवार है। एक पुरुष उसपर चंवर करता है दोनों ओर दो सेवक खड़े है और ब्राह्मण कुछ पढ़ रहे है।

हमने यहांके अधिपतिका घोड़ा देखा तो छूते ही उसने कनौती दबाई, यह महु-आरंगका कुम्मैत है और अपने स्वामीकी समान महाराष्ट्र देशका रहनेवाला है, इसके शरीरकी गढ़न बहुत सुन्दर थी सब चौदह बिलस्त था, चेहरा नमूनेके अनुसार था असी लखेत, कान छोटे नोकदार, आंखे बड़ी उभरी हुई और थूथना इतना छोटा था कि चाहके प्यालेमे पानी पीसकता था। हमने कहा कि इसीके अनुसार इसकी पोशाक होनी चाहिये जिसको उसके स्वामीने स्वीकार कर लिया।

भानुपुरेमे ५००० घर है प्रबन्ध नरम है दीवान हुलकरका काम करते है। यहांके बड़े व्यापारी आदि सब अपने स्वामीके साथ हमारी मुलाकातको आये और ऐसी योग्यतासे मिले कि मेवाड़के निवासी इससे अधिक योग्यता नही दिखा सकते, पुरानी रसम रीति सब होती है और यहांका अधिपति सामर्थ्यवान है।

स्थान गरोट सात दिसम्बर फासला १३ मील-अब हम ठोकर खानेके मार्गसे मालवेमे आये इससे प्रसन्नता हुई गरोटमे बारह सौ घर है। यहाँ पुरानी कोई वस्तु नही है, पर बीच मार्गमे मीलीका किला हमारी पुस्तकके लिये कुछ सामान दे सकता है, जिसके टूटे फूटे खंड सातल पातल नामक राजाका कुछ पता देते है, यह राजा पांडवोंके समयका था यहांके मैदानमें अत्री हरे स्याह प्रकाशमान कितने ही प्रकारके पाषाण दृष्टि गोचर होते है। पर पहाड कहीं नहीं है थोड़ा भी खोदनेसे पाषाण खंड निकल आते है।

कर्नल टाड् साहबने आठ ८ वीं दिसम्बरको धून्नार नामक स्थानमे परम रमणीक गुहा और मंदिरोंको देखकर लिखा है कि इस देशकी उपजाऊ और श्रेष्ठ मट्टीको देखकर मुझे मेवाड़का स्मरण होआया।

हमारा प्रधान लक्ष्य धूम्नारकी गुहाके निकट जानेका था। मै ढाके तथा वन्यपादप पूर्ण एक पाषाणमय देशमे होताहुआ अन्तमे धूम्नार पर्वत पर जा पहुँचा । मैने देखा कि पर्वतके मूलमे उत्तरकी ओर एक सुन्दर सरोवरके किनारे मेरे डेरे लगे हुए है । परन्तु उस समय रमणीय दृश्यको देखकर नेत्रोको तृप्ति नही होती थी और अपार कौतूहल उत्पन्न होता था, मैने भोजनके लिये न बैठकर पहिले गुहा देखनेके लिये कहा "।

"धूम्नार पर्वतकी वेष्टनी प्रायः डेढ कोश थी, इसका उत्तरांश चौडा क्रम २ से शृङ्ग परको ऊंचा होगया था। इसकी ऊंचाई एक सौ चालीस फुट थी । सबसे ऊंचा शिखर ऋजुभावसे ३० फुट ऊंचा और उसके ऊपरका भाग समतल था । उस समतल क्षेत्रमे बहुतसे वट वृक्ष विराजमान थे, इसके दक्षिण ओर घोड़ेके खुरोकी आकृतिके समान, तथा ऊपरके भागके चारोओर स्वाभाविक अभेद दीवारे बनी हुई थी । प्राय. दीवारोमे सर्वत्रही गुहा बनी हुई थीं, मैने गिनती करके देखा कि गुहाओकी सख्या एक सौ दश है । इन गुहाओके प्रधान मंदिरोंका प्रवेश द्वारस्वरूप था, अथवा यहाँ प्राचीन सन्यासी लोग निवास करते थे। दीवारोमे छेद होरहे थे परन्तु दीवारे लोहेकी समान कठिन और चिकनी थीं, यहाँ पर प्राचीन बस्तीके चिह्न भी पाये जाते है, परन्तु वह किस समयके है यह नही जाना जाता, यहां जो एक फुट चौड़ा प्राचीन दीवारो का कुछ टूटा हुआ हिस्सा देखा । यह एक बडे पत्थरके टुकड़ेकी समान था, पत्थर पत्थर पर जोड़ा नही गया है, इस कारण मेरा यह विचार हुआ कि यहाँ संसारियोकी वस्ती नही थी, केवल योगी और संन्यासी ही निवास करते थे " ।

" मै शिखरके ऊपरके अंश पर चढ़ा, चारोओर भ्रमण करनेके पीछे एक अंशमे जानेका मार्ग देखा । वह नीचेसे ऊपरतक कटा हुआ और खुला था । वह मार्ग दोसौ हाथ चौड़ा और चार सौ हाथ लम्बा था मै उसके एक चौकोने स्थानमें आया । इसकी ऊँचाई प्राय ३५फुट थी। यह एक बड़ी भारी गुफा है। यह गुफा पत्थरको खोद कर बनाई गई है । इसके मध्य स्थान पर एक बड़ा पत्थर काट कर उससे एक मंदिर बनवाया है और उसमे चतुर्भुजाकी मूर्ति विराजमान है, गुहाके उत्तर पश्चिममे खुदी हुई सीढियां दिखाई दी । वह सीढ़ी पर्वतके शिखर तक लगी हुई थी। उस शिखर देशपर यद्यपि मट्टी नहीं है तथापि मैने वहाँ बहुतसे प्राचीन पीपल और वट तथा इमलीके वृक्ष देखे " ।

" उक्त मंदिर साधारण मंदिरकी आकृति युक्त चाडा–मंडप है । इस मंदिरकी गठन रीति जैसी सरल है वैसी ही मजबूत भी है, स्तम्भोकी श्रेणी नकासीके कामका चमत्कार दिखाती थी, अनेक प्रकारकी सुन्दर प्राति मूर्तियां भी खुदी हुई है । एक बड़े भारी पत्थरके टुकडेको खोद कर यह मंदिर बनाया गया है, इसका स्मरण करनेसे इस मंदिरकी प्रशंसा नही की जासकती " ।

" एक बेदीके ऊपर चार हाथकी बराबर विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान है । विष्णुके पहिरे हुए वस्त्र सभी पीले रंगके है। इस कारण इस मूर्तिका दूसरा नाम पॉडुरंग है प्रधान मंदिरके चारोओर निम्नलिखत देव देवियोकी मूर्तियाँ है। पहिले प्रवेश

द्वारके ऊपर द्वारपाल देवताकी मूर्ति है दक्षिणमे गणदेवकी मूर्ति है, उनके निकट वारदेवी सरस्वतीकी प्रतिमा विराजमान है, वाईओर कालभैरव और गौरा भैरवकी मूर्ति है। उससे कुछ ही दूर पंच महादेवोकी मूर्तिका मंदिर है। प्रत्येक मूर्तिका स्वतंत्र वाहन दिखाया गया है। बैल, मनुष्य, हाथी, भैसा, और मोर यह पॉच प्रकारके वाहन भी खुदे हुए है"।

प्रधान मंदिरके पीछे तीन छोटे २ मंदिर और है, उनके वीचके मंदिरमे अनन्त शय्यापर शयन किये हुए नारायणकी मूर्ति, और चरणोके धोरे लक्ष्मीजीकी मूर्ति है" । लक्ष्मीजीकी मूर्तिके धोरे दो विकट काय दैत्य मानो परस्परमे आक्रमण कररहे है। नारायणके चारोओर छोटे २ देवताओकी मूर्ति कोई वंशी कोई वीणा और कोई मृदंग वजा रही है, इन वाजोकी ध्वनिसे मानो अनन्त आनन्दसे अनन्त फल विस्तार कर रहे है। छोटे २ मंदिर भी प्रधान मंदिरोकी समान वड़े २ पत्थरोके टुकड़ोको खोद कर वनाये गये है, परन्तु उनमे विग्रह सिहमर्मरके पत्थर पर खुदे हुए है, मंदिरके ऊपर महादेवजी की मूर्ति विराजमान होरही है"।

"मै पर्वतकी सीढ़ियो परको होता हुआ दक्षिण ओरसे वाहर हुआ। वह स्थान खुला हुआ था, और वहांसे चम्बल वहुत दूर थी, तथापि उसका तथा मन्दसोर और सुन्दवाराके देशका रमणीय दृश्य देखा। वहांसे सीढियोपरसे उतर कर मै वाई ओरकी गुफामे गया, उस गुफाका तलछत केवल स्तभोसे रुका हुआ था। यह स्तंभ जैन आकारसे वने हुए थे। आश्चर्यका विषय है कि इन मंदिरोके एक अंशमे जिस भांति शिव और विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान थी, इसी प्रकार और अंशोमे भी दक्षिणांशोमे जैनियोके विग्रह चिह्न विराजमान थे। इनके पास ही गुफामे जैन व बहुत सी वौद्धोकी मूर्ति थी–कोई खड़ी थी, कोई बैठी थी, परन्तु इसकी दक्षिण ओर महाभारतमे विख्यात पांचो पांडवोके स्मृति चिह्न पाये जाते थे। एक दश फुटकी लम्बी मूर्ति यहॉ निद्रित अवस्थामे थी, ऐसा सुना जाता है कि यह मूर्ति महावीर भीमके पुत्रकी है और इसकी यह अवस्था केवल एक ही घंटेकी बताते है, इसके अतिरिक्त पॉचो पांडवोकी मूर्तियां दिखाई आई जो मनुष्य उन पांचो पॉडवोके सेवकभावसे रहते थे वह उनकी मूर्तिये थी, कहते है वनवासके समय पॉडव यहॉ ही आकर रहे थे"।

"सौभाग्यसे मेरे साथमे जैन गुरू थे, उन्होंने कहा कि यह पंचमूर्ति जैनियोके पंच तीर्थकरोकी है। ऋषभदेव प्रथम, सन्तनाथ षोड़श नेमनाथ वाईसमे, पार्श्वनाथ, तेईसमे, महावीर और चौवीसमे यह पचजैन देवताकी पंचमूर्ति है, यह पंच पांडवोकी मूर्ति नहीं है। चन्द्र प्रभुकी मर्ति भी वहॉ दिखाई दी। सभी मूर्ति दश ग्यारह फुट ऊची थी"। वास्तवमे यह पच जैन देवताकी मूर्तियां है वा पांच पांडवोकी मूर्ति है, इस स्थान पर इसका विचार करना हमै असंभव होगया।

उस गुफाके धोरे ही धूम्रारमे एक और वड़ी गुफा है। पहिली गुफाके भीतरसे ही उस गुफामे जानेका रास्ता है। वह सर्व साधारणमे भीमके राजके नामसे विदित

है। इस गुफाकी लम्बाई सौ१०० फुट है और८० फुट चौड़ाई है। गुफाका प्रधान कमरा भीमके अस्त्रागार नामसे पुकारा जाता था, एक बाहरकी कोठरीके रास्तेसे इसमे जाना होता है, वह कोठरी २० फुटकी है, अस्त्रागारकी गुफाके भीतर एक घर है। वह घर ३० फुट लम्बा और १५ फुट चौड़ा है, उस कमरेके चारोओर धर्मशाला बनी हुई है। तीर्थ-यात्री लोग यहां आकर ठहरते है। यद्यपि यह भी भीमके नामसे विख्यात है, परन्तु अन्यान्य लक्षणोसे जैनियोकी जानी जाती है। अस्त्रागारके पास ही राजलोक नामका एक कमरा है, यह पहाड़ आदिनाथके नामसे विख्यात है। इससे यह भी विश्वास होता है यहां आदिनाथकी पूजा होती होगी, एक स्थानमे पार्श्वनाथकी भी दो मूर्तियां है।

"और भी दक्षिण वा दक्षिणपश्चिममे गुफा और कमरे है, उन कमरोके चारो ओर योगियोंके ठहरनेके लिये घर बने हुए है। यहॉ एक बहुत बड़ा वृक्ष है, यहॉ भी एक बहुत बड़ी मूर्ति है.

धून्नारकी गुफाओका विस्तार सहित वर्णन करनेकी अब लेखनीमे सामर्थ्य न रही। यद्यपि यह इलोरा, कारलि, वा सालसेटीके प्रसिद्ध प्राचीन गुफाओकी समान श्रेष्ठ नही, परन्तु इसमे कुछ भी सन्देह नही कि यह उन सबकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन है। मैने इन गुफाओके चारोओर खोज की परन्तु कही भी किसी प्रकारकी खुदी हुई लिपि वा अनुशासनपत्रको न पाया। यह गुफा दर्शन करनेके योग्य ही थी, इनको देखकर अनेक प्रकारका कौतूहल उत्पन्न होता था, और इनमे बहुतसे अद्भुत पदार्थ है"।



त्रयोदश अध्याय १३.

झालरापाटन–कर्नल टाड्की अभ्यर्थना–झालरापाटन नगर–मंदिरोकी श्रेणी–झालरापाटनकी उत्पत्ति–झालरापाटनकी सृष्टिके सम्बधका विवरण–स्वायत्व शासन–कर्नल टाड् साहबके साथ नगरके सब श्रेणीके प्रतिनिधियोका साक्षात्–प्राचीन नगरी चन्द्रावतीका वृत्तान्त–उसकेस म्बन्ध का प्रवाद वाक्य–प्राचीन मंदिर श्रेणी–कर्नल टाड्का देवताओकी मूर्तियोंको संग्रह करना—

स्थान पंच पहाड़–१०दिसम्बरको हम गिरोटसे चलकर इस मुकाम पर आये। गिरोटसे मानसन साहबका आगमन हुआ था, यह एक ऐतिहासिक स्थान है। जब हुलकर प्रताप गढ़मे था और उसने अंग्रेजी फौजका आगमन सुना तब वह अपनी सेनासहित मन्द-सोरको गया और चम्बलके पार होकर गिरोटकी तरफ चला, जो वहॉसे पचास मीलके लगभग दूर था, मानसन साहबको इसकी कुछ खबर न थी वह उस समय चन्द्रवासाको जाते थे, पर ज्योही उन्होने हुलकरका समाचार सुना कि उन्होने मुकन्दरा घाटीको जाकर रोका और ल्यूकन साहबको कोटेकी हाड़ा फौजके साथ वही छोड़ा। हुलकरके १००००सहस्र अश्वारोही चार गोलें बॉधकर चले यह खान वगशके अधीन थे और इन्होने

दक्खिनसे ल्यूकन साहव पर आक्रमण किया। पर ल्यूकन साहवने उसको पराजित किया, पर साहबके पॉवमे उन्हींके सिपाही द्वारा चोट आई, एक पुरुष जो उस युद्धमे सम्मिलित था उसने हमको वह वृक्ष दिखाया जिसके नीचे साहब गिरे थे।

कोटेकी सेना कोइलाके सामन्तके अधीन थी। अमरसिंह पर ज्यों हीं आज्ञा पहुँची वह तैयार हुआ। पीपली ग्रामके सम्मुख वह अपने घोड़ेसे उतरा और जीनपोशके ऊपर बैठ गया और उसके चारोओर एक सहस्र सिपाही थे, उसने अमजारके मार्गसे आक्रमण करना चाहा पर उसकी सेना साहस हीन होगई थी, तथापि उन्होंने शत्रुओंके शवोंसे नदीको भर दिया। पीछे एक गोली अमरसिंहके माथे और एक छातीमे लगी जिससे वह भूमि पर गिरा परन्तु तत्काल उठकर एक कोल्हूके सहारे खड़ा होगया। और सेनाको साहस बँधाया पर वह शत्रुकी ओर तलवार उठाकर गिर गया और मरगया, साढ़े चार सौ सैनिक उसके साथ मारे गये और कोइलाका भावी अधिकारी सामन्त पलेटिया भी मारा गया, और कोटेकी सेनाका वखशी वन्दी हुआ जिसको दशलाखका तमस्सुक लिखनेसे छुटकारा मिला जिसका वर्णन पीछे हो चुका है।

यहॉ एक सादी छतरी बनी है। जहॉ यह हाड़ा वीर मारा गया था। एक चौतरा यहॉ बना है इसको जुझार कहते है, इस पर घोड़े सहित उस सवारका चित्र है, हमको कोटेके नायब पर यहॉ उसकी वे परवाईसे क्रोध आया कि उसने कोई दृढ़ स्मारक यहॉ नही बनवाया था, पर वह ऐसा क्यो करता कारण कि वह हाड़ा जातिका तो है ही नही बल्कि ऐसा करनेसे तो उसे इर्षा होती। तथापि यह कच्ची छतरी भी एक प्रतिष्ठा की वस्तु है, जो दृढ़ छतरियोको प्राप्त नही है, ल्यूकन साहबकी छतरी ऐसी भी नही है, वह जो मारेगये वह छतरी बननेका कुछ स्वत्व रखते थे वा नही, यह भी विदित नहीं हुआ परन्तु रहने वाले उस पीपलीके वृक्षको जहॉ साहव गिरे थे ल्यूकनका जुझार कहते है। यही स्मृति है और छतरीकी मरम्मत करते रहते है।

इतने मनुष्योका वध कराकर अंग्रेजी कमानियरने मुकन्दराघाट पर अधिकार किया और शत्रुसे भेट न हुई। यदि साहब पांच कम्पनी पैदल छोड जाते और थरमोपलीको चले जाते तो नामवरी रहती–कारण कि वह स्थान ऐसा है कि उसके चारो ओर भ्रमणमे एक सप्ताह लग जाता है और पैदलके सिवाय वहॉ किसीकी गुजर नही है पर कमानियर साहवको अपनी सेनापर विश्वास न था हम कहते है यदि ऐसा था तो उन्होने सेनाकी अफसरी क्यो की थी। पर ऐसा नही था प्रत्येक सिपाही युद्धके लिये तैयार था जब कमाडरने पांच कम्पनी युनासके घाट पर छोड़ी तब उन्होने कैसा काम किया जब-तक उनके पास युद्धका थोड़ा सामान भी रहा बरावर लडते रहे और शत्रुको हरादिया। एक समय सेंधियाकी फौजके एक जिमानखो रूहेलेने हमसे कहा कि मैने शनैः २ एक स्थान वनाया जहासे एक अंग्रेजको पिस्तौलसे मारा। उसने यह भी कहा कि मरहठे पैदल कभी आक्रमण नही करते। जसवन्त राव दीवानेकी समान अपने हाथ भूमिपर देमारता था। और अपने अश्वारोहियोमेसे वीरोको पुकारता था अन्तमे

उसके सवारोके हाथसे संकलेर साहव और उनके साथी मारे गये। हम इससे यह उपदेश लेते है कि ऐसे पुरुपको किसी प्रकार अफसरी न देनी चाहिये । जो अपने सिपाहियो पर विश्वास न करता हो।

पंचपहाड़ एक आवाद शहर है, इसमे चार जिले है, जिनको हमने युद्धमे हुलकरसे लेकर नायवको दिया है। यद्यपि अभी उनमे ५०००० रुपयेकी आय नहीं होती, पर उनमे इस्से दूनी आय होसकती है इस शहरमे २००० घर है। वाजार चोड़ा है।जिसमे व्यापारी महाजन रहते है । यहॉके आदमी हमारी भेटको आये यहां लाल पत्थर भी वहुत है।

कुनवारा ११ दिसम्बर–उत्तर पूर्व १३ मील हमारा गमन वहुत अच्छे मार्गसे हुआ यहॉ ज्वार गेहूं वहुत होते है। यद्यपि युद्धके स्थानोमें खेती विशेषत: कम होती है पर गेहूंकी खेती विशेष होनेसे कुनवारा यथानाम तथा गुण होगया है। यहांसे चार मील ओतला ग्राम होकर हम चले।हम उस मुकाम पर पहुँचे जो उज्जैनसे सीधा हिन्दुस्थानके द्वारको जाता है- यहासे सोनेल वडा शहर है, तीन मील हमारे दहनी ओर है।

महात्मा टाड् साहवने १२ वी दिसम्बरको दश मील चलकर झालरापाटनमे जाकर लिखा है, "कि मे चन्द्रभागा नदीके पार होकर गया, इस नदीकी उत्पात्तिका स्थान यहॉसे दो कोश दूर है। उसके पास ही रेलीत्यो नामक पर्वत विराजमान है । पहिले उस पर्वती देशमे एक सम्प्रदाय भीलोकी वास करती थी और एक समय यहॉसे चार हजार भील मालवेमे जाकर वहॉके वीचके देशोंकी समस्त धन सम्पत्ति लूट लाये थे । कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिहने ही उस भील सम्प्रदायका विनाश किया था"।

झालरापाटन नगर कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिहने बसाया था। मै नगरके आधकोश धोरे पहुँचा उसके पूर्वदेशकी समान नगरके प्रधान विचारक, पंचायत समाज समस्त प्रधान २ धनवान् निवासियोने आगे वढ़कर मुझे बड़े आदर सम्मानके साथ ग्रहण किया। समस्त भारतवर्षके बीचमे केवल इसी नगरमे इस समय मिउनिसिपलके स्वायत्व शासनकी रीति प्रचलित देखी। यहॉके निवासियोने ही स्वयं आत्मशासन विधिको प्रणयन करके स्वाधीनताके साथ स्वायत्वशासन कार्य किया था । भारतवर्षमे सबसे अधिक यथेच्छाचारी शासन कर्ता जालिमसिहके समीपसे इन्होने स्वायत्व शासनकी स्वाधीनता पाई थी, यह अवश्य ही आश्चर्यकी वात है, कि जालिमसिहने राजनैतिक अभिप्रायके सफल होनेकी आशासे इनको यह स्वाधीनता दी थी।

मै उपस्थित सभी मनुष्योके साथ अभिवादन कर तीसरे पहरके समय सवके सहित अपने डेरोमे आया, मैने इस युक्तिसे विदा ली कि सभी मेरे साथ वातचीत करके संतुष्ट हुए,उसने विदा होकर नगरमे आया। जानेके समय किलेपरसे तोप छूटनेका शब्द हुआ। यह नगर चौकोर है चारोंओर वड़ी २ दीवारें और उनके ऊपर तोपोकी कतार सज रही है। नगरका भी तरीभाव सरल और सहजभावसे गठा हुआ है। दो

प्रधान राजमार्गोंने भिन्नप्रान्तसे वाहर होकर परस्परमे अतिक्रम किया है। सबसे प्रधान मार्ग दक्षिणसे उत्तरकी ओरको गया है। मै इसी मार्गसे वड़े वाजार होता हुआ गया अन्तमे जो रास्ता दोनो रास्तोसे परस्परमें अतिक्रम करके गया है। उस संगम स्थानमे जा पहुँचा। उस संगम स्थानमे सम मध्यस्थलमे नव्वे फुट ऊंचा एक मंदिर था। उसमे चतुर्भुजा देवीकी मूर्ति विराजमान थी। पाषाण मय चूड़ा-मंडप इत्यादि मेरी दृष्टिको आकर्षण करता था यद्यपि यह सब भाँतिसे तैयार तो होगया था। किन्तु श्वेतही रंगसे रंगा हुआ था, मैने इसे आज कलका जान कर विचारा कि इसमे कोई प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व नही पाया जायगा, इससे उसके देखनेकी इच्छा न करके सीधा चला आया इस स्थानसे उत्तरकी ओर तोरणद्वार तक मार्गके दोनो ओर एकभावसे बने हुए सौध और आलयकी श्रेणी दिखाई दी। यह मार्ग आध कोश था, इसकी शेष सीमामे जालिमसिहद्वारा प्रतिष्ठित द्वारकानाथका मंदिर स्थापित है, यह मूर्ति प्राचीन नगरके टूटे स्थान खोदनेके समयमे निकली थी और यह कोटेके जालिमसिहके पास भेजी गई। उन्होने इसका नाम गोपालजी रखकर इस रमणीक और विस्तारित सरोवरके किनारे उसे मंदिरमे स्थापन किया ”।

उत्तरांशमे जैनियोके सोलह देवताओके निवासका रमणीक मंदिर है, वह मानो इस समय भी असम्पूर्ण अवस्थामे है अंतमे मै जानगया कि यह बहुत पुराना है, और यहाँ एक सौ आठ जैनमंदिर थे, उन्हीमेका एक यह भी है। प्राचीन नगरमे इन एकसौ आठ मंदिरोमे वरावर एक साथ घंटा घड़ियाल बजते थे। इसी कारणसे इसका नाम झालरा पाटन अर्थात् घण्टेका सहर हुआ है झालरा पाटन अर्थात् झालावंशीय जालिमसिहके नामसे इस नगरका नाम हुआ है, इसीसे यह प्रचलित वाक्य सत्य नही है, मै कई मुहूर्तके लिये प्रधान मजिष्ट्रेट साहब मनीरामके घर गया नगरीकी जो कुछ सुन्दरता देखी उसीके लिये उनके समीप संतोष प्रकाश कर तुम्हारे शासनसे नगरकी अधिकतासे श्रीवृद्धि होगी, यह आशा प्रकाश कर उनके समीप से विदा माँगी साह मनीरामके घरके ठीक सामने एक स्तंभ देखा, और झालरा पाटनके निवासियोको जो स्वयं शासनतंत्र प्राप्त हुआ था उस स्तंभ पर उसका विस्तारसहित वर्णन खुदा हुआ देखा। उस सरल विवरण पूर्ण सत्वदानकी रीतिको पढ़कर हँसी आती थी ”।

“ कोटेके राजमंत्री जालिमसिहने राष्ट्रविप्लव और अराजकताके समयमे सुअवसर पाकर पार्श्ववर्ती अनेक देशोके धनवान निवासियोको इस स्थानमे इस नगरमे वाणिज्य स्थानमे वास करनेके लिये बुलाया, उन्होने उनकी सुखशांतिके लिये जो प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये उक्त स्वत्वको दान करके, उस स्तंभके ऊपर उसे खोद दिया, जिस्से यह किसी समय भी नष्ट न होसके इस कारण वह उनके चित्तपर दृढ़तापूर्वक भलीभांतिसे अंकित होगया। उस स्वायत्वदानके साथही साथ नगरके चारो ओर दीवारें बनवाकर एक माननीय और सुयोग्य सेनापतिके अधीनमे एक सेनाको भी उस

स्थान पर रख दिया। उसने कुएँका खुदवाना प्राचीन ह्रदोका बांध बांधन, और अपने खर्चेसे यहांके सब जाति और सब वर्णांके प्राचीन देवालयोंका संस्कार करा दिया। और जिससे सभी जने यहाँ स्थाईरूपसे निवास कर सकै इस लिये आवासादिके बनानेके निमित्त प्रत्येकके खर्चेका आधा खर्चा अपने यहाँसे अग्रिम देदिया। इस प्रकारसे सबको यहाँ निवास कराकर उन्होने स्थाई शासनका भार तथा आभ्यन्तरी शांतिरक्षाका भार यहांके निवासियोंके ही हाथमे सौंपदिया।

पंचायत समाजने उस शासनके भारको पाकर कार्य किया। विचारादि कार्य करके यहाँके निवासियोंसे जो कुछ भी दंडमे धन मिलता है, उसको और किसी कार्यमे खर्च न करके केवल द्वारकानाथजीकी सेवामे लगाना होता है"।

"यहाँ पर यह भी अवश्य कहना होगा कि यहांके प्रधान मजिष्ट्रेट मनीरामने स्वयं वैष्णव होकर यहाँके वैष्णवोंका विचारकार्य जिस भांति निर्वाह किया था। उसी भांति यहाँके ओसवाल जातीय जैन धर्मावलम्बी निवासियोंके विचारकार्यको करनेके लिये गुमानीराम एक जैन मजिष्ट्रेट नियुक्त है। यद्यपि दोनो जने पृथक् २ रूपसे विचारकार्य करते है परन्तु आवश्यकता होनेपर किसी असाधारण प्रश्नकी मीमांसाके लिये दोनो पंचोंको इकट्ठा होना होता है, दोनो जने अत्यन्त प्रीतिके साथ कार्य करते है, और दोनो जनोंने ही अपने अपने पुत्रोंके नामसे उपनगर स्थापन किये है। जातीय प्रधान सभाके सभ्यगण बडी चतुरतासे सर्वसाधारण प्रजाके द्वारा बुलाये जाते है। पिछले बीशवर्षमे इस नगरीमे छः हजार उत्तम घर बने थे, और कुछ कम पचीस हजार निवासी रहते थे, इस देशके सब ही पट्टे वंशगत थे, इस कारण साह मनीराम और गुमानीरामके न होनेपर उनके पुत्र ही मजिष्ट्रेटका कार्य करते है। परन्तु यदि वह पुत्र इनकी समान दक्ष और न्याय विचारक न होते, तो स्वायत्व शासन नाममात्रको रहजाता। जालिमसिहके पक्षसे केवल सेनापति और वाणिज्य शुल्क संग्राहकने यहाँ निवास किया है"।

"नगरके सभी श्रेणीके मनुष्य और प्रतिनिधियोंने मेरे डेरोमें आकर मुझसे साक्षात किया। पाहिले वैश्य, पीछे वैष्णव सम्प्रदायके पंडा एक२ करके सभोंने अपना२ परिचय दिया। इसके पीछे उसी रीतिसे ओसवाल वाणिक मडलीने अपना परिचय दिया। मैने सभीको अपने२ पदानुसार बैठनेके लिये कहा इसके पीछे व्यवसाइयोंके प्रतिनिधिने आकर मुझे भेट दी। उसके पीछे शिल्पकार स्वर्णकार, काँस्यकार, हलवाई और अन्तमे छौरकार इत्यादि नगरकी सभी सम्प्रदायके प्रतिनिधियोंने आकर परिचय दिया। प्राचीन मंडलमे पाटलियोंके प्रतिनिधि भी आये। साह मनीरामने स्वयं बाहर खड़े होकर शान्तिकर रक्षा और उनको प्रणाली बद्ध कर दिया। और उनके सहयोगी गुमानीरामने परिचय देनेका कार्य किया। स्वर्णकार सम्प्रदायके प्रतिनिधिने अपनी सम्प्रदायके नामसे एक रमणीय चाँदीका पात्र उपहारमे दिया। उसका शिल्पकार्य अत्यन्त चमत्कारक था। प्रतिनिधि जिस प्रकार परिचय क्रमसे आये थे, उसी भांति पर्याक्रमसे विदा होकर बाहर जा राजमार्गमें भूरि भूरि, जयका डंका बजाते हुए और पताका उड़ाते हुए नगरको गये"।

उत्तर मालवेमे एक झालरापाटन ही वाणिज्यका प्रधान स्थान है। इन्दौरसे इस स्थान तक मध्यस्थके सभी देशोमे वाणिज्य कार्य होता है ।

"हम आधुनिक नगर झालरापाटनके सम्बन्धमे बहुत कुछ कह आये है । इस समय झालरापाटन वा घंटाशहरके सम्बन्धमे जो चन्द्रावती नामसे प्रसिद्ध है और जिस नगरमे होकर चन्द्रभागा नदी बही है उस प्राचीन चंद्रावतीके सम्बन्धमे इस समयमे कुछ कहनेकी इच्छा करता हूँ। ऐसा सुना जाता है कि राजा हूनने इस चन्द्रावती नगरकी प्रतिष्ठा की थी। और यह भी विख्यात है कि मालवेके प्रमार वंशीय राजा चन्द्र सेनकी एक कन्या चन्द्रावती तीर्थयात्रा करनेको गई थी, यात्राके समय उसके इसी स्थानपर एक कन्या उत्पन्न हुई, उन्होने ही इस नगरकी प्रतिष्ठा की है। और ऐसा भी सुननेमे आया है, प्राचीन निकृष्ट और जातिका एक जस्सू लकड़हारा जिस समय वनसे लकड़ी काटकर ला रहा था । उस समय रास्तेमे पारस (पत्थरके) ऊपर उसकी कुल्हाड़ी गिरपड़ी, गिरते ही वह सुवर्णकी होगई। उस मनुष्यने स्वर्णराशिकी सहायतासे इस चंद्रावती नगरकी प्रतिष्ठा की। और जस्सू ओरका तलाव नामका एक बड़ा सरोवर खुदवा दिया। वही इस चद्रावती नगरीका प्रतिष्टाता हुआ, कोई कहते है कि वनवासके समय पांच पांडवोमेसे भीमने इसकी प्रतिष्ठा की, एक दैत्यने इसमें विघ्न किया, भीमने उसे वाणसे मारा, वह भागा जहॉ बाण लगा वहॉसे चन्द्रभागा निकली। हमारा यह विचार है कि मालवेके राजा उदयादित्यके उस प्रवाद वाक्यको उस लकड़हारेमे परिणत कर दिया है, यही नही कि उसी राजाके नामकी खुदी हुई लिपि यहॉ दिखाई देती है। मध्य भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान२ नगरोमे ही उनके नामकी खुदी हुई लिपियां पाई जाती है। विक्रमाजीतके संवत्से १३ सौ वर्ष तक इस वशने वोर पराक्रमके साथ इस देशमे राज्य किया था" ।

"नदीके दोनोओर वहुतसे प्राचीन मंदिर टूटे फूटे पडे है। नदीके किनारे तक बरावर घाट और सीढ़ियॉ बनी हुई है वहॉ बहुतसे देव देवी दैत्य और दानवोकी बहुत सी मूर्ति पडी हुई है, इनमे वहुतसे लिग मट्टीकी वेदीके ऊपर स्थित है। और सबलकार अलस गोस्वामी उस वेदीके नीचे बैठ कर धूपमे अपने शरीरको सुखा रहे। मैने विचारा कि यदि उन मूर्तियोको मै उदयपुर भेज दूँ तो अच्छा होगा, यह विचार कर मैने अनन्तशय्या शाइत नारायण, एक, पार्वती एक त्रिमूर्ति तथा और भी बहुत सी मूर्तियोको गाड़ीमे रखकर उदयपुरको भेज दिया। वह सब एक वट वृक्षकी जड़मे पडी थी। उसी स्थान पर गणेशजीकी एक बड़ी सुन्दर मूर्ति पड़ी हुई थी किन्तु मै उस मूर्तिको किसी प्रकार भी न उठा सका। तव गोस्वामी मुसकाये" ।

"चंद्रावतीके एक सौ अट्ठासी देवमदिर प्रायः सभी विध्वंस होगये है। केवल दो तीन मंदिर आज तक उत्तम अवस्थामे है वह प्राचीन कालके सौन्दर्यकी पराकाष्टा दिखा रहे है। मंदिरोका शिल्पकार्य अत्यन्त रमणीक है" ।

"और सागरके वांधके निकट जैनपासकोके निसिया नामक वहुतसे समाधि चिह्न विराजमान है। एकमे लिखा है कि ३ माघ संवत् १०६६ इस दिन आचार्य

श्रीगन्धदेवके चेले श्रीमन्तदेवने इस संसारको छोड़ा। पिछली समाधिकी तारीख ११८० संवत् लिखी है तथा वह देवेन्द्र आचार्यकी समाधि है। इस प्रकारसे अनेक समाधियोंके स्तंभ देखे परन्तु उनमे कोई ऐतिहासिक ज्ञातव्य विवरण नही पाया।"
ऊपरकी समाधिके पास एक सन्दूक वना हुआ है,वह ऐसा है जैसे कोई पुस्तक देखता है, एक पुस्तक और एक धोती आचार्यके सम्मुख धरी है जैन छतरियोका ऐसा ही चिह्न होता है एक और कुमार देवकी छतरी है इन्होने१२८९मे इस असार संसारको त्याग किया था।

हमारा घासी दो मंदिरोका मानचित्र लेरहा है,इनमेके एक मांदिरमे अवतक सिगार चोग विद्यमान है, इनमे वह शिल्प है जो यूरुप निवासी भी तैयार नहीं कर सकते प्रत्येकमे एक सादा मंदिर है जो बीस फुट लम्बा चौड़ा है, उसके आगे सभा मंदिर है जिसे जगमोहन कहते है स्तभो पर सवमे नक्काशी है, द्वार भी प्रशंसाके योग्य है उसका शिल्प भी एक मुख्य प्रकारका है उसके (गिलवर्ग) वहुत ही श्रेष्ठ है, हमको दुःख है यूरूपवालोने इस पूरे शिल्पका कोई खाका तैयार नही किया, नही वह इसमे और योग्यता प्रगट कर सकते और इस भवानी भूमिका यह नाम वदल देते। जव तक हमारा चित्रकार चित्र लेता रहा हमने पण्डितोको और भी खोजके लिये भेजा यहाँ सहस्रो मूर्तिया है कितनी मूर्तियें दीवारोंमें लगा दी गई है पर उनकी खोज निरर्थक नही हुई.

सवसे पुरानी खोदित लिपि संवत् ७४८ सन् ६९२ई० की है जिसमे राजा दुर्गा अगलका नाम है। यह वेल बूटेदार अक्षरोंसे लिखी है, उसमे वह नियम जो पांडु अर्जुनके सम्बन्धमे है लिखा है कि यहाँ उसने एक वाराहको मारा जहाँ उसका रुधिर गिरा था वहा एक आकृति प्रगट हुई। कारण कि यह वाराह एक वरोदा दैत्य था। उस आकृतिका वंश खेतरी कहा है या कृष्णवंश खेतरी उसी वंशमे था। जिसके पुत्रतक एक था किस्से उसकी उपमा दे जिसे समस्त भूमंडलका फल प्राप्त था। उसनें अपने सब शत्रुओ पर विजय पाई थीं। इसका एक पुत्र क्याक नामवाला था। यह पृथ्वीको उठानेवाले देवता की समान था। बुद्धिमानीमे महादेवकी समान उसके नामसे शत्रुओके बालक छिप जाते थे। वह बुद्धका अवतार विदित होता था। और जैसे चन्द्रमासे सागर बढ़ता है इस प्रकार उससे हमारी बुद्धि वढ़ती है जव उसकी दृष्टि हमारी योग्यता पर पड़ती है। उसकी दृष्टिमे अमृत है चैत्रसे चैत्र तक वर्षभर उसके यहाँ हवन होता रहता है। इन्द्र उसके यहाँ कृपादृष्टि रखता है उसकी सरलता ससारमे छा गई है। इसके शत्रुओके चढ़नेके हाथियोके दाँतोमे जो प्रकाश था वह जाता रहा और जो आगे बढ़नेको हाथ उठाता था वह स्तंभित हो जाता था। भूमिमे कोई स्थान ऐसा न था जहाँ उसकी आज्ञाका प्रचार न हो इस प्रकारके श्री क्याक जी थे। जब वह दूसरोके नगरोमे जाते तौ शत्रुओकी स्त्रियोके मनोसे प्रसन्नता दूर होजाती थी, उसकी सब इच्छाएं पूर्ण हों।

संवत् ७४८ जेष्ट शुदी पूर्णमासीको यह लिपि इस मंदिरमे बनेरा घाट गणेश्वर मंडलवालेने जो हरगुप्तका पुत्र है लगाई और यह लेख महाराज दुर्गा अंगल राजाके निमित्त हुई, उनको हमारा प्रणाम पहुँचै। ऐसा कोई मस्तक नही जो देवता गुरू और स्त्रीके सामने नही झुकता यह लिपि ओलिक शिलपकारने खोदी है।

हमको इस खेतरी वंशपर यह भी अनुमान होता है कि यह वश वड़े हिन्दू वंश से है, जो उत्तरसे आये थे और वाराह नाम इन्दोसीदियनका भी है, इतिहास जैसलमेरसे कई जगह आया है कि जिस रयासतके आरंभ इतिहासमे पदभट्टीके तक्षक और क्याकसे युद्धका वर्णन है तक्षक और क्याक तातारी नाम है, तक्षक सर्प क्याक नाम आकाशका है, अर्थात् पूर्वमे यहाँके निवासी सर्प पूजक थे, इसीसे इस जातिका नाम तक्षक हुआ। वैसे ही इनके अक्षर है, जो पश्चिमी भारतमे पाये जाते है, यदि हम इस विषयको राजा हूनके जो भद्रावतीवाले और अंगदसी है जिन्होने राजा चित्तौरकी सेवा की थी। प्रविष्ट करे तो हमको स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह स्मारक सिथिर और तातार राजाका है। जो राजा जैतसालपुरवालेके सहित हिन्दू जनोमे सम्मिलित हुए थे।

एक लिपि जैन मंदिरसे संवत् ११०२ ज्येष्ट तृतीयाको मिली पर इसमे केवल एक दर्शक यात्रीका नाम है।

मुकाम नरायनपुरा १२ दिसम्बर ग्यारह मील–सबेरे ही यहाँसे चले, यहाँ एक गंदौर स्थान है, पहिले यह वाटीरावकी जागीर थी, आधकोश आगे आंतरीका मार्ग था इस घाटीसे हम उत्तरकी ओर चल रहे थे, और उत्तर पश्चिमकी ओर गागरौन शहर था, हमारी इच्छा इसके देखनेकी बहुत थी, समय थोड़ा था इससे हम इसको न देख सके, यह खीची वंशकी राजधानी है, हम उसी मार्गसे चले जिस पर अलाउद्दीन गौरी होकर गया था जब उसने अचलदा पर आक्रमण किया। यह घाटी तीन मील चौड़ी है, यहाँका दृश्य देखने योग्य है, मोर तीतर मुर्गे शब्द कर रहे है। मानो सूर्यके निकलनेकी प्रसन्नता प्रगट कर रहे है। इस वाटीमे नायव जालिमसिहने अपनी छावनी डाली है। और तीस वर्ष तक वह यहाँ रहा। इस घाटीने अब शहरियतमे अपना स्वरूप बदला है। बड़े २ मकान बन गये है चहारदीवारी बनानेका प्रबन्ध हो रहा है पर उसकी तैयारी तक उनके जीवित रहनेकी आशा नही है। यह स्थान अमजोरके किनारे है जिसको नायवने खूब पसद किया है, झालरा पाटनके मार्गके मध्यमे है, कुछ ही दूर पर पिडारोकी छावनी है जहाँ करीमखाँके पुत्रादि रहते है जो उस पिडारीदलके अधिपति थे यहाँ एक ईदगाह भी बनाई जाती है कि यहाँके क्रर कर्मालोग भी जो जघन्यकर्ममे तत्पर है पॉच समयकी नमाज पढ़े और कदाचित् उनके चरित्र सुधरै।

जब तक गागरोनके समीप न पहुँचो तब तक शहर और किला मिला हुआ सा दीखता है, पर यहाँ ऊपर चढ़नेसे वह पृथक् दृष्टिगोचर होता है, जलके प्रवाहसे ऊचाई तक पहाड कट गया है, और पर्वतकी चढ़ाई ऐसी क्रमानुसार है कि उसको देखकर हमको आश्चर्य हुआ। हमने उत्तरकी ओर निगाह की, काली और सिन्धु किले और शहरके उत्तरकी ओर टकराती दीखी हमारे शहरके निकट होते ही तोपोकी सेलामी हुई शहरके लोग हमारी मुलाकातको आये, किलेका अधिपति हमको साथ लेगया, अलाउद्दीन खूनी और जानवरने पांचसौ वर्ष हुए कि इस स्थानको खीची और अचलसे लेलिया था, नदीको गो रुधिरसे अपवित्र कर दिया था, हम पर्वतके मार्गसे फिर चले

फिर अंतरीघाटीमे उतरे और ठीक पश्चिमकी ओर होकर नरायनपुर पहुँचे, यह घाटी चारसौसे छः सौ गज तक चौड़ी है, यहाँका दृश्य सुहावना है, नायबने शिकारके निमित्त यहाँ खंदक किये है, पर्वत काटे है, जिन पर हिरन वा बनैले शूकर नही जा सकते, हम कई छावनियोमे गये जो पर्वतमें है, यहाँ नायब अच्छी सेना इकट्ठी कर सकता है, इनमे कुएँ और सरोवर भी विद्यमान है, जिनको पौ कहते है।

स्थानमुकन्दरा १४ दिसम्बर १० मील–हम प्रभात ही चल घाटीपर एक ऊजड़ किला देखा इसकी ऊंचाई बहुत है, मालवेके सब मैदान यहाँसे दीखते है। खीची महाराजके यहाँ चिह्न है जब उन्होने यवनोपर आक्रमण किया था। यहाँ बहुतसी मृतकोकी छतरियाँ है। मंदिर भी शिव पार्वतीके है। एक लिपि हमको मिली जिसमे महाराजका नाम नही है वह लिपि यह है कि विष्णुकी स्थापनाके समय चार पीढ़ी विद्यमान थी।

संवत् १६५७ शाके १५२२ सौम्य संवत्सर दक्षिणायन शरद्दतु आसौज कृष्ण रविवार दिनमान ३६ घड़ी इस समय चौहान वंश महाराज श्रीरावत नृसिहदेवने अपने पुत्र श्रीरावतमेहराज और उनके पुत्र श्रीचन्द्रसेन तथा उनके पुत्र कल्यानदासने यहाँ शिवालय बनाया। उनको शुभ हो। मुहरा जैसरमन कम्माने लिपि खोदी महेशके पुत्र कृष्णगुरूकी उपस्थितिमे लिपि बनाई।

हम देशके निमित्त प्राण देनेवाले वीरोका वर्णन न करके केवल एक पुरुषका वृत्तान्त यहाँ लिखते है। अर्थात् गुमानसिह सामन्त हाड़ाका वर्णन करते है। वह उस समयका है जब दुर्जनशाल कोटेका शासन करते थे और उस समय जैसिहगागरोनी वाला एक राठौर राजपूत फौजदार था इस फौजदारके कारण गुमानसिह इस घाटीके अधिकारकी प्रतिष्ठासे व्याकुल होगया था। उसकी जागीर भी छीन ली गई थी। वह राजदरवारसे लौट कर घर आरहा था। उसका जी बहुत खट्टा होगया था। मार्गमे वह उस फौजदार (सेनापति) से जो अपने सेवको सहित आरहा था मिला। रात अंधेरी थी एक मशालची उसके आगे था। गुमानसिंहने मशालचीको देमारा और अपनी फ़ौलादकी तलवारसे राठौरको पालकीमे ही समाप्त करदिया और वहाँसे द्वार पर आकर कहा कि रावसाहबका हुक्म है कि जबतक वह लौट कर न आवे उस समय तक कोई उस मार्गसे न जाय। यह कहकर जब वह अपने इलाकेमे पहुँचा तो अपने बाल बच्चे और सब सामग्री लेकर उदयपुर चला गया और राणाकी शरण हुआ। रानाने उसको कुछ देश उसके पोषणके निमित्त दिया। गुमानसिह उस समय तकँ उदैपुरमे रहा जब किं ईश्वरीसिह जैपुरेश्वरने कोटेपर आक्रमण किया। उस समय उसने कोटेकी रक्षाके लिये रानासे आज्ञा मागी। और उदयपुरसे रवाना होकर पठारके मार्गसे चला। पर कोटा चारोंओरसे घिरा था। इससे उसने विचारा याती कोटे पहुँचूँ या यही प्राण देदूँ यह विचार कर उसने नगाड़े पर चोट लगानेकी आज्ञा दी। और शत्रुसेनाके बीच होकर चला। जैपुरनरेशने कहा ऐसा कौन बली है जो हमारे डेरेके समीप नगाड़े पर चोब देता

हुआ जा रहा है। समाचार मिला कि रावत घाटीवाला है, उदयपुरसे आरहा है। नरेशने पितासे सुना था कि इस रावतने बिना किसीशस्त्रके सिहको मारडाला था इससे नरेशने इसके साथ साक्षात् करना चाहा। हाड़ापर समाचार पहुँचा तब उसने कहा मै अपने साथियोसहित मिलसकता हूँ। मिलने पर जैपुरनरेशने बड़ा सत्कार किया और कहा यदि तुम हमारे साथ रहो तौ जैपुरमे एक बड़ी जागीर तुमको दीजायगी. और राजाके फूफा ईश्वरीसिहने कहा उसका भाग्य उसको कोटेमे लिये जाता है. और कोटा इतने समयमे ले लिया जायगा. जितने कालमे कोई पानखाता है यह सुनकर गुमानसिहने कहा महाराज मेरा जुहारले। बीश सहस्र हाड़ा वंशियोके शिर कोटेके साथ है। राजाने आज्ञा दी कि कोई इनसे मोरचे पर या सेनामे कुछ न कहे। जब रावत नदीपर पहुँचे तब ऊँचे स्वरसे कहा कि रावत घाटीका एक नाव चाहता है। वह अपने राजाके पास जायगा। जब वह राजाके समीप पहुँचा तौ उसने देखा कि राजा एक दीवारकी छायामें बैठे हुए अपनी सेनाकी वीरता बढा रहे है। इसी समय समाचार मिला कि एक स्थानकी दीवार टूट गई है। उसने राजाको इतना भी समय न दिया कि स्वामी उसके धर्मकी प्रशंसा करता। वह प्रणाम करके अपने साथियो-सहित उस टूटे स्थान पर गया। और वहाँ जाकर अपनी लोहेकी सांग गाड़दी। पहिले हाड़ा रावत ऐसे वीर थे अब उनके वंशधर बहुत गरीब है। उनकी भूमि छिन गई है और बड़ी कठिनाईसे अब उनको भोजन मिलता है।

हम इस घाटीसे जो राजपूतोके रुधिरसे तर रहती थी आगे बढ़े और दर्रे स्थानमे पहुँचे; दर्रेके बाहर नायबकी स्थिति थी। पर वहाँ हमको यह समाचार मिला कि यहाँसे थोड़ी दूर एक भीमका चौरा नामक स्थान ऊजड़ पडा है उसमे शिल्पकारी बेडी कौशल से की गई है, जैसी कही नही है, उसमे भारतीय और मिसर देशीय दोनो प्रकारकी बनावटे है, कहा जाता है कि राजा कोटाने इसका सब असबाब अपने रंगमहलमे ले लिया है। जो उसने एक भीलनी वेश्याके लिये बनवाया था यहाँके स्तंभ अद्भुत है जो चौराके समीप जहाँ पाँडु भीमने अपना विवाह किया था दो स्तम्भ है उनसे किसी स्थानका चित्र विदित नही होता कि केवल स्तम्भ ही स्थित है। उनके शिरोपर मट्टी और घास उत्पन्न होगई है और समीपमे छतरियां दृष्टिगोचर होती है और जो कि यह मार्ग दक्खिन और उत्तरी भारतका था इस्से यह विख्यात स्थान होगा और निश्चय यहाँ कोई नगर बस रहा होगा। यहाँ हाडावंशके बहुत चिह्न पाये जाते हैं। जब नायबने अपना एक स्तभ बनाया जिसमे उसने अपनी कार्यवाहीसे पृथक् रहना स्वीकार किया तो भी उसको कुछ नियम ऐसे मिले जिनको उसे भावना ही पड़ा।

उन नियमोकी हम एक लिपि यहाँ प्रगट करते है जो मुकन्दरासे हमको मिली है और जो भीतरी राज्यमें विख्यात है।

महाराज महारावजी किशोरसिह आज्ञा देते है महाजन व्यापारी किसान व मुकन्दरामे रहनेवाली दूसरी जातियोके प्रति–

इस समय विश्वास रक्खो महाजनी व्यापार वटाई ऋणका लेना तथा खेती करो और अच्छी दशासे रहो। कारण कि सभी दंड सरकारने क्षमा कर दिये अपराधके अनुसार दड दिया जायगा. सव कार्यकर्ता विश्वासी रहैंगे, पटैल पटवारी रात्रिको पहरा देनेवाले चौकीदार मुसद्दी सुसेवाका पुरस्कार पावेगे, अपराधी होनेपर दड पावेंगे, व्योपारियोको सताने वा उनसे रिस्वत लेनेकी कार्यवाही न होगी इसके माननेके निमित्त उस वस्तुकी शपथ है, जो हिन्दू मुसलमानोमे पवित्र समझी जाती है यह आज्ञा महाराजके श्रीमुखकी है। और नानाजी जालिमसिह और उनके पुत्र माधोसिहकी साक्षी है।

मिती १० आसौज दिन चंद्रवार संवत् १८७७।

कुछ दिन रहकर हम कोटेको पचपहाड़ और आनन्दपुरके मार्गसे आये, यह दोनो वडे नगर उक्त नदीके किनारे पर वसे है।

माधोसिंह छः तोपोके साथ दो मीलतक हमारे साथ आया और हमारे पुराने वागके स्थान तक हमारे साथ रहा। यह शहरसे पूर्वकी ओर है हमने यहॉ हैजेके दूर होनेकी कुछ विधि निकाली। हमने मुरगावी और हिरनोका शिकार यहॉ किया। कभी हम नायवके चीतोसे शिकार करते थे। एक वार हम अखिलगढके किलेके समीप शिकारको गये, यह दक्खिनकी ओर छ मील है। यहॉके पर्वत तीनसौ फुट ऊंचे है यहॉ हम लकाड़ियोका वेड़ा वनाकर उतरे नायवके शिकारियोके चिल्लानेसे एक वृद्ध रीछ निकला, कप्तानसाहब और डाक्टर साहवने इस पर गोली चलाई मगर दोनो गोली खाली गई, वह रीछ क्रोधकर मेरे ऊपर टूट पड़ा, जब दश कदमका फासला रहा तव मैने उस पर गोली चलाई, जो उसके आगेके हाथमे लगी जिससे वह गिर पड़ा और फिर उठ कर खड़ा हुआ और मुंह खोल कर मेरी ओरको झपटा, हमारे एक साथीने उसके एक सांग मारी और हमे वचा लिया। गोली और सांग खाकर वह एक गुफामे भाग गया, फिर हम शेप दिनतक अखिलगढ़मे रहे, यहॉ बहुत पत्थर है अनुमान होता है कि यह भीलोका किला होगा यहॉ एक स्थान जापुर[1] महादेवका है, एक पानीका नाला है जो चम्वलमे गिरता है यहॉ चम्वलके किनारे ६०० फुटसे अधिक ऊंचे है, जैसे कोटेसे भिसरोरतकके स्थान प्रशंसाके योग्य है भारतमे ऐसे स्थान वहुत कम है।

हमने खोदित लिपियोंकी यहॉ वहुत खोज की परन्तु वे ऐसे अक्षरोमे मिली जिन को अव कोई नही पढ़ सकता। राजा जितकी एक लिपिका वर्णन प्रथम खडमे लिखा है।

चतुर्दश अध्याय १४.

बिजौलीका वृत्तान्त–माई नाल वा महानाल–खुदीहुई लिपि–हाड़ावशके विवरण पूर्ण खुदीहुई लिपि–वामोदा–आलूहाड़ाका विध्वंस्त किला और महल–अधेरी कुटी–एक प्रवाद कहानी।

(१) कोई गयापुर कोई जैपुर महादेव भी कहते है।

कई स्थानोमे घूमनेके पीछे महात्मा टाड् साहव कई दिनतक कोटेमें रहकर अन्तमे उदयपुर राजधानीकी ओर गये । रास्तेमे वूँदीमे होकर गये । देखा कि यहाँका शासन-कार्य भलीभाँतिसे होरहा है । फिर माईनाल नामक प्रसिद्ध स्थानके दर्शन करनेके लिये पाठार देशको गये । इसमे होते हुए दश मील उत्तरको बिजौली नामक स्थानमें पहुँचे । बिजौली मेवाड़का एक प्रधान देश है । प्रमार जाति रावकी उपाधि धारण करनेवाले एक सामन्त विजौलीके अधीश्वर है । यह सामन्त वंश पूर्वकालमे वियानाके समीप जगनेर देशके अधीश्वर थे । पीछे अमरसिहके शासनसमयमे प्रायः दोसौ वर्ष वीतने पर इस सामन्त वंशने कुटुम्ब सहित मोल लिये हुए सेवकोके साथ यहाँ आकर निवास किया । राव राणाने अशोककी एक कन्याके साथ विवाह किया था । उन्होने ही उन राव अशोकको वार्षिक पाँच लाख रुपयेकी आमदनीवाले इस विजौलीदेशका समस्त अधिकार देदिया था" ।

विजौलीया विजयावाली–ध्वंसस्तूपके ऊपर संस्थापित है, यहाँकी अगणित प्राचीन खोदीहुई लिपिमे इस देशके प्राचीन दो नाम, अहिचपुर या मोरकरो यह खुदेहुए दिखाई दिये, उन दोनों नामोमे पहलेके बदलेमें दूसरा ही यहाँका प्रकृत प्राचीन नाम जानाजाता है । मेवाड़के इस प्राचीन सीमान्त देशके साथ चौहानोके अनेक प्राचीन प्रवाद इतिहासमे लिखे हुए है, इन देशोके पहिले अजमेर राजवंशके अधीनमे था, ऐसा अनुमान करनेके अनेक कारण भी विद्यमान है, कारण कि उस राजवंशके वीश-लदेव, सोमेश्वर पृथ्वीराज इत्यादि नामकी बहुतसी लिपियां यहाँ विराजमान है । मोर-कुरोके अरन्राज तथा उनके पुत्र वहिरराज और कुन्तपालकी वीरता प्रकाश करनेवाले बहुतसे स्मृति चिह्न वहाँ बिराजमान है । यह दिल्ली और अजमेरके बादशाह पृथ्वीराजके समकालीन थे । "

एक खोदित लिपिमे चीतौड़का ऐसा युद्ध लिखा ह कि इसके द्वारा यह अन्तर करना कठिन होजाता है कि यह गहिलोत वंश वा चौहानोंका युद्ध है, इसकी आरंभ प्रणाली शाकम्भरी मातासे है, जो वंश साकमदुर्ग और पर्वतकी अधिष्ठात्री देवी है, उसमे वत्सगोत्र चौहानका वर्णन करके, श्रीमत् वाप्पा राजाविन्ध्या त्रिवेनी या वापा राजा विन्ध्याचलका वर्णन किया है–जो राणा मेवाडके वंशका प्रतिष्ठाता था परन्तु उसके आगे जो नामावली है वह उसके वशसे नहीं मिल सकती इससे हम विचार कहते है कि उस समय चौहान और परमार चित्तौरके अधीन थे विशेष इस पर लिखना हम उचित नहीं समझते केवल इतना लिखना ही उचित जानते है कि यह वर्णन कुन्तपाल वनैडा अरन्राजका है जिसने जावलापुरको जीतकर नष्ट भ्रष्ट किया था, जिसके युद्धका वर्णन देहलीद्वारके वल्लभी द्वारपर खुदा हुआ है । इसके बड़े भाईका पुत्र पृथ्वराज था, उसने ढेर सुवर्णका एकत्र करके उसको दान किया और मोरकरोमें पार्श्वनाथका मंदिर वनवाया, और सम्वत्सवारमे जो उसे राजाई योग्यता प्राप्त हुई इस्से उसका नाम सवत्स वार विख्यात् हुआ । उसके स्मरणार्थ यह मंदिर वनाया गया और रवाके किनारेका रेवाना ग्राम इसके व्ययके निमित्त निर्धारण किया गया । सवत् १२२६ ।

इससे विदित होता है कि चौहानोने वलपूर्वक तौर वंशसे देहली लेली थी और हमै यह भी सावित होता है कि जो विख्यात कविचंदने लिखा है कि–जो लिपिस्थान असि (हांसी) और दिल्लीके स्तम्भोंपर है वह इसीके समयमे खोदी गई है परन्तु जव वल्लभी द्वारकी ओर जो तिलोनोकी पुरातन राजधानी सौराष्ट्रमे थी, विचार किया जायतो अद्भुत वात विदित होती है, और उस समयकी वह दशा विदित होती है कि जब पृथ्वीराजने अपने पिता सौमेश्वरके वधका वदला लिया जो राजा सौराष्ट्र और गुजरातके युद्धमे मारा गया था, कुन्तपालने इस अवसरको अच्छा जाना और दिल्लीकी जीतमे अपना भाग प्राप्त करके उसने गुजरातकी जीत भोलाभीमसे की ।

हम यहॉ यह भी कहते है कि पुरातन मोरकरो नाम विजौलीका था और दूसरे यह कि वहॉ राजा चौहान जैनमतावलम्बी था, चन्दकविके कथनमे यह कोई मुख्य बात न थी, कारण कि उसके लेखसे यह वात प्रगट होती है कि उसने अपने पुत्र सारंगदेवको इस कारण अजमेरसे पृथक् कर दिया कि उसने बुद्धमत स्वीकार किया था ।

"यहॉकी खोदी हुई लिपिमे चित्तौरके राजवंशका शासन और वीरताका विवरण खुदा हुआ पाया गया । विजौलीका प्राचीन नाम जिसे मोरकुरो कहते है उसकी खोदीहुई लिपिको पढ़कर हमने जाना कि मोरकुरो वर्तमान बिजौलीसे आधकोश पूर्वमे स्थापित था, वह इस समय एक वार ही विध्वंस होगया है । नौचौकी नामक प्राचीन महलका एक अश था, यहॉ पार्श्वनाथके पॉच मंदिर थे, और तेरह जैन देवाताओंके जैनमंदिर टूटे फूटे अवतक भी विद्यमान है । महल और मंदिरोके बनानेकी रीति और कारु कार्य अत्यन्त ही रमणीक है। मंदाकिनी नामकी एक छोटी नदी इसके बीचमें होकर निकली है । पार्श्वनाथके मंदिरके पास एक प्राचीन कुंड और दो बड़े २ जलाशय है । नगरके पास ही महादेवजीके तीन मंदिर है और " ।

विजौली, वर्तमान महलोके प्राचीन विध्वस्त मंदिरकी श्रेणीके उपकरणसे बनी हुई है । उन मंदिरोके लिग इस समय उखड़े हुए एक साथ पड़े है । हमने अनेक स्थानोमे मूर्तियोको इसी प्रकारसे पड़ेहुए देखा, इससे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि हिन्दू इन मूर्तियोकी देवताओमे गिनती नही करते है, वह इन्हे केवल देवताका चिह्न स्वरूप जानते है । लिगकी पवित्रताके दूर होने पर फिर उसे सामान्य पत्थरकी समान मानते है । मैने इस नगरके चारोओर बहुतसे टूटे फूटे चिह्न देखे " ।

स्थान दरौली जो चार मील दक्खिनकी ओर है वहॉ एक शिलालेख संवत् ९०० का है, पर वह कुछ कामका नहीं है और तिलसवा जो उससे भी दो मील दक्खिनको है, वहॉ चार मंदिर एक कुंड एक और तोरन है, पर वहॉ कोई शिलालेख नहीं है । जारौली वहॉसे सात कोश है। उसमे सात मंदिर है । सब टूटे पड़े है और भी टूटे फूटे किलेके चिह्न पाये जाते है । यहॉ और भी टूटे फूटे मन्दिर है जिनको वहॉवाले अलाउद्दीन खूनी और औरंगजेबकी करतूत कहते है, यहॉवाले पहिले बादशाहको खूनी और दूसरेको कालयवन नामसे पुकारते है ।

बिजौलीके सामन्तकी आय अव वहुत न्यून होगइ है। यदि उसकी जागीरको सभाला जाय तो५००००रुपया वार्पिक आय हो सकती है पर वह कर नही सकते। जब तक वह उसके चारोंओर वड़ी मूर्तियोको जीवित न करसके। उसकी वेटी राजा अमरासे व्याही गई थी। उसके स्वामीकी जव मृत्यु हुई तो उसकी अवस्था सत्रह वर्पकी थी। परन्तु हजार समझानेसे भी वह सती होगई, हमने वहुत सी युक्ति उसके पास कहाई, और कहा हम उसके इलाकेको विशेष करादेगे पर उसने एक न माना और अपने स्वामीके पाप मिटानेमे दृढ़ रही। हम वहॉ दो तीन दिन रहकर शिलालेखोकी खोजमे फिर चले।

माईनाल २१ वी फरवरी–महानल शब्दके विगडनेसे इस स्थानका नाम माईनाल हुआ है। पाठारके पश्चिम प्रान्तमे चारसौ फुट गहरे एक खातका नाम महानल है इस घाटीमे प्रवेश करना मृत्युके बराबर है। उसी महानलके किनारे प्राचीन मंदिर और हर्म्य देखे गये। मंदिर और महलके एक अंशमे दिल्लीपति पृथ्वीराज और अन्य प्रान्तोंमे पृथ्वीराजके भग्नीपति चित्तौरके राणा समरसीका नाम खुदा हुआ है, समर सिहने पृथा वाईका विवाह किया था। कविचंदने उनके वलविक्रमकी कहानीको अपने महाकाव्यमे भली भॉतिसे विनारण किया है"।

उस स्थान पर जो वड़ा कुरो है वहॉ दोनो वंश आकर भारतके विषयकी वात चीत करते थे, और अपने बालबच्चोके सहित आनन्दसे रहते थे। यदि चन्द्रकवीश्वरका यह कहना सत्य हो कि यदि महाराजा पृथ्वीराज समरसी महाराणाके साथ यहॉ सम्मति करते तो यवनोके हाथमे किसी प्रकार भी भारतका शासन न जाता, पर पृथ्वी राजकी वेपरवाई वीरता और सरगरमीने सबको डुबा दिया, और उस युद्धमे समरसी तथा पृथ्वीराज दोनो ही निहत हुए, यह घग्गरके किनारेका घोर युद्ध था, कवीश्वरने इसको प्रलय कहा है, वास्तवमे भारतकी स्वाधीनताका यह प्रलय ही था, अव भी यह स्थान भयंकर है। प्रत्येक वस्तु यहॉकी उस बातको दिखाती थी, यहॉके वृक्ष भी मानो उस समयके वीरो अधिकारियोका शोक करते हुए दृष्टिगोचर होते थे।

हमने वहुतसी खोदी हुई लिपियां देखी, उनमें खुदीं हुई हाड़ाजातिके वंशकी कहानीके वहुतसे तथ्य पाये जाते है, हमने इस स्थान पर केवल एक लिपिका अविकल अनुवाद प्रकाश किया है।

कुलदेवी आशा पूर्णाकी कृपासे इस वशके वहुतसे चौहान राजाओने अपने प्रवल प्रतापसे पृथ्वीको शासन कर रणभूमिमे जय प्राप्त की थी, जिनके वंशमे मौरधन हुए, जिसने युद्धमे पूरी जय पाई। उसी वंशके हाड़ाजातीय कोलनको यश चद्रमाकी समान निर्मल था। उनसे जैयपाल उत्पन्न हुए, उन्होने पूर्व जन्मके सुकृतिके फलसे इस

---

(१) यही रैनसीके पुत्र थे, और यही केदारनाथ तीर्थमे १३५२ संवत्में गये थे, हाड़ाजातिके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभॉतिसे किया गया है।

(२) इसीको यगातम्नसे इतिहासमे वंग कहा है, यह कोलनका पुत्र था जिसने माइनालको लिया था।

राजवंशमे जन्म लेकर परमसुख शान्ति प्राप्तकी। उनकी प्रजाने ईश्वरके समीप उनके अमर होनेकी प्रार्थना की उनके पुत्र देवराज महादाता थे और मनुष्य समाजकी सुख शांतिका वृद्धि करना ही उनका एकमात्र अभिप्राय था। उनके पुत्र हरराज[2] देखनेमे प्रज्वलित अग्निकी समान तीव्र तेजस्वी थे, और उन्होने अपने बाहुबलसे भूमीश्वरोको परास्त कर यश और अतुल धन प्राप्त किया था"।

"उनसे वामोदाका अधिराज वंश उत्पन्न हुआ। देवराजसे ऋतुपाल उत्पन्न हुए उन्होने अपने बाहुबलसे बिद्रोहियोको परास्त कर कपिलमुनिने जिस भांति सगरको सतानको भस्मभूत किया था, इन्होने भी उसी प्रकारसे उनको परास्त किया।

इनके पुत्र कल्हन हुए। उनके पुत्र कुंतल धर्मराजकी समान थे, उनके छोटे भ्राताका नाम देहा था। कुंतलकी रानी राजल देवीके गर्भसे चन्द्रमाकी समान महादेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ, और रणभूमिमे सुमेरुकी समान अटल और दानमें इन्द्रके कल्पपादपकी समान था। उन्होने अरातियोके रुधिरसे रणभूमिमे घोड़ोंके खुरोसे उठी हुई धूलिको कर्दमाक्त करादिया था। इन्होने रणभूमिमे अपनी लम्बी भुजामे तीक्ष्ण तलवार विपक्ष नेता उमीशाहके मस्तक पर उठाकर भेदपाटके अधिपतिके प्राणोकी रक्षा की, चंद्रमा जिस भांति राहुके कराल ग्राससे उद्धार पाता है कैथियाका इसी प्रकार उद्धार किया[3] बैल जिस प्रकार अपने पैरोसे नाजको पीसता है महादेवजीने भी उसी प्रकारसे अपने पैरोसे शत्रुओकी सेनाको विध्वंस करादिया और समुद्र मथनेकी समान महादेवने इस समरके मथनेमे विजयरत्नको संग्रह कर कैथियाके अधिपातिको प्रदान किया। समस्त पृथ्वीमे उनके यशकी ध्वनि गुंजार उठी थी। उनके पुत्रका नाम दुर्जन था उसने अना उपनाम जीवराज रक्खा। युवतसाल और कुंभकर्ण नाम उसके दो भाई थे।

इस महा अग्निमे भूमीश्वर महादेवने यह मंदिर निर्माण किया, और उसको भली भांतिसे सजाकर इस खोदीहुई लिपिको सम्बद्ध किया। महादेवका यह महादेव स्थापित है, गंगा और सुमेरु जबतक है तबतक यह स्थिर रहै, और चीतौड़के निवासी ब्राह्मण धनेश्वरके द्वारा इसकी प्रतिष्ठा हुई थी"।

अनल नन्द इन्द्र चन्द[4]
३ ९ १ १

"शिल्पविद्यामें सुशिक्षित वीरधवल शिलीने वैशाख मासकी सप्तमी तिथिको यह मंदिर बनाया।

---

(१) यह देव वंगूके पुत्र है, संवत् १२९८ बूंदीमे थे।

(२) हरराज देवराजके बड़े पुत्र थे, और उन्होंने वामौदामे वास किया जिसे उसके पिताने दिया था जो पीछे बूँदीमे लगा। टाड् साहब कहते है कि हरराजके बारह पुत्रोमेसे बड़ा पुत्र आलृ-हाड़ा हुआ यह वामौदाका अधिपति हुआ।

(३) कर्नल टाड् साहबने कहा है कि ऐसा बोध होता है कि यह उमीशाह पठान बादशाह हुमायूं होगे। महानलके हाड़ा अधीश्वर महादेवके साथ युद्धके समयमें मेवाड़के राणाके किसी प्रधान सेनापतिने इस कैथियासिहका उद्धार किया था"। (४) सन् ११३९.

वेगू–माईनाल वा महालमें भ्रमण करनेके पीछे साधु टाड् साहबने वेगू नामक स्थानमे जाकर लिखा है कि मै पाठारके शिखर पर अत्यन्त ही प्रभातकालमे गया। परन्तु रास्तेमें बहुतसे वृक्षोके होनेसे हम दोनों ओरके समतलक्षेत्रको न देख सके, अन्तमें जिस स्थान पर आल्हाड़ाका किला स्थापित था, वहॉ जा पहुंचे । परन्तु वामौदाका किला बिलकुल टूट गया था वरन वहॉकी जमीन भी एकसार होगई थी। महावीर आल्हाड़ाका यह किला और महल किस प्रकारकी आकृतिका वना हुआ था । मैने उसको विध्वंस अवस्थामे भी अनुमान कर लिया था यहॉ शिवजी, हनूमान, और धर्मराजके तीन मंदिर है ”।

अंधियारी कोठरी–नामक एक गुप्त अंधकारमय कमरा है। ऐसा सुना जाता है कि आल्हाड़ा जिस समय मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये गये थे उस समय अपने भतीजेको इसीमें बद कर गये थे। भूधर पार्श्वमे योगिनीमाताकी एक बड़ी भारी मूर्ति है। आल्हाड़ाके इस अभेद्य किलेको किसने विध्वंस किया था इसकी विशेष खोज करने पर भी इसका पता न चला। शायद मेवाड़के महाराणाने ही इसको विध्वंस किया हो। यहाँ एक जोगनी माताकी मूर्ति है। यह इस समय वेगू सामन्तके अधीनके देशके अन्तर्भुक्त है। हमने यहॉ आल्हाड़ाके सम्बन्धका एक और वृत्तान्त जाना, पाठकोको इस स्थान पर वह उपहारमे देते है।

वामौदाके किलेके चौवीस किलोमेसे एक किलेमे आल्हाड़ा और उसी जातिके लालजी एक पुरुष निवास करते थे। उनके एक कन्या थी। लालजीने चित्तौरके राणाके साथ उस कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित कर राजपूत रीतिके अनुसार राणाके समीप कन्याके नामका नारियल भेजा। परन्तु राणा उस प्रस्तावमे किसी प्रकार भी सम्मत न हुए, उन्होने नारियलको लौटा दिया। लालजीके पुरोहित जो उस नारियलको लेकर गये थे वह आंतरी देशसे होते हुए आरहे थे। इसी समयमे राणाके बडे पुत्रको मृगयासे लौटकर आते हुए देखा। उससे पुरोहितने सब वृत्तान्त कहा युवराज पुरोहितके मुखसे समस्त वृत्तान्त जानकर लालजीके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वय उस नारियलको ग्रहण कर विवाह करनेके लिये राजी हुए। उन्होने पुरोहितको विदा करके कहा कि मै शीघ्र ही विवाहके लिये आता हूँ। कुछ दिनके पीछे चीत्तौड़के युवराज अपने अनुचरोसहित राणासे साक्षात् करनेके लिये उपस्थित हुए। और पिताकी आज्ञानुसार एक कविके साथ विवाह करनेके लिये वामौदामे गये।

उक्त कविका नाम भीमसेन था, यह वाराणसी निवासी थे। इस समय मेवाड़के समस्त कवि मेवाड़से निकाल दिये गये थे। भीमसेन कच्छभुज देशमे जानेके समय राणाके पास भी गये। मेवाड़के कवियोके निकालनेके सम्वन्धमे यह कारण जाना गया है कि मेवाड़के एक प्राचीन सरोवर वनानेके सम्बन्धमें एक परम रमणीय नेत्रोको आनंद देनेवाला एक विग्रह आविष्कृत हुआ। यद्यपि वह मूर्ति अत्यन्त चमत्कारिक थी, परन्तु हाथका भंगीभाव अत्यन्त विचित्र था; एक हाथ ऊपरको और एक नीचेको और

तीसरा सम्मुख दर्शकोंकी ओरको फैल रहा था। यह तीनों हाथ तीनो ओरको फैले हुए देखकर सभी विस्मित हुए, ऐसी मूर्ति पहिले कभी नही देखी थी, इस भाँति तीन ओर को हाथ फैलानेका अर्थ क्या है, इसको कोई भी स्थिर न करसका, राजाकी आज्ञासे देशके जितने कवि, चारण, भाट, और वेदके जाननेवाले ब्राह्मण पंडित थे सभो बुलाये गये, और उनसे इसका कारण बतानेके लिये कहा गया। परन्तु किसीने भी संतोष-दायक उत्तर नहीं दिया। अन्तमे उक्त झारिजाके कवि भीमसेनने आकर इसकी मीमांसा करदी। उन्होने कहा कि ऊपरको जो हाथ फैला हुआ उंगली दिखा रहा है, उसका अर्थ यह है कि ऊपर अर्थात् स्वर्गमे एकमात्र इन्द्र है और नीचेको इस भावसे हाथ फैलाकर उगली दिखा रहा है, इसका यह अर्थ है कि नीचे पातालके अधीश्वरको बता रहा है, और सम्मुख राणाकी ओरको जो हाथ फैल रहा है, इसका अर्थ यह है कि इस संसारमे एकमात्र राणा ही संसारके अधीश्वर है। भीमसेनकी इस व्याख्यासे राणा हमीर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ, और उनको अपने प्रधान कवि पदपर वरण किया। उस भीमसेनकी ही आज्ञासे निकाले हुए कवि मेवाड़मे बुलाये गये। परन्तु भीमसेन राणाके अतिरिक्त और किसीसे किसी प्रकारका दान नही लेते थे। वह कवि श्रेष्ठ भीम-सेन चीतौड़के युवराजके साथ विवाहसभामे गये। उनके जाने पर लालजीके किलेमे महा महोत्सवका अनुष्ठान हुआ। अनेक देशोंसे कविलोग आकर लालजीका जय-गान करते थे। प्रचलित रीतिके अनुसार लालजीने कवियोको बड़े २ मूल्यवान् द्रव्य उपहारमे दिये, लालजीने भीमसेनको एक श्रेष्ठ घोड़ा मूल्यवान् पोशाक वस्त्र और एक तोड़ा रुपयोका उपहारमे दिया। परन्तु भीमसेन किसी प्रकार भी लेनेको राजी न हुए, अन्तमे विशेष लोभके त्यागने पर इतना बोले कि इन उपहार द्रव्योको यहाँ रख जाओ। उन उपहारके द्रव्योंको लेनेके कुछही समय पीछे उन्होने अपने मनको सैकडो वार धिक्कार दिया, और तुरन्त ही अपनी तलवार निकाल कर प्राणघात किया। चीत्तौड़के प्रधान कवि मारे गये है, शीघ्र ही यह शब्द चारोंओर गुंजार उठा। इस समय युवराज विवाहके स्थानमे बैठे थे, और वर कन्याकी गाँठ बंधनेका उपाय होरहा था। युवराज उस कविकी आत्महत्याका समाचार सुनते ही आसनसे उठ खड़े हुए, और प्रतिहिंसा देनेके लिये तैयार हुए। युवराजको इस प्रकार से विवाहका आसन छोड़ते हुए देखकर कन्याके पिता अत्यन्त दुःखित हुए। अन्तमे युवराज विवाह करनेमे असम्मत हो बामौदाके बाहर चले गये। कुछही समयके पीछे उन्होने सेना और सामन्तोंके साथ आकर बामौदा पर आक्रमण किया और वह अपना बदला लेकर चले गये। अन्तमे फाल्गुण मासमे अहेरके समय कन्याके पिता लालजी जातीय रीतिके अनुसार शूकरका शिकार करनेके लिये गये, उस समय चीतौडके युवराजने आकर दलसहित उन पर आक्रमण किया। दोनो जने परस्परमें भाले हाथमे लेकर भिड़े भालोंके आघातसे दोनोहीके प्राण गये। बामौदामे दोनोकी चिता सजी गई। एकमे युव-राजका और दूसरीमें लालजीका शव स्थापित होकर चिता प्रज्वलित हुई, युवराजके साथ लालजीकी वह कुमारी कन्या और लालजीके साथ उनकी स्त्रीने प्राण त्याग

किए। " और इस अवसरमे वह यह नियम करगई कि राना और राव किसी प्रकार भी अहेरके स्थानमे वसन्त ऋतुमे कभी एकत्र न हों। नही तो उसका परिणाम वध होगा हमने ऐसी दो घटना हाड़ाजातिके इतिहासमे लिखी है, और चौथा पद पूर्ण करनेको मुकलका वर्णन किया है, जो कम्भूने कहा है।

हाम् मु, कल माचा, लाला खतयारान ।
सोजा रतन संहारया, आमल अरसी रान ।

इस दोहेको पाठ करके आलूहाड़ाके वंशधर कुछ अपने हृदयके दु खका आवेग न्यून करते होगे, जो दु ख वमौदाके उजाड़ और उसके चौविस किलोके निकल जानेसे होता होगा जिनमे अब एकमे भी हाडाका नाम लेनेवाला नही है।

हाड़ाजातिकी इस वातको हम उन चिट्ठियोसे प्रमाणित कर सकते है जो पिछले अक्टूबरमे हमारे पास आई थीं, जब बटीरानीकी आज्ञाके अनुसार एक समूह उनके मदिर पर उपस्थित हुआ कि जो उनकी आज्ञा हो वह काम किया जाय।

बूँदी १८ अक्टूबर सन् १८२०का विज्ञापन–समाचार पत्रद्वारा सब रईसोके पास आज्ञापत्रका प्रचार किया गया कि दशहरे पर सब रईस और जिमीदार राजधानीमे उपस्थित हो उनके आनेपर बरके ठाकुर जसजीने कहा कि वमौदाकी भयानीने मुझे एक आज्ञा दी है कि रानीकी भूमिमे आगेको खेती न करो और अपने घोड़े पशु आदि बेचकर उस द्रव्यके ६४ भेडे और ३२ बकरे खरीद कर माताजीके वलिके निमित्त भेज दो। ऐसा करनेसे वामोदा दूसरी बार हमारे अधिकारमे आजायगा, यह समाचार फैलते ही बूँदी कोटेके बहुतसे पुरुप वहाँ उपस्थित हुए। ठाकुरवरने २०० मनुष्योका भोजन श्रीमाताजीके प्रसादरूपमे तैयार कराया था पर वहाँ ५०० मनुष्य आगये पर माताजीका यह प्रभाव हुआ कि उन्होने भली प्रकार भोजन किया और फिर भी वच रहा लोगोको विश्वास होगया कि माताजीकी आज्ञा ठीक थी।

यह वृत्तान्त हमको बूँदीसे मिला परन्तु नीचेकी घटनाका वर्णन हमारे सच्चे मित्र वालगोविन्दने मुझसे कहा, जो उस घटनाके समय वहाँ विद्यमान था। कार्तिकके पहले दिन माईनालमे कुछ दिन हुए एक बड़ा वलिदान हुआ, जोगनीमाताके निमित्त इकतीस भेड़े और ५३ वकरोकी वलि हुई पर तीन हाडा वीरोने दो बकरों पर बड़े वेगसे अपनी तलवारे मारी, तथापि उनका वालबाँका न हुआ, यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। वह वकरे यथेच्छ चरनेको छोड़ दिये गये और लोग उनको अमर कहने लगे।

वालगोविन्दके इस कथन पर किसीने तर्क न की। ज्ञानजी उसके साथ था बात सत्य थी, पर इन पाँचसो एकत्र हुए हाड़ा राजपूतोके विपयमें यह विचार हुआ कि यह भवानीके वाक्य पर उपस्थित हुए और विश्वास कर रहे है, हमने राजाको इसकी सूचना भेजी कि वह यह प्रगट करदे कि हमने वैसा ही किया है इससे यह प्रगट है कि उन वीरोंके हृदय पर यह वात शीघ्र ही कैसी प्रभाव डालनेवाली थी।

हम यहाँसे फिर आगेको चले हम बमौदाकी दीवारें देखना चाहते थे। हम पर्वतके नीचे फेरके मार्गसे चले और जोगिनी माताके ऊपर भी एक दृष्टि डाली और घाटीके मार्गसे घोड़ा चलकर बेगूके एक अच्छे बागमें ठहरे। यहांका रावत कालामेघका वंशधर हमसे मिलनेको आया, पर अबतक वह उस श्रेष्ठ कार्यवाहीसे अजान था जो उसके निमित्त होनेवाली थी, अर्थात् उसको उस आधे देशसे कुछ अधिक देश प्राप्त होगा, जो सन् १७९१ ई० मरहठे सेंधियाके अधिकारमें था।

पंचदश अध्याय १५.

बेगू–कर्नेल टाड् साहबका हाथीपरसे गिरकर चोट खाना–वेगूके सामन्तकी सहानुभूतिके चिह्न–महाराष्ट्रोंको वेगूसे निकालनेका वृत्तान्त–वेगूदेशको राणाके अधिकारमें करना–सामन्तोंको वेगूदेशको पुन प्रदान–चीत्तौड़–अकबरका द्वीप–चित्तौर नगरका वर्णन–नगर भ्रमण–वाघ रावत सम्प्रदायकी सृष्टिका विवरण–खुदी हुई लिपि–उदयपुरसे लौटना–कर्नेल टाड्का स्वदेशमें जाना–उपसंहार।

कर्नेल टाड् साहबने २६ वीं फरवरीको लिखा है कि "तीन वर्षसे बेगूके सामन्त जो भूस्वत्वसे रहित हुए थे। उनको फिर उस विस्तारित देशका अधिकार देनेके लिये दो दिनसे मैं उस घटनाके उपयोगी बड़ी धूमधामके साथ बेगूके किलेकी ओरको गया। मेरे जानेका समाचार जानकर कालामेघके वंशधर अनेक देशोंसे आ आकर इकट्ठे हुए। वेगूके प्राचीन किलेके चारोंओर बड़ी २ खाई हैं, एक काठका पुल महलमें आने जानेके लिये बना हुआ है। उस सेतुके सामने एक तोरण है, मेरे सैनिक और एक सम्वाद वाहक हाथीकी पीठपर चढ़कर वृटिश पताकाको स्थापित कर उस तोरणके नीचसे पुलके पार होगए। मैंने भी इसी प्रकार हाथी पर चढ़कर तोरणमें जानेकी इच्छा करी, परन्तु महावतने भलीभाँतिसे निषेध करके कहा कि तोरणके भीतर हौदे समेत हाथी नहीं जासकता कारण कि तोरण छोटा है, इस प्रकार जानेमें तोरणमें उसका ठसका लगेगा। परन्तु मैंने उसकी वातपर कुछ भी ध्यान न दिया। और उसको चलनेके लिये आज्ञा दी और कहा कि यदि तुम हाथी पर न बैठसको तो उतर आओ। काठके पुलका कठोर शब्द और दोनो ओर गहरी खाइयोंको देखकर हाथी भयभीत हो महावेगसे पार होनेके लिये ऐसा दौड़ा कि वह किसी प्रकार भी सावधानतासे तोरणके पार न होसका। महावत विशेष चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसको स्थिर न करसका। तोरणके पास जाते ही मैंने देखा कि अब रक्षा नहीं है, तोरणके भयंकर आघातसे हौदेके चूर्ण होनेकी भलीभाँतिसे सम्भावना थी। इस कारण मैंने उछलकर तोरणको दोनो हाथोंसे पकड़ा। परन्तु तुरन्त ही हाथमेंसे तोरणके छूटते ही मैं हौदेसे बाहर आकर गिर पड़ा, हाथी महा भयभीत होकर तोरणके पार

होगया, और मै हाथी परसे गिरकर अचेत हो सेतु पर पड़ा रहा। जो लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे, उन्होने तुरन्त ही मेरी भलीभाँतिसे सेवा की अन्तमे मुझे एक पालकीमे चढ़ाकर मेरे डेरोमे लेगये। यद्यपि मेरे शरीरके अनेक स्थानोमे चोट लगी थी तथापि मैने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की। मैने अपने सौभाग्यवलसे ही इस विपत्तिसे उद्धार पाया। यदि एक इञ्च भी उस जगहसे बचकर गिरता तो अवश्य ही खाईके जलमे डूब जाता। शीघ्र ही वेगूके सामन्त रावतजी और उनके कुटुम्वी भाई वन्धुओने डेरोंमें आकर उस दुर्घटनाके कारण विशेष शोक प्रकाश किया। बड़े कष्टसे मैने उनको अपने डेरोंमेसे भेजा। मै जव इस घटनाके दो तीन दिन पीछे फिर उसी अभिप्रायसे सामन्तको भूमिका अधिकार देनेके लिये गया, तव देखकर महान् आश्चर्य हुआ, काला मेघने वह जो रमणीक तोरण निर्माण किया था, वह टूट कर एक सार होगया है। मै उसी टूटे हुए मार्गसे किलेके भीतरी महलमे गया, एक विस्तारित स्थान पर सामन्तोको पारिषदोसे घिरे हुए देखा। रावतजीने आगे वढकर किलेके महलकी चावी मेरे हाथमे दी। मैने उसके अधीश्वर प्रभुके नामसे फिर उन्होंके हाथमे देदी। समस्त तोरणके विध्वंस होजाने पर मैने शोक प्रकाश किया, और कहा कि मेरी ही दुर्वुद्धिसे यह दुर्घटना हुई थी, इस कारण तोरणका टूटना अच्छा नही हुआ। सामंतने उत्तर दिया कि आप हमारे जीवन दाता है, इस कारण जिस तोरणसे आपके प्राण नाशकी सम्भावना हुई थी हम लोग किसी प्रकार भी उस तोरणको नही रखसक्ते"।

"सामन्तोकी जो भू सम्पत्ति उनको दी गई थी, यह सम्पत्ति सामरिक व्ययके कारण सेन्धियाके निकट गिरमी थी। रावतने सेन्धियासे इस मर्मका पत्र लिखालिया था कि उक्त युद्धमेका जितना खर्चा है वह रुपया सव देकर फिर अपनी सम्पत्ति लेलेगे जिस समय इस अंचलमे वृटिश गवर्नमेण्टके मध्यस्थ होनेसे फिर शान्ति स्थापित हुई उस समय उक्त सामन्तने वह खत उपस्थित करके सव हिसाव किताव करदिया, सेन्धियाको जो मिलता था रावतने उससे दुगना धन उसको दिया था। सामन्तने वृटिश ऐजेण्टके द्वारा सेन्धियासे उक्त सम्पत्तिको पानेके लिये फिर प्रार्थना की। इसीसे अनेक पत्रोके द्वारा लिखा पढ़ी हुई। परन्तु कुछ भी फल न देख कर एक दिन रावतजीने अपनी सेनासहित आक्रमण करके महाराष्ट्रोको भगा दिया, और महाराष्ट्रोने जो एक छोटा किला बनाया था उस पर अधिकार करलिया। रावतजीने अपने वलसे इस पर अधिकार किया था, इसीसे यह अपराधी हुए, इस कारण उनको दंड देना उचित जानकर उक्तवेगूदेश राणाने अपने अधिकारमे करलिया था। वेगूके किलेपर राणाकी पताका उड़ा दीगई। राणाके इस प्रकारसे दंड देने पर वेगूके सामन्तने किसी प्रकार भी असंतोष प्रगट न किया वरन सव प्रकारसे राणाकी आज्ञा पालन की, परन्तु राणाका यह अभिप्राय नहीं था कि वास्तवमे वेगूदेश सदाके लिये राज्यके अधिकारमे रहै। केवल सामन्तने राणाकी विना आज्ञा लिये महाराष्ट्रोको भगाया। नाममात्रका उस देशपर राणाका अधिकार था। अंतमे मैने सेन्धियाके दावेके विरुद्धमे विशेष प्रमाण उपस्थित किये, सिन्धियाने वहुतसे

कागज पत्र और खतोंका उल्लेख किया, और अपने दावेको प्रवल करना चाहा, परन्तु उन कागज पत्रोंको उपस्थित करनेमे वह समर्थ न हुए। अन्तमे कई महीनोके वीतने पर मैने वेगूदेश उक्त सामन्तको फिर देदिया। इस कार्यसे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ, कारण सन् १८१८ ईसवीके मई मासमे जव मैने मेवाडकी वश्यता स्वीकार पत्रमे हस्ताक्षर करानेका प्रस्ताव किया; तव इन्हीं सामन्तने पहिले उसपर हस्ताक्षर किये थे"।

महात्मा टाड् साहवने वीरक्षेत्र चीतौड़मे जाकर लिखा है कि " शीशोदियोकी प्राचीन राजधानी चीत्तोड़के ऊच किलोकी प्रत्येक दीवारों पर पत्थरखंड है, जिनमे असीम गौरवकी गरिमा लिखी हुई थी, मै दूरसे जैसे २ उस राजधानीकी ओरको वढ़ता गया, मेरे हृदयमें उतना ही आनन्द होता था। मै जिस रास्तेसे चीतौड़की ओरको आगे वढ़ा, उसी मार्गसे वादशाह अलाउद्दीन और सम्राट् अकवर अपनी प्रवल सेना और सामन्तोके साथ रामचन्द्रके वंशधरोको परास्त करनेके लिये आगे वढ़े थे। चीतौड़के महाराज किस भांति सम्राट्के विरुद्धमे खड़े हुए थे, राणा अरीसिंह (अरसी) राणा प्रतापसिंहने कैसा वल विक्रम प्रकाश किया था उसका वर्णन यथास्थान किया गया है। चीतौडके उस अंतिम युद्धका स्मृतिचिह्न आजतक यहाँ विराजमान है, आज प्रभातकाल ही मैंने उसका दर्शन किया। जिस स्थान पर भारतके सबमें प्रधान वादशाह (अकवर) ने अपनी हरे रंगकी विजयपताकाको उठा कर डेरे डाले थे, और अपने प्रधान वीर सेनापतियोंको इकट्टा करके चीतौडपर अधिकार कर उसको विध्वंस करनेकी परामर्श की थी उसी स्थान पर एक स्मरण चिह्न विराजमान है, इन चिह्नोने इस स्थानको अक्षय कर रक्खा है, यह एक ऊंचे स्तंभाकारमे है और यह "चिरागदान, वा अकवरका दीप" नामसे विदित है। यह वड़े २ पत्थरके टुकड़ोके द्वारा वनाया गया था और ३५ फुट ऊंचा है। इसका नीचेका भाग विशेष स्थूल और ऊपरका भाग क्रमशः सूक्ष्म होता गया है। शिर पर एक वड़ा भारी दीपक वलता था, उसको देखकर सर्वसाधारण जान सकते थे कि उक्त स्थानमे वादशाहके डेरे पड़े हुए थे। इसके भीतरी भागमे सीढ़ियाँ है, उन सीढ़ियोके द्वारा ऊपरको चढ़ाजाता है। वादशाह अकवर अवश्य ही उन सीढ़ियोपर चढ़कर ऊपरको गये थे, यह विचार कर मैने भी एक वार इन्ही सीढ़ियोपर चढ़कर ऊपरको जानेकी इच्छा की, परन्तु शरीर स्वस्थ नही था इस कारण मेरे मनकी आशा मनहीमे रहगई। नीचेके नगरके अंशको अतिक्रमण कर मै सवारी परसे उतरा। और घोड़ेपर सवार हो पांच किलेको लाँघकर चीतौड़मे गया। सूर्यकुंडके पासही मेरे डेरे पड़े थे, इस कारण वहाँ जाकर चीतौड़के चारोओर उस प्राचीन ऐतिहासिक विध्वस्त चिह्नोको देखकर चिन्ताको भगा दिया। अस्ताचल चूडावलम्वी प्रभाकरकी शेष किरणोंका जाल जवतक चीतौड़के स्तंभके ऊपर पड़ता रहा, मै तवतक विषादित स्मृति विचलित हृदयसे एक दृष्टिसे उसे देखता रहा"।

" विध्वस्त प्राचीन चीतौड़को देखकर मेरे मनमे जो समस्त भाव उदित होने लगे, पाठकोंको उन सवको विदित कराकर विरक्त करना नही चाहता, मै इस समय उन

विध्वंस्त दृश्योको देखकर अपनी सामर्थ्यानुसार कितने ही विवरणोको विदित करनेमे प्रवृत्त हुआ। खुमानरासा ग्रन्थमें चीतौड़के सम्बन्धमें लिखा है कि विख्यात दुर्गम और अभेद्य चौरासी किलोमे छत्रकोटका किला सबमे प्रधान है; समतल क्षेत्रसे जो भूधर उठा है, उस भूधरके ऊपर यह छत्रकोटका किला बना है, वह मानो पृथ्वीके मस्तक पर तिलक स्वरूप विराजमान होरहा है। कोई शत्रु भी उस किले पर अधिकार करनेको समर्थ नहीं हुआ, और इस दुर्गके अधीन सामन्त मंडली भयके नामतकको नहीं जानती थी। इसके ऊपरसे गंगा अपनी तरंगै दिखाती वहती हुई चली है। और इस पहाड़परका मार्ग इस प्रकारसे बना हुआ है कि यद्यपि कोई इसमे जानेके लिये समर्थ हो सकै, परन्तु यहाँसे बाहर होनेकी कुछ आशा नहीं है। एक बुर्ज पत्थरके ऊपर बना हुआ है, और उस बुर्जमे रहनेवाली सेना रात्रिमे सोते हुए शत्रुओसे भय नहीं मानती इसके धान्यागार धान्यसे पूर्ण है, और जल कुण्ड फुआरे और कुएँ निर्मल जलसे भरे पुरे है। स्वयं महाराज रामचन्द्रजी इस स्थानमे १२ वर्ष तक रहेथे नगरमे ८४ बाजार, बालिकाओके लिये बहुतसे विद्यालय, और प्रत्येक प्रकारकी शास्त्रीय शिक्षाके लिये पाठशाला और अठारह प्रकारके शिल्पविद्यामे निपुण शिल्पकार यहाँ रहते है।" छत्तीस प्रकारकी राजपूत जाति यहाँ निवास करती है, सेना अश्वारोही असख्य है।

"खुमानरासा अर्थात् रावत खुमानका उपाख्यान नामक ग्रन्थ ९ नौमी शताब्दीमे लिखा गया था और मेरा विश्वास है कि कविने चीत्तौड़का वर्णन कल्पनासे नहीं किया है सब सत्य लिखा है कारण कि चीतौड़के विध्वंस होनेके पाहेले भारतवर्षकी कोई राजधानी ही उसके समान नही थी, पठारकी समान चीत्तौड़की राजधानी पहाड़ पर स्थित है, पहाड़ श्रेणी चीत्तौड़से डेढ़ कोश तक चली गई है। चीतौड़के और पाठारके बीचमे उर्वरके ऊपर विजैपुरा, गुआलियर, और बेगूके कुछ अंश विराजमान है, उनके बीच २ मे कुंज कानन वृक्ष समूह है, किन्तु वह प्रदेश चिरकालकी अराजकतासे इस समय वनकी समान होगये है। चितौड़के ऊपरीभागका अंश लम्बाईमे तीन मील दो फर्लांग और चौड़ाईमे चौबीस सौ हाथ है। जिस पर्वत पर चीतौड़ स्थापित है उस पर्वतके नीचेका व्यास चार कोश है। उसके नीचेसे ऊपर तक घने २ पेड और झाड़िये है तिनमें व्याघ्र, हरिन, सुअर ही नहीं किन्तु सिंह भी आजलों रहते है। तुगाइति नामक चीतौड़के नीचेका भाग दक्षिणके अंशमें स्थापित है और वहां विजयस्तंभ चतरङ्ग मोरी राणा रायमल्लका महल, राणा मुकुलका विराज मंदिर गहिलोतके शतचूड़ा विशिष्ट दुर्ग और जयमल्लका सौध प्रभृति रमणीय स्मृति चिह्न समूह स्थापित है, चीतौड़से पृथक् एक स्थान ४०० सौ फुट उत्तरको है, इसके चारोंओर दीवारे है, शत्रुको इसीसे लाभ हुआ था। माधोजी सेंधियाने इसी पर अपना तोपखाना स्थापित किया था इसी स्थानसे अलाउद्दीन तातारीने आक्रमण किया था, लोग कहते है यह चीत्तौड़ी टीला वही है जिसके लिये प्रत्येक टोकरी मट्टीपर एक पैसेसे लेकर एक मोहरतक दी गई थी इसके निर्माणमें बारह वर्ष लगे होगे"।

माननीय टाड् साहबने प्राचीन चीतौड़के देखने योग्य स्थानोको देखकर जो वर्णन किया है, हमने उसका अविकल अनुवाद प्रकाश किया। टाड् साहब लिखते है, कि ठीक उत्तरी ओरसे ऊपर चढ़ना होता है, चढ़ते समय जो दरवाजे बीचमे पड़ते है, उनमे सबसे पहले द्वारको "फूटाद्वार" और चौथे द्वारको "हनुमान् पोल" कहते है। यह हनुमान पोल चीतौड़के इतिहासका एक चिरस्मरणीय स्थान है यही पर प्रसिद्ध वीर जयमल्ल और फत्ता महावीरता दिखाकर परलोक सिधारे थे। जयमल्लके स्मरणार्थ यहाँ पर एक छोटासा स्मारक चिह्न विराजमान है, और एक पत्थरके घोड़ेपर वीर वेषी भाला हाथमे लिये जयमल्लकी मूर्ति स्थापित है। कहा जाता है कि मेवाड़के देवता स्वरूप माननीय वीर शिरोमणि राखोदीकी यादगारीमे यह बनाई गई है। यहाँसे फिर तीन वेष्टनी उतर कर हम रायपोल नामक बड़े दरवाजे पर गये। इस स्थानसे विख्यात 'दरीखाना' वा बारहद्वारी जिस सभाग्रहमे प्रधान २ उत्सवोके समयमे चीतौड़के राणा इकट्ठे होते थे उसी स्थान पर गये। वह सभागृह ही चीत्तौड़की प्रतिभा, राणा अरसीको विदित करती थी कि उनके गौरवका सूर्य अस्त होता चला है। रामपोलके एक कमरेमे हमने खोदी हुई लिपिको देखा। सालूंबरके विख्यात् सामन्त भीमसिहने इस खोदी हुई लिपिकी प्रतिष्ठा की थी, कारण कि उनका ही नाम नीचे लगा हुआ है। भीमसिह एक समयमे चीतौड़के राजमुकुटको अपने शिर पर धारण करनेके लिये उद्यत होकर विद्रोही होगये थे, मेवाड़के इतिहासमे उसका वर्णन भलीभाँतिसे होचुका है। भीमसिंहने जिस वंशमे जन्म लिया था, उस वंशके आदिपुरुषोने भीमके जन्म लेनेके कई सौ वर्ष पहिले एक समय इस राजमुकुटको प्रकृत राजभक्तकी समान छोड़ दिया था। सालूंबरके सामन्त उक्त भीम जिस समय राजभक्त थे, ऐसा जाना जाता है कि उसी समय उन्होने इस खोदी हुई लिपिको स्थापन किया। इस खोदी हुई लिपिमे लिखा था " नगर निवासियोको बल पूर्वक किसी श्रमसाध्य कार्यमे नियुक्त नही किया जायगा, और नगर निवासियोसे दंडस्वरूप कर नहीं लिया जायगा। दूसरे गोइन्दा नामक स्थानके एक सूत्रधरने अपने व्ययसे रामपोलके नवीनद्वारको तैयार कर दिया, वहाँ एक मूर्ति गाय और शूकरकी विद्यमान है, उसको जो एक खंड भूमि दी गई थी इस खोदी हुई की लिपिमे उसका भी उल्लेख है "।

"मै उस स्थानसे दक्षिणकी ओरको कुछ दूर गया वहाँ एक अत्यन्त प्राचीन मंदिर देखा। उस मंदिरका तोपखाना चोराके समीप स्थापित था और वहाँ तुलसी भवानीका मंदिर है। वह तोपखाना चोरानामक स्थानमे पहिले तोपोकी श्रेणीसे सजा रहता था। इस समय वहाँपर चीतौड़के लूटनेके चिह्न स्वरूप कई एक प्राचीन तोपे पड़ी हुई है। इसके पीछे राणाके प्रधान पुरोहितका एक बड़ा और सुन्दर घर दिखाई दिया। इसके पीछे मुसाहिब अश्व शालाध्यक्ष और राजदरबारके अन्यान्य विभागोके प्रधान २ कर्मकर्त्ताओके घर है परन्तु सबमे पहला जो मनोहर महल चित्तको आकर्षण करता है उसका नाम नोलखा भंडार है। यह एक छोटा दुर्ग स्वरूप है। इसकी दीवारे

बड़ी २ सौध श्रेणी जैसी ऊंची है, तथा उसी भाँति उन्नत है । यह प्राचीन विध्वस्त उपकरणसे बनाया गया है । भंडार शब्दका अर्थ धनागार है ।

इस कारण इसके नामसे ही इसका परिचय पाया जाता है, किन्तु ऐसा जाना जाता है कि जिन वनवीरका वर्णन इस इतिहासमे किया है वह यहीं निवास करते थे । उत्तर पूर्वकी ओर एक छोटा सा मंदिर है, उसका चित्र कार्य अत्यन्त रमणीक है उसका नाम सिगारचोरा है " ।

" उक्त स्थानसे हम राणाके महलकी ओरको गये, यद्यपि यह जाना जाता है कि राणा रायमल्लने उक्त महलको बनाया था परन्तु इसके गठनकी रीति इसकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन महलोकी समान थी । इसका गठन सरल आकृति पर विस्तारित है । केवल बुर्जोमे महान् कारीगरी है, और महलमे कोई विशेष कारीगरी नहीं है । मुसल्मानोके आनेके पहिले राजपूतोके महल किस रीतिसे बनते थे, इसको देखकर यह भलीभाँतिसे जाना जाता था । महलके चारोंओर प्राङ्गणभूमि है । उस प्राङ्गणभूमिकी एक ओर देवजीका मंदिर है । राणा सांगाको उसी मूर्तिकी कृपासे चारोओरसे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ था । इन अपरिचित मूर्तियोके ग्यारह कुल वा महाविद्याओमे एकके नामसे विदित थे । विख्यात वीर भोज जिनके पिता एक चौहान और माता गूजरी जातिकी थी, और जिसके मिलनेसे बगरावत सम्प्रदायकी सृष्टि हुई थी, ऐसा जाना जाता है कि वही भोजदेव शक्ति युक्त होकर इस विग्रहरूपसे प्रतिष्ठित है इन देवताके सम्बन्धमे एक प्रवाद प्रचलित है । उक्त दैव शक्तियुक्त बगरावत वीर जिस समय प्राचीन शत्रुताका बदला देनेके लिये रणविजय नामक स्थानके परहारियोके विरुद्धमे गये थे, उस समय उनके चीतौड़के समीप आते ही चीतौड़पति राणासांगाने उनके आनेका समाचार पाया तब उनको देवशक्ति युक्त जानकर भक्ति और श्रद्धाके साथ बड़े सम्मानसे उनकी पूजा की । देवजीने राणाकी भक्तिसे प्रसन्न होकर राणाको एक देव पदार्थ (तवीज) दिया, उस देवपदार्थके ही बलसे तथा देवजीकी निर्दिष्ट व्यवस्थाके मतसे राणा जितने दिन चले उतने ही दिन उन्होने विजय प्राप्त की । देवजी ने उस दैवपदार्थ (तवीज) को छोटेसे कपड़ेमें रखकर राणा सागाके गलेमे बाँध दिया, और कहा कि यह किसी प्रकारसे भी पीठकी ओरको न जाने पावै । उक्त देवजीकी इस प्रकारकी देवशक्ति थी, कि वह मृतक मनुष्यको जीवित कर सक्ते थे । उस शक्तिको दिखानेके लिये उन्होने अपने हाथमे एक मोरका पंख लेकर उस समय चित्तौरमे जो मनुष्य मरगये थे उनका शव स्पर्श करके ही उनको फिर जीवित कर दिया ! राणा सागा देवजी का वह दैव शक्तिका चूडान्त प्रमाण पाकर दिग्विजयके लिये वाहर हुए । उन्होने अनेक युद्धोमे जय प्राप्त करके अन्तमे वियानाके किलेतक पर अधिकार करालिया था, इसी समयमे पोला खानमे स्नान करते समय उनके गलेमेसे दैवी पदार्थ जलमे गिर पड़ा । उसी समय यह शब्द उठा कि एक भयंकर शत्रु तुम्हारे समीप आपहुँचा है ! शीशोदीया इस प्रवाद वाक्य पर इतना विश्वास स्थापन करते थे कि उक्त देवजीने उनके देवताओमे

स्थान पाया, और यद्यपि उनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होगई थी परन्तु तौ भी वह देवजीकी उस मूर्तिके सम्मुख दिन रात दीपक प्रज्वालित करते रहते थे, देवजीकी मूर्ति अश्वारोही वीरकी समान गठित थी। हाथमे वर्छी और घोड़ा नीले वर्णका था। आजतक भी सब उनकी पूजा करते है । सबका मन्तव्य संग्रह करनेके लिये मैने तीन रुपये वावरके उपयुक्त प्रतिद्वंदी महावीर सांगाके नामसे उक्तदेवजीकी प्रतिमाके सामने अर्पण किये "।

राणा रायमल्लके महलको छोड़ कर मै दो बड़े मंदिरोमे गया। उन दोनों मंदिरोमेंसे एकमें बृजराज श्रीकृष्णजीकी मूर्ति स्थापित थी । उसे राणाकी विख्यात् रानी मीराबाईने वनवाया था और उसमे श्यामनाथकी मूर्ति स्थापित थी । मीराबाईको कविता करनेकी भी शक्ति थी। इसका वर्णन इतिहासमे होचुका है । उन्होने जयदेवकी विख्यात् गीतगोविन्दकी टीका तैयार की थी ऐसा जाना जाता है। मीराबाईकी कृष्ण-भक्ति इतनी प्रबल थी कि वह कृष्णके प्रेमसे व्याकुल हो इस मंदिरमे नृत्य करती थी, और मीराबाईकी मृत्युके सम्बन्धमे जाना जाता है कि एक समय मीराबाई प्रेममे व्याकुल होकर नृत्य कररही थी कि इसी समयमे राधानाथने मूर्तिमेसे प्रगट हो कर कहा। "मीरा आओ ! हृदयसे लगो। श्रीकृष्णने जैसेही मीराको आलिंगन किया कि मीराकी मानवी लीला भी उसके साथ ही साथ समाप्त होगई "।

"परन्तु यह दोनो मंदिर अत्यन्त प्राचीनकालके कितने ही टूटे मंदिरोंकी समान बने हुए है। चीतौड़से तीन कोश उत्तरकी ओर एक स्मरणातीतकालके निगर नगरका ध्वंस स्तूव पड़ा है। वहाँके टूटे हुए मंदिरोकी सामग्री लाकर यह बनाये गये है। उक्त दोनो मंदिरोके समीप एक बडाभारी जलाधार विराजमान है। प्रत्येककी लम्बाई एक सौ पचीस फुट ह बिस्तार पचास फुट है और गहराई पचास फुट है । ऐसा जाना जाता है कि मेवाड़की राजनंदिनीके साथ गागरौनके खीची वंशीय अचलका जब विवाह हुआ तब राणाने इन दोनोको खुदवाकर आमंत्रित हुओके लिये एकमे घी और एकमे तेल भरवा दियाथा "।

"हम पीछे कीर्त्तिस्तंभके समीप पहुँचे, राणा कुंभाने मालवा और गुजरातकी समस्त सेनाको पराजय करके उस विजयके चिह्न स्वरूप यह स्मरण स्तंभ स्थापित किया था। समस्त भारतवर्षमे एकमात्र दिल्लीकी कुतव मीनारके साथ इसकी तुलना हो सकती है परन्तु यह उसकी अपेक्षा ऊंचा है तथापि इसका शिल्पकार्य वैसा उत्तम नहीं है। यह स्तंभ एकसौ बाईस फुट ऊंचा है। और इसके मूलदेशके प्रत्येक खंडका परिमाण ३५ फुट है। शिर देशका गुम्वज साढ़े सत्रह फुट है। यह ४२ फुट वेदीके ऊपर स्थापित है। यह नौतल युक्त है और प्रत्येकके नीचे ही द्वार और झरोखे विराजमान है। चारोओर स्तंभौसे युक्त वरामदोकी श्रेणी वनो हुई है। इनकी सुन्दरताके लिखनेकी

---

(१) हमारी समझमें यह वही तक्षक नगर है जिसकी हम खोजमें थे और जिसके लिये हरवर्ट साहबने यह लिखा है कि चीतौड़ टकसेल पोरस (पवार) का था।

कलममे सामर्थ्य नही है । इसके ऊपर हिन्दुओके समस्त देवी देवताओंकी मूर्त्ति खुदी हुई है । इसका सबसे ऊचा वल अर्थात् नौसंख्यक तल साढे सत्रह फुट चौडा है, अनेक भांतिके पापाणोसे यह बना हुआ है वहॉ अगणित स्तम्भ श्रेणीके ऊपर गुम्वज स्थापित है । इनमे कन्हैयाजीका रासमंडल आंकित है, चारोओर गोपिया बाजे हाथमे लियेहुए नृत्य कररही है मध्यस्थलमे राधाकृष्ण विराजमान है उस कमरेमे चित्तौडके राणाका वंश विवरण पत्थर पर खुदा हुआ है । किन्तु दुरात्मा यवनोंने उन सबको विध्वंस कर दिया है । केवल निम्नलिखित दो श्लोक आजतक पूर्व अवस्थामे है ।

१७२ श्लोकार्थ–गुर्जर खंड तथा मालवादेशके अधीश्वरने अपार समुद्रकी समान विस्तारित सेनाके साथ पृथ्वीको कंपायमान करके मेरपति पर आक्रमण किया । कुम्भाने जगत्‌को उज्वल किया उसके अशेप यशका वर्णन कहां तक किया जाय ? उन्होने अपनी विपक्षी सेनामे व्याघ्रस्वरूपसे अथवा शुष्क गहन बनमे अग्निस्वरूपसे गमन किया था ।

१८३ श्लोकार्थ–जब तक सूर्य भगवान् इस संसारमे अपनी किरणजालका विस्तार करेंगे तबतक राणा कुंभका यश फैला रहेगा। जब तक उत्तरमे हिमालय पहाड़ ऊंचे भावसे खड़ा रहेगा । जब तक वारिधि मालाकी समान मेदिनीके गलेको पकड़े रहेगा तबतक कुंभका यश अक्षय रहैगा । उनके शासन समयके अनेक घटनाओंसे पूर्ण इतिहास और उनके गौरकी गरिमा सर्वदा अक्षयभावसे विराजमान रहैगी । एक हजार पॉचसौ सात संवत्‌मे राणा कुंभने कहा चीतौड़के ललाट पर मुकुटरूप यह स्तम्भ निर्माण किया । उदय हुए सूर्यकी उज्वल किरणोकी समान यह तोरण चीतौडके नवीन वरकी समान उठा था" ।

संवत् "१५१५ में ब्रह्माके मंदिरकी प्रतिष्ठा हुई और वर्तमान वर्षके माघ मास पुष्य नक्षत्र दशमी तिथि वृहस्पतिवारको अक्षय छत्र कोटमे यह कुंभाका कीर्तिस्तंभ निर्माण हुआ । अब इस स्तंभकी तुलना नहीं होसकती इस स्तंभको धारण करके चीतौड़ आज मेरुका उपहास कररहा है । अब इस छत्र कोटकी उपमा कहां है ?–इसके शिखरसे झरने निकल कर अविकल शब्द करते हुए बहरहे है । चारोओर देवता और देवियोकी मूर्तियां विराजमान है । चारोओर उज्वल कुञ्जवन और भौरे गुंजार करते हुए प्रेमसे क्रीड़ा कररहे है । इस अभेद्य अचल किलेको महाइन्द्रने अपने हाथसे बनाया था ।

उक्त श्लोकाकी संख्या १८३ थी परन्तु और भी कितने ही श्लोक इस स्थान पर लिखे हुए थे । इनका अनुमान सरलतासे होसकता है" ।

कर्नल टाड् साहब लिखते है कि इस ऊंचे स्थानसे जो दृश्य देखा जाता है वह अत्यन्त मनोहर है । मालवेके समतलक्षेत्र तक यहॉसे दृष्टि पहुँचती है । कई वर्षके बीतने पर इस स्तभके सबसे ऊंचे बुर्ज पर वज्रपात हुआ था और उसीसे बहुतसे बुर्ज टूट गये थे, परन्तु सर्वसाधारणमे यह स्मरण स्तंभ, आजतक अक्षतभावसे खड़ा हुआ है । केवल जिस स्थान पर वज्रपात हुआ था उस स्थान पर कई एक पीपलके वृक्ष जम गये है, ऐसा जाना जाता है कि स्मरण स्तंभके बनानेमे नौ लाख रुपया खर्च हुआ था । राणा कुंभाने जो अगणित सौधमंदिर निर्माण किये थे उन्हींमे का एक यह भी है ।

श्रीकृष्णका मंदिर और कूर्मसागर नामका एक बड़ा सरोवर है, तथा महादेवका मंदिर और कृत्रिम निर्झर राणा कुंभाके द्वारा बना था। राणा कुंभाने कमलमेरे नामक विराट-काय किला और उसमेके महलको बनाया था। उस कमलमेरके किलेमे वह शासन कार्य करतेथे, ऐसा जाना जाता है कि महम्मद बेगने जिस समय कमलमेर पर आक्रमण करके इस पर अधिकार किया था उस समय उसको उस किलेमेसे गुजरातकी राजकुमारीका कई लाखके मोलका हीरोंका एक हार मिला था, और उसने चालीस हजार मनुष्योको यहाँ बंदी कर लिया था।

"उक्त कीर्तिस्तंभके निकट ही ब्रह्माका एक बड़ा मंदिर है, राणा कुंभाने अपने पिता राणा मुकुलके स्मरणके लिये इस मंदिरकी प्रतिष्ठा की है। और यह उन्हींके नामसे विदित है, यह राजा बड़ा ईश्वरभक्त था। इस मंदिरके समीप विख्यात चारवाग नामक स्थान है। वहाँ वाप्पासे उदयपुर राजधानीकी प्रतिष्ठाता तक शीशोदीय वंशके प्रत्येक राणाका समाधि मंदिर है। उस मंदिरमे केवल भस्म राशि रक्खी हुई है उस समाधि मंदिरके भीतरी भागोमे बहुतसे ऐतिहासिक तथ्य विजड़ित हुए है। हम अपने लेखको भी यहाँसे संक्षेप करते है कि हमारे इतिहास बतानेवालेने संसारसे विदा की"।

"उस सनमान समाधिक्षेत्रमे होकर मै पर्वतके एक निर्जन स्थानमे गया। भूधरका वह स्थान स्वभावसे ही विदीर्ण होगया है और उसके एक अंशसे 'गोमुख' नामका स्वाभाविक झरना एक वटवृक्षके नीचे होकर निकला है। पर्वतके उस गुहाकी एक ओर एक गुप्त सुरग पर्वतके भीतरीभागमे चली गई है, उसको रानी भीदर कहते है। उसी सुरंगमे होकर वराबर भीतरी भागमेंको कई एक कमरे चले गये है। बादशाह अला-उद्दीनने जिस समय चित्तौड़पर अधिकार करके लूट की थी उस समय इस स्थान पर जौहर वृत्तका अनुष्ठान किया गया था। भुवन मोहिनी पद्मिनी और चीत्तौड़की अन्यान्य राजरानी और राजनन्दनियोने इसी स्थान पर प्रज्वलित अग्निमें प्राणत्याग करके अपने सतीत्वकी रक्षा कर पापातमा अलाउद्दीनकी पाप कामनाको व्यर्थ किया था, उसी समयसे यह गुप्त सुरंग वंद करदी गई"।

"मैने और भी ऊपर चढ़ कर जयमल और पत्ताके नामके मंदिर देखे। वहां कालकादेवीके मंदिरकी प्राचीन अर्थात् चीत्तौडके गहिलोत वंशके आधिपत्य विस्तारित होनेके कईसौ वर्ष पहिले प्राचीन मोरिराजवंशके शासन समयमे प्रतिष्ठा हुई थी। मैने वहाँ निम्नलिखित खोदी लिपिये देखीं।

"सम्बत १५७४ माघ सुदी पचमी रेवती नक्षत्रमे पत्थर खोदकरलिपि अंकितकी कालू. कैमर शिल्पीने तथा और अन्य छत्तीस जनोने (यहाँ पर उनके नाम वर्णन किये है कालकादेवीके मंदिरसे लगे हुए विस्तारित कुंड बनाये"।

"उक्त स्थानसे मै चन्द्रावत् सम्प्रदायके आदिपुरुष चंडके समाधि मंदिरकी ओर गया। वहांसे कुछही दूर भीमसिह और पद्मिनीका महल विराजमान है उसके पीछे एक स्थानके चारोओर पत्थरकी दीवार दिखाई दी। ऐसा जानाजाता है कि राणा

कुंभाने मालवेके राजाको युद्धमें परास्त करके वंदीभावसे इसी स्थानमे लाकर रक्खा था उसी स्थानसे लगाहुआ रामपुराके राववंशियोका महल विराजमान है " ।

"और भी दक्षिणकी ओर प्राचीन चीतौड़के प्राचीन पँवार अधीश्वर चतरङ्ग मोरीकी पुष्करणी और महल विराजमान है । यह स्थान विशेष ऐतिहासिक विवरणोसे भरा हुआ है । पुष्करणीका भीतरी भाग भिन्न २ अंशोमे विभक्त है । चीतौड़के किलेके दक्षिण बुर्जके चारसौ हाथ समीप जाकर मै इस स्थानसे चीतौड़की प्राचीन सामन्त श्रेणी अर्थात् सिरोही; बून्दी सन्तलूना वारा इत्यादिके अधीश्वरोकी महल श्रेणीके भीतरको होताहुआ चौगान नामक स्थानमे जा पहुँचा । यह स्थान सामरिक उत्सवों का क्षेत्र है । आजतक भी दशहरेके पहिले चीतौड़मे संख्या वद्धसेना प्राचीन रीतिके अनुसार वहाँ सामरिक उत्सव करती है । उक्त स्थानके समीप ही एक वड़ा जलाशय विराजमान है । यह एक सौ तीस फुट लम्वा है, चौडाईमें ६५ फुट है, और इसकी गहिराई ४७ फुट है । इसके चारोओर रमणीक अत्यन्त सुन्दरतासे खुदेहुए आभ्यन्तरी भाग जलसे पूर्ण है " ।

इसके और भी ऊपर प्रायः सम मध्यस्थानमे एक चमत्कार चौकोना स्मरण स्तंभ विराजमान है । यह ऊंचा साढ़े७५ फुट है । इसका मूलदेशका व्यास३० फुट है । शिरका व्यास १५ फुट है । और उसके गात्रपर जैनियोकी मूर्तियां खुदी हुई है । यह स्मरण स्तभ अत्यन्त प्राचीन है । इसके मूलदेशमे मैने जो खोदी हुई लिपि देखी उनसे जाना गया कि यह पहिले जैनगुरू आदिनाथके नामसे उत्सर्ग की गई थी, उक्त मूलदेशके नीचे इस भाँति खुदा हुआ है ।

"श्रीआदिनाथ और चौबीस जैनेश्वर । पुंडरीक । गणेश । सूर्य और नवग्रह । अनुग्रह करके तुम रक्षा करो । संवत्९५२,सन्८९६ ई०मे वैशाखशुक्ला पूर्णिमा गुरुवार" ।

कोकरेश्वर महादेवके अत्यन्त प्राचीन मंदिरके समीप मैने निम्नलिखित लिपि पाई,-

" संवत् ८११ । माघ शुदी पंचमी वृहस्पतिवार को । सन् ७५५ ई. राजा कोकरेश्वरने इस मंदिरकी प्रतिष्ठा करी और यह जलाशय खुदवाया " ।

"यहाँ अनेक जैनियोकी खुदी हुई लिपियाँ है, परन्तु टूट फूट जानेके कारण मैं उनमेसे किसी विशेष प्रयोजनीय लिपिको अपने दुर्भाग्यसे न निकालसका । शान्ति (सन्त) नाथके मंदिरपर निम्नलिखित खोदी हुई लिपि देखी ।

संवत् १५०५, सन् १४४९ ईसवी श्रीमहाराणा मुकुलके पुत्र कुंभाके धनाध्यक्ष साह कोला, उनके पुत्र वदरीरत्न और स्त्री श्रीविलनदेवीने शांतिनाथका यह मंदिर प्रतिष्टित किया, और खरताके सामन्त कछकाछत राजपुरा और उसके गोत्री राजश्री जिन चन्द्रसूरिजीने यह लेख लिखा था " ।

"पूर्वकी ओर मध्यांशमे सूर्यपोल नामक तोरणके समीप चादावत् सम्प्रदायके नेता सहोदासका समाधि मंदिर विराजमान है । सम्राट् वहादुरशाहने जिस समय

चीतौड़ पर आक्रमण किया था उस समय उक्त सहीदासने उस सूर्यपोलके समीप जाकर भयंकर वीरता प्रकाश करनेके पीछे शत्रुके हाथसे उसी स्थान पर प्राण त्याग किये थे"।

"उत्तर पश्चिमके अंशमे एक किला है, और उसमे महल विराजमान है, उसकी दीवारै और ऊंचाईको देखनेसे यह बोध होता है कि यह बहुत प्राचीन कालका बना हुआ है। ऐसा जाना जाता कि मोरी राजवंश और चीतौड़के प्रथम राणा इसी महलमे रहते थे। कोई पुरुष एक पग भी ऐसे स्थानमे नहीं रख सकता जहॉ कोई न कोई वस्तु पुराने समयकी उसके पैरके नीचे न आवै"।

इस स्थान पर चीतौड़का वर्णन समाप्त करते है। परन्तु इसकी समाप्तिके पहिले मैने एकसौ साठ वर्षकी अवस्थावाले एक फकीरको देखा। उसका उल्लेख विना किये हुए नहीं रह सकता। यहॉके बहुत २ पुराने मनुष्य कहते हैं कि यह फकीर यहॉके मदिरमे चिरकालसे निवास करता है। यहॉके एक नव्वे वर्षसे अधिक अवस्थावाले सूत्रधरने कहा है कि "बालकपनसे मैने इनको इसी प्रकारसे वृद्ध देखा है। जब इन अत्यन्त वृद्ध महात्मा निकट मैने अपना परिचय दिया, उस समय वह एक नगरवासीके साथ चौसर खेल रहे थे। उन्होने एक मुहूर्तके लिये मेरी ओरको देखकर "यह मनुष्य क्या चाहता है?" कह कर फिर क्रीड़ामे मन लगाया। क्रीड़ाके समाप्त होनेपर मैने उनको भेटमे रुपये दिये। वह उनको लेकर अपने समीप खड़े हुए मनुष्यको दे बड़ेवेगसे उस टूटेहुए मंदिरकी ओरको चले गये। एक मनुष्यने उनको एक बहुत बढ़िया दुशाला दिया था, शीघ्रतासे चलनेके कारण उनका वह दुशाला जमीन पर गिरता हुआ जा रहा था। परन्तु उन्होने उस दुशालाको वहीं छोड़ा और आप वहॉसे चल दिये। इनका ऐसा स्वभाव देखकर कोई भी इनके साथ किसी प्रकारका अत्याचार नही करता था। इनको जब भोजनकी इच्छा होती तब तुरन्त ही भोजन करनेका उपाय करते थे। मै एक मात्र एक मुहूर्तके लिये उनकी पूर्वस्मृतिको जागरित करनेमे समर्थ हुआ था। उस समय उन्होने एकमात्र अदीनाबेग और पंजाबके सम्बन्धमें कुछ एक बातै कही थी। ऐसा जाना जाता है कि वह पंजाबके रहनेवाले थे मुझे उनकी अवस्था सत्तर वर्षकी विदित होती थी"।

कर्नल टाड् साहब प्राचीन चितौड़को देखनेके पीछे८ मी मार्च सन् १८२२ ई० को उदयपुरमे आये, महाराणा भीमसिहने उनको बड़े आदरभावके साथ ग्रहण किया। करनल टाड् साहबने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि "मै फिर हिन्दूपतिकी इस राजधानीमे आया। जबतक मै अपनी जन्मभूमिको नही जाऊंगा। तबतक किसी उपद्रवके बशसे भी इस स्थानको नही छोडूंगा। मेरे लिये इस समय विश्राम करना आवश्यक है, कारण कि मेरे जीवनके गत पिछले पन्द्रह वर्ष कठोर परिश्रम करनेमे व्यतीत हुए है (जिसका कुछ एक अंश इतिहासमे वर्णन किया गया है। मैने कई दिन तक भैरतामे विश्राम किया, और देखा कि मेरे घर बननेका कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है, और बगीचा रमणीय शोभा को प्रकाश कर रहा है। आडू, सेव संतरे,

नारंगी, अनेक जातिके नींबू इत्यादि वृक्षोमे कलिये खिली हुई देखी । श्रेष्ट फल, अनार केला, इत्यादि फलवान् वृक्ष भी फलके भारसे झुके हुए देखे, यह सब फलवान् वृक्ष लखनऊ आगरा और कानपूरसे आये थे । किन्तु प्रधानतः श्रेष्टफलवाले वृक्षोके वीजमें ग्वालियरसे लाया था, मैने ग्वालियरके समस्त वृक्षोको अपने हाथसे लगाया था। सन् १८१७ ईसवीमे जिस समय मैने ग्वालियरको छोड़ा उस समय मै वहांसे कितनेही फलोके वीज ले आया था, और उन सबको मैने उदयपुरके रंग प्यारी नामक भवनसे लगेहुए बागमे बोया था । यह जैसे स्वादिष्ट और मीठे थे ऐसे फल मैने और कभी नही देखे । उन सब वृक्षोके वीजको मैने फिर इस मेरताके वागमे बोया, और इस समय देखता हूँ कि, उन सबमे फिर मधुर २ फल लग रहे है । शाक सवजी भी विशेष वृद्धिको प्राप्त होगई है । उदयसागरसे मै जलविहार करनेके लिये एक छोटी नहरको भी यहाँ लाया । कितनेही दिनो तक मैने आनन्दित होकर नाव पर चढ़कर यहाँपर भ्रमण किया, और किनारे पर वैठकर मत्स्य धारण किया । परन्तु हाय ? सभी कुछ वृथा था, अभागा केरिसाहव मट्टीके गर्भमे विलीन होगया है, उन डंकन रोगसे पीड़ित स्वास्थ हीन अवस्थामे केप आफ गुड़ होपमे जानेके लिये तैयार हुए है । वह जिस वख्त साहवको कोटेमे छोड़ आये थे उन्होने उनकी रुग्ना अवस्थाका समाचार मुझे पत्रमे लिखा था और मै जो कुछ था अब वह नहीं हूँ । मुझमे अस्थिमात्र शेष है । मेरे स्वास्थभंगको देखकर चिकित्सकने मुझे स्वदेशमे जानेके लिये परामर्श दी है । राणा मेरे जानेकी वार्तासे अत्यन्त दुःखित हुए है।उन्होने मुझे केवल तीन वर्षके लिये स्वदेश जानेकी विदा दी है और उनकी भगिनी चॉदजी वाईने कहा था कि जिससे मै अवकी बार देशसे विवाह कर अपनी स्त्रीको ले आऊं तो, वह अपने अन्त करणसे मेरे स्त्रीसे प्रेम करेगी ” ।

“मैने उदयपुरसे चुपचाप जानेकी अभिलाषा की थी । परन्तु राजपूतोकी रीतिके अनुसार स्वास्थभंग अवश्य ही अवनत होता है । इस कारण मै उदयपुरकी ओरको गया राणा भीमसिह युवराज ज्वानसिंह और समस्त शीशोदीया सामन्तोने आगे वढ बड़े आनन्दसे मुझे ग्रहण किया । “ आप मेरे घर आये है , केवल इन्हीं कितने ही सरल हृदयहारी प्रीतिपूर्ण वचनोसे राणाने मुझे ग्रहण किया । परन्तु वह उसी समय इधर उधर देखकर मेरे सहायक वाह साहब और डाक्टर केरीसाहवको न देख कर अत्यन्त दुखित हुए, और अन्तमे उन्होने मुझे जो वाजराज नामका अश्व उपहारमे दिया था उस घोडेके विना देखे हुए अत्यन्त विस्मित हुए । और जब सुना कि वह घोड़े कोटेमे मृतक होकर समाधिमे धरा गया है तब कह उठे। हाय ! (वड़ा सोचपन भला मनुष्यचा) वड़ा सोच है वह तौ अत्यन्त भला मनुष्य था । मै जब तक सूर्यपोलके समीप पहुँचा तव तक उसी वाजराजके गुणोके सम्बन्धमे बहुत सी वातचीत होती रही ।

“वास्तवमें वाजराजका जैसा नाम था उसके गुण भी उसी प्रकार थे । वह सर्व साधारणको इतना प्यारा था कि उसकी मृत्युसे सभीने शोक प्रकाश किया था । इस देशमे अपने प्रभुकी समान वह भी सर्वत्र विदित था। उसकी मृत्युके समय मेरी समस्त

सिपाही सेना और कर्मचारियोंने जो दुःख प्रकाश किया था वह हृदय विदारक था। बाजराजके समाधिस्थानमें सबने इकट्ठे होकर रुदन किया था और जब अश्वको कपड़ेमें लपेट कर समाधिमें स्थित करके उसके ऊपर मट्टीडाली थी। उस समय उसके सहीसने उसको समाधि पर शोक प्रकाश करते हुए महा रुदन किया था। मैंने उसकी यादगारीके लिये उसके बाल काटकर रखलिये थे। ऐसा श्रेष्ठ घोड़ा मैंने कभी नहीं देखा था। कुछ दिन पीछे मैंने देखा कि कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने उसकी समाधिके ऊपर २० फुट विस्तारित और चार फुट ऊंची एक पाषाण वेदी तथा उसके ऊपर एक बड़ा पत्थरका टुकड़ा रखकर बाज राजकी मूर्तिको स्थापित किया था, नायबने हमसे कहा था कि इस घोड़ेकी योग्यताको मैं जानता हूँ, इससे मैं इसका ऐसा समाधि मंदिर बनवाऊंगा कि उसके स्वामीको वैसा ध्यान भी न होगा, कोटेके रईस ही घोड़ोंके विषयमें सबसे अधिक अभिमानी थे, पाँडुके समयसे देववांगो बूंदी वालेके समय तक घोड़ोंके विषयमें बहुत युद्ध हुए हैं और हाड़ा जातिके एक वीरने लोधी बादशाहसे कहा था, हम और विशेष कुछ नहीं कहते राजपूतोंसे तीन वस्तु मत माँगना, उसका घोड़ा स्त्री, और उसकी तलवार।

उदारचरित्र राजपूत बाँधव महात्मा टाड् साहब निम्नलिखित कई एक बातें लिखकर हृदयसे इस रजवाड़ेके विस्तारित इतिहासका उपसंहार कर गये हैं। "बहुत थोड़े दिनोंके पीछे हम राजधानीको छोड़ कर कोटेराजकी भगिनी कि जिनके दिये हुए जुगत् मैंने भ्रातृ चिह्न स्वरूपसे अपने पास रख छोड़े हैं, उन हाड़ा रानीके स्थानमें जॉयगे, राजपूतजातिके समस्त सामयिक सामाजिक आचार व्यवहार, उनकी सहानभूति और वहांके सब मनुष्योंका मेरे साथ दया और नम्रतासे व्योहार करनेके कारण यह राजवाड़ा हमारा जन्मस्थान सदृश सुखद हो गया है अब मैं उस भूमिसे विदा माँगता हूँ, किन्तु यह विदा अन्तिम विदा है वा नहीं इसको परमात्मा जाने। मैं जहां भी जाऊं, मैं जबतक जीता रहूंगा तबतक मेरे हृदयसे इस उदयपुरकी स्मृतिका लोप होना तो दूर रहा वरन किसी समय भी कम नहीं हो सकेगी।

---

(१) टाड् साहब अपने बड़े ग्रन्थकी टिप्पणीमें लिख गये हैं "यह विचित्र बात है कि जिस महीनेकी जिस तारीखमें यह भ्रमणका कार्य समाप्त हुआ, इस बड़े ग्रन्थको जिसके सम्पादन करनेसे मुझे यथेष्ट आनन्द और सन्तोष प्राप्त हुआ उसी महीनेकी उस तारीखमें अन्तिम लेखनी उठाई गई अर्थात् सन् १८२२ ईसवीकी आठवीं मार्चको मैं भ्रमण समाप्त करके उदयपुरमें गया, और सन् १८३२ ईसवीकी ८ मी मार्चको अपने इस भ्रमण वृत्तान्तको समाप्त करता हूं। मार्चमास में ही मेरी पुस्तक छपी तथा मार्च मासमें ही मेरी इस पुस्तकका सर्व साधारणमें प्रचार हुआ (क) मेरा जन्म भी मार्च महीनेमें हुआ था; मार्च मासमें ही इग्लैंण्डसे भारतवर्षकी ओर गया, अंतमें भारतका दर्शन कर सिंहलका उपकूल दर्शन मार्च मासमें ही हुआ। परन्तु यह निरंतर घूमनेवाला संसारचक्र कैसा परिवर्तन करता हैं जिस हाथसे इस ग्रंथके चित्र तैयार हुए हैं वह इस समय मृतक है! मुझे यह दृढ़ विश्वास है कि समयके अनुग्रहसे उन हिंदुओंके शिल्प स्मृति चिह्न आजतक भी विराजमान हैं, उन सबके साथ ही साथ उनकी कीर्ति अक्षय रहैगी। मेरे भारतवर्षके छोड़नेके छ.—

"इस बड़े इतिहासरूपी पर्वतकी अन्तिम चोटीके अन्तिम स्थलमे खड़े होकर हम अपने पाठकोसे विदा मॉगते है । माननीय टाड् साहबके दिखाये मार्गमे हम अपने पाठकोंको लेचल कर इस अन्तिम लक्ष्य स्थानमे केवल उस अज्ञात–अज्ञेय शक्तिसे और पाठक मंडलीकी सहायतासे खड़े होनेको समर्थ होते है । इस अन्तिम विदाके समय हमारा हृदय आवेग पूर्ण है अतएव क्या कहे? क्या प्रार्थना करे? जो महोदय इस बड़े इतिहासके सम्पादक है, आओ आज हम अपने पाठकोसमेत साधुचरित्र राजपूतोके भाई उदार हृदय कर्नल टाड्की आत्माके मंगलके लिये सर्व मंगलमय परमेश्वरसे प्रार्थना करे "।

परिर्वतनशील समयका प्रभाव कैसा विचित्र है । मनुष्यके हृदयका वह प्रभाव वह उमग वह तरग वह चाव यह समय एकबार ही शान्त करदेता है । इस बड़े विस्तारित ग्रन्थके पाठमात्रसे पाठक समझ जॉयगे कि यह देश क्या था और क्या होगया, इस देशके निवासी क्या थे क्या होगये । विदेशी टाड् साहब जैसे उदार हृदय भारतके प्रेमी अब कहां है। भारतमहिलाओके साथ भ्रातृभावका सम्बन्ध जोड़नेवाले अंग्रेज अब कहां है वह भरापूरा देश कैसे दरिद्र होगया किस प्रकारसे इसको रोग शोकने ग्रास लिया, समय तुमने ही सब कुछ किया और तुम ही सब कुछ करोगे हाय ! काल जिस विख्यात नाम बलदेवप्रसादमिश्रने बडे उत्साहसे इस महान् ग्रन्थके अनुवादमे लेखनी उठाई थी, जो रजवाड़ेसे किसी प्रकार उपकार न पाकर भी रजवाडेके लिये प्राण देते थे जिन्होने कई प्रकारके इतिहास लिखकर देवनागरीके भंडारको ऐतिहासिक ग्रन्थावलीसे पूर्ण करनेकी इच्छा की थी जो देवनागरीके प्रचारके तथा शुभाचिन्तकोके लिये निरन्तर धन्यवाद करते थे तथा जिनकी सरल ओजस्विनी लेखनी बहुत कुछ कर दिखानेमे समर्थ हुई थी । काल तुमने उनको अकालमे ही ग्रास करालिया । तुम बडे निर्दयी हो तुमको कच्चे पक्के फलोका विचार नहीं है अथवा तुम बालस्वभाव हो जैसे बालक कच्चे फलोको

—महीने पीछे कप्तान वाह इंगलैण्डको आये, उस समय उनका स्वास्थ बहुत बिगड़गया था। हम दोनो जने मिलकर लंदनमे, विलजियममें और फ्रांसमे एक जगह रहे, किंतु उस समय बात २ में राजपूतानेकी बात चलती थी। जब वह फिर भारतमें लौट कर आये और मेजर हुए तब १० वीं घुडसवार पलटनके नेता बनकर जिस समय मथुरासे मऊ जाने लगे उस समय मै जिस प्रदेशमे बहुत दिनो रहा था वहांके निवासी दूनीके सामन्तने इनको भोज दिया था । यद्यपि उस समय वह हृष्ट पुष्ट थे तोभी मेरे वह जाति भाई बड़े दु खमे पड़े। उनके साथ जो घुड़सवार थे वह भी भोजमे सम्मिलित हुए । वह पर्वत पर चढते समय घोड़ेसे गिर गये और इतनी चोट आई कि उसके लिये डाक्टरी चिकित्साका प्रयोजन हुआ। उस चिकित्सासे वह इतने आरोग्य हुए कि दो दिनके पीछे उन्हे डोलीमें बैठनेकी शक्ति हुई । किन्तु जब वह जानेके लिये डोलीमे बैठे तब मित्रोंने डोलीके परदेको उठाकर उनसे बात करनी चाही तो जाना गया कि उनकी प्राणवायु पंचत्त्वमे लय होगई । उस समय उनका शव मेवाड़में दफनाया गया और उनके साथी सवारोंने अपने पाससे उनकी कबर पर एक स्मृति चिह्न बनवा दिया। वह हमारे परिश्रमका अन्तिम फल है, इनसे बीस वर्ष हमारी मित्रता रही। क्या कहैं । वह इस ग्रंथकी समाप्तिको नहीं देखसके। ८ मार्च सन्१८३२ ई.।

विशेषरूपसे तोड़ते हैं वैसे ही तुम नव्य अवस्थावाले प्राणियोंका संहार करते हो। इसीमें तुमको स्वाद है। विदित होता है कि तुम जगत्का रोना देखकर हँसते हो। विगाड़मे तुमको रस आता है। यदि यह समग्र ग्रन्थ इस महानुभाव पुरुषकी लेखनीसे निर्गत होता तौ पाठक और भी प्रसन्न होते, पर हरि इच्छामें किसकी सामर्थ्य है जो कुछ कहसके दूसरा खण्ड आधा भी न होने पाया कि अपने आपने इष्टमित्रोंको भ्राता माताको और जिनका लालन पालन करते थे उन सबोंको सदाके लिये शोकित छोड़ कर संसारसे विदा ली और इसका भार मुझ जैसे हिन्दीके मर्मके अभिज्ञके हाथमें सौप गये। उनके मनमे यही रहा कि कब इस ग्रन्थको मुद्रित हुआ देखूं पर कालने वह न होने दिया, उस उमंगको मनमें ही लीन कर आप संसारसे विदा हुए अच्छा हमारा वस क्या है हम आपकी इस लेखनीसे निकली हुई वाणीको आपका स्वरूप समझेंगे। हम तो आपके लिये यावज्जीवन इसी प्रकारके वाक्य कहैंगे पर हम आपकी इस दोहावलीके साथ इस महान् ग्रन्थकी पूर्ति करते है।

दोहा-सुमरि राम लछमन सिया, मारुतसुत हनुमान।
किये पूर्ण शुभ ग्रन्थ यह, हिन्दीराजस्थान॥ १॥
जैम्स टाड कृत ग्रन्थका, हिन्दीमे अनुवाद।
कियो यथामति शोधकर, द्विज वलदेव प्रसाद॥ २॥
पढहि सुनहि करि प्रेम जो, पुरुपनके इतिहास।
देशभक्ति, आचारसे, प्रगट करहि उल्लास॥ ३॥
निज पुरुपनकी रीतिको, ग्रहण करो सब कोय।
उनके शिष्टाचारसों, भारत उन्नत होय॥ ४॥
अति उदार गुणिजन विदित, विश्व विदित गुणखान।
हिन्दी उद्धारक विमल, चित्त भक्त भगवान॥ ५॥
वेकटेश यन्त्राधिपति, खेमराज सुखरास।
तिन हित हिन्दीमे कियो, यह अद्भुत इतिहास॥ ६॥
छाप २ कर ग्रन्थ बहु, कीनो जग उपकार।
कवि कोविद नित करत है, जिनकी जय २ कार॥ ७॥
जगदीश्वर तिनपर सदां, करै कृपा भरपूर।
द्विज वलदेवप्रसादकहि, रोग शोक हो दूर॥ ८॥
संवत शर ऋतु अंक विधु, मार्गशीर्षशशिवार।
पूनोतिथि पूरण कियो, ग्रंथ सुमंगल सार॥ ९॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादावाद।
भजन करत हरिको जहां, द्विज ज्वालापरसाद॥ १०॥
हरिको भजन न त्यागिये, भजिये सीताराम।
यही सार सब जगतमे, दायक अभिमत काम॥ ११॥

सम्पूर्ण.

चिट्ठी.

चिट्ठी अम्बरवाले जैसिहकी ओरसे राना संग्रामसिह मेवाड़ाधिपतिके पास ईडरके विषयमे ।

श्रीरामजी ।

श्रीसीतारामजी ।

जब मै दरबार उदयपुरमे था, आपने हुक्म दिया था कि मेवाड़ मेरा घर है और ईडर स्थान मेवाड़का द्वार है उसके प्राप्त करनेके निमित्त कावूमे रहना चाहिये उस समयसे मै कावूमे था । आपके नायव मैयारामने फिर उसके विषयमे लिखा है और दलपतरायने चिट्ठी मुझको पढ़कर सुनाई सुनकर मैने वातचीत इस विषयमे महाराजा अभयसिहके साथ की और वह आपके सबप्रवन्ध विषयोके साथ अनुकूलता करके उस परगनेको आपकी भेटकरते है और उनका लेख इस विषयमे भलीभांति प्रमाण होता है।

महाराजा अभयसिहकी प्रार्थना यह है कि आप ऐसा प्रवन्ध करै कि अनन्दासिह जो इस समय अधिकारी है जीवित न रहै कारण कि विना उसके मरे तुम्हारा अधिकार उचित न होगा और यह आपके अधिकारमें है और मेरी इच्छा भी यह है कि आप स्वयं वहॉ जॉय । और यदि आपके समीप उसकी आवश्यकता न हो तो वहॉ भाई निगो-को आज्ञाहो और उसकी आज्ञामे यथोचित सेना रक्खी जाय और सब मार्ग रोककर आप उसका वध कर सिद्धान्त यह है कि वह जीवित भाग न जाय इसका ध्यान अवश्य रहै इति । आषाढ़ वदि ७ संवत् १७८४ ।

विवरण ।

यह पंक्ति हांसियेपर है मेरा मुजरा पहुंचे जब दीवानके पास उपस्थित था तो उसने आज्ञा दी थी कि ईडर और स्थान चौथन मेवाड़के द्वार है और उनका लेना अवश्य है मैने इसको मनमे रक्खा और दीवानजीके सौभाग्यसे यह काम पूर्ण होगया ।

परगना ईडर महाराज अभैसिहकी जागीरमे है और वह श्रीमान्की भेट करते है यदि वह किसी औरको दिया जाय तो इसका ध्यान रहै कि मनसबदार अधिकार न पावे । ८ संवत् १७८४ ।

इसके पीछे टाट् साहवने जो चार पांच संधिपत्र लिखे है वह हमने उन उन राज्योके यथास्थानमे लिख दिये है इस कारण उनका दूसरी वार लिखना उचित नहीं है ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

मरुभूमिका वर्णन.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसराभाग २.

मरुभूमिका वर्णन.

प्रथम अध्याय १.

मुझको स्वयं कभी मरुभूमिके मध्यमे मंडोरसे आगे प्रवेश करनेका मौका नहीं मिला है। मंडोर मरुस्थलीकी प्राचीन राजधानी है और हिसारका पुराना किला इसके ईशान कोणमे, और आबू नहरवाला और भुज दक्षिणमे है। सविस्तार वर्णन करनेके पहिले यह आवश्यक है कि मै अपनी ढिठाई, अयोग्यता या अक्षमताके लिये क्षमा मांग लूं और मै प्रार्थना करता हूँ कि पाठकोंको यह बात ध्यानमे रखना चाहिये कि मेरी अनुसन्धान करनेवाली मंडलियोने प्रत्येक दिशामे भ्रमण किया है और उनकी यात्रासंबन्धी दैनिक वृत्तान्त पुस्तके उनकी शुद्धता या यथार्थताकी पुष्टिमे अकाट्य प्रमाणोसे भरी पड़ी है। और वे मेरे पास भटनेरसे अमरकोट और आबूसे अरोरं तकके प्रत्येक थलके निवासियोको भी लाये है। मै चाहता हूँ कि लोग मेरे यथार्थभावको समझले इसलिये मै इस कार्यको सिर्फ ढॉचा ही समझता हूँ और आशा करता हूँ कि इस कार्यको देखकर भविष्यतमें नवीन २ खोज करनेको लोग उत्साहित हो; परन्तु प्रमाणाभावके कारण इस विषयमें यद्यपि असम्भावनीय अशुद्धियां होगी तौभी मै इस कार्यको प्रकाशित करनेमे नही हिचकता हूं न पशोपेश करता हूं क्योंकि मुझे इस बातसे परम संतोष है कि विस्ताररूपसे यथार्थ ज्ञान संपादन करनेवालोका मै मार्ग द्रष्टा बनूंगा।

इतनी भूमिका बांधनेके बाद हमको सविस्तार वृत्तान्त लिखना चाहिये। और यदि उपरोक्त कथित कारण न होते तो यह वृत्तान्त इस पुस्तकके भूगोल संबन्धी

---

(१) इन मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकें, मध्य और पश्चिमी भारतके मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकोंके सहित ग्यारह भागोंमें विभाजित है जिनसे इन देशोंकी मार्ग निरूपण पुस्तकें तैयार की जा सकती हैं। मेरा विचार था कि इन पुस्तकोंकी सहायतासे एक बड़ा और दोष रहित नकशा तैयार करूं, परन्तु मेरी अस्वास्थ्यता इस काममें बाधक होती है। ये पुस्तकें अब कम्पनीके दफ्तरोमें रखदी गयी हैं और यदि बुद्धिमत्तासे काम लिया जाय तो भारतके विशाल नकशोंकी न्यूनताको पूर्ण करनेमे इनका उपयोग होसकेगा।

भागमे संमिलित करादिया जाता। यह वृत्तान्त ऐतिहासिक दृष्टिसे अप्रसंगिक होनेपर भी इतना सुन्दर है कि विस्तारपूर्वक वर्णन करना अधिक श्रेयस्कर होगा। मै यहां पर यह अवश्य कहूँगा कि जो नतीजा या परिणाम मैने स्वयं निरीक्षण या अनुभव करनेके वाद परन्तु, विशेष कर उपरोक्त लिखित मार्गसे निकाले है उनकी पुष्टि या (समर्थन) महाशय एलफिन्सटोन (Elphinstone) ने राजदूत बनकर उत्तरीय मरुभूमिमें होकर काबुलको जातेहुए अपने मार्गका जो सुन्दर वर्णन किया है उसके द्वारा होती है और यह वर्णन मेरे पूर्वविचारोको सन्तोषजनक दृढ़ता प्रदान करता है। इस जगह यह कहना अनुचित न होगा कि आगेके वर्णनमे, हमको कही २ पर एक वात को दुबारा लिखना पड़ेगा क्योंकि हम वीकानेरके इतिहासका वर्णन करते हुए इस मरुभूमिकी अनेक विशेप २ वातोका उल्लेख करचुके है। क्योकि इस राज्य की स्वाभाविक स्थिति मरुभूमिमे होनेके कारण उनका उल्लेख करना बहुत जरूरी था। प्रकृतिदेवीने स्वय अपने हाथोंसे भारतके इस महान् मरुभूमिकी सीमाओंको नियत किया है। और हमारा केवल इतना ही काम है कि हम सीमा स्थित रेखा पर ठीक ठीक चले जॉय जिसमे हमारी वात लोगोंके ध्यानमे ठीक २ आजावे, इस कारण हम मरुस्थली पदका पुनः पदच्छेद करनेको वाध्य है-इसका मूल अर्थ है "मृत्युकादेश" यह शव्द यौगिक है और संस्कृत धातु "मृ" मरना और "स्थली" "सुष्कभूमि" के योगसे बना है और अन्तिम पद "स्थली" इन देशोंकी बोलीमे बिगडते २ "थल"मे परिणत होगया है-थल अनउपजाऊ भूमिको भी कहते है प्रत्येक थल किसीन किसी नामसे प्रसिद्ध है। उदाहरणार्थ 'कावुलकाथल' 'गोगाका थल और खेती करनेके योग्य भूमि इन थलोकी अपेक्षा संख्या और आकारसे इतनी न्यून है कि प्राचीन रोमन अलंकारके एवजमे जिसमे अफ्रीकाको चीताकी खालसे उपमा दी गयी है, मै भारतकी मरुभूमिको व्याघ्रचर्मसे उपमा देना अधिक संयुक्तिक समझता हूँ। जिस व्याघ्रकी लम्बी २ काली धारियां विस्तीर्ण रेतके कटिवन्धके समान प्रतीत होती है। और केवल न्यूनतर रेतके मैदानकी सतहपर इन रेतके कटिवन्धोके समान असंख्यक आवाद नगर और गांव तितर वितर या छिटके हुए स्थित है। मरुस्थलीके उत्तरमे गरहकी सीमाको छूताहुआ एक समतल मैदान है। दक्खिनमे महान् नमकका दलदल 'रिन' और कोलीवरी है, पूर्वमे अरवली, और पश्चिममे सिन्धकी घाटी विराजमान है। अन्तिम दो सीमाएँ वहुत प्रसिद्ध है-विशेष कर अरवली-यदि अरवली पहाड़ रेतका मार्गावरोधक न होता तो मध्य भारत कभी रेतके नीचे दवगया होता। यद्यपि यह ऊंची और अवच्छिन्न श्रेणी समुद्रसे दिल्लीतक चली गयी है तौ भी जहां कहीं दरार या रास्ता मिल गया है ये रेतके उड़ते हुये वादल इन मार्गोंसे प्रवेश कर उर्वराभूमिके मध्यमे छोटा सा 'थल' जाकर निर्माण कर देते है। जिस किसी को टोकके निकट वुनासको पार करनेका अवसर हाथ आया है जहॉ कि रेत कोशोतक लहरोंके सदृश प्रतीत होती है वह इस कथनको वहुत ही अच्छीतरहसे समझ सकेंगे। इसकी पश्चिमी सीमा सिन्धकी घाटीमे यात्रा या प्रवास करनेका जिस अंग्रेज यात्रीको

सौभाग्य होवे उसे नेपोलियनके वे उद्गार स्मरण आवेंगे जो उसने लिबियन मरुभूमिके विषयमे अपने मुखसे निकाले थे। मरुभूमिको छोड़कर संसारका कोई भी पदार्थ समुद्रके समान नही प्रतीत होता है या किनारे नाइलकी घाटीके समान हैं। यहां पर नाइलके स्थान पर सिन्धुको रखते है जहॉसे कि हैदराबादसे ओचतक इसके किनारे २ उत्तरकी तरफ यात्रा करनेवालेको जहॉतक उसकी दृष्टि पहुंचेगी पूर्वकी तरफ रेतके दुर्गके दुर्ग दिखलाई पड़ेगे जिनकी ऊँचाई प्रायः नदीकी सतहसे दो सौ फीटतक है। तब उसके हृदयमे यह कल्पना उत्पन्न होगी कि वह दरार या छिद्र जिसमे रमणीक दरारी सुशोभित है काकेशस पहाड़के संपूर्ण सघन तुषारपुंजके एकाएक पिघलजानेसे उत्पन्न हुई होगी जिसके एकत्र भूत पानीने मरुस्थलीकी अविच्छिन्नतामें अन्तर डाल दिया है नही तो वह अरचोसियाके मरुभूमियोसे संमिलित होगया होता। हम यहॉ पर मरुभूमिके विषयमे भूगोल सम्बन्धी वंश परम्परानुगत कथनको दोहराते है अर्थात् प्राचीन समयमें प्रमर वंशके राजा इस देशपर शासन करते थे और इस बातकी पुष्टि भट्ट कविकी कविता करती है जिसमे उसने नौ दुर्गोंके नामोका उल्लेख किया है और ये दुर्ग बड़ी सुन्दरता और बुद्धिमानीसे माकके स्थानोपर निर्माण किये जानेके कारण इस देशके ऊपर आधिपत्यताको दृढ़ करते है। पुंगलका किला उत्तरमे है। मंडोर समस्त मारुके मध्यमे, आबू खेरालू और परकर दाक्षिणमें चोटन अमरकोट अरोर और लुद्रावा पश्चिममे है, और जिसके हाथमें ये नौ दुर्ग है मरुभूमिके ऊपर उसके आधिपत्यमे कोई भी हस्ता-क्षेप नहीं कर सकता है। इस कथाकी प्राचीनता समस्त अर्वाचीन नगरोके–भाइयोकी वर्त्तमान राजधानीका नामोच्चारतक नहीं किया गया है–नामोको उड़ादेनेसे कायम रक्खी गयी है। यद्यपि लुद्रुवा और अरोर नामके नगर प्राचीनकालसे खंडहर या भग्न दशाका अनुभव कर रहे है, तौभी इनके नाम उन्ही लोगोको विदित है जो कभी २ मरुभूमिकी सैर करते है और चोटन खेरालू इत्यादिका नाम निशान भी नकशेमे न पाया जाता यदि वह वंश परम्परानुगत भट्टकविका छन्द हमको खोज करनेके लिये न उभाड़ता।

हमारा अभिप्राय देशके प्राकृतिक विभागोका अथवा एतद्देश निवासियोकृत विभागोका जैसा कि पूर्व कह आये है। जिनको वे 'थल' कहते है। वर्णन करनेका है। और इनका सविस्तर वर्णन करनेके बाद हम इस देशकी भिन्न श्रुतियो और उन प्रसिद्ध नगरोका वर्णन करेंगे–जो अबतक वर्त्तमान है या नाश होगये है। इसके बाद जैसलमेरसे अन्य स्थानोको जानेवाली या जैसलमेरको आनेवाली खास २ रास्तोका वर्णन करके इस लेखको समाप्त करेंगे। समस्त बीकानेर और अरवलीके उत्तरमे स्थित शेखावाटीका वह भाग इस मरुभूमिमें शामिल है। यदि पाठक कनोड़ (Kanorh) नगरको जो अंग्रेजी राज्यके सीमाके अन्तर्गत है नकशेमें देखे तो वह मालूम करेंगे कि मि० एलफिं-स्टोनके कथनानुसार मरुभूमिका प्रारम्भ या श्रीगणेश यहांसे ही होता है। 'दिल्लीसे

(१) यह चोटनसे १५ मील उत्तरमे है।

(२) उन्होंने १३ अकटूबर सन् १८०८ को दिल्लीसे कूच किया था.

कनौड़ (मेरे नकशेका कनौड़) तककी दूरी अंग्रेजी राज्यमें करीब सौ मीलके है और इसके वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। सिर्फ इतना कहना काफी है कि यह देश रेतीला होनेपर भी खेतीके योग्य है । कनौड़ पहुँचने पर हमने पाहिलेपहिल मरुभूमिका नमूना देखा जिसके देखनेके लिये हम बड़े ही उत्सुक और व्यग्र थे । कनौड़से तीन मील पहिले ही हमको रेतकी पहाडियां दृष्टिगोचर हुई जो पहिले तो झाड़ियोंसे आच्छादित थीं परन्तु पीछेसे धसकती रेतकी नग्न या पुष्प पत्र विहीन राशिकी राशि समुद्रके लहरोंके समान उठती हुई दिखलाई पड़ी । जिनकी सतह पर बायुने वर्फके ढेरके समान चिह्न वना दिये थे इन पहाड़ियोंमे होकर सड़के भी वनी हुई थी जो जानवरोंके चलनेसे पुख्ता होगई थीं, परन्तु मार्गसे हटते ही हमारे घोड़े घुटनोतक रेतमे धस जाते थे। यह पहिला दृश्य था । और राजपूत सिगाना, झुंझनू होते हुए चुरू पहुँचा जब कि वे बीकानेरमें घुसे । शेखावाटीके बारेमें जिसको उसने छोड़ दिया था मि० एलफि-स्टोन लिखते है कि इसकी पश्चिमी सीमा और बहावुलपुरके बीचवाला दोसौ अस्सी मील लम्बे मैदानसे मुकाबिला करते हुए भी यदि यह मरुभूमिमे शामिल किया जाय तो अपनी पदवीको खोताहुआ मालूम पड़ता है क्योंकि इस मैदानके अन्तिम सौ मीलमे मनुष्यके दर्शन भी नही होते है।न जीवनाधार जल है और न हराभरा वृक्ष नेत्रको आनन्द देनेके लिये मिलता है । शेखावाटीसे पूगुलतक हमारा मार्ग पहाड़ियो ओर धसकती और भारी रेतकी घाटियोमें होकर था । ये पहाड़ियां ठीक २ उन पहाड़ियोकी मानिन्द थी जिनको बाजेवक्त हवा समुद्रके किनारे बनाती है । परन्तु इनकी (मैदानवालोंकी) ऊंचाई अत्यन्त अधिक है जो वीस फुटसे लेकर सौ फुटतक थी लोग कहते है कि इनके स्थान और आकारमे वायुद्वारा परिवर्तन भी हुआ करता है।और गर्मीके दिनोमे इन पहाड़ियों मे होकर चलना कठिन है,या यह पहाड़ी मार्ग,उड़तेहुए रेतके बादलोके कारण अधिक भया-नक होजाता है,परन्तु शीतऋतुमें जब मैने उनको देखा था तब वे बहुत कुछ अंशोमें अचल प्रतीत होती थी । क्योंकि फोक बबूल और वटके वृक्षोके अलावा उनके ऊपर घास भी उगी हुई थी । जिसके कारण दूरसे उनपर हरित चद्दर सी पड़ी हुई मालूम पड़ती थी । ऐसे भयानक रेतके पहाड़ियोके बीचमे कभी२ गॉव दिखलाई पड़जाता है, नाजकी छोटी राशिके समान, नीची दिवाले और गोपुच्छाकार छतवाले घास फूसके कुछ झोपड़ोको यदि गांवका नाम दिया जासके"। तोपर भी महाशय एलफिन्स्टोन द्वारा जो यथार्थ और आडम्बर शून्य वर्णन करनेके लिये प्रसिद्ध है उन्हीका लिखा हुआ मरुभूमिके उत्तरी भागका यह वर्णन आगे पाठकोको यथार्थ विचार बॉधनेमे अधिक सहायता देगा ।

---

(१) मि. एलफेन्स्टोन लिखता है " हम कभी भी लम्बी; सफर नहीं करते थे । अधिकसे अधिक छबीस मील और कमसे कम पन्द्रह मील हम लोग चला करते थे,परन्तु मार्गके चलनेसे जो थकावट हमको मालूम पड़ती थी उसका और दूरीका कुछ सम्बन्ध ही नहीं होता था । हमारी श्रेणी या कतार दो मील लम्बी होती थी जब कि हम बहुत ही मिलकर चलते थे । रेतकी पहाड़ियोंको बचानेके अभिप्रायसे हमको मार्गमें बहुत घूमकर जाना पड़ता था या चक्कर काटना पड़ता था ।—

इतना भी कथन करनेके अनन्तर और इस देशकी बाह्याकृति देखकर जो कुछ अवतक कहा है उसको स्मरण रखतेहुए हम इस मृत्युभूमिके भिन्न २ थलोका और इसमे उपस्थित यत्र तत्र उर्वराभूमिका विशेषरूपसे वर्णन करते है । मेरे विचारमे हिन्दुओंके प्राचीन भूगाल संबन्धी विभागको छोड़ देना लाभदायक या अधिक उपयुक्त होगा, जो मंडोरको मरुस्थलीकी राजधानी बनाते है, क्योंकि समस्त मरुभूमिके मध्यमे होनेके कारण और उसके चिह्न या लक्षण और स्थानकी विवेचन करते हुए जैसलमेरको ही मरुस्थलीकी राजधानी कहना उपयुक्त जंचता है । वास्तवमे यह उर्वराभूमि प्रत्येक दिशामे बड़े २ थलोसे आवृत है, जिनमेसे कुछ चालीस मील चौड़े हैं। जहां कि मनुष्य और उसके खाद्य पदार्थके दर्शन तक दुर्लभ है। हम जैसलमेरसे मारवाड़ जायँगे और लूनीको बिना पार किये हुए झालौर और सेवाचीका वर्णन करेंगे, फिर पाठकोको पर-कर और वीरवहके सज्ञात राजमे लेजायँगे जो रानाकी उपाधि धारण करनेवाले चौहान वंशके राजाओंके अधीन है। अर्वाचीन राजपूतानेकी राजकीय सीमाओंके निकट रहतेहुए वर्त्तमान समयमें सिन्धसीमान्त,धात और ओमुरसुमराके देशोका वर्णन करके हम दाऊद पुत्र और सिधुनदी गत घाटीका किंचिन्मात्र वर्णन करतेहुए इस लेखको समाप्त करेंगे।

"जिसोहै (जैसलमेर) की पहाड़ीसे इधर उधर छिटकेहुए प्रत्येक नगर या गॉवकी चर्चासे इस सविस्तर वृत्तान्त पर अधिक प्रकाश पड़ेगा। त्रिकूट पर्वतके पश्चिम की ओर इस रेतीले समुद्रसे आरपार सिन्धु नदीके नील जलतक दृष्टि डालता हुआ या दृष्टिको फेकता हुआ यदि कोई दर्शक हैदराबादसे ओचतक इस नदीके संपूर्ण प्रवाह मार्गको दृष्टिगोचर करसके तो उसको इन रेतकी पहाड़ियोंके बीचमें उन स्थानोपर जहॉ कही पानी सुगमतासे मिल सकता है। छोटी २ वस्तियां बसीहुई दिखलायी पड़ेगी । इस समस्त प्रदेशमें जिसकी लम्बाई चारसौसे पांचसौ मील है और कोणगामी चौड़ाई एक सौ मील है तितर वितर झोपड़ेवाले छोटे २ गांव है। जिनमे मरुभूमिके गड़ रिये अपनी भेड़ोके झुण्डको चराते हुए या अन्नके लिये छोटे २ उर्वराभूमिके टुकड़ोंको जोतते हुए रहते है। उसको शयद ऊंटोकी एक लम्बी कतार देखपडेगी यह शब्द इस देशमे काफिला या काखानामसे अधिक प्रसिद्ध है । जो प्राय अनिश्चित रास्तेमे चिन्तासहित गमन करतेहुए दिखलाई पड़े और चारून हांकनेवाला हर एक मंजिल पर अपनी पगड़ीको शिरमे गांठ लगाता है । वह कदाचित् घोड़ो या ऊंटोपर सवार सेहरोस हमारे मरुभूमिके यासहाराके बद्दू-के झुंड या समूहको देखे, वह या तो कारवांके लूटनेके घातमे बैठा हो या ,तुर, या वाबके निकट शान्तिपूर्वक अपने भेड़ोके चारनेवाले राजूर या संगुलि याके गड़रियोके झुंडको हांकनेके कम भयानक काममे लगे हो । या निरन्तर हरित

—रास्ता इतनी तंग थी कि दो ऊंट साथ २ या लगे २ नहीं चल सकते थे; और यदि कोई ऊंट जरा भी नियमित रास्तेसे हटा कि वर्फके समान रेतमे धस जाता था"। काबुल राज्यका वर्णन भाग प्रथम।

(१) जिस पहाड़ी पर जैसलमेर स्थित है उसे त्रिकूट कहते हैं।

" झलके " झोपड़ेमे रखनेके लिये जो एक साथ ही अन्न भरने और धूपसे बचानेका डबल काम देते हैं। अन्न लूटते हो' उसको एक ऐसा गिरोह दिखलाई पडे जो नवीन चरागाहकी तलाशमें अपने भेड़ोंके झुंडको लेकर उस स्थानसे जिसको उसने रस चूस लिया है या अन्न उत्पन्न करनेके अयोग्यहोगया है चलपड़ा हो।

"यदि सौभाग्यवश दूसरे दिन उनको नवीन आहार या अनास्वादित झरना मिल जाय तौ वे अपने ग्रह या दिनदशा अच्छी समझे और उसको भोग विलासकी सामग्री ख्याल करेगे।"

या वे राबड़ी-यह भोजन उनके नूमिदी भाइयोंके हौंसकौस (honskou) भोजनके सदृश है- पकाते हुए देखे जायँ या अपने छोटे उर्वराभूमिके 'वाह' से प्यास बुझाते हुए दृष्टि पड़ेगे जिनको (भूमिकी) वे अपने अधिकारमे दृढ़तापूर्वक रखते है जबतक वह हरा भरा रहै या पशुओंके चरानेके योग्य बना रहै या जबतक कोई दूसरा ही प्रबल गिरोह आकर उनको अधिकार रहित न करदे।

हमको यहाँपर इस बातका विचार करनेके लिये ठहरना चाहिये या ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिये कि भारतके मरुभूमिके 'वाह, बावा या वह' में कहीं यूनानियोंके 'ओसिस'-'एलवह ,(Elwah)का अपभ्रंश-या एलोह(Flloah)जैसा कि बल जोनीने (लिबियन मरुभूमिके वृत्तान्तमें जब कि वह अम्मन (Ammin) का मन्दिर तलाश कर रहा था) लिखा है-का पता न लगजाय। असंख्य शब्दोंमेसे जो पानीके लिये इन शुष्कदेशोंमे व्यवहृत किये जाते है उदाहरणार्थ 'पार, रार तिरदे वाह बाबा, वह अनेक शब्द खासकर झरने या तालके लिये ही व्यवहारमे आते है। जब कि अन्तिम शब्द वाह यद्यपि प्रायः उसी अर्थमे इस्तेमाल किया जाता है तौ भी अधिकतर बहते हुए पानी या नदीके लिये वहाँके लोग बोलते है या कहते है "एलवह (Elwah) सर्वरूपसे पानीके लिये ही व्यवहृत होता है। 'दे' शब्द सामान्यरीतिसे तालके लिये इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु प्रायः बडी २ नदियाँ गरमींके ऋतुमे वह जानेपर महान् अचल राशि जलको छोड़ जाती है उसको हमेशा 'दे' कहकर पुकारते है। राजपूतानामे ऐसे ताल रखनेवाली अनेक नदियाँ है, इनमेसे एक तालका नाम 'हाथीदे, है जो इस बातको प्रकट करता है कि इसमे हाथी बुड़ाऊ तक पानी है। अब जलके लिये सामान्यरूपसे प्रचलित शब्द वाह मे 'दे' को जोड़नेसे 'वादी' बन जायगा, अरबके लोग बहतेहुए पानी या नदीको वादी शब्द इस्तेमाल करते है और साधारणतः आधुनिक यात्रियोंके द्वारा अफ्रीकामें रहने योग्य स्थानके लिये व्यवहृत किया जाता है यदि यूनानियोंने 'वादी' शब्द किसी हस्त लिखित प्रतिसे लिया तब तो स्थान विपपर्यका कारण सुगमतापूर्वक बतलाया जासकेगा 'वादी' उर्दूमे इस तरह लिखी जावेगी और एक नुक्ताके लगानेसे 'वाजा' आसानीसे 'ओसेस' मे

(१) जब मैं इस शब्दकी व्युत्पत्ति अनुमानसे लिख रहा था, मैं नहीं जानता था कि किसी दूसरेने भी इस शब्दपर कुछ लिखा था। मुझे पीछेसे मालूम पड़ा है कि स्वर्गवासी एम ले गिलसने अर्वी शब्दरागसे ओसिस यूनानियोंने इसको कई तरहसे लिखा है जैसेauasis, Iasis, huasis,-

रूपान्तर होसकेगी दुहरानेकी जोखिम उठालेने पर भी हमको यहांपर इस रेतके समुद्रको पृथकत्व प्रदान करनेवाले कुछ महान् चिह्नोंका वर्णन करना चाहिये और ' रो ' और थलका अन्तर जिनसे पाठकोको यात्रा वर्णन या वृत्तान्तमे बारंबार काम पड़ेगा वतलाकर हम तुरन्त ही मध्यमे कूद पड़ेगे ।

हम पूर्वमे ही किसी स्थानपर कगर नदीके लय या सूख जानेकी वंशपरम्परागत वार्ताका उल्लेख कर आये है जिसमें हमने यह कहा है कि उत्तरी मरुभूमिके तहसनहस होनेका एक भी कारण है । इस घटनाका वर्णनात्मक छंद या मिसरा मुझे याद नहीं आता, और न सोढ़ा नरेश हमीरका ही, जिनके राज्यकालमे यह चमत्कारिक घटना हुई है, कुछ वृत्तान्त मिलता है । इस प्राचीन वंशपरंपरागत कविताकी उपयोगिताकी तरफ मैने अनेक वार पाठकोका ध्यान आकर्षित किया है। और सौभाग्यकी बात है कि उसका एक नवीन उदाहरण पाठकोंको भेट करता हूॅ क्योकि भट्टीके इतिहासमे पारस्परिक वैवाहिक सम्बन्धी घटनाका जो उल्लेख किया गया है उसमे हमीरका नाम पाया जाता है। हमीरका समकालीन जैसलमेरका दूसौज था जो संवत्१०१० या सन्१०४४ ई. म राजसिहासन पर वैठा था,इस लिये जिन हमीरका ऊपर उल्लेख होचुका है उनका ठीक २ काल निर्णय करनेमे कुछ संशय नही है। कगर नदी–जो सेवल्कसे निकल कर हांसी हिसारमे वहती है–एक समय भटनेरकी दीवालोके नीचे बहती थी, और वहांके लोग अब भी उसके प्रवाहमार्गमे कुॅआ खोदते है । भटनेरके बाद कगर नदी रंगमहल बुल्लर, फूलरा, और खदलके समतल मैदानोमे होकर बहती हुई किसीके मतानुसार ओचके नीचे, परन्तु अबूबरकरके (जिसको मैने सन् १२०९ ई. मे नवीन स्थानोको खोजनेको भेजा था और उसने शाहगढ़के निकट नदीके सूखे प्रवाह मार्गके जिसको

—की व्युत्पत्ति वतलाई। डाक्टर वेट अत्यन्त रोचक व्युत्पत्तियोंकी सूचीमें (एशियाटिक जनरल मई सन्१८१३ देखो) (वाद्दे) से बतलाते है और वसि शब्द (वस्) धातु (रहना) से वना है । वसि Nasi और euasi करीब एकसी सादृश्यता रखते हैं। मेरे दोस्त सर डवलू ऊसलेने करीब २ वादी का वही अर्थ मुझे बतलाया जैसा कि रिचर्डसनके द्वारा प्रकाशित कानसनकी पुस्तकमे मिलता है–घाटी, मरुभूमि, नदाका प्रवाहमार्ग–नदी; wadey at-kahis वादी–अल–कबीर–बड़ीनदी विगड़कर ग्वाडसक्यूवरमें परिणत होगया है, यह उदाहरण डिहरबोहरमे दिया गया है (Seeadi Gehennem) और कामसनने भी, जो दिया है जो ज्सिने यूरोपकी समस्त भाषाओ में (अंग्रेजी शब्द पानाक लय) water वाटरका पता लगाया है–The sason wolter, the greek hudor the iskindsicudi, the Salvanic wod (इस लिये वोदर या ओदरके अर्थ नदी) इन सब उपरोक्त शब्दोकी व्युत्पत्ति वह नदी या संस्कृत वहसे होसकती है, और यदि डाक्टर डबल्यू यात्रा वर्णन या७९ Hinerary का ३४१ सफाको देखेगा तो उनको बड़ा ही आश्चर्य होगा कि (बस) bas शब्द उनकी व्युत्पत्तिको दृढ़ता प्रदान करता है–(बस) शब्द निवास करके योग्य स्थानके लिये व्यवहृत होता है। (वस्ती) शब्द जो प्राय: उस वर्णनमें आया है (वसना)से बना है, (वासी) रहनेवाला वस स्थान शायद वह शब्दस निकले हैं जो ओसिसके लिये अपरिहार्य है ।

सगर कहते है पार किया था) मतानुसार जैसलमेर और रोरोवेसरके दरमियानमे नाशको प्राप्त होती है । यदि यह बात सत्य प्रमाणित होजाय तो हम तुरन्त कह सकेगे कि कगर नदीने डूराकी एक शाखसे मिलकर सांगराको अपना नाम दिया–यानी सागरा नदी कगरमे मिलगयी और आगे चलकर कगर नामसे प्रसिद्ध हुई । छोटी छोटी नदियोंका यही हाल होता है–जो (सांगरा) लूनीसे मिलकर सिन्धु नदीके डेल्टाके नदीके मुखपर त्रिभुजाकार भूमिकी डेल्टा कहते है पूर्वीय शाखाको बढ़ाती है दूसरी ओर शायद सबसे बढ़कर वर्णन करने योग्य बात मरुभूमिमें लूनी या खारी नदी है जो अपनी अनेको सहायक नदियोके साथ अर्वली पर्वतके झीलो या झरनोसे निकलती है । मारवाड़में लूनी नदी उर्वराभूमि और मरुभूमिकी सीमा है–लूनी नदी मारवाड़के मरुभूमि और उर्वरा भूमिको विभक्त करती है–और जैसे ही इस देशको छोड़कर चौहानोके थलकी तरफ बढ़ती है यह चौहान समाजको विभाजित करती है और सीमाभ्थित भूगोल संबन्धी रेखा बनाती है,–और स्वयं इस थलकी भोगोलिक सीमा बनती है । पूर्वीय भाग शिव बाहका राज्य कहलाता है, और पश्चिमी हिस्सा पारकर हम आगे चलकर फिर चौहानोके देशका वर्णन करेगे जिसके दक्षिणकी तरफ मरुभूमिके अद्भुत २ चिह्न या आकार पाये जाते है । इस पुस्तकके आरम्भमे भौगोलिक वृत्तान्तके वर्णनमे ' रन ' या ' रिन ' के बारेमे किंचिन्मात्र चर्चा होचुकी है । यह विस्तीर्ण नमकका दलदल जो चौडाईमे डेढ़सौ मीलसे अधिक है, खासकर लूनी नदीके द्वारा निर्माण किया गया है । जो लोमन झील बनानेवाली लूनी नदीके सदृश आगेके निकास पर फिर अपना वही नाम धारण करती है, और नारायणका मन्दिर इसके मुखपर, जहां यह समुद्रसे संगम करती है, बना हुआ है और ब्रह्माका मन्दिर इसके उद्गमस्थान पुष्करमे है, इस कारण इसके दोनो ही उद्गम और संगम स्थान पवित्र चिह्नोसे विभूषित है । ' रन ' या ' रिन ' 'अरण्य' शब्दका अपभ्रंश है, और कीचड़से संतप्त मरुभूमिकी अपेक्षा गर्मीकी ऋतुमें इस संसारमे कोई भी वस्तु अधिकतर भयानक या निर्जन नही है, और इस अनोखे स्थानमे खर (गदहा) या जंगली गदहा निवास करते है जिसका एकान्त प्रेम श्रेष्ठ कवियोकी अमर कविताके द्वारा लोगोके दिलमे अबतक जीवित है । यह विस्तीर्ण नमककी कोठी आधुनिक कालकी रचित या रचना नही है, क्योंकि यूनानियोके, लेखोमे हमको इसका पता मिलता है जिनकी दृष्टिसे यह उस समय भी न बचसका और हमारे (अंग्रेजोके) ' रन ' या 'रिन' शब्दकी अपेक्षा यूनानियोका ' एरीनोस , मूलशब्द 'अरण्य' से अधिकतर घनिष्ठ सादृश्यता रखता है । यद्यपि विशेष करके यह दलदल नमकके लिये लूनीका ऋणी है, जिसका और उसकी सहायक नदियोंका प्रवाह मार्ग(bed) नमककी तहोसे परिपूर्ण है तौ भी सिन्धनदीके बाढ़से नमक इसमे प्रचुर परिमाणसे मिलता है, और अपने अथाह पानीके लिये शायद यह महान् नदी सिन्धुकी ऋणी होवे । सिन्धु और नाइल नदीकी घाटियोके बीचमे एक और भौतिक सादृश्यता है । जिसको नेपोलियनने एक बार ही प्रकृतिका साधारण

व्यापार कहा है। मेरा संकेत मौरिस झीलके जन्मकी तरफ है। यह काम मनुष्यकी शक्तिके वाहर है।

क्योंकि पाठकोंको थल और रो शब्दोंसे प्रायः सामना करना पड़ेगा इस लिये इनके अन्तरको जानना उनके लिये नितान्त आवश्यक है। थल शुद्ध और ऊसर मैदानको कहते हैं। और रो उस मरुभूमिके लिये व्यवहृत होता है जिसमे स्वाभाविक तृणादिक उत्पन्न होते हो; वास्तमे मरुभूमिका जंगल।

लूनीका थल-यह थल नदीके दोनो किनारों परके देशको सम्मिलित करता है जिसमे झालौर और उसके अधीन राज्य स्थित है। यद्यपि नदीके दक्षिण तरफका देश इनमे नही शामिल किया जा सकता है तो भी इसका इससे इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि हम अपने हाथमे आयाहुआ इसके वर्णन करनेका अवसर न खोवेंगे।

झालौर-यह प्रदेश मारवाड़के उत्तम भागोंमेसे एक भाग है। सुक्री और खारी नदिया जो झालौरको सोवाचीसे पृथक् करती है। अनेक छोटी २ नदियोंके सहित अर्वली और आवू पहाड़ोसे निकलकर इन प्रदेशोंमे होकर बहती हुई इनके तीनसौ साठ नगरो और गांवोंकी उपजाऊ शक्तिको बढ़ाती है। जिनसे मारवाड़को कुछ अंश राजस्वका मिलता है। झालौर उस भौगोलिक पदके अनुसार जो प्रायः उद्धृत किया गया है मरुके नौ दुर्गोंमेसे एक दुर्ग था। जब कि मरुस्थलीमे प्रमारवंशका आधिपत्य था। झालौर कब प्रमारोसे छीन गया था इस बातका पता लगानेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है। परन्तु यह बहुत दिनोतक चौहानोके अधिकारमे बना रहा। और जो प्रसिद्ध युद्ध चौहानोने अपनी राजधानीके रक्षार्थ अलाउद्दीनके साथ सन् १३०१ ई. मे किया था उसका वर्णन फरिस्ता और उनके भाटोके ग्रन्थोमे पाया जाता है। चौहान वंशकी यह शाखा मल्लिनी नामसे प्रसिद्ध थी। और यहाँ तथा हाड़ौतीके इतिहासमे इस का उल्लेख फिर किया जायगा। इसमे चौहान राज्यका वह हिस्सा शामिल था जो हथ राजके नामसे विख्यात था जिसकी राजधानी जूनाचोटन थी, और अजमेरसे परकर तक लूनीके किनारेके देशोंमे इस वंशका राज्य था, और जिससे यह माल्रूम पड़ेगा कि चौहानोने अपने अग्निकुलोत्पन्न प्रमार भाइयोका नाश करके खारी नदीके किनारे किनारे परकरतकका देश अपने अधीन कर लिया था।

---

(१) नीलनदीकी घाटीकी अधिकसे अधिक चौड़ाई चार योजन है और कमसे कम एक योजन (Lague) है वस सिन्धकी घाटीका तंगसे तंगभाग नील नदीके बड़ेसे बड़े भागके बराबर है। अकेले मिश्रमे ही अस्सी लाख जन संख्या कही जाती है; तब सिन्धमे कितनी होसकती है। किसानोकी हालत जैसा कि वानारिम लिखा है राजपूतानाके किसानोंके हालतके अनुरूप है, गांव किसी न किसीकी जागीर है जिनको राजाने प्रसन्नतापूर्वक उनको देदिया है; किसान अपने स्वामीको लगान अदा करते हैं और भूमिपर उनका अधिकार सदा चला जाता है। और संसारमे कैसी ही राज्यक्रान्ति या उलट पलट क्यो न हो परन्तु इनके हक या स्वत्वका बाल भी नहीं बाका होता है। यह स्वत्व अब भी है। यूसफने छीन लिया था परन्तु सिसोस्ट्रिसने उनको पुनः प्रदान करदिया है।

सोनगिर या स्वर्णगिरि इस दुर्गका अति प्राचीन नाम है और पुरानी पदवी 'मल्लिनी' का सोनिगुरीके निमित्त परित्याग करके, निज जातिके चिह्न स्वरूपमें या पृथक्त्व सूचनार्थ, चौहानोंने इस उपाधिको शिरोधार्य किया था। यहाँ उन्होंने अपने रक्षक देव मल्लिनाथ मालीके देवका मन्दिर बनवाया था, जो शिवजीके पुत्रोंके इस देशमे प्रवेश करनेतक अपने स्थान पर बने रहे, कि जब सोनगिरका नाम बदल कर झलन्दर नाथ रक्खा गया, जिनका मन्दिर दुर्गसे पश्चिमकी तरफ एक कोश पर है। यह बात अब तक निश्चित नही हुई है कि झलन्दरनाथ गंगाके प्रदेशोंमेसे लाये गये थे या झलन्दरनाथ और मल्लिनाथको लड़ाकू भलानिस छोड़ गये थे, परन्तु यदि यह सिकन्दरके शत्रुओंको शेष चिह्न प्रमाणित होजाय जिनको उसने तब मुलतानसे निकाल दिया था। क्योंकि उनके पड़ोसमें झलन्दरकी (जो बाबरके समयमे हिन्दुओंका प्रसिद्ध तीर्थ स्थान था) गुफाएँ होनेके कारण इस सम्भावनाको कुछ दृढ़ता प्राप्त होती है। अस्तु जो कुछ हो राठौरोंने, रोमन जेताओंके समान इन प्राचीन देवोंको अपने देवताओंमे सम्मिलित कर लिया। मल्लिनाथका चित्र मंडोरके पत्थर पर खुदी हुई मूर्तिको देखकर खींचा गया था। निर्वासित सोनिगुरोंके वंशज अब चित्तलवाना प्रदेशमे वास करते है जो लूनीके डेल्टाके निकट है।

भद्राजून मेहवो–जैसोल और सिन्द्रीकी बड़ी २ जागीरोंके अलावा, सेवाची भीनमल सांचोर मोरसेनके निकृष्ट और खालसा जिले झालौरके अन्तर्गत है। जिस प्रदेशकी भूमि उपजाऊ, पानी सतहके निकट, और लम्बाई, चौड़ाई नव्वे मील है, उसको एकमात्र सुराज्यकी आवश्यकता है जो इस प्रदेशको इसके समान आकारवाले दूसरे प्रदेशोंके बराबर उत्पादक बना सके, और जिसकी आमदनीसे जोधपुर नरेशका निजी खर्च भरपूर चल सकता है, परन्तु राजधानीकी अराजकता; प्रबन्धकर्ताओंकी बेईमानी, और मरुभूमिके सेहरोंस और आबू अरवलीके मीनाओंके लूटके कारण इसकी भयंकर अवनति हुई है। इस देशमें अनेक पहाड़ियां (इनमेसे एकपर दुर्ग बना है) पायी जाती है। परन्तु यद्यपि इनमेसे एक भी मेवाड़की ऊंची भूमिसे सलग्न नहीं होती है, तौ भी आबूतक इसके खंड पाये जाते है। सिर्फ एक बातमे यह मरुभूमिकी सादृश्यता रखता है अर्थात् उद्भिज पैदावारमे, क्योंकि झाई बबूल, करील, और थलके

---

(१) मुलतान और जूना चोटनके अर्थ चाहान तान के एक ही अर्थ है अर्थात् प्राचीन स्थान और दोनोंहीमें माली या मालिनी जातिकी थी जिनको लोग चौहानके वंशज बतलाते है; और यह आश्चर्यकी बात है कि झालौर (प्राचीन झलन्दरनाथ) में वेही देवता पाये जाते हैं जो पंजाबमें उनके रहनेके स्थानोंमे मिलते हैं यानी मल्लिनाथ, झलन्दरनाथ, और बालनाथ। अब्बुलफजल कहता है (वे. १०८ भाग दूसरा) "बालनाथकी गुफा सिन्ध–सागरके मध्यमें है;" पर बाबर "सिन्ध नदीके पूर्वमें पांच मंजिल जुदकी पहाड़ीके नीचे बालनाथ जोगीकी गुफा नियत करता है" और यह वही स्थान है जिस पर यदुवंशियोंका अधिकार था जब कि भारतके बाहर उनका नायक बलदेव या बलनाथ जो देवता समझ कर पूजे जाते हैं–उनको ले गया था।

दूसरे प्रकारकी झाड़ियो या छोटे २ वृक्षोंके सिवाय किसी किस्मकी लकड़ी इसमे नही पायी जाती है।

झालौरका उत्तम दुर्ग मारवाड़की दक्षिणी सीमाकी रक्षा करताहुआ उस श्रेणीके सिरे पर अपना मस्तक उन्नत कियेहुये खड़ा है जो उत्तरकी तरफ सिवानातक चली गयी है। यह तीनसौसे चारसौ फ़ीटतक ऊंचा है और बाल और बुर्ज जिनपर तोपे चढ़ी हुई है इसके अधिक सुदृढ बना रही है। इसमें चार फाटक है, शहरकी तरफ़वाला फाटक 'सूरजपोल' के नामसे प्रसिद्ध है, और वायव्य कोणका फाटक 'बालपोल' कहलाता है जहां जैनियोंके धर्म गुरु परसनाथका मन्दिर विद्यमान है। किलेके अन्दर बहुतसे कुएं और दो बड़ी २ बावड़िया है, और उत्तरकी तरफ पहाड़ी नदियोको बांधकर छोटीसी झील बनायी गयी है, परन्तु छै महीनेसे अधिक कभी भी इसका पानी नही चलता है। नगर जिसमे तीन हजार और सत्रह मकान है किलेके उत्तर और पूर्वकी तरफ बसता है, और सुकरी नदी करीब एक मील इससे पूर्वमे बहती है। इस नगरके चारो तरफ दीवाल खिंची हुई है और एक दुर्ग है जिसपर इसके रक्षाके लिये तोपे चढ़ी हुई है, और नगरमे भिन्न २ जातियोके मनुष्य निवास करते है, परन्तु यह आश्चर्यकी बात है कि इस रंग बिरंगी आबादीमे सिर्फ राजपूतोके पांचही वंश या घर पायेजाते है निम्नलिखित मनुष्य गणना सन् १८१३ ई० में मेरी एक मंडलीके द्वाराकी गई थी।

नाम जाति.	मकानोकी संख्या.
माली	१४०
तेली या धाची	१००
कुम्हार	६०
ठठेरा	३०
धोबी	२०
सौदागर	११५६
मुसलमान	९३६
खटिक	२०
नाई	१६
कुलाल	२०
जुलाहे	१००
रेशमके जुलाहे	१५
जैन पुरोहित	२
ब्राह्मण	१००
गूजर	४०
राजपूत	५
भोजक	२०

मीना	६०
भील	१५
मिठाईवाले या हलवाई	८
लुहार और बढ़ई	१४
मनिहार	४

इस मनुष्य गणनाकी सत्यता प्रमाणित हो चुकी थी लूनी और सुकरीके बीचका देश सेवांची कहलाता है और जिस पर्वतश्रेणी पर झालौर स्थित है उसी श्रेणीके एक शिखरपर सिवाना नामका एक दुर्ग बना हुआ है जो इस प्रदेशकी राजधानी है। इस देश-का विशेष रूपसे वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसकी प्राकृतिकदशा वैसी ही है जैसी कि अभी वर्णित होचुकी है। प्राचीन कालमें यह नागौरके सहित मार-वाड़के युवराजकी जागीर थी; परन्तु धौकलसिंहको गद्दी देनेके बाद राज्यमे शामिल करली गयी है। वास्तवमे मारुका कोई भी उत्तराधिकारी नही है फरिस्ता अलाउद्दीनके प्रतिकूल सिवानाके वचावका वर्णन अपनी पुस्तकमे करती है।

माचोल और मोरसेन दो राजा लूनीके अन्दर झालौरके आश्रित है मीनाओंकी लूट और उपद्रवसे बचानेके लिये माचोलकी आग्नेय सीमापर एक दुर्ग स्थित है। मोर-सेन झालौरके पश्चिमी शिरेपर है और इसमे एक दुर्ग और पांचसौ घरोका नगर है।

भीनमल और सांचोर दक्षिणकी तरफ दो प्रसिद्ध उपभाग है। दोनो मिलकर करीब शेष सूबेके समान आकारमे हैं। प्रत्येक उपभागमें आठ गॉव है। कच्छ और गुजरातको जानेवाले राजमार्ग पर ये नगर होनेके सबबसे अति प्राचीन कालसे व्यापा-रके लिये प्रसिद्धहै। भीनमलमे पन्द्रहसौ घर कहे जाते है और सांचोरमे करीब आधे के बड़े २ धनी महाजन यहां रहा करते थे। परन्तु भीतर बाहर दोनों ओरसे अरक्षित रहनेके कारण या भीतरी और बाहरी अशान्तिसे इन शहरोको बहुत कुछ धक्का लगा है। जिनमेसे पहिला अपने बाजारके धनके कारण "माल" नामसे प्रसिद्ध है।

वहां बाराहका मन्दिर है (शूकरावतार) जिसमे शूकरकी मूर्ति पत्थरमे खोदकर बनाई गयी है। सांचोर दूसरी ही वातके लिये प्रसिद्ध है, क्योंकि यह सांचोरा नामक ब्राह्मणोंका जन्मस्थान है। जो इन देशोके अत्यन्त प्रसिद्ध मन्दिरोंके पुरोहित नियत किये जाते है। उदाहरणार्थ, द्वारका, मथुरा, पुष्कर इत्यादि सांचोर सतीपुराका अपभ्रंश है और वहुत प्राचीन बतलाया जाता है।

भद्राजून–संक्षिप्त वर्णन झालौरकी प्रसिद्ध जागीर तथा उसके अधीन राज्यका आवश्यकीय है। भद्राजून पांचसौ घरोका शहर (तीन चतुर्थांश मीनाओके है) पहा-ड़ियोके झुंडके वीचमे वसता है और इसमे एक किला भी है। सरदार जोधाजातिका है, उसकी जागीर झालौरकी गोड़वारमे पालीसे मिलती है यानी उसकी जागीर झालौ-रसे पालीतक चलीगयी है।

मेहवा–लूनीके दोनों किनारोंपर प्रसिद्ध प्रदेश है और पहिलेपीहल राठौरोंने जिन देशोंपर अधिकार प्राप्त किया था उनमेंसे एक है। वास्तवमे यह सेवाचीमें है जिसको वह आवश्यकता पड़नेपर कर दियाकरता है। सेवाक अलावा मेहवाके सरदारको रावल की पदवी है और वह प्राय: जेसोल नगरमे रहा करता है। सूरतसिह वर्तमान नरेश है। इनका समधी सूरजमल भी रावल पदवीसे विभूषित है और जैसोलसे बाइस मील दक्षिणमे लूनीके किनारे पर सिद्रीका किला और जागीर उसके अधिकारमे है। इनमे आपसमे कलह चला आता है, वे बराबरीके हकका दावा करते है और इसका परिणाम यह है कि दोनोंमेसे कोई भी राज्यकी राजधानी मेहवामें नहीं रहसकता है दोनो ही डाकूके कर्मको अप्रतिष्ठा जनक नहीं समझते थे जब कि यह वृत्तान्त सन् १८१३ ई. मे लिखा गया था। परन्तु आशा की जाती है कि उन्होने इस कार्यके खतरेका (यदि गलती या चूकको नही) जान लिया है तो खारी नदीके किनारेके उपजाऊ प्रदेशोंकी जोतेंगे जिनमे प्रचुर परिमाणमें गेहूँ ज्वार और बाजरा पैदा होता है। भलोत्रा तिलवारा इस देशके भूगोलमे दो प्रसिद्ध नाम है और इनमे एक वार्षिक मेला लगता है जो राजपूतानामे उतना ही प्रसिद्ध है जितना कि जरमनीमे लेपसिकका मेला है। यद्यपि यह मेला भलोत्राके नामसे प्रसिद्ध है तौभी यह मेला कई मील दक्षिण लूनीके एक टापूके निकट भी नगरा और उसके राजाओको 'सम्बा' मे परिणत कर दिया। इस वर्णनसे मालूम पड़ता ह कि सोढ़ाओने अरोर बेखरके या सिन्धके ऊपरीभागमे शासन किया और सम्माओने नीचेवाले भागमे जब कि सिकन्दर इन देशोंमे होकर गया था। झारियोंमें और सौराष्ट्रमे नौ नगरके जामोंने सुम्माओसे उत्पन्न होनेका स्वत्व पेश किया है, और इसी कारण कहींपर अबुलफजल 'सिध–सुम्मावंशका' लिखता है, परन्तु मुसलमानोसे मिलजानेके कारण और हिन्दुओंके द्वारा धर्मबहिष्कृत होनेपर उन्होंने सम्मा–यदुकुलमे उत्पन्न होनेके बातको छिपानेकी इच्छा की और जमशेदके वंशज अपनेको कहते हुए उन्होने सम्मा उपाधिको त्यागकर जामकी पदवी धारण की। हम इस बातको यहां मानलेते है कि सोढ़ा जातिके नरेश महान् और राज्यके उस भागपर अधिकार किये हुए थे, जिसकी राजधानी अरोर या बेखरका द्वीप था जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था, यह सम्भव है कि वह सेना–जिसको अबुलफजल ईरानी लिखता है–जिसने अरोर पर हमला किया, और सेहरीके राजाको मारडाला, अपोलोडोटस था मीननदेरके अधीनतामे यूनानी और बकाटिरियाकी सेना थी; जिसने (Appithdttu) सेहरोस नरेशसे प्रतिपालित देशसे लेकर सोरो या सौराष्ट्र देशतक यात्रा की जहां कि यूनानी

---

(१) प्राचीन हिन्दू इतिहासमें लिखा है कि अग्निकुलके चारवंशोंने यदुवंशको सर्वत्रसे बाहर निकाल दिया है। दो उत्तम मुसलमान इतिहासज्ञोंके लेखोंमें इनके आपसके कलह होनेका प्रमाण मिलता है, जिन्होने प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकोंको देखकर जिनमेंसे कुछ हमको प्राप्त हुई हैं, वे लेख लिखे थे। यह स्मरण रखना चाहिये कि सोढा, ओमुर सुमुरा प्रमर वंशके थे (ग्रामीण पतार) जब कि सुम्मा यदुवंशोत्पन्न थे। इनकी उत्पत्तिके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

इतिहासलेखकके अनुसार जब कि उसने दूसरी शताब्दीमें लिखा था । उनकी कीर्ति मुद्राये (Medal) वर्तमान थी । विस्तारपूर्वक उपरोक्त वर्णित इतिहास हमको सच्चा और संशयातीत प्रमाण देता है कि दहीर और उसका पुत्र रायसा, जो कासिमके अधीनतामे पहिले मुसलमानी सेनाके शिकार बने थे, उसी वंशमे उत्पन्न हुए थे जिस वंशकी शोभाको राजा सेहरोसने बढ़ाया था, और भट्टी इतिहास इस सत्यताको प्रमाणित करता है कि इस समय–रेगिस्तानमे उनके बसनेके समय–सोढा जाति अधीश्वर थी और स्थानो और नामोमे घनिष्ठ सादृश्यता होनेके कारण जो परिणाम हमने निकाला है उसमे सन्देह करनेको स्थान नही है कि पौरवंशकी सोढा जाति उस समय उत्तरी सिन्धमे शासन कररही थी जब कि सिकन्दर, नदीमुखेनेवे समुद्रमाविसत्, और भाग्य चक्रके उलटपुलट होतेहुए भी वह अबतक अधिकारके लिये अपने प्राचीन यदुवंशी सम्मासे लड़ते हुए अपने प्राचीन राज्यके कुछ भागपर अपना अधिकार कायम रखसकी है । हम पाठकोको इस भागका कुछ हाल बतलावेगे और जिस अलौकिक सलग्नशोलता या दृढ़ताके प्रतापसे ये लोग विदेशी शत्रुओको–चाहे यूनानी, मुसलमान या बैक्टरियाके क्योन हों–तुच्छ समझते हुए और प्राकृतिक दु.खोको–अकाले महामारी, भूकंप इत्यादिके दुःखोको–सहते हुए दो हजार दोसौ वरषतक जीवित रह सक्ते है । जिन्होने इस देशपर समय २ पर प्रचंड प्रलय मचा दिया है और आखिरकार इस देशको उजाड़ दिया है,उसकी हम अत्यन्त प्रशंसा किये बिना न रहेगे । क्योकि लोग परंपरासे कथन करते आते है कि मिश्र देशके रेगिस्तानके सदृश यह रेगिस्तान सिन्ध और यमुना नदियोकी घाटीकी तरफ विस्तारमे उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है

---

(१) बड़े ही सौभाग्यसे इन मुद्राओमेंसे एक सिक्का मेननदेर और तीन अपोलोडोटस इस ग्रन्थ कर्त्ताके हाथ लगे । जिनके कि अस्तित्वमे इसके पूर्व सन्देह था । अपोलोडोटसके तीन मुद्राओंमेंसे एक सुरपुरीके खंडहरमें जो मेनू और ऐरियनके सूरसेनीकी राजधानी थी, मिला; दूसरा सिक्का प्राचीन अवन्ती या उज्जैनमें मिला जिसका सम्राट् जस्टिनके कथनानुसार अगस्टसके पत्र-व्यवहार रखता था; और तीसरा आगराके निकट हिन्दू सिथिया और बेकटियांके सिक्कोंसे भरा हुआ घडेके साथ मिला, जो (बड़ा) एक अधिकतर प्राचीन नगरके स्थानको खोदते हुये कई बरस हुए निकाला गया था । यह संभव है जैसा कि पूर्वमें लिखचुका हूं कि यह स्थान अग्र ग्रामेश्वरकी राजधानी हो जो ऐरियनके कथनानुसार उत्तरी भारतका सबसे बढ़कर शक्तिशाली सम्राट् था, और पोरस या पुरुके मृत्युके अनन्तर सिकन्दरके आगे बढ़नेको रोकनेके लिये तैयार था । हमको आशा करना चाहिये कि पजाबके इतिहासमें कुछ भूतकालकी बातोंका दर्शन होजाय या पता लगजाय । इन मुद्राओंके वर्णनके लिये रायल एसियाटिक सोसायटीकी पुस्तके देखो भाग प्रथम पे. २१३.

(२) कप्तान पाटिजर (जो अब कर्नल है) ने " मुजमूद गारिदाल " नामक फारसी पुस्तकसे जो वाक्य अपनी पुस्तकमें उद्धृत किया है, जो पुस्तक उन्होंने सिन्ध और बिलोचिस्तानके वर्णनमें लिखी है, उसमें वह प्राचीन सिन्धकी राजधानी ' उलौर ' लिखता है और " सहीर " वंशके नाश होनेका भी उल्लेख करता है, जिनके पुरखे दो सहस्र बरस तक सिन्धमें राज्य करते रहे ।

अमरकोट-यह ओमुरोंका किला, कुछ वर्ष पहिले सोडा राजकी राजधानी थी और यह राज दो शताब्दी व्यतीत हुई सिन्धकी घाटीमें और लूनीके पूर्वमें फैला हुआ था, परन्तु मारवाड़के राठौरोने और सिन्धके वर्त्तमान राजवंशने मिलकर सोडाओंके महान् राज्यको इतना कम किया कि सोडाओके हाथसे केवल एकमात्र नियमित भूमि रहगयी, और सेहरीसके वंशजोको अमरकोटसे (मारुके नवदुर्गोंमेंसे अन्तिम दुर्ग) निकाल बाहर किया जो अरोर राजधानीसे कश्मीरसे समुद्रपर्यन्त विस्तीर्ण राज्यपर शासन करते थे । दुःखके साथ लिखना पड़ता है कि अमरकोट अपने प्राचीन महत्त्वको खो बैठा, और सोडा नरेशोके वैभवकालमे पांच हजार मकानोंके बजाय अब अमरकोटमे सिर्फ दोसौ पचास मकान है जिनको झोपड़ा कहना अधिक सयुक्तिक होगा । प्राचीन दुर्ग नगरके वायव्यकोणमे है । यह ईटका बना हुआ है और बुर्ज जो संख्यामे अठारह है पत्थरके निर्माण किये गये है । नगरके भीतर एक किला या सुदृढ और सुरक्षित महल बना हुआ है । दुर्गसे उत्तरकी तरफ पुरानी नहर है जिसमें पानीसालके कुछ महीनोतक बना रहता है । जब राजामानने अमरकोटको जीता तब उसने समाचार लेने देनेके लिये कई गांव वहॉपर बसाये । जबतक तालपुरियोंको किसी प्रकारका भय या खटका अपने कन्दहारके सम्राट्से बना रहा तबतक उन्होने राठौर राजाको प्रसन्न रखना अपने लिये हितकारी समझा, परन्तु मारवाड़के सदृश जब कन्दहारमे आपसमे ही युद्ध ठन गया तब एकसे भय न रहनेके कारण दूसरेको प्रसन्न रखनेकी इच्छाको अर्द्धचन्द्र मिला, और अभाग्य वश अमरकोट सिन्धके कुलारो और राठौरोके राज्यके बीचमे पड़ गया और प्रत्येक इस सीमास्थित स्थानको अपने राज्यकी उचित सीमा समझकर उसका अधिकार प्राप्त करनेके लिये लड़ने लगा । हम इन प्रतिद्वंदियोंके आपसमे कलहका वर्णन करेंगे जिसने अन्तमें सोडानरेशका सत्यानाश किया, जिससे चाहे कुछ सिद्धहो वर्त्तमान राजवंशका इतिहास-जिससे हम पूर्णतया परिचित नहीं है जाननेमे सहायता मिले ।

जब विजयसिंह मारवाड़का शासन करता था, सिन्ध राज्यकी बागडोर मोहनूर महमूद कुलोरके हाथमे थी । परन्तु कन्दहारी सेनासे निकाले जाने पर वह जैसलमेरको भाग गया जहां कि वह इस असार ससारके झगडोसे सदाके लिये छूट गया । ज्येष्ठ पुत्र उन्तरखां अपने भ्राताओसहित बहादुरखां कैरानीकी शरणमे प्राप्त हुआ, जब कि वेश्या पुत्र गुलामशाह हैदराबादकी मसनद पर बैठनेमे कृतकार्य हुआ । दाऊदपुत्रके राजाने उन्तरखांका पक्ष लिया और राज्यापहारोको निकालनेके लिये तैयारी करने लगा । बहादुरखां, सबजुलखां, अलीमुराद महमूदखां कायमखां, अलीखाने-कैरानी सरदारोंने उन्तरखांके साथ हैदराबाद पर चढाई की, गुलामशाह इन लोगोसे युद्धके लिये निकला और "ओवरा" स्थान पर भाइयोमे घनघोर युद्ध हुआ जिसमे उन्तरखां पराजित हुआ करीब २ समस्त कैरानो सरदार इस लड़ाईमे काम आये और उन्तरखां गुलामशाहके हाथ पड़ा जिसने उसको हैदराबादसे सात कोश दक्षिणमे गुजके कोटमे-सिन्धनदीमे एकद्वीप है-जीवनभरके लिये कैद किया । गुलामशाहने "मसनद" अपने पुत्र सरफराज को दे डाली, जिसकी मृत्युके बाद अब्दुलनबी तख्त पर बैठा । शिवदादपुरसे सातकोश

अभयपुर नगरमे तालपुरी जाति (बलोचकी शाखा है) का सरदार रहता था, जिसका नाम गोरम था और उसके विजूर और सुबदान नामक दो पुत्र थे।

सरफराजने गोरमकी लड़कीका पाणिग्रहण करना चाहा, परन्तु इस प्रस्तावके अस्वीकृत होने पर सरफराजने गोरम वंशका समूल नाश कर दिया, केवल एकमात्र विजूरखॉ बच रहा जिसने अपनी जातिको बदला लेनेके लिये उकसाया और अत्याचारीको उतारकर स्वयं हैदरावादकी गद्दीपर विराजमान हुआ। कुलोर लोग इधर उधर भाग गये, परन्तु विजूर जिसका स्वभाव उग्र और क्रोधी था अमरकोटके अधिकारके बारेमे राठौरो से लड़ पड़ा लोग कहते है कि केवल उसने मारवाड़से करलेना न चाहा परन्तु राठौर नरेशकी कन्यासे विवाह करना चाहा और इस बातके समर्थनमे यह नजीर पेश की कि विजयके पितामह अजीतने फेरोशरको अपनी कन्या दी थी। इस उपमर्दकारक बातसे जलकर राठौरोने धरणीधरसे पांच कोश पर उगरानामक स्थान पर विजूरके प्रतिकूल तलवार उठाई आर इस युद्धमे बलोचसेना राठौरोके द्वारा पूर्णरूपसे पराजित हुई, परन्तु विजयसिहने इस विजयसे संतुष्ट न होकर अपने दिलमे चुभनेवाले कांटोको उखाड़ डालनेको पक्का निश्चय करलिया। भट्टी और चन्द्रावतने सहायता देना स्वीकार किया, और उनके वंशजोकी जागीरे मिलजाने पर वे दूतके भेषमे इस खतरनाक कार्यको पूर्ण करनेके लिये चलदिये। जब वे विजूरके सामने पेश किये गये उसने अभिमानपूर्वक पूछा कि राजाने उसकी बातका ध्यानपूर्वक विचार किया तब चन्द्रावतने विजयसिंहका पत्र उसके हाथमे देदिया जैसे ही विजूरने शीघ्रतापूर्वक अपनी दृष्टि उसपर दौड़ाई और ' डोलाका उल्लेख नही है ' यह शब्दके निकलनेकी देर थी कि चन्द्रावतका कटार उसकी छातीमें प्रवेश कर गया। ' यह डोलाके एवजमें ' उसने कहा और यह करके एवजमे उसके दूसरे साथीने दूसरा प्रहार करते समय कहा।

बिजूर गतप्राण होकर गद्दीपर गिर पड़ा और हत्यारे जो भागना असम्भव जानते थे चारो तरफ घूम कर कटार चलाने लगे, उनके शरीरके टुकड़े २ होनेके पहिले चन्द्रावतने पचीस और भट्टीने पांच मनुष्योको मार गिराया। बिजूरका भतीजा और सोबदानका पुत्र फतेहअली गद्दीके लिये चुनागया और कुलोरका प्राचीनवंश भुज और राजपूतानेमे भागगया। जब कि उनका प्रतिनिधि कन्दहारको चला गया। शाहने उसको पचीस हजार सेनाका अधिपति बनाया, जिसकी मददसे उसने फिर सिन्ध देशको विजय किया और ऐसे २ निर्दयताके काम किये जिनका उल्लेख इतिहासमे नही है। फतेहअली जो भुजको भाग गया था, उसने अपने साथियोको फिर एकत्र करके शाहकी फौजपर आक्रमण किया, जिसको उसने हराकर शिकारपुरके उस तरफ तक कनल करतहुए उसका पीछा किया। और वह शिकारपुरको अधिकारमे कर विजय शंख बजाता हुआ हैदराबादको लौट आया। निर्दयी और पराजित कुलोरा फिर एक बार शाहके सम्मुख गया। परन्तु शाहने अपनी फौजकी अत्यन्त अपमानकारक हारपर क्रोधित होकर उसको अपने सम्मुखसे भगा

दिया, और इधर उधर घूमनेके वाद वह मुल्तानसे जैसलमेर होताहुआ अन्तमें पोकरनेमें निवास करने लगा जहाँ कि उसको इस नश्वर शरीरसे सम्वन्ध त्यागना पड़ा। पोकरननरेशने अपनेको उसका उत्तराधिकारी वनाया और सिन्धके निर्वासित राजाके असंख्य धन भंडारको पाकर पोकरननरेश मारवाड़मे अगुआ वननेको समर्थ हुए निती सिट राजाकी स्वरई नगरके उत्तरकी तरफ वनी हुई है।

यह कथा जो वास्तवमें मारवाड़ या सिन्धके इतिहाससे सम्वन्ध रखती ह सोडा नरेशोके भाग्यपर सिन्धवालोका क्या प्रभाव पडा सिर्फ इस वातको दिखलानेके अभिप्रायसे यहाँपर इसका उल्लेख किया गया है। विजूरने, जो विजयसिंहके दूतोके हाथसे मारा गया था सोड़ा नरेशको अमरकोटसे निकाल दिया था, और अमरकोटका अधिकार मिलनेपर सिन्धवालोंको तुरन्त ही भट्टियों और राठौरोंसे लड़नेको विवश होना पड़ा। विजूरके मारजाने पर और सिन्धीसेनाके हार खानेपर अमरकोटकी गद्दी पर सोडानरेशको फिर विजयसिंहने वैठाया। परन्तु वह वहुत दिनोंतक अमरकोटको अपने अधिकारमे न रखसका क्योकि कन्दहारी सेनाके आक्रमण करनेपर इस दरिद्र देशके निवासियोंको अफगानोने कतल किया और लूटा और अमरकोट पर हमला करके उसको छीन लिया। जव फतेहअली कन्दहारी सेनाके सम्मुख हुआ और राठौरोकी मददसे उसको पराजित करनेमे समर्थ होनेपर उसने इस मददके वदलेमें अमरकोट राठोरोके अधिकारमे देदिया जिसकी दीवालपर राठौरोका झडा फहराता रहा जव तक कि सिन्धवालोने आपसकी लड़ाईसे फायदा उठाकर उनको नहीं भगा दिया। यदि राजा मान अपने सरदारोकी शुभेच्छासे लाभ उठाना जानते होते तो इस दूरस्थित स्थानको लेनेके लिये और कुछ असंतुष्ट मनुष्योसे पिंड छुड़ानेके लिये उन उपायोको काममे न लाना पड़ता जिनके कारण उनके नामपर कलंकका धव्वा लग गया है।

---

(१) नगरके उत्तरकी तरफ फतेहअलीके वाद उसका भाई वर्तमान नरेश गुलामअली मसनद पर वैठा और फिर उसके पुत्र कुरेमअलीने मसनदको रौनक वख़शी! डा. वर्नकी "सिन्ध दरवारके प्रतिगमन करनेका वृत्तान्त" नामक पुस्तकके द्वारा इस वर्णनकी सत्यता प्रमाणित होती है। यह पुस्तक वडी ही रोचक और उत्तम है और इस नोट या 'टिप्पणीके लिखनेके ऐन वक्तपर यह पुस्तक मेरे हाथ लगी है। वीजूरखां, सिन्धके कलोरा शासकोका मंत्री था और जिसकी क्रूरताके कारण आखिरकार सिन्धका राज्य मंत्रीके कुहमके हाथ लगा या कुटुम्बमे चला गया। इस वातका मुश्किलसे विश्वास होसकता है कि राजा विजयसिंह गुप्त हत्यारोंको कलोराके लिये मुहैया करे जो इनको वड़ी ही सुगमतासे सिन्धमे पा सकता था, तौभी जिस अपमान कारक वापके मुँहसे निकालने पर विजूरको प्राणसे हाथ धोना पड़े वह संभव है कि उसके मालिकसे कही गयी हो यद्यपि वह उसको इसके लिये कुछ प्रायश्चित न करना पड़ा। यह वड़े दु खकी वात है कि डा. वर्न अमीरके साथ रुहतन (जिसका वृत्तान्त मुझको वीस वरस पहिले मिल चुका था) तक नहीं गया। डा वर्नके भाई लफटेट वर्नने वड़ी ही योग्यता पूर्वक "रिन" (खारी झील) का वृत्तान्त और नक्शा चित्रित किया है जिसने भारतके इस सुन्दर और महत्व पूर्ण भागके भूगोल और इतिहास-

द्वितीय अध्याय २.



चौहानराज–चौहानराज राजपूतानेके सुदूर कोनेमे स्थित है और प्रथम वारही इसके अस्तित्वका उल्लेख किया गया है। क्योंकि महत्त्व और सुन्दरताका नाम किसी दूसरे ही चीजको माप (Standard) मानकर किया जाता है इसीलिये इस दृष्टिसे विचार करनेपर चौहानराज रेगिस्तानके छोटे २ राज्योंके मुकाविलेमे साम्राज्य प्रतीत होगा। चौहानराजके उत्तर और पूर्वमे मारवाड़ राज्यकी भूमि है जिसका वर्णन हम अभी करचुके है। इसके आग्नेय कोणमे कोलीवारा (Koliwaria) है, दक्षिणमे 'रिन' या 'नमककी झील' है और धात (Dhat) का रेगिस्तान पश्चिमी सीमा पर है। चौहान राज्य दो प्रसिद्ध राज्योमे विभक्त है, पूर्वीयराज्य 'वीरवाह' (ViBah) नामसे विख्यात है और पश्चिमी राज्य लूनीके पार होनेके कारण 'परकर'(parkur) नाम धारण किये हुए है। और दोनो ही नगर (Nuggur) और राजधानी पृथक्त्व सूचना करनेके लिये सरनगर (Sii-Nuggar) के नामसे परिचित है–परकरकी पदवीसे विभूषित है। यह प्रसिद्ध रेनल Rennel का नगर–परकर Negar Parkir है जिसको साहसी और उद्योगी विटिङ्गटन Whiteington नामक अंग्रेजने उस समय देखा था। जब कि इन देशोंसे हमारे सम्बन्धका सूत्रपात ही हुआ था। इस रेगिस्तानके चौहानोको अपने राज्यके प्राचीनपनका तथा उच्चकुलमें जन्म लेनेका गर्व है। पिछली बातको प्रमाणित करनेके लिये मानिकराव अजमेरके वीसलदेव और दिल्लीके अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराज पृथ्वीराजको अपना पूर्वपुरुष वतलाते है, परन्तु पहिले नामोंको कल्पना और भट्ट कवियोंके कविताके हवाले कर हम निर्भयतापूर्वक कहनेका साहस करते है कि वे सोडा Sodas और प्रमारजातिके दूसरी शाखाओसे पीछे हुए थे, जो इस देशमे जब कि

–पर नया ही प्रकाश डाला है। मेरी यह इच्छा है कि इस अपरिचित और अप्रसिद्ध प्रदेशको अनुसन्धान करनेका भार एक ऐसे पुरुषको सौंपा जाय जो सव तरहसे इस कामको करनेके लिये सुयोग्य हो। इस मरुभूमिमे जैसलमेरसे ओचतक यात्रा करनेकी इच्छा वहुत दिनोंतक मेरे मनमे वनी रही, और फिर आजसे जलमानसे मनसुराको जाते हुए रास्तेसे अरोर, सेहवान, सम्मा नगरी और वामुनवासीको देखू। सन् १८२० मे सिन्धसे युद्ध छिडनेकी आशङ्कासे मेरे मनोरथके सफल होनेके लक्षण दिखाई पड़ने लगे, और मैने मरुभूमिमे होकर सेना लेजानेके मार्गका नक्शा खींचकर लाट हेस्टिंगके पास भेज दिया था, परन्तु उस समय उनको शान्ति रखना ही अभीष्ट था। अपर सिन्धके गवर्नर मीर सोहरावसे भी मेरा उस समय पत्र व्यवहार चल रहा था और इसमे सन्देह नहीं है कि वह मेरे विचारोंसे सहमत होजाता।

(१) परके अर्थ 'पार' है और करयासरलूनी या खारी नदीका समानार्थक है। लूनीके अलावा राजपूतानेमे हमने अनेक खारी नदियां देखी है। समुद्र (लूनापानी) या (खारापानी) के नामसे प्रसिद्ध है परन्तु यह नाम अव (कालापनी) में रूपान्तरित होगया है जो किसी तरहसे निरर्थक नहीं है।

सिकन्दरने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गमन किया था। शासन कररहे थे। यह है कि माली या मालिनीने, जिनको सिकन्दरने पंजावके कोनेसे निकाल दिया था सोड़ाओसे खेरकी भूमि छीनली हो। अस्तु इतना निस्सन्देह ठीक है, कि आठवी शताब्दीसे लेकर तेरहवीं शताब्दी तक चौहानराज अजमेरसे सिन्धकी सीमातक फैला हुआ था। जिसकी राजधानियां, अजमेर, नादौल, झालौर, सिरोही, और जुना चोटन थी। और यद्यपि प्रत्येकका इतिहास इनको स्वाधीन वतलाता है तौ भी वे किसी न किसी प्रकारकी अजमेरकी अधीनता स्वीकार किये हुए थी। इस वातको प्रमाणित करनेके लिये हमारे पास ऐतिहासिक लेख मौजूद है। गजनीके जगद्विजयी महमूदके समयसे अलाउद्दीन द्वितीय सिकन्दरके समयतक इनमेसे प्रत्येक मुसलमानी इतिहासमे प्रसिद्ध रहचुकी थीं। अपने वारहवे हमलेमे मुलतानसे अजमेरको जाता हुआ (फरिश्ता कहता है कि जिसका किला महमूद शत्रुओके हाथमे छोड़नेको विवश हुआ था) महमूद नादौलके पाससे गुजरा और उसको लूटा, और रेगिस्तानके निवासी महमूदके जुना–चोटनमें आगमनको, वंशपरंपरानुगत कथाके द्वारा जीवित रखसके है और वे उन सुरंगोंको बताते है जिनके द्वारा वहांका पहाडी किला उड़ायागया था। इस वातको जाननेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है कि यह घटना उसके आगमन और नहरवल्लके नाशके बाद हुई थी या जव कि वह यात्रा कररहा था परन्तु जव हम इस वातका स्मरण करते है कि अपनी अन्तिम चढ़ाईमे उसने सिन्धमे होकर लौटनेका प्रयत्न किया था, और इस रेगिस्तानमे अपनी सम्पूर्ण सेनासहित वह नाश होनेके निकट ही था कि तव हमको इस वातको ख्याल करनेकी जगह मिलजाती है कि उसके जुनाचोटनके नाश करनेके दृढ़ निश्चयने उसको इस खतरेमे डालदिया था। क्योकि 'काफिरो' को नाश करने या उनको मुसलमान वनानेके सर्वव्यापक उद्देशके अलावा संभव है कि नहरवल्लके निर्वासित राजे खेरधरके रेतके पहाडियोके वीचमे वसनेवाले चौहानोके शरणमे प्राप्त हुये हो और इस तरहसे उसके हाथमे पड़े हो। यद्यपि नाममात्रको एक राज्य है तौ भी 'परकर' नरेश वीरवाहकी वड़ी गद्दीकी किसी प्रकारकी अधीनता नही करता है। दोनों ही रानाकी प्राचीन हिन्दू पदवीसे विभूपित है और लोग कहा करते है कि वीरत्व इनका पुस्तैनी गुण है–यानी इनके घरानेमे सदासे वीरपुरुष उत्पन्न होते चले आये है–क्योकि वीरता और चौहान समानार्थक शब्द है। इस राजके थलकी वर्गमीलमे लम्बाई चौड़ाई या आवादी जो निरन्तर घटा वढा करती है, बतानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, परन्तु हम प्रसिद्ध नगरोका संक्षिप्त वर्णन करेगे जिससे हमको मरुस्थलीकी मनुष्य सख्या कूतनेमे सहायता पहुंचेगी। हम पहिले भागका वर्णन आरम्भ करते है। चौहानराजमें प्रसिद्ध २ नगर शिव, वह धरणीधर वंकसर थेराड़ हितीगाव और चीतल है। राना नारायण राव ओसरा ओसरीसे शिव और वह मे रहता है। दोनो ही वड़े नगर है और इनके चारोतरफ ववूल या दूसरे किस्मके कांटेदार वृक्षोका परकोटा सिचा हुआ है जो इन देशोंमे 'काठकाकोट' कहलाता है और शत्रुओके आक्रमणको रोकनेके लिये भलीभांति दृढ़ है। इस रेतीले देशसे नारायण रावकी आमदनी

तीन लक्ष रुपया वार्षिक है। जिसमेसे एक तृतीयांश एक एक लक्ष रुपया जोधपुरको करके रूपमे और सो भी विना युद्धके नहीं दियाजाता है जिसको लेनेके लिये जोधपुरका किसी प्रकारका भी स्वत्व नही पहुँचता है। देशके उन भागोमें जो लूनीके द्वारा सीचे जाते है। अच्छे अन्तकी पैदावार होती है। और यद्यपि गर्मीके ऋतुमे नदी सूख जाती है तौ भी उसके प्रवाहमार्गमे bedकुंएं खोदकर प्रचुर परिमाणमे मीठा पानी प्राप्त हो सकता है परन्तु लोग कहते है कि यद्यपि नदीका प्रवाह वन्द होजाता है तौभी रेतमेसे छन २ कर filter उन पृथक् तालोमे मन्द २ गतिसे बहती हुई धार दिखलाई पड़ती है। ऐसा ही चमत्कारिक दृश्य कोहरी नदीके प्रवाहमे bed (ग्वालियरके जिलामे कई मीलके पूर्णतया सूखोभूमिके वाद हमारे नेत्रगोचर हुआ है। (पानीके उस हिस्सेमे जो कुछ दूर चलकर पड़ा है)।

नगर या सर नगर परकरकी राजधानी है और १५०० घरोकी वस्ती है जिसमेसे सन्१८१४ई.मे आधे आवाद थे। नगरके नैऋत्यकोणमे एक छोटासा पहाड़ीपर किला है जिसकी ऊँचाई २९ फीट कही जाती है। कुंए और बावड़ियाँ अनगिनती है। नगरसे सात कोश दाक्षिणमे नदी लूनी नामसे प्रसिद्ध है। जिससे हम यह परिणाम निकाले कि इसका प्रवाह मार्ग (bed) अवश्य ही रिनके वीचमेसे होगा। परकरनरेश अपने वीरवहके स्वामीके समान रानापदवीसे अलंकृत है। यद्यपि हम इस वातसे अपरिचित है कि उनका आपसमें क्या सम्बन्ध है तौ भी परकरनरेश वीरवह नरेशके प्रति अपने कर्त्तव्यके लिये विख्यात है। दोनो ही हथ राजावंश जात है जिनकी राजधानी जुना चोटन थी। वंकसिर सरनगरसे दूसरे नंबरका है। यह कुछ काल पूर्वरेगिस्तानके लिहाजसे बड़ा और समृद्धिशाली नगर था। परन्तु सन्१८१४ई. मे इसमे सिर्फ ३६० मकानोकी वस्ती है। नगर नरेशका पुत्र यहां रहता है जो अपने पिताके समान राना पदवी से विभूषित है। हम यहांपर छोटे २ नगरोका उल्लेख नही करेगे क्योकि यात्रा वर्णनमे वे फिर मिलेंगे।

थेरड़ लूनीके चौहानोका दूसरा भाग है, जिसकी राजधानी शिवसे कुछ ही कोश पर थेरड़ नामसे प्रसिद्ध है और जो परकरके सदृश नाममात्रके लिये शिव-वह की अधीन है। इस वर्णनके साथही हम वीरवहके विषयको समाप्त करते है जिसमे हम फिर दुहराते है अवश्यही अनेक अशुद्धियां होगी।

चौहानराजका मुख या आकृति-क्योकि "यात्रा वर्णनमे देशकी हालातका सविस्तर वर्णन आवेगा। इसलिये यहाँपर उसका सूक्ष्मवर्णन व्यर्थ होगा। वही ऊसर पहाड़ी जैसा कि हम कह आये है, चोटनसे जैसलमेर तक फैली हुई है। वंकसिरके दो कोश पश्चिममे पायी जाती है और यहाँसे नगरतक पृथक् २ पिंडमे चली

---

(१) मेरे एक भ्रमण वृत्तान्त पुस्तकमें लिखा है कि लूनीकी एक शाखा वीर-वहकी राजधानी शिवके निकट वहती है जहा यह चारसौ वारह कदम चौड़ी है मै समझता हूँ कि यह अशुद्धि है।

गयो है। लूँनीके दोनो किनारोंकी भूमिमे गेहूं और अच्छे अन्नोंकी फसल उत्पन्न करती है। और यद्यपि वीरवहमे अनेक थल है तौ भी शिवसे १७ कोश विशेषकर पुरकी तरफ एक सपाट मैदान है। लूनीके पार थल ऊंचे टीवो मे उठता गया और वास्तवमे चोटनसे वंकसर तक संपूर्ण देश ऊसर है और ऊंचीर रेतकी परिपूर्ण है। और प्रायः रेतसे ढकीहुई टूटी फूटी ऊंची भूमि दूरतक चली गयी है।

पानी–पैदावार–सम्पूर्ण चौहानराजमे या कमसे कम उस भागमे जहां अच्छी है पानी सतहसे औसत दर्जेकी गहराई पर मिलजाता है। कुंओकी १० से २० पुरुषा है या पैसठके एकसौ तीस फीट और जो धातके कुओकी मुकाविलेमें जो कभी २७०० फीट तक होती है किसी गिन्तीमें नही है। लूनीके गेहूं, तिल, मूंग, मौथ अनेक प्रकारकी दाले, वाजरा वहॉके लोगोंकी आवश्यकता करनेके लिये काफी परिमाणमे पैदा होते हैं, परन्तु इस सम्पूर्ण देशमे लूट ही रोजगार है जिसमे चौहान राजा और नीचकोली चालाकी और फुर्तीमे एक स्पर्धा करते है। जहॉ कही भूमि खेती करनेके अयोग्य समझी गयी है वहॉ ऊटोंके लिये अच्छी जगह चरनेको निकल आती है जो (ऊंट) अनेक प्रकारकी कांटे दार झाड़ियां खाकर जीवन निर्वाह करते है, भेड़ वकरियां अधिक संख्यामे पायी है और वैल और घोड़े–सुन्दर और अच्छी जातिके तिलवाराके मेलेमे विकने आते है।

निवासी–यह नितान्त आवश्यक है कि हम सिकन्दरके शत्रु मल्लिके वंशजोको वीरवर पृथ्वीराजके वंशजोको चोरोकी समाज कहकर वर्णन करे। ये लोग जोर राजके अभावमें उठाये या जो अत्याचार उनको जोधपुरवालोके हाथसे सहने पड़ते जो उनपर अपना प्रभुत्व और लूटनेका हक्क वतलाते थे, उनका वदला लेनेके लिये साधारणको लूटनेके गरजसे सिन्ध गुजरात और मारवाड़ तक धावा करते थे। चौहान राजमे सर्व प्रकारकी जातियां पायी जाती है, परन्तु सबसे शक्तिशालिनी जातियां सहरी, खोसा कोली और भील है जिनके नाम डॉकू शब्दके समानार्थकवाची है। चौहान अधीश्वर होनेपर भी प्रत्येक गांवमे अल्प संख्यामे पाये जाते है, परन्तु कोली भील पिथिलकी संख्याएं अधिक है पिथिल नीच जातिके होनेपर भी, केवल उद्योग द्वारा इस देशमे अपना जीवन निर्वाह करते है। खेतीके अलावा वे गोदका व्यापार करते है जिसको वे प्रचुर परिमाणमें भिन्न वृक्षोसे जिनका नाम पहिले वतला चुके है एकत्र करते है; चौहान लोग दूसरी प्राचीन राजपूत जातियोंके सदृश द्विजत्वसूचक चिह्न जनेऊको नही धारण करते है और जिन लोगोंको ब्राह्मणोकी संगीतने लोहके जंजीरसे जकड रक्खा है उन लोगोके आचार विचारको वे (चौहान) पालन करनेके लिये पूर्णतया वाध्य नही है। परन्तु संस्कार सम्बन्धी शिथिलताको सुधारनेके लिये पुरविया चौहानोकी अपेक्षा

---

(१) पुरुसा मरुभूमिके नापनेका माप है। यदि औसत दर्जेका ऊचा आदमी शिरके ऊपर हाथोंको सीधा उठाकर खड़ा हो तो अंगुलियोंकी नोकसे लेकर पदपर्यन्तकी ऊंचाई पुरुसा कहलाती है यह (पुरुष) शब्दसे निकला है।

कोई महान् सम्राट् नहीं हुआ है, हमको उस पर्देको हटादेना चाहिये जो हुमायूंको रक्षककी जीतिके इतिहासको छिपाता है, और यद्यपि वह नाममात्रका अमरकोटका सम्राट् है और चोरगांवका स्वामी है तौभी हमको भारतवर्षपर सिकन्दरकी चढ़ाईके समय उसका स्थानीय निवास और नाम बतलाना चाहिये। धात (Dhat) जिसकी राजधानी अमरकोट है, मरुस्थलोंके भागोंमेसे एक भाग था जो प्राचीनकालसे प्रमारोंके अधीन चला आता था। इस देशकी पैंतीस जातियोंमेंसे अग्निकुल वंशकी जातियोंमे सोढा ओमुरू और सुमुरा अधिक संख्यामे पाई जाती थीं, और पिछले दोनो नामोंके मिलनेके कारण उत्तरी थलका प्रसिद्ध नाम ओमुरसुमरा पडगया है—और अबतक वह इसी नामसे विख्यात है—यद्यपि कई शताब्दी पूर्व इसका अधिकार उन्हींके हाथमे था।

अरोर जिसके आविष्कारका अभी उल्लेख होचुका है सिन्धुनदीके पार बेखरसे छः मील पूर्व नकशेमे विराजमान है, और यह ओमुर-सुमरानामक देशमे वर्तमान था ओमुरसुमरा सम्भव है किसी समय अधिक व्यापक शब्द हो, जब कि सुमराजाति के छत्तीस राजाओंका वंश पांचसौ वर्ष व्यतीत हुए इन देशोंपर राज्य करता था। उनकी शक्ति या प्रभुत्व नष्ट होनेपर और उनके प्राचीन प्रतिस्पर्धी सिन्धा तुम्भा राजाओंको दुबारा राज्य मिलने पर और कालचक्रके फेरसे इनके भट्टियोंके द्वारा पराजित होनेपर इस देशका नाम भट्टियोह प्रसिद्ध हुआ; परन्तु प्राचीन और प्रमाणिक नाम ओमुरसुमरा अबतक बना है और गड़रियोंके छोटे २ गॉव—ओमुरा और सुमरामे—रेतकी पहाड़ियोंके बीचमे अब भी स्थित है। उनके बड़े भाई सोढाओंका वर्णन करनेके बाद उनका उल्लेख किया जायगा। इन संपूर्ण देशोमे, मध्य और पश्चिमी राजपूतानेके भट्टियों चावड़ाओ, सोलकियो गिहलौतो और राठारोंकी वस्तियो या उपनिवेशोंका चिह्न पाते है, और जहॉ कही हम जाते है और कोई भी नवीन राजधानी स्थापित की जाती है तो वह हमेशा प्रमर राज्यमे ही आकर पडती है। पृथ्वीत्याना प्रमरकी यह वाक्य राजपूत संसारको लागू करनेसे मै दुहराता हूँ, मुश्किलसे अतिशयोक्ति पूर्ण होगी।

अरोर या अलोर जैसा कि अबुलफजलने लिखा है, और प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता इवनहैकलने "महलमे मुलतानकी स्पर्धा या होड़ करता हुआ" वर्णन किया है, "मारुके नौ भागो" मेसे एक भाग था। और प्रमर जातिके क्षत्री, जिनकी अनेक प्रसिद्ध शाखाओंमें एक सोढ़ा शाखा थी—इस पर शासन करते थे। बेखर या मानसूराका द्वीप (सलीफा अलमुनसूरके लफ्टिनेण्टने ऐसा नामकरण किया) अरोरसे कुछ मील पश्चिमकी तरफ स्थित है और सोदगीकी राजधानी ख्यालकी जाती है जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था,। और यदि हम नामकी सादृश्यताको इस देशके प्राचीन इतिहास सिद्ध राज्यके साथ मिलावे तो हमपर यह आक्षेप नहीं हो सकता है

---

(१) जातियोंकी सुची और प्रमरोंका वृत्तान्त देखो भाग प्रथम।

(२) फरिश्ता अब्दुल फजल।

कि हमने केवल जातपर विश्वास करके सोढ़गी और सोड़ा एकही है ऐसा कहनेका साहस किया है। सोड़ा राजे रेगिस्तानके पैतृक शासक थे जब कि भट्टी उत्तरसे निकलकर यहां चले आये थे, परन्तु इतिहास इस बातका उल्लेख तक नही करता है कि भाट्टियों से सोढाओने अरोर और लोडोखॉको छीन लिया या नहीं। यह सम्भव है कि सोढा शाखाके समकालीन या सम्पद होनेके वजाय ओमुर और सुमरा उनके उपभागमात्र हो। यह आवश्यक है कि प्राचीन सिन्ध और इन जातियोंके संक्षिप्त इतिहास वर्णन करनेमे हम फारिस्ता और अव्बुफजलका अनुसरण करें। अव्बुलफजल कहता है–"प्राचीनकालमे सेहरीस नामका राजा अलोर राजधानीमें राज्य करता था और इसके राज्यका विस्तार उत्तरमें कश्मीर पश्चिममें मेहरान और दक्षिणमें समुद्रपर्यन्त था। ईरानी सेनाने इस राज्यपर आक्रमण किया। राजा युद्धमे खेतरहा और ईरानी फौज प्रत्येक वस्तुको लूटनेके बाद स्वदेशको लौटगयी। रायसाही[2] राजपुत्र रायसा या (सोढ़ा) राजसिंहासनपर विराजमान हुआ। यह वंश वालीदके खलीफाके समय तक राज्य करता रहा। जव कि इराकके गवर्नर हिजौजने सन् ७१७ ई. में महमूदकासिमको

---

(१) मैं पाठकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं नाममात्रकी सादृश्यता पर कोई अनुमान या परिणाम नहीं निकालता हूँ जबतक कि स्थानोंसे पूरा २ पता न लगजाय, क्योंकि हमने अन्यत्र इस बातका उल्लेख किया है कि प्रसिद्ध राजा पुरुयो पोरसको उत्पन्न करनेका गौरव पंजाबके यदुवंशियोको है, यद्यपि पौर साधारण प्रमर शब्द इसी तरह उच्चारण किया जाता है–और पोरसमे अधिक सान्निध्यता है।

(२) कर्नल ब्रिगस अपने अनुवादमे इसको हुलीसा (Hullysa) लिखते है, और उसी स्थान पर इस बातको लिखते है कि "प्राचीन मुसलमान लेखकोने हिन्दू नामोको इतना तोड़मरोड़कर लिखा है कि वे प्राय पहिचान भी नहीं पड़ते है, या हम 'हुली' मे जो सा शब्द संमिलित किया गया है–हुली सेहटियोका पुत्र था—उसको हम कदाचित् उसकी जाति–सोढाकी पदवी ख्याल करें। अव्बुलफजलका रायसाही या रायसाके अर्थ (राजा सा) या सोढोंका राजा है। उसी वंशमें दहीर उत्पन्न हुआ था जिसकी राजधानी ८० हिजरीमे (अव्बुलफजल कहता है) अलोर या देविल थी, और जिसमें इतिहासवेत्ता भूगोल सम्बन्धी गलती करता है, अलोर या अरोर ऊपर सिन्धकी राजधानी है और देविल (शुद्ध देवल–मन्दिर–) या तत्ता नीचले सिन्धकी राजधानी है। संभव है कि दोनो ही दहीरके अधिकारमें थीं। हम मेवाड़के इतिहासमें प्रकट करचुके है कि मुसलमानोके प्रथम आक्रमणसे मेवाड़की रक्षा करनेवालोंमें एक विदेशी राजा दहीर भी था। और हमने यह अनुमान किया था कि यह हमला सिन्ध प्रदेशको जीतनेके बाद महम्मदकासिमने अवश्य ही किया होगा। बापा चित्तौरका अधिपती, राजा मानमोरीका भांजा था इसलिये कासिमके विरुद्ध चीतौरकी रक्षार्थ शस्त्र उठानेमे दहीरके निर्वासित पुत्रके दो हेत थे। मोरी और मौर सोढा प्रमार वंशकी शाखाएं है (देखो भाग प्रथम सूचीपत्र) यह महत्वकी बात है कि हम पाठकोंका ध्यान उस कथनकी तरफ खींचें जो जाबुलिस्तानके हिन्दू राजाओके बीचमें खोरासानके हिजूज (जिसने कासिमको सिन्धपर भेजा था) के हलचल मचाने पर अन्यत्र कहीं पर किया जाचुका है, वास्तवमें कुछ प्रमाण नहीं है परन्तु इससे केवल यह महत्वकी बात सिद्ध होती है कि महम्मदके आनेके पहिले राजपूतोका राज्य चारोंतरफ दूर २ तक फैला हुआ था।—

भेजा, जिसने हिन्दुराजा दहीरको मारकर विजय प्राप्त की । इसके अनन्तर अनसेरीका वंश इस देशपर शासन करता रहा फिर सुमराके वंशकी ध्वजा फहराई, और अन्तमे सीमा वंशके हाथमे इस राज्यकी शासन डोर गयी, जिन्होने अपनेको जमशेदका वंशज समझ कर जामकी उपाधि धारण की । फरिश्ता भी इसी प्रकारका वर्णन करता है ' महसूदकासिमके मृत्युके अनन्तर, एक जातिने जो अनसेरीके वंशमे होनेका दावा करती है, सिन्धमे राज्य स्थापनकिया, इसके बाद जमीदारोने राज्यको अपने अधिकारमे किया और पांचसौ वर्षतक स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया । सुमराओने सुमना नामके वंशका राज्य उलटदिया । जिनका सरदार जामकी[२] पदवी धारण करता था, । यूनानी और ईरानी लेखकोके अशुद्ध लेखके कारण इन जातियोके सादृश्यताको प्रस्थापित करनेकी कठिनताका उदाहरण फारिस्ताके दूसरे भागमे इसी वशके वर्णनमे पाया जाता है । फरिश्ता इस वशको सोमुना और अब्बुल फजल सुमा कहता है।"साहनाकी जाति अप्रसिद्ध कुलोत्पन्न मालूम पड़ती है और सिन्धदेशमे वेखर और तत्ताके बीचकी भूमिपर प्रथमतः निवास करती थी और जमशेदके वंशज होनेकी वात बताती है । इस जातिके निवासस्थानका पता ठीक २ लिखनेके कारण हम उसकी अक्षरकी अशुद्धी क्षमा करते है, सोमुना सेहना या सीमा लिखे जानेपर भी यह महान् यदुवंशकी सुम्मा या सम्मा जाति है, जिसकी राजधानी सुम्माका कोट या सुम्मा नगरी था जिसको यूनानी लेखकोके निकट लगता है जिसमे मल्लिनाथका मन्दिर वना हुआ है जैसा कि पहिले कह आये है, राठौरोके अव कुल रक्षक देव है । मेहवो घरानेके दूसरे संबन्धीकी जागीर तिलवारा है, और भलोत्रा, जिसपर राज्यका अधिकार होना चाहिये, मारवाड़के प्रसिद्ध सरदार अहवाके पास पूर्वकालमे वतौर जागीरके थी और शायद अव भी हो । परन्तु भलोत्रा और सिन्द्री दूसरे ही वातके लिये प्रसिद्ध है । क्योकि दुनेरकी रियासतके साहित ये दोनो दुर्गादासकी जागीरेथी जो मरुके इतिहासमे सवसे वढ़कर विख्यात पुरुष है और जिसके वंशज अव भी सिन्द्रीपर अधिकार रखते है । मेहवोके जागीरकी वार्षिक आय पचास हजार रुपया कूती जाती है जिसमे यह सव प्रदेश शामिल है । पटैल (या सरदार) अपने आश्रित जनोके साथ कभी २ दरवारमे उपस्थित होते है परन्तु विपत्ति समय या कठिन प्रसंगके सिवाय वे राज्यकी सेवा करनेके लिये वाध्य नही है वे विशेपकर सीमाकी रक्षाके लिये वुलाये जाते है जिस कारण वे सोमेश्वर नामसे पुकारे जाते है या प्रसिद्ध है । इन्दुवती–यह प्रदेश, इन्दुजातिके राजपूतोके

—उत्तम हस्तलिखित प्रतियोके नाश होजानेसे पूर्वीय साहित्यकी जो हानि हुई है उसकी पूर्ति कठिनतासे होसकती है ये प्रतियां अनेक वर्षोके परिश्रमसे कर्नल ब्रिग्सने एकत्रित की थी और उनका अभिप्राय प्राचीन मुसल्मानोके कारगुजारीका साधारण इतिहास लिखनेका था ।

(१) वह पिछले वशके सत्रह राजाओंके नामकी सूची देता है । ग्लैडविनका आईन अकवरीका अनुवाद भाग सफा १२२.

(२) देखो ब्रिग्सका फरिश्ता भाग ४ सफा ४११–४२२

वसनेके कारण, जो पुरिहारोंकी प्रसिद्ध शाखा है, (मंडोरके प्राचीन राजे थे) इन्दुवती कहलाता है। और यह भंलोत्रासे उत्तरकी ओर और जोधपुरकी राजधानीसे पश्चिमकी तरफ, फैला हुआ है। और गोगाका थल इसको उत्तरकी तरफसे घेरे हुए है। इन्दुवतीका थल करीब २ तीस कोशकी परिधिमे है।

गोगादेवका थल–गोगाका थल जो चौहानोंके वीररसपूर्ण इतिहासमें प्रसिद्ध है। इन्दुवतीके ठीक उत्तरमे है, और एक ही वर्णन दोनोके लिये लागू होसकता है। इस प्रदेशमें रेतके टीले बहुत ही ऊंचे है। आबादी बहुत ही कम है, चन्द गांव पाये जाते हैं, पानी सतहसे बहुत दूर पर है और बड़े २ जंगलोंसे परिपूर्ण है। "इस रो के" प्रसिद्ध नगर थोव Thobe फूलसुन्द और बीमसिर है। यहांके लोग "टंको" मे वरसाती पानी एकत्र करते है जिसको वे बड़ी ही किफायतके साथ खर्च करते हैं और अकसर पानीके सड़जानेसे उन्हे रतौन्धकी बीमारी उत्पन्न होजाती है।

तिरूरोका थल गोगादेव आर जैसलमेरकी वर्त्तमान सीमाके वीचमे स्थित है और पूर्वकालमें यह जैसलमेर राज्यके अधिकारमे था। पोकर्न न सिर्फ तीरूरोका, वरञ्च मरु स्थलीके दो प्रसिद्ध राजाधानियोके वीचमे स्थित संपूर्ण मरुभूमिकी राजधानी है। इस थलका दक्षिणी हिस्सा उस भागसे भिन्न नही है जिसका वर्णन अभी होचुका है परन्तु उत्तरी हिस्सेमे और अधिकतर कोकर्न नगरके चारोंतरफ सोलहसे वीस मील तक, नीची असंयुक्त ढोली चट्टानोंकी श्रेणियां पायी जाती है। और यह उसी श्रेणीका हिस्सा है जिस पर भाट्टियोकी राजधानी बनी हुई है और इन चट्टानोकी श्रेणियोके कारण इस भूमिका नाम मेरं या चट्टानी या चन्दानी या चन्द्रान युक्त पड़गया है। 'तीरूरो' 'तीर' शब्दसे निकला है। जिसका अर्थ गीलापन झरनेकी अद्रिता या झरना है जो इससे 'रो' निकलते है।

पोकर्न नगर जिसमे सलीमासिह निवास करते है (जिनके वंशका हम सविस्तर वर्णन मारवाड़के इतिहासमे कर आये है) दो हजार घरोंकी वस्ती है और पत्थरकी दीवालसे चारो तरफसे परिवेष्टित है, और किलेपर पूर्वकी तरफ कितनी ही तोपे चढ़ी हुई है। नगरसे पश्चिमकी तरफ इस देशके लोगोकी केवल वरसातहीमे वहते हुए पानीका आश्चर्य जनक वा अद्भुत दृश्य दिखलाई पड़ता है, क्यो कि रेत शीघ्र ही इस पानीको सोखलेती है। कुछ लोग कहते है कि यह पानी कनोड़के "सर" से आता है कुछ पहाड़के झरनो या चश्मोसे आता हुआ बतलाते है, कुछ भी क्यो न हो, पर वहांके निवासी उसके प्रवाह मार्गमे कुण्डा खोदकर सुस्वादु और प्रचुर परिमाणमे जलको प्राप्त करते है पोकर्नका सरदार चौवीस गॉवोके अलावा, लूनी और वान्दी नदियोके वीचमे स्थित भूमिका स्वामी है जिसकी कीमत करीव २ लक्ष रुपयेकी है। दूनरा और मंजिल जो

---

(१) यहांके निवासी कहा करते हैं कि इस रोगकी उत्पत्ति एक छोटेसे तागेके समान कीड़के द्वारा होती है, जो घोड़ेके आंखमे भी होजाता है, मैंने घोड़ेके आखमें इसको बड़े ही वेगसे फिरते देखा है। यहांके लोग उसको छेदकर कीचरके साथ या आंसूके साथ निकाल देते हैं।

राजभक्त दुर्गादासकी जागीरें थीं। अब देशद्रोही सलीमके अधिकारमें है। पोकर्नसे तीन कोश उत्तरकी तरफ रामदेवरा नामक गॉव है–रामदेवका मंदिर होनेके कारण गाँवका नाम रामदेवरा पड़गया है जहां भादोंके महीनेमें मेला लगता है जिसमें चारो तरफका अदमी आता है। कराचीबन्दर यहॉ मुलतान शिकारपुर और कच्छके व्यापारी यहां पर भिन्न २ देशोकी वस्तुओंका विनिमय करते है। घोड़े ऊँट बैल यहां अधिक संख्यामे पाले जाते हैं। परन्तु सन् १८१३ ई.के अकाल अराजकता राजा मानके गद्दीपर वैठनेके समयसे चली आई हुई और राठौरो और भट्टियोकी असीम कलहने इस अभिलषित व्यापारको बन्द करादिया है जिसके कारण कभी २ मरुभूमिके मध्यमे आनन्द और कर्मण्यताका दृश्य दिखलाई पड़ता था। खावरका थल यह (थल) जो जैसलमेर और वरमेरके वीचमे स्थित है और गिरोपके पास धातके मरुभूमिसे जाकर संलग्न होता है, मारवाड़के सुदूरकोणमे स्थित है। मनुष्य संख्या कम होनेपर भी अनेक विस्तीर्ण-स्थान है जो इस मृत्यु (यमालय) मे नगर पदवी धारण करनेके योग्य है। इनमेसे शिव और कोटरा बहुत बड़े है और उन पहाड़ियोकी चोटियों पर स्थित है जो भुजसे जैसलमेरतक पायी जाती है। शिवमे तीनसौ घर है और कोटरामे पांचसौ ये दोनो नगर राठौर सरदारोंके हाथमे है जो जोधपुरके राजाकी नाममात्रकी अधीनता स्वीकार करते है। कुछ काल पूर्व अन्हलवाड़ा पत्तन और इस देशके बीचमे व्यापार होता था, परन्तु सेहरीसे डॉकुओने इतने काफिलाओको लूटा कि आखिरकार यह व्यापार बन्दही होगया। इस स्थलमे असख्य भेड़े और भैसोके चरनेके लिये हरित भूमि मौजूद है।

मल्लिनाथका थल या वरमेर–पूर्वकालमे इस संपूर्ण देशमे मल्लि या मालिनी जाति निवास करती थी, जिनको यद्यपि कुछ लोग राठौर वशका बतलाते है तौभी निसन्देह ये चौहान है और उसी वंश या कुलके है जिस कुलको जुनाचोटनके स्वामीने उजागर किया है। पिछले अकालके पड़नेके पहिले वरमेर बारहसौ घरोकी वस्ती कूती गयी थीं, जिसमे सब जातियोके मनुष्य निवास करते थे, और चौथाई आबादी सांचोर ब्राह्मणोकी थी। वरमेर उसी पहाड़ी पर स्थित है जिसपर शिव–कोटरा वसते है और यह पहाड़ी यहॉ पर दोसौसे तीनसौ फीटतक ऊंची है। शिवसे वरमेरतक एक बड़ा समतल मैदान चलागया है जिसमे कही २ पर नीचे रेतके 'रीते' पाये जाते है जो अच्छी ऋतुमे खानेके लिये काफी अन्न पैदा करते है। पद्मसिह वरमेर सरदार उसी वशकी शोभाको वढ़ाते है जिस वंशमें शिवकोटरा और जैसोल नरेशोने जन्म ग्रहण किया है, वे सब जैसोल नरेशके वशज है और पद्मसिहके जागीरमे चौतीस गांव है। पूर्वकालमे (दानी) annil यहॉ यात्रियोसे कर वसूल करनेको नियत किया गया था; परन्तु सेहरीसकी लूटने इस पदको वेतन युक्त या बिना कामका कर दिया है, और वरमेर सरदार जो कुछ वसूल कर पाते है उसको स्वय ही लेलेते है वे भट्टियोसे, जिनसे यह प्रदेश जीता गया था सलाह करना अपने अधिपतिकी अपेक्षा अधिक उपयोगी समझते है, जिसके अधिकारियोसे वे प्राय: युद्ध करते है विशेप कर जब हिन्दकी

माँग उनपर होती है । ऐसे अवसरों पर वे मरुभूमिके सेहरीसोसे मदद लेना घृणास्पद नहीं समझते है । इस संपूर्ण देशमें लोग अच्छी जातिके ऊंट पालते है जिनकी भारतके संपूर्ण वाजारोमे अधिक माग रहती है ।

खेरधूर-इन राज्योंके इतिहासमे अनेक वार खेरका उल्लेख किया गया है। राठौरोने पहिले पहिल गोहिला जातिको निकाल कर इस दूरस्थित कोणमें अपने रहनेका निवासस्थान वनाया था। गोहिल जाति इस स्थानको परित्याग करके खम्मातकी या आखातकी तरफ चली गयी थी । और अव गोगा और भावनगरके स्वामी है। और ऊंटोपर काफिलाको लूटनेके वजाय हिन्दमहासागरमे अति गर्हित दासोका व्यापार करते हुए उन्होने सोफलाके स्वर्णतट तक यात्रा की। यह जानना कठिन है कि वे खेरकी भूमिको किस अक्षांश रेखापर नियत करते थे, जो गोहिलोके समयमे लूनीके निकटतक चली गयी थी । और न यह आवश्यक है जरा २ सी नुक्ताचोनीमे हम उलझे रहे क्योकि वर्णन करनेके अभिप्रायसे ही हमने उन नामोका व्यवहार किया है । बहुत सम्भव है कि वह संपूर्ण देश इसमें शामिल हो, जिसमें वादके मल्लिनी या चौहान जाति निवास करती थी। जिन्होंने जुना-चोटनकी नींव डाली थी; इसलिये हम इसको खेरधूरमे संमिलित करेगे । राजधानी खेरल मारके नवदुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था, जब कि प्रमार उसके अधीश्वर थे। आज वह ह्रास होते २ गांवसा रहगया है, जिसमें चालीस घरसे अधिक नही हैं, और चारो तरफसे 'श्यामरंगकी' पहाड़ियोसे परिवेष्टित है जो भुजसे आनेवाली श्रेणीका एक भाग है। जुनाचोटन या प्राचीन चोटन संयुक्त नाम होनेपर भी, पृथक् २ दो स्थान है. और लोग उनको अति प्राचीन और हप्प राज्यकी राजधानियां बतलाते है । वंश परंपरा गत-वाली इस विषयमे चुप है कि हथराज क्या था । हम केवल इतना ही जानते है कि उसके राजे चौहान थे । उन नगरोके प्राचीन चिह्नके देखनेसे मालूम पड़ता है कि किसी समय ये बड़े २ नगर होगे, और विशेषकर जुना प्राचीन चारों तरफसे पहाड़ियोसे परिवेष्टित होनेके कारण इसमे भीतर घुसनेके लिये पूर्वकी तरफ सिर्फ एक छिद्र या मार्ग है, जिसके मुखपर एक छोटा सा किला भग्नावस्थामे अव भी विद्यमान है। इसी प्रकार पर्वतके शिखर पर दो और किलेके चिह्नमात्र दिखलाई पड़ते है ।

भग्नावशेष मंदिर । बन्द बावड़ी प्राचीनकालमे इस नगरकी विस्तीर्णताकी साक्षी देती है। जिसमे वारह सहस्र मकान वतलाये जाते हैं । अव इस स्थानपर दोसौसे अधिक झोपड़े नही है जव कि चोटन अव केवल छोटासा गावमात्र रहगया है। धोरिमनमे

---

(१) बहुत सभव है कि जिस वृक्षको खेर और धर (भूमि) कहते हे उस वृक्षकी मरुभूमि में विपुलता होनेके कारण इसका यह नाम पड़ा है। यह 'खेरलू' भी कहलाता है, परन्तु 'खेराल' खेरका स्थान अधिक उपयुक्त नाम है इन प्रदेशोमें यह जड़ी बडी ही लाभदायक है । इसके शिकुड़नेवाले छिलकेको जिसकी शक्ल लिब्रनम Libuinam से मिलती है। वे भोजनके काममे लाते है। इसका गोद व्यापारके लिये एकत्र किया जाता है, ऊंट उसकी शाखाओको खाते है और उसकी लकड़ी झोपड़े बनानेके काममे लायी जाती हैं ।

जो उस पर्वत श्रेणीके दूसरे शिरेपर स्थित है जिस पर जुना और चोटन विद्यमान है एक अद्भुत पूजनीय स्थान है जहां श्रावण शुदी तीजको यहांके निवासी एकत्र होते है। रक्षक सन्ट अलनेदवके नामसे प्रसिद्ध है, जिनके द्वारा या प्रभावसे मल्लिनी एक महान् विजय प्राप्त करनेको समर्थ हुए थे। अलनेदेव पर्वतके शिखर पर एक श्रेणीमे घोड़ेके मुखकी आकारवाली कुछ पीतलकी मूर्तियाँ रक्खी हुई है जिनकी पूजा की जाती है इन मूर्तियो से चाहे भविष्यतमे यह वात सिद्ध होजाय कि मल्लिनीके मध्य एशियाकी अश्ववंशकी एक शाखा-पूर्वपुरुष सिदियनथे, परन्तु इस समय अनुमान या अटकलके शिवाय इस बातके समर्थनमे कोई ऐनिहासिक आधार नही है । नागर-गुरु-वरमेर और नागर गुरुके बीचमे लूनी नदी पर एक अपार अविच्छिन्न थल या विशेष करके 'रो' स्थित है, जिसमे खैर केजरी करील केप फोकके घने जंगल है, जिसके गोद और वेरसे दक्षिणी जिलेके कोली और भील लाभ उठाते है । नागर और गुरु लूनीके किनारे दो बड़े २ नगर है सो वह चौहानराजकी सीमापर स्थित है, और पूर्वकालमे दोनो इसके भाग थे । इस स्थानपर हम मारवाड़के पश्चिमी थलौका वर्णन समाप्त करते है एक तो प्रकृति ने स्वयं ही मारवाडको ऊसर या धनधान्य विहीन रचा है, तिसपर संवत् १८६८के जिसको तीन वर्ष व्यतीत हो चुके है-भयंकर दुर्भिक्षने जिसने संपूर्ण देशोमे हाहाकार मचादिया था, मारवाड़की दुर्वस्थाको अन्तिम सीमातक पहुँचादिया था । गत तीस वर्सोसे पूर्वोक्त वर्णित अव्यवस्थाका राजधानीमे अधिकार होनेके कारण ये दूरस्थित देश मरुभूमिकी जातियो अथवा वहांके लुटेरे स्वामियोके पूर्णतया हाथमे है और वे चाहे जो कुछ करे इसके लिये कुछ भी अवरोध नही है ।

जब हम इस वातका विचार करते है तब हमारे आश्चर्यका वारापार नही रहता है कि मनुष्य कैसे ऐसे देशमे अपने प्राणोकी रक्षा कर सकता है, जिसमे चन्द नमककी झीलोके, और ऊँटोके लिये सुन्दर चरागाहोके सिवाय ऐसी कोई वस्तु नही है जिससे उसके मालिक कुछ लाभ उठासके । ये चरागाह विशेपकर दक्षिणी प्रदेशोमे है जहांके ऊंटोसे बढ़कर ऊची जातिका ऊंट मरुभूमिमे नही पैदा होता है ।

---

(१) अब सन् १८१४ हैं । मै इन प्रदेशोसे मेरी खोजकरनेवाली मंडलियोमेसे एकके लौटनेके बाद ही मै उस दिनके भ्रमण वृत्तान्तकी पुस्तकोसे लिखरहा हूँ । मेरी मंडली अपने साथ धातके निवासियोको लायी थी जो अपनी सीधी बोलीमे कहा करते थे कि मरुभूमिका नाप उनके हस्तामलक है, क्योकि वे तीस वर्षतक कासिदका काम करनेमे नियत किये गये थे । बादको उनमेसे दो अपने कुंटुम्बको देशसे जाकर लेआये थे और पांच वरससे अधिक मेरे आश्रय या सेवामे बने रहे, । वे नमकहलाल लायक और ईमानदार थे और मेरा बताया हुआ डाककी जमादारीका काम बड़ी ही योग्यतासे संपादन करते थे, और यह काम मेरे सुपुर्द बहुत दिनतक रहा जब कि शिन्दे (सेन्धिया) के दरबारमे नियत था, और किसी समय जब कि काम अधिक था भारतके भयानक और अपरिचित प्रदेशोमे होकर गंगाके किनारेसे बम्बई तक पत्र भेजने पडते थे । परन्तु ऐसे खोजके कामोमें जिन आदमियोको मैंने सिखाया था, उनकी सहायतासे मुझको ऐसी कोई आपत्ति नहीं मिली जिसको मैं पार न करसका ।

चोर–क्योकि अमरकोट सोढाओंसे छीन लिया गया है इस लिये निर्वासित राजा जो अब भी रानाकी उपाधि धारण करता है अपनी प्राचीन राजधानीसे पन्द्रह मील ईशान कोणकी तरफ चोर नगरमें निवास करता है। जिस वंशके पूर्वपुरुषोने सिकन्दर, मेननदेर (Menander) और कासिमका सामना किया,और भारतवर्षके सिंहासनाच्युत शरणागत प्राप्त हुए, हुमायूकी रक्षाकी, आज उन्होका वंशज विवाहमे मिले हुए धनसे या देहेजसे अपनी प्राण रक्षा करता है, या अपने मरुभूमिस्थित राज्यके चन्दभूमिके टुकड़ोकी उपजसे जीवन निर्वाह करता है। जिनको सिन्धके राजाओने अपनी ओरसे उनको दे रक्खा है। उसके आठ भाई है जो जीविका प्राप्त करनेको कुछ भी उद्योग नहीं करते है और ये इन राज्योके कोषकी न्यूनताको पूर्ण करनेवाली लूटसे अपनी उदरपालना करते है।

सोढा और झारीजा, हिन्दू मुसलमानोको जोड़नेवाली जंजीर है, क्योंकि हम जितना ही पश्चिमकी तरफ़ बढ़ते है उतनी ही अधिक शिथिलता या ढिलाई राजपूतोंके आचार विचारमे दृष्टि आती है। तौभी एकमात्र स्थानकी अपेक्षा कोई दूसरा ही अधिक-तर प्रवल कारण है जिसने उनके हृदयमे जातीय अधिकारोसे हीन करानेवाली भाव-नाको उत्पन्न किया है जिसके कारण सोढा और सिन्धी परस्पर वैवाहिक सम्बन्धके वन्धनमे पड़ते है क्षुधा ही एकमात्र कारण है, और कोई पुरुष इस बातसे इन्कार नहीं कर सकता है कि मनुजीकी आज्ञाओकी अपेक्षा उसका प्रभाव अधिक बलशाली है। प्रत्येक तीसरे वर्ष दुर्भिक्ष पड़ता है, और जिनके पास उससे लड़नेका सन्मान नहीं होता है वे अपने पड़ोसियोकी शरणमे प्राप्त होते है। और विशेष कर सिन्धुकी घाटियोमें भाग जाते है। प्रत्युपकारमे वे अपने प्राण बचानेवालोको अपनी कन्याका हाथ पकड़ा देते है, परन्तु वे अपनी प्राचीन रीति अब भी इस दृढ़ताके साथ पालन करते है कि विवाहिता स्त्रीको फिर अपने घरमे नहीं आने देते है, या ग्रहण नहीं करते है। अपनी कन्याएँ मीर-गुलामअली मीर सोहराव, और दादरसरदार खोसाको देकर सोढाओके वर्त्तमान राना दूसरोंके लिये उदाहरण स्वरूप बनचुके है, इस लिये जैसलमेर वह परकरके राजे–रानाके भाई–यद्यपि सोढा राजकुमारीका पाणिग्रहण करना स्वीकार करलेगे (क्योंकि उनको उसकी लोहूकी पवित्रतापर विश्वास है) तौ भी बदलेमे अपनी कन्या रानाको नही देगे क्योकि संभव है उसकी संतान बलौचकी अन्तःपुरकी शोभाको बढ़ावे। परन्तु मारवाड़ के राठौर न अपनी कन्या धातको देगे और न उसकी कन्या लेंगे। इस देशकी स्त्रियां अपनी सुन्दरताके लिये प्रसिद्ध होनेके कारण व्यापार–वैवाहिक व्यापारकी वस्तु समझी जाती है और यह कहाजाता है कि (धतियानी) की सुन्दरताकी चर्चा, यदि सिन्धीके कानोतक पहुँचती है तो वह उसके पिताके पास उतना अन्न भेज देता है जितना वह उसके बदलेमें लेना स्वीकार करता है, और सौदा पटजाता है।

हम यहाँ पर सोढा जातिकी रीति व्यवहार या दूसरी ही वैशिष्ट्यबातोंका अधिक वर्णन न करेगे यद्यपि हम इस लेखके अन्तमें इस देशकी जातियोंका सामान्य वर्णन

करते हुए फिर सोढाओंकी रीतिका वर्णन करदेंगे । जातियां–भिन्न २ जातियां ही मरुभूमि और सिन्धकी घाटीमे रहनेवाली नवीन खोज करनेवालेके लिये बड़ी भारी सामग्री उपस्थित करदेगी और संभव है कि इस खोजमें कुछ महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक बातोका पता लगजाय अनुसंधान कर्त्ता उन जातियोकी वंशावलीमें जिन्होने इसलाम धर्मको स्वीकार करलिया था, उन नामोंकी पता लगावेगा जो एक समय इतिहासमे प्रसिद्ध थे परन्तु अब नवीन धर्मरूपी चादरसे ढके हुए है और संभव है कि वह उन नामोकी मददसे उनकी ऐतिहासिक उत्पत्तिको ढूंढ़ निकाले । अनुसंधानकर्त्ता सोढा कही और मालिनी जातिको पावेगा जो इतिहास, स्थान और नाममात्रकी साद्दश्यताके कारण इस बातका अनुमान करनेको बहुत जगह देती है कि सोदगी, काठी और मालिनीके वंशज है जिनके पूर्वपुरुषोने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ जाते हुए सिकन्दरका सामना किया था, गेटी या यूतीके टिड्डी दलके अलावा जिनमेसे बहुतेरोने बलौचकी साधारण पदवीको धारण करलिया है या प्राचीन खास–दूसरी पदवी नही है–नूमरी पदवीको अबतक बचाये हुए है, जब कि दूसरोने प्राचीन ' जहित ' नामको अबतक जीवित रख छोड़ा है । हमारे पास जोहिया और दाहिया वंशके विशेष चिह्न मौजूद है जिनके बारेमे जैसलमेरके इतिहासमे और अन्यत्र स्थान पर भी बहुत कुछ कहा जाचुका है, जो गेटी जित और हूनके सहित प्राचीन भारतकी "छत्तीस राजपूत वश" मे शामिल है ये बाराह और लोहानाके सहित कौरवका प्रसिद्ध नाम, भारतमे कृष्णके शत्रुको अबतक जीवित रखते हुये धारण करते है । बाराह और लोहाना जो कई शताब्दी पहिले अगणित दलसे पंजाबमे आये थे,अब "यमालय" मे केवल अल्पसंख्यामे दिखलाई पड़ेगे । सेहरी–हमारे पश्चिमी मरुभूमिका बड़ा लुटेरा मनुष्य समाजका शत्रुके लूट और आद उसकी आदतोके विषयमे बहुत कुछ कहा जा सकेगा । परन्तु हम पहिले पहिल उन जातियोका वर्णन करेगे जिनमे कुछ भी हिन्दूपन शेष है और बाद करके उनकी विशिष्टताओका कथन किया जायगा । भट्टी राठौर, जोधा, चौहान, मालिनी, कौरव, जोहा, सुलतान् , लोहाना, अरोरा, खुमरा सिन्दिलु भैसुरी, वैष्णवी जाखर शैगया अशैग पुनिदा ।

मुसलमानोमे सिर्फ दो जातियां कुळोरा और सेहरी है जिनकी उत्पत्तिमे कुछ सदेह है, और दूसरी जातियां जिनके नाम हम गिनावेगे न्याद है अर्थात् राजपूत या हिन्दुओकी दूसरी जातियां थी जिन्होने स्वधर्मको त्यागकर किसी कारणवश इसलाम धर्मका स्वीकार किया था, जूत, राजूर, ओमुरा, सुमरा, मेर मोर या मोहर बलौच, लुमरिया, याल्का, सुमैचा, मगुलिया, बागम्रिया, दाहिया, जोहिया,कैरो, मगुरिया, ओढुर, बेरोवी बाबुरी, तावुरी, चरेन्दी, खोसा, सुदानी लोहाना। इन जातियोकी आदतोका बयान करनेके पहिले हम न्यादकी एक विशिष्टताको कहना चाहते है जिन्होने अपने

(१) न्याद नवीन शब्द है और ख्याल करता हू कि याद (प्रथम) और नौ (नवीन) के सयोगसे बना है ।

पुराने धर्मका त्याग करते समय उस धर्मके सर्वश्रेष्ठ नैतिकगुण और सहनशीलताका भी वायकाट किया और जिस मुसलमानी धर्मको उन्होंने स्वीकार किया था उसका तास्सुब उनकी नसोंमे द्विगुणितरूपसे फैलगया। इस नैतिक रूपान्तरका कारण क्यों? मुसलमानी धर्मका स्वाभाविक गुण है या स्वधर्म त्याग करनेका परिणाम बुद्धि भ्रष्टता है क्योंकि इस संसारमें उस राजपूतकी अपेक्षा जिसने इस्लाम धर्मको स्वीकार किया है, कोई भी खूंखार या असहनशील नहीं मिलेगा। सिन्ध प्रदेश और मरुभूमिमें हम एकही जातियोंको एकही नाम धारण किये पाते है परन्तु इनमेसे एक हिन्दू है और दूसरी मुसलमान पहिली अपने प्राचीन रीति व्यवहार पालन करती है, जब कि दूसरी असहनशील कायर और अतिथि द्वेषी है। यह संभव है कि मालदोत लाड़खानी, मुर्रा या तातुरिये शैतानके सन्तानोंके हाथोंसे कमसे कम जान शायद कुछ मालका भाग वच जाय, परन्तु खोसा सेहरी या भट्टियोंके हाथसे छुटनेकी आशा मृगतृष्णावत है। ये इतने अज्ञान और क्रूर होते है कि यदि मुसाफिर दैवयोगसे रस्ता या रस्ता शब्दका उच्चारण करै तो वह वड़ा ही भाग्यवान होगा यदि इन पशुओके हाथोंसे लाठीसे पीटकर जीता जागता वच जाय, जो (सेहरी) इन शब्दोंमे रसूल शब्दकी सादृश्यता पाते है, वह पहिले (रस्साके लिये किलब्र या रूनडोरी और पिछलेके लिये डुगरा या उगे" शब्दको व्यवहृत करे। जिन्होंने पार्क, देनहम, और क्लयटत–जो अनुसन्धानके इतिहासमे हमेशा अमर रहेंगे) के हृदयको उभाड़नेवाले उनके साहसिक कर्मोंको पढ़ा है वे इस वातको जानकर आश्चर्यके समुद्रमे डूब जायँगे कि किस तरह पूर्णतया सात्विक, दयायुक्त अतिथिसेवी हविपी इन गुणोमे राजपूतके समान है जो ला अल्लाह इल्लिलाह महमूद रसूल अल्लाके उच्चारण करते हुए वन्य–पशुकी वृत्ति स्वीकार करलेते है जब कि मध्य एशियाके देशोमे बुद्धका अहिंसा परमोधर्मका सिद्धान्तके प्रचलित होनेसे तातरजातियोंके वीचमे आश्चर्य जनक तबदीली हुई है।

हम काफी तौरसे भट्टियो, राठौरो चौहानो और उनके वंशज मालिनी और सोढाओका वर्णन करचुके है, परन्तु सोढा जातिकी कुछ विशिष्टताओका वर्णन शेष रहगया है।

सोढा–सोढा जो अबतक हिन्दूनाम धारण करते है, प्राचीन आचार विचारको यहाँतक परित्याग किया है कि वह उसी वर्तनमे पानी पीलेगा जिससे मुसलमानने पिया है और मुसल्मानके हुक्केसे तमाखू पीलेगा केवल उस निगालीको निकाल कर अलग रख देगा जो मुंहसे लगाई जाती है।

निर्धनताके कारण सोढाका जगप्रसिद्ध साहस लोप होगया है तौभी चोरी करनेमे फुर्तीलेपनके लिये वह अब भी विख्यात है और यह सेहरीस और खोसाके समूहमें शामिल होता है जो दाऊद पोतरासे गुजरात तकका धावा लगाते है सोड़ा विशेषकर तलवार और ढाल वांधते है और उनकी कमरवन्दसे एक लम्बा छुरा

(१) मार्गके लिये 'डुगरा' राजपुतानामें अधिक प्रचलित शब्द है, परन्तु मैं 'किलवर' या रूनडोरी शब्दसे परिचित नहीं हू जो (रसाके) लिये व्यवहृत हुआ है।

लटकता रहता है जो शत्रुओंको घायल करने या गोस्तके टुकड़े २ करनेके काममे आता है, कुछके पास बन्दूक होती है, परन्तु प्राचीन साधारणता आक्रमण करनेका शस्त्र है जिसके चलानेमे वे बहुत ही प्रवीण या कुशल होते है उनका पहिनावा भट्टी और मुसल्मानोंसे मिलता है, परन्तु उनकी पगड़ीमे एक ऐसी विशिष्टता होती है जिससे सोढा हमेसा पहिचान लिया जाता है सोडा मरुभूमिमे तितरवितर पाये जांत है और इस जातिकी शाखाएँ मूलवशकी अपेक्षा अधिक संख्यामे पायी जाती है जिसमेसे सुमाचा शाखा–इसमे हिन्दू मुसलमान दोनो ही शामिल है–अधिक प्रसिद्ध है। कौरव–यह राजपूतोंकी जाति असंख्यामे धातके 'थलमे' पायी जाती है और लूटपाटके होते हुये भी यह पूर्णरूपसे परिभ्रमणशील है।

उनके वास करनेका कोई नियत स्थान नही है, परन्तु अपने भेडोके वृन्दको साथ लेकर इधर उधर फिरा करते है और जहाँपर पानीका सुपास या गोरुओंको चरानेके लिये हरितभूमि मिलजाती है, वहांपर वे डेरा जमादेते है, और यहांपर थोडे दिनोके लिये वे 'पीलू' (Peeten) की सजीव–वृक्षमे लगी हुई–शाखाओंको मिलाकर झोपडे निर्माण करलेते है, जिनकी चोटीकी पत्तियोंको ढांक देते है और अन्दर मट्टीका पलस्तर लगादेते है और इस चतुरताके साथ वे इसको बनाते है कि बाहरसे देखने पर कुछ चिह्नतक नही दिखलाई पड़ता है तौभी घूमते हुए सेहरीसे वनमे बने हुए इन सुरक्षित स्थानोकी हमेशा खोजमे रहते है जिसमे गड़रियेका स्वल्प अन्न रक्खा रहता है जो उनके चारो तरफ छोटे २ टुकड़ोसे उत्पन्न हुआ है। जो अपने निरन्तर घूमनेवाले भाइयोंके बीचमे खासकर परिभ्रमणशीलताके लिये प्रसिद्ध है अथवा परिभ्रमणता इनके ही बांट पड़ी है उन कौरवोंकी चंचल प्रकृतिका कारण शाप मेरे धातीने कहा है जो उनको प्राचीनकालमे मिला था।

ऊंट गाय भैस और बकरियोको पालते है जिनको वे चारुन और दूसरे व्यापारियोंके हाथ बेच देते है। वह बड़ी ही शान्तिप्रिय जाति है,और अपने समस्त राजपूत भाइयोंके समान अफीमके नशेमे जो समस्त नैतिक और शारीरिक रोगोकी दूर करनेवाली एक मात्र औषध है मनके लड्डू बांधा करते है जिसमे वे समस्त मरुभूमिको अपनी इच्छामात्र ही बनाकर जनपूर्ण कर सकते है। महल धोते या धोती कोखोके समान अल्पसंख्यामे धातमे निवास करती है। इनका स्वभाव कौरवोसे मिलता है, और पूर्णरीतिसे गडरियेका जीवन व्यतीत करते हुए कुछ भूमिको जोतलेते है जिसमे अन्नका पैदा होना मेघराजकी कृपापर अवलम्बित है। वे अन्न और जीवनकी आवश्यक वस्तुओके बदलेमे घीको देते है। रावरी और छांछ मरुभूमिका उत्तम भोजन है बाजरा ज्वार और कैजरी का दो सेर आटा कई सेर छांछेम मिलाकर आंच पर रख कर किंचिन्मात्र गरम करलिया जाता है और यह भोजन एक बड़े खान्दानके लिये काफी होगा।

भारतवर्षके मैदानोकी अपेक्षा यहांकी गाएं बहुत बड़ी होती है और प्रतिदिन आठसेरसे लेकर दश सेरतक दूध देती है। चार गाओंसे उत्पन्न हुए घीकी विक्रीसे एक

घरका या कुटुंबका जिसमे दश आदमी हो अच्छी तरहसे जीवन निर्वाह होसकेगा और हर गायोकी कीमत दश रुपयेमे पन्द्रह रुपये तक दूधके परिमाणके अनुसार होती है। यह रावरी जो अफ्रीकाके होसकौपके सदृश होती है प्रायः ऊंटके दूधसे बनायी जाती है जिसमेसे घी नही निकाला जासकता है और जो तुरन्त ही अलग रखने पर सजीव ढेरसा होजाता है। सिन्धकी घाटीसे सूखी मछली ऊंटो या घोड़ों पर लदकर आती है और पूर्वमे वरमेरतककी समस्त जातियां इसको खरीदती है। सूखी मछली दो टुकराकी एकसेर मिलती है घातियोके प्रत्येक गावँ या पुरमे दश झोपड़े होते है यह कौरवोके झोपड़ाके समान होता है और थोड़े दिनके लिये निर्माण किया जाता है।

लोहाना यह जाति धात और तालपुरामे अधिक संख्यामे पायी जाती है। पहिले वे (लोहाना) राजपूत कहलाते थे परन्तु व्यापार करनेके कारण वैश्य जातिमे परिणत होगये है। वे लेखक और दुकानदार होते है और किसी किस्मका रोजगार करनेमें जिससे उदरपालन होसके उनको एतराज़ नही है और 'बुभुक्षितः किं न करोति पापं' उक्तिके अनुसार वे विल्ली और गायको छोड़कर प्रत्येक वस्तु भोजनीय समझते है।

अरोरा—यह जाति लोहाना जातिके समान हरपेशा जैसे व्यापार, खेती, करनेको तैयार है, और मेहनती चालाक, और अक्लमन्द होनेके सबबसे सिन्धराज्यमे नीचे पदोपर नियत किये गये है। मितव्ययी अरोरा और इन्हीके समान अनेक जातियोकी क्षुधा शान्त करनेके लिये ठंढे पानीमे मिलाहुआ थोड़ासा आटा काफी है। हम इस बातसे अपरिचित है कि अरोरमे रहनेके कारण इस जातिका नाम अरोरा पड़गया है। भाटिया जातिने अश्वारोही काम छोड़कर वैश्यवृत्ति स्वीकार करली है और इस विनिमयसे उनको वहुत ही लाभ हुआ है।

इनका स्वभाव अरोराके सदृश है और कर्मण्यता और संपत्तिमे अरोरासे उतरकर इनका ही नंबर है। शिकारपुर, हैदराबाद, सूरत और जैपुरमें अरोरा और भाटियोके व्यापार करनेके लिये कोठियां बनी हुई है।

ब्राह्मण—मरुभूमि और सिन्धके ब्राह्मण वैष्णव धर्मका छलन करते है। ये ब्राह्मण मनुकी आज्ञाएँ वहाँतक ही शिरोधार्य करते है जहाँतक इस मरुभूमिमे वे कष्टप्रद न हो। यहां वे (ब्राह्मण) स्वतः ही कानून या स्मृति है। वे जनेऊको पहिनते है परन्तु यहां पर यह धर्मसंबन्धी कृत्य करानेवाला या पुरोहितीका चिह्न नही समझा जाता है। क्योकि व्यर्थ कालक्षेप करनेवाले मनुष्यकी यहां कुछ प्रतिष्ठा नहि है। वे खेती करते है और अनेक आवश्यक वस्तुओंको वचा हुआ घी देकर वदलेमे खरीदते है। वे धातमे बहुतायतसे पाये जाते है अकेले सोढा रानाका निवास स्थान चोर ही वैष्णवसंप्रदायके सौदार है और अमरकोट धारना और मित्तीमें इनके कई घर है। वे मछली नहीं खाते है और न हुक्का पीते है, परन्तु माली या नाईका वनाया हुआ भोजन करलेगे, वे चौका नही लगाते है अधिक सभ्य देशमे अपरिहार्य है या जिसके विना काम चलही नही सकता है। वास्तवमे सिन्ध देशमे रहनेवाली हिन्दुओकी सव जातियां भटियारिनके

हाथका बना हुआ सरायमे भोजन करलेगे। वे विना किसी भेदाभेदके विचारके हर एकके वर्तन व्यवहृत करते है जो केवल थोड़े रेत और पानीसे साफ किये जाते है। वे मुर्देको जलाते नही है परन्तु देहरीके निकट पृथ्वीमे गाड़ देते है, और समियाईवाले या धनी छोटासा चबूतरा वनादेते है जिसपर शिवकी प्रतिमा और जलका भराहुआ कलश रखदेते है। इस देशमे कोली और लोहानोंको छोड़कर सब जातियां जनेऊको पहिनती है जिसको हिन्दुस्तानमे केवल द्विजातिमात्र धारण करती है। इस प्रथा की मूल उत्पत्ति यहांके गवर्नरोसे है जिन्होने उत्तम और अत्यन्त निकृष्ट काम करनेवालोके पहिचानके लिये यह प्रथा जारी की थी।

रेवारी–समस्त हिन्दुस्तानमें लोग इस शब्दसे परिचित है और यह शब्द ऊंटोंका पालन पोपण करनेवालोके लिये व्यवहृत होता है परन्तु हिन्दुस्तानमे इस कामको करने वाले सदासे मुसलमान होते है। मरुभूमिमे यह एक अलग जाति है और हिन्दू है जिनका एकमात्र व्यवसाय ऊंटोका पालना या उनका चुराना है। इस पिछले काममे वे असामान्य दक्षता या फुर्ती दिखलाते है। और वे भट्टियोके साथ दाऊदपोतरा तक ऊंटोके चरानेके लिये धावा मारते है। जब उनको ऊंटोका चरता हुआ वृन्द मिलता है तव सबसे बढ़कर पराक्रमी और अनुभवी अपना भाला उस ऊंटके मारता है जिसके पास वह पहिले पहिल पंहुचता है और ऊंटके खूनमे कपड़ेको भिगोकर वह भालेके नोकपर रखकर दूसरे ऊंटके नाकके पास लेजाता है और फिर उलटे पांव बड़ी शीघ्रगतिसे भागता है और अपने नायकके उदाहरण और खूनके सुगन्धसे लुभाया हुआ समस्त ऊंटोका वृन्द इसके पीछे जाता है।

जाखूर, शियाध, पुनिया संपूर्ण नाम जीतवंशके है और इनमेसे कुछ लोगोने उपविभागोमे वटे हुए होने पर भी प्राचीन व्यवहार और धर्मको नही छोड़ा है परन्तु अधिकाश भागने इसलामधर्मको स्वीकार कर लिया है और जातीय नामको अवतक जीवित वनाये हुए है। ये लोग जिनको पहिले गिना चुके है सीधे और मेहनती है और मरुभूमि और घाटीमे पाये जाते है। उनको छोडकर कुछ तितरवितर प्राचीन घराने पाये जाते है जैसे सुलतान और खमरा जिनके इतिहासिक वृत्तान्त हमको विदित नही है, जोहिया सिन्दिल इत्यादि अनेक है जिनकी उत्पत्तिका उल्लेख मरुस्थलीके इतिहासमे होचुका है।

अव हम हिन्दू जातियोके साधारण वृत्तान्तको छोड़देगे जो (हिन्दु) समस्त सिन्धदेशमे मुसलमानोके इच्छानुकूलचलते है जो अपनी असहन शीलताके लिये, जैसा कि पहिले कहचुके प्रसिद्ध है।

---

(१) अब्बुलफजल विजौरके सूवेका वर्णन करते हुए जिसमे यूसफजाई रहा करते थे, लिखता है कि "सुलतान जाति जो अपनेको सुलतान सिकन्दर जुलकरनैनकी लड़कीके वंशज कहते है, मिर्जा उलघवेगके समयमें कावुलसे आयी और इस देशपर अपना अधिकार जमाया"। मि० एलफिण्स्टोनने सिकदरके वंशजोंका पता लगानेको व्यर्थ ही कोशिश की।

प्रसिद्ध है कि हिंदुओंका नम्बर हमेशा दूसरा है कुँआपर हिन्दूको मुसलमानके पानी भरलेने तक धैर्य पूर्वक ठहरना चाहिये या भोजन बनाते समय यदि कोई मुसलमान आगको मांगे तो उसी समय उसको देना चाहिये नही तो हिन्दूके शिरपर चमरछत्रकी वरसा होगी।

सेहरी, कोस चन्दी सुदानी मरुभूमिकी मुसलमानजातियोमे सेहरीकी प्रथम गणना है और कहा जाता है कि जड़मे यह हिन्दू है और प्राचीन अरोराके वंशके कुलजात कहेजाते है परन्तु इनकी उत्पत्ति चाहे सेहरीसे पाटिंजरने साहिर लिखा है वंशमें हो या अरवी शब्द सेहरा मरुभूमि जिसके वह हुआ है इसकी व्युत्पत्ति हो कुछ बड़े महत्वकी वात नही है।

कोसा या खोसा सेहरोकी शाखा है और इनकी आदतें भी वैसी ही है। इन्होने अपने लूटके तरीकेको अब नियमबद्ध करदिया है और कौरी एक किस्मका कर जो रक्षार्थ डाकुओंके आदमियोंको दिया जाता है–नामक कर नियत किया है जिसमे हल पीछे एक रुपया और पांच धड़ी अन्न लिया जाता है और यह कर गांवके गडरियो तकसे वसूल किया जाता है। इनके वृन्दके लोग विशेपकर ऊंट पर चढ़ा करते है यद्यपि इनमेंसे कुछ घोड़े पर होते है सेल या साँग तलवार और ढाल इनके शस्त्र है परन्तु बन्दूक किसीके ही पास होती है। वे लूटनेके लिये चारो तरफ सौ कोस और जोधपुर और दाऊदपुराके राज्योमे भी चले जाते थे।

परन्तु राजपूतके संग युद्ध करना वे बरादेते है जो (राजपूत) सेहरिके वारेमे कहता है कि युद्धके नकारा बजातेही सेहरी रणभूमिमे अवश्यही शयन करेगा। मरुभूमिके दक्षिणी भागमे वे खासकर रहते है, और नवकोट भित्तीके निकट बुलेरीतक इनमेसे वहुतेरे उदयपुर जोधपुर और शिवबहके राज्यमें नौकरी करलेते थे परन्तु वे कायर और नमकहराम है।

सोढावंशसे जिन्होने इस्लामधर्मको स्वीकार कर लिया था सुमाचा उनमेसे एक है, और दोनो ही थल और घाटीमे अधिक संख्यामें पाये जाते है जहाँ उनके बहुतसे गांव है। उनकी आदते धातियोसे मिलती है परन्तु उनमेसे वहुतेरे सेहरीकी संगति करते है और अपने भाइयोको लूटा करते थे। वे अपने शिरके वाल नहीं मुंडवाते है इस लिये मनुष्यकी अपेक्षा वे अधिकतर पशु दिखलाई पड़ते है। वे किसी जानवरको रोगसे नही मरने देते है परन्तु जव उसके आरोग्य होनेकी कोई आशा नही रहती है तव वे उसको मारडालते है इनकी स्त्रियां वड़ी कर्कशा होती है और अपने मुखको झाँपती नहीं है। राजूर–वेवे कुलके कहेजाते है और भट्टी केवल मरुभूमि या जैसलमेरकी सीमाओंतक जैसे रामगढ़केला, जरियाला इत्यादि तक–और जैसलमेर और ऊपरी सिन्धके बीचवाले थलतक अपना गमनागमन करते है। वे खेती करते है, भेड़ चराते हैं और चोरी करते है और जिन लोगोने इसलाम धर्मको स्वीकार किया है उनमे सबसे निकृष्ट समझे जाते है।

ओमुर और सुमरा प्रमरवंशके है और अब खासकर मुसलमानी धर्मके पैरोकार है यद्यपि जेसलमेर और ओमुरसुमराके थलमे अल्पसंख्यामे पाये जाते है । इनका वर्णन हम काफीतौर पर करचुके है ।

कुलोरा और तालपुरी सिन्धदेशमे प्रसिद्ध जातियां है। सिन्धदेशके पिछले शासन-कर्त्ता कुलोरा जातिके थे और वर्त्तमान शासन कर्त्ता तालपुरी जातिके है,और यद्यपि एकने ईरानके अब्बशैदसे अपनी उत्पत्ति कहनेका साहस किया है और दूसरेने पैगम्बर महम्यूदसाहिबसे पैदा होनेका दावा पेश किया है तौभी यह कहाजाता है कि दोनो ही बलौचके समान है जो विशेपरूपसे जीतवंशके कहेजाते है ।

तालपुरियोकी आवादी लोहरी सिन्धकी आवादीकी चतुर्थांश है और वे हैदरावादके राज्यको लोहरीसिन्धकी अयथार्थ नाप रखते है । वे थलमे नहीं पाये जाते है।

नुमरी लुमरी या लुका–यह बलौच वंशका महान् उपविभाग है और अबुलफजलके कथनानुसार कुलमानीसे उतरकर है और रणक्षेत्रमे तीनसौ सवार और सात हजार पैदल उपस्थित करनेकी सामर्थ्य रखते है । लैडविन और रेनल साहिवोने नुमरीका नोमुर्दी करदिया है नुमरी या लुमरी जो लुका भी कहलाते है–लुका शब्द लोमडीके लिये विशेष प्रसिद्ध है, जीतवंशके है । जातीय शब्द बलौचकी जिसको वे धारण करते है क्या व्युत्पत्ति है, भविष्यतमे इन विषयोका अनुसन्धान करनेवाला चाहे इसका पता लगावे कि यह नाम उन्होने बलूचिस्तानसे लिया या उसको दिया ।

जीहूत जूत या जित अत्यन्त प्राचीन जाति, जो समस्त राजपूत जातियोकी एकत्रित संख्यासे अधिक है। अब भी समस्त सिन्ध देशमे समुद्रसे दाऊदपूतरातक अपने प्राचीन नामको बचाये हुये है । परन्तु थलमें यह नही पायी जाती है । इनकी आदते अपने पड़ोसियोकी आदतोसे कुछ ही भिन्न है। सबसे पहिले इसलाम धर्म स्वीकार करने वालोमेसे वे एक है ।

मेर या मेर–हमको यह कदापि आशा न थी कि सिन्धकी घाटीमे मेरा या पहाडीजाति मिलेगी, परन्तु मेर शब्द काफी तोरसे इस बातको प्रमाणित करता है कि वे भट्टी वंशके है ।

मोहर या मोर–भट्टी वंशके कहे जाते है ।

जतावुरी वोरीया ही एकमात्र भूतकी प्रसिद्ध पदवीको धारण करते है और शैतानके पुत्र की प्रवलतर उपाधि भी इनकेही बाटमे पड़ी है। इनकी उत्पत्ति संदेहजनक है परन्तु इनकी गिन्ती वातुरी खेनगर और समस्त राजपूतानामे फैले हुये दूसरे चौर-वृत्ति करनेवालोमे है जो तुम्हारे शत्रुका शिर या उसकी पगडी लादेंगे । वे दाऊदपोतरा विजनौत, नोक नवकोट और ओढुरके थलोमे पाये जाते है । वे अपने ऊंटोको किराये पर चलाते है और कारवाँ की रक्षा करनेके लिये भी नियुक्त किये जाते है ।

जोहिया, दहिया, मगुलियोने पूर्वकालमे राजपूत होनेपर भी अब इसलाम धर्मको स्वीकार करलिया है । और घाटी या मरुभूमिमे अल्पसंख्यामे पाये जाते है । वैरीबी–

बैरीवी-वलौचकी एक शाखा,खैरोवी, जनम्री, ओंदुर वाधी नामकी अनेक जातियाँ पायी जाती है जिनके पूवपुरुष प्रमर और शांकला राजपूत थे । परन्तु संख्यामे अल्प या अप्रसिद्ध होनेके कारण हमको इनके वर्णन करनेकी कुछ जरूरत नहीं है। दाऊदपोतरा-यह छोटासा राज्य, यद्यपि हिन्दूधर्मकी सीमासे बाहर है, तौभी मुश्किलसे मरुस्थलीकी सीमाके अन्तर्गत है और जिसकी रचना जैसलमेरके भट्टी राज्यका कुछ अंश काटकर आधुनिक समयमे हुई है। उस वंशके विषयमे हम कुछ नही जानते है जिसने इसकी नीव डाली, और हम सिर्फ इसी बातका वर्णन करेगे जिसका उल्लेखतक मि एलफिन्स्टोनने नहीं किया है-जिनका इस राज्यके अधिपती और राजधानी भावलपुरका रोचक वृत्तान्त पाठकोंके पढ़नेके योग्य है जब वह कावुलको जातेहुए यहांपर ठहरे थे।

दाऊदखाँ दाऊदपोतराकी नीव डालनेवाला सिन्धुनदीके पश्चिममे शिकारपुरका निवासी था जहाँ उसने प्रजाकी हैसियतसे कई गुना अधिक शक्ति संपादन की उसके स्वामी कन्दहारके सम्राट्ने अपनी सेना इसको दमन करनेको भेजी । शाही फौजका सामना करनेमे नाकाबिल होनेकी वजहसे उसने अपनी जन्मभूमिका परित्याग किया, और अपने घर गृहस्थी और जंगम संपत्तिको लेकर सिन्धुनदीके इस तरफकी मरुभूमिमे चला आया । शाही फौज बराबर पीछा करती हुई सूतीअल्लाह स्थानपर उसके निकट आ पहुँची । दाऊदके लिये दो बातोंमेसे एकको किये बिना छुटकारा न था कि यातो वह स्वयं अपनेको शत्रुओंके अधीन करदे या अपने घरवालोको मारडाले जो उसके पलायन या बचावमें बड़ी भारी बाधा डालते थे उसने राजपूतोके समान व्यवहार किया और अपने दुश्मनोंसे लोहा लिया जो इस साहसिक कर्मसे भयभीत या धैर्यच्युत होकर और दाऊद पर आक्रमण उचित न समझकर भागगये । दाऊदखाँ अपने साथियो समेत सिन्धके समतल मैदानमे या 'कच्ची' मे बसगया और धीरे २ उसने अपने राज्यकी सीमा थल तक बढ़ायी । दाऊदके बाद मुबारकखां मसनदपर बैठा, फिर उसका भतीजा भावुलखां सिंहासनासीन हुआ जिसका बेटा सादिक महम्मदखां भावलपुर या दाऊदपोतराका वर्तमान अधिपती है। दाऊदपोतरा की उपाधि दोनोहीके लिये देश और उसके स्वामी-लागू है । मुबारकखांने ही भाट्टियोसे खादल जिला छीन लिया था, जिसका जिक्र जैसलमेरके इतिहासमे कईवार होचुका था, ओर जिसकी राजधानी देरावल है जिसकी नीव आठवी शताब्दीमें रावल देवराजने डाली थी, और यहांपर दाऊदके वंशजोने अपना निवासस्थान नियत किया था । उस समय देरावलमे भाट्टियोकी एक शाखा रहती थी जिसने अतिप्राचीन समयमे मूलवृक्षसे अपना सम्बन्ध तोड़डाला था। इसके सरदारको रावलकी पदवी है और उसके वंशज अपने देशनिकालेके बाद गुरियालामे जो बीकानेरके अधीन है, पांच रुपया दैनिक वेतनपर जो उनके जीतनेवालोने नियत किया है रहते है।

"दाऊद पुत्रकी राजधानी भावलखाँने गरहके दक्षिणी किनारेकी तरफ बसायी और उसका नाम अपने नामपर रक्खा, उस स्थानपर प्राचीन भट्टी नगर था जिसका नाम मै

नहीं जाना सका, । तीस वरसं वीते कन्दहारी सेनाने दाऊदपोतरापर आक्रमण किया और देरावलको घेरकर अपने अधिकारमे करलिया, और भावलखांको वीकमपुरके भाइयोंसे रक्षा मांगनेके लिये विवश किया ।

एक सधिपत्र लिखागया जिसके द्वारा देरावल उसको लौटादिया गया और भावलखॉने फिर एकबार अवदाली शाहकी अधीनता स्वीकार करली और अपने पुत्र मुवारकखांको रुपया बटानेके लिये वतौर जामिनके भेजनेपर शाही सेना चली गयी । मुबारक तीन वरस तक कावुलमे रहा और आखिरकार फिर स्वतंत्र किया गया और भावलपुत्रखांकी उपाधिसे विभूषित हुआ, राज्य पानेके उद्योगमे देखकर भावलखांने अपने पुत्रको कैदकर क्जिरके किलेमे डाल दिया जहां वह भावलखांके मृत्यु पर्यन्त उसी हालतमे पड़ा रहा भावलखांकी मृत्युके कुछ पहिले दाऊदपोतराके सरदारोंने–वुद्धिपर खैदानी भोजगढ़वाला तिररोहके खुदावक्स गुरहीके इरितयारखां और ओचके हाजीखां–मुवारकखांको किजरके किलेसे निकाला और भावलखांका मृत्युसंवाद उनको मुरारमे मिला जव कि वे वहॉ पहुँचे । वह राजधानीतक बराबर चला आया परन्तु नासिरखांने आलमखां गुरग या कावलीच पुत्र अपने पिछले अपराधोकी सजासे डरकर उसको छलसे मरवा दिया और वर्तमान नरेश अपने भाईको सादिकखां मसनदपर बैठादिया जिसने तुरन्त ही मुवारिकके पुत्रोंको अपने छोटे भाई समेत देरावलके किलेमे बन्द करदिया । वे भाग गये और उन्होने राजपूतो और पुरबियोकी सेना एकत्रकर देरावलको हस्तगत करलिया, परन्तु स्तदिक किलेकी दीवालपर चढ़ गया पुरविआओंने कुछ रक्षा न की और उसके दोनो भाई और एक भतीजा इस युद्धमे काम आये । दूसरा भतीजा दीवाल पर चढगया परन्तु पासके सरदारने उसको पकड कर सादिकके हवाले कर दिया जिसने उनको मरवा डाला और यह अनुमान किया जाता है कि यह सब उपाय सादिरखांने रचे थे ताकि उनके खून करनेका बहाना हाथ लगे । सादिकखांने जिस नसीरखांकी मददसे गद्दीको पाया था उसको ही मरवाडाला जब कि उसकी ताकत रैयतकी है सियतसे ज्यादा बढ़ गयी थी । खैरानी सरदार हमेशा ही कुछनकुछ षड्यन्त्र अपने स्वामीके विरुद्ध रचा करते है, जिसका एक उदाहरण वीकानेरके इतिहासमे दिया गया है जब कि तीरारोह और भोजगढ़ जप्त करलिये गये थे और उनके सरदार क्जिरके किलेमे दाऊदपुतराका राजकारागार–कैदकर भेज दिये गये थे गुरही अव भी हाजीखांके पुत्र अवदुल्लाके अधिकारमे है, परन्तु इसमे कोई भी राज्य सलग्न नही है । सादिक महम्मदखांमे अपने पिताके समान कोई गुण नहीं है जिसको मारवाड़के विजयसिंह अपना भाई कहा करते थे । दाऊदपोतराके सरदार आपसमे ही लडा करते है, और भट्टीलोग जिनसे अव भी लूटनेके ऐवजमे वे कर वसूल किया करते है, इनको वड़ी ही घृणासे देखते है ।

---

(१) यह स्मारक टिप्पणी सन् १८११ या १८१२ में लिखी गयी थी ।

भावलपुरके सरदारको अब कन्धारसे कुछ डर नही है और वह ऊपरी सिंधमें अपने पड़ोसीसे सलाह रखता है, यद्यपि उसको लाहौरके रनजीतसिंहकी धमकियोसे प्रायः भयभीत होना पड़ता है जो ' दाऊदके सन्तानो ' पर अपना प्रभुत्व वतलाता है ।

रोग–अनेक प्रकारके रोगोसे जिनसे यहांके निवासी स्वास्थ्य और उदरभर भोजन न मिलनेके कारण या सड़ा हुआ स्वास्थ्यको हानिकारक जल पीनेके कारण पीड़ित रहते है ' रतौन्ध' नारू और वेरीकोसने इस देशको अपना घरही वना लिया है । रतौन्ध और वेरीकोस विशेष कर दीन दुखियाको सताती है, और जिनको बेवशी-मे बहुत दौड़ धूप करनी पड़ती है जब कि रेतमे धसे हुए आगेको निकालनेके लिये अत्यावश्यक श्रमके कारण जिससे उनके रगोपर बड़ा ही जोर पड़ता है, उनके अंग अकसर टूट जाते है । तौभी अभ्यासका वल ऐसा होता है कि मेरे अधीन घातके निवासी जो मरण पर्यन्त (कासिद) का काम सिन्धुनदी और राजपूतानेके नगरोके बीचमें करते रहते थे । इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हिन्दुस्तानके मैदानकी कठोर भूमि उनको अधिकतर थका डालती है बनिस्वत कि उनके देशकी रेतकी पहाड़ियां ।

परन्तु मैने कभी भी धातीकी इस बातका विश्वास नही किया,वावजूद कि उसके भोलेपन या सिधाईके, यद्यपि यह उनकी गर्वोक्ति थी, उसकी फूली हुई नसें जिनकी उपमा पिंडुली पर बन्धी हुई पटीसे दीजासकती थी । यदि उसके कथनको झूंठा नही करती थीं कमसे कम इतना तौ भी साबित करती थी कि मरुभूमिमे पैदल चलनेका ही यह फल उसको भोगना पड़ता था । राजकुमारसे किसान पर्यन्त कोई भी इस नारुरोगसे नही छुटा है, और वह मनुष्य बड़ा ही सौभाग्यवान है जिसको यह रोग एकही वार हुआ है यह रोग केवल मरुभूमि और पश्चिमी राजपुताना और मध्यस्थित राज्योमे नही होता है, परन्तु अर्वली पर्वतके उसपार इस रोगसे आक्रान्त इतने मनुष्य है कि आपसमे मिलने पर " तुम्हारा नारु कैसा है " यह उनका कुशल प्रश्न पूछनेका साधारण वाक्य होरहा है । यह सामान्यता पर और जोड़ोके चमड़ेमे होता है और इसकी वेदना सहन करनेकी सामर्थ्यके वाहर है । यहांके निवासी इस वातमें संमत नही है कि यह रोग रेत या पानीके अन्तस्थित अति क्षुद्र जन्तुके द्वारा उत्पन्न होता है या सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु-ओके जिनमे संजीवता या चैतन्यता (Vital precipple) गुप्तरूपसे वास करती है । शरीरमे छिद्रोके द्वारा घुस जानेपर होता है । खालके नीचे और उससे चिपटे हुये स्थान पर पहिले पहिल यह रोग एक दाग उत्पन्न करता है जो धीरे २ वढ़कर और फूलकर आखिरका तमाम शरीरमे जलन और सूजन पैदा करदेता है । कीड़ा तव चलने लगता है और जव यह कुछ अंशमे इसके छुटकारेके लिये आवश्यकीय सजीवता प्राप्त करता है तव इसकी गति रुकती ही नही है और रात दिन अभागे रोगीको काटा करता है, जो पतले चमड़ेके कटने पर अपने शत्रुके थिरकी प्रतिदिन देखनेकी एकमात्र आशासे ही

प्राणको नही छोड़ता है। दवाके लिये यही समय अति लाभदायक है, कुशल नारु वैद्य बुलवाया जाता है जो कीड़ेका शिर पकड़ कर उसको सूईके चारो तरफ लपेट देता है. इस प्रकारसे निश्चित समय पर सूईको गति प्रदान कर टूटनेके खौफके विना जहांतक होसकता है उसको सूईके चारो तरफ लपेटता जाता है। वह मनुष्य वड़ा ही अभागा है जिसका तागा टूटजाता है। जव वह ज्वरके नीदमे लात मारकर सजीव तागाको तोड़ डालता है तब दशगुणा सूजन जलन पककर पीब निकलने लगता है। यदि धैर्य और होशियारीसे उसके खोचलेनेमे समर्थ हुये तो रोगी आरोग्य होजाता है।

जब कि उनका पैतृक शासकरहता है, मेरा मांस कीड़ोसे परिपूर्ण है मेरी खाल टूट गई है और घृणा करनेके योग्य है मै लेटा हुआ कहा करता हूँ कि कव रात समाप्त होगी और मै उठूंगा ? तब मै इस वातकी कल्पना करूं कि वह अवश्य ही नारुसे आक्रान्त हुआ है जिससे वढ़कर कोई रोग मनुष्यके लिये यंत्रणापूर्ण नही है।

भारतकी तरह यहाँ पर भी वच्चो और वयप्राप्त मनुष्योके रोग विद्यमान है। इनमेसे शीतला या तिजारीका अधिक प्रकोप है। शीतलाका सामोपचार वे उनता ही करते है कि रोगीको शीतला माताके ऊपर छोड़ देते है; और दूसरे रोगोके प्रतीकारार्थ वे सुकोड़नेवाली दवा देते है जिसका एक अंग अनार (यदि मिलसका) के छिलकेका काढ़ा है। अमीर दूसरे देशोके अनुसार नीमहकीमके पल्ले पड़ते है जो वात संवन्धी विप देकर जिनके असरसे वे स्वयं ही अज्ञात है उनको कातिल वीमारियोका शिकार बनाते है। इन वुखारोके प्रभावसे अकसर तिल्ली वढ़जाया करती है और जिसकी दवा उनके पास एकमात्र गर्म लोहेसे दग्ध करना है।

दुर्भिक्ष इन देशोका महान् प्राकृतिक रोग है। इन देशोमें अत्यन्त प्राचीन कालसे एक कल्पित कहानी प्रसिद्ध चली आती है जिसमे यह कहा गया है कि भूखा माताके आगमनसे अकाल पड़ता है। एक अकाल ग्यारहवी शताव्दीमे पड़ा था और वारह बरस तक रहा था, जिसका उत्कृष्ट प्रमाण कई राज्योके वंश परंपरागत वातोमे विद्यमान है। भूलसे इस अकालका संवन्ध लाखा फूलनीके नामसे जोड दिया गया है, जो शिवजी राठौरका पहिला जिसने कन्नौजको त्याग किया था–शत्रु था और जिसने मरुभूमिके इस Rabin Hood राविनहडको संवत् १२६८ या सन् १२१२ ई० मे मारडाला था। करीव २ एक शताव्दी पहिले हमीरके समयमे कगरनदीका लुप्त होजाना अवस्यही इस

(१) मेरे दोस्त डाक्टर जोसफ डंकन) जब मैं उदयपुरमे पोलिटिकल ऐजट था तब यह रेसीडेन्सीमे एक पदपर सुशोभित थे) पर 'नारू' ने भयंकररूपसे आक्रमण किया। यह Aucb joint में निकला और इसके निकालनेके उद्योगमे इसके टूट जानेके कारण उन सब बुराइयोका सामना मेरे दोस्तको करना पड़ा जिनको मैं वर्णन करचुका हूँ जिससे वह लंगड़े होगये, और स्वास्थ्य विगड़ जानेके कारण वह उसके पुन प्राप्त करनेके लिये उनको केटाके जानेके लिये बाध्य होना पडा, जहाँ कि मैंने अठारह महीनवाद स्वदेशको जाते हुए देखा था, परंतु तव भी पूर्णतया उनका लंगड़ापन नहीं गया था।

दुर्भिक्षका कारण रहा होगा। उनकी गणनानुसार हर तीसरे साल कुछ न कुछ अकालका कोप सहना पड़ता है और सन् १८१२ का अकाल तीन या चार बरस तक रहा और जिसके अधिकारकी सीमा भारतके मध्य रियासतों तक पहुंच गयी थी जहांसे गरीबोंके यूथके यूथ अपने देशको छोडकर गंगाके मैदानमे चले गये थे और उन्होने अपने प्यारे बच्चोंको और अपने स्वतंत्रताको मुट्ठीभर अन्नके लिये बेचा था।

फसल, पशु और वृक्ष—ऊंट "मरुभूमिका जलयान" का वर्णन प्रथम ही करना आवश्यक है। यहां इसके विना काम नही चलसकता है—मरुभूमिवासियोंके यह अपरिहार्य वस्तु है, वह हलमे जोता जाता है, कुंआसे पानी खीचता है। अपने स्वामीके लिये मरुभूमिके रास्तेमे पीनेको लिये मशकोंमें पानी लेजाता है और कई दिनतक यह विना पानीके रह सकता है। उपरोक्त गुण, उसके पैरकी बनावट, जो भूमिके अनुसार सिकुड़ने और फैलनेका गुण रखती है, और उसका सख्त मुह जिसमे वह अपनी जीभसे बाबूल खैर और जवासकी शाखाये रखलेता है जिनमे सूईके समान नुकीले सख्त और लम्बे काँटे लगे होते है, सब इस बातकी साक्षी देते है कि ईश्वरने इसके उत्पन्न करनेमे मनुष्यो पर बड़ी ही कृपा और उपकार किया है। यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है कि अरबी पैतृक शासक जो भिन्न २ पशुओंकी—पालतू और जंगली—आदतोका ठीक२ वर्णन करता है और जो स्वयं तीन सहस्र ऊंटोका प्रभु था। ऊंटके इन गुणोका कुछ भी उल्लेख न करे, यथार्थ हल चलानेमें गेड़की अनउपयोगिताका वर्णन करते हुए वह पर्यायसे इस बातको कबूल करता है कि इस काममें बैलके अलावा दूसरोका भी उपयोग हो सकता है। मैदानके ऊंटोकी अपेक्षा मरुभूमिके ऊट अधिक उत्तम होते है और धात और बरमेरके थलोंके ऊंट समस्त संसारमे प्रथम गिने जाते है। जैसलमेर और बीकानेरके राजाओंके पास लड़ाईके लिये सीखे हुए युद्धके योग्य ऊंटोंकी पलटन है। जैसलमेरकी सेनामे दो सौ ऊंट है जिनमेंसे अस्सी महाराजके है, बाकी सरदारोंके बीचमे बटे हुए है, परन्तु मैने इस बातके पूछनेका कभी विचार नही किया कि और राज्योके सवारोंसे यहांके ऊंट सवार क्या निस्बत रखते है या किस परिमाणमे है हर ऊंटपर दो मनुष्य बैठते है एकका मुहँ ऊंटके मुखकी तरफ और दूसरेका पूछकी तरफ, और सेनाके पीछे हटनेके समय वे बड़े ही कामके होते है, परन्तु जब वे शत्रुके अत्यन्त निकट आजाते है वे ऊंटोको घुटनोके बल बैठाते है, उसकी टांगे बाँध देते है और पीछे जाकर ऊंटके शरीरका ही मोर्चा बनाते है छातीतक ऊंचो भूमि मोर्चेका काम देती है और ऊंटकी काठीपर अपनी बन्दूक रखते है। मरुभूमिकी हर किस्मकी झाड़ी या वृक्ष ऊंट अपने खानेके काममे लाता है।

(खर) गदहा, गोरखर या जंगली गदहा मरुभूमिका निवासी है परन्तु धातके निकट दाक्षिणी हिस्सामें, और बरमेरसे बंकसिर और बुलारी तक महान् रन या नमकको मरुभूमिके उत्तरी किनारे २ फैले हुए घने'रो'मे बहुतायतसे पाया जाता है।

नीलगाय सिंह इत्यादि—हिरन और नीलगायकी उत्तम किस्में मरुभूमिके अनेक भागोमें पायी जाती है और यद्यपि मैदानमे रहनेवाले राजपूतोंने उसको अदण्डता मान

रक्खा है जो उसको शायद आखेटमे मारे परन्तु उसका मांस नहीं खाते है, पर मरुभूमिमे उसकी खाल और मांस दोनो ही वड़े काममें आती है । यहां व्याघ्र लोमड़ी शृगाल और सिंह भी पाये जाते है पालतू पशुओमे घोड़ा वैल, गाय, भेड़, वकरी, गदहाकी कुछ कमी नही है और गदहा यहाँ हल जोतनेमे भी व्यवहृत किया जाता है।

वकरी और भेड़–भेड़ और वकरियोके वृन्दके वृन्द मरुभूमिमे असंख्य संख्यामें चरते हुए दिखाई पड़ते है। लोग कहते है कि वकरी कार्तिकसे चैत तक विना पानीके जिन्दा रहसकती है जो विलकुल असंभव या गप्प है,यद्यपि यह प्रसिद्ध है कि वे छ हफ्तेतक जव कि घासकी विपुलता होती है पानीको छोड़ सकती है। दाऊदपोतरा और भट्टीपोहके थलोकी वकरियाँ और भेड़े गर्मीके प्रारम्भमे सिन्धके समतल मैदानमे चली जाती है । गड़रिये अपने वृन्दोके समान पानीकी जगह छांछ पीकर रहते है जिसमेसे मक्खन निकाल लिया जाता है और जिसका घी वनाकर अन्न या दूसरी आवश्यक वस्तुओके वदलेमे वेच देते है। ऊंटोके चरानेवाले उनका दूध पीकर एक मात्र जीवनकी रक्षा करते है और जंगली फलोके सिवाय उनको कभी रोटी तक मयस्सर नही होती है।

वृक्ष और फल–हम अनेक अवसरोपर करली या खैरका उल्लेख करचुके है, ' खैजरी ' के छुलकेको सुखाकर आटा वनाया जाता है जिसको साग्री कहते हैं, झल जिसमे गड़रिये अपने झोपड़े वनाते है जेठ और वैशाखमे उनको फल प्रदान करते है पीलू भोजनके काममे आता है, ' ववूर ' से एक प्रकारका गोंद मिलता है जो दवामे काम आता है, वेरमे भी सुस्वादु फल लगते है, ऊंट इन सबको भक्षण करते है और ये सब अत्यन्त विपुलतासे पाये जाते है और वहुत ही लाभदायक है, ' जवासके ' स्वच्छ रसका गोंद वनाया जाता है जो दवामे काम आता है, फोककी शाखोसे वे अपने कुएँ ढांकते है, 'सजी' का पौधा वे राखके लिये जलाते है। इनमेसे प्रथम और अन्तिमका सविस्तर वर्णन अत्यावश्यक है।

करील या खैर हिन्दुस्तान और मरुभूमिमे प्रसिद्ध है, हिन्दुस्तानके लोग उसका अचार डालते है परन्तु यहां यह भोजनकी उत्तम सामग्री ख्याल करके इकट्ठा किया जाता है। इसकी झाड़ीकी उंचाई दश फीटसे पन्द्रह फीटतक है और इसके चारोतरफ खूव फैलती है इसकी निरन्तर हरित शाखाएँ पत्र विहीन होती है जिनमे लालरंगका फूल निकलता है, और फल काले करेट एक किस्मका फलके समान होता है। जव इकट्ठा करके उसको चौवीस घंटेतक पानीमे भिगोते है, यह पानी फेंक दिया जाता है, और इसके वाद दो वार फिर उपरोक्त क्रिया कीजाती है तव उसके प्राणान्तक गुण दूर होजाते है, वे फिर उवाले जाते है और नमकके साथ खाये जाते है अथवा अमीर आदमी इनको घीमें तैयार कर रोटीके साथ खाते है। अनेक घरोमे यह वीस २ मनतक मिलता है।

सज्जी एक छोटासा पौधा है और खासकर उत्तरी मरुभूमिमे पैदा होता है, परन्तु जैसलमेरके उन प्रदेशोमे जो खदल कहलाते है। और अव दाऊदपोतराके अधीन है विपुलतासे पाया जाता है। पूगलसे देरावलतक और फिर यहाँसे मुरीदकोट इरितयारखाँकी

गढ़ी होते हुए, खैरपुर तक एक विस्तीर्ण थल है, जिसमे अनेक नीचे सख्त और समतल प्रदेश पाये जाते है जो यहाँ 'चित्रम्' नामसे प्रसिद्ध है जिनकी रचना वरसातके वाद जो पानी एकत्र होता है उसके द्वारा हुई है और इन्ही स्थानेमे सज्जीका पौधा उत्पन्न होता है। नमक जो (subcarbonate of soda) है, जलेहुए पौधेकी राखके नीचे लिखी हुई रीतिसे प्राप्त होता है । गड्ढे खोदकर पौधेको उनमे भरदेते है फिर आगलगा देनेपर एक किस्मका द्रव पदार्थ निकलता है जो तलीमे वैठ जाता है । जलते समय वे ढेरको लम्बे वांसोसे चलाते है या उसपर रेत डालते है जब वड़ी ही शीघ्रता पूर्वक जलता होता है । जव पौधेके गुण निकल जाते है, गड्ढा रेतसे भरकर तीन दिन तक ठंढा होनेके लिये छोड़ देते है, सज्जी फिर निकाली जाती है और किसी दूसरे उपायसे इसमेका मैल दूर कर देते है । स्वच्छ सज्जी रुपयेको एक सेर विकती है, और अस्वच्छ रुपयेकी चालीस सेरसे भी अधिक मिलती है । राजपूत और मुसलमान दोनो ही इस व्यवसायको करते है। और एक पैसा रुपया कर अपने अधीश्वरको देते है । चारूं और मारवाड़ नगरोके रहनेवाले इसको खरीदकर भिन्न २ वाजारोमे लेजाते है जहाँसे यह समस्त भारतमे भेज दीजाती है। सिन्धदेशमे इसका वडा ही व्यापार होता है और समस्त काफिले इसको वेखर तत्तार और कच्छमे लेजाते है। सज्जीके गुण पाकक्रिया जानने से छिपे नहीं है और सख्त पानीमे थोड़ी सी सज्जी मिलाकर दालमे डालनेसे उसको हलका वनादेती है, तमाखू वेचनेवाला अपने व्यापारमे इसका प्रचुर परिमाणमे उपयोग करता है, क्योंकि यह कहाजाता है कि इसमे फिर तमाखूके पौधेके गये हुए गुणोंको वापिस लानेकी शक्ति विद्यमान है ।

अनेक प्रकारके घास यहां पाये जाते है परन्तु वृक्षविद्या सम्बन्धी चित्रके विना इनके वर्णनमे कुछ रोचकता न होगी । यहां बड़ी २ घास कुश नामक पैदा होती है और इसीके नाम पर रामके प्रथम पुत्रका नाम कुश रक्खा गया था और उसके वंशज कुशवाह या कछवाह कहलाते है। यह प्रायः आठ फीट ऊँची होती है, अंकुरदशामे इसको पशु चरते है और जव कुछ प्रौढ़ होजाती है तव झोपड़े छानेके काममे आती है जव कि उसके जड़की रेसेकी जुलाहे कूची बनाते है जो उनके व्यवसायके लिये अपरिहार्य वस्तु है । सरकंडा धामून धवू और अनेक प्रकारके दूसरे घास यहां पर पाये जाते है जिनमेसे गोकरा पापरी और भूरुत कपड़ोमे चिपटनेके कारणसे यात्रीको वहुत ही कष्ट पहुंचाते है ।

---

(१) चित्रम् नाम यहाके समतल और कठोर भूमिवाली प्रदेशोंके लिये व्यवहृत होता है (मि० एलफिंस्टोन लिखता है कि यह प्रदेश घोडेके सूमके शब्दसे गूज उठते है) पर मूल अर्थ इसका 'चित्र' तसवीर है, और चित्रम् नाम पड़नेका कारण यह है कि सदा सविकाल 'मृगजलका चित्र दृष्टिगोचर होता है। यहाँ की भूमि जवाखारसे परिपूर्ण होनेपर कहांतक इस दृश्यको यदि यह इसकी मूल उत्पादक नहीं है उन्नति प्रदान करती है, और इसका उल्लेख हम उत्तरी भारतके भिन्न २ भागोके मृगतृष्णाका वर्णन करते हुए करचुके है ।

खरबूजा–बडा खरबूजा चिपरा, और वामन, गोवर ३ यहां पर वहुतायतसे होता है।

(तोमाता) जिसका हिन्दुस्तानी नाम मुझे मालूम नहीं है, इन प्रदेशोमेका निवासी है और भारतके दूसरे भागोमे भी यह पाया जाता है। हम इस वातको लिखकर इस लेखको समाप्त करते है कि इनके–वृक्षो झाड़ियो या अन्नके–वृक्षविद्या सम्बन्धी नामोंको इस पुस्तकके सूचीपत्रमे देदेवेगे।

यात्रावृत्तान्त।

जैसलमेरसे सिन्धु नदीके दक्षिण तटपर सिवाना और हैदरावाद तक और हैदरावादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरको लौट आया कुलदूरी (पांचकोश)–इस गांवमे पालीवाल ब्राह्मण रहते है, दो सौ घर कुल गुजियाकी वस्ती (२ कोश)– साठघर खास कर ब्राह्मण कुएं।

खावा ३ कोश–तीनसौ घर, खासकर ब्राह्मण एक छोटासा दुर्ग चारवुर्जवाला नीची पहाड़ी पर स्थित है जिसमे जैसलमेरकी सेना रहती है।

कुनोही (५कोश) और सुम (५ कोश)–कुनोही और सुमसे करीब एक मीलकी दूरी पर एक स्थानपर चार या पांच झोपड़ोवाले गांवोका वृन्द है जो सुम नामसे प्रसिद्ध है। इसकी रक्षाके लिये एक वुर्ज है जिसमे जैसलमेरकी सेना रहती है कई कुएं है जिनको यहाँवाले ' वैरिया ' कहते है। यहांके निवासी खासकर भिन्न २ जातिके सिन्धी हे जो अपने भेड़ोके झुडोको चराते है और देव चन्द्रेश्वरसे ' खारा ' लाते है जो वतौर दावनके रंग पक्का करनेके काममे लाया जाता है। सुम और मूलनोहके बीचोवीच जैसलमेर और सिन्धकी सीमा पड़ती है।

मूलनोहे–२४ कोश दश झोपड़ेका गांव है, निवासी विशेषकर सिन्धी ऊंची २ रेतकी पहाड़ियोके मध्यमे स्थित है। सुमासे आधामार्ग १२ कोश पारी पारी से रेतको

---

(१) मूलनोहसे सिवानाको दो मार्ग गये है। घाती पानी मिलनेके कारण दूरकी रास्ते गया। दूसरी सुकरुन्द होकर है जैसा कि नीचे लिखा है।

पैरी	५ कोश			
वादशाहकी बस्ती	.. ६ ”		सुकरुन्द ...	३ कोश.
ओदानी	.. ५ ”		नूला ...	½ ,,
मित्राओ	.. १० ”		मुकरुन्द ..	४ ”
मीरकाखोल	६ ,,		काकाकी वस्ती	६ ,,
सुपुरी	... ५ ,,		सिन्ध	१० ,,
कुम्वरका नाला	९ ,,		सिवाना	½ ,,

ऊपर (ऊपरी) सिन्धसे लावर (नीचे) सिन्धको सड़क गई है।

पहाड़ियों पर्वत श्रेणियों और कभी २ मैदानमे होकर है। (यहां पर्वत श्रेणी ' मुगरा ' कहलाती है) आगेके तीन कोशमे केवल रेत और पर्वतकी श्रेणियां पड़ती है, और शेष नौ कोशमे लगातार एक ऊंचा टीला चलागया है। इस चौवीस कोशकी यात्रामें न कोई कुँआ पड़ता है और न वर्षाऋतुके सिवाय पानीका एक बून्द भी दिखलाई पड़ता है, जब कि पानी पुराने तालावो या वावड़ीमे एकत्र होता है । यहाँ नदीको तावा कहते है, जो अर्द्ध मार्गपर स्थित है जहां कि प्राचीन कालमे एक नगर बसता था। लोग कहते है कि सिन्धको इन देशोके मुसलमान द्वारा विजय किये जानेके पहिले घाटी और मरुभूमि पर प्रमर और सोलंकी जातिके राजपूतोका अधिकार था। प्राचीन ताल और मन्दिरोके भग्नावशेष यद्यपि रेतकी राशिसे बहुत कुछ दब गये है। तौ भी वे इस बातकी साक्षीभूत है कि समस्त ' थल ' किसी समय आवाद–चाहे अधिक या कम था। वंशपरंपरा गत वार्तासे विदित होता है कि बारहवीं सदीमें लाखा फूलनीके समयमें वारह वरसका अकाल पडा था। जिसने इस देशको उजाड़ दिया और अकाल मृत्युसे बचेहुए प्राणी सिन्धके समतल मैदान् या कूर्चा को भाग गये। इस मरुभूमिमे अनेक खेतीके योग्य स्थान है जिसके आगे पशुओके चरानेवाले चाहे सोढा राजूर या सुमेचा क्यो न हो –वह वह रर,रिर मेंसे किसीको लगादेते है। उपरोक्त शब्द मरुभूमिमे पानीके लिये व्यवहृत होते है।

मारे	२ कोश	ये सब दश २ झोपड़ोके गांव है जिनमे राजूरा निवास करते जो इस थलमे खेती करते है या गाय ऊंट भैस बकरियोके झुंडको चराते है। इन गावोंमे अनेक ताल है। राजूरकी वस्तीका ताल'महादेवका दे' कहलाता है।
पलरी	३ "	
राजूरकी वस्ती	२ "	
राजूरका गांव	२ "	

देवचन्देश्वर महादेव (२कोश) सोढा राजाओके राज्यकालमे यहांपर एक नगर था और महादेवका मन्दिर सूरजकुंडके किनारे पर निर्माण किया गया था जिसके खंडहर अब भी विद्यमान है। मुसलमानोंने मन्दिरको तोड़ डाला और तालका नाम बदलकर ' दीन-वाह ' रख दिया। यह छोटासा कुंड ईटोका बना है और खजूर और अनारके वृक्ष उसके तटकी शोभाको बढाते है, और मुल्ला–सिन्धसे आया हुआ–यहांपर रहता है जिसको सब मुसलमान भेट देते है। इस स्थानके चारोओर बारह कोश तक असंख्य ताल ही ताल चलेगये है जहां कि राजूर अपने पशुओको चराते है और खेती करते है। इनके झोपड़े गोपुच्छाकार होते है और इनकी चोटीपर खंभे बांध दिये जाते है जिनको घास और पत्तियोंसे आच्छादित करते है। और प्रायः ऊंटके बालोका बड़ा कम्मल खंभोपर फैलादेते है।

चन्दिकाकी वस्ती–(२ कोश) गांवमे चन्दी जातिके मुसलमान् रहते है । ये यात्रियोके दान पर अपना जीवन निर्वाह करते है।

राजूरकी वस्ती	२	कोश	
सुमैचाका	दो	२	”
राजूरका	”	१	”
”	”	२	”
”	”	२	”
”	”	२	”
”	”	२	”
”	”	२	”

इन गॉवोमे गडरिये सुमैचा, राजूर और दूसरे लोग निवास करते है जो अपने पशुओको लेकर एक स्थानसे दूसरे स्थानको चलेजाते है जव कि हरित भूमि उनको आश्रय देनेके लिये असमर्थ होजाती हैं। इस स्थानमे उनकी आवश्यकताको पूरा करनेके लिये विदानीकी प्रचुरता है।

ओधनिया-७ कोश वारह झोपड़े, राजूरकादो और इसके वीचमे पानीका नाम निशान नही है।

नल्लाह-(५कोश) (थल) या मरुभूमिका ढालूपन नालेके एक मील पूर्वकी ओर समाप्त होजाता है, और लोग कहते है कि यह वही नाला है जो रोरीवेखरके ऊपर डूराके निकट इन्दूरसे निकलता है, रोरीवेखरसे यह सोहराव और खैरपुरके पूर्वमे वहता हुआ निकलता है और जिजर होते हुए वैरसीकाहरको चलाजाता है जहॉसे अमरकोट और चीरके लिये इसमेसे नहर काटी जाती है।

मित्रा ४ कोश साठ घरका गांव है, जिसमे वलौच रहते है हैदरावादका थाना यहॉ है कहीं २ पर नीची रेतकी पहाड़ियॉ है।

मीरकाकू-६कोश दश २ झोपड़ेके तीन गांव पृथक् २ है जिनमे अरोरा रहे है। शिवपुरी ३ कोश एकसौ वीस घर है, निवासी अरोरा, नैऋत्यकोणमे छः बुर्जवाला एक छोटासा किला है जिसमे हैदरावादकी सेना रहती है।

कुमैरका नाला-६ कोश, यह नाला काकुरकी वस्ती और सुकसनूके वीचसे निकलकर पूर्वकी तरफ वहता है संभव है कि यह प्राचीन नहरका प्रवाहमार्ग हो जिसके जाल संपूर्ण देशमे फैले हुए थे।

सुकरुन्द-२कोश एकसौ घर, एक तृतीयांश हिन्दू, खेतीके योग्य भूमि, असंख्य अनपेक्षितनाले; झौ और खैजटीके जंगलसे हर तरफ परिपूर्ण है। नालोके किनारे पर रूई, नील, चावल, गेहूँ जौ, चना, इत्यादि पैदा होते है जूतू-२कोश साठ घर सुकरुन्द और जूतूकै वीचमे एक नाला है।

काजीका सहर-४ कोश, चारसौ घर दो नाले एक दूसरेको काटते है। मखैरो ४ कोश, साठ घर एक नाला मखैरो और जूतूके बीचमे है। काकुरकी वस्ती -६ कोश साठ घर अर्धमार्गमे प्राचीन किलाके खंडहर तीन नहरे या नाले एक दूसरेको काटते है गांव सिन्धुसे चार मील एक पुस्ता या वांध पर वसता है। जिसका पानी वर्षा ऋतुमे गांवके भीतर आजाता है। पुर -१ कोश उतारा या घाट।

सिन्धुनदी--१ कोश नावपर बैठकर उस तरफ उतर कर सेवानमे पहुँचे। सेवानें १, ½ दक्षिण किनारेपर बारहसौ घरका एक नगर जो हैदराबादके अधीन है।

---

(१) नदीसे कुछ दूरपर एक ऊंचे टीलेपर सेवानका नगर बसा हुआ है और खासकर दक्षिणमे कई कुंज हैं। मकान मट्टीके बने हुए प्रायः तीन मंजिल ऊचे है और छतको साधनेके लिये खंभोंका उपयोग किया गया है। नगरके उत्तरकी ओर एक प्राचीन और विस्तीर्ण दुर्गके खंडहर विद्यमान हैं और जिसके सातबुर्ज अब भी दृष्टि गोचर होते हैं; मध्यभागमें राजमहलके चिह्न दिखलाई पड़ते हैं। जो अब भी भरतरीका महल कहलाता है, लोग कहते हैं कि उज्जैनसे अपने भाई विक्रमादित्यसे निकाले जाने पर यहाँ भरतरी राज्य करते थे। यद्यपि कई शताब्दी बीत गई जब कि इन देशोंमें हिन्दुओंका राज्य था तौ भी वंशपरंपरा गत बाकी अब भी बच रही है। वे कहते हैं कि गंधर्वसेनका ज्येष्ठ पुत्र भरतरी अपनी स्त्रीमें इतना अनुरक्त था कि उसका मन राज्यकार्यमें नहीं लगता था। विक्रमने अपने भाईकी राज्यकार्यमे प्रमादता देखकर उसको बहुत समझाया। ज्योंही यह बात रानीके कर्णगोचर हुई उसने विक्रमको देश निकालेका दंड दिलवानेका हठ किया। कुछ दिनोंके बाद एक प्रसिद्ध योगीने राजसभामें आकर राजाको 'अमरफल' प्रदान किया जिसको उसने शंकरकी कठिन तपस्या करके प्राप्त किया था। राजाने वह फल रानीको दे दिया; रानीने अपने जार महावतको दिया; उसने निज वेश्याको दिया; वेश्या गहरे इनाम पानेकी आशासे उसे राजाके पास लेगयी। राजा मनहीमन अपनी रानीके कुलटापन पर क्रोधित होकर रंगमहल को गये और रानीसे फल मांगा। उत्तर मिला "वह खोगया है"। राजाके दिखाने पर रानी मारे कायलीके भाग गयी, और अपने महलके नीचे कूदकर उसने आत्महत्या करली। राजा अपनी दूसरी रानी पिंगलासे मन बहलाने लगा और थोड़े ही दिनोंमे उसके रूपके वशीभूत होगया। परन्तु पिछले अनुभवके कारण उसको रानी पर सन्देह बना रहता था। एक दिन राजा शिकार खेलने गया। वनमें उसके एक शिकारीने एक हिरन मारा। हिरनी उस स्थान पर आई जहाँ कि हिरन पड़ा हुआ था, और कुछ कालतक पतिका ध्यान कर उसके शरीर पर गिरकर प्राणको बाहर निकाल दिया। सांपने उसी शिकारीको काटखाया जिसके सोते ही सोते प्राण पखेरू उड़गये। उसकी स्त्री उसको तलाश करती हुई वहाँ आयी और पहिले तो उसने अपने पतिको सोता समझा, परन्तु जब उसको यथार्थ बात मालूम हुई तब उसने वनकी लकड़ियोंको एकत्र कर चिता बनाई और अपने पतिका शव उसपर रक्खा, कुछ देर परिक्रमा करनेके बाद चितामे आग लगाकर पतिके साथ भस्म होगयी! राजाने इन बातोंको देखकर घर पहुंचकर पिंगलासे कहा कि शिकारी की स्त्रीसे बढ़कर संसारमे कोई स्त्री सती नहीं है। रानीने कहा शिकारीकी स्त्री दुःखके मारे सती होगयी कि प्रेमसे; और यदि प्रेम होता तब चिता बनानेकी कुछ आवश्यकता न होती। कुछ दिनोंके बाद राजा फिर शिकार खेलने गया और रानीकी बात याद करके उसने हिरनको मार अपना वस्त्र उसके खूनमे रंगकर अपने विश्वासी नौकरके हाथ रानीके पास भेज दिया और आज्ञा दी कि रानीसे कहना कि राजा सिंहके शिकार करनेमे मारा गया। पिंगला इस वार्ताको सुनकर न रोयी न बोली पर भूमिमें पड़कर सूर्यको दंडवत कर उसने प्राणको छोड़ दिया।

चिता बनायी गयी, और रानीका शव नगरके बाहर जलाया जा रहा था जब कि राजा शिकार खेलकर लौटा। स्मशानभूमिमें जाकर जब राजाने अपने कपटका यह फल देखा तब उसने राजसी वस्त्र फेंक कर फकीरी वस्त्र धारण किया और विक्रमको उज्जैनका राज्य देकर वनमें चला गया।

सेवानसे हैदराबाद ।

जूटकी बस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जीहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपड़ो वाला है, गांवके निकट ही पहाड़ी है ।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल " हाय पिंगला ! हाय पिंगला " के सिवाय कुछ नहीं निकलता था । आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया, यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हे जिसको मुसल्मान भरतरीका आमखास कहते हैं तौभी किला अधिकतर प्राचीन है । भरतरीका मन्दिर नगरके दक्षिणमे है । इस मन्दिरमे मुसल्मानोंने लालपीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसल्मान) सिन्धको विजय करनेमे सफलीभूत हुए । इस सन्तके स्मारक मन्दिरके मध्यमे चारों तरफ लकड़ियोंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था । यह बडा ही आश्चर्य जनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसल्मान एक ही स्थानमें पूजा करते है, और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते है तौभी दोनो ही ताखमे रक्खे हुए सालिगराम की बड़ी मूर्तिका पूजन करते है । वास्तवमे यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहाँके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिन्दू था प्राय बड़ा ही आग्रही और असहनशील होता है । मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान दूतोंने–मदारीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खंडहरकी एक ईंट लाकर दी । इसकी लंबाई चौड़ाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजाने पर घंटाके समान बजती थी । वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्बन) मे परिणत होगये थे । वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहाँ हजारों बरससे पड़े है । इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख–सेवानके अधिकारमे था । निसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमे उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले समयमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोतक न लेजासके उसको उन्होंने फूक दिया । सिक्खोंके गुरु नानकका बाड़ा नदी और किलेके मध्यमें है । सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आबादी बराबर है, हिन्दुओंमे जैसलमेरसे आई हुई व्यापारकरनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढ़ियोसे यहां रहती है । पोकरन(१)जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते है । मुसलमानोमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिन्दू अमीर है । रुई, नील, और धान जो अधिक परिमाणमे सेवानके समीपमे होते है, रहा और कराचीबन्दरके बन्दर गाहोंकी बडी (२)नावोमें जिनको मुसल मान खेते हैं भेजा जाता है । सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है ।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिन्धुनदीके समानान्तर रेखामे सेवानसे तीन मीलके करीब पहुँचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है । इन सब पहाड़ियोंमें मेकरानके किनारे हिंग–लाज माता (३) के मन्दिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलौच कहते जीतवंशके है ।

---

(१) जैसलमेका इतिहास देखो ।

(२) यह प्रसिद्ध मन्दिर रहासे कराची बन्दर होते हुए नौ दिनकी रास्ता पर है और समुद्र तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिन्दूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते है ।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी है ।

सुमैचाकी वस्ती (२ १/२ कोश) छोटासा गांव।

लूखी (२ १/२ कोश) साठ घर नदीसे डेढ़कोश पर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहर-तट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाड़ियोंमे एक स्थान पर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल है जिनमेंसे तीन गर्मपानीके है।

ऊमरी–९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर है; एक कोश पश्चिम नीची पहाड़ियां है।

सूमरी–३ कोश नदीके पहाड़ियोंपर पचास घर, ड़ेढ कोश पश्चिम।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दोसौ गजपर एक वजार है, गांवमें दोसौ घर है. डेढ़ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द–४ १/२ कोश नदी तटपर दोसौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाड़ियां।

ओमुरकी वस्ती–३ कोश नदीके निकट थोड़ेसे झोपड़े।

सैदयकी वस्ती ३ कोश।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर। हैदरावाद ३ कोश सिन्धुनदीसे डेढ कोश हैदरावादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड़ तेतालसि कोश।

हैदरावादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखांकी वस्ती ३ कोश, फुलेती नदीका पश्चिमीतट ताजपुर ३ कोश, वड़ानगर हैदरावादके ईशान कोणमे कुतरैल २ १/२ कोश एकसौ घर।

नूसुरपुर १ १/२ कोश ताजपुरके पूर्वमे बड़ा शहर है।

अलिपरका टंडा–४ कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमे अलियरखॉने, जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर वनवाया था। नगरके दो कोश उत्तरमे

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तिओको पार करके इन तालोमे स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते है। इनमेंसे दो गर्म है और सूर्य कुंड और चन्द्रकुंड कहलाते है और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोसे संपन्न है। इन कुंडोके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करने के पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमे कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ वनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है। लोग कहते है कि यदि पापी विना अपनी पाप कहानी कहे कुंडमे कूद पड़े तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोसे आच्छादित दिखाई पड़ता है। रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओमे पापकहानी कहने की प्राचीन रीति चली आती है।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमे जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था, और इसी सवबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकार मे चला गया था जो सिंधुनदीके पूर्वमे था। लोग कहते है कि वह यह ' संकरा ' है परंतु दूसरे कहते है वह रोरीवेखरके ऊपर दूरासे निकलता है।

सांगराका नाला है, जिसके बारेमे लोग कहते है कि हाला और मुकरुन्दके बीचमे सिन्धुनदीसे निकला है और जंडीलाके पाससे गुजरता है।

मीरवह ५ कोश चालीस घर, वह, टंडा, गोट, पुरवा, गांव शब्दके लिये समानार्थक है।

सुनारियो-७ कोश चालीस घर।

दिनगानो-४ कोश सिन्धके समतल प्रदेशकी सीमा यह गांव है। उत्तरकी तरफ पांच और छः मीलकी दूरीपर रेतकी पहाड़ियां है। दिनगानोके नीचे एक छोटीसी नदी बहती है।

कोरसानो ७ कोश सौघर। कोरसानोके पूर्व दो कोशकी दूरी पर एक प्राचीन नगरके खंडहर दृष्टिगोचर होते है। ईटके मकानात कुआँ और बावड़ी अबतक विद्यमान है। उत्तरकी तरफ दो या तीन कोश पर रेतकी पहाड़ियॉ है।

अमरकोट ८ कोश हैदराबादसे अमरकोटतक एक विस्तीर्ण मैदान चलागया है जो मरुभूमिकी रेतके पहाड़ियोके शिरे पर नीची भूमिपर बनाया गया है। इस समस्त देशमे जिसका रकवा कच्चा चौवालिस कोश है और सुनारियोतककी भूमि अत्यन्त उत्कृष्ट है और सिन्धुनदीके नहरों द्वारा साम्यकतया सीची जाती है। गांवोके चारो तरफ खूब खेती होती है और यहांकी भूमि स्वभावत. उपजाऊ होनेपर भी विशेपकर बबूल निरन्तर हरित झल और झो के जंगलसे परिपूर्ण है। सुनरियोसे अमरकोटतक लगातार एक जंगल चला गया है जिसमे खेती करनेके योग्य कुछ भूमिके टुकड़े है जहॉकी खेती दैवाधीन है। यहांकी भूमि इतनी अच्छी नही है जितनी कि प्रथभ मार्गकी है।

कत्तार-४ कोश अमरकोटके पूर्वमे एक मीलकी दूरीसे रेतकी पहाड़ियां प्रारम्भ होती हैं जिनकी ऊॅचाई डेढ़सौ फीटसे दोसौ फीटतक है। कुछ झोपड़े सुमैचा जातिके है जो यहां अपने पशु चराते है, दो कुएँ है।

धोतकी बस्ती-४ कोश कुछ झोपड़े, एक कुआँ, धोते सोढा और सिन्धी यहॉ खेती करते है और पशु चराते है।

धारना-८ कोश सौ घरकी बस्ती है जिसमे पोकरन ब्राह्मण और बनिया रहते है जो गडरियोसे घी खरीदकर भुज और घाटीको भेजते है। यह व्यापारकी मंढी है, पूर्वके कारवां यहॉ अपनी वस्तुओके बदलेमें घी लेलेते है जो यहां पर ' रो ' मे भेड़ोकी बहुतायतके सबबसे बहुत ही सस्ता है।

खैरल्का पर तीनकोश, इस समस्त प्रदेशमे तितर वित्तर अनेक गॉव और ताल 'पर' है।

लनैलो १$\frac{1}{2}$ कोश सौघर, पानी, खारी खैरल्से पानी ऊंटोपर आता है।

भोजका पर ३ कोश झोपड़े खेतीके योग्य भूमिभू ६ कोश, झोपड़े।

गारिरी १० कोश-तीनसौ घरका छोटासा नगर है जो शोभासिह सोढाके अधिकारमें है[1] इसके अधीन कई गांव है। घाट और जैसलमेरके राज्योंकी यह सीमा है। घाट पूर्णतया सिन्ध देशमे संमिलित करदियां गया है। यात्रियोंसे कर वसूल करनेके लिये यहाँ पर एक 'धानी' रहता है।

हरसानी १० कोश तीनसौ घर, निवासी खासकर भट्टी। यह भट्टी जातिके राजपूतके अधिकारमे है जो मारवाड़को कर देता है।

जिनजिनियाली १० कोश तीनसौ घर-यह जैसलमेरके प्रधान सरदारकी जागीर है इसका नाम कैलर्सी भट्टी है। यह नगर जैसलमेरकी सीमा पर है। एक छोटासा भट्टीका दुर्ग है और अनेक ताल है जिनमे नौ महीनेतक पानी बना रहता है, और रेतकी पहाड़ियोंकी घाटियोंमें खूब खेती होती है। जिनजिनियालीके उत्तरमे करीब छै कोश पर चारुनका एक गांव है।

गजासिहकी वस्ती २ कोश पैतीस मकान। पानीकी कमी चारुनगांवसे ऊंटोंपर लाया जाता है।

हमीर देवरा-५ कोश दो सौ घर। करीब १ मील उत्तरकी ओर कई ताल हैं और गांवका पानी खारी होनेके कारण इन तालोंसे पानी ऊंटोंपर आता है। जैसलमेरकी पर्वत श्रेणीकी यहांपर इतिश्री होजाती है।

चैलक ५ कोश अस्सी घर, कुएँ, चैलक पहाड़ी पर है।

भोपा ७ कोश चालीस घर, कुआँ, छोटासा ताल है।

भाऊ २ कोश दो सौ घर, पश्चिमकी ओर ताल, छोटे २ कुएँ है।

जैसलमेर ५ कोश-इस चक्कारदार मार्गसे अमरकोटसे जैसलमेर साढ़े पचासी कोश है। जिनजिनियालीसे छबीस कोश, गिरपसे सात मील बासे बारह और अमरकोटसे पचीस, सब मिलाकर पक्का सत्तर कोश है ऊंटोका कारवां चारादिनमे इस मार्गको आक्रमण कर सकता है और कासिद रात दिन चलते हुए साढ़े तीन दिनमें पार करते है। अन्तिम पचीस कोशका मार्ग पूर्णतया मरुभूमिमे होकर है, हैदरावादसे अमरकोटतक चौवालिस कच्चे कोशकी दूरी उपरोक्त कोशमें संमिलित करने पर उसका जोड़ १२९ $\frac{1}{2}$ कोश होता है। बिलकुल सीधा मार्गकी दूरी १०५ पक्का कोश कूती गयी है। जो सर्पाकार मार्गके वजा करनेपर भी करीब करीब १९५ अंगरेजी मीलके होती है। इस मार्गका जोड़ ८५ $\frac{1}{2}$ कोश।

वैसनौ होते हुए जैसलमेरसे हैदरावाद।

कुलदार ५ कोश।

खावा ५ कोश।

लाखागंज ३० कोश तमाम मार्ग मरुभूमिमे होकर, न गांव न पानी।

---

(१) इस सरदारके मारजानेके वृत्तान्तको जाननेके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

वैशनौ ८ कोश ।

वैरसीका रार १६ कोश कुँएँ ।

शीप्रो-३ कोश

मीतका घैर ७ कोश अमरकोट २० कोशकी दूरीपर

जेन्दीला--८कोश

ऊलियरका टंडा--(१०) कोश सांकरा नाला

ताजपुर	४ कोश	प्रथम मार्गसे नूसुरपुर होतेहुये ऊलियरका टंडाव [illegible] दूरी १३कोश है या २ कोश इससे अधिक अन्तिम पां[illegible] कोशमें पाँच नहरें मिलती है। इस मार्गका जोड़ १०३ कोश ।
जामकाटंडा	२ कोश	
हैदराबाद	५ कोश	

जैसलमेरसे शाहगढ़ होते हुए मीर सोहरावसे खैरपुरतक

अना सागर २ कोश

चन्दा १ कोश

पानीका तर ३ कोश तर या "तिर" या ताल

पानीकी कुचरी ७ कोश कोई गांव नही ।

कोरियाल्ले ४ कोश

शाहगढ़ २० कोश[1] तमाम मार्गमे 'रो' शाहगढ़ सीमा है। छः बुर्जवाला एक छोटासा दुर्ग इसमे है और ऊपरी सिन्धके शासकका यह स्थान है

गुरसेह ६ कोश

गुरहर २८ कोश संपूर्ण मार्गमे 'रो' या मरुभूमि, पानीका एक बुन्द भी नहीं । गुरहरसे दो रास्ताएँ फूटती है एक खैरपुरको दूसरी रानीपुरको ।

बलौचकी बस्ती	५ कोश	बलोचा और सुमैचाके गांव है ।
सुमैचाकी बस्ती	५ कोश	

नल्ला २ कोश यहाँ वही नदी है जो दूरा और प्राचीन नगर अलोरमे होकर वहती है यह नदी मरुभूमिकी सीमा है । खैरपुर १८ कोश ऊपरी सिन्धका शासक और हैदराबाद के राजाका भाई यहाँ रहता है । वारह बुर्जोका उसने एक पत्थरका किला निर्माण किया है, जिसका नाम नवकोट है । नालासे खैरपुरतक १८ कोशकी दूरीमे एक समतल प्रदेश है और यहाँकी घाटीकी चौड़ाई १८ कोश है । निम्न लिखित [illegible] अत्यन्त महान् है ।

---

(१) शेख अब्दुल वरकत शाहगढ़से कोरियालाकी दूरी सिर्फ नौ कोश वतलाता है और कोरियालासे ५ कोश पश्चिमको और (कगर) नदीके शुष्क मार्गको पारकरनेकी अत्यन्त महत्त्व पूर्ण वातका उल्लेख करता है । पानी प्रचुर परिमाणमें उसका प्रवाहमार्ग खोदने पर मिलता है । असंख्य वैरा मिलते हैं जहाँ कि गडेरिये अपने पशुओको लेजाते हैं ।

वनिये है, वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते है, पटैलोने अनेक चिन्ता करनेके पीछे उन्ही महाजनोसे कार्य-कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके वोहरोके सम्बन्धमे महात्मा टाड् साहवने लिखा है कि "वोहरागण किसानोके कृषिकार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गो कर्पण यन्त्र वीज आदि देते थे, और जवतक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तवतक सहायतादेते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोके साथ वोहरोका यह नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही वोहराने जो कुछ धनकी सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्ही वोहरोसे किसानोको विशेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। विशेप करके वोहरागण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नही करते थे, और किसान भी वोहरोको असतुष्टके लिये चेष्टा नही करते थे, कारण कि वोहरा इस वातको भलीभाँतिसे जानते थे कि अत्याचार और उत्पीड़न करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नही लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक वोहराको ठकानेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नही करेगा, इस कारण दोनो ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहै एक २ ग्रामका वोहरा सदा एक २ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके वोहरोंको छोडकर अन्य किसी ग्रामके बोहरोका आश्रय नही लेता था"।

राजराणा जालिमसिहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करने की रीति एक वार ही दूर करके उसके वदलेमे नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्वतक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोने इस समय देखा कि एकमात्र नियमित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिह सर्वनाश साधन करेगे, इस कारण वह सव लोग षड्यत्र करके उक्त वोहरोका नाश करके आप स्वयं महाजनोका कार्य करनेके लिये तैयार हुए। प्रकाश्य रूपसे वोहरोके कार्यमे बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होगे यह जानकर उन्होने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्वन किया। क्षेत्रमे धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोने धान्यको काटनेके लिये पटैलोके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, "पहिली पहल राजाका कर देदो पीछे धान्य काटना।" दीन किसान धान्य काटकर विना वेचेहुए कहाँसे रुपया दे? इस कारण वह महा विपत्तिमे पड़े और उन्होने जाकर वोहरोका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोने वोहरोसे जतादिया कि "जिन किसानो पर राजाका प्राप्त कर वाकी है तवतक वह किसानोको किसी प्रकार भी ऋण न देसकेगे।" वोहरागणने पटैलोके इस निषेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोको आगे ऋणदान नहीं किया,